



# हिन्दी विश्वकोष

बंगला विश्वकोषके सम्पादक  
श्रीनगेंद्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहाशय,  
विद्वान् चरित्रि, शब्दरत्नाकर, तत्त्वचिन्तामणि, एम, आर, ए, एम  
तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सहायिता ।

—#—

पञ्चदश भाग  
प्रैतशिला—भवानन्द मजूमदार  
THE  
ENCYCLOPÆDIA INDICA  
VOL. XV

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

**NAGENDRANATH VASU**, *Prāchyavidyāmahārṇava*,  
*Siddhānta vāridhi*, *Śabda ratnākara*, *Tattva chintāmaṇi*, M R A S  
Compiler of the Bengali Encyclopædia the late Editor of *Banglā Sāhitya* *Parisāda*  
and *Kāyastha Patrikā* author of *Castes & Sects of Bengal*, *Mayura*  
*bhanja* *Archæological Survey Reports* and *Modern Buddhism*  
Hon'ry *Archæological Secretary*, *Indian Research Society*,  
*Associate Member of the Asiatic*  
*Society of Bengal* &c &c &c

—♦—

Printed by B. Basu at the Visvakosha Press.  
Published by

**Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu**  
9 *Visvakosha Lane*, *Baghbazar*, *Calcutta*

1928



हिन्दी

# विष्वकोष

( पञ्चदश भाग )

प्रतेशिला ( स० स्त्री० ) प्रेताना प्रेतम्यो वा या शिला ।  
पिण्डदानार्थं गयास्थित प्रस्तरविशेष, गयाकी यह शिला  
जिस पर प्रेतोंके उद्देश्यसे पिण्डदान किया जाता है ।  
गण्ड पुराण-गयामाहात्म्यमें लिखा है, कि गयामें जो  
प्रतेशिला कहलाती है, वह तीन स्थानोंमें अवस्थित है,—  
प्रभासमें, प्रेतकुण्डमें और गयासुरके मस्तक पर । यह  
प्रतेशिला समस्त देवस्वरूपिणी और धर्म कर्तृक धारित  
है । पितृ प्रभृति और वान्धवादि यदि कोई प्रेतमावापन्न  
हो, तो गयासुरके मस्तक पर जो प्रतेशिला है, उस पर  
पिण्डदान करनेसे उनकी प्रेतयोनि नष्ट होती है । प्रेतत्व  
दूर करनेके लिये प्रतेशिला ही सर्व श्रेष्ठ है । इस प्रेत  
शिला पर जो कोई पिण्डदान करता है उसका प्रेतत्व  
दूर होता है और श्राद्धादि करनेसे उसे ब्रह्मलोककी प्राप्ति  
होती है । गयासुरका जो मुण्ड है, उसकी पीठ पर यह  
शिला अवस्थित है । इस शिला, पर चिष्णुपादपद्ममें  
पिण्डदान करना होता है । गया देखो । हिन्दुमाल-  
की ही गयाश्राद्ध अवश्य करना चाहिये । गयाक्षेत्रमें  
प्रतेशिला पर निम्नलिखित मन्त्रसे पिण्डदान करना  
होता है । मन्त्र यथा—

“स्नात्वा प्रतेशिलादीं तु चरणाम्बुस्रुतेन च ।

पिण्डं दद्याद्विभैर्मन्त्रैरायाह्यं च पितॄन् परान् ॥

अस्मत्कुले मृता ये च गतिर्येषा न विद्यते ।  
तेयामावाहयिष्यामि दर्भपृष्ठे तिलोदके ।  
पितृवशे मृता ये च मातृवशे च ये मृता ।  
तेयामुद्धरणार्थाय इमं पिण्डं ददाम्यहम् ॥  
मातामहकुले ये च गतिर्येषा न जायते ।  
तेयामुद्धरणार्थाय इमं पिण्डं ददाम्यहम् ॥  
अज्ञातदन्ता ये केचित् ये च गर्भेषु पीडिता ।  
तेयामुद्धरणार्थाय इमं पिण्डं ददाम्यहम् ॥  
उद्बन्धनेऽमृता ये च विपशस्त्रहताश्च ये ।  
आत्मोपघातिनो ये च तेभ्यः पिण्डं ददाम्यहम् ॥  
बन्धुवर्गाश्च ये केचित् नामगोतयिवर्जिता ।  
स्वगोत्रे परगोत्रे वा गतिर्येषा न विद्यते ।  
तेयामुद्धरणार्थाय इमं पिण्डं ददाम्यहम् ॥  
अग्निदाहे मृता ये च सिंहव्याघ्रहताश्च ये ।  
द्यूरीभिः शृङ्गिभिर्वापि तेया पिण्डं ददाम्यहम् ।  
अग्निदग्धाश्च ये केचित् नानिदग्धास्तथा परे ।  
विद्युच्चौरहता ये च तेया पिण्डं ददाम्यहम् ॥  
रीरवे नान्धतामिन्ने कालसूत्रे च ये गता ।  
तेयामुद्धरणार्थाय इमं पिण्डं ददाम्यहम् ॥  
असिपत्रयने घोरे हुम्मीपाके च ये गता ।  
तेयामुद्धरणार्थाय इमं पिण्डं ददाम्यहम् ॥



अन्वेया यातनाग्याना प्रैतगोऋतिनामिनाम् ।  
 तेगामुन्नरणाथाय ह्रमं पिण्ड दद्याम्बहम् ॥  
 पशुयोगिनां ये च पक्षिबीटमरौष्या ।  
 अथवा वृक्षयोगिस्त्वान्मेव पिण्ड दद्याम्बहम् ॥  
 अमर्यायातनासस्या ये नीना यमशासो ।  
 तेगामुन्नरणाथाय इम पिण्ड दद्याम्बहम् ॥  
 जात्यन्तरस्वशापि भ्रमन्त स्वैः कर्मणा ।  
 मातुष्य दुर्लभ वेया तेभ्य पिण्ड दद्याम्बहम् ॥  
 ये वाधयावाग्त्रया वा येऽन्य जमनि वाग्त्रया ।  
 ते सर्वे नृनिमावान्तु पिण्डदानेन सर्वदा ॥  
 ये केचिन् प्रैतरूपेण वर्तन्ते पितरो मम ।  
 ते सर्वे नृनिमावान्तु पिण्डदानेन सर्वदा ॥  
 ये मे पिण्डपुत्रे जाता बुले मातुस्तथैव च ।  
 शुभ भ्यशुन्नपुत्रा ये चान्ये वाग्धया मृता ॥  
 ये मे पुत्रे तुभपिण्डा पुत्रदारविर्जिता ।  
 त्रियागेपगाया ये च जात्यथा पशुवस्तथा ॥  
 त्रिरूपास्त्वामगमां ये दातादाता. बुले मम ।  
 नेया पिण्ड मया वृक्षमभ्यमुपतिष्ठताम् ॥  
 साक्षिणः मन्तु मे देवा श्रद्धे शानादपस्तथा ।  
 मया गया ममास्ताघ पित्रुणा निवृत्ति दृता ॥  
 आगतोऽह गया देवपितृकार्ये गदाधर ।  
 तन्मे साक्षी भवस्याघ अनुषीऽहमृणत्प्रयात् ॥”

( गयामा० ८६ अ० )

इम मन्त्रसे प्रैतजिला पर विष्णुपादपत्रमें पिण्डदान करने । इम प्रकार गयामें पिण्ड देनेसे सभी पाप और मोह प्रकारके भ्रम अपनोदित होते हैं । जब तक पिता-द्विधे उद्देजने प्रैतजिना पर पिण्डदान न किया जाय, तब तब पित्रश्राद्धमें मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती । इसीसे सबसे पहले पिताद्विधे उद्देजने प्रैतजिला पर श्राद्ध करना हर प्यतिक्रम करत्य है ।

प्रैतजीव ( म० ३७० ) प्रैते स्मति प्रैतस्य या जीव । मृत व्यक्तिके निमित्त अजीव, मर्त्याका अजीव । दो वर्षके श्राद्धके मृतपु होनेसे उसे मट्टीमें गाढ देना होता है और इसके ऊपर होनेसे बाह कर्म करना होता है । इम प्रकार प्रैतमन्त्रकार इसके निम्नमें बुद्धि विधान हो उसका अनुष्ठान करनेका नाम प्रैतजीव है । क्षाति वस्तुओंके

साथ श्मशानसे लौट कर स्नान कर ले, पाँते यमसूक्त अप और उसके उद्देजने तर्पणादि करने होते हैं । संसार अनित्य है, एक न एक दिन सबोंकी मृत्यु होगी ही, ऐसा सोच कर मृत व्यक्तियोंके लिये रोना धोना उचित नहीं । अनन्तर घर जा कर दरवाजे पर रखे हुए नीम-फै पत्तोंको दातसे काट कर जलमें हाथ धो शाले । पाँते आचमन और अनित्यस्पर्श करके घरमें प्रवेश करे । घरको चारों ओर गोबरने पोत देना आवश्यक है । घर जिस से पवित्र रहे उस पर विशेष ध्यान देना चाहिये ।

“प्रैतजीव प्रवक्ष्यामि तन्नुशुष्य यतप्रता ।  
 ऊणद्विर्षय निवनेत्र कुयादुदकं तत ॥” इत्यादि ॥  
 ( गहस्तु० १०६ अ० )

क्षाति भिन्न जो सब व्यक्ति प्रैतके अग्निकार्यके लिये श्मशान गये थे, उन्हें केवल एक दिन तक अजीव होता है । एक दिनके बाद उनकी शुद्धि होती है । जो क्षाति हैं, उन्हें पूरा अजीव मानना पड़ता है ।

अजीवका विषय प्रैतश्रीचर्म देखो ।

प्रैतश्राद्ध ( स० ३७० ) प्रैताय प्रैतोद्देश्यक या श्राद्ध । प्रैतोद्देश्यक श्राद्ध, किसीके मरनेको निमित्ते एक वर्षके अन्दर होनेवाले श्राद्ध श्राद्ध जिनमें स्पिण्डी, मानिक और पाणमानिक आदि श्राद्ध सम्मिलित हैं ।

“छादन प्रतिमास्यानि भाघ पाणमानिके तथा ।  
 सपिण्णोकरणश्चैव इत्येत्न् श्राद्ध षोडशम् ॥”

( श्राद्धतत्त्व )

भाघ प्रैतश्राद्धके दिन अघात भाघकोदिष्ट श्राद्धके दिन प्रैतका प्रैतद्वय दूर होने और उसके स्वर्गलोक जाने को कामनामें घृषोत्सर्ग करना होता है । यदि किसी कारणवजल भाघकोदिष्ट श्राद्ध न किया जाय, तो श्राद्ध पचादशके दिन यह श्राद्ध करता होता है । धर्मशास्त्रकारोंने अभिप्राय यह है, कि श्राद्ध पचादशी और श्राद्ध पचा दशोनों ही दिन पतित श्राद्धका फल है । प्रैतश्राद्ध हो पचाहे साव्यन्मरैकोदिष्ट श्राद्ध उत दोनों ही दिन किया जा सकता है । प्रैतके उद्देजने तबश्राद्ध मानिकों का कर्मण्य है । यह श्राद्ध वस्तुर्ष, गधम, नान या पका दग दिनमें करना होता है । पचा—

‘चतुर्थे पञ्चमे चैव नयमैकादशे तथा ।  
तद्वत् दीयते जन्तोस्तन्नश्चाद्भुमुच्यते ॥”

(श्राद्धत्रिवेक-यम)

पहले जिन सोलह श्राद्धोंकी कथा लिखी गई है, वह सामाजिक और निरग्निक दोनोंके ही कर्त्तव्य हैं । प्रोतके उद्देशसे अमृत्युवद श्राद्धको भी प्रोतश्राद्ध कहते हैं । सम्यत्सर पर्यन्त प्रोतके उद्देशसे प्रतिदिन अन्न जलदान रूप श्राद्धका नाम अमृत्युवदश्राद्ध है । (श्राद्धत्रिवेक)

प्रोतहार (स० पु०) मृत शरीरको उठा कर श्मशान आदि तक ले जानेवाला, मुरदा उठानेवाला ।

प्रोता (स० स्त्री०) १ स्त्री प्रोत, पिशाची । २ भगवती काल्यायिनिका एक नाम ।

प्रोताधिप (स० पु०) प्रोताना अधिप । प्रोताधिपति, यमराज ।

प्रोतान्न (स० क्लृ०) प्रोताय देय अन्न । प्रोतोद्देश्यक देय अन्न, वह अन्न जो प्रोतके उद्देशसे दिया जाय ।

प्रोताशिनी (स० स्त्री०) १ भगवतीका एक नाम । २ मृतकोंको मानेवाली ।

प्रोताशौच (स० क्लृ०) प्रोते सति अशौच । प्रोतनिमित्त अशौच । मृत्युके बाद जो अशौच होता है, उसका नाम प्रोताशौच वा मरणाशौच है । शुद्धितत्त्वमें लिखा है,—

सपिण्डको मृत्यु होने पर मृत्यु दिनसे ले कर ब्राह्मणके १० दिन, क्षत्रियके १२ दिन, वैश्यके १५ दिन और शूद्रके ३० दिन अशौच होता है, यहो पूर्णाशौच है । इसमें न्यूनकालध्यापक अशौचको खण्डाशौच कहते हैं । जननाशौचमें ही खण्डाशौच होता है । दूरस्थ श्रातिके मरण पर तीन दिन और समानोदक श्रातिके मरण पर पक्षिणी अशौच होता है । यह पक्षिणी अशौच दिनको हो चाहे रातको, उस समयसे ले कर सूर्यास्तकाल पर्यन्त रहता है । पूर्वोक्त चतुर्वर्णके पूर्वपुरुषको जन्म नाम स्मरण पर्यन्त एक दिन अशौच होता है । उसके बाद समोक्तके जनन वा मरणमें स्नानमात्रसे ही शुद्धि होती है ।

पहले जिस समानोदकादिधा उद्देश्य किया गया है, उसका अर्थ यों है—सप्तमपुरुष पर्यन्त श्राति सपिण्ड, दशमपुरुष पर्यन्त साकुल्य, पीछे चतुर्दशपुरुष समानोदक कहलाता है ।

अत्रिवाहिता कन्याके तीन पुरय पर्यन्त सपिण्डय रहता है । अत्रिवाहिता कन्याके तैपुरुषिक श्रातिके जनन वा मरणमें पूर्णाशौच होता है । उसके बाद साकुल्य पर्यन्त तीन दिन अशौच रहता है । ब्राह्मणादि चतुर्वर्णों यदि अपने अपने जात्युकाशौचकालके मध्य यह अशौच सुने, तो पूर्वोक्त दशाहादि अशौच होता है । किन्तु यह अशौचकाल बोन जाने पर यदि एक वर्षाके भीतर सुननेमें आवे, तो सपिण्डश्रातिके तीन दिन अशौच होता है । एक वर्षाके बाद सुननेसे स्नानमात्रसे ही शुद्धि होती है । किन्तु महागुरुनिपातमें अर्थात् पुत्र यदि पितृमातृमरण और स्त्री स्वामिमरण एक वर्षाके बाद सुने, तो एक दिन अशौच और यदि उसके बाद सुने, तो स्नानमात्रसे ही शुद्धि होती है । खण्डाशौचके बहुत समय बाद सुननेमें भी अशौच नहीं होता ।

गर्भधावाशौच ।—६ मासके भीतर गर्भघ्राव होनेसे उस स्त्रीके माससप्तसप्त्यक दिन अशौच होता है, अर्थात् एक मासका गर्भघ्राव होनेसे एक दिन, दो मासका होनेसे दो दिन इसी प्रकार छ मास तक जानना चाहिये । किन्तु दैवकार्यमें द्वितीयमासाधि ब्राह्मणोके पक्षमें एक एक दिन अधिक होता है । अर्थात् द्वितीय मासमें तीन दिन, तृतीय मासमें चार दिन, चतुर्थ मासमें पांच दिन, पञ्चममासमें ६ दिन और षष्ठ मासमें ७ दिन अशौच होता है । क्षत्रियाके द्वितीय मासाधि पूर्वोक्त रूपमें दो दो दिन करके और वैश्याके तीन दिन करके और शूद्राके ६ दिन करके उस अशौचकी वृद्धि होगी । उस वर्द्धित शौचमें केवल देव वा पैतृकार्य करना निषिद्ध है, पर लौकिक सभी कार्य कर सकते हैं । किन्तु मास सप्त्यक दिनमें लौकिक या दैविक किसी भी कार्यमें अधिहार नहीं है । सप्तम या अष्टम मासमें गर्भघ्राव होनेसे खजात्युक्त पूर्णाशौच तथा निरुण सपिण्डके एक दिन अशौच होता है । यह वाक्य जीविन प्रसूत हो कर यदि उसी दिन मर जाय, तो भी उसी प्रकारका अशौच होता है । द्वितीय दिनमें मरनेसे पितामाताके सिवा और किसीको अशौच नहीं होता है ।

बालाशौचव्यवस्था ।—नयम और दशममासजात बालककी अशौचकालके मध्य मृत्यु होनेसे यह जन्त

शौच अङ्गाव्युत्थानयुक्त हो कर केवल पितामाताके रोग, दूसरेके नहीं। सभी धर्मोंके लिये इसमें एक-सी व्यवस्था दी गई है। ब्राह्मणके घरमें जात बालक यदि छ महीनेके भीतर, दन्तोद्गम न हुआ हो, मर जाय, तो पितामाता और निम्नोपा महीनेके एक दिन अर्थात् और सप्तिहके सप्तमीके होता है। छ मासके भीतर यदि दात निकल आये हों, तो पितामाताके तीन दिन और सप्तिहके एक दिन अर्थात् होता है। छ माससे ले कर दो वर्षके भीतर यदि जानबालकको बिना चूडाकरणके ही मृत्यु हो जाय, तो पितामाताके तीन दिन तथा सप्तिहके एक दिन और यदि चूडाकरण हो गया हो, तो सप्तिहके भी तीन दिन अर्थात् होगा। दो वर्षसे ले कर छ वर्ष तीन मासके मध्य मृत्यु होनेसे पितादि सप्तिहवर्गके तीन दिन और उसके बाद होनेसे पूर्णांशौच होता है। छ वर्ष और तीन मासके मध्य उपनीत हो कर मरनेसे सम्पूर्णांशौच होता है।

क्षत्रियजातिके जननाशौचकालके बाद ६ मासके भीतर जानबालकको मृत्यु होनेसे सप्तमीके, उसके बाद दो वर्षके भीतर होनेसे तीन दिन, ६ वर्षके भीतर होनेसे छ दिन अर्थात् होता है। यदि छ वर्षके बाद उसकी मृत्यु हो, तो पूर्णांशौच होगा।

वैश्यजातिके जननाशौचकालके बाद छ मासके भीतर जानबालकको मृत्यु होनेसे सप्तमीके, उसके बाद २ वर्षके मध्य होनेसे ५ दिन, दो वर्षके बाद छ वर्षके मध्य होनेसे पूर्णांशौच होता है।

शूद्रोंके जननाशौचके बाद ६ मासके मध्य अज्ञातदन्त बालकको मृत्यु होनेसे पितादि सप्तिहवर्गके लिये तीन दिन अर्थात् और ६ मासके मध्य जानदन्त हो कर तथा १ मासके बादसे ले कर २ वर्षके मध्य मरनेसे सप्तिहवर्गके लिये ५ दिन अर्थात्, दो वर्षके मध्य दन्तचूट हो कर तथा दो वर्षके बादसे ले कर छ वर्षके मध्य मरनेसे पितादि सप्तिहके लिये १३ दिन अर्थात् होता है। ६ वर्षके मध्य विवाहित हो कर या ६ वर्षके बाद मरनेसे सम्पूर्णांशौच होता है।

शैवशास्त्रके अनुसार शौच ३३ वर्षों तक के लिये है। दो वर्षके मध्य कन्याकी मृत्यु होनेसे पिता, माता और

सप्तिहके सप्तमीके, दो वर्षके बाद धाम्दान पयन एक दिन, धाम्दानके बाद विवाह पर्यन्त अर्धशुक्लमें तथा पितृ शुक्लमें तीन दिन अर्थात् होता है। विवाहके बाद मर्त्य शुक्लमें पूर्णांशौच होता है, पितृशुक्लमें अर्थात् नहीं रहता। परन्तु यहाँ पर सहोदर भाईके लिये विशेषता यही है, कि अज्ञातदन्त मरनेसे सप्तमीके, जानदन्त हो कर चूडा पर्यन्त मरनेसे एक दिन, चूडाके बाद विवाह पर्यन्त मरने से तीन दिन अर्थात् होता है। विवाहित कन्या पिताके घरमें दि सरता प्रसव करे, या मरे, तो पिता माताके तीन दिन और सहोदर बाल्यादि वस्तुवर्गके एक दिन अर्थात् होता है। उस कन्याका यदि पिताके घर या अन्यरूपमें प्रसव या मरण हो, तो सहोदर ज्ञाता और उसके पुत्रके पक्षिणी अर्थात् होता है। उस कन्याके आधाधिकारी यदि पितामाता हों, तो उस कन्याको वही भी मृत्यु कर्मों न हो, पितामाताके तीन दिन अर्थात् होता है।

अविवाह शौच ३ वर्षों।—गायत्रीदाता और मन्व दाता, शुक्र तथा मातामहके मरने पर तीन दिन अर्थात् होता है। भगिनी, मातुलाजी, मातुल, पितृव्यसा, मातृव्यसा, मुहपत्नी, मातामही, मानुष्यस्त्री, पितृव्यस्त्री, पितामही, भगिनीपुत्र, पिताके मातुलपुत्र, पितामहके भगिनीपुत्र, मातुलपुत्र, भगिनीपुत्र और दीहित इन सबकी मृत्यु होनेसे पक्षिणी अर्थात् होता है। श्वशुर और श्वशुरके मित्र प्राममें मरनेसे तीन दिन अर्थात् रहेगा। आचार्य पत्नी, आचार्यपुत्र, अज्ञापक, माताके पैमानेपे भाई, श्यालक, सहाध्यायी, जिन्य, मातामहीके भगिनीपुत्र, मातामहके भगिनीपुत्र, मातामहीके भ्रातृपुत्र और एक प्रामवर्ती सगोत्रज श्वशुरके मरनेसे एक दिन अर्थात् होता है। मानुष्यसा, पितृव्यसा, मातुल और भगिनीपुत्र, वे सब एक घरमें रह कर यदि मरे, तो तीन दिन अर्थात् माना जाता है। विवाहित कन्याके पितृमरणसे तीन दिन और अर्थात् सम्बन्धित मित्र शूद्रज अपार्ण्य शूद्रा मातुलादिको ददन या पदत करनेसे तीन दिन अर्थात् होता है।

शुश्रूषिके शौच ३३ वर्षों।—अपैय आरमप्राप्तिका अर्थात् नहीं होता। गाम्बोप अनजनादि द्वारा मृत्यु होनेसे

तथा जलमें मज्जन, उच्चस्थानसे पतन, शृङ्गी, दण्डी और नली द्वारा हत, सर्पदशन, विषप्रयोग और चण्डाल या चीर द्वारा हत तथा वज्राहत और धनिमें पतित हो कर मरनेसे तीन दिन अशौच होता है। पक्षी, मत्स्य, मृग, व्याध, दण्डी, शृङ्गी और नली द्वारा हत होनेसे, उच्च स्थानसे गिरनेसे, अनशन और प्रायोपवेशनसे, वज्र, अग्नि, विष, बन्धन और जलप्रवेशने, क्षतव्यतिरिक्त शालाघातसे यदि किसीकी तीन दिनके मध्य मृत्यु हो जाय, तो तीन दिन और यदि छ दिनके बाद हो, तो सम्पूर्णाशौच होता है। यदि किसी प्रकार क्षत द्वारा ७ दिनके मध्य मृत्यु हो, तो तीन दिन अशौच और यदि ७ दिनके बाद हो, तो पूर्णाशौच होता है। अरुतप्राय पिबच्च महापातकी और अतिपातकीके मरनेसे अशौच नहीं होता।

दत्तकपुत्र सम्बन्धीय अशौचव्यवस्था—सपिण्डज्ञाति यदि दत्तकपुत्र हो और उसकी मृत्यु हो जाय, तो दत्तकग्रहणकारी पितादि सपिण्डोंके पूर्णाशौच तथा सपिण्डके जनन-मरणमें भी उस दत्तकके पूर्णाशौच होता है। पतङ्गिण दत्तकके अर्थात् सपिण्ड ज्ञाति मित्र दत्तकके मरनेसे पितादि सपिण्डके तीन दिन और पितादि सपिण्डके भी मरनेसे उसे उतना ही दिन अशौच होता है। किन्तु दत्तकके पुत्र आदिके पूर्णाशौच होता है। दत्तककी स्त्रीके अशौच-सम्बन्धमें मतभेद दिखाई देता है। किसी मतसे दत्तककी स्त्रीका पूर्णाशौच होगा, फिर कोई कहते हैं, कि दत्तककी तरह उसका भी तीन दिन अशौच होता है।

अशौच-करकी व्यवस्था—तुल्य मरणाशौचके मध्य यदि अपर तुल्य मरणाशौच हो, तो पूर्वाशौचकालमें ही ज्ञातियोंकी शुद्धि होती है। किन्तु यदि पूर्वाशौचके शेष दिनमें अपर पूर्ण मरणाशौच हो, तो पूर्णाशौच फिर दो दिन बढ़ जाता है तथा उसे शेष दिनके सुबेरे सूर्योदयसे ले कर दूसरे दिनके सूर्योदय तकके मध्य यदि पुनः पूर्ण समानाशौच हो जाय, तो पूर्वाशौच तीन दिन और बढ़ जाता है। उन घटित दो वा तीन दिनोंके मध्य अपर ज्ञाति, पिता, माता अथवा भर्ताकी मृत्यु होनेसे उस घटित पूर्णाशौचकाल द्वारा शुद्धि होती है, अब उसकी

शुद्धि नहीं होती। परन्तु उस अशौचके शेष दिनमें वा पूर्वांक प्रभातमें यदि पिता, माता वा भर्ताकी मृत्यु हो जाय, तो तमसे पूर्णाशौच होता है, दो वा तीन दिनकी शुद्धि नहीं होती। ज्ञाति मरणाशौचके पूर्वाङ्कमें पिता, माता वा भर्ताकी मृत्यु होनेसे पूर्वाशौचकाल द्वारा ही शुद्धि होती है। अपराङ्कमें मरनेसे पूर्णाशौच होता है।

स्वपुत्र जननाशौचके शेष दिनमें वा पूर्वांक प्रभातमें ज्ञातिके जन्म लेनेसे तथा पिता माता वा भर्ताके मरणाशौचके शेष दिनमें वा यह प्रभातमें ज्ञातिका मरण होनेसे पहलेको तरह दो वा तीन दिन अशौच नहीं बढ़ता। किन्तु स्वपुत्र-जननाशौचके शेष दिनमें वा तत्प्रभातमें स्वपुत्रके जन्म लेनेसे पिताके तीन दिन अशौच और बढ़ जाता है तथा पितृमरणाशौचके शेष दिनमें वा पूर्वांक प्रभातमें मातृमरण होनेसे अथवा मातृमरणाशौचके शेष दिनमें वा तत्प्रभातमें पितृमरण होनेसे पहलेको तरह दो वा तीन दिन अशौच बढ़ जाता है।

जननाशौचके मध्य यदि अपर जननाशौच हो, और पूर्वजात बालक यदि अशौचकालके मध्य ही मर जाय, तो उस मृत बालकके पितामाताके सम्पूर्णशौच और सपिण्डियोंके सद्यशौच होता है तथा उस सद्यशौच द्वारा परजात बालकका अशौच भी निवृत्त होता है। केवल परजातके मातापिताके पूर्णाशौच रहता है और इसी प्रकार यदि परजात बालककी मृत्यु हो, तो वैसा नहीं होता। क्योंकि, अशौच पूर्वजात अशौचकाल तक रहता है। अतएव यहा पर सबको पूर्वजातका अशौच भोगना पडता है। यहा पर विशेषतः इतनी ही है, कि यह परजात बालक यदि पूर्वजाताशौचके पूर्वाङ्कमें जन्म ले कर मर जाय, तो उसके मातापिताके उस पूर्वाशौचकाल तक अङ्गस्थित्ययुक्त अशौच रहता है। तुल्यकालव्यापक—सामान्य जननाशौच अथवा मरणाशौचके मिलनेसे मरणाशौचकाल द्वारा ही शुद्धि होती है।

एक दिनमें यदि दो ज्ञातिकी मृत्यु हो, तो सर्वशौचके अशौचकालावधि अङ्गस्थित्ययुक्त रहता है। सुतरां उस अशौचके शेष दिनमें वा तत्प्रभातमें यदि किसी अन्य ज्ञातिकी मृत्यु घटे, तो पूर्वांक दो वा तीन दिनकी शुद्धि नहीं होती, केवल महागुरुनिपातमें शुद्धि होती

है। दोनों प्रकारके अंगीच मिलनेमें सुख अंगीच द्वारा ही सुधि होती है। विदेगामृत क्षातिके त्रिरात्रांगीच की अपेक्षा विदेगामृत मातापिता और भर्त्सके विगता गीच होता है। आप्य यहा पर सुख अंगीच ही बल पान है। सुख त्रिरात्रांगीच एक साथ होनेमें प्रांगीच द्वारा और जनन या मरण त्रिरात्रांगीच एक साथ होनेसे मरणांगीच द्वारा सुधि होती है। (शुद्धितत्त्व)

यही सब अंगीच प्रेतांगीच है। जब तक यह अंगीच दूर नहीं होता, तब तक शरीरकी सुधि नहीं होती। शरीरकी सुधि होनेसे ही देव या पैव कर्मोंमें अधिकार होता है। अशीचके रहनेमें शरीर अपवित्र रहता है, इसीसे अशीचयुक्त व्यक्तिके साथ एकत्र उपवेशन या मौजन आदि निन्दनीय बतनाया गया है।

प्रेतारिष (स० ह्यो०) मृत्युविक्रिकी अन्धिय, सुदुर्की हृष्टी। प्रेतान्धिधारी (सं० पु०) ? सुदुर्की हृष्टीकी माला पहननेवाला। २ रुद्रका एक नाम।

प्रेति (स० पु०) प्रकर्षण इतिर्षमन देहोऽस्य। १ अन्न, अनाज। २ मरण, मरणा। ३ प्रगमन, आगे बढ़ना

प्रेतिक (स० पु०) मृत्युविक्रिकी, प्रेत।

प्रेतिनी (हि० ग्री०) प्रेतकी स्त्री, पिनाचिनी।

प्रेतियत् (स० ग्री०) प्रेत देखने।

प्रेतो (हि० पु०) प्रेतपूजक, प्रेतकी उपासना करनेवाला।

प्रेतोवाल (हि० पु०) यह मनुष्य जो कभी स्वाम अपने लिये और कभी अपने मानिकके लिये काम करे।

प्रेतोपनि (स० ग्री०) ? प्रातगमन। २ अन्धिका एक नाम।

प्रेतोत्र (स० पु०) प्रेतानामोत्रं ६-तत्। यमराज।

प्रेतोत्रमाद् (सं० पु०) एक प्रकारका उग्रमाद् या पागल पन। इसके विषयमें ऐसा श्लोकोक्त स्थाल है, कि यह प्रेतोंके बोधमें होता है। इनमें शोभाका शरीर पापका है और यह कुछ भी रागा पाना नहीं है। लम्बी लम्बी धर्ममें आती हैं। यह धर्ममें निश्चय कर भागोकी चेष्टा करता है। श्लोकोकी गान्धियां देता है और बहुत त्रिहारा है।

प्रेत्य (सं० पु०) प्रेत्यन्वय। श्लोकात्तर, परलोका।

प्रेत्यजाति (सं० ग्री०) प्रेत्य मृत्या जाति जन्म। पुनर्जन्म।

प्रेतमाज् (सं० खि०) मृत्युके बाद परलोकमें फलभागी।

प्रेत्यमाव (स० पु०) प्रेत्य मृत्या भाव। मरणोत्तर

पुनर्जन्म। एक बार मृत्यु, फिर जन्म, इसीका नाम

प्रेत्यभाव है। दुर्गन्धारात्ममें इसका विषय बहुत बढ़ा

घटा कर लिया है, पर विस्तार हो जानेके मयसे यहाँ

पर उसका सक्षिप्त विवरण दिया जाता है। हम लोग

जितने प्रकारके दुःखमोग करते हैं उतमैसे जन्म मृत्यु

ही प्रधान है। इस जन्ममृत्युके हाथमें पिण्ड सुदे,

उसीके लिये मोक्षगारात्मका उपदेश है। महर्षि गौतमने

प्रेत्यभावका लक्षण इस प्रकार निर्दिष्ट किया है।

प्रेत्यभाव शब्दसे जन्म हो कर मरण और मरण हो कर

जन्म, इस प्रकार जीवका धारावाहिक जन्म मरण समझा

जाना है। जब तक जीवात्मागी सुक्ति नहीं होती, तब

तक जीवात्माका धारावाहिक जन्म और मरण हुआ करता

है। सुक्ति होनेसे जन्म और मरण कुछ भी नहीं होता।

जन्म शब्दसे शरीरका आत्माके साथ प्रथम सम्बन्ध

सम्भवा जाता है। आत्माके साथ जब शरीरका प्रथम

सम्बन्ध होता है, उस समय देहदत्त पैदा करता है, ऐसा

व्ययहार हुआ करता है। मरण शब्दसे भी जिस सम्बन्ध

के होनेसे आत्मा शरीरसे है, ऐसा व्ययहार हुआ है उस

सम्बन्धका नाशक समझा जाता है। यही जन्म और

मृत्यु जोवधे अशय दुःखमोगका मूलकारण है, इस मूल

कारणका जब तक नाश नहीं होता, तब तक शरीर दुःख

से बनना विवृत्त अममय है। जब तक इसका मूळ

नहीं काटा जायगा, तब तक जन्म और मरण धारा

वाहिकरूपमें होता ही रहेगा, एक बार जन्म और फिर

जन्मके बाद मृत्यु अवश्य होगी। जब जीवके आत्मनश्य

बानका सम्यक् होगी, तब यह जन्ममरण धारा समूळ

मट हो जायेगी। परन्तु दिना आत्मनश्यहागके जन्म-

मृत्यु अवधारमायी है।

मरणके बाद जन्म, जन्मके बाद मरण, ऐसे जन्ममरण

प्रवाहना नाम प्रेत्यभाव है। प्रेत्यभाव और जन्ममरण

दोनोंका एक ही अर्थ है। परन्तु शास्त्रमें कहा गया है, कि आत्मा भङ्ग और अमर है, आत्माके जन्म मृत्यु का

जन्म कुछ भी नहीं है, तब जो यह जन्ममृत्यु होती है, सो किसकी ? मनुष्य मर, शरीर रह गया, अशरीर आत्मा रही वा चञ्ची गई, कहा गई ? कहा रही ? यह ले कर विवाद करना निष्प्रयोजन है। परमात्म यही देखना चाहिये, कि शरीर परिच्युत आत्मा आकाशकी तरह सुखदुःख-वर्जित हुई ? या इहलोककी तरह अथवा इहलोककी अपेक्षा अधिकतर भोगभागी हुई ? भोगभागी हुई, ऐसा कह ही नहीं सकते। चाहे इसमें तर्क भी क्यों नहीं लड़ाया जाय, तो भी यह प्रमाणित नहीं हो सकता। कारण, बिना शरीरके सुखदुःखका भोग हो सकता है, यह विलकुल असम्भव है। शरीरोत्पत्ति नहीं होती अथवा आत्माके अनन्त सुख और अनन्त उन्नति होती है, इसका कोई भी प्रमाण नहीं है। आत्मा अजर और अमर है, यदि इसे विश्वास करे, तो अमरताके अनुरूप सुखदुःख भोगमागिता पर भी जरूर विश्वास करना पड़ेगा। रूप देयना चाहता हूँ, अथवा चक्षु देखना नहीं चाहता, ऐसा हो ही नहीं सकता।

साध्यकारिकामें लिखा है—

“स सरति निरुपभोग भावैरिध्यासित लिङ्ग ॥”

भोगस्थान यदि स्थूलशरीर न हो, तो सूक्ष्मशरीरमें भी परिस्फुट भोग सम्भव नहीं। अतएव आत्मा लिङ्ग शरीरविशिष्ट रह कर पुन पुन स्थूलशरीरको ग्रहण करती और पुन पुन उसे छोड़ देती है। यद्यपि सुखदुःख आत्माके नहीं है, तो भी अमुक आत्माके सुख दुःख विहीन होनेको सम्भावना नहीं। (किन्तु केवल नैयायिकोंके मतसे सुखदुःख जीवात्माके हैं।) इस कारण यह अग्रण्य स्वीकार करना पड़ेगा, कि आत्माके कभी तिर्यक्-शरीर, कभी मनुष्यशरीर, कभी देवशरीर और कभी पशु-शरीर हुआ करता है।

मनुष्य इस शरीरमें जिस प्रकारके कर्म और ज्ञानमें निमग्न रहता है, मरने पर तदनुसार वह वैधधारण करता है। कर्म हीसे स्थावर शरीर, कर्म हीसे पश्यादि शरीर और कर्म हीसे देव शरीरको प्राप्त होता है। इस विषयमें जन्मान्तर अस्वीकारवादी आस्तिक इन दोनों सम्प्रदायमें विशेष मतभेद देखा जाता है।

आत्मा अजर और अमर है। सुतरा इस आत्माने

पहले इसी प्रकारका एक शरीर पाया था। यह यदि सत्य हो, तो उसका स्मरण क्यों नहीं होता ? जब जन्मान्तरीय कोई भी विषय स्मरणमें नहीं आता, तब किस प्रकार विश्वास होगा, कि मैं था और मेरा पूर्वजन्म था ? इसका उत्तर यही है, कि शैशवकालकी घटना जब युवावस्थामें याद नहीं आती, शैशवकी बात तो दूर रहे, फलकी कुल बातें आज याद नहीं आती, तब जन्मान्तरकी बात याद आवेगी, यह कहा तक सम्भव है। इस प्रकार स्मरण नहीं होनेके कई कारण दिखाई देते हैं। अनेक दिन उस विषय को खाल नहीं करनेसे, भय, त्रास और यन्त्रणादि द्वारा अभिभूत होनेसे तथा रोगविशेषके आक्रमणसे मनुष्यके पूर्वाभ्यस्त ज्ञानका विलोप होते देखा जाता है। मनुष्य जब इसी शरीरमें सामान्य कारणोंसे पूर्वानुभूत विस्मृत होते हैं और अति अल्प यातनासे अभिभूत हो उपार्जित ज्ञानराशिमें खो बैठते हैं, तब जो यह उन्मत्त मरण यन्त्रणा, पीछे उम शरीरका परित्याग और तब एक नूतन शरीर-ग्रहण इत्यादि कारणोंसे पूर्वजन्मवृत्तान्त विस्मृत होगा, इसमें आश्चर्य ही क्या।

जीव इस देहमें यदि मरणकाल पर्यन्त कर्मज्ञानादिको समानरूपमें अटल और अव्याहत रख सके, तो सभी कर्म और ज्ञान जन्मान्तरमें भी अनुवृत्त होते हैं, लोप नहीं होता। वैसा जीव जातिस्मर नामसे प्रसिद्ध है।

जन्मान्तरवादिपक्षमें कोई कोई कहते हैं, कि मनुष्य मर कर अश्व हो सकता है, यह बात विश्वसनीय नहीं है। अश्वने अश्व ही होता है, मनुष्य नहीं होता। मनुष्य हमेशा मनुष्य ही रहता है। इसके उत्तरमें यही कहना है, कि शरीरोत्पत्तिका बीज आत्मा नहीं है। शरीरोत्पत्तिका बीज कर्माशय है अर्थात् अनुष्ठित ज्ञान और कर्मका पुत्री भूत संस्कार है। इस कारण मानवदेह पा कर जीव यदि निरन्तर अभ्ययान कर अथवा अभ्यशरीर पानेका अन्य विध कारणरूपतः सग्रह करे, तो भावी जन्ममें उमके अश्व शरीर क्यों नहीं होगा ? इस पर कोई कोई इस प्रकार आपत्ति करते हैं,—मान लिया पूर्वजन्ममें ज्ञान मनुष्य था, कर्मबलसे इस जन्ममें अश्व हुआ है। परन्तु उसका पूर्वाभ्यस्त मनुष्योचित ज्ञान कहा गया और अभ्यशरीरोचिन ज्ञान ही कहासे आया ? इसका उत्तर यह है,—

“कारणाविविधाविन्यात् कार्याणां तत्समायता ।  
नानापोन्याटनी सत्त्वो घटतेऽतो वृत्तत्वेहयत् ॥”  
(वेदान्तभा०)

जो जिनमें उत्पन्न होता है वह उसीका स्वभाव प्रकृत करता है। इसी नियमके अनुसार नाना योनिले नाना आकारका जीव उत्पन्न होता है। गलाया हुआ लोहा मायिका आकार धारण करता है, दूसरेका नहीं। जीव जब जिन योनिमें उत्पन्न होता है, तब उसी योनिके अनुरूप आकार वा स्वभावको प्राप्त होता है। प्रावन स्तंवार अधिक परिमाणमें अभिभूत हुआ करता है। इसी कारण मानवीय ज्ञान लुप्त रहता है और घोड़ेके आकार तथा स्वभाव प्रतीत मायिका आकार और स्वभाव नहीं होता।

संसारो जीव स्योपाहित ज्ञान और कर्मके अनुसार कमी उत्पन्न होता है और कमी अत्यंत, कमी उत्पन्न देह पाता है और कमी निरुद्ध। जो कहते हैं, कि जमान्तर नहीं है, उनके लिये कोई सत्यपूर्ण मनुष्यिक नहीं है। यत्न जमान्तरके अस्तित्वके पक्षमें सत्ययुक्तियां देखनेमें आती हैं।

१। प्राणिमात्रके ही एक नित्य और नियमित अति निवेश है अर्थात् स्वामादि प्रार्थना है। जीवमात्र ही मरना नहीं चाहता, मरणके प्रति उनका विशेष विरोध देखा जाता है। जितने प्रकारके भय या काम हैं, नयां पेशा मरणमात्र अधिक बड़बान् और अनिवार्य है। मरणमात्र सचोक्त गिगुमें भी देखा जाता है। जो कभी भी मरण यानताका अनुभव नहीं करता, जैसे ध्विके धतरमें भी मारक घन्तु देवनेमे त्रास उत्पन्न होता है। मरणमें यदि क्लेश रहे और उसका यदि कभी भी अनुभव होये, तो उसी क्षणमें मारक घन्तु देवनेमे त्रास बगनादि उत्पन्न हो सकता है अथवा नहीं। सुतरां यह विचार्य करना उचित है, कि जमान्तरके मरणपुत्र भोग या अनुभवका संस्कार उसकी अनसिद्धिमें जिना था, भाज उमने मनात मीरसे उद्भूत हो कर उमें भीत और चम्पिन कर जाला है। विरोध-सचोक्त जालकके मरणमात्रके माध इन्द्रजका सम्बन्ध नहीं देखा जाता। इससे भी जमान्तरका होगा अनुमान विद्या जा सकता

है। इन सम्बन्धमें विकासद्वारा सभी अति अनुभव करते हैं और कहते भी हैं, कि जीवके जीवस्वभावके अनन्त मरणमात्र ही पूर्वजन्म रहनेका चिह्न है।

२। इच्छा एक आत्मगुण वा आत्मलक्षण शक्तिविशेष है। थोड़ा और कर देखो, किसी प्रकार इसका उदय होता है। इच्छाका जाक सीन्यवृत्तान्त है। अच्छी तरह अनुभव नहीं होनेसे तथा यह मेरा अनुकूल वा उपकारक है, ऐसा ज्ञान नहीं होनेसे उस विषयमें किसी हालतसे इच्छाका उद्रेक नहीं होगा। इच्छाको तरह भय, त्रास, प्रवृत्ति आदि समस्त अन्त प्रवृत्तिके प्रति यही नियम चिह्नप्रतिष्ठित है। अनपय सच-प्रसूत शिशुकी इच्छा, प्रवृत्ति और त्रास आदिके साथ जब इन्द्रजन्मका वैया कोई सम्बन्ध नहीं देखा जाता है, तब यह अथवा यह कहते हैं, कि उन सबके साथ पूर्वजन्मका सम्बन्ध है। पूर्वजन्मार्जित ये सब सत्कार उसे उन सब विषयोंमें चिह्न, इच्छा और प्रवृत्ति आदि उत्पन्न कर चरितार्थ होते हैं। अतएव सचोक्त शिशुको स्तनपान प्रवृत्ति भी जन्मान्तर रहनेका दूसरा चिह्न है।

३। सौ पर्यंका पुत्र भी शरीरनिर्देशमात्रसे अपना पुत्रत्व अनुभव नहीं करता। यह जब अपने शरीर और इन्द्रियके प्रति लक्ष्य करता है, तब ही यह समझता है, कि मैं पुत्र हो गया हूँ। यह नियम बालकमें भी विद्यमान है। आत्माके अन्न अन्न होनेसे ही ऐसी घटना हुआ करती है। आत्मा पुत्र नहीं होगी और न मरती है, तदाशित शरीर ही पुत्र होता और मरता है। सुतरां आत्माके अन्नरथ और देहके परिपक्व न द्वारा भी जमान्तरका रहना अनुमान होता है।

४। विद्यापुद्धि सर्वोक्त समान नहीं होता भी जमान्तर रहनेका धन्यताम चिह्न है। ऐसे बहुतसे मनुष्य हैं जो थोड़ी उमरमें ही वैशेषदाह्यारण हो जाते हैं। फिर कुछ ऐसे भी हैं जो जीवन भर खड़े रहने भी उतका पुत्र भी इष्टपुत्र नहीं कर सकते।

५। आग्रह अर्थात् इष्ट। इसका दूसरा नाम प्रवृत्ति निरर्थक है। यह आग्रह भी जमान्तर साबित करनेका अनुभाव है। एक एक विषयमें एक एक मनुष्यका ऐसा एक अनिवार्य इष्ट रहता है, कि अनेक

मारने पर भी वह उमसे निवृत्त नहीं होता। ऐसा आग्रह वा हठ पूर्वजन्मका संस्कार वा अभ्यास छोड़ कर और कुछ भी नहीं है।

६। जीवविशेषका स्वभाव और कर्मविशेष पूर्व-जन्मकी अवस्थिति साबित करता है। सद्य प्रसूत शाया मृगको शायाका आक्रमण और सद्य प्रसूत गण्डार शिशु का पलायन वृत्तान्त अच्छी तरह जाननेसे मालूम पड़ेगा पूर्वजन्म है, इसमें कुछ मन्देह नहीं। इत्यादि।

जो कहते हैं, कि पूर्वजन्म नहीं है, उनका मत नितान्त अभ्रदुधेय और युक्तिविगर्हित है।

जन्म, मरण और जीवन—आरमा जन्म अजर अमर है, तब मरता कौन है? इस प्रश्नकी मीमासा करनेमें एक साथ जन्म, मरण और जीवन तीनोंका ही वर्णन और मीमासा आ जाती है। ऋषिमात्रका कहना है, कि 'नाथ हन्ति न ह'पवे' आत्मा न किसीको मारती है और न स्वयं मरती ही है। कारण, मरण नामक कोई स्वतन्त्र पदार्थ नहीं है। जो घटना मरण कहलाती है उसके प्रति लक्ष्य करनेसे, सूक्ष्माणुसूक्ष्मरूप विवेकयुक्तिको परिचालना करनेसे समझमें आ जायगा, कि कौन मरता है। मरण क्या है, पहले यही जानना आवश्यक है। कुछ घास, लकड़ी और रस्सो ले कर एक अणयत्री (गृहादि) बनाया। जल, घास और मृत्तिका आहारण करके एक दूसरा अणयत्री (घटादि) प्रस्तुत किया। क्षिति, जल और वीज एक साथ मिला गया, उससे अक्षुर निकला, उससे शाखा-पल्लवादि उत्पन्न हुए। अब यह कहने लगा, कि वृक्ष उत्पन्न हुआ है। कुछ दिन बाद उन सबोंका यह पूर्व अवयव त्रिभुज हुआ अथवा यों कहिये, कि उन सब अवयवोंका सयोग विध्वस्त हुआ। अब उसने कहा, कि गृह भग्न हो गया, घट विध्वस्त हुआ और वृक्ष मर गया है। सोच कर देखो, किस प्रकार घटनाके ऊपर भ्रम, ध्वस्त और मरण शब्दका व्यवहार हुआ है। अवयवका शैथिल्य, विकार अथवा सयोग ध्वंस इस अन्त्यतमके ऊपर ही मरणादि शब्द प्रयुक्त हुए थे। उसे निर्वाध पदार्थसे सन्नीच पदार्थमें उठा कर लानेसे समझमें आयेगा, कि जीवन्त पदार्थका मरण कौन है? जन्म मरण और कुछ भी नहीं है, अवयवका अपूर्व सयोगभाव जन्म और

उसका वियोगभाव मरण है। 'मृत्युरत्य तथिस्मृति' मरण और आत्यन्तिक विस्मरण दोनों एक ही बात है। जिस कारण कूटने जीवनकी देहपिञ्जरमें आघस रजा था, उसी कारण कूट वा सयोगविशेषके विनष्ट होनेसे अत्यन्त विस्मरण वा महाविस्मरण नामक मरण होता है। मरण होनेसे देहादिमें अन्य प्रकारका विकार उपस्थित होता है। अतएव सभी अवयवोंके अपूर्व सयोगका नाम जन्म और वियोग विशेषका नाम मरण है। इसीसे साध्याचार्यने कहा है—

“अपूर्वदेहेन्द्रियादिरूघातविशेषेण सयोगश्च वियोगश्च।”

(साध्य)

इससे मालूम होता है, कि सावयव वस्तुका ही मरण होता है निरवयव वस्तुका नहीं। आत्मा निरवयव है, इसीसे आत्माका मरण नहीं है। नितान्त सूक्ष्म और निरवयव इन्द्रियोंकी भी मृत्यु नहीं है। आत्मा नहीं मरती और न इन्द्रिय ही मरती है, यह सिद्धान्त यदि सत्य हो, तो अमुक मरा है, मैं मरूंगा, मैं मरा, ऐसा न कह कर देह मरो है, देह मरेगी ऐसा ही कहना उचित है, पर ऐसा जो कोई भी नहीं कहता है, उसका कारण क्या? कारण है। मनुष्य इस दृश्यमान सघातका अर्धात् देह, इन्द्रिय, प्राण, मन इनके सम्मिलन भावका विनाश देख कर ही 'मरण' शब्दका प्रयोग करते हैं। यथार्थमें प्राण सयोग का ध्वंस ही उक्त शब्दका प्रधान लक्ष्य है। प्राणव्यापारके निवृत्त नहीं होनेसे दूसरेके सम्बन्धकी निवृत्ति नहीं होती। 'जीवन' 'मरण' इन दो शब्दके घातव अर्थात् अन्वेषण करने पर भी कथित अर्थ प्रतीत होता है। जीव घातसे जीवन और मृ-घातसे मरण, जीव घातका अर्थ प्राणधारण और मृ-घातका अर्थ प्राणपरित्याग है। सुतरा यह मालूम होता है, कि प्राण जब तक देहेन्द्रिय सघातमें मिलित रहते हैं, तभी तक उसका जीवन है, विच्छेद होनेसे ही मरण होता है। अत यह कहना होगा, कि मरणसे आत्माका विनाश नहीं होता, देहके साथ उसका केवल विच्छेद होता है। मैं मरा और अमुक मरा, इन सब शब्दोंका अर्थ औपचारिक है। आत्माका अध्यास रहनेसे ही देहादि सघात अह-



प्रत्ययगम्य होता है और इसी कारण उक्त प्रकारके शीघ्र चारित्रिका प्रयोग हुआ करता है । किन्तु प्राणसंयोग का व्यंज ही यथार्थ मरण है ।

सृष्टिशास्त्रिकों सहित करके उमरों जो दृष्टता और ध्ययहातोपयोगिता सम्पादन की जाती है, उसका नाम शूद्रका जीया है । उस दृष्टता और ध्ययहातोपयोगिताका जो अन्तर्भावगत है, यह उमरों आयु है, जीवदेहका जीवन या आयु उमरोंके अनुरूप है । भ्यास प्रभ्यास निम्नका कार्य है, यह प्राण वृद्धता है । यथार्थमें प्राण कीन-सा पदार्थ है, उसका निर्णय करनेमें वारों वारोंमें मतभेद पैदा हो गया है । कोई कहते हैं, कि यह वातायु है, कोई कहते हैं, कि यह इन्द्रियसमष्टिका व्यापारविशेष है और कोई इसे एक प्रकारका स्वतन्त्र पदार्थ बतलाते हैं । पहले मात्रा सिद्धान्त इस प्रकार है—शरीरमें जो तेज, उष्मा, जल या आकाश है, निभ्यास प्रभ्यास उन तीनोंका सायोगिक कार्य है । वैदिक उष्मा या ताप रसरकादिरूप अवस्था उल्लेखित करता है । दोनों की संयोगजनित क्रियाविशेष उद्दकन्दस्थ आकाशमें जा कर परिपुष्ट होते हैं । यह परिपुष्ट सायोगिक क्रिया पुष्पसूत्र नामक सन्तोचक्रियाशास्त्र बतलाने में उल्लेखित और चित्रित करता है । चक्रिया-क्रियामें पाण्डुरायुक्त परिपुष्ट या पूरण होता है, फोंटे सन्तोचक्रियामें उमरका त्याग या परिहर्णित उपपन्न होते हैं । प्राणयन्त्रकी चेत्ती पित्तामे अणुद्वय परिपुष्ट होता और रसरकादि मारे शरीरमें प्रेरित होता है । देहकी ध्ययनति, पृष्टि, जन्म और मरणान्ति जो कुछ घटना है ये सभी उमरों प्राणयन्त्र के अर्थात् हैं । इन्द्रियकी कायनति प्राण द्वारा उपपन्न और सरञ्जित होती है । प्राण जब तब सतेज रहेगे, तभी तब इन्द्रियों काय कर सकेगा । प्राण ही उपपन्नित या कारण है अर्थात् मनुष्य जब मरता है तब प्राण इन्द्रियकी ले कर उल्लेखित अर्थात् शरीरमें निरल जाते हैं । विवेक विवेक नाम इन्द्रिय है ।

शूद्र शरीर और पदार्थ वृत्ति—जो मरणयोगी या पूर्ण है उमरों की गति गति है क्या ? पूर्णकी गति अर्थात् वागा-पाय करके वाग्या ही कहा है । जिसे वागापाय करनेका शक्ति है, वह पूर्ण नहीं है । जो वाग्य पूर्णत्वग

युक्त है, उसका वागापाय अमम्य है । परिच्छिन्न वा वाएड पदार्थका हा यातायात है, परिपूर्णपदार्थका नहीं । आत्मा पूर्णत्वमात्रयुक्त है, इस कारण गत्या गति नहीं है ।

परन्तु यातायात जो करता है सो कीन ? अथवा जन्ममरण प्रवाहका ही कीन भोग करता है ? स्पृष्ट शरीर तो पडा रहता है, आत्मा न जाती है और न आती है, तब जाता है कीन ? अथवा आता ही है कीन ? इस प्रश्नके उत्तरमें सभी साध्यवेदान्तादिने एक स्वरसे कहा है, इत्यमात्र स्पृष्टके ध्ययन्तर सृष्टमशरीर है, यही सूक्ष्म शरीर बार बार जाता आता है । जब तक मुक्ति नहीं होती या प्राकृतिक प्रत्यय उपस्थित होता, तब तक यह रहता है और इहलोकमें वागापायन करता है ।

“उपात्तमुपात्त पाटकीपिक शरीर हायहायश्रोपादाने ।”

(सत्यकामुदी )

जीव जो बार बार पाटकीपिक शरीरको प्रेषण और बार बार त्याग करता है, यही जीवका वागापाय और इह परलोक सञ्चार है । इत्यमात्र स्पृष्टशरीरका वागापाय में पाटकीपिकशरीर नाम रखा है । स्वयं, स्व, मांस, स्नायु, अस्थि और मज्जा ये छ कीय है अर्थात् आत्माके आवरण है, इसीसे पटकीपरम स्पृष्ट देहको पाटकीपिक कहा गया है । यह पाटकीपिक शरीर सुकजोषितके परिणामसे उत्पन्न होता है, परन्तु सूक्ष्मशरीर उस प्रकार नहीं होता । सूक्ष्म शरीर अन्त करण अर्थात् सुसंश्रिय-निचयकी समष्टि या सद्रुहाय रचित है । यह बहुत सूक्ष्म है, इसीसे अच्छे घ, भजेघ, अज्ञात, अज्ञेय और अज्ञेय है । जिसके मूर्ति नहीं है, ध्ययय नहीं है, अज्ञानमय पदार्थ है, उसे कीन देव सचता है, कीन उसे छेद, भेद, या दाह ही कर सकता है । सांख्यके मतसे भावि वृष्टि चालमें प्रकृतिते प्रत्येक आत्माके निमित्त एक एक सूक्ष्म शरीर उत्पन्न हुआ था । प्रकृतिको पुनः साम्यावस्था या जीवकी मुक्ति नहीं होने तक यह सूक्ष्म शरीर रहेगा और बार बार पाटकीपिक शरीर उपपन्न होगा ।

सूक्ष्मशरीरका सूक्ष्म नाम लिङ्गशरीर है । जिसके मतमें इन्द्रिय मत्तह अथयय, जिसके मतमें मोक्ष और जिसके मतमें वृद्ध है । सभीके मतमें यह सूक्ष्मशरीर

प्राण, मन, बुद्धि और इन्द्रिय द्वारा रचित है। वेदान्त चैतन्याधिष्ठित सूक्ष्मशरीरको ही जीव कहते हैं।

द्रव्यमान देहके अन्तर्गत एक सूक्ष्म देह है, उसका प्रमाण क्या ? इस पर सारथ्य कहते हैं, नि योगियोंका अनुभव और योगियोंका अद्भुत कार्यकलाप ही उसका प्रमाण है। कार्यकलाप किस प्रकार सूक्ष्मशरीरका अस्तित्व-साधक है, यह योगी हुए बिना समझमें नहीं आ सकता। योगी योगसाधन करके सूक्ष्म शरीरको इस प्रकार उत्पन्न कर सकते हैं, कि मासपिण्ड अस्थि पिण्डरूप द्रव्य शरीरसे बहिर्गत हो कर वे स्वच्छानुसार विचरण और परशरीरमें प्रवेश करते हैं। इस समय केवल युक्ति द्वारा सूक्ष्म शरीरसद्भाव बोधगम्य किया जाता है। शास्त्रमें इसकी युक्तिका विषय इस प्रकार लिखा है—धर्माधर्म, धानाहान, चैतन्यात्रैरान्य, चेध्वर्या नैध्वर्यं और लज्जा भय आदि जो सब गुण मानवीय आत्माको वल्लकुसुम ( वल्लमें पुष्पका स्पर्श होनेसे जिस प्रकार वल्ल सुवासित होता है, उसी प्रकार )-की तरह निरन्तर अधिवासित करते हैं, ये सभी बुद्धिपदार्थमें गिने जाते हैं। इसका कारण यह, कि बुद्धिको ही विशेष विशेष अरुस्था धर्माधर्मादि विविध नामोंकी नामो हैं। बुद्धि ऐसी चीज नहीं जो निराश्रयमें रहे, अश्रय उसका आश्रय है। थोड़ा ध्यानपूर्वक विचार करनेसे प्रतीत होगा, कि बुद्धि मासल्लिप्त अस्थिपिण्डरूपमें अरुस्थित नहीं है और न निरुपाधिक आत्मामें ही अरुस्थित है। निरुपाधिक आत्मा, निर्गुण, निष्क्रिय और निधर्मक है। सुतरां बुद्धिना पृथक् आश्रय फल्पनीय या अनुमेय है। जो बुद्धिके आश्रय है, वही सूक्ष्मशरीर है। सूक्ष्मशरीरमें ही बुद्धिको स्थिति और उत्पत्ति है।

सारथ्यकार कहते हैं, कि चित्त जिस प्रकार बिना आश्रयके स्थिर नहीं रह सकता, छाया जिस प्रकार मूर्ति पदार्थके बिना नहीं रह सकती, उसी प्रकार लिङ्ग अर्थात् नाना प्रभेदयुक्त बुद्धि भी बिना किसी एक उपयुक्त आश्रय या आधारके नहीं रह सकती।

“चित्तं यथाश्रयमृते स्थाण्वादिभ्यो बिना यथा छाया । तद्ब्रह्मिना विशेषैर्न तिष्ठति निराश्रय लिङ्गम् ॥”

( माण्यका० ४१ )

इसी कारण मासल्लिप्त अरिथरचित द्रव्यदेहके अन्तर्गत सूक्ष्म इन्द्रियातीत शरीरका रहना अनुमित होता है। सूक्ष्मशरीरराजस्थामें सभी कर्मज्ञान उस शरीरकी सहायतासे उत्पन्न होता है और दोनोंका सस्कार उसीसे स्थितिलाभ करता है। जन्ममरणकी अन्तराल अरुस्था में अर्थात् सूक्ष्मशरीर चिपुक हुआ है, अथच अभिनव सूक्ष्म शरीर उत्पन्न नहीं हुआ। वैसी अवस्थामें भी धर्माधर्मादिका सस्कार उसमें आवद्ध रहता है। इह-जन्ममें जिन सब बुद्धिरूतियोंका आविर्भाव हुआ है, तत्तावत्का सस्कार लिङ्गशरीरमें आवद्ध होता है और रह जाता है। बुद्धिके आविर्भावप्रभावसे द्रव्य देह केवल स्पन्दित होती है और उसके सस्कारके सिवा अन्य कोई सस्कार इसमें आवद्ध नहीं होता। यही कारण है, कि सूक्ष्मदेहका ध्वस होने पर धर्माधर्मादिका सस्कार विलुप्त नहीं होता। तथा इहजन्मकी कार्ययुक्ति पूर्णजन्म के सस्कारानुरूप हुवा करती है।

“सूक्ष्मास्तेषां नियता माता पितृजा नियन्तान्ते ॥”

( साण्यका० ३१ )

मातापितृजात अर्थात् शुभ्रगोणित द्वारा उत्पन्न यह पाटकीयिक देह पडी रहती है, सड जाती है, मट्टी हो जाती है, भस्म बन जाती है, गोदूद बुत्ते उसे घाते हैं, तथा यह बिष्टा भी हो जाती है। किन्तु 'सूक्ष्मास्तेषां नियता' अर्थात् उसके मध्य सूक्ष्मशरीर नियतकालरूपमें ही है। यह मोक्ष अथवा प्रलय नहीं होने तक रहता है। सूक्ष्मशरीर बार बार पाटकीयिक शरीरको ग्रहण करता है और बार बार उससे चिमुक्त होता है। पाटकीयिक शरीरके उत्पन्न होनेको जन्म और उससे चिमुक्त होनेको ही मरण कहते हैं।

जन्ममरणका अन्तराल।—अन्तराल शब्दका अर्थ मध्यकाल है। मरण हुआ है, अथच शरीरोत्पत्ति नहीं हुई। इस मध्यवर्ती अरुस्थाविषयमें वेदान्तादि शास्त्रों में इस प्रकार लिखा है—

अभिनियेश, ध्यान और अध्यान इन सबका फलाफल अनुमन्धान करनेसे अन्तरालमें अरुस्थाका सुस्पष्ट चित्र मालूम हो सकता है। किसी आदमीकी अन्तिम १ इण्ड रातमें ही नींद टूट जाती है, उसने उसी प्रकार

अध्यास किया है। अध्यासमें बन्धने यह चाहे जिस समय विद्यार्थन पर पाय, पर उसकी नोंद डोक उसी समय टूटती है। अथवा यह व्यक्ति यदि चाहे, कि मैं बल शीघ्र ६ घण्टा रात रहने उठूँगा, तो यह निश्चय है, कि उसकी नोंद डोक उसी समय टूट जायगी। इसमें जानना चाहिये, कि ध्यान या अभिनिवेश अध्यासको अतिप्रमत्त करके प्रभुत्व करनेमें समर्थ है। आहार, विहार, विमर्ग (मलमूत्रत्याग) और अन्यान्य दैहिकक्रिया सभी अध्यास, ध्यान और अभिनिवेशके प्रभावसे हमेशा निर्वाहित होती है। शरीरमें रहते जो सब ध्यान, अभिनिवेश और अध्यास किया जाता है, शरीरस्थान होने पर ये सब ध्यान, अभिनिवेश और अध्यास स स्फारीभावको प्राप्त हो कर जीवको अनुरूप नियमके अधीन रहते और परिवर्तित करते हैं। इन शरीरमें किसी एक विषयका निरन्तर ध्यान करके शरीर परिवर्तित करने पर भी यह कभी १ कभी पुनरुदित होगा ही। उस उदयका पीच अनुष्ठित शाश्वतमन्त्र स स्फार है। जो स स्फार सूक्ष्म शरीरमें रहता है, पीछे उसीके बलसे यह उदयुद्ध होता है। शिवा स स्फारके उदयुद्ध होनेसे स्मरण और प्रत्यभिज्ञा नामका शाश्वत उदय होता है। उसके साथ मोहभाव और भयभीत परिवर्तित होने हैं। इस जग में जो जन्मान्तरीय स स्फार उदयुद्ध होता है, वह उदयुद्ध हृदयेके स्वभाव और प्रकृति हृदयादि नामोंसे परिचित है। मरणकालमें हृदयेके वनित रहता है, किन्तु उस देहका अर्जित स स्फार सूक्ष्मशरीरके अलम्बन पर विद्यमान रहता है, दूया नष्ट नहीं होता। यही कारण है, कि मरणके बाद उस देहका अर्जितमानसम अर्थात् धर्मा धर्मादि उसकी अभिवाय अदम्याको उपस्थापित करता है। मृत्युदण्डना उस देहकी परिचित ममी वस्तुओं को भुला देती है और भविष्यत देह तथा भविष्यत देहका भोग्य एवं भोग्यतापोय भावना विज्ञानमें पर्यवसित करती है।

जाता चाहे जिसमें प्रकाशकी कमी न हो, मरण जातका मरणके उच्छेद है। जिसका प्रकाशका उच्छेद होगा हीनोके भावना मुक्त्यादि दृश्य सस्फारका भोग होनेसे जिस प्रकार पूर्वसंज्ञित जातकी अथवा हीनो है, पूर्वा

भ्यस्त विषय भुला जाता है, उसी प्रकार मृत्युदण्डना भी मुमुक्षुके विद्यमान ममी भावोंको निस्संशयतागर्भे निम्न और अभिन्न भावनाका उच्छाया करती है। जीवने जीवन मर्त्तमें जो सब कर्म ध्यान या अभिनिवेश किया है, मृत्युकालमें उसीके अनुरूप एक नूतनपरिचरित अर्थात् एक नूतन भावना उपस्थापित होती है। ज्ञानमें इसीको भावनामय शरीर बनलाया है। मृत्यु कालमें भावनामय शरीर होता है, इसका अर्थ यह, कि भविष्यमें जो व्यापयोगिमें जन्म लेगा, मरणकालमें उसे 'ध्यातोऽहं' ऐसी भावना उत्पन्न होती है। उच्छेद मरणवन्तना उसके हृदयशरीरके समान शाश्वत वितुम पर भावनामय विज्ञान उत्पन्न करती है। यह भावना विज्ञान या भावनाशरीर स्वप्रशरीरके अनुरूप है। हम लोग जिस प्रकार स्वप्न देखते हैं, उसी प्रकार सृष्ट्येक-च्युत मायदेशी पहले अल्प परजमका स्फुरण सम्झना करता है, पीछे यथाकालमें उसका पादार्थिक शरीर उत्पन्न होता है। ज्ञातमें जन्म और मरणकी जो गुण अतीवकी तरह बनलाया, वह भावनामय शरीर विषयक अर्थात् जन्मका चित्त प्रकार एक गुणको छोड़ कर दूसरे गुणकी पर्यवसित है अथवा अन्य गुण विना पर्यवसित गुणित नहीं छोड़ती है, उसी प्रकार पाय भी अन्य शरीरको विना मरण विषये इन शरीरका स्थान नहीं करता। यह अथ पादार्थिक शरीर नहीं है। परन्तु यह भावनामय शरीर है। पादार्थिक शरीरलाभ ममीके भावमें बद्ध नहीं रहता।

"वीजिनभ्ये प्रपद्यन्त शरीरत्वाय शैविनः।

रघाणुमन्वेऽनुसन्ति यथापर्म यथाधुतम् ॥"

(स्मृति)

भावनामय देहका दूसरा नाम आतिथ्यादिक देह है। आतिथ्यादिक देह थोड़े समय तक रहती है। पीछे पूर्ण प्रकाशे अनुसार पादार्थिक भोगदेह उत्पन्न होने है।

कोर को मायदेह, कोर निरुद्ध, अथवा कोर देह देह पाता है। पुन्यादिषय रहते पुनःशरीर अर्थात् ह्यादि शरीर, पादादिषय रहते निरुद्धशरीर, पादादिषय का बल समान रहते मानवशरीर उत्पन्न होता है। जब सब हृदयशरीर उत्पन्न नहीं होगा, तब तब भावना

मय शरीरमें अर्थात् आतिवाहिक भागदेहमें सुयतु पना भोग करना होगा। यह भोग स्वप्नभोगकी तरह अस्पष्ट है। स्वप्न और भावनामय है। मृत्युकालमें जिस भावकी स्फूर्ति होगी, वह भाव प्रबल हो कर उसे तदनु रूप गति प्रदान करता है। जीवके मुमुक्षु होनेसे लोग उसके काममें निष्णुका नाम इस लिये सुनाते हैं, कि इस समय भी उसके मनका भाव ईश्वरकी ओर जाय। परन्तु इससे कोई फल पानेकी सम्भावना नहीं। चैतन्य प्रति-विम्बित स्वप्नदेह कथित प्रकारसे पाट्कौपिक शरीरमें निम्नल कर पहले आतिवाहिक शरीरमें आकाशस्थित, आलम्बनहीन, वायुभूत और आध्रयशून्य अवस्थाको प्राप्त होती है। पीछे यथाकालमें जन्मग्रहण करती है। जो अत्यन्त पापाचारी हैं वे मरनेके बाद इस पृथ्वी पर आतिवाहिक शरीरमें कुछ दिन रह कर पीछे तम-प्रधान शृङ्खलादि जड सहित ग्रहण करते हैं। जो प्रथि, तपस्वी और धानो हैं, वे देवयानपथसे ऊर्ध्वलोक गामी हो कर धीरे धीरे ब्रह्मलोकमें जा उत्पन्न होते हैं। जो सत्कर्मनिष्ठ हैं वे पितृयानपथसे ऊर्ध्वगामी हो पितृ लोकमें जा कर जन्म लेते हैं। अनन्तर सुखभोगके बाद वे पुनः पितृयानपथसे इहलोकमें उतरते और अपने कर्मानुसार मानशरीर पाते हैं। जो मनुष्य पशुशरीर पाता है, उसे आकाशमें, पृथ्वी पर, पीछे पापिचरसके साथ शस्यादिके मध्य, उसके बाद पाचक्रमें मनुष्य वा अन्य किसी जीवके शरीरमें कुछ दिन रहना पड़ता है। युगशरीरमें प्रवेश करनेसे रसरत्नादि क्रमसे शुरुधानुमें और स्त्रीशरीरमें प्रवेश करनेसे आर्चनरक्तमें अग्रस्थान करता है। अनन्तर यह स्त्रीपुरुषसंयोगके उपलक्ष्यमें गर्भधन्वमें प्रविष्ट हो कर पाट्कौपिक देह पाता है।

जीव पाचके साथ जिस शरीरमें प्रवेश करता है, उस समय उसे उसी शरीरके अनुरूप संस्कार होता है। जो पहले मानवदेहमें था, कर्मकी प्रेरणासे यह यदि बानरयोनिमें उत्पन्न हुआ हो, तो बानरशरीरमें प्रवेश करते ही उसका मानवोचित संस्कार जाता रहता है और यानरोचित संस्कारका मञ्जर होता है।

पुत्रोके संयोगसे जीव गर्भमें प्रविष्ट होता है। पीछे गर्भस्थ देही नवम या दशमासमें अङ्गप्रत्याङ्गादिका

पुष्टि भाग लाभ करके प्रबल प्रसववायु द्वारा धनुसुक् वाणकी तरह योनिछिद्रसे बाहर निकल आता है।

योगशास्त्रमें लिखा है,—अष्टम मासमें जब मनका प्रादुर्भाव होता है, तभीसे ले कर जब तक भूमिष्ठ नहीं होता, तब तब जीव पूर्वजन्मका वृत्तान्त स्मरण और गर्भावासकी कठोर यन्त्रणाका अनुभव करके इंग पाता रहता है। यह घेचारा क्या करे, सुप्त जरायुसे आच्छन्न है, कण्ठ कफपूर्ण है, वायुका पथ निरुद्ध है, इत्यादि कारणों से यह रोदनादि नहीं कर सकता। सुतरा पूर्वानुभूत नाना जन्मकी नाना प्रकारकी यन्त्रणा याद करके अति उद्वेगके साथ उसे सह कर रह जाता है।

“जात स वायुना स्पृष्टो न स्मरति।

पूर्वं जन्ममरण कर्म च शुभाशुभम्॥”

ज्योंही यह भूमिष्ठ होता है, त्योंही सभी बातें भूल जाता है। वाह्यवायु ही उसकी पुरातन स्मृतिकी विनाश कर डालती है। इसी नियमसे जन्म और मृत्यु हुआ करती है।

दर्शनशास्त्रमें जीवका जन्म और मृत्यु विषय इस प्रकार निर्दिष्ट हुआ है। जन्म और जन्मके बाद मृत्यु, यह अशुभ होगा ही। इस प्रकारका जन्म और मृत्यु ही जीवका प्रेत्यभाव है। जब तक मुक्ति नहीं होगी, तब तक पूर्वोक्त प्रकारसे जन्म और मरण-कलेशका भोग करना ही पड़ेगा। मुक्ति होनेसे फिर प्रेत्यभाव नहीं होगा। सभी दर्शनशास्त्रोंमें जिससे यह प्रेत्यभाव अर्थात् जन्ममृत्यु न हो, उसका विषय समझा गया है।

प्रेत्यभाविक (स० त्रि०) प्रेत्यभाव सम्बन्धीय, इहलोक सम्बन्धी।

प्रेत्यन् (स० पु०) प्र इ कनिष् । १ इन्द्र । २ वात, हवा।

प्रेत्यु (स० त्रि०) प्राप्तु मिच्छु प्र आप्-सन्-उ। जो पानेमें इच्छुक हो, जो कोई चीज पानेकी आदिश करता हो।

प्रेम (स० पु० ह्री०) प्रियस्य भाव प्रिय (पृष्वादिभ्य इमनिष्वा। पा ५।१।२२) इति इमनिष् (प्रिविधरेति। पा ५।१।५५) इति प्रादेश, या प्री-सत्पणे मणिन् । १ सौहार्द । पर्याय—प्रेमा, प्रियता, हार्द, स्नेह।

प्रेमके प्रियता, हार्द, स्नेह आदि कतिपय पर्याय

रहने पर भी हमारा स्वरूप निर्णय करना असाध्य है। इसी कारण भारतीय-तन्त्रियोंमें लिखा है—“अतिवेदनीयं ब्रह्मसत्त्वम् ।”

आश्रय प्रेम क्या पदार्थ है उसे वाक्य हास व्यक्तियोंको समझाया नहीं जा सकता है। इसका दृष्टान्त भी उसी भारतीयोंमें लिखा है, “मुक्ताम्बादायन्” अर्थात् निम्न प्रकार कोई मूल व्यक्ति किसी द्रव्यका आत्मादा करने में उमरा बहुत, तित्त और कणाय गुण किन्हींके भी मामने व्यक्त नहीं कर सकता, जैसे यही उसका आत्मादन अनुभव करता है, प्रेम भी उसी प्रकार है, प्रेम भी व्यक्ति भिन्न अन्य कोई भी उमरा स्वरूप नहीं जान सकता। इसी कारण उस सूत्रमें कहा गया है “यथा गोवामगाम्” गोपियोंका श्रीकृष्णके प्रति जो प्यार है, उसीको प्रेम कहते हैं। श्रीमद्भागवतके तृतीय स्कन्धमें लिखा है, कि पहले मत्पथ, पीछे तत्परायण, उसके बाद भागवतवर्धामें प्रयत्न, बादमें भ्रष्टा, पीछे रति अर्थात् भावमति और सबके अन्तमें भक्ति अर्थात् प्रेम होता है।

मोक्ष, महाद, उदय, नारद आदिने शम्भारक रहित भागवतमें जो मन्त्रा है, उसीको प्रेम बतलाया है। यह प्रेम भाषोत्थ और अतिप्रसादोत्थके भेदसे दो प्रकारका है। निरन्तर शान्तदृग् भवत्ययके गेचन द्वारा भाव जब परमोत्कर्षको प्राप्त होता है, तब उन्ने भाषोत्थ प्रेम और हरिके स्वीय सद्गुणोंको ही अतिप्रसादोत्थ प्रेम कहते हैं।

एक दिन श्रीकृष्णो उदयमें कदाप्या—

“तनापान्तपुलिगामा नोपासितमहत्तमम् ।

अनातातपसो मत्सङ्गमामुपासाम् ॥”

(भाग० ११ स्कन्ध )

उस गोपियोंके मुखे पाके लिये वेदाध्यय नहीं किया, शम्भु भी नहीं किया और न कोई मत या लक्षणा ही की, केवल मेरे सङ्गमावसे ही उक्तो मत्ता प्रेमजन्य करके मुखे पा लिया है।

यह अतिप्रसादोत्थ प्रेमके भी निम्न दो भेद हैं, महात्म्य ज्ञानयुक्त और वैशाल (साधुयं) ज्ञानयुक्त। विधि मार्गसे भक्तिकारियोंके प्रेमको महात्म्यज्ञानयुक्त और रागाङ्गुलभित भावार्थके प्रेमकी वैशाल (साधुयं) ज्ञान युक्त कहते हैं।

वैष्णवाचार्योका कहना है—

“धन्यस्वाय नय प्रेमा यन्मोर्मीनति चोसि ।

अन्तर्यामिस्वरूपस्य मुद्रासुतु सुदुर्गा ॥”

जिस धनी व्यक्तिके चित्तमें इस नयी प्रेमका उदय होता है, शास्त्र होने पर भी वे सहसा प्रेमकी परिचायी समझ नहीं सकते। यह प्रेम ज्ञान्त, वाक्य, मरण, यात् नल्य और मधुरके भेदसे पाच प्रकारका है।

शास्त्र प्रेम ।

ज्ञान्तरसका विषय आत्मन्या चतुर्भुजं विभुर्भूति और भाग्यपालम्वन सनकादि ज्ञान्तगण हैं।

महोपनिषद्का ध्वषण, निजगन्धान-सेषण, मुञ्जसस्य मय भगवान्को स्मृति, तत्त्वविचार, ज्ञानात्मिका प्राधान्य, विश्वरूपदर्शन, ज्ञानमकता संसर्ग और संमतिवधगणके साथ उपनिषद्विचार ज्ञान्तरसके उद्दीपन हैं। गामासमें दृष्टि, मयपुत्रकी तरह वेष्टा, चार हाथ स्थान देन कर पीछे पाद्विज्ञेय, ज्ञानमुद्राधारण, हरिकेवोके प्रति हृदय राहित्य, भगवान्के प्रियभाषमें भक्तिकी अव्यता, ससार-क्षय और जीवगुणिके प्रति बहुत साधर, तिरपेक्ष, निर्ममता, तिरहृदयिता और भीन इत्यादि अनुभाव हैं। स्वप्न, स्पेद, रोमाश, स्वमेव, वैषयु, शैव यं और शयु ये शाप सारित्यक भाव हैं। निर्वेद्य, चैषं, ह्यं, मति, स्मृति, उत्सुक, आवेग और पितक आदि इस ज्ञान्तरसमें मञ्जरी भाव हैं। शांतिरति स्थायीभाव है।

वाक्यप्रेम ।

इसे ज्ञान्तरसके प्रीतमनिर्गम बतलाया है। इस रसमें द्विभुज और चतुर्भुज दोनों रूप ही विषयात्मव्यन और हरिकारण साधयान्त्र्यन हैं।

विषयात्मव्यन धोरण सुन्यायान द्विभुज, अत्यध द्विभुज और चतुर्भुज भेदमें तीन प्रकारका है। आश्रयात्मव्यन हरिकारण भी प्रमित, अज्ञावर्षी, विभक्त और मत्पुत्रिके भेदमें पाच प्रकारका है। इन चार प्रकारके दार्शनिक नाम अधिष्टन, आधिष्ठन, पारिष्ट और भुगुण हैं। ज्ञान, ज्ञिष, इत्यादि देवगण अधिष्टन दाम हैं। आधिष्ठन जन्मगण, ज्ञानो और वेधादिभु भेदमें तीन प्रकारका है।

वाणीयताग और शरामाध वास्तव्य शरामाग नर पागत हैं। जो सुक्तिकी इच्छाका परिचय करके

केवल हरिको ही आश्रय किये हुए हैं, वे ही (शौनकादि ऋषि) श्रान्ती दास हैं। जो पहलेने ही भजन चिपयमें आसक्त हैं उन्हे सेगानिष्ठ कहते हैं—चन्द्रध्वज, हरिहर, बहुलाश्व, इक्ष्वाकु, श्रुतदेव और पुण्डरीकादि वे ही सेगानिष्ठदास हैं।

उद्व, दासक, सात्त्विक, श्रुतदेव, शङ्खजित्, नन्द, उपनन्द और भद्र आदि पारिपद हैं। इनके मन्त्रकार्य और सारथ्य कार्यमें नियुक्त रहने पर भी कभी कभी अवसर पा कर ये परिचर्यादि कार्यमें नियुक्त होते हैं।

कौरवोंके मध्य भीम, परीक्षित और विदुरादिकी भी उन पार्षदोंमें गिनती होती है। पारिपदोंमें उद्व शी श्रेष्ठ हैं।

अनुगदास—पुरस्थ और प्रजस्थके भेदसे अनुग दो प्रकारका है—सुरचन्द्र, मण्डन, स्तम्भ और सुस्तम्बादिको पुरस्थ अनुग दास और रत्नक, पत्नक, पत्नी, मधुवत, रसाल, सुविलास, प्रेमकन्द, मरन्दक, आनन्द, चन्द्रहामन, पयोद, यकुल, रमव और शारदको प्रजस्थ अनुगदास कहते हैं।

इस रसमें श्रीकृष्णकी सुरलीङ्गनि, ऋङ्गरय, हास्य युक्तायलोकन, गुणोत्कर्षध्वज, पद्म, पद्मिनी, नूतन मेघ और अङ्गसौरभ उद्दीपन है।

सर्वतोभावमें भगवदाज्ञाका प्रतिपालन, भगवत् परिचर्यामें ईर्ष्याभयता, कृष्णदासके साथ मित्रता और प्रीतिमाल निष्ठता दास्य प्रेमरसका अनुभाव है।

स्वप्न, स्येद, रोमाञ्च, भ्रममेद, चेपशु, चैवर्ण, अश्रु और प्रलय ये आठ सात्त्विकभाव ही इसमें सात्त्विक हैं।

हृष, गर्व, भृति, निर्वेद, विषण्णता, दैन्य, चिन्ता, स्मृति, शङ्का, मति, औत्सुक्य, चपलता, चित्तक, आवेग, लज्जा, जडता, मोह, उन्माद, अर्वाहृष्या, बोध, स्वप्न, व्याधि और मृति ये सब व्यभिचारी भाव हैं। सम्मू म प्रीतिके इसका स्थायीभाव कहते हैं। इस सम्मू म प्रीतिके घृद्धिप्राप्त होनेसे पहले प्रेम, पीछे स्नेह, उसके बाद राग पर्यन्त हुआ करता है। ज्ञान्तरममें स्नेह और राग नहीं होनेके कारण ज्ञान्तरसे दास्यप्रेम श्रेष्ठ है।

यह दास्यप्रेम पुन. अयोग और योगभेदसे दो प्रकारका है। हरिके सङ्गाभावको अयोग कहते हैं। इसमें

हरिके प्रति मन समर्पण और उनके गुणादिका अनुसंधान किया जाता है। फिर इस अयोगके भी दो भेद हैं, उत्कण्ठता और वियोगता। अदृष्टपूर्व हरिकी दर्शनेच्छाको उत्कण्ठता कहते हैं। इसमें समस्त व्यभिचारी-सम्भावना होने पर भी औत्सुक्य, दैन्य, निर्वेद, चिन्ता, चपलता, जडता, उन्माद और मोह इन सब व्यभिचारी-भावकी अधिकता होती है। औत्सुक्यका उदाहरण कर्णाभूतमें इस प्रकार है—

“अमृत्यधन्यानि दिनान्तराणि हरे त्वदालोकनमतरेण ।  
अनाथवधो करुणैकसिंधो हा हत हा हत कथ नयामि ॥”

विल्यमङ्गलने कहा है,—हाय। हाय। हे हरे। हे अनाथवधो। हे करुणसिंधो। बिना आपके दर्शनके किस प्रकार यह अघन्य दिन यापन करूँगा।

हरिके साथ सङ्गलाम करके फिरसे उसके विच्छेद होनेको त्रियोग कहते हैं। इस वियोगके अङ्गमें ताप, दृशता, जागर्या, आलस्यशून्यता, अधैर्य, जडता, व्याधि, उन्माद, मूर्च्छा और मृति ये दश दशाप होती हैं। इनमें से केवल एकका उदाहरण नीचे दिया जाता है—

“दनुजदमनयाते जीवने त्वय्यकस्मात्  
प्रचुरविरहतापैर्ध्वस्तहृत्पङ्कजाया ।

प्रजमभिपरितस्ते दासकासारपङ्कती  
न किल वसतिमार्त्ता कर्तुमिच्छन्ति ह सा ॥”

हे कृष्ण! जीवनस्वरूप तुम जो घृन्दावनसे चले गये हो उससे प्रजभूमिके चतुर्दिकस्थ तुम्हारे दासरूप सरोवर श्रेणीके अकस्मात् प्रवल विरहानल द्वारा हृत्पत्र सूख गये हैं। प्राणरूपी हस आर्त्ता हो कर भव उसमें रहनेको इच्छा नहीं करते।

कृष्णके साथ मिलनकी योग कहते हैं। यह योग सिद्धि, तुष्टि और स्थितिके भेदसे तीन प्रकारका है। उत्कण्ठतावस्थांमें कृष्णप्रातिके सिद्धि, विच्छेदके बाद श्रीकृष्णप्रातिके तुष्टि और श्रीकृष्णके साथ एकद पास की स्थिति कहते हैं।

गौरव-प्रीतिमें भी यही सब भाव हुआ करते हैं। गौरवप्रीतिका विषयात्म्यन दृष्ट्यं है, आश्रयात्म्यन उनके लालनीय सारण, गद, प्रद्युम्न आदि कुमारगण हैं।

सम्भ्रम, प्रीति और गौरवप्रीतिशाली द्वारकाके दासों

में जो निम्न आकाश बुद्धिमें रखा करते हैं, उन्हें वेष्मन्तानवी प्रजापाता है और जो लम्ब है उन्हें सर्वतो मातमें श्रीहृत्पाके साथ स्त्रीय मन्थन्यभूति होती है। प्रकृत्य इन ती क्षात्रवर्णिके ऐश्वर्यवाता नहीं रहने पर भी गोपराज मन्त्र होनेके कारण यह ऐश्वर्यवाता है।

[७६५-श्रेम।

इस मातृपरममें द्विभुजधारी धीरुपाय विषयालय्य और उनके वषम्यगण साध्रपायमन है। प्रकृत्य द्विभुज और वषय स्वास्य द्विभुज हृत्पाकेमेंसे आत्मस्वन को प्रजापाता है। फिर वषम्यगणके भी पुनर्मन्थनी और प्रजमन्थन्याके भेदसे दो भेद हैं। अर्जुन, भीम, द्रौपदी, भीष्मादिप्रभु भादि पुनर्मन्थि मगा है। इन मगाओंमें अर्जुन ही सर्वश्रेष्ठ है।

प्राममन्थि मगा—जो सर्वदा हृत्पाके साथ विहार करते हैं, जितया औरन हृत्पागत है और क्षणमात्र भी विना हृत्पाके नहीं रह सकते, वे ही प्रकृत्य मगा हैं। वे ही मगा मगाओंमें श्रेष्ठ हैं।

मजपवस्यगणना प्रेम,—

“इयं मता श्रद्धसुभाजुभ्या दास्य गताना परदेवनेन ।  
मायाधितानां नरदास्येण मदां विजहन् हृत्पुण्यपुञ्जा ॥”

(भागवत १०४ स्कन्ध)

शुभदेवने वहा,—भगवान् हरि विठ्ठलाके लिये स्वमेवान परम सुखस्वहाय, मनजाके लिये भाग्यवद् परम दीपता और मायाधित जाके लिये मयादाकरूपमें प्रतीयमाना होते हैं। उन भगवानके साथ गोपराजक गण जव इस प्रकार विहार करने लगे, तब यह अत्यन्त भाव्य होता है, कि उन सब बालकोंके पुण्यपुण्य भा।

वषमन्थीके प्रति धीरुपाका प्रेम —

“सहस्रानिपुण्यम भागवतं । प्रविष्ट  
द्वृत्तमघस्रगण कोटरे प्रेक्षामाणा ॥  
स्वात्पुनिरिषयाय हान्तिरक्षामगाः ।  
क्षान्मन्थयसीदन् द्वाविषयादान ॥”

धीरुपाकी वषामने वषा,—हे मातृ! हे माता! सहस्रानिपुण्यम भागवतमें प्रविष्ट होने के लक्ष्यमन्थित वषा अर्जुन की वषामने क्षामय करनेकी वशीत कर रहा है। इस कारण मैं क्षामयत द्वा-

वित हो भयमन्त हो पटा था। इन गीतुत्पाय मगाके भी किन धार भेद देने जाते हैं। यथा—सुहृत्, मगा, प्रियमगा और प्रियनर्ममगा।

सुहृत् मगागण धीरुपाके उमरमें कुछ बड़े और याम्मन्थन्यायुक्त थे। ये अर्जुनदि धारणपूर्वक धीरुपाकी नयदा रक्षा करते थे। सुगन्ध, मरुलीमन्थ, भद्रपदन्, गोमन्थ, वसु, इन्द्रमन्थ, भद्राङ्ग, वीरमन्थ, महापुण, विजय और वलभद्र भादि सुहृत् हैं। इन्हींसे मरुलीमन्थ और वलभद्र श्रेष्ठ हैं।

वलभद्रवा प्रेम, यथा—

“अनितिधिर्गति युवधेमममर्थातयाह  
स्नपयितुमिह सगानावया स्नमिनोऽस्मि ।  
इति सुवल । गिरामं वदिनाय सुपुण्य  
पणिपतिरक्षच्छे माघमन्थीः कयापि ॥”

वलभद्रकी वसु,—सुवल । वषामने जा वही, कि भाग उनकी जन्मतिथि है, इस कारण उनकी जन्मतिथि मगा में उन्हें स्नान करानेके लिये घरमें टारा है, ये वमी भी आज वाजियहृदकी क्षीर न जाय ।

जो उमरमें कुछ वय, दास्यगन्धियुक्त, मगा और प्रेमगाली हैं, वे ही मगा कहलाते हैं।

विनायक, वृषभ, भोजमन्थी, देवमन्थ, वरुधप, मरुत्प, कुसुमापीठ, मणिबध और वरुधम भादि धीरुपाके मगा थे। इन मगाओंमें देवमन्थ ही श्रेष्ठ थे। देवमन्थवा मन्थ प्रेम, यथा —

विभी सद्देव क्षात्रियात्प्राी धीरुपाके वहा,  
‘सुन्दरि! धीरुपा वषतमुद्रामें धीरुपाकी लक्ष्मीपुत्रा पर मन्थ और वाम भागव सयाकी वष भुताकी भावनी छाली पर रण कर गी रहे हैं तथा देवमन्थ नामक मगा प्रेमके साथ उनका पैर दत्ता कर उम प्रियमन्थी सुग पदुता रहे हैं।

सुत्पयम और वेषय मन्थान्धरी मगाओंकी प्रिय मगा करने हैं। (भीमान, सुहाय, वाम, वसुवाम, विद्विन्थी, स्तोत्रहृत्, अङ्गु, मन्थेक, विजयरी, पुन्दीर, विद्वन् और वरुधियु भादि गोप क्षाममन्थ आकाशके प्रिय मगा थे। इन्हींसे धीरुपा ही श्रेष्ठ थे। भीमानका प्रेम, यथा—

श्रीदामने श्रीरुष्णसे कहा, 'ये कठोर ! तू अस्मात् हम लोगोंका परित्याग कर यमुनाके किनारे क्यों चला गया था ? अट्टपवगत यदि फिरसे तुम्हारे दर्शन हुए, तो थायो, हमें दृढ बालिष्ठा करके सन्तुष्ट करो। सब कहता है, क्षण भन्के लिये भी जय तुम अलग हो जाते हो, तो क्या धेनुगुण, क्या सखागुण, क्या गोष्ठ, क्या धमीष्ट छोड़े ही समयमें त्रिपर्यस्त हो जाता है।

त्रिष-नर्मवक्ष ।—सुहृद्, सखा और प्रियसखासे जो श्रेष्ठ, विशेष भावगाली और अतिशय रहस्य कार्यमें नियुक्त हैं, उन्हें त्रिष-नर्मसखा कहते हैं। सुवल, अनुन, गन्धर्व, घमन्तक और उज्ज्वल नामक सखा त्रिष-नर्म-सखा थे। इनमेंसे सुवल और उज्ज्वल ही सर्वप्रधान थे।

श्रीरुष्णाका वयस्, रूप, शृङ्गा, वेणु, शङ्ख, विनोद, नर्म, विक्रम, गुण, प्रेष्ठजन और राजा, देवता तथा भयतारोंकी चेष्टाके अनुकरण प्रभृति स्वरपरसके उद्दीपन हैं। बाहुयुग, कन्दुककीडा, घ तकीडा, स्कन्ध पर आरोहण, स्कन्ध द्वारा बहा, परस्पर यष्टिकीडा, पर्यङ्क, आसन, पर साथ शयन और उपवेशन, परिहास और जलाशयमें विहारदि ये सब रसके अनुभाव हैं। स्तम्भ, स्वेद, रोमाञ्च, खरभेद, अश्रु आदि सात्त्विक भाव हैं। निर्वेद, विषाद, दैन्य, क्लान्ति, श्रम, मद, गर्व, शङ्का, आवेग, उन्माद, अपस्मृति, व्याधि, मोह, मृत्ति, जाड्य, व्रीडा, अग्रहिष्या, स्मृति, वितर्क, चिन्ता, मति, धृति, हर्ष, औत्सुक्य, अमर्ष, असूया, चापल्य, निद्रा, सुमि और वीध ये तीम इस रसके व्यक्ति चारो भाव होते हैं। इनमेंसे मद, हर्ष, गर्व, निद्रा, और धृति अमिलनावस्थामें तथा मृत्ति, क्लम, व्याधि, अप स्मृति और दैन्य मिलन अवस्थामें प्रकाश नहीं पाता। इस सख्यरसमें रति, प्रणय, प्रेम, स्नेह और राग तककी वृद्धि होती है।

वासव्य प्रेम।

इस वात्सल्य-रसमें द्विभुज श्रीरुष्ण विषयावलम्बन और उनके गुरुगण आश्रयालम्बन हैं। श्रीरुष्णा रूप—

“नवकुण्डपदामश्यामल कोमलाङ्ग।

विचललक्ष्मणशृङ्गाकान्तनेत्राङ्गुजान्त ॥

मज्जमुचि विहगन्त पुत्रमालोचयन्ती।

मज्जपतिद्विपितासौत्र प्रसन्नोत्पीडदिग्धा ॥”

Vol. XV 6

नूतन नील कमलसदृश श्यामवर्ण, कोमलाङ्ग, विचलित चूर्ण कुतरूप शृङ्गद्वारा नयन-कमलके प्रान्तभाग आक्रान्त ऐसे श्रीरुष्णको वज्रभूमिमें बिहार करते देख नन्दरोहिणी स्वयं स्तुत दुग्ध द्वारा लिताङ्गी हुई थी। श्यामाङ्ग, रुचिर, सर्वसलक्षणयुक्त, मृदु, प्रियवाक्य, सरल, युद्धिमान, विनयी, मान्यव्यक्तियोंके सम्बन्धमें मानद तथा दाता ये सब इसके विभाव हैं। यशोदा, नन्द, रोहिणी, जिनके पुत्रोंको प्रदाने हर लिया था, ये सब गोपिया, देवनी और उनकी सम्पत्तीगण, कुन्ती, यसुदेव, सान्दीपन मुनि और श्रीरुष्णकी पितृव्यपत्नी आदि आश्रयालम्बन गुरुगण हैं। इनमेंसे यशोदा और नन्द श्रेष्ठ हैं।

मधुप्रेम।

नायक नायिका सम्बन्धीय प्रेमको मधुर प्रेम कहते हैं। श्रीरुष्ण और गोपियोंमें जो प्रेम था, वही प्रेम श्रेष्ठ है। साधारण नायक-नायिकाका जो प्रेम है, वह कामज मोहभाव है। इस मधुर रसमें मुरलीध्वनि आदि उद्दीपन विभाव हैं। कटाक्ष और ईषदास्य प्रभृति अनुभाव हैं। स्तम्भ, स्वेद, रोमाञ्च, खरभेद, कम्प, वैषम्य, अश्रु और प्रलय ये सब सात्त्विकभाव हैं।

२ स्त्री जाति और पुरुषनातिके ऐसे जीर्णका पारस्परिक स्नेह जो बहुधा रूप, गुण, स्वभाव, सात्त्विक्य अपवा कामवासनाके कारण होता है। ३ माया और लोभ। ४ केशवके अनुसार एक अलङ्कार।

प्रेमकर्ता ( स० पु० ) प्रीति करनेवाला, प्रेमी।

प्रेमकलह ( स० पु० ) प्रेमके कारण हुआ विहंगी या झगडा करना।

प्रेमकिशोरदास—युक्तप्रदेशराजानी एक कवि। आप भागवतपुराणके द्वादश स्कन्धका हिन्दी भाषामें अनुवाद कर गये हैं।

प्रेमगर्विता ( स० स्त्री० ) १ साहित्यमें यह नायिका जो अपने पतिके अनुरागका अहङ्कार रखती है। २ वह स्त्री जिसे इस बातका अभिमान हो, कि मेरा पति मुझे बहुत चाहता है।

प्रेमचर्चाद तर्वागीश—बङ्गदेशके एक नानाशास्त्रवित् परिदित और प्रसिद्ध कवि। ख्यातनामा ईश्वरचन्द्र त्रिपासागर आदि अनेक महानुभाव इनके छात्र थे।





मान थे। इन्होंने हिन्दू भाषामें प्रह्लोत्तरखण्डमा अनुवाद किया।

शंभुनारायण (सं० पु०) कोचविहारके एक राता।

कोचविहार देखो।

प्रेमनिधि—आगरा निवासी एक साधु। ये रात दिन कृष्णसेवामें मत्त रहते थे। मुसलमानी अमलमें जब आगरा शहर मुसलमानोंके हाथ आया, तब ये मुसलमानस्पर्शमें जल नष्ट न हो जाय, इस भयसे प्रतिदिन कोपहर रातको जल लानेके लिये यमुना जाते थे। प्रवाद है, कि एक दिन रातको काली घनघटासे आकाश छा गया। रास्ता दिखाई नहीं पडने लगा। अब मन्त्र प्रेमनिधि बड़े सङ्कटमें पड गये। अन्तर्यामी श्रीभगवान् जलाभावसे भक्त कष्ट पावेगा, यह समझ मशालची हो कर उन्हें राह दिखाते गये थे।

आस पासके खो-पुरुष प्रतिदिन सन्ध्या समय श्री भगवत सुननेके लिये उनके घर जाया करते थे। किसी दुष्ट प्यकितने बादशाहसे चुगली खाई, कि प्रेमनिधि पर श्रीकी अपने घरमें बलात्कार करते हैं। यह सुनते ही सध्याउने उन्हें कैद कर रगा। पीछे स्वप्नमें उनके प्रति देवप्रभाय जान कर उन्हें कारामुक्त कर दिया।

(भक्तमाल)

प्रेमनिधिपन्थ—एक विख्यात तार्किक पण्डित। इनके पिताका नाम उमापति था। इन्होंने अन्तर्यामरत्न, धाम्य शीपदानपद्धति, घृतदानपद्धति, सुदर्शना नामक तन्त्रराज टीका, शीपदानरत्न, प्रयोगरत्नाकर, प्रयोगरत्नकोट, प्रयोग रत्न-संस्कार, अद्वैतगुरुत्न, भक्तव्रतसंतोषक, भक्तिरत्नदिग्गी, महादश, लवणदानरत्न, शक्तिमङ्गलतन्त्रटीका, शब्दार्थ चिन्तामणि नामक शारदातिलकटीका और १०५५ ई०में शब्दप्रकाश तथा उसकी टीका लिखी हैं।

प्रेमनिधिगर्मा—मिथिलाके एक प्रसिद्ध स्मार्त्त पण्डित, इन्द्रपतिके पुत्र। इन्होंने धृष्टीप्रमोदय और १३५४ ई०में धर्माधर्मप्रबोधिनी नामक स्मार्त्त ग्रंथ प्रणयन किये हैं।

प्रेमतीर (सं० पु०) प्रेमके कारण आखोंसे निकलनेवाले आसू, प्रेमाम्बु।

प्रेमपातन (सं० श्लो०) प्रेम स्नेहस्य पातन यस्मान्, प्रेम्ना पातन यस्येति वा। १ टोदन, प्रेमके आघेगमें

रोना। २ यह आसू जो प्रेमके कारण आखोंसे निकले। प्रेमपात (सं० पु०) यह जिससे प्रेम किया जाय।

प्रेमपास (सं० श्लो०) प्रेमका फटा या जाल।

प्रेमपुत्तलिका (सं० श्लो०) १ प्यारी स्त्री। २ पत्नी, भार्या।

प्रेमपुष्क (सं० श्लो०) यह रोमाञ्च जो प्रेमके कारण होता है।

प्रेमप्रत्यय (सं० पु०) घोषा आदिके शब्दोंसे जिनसे राग रागिणी निकलती है, प्रेम करना।

प्रेमबन्ध (सं० पु०) प्रेम बन्ध ६-तत्। गाढानुराग, गहरा प्रेम।

प्रेमवत् (सं० श्लो०) प्रेम अस्त्यर्थे मनुष्य, मस्य व। प्रेमयुक्त।

प्रेमभक्ति (सं० श्लो०) प्रेम भक्ति। स्नेहयुक्त श्रीकृष्ण सेवा, पुगणानुसार श्रीकृष्णकी यह भक्ति जो बहुत प्रेमके साथ की जाय।

प्रेमगज—गाथाकोपटीका और रूपूरमझरीटीकाके रचयिता।

प्रेमलक्षणाभक्ति (सं० श्लो०) प्रेमपूर्वक श्रीकृष्णके चरणोंकी भक्ति करना।

प्रेमलेश्या (सं० श्लो०) जैनियोंके अनुसार एक प्रकारकी वृत्ति। इसके अनुसार मनुष्य विद्वान्, दयालु, विवेकी होता और निस्वार्थभावसे प्रेम करता है।

प्रेमगारि (सं० पु०) यह आसू जो प्रेमके कारण निकले, प्रेमाम्बु।

प्रेमा (सं० पु०) १ स्नेह। २ स्नेही। ३ वासव, इन्द्र। ४ वायु। ५ उपजातिरूतका ग्यारहवा भेद।

प्रेमामृत (सं० श्लो०) प्रेम एव अमृत। प्रेमरूप सुधा।

प्रेमादीप (सं० पु०) केशवके अनुसार आक्षेप अलङ्कार का एक भेद। इसमें प्रेमका वर्णन करनेमें ही उसमें प्राधा पडती दिखाई जाती है। (कविप्रिया)

प्रेमामृत (सं० श्लो०) प्रेम एव अमृत। प्रेमरूप सुधा।

प्रेमालाप (सं० पु०) यह वातचीत जो प्रेमपूर्वक हो।

प्रेमालिङ्गन (सं० पु०) १ प्रेमपूर्वक गले लगाना। २ कामशास्त्रके अनुसार नायक और नायिकाका एक विशेष प्रकारका आलिङ्गन।



प्रेस (अ० पु०) १ यह कल जिससे कोई चीज बनाई जा सकती जाय, वैद्य। २ छापनेकी कला। ३ छापानाला। मुद्रापत्र देखो।

प्रेस प्रेस (अ० पु०) यह कानून जिसके द्वारा छापेखानेवालोंके अधिकारों और स्वतन्त्रता आदिका नियन्त्रण होता है। जो छापेखाने ऐसे नियमोंका भंग करते हैं, उन्हें दम्मी कानूनके द्वारा दण्ड दिया जाता है।

प्रेसमैन (अ० पु०) वह जो प्रेस पर कागज छापता हो।

प्रेसिडेंट (अ० पु०) किसी मन्त्रालय या समिति आदिका प्रधान, सभापति।

प्रेसिडेन्सी (स० स्त्री०) १ प्रेसिडेन्टका पद या कार्य, सभापतिकार्य बोहदा। २ वृत्तिय भारतमें शासनकी सुविधाके लिये कुछ निश्चित प्रदेशों या प्रांतोंका किया हुआ विभाग। यह विभाग एक गवर्नर या लाटनी अर्धानतामें होता है। बङ्गाल प्रेसिडेन्सी, मद्रास प्रेसिडेन्सी और बम्बई प्रेसिडेन्सी, ये तीन प्रेसिडेन्सिया इस समय भारतमें हैं।

प्रेय (स० पु०) प्रियका भाव, स्नेह, प्रेम।

प्रेयवत (स० पु०) वह जो प्रियवतके वर्णमें हो।

प्रेय (स० पु०) प्र-इप घन्ट (प्र दूबोड गेयथेपु। पा ६।१।८२) इत्यस्य धार्मिकोक्त्या वृद्धि। १ कलेज, दुग। २ मर्दन। ३ उन्माद, पागलपन। ४ प्रेषण, भेजना। ५ वह शय्य या वाक्य जिसमें किसी प्रकारकी आशा हो।

प्रेय (स० पु०) १ दास, सेवक। २ दासत्व। ३ प्रेष्यका भाव, दासत्व।

प्रोक (स० स्त्री०) प्रकृषण उच्यते स्मेति क। १ कथित, कहा हुआ। (स्त्री०) २ कहा हुआ चचन रहता।

प्रोक्षण (स० स्त्री०) प्र उक्ष सेचने ल्युट्। १ यद्यार्थ पशु हनन। यद्यमें यद्यके पहले बलि पशु पर पानी छिड़क कर तब उसे यद्य करना होता है। २ धाद्रादिमें उचित स स्कार, धाद्र आदिमें होनेवाला एक स स्कार। ३ यद्य, हिंसा। ४ सेचन, पानी छिड़कना। ५ पानीका छौंटा। ६ यियाहकी परिच्छिन नामक रीति।

प्रोक्षणी (स० पु०) १ यद्यका वह पान जिसमें पशु पर

छिड़कनेवाला जग रहता है। २ कुशकी मुद्रिका जो होमादिक मय अनामिसामें पहनी जाती है।

प्रोक्षणीय (स० स्त्री०) प्र उक्ष अनीयर्। प्रोक्षणयोग्य।

प्रोक्षिन (स० स्त्री०) प्र उक्ष-क। १ निहत, मारा हुआ।

२ सित्त, सींचा हुआ। ३ जलका छौंटा मारा हुआ।

४ बलियान मिया हुआ। (पु०) ५ यह मास जो यद्यके लिये स स्हत किया गया हो। ऐसा मास पानेमें किसी प्रकारका दोष नहीं माना जाता।

"भक्षयेन् प्रोषितं मास सट्ट् ब्राह्मणकाम्यया।

इवे नियुक्त श्राद्धे वा नियमे तु विवजयेत् ॥"

(तिथितत्त्व)

आरण्यक मृगादिपशुका प्रोक्षण आवश्यक नहीं है अर्थात् वन्यपशु शय्यहोय होने पर भी उसका मास चाया जा सकता है।

"आरण्या सर्वदैवत्या प्रोक्षिता सर्वशो मृगा।

अगस्त्येन पुरा राजन् मृगया येन पूज्यते ॥"

(तिथितत्त्व)

प्रोक्षितव्य (स० स्त्री०) प्र-उक्ष तज्य। प्रोक्षणयोग्य, जो प्रोक्षणके योग्य हो।

प्रोक्षाम (अ० पु०) १ कार्यक्रम, होनेवाले कार्यों आदिका निश्चित क्रम। २ वह पत्र जिसमें इस प्रकारका कोई क्रम या सूची हो, कार्य क्रम-सूचक पत्र।

प्रोक्ष्यत् (स० अर्थ०) अत्यन्त उच्च।

प्रोक्ष्जासन (स० स्त्री०) प्र-उक्ष जस णिच्-ल्युट्। मारण।

प्रोक्ष्कत (स० स्त्री०) प्र उक्ष-कर्मणि क। त्यक्त, छोड़ा हुआ।

प्रोक्ष्कत (स० स्त्री०) प्र उक्ष-ल्युट्। प्रवर्जन, लोपन, मार्जन।

प्रोटोस्टैण्ट (अ० पु०) ईसाईयोंका एक सम्प्रदाय। इसका आरम्भ यूरोपके १६वें शताब्दीमें उस समय हुआ था जब लुथरने ईसाई धर्मका स स्कार शुरू किया था। इस सम्प्रदायके लोग रोमन कैथोलिक सम्प्रदायवालोंका और साथ ही पोपके प्रबल अधिकारोंका विरोध और मूर्ति-पूजा आदिका निषेध करते हैं। कुछ दिनों तक यह मत गूढ़ बड़ा चढा था। अब भी ईसाई देशोंमें इस सम्प्रदायके लोगोंने स स्का अधिक है।



है। जनसंख्या चौदह हजारसे ऊपर है। यहां जिला मु सिफकी अदालत और दो रुईके कारखाने हैं। अयावा इसके तीन प्राचीन मन्दिर भी देखे जाते हैं। नील ही यहांका प्रधान व्यवसाय है।

प्रोजे (अ० कि०) १ तजवीज करना। २ प्रस्ताव करना।

प्रोजेजल (अ० पु०) प्रस्ताव।

प्रोमाइटर (अ० पु०) स्वामी, मालिक।

प्रोफेसर (अ० पु०) १ किसी विषयका पूर्ण ज्ञाता, भारी पण्डित। २ किसी विश्वविद्यालय आदिना अध्यापक।

प्रोवेशन (अ० पु०) काम करनेकी योग्यताके सम्बन्धमें जाच।

प्रोवेशनरी (अ० वि०) १ योग्यताकी जाचसे सम्बन्ध रखनेवाला। २ जो इस शर्त पर रखा जाय, कि यदि सतौप जनक कार्य करेगा, तो स्थायी रूपमें रख लिया जायगा।

प्रोम—निस्रग्रहके पेशू जिलान्तर्गत एक जिला। यह इरावती नदीकी विस्तीर्ण उपत्यकाभूमि पर अक्षा० १८ १८' से १९ ११' उ० और देशा० ९४ ४१' से ९५ ५३' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २९१५ वर्गमील है। इसके उत्तरमें घघेतु भ्यो, पूर्वमें पेशुयोमा पर्वतमाला, दक्षिणमें हेननादा और धरावती तथा पश्चिममें आराकन गिरिश्रेणी है।

इरावती नदीके उत्तरसे दक्षिणकी ओर बहनेके कारण जिला दो भागोंमें विभक्त हुआ है। दोनों ही भाग घन मालासे समाच्छ्रज है और बीच बीचमें पर्वतमालानि घृत छोटी छोटी झोतखिनीके बहनेसे घहाकी जोमा देखते बन आती है। इन सब नदियोंमेंसे दक्षिण पश्चिममें प्रजा हित ना विन् नामक नदी ही सबसे बड़ी है।

प्राचीनकालमें प्रोमराज्य विशेष समृद्धिशाली था। ग्रह पतिहासिकोंका कहना है, कि गौतम बुद्ध प्रोमराज्य देखने आये और अपना धर्ममत प्रचार कर गये। उन्होंने समुत्पन्न पर गोमय देण कर कहा था, कि एक समय ( १०१ वर्ष बाद ) उस स्थान पर घने-क्षेत्र (श्रीभेत्र) नगर बसाया जायगा और उस महानगरोमें बौद्धधर्म पूर्ण प्रतिष्ठालाम करेगा। आगे चल कर यथार्थमें ऐसा ही हुआ। वर्तमान प्रोम नगरने ३ फीस पूर्व उस महा-

समृद्धिशाली नगरोके ध्वसावशेषके निदर्शन पागोदा आदि आज भी धान्यक्षेत्र और दलदल स्थानोंमें दृष्टि गोचर होते हैं। पतिहासिकोंका कहना है, कि घरे क्षेत्र नगरके चारों किनारे प्रायः २० कोस परिधिभुक्त प्राचीर था जिसमें ३२ बड़े और २३ छोटे दरवाजे थे। २री शताब्दीमें वह नगर श्मशानमें परिणत हो गया।

फार्थेज साहब (Captan C D F. Forbes)ने लिखा है, कि ग्रहके इतिहासानुसार मालूम होता है, कि प्रोम राजवंशने ४४४ ख०पू०से १०७ ई० तक राज्य किया था। उन राजवंशके तृतीय राजाके शासनकालमें भारत इतिहासमें भी दो प्रसिद्ध घटनाए घटीं। एक ३२५ ख०पू०में महावीर अलेकमन्दर कर्तृक भारत आक्रमण और दूसरी सम्राट् अशोकके राज्यशासनके समय अहत मोगगलि पुत्रकी अधिनापन्नतामें ३०८ ख०पू०को तृतीय महाबौद्धमह।

इसके बाद ९०० ख०पू०के निकटवर्ती समयसे ही विभिन्न देशोंकी पतिहासिक घटनाओंके साथ यहांका पतिहासिक युग निर्णीत होता है। उस समय सिहल द्वीपमें बौद्धशास्त्र देश भाषामें लिखे गये। तालपवमें लिखित ग्रहके इतिहासमें घटनाका से प राजाके १७वें वर्षमें सघटित होना लिखा है। वह राजा पहले बौद्ध-मठमें धर्मान्नीचना करते थे। पूर्ववर्ती राजाके कोई सन्तान न रहनेके कारण उन्होंने इस वालकको गोद लिया था। इस राजाका सिंहासनारोहणकाल १०० ख०पू०के किसी समय होगा। ये ही श्रीक्षेत्र-राजवंशके ११वें राजा थे।

उस ते प-राजवंशने प्राय २०२ वर्ष तक घरे क्षेत्रका शासन किया। इसके बाद गृहविघादने राज्य उजाड सा हो गया था। इसी समय आटाकनवासी कन रन लोगोंने उन पर अपना अधिकार जमा लिया। उस समय धु पन्थ राजा थे।

चैदेशिकोंकी आगमनजात्ती सुनने ही राजाके मतोजे थ मुन-द विन् प्रोमके दक्षिण पूर्वी तीह्नु गुनु नामक स्थान को भाग चले। विन्तु कनरनोंने उनका पीछा किया, तब वे इरावती नदी पार कर उत्तर मिन्दून नामक स्थान में जा छिपे। कनरनोंने उन्हे यहांसे घवेया। मर वे



२ वेगू विभागके प्रोम जिलेकी राजधानी और सन्तर । यह इराजती नदीके बाएँ किनारे अक्षा० १८ ४'३०" और देशा० ६५ १३' पू०के मध्य अवस्थित है । पिन सुके उत्तर विख्यात श्वे सान्द्र पागोदा है । प्रवाद है, कि सात थान सोनेके ऊपर एक मरकत वस्तुके मध्य गौतम बुद्धके तीन ढाल हैं, उसीके ऊपर यह मन्दिर बनाया गया है । १८६२ ई०में भीषण अग्निसे यह नगर जिलडुल मरुभीभूत हो गया था ।

ईसा ज०के पहलेसे प्रोमनगर राजधानीरूपमें गण्य होता आ रहा है । य रे-खेत्र ( थ्रीक्षेत्र ) नगरका ध्वसा चशीय आज भी अल्पन्तर भागमें दृष्टिगोचर होता है । १ली शताब्दीके शेषभागमें य रे क्षेत्रके परित्यक्त होनेके बाद प्रोम कुछ समयके लिये आवा और कुछ समयके लिये वेगूके शासनाधीन रहा । फिर कुछ समय तक यह स्वाधीन भी था । इसके बाद भारतके बड़े छोट डल्हौसीने इसे भारत-राज्यकी सीमामें मिला लिया ।

१८७४ ई०में यहा म्युनिसिपलिटो स्थापित हुई है । शहरमें एक म्युनिसिपल हाई स्कूल भी है । यहाका जो अस्पताल है उसका भी खर्च म्युनिसिपलिटो देती है ।

प्रोमिसरोनोट—शामिषरीनोट देखो ।

प्रोमोशन ( अ० पु० ) १ किसी पदाधिकारीका अपने पदसे ऊँचे पद पर नियुक्त किया जाना, तरफकी । २ विद्यार्थीका किसी कक्षामेंसे आगेकी कक्षामें भेजा जाना, दर्जा चढना ।

प्रोभण ( स० ङी० ) प्रहृष्टरूपसे पूरण ।

प्रोणुंनविषु ( स० लि० ) प्र उणुं ष् धाच्छादने सन्-उ । आच्छादनाभिलाषी ।

प्रोणुंनाव ( स० पु० ) सत्रिपात उपरविशेष ।

प्रोहाणित ( स० लि० ) रोगमुक्त ।

प्रोष ( स० पु० ) प्र ष-दाहे भाये घञ् । सन्ताप, बहुत अधिक दुःख या कष्ट ।

प्रोषक ( स० पु० ) महाभारतके अनुसार एक देशका नाम ।

प्रोपित ( स० लि० ) घस-त्, इट्, सम्प्रसारण, प्रठ्ठदूर उचिता । प्रयासगत, जो विदेश गया हो ।

प्रोपितनायक ( स० पु० ) वह जो विदेशमें अपनी पत्नीके विवाहमें विकल हो ।

प्रोपितपति ( स० स्त्री० ) पतिके विदेश जानेमें दुःखित स्त्री । प्रोपितभर्तृका देखो ।

प्रोपितप्रेयसी ( स० स्त्री० ) प्रोपितभर्तृका देवी ।

प्रोपितभर्तृका ( स० स्त्री० ) प्रोपितो विदेशगतो भर्ता यस्या, समासान्तकृप् प्रत्यय । विदेशस्थ पतिम् । जिस स्त्रीका स्वामी विदेशमें रहता है, उसे प्रोपितभर्तृका कहते हैं ।

“नानाकार्यवशाद् यस्या दूरदेशं गतः पति ।

सा मनोभवद् ज्ञात्वा भवेत् प्रोपितभर्तृका ॥”

( सा० ३११८ )

नाना प्रकार कार्यप्रशत जिसका पति दूर देश गया हो, उस कन्दर्पपीडिता नारीको प्रोपितभर्तृका कहते हैं । प्रोपितभर्तृका नारीके लिये ह सना, दुसरे घर जाना, समाजोत्सव देपना, षोडा और शरीरसंस्कार करना वर्जनीय है ।

“हास्यं पर्युद्धे यान समाजोत्सवदर्शनम् ।

क्रोडा शरीरसंस्कार त्यजेत प्रोपितभर्तृका ॥”

( चिन्तामणि )

जिस स्त्रीका पति परदेश गया हो, उसे परपुरुषके साथ आलाप, केशादिका स स्कार और सत्र प्रकारका प्रमोदजनक विषय परित्याग करना चाहिये ।

रसमञ्जरीमें लिखा है, कि प्रोपितभर्तृका स्त्रियोंके दश प्रकारकी अनङ्ग दशा अर्थात् पतिविषयक चेष्टा होती है । यथा—१ पत्यभिलाष, २ पतिचिन्ता, ३ स्मृति, ४ शुषोक्तीर्त्तन, ५ उद्वेग, ६ त्रिलाप, ७ उन्माद, ८ व्याधि, ९ जडता, १० मृत्यु । पतिके विदेश जाने पर पहले उस विषयमें अतिशय अभिलाष होता है, पीछे चिन्ता आदि उपस्थित हो जाती है । यहां तक, कि आदिरमें उसकी मृत्यु भी हो जाया करती है । रसमञ्जरीके मतसे यह प्रोपितभर्तृका नायिका दो प्रकारकी है, प्रोपितभर्तृका और प्रोप्यन्भर्तृका । जिन् स्त्रीका पति विदेश गया हो उसे प्रोपितभर्तृका और जिसका पति जानेवाला हो, उसे प्रोप्यन्भर्तृका कहते हैं ।

प्रोपितभार्यानायक (सं० पु०) प्रोपिता-भार्या यस्य प्रोपित भार्या तादृश नायक कर्माधा० । नायकभेद । जिसकी पत्नी विदेशमें रहती हो, उसे प्रोपितभार्यानायक कहते हैं ।





परकीया और सामान्या ये तीन भेद इसमें लगते हैं । २ वह स्त्री जिसे जवान हुए बहुत दिन हो चुके हों ।

प्रौढा अधोरा ( स० स्त्री० ) वह प्रौढा नायिका जो अपने नायकमें विलासलुक्क चिह्न देखने पर प्रत्यक्ष कोप करे, अधोरा नायिकाका लक्षणसम्पन्न प्रौढा ।

प्रौढाधीरा ( स० स्त्री० ) वह प्रौढा नायिका जो नायकमें विलाससूचक चिह्न देखने पर प्रत्यक्ष कोप न करके व्यंग्यसे कोप प्रकट करे, ताना मार कर क्रोध प्रकट करनेवाली प्रौढा ।

प्रौढाधीराधीरा (स० स्त्री०) वह प्रौढा जिसमें धीराधीराके गुण हों, वह नायिका जो अपने नायकमें पर-स्त्रीगमन के चिह्न देखने पर कुछ प्रत्यक्ष और कुछ व्यंग्यपूर्वक कोप प्रकट करे ।

प्रौढि ( स० स्त्री० ) प्र-वह किन्तु, सम्प्रसारण प्रादुर्हति वृद्धिः । १ नामधेयं, शक्ति । पर्याय—उत्साह, प्रगल्भता, अभियोग, उद्योग, उद्यम, कियदेतिका, अध्वनसाय, ऊन । २ घृष्टता, टिड्ढाई । ३ प्रौढता । ४ धादविवाद ।

प्रौढोक्ति ( स० स्त्री० ) १ अलङ्कारविशेष । इसमें जिसके उत्कर्षका जो हेतु नहीं है, वह हेतु कल्पित किया जाता है । २ गुह्यरचना, किसी बातको मूख बढा कर कहना ।

प्रौण ( स० लि० ) प्र उण् अपनयने अच् । १ निपुण । २ प्रकर्षरूपसे अपसारक ।

प्रौष्ठ ( स० पु० ) प्रष्टु ओष्ठोऽरय वा धाहु० वृद्धि । मत्स्यभेद, सौरी मछली ।

प्रौष्ठपद् ( स० पु० ) प्रौष्ठो भौस्तस्त्वेष पादा यासामिति प्रौष्ठपदा नञ्जलविशेषा, तद्वयुक्ता पीर्णामामी, प्रौष्ठपद ( नञ्जलपुष्प काल । वा ४।२।३ ) इति अण् डोप् । षोडशिनन् पीर्णमाधिति । वा ४।२।२१ ) इति अण् । १ भाद्र मास । इस मासमें जो पराहार रहते हैं, वे समस्त वैश्वयं लाभ करते हैं । २ कुवेरके निधिरक्षकोंमेंसे एकका नाम । (त्रि०) ३ प्रौष्ठपदां मर्धान् उत्तरभाद्रपद तथा पूर्वभाद्र पद लक्ष्मणमें जात ।

प्रौष्ठपदिक ( स० पु० ) भाद्रपद, भादों ।

प्रौष्ठपदी ( स० स्त्री० ) भाद्रमासकी पूर्णिमा ।

प्रौष्ठिक ( स० लि० ) उत्तम ओष्ठयुक्त ।

प्रौह ( स० पु० ) प्र ऊह-क्, प्रदुहेति वृद्धि । प्रकर्षरूपसे ऊह, यथाविधि विवाह ।

प्रुक ( स० पु० ) प्र-कू-क, रस्य ल । खिचोका अधोऽङ्ग-भेद, खिचोका कमरके नीचेका भाग ।

प्रुक्ष (सं० पु०) प्रुक्षते भुक्षते त्रिहारादिभिरिति प्लुक्ष कर्मणि षष् । १ वृक्षविशेष, पाकर नामका वृक्ष । इन्हीं तेलद्रुममें गङ्गजुवि और तामिलमें पोरिशरायो कहते हैं । युहन् प्रुक्षका सस्कृत पर्याय—जटो, परुटो, परुटि, प्रुषा, प्लुश्रा, जटि, कपोतन, क्षीरो, सुपाश्र्व, कमण्डलु, शृङ्गी, अवरोहाशपी, गर्दभाण्ड, कपीतक, दूढप्ररोह, प्लवक, प्रुङ्ग, महावल । छोटे प्रुक्षका पर्याय—सूक्ष्म, सुशीत, शीतवीर्यक, पुण्ड, महावरोह, हृन्वर्षण, पिम्ब्यरि, भिदुर, मङ्गलच्छाय । गुण—कटु, कषाय, शिशिर, रक्तदोष, मूर्च्छा, भ्रम और प्रलापनाशक तथा भावप्रकाशके मतसे योनिदोष, दाह, पित्त, कफ, शोथ और रक्तपित्तनाशक । २ अव्यर्थप्रुक्ष, पीपल । ३ सात कल्पित द्वीपोंमेंसे एक द्वीपका नाम । भागवतमें लिखा है, कि यह जम्बूद्वीपके चारों ओर है और दो लाख योजन विस्तृत है । यहा परु प्रनाण्ड प्रुक्षका वृक्ष है । यह वृक्ष जम्बूद्वीपमें जो जामून का वृक्ष है उसीके समान उन्नत और विस्तृत है । इसी प्रुक्षवृक्षसे इस द्वीपका नामकरण हुआ है । यह वृक्ष हिर पयमय है और इस पर सप्तजिह्वभग्नि सय्य अत्रस्थित हैं । प्रियव्रतके पुत्र इन्द्रजिह्व इस द्वीपके अधिपति माने जाते हैं । ये इस द्वीपको सात वर्षाओंमें विभक्त कर सात वर्षाके नाम पर जिनके नाम थे, उन्हें वे सात वर्ष समपण कर आप तपस्याओं टण गये । उक्त सात वर्षाओंके नाम थे हैं— शिव, धयम, सुमनु, शान्त, क्षेम, अमृत और अमय । उक्त सात वर्षाओंमें मणिभूट, यमभूट, इन्द्रसाम, ज्योतिष्मान्, सुचर्ण, हिरण्यद्वीय और मेघमाला नामके सात पत्र और अरुणा, भ्रमला, आङ्गिरसां, सावित्रा, सुप्रभाता, श्रुत भ्ररा और सत्यम्भरा नामकी सात नदिया हैं । इन सय्य नदियोंका जल स्पर्श करनेसे रज-तमोगुण-रहित हो कर यथाक्रम ब्राह्मणादि चार वर्णाओंके हस, पतङ्ग, ऊर्जायन और सस्याङ्ग नामक चार भ्यक्ति हजार वर्षको परमायुलाम करने हैं । ये लोभ आत्मविद्यालाम करके देवताके मनुज हो अत्रस्थान करते हैं । ( भाग० ५।२० अ० )

विष्णुसुक्तो विना है—अनुसूचित विना प्रसार कथन  
 समुद्र काग पवित्रिय है, उनी प्रसार प्रदर्शन मो  
 कथनसमुद्रकी सेरे हुए है । अनुसूचितक विस्तार नाम  
 कोचक है, पर इसका विस्तार उमने दूता है । प्रदर्शनके  
 कार्यकर्म सेवककर्मके साथ हुए है । इनके नाम पदान्त  
 ये हैं—आत्मन्, निगिर, सुलोदय, आत्मन्, तिय, होनर  
 बंधू भूय । इष्टीके नाम पर कर्मक शोचनय पर,  
 निगिरपर, सुलोदयपर आत्मन्पर, तियपर, होनरपर  
 भीर भूयपर कथनाये । इस शोचने जो ० प्रथम पर्यंत  
 है उरके नाम ये हैं— गोमिद, चन्द्र नाम्, दुनुनि, सोमद,  
 धूमना भीर वीताय । इन सब कथनीय पर्यायकी पर  
 १४ भीर पर्यायके साथ समस्त प्रता सुपरमे रहती है ।  
 इन सब पर्यायके ऊपर पवित्र जनपद बने हुए हैं ।  
 यहाँ समुद्रकी दरमायु योग हनर वर है । यहाँ  
 अविष्णुविष्णुन्यु दुय मदी है, निरपचित्त केवल  
 कात्मन् है । इन सब पर्याय समुद्रगणितो ० प्रथम  
 गर्दिय रहती है । इन सब गर्दियोंके नाम हैं—अनुपत्ता,  
 निष्ठा, विपत्ता, विविधा समु धमुना भीर सुहता ।  
 इन सब पर्यायों में गो भीर पर्यंत भीर मदी है, पर अर  
 धान रहनेके कारण परा उरता उर्येण मदी विधा गाया ।  
 यहाँके योग उर गर्दियोंके उरता उरहाद करके धय  
 भीर पर्याय है। इन सब पर्यायों समुद्रगण  
 की है उरतायु हांकि समानाद पर्याय रहता है ।  
 यहाँ पर्याय विष्णुसुक्तपर धाम प्रसारके धर्म है, यथा—  
 उरपर, गर्दिया, नाम्, अनेक भीर कारिमद । इन  
 सब पर्याय पर्यायों विषय अविष्णु है । यहाँकी जो  
 पर्यायक वृत्, विविध भीर भावा अति है, ये ही समुद्र  
 पर्यायों उरता, अतिर दैव भीर दूद कथनाता है ।  
 अनुसूचितों जो अनुसूचित हैं उर्येके उरता परा उर  
 प्रानुद है । उर्ये समुद्रको उरता प्रानुद नाम परा  
 है । इन दूद पर उर्येके उरता उर्येके उर्येके उर्येके  
 उर्येके है । ( विष्णुः २० अ० )

समुद्रगणित सुक्तपर्यंतके ३१वें अंशपर्यंत इस प्रानुद  
 का विष्णु विवरण उर्येके विवरण है अनेक नामों  
 पर उर्येके विवरण है । १ उर्येके विवरण का उर्येके १५  
 उर्येके उर्येके १५

प्रानुद ( स० वि० ) प्रानुदप्रानुदेकदि मडादिप्रानु उ ।  
 प्रानुदे विष्णुप्रानु, प्रानुके समीर ।  
 प्रानुता ( स० श्री० ) प्रानुत् तन्मन्तेयधमन्मन्ता  
 प्रानु । मन्मन्ती मन्ता पर नाम ।  
 प्रानुताये ( स० श्री० ) प्रानुतायेपर्यंत सीधे मन्मन्तनीरि० ।  
 सीधेमेद, हरियेके अनुसूद पर सीधेका नाम ।  
 प्रानुप्रानु ( स० श्री० ) प्रानुप्रानु मन्मन्तनीरि० ।  
 मन्मन्ती मन्ता उर्यामिष्णुता ।

( सारः ३५० ५० अ० )

प्रानुत्त ( स० पु० ) प्रानुत्तनीरि०, उर्येकायान्तः । १  
 मन्मन्तीरि० प्रानुत्त । २ मन्मन्ताका उर्यामिष्णुता ।  
 प्रानुदि ( स० पु० ) प्रानुदि अदि करके पाणिगुण मन्मन्  
 मन् । यथा—प्रानु, प्रानुमेध, मन्मन्, इमुदी, निष्णु,  
 उर्ये, वर्यु, प्रानुदी ।

प्रानुदेयी ( स० श्री० ) मन्मन्ती मन्ता ।  
 प्रानुदेयान्तः ( स० श्री० ) मन्मन्तपर्यन्त मन्मन् अन्ता  
 मन्मन्तः । महाप्रानुके मन्मन्त पर उर्येकाका नाम  
 उर्येके मन्मन्ती मन्ता विष्णुकी है ।

प्रानु ( स० पु० ) प्रानुदे, पर उर्येके अतिर नाम ।  
 प्रानु ( स० श्री० ) प्रानुदे इति मन्मन् । १ मन्मन्मन्तः,  
 मन्मन्ती मन्ता । २ मन्मन्ती मन्ता । ३ मन्मन्तः पर  
 मन्मन्ती मन्मन्तः नाम । ४ मन्मन्, बाङ् । ५  
 मन्मन्, मन्मन्मन्मन् । ६ मन्मन् । ७ मन्, मन्मन् ।  
 ८ मन्मन्, मन्मन् । ९ मन्मन्, मन्मन् । १० मन्मन्  
 मन्मन् । ११ मन्मन्, पर मन्मन्ती मन्मन्ती मन्ता । १२  
 मन्मन्, मन्मन्ती मन्मन्ती मन्मन्ती मन्ता । १३ मन्मन्, उर्येके उर्येके ।  
 १४ मन्मन्ती मन्मन्, मन्मन् । १५ मन्मन्तः मन्मन्ती । १६ मन्मन्,  
 मन्मन् । १७ मन्मन्ती, मन्मन्, मन्मन् मन्ता । १८  
 मन्मन् मन्मन् । १९ मन्मन्, मन्मन् । २० मन्मन्, मन्मन्ती  
 मन्मन्ती मन्मन्ती मन्ता । २१ मन्मन्मन्, मन्मन्ती । २२  
 मन्मन्ती, पर मन्मन्ती मन्मन्ती । २३ मन्मन् मन्मन्ती ।  
 २४ मन्मन्ती मन्मन्ती मन्मन्ती मन्ता । २५ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 २६ मन्मन्, मन्मन्ती । २७ मन्मन्, मन्मन्ती । २८ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 २९ मन्मन्, मन्मन्ती । ३० मन्मन्, मन्मन्ती । ३१ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ३२ मन्मन्, मन्मन्ती । ३३ मन्मन्, मन्मन्ती । ३४ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ३५ मन्मन्, मन्मन्ती । ३६ मन्मन्, मन्मन्ती । ३७ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ३८ मन्मन्, मन्मन्ती । ३९ मन्मन्, मन्मन्ती । ४० मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ४१ मन्मन्, मन्मन्ती । ४२ मन्मन्, मन्मन्ती । ४३ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ४४ मन्मन्, मन्मन्ती । ४५ मन्मन्, मन्मन्ती । ४६ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ४७ मन्मन्, मन्मन्ती । ४८ मन्मन्, मन्मन्ती । ४९ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ५० मन्मन्, मन्मन्ती । ५१ मन्मन्, मन्मन्ती । ५२ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ५३ मन्मन्, मन्मन्ती । ५४ मन्मन्, मन्मन्ती । ५५ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ५६ मन्मन्, मन्मन्ती । ५७ मन्मन्, मन्मन्ती । ५८ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ५९ मन्मन्, मन्मन्ती । ६० मन्मन्, मन्मन्ती । ६१ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ६२ मन्मन्, मन्मन्ती । ६३ मन्मन्, मन्मन्ती । ६४ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ६५ मन्मन्, मन्मन्ती । ६६ मन्मन्, मन्मन्ती । ६७ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ६८ मन्मन्, मन्मन्ती । ६९ मन्मन्, मन्मन्ती । ७० मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ७१ मन्मन्, मन्मन्ती । ७२ मन्मन्, मन्मन्ती । ७३ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ७४ मन्मन्, मन्मन्ती । ७५ मन्मन्, मन्मन्ती । ७६ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ७७ मन्मन्, मन्मन्ती । ७८ मन्मन्, मन्मन्ती । ७९ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ८० मन्मन्, मन्मन्ती । ८१ मन्मन्, मन्मन्ती । ८२ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ८३ मन्मन्, मन्मन्ती । ८४ मन्मन्, मन्मन्ती । ८५ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ८६ मन्मन्, मन्मन्ती । ८७ मन्मन्, मन्मन्ती । ८८ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ८९ मन्मन्, मन्मन्ती । ९० मन्मन्, मन्मन्ती । ९१ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ९२ मन्मन्, मन्मन्ती । ९३ मन्मन्, मन्मन्ती । ९४ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ९५ मन्मन्, मन्मन्ती । ९६ मन्मन्, मन्मन्ती । ९७ मन्मन्, मन्मन्ती ।  
 ९८ मन्मन्, मन्मन्ती । ९९ मन्मन्, मन्मन्ती । १०० मन्मन्, मन्मन्ती ।

कारण्ड्य, धरु, मौञ्ज, सरारिका, नन्दीमुष्ठी, वादस्य और चलाकादि जलचर पक्षियोंको प्लव कहते हैं। ये सब जलमें प्लवन अर्थात् तैरते हैं, इसीसे इनका प्लव नाम पड़ा है। इनके मासका गुण—पित्तनाशक, स्निग्ध, मधुर, गुरु, शीतल, वातश्लेष्मनाशक, बल और शुक्रवर्द्धक।

सुश्रुतके मतसे ह स, मारस, क्रीञ्ज, चक्रमाक, कुण्ड, कादस्य, कारण्ड्य, जीवजावक, धक, बलाका, पुण्डरीक, प्लव, शरीरमुष, नन्दीमुष्ठी, मद्गु, उत्कीण, काचाक्ष, महिकाक्ष, शुक्लाक्ष, पुष्कशायो, काकोनाल, काम्बु, कुक्कुटका, मेघराज और श्वेतचरण प्रभृति पक्षी प्लव कहलाते हैं। ये सब जलमें उडलते कूदते और तैरते हैं, इसीसे यह नाम पड़ा है। इस प्रकारके पक्षी सघात चारी होते अर्थात् दल बाध कर चरते निकलते हैं। इनके मासका गुण—रकपित्तनाशक, शीतल, स्निग्ध, वृष्य, वायुदमनकारक, मलमूत्रका वर्द्धक, रस और पाकमें मधुर माना गया है। ( त्रि० ) ३२ तैरता हुआ। ३३ कुशता हुआ। ३४ क्षणम गुर।

ध्रुव ( स० पु० ) प्लवते इवेति प्लु भच्, तत स्वार्थे सञ्जाया धा कन् । १ अङ्ग धारादि पर नत्सक, तलवारकी धार पर नाच करनेवाला पुरुष। सञ्जल पर्याय—कैलक, कैरुल, ननु, फेलिकोप, कलायन । २ चण्डाल। ३ सत-रणीपजीवी, वह जो तैर कर अपना गुनारा चलाता हो। ४ मँक, मँडक। ५ प्लक्ष, पाकर। ( त्रि० ) ६ तैरनेवाला, पैराक।

प्लवग ( स० पु० ) प्लवेन प्लुतगत्या गच्छतीति गम (अभेदस्यि इक्षवे) । पा १।२।१०१ इति य । १ बन्दर। २ मेक, मँडक। ३ सूर्यसारथि। ४ प्लवपक्षी, जल पक्षी। ५ शिरीषरक्ष, सिरसका पेड़। ६ मृग, हरिण। ( त्रि० ) ७ कूदनेवाला, उछलनेवाला। ८ तैरनेवाला।

प्लवगति ( सं० पु० ) प्लवेन गतिर्यस्य । १ मेक, मँडक। ( स्त्री० ) प्लवस्य मेकस्य गति । २ मेकादिनी गति, मँडक भाविकी चाल। ३ प्लुतगति, कूद कूद कर जानेकी चाल।

प्लवङ्ग ( सं० पु० ) प्लवेन प्लुतगत्या गच्छतीति गम ( गमथ ) पा ३।२।१७ इति वच् 'यथ द्विधा घाष्य' इति वित् द्वित्यात् डेलोपः मुमागम । १ बानर, बन्दर। २

मृग, हिरन। ३ प्लक्ष, पाकर। ४ साठ सवत्सरोमें इकतालीसवा सवत्सर।

प्लवङ्गम ( सं० पु० ) प्लवेन गच्छतीति गम ( गमथ ) पा ३।२।१७ १ मेक, मँडक। २ बानर, बन्दर। ३ एक छन्द। इसके प्रत्येक पादमें ८।१३के विराममें १ मात्राप होती है। आदिका वर्ण गुरु और अन्तमें १ जगण और १ गुरु होता है। ( त्रि० ) ४ प्लुतगतियुक्त, कूद कूद कर चलनेवाला।

प्लवज ( सं० पु० ) १ उछलना, कूदना। २ सन्तरण, तैरना। ३ प्रवण, उतार।

प्लवर्ग ( सं० पु० ) १ अग्नि, आग। २ जलपक्षी। प्लववत् ( सं० त्रि० ) प्लव मतुप् मस्य घ। प्लवयुक्त। प्लविक ( सं० पु० ) प्लवेन तरति टन्। पवद्वारा तरण कारी, जो वेड़ेके सहारे तैरता हो।

प्लविता ( सं० त्रि० ) प्लव-न्च्। प्लव द्वारा तरणकारी, वेड़े द्वारा तैरनेवाला, तैराक।

प्लवेट ( अ० पु० ) मेस्मरेज्म पर विश्वास रखनेवालोंके कामकी एक छोटी तपती। इसका आकार पान सा होता है। इसके विस्तृत भागके नीचे दो पाये मट्टे हुए होते हैं। इन पायोंके नीचे छोटे छोटे पहिए सलन होते हैं। उस छेदमें एक पेंसिल लगा दी जाती है। कहते हैं, कि जब एक या दो मनुष्य उस तपती पर धीरे धीरे अपनी उँगलिया रखते हैं, तब वह स्वसकने लगती है और उसमें लगी हुई पेंसिलसे लफ़ीरे, अक्षर, शब्द और वाक्य बनते हैं। उन्हीं प्रश्नोंसे लोग अपने प्रश्नोंका उत्तर निकाला करते हैं अथवा गुप्त भेदों का पता लगाया करते हैं। यह १८५५ ई०में आविर्गत हुआ था और इसके सम्बन्धमें कुछ दिनों तक लोगोमें बहुतसे झूठे विश्वास थे।

प्लक्ष ( सं० स्त्री० ) प्लक्षस्य फल ( प्लक्षदिभ्याऽण् । पा १।३।१६४ ) इत्यण्निधानसामर्थ्यात् तस्य फले न लुक् । १ प्लक्ष वृक्षका फल, पायारका फल। २ प्लक्षका धिक्कार। ३ प्लक्ष समूह। ४ प्लक्षका भाव। ५ प्लक्षका हितकर। ( त्रि० ) ६ प्लक्ष सम्बन्धी।

प्लक्षक ( सं० पु० ) प्लक्षभव, प्लक्षका गोत्रापत्य। प्लक्षायन ( सं० पु० ) प्लक्षिके गोत्रमें उत्पन्न।

विष्णुपुराणमें लिखा है,—जम्बूद्वीप जिस प्रकार लज्जण-  
मसुद्दु हाटा परिच्छेदित है, उसी प्रकार प्लक्षद्वीप भी  
लज्जणमसुद्दुको घेरे हुए है। जम्बूद्वीपका विस्तार लाख  
योजन है, पर इसका विस्तार उससे दूना है। प्लक्षद्वीपके  
अधिपति मेधातिथिके सात पुत्र हैं। इनके नाम यथाक्रम  
ये हैं—शान्तमय, शिशिर, सुलोदय, आनन्द, शिव, क्षेमक  
और ध्रुव। इन्हींके नाम पर क्रमशः शांतमय वर्ष,  
शिशिरवर्ष, सुलोदयवर्ष, आनन्दवर्ष, शिववर्ष, क्षेमकवर्ष  
और ध्रुववर्ष कहलाये। इस द्वीपमें जो ७ प्रधान पर्वत  
हैं उनके नाम ये हैं—गोमेद, चन्द्र, नारद, हुन्दुभि, सोमक,  
सुमता और वैभ्राज। इन सब रमणीय वर्षाचलों पर  
देव और गन्धर्वाँके साथ समस्त प्रजा सुखसे रहती हैं।  
इन सब पर्वतोंके ऊपर पवित्र जनपद बसे हुए हैं।  
यहाँके मनुष्योंको परमायु पाँच हजार वर्ष हैं। यहाँ  
आधिप्याधिजनित दुःख नहीं है, निरपच्छिन्न फेवल  
आनन्द है। इन सब उर्ध्वमें समुद्रगामिनो ७ प्रधान  
नदिया बहती हैं। इन सब नदियोंके नाम हैं—अनुतप्ता,  
शिन्गी, विपागा, विद्रिवा मसु, अमृता और सुकृता।  
इन सब वर्षांमें यों तो अनेक पर्वत और नदी हैं, पर अप्र  
धान रहनेके कारण यहाँ उनका उल्लेख नहीं किया गया।  
यहाँके लोग उक्त नदियोंके जलका व्यवहार करके धन्य  
और पयित हो गये हैं। इन स्थात स्थानोंमें युगावस्था  
मही है, त्रेतायुग हमेशा समभावमें वर्तमान रहता है।  
यहाँ वर्षांश्रम विभागानुसार पाच प्रकारके धर्म हैं, यथा—  
श्राध्वर्य, अहिंसा, सत्य, अस्तेय और अपरिग्रह। इन  
सब वर्षांमें चातुर्वर्ष नियम प्रतिष्ठित हैं। यहाँको जो  
वार्त्तक, पुर, विविश और भात्री जाति हैं, ये ही मृत्यु  
लोकमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र पहलाती हैं।  
जम्बूद्वीपमें जो जम्बूद्वीप है उसीके जैसा यहाँ एक महान्  
प्लक्षद्वीप है। उसी प्लक्षद्वीपमें इसका प्लक्षद्वीप नाम पड़ा  
है। इन दृष्ट पर जगत्स्रष्टा भगवान् विष्णु लोमोत्तरे पूजित  
होते हैं। (विष्णुपुरा २१४ अ०)

धूमपुत्राणके भुवनकोषके ४६१ अध्यायमें इस प्लक्षद्वीप  
का विरचन विवरण लिखा है, विस्तार हो जानेके भयसे  
यहाँ मही गिगा गया। ५ बड़ी गिरद्वी या दरवाजा। ५  
एक तीर्थका नाम।

प्लक्षकोय (स० त्रि०) प्लक्षस्याद्वरदेशादि नडादित्वात् छ।  
प्लक्षके निकटउत्ती, प्लक्षके समीप।  
प्लक्षजाता (स० स्त्री०) प्लक्षात् तत्समीपस्थप्रसवणात्  
जाता। सरस्वती नदीका एक नाम।  
प्लक्षतीर्थ (स० स्त्री०) प्लक्षसमीपस्थ तीर्थं मध्यपवलोपि०।  
तीर्थमेद, हरिचक्रके अनुसार एक तीर्थका नाम।  
प्लक्षप्रकरण (स० स्त्री०) प्लक्षस्य समीपस्थ प्रकरणं।  
सरस्वती नदीका उत्पत्तिस्थान।

(भारत शश्वप० ५० अ०)

प्लक्षराज (स० पु०) प्लक्षार्णा राजा, ट्वस्समासान्तः। १  
सोमतीर्थमित्यत प्लक्षवृक्ष। २ सरस्वतीका उत्पत्तिस्थान।  
प्लक्ष्वादि (स० पु०) प्लक्ष आदि करके पाणिन्युक्त शब्द  
गण। यथा—प्लक्ष, ग्यप्रोध, अभ्यत्थ, इगुदी, शिम्बू,  
रथ, कक्षतु, वृहती।

प्लक्षादेवी (स० स्त्री०) सरस्वती नदी।  
प्लक्षवतरण (स० स्त्री०) अत्रतरत्यस्मात् अत्रन् अथा  
दाने ल्युट्। महाभारतके अनुसार एक स्थानका नाम  
जहासे सरस्वती नदी निकलती है।

प्लति (स० पु०) म्रपिमेद, एक वैदिक ऋषिका नाम।

प्लय (स० स्त्री०) प्लवते इति प्लु अच्। १ कैयर्त्तोमुस्तक,  
फेजटी मोथा। २ नागरमोथा। ३ गन्धतुण, एक  
प्रकारकी सुगन्धित घास। ४ प्लवन, बाढ। ५  
प्लुतग, प्लुतगतियुक्त। ६ वेडा। ७ मेक, मैदक।  
८ अवि, भेडा। ९ श्वपच, चण्डाल। १० कपि,  
बन्धु। ११ जलकाक, एक जलकोभा नामका पक्षी। १२  
पुलक, मकरतैलुभा नामका पुत्र। १३ प्रण, उतार, डाल।  
१४ पर्कटीद्रुम, पाकर। १५ कारण्डप पक्षी। १६ शब्द,  
आवाज। १७ प्रतिगति, लौटना, घास माना। १८  
प्रेरण, भेजना। १९ जल, दुश्मन। २० पलन, मछली  
पकड़नेका काठका टापा। २१ जलकुशकुट, जलमुर्गा। २२  
पकथिरोय, एक प्रकारका बगला। २३ साड संवत्सरमें  
मे वै तीसवा स वत्सर। २४ उडल कर या उड कर  
जानेजाले पक्षी। २५ स्नान, नहाना। २६ प्लवन, तैरना।  
२७ एक प्रकारका छन्द। २८ गज, हाथी। २९ गोषाल  
परुष। ३० अण, जनाज। ३१ जलचर पक्षिमान, जल  
तेरनेजाले चिडिया। भावप्रकाशके मतसे इस, साक,

कारण्डव, वक, क्रीड, सरारिका, नन्दीमुषी, वादस्य और बलाकादि जलचर पक्षियोंको प्लव कहते हैं। ये सब जलमें प्लवन अर्थात् तैरते हैं, इसीसे इनका प्लव नाम पडा है। इनके मासका गुण—पित्तनाशक, स्निग्ध, मधुर, गुद, शीतल, वातप्लेथनाशक, बल और शुक्लवर्द्धक।

सुश्रुतके मतसे ह स, मारस, क्रीड, चक्रवार, कुण्ड, कदम्ब, कारण्डव, जीवजीवक, वक, बलाका, पुण्डरीक, प्लव, शरीरमुष, नन्दीमुख, मद्गु, उत्क्रोश, काचाक्ष, महिकाक्ष, शुक्लाक्ष, पुष्कशायो, फाकोनाल, फाम्बु, कुङ्कुटका, मेघराव और श्वेतचरण प्रभृति पक्षी प्लव कहलाते हैं। ये सब जलमें उछलते कूदते और तैरते हैं, इसीसे यह नाम पडा है। इस प्रकारके पक्षी सघात चारी होते अर्थात् दल बाध कर चरने निकलते हैं। इनके मासका गुण—रक्तपित्तनाशक, शीतल, स्निग्ध, घृण, वायुदमनकारी, मलमूलका वर्द्धक, रस और पाकमें मधुर माना गया है। (त्रि०) ३२ तैरता हुआ। ३३ कुङ्कुटा हुआ। ३४ क्षणभ गुर।

प्लवक (स० पु०) प्लवते इवेति प्लुअच्, ततः स्वार्थे सहाया या कन्। १ अङ्ग धारावि पर नक्षत्र, तलवारकी धार पर नाच करनेवाला पुरुष। संस्कृत पर्याय—केलक, केकर, नत्तु, फेलिकोप, फनायन। २ चण्डाल। ३ सत रणोपजीवी, वह जो तैर कर अपना गुजारा चलाता हो। ४ मँक, मँडक। ५ प्लक्ष, पाकर। (त्रि०) ६ तैरनेवाला, पैरक।

प्लवग (स० पु०) प्लवेन प्लुतगत्या गच्छतीति गम- (अथेषवि इशवे। पा १।२।१०२) इति ड। १ बन्दर। २ मेक, मँडक। ३ सूर्यसारथि। ४ प्लवपक्षी, जल पक्षी। ५ शिरीषरक्ष, सिरसका पेड़। ६ मृग, हरिण। (त्रि०) ७ कूदनेवाला, उछलनेवाला। ८ तैरनेवाला।

प्लवगति (स० पु०) प्लवेन गतिर्वस्य। १ मेक, मँडक। (खी०) प्लवस्य मेकस्य गति। २ मेकाविकी गति, मँडक आदिकी चाल। ३ प्लुतगति, कूद कूद कर जानेकी चाल।

प्लवङ्ग (स० पु०) प्लवेन प्लुतगत्या गच्छतीति गम (गमथ। पा ३।२।३७) इति गन् 'अद्य द्विद्वा वाच्य' इति द्विः द्वित्वात् टेलोपः सुमागम। १ बानर, बन्दर। २

मृग, हिरन। ३ प्लक्ष, पाकर। ४ साठ सवत्सरोमें इफतालीमना सवत्सर।

प्लवङ्गम (स० पु०) प्लवेन गच्छतीति गम (गमथ। पा ३।२।३७) १ मेक, मँडक। २ बानर, बन्दर। ३ एक छन्द। इसके प्रत्येक पादमें ८।१३के विराममें १ मात्राप होता है। आदिका वर्ण गुण और अन्तमें १ जगण और १ गुण होता है। (त्रि०) ४ प्लुतगतियुक्त, कूद कूद कर चलनेवाला।

प्लवन (सं० पु०) १ उछलना, कूदना। २ सन्तरण, तैरना। ३ प्रवण, उतार।

प्लवर्ग (स० पु०) १ अग्नि, आग। २ जलपक्षी।

प्लववत् (स० त्रि०) प्लव मत्पु-मस्य व। प्लवयुक्त।

प्लविक (स० पु०) प्लवेन तरति डन्। पवद्दारा तरण कारी, जो वेह के सहारे तैरता हो।

प्लवित (स० त्रि०) प्लव-मृच्। प्लव द्वारा तरणकारी, वेह द्वारा तैरनेवाला, तैरक।

प्लवेत् (अ० पु०) मेस्मेरेजम पर विश्वास रखनेवालोंके कामकी एक छोटी तरती। इसका आकार पान सा होता है। इसके विस्तृत भागके नीचे दो पाये मडे हुए होते हैं। इन पायोंके नीचे छोटे छोटे पहिए सलग होते हैं। उस छेदमें एक पेंसिल लगा दी जाती है। कहते हैं, कि जब एक या दो मनुष्य उस तरती पर धीरे धीरे अपनी उँगलिया रखते हैं, तब वह बसकने लगती है और उसमें लगी हुई पेंसिलसे लकीरे, अक्षर, शब्द और वाक्य बनते हैं। उन्हीं प्रदनोंसे लोग अपने प्रदनोंका उत्तर निकाला करते हैं अथवा गुप्त भेदों का पता लगाया करते हैं। यह १८५५ ई०में आविष्कृत हुआ था और इसके सम्बन्धमें कुछ दिनों तक लोगोमें बहुतसे मूठे विश्वास थे।

प्लक्ष (स० त्रि०) प्लक्षस्य फल (प्लक्षदिभ्योऽच्। पा १।३।१४) इत्यणविधानसामर्थ्यात् तस्य फले न लुक्। १ प्लक्ष वृक्षका फल, पापरका फल। २ प्लक्षका विकार। ३ प्लक्ष समूह। ४ प्लक्षना भाव। ५ प्लक्षका हितकर। (त्रि०) ६ प्लक्ष सम्बन्धी।

प्लक्षिक (स० पु०) प्लक्षमत्र, प्लक्षका गोतापत्य।

प्लक्षायन (स० पु०) प्लक्षिके गोतमें उत्पन्न।

प्लाटि ( स० पु० ) : प्लूविका गोतापत्य । ( री० ) २ प्लाक्षी ।

प्लाट ( स० पु० ) : इमारत बनाने या रैनी आदि करनेके लिये जमीनका टुकड़ा । २ पडयन्त्र, साजिग । ३ उपन्यास, नाटक या काव्य आदिको उम्नु या मुख्य कथा-भाग, उस्तु । ४ इमारत बनानेका नकशा । ५ कोई कार्य करनेका निश्चित किया हुआ ढग, मनस्वा ।

प्लाटफार्म ( हि० पु० ) : प्लेटफार्म देखे ।

प्लायोगि ( स० पु० ) : प्रयोगनामन रास पुत्र इन् वैदे रम्य ल । प्रयोग नामय राजाका पुत्र ।

प्लाज ( स० पु० ) : परिपूर्णता । २ गोला, डुक्की ।

प्लावगा ( स० पु० ) : मर्फट, पन्वर ।

प्लावन ( स० स्त्री० ) : प्लु गिक्-प्लुट् । १ द्रवद्रव्यका ऊर्ध्वप्रापण, तरल पदार्थको ऊपर फेंकना । २ मज्जन, गूथ अचूरी तरह धोना, धोर । ३ बन्धा, बाढ । ४ सन्तरण, नैरता ।

प्लावित ( स० पु० ) : प्लु गिक्-त् । जो जलमें डूब गया हो, पानीमें डूबा हुआ ।

प्लाथ ( स० त्रि० ) : प्लु प्यत् । जलमें डूबानेके योग्य, जो जलमें डूबाया जाय ।

प्लाशि ( स० स्त्री० ) : प्रशयेंण अग्नाति भुट्केऽनया प्र अद् करणे इ, वेदे रस्य ल । शिशुमूलरूप नाडी, पुरुषके मुखेन्द्रियको जटके पासको नाडी ।

प्लाशुव ( स० त्रि० ) : प्ररुयेंण आशु कापति कै-क, वेदे रस्य ल । प्रकर्षरूपसे आशु पचमान, जो शीम पक जाये ।

प्लाशुचिन् ( स० अर्थ० ) : शीम, जन्दी ।

प्लास्टर ( अ० पु० ) : १ एक द्राक्षुटी औषध । यह औषध शरीरके किसी रोग शूल पर उसे अच्छा करनेके लिये लगाइ जाती है । २ इतें आदिकी दीवारों पर लगानेके लिये सुगुं चूने आदिका गाढा लेप, पलस्तर ।

प्लास्टर आफ् पेरिस ( अ० पु० ) : एक प्रकारको टोस और कड़ा अङ्गुरेकी मसाला । यह धातु, चीनी, पत्थर और शीसे आदिके पदार्थोंको जोड़ने और मूर्तियों आदि बनानेके काममें आता है । जलमें मिला कर किसी स्थान

पर लगाते ही यह दृढतापूर्वक बैठ जाता और फैल कर मन्त्रियों आदिको भरने लगता है ।

प्लिनि—जगद्विख्यात रोमक पण्डित । इनका पूरा नाम था कायस प्लिनिअस सिकरुडम ( Caius Plinius Scandus ) । इनका अभ्युदय होने पर प्लिनि चक्षुका मुल उज्ज्वल हुआ था । जनसंधारण इन्हें 'दि पल्टर' कहा करते थे । (१) यौवनकालमें इन्होंने युद्धविद्यामें पारदर्शिता प्राप्त की । इसके बाद शकुनशास्त्र पढ़नेके लिये वे विद्यालय ( college of augurs ) में भर्ती हुए जर्मनयुद्धका इतिहास शेष कर इन्होंने धर्मशास्त्र ( Jurisprudence ) का अभ्यास किया था । सम्राट् मेसपितिसियनके आदेशसे वे स्पेन-राज्यके प्रतिनिधि नियुक्त हुए । वहा रहते समय वे दिनको तो राजकार्य चलाते और रातको पाठान्यास करते थे । उनका स्पेन शासन साधुता और निरपेक्षतासे पूर्ण था । एक दिन नौनेनापति रूपमें वे नेपलस् उपसागरतटों मिलेनियम् नगरके सामने जहाज पर क्लबल समेत ठहरे हुए थे । इसी समय मिसुभियस् पर्वतसे इन्होंने मेघघट देखा । अथ वे इनका कारण जाननेके लिये बड़े उत्सुक हुए और इसी उद्देश्यसे समुद्रकी राहसे उक्त पर्वत पर पहुँचे । वहा आते ही दग्ध गन्धककी गन्धसे इनकी नास रुक गई । आपिर इनका कुल रहस्य इनकी समझमें आ गया । इन्होंने जिनकी पुस्तके बनाई हैं उनमें 'जगततिहास' ( Natural History ) नामक ग्रन्थ प्राचीनतम ऐतिहासिकरत्नरूपसे पूण है । यह ग्रन्थ एक महाकोषके जैसा ही और ३७ भागों में समाप्त हुआ है । इसका शेष छठा भाग मृत्युके दो वर्ष पहले

(१) अपने मरीचे दिने दि व राकी अपने गाँव दिया था । यह बालक नी पालक-विधायी तरह प्रतिभाशाली निरुद्ध । अगले तेरह वर्षकी अवस्थामें एक उल्लूक नाटक घोड साधामें लिखा । रोम सम्राट् ट्राननके शासनाधिक कालमें इनकी कीर्तिश्रीमा करते हुए आ बचतता ही थी, वह पार्थिव-मार्गमें 'Panegyric on Trajan' नामसे प्रसिद्ध है । शाकाके अग्रपदसे अल्प पण्डित और विपत्तियोंके घाघन-रुतां नियुक्त हुए । इनका जन्म ६२ ई० और मरण ११६ ई०५ हुआ था ।

सम्पादित हुआ था। उम पुस्तकमें आप ज्योतिष, जलवायुतत्त्व ( Meteorology ), पृथ्वीतत्त्व, भूगोल, उन्मिद्विद्या, जीवतत्त्व, वृषिबिद्या, आयुर्वेद, धातुविद्या ( Mineralogy ), भास्करविद्या, चित्रविद्या आदि विषयोंमें गभीर आलोचना कर गये हैं। पेरिपुसकी भौगोलिक वर्णनाके साथ इनका बहुत कुछ मिलता जुलता है। आपका जन्म २३ ई० और मृत्यु ७६ ई०में हुआ था।

प्लिहन् (स० पु०) प्लेहति वृद्धि गच्छतीति प्लिह कनिन् । पोहरोग । प्लीहन् टेटो ।

प्लीडर ( अ० पु० ) १ वह जो धकालत करता हो, बनील ।  
० वह जो किसीका पक्ष ले कर वाद विवाद करता हो ।  
प्लीहघ्न ( स० पु० ) प्लीहान् हन्तीति घ्न ट् । वृक्षविशेष, रोहडावृक्ष । स स्मृत पर्याय—रोही, रोहितक, प्लीह शब्द, दाडिमपुष्पक, भामदलन, यट्टुवैरी, चल्छद, रोहितेय, रोहित, रोहीतक, रोही ।

प्लीहन् (प्लीहा) (स० पु०) प्लिहन् (वृद्धयन्प्लीहभिति । वण १।१५८) इति कनिन् प्रत्ययेन साधु । कुक्षि-यामपाश्र्वस्थित मासपण्ड, पेटकी तिल्ली । स स्मृत पर्याय—गुल्म, प्लिहन् ।

प्लीहा शरीरका एक अवयव है। यह हृदयसे अयो-देशमें रक्तसे उत्पन्न होता है। रक्तवाही सभी शिराओं का प्लीहा ही मूल है। यह सभीके शरीरमें विद्यमान है। उसके बढ़नेसे रोगमें उसकी गिनती होती है। वैदानशास्त्रमें इस प्लीहारोगके लक्षण और चिकित्साविधा विषय इस प्रकार लिखा है—

श्रीरोगणका निदान।—विदाहो द्रव्य अर्थात् कुल्फी, फलाय और सरसोंका मग तथा अभिष्यन्दी (भैंसका बहि आदि) द्रव्य सेवन करनेसे रक्त और कफ अत्यन्त दूषित हो जाता है जिससे प्लीहा धीरे धीरे बढ़ने लगती है। प्लीहास्त्री वृद्धि होनेसे ही जानना चाहिये, कि उसे रोग हो गया है। प्लीहा उदरके चाम पाश्र्वमें होती है। इस रोगमें रोगीका शरीर पाण्डुवर्ण, अग्रसन्न, अल्प ज्वर, अग्निमात्र और बलका हास होता है तथा श्लैष्मिक और पैत्तिक उपद्रव भी पहुँच जाते हैं। इसके चार भेद हैं रक्त, घात, पित्त और श्लेष्मज ।

रक्त प्लीहामें ज्ञान्ति, त्रम, विदाह, त्रिवर्णता, शरीर का मुख्य और उदरकी रक्तचर्णता होती है। पैत्तिक प्लीहामें ज्वर, पिपासा, दाह, मोह और दैहिक पीन यणता दिखाई देती है। श्लेष्मज प्लीहामें अतिशय वेदना, प्लीहा, स्यूकाकार, कठिन और गुरुतर होता तथा इसमें रोगीके अर्धचि उत्पन्न होती है। घातज प्लीहारोगमें सर्वा कोष्ठयुद्धता और उदावर्त्त रोग तथा प्लीहामें सर्वा वेदनाका अनुभव होता है। प्लीहा रोगमें ये सब लक्षण होनेसे उसे असाध्य समझना चाहिये।

ज्वर रोगके अधिक दिन तक शरीरमें रहनेसे, मलेरिया ज्वर होनेसे अथवा मलेरिया दूषित स्थानमें वास करनेसे वा मधुगन्धिघाति आहारजन्य रक्तके बढ़नेसे प्लीहाकी वृद्धि होती है। अत्रावा इसके अतिरिक्त भोजनके वाद किन्हीं द्रुतयानादिसे गमन या व्यायामादिमें परिश्रमजनक कार्य करनेसे भी प्लीहा स्वस्थानच्युत हो कर बढ़ती है। उदरके यामपाश्र्व में ऊपरकी ओर प्लीहाका स्थान है। अविट्ट अग्रस्था में हाथसे उसका पता नहीं लगाया जा सकता, किन्तु जब वह बढ़ती है, तब कुक्षिके यामपाश्र्वमें हाथ द्वारा उसका पता लग जाता है। इस रोगमें हमेशा मृदुज्वर रहता है और प्रति दिन किसी न किसी समय यह ज्वर चढ़ आता है अथवा एक दिनके बाद कफ पी दे कर अधिक ज्वर प्रकाशित होता है। अलावा इसके प्लीहामें वेदना, रोडन वा ज्वाल, कोष्ठयुद्धता, अल्पमूत्र या रक्त वर्णमूत्र, प्रयाम, काम, अग्निमान्द्य, शरीरकी अवमन्नता, कृप्राता, दुर्गन्धता, पिपासा, धमन, मुग्धरस्य, चक्षु, हस्ता गुलि और ओष्ठ आदि स्थानोंकी रक्तहीनता, अचकार दर्शन और मूर्च्छा आदि लक्षण होते हैं।

वृहत्संघ श्रीहाका लक्षण।—प्लीहाके अधिक बढ जानेसे जब रोग कष्टमाध्य हो जाता है, तब नासिका और वन्त माडीमें रक्तस्राव अथवा रक्तयमन, रक्तभेद, उदरामय, दन्तमूलमें क्षत, दोनों पैर और दोनों चक्षु अथवा सर्वाङ्ग में शोथ तथा पाण्डु और फामला आदि लक्षण दिखाई देते हैं। ये सब लक्षण होनेसे आरोग्यकी सम्भावना बहुत थोड़ी रहती है। प्लीहा अत्यन्त घटित हो कर जब उदरकी वृद्धि होती है, तब उसे प्लीहोडक कहते हैं। यह फेजल यामपाश्र्वमें बढ़ता जाता है।



श्लेहोपशान्ना देवनेक्षण ।—श्लेहोपशान्ना मन्त्ररुता, प्रायु का ऊर्ध्व गमन और वेदना अधिक रहनेसे वायुकी अधि कता । श्लेहाके अतिशय कठिन, भारीका गुह्य और अरुचि रहनेसे श्लेहप्राची अधिभूता समझी जायगी । रक्तकी अधिकता रहनेसे पित्ताधिपत्यके लक्षण और उमने भी बढ़ कर नृणा मालूम होती है । तीनों दोषकी अधि- कता रहनेसे मिलित लक्षण दिखाई देते हैं ।

इसकी चिकित्सा ।—श्लेहारोगमें जिमसे पहले रोगीका फीछ परित्कार हो, उन्मीना उपाय करना आवश्यक है । पुराना गुड और हरोतकीचूर्ण अथवा चिट्कल्यण और हरोतकीचूर्ण समान भाग ले कर रोग और रोगीके अव स्थानुसार गम्भ्र जल्के साथ सेवन करनेसे श्लेहा और यन्त्र दोनों ही रोग थोड़े ही दिनोंके मध्य जाते रहते हैं । पीपल श्लेहारोगकी एक उत्तम औषध है । दो वा तीन पीपलको जलमें धिम कर पुराने गुडके साथ उप युक्त मात्रामें सेवन करनेसे भी श्लेहा प्रशामित होती है । हींग, नींद्र, पीपल, मिर्च, छुट्ट, यशश्चर और सैधवल्यण इनके समान समान भाग चूर्णको एकत्र कर नीचूके रस में मिला कर दोसे चार आना मात्रामें सेवन करनेसे भारी उपकार होता है । अजवायन, चितामूल, यशश्चर, पिपरामूल, पांर और दन्ता इनके समान भाग चूर्णको साथ तोला मात्रामें उष्ण जल, दूधके पानी, या आसव के साथ सेवन करनेसे यह रोग बहुत जल्द जाता रहता है । चितामूत्रकी पीस कर एक रस्तीकी गोली बनाये । पीछे उस गोलीको तीन पक्षके केलमें भर कर सेवन करे । लहसुन, पिपरामूल और हरोतकी पाने तथा गोमूत्र पीने से भी श्लेहारोग प्रशामित होता है । चितामूल, हृदिद्रा, पक्षके अकयनका पत्ता अथवा घासुलका चूर्ण पुराने गुडके साथ सेवन करनेसे विशेष उपकार होता है । शर- पुह्लयटिका आध तोला मात्रामें महुके साथ सेवन करने से श्लेहाका उपशान होता है । आध तोला शङ्खनामिके चूर्णका घिमीरा भाचूके रसके साथ सेवन करनेसे अति प्रकाण्ड श्लेहा दूर हो जाती है । समुद्रजात घोषेकी भस्म श्लेहारोगागारक है । वैयदाय, सैधवल्यण और गन्धक- क समान भागकी भस्म कर सेवन करनेसे श्लेहा और यशश्चरदि घिमष्ट होते हैं । रोहित और हरोतकीके

प्राथम्ये दो आना भर पीपल चूर्ण मिला कर सेवन करने से श्लेहारोग जाता रहता है । शालपाणि, पिठमन, वृहती, कण्टकारी, गोक्षर, हरोतकी और रोहित्य छालका प्रायः श्लेहारोगमें विशेष उपकारी है ।

उरट्ट पक्षके आमके रसकी मधुके साथ पान करने से श्लेहा रोग अवश्य दूर होता है । सीवर पुष्पको सुमिद्र कर एक दिन रय छोड़, पीछे उसे मरसोंके चूर्णके साथ भक्षण करे । थोड़े ही दिनोंमें श्लेहा नष्ट होती है । यवा यन, चिता, यवशर, पिपरामूल, दन्ती, पिप्पली इनका समान समान भाग चूर्ण ले कर गरम जल अथवा दूध के पानी वा मासरस अथवा आमचके साथ यथामात्रामें सेवन करनेसे यह बहुत जल्द जाता रहता है ।

( भाष्य० श्लेहारोगा० )

इसके अतिरिक्त यमानिकादि चूर्ण, माणकादिगुडिका चित्कादिश्लेहा, अभयालयण, गुडपिप्पलीचूर्ण, पिप्पली घृत, चित्तघृत, रोहितकघृत, महारोहितकघृत, श्लेहाचि- रस, वासुकिभरणरस, विद्याधररस, रमराज, श्लेहानक रस, लोचनाधरस, वृहल्लीरनाधरस, रोहितकलीह, यशश्चरश्लेहाचिर्ह, यशश्चरश्लेहाचिर्ह, रोहितकायचूर्ण, महाद्रावकरस, महाद्रावक, शङ्खद्रावक, शङ्खद्रावकरस, महाशङ्खद्रावक और रोहितकागिष्ट ये सब औषध श्लेहा और यशश्चररोगमें विशेष उपकारी हैं ।

( भैष्यरता० प्लीहवृहताधि० )

चिकित्सक रोगीके बलाबल और धातुकी विवेचना कर उक्त औषधोंमेंसे विस्ती औषधका प्रयोग कर सकते हैं । श्लेहारोगके साथ ज्वरकी प्रकृता रहनेसे अथवा ज्वरके हटानु प्रत्यक्ष रोगमें चट आनेसे उक्त औषधोंमेंसे जो सब औषध ज्वरके उपकारक हैं उन औषधोंका तथा श्लेहा रोगकी औषधका मिलित भावमें प्रयोग करना होगा । अरुत पडने पर श्लेहाकी औषध बन्द करके केवल ज्वरकी चिकित्सा की जा सकती है । ज्वरका प्रशोष कुट्ट घटनेसे पुनः श्लेहाकी औषधका सेवन कराना उचित है ।

जीर्णश्लेहारोगमें चिकित्सक औषधका प्रयोग न करे । क्योंकि उसने यदि देवात् उद्गमय हो जाय, तो पीछे आरोग्य होना कठिन है । उद्गमय होनेसे पुट्टपाककी

विषम ज्वरान्तप्लीहा आदि ब्राह्मक औषध विशेष उपकारक है। रक्तमांस्य, शोथ, पाण्डु और आमलर् आदि पीडा इसके साथ रहनेसे उम रोगनाशक औषधकी मिश्रितभाषमें व्यवस्था करे। प्लीहरोगोके प्रहणी होनेसे उमका जायोग्य होना मुश्किल हो जाता है। प्लीहरोगोके सुहमें यदि क्षत हो जाय, तो पत्रिादिचट्टिाको जलमें घोल कर क्षतस्थान पर लगाने और बकुलकी छाल, जामुनकी छाल, गालपकी छाल तथा अमरूदके पत्तेको निद्र कर उममें छोडा फिटकरोका चूर्ण डाल दे। पीडे कुछ गरम रहते उससे कुछ करनेसे मुपक्षतका विशेष उपकार होता है।

प्लीहामें वेदना रहनेसे घन अदरकका पीस कर उसका प्रलेप तथा गोमूत्रको गरम कर अथवा गरम जलका स्वेद दे। बहुत हल्केसे प्रानलकी उदरमें बाधनेसे भी उपकार होता है।

प्लीहोमीका रथावध्य।—ज्वररोगमें जो सब द्रव्य निषिद्ध बतलाये गये हैं, प्लीहामें भी वे सब द्रव्य विशेष अनिष्टप्रद हैं। इसमें केवल दूध न पी कर उसके साथ २४ पीपल निद्र करके सेवन करनेसे प्लीहाका विशेष उपकार होता है। इस रोगमें सत्र प्रकारका चघारा हुआ पदार्थ, शुद्धपाक द्रव्य और तीक्ष्णवर्धे द्रव्यमोजन तथा अधिक परिश्रम, रात्रिनागरण, दिवानिद्रा और मैथुनादि विलकुल निषिद्ध हैं।

डाकूरी मतसे प्लीहा शरीराभ्यन्तरस्थ यन्त्रविशेष (Spleen) है,—उदरगहरकी वामकुडिमें पाकाशयके प्रशस्त अणके उत्तर अवस्थित है। इसकी आश्रति पिएककी सी और वर्ण घोर रंगनी है। रक्तके न्युनाधिकयानुसार इसके भी आयतनकी हाम्बुद्धि होती है। वृद्धा वरुषामें इसका आयतन और भार घटता और सत्रिराम तथा कम्पज्वरमें बढ जाता है।

साधारणत माननमात्रके प्लीहा होती है। कभी कभी छोटी अतिरिक्त प्लीहा भी देयी जाती है। इस प्लीहाका मूलभाग प्लीहाके नीचे समुक्त रहता है। उसका आयतन मररसे ले कर अशरोदके औसा भी हो सकता है।

प्लीहाका प्ररन कार्य क्या है, उसका आज तक भी

ठीक ठीक पता नहीं लगा है। परन्तु इतना तो अस्पष्ट कहा जा सकता है, कि भुक्तद्रव्यका अण्डलाल परिपाक कालमें प्लीहाके मध्य सञ्चित होता है। उस समय प्लीहाका फलेवर वर्द्धित होने देया जाता है। फिर कुछ समय बाद ही जब वह रस शोणितमें न्यून लिया जाता है, तब प्लीहा पुन पुनर्वास्थाको प्राप्त होती है अर्थात् छोटी हो जाती है। अलावा इसके प्लीहासे ही रक्तका श्वेत और लालरूपिकाओंको उत्पत्ति हुआ करती है।

पहले कहा जा चुका है, कि ज्वररोगमें साधारणत इसकी वृद्धि होती है। इस समय रसमें रक्ताधिक्य, प्रदाह, स्फोटक और विषयर्नादि लक्षण देखे जाते हैं।

प्लीहाका रक्ताधिक्य (congestion) प्रबल और अग्र बलभेदसे दो प्रकारका है। मलेरिया और टाइफेड ज्वरमें प्लीहाका प्रबल रक्ताधिक्य होता है। कभी कभी टाइफस, सूतिकावस्था, वसन्त, त्रिसर्प और पाश्चिमिया आदि रोगोंमें भी रक्ताधिक्य होते देखे जाते हैं। आघात आदि भी इसका दूसरा कारण है। यद्धमनोमें रक्तमें सञ्चालन की अरुद्धता और हृत्पिण्ड तथा पुंसकुसीय पुरातन रोग ही अग्रप्रल रक्ताधिक्यका कारण समझा जाता है।

इस समय प्लीहा आयतनमें बडी, पृष्णाम, आरक्त, स्वाभाविककी अपेक्षा भारी और उसका कैपसूल (Capsule) मरुण तथा विस्फृत होता है। प्लीहाके समीप विधान कोमल और वहाँ वही तरल वा फलके गुद्देके सद्गुण नरम मालूम होता है। काटनेमें उसमेंसे काफी लाल रक्त निकलता है। प्रदाह अधिक दिन रहनेसे प्लीहा बडो और कडी हो जाती है। प्लीहा स्थानमें सामान्य वेदना, इन्नेसे अधिक यन्त्रणा और रक्ताल्पताके लक्षणानि देखे जाते हैं। प्लीहा-स्थानमें गरमजलका लेक, प्लिटर वा मास्टर्ड प्लिटरका आयश्चकानुसार प्रयोग विधेय है। आभ्यन्तरिक लवणयुक्त मृदु विरेचक भी उपकारी है। यश्चिद्राको अरुद्धता रहनेसे उसीके अनुसार चिकित्सा करनी चाहिये।

पाश्चिमिया, सेप्टिसिमिया, आघात, मलेरियाके स्थान में वास और श्लैथ सल्म हेतु इसमें प्लीहा (Splenitis or Haemorrhagic Infection) उत्पन्न होती है। रोग दिवाइ देनेसे बहुत कुछ शारीरिक परिवर्तन होता है।

प्लीहामें हर समय आम्बेगई आउद रहती है और इसीसे उमके चारों तरफ हिमरेनिक इनफार्ड दिव्वाई देती है। इनफार्डकी आश्रति की-उ मो होनी और उसका मध्य स्थान वृणावर्ण और पाथ्वेजामें रक्ताधिक्य रहता है। आम्बेगईके निवारण होनेसे प्रदाह उत्पन्न होता है। कभी यह आम्बेगई चूर्णापट्टणामें परिणत होती है। इस प्रकार जोषित या अपट्टणामें परिणत नहीं होनेसे उमकी उत्तेजनाने स्फोटक उत्पन्न हुआ करता है। निकटवर्ती पेरिटोनियममें प्रगाहना लक्षण दिग्गई देता है। मले रिया और शैत्यजनित प्रदाहमें प्लीहा जुहन् और वृष्ण वर्ण तथा स्पशमें फोमल मालूम होनी है। रक्ताधिक्यसे प्रदाहकी पृथक् करना बहुत मुश्किल है। स्फोटक रहनेसे प्रदाह हुआ है, चेमा मालूम होता है।

अम्बेगई द्वारा स्थानिक प्रदाह उपस्थित होनेसे सामान्य घेदनाका अनुभव होता है। स्फोटक होनेसे अत्यन्त वेजना, शीत, कम्पञ्जर, वमन और दुर्बलता तथा स्फोटकके अन्त्यन्तरमें निर्माण होनेसे मुच्छा और हिमाङ्ग आदि लक्षण उत्पन्न देते जाते हैं। स्फोटक बाहरकी ओर भी प्रजागित हो सकती है; किन्तु उम समय उममें प्रकृच्छेसन मालूम होता है।

स्फोटक होनेसे पहले पम्पिरेटर द्वारा पीप निवाल ले। बुनाइन, सुरा और बल्कारक बाहार खानेकी है। स्फोटकमें रोगका भागी फल अशुभ जानना चाहिये, येमी अस्थामें रोगका आरोग्य होना बहुत कठिन है।

प्लीहाकी विपुष्टि (Hypertrophy of the spleen) शैक्षिक फोबममृह रक्तस्रोत द्वारा अपमारित न हो कर यदि प्लीहामें अपरुद रहे, तो प्लीहाकी बुद्धि होती है। इन पीडाओं विविध स्थान और यन्त्रका लिम्फाटिक निष्ठम बट्टा जाता है तथा इससे श्वेतरक्तकणिका विपुष्ण परिमाणमें उत्पन्न होती है। ये नियमितरूपसे लोहितकणिका में परिवर्तित नहीं हो सकती। इसके द्वारा रक्ताल्पताके सभी लक्षण उपस्थित होते हैं।

प्लीहामें बहुकालस्थापी या बार बार रक्ताधिक्य (Connexity) मलेरिया पूर्ण स्थानमें वाम, पुन पुन मधिगम उजर और घट्टमनीके रक्तघोलमें रक्ताधिक्य ही तीहा विपुष्टिका प्रथापान कारण है।

इस समय प्लीहा जुहदाकार और वजनमें प्राय ८१६ पाँउ तक भारी होती है। कभी कभी अप्रपाथ्य में हुनेसे प्रात मा मालूम होता है। प्लीहा प्रदेज लीप्टाकार और बीच बीचमें निकटवर्ती शैक्षिक विधानके साथ संयुक्त है। रक्त तरल और श्वेतरक्तकणिकायुक्त तथा रक्तमें जलका भाग बढ़ता है।

रोगी धीरे धीरे शरीर हो जाता है। मुसामएडल, ओष्ठ और वरुफनटाइमा रक्तशून्य; चर्म शुष्क और उत्तम, नाडी द्रुत और दुर्बल; मूल स्वल्प और लोहिताम, क्षुधा मान्य, फोष्ठउद, प्लीहास्थानमें भार और घेदनादिलक्षण उपस्थित होते हैं। पीडाके तरण होनेसे ज्वरका विराम नहीं देया जाता। रोग कठिन होनेसे रोगीना वर्ण सृत्तिकावत् नासिका और दन्तमाडीसे रक्तस्राव, चमडेके नीचे सूक्ष्मरक्त चिह्नविगलित सुषीय (Cancerum Uris) अक्षिपह्न और पदकी स्फोतता तथा समय समय पर सायाङ्गिक शोथ वृष्टिगोचर होता है। विवर्धित प्लीहा में चाप द्वारा भ्यास, श्छुच्छ, वाशि, फुमकुसुका रक्ता क्षिप्य और वमन उपस्थित हो सकता है।

प्लीहाके घृहत् होनेसे उदरके वामपार्श्वस्य वृक्षिण दिक्से ले कर नाभि तकका स्थान ऊँचा दिपाई देता है, हुनेसे एक अप्रधार पतला और प्रातयुक्त अर्बुद सा बोध होता है। कभी कभी उममें श्कच्युसेसन भी पाया जाता है। प्रातिघातिक शब्ध मलगर्भ (Dull), उसके नीचे नाभि तथा ऊपर धम पशुका परन्त फैल सकता है। पार्श्वपरिवर्तनमें प्लीहा अपना स्थानसे कुछ हट जाता और दीर्घधाममें नीचेका ओर चला जाता है। प्लीहास्थानमें कभी कभी एक मर्मरध्वनि सुनाई देती है जिसे स्प्लीनिक मर्मर (Spleenic murmur) कहते हैं।

नासिका और दन्तमाडीसे रक्तस्राव, पाण्डुरोग, उदरामय, आम्राणय, शोथ और कैमनमोरिस् आदि इसके उपसर्ग हैं। रोग भारी नहीं होनेसे दुर्बलता, शोथ, आम्राणय, रक्तस्राव और कभी कभी अत्रैतन्य हो कर मृत्यु हो जाती है।

निम्नलिखित कुछ पीडाके साथ इसका सम्बन्ध हो सकता है—पाकाशयके वाक्षिधेय छिद्रमें कर्षट्टरोग,

यद्यत्के चामभाग वा चाममूत्रयन्त्रका चिचदन, अन्त्रा प्लाजकमें फोइ अयुद् और रक्तमें श्वेतरूणाधिक्य (Leucocytæmia)। व्याधिके तरुण होनेसे आरोग्य होनेको सम्भावना है, पर प्लीहाके अधिक बढ़ने और रोगके पुराने होनेसे आरोग्यता लाभ करनेकी फोई आशा नहीं।

वायुपरिवर्तन, किनाइन, आर्सेनिक और लौहघटित औषधोंका सेवन विधेय है। अन्यान्य औषधोंके मध्य आइओडिडस, ग्रीहाइड्स और फ्लुराइड्स विशेष कार्यकारी है। आहारार्थ लघुपाक और बलकारक द्रव्यादिते प्लीहाके ऊपर रिटर तथा टिचर वा अङ्ग्रेण्टम् आइ ओडिन्का लेपन आवश्यक है। पुरातन ग्रीहाने ऊपर अङ्ग्रेण्टम् हाइड्राजिराई विनाइओडिडम मालिज करनेसे ग्रीहा छोटी हो सकती है, पर दो बारसे अधिक मालिज न करे। एन्टोपैथिक मतसे स्निपनमिकश्चर -

R विनिसलकस	२ ग्रोन
पसिड सालफ्युरिक डिल	६ बुद
फेरि सल्फ्	१ ग्रोन
मेगनिसिया सलफस्	॥० ग्राम
टि जिड्र	१० बुद
जल	१ औंस

ज्वरके समय दिनमें एक मात्ता २।३ बार।

यद्यत्का फञ्जेयवन रहनेसे लीभरके ऊपर नाइट्रो हाइड्रोक्लोरिक पसिड डिलका लेप देनेके बाद फोमेण्ट करे और निम्नलिखित औषधका सेवन करावे।

R पिपनि म्युरिप्ट	३ ग्रोन
पसिड हाइड्रोक्लोरिक डिल	६ बुद
टि न्युसिस् म मिजि	५ बुद
इ कलम्या	१ औंस

दिनमें ३।३ बार।

पुरातन प्लीहामें सामान्य ज्वर रहनेसे—

R पोटाशि मोमाइड	५ ग्रोन
टि सिकाकोना कम्पा	२० बुद
टि जेनसियन कम्पा	२० बुद
टि डिजिटैलिस्	२ बुद
इन्फुजन सापैट्रि	१ औंस

एक मात्ता दिनमें ३ बार।

R लाइन्स एमन फ्लुराइड	५ बुद
एर्रोयामिन्थलिप्	१ औंस

पानेके बाद १ मात्ता दिनमें दो बार।

प्लीहामें एमिलिपेट् अपट्टता, उपदग्, फर्स्ट, ट्युधा फॅल और हाइभेटिम आदि रोग उत्पन्न होते हैं। उन सब रोगोंसे भी प्लीहाका चिचदन और दुर्गलताका लक्षण दिखाई देता है। ऐसी अग्रस्थामें होमिओपाथी चिकित्सा विशेष उपकारी है।

प्लीहाजलु (स० पु०) प्लीहप्र, रोहडा गृह।

प्लीहा (हि० खी०) प्लीहन् रेगो।

प्लीहाकर्ण (स० क्ली०) कर्णदेशजात रोगविशेष, एक रोग जो कानके पास होता है।

प्लीहान्तकरम (स० पु०) अन्तयतीति अन्तक ग्रीहायाः अन्तकः। प्लीहारोगोक्त एक औषध। प्रस्तुत प्रणाली—ताम्र, रीण, त्रिकटु, रास्ता, जयपालवीज, त्रिफला, कटकी, दन्तीमूल, घोषामूल, सैन्धव, निसोथ और यशश्चर इन सब द्रव्योंको रेंडोके तेलमें घोंट कर रत्ती भरकी गोली बनाये। इसका अनुपात रोगीका बलाबल देण कर स्थिर करना होता है। यह औषध पाण्डु और शीथ आदि रोगोंमें भी हितकर है।

(मेघशरणा० प्लीहकृदधि०)

प्लीहाणंजरस (स० पु०) प्लीहोक्त औषधविशेष।

गुरु, गन्धक, सोहागा, अन्नक और बिन्व आठ आठ तोले ले कर उसमें चार चार तोला मिर्च और पीपल मिला दे। पीठे छ छ रत्तीकी गोली बाये। इसका अनुपात निर्गुंडीका रस और मधु है। इस औषधका सेवन करनेसे ज्वर, मन्दाग्नि, कास, श्वास, वमि, भ्रम और सब प्रकारकी प्लीहा दूर होती है। (शे०धारा० प्लीहा(रोगाधि०))

प्लीहादि (स० पु०) प्लीहाया अरि शत्रुस्तत्राशकत्यान्।

१ अश्वत्थयुक्, पीपलका पेड। २ प्लीहनाशकपटिकी-पधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—हरिताल २ तोला, स्वर्ण अर्द्ध तोला, ताम्र ४ तोला, मृगवर्मनरस और नोचु-का मूलचूर्ण प्रत्येक दो २ तोला, इन सब द्रव्योंकी एकत्र कर ६ रत्ती भरका गोली बनाये। इसका अनुपात मधु और चित्ताचूर्ण है। इस औषधका सेवन करनेसे असाध्य प्लीहा, यटन्, पाण्डु, शुभ और भगन्दरोग

जाता रहता है । यह बीजध प्लीहारिरस नामसे प्रसिद्ध है ।

इसके अलावा प्लीहारिरस एक और प्रकारका भी है जिसकी प्रस्तुत प्रणाली यों है—लौह ४ तोला, मृग चर्ममस ८ तोला, भंडा नीचूका मूल ८ तोला इन सब द्रव्योंको एकत्र कर ६ रसो भरकी गोली बनाये । इसके सेवनसे प्लीहा, यक्ष्म और शुष्म अति शीघ्र प्रशमित होते हैं । ( रोगप्रधारण )

प्लीहाशु ( स० पु० ) प्लीहाया शू । प्लीहाशु, श्लोहाशु ।

प्लीहाशुलरस ( स० पु० ) प्लीहाया शूलरस रस । प्लीहाशुलरस बीजधविशेष । प्रस्तुत पणाली—पाद, गन्धक और त्रिफल प्रत्येक बराबर बराबर भाग मिला कर जितना हो उतनी ही ताप मस, मन तिला, फीडी, तृतिया, हींगा, लोहा, जवन्ती, रईया, यक्ष्मा, मोहागा, सैन्धव लवण, चिट लवण, चिता और जयपाल । प्रत्येक पारेके समान, इन सब द्रव्योंको एकत्र कर निमोघ, चिते, अदरक और धतूरेके रसमें भावना दे । पीछे रसो भरकी गोली बनाये । इसका अनुपान मधु और पीपल है । रोगभेद बलावलके अनुसार सेवन करनेसे पीडा, अप्रमान, यक्ष्म, शुष्म, आमामास्य, उदरी शोथ, निद्राधि, अग्निमान्ध और ज्वर आदि रोग धोखे हो दिनोंके अन्दर जाते रहते हैं ।

( रस प्रधारण० प्लीहाशाशु० )

प्लीहाशु ( स० को० ) उदररोगभेद, तिल्ले । जो जिवाही और अमिष्यन्तनक द्रव्य बहुत खाते हैं उनका रज और श्लेमा दुषित हो कर प्लीहाका घृद्धि करने दी है, इसीका नाम प्लीहाशु है । यह पीडा घाम पाश्र्वमें पड़ती है । इस म रोगो अत्यन्त शोण हो जाता है । ( बभ्रुव नि० ० ७० )

उदररोग बी० शीहा ६६१ देणो ।

प्लीहाशुनि ( स० नि० ) प्लीहाशु अल्पघर्षे शनि । प्लीहाशु रोगप्रसन्न, जिते प्लीहारोग हुआ हो ।

प्लुति ( स० पु० ) प्लुति कर्तव्ये प्लुति शब्दे ( अ० धि कर्षणिक २ इति । ३५३ । १२५ ) शनि कर्मि । १ अग्नि, आम । २ स्नेह, प्रेम । ३ शूद्रा, घर जलाता ।

प्लुत ( स० पु० ) प्लुत । १ अथगतिविशेष, गोष्ठ-

की एक चाउडा नाम जिसे पोई कहते हैं । २ तिर्यक गति, देही चाल । ( पु० ) प्लुत प्लुतवदु गति रस्या स्तोति प्लुत अच् । ३ विमात्रवर्ण, सरका एक भेद जो दीर्घसे भो बडा और तीन माताका होता है ।

“ एक मातो भवे द्वयसो द्विमातो दीर्घ उच्यते ।

विवस्व प्लुतो श्रेयो षड्वज्रजाद मातकम् ॥ ”

( प्राचीनका० )

जिसकी माता एक है, वह हस्य, जिसकी दो, वह दीर्घ और जिसकी माता तीन है, वही प्लुत कहा जाता है । पाणिनिमें, किम स्थान पर कौन शब्द प्लुत होगा और कहा नहीं होगा, इसका विशेष विवरण लिखा है । सुधबोधोक्तानामें दुर्गादानने लिखा है, कि दुराहान, गान और रोदन इन सब स्थानोंमें प्लुतस्वर होगा । ४ यह लाल जो तीन मात्राओंका हो । ( त्रि० ) ५ कर्म गतियुक्त, जो कावता हुआ चले । ६ प्लाघित । ७ ताप धोर । ८ जिसमें तीन माताए हों ।

प्लुतगति ( स० खी० ) प्लुता गति कर्मधा० । १ प्लुत गमन । ( त्रि० ) २ शत्रव, खरहा । प्लुता गतिर्यस्य । २ प्लुतगमनयुक्त, जो फूट फूट कर चलता है ।

प्लुतार्क—एक प्रोक्त जोयनी लेख्य और नीतिशास्त्र । ५० ई०में निर्वोसिपाके अन्तर्गत धिरेनिया प्राममें दाका जन्म हुआ था । इन्होंने डेल्टाके आमनियम प्रति छित वि विद्यालयमें दशानशास्त्र पढा था । इसके बादसे ये राम महानगरमें रहने लगे थे । यहा प्रोक्तके मध्यधमें कई बार चकृताए हो धीरे धीरे लूकन, यक्ष्म, प्लुति और मार्शन आदिके साथ इनकी मितता हो गई । युवा वस्थामें ये अपनी जन्मभूमि छोड़े । दाके बनाये हुए प्रयोगमें विद्वज्जीवनी ( Lives of illustrious men ) और नीति ग्रन्थ मथोत्प्रेष्ट है । उनका प्रथ पत्रनेने प्राचीनकालमें यूरोपमें उररति प्रथा प्रचलित थी, इसके अर्थ प्रमाण मिलते हैं । १०० ई०में इनकी जीया लीला समाप्त हुई ।

प्लुति ( स० खी० ) प्लु भाषे निन् । १ प्लव्य, उद्वल फूटने वाला । २ पीर । ३ यह घण जो तीन मात्राओंमें बाला गया हो ।

प्लुप ( स० पु० ) १ दाद, जलता । २ पूरति । ३ स्नेह, प्रेम ।

प्लुपि ( स० पु० ) प्लुप बाहुल्यत् क्रि । १ वस्तुल्य तुण्डयुक्त खगमेद, जगलेके जैसा एक प्रकारका पक्षी । २ दाहक सर्पमेद । ३ अन्य परिमाण पुत्तिकादि ।

प्लुष्ट ( स० त्रि० ) दग्ध, जला हुआ । सुश्रुतमें इसका लक्षण इस प्रकार लिखा है—

“यत्र यद्विषणं प्लुष्यतेऽतिमात्रं तत् प्लुष्टम् ।”

( सुश्रुत सू० ११ अ० )

पीडित स्थानमें क्षारका प्रयोग करनेसे जो विवर्णता होती है, उसे प्लुष्ट कहते हैं ।

प्लेग ( अ० पु० ) भयङ्कर रूप धारण कर जाड़े में फैलने वाला सक्रामक रोग । इसके फैलने पर बहुसंख्य पृथक्कीयोंकी मृत्यु होती है । इसमें रोगीको बहुत तेज ज्वर आता है और जाघ या बगलमें गिलटी निकल आती है । यह रोग प्राय तीन चार दिनमें ही रोगीके प्राण हर लेता है । प्रवाद है, कि छठी शताब्दीमें यह रोग पहले पहल लेवाटसे यूरोपमें गया था और वहाँसे अनेक देशोंमें फैला । १६०० ई०ले भारतपर्यमें इसका विशेष प्रकोप था, पर अब कुछ कम हो गया है ।

प्लेट ( अ० पु० ) १ किसी धातुका पत्तर या पतला पीटा हुआ टुकड़ा, चादर । २ धातुका बना हुआ वह चौड़ा पत्तर जिस पर कोई लेख आदि खुदा या बना हो । ३ छिछली पाली, तश्तरी । ४ सोने चांदी आदिका बना हुआ प्याला जैसे घुड़दौड़का प्लेट, क्रिकेटका प्लेट । ५ फोटो लेनेका वह शीशा जो प्रकाशमें पहुंचते ही उस छायाको स्थायी रूपमें ग्रहण करता है जो उस पर पड़ती है । पोंडेसे इसी शीशेसे फोटो चित्र छापे और तैयार किये जाते हैं ।

प्लेटफार्म ( अ० पु० ) १ कोई चौकोर और समतल चतुर्तरा । यह किसी इमारत आदिमें इस उद्देशसे बनाया जाता है कि उस पर पड़े हो कर लोग चकृता या उपदेश दे सकें । २ रेलवे स्टेशनों पर बना हुआ यह ऊँचा और बहुत लम्बा चतुर्तरा जिसके सामने आ कर रेलगाडो पड़ी होती है और जिस परसे ही कर यात्री रेल पर चढ़ते या उससे उतरते हैं ।

प्लेटो—ग्रीक देशीय एक निप्यान्त दार्शनिक । अरबोंके निकट ये 'प्लूतोन' नामसे प्रसिद्ध थे । इनके पिताका

नाम अरिष्टोन और माताका नाम पेरिक्लिडिनि था । ४२६ ई०सन्के पहले मई मासमें आथेन्स नगरमें इन्होंने जन्म ग्रहण किया । जब इनकी उमर बीस वर्षकी थी उस समयसे ले कर आठ वर्ष तक इन्होंने मक्रोटिस नामक प्रसिद्ध दार्शनिकके निकट पाठाध्ययन किया । सक्रेटिससे इन्हे जो कुछ उपदेश मिलता था, उन्हें वे लिपि बद्ध करते जाते थे । पीछे मित्र, इटली आदि स्थानोंमें कुछ काल ठहर कर ये पुन आथेन्स लौटे । यहाँ इन्होंने परिपट ( Academy ) में पढ़ना आरम्भ कर दिया । नये ड्युनिवर्सिटीमें इन्हे अपनी सभामें बुलाया था । किन्तु ये खुशामदी टट्टू थे नहीं, कि जहाँ तहाँ बुलाने पर चले जाय । ये बड़े ही स्पष्टवक्ता थे । फडोर हृदयके ड्युनिवर्सिटीस इन पर हमेशा रज रहा करने थे । इस कारण इन्होंने प्लेटोको कैद कर दत्तदासरूपमें फिरिनी ( Cyrene ) वासी आनिकेरमके यहाँ भेच डाला । आनिकेरमसे इनके गुण पर सुग्ध हो इन्हे मुक्तिदान दिया । अनन्तर जन्मभूमि लौट कर ये अपने दर्शनतत्त्वके प्रचारमें लग गये । इनके उपदेश गुणशिश्यके प्रश्नोत्तरके ढग पर लिखे हुए हैं । उसमें शुद्धमक्रोटिस हो चक्का है । उन उपदेशोंमें बहुतसे वैदान्तिक भाव मिश्रित हैं । प्लेटोका आदि नाम आरिष्टोटिलिस था । किन्तु प्रगल्भ लालट रहनेके कारण इनका 'प्लेटो' नाम रखा गया । ८२ वर्षकी अयस्थामें ई०सन्के ३४८ वर्ष पहले इनका देहान्त हुआ । दार्शनिक आरिष्टटल इन्हींके छात्र थे ।

प्लेटिनिम ( अ० पु० ) चाँदीके रंगकी एक मजहूर कोमती धातु । यह धातु १८वीं शताब्दीके मध्य दक्षिण अमेरिकामें यूरोप गइ थी । इस धातुमें कई धातुओंका कुछ न कुछ मेल अवश्य रहता है । जिनकी धातु हैं, सोसे यह अधिक भारी होता है और इसके पत्तर पीटे या तार खींचे जा सकते हैं । यह आगमें नहीं गल सकती । विजली अथवा कुछ रासायनिक क्रियाओंकी महायत्नासे गलाई जाती है । इसमें न तो मोरचा लगना और न तेनाथी आदिका कोई प्रभाव ही पड़ता है । यही कारण है, कि लोग विजली तथा अनेक रासायनिक कार्योंमें इसका व्यवहार करते हैं । रूममें कुछ दिनों तक इसके सिपके भी चलने थे । यह कैवल दक्षिण अमेरिकामें ही

नहो, यूराल पर्यंत तथा बोरियो होपमें भी पाई जाती है।  
 प्लोत (स० इ०) प्र वै च, समग्रसारण स्थ्य ल । १  
 सुप्रतीव श्रवणमापसरणमेद । श्रमर्म देगो । ०  
 पित्तविद्यारविद्येव, पित्तका विचार जो मु हने गिरता है।  
 ३ कर्पद, मुदद, लता । ४ पदी ।  
 पोप (स० पु०) प्ल्य भावे घञ् । १ दाह । भावे त्पुद् ।  
 ( इ० ) २ प्रोषण, दाह ।

प्ला ( स० स्त्री० ) प्ला-भावे अद् । मक्षण, खाना ।  
 प्लात (स० त्रि०) प्ला फर्मणि क । मक्षित, जो राया  
 गया हो ।  
 प्लान स० इ०) प्ला भावे-त्पुद् । भोजन ।  
 प्लु (स० पु०) प्ला बाहुलकान् कु । रूप, चेहरा ।  
 प्लुर (स० त्रि०) प्लु-बाहु० अस्त्यर्थे र । रूपयुक्त,  
 रूपवार ।

## फ

फ—हिन्दो उर्णमालामें बाईमरा व्यञ्जन और पयर्गभा  
 दूसरा वर्ण । इसके उच्चारणका स्थान श्रोत्र है और इसके  
 उच्चारणमें आन्तरिक प्रयत्न होता है । इन्में उच्चारण करनेमें  
 जीभका अगला भाग होठोंमें लगता है । इसलिये इन्में  
 स्पर्शपूर्ण कहते हैं । इन्में वाद्यप्रयत्न, विचार, श्वास और  
 अधोष हैं । इसकी गिनती महाप्राणमें होती है ।

फ-कार स्वविष्णुलतामद्वय, चतुर्वर्गप्रद, पञ्चदेव  
 स्वरूप, पञ्चप्राणमय, त्रिगुण और मात्मादि तत्त्वसयुक्त  
 तथा त्रिगुण सहित है । इसकी कुण्डली प्रला, विष्णु और  
 कृत्तृविणी है । इसके वाचक शब्द ये स्व हैं—सर्गो,  
 दुर्गिणी धृत्रा, यामपाश्र्वं, जनार्दन, जया, पाद, गिरा,  
 रौद्री, फेन्वार, जारिनीप्रिय, उमा, विद्वह्म, काच,  
 बुध्जिनी, प्रियपाश्र्व, प्रलयानि, नीलपाद्, अश्व, पशु  
 पति, शशी, कुन्वार, यामिनो, व्यका, पावन, मोहदह न,  
 निरन्लधार, अहद्वार, प्रयाग, प्रामणी और फल ।

( नाना तन्त्रशास्त्र )

“प्रत्याशुत्पणामा ललजिह्वा चतुर्भुजाम् ।

भक्तानपप्रदा तिन्या नानाङ्कामभूतिनाम् ॥

पय ध्याता फक्तान्तु तामन्त दृशाप उपेप ॥”

( यणाहारतन्त्र )

इस प्रकार ध्यात करने फ-कारका दस बार उच  
 करना होता है । मातृकान्यासमें इस वर्ण द्वारा याम  
 पार्श्वमें स्थान स्थित जाता है । वाक्यके आदिमें इस  
 वर्णका प्रयोग नहीं करना चाहिये, करनेमें दुःखान्त  
 होता है ।

फ (स० इ०) फ च प्रमदावहारे च । १ रूपोति, रग्ना  
 यत्न । २ पुत्रति, पुत्रकार । ३ निष्कार भाषण ।  
 ४ यन्त्राणन । ५ भक्षायान, प्रथम । ६ ज्ञानानिस्तार,

जम्हाई । ७ चर्क । ८ रफान । ९ स्फुट । १० फल-  
 लाभ । ११ मुग्धनीचोक्त स प्राविशेष ।

फक ( हि० स्त्री० ) फाक देगो ।

फका ( हि० पु० ) सूखे जाने या सुकनीकी मात्रा जितनी  
 एक बार मु हमें फाकी जा सके । २ फण्ट, टुकड़ा ।

फकी ( स० स्त्री० ) १ सूखी फाकनेकी चूर्ण आदिकी  
 पुष्टिया, फाकनेकी दवा । उतनी दवा जितनी एक  
 बारमें फाकी जाय ।

फग ( हि० पु० ) १ बन्धन, फदा । २ अनुराग, राग ।

फड ( अ० पु० ) वह धन वा सक्ति जो किसी नियत  
 काममें लगानेके लिये एकल की जाय ।

फद ( हि० पु० ) १ पध, यधन । २ दुःख, कष्ट । ३ नध  
 की बाटी फसानेका फदा, गुज । ४ खट्टय, मर्मा । ५  
 छत्र, घोना । ६ जाल, फाम ।

फदना ( हि० त्रि० ) १ फदमें पडना, फसना । २ उन्म-  
 द्भन करना, लाघना ।

फदरा ( हि० पु० ) फदा देगो ।

फदवार ( हि० त्रि० ) फदा लगानेवाला ।

फदा ( हि० पु० ) १ रखनी सामे आदिवा घेर जो किसी  
 को फमानेके लिये बनाया गया हो, फाद । २ पान,  
 जाल । ३ कष्ट, गुद ।

फदाना ( हि० त्रि० ) १ आत्ममें फंसाना, फदमें लगना । २  
 बुदाना, उछालना ।

फंफारा ( हि० त्रि० ) १ शब्द उच्चारणके समय जिह्वाका  
 कपला, हकणना । २ आग पर शीलने दृषका फेल  
 छोड कर ऊपर उटना ।

फंसना ( हि० त्रि० ) १ यधनमें पडना, पकटा जाना । २  
 अटटना, उछलना ।

फंसनी ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी हथोड़ी जिससे कंसरे  
 लोटे, गगरे आदिवा मल बनाते हैं ।

फसाना ( हि० कि० ) १ उगीभून करना, अपने जाल या वशमें लाना । २ फदेमें लाना, बन्धाना । ३ अटकाना । फँसिहार ( हि० वि० ) फदवार, फँसानेवाला ।

फऊ ( हि० वि० ) स्वच्छ, सफेद । २ बदरग । ( स्त्री० ) ३ दो मिली हुई चीजोंका अलग अलग होना, मोक्ष ।

फरुडी ( हि० स्त्री० ) दुर्गति, दुर्दशा ।

फकत ( अ० वि० ) १ पर्याप्त, अलम्, बस । २ केवल, सिर्फ ।

फकीर ( अ० पु० ) १ भीख मागनेवाला, भिखमगा । २ साधु, समाख्यागी । ३ निर्धन मनुष्य, वह मनुष्य जिसके पास कुछ न हो ।

फकीर—मुसलमान भिक्षु-सम्प्रदाय । भिक्षु कृपुत्तिमे ही वे जीवनधारण करते हैं । फकीरोंके मध्य भिन्न भिन्न श्रेणियाँ हैं । भारतवर्षमें इस प्रकारकी केवल दश श्रेणी देखी जाती हैं । जलालउद्दीन मुलानी सम्प्रदायके प्रतिष्ठाता थे । यूरोपीय तुरष्कके मध्य फकीरकी प्राय ६० विभिन्न श्रेणियाँ हैं । इनमेंसे कनस्तान्तिनोपलके बतासीगण निरीश्वरवादी हैं । वे महम्मद से नहीं मानते और न उनके बनाये गुरान शान्न पर ही विश्वास रखते हैं । सभी सुफी और अलोप्रार्तिन सिया-सम्प्रदायभुक्त हैं । वहाके रफाई दरवेशगण शारीरिक कष्टकी ही मोक्षदायक प्रधान उपाय समझते हैं । भारतवर्षमें एक श्रेणीके फकीर हैं जो हमेशा मुसलमान तीर्थोंमें घुमा करते हैं । प्रायः सभी फकीर बहुत दूर पश्चिम हाङ्गेरि राज्यमें जा कर तुर्कस न्यासी गुलजायाके पत्रिख क्षेत्रका व्रतन करते हैं । पूर्व दक्षिण सिहल आदि स्थानोंमें भी दीङ्ग लगाते हैं । साधारणतः भारतवासी फकीर धर्म प्रभावहीन और नीच समझे जाते हैं । वे सभी प्राय 'वे सेरा' हो गये हैं अर्थात् कोई भी महम्मदके उपदेशानुसार कार्य नहीं करता । जो अब भी 'वासेरा' हैं अर्थात् धर्मका पालन करते आ रहे हैं उन्हें 'सालिक' कहते हैं ।

फकीर साधारणतः अफ़्गानिस्तान, आस्तानामें रहना पसन्द करते हैं, या यों कहिये, कि फकीरको जहाँ रात हो गई वहीं सराय है । काठियावाड़ या बनारसगण अपनेकी घोम्दाववासी सैयद अबदुल फादेर जिलानोंके शिष्य बन लाते हैं । चिस्तिगण बन्दनाराजकी अपना धर्ममुद

मानते हैं । आज भी बुलवर्गामें उन महात्माका पवित्र श्रेत विद्यमान है । वे सभी सिया-सम्प्रदायभुक्त हैं । सुतारियागण अबदुल्सुतग इनाकके शिष्य और तन्म ताजगमी हैं । तजनातिया या मदरियागण अपनेकी शाह मदरके शिष्य बतलाते हैं । मलङ्गागण शाह मदरके पादानुध्यात जामन यतिके और रफाई वा गुर्नभारागण सैयद अहम्मद फकीर रफाईके शिष्य हैं । इनका इश्वर पर ऐसा विश्वास है कि वे अपना हाथ फाट कर पुन उसे जोड़ सकते हैं । इसी विश्वासके बल पे स्वेच्छासे अपना अंग प्रत्यग फाट डालते हैं । जलालियागण सैयद जलालउद्दीन योगारोके शिष्य हैं । सोहागियागण मूसा सोहागके अनुचर बतलाते हैं । वे लोग सब समय रिश्वीकी तरह वेगभूया पहनते तथा गीतवाद्य और नृत्यादि करते हैं । नफमवान्दियागण नफसवन्दीरामी वहा-उद्दीनके शिष्य हैं । वे लोग रातको अपने हाथमें चिराग ले कर आँग मागने निकलते हैं । येओवा पियादी गण साधारणतः श्वेत वस्त्र पहना करते हैं । जिस प्रकार हिन्दू लोग साधु सन्यासिका सम्मान करते हैं उसी प्रकार मुसलमान लोग फकीरका । कहायत है—फकीरको तीन चीजें चाहिये, फानट, कनात और रियान, अर्थात् फारसीमें फकीर हरफामे लिखा जाता है, फी से फाकट ( व्रत ), काफसे कनात ( सन्तोष ) और रे से रियान ( मेहनत ) ।

फकीर—एक धर्मसम्प्रदाय । कुछ दिन हुए, बङ्गलाये गोआडी कृष्णनगरके अश्वरामें फकीर नामक एक उपासक सम्प्रदाय प्रवर्तित हुआ है । इस सम्प्रदायमें हिन्दू और मुसलमान दोनों ही जातिके लोग हैं । अधिकतर मुसलमान हैं, हिन्दूको सत्या छोड़ी है । हिन्दूफकीर सभी गृहस्थ हैं, मुसलमानोंमें भी उदासीनकी संख्या बहुत छोटी है । वे लोग पौर पैगम्बर आदि कुछ भी नहीं मानते ।

सैरि साहयने भी एक श्रेणीके हिन्दू फकीरकी कथाका उल्लेख किया है । वे लोग साधारण गोसाई-सम्प्रदायके हैं । इनमेंने बहुतेरे मूर्ख हैं और देवतापिरेयके उपासक हैं । जो विद्वान् हैं वे प्रत्ययके अवगमन करने मन्दिरमें पूजापाठमें अपना समय बिताते हैं । परन्तु सभी



फकीर शोधयात्रा करने और दूर दूर भोज मांगने हैं। पोल यत्र हो डाका पहनाया है। रुकटिनादिकी एक मात्रा गण्डों और एक हाथमें पकट कर इधर उधर घूमते फिरते हैं। ये कपाड़ों, नाकमें, दोनों हाथोंमें और छातोंमें लिप्य लगाते हैं।

फकीर—बिल्ग्रामवासी एक मुसलमान कवि, मोर नया जाम अजीफी उपाधि। १७५४ ई०में उनकी मृत्यु हुई।

फकीर अजीबग—मुल्तानराजके शासनकर्ता। ये सख्खाट्ट हुमायु के शासनकालमें (१५३८ ई०में) धर्तमाना थे।

फकीरगज—बङ्गालके दिनाजपुरके अन्तर्गत एक याण्ड्य स्थान और गाढ़ग्राम। यहा चावल और पटसन आदिका बड़ा कारोबार है।

फकीर, मार समसुद्दान—दिल्लीनिवासी एक मुसलमान कवि। ये 'मफनून' नामसे ही विशय परिचित थे। १७६५ ई०में ये दिल्लीका त्याग कर लखनऊ जहरमें बस गये। यहाँ पर १७६७ ई०में उनकी मृत्यु हुई। यों तो ये और कविताएँ लिख गये हैं, पर 'दीवान' और ताम्बूल व्यवसायोंके पुत्र रामचंद्रके इतिहासके आधार पर लिखित 'नसबोरसुद्दयत नामक मन्तवों ही प्रसिद्ध हैं।

फकीरगढ़—बङ्गालके सुन्दा जिलेके अन्तर्गत एक थाना और गण्डग्राम। यहा चावल, सुपारी, नारियल और चोलाकी काफी आमदानी होती है। सुन्दरवनके मध्य यह स्थान सबसे ऊँचा है। यहा गजुरके रमसे गुड और चोले बर्बाद जाती हैं।

फकीरगण—मुसलमान साधु या फकीरोंके अरण्य घोषणाएँ की हुई निष्कर भूमि आदि।

फकीरी (हि० खी०) १ मींगमंगाप। २ साधुता। ३ विषादा। ४ एक प्रकारका अमूर।

फक—शरमेनके एक राजा।

फकिरा (स० खी०) फका धार्यनिर्देशी प्युल् चतुर्थ १३११ गतिराजके प्युल्, टापि अत इत। १ अमरप्रहार, अमुनिन व्यवहार। २ पापेवाच। ३ यह जो शास्त्रार्थमें दृढ़दृष्टियोंके व्यष्ट करनेके लिये पूर्वपक्षरूपमें बड़ा जग्य मूढ प्रथ।

फकर (फा० पु०) गौरव, अभिमान।

फकरो—होस्टवासोंके एक मुसलमान प्रवचक। ये मींगता

सुल्तान महमद अमीरोके पुत्र थे। उन्होंने शोकवियों की जीवनी पर 'जयाहिर उल् अजायब' नामक एक ग्रन्थ लिखा है। ये जगह तहमास्य तखानके शासनकालमें मिन्यु प्रदेश आये थे। तहफर-उल् हरीर नामक उनका बनाया हुआ एक दूसरा गनलसग्रह भी पाया जाता है। १५६० ई०में ये विद्यमान थे।

फखर उद्दीन आरू महम्मद यिन् अली आञ्जैले—एक धार्मिक मुसलमान पण्डित। उन्होंने तराइन उल् हफाफ नामक 'कञ्जल् उक्फाएक' नामक पुस्तककी एक टीका लिखी है। उसमें ये सुफी मतका पण्डन करके हजिरी मतको पोषकता की है। यह पुस्तक भारतवासी मुसलमानोंकी बड़ी ही रोचक है। १३४२ ई०में उनकी जीवन्मौल शय हुई।

फखरउद्दीन जुगान—मुल्तान गयामुद्दीन तुगलक शाह के बड़े लड़के। पिताके राज्यारोहणके बाद ये दिल्लीके युवराज पदपर प्रतिष्ठित हुए। १३२५ ई०में जब इनके पिता इस लोकसे चले गये, तब इन्होंने महम्मदशाह तुगलक १म नाम धारण कर दिल्लीके सिद्दासन पर अधिकार किया। महम्मदशाह इतलक देखो।

फखर उद्दीन मालिक—बङ्गालके एक मुसलमान राजा।

फखर उद्दीन मींगाना—दिल्लीवासी एक मुसलमान कवि, निजाम उल् हकके पुत्र। निजाम उल् अकफर और विशाला मींगिया नामक दो ग्रन्थोंके अन्तर्गत और भी कितनी ग्रन्थ इनके बनाये हुए मिलते हैं। इनकी काव्याधि सेवा उप सुआरा थी। १७८५ ई०की ७३ वर्षकी अवस्थामें उनकी मृत्यु हुई। दिल्लीके वसुपुद्दीन कर्मणि यादकी दरगाहके हार्दिक पर इनकी कर्म आज भी देगोंमें जाती है। मुसलमान समाजमें ये धार्मिक मन्त्रे जाते थे।

फखरउद्दीन सुल्तान—बङ्गालके अन्तर्गत सुपर्णग्रामके मुसलमान अधिपति। ये १३५६ ई०में लक्ष्मणावतीके मुसलमानराज समसुद्दीनस यमालय भेजे गये और उनका राज्य लक्ष्मणावतीके अन्तर्गत कर लिया गया।

फखर उद्दीन—एक अन्तर्गत मुसलमान शासनकर्ता। १७३५ ई०में दिल्लीअर महम्मदशाहके शासनकालमें इन्होंने पटनाका शासन मार प्रदल किया।

फारपुर—१ अयोध्या प्रदेशके बहराइच निलाल्गंत एक उपविभाग । यहा सरयू, भकोगा, घर्बरा आदि नदिया बहती हैं। भूपरिमाण ३८३ वर्गमील है। इस सम्पत्तिके वर्तमान सचवाधिकारी कपूर्थराके महाराज हैं। लाहोर-राज रणजितसिंहके ख्यातिनामा दो पील सरदार फते सिंह और जगज्योतिसिंहने चाहलारिराजको यह स्थान दान किया था। नृदीरानके विद्रोही होने पर यह स्थान उनसे छोन कर कपूर्थलाके राजाको दे दिया गया।

२ उक्त उपविभागका एक प्रधान ग्राम। यह अक्षा० २७ २५' उ० और देशा० ८१ ३१' पू०के मध्य अवस्थित है। पहले यह अहीरोंके अधिनारमें था। सम्राट् अकबरने इस स्थानको उक्त परगनेका मद्र बनाया और यहा एक दुर्गका भी निर्माण किया। राजख सम्रहके लिये एक तहसील स्थापित हुई। १८१८ ई० तक यह दुर्ग और धनागार तहसीलदारके अधीन रहा। पीछे जबसे यह नृदीरानके इलाकेमें आया तबसे उक्त दुर्ग जनहीन हो गया है। यहा शोरा तैयार होता है।

फगयाडा—१ पञ्जाबके कपूर्थला राज्यकी तहसील। यह अक्षा० ३१ ६' से २१ ३१' उ० और देशा० ७१ ४४' से ७१ ५६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ११८ वर्गमील है। इसमें १ शहर और ८८ ग्राम लगते हैं। राजख दो लाख रुपयेसे ऊपर है।

२ उक्त तहसीलका प्रधान शहर। यह अक्षा० ३१ १४' उ० और देशा० ७१ ४७' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या पन्द्रह हजारके करीब है। यहा वाणिज्य-व्यवसाय जोरों चलता है, इस कारण जनसंख्या भी धीरे धीरे बढ़ती जा रही है। शहरमें एक हाई स्कूल और चिकित्सालय है।

फगु—पञ्जाबके अन्तर्गत फेडरेशन राज्यके अधिष्ठत एक स्थान। यह सिमला पर्वतसे ६ फीस पूर्व फोटागड जाने के रास्ते पर अक्षा० ६१ ६' उ० और देशा० ७७ २१' पू०के मध्य अवस्थित है। यह सुरम्य स्थान अङ्ग्रेजोंको अतिप्रिय है। समुद्रपृष्ठसे इसकी ऊँचाई ६ हजार फुट है। सिमलाके अङ्ग्रेज अधिवासी और वैदिक नमन

कारियोंके लिये श्रुतिग संग्रहने एक विश्राम भवन बनना रखा है। पर्वतके ढालप्रदेशस्थ बनको जला कर लोग यहा आनन्दको खेती करते हैं।

फगुआ (हि० पु०) १ होलीकोत्सवका दिन। होनी देखो। २ फागुनके महीनेमें लोगोंका वह आमोद प्रमोद जो बसन्तऋतुके आगमनके उपलक्ष्यमें माना जाता है। इसमें लोग परस्पर एक दूसरे पर रंग फीच आदि डालते हैं और अनेक प्रकारके विशेषण अश्लील गीत गाते हैं। होला देखो। ३ यह वस्तु जो किसीने फागके उपलक्ष्यमें दी जाय। ४ फागुनके महीनेमें गाये जानेवाले गीत, विशेषत अश्लील गीत।

फगुआना ( हि० कि० ) किसीके ऊपर फागुनके महीनेमें रंग छोडना या उसे सुना कर अश्लील गीत गाना।

फगुन ( स० पु० ) एक गोत्रप्रवर्तक ऋषिका नाम।

फगुनहट ( हि० री० ) १ फागुनमें चलनेवाली तेज हवा। इस हवाके साथ बहुत-सी धूल और नृशोंकी पत्तिया आदि भी मिली रहती हैं। २ फागुनमें होनेवाली वर्षा।

फगुनियाँ ( हि० पु० ) विसन्धि नामक फूल।

फगुहरा ( हि० पु० ) फगुहारा देखो।

फगुहारा ( हि० पु० ) १ फगुआ गानेवाला पुरुष। २ वह जो फाग पेटनेके लिये होलीमें किसीके यहा जाय।

फजर ( अ० खी० ) प्रातःकाल, सवेरा।

फजल ( अ० पु० ) अनुग्रह, मेहरबानी।

फजल उल्ला खाँ—१ महिसुरराज हींदरअलीका विख्यात सेनापति। इस्तने १७६४ ६५ ई०के मध्य सदाशिवगड, धारनार आदि स्थानोंमें कई बार महाराष्ट्र-सेनाको विपयस्त कर डाला था। महाराष्ट्र देखो।

२ सम्राट् बाबरके सभास्थ एक अमीर। १५८६ ई०में बनाई हुई इनकी एक मसजिद आज भी विद्यमान है।

फजल हक—एक मुसलमान ग्रन्थकार। ये पैरवाद्वासी फजल इमामके पुत्र थे। अपने पिताके जैसे ये भी अनेक गद्य पद्यकी रचना कर गये हैं। १८५७ ई०के गद्दमें आपने बन्दाके विद्रोही नवाबके साथ मिल कर अङ्ग्रेजोंके विरुद्ध युद्ध किया था। १८५८ ई०के दिसम्बरमासमें

जेनाउ पेपियाके विरुद्ध रोड युद्धमें आप मारे गये ।

फनिर ( हि० खी० ) फर देखो ।

फजिर ( हि० पु० ) फर देखो ।

फनीलन ( अ० खी० ) उत्पत्ता, श्रेष्ठता ।

फनीहा ( अ० खी० ) दुदगा, दुर्गति ।

फनीहनी ( हि० खी० ) फनीहा देखो ।

फनूल ( ग० खी० ) व्यर्थ, निरर्थक ।

फनूलगर्न ( फा० खी० ) अपत्ययी, बहुत व्यर्थ करनेवाला ।

फज्जगर्न ( फा० खी० ) अपत्यय, व्यर्थ व्यय करना ।

फज्जिहा ( म० खी० ) भाकि गोगानिनि भज्ज आमर्दने

पुत्र पृथोदगादित्यान् भस्य फ, टापि अतस्तत्र ।

प्राहणयष्टिना, भारगी नामका धूप । २ देवताह । ३

दुगलभा, जयासा । ४ दन्तिदृष्ट ।

फज्जिपरिका ( म० खी० ) फज्जिगेगक्षारक पत्र यस्या

फय, टापु अतो इत्य । १ आनुपणी, मृसानानी । २

पत्रपतिभेद ।

फज्जो ( म० खी० ) भज्ज अत्र, पृथोदगादित्यान् भस्य फ,

गोरादित्यान् टोप् । १ भारगी, प्रतनेष्टि नामक धूप । २

पन्नापुत्र । ३ दृक्कदापुत्र । ४ योजनवह्नी ।

फज्जोर ( म० पु० ) फज्जो ।

फज्जगादिपक्ष ( म० पु० ) पत्नी आदि करके पांच प्रकार

का नाम, पत्नी, जीवनी, पत्नी, तर्पणी और चुड़ैक यही

पांच प्रकारके नाम । इसका गुण यातहारक, प्राहक,

क्षोषक, फज्जिपर, विरोधनाशक, पथ्य, प्राहक और बलकर

माना गया है ।

फट् ( म० अर्थ० ) १ अनुकरणशब्द । २ अग्नयोज,

तर्पणी अत्र नामक मन्त्रभेद । इस मन्त्रका शान्ति

कुम्भशासन, अर्घ्यपात्रशासन, अर्घ्यपात्र द्वारा पूजोपकरण

में अनुपक्षण, महारोगनाश विरोधनाशक, विविधोपण,

गन्धपुत्र द्वारा फज्जोपण, अतमर्षण, पापपुनराप्ता,

करानुपकार विरोधोपण, हंसान्तिके प्रायाश्चित्तपरित्याग,

होनामिके आवाहक, तद्विनि प्रोक्षण आदिमें प्रयोग

होता है । ( हि० ) ३ धिजोपादि ।

० दिशोत्तरमें दिशा है, कि दिशोके विद्वेषकरुण

शब्दा होनीदि ह कीर भीतर कर्म इवकी दीपकद इवउ

दिश भा ।

फट ( म० पु० खी० ) स्फुट् विकसने पनायत्, पूने  
रादित्यात् मायु । १ फणा । ० दग्ग, फामाउ ।  
३ विनय, छल, धोरा ।

फट ( हि० खी० ) १ किसी फले तलकी हलकी पतली  
चोत्रके हिलने या गिरने पड़नेका शब्द । २ फट् देखो ।

फटक ( हि० पु० ) १ स्फटिक, विहीर फणर । ( खि० ) २  
तत्क्षण, फट ।

फटकन ( हि० खी० ) यह जो फटक कर निफला जाय ।

फटकना ( हि० खि० ) १ हिला कर फट फट शब्द करना ।

२ रूप पर अत्र आदिको हिला कर साफ करना । ३

रई आदिको फटकेसे धुनाता । ४ फेचना, पटकना । ५

चलाना, मारना । ६ पहचाना, जाना । ७ अलग होना,

दूर होना । ८ भ्रम करना, हाथ पैर हिलाना । ९ तट

फडाना, हाथ पैर पटकना ।

फटकरी ( हि० खी० ) फिटकी देखो ।

फटफा ( हि० पु० ) १ रई धुनेकी धुनियेकी धुननी । ०

तटफडाहट । ३ रस और गुणसे हीन कथिता, कोरी

तुकच दी । ४ यह लकड़ी जो फले हुए पेड़में इसलिये

बांधी जाती है, कि रस्मोंके हिलानेसे यह उठ कर गिरे

और फटफटका शब्द हो जिससे विधियां उड़ जायं

अथवा पेड़के पास न आयें । ५ एक प्रकारकी बलुई

भूमि । ऐसी भूमिमें पथरके टुकड़े भी होते हैं जिगने

यह उपनाक नहीं होती ।

फटकाना ( हि० खि० ) १ झलक करना, फेचना । २ फट

कनेका काम किसी दृग्गसे कराना ।

फटकार ( हि० खी० ) १ दुलकार, गिहण । २ नाय ।

फिटकार देखो ।

फटकारना ( हि० खि० ) १ शब्द आदि मारना, चलाना ।

२ भटका दे कर फेकना । ३ अलग करना, दूर करना ।

४ एकमें मित्रा हुए बहुत मीं चोचोंको एक साथ हिलाना

या फटना मारना जिसमें ये छिनरा जायं । जैसे, दादी

फटकारता । ५ लग्न उठाना, लेना । ६ बपड़ेकी बाखी

तह पटक पटक कर घोंना । ७ धरी और बड़ों बात

फट कर चुप करना ।

फटकिया ( हि० पु० ) मीठा नामक एक प्रकारका चिर ।

यह गोबरियासे काम चिपैला होता है और उससे छोटा भी होता है ।

फटकी ( स० खी० ) स्फुटिकारी, फिटफरी ।

फटकी ( हि० खी० ) १ एक प्रकारका पिपडा जो टोकरोंके आकारका होता है । इसमें चिड़ोमार चिड़ियोंके पकड़ कर रखते हैं । २ फटका देखो ।

फटना ( हि० कि० ) १ आघात लगनेके कारण अथवा यों ही किसी पोलो चीजका इस प्रकार टूटना या घड़ित होना अथवा उसमें द्राग पड जाना जिसमें भीतरकी चीजे बाहर निकल पडे अथवा दिखाई देने लगे । २ किसी धने तरल पदार्थमें कोई ऐसा विकार उत्पन्न होना जिससे उसका पानी और सार भाग दोनों अलग अलग हो जायँ । ३ किसी बातका बहुत अधिक होना । ४ भटका लगनेके कारण या और किसी प्रकार किसी वस्तुका कोई भाग अलग हो जाना । ५ किसी पदार्थका बीचसे फट कर छिन्न भिन्न हो जाना । ६ पृथक् हो जाना, बलग हो जाना । ७ असह्य वेदना होना, बहुत अधिक पीडा होना ।

फटफट ( हि० खी० ) १ फटफट शब्द होना । २ ध्वयंकी बात, वस्त्राद । ३ जूते आदिके फटकनेका शब्द ।

फटफटाना ( हि० कि० ) १ ध्वयं वकवाद् करना । २ हिला कर फट फट शब्द करना । ३ टकर मारना, हथ उधर फिरना । ४ प्रयास करना, हाथ पैर मारना । ५ फट फट शब्द होना ।

फटा ( स० खी० ) फट खिया टापू । १ फणा, सापका फन ।

"निर्विषेणापि सर्पेण कर्त्तव्या महती फटा ।

त्रिय भवति मा वास्तु फटाटोयो भयङ्करः ॥"

( पञ्चतन्त्र ३।८३ )

२ दम्भ, घमड, गहूर । ३ छल, धोखा ।

फटा ( हि० पु० ) छिट, छेद् ।

फटिक ( पा० पु० ) १ काचकी तरह सफेद रंगका पारदर्शक पदार्थ, बिस्तीर । २ सङ्ग-मरमर, मरमर पत्थर ।

फटिका ( हि० खी० ) एक प्रकारकी शराब । यह जी आदिसे एमोरको उठा कर बिना खींचे बनाई जाती है ।

फटिकारी ( स० खी० ) खनामएयात क्षारविशेष, फिटफरी

(Alumen, Alum), भिन्न भिन्न देशोंमें यह भिन्न भिन्न नाम से प्रसिद्ध है,—तैलङ्ग—पटिकुरम, तामिल—पडिङ्गरम, दाक्षिणात्य—फटकी, गुजरात—फरारी, बम्बई—फटिकी, बंगाल—फटिकीरी । इसका गुण—सप्राही, सङ्कोचक, अर्पुसिम्बर, बालविस्त्रो, उदरामय और नाम्ना रक्तस्रावमें हितकर, तथा फट्टु स्निग्ध और कषाय पर प्रदररोग, मेदठच्छ, घमन और शोषनाशक है ।

विशेष विवरण फिटकी प्रारम्भमें देखो ।

फट्टा ( हि० पु० ) १ चोरी हुई बाँसकी छड, फलटा । २ टाट ।

फट्टो ( हि० खी० ) बासकी चिरी हुई पतली छड ।

फड ( हि० खी० ) १ जूआ खेलनेकी एक रीति । एक चींगूरी गोलीकी एक एक पीठ पर कुछ शून्य चिह्न देने होते हैं । एक ओर ५ और दूसरी ओर ७ आदि चिह्न रहते हैं । अब उस गोलीको किसी एक धरतनमें रख कर जमीन पर आँधे रख देते हैं । जुआरी उस गोटीके शून्यचिह्नके अनुसार ५, ७, ३, २ आदि जितने जैसा सूझता है, उन्नीके अनुसार बाजी रखता है । बाजी रखनेके बाद उस धरतनको हाथसे अलग कर लेते हैं । अब उन् जमीन पर पडो हुई गोटीके ऊपर जो चिह्न रहना है उसीके अनुसार हार जीत होती है, अर्थात् उम गोटीके ऊपरपाडे चिह्न पर बाजी रखी है उसकी जीत और शेष सर्वोंकी हार मानी जाती है । पहले इस खेलका बहुत प्रचार था । पर अब आईनके अनुसार दण्डनीय हो गया है ।

२ जूएना दौप जिस पर जुआरी बाजी लगा कर जूआ खेलते हैं । ३ पशु, दल । ४ यह स्थान जहा जुआरी एकत्र हो कर जूआ खेलते हैं, जूएना अट्टा । ५ यह स्थान जहा दुकानदार बैठ कर माल खरीदता या बेचता हो । ६ यह गाड़ी जिस पर तीप चढाई जाती है, चरण । ७ गाड़ीका हस्ता । ८ कर देपो ।

फडन ( हि० खी० ) फडकनेकी क्रिया या भाव ।

फडफन ( हि० खी० ) १ फडकनेकी क्रिया या भाव, फडफडाहट । २ घडफन । ३ उत्सुकता, लालसा । ( रि० ) ४ भडफनेवाला । ५ तेज, चंचल ।

फडकना ( हि० खी० ) १ फड फड करना, फडफडाना । २ गति होना, हिलना टोलना । ३ स्थिर रहना, तड

फडाना । ४ पक्षियोंका पर हिलना । ५ किसी अगम में गति उत्पन्न होना ।

फडबाना (हि० वि०) १ दृग्मनेको फडबानेमें प्रवृत्त करना । २ विरहित करना, हिलाना । ३ उत्सुक बनाना, उमग दिलाना ।

फडबानेल्न (हि० पु०) एक प्रकारका पैठ । इसका एक सींग तो सीधा ऊपरको होता है और दूसरा नीचेको झुका होता है ।

फडावांस—महाराष्ट्र राजवंशचारीविशेषका पद । पहले यह पद फण्ड उर्दोका माना जाता था जो राममाममें रह कर साधारण लोगका काम करते थे । पर पीछे यह पद उन लोगोंका माना जाने लगा जो दंड्यानी या मालविभागके प्रधान कर्मचारी होते थे । ये लोग लगान वसूल करनेवालोंका हिसाब जांचा और लिया करते थे । बड़े बड़े इजाम और जागीर देनेकी ध्ययस्था ये ही लोग किया करते थे ।

महाराष्ट्रराज-सरकारमें बहुतोंने फडबानेपरका भोग किया है, पर उनमेंसे नानाफडावीसका नाम भारतके इतिहासमें विशेष प्रसिद्ध है । नाना फडबाने देनी ।

फडफडाना (हि० वि०) १ फडफड शब्द उत्पन्न करना, हिलाना । २ फडफड शब्द होना । ३ घबराना । ४ तड फडाना । ५ उत्सुक होना ।

फडिङ्गा (सं० स्त्री०) फडिङ्गि शब्द इङ्गति गच्छतीति इङ्ग गती अच् टाप् । १ किङ्गिर्कट, भींगुर । २ पतङ्ग, पतिगा ।

फडिया (हि० पु०) १ सामान्य द्रव्यविषयी, यह बनिया जो कुछ घर अन्न बेचना हो । २ यह पुरख जो जूभा खेतोंका व्यापार करता हो, जूभाके फंडूका मालिक ।

फडी (हि० स्त्री०) एक गज पीछी एक गज ऊंची और नीच गज लम्बी परभरी या ईंठों आदिकी देरी ।

फडोल्ना (हि० वि०) किसी चीजको उल्टाया पल्टाया, १ घर उल्टा या ऊपर नीचे करना ।

फण (सं० पु०) धननि विभृति गच्छतीति फण धन् । १ सर्पका विभृत् मूलक, सापका फण । फण्य—फणा, फण, फटा, फट, फाट, फटा, फाँ, फाँ, फण्ड, फण्डा, हवीं, फटी । इस शब्द अनेक पर, फर, धृत्,

धृत् शब्द लगा कर बनाया हुआ ममत्त धृत् सांपका बोधक बनाना है । २ प्राणमार्गके द्वेषों और श्रोतोमार्ग प्रतिपद मर्मद्वय । मर्मन् द्वेषो । ३ रस्सीका फण, मुर्ती । ४ नायमें ऊपरके तानेकी वह जगह जो सामने मुहके पास होती है, नायका ऊपरगे अगला भाग ।

फणकर (सं० पु०) फण कर इवास्पेति, फणस्य करो या । भुजङ्ग, सर्प ।

फणधर (सं० पु०) धरतीति भृ अच् फणस्य धर । सर्प, साप ।

फणधरधर (सं० पु०) फणधरस्य सवभ्य धरः । शिष्य, महादेव ।

फणधृत् (सं० पु०) फण विभृति इति भृ क्तिप् तुश्च । सर्प ।

फणयत् (सं० पु०) फणोऽरयास्तीति फण मनुप्, मस्य च । सर्प ।

फणा (सं० स्त्री०) फणति प्रसारमद्वा गच्छतीति फण गती अच् टाप् । सर्पफणा, सापका फण ।

फणाकर (सं० पु०) करोतीति कृ भञ्, फणाया करा । सर्प ।

फणाधर (सं० पु०) धरतीति भृ भञ्, फणायाः धर । सर्प ।

फणाभर (सं० पु०) विभृति धरतीति भृ पञाच्च । सर्प ।

फणायत् (सं० पु०) फणा अण्यर्थे मनुप् मस्य च । सर्प ।

फणि (सं० पु०) विप ।

फणिक (हि० पु०) नाम, साप ।

फणिका (सं० स्त्री०) एणोऽनुवर्तिका, काले गुण्यका पैठ ।

फणिकार (सं० पु०) एहन्वर्तिश्लोक देनभेत्, एव प्राचीन दुःखताम जो गृहमर्महिराके अनुसार इतिगमं या ।

फणिकेजर (सं० स्त्री०) पत्नीय वेङ्गोऽयं नामकेजर । नामकेसर ।

फणिकेज (सं० पु०) फणिका सह श्लोकाति पैठ अण् । भातवापनी ।

फणिक (सं० दा०) फणाकारं चर । फणिक ज्योतिषके अनुसार नाडीगणना नाम । यह एक सर्पाकार एक

होता है। इसमें मित्र मित्र रथानों पर नक्षत्रोंके नाम लिखे रहते हैं। इन सब नक्षत्रोंका वेध देव फर त्रिवाहका शुभाशुभ निर्णय किया जाता है। इस चक्रके पृष्ठमें १, ६, ७, १४, १३, १८, १६, २४, २५ नक्षत्र और मध्यमें २, ५, ८, ११, १४, १७, २०, २३ और २६ नक्षत्र तथा श्लोडमें ३, ४, ६ १०, ११, १६, २१, २२, २३ नक्षत्र स्मरिथत है। इस चक्रमें त्रिवाहके समय घर और कन्याकी नाडीका मिलान किया जाता है। पर यदि घर और कन्या दोनों एक ही रागिके हैं, तो इस चक्रका मिलान नहीं होता।

फणिचम्पक (स० पु०) जनचम्पकृश, जगदी चम्पा।

फणिजा (स० स्त्री०) फणीव जायते जन-ड। फणि मनसावृक्ष, एक प्रकारकी तुलसी जिसकी पत्तिया बहुत छोटी होती हैं।

फणिजिह्वा (स० स्त्री०) फणिजिह्वेन आहृतिरस्त्वस्य इति अच्। १ महाशनावर, बड़ी सतावर। २ महास मङ्गा, क गहिया नामक ओषधि।

फणिजिह्विका (स० स्त्री०) १ श्वेत शारिवा, क गहिया नामक ओषधि। २ महागतावरो, बड़ी सतावर।

फणिज्झक (स० पु०) फणिनामुञ्जकः, वहिष्कारक उत्पादक इति यावत् पृषोदरादित्वात् साधु, फणितुल्य बहुपत्रपुपवत्त्वात् यथात्व। १ क्षुद्रपत्र तुलसी, छोटे पत्तैनी तुलसी। २ श्यामा तुलसी। ३ मधुर जम्बोद, मीठा नीबू। ४ पलाशवृक्ष।

फणित (स० द्वि०) फण-गनी-क। १ गत। २ नि स्नेहित।

फणितल्पग (स० पु०) फणी शेष इव तल्प फणितल्प तस्मिन् गच्छतीति गम-ड। विष्णु। भगवान् विष्णु। कल्यान्तमें अनन्तशय्या पर सोते हैं, इसीसे उनका फणि तल्पग नाम पडा है।

फणिर (सं० पु०) फणास्त्यप्येति फणा (त्रोहादिभ्यश्च। पा ५।२।१३) इति इनि। १ सर्प, साप। २ सर्पिणी नामक ओषधि। ३ केतु नामक ग्रह। ४ सौंसक, मौसा। ५ मरुचक नामक ओषधि, मरुचा।

फणिरति (स० पु०) फणीन्द्र देवो।

फणिरिय (स० पु०) वायु, हवा।

फणिकेन (स० पु०) फणिना फेन-इव उग्रगुणत्वात्। अहिकेन, अकीम।

फणिभारिका (स० स्त्री०) वृष्णोदुम्बरवृक्ष, काले गूलरका पेड।

फणिभुज (स० पु०) फणिम भुटके भुज क्विप्। पत्त गामन, गरुड।

फणिमुक्ता (स० स्त्री०) मुकामेद, सापकी मणि।  
गुफा देवो।

फणिमुख (स० स्त्री०) फणिन इव मुखमस्य। प्राचीन कालका चौरोंका एक प्रकारका औजार जिससे वे से घ लगानेके समय मट्टी खोद कर के बते थे।

फणिलता (स० स्त्री०) नागवल्कीलता, पान।

फणिवल्ली (स० स्त्री०) फणीव दीर्घा वल्ली। नाग वल्ली।

फणिसम्भारा (स० स्त्री०) कृष्ण उदुम्बर, काला गूलर।

फणिहन्त्री (स० स्त्री०) फणिनो हन्तीति हन् तृच्, डीप्। गन्धनाशुत्री, नेउरकद।

फणिहारी (स० पु०) कपिक्वृत्।

फणिहृत् (स० स्त्री०) फणिनो हरति स्वगन्धेन अप मरायतीति हृ क्विप् तुगागमश्च। क्षुद्र दुरालभा, जजाम्ना।

फणी (स० पु०) फणिन् देवो।

फणोन्द्र (स० पु०) फणिना इन्द्र। १ शेष। २ यामुकि। ३ बडा साप।

फणीयम् (स० द्वि०) पत्रकाष्ठ।

फणीश (स० पु०) फणिनामीश। सर्वेश्वर।  
कणीन्द्र देवो।

फण्ड (स० पु०) फणति फण गर्ती ङ (कम-ताह ङ। उण् १।१।३) जडर।

फतनाराज—गुजरातका एक प्रसिद्ध दलपति। सिपाही विद्रोहके समय शाहरानपुर अञ्चलमें इन्होंने अद्रैजोंको तग तग कर डाला था। आखिर १८५७ ई०के जनमास में वे अद्रैजोंमें अच्छी तरह परास्त हुए।

फतवा (अ० पु०) मुसलमानोंके धर्मशास्त्रानुसार व्यवस्था जो उस धर्मके आचार्य या मौलवी आदि किसी कर्मके अनुकूल वा प्रतिकूल होनेके विषयमें देते हैं।  
फतवा—क़दुभा देवो।

फतेह ( २० मील ) १ विन्ध्य, जोर । २ रुतकार्पाया, साफ़ता ।

फतेहमंद ( २० वि० ) निम्ने फतेह मिर्ची हो जिम्मीकी जोर हुंर हो ।

फतेहाबाद—बदेहाबाद देगो ।

फतिया ( हि० पु० ) एक प्रशारणा उडनेवाला कोडा । यह कोडा विशेषत बरमानके दिनोंमें अग्नि या प्रकाशके धाम पाय मंडराता हुआ अन्नमें उत्तमों गिर गडता है, फतिया ।

फनीलजोड़ ( फा० पु० ) १ पौलिया या और किसी धातु को दीपज । इसमें एक या अनेक क्षीये ऊपर नीचे बने होते हैं । इसमें तेल भर कर बत्तिया जलाई जाती हैं । उन दीपोंमें किसीमें एक, किसीमें दो और किसीमें चार चार बत्तियां जलती हैं । इसे चाँसुगो भी कहते हैं । २ कोई साधारण दीपज, चित्तमदा ।

फनीला ( अ० पु० ) १ जरदोजीका काम करनेवालोंको लकड़ोंकी तीली । इस पर बेजूटा और फूलोंकी डालियां बनानेके लिये कारीगर नारको लपेटते हैं ।

फतुधा—पटना जिल्ला एक नगर और रेल स्टेशन । यह अक्षांश २० ३० उ० और देशांश ८० २१ पू० पटना नगरसे ८ मील दूर पुापुन और गङ्गाके मग्न पर अर लियत है । गङ्गा मग्न पर बसे रहनेके कारण यह तीर्थस्थानरूपमें गिना जाता है । यहाँ वर्षमें ५ मीलें लगते हैं । जिसमेंसे चारदोहाडाको स्नानोपयुक्तमें जो मेला लगता है, यह सबसे बड़ा है । इस समय लगाने ऊपर मनुष्य एकत्र होते हैं ।

फतूद ( अ० पु० ) १ दोष, विकार । २ उपद्रव, खुल फाल । ३ विघ्न, पाप । ४ हाजि, नुकसान ।

फतूरिया ( अ० वि० ) जो किसी प्रशारका फतूर या उद्यान बने, उपद्रवी ।

फतूर ( अ० म्हा० ) १ विन्ध्य, जोर । २ लटका मान् । ३ विन्ध्यमें प्राण पल आदि, वह पल जो लटारें जोरने पर गिना हो ।

फतूरी ( अ० म्हा० ) १ एक प्रशारणी पहलोरने वुरता । यह मिर्च कमर लफ होना है और इसके गामों बदन या पु डी लगाई जाते हैं । आन्वीन इसका नडा हवा ।

० वह कटी, सलूका । ३ विन्ध्य या लटका घन, लटारें या लूममें गिलाहुआ मान् ।

फतेअली—तलपुरमौरीके एक सरदार । मिर्चपुरदेगमें कहीराओने कुछ दिन तक राज्य किया । पीछे फतेअली ने अपरापर बलुचियोंकी सहायतासे उन्हें भगा कर सिन्धु प्रदेश पर अधिकार जमाया । वे एकच्छया अधिपति होना चाहते थे । पर चेमा नहीं हुआ । आरमीय विन्डेड और रतपातना सूझपात हुआ । मय फतेअली मीरपुर आदि कुछ स्थानोंका परित्याग कर ताँतो भाइयो के साथ हिराबादमें राज्य करने लगे ।

विष्णुवर्धन देगो ।

फते खाँ—निजामशाही राज्यके एक सर्वप्रथम कर्ता, मालिक अमरके उयेष्ट पुत्र । मालिक अमरकी मृत्युके बाद १६२६ ई०में फते खाँ निजामशाही राज्यके अधिभाषक हुए थे । पदलभके बाद ही उन्होने निजाम उक्त मुफक की मलाहसे मुगलोंके साथ युद्ध टान दिया । इपर श्रेष्ठ क्षमता हाथमें बा जानेमें वे धीरे धीरे अत्याचारी हो गये । १६२६ ई०में मुर्ता निजामशाह ( २५ ) बाल्यि हुए । फते खाँके हाथ कुछ अधिकार छीनना ही उनका पहला काम था । उनका उद्देश्य भी फनीभूत हुआ । तजरिय खाँका महायत्नसे उन्होंने फते खाँ को बंद कर लिया । मुर्तजा भी उपयुक्त सुविधाके अभावमें सर्वाके अधिप हो उठे । शाहजी औरंगजेबने उनका पक्ष छोड़ कर मुगलोंका पक्ष लिया । मुर्गिअ और जलूके आक्रमणसे वे तन तन ना गये । इस समय मुगलसैन्यापति अजान खाँका उसेज्रासे मुर्तजाने पुा फते खाँको पूर्वाधिकार प्रदान किया । इस अजारे का फतू उलटा ही निजला । फते खाँ अगो हाथमें सारी क्षमता वा कर मुसला निजामके विरुद्ध लड़े हो गये । विन्ध्यपुरके शाहने मुगलोंके विरुद्ध लड़ाई टान दा । फते खाँने उतना नाथ दिया । इस युद्धमें वे फनी विन्ध्यपुरका और फनी मुगलोंका साथ देते थे इस कारण दोनोंकी ही निगाहमें वे विजयवातन रहगये गये । आगिर १६२६ ई०में मुगलसैन्यापति महाराजसर्गने दीडका बादमें फते खाँका नामें नीरसे घेर लिया । निजामशाही राज्यका पतन आरदरअसया समय कर फते खाँ मुगल

सेनापतिके निरुद्ध धातमसमर्पण करनेकी बाध्य हुए। इसके बादसे ये मुगलोंके अधीन काम करने लगे।

**फतेगञ्ज (पूर्व)**—युक्तप्रदेशके बरेली जिलान्तर्गत एक ग्राम। इसकेदो विभाग हैं, पूर्व और पश्चिम। यह अक्षा० २८ ४' ३०" और देशा० ७६ ४२' ५०" बरेलीसे शाहजहानपुर जानेके रास्ते पर अवस्थित है। १७७४ ई०में यह स्थान अङ्गरेज-रोहिला-युद्धकी रङ्गभूमि हो गया था। इस युद्धमें रोहिला-सरदार हाफिज रहमत खान मृत्यु हुई। अयोध्याके नवाब खान सरजूजहाँलाने अङ्गरेजोंकी जय घोषणाके लिये यहां वर्तमान ग्राम बसाया। इसके बाद ये सब स्थान उनके दखलमें आ गये।

**फतेगञ्ज (पश्चिम)**—उक्त बरेली जिलेका एक ग्राम। यहां भी १०६४ ई०के अवशेष मासमें अङ्गरेजों और रोहिलोंका युद्ध हुआ। इस वार भी रोहिलोंकी ही हार हुई थी। इस युद्धक्षेत्रमें दो रोहिले-सरदारोंकी कब्र और मृत-अङ्गरेजसेनाकी समाधिके ऊपर जो स्मृति स्तम्भ स्थापित हुआ था वह आज भी देखनेमें आता है।

**फतेगढ**—१ पञ्जाबके पतियाला राज्यके अन्तर्गत अमरगढ निजामतकी एक तहसील। यह अक्षा० ३० ३३' से ३० ५६' ३०" और देशा० ७६ १७' से ७६ ४२' ५०"के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २४३ वर्गमील और जनसंख्या लाखसे ऊपर है। इसमें बसी और सरहिन्द नामके २ शहर और २४७ ग्राम लगते हैं।

**फतेगढ**—युक्तप्रदेशके फर्रुखाबाद जिलेका सदर। यह अक्षा० २७ २४' ३०" और देशा० ७६ ३५' ५०"के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या सोलह हजारने ऊपर है।

पहले यह स्थान अयोध्याके नवाब-घर्जतोंके अधिकारमें था। १८२० ई०में जब यह अङ्गरेजोंको सुपुर्द किया गया, तब यहां गवर्नर जेन रल्फे पेंडेंट साहबका सदर स्थापित हुआ। १८०४ ई०में होलकरराने फतेपुर दुर्ग पर घाया बोल दिया। पीछे लार्ड लेबके आने पर ये हार खा कर भागे। अनन्तर १८५७ ई०में सिपाही-विद्रोहके समय यह स्थान अङ्गरेजोंके धूलसे तर हो गया था। अङ्गरेज लोग अब रोधके समय दुगकी रक्षा करके भी अपनेकी न बचा

सके। पलातजोंमेंसे कुछ तो नदीमें त्रिट्रोहियोंके हाथ डुबोये गये और कुछ कानपुर भागते समय नाना साहब के गिरफ्तार बन गये थे। जो आश्रय पानेके लिये इधर उधर भटक रहे थे, वे भी धृत हो कर तीन मास काल गारमें रते गये और पीछे यमराजके मेहमान बने। उन मृत देहको एक कूपमें डाल कर ऊपरसे एक स्मृति-स्तम्भ पड़ा कर दिया गया है।

आज भी यहां मोरटविभागका सेनावास है। १८१८ ई०में यहां ब्रिटिश गवर्नमेंटकी गन फैक्ट्री फैक्ट्री (Gun-Carnage Factory) स्थापित हुई। १८३० ई०में काशीपुर (बलकत्तेके उत्तर) की सेण्ट्रल फैक्ट्रीके उठ जानेके बादसे सेनाविभागके फमानवाही यानादि यहां पर ही बनाये जाते हैं।

ईसाइयोंने यहां अनाथ बालक बालिकाओंके लिए एक भवन बनवा दिया है। यहांके लोग वृषिक्राय द्वारा अपना गुजारा चलाते हैं। यहां गन-फैक्ट्री फैक्ट्रीके अलावा एक मिडिल स्कूल, बहुतसे प्राइमरी स्कूल, एक बालिका स्कूल तथा एक रेसा स्कूल है जिसमें केवल यूरोपियन तथा यूरोपियनके लड़के पढ़ते हैं।

० पञ्जाबके गुरुदासपुर जिलान्तर्गत फतेगढ तहसीलका एक नगर। यहां बागमोने शालका विस्मृत कारवार होता है।

**फतेगढ**—१ पञ्जाबके अन्तर्गत राजपिण्डी जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३३ १' ०" से ३३ ४५' ३०" और देशा० ७२ २३' से ७३ १' ५०"के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ८६६ वर्गमील और जनसंख्या लाखसे ऊपर है।

२ उक्त उपविभागका एक प्रधान नगर। इसका प्राचीन हिन्दूनाम घास है। यहां अति प्राचीन और पूर्वं तन प्रोक राजाओंके समयकी मुद्रा पाई गई हैं। यहां जलामात्र होने पर भी नगरकी अरुस्था कराव नहीं है। कालाजाग और गुसावगढ तक दो बड़ी बड़ी सड़कें चली गई हैं निम्नमे याणिक्य ध्वजसायको, विशेष सुविधा है। नगरमें आध कोस दूर २२५ फुट लम्बा, १६० फुट चौड़ा और २६ फुट ऊंचा मट्टीका एक टीला है। इस स्तूप परके प्रस्तरादिका गठन देखनेसे मालूम होता है, कि हिन्दूप्रभावकालमें यहां एक बड़ा नगर था। उसके



उत्तर एक सुन्दर मन्दिरका अन्तर्गत एक शिवलिंग है। इस लिंगाकी उपासके लोग नामदेवी कहते हैं। इसके पूर्वमें श्रीगंजी के दो छोटे छोटे मन्दिर देखे जाते हैं जिनका ध्यान २० फुट है। प्रवाद है कि जिन राजाओं के इन मन्दिरोंमें स्नान करने का आदेश हुआ है। किन्तु उपासके उस स्नानमें यह शिवलिंगा जा सक्ता है यह शिवलिंगाके मुद्राव्यवस्थापियोंके पास एक पुस्तकमें लिखा है, किन्तु कोई भी इस शिवलिंगा नहीं देखे।

फतेहमहमद नाथक—जिलापत महिन्द्रगंज हैदरगंजके पिता। ई. सी. १८८०।

फतेहगंज—राज्यके अन्तर्गत एक गिरिमाता। इसके दक्षिण पश्चिमकी उपत्यका भूमि है। यह अक्षांश ३३ ३४ ३० और देशांश ७४ ४० पूर्वके मध्य अवस्थित है। इसकी लंबाई १० हजार फुट और चौड़ाई ४० मील है।

फतेपुर—मुजफ्फरगंज जिलाके अन्तर्गत एक जिला। यह अक्षांश २५ २६ से २६ १६ ३० और देशांश ८० १४ से ८१ २० पूर्वके मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरमें गङ्गा नदी, पश्चिममें फतेहपुर, दक्षिणमें यमुना और पूर्वमें इलाहाबाद जिला है। भूपरिमाण १६१८ वर्गमील है।

उत्तर और दक्षिणमें गङ्गा तथा यमुना नदीके बहनेसे यह जिला दो भागमें अलग हुआ है। पहले बगुन-सी शोतलगाँव हिमालय पर्वतसे निकल कर इस स्थान को कर रहा था। मात्र भी उनका निद्रांश पाया जाता है। पश्चिम पाण्डु, सिन्धु और तुन नदी प्रवाहित भूमिकाकी इलाहाबाद क्षेत्र बनाए है। जिलेके मध्य भागमें कुछ भीतरी भी है जिनमें हरिकान्ठमें विभिन्न सुविधा होता है। पश्चिममें पर्यटनस्थल बबुलिया पन है।

यहूँ प्राचीनकालमें ही यहाँ भीतरी नामक अनाथ जाति का नाम है। रामायणमें लिखा है, कि रामचन्द्र यहाँ पर सुन्दरके अतिथि हुए थे। यह स्थान बहुत समय तक अंग्रेज राजघरने अधिकांशमें रहा है। इन सब राजाओंके कर्मोत्तराजके द्वारा मुसलमानोंके विरुद्ध युद्ध किया गया। कर्मोत्तराजकी परमाप होने पर भी मराठों

सदरगंजके राज्यपाल पर्यंत इन्होंने स्वाधीनता अर्जित करी थी। अन्तरने सामान्य कारणोंसे अंग्रेजों ने इनका कर अंग्रेजराज्यके विरुद्ध बना भेजा। युद्धमें हिरण्यकर मारे गये और उनका युवा तथा प्रामाण्य भूमिमात्र बच गया। इसके बाद मुगल-सम्राटने राज्य बगल परनेके लिये यह प्रदेश अमीरके जादुर रा जोंके हाथ सौंपा।

इसके समीप ही हमसा नगरका प्यसापरोव प्राचीनत्व का परिचायक है। राजा कुजध्वजने इसे बनाया था।

विराट विवरण इवशा १९२६में देखो।

१९१५ ई०में ग्राहपुरकी गौरीने इस स्थानकी लूटा। तभीसे यह स्थान दिल्लीके शासनधीन हुआ। १९३६ ई० में फतेपुर, कोरा और मदीया नामक स्थान मालिक उल्-साफ नामक किसी शासनकर्ताके अधीन था। उन्होंने अपने बादकालमें तैमूरके शासन आक्रमणमें देनाका भी थी। उन्होंने सुशासनमें राज्य भर ज्ञानि विराजता भी। मुगलशासनके अधिष्ठानके पहले भी यह गढ़ नहीं हुआ। १५२६ ई०में बाबले इस स्थानकी दंगल किया। उस समय भी यह स्थान पठानराजाओंका मंत्र स्थल था। उन्होंने बड़े साहसमें युद्ध करके मुगलोंके राज्यस्थापनकी आशा धूलमें मिला दी थी। हुमायुनके सिंहासन पर अधिकार होने पर भी शेरशाहने यहाँ का संभ्रम करके उन्हें मार भगाया था। दिल्ली शासनकी शासनप्रथा जब सुधरी पर आए, तब फतेपुरका शासन अयोध्याराजके हाथ सौंपा गया। कोराके शासनके अधीनके स्थान पर १७३१ ई०में मराठोंने इस प्रदेशको लूटा और १७५० ई० तक यह उन्होंने दंगलमें रहा। दोठे फतेपुरके पठानोंने यह स्थान मराठोंके हाथसे छीन लिया। इसके तीन वर्ष बाद अयोध्याके शासक यशोवन्त मराठरजोंने उसे जीत कर निज राज्यभुक्त किया।

१७५१ ई०में अयोध्याके दशरथ विशेके अधीनता पाज को तोड़ कर स्वाधीन हो गये। १७५५ ई०में अंग्रेज राजने उन्हें स्वतंत्र राजाके उपाय सौंपा दिया। उर्गी शासनके अधीनके अमुगल फतेपुर मराठ ग्राह आक्रमके हस्तगत हुआ। परन्तु १७५५ ई०में उक्त मराठोंके मराठोंके हाथ आजा

(१) कर्मोत्तराज इलाहाबाद क्षेत्र बनाए है।

पर उनके पूर्वदेशीय राज्य नवाब यज़ीरने ५० लाख रुपयेमें अगरेजोंसे परीव लिये । १७६८ ई०में यहाकी पूर्वस्मृद्धिका हास हुआ । यज़ीरके यहा राज-कर बाकी पड जानेके कारण १८०१ ई०में इलाहाबाद और कोरा अगरेजोंके हाथ लगा । इस समय फतेपुरका कुछ अज इलाहाबादमें और कुछ कानपुरमें मिला दिया गया तथा १८१४ ई०में गङ्गाके किनारे मिठुर नगरमें नई राजधानी बसाई गई ।

१८५७ ई०के जूनमासमें सिपाही-विद्रोहके समय इस स्थानके गृहादि जला दिये गये और अङ्गरेज अधिवासियोंका यथासर्वस्व लूटा गया था । निराश्रय रमणियों और पालिकाओंमें हाहाकार मच गया था । विद्रोहीदल अङ्गरेजको देखते ही जानसे मार डालते थे । प्रायः एक मास तक फतेपुर सिपाहियोंके अधिनारमें रहा । ३०वीं जूनको जेनरल नीलने मेजर रेण्डको इलाहाबादसे कानपुर भेजा । ११वीं जुलाईको जेनरल हेबलफने खागामें जा कर रेण्डका साथ दिया । १२वीं जुलाईको विद्रोहीदल अच्छी तरह परास्त हुए । इसके बाद अङ्गरेजोंकी गोलाघृष्टिसे विद्रोहियोंको फतेपुरसे भागना पडा । १५वीं जुलाईको हेगलकने अङ्गरेजकी और अग्रसर हो कर विद्रोहियोंको पाण्डुनदीके उस पार मार भगाया । इस नदीके किनारे दूसरी बार दोनों पक्षमें लडाईं छिडी । पीछे सिपाही-दल कानपुरको भाग गये, लेकिन तो भी अङ्गरेजराज इस स्थानको अपने दबलमें न कर सके । जब तक लगनऊ नगरका पतन नहीं हुआ और लाईं फलाइनकी सेनाने ग्यालियरके विद्रोही सेनादलको मार न भगाया, तब तक सभी लोग अङ्गरेज शासनकी उपेक्षा करते रहे थे ।

इस जिलेमें ५ शहर और १४०३ ग्राम लगते हैं । जनसंख्या सात लाखके करीब है । गङ्गातीरवर्षीं गिवराजपुरका तीर्थक्षेत्र हिन्दूका एक पवित्र स्थान है । शस्यके अलावा यहा तमाकू और पीतलके बरतन तथा सोडेका विस्तृत कारखार है । गिवराजपुरमें वार्षिकमासमें एक मेला लगता है । इस समय माना स्थानोंके पण्यद्रव्यके अलावा मवेशी, छागल, भेडे, घोडे आदि भी विक्रने आते हैं । यहा १८३७ और १८६८ ई०में घोर अकाल पडा था ।

नियागिष्ठामें यह जिला बहुत पीछे पडा हुआ है । जिले भरमें १७७ सरकारी और १८० पानगी स्कूल हैं । स्कूलके अतिरिक्त यहा ६ अस्पताल हैं जहा रोगियोंकी अच्छी चिकित्सा की जाती है ।

२ उक्त जिलेकी एक तहसील । यह अक्षा० २५ ४३' से २६ ४' उ० और देशा० ८० ३८' से ८१ ४' पू०के मध्य अवस्थित है । क्षेत्रफल ३५६ वर्गमील और जनसंख्या दो लाखके करीब है । इसमें इसी नामका एक शहर और ३७४ ग्राम लगते हैं ।

३ उक्त तहसीलका प्रधान नगर । यह अक्षा० २५' २६' उ० और देशा० ८० ५०' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या प्राय १६२८१ है । बहुत प्राचीनकालसे यह नगर स्थापित है । सम्राट् बाबरने अपने इतिवृत्तमें इसका उल्लेख कर गये हैं । औरङ्गजेबके शासनकालमें इसकी बहुत कुछ उन्नति हुई थी । अयोध्याके सचिव नवाब बाबरअली खाँका समाधिस्तम्भ और मसजिद तथा कोरावली हाकीम अबदुल हुसैनका धर्ममन्दिर ही उल्लेख योग्य है । यहा चमड़े, सातुन, चातुक और अनाजका विस्तृत कारखार है ।

फतेपुर—१ अयोध्याके बाराबाकी जिलेकी एक तहसील । यह अक्षा० २६ ५८' से २७ २१' उ० और देशा० ८० ५६' से ८१ ३५' पू०के मध्य अवस्थित है । क्षेत्रफल ५२१ वर्ग मील और जनसंख्या प्राय ३३,४०७ है । इसमें २ शहर और ६७३ ग्राम लगते हैं । फतेपुर, कुसी, महम्मदपुर, विडोली, रामनगर और बावोसगय आदि परगने इसके अन्तर्गत हैं ।

२ उक्त तहसीलका एक परगना । भूमिपरिमाण १५४ वर्गमील है । यह प्रसिद्ध पानजादाव शका आदि पासस्थान है । लगनऊके प्यातामा सेगजादागण फतेपुरके सेखनादाव शसम्भूत है ।

३ उक्त बाराबाकी जिलेका प्रधान नगर । यह अक्षा० २७ १०' उ० देशा० ८१ १४' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या लगभग ८१८० है । मुगलसाम्राज्यकी उन्नतिके साथ साथ इस नगरकी धीवृद्धि हुई थी । आज भी उन मय मुसलमान निर्मित अट्टालिकादिना परमावशीष देखनेमें आता है । नसिरउद्दौल हैदरके कर्मचारी मौलाना

उत्तर एक सुप्रसिद्ध मन्दिरका भग्नावशेष नजर आता है। इस स्थानकी वहाँके लोग चामुण्डेश्वरी कहते हैं। इसके पूर्वमें और भी कितने छोटे-छोटे स्तूप देखे जाते हैं जिनका व्यास २० फुट है। प्रवाद है, कि चास नगरके इस वृहत् स्तूपमें प्रचुर रत्न गड़ा हुआ है। किस उपाय से उम स्तूपमेंसे वह अर्घ निकाला जा सकता है वह रावलपिण्डीके मुद्राव्यवसायियोंके पास एक पुस्तकमें लिखा है, किन्तु कोई भी इस ओर ध्यान नहीं देते।

फतेहगढ़में बर्खा नायक—विरघ्यात महिसुरराज ईश्वरालीके पिता। ई२ अ० देवो।

फतेहगढ़—काश्मीर राज्यके अन्तर्गत एक गिरिमाला। इसके दक्षिण काश्मीरकी उपत्यका भूमि है। यह अक्षांश ३३ ३४' उ० और देशांश ७४ ४०' पू०के मध्य अवस्थित है। इसकी ऊँचाई १० हजार फुट और लम्बाई ४० मील है।

फतेहपुर—युक्तप्रदेशके इलाहाबाद विभागके अन्तर्गत एक जिला। यह अक्षांश २५ २६' से २६ १६' उ० और देशांश ८० १४' से ८१ २०' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरमें गङ्गा नदी, पश्चिममें कानपुर, दक्षिणमें यमुना और पूर्वमें इलाहाबाद जिला है। भूपरिमाण १६१८ वर्गमील है।

उत्तर और दक्षिणमें गङ्गा तथा यमुना नदीके बहनेसे यह जिला दोआबके अन्तर्भूक्त हुआ है। पहले बहुत-सी खेतखती हिमालय पर्वतसे निकल कर इस स्थान को कर बहती थी। आज भी उनका निदर्शन पाया जाता है। पलायन पाण्ड, सिन्धु और नुन नदी प्रसिद्ध भूभागकी दृश्यावली अतीव मनोहर है। जिलेके मध्य भागमें कुछ भौलों भी हैं जिनसे कृषिकार्यमें विशेष सुविधा होती है। पश्चिममें पर्वतसलन बगलका वन है।

बहुत् प्राचीनकालसे ही यहाँ भोल नामक अनाये जातिका वास है। रामायणमें लिखा है, कि रामचन्द्र यहाँ पर शुकके अतिथि हुए थे। यह स्थान बहुत समय तक अंगल राजवंशके अधिकारमें रहा (१) इन सब राजाओंकी कन्नौजराजके पक्षसे मुसलमानोंके विरुद्ध युद्ध किया था। कन्नौजराजकी पराजय होने पर भी सम्राट्

अकबरकाएके राज्यकाल पर्यन्त इन्होंने स्वाधीनता अभूण रखी थी। अकबरने सामान्य कारणोंसे अप्रमत्त हुँ कर अंगलराज्यके विरुद्ध सेना भेजी। युद्धमें हिन्दुराज मारे गये और उनका दुर्ग तथा प्रासाद भूमिसात् कर डाला गया। इसके बाद मुगल सम्राटने राजस्य बसूल करनेके लिये यह प्रदेश असौधरके ठाकुर रा० भाँके हाथ सौंपा।

इसके समीप ही हस्वा नगरका ध्वंसावशेष प्राचीनत्व का परिचायक है। राजा कुशध्वजने इसे बसाया था।

विलुप्त विवरण हृष वा शस्त्रमें देखो।

११६५ ई०में शाहबुद्दीन घोरीने इस स्थानको लूटा। तभीसे यह स्थान दिल्लीके शासनाधीन हुआ। १३७६ ई०में फतेहपुर, फीरा और महोबा नामक स्थान मालिक उल सार्क नामक किसी शासनकर्ताके अधीन था। उन्होंने अपने वाहुवलसे तैमूरके भीषण आक्रमणसे देशरक्षा की थी। उन्होंने सुशासनसे राज्य भर शान्ति विराजती थी। मुगलराजवंशके अधिष्ठानके पहले भी वह नष्ट नहीं हुआ। १५२६ ई०में बाबरने इस स्थानको दपल किया। उस समय भी यह स्थान पटानराजजाँका केन्द्र स्थल था। उन्होंने बड़े साहससे युद्ध करके मुगलोंके राज्यस्थापनकी आशा धूलमें मिला दी थी। हुमायुनके सिद्धान्त पर अधिकृत होने पर भी शेरशाहने यहाँ बल सग्रह करके उन्हें मार भगाया था। दिल्ली-राजवंशकी शासनप्रभा जब नुकने पर आई, तब फतेहपुरका शासन अयोध्याराजके हाथ सौंपा गया। फीराके जमींदार अय्यरके सुलने पर १७३६ ई०में मराठोंने इस प्रदेशको लूटा और १७५० ई० तक यह उन्हींके दबलमें रहा। पीछे फतेहगढ़के पठानोंने यह स्थान मराठोंके हाथसे छीन लिया। इसके तीन वर्ष बाद अयोध्याके स्वाधीन राजीर मफदरजदूने उसे जीत कर जिन राज्यभुक्त किया।

१७६६ ई०में अयोध्याके वजौर दिल्लीके अधीनता पाश को तोड़ कर स्वाधीन हो गये। १७६५ ई०में अंगरेजराजने उन्हें स्वतन्त्र राजाके जैसा स्वीकार किया। उसी सालकी सन्धिसे अनुसार फतेहपुर सम्राट शाह आलमके हस्तगत हुआ। परन्तु १७७४ ई०में उक्त सम्राट्के मराठोंके हाथ आत्म-समर्पण करने

(१) कन्नौजसे इलाहाबाद पर्यन्त इनका राज्य विलुप्त था।

ए उनके पूर्वदेशीय राज्य नवाब घनोरने ५० लाख रुपयेमें अगरेजोंसे गरीद लिये । १७६८ ई०में यहाकी पूर्वस्मृद्धिका हास हुआ । वजीरके यहा राज-कर वाकी पड जानेके कारण १८०१ ई०में इलाहाबाद और कोरा अगरेजोंके हाथ लगा । इस समय फतेपुरका कुछ अज इलाहाबादमें और कुछ कानपुरमें मिला दिया गया तथा १८१४ ई०में गङ्गाके किनारे विठुर नगरमें नई राज धानी बसाई गई ।

१८५७ ई०के जूनमासमें सिपाही-विद्रोहके समय इस स्थानके गृहादि जला दिये गये और अङ्गरेज अधिवासियोंका यथासर्वत्र लूटा गया था । निराश्रय रमणियों और बालिकाओंमें हाहाकार मच गया था । विद्रोहीदल अङ्गरेजको घेरते ही जानसे मार डालते थे । प्रायः एक मास तक फतेपुर सिपाहियोंके अधिकारमें रहा । ३०वीं, जूनको जेनरल नीलने मेजर रेण्डको इलाहाबादसे कानपुर भेजा । ११वीं जुलाईको जेनरल हेवलकने खागामें जा कर रेण्डका साथ दिया । १२वीं जुलाईको विद्रोहीदल अच्छे तरह परास्त हुए । इसके बाद अङ्गरेजोंको गोलावृष्टिने विद्रोहियोंको फतेपुरसे भागना पडा । १५वीं जुलाईको हेवलकने आङ्गकी और अमसर हो कर विद्रोहियोंको पाण्डुनदीके उस पार मार भगाया । इस नदीके किनारे दूसरी बार दोनों पक्षमें लडाई छिडी । पीछे सिपाहीदल कानपुरको भाग गये, लेकिन तो भी अङ्गरेजराज इस स्थानको अपने बत्तलमें न कर सके । जब तक लखनऊ नगरका पतन नहीं हुआ और लाई फ्लाइयंग सेनाने ग्यालियरके विद्रोही सेनादलको मार न भगाया, तब तक सभी लोग अङ्गरेज शासनकी उपेक्षा करते रहे थे ।

इस जिलेमें ५ शहर और १४०३ ग्राम लगते हैं । जनसंख्या सात लाखके फतेब है । गङ्गातीरपक्षीं शिवराजपुरका तीर्थक्षेत्र हिन्दूका एक पवित्र स्थान है । शस्यके अलावा यहा तमाकू और पीतलके बरतन तथा सोडेका निस्तृत कारबार है । शिवरानपुरमें क्रांतिकमासमें एक मेला लगता है । इस समय नाना स्थानोंके पण्यद्रव्यके अलावा मजेगी, छागल, भेड़े, घोड़े आदि भी विक्रने आते हैं । यहा १८३७ और १८६८ ई०में घोर अकाल पडा था ।

विद्याशिक्षामें यह जिला बहुत पीछे पडा हुआ है । जिले भरमें १७७ सरकारी और १८० धानगी स्कूल हैं । स्कूलके अतिरिक्त यहा ६ अस्पताल हैं जहा रोगियोंको अच्छी चिकित्सा की जाती है ।

० उक्त जिलेकी एक तहसील । यह अक्षा० २५ ४३' से २६ ४' उ० और देशा० ८० ३८' से ८१ ४' पू०के मध्य अवस्थित है । क्षेत्रफल ३५६ वर्गमील और जनसख्या दो लाखके करीब है । इसमें इसी नामका एक शहर और ३७४ ग्राम लगते हैं ।

३ उक्त तहसीलका प्रधान नगर । यह अक्षा० २५ २६' उ० और देशा० ८० ५०' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या प्राय १६२८१ है । बहुत प्राचीनकालसे यह नगर स्थापित है । सम्राट् वावरने अपने इतिवृत्तमें इसका उल्लेख कर गये हैं । औरङ्गजेबके शासनकालमें इसकी बहुत कुछ उन्नति हुई थी । अयोध्याके सचिव नवाब बापरखली खाँका समाधिस्तम्भ और मसजिद तथा कोरायनी हाकीम अबदुल हुसेनका धर्ममन्दिर ही उल्लेख योग्य है । यहा चमड़े, साजुन, चायुक और अनाजका निस्तृत कारबार है ।

फतेपुर—१ अयोध्याके बाराबाकी जिलेकी एक तहसील । यह अक्षा० २६ ५८' से २७ २१' उ० और देशा० ८० ५६' से ८१ ३५' पू०के मध्य अवस्थित है । क्षेत्रफल ५२१ वर्ग मील और जनसंख्या प्राय ३३५४०७ है । इसमें २ शहर और ६७३ ग्राम लगते हैं । फतेपुर, कुर्सी, महम्मदपुर, विठोली, रामनगर और बादोसराय आदि परगने इसके अन्तर्गत हैं ।

२ उक्त तहसीलका एक परगना । भूमिपरिमाण १५४ वर्गमील है । यह प्रसिद्ध गानजादाय शका आदि यासस्थान है । लखनऊके प्यातनामा सेगजादागण फतेपुरके सेगजादाय शसम्भूत हैं ।

३ उक्त बाराबाकी जिलेका प्रधान नगर । यह अक्षा० २७ १०' उ० देशा० ८१ १४' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या लगभग ८१८० है । मुगलसाम्राज्यको उन्नति के साथ साथ इस नगरको धीवृद्धि हुई थी । आन भी उन सब मुखलमान निर्मित अट्टालिकादिका प्यसायशेष देखनेमें आता है । नसिरउद्दीन हिरके, कर्मचारी मौलानो

फरमत् बत्रोका बनाया हुआ इमामबाड़ा ही यहाका प्रधान गृह है। सम्राट् अकबर शाहके समयकी बनी हुई एक मस्जिद आज भी प्रियमान है। उसके अधिकारीके निरुद्ध अफसरप्रदत्त मनद देखनेमें आतो है। अलावा इसके यहा और भी कितने देगमन्दिर हैं। यहा सरकारी अदालत, अस्पनाठ और एक स्कूल हैं।

४ मध्यप्रदेशके होसेन्नाबाद जिलान्तर्गत एक ग्राम। यह अक्षा० २२ ३८' उ० और देशा० ७८ ३४' पू०के मध्य अग्रियन है। मण्डलाके राजव शके बाद यहा गोंड राजगण अर्द्धस्वाधीन भावमें राज्य करते आ रहे हैं। १८५८ ई०में तातियातोपी इसी स्थान हो कर सतपुरा पहाड पर भागे थे।

५ मध्यप्रदेशके दमोह जिलान्तर्गत एक गाएटग्राम।  
६ राजपूतानेके जयपुर राज्यके अन्तर्गत शोपावटी जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २८ उ० और देशा० ७४ ५८' पू० जयपुर शहरसे ६५ मील उत्तर पश्चिममें अग्रियन है। जनसंख्या लगभग १६३६३ है। यहा १४ स्कूल और १ डाकघर हैं।

फतेपुर चौरासी—१ अयोध्याके उनाव जिलेका एक परगना। यह फर्रुखके दक्षिण गङ्गाके किनारे अवस्थित है। यहा पहले ठठेरा नामक आदिमजातिका वास था। प्राय तीन सौ वर्ष हुए, जानवार नामक राजपूत जातिने उन्हे भगा कर अपना धाम स्थापन कर लिया है।

१८५७ ई०के गदरमें यहाके अन्तिम सरदार त्रिदोही दलमें मिला गये थे। फतेगडसे फलातक अगरेजोंको परकडक उन्हेने फानपुरमें नाना म्नाहकके निकट भेज दिया। उताके युद्धमें वे मारे गये। अगरेज सरकारने उनके एक लडकोंको फासी दी थी।

२ उक्त जिलेका एक प्रयाग नगर। यह सफीपुरसे ३ कोस पश्चिममें अवस्थित है। यह स्थान क्रमानुसार ठठेरा, सैयद और जानवारोंके अधिकारमें रहा। मिवाहीयुद्धके बाद यह नगर ब्रिटिश शासनमें मिला लिया गया। प्रतिवर्षके दशहरा उत्सवमें यहा एक मेग लगता है।

फतेपुर सिकरी—युक्तप्रदेशके आगरा जिलेका एक विभाग। भूपरिमाण २७२ वर्गमील है। उत्तरान्न और सारी नदी

तथा आगराको नहर इस विभागमें बहती है जिससे यहाके श्रमकोंकी रोजीवारीमें बहुत सुविधा है। फसल भी अच्छी लगती है। मथुरा, आगरा आदि नगरोंमें जाने आनेके लिये लम्बी चौड़ी सडक चली गई हैं।

० उक्त जिलेका प्रधान नगर। यहा अक्षा० २७ ५' उ० और देशा० ७७ ४०' पू० आगरा शहरसे २३ मील अग्रस्थित है। जनसंख्या सात हजारसे ऊपर है। भारत इतिहास प्रसिद्ध सिकरीयुद्ध इस स्थानके पास ही हुआ था। पानीपत युद्धके बाद जब बाबरने दिल्लीमें राज्यकी प्रतिष्ठा की, तब गणा सप्रामकी आँसे खुलीं। उनका ग्याल था, कि बाबर अपने पूर्वपुरुषोंकी तरह दिल्ली लूटकर खदेज जायेगे, पर ऐसा नहीं हुआ। वे रणजयके बाद दिल्लीमें चिरस्थायी बन्दोवस्त द्वारा मुगलराज्यकी जड मजबूत करनेकी कोशिश करने लगे। अब हिन्दू राजत्व को पुन प्रतिष्ठा करनेकी राणाकी जो इच्छा थी, उस पर पानी फेर गया। तो भी राणा जरा भी विचलित न हुए। वे वीर पुरुष थे, अपने बाहुबलसे उन्हेने मुगलोंको भारतसे मार भगानेका संकल्प किया। इस उद्देशसे उन्हेने कुछ राजपूतों और पठान राजकी सहायतासे बाबरके विरुद्ध युद्ध घोषणा कर दी। १५२७ ई०में फतेपुर सिकरीमें दोनों पक्षमें घोर युद्ध हुआ। इस युद्धमें राजपूत और पठान-सेना मुगलोंके हाथसे अच्छी तरह परास्त हुई और उत्तर भारतमें बाबरके मुगल साम्राज्यकी मिति दृढरूपसे प्रतिष्ठित हुई। इसी समय हिन्दूराजाजी भायलक्ष्मी मदाके लिये निदा हो गई।

सम्राट् बाबरके प्रपौत्र अकबरने १५७० ई०में मुगल दरवारकी स्थापनाके अभिप्रायसे उक्त प्रसिद्ध स्थानके पास ही इस नगरको बसाया। उनके तथा उनके पुत्र जहांगीरके समय यह स्थान अनेक गुरम्य अट्टालिकाओंसे सुशोभित था। परन्तु ५० वर्ष यहा रहनेके बाद मुगल राजगण दिल्लीको चले गये। आज भी प्राचीरपरिधिहित पाच मील तक उस प्राचीन नगरका असाधारण दृष्टि गोचर होता है। यहा सबसे बडा मुसलमान मन्दिरका 'बुन्द दरवाजा' नामक द्वारपथ देखने योग्य है। उस मन्दिरमें फकीरोंके रहनेके लिये बहुतसे घर बने हैं।

यहा मुसलमान साधु शैव सलीम चिस्तीकी कब्र

आज भी विद्यमान है। इन्हींकी रूपाने अकबरने पुत्र लाम किया था, इस कारण उनके पुत्रका नाम सलौम रखा गया। दरगाहके उत्तर अतुल फजल और उनके भाई फेजीका आवासभवन है। अभी उस अट्टालिकामें स्कूल लगता है। पूर्णकी ओर अकबरकी प्रधान महिरीका प्रामाद है। सोपानसयुक्त उच्च स्थानमें घोरवठ और घृष्टान कुमागोका आवास भवन है। प्रवाद है कि अकबरने घोषी मरियम नाम्नी जिस पुर्तगोजन्याका पाणिग्रहण किया था, उसके रहनेके लिये उन्हींने यह सुन्दर अट्टालिकादि बनवा दी थी। पतङ्गिन दिवानी पास और वीयान इ आम (विचारगृह और मन्त्रणा गार) नामक अट्टालिका विशेष चिचहाटी है। हस्तिठार का हस्तिमुण्ड स्वप्नाट अकबरसे नष्ट हुआ था। हिरण मिनार नामक स्तूपिस्तम्भ प्राय ७० फुट ऊँचा है। अलावा इसके और भी कितनी प्राचीन अट्टालिकायें विद्यमान हैं।

आगरेसे आज भी बहुतेरे यह श्रोहीन सौन्दर्य देखने आया करते हैं। गत सौन्दर्यके साथ साथ यह स्थान जनहोन हो गया है। १८५७ ई०में नीमच और नसीरा बादके विद्रोही दलने इन स्थानको अधिकार किया था। पीछे नवम्बरमासमें यह फिरसे अङ्गरेजोंके हाथ लगा।

घर्षमान फतेपुर नगर उक्त धरसायशेपके दक्षिण पश्चिम और सिकरी ग्रामके उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। किन्तु ये दोनों ही स्थान अकबरकी प्राचीर-सीमाके अन्तर्भूत हैं। १५६६ ई०में आर्दन इ अफचरीमें सिकरी ग्राम मुगल राज्यका एक प्रधान स्थानके जैसा उल्लिखित हुआ है। अकबरने समय यहा बाल, पेशा और पत्थर के तरह तरहके कारकायें सम्पादित होते थे। अभी सूतो कालोन और चक्रीका पाट ही प्रधान व्यवसाय सम्पन्न जाता है। शहरमें केवल दो स्कूल हैं। जिनमें अङ्गरेजी और हिन्दी दोनों ही पढ़ाई जाती हैं।

फतेसिंह अहलूवालिया—पञ्जाबकी अहलूवालिया मिसलके एक सरदार। भागसिंहके बाद १८०१ ई०में ये ही दलपति पद पर नियुक्त हुए। इसके बाद इन्होंने सुकर्मिया दल के अधिपति रघातनामा रणजित्सिंहके साथ पवित्र ग्रन्थ छु कर मेल कर लिया और आपसमें पगडों

बदल कर ली। अब दोनोंने ही मिला कर कसुके पटानोंके विरुद्ध युद्ध यात्रा कर दी। किन्तु अन्तकार्य हो वे वितस्ता (B as) पार कर पुन अपने दलकी पुष्टि करने लगे।

१८०५ ई०में यशोवन्तराय होल्करने अङ्गरेजोंको मार भगानेके लिये पञ्जाब सरदारसे मेल करना चाहा, पर इसी बीच १८०६ ई०में अङ्गरेजोंके साथ फतेसिंह और रणजित्की सन्धि हो गई। उस सन्धिके बलसे लार्ड लेक्ने मराठा सरदारको वितस्ताके पार मार भगाया था।

फतेसिंहके साथ रणजित्की मित्रता दिनों दिन गहरी होती गई। १८०६ ई०में दोनों ही शतद्र के वृत्तिण और भङ्ग प्रदेश जीतनेके लिये अग्रसर हुए। १८०७ ई०में भङ्गके सियाल सरदार अहमद यों विताडित हुए और उनका दुर्ग अधिग्रहण किया गया। १८०८ ई०में अङ्गरेज प्रतिनिधि सर चार्ल्स मैटकाफ जब पञ्जाब पधारे तब फतेसिंह दो हजार सेना ले कर मापमचांदके साथ उनके स्वागतमें आगे बढ़े। फतेसिंहकी धीम और विनय नम्र प्रकृति देख कर मैटकाफने लिखा है, कि फतेसिंहमें यदि ऐसी उदारता न रहती, तो रणजित्त कभी भी ऐसे उद्यमार्ग पर न पहुच सकते थे। वे किन्ती भी अग्रमें रणजित्तसे न्यून थे, मैटकाफ साहयने स्वीकार नहीं किया है।

अमृतसरमें राज्यमीमा ले कर अङ्गरेजवहादुर और महाराज रणजित्तसिंहमें जो सन्धि हुई थी, उस उपलक्षमें ये भी यहा उपस्थित थे। १८०६ ई०में उन दोनोंने काङ्गडाकी ओर युद्ध यात्रा की। १८१० ई०में रणजित्तके मूलतान जाने पर लाहोर और अमृतसरका रक्षाभार इन्हींके ऊपर सुपुर्द था। १८११ ई०में ये दोनों ग्राह सुजाके भाई सुलतान महमूदने लिये गजल पिएडी गये। उसी साल फतेसिंहने जलंधरराज-सरदार बुधसिंहका राज्य जीत कर उसकी सारी सम्पत्ति छीन ली। काजुल्के यजीर फने राँके साथ उन्हींने १८१३ ई०को हरद्वे युद्धमें जो घोरता दिखलाई थी, उनमे काजुली सेनापतिको जान ले कर भाग जाना पडा था। बढवलपुर, एजोरो, भीमनर आदि अभियानमें तथा १८१८ ई०के मूलतान अग्ररोधकालमें उन्हीं भोषण युद्ध किया

था। १८१६ ई०में फारमोर अभियानकालमें राजधानी की रक्षाका कुल दायमदार इन्होंने हाथ था। १८२१ ई०में इन्होंने मनखेरा दुर्ग फतह किया था।

बन्धुर फतेसिंहकी वीरता पर रणजित्सिंह मन ही मन जलते थे। उनको इच्छा थी, कि यदि वे किसी तरह फतेसिंहको इस सत्कारसे विदा कर सकें, तो उन्हें भविष्यमें कोई उर न रहेगा, रास्ता विलतुल साफ हो जायगा। इसी अभिप्रायसे उन्होंने लाहौरदरवारस्थित फतेसिंहके विध्वस्त कर्मचारी कादिर बक्सके साथ पड यन्त्र करके फकीर आजीज उद्दीन और आनन्दराम पिण्डारीकी अहलूवालािया राज्य जीतनेके लिये जलन्धर भेजा। यह भवाद् पाने ही फतेसिंह जान ले कर भागे (१८३० ई०में)। अब उन्होंने अ गरेजोंसे सहायता मागी किन्तु रणजित् अ गरेजरजके दोस्त थे, इस कारण उनके निरुद्ध कोई कार्यवाही करना अच्छा नहीं समझा। फलत फतेसिंह नि महाय हो राज्य खो बैठे। पीछे दोनोंमें मेल हो गया। नवनेहाल सिंह और वैशसिंह हने उन्हें खोया हुआ अधिकार वापस दिया। इसके बाद फतेसिंह हने विधासराजतक काविरबक्सके लडकोंको पैद कर उनसे कुछ रुपये वसूल किये।

अनन्तर फतेसिंह फरपुरथला जा कर सच्चन्दसे रहने लगे। १८३७ ई०के अश्वरमासमें उनको मृत्यु हुई। पीछे उनके बड़े लडके नेहार्लामिंह फरपुरथलाके सिंह सन पर बैठे।

फतेसिंह अ आजीवन सदाशुभापी और उदारहृदयके थे। भेटकाफसाहयने लिखा है, "वे नश्र, चिनयो, सत्स्वभावा पत्र, सत्प्रतिभयुक्त और असीम धैर्यवान् थे।"

फतेसिंह—बडौदाके गायकवाड-राजघावा। जब बडौदाका सिंहासना ले कर नाना पडयन्त्र चलने लगा, तब इन्होंने राजशायी चलनेका भार ग्रहण किया। गङ्गाधर शास्त्री उनके मन्त्री थे। मराठोंके साथ उन्हें अनेक बार युद्ध करने पड़े थे। प्रत्येक बार उन्होंने हार होनी गई थी। आगिर उन्होंने १७८० ई०में अ गरेजोंकी सहायता ली। परन्तु १७८० ई०में दमोई अधिनारके बाद उनकी बुद्धि विलकुट पण्ड गई। उन्होंने अ गरेजोंने अहमदाबाद नगरके लिये प्रार्थना की और उनके बन्धुनें ३ हजार

अश्वारोही सेनसे मदद पहुंचानेका प्रवचन दिया। १८१३ ई०में भी अ गरेजोंने उनकी सहायता की थी, किन्तु अब भी मराठोंका क्रोध शान्त नहीं हुआ था। पेशवा उनसे ७ लाख रुपये आयकी सम्पत्ति मागी। फतेसिंहने अपना सारा राज्य छोड देना चाहा। कारण, गङ्गाधर शास्त्री पहले ही पेशवाको सुशर रखनेके लिये विवाह और राज्य दानके सम्बन्धमें पल दे चुके थे। पल पा कर पेशवा विवाहोत्सवसे अप्रसर हुए। गङ्गाधर इस बार बड़ी मुश्किलमें पड गये। इस कारण उन्हें असली बात प्रकट करनी ही पडी। पेशवाने क्रोधसे अन्ध हो बडौदाकी याता की और छलसे गङ्गाधरकी बड़ी निन्दुनतासे हत्या कर पाशव चरितकी पराक्रामा दिखलाई। कहते हैं, कि इस हत्याकांडमें फतेसिंहके शेष दो भाइयोंकी भी सलाह थी। फतेह (अ० खी०) विजय, जीत।

फतेहाबाद—पञ्जाबप्रदेशके हिसार जिलेकी तहसील। यह अक्षा० २६ ३' से २६ ४८' उ० देशा० ७१ १३' से ७६ ०' पू० के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ११७८ वर्ग मील और जनसंख्या दो लाखके करीब है। इन्में १ शहर और २६१ ग्राम लगते हैं। घघरीसे एक नहर काट कर तहसीलके उत्तर हो कर निकल गई है।

२ उक्त तहसीलका सदर। यह अक्षा २६ ३१' उ० और देशा० ७१ २७' पू० हिसारने ३० मील उत्तर पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या लगभग २७८६ है। १३५२ ई०में सम्राट् फिरोजशाह अपने लडके फतेहाके नाम पर इस नगरकी बसाया। १६वां प्रतापशुकी प्रारम्भमें यह स्थान भट्टिसरदार या बहादुरशुके अधिकारमें था। घघरीसे ले कर इस नगर पयन्त फिरोजशाहकी एक नहर दौड़ गई है। यहां देशावल, घृत और चमड़ेका भारो कारवार है।

३ उक्त तहसीलका प्रधान नगर और विचार सदर। यह अक्षा० २१ १' उ० और देशा० ७८ २०' पू० के मध्य अवस्थित है। पहले यह स्थान जाफरनगर नाम से प्रसिद्ध था। औरङ्गजेबने दादाको पराम्म कर इसका फतेहाबाद नाम रखा। युद्धके बाद धकापट दूर करनेके लिये सम्राट्ने जहा प्रिभाम किया था यहा उन्होंने एक धममन्दिर बनवा दिया जो आज भी विद्यमान है।

४ सुसमदेशके आगरा जिलेकी तहसील। यह अत्ता २६ ५६' से २७ ८' ३० और देशा ०७ ५५' से ७८ २६' ५०' के मध्य अवस्थित है। भूपरिमण २४१ वर्गमील और जनसंख्या लापसे ऊपर है। इसमें १ शहर और ८६१ ग्राम लगते हैं।

फयस्रनी हुसेनी—एक सुसममान जीवनी नैपन। इन्होंने 'ताजमिरात् उस सुआरे हिन्दी' नामक ग्रन्थमें १०८ हिन्दी और दक्षिणदेशवासी फयियोंकी आर्यायिका लिखी है और उनकी रचना भी उद्धृत की है।

फयस्रनी शाह—पारस्यके अधिपति। ये कठोर जातिके अफगान थे, १७६७ ई०में मरामके सिंहासनके अधिकारी हुए। अफगानगद्दु जमानशाहका दमन करने और बोनापार्टीका भारतप्रवेश रोकनेके लिये कलकत्तेसे छाड़ घे-सलने सर जान मैकमकी दूत बना कर उक्त पारस्य राजसभामें भेज दिया।

फयउल्ला इमादशाह—बराके शासनकर्ता। पहले ये दक्षिणात्यके बाहमनी राज्यके सुलतान २५ महमूदशाह के अधीन काम करते थे। १४८४ ई०में इन्होंने दिल्लीका अधीनता पाज तोड़ डाला और अपनेको स्वाधीन बतला कर तमाम घोषणा कर दी। १५१३ ई०में उनकी मृत्यु हुई।

फयउल्ला सिराजी—मिराजवासी एक परिदत्त। ये दक्षिणात्यमें बीजापुरके राजा सुलतान अठो आदिलशाहकी राजसभामें काम करते थे। आदिलकी मृत्युके बाद ये दक्षिणात्यका परित्याग कर १५८२ ई०में दिल्ली पहुँचे।

सम्राट् अकबरशाहने उन्हें अपने साथ रखा और उच्च पद दे कर सम्मानित किया। १५८६ ई०में काश्मीरकी राजधानी थीन, रमें उनकी मृत्यु हुई। इस समय भी सम्राट् अकबरशाह उनके साथ थे।

फयखाँ ( फतेवाँ )—बाहमदनगरके आबिसिनिया देशीय नैनापति मालिक अम्यरके पुत्र। १६२६ ई०में पिताकी मृत्युके बाद ये दक्षिणात्यके निजामशाही राज्यके मयें सर्वाँ हो गये। इस प्रकार अमन्तुष्ट हो मुर्ताजा निजाम शाहने उन्हें बड़ी चातुरीने गैबर दुर्गमें बाधक रखा। वहा से त्रिन्नी प्रकार भाग कर उन्होंने फिरसे रानाके त्रिगद अरण्यारण किया। इस वार भी बन्दीभावमें ये दीलना

बाद भेज दिये गये। जो हु उ हो, हु उ समय बाद उन्हें मुक्ति मिली और निमेनी ( निजाम शाहकी माता ) के आदेशसे सेनाध्यक्ष नियुक्त किये गये। परन्तु पीछे घे फिरसे पदच्युत न होये, इस भयसे उन्होंने सुलतानको उमादग्रस्त बतला कर घेद कर रखा और उनके सहचर उमराय आदिको यमपुर भेज दिया। इस हत्याकाण्डके विषयमें इन्होंने सम्राट् शाहजहानको सूचित किया कि, 'उमराय-दल दिल्लीसिंहासनकी अधीनता उच्छेद करनेको कोशिश कर रहे थे, इस कारण मैंने उन्हें यमपुर भेज कर सम्राट् की गौरवरक्षा की है।'

सम्राट् फयखाँकी सहानुभूति पर बड़े प्रसन्न हुए और सुलतानकी भी हत्या करनेको उन्होंने हुकम दे दिया। वम! फिर क्या था, फयखाँको यह चाहते ही थे, उन्होंने १६२७ ई०में बन्दीराजकी मार कर उनके लडके हुसेनको राना बनाया। १६३४ ई०में फय खाँ आत्मसमर्पण करनेको बाध्य हुए और हुसेन निजामशाह ग्यालियरके दुर्गमें घेद रहे गये। पीछे फयखाँ सम्राट् का अनुग्रह लाभ कर लाहौर चले गये और वहीं जीवितके शेष पर्यन्त उन्हें २० लाग रुपया मासिक मिलता रहा।

फयशाह—बदालके शासनकर्ता। १४८२ ई०में युसुफ शाहकी मृत्युके बाद ये सिंहासन पर घेडे। १४६१ ई०में गोजा सुलतान आहजादके हाथ उनकी मृत्यु हुई।

फदकना ( हिं कि० ) १ फड फड शब्द करना, पवदवद करना। २ फुदकना देणो।

फदका ( हिं पु० ) गुडका वह पाग जो अधिक गाढा न हो गया हो।

फदिया ( हिं खी० ) करिया देणो।

फन ( हिं पु० ) १ सापना उस समयका सिर जब कि वह अपनी गर्दनके दोनों ओरकी नलियोंमें घायु भर कर उसे फैला कर छबके आकारका बना लेना है। २ बाल। ३ भटवास। ४ फन देणो।

फन ( फा० पु० ) १ गुण, रूमी। २ रिया। ३ वस्तु कारी। ४ छलनेका हथ, मकर।

फनकना ( हिं कि० ) हयामें मन मन करते हुए हिलना, डोलना या चरना, फनफनाना।

फनकार ( हिं खी० ) फनफन होनेका शब्द, घँसा शब्द



जैसा सापक फूटने या पैल आदिके सास लेनेसे होता है।

फनगना (हि० कि०) नये नये अक्षरोंका निरालना, कल्ला फटना।

फनगा (हि० पु०) १ नई और कोमल डाली, कल्ला। २ घास आदिकी तोली। ३ फतिगा।

फनना (हि० कि०) कामका आरम्भ होना, काममें हाथ लगाया जाना।

फनफनाना (हि० कि०) १ हवा छोड़ कर वा चौर कर फनफन शब्द उत्पन्न करना। २ चबलताके कारण हिलना या श्चर उधर करना।

फनस (हि० पु०) कटहड़।

फनिधर (हि० पु०) सर्प, साप।

फनिपति (हि० पु०) फणिवति देख।

फनिपाला (हि० पु०) १ गज डेढ़ गज लंबी करघेकी एक लम्बी जिम पर तानी लपेटी जाती है। इसके दोनों सिरों पर दो चूले और चार छेद होने हैं। २ नाग, माप।

फनिराज (हि० पु०) फणोन्द्र।

फनी (हि० स्त्री०) १ लकड़ी आदिका वह टुकड़ा जो किसी ढोली चीजकी जड़ में उभे कसने या दृढ़ करनेके लिये ठोका जाता है, पथर। २ जुल्लहार्का एक बीजार जो कघीकी तरहका होता है और घामकी तीक्ष्णोंका बना होता है। इससे दवा कर शुना हुआ बाना ठीक किया जाता है।

फफटना (हि० कि०) १ किसी गीले पदार्थका बट कर फैलना। २ फैलना, बटना।

फफसा (हि० पु०) १ कुम्फुस, के फटा। २ वि०) २ फूला हुआ पर भीतरमें गाली, पोला। ३ स्यादहीन, फीका।

फफुदी (हि० स्त्री०) फाईकी तरहकी पर मफेद तह जो बरसातके दिनोंमें फल, लकड़ी आदि पर लग जाती है, भुफडी। यह यधार्थमें खुमी या कुकुमुत्तेकी जातिके बहुत सूक्ष्म उद्भिद् हैं। यह ग्रास कर जन्तुओं या पेड़ पौधों, मृत या जीवित शरीर पर हो पल सक्ते हैं और उद्भिदोंके समान मट्टी आदि द्रव्योंको शरीरद्रव्यमें परिणत करके शक्ति इनमें नदी होती।

फफोर (हि० पु०) एक प्रकारका जगली प्याज। यह हिमालयमें छ हजार फुटकी ऊँचाई तक होता है और प्राय प्याजकी जगह काममें आता है।

फफोला (हि० पु०) आगमें जलनेसे चमड़े परका पोला उभार जिसके भीतर पानी भरा रहता है, छाला।

फफरना (हि० कि०) १ मोटा होना। २ कफटना देखो।

फवती (हि० स्त्री०) १ देशकालानुसार सूक्ति, वह बात जो समयके अनुकूल हो। २ हंभीकी बात जो किसी पर घटती हो, चुटकी।

फवन (हि० स्त्री०) शोभा, छवि।

फवना (हि० कि०) उचित स्थान पर रखना, ऐसी जगह लगाना या रखना जहा अच्छा जान पड़े।

फवीला (हि० वि०) जो फवता या भला जान पड़ता हो, शोभा देनेवाला।

फफण (स० पु०) सन्निपात।

फर (स० स्त्री०) फलतीति फल जच्, लस्य र। फलक।

फरक (हि० स्त्री०) १ फरकनेका भाव। २ फरकनेकी क्रिया। ३ फुरतीसे उछलने कूदनेकी चेष्टा।

फरक (अ० पु०) १ पार्थक्य, अलगाव। २ दो वस्तुओं के बीचका अन्तर, दूरी। ३ कामों, बसर। ४ अन्यता, परायापन। ५ भेद, अन्तर।

फरकन (हि० पु०) १ फरकनेका भाव। २ फरकनेकी क्रिया।

फरकना (हि० कि०) १ फरकना, उठना। २ स्फुरित होना, उभटना। ३ उड़ना।

फरना (हि० पु०) १ छप्पर जो अलग छा कर पड़े पर चढाया जाता है। २ टट्टर जो छार पर लगाया जाता है। ३ ब डेरके एक ओरकी छाजन, पल्ला।

फरकाना (हि० कि०) १ सचालित करना, हिलाना। २ फरकाना, बार बार हिलाना। ३ विलग करना, अलग करना।

फरहा (हि० पु०) गाडीका वह खंटा जो हरसेके बाहर पट्टीमें लगाया जाता है। इन पर लकड़ी, बास या बले रख कर गन्मियोंसे कस कर ढाँचा बनाया जाता है।

फरकी (हि० स्त्री०) १ बाँसकी पतली तोली। इसमें

लामा लगा कर चिड़ोमार निडिया फ साते हैं । २ यह वडा पत्थर नो दोनरोंकी चूनाईमें दूर दूर पर पडे वलमें लगाया जाता है ।

फरसीला ( हि० पु० ) फरकिल्ला देखो ।

फरज द ( फा० पु० ) पुत्र, लडका, बेटा ।

फरजिद ( हि० पु० ) फरज देखो ।

फरजो ( फा० पु० ) शतरजना एक मोहरा जिसे रानी या रजोर भी कहते हैं । गेलमें जितने मोहरे हैं सयोंमें यह वडा उपयोगी माना जाता है । शतरजके किमी किमी गेलमें यह टेडा चलता है और शेषमें प्राय यह सीधा और टेडा दोनों प्रकारकी चाल आगे और पीछे दोनों ओर चलता है । ( हि० ) २ बनावटी, नरली ।

फरजोद ( फा० पु० ) शतरजके खेलमें एक योग । इसमें फरजो किसी व्यादेके बल पर बादशाहको चेम्पी शह देता है जिससे निपक्षकी हार होती है ।

फरद ( अ० खी० ) १ लेला या वस्तुओंकी सूची आदि जो स्मरणपाथ किसी कागज पर अलग लिखी गई हो । २ एक प्रकारका लयका कवृतर । इसके सिर पर टीका होता है । ३ बरफोले पहाडों पर होनेवाला एक प्रकारका पक्षी । इसके विषयमें वैसी ही बातें प्रसिद्ध हैं जैसा बजया और चरईके विषयमें । ४ यह कविता जिसमें केवल दो पद रहते हैं । ५ रजाई या दुलाइका ऊपरो पहा । ६ एक ही तरहके, एक साथ बनानेवाले अथवा एक साथ काममें आनेवाले कपडोंके जोडमेंसे एक कपडा, पहा । ( वि० ) ७ अनुपम, बेजोड ।

फरफ द ( हि० पु० ) १ छल कपड, दाँव पेच । २ नखरा, चौचला ।

फरफर ( हि० पु० ) निम्नो पदार्थके उडने या फडफनेसे उत्पन्न शब्द ।

फरफराना ( हि० कि० ) 'फरफर' शब्द उत्पन्न होना, फडफडाना ।

फरमावन्दार ( फा० वि० ) आहाफारे, हुषम मानने वाला ।

फरमा ( अ० पु० ) १ दाँचा, डील । ३ लफडी आदिफा बना हुआ दाँचा या साँचा जिस पर रब कर चमार जूता बनाते हैं, बालवृत् । ३ कोई चीज टालनेका साँचा ।

४ कागजफा पूरा तगना जो एक बारमें प्रेममें छापा जाता है । फार्म देखो ।

फरमाइश ( फा० खी० ) आह्ला, जिशियन यह आह्ला जो कोई चीज लाने या बनाने आदिके लिये दी जाय ।

फरमाइशी ( फा० वि० ) विशेषरूपसे आह्ला दे कर मगाया या तैयार कराया हुआ ।

फरमान ( फा० पु० ) राजसीय आज्ञापन, अनुयागमनपत्र ।

फरमाना ( फा० कि० ) आह्ला देना, हुषम देना । इस शब्दका प्रयोग प्राय बडोंके सम्बन्धमें उनके प्रति आदर सूचित करनेके लिये होता है ।

फरयाद ( हि० खी० ) करिबान देखो ।

फरयारी ( हि० खी० ) हलके जाघेमें लगी हुई वह लकडी जिसम फाल लगा रहता है, गोंपो ।

फरलाग ( अ० पु० ) भूमिकी लम्बाइका एक अ गरेजो माप । यह एक मोटका आठवाँ भाग और चालीस राड या पोल लट्टे )के बराबर होता है ।

फरलो ( अ० खी० ) एक प्रकारकी छुट्टी जो सरफारो नौकरोंको बाघे बेनन पर मिलती है ।

फरखरी ( अ० पु० ) अ गरेजो सन्का दूनरा महीना । यह महीना प्राय अठ्ठाइन दिनका होता है, परन्तु जब लीपियर आता है अर्थात् जब मन् इसवी ४से पूरा पूरा विभक्त हो जाता है, उस वर्ष यह २६ दिनका होता है । जब सन्में फराई और दहाई दोनों अकोंके स्थानमें शून्य होता है, उस अन्वयामें यह तब तब २६ दिनका नहीं होता जब तक सैकडे और हजारका अक ४से पूरा पूरा विभाजित न हो ।

फरवार ( हि० पु० ) फलिहान ।

फरवारी ( हि० खी० ) अन्नका वह भाग जो किसान अपने फलिहानमेंसे राशि उठानेके समय बडई, घोवी ब्राह्मण, नाई आदिफो निकाल कर देते हैं ।

फरनी ( हि० खी० ) एक प्रकारका भूना हुआ ध्यान जो भुाने पर भीतरसे पोला हो जाता है, लार । २ फरही देखो ।

फरशा ( अ० पु० ) १ ईटनेके लिये विछानेका बरत, पिछा यन । २ घर या कोठरीके भीतरकी वह समतल भूमि जो पत्थर या ईंटे विछा कर या चूने गागेमें ढगवरकी गई हो । ३ समतलभूमि, धरातल ।

फरशद (फा० पु०) यह ऊँचा और समतल स्थान जहाँ फरश बना हो।

फरशी (फा० स्त्री०) १ फूल, पोतल आदिका बना हुआ बरतन। इसका मुह पतला और सफ़रा होता है। इस पर लीग नैचा, सटक आदि लगा कर तमाकू पीते हैं। २ यह हुषका जो उक बरतन पर नैचा आदि लगा कर बनाया गया हो।

फरसा (हि० पु०) १ तेज और चौड़ी धारकी एक प्रकारकी कुल्हाड़ी। यह प्राचीनकालमें युद्धमें काम आती थी।

फरसी (हि० स्त्री०) फरशी देखो।

फरहा (हि० पु०) चौड़ी और पतली पररियाँ जो चरकी आदिके बीचकी नाभिसे बाध कर या गाड़ कर खड़े बलमें लगाई जाती हैं, फरेहा।

फरहत (अ० स्त्री०) १ आनन्द, प्रसन्नता। ३ मन शुद्धि।

फरहद (हि० पु०) बह्नाकमें मसुठके किनारे होनेवाला एक पेड़। यह पेड़ थोड़े दिनोंमें बड़ कर तैयार हो जाता है और न बहुत बड़ा और न बहुत छोटा, मध्यम आकारका होता है। इसमें पहले काटे निरुलते हैं, पर जब यह बड़ा होता, तब उससे जो छिलके उतरते हैं उसीके साथ समीं काटे जाते रहते हैं। अन्तमें रुग्ण विलुप्त चिकना हो जाता है। परन्तु बालियोंके काटे दूर नहीं होते, वे सब दिन रह जाते हैं। जिस प्रकार टाक पेड़की एक नालमें तीन तीन पत्तियाँ होती हैं, उसी प्रकार इसमें भी। इसके फूल लाल और सुन्दर होते हैं। फूलोंके भूषते ही फलिया लगती हैं। फूलों तथा छालसे लाल रंग निकाला जाता है। छालको कूट कर रस्मीं भी बढी जाती हैं। इसकी लकड़ी फटती या चिटकती नहीं और नरम तथा साफ होती है। पुराणोंमें इसे पञ्च देवतकमें माना है। पारिभ्र देवो।

फरहर (हि० वि०) १ जो एकमें लिपटा या मिला हुआ न हो, अलग अलग हो। २ शुद्ध, निर्मल। ३ तेज, बालाक। ४ जो कुछ दूर दूर पर हो। ५ स्पष्ट, साफ। ६ प्रसन्न, हटमत्त।

फरहरना (हि० कि०) १ फरफराना, फरफना। २ फहराना, उडना।

फरहरा (हि० पु०) १ पताका, भडा। २ कपड़े आदिका यह तिकोना वा चौकोना टुकड़ा जिसे छडके सिरे लगा कर झड़ी घनाते हैं और जो हवाके भँकेसे उडना रहता है। (वि०) ३ स्पष्ट, अलग अलग। ४ शुद्ध, निर्मल। ५ प्रसन्न, विला हुआ।

फरहरी (हि० स्त्री०) फल।

फरहा (हि० पु०) धुनियोंकी फमानका यह भाग जो चौड़ा होता है और जिस परसे हो कर तात दूसरी छोर तक जाती है। इसका आकार घेने सा होता है और धुनते समय आगे बढ़ता है।

फरही (हि० स्त्री०) लकड़ीका यह चौड़ा टुकड़ा जिस पर ठठे बरतन रख कर रेंतीसे रेतते हैं।

फरा—मथुराजिलेका एक नगर। यह अक्षा० २७ १६' उ० और देशा० ७७ ४६' पू० यमुना किनारेसे प्राय १ मील दूर तथा मथुरासे १३ मील दक्षिणपूर्वमें अवस्थित है। पहले यहा तहसीलका सदर था।

फरा (हि० पु०) एक प्रकारका व्यञ्जन। इसके बनानेके लिये पहले चावलके आटेको गरम पानीमें गूँध कर उसकी पतली पतली बत्तिया बढते हैं और फिर उन बत्तियोंको उबलते हुए पानीकी भापमें पकाते हैं।

फराकत (फा० वि०) १ विस्तृत, आयन। २ फरागत। फरागत देखो।

फराफ (फा० वि०) विस्तृत, लया चौड़ा।

फराधी (फा० स्त्री०) १ विस्तार, चौड़ाई। २ आनन्दता, सम्मानता। ३ घोड़ेका तंग। यह उसकी पीठ पर फयल गरदनी आदि डाल कर या यों ही उस पर लगाया जाता है। यह चौड़ा तसमा या फांता होता है और उसके दोनों सिंसें पर कड़े लगे रहते हैं।

फरागत (अ० स्त्री०) १ मुक्ति, छुटकारा। २ निश्चिन्ताता, बेफिकी। ३ मल्लयाग, पाधाना फिरना।

फराज (फा० वि०) ऊँचा।

फराजी—मुसलमानोंका धर्मसम्प्रदायविशेष। फरिदपुरके अन्तर्गत दौलतपुरीवासी हानी सरितुहाने इस नये मतका प्रवर्तन किया। महम्मदीय धरतन शाखके प्रसिद्ध

टीकाकार अबूहनीफका मतानुसरण करके वे लोग जगत् क्रिया और ईश्वरतत्त्व सम्बन्धमें विशेष भक्ति प्रशंसन करते हैं। सुन्नी सम्प्रदायके अन्तर्भूक्त होने पर भी वे पूर्वप्रचलित अशास्त्रीय बुगचारको नहीं मानते। उन लोगोंका कहना है, कि इुरान शास्त्र ही मोक्ष साधनका प्रधान अथलम्बन है।

फरीदपुर शब्दमें लिखा है, कि गङ्गा ( पद्मा ) और ब्रह्मपुत्र नदीके मध्यप्रती जो डेल्टा अवस्थित है, वहाके प्राय सभी मुसलमान उस देशके आदिम अधिवासी हैं। अफगान और मुगलोंने आक्रमणके समय डरके मारे उन्हींने इस्लाम धर्म ग्रहण करने पर भी उनके हृदयसे अत्यस्त हिन्दूभाव और आचार ध्यरहार दूर नहीं हुआ, उषोंके ल्यों बना रहा। हाजी सरितुला मुसलमान समाजकी अग्रजति देव कर बडे दु न्वित हुए। उन्हींने इस त्रिपयमें अमम्मति प्रकट कर जनसाधारणको देवपूजाके बदलेमें इुरान-प्रर्णित पक्षेधरोपासना और सरल तथा साधु आचारीका अनुष्ठान करनेके लिये अनुयोग किया। उन्हीं ने त्रिप्राहमें जो फजूल चर्च होता था उसे बंद कर दिया और सरकी सुन्नत करनेके लिये फरमाया। उनके आचरित धर्ममतके कुछ प्रधान नियम ये हैं—१ धर्मयुद्ध ( निहाद )-की कर्त्तव्यता, २ त्रिश्वासहन्ता, पापएड और नास्तिकोंका पाप, ३ ईश्वरपूजामें क्रियाकलापादिका अनुष्ठान और ४ सरोंको उस एक ईश्वरका अग्रदान। फराजी लोग काष्ठ नहीं देते, घोतीको कमरमें एक बार लपेट कर पेटके सामने खोम लेते हैं, घुटनेको जमीनमें टेक कर नमाज पढते हैं, इत्यादि कुछ बाहरी आचार देनेसे ही पता लग जाता है, कि ये फराजी हैं। प्रय र्त्तक जब तक जीते रहे, तब तक इस मतका बहुत प्रचार था। प्राय पचास वर्षके अन्दर सैकड़ों मुसलमान उन के शिष्य हो गये। अभी पश्चिम बङ्ग और बिहार आदि स्थानोंमें भी फराजी मतावलम्बी सैकड़ों मुसलमान देखनेमें आते हैं।

हाजीकी मृत्युके बाद उनके बडे लडके वाइमिया फराजीदलके धर्मगुरु बने, किन्तु समाजदोषसे वे मुसलमान समाजके अप्रियमाजन हो गईं। उनकी इस असन्प्रवृत्तिके लिये पृथ्वा-सरकारने उन्हें कई बार बंद किया।

१८६२ ई०में ढाका नगरमें उनकी मृत्यु हुई। उनके दो पुत्र आज भी फराजीदलकी धर्मनायकता करते हैं। अभी उनमें विसा धर्मोन्माद नहीं है। वे अभी राजभक्त, निरोह और शान्तम्यभावके ही गये हैं।

मुसलमान जातिनी धमान्ति, धर्ममें उत्साह और प्रस्तापित नीति पालनके त्रिपयमें उनका विशेष लक्ष्य है। वे अपने धर्ममें इतने कट्टर हैं, कि जब कभी कोई उनके धर्मकी निन्दा करता, तभी वे उस पर दूट पडते हैं।

फरामोज ( फा० वि० ) १ विस्मृत, भूला हुआ, चित्तसे गिरा हुआ। ( पु० ) २ लडकोंका एक खेल। इसमें वे आपसमें कुछ समयके लिये यह बंद लेते हैं, कि यदि एक दूसरेको कोई चीज दे, तो यह फौरन 'फरामोज' कह दे। यदि चीज पाने पर पानेवाला 'फरामोज' न बंदे, तो यह हार जाता।

फरामगिरि—आसामप्रदेशके गारो पहाडके दक्षिण पूर्णमें अवस्थित एक ग्राम। यह समुद्रपृष्ठसे ३६५२ फुट ऊँचा है।

फार ( अ० वि० ) जो भाग गया हो, भाग हुआ।

फारल ( हि० स्त्री० ) १ फैलाव, विस्तृत। २ तन्ता। फारासडङ्गा—इसका देशीय नाम चन्द्रनगर वा चन्द्रनगर है। सबसे फरासीसियोंने यहां एक कोठी खोली, तभीसे यह फारासडङ्गा नामसे मगहूर हुआ है।

चन्दननगर और फरागी। देखो।

फारासी—फ्रान्सदेशके अधिवासी।

फारव और धुष्टान शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

१६वीं शताब्दीमें जो मन्व यूरोपीय शक्तियां याणिज्य करनेकी इच्छासे भारतवर्ष आई थीं, उनमेंसे फारासीगण चतुर्थे थे। पुत्तगोज, ओलन्दाज और अङ्गरेजोंके बाद फारासी लोग भारतवर्ष आये हैं।

१५०३ ई०में फ्रान्सपति १२वें लुरंके समय रीयन् नामक स्थानके यणिकोंने पूर्णसागरमें याणिज्य करनेका पहले पहल आयोजन किया। १५३७ और १५४३ ई०में १२वें लुरंके उत्तराधिकारी १म फ्रान्सिसने अपनी प्रजाको सुदूरदेशोंमें जा कर याणिज्य करनेका हुक्म दिया। किन्तु नाना विप्लवोंने उनका उद्देश्य सिद्ध न हो सका।

१६०१ ई०में सेल्टमालोसे दो जहाज लफटेनाएट बाद

फरशव द ( फा० पु० ) यह ऊंचा और समतल स्थान  
अहा फरजा बना हो ।

फरसी ( फा० खी० ) १ फूल, पीतल आदिका बना हुआ  
वरनन । इसका मुह पतला और मंकरा होता है ।  
इस पर लोग नैचा, सटक आदि लगा कर तमाकू पीते  
हैं । २ यह हुषका जो उक्त वरनन पर नैचा आदि लगा  
कर बनाया गया हो ।

फरसा ( हि० पु० ) १ तेज और चौड़ी धारकी एक  
प्रकारकी छुन्हाडी । यह प्राचीनकालमें युद्धमें काम आती  
थी ।

फरसी ( हि० खी० ) फरजी देखो ।

फरहटा ( हि० पु० ) चौड़ी और पतली पटरियाँ जो  
चरपी आदिके बीचकी नाभिसे बाध कर या गाड़ कर  
घड़े बलमें लगाई जाती हैं, फरहा ।

फरहत ( अ० खी० ) १ आनन्द, प्रसन्नता । ३ मन  
शुद्धि ।

फरहद ( हि० पु० ) यज्ञालमें ममुद्रके किनारे होनेवाला  
एक पेड़ । यह पेड़ थोड़े दिनमें बढ कर तैयार हो जाता  
है और न बहुत बढा और न बहुत छोटा, मध्यम  
आकारका होता है । इसमें पहले काटे निकलते हैं, पर  
जब यह बढा होता, तब उमसे जो छिलके उतरते हैं उसीके  
साथ सभी काटे जाते रहते हैं । अन्तमें स्क्न्ध बिल  
खुल चित्रना हो जाता है । परन्तु खालियों के काटे दूर  
नहीं होते, वे सय दिन रह जाते हैं । जिस प्रकार डाक  
पेड़की एक नालमें तीन तीन पत्तियाँ होती हैं, उसी प्रकार  
इसमें भी । इसके फूल लाल और सुन्दर होते हैं ।  
फूलोंके झुत्ते ही फालिया लगती हैं । फूलो तथा छालसे  
लाल रंग निकाला जाता है । छालको कूट कर  
रस्मी भी बढी जाती है । इसकी लकड़ों फटती या  
चिटकनी नहीं और नरम तथा साफ होती है । सुरा  
जोंमें इसे पशु देयनरमें माना है । पारिभ्रष्ट देखे ।

फरहर ( हि० खी० ) १ जो एकमें लिपटा या मिला हुआ न  
हो, अलग अलग हो । २ शुद्ध, निर्मल । ३ तेज, धालाफ ।  
४ जो कुछ दूर दूर पर हो । ५ स्पष्ट, माफ । ६ प्रसन्न,  
हृत्परा ।

फरहरना ( हि० कि० ) १ फरफराना, फरकना । २ यह  
राना, उडना ।

फरहरा ( हि० पु० ) १ पताका, भडा । - कपड़े आदिफा  
यह तिफोना या चौकीना टुकडा जिसे छडके सिरे लगा  
कर भडी बनाने हैं और जो हवाके भँकेसे उडता रहता  
है । ( वि० ) ३ स्पष्ट, अलग अलग । ४ शुद्ध, निर्मल । ५  
प्रसन्न, मिला हुआ ।

फरहरी ( हि० खी० ) फल ।

फरहा ( हि० पु० ) धुनियोंको फमानका यह भाग जो चौड़ा  
होता है और जिस परसे हो कर तात दूसरी छोर तक  
जाती है । इसका आकार घेने सा होता है और धुनते  
समय आगे बढता है ।

फरही ( हि० खी० ) लकड़ीका यह चौड़ा टुकडा जिस पर  
ठठरे बरतन रख कर रेतोसे रेतने हैं ।

फरा—मथुराजिलेका एक नगर । यह अक्षा० २७' १६'  
उ० और देशा० ७७ ४६' पू० यमुना किनारेसे प्राय  
१ मील दूर तथा मथुरासे १३ मील दक्षिणपूर्वमें अवस्थित  
है । पहले यहा तहसीलका मुख था ।

फरा ( हि० पु० ) एक प्रकारका प्यजन । इसके बनानेके  
लिये पहले चावलके आटेको गरम पानीमें गुंध कर  
उसकी पतली पतली बत्तिया बढते हैं और फिर उन  
बत्तियोंको उढलते हुए पानीकी भापमें पकाने हैं ।

फराफत ( फा० वि० ) १ विस्तृत, आयत । २ फरागत ।  
फरागत देखो ।

फराफ ( फा० वि० ) विस्तृत, लया चौड़ा ।

फराथी ( फा० खी० ) १ विस्तार, चौड़ाई । २ आङ्गता,  
सम्पन्नता । ३ घोड़ेका तग । यह उसकी पीठ पर बंधल  
गद्दनी आदि डाल कर या यों ही उस पर लगाया जाता  
है । यह चौड़ा तम्ना या फाता होता है और उसके दोनों  
सिरों पर कड़े लगे रहते हैं ।

फरागत ( अ० खी० ) १ मुक्ति, छुटकारा । २ निदिचन्ता,  
वेकिकी । ३ मलत्याग, पापाता फिरता ।

फराज ( फा० खी० ) ऊंचा ।

फराजी—मुसलमानोंका धर्मसम्प्रदायविशेष । फरिदपुरके  
अन्तर्गत दौलतपुरनियामती शाही मस्जिदुद्दौलत इम नये  
मतका प्रचलन किया । महम्मदीय कुरान शास्त्रके प्रसिद्ध

टीकाकार अबूहनीफका मतानुसरण करके वे लोग जगन् क्रिया और ईश्वरत्वरूप सम्बन्धमें विशेष भक्ति प्रदर्शन करते हैं। सुन्नी सम्प्रदायके अन्तर्भुक्त होने पर भी वे पूर्वप्रचलित अशास्त्रीय बुलाचारको नहीं मानते। उन लोगोंका कहना है, कि कुरान शास्त्र ही मोक्ष साधनका प्रधान अयलम्बन है।

फरीदपुर शब्दमें लिखा है, कि गङ्गा (पद्मा) और प्रयाग नदीके मध्यवर्ती जो डेल्टा अवस्थित है, वहाके प्रायः सभी मुसलमान उम्र देगके आदिम अधिवासी हैं। अफगान और मुगलोंके आक्रमणके समय डरके मारे उन्होंने इस्लाम धर्म ग्रहण करने पर भी उनके हृदयसे अभ्यस्त हिन्दूभाव और आचार व्यवहार दूर नहीं हुआ, ज्योंके त्यों धना रहा। हाजी सरितुला मुसलमान समाजकी अवनति देख कर बड़े दुःखित हुए। उन्होंने इस विषयमें असम्मति प्रकट कर जनसाधारणको टेवपूजाके बदलेमें कुरान-प्रणीत एकेश्वरोपासना और सरल तथा साधु आचारोंका अनुष्ठान करनेके लिये अनुयोग किया। उन्होंने

१८६२ ई०में ढाका नगरमें उनको मृत्यु हुई। उनके दो पुत्र आज भी फराजीदूलको धर्मनायकता करते हैं। अतः उनमें वैसे धर्मोन्माद नहीं है। वे अभी रायभव, मिर्सेह और शान्तम्बभावके हो गये हैं।

मुसलमान जातिकी धर्मोन्नति, धर्ममें उस्ताह और प्रस्तावित नीति पालनके विषयमें उनका विशेष रुचन है। वे अपने धर्ममें इतने कट्टर हैं, कि जब कभी कोई उनके धर्मको निन्दा करता, तभी वे उस पर हूट पड़ते हैं। फरामोज (फा० वि०) १ विस्तृत, भूगण्ड, निकलते गिरा हुआ। (पु०) २ लडकोंका एक सेना। इसमें से आपसमें कुछ समयके लिये यह बह लेते हैं कि यदि एक दूसरेको कोई चीज दे, तो वह फौरन 'फरामोज' कह दे। यदि चीज पाने पर पानेवाला 'फरामोज' न करे, तो वह हार जाना।

फरामुगिरि—आसानभरैराके मारो परउके इकीव पूवमे अवस्थित एक ग्राम। यह सुबुगुङ्के इ०५६ ई०

फरजाव द (फा० पु०) यह ऊचा और समतल स्थान जहा फरजा बना हो।

फरजी (फा० र्जी०) १ फूल, पौनल आदिका बना हुआ बरतन। इनका मुह पतला और सँकरा होता है। इस पर लगे नैचा, मटक आदि लगा कर तमाकू पीते हैं। २ यह हुषका जो उक बरतन पर नैचा आदि लगा कर बनाया गया हो।

फरमा (हि० पु०) १ तेज और चौड़ी धारकी एक प्रकारकी कुन्हाडी। यह प्राचीनकालमें युद्धमें काम आती थी।

फरसी (हि० र्जी०) फरजी देवी।

फरहाटा (हि० पु०) चौड़ी और पतली पटरियाँ जो चरगी आदिके बीचकी नाभिले बाध कर या गाड कर गड्डे बन्में लगाइ जाती हैं, फरहा।

फरहत (अ० र्जी०) १ आनन्द, प्रसन्नता। २ मन शुद्धि।

फरहद (हि० पु०) यद्गालमें समुद्रके किनारे होनेवाला एक पेड। यह पेड थोडे दिनमें बढ कर तैयार हो जाता है और न बहुत बडा और न बहुत छोटा, मध्यम आकारका होना है। इसमें पहले फाटे निकलते हैं, पर जब यह बडा होता, तब उससे जो छिन्के उतरते हैं उन्की साथ सभी फाटे जाते रहते हैं। अन्तमें रन्ध्र बिल कुछ चिकना हो जाता है। परन्तु छालियो के फाटे दूर नहीं होते, वे मय दिन रह जाते हैं। जिस प्रकार डाक पेडकी एक नालमें तीन तीण पत्तियाँ होती हैं, उसी प्रकार इसमें भी। इनके फूल लाल और सुन्दर होते हैं। फूलोंके भक्षते ही फलिया लगती हैं। फूलों तथा छालसे लाल रंग निकाला जाता है। छालकी फूट कर रस्सी भी बटी जाती है। इनकी लकड़ी फटती या चिटकती नहीं और नरम तथा साफ होती है। पुण जोमें इसे पख देवतकमें माना है। पारिभद देवे।

फरहर (हि० यि०) १ जो एकमें लिपटा या मिला हुआ न हो, अलग अलग हो। २ शुद्ध, निर्मल। ३ तेज, चालाक। ४ जो पुण दूर दूर पर हो। ५ स्पष्ट, भाफ। ६ प्रसन्न, हसामत।

फरहरना (हि० क्रि०) १ फरफगना, फरकना। २ कह राना, उडना।

फरहरा (हि० पु०) १ पताभा, भडा। - कपडे आदिवा यह तिफेना वा चौकीना टुकडा जिसे छडके सिरे लगा कर भडी बनाते हैं और जो हुजाके भीकेसे उडता रहता है। (यि०) ३ स्पष्ट, अलग अलग। ४ शुद्ध, निर्मल। ५ प्रसन्न, खुशिया हुआ।

फरहरी (हि० र्जी०) फल।

फरहा (हि० पु०) धुनियोंको क्षमानका वह भाग जो चौडा होता है और जिस परसे हो कर तात दूसरी छोर तक जाती है। इसका आकार बने सा होता है और धुनने समय आगे बढता है।

फरहाँ (हि० र्जी०) लकड़ीका वह चौडा टुकडा जिस पर टटेरे बरतन रख कर रेतीसे रेतते हैं।

फरा—मथुराजिलेका एक नगर। यह अक्षा० २७ १६' उ० और देशा० ७७ ४६' पू० यमुना किनारेसे प्रायः १ मील दूर तथा मथुरासे १३ मील दक्षिणपूर्वमें अवस्थित है। पहले यह लक्ष्मीलका संदर था।

फरा (हि० पु०), एक प्रकारका प्यज। इसके बनानेके लिये पहले चावलके आटेको गरम पानीमें गुंध कर उसकी पतली पतली बत्तिया बढते हैं और फिर उन बत्तियोंको उग्रते हुए पापकी भाषमें फरते हैं।

फराफत (फा० यि०) १ विसृत, आयन। २ फरागत। फरागत देवी।

फराफ (फा० यि०) विसृत, लया चौडा।

फराधी (फा० र्जी०) १ विस्तार, चौडाई। २ आनता, सम्यन्तता। ३ घोडेका रंग। यह उसकी पीठ पर गबल गबली आदि छाल कर या यों ही उन पर लगाया जाता है। यह चौडा तमसा या फाता होता है और उसके दोनों सिसें पर कडे लगे रहते हैं।

फरागत (अ० र्जी०) १ मुक्ति, छुटकारा। २ निर्दिशन्ता, बेफिकी। ३ मलत्याग, पागाना फिरना।

फराज (फा० यि०) ऊचा।

फराजी—मुसम्मानीका धर्मसम्प्रदायविशेष। फरिदपुरके अन्तर्गत दौलतपुरनिवासा हाजी सरिनुद्दामे इस नये मतका प्रवर्तन किया। महम्मदीय कुरान शाब्दके प्रसिद्ध

टीकाकार अबूहनीफका मतानुसरण करके वे लोग जगत-क्रिया और ईश्वरतत्त्व सम्बन्धमें विशेष भक्ति प्रदर्शन करने हैं। सुन्नी सम्प्रदायके अन्तमुक्त होने पर भी वे पूर्वप्रचलित अशास्त्रीय बुग्याचार-में नहीं मानते। उन लोगोंका कहना है, कि कुरान शास्त्र ही मोक्ष साधनका प्रधान अत्रलम्बन है।

फरीदपुर शब्दमें लिखा है, कि गङ्गा ( पद्मा ) और ब्रह्मपुत्र नदीके मध्यवर्ती जो डेल्टा अस्थित है, वहाके प्राय सभी मुसलमान उस देशके आदिम अधिवासी हैं। अफगान और मुगलोंके आक्रमणके समय डरके मारे उन्होंने इस्लाम धर्म ग्रहण करने पर भी उनके हृदयसे अभ्यस्त हिन्दूभाष्य और आचार अज्ञात हुए नहीं हुआ, ज्योंके त्यों बना रहा। हाजी सरिनुल्ला मुसलमान समाजकी अननति देव कर बडे दुःपित हुए। उन्होंने इस विषयमें अमम्मति प्रकट कर जनसाधारणकी देवपूजाके बदलेमें कुरान-पठित एकेश्वरोपासना और सरल तथा साधु आचाराँका अनुष्ठान करनेके लिये अनुयोग किया। उन्होंने विवाहमें जो फजूल खर्च होता था उसे बन्द कर दिया और सबको सुन्नत करनेके लिये फरमाया। उनके आचरित धर्ममतके कुछ प्रधान नियम ये हैं—१ धर्मयुद्ध ( जिहाद )की कर्त्तव्यता, २ त्रिधासहल्ता, पापएट और नास्तिकोंका पाप, ३ ईश्वरपूजामें क्रियाशलापादिका अनुष्ठान और ४ सबोंको उस एक ईश्वरका अशदान। फराजी लोग काष्ठ नहीं घेते, घोतोंको कमरमें एक बार लपेट कर पेटके सामने खोम लेते हैं, घुटनेको जमीनमें टेक कर नमान पढ़ते हैं, इत्यादि कुछ बाहरी आचार देनेसे ही पता लग जाना है, कि ये फराजी हैं। प्राय सँक जय तक जीते रहे, तब तक इस मतका बहुत प्रचार था। प्राय पचास वर्षके अन्दर सैकड़ों मुसलमान उन के शिष्य हो गये। अर्थात् पश्चिम बङ्ग और बिहार आदि रणार्थोंमें भी फराजी मतावलम्बी सैकड़ों मुसलमान पेशेनेमें आते हैं।

हाजीकी मृत्युके बाद उनके बेटे लडके दादूमिया फराजीदलके धर्मगुरु बने, किन्तु समावादोपसे वे मुसलमान समाजके भ्रमियमाजन हो गईं। उनकी इस अस्त-प्रतिके लिये घृष्टि-सरकारने उन्हें कई बार कैद किया।

१८६२ ई०में ढाका नगरमें उनकी मृत्यु हुई। उनके दो पुत्र आज भी फराजीदलमें धर्मनायकता करते हैं। अर्थात् उनमें वैया धर्मोन्माद नहीं है। वे अर्थात् राजभक्त, निरीह और शान्तमभावके हो गये हैं।

मुसलमान-जातिमें धर्मोन्नति, धर्ममें उत्साह और प्रस्तावित नौति पात्रनके विषयमें उनका विशेष लक्ष्य है। वे अपने धर्ममें इतने कट्टर हैं, कि जय कभी कोई उनके धर्मकी निन्दा करता, तभी वे उस पर टूट पड़ते हैं।

फरामोश ( फा० वि० ) १ विस्मृत, भूला हुआ, चित्तने गिरा हुआ। ( पु० ) २ लउर्षीका एक रोल। इस्में वे आपसमें कुछ समयके लिये यह बद् लेते हैं, कि यदि एक दूसरेको कोई चीज दे, तो वह फौरन 'फरामोश' कह दे। यदि चीज पाने पर पानेवाला 'फरामोश' न कहे, तो वह हार जाता।

फरामुगिरि—आसामप्रदेशके गारो पहाडके दक्षिण पुर्यमें अवस्थित एक ग्राम। यह समुद्रपृष्ठसे ३६५२ फुट ऊँचा है।

फार ( अ० वि० ) जो भाग गया हो, भाग हुआ।

फारल ( हि० स्त्री० ) १ फैलाव, विस्तृत। २ तात्ता।

फारासडङ्गा—इसका देगोय नाम चन्द्रनगर वा चन्द्रनगर है। जवने फरासीसियोंने यहा एक थोटी घोली, तभीसे यह फारासडङ्गा नामसे मशहूर हुआ है।

च, ननगर और फरागी। देगो।

फारासी—फ्रान्सदेशके अधिवासी।

फ्राँस और एशान शब्दमें विस्तृत विवरण देतो।

१६वीं शताब्दीमें जो सब यूरोपीय शक्तिप्राप्ति पाणिज्य करनेकी इच्छासे भारतवर्ष आई थीं, उनमेंसे फरासीगण चतुर्थ थे। पुत्तगीज, ओलन्दान और अङ्गरेजोंके बाद फरासी लोग भारतवर्ष आये हैं।

१५०३ ई०में फ्रान्सपति १२वें लुईके समय रीप्ट नामक स्थानके यणिकोंने पूर्वसागरमें याणिज्य करनेका पहले पहल आयोजन किया। १५३७ और १५४३ ई०में १२वें लुईके उत्तराधिकारी १६म फ्रांसिसने अपनी प्रजाकी सुदृढदेशमें जा कर याणिज्य करनेका हुक्म दिया। किन्तु नावा विप्लवोंसे उनका उद्देश्य सिद्ध न हो सका।

१६०१ ई०में सेण्टमानोसे दो नवान लफ्टेनाण्ट धाद-



ज्युको अधिनायकतामें भारतकी ओर भेजे गये थे, किन्तु दुर्भाग्यक्रमने वे दोनों ही जहाज मालद्वीपके समीप डुबो गये।

४थं हेनरीके शान्तिमय राज्यकालमें १६०४ ई०की १लीं जूनको एक बार फिर चेष्टा की गई थी। किन्तु इस बार भी यह चेष्टा व्यर्थ निकली। आखिर १६१६ ई०में एक दूसरा दल राजाका अनुशासक ले कर कार्यक्षेत्र में उतरा। इस दलका नाम रखा गया 'फरासी इष्ट इण्डिया कम्पनी'। फरासी मन्त्री कोलार्डने १६६४ ई०में उन्हे अत्याहतभावमें पास तीर पर घाणित्य करने के लिये ५० वर्षका समय दिया था।

१६६८ ई०में फरासी घणिकोंने पहले पहल सूत आ कर एक कौड़ी खोली। इसके बाद मसलीपत्तनमें दूसरी कौड़ी खोली गई। अनन्तर उन्होंने ओल्न्दाजोंसे तिन फमली नगर छीन लिया, किन्तु कुछ दिन बाद ही ओल्न्दाजोंने फिरसे इस पर अपना कब्जा किया। १६७२ ई०में फरासियोंने मन्दाजके निकट सेक्टोमे नामक स्थान ओल्न्दाजोंसे जीता। १६७४ ई०में ओल्न्दाजों ने फरासियों को वहासे मार भगाया। अब वे पु दिचेरी में आ कर रहने लगे।

ओल्न्दाजोंने वहासे भी फरासियोंको खदेरा था। इसके बाद वे कुछ दिन तक सूतमें रह कर घाणित्य चलाते लगे। किन्तु यूरोपीय प्रतिद्वन्द्वियोंकी प्रतिबन्धतासे उनका मनोरथ सिद्ध न होने पाया। वे सूतका परित्याग करनेको बाध्य किये गये। इसके बाद उन्होंने चन्दननगरमें कौड़ी खोली।

१६८८ ई०में बादशाह औरङ्गजेबने उन्हे चन्दननगरका अधिकार प्रदान किया। बादमें फरासी कम्पनीने माहो पर आक्रमण करके उसे अपने दफ्तलमें कर लिया। १७३० ई०में मुन्टे चन्दननगरके गवर्नर हुए। इसके बाद १७४२ और १७४६ ई०में उन्हींने पु दीचेरीका शासन भार पाया। १७३६ ई०में फरासियोंने तन्नोर राजसे कारिकल गरीदा।

पहले ही कंपनी ओल्न्दाजोंकी ही फरासियोंसे शत्रुता थी, अब घाणित्यक्षेत्रमें अङ्गरेज लोग भी फरासियोंके शत्रु हो गये। ताना स्थानोंमें युद्ध विमर्शकी

खबर आने लगी। १७५० ई०में फरासियोंने यान्म और मसलीपत्तन पर अधिकार किया था। १७५२ ई०में तन्नोरराजकी कुछ रुपये दे कर उक्त स्थानका पञ्जा कर लिया। अब वे अङ्गरेजोंके विरुद्ध अन्नधारण करनेके लिये द्वितीय राजाओंको उभादने लगे।

१७३५से १७५४ ई०के मध्य जुलै और इमसकी चेष्टासे भारतपर्यमें फरासियोंको धाक बहुत कुछ जम गई थी। नागपत्तनमें अङ्गरेजोंके जमी जहाजको नष्ट मष्ट करके उन्हींने मन्दाज पर दफल किया। इसके बाद सद्रसे मफूजली भी उनसे परास्त हुए। किन्तु कुद्दाल्दमें जो युद्ध हुआ था, उसमें फरासियोंकी दो बार हार हुई थी। अङ्गरेजोंने फरासियोंको पु दीचेरीमें अब रोध किया, पर पीछे उन्हें ही पीठ दिखाती पड़ी थी। अम्बुरके युद्धमें भी उन्हींकी रिजय हुई। इस युद्धमें अनवर-उद्दीन् मारे गये। अनन्तर फरासियोंने मुबारि राजके शिबिर पर आक्रमण कर उन्हे चकित किया था। अनवर-उद्दीन्के लडके महम्मद अलने भी फरासियोंका शासन करनेके लिये उनसे घोर युद्ध किया था, पर आखिर वे भी परास्त हुए। अनन्तर फरामियोंने गिञ्जी पर धावा बोल दिया। नासिर पराजित हुए, बोल कण्टाक्षेत्रमें अङ्गरेज लोग भी पीठ दिवानेकी बाध्य हुए थे। झाइवके कौंगलसे तिचिनपल्लीमें फरामीगण अग्रद्वष्ट हुए थे और दो बार उन्हींने झाइवसे पराजय भी स्वीकार की थी। अब फरामी वहासे धौरङ्ग क्षेत्रको चले आये। यहा भी वे अङ्गरेजोंके निकट आत्म समर्पण करनेकी बाध्य हुए। विजगवाडी नामक स्थानमें फरामियोंने अङ्गरेजोंकी परास्त किया, किन्तु बहार नामक स्थानमें जो युद्ध हुआ उसमें फरामियोंकी ही हार हुई।

पुस्तीकी अधिनायकतामें फरामीगण वधेष्ट प्रमाय शाली हो उठे थे। उन्हींने महाराष्ट्रोंकी कई बार परास्त किया और भारतके पूर्ण उपकूलरघ धार विसृष्ट प्रदेग दफल किये। तिरुवाडी नामक स्थानमें अङ्गरेजोंने फरामीवके हाथसे हदसे ज्यादा बष्ट भोगा था। किन्तु स्थानांचल धौर मर्षाचलमें फरामी लोग हार ग्या कर धौरङ्गकी भाग गये थे। फिर तिचिनपल्लीमें दोनोंकी

मुद्रमेड हुई। यहाँ फरासियोंके भग्न मनोरथ होने पर भी उन्होंने काटापाडामें अङ्गरेजों पर आक्रमण कर दिया। इसके बाद दोनोंमें सन्धि स्थापित हुई। फरासियोंने अङ्गरेजोंके विरुद्ध सिराजुद्दौलाको सहायता देना नामजूर किया। अनन्तर नागपत्तनमें फिरसे युद्ध छिडा। इस समय फरासियोंने बुहालूर और सेरारडेभियाके किले पर अधिकार किया। किन्तु शीघ्र ही ये उक्त स्थानको छोड़ कर तजोरमें आश्रय लेनेको बाध्य हुए थे। ताहुइर, कन्दूर, सेरारडेमेड और बन्दिवास इस सब स्थानोंमें जो युद्ध हुए थे उनमें फरामोंका प्रभाव बहुत कुछ जाता रहा। यहाँ तक, कि ये अङ्गरेजोको १७६१ ई०में पु दिचेरी अर्पण करनेको बाध्य हुए। १७४६ ई०में डुप्लेके सुद्विगौलसे फरासीका जो प्रभाव एक समय इतना बढ़ा चढ़ा था, यह आज पु दीचेरी-समरपणके साथ साथ तिरोहित हुआ। १७६३ ई०में सन्धिके अनुसार अङ्गरेजोने फरासियोंको पु दिचेरी लौटा दिया। १७७८ ई०में सर हेकूर मनरोने पुन पु दिचेरीको दखल किया, पर १७८३ ई०में सन्धि हुई, उसके अनुसार उक्त स्थान पुन लौटा दिया गया। १७६३ ई०में यह फिर अङ्गरेजोंके हाथ लगा और १८०१ ई०में धामीनकी सन्धिके अनुसार प्रत्यापित हुआ। परन्तु १८०३ ई०में अङ्गरेजोंने उक्त स्थान पुन छीन लिया था। आखिर १८१४ ई०में सदाके लिये फरासियोंको दे दिया गया। अभी चन्दन नगर, करिकाल, पु दिचेरी, फणम् और माहो ये सब स्थान फरासीके अधिकारमें हैं।

एक समय सारे भारतवर्षमें फरासीप्रभाव फैल गया था। फरासियोंने ही सबसे पहले त्रिपुठ मुगल साम्राज्य अङ्गरेजोंके अधीन करनेकी चेष्टा की थी। फरासियोंने पहले देशीलीकोंके साथ मिल कर उनकी सहायतासे भारत अधिकारमें प्रयास पाया था। फरासियोंने ही देशी राजाओंके सेनादलमें घुस कर देशी सेनाको यूरोपीय प्रथासे रणजिज्ञा दी थी। यदि प्रह वैशुण्य न घटता, तो वह नहीं सकते, कि फरासी अधिकार आज भारतमें कहा तक फैला होता। जो सब महाशूर भारतवर्षमें फरासी अधिकार फैलानेमें उद्योगी हुए थे, उनमेंसे डुप्ले, बूसी, वाउण्ट लाली और लयो

दनेमा नाम प्रधान है। इस पाचोंके साथ भारतमें फरासीका इतिहास अद्वित है। इनके बूसी, लाली लार्दन और फ्रांस प्रपदने विलुत विवरण देखो।

फरासीस—फरासी देतो।

फरासीसी ( हि० वि० ) १ फ्रासका रहनेवाला। २ फ्रास का बना हुआ। ३ फ्रासदेशमें उत्पन्न, फ्रासका।

फरासीसाँवैध—एक ग्रन्थकार। इन्होंने अजुलिपुराण और इजोलपुराणकी रचना की थी।

फरिया ( हि० स्त्री० ) १ यह लहंगा जो सामनेकी ओर सिला नहीं रहता। यह कपड़ेका चौकीर टुकड़ा होता है जिसे एक किनारेकी ओर चुन लेते हैं। इसे लड किया वा स्त्रिया अपनी कमरमें बांध लेती हैं। ( पु० ) २ रहटके चरपे वा चक्रमें लगी हुई धे लकड़िया जिन पर मट्टीको ह धियोंकी माला लटकती रहती हैं। ३ मिट्टी की नाद। यह नाद चीनीके कारखानोंमें इमलिये रती जाती है, कि उसमें पाग छोड़ कर चीनी बनाई जाय, हीद।

फरियाद ( फा० पु० ) १ दु पित या पीडित प्राणियोंका अपने परिव्राणके लिये चिल्लाना, शिवायत, नालिन। २ प्रार्थना, बिनती।

फरियादी ( फा० वि० ) फरियाद करनेवाला, नालिन करनेवाला।

फरियाना ( हि० कि० ) १ छोट कर अलग करना। २ पक्ष निर्णय करना, ती करना। ३ साफ करना, गोलमाल दूर करना। ४ निर्णय होना, निवटना। ५ सूफ पद ना, साफ साफ दिखाई पड़ ना।

फरिष्णा ( फा० पु० ) १ मुसलमानी धर्म प्रथोंके अनुसार ईश्वरका यह दूत जो उसकी आह्लाके अनुसार कोई काम करता हो। २ देवता।

फरो ( हि० स्त्री० ) १ फाल, कुर्गी। २ गाड़ीवा हरमा, फड। ३ एक प्रकारको छोटी ढाल जो चमड़े की बनी होती है। इसे गतकेके साथ उसकी मारको रोकनेके लिये ले कर खेलते चलते हैं। ४ फकी देतो।

फरोक ( अ० पु० ) १ प्रतिद्वंद्वी, मुवाफला। २ फरका मनुष्य, तरफदार। ३ दो पक्षोंमें किसी पक्षका मनुष्य। फरीदकोट—पञ्जाबके शतद्रके अन्तर्भुक्त एक सिरा-राज्य।

यह अक्षांश ३० १३' से ३० ५०' ३०' और देशांश ७४' ३१' से ७५ ५' ५०' फरीदपुर जिलेके दक्षिणमें अवस्थित है। भूपरिमाण ६४२ वर्गमील और जनसंख्या सवा लाखके करीब है। इसमें फरीदकोट और फोटकपुर नामके २ शहर और १६७ ग्राम लगते हैं। राज्य इसके उत्तर पश्चिममें पड़ता है। राज्यका पश्चिमांग अनुचर है। पर पूर्वांगमें अच्छी फसल लगती है।

जलामात्र होनेसे पेंती-शरीमें भारी नुकसान पहुंचता है। एकमात्र वृष्टि ही प्रजाका भरोसा है। किसी किसी वर्ष जय बिलबुर् पानी नहीं बरसता, तब प्रजाके फटेकी सीमा नहीं रहती। इस कारण यहाका राजस समय पर चसल नहीं होता समयानुसार घह घटा बढ़ा भी दिया जाता है।

यहाके सम्राट् प्रराइजाट्-ग्रीय हैं। भल्ला नामक उस वंशके पूर्वतन कोई ध्यतिक सम्राट् अकबर शाहके शासकालमें अपने कुल गौधवकी रक्षा कर गये हैं। उनके भतीजेने फोटकपुरा नामक दुर्ग बनवाया और स्वयं स्वाधीनभावमें राज्य करने लगे। १६वीं शताब्दीके प्रारम्भमें पञ्जाब केजारी महाराज रणजित्-सिंहने फोटकपुरा और पीछे फरीदकोट दखल कर लिया। उन्होंने १८०८ और १८०६ ई०के मध्य शत्रुके घामफूलजसों सब विभागोंको दखल किया था, वृष्टिजगजमेंएन्ने उन्हें प्रत्यर्पण कर देनेके लिये प्रार्थना की। आखिर नितान्त अनिच्छा रहते हुए भी महाराज केवल फरीदकोट लौटा देनेकी बाध्य हुए।

१८४५ ई०में सिंग मुल्दके समय मरदार पहाडमिहने भन्नेरेजोंका पक्ष लिया था, इस प्रत्युपकारमें उन्हें राजकी उपाधि मिली थी। इसी समय उन्होंने नाभा अधिष्ठत राज्यका कुछ अंश तथा निज पैतृक सम्पत्ति फोटकपुरा प्राप्त किया।

१८४६ ई०में द्वितीय सिंगमुल्दके समय पहाडमिहनेके लक्ष्ये नचोरमिहने भन्नेरेजोंकी शामी मर्द पहुंचाई थी। १८५७ ई०के शत्रुमें से विद्रोह दमनमें भी भन्नेरेजोंके साथ थे। यहा तक, कि ते उन विद्रोहियोंके साथके गांव जग देंने भी वान न भाये। उनके कथमें प्रमत्ता हो कर वृष्टिजग

मेंएन्ने उन्हें यथेष्ट पारितोषिक दिया। १८७४ ई०में उनकी मृत्यु हुई। बाद उनके लड़के विक्रमसिंह राजा हुए। १८६३ ई०की सनदके अनुसार अधिकारियोंके इस राजसम्पत्तिका पुनर्पौत्राधिकारमें भोग करनेका अधिकार पाया है। उन्हें दत्तक लेनेका भी अधिकार है। राज्यमें जितने द्रव्य आते हैं, उन पर किसी प्रकार का कर निर्धारित नहीं है। वर्तमान राजाका नाम प्रिन्स इन्डर्मिह जी है। इन्हें सरकारकी ओरसे ११ सजामी तोपें मिलती हैं। इनके पास ४१ बुद्धमवार, १२७ पदाति, २० गोलन्दाज और ६ फमान हैं। फरीदकोट शहरमें एक हाई-स्कूल और एक वानथ चिकित्सालय है जिसका राज्यकी ओरसे दिया जाता है।

२ उक्त राज्यकी राजधानी, यह अक्षांश ३० ४०' ३०' और देशांश ७४ ४६' ५०', फरीदपुरसे २० मील दक्षिणमें अवस्थित है। जनसंख्या प्राय १०४०५ है। प्रायः सात मीं वर्ष हुए, थावा फरीदके समय मज्ज राजपूतराज मोकलसीने अपने नाम पर यहा एक दुर्ग बनवाया था। इसी शहरमें फरीदकोटका राजप्रसाद अवस्थित है। यहा एक हाई स्कूल और दातव्य चिकित्सालय है। फरीदपुर—मीरट जिलेकी गाजियाबाद तहसीलका एक शहर यह अक्षांश २८ ४६' ३०' और देशांश ७७ ४१' ५०' मीरट शहरमें १६ मील दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या ५६२० है। सम्राट् अकबरके समय फरीद उद्दौर्गर्गने इसे बसाया। यहा एक प्रायगरे स्कूल है। फरीदपुर—धन्नालके टाका विभागान्तर्गत एक जिला। यह अक्षांश २२ ५१' से २३ ५०' ३०' तथा देशांश ८६ १६' से ६० ३७' ५०'के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २२६१ वर्गमील है। इसके उत्तरमें पमानदी, पूर्वमें मेगना, पश्चिममें गडई नदी और दक्षिणमें वागमगुड है। जिलेके उत्तरांगवर्षों तथा अथेःशरत ऊच्य है। फरीदपुर नगरमें यह प्रमत्ता उचा होता आया है। वायव्यजके निश्चयसे स्थान प्राय जगमान रहते हैं। यहा तक, कि नायके सिवा यहा आने जानेवा कोई दूसरा उपाय नहीं है। यहाके लोग प्रायः नजी चितारे दखलके निश्चय उद्यमथा पर ही पामपूह बनाने हैं। प्रबल वर्षामें यह स्थान क्षयके सद्ग दिखार्

देता है। कभी कभी जलस्रोतमें नदीतीरपक्षों कितने ग्राम बह जाते हैं। स्थानीय प्रवाद है, कि गङ्गा नदीके पहले सगीमपुरके पास ही बर बहती थी। अभी यह कानाङ्गुकी ओर गति पलट कर पूर्वकी ओर पद्मा नामसे बहती है।

नदीके पक्षसे धीरे धीरे इस जिलेकी उत्पत्ति हुई है। क्रमशः प्रजायुक्तके आग्रहमें जयसे यहा विचार अदालत आदि स्थापित हुई, तबसे यह सम्पूर्ण स्वाधीन जिला रूपमें गिना जाने लगा है। १५८२ ई०में मुगलसम्राट् अकबरराहने जय बङ्गालका यदोबस्त किया, उस समय यह स्थान महामदाबाद सरकारके अन्तर्निविष्ट था। २री शताब्दीमें यहा मघदस्तुगण भारी उत्पात मचाने लगे और आसामयामिनियोंने इस स्थानमें लूटपाट आरम्भ कर दिया। ३ गरेजी शासनके आरम्भमें १७२५ से १८११ ई० तक यह स्थान ढाकाविभागके अन्तर्भूक था और लोग इसे ढाका जलालपुर कहा करते थे। उस समय ढाका नगर में ही फरीदपुरका विचार सद्द था जिससे लोगोंकी उत्तनी दूर आने जानेमें बहुत कष्ट होता था १८११ ई०में इस अभावको दूर करनेके लिये यहा स्वतन्त्र विचार-शुद्धादि स्थापित हुए। तभीसे यह स्थान एक स्वतन्त्र जिलारूपमें गण्य होता आ रहा है।

इस जिलेमें २ शहर और ५२२३ ग्राम लगते हैं। जासख्या बांस लाखके करोव है। मुसलमान और चण्डालगण ही यहाके मुख्य अधियासी हैं। इन्हींकी सख्या अन्यान्य जातियोंसे अधिक है। मुसलमान सिया और सुन्नी सम्प्रदायके हैं। उनमें अधिकांश मनुष्य पेंती बारी करके अपना गुजारा चलाते हैं।

मुसलमानोंके फरामी मतके प्रवर्त्तयिता हाजी सरि तुहाने इसी जिलेके अन्तर्गत दौलतपुर ग्राममें जर्मप्रहण किया था। पचास वर्षके भीतर उनका मत क्रमशः सारे पूर्वबङ्गालमें फैल गया। फरानीगण सुन्नी हैं और भाङ्गु हनीफा (१) के मतानुसार चलते हैं। यहाके जो चाण्डाल हैं उनमेंसे अनेक मुगल और अफगान शासन कालमें सीधिन हुए थे। उनका कहना है, कि वे पहले दिन्दु समाजभुक्त थे। उनमें प्राराणादि नाना वर्ण भी

था। किसी ब्राह्मणके शापसे वे ढाकाका परित्याग कर यगोद, फरीदपुर और बानरगञ्ज अञ्चलोंमें आ कर बस गये और इस प्रकार आचारप्रद हुए हैं। जो कुछ ही इनका अध्वरसाय, कष्टसहिष्णुता और स्वदेशप्रियता आश्चर्य जनक है।

जिलेकी प्रधान उपज धान, पटसन, तेलहन, दलहन, गेहूँ और बानरा है। रात्रकार्यकी सुविधाके लिये यह फरीदपुर, रात्रवाडी और मदारीपुर नामक तीन उपवि भागोंमें विभक्त है। यहाकी धर्यरा नदीके किनारे प्रति चैत्र सक्रान्तिमें गङ्गा और कालीपूजाके उपलक्षमें एक मेला लगता है। हिन्दु मुसलमान ईसाई आदि अपने अपने अभीष्टकी सिद्धिके लिये उक्त नदीमें स्नान और मानसिक पूजा दान करते हैं।

विद्याशिक्षानी ओर लोगोंका उतना ध्यान नहीं है। सैकड़ों पीछे छ मनुष्य पढे लिखे मिलते हैं। जिले भरमें अभी कुल १०५ सैन्पट्टी, १६५६ प्राइमरी और २०७ स्वे सल स्कूल हैं। शिक्षाविभागमें कुल खर्च ढाई लाख रुपयेसे ज्यादा है। स्कूलके अगवाया जिले भरमें १६ अस्पताल हैं।

० फरीदपुर जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० २३ ८' से २३ १०' उ० तथा देशा० ८६ ३०' से ६० १२ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ८६० वर्ग मील और जनसंख्या सात लाखसे ऊपर है। इस विभागमें १ शहर और २२६२ ग्राम लगते हैं।

३ उक्त जिलेका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० २३ ३७' उ० और देशा० ८६ ५१' पू० मरा-पन्नाके किनारे अवस्थित है। जनसंख्या लगभग ११६४६ है। फकीर फरीदशाहके नाम पर इसका फरीदपुर नाम पडा है। नगरके दक्षिण ढोलसमुद्र है। इसका जल स्वच्छ, सुमिष्ट और स्वास्थ्यकर है। प्रति वर्षके जनवरीमें यहा एक एपि-प्रदर्शनी मेला लगता है। उम मेलेकी प्रतिष्ठा पहले पहल १८६४ ई०में हुई। अभी उसी मेलेके प्रताप जन साधारणमें शिल्पकी उन्नति देखी जाती है।

फरीदपुर—१ युवप्रदेशके बरेली जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २८ १' से २८ २२' उ० तथा ७६ ०३' और ७६ ४५' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २४६

(१) इरानके प्रसिद्ध ढोढाकार।

वर्गमूल और लोकसन्ध्या प्राय १३०००० है। इसमें १ शहर और ३१४ ग्राम लगते हैं। जिले भरमें यह तहसील पर्यतगय और अनुरंर है। फौज रामगढ़, वाघुल और कैंगमनदीके तिनारे सामान्यत सेती बारी देगी जाती है। यहा अयोध्या रोहिल्लाएंड रेलपथके दो स्टेशन हैं।

२ उक्त तहसीलका प्रधान शहर। यह आस० २८ १३ उ० और देशा० ७६ ३३ पू०के मध्य बरेलीसे शाह-जहानपुर जानेके रास्ते पर अवस्थित है। जनसंख्या सात हजारके बरीय है। इसका प्राचीन नाम पुर था। राज श्रोही किन्ती कठोरिया राजपूतने इस नगरको बसाया। १७वीं शताब्दीके मध्यमें कठोरियागण बरेलीसे भगाये गये। किन्तीका मत है, कि मुमत्रमान साधु शेष फरीदके नामानुसार इसका वर्तमान नाम पडा है। फिर किसीका कहना है, कि १७४८-७५ ई०के रोहिला अधि कारकालमें जिस शासनकर्ताने यहा दुग बनवाया था, उन्हींके नामानुसार फरीदपुर नाम रखा गया है। प्राचीन हिन्दुराजत्वके गौरव्यरूप यहा कितने मन्दिर विद्यमान हैं। फरीदपुरी (अ० खी०) एक वनस्पतिका नाम। इसकी पत्तियां यरियारके आकारकी छोटी छोटी होती हैं। इन पत्तियोंकी जलमें डाठ फर मल्लोने लजाय निकलता है। यह ठंडी होती है और गर्मीकी शान्त करनेके लिये लोग इसे पीते हैं।

फरीदाबाद—पञ्जाबके दिल्ली जिलेकी बहुभगड तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २८ २५ उ० तथा देशा० ७२ २० पू० दिल्लीसे १६ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जन्म स्या प्रायः ५३१० ई। जहांगीरके प्रजानची शेर फरीदने १६०७ ई०में इस नगरको बसाया था। शहरमें विशदोरिया पट्टकी यनाषयुलर मिडिल स्कूल, यनाषयुलर मिडिल स्कूल और मिडिल इङ्गलिश स्कूल हैं। अलावा इसके एक सरकारी अस्पताल भी है।

फरुगनागर—पञ्जाबके गुरदास जिल्लाकर्गत एक नगर। यह अक्षा० २८ २७ उ० और देशा० ७६ ५० गुरदास शहरसे १४ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जास स्या लगभग ८: हजार है। नगर अष्ट कोण और प्राचीरपरिधिष्ट है। बाती और चार द्वार हैं। मध्य भागमें दो बाजार हैं। नगरका शोभा देपनीसे

यह सचमुच समृद्धिशाली प्रतीत होता है। पहले लपन प्रस्तुत और विक्रय करना यहाका प्रधान व्यवसाय था। अभी रेलपथके खुल जानेसे शम्बर लपनकी विशेष आम दनी होती है जिससे स्थानीय लपनका कारबार प्राय वन्द-सा हो गया है। यहा जो कुछ उत्पन्न होता है, उसकी प्राय अन्य स्थानोंमें रफ्तानी होती है। दिल्ली ह्या, सोसमहल नामक नवाबका प्रासाद, ममजिद आदि प्रधान अट्टालिकाये देपनी योग्य हैं।

१७१३ ई०में इस प्रदेशके शासककर्ता चेल्चसरदार फौजदार रॉ (द्वेल रॉ) ने सभ्राट् फरखसियरके नाम पर इसका नाम रखा। १७५७ ई० तक यहा य श यहाके अधिकारी रहे। पीछे भरतपुरके जादोंने उनसे छान लिया। १२ वर्षके बाद फौजदारके पीछेने पुनः पितृ सि हासन पर अधिकार जमाया। १८५७ ई० तक उन्हींने यहा राज्य किया था। सिपाहीविद्रोहके समय यहाके नवाब अहमद खाली रॉन विद्रोहियोंका साथ दिया था जिससे ये अ गरेजोके हाथसे यमपुरके मेहमान बने। तफुज्जुल हुसैन रॉ नामक एक मुसलमानने उक्त सम्पत्ति पारितोषिकमें पाई। सिपाही विद्रोहकालमें उनने अ ग रेजोके घासी मदद पहुँचाई थी। उनके य शहर गुराज उद्दीन हुदर आज भी उस प्रदेशका शासन करते हैं। राजस्य छह हजार रुपयेसे अधिक है। शहरमें एक अस्पताल है।

फरखसियर—एक मुमत्रमान बादशाह, आजिम उस शाह के मध्यम पुत्र तथा सभ्राट् बहादुरशाहके पति। ये विशे पतः फरखसे और फेरागसियर नामसे ही मशहूर थे। हुमार आजिम उस जान् जब औरदूनेव बादशाहके आदेश से बङ्गालका परित्याग कर दक्षिणप्रदेशकी गये, उस समय उन्हींने अपनी मध्यम पुत्र फरखसियरकी बङ्गालका नायब सूबेदार बनाया। जब तब दक्षिणात्यमें लूट कर लाहोर व पदुँचे तब नर फरखसियर बेतोरदोष बङ्गाल की सूबेदारी करते रहे। १७२२ ई० (१७१० ई०में) उनकी जगह पर आज्ज-उद्दीन गानघाना बङ्गालके सूबेदार बनाये गये और फरखसियरका दिल्ली-समाम लूट जानेकी कदा गया।

फरखसियर अभीमाबाद (परजामें) आ कर अर्धा

भाव और वषाका आगमन देख कर नगरके निरुद्ध अपेक्षा करने लगे । इसी समय उहे बहादुरशाहका मृत्यु स वाद मिला । उन्होंने भटसे अपने पिताके नाम पर खुतनापाठ और मुद्राका प्रचार कर दिया । उस समय पटनाके सैयद हुसेन अलीपाँ वाडा आजिम उस शानके नायब थे । सैयदका साहस और प्रतिभा देख कर फरखसियरने उन्हें अपने पक्षमें खींच लिया । फरखसियरकी माता भी हुसेनअलीकी पुत्र पक्षावलम्बन करनेके लिये विशेष अनुरोध किया था ।

इसके बाद आजिम उस शानकी मृत्यु और जहान दार शाहकी विजयवात्ता पटना पहुँची । अमी ( ११२३ हिजरी, रवि उल् आबल ) फरखसियरने अपने नाम पर मुद्रा प्रचार और खुतना पाठ करनेका हुक्म दिया । हुसेन अलीके भाई सैयद अबदुल्ला खाँ उस समय इलाहाबादके सूबादार थे । उन्होंने भी फरखसियरका साथ दिया । इस समय बङ्गालका समस्त रानकोष फरखसियरने अपना लिया ।

फरखसियरने विश्वस्त सेनापति और २५००० अश्वारोहीके साथ दिल्लीकी ओर यात्रा कर दी । सैयद भाई उनकी यथेष्ट सहायता कर रहे थे । इलाहाबादमें बहुत स खयर सेना इकट्ठी करके फरखसियरने आगरेमें जहान दारशाह पर पराजय हमला कर दिया । इन भीषण युद्धमें हुसेनअली गुरुतररूपसे आहत हुए थे, किन्तु जहानदारकी ही पराजय स्वीकार करनी पड़ी ।

रात तो जहानदारने किसी तरह आगरेमें ही विताई, सपेरे होते ही ये झुठफिकर खाँके साथ बड़े सतर्कसे दिल्ली आये । उनका भाग्य परिवर्तन हुआ जान आसद् उद्दालने उन्हें दुःखमें कैंद कर लिया ।

सात दिन विधामके बाद फरखसियरने दिल्लीकी ओर यात्रा की । ११२४ हिजरी ( १७१२ ई०में ) ११वीं महरमके ये दिल्लीमें आ धमके । जहानदारशाह निहत हुए । २०वीं जेल्हज्जके फरखसियर दिल्लीके सिद्दासन पर अधिकृत हुए । सैयद अबदुल्लापरने 'खुतब उल्-मुल्क' की उगाधि और सात हजारो मन्सूब ( दो असपस् और से असपस् ) हुलेन अली परने 'अमीर उल् उमरा फिरोज जङ्ग'की उपाधि और सात हजारो तथा इसीके साथ साथ मीर-शरसीका पद प्राप्त किया ।

फरखसियरका कोई स्वाधीन मत नहीं था । उनका लालन पालन बङ्गालमें ही हुआ था । वहा दूसरेके इच्छानुसार ही उन्हें सभी कार्य करने होते थे, इस कारण उनकी स्वाधीन प्रगुत्तिना आभास प्रकट होने नहीं पाता था । कभी उमरमें ये दिल्लीके सिद्दासन पर अधिकृत हुए थे, राजकार्यमें उनकी उतनी दक्षता न थी । मैयद अबदुल्लाकी वजीर बना कर उन्होंने राजकार्यका कुल दारमदार उसी पर सौंप दिया था । इस अविमृष्यकारिताका फल उन्हें पीछे अच्छी तरह भुगताना पड़ा ।

मीरजुमला बादशाहके अतिप्रिय पान हो उठे थे । वे एक विचक्षण, कर्मदक्ष और उदारपुरुष थे । सैयद भाई आ कर एक प्रकारसे मुगल साम्राज्यको भ्रास कर रहे हैं, यह देग कर उन्हें भारी दुःख हुआ था । अब ये ही सैयद भाइयोंकी जन साधारणके निरुद्ध हेय और अपदृश करनेके लिये कौशलक्रमसे उन्हींके द्वारा दिल्लीके प्राचीन अमीर और उमराव लोगोंकी हत्या करने लगे । इस समय दुर्घट सैयदोंके हाथसे अमीर उल उमरा जुल्फिकर पाँ आदि सम्मान्त व्यक्तिकण अति घुणित मानसे मारे गये । अमीर उल-उमरावे हीनान राजा शुभचौदकी जीभ काट डालने गइ, जहानदार शाहके पुत्र अजोउद्दौन, आजिमशाहके पुत्र अली तजर और फरखसियरके वनिष्ठ हुमायुन वगन् उच्चत लीहशलाका द्वारा नेत्रहीन किये गये थे ।

सैयद अबदुल्लाने रतनचौद नामक एक शस्यत्रिके ता को दीनान बनाया । यह व्यक्ति तथा सैयद भाइयोंकी उदरपूर्ति किये बिना किम्को भी कोई काम नहीं करता था । फरखसियर सैयदके आचरणमें अच्छी तरह जान कर थे । उन्होंने मीरजुमलाकी अपना प्रतिनिधि बनाया । सहो मोहर आदि कुल बादशाही कामका भार उसी पर सौंपा गया इसीसे वजीरकी क्षमता बहुत कुछ हान हो गई । अब सैयद बादशाह और मीरजुमलाके अनिष्ट साधनमें लग गये । मीरजुमला मैयद भाइयोंकी कैंद करनेके लिये बादशाहसे बार बार अनुरोध करने लगे । बादशाहकी माता सैयद अबदुल्लाकी बहुत चाहती थी । उन्होंने सैयदको किसी तरह इन सब बातोंमें सतर्क कर दिया ।

इस समय अमोर उल उमरा हुनेन अलने बादशाह-  
ने दाक्षिणात्यकी सूयेदारी माग ली । उनको इच्छा थी,  
कि ये दाउद का नामक एक व्यक्तिने प्रतिनिधि बना कर  
सूयेदारी चर्चोंमें और आप दिल्लीके दरबारमें रहेंगे ।  
इस सूयेदारीमें उन्हें अच्छा रकम मिलनेकी आशा थी ।  
किन्तु मीरजुमलाके परामर्शसे बादशाहने हुनेनकी कहला  
भेना, कि दाक्षिणात्यकी सूयेदारी मिलेगी सही, पर दाक्षि  
णात्यमें रह कर कार्य निवाह करना पड़ेगा । अमोर  
उल उमरा भार्दकी दरबारमें अकेला रूप पर दाक्षिणात्य  
जानेकी राजी न हुए । फलत सैयदों के साथ बाद  
शाहका मनोमालिन्य होनेका सूत्रपात हुआ । सैयद  
भार्यों ने दरबारमें आना बंद कर दिया और अपने अपने  
मकानकी सजाव सैन्य ठारा सुरक्षित कर रखा । फरख  
सियरकी माता पहलेसे ही सैयदों के पक्षमें थी । उन्होंने  
पुत्रको कह सुन कर सैयदों की दरबारमें बुलाया और  
आपसमें मेल करा दिया । मीरजुमला पटनाका सूये  
दार बन कर आये । फरखसियरके अमियेकके २२ वर्षमें  
यह घटना घटी ।

३२ वर्ष, गुजरातके अहमदाबादमें मुसलमानों के  
हिन्दूधर्ममें आक्षेप और गोहत्याका आयोजन करनेके  
कारण दोनों में घोरतर टगा हुआ था । इस समय सूये  
दार दाउद का हिन्दूके पक्षमें थे ।

जिस समय दिल्लीका सिंहासन ले कर भार्द भार्दमें  
युद्ध चल रहा था, नाना स्थानोंमें अराजकता फैलनेकी  
भीषत आ गई थी, उस समय पञ्जाबमें सिख लोग गुरु  
यदाकी अधिनायकतामें स्वाधीन होनेकी चेष्टा कर रहे  
थे । फरखसियरके चौथे वर्षमें ( १७१४ ई०में ) अय  
दुम्समद दिल्लेर जङ्ग लाहौरके सूयेदार हो कर गये । यहाँ  
उन्होंने सिखोंको परास्त कर उनके गुप्तकी बन्दी रूपमें  
भेज दिया । मीरजुमलाकी पटनेकी सूयेदारी पनन्दमें  
न आई । उनकी सेनाके आपसमें सजाह कर पेतन  
पृथिवी दरखाल पेश की । यहाँ तक, कि उनकी उर्छे  
जनासे मीरजुमला पटनामें और अशिक दिा तक उदर  
न सके । ये फौज दिल्लीमें आ घामये । उनके ठेमे  
आचरणके बादशाह बड़े विरक्त हुए । मीरजुमलाने  
आखिर बादशाहका अनुमद पानेकी आनासे सैयद

भार्यों का आश्रय लिया । किन्तु लोगोंने समझा, कि  
यह सैयदको बन्दो करनेका बहाना मात्र है । इस समय  
७१८ हजार अश्वारोहीने बाकी तात्याह घसूल करनेके  
लिपे महम्मद अमो ग्रा बरम्मी, अमोर उल उमराके  
प्रतिनिधि का दीरान और मीरजुमलाके मकानमें उरपात  
मचना आरम्भ कर दिया । यहा तक, कि दिल्लीका पण  
विपन्नन हो उठा । सैयद अली अयदुल्लाने बहुसंख्यक  
सजाव अश्वारोही और निपादो रण कर उन लोगोंका  
गतिरोध किया है ।

बादशाहने मीर जुमलाके प्रति नितान्त अमत्तुष्ट हो  
उन्हें पञ्जाब भेज दिया और उनकी जगह सर युन्द  
जा पटनाके सूयेदार बनाने गये । मीर जुमलाने  
पञ्जाब जाने पर सभी कानाफूसी करने लगे, कि यह  
राजाकी चालबाजी है, सैयद भार्योंको बन्दो करनेका ही  
आयोजन हो रहा है । आगिर ठेमा हुआ, कि अय  
दुल्ला अपना घञ्जीरी-शाम भी गी बँडे । चारों ओर  
गोलमाल उपस्थित हो गया । बहुतेरे दूसतोंकी  
जागीर या मनसद आत्मसात् करने लगे । इस समय  
हुसेन अली दाक्षिणात्यमें राजद ग्राँ और महापट्टीकी  
क्षमता हास करनेकी चेष्टा कर रहे थे, नाना स्थानोंमें  
युद्ध विग्रह चल रहा था । इस समय बालाजी विभ  
नायके प्रभावसे मुगल-सेनाने कई जगह हार गार् थी ।  
हुनेन अलीने महाराष्ट्रपति शाहुके साथ सन्धि करनेकी  
मनद भेजो थी । किन्तु बादशाहने उनके प्रस्तावको  
प्राव्य नहीं किया । पेशवा २८२ ।

दिल्लीके दरबारमें महम्मद मुराद नामक एक गोन  
यनीय काम्मीरी बादशाहका मित्रपात हो सैयदोंके दमन  
की चेष्टा कर रहा था ।

योधपुरके राजा अजितसिंहकी बन्धा धनि रूपयता  
थी । बादशाहने उससे विवाह करना चाहा । परन्तु ये  
परापक ठेमे बीमार पड़े, कि उनकी आना पूर्ण न हो  
सकी । इस रोगमें यथामाप्य चिकित्सा चली रही  
थी । इसी समय अङ्गरेजयणिक बेरोबटोक वाणिज्य  
करनेका फरमान लेनेकी आजामें कई स्थाप रूपये उप  
टीरनके साथ गजदरबारमें उपस्थित थे । उषामरी  
पक्का नाम प्राकृत हामित्तन था । हामित्तनकी

फोशिशमे वादशाह रोगमुक्त हुए और शीघ्र ही महा समारोहसे राजपूतवालाके साथ उनका परिणयकार्य सम्पन्न हुआ। (१७८६ ई०में) अद्वैतचिन्तित्सम्मेके प्रार्थनानुसार अद्वैतजगन्ने वादशाहने बङ्गालमें बेरोफ टोक वाणिज्य करनेका फरमान और ३७ ग्राम एरोननेफी अनुमति पाई थी। इधर सैयद भाइयोंके साथ उनका विशेष धीरे धीरे बढ़ता जा रहा था। अबदुल्ला हुसेन अफीकी किल्ली आनेके लिये बार बार पत्र लिखा करते थे। अजितसिंह आदि बड़े बड़े मनुष्य वादशाहके सहायक थे। यदि वे चाहते, तो सब उस कष्टकरी को दूर कर सकते थे। पर अपनी निवृत्तता और अलसतामें उन्होंने ऐसा किया नहीं, जिसमें पीछे उन्हें हाथ मग मल कर रहना पड़ा। हुसेन भाइके साथ आ मिले। दोनोंके फौजालसे अनुचरो ने राजान्त पुरसे वादशाहको बाहर कर उनकी दोनों आर्से निकल लीं और पीछे उन्हे कारगारमें कैद कर रखा (१७९६ ई०से १८वीं फरवरी)। दोनों सैयद भाइयोंने तैमुरजगीय एक बालकको वादशाह गडा कर ११३६ हिजरी, ६ रजब (१७१६ ई० १६वीं मई) को नृगसम्पत्से फरगसियरके प्राण ले लिये। दिल्लीमें हुमायुनके समाधिमन्दिरमें उनकी कब्र हुई। सैयदोंने पहले जिस बालकको वादशाही दी थी, उसका नाम था रफी उडु दर्जात।

फर्कखावाद (फरक्कावाद)—युक्त प्रदेशके आगरा विभाग का एक जिला। यह अक्षा० २६ ५६'से २७ ४३' ० और देशा० ७६ ८' से ८० १' ५०'के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १६६५ वर्गमील है। इसके उत्तरमें शाहनहान पुर और बदाऊँ, पूर्वमें हरदोई जिला, दक्षिणमें कानपुर और पन्ना तथा पश्चिममें मैनपुरी और पटा है। फते गढ नगर इसका विचार विभागीय स्वर है, किन्तु गङ्गाके पश्चिम घुल्लुत्तों फर्कखावाद नगरमें ही लोगोंका वास अधिक है।

दोआबके मध्यभागमें यह जिला अवस्थित है। मध्यभाग और मार्गोस निम्न है। इस कारण प्रति वर्ष बाढमें यह स्थान जलमग हो जाता है। गङ्गाके तीर-वर्ती भूमि पर एक एक जानेके कारण फसल अच्छी लगती है। शेष सभी स्थान जगलसे पूर्ण हैं।

प्राचीन कन्नौजराज्य इस जिलेके अन्तर्भूक्त होनेके कारण यह स्थान प्रलतत्त्वविदोंका हृदयप्राही हुआ है। कान्यकुब्ज देखो। वर्त्तमान फरक्कावाद नगर मुसलमान राजाओंके समय बसाया गया। नगरकी भीतर और बाहर स्थर्पात गिया (भन्नावशेष अट्टालि कादिके)-के जो सब निदशन देगनेमें आते हैं, वे मुसलमानों डग पर बने हुए हैं। वक्त मानगालमें गङ्गासे २ कोस(१) दूर फालीनदीके वामगुल पर फर्कखावादनगर बसा हुआ था। प्राचीन नगरके धरमा वशेषमें प्राय ५ ग्राम विस्तृत है। चारों ओर ईंटोंकी दीवार पडी हुई है। यहांके लोग उस ध्वनस्तूपमेंसे इट ले कर अपना घर ढार बनाते हैं। प्राचीन नगरकी गौरव कीर्त्ति धीरे धीरे लीप होती जा रही है।

हिन्दूकीर्त्तियोंमें एक मात्र राजा ब्रजपपालका पत्रित शैल देपने लायक है। आज भी बहुत सी मुसलमानकीर्त्तिया विद्यमान हैं।

गुलतराजाओंने ३१६से ७७५ ई० तक इस रथाका शासन किया था। उनकी प्रचलित मुद्रा और अपरापर कीर्त्तिसम्म आज भी इस जिलेके मध्य इधर उधर पडे दिनाड देने हैं। भारजाति ही यहांकी आदिम अधिवासी है। ठापुरय शहर उनका उच्छेदसाधन करके कार्य उपनिवेश बसा गये हैं। कन्नौजराज जयचार्दके अधि कारकालमें फालीनदीका दक्षिणाग नौगे से परिपूर्ण हो गया। मुसलमान कच्चे व तु वर राजाओं के पराजित होनेके बहुत बाद इसका उत्तराग वर्त्तमान अधिवासियों के हाथ लगा। १८वीं जतावदीमें फर्कखावादके नयाव हो यहांके सर्वमय फर्चा हुए। १७५१ ई०में रोहिला-सरदार अली महम्मदकी मृत्यु हुई। सम्राटने हाफिज रहमत खाको अलीका उत्तराधिकारी बरूल नहीं किया। सम्राटके आदेशसे फर्कखावादके नयाव दलबलके साथ हाफिजकी दमन करनेके लिये अग्रसर हुए। युद्धमें नयाव साहव पराजित और निहल हुए। इतों समय अयोध्याने वजीर सफ्दर जङ्गने फर्कखावादको लूटा, इस कारण फरक्कावादी रोहिला और बरेलीके दलमें एकत्र

(१) पहे ग ग नदी फर्कखावादके निम्न हो कर बहती थी।



हो कर सभ्यताके हाथमें फर्रुखाबाद छीन लिया और  
रंगहावाटमें घेरा जाला । विस्तृत विवरण रोहितसंग्रह  
और बरेली जवामे देखो ।

रोहिल्लाओ को १७७४ ई०में परास्त करके सुजा  
उर्दालानमें यह स्थान अगने अधिभारमें कर लिया । इसके  
बाद १८०१ ई०में यह अंग्लेजो के हाथ लया । १८०७  
ई०में यहा विद्रोहान्त ग्युव जोरसे धधक उठा ।

फतेगढमें बहुतसे अंग्लेज मारे गये । कनेरा देगो ।  
मईमें जायसो माम तब यह निला नयाव और धधक  
याँके अर्थात् रहा । १८५८ ई०में जब प्रिन्सेडियाकी  
फौजने विद्रोहियों को परास्त किया, तब नयाव और  
फिरोजशाह जान ले कर बरेलीके भाग गये । पीछे  
मई मासमें विद्रोहियोंने आ कर फिरसे कायमगङ्गको  
घेर लिया । किन्तु इस बार वे यहा अधिक दिन ठहर  
न सके ।

इस जिलेमें फर्रुखाबाद, फतेगढ, कायमगङ्ग, जाम  
साबाद, कशेर, छिप्रामौं, तिरवा और तेलोप्राम नामके  
८ जहर और १३८० ग्राम लगते हैं । जनसंख्या दो  
लाकसे ऊपर है । मैकडे पीछे ८८ हिल्डू और १०  
मुसलमान हैं । अयोध्या, रोहिल्लाण्ड, बानपुर, बल  
बत्ते आदि स्थानोंमें यहासे चावल, गेहूँ, जौ, उजार,  
बाजरा, उड़द, बीन् आदि जान द्रव्योंकी रफ्तकी होती है ।  
रेलमार्गके खुल जानेसे वाणिज्यकी विशेष सुविधा हो  
गई है । १९०९ ई० तकके अन्त्येतर प्राय २५  
बार दुर्भाग पडा था ।

विश्रांतिक्षेत्रमें यह निला बहुत गिरा हुआ है, मैकडे  
पीछे चार मनुष्य पडे लिये मिलते हैं । पर अब इस ओर  
लोगोंका ध्यान कुछ कुछ आरुण्य होता जा रहा है ।  
जमा जिले मरमें ०५० पेसे स्कूल है जिनमें सरकारी  
कुछ कुछ सहायता मिलती है, ५० प्राइमरी स्कूल हैं  
नगरमें पठने कुछ भी सहायता नहीं मिलती और ४  
ग्राम माध्यमिकके स्कूल हैं । स्कूलके अभाव अल्पता  
भी है ।

० युवप्रदेशके फर्रुखाबाद जिलेकी एक तहसील ।  
यह अक्षां २० १ से २७ २८ ३० और देशां ७१ ६५ से  
७१ ४६ ५०के मध्य अवस्थित है । भूविभाग ३३६

वर्गमील और जनसंख्या प्राय २५०३५२ है । इनमें  
१ शहर और ३८७ ग्राम लगते हैं । बानरा, आलू और  
तमाकू यहाकी प्रधान उपज है । यहा आम भो बहुत  
यनसे मिलता है । भोजपुर, मल्लमदाबाद, पहाडा और  
जमश्याबाद परगने ले कर यह तहसील गठित हुई है ।

३ उक्त जिलेका प्रधान नगर । यह अक्षां ०७ २४ ३०  
और देशां ७६ ३४ ५० गङ्गाके पश्चिम कुल्ते  
प्राय १५ कोसकी दूरी पर अवस्थित है । जाम तथा  
पचास हजारके बसीब है । १७१४ ई०में नयाव महम्मद  
गाने सम्राट फर्रुखसिंघके नाम पर यह नगर बसाया ।  
यहा एक मिला है । कहते हैं, कि पहले उसीमें नयाव  
का प्रासाद था । यहासे गङ्गागर्मका द्रव्य अति मनो  
रम लगता है । पहले यह नगर युवप्रदेशका वाणिज्य  
केन्द्र था । इष्टाडिया और कानपुर फर्रुखाबाद लाइट  
रेलमार्गके खुल जानेसे नगरका वाणिज्य और गढ गया  
है । मित्र मित्र मालोंकी रफ्तकी रेल द्वारा हो होती है ।  
यहाकी ऐतिहासिक घटना जिलेके साथ सखिद्रे रहनेके  
कारण उसी जगह घणित हुई है । शहर चारों ओर  
मट्टोंका दीवारसे घिरा हुआ है । शहरके बाहर नयावका  
समाधि मन्दिर है जो अभी अनाथस्थानमें पडा है ।  
शहरमें एक हाईस्कूल, American Presbyterian mission  
स्कूल, एक मिडिल स्कूल तथा बहुतसे प्राथमिक स्कूल  
हैं । अजाया इसके एक चिकित्सालय और एक जनाता  
अस्पताल है । हालमें एक मेडिकल कालेज भी खुला है ।

फर्रुगि—गान्देशके मुसलमान राजपूज । १३७० ई०में  
माङ्कराज फर्रुगिने दिहाोन्यसे दक्षिण तिमरका  
शासनभार ग्रहण किया । तामी गदोकी उपत्यका तब  
वे राज्य देला कर परलोप निघारे, पीछे उनके लडके  
नगिर गाने अगोरो स्वाधीन राजा बनग कर तमाम  
घोरणा कर ही और १३१६ ई०को गान्देश राज्यमें फर्रुगि  
राजपूजकी प्रतिष्ठा की । उन्होंने अजोरगढ जीन कर  
पीछे तामोके दूसरे किनारे बुर्दापुर और उताबाद नगर  
बसाया । बुर्दापुर नगरमें उनकी राजधानी थी । यहा  
गान्देश राजपूजने १३४९ से १६०० ई० तक शासन किया ।  
किन्तु उनकी स्वाधीनता सदाके लिये अक्षुण्ण न रही ।  
मुसलमान और मालवराजके अर्थात् वे सामन्तत्व । राज्य

करते थे। समय समय पर उन्होंने स्वाधीन होनेकी कोशिश भी की थी जिससे वे अधिराजके हाथ कई बार अच्छी तरह शांतिन हुए थे। विभिन्न आक्रमणकारियोंके हाथमें पट कर उर्हानपुर तबाह हो गया था और फरखि गणने अशीरगढ जा कर आश्रय ग्रहण किया। पञ्चम राजा आदिल खाँ (शाह इ. भरखन्द) के राज्यकालमें इस घणनी विरोध श्रीरूढ़ि दिखाई दी थी। उन्होंने गहाँ मण्डल तक राज्य जीत कर गौड़ोंसे कर वसूल किया था। उनकी वनाई हुई जमा मसजिद इद्गा आदि आज भी उर्हानपुरमें देवानमें आती है। १६०० ई०में सम्राट् अकबरशाहने फरखिगणके शेष राजा बहादुर गाँको अशीरगढके युद्धमें परास्त कर पान्देश अपने साम्राज्यमें मिला लिया था।

फलयक (सं० झी०) पूगपाल।

फगहा (हि० पु०) फावडा देखो।

फरहो (हि० स्त्री०) १ छोटा फावडा। २ लकड़ीका एक प्रकारका औजार जो फावडे के आकारका होता है। यह घोडे की लोढ़ हटानेमें काम आती है। फयारी बनानेके लिये युद्धस्थ रेतकी मिट्टी हलसे हटाते हैं। ३ मथानी। ४ एक प्रकारका भूना हुआ चावल जो भुनने पर फूल कर भीतरसे प्योछला हो जाता है, लाह।

फरहरी (हि० स्त्री०) फुरही देखो।

फरेंद (हि० पु०) जामुनकी एक जातिका नाम। इसके फल बहुत बडे बडे और गुदेदार होते हैं। इसकी पत्तियाँ जामुनकी गत्तियोंसे अधिक चौडी और बडी होती हैं। फल आपाढमें पकते हैं और मीठे होते हैं। जामुनके समान यह पाचक होता है। आम्र देखो।

फरेन्द्र (सं० पु०) जम्बू रूक्ष, जामुनका पेड़।

फरेय (फा० पु०) कपट, धोखा।

फरेय (हि० पु०) फाहल देखो।

फरेरी (हि० स्त्री०) जगलके फल, जगली मेवा।

फरैदा (फा० पु०) एक प्रकारका तोता।

फरो (फा० वि०) तितोहित, दबा हुआ।

फरोपन (फा० स्त्री०) विक्रय, बिक्री।

फरोदस्त (फा० पु०) १ गौरी, कान्दला और पूरखीक मेलसे बना हुआ एक प्रकारका सबर राग। कहते हैं,

कि यह राग अमीर खुमरोने निकाला था। २१४ मात्र। औका एक ताल। इसमें ५ आगत और २ ग्याती होते हैं। इसके तबलेके बोल यों हैं—१ धिने धिन, २ घाफेदे, ३ तागपिन् घा गये ता, तेदेकता, गदिघेन। घा।

फरुँ (हि० पु०) फरक देखो।

फरुँ (हि० वि०) फरब देखो।

फरुँ (हि० पु०) फरब देखो।

फरुँद (हि० पु०) फरब देखो।

फरुँ (अ० पु०) १ मुसलमानों धर्मानुसार विधिर्वाहत कर्म जिसके नहीं करने प्रायश्चित्त करना पडता है। २ कल्पना, मान लेना। ३ कल व्यकर्म। ४ उत्तरदायित्व। फरुँ (फा० वि०) १ कल्पित, माना हुआ। २ सत्ताहीन, नाममात्रका। (पु०) ३ फरबी देखो।

फरुँ (फा० स्त्री०) १ फागज वा फावडे आदिका टुकडा जो किसीके साथ जुडा या लगा न हो। २ रजाइ गाल आदिना ऊपरीपल्ला जो अलग बनता और विकता है। ३ फागजका टुकडा जिस पर किसी वस्तुका विवरण, सूची या सूचना अदि लिखी गई हों या लिखी जाय। ४ परण। ५ यह पशु या पक्षी जो जोडके साथ न रह कर अलग और अकेला रहता है। (वि०) फरद देखो।

फरुँसी—फिर्दाही देखो।

फरुँर (सं० वि०) स्फुर अच् शृपोदरादित्याम् माधु। अत्यन्त चञ्चल।

फरुँरी (सं० स्त्री०) फराय, पंजा।

फरुँरीक (सं० पु०) स्फुरतीति स्फुरणे (फरुँराफद यश्च। उण् ४।२०) इति ईकन्, धातो फरुँरादेश्च। १ फराय, पंजा। २ उपानत, जूता। ३ मारुद, मरुत्ता। ४ कौपल।

फरुँरीना (सं० स्त्री०) फरुँरीक टाप। १ पाहुका, जूता। २ मदन।

फरुँना (फा० वि०) फरमाना देखो।

फरुँद (फा० स्त्री०) फरिबाद देखो।

फरुँ (हि० पु०) गैह या धानकी फसलका एक रोग। यह रोग उस अरुस्थामें उत्पन्न होता है जब फलुँके समय तेज हवा बहती है। इसमें फलुँ गिर जानेसे शालीमें दाने नहीं पडते।

फरांगी हि० पु०) १ क्षिप्रता, तेजी। २ फरांगी देखो। फरांगी (अ० पु०) १ यह तीसरा जिनका काम डेग यादग, मफाई करना, फरांगी विज्ञान, दीपक जलाना और इसी प्रकारके दूसरे काम करना होता है। २ तीकर, विद-मतगार।

फरांगी (फा० वि०) फरांगी या फरांगीके कामोंसे सम्बन्ध रखनेवाला। (स्त्री०) २ फरांगीका काम। ३ फरांगीका पद।

फराने (अ० स्त्री०) करने देना।

फराने (अ० स्त्री०) १ मित्रानन, विद्यार्थीका कपडा। २ फरांग देना।

फराने—युवावयवियोग।

फराने गौ—सम्राट् हुमायुनके एक प्रीतगाम। इसने किमी युद्धमें वेगवावाके हाथसे हुमायुनको बचाया था। इस प्रत्युपकारमें सम्राट् सिद्धिन्द जनेके समय इसे लाहोर-का निर्यात बना दिया। कुछ समय बाद यह अकबर शाहके माथ मिला गया। अकबरने सिद्दासन वा कर इसे कौराके तुजलदना पद प्रदान किया। अहमदाबादके समीप इसी महामद् हुमेन मिर्जाको परास्त कर सिन्ध सुक्यानि प्राप्त की। उक्त सम्राट्के जामतके १६वें वर्षमें यह पुनः युद्ध करनेके लिये विहार भेजा गया। इस बार भी इसने सफलता प्राप्त की जिससे सम्राट्ने प्रमन्न हो कर इसे जागीरदार बना दिया। पीछे राजा गजपतिके माथ जो इसका युद्ध हुआ उसीमें यह मारा गया।

फरी—युवावयवके मैनपुर जिलेका एक नगर। यह मुल्त फावादेमें ४ कोस दूरमें अवस्थित है। यहाँ गौ, हरि और शस्त्रादिना बाजार है।

फराने (फा० पु०) अन्तर्निध, आकाश।

फराने (म० स्त्री०) फरानेति फरानेति म्रि फल विज्ञाने वा अन्। १ लाभ। २ धारणाके होनेवाला यह बीज अथवा बीजक द्रव्य या मृदेसे परिपूर्ण बीज-कोश जो किसी विनिष्ट अणुमें पृथ्वीके आनेसे बाद उत्पन्न होता है।

गैसासिद्ध हस्तिमें बीज (दाने वा बीजक आदि) और बीजकोश (माधायन बीजकको अर्थ म फराने) बीज विभेद नहीं माना जाता। परन्तु व्यवहारमें यह विभेद

बहुत ही प्रत्यक्ष है। यद्यपि वैज्ञानिक दृष्टिमें गेहूँ, फल, जी, मटर, आम, कटहल, अमर, अनार, सेब, यामन, किशमिश आदि सभी फल हैं, परन्तु व्यवहारमें गेहूँ गेहूँ, चने, जौ, मटर आदिकी गिनाती बीज वा अनाममें और आम, कटहल, अनार, सेब आदिका गिनाती फलोंमें करते हैं। फल प्रायः मनुष्यों और पशु-पक्षियोंके पानेके काममें आते हैं। इसके भेद भी बीज होते हैं। कुछमें फेरल एक ही बीज या गुठली रहती है, कुछमें बीज। इसी प्रकार कुछके ऊपर बहुत ही मुलायम और हल्का आवरण या चित्रिका और कुछके ऊपर बहुत कडा या पाटेदार रहता है।

३ गुण, प्रभाव। ४ प्रतिफल, बदला। ५ प्रयत्न वा क्रियाका परिणाम, नतीजा। ६ धर्म वा परलोकका दृष्टि में कर्मका परिणाम जो सुख और दुःख है, कर्म-भोग। ७ शुभ कर्मोंके परिणाम जो सख्यामें चार माने जाते हैं। १। चारोंके नाम हैं—अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष। ८ हल्की फाट। ९ डाल। १० फलक। ११ बाण, माले, लुटरी आदिका तेज अगला भाग। यह नाग लोहेका बना होता है और उससे चापात बिधा जाता है। १२ गणितकी किसी क्रियाका परिणाम। १३ पासे परकी जिरो या चिह्न। १४ उदके दशकी सिद्धि। १५ गैसासिद्धकी तीसरी राजि वा निष्पत्तिमें प्रथम निष्पत्तिका द्वितीय फल। १६ मूल्याख्या या बुद्धि, सूद। १७ क्षेत्रफल। १८ कल्पित लोचनमें प्रदोषके योगका परिणाम जो सुख दुःख आदिके रूपमें होता है। १९ जातीका, आपक। २० प्रयोजन, दरकार। २१ विकार। २२ कर्षण, कर्षण। २३ कृत्तक वृक्ष, कर्षणका पेड़। २४ धारा। २५ गुण। २६ हस्तयय। २७ स्त्रीका। २८ सर्व-सौम्यतर। २९ मन्तक। ३० वसन। ३१ महर्षि गौतमीय प्रेमका भेद। महर्षि गौतमीय स्वप्न सूत्रमें इसका २११ इव प्रकार बखलाया है—

प्रभुनि और दोषवर्जित जो सध है यहाँ फल पदाथ है। इस विषयकी कुछ विचाररूपसे यहाँ भागीरथ बनने चाहिये। भागीरथका नाम, भागीरथ वा भागीरथ गिनाती आदि गेहूँ जो बीजक अथवा फल म हों, उनमें परिणाममें सुख अथवा दुःख भोग उत्पन्न होता है।

अर्थान् सुख या दुःखमोग ध्यतीत कार्यं मात्रका और मोई परिणाम फल ही नहीं है। सभी कार्याके अन्तमें सुख अथवा दुःख हुआ करता है। इसीसे महर्षि गीत मादि ऋषियोंने सुख और दुःखको ही कार्यका फलस्वरूप स्वीकार किया है, सुख अथवा दुःख साक्षात्कारके बाद और कोई भी फल उत्पन्न नहीं होता, यही सुखदुःख भोगकार्यमात्रका चरमफल है। इस कारण सुख अथवा दुःखमोगको ही मुख्यफल कहना चाहिये। जीवके आहार निहार आदि व्यापारोंका मूल कारण प्रवृत्ति और दोष है। प्रवृत्ति शब्दमे यत्न और दोष शब्दमे राग, द्वेष तथा मोह ये तीनों ही समझे जाते हैं। रागका अर्थ इच्छा अर्थात् अनुराग और द्वेषका आत्मगुणविशेष है। द्वेष होनेसे अनिष्टाचरणमें प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। मोहका अर्थ 'अपयार्थ-ज्ञान' है अर्थात् दुःखकर कार्यमें सुपत्नर और कामिनी आदिमें मनोहरत्वादि बुद्धि है। ये तीनों प्रथमतः जीवात्माके आच्छन्न करते हैं। इसीसे उपाजित प्रवृत्ति व्यापार अति दुःखकर होने पर भी उसमें उस दोष मोहित आत्माकी प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। उस प्रवृत्तिके होनेसे ही व्यापारधारा उत्पन्न हुआ करती है। यही व्यापारधारा आदिमें सुख या दुःख उत्पादन करती है। इसी कारण दोष और प्रवृत्ति इस सुख अथवा दुःखमोगका मूल कारण होती है। महर्षि गीतमें प्रवृत्ति और दोष द्वारा उत्पन्न पदार्थको ही फल बतलाया है। अतएव सुख अथवा दुःखमोग ही मुख्य फल है, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। भोजनादि क्रिया भी शरीरादि इन्द्रियके सुख और दुःखमोग सम्पादन करती है, इस कारण यह गौणफल है। अतएव सुख और दुःख इन दोनोंके अन्त्यरका साक्षात्कारत्व ही मुख्यफलका लक्षण है तथा सुखदुःख भिन्न वर्तमान जन्त्यत्व गौणफलका लक्षण और जन्त्यत्व ही सामान्य फलका लक्षण है। (व्याख्यदर्शन)

अनिष्ट ११ और मिश्रके भेदसे कर्मके तीन फल होते हैं। चाहे जिस किसी कार्यका अनुष्ठान क्यों किया जाय उसके उक्त तीन प्रकारके फलके सिवा और किसी प्रकारका फल नहीं होगा।

मानव इस जगत्में (गीता १८ अ०) या परलोकमें

सुख दुःखादि वा स्वयं नरकाणि जो मोई फलभोग करने हैं, यह कर्मजन्य है। शुभकर्मका फल सुख और अशुभ वा पाप कर्मका फल दुःख है। जीव बार बार कर्म फलका भोग करते हैं, किन्तु आत्मा निर्लिप्त है, उसके ये सब फल नहीं होते।

जब तक आत्माका मायिस्ववन्धन टिप नहीं होता, तब तक इस प्रकारका फल अवश्यम्भासी है।

दलितमें दान ही परमात्र शुभफलप्रद है। ब्रह्मचरित पुराणमें प्रवृत्तिपण्डके ३४वें अध्यायमें तथा ऐमाद्रिमें दानफलका विशेष विवरण लिखा है, विस्तार हो जान के लिये यहाँ नहीं लिखा गया।

फलक (स० पु० ३०) फल सजाया वन। १ चक्र, ढाल। २ अस्थिराण्ड। ३ नागदेश। ४ काष्ठादि फलक, तन्ता, पट्टी। ५ नितम्ब, चून्ड। ६ जलपात रखनेका आधारविशेष। ७ रत्नपद, घोरोका पाद। ८ चादर। ९ पृष्ठ, चरक। १० हथेली। ११ फल। १२ चौकी, मेज। १३ ग्राहको ज्ञान चिम पर लोग बैठते हैं।

फलक (अ० पु०) १ आकाश। २ सग।

फलकक्ष (स० पु०) महाभारतके अनुसार एक यक्षका नाम।

फलकण्टक (स० पु०) फले कण्टक यस्य। १ कण्टकि फलकक्ष। २ पनस, कटहल। ३ पर्पटक, नैतपापटा। ४ इन्द्रोरा।

फलकण्टकी (स० ग्रा०) इन्द्रोरा।

फलककशा (स० ग्रा०) वनपत्त वृष्ट, ज गली देर।

फलकना (दि० कि०) १ छलकना, उमगना। २ फ। ना देली।

फलकपाणि (स० पु०) फलक पाणी यस्य। चर्मों, हाथमें ढाल के लडनेका योद्धा।

फलकपुर (स० ३०) भारतके पूज्यर्षी पुरभेद।

(पाणिनि १।२।१०१)

फलकयन्त्र (स० ३०) ज्योतिषोक्त यन्त्रभेद। इसके अनुसार ज्या धादिका निर्णय किया जाता है। मित्राल-श्रीगोमिनिमें इस यन्त्रकी प्रस्तुत प्रणाली आदिका विशेष विवरण लिखा है।

फलकर ( हि० पु० ) यह कर जो वृक्षोंके फल पर लगाया जाता है।

फलकर्मण्य ( सं० वि० ) फलकर्मिणः सक्थि यस्य पत्न्यु ममात्मान । फलकृत्युत्वं सक्थियुक्त । ( ह्री० ) फलकर्मिणः सक्थि ।

फलका ( अ० पु० ) १ नाम या जहाजकी पाटनमें यह दरवाजा चिममेंसे हो कर नीचेमे लोग ऊपर जाते और ऊपरमे नीचे उतरते हैं । २ फफोला, छाला ।

फलकाम ( सं० वि० ) फलं कामयते इति कर्म अण् । कर्म फलकामो, जो कर्मके फलको कामना करना हो । शाररमें फलकामो हो कर कार्य करनेको विशेष निन्दित वत लया है।

शाररमें सभी जगह निष्काम कामना विधान देगनेमें आता है, इस कारण सबोंको फलकामनाशून्य हो कर कर्मानुष्ठान करना विषेय है। अज्ञानान्ध जीर्णका चित्त बहुत मलिन है, इस कारण ये हमेशा नाना प्रकारकी कामना द्वारा अभिभूत रहते हैं। जब तक उनका चित्त मलिन रहेगा, तब तक ये पुन पुन सकाम कर्मका अनुष्ठान करते हैं। किन्तु इस प्रकार कर्म करते करने निस परिमाणमें चित्त मलिनता दूर होगी उनी परिमाणमें चित्त भी कामशून्य होगा। भगवान् विष्णुकी प्रीतिको कामना करनेके यदि किसी कर्मका अनुष्ठान किया जाय, यह दोष नहीं होता।

“कर्मण्येवाधि शरत्ने मा फलेषु कदाचन ।” (गीता)  
भगवान् विष्णुने अहम्को निष्काम कर्म करनेवा उपदेश दिया था। जोयदेह धारण करनेमें, इच्छापूर्वक हो चाहे, अनिच्छापूर्वक, कर्म करता हो होगा। निष्कम हो कर कोई भी मर्दो रह सकता। जब कर्म जोयका अधश्चमासी है, तब त्रिमसे जोयमाण फलकामनाशून्य हो कर कर्मका अनुष्ठान करे, उनीके लिये शान्तिमें बार बार फलकामना त्यागना विषय वर्जित हुआ है। सकाम कर्मका फल बन्धन और निष्काम कर्मका फल मुक्ति है। यही सशाम और निष्काममें भेद है।

फलकायन ( सं० ह्री० ) एक कर्त्तव्य बनना नाम चिमके मन्त्रार्थमें यह प्रसिद्ध है, कि यह मन्त्रार्थकी बहुत प्रिय है।

फलकिन् ( सं० पु० ) फलकारोऽप्यन्यस्येति फलक इति । १ मत्स्यमेव, चोत्तर नामकी मछली । ( वि० ) २ फलकान्वित । फलक भक्तिरिष्टपूष एव स्वार्थे क, फलका तत चतुरस्रायं प्रोक्षादित्यात् इति । ३ तटपुत्र मन्त्रो पादि ।

फलको ( सं० स्त्री० ) फलकिन् देवो ।

फलकीरन ( सं० ह्री० ) महाभारतके अनुसार एक वनका नाम जो किसी समय तीर्थ माना जाता था।

फलकच्छ ( सं० पु० ) एक प्रकारका वृच्छ, मत् । इनमें घेठ आदि फलों के फायने पी कर एक मास तक रहना पड़ता है।

फलकृष्ण ( सं० पु० ) फले फलायच्छेदे कृष्ण । १ पानीयामलक, जल भाँयला । २ वरजपूष । ( वि० ) फलं कृष्ण यस्य । ३ इन्द्राकृत्युक्त ।

फलकेशर ( सं० पु० ) फले केशरा इयाऽस्य । नारियेलपूष, नारियेलका पेठ ।

फलकोप ( सं० पु० ) फलस्य मुष्कस्य कोप इय । १ मुष्कारण चर्मयुक्त अष्टकोप । २ पुष्पकी इन्द्रिय लिङ्ग ।

फलकोपक ( सं० पु० ) फल मुष्क एव कोपो यत्र, ततः फल् । मुष्क, अष्टकोप ।

फलमहि ( सं० वि० ) फलं शृङ्गातीति मह इत् । उपयुक्त समयमें फलित पुष्प ।

फलम्राही ( सं० पु० ) फलं शृङ्गातीति प्रद पिनि । १ युद्ध, पेठ । ( वि० ) २ फलमहणरसां, फल लेनेवाला ।

फलपूत ( सं० ह्री० ) पूतीर्णविशेषः । इसको प्रस्तुत प्रणाली—गणपती ४ मंत्र, शाम्भुकी २ मंत्र, सुष्प ८ मंत्र । कर्मार्थ—मार्जडा, पण्डितपु, कुट, विनाय, शोनी, विजयन्दकी जट, भेदा, शोरकडूला, शायगन्धामुन, बन यमानो, हरिडा, दागहमिडा, हिरु, कर्त्तवी, र्कोण्ड, कुम्भ, गुग्गु, कटुला, शोकरकुंज, अथवापुन, रत्नचन्द, गन्तला मूत्र (आमायमें अथवालिपारोका मूत्र) प्रत्येक दो तोला । इत सब दुष्यों में विषमपूर्वक पूत प्रस्तुत करना होता है। पुला यदि इस पूतका मंत्रन करे, तो उत्तरी र्त्ति जाति कर्त्तवी ४ और शिवो के सब प्रकारके योनिशय तथा कर्मदेश दूर हो कर आयु और बन्धनों पुत्र उत्पन्न

होता है। यह स्त्रीरोगाधिमारमें एक उत्कृष्ट औषध है। स्वयं अम्बिओकुमारने इस घृतका उपदेश दिया है। इसे फलकल्याणघृत भी कहते हैं। (भयवशरत्ना० स्त्रीरोगाधि) फलचमस (स० पु०) दधिमिश्रित बटरूप चूर्ण, एक प्रकारका पुराना व्यञ्जन जो बडकी छालकी कूट कर उसके चूर्णको दहीमें मिला कर बनाया जाता था।

फलचारन (स० पु०) १ फलभिजाजक फलभिजाजकारी। २ धौलमतके अनुसार प्राचीनकालके एक कर्मचारिके पदका नाम।

फलचोरन (स० पु०) फल चोर इन यस्य कन्। चोरक नामक गन्ध द्रव्य।

फलच्छन्दन (स० स्त्री०) काष्ठनिर्मित गृह।

फलजलयासुदेव (स० पु०) एक प्राचीन कवि।

फलजाति स० स्त्री०) जातीफलवृक्ष।

फलत (स० अर्थ०) फलस्वरूप, इसत्तिये।

फलता—बङ्गालके २४ परगनेके अन्तर्गत एक ग्राम। यह अक्षा० २० १८'३० और देशा० ८८ १०'५०, हुगली नदीके किनारे अवस्थित है। इसके ठीक दूसरे किनारे दामोदरादी आकर गङ्गामें मिल गई है। पहले यहा ओलन्दासोंकी एक फौडी थी। नवाब निराज उद्दीलाने जब बङ्गके पर आक्रमण किया, तब अङ्गरेज रणतट ले कर डूँक माहव यहीं पर रहते थे। यहां पहले एक छोटा दुर्ग था जो अभी छोटा दिया गया है।

फलतान—दक्षिणात्यके सातारा अधिकारभुक्त एक सामन्तराज्य। यह अक्षा० १७ ५६'से १८ ६'३० और देशा० ७४ १६'से ७४ ४४' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर पूना जिला और तीन ओर सातारा-राज्य है। भूपरिमाण ३६७ वर्गमील है। उत्पन्न शस्यादिके अलावा यहा तेल, कपास और रेशमी वस्त्र बुनने तथा पत्थरकी मूर्त्ति बनानेका विस्तृत कारवार है।

यहाके सरदार राजपूत हैं। इस घण्टके पदकला जगदेव नामक कोई व्यक्ति दिहोदरवारमें नीकरो करते थे। १३२० ई०के युद्धमें उनकी मृत्यु हुई। विध्वारसी भृत्यकी मृत्युसे घबराये हो मस्रारने उनके लडके निम्न राजकी नायककी उपाधि और जागीर दी। १३४६ ई० में निम्नराजका देहा हुआ। इसके बाद १८२५ ई०में

साताराके राजाने इस पर अधिकार किया। १८२७ ई० में उन्होंने नवराना ले कर वालाजी नायककी पितृसिद्धासन पर बैठनेकी अनुमति दी। १८२८से १८४१ ई० तक फलतान फिरसे साताराके जासनाधीन रहा। पीछे मृत राजाकी विधवा पक्षीने गोद लेनेका अधिकार पाया। ये हिन्दू और जातिके क्षत्रिय हैं। इन्हे दत्तक लेनेका अधिकार है। बडे लडके हो राज्यके उत्तराधिकारी होते हैं।

२ उक्त सामन्तराज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० १७ ५६'३० और देशा० ७४ २८'५० सातारासे ३७ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या दश हजारके लगभग है। १८वीं शताब्दीमें राजा निम्नराजने यह नगर बसाया। यहाकी मउद परिष्कार, परिच्छन्दन और पृक्षच्छायायुक्त है। १८६८ ई०में म्युनिमिपलिटि स्थापित हुई।

फलवप (स० स्त्री०) फलस्य वप ६-तन्। १ शाखा, पुरुष और फलार्थ ये तीनों फल। २ हड बहेडा और आवला इन तीनोंका समूह।

फलविष (स० स्त्री०) फलस्य विषम्। १ भावप्रसाजके अनुसार मोठ, पीपल और काजी मिर्च। २ तिकला, हड, बहेडा और भायग।

फलद (स० पु०) फल ददातीति दा (आन्तोऽपुपसर्गे)। पा ३।२।३ इति-फ। वृष, पेड। (वि०) २ फल दाता, फल देनेवाला।

फलदान (हि० पु०) १ हिन्दुओंकी एक रीति जो विवाह होनेके पहले उस समय होती है जब कोई व्यक्ति अपनी कन्याका विवाह किसीके लडकेके साथ करना निश्चित करता है। इसमें कन्याका पिता रुपये, मिठाई, अक्षत, फूल आदि लोक प्रथाके अनुसार शुभ मुहूर्त्तमें घरके घर भेजता है। उस समय विवाह निश्चित मान लिया जाता है। इसका दूसरा नाम बररक्षा भी है। २ विवाह सम्बन्धी टीकेकी रमस।

फलदार (हि० वि०) १ फलवाला, जिसमें फल लगे हों। २ जो फले, जिसमें फल लगे।

फलदू (हि० पु०) घाली नामका एक वृक्ष।

फलद्रम (स० पु०) फलितद्रव्य, फल हुआ पेड।

फलना (हि० कि०) १ फलसे युक्त होना, फल लाना।

फलाग (हि० स्त्री०) १ एक स्थानसे उड़ल कर दूसरे स्थान पर जानेकी क्रिया या उसका भाव । २ मालगमकी एक कसरत । यह एक प्रकारकी उड़ाई है । इसमें दोनो हाथोंसे जमीन पर डेर कर पैरोंसे उड़ाने और चक्कर लगाते हुए दूसरे ओर भूमि पर गिरते हैं । ३ यह दूरी जो फलागने ते की जाय ।

फलागगा (हि० वि०) एक स्थानसे उड़ल कर दूसरे स्थान पर जाया या गिरता ।

फलाग ( हि० पु० ) तादाय, सायाग, अस्य मतलब ।

फला ( स० स्त्री० ) १ मिथिलाका क्षुप, फिभिर्गटा । २ जमी । ३ विधायु । ४ कुरीय ।

फलागम ( स० पु० ) १ शम्भूकाल । २ फलके आंका फाल ।

फलागम ( स० स्त्री० ) फले आगम सम्पत्ता । फाणवदली, वटकेरा, जगने फेरा ।

फलागमि ( स० स्त्री० ) काररेही, करेगी ।

फलादन ( स० पु० ) फलनामद्वय भक्षक या फलाग भदन भक्षण यम । १ मुकपक्षी, तोता । (वि०) २ फल भक्षक, फल खाता ।

फलादेश ( स० पु० ) १ किसी बातका फल या परिणाम बतलाना, फल कहना । ३ जन्मवृत्तकी आदि देण कर या और किसी प्रकार प्रदत्त आदिका फल कहना ।

फलादेश ( स० स्त्री० ) फलनामपक्षमिष । १ खाना दानपूर, गिरावका पेठ । २ फलदेवाला, ईश्वर । ३ यह जो फलोंका भागिक हो ।

फलाग ( अ० पु० ) अनुक, कोई अनिश्चित ।

फलागालु ( स० पु० ) वन्द्याग ।

फलागुपथ ( स० पु० ) वरफलाकी प्रणाली ।

फलागेषी ( अ० पु० ) जहाजका एक तिकोला पाल जो भाषेकी धोर होता है ।

फलाग ( स० पु० ) फलेयु मलयु कस्तो मासो यव्य । १ वडा, वीस । फलाग्य अन्त १ तम् । २ फलका मत, शेर ।

फलाग ( स० स्त्री० ) फलागवचन फलाग । यह दगियर, मुह और फलाग्य धुआंयु माना गया है । ( वेदके ) २ वृक्षान्त ।

फलाग ( स० स्त्री० ) फल और अन्न, अन्न और युग ।

फलागलि ( स० स्त्री० ) फलासहित अन्न तद्विष अल्प उन्न, टाप, वापि धन-इत्य । फलागहित अन्नयुगा स्त्री ।

फलाग्य ( स० पु० ) फलेन अग्यया । फलपेष्य युग ।

फलाग्य ( स० स्त्री० ) फलाग्य यस्य । १ वृक्षान्त, लदा फल । २ अन्नपेषतस, अग्येयत । ३ विद्यावली, विद्या विल ।

फलाग्यपञ्चक ( स० स्त्री० ) अग्न पञ्चक, वेर, अनाद, विद्या विल, अग्येयत और विगीरा ये पान राट्टे फल ।

फलाग्यिक ( स० पु० ) एक प्रकारकी इमलीकी चटनी ।

फलाग्येयि ( स० स्त्री० ) पतङ्ग स्त्री, मादा फलियाग ।

फलाग्य ( स० पु० ) फलका वगीरा ।

फलाग्य ( स० पु० ) अनादीयोगाधिकारमें अरिष्ट औरध विरोध । एक प्रकारका अरिष्ट जो धवामीरके रोगीको दिया जाता है ।

फलाग्य ( स० स्त्री० ) फल अर्धयने इति अर्थ पिनि । फलकामो, फलकी कामना करनेवाला ।

फलाग्य ( अ० पु० ) एक प्रकारका उनी यम जो बगुन फीमड और दाली दाडी बुनाघटका होता है ।

फलाग्य—दार्जिलिङ्ग जिन्हे भारतमें हिमालय पर्वतको सिहलीला ओंकाका एक शिखर । यह अक्षां २३ १२ ३० उ० और देशां ८८ ३ ५०के मध्य समुद्रपृष्ठसे १२०४२ फुट ऊँचा है । दार्जिलिङ्गमें मडा हो कर देशोमें इस वृक्षाका बर्कायुत इत्य अनीय मनोहर लगता है ।

फलाग्य ( स० पु० ) फलाग्यनातीति अग्न्यु । धुरपक्षी, तोता । ( वि० ) २ फलाग्य, फलाग्येयला ।

फलाग्य ( स० वि० ) फलाग्यनाति अग्न पिनि । फलाग्योमी, फल खातेवाला ।

फलाग्य ( स० पु० ) फलेयु काम्यु । फलाग्य, यह भागाली को किसी वारके फल पर हो ।

फलाग्य ( स० पु० ) गन्धके धनुमान दाव, मयूर आदि फलोंके भागय जो २६ प्रकारके होते हैं ।

फलाग्य ( स० पु० ) मारिकेड वृक्ष, मारिकेडय पेठ ।

फलाहारं ( स० पु० ) फलाना आहार । फलभोजन, फेरल फल खाना ।

फलाहारी ( हि० पु० ) १ वह जो फल खा कर निर्वाह करता हो । ( वि० ) २ फलाहार सम्पन्न, जो फेरल फलोंसे बना हो ।

फल ( स० पु० ) फल इन् । मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी मछली । इसका मांस भारी, चिकना, बलकारक और स्वादिष्ट होता है ।

फलिना ( सं० स्त्री० ) फलमस्या अस्तीति फल ठन् टाप् । १ एक प्रकारकी निपावी जो हरे रंगकी होती है । २ शरादिका अग्रभाग, सरपत आदिके आगेका तुकोला भाग ।

फलित ( स० लि० ) फलमस्य जात अस्त्यर्थे तारकादि-स्थादि तच् । १ फलवान्, फला हुआ । २ सम्पूर्ण, पूर्ण । ( पु० ) ३ वृक्ष, पेड़ । ४ पत्थर फल, छरीला ।

फलितथ्य ( स० स्त्री० ) फल-तथ्य । जो फलनेके योग्य हो, फलने लायक ।

फलित् ( स० लि० ) फलमस्यास्तीति फल इनि । फलयुक्त वृक्षादि, यह वृक्ष जिसमें फल लगते हैं ।

फलिन ( स० लि० ) फलानि सन्त्यस्येति फल ( बहु - मध्यमापि । उ० २।४८ ) इति इनच् । १ फलवान्, फला हुआ । ( पु० ) २ फलवान् वृक्ष, यह पेड़ जिसमें फल लगते हैं । ३ पनस वृक्ष, बटवल । ४ श्योनाक वृक्ष । ५ रोड़ा ।

फलिनो ( स० स्त्री० ) फलिन् खिया डीप् । १ म्रिय गु वृक्ष । २ अग्निगिणावृक्ष । ३ मुपली, मूसली । ४ लक्षणाकन्द । ५ पलादि, इलायची । ६ द्राक्षास्य, दाखवा बना हुआ आसव । ७ नपफरु वृक्ष, मेंहदी । ८ लाहलीवृक्ष, जल पीपल । ९ तायमाणा लता । १० बुगिफका, दूधी ।

फली ( स० स्त्री० ) फलमन्त्यरया इति अशं आदि भ्योऽच् खिया डीप् । १ म्रिय गुवृक्ष । २ फलिमत्स्य । ३ मुपली, मूसली । ४ चर्मक्या, चमरगा । ५ आघ्रातक वृक्ष । अमला । ६ फलयुक्त वृक्षादि, यह वृक्ष जिसमें फल लगते हैं । ७ श्योनाक । ८ पनस, बटवल ।

फली ( हि० स्त्री० ) छोटे छोटे पींधों में तगनेवाले एक प्रकारके फल पे लम्बे और चिपटे होते हैं । गुदा वृक्ष

भी नहीं होता, बल्कि उसके स्थान पर एक पींकिमें कई छोटे छोटे बीन होते हैं । लोग इन्हे ताने नहीं, बच्चे ही तरकारी आदिके काममें लाते हैं । प्राय सभी फलिया तानेमें पींकि होती है और सूरा जाने पर पशुओं के भी तानेके काममें आती है ।

फलीकार ( स० पु० ) फल चित्र वृ कर्षणि यत्र । फलेच्छा, फलकी कामना । चितुपीकरण । ३ अफल का फलसम्पादन ।

फलीता ( अ० पु० ) १ वड आदिके चररोह या छाल आदि-के रेशोंसे बटी हुई रस्सोका टुकड़ा । इसमें तोड़ेदार बन्दूक दागनेके लिये धाग लगा कर रबी जाती है । २ यर्त्ति, बत्ती । ३ पत्ती डोर जो मोट लगाते समय सुन्दरताके लिये बपडे के भीतरका विनारा छोड़ कर ऊपरसे बखिया की जाती है ।

फलोभूत ( स० लि० ) फलदायक, लाभदायक ।

फलीय ( सं० लि० ) फल उत्करादित्वात् चतुरर्थ्या छ । १ फलयुक्त, जिसमें फल लगा हो । २ फलमन्त्रिच्छादि । फलेंदा ( हि० पु० ) एक प्रकारका जामुन । इसका फल बड़ा, गुदेदार और मीठा होता है । इसके पेड़ और पत्ते भी जामुनसे बड़े होते हैं ।

फलेग्रहि ( स० पु० ) फल वृक्षातीनि फल-ग्रह ( क्लेमहिः । तन्मन्त्रिथ । १। ३।२।२६ ) इति उपपदस्य प्दन्तत्वं प्रहेरिन् प्रत्यश्च निपात्यते । यथासमयमें फलधरवृक्ष, यह वृक्ष जो उपयुक्त समयमें फलता है ।

फलेग्राहि ( सं० पु० ) फले वृक्षातीति ग्रह इन्, श्योद्रादित्वात् वृद्धि निपातनात् सप्तम्या अलुक् ।

फलेग्रहि देवो ।

फलेच्छुक ( स० पु० ) १ यक्षभेद । ( लि० ) २ फलनाम । फलेन्द्र ( स० पु० ) फलेन्द्र ऐश्वर्यशापीय वृहत् फल त्यादेशात् तथ्यात् । वृहज्जम्बू, बड़ा जामुन । पर्याय—नन्द, राजजम्बू, महाफला, सुरमिपत्ता, महाजम्बू । गुण—खादु, विष्टम्भी, गुरु और रक्षिकर ।

फलेपाकी ( स० स्त्री० ) गन्धमुन्, ग धमुन्ता । फलेपुष्पा ( स० स्त्री० ) फले फलमुत्ते पुष्प यस्या, ममस्या अलुक् । क्षुद्र क्षपविशेष, गुमा । पर्याय—गुरु, खादु, रक्ष, उष्ण, घातपित्तकारक, क्षार, लवण, खादुपाक,



बहु भेक और बरु, धाम, कामरा, शोध और भ्यास  
 नादक।  
 फलेराहा (सं० ग्री०) फले रोहतीति च्छक मनम्या  
 सतुष् । पाटलिपुत्र, पाटणका पेड।  
 फलेराहु (स० पु०) जीयारुह।  
 फलेसक (स० वि०) फले मत आमल । फलामक,  
 फलकामी।  
 फलेसमा (स० ग्री०) फलेपु उत्तमा । १ कारुलोद्राहा,  
 कारुलो क्षण । २ दुग्धिका, दुग्धिया । ३ त्रिफला ।  
 फलोत्पत्ति (स० पु०) फलाप उत्पत्तिमा, प्रजास्त फलाता  
 उत्पत्तिरय । आमरुह, आमका पेड।  
 फलोदक (स० पु०) १ शमभे । २ फलभूषट जट।  
 फलोदय (स० पु०) फलस उदयो पत्र । १ लाम । २  
 मुरालय, देवलोक । ३ हर्ष, आनन्द । फलस उदयः।  
 ४ फलोत्पत्ति।  
 फलोद्वय (स० वि०) जो फलसे उत्पन्न हुआ हो।  
 फलोपनीयि (स० वि०) फलेप उपनिषयनि उप जीव  
 यिनि । जो वेद्यत फल ता कर जीविका निर्वाह करता  
 हो।  
 फलीर - मुक्तप्रदेशके मीरट जिलान्गत एक नगर।  
 मुषयजीय फल्यु नामक विन्नी राजपूनी इस नगरकी  
 प्रतिष्ठा की। मुसलमानोंके आक्रमण तक यह स्थान  
 फल्यु घनापसे ही हाथ रहा। फलीर मुजबजादके अग्नि  
 मन्दातये बादमे प्राय दो जगतापुी तक यह स्थान जन  
 शून्य हो गया। १८३६ ई०में शूद्रिामरफारो इस स्थान  
 की इकाग देना चाहा, पर अधिशापके भयसे किसाने  
 प्रवृत्त नहीं किया। आधिशापक जाटोंने उक्त स्थान उंचे  
 पर से लिया।  
 फल (स० पु०) फल निपत्ती (शुभापार्षिणलिम्भा  
 क । उ० ३।४०) इति क । पि०मरिनाद्र।  
 फल्यु (स० वि०) फल निपत्ती (कथिवादिबमिपिब  
 बा६३। ३० १।१६) इति उ, गुणागमरा । १ अमाय,  
 विमने बुल माग हो। २ निरधक वर्यं। ३  
 माताम्य माधारा । ४ शर, छंटा। (ग्री०) ५  
 गपारय गदुमेद । गपारोके स्नान कर विष्णुपदपदमे  
 निरुद्धकर करता होता है। गृह्या पर शिलने गोर्धे,

समुद्र और मरोवर हे ये मनो इस पन्थुओंमें ही अर्घ्य  
 समी तीर्थादिमें स्नानगान करनेमे जो फल होता है, एक  
 मात्र इस फल्युतदीमें स्नानदानमे यही फल प्राप्त होता  
 है। गया तीर्थ इसी नदीके किनारे अयस्थिप है, इस  
 कारण यह फल्युतीर्थ नाममे भी प्रसिद्ध है।  
 (हरद्व० ४१ ६०)-  
 गकटपुराण और अग्निपुराणादिके मतसे गयागिर  
 ही फल्युतीर्थ है। गया देगो । ६ कारुडुमर । ७  
 रेणुभेद । ८ मिथ्यानाप्य । ९ परन्त शत्रु।  
 फल्युता (सं० ग्री०) फल्यु-तत् टाप । अर्घ्यार्थता,  
 अयभनुता।  
 फल्युदा (सं० स्त्री०) फल्युरिति नाम ददाति धारयतीति  
 दा-भारणे क । गयागदी । (शुद्धमेपु० १८ १०)  
 फल्युन (स० पु०) फलति वायादिकमगमादिति फल  
 निपत्ती (कथेक ४ । उ० ३।५६) इति उगन् गुणा  
 गमरा, फल्युग्या फल्युनीनक्षत्रे जात, इति या (अधिशा-  
 कश-शुभापेनि । वा ५।३।३४) इति जानार्थप्रत्ययस्य  
 लुक् (उ०कदिकउ० १ । वा १।३।६६) इति स्त्रीप्रत्ययस्य  
 च लुक् । १ अर्द्धम । २ फल्युतमाम । (वि०) ३  
 फल्युनीनक्षत्र सम्बन्धी।  
 फल्युनक (स० पु०) जानिदिनेर ।  
 (मा०शुद्धेवपु० ५६।३०)  
 फल्युनाल (स० पु०) फल्युनेन अन्तीति अन् अय् ।  
 फल्युनमाम।  
 फल्युनी (स० ग्री०) फल्युन योगदिय्याण डीम् । १  
 नक्षत्रविनेर, गृह्येफल्युनी और उक्तफल्युनी मसक।  
 २ फलीरुसगिका । ३ फल्युनी फल्युनम् उत्पन्न।  
 फल्युनीमय (स० पु०) गृह्येनिका क्व नाम।  
 फल्युनक (स० ग्री०) फलीरुसगिकायत् ।  
 फल्युपुत् (स० ग्री०) फलीरुसगिकायत् ।  
 फल्युदुका (स० पु०) फल्युनीमिथय गरीभेद।  
 (हरद्व० १४।३३)  
 फल्युवाटिका (स० ग्री०) फल्युनी गारीव इयार्थे कन् ।  
 फलीरुसगिका, कट्टार।  
 फल्युगुल (सं० पु०) १ पायउभयुष । २ दय'नाय  
 विनेर।

फलवृत्तांक (म० पु०) फलवृत्ता घृन्तेन आकायति  
शोभते इति आर्क-क। ज्योनाकभेद।

फलवृत्तान्ती (म० स्त्री०) एक स्त्री-वृत्ति।

फलवृत्तस्य (स० पु०) फलवृत्तस्य उत्सव ६ तत्।

फलवृत्तस्य गोविन्दोत्सव, दोलायात्रा।

दोलायात्राके विधानानुसार श्रीरक्षणको पूजा करके  
फलवृत्तपूर्ण भगवान्को चढाया जाता और उन्नीसे उत्सव  
किया जाता है, इसीसे इसको फलवृत्तस्य वा फल-  
खेलना कहते हैं। यह उत्सव तीन या पाच दिन करना  
होता है।

फल्य (म० स्त्री०) फलाय हितमिति फल-यत्। कुसुम,  
फल।

फलकिन् (स० पु०) फलकः फलकस्तदाकारोऽस्त्यस्येति  
इति। मत्स्यविशेष, फलुई नामकी मछली।

फलफल (स० पु०) सूपात, वह हवा जो सूपसे की  
जाती है।

फला (हि० पु०) एक प्रकारका रोग जो बङ्गालके राम-  
पुरहाट नामक स्थानमें आता है। इसका रोग पीला  
पत्र लिये सफेद होता है।

फाल्स पैण्ट—कटक जिलान्तर्गत एक अन्तरीप। यह महा  
नदीके उत्तरमुख पर अवस्थित है। यहा जहाजादिके  
लंगर डालनेके लिये सुन्दर बन्दर और आलोक शूह  
निर्मित है। बम्बईसे ले कर हुगलीनदीके मुहाने पर्यन्त  
ऐसा बन्दर और कहीं भी देखनेमें नहीं आता। इसके  
पास हो लड् और डीडेसवेल द्वीप, भीतरमें प्लाउडन द्वीप  
नामक अनुच्य धनभूमि है। जब जहाज इस बन्दरमें प्रवेश  
करता है, तब तूफान आदिका कुछ भी मय नहीं रहता  
है। इच्छानुसार जहाज आ जा सकता है, कहीं भी  
नमीनमें नहीं अटकता। इस बन्दरके सामने हो कर  
जम्बू, धामरा, प्राण्णी और देवोन्दी तथा महानदीकी  
वाफूदशाखा यह गई है। नाव द्वारा घाण्णिय द्रव्यकी  
रहनी और आमदनी होती है। समी प्रशुओंमें इस  
बन्दरमें जहाज आ मन्ना है।

पचास पय पहले कीर्ी भी इस बन्दरकी उपयोगिता  
समकन सके थे। एफमात मन्त्राजके देशीय घणिक  
लोग ही यहास चाल आदि ले जाया करते थे। १८६०

ई०में इसे बन्दर फायम किया गया। कलकत्तेके रहने  
वाले किसी एक फरासीमी यणिकने यहा धा कर  
रहनेका अज्ञा सोला। पीछे इष्ट इण्डिया-इरिगेन-  
कम्पनी नाना द्रव्य ले कर यहा घेचनेको आई। १८६६  
ई०में उडोमामें घोर अकाल पडा। अङ्गरेन-गर्मण्ट उक्त  
प्रदेशके समी स्थानोंमें इसी बन्दर हो कर चाल आदि  
भेजो लगे। जयमे केन्द्रापाडा नहर इस बन्दरमें मिला  
दी गई है, तवसे यह स्थान एन घाण्णिय-केन्द्ररूपमें गिना  
जाने लगा है। मिर्च गहर, हेमरयोदी आदि फरासीसी  
बन्दरसे माल लेनेके लिये यहा जहाज आते हैं।

फसकडा (हि० पु०) पालघो, पल्थी।

फसकन्ना (हि० कि०) १ कपडेका मसकता। २ घैठना।  
घँसना। (वि०) ३ जो जल्दी मसक या फट जाय। ४  
जो जल्दी घँसे या घैठ जाय।

फसकाना (हि० कि०) १ कपडेको मसकाना या दबा  
कर कुछ फाडना। २ घसाना, घैठाना।

फसल (अ० स्त्री०) १ ऋतु, मौसम। २ समय, काल।  
३ शल्य, खेतकी उपज। ४ वह अन्नकी उपज जो वर्षके  
प्रत्येक अयनमें होती है। अन्नके लिये वर्षके दो अयन  
माने गये हैं, पारीफ और रबी। माननेसे पून तकमें  
उत्पन्न होनेवाले अन्नको पारीफ और माघसे आषाढ  
तकमें उपजनेवालेको रबी कहते हैं।

फसली (हि० पु०) १ एक प्रकारका सवत्। इसे दिल्ली  
के सम्राट् अकबरने हिजरी सवत्को जिम्का प्रचार  
मुसलमानोंमें था और जिसमें चान्द्रमासकी रीतिसे वर्ष  
की गणना थी, बदल कर सौरमासमें परिवर्तन करके  
चलाया था। अब ईसवी सवत्में यह ५८३ वर्ष कम  
होता है। इसका प्रचार उत्तराय भारतमें फसल या  
खेती-वारी आदिके कामोंमें होता है। २ हेजा। (वि०)  
३ ऋतुसम्बन्धी, ऋतुका।

फसाद (अ० पु०) १ विगाड, विचार। २ विरोध, बलना।  
३ अधम, उपद्रव। ४ लडाई, भगडा। ५ विवाद।

फसादी (फा० वि०) १ फसाद बडा करनेवाला, उपद्रवी।  
२ लडाका, भगडाला। ३ नटगट, पानी।

फसल (हि० स्त्री०) फासल देलो।

फस्त (अ० स्त्री०) फस देलो।

फन्द ( अ० स्त्री० ) नमकी छेद कर शरीरका दूधिन एक निष्कर्मके किया ।  
 फन्दोय्य — एक प्रकार के गो ।  
 फन्दम ( अ० स्त्री० ) झाडा, नमक, चियेक ।  
 फन्दामस ( फा० स्त्री० ) । जिज्ञा, सीप । ० आसा, हुकुम ।  
 फन्दरा ( हि० वि० ) फन्दरानाका प्रकमकरूप, घायुमें उठना ।  
 फन्दरान ( हि० स्त्री० ) फन्दरानेका भाव या ब्रिया ।  
 फन्दराना ( हि० नि० ) ? उठाना, कोइ चीज हम प्रकार खुनी छोट देना जिसमें यह हवामें जिलने और उठने लगे । २ घायुमें पसरना, हवामें रह रह कर दिल्ना या उठना ।  
 फन्दरिस्त ( हि० स्त्री० ) के।सित देणो ।  
 फन्दन ( अ० वि० ) वृहद, बन्नील ।  
 फन्दीम कवि — एक भाषा कवि । सम्वत् १०८०में इन्होंने जगमगहन किया था । ये अकरर वादशाहके यज्ञीर थे । इनके भाइया नाम अयुक्तकण्ठ केजो था । इनके विरयो प्रथमथ तो पना नहीं है परन्तु इनके पुत्र मतोहद और जिज्ञामद शैले पाये जाते हैं ।  
 फन्द ( हि० स्त्री० ) १ गण्ड, टुकडा । २ किसी पान का एक गिरा, एक गिरेने दूसरे सिरे तक काट कर भलग किया हुआ टुकडा । ३ किसी गोल या गिण्डाकार वस्तुका काटा या चींग हुआ टुकडा, छुरी, आगे आदिसे जलग किया हुआ गण्ड । ४ लकीरे जिनमें कोइ गोल या गिण्डाकार वस्तु साथे टुकडोमें पंटी दिसाई दे ।  
 फन्दका ( हि० वि० ) ? निरछा, बाँका । २ दण्डपुष्ट, लण्डा ।  
 फन्दका ( हि० वि० ) ? चूर, दाणे या घुषनाके रूपकी वस्तु को दूधमें मुहमें डालना ।  
 फन्दका ( हि० पु० ) ? किसी वस्तुको दूधमें के क कर मुहमें डालनेकी क्रिया या भाव । २ जगरी वस्तु को एक बारमें फन्दका कर ।  
 फन्दकी ( हि० स्त्री० ) ? कंठ देण ।  
 फन्द ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारका भाव ।

फाँट ( हि० स्त्री० ) ? यथाक्रम कई भागोंमें बाँटनेकी क्रिया या भाव । ० इत्या पटना जिसके अनुसार कौरे लखु बाटी जाय । ३ कमसे बाटा हुआ भाग, अलग अलग चिये हुए कई भागोंमेंसे एक भाग । ४ औपचारिके नाम पाठोंमें आँटाना । ५ काय, काटा आदिकी पानोमें आँटाना, काटा करना ।  
 फाँटना ( हि० नि० ) ? किसी वस्तुको कई भागोंमें बाटना, विभाग करना । २ जगरी वृद्धो आदिका पानोंमें आँटाना, काटा करना ।  
 फाँटपरी ( हि० स्त्री० ) यह कागज जिसमें किसी गाँवमें नामुखभल पट्टीदारोंके हिसाबके अनुसार उग गाँवकी धामदनी आदिकी बात लिगी रहती है ।  
 फाँटा ( हि० पु० ) लोहे या लकड़ीका यह भुसा हुआ गण्ड जो मिल कर कोण बनती हुई दो वस्तुधोने पर स्पर् अरुद्ध रखनेके लिये जोड़ पर जोड़ दिया जाता है, कोनिया ।  
 फाँट ( हि० पु० ) पाँडा देणो ।  
 फाँडा ( हि० पु० ) दुपट्टे या घोलीका कमरमें बंधा हुआ हिस्सा ।  
 फाँर ( हि० स्त्री० ) ? उछाल, उछलनेका भाव । ० गिण्डिका आदि क मारोका का दा या जान । ३ मम्मो, बाज, गूल आदिका पैग जिसमें पट कर कोइ वस्तु बंध जाय । कवियोंके इस मरुकी प्रायः पु लिन ही माना है ।  
 फाँदा ( हि० वि० ) ? धोरेके साथ जरोरकी रूपर डड कर एक स्थानमें दूसरे स्थान पर या पड़ना, दूरना । २ नरकमुखा मादा पर जोड़ लानेके लिये जाना । ३ उछल कर पार करना, दूर कर लंगना । ४ कदमें डालना, कमना ।  
 फाँदा ( हि० पु० ) पंदा देणो ।  
 फाँदा ( हि० स्त्री० ) ? यह रस्मी जिसमें कई वस्तुओंको एक साथ रग कर बाँधी है मूडा बाँधीका रस्मी । ० मन्त्रीका मनु लकीरे बंध हुए बहुला मन्त्रीका शेष ।  
 फाँकी ( हि० स्त्री० ) ? बहन कागीर भिड़ी । ० दूधके ऊपर पडी हुई मसादकी बहुर फाँकी मर । ३ फाँकी मन्त्री भिड़ी जो रोगको सुखना पर पड जाती है, जाना ।

फॉस (हि० खी०) १ पाज, घघन । २ यह रस्सी जिसका फँदा डाल कर गिकारी पशु पक्षी फॉसते हैं । ३ बास या काठका कड़ा रेगा जिसकी नोक कटिको तरह हो जाती है, महीन काटा । ४ धाम, घँत आदिको चोर कर धनाई हुए पतली तीली, पतली कमाची ।

फॉसना ( हि० फि० ) १ घघनमें डालना, पकडना । २ किमी पर ऐसा प्रभाव डालना कि यह घघनमें हो कर कुत्र करनेके लिये प्रस्तुत हो जाय । ३ घोघेमें डालना, घशीभूत करना ।

फॉसी ( हि० खी० ) १ पाश, फसानेका फदा । २ रेशम या रस्सीका फदा जो ऊचे घघने गाड कर ऊपरसे लटकाया जाता है और जिसे गलेमें डाल कर अपराधियोंको प्राणदण्ड दिया जाता है । ३ पाश द्वारा प्राणदण्ड, मीत की सजा जो गलेमें फदा डाल कर दी जाय । ४ वह रस्सी या रेशमका फँदा जिसमें गला फँसानेसे घुट जाता है और फसनेवाला मर जाता है ।

फाइल ( अ० खी० ) १ नट्यो, मिसिल । २ लोहेका तार जिन्में कागज या चिट्ठिया नट्यो की जाती हैं । ३ सामयिक पत्रों आदिके कुछ पूरे अकाँका समूह ।

फा ( स० पु० ) १ सन्ताप । २ निःफल भाषण ।

फाफा ( अ० पु० ) उपयान, निराहार रहना ।

फाकामन्त ( फा० वि० ) जो खाने पीनेका कष्ट उठा कर भी कुत्र चिन्ता न करता हो, जो पैसा पास न रख कर भी वेपरवाह रहता हो ।

फाकेमन्त ( फा० वि० ) फाकामन्त देखो ।

फामन्तई ( हि० वि० ) १ पण्डुके रगका, भूगपन लिये हुए लाल । ( पु० ) २ एक रगका नाम । यह रग ललाई त्रिये भूरे रगका होता है । आठ माशे चायोलेटकी आध सेर मजौठके काठमें मिला कर यह बनाया जाता है ।

फामन्ता ( अ० खी० ) पडुक्, धर्ररगा ।

फाग ( हि० पु० ) १ एक उरसव जो फागुनके महीनेमें होता है । इस उरसवमें लोग एक दूसरे पर रग या गुलाल डालते और बसन्त ऋतुके गीत गाते हैं । २ यह गीत जो फागके उरसवमें गाया जाता है ।

फागुन ( हि० पु० ) गिगिर ऋतुका दूसरा महीना, माघके बादका महीना । यद्यपि इस महीनेको गिनती पचकड

या गिगिरमें है, पर बसन्तका आभास इसमें दिखाई देने लगता है । इस महीनेकी पूर्णिमाको होलिका-दहन होता है । यह आनन्दका महीना माना जाता है । इस महीने में जो गीत गाये जाते हैं उन्हें फाग कहते हैं ।

फाल्गुन देखो ।

फागुनी ( हि० वि० ) फाल्गुन सम्बन्धी, फागुनका ।

फाजिल ( अ० वि० ) १ भावश्यकतासे अधिक, जहरतसे ज्यादा । २ विद्वान् ।

फाजिल्का—पञ्जाबके फिरोजाबाद जिलेको तहसील । यह अक्षा० २६ ५५' से ३० ३४' उ० और देशा० ७२ ५२' से ७४ ४३' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण १३५५ वर्गमील और जनसंख्या दो लाखके करीब है । इसके उत्तर पश्चिममें मतलज नदी पडती है । इसमें इसी नामका १ शहर और ३१६ गाँव लगते हैं । राजस्व दो लाखसे ऊपर है ।

२ उक्त तहसीलका एक नगर । यह अक्षा० ३० ३३' उ० और देशा० ७४ ३' पू०के मध्य अवस्थित है । पहले यहा बर्तु सरदार फाजिल्का वास था । १८४६ ई०में उन्होके नामानुसार आल्भर ( Mr Oliver ) साहबने इस स्थानका नाम 'फाजिल्का' रखा । उक्त महोदयके यत्न और अथयसत्तापने यह जनशून्य ग्राम बहुजनकीर्ण हो गया । अभी यह नगर पञ्जाबका एक वाणिज्य केन्द्र हो गया है । यहा जो शस्त्रादि और पगम दूसरे देशोंसे आता है उसकी रफ्तनो कराची, भागलपुर, बोकानेर और झूलतान आदि देशोंमें होती है । शहरमें एक मरकरो अस्पताल और म्युनिसिपल स्कूलों यन्त्रियुलर मिडिल स्कूल हैं ।

फाजिलनगर—युन प्रवेशके गोखरपुर जिलान्तर्गत एक प्राचीन ग्राम । अभी यह फाजिल्का नामसे मशहूर है । इधर उधर जो ईंटोंका रागि पडो हुए हैं वहां इस जन पदकी वृक्षस्थिति दिखती है ।

फाटक ( हि० पु० ) १ तोरण, बन्ना द्वार । २ दरवाजे परकी बैठक । ३ फटकन, पछोड़ना ।

फाटकी ( स० खी० ) फिटथरी ।

फाटना ( हि० फि० ) फटना देखो ।

फाटन ( हि० पु० ) १ कागज या कपडे आदिका टुकड़ा जो

फादोमें निरन्ते । ० दहीके ताजे मषगाकी छाँउ जो भाग पर गारांने निरन्ते ।

फादना ( हि० मि० ) १ किमी पैरो या मुकीली चीपका किमी मवह पर इन प्रकार मारना या गोचना, कि मवहका कुछ भाग हट जाय या उसमें दूरा पड जाय, नीला । ० किमी गाटे दूय पदार्थकी इन प्रकार करना, कि फातो और माग पदार्थ अलग बन हो जाय । ३ मार डरना, टुटने करना । ४ सन्धि या जोड़ फेला कर लोचना ।

फाणि ( म० री० ) गुद् ।

फाणित ( म० री० ) फण गतीं निरन्तः । १ अर्थां यस्मिन् इक्षुरन्, आद पर छोटा कर गूष भाटा किया हुआ गन्ना रस, बाब । इसका गुण—गुद, अभियन्त्री, वृहण, कफ और पित्तनाशक, पात, पित्त और धम पाजक पय मूत्र और यस्मिन् जीषय माना गया है । मीमांस्यनामो यस्मिन्को पूर्णफानुनी नक्षत्रमें उपवास करके ब्राह्मणोंकी भक्षणद्वय फाणित संयुक्त करके पान करना चाहिये । २ जोरा ।

फाण्ट ( स० वि० ) फण्यो स्मिति फण गतीं ह्यथ यस्मिन् शस्तेति । वा १२११८ ) इति निपातनात् माधु । १ असायान् एव, जो महजमें बनाया गया हो । (को०) २ कणपभेद । इसकी प्रस्तुत प्रणाली—एक पर कुट्टितदुग्ध को ४ पल गरान् अल्पमें डाल कर कुछ समय तक ढक रहे । पीछे उस मूदित और पान पूरा कर लें । इसीका नाम फाण्ट है । ( वैदिकपरिभाषा)

फाण्टाइन ( म० पु० ) १ फाण्टा इति भाष्य । २ उभे छायादि ।

फाण्टाइनपान ( म० पु० ) फाण्टाइनिका अण्य ।

फाण्ट ( म० री० ) नाम ।

फाण्टिह ( म० पु० ) नामभेद ।

फाण्टा दवाक दहम —दुग्धागमनाय । अनुष्ठित महोत्सव-विशेष । इस समय ये लोग महामरुके नाम और मृगु के उदरमें मर्माङ्ग अथवा मरुके अणुमें धर्म मन्त्र प्राणिका वा भी मन्त्र करते हैं ।

फाण्टा ( म० पु० ) १ फाण्टा । २ फट कटाया जो मी हूर लोकोके समय पर दिया जाय ।

फाना ( हि० कि० ) १ रंकी पदकना, पुला । ० अनुष्ठान करना, कोई काम हाथमें लेना ।

फानूम ( फा० पु० ) १ एक प्रकारका दोषाधार । इसके नामों और महोत्सव कपड़े या वागनका मंडप-मा होना है । २ समुद्रके किनारेका यह उच्च स्थान जहाँ राजकी हमलिये प्रमाण जल्पाया जाता है, कि नहाज उसे देव बन बक्षर जाय जाय । ३ मीमेकी मूदगी, कमल या गिणस आदि जिसमें यस्मिन् जल्पा जाता है । ४ देवी आदिनी भट्टी । इसमें काम सुन्दार जाती है और उसमें तापमें अोक प्रकारके काम लिये जाते हैं ।

फासेफाजी—क्षुशितात्ययानी एक मोज जाति । सोमा पुर मोजपुर आदि अञ्चलमें इनका नाम है । किन्तु बंग में घेर बाघ कर अथवा गीतोवारी करके रघावी रूपमें मतो रहता । फंदेमें यमुपसी पकटना ही इनका ज्ञानीय ध्ययमाय है । ये लोग मोज प्ररुतिके होते हैं, कमी मो मिरके बाल या मूँठ दाढी नहीं मुदपाते हैं । इनकी मायामें मुचगनी, मराठी, कणाटा और हिन्दुनामों भाग मिश्रित है ।

फाँवके बाहर ये म्वाधारणतः भोपड़ी बना कर रहते और गो, महीय, छाग तथा गद्ग आदि पोसते हैं । ये म्वाधारण मयमांतपिय, बोधो और निरुदर हैं । छोटी बार्ताम उत्तंजित होते और बच्चा लिये बिना उगवा पिण्ड नहीं छोड़ते हैं । फाँवकी पूँछमें बोटमें येमा फटा बनाते हैं, कि उसमें मष प्रकारके पत्ती और छोटे छोटे पंगु पकड़ जा सकते हैं ।

ये लोग भस्वानपानी, कण्टीया, अतिमि और नामा माण्डेयताकी पूजा करते हैं । 'पसंगा' और 'मन्हाय' ही इनका प्रधान इत्सव है । विवाहमें कन्याकी मायमें गिण्ट और अनाममें मर सोनी पहनते हैं । इस समय इनके मरदार ( मापक )को उपस्थित रहना जरूरी है, क्योंकि, उसे भी कुछ मिला है । सभी स्वभावाय विवाहक बाद मूष उगव पीते हैं । मरुधर्मिणों का बाण पकी हो करने पर विवाहके दिन परकन्या एकल की जाती है । फाँवके मरदार या कर 'गाड' बाँव देने और म्वाधारण करते हैं । विवाह हो करने पर म्वायन क्षमिता में कर इन्दीकी आगीपाँव दे करे जाते हैं । पीछे मोज मुक

होता है। नायक सरदार ही इनके समाजके मानिक हैं। जब कोई व्यक्ति वा उम्मी प्रकारका अन्य जन्य पापाचरण करता है, तब उक्त तेलके कडातेमेंसे पैसा निकाल कर उसे पापका प्रायश्चित्त कराया जाता है। यदि हाथ न जले, तभी उसको निरुद्ध है। किन्तु यदि हाथ जले अथवा हाथ देनेसे इनकार करे तो उनकी जानि च्युति होती है। इनका कर्तव्य स्वभाव जान कर पुलिसकी इन पर कड़ी नजर रहती है।

बीजापुरमें ये लोग अडिचिञ्चर चिप्रिवेत्कार नामसे पुकारे जाते हैं। घांगड, फरलिंगार और राजपूत नामक इनके तीन स्वतन्त्र थाक हैं। किन्तु ये मर थाक विलुप्त स्वतन्त्र हैं। कोई भी दूसरेको पुत्र धन्याया विनाह नहीं देता और एक साथ पैठ कर खाता ही है। घांगडोंमें हाउरडून और उणिवडून नामक दो विभाग हैं। ये लोग आपसमें पाते और आदान प्रदान करते हैं। राजपूतगण भी अपने दलमें विवाह नहीं करते हैं।

पुलिसकी इन पर कडा नजर रहती है। यह पहले ही कहा जा चुका है। जब कभी उनके साथ विवाद होता है, तब ये अपने पुत्र या धन्याको हत्या कर पुलिसके विरुद्ध अदालतमें अभियोग लाते हैं। प्राहणोंके प्रति इनकी भक्ति है। यहूमा, तुलजा भयानी और चेङ्गुदेश आदि देवदेवियोंकी मूर्तिको ये लोग कपडेमें लपेट रखते हैं। आग्निमासकी शुद्धा नयमी (महा-शयमी)की मूर्तिको बाहर निकाल कर पूजा करते हैं। प्रति वर्ष दीवाली उपलक्षमें ये नयमल-परिहित रियोंको मूर्तत्वकी परीक्षा करते हैं। इस समय रमणां कुलकी निन्दुर स्वामीके हाथमें पड कर उक्त तेलमें उगली बुझाने पडती है। इन लोगोंमें चियया विवाह प्रचलित है। जात बालककी कोई क्रिया नहीं है। लकड़ी मिलने पर नयमी जलाते हैं, नहीं तो जमीनमें गाड देते हैं।

फाफर (हि० पु०) कुल्लू, कुट्ट। इद देखो।

फाफा (हि० टी०) दात गिर जानेसे 'फा फा' करके बोलनेवाली बुद्धिया, पोपली बुद्धिया।

फाफुरड—युक्त प्रदेशके इटावा जिलान्तर्गत एक तहसील।

भूपरिमाण २२८ वर्गमील है। १८८३ ई०में यहा स्वतन्त्र विचार अदालत स्थापित हुई। -

२ उक्त तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा० २६ ३६' उ० और देशा० ७६ २८' पू० इटावा शहरसे ३६ मील दक्षिणपूर्वमें अवस्थित है। जाम तथा आठ हजारके लगभग है। अगरेजोंके अधिकारमें आनेके पहले यह स्थान विशेष मम्हूदशाली था। ध्यमाजगिष्ट मन्दिर, जगन्नाथदि और मसजिद आदि जो शहर उधर पडे हैं, इसके पूर्व गौरवके निदर्शन हैं। १८५७ ई०के गदरमें यह नगर दो बार लूटा और उल्लया गया था। गार्ह बुखारी नामक मुसलमान फकीर (निननी मृत्यु १०४६ ई०में हुई) फाफरके पास प्रतिव्य मेला लगता है। यह एक स्कूल और अस्पताल है।

फायदा (अ० पु०) १ लाभ, नफा। २ अच्छा फल, भला परिणाम। ३ प्रयोजनसिद्धि, मतलब पूरा करना। ४ उत्तम प्रभाव, अच्छा असर।

फायदेम द (फा० पु०) उपकारक, लाभदायक।

फायर (अ० पु०) १ आग। २ कैर देखो।

फायरमेन (अ० पु०) यह कर्मचारी जो इजनमें फोयना भोजनेका काम करता है।

फाया (हि० पु०) काहा देखो।

फारखतो (अ० टी०) यह फागज या लेंप जो इस बात का प्रमाण दे, कि किसीके निम्मे जो कुछ था, यह अदा हो गया, चुकती।

फारविसगञ्ज—विहार और उड़ीसाके पूर्णिया जिलान्तर्गत अररिया उपविभागका एक ग्राम। यह अक्षा० २६ १६' उ० तथा देशा० ८७ १६' पू०के मध्य विसृत है। जनसंख्या दो हजारसे ऊपर है। यहा पाट, अनाज आदिका विसृत कारखाना होता है। पाटकी दो बन्ने भी चलती हैं। यहा एक गुग्गुनिद्र स्कूल है।

फारम (अ० पु०) १ दरखान्, वही खाते रम्नीद आदिके नमूने जिनमें यह दिनाया रहता है कि कहा कान वान डिगनी चाहिये। २ छापनेके पैठाप हुप जाने अक्षर जितने एक तपता छापनेके लिये पूरे हों। ३ छापाईमें एक पूरा तपता जो एक बार एक साथ छापा जाता हो।

फारस—वाँस देखो।

फारसी (फा० खी०) फारसदेशकी भाषा।

फारा (हि० पु०) १ फाल, कतरा। २ फास देखो।



देनेकी जरूरत ही क्या ?" वस्तुतः इसी कारण कोई प्रकोत्तर निर्दिष्ट नहीं है। जयन्तोके पतनके साथ ही साथ इस पीठकी भी दुरन्तरथा हो गई है। अभी देवी एक जोर्ण कुटीरमें विराजती हैं।

फाल्गु ( हि० वि० ) १ आश्वयन्ततास अधिप, जस्वन्तमे ज्याया। २ जो किसी कामके लायकन हो, निष्क्रमा। फाल्गुती ( स० स्त्री० ) फाल्गुकी तरह दन्तगुना एक राक्षसी।

फाल्गुसई ( फा० वि० ) फाल्गुके रगका, ललाई लिये हुए हल्का ऊदा। इस रगके लिये कपडेको तीन बार देने पडते हैं। पहले तो कपडेको नील रगमें रगने हैं, फिर धुंमुमके पहले उतारके र गमें रंगने हैं जो जेडा र ग होता है। फिर फिटफरी या स्याई मिले पानीमें धोर कर निवार देनेसे र ग साफ निकल आता है।

फाल्गुसा ( फा० पु० ) एक छोटा पेड। इसका धड ऊपर नहीं जाता और इसमें छडीके आकारकी सोधी सोधी डालियाँ चारों ओर निकलती हैं। डालियोंके दोनों तरफ सात आठ अङ्गुल लम्बे चौड़े गोल पत्ते लगते हैं। इन पत्तों पर महीन गेरुयाँसी होता है। पत्तोंके ऊपरी तरफकी अपेक्षा पीठके तलका र ग हल्का होता है। डालियोंमें फूल लगते हैं। जब ये सब फूट भड्ड जाते, तब मोतीके दानेके बराबर छोटे छोटे फल लगते हैं। पत्तों पर फणोंका र ग ललाई लिए ऊदा और स्याद खटमीडा होता है। धीन पर या बो होते हैं। फाल्गुके तासीर ठंडी है। इस कारण गरमीके दिनोंमें लोग इसका शरवत बना कर पीते हैं। १६१७ देखो।

२ जिकारियोंकी बोलीमें यह ज गली जानवर जो ज गडसे निकल कर मैदानमें चरनेको आये।

फांग ( स० पु० ) फाल्गुनीति फल णिच्। जग्गीर घृक्ष, जमीनी नीयुका पेड।

फाल्गुवात—उत्तर बङ्गाल प्रदेशके जलपाईगुडी जिल्लेके अन्तर्गत अन्नेपुर उपविभागका एक ग्राम। यह भक्षा० २६°३१'३० तथा देशा० ८६°१३'५० भुवनेश्वर नदीके पूर्वी किनारे पर अवस्थित है। जनसंख्या तीन सौके बराबर है। यहां फरवरी मासमें एक महीना तक मेला लगता है।

फाल्गुन ( अ० पु० ) पक्षाघात रोग। इसमें प्राणोका आधा अन्न मुख या घेकार हो जाता है। पक्षाघात देतो।

फाल्गुया—पञ्जाबके मुन्दात निलेका तहसील। यह अक्षा० ३२°१०'३० तथा देशा० ७३°१७'५० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ७२२ बग मील है। श्वेलम नदी इसके उत्तर-पश्चिम और चनाब दक्षिण पूर में बह गई है। जनसंख्या दो लाखके बराबर है। इनेमें फाल्गुया नामका एक शहर और ३१० ग्राम लगते हैं। लण्डन और सिम्का विलियनवालाका युद्ध इसी तहसीलमें हुआ था।

फाल्गुदा ( फा० पु० ) पौनेके लिये बनाई हुई एक चीज। इसका व्यवहार प्राय मुसलमान लोग करते हैं। गेहूँके सससे बने हुए नगास्तेको बारीक काट कर शरवतमें मिला कर खत्ते हैं और ठण्डा हो जाने पर पीते हैं। यह गरमीके दिनोंमें पिया जाता है।

फाल्गुन ( स० पु० ) फाल्गु निष्पाद्यतीति फल ( ऋ० गुं० १। १५ ) इति उनत् ततो शुक् नत प्रमादि ह्याद्यन्ना फाल्गुया फाल्गुनी। फाल्गुनी नाश्रे जात अण् ष अयुन। अनु नके वज नाम द्वे जिनमें फाल्गुन एक है। अशुनने फाल्गुनीनक्षत्रमें जन्म ग्रहण किया था, इस कारण उनका फाल्गुन नाम पडा है।

“उत्तराश्याश्च पूर्वाम्या फाल्गुनीयमामह दिया।  
जाता हिमवतः पृष्ठे तेन मा फाल्गुन विदुः ॥”

( भारत ४१४२१६ )

२ नदीजघुक्ष। ३ अशुननशुक्ष। ४ तपस्वमास। ५ वैशाखादि द्वादश मासके अन्तर्गत फाल्गुना मास। इस मासकी पूर्णिमामें फाल्गुनी नक्षत्र होता है, इसीसे इस मासका नाम फाल्गुन पडा है। यह तीन प्रकारका है। मुख्यचान्द्र, गौणचान्द्र और सौर अथात् मुख्यचान्द्र फाल्गुन, गौणचान्द्र फाल्गुन तथा सौर फाल्गुन। मयूँके शुक्लपक्षमें आनेसे शुक्ल प्रतिपदसे ले कर अमावस्या तक जो मास पडता है, उसे मुख्यचान्द्र फाल्गुन और वृष्णप्रतिपदसे ले कर मुख्यचान्द्र फाल्गुनामासोय पूर्णिमामें पौर्णमासीके गौणचान्द्र फाल्गुन तथा शुक्लपक्षमें पौर्णमासीके सौर फाल्गुन कहते हैं। मासके मुख्यचान्द्र और गौणचान्द्र गदि





ले। अनन्तर सूत्र जाने पर उस पिण्डको मट्टीके बने हुए चकचकत (Retort) में टाँक कर चुआवे। ऐसा करनेसे उत्तम क्षोभक एक मुलसे धापाण उड जायगा और दूसरे मुलसे फास्फरस हलदी रंगकी बुद्धमें टपक टपक कर एक जठरपूर्ण पात्रमें जमा होगा। जल और अमोनियाके योगसे अथवा वाइ क्रोमेट आय पदामयुक्त सल्फयुरिक एसिड ट्रायकमें उसे जलानेसे शोषित होता है। बहुत थोड़ी गरमी या रगड पा कर यह जलता है। हवामें खुला रहनेसे यह धीरे धीरे जलता है। यही कारण है, कि रसायनिकगण उसे जलमें रण देते हैं। उसमें लहसुनकी भी गन्ध निकलती है। अ धेरमें देग्ने से उसमें सफेद लपट दिखाई पडती है। यदि गरमी अधिक न हो, तो यह मोमकी तरह जमा रहता है और छूरीसे काटा या गुरवा जा सकता है। यदि कोई भूठसे उसे कपडेमें रचे, तो कपडा सहजमें दग्ध हो सकता है।

इसका आपेक्षिक गुरुत्व (५० डिग्री फारनहीरके उतापमें) १.८३ और आपेक्षिक गुरुत्व ३१ है। रसायन—शास्त्रमें 'पी' (P) नाम देवनेने ही उसे फास्फरस जानना चाहिये। १११५ डिग्री उतापसे यह जल जाता है। किसी आयत पात्रमें ५५० डिग्री उतापसे उसे चुआनेसे पुन यह उसी अस्थामें आ जाता है। जठमें यह नहीं घुलता, लेकिन हथर या नेप्यामें बहुत छुड घुल जाता है, वाइसलफाड आन कार्बन वा फ्लोराइड आय सल्फरसे यह विलकुल गल जाता है। हवामें खुला रखनेसे थोडा थोडा करके जलता और उसमें सफेद लपट दिखाई देती है। इस समय उससे लगातार धुआ निकलता रहता है।

प्रस्तुरक हाथमें लेनेके पहले विशेष सावधान रहना उचित है। कारण, शुष्कायस्थामें थोडी रगड लगनेसे ही यह जल सकता है और इससे शरीरमें छात्रा पडने की सम्भावना है। जलमें रण कर इच्छानुसार काट सकते और हाथमें भी ले सकते हैं, इससे जागरिक कोड भी अनिष्ट नहीं होता। इसी कारण पैमानिक लोग इने जलमें काट कर व्यवहारके लिये बाहर निकालते हैं। प्रस्तुरक तरह तरहकी अस्थायी (Allotropic forms) में पलट सकता है। इनमेंसे Amorphous Phosphorus दो सर्वप्रधान है। मियेनादेशीय रसायनविदु स्कोटर

(Professor Schrotter) इस प्रथाके उद्गमायक हैं। उन्होंने कार्बनिक एसिडमें ३०।४० घंटे तक ४५० वा ४६० डिग्री तापमें साधारण फास्फरस खींग कर एमर्फस उत्पादन किया था। उतापके विभिन्नानुसार इसका वर्ण कभी लाल, कभी उजला और कभी घना पाटल (Dark purple) होता है। पूर्वोक्त फास्फरसके साथ इसका प्रमेड इनता ही है, कि अधिक घिमनेने भी यह जलता नहीं है, गन्धहीन है, जायु लगनेसे इसमें कोई परिवर्तन नहीं होता और न साधारण प्रस्तुरककी तरह ट्रायकमें गलता ही है। किन्तु यदि मोरेट आय पटाण, पेरक्साइड आन लेड वा पेरफसाइड आय मन्नातिसके साथ थोडा भी सघर्ष हो, तो यह शीघ्र ही जल जाता है। पीछे ४५० वा ४६० डिग्री उतापमें गरम करनेसे यह पुन पूर्वानुस्थाको प्राप्त होता है। इने तेल वा चरनीमें घोलने पर ऐसा तेल तैयार हो जाता है जो अंधेरमें चमकता है, दिया सलाई बनानेमें इसका बहुत प्रयोग होता है। अलावा इसके और भी कई चीजें बनानेमें काम आता है। औषधके रूपमें भी यह बहुत दिया जाता है, क्योंकि डाक्टर लोग इने बुद्धिका उद्दीपक और पुष्ट माते हैं। तापके मात्रानेदने कामकरसका गहरा रूपांतर भी हो जाता है।

आक्सिजनके साथ प्रस्तुरक चार विभिन्न भागामें मिलाया जा सकता है। उमने अक्सराइड आय प्रस्तुरक (Oxide of phosphorus), उपस्तुरकायक (Hypophosphorous acid), स्फुरकायक (Phosphorous acid) और स्फुरककायक (Phosphoric acid) आदि उत्पन्न होते हैं। जलके तातन्म्यानुसार Phosphoric acid तीन प्रकारका है। यथा—१ Orthophosphoric acid स्फुरककायक, २ Metaphosphoric acid अमिस्तुरककायक और Pyrophosphoric acid अधिस्तुरककायक। हरिणस्तुरक (Chlorides of Phosphorus) हरिण (Chlorine) के योगसे प्रस्तुरक के ट्राक्लोराइड और पेण्टा क्लोराइड नामक दो अस्थायी अण्ड और टान आयोडाइड नामक दो परिवर्तन होते हैं। गन्धके साथ मिलानेसे छुड पीमिक पदार्थकी



भारतके पूर्वतन इतिहास, भूगोल और बौद्धक्रीचि जन पन्नादिके स्थाननिर्णयमें बहुत कुछ सुविधा हुई है।

फाइया पश्चिम भारतपर्यसे क्रमागत पूर्वकी ओर कपिलवस्तु, रामग्रह और गयादि बौद्धकेतोंके दर्शन करने हुए चम्पाराजधानीमें उपस्थित हुए। पीछे वहासे ममुद्रकी ओर ताम्रलिप्ति नगरमें पहुँच कर उन्होंने मैकडेो मृत प्रयादिकी नकल कर ली। इस स्थानमे जहाज पर चढ़ कर वे सिंहलद्वीप गये। यहा उन्होने विनयपिटक, दीर्घांग और स युत्तागम आदि स ग्रह कर फिरमे समुद्रकी राहसे पूर्वकी ओर यात्रा की। कुछ दिन तृकानमें ममुद्रकी राहसे विचरण कर कमण्डलुके साथ वे जलमें कूद पडे। आगिर यवद्वीप (ये पो ति) में उत्तीर्ण हो वहा उन्होंने ब्राह्मणधर्मका विस्तार देया। पीछे वहासे वे चीनदेशके कङ्ग-चाउ नगरमें पहुँचे।

चाङ्ग-वन राजधानीका परित्याग कर ५ वर्ष परि भ्रमण करनेके बाद वे मध्य भारतमें उपस्थित हुए। यहा प्राय ६ वर्ष तक रह कर उन्होने परीव ३० विभिन्न राज्यों में परिभ्रमण किया था। चौदह वर्षके बाद वे स्वदेशके त्सिङ्ग जाऊ नगरमें पहुँचे। पीछे नाकि शहर यासी भारतीय बौद्ध भ्रमण बुद्धभद्रकी सहायतासे उन्होंने अनेक धर्म ग्रन्थो का अनुवाद और निज भ्रमण विवरण प्रकाशित किया। ८६ वर्षकी उमरमें उनकी मृत्यु हुई।

फाइया (अ० वि०) पुश्चली, टिनाल।

फिकरना (हि० वि०) फेंकना देना।

फिकवाना (हि० वि०) फेंकनेका प्रेरणार्थक रूप, फेंकनेका काम करना।

फिगा (हि० पु०) एक प्रकारका पत्ती जो सिन्धुसे आसाम तकके बड़े बड़े मैदानोंमें पाया जाता है। इसके पर भूरे, नीचे पीले और पजे लाल होते हैं। ये छोटे छोटे झुंडोंमें इधर उधर उड़ते हैं। विगैत ये हरियालीमें घटा पसन्द करते हैं। इसके भूण्डमेंसे जहाँ एक पत्ती उड़ता है वहा बाकी सब भी उमीका अनुसरण करने हैं। इसकी लम्बाय प्राय डेढ़ बालित्त होती है। वर्षासत्रुमें इसकी मात्रा एक माघ तीज अण्डे देती है।

फि (स० पु०) १ पाप। २ निकल घायब। ३ कोप।

फिर्ई (हि० स्त्री०) चेनेकी तरहका एक मोटा अन्न जो युटेल्लरुटमें होता है।

फिकार (हि० पु०) फिकर देना।

फिक्र (अ० स्त्री०) १ चिन्ता, मोच। २ उपायकी उद्गायना, उपायका विचार। ३ ध्यान, विचार।

फिकमद् (फा० वि०) चिन्ताप्रस्त।

फिङ्गन (स० पु०) फिङ्ग इति शब्देन कायति शब्दात्ते इति कै क। किगा नामक पत्ती। पर्याय—कुलिङ्ग, कलिङ्ग, धृष्याद, भृङ्ग।

फिङ्गेश्वर—मध्य प्रदेशके रायपुर निजान्तर्गत एक सामन्त राज्य। भूपरिमाण २०८ वर्ग मील है। यहाके सरदार अपनेकी राजगीड बतलाने हैं। १५७८ ई०में दी हृइ मनदके अनुसार ये राज्यसम्पदना भोग करते आ रहे हैं। फिङ्गेश्वर ग्राम यहाका प्रधान स्थान है।

फिचबुर (हि० पु०) वह फेन जो मुब्बर्जा या वेहोगी आने पर मुहसे निकलता है।

फिट (हि० अर्थ०) छिक्, छो।

फिटकरी (हि० स्त्री०) फिटकिरी देना।

फिटकार (हि० पु०) १ धिक्कार, लानत। २ शाप, बद-दुआ। ३ हलकी मिलावद, भावना।

फिटकिरी—खनामत्प्रात रानिज पदार्थ विशेष जो सल फेट थाफ पोदाश और सलफेट थाफ अलमोनियमके पानीमें जमनेसे बनता है। भारतपर्यमें विहार, सिन्ध, कच्छ और पञ्जाबमें फिटकिरी पाई जाती है। मैलके या अन्यान्व द्रव्योंके योगसे यह लाल पाली और काली भी होता है। भिन्न भिन्न देशोंमें यह भिन्न भिन्न नामोंसे प्रसिद्ध है, यथा बङ्गाल—फटकिदि, सहरन—फकटि कारी, अरब—सियू, जाज, पारस—जाफ, जाफे स्फेद, महाराष्ट्र—फकटी, तुर्षि, पदमि, तामिल—पटिकारम, तेलगु—पटिकारम; मन्थालम्—पटिकारम; प्रान्—किर्बीगिन्।

पर्यंतके मध्यस्थित किसी न्यायार्थ यह मिट्टीके साथ मिली देवी जाती है। उस समय इसका रंग कृष्णपूरम पर्यन्ती मछलीक छिलकेके जैसा रहता है। येहानिर्णने इसे अग्निप्रस्तरसम्बन्धीय निरूपण किया है। उममें सब-भारतुलिक (Sub mammalitic group) की जगह

उत्पत्ति होती है। फस्फुरेटेड हाईड्रोजन (Phosphur-retted Hydrogen) नामक एक पदार्थ प्रचलित है। दृढ (Solid), तरल और वाष्पीयके भेदने उसको तीन अत्रस्थाए हैं।

कुछ पदार्थ ऐसे हैं जिनमें आलोक-विकिरणकी शक्ति है। दो एण्ड कोयार्डज पत्थरको आपसमें घिसने से आलोक उत्पन्न होता है। उस पत्थरमें फास्फरसकी अस्थिति हो इसका कारण है। जुगनू और मडली के छिलकेमें इसी प्रकार कभी कभी प्रस्फुरकालोक देखनेमें आता है।

फासला (अ० पु०) अनन्तर, दृती।

फास्ट (अ० नि०) १ तेज। २ मोघ्र चलनेवाला, वेगवान्।

फाहा (दि० पु०) १ फाया, माया। २ मरहमने तर पट्टी जो घाव, फोडे आदि पर रखी जाती है।

फाहियान—एक चीन परिव्राजक। चीनोंमें ये ही सबसे पहले बौद्धधर्मतत्त्वकी खोजमें भारतवर्ष आये थे।

सान सि प्रदेशके यु-युङ्ग नगरमें इनका जन्म हुआ था। बचपनमें ये बुद्ध नामसे परिचित थे। चीनोंका बौद्धधर्ममें अनुराग रहनेके कारण ये थोड़ी ही उमरमें संसाराभ्रम छोड़ देनेको वाध्य हुए। तीन ही वर्षकी उमरमें ये ध्रमण हो गये थे। स्वदेशीय प्रधानुसार उन्होंने पूर्व नामका परित्याग कर धर्मनाम 'फा हियान' और 'सिंह' (शाक्यपुत्र) की उपाधि प्राप्त की। यतिधर्मका ग्रहण कर जब वे सि-गन् फु प्रदेशकी राजधानी चान्ग-अन् नगर में धर्मानुशीलनमें व्यापृत थे, उस समय 'चिनयपिटक' ग्रन्थको अधूरा देख कर उन्हें भारी दुःख हुआ। इस कारण उन्होंने चिनयशास्त्रके नियमादिका उद्धार करनेके लिये कुछ साधियोंके साथ भारतवर्ष आनेका स कल्प किया। जनसाधारणके निकट ये सुदृढ़ धर्मके शाक्य नामसे प्रसिद्ध थे।

बौद्धधर्ममें विशेष अनुराग रहनेके कारण बौद्ध ग्रन्थ पढ़नेकी उननी बड़ी इच्छा हुई। इस उद्देश्यकी सिद्ध करनेके लिये ये ३६६ ई०में दलबलके साथ चान्ग अन नगरसे निकल पडे। चीन राज्यका विख्यात प्राचीर पार कर वे क्रमागत पश्चिमकी ओर अग्रसर हुए। उस

समय बौद्धप्रभाव प्रायः सारे उत्तर देशोंमें फैला हुआ था। राहमें उन्हे अनेकों बौद्धमठ मिलते जाते थे। उन्हीं मठोंमें चर्चा बिता कर वे खोदानमें उपस्थित हुए। राजाके आदेशसे उन्हे यहाके गोमती सङ्घाराम रहना पडा। यहा महायान मतवाचलन्वी बौद्ध सम्प्रदायका वास है। यहा रख कर ही उन्हींने बुद्धदेवकी रथावाला देवी थी। इसके बाद वे लोग छत्रभङ्ग हो गये। फाहियान थोडेसे साथी ले कर इयारकन्दकी ओर चल दिये। यहा भी उन्हींने महायान बौद्धमत फैला हुआ देखा था। अब वे यहासे लौट कर कि श (कासगर) राज्यमें पहुँचे। यहाके राजाके 'पञ्चवर्षपरिवृद्' था और सभी बौद्ध हीनयानमवाचलन्वी थे। इसके बाद वे तुपारावृत त्सुङ्ग लिङ्ग पर्वतमाला पार कर दरदराश्यके दारिल उपत्यकामें पहुँचे। यहासे क्रमागत दक्षिणपश्चिमकी ओर पैदल चल कर वे नवके सब स्वातन्त्री पार हुए। यहा उद्यान राज्यमें प्रवेश कर उन्हींने बौद्धधर्मका पूर्ण प्रभा देखा। इसके बाद वे भारतके उत्तर सोमावर्ती गन्धार, तक्षशिला, नगरहार, पुरुषपुर आदि जनपदोंमें भी बौद्धधर्म और कीर्त्तिसमूहका विस्तार देण कर प्रसन्न हुए थे।

भारतगमनकालमें उन्हींने जो जो जनपद देखे उन्हे स्वरचित 'फो-को की' नामक ग्रन्थमें लिपियद्ध कर गये हैं। उक्त प्राचीन ग्रन्थ और परवर्ती चीनपरिव्राजक यूननचुवङ्गने लिखित भ्रमणवृत्तान्तका सामञ्जस्य करके

उनके लिखित वर्णानुसार कोई कोई इस जनपदको बर्किया राज्य अनुमान करते हैं। फाहियानने इस नगरसे कोष भर पश्चिम जिन नये संघारामका उल्लेख किया है, यूननचुवङ्ग व रसीकी बाह्यलीक राज्यक अन्तर्गुक्त बतला गये हैं।

यूननचुवङ्गने इस किश नामसे कासगर जनपदका उल्लेख किया है। बहुवारे इसे मनु लिपिन स्वतः वा विष्णुपुराणके कशाकोषा देण बतलाते हैं। सभ्यत तडेमी लिखित कोषादो (K. 0897101) वरै पृथ्वर्मशास्त्रलिखित कुशाट रण दोनों इसी जनपदके अधिवासी बतल ये गये हैं।

सिन्धुनदीके पश्चिम मूलवर्ती उपरपश्च भूमि। यहाँ दारिल नदी बहती है।

भारतके पूर्वतन इतिहास, भूगोड और बौद्धकोत्ति जन पदादिके स्थाननिर्णयमें बहुत कुछ सुविधा हुई है।

फाइयान पश्चिम भारतयपसे क्रमागत पूर्वकी ओर कपिलवस्तु, राजगृह और गयादि बौद्धक्षेत्रोंके दर्शन करते हुए चम्पारारजधानीमें उपस्थित हुए। पीछे वहासे समुद्रकी ओर ताम्रललि नगरमें पहुँच कर उन्होंने मैकडो सूत्र ग्रन्थादिनी नकल कर ली। इस स्थानमें जहाज पर चढ कर वे सिंहलद्वीप गये। वहा उन्हो ने विनयपिटक, दीर्घांगम और म युक्तागम आदि स ग्रह कर फिरसे समुद्रकी राहसे पूर्वकी ओर यात्रा की। कुछ दिन नूफानमें ममुद्रनी राहसे निचरण कर कमण्डलुके साथ वे जलमें कूद पडे। आचिर यद्यद्वीप (ये पो ति)-में उत्तरी हो वहा उन्होंने महाप्रणयधर्मका विस्तार देया। पीछे वहासे वे चीनदेशके बङ्ग-चाउ नगरमें पहुचे।

चाङ्ग वन राजधानीका परित्याग कर ५ वर्ष परि भ्रमण करनेके बाद वे मध्य भारतमें उपस्थित हुए। वहा प्रायः ६ वर्ष तक रह कर उन्हो ने करीब ३० विभिन्न राज्यों में परिभ्रमण किया था। चौदह वर्षके बाद वे स्वदेशके त्सिङ्ग-चाऊ नगरमें पहुचे। पीछे नाकि शहर-घासी भारतीय बौद्ध भ्रमण बुद्धमद्रकी सहायतासे उन्होंने अनेक धर्म ग्रन्थो का अनुयाद और निच भ्रमण विवरण प्रकाशित किया। ८६ वर्षकी उमरमें उनकी मृत्यु हुई।

फाइना (अ० वि०) पुश्चली, छिनाल।

फिक्करना (हि० कि०) फेंकना देना।

फिक्काना (हि० कि०) फेंकनेका प्रेरणार्थक रूप, फेंकनेका काम कराना।

फिगा (हि० पु०) एक प्रकारका पक्षी जो सिन्धुमें आसाम तकके बड़े बड़े मैदानोंमें पाया जाता है। इसके पर भूदे, चौंच पाली और पजे लाल होते हैं। ये छोटे छोटे झुंडोंमें इधर उधर उड़ते हैं। विशेषत ये हरियालीमें घरना पसन्द करते हैं। इसके झुण्डमेंस जहाँ एक पक्षी उड़ता है वहा बाकी सब भी उसीका अनुसरण करते हैं। इसकी लम्बाई प्राय डेढ कालिन्त हीनी है। वर्षाऋतुमें इसकी मादा एक साथ तीन अण्डे देती है।

फि (स० पु०) १ पाप। २ निराल धारण। ३ कोप।

फिई (हि० खी०) चेनेनी तरहका एक मोटा अन्न जो युटेल्लसगडमें होता है।

फिक्कर (हि० पु०) फिई देना।

फिज (अ० खी०) १ चिन्ता, सोच। २ उपायकी उद्गा घना, उपायका विचार। ३ ध्यान, विचार।

फियमद (फा० वि०) चिन्ताप्रसन्न।

फिङ्गक (स० पु०) फिङ्ग इति शब्देन कायति शब्दायते इति कै क। फिगा नामक पक्षी। पयाय—छुल्लिङ्ग, कलिङ्ग, धूम्याद, भूङ्ग।

फिङ्गेश्वर—मध्य प्रदेशके रायपुर जिलान्तगत एक सामन्त राज्य। भूपरिमाण २०८ वर्ग माल है। वहाके सरदार अपनेको राजगोड बतलाते हैं। १७७६ ई०में श्री हुई मनदके अनुसार ये राज्यसम्पदना भोग करते आ रहे हैं। फिङ्गेश्वर ग्राम वहाका प्रधान स्थान है।

फिचबुर (हि० पु०) वह फेा जो मुब्छाँ या वेहोशी बाने पर मूहसे निकलता है।

फिट (हि० अर्थ०) छिक्, छो।

फिटकरी (हि० खी०) फिटकिरी देना।

फिटकार (हि० पु०) १ धिक्कार, लात। २ शाप, बद-दुआ। ३ हलकी मिलावट, भायना।

फिटकिरी—सनामग्यात एनिज पदार्थ विशेष जो सल फेट थाफ पोटाश और सलफेट थाफ अलमोनियमके पानीमें जमनेसे बनता है। भारतयपमें विहार, सिन्ध, कच्छ और पञ्जावमें फिटकिरी पाई जाती है। मैलके या अन्यान्व द्रव्योंके योगसे यह लाल पाली और काली भी होती है। भिन्न भिन्न देशोंमें यह भिन्न भिन्न नामोंसे प्रसिद्ध है, यथा बङ्गाल—फटकिरी, महरत—स्फटि कारी, भरय—निघ, जाज, पारस—जाक, जाफे स्फेद; महागद्द—फकटी, तुर्षि, पटक, तामिल—पटिकारम, तेलगु—पटिकारम; मलयालम्—पटिकारम; ब्रह्म—विश्रीविन्द।

पत्रके मध्यपरिचन किन्नी स्थानमें यह मिट्टीके साथ मिलने देती जाती है। उस समय इसका रंग श्यामर घणकी मछलीके छिलकेके जैना रहता है। वैज्ञानिकोंने इसे धनिप्रलन्तरसन्धाय निरूपण किया है। उसमें सब आग्मुलितिक (Sub-nummulate group)की जगह

उत्पत्ति होती है। फस्फुरेटेड हाईड्रोजन (Phosphur-  
retted Hydrogen) नामक एक पदार्थ प्रचलित है।  
बृद्ध (Solid), तरल और वाष्पयुक्त भेदसे उसकी तीन  
अवस्थाएँ हैं।

बृद्ध पदार्थ जेमे हैं जिनमें आलोक विकिरणकी  
शक्ति है। दो एण्ड कोयार्डज पत्थरकी आपसमें घिसने  
से आलोक उत्पन्न होता है। उस पत्थरमें फास्फरस-  
की अवस्थिति ही इसका कारण है। जुगनू और मउली  
के छिलकेमें इसी प्रकार कभी कभी प्रस्फुरकालोक देखने  
में आता है।

फासला (३० पु०) अनन्तर, दूरी।

फास्ट (३० वि०) १ तेज। २ शीघ्र चलनेवाला, वेग  
वाला।

फाहा (हि० पु०) १ फाया, साया। २ भरहमसे तर पट्टी  
जो घाघ, फोडे आदि पर रची जाती है।

फाहियान—एक चीन परित्राजक। चीनोंमें वे ही सबसे  
पहले बौद्धधर्मतत्त्वकी गोजमें भारतपर आये थे।

सान सि प्रदेशके बु-यङ्ग नगरमें इनका जन्म हुआ था।  
बचपनमें वे बुद्ध नामसे परिचित थे। चीनोंका बौद्ध-  
धर्ममें अनुराग रहनेके कारण वे थोड़ी ही उमरमें ससारा  
धर्म छोड़ देनेकी वाध्य हुए। तीन ही वर्षकी उमरमें वे  
धमण हो गये थे। स्वदेशीय प्रथानुसार उन्होंने पूर्व  
नामका परित्याग कर धर्मनाम 'फा हियान' और 'सिह'  
(शाफ्यपुत्र)-की उपाधि प्राप्त की। यतिधर्मका ग्रहण  
कर जब वे सि गन्तु प्रदेशकी राजधानी चाङ्ग-अन नगर  
में धर्मानुशीलनमें व्यापृत थे, उस समय 'विनयपिटक'  
ग्रन्थकी अपूर्ण देल कर उन्हें भारो हुल हुआ। इस  
कारण उन्होंने विनयशास्त्रके नियमादिका उद्धार करनेके  
लिपे कुछ साधियोंके साथ भारतपर आनेका स करप  
किया। जनसाधारणके निकट वे सुदृढ़ शक्ति शाफ्य  
नामसे प्रसिद्ध थे।

बौद्धधर्ममें विशेष अनुराग रहनेके कारण बौद्ध ग्रन्थ  
पढनेकी उनकी बड़ी इच्छा हुई। इस उद्देश्यको सिद्ध  
करनेके लिये वे ३६६ ई०में दलबलके साथ चाङ्ग अन  
नगरसे निकल पडे। चीन राज्यका प्रिष्यात प्राचौर  
पार कर वे क्रमागत पदिचमकी ओर अग्रसर हुए। उस

समय बौद्धप्रभाव प्राय सारे उत्तर देशोंमें फैला हुआ  
था। राहमें उन्हें अनेकों बौद्धमत मिलते जाते थे।  
उन्हीं मठोंमें वर्षा बिता कर वे ज्योदानमें उपस्थित हुए।  
राजाके आदेशसे उन्हें यहाके गोमती सङ्गाराम रहना  
पडा। यहा महायान मतावलम्बी बौद्ध सम्प्रदायका वास  
है। यहा रत कर ही उन्होंने बुद्धदेवकी रथयात्रा देखी  
थी। इसके बाद वे लोच छत्रभङ्ग हो गये। फाहियान  
थोडे से साथी ले कर इयारकन्दकी ओर चल दिये। यहा  
भी उन्होंने महायान बौद्धमत फैला हुआ देखा था। अब  
वे यहासे लौट कर कि श (कासगर) राज्यमें पहुँचे।  
यहाके राजाके 'पञ्चवर्षपरिपट्ट' था और सभी बौद्ध  
हीनयानमतावलम्बी थे। इसके बाद वे तुगारावृत  
तुसुङ्ग लिङ्ग पर्वतमाला पार कर द्वादराज्यके दारिल  
उपत्यकामें पहुँचे। यहासे क्रमागत दक्षिणपश्चिमकी  
ओर पैदल चल कर वे सबसे सब स्वातन्त्री पार हुए।  
यहा उद्यान राज्यमें प्रवेश कर उन्होंने बौद्धधर्मका पूर्ण  
प्रमा देखा। इनके बाद वे भारतके उत्तर सोमावर्ती  
गन्धार, तक्षशिला, नगरहार, पुष्यपुर आदि जनपदोंमें  
भी बौद्धधर्म और कीर्त्तिसमूहका विस्तार देल कर प्रसन्न  
हुए थे।

भारतगमनकालमें उन्होंने जो जो जनपद देखे उन्हें  
स्वरचित 'फो-को-की' नामक ग्रन्थमें लिपिबद्ध कर गये  
हैं। उक्त प्राचीन ग्रन्थ और पर्यटकों चीनपरित्राजक  
यूपनचुवङ्गके लिखित भ्रमणवृत्तान्तका सामञ्जस्य करके

अउनके लिखित वर्णानुसार कोई कोई इस जनपदको बकि या  
राज्य अनुमान करते हैं। फाहियाने इस नगरके कोष  
भर पदिचम जिन नये सेपारामका उल्लेख किया है, यूपन-  
चुवङ्ग उरुको वाहनीक राज्यक अन्तर्गुक्त बतला गये हैं।

यूपनचुवङ्ग गने इस विश्व नामके राधगर जनपदका उल्लेख  
किया है। बहुतेरे इसे मगु लिखित खत वा धिष्णुपुराणके  
र.श.कोश देल बतलाते हैं। सम्भारत टडेमी लिखित  
कोशादेशे (Kossewos) और पुष्यपर्वनामलिखित कुशादेश-  
रण नामों इसी जनपदके अधिवासी बतल ग गये हैं।

गि 'सुनधीके पदिचम छलबर्ती उपत्यका मूनि। यहाँ  
दारिल नहीं बहती है।

भारतके पूर्वतन इतिहास, भूगोल और बौद्धकीर्ति जन पदादिके स्थाननिर्णयमें बहुत कुछ सुविधा हुई है।

फाइयान पश्चिम भारततकसे क्रमागत पूर्वकी ओर कपिलवस्तु, राजगृह और गयादि बौद्धशैलीके दर्शन करते हुए चम्पारारजधानीमें उपस्थित हुए। पीछे यहासे समुद्रकी ओर ताम्रलिप्ति नगरमें पहुँच कर उन्होंने नैफडो सूत्र ग्रन्थादिकी नकल कर ली। इस स्थानसे जहाज पर चढ़ कर वे सिहलद्वीप गये। यहा उन्होने विनयपिटक, दीर्घांगम और स युत्तागम आदि स ग्रह कर फिरसे समुद्रको राहसे पूर्वकी ओर यात्रा की। कुछ दिन तकानमें समुद्रकी राहसे त्रिचरण कर कमण्डलुके साथ वे जलमें कूद पड़े। आपिर यत्रोप (ये पो ति) में उत्तीर्ण हो यहा उन्होंने ब्राह्मणधर्मका विस्तार देखा। पीछे यहासे वे चीनदेशके कङ्ग चाउ नगरमें पहुँचे।

चाङ्ग अन राजधानीका परित्याग कर ५ वर्ष परि भ्रमण करनेके बाद वे मध्य भारतमें उपस्थित हुए। यहा प्रायः ६ वर्ष तक रह कर उन्होंने करीब ३० विभिन्न राज्यों में परिभ्रमण किया था। चौदह वर्षके बाद वे स्वदेशके सुसिङ्ग-चाऊ नगरमें पहुँचे। पीछे ताकि शहर यासी भारतीय बौद्ध भ्रमण बुद्धभद्रकी महायानासे उन्होंने अनेक धर्म ग्रन्थो का अनुवाद और निज भ्रमण त्रिचरण प्रकाशित किया। ८६ वर्षकी उमरमें उनकी मृत्यु हुई।

फाइशा (अ० वि०) पुश्चली, छिनाल।

फिकरना (हि० फि०) फेंकना देखो।

फिकवाना (हि० फि०) फेंकनेका प्रेरणार्थक रूप, फेंकनेका काम कराना।

फिगा (हि० पु०) एक प्रकारका पक्षी जो सिन्धुसे आसाम तकके बड़े बड़े मैदानोंमें पाया जाता है। इसके पर मृदु, चींच पोनी और पजे लाल होते हैं। ये छोटे छोटे भुबोंमें इधर उधर उड़ते हैं। विशेषत ये हरियालीमें घरना पसन्द करते हैं। इसके भ्रूणमेंसे जहाँ एक पक्षी उड़ता है यहा बाकी सब भी उसीका अनुसरण करते हैं। इसकी लम्बाय प्राय डेढ़ बालिन्त होती है। वर्षामसतुमें इसकी मात्रा एक साथ तीन अण्डे देती है।

फि (स० पु०) १ पाप। २ निष्कल वाक्य। ३ कौप।

फिगई (हि० स्त्री०) चनेको तरहका एक मोटा अन्न जो युद्धेल्गएडमें होता है।

फिकार (दि० पु०) फिङ्ग देखो।

फिक (अ० स्त्री०) १ चिन्ता, सोच। २ उपायको उद्गायना, उपायका विचार। ३ ध्यान, विचार।

फिकमद (फा० वि०) चिन्ताप्रान्त।

फिङ्गक (स० पु०) फिङ्ग इति शब्देन कायति शब्दायते इति की क। फिगा रामक पक्षी। पर्याय—हुलिङ्ग, कलिङ्ग, धृम्याद, भृङ्ग।

फिङ्गेश्वर—मध्य प्रदेशके रायपुर जिलान्तर्गत एक सामन्त राज्य। भूविमाण २०८ वर्ग मील है। यहाके सरदार अपनेको राजगोड बनलाते हैं। १९३६ ई०में वी हर्द सनदके अनुसार ये राज्यसम्पदका भोग करते आ रहे हैं। फिङ्गेश्वर ग्राम यहाका प्रधान स्थान है।

फिचपुर (हि० पु०) यह फेन जो मृच्छां या घेहोगी आने पर मुहसे निरलता है।

फिट (हि० अर्थ०) छिद्र, छो।

फिटकरी (हि० स्त्री०) फिटकिरी देगा।

फिटकार (हि० पु०) १ फिजार, लानत। २ शाप, बद-दुआ। ३ हलकी मिलायत, भायना।

फिटकिरी—खनामण्यात पानिन पदार्थ विशेष जो सल फेट आफ पोदाज और सलफेट आफ अल्मोनियमके पानीमें जमनेसे बनता है। भारतवर्षमें बिहार, सिन्ध, कच्छ और पञ्जावमें फिटकिरी पाई जाती है। मैलके या अन्यन्य द्रव्योंके योगसे यह लाल पौली और काली भी होती है। सिन्ध सिन्ध देशोंमें यह भिन्न भिन्न नामोंसे प्रसिद्ध है, यथा बङ्गाल—फटकिदि, मसूत—रफटि कारी, अरब—मिन्, जान, पारस—जाव, जाफे सफेद, महाराष्ट्र—फकरी, तुर्कि, पटक, तामिल—पटिकारम, तेलगु—पटिकारम; मलयाळम्—पटिकारम; प्रझ—किर्मीपित्त।

पंचतके मध्यरिया बिस्ती स्थानमें यह मिट्टीके साथ मिश्री देवी जाती है। उस समय इसका रंग ह्वापूनर वर्णकी मछलीके टिलकेके जैसा रहता है। ये शानिर्णी इने अग्निप्रस्तरसम्बन्धीय निरूपण किया है। उसमें सब नाममुलितिक (Sub-nummulate group)की जगह



सञ्चित फिटकिरीयुक्त कृत्विम धातु ( P edo brectia ) मिली रहती है ।

इस प्रकारकी मिश्रित फिटकिरी-सयुक्त मट्टीको ला कर छिछले हीर्दोंमें बिठा देते और ऊपरमें पानी डाल देते हैं । अलमीनियम सल्फेट पानीमें घुल कर नीचे बैठ जाता है जिसे फिटकिरीका बीज कहते हैं । इस बीज ( अलमीनम सल्फेट ) को गरम पानीमें धो कर ६ भाग सल्फेट आफ पोटाश मिला देते हैं । फिर दोनोंको आग पर गरम करके गाढा करते हैं । पाच छ दिनमें फिटकिरी जम जाती है ।

सिन्धुनदके किनारे कालावाग और छिछली घाटीके पास फोटिकल फिटकिरी निकलनेके प्रसिद्ध स्थान हैं । इङ्ग्लैण्ड वा चीनदेशजात फिटकिरीकी अपेक्षा कच्छ देशोत्पन्न फिटकिरी ही उत्तम है । कालावागकी फिटकिरीके धारागमें सोडा पाया जाता है, परन्तु इङ्ग्लैण्ड-देशज फिटकिरीमें पटाश रहता है । मझिष्ठा, हरिद्रा, नील आदि रंगोंको पक्का करनेके लिये उसमें फिटकिरी मिलाई जाती है ।

आयुर्वेदके मतसे इसका गुण धारक, रक्तरोधक और पचननिवारक है । निस्तेज उदरामय, क्षयशील प्रदरादि, रक्तप्राय, वधोंकी विसृचिका, औदरिक छर्दि, जलचतु श्लेष्माप्राय, हिक्का आदि रोगोंमें इसका आभ्यन्तरिक प्रयोगमें व्यवहार किया जाता है । चक्षुःरोग, श्वेतप्रदर ( Leucorrhœa ), प्रमेह ( Gonorrhœa ), अस्त्रदर ( Men thragia ) मुदस्रग वा जरायुमूत्र ( Prolapsus of the uteri and rectum ) तथा अन्यान्य क्षतरोगोंमें जलमिश्रित फिटकिरी विशेष उपकारजनक मानी गई है । फसायके कारण इसमें सद्बोधनका गुण बहुत अधिक है । शरीरमें पड़ते ही यह तलुओं और रक्तकी नलियों को सिकोड देती है जिससे रक्तप्राय आदि कम या बंद हो जाता है । गरम पानोंमें फिटकिरी डाल कर ४१५ दिन तक उससे मुँह धोनेसे जिह्वा और मुखवित्रयके फोड़े जाते रहते हैं । फिटकिरीके चूर और आइडोफगमको मिला कर विस्कोटादि पर लगानेसे घाव सहजमें सूज जाता है ।

फिटकिरीके पानोंमें पुत्ती करनेसे वृन्तक्षत और गल

क्षत दोषादि नष्ट होते हैं । फिटकिरीको जला कर उसके चूरकी नास लेनेसे नासाप्राय निवारित होता है । विचरू ने जहा डंक मारा हो, वहाँ पर इसके चूरका लेप देनेसे विष बातकी बातमें उतर आता है । प्रसूत शिशुकी नाभिरेख्तु फाटनेके बाद यदि नाभि पक जाय, तो जली हुई फिटकिरीका चूर देनेसे विशेष उपकार होता है । कपडे की रंगाईमें तो यह बड़े कामकी चीज है । इससे कपडे पर रंग अच्छी तरह चढ़ जाता है । इसीसे कपडे को रंगनेके पहले फिटकिरीके पानीमें धोए देते हैं । रंगने के पीछे भी कभी कभी रंग निवारने और बराबर करनेके लिये कपडे फिटकिरीके पानोंमें धोए जाते हैं ।

फिटकी ( हि० खी० ) १ छीटा । २ सूतके छोटे छोटे फुचरे जो कपडे की सुनायटमें निकले रहते हैं ।

फिटन ( अ० खी० ) चार पहियेकी एक प्रकारकी खुली गाडी जिसे एक या दो घोड़े रींचते हैं ।

फिट्टा ( हि० वि० ) अपमानित, फटकार खाया हुआ ।

फिनना ( अ० पु० ) १ भगडा, दगा फसाद । २ एक फूलका नाम । ३ एक प्रकारका इल ।

फितरती ( अ० वि० ) १ चालाक, चतुर । २ मायावी, फितूरी ।

फितुर ( अ० पु० ) १ मृन्मत्त, घाटा । २ निपर्यथ, छराबी । ३ उपद्रव, भगडा ।

फितूरी ( हि० वि० ) १ भगडालू, लड़ाका । २ उपद्रवी, फसादी ।

फिदवी ( फा० वि० ) १ रजामिभक्त, आशाकारी । ( पु० ) २ दास ।

फिहा ( फा० पु० ) फिहा १रती ।

फिनिकीय—फिनिस ( Phœnicia ) देशके प्राचीन अधिवासी ( Phœnician ) । ईसा जन्मके बहुत पहले से ये लोग विदेशीय वाणिज्यकी उन्नति द्वारा जगतमें प्रतिष्ठालाभ कर गये हैं । ये लोग सेमितिक या अरमियाण जातिके थे । पहले ये लोहितसागर वा पारस्य उपसागरके किनारे रहते थे । (१) किस समय इन्होंने भूमध्य सागरके सिरिया उपकूलमें उपनिवेश बसाया उसका

कोई प्रमाण नहीं मिलता। (२) जो कुछ हो, प्राचीन सिरिया राज्यके दक्षिण और पश्चिम तथा ट्रिग्लिट उपमागरके पूर्वी किनारे आकर ये लोग पश्चिम यूरोप के साथ व्यवसाय वाणिज्यमें लिप्त हुए थे। इस समय फिनिस राज्यकी लम्बाई २०० मील और चौड़ाई २० मील थी। सिदोन और टायर नगरमें उनकी राजधानी थी। वाइबल पढ़नेसे मालूम होता है, कि जलुआके राज्यकालमें यह सिदोन नगर महासमृद्धिशाली था। (३) सिरिया आकर उन्होंने पश्चिममें ग्रीटेन तक अपना वाणिज्य फैला लिया था। वाणिज्योन्नतिके लिये उन्होंने अरब, बाविलोनिया, आफ्रिकाके उत्तरी उपकूल, स्पेन, सिसली, मल्टा आदि स्थानोंमें सैकड़ों उपनिवेश बसाये थे। इन सब देशोंमें वे पूर्ण दिशासे माल लाते थे। अफ्रिका और सिसलीका उपनिवेश धीरे धीरे स्वतन्त्र राज्यमें परिणत हो गया। उन्होंने बहुत समय तक विशेष दक्षताके साथ रोमकोंका मुखावला किया था।

जगत्के वर्तमान इतिहासमें यहाँ प्राचीन वाणिज्य जाति सबसे पहले वाणिज्य द्वारा उन्नतिकी चरमसीमा तक पहुँच गई थी। भिन्न भिन्न देशों और जातियोंके साथ इनका वाणिज्य होनेके कारण उन्होंने इनसे वर्षा-माला ग्रहण की थी। सिन्धुनदके उत्तर भौक अक्षर प्रचलित होनेके पहले ५वीं शताब्दीमें भारतवासी फिनिक-वर्णमालासे अवगत थे। भारतमें वर्ण नामसे प्रसिद्ध, प्राच्यभारतमें इन लोगोंने पाश्चात्य जगत्में सभ्यतालोक विस्तार किया था। (४) मले मनके राज्यकालमें ये लोग जहाज पर चढ़ कर अरबदेश के दक्षिण अफिर नगरमें आये थे। यहासे ये रोमकोंके भारतीय पण्य ले कर ये बहुत दूर पश्चिम चले जाते थे। (५) ५८६ और ३३१ शताब्दीमें अलेक्सन्दरके द्वारा

दूसरी बार टायर नगर विध्वस्त होने पर भी उनके वाणिज्यमें जरा भी घटाना न पहुँचा था। ३४६ शताब्दी में पूर्वाभिर्में दार्धजके अध पतन पर भी उनका वाणिज्य ज्योंका त्यों बना रहा। किन्तु अरबीयाम जल्युद्धके बाद उनकी वाणिज्य भागा पर पानी फेर गया। अनन्तर अरबोंने फिनिकियोंका वाणिज्यमेव अपना लिया। दूसरे वर्ष पुर्तगाल-वाणिज्योंने जगत्का वाणिज्यभण्डार अपने हाथ कर लिया।

फिनिया (हि० खी०) कानमें पहननेका एक गद्दा।  
फिनोज (हि० खी०) दो मस्तूलवाली एक छोटी नाव।  
यह दो डालेमें चलाई जाती है।

फिरग—फिरङ्ग देणो।  
फिरगवात (हि० पु०) वातज फिरङ्ग। फिरङ्ग देणो।  
फिरगी (हि० चि०) फिरङ्गो देणो।  
फिरट (हि० चि०) १ विरुद्ध, खिलाफ। २ विरोध या लड़ाई पर उद्यत, विगडा हुआ।

फिर (हि० नि० चि०) १ पुन, दोबारा। २ अनन्तर, उपरान्त। ३ भविष्यमें किसी समय, और वक्त। ४ देशसम्बन्धमें आगे बढ़ कर, और चल कर। ५ उस हालतमें, उस अवस्थामें। ६ इसके अतिरिक्त, इसके सिवाय।

फिरफ (हि० खी०) एक प्रकारकी छोटी गाड़ी। इस पर गावके लोग चीजोंको लाद कर इधर उधर ले जाते हैं।

फिरफना (हि० फि०) १ धिरफना, ताचना। २ किसी गोल वस्तुका एक ही स्थान पर घूमना।

फिरफा (अ० पु०) १ जाति। २ जट्टा। ३ सम्यदाय, पन्थ।

फिरकी (हि० खी०) १ लक्ष्मणके गचानेका एक खिलौना। २ मालवामकी एक कसरत। इसमें निधरके हाथसे मालवाम लपेटते हैं, उसी धर गर्दन मुका कर फुरनीमें दूसरे हाथके कंधे पर मालवामकी लेने हुए उड़ान करते हैं। ३ लक्ष्मण, धानु या बड़के छिलके आदिवा गोल टुकड़ा जो तागा बटनेके तर्कके नीचे लगा रहता है। ४ चर्खे नामका खिलौना। ५ पुञ्जीका एक देव। जब जोशके दोनों हाथ गर्दन पर हों अथवा एक हाथ गर्दन

(२) कोई कोई अनुमान करते हैं, कि ३ हजार २५०० वर्ष पूर्व ईसके समय ये लोग पूर्व-बाइका पारिवाग कर लिब-यर्टके किनारे बस गये थे, क्योंकि पारस्यके किनारेसे वे कर ओरिजिनाग तक उनका वाणिज्य चल रहा था।

(३) Jor p xiv 26  
(४) The Social History of Anmarup by A. Vasu, Vol 1  
(५) Cherom VII 17 18 Ann. 127-28  
Vol 31 23

पर जीर पर भुजदण्ड पर हो, तब एक हाथ जोड़की  
गन्ध पर रख कर दूसरे हाथने उसके लंगोटको पकड़े  
और उभे सामने भोंका डेते हुए बाहरी टांग मार कर  
गिरा दे। ६ चमड़े का गोला टुकड़ा जो तन्त्रमें लगा  
कर चरचरेमें लगाया जाता है। चरचरेमें जब सूत फालने  
है, तब उसके लच्छेको इसीके दूसरे पार तपेटने हैं। ७  
चहू गोला या चनासार पत्थर जो पीचकी कौलीने एक  
स्थान पर हिला कर घूमना हो।

फिरङ्ग ( म० पु० ) ? खनामख्यात यूरोपीयभेद । २  
यूरोपका देश, गोरोंका मुक्त, फिरगिस्तान ।

फ्राङ्क नामका जर्मन जातियोंका एक जत्था था ।  
यह जत्था इसाकी ३री शताब्दीमें तीनों दुर्लोंमें विभक्त  
हुआ । इनमेंसे एक दक्षिणकी ओर बढ़ा और गाल  
( फ्रान्सका पुराना नाम )-से रोमका राज्य उठा कर उसने  
वहा अपनी गोटी जमाई । तभीसे फ्रान्स नाम पड़ा ।  
१०६६ और १२५० ई०के मध्य यूरोपके ईसाइयों ने ईसा  
की जन्मभूमिको तुर्कोंके हाथसे निजानेके लिये कई  
बार आक्रमण किये । फ्राङ्क शब्दका परिचय तभीसे  
तुर्कोंको हुआ और ये यूरोपसे आनेवालोंको फिरङ्गी  
कहने लगे । क्रमश यह शब्द अरब, फारस आदि होता  
हुआ भारतपर्यन्त आया । भारतपर्यन्त पहले पहल पुर्त-  
गाल आये, इसने इस शब्दका प्रयोग बहुत दिनों तक  
उन्हींके लिये होता रहा । फिर यूरोपियन मालको फिरङ्गी  
कहने लगे ।

३ रोगनिशेध, गरमी, आतशक । केवल भावप्रकाश  
में ही इस रोगका नियंत्रण देखनेमें आता है । चरक,  
सुश्रुत, हार्यन आदि प्राचीन किसी भी ग्रन्थमें इस रोगका  
उल्लेख नहीं है । अतः यह नि सन्देह कहा जा सकता है,  
कि पहले इस देशमें इस रोगका नाम निजान भी था,  
पीछे फिरङ्गियों के इस देशमें बस जानेसे फिरंग रोगकी  
सृष्टि हुई है । यह भी स्पष्ट कहा गया है, कि फिरङ्ग रोग  
फिरङ्गी ग्रीके साथ सम्बन्ध करनेसे ही जाता है । ११५।  
१। २ - ११५। १२४२में देगे । इस रोगकी नामनिश्चि-  
ते स्थानमें लिखा है—

"फिरङ्ग रोगसे देगे वायुनेत्र यद्भवेत् ।

तस्मान्ना फिरङ्ग इत्युक्तं व्याधिष्वप्याधिशास्त्रैः ॥"

( भायप्र० )

फिरङ्गियों के देशमें यह रोग बहुत होता है, इसीसे  
इस रोगको फिरङ्ग कहते हैं । इस रोगका दूसरा नाम  
गन्धरोग भी है ।

फिरङ्गरोगप्रसन्न ध्यक्किन्ना गावस्पशा करनेसे, त्रिसे-  
पत फिरङ्गरोगप्रस्ता फिरङ्गिनीके साथ ससर्ग करनेसे यह  
रोग उत्पन्न होता है । इस आगन्तुन रोगमें पश्वान्  
दोषादिके लक्षण दिखाई पड़ते हैं । अतएव धं मव क्षेप  
क्षेप कर यात, पित्त और कफका विषय स्थिर करना  
होगा । दोषमें चायुक्ता लक्षण रहनेसे यातन फिरङ्ग,  
इसो प्रकार पित्त और कफके मध्यन्धमें भी जानना  
चाहिये । फिरङ्गिणीका ससर्ग ही इस रोगका प्रधान  
कारण है । यह रोग तीन प्रकारका होता है—बाह्यफिरङ्ग,  
आभ्यन्तर फिरङ्ग और बहिरन्तर्भवफिरङ्ग ।

बाह्यफिरंग विस्कोटयके समान शरीरमें फूट फूट कर  
निकलता है और घाव या मृण हो जाते हैं । यह बाह्य  
फिरङ्ग सुगमाध्य है अर्थात् अल्प आयाससे ही यह  
दूर हो जाता है । आभ्यन्तर फिरङ्गमें सन्धि स्थानोंमें  
आमवातके समान शोथ और घेदना होती है । यह कष्ट  
साध्य है । जो बाहर और भीतर दोनों ही जगह होता  
है उसे बहिरन्तर्भव फिरङ्ग कहते हैं । यह भी दुःख  
साध्य है । इस रोगमें दृशता, बलक्षय, नाशाभङ्ग, अग्नि  
मान्य, अस्थिगोष और अस्थिघ्नी यमता आदि उपद्रव  
होते हैं ।

बाह्यफिरङ्ग नरोत्थित और उपद्रवग्रहित होनेसे सुग-  
साध्य, आभ्यन्तर फिरङ्ग कष्टसाध्य और बहिरन्तर्भव  
फिरङ्ग उपद्रवयुक्त तथा अधिक दिनका होनेसे असाध्य  
होता है ।

निकृषा ।—रसकर्पूर फिरङ्गरोगकी एक उत्कृष्ट  
औषध है । इसके सेवनसे फिरङ्गरोग निन्द्य ही आरोग्य  
होता है ।

रसकर्पूरका निमल्लिपित प्रकारसे सेवन करना पड़ता  
है । विहित विधानसे यदि सेवन किया जाय, तो सुगन्धोष  
नहीं होता ।

पहले गोघृत चूर्ण द्वारा एक छोटी घृषिका प्रस्तुत  
कर उसमें ४ रत्नों शोधित पारा डाल दे । पीछे उस  
घृषिका द्वारा पारदके आवरक स्वरूप एक पेसा गोल

पिण्ड बनाये कि उसमें पारद जरा भी दिगाई न दे। अनन्तर लवङ्गचूर्ण उसके चारों तरफ लगाये। अब उस गोलीको जलके साथ निगल जाये, पर याद रहे, निगलते समय यह दाँतसे छू न जाय। इस प्रकार रस कपूरका सेवन करने के पीछे पान बचना उचित है। इस औषधका सेवन करनेके बाद शाक, अमृ, लण, परिश्रम, रौद्रसेवन, पथपर्यटन और खीसङ्ग विलघुत्र निषिद्ध है। इस सब निषिद्ध द्रव्योंके सेवनमे रोग बढ जाता है।

पारद आध तोला, गदिर आध तोला, आरुक्का एक तोला इन सब द्रव्योंको एक साथ सलमें पीस कर मात गोली बनाये। प्रतिदिन मन्त्रे जलके साथ एक एक गोली सेवा करनेमे फिरङ्गुरोगका आठवें दिनमें कहीं पता न रहेगा। इस औषधका सेवन करके अमृ और लघणका बिल्कुल परित्याग करना पडता है। इस औषधका नाम मससालिवटी है। इस रोगमें धूमप्रयोग भी हितकर बतलाया गया है। पारद २ तोला, गन्धक १ तोला और विङ्गु २ तोला इन सब द्रव्योंको एक साथ पीस कर बज्जली करे, पीछे उसमे मात गोली बनाये। प्रतिदिन एक एक गोली द्वारा धूम प्रयोग करने से फिरङ्गुरोग अशय दूर हो जाता है। अथवा इसके आध तोला पारदको बडेल्याके रसमें घिसे, जब तक पारद दिगाई न दे, तब तक घिसते रहे। अनन्तर इसके छारा ७ दिन पाणिसे द देनेमे फिरङ्गुरोग नष्ट हो जाता है। यह खेद देख अमृ और लघणका बिल्कुल व्यवहार न करे।

एतद्भिन्न नीमकी पत्तियोंका चूर्ण आठ तोला, हनी तनी चूर्ण एक तोला, आमलकी चूर्ण एक तोला और हरिद्रा चूर्ण आध तोला इन सबको एक साथ मिला कर अमृ या मधुके साथ आध तोला तोबचीनीका चूर्ण खाने से फिरङ्गुरोग जाता रहता है। इस औषधके सेवनमें लघणका परित्याग करना पडता है। एकांत पक्ष में लघणका परित्याग नहीं कर सन्नेसे मन्थव-सेवा किया जा सकता है। पारद दो तोला, गन्धक दो तोला, और पदिरकाष्ठ दो तोला इन सबको एक साथ पीस कर बज्जली बनाये। पीछे हरिद्रा, नागकेजद, त्रिपट्ट, म्पुलजीप, शृङ्गात्रा यवाना, रत्नचन्दन, श्रीतचन्दन,

पिप्पली, घगलोचन, जयामासी और तेजपत्र प्रत्येकका चूर्ण एक एक तोला, मधु एक पाय और घी एक पाय, सबको एकत्र पीस कर एक एक तोलेका इकोम खुगक बनाये। प्रतिदिन एक एक खुगक खानेमे सब प्रकारके फिरङ्गुरोग नष्ट होते हैं। इन इकोम दिनों तब नमकका बिलघुत्र व्यवहार न करे। फिरङ्गुरोगमें चित्ती प्रकारकी औषधोंका व्यवहार बतलाया गया है, उनमेंमे पारद ही प्रधान है। (भाप्रशय)

फिरङ्गुरोटी (स० खो०) फिरङ्गुरिया रोटी, फिरङ्गाणा रोटीति वा। रोटिकाग्रिये, पायरोटी। यह रोटी फिरङ्गुरोटीको अतिशय प्रिय है अथवा फिरङ्गुरोटीमें ही गाम कर प्रस्तुत होता है, इसीसे इसको फिरङ्गुरोटी कहते हैं। पायराजेभ्यरमें इसकी प्रस्तुत प्रणाली इस प्रकार लिखी है—गङ्गुके चूर्णमें ताल या मज्जरा रस और मीक या पानी डाल कर उसे कुछ समय तक गुंधते हैं। पीछे मोटी मोटी लिट्टी बना कर तन्दूरपानमें पकाते हैं। इस प्रकार जो रोटी बनती है, उसीका नाम फिरङ्गुरोटी है। फिरङ्गुरोटी (स० खो०) फिरङ्गुरोटीप्रमाणतत्वेता स्वरया इति फिरङ्गुरोटी, डो०। फिरङ्गुरोटीप्रमाण नारी, मेम।

"गन्धरोग फिरङ्गुरोडय जायने देहिना धूष।

फिरङ्गुरोडतिम सर्गात् फिरङ्गुरोडया प्रसङ्गत ॥"

(भाप्रशय)

फिरङ्गुरो (दि० वि०) १ फिरङ्गुरोडमें उत्पन्न। २ फिरङ्गुरोडमें रहतीयात्रा, गोरा। ३ फिरङ्गुरोडमें। (खो०) ४ यूरोपदेशकी बनी तन्धार, बिलायती तन्धार। फिरङ्गुरोडु—दाक्षिणात्यके शृङ्गा जिल्लागत त एव प्राचीन नगर। यह गुण्टूरसे ६॥ फोस पश्चिममें अवस्थित है। निश्चयती कोण्डविष्ट पर्वतमाला पर एव प्राचीन दुर्ग देखीमें आता है। रोडोसद्वाराएक उक्त दुर्गका निर्माण कर गये हैं। पर्वतके नीचे बहुतमे प्राचीन हिन्दू देव मन्दिर और मसजिद विद्यमान हैं।

फिरङ्गीबाजार—डाका जिलेमे अन्तर्गत एव प्राचीन ग्राम। यह अक्षा० २३ ३३' उ० तथा देशा० ९० ३३' पू०के मध्य इच्छामती नदीकी एक शारा पर अवस्थित है। बङ्गुरोड माह्लाया शाके शासनकालमें १६६३ ई०की पुस्तिकाओंमें

पहले पहल यहा उपनिवेश बसाया। ये लोग पहले आरामनके धर्मोत सैनिकवृत्ति करते थे। मुगल सेनापति मुम्बैनगेने जब आरामनराजधानी चट्टामाममें घेरा डाला, तब ये लोग नीकरी छोड़ कर बङ्गाल भाग आये। फिर द्दियोंके यहा बस जानेके कारण इस स्थानना फिरदौ बाजार नाम पडा है। वाणिज्यकी उन्नतिके कारण एक समय यह नगर विशेष समृद्धिशाली हो उडा था। उस समय इसका आयतन भी छोटा नहीं था। ढाकाके वाणिज्यकी अन्नतिके साथ साथ यह स्थान भी श्रोहोन हो गया है।

फिरता ( हि० पु० ) १ रापसी। २ अस्मीकार। (वि०)  
३ रापस, लौटाया हुआ।

फिरदौसी—एक प्रसिद्ध महाकवि। इनका प्रकृत नाम अबुलकामीम हसन बिन शरफजाह था। गजनोके सुल्तान महमूदके आदेशसे 'शाहनामा' नामक फारसी ग्रन्थ लिख कर ये जगद्विख्यात हो गये हैं। शाह नामानी रचया किस प्रकार हुई और फिरदौसीने किस प्रकार प्रसिद्धि प्राप्त की, उसका विषय शाहनामाके मुख चपटमें इस प्रकार लिखा है—

पारस्यके शासनीय राजा यजदेजार्दने फैसूरयशसे मुमुसरो व जतीय राजाओंका विवरण सग्रह करके अपने उद्यम और तत्त्वावधानसे 'सियाउल्लु सुतक' या वास्तान नामा नामक एक इतिहास सङ्कलन कराया था। महमूद के शिष्योंने जब पारस्य राज्यकी विद्वलित करनेकी चेष्टा की, उस समय यजदेजार्दके पुस्तकागारमें यह ग्रन्थ पाया गया था। १०वो जताब्दीमें शासनर जतीय किसी राजाने नूकीकी नामक एक कविको उक्त महाग्रन्थका उद्धार करनेका भार सौंपा। किन्तु १००० श्लोक लिखने के बाद ही ये अपने टनदासके हाथके शिषार बने। इनके बाद किमीने भी उक्त ग्रन्थके उद्धारकी चेष्टा न की। आगिर सयोगवजन एक गण्ड वास्ताननामा गजनोपति सुल्तान महमूदके हाथ लगा। गजनीपतिने उस ग्रन्थसे ज्ञान विषय ले कर ज्ञात कवियोंके एक एक कविना ग्रन्थ लिखनेका हुषम दिया। उन कवियोंमेंसे कौन प्रधान हैं, इनकी परीक्षा करना ही सुल्तानका उद्देश्य था। उनमेंसे कवि अतमारिने पुस्तकार मिला।

और ये ही पहले पहल उस बृहत् ग्रन्थको कवितामें प्रथित करनेके लिये नियोजित हुए।

इस समय फिरदौसी अपनी जन्मभूमि तुप नगरमें कवितादेवीकी सेवा करके जयश्री और यशोलाम कर रहे थे। ये कवि दकीकीको चेष्टासे अच्छी तरह जान कार थे। सुल्तान महमूदका महदमिमाय भी उन्होंने सुना था। अभी सीमाग्र्यक्रमसे उन्हें एक वास्ताननामा हाथ लगा। यज्ञीर परिश्रम करके उन्होंने समस्त ग्रन्थ मली भाति समझ लिये। थोड़े ही दिनोंके अन्दर जुहाफ और फरिदून युद्धके आधार पर उन्होंने एक खण्डकाव्य निकाला जिसका आदर घर घर होने लगा।

उस खण्डकाव्यकी सुख्याति सुल्तान महमूदके कानों में पहुंची। उन्होंने फिरदौसीको बुलया भेजा। सुल्तान का आहापालन कर फिरदौसी गजनो पहुंचे। उनके शाय मनसे सुल्तानने अपनेको धन्य, हतार्थ और उनके पाद स्पर्शसे राजधानीको पवित्र हुआ समझा। कविको सम्भर्द ना किससे करेगे, वेसी उन्हें एक भी चीज न मिली। सुल्तानने कविवरको वास्तान नामाके आधार पर अपने पूर्वपुरुषोंकी अनुपम कीर्त्ति कवितामें लिखनेका आदेश किया और प्रति हजार स्वर्णमुद्रा देनेका वचन दिया। कविने भी कहा था, कि जब तक ये ग्रन्थको शेष न कर लेंगे तब तक पक्ष षीड़ी भी पहण न करेंगे।

तीस वर्षके परिश्रमके बाद ६०००० श्लोकोंमें उनकी शाहनामा सम्पूर्ण हुई। किन्तु इस समय सुल्तानका यह उत्साह, अनुराग और प्रतिभा कहा गई। पुस्तक सम्पूर्ण तो हो गई, पर सुल्तानने अपना वचन पूरा न किया, आठवां दे कर चिर निराशामें कविवरको बहा दिया। कविने सुल्तानके आचरण पर फटाहा करके मर्मभेदी आश्रोपमें ग्रन्थका उपसहार लिखा। सुल्तानने शाहनामा में अपने चरित्रकी समालोचना देग आगिर ६० हजार स्वर्णमुद्राके बदलेमें ६० हजार शीव्य दिखम भेज दिया। जिस समय उनका आदमी रूपके गठरी बाध कर फिर दौसीके यहां पहुंचा, उस समय ये श्रानागारमें थे। उन्होंने उस मुद्राको स्वयं प्रहण न किया, मोध और पूजासे अपने भृत्योंके बीच छिडक दिया। यज्ञीरके परामर्शसे सुल्तानने ऐसा काम किया है, जब यह उन्हें मालूम हुआ,

तब वजीरके उद्देश्यसे उन्हें निरपेक्ष विद्रोहप्रसन्न प्रथम लिप्य कर सुलतानके पास भेज दिया और आप मानन्दराज देगन्ने भाग गये। जाने समय उन्होंने यह भी कहा था, कि जब कभी सुलतानका मन किसी राजनीय ध्यापारसे निपीडित होये तब वे उस प्रथमका अग्रगण्य पाठ करे। पीछे वह प्रथम पढ़नेसे महामुदको मालूम हुआ, कि उन्होंने सद्दाके लिये अपना सम्पन्न रजो दिया है। वजीर को उन्होंने दरबारमें निकाल भगाया और फिरदीमीकी घोड़में आदमी भेजा। इधर फिरदीमी निरापद होनेके लिये योगदादकी सभामें उपस्थित हुए। यहा आ कर उन्होंने शाहनामाके शेषमें पलीफाके प्रगस्तिमूलक १००० श्लोक और जोड़ दिये। पलीफाने प्रसन्न हो कर उन्हें साठ हजार स्वर्णमुद्रा प्रदान की। इधर सुलतान महामुदने भी सम्मानसूचक परिच्छदके साथ प्रति धुआ ६० हजार स्वर्णमुद्रा भेज दीं। किन्तु वह कचिके निकट पहुंचनेके पहले ही वे इहलोकसे चल बसे थे। जन्मभूमि तुप (वर्तमान मसद) नगरमें ही १०२० ई०को ८६ वर्षकी अवस्थामें उनकी मृत्यु हुई। शाहनामाके अलावा उन्होंने 'अधियात् फिरदीमी' नामक एक और भी काव्य लिखा था।

फिरना ( हि० क्रि० ) १ विचरना, टहलना। २ चक्कर लगाना, बार बार फेरें खाना। ३ घमण करना, इधर उधर चरना। ४ प्रत्यावर्त्तित होना, पलटना। ५ मरोडा जाना, पेंटा जाना। ६ किसी ओर जाते हुए दूसरी ओर चल पड़ना, मुड़ना। ७ परिवर्त्तित होना, विपरीत होना। ८ लोप या पोत कर फिलाया जाना, चढाया जाना। ९ यहाँसे यहाँ तक स्पर्श करते हुए जाना, रखा जाना। १० वापस होना। ११ एक ही स्थान पर रह कर स्थिति बदलना, सामना दूसरी तरफ ही जाना। १२ बिरुद्ध हो पडना, लडने या मुझबला करनेके त्रिये तैयार हो जाना। १३ प्रतिष्ठा आदिसे विचलित होना, घात पर डूब न रहना। १४ मोपी उस्तुका किसी ओर मुड़ना, मुचना। १५ घोषित होना, चारों ओर प्रचारित होना।

फिरवा ( हि० पु० ) १ गलेमें पहननेका मोनेका एक आभूषण। २ मोनेकी अंगूठी जो तारकी बर्दे फेरें लपेट कर बनाई गई हो।

फिरवाना ( हि० क्रि० ) १ फेरनेका काम कराना। २ फिराने का काम कराना।

फिराक ( अ० पु० ) १ वियोग, विडोह। २ चिन्ता, खटका। ३ योज, रोह।

फिराना ( हि० क्रि० ) १ इधर उधर चलाना, पेना चराना कि कोई एक निश्चित दिशा न रहे। २ चक्कर देना, नचाना या परिक्रमण कराना। ३ एक ही स्थान पर रख कर स्थिति बदलना। ४ सैर कराना, टहलाना। ५ पेंडन, मरोडना। ६ किसी ओर जाते हुएको दूसरी ओर चला देना, घुमाना। ७ लौटाना, पलटाना। ८ परिवर्त्तन करना, बदला देना। ९ विचलित करना, घात पर डूब न रहने देना।

फिरार ( अ० पु० ) भागना, भाग जाना।  
फिरारी ( फा० वि० ) १ भागनेवाला, भगोड। २ पद अपराधी जो दण्ड पानेके भयसे भागता फिरता हो।

फिरिङ्गी—चट्टग्रामके खूबान अधिजासी पुर्तगीजके घना धर। ये लोग पुर्तगीज गौरवके समय धनशाली घणिक समझे जाते थे। घाणित्य और दुरुचुम्तिके लिये वे जहाज रखते थे। अमी चट्टग्राममें जो सब पुर्तगीज रहते हैं वे रोमन कीचलिक हैं। बहुतेरे जैती वारी करके अपना गुजारा चलाते हैं। पुर्तगीज और चट्टग्राम देखो।

इन लोगोंकी प्रवृत्ति अति जघन्य है। १६वीं शताब्दीके आरम्भमें ये क्रीतदासकन्या रखते थे। उन दासकन्याओंको उपपत्नीरूपमें भाड़े पर दे कर अर्ध सङ्घष करते थे। वर्तमान फिरिङ्गी ऐसी सस्कारीत्वपसिसे चिलबुल घञ्जित हैं। परिच्छदके सिवा इनके और कोई पैतृक अथलग्न्य नहीं है। वर्षों और बारतिसमें भी वे देशी लोगोंसे हैं। इनमें मम और मुसलमान रक्त मिला हुआ है। पत्नी या उपपत्नीजात दोनों ही प्रकारके पुत्रोंका पितृ नाम रखा जाता है। पहले इनका शक नाम और पदवी पुर्तगीजोंसी थी। अभी बहुतेरे भगैरों डाफनामका अनुकरण करना सीखा लिया है। उस देशके लोग इन्हे 'मिटेफिरिङ्गी' या 'काला फिरिङ्गी' कह कर पूजा करने हैं। विद्याशिष्टाके अभावसे ये लोग अभी अति हीन हो रहे हैं। बहुत दिनों तक देशीय सखतमें रहने तथा मावृपुत्र मय या मुसलमान होनेके कारण ये

तद्देशवासियों हिन्दू मुसलमान आदिके आचार व्यवहारका अनुकरण करने लगा गये हैं। इनका जिजाह घटनाकी तरह तृतीय ज्यनि द्वारा निपन्न होता है। ये लोग साधारणतः खोके प्रति निष्ठुर व्यवहार करते हैं।

२ दक्षिण भारतमें पुतागीचोंका प्रचलित शास्त्रविशेष। फिरिश्ता ( फा० पु० ) वैयदूत।

फिरिश्ता—जिज्यान्त मुसलमान ऐतिहासिक। इनका पूरा नाम था महम्मद रानिम हिन्दूशाह। फिरिश्ता इनकी उपाधि थी और इमी नामसे ये तमाम परिचित हैं। इनके पहले और फोई भी मुसलमान ऐसे विजयभावमें इतिहास सङ्कलन करनेमें समर्थ नहीं हुए हैं। काश्मिरयन सागरतीरवर्ती अफ़्ग़ानाद नगरमें इनका जन्म हुआ। इनके पिता गुलाम अली हिन्दूशाह एक विशेष शिक्षित व्यक्ति थे। किसी कारणसे वे अपने पुत्रको साथ ले जन्मभूमिका परित्याग कर भारतवर्ष जाये। यहा अहमदनगरके अधिपति मुस्ताजाने इन पर चडी एपा दरसाई और इन्हें अपने पुत्र मीरान हुसैनको पारसी भाषा सिखानके लिये नियुक्त किया। किन्तु उस राज प्रस्तावका ये अधिक दिन भोग करने न पाये। अकाल ही वे काल कालके गालमें पतित हुए।

फिरिश्ता अनाथ हो गये सही, पर स्वयं मुस्ताजा निजाम उनके प्रतिपालक हुए। निजाम गुलामके सङ्गण भूले नहीं थे। उन्होने एक दिन फिरिश्ताको राजसभा में बुलाया और वृत्ति प्रशस्त ( गुप्त ) मन्त्रिपद पर नियुक्त किया। इसके बाद फिरिश्ता राजसभो से तापति दलके अधिनायक हो गये। इस समय पूर्व राजाके अमात्य पर्यं विद्रोहियोंके हाथमें मारे गये, एक मात्र फिरिश्ताने ही युवराज मीरान हुसैनको आडमें अपनी प्राण रक्षा का। पिताको राज्यच्युत करके मीरान स्वयं गद्दी पर बैठे, पर ये अधिपति दिन तक राज्यभोग न कर सके। १५८८ ई०के राष्ट्रिययुद्धमें ये भी निष्ठुरभावमें निहत हुए। इस समय ५६६ मुनिपोक्री तूनी घोल्ती थी। फिरिश्ता मिया थे, इस कारण उन्ततिकी कोई आगा न देता ये कीजापुरको और भ्रमसर हुए।

१०८६ ई० में बीजापुर पहुँचने पर राजमन्त्री दिला घर एाने उताय स्येष्ट आदर किया और उन्हींके अनुग्रह

से ये बीजापुरराज इमातिम आदिलशाहके निकट परिचिन हुए। १०६२ ई०में अहमदनगरके युद्धमें इन्होंने बीजापुर की ओरसे सैन्य चालना की थी। उस युद्धन ये जामल नामे वाहत तीर चन्दी हुए। अगिर बीजापुर भाग कर उन्हींके आदमरणा की। इसके बाद इमाहिम शाहने इन्हें एक इतिहास लिखनेका अनु रोध किया और अन्यान्य लेखकोंकी तरह उन्हें भी आरोपित अश वाद दे कर प्रकृत घटनाका अलम्बन करनेका ह्युम मिला। १५६४ ई०में ये वेगम सुल्तानके जिजाहमें उपरिधत थे और उन्हे साथ ले कर सुल्ताना सुहानपुर अपने राजामोके घर आर्द। १५६६ ई०में उनका बीजापुर-राजइतिहास समाप्त हुआ। १६०० ई० में सम्राट अमर शाहकी मृत्यु पर शोक प्रकाश करने और सान्त्वना देनेके लिये बीजापुरराजने उन्हींके दिहो भेजा। १०६ ई०की लाहौरमें जहाङ्गारके साथ इनकी भेट हुई। छोटो समय ये बदनगान, रोहतम आदि स्थानोंमें परिभ्रमण कर अपने इतिहासके उपकरण सङ्ग्रह कर लिये। उन्हींकी मृत्यु कथ हुई, ठीक ठीक मादूम नहीं। पहले उन्हींके उस पुस्तकका गुलशन इ इमाहिमों का नीरमनामा नामसे प्रचार किया। जन्मधारणके निकट यह ग्रथ तारिख इ इमाहिमी जनागिर्य इ फिरिस्ता नामसे मजहूर है। पुस्तककी उपक्रमणिकामे उन्हींके हिन्दू और भारतमें मुसलमान आगमन लिपिवद्ध किया है। पीछे पचायक्रममे लाहौर, गजनी, दिल्ली और राशिणात्यके मुसलमानराजवज (कुल्जर्गा, बीजापुर, अहमदनगर, तैलङ्ग, वेराहर, विदार ) गुजरात, मन्तान, मालय, पान्देश, बङ्गाल और विहार, मन्तु और काश्मीर राजवशका इतिहास प्रकाशित किया तथा शेष दो भागों में उन्हींके मलवार और भारतीय साधुओंकी जीवनी लिखी है। उप न द्वार भागमें भारतवर्षका प्राटतिष और भौगोलिक विवरण लिपिवद्ध किया गया है।

फिरिश्ता ( हि० पु० ) पर प्रकाशक पत्नी। इसकी छाती लाल और पीठ काले रंगका हाती है।

फिरिश्ती ( हि० रंग० ) बघोंका एक तिनीता पिले फिरकी भी कहते हैं।

फिरोज—आगरा-वासियों एक विख्यात सुकी पण्डित। इन्होंने

१६२२ ई०में 'अकामद् सुफिया' नामक धारसी भाषामें ईश्वरानुग्रहके सम्बन्धमें एक पुस्तक लिखी है।

फिरोजपुर—पश्चिम प्रदेशके आन्तर्गत जालन्धर विभागका एक जिला। यह अक्षा० २६ ५०'से ३१ ६' पू० और देशा० ७३ ५२'से ७० २६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४३०२ वर्गमी० है। शतद्रु और तितस्ता नदी आपसमें मिल कर जिलेके मध्यमें बह गई है। इसके दक्षिण पश्चिम और दक्षिणमें बहावलपुर तथा बीकानेर राज्य और पूर्वमें लुधियाना जिला है।

जि०में जगह जगह अनेक अट्टारिकाओं और कुणों का भग्नावशेष देखनेमें आता है। इन सबसे प्रतीत होना है, कि एक समय इस जनहीन प्रदेशमें भी लोगों का अधिक सङ्घामें था। शुक्रप्राय मालके समीप बर्तौ ( अभी निम्ने जामानाशुन्य मरुभूमि कहनेमें भी कोई अस्त्युक्ति नहीं ) भूसारमें आग भी उस प्रकारके अनेक निदर्शन पाये जाते हैं। किम समय इस जन पक्षी मनुष्यिका एतन् एता था, उमका वार्दे निश्चय नहीं है। निम्नु आईन इ-अफगरी पढनेसे मालूम होना है, कि सम्राट् अफगणशाहके समय शतद्रु नदी फिरोजपुर नगरके पूर्व ओर बहती थी। नदीके गतिप्रचलनसे जला भाव होने तथा १६वीं शताब्दीके शेषमें घोरतर सुखके कारण यह स्थान जनशून्य हो गया है। प्राय दो शताब्दी तक यह स्थान मरुभूमि सा पडा रहा। पीछे दोस्रो जातीय सन्तान लोग भट्टियोंकी सद्देर कर पाक-पचनके निरन्तर बस गये। धीरे धीरे शतद्रु उपत्यका पार कर उन्होंने १७४० ई०में फिरोजपुर नगरमें ही सान धानी बसाई। इस प्रदेशमें काफी आमदनी न रहनेके कारण मुगल-सम्राट्ने इस पर इस्लामेग नदी किया। परन्तु शतद्रुके पश्चिमबर्तौ बसुर नगरमें उनका एक फौजदार था जो लडा जगलकी देण देण करता था। १७६३ ई०में सुपर सिंहके अधीन भद्रमिसनके निगोंने फिरोजपुर पर अधिकार किया। पीछे यह स्थान सुपरके अनोजे गुरुद्वस सिंहके हाथलगा। इस नवीन मरुदातने यहां एक दुर्ग बनवाया था। १७६८ ई०में उनके द्वितीय पुत्र धरमसिंह यहाके शासनकर्त्ता हुए। १८१८ ई०में उनकी मृत्यु होनेसे उनकी पत्नी राज्यकी

सब मयी कर्त्वीरुपमें राजकार्यकी पर्यालोचना करने लगी। रानोके परलोकागत होने पर वृष्टिश-सरकारने अपने हाथ फाय भार ग्रहण किया और मरु देनगी लारेन्स यहा रहने लगे।

१८४५ ई०का प्राम मिल-युद्ध ( यदनी, फिरोज शहर, अलिवाल और मोताउन नामक स्थानके कुछ युद्ध ) इन्हीं जिलेमें हुआ था। १८५७ ई०के गदरमें अगरेजोंको यहा भी अनेक कष्ट भुगतने पडे थे।

इस जि०में ८ शहर और ११०३ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या दस लाखके करीब है तिनमेंसे सैकडे पीछे ४७ मुसलमान, २६ हिन्दू और शेष २४ सिग हैं। यहा की भाषा पंजाबी है। गेहू, चना, जूहारी जिलेकी प्रधान उपज है। गेहू तथा धान बहुत कम उपजता है। जो सब अनाज यहा उपजता है उसकी रफतती लुधियाना, अमृतसर, बहावलपुर, लाहौर, जालंधर, हिमाचल, होजियार पुर आदि स्थानोंमें होती है तथा आमदनीमें चीनी, रई, शीशम, धातु, नील, तमाकू, नमक, धान और ममाला प्रधान है। फिरोजपुर शहर याणिज्यका एक प्रधान केन्द्र है। १७५६ ई० और १७८३ ४ ई०में यहा घोर अन्धाल पडा था। उस समय गेहू रूपमें सया सेर मिलता था। अन्धता इसके यहा और कई बार दुर्भाग्य का प्रकोप देगा गया है।

रिप्टी बन्कूर छह सहकारी कमिश्नर टाग शासन काय चलाते हैं। इसकी सुविधाके लिये जिला पाच तहसीलोंमें विभक्त है यथा - फिरोजपुर, जाग, मोगा, मुकासर और फाजिलका। एक एक तहसीलदार और नायब तहसीलदारके अधीन है। इस प्रदेशके अठारह जिलोंमेंसे फिरोजपुर निम्न विधानसभामें चौवहमा है। सैकडे पीछे ४ मनुष्य लिख पढ सकते हैं। अभी जि० भरमें १० सैकण्टी, २०० प्राइमरी, १०० एलिमेण्ट्री स्कूल और एक पब्लिक प्रोविड्युलर हाइ स्कूल है जिसका सर्व स्तुनिमपण्डितरी ओरसे दिया जाता है। अन्धता इसके दो और अग्राम साहाय्य हाइ स्कूल हैं, एक हर भगवान दास मेमोरियल हाइ स्कूल फिरोजपुर शहरमें और दूसरा 'देवधाम हाइ-स्कूल' मोगामें। स्कूलके अन्धता यहा मरुकाय अस्पताल भी है।



२ उक्त जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३० ४४' से ३१ ७' ३०" और देशा० ७४ २५' से ७४ ५७' ५०" के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४८६ वर्गमील और जनसंख्या प्राय १६५८७१ है। इसके उत्तर पश्चिममें जन्तु नदी बहती है जो तहसीलके लाहौर जिलेसे पृथक् करती है, इसमें फिरोजपुर और मुदकी नामके २ शहर और ३२० ग्राम लगते हैं। आर दो लाखसे ऊपर है। युद्धस्थान फिरोजशाह इसी तहसीलके अन्तर्गत है।

३ उक्त तहसीलका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० ३०' ५४' ३०" और देशा० ७४ ३७' ५०" जन्तुके पुरातन किनारे अवस्थित है। यह देल्हाडीके द्वारा बम्बईसे १०८०, कराचीसे ७८८ और कलकत्तेसे ११६४ मील दूर पड़ता है। जनसंख्या पचास हजारके लगभग है। मुसलमान और हिन्दूकी संख्या करीब करीब बराबर है। लोगोंका विश्वास है, कि दिल्लीश्वर फिरोजशाहने (१३५१ १३५७) इस नगरकी बसाया। सरदार लक्ष्मणकुंवर की मृत्युके बाद बृटिश गवर्नमेंटने इसे १३२५ ई०में अपने साम्राज्य मुक्त किया। अंगरेजोंके हाथ आनेसे अर्थात् १८३५ ५१ ई०के मध्य व्यवसाय वाणिज्यमें यह शहर विशेष समृद्धिवाली हो उठा था। १८४५ ४६ ई०में जन्तु-युद्धमें जो अंगरेजी सेना मारी गई थी, उनकी स्मृतिमें एक गिरजा बनाया गया था जिसे गद्दरके समय उदत्त सिपाहो ढलने तहस नहस कर डाला।

नगरमें एक दोस दक्षिण सेना निवास है। इसके अर्सेन्ल या अस्त्रागारमें प्रचुर युद्धोपकरण रचे हुए हैं। पञ्जाब भरमें पेसा और कहीं भी नहीं है। १८६७ ई०में म्युनिस्पैलिटी स्थापित हुई है। शहरमें दो बड़े-ठो घाँ बसुपुर हाई-स्कूल, एक पञ्जो-धर्नापुलर मिडिल स्कूल और एक सरकारी अस्पताल है।

फिरोजपुर—पञ्जाबके मुकगाँव जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २७ २६' से २० १३' ३०" और देशा० ७६ ५३' से ७७ २०' ५०" के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या डेढ़ लाखके करीब है। इसमें १ शहर और २३० ग्राम लगते हैं। भूपरिमाण ३१७ वर्गमील है।

२ उक्त मुकगाँव जिलेका प्रधान नगर और फिरोजपुर तहसीलका सदर। इसका दूसरा नाम फिरोजपुर

फिरका भी है। यह अक्षा० २७ ४६' ३०" ३०" और देशा० ७६ ५६' ३०" ५०" के मध्य अवस्थित है। सम्राट फिरोजशाहने निकटपूर्वों पार्वतीय जातिका दमन करनेके लिये इस नगरको दुर्गसे सुदृढ़ित कर दिया था। १८०३ ई०में अंगरेजराजने इस स्थाको हस्तगत कर भद्रमद बयस चौकी जामीर स्वरूप प्रदान किया। उनके पुत्र नवाब साम्बुदौदन गौ दिल्लीके कमिश्नर फ़ौज साहबकी हत्याके अपराधमें १८३६ ई०को अंगरेजोंसे मार डाले गये। तभीसे यह नगर उक्त तहसीलका सदर चला आ रहा है।

फिरोजमुहल्ला—बम्बईवासी बंदोमी पारसियोंका प्रधान धर्म याजक। ये काउम्बके पुत्र थे। इन्होंने पुर्नगोज आग मनसे ले कर १८१७ ई०में अंगरेजी अधिकार पर्यन्त समस्त घटनाओंका उल्लेख कर 'जाज' नामा' नामक एक ग्रन्थकी रचना की।

फिरोजशाह—दिल्लीश्वर सलीमशाह सुूरके एकलौते। पिताकी मृत्युके बाद वारह वर्षके बालक दिल्लीके मिहामा पर बैठे। किन्तु तीन मास भी राज्य करने न पाया था, कि उनके मामा मुबारिक गाने बड़ी निष्ठुरतासे उनकी हत्या ( १५५४ ई०में ) की और स्वयं मुहम्मदशाह आदिल नाम धारण कर दिल्लीकी मसनद पर बैठे।

फिरोजशाह—पञ्जाबके फिरोजाबाद तहसील और जिलेका एक प्रसिद्ध युद्धस्थल। मिल् युद्धके लिये यह स्थान बहुत महत्त्व है। १८४५ ई०के दिसम्बर मासमें सर हा गुरु और हेनरी हार्डिजो सिपसैनाओं पर धावमण किया। दो दिन भीषण युद्धके बाद मिल् लोग भाग जानेको पाध्य हुए। युद्धके समय सिखोंने जो दुर्ग बना बनावी थी, उसका बलबुल लोप हो गया। पेरल मृत सेनापतियोंकी स्मृतिके लिये जो स्लम्स गडडा किया या था, वही विद्यमान है। इस स्थानका भाद्रि नाम फदरगशहर है। ऐतिहासिक घटनाके लिये इसका फिरोजशाह नाम पड़ा है।

फिरोजशाह—दिल्लीके शेर मुगलसम्राट् ७५ बहादुरशाहके पुत्र। १८५७ ई०के गद्दरमें उन्होंने असीम उम्माहने विद्रोहीदलका नेतृत्व किया था। युद्धके बाद अंगरेजोंके भयसे ये अरबदेश जान ले कर भागे। यहाँ

मिश्राजुक्ति ढाग उहो ने जीवनयापन किया था । फिरोजशाह पूरवी—एक हवामी सरदार । इसका पहला नाम मालिक था—दि १४६१ ई०में योजा मुल्तान शाहजादाको मार कर ये फिरोज नामसे बङ्गालके सिंहासन पर बैठे । इन्होंने पुत्रकी तरह हिन्दू मुसलमान प्रजा मातका ही पालन किया था । गौडनगर (लम्पणाजती) का पुन मरफार उनकी एक गौरव कीर्ति है । १४६४ ई०में उनकी मृत्यु हुई ।

फिरोजशाह बाल्खनी सुतान—दाक्षिणात्यके एक मुसलमान राजा, सुतान दाऊदके पुत्र । बाल्खनीगज सुताना समसुद्दोहनको राज्यव्युत् और फारायद करके ये १३६७ ई०में सुतान फिरोजशाह रोज्जफज्जुन नाम धारण कर सिंहासन पर अधिरूढ हुए । इनके प्रभावसे बाल्खनी राजवन् उन्नतिकी चरम सीमा तक पहुच गया था । सिंहासन पर बैठते ही इन्होंने अपने भाई अहमद खाँको ( खानखाना ) अमीर-उल उमरावके पद पर नियुक्त किया और निज उपदेश-दाता मीर फैजुल्लाको 'मालिक नायब' उपाधिसे भूषित कर यजोर उस सुल्तानतका कार्यभार सौंपा । अपने भाई अहमदको बाल्खनी सिंहासन देनेके १० दिन बाद ही १४२२ ई०में ये मृत्यु मुगमें पतित हुए ।

फिरोजशाह तुगलक सुतान—दिल्लीके पठाणशाय अधिपति । सुल्तान गयासुद्दीन तुगलकके भाई सिपासलारक औरस और दिवालयपुरपति रणमहभट्टिनी कन्या ( सुताना बवी कदवान् ) के गर्भसे ७०६ हिजरीमें इनका जन्म हुआ था । ७ वर्षकी अवस्थामें इनके पिताकी मृत्यु हुई । अनाथा राजकन्याको अपने एकमात्र पुत्रको पदानेकी बड़ी फिकर हुई । तुगलकशाहकी बालक पर बड़ा तत्पन आया और ये निज पुत्रवन् उसका लालन पालन करने लगे । तुगलककी एपाले उन्हींने राजकीय सभी शिक्षा पा ली । १४ वर्षकी उमरमें ये उन्हींके अनुग्रहसे ४ वर्षतक राज्यके समस्त स्थानोंमें परिभ्रमण करते रहे । जब ये १८ वर्षके हुए, तब महम्मदशाह दिल्लीके सिंहासन पर बैठे । दो राजाका राज्यशासन देण कर उन्हे बहुत कुछ ज्ञान हो गया था । महम्मदने उन्हे १२ हजार अरपाटोही सेनाका अध्यक्ष और नायब अमीर दक्षिण ( Deputy of the Lord Chamberlain )को

उपाधि दी । फिरोज राजकायमें उन्हे हमेशा सल्लाह दिया करते थे । महम्मदने दिल्ली प्रदेशको चार भागोंमें विभक्त कर एक भागका शासन मार फिरोजशाहके ऊपर सौंपा था । महम्मदशाहके अधीन राजकीय शिक्षामें इनमें ४५ वर्ष बीत गये ।

१३५१ ई०को उट्टनगरमें महम्मदकी मृत्यु हुई । राज अमात्यों और फर्मचारियोंके अनुरोध तथा सम्मतिसे फिरोज ही राजा बनाये गये । किन्तु पीछे राजकीय परिचालनमें कोई त्रुटि न हो जाय, इसकी उन्हे भारी चिन्ता हुई । ईश्वरमें उनकी अजला भक्ति थी । उन्ही धर्मके बलसे ये भविष्यमें दया और दाक्षिण्यके साथ प्रजापालन करनेमें समर्थ हुए थे । महम्मदकी मृत्युके लिये परिभृत शोक परिच्छदके ऊपर ही उन्हे राज परिच्छद धारण करना पडा, क्योंकि ये किसी हालत से शोक परिच्छद त्याग करनेमें राजी न हुए । हाथीकी पीठ पर सवार हो ये राजान्त पुरमें गये और गोदावन् जादा महम्मदकी बहन ) के सामने जा कर शोकान्निभूत हो पडे । उस रमणीने उनके सरल स्वभाव पर मोहित हो अपने हाथसे सुतान तुगलकका मुकुट उन्हे पहना दिया ।

महम्मदके मृत्युकालमें मुगलोंने भारत पर आक्रमण किया और इसे लूटा भी था । बिना राजाके राज्य रक्षा करना दुरुह समझ कर उमरावोंने फिरोजशाहको राज सिंहासन प्रदान किया । मुगल लोग फिरोजके हाथसे पराजित हो नौ दो ग्यारह हुए । इस समय दिल्लीमें भूडों खबर फैला, कि फिरोजशाह मुगलसे बन्दी और हत हुए । सुतरां दुःखसे अग्निभूत हो राजानहानने महम्मदके पुत्रको राजसिंहासन पर बिठाया । जब उन्हीं सुना, कि फिरोज जीवित है, तब ये इस विषय भ्रमकी चिन्ता करने लगे । उनका यह भ्रम दूसरा ज्ञायद ही समझेगा, यह सोच कर उन्हीं आत्मरक्षाके लिये २० हजार भ्रम्या रोहो संग्रह किया ; फिरोज यह स्याद पान ही दिल्लीकी दौड पडे । पीछे कुल रहस्य मालूम हो जाने पर एक दूरसे गले मिले ।

राजपद पर अधिष्ठित हो फिरोजशाहने बहुतसे नये नये कानून निकाले । इससे प्रजायुग का कुछ बहुत कुछ

जाना रहा। पूरबी राजाओंकी तरह ये अथवा कर उम्मीद नहीं करते थे। उन्होंने नियम चलाया, कि जो मिन ने अधिकार समूह करेगा उसे उचित दण्ड मिलेगा और सनाके आवश्यककिय सभी द्रव्य उपयुक्त मृगमें गरीदा जायगा।

उन्होंने दलबलके साथ लक्ष्मणावती, जाजनगर और नगरकोटकी ओर अभियान किया। बहूपति ग्रामसुद्दीन उनसे पराजित हुए। पीछे लापरसे ऊपर बहूवासी इस युद्धमें मरे रहे। उन्होंने दो बार बहूमें और कई बार मिन्यु, मुजरत, कागडा आदि प्रदेशोंमें युद्ध किया था।

१३८७ ई०में उन्होंने अपने पुत्र नासिरउद्दीन महम्मद को सिंहासना दे कर फुरमत पाई। किन्तु युवराजका राज-कार्यमें जरा भी ध्यान न था। रात दिन वे आमीद प्रमोदमें मत्त रहते थे, इस कारण वे पुत्र राज्य परिचालन भार ग्रहण करनेको बाध्य हुए। युवराजने विताडित हो कर शिरपुरके पार्लय प्रदेशमें जा आश्रय लिया।

फिरोजको बाई हुई अनेक अट्टालिकार्य, नहरें और दुर्गादि आज भी देगनेमें आते हैं। बहुत दिन सुशासन से राज्य करके वे ७६० हिजरीमें (१३८८ ई०में) परलोक स्थितार गये। पुरानो दिल्लीके समीप यमुनाके किनारे उनके बनाये हुए 'होज धाममें' उनकी समाधि हुई। मृत्युके बाद पीछ गयामुद्दीन राज-निहासन पर बैठे। उनके समय लक्ष्मणावती, पाण्डुआ (फिरोजबाद), सोनाग गाँव आदि स्थानोंमें एकसाल बोलो गई। उन्होंने स्वयं जो सब युद्ध किये थे, उन्हें वे स्मरचित 'फतुहत फिरोज शाही' नामक ग्रन्थमें लिख गये हैं। (१)

फिरोजशाह सुलतान—मिर्जा य शोध प्रथम दिल्लीश्वर कायेम मारिके पुत्र। ये सुलतान मुह मुद्दीन कीसोबादकी हत्या कर ६८८ हिजरी (१३८२ ई० में) में दिल्लीके सिंहासन पर बैठे। इनका दूसरा नाम जलालउद्दीन था। इनके शासनकालके आठवें वर्ष इलाहाबादके शासनकर्ता उनके भर्तों और जमाई अजाउद्दीन बारां हो गये। फिरोजने उन्हें शांति देनेके लिये फडा प्राणिकपुरकी

ओर यात्रा कर दी। अलाउद्दीन दलबल समेत गंगाके दूसरे किनारे भाग गये और यहाँ छावनी डाली। फिरोज शाहके उपस्थित होने पर वे अपने अनुगणोंके साथ नदीके किनारे आये और चचाके पैरों पर गिर कर क्षमा प्रार्थना की। फिरोजजाहको बड़ी दया आई, उन्होंने अपराध क्षमा कर उन्हें प्रेम पूर्वक आलिङ्गन किया। इसी समय इशारा पा कर अलाउद्दीनके अनुचर जो कुछ दूर ही राडे थे आये और दिल्लीश्वरके प्राण ले लिये। अलाउद्दीन चचाके छिन्न मुण्डकी घरछेमें गांध कर नगर ले गये। १७२६ ई०में यह घटना घटी। इसके बाद अलाउद्दीन दिल्ली गये और सिकन्दर सनो नाम धारण कर निहासन पर अधिरुढ हुए। चित्तारावादसे ले कर मरिचक पर्यन्त एक विस्तृत नहर उन्होंनेके यत्नसे लोदीयाह गई थी।

फिरोजबाद—१ युन प्रदेशके आगरा जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २६ ५६' से २७ २२' उ० और देशा० ७८ १६' से ७८ ३२' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २०३ वर्गमील और जनसंख्या लागसे ऊपर है। इसमें फिरोजबाद नामका १ शहर और १८६ ग्राम लगेते हैं। राजस्य तीन लाख रुपयेके लगभग है। तहसील यमुनाके उत्तर पडती है।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २७ ६' उ० और देशा० ७८ २३' पू० आगरासे मैनीपुर जानेके रास्ते पर अवस्थित है। जनसंख्या प्राय १६८४६ है। यह शहर बहुत प्राचीन है। कहते हैं, कि यहाके अधिवासियोंने टोडरमलका भारी अपमान किया था। इन पर अकबर बड़े विगडे और उन्होंने मालिका फिरोजकी नगर ध्वंस करनेका हुकुम दिया। अग्रा पाते ही फिरोजने नगरकी घेमा उजाह डाला कि आज तक यह सुधारने नहीं पाया है। यहा बहो बडो अट्टालिकाओंका व्यवसायशेध देगनेमें आता है। यही इसके पूर्व शीत्यका निर्द्वान्मरुहप है। चिचिन्माल्यके अग्राया शहरमें एक पुरानो मन्दिद और अनेक मन्दिर हैं।

फिरोजबाद—अयोध्याप्रदेशके मेरी जिलान्त एक परगना। यह चीन्हा, कौरियाला और शहरार इन तीन नदियोंसे घिरा सम्राट है। फिरोजशाह यहा प्रायः

(१) ता० १८६० ई० फिरोजशाही नामक इतिहास ग्रन्थमें विस्तृत विवरण दिया है।

जिकारमें आया करते थे। इसी कारण उन्हींके नाम पर इसका नामकरण हुआ है। पहले यह विसन जातिके अधिकारमें था। पीछे ज श्रीगणने उपयुं परि युद्धके बाद उन्हें मार भगाया। १७७६ ई०में ज प्रौरानके पराजित और मृत होने पर उनका राज्य छीन लिया गया। १७६२ ई०में भरण घोषणके लिये उनके घरखरने निकर ग्राम पाये। यहो अभी ईजानगर सामन्त राज्य कहलाता है। इसके उत्तर राइरुयाड सामान्तराज्य पडता है।

फिको ( हि० पु० ) फि० देसो।

फिलौर—पञ्जाब प्रदेशके जालन्धर जिलेकी तहसील। यह अक्षा० ३०°५७' से ३१° १३' उ० और देशा० ७५ ३१' से ७५ ५०' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २६१ वर्ग मील और जनसंख्या दो लाखके करीब है। इसमें फिलौर, नूरमहल और जनदियाठ नामके ३ शहर और २२२ ग्राम लगते हैं। शतद्रु नदी तहसीलकी उत्तरी सीमामें बहती है।

२ उक्त तहसीलका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० ३१° १' उ० और देशा० ७५ ४८' पू० शतद्रु नदीके उत्तरी किनारे अवस्थित है। जनसंख्या प्राय ६६८६ है। पहले यह नगर समृद्धिसम्पन्न था। आईन-इ अकबरी पढ़नेसे मालूम होता है, कि धैराम खानि इसके निम्नवर्ती स्थानमें युद्ध किया था। इसके बाद यह नगर ध्वसाव शेषमें परिणत हुआ। सम्राट् शाहजहानने दिल्लीमें लाहौर जानेके समय यहाके ध्वसावशेषसे एक विभ्राम भवन ( सराय ) बनाना चाहा। फमज उन्हींके उद्यमने नगरकी श्रेयुद्धि हुई थी। सिव प्रभावकालमें यह नगर सुर्पासिंहके हाथ लगा। उन्हीने यहा राजधानी बनाई। १८०७ ई०में रणजितने इस स्थान पर अधिकार जमाया। उक्त महावीरने शतद्रुमुखाकी रक्षा करनेके लिये उस सरायको दुर्गरूपमें परिवर्तित किया। अङ्गरेजोंके अधि कारमें आनेसे यहा फमान, गोला, बारूद आदि रफी जाने लगे। १८५७ ई०के गदरमें विद्रोहियोंने इस पर अधिकार किया था। १८६१ ई०में यहा एक किला बनाया गया जिसमें अभी पुलिस ट्रेनिंग स्कूल लगना है। १८६७ ई०में म्युनिस्पलिटो स्थापित हुई। शहरमें एक म्युनिसिपल पब्लिकवर्नाकुलर मिडिल स्कूल और एक सरकारी अस्पताल है।

फिल्ली ( हि० खी० ) १ लोहेकी छडका एक टुकडा जो जु गहोंके कर्धमें तूरमें लगाया जाता है। २। ३। देगो।  
फिश् ( हि० अव्य० ) घृणासूत्रक अव्यय, धिक्, फिट्।  
फिम ( हि० वि० ) फुट नहों। जब कोई आदमी घटे टाटवाटने कोई काम करने चरता है और उसमें नहों हो सकता तब तिरस्कार रूपमें यह शब्द कडा जाता है।  
फिसतू ( हि० वि० ) १ जो काममें पीछे रहे, जो किन्मी यातमें बट न सके। २ जो काम हाथमें ले कर उसे पूरा न कर सके, जिसका कुछ किया न हो।

फिसफिमाना ( हि० कि० ) १ फिस होना। २ निधिल होना, डीला पडना।

फिसलन ( हि० खी० ) १ फिमलनेकी क्रिया या भाव, स्पटन। २ चिक्ती जगह जहा पढ़नेसे कोई वस्तु न बहरे, सरक जाय।

फिसलना ( हि० कि० ) १ चिक्ताहट और गोलेपनके कारण पैर आदिका न जमना। २ प्रवृत्त होना, भुक्ता।  
फिसलाता ( हि० कि० ) किसीको ऐसा करना कि वह फिसल जाय।

फिहरिस्त ( फा० खी० ) सूची, बीजय।  
फो ( अ० अव्य० ) प्रति एक, हर एक।  
फोका ( हि० वि० ) १ नीरस, स्वादहीन। २ जो चटनेका न हो, मलिन। ३ प्रभावहीन, व्यर्थ। ४ कान्तिहीन, बिना तेजका।

फोता ( हि० पु० ) १ नेवारकी पतली धन्नी, सूत आदि जो किन्मी वस्तुको लपेटने या बाधनेके काममें आता है। २ पतला किनारा या फोर।

फोफतो ( हि० खी० ) पेशी देखो।

फोरनो ( फा० खी० ) एक प्रकारकी घोर जो दूधमें चायउ का बारीक आटा पका कर बनाई जाती है। इने मुसलमान अधिन पाते हैं।

फोरोजा ( फा० पु० ) एक प्रकारका नग या घटमूय पत्थर। यह हरापन लिये पीने रगका होता है। इसमें अल्मोनियम फामफेट और कुछ लोहे तथा तामिस भाग रहता है। उरट्ट फोरोजा फामफको पहाटियों पाया जाता है। यहासे पढ़ने यह क्रम और तद यूरोप आता है। अमेरिकासे भी फोरोजा बहुत आता है। उसकी

जाना रहा। पुर्यपत्तों राजाओंकी तरह ये अथवा कर यन्त्र नए करने थे। उन्होंने नियम चलाया, कि जो मित्राने भ्रिग्न कर वसूल करेगा उसे उचित लूट मिलेगा और राजाने आनन्दपूर्ण सभी द्रव्य उपयुक्त मूल्योंमें गरीदा जायगा।

उन्होंने दलबलके साथ लम्बणावती, जाजनगर और नगरकोटको शेर अभियाग किया। बहूपति ग्राममुद्दीन उतने पराजित हुए। पीछे लागसे ऊपर बङ्गचामो इस युद्धमें गेन रहे। उन्होंने दो बार बङ्गमें और कई बार मिन्यु, गुजरात, कागजा आदि प्रदेशोंमें युद्ध किया था।

१३८७ ई०में उन्होंने अपने पुत्र नामिरउद्दीन महम्मद को सिंहासन दे कर कुर्रतत पाई। किन्तु गुजरातका राज-कार्यमें जरा भी ध्यान न था। रात दिन वे आमोद प्रमोदमें मत्त रहते थे, इस कारण वे पुन राज्य परिचालन भाग ग्रहण करनेमें बाध्य हुए। गुजरातने विताडित हो कर निरमुरके पारस्य प्रदेशमें जा आश्रय लिया।

फिरोजकी बाईं हूड अनेक अट्टालिकार्य, नहरें और दुर्गादि धाज भी देनेमें आते हैं। बहुत दिन सुशासन से राज्य करके वे ७६० हिजरीमें (१३८८ ई०में) परलीफ सिंधार गये। पुत्राने दिल्लीके समीप यमुनाके किनारे उनके बगैचे हुए 'हॉन गार्समें' उनकी समाधि हुई। मृत्युके बाद पीव गयामुद्दीन राज-सिंहासन पर बैठे। उनके समय लम्बणावती, पाण्डुआ (फिरोजाबाद), सोनाग-गाँव आदि स्थानोंमें टकमाल खोली गई। उन्होंने खय जो सब मुन किये थे, उन्हें वे खरचित 'फतुहत फिरोज शाही' नामक प्रथममें लिख गये हैं। (१)

फिरोजशाह सुल्तान—मिलित्री पंशीय प्रथम दिल्लीपर कायेम गये पुत्र। वे सुल्तान मुद्दुद्दीन फैकीबादकी हत्या कर ६८८ हिजरी (१३८९ ई० में) में दिल्लीके सिंहासन पर बैठे। इसका दूसरा नाम जलालउद्दीन था। इनके शासनकालके आठवे वर्ष इल्हाबादके शासनकर्ता उनके भतीजे और जमाद अशाउद्दीन बामो हो गये। फिरोजने उन्हें शान्ति देनेके लिये फडा माणिकपुरवती

और यात्रा कर दी। अलाउद्दीन दलबल समेत गगारे दूसरे किनारे भाग गये और वहाँ छावनी डाली। फिरोज शाहके उपस्थित होने पर वे अपने अनुचरोंके साथ नदीके किनारे आये और चत्वारों पैतों पर गिर कर सना प्रार्थना की। फिरोजशाहको बड़ी दया आई, उन्होंने अपराध क्षमा कर उन्हें प्रेम पूर्वक आश्रित किया। इसी समय इशाग पा कर अलाउद्दीनके अनुचर जो कुछ दूर ही गडे थे आये और दिल्लीपरके प्राण ले लिये। अलाउद्दीन चत्वारि छिन्न मुण्डकी दरछेमें गाथ कर ले गये। १७२६ ई०में यह घटना घटी। इसके बाद उद्दीन दिल्ली गये और सिफन्दर सनी नाम धर्म सिंहासन पर अधिकृत हुए। विजिरायादसे ते हीन पर्यन्त एक विस्तृत नहर उन्होंने यत्ना गई थी।

फिरोजाबाद—१ युक्तप्रदेशके आगरा जिले

यह अक्षा० २६ ५६' से २७ २२' उ० और

७८ ३२' पू०के मध्य अवस्थित है।

वर्गमील और जनसंख्या लागसे अण

बाद नामका १ शहर और १८६ प्रा

तीन लाग दसपेके लगभग है।

पडती है।

२ उक्त तहसीलका एक

उ० और देश० ७८ २३' पू

रास्ते पर अवस्थित है।

यह शहर बहुत प्राचीन

वासियोंने टोडरमलक

अकबर बडे विगडे

नगर धरम करने

नगरको पेसा उर

नहीं पाया है।

देखनेमें आता

है। चिकित्सा

और अन्य

फिरोजाबा

परा

मि

(१) भारत-फिरोजशाह नामक इतिहास ग्रन्थमें विवरण दिया है।

फुटकी ( हि० स्त्री० ) १ पर प्रकारकी छोटी चिट्ठिया, फुलकी । २ किसी वस्तुके छोटे लखे या जमे हुए कण जा पानी, दूध आदिमें अलग अलग दिगई पड़ते हैं, बहुत छोटी बटी । ३ गून, पीष आदिवा छोट्टा जो किसी वस्तुमें दिगई दे ।

फुटनोट ( अ० स्त्री० ) वह टिप्पणी जो किसी लेख या पुस्तकके पृष्ठमें नीचेकी ओर दी जाती है ।

फुटपाथ ( अ० पु० ) १ पगइडी । २ गहरोंमें सड़ककी पट्टी परका वह मार्ग जिस पर मनुष्य पैदल चलते हैं ।

फुटवाल ( अ० पु० ) बडा गेद जिसे पैरकी ठोकसे उछाल कर फैलते हैं ।

फुटेहरा ( हि० पु० ) १ मटर या चनेका दाना जो भूतनेसे ऐसा पिल गया हो, कि छिलका फट गया हो । २ चनेका भुना हुआ चबन ।

फुट्टेला ( हि० वि० ) फुट देवो ।

फुट्ट ( हि० वि० ) फुट देपो ।

फुट्टक ( सं० स्त्री० ) यक्षत्रिशेष ।

फुट्टैल ( हि० वि० ) १ भुण्ड या समूहसे अलग, अकेला रहनेवाला । २ जिसका जोड़ न हो, जो जोड़ेसे अलग हो । ३ अभागा, फूटे भाग्यका ।

फुन् ( सं० अज्य ) १ अनुकरण शब्द । २ तुच्छ भाषण ।

फुन्कर ( सं० पु० ) फुदित्यव्यक्तशब्द करोतीति वृट् । अग्नि ।

फुत्कार ( सं० पु० ) वृ भावे घञ्, फुन् इत्यन्यत्तशब्दस्य परणं । मुहसे हवा छोड़नेका शब्द, फूफ । होमाग्नि यदि बुझ जाय, तो उसे फुत्कार द्वारा बाल कर पुन होम नहीं करना चाहिये । ( तिथिवाक्य )

फुत्कामि ( सं० स्त्री० ) फुदित्यव्यक्तशब्दस्य इतिः कर० । फुत्कार ।

फुत्तना ( हि० स्त्री० ) १ उछल उछल कर फूटना । २ उमगमें भाग, फुटने न समाना ।

फुत्तरी ( हि० स्त्री० ) १ छोटी चिट्ठिया जो उछल उछल कर फूटती हुई चरती है ।

फुत्ताग ( हि० स्त्री० ) फुत्त या गारावाका अग्र भाग या अग्र ।

फुत्त ( हि० अज्य० ) फुत्त, फिर्त ।

फुत्तगी ( हि० स्त्री० ) घृष और घृत्तको गारावाका अग्र भाग, फुत्तग ।

फुत्तना ( हि० पु० ) फूटना देवो ।

फुत्तुस ( सं० पु० ) फोफुरियोस, फेफडा । हृदयके वाम पाथमें फुत्तुस अवस्थित है । इसका दूसरा नाम फुत्त फुरट भी है । सुश्रुतमें लिखा है, कि शीत और कफके मेलसे हृदय उत्पन्न होता है । उसी हृदयमें प्राणवाहिनी सभी घमनिया आश्रय की हुई है । हृदयके अग्रभागमें बाद और शोहा और फुत्तुस तथा वाहिनी और यष्टु और फोम है । ( सुश्रुत शशा० १५० ४ ५० ) शार्ङ्गधरने लिखा है, कि फुत्तुस उदान वायुका आधार है और हृदयके बाई ओर रहता है । ( शार्ङ्गधर ५ अ० )

फुत्तदी ( हि० स्त्री० ) लहगेके इजाब द या त्रिषीकी साडी बसनेकी डोरीकी गाठ यह गाठ फर पर सामने की ओर रहती है और इसके नीचेसे लह गा या धोती खुल जाती है । इसे नीधी भी कहते हैं ।

फुत्तकाना ( हि० स्त्री० ) फुत्तकाना ।

फुत्तकार ( हि० पु० ) फुत्तकार, सापके मुहमें निकली हुई हवाका शब्द ।

फुत्तकारना ( हि० वि० ) सांपका मुहमें फूफ निकालना, फुत्तकार करना ।

फुत्तनी ( हि० स्त्री० ) फुत्तनी देवो ।

फुत्तेरा ( हि० वि० ) फूफामें उत्पन्न ।

फुर ( हि० स्त्री० ) १ उड़नेमें परोंका शब्द, पर फडफडाकी आवाज । ( वि० ) २ मत्स्य, मत्था ।

फुरकना ( हि० स्त्री० ) जुलाहोंकी बोलोंमें किसी वस्तुको मुहमें चबा कर सासके जोरसे धूकना ।

फुरकाना ( हि० स्त्री० ) फुत्तना देवो ।

फुरती ( हि० स्त्री० ) शीतता, तेजी ।

फुरतीला ( हि० वि० ) निममें फुरती हो, जो सुम्न न हो ।

फुरता ( हि० स्त्री० ) स्फुटित होना, उद्व होना । १ फड फना, हिलना । ३ उधरित होना, मुहमें शब्द निकलना ।

४ प्रशानित होना, चमक उठना । ५ सफल होना, मोटा हुआ परिणाम उत्पन्न करना । ६ प्रमाथ उत्पन्न करना, अमर करना । ७ मत्स्य उड़ना, पूरा उतरना ।

फुरत ( हि० स्त्री० ) १ घट शब्द जो पर आदिनी रगड़ने

गिनती रत्नों में है। स्त्री इन्हे आम्रपुष्पों में जड़ने हैं। कम कामके पन्धर पत्रोकारों में भी काम आते हैं। वैद्यलोग इन्का ध्यप्रहार औषधके रूपमें भी करते हैं। यह कसैला, मोटा और दीपन कहा गया है।

फोनीनी (फा० दि०) फोमेलेके रंगका, हरापन लिये मोला। इस रगमें रगाते समय पहले कपड़ेकी सूतिये के पानीमें रगते हैं, फिर तृतिपेसे चाँगुना चूना मिले पानीमें उमने वोर देने हैं और तब पानीमें निधारते हैं।

१ प्रकार तीन बार करते हैं।

फोल (फा० पु०) हाथी।

फोल्लाना (फा० पु०) दुग्निजाला, हृदिसार।

फोल्लपा (फा० पु०) एक प्रकारका रोग इसमें पैर फूल कर हाथीके पैरकी तरह हो जाता है। यह रोग शरीरके दूसरे अंग पर भी आक्रमण करता है।

फोल्लपाया (फा० पु०) १ ईंटेका बना हुआ मोटा खमा जिस पर छत उढलाई जाती है। २ फीला देखो।

फोल्लयान (फा० पु०) हाथीघान।

फोनी (हि० खी०) घुटनेके नीचे पड़ी तकका भाग, पिङ्गनी।

फोड (अ० पु०) १ मैदान, रेत। २ मेढ़ गोलनेका मैदान।

फोम (अ० खी०) १ मूलक, घर। २ मेहनताना, उजरत।

फुक्का (हि० कि०) १ जलना, भस्म होना। २ मुँहकी एरा भर कर निबाला जाना। ३ नष्ट होना, बरबाद होना।

(पु०) ४ बाम, पीतल आदिकी नली। इसमें मुँहकी हवा भर कर भाग ७ छोड़ने हैं, फुँकनी। ५ प्राणियोंके शरीरका मूल रहनेका अवयव। यह पेटके पास होता है।

फुक्की (हि० खी०) १ बाम, पीतल आदिकी नली। इसमें मुँहकी हवा भर कर आगनी देहकानेके लिये उम पर छोड़ते हैं। २ भाषा।

फुक्कना (हि० कि०) फुत्कार छोड़ना, मुँहसे हवा छोड़ना।

फुँकना (हि० कि०) १ फुँकनेका काम किसी क्षमतेमें करना। २ मुँहमें हवाका भौंका निकलवाना। ३ भस्म करवाना, जलवाना।

फुक्का (हि० कि०) फुँकनेका काम करना।

फुँकार (हि० पु०) सोंप पैल आदिके मुँह या नाकके नथनोंसे बलपूर्वक वायुके बाहर निकलनेमें उत्पन्न शब्द, फुत्कार।

फुंदना (हि० पु०) १ फूलके आकारकी गाठ। घंट, इजार वद चौटी बाधो या धोनों कसनेकी जोरो, भालर आदिके छोर पर शोभाके लिये इन्हे बनाते हैं। इसे फुलरा भी भव्या भी कहते हैं। २ यह गाठ जो कौड़ेकी शीरोके छोर पर रहती है। ३ यह गाठ जो तराजूकी ३ ओके शीरकी रस्तीमें दी जाती है।

फुदी (हि० खी०) फदा, गाठ।

फुमी (हि० खी०) छोटी फोडिया।

फुमार (हि० पु०) फुहारा देतो।

फु (स० पु०) फल-फु। १ मन्त्रोच्चारणपूर्वक फुत्कार। २ तुच्छ वाक्य।

फुक (स० पु०) फुना अल्पदवापयेन कापति शब्दापते इति फु-की क। पक्षी।

फुकना (हि० कि०) फुका देतो।

फुकाना (हि० कि०) फुका देना देतो।

फुङ्गी—वृष्टप्रामके पार्यत्य जानिका पुरोहित। ये लोग प्राय बालकोंकी लिपिगाना पठाना सीखलाते हैं।

फुचडा (हि० पु०) यह सूत या रेखा जो कपड़े, दूरी बालीन, चटार आदि हुनो हुनो बस्तुओंमें बाहर निकला रहता है।

फुट (स० पु०) स्फुटतीति स्फुट क, शूरोदरादित्यात् स्नाथु। मर्प-फणा, सापका फा।

फुट (हि० वि०) १ अयुग्म, जिसका जोडा न हो। २ जिसका सपथ किसी क्रम या परम्पराके न हो पृथक्।

फुट (अ० पु०) आहत गिम्नारका एक न मरैकी मान जो १२ इंच या ३६ जीके बराबर होता है।

फुटकर (हि० वि०) १ अयुग्म, जिसका जोडा न हो। २ निम्न, गिन, कई प्रकारका। ३ थोडा थोडा, एकट्टा नहीं। ४ जिसका सम्बन्ध किसी काम या परम्पराके साथ न हो, जिसका कोई मिश्रण न हो।

फुटकर (हि० वि०) फुटकर देतो।

फुटका (हि० पु०) १ फोला, आकल। २ धान, मकई, ज्यार आदिका लया। ३ गम्भिरा रम पराकीका लोह का बड़ा बड़ाह।

फुटकी ( हि० स्त्री० ) १ एक प्रकारकी छोटी विडिया, फुटकी। २ किमी परतुके छोटे लच्छे या जमे हुए कण जा पाना, दूध आदिमें अलग अलग दिगाई पड़ते हैं, बहुत छोटी बंठी। ३ गून, पीप आदिका छोंडा जो किसी वस्तुमें लिगाई दे।

फुटनोट ( अ० स्त्री० ) उह टिप्पणी जो किसी लेख या पुस्तकके पृष्ठमें नीचेकी ओर दी जाती है।

फुटपाथ ( अ० पु० ) १ पगडंडी। २ गहरोंमें सड़ककी पट्टी परका वह मार्ग जिस पर मनुष्य पैदल चलते हैं।

फुटवाल ( अ० पु० ) बडा मे द जिसे पैरकी ठोकरने उछाल कर खेलते हैं।

फुटेहरा ( हि० पु० ) १ मटर या चनेका दाना जो भूननेसे पेसा पिल गया हो, कि छिलका फट गया हो । २ चनेका भुना हुआ खबन।

फुटैल ( हि० वि० ) फुल देणो।

फुट ( हि० वि० ) फु देणो।

फुटक ( सं० स्त्री० ) यन्त्रविशेष।

फुटैल ( हि० वि० ) १ भुण्ड या समूहमें अलग, अकेला रहनेवाला। २ जिसका जोड़ न हो, जो जोड़ेमें अलग हो। ३ अभागा, फुटे भाग्यका।

फुन ( सं० अव्य० ) १ अनुकरण शब्द। २ तुच्छ भाषण।

फुन्कर ( सं० पु० ) फुदित्यव्यकशब्द करोतीति शृट। अग्नि।

फुन्कार ( सं० पु० ) १ भाषे घन्न, फुन इत्यव्यक्तशब्दस्य करण। मु हसे हरा छोड़नेका शब्द, फू व। होमानि यदि शुभ जाय, तो उसे फुन्कार द्वारा बाल कर पुत्र होम नहीं करना चाहिये। ( तिथितरङ्ग )

फुत्शक्ति ( सं० स्त्री० ) फुदित्यव्यक्तशब्दस्य शक्ति कर०। फुन्कार।

फुदरना ( हि० क्रि० ) १ उछर उछर कर फुदना। २ उमगमें आना, फुटे न समाया।

फुदकी ( हि० स्त्री० ) १ छोटा विडिया जो उछल उछल कर फुर्तो हुए चलता है।

फुग ( हि० स्त्री० ) वृक्ष या शापाका अग्र भाग या अक्षुर।

फुन ( हि० अव्य० ) फुग, फिर।

फुनगो ( हि० स्त्री० ) वृक्ष और वृक्षकी शाखाओंका अग्र भाग, फुनग।

फुनना ( हि० पु० ) फुदना देणो।

फुफुस ( सं० पु० ) कोष्ठविशेष, फेफड़ा। हृदयके चाम पाथमें फुफुस अवस्थित है। इसका दूसरा नाम फुफु फुरइ भी है। सुश्रुतमें लिगा है, कि शोणित और कफके मेलसे हृदय उत्पन्न होता है। उसी हृदयमें प्राणवाहिनो मभी घमनिया आश्रय की हुई हैं। हृदयके अधोभागमें बाह और ग्रीहा और फुफुस तथा दाहिनी ओर यदन् और श्रोम है। ( सुश्रुत जग० ( १४ ) ० ४ अ० ) शार्ङ्ग धरने लिगा है, कि फुफुस उदान वायुका आधार है और हृदयके बाई ओर रहता है। ( शार्ङ्ग धर ५ अ० )

फुफुदी ( हि० स्त्री० ) लहंगेके इनारव द या खियोंकी साडी कमनेकी डोरीकी गाठ यह गाठ कमर पर सामने की ओर रहती है और इसके पींचनेसे लहंगा या धोती खुल जाती है। इसे नीची भी कहते हैं।

फुफुकारना ( हि० क्रि० ) फुफुकारना।

फुफुकार ( हि० पु० ) फुन्कार, सापके मु हने निबन्ती हृद हवाका शब्द।

फुफुकारना ( हि० क्रि० ) सांपका मु हने फु फ निकालना, फुफुकार करना।

फुफुनी ( हि० स्त्री० ) फुफु देणो।

फुफेरा ( हि० वि० ) फुपासे उत्पन्न।

फुर ( हि० स्त्री० ) १ उठनेमें परोंका शब्द, परा फडफडानेकी आवाज। ( वि० ) २ सत्य, सभा।

फुरफना ( हि० क्रि० ) जुलाहोंकी बोलियों किमी वस्तुको मु हमें चरा कर सामने जोलने धूचना।

फुरफना ( हि० क्रि० ) फडना देणो।

फुरती ( हि० स्त्री० ) शोभता, तेंपो।

फुरतीला ( हि० वि० ) जिसमें फुरती हो, जो सुस्त न हो।

फुरता ( हि० क्रि० ) स्फुरित होना, उदय होना। ० फड बना, दिग्ना। ३ उधगित होना, मु हसे शब्द निकलना।

४ प्रकाशित होना, चमक उठना। ५ सकल होना, सोम हुआ परिणाम उत्पन्न करना। ६ प्रमाय उत्पन्न करना, अमर करना। ७ मल्य टहरना, पूग उठना।

फुरफुर ( हि० स्त्री० ) १ यह शब्द जो पर आदिनी रगड़से



गिनती रलोंमें है। लोग इसे आम्रपनोंमें जड़ते हैं। कम दामके पत्थर पथोकारोंमें भी काम आते हैं। चैपलोग इनका व्यवहार औषधके रूपमें भी करते हैं। यह कसौला, मोटा और क्षीपन कहा गया है।

फीरोजी (फा० वि०) फीरोजेके रगका, हरापन लिपे मोटा। इस रगमें रगते समय पहले कपड़ोंको नृतिथे के पानोंमें रगते हैं, फिर नृतिथेसे नीगुना चूना मिले पानोंमें उन्हे धोर देने हैं और तब पानोंमें निधारते हैं। इ प्रकार तीन बार करते हैं।

फील (फा० पु०) हाथी।

फीलपान (फा० पु०) हस्तिशाला, हथिसार।

फोउपा (फा० पु०) एक प्रकारका रोग इसमें पैर फूल कर हाथोंके पैरकी तरह हो जाता है। यह रोग शरीरके दूसरे अंगों पर भी आक्रमण करता है।

फीलपाया (फा० पु०) १ शैला बना हुआ मोटा पत्ता जिस पर छत ठहराई जाती है। २ फीला देवो।

फीलवान (फा० पु०) हाथीवान।

फीरी (हि० खी०) घुट्टीके नीचे पड़ी तकका भाग, पिशली।

फीरुड (अ० पु०) १ मैदान, जेत। २ गेद गेलीका मैदान।

फीरु (अ० खी०) १ शुक्र, कर। २ मेहनताना, उजरत।

फु वना (हि० कि०) १ जगना, भस्म होना। २ मुँहकी हवा भर कर निकाला जाता। ३ नष्ट होना, बरबाद होना।

(पु०) ४ बाम, पीतल आदिकी लकी। इसमें मुँहकी हवा भर कर भाग पर छोड़ते हैं, फुंकनी। ५ प्राणियोंके शरीरका मूत्र रहनेका अवयव। यह पेटके पाम होता है।

फु वनी (हि० खी०) १ बाम, पीतल आदिकी लकी। इसमें मुँहकी हवा भर कर भागको बरफानेके लिये उस पर छोड़ते हैं। २ भागी।

फुं वना (हि० कि०) १ फुंकार छोड़ना, मुँहसे हवा छोड़ना।

फुं वना (हि० कि०) १ फुंकारना काम किसी दूसरेमें कराया। २ मुँहसे हवाका धौन निकलना। ३ भस्म करवाया, जलाया।

फु वना (हि० कि०) फुंकारना काम कराया।

फुंकार (हि० पु०) साँप पैल आदिके मुँह या नाकके नयनोंसे बलपूर्वक वायुके बाहर निकलनेमें उत्पन्न शब्द, फुंकार।

फुंदा (हि० पु०) १ फुंके आकारकी गाठ। यद्, इमारत यद् चोटी बाधने या धोती कसौकी जोगे, फालर आदिके छोर पर जोमानेके लिये इसे बनाते हैं। इसे फुलरा और फडा भी कहते हैं। २ यह गाठ जो कौड़ेकी छोरोंके छोर पर रहती है। ३ यह गाठ जो तराजूकी ड बाँके बीचकी रखसोंमें दी जाती है।

फु दी (हि० खी०) फुंदा, गाठ।

फु सी (हि० खी०) छोटी फोडिया।

फुभावा (हि० पु०) फुंदा देवो।

फु (सं० पु०) फल-फु। १ मन्त्रोच्चारणपूर्वक फुंकार। २ तुच्छ वाक्य।

फुक (सं० पु०) फुना अस्पष्टवाक्यका क्रायति शब्दाप्यते इति फु-क। पक्षी।

फुकना (हि० कि०) फुंदा देवो।

फुकाना (हि० कि०) फुंदा देवो।

फुद्धी—चंद्रमाके पार्वत्य जातिका पुरोहित। ये लोग प्राय बालकोंको लिपाना पढ़ाना सीखाते हैं।

फुचडा (हि० पु०) यह मूत या रेशा जो कपड़े, सूती कालीन, चटाई आदि धुना हुई वस्तुओंमें बाहर निकला रहना है।

फुट (सं० पु०) फुटनीति फुट व, ध्रुवोद्वारदित्याम् साधु। सर्प कपा, सापका फा।

फुट (हि० वि०) १ अयुग्म, जिसका जोड़ा न हो। २ निम्नका स्वयं किसी क्रम या परंपराने न हो पृथक्।

फुट (सं० पु०) आहत विन्तारका एक अंगरेजों मान जो १० इंच या ३६ आँके बराबर होता है।

फुटकर (हि० वि०) १ अयुग्म, जिसका जोड़ा न हो। २ मिल्न, मिग, कर प्रकारका। ३ थोडा थोडा, इकट्ठा नहीं।

४ जिसका सम्बन्ध किसी क्रम या परंपराके साथ न हो, निम्नका फोड मिला-मिला न हो।

फुटका (हि० वि०) फुंकार देवो।

फुटका (हि० पु०) १ फालोला, भावला। २ धान, मक्का, ज्वार आदिका लया। ३ गन्नेका रम परानेका लंदे का बड़ा बड़ा।

लडके बरमसिंह राजा हुए । इस समय समरथी रेगम श्री मगडोंने पतियाग पर चढ़ाई कर दी । प्रथम युद्ध में अमरकी बहन राणी राजेन्द्र, और द्वितीय युद्धमें साहेब की बहन राणी साहेबनुमारोने विशेष धीरताका परिचय दे कर मुसलमानोंको परास्त किया था । बरमसिंहकी मृत्युके बाद उनके लडके नरेंद्रसिंह पतियाला सिंहासन पर बैठे । इन्होंने गढ़के समय अङ्गनेवांका क्षत्रिया था, इस कारण इन्हें कुछ सम्पत्ति जागीर और 'फानाल' नाम नीलम् इ-इ त्रिजिया मनसुरी जमान अमीर उल उमरा महाराजाधिरान राजेश्वर श्री महाराज इ-गनराण नरेन्द्रसिंह महन्दर बहादुर'को उपाधि मिली थी । राजा नरेन्द्रके बाद राजा महेंद्र और पीछे महाराज राजेन्द्र राजा हुए । नामा और भिन्दके कुत्रकिया रानवशाका विवरण अन्यत्र दिया गया है । अन्वश्य विराम वनियाना, सिन्द और नामा जगमें देखो ।

कुनसुहा ( हि० खी० ) तोलापन लिये काले रमकी एक चमकती चिडिया । यह हमेजा फूलों पर उड़ती फिरती है । इसकी चोंच पतने और कुछ लम्बी होती है । इस चोचने यह फूलोंका रस चूसती है ।

कुलचोरा—तोपालके अन्तगत एक पर्वत गिरा । यहां लक्ष्मोर्त्ति प्रतिष्ठित है ।

कुलकडी (हि० खी०) १ एक प्रकारकी आतजाजी जिसमें फूलकी-सी चिनगागिया निकरती है । २ भाग लगाने वाली बात, ऐसी बातना कहना जिसमें विवाद वा और कोई उपद्रव हो जाय ।

कुलभरी—मध्यप्रदेशके मध्यपुर जिगातगत एक सामंत राज्य । यह पहाडी राज्य १८ गडनातके अन्तर्गत है । क्षेत्रफल ७८७ वर्गमील है । समूचा राज्य फुलचरगढ, फेलिन्दा, शोहतग, यामना, बलाद, पार्वग, सिबोरा और शङ्करा आदि विभागों में विभक्त है । यहांके सरदार रानगौड हैं । तीन स्त्री धरं पहने पर सम्पत्ति पराकाके रानाने उन्हें मिली है ।

कुलभर—पुन-बङ्गाल और भामाममें प्रचलित एक नदी । यह बागल जिलेके पश्तोया और हल्हात्रिया नदीसे उपजत हो कर यमुनामें मिले है ।

कुलभरी ( हि० खी० ) फुलहाडी देखो ।

कुला ( हि० खी० ) ऊसर भूमिमें होनेवाली एक वारद मामी घास ।

कुलपुर—१ युक्तप्रदेशके गङ्गावाग विन्नेनी एक तहसील यह अक्षा० ७१८'२५" पू० गङ्गाके दाहिने किनारे अवस्थित है । भूपरिमाण २८६ वर्गमील और जनसंख्या दो लाखके करीब है । इसमें १ गहर और ४८६ ग्राम लगते हैं ।

२ उक्त तहसीलका शहर । यह अक्षा० २५ ३३' उ० और देशा० ८२ ६' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या प्राय ७६११ है । कहते हैं, कि यह शहर १७वीं शताब्दीमें बसाया गया है । यहां क्षीरानो और फौजदारी अदालतके अलावा एक अस्पताल, पुलिस स्टेशन, डाकघर, और एक स्कूल है । रास्य १३०० टंका है ।

कुलमती ( स० खी० ) रागिणीविशेष ।

कुलरा ( हि० पु० ) कुलना देग ।

कुलवर ( हि० पु० ) एक कपडा जिस पर रेशमके घेरे घूटे उनें या कढ़े होते हैं ।

कुलवाडिया—बागणमो विभागके आनमगड विभाग गंत एक प्राचीन नगर । उसके अन्तर्गत एक ऊपर आनम वहाँ आजमगड नगर बसा गये हैं ।

कुलवाडी—बङ्गालके अन्तर्गत एक प्राचीन जापद । यहां एक दुर्गका ध्वस्तारोप है ।

कुलवाडी—पटना जिलेका एक शहर । यह अक्षा २५ ३४ उ० और देशा० ८५ ५' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या ३४१५५के करीब है ।

कुलवाडी ( हि० खी० ) कुलवाडी देखो ।

कुलवारी ( हि० खी० ) १ पुष्पाटिका, उगान । २ बागन के बने हुए फूल धीरे धीरे जो टाट पर लगा कर पिचाहमें धरातक साथ निराणे जाते हैं ।

कुलसरा ( हि० पु० ) कान्हे रागका एक चिडिया । इसके मिर पर सफेद छीटे हाते हैं ।

कुलसुयो ( हि० खी० ) एक चिडिया, कुलसुदी ।

कुलदाग ( हि० पु० ) मागो ।

कुलगा ( हि० पु० ) एक प्रकारकी भाग ।

कुलगं ( हि० खी० ) १ कुलकडी । २ पचायमें मिस्रु और मतलब नदियोंके बीचकी पहायियों पर होनेवाला

उत्पन्न हो। ० उदनेमें परीकी फरफगाहटमें उत्पन्न  
शब्द।

कुरुकुमाना ( हि० मि० ) १ कुर कुर करना, उठ कर परी-  
का शब्द करना। ० लकी यानुमा लपराना। ३ पर या  
ओर कोई हटकी धनुष टिटना जिसमें कुरकुर शब्द हो।

४ कानमें गंभीर कुरेती करता।

कुरुकगाहट ( हि० स्त्री० ) कुर कुर शब्द होनेका भाव। पर  
फडफडातीका भाव।

कुरकुटी ( हि० स्त्री० ) कुरकुटी देती।

कुरमान ( फा० पु० ) १ राजाण, अनुमानापन। ० आशा,  
आदेश। ३ मापन, मनन।

कुरमत ( अ० स्त्री० ) ० अचमर, समय। ० निवृत्ति, अर  
फाज। ३ योगीश्वर कुरुकाम, आराम।

कुरहती ( हि० स्त्री० ) १ परकी फुला कर फडफडाना।  
कपड़े आदिके हथामें टिलनेकी क्रिया या शब्द, फरफरा

हट। ३ कुरकुरीका भाव, फडफडाता। ४ कुरी देती।  
५ कुरा और रोमाञ्च, कुरकुरी।

कुराना ( हि० मि० ) १ सधा टहराना। ० प्रमाणित  
करना।

कुरेगे ( हि० स्त्री० ) १ रोमाञ्चयुक्त कथ्य, सखी, मय आदि  
के कारण धरफगाहट होना और रंगरे गंठे होना। २  
सौकर जिसके सिरे पर हलकी गंठ लपेटी हो और जो  
तेल, रस, दवा आदिमें डुबा कर काममें लाइ जाय।

कुरी ( हि० स्त्री० ) कुरी देती।

कुरमत ( अ० स्त्री० ) कुरमत देती।

कुरा ( हि० पु० ) १ फकीला, छाला। ० एक छोटा  
कड़ा जो नीलाके फरफगनेमें काम आता है। ३ हलकी  
और पतली रोटिया, चपाती।

कुरुकिया एक मिला मिश्रण या द्रव। मिश्रणका नामो  
जाटयंतोय(१) कुरु नामक एक मरुदारमें यह द्रव प्रति  
दिष्ट हुआ। ये मरुदारके ३५ पुत्र थे। १६१६ ई०में मेह  
राज सामंत उरुजा जून हुआ था। मरुदाट् जाहङ्गिराके  
परमाणा मुशाफिक थे सिद्ध पर अधिष्ठित हुए। उनोंने

अपने नाम पर एक मगर बसाया। (२) आन्तर हय्यु का  
और इनावा नामक दो मुसलमान सरदारोंने पराजित  
हो वे अपने मेहराज राज्यका परिन्धान करनेकी वाण्य  
हुए। मरुजा निज रजुष्टि परके उन्होंने इसके पुत्र  
दीलत कां और भाटाके सरदार हय्यु कांको हराया  
और निज राज्यका पुत्र उत्तर दिया। अब वे प्रताप  
शाली मरुदार हो दिहानी अधीनताकी उपेक्षा करने  
लगे। जाग्रामके जामनकर्त्तानी राजरत न दे कर उन्हें  
उन्हें युद्धमें पराम्त और अर रुठ किया था। किन्तु इसके  
सिया उन्हें और निजो प्रकाशका कष्ट नहीं दिया गया।

युव हरगोविन्दकी मयिष्य चाणो मरु निरन्तरी,  
वाल्मीकि ये प्रतापशाली हो उठे। उनके मारत पुत्र  
पतियाला, फिन्द, नामा, भद्रोद, मलोद, रान्दपरिया और  
जियान्दन घनाके प्रतिष्ठाता हो कुरुकिया नामसे परिचित  
हुए।

१६५० ई०में ७० वर्षकी उमरमें कुरुकी मृत्यु हुई।  
कोई कहते हैं, कि वे योगान्ध्याम करते थे। सरहिन्दके  
जामनकर्त्तानी जब समय पर कर नहीं मिलत, तब उन्होंने  
कुरुकी अग्ररुठ किया। उस समय वे ईश्वरचिन्तामें  
योगमग्न हो गये और लोगोंने उमरको मृत्युका कल्याण  
कर ली। फिर निम्नोका कहना है, कि अग्ररोषके समय  
मरुकी गर्मांशे मारे उरुकी मृत्यु हुई थी।

मृत्युके बाद उनके द्वितीय पुत्र रामचन्द्र कुरुकिया  
वल्के मरुदार बनाये गये। उन्होंने हमरा गाँवी पराम्त  
कर मरु राज्यको लूट लिया। पीछे इसका गाँ और वाटवा  
मुसलमानों राज्य जीत कर मोटी रकम इकट्ठी की। १७१४  
ई०में १५ वर्षकी उमरमें वे अरु सरदार चेरामिहके  
पुत्रोंमें मारे गये। इसके बाद रामक मृतोय पुत्र आगा  
मिह मरुदार गये। वे पतियालाघनाके प्रतिष्ठाता थे।  
१६६५ ई०में उनका जून हुआ था। आगामिहकी  
मृत्युके बाद १७६५ ई०में अमरमिह काका हुए। उन्होंने  
मुसलमानोंको पराम्त कर मजिनातनग और फोटपुर  
पर अधिष्ठार किया। १७२१ ई०में उरुकी मृत्यु हुई।  
पीछे उनके लड़के गाँव निह और मारुवर्षे बाद उनके  
(१) उरुकी मरु नामा राज्यके जामनकर्त्तानी  
गया है।

कुल ( स० त्रि० ) कुलन्तीति कुल-अच्, या फल्तीति फल्-त् (आदिप) । पा ७।१।१६ इति इडभाष ( ति व । पा ७।४।२६ ) इति उन्व, अनुपमगान् । ( कु-उ धीधेनि । टा।१।५ ) इति निष्ठा तस्य ७ । चित्रसित, फूग हुआ । ( पु० ) २ पु'प, फूल ।

कुलकुलम—मानभूमके अन्तर्गत एक छोटी सम्पत्ति । कुलग्राम—वीरभूमके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम । यह मिउडीनगरमे ४ काम अग्निकोणम अस्थित है । यहा कुलरादेशीका मन्दिर विद्यमान है ।

कुलतुरी ( स० स्त्री० ) स्फटिकाकारिका । कुलदाम ( स० पु० ) कुलाना पुपाणा दाम-इय । उशीम वर्णनी एक शृत्ति । रसके प्रत्येक चरणमें ६, ७, ८, ९, १०, ११, और १७ या वर्ण लय होता है ।

कुलन ( स० त्रि० ) धायुमे परिपूर्ण । कुलपुर ( स० स्त्री० ) नगरभेद । कुलफाल ( स० पु० ) कुल फल्तीति फल् अण् । सुपजात, यह दूना जो मूषसे की जाती है ।

कुलरा—चण्डीकाश्रीक फाल्ग्वेत्तु ध्याधरी स्त्री । छिन जातईन, माधवाचार्य, बजराम कविकडूण आदि चण्डी काव्यलेखकोंने फूलगचरित्रना जो रखापात किया था, मुकुन्दरामने उसका सम्पूर्ण विकास किया है । मुकुन्द रामके हाथमे यह चरित्र अति सुन्दररूपसे चित्रित हुआ है । तद्वर्णित फूलगकी मन्दिशुना और पातिमत्य आदर्श रथानोय है ।

कुलरीक ( स० पु० ) फल (दर्शरीधदयय । ४७, ४।२०) इति इक्षन् प्रत्ययेा निपातान्त् माधु । १ देश । २ सप ।

कुलशेखर स० पु० ) कुल्ले विकसिते लोचने यस्य । १ मृगचिन्नेय । ( त्रि० ) २ प्रकुल्ल वैशयुक्त ।

कुलपत् ( स० त्रि० ) प्रस्तुटनके योग्य । कुल्ला—चण्डीपके अन्तर्गत एक नदी ।

कुलारण्य—दाक्षिणात्य प्रदेशमें रामेश्वरके निकटवर्ती एक पवित्र तीर्थ । यह मनुष्यके चित्तारे बनके मध्य अवस्था है । कुल्ल नामक किसी योगीके नाम पर इसका नामकरण हुआ है । यह क्षेत्र वैष्णवोका प्रियतम है । कुलारण्य माराम्यमें इसका विस्तृत विस्तार लिया है ।

कुलारविन्द ( स० स्त्री० ) प्रस्तुटित पद्म, खिला हुआ कमल ।

कुल्लि ( स० स्त्री० ) विस्मय । कुल्लो ( हि० स्त्री० ) १ कुल्लिया । २ फूलके आधारका कोई आभूषण या उसका कोई भाग ।

कुलारा ( हि० पु० ) कुलारा देवो । कुल ( हि० स्त्री० ) अतिशय मन्द सर, बहुत धीमी आवाज ।

कुलडा ( हि० पु० ) कुलडा देवो । कुसकुमा ( हि० त्रि० ) १ नरम, ढीला । २ कमजोर, कुसमे डूब जानेवाला । ३ जो तीक्ष्ण न हो, मदा ।

कुसकुमाना ( हि० द्वि० ) कुसकुम करना, इतना धीरे धीरे कहना, कि शब्द व्यक्त न हो ।

कुसलाना ( हि० द्वि० ) १ भुजा पर ग्रान्त और सुप रपाता, बहलाना । २ मीठी मीठी बातें कह कर अनु कूल करना, भुजावा दे कर अपने मतलब पर लाना । ३ मनुष्य करनेके लिये प्रिय और विनीत बच्चा कहना । ४ किसी यातके पक्षमें या किसी ओर प्रवृत्त करनेके लिये इधर उधरकी बातें करना, चक्का देना ।

कुहार ( हि० पु० ) १ जलक्षण, पानीका महोत छोटा । २ महान बूझकी भण्टी, भौंसी ।

कुहारा ( हि० पु० ) १ नरको यह टोंटी निसमेंसे दवावके कारण जलकी महोत धार या छोटि वेगमे उपरकी ओर उठ कर गिरा करते हैं । माधारणत जो कुहारे देगनेमें आते हैं वे शक्तिम हैं । मनुष्य हम लोगोंके लिये यह कुहारा बताते हैं । जटजगनमें भी हम लोग चेमी जल धारा उठती देखते हैं । किन् प्रकार यह ऊर्ध्वगामी जल श्रोत समान वेग और अविधान्त गतिसे क्षणमागमें उठता है यह नोपे देते हैं ।

प्राचिन विषयग्रामे भूगर्भके मध्य अन्तनि हिल जल श्रोत थोडा थोडा करके एक जगह जमा होता है । पीछे यह गम जब भर जाता है, तब जल भापे भाप वेगवान् गतिसे अथा गस्ता निराला गैरा है । पहाडो प्रदेशकी बड़ी मट्टोकी भेद कर यह अपनी राहसे नीचे जाता है । भूश्रुत सलान होनेने यह पृष्ठापरणकी भेद कर ऊपरकी ओर उठता है ।

एक प्रकारका बट्टा । इसके पेड़ मन्डोले होते हैं और विशेष कर गेहोंकी बागों पर लगाए जाते हैं । इसकी लकड़ी मायुग और टोम होती है । इसे लोग कोल्डरी जाट और गाड़ियोंके पहिये आदि बनानेके काममें लाते हैं । इसके पेड़में एक प्रकारका गोंद विद्यमान है जो अल्पमें फल आता है । यह गोंद अमृतमरका गोंद नामसे प्रसिद्ध है । ३ मरक २.३ देवो ।

कुनागुडी—गाम्माय प्रदेशके नौगाँव जिल्लागत एक प्रसिद्ध स्थान । यहाँ प्रतिवर्षके वैतन्मासमें एक मेला लगता है ।

कुलाटा (दि० त्रि०) १ किन्नी प्रन्तुके पिरदार या फैलाय को उसके भीतर चायु आदिका दबाव पड़ना कर बढाना, भीतरके दबावसे बाहरकी ओर फैलाया । २ बुसुमित करना, फूँसे युक्त करना । ३ घमण्ड बढाना, गर्वित करना । ४ किन्नीमें हाना आनन्द उत्पन्न करना कि वह आपके बाहर हो जाय ।

कुलाय (दि० पु०) फूँसेकी क्रिया या भाव, फूँसेकी भरखा ।

कुलायट (दि० खी०) फूँसेकी क्रिया या भाव, उभार या गुञ्जा ।

कुलाया (दि० पु०) तिरवाँके मिरके बालोंकी गू घनेकी दोरो चिममें फूँ या फूँदने लगे रहते हैं ।

कुलिग (दि० पु०) चित्तगारी ।

कुलिया (दि० खी०) १ काल या कौंठा जिसका मिरा फूँकी तरह फेरा हुआ, गोल और मोटा हो । २ किसी काल या छटके आकारकी वस्तुका फूँकी तरह उभार और फैला हुआ गोल मिरा । ३ फाममें पहननेका एक प्रकारका गीम गामय गहन ।

कुलिमरंषेप (स० पु०) एक प्रकारका चिबना सफेद बागज जिसके भीतर हल्का लकड़े पड़ी रहती हैं । पहले इसके सभमें मनुष्यके सिरका जित्त बना रहता था जिस पर नोजदार टोपी होती थी । इसा कारण इसे 'कुलिमरंषेप' बट्टो लगे जिसका अर्थ धेनुफूफती टोपी होता है । अब इस बागजमें भोज निरु बनाने जाते हैं ।

कुनुलिया (दि० खी०) बपट्टेका एक कुकडा जो छोटे बच्चोंके बूट्टके आने इस लिये बिछाया या रखा जाता

है कि उसका मल हमसे उगद न लगे, गँडनता ।

कुलेय (दि० पु०) जेपताओंके ऊपर लगानेकी फूसकी बनी हुई छतरा ।

कुलेय (दि० पु०) १ सुगन्धयुक्त तेल, फूँकी महङ्गे बना हुआ तेल जो सिरमें लगानेके काममें आता है । इसकी प्रचुरता पणाली इस प्रकार है—पहले तिलकी फाँट फार कर छिलका अलग कर देते हैं । उसके बाद ताजे फूलोंकी कलियाँकी जमीन पर बिछा कर उनके ऊपर तिल छितरा देते हैं । तिलोंके ऊपर फिर फूलोंकी कलियाँ बिछाई जाती हैं । जब कलियाँ गिर जायेंगी हैं, तब फूलोंकी महङ्ग तिलोंमें आ जायेंगी है । इन प्रकार एक बार नहीं, कई बार तिलोंकी फूलोंकी ताड़ पर फैलाते हैं । जितना ही अधिक तिल फूलोंमें घामा जाता है, उतनी ही अधिक सुगन्ध उसके तेलमें होती है । अन्तर उन सुवासित तिलोंकी पेल कर कई प्रकार के तेल तैयार होते हैं ।

२ हिमालय पर कुमाऊँमें ले कर बार्पिपिङ्ग तक होनेवाला एक पेड़ । इसके फलकी गिरी गाँड़ आती है । इससे जो तेल निकलता है वह स्यायु और मीमवत्ता बनानेके काममें आता है । लकड़ी इसके भूरे रंगका होगी है जिसकी मेज, बुरगी आदि बनायी हैं ।

कुलेली (दि० खी०) कुलेय रगनेका पाच धादिका बट्टा बनान ।

कुलेटा (दि० पु०) उरमयामें हाथ पर लगानेके सूत, रेशम आदिके बने हुए भस्वेदार बन्दनघार ।

कुलेच्छ—जेपा राज्यकी प्राचीन राजधानी । यह दक्षिण पाटाके मनीष गोदावरीके किनारे अवस्थित है । मोमचंदी राजपूतोंके आक्रमणमें राज्यकी रक्षा करनेके लिये गल्लिगरी यह एक दुग बनाया था ।

कुलीरा (दि० पु०) बडी कुलीरी, पकीरा ।

कुलीरी (दि० खी०) बने या मटर आदिके बैतनकी बरी, बैसनकी पकीरी ।

कुल्लि (स० ति०) फल-आरम्भे भाये ल या तयोमेंटू भाव इत्य । फलनाममयुक्त, जो फूलों पर हो ।

कुल्लि (स० खी०) फल मित्त, (िच्। ३।४।६।६) इति अत्र-उद्। कल्लि । (हृष्यक ४२०.)

दूसरे मुख हो कर बाहर गिर पड़ता है और प्रथम मुखकी ऊँचाईके साथ धरतल मुखके जलके ऊपरों नग्न ऊँचाई समान पड़ती है। इस प्रणालीके आधार पर फुहारा सहन में प्रस्तुत हो जाता है।

उद्यानों साधारणतः इसी उपायसे टक्मि फुहारे बनाये जाते हैं। अटालिकाकी छत पर एक टैंक (जल रखनेका लोहेका चहबुआ) रख कर उसमें जल भर लिया जाता है। पीछे उस टैंकसे एक नल (जलकी बरतका पाइप) लगा कर नीचेकी ओर मट्टीमें उसे फैला देने है। उस संयोगस्थल पर जो एक टैप (चाबी) रहता है, उसे घुमानेसे जल नलमुख हो कर बहने लगता है और जरूरत पड़ने पर उसे बन्द भी कर सकते हैं। अब उस नलकी बराबर लगे कर यथास्थान पर निर्मित पर उल्टे चहबुआके मध्यस्थ मनोहर दृश्य स्तम्भ या पुस्तकोंमें प्रयोग कराये। अब ऊपरवाला टैप खोल देनेसे फुहारेके मुखसे जल निकलने लगेगा।

स्वभावात्सिद्ध गुणसे जल नलके मुखसे निकल कर उपरिस्थित टैंकके जलतलके साथ समतारक्षणमें क्रियाशील देखा जाता है। इसी कारण स्वभावात् ही फुहारे का जल स्वकीर्ण मुखसे बड़ी तेजी और वेगसे साथ निकलता है। किन्तु नलका मुख अपेक्षाएत मोटा होनेसे जलका वेग कम होते देखा जाता है। चाप भी (Pressure) जलकी उमुत्पत्तिका अन्यतम कारण है। उपरिस्थित जलकी चापसे नीचेका जल अधिक चापयुक्त हो वेगवान् गतिको प्राप्त होता है। इस चापके प्रभावसे नीचेका जल भी ऊपर उठता है। पम्प (Pump) नामक यन्त्र की प्रक्रियाके बलसे जल चापयुक्त हो नलके मुखसे बाहर निकलता है। चापके बलसे जल स्वभावात् ही ३० फुट ऊपर उठता है। इस कारण ऊपरमें जल नहीं रहनेसे भी चाप द्वारा फुहारेका कार्य सम्यक् हो सकता है।

भाज कर बहुतेरे शौकीन मनुष्य घरकी सजानेके लिये अपने घरमें फुहारा बजाते हैं। जगानिग मके लिये नूतन नूतन मुख भी आविष्कृत हुआ है। बहनेसे लोगों के धर्म कर्माकी कामनासे राहमें, घाटमें इस प्रकारके अनेक फुहारे बजा दिये हैं। कलकत्ता, लीवरपुट, एगडन

आदि जगहोंमें सबकको बगलमें ऐसे अनेक फुहारे देवने में आते हैं। श्रीवन्दानन, दिन्दी आदि नगरोंमें भी बहुत पुराने समयके बने हुए फुहारे दृष्टिगोचर होते हैं। इतिम उपायसे नाना प्रकारके फुहारे बनाये जाते हैं।

प्रसन्नप्रणका जो ऊपर उल्टेन किया गया है, बहुत प्राचीनकालसे उसे पवित्र मानते आ रहे हैं। सीता दुःख आदि तीर्थोंमें आन भी पूजा देनेकी विधि है। यूरोपमें भी पहले प्रसन्नप्रणके, सामने पवि और पूजा होती थी। होरेसेने 'फल्मिगान्दुसी' नामक रोमागरीके एक फुहारेकी पवित्रताका उल्लेख किया है। प्रोफ-रानधायायों में (त्रियोपतः करिन्धमं) हाकुलेनियम और पम्पिके भयमा यशोपके मध्य वह निदर्शन पाया जाता है। रोम, ट्रेफा, पालिन, सानपिट्री, पारो, भासल और सेन्ट्रुम नगर तथा इटलीएडके एफटिक प्रासादका अति बहुभुज गिल्यमय भास्करकीसिंघयुक्त फुहारे जगत्में अतुलनीय है।

२ जलका महोन छोटा।

फूही (हि० खी०) १ सूक्ष्म जलकण, पानीका महोन छोटा। २ महोन शीत बूदोंका भूदो।

फूँक (हि० खी०) १ वह हवा जो ओठोंकी चारों ओरसे दबा कर भीजसे निकाली जाय। २ मन्त्र पठ कर मुहसे छोड़ी हुई वायु जो उस मनुष्यकी ओर छोड़ी जाती है जिस पर मन्त्रका प्रभाव डालना होता है। ३ साँस, मुहको हवा।

फूँकना (हि० कि०) १ ओठोंको चारों ओरसे दबा कर भीजसे हवा छोड़ना। २ प्रकाशित कर देना, चारों ओर फैला देना। ३ दुःख देना, सताना। ४ नष्ट करना, प्यय प्यय कर देना। ५ शीघ्र, वासुरी आदि मुहसे बजाए जानेवाले वाद्योंकी फूँक कर बजाना। ६ मन्त्र आदि पढ़ कर किसी पर फूँक मारना। ७ फूँक कर प्रज्वलित करना। ८ मत्स्य करना, जलाना। ९ धातुओं की रसायनकी रीतिये जड़ी बूटियोंका महायनासे भस्म करना।

फूँका (हि० पु०) १ भाषो या नलीसे भाग पर फूँक मारना, फूँक मारनेकी क्रिया। २ फाँटा फरोग। ३ श्म आदिकी गली जिससे फूँका मारा जाता है। ४ बाँसकी नलीमें जला पैदा करनेवाली ओषधियाँ

गुप्त सेने परधर ( previous ) हैं जिससे वे जड़ निकल सकता है। बाहुल्यमय महीमें जो इस प्रकार जड़ नियम हुआ करता है, विन्तु कड़ी मही हो कर जड़ तर्को जानकता (impervious)।

भूगुप्त या पर्यंत पर घुष्टि पड़नेसे गुप्त जल तो टालनें मागसे गिर कर तर्कोमें मिल जाता है और कड़ महीमें प्रयेन करता है। जो जल महीमें प्रयेन करता है, यह जमीनके भीतर छेददार स्तरों ( Pervious Strata ) में प्रवाहित हो कर एक जगह जा जमा होता है। पीछे उस स्थानके भर जानेसे यह जल दूसरी राहमें निरन्तरी कीजिन करता है। क्रमज ससिद्ध सृष्टिसा-स्तरमें होता हुआ जब यह कठिन स्तरमें पड़ जाता है तब फिरसे जगके समतारक्षणके लिये दूसरी राह उठता है। इस प्रकार उठने समय यदि उसे किसी पर्यंत, उदाहरण या निम्नभूमिमें छिद्र मिल जाय, तो यह उसी भूगुप्त निरन्तार शुरु करता है। पर्यंत का नृत्ता पर मक्षिण जलराजि क्रमज नोचिको और उतर कर निरामके स्थानमें यह जाता है और यह जल धाराधारमें उदित्य हो कर पूर्वमक्षिण जलराजिकी साना स्थानमें समर्थ होता है। कभी यह निर्धरकी तरह पर्यंत परने भर भर करके जाने गिरता है। इस प्राकृ-तिक जलजमको प्रस्त्रयण ( Springs ) कहते हैं। प्रस्त्रयण साधारणत यो प्रकारका है - जीला जगवाही प्रस्त्रयण और उला प्रस्त्रयण। जिन सब प्रस्त्रयणोंमें उला जल निरन्तार है, उसे ही उला प्रस्त्रयण कहते हैं। (१) भूगुप्त मध्यम जलान्ते ( Sub-terranean Channels ) होकर प्रवाहित जलराजि प्रस्त्रयणकारमें प्रवाजित हो कर नदी आदिके उत्पत्ति-स्थानमें परिणत हुआ है। जिन सब प्रस्त्र-यणोंमें नदी, नद या नदीनागा आदिनो उत्पत्ति होती है उला जल तर्को गुप्त गुप्त दमें बाहर होता है। पीछे यह एक स्थानमें ससिद्ध हो कर क्रमज गौरीकी भाग पर जाता है। राहमें यह जल जब किसी पर्यंतगच्छने रुक

जाता है, तब उसे भेद कर यह प्रस्त्रयण घेगने प्रवाजाकारमें पणित होता है। (२)

पर्यंत या पार्यन्तभूमिमें ही अधिक प्रस्त्रयण निरन्तरे देखे जाते हैं। कारण, यदाका जड़ बहुत ऊपरमें ससिद्ध पथ हो कर नीचे जाता है, जहा उमका अधिक भाग ससिद्ध स्तरों पर ही ( Impervious stratum ) जमा हो जाता है। यह जड़ यदा अधिक देर तक तर्को उदरता, बहुत उच्च दूसरी राहमें निकल जाता है। कृपणकनराण में हम लोग कृपणें जलसञ्चय देखते हैं। यह जल कहाँसे आया, स्वयं समझ सकते हैं।

प्रस्त्रयणका जल स्वाभावत हा सुखादु और रज-कारक है। भूगुप्तरेष धातुपर्यार्य ( Minerals ) मिले रहनेके कारण उमका भीयधरको तरह पानीपरूपमें पण-छात्र होता है। धातुसुईर्यादि रोगीमें यह विगेष स्यारथ्य प्रर है। इस कारण विविधसकणज प्रस्त्रयण, हृदय और औदरिक रोगप्रस-थितिसातरको ही स्थान्य परिणत गके लिये पार्यन्तीय प्रदेजमें जानेंको सग्राह देते हैं। जिन सब प्रदेजोंका प्रस्त्रयण या नदी प्रवाहित जल धान्ययोगमें बलकर है, यही सब स्थान स्थान्ययद माँगे गये हैं। उला प्रस्त्रयण जगमें स्नात्र मर्यन्तीमागमें विधेय है। कटेसियम् ( Ktesius ) ने लिगा है, कि इथियोपिया राज्योंमें एक प्रस्त्रयणमें गाल जल निरन्तार था जिसे पीनेसे ही मनुष्य उमगादप्रस-हो जाते थे। विविधे इतिहासमें हम लोग धामेंगिया-धुनें पण प्रस्त्रयणका उल्लेख पाते हैं। उस प्रस्त्रयणमें जो माटली रहती है उसे स्थानेहें तक्षुषणाम् गुप्तु हो जाते हैं।

समानाजात प्रस्त्रयणको जगमति देख कर विद्यात्र विद्योरे इतिम उपायमें कुहरा ( Mountain ) का भाषि-कार किया है। जलमें एक घेरा स्थानपरिसर गुण है, कि उमका ऊपरत तल हमेजा समतारक्षणकोल रहगा है। एक 'इ' की तरह बरगनृत्तियातं मल ( Lule ) के एक गुण हो कर जल क्षान्तेमें एक स्थानावतः हो

( १ ) गुप्तिका सौदगुप्त और राजपुत्रके समर्थ गुप्त, २००३ भाग ३ इदद का इस्तरक दिदीन है।

(२) गौरीकी, गौरीकी, बागवाय बादि प्रवासी की इकी इका उमर्ण कु है।

हूँकने मुग्न हो कर बाहर गिर पड़ता है और प्रथम मुग्नकी ऊँचाईके साथ ऊपर मुखके जलके ऊपर तलकी ऊँचाई समाप्त पड़ती है। इस प्रणालीके आधार पर कुहारा सञ्चनमें प्रस्तुत हो जाता है।

उद्योगमें साधारणतः इसी उपायसे कृत्रिम फूँकारे बनाये जाते हैं। अष्ट्राकियाकी छत पर एक टैंक (जल रखनेका लोहेका सहवर्षा) रख कर उसमें जल भर दिया जाता है। पीछे उस टैंकसे एक नल (जङ्गी कलका पाइप) लगा कर नीचेकी ओर मट्टीमें उसे फँसा देने है। उस नल योगमध्य पर जो एक टैप (चाबी) रहता है, उसे घुमानेसे जल नलमुग्न हो कर बहने लगता है और जल्द रत पड़ने पर उसे बन्द भी कर सकते हैं। अब उस नलकी बराबर ला कर यथास्थान पर निर्मित एक उत्कृष्ट चहयचूकेके मध्यस्थ मनोहर दृश्य स्तम्भ या पुस्तलीमें प्रवेश करावे। अब ऊपरवाला टैप छोड़ देनेसे फूँकारेके मुग्नसे जल निकलने लगता है।

स्वभावासिद्ध गुणसे जल नलके मुग्नसे निकल कर उपरिस्थित टैंकके जलतलके साथ समताराक्षणमें किया शील देगा जाता है। इसी कारण स्वभासत ही फूँकारे का जल स्वकीर्ण मुग्नसे बड़ी तेजी और धैर्यसे साथ निकलता है। किन्तु नलका मुग्न अपेक्षाएत मोटा होनेसे जलका वेग कम होते देगा जाता है। चाप भी (Pressure), जलकी उन्मुग्नगतिका अन्यतम कारण है। उपरिस्थित जलकी चापसे नीचेका जल अधिक चापयुक्त हो वेगवान् गतिसे प्राप्त होता है। इस चापके प्रभावसे नीचेका जल भी ऊपर उठता है। पम्प (Pump) नामक यन्त्र की प्रसिद्धाके बलसे जल चापयुक्त हो नलके मुग्नसे बाहर निकलता है। चापके धरसे जल स्वभासन ही ३० फुट ऊपर उठता है। इस कारण ऊपरमें जल नहीं खपाने भी चाप द्वारा फूँकारेका कार्य सम्पन्न हो सकता है।

भाज बल बहुतसे जीवीन मनुष्य घरकी सज्जानेके लिये अपने घरमें फूँकारा बनाते हैं। जङ्गीन मके लिये मूतन पूतन मुग्न भी आविष्टन हुआ है। बहुतसे लोगों ने धर्म कमानकी कामनासे गहमें, घाटमें इस प्रकारके अनेक फूँकारे बना दिये हैं। कलकत्ता, लीवस्पुर, हाइड्रा

आदि शहरोंमें सड़ककी बगलमें ऐसे अनेक फूँकारे देखने में आते हैं। श्रीपुन्दावन, दिल्ली आदि नगरोंमें भी बहुत पुराने समयके बने हुए फूँकारे दृष्टिगोचर होते हैं। कृत्रिम उपायसे नाना प्रकारके फूँकारे बनाये जाते हैं।

प्रकृत्यणका जो ऊपर उल्लेख किया गया है, बहुत प्राचीनकालसे उसे पवित्र मानते आ रहे हैं। सीता सुगुण आदि तार्थीमें आन भी पूजा देनेको विधि है। यूरोपमें भी पहले प्रकृत्यणके मानने बाल और पूजा होता थी। होरेसने 'फन्सुगान्दुसी' नामक रोमनगर्भके एक फूँकारेकी पवित्रताका उल्लेख किया है। प्रोकरानपानियों में (विशेषतः फरिन्थमें) हाकुंलेनियम और पम्पिके ध्वसा प्रशोकके मध्य वह निदर्शन पाया जाता है। रोम, ट्रेफो, पालिन, सानपिट्रो, पारी, भासल और सेन्ट्कृम गगर तथा इन्ड्रेएटके स्फटिक प्रासादका अति अद्भुत शिल्पमय भास्करकीसिंसियुक्त फूँकारे जगत्में अतुल्य है।

- २ जलका महीन छौंटा।
- फूँहो (हि० खी०) १ सूक्ष्म जलकण, पानीका महीन छौंटा। २ महीन महीन बूँदोंका भण्डो।
- फूँक (हि० खी०) १ वह हवा जो ओठोंकी चारों ओरसे प्यार कर भौंकेसे निकली जाय। २ मात्र पद कर मुहसे छोड़ी हुई वायु जो उस मनुष्यकी ओर छोड़ी जाती है जिस पर मन्त्रका प्रभाव डालना होता है। ३ मांस, मुहकी हवा।
- फूँपना (हि० फि०) १ ओठोंकी चारों ओरसे हवा कर भी बसे हवा छोड़ना। २ प्रकाशित कर देना, चारों ओर फैला देना। ३ दुःख देना, सताना। ४ नष्ट करना, व्यय व्यय कर देना। ५ शंभ, वास्तुरी आदि मुहसे बनाए जानेवाले वाजोंकी फूँक कर बजाना। ६ मन्त्र आदि पद कर किसी पर फूँक मारना। ७ फूँक पर प्रकृत्यण करना। ८ मस्म करना, जलाना। ९ धातुओं की रसायनकी रीतिले जदी बूँदियोंकी सहायतासे भरण करना।
- फूँका (हि० पु०) १ माथी या नलाने माग पर फूँक मारना, फूँक मारनेकी क्रिया। २ फोडा फरोग। ३ बाम आदिकी नली जिससे फूँका मारा जाता है। ४ बसिकी नलीमें चलन पैदा करनेवाली ओषधि



भर कर और उर्द स्नानमें लगा कर फूकना। पेना  
 यन्त्रमें मार्ये स्नानमें दूध चुरा लहो मरनी, माग दूध  
 बाहर निकाल देनी है।

फूँद ( हि० स्त्री० ) फुल्ल, भल्ला।

फूँ ( हि० स्त्री० ) १ घोडा फूँ या पुत्रबुलीका समूह  
 जो गधाले समय ऊपर आ जाता है। २ फूक दी, झुंझी।  
 फूट ( हि० स्त्री० ) फूँ की लिया या भाव। २ वीर,  
 सनबा। ३ एक प्रकारकी बडी बकडो जो गैलमें होती  
 है और पकने पर फूट जाती है।

फूटना ( हि० स्त्री० ) १ यह टुकड़ा जो फूट कर अलग हो  
 गया हो। २ जगामे जोड़में होनाशली पोडा।

फूटना ( हि० कि० ) १ भग्न होना, गरा पस्तुभोंका गड  
 गड होना। २ पहा छोडना, दूसरे पक्षमें हो जाना। ३  
 जालाके रूपमें अलग हो कर किसी मोधमें जाना। ४  
 सङ्ग या समूहमें अलग होना, साथ छोडना। ५ विद्व  
 कर निकलना, मोतरमें भोंके साथ बाहर आना। ६  
 ध्वस्त होना, प्रकानित होना। ७ बोचना, मुहमें शब्द  
 निकलना। ८ पैसी बस्तुका फटना निकले ऊपर छिड़का  
 हो और नीचे या ना पीला हो अथवा गुणायम या पतनी  
 चीज भरो हो। ९ गड होना, बिगडना। १० शरीर पर  
 दागे या धावके रूपमें प्रकट होना। ११ अरपय, ओट या  
 वृत्तिके रूपमें प्रकट होना, अशुद्ध, जाला आदिका  
 निकलना। १२ अ वृत्तित होना, पट कर अशुद्धा निक-  
 लना। १३ प्यस्त होना, फीटना। १४ स मुक्त न रहना,  
 नियमकी दशामें न रहना। १५ पस्तुलित होना, बनीका  
 लिटना। १६ जख्दना मुहमें निकलना। १७ जोड़ोंमें  
 दुर् होना। १८ पानी या और किसी पतली चीजका रस  
 कर इस धारमें उस धार निकट जाना। १९ मुल बालका  
 प्रकट होना, किसी भेदका खुल जाना। २० पानीका इगला  
 गीठ जाना, बि उसमें छोट छोटे बुलबुलोंके समूह  
 दिखाई दे। २१ लगीका गडबडाने लगा। २२ रीस या  
 पदरेका दबावके कारण टट जाना।

फूटा ( हि० वि० ) १ भग्न फूटा हुआ। २ ओंठोंका  
 दुर्।

फूटकार ( सं० पु० ) मुहमें तथा छोटेका टट, फूटकार।  
 फूटा ( हि० पु० ) भागका बडबोड, फूटोका पति।

फूतो ( हि० स्त्री० ) बापकी बहन गुआ।

फूक ( हि० स्त्री० ) १ फूक देना।

फूक ( हि० पु० ) गर्भाधानपाले पोधोंमें सं  
 ग्रथि निममें फूक उपपन्न कर्णीकी गन्धि  
 होती है, पुण्य, समुद्र। बडे फूँके पाग भाग  
 होते हैं--कटोरी, एगपुट, ( पगडी ), गर्भवेज  
 और परागवेज। ताकके जिन चीं छोर पर  
 फूकका माया ढाना रहता है उसे कटोरी कहते हैं।  
 उस कटोरीके चारों ओर जो हवी पत्तियां मी होती हैं  
 उनके पुटके भीतर कर्णीकी दशामें फूक बद्ध रहता है।  
 ये आकारण पर बंधने लहो, मिय मिय पोधोंमें भिन्न  
 भिन्न आकार प्रकाशके होते हैं। पु छोरे आकारका जो  
 मध्यभाग होता है उसके चारों ओर रंग विरगके  
 दल निकले होते हैं। ये सब दल पगडी कहलाते हैं।  
 फूँकीकी जोभा इहो रगीकी पराशियोंके कारण होती है।  
 परन्तु फूँमें प्रधान वस्तु बीजकी पु बी हो है जिन पर  
 परागवेज और गर्भवेज होता है। परागवेजके  
 मिर पर एक छोटी टिकिया मी होती है इयो टिकियामें  
 पराग या धूल रहती है। यह परागवेज पु बनीउप  
 है। गर्भवेज ठीक मध्यमें होने है। उनका विनाय भाग  
 या आधार बोजके आधारका होता है जिसके अन्तर गगान्ठ  
 बद्ध रहते हैं और उनका लीर वृद्ध गीठ मा होता  
 है। जब परागवेजका पराग भट्ट कर गमपदरके इन  
 मुह पर पडता है तब नीतर ही नीतर यह गमपदीमें  
 जा कर गगान्ठकी गर्भिक करता है जिसमें घोरे छोरे यह  
 बीजके रूपमें होता जाता है और फाणी उपवास होता  
 है। पुण्य देना।

२ छोरे वृद्ध, मन्त्रे दाय। ३ वाद मय जो पहली बाकका  
 उत्तरा हो, बडी देना जगध। ४ विप्रीका यह रण जो  
 मानिक धर्ममें निकलता है। पुण्य देना। ५ वं मउ आदि  
 की गीठ वाट या पु बी जिन जागधे जिधे लश, तिकार  
 के जोड भादि पर जडो है, पुलिया। ६ फूँके  
 आधारके से वृं या गडानी। ७ मियोंके पदमनेका  
 फूँके आधारका गहना। ८ मियगर्भा जगती बला पर  
 पडे दूध गीठ दमरते मने जो उमरे दूध माटुन होने है,  
 मुल। ९ अगकी चिमकारी। १० भाट बीनी भादि का

उत्तम भेद । ११ मत्त, मार । १२ यह अग्नि जो शत्रु जलनेके पीछे बच रहती है और जिसे हिन्दू किसी तीर्थ या मन्त्रों के बनेके लिये ले जाते हैं । १३ गर्भाशय । १४ घुसने या वैरकी गोल हड्डी, टिकीया । १५ यह पत्तर या बरफ जो किसी पत्ते या द्रव पदार्थको सुखा कर जमाया जाता है । १६ सूखे हुए मांस या भागकी वस्तु । १७ तावे और रागेके मेलसे प्रस्तुत एक मिश्र या मिली जुली धातु । यह धातु चादीकी तरह उज्ज्वल और स्वच्छ होती है । इसमें दही या और घट्टी चीजें रखनेसे यह विगड़ती नहीं । उत्पन्न फूलको बेधा कहते हैं । साधारण फूलमें चार भाग ताँबा और एक भाग राँगा तथा बेधा फूलों १०० भाग ताँबा और २० भाग राँगा होता है । बेधा फूलमें कुछ चादी भी पड़ती है । यह धातु बहुत परी होती है और आघात लगाने पर चट्ट हट जाती है । इससे लोहे, कठोरे, गिलास, आयरनोरे आदि बनाये जाते हैं । यह धातु फालसे बहुत मिलती जुलती । प्रमेद केवल इतना ही है, कि फालसें ताँबेके साथ जलतेका मेल रहता है और इसमें घट्टी चीजे रखनेसे विगड़ जाती हैं ।

फूल (हि० खी०) १ प्रफुल्ल होनेका भाव, उरसाह । २ प्रसन्नता आनन्द ।

फूलकारी ( हि० खी० ) बेलघुटे बनानेका काम ।  
 फूलगोभी ( हि० खी० ) गोभीकी एक जाति । इसमें मंज रियोंका बन्धा हुआ टोम पिण्ड होता है जो तरकारीके काममें आता है । इसके बीज आषाढमें बुआर तक बोते हैं । पहले इसके बीजको पनोरो तैयार करते हैं । जब बीजे कुछ बड़े होते हैं, तब उन्हें उखाड़ उखाड़ कर बगारियोंमें लगाते हैं । कहीं कहीं कई बार एक स्थानमें उखाड़ दूसरे स्थानमें लगाए जाते हैं । दो बार्द महोनि पीछे फूलोंकी घु डिपा नजर आती है । उस समय बीजों से बचावके लिये बीजों पर राग छिनराई जाती है । कलियोंके फूट कर अलग होनेके पहले ही बीजोंको काट लेते हैं ।

फूलडोल ( हि० पु० ) शत्रु युद्धकादशोके दिन होनेवाला एक उत्सव । इस दिन मगवान् हत्वाचन्द्रके उद्देश्यमें फूलोंका डोल या झुला मजाया जाता है । यह उत्सव

विरोध मधुरा और उसके आसपासके स्थानोंमें मजाया जाता है ।

फूलदौक ( हि० पु० ) भारतके सभी प्रान्तोंमें मिलनेवाला एक जातिकी मच्छी । यह हाथ भर लम्बो होती है ।

फूलदान ( हि० पु० ) १ पोतल आदिना बना हुआ बरतन । इसमें फूल सजा कर देवताओं के सामने रखा जाता है । २ गुग्गुलु रत्नना एक बरतन । यह कंच, पोतल, चीनी मिट्टी आदिना मिश्रणसे आकारणा होता है ।

फूलदार ( हि० वि० ) जिस पर फूल पत्ते और बेजुड़े काट कर या और प्रकारसे बनाये गये हों ।

फूलना ( हि० वि० ) १ पुष्पित होना, फूलने से युक्त होना । २ आस पासकी सतहसे उठा हुआ होना, सतहका उभरना । ३ विरामित होना, गिलना । ४ भीतर किसी वस्तुके भर जानेसे अधिक फैल पा बढ जाना । जैसे हवा भरनेसे गेहूँ फूलना, गाल फूलना आदि । ५ आनन्दित होना, प्रसन्न होना । ६ सुदृष्टता, कटना । ७ शरीरके किसी भागका आम पामको सतहसे उभरा हुआ होना, सूजना । ८ मूल्य होना, मोटा होना । ९ घमण्ड करना, गर्व करना ।

फूलविरज ( हि० पु० ) बुआरके प्रारम्भमें होनेवाला एक प्रकारका धान । इसका चान्न अच्छा होता है ।

फूलमती ( हि० खी० ) एक देवीका नाम । यह शीतल रोगके एक भेदकी अधिष्ठात्री देवी मानी जाती है । कहते हैं, कि यह राधा वेषुका कन्या है । नीच जातिके लोग इसकी उपासना करते हैं । २ एक प्रकारकी रागिणी । फूलमाली—युवप्रदेशवासि माली जातिकी एक जाति । फूल बेचने और फुलवाडीकी रक्षा करता राजा जातीय व्यवसाय है । तैलङ्ग देशके फूलमाली व्यवपनमें ही पुत्र उन्माका विवाह करते हैं ।

फूलघारा ( हि० पु० ) चिट्ठी नामका पेड़ ।

फूलमैपेठ ( हि० वि० ) जिस बेल या गायका एक सोंग दहनो और और दूसरा बार्द औरकी गया हो ।

फूलसिंह—एक विख्यात अफाकी मस्दार । मालय देशमें ये महावीर रणविष्के विरुद्ध गठे हुए थे । पीछे १८१४ ई०में ये दीवान मोतीरामने धृत हा गहोर लिये गये । इन्होंने सिंग युद्धमें अच्छा काम बजाया था । १८२३ ई० की नौ गहरके युद्धमें ५ मारे गये ।

पूजा ( हि० पु० ) १ सांख्य शास्त्र । २ मानेका सम्पत्तियों या उपासकों का पूजा करना । ३ शक्ति या एक योग । इसमें उमका साक्षात्कार सुख जाता है और मुक्ति काटिफण्ड आते हैं निरममें यह मर जाता है । ४ भांगका एक योग । इसमें चार्गी पुत्रों पर सफेद दूध या छोटा सा घट जाता है, पूज्यो ।

पूज्यो ( हि० स्त्री० ) १ सफेद दूध जो भांगकी पुत्रों पर पड़ जाता है । इसमें मनुष्यों कायकी दृष्टि कुछ कम हो जाती है । यदि यह दूध सांख्य शास्त्रों पर या उमके तिल पर हो, तो दृष्टि विलुप्त हो जाती है । २ एक प्रकारकी मन्त्रो । ३ मयुगके आसपास होनेवाली एक प्रकारकी कर्त्त ।

पूज्य ( हि० पु० ) १ छपर आदि छातनेकी मूषो हुए लम्बी घाम । २ गुण वृष, गर, तिरा ।

पूज्य ( हि० वि० ) १ जो किसी कायकी मुखाङ्कणमें न कर सके, जिसकी चाल दाल घेड़ गो हो । २ जो देवतामें प्रोत्तर न हो, भद्रा ।

पूज्य ( हि० वि० ) इष्ट देवो ।

पूज्य ( हि० पु० ) कर्मा गाल ।

पूज्यो ( हि० स्त्री० ) १ मांकी महोत्त पृथ । २ महोत्त वृत्तोंकी भवा, भागी ।

पूज्य ( हि० स्त्री० ) पूजनेकी विद्या या भाग ।

पूज्य ( हि० वि० ) १ इस प्रकारकी गति देना कि दूर जा गिरे, भवनेमें दूर गिरना । २ एक स्थानमें से जा कर और स्थान पर जाना । ३ वृत्तों आदिमें पठना, दूर गिन गिरना । ४ अक्षय्य करना, कर्मों गर्च करना । ५ यथासा, से कर धुयाना या हिलाया सुनाया । ६ उठाना । ७ परिवर्तना करना, छोड़ना । ८ रूप आदि के मन्त्रों की, पौमा मोटी आदिवा हाथों से कर इस लिये जमीन पर जाना कि उनकी स्थितिके अनुसार हार जानका नियम हो । ९ गंधाया सोना । १० अमासपानीमें स्था उपर छोड़ना या करना । ११ अनाया पाठा पुजा कर दूधरे पर आर डाल देना ।

पूज्य ( हि० वि० ) १ पूजनेका काम करना ।

पूज्य ( हि० पु० ) विद्या शिष्यो ।

पूज्य ( हि० स्त्री० ) १ शक्ति शास्त्र, कर्मका विद्या । २ कर्ममें बोधा हुआ बोध रूपका कर्मका । ३ पूज्य, लोच ।

पूज्य ( हि० वि० ) १ लिय या लोचकी सम्यक् बोधकी भाग या उंगलोंने सम्यक् । २ मनुके नामोंकी उन्म पन्त कर मन्त्रों तरह गिरना । ३ उंगलोंने विद्या कर सुख मिलाना ।

पूज्य ( हि० पु० ) १ कर्मका विद्या २ कर्मका, पशुका । ३ धोतीका यह भाग जो कर्मका लिये कर बोधा गया हो । ४ सुतकी वही लोच, अटेन पर लपेटा हुआ सूत । ५ मिर पर लपेट कर बाधोका गन्त, छोटा पगल्ये ।

पूज्य ( हि० स्त्री० ) अटेन पर लपेटा हुआ सुत, गुणका विद्या ।

पूज्य ( अं० वि० ) कौनो देवो ।

पूज्य ( हि० वि० ) शास्त्राद्वन्द्वित होता, मगा होना ।

पूज्य ( हि० वि० ) खोला, या गंगा करना ।

पूज्य ( स० पु० ) स्थापते यदाते इति स्थाप्य ( केवली ) । १०३३ इति नक्ष्, का जन्मदेवता प्रान्तरे पार्थ । मदीन मदीन युष्पुत्रोका यह गटा हुआ समुद्र जो पाना या और किसी ग्रह पार्थके मूष हिला, यासाधने हीन नेम उन्नत दिग्गर्भ पठता है । पूज्य देवो ।

पूज्य ( स० पु० ) अथवा यागु नक्ष् या पशुधर्मि ।

पूज्य ( स० स्त्री० ) पूज्यनेतीति इति निर्दि, डीप । नक्षत्रिण ।

पूज्य ( स० पु० ) तन्त्रविद्यो ।

पूज्य ( स० पु० ) स्थापते यदाते इति स्थाप्य ( केवली ) । १०३३ इति नक्ष्, का जन्मदेवता प्रान्तरे पार्थ । अथ उता हुआ युष्पुत्र । के देवो । संस्त्रय पार्थय— हिल्पर, अविशक, हिल्पर, समुद्रक, जयहाम, कौश । पूज्य जन्मका नक्षत्र दन्त होना । कौश को मूषणका भी व्यवहार करने है ।

पूज्य ( स० पु० ) पूज्यनेतीति इति निर्दि, डीप । नक्षत्रिण ।

पूज्य ( स० पु० ) पूज्यनेतीति इति निर्दि, डीप । नक्षत्रिण ।

फेनका (स० ग्री०) फेनेन वायनीति कै क-टाप् ।  
जलपाक तण्डुलचूर्ण, पानीमें पका हुआ चाण्डका चूर ।  
० अविष्टकचूर्ण, रोडेका पेड ।

फेनगिरि—मिथुनदीके मुहानापक्षी एक पक्षी ।

फेनदुग्ध (स० ग्री०) फेन इय दुग्ध यस्या । दुग्ध  
फेनीशुष्य, दूधफेनी नामका पीप्रा जो दूधके काममें आता  
है । यह एक प्रकारकी दुधिया घास है ।

फेनप (स० पु०) १ स्वयं पतित फणादिजोयो मुनि  
त्रियोय । फेन पिवतीति फेन पा-क । (वि०) ० फेनपान  
'कर्त्ता, फेन पीनेवाला ।

फेनमेह (स० पु०) प्रमेहमेह । इममें वीर्य फेनरी तरह  
भोड़ा भोड़ा गिरता है । यह इन्फेज प्रमेह है ।

प्रमेह देखो ।

फेनमेहिन (स० वि०) फेनमेह अस्त्यर्थे इति । प्रमेहरीग  
युक्त ।

फेन (स० वि०) फेनोऽस्त्यस्येति फेन ( फेनादि  
सत्त्व । पा ५।२।६६ ) इति चान्-लच् । फेनयुक्त, फेनिल ।

फेनयत् (स० वि०) फेनोऽस्त्यस्येति ( फेनादि-लच् ।  
पा ५।२।६६ ) इत्यत्र अयतरस्यामित्यनुसृते पक्षे मनुप्  
मभ्य यः । फेनिल, फेनयुक्त ।

फेनवाहिन (स० पु०) फेनयत् शुभ्रता वहतीति वह णिति ।  
वर्ष, कपडा ।

फेना (सं० ग्री०) फेनोऽस्मिन् बाष्पयेनास्या फेन अच्  
टाप् । १ सातलासप । ० शीतुण्डभेद ।

फेनाम (सं० ग्री०) फेनस्याम । बुडबुड, बुन्बुना ।  
फेनायमान (स० वि०) फेनामुद्रमतीति फेन ( फेनाच्चेति  
वाच्य । पा ३।१।१५ ) इत्यल्प वासितोपपत्त्या षयट्-त्ता  
शानच् । १ उल्लिखित फेन दुग्धादि । फेनाय आचरति  
षयट्-शाणच् । २ फेनकी भांति आचरणयुक्त ।

फेनागति (स० पु०) फेन वय धननिर्वास यस्य । इन्द्र ।  
इन्द्रो फेन द्वारा घृतासुरका घष किया था, इसामें  
इतना यह नाम पडा है । दूनीमागयतमें लिखा है, कि घृता  
सुरके साथ जब इन्द्रका घोर संग्राम छिदा, तब इन्द्र सुर  
रथमें जायु पक्ष करनेका उपाय सोची लगे । इसी समय  
इन्द्रको समुद्रमें पर्यन्तके समान ऊनी फेनराशि दिखाई  
दी । इन्द्रो अतिशय भक्तिपूर्वक उस फेनको ले कर

परमाराधना भगवतोका स्मरण किया । भगवतोने भी  
प्रसन्न हो कर उस फेनामें धामलक्षण प्राप्त किया । इधर  
घञ् भी उस फेनापाण्डु छाग धानुत हुआ । अब इन्द्रने  
उस फेनादून घञ्को घृषे ऊपर फेना निम्नमें धूव उम्मी  
समय घडामसे घृषो पर गिरा और मग गया । इसी  
प्रकार फेनादून अग्नि द्वारा इन्द्रने घृषता संहार किया  
था । ( देवीभाग-०।१।५५-५६ )

फेनिका (स० ग्री०) फेन इय आगतिरस्त्यस्या फेन  
उन-टाप् । पञ्चान्नविशेष, फेनो नामकी मिठाई । इसकी  
प्रस्तुत प्रणाली डोले खुधे हुए मैदको घालीमें रख  
कर पीके साथ चारों ओर गोंड बढ़ाव । फिर उसे कई  
बार लपेट कर बढ़ाये । इस प्रकार बढ़ाता और लपेटता  
चला जाय । आरिग नाममें तल कर चाजनीमें पागते या  
योंहो काममें गते हैं । यह मिठाई दूधमें निगो कर  
गान् जाती है ।

फेनिल (स० ग्री०) फेनोऽस्त्यस्येति ( फेनादि-लच् ।  
पा ५।२।६६ ) १ क्रीकफल, वेरका फल । २ मदनफल,  
मैतफल । ३ अविष्टकचूर्ण रोडेका पेड । ४ बदरीपृष,  
वेरका पेड । ५ जङ्गलाली, हिलमोच । । (वि०) ६ फेन  
युक्त, फेनवाला ।

फेनो—१ नोभाषागो जिलान्तगत एक उपविभाग । भूपरि  
माण ३४३ वर्गमील है ।

० पूर्ववर्द्धमें प्रवाहित एक नदी । यह विपुगफे  
पहाडी प्रदेशमें निकल कर दक्षिण पश्चिमकी ओर बह  
गई है । यह नदी चट्टग्राम और विपुगफे पार्थस्यप्रदेशके  
बीच ही कर बहती हुई बङ्गोपसागरमें मिल गई है ।

फेनी (हि० ग्री०) लपेटे हुए मत्तके लच्छेने आकारकी  
मिठाई । फेनिहा देखो ।

फेन्य (सं० वि०) फेन यत् । फेनभय, जो फेनमें  
निकले ।

फेकडा (हि० पु०) जगोके मोतर धैरके आकारका यह  
अवयव जिम्नकी क्रियामें जोष माम लेते हैं ।

यक्षाजायके अल्पतर पायुनालमें भोडो दूर नीचे दो  
बनके इधर उधर पड़े रहते हैं । इन बनको में बल्यन  
मामका एक एक लोपडा दीना ओर रहता है । ये  
धैरके आकारके और छिद्रमय होते हैं । ये दो दीनों लोपडे

दृष्टि और धार फेफड़े कहलाते हैं। दृष्टि फेफड़ा धार फेफड़े में जोड़ा और नार्स होता है। फेफड़े की आहृति बॉरामे पटी हुई मागगीनी पार मी होती है। विमरन सुवीरग नीर माग ऊपरनी धोर होता है। फेफड़ाका निरगनी चौडा माग उदरनापने पयागपने अलग करीराने परदे पर रमा रहता है। इतिने फेफड़ेमें दो दरने होती है। हा अरार के कारण यह सोा प्राणीमें विमरन निगां पडता है। बाण फेफड़े-मं पर हो अरार होनी है निममें यह दो हो भागो में व डा दिगां देना है। फेफड़े विमने धीर चमकीले होने हैं और उा पर कुछ निमिषा मी पडी रहती है। सुवाअरगामें मनुष्यके फेफड़ेका रग कुछ नीलापन लिये भूग होग है। गमरग निगुके फेफड़ेका रंग गहरा लाल होना है। ओ उरगके उपरान्त सुगवी रहता है। दोनो फेफड़ोंका यत्रा मी मया मेरके लयमग होग है। मन्ध मनुष्यके फेफड़े वायुमें अरे रहनेके कारण जग्मे लपके होते हैं और जग्में नहीं डूबते। परन्तु जिल्ले मृमोपिया, मय धादि रोग होते हैं उनके फेफड़ेका रग भाग टोम हो जाता है और जलमें डालनेसे डूब जाता है। मरके मन्धतर निगु अमम नहीं लेता, हम कारण उरग फेफड़ा जलमें टूथ जायगा। परन्तु ओ निगु उरगन हो पर कुछ भी अंधित रहा है, उमका फेफड़ा जग्में नहीं डूबता। प्राणी अमर हाग ओ वायु नीरते है यह अमम नाउ हास फेफड़ेमें पडूवती है। हम दे रूंधे नीने भीडी दूर जा कर अममालके इधर उधर दो बनने फूटे रहते है जिदें जग्मी धीर बां मनुष्यप्रानिका चलते है। फेफड़े के भीतर मियन बनते हा ये मनुष्यप्रानिका उमनेमर बहु-म। जायासीमें बँट जाती है। फेफड़ेमें जग्मेके फण्डे वायुप्रानिका लघीनी हड्डके पानके कानो रहती है पर भाग जा कर उनी नीं जायासीमें विमरन होग जाती है इवो रवो जागार पना और मृषके कानमें होनी जाती है। रदा मर, दि से जायक फेफड़ेके मर भागामें पालके मड्डा फौनी रहता है। इग्मे ममर हाग आरनिन वायु फेफड़े के मर भागामें पडूवती है। फेफड़ेके बहुमे हाउ पाउ विमरन होने है। ये वायु आरिषा हास भीतर जाती

उमे अमम भीर ओ बाहर निमरनी जागी है, उमे प्रभास कहते है। ओ वायु भीतर मीनी जाती है उरामे का वन, जल्गप भीर हागिवाकर पदप बद्द कन मारामें होते हैं, तथा आरिषाग मीम ओ प्राणिवेधे लिये आयन्यक है अधिक मारामें होना है। परन्तु प्रभासमें वारव या मड्डारव वायु अधिक भीर आरिषाका कन रहती है। जरीरके मध्य ओ अनेन वामापनिन निगार होने रहती है उनके कारण अदरीनी वारव मीम बनती रहती है। हम मीमके मरवमे रलमें कुछ कालापन आ जाता है। यह काल रा जरीरके मर भागामें जमा हो कर दो महानिगमोंके हास हड्डके दृशिन कोममें पडू-नगा है। हड्डके यह दृशिन रा किर पुपुमाय घमता हास रीनी फेफड़ोंमें आ जाता है। यहाँ राका बहुमो कारण मीम बाहर निमरन जाती है और उरके रगामें आरिषाका आ जाता है, हम प्रका फेफड़ोमें जा कर रा हड्ड हो जाता है।

फेफड़ा ( हि० मी० ) गमो वा सुगरीर भीडोंके ऊपर चमडेको मृगी लठ, व्यास वा गमोमे मृगे टूथ भीड वा चमडा।

फेफरी ( हि० मी० ) फरही देवी।

फेर ( सं० पु० ) फे इति मन्ड राति मृश्रासीति वा प्रधमे व । १) गाल, गीदड।

फेर ( हि० पु० ) १ वखर, पुमाप । २ परिपलंग, उलट पुदट। ३ मोड, पुवाय । ४ मारामरम, उरधन । ५ मम, संजय । ६ मड्डपन, वाउपामो । ७ बर, अन्तर । ८ मय, अंजाल । ९ हागि, टोडा । १० मृग मेलका प्रभाव । ११ सुगि, उगाय । अदल मरडा, पपड । फेरड ( सं० पु० ) फे इत्यन्त प्रधेन मन्मोति मन्ड मन्ड । १) गाल, गीदड, ।

फेरना ( हि० वि० ) १ निमर दिगामें मपून बनना, गति बदलना । २ मरडलवाक गति होना, चउर देना । ३ मीडला वारम बनना । ४ छे टला, मरीड वा । ५ यरामे यहा लक मरनी बनना, विमो परन्तु पर चोमे रल का ररर उधर से जाता । ६ मीउ चाना, जियरमे धारा । ७ रमो आर मेरना वा चनाना । ८ दिमके फामने मापा हो उरके फाम पुन भेकना । ९ मोड भागिरे ।

टीफ चर्चोमी शिक्षा देना, चाल चराना । ६ सबके सामने ले जा कर रगना, घुमाना । १० प्रचारित कराना, घोषित करना । ११ पलटना, बल्लना । १२ पीतना, तह चढ़ाना । १३ पार्श्व परिवर्तन करना, एक ही स्थान पर स्थिति बदलना । १४ स्थान या क्रम बदलना । १५ अल्पस्त करना, बार बार दोहराना ।

फेर पलटा ( हि० पु० ) द्विरागमन, गीना ।

फेरफार ( हि० पु० ) १ परिवर्तन, उलट फेर । २ चजर, घुमाव फिराव । ३ अन्तर, बीच । ४ टालमटोल, बहाना ।

फेर ( स० पु० ) फे इति रचि यस्य । १ अगाल, गोदड़ । २ गह्वर । ( हि० ) ३ धूर्त, चालवाज । ४ हिम्न, दुःख पहु घानेयाला ।

फेरवट ( हि० स्त्री० ) १ फिरनेका भाव । २ लपेटनेमें एक एक बारना घुमाव । ३ घुमाव फिराव, पेच । ४ अन्तर, फर्क ।

फेरया ( हि० पु० ), मोनेका यह छल्ला जो तारकी दो तीन बार लपेट कर बनाया जाता है, लपेटुआ ।

फेरा ( हि० पु० ) १ परिव्रमण, चजर । २ लीट कर फिर आना, पलट कर आना । ३ श्वर उधरसे आगमन । ४ लपेट, मोड़ । ५ बार बार आना जाना ।

फेराफेरी ( हि० स्त्री० ) हेरा फेरी, श्वरका उधर ।

फेरी ( हि० स्त्री० ) १ प्रदक्षिण, परिव्रमा । २ फेरी देवो । ३ फेरी देवो । ४ यह चर्चो जिस पर रस्सी पर पेठन चढ़ाए जाती है । ५ योगी या फकीरका किन्नी बस्तीमें भिक्षाके लिये बराबर आना । ६ फेरी बार आना जाना, चजर ।

फेरीयाला ( हि० पु० ) घूम घूम कर सौदा बेचनेयाला व्यापारी ।

फेर ( सं० पु० ) फे इति प्रादेशे रीतीति रु मितद्र्वा दिव्यात् इ । अगाल, गोदड़ ।

फेरआ ( हि० पु० ) फेरी देवो ।

फेरोग—मन्त्रान् प्रदेनाके मन्त्रधार मिलेका एक नगर । यह अक्षा० २३ १' उ० तथा देशा० ६० २५' पू०के मध्य अर स्थित है । जासण्या चार हजारके फेरोग है । १७८६ ई०में महिमुत्तान टीपूमुत्तान इस नगरको उक्त चिलेकी राजधानी कायम कर कश्चित् पासिलेको बहा ले गये थे ।

१६६० ई०में अङ्गरेजोंने इस नगरको अधिकार कर धूम कर डाला । यहां खपडेका एक बड़ा कारखाना है ।

फेरीती ( हि० स्त्री० ) टूटे फूटे गपरेलीकी छाननसे निशाल कर उनके स्थानमें नये नये गपरेले रखनेकी क्रिया ।

फेर ( सं० स्त्री० ) फेर्यते दूरे निक्षिप्यत इति फेर घञ् । भुक्त समुञ्जित, उच्छिष्ट द्रव्य, जूटा ।

फेर ( अ० पु० ) कार्य, काम ।

फेर ( अ० पु० ) अर्थनकार्य, जिसे काममें सफलता न हुई हो ।

फेरक ( सं० पु० ) फेर स्वार्थे सहाया वन । उच्छिष्ट, जूटा ।

फेला ( सं० स्त्री० ) फेर्यते इति फेल ( श्लोथ इमः । ७ ३।३।१०६ ) इति अ, टाप् । उच्छिष्ट वस्तु, जूटा पदार्थ ।

फेलि ( सं० स्त्री० ) फल-हर । उच्छिष्ट, जूटा ।

फेलिका ( सं० स्त्री० ) फेलिरेष स्वार्थे वन टाप् । उच्छिष्ट, जूटा ।

फेली ( सं० स्त्री० ) फेलि टोप । उच्छिष्ट, जूटा ।

फेलो ( अ० पु० ) समासद, सम्य ।

फेत् ( अ० पु० ) जमाया ह्वा ऊन, नमदा ।

फेस ( अ० पु० ) १ चेहरा, मुँह । २ सामना । ३ घड़ी-का सामना भाग जिस पर सुइ और अङ्क रहते हैं । ४ टाइपका यह ऊपरी भाग जो छपने पर उभरता है ।

फेहरिस्त ( हि० स्त्री० ) रिहमत दियो ।

फेसो ( अ० स्त्री० ) १ देवनेमें सुन्दर, रूप रगमें मनोहर । २ दिवाऊ, तडक महक का ।

फेकूरी ( अ० स्त्री० ) फारगाना ।

फेज ( अ० पु० ) १ बुद्धि, लाम । २ परिमाण फल ।

फेज अलो—१ दिल्लीयामा एक सुसलमान कवि । इनका नाम मोर फेजअलो है । इनके पिता मोर महम्मद कवि भी एक विषयात कवि थे । दोनों ही १७८५ ई०की विहा नगरमें विद्यमान थे ।

२ दीवान फेज नामक पारस्य-भाषाके संगीतमध्य रचयिता । ये लखनऊ-राज महम्मद अली शाहके सम सामयिक थे ।

दहिने और बाएँ फेफड़े फटलते हैं। दहिना फेफड़ा बाएँ फेफड़े में चौड़ा और भारी होता है। फेफड़े की आवृत्ति दोबारे फटी हुई नागगीनी फात्र सी होती है। जिम्मा चुनीला जीव भाग ऊपरकी ओर होता है। फेफड़ोंका निचला चौड़ा भाग उदराशयको वक्षशयमे अलग करनेवाले परदे पर रखा रहता है। दहिने फेफड़े में दो दरारें होती हैं। इन दरारोंके कारण वर तीन भागों में विभक्त दिखाई पड़ता है। बाएँ फेफड़े में एक ही दरार होती है जिम्से यह दो ही भागों में बँटा दिखाई देता है। फेफड़े चिकने और चमकीले होते हैं और उन पर कुछ चिचिया सी पड़ी रहती है। युवावस्था में मनुष्यके फेफड़ेका रंग कुछ नीलापन लिये भूरा होता है। गर्मस्थ शिशुके फेफड़ेका रंग गहरा लाल होता है। जो जन्मके उपरान्त गुलाबी रहता है। दोनों फेफड़ोंका घजा सेर सजा सेरके लगभग होता है। स्वस्थ मनुष्यके फेफड़े वायुसे भरे रहनेके कारण जलमे हलके होते हैं और जलमें नहीं डूबते। परन्तु जिन्हें न्यूमोनिया, श्वे थादि रोग होते हैं उनके फेफड़ेका रंग भाग दोस हो जाता है और जलमें डालनेसे डूब जाता है। गर्भके अन्तर्गत शिशु श्वास नहीं लेता, इस कारण उसका फेफड़ा जलमें डूब जायगा। परन्तु जो शिशु उत्पन्न हो कर कुछ भी जीवित रहा है, उसका फेफड़ा जलमें नहीं डूबता। प्राणी श्वास द्वारा जो वायु रोंचते हैं वह श्वास नाल द्वारा फेफड़े में पहुँचती है। इस दे डूबेके नीचे घोड़ी दूर जा कर श्वासनालके इधर उधर दो फलने फूटे रहते हैं जिन्हें वृहनी और वाई वायुप्रणालिया कहते हैं। फेफड़ेके भीतर प्रवेश करते ही ये वायुप्रणालियाँ उसरोत्तर बहुत सी शाखाओंमें बँट आती हैं। फेफड़े में जानेके पहले वायुप्रणाली लचीली हड्डीके छल्लोंके रूपमें रहती है, पर भीतर जा कर ज्यों ज्यों शाखाओंमें विभक्त होती जाती हैं त्यों त्यों जापाएँ पतनी और सूतके रूपमें होती जाती हैं। यहाँ तक, कि ये शाखाएँ फेफड़ेके सब भागोंमें जालके सदृश फैली रहती हैं। इन्हींमें श्वास द्वारा आकर्षित वायु फेफड़ेके सब भागोंमें पहुँचनी है। फेफड़ेके बहुतसे छोटे छोटे विभाग होते हैं। जो वायु नासिका द्वारा भीतर जाती

उसे श्वास और जो बाहर निकाली जाती है उसे प्रश्वास कहते हैं। जो वायु भीतर रोंची जाती है उसमें कार वन, जलवाष्प और हानिकारक पदार्थ बहुत कम मात्रामें होते हैं, तथा आक्सिजन गैस जो प्राणियोंके लिये आवश्यक है अधिक मात्रामें होती है। परन्तु प्रश्वासमें कारबन या अद्धारक वायु अधिभू और आक्सिजन कम रहती है। शरीरके मध्य जो अनेक रासायनिक क्रियाएँ होती रहती हैं उनके कारण जहरीली कारबन गैस बनती रहती है। इस गैसके सबसे रक्तमें कुछ फालापन आ जाता है। यह काला रक्त शरीरके सब भागोंसे जमा हो कर दो महाशिराओंके द्वारा हृदयके दक्षिण कोष्ठमें पहुँचता है। हृदयसे यह दूषित रक्त फिर फुफुसीय धमनी द्वारा दोनों फेफड़ोंमें आ जाता है। यहाँ रक्तको बहुतसी कारबन गैस बाहर निकल जाती है और उसके स्थानमें आक्सिजन आ जाता है, इस प्रकार फेफड़ों में जा कर रक्त शुद्ध हो जाता है।

फेफड़ी ( हि० री० ) गरमी या रुग्णकीसे ओठोंके ऊपर चमड़ेको सूपी तह, प्यास या गरमीमे सूखे हुए ओठ का चमड़ा।

फेफरी ( हि० खी० ) फेफड़ी देवो।

फेर ( स० पु० ) के इति शब्द राति श्रुतातीति रा प्रश्णे क। शृगाल, गीदड़।

फेर ( हि० पु० ) १ चकर, घुमाव। २ परिवर्तन, उलट पुलट। ३ मोड़, मुकाव। ४ असमजन्म, उलभन। ४ धम, सशय। ६ पट्टक, चालवाची। ७ बल, अन्तर। ८ प्रपच, जज्ञाल। ९ हानि, छोटा। १० भूत प्रेतका प्रमाण। ११ युक्ति, उपाय। अदला बदला, पयज। फेरण्ड ( स० पु० ) के इत्यय्यक शब्देन रण्डतीति रण्ड अच्। शृगाल, गीदड़।

फेरना ( हि० कि० ) १ मित्र दिशामे प्रवृत्त करना, गति बदलना। २ मण्डलान्तर गति होना, चकर देना। ३ लीटना, घापस करना। ४ घे डना, मरोड़ना। ५ यहाँमे यहाँ तक स्प्यथ कराना, विन्तो वस्तु पर धरोरेमे रटा कर इधर उधर ले जाना। ६ पीछे चलाना, जिधरसे आता हो, उम्नी और भेजना या चलाना। ७ जिसके पाससे आया हो उसीके पास पुनः भेजना। ८ घोड़े आदिफो

टीफ घन्नेकी शिक्षा देना, चाल चलाना । ६ सबके सामने ले जा कर रगना, घुमाना । १० प्रचारित करना, घोषित करना । ११ पलटना, थलना । १२ पोतना, तह चढ़ाना । १३ पार्श्व परिवर्तन करना, एक ही स्थान पर स्थिति बदलना । १४ स्थान वा प्रभु बदलना । १५ अभ्यस्त करना, बार बार छोहराना ।  
 फेज-पलटा ( हि० पु० ) द्विरागमन, गीना ।  
 फेजफार ( हि० पु० ) १ परिवर्तन, उलट फेर । २ घबरा, घुमाना फिगव । ३ अन्तर, बीच । ४ टालमटूल, बहाना ।  
 फेरव (स० पु०) फे इति रवि यस्य । १ शृगाल, गौदड़ । २ राक्षस । (वि०) ३ धूर्त, चालबाज । ४ हिंस्र, दुःख पहु चानेवाला ।  
 फेरपट ( हि० स्त्री० ) १ फिरनेका भाव । २ लपेटनेमें एक पक्ष धारका घुमान । ३ घुमान फिरोव, पेश । ४ अन्तर, फर्त ।  
 फेर्या (हि० पु०), मोनेका यह छल्ला जो तारकी दो तीन बार लपेट कर बनाया जाता है, लपेटुआ ।  
 फेरा ( हि० पु० ) १ परिक्रमण, चक्र । २ लीट कर फिर आना, पठट कर आना । ३ इधर उधरसे आगमन । ४ लपेट, मोट । ५ बार बार आना जाना ।  
 फेरफेरी ( हि० स्त्री० ) हेत फेरी, इधरका उधर ।  
 फेरी ( हि० स्त्री० ) १ प्रदक्षिण, परिभ्रमा । २ फेरा देवो । ३ फेरा देवो । ४ यह चरणी जिस पर रस्सी पर पेठन चढाई जाती है । ५ योगी या फकीरका किसी बस्तीमें भिक्षाके लिये बरतकर आना । ६ फेरे बार आना जाना, चक्र ।  
 फेरीवाला ( हि० पु० ) घूम घूम कर सौदा बेचनेवाला ध्यापारी ।  
 फेठ ( स० पु० ) फे इति शब्देन रीनीति सं मितद्रुघा दिव्यान् इ । शृगाल, गौदड़ ।  
 फेठआ ( हि० पु० ) फेरा देवो ।  
 फेरोग—मन्थान प्रदेशके मल्वार जिलेका एक नगर । यह अक्षा० २३ १' उ० तथा देशा० ६० २५' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या चार हजारके करीब है । १७८६ ई०में महिगुरुराज दीपूराजतान इस नगरको उक्त विजेरी राजधानी कायम कर कलिबट पारिवर्तनो यहाँ ले गये थे ।

१६६० ई०में अहूदेनीने इस नगरको अधिकार कर ध्वस्त कर डाला । यहां खपड़ेका एक बड़ा कारखाना है ।  
 फेरीरी ( हि० स्त्री० ) टूटे पड़े सपनेकी छाजसि निकाल कर उनके स्थानमें नये नये सपनेले रगनेकी क्रिया ।  
 फेर ( सं० स्त्री० ) फेर्यते दूरे निक्षिप्यते इति फेर घञ् । भुक्त समुन्मत्त, उच्छिष्ट द्रव्य, जूठा ।  
 फेर ( अ० पु० ) कार्य, काम ।  
 फेर ( अ० पु० ) अटनकार्य, जिसे बाजमें सफलता न हुई हो ।  
 फेरक ( स० पु० ) फेर स्वार्थे सहाया कन् । उच्छिष्ट, जूठा ।  
 फेला ( स० स्त्री० ) फेर्यते इति फेल ( श्लोथ इतः । वा ३।३।१०६ ) इति अ, टाप् । उच्छिष्ट वस्तु, जूठा पदार्थ ।  
 फेलि ( स० स्त्री० ) फल-कन् । उच्छिष्ट, जूठा ।  
 फेलिका ( स० स्त्री० ) फेतिरेव स्वार्थे कन् टाप् । उच्छिष्ट, जूठा ।  
 फेली ( स० स्त्री० ) फेलि हीय । उच्छिष्ट, जूठा ।  
 फेली ( अ० पु० ) समासन्, सम्भ्य ।  
 फेल् ( अ० पु० ) जमाया हुआ ऊन, नमदा ।  
 फेस ( अ० पु० ) १ चेहरा, मुँह । २ सामना । ३ घड़ी-का सामना भाग जिम पर सुई और अद्द रहते हैं । ४ टारपका यह ऊपरी भाग जो छपने पर उभरता है ।  
 फेहरिस्त ( हि० स्त्री० ) फिरासम दगो ।  
 फेसी ( अ० स्त्री० ) १ देखनेमें सुन्दर, रूप रगमें मनोहर । २ दिग्गज, तहव महव का ।  
 फेकूरी ( अ० स्त्री० ) फारगाना ।  
 फेज ( अ० पु० ) १ बुद्धि, लगन । २ परिमाण फल ।  
 फेज अलो—१ दिल्लीवासी एक मुसलमान कवि । इनका नाम मोर फेजअली है । इनके पिता मोर महम्मद तकि भी एक विख्यात कवि थे । दोनों ही १७८५ ई०की दिल्ली नगरमें विद्यमान थे ।  
 २ दीवान फेज नामक पारस्य भाषाकः संगीतग्रन्थ रचयिता । ये लगनऊ-राज महम्मद अली शाहके नम सामगिक थे ।



फैजापुर—बम्बई प्रदेशके खान्देश जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २० १०' ३०" और देशा० ७० ५०' पू० धूलिमासे ७० मील उत्तर पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या दस हजारसे ऊपर है। सूती कपड़े की छोट तथा नोल और लाउ रंग प्रस्तुत होनेके कारण यह स्थान प्रसिद्ध है। प्रायः ३०० घर इसी काममें अपना गुजाय चलाते हैं। नगरमें कई और काठको भी अच्छी विक्री होती है। यहां कुछ मिला कर पाच स्क्वैड हैं।

फैजाबाद - १ युक्तप्रदेशके अयोध्या प्रदेशके अन्तर्गत एक विभाग। यह अक्षा० २५ ३४' से २८ २४' ३०" और देशा० ८० ५६' से ८३ ८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १२११३ और जनसंख्या सात लाखके लगभग है। इसमें फैजाबाद, गोण्डा और यहारइन नामक तीन जिले लगते हैं।

० उक्त विभागका एक जिला। यह अक्षा० २६ ६ से २६ ५०' ३०" और देशा० ८१' ४१' से ८३ ८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ७७४० वर्ग मील है। इसके उत्तर पूर्वमें गोगरा नदी, दक्षिण पूर्व में आजमगढ़ और मुलतानपुर तथा पश्चिममें बरकोही है। जिलेकी प्रधान नदी गोगरा है जो उत्तरी मोरामे ६५ मील तक बह गई है। यहां पलाशरक्षके घने जङ्गल नजर आते हैं जिनमें नोलगाय चहुतायतसे पाई जाती है। पलाशरक्षके सिवा आन्नकाल भी बनेक हैं।

इस जिलेका पुरातन अयोध्याके इतिहासके साथ मिला हुआ है। अयोध्या और भावस्ती देखो। रामचन्द्र और उनके वंशधरोंके शासनके बाद हम बौद्धधर्मका पूर्णप्रभाव और अवनति देखते हैं। उज्जयिनौराज विक्रमादित्यके समय ब्राह्मण्यधर्मका पुन आधिभार देखा गया। पीछे दोनों मतावलम्बो राजाओंका स घर्ष हुआ और ८वीं शताब्दीमें हिन्दुधर्मका फिरसे प्रभाव जमा। किन्तु उक्त, समयका कोई धारावाहिक इतिहास नहीं मिलता। ११वीं शताब्दीमें मुसलमानों काक्रमणने हा। यहांका प्रवृत्त इतिहास लिपिबद्ध किया जाता है। १०३० ई०में सुल्तान महमुदके सेनापत्यरु सैयदसलार मसाउदने अयोध्या आक्रमणकालमें फैजाबादको लूटा था। उस युद्धमें सैयदसलार रामपुतोंके हाथने परा

जिन जीर निरत हुए थे। कन्नोज युद्धके बाद यहां मुसल मानो-शासन प्रतिष्ठित हुआ। १८वीं शताब्दीके प्रथम भागमें नरो-यासे राजधानी उठा कर फैजाबाद लाई गई। १७९६ ई०में अयोध्याके शासनकर्त्ता सुबाउद्दौला ने यहां चिरस्थायी वासका बन्दोबस्त किया। उनकी मृत्युके बाद (१७८० ई० में) राजधानी लखनऊ नगर लाई गई। अनन्तर १८५७ ई०का गदर ही यहांका प्रधान तम ऐतिहासिक घटना है। विपक्षीविरोध देखो।

इस जिलेमें ६ गहर और २६६ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या दस लाखसे ज्यादा है। सैकड़ें पीछे ६० हिन्दू और १० मुसलमान हैं। फैजाबाद, अहवरपुर, बोंकापुर, और टण्डा नामकी इसमें चार तहसील लगती हैं। यहां धानकी अच्छी फसल लगती है और यही जिले भरका प्रधान पद्य है। धानके अलावा चना, गेहूँ, मटर, मसूर, जौ, अरहर, फोर्दी भी उपजाते हैं। नाना (पाम कर चावल), चीनी, कपड़े, तेलहन, अफोम, चमड़े, और तमाकूकी रपतनी तथा धान, धातु और नमककी आमदनी होती है। बनारससे लखनऊ तक जानेवाली अजधरोहिलखण्ड रेलवेकी रूप लाईन इसी जिले हो कर गई है। इस जिलेको दुर्भिक्षमें कई बार मुनाबला करना पड़ा था जिससे इसकी महती क्षति हुई थी। गौं तो कई बार दुर्भिक्ष पड़े हैं, पर १८७८के दुर्भिक्षने भयङ्कर रूप धारण किया था। डिपटी कमिश्नर इण्डियन मिनिस्टरसर्विसके एक या दो सदस्य और चार डिपटी कलेक्टरकी सहायतासे गन्तव्य चलाते हैं।

इस जिलेके अधिकांश मनुष्य विद्याजिज्ञासे वञ्चित हैं। सैकड़ें पीछे ४ मनुष्य पढ़े लिखे मिलते हैं। किल्ला यहां ३० प्राइमरी और मेकेंणरी स्कूल, ३ सरकारी तथा १०० म्युनिसिपल स्कूल हैं। स्कूलके अलावा ११ अस्पताल हैं। जिले भरमें दो म्युनिसिपललिटिया हैं, पर फैजाबादमें और दूसरी टण्डामें। आबहवा बहुत अच्छी है।

२ उक्त जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २६' ३० से २६ ५०' और देशा० ८१ ४८' से ८२ २६ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ३७१ वर्ग मील और जन संख्या साठे तीन लाखके करीब है। इसमें ४ गहर और ४४८ ग्राम लगते हैं।

३ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अ.स. २६ ४७  
 ३० और देगा. ८२ १० पूंके मध्य गोगगा नन्के  
 किनारे अवस्थित है। जनसंख्या लगभग ७ ०८५ है।  
 इसके पश्चिममें वर्तमान अयोध्यानगर पड़ता है। ये  
 दोनों ही नगर प्राचीन अयोध्या महानगरीके ऊपर बने  
 हैं। १७३२ ई०में मनसुर अजी गी यहा बाये थे। उन  
 का अग्रिप्राय समय इसी शहरमें ध्यतीत होता था।  
 किन्तु उनके पश्चात् सुजाउद्दौलाने १७६० ई०में इस नगर  
 को राजधानीमें परिणत किया था। १७७० ई०में तब  
 सुजाउद्दौलानीकी मृत्यु हुई, तब आसफ उद्दौलाने १७८०  
 ई०में राजधानीको लगनऊ उत्रा गये। १७९८ ई०में  
 यह बेगम इस नगरका निरन्तरोग कर रहा थी। १८१६  
 ई०में उनकी मृत्युके बादसे यह नगर श्रीलींग हो गया  
 है। उनका समाधिमन्दिर और तस्लान 'दिल मुस'  
 प्रासाद अयोध्या प्रदेशके मध्य देगने लायक है। कहते हैं,  
 कि इसके बनानेमें तीन लाख रुपये धर्च हुए थे। यहा  
 रोहिलखण्ड रेलपथका स्टेशन है। शहरक उत्तर पश्चिम  
 गोगराके किनारे सेतानियाम है। यहा पुराण और ग्रीके  
 लिये पृथक् पृथक् अस्पताल हैं।

फौजी सेग—अकबरशाहके प्रधान मन्त्री सेग अ-तुल  
 फजलके बड़े भाई और नागरजामी सेग मुसारिकक  
 पुत्र। १५४ हिजरीमें उमा जन्म हुआ। उनका  
 प्रहन नाम अशुत्र फौज था, पर फौजी नामसे ही जन  
 साधारणमें परिचित थे। ये उक्त सम्राटके राज्यारोहण  
 के १२ वर्ष बाद राजसभामें पहुँचे और 'मात्रि उय  
 सुजारा' उपाधिसे भूषित हुए। इनिहाम, 'जग, आयु  
 पैद तथा गय और पय रचनामें ये विशेष पारङ्गी थे।  
 उस समय उनके मुशायरेमें दिल्ली भरमें और कोर १  
 था। प्रथम रजनाभोमें उनका फौजा नाम निरता है,  
 पर पीछे उहनी फौयाती नामसे अपनेके सम्मानित किया  
 था। उहोंने निनामी लिखित विग्रहान पात्र गामला  
 कविताके प्रतिद्वी हो 'मकज अदबर' 'कुपेमान और  
 बिम्बाइक' 'नल्दमन' 'हम विदुय' और अकबरनामाकी  
 रचना की। छत्रदेशमें एक प्राक्षण परिदहनके घर गृह पर  
 उल्लोके सिद्ध साहित्य और विद्याकी भालोना की थी।  
 संस्कृत काव्य और दर्शन छोड़ दे आस्त्रशास्त्र प्रयोग

योजगणित और लीलायतीका अनुवाद करके अपने  
 निवासुद्धिका परिचय दे गये हैं।

उहोंने पुरान शाक्यका भी एक अति धृष्ट व्याख्या  
 प्रथ लिगा है। उस प्रथमें उहोंने २८ अक्षरोंके मध्य  
 युका म युच अक्षरोंको वाट दे कर फेरलमात्र १३ अक्षर  
 में शब्दयोजना करने हुए उसे जनसाधारणके पाठयोग्य  
 बनाया था। कुछ लोगोका कहना है, कि अन्नेपनिपद्  
 शब्दोका बनाया हुआ है। भाषामें भी इहोंने बहुतसे दोड़े  
 बनाये हैं।

एक बार अरबने इन्ने हिन्दुस्तानकी सभी भाषाएँ  
 मींगनेके लिये कहा। ये कह बर्गों तब भारतय के  
 सभी प्रान्तोंमें 'मूम मूम कर बहाली भाषाएँ मींगने रहे।  
 जब घर लींटे और दरवागमें हाजिर हुए तब बादशाही  
 कहा, 'फौजी! किस प्रान्तमें कौसी भाषा बोली जाती  
 है, उगाहरण सहित कहे।' फौजी सय देगोंकी बोलियाँ  
 बादशाहकी सुनाने लगे। अन्तमें ये अपनी जेबसे एक  
 शीशी जिसमें कुछ ककड़ भरे हुए थे निकाल कर गड  
 गडाने लगे। अरबने हँस कर पूछा, 'फौजी! यह किस  
 मुल्ककी बोली है।' फौजी उत्तर दिया, 'तुदायन्द' यह  
 नैल्लू है और नैल्लू देशमें बोली जाती है। यह सुा  
 पर बादशाह और सब मसामद हँसने लगे। इस प्रकार  
 ये दरवारमें प्राय हँसाते ही रहने थे। इस कारण  
 अकबरकी इन पर बड़ी एपा रहती थी। १००४  
 हिजरी (१५१६ ई०) में दमातोगसे इनकी मृत्यु हुई।  
 यह एक एषेभ्यत्वादी थे। इस कारण इस्लाम्  
 धर्माव्यभिचरण इन्हें विषमें समक कर निरन्कार करते  
 थे। फौजी एक असाधारण धीगनि सम्पन्न परिदहन  
 थे। भरबी साहित्यमें, काव्यमें और हनीमी विषामें  
 इनकी विशेष पारदगिता थी। ये कुल मिला कर १०१  
 प्रथ लिग गये हैं। इानी ऐसी तीम बुद्धि थी, नि  
 जो पुस्तक एक बार पठ लेते थे, यह इहें याद हो जाती  
 थी। इनकी तनप्रादका अधिक भाग पुस्तके करोदों  
 में ही गर्च होता था। कहते हैं, कि ४५०० पुस्तके इनके  
 पुनराचयमें निकली थीं।

फौज उला अ जमीर—एक सुमलमान कान्ती। ये  
 दारिद्र्यादयके बाह्योत्प सुलमान महमूदके शासक

कान्ममें ( १३७८ १३८७० ई०में ) न्यायायोगका काम करते थे । आप एक सुकवि और विख्यात यज्ञाज्ञा हाफिजके समसामयिक थे ।

फैजउल्ला खाँ—एक रोहिला सरदार और रामपुरके जागीरदार । ये रोहिला सरदार अली महम्मद खाँके पुत्र थे ।

१७७४ ई०को फटवाकी लड़ाईमें हार या कर ये शुमान्पुरके पराङ्गी प्रदेशमें भाग गये । पीछे अ गरेजो से सन्धि हो जाने पर इन्हें १३ लाखकी सम्पत्ति मिली । अब इन्होंने रामपुरमें राजप्रासाद और राजधानी बसाई । २० वर्ष तक सुचारुरूपसे राज्य करके ये १७९४ ई०में परलोकको सिधर गये ।

फैजुलपुरिया—सिप सभ्रदायका एक मिसल वा दल । ये लोग सिंहपुरिया नामसे भी प्रसिद्ध हैं । कर्पूरसिंह नामक एक जाट भूष्यधिकारी इस दलके नेता थे । जो खालसा सेना दल फरखसियरके राजदरवाजामें प्रतिष्ठित हुआ उसने इन्हीं कर्पूरसिंहकी अधिनायकतामें सिप दलका सर्वाधिक्य स्थान अधिकार किया । उन्होंने अपने ब्रह्मचर्यप्रभावसे सिख जातिको भ्रमिण्योडगतिय पथ परिष्कार कर दिया था । इस उन्नति पथ पर आरूढ़ हो कर ही सिप लोग एक समय स्वाधीनतामें राजत्व करनेमें समर्थ हुए थे ।

उनके अधीनस्थ सिप दलने उन्हे नवाबकी उपाधि दी । उन्होने अपने बाहुबलसे सेरुडो जाट, बढई, ताती, क्षत्रिय आदिको गुरुगोविन्दका धर्ममत प्रदण करनेको वाध्य किया । उस समय जनसाधारणके निरुद्ध थे धार्मिक समझे जाते थे । उनके हाथसे 'पाहल' ग्रहण भी सब कोई सम्मानसूचक समझते थे । उनके अधीनस्थ दारुं हजार निरप्र बडे ही दुर्द्वर्ष और धर्मनिष्ठ थे । इतना ही सामान्य सेनाको ले कर उन्होंने दिल्लीकी मोमा तक धारा बोल दिया था ।

१७५३ ई०को अमृतसरमें उनकी मृत्यु हुई । मरने समय ये अपना चालसा दल बहलुवालिया सरदार यज्ञसिंहके हाथ सौंप गये ।

यज्ञकी मृत्युके बाद गुजालसिंह ह सम्पत्तिके उत्तराधिकारी हुए । ये अपने ज्ञायाकी तरह धर्मोपान और बुद्धिमान् थे । लउरुके विनासे तक उन्होंने अपना राज्य

फौला लिया था । जालंधर, नूरपुर, बहरमपुर, भरतगड, पट्टी और बनोर आदि स्थान उनके राज्यभूक्त हुए । ये भी बहुतांको अपने मतमें लाये थे, यहा तक कि पतियाला राज अलासिंहने भी उनके निरुद्ध गोविन्दका पाहल ग्रहण किया था । १७६५ ई०में उनको मृत्यु हुई । पीछे उनके लडके बुद्धसिंह राजा हुए । पञ्जाबकेशरी रणजिंत्के समय यह दल विच्छिन्न हो गया और सरदार बुद्धसिंह अ गरेजी आश्रयमें रहनेको वाध्य हुए ।

फौदम ( अ० पु० ) गहराईको एक माप जो छ फुटकी होती है, पुरसा ।

फौर ( अ० खी० ) बन्दूक तोप आदि एधियारोंका दगना । फौल ( हि० खी० ) १ निम्नत, लम्बा चौडा । २ फौला हुआ ।

फौलना ( हि० कि० ) १ लगातार स्थान घेरना, यहासे यहा तक बराबर रहना । २ प्रचार पाना, बहुतायतसे मिलना । ३ पूरा तन कर किन्नी आर बढना, मुझा न रहना । ४ विपरना, इकठा न रहना । ५ वृद्धि होना, सख्या बढना । ६ अधिक गुलना, किसी छेद या गड्ढेका और बडा हो जाना । ७ स्थूल होना, मोठाना । ८ आनृत करना, व्यापक होना । ९ विस्मृत होना पसरना । १० आग्रह करना, जिद करना । ११ प्रसिद्ध होना, बहुत दूर तक विदित होना । १२ इधर उधर दूर तक पहुचना ।

फौलसूफ ( हि० पि० ) फजूल गर्भ ।

फौलसूकी ( हि० खी० ) फजूलसूची ।

फौलाना ( हि० कि० ) १ लगातार स्थान घिरवाना । २ इधर उधर दूर तक पहुचाना । ३ किसी छेद या गड्ढेको और बडा करना या बढाना । ४ पूरा तान कर किसी और बढाना, मुझा न रहना । ५ अलग अलग दूर तक कर देना, विपरना । ६ न कुचित न रहना, पसारना । ७ प्रचलित करना, किन्नी घन्नु या यातको इस स्थितिमें करना, कि वह जनताके बीच पाई जाय । ८ निम्नत करना, पसारना । ९ व्यापक करना, भर देना । १० वृद्धि करना, बढाना । ११ गुणा भागके दोन होनेकी परीक्षा करना । १२ हिमाय विनाय करना लेना लगाना । १३ आयोजन करना, उपक्रम करना । १४ प्रसिद्ध करना, चारों ओर प्रकट करना । १५ गणितकी विद्याका प्रचार करना ।

फौलाव ( हि० खी० ) १ विस्तार, प्रसार । २ प्रचार ।

३ लम्बाई चौड़ाई ।

फौलाव ( अ० पु० ) १ चान, ढग । २ रीति, प्रथा ।

फौलाव ( अ० पु० ) १ दो पक्षोंमें किम्की बात डोक ही इम्का निरपेरा । २ किम्ी मुकदमेमें अदालतकी आखिरी राय ।

फौलाव ( हि० पु० ) १ नीरके पीछेकी नोक जिम्के पाम पर लगाए जाने हैं । इम् नोक पर गड्ढा या चूड़ी बनी रहती है जिम्में धनुषकी डोरी घेड जाती है । ( वि० ) २ ल्गायोंकी बोलीमें 'चार' ।

फौलाव ( हि० वि० ) लालाँकी बोलीमें 'चील्ह' ।

फौलाव ( हि० पु० ) १ लम्बा और पोला चींगा । २ मटर आदि फोडी उठलवाले शस्योंकी फुनगी । ३ फुका पन्नी ।

फौलाव ( हि० पु० ) तोपना लम्बा गोला ।

फौलाव ( हि० वि० ) १ मारकाश, पोला । २ नि सार फौलाव ।

फौलाव ( हि० खी० ) १ गोल लम्बी नली, छोटा चींगा । २ यह पांगे फौलाव जो नाकमें पहनी जाती है, डू छी । ३ सोनार चोहार आदिकी आग धौकनेकी नली जो पाम की बनी होती है ।

फौलाव ( हि० पु० ) १ मार निवड जाने पर बचा हुआ अण, मीठी । २ तुप, भूमी । ३ स्वादहीन घन्सु, फौकी या नीरम चीन । ४ खून पुपु, एक तृण जिसका माग बना कर लोग खाते हैं । यह माग माग्याडकी ओर होता है । घेधयमें इसे रक्त पित्त और कफनाशक तथा रचन और ठंडा बनगया है ।

फौलाव ( हि० वि० ) तुच्छ, धर्य ।

फौलाव ( हि० पु० ) किम्ी कण आदिके ऊपरका टिलका ।

फौलाव ( अ० पु० ) १ यह विन्डु जहा, पर प्रकाशकी छिन राई हुए किरने एकत्र हैं । २ फोटो लेके लिये लेस द्वारा उस घन्सुकी छायापो जिम्का छायाचित्र लेना है, निवा स्थान पर स्थित रूपसे लानेकी क्रिया ।

फौलाव ( अ० पु० ) नावविशेष ।

फौलाव ( हि० पु० ) शोट टैरवी ।

फौलाव ( अ० पु० ) फोटोग्राफीके यन्त्र द्वारा उठाया हुआ चित्र, छाया चित्र ।

फोटोग्राफ ( अ० पु० ) छायाचित्र, फोटो ।

फोटोग्राफर ( अ० पु० ) फोटोग्राफीका काम करनेवाला ।

फोटोग्राफी ( Photograph )-चित्रविद्याविशेष । आग कण इस चित्रविद्याके प्रभावसे हम लोग मनुष्यमायकी प्रतिवृत्ति, पशुपक्षी आदि जीवमूर्ति और वेग मन्दिगादि बड़ी बड़ी अट्टालिकाओंकी प्रतिच्ययि वातकी वातमें अंकित कर ले सकते हैं । यह हस्तमाय्य चित्रविद्यामें खतन्व है । चित्रविद्या देखो ।

इस कला विद्याका महायत्नासे जो चित्र उतारा जाता है, उसे 'फोटोग्राफ' कहते हैं । किम् प्रकार प्रतिविम्बित चित्रकी देखते हो आधार पर यह प्रतिफणित होता है, उसको आलोचनानाम ही इस विद्याका उद्गम हुआ है । सूर्यप्रशिकी शक्तिसे किम्ी किम्ी घन्सुमें रासायनिक क्रियाय हुआ करता है । सूर्यालोचकी चेमी परिवर्तन शील शक्ति ( Actinic influence ) रहनेसे तथा रासायनिक प्रक्रियासे प्रस्तुत आधारविशेषसे यह आलोक चार्णित प्रतिवृत्ति प्रतिभात हो कर विकाश पाती है । इस तत्त्वका विशेष अनुशीर्णन ही फोटोग्राफीका उन्नति का प्रधानतम कारण है ।

आलोककी महायत्नासे चित्र उतारा या लिगा जा सकता है, इसी कारण उसे कलाविद्याके अन्तर्गच्छिष्ट किया गया है । जोषित या मृत, गनिन, उद्भिट और जीव प्रभृति जागतिक पदार्थोंमें आलोककी कार्यकारिता का लक्ष्य करके हम लोग अनुसन्धितस्तु होते हैं, यही उन विद्याका वैज्ञानिक लक्षण है ।

अभी फोटोग्राफी विद्याकी एक शीर्षन कलामें गिनती की गई है । हमे मनमनुषिकर चित्रोकी आपश्य कता है इस कारण फोटोग्राफरकी शरण लेनी पड़ती है । इस प्रकार आयश्यक मन्त्रण कर बहुतेरे यत्नामाग समयमें इस विद्याकी बडे खापने मीग लगत है । परन्तु प्राचीनकालमें मिचे ( Nicols ), रोटर ( Ritter ), मीवेक ( Sebeck ), बरथोलेट ( Berthollet ), बेसार्ण ( Bequerel ), उन्मटन ( Wella ton ), डेमी ( Sir Humphrey Davy ), वेजवुड ( Thomas Wedgwood ), ह्य ( T Young ) और हर्मस ( Two Her ch ) आदि महापुरुषानाम बडे परिश्रमसे इसकी वैज्ञानिक भित्तिने

मजबूत कर गये हैं। इस कलाविद्यामें अनुकूलवृष्टिका विशेष कारण यह है, कि इसके अनुगोलन द्वारा रसायन वृष्टिविज्ञान और पदार्थविद्या (Physics) के नियमोंमें बहुत कुछ उन्नति हुई है और हम लोगोंके जियनेपुण्य की उन्नतिके साथ ही साथ कार्य दक्षताका भी विकास हुआ है। अभ्यस्त कार्यके परिपक्वतानुसार जब यह विज्ञान धीरे धीरे पराफाष्टा पर पहुँच जाता है, तब उससे वृष्टिविज्ञान और रसायनशास्त्रके अनेक सम्प्राप्त विषय निर्धारित होते हैं और अन्तमें एक आनन्दका उपादान हो जाता है।

जिस प्रकार विज्ञानविद्योके यत्न और उत्साहसे इस विद्याकी उत्पत्ति और उन्नति हुई है उसका मंझित विवरण नीचे लिखा जाता है।

पहले 'कैमेरा अर्स्क्युरा' (Camera obscura) नामक चित्रप्रदर्शन यन्त्रका आविष्कार हुआ। पदुआ घान' बैप्टिस्ता पोर्टा (Baptista Porta) नामक कोई व्यक्ति (१५८६ ई०में) इसके गठनादिका निरूपण कर गये। सर हाम्फ्रि डेवी, विज्ञान उद्योग आदिने उत्साहने अनुप्राणित हो 'Camera obscura' यन्त्रके द्वारा फिरसे इसकी परीक्षा करना आरम्भ कर दिया। उसके फलसे यह प्रतिफलित चित्र 'सेन्सेटिव पेपर' के ऊपर अति क्षीणभारमें प्रतिचित्रित हो चित्ररूपमें प्रकाशित हुआ। पर्यायिक आलोचनासे यह यन्त्र विलुप्त होकर चिया गया। मन्त्र पृथिव्ये, तो वही फोटोग्राफोकी उत्पत्तिकी मूलकारण बतलाया गया है। १६वीं शताब्दीके उत्तरार्द्धमें पोर्टोकी वृक्षमे सधन पत्तोंमेंसे हो कर सूर्यकी किरणोंका प्रकाश छनते देव कर उन्मुखता हुई। उन्होंने अपने घरकी कोठरीको दीवारमें एक छोटासा छिद्र किया। फिर बाहरकी ओर दीपक जला कर वे दूसरी ओर एक पर्दा टांग कर परीक्षा करने लगे। क्षीणता उसी पर्दे पर उलटी लटकी रिगाइ पडी। ये इस प्रकार दूसरे पदार्थोंको प्रतिचित्रित भी पर्दोंमें लानेका यत्न करने लगे। नुमीतिके लिये उन्होंने एक नतोद्व शीशा (Lens) उभरेपुंसे लगा दिया। उनका कमा नलाकार और अन्तर्भाग काला था। उम शीशोंके द्वारा ही ये आलोकका अधि-  
भाषण (Focus) ठोक कर देने थे। उसी समय फ्रांस

देशके एक और वैज्ञानिकने परीक्षा करके नाइट्रेट आफ मिटरलर (Nitrate of silver) नामक रासायनिक मिश्रण बनाया। यह मिश्रण यद्यपि स्फेद होता है पर सूर्यको किरण पडते ही धीरे धीरे काला होने लगता है। म० १६२० ई०में स्विजरलैण्डके एक विद्वान् जार्लेने अंधने कोठरीमें नाइट्रेट आफ मिटरलरके महारस चित्र बनानेकी चेष्टा की। चित्र तो पिय च गया, पर स्थायी न हो सका। बहुतसे वैज्ञानिक चित्रको स्थायी करनेकी चेष्टा करते रहे। अन्तको सौ उप पीछे, एमन्योपस नामक एक वैज्ञानिककी महायत्नासे डग माहवने पारेके रासायनिक मिश्रण द्वारा चित्रको स्थायी करनेमें सफलता प्राप्त की। १८५८ ई०में जान डोलण्डने वर्णविहीन शीशे (Achromatic lens) का आविष्कार किया जिससे परिव्यार चित्र उतरने लगा। इसके बाद कमरेके यन्त्रादि और आधुनिक परिवर्तनने उबल आये-स्टिभ लेन्सका व्यवहार करनेसे धूम्र अधि-श्रयण गहन आदि विषयोंमें बहुत उन्नति हुई है। इस प्रकार अनुगोलन बलसे ही चित्र प्रहणके लिये बक्स (Box Camera) से बेल्लो (Bellows Camera) पीछे स्टैरोस्कोपिक (Stereoscopic) और ओम जर्णस् कपि कमरा तथा टेबल (Osborne's Copying Camera and Table) आदिका आविष्कार हुआ है। इसके बाद १७६८ ई०में फाउण्ट रामफोर्ड (Count Rumford) तापको ही इन सब परिवर्तनका कारण समझ कर प्रवृत्त किया।

१८०१ ई०में रोटरने फान प्रतिफलित चित्रण वर्णोंके सौरप्रतिक्रिय पर आलोककालाका अनुप्राणन प्रमाणित करके ह्योराइड आफ मिटरलरका वर्णान्तर निरूपण किया है। इसी अनुसन्धानसे एम् एम् वेगर्ड, सिंसेक, वाथॉलिट, मर उग्ल हॉल, मर एम् एड्लरविंड, वाल्डेन, डेवी आदिका चित्र आदृष्ट हुआ। ये लोग भी परीक्षा द्वारा जीवदृश्ये उपर आलोकको इस विधिसे जतिषा प्रमात्र स्थिर कर गये हैं।

प्राचीनकालमें फोटोग्राफी विद्याको नोप डालनेमें अट्ट पश्चिम चिया गया था। मिट्टे, सेनिवायर, इङ्गेनद्य ज, डि कएडोने, ससार और रोटर आदि

प्रनीययेंनि उद्भिद्वाचिके ऊपर आलोचनचित्रके प्रभाव निर्णयमें भी घेनी ही चेष्टा की थी।

गीटर और चालेष्टनके बाद १८०० ई०में टोमस विज उड और मर हाम्फ्रे डेमीने फोटोग्राफी विद्याकी उन्नतिके लिये अच्छी आलोचना की। रासायनिक प्रक्रियामें नार ट्रेट आफ मिल्वरके प्रलेप द्वारा प्रस्तुत कागज, चम, बान या पत्रादिके ऊपर ( Sensitive surface ) सूर्या लोफसे आलोचन प्रारुतिर पदार्थाका पूष चित्र कभरा धरस्किउरा और मीर यणुवीक्षण (solar microscope) यन्त्रकी सहायतामें वे अद्भुत करनेमें समर्थ हुए थे। चित्र नो गिच गया पर स्थायी न हो सन। डगरने चित्रको पहले गोठाम प्रोमाइडमें दुबा दुबा कर देना, पर अन्तमें उन्ने हाइपो मल्फाइड मोडा द्वारा पूरी सफलता हुई। इसी समय एक अ गरेजने गैलिन पमिड और नाट्रेट आफ सिल्वर की मद्दने कागज पर चित्र छापने का तरीका निकाल। कभरा यह चित्रा उन्नति करती गई और मर १८५० ई०में प्लेट पर चित्र लिये जाने लगे। १८७२ ई०में डा० मैडाक्षने जेनेटीनकी सहायतामें प्लेट बाननेकी प्रथा चगाई। यह प्रथा उत्तरोत्तर उन्नत हो कर अब तक प्रचलित है। अब धात्रे प्लेटका बहुत कम व्यवहार होता है। प्राय सब जगह शुक्र प्लेट परामर्ग गया जाता है।

कभरा मन्दूपके आकारका होता है। इसके आगे का ओर धोरमें गोल लम्बा चोंगा सा निकटा रहता है। उस चोंगेमें पर गोल उन्नतोदर गीगा लगा रहता है। इसी शीशेका नाम लेंस है। दूसरी ओर पर गीगा और एक विचाइ होता है। यह विचाइ कटकेने खुलता और बंद होता है। कभरेके बाचका भाग भाधोकी तरह होता है जिसे इच्छानुसार घटा बडा सक्ते हैं। लेंसके सामने एक दहन हाता है जिसमें चांगा बंद किया जाता है। कभरेके नीर अंधेरा रहता है और उसमें केवल लेंसकी ओरसे ही प्रकाश आता है। इसके मिया प्रकाश आनेका और बंद रास्ता नहीं है। जिस वस्तु का प्रतिगति लेनी होता है यह सामने केमे स्थान पर होता है जहा उस पर सूचना प्रकाश अच्छी तरह पडता है। उसके सम्मुख कुछ दूर पर कभरेका मुँह उमरी

ओर बरके गया जाता है। इसके बाद लेंसका दहन गोल फोटोग्राफर दूमरी ओरके टारफी गोल मिर पर काला कपडा, निममें रहोने प्रकाश न धावे, डाल कर देवता है कि उस वस्तुको प्रतिगति टार दिग्गार देनी है या नहीं। इसे फोरस लेना करने है। अनन्तर लेंसके सामनेका दहन फिर बन्द कर दिया जाता है और दूसरी ओर उकडोके बंद चौपटेमें रगरे हुए रासायनिक पदार्थ मिश्रित प्लेटको बडी होजियारीमें, जिसमें प्रकाश उसे स्पश न करन पाए, लगा देते हैं। फिर लेंसके मुँहको थोडी देर तकके लिये गोल देते हैं जिसमें प्लेट पर उस पदार्थकी छाया अंकित हो जाय। दहन पुन बंद कर दिया जाता है और अंकित प्लेटके बडी माय धानीमें बंद चौपटेमें बन्द करके रग देते हैं। इसके बाद उस प्लेटका अंधेरा कोठरीमें ले जा कर लाल लालटेनके प्रकाशमें रासायनिक मिश्रणोंमें कइ बार डुबाते हैं। आगिर फिटफिरोके धानीमें डाल कर ठंडे पानी का धार उस पर गिराते हैं। ऐसा करनेसे प्लेट बाले रगका हो जाता है और उस पर पदार्थ अद्भुत दिग्गार पडने लगता है। अब उस पर रासायनिक पदार्थ लगे हुए कागजके टुकडोंको अंधेरो कोठरीके भीतर मटा कर प्रकाश दिग्गारें और रासायनिक मिश्रणोंमें धोने हैं। इस प्रकार कागज पर प्रतिगति अंकित हो जाती है। इसीको फोटो कहते हैं।

फोटोना ( हि० खो० ) : मग करना, पर। वस्तुओंको सङ्ग सङ्ग करना। १ मगमें न रहने देना, माध छुडाना। २ नगरमें पेसा विचार या शेष उत्पन्न करना जिसमें स्थान स्थान पर घाय या फोटो हो जायें। ३ फेवल आधान या दवायते भेड न करना, धक्केस द्वारा डाट कर उस पर निकल जाता। ४ एक छुडाना, एक पक्षमें अलग करके दूसरे फासे कर लेना। ५ पेमी वस्तुओंकी भाषाल और दवायते विनिर्ण करना जिसे अभ्यन्तर या तो पाला हो सधरा मुजापम या पत्नी चोंप भरो हो। ६ भयपय, जोदा या धृष्टिके रूपमें प्रकट करना, अदुर, कनखे, ज्ञाया आदिका निहायता। ७ ज्ञानार्थके रूपमें अलग हो कर किसी मीचमें जाना। ८ गुण बान महसा प्रकट कर देना, वक्यारगो भेद धालना।

१० मैदानों अलग कर देना, फुट डाल कर अलग करना ।  
 फोडा ( हि० पु० ) एक प्रकारका जोध या उभार । शरीर-  
 में जटा पर कोई दोष मञ्जित रहता है वहाँ यह उत्पन्न  
 होता है । इसमें जलन और पीडा होती है तथा रक्त  
 मड कर पीवके रूपमें हो जाता है । विशेष विवरण रक्षाक  
 शब्दमें देंगे ।

फोडिया ( हि० पु० ) छोटा फोडा, फुनसी ।

फोएटालु ( म० पु० ) आलुविशेष, आलुबन्ध ।

फोता फा० पु० ) १ पट्टका, कमरबन्ध । २ निरवध,  
 पगड़ी । ३ जमीनका लगान, पौन । ४ कोप, घौली ।  
 ५ अखंडकोप ।

फोतेदार : फा० पु० ) १ कौषाध्यक्ष, राजाची । २ तह  
 सोलदार, गेकडिया ।

फोनोग्राफ—१९वीं शताब्दीमें आविष्कृत वाद्ययन्त्र  
 विज्ञान । अमेरिकाके युक्तराज्यके अन्तर्गत्तौ न्युजार्सी  
 घामो थामस ए एडिसन ( Thomas A Edison ) नामक  
 एक वैज्ञानिकने १८७७ ई०में पहले पहल इस यन्त्रका  
 आविष्कार किया । उन्होंने गेल ( Mr Graham Bell )  
 के टेलिफोन यन्त्रके गोलार्कण पट्टिकायान ( Discs )-का  
 शब्दग्रहण और रिताडन जिनिका लभ्य करके स्थिर किया,  
 कि यदि किसी उपायसे वे उम स्थानमें सुरका कम्पन  
 ( Vibrations ) ग्य सकें, तो उसकी सहायतासे एक  
 नूतन यन्त्रको रूपांति हो सकती है ।

इस यन्त्रमें पूर्वके गाए हुए गान, कही हुई बातें और  
 बजाए हुए वाजोंके स्वर आदि चूडियोंमें भरे रहते हैं और  
 ज्योंके ज्यों सुनाइ पड़ते हैं । इस यन्त्रके भाषार सन्दूक  
 सा होता है । इसके भीतर चक्र लगे रहते हैं जो चाबी  
 देनेसे आपसे भाग घूमने लगते हैं । इसके मध्यभागमें  
 एक सूई या धुरी होती है । उस धुरीकी एक नोक  
 सन्दूकके ऊपर धीचममें टिकती रहती है । यन्त्रके दूसरे  
 ओर विनार पर एक परदा होता है जिसके गोर पर सूई  
 लगी रहती है । इस सूई पर बजाते समय एक चाँगा  
 लगा दिया जाता है ।

जिन चूडियों ( Record ) पर गीत गान आदि  
 अङ्कित रहते हैं वे गेटीके भाषारफर्की होती हैं । उन पर  
 मध्यसे ले कर परिधि पर्यन्त सूई सुन्दर रेखाओंकी

कुडलियाँ होती हैं । चूडियोंमें गीत गान आदि इस  
 प्रकार अंकित किये जाते या भरे जाते हैं—एक विशेष  
 प्रकारका यन्त्र होता है । उस यन्त्रके एक सिरे पर चाँगा  
 ( Horn ) और दूसरे पर सूई ( Pin ) लगी रहती है ।  
 गाने, घञाने या धोलनेजाला चाँगिको ओर धीक कर गाया,  
 बजाता या धोलता है । उस शब्दमें हयामें लहरियाँ  
 उत्पन्न हो कर चाँगेके दूसरे सिर पर लगी हुई सूईकी  
 सञ्चालित करती हैं । इसी समय चूडी घुमाइ जाता  
 है और उस पर उच्चारित शब्द, गाय गान या वाजोकी  
 ध्वनिके कम्पचिह्न सूई द्वारा अंकित हाते जाते हैं । जब  
 फिर उसी प्रकारका शब्द सुनाता होता है, तब उसी चूडी  
 की फोनोग्राफमें सन्दूकके बीच जो कोल निचली रहती  
 है उसीमें लगा देते हैं और विनारके परदेमें लगी हुई  
 सूई चूडीको रेखा पर घेडा देते हैं । चायी देनेसे भीतरके  
 चक्र घूमने लगते हैं । अब चूडी कोलके महारे नाचती  
 है और सूई रेखाओं पर घूमकर चाँगमें उसी प्रकारके धातु  
 तरंग उत्पन्न करती है, जिन प्रकारके चूडीमें अङ्कित हुए  
 थे । ये ही धातु तरंग उम यन्त्रमें सयुक पुर्तोंकी  
 हिलाते हैं जिससे चाँगिमेंसे हो कर चूडीमें अङ्कित शब्द  
 या स्वरोंकी प्रतिध्वनि सुनाई देती है । यह ध्वनि कुछ  
 धीमी होती है और धातुकी भलकनाहट तथा सबकी  
 दरदराहटके सबबसे कुछ गराब हो जाती है । परन्तु  
 मन्त्रमें चेमा गुण है, कि यदि कोई गोतादि ग्रहण कालमें  
 उसे शब्दके परिमाणानुसार घुमा सके, तो नई चूडी  
 वा सुकोली सूई रहनेसे यह निश्चय है, कि उसी शब्दके  
 अनुरूप शब्द उच्चारित होंगे । यदि उम नलको सेजाने  
 घुमावे, तो सर ऊँचा और धीरे धीरे घुमानेसे यह नीचा  
 होता है । फोनोग्राफमें स्वरोंका उच्चारण व्यञ्जनोंकी  
 अपेक्षा अधिक स्पष्ट होता है । व्यञ्जनोंमें म और जका  
 उच्चारण इतना अस्पष्ट होता है, कि उनमें कम प्रभेद जान  
 पड़ता है ।

फोनोग्राफ ( ध० पु० ) एक यन्त्र । इसके द्वारा कोयने  
 वालेके शब्दोंसे उत्पन्न धातुतरंगोंका अंकन होता है ।  
 इसका आवार एक पीपे सा होता है । पीपेका एक  
 मुँह तो विरगुल सुला रहता है और दूसरी ओर कुछ  
 यन्त्र लगे रहते हैं । यन्त्रमें एक पतला परदा होता है

निम्न पर एक पतनी गई लगी रहती है। इन्हीं मूर्तियों  
शब्द द्वारा उत्पन्न वायुतरंगें घूमी पर अंकित होती हैं।  
फोनोग्राफ देखो।

फोया ( हि० पु० ) खंडके गायेना टुकड़ा, कर्षक एक  
लक्ष्य।

फोरमैन ( अ० पु० ) कारखानोंमें कारीगरी और काम  
करनेवालों का सचवाग या जमादार।

फोर्ट प्रिन्सिपम—बल्कान्सेके किला मैदानमें अवस्थित  
प्रसिद्ध अङ्ग्रेजी दुर्ग। बरकत देखो।

फोर्ट सेण्टजार्ज - मन्त्रानका प्रसिद्ध अङ्ग्रेजी दुर्ग।  
म शब्द देखो।

फोटियो ( अ० पु० ) वागनके तानेका आग्रा भाग।

फोहा ( हि० पु० ) काहा देखो।

फोहारा ( हि० पु० ) कुहारा देखो।

फोहारार ( हि० पु० ) कुहारा देखो।

फोफिया ( हि० फि० ) डोंग मारता, बट बट कर बातें  
करना।

फौज ( अ० स्त्री० ) १ सेना, लड़ाकर। २ भुएड, जत्था।

फौजदार ( फा० पु० ) सेनापति, सेनाका प्रधान।

फौजदारी ( फा० स्त्री० ) १ लडाईं भ्रगडा, मार पीट।

२ यह न्यायालय जहा ऐसे मुकद्दमोंका निर्णय होता हो  
जिनमें अपराधीको दण्ड मिलता है, कण्ट्रोलघन,  
इण्डनियम। फौटियके अर्थशास्त्रमें न्यायशासनके दो

विभाग दिखाई देने हैं—धर्मस्थाय और कण्ट्रोलघन।

कण्ट्रोलघन अधिकरणमें आज बलके फौजदारीके

मामलोंका विवरण है और धर्मस्थायमें दीवानोंके

स्मृतियोंमें दण्ड और व्यवहार ये दो शब्द मिलते हैं।

फौजी ( फा० वि० ) सैनिक, फौजमन्थरी।

फौज ( अ० वि० ) नष्ट, मृत।

फौरन ( अ० फि० वि० ) तत्काल, अटपट।

फौलाद् ( फा० पु० ) हथियार बानेका एक प्रकारका कडा

और अच्छा लोहा।

फौलादी ( फा० वि० ) फौलाद्का बना हुआ। २ दूद,

कठिन, मजबूत। ( स्त्री० ) ३ बल्लमकी छड, मालेकी

तकड़ी।

फौयारा ( हि० पु० ) कुहा। देखो।

फ्याङ्ग ( हि० पु० ) श्रृगाल, गोडड।

फ्राङ ( अ० पु० ) लक्ष्मी आन्तोन्का ढींग दाया घुरता  
जिसे प्राय बच्चोंको पहनाते हैं।

फ्रान्स—१ पश्चिम यूरोपमें फरामिसियोंके नियाम भूमि।

यह एक प्राचीन समृद्धिशाली राज्य है। इसके उत्तर  
और पश्चिममें इंग्लिश चानेज और डेन्मार्क प्रजाती; पूर्व

में बेल्जियम, जर्मनी, स्विट्जरलैंड और इटली; दक्षिणमें  
स्पेन राज्य और पश्चिममें गिरेके उपसागर तथा अट

लण्टिक महासागर है। उत्तर छोड़ कर यह पृथ्वीमें  
आल्पस्, भूमज्जम और जूरा पर्यन्तवाग तथा दक्षिणाग

में पिंगिनिम पर्यन्तश्रेणी द्वारा विभक्त है। डेनमार्कमें  
ले कर विगानिन तक उत्तर दक्षिणमें ६२० मील लम्बा

पूर्व और पश्चिममें ५५० मील चौड़ा है। उत्तर, पश्चिम  
और दक्षिणके समुद्रोपकूलका परिमाण १५८० मील है।

पश्चिम उपकूलमें बहुतसे छोटे छोटे उपसागर हैं। दक्षिण  
के लिये म उपसागरोपकूलमें छोटे छोटे द्वीप देखे जाते

हैं। उपकूलवर्ती द्वीप बहुत घोडे हैं और यह भी कोई  
विशेष घटना समाधिगत नहीं।

पायत्यप्रदेश छोड़ कर बग एडीसा समतलक्षेत्र तथा  
लायन, मन और गारोंन आदि नदियोंका अयथादिका

देश समतल तथा पवनसातुनेका तरह उच्च और निम्न  
है। घुटिनी, आरुह और गाल्फानी भूमि पर्यन्त भी

बालुकामें पूषण है। जिसमें यहा कोई फसल नहीं होती।  
किन्तु यहाके 'हिद' नामक मैदानमें घाम मूष उगती है।

लादो, गोरदे और धापुर नामक भूमिबिभाग घास  
तथा दलदलमें परिपूर्ण हैं, देशमेंसे मरुभूमिके जेगा

मालूम पडता है। किन्तु बीच बीचमें उष्णक्षेत्र और  
गोचाराणभूमि हैं। आर्देने, फण्टेनेस्की, वाग्नेनी और

मोर्गिन्स विभाग घनराजिममाकीर्ण हैं। प्राय भूमत्त  
फ्रान्सका चरा अष्टमाग जूल्समाच्छादित और अग्रा ग

दृष्टिकार्यके उपयोगी हैं।

वर्षतमात्र।—आल्पस् पवन सामय और किस्  
विभागमें अयच्छित है। माएटप्लाग नामक आल्पस्

निचल यहाँ पर है। यह स्थान यूरोपके मज्ज सबमें  
ऊँचा है। फ्रान्स और स्पेनके बीचमें पिंगिनिज पर्यन्त

दृष्टापमान है। इनका सर्वोच्च चोटोका नाम मोंपो



है जिसकी ऊँचाई ११६६ फुट है। अथावा इसके उस पवतके दश हजार फुट ऊँचे पर अनेक गिबर फ्रान्सके अन्तर्गत है। उत्तरपूर्ववर्ती मित्रेनिम पर्वतमाला रादा और लायर नदी तक फैली है और उसकी ऊँचाई ६ हजार फुटसे अधिक बतलाई जाती है। जूरा और मरजेम गिरिश्रेणो फ्रान्सकी पूर्वी सीमाओं विस्तृत है।

नदी। मित्रेनिम और मरजेस पर्वतमालासे सभी नदिया निम्न कर फ्रान्सके विस्तोर्ण अथवादिका देशको संगठन करती हैं। मिया, लायर, गारोने और रोन् यहा की सबसे बड़ी नदी हैं। मिन नदी इग्लिज चानेल्में, गारोने और लायर अटलाण्टिक महासागरमें तथा रोन् भूमध्यसागरमें गिरती है। स्पुन्, मोवल, मध्यर, स्केगाड और लीन उत्तरसागरमें, सोमे, ऊन, अर्ने, मार्ने, आइने, पोने और यूरे इग्लिज चानेल्में, व्लामेट, मिलेने, क्रज, मयने, लायर, जार्ने दोवोने, आरिणज, टार्ने और लोत नामन नदी अटलाण्टिक महासागरमें तथा आड, अर्ने, हिराल्ड, मायो, वीन्, इमार और इरस आदि नदिया भूमध्य सागरमें गिरते हैं।

ये सब नदिया बाल द्वारा आपसमें संयोजित हैं। समस्त फ्रान्सके मध्य २५० नदिया घेसी हैं जिनमें नाव द्वारा जा जा सकते हैं। अथावा इसके ५०० छोटी नोत न्विर्ना फ्रान्स राज्यमें बहती हैं। इस प्रकार फ्रान्स भरमें नदी और गाल ले कर प्रायः ८,५०० मील जलपथने नावका द्वारा माल पत्र ले जा सकते हैं। प्राद और ल्यु नामक दोनो हद सबसे बड़े हैं और परिमाणमें २६ घण मील हैं।

अर्थशास्त्र।—फ्रान्सका उत्तरांश प्राय इङ्ग्लैण्डके जैसा है, हमेशा वृष्टि हुआ करती है। इस कारण ये सब स्थान गोचारणके विद्वेष उपयोगी हैं। मध्यभागका वायु शुष्क है। दक्षिणके ताप प्रचण्ड और वृष्टिके अभावसे वभी कमी धारणी फसल नहीं होती, मर जाती है। पश्चिम उपकूल भागकी वायु जलमिक्त है। यहाँ सब समय वृष्टि, होती है। फ्रान्स राज्यका प्राय बारह भागा स्थान सुरक्ष्य और स्वास्थ्यप्रद है। उक्त प्रकारके जलमिक्त स्थानोंमें नाना प्रकारके उद्भिद् उगते देखे जाते हैं। यूरोपमें और वहाँ भी ऐसी विभिन्न फसल और

फलादि उत्पन्न नहीं होते। जौ, गेहूँ, जौ, मटर, उड़द, धान, चिट ( इस विटपालमने चीनी बनती है ), परमटा, गाँज, तमाकू, रगके पेड़ और आँषच तथा बाग्याम, फमरा नोव, अगुर, पिस्ता अनाद, इमर शाद्वत आदि सुगन्ध फल बहुतायतमें उत्पन्न होते हैं। बर्राएडो, बीदों और शाम्पिन नामक स्थानमें शराब बनानेके लिये दानकी येनी होती है। यह शराब सत्सार भरमें आदरणीय और सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। जहाज बनाने तथा यद्दसजायिके उपयोगी काष्ठ यहा बहुत मिलते हैं।

खनिज वधाये।—भूमर्भरुथ धातन पदार्थोंमेंसे लोहा, ताँबा, सीसा, चाँदी, रमाइन, गंधक, सोना, कोयला और नमक आदि मिलता है। किन्तु लोहा, नमक और कोयला सभी जगह विद्यमान हैं, इस कारण ये सब गणिज्यके एक प्रधान उपकरण हैं। सोना सबसे कम पाया जाता है। मर्मर, फ्लेट, अलवाटर, प्रेनाइट, फिष्टोन, लिथोम्राफिक षोन, मिलष्टोन आदि कम मोलके तथा कुछ मूल्यवान पत्थर भी मिलते हैं। यहाँ कुल मिला कर प्राय ५ हजार प्रकषण हैं। उनका धातव जल बिरोध स्वास्थ्यकर है। पिरिनिज पवत पर चार सौ प्रकषण हैं जिनका जल पीनेके लिये बहुत दूर दूर देशोंके लोग आत हैं। जनसाधारणकी भलाइके लिये प्रकषणके निश्च ६० वासस्थान निरूपित हुए हैं।

औषध।—सिद्ध, वाघ और हाथी छोड़ कर यहाँ सब प्रकारके ज गली जन्तु मिलते हैं। तरह तरहके पक्षी भी देतनेमें आते हैं। मधु सप्रह करनेके लिये मधुमक्षिका पाली जाती है। समुद्रके किनारे मिन्न मिन्न प्रकारकी मछलियाँ पाई जाती हैं। भूमध्यसागरके किनारे कामिस (Kalmis) नामक एक प्रकारका पोडा उत्पन्न होता है जिससे सिन्दूर धर्णका रंग प्रस्तुत होता है। यहाके अधिवासिगण फरासी कहलाते हैं। उनको भाया लाटिा मिश्रित है। यूरोपीय सभी भायाजर्मि फरासी भायाही राजात्मिकी उपयोगी है।

समस्त फ्रान्सराज्यका भूपरिमाण २०१६०० वर्गमील और जनसंख्या ४ करोड़से ऊपर है। प्रसिद्ध फरामी विधायके पहले यह यद्दव मूराएड मिन मिन प्रदेशोंम विभक्त था। १७६० ई०के बाद क्रांसका, जेतिमा, नेमप

आदि ले कर फ्रांसी राज्य १३१ विभागोंमें परिणत हुआ। विख्यात जर्मन युद्धके बाद अन्तमें फ्रांसी लोग राज्यके कुछ अंश गोये बैठे। अनन्तर फ्रांसी-राज्य ८६ विभागों में ३६२ जिलोंमें ( Arrondissements ) और प्रमण ३१६८६ उपविभागों ( कमिउन ) में विभक्त हुआ था। जो सब प्राचीन प्रदेश फ्रांसी इतिहासमें वर्णित हुए हैं उनकी एक तालिका नीचे देने हैं।

प्रदेश । डिपार्टमेंटसँख्या । प्रदेश । डिपार्टमेंटसँख्या ।

आल्सस १८७१ ई०में जर्मनीके हाथ आया।	} २।	गैम्बर्नि	३।
		गिनि	६।
		इन्डे डि प्रान्स	५।
		लङ्गोयेडक्	८।
आञ्जुय और ओर्निम्	२।	लिमोसे	२।
आञ्जु	१।	लोरेन	} ४।
आर्दीन्	१।	१८७१ ई०में जर्मनीके हाथ आया।	
आमिन्तो	१।		
भाभाषों	१।	ल्युगे	२।
घार्ण और नाभागे	१।	मेन	२।
वेरी	२।	मार्क	१।
योवॉनि	१।	निभाषों	१।
वार्गवने या वरगाएडा	४।	नार्मण्टी	५।
मिट्टिगे	५।	ओर्लिन्	३।
स्वाभ्येन	४।	पिरार्डी	१।
फोर्म्टेडिफर्दे	१।	पीएट	३।
इफो	३।	प्रमेन्स	३।
इएडर	३।	रामिली	१।
प्रान्सेरोय्ट	३।	सेएटाङ्ग	१।

उत्त प्रदेशके मध्य राजधानी पारी ( Paris ) और लियन्स, मार्सायल, बोर्दों, लोले, टुनो, नाएडे और राघेरा आदि महानगरोंमें राज्यसे अधिक लोगोंका वास है।

शासनविधि ।—फ्रांसी राज्यमें सभी प्रजातन्त्र विधय प्राण हैं। सबकी सम्मतिसे नियुक्त प्रेसिडेण्ट ही यहाँके सर्वमय चर्चा हैं। राज्यशासनभार उन्हींके हाथ है, किन्तु खान वपसे अधिक वे आसन ग्रहण नहीं कर सकते। राजविधि-सम्कारके लिये यहाँ चेम्बर ऑफ डेपुटिज और सेनेट नामक दो सभा स्थापित हैं। ये ही लोग राज्यके शासनका सञ्चालन और रक्षण कर सकते हैं। जनताकी सम्मतिके अनुसार हम सभाके सदस्य नियुक्त होते हैं।

चेम्बर ऑफ डेपुटिजमें ५३२ सदस्य और सेनेटमें ३०० सदस्य नियुक्त हुए करने हैं। ३६२ जिलोंसे डेपुटो सभाके सदस्य और उपनिवेशी तथा डिपार्टमेंटोंसे सेनेटके सभ्य नियुक्त होते हैं। २५ वर्षके उमरवाले फ्रांसी डेपुटो और ४२ वर्षवाले सेनेटर होनेके योग्य हैं। सेनेट और डेपुटो सभाके प्रेसिडेण्ट भोट द्वारा हो चुने जाते हैं। १८७२ ई०में राजकार्य नगरीके लिये एक और सभा ( Council of Stat ) स्थापित हुए। जातीय महासमिति ( The national Assembly ) और प्रजातन्त्रके प्रतिनिधि द्वारा ही उसके सभ्य नियुक्त होते हैं। विचारविभागके प्रधान मन्त्री ( मिनिस्टर ऑफ जस्टिस ( Garde des Sceaux ) उस सभाके सभापतिका पद पानेके योग्य हैं। पतञ्जिन प्रजातन्त्रके एक सहकारी सभापति ( Vice President ) और ३ विभागीय सभापति ( Sectional President ) हैं।

धर्म ।—राजकीय निमानुसार सभी धर्म समान भावमें रक्षणीय और पालनीय हैं। किन्तु मिर्क रोमन कैथलिक और प्रोटेस्टण्ट मृष्टान तथा यहूदीगण ही राजकीय फ्रंसि पाते हैं। यहाँ सर्वत्र पाँछे ६८ रोमन कैथलिक और बानी प्रोटेस्टण्ट मृष्टान हैं। कैथलिक धर्मके प्रतिष्ठाकारसे यहाँ ८६ बिस्केप, १७ आर्कबिशप और ६६ बिशप नियुक्त हैं। लुथारण सम्प्रदायके कार्यको देख रेल करनेके लिये ( General Consistory ) सभा और कैथलिकिण्टकी स्वतन्त्र सभा पारोन्गरमें प्रतिष्ठित हैं।

शिक्षाविभाग । फ्रांसकी शिक्षा-प्रणाली विश्वस्य स्वतन्त्र है। गवर्नर ही शिक्षा विषयमें विशेष पक्षपाती हैं। जिससे प्रजातन्त्रकी मध्य शिक्षाका विस्तार हो, इसके लिये शिक्षाविभागके एक मन्त्री ( Minister of Instruction ) नियुक्त रहते हैं। यहाँ धर्मतत्त्व, व्यवहारशास्त्र, आयुर्वेद, विज्ञान, नैतिक, युद्धविद्या और गिन्यायिका पढोके लिये स्वतन्त्र राजकीय विध्याविद्यालय प्रतिष्ठित हैं। राजकीयसे उनका धर्म दिया जाता है।

शास्त्र ।—पंडी, जगद्गुरुके अलङ्कार, युद्धशास्त्र, शास्त्रा गिन्य, यान निर्माण, मद्ये, काच और विद्युत्का परतन, स गीतयत्त, विद्युत्पुस्तकें, वास्तविक द्रव्य,

नेल, साजुन, विट चीनी, रंग, कागज मुद्रापत्र, रेडम, प्याम, कपाम, लिनेन, कार्पेट, शाज और फौता प्रभृति उच्च वाणिज्यके लिये बहुतायतसे प्रस्तुत होते हैं। लियन्म, टूट, पारी, निममें, अमिन्नी, आनीने, सेल्ट एटिन आदि ग्रहोंमें रेडमरा बडिया चलन और फौता बाना है। रायेन, सेल्ट, कोणनटिा, ड्रेय, लिंले आदि ग्रहोंमें सूनी फण्डेका विस्तृत कारबार है। राइमम, लानर, आमेन, पारी आदि नगरोंमें पजामीने, वनात और फार्पेट तथा स्यामर, लिमोगे और पारी आदि नगरोंमें काच तथा पोर्सलैन्के वरतन तैयार होते हैं।

बोर्डा, मार्सेल, नीट, हाभर दि प्रेस, कैले, वीलो, सेग्टमाले, ला ओरियेएट, ययने, इनराके, रिपे, रोकेल आदि बन्दर ही प्रधान वाणिज्यस्थान हैं। शराय बनाना ही यहाला प्रधान व्यवसाय है। जगत्में सब जगह फरासी मद्यकी विशेष सुख्याति है।

उपनिवेश । आफ्रिका महादेशमें—अल्जिरिया, सेरिगाट, समोद्रीपपुत्र, सेण्टमेरी, नोसी ये और मयोटे। एजियामें—यूरु भारतीय अधिराज और कोचीन चीन। अमेरिकामें—गायो, गोआडालोप मार्टिनिक, नेएटपियारे और मिकुइलन। पलिनेशियामें—न्यु फालिडोनिया, मार्शएसम और लपण्टी द्वीपपुत्र हैं।

फरामियोंके जो सब वैदेशिय अधिकार हैं, उनका क्षेत्रफल प्राय ४६३८०७ वर्गमील है। १८४८ ई०के २४वें फरवरीकी गरमण्ट डिक्रीके अनुसार उपनिवेशोंसे क्षान्त विश्वय प्रथा उठ गई।

रेलवेय और टेलिग्राफ ।—वाणिज्यकी सुविधाके लिये फ्रान्सराज्यमें प्राय ३१ हजार मील रेलपथ और २५ हजार मील टेलिग्राफकी तार फैलाया गया है।

इतिहास ।—रोमक अधिकारमें फरासी राज्य गाल (Gaul) नामसे प्रसिद्ध था। जगद्विषयात रोमकसेनापति जुलियस सीजरही इस देशमें अपना शासन फैलाया था। किन्तु उत समय गाट गण्यमें कोई उन्नति न दिखाई गई। इन्ग्लैण्डकी तरह यह भी एक तरहमें हीन प्रभ ही उठा। रोमक जातिरा गौरव रचि जब अन्त हुआ, तब धीरे धीरे युरोपके विभिन्न राजसभोंने अपना अराजा मिर उठाया। मेरोविनजियन राजघनके प्रतिष्ठाता

मेरेमीके पीर क्लोमिसके राज्यकालमें ही फ्रान्सका प्रभुत्व इतिहास लिपियद्ध हुआ। ४८१ ई०में क्लोमिस राज गदी पर बैठे। इस समय भिसिगथ, बर्गण्डियन, रोमक और जर्मन आदि जातिया गालराज्यका अधिकार लेनेके लिये आपसमें भगडने लगीं। परस्परके विच्छेदसे शत्रुदल बलहीन हो रहा है, यह देखा कर क्लोमिसने ४८६ ई०में सोइसोंके युद्धमें रोमकोंको परास्त किया। ४९६ ई०में टालविया (Tollu)के युद्धमें अर्गोम घोरता दिगा कर उन्होंने जर्मनोंको घसीभूत कर लिया था। भौवली विजयके बाद उन्होंने भिसिगथनातिरों सेप्टि मानिया प्रदेशमें अयच्छ रखा। इसके बाद उनके पीरत्व प्रभावसे बर्गण्डियासी चौर्यहीन हो पडे। आपिर ५३४ ई०में उन्होंने पुक्से पराजित हो के लोग मोटाभिनजियनयशका आश्रय लेनेको बाध्य हुए। क्लोमिसकी मृत्युके बाद तदधिकृत राज्य विपरी, क्लोडो मोर, चारुडवार्ट और क्लोडेर नामक उनके चार पुत्रोंमें बाँटे गये। किन्तु ५५८ ई०में क्लोडेरके उद्यमसे पैतृक राज्य एक साथ मिला दिये गये। पीछे आपसमें अन्त रियाद हो जानेसे उनके एक दलने अर्प्रे लिया, न्युप्रिया, यणएडी और आबुइलनमें जा कर स्वतन्त्र राज्य बसाया। उत चार राज्योंमेंसे प्रथम दो विशेष बलशाली हो गये थे। ६८७ ई०में अग्नेलियाने न्युप्रियाका वसूतत्व ग्रहण किया और दोनोंके मिल जानेसे एक स्वतन्त्र प्रजातन्त्रकी सृष्टि हुई। हरिएलगण ड युद्धकी उपाधि धारण कर इन प्रदेशोंका शासन करते थे। धीरे धीरे ये ही लोग न्युप्रियन राजघनके सर्वमय कर्ता हो उठे। बर्गण्डी राज गण उनसे परास्त हुए थे। आबुइटे राज्य मर जानेसे लूट जानेके बाद ७३२ ई०में चार्लस् मर्टल कर्तृव शर्मानतापानसे मुक्त हुआ। इसके २० वय बाद मेरोविनजिया राज्य जके शेष और फाल्मिन जियन घनके २५ राजाही ३५ चार डिकर्ष। राज्यच्युत करके पेरिा टि प्रेक राज्य पर अधिकार किया। पिपेने अपने पाटकल्पसे प्रिटिनी छोड कर भीर सारे प्राय पर अपना आधिपत्य फैला लिया था। इटली तक उतका धाक जम गई थी। उन्होंने चम्पार्दरान बाएल्फकों पीप टिकनकी प्रचानता स्वीकार करनेकी बाध्य किया।

के मध्य पोपको एक छोटा राज्य दान कर गये थे।

पोपिनकी मृत्युके बाद उनके उड़के मार्लिमेन राज गद्दी पर बैठे। उन्होंने स्पेन, इटली, सैफमनी, जर्मनी और बमेरिया आदि राज्योंकी जीत कर ८०० ई०में यूरोप महाद्वीपमें एक पच्छिम-साम्राज्य (Empire of the West) बसाया। इन साम्राज्यकी स्थिति सदा एक सी न रही। ८४३ ई०में यह साम्राज्य परस्पर विरुद्धमायापन राजाओं के विद्रोहसे फ्रान्स, जर्मनी और इटली राज्यमें विभक्त हो गया। राजमुकुट इटली और जर्मनीके कालोमिनजियन राजघरानेके ऊपर रखा गया। इसके बाद राज्यशासनका भार कुछ समय तक विभिन्न देशीय सामन्तराजाओंके साथ और पीछे जर्मनीके शासनाधीन रहा।

८४३ ई०से ही फ्रान्सराज्यमें चार्ल्स मार्टेलघरानेकी अवनतिका सुरुवात हुआ। राज्यपरिचालनके लिये फरान्सी राज्य क्रमशः सामन्त राजाओंके मध्य विभक्त हुआ। १८८७ ई०में कालोमिनजियन राजाका प्रभाव नष्ट हो जानेसे युद्ध नामक किमी सरदारने राज्यसिंहासन पर अधिपत किया। ८९८ और ९३६ ई०में चार्ल्स मिनजियन राजघरानेको फिरसे दो बार सिंहासन पर प्रतिष्ठित करना पडा। किन्तु वे लोग राजदण्डरक्षामें बिरकुल असमर्थ थे। फलतः ९८७ ई०में कैपेट घराणिय राजाओंने फरान्सी सिंहासन पर गोठी जमाई। वे सब राजगण अपने दोबरेद प्रतापसे बहुराल तक सुदृढ़ता से राज्यशासन करनेमें, मन्त्रिमन्त्रा और शासना समिति के स्थापनमें तथा क्रुजिड नामक धर्मयुद्धमें सहायता आदि कार्योंमें, अपने प्रभावकी अभ्रतिहत रखनेमें तथा घन गौरवकी वृद्धि करनेमें समर्थ हुए थे।

कैपेट राजाओंके अधिकार कालमें ११०८से १२२६ ई०के मध्य नामण्टी, अञ्ज, मेइन और पोइटु आदि प्रदेशोंका अङ्गरेजोंके हाथसे पुनरुद्धार और डान्ची भाग फ्रान्सका अन्तर्निविष्ट हुआ। राजा एम लुइस पुत्रके नाँव पर राज्यशासन किया था, इन कारण लोग उन्हें सायु (Saint) कहा करते थे। अपने राज्यकालमें (१२२६-१२७० ई०के मध्य) कोई राज्य फतह नहीं करने पर भी उन्होंने स्पेयरराया बड़ा कर

राजशक्तिका प्रभाव बहुत फैला लिया था। १२७०से १२८४ई० तक ३५ फिलिपके शासनकालमें लङ्गोपडक फरान्सीयानके अधीन था। उनके ४ शहर ४४ फिलिप ने ८४३ ई०में जर्मन सम्राट् लोथेपरकी प्रदत्त राज्यांका पुनरुद्धार करनेकी चेष्टा की। उन्होंने पोपकी क्षमता बहुत कुछ घटा ली थी। वे निज प्रतिष्ठित छैटम् जेनरल समाके सम्पूर्ण प्रतिप्रस्था करके पार्लियामेण्ट महासभाकी स्थापना कर गये। उनके पुत्रोंके समय १३१४-१३२८ ई०के मध्य सामन्त विद्रोह बहिन घबक उठी। राजपुत्रोंने रिक्चर्थविमुक्त हो उसमें साथ दिया। भलोह घशने भी उनका पदा तुमरण किया। इस विद्रोह तरङ्गमें उदत्त फरान्सियों १३३७ ई०में इङ्ग्लैण्डके साथ युद्ध घोषणा कर दी। यह युद्ध प्रायः सौ वर्ष (Hundred years war) तक चरता रहा था।

१३४६ ई०में फिलिप डि भलोई (Philip de Valois) कर्तृक क्रमो युद्धमें और २५ जूनके राजत्यमें पोइटियाके युद्धमें अङ्गरेज लोग परास्त हुए। १३६४-१३८०ई०के मध्य बाल्बरायने फ्रान्सका पूर्वबल बहुत कुछ पलटा लिया था। पीछे ५५ सालके राजत्य, ६३ सालके ठमादनेग, सार्धान्येयी राजपुत्रोंके आत्म विच्छेद, बर्गण्टी और गार्कन राजघरानेके परस्पर विरोध से फ्रान्सराय चौपट हो गया। १४१५ ई०में एजिनकोर्टके युद्धमें जयोही कर अङ्गरेजोंने फ्रान्सके मनुष्योप-कृत्योत्ती प्रदेशों पर अधिकार किया। अब फरान्सीयण धीरे धीरे तेनीहीन होते आ रहे थे। इसी समय १४९६ ई०में आर्क नियासी जोमान नामक एक फरान्सी रमणीके अमाधारण प्रीपान्मादसे उमसत ही फरान्सिदोंने अङ्गरेजोंको अच्छी तरह परास्त किया जिससे फरान्सी राज्यका मानचिह्न एकदम बदल गया। राजा ७१ चार्ल्स रायनगरमें फरान्सी सिंहासन पर अधिष्ठित हुए। फरान्सी सेनाके निरुत्त उपयुक्ति कई एक लडाइयोंमें पराजित हो अङ्गरेज लोग १४७३ ई०में फ्रान्स छोड देने की बाध्य हुए।

११ वें लुइने राज्यारोहण करके शासनकी क्षमता हान्य करनेमें सफलता प्राप्त की और १४६, १४८३ ई०के

मध्य वृत्तों राज्य जीत कर अपने अधिकारमें कर लिया। राजा ८ वें चार्ल्सकी अमलदारियों फ्रांसीसी सेना इटलि युद्धमें डगभी हुई थी। तत्पश्चात् राना १२ वें लुई उक्त युद्धोंमें लिप्त थे, इस कारण फ्रांसीसी बल बृत्त कुछ नष्ट हो गया था। १७१५ ई०को १म फ्रान्सिसने मरीग्मानोके युद्धमें मुईम जातिसे परास्त किया। किन्तु ये १५२५ ई०में सम्राट् ७म चार्ल्स असह्य सेनाके सामने टहर न मके और पामियाके युद्धमें पराजित तथा बन्दी हुए। २५ हेनरीके शासनकालमें १५६२ १७८६ ई०को एगुनेट जीर कैथोलिकोंका धर्मयुद्ध टिढा। इस युद्धमें फ्रांसीसी राज्य ध्वस्त और राजकीय विलकुल गाली हो गया। १७८६ ई०में ३५ हेनरीकी मृत्युके साथ साथ भर्लोई घनका लोप हुआ। इसके बाद बर्षों यशोय ४थे हेनरी सिंहासन पर बैठे। उन्होंने यत्नसे फ्रान्स और नाभारे राज्य एक साथ मिलाया गया। उन्होंने षडे उद्यमसे गृहयुद्ध (Civil wars) दूर कर राज्यके एक महत् अभावको पूरा किया। इस आत्मयुद्धसे राज्यकी महती क्षति हुई थी, उमरा सजोघन करनेके लिये उन्होंने विशेष बट्ट सजोकार किया था। इस दावण विप्लव और सजाईके बाद फ्रांसीसी राज्यमें तमाम पूर्ण ज्ञान्ति विराजने लगी। १३वें लुईके अधिकारमें (१६१० १६४३ ई०) कार्डिनेल रिचेल्लु अयोग्य सामन्तकी क्षमता रूप करके फ्रान्समें पूर्ण राजतन्त्र (Absolute monarchy) स्थापना कर गये। ३० वर्षके युद्ध (The Thirty years, war) बाद १६४८ ई०में चेष्ट फालियर और पोटे १६५६ ई०में पिग्निजरी सन्धिके बाद फ्रान्सने यूरोप महादेश में ऊँचा स्थान पाया। उस समय उसका मुकाबला करनेकी शक्ति नष्ट नहीं आती थी। उमरी माल निर्माण और रायसोयिकमें जो सन्धि हुई उसमें फ्रान्सकी कोई विशेष स्वार्थहानी न हुई। किन्तु स्पेन देशके राज्या रोहणसफल युद्ध (Wars of the Spanish Succession)के बाद इच्छा नहीं रहते हुए भी फ्रांसीसीराजकी १७१३ ई०में युद्धके सन्धि पर हस्ताक्षर करना पडा था। १५ वें लुईके शासनकालमें (१७१५ १७७४ ई०में) बर्गिंका और गैरेन प्रदेश फ्रान्सके अधिकारलुक्त हुआ। किन्तु अट्टीवा युद्धमें पराजित हो जानेसे फ्रांसीसी अधिकार

कुछ उपनिवेश उनके हाथसे जाते रहे। इस समय फ्रांसीसी साहित्यको विशेष उन्नति देखी गई। यूरोपकी मनस्त अन्तर्गतोंमें फ्रांसीसी भाषाका ही प्रचार हुआ। स्वाधीनता-प्राप्ति अमेरिजन जब इंग्लैण्डकी अधोपना की उच्छेद करने असमर्थ हुए, तब फ्रांसीसीराज १६वें लुईने उनकी सहायतामें सेना भेजी थी। इस समय १७८६ ई०में फ्रांसीसी अन्तर्विद्युत् (The French Revolution) उपलब्ध हुआ। प्रजातन्त्रके साथ राजकीय दलके घोर संघर्षसे फ्रांसीसी राज्य छार छार हो गया। राजदलका, नरदलका आदि घोमत्स व्यापार अधोपुध करने लगे। यहा तक, कि असह्य फ्रांसीसी रमणिया भी अन्न शरसे परिचृत हो राज सानीका हत्या करनेकी कामनासे भासायल नगरमें उतर पडी और राजप्रासाद पर चढ़ाई कर दी। यहाके रक्षितल उन रमणियोंके हाथसे पमपुट भेजे गये। राज सानीकी पूर्वाहमें इसको गवर लगते ही प्राण ले कर भाग चले। यदि वे नहीं भागते, तो कभी भी उन ललनाओंके हाथसे निस्तार नहीं पा सकते थे। घोर घोर इम राष्ट्रविद्युत्ने भीषणसे भीषणतर मुक्ति धारण कर ली। १६ वें लुई तथा किन्ती राजपुत्र और राज पुत्र पमपुट भेजे गये थे, उसकी सुमाग नहीं। इसी समय जर्मन और प्रसियाराजकी मिलित सेनामें फ्रान्स पर आक्रमण कर दिया, किन्तु रणोन्मात् फ्रांसीसी सैनिकोंके सामने ये अधिक देर तक टहर न सके। आन्तर पुचंगन राजतन्त्र और राजघनका उच्छेद करके फ्रांसीसी राज्यमें १७९२ १८०४ ई० तक प्रजातन्त्र स्थापित हुआ। इसी समय महाबाँर नेपोलियनका अमुद्युत् देखा गया। इस बालक घोरकी घोरता देखा कर प्रजाको पहलेसे ही उनके प्रति आस्था हो गई थी। राना और राजपरिवारपर्यंका चेष्टाने प्रजाका मरुच नष्ट होते देण उन्होंने सबके सामने दो एक ओजसिनी सपकृता दीं। इस गतप्रोदिताका फल उन्हें हाथों हाथ मिल गया था, पर प्रजातन्त्रके बाद वे फ्रांसीसी सम्राट् हो कर इस अपमानका बदला पुकारनेमें सक्षम नहीं आये थे १८०४ ई०में फ्रांसीसी सम्राट् हो कर नेपोलियन वीरदप और अमितविक्रमने रुम, जर्मनी आदि राज्य जीत कर एक विस्तृत फ्रांसीसी साम्राज्य सन्स्थापन करनेमें समर्थ हुए थे। १८०५ ई०का अट्टीवट्ट मीषण

युद्ध उनके जीवनीकी अद्भुत कीर्ति है। युद्धविग्रहमें लिप्त रह कर नेपोलियनने राजकीय खाली कर दिया था। इस कारण सेना मएदली और मन्त्रि सभा प्रमग उनके ऊपर बोलत रह रही थी। मन्त्रिदलके अनुरोधमे उन्होंने १८१४ ई०की १४वीं अधिवर्षकी सिंहासनवा परिभ्याग कर गल्या होपमें आश्रय लिया। इसी समय बोर्बोवशीय १८वे लुईमें मन्त्रिसभाके अनुरोध ने राजसिंहासन पर बैठे। किन्तु इस समय भी नेपोलियनके हृदयसे फ्रान्सकी आशा दूर नहीं हुई थी। एक वर्षके भीतर ही वे पुन फ्रान्स पर चढ़ आये। राजधानीकी ओर बढ़ते देप उद्दम्रीय सेनाएलने उनका साथ दिया। सेना ने वर उन्होंने प्रमियाराजके साथ लड़ाई टान ली। लिगोके युद्धमें प्रमियाराज १६वीं जूनको परास्त हुए। किन्तु वेल्डिङ्गटनप्रमुख निपक्ष सेनाने उन पर १६वीं जूनकी चाटरलक्षेत्रमें चढाई कर दी। जन्तु याहिनीके सामने वे उठर न सके और राजधानीकी ओर लौट जानेकी बाध्य हुए। मन्त्रियोंके अनुरोधसे उन्होंने पुन अपने पुत्रके लिये राज्यका परित्याग किया। इस वार भी निरुष्ट फरामी मन्त्रिसभा उनके साथ शठता करनेसे वाज नहीं आई। उनके पुत्रकी राजसिंहासन न मिल कर पुन बोर्बोवशीय ही मिला। जन्तुके हाथ मृत्यु या अपमानित होनेके भयसे उन्होंने जीवनदान मागा था, किन्तु नृशंस फरामी मन्त्रिदलने उनकी बात पर कुछ भी कान न दिया। घोषा दे कर उन्होंने जन्तुके अठितीय वीर नेपोलियन वीरको जन्तु अ गरेजके हाथ समर्पण किया। अगरेजराजने भी उन्हें सेप्टेम्बेना होपमें ले जा कर कैद रखा। जो नेपोलियन फरामी जातिकी उन्नतिके आदर्श थे, उनके प्रति ऐसा बडोर ध्यवहार हो फरामी जातिके अध पतनका कारण हुआ।

नेपोलियन देगो।

१८वीं लुईकी मृत्युके बाद १८२४ ई०में १०म चान्स राजा हुए। १८३० ई० तक राज्य करनेके बाद उसी घाजकी मन्थम शाखाके व शहर लुई विलिये फरामी जातिके सिंहासन पर बैठे। १८४८ ई०की २४वीं फरवरीको फरामी घाजपमें फिरसे राष्ट्रियद्व खडा हुआ तथा इसके साथ साथ राजतन्त्रका अन्तान और प्रजातन्त्रका स्थापना हुई।

१८५२ ई०में प्रजातन्त्रका घिल्न होनेसे फरामी साम्राज्य योनापार्टी व शके अधिकारमें आया। ३५ नेपोलियन फरामीसिंहासन पर अधिरूढ हुए। १८७० ई०में होहेन जोलारण राजपुत्र त्युपोन्डेके मस्तक पर जब स्पेनराज मुशुट पहनाया गया, तब प्रमिया और फ्रान्सके मध्य वियाद् म्पडा हुआ। उसी सालकी १६वीं जुलाईकी म्पद्राट्ट नेपोलियनने युद्ध घोषणा कर दी। इस अविशुध्य कारिताके दोपसे फ्रान्सका अद्भुतकाश क्रमग मेघाच्छन्न हो गया। ममप्र जर्मन शक्तिके समर्थमें एक एक करके फरामीसेनादल क्षय होने लगा। सेवान-युद्धमें नेपोलियन स्वयं घन्दा हुए और विम्यात सेनापति माराट्ट बर्जेनेने प्राय १ लाख ७३ हजार फरामी-सेना ले कर मेटजे नगरमें जर्मनके हाथ आत्मसमर्पण किया।

मार्सेल मैकमहोन जनरल निम्नी आरि शीरोंके प्राण पणने युद्ध करने पर भी जयोद्दम जर्मनसेनाने पारी नगरमें घेरा डाला। साम्राज्ञी युजिन इस समय राज्यकी सर्वमयी कत्ता थीं, जर्मनसेनाके आगमन पर वे भाग गईं। १८७१ ई०में फरामी गवर्मेण्ट और जर्मन म्पद्राट्टके बीच सन्धि स्थापित हुई। उम सन्धिके अनुसार फरामी गण जर्मन म्पद्राट्टकी एल्सस और लोरेन प्रदेश तथा युद्ध व्ययके मतिपूरणलरूप २० करोड पौंड मुद्रा देनेकी बाध्य हुए। १८७१ ई०में ही फ्रान्समें तीसरी बार प्रजातन्त्रका स्तृपान हुआ। जातीय समिति (National Assembly) ने जगद्विख्यात ऐतिहासिक गियर्म (Thiers)की तृतीय प्रजातन्त्रके प्रधान कर्मकत्ता (Chief of the Executive Power of French Republic) निर्वाचित किया। इस समय कोमउनों (Commune) का विद्रोहानल घघक उठा। किन्तु घोडे ही समयमें अदर जातीय सैम्यदल ने बडी बहादुरीमे उस जान्त कर दिया। १८७१ ई०के अगलन्त माममें थियस प्रजातन्त्रके प्रसिद्धेण्ट या मनापति बनाये गये। १८७३ ई०में ३५ नेपोलियनकी मृत्यु हुई। इसी साल थियसने पदत्याग किया। पीटे मार्शल मैक महोन (Marshal McMahon) प्रसिद्धेण्ट हुए। उनके बाद लुई ब्रेडिने म्पनापति का पद सुगो भित किया। इनके समयमें सिन्डोने प्रधात मन्त्रीका कार्य किया था उनमेंमे गैम्बेट्टा (Gambetta) एक थे।

आक्रियताके फामोदा स्थानमें पराजित होनेसे फरा मिनियोंकी विशेष क्षति हुई थी तथा चीनदेशके बफमर विद्रोह और गुआन हत्याका प्रतिरोध लेनेके लिये इन्होंने भी प्रधान नेतृत्व प्रदान किया था।

१६१४ ई०के आगस्तमासमें जर्मन महामरमर श्राव्य हुआ। उस समय फरासी प्रजातन्त्रके सम्रापति थे मन्वियों पोंकारे ( Pomare ) उनके पूर्वतन राष्ट्रपति मन्वियों फेलियरके समयमें फ्रान्सके मध्य इस प्रकार एक महायुद्धक पूर्णमात्र शिराई किया था। जर्मनी और अष्ट्रिया सम्मिलित शक्ति के विरुद्ध इंग्लैंड, फ्रान्स और रुसियाने युद्ध घोषणा कर दी। इस युद्ध में जर्मन सेना द्वारा फ्रान्सकी विशेषतः पारिसनगरकी महती क्षति हुई थी। १६१८ ई०को सन्धिमें मित्रशक्ति पक्षका जय होएत हुआ। भसाई शक्तिकी शक्तके अनुसार जर्मनीने फ्रान्सको आल्मैन लॉरेन प्रदेश लौटा दिया। फ्रान्सने १६१६ ई०के जाति सद्दु ( League of Nation ) में योगदान दिया है।

१६१६ ई०के अप्रिल मासमें फ्रान्समें प्रबल श्रमिक विद्रोह आरम्भ हुआ था। पाद्यप्रव्यकी मूल्यवृद्धि, श्रमिकोंकी शैतिक कार्य, वायुवृद्धि, स्थलविशेषमें श्रमिकोंका चेनाहाम और रुसियोंके साथ फ्रान्सकी युद्धघोषणाके सम्बन्धमें अमूल्य जनरय-यही सब उक्त विद्रोहके प्रधान कारण थे।

१६१६ २० ई०के निर्वाचनमें मैसियो डेसले ( M. Deslès ) प्रजातन्त्रके सम्रापति हुए और मिलेरा ( Millera d ) उनके पूर्वपक्षी प्रधान मन्त्री क्लेमेन्सी ( Clemenceau ) की जगह नियुक्त हुए। इसके कुछ समय बाद ही डेसले के संयोगशतः चलती गाडीमें गिर पड़े जिससे उन्हें गहरी चोट लगी थी। इस कारण वे पदत्याग करनेकी बाध्य हुए। उनको जगह पर मिलेरा राष्ट्रपति बने गये।

पारो ( पेरिस ) नगर इस राष्ट्रकी राजधानी है। सुविधसम्पन्नइसे इस नगरका पुटेमिया नामसे उल्लेख किया है। उस समय यह नगर मईके गर्मीमें आवृत था। ४वीं जताब्दीमें पारिसिया नामक केल्टिक जातिके वाससे इस स्थानका पारिसिया नाम पडा। ६वीं

जताब्दीके प्रारम्भमें यह नगर राजधानीमें परिणत हुआ। पीछे १०वीं जताब्दीमें हाफेपेटने यहां फरासी राजतन्त्रकी राजधानी बसाई थी। १५वीं जताब्दीमें युद्ध, दुर्भिक्ष, महामारी आदिमें यह नगर क्षयही हो गया। पीछे ४थं हेनरी, १३वें और १४वें लुईके शासनकालमें यह नगर नाना अटालियाओंमें सुशोभित और भाषणोंमें बडा था। विल्याम फोर नेपोलियन बोनापार्टके अधिकाय में तब लुईके यत्नसे इस राजधानीने अपूर्ण भी धारण की। जो बुगु शक्ति बचा, २५ नेपोलियन और बेन हसमैनने उसे पुनः किया। इस समय राजकीय अटालिया, उद्यान, सेतु, जल प्रणाली और दुर्गके पुनर्निर्माण में प्रायः करोड़ पौ ड मुद्रा खर्च हुई थी। पारी नगरीने सम्पूर्ण नूतन भाषणें सुगठित हो कर वर्तमान आकार धारण किया।

१८७० ई०में जर्मनी सेनाने राजधानीमें घेरा डाला और परधर्मीकालमें कमिउनोंके अत्याचारने पारी नगरीको महती क्षति हुई।

१८८० ई०में यहाँके प्रजातन्त्र मन्त्रिमं ( Place de la Republique ) एक ७० फुट ऊँचा अनुशासन स्थापित हुआ था। जगन्नाथ सम्प्रेष्ठ और मवापेक्षा वृद्ध पुन्यन्याय इस नगरमें विराजित है। पुस्तकालय देखो।

१-०० ई०में पारी राजधानीमें एक जगन् प्रसिद्ध प्रदर्शनी अनुष्ठित हुई। इसके पहले अनाधारण परिश्रम और प्रयुक्त अर्ध व्यय करके ऐसी नित्यप्रदर्शनी और किन्हीं भी देशोंमें संचालित नहीं हुई। वर्तमान जताब्दीमें यह फरासी जातिकी गौरव परिचायक है।

फ्रांसीसी ( वि० ) १ फ्रान्स देशका, फ्रान्स देशमें उदयन। २ फ्रांसदेशमें रहनेवाला, फ्रांसदेशवासी।

फ्रिस्वेट ( अ० ग्री० ) लोहेकी चट्टक बना हुआ चीकरा। यह हाथके धागा जानेवाले से सके अर्थमें जडा रहता है। छापनेके समय कागजके तन्नेको शान्त पर इसका इत्ती चौखटेने ऊपरसे बन्द कर देने है। पीछे शान्ती गिरा कर से समें दबाया जाता है। कागजके तन्ने पर उन उन जगहों पर जो फ्रिस्वेटके छेदसे गुली रहती हैं मीटर छप जाता है और रंग भेन रचनेमें मारा रहता है।

श्री ( अ० वि० ) १ स्वतन्त्र जिम्मे पर किसीकी दाव न हो। २ कर या महसूलमे मुक्त।

श्रीद्वैत ( अ० पु० ) यह धाणिज्य निम्में मालके आने जाने पर किसी प्रकारका कर या महसूल न लिया जाय।

श्रीमेसन ( अ० पु० ) श्रीमेसनगी नामके गुप्त स घोषका सम्बन्ध।

श्रीमेसनरी ( अ० खी० ) एक प्रकारका गुप्त स घ या समा। इसकी शाखा प्रजापार्य यूरोप, अमेरिका तथा उन सब स्थानोंमें हैं जहा यूरोपिया हैं। इस मभागा उद्देश्य है समानकी ग्था करनेजाले मृत्य, दान, आचार्य, भ्रातृ भान आदिका प्रचार। श्रीमेसनरीको सभापर्यं गुप्त हुआ करती हैं और उाके बीच कुछ पैसे स फेन होते हैं निम्में वे अपने स धके अनुयायियोंको पहचान लेते हैं। ये सफेन फोनिया, परमार आदि राजगोंरोंके कुछ श्रीनारके चिह्न हैं। पुराकालमे यूरोपमें उन कारीगरो

या राजगोंरोंकी इसी नामकी एक स रुपा थी जो बड़े बड़े गिरजे बनाया करती थी। इन्हीं स केनोंके कारण जो अमनी कारीगर होते थे वे ही भरती किये जाते थे। इसी आदर्श पर सन् १७७७ ई०में फ्रीमेसन संस्थापर स्थापित हुई निम्ना उद्देश्य अधिक व्यापक रखा गया।

फूँच ( अ० वि० ) फास देनाका।

फूँचयेपर ( अ० पु० ) एक प्रकारका पागन जो हल्का पतला और रिक्का होता है।

फेम ( अ० पु० ) चौपटा।

फाइंफाय ( अ० पु० ) प्रे समें काम करनेवाला एक लडगा।

इसका काम है प्रेस परने छपे हुए पागनको जल्दीसे ऋपट कर उतारना और उन पर आंग दीडा कर छपाईकी बुटिकी सूचना प्रेसमेंनको देना।

फट्ट ( अ० पु० ) फूँच कर बजानेका एक न गरेजो बाना जो ब सीकी तरह होता है।

## व

व—हिन्दीका तेईसवाँ व्यञ्जन और पर्यायका तीसरा वर्ण। यह ओष्ठव्यञ्ज है और दोनों होठोंके मिलानेमे इसका उच्चारण होता है। इसलिये इसे स्पर्श वर्ण कहते हैं। यह अत्यप्राण है और इसके उच्चारणमें स घार, नाद और घोष तामक घादा प्रयत्न होते हैं। इस वर्णका लिम्ने का प्रकार यों है,—पहले शून्यके आकारमें रेखा करनी होगी। पीछे उसमें मात्रा सौँच देनेमे यह वर्ण बनता है। यह त्रिकोणरूपिणी रेखा प्रह्ला, गिष्णु और शिष्यस्वरूपिणी तथा परम माता शक्ति है।

यणादारतन्त्रके मतसे इसका ध्यान—

“नीलवर्णा त्रिनयना नीलाम्बरधरा पराम्।

मागहातोऽञ्जला देवीं त्रिभुवा पद्मनेत्रां ॥”

इस मन्त्रमे ध्यान करके द्वाद बार बकारका जप करना होता है।

यह बकार व्युत्पन्नप्रदायक, शरत्चन्द्रमहान, पञ्चदेव भय, पञ्चशाणात्मक और त्रिपिंडुमहित है। यहो बकारका स्वरूप है।

इसके वाचक शब्द ये सब हैं, बनी, भूधर, मार्ग, धरणी, लोचनप्रिया, प्रचेतसू, कन्स, पक्षी, रथलगण्ड, कपर्दिनी, वृष्टय श, शिशियाह, युगधर, मुगविन्दु, बगी, घण्टा, बोडा, त्रिलोचनप्रिय, छेदिनी, तापिनी, भूमि, सुगन्धि, त्रिबलिप्रिय, सुरभि, मुगविष्णु, स हार, यमुधाधिप, पद्यापुर, छपेटा, मोदक, गगन, पति, पुर्यादादा, मध्यत्रिङ्ग शक्ति, कुम्भ, सुतीपक ( वाता सत्प्रशात्र )

व ( स० पु० ) वट्ट १। २ सिन्धु। ३ भग।

४ तोय, जल। ५ गत। ६ गन्ध। ७ तन्तुमन्ता।

८ यवन। ९ कुम्भ। इसके माट्टे त्रिष नाम युगधर,

सुरभि, मुगविष्णु, स हार, यमुधाधिप, भूधर, द्वागण्ड

है। ( इत्थामकोक शैलाम् )

व व ( हि० वि० ) १ टेढ़ा, तिरछा। २ पुरवापी,

विप्रमशाली। ३ दुर्गम, निम्न तक पहुँच न हो सकने।

( पु० ) ४ यह कार्यालय या मरथा को लीगोंका

रूपरा मूढ़ दे कर झरने पहा जग बन्तो भयथा मूढ़

ने कर लीगोंको श्रेण देतो है, लीगोंको दुष्टिया लेती



और भेजती है तथा इसी प्रकारके मट्टाजनोंके बर्ण करती है।

ब कट ( हि० पु० ) घन, टेढ़ो।

ब कनाल ( हि० स्त्री० ) सुनारो की एक मली। यह अति सूक्ष्म मण्डो को स योजित करनेके समय तिरागकी ली कू करनेके काम आती है।

ब कनाज ( हि० पु० ) एक प्रकारका साँप।

ब कया ( हि० पु० ) अगहनम होनेवाला एक प्रकारका धान। इसका चावल सैबडो वर्ष तक रह सकता है।

ब कमाज ( हि० पु० ) जहाजका बड़ा कमरा। इसमें मण्डूको पर चढ़ानेवाली रस्सिया या जंजीरे आदि तैयार या ठोक करके रगो जाती हैं।

ब का ( हि० वि० ) १ टेढ़ा, तिरछा। २ पराक्रमी, बल शाली। ३ बाँका। ( पु० ) ४ धानके पीछेमें हानि पहुँचानेवाला एक प्रकारका कीड़ा जो हरे रंगका होता है।

ब काई ( हि० स्त्री० ) टेढ़ापन, तिरछापन।

ब की ( हि० स्त्री० ) बाक देखो।

ब कुर ( हि० पु० ) ब क देखो।

ब क ( हि० पु० ) बङ्ग देखो।

ब कद ( हि० स्त्री० ) मिल्कहटमें होनेवाली एक प्रकारकी बटिया फलाम।

ब कनापात्रो ( हि० स्त्री० ) एक देवी मुसलमानो रियासत।

बं गल ( हि० वि० ) १ बङ्गालदेशका, बं गल सम्बन्धी।

( पु० ) २ एक रत्नका कथा मकान। इस पर कूस या मण्डो का छप्पर पड़ा रहता है। ३ छोटा हवादार कमरा जो प्राय प्रकारो की सबसे ऊपरवाली छत पर बगया जाता है। ४ ब गालदेशका पान। ५ यह छोटा हवादार और चारो ओरसे खुला हुआ एक रत्नका मकान जिसके चारों ओर बरामदे हों। पाले इस प्रकार के मकान ब गालमें अधिकताने होते थे। उन्होंने देगा देखो अङ्ग्रेज जो अपने यहाँके मकान बनाने और उन्हें ब गला कहने लगे थे।

( वि० ) ६ ब गाल देशकी भाषा।

ब गाल्या ( हि० पु० ) १ एक प्रकारका धान। २ एक प्रकारका मटर।

ब गरी ( हि० स्त्री० ) १ चट्टियो के साथ पहननेवा रिवों का एक आभूषण। ( पु० ) २ घोडा।

ब गमार ( हि० पु० ) पुल्की तरह बना हुआ यह मयूरा जो समुद्रमें दूर तक चला जाता है और चित्त परने लगे जहाज पर चढ़ने या उमरने उतरते हैं, बगमार।

ब गा ( हि० वि० ) १ घन, टेढ़ा। २ मूर्त, देवपूजा। ३ उल्हड, लड़ाई भगडा करनेवाला।

ब गारी ( हि० पु० ) हरताल।

बं गाल ( हि० पु० ) १ बङ्गदेश देगो। २ एक रागका नाम चित्ते कुछ लोग मेघरागका और कुछ मीरवागका पुत मानते हैं।

ब गालिका ( हि० पु० ) एक रागिनो जिसे कुछ लोग मेघरागकी स्त्री मानते हैं।

ब गाली ( हि० पु० ) १ ब गाल देशका नियासी। २ सम्पूर्ण जातिका एक राग। ( स्त्री० ) ३ बङ्गदेशकी भाषा, बंगला।

बं गुरी ( हि० स्त्री० ) बं गली देगो।

ब गू ( हि० पु० ) १ दक्षिण तथा ब गालकी नदियोंमें मिलने वाली एक प्रकारकी मछली। २ भौता या जंगी नामक गिल्लीना जिसे बागक नचाते हैं।

ब गोमा ( हि० पु० ) गगा और तिरभुमें मिलनेवाला एक प्रकारका कबुआ। इसका नाम पाने योग्य होता है।

बं चक ( हि० पु० ) १ घूर्त, पागडी। २ पहाडी देगोमें पैदा होनेवाला एक प्रकारकी घामका दाना। यह जीरेके रूप रंग तथा आकार प्रकारका होता है।

ब चा ( हि० पु० ) छल, टगपाग। बचन देखो।

ब चाना ( हि० स्त्री० ) टगी, टण। बचनका देखो।

ब चर ( हि० पु० ) बचन देगो।

बं चराना ( हि० स्त्री० ) दुमरेको पढीमें प्रपूषा करना, पढमाता।

ब चित्त ( हि० पु० ) बचिच देखो।

ब ज ( हि० पु० ) १ बलिच देखो। २ हिमाचलप्रदेशमें होनेवाला एक प्रकारका बलुत्तरा पेड। इसकी मूकटो का रंग लाली होता है। इसका दूधका नाम मित्र और माकं भा है।

ब जर ( हि० पु० ) पट भूमि जिसमें कुछ उपद्रव न हो मर्बे, उमर।

वज्रा ( हि० पु० ) वज्रारा देतो ।  
 वज्रल ( हि० पु० ) वज्रल देतो ।  
 वक्रा ( हि० वि० ) जिसके संतान न हो, वक्र । ( स्त्री० )  
 २ यह स्त्री जिसमें सन्तान उत्पन्न करनेकी ताकत न हो ।  
 वटना ( हि० कि० ) १ विभाग होना, अलग अलग हिस्सा होना । २ कई प्राणियोंके बीच सबकी प्रदान किया जाना । ( पु० ) २ बटना देखो ।  
 वटवारं ( हि० स्त्री० ) १ वांटनेकी मजदूरी । २ पिसवानेका मेहनताना ।  
 वट्याना ( हि० कि० ) १ वितरण करना, सबको अलग अलग करके दिलवाना । २ पिसवाना ।  
 वटा ( हि० पु० ) १ गोल या चौकोर कुछ छोटा उभरा । ( वि० ) २ छोटे आकारवाला, छोटे कदका ।  
 वटाई ( हि० स्त्री० ) १ वितरण करना, वांटनेका काम । २ वांटनेकी मजदूरी । ३ वांटनेका भाव । ४ दूसरेको धेत देनेका एक प्रकार । इसमें शैत जीतनेवालेने मालिक को लगानके रूपमें धन नहीं मिलता बल्कि उपजका कुछ अंश मिलता है ।  
 वटाना ( हि० कि० ) १ अंश ले लेना, भाग कर लेना । २ किसी काममें हिस्सेदार होनेके लिये या दूसरेका बोझ हलका करनेके लिये शामिल करना ।  
 वटी ( हि० स्त्री० ) हिरन आदि पशुओंको फँसानेका जाल या फदा ।  
 वटीया ( हि० पु० ) हिस्सा लेनावाला व टांगवाला ।  
 वड्ड ( अ० पु० ) वागज या बपडे आदिमें बँधी हुई छोटी गडरी, पुलिया ।  
 वडा ( हि० पु० ) १ एक प्रकारका बच्चू । यह गोल गाठदार और लची होती है । २ बनाज रगनेका छोटी दीपारसे तिरा हुआ स्थान, वडा बगारी ।  
 वंडी ( हि० स्त्री० ) १ बिना अन्तोनकी मिरजई, फतुदी । २ बगलबंदी कामच पहनाईका यंत्र ।  
 वंडेरा ( हि० पु० ) व बंदी देखो ।  
 वंडेरी ( हि० स्त्री० ) यह लकड़ी जो खपेटको छाननेमें मंगरे पर लगायी है । यह दो पत्तियाँ छाजतमें बीजा बोझ स्थानमें लगाए जाते हैं ।

वद ( फा० पु० ) १ कोई वस्तु वांछनेका पदार्थ । २ पानी रोक्नेका पुस्त, पुत्र, मेड । ३ शरीरके अंगोंका कोई जोड़ । ४ यन्त्र, ईद । ५ पाच या छ' घरणोंका उर्दु कपिताका टुकड़ा या पद । ६ अँगरेजी, चोली आदि के पड़े बांधनेका पतला तिला हुआ कपड़ेका फीता । ७ वागजवा लम्बा और बहुत कम चौड़ा टुकड़ा ।  
 ( वि० ) ८ जो चारों ओरसे घिरा हो, जो किसी ओरसे खुला न हो । ९ जिसका मुँह या आगेका मार्ग खुला न हो । १० जिसके मुँह अथवा मार्ग पर दरवाजा, ढक्का या ताला आदि लगा हो । ११ जो इस प्रकार घिरा हो, कि उसके अंदर कोई जा न सके । १२ जो खुला न हो । १३ जो पेशी स्थितिमें हो जिससे कोई वस्तु अंदरसे बाहर न जा सके और न बाहरको चीज अंदर हो आ सके । १४ जो किसी तरहकी ईदमें हो । १५ जिसका प्रचार, प्रकाशन या कार्य आदि रूढ़ गया हो, जो जारी न हो । १६ जिसका कार्य रथागत या रूढ़ हुआ हो । १७ जो गति या ध्यापारयुक्त न हो, धमा हुआ ।  
 वदगी ( फा० स्त्री० ) १ भिनपूरक इंजरीकी बटना, इंजरीराधन । २ मेचा, गिदमत । ३ प्रणाम, सलाम, आदाब ।  
 वदगीभी ( हि० स्त्री० ) १ करमवहा, पातगोभी । २ रोचन, रोले । ३ इन्ड, सिन्दुर ।  
 वदन ( हि० पु० ) बदन देखो ।  
 वदनता ( हि० स्त्री० ) आदर या सम्मान किसे जानेकी योग्यता ।  
 वदनवार ( हि० पु० ) वदनमाला, पूल, पसे, दूब आदि की बनी हुई यह माला जो मंगल कार्योंके समय छार आदि पर लटकवाई जाती है ।  
 वदना ( हि० स्त्री० ) बटना देखो ।  
 वदनी ( हि० स्त्री० ) त्रिपोंका एक भूषण । इसे धे धागेकी ओर सिर पर पहनती है ।  
 वदनीमाला ( हि० स्त्री० ) यह लकी माला जो गलेमें हैत तक लटकती हो ।  
 वदर ( हि० पु० ) एक प्रसिद्ध स्नानपापों चौपाया । विशेष बिनर श्राद्धमें देखो ।

घट्ट (फा० पु०) ममुद्रके किनारेका यह स्थान जहा जहाज टहरने हैं।

घट्टगाढ़ (फा० पु०) ममुद्रके किनारे जहाजोंके टहरनेके लिये बना हुआ स्थान।

घट्टा (हि० पु०) वनवा देवता।

घट्टी (हि० पु०) रत्नलगावमें पैदा होनेवाला एक प्रकारका धात। इसका दूसरा नाम रायमुनिया और तिलोत्तमन्दन भी है।

घट्टवान (हि० पु०) व दौष्टकका रक्षक, कैदखानेका अफसर।

घंमाल (हि० पु०) कैदी रखनेकी जगह, कैदखाना, जेल।

घना (फा० पु०) १ नैयक, दाम। २ जिए या चित्त भाषामें उत्तमपुरुष।

घनानी (फा० पु०) १ मोल बाज, तोप चलानेवाला। २ एक प्रकारका गुन्गी रंग। यह पिपाची रंगसे कुछ गहरा और अम्ली गुन्गी रंगसे बहुत हल्का होता है।

घनारू (हि० चि०) १ बन्दनीय, बन्दन करने योग्य। २ पूजनयोग, आदर्शयोग। (पु०) ३ 'दा' देवता।

घनाड (हि० पु०) देवदाली, घगर घेल।

घदि (हि० ग्रा०) घाराविधान, कैद।

घदिया (हि० ग्रा०) व दो नामक भूरण जो त्रिया मिर पर पहनता है।

घदिना (फा० ग्रा०) १ बाधनेकी क्रिया या भाव। २ प्रपञ्च, घोषणा, रचना। ३ पहचान।

घदी (हि० पु०) १ चारलोंकी एक जाति जो प्राचीन कालमें राजाओंका परिनिधान किया करती थी, भाद।

घदी देवता। (ग्रा०) २ एक प्रकारका आभूषण जिसे त्रिया मिर पर पहनती है।

घदी (फा० पु०) १ घदी। (ग्रा०) २ दामो, चेरी।

घदीखाना (फा० पु०) कैदखाना, जेलखाना।

घदाघर (हि० पु०) कैदखाना, जेलखाना।

घदीया (हि० पु०) घदी।

घदूक (अ० ग्रा०) घातुका बना हुआ तनीके रूपका एक प्रसिद्ध भाव। इसमें पीतकी और मोहम्मद स्थान

बना होता है जिसमें गोती रंग कर बास्फ या इसी प्रकार के किसी सहायताके चलाई जाती है। जो गोती इसमेंसे निकलती है वह अपने निजाने पर जोरसे जा लगती है। इसका उपयोग मनुष्योंकी तथा दूसरे जीवोंकी मार डालने अथवा घायल करनेके लिये होता है। घनेमानखालमें साधारणन सैनिकोंको युद्धमें लड़नेके लिये यही दी जाती है। इसके कई भेद होते हैं।

घदूकची (फा० पु०) यह सिपाही जो घदूक चलाता है।

घदूक (हि० ग्रा०) घदूक देवता।

घदो (फा० ग्रा०) दामो, चेरी।

घदोखल (फा० पु०) १ प्रपञ्च, इतिहास। २ यह महकमा या विभाग जिसके सुपुर्द रीतों आदिनी भाष कर उनका कर निश्चित करनेका काम हो। ३ रीतोंके लिये भूमिको भाष कर उसका राज्यकर निर्धारित करनीका काम।

घंधा (हि० ग्रा०) १ घघनमें आना, बढ होना, बांधा जाना। २ रस्मों आदि छारा किसी वस्तुके साथ इस प्रकार सबंध होना कि वही जा न सके। ३ प्रेमपात्रमें बढ होना, मुग्ध होना। ३ प्रतिज्ञा या वचन आदिसे बढ होना ४ सञ्चलन न रहना, फसना, अटकना। ५ बंदो होना, कैद होना। ६ दुःख होना, ठीक होना। ७ धर्मनिर्धारित होना, चक्र चटौंवाला फायदा उठरना।

घंधा (हि० पु०) १ कोई चीज बाधनेकी वस्तु, बपड़ा रस्सी आदि। २ यह घैली जिसमें त्रिया मीने पिरोनेका सामान रखती है।

घंधा (हि० ग्रा०) १ बन्धन, यह जिसमें कोई चीज बांधी हुई हो। २ यह जो किसी चीजकी स्वतन्त्रता आदिमें बाधक हो, उन्धाने या फंसानेवाली चीज।

घंधाना (हि० ग्रा०) १ बांधनेका काम दूसरेके कराना, २ कैद कराना। ३ तानाब, धुआं आदि बनवाना, तैयार कराना। ४ देना आदि नियत कराना, सुपुर्द कराना।

घघान (हि० पु०) १ किसी भाष क होने अथवा किसी पदार्थके लेने देने आदिके सम्बन्धमें बहुत दिनोंका रंग अथवा हुआ निश्चित अथवा नियत, लेन देन आदिके



व दर (फा० पु०) समुद्रके किनारेका वह स्थान जहा जहाज ठहरते हैं।

व दरगाह (फा० पु०) समुद्रके किनारे जहाजोंके ठहरनेके लिये बना हुआ स्थान।

व ददा (हि० पु०) वनग देवो।

व दलो (हि० पु०) रूहेलपरण्डमें पैदा होनेवाला एक प्रकारका धान। इसका दूसरा नाम रायमुनिया और तिलोकचन्दन भी है।

व दधान (हि० पु०) व दीगृहका रक्षक, कैदखानेका अफसर।

व दसाल (हि० पु०) कैदी रखनेकी जगह, कैदखाना, जेल।

व ददा (फा० पु०) १ सेयक, दास। २ शिष्ट या विनोत भाषामें उत्तमपुरुष।

व दानी (फा० पु०) १ गोल दाज, तोप चलानेवाला। २ एक प्रकारका गुलाबी रंग। यह पियाजी रंगसे कुछ गहरा और असली गुलाबी रंगसे बहुत हल्का होता है।  
व दारू (हि० वि०) १ वन्दनीय, वन्द्य करने योग्य। २ पूजनीय, आदरणीय। (पु०) ३ बंदार देवो।

व दाल (हि० पु०) देवदाली, घघर घेल।

व दि (हि० स्त्री०) कारानिवान, कैद।

व दिया (हि० स्त्री०) व दी नामक भूषण जो स्त्रियां सिर पर पहनती हैं।

व दिग्रा (फा० स्त्री०) १ वाधनेको क्रिया या भाव। २ प्रबन्ध, योजना, रचना। ३ पडयन्त्र।

व दी (हि० पु०) १ चारणोंको एक जाति जो प्राचीन कालमें राजाओंका कीर्तमान किया करती थी, भाट।

व दी देवी। (स्त्री०) २ एक प्रकारका आभूषण जिसे स्त्रियां सिर पर पहनती हैं।

व दी (फा० पु०) १ दीदी। (स्त्री०) २ दासी, चैरी।

व दीकाना (फा० पु०) कैदखाना, जेलखाना।

व दीकान (हि० पु०) कैदखाना, जेलखाना।

व दीकान (हि० पु०) कैदी।

व दूक (अ० स्त्री०) आतक बना हुआ बलीके अण्डक एक अण्डक अण्डक। इसमें पीलेकी और पीलेका अण्डक

बना होता है जिसमें गोली रख कर बारूद या इसी प्रकारके किसी सहायतासे चलाई जाती है। जो गोली इसमेंसे निकलती है वह अपने निशाने पर जोरसे जा लगती है। इसका उपयोग मनुष्योंको तथा दूसरे जीवोंको मार डालने अथवा घायल करनेके लिये होता है। वर्त्तमानकालमें साधारणतः सेनिकोंको युद्धमें लड़नेके लिये यही दी जाती है। इसके कई भेद होते हैं।

व दूकची (फा० पु०) वह सिपाही जो व दूक चलाता है।

व दूर (हि० स्त्री०) बंदूक देवो।

व देरी (फा० स्त्री०) दासी, चैरी।

व दोबस्त (फा० पु०) १ प्रबध, इतिजाम। २ वह मह कमा या विभाग जिसके सुपुर्द खेतों आदिको नाप कर उनका कर निश्चित करनेका काम हो। ३ खेतीके लिये भूमिको नाप कर उसका राज्यकर निर्धारित करनेका काम।

व धना (हि० कि०) १ व धनमें आना, बढ़ होना, बांधा जाना। २ रस्सी आदि द्वारा किसी वस्तुके साथ इस प्रकार सबंध होना कि कहीं जा न सके। ३ प्रेमपाशमें बद्ध होना, मुग्ध होना। ३ प्रतिज्ञा या वचन आदिसे बद्ध होना ४ खच्छन्द न रहना, फसना, अटकरना। ५ व दी होना, कैद होना। ६ डुरस्त होना, ठीक होना। ७ कमनिर्धारित होना, चला चलनेवाला कायदा ठहराना।

व धना (हि० पु०) १ कोई चीज बाधनेको वस्तु, कपड़ा रस्सी आदि। २ वह थैली जिसमें रिया सौने पिटोनेका सामान रखती हैं।

व धनि (हि० स्त्री०) १ वन्धन, वह जिसमें कोई चीज बंधी हुई हो। २ वह जो किसी चीजकी स्वतन्त्रता आदिमें बाधक हो, उल्लंघने या फाँसनेवाली चीज।

व धवाना (हि० कि०) १ बाधनेका काम दूसरेसे कराना, २ कैद कराना। ३ तालाब, कुआँ आदि बनवाना, तैयार कराना। ४ देना आदि नियत कराना, मुकर्र कराना।

व धान (हि० पु०) १ किसी कार्यके होने अथवा किसी पदार्थके लेने देने आदिके सम्बन्धमें बहुत दिनोंसे चला आया हुआ निश्चित काम या नियम, लेन देन आदिके

सम्बन्धकी नियत परिपाटी । २ तालका सम । ३ पानी  
 रोकनेका धुम्म, बाँध । ४ वह पदार्थ या धन जो इस  
 परिपाटीके अनुसार दिया या लिया जाय ।  
 व धाना ( हि० क्रि० ) १ बाधनेका काम दूसरेसे कराना ।  
 २ धारण कराना । ३ कैद कराना ।  
 व धाल ( हि० पु० ) नाव या जहाजमें वह स्थान जिसमें  
 रत्न कर या छेदोंमेंसे आया हुआ पानी जमा होता है  
 और जो पीछे उल्टे कर बाहर फेक दिया जाता है,  
 गमतघाना ।  
 व धिका ( हि० स्त्री० ) वह डोरी जिससे तानेकी साँधी  
 बाँधी जाती है ।  
 व जिन ( हि० पु० ) व ध्या, वाष्प ।  
 वँधो ( हि० पु० ) वह जो बँधा हुआ हो, वह जिसमें  
 किसी प्रकारका बँधन हो ।  
 वँधुआ ( हि० पु० ) कैदी, बंदी ।  
 वँधुआ ( हि० पु० ) १ बुआ देगो ।  
 वँधेज ( हि० पु० ) १ नियत समय पर और नियत रूपसे  
 मिलने या दिया जानेवाला पदार्थ या द्रव्य । २ प्रतिबन्ध,  
 रकावट । ३ वीर्यको जल्दी स्थलित न होने देनेकी  
 क्रिया, वाजीकरण । ४ नियत समय पर या नियत रूपसे  
 कुछ देनेकी क्रिया या भाव । ५ किसी वस्तुको रोकने  
 या बाधनेकी क्रिया या युक्ति ।  
 व धुलिस ( हि० स्त्री० ) मलत्यागके लिये म्युनिस्पैलिटी  
 आदिका बनवाया हुआ वह स्थान जहाँ सर्वसाधा  
 रण बिना रोक टोक जा सके ।  
 व ध ( हि० स्त्री० ) १ व व शब्द, व, व, गिव शिब, हर  
 हर, इत्यादि शब्दोंकी ऊँचो ध्वनि जो शैव लोग भक्तिकी  
 उम गमें आ कर क्रिया करते हैं । २ बुद्धारम्भके वीरोंका  
 उत्साहवर्द्धक नाद, रणनाद, हल्ला । ३ डुन्दुभी, नगारा ।  
 व धा ( हि० पु० ) १ जल-बल, पानीकी बल । २ स्रोत,  
 स्रोत । ३ पानी वहानेकी बल ।  
 व धाना ( हि० क्रि० ) गौ आदि पशुओंका बाँ बाँ शब्द  
 करना, रँभाना ।  
 व धू ( हि० पु० ) चूड़ पानेकी बाँसनी छोटी पतली नली ।  
 व ध ( हि० पु० ) व ध देगो ।  
 व धकार ( हि० पु० ) वाँसुरी ।

व सरी ( हि० स्त्री० ) बँधी देखो ।  
 व मलोचन ( हि० पु० ) वामका नाग भाग जो उसके  
 जल जानेके बाद मफेद रगने छोटे छोटे टुकड़ोंके रूपमें  
 पाया जाता है । व लोचन देखो ।  
 व सार ( हि० पु० ) व गसाल, भ डार ।  
 व सो ( हि० स्त्री० ) १ एक प्रकारका राजा जो वासनी  
 नलीका बना होता है । व शी देखो । २ मछली  
 फँसानेका एक औजार । इसमें एक लम्बी पतली  
 छडीके एक सिरे पर डोरी बँधी होती है और  
 दूसरे सिरे पर अ कुण्ठके आकारकी लोहेकी एक क टिया  
 बंधी रहती है । इसी कटियामें चारा लपेट कर डोरीको  
 जलमें फेरते हैं और छडीको गिकारी पकड़े रहता है ।  
 जब मछली वह चारा खाने लगती है, तब वह कटिया  
 उसके गलेमें फस जाती है और वह खींच कर निफाली  
 जाती है । २ मागधी मानमें ३० परमाणुकी तैल । ३  
 विष्णु, कृष्ण और रामजीके चरणोंका रेखाचिह्न । ४ धान  
 के खेतोंमें होनेवाली एक प्रकारकी घास । इसको बाँसी  
 भी कहते हैं । इसकी पत्तियाँ वामकी पत्तियोंके आकारकी  
 होती हैं । इससे धानको भारी नुकसान होता है । ( पु० )  
 ५ एक प्रकारका गेहूँ ।  
 व साँघर ( हि० पु० ) व शाधर, श्रीरृष्ण ।  
 व हगी ( हि० स्त्री० ) भार ढोनेका एक उपकरण । यह  
 बाँसका बना होता है । इसके दोनों सिरों पर रस्सियोंके  
 बड़े बड़े छोंके लटका दिये जाते हैं । इन्हीं छोंकोंमें  
 बोझ रख देने हैं और लकड़ीको बीचमेंसे कंधे पर रख  
 कर ले चलते हैं ।  
 व हिमन् ( म० पु० ) अयमेपामतिगयेन बहुल बहुल इमन्  
 ( बहुल शब्दश्च व शदेश पा १।४।१५० ) अतिशय बहुल,  
 बहुत ज्यादा ।  
 व हिष्ट ( स० त्रि० ) अतिगयेन बहु बहु इष्ट, प्रियस्त्रिय  
 रेत्यादि इष्ट प्रन्थय । अन्यधिर, बहुत ज्यादा ।  
 "व हिष्ट कीर्त्तिर्यज्जमा वरिष्ठ" ( मट्टि २।४५ )  
 व हीयम् ( म० त्रि० ) बहु ईयसु, ततो व होदेश । अतिगय  
 बहुल ।  
 व ध ( पु० ) व धने हुटिलीभयनि व कि अच् पृषोदरादि  
 त्यात् न लोप । , स्वनामध्यात पतिविरोध, दगुला ।

व दर (फा० पु०) समुद्रके किनारेका वह स्थान जहा जराज ठहरते हैं।

व दरगाह (फा० पु०) समुद्रके किनारे जहाजोंके ठहरनेके लिये बना हुआ स्थान।

व दग (हि० पु०) वनवा देणो।

व दली (हि० पु०) कलेखण्डमें पैदा होनेवाला एक प्रकारका धान। इसका दूसरा नाम रायमुनिया और तिलोकचन्दन भी है।

व दवान (हि० पु०) व दीगृहका रक्षक, कैदखानेका अफसर।

वंदमाल (हि० पु०) कैदी रगनेको जगाह, कैदखाना, जेल।

वदा (फा० पु०) १ सेवक, दास। २ शिष्ट या विनोत भाषामें उक्तमपुष्टय।

व दानी (फा० पु०) १ गोल दाज, तोप चलानेवाला। २ एक प्रकारका गुलाबी रंग। यह पिपाजी रंगसे कुछ गहरा और असली गुलाबी रंगसे बहुत हल्का होता है।

वदारू (हि० जि०) १ वन्दनीय, वन्दन करने योग्य। २ पूजनीय, आदरणीय। (पु०) ३ व दारू देखो।

वदाल (हि० पु०) देवदाली, घघर बेल।

व दि (हि० टी०) कारानिवास, कैद।

व दिवा (हि० खी०) व दी नामक भूषण जो खिया सिर पर पहनता है।

वदिग (फा० ग्री०) १ वाधनेकी क्रिया या भाव। २ प्रवन्ध, योजना, रचना। ३ पडवन्त।

व दी (हि० पु०) १ चारणोंको पकू जाति जो प्राचीन कालमें राजाओंका कीर्तिमान किया करती थी, भाट।

वन्दी देखो। (खी०) २ एक प्रकारका आभूषण जिसे खिया सिर पर पहनती हैं।

व दी (फा० पु०) १ कैदी। (खी०) २ दासी, चेरी।

व दीघाना (फा० पु०) कैदघाना, जेलघाना।

व दीघर (हि० पु०) कैदखाना, जेलखाना।

व दीघान (हि० पु०) कैदी।

व दूक (अ० खी०) धातुक बना हुआ नलीके रूपका एक प्रसिद्ध अस्त्र। इसमें पीछेनी ओर थोडासा स्थान

बना होता है जिसमें गोली रख कर वारूद या इसी प्रकार के किसी सहायतासे चलाई जाती है। जो गोली इसमेंसे निकलती है वह अपने निशाने पर जोरसे जा लगती है। इसका उपयोग मनुष्योंकी तथा दूसरे जीवोंको मार डालने अथवा घायल करनेके लिये होता है। वर्तमानकालमें साधारणतः सैनिकोंको युद्धमें लड़नेके लिये यही दी जाती है। इसके कई भेद होते हैं।

व दूरूची (फा० पु०) वह सिपाही जो व दूक चलाता है।

व दूख (हि० खी०) व दूक देखो।

व देरी (फा० खी०) दासी, चेरी।

व दोबस्त (फा० पु०) १ प्रवध, इतिजाम। २ वह मह कमा या विभाग जिसके सुपुर्देतों आदिको नाप कर उनका कर निर्दिष्ट करनेका काम हो। ३ खेतीके लिये भूमिको नाप कर उसका राज्यकर निर्धारित करनेका काम।

व धना (हि० कि०) १ व धनमें आना, बढ़ होना, बांधा जाना। २ रस्ती आदि द्वारा किसी वस्तुके साथ इस प्रकार सब ध होना कि कहीं जा न सके। २ प्रेमपाशमें बद्ध होना, मुग्ध होना। ३ प्रतिज्ञा या वचन आदिसे बद्ध होना ४ स्वच्छन्द न रहना, फसना, अटकना। ५ व दी होना, कैद होना। ६ दुःखस्त होना, ठीक होना। ७ क्रमनिर्धारित होना, चला चलनेवाला फायदा ठहराना।

व धना (हि० पु०) १ कोई चीज वाधनेकी वस्तु, फपड़ा रस्ती आदि। २ वह थैली जिसमें खिया सीने पिटोनेका सामान रखती हैं।

व धनि (हि० खी०) १ वधन, वह जिसमें कोई चीज बांधी हुई हो। २ वह जो किसी चीजको स्वतन्त्रता आदिमें बाधक हो, उलभाने या फँसानेवाली चीज।

व धवाना (हि० कि०) १ वाधनेका काम दूसरेसे कराना, २ कैद कराना। ३ तालाब, कूआँ आदि बनवाना, तैयार कराना। ४ देना आदि नियत कराना, मुक्कर कराना।

व धान (हि० पु०) १ किसी कार्यके होने अथवा किसी पदार्थके लेने देने आदिके सम्बन्धमें बहुत दिनोंसे चला आया हुआ निर्दिष्ट काम या नियम, लेन देन आदिके

सम्बन्धकी नियत परिपाटी । २ तालका सम । ३ पानी रोकनेका धुम्म, बांध । ४ वह पदार्थ या घन जो इस परिपाटीके अनुसार त्रिया या लिया जाय ।

व धाना ( हि० क्रि० ) १ बाधनेका काम दूसरेसे कराना । २ धारण कराना । ३ कैद कराना ।

व धाल ( हि० पु० ) नाव या जहाजमें वह स्थान जिसमें रम कर या छेदोंमेंसे आया हुआ पानी जमा होता है और जो पीछे उन्च कर बाहर फेक दिया जाता है, गमतखाना ।

व धिका ( हि० स्त्री० ) वह डोरी जिससे तानेकी साँथो बांधी जाती है ।

व धिन ( हि० पु० ) व ध्या, वाष्प ।

बंधी ( हि० पु० ) वह जो बंधा हुआ हो, वह जिसमें किसी प्रकारका बंधन हो ।

बंधुआ ( हि० पु० ) कैदी, बंदी ।

बंधुवा ( हि० पु० ) बंधुआ देणो ।

बंधन ( हि० पु० ) १ नियत समय पर और नियत रूपसे मिलने या दिया जानेवाला पदार्थ या द्रव्य । २ प्रतिबन्ध, रुकावट । ३ वीर्यको जल्दी स्पलित न होने देनेकी क्रिया, बाजीकरण । ४ नियत समय पर या नियत रूपसे कुछ देनेकी क्रिया या भाव । ५ किसी वस्तुको रोकने या बाधनेकी क्रिया या युक्ति ।

व पुलिस ( हि० स्त्री० ) मलत्यागके लिये म्युनिसिपैलिटी आदिका बनवाया हुआ यह स्थान जहा सर्वसाधारण विना रोक टोक जा सके ।

व ध ( हि० स्त्री० ) १ व धन्त्र, व, व, शिव शिव, हर हर, इत्यादि शब्दोंकी ऊँची ध्वनि जो शैव लोग भक्तिकी उम गमें आ कर क्रिया करते हैं । २ बुद्धारम्भके वीरोंका उत्साहवद्धक नाद, रणनाद, हल्ला । ३ दुन्दुभी, नगरा ।

व धा ( हि० पु० ) १ जल-कल, पानीको कल । २ स्रोत, स्रोत । ३ पानी बहानेकी नल ।

व धाना ( हि० क्रि० ) गौ आदि पशुओंका बाँ बाँ ग्रन्थ करना, रँमाना ।

व धू ( हि० पु० ) चङ्ग पीनेकी बाँसकी छोटी पतली नली ।

व धस ( हि० पु० ) बंध देणो ।

व धकार ( हि० पु० ) बाँसुरी ।

व धरी ( हि० स्त्री० ) बंधी देणो ।

व धसलोचन ( हि० पु० ) वामका सार भाग जो उसके जल जानेके बाद स्फेद रंगके छोटे छोटे टुकड़ोंके रूपमें पाया जाता है । बंधलोचन देणो ।

व धसार ( हि० पु० ) व धसाल, भ डार ।

व धसी ( हि० स्त्री० ) १ एक प्रकारका वाजा जो बासकी नलीका बना होता है । व धसी देणो । २ मछली फँसानेका एक औजार । इसमें एक लम्बी पतली छडीके एक सिरे पर डोरी बंधी होती है और दूसरे सिरे पर अ कुशके आकारकी लोहेकी एक फ टिया बंधी रहती है । इसी फटियामें चारा लपेट कर डोरीको जलमें फेकते हैं और छडीकी शिकारी पकडे रहता है । जब मछली वह चारा पाने लगती है, तब वह फटिया उसके गलेमें फस जाती है और वह पॉच कर निकाली जाती है । २ भागधो मानमें ३० परमाणुकी तौल । ३ विष्णु, वृष्ण और रामजीके चरणोंका रेखाचिह्न । ४ धानके खेतोंमें होनेवाली एक प्रकारकी घास । इसको बाँसी भी कहते हैं । इसकी पत्तियाँ बासकी पत्तियोंके आकारकी होती हैं । इससे धानको भारी नुकसान होता है । ( पु० ) ५ एक प्रकारका गेहू ।

व धसोधर ( हि० पु० ) व धोधर, धोधरण ।

व धगो ( हि० स्त्री० ) भार ढोनेका एक उपकरण । यह बाँसका बना होता है । इसके दोनों मिरों पर रस्सियोंके बडे बडे छीके लटका दिये जाते हैं । इन्ही छीकोंमें बोझ रख देते हैं और लकड़ीको बीचमेंसे कंधे पर रख कर ले चलते हैं ।

व धिमन् ( स० पु० ) अयमेयामतिशयेन बहुद बहुल इमन् ( बहुक शब्दधर व हादेश पा १४।१५० ) अतिशय बहुल, बहुत ज्यादा ।

व धिष्ट ( स० लि० ) अतिशयेन बहु बहु इष्ट, प्रियस्थि रेत्यादि इष्ट प्रत्यय । अन्यधिक, बहुत ज्यादा ।

"व धिष्ट कीर्त्तियं प्रासा धरिष्ट" ( मट्टि २।४५ )

व धोयस् ( स० लि० ) वट् इयसु, ततो व होदेश । अतिशय बहुल ।

व धरु ( पु० ) व क्ते कुटिलीभयति क्वि अन् पृषोदरादि त्यात् न लोप । १ स्वनामव्याप्त पश्चिमिदेश, बगुला ।



व दर (फा० पु०) समुद्रके किनारेका वह स्थान जहा जहाज ठहरते हैं।

व दरगाह (फा० पु०) समुद्रके किनारे जहाजोंके ठहरनेके लिये बना हुआ स्थान।

व दरा (हि० पु०) वनरा देखो।

व दली (हि० पु०) रहैलपण्डमें पैदा होनेवाला एक प्रकारका धान। इसका दूसरा नाम रायमुनिया और तिलो-रुचन्दन भी है।

व दवान (हि० पु०) व दीगृहका रक्षक, कैदखानेका अफसर।

वंदसाल (हि० पु०) वैदी रचनेकी जगह, कैदखाना, जेल।

वदा (फा० पु०) १ शेषक, दास। २ शिष्ट या विनोत भाषामें उत्तमपुरुष।

व दानी (फा० पु०) १ गोल दाज, तोप चलानेवाला। २ पत्र प्रकारका गुलाबी रंग। यह पियाजी रंगसे कुछ गहरा और असली गुलाबी रंगसे बहुत हल्का होता है।

व दारू (हि० वि०) १ बन्दनीय, बन्दन करने योग्य। २ पूजनीय, आदरणीय। (पु०) ३ व दाल देखो।

वदाल (हि० पु०) देवदाली, घघर बेल।

व दि (हि० स्त्री०) कारानिवास, कैद।

व दिया (हि० स्त्री०) व दो नामक भूषण जो स्त्रियां सिर पर पहनती हैं।

वदिश (फा० स्त्री०) १ वाधनेकी क्रिया या भाव। २ प्रवन्ध, योजना, रचना। ३ पडयन्त्र।

व दी (हि० पु०) १ नारणोंकी एक जाति जो प्राचीन कालमें राजाओंका कीर्त्तमान किया करती थी, भाट।

व दी देखो। (स्त्री०) २ एक प्रकारका आभूषण जिसे स्त्रियां सिर पर पहनती हैं।

व दी (फा० पु०) १ कैदी। (स्त्री०) २ दासो, चेरी।

व दीघाना (फा० पु०) कैदखाना, जेलखाना।

व दीघर (हि० पु०) कैदखाना, जेलखाना।

व दीघा (हि० पु०) कैदी।

व दूक (अ० स्त्री०) धातुका बना हुआ नलीके रूपका एक प्रसिद्ध अस्त्र। इसमें पीठकी ओर थोडामा स्थान

बना होता है जिसमें गोली रख कर धारूद या इसी प्रकार के किसी सहायतासे चलाई जाती है। जो गोली इसमेंसे निकलती है वह अपने निगाने पर जोरसे जा लगती है। इसका उपयोग मनुष्योंको तथा दूसरे जीवोंको मार डालने अथवा घायल करनेके लिये होता है। वर्तमानकालमें साधारणतः सैनिकोंको युद्धमें लड़नेके लिये यही दी जाती है। इसके कई भेद होते हैं।

व दूकची (फा० पु०) वह सिपाही जो व दूक चलाता है।

व दूप (हि० स्त्री०) बंदूक देखो।

व देरी (फा० स्त्री०) दासो, चेरी।

व दोवस्त (फा० पु०) १ प्रव ध, इतिजाम। २ वह मह कमा या विभाग जिसके सुपुर्द खेतों आदिको नाप कर उनका कर निश्चित करनेका काम हो। ३ खेतीके लिये भूमिको नाप कर उसका राज्यकर निर्द्धारित करनेका काम।

व धना (हि० स्त्री०) १ व धनमें आना, बढ़ होना, बांधा जाना। २ रस्ती आदि द्वारा किसी वस्तुके साथ इस प्रकार सब ध होना कि कहीं जा न सके। २ प्रेमपाशमें बद्ध होना, मुग्ध होना। ३ प्रतिष्ठा या वचन आदिके बद्ध होना ४ स्वच्छन्द न रहना, फसना, अटकना। ५ व दी होना, कैद होना। ६ दुस्स्त होना, ठीक होना। ७ क्रमनिर्द्धारित होना, चला चलनेवाला कायदा ठहराना।

व धना (हि० पु०) १ कोई चीज बाधनेकी वस्तु, कपड़ा रस्ती आदि। २ वह धैली जिसमें स्त्रियां सोने पिरनेका सामान रखती हैं।

व धनि (हि० स्त्री०) १ बन्धन, वह जिसमें कोई चीज बांधी हुई हो। २ वह जो किसी चीजकी स्वतन्त्रता आदिमें बाधक हो, उल्लाने या फँसानेवाली चीज।

व धवाना (हि० स्त्री०) १ बाधनेका काम दूसरेसे कराना, २ कैद कराना। ३ तालाव, कुआँ आदि बनवाना, तैयार कराना। ४ देना आदि नियत कराना, मुकर्रर कराना।

व धान (हि० पु०) १ किसी कार्यके होने अथवा किसी पदार्थके लेने देने आदिके सम्बन्धमें बहुत दिनोंसे चला आया हुआ निश्चित क्रम या नियम, लेन देन आदिके

सम्बन्धकी नियत परिपाटी । २ तालका सम । ३ पानी रोकनेका धुम्स, बाँध । ४ वह पदार्थ या धन जो इस परिपाटीके अनुसार दिया या लिया जाय ।

व धाना ( हि० कि० ) १ बाधनेका काम दूसरेसे कराना । २ धारण कराना । ३ कैद कराना ।

व धाल ( हि० पु० ) नाव या जहाजमें वह स्थान जिसमें रम कर या छेदोंमेंसे आया हुआ पानी जमा होता है और जो पीछे उलोच कर बाहर फेक दिया जाता है, गमतखाना ।

व धिन्ना ( हि० स्त्री० ) वह डोरी जिससे तानेकी साँधी बाँधी जाती है ।

व धित ( हि० पु० ) व ध्या, वाष्क ।

बंधो ( हि० पु० ) वह जो बंधा हुआ हो, वह जिसमें किसी प्रकारका बंधन हो ।

बंधुमा ( हि० पु० ) कैदी, व दौ ।

बंधुवा ( हि० पु० ) बंधुआ देवी ।

बंधेज ( हि० पु० ) १ नियत समय पर और नियत रूपसे मिलने या दिया जानेवाला पदार्थ या द्रव्य । २ प्रतिबन्ध, रुकावट । ३ वीर्यको जल्दी स्पृगलित न होने देनेकी क्रिया, बाजीकरण । ४ नियत समय पर या नियत रूपसे कुछ देनेकी क्रिया या भाव । ५ किसी वस्तुको रोकने या बाधनेको क्रिया या युक्ति ।

व धुलिस ( हि० स्त्री० ) मलत्यागके लिये म्युनिसिपैलिटी आदिका बनवाया हुआ वह स्थान जहा सर्वसाधारण बिना रोक टोक जा सके ।

व ध ( हि० स्त्री० ) १ व व शब्द, व, व, शिव शिव, हर हर, इत्यादि शब्दोंकी ऊँची ध्वनि जो शैव लोग भक्तिकी उम गमें आ कर किया करते हैं । २ बुद्धारम्भके धीरोंका उत्साहपूर्वक नाद, रणनाद, हल्ला । ३ दुन्दुभी, नगरा ।

व धा ( हि० पु० ) १ जल कल, पानीकी कल । २ स्रोत, स्रोत । ३ पानी बहानेकी नल ।

व धाना ( हि० कि० ) गौ आदि पशुओंका बाँ धा शब्द करना, रैमाना ।

व धू ( हि० पु० ) चूड़ पीनेकी वाँसकी छोटी पतली नली ।

व धस ( हि० पु० ) व ध देवी ।

व धकार ( हि० पु० ) बाँसुरी ।

व सरी ( हि० स्त्री० ) बंसी देखो ।

व सलोचन ( हि० पु० ) वामना साग भाग जो उसके जल जानेके बाद सफेद रगके छोटे छोटे टुकड़ोंके रूपमें पाया जाता है । व गलोचा देवो ।

व सार ( हि० पु० ) व गमाल, भंडार ।

व सी ( हि० स्त्री० ) १ एक प्रकारका चाजा जो वासनी नलीका बना होता है । बंशी देवो । २ मछली फँसानेका एक औजार । इसमें एक लम्बी पतली छडीके एक सिरे पर डोरी बाँधी होती है और दूसरे सिरे पर अ कुशके आकारकी लोहेकी एक फटिया बंधी रहती है । इसी फटियामें चार लपेट कर डोरीको जलमें फेकते हैं और उडीकी शिकारी पकड़े रहता है । जब मछली यह चारा गाने लगती है, तब वह फटिया उसके गलेमें फस जाती है और वह खींच कर निकाली जाती है । २ मागधो मानमें ३० परमाणुकी तौल । ३ विष्णु, कृष्ण और रामजीके चरणीका रेखाचिह्न । ४ धान के खेतोंमें होनेवाली एक प्रकारकी घास । इसको बाँसी भी कहते हैं । इसको पत्तियाँ वासनी पत्तियोंके आकारकी होती हैं । इससे धानको भारी नुकसान होता है । ( पु० ) ५ एक प्रकारका गेहूँ ।

व सोधर ( हि० पु० ) व गोधर, श्रीकृष्ण ।

व हणी ( हि० स्त्री० ) भार होनेका एक उपकरण । यह बाँसका बना होता है । इसके दोनों भिन्न पर रस्सियोंके बड़े बड़े छीके लटकाने दिये जाते हैं । इन्हीं छीकोंमें बोझ रख देते हैं और लकड़ीको बीचमेंसे कंधे पर रख कर ले चलते हैं ।

व हिमन् ( स० पु० ) अयमेपामतिशयेन बहुल बहुल इमन् ( बहुल शब्दश्च व हादेशे पा १।४।१५० ) अतिशय बहुल, बहुत ज्यादा ।

व हिष्ट ( स० लि० ) अतिशयेन बहु बहु इष्ट, प्रियस्थि रेत्यादि इष्ट प्रत्यय । अत्यधिर, बहुत ज्यादा ।

“व हिष्ट कीर्त्तिर्यशसा चरिष्ट” ( भट्टि २।४५ )

व हीयस् ( स० लि० ) बहु ईयस्, ततो व होदेशः । अतिशय बहुल ।

वक ( पु० ) व कते कुटिलोभयति वक्रि अच् प्रपोदरादि त्यात् न लोप । १ स्वनामप्यात पश्चिमिषेय, वयुता ।

यह वृक्ष की तरह सफेद है। इसका गला और दोनों पैर लम्बे, चौख लंबी, चाल धीरी और पूछ इतनी छोटी होती हैं, कि देखनेमें नहीं आती। गला इसका इतना कोमल होता है, कि उमनी तुलनाका अन्य कोई भी पदार्थ नहीं है। यह साधारणतः ही मूल्यवान है। कोई इसे अपने माथेका सुहाग समझते हैं।

वैज्ञानिक लोगोंने इस जातिके पक्षिको *Ardea* की श्रेणीमें शामिल किया है। आयुर्वेद शास्त्रकारोंके मतमें यह वृक्ष जातिका है, ध्यो कि यह तालाबो के किनारों पर ही सदा बैठा रहता है। इ गण्डैड आदि यूरोपीय देशोंमें इस जातिके पक्षिको *Heron* (*Ardea cinerea*) कहते हैं। किन्तु इसके शरीरका आकार इस वगुलेसे बड़ा होता है। जब यह तालाबके तट पर रहता है तब बहुत निरपृह मालूम होता है और स्थिर हो गला नीचा कर मछलियोंकी बाट जोहता है। ज्यों ही छोटी मछली जल पर तैरती दिखाई देती है त्यों ही लंबी चौंचसे उसे पकड़ निगल जाता है। विलायती वगुले जलके चूहे, मेढक, सरी सृप्रादिके बच्चोंको पकड़ खाता है। पैट भरनेके लिये वगुला समस्त दिन नदीके तट पर चुपचाप बैठा रहता है और रात्रिको बच्चोंकी डालियो पर सोता है। जब इसके अडे देनेका समय आना है तब वह अन्य स्थानमें उड जाता है। आकाशमें यह इतना ऊपर उडता है, कि नीचेसे हमें वह बहुत छोटा श्वेतकाय दीखता है। वह एकान्तमें वृक्ष पर घोंसला बनाता है। यहा तक, कि किसी किसी वृक्ष पर इसके घोसलो को सख्या अस्सीसे अधिक देखी गई है। इसका घोसला छोटी मोटी लफडियो से बड़ा और चिपटा बना होता है। मध्य भाग कोमल पशम, रेशम आदि अन्य द्रव्योंसे ढका रहता है। इसके ऊपर वह हरे नीले, ४-या ५ अडे देता है।

अन्यान्य पक्षियोंकी तरह इसके अडोंका खोल अधिक चमकता हुआ नहीं होता। अडेके फूट जाने पर और बच्चेके बाहिर निरल आने पर वह प्राय ६ सताह तक घोंसलेके भीतर ही रहता है। इस समय वृद्ध पक्षी मछलीको पकड़ उसे खाने देते हैं। कभी कभी वृक्ष पर घोंसला बनाते समय द्रोण (कालेकाँवे) और वगुलेमें कितो हो उडता है। डाकर हेसमने (*Der Heuschum*)

वेष्ट मोरलेंडमें इस प्रकार पक्षियो का विवाद देखा है। पहिले युद्धमें एक वृक्ष नष्ट हुआ पच दूसरे युद्धमें वगुलेने जय लाभ पा कर द्रोण काफके अधिष्ठत स्थानमें अन्यान्य घोसला बनाया। अन्तमें इस विरोधी दलके बीच सधि हो गई। यह सभाजसे ही पोस मानता है, पालने पर वह इतना परच जाता है, कि पालकके पाससे कभी अलग नहीं होता। यह मत्स्यसे मिश्र अन्य द्रव्य भी खाता हुआ देखा गया है। यह हसादिकी तरह स्पष्ट रूपसे तैर नहीं सका, ती भी जलके ऊपर पल रख कर और पैरके बलसे उडता हुआ धमोष्ट स्थानमें चला जाता है। किसी किसी समय यह १० या १२ फीट तैर कर पार करता हुआ देखा गया है।

तीन वर्ष तक बच्चोंके माथे पर रोप नहीं निरलते, इसके बाद मस्तकके ऊपरी भाग पर ही कितने रोप निकलते दिखाई देते हैं। गलेके रोप सफेद और अत्यन्त कोमल होते हैं। चोच जन्मसे ही पीली होती है। पैरो का रंग पक्षा होता है, इस समय बच्चो का शारीरिक गठन इतना सुन्दर नहीं होता, किन्तु तीन वर्षके बाद ही उनका जीवन प्रारम्भ होने लगता है। नर और मादा स्व। अपने ही चिकने वालो से वेष्टित रहनेके कारण देखनेमें सुदूर लगती हैं। यूरोपमें पहिले वगुलेका शिकार सम्राज्य व्यक्तियों की फ्रीडामें गिना जाता था। शिकार करते समय यदि किसी ध्यकिसे अण्डा नष्ट हो जाता था, तब उसे एक पौंड अर्थ दंड देना पडता था। वगुलेका मास सुखाद्य आहार है। इ गलेंडमें ४वें एडवर्डके राज्यकालमें योर्कके आर्कबिशप जार्ज नेमिलके अभियेकके समय बहुतसे वगुले मारे गये थे। राजा टम हेनरीके विवाहके समय वकमासका प्रचार था। आजकल रुविके परिघर्तनसे इ गलेंडमें वकमासका प्रचार नहीं रहा।

२ खनामरव्यात पुष्पवृक्ष, अगस्तफूल। पर्याय— शिवयह्नी, वाशुपत, पकाष्टीला, बुक, वसुक, वकपुष्प, शिवमह्नी, काकशीर्ष, स्थूलपुष्प, शिवप्रिय, काकतामा, बसदह, सपरक, रक्तपुष्प, मुनिदय, अगस्त, व गसेनक, अगस्त्य, शोधपुष्प, मुनिद्रुम, घणार्थि, दीर्घफलक, वक पुष्प, सुरप्रिय (*Scabana grandiflora*)

दक्षिण और पूर्वभारत, गङ्गाके किनारे, ब्रह्म, उत्तर आदि लिया और मरिसस द्वीपमें यह पुष्प उत्पन्न होता है। इसका पेड़ स्वभावतः २२ या ३० फुट तक ऊँचा होता है। इसको लकड़ी बहुत हलकी होती है जिससे थोड़े ही दिनोंमें पेड़ अपने आप मर जाता है। इसके फूल देखनेमें ढाकके फूलके समान, पर उससे बड़े और सफेद तथा कुछ ललाई लिये हुए सफेद होते हैं। इसका गोंद लाल, धूप और हवा लगनेसे बँगनकी तरह काला हो जाता है। वह जल और मदिरामें गल जाता है। काठके सूखा और नोरस होनेके कारण छाल धूप लगनेसे उससे अलग हो जाती है, किन्तु भीतर मछलीके छिलके की तरह जो पतली छाल होती है उससे उत्कृष्ट, मजबूत तन्तु प्रस्तुत होता है। छालमें धारवता शक्ति है। चेचकके प्रारम्भमें अथवा सस्फोटक ऊदरमें इसकी छाल पानीमें भिगो कर रगनेकी दी जाती है। कहीं कहीं फूल और पत्तोंका रस शिर पीडा और नासिका रोगमें दिया जाता है। इस रसको अच्छी तरह नाकके द्वारा घनेसे कफ पतला हो निकल आता है, जिससे माथेका दुखना और भारोपन दूर हो जाता है।

लाल रंगके बक फूलके रेशेको ठंडे जलमें बाट कर वातयुक्त स्फोट स्थानमें लेप देनेसे फायदा देया गया है। दृष्ट घाव या शस्त्राघातमें अथवा दृष्ट स्थानमें पत्तोंकी पुलटिस बाधनेसे क्षत स्थान आरोग्य हो जाता है। फूलोंका रस आगोंमें डालनेसे ऋषनी दोष दूर होता है। हरे पत्ते और फूल राध कर खानेमें अच्छे लगते हैं। इसकी गरी बरन्टकी तरह ध्वजनादिमें खायी जाती है, किन्तु खानेमें ज्यादा कम्बैली और अधिक खानेसे उदरमें रोगको पैदा करती है।

यह फूल शिवजीकी पूजामें पवित्र माना जाता है। प्रायः सभी पूजामें इसका व्यवहार होता है। यह सफेद, पीला, नीला और लालके भेदसे चार प्रकारका है। तन्त्र मतमें यह यन्त्रपुष्प माना जाता है। विशेषतः अन्याय फूलोंके पर्युषित होने पर उनके द्वारा पूजा नहीं की जाती, किन्तु बकपुष्पके पर्युषित होने पर भी उनसे पूजा की जाती है। वैद्यकके मतमें इसके गुण—मधुर, शिथिल, श्रम, कास, त्रिदोषनाशक पर्य बलकारी है। (१।प्रति०)

भावप्रकाशके मतसे यह शीत, नक्तान्ध्यनाशक, चातुर्थक निवारक, तिक्त, रपाय, फट्टपाक, पीनस, श्लेष्मा, पित्त और वातघ्न माना गया है।

३ कुनेर। ४ एक राधस जो भीमके हाथसे मारा गया था। (भारत १।१५।७३) ५ असुरविरोध, वकासुर। भगवान् श्रीकृष्णके द्वारा यह असुर निहत हुआ था। भागवतमें इसका विषय यों लिखा है—

एक समय गोप बालकगण श्रीकृष्णजीके साथ वनमें गाने चराने गये। वहाँ श्रीकृष्ण गायोंकी पानी पिलानेके लिये एक जलाशय पर पहुँचे। उसी समय वकना रूप धारण कर एक असुर आया और उसने श्रीकृष्णको निगल लिया। बलराम आदि यह देख भयसे चिह्न हो मवके मन रोने लगे। उस बगुलेकी चोंच बड़ी और तेज थी। भगवान् श्रीकृष्ण बगुलेके मुखके बीचमें बैठ कर अग्निकी तरह उसके तालू भागको जलाने लगे। बगुला जब उस वेदनाको न सह सका, तब उसने श्रीकृष्णको उगल दिया। इसके बाद वह चोंचके द्वारा श्रीकृष्णको मारनेके लिये उनके सामने आया। भगवान् श्रीकृष्णने उस असुरको फिर आते हुए देख अपनी दोनों बाहुओंसे उसको चोंच परकट कर उसी समय उसको यमपुर भेज दिया। (भागवत १०।११ अ०)

बकच दन (हि० पु०) एक प्रकारका वृक्ष। इसकी पत्तिया गोल और बड़ी होती हैं। इसका पेड़ ऊँचा और लकड़ी मजबूत होती है। फल इसका लम्बा और पतला होता है जिसमें छ से आठ नी अगुल ल वे तीन चार दल होते हैं। यह ऊपर कुछ ललाई लिए भूरे रंगका होता है। फल सिरके दर्दमें पीस कर लगाए जाते हैं।

बकचन (हि० पु०) बकच दन देखो।

बकचा (हि० पु०) बकचा देखो।

बकचिञ्चिका (स० खी०) मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी मछली। इस मछलीके मुहकी जगह लम्बी चोंचसी होती है। इसे कीचा मछली भी कहते हैं।

बकची (हि० खी०) एक प्रकारकी मछली। २ बकची देखो।

बकजित् (स० पु०) बक जितवान् इति जि विप् तुक् च। १ भीमसेन। २ श्रीकृष्ण।

बकठाना (हि० कि०) किसी बहुत कसैली चीज जैसे

वगलव दी ( हि० रगी० ) एक प्रकारकी मिगजई । इसके  
बंद वगलके नीचे लगते हैं ।

वगन ( हि० पु० ) १ मफेट रगना एक प्रसिद्ध पक्षी ।  
य देगो । एक झाडीदार पौधा । उसे गमलीमें शोभा  
के लिये लगाया जाता है ।

वगलामुगी ( हि० खी० ) ताम्बिलकोंके अनुसार एक देवी ।  
वगामुगी देगो ।

वगलियाना ( हि० कि० ) १ वगलमे ही कर जाता, गह  
काट कर निकलना । २ पृथक् निवालना, अलग करना ।  
३ वगलमें लाना या करना ।

वगली ( हि० नि० ) १ वगलसे मधु रचनेवाला, वगल  
का । ( खी० ) २ ऊँटोंका एक दीप । इसमें चलते समय  
उनकी जाघनी रग पेटमें लगती है । ३ मुन्दर हिलाने  
का एक ढग । इसमें पहले मुन्दरको ऊपर उठाते हैं और  
उमे कचे पर इस प्रकार रखते हैं, कि हाथ मुठिया पर उठे  
नीचेकी सीधा होता है और मुन्दरका दूसरा सिरा कचे  
पर होता है । फिर एक हाथकी ऊपर ले जा कर मुन्दर  
को पीछे सरकाते जाते हैं, यहा तक कि यह पीठ पर  
लटक जाता है । इसी बीचमें दूसरे हाथके मुन्दरको  
पहले जैसा ऊपर ले जाते हैं इसके बाद पहले हाथके  
मुन्दरको हाथ नीचे ले जा कर कचे पर इस प्रकार लाते  
हैं, कि उनका दूसरा सिरा फिर कचे पर आ जाता है ।  
इसो तरह बराबर करते रहते हैं । ४ यह सेंध जो किनाड-  
की वगलमें सिटकिनीकी सीधमें चोर डमलिये खाँदते है,  
कि उसमेंसे हाथ डाल कर सिटकिनी खसना कर  
किनाड गोल ले । ४ ब गे, कुरते आदिमे कपडेका  
टुकडा जो अस्तीनके साथ कपड़ेके नीचे लगाया जाता  
है । ५ यह धैली जिसमें दर्जी मूई तागा रखते हैं और  
जिसको वे चलते समय कचे पर लटका लेते हैं । यह  
चौकीर कपडेकी होती है । इसके तीन पाट दोहर  
दोहर कर सी दिये जाते हैं और चौधमें एक डोरी लगा  
दी जाती है जिसे धैली पर लपेट कर बाँधते हैं । यह  
धैली चौकीर होती है और इसके दो ओर एक फीता या  
ओरीके दोनों सिरे टाके रहते हैं जिसे वगलमें लटकाते  
समय जनेऊकी तरह गलेमें पहन लेते हैं । ६ यह  
लकड़ी जिसमें हुएकेजाले गडगडकी अटका कर उसमें

छेद करने हैं । ७ खो चक, वगला नामक पानीकी  
मादा ।

वगलीटाग ( हि० खी० ) कुष्तीका एक पेच । इसमें  
प्रतिपक्षीके सामने आते ही उसे अपनी गलमें ला कर  
और उसको टाग पर अपना पेर मार कर उमे गिरा देते  
हैं ।

वगली वाह ( हि० खी० ) एक प्रकारकी कसरत । इसमें  
दो आदमी बराबर बराबर खड़े हो कर अपनी बाहमें  
दूसरेकी बाँह पर घक्का देते हैं ।

वगली लपोट ( हि० पु० ) कुष्तीका एक पेच ।

वगाग ( हि० पु० ) गाय बाधनेना स्थान, घाटी ।

वगारजा ( हि० कि० ) १ पसारजा, फैलाना । बगराना  
देखो ।

वगाजत ( अ० खी० ) १ वागी होमेश नाय । २ विद्रोह,  
बलया । ३ राजद्रोह ।

वगीचा ( फा० पु० ) उपजन, छोटा वाग ।

वगुडा—पूर्वीय वङ्गाल और आसामके राजगाही विभागका  
जिला । यह अक्षां १४ ३२ से २५ १६ उ० तथा देशां  
८८ ५२ से ८९ ४१ पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण  
१३५६ वर्ग मील है । यहा निस्ता, ब्रह्मपुत्र, यमुना,  
नागर, करतोया, व गाली और मानस नदी बहती हैं ।  
१७८७ ई०की भीषण बाढके पहले करतोया नदी  
तिस्ताके जलको अपने साथ लेती हुई गङ्गामें  
मिलती थी, उस समय इसमें बड़े बड़े जहाज आते  
जाते थे । इसी कारण प्राचीनकालमें इस नदीका  
विशेष गौरव था । बाढके बादसे इसकी गति फलट  
गई है । यद्यपि आज भी यह प्राचीन गड ढा देखा जाता  
है पर उसमें श्रोत बिल्कुल नहीं है ।

राजगाहीके कुछ धानोंको ले कर १८२१ ई०में यह  
जिला सगठित हुआ है । उस समय यहा नील और  
देगमकी अच्छी खेती होती था । उस समय यहाँतका  
भी भारी उपद्रव था, पर ब्रिटिश सरकारने उनका  
थोड़े ही दिनोंके अन्दर अच्छी तरह दमन किया । दूरदर्शी  
जिलेसे विचारकी सुविधा न होती देख यहा एक ज्वाइएट  
मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए । ये ही राजस्व विभागका बुर  
काम करते थे । प्रथम वगुडा जिलेकी उन्नति होती गई ।

पोछे १८५६ ई०में यहा एक स्वतन्त्र मजिस्ट्रेट कलकूर नियुक्त हुए ।

इस जिलेके अन्तर्गत महास्थानगढ और शेरपुर नगर ऐतिहासिक तत्त्वमें पूर्ण है । महास्थानगढ अभी स्तूप मानवमें परिणत हो गया है जिसके एक पार्श्वसे बरतोया नदी बहती है । ७४ समय यहा हिन्दू राजाओं-में राज्य किया था । आज भी जहाके लोगों के मुख से उन हिन्दूराजव शक्ती बहुत सी बातें सुनी जाती हैं । १६वीं शताब्दीमें शेरपुर नगर विशेष समृद्धशाली था । मुगल इतिमुक्तमें तथा १६६२ ई०के ओलन्दाज शासन कर्ता ब्रूक ( Von den Broucke )-के मानचित्रमें यह नगर वाणिज्य स्थान कह कर वर्णित हुआ है । ढाकामे मुसलमान-नवाबोंकी प्रतिष्ठा होनेके पहिले यह नगर मुसलमान अधिकारस्थ सीमान्तदेशमें अवस्थित तथा भिन्न राज्यके साथ वाणिज्यके लिये बहुत कुछ निरघात था । नोलकी खेती पहलेकी तरह नहीं होती, पर रेशम तथा यन्त्रादि धुननेका कार्य पहले सा चला आ रहा है । शेरपुर और नन्दावाडामें इष्ट इण्डिया कम्पनीकी दो रेशमनी कोठी थी १८३४ जो ई०में यहासे उडा दी गइ ।

इस जिलेमें बगुडा १ और शेरपुर नामके २ शहर और ३८६५ ग्राम लगते हैं । जनसंख्या ६ लाखके करीब है । इनमेंसे सैकड़ों पोछे १८ हिन्दू और शेष ८२ मुसलमान हैं । आबहवा कुल मिला कर अच्छी है, पर उक्त दोनों शहर बरतोया नदीके किनारे अवस्थित होनेके कारण मलेरियाका अक्सर प्रकोप देखा जाता है । धान, पटसन, सरसों, चीनी, चमडा, तमाकू और गांजा यहा का उत्पन्न द्रव्य है । यमुनानीरवर्ती हिहरी, दमदमा, जमालगञ्ज, बालुभरा, नीर्गान और बुवलहाटी, बरतोया तीरवर्ती गोविन्दगञ्ज, शुभाणीगञ्ज, शिन्गञ्ज, सुलतान गज और शेरपुर ये सब जिलेके प्रधान वाणिज्यस्थान समझे जाते हैं । चियाशिक्षाकी ओर यह जिला बहुत पीछा पडा हुआ है । पर पहलेसे लोगोंका इस ओर कुछ विशेष ध्यान आकृष्ट हुआ है । अभी यहा कुल मिला कर ४६० स्कूल हैं । स्कूलके अलावा जिलेमें ६ अस्पताल भी हैं ।

२ उक्त जिलेका एक शहर । यह अक्षा० २४ ५१' उ०

तथा देशा० ८६ २३' के मध्य बरतोया नदीके पश्चिम कुल पर अवस्थित है । जनसंख्या ७ हजार है । शहरमें १८७६ ई०में म्युनिमपलिट्री स्थापित हुई है । कालीतला और मालधी नगरकी हाट यहाका प्रधान स्थान है ।

बगुलपोख ( हि० पु० ) जलमें रहनेवाली एक प्रकारकी चिडिया जो मुरगानीसे छोटी होती है । इसका रंग सफेद होता है और इसके पैर तथा चोंच काली होती हैं ।

बगुला ( हि० पु० ) बगला देखो ।

बगुला—नदिया जिलान्तर्गत एक गण्ड ग्राम । यहा ३, धी, पम् रेठवेका एक स्टेशन होनेके कारण गोवाडो कृष्ण नगर आदि स्थानोंमें जाने आने तथा वाणिज्यकी त्रितीय सुविधा हो गई है । इसके पास ही चूणाम नामनी नदी बहती है ।

बगुला ( हि० पु० ) बड़ चायु जो गरमीके दिनोंमें कभी कभी एक स्थान पर भँवर सी भूमती हुई दिपाई देती है और निस्से गर्दका एक कभा सा बन जाता है । यह चायु-रत्नम् आगेको बढ़ता जाता है । इसका व्यास और ऊचाई कभी कम और कभी अधिक होती है । कभी कभी बड़े व्यासवाले बगुलेमें पड कर बड़े बड़े पेड और मकान तक उखड कर उड जाते हैं । यह बगुला जब समुद्र या नदियोंमें होता है, तब उसे 'सू डी' कहते हैं और इससे पानी नलकी भाति ऊपर चिच जाता है, बचडर ।

बगेडी ( हि० स्त्री० ) बगेरी देखो ।

बगेरी ( हि० स्त्री० ) पानी रगनी एक छोटी चिडिया जो सारे भारतमें पाई जाती है । यह डोल डौलमें गौरैयाके समान होती और मैदानोंमें जलाशयोंके पास पाई जाती है । यह जमीनके साथ इस प्रकार चिमट जाती है, कि सहजमें दिखाई नहीं देती । यह कुडोंमें रहती है । इसे ससृष्टतमें भरद्वाज कहते हैं ।

बगीचा ( हि० पु० ) बगीचा देखो ।

बगीधा ( हि० पु० ) बगेरी नामकी चिडिया ।

बगी ( अ० स्त्री० ) चार पहिपेकी पाटनदार गाडी जिसे एक वा दो घोडे पीचते हैं ।

बगडो—१ बङ्गालके अन्तर्गत एक विभाग । वा० स्त्री देखो ।

२ मेदिनीपुरके उत्तर और हुगली तथा बाकुङ्गाके

म-यपत्ती स्थान । यह स्थान २२ व्यवसायके लिये प्रसिद्ध है । यहा जो कपडे नैवार होते हैं वे बगडी नामने तमाम मगहर हैं ।

वधवर ( हि० पु० ) १ वाघपती गाल जिस पर साधु लोग प्रेड कर ध्यान लगाते हैं । २ वाघपती गालकी तरह बगडा हुआ कबल ।

वधनहा ( हि० पु० ) १ एक प्रकारका हथियार । इसमें नायूनके समान चिपटे डेढे काटे रहते हैं । इसे उ गलियों में पहनते हैं और हाथापाई होने पर इससे शत्रुकी नोक लेते हैं । २ एक आभूषण जिसमें वाघके नायून चादी या सोनेमें मडे होते हैं । इसे गलेमें तागेमें ग्रथ कर पहनते हैं ।

वघार ( हि० पु० ) १ छींक, तडका । २ वघारनेकी महक ।

वघागना ( हि० कि० ) १ कलडी या चम्मचमें घीको आग पर तपा कर और उसमें हींग, जीरा आदि सुगंधित मसाले छोट कर उमे डाल आदिके कतनमें मूंह ढाक कर छोटना जिसमें वह डाल आदि भी सुगंधित हो जाय, छीरना । २ अपनी योग्यतासे अधिक्, विना मीके या आश्चर्यकतासे अधिक् चर्चा करना ।

वघेरा ( हि० पु० ) लकड़वघा ।

वघेलखण्ड—मध्यभारतके अन्तर्गत एक विस्तीर्ण पठेन्तो । यह अक्षा० २२ ४०' से २६ १०' उ० तथा देशा० ८० ०५' से ८० ४५' पू०के मध्य अवस्थित है । यह देशीय राजाओंके अधीन है तथा बडे लाटके मध्यभारतके पठेन्तोमें शासित होता है । भूपरिमाण १४३२३ वर्ग मील है जिसमेंसे १३००० वर्ग मील देवागज्यके अधीन है और शेष भाग ११ छोटे छोटे राज्योंमें विभक्त है । इन ११ राज्योंके नाम हैं—बर्गोदा, नागोद, मैहर, सोहावल, कोट्टी, जासो, पालदेव, पहरा, तरौन, मैसौंदा और कामत रजौल । इसके उत्तरमें मिर्जापुर, श्लाहावाड और वादा जिला, दक्षिणमें विलासपुर, मण्डला और जयलपुर, पश्चिममें जयलपुर जिला और बुंदेलखण्ड पठेन्तो तथा पूरवमें छोटानागपुरका सामन्तराज्य है । जनसंख्या साडे पन्द्रह लाकके करीब है जिनमेंसे हिन्दू की संख्या और बर्गोदे अधिक् है । इसमें देवा, मनना, मैहर, उमरिया, गीचिल्लगड और उनचहर नामके ६ शहर

तथा २५५६ ग्राम लगते हैं । सतना यहाका प्रधान प्राणिय स्थान है । १८७१ ई० तक यह प्रधान बुन्देलखण्डके अधीन रहा । उसी सालसे यह बघेलखण्ड पठेन्तो कहलाने लगा है । बघेला नामक राजपूनोंके वामसे इसका बघेलखण्ड नाम पडा है । बघेला राजपूत एक समय गुजरातमें राज्य करते थे । बघेला देवो ।

वघेला—शिरोदीय वशीय राजपूत जातिकी एक शाखा । ये लोग पहले गुजरात प्रदेशमें राज्य करते थे । तिरुण पाल ( विभुवनपाल), दुर्लभ और वल्लभके शासनके बाद १३०० सम्मत्तमें त्रिगलदेव पटनाके सिंहासन पर बैठे । इनके १८ वर्ष राज्य करीके बाद अर्जुनदेवने १३२० सम्मत्तमें राज्याधिकार प्राप्त किया । उसके बाद १३३३ सम्मत्तमें सारङ्गदेवका राज्याधीन देमा जाता है । १३५३ सम्मत्तमें १३६० सम्मत्त तक कर्णने राज्य किया । शेषोक सबत्तमें दिल्लीशर सुलतान अलाउद्दीनने दलबलके साथ आ कर हिन्दू राजघरानेको तहस नहस कर डाला । विचारध्रेणी तथा प्रवचनपरीक्षा नामक ग्रन्थमें इस राजघरानेके राज्यकाल सम्बन्धमें बहुत सी बातें लिखी हैं ।

राजाकी वघेलराज-अप्यायिकासे मालूम होता है, कि आहलवाडके अधिपति सिद्धराय जयसिंह ( ११०० ११५० ई० ) के पुत्र व्याघ्रदेवने १२२१ गताश्र्योमें यहा आ कर राज्य बसाया । व्याघ्रदेवके नामसे ही इनकी वघेला संज्ञा पडी है ।

वघेली ( हि० स्त्री० ) वरतन सरारनेवालोकका खूटा । इसका ऊपरी सिरा आगेकी ओर फुड बडा होता है । इस सिरने घाई या नाक कहते हैं और इसी पर रख कर वरतन रगवादा या कृना जाता है ।

वघैरा ( हि० पु० ) बगेरी देवो ।

वङ्गनेर—बंगालियर राज्यके अन्तर्गत एक प्रधान नगर । यह मानन्तीके किनारे अवस्थित है ।

वङ्गापुर—बर्गोदे प्रदेशके मारवार जिलान्तर्गत एक उप विभाग । यह अक्षा० १४ ५१' से १५ १०' उ० और देशा० ७५ ४' से ७५ २८' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ३४४ वर्गमी० और जनसंख्या नन्ने हजारसे ऊपर है । इसमें एक शहर और १४४ ग्राम लगते हैं । जलवायु स्वाम्प्यप्रद है । २ बम्बईके धारवार जिलान्तर्गत एक शहर । यह

अक्षा० १४ ५५ उ० और देशा० ७५ १६ पृ०के मध्य अरु स्थित है। जनसंख्या छ हजारसे ऊपर है। यहां एक भन्त दुर्ग और दो मन्दिर हैं। प्रति मंगलवारको हाट लगती है जिसमें मोटा रूपाडा, कम्बल, तेल आर वरतन बिक्रनेके लिये आते हैं। ७७ ई०में गङ्गवशके उदयादित्य नामक व्यक्ति यहाका शासन करते थे। १४०६ ई०में बाहमनी सुल्तान फिरोज शाहने शहरमें घेरा डाला। १७९६ ई० में यह हैदरअलीके हाथ लगा। १८०२ ई०में वसीनजी सन्धिके अनुसार पेशवाने इसे घृष्टिग गजमे एटने समर्पण किया। यहां रङ्गस्वामीका एक सुन्दर जैन मन्दिर है जिसमें अनेक शिलालिपिया लोदित हैं। शहरमें चार स्कूल हैं जिनमेंसे दो बालिकाओंके लिये हैं।

वङ्गिमचन्द्रचट्टोपाध्याय—अन्तर्य 'व' देणो।

वङ्गसू—एक मुसलमान वंश। ये लोग स्वभारत ही निरोह होते हैं। फरुखाबादके नवाब वंश इसी वङ्गवशके मुसलमान हैं।

वच ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारका पौधा। वचा देखो

वचकाना ( हि० वि० ) १ वचचोंके योग्य, वचचोंके लायक।

२ वचचोंका स्र, धोडी अरुस्थाना।

वचत ( हि० स्त्री० ) १ वचनेका भाव, वचाव। २ लाम, मुनाफा। ३ वह भाग जो ध्यय होनेसे वच रहे, शेष।

वचनविदग्धा ( स० स्त्री० ) वचनविदग्धा देणो।

वचना ( हि० कि० ) १ फट वा धिपत्ति आविसे अलग रहना, रक्षित रहना। २ पीछे या अलग होना, हटना।

३ दूर रहना, परहेज करना। ४ किसी तुरी बातसे अलग रहना। ५ ररचने या काममें जाने पर शेष रह जाना, बाकी रहना। ६ किसीके अन्तर्गत न आना, छुट जाना।

७ कहना।

वचपन ( हि० पु० ) १ बाल्यावस्था, लङ्कपन। २ वचचा होनेका भाव।

वचाना ( हि० कि० ) १ रक्षा देना, आपत्ति या कष्ट आदिमें न पडने देना। २ पीछे धरना, हटाना। ३ ऐसे रोगसे मुक्त करना जिसमें मरनेकी आश का हो। ४ प्रभावित न होने देना, अलग रचना। ५ छिपाना, छुटाना। ६ किसी तुरी बातसे अलग रखना, दूर रखना। ७ ध्यय न होने देना।

वचाव ( हि० पु० ) रक्षा, हाण।

वचिया ( हि० स्त्री० ) कसीदेके वाममें छोटी छोटी वृटिया।

वचुआ ( हि० पु० ) सिंध, उड़ीसा, बङ्गाल और आसाम की नदियोंमें मिलनेवाली एक प्रकारकी मछली। साधारणतः यह बालिशत भर ल धी होती है, पर इम जातिकी कोई कोई बड़ी मछली हाथ डेढ हाथ तक भी लम्बी होती है।

वचून ( हि० पु० ) भालूका वचा।

वचो ( हि० पु० ) काश्मीर, सिंध और कानुलमें मिलने वाली एक वारहमासी लता। इसकी जडसे मजीठकी तरहका रंग निकलता है। यह लता बीज और जड दोनोंसे उत्पन्न होती है। तीन वर्षसे ले कर पाच वर्ष तक इसकी जड एक रग तैयार होती है। इसकी पत्तिया पशु और विशेषत ऊँट वडे चाबने पाते हैं।

वचा ( फा० पु० ) १ किसी प्राणीका नरजात और अस हाथ गिशु। २ बालक, लडका।

वचाकाज ( फा० वि० ) जो बहुत वचो जनती हो।

वचादान ( फा० पु० ) गर्भाजय, फोख।

वचा ( हि० स्त्री० ) १ वह छोटी घोडिया जो छत वा छाजनमें बडी घोडियाके नीचे लगाई जाती है। २ यह गाल जो होंठके नीचे बीचमें जमता है। ३ वचा देणो।

वच्छ ( हि० पु० ) १ वचा, बेटा। २ गायका वचा, बछडा।

वच्छनाग ( हि० पु० ) वडनाग देखो।

वच्छा ( हि० पु० ) १ गायका वचा, बछडा। २ किसी जानवरका वचा।

बछडा ( हि० पु० ) गायका वचा।

वडनाग ( हि० पु० ) एक स्थावर त्रिय। यह नेपालके पहाडोंमें होनेवाला पीप्रेकी जड है। यह देवनामें हिरनके मोगके आकारका होता है। विशेष विवरण वरठनाम ग्रन्थमें देखो।

बछरा ( हि० पु० ) बछडा देखो।

बछरागात्र— रायबरेली जिलेके अन्तर्गत एक परगना। भूपरिमाण ६४ वर्ग मील है। १५वीं शाब्दिके प्रारम्भमें मुसलमान सेनापति खैयद सलार मसाउद और वाई



राजाओंके हाथमें यथाक्रम परास्त और विध्यस्त होने पर भी यह स्थान भार जातिके अधिनायकमें रहा। उसी माल जौनपुर गज सुत्रतान इब्राहिमने इस स्थान पर अधिकार जमाया। इब्राहिमने अपने कर्मचारी काजी सुलतानको यह सम्पत्ति दान कर दी। इसके बाद कुर्मी और वार्दगणने पुनः उनके प्रशपरीके हाथसे छीन ली।

२ उक्त जिलेके दिग्गजयग ज तहसील्का प्रधान नगर और सदर। यहा पाच शिव मन्दिर हैं।

बछौटा (हि० पु०) वह चन्द्रा जो हिस्सेके मुताबिक लगाया या लिया जाय।

बजनी (हि० पु०) बाजा बजानेवाला, बजनिया।

बज (स० पु०) ओपधिचिश्ये।

बजरुद (हि० पु०) भारतके जगलोंमें पैदा होनेवाली एक बड़ी लता। इसकी जड़ विपैली और मादक होती है परन्तु उबालनेसे घाने योग्य हो सकती है।

बजकना (हि० कि०) किसी तरल पदार्थका सड़ कर या बहुत गन्दा हो कर तुलतुने के बना, बजबजाना।

बजका (हि० पु०) चनेकी शाल या येसाकी बनी हुई बड़ी बड़ी पकौटियाँ जो पानीमें भिगो कर दहीमें डाली जाती हैं।

बजट (अ० खी०) आगामी वर्ष या मास आदिके लिये भिन्न भिन्न विभागोंमें होनेवाले धाय और व्ययका लेखा जो पहलेसे तैयार करके मजूर कराया जाता है।

बजड ना (हि० कि०) १ टन्नाना। २ पहुँचना।

बजड (हि० पु०) बग्गा देखो।

बजनक (हि० पु०) पिस्तेका फल जो रोग रगनेके फाममें आता है।

बजना—बर्मादेशी काडियावाड एजेन्सोका एक सामन्त राज्य। यह अक्षा० २२ ५८' से २३ १०' उ० देशा० ७१ ४०' से ७१ ५८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १८३ वर्ग मील और जनसंख्या ४० हजारसे ऊपर है। सब तरहके शस्य और कई यहाँका प्रधान उत्पाद द्रव्य है। कोई नद न रहनेके कारण लोग कुए के पानी में अपना काम चलाने हैं। निन्दरत्ती डोलैरा नामक रधानमें यहाका धाणउप होता है।

यहाके अधिनामी मुसलमान और जाट हैं। सरदार राजा भी मुसलमान हैं। १८७७ ई०में बग्गोंके साथ इनकी मिलता हुई। यहाका राजस्व ७१००० र० है जिनमेंसे ८ हजार ६० वृट्टिका-गधमेंलको षट-स्वरूप देना पडता है। सैन्य-संख्या २३२ है। राजाको गोद लेनेका अधिकार नहीं है।

बजना (हि० कि०) १ किसी प्रकारके आघात या हवाके जोरसे बाजे आदिमेंसे गन्ध उत्पन्न होना। २ प्रत्याति पाना, प्रमिद्ध होना, कहलाना। ३ बड ना, हट करना। ४ बग्गोंका चलना। ५ प्रहार होना, आघात पड ना। (पु०) ६ बजनेवाला बाजा। ७ रपया। (वि०) ८ बजानेवाला। बजनियाँ (हि० पु० खी०) वह जो बाजा बजाता या बजाती हो।

बजनियाँ (हि० पु०) बजनियाँ देखो।

बजनी (हि० वि०) बजनेवाला, जो बजता हो।

बजरग (हि० वि०) बजनेके समान दृढ शरीरवाला।

बजरगवली (हि० पु०) महावीर, हनुमान।

बजरगौवैठक (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी वैठक।

बजरगण्ड—१ ग्वालियर राज्यके अन्तर्गत एक सुबाहत्। सुबादार ही यहाके सरदार हैं। ये ग्वालियर-राजके अधीन हैं।

२ उक्त सचानी राजधानी। यह अक्षा० २४ ३४' उ० और देशा० ७७ १८' पू०के मध्य अवस्थित है। यह कार्तिक मासमें १५ दिन तक मेला लगता है।

बजरवट्ट (हि० पु०) एक वृक्षके फलना दामा या बीज जो काले रंगका होता है और जिसकी माला लोग बघीं को नजरसे बचनेके लिये पहनाते हैं। इसका पेड ताड़की जातिका है और मलायारमें समुद्रके किनारे तथा लकामें उत्पन्न होता है। बङ्गाल और बर्मामें भी इसे लोग बोते और लगाते हैं। इसके पत्ते बहुत बड़े और तीन साठे तीन हाथ व्यासके होते हैं। लोग इसके पत्ते, चट्टाई, छाते आदि बनाते हैं। यूरोपमें इसके नरम और बोमल पत्तोंसे अनेक प्रकारके कढाबदार फोते बनाये जाते हैं और इसके रेशेसे बुछरा बनाये और जाल बुने जाते हैं। इसकी रसियाँ भी बड़ी जा सघती हैं। इसके फल बहुत कड़े होते हैं और यूरोपमें उनसे बदन, मालाके

दाने तथा छोटे छोटे पाल बनाये जाते हैं। मलवारमें इसके पेड़ोंको लोग समुद्रके किनारे वागोंमें लगाते हैं। यह पेड़ चालीस बयालीस वर्ष तक रहता है और अन्तमें पुराना हो कर गिर पड़ता है।

वजरोंग ( हि० पु० ) १ अगहनमें होनेवाला एक प्रकार का धान। इसका चावल बहुत दिनों तक रह सकता है। २ वासका मोटा और भारी डडा।

वजर हठी ( हि० स्त्री० ) घोड़ेके पैरोंकी गाठोंमें होनेवाला एक फोडा जो एक एक फूट जाता है और तब वहा घाय हो जाता है। यह प्राय बराबर बढ़ता जाता है और गाठनी हठी फूट आती है। इससे घोडा बेकाम हो जाता है। वह रोग असाध्य माना जाता है।

वजरा ( हि० पु० ) १ एक प्रकारकी बड़ी और पटी हुई नाप। इसमें नीचेकी ओर एक छोटी कोठरी और एक बड़ा कमरा होता है तथा ऊपर खुली छत होती है। २ बाजरा देखो।

वजरी ( हि० स्त्री० ) १ ककड़के छोटे छोटे टुकड़े जो गच के ऊपर पीठ कर बैठाय जाते हैं और जिस पर सुरकी और चूना डाल कर पलस्तर किया जाता है। २ छोटा नुमायगी क्यूरा। यह किल आदिकी दीवारोंके ऊपरी भागोंके बराबर छोड़े अन्तर पर बनाया जाता है और इसको बगलमें गोलिया चलानेके लिये कुछ अन्काश रहता है। ३ ओला।

वजवाइ ( हि० स्त्री० ) बाबा वजानेकी मजदूरी।

वजवाना ( हि० क्रि० ) वजानेके लिये किसीको प्रेरणा करना, किसीकी वजानेमें प्रवृत्त करना।

वजवैया ( हि० वि० ) वजानेवाला, जो वजाता हो।

वजा ( फा० वि० ) उचित, वाजिब।

वजाज ( अ० पु० ) कपड़ेका व्यापारी, कपडा बेचनेवाला।

वजाजा ( फा० पु० ) वजाजोंका बाजार, कपड़े विक्रनेका स्थान।

वजाजी ( फा० स्त्री० ) १ कपडा बेचनेका व्यापार, वजाजका काम। २ वजाजकी दूकानका सामान, विक्रीके लिये परोदा हुआ कपडा।

वजाना ( हि० क्रि० ) १ किसी वाजे आदि पर आघात पहुंचा कर अथवा हवाका जोर पहुंचा कर उससे शब्द

उत्पन्न करना। २ आघात पहुंचाना। २ किसी चीजसे मारना। ३ चोट पहुंचा कर आघात निकालना।

वनाय ( फा० अर्थ० ) स्थान पर, जगह पर, बदलेमें।

वजायी ( हि० वि० ) १ बाजारसे सम्बन्ध रखनेवाला, धानारू। २ साधारण, सामान्य।

वजारू ( हि० वि० ) बाजारू देखो।

वजुआ ( हि० पु० ) बाजू देखो।

वजुला ( फा० पु० ) वाह पर पहननेका मिजायठ नामका आभूषण।

वजूरा ( हि० पु० ) बिजूरा देखो।

वज्जात ( फा० वि० ) दुष्ट, बदमाश, पाजी।

वज्जाती ( फा० स्त्री० ) दुष्टता, बदमाशी।

वज्मी--कर्णवासी एक मुसलमान-कवि। इन्का असल नाम अबदुल सफर था। कुछ समय सिराज नगरमें रह कर ये सम्राट् जहांगीरके शासनकालमें गुजरात राज्य आये। इन्होंने १६१६ ई०में पद्मावती नामक पारसी भावा में पद्मावती उपरदान लिया। सम्राट् शाहजहानके राजत्वकालमें १६३४ ई०को ये जीवित थे।

वज्र ( स० पु० ) वज्र देखो।

वक्कयट ( हि० स्त्री० ) १ वक्क्या स्त्री, वक्क औरत। २ वक्क गाय, भैंस या कोई मादा पशु। ३ अग्नके पीधोंके डठल जिनसे बाले तोड़ ली गई हों।

वक्कान ( हि० स्त्री० ) वक्कनेकी क्रिया या भाव, वक्कव।

वक्काना ( हि० क्रि० ) वक्कनेमें लाना, उलक्काना।

वक्कव ( हि० पु० ) १ वक्कनेका भाव, वक्कनेकी क्रिया या भाव। २ उलक्कव, अटकाव।

वक्कवट ( हि० स्त्री० ) १ वक्कनेकी क्रिया या भाव। २ उलक्कव, अटकाव।

वट ( हि० पु० ) १ वट देखो। २ वडा नामका एकवान, बरा। ३ रस्सीकी ये टन, लल। ४ वाट, बटखरा। ५ बट्ट, लोडिया। ६ गोल वस्तु, गोला। मार्ग, रास्ता।

वटई ( हि० स्त्री० ) वटेर नामकी चिडिया।

वटपर ( हि० पु० ) बटखरा देखो।

वटपरा ( हि० पु० ) तीलनेका मान, वाट।

वटन ( हि० स्त्री० ) १ रस्सी आदि बटने या ये टनेकी क्रिया या भाव, पे टन। ( पु० ) २ एक प्रकारका बाटलेका

ताग । ३ चिपटे आकारकी बडी गोन घु डी । यह घु डी कोट, बुरते, अगे आदिमें टँकी रहती है और इसे छेदमें डाल देनेसे खुली जगह बंद हो जाती है तथा कपडा घदनकी पूरी तरहसे ढक लेता है ।

वटना ( हि० कि० ) १ कई तनुओं तागों या तागोंको एक साथ मिला कर इस प्रकार घे डना या घुमाना कि वे सब मिल कर एक हो जायँ । २ सिल पर रख कर पीना जाना, पिसना ।

वटना ( हि० पु० ) १ रम्सी बटनेका औजार । २ सरसों चित्री जी आदिका लेप जो शरीरकी मैल छुडानेके लिये मला जाता है, उज्जल ।

वटपार ( हि० पु० ) बटमार देखो ।

वटपारी ( हि० स्त्री० ) वटमारका काम, उकैती, ठगी ।

वटम ( हि० पु० ) पत्थर गढ़नेवालोंका एक यन्त्र जिससे कोना साधते हैं, फोनिया ।

वटमार ( हि० पु० ) मार्गमें मार कर छोन लेनेवाला, डाकू, लुटेरा ।

वटला ( हि० पु० ) बडी बटलोई, देग, देगचा ।

वटलो ( हि० स्त्री० ) वटलोई ।

वटलोई ( हि० स्त्री० ) दाल, चावल आदि पकानेका चौड़े मुहका गोल बरतन, देगची ।

वटमाना ( हि० कि० ) बटवाना देखो ।

वटवायक ( हि० पु० ) चौकीदार, रास्तेमें पहना देने वाला ।

वटवार ( हि० पु० ) १ राह वाटकी चौकसी रखनेवाला कर्मचारी, पहरेदार । २ रास्तेका कर उगाहनेवाला ।

वटा ( हि० पु० ) १ बर्तुंलाकार वस्तु, गोला । २ पथिक, राही । ३ गेद । ४ रोडा, ढेला ।

वटाह ( हि० स्त्री० ) १ बटने या पेठन डालनेका काम । २ बटनेकी मजदूरी । ३ बटाई देगो ।

वटाऊ ( हि० पु० ) वाट चलनेवाला, बटोही, पथिक ।

वटाना ( हि० कि० ) बंद हो जाना, जारी न रहना ।

वटाली ( हि० स्त्री० ) बंदश्योंका एक मौजार, रखानी ।  
वटिया ( हि० स्त्री० ) १ गोल मटौल टुकड़ा, छोटा गोला ।  
२ छोटा बट्टा, लीट्रिया ।

वटो ( हि० स्त्री० ) १ बडी नामया पकवान । २ गोली ।

वट्ट ( स० पु० ) ३३ देखो ।

वट्टा ( हि० पु० ) बट्टा देगो ।

वट्टक ( स० पु० ) बट्टक देखो ।

वट्टुजा ( हि० कि० ) १ सिमटना, फैला हुआ न रहना ।  
२ एकत्र होना, इकट्ठा होना ।

वट्टुटी ( हि० स्त्री० ) एक बट्टक, खेमारी ।

वट्टुला ( हि० पु० ) बडी बट्टोई ।

वट्टुना ( हि० पु० ) १ एक प्रकारकी कपडे या चमड़ेकी गोल थैली । इसके भीतर कई खाने होते हैं और मुँह पर डोरे पिरोए रहते हैं जिन्हें धींचनेसे मुँह खुलता और बंद होता है । लोग इसे सफरमें साथ रखते हैं, क्योंकि इसके भीतर बहुतसी फुटकर चीजे आ जाती हैं ।

वट्टेर ( हि० स्त्री० ) भारतवर्षसे लेकर अफगानिस्तान, फारस और अरब तकमें मिलनेवाली एक छोटी चिडिया । यह तीतर या लवाकी तरह होती है । इसका रंग भी तीतरका सा होता है, पर यह उससे छोटी होती है । लोग इसका शिकार करते हैं, क्योंकि इसका मांस बहुत पुष्ट ममभा जाता है । लडानेके लिये शौकीन लोग इसे पालते भी हैं । श्रुतुके अनुसार यह रधान भी बदलती है और माय भुडमें पाई जाती है । यह धूपमें रहना पसन्द नहीं करती, छाया वृंढती है ।

वट्टेरवाज ( हि० पु० ) वट्टेर पालने या लडानेवाला ।

वट्टेरवाजी ( हि० स्त्री० ) वट्टेर पालने या लडानेका काम ।

वट्टेरा ( हि० पु० ) कटोरा ।

वट्टेभर—युक्तप्रदेशके आगरा जिलान्तर्गत एक नगर । यह अक्षा० २६ ५६' ०" और देशा० ७८ ३३' ५०" आगरा से दक्षिण पूर्वमें अवस्थित है । जनसंख्या दो हजारसे ऊपर है । यहाँ प्रतिवर्ष कार्तिक सत्रान्तिसमें एक बड़ा भारी मेला लगता है । इस समय डेढ़ दो लाख मनुष्य जमा होते हैं । वट्टेभरक्षेत्रमें उस दिन गन्ना स्नान महापुण्य जनक माना गया है । आगरा इसके मेलेमें ७ हजार घोडे, ३ हजार ऊट और १० हजार गायें बिकने आती हैं ।

वट्टोई ( हि० पु० ) बटाई देगो ।

वट्टोर ( हि० पु० ) १ बट्टुनसे आदिमियोंका इकट्ठा होना, अमावसा । २ कूड़ेकरकटा टेर । ३ वारतुओंका टेर

जो इधर उधरसे वटोर कर या इकट्ठा करके लगाया गया हो ।  
 वटोरन ( हि० स्त्री० ) १ वस्तुओंका ढेर जो इधर उधरसे ढाड़ वटोर कर लगाया गया हो । २ चेतमें पडा हुआ अन्नका दाना जो वटोर कर इकट्ठा किया जाय । ३ कूडे करकटका ढेर ।  
 वटोरना ( हि० क्रि० ) १ इकट्ठा करना, एकत्र करना । २ इधर उधर पडी चीजोंको विन विन कर इकट्ठा करना, चुन कर एकत्र करना । ३ समेटना, फैला न रहने देना । ४ फँसी या विचरने हुए वस्तुओंको समेट कर एक स्थान पर करना ।  
 वटोहिया ( हि० पु० ) वढीही देखो ।  
 वटोही ( हि० पु० ) पथिक, राही ।  
 वट्ट ( हि० पु० ) १ गेंद । २ गोला, वटा । ३ वाट, बटखरा । ४ बल, शिफन ।  
 वट्टा ( हि० पु० ) १ दलाली, दस्तूरी, डिसनाउट । २ हानि, नुकसान । ३ पत्थरका गोल टुकड़ा जो किसी वस्तुको फूटने या पीसनेके काममें आये, फूटने या पीसनेका पत्थर, लोडा । ४ पत्थर आदिका गोल टुकड़ा । ५ वटोरा या प्याला जिसे आँघा रख कर बाजीगर यह दिखलाते हैं, कि उसमें कोई वस्तु आ गई या उसमेंसे कोई वस्तु निकल गई । ६ एक प्रकारकी उमालो हुई सुपारी । ७ पान या जगहिरात रखनेका गोल डिब्बा । ८ पूरे मूल्यमें वह कमी जो किसी सिक्के आदिको बदलने या तुडानेमें हो, वह अधिक द्रव्य जो सिक्का भुनाने या उसी सिक्के की धातु लेनेमें देना पड़े । ९ कोटे सिक्के धातु आदिके बदलने या बेचनेमें वह कमी जो उसके पूरे मूल्यमें हो जाती है ।  
 वट्टाखाता ( हि० पु० ) वह बही या लेखा जिसमें नुकसान लिखा जाय, हूवी हुई रकमना लेखा या बही ।  
 वट्टाढाल ( हि० वि० ) इतना चौरस और चिकना कि उस पर कोई गोला लुढ़काया जाय, सूख ममतत और चिकना ।  
 वट्टी ( हि० स्त्री० ) १ छोटा वट्टा, पत्थर आदिका गोल छोटा टुकड़ा । २ समझील नटा हुआ टुकड़ा, बडी टिकिया । ३ फूटने पीसनेका पत्थर, लोढिया ।  
 वट्टू ( हि० पु० ) धारीदार चारपाना । २ बजरबट्ट, ताली । ३ षोडा, लोविया ।

वट्टेवाज ( हि० वि० ) ननख दका खेल करनेवाला, जादूगर । ० धूर्त, चालाक ।  
 वडिया ( हि० स्त्री० ) उपर्योका ढेर, पाये हुए सूखे कड़ोंका ढेर ।  
 वडूचना ( हि० क्रि० ) वँटना ।  
 वडूसना ( हि० क्रि० ) वँटना ।  
 वड गा ( हि० पु० ) लवा वटा जो छाजनके बीचोबीच लंदाईके बल आधाग रूपमें रहता है, वँडेरी ।  
 वगडी ( हि० पु० ) घोडा ।  
 वड गू ( हि० पु० ) कोङ्कण, मलापग, वागडोर आदिकी ओर होनेवाला एक जगली पेड । इसमेंसे एक प्रकारका तेल निकलता है ।  
 वड ( हि० स्त्री० ) १ प्रलाप, रकनाद । ( पु० ) २ वर गदका पेड ।  
 वड का ( हि० वि० ) बाबा देखो ।  
 वड कुइया ( हि० पु० ) कच्चा कुआ ।  
 वड मौला ( हि० पु० ) वरगदका फल ।  
 वडगोहिया—क्षद् जातिका हरिण । हरिण देखो ।  
 वड गल्ल—चट्टग्रामके डेकनाफ पर्वतमालाके अन्तर्गत एक छोटा पहाड़ ।  
 वडगल—मन्द्राजप्रदेशवासी वैष्णव सम्प्रदाय । ये लोग रामात् सम्प्रदायके अन्तर्भुक्त हैं । कमसे कम छ सौ वर्ष पहले काञ्चीपुरनिवासी तेसिकर नामक एक वैदान्तिक ब्राह्मण इस सम्प्रदायका प्रवर्तन कर गये । उन्होंने यह प्रचार कर दिया था कि, "दाक्षिणात्यमें ब्राह्मणकुलके आचार व्यवहारका स शोत्रन और दक्षिणापथमें आयाचसके सनातन शास्त्र और धर्मकी पुन प्रतिष्ठा करनेके लिये मैं जगदीश्वरसे भेजा गया हूँ ।"  
 ये लोग साक्षात् त्रिणुके उपासक हैं । त्रिणुकी तरह विष्णु शक्तिका अस्तित्व और प्रभावशास्त्रियं स्वीकार करते हैं । तिलकधारण इस सम्प्रदायका एक प्रधान अङ्ग है । ये लोग रामानन्दोनी तरह ऊद्धुपुण्ड के मध्य स्थलमें विन्दु न दे कर रत्नार्ण श्री धारण करते हैं, किन्तु उन लोगोंकी तरह भी के नीचे नाकके ऊपर सिंहासन अङ्कित नहीं करते । यही तिलक ले कर इन लोगोंके साथ वहाके तिट्टलोक महाविवाद हो गया था । आखिर

काञ्चीपुरकी अगलनसे इसका निवटेरा हुआ। इस सम्प्रदायके सभी ग्रन्थ विज्ञान हैं। स स्तन धर्मशास्त्र का अनुशीलन करना इन लोगोंका प्रधान कार्य है।

बड़गाँव—पटना जिलेके विहार उपविभागका एक ग्राम। यह अक्षां २५ ८' ३०" तथा देशां ८५ २६' पूंके मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्राय ५६७ है। यहाँका तथा पार्थवर्षी स्थानोंका भानस्वूप देवनेसे अनुमान किया जाता है, कि एक समय यहाँ कोई निरवृत्त राज्य अवस्थित था। (१)

फाहियानने लिखा है, कि नगोग्राम (नालन्दा गिरि एक पर्यंत (जिसका नाम उन्हें मालूम नहीं) से १ योजन और नूतनराजपुरसे प्राय उतना ही दूर होगा। यूपन चुपगके चणनसे हम लोगोंको मालूम होता है, कि यह राजपुरसे ५ मील उत्तर और उडगयाके पवित्र बोधि द्रुमसे ७ योजनकी दूरी पर अवस्थित था। (२)

चीनपरिजात्र फाहियान और यूपन चुपगके वर्णनका अनुसरण करनेसे वही स्थान प्राचीन बौद्धक्षेत्र नालन्दा समझा जाता है। नालन्दा एक समय गौडधर्म और शास्त्राग्नेचनका प्रसिद्ध स्थान था। वहाँ अनेक स घासम विहार, स्तूप और बौद्ध स्तूपोंकी मूर्ति प्रतिष्ठित हुई थी। नालंदा देख।

यह ग्राममें जो उच्च और दूरविस्तृत इष्टकस्तूप पड़े हैं उन्हें वनि हम भी यूपन चुपग वर्णित बौद्धस्तूपराम मानते हैं। (३) उा सब स्तूपोंमेंसे अनेक पत्थर

(१) था० बुकाननको विहारवासी किसी जैन पुरोहितसे मालूम हुआ, कि यहाँ राजा अनेक और उनके वंशधरोंके राज्य किया था। यहाँके ब्राह्मणोंका कहना है, कि यह कृष्णवर्णी दक्षिणी देवीकी जन्मभूमि बुध्दवननगरीका पर्वत-बोधेय मास है।

(२) Beal's Fa Hien xxviii & Julien's Hiven Thsang I 143

(३) शाकादेश्य, बुद्धप्रति, लयागत, बालादेश्य, बन्धु और नायमारुत राजप्रतिष्ठित थे हैं। अल वा इसके अन्वेषके मूर्ति और विहार, बालादेश्यविहार, ताराबोधिविहार कपटवदेवीमंदिर, बुद्धके बेज और नखाया स्थानी बुद्ध-मूर्ति, भैरव, नागास्तूप और विहार निर्माणमें कति हय साहस शक्यप्रयत्न हुए हैं।

और बुद्धमूर्ति प्रामवासी अपने अपने घर उड़ा ले गये हैं। यहाँके बटुकभैरव नामक स्थानके चतुर्गर्भ बुद्धदेवकी मयसे बड़ी मूर्ति स्थापित है। सम्भवत वही मूर्ति पहले बालादेश्यविहारमें प्रतिष्ठित हुई थी। अभी बड़गाँवके मध्य अनेक पत्थर देखने लायक हैं, यथा -- १ बटुक भैरवके चतुर्पाश्र्वस्थ भास्वरगिरि, २ सुबहुत् स्थानी बुद्धमूर्ति, मूर्तिके चारों बगल आर्यसारिपुत्र, आर्यमौदुग लायन, आर्य मैत्रेय नाथ और आर्य वसुमित्र आदि अनु चतुर्गर्भ। उन अनुचरोंके नाम प्रतिमूर्तिमें ही अङ्कित हैं। यह मूर्ति बौद्धभिक्षुणो परमोपासिका गङ्गा द्वारा प्रदत्त हुई है। ३ बज्रगाराही मन्दिर, उडगाँवके राजप्रासाद और हिन्दू मन्दिरादिमें स्थित बुद्धमूर्ति तथा गरुडवाही नारायण, वागीश्वरी आदि इधर उधर प्रतिष्ठित देखी जाती हैं। यहाँ बुद्धगयाके प्रसिद्ध मन्दिरकी नकल पर एक जैन मन्दिर स्थापित है। यह मन्दिर ५वीं शताब्दीका बना हुआ मालूम होता है। पीछे उस मन्दिरमें बौद्ध मूर्ति के बदले १५०४ सम्यत्की जैनतीर्थङ्कर महावीरकी मूर्ति स्थापित हुई है। सूर्यकुण्डके किनारे बौद्धमूर्तिके साथ बराह अजगता, विष्णु, शिव पार्वती और सूर्यमूर्ति आदि दृष्टिगोचर होती हैं। अलावा इसके यहाँ बहुत सी बड़ी बड़ी पुष्करिण्या भी हैं।

बड़गुजर—राजपूतानावासी क्षत्रिय जाति। ये लोग अपने को श्रीरामचन्द्रके पुत्र लवके चतुर्थ वतलाते हैं। मानाडी राजवज इसी जातिमें उल्लेख हुए हैं।

नावाडी देखो।

बड़गुला (हिं० पु०) एक प्रकारका वनस्पति।

बड़नोटी—१ पञ्चकूट राज्यके अन्तर्गत एक ग्राम।

२ गया जिलेके अन्तर्गत एक प्रसिद्ध ग्राम और पुलिस सहर। यह अक्षां २४ ३०' १०" उ० और देशां ८५ ३' १०" पूंके मध्य अवस्थित है।

बड़दुमा (हिं० पु०) यह हाथी जिसकी पूँछकी बँगनी पाय तक हो, लम्बी दुमका हाथी।

बड़नगर—मध्यप्रदेशके ग्यालियर राज्यके अन्तर्गत उज्जैन जिलेका एक नगर। यह अक्षां २३ ४' ३०" और देशां ७६ २३' चामला नदीके किनारे अवस्थित है। जनसंख्या उज्जैनमें ऊपर है। पहले यह रानपुन

बहराम लोधर शके अधिकारमें था। पीछे १८वीं शताब्दीमें सिन्धियाके हाथ लगा। ज०रमें एक डारु घर, अस्पताल, स्कूल और धर्मशाला है।

**वडपेटा**—१ पूर्व बङ्गाल और आसामके कामरूप जिलेका एक उपनिभाग। भूपरिमाण २०६ वर्ग मील है।

२ उक्त उपविभागका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० २६ १६ उ० और देशा० ६१ १' पू०के मध्य चीलपोआ नदीके किनारे अवस्थित है। जासण्या दश हजारके लगभग है। यहां नाज द्वारा चावल, रबर, रई, तिलादि का विस्तृत वाणिज्य चलता है।

**वडपन** ( हि० पु० ) महत्त्व, गौरव, बड़ाई। वस्तुओंके विस्तारके सम्बन्धमें इस शब्दका प्रयोग नहीं होता, इसमें केवल पद, मर्यादा, अपस्या आदिकी श्रेष्ठता समझी जाती है।

**वडफनी** ( हि० स्त्री० ) बहुत चौड़ी मटिया।

**वडफेणी**—मेघना नदीकी एक शाखा।

**वडवट्टा** ( हि० पु० ) बरगदका फल।

**वडवड** ( हि० स्त्री० ) व्यर्थका बोलना, बरबाद।

**वडवडाना** ( हि० क्रि० ) १ प्रलाप करना, व्यर्थ बोलना।

२ कोई बात बुरी लगने पर मुँहमें ही कुछ बोलना।

**वडवडिया** ( हि० त्रि० ) वड वड बनेवाला, बरबादी।

**वडबुदर**—यचक्षीप स्थित एक प्राचीन स्थान। यहां जो बुद्धमन्दिर है उसीके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है।

यचक्षीप दण्डो।

**वडबेल**—१ कडापा जिलान्तर्गत एक भूसम्पत्ति। भूपरिमाण ७५५ वर्ग मील है। वडबेल, केदरु पोचमामिल, पाल गुरलपही, केदरु, सेनकावरम, फाउरकुण्डला, मुन्नेली, चालीपही और कटेरगण्डला इसके प्रधान नगर हैं।

२ उक्त तालुकका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० १४ ४५ उ० और देशा० ८६ ६' पू०के मध्य अवस्थित है। यह स्थान बहुत प्राचीन और ऐतिहासिकोंका द्रष्टव्य स्थान है।

**वडबोल** ( हि० वि० ) बड़ी बड़ी बातें करनेवाला, लंबी चौड़ी हाकनेवाला।

**वडभाग** ( हि० वि० ) वडभागी देखो।

**वडभागी** ( हि० वि० ) भागवान्, वड भागवाला।

**वडमूल**—१ काश्मीरराज्यके अन्तर्गत एक पर्वत मन्दर। इस स्थान हो कर भेलम नदी बहती है। वडमूल नगर इस स्थानके दहिने किनारे बसा हुआ है।

२ काश्मीरराज्यका एक शहर। यह अक्षा० ३४ १२' उ० और देशा० ७३ २३' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या छ हजारके करीब है। यहां भूकम्प अकसर हुआ करता है। १८८५ ई०में जो भूकम्प हुआ था, उससे शहरकी महती क्षति हुई थी।

**वडम्बा**—उड़ीसाके अन्तर्गत एक सामन्त राज्य। यह अक्षा० २० २७' से २० ३२' उ० तथा देशा० ८५ १२' से ८५ ३१' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १३४ वर्ग मील और जनसंख्या ४० हजारके करीब है। इसके उत्तरमें हिन्दोल, पूर्वमें तिघरिया, दक्षिणमें फटक और गण्डपाडा तथा पश्चिममें नरसि हपुर सामन्त राज्य हैं। कणिकाशिखर ही यहांकी गिरिश्चोणीका सर्वोच्च स्थान है।

इस राज्यकी प्रतिष्ठाके सम्बन्धमें एक प्रवाद यों प्रचलित है,—किसी उड़ीसाके राजाने एक मशहूर कुश्ती बाजके फौशल पर प्रसन्न हो उसे दो ग्राम दान किये। उस ग्राममें कन्ध नामक असभ्य जातिका वास था। कन्धोंको भगा कर उसने वह ग्राम अपने दरलमें कर लिया। पीछे और बहुतसे स्थान जीत कर उसने अपना राज्य बढ़ाया। वर्तमान राजा विश्वम्भर धीरवर महाराज महापाल अपनेको क्षत्रिय बतलाते हैं। इनके अधीन ७०६ शिक्षित सेना और १८८ अन्नधारी शहरी नियुक्त हैं। ये अपने कोशसे विद्यालय और डाकघरका रच देते आ रहे हैं।

नीचे वडम्बा सामन्त राजाओंके नाम और अधिकांकाल लिखे गये हैं—

हाटकेश्वर राजत	१३०५ से	१३२७ ई०
मालकेश्वर राजत	१३२७ "	१३४५ "
दुर्गेश्वर राजत	१३४५ "	१३७१ "
जम्नेश्वर राजत	१३७५ "	१४१६ "
भोलेश्वर राजत	१४१६ "	१४५६ "
कम्बु राजत	१४५६ "	१५१४ "
माधव राजत	१५१४ "	१५३७ "
नवान राजत	१५३७ "	१५६० "

बसधर राउत	१५६० से	१५८४ ई०
चन्द्रशेखर मङ्गराज	१५८४ "	१६१७ "
नारायण मङ्गराज	१६१७ "	१६३५ "
रणचन्द्र मङ्गराज	१६३५ "	१६५० "
गोपीनाथ मङ्गराज	१६५० "	१६७६ "
बलभद्र मङ्गराज	१६७६ "	१७११ "
फकीर मङ्गराज	१७११ "	१७४३ "
सानुधर मङ्गराजमहापाल	१७४३ "	१७७८ "
पद्मनाभ घोरवर मङ्गराज	१७७८ "	१७९३ "
पिरिडक घोरवर मङ्गराजमहापाल	१७९३ "	१८४१ "
गोपीनाथ घोरवरमङ्गराज महापाल	१८४१ "	१८६६ "
दाशरथी घोरवरमङ्गराजमहापाल	१८६६ "	१८८१ "
विश्वम्भर घोरवरमङ्गराजमहापाल	१८८१ "	

( वर्तमान राजा )

बडरा ( हि वि० ) बडरा ।

बडराना ( हि० कि० ) बराना देखो ।

बडरा ( म० खी० ) बल वातीति बल वा-क टापु, बलवोरिषयात् लस्य रत्ये । १ घोरको, घोड़ी । २ अग्निनी रूपधारिणी सूर्यपत्नी सक्ष । ३ तृतीया सूर्य पत्नी । ४ अग्निनीनक्षत्र । ५ नारीविशेष । ६ दासी । ७ घासुदेवकी एक परिचारिका । ८ नदीविशेष । ९ तीर्थ मेघ । १० बडवानि, समुद्रके भीतरकी आग या ताप । इसका उत्पत्ति विवरण कालिकापुराणमें इस प्रकार लिखा है—महादेवका कोपानल जब मदनको भस्म करनेके दशकवन्दकी भस्म करनेके लिये तैयार हुआ तब ब्रह्मने उसे बडवा या घोड़ीके रूपमें कर दिया । देवगण उस अग्निको बडवारूप धारण करते देण निश्चिन्त हुए । पीछे ब्रह्मा उस बडवाको ले कर जगत्की भलाईके लिये समुद्रके किनारे गये । समुद्रने ब्रह्माको अपने किनारे उपस्थित देण उनको पूजा की और आनेका कारण पूछा । ब्रह्माने कहा, "यह बडवारूपधारी महा देवके क्रोधानलसे उत्पन्न हुआ है, जब तक मैं इसे पुन धार प्रहण न करूँ, तब तक तुम इसे अपने हवाले रणाना । निम्न समय मैं आ कर इसे छोड़ देने कहूँगा, उस समय तू इसे छोड़ देना । तुझारा फेवल जल भी कर बडवा यहा पर रहेगा । तुम इसे धनपूर्वक अपने पास

रणाना, कहीं भी जाने न देना ।" ब्रह्माके इतना कहने पर समुद्रने इच्छा नहीं रहते हुए भी इसे स्वीकार कर लिया । इसके बाद बडवामुण अग्नि समुद्रमें प्रवेश कर ज्वालामुहसे प्रदीप्त हो समुद्रके जलको दग्ध करने लगे ।

बडघारत ( स० पु० ) बडवाया दास्या दृतः । पन्द्रह प्रकारके दासोंमेंसे एक दास ।

"भक्तदासश्च विज्ञेयस्तथैव बडघारतः ।"

( नारद )

'बड वा दासी तहोभात् बड्गीदृत्दास्य' ( दायकमस० )

अर्थात् बड वा दासीके लिये जिस व्यक्तिने दासत्व अङ्गीकार किया है । कहीं कहीं 'बडवामृत' और 'बड वाहत, येसा भी पाठ देखनेमें आता है ।

बडवानि ( स० पु० ) बड चाया समुद्ररिचयताया, घोरवयाः मुल रधोऽग्नि । समुद्राग्नि । बडवा और बडवानत देखो ।

बडवानल ( स० पु० ) बड चाया अनल । बडवानि ।

पर्याय—सलिलेन्धन, बड वामुण, कारुध्वज, वाणिज, स्कन्दानि, तृणधुकु, काष्ठधुकु, और्व, वाड व ।

किसी समय महर्षि और्व अयोनिज पुत्रकी कामना करके अपना वक्ष स्थल मधने लगे । इससे एक ज्वालामय पुण्ड्र उत्पन्न हुआ । उस पुण्ड्रने उत्पन्न हो कर पिता और्वसे प्रार्थना की, 'मैं भूतके मारे ध्याकुल हो रहा हूँ, अत मुझे जगत्भक्षणकी आशा दीजिये ।' इसी समय ब्रह्मा और्वके समीप पहुँच गये और उनसे बोले, अपने पुत्रको समालो, सारा संसार इससे कष्ट पा रहा है ।' इस पर और्वने निवेदन किया, 'भगवन् ! आप ही इस पुत्रकी वृत्ति स्थिर कर दीजिए ।' ब्रह्माने कहा, 'समुद्रमें बड वामुणमें इसका वासरधान और समुद्रकी वारिरूप हवि हो इसकी खाद्य धन्तु होगी । इस जगत् में यह बड वानल नामसे प्रसिद्ध होगा । जब जगत्का अन्तकाल आयेगा तब यह अन्तदेवानुरोंकी भक्षण करेगा ।' इस प्रकार उसको वृत्ति स्थिर करके ब्रह्म पिता मह चल दिये । तभीसे यह ज्वालामय पुण्ड्र समुद्रके बड वामुणमें रहने लगा । ( भास्वपु० ५५० श० )

बडवा देखो ।

२ लङ्काके दक्षिण पृथ्वीके चतुर्थ भागरूप स्थान-विशेष । ( विद्वान्त शिरोमणि )

बड धानलचूर्ण ( स० पु० ) एक चूर्ण जिसके सेवनसे अजीर्णका नाश और क्षुधाकी वृद्धि होती है। ( वैद्यक )  
 बडवानलरस ( स० पु० ) बटिकीपधविशेष । इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पारा, गन्धक, पिपुल, विटलवण, उद्भिद-लवण, सौवर्चलवण, मिर्च, हरीतकी, आमलकी, बहेडा, यवक्षार, साचिक्षार और सोहागा इन सब द्रव्योंका समान भाग ले कर चूर्ण करे। पीछे सन्हातूकी पत्तियोंके रसमें एक दिन भावना दे कर दो वा तीन रत्तीकी गोली बनावे। रोगीके अनस्थानुसार अनुपान दे। इसके सेवनसे मंदाग्नि बहुत जल्द दूर हो जाती है।  
 ( रथेन्द्रसार० अजीर्णाधि० )

अन्यविध—पारा, गन्धक, मांसिक, यवक्षार, ताम्र और अन्न सम भाग ले कर चीते और अरुणनके रसमें सौंद कर २ रत्तीकी गोली बनावे। अनुपान पानका रस ही। इस औषधके सेवनके बाद हींग, सैन्धवलवण, सौवर्चल लवण, अतार, चिल्व, कुल मिला कर दो तोला, भृङ्गराज रसमें पीस कर छुराके साथ मिला कर सेवन करना होता है। इसके सेवनसे सब प्रकारके गुल्मशूल और परिणामशूल जाते रहते हैं। ( रथेन्द्रसार० शुद्धप्रवि० )  
 बड वामुख ( स० पु० ) बड चाया घोटक्यां मुखा आश्रय त्वेनास्त्वस्य अर्भा आदित्वाद् च । १ बडवानल । २ शिव का मुखा । ३ महादेवका नामभेद । ४ कुर्मके दक्षिण कुक्षिमें स्थित एक जनपद ।

“कुमस्य दक्षिणे कुक्षौ याहा पादस्तथापरम् ।  
 काम्बोजा पड्याश्रयै तथैव बडवामुखा ॥”

( मार्क० पु० ५८।३० )

५ बटिकीपधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—पारा, ताम्र, सोहागा, कर्कचलवण यवक्षार, ( जवारार ) साचिक्षार ( सज्जीखार ), सैधवलवण, सौंड, अपामार्ग, पलाश और वरुणक्षार सम भाग ले कर और अम्लवर्णके रसमें भावना दे कर तथा फिर चीतेके रसमें बार बार सौंद कर लघुपुटपाक द्वारा तैयार करे। इसकी मात्रा १ माशा है। इसके सेवनसे ज्वर और ग्रहणी रोग दूर होते हैं।

बड्यार ( हि० वि० ) बडा देगो ।

बड यारी ( हि० स्त्री० ) १ महत्व, बड प्यन । २ प्रशसा, बड ई ।

बड बाल ( हि० स्त्री० ) हिमालयके उस पारकी तराईकी भेडोंकी एक जाति ।

बड चांसुत ( स० पु० ) बड चाया घोटकी रूपाया सुन । अश्विनीकुमार । इन दोनोंके नाम नासत्य और वल भी हैं। ये दोनों खर्गके चिकित्सक और परम रूपवान् हैं। सूर्यदेवकी बड चांसुतीके गर्भसे इन्होंने जन्मग्रहण किया है। हरिवंशके ६ वें अध्यायमें इनकी उत्पत्तिका पूरा विवरण लिखा है। अश्विन और अश्विनीकुमार देखो।  
 बड चादत ( स० पु० ) बड चाया दास्या हृत्तः । बड वा दत, पन्द्रह प्रकारके दासोंमेंसे एक, वह जो दासीके साथ विवाह करके दास हुआ हो।

बड हंस ( हि० पु० ) मेघरागका पुत्र एक राग । कुड लोग इसे सकर राग मानते हैं जो रुद्राणी, जयन्ती, मारु, दुर्गा और धनाश्रीके मेलसे बनता है। कहीं कहीं यह मधु-माधय, शुद्ध हम्मौर और नरनारायणके मेलसे बना कहा गया है।

बडहससारग ( हि० पु० ) सम्पूर्ण जातिका एक राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

बड ह सिका ( स० स्त्री० ) एक रागिनी जो हनुमत्के मतसे मेघरागकी स्त्री कही गई है।

बडहर ( हि० पु० ) बडहल देगो ।

बडहल ( हि० पु० ) सयुक्त प्रान्त, पश्चिमी घाट, पूर्ण बङ्गाल और कमाऊ की तराईमें होनेवाला एक बडा पेड़ । इसकी पत्तिया छ सात अगुल लम्बी और पाच छ अगुल चौड़ी तथा कर्कश होती है। फूल येसकी पकीड़ीके समान पीले पीले गोल गोल होते हैं। उनमें पखडि या नहीं होती। फल पकने पर पीले और छोटे गरीफेके धरा धर पर बडे बेडील होते हैं। इनका स्वाद खटमीठा होता है पर गुदेका रंग पीलापन लिये लाल होता है। लोग इसके फूल और कच्चे फलका अचार और तरकारी बनाते हैं। बड हलके हीरकी लकड़ी फडी और पीली होती है। इससे नाय तथा सजावटके सामान बनाते हैं। आसाममें इसकी छाल दाँत परीष्कार करनेके काममें लाई जाती है। वैद्य लोग इसके फलको बादो मानते हैं।  
 बड हार ( हि० पु० ) विवाह हो जानेके पीछे घर और बरा-तियोंकी ज्योनार ।



बड, (हि० वि०) १ अधिक विस्तृतता, बूढ़ लम्बा चौड़ा ।  
२ अत्रस्थामें अधिक, जिसमें उम्र ज्यादा हो । ३ गुण,  
प्रभाव आदिमें अधिक या उत्तम, जिसका असर या  
नतीजा ज्यादा हो, भारी । ४ किसी बातमें अधिक, बढकर  
५ गुण धोए, सुल्लगं । ६ परिमाण, विस्तार या अत्रस्थता ।

बड ( हि० पु० ) १ एक पकवान जो मसाला मिली हुई  
उर्द की पीठोकी गोल चक्राकार टिकियोंकी घी या तेलमें  
तल कर बनता है । २ उत्तरीय भारतके पट्टरोंमें होने  
वाली एक बरसाती घास । इसे सुखा कर घोड़े और  
चौपायोंकी खिलाते हैं ।

बड ( हि० स्त्री० ) १ परिमाण या विस्तारकी अधिकता ।  
२ परिमाणका विस्तार । ३ महिमा, प्रशंसा, तारीफ ।  
४ पद, मान, मर्यादा, वयस्, विद्या बुद्धि आदिकी  
अधिकता । इज्जत, दरजे, उम्र वगैरहकी ज्यादाती ।

बडाकुंघार ( हि० पु० ) कुंघारके आकारका एक पेड़ ।  
इसकी पत्तिया किरिचकी तरह बहुत लयी लयी निकली  
होती हैं ।

बडा कुलजन ( हि० पु० ) बृहत्कुल जन, मोथा कुलजन ।  
बड दिन ( हि० पु० ) १ यह दिन जिसका मान बडा हो ।  
२ २५ दिसम्बरका दिन जो ईसाईयोंके त्योहारका दिन है ।  
इस दिन ईसाके जन्मका उत्सव मनाया जाता है ।

बड, पीतू ( हि० पु० ) एक प्रकारके रेशमका कीड़ा ।

बड बोल ( हि० पु० ) अहङ्कारका शब्द, घमण्ड ।

बड बसवरा ( हि० पु० ) यह यन्त्र जिससे कसेरे टाका  
लगाते हैं, बरतनमें जोड़ लगानेका औजार ।

बडि श ( स० स्त्री० ) बलिनो मत्स्यान् श्रयति नागपतोति  
शोक, लस्य उच्य । मत्स्यधारणार्थं चमत्प्रीतिरुपहन  
विशेष, मछली फसानेका एक औजार, धसी । पर्याय—  
मत्स्यधेधन, बलिन, बडिनी, बलिसी, मत्स्यधेधनी,  
बलिसी, मत्स्यधेद ।

“यस्ते फण्डमनुप्राप्तो निगोणं पठित्त तथा ।

द्वेदद्ग्राहयन् पुन । त विद्यान् प्राणजर्णभम् ॥”

( भारत १२८११० )

बडिनी ( स० स्त्री० ) बडिनीगौरादित्यात् डीप् । बडिज,  
बनी ।

बडो ( हि० स्त्री० ) १ शाब्द, पेठा आदि मिली हुई पीठो

की छोटी छोटी सुलाई हुई टिकिया जिसे तल कर खाते  
हैं, बृहद्गीरी । २ मासकी बोटी ।

बडोइलायची ( हि० स्त्री० ) इलायची देखो ।

बडो कटाई ( हि० स्त्री० ) बृहत् कण्टकारो, बडो जातिकी  
भटकटैया ।

बडो गोटी ( हि० स्त्री० ) चौपायोंकी एक बोमारी ।

बडो दाए ( हि० स्त्री० ) बडो जातिकी अगुर । इसमें बीज  
होते हैं और इसे सुखा कर मुक्का बनाते हैं ।

बडोमाता ( हि० स्त्री० ) शीतला, चैचक ।

बडोमैल ( हि० स्त्री० ) पाकी रगकी एक चिडिया ।

बडोमीसली ( हि० स्त्री० ) थालीमें नज़ागी बनानेके लिये  
लोहेका एक ठप्पा जिससे तोसीके आगे नप्राशी बनाते  
हैं ।

बडोराई ( हि० स्त्री० ) लाल रगकी एक प्रकारकी  
मरसी, लाही ।

बडोभोतीका फूल ( हि० पु० ) बडोनांशकी देखो ।

बडोर ( हि० पु० ) चक्रगत, बचडर ।

बडोरा ( हि० पु० ) १ छाजनमें बीचकी लकड़ी जो  
लम्बाईके बल होती है और जिस पर सारा टाट होता है ।  
२ कुर्च पर दो खंभोंके ऊपर उदराई हुई यह लकड़ी जिस  
में धरनी लगी रहती है ।

बडे लाट ( हि० पु० ) भारतवर्षमें अङ्ग्रेजों साम्राज्यके प्रधान  
शासक ।

बडोला ( हि० पु० ) एक प्रकारका लवा और नरम गन्ना ।

बडोदा—बम्बईके गुजरात प्रदेशके अन्तर्गत एक प्रसिद्ध  
देशीयराज्य । यह अक्षा० २१ ५१' से २२ ४६' उ० तथा  
देशा० ७२ ५३' मे ७३ ५५' पू०के मध्य अत्रस्थित है ।  
भूपरिमाण ८१३५२ वर्गमील है । गायकवाड राजवंश  
द्वारा यह परिचालित होता है । बृटिश सरकारके सामन्त  
राज्यमुक्त नहीं होने पर भी इसकी राजकीय कार्यालयी  
भारत सरकारके साथ संबन्धित है ।

बडोदा राज्य स्थापनतः चार भागोंमें विभक्त है ।  
१ ला उत्तर का कडो विभाग । इसमें पत्ता, बडो, यीन  
पुप, विषपुप, देहगाप, बल्लोल, बदासिद्धपुर, रोरातू और  
मेसान आदि जिले हैं । २ रेंमें बडोदा विभाग है, यह  
बडोदा, चोरन्दा, जर्दाई, पेटनाद, पत्ता, दमोई, मिर्नोई

और शहूँडा जिला ले कर समुद्रित है। ३रा दक्षिण वा नवसारी विभाग है। इसके अन्तर्गत नवसारी, गण देवी, पलमान, कामवीज, बेलामोह, बेरी और तोन-गड जिले हैं। ४थे अमरेली विभागमें अमरेली, ओप मण्डल, कोरीनारधारी और दायनगर आदि जिले अन्तर्भूत हैं। अलावा इसके ब्रिटिश सरकारके अधिष्टत स्थानोंके मध्य गायकवाड राज्यकी निज सम्पत्ति और सामान्त राज्य है।

इस जिलेके उत्तर जितने जिले पड़ते हैं, वे सभी समतल हैं। यहा नर्मदा, ताप्ती, माही नदिया बहती हैं। काठियावाड के निकटवर्ती भूभागके तीन ओर समुद्र हैं। उत्तर छोड़ कर समस्त बडौदाराज्यमें सरस्वती, घाघर, किम, अम्बिका, वनास, रूपन, लून, जारो, विश्वामित्त, धूर्या, ओड, वर्णा, अम्बा, करड, जम्बुआ तथा तेम्मी आदि नदियाँ विद्यमान हैं। राज्यमें तरह तरहके अनाज, रुई, तमाकू, अफीम, ईप और तिलादिबीज उत्पन्न होते हैं। चावल, गेहूँ और बाजरा यहाके अधिवासियोंका प्रधान भोजन है।

स्वाधीन राज्यनी तरह पहलेसे ही यहा एकसाल प्रतिष्ठित है। बडौदा राज्यकी नामाङ्कित मुद्रा बादशाही मुद्रा कहलाती है। राजस्व वसूल तथा राजकार्य की देख रेख करनेके लिये यहा सरसुवा, नापर सुवा, चट्टिवतिदार, महलकार आदि विशिष्ट कर्मचारी नियुक्त हैं। विचार-कार्य के लिये राज्यमें 'चरिष्ट अदालत' (High court) नामक सर्वश्रेष्ठ विचारालय प्रतिष्ठित है। वर्तमान राजा सयाजी राव १८८१ ई०में राजगद्दी पर बैठे। इनका पूरा नाम है,—एच, एच, फरजद ६ जेसी-दीलत ६ ६ गलिशिया महाराजा श्री सयाजी राव, गायकवाड सेना पास खेल शमशेर बहादुर, जि, सि, एस, आइ, जि, सि, आइ, जि, सि, आइ ६। इन्हे ब्रिटिश गवर्नमेंट्स २१ तोपोंकी सलामी मिलती है। बडौदा राज्यका निरस्त इतिहास गायकवाड शब्दमें देखो।

राज्यकी जनसंख्या २० लाखके करीब है। इनकी भाषा गुजराती और मराठी है। १८७१ ई०में यहा पहले पाच स्कूल खोले गये जिनमेंसे दो में गुजराती, दो में मराठी और एकमें अङ्ग्रेजी पढ़ाई जाती थी।

पीछे और भी नितने सेकेण्ड्रीस्कूल, प्राइमरी स्कूल खोले गये। इन सब स्कूलोंमें सभी वर्णके छात्र सब प्रकारके विद्याध्ययन करते हैं। बडौदा कालेज १८८१ ई०में स्थापित हुआ और उसी साल बम्बई विश्वविद्यालयसे स्वीकृत किया गया। स्कूलके अलावा राज्यमें बहुतसे अस्पताल भी हैं। जहा सब तरहको औषधिया मिलती हैं। १८६८ ई०में एक पागल घाना (Lunatic asylum) खोला गया है। राज्यमें गोलन्दाज, घुड सवार और पैदल तीनों प्रकारकी सेना है जिनकी संख्या ४७७५ है। जलवायु स्वास्थ्यप्रद है।

बडौदा—१ बडौदा राज्यका एक जिला। यह अक्षा० २१ ५० से २२ ४५ उ० तथा देशा० ७२ ३० से ७३ ५०के मध्य अन्तर्स्थित है। भूपरिमाण १८८७ वर्गमील और जनसंख्या साठे छ लाखके करीब है। इसके उत्तर बम्बईका कैरा जिला, पश्चिममें त्रेच, काम्बे, दक्षिणमें त्रेच और रेवाकाण्वा तथा पूर्वमें रेवाकाण्वा और पाचमहाल है। इसमें १५ शहर और ६ ४ ग्राम लगते हैं। जिलेके अधिकांश लोगोंकी भाषा गुजराती है। यहा सूती कपड़े तथा पीतल और तांबेके अच्छे अच्छे बरतन तैयार होते हैं।

शासन कार्य सुवा द्वारा परिचालित होता है। विद्या शिक्षामें यह जिला बहुत बढा चढा है। अभी यहा १ कालेज, १ हाई स्कूल, ६ पब्लिक वर्नाक्युलर स्कूल और ४७६ वर्नाक्युलर स्कूल हैं। इसके अतिरिक्त १ सिविल अस्पताल, १ पागल घाना और १० औषधालय हैं।

२ उक्त जिलेका एक तालुक। भूपरिमाण १६० वर्गमील और जनसंख्या ६० हजारसे ऊपर है। इसमें १ शहर और ११ ग्राम लगते हैं। माही, मेनी, रङ्गल, जाम्बा और विश्वामित्ता नामकी पाच नदिया तालुकके मध्य बहती हैं।

३ बडौदा राज्यकी राजधानी और शहर। यह अक्षा० २२ १८ उ० तथा देशा० ७३ १५ पू० विश्वामित्ती नदी के किनारे अन्तर्स्थित है। जनसंख्या प्राय १०३७६० है। यह नगर विशेष समृद्धशाली है। गुजरात भरमें इसे यदि दूसरा और बम्बई प्रदेशमें तीसरा स्थान दे, तो

कोई अत्युक्ति नहीं। नगरसे सेना निजास जानेके लिये विन्धामित्र नदी और उमको शाखाके ऊपर चार पुल बने हैं। नगर दो वृहत् पथसे चार भागोंमें विभक्त है। मध्यम्यलमें बाजारके पास मुगलोंका बनाया हुआ एक तीन मुख्यदका चौका दालान है। यही यहाका देरने योग्य स्थान है। अलावा इसके महाराष्ट्रोंके समयकी तथा फतेमि हके दरवार आदिकी अट्टालिका भी अपूर्व शोभा दे रही हैं। गायकवाडराज मलहार रायके शासन कालमें बडोदाकी अधिक श्रौचुद्धि हुई थी। उनके समयमें नजरबाद, मकरपुर, लक्ष्मीजिलास आदि प्रासाद यमुनावाड़ी अस्पताल, राजकीय पुस्तकालागार और कर्म स्थान, जेलराना, बडोदा-भालेज आदि अनेक सुरम्य अट्टालिकायें स्थापित हुई हैं।

यहाके धर्मप्राण अधिप्रासियोंके यज्ञसे असंख्य देव-मन्दिर निर्मित हुए हैं। गायकवाड राजाओंका प्रतिष्ठित विठ्ठल मन्दिर, नारायणस्वामोका मन्दिर, राण्डोवा, चारजी, भोमनाथ, मिद्धनाथ, कालिका, बलाई, रामनाथ, महाकाली, गणपति, बलदेवजी और फारी विन्धेश्वरका मन्दिर प्रधान है। यहा गायकवाड राजाओंकी अतिथि-शाला है जहा राजाजण्डे राव मुसलमान मिथारियोंको शिक्षा देनेकी अनुमति दे गये हैं। यहाके विभाग महा राष्ट्र और गायकवाड राजाओंके नाम पर आख्यात है।

४ पञ्जाबके रोहतक जिलेके अन्तर्गत एक छोटा नगर। यह यमुना नहरकी सुनाना शाखा पर अवस्थित है।

**बटगार**—मन्द्राज प्रदेशके मलयार जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० ११°३६' उ० तथा देशा० ७५°३७' पूर्वके मध्य अवस्थित है। यहाका दुर्ग पहले कोल चिरी (चिरपल) राजाओंके अधिकारमें था। फोले १५६४ ई०में कदस्तनाथ यज्ञधरने उनसे दुर्गधिकार छीन लिया। टीपूसुलतानके हुस्तगत होनेके बाद यह स्थान पाणिश्वरद्रष्टके शुक्रसम्राटस्थानरूपमें परिणत हुआ। १७६० ई०में टीपूके हाथसे उक्त दुर्ग छीन कर पुनः बट सनाइय जगो दे दिया गया। किन्तु अभी यह स्थान तोर्चयात्रियोंके विध्रामस्थलमें परिणत हो गया है। नगरका पाणिश्वरछोत अमतिदत्त है और विचार अज्ञानत आदिके रहनेमें इसकी दिती दिन उन्नति होती जा रही है।

**बट** (हि० वि०) अधिक, ज्यादा। इस शब्दका प्रयोग अनेक नहीं होता।

**बटई** (हि० पु०) सूतघार, काठकी छील और गड कर अनेक प्रकारके सामान बनानेवाला।

**बढती** (हि० स्त्री०) १ मात्राका अधिपथ, मान या स प्यामें वृद्धि। विस्तारकी वृद्धिके लिये अधिकतर बट शब्दका प्रयोग होता है। २ धन धान्यकी वृद्धि, स पत्ति आदिका बढना।

**बडदार** (हि० स्त्री०) पत्थर काटनेका यन्त्र, टाँकी।

**बढन** (हि० स्त्री०) वृद्धि, बाढ।

**बढना** (हि० स्त्री०) १ वर्द्धित होना, वृद्धिको प्राप्त होना। २ उन्नति करना, तरकी करना। ३ अग्रसर होना, किसी स्थानसे आगे जाना। ४ किसीसे किसी बातमें अधिक हो जाना। ५ चलनेमें किसीसे आगे निकल जाना। ६ अधिक ध्यापक, प्रबल या तीव्र होना। ७ परिमाण या स थ्यामें अधिक होना। ८ दीपकका निर्वात होना, चिरागका बुझना। ९ हुक्मन आदिका समेटा जाना, यद होना। १० भाग्य बढना, घरदनेमें जगदा मिलना। ११ लोभ होना, मुनाफेमें मिलना।

**बढनी** (हि० स्त्री०) १ काट, कुहारी। २ पेगगी जनाज या रुपया जो खेती या और किसी कामके लिये दिया जाता है।

**बढवारि** (हि० स्त्री०) बढती देती।

**बढाना** (हि० क्रि०) १ विस्तार या परिमाणमें अधिक करना, वर्द्धित करना। २ फैलाना लवा करना। ३ पद, मर्पादा, अधिकार, विद्या, बुद्धि, सुग स पत्ति आदिमें अधिक करना। ४ अग्रसर करना, चलाना। ५ चलने में किसीसे आगे निकल देना। ६ ऊँचा या उन्नत कर देना। ७ बल, प्रभाव, गुण आदिमें अधिक करना। ८ गिनती या नाप तोल आदिमें अधिक करना। ९ दीपक निर्वात करना, चिराग बुझाना। १० नित्यका व्यवहार समाप्त करना, कार्यालय बन्द करना। ११ भाग्य अधिक कर देना, सस्ता बेचना। १२ फैलाना। १३ ममात होना, बाकी न रह जाना।

**बढाली** (हि० स्त्री०) बढारी, बढारी।

**बढाय** (हि० पु०) १ बढनेकी क्रिया या भाग्य। २ अधिपथ, विस्तार। ३ वर्द्धि, तरकी।

वडावन ( हि० खी० ) गोवरकी टिकिया जो बच्चोंनी नजर  
भाङनेके काम आती है ।

वडावना ( हि० कि० ) वडाना देखो ।

वडावा ( हि० पु० ) १ श्रोत्रसाहन, किसी कामकी ओर  
मन बढानेवाली बात । २ साहस या हिम्मत दिवानेवाली  
बात, ऐसे शब्द जिनसे कोई कठिन काम करनेमें प्रवृत्त  
हो ।

वदिया ( हि० वि० ) १ उत्तम, अच्छा । ( पु० ) २ एक  
प्रकारका कोल्ह । ३ डेढ सेरकी एक तोल । ४ गन्ने,  
अनाज आदिकी फसलका एक रोग । इसके होनेसे फल  
नहीं निकलते और दाब बन्द हो जाती है । ( खी० ) ५  
एक प्रकारकी ढाल ।

वढेह ( हि० खी० ) हिमालय परकी एक भेड जिससे  
ऊन निकलता है ।

वढेला ( हि० पु० ) वन शूकर, ज गली सूजर ।

वढैया ( हि० वि० ) १ उन्नति करनेवाला, बढानेवाला ।  
२ बढनेवाला ।

वढोतरा ( हि० खी० ) १ उत्तरोत्तर वृद्धि, बढती । २  
उन्नति ।

वण ( स० पु० ) वणनमिति वण-अप् । शब्द, आवाज ।

वणिक् ( स० पु० ) १ वाणिज्य करनेवाला, बनिया,  
सौदागर । २ विक्रेता, बेचनेवाला । ३ ज्योतिषमें छटा  
करण ।

वणिकपथ ( स० पु० ) वणिजा पन्था अच् समासान्त ।  
१ हट्ट, हाट, बाजार । २ वाणिज्य व्यापारकी चीजोंकी  
आमदनी रफतनी ।

वणिवन्धु ( स० पु० ) वणिज पण्याजीवस्य वन्धुर्धनद-  
त्यात् । १ नीलीवृक्ष, नीलका पीधा । २ वणिकोंके वन्धु ।

वणिग्भाव ( स० पु० ) वणिजो भाव । वाणिज्य । पर्याय—  
सत्यानुत्, वाणिज्य, वाणिज्या, वणिकपथ, वणिज्य ।

वणिवह ( स० पु० ) बहतीति बह अच्-बह, वाणिजा  
वाणिज्य द्रव्याणां बह । उद्ग, ऊँट ।

वणिज् ( स० पु० ) पणते क्रयविक्रयादिना व्यवहारतीति  
पण ( पणतदेश्च व । उण् २।७० ) इति इजि पस्य च  
घ । १ क्रयविक्रयकर्त्ता, बनिया । पर्याय—वैदेहव, सार्ध-  
चाद, नैगम, वणिज, पण्याजीव, आपणिक, क्रयविक्रय

विक, वैदेह, वाणिज, वाणिजिक, क्रायिक, विक्रयिक,  
वाणिजक, वाणिज्यकार । २ करणान्तर । ३ वैश्य ।  
ये लोग क्रय विक्रय करते हैं, इसीसे इन्हे वणिक् कहते  
हैं । वाणिज्य ही इनकी वृत्ति है । ४ करण विशेष ।  
( खी० ) पण्यते व्यवहोयते इति पण इजि, पस्य च, अग्नि  
धानात् शीत्य । ५ वाणिज्य, व्यापारकी चीजोंकी आम  
दनी रफतनी ।

वणिज ( स० पु० ) वणिमेव वणिज-स्वार्थे अण्, अभिधानात्  
न वृद्धि । १ वणिक, बनिया । २ ज्योतिषोक्त  
वय और वालच आदि ग्यारह करणोंके अन्तर्गत  
छटा करण । जिस दिन यह करण होता है,  
उस दिन शुभ कार्यादि निषिद्ध हैं, किन्तु वाणिज्य कर्म इस  
करणमें प्रशस्त बतलाया गया है । इस करणमें जन्म  
लेनेसे जात बालक बुद्धिमान, दृढब, विविध गुणशाली,  
गुणग्राही वणिकोंका प्रिय और वाणिज्यकर्ममें उन्नति  
शील होता है ।

“प्राज्ञ दृढशो गुणवान् गुणशो

वणिगजन प्राप्तमनोरथ न्यात् ।

वस्य प्रसूती वणिजाभिधान

भाण्डप्रधान इविण हितस्य ॥” ( फीष्टीप्रदीप )

३ शिव, महादेव ।

वणिज्य ( स० खी० ) वणिजो भाव कर्म वा वणिज  
( दृढवणिगभ्या च । पा ५।१।२६ ) इत्यत्र काशिकी  
कथं । वाणिज्य वणिकका भाव या कर्म ।

वणिज्या ( स० खी० ) वणिज्य टाप्, स्वभानात् खीलिङ्गेय ।  
वाणिज्य ।

वत ( हि० खी० ) वात । इसका प्रयोग शीतिक शब्दोंमें  
ही होता है, जैसे वतकही, वतबढाव ।

वतक ( हि० खी० ) वतव टाप् ।

वतन्हाव ( हि० पु० ) वातचीत । २ विवाद बातोंका  
भगडा ।

वतकही ( हि० खी० ) वातालाप, वातचीत ।

वतख ( हि० खी० ) हस जातिकी एक विडिया जो  
पानीमें तैरती है । इसका रंग सफेद, पजे फिहीदार  
और चिपटी होती है । बॉच और पजेका रंग पीलापन  
लिये लाल होता है । इसका डीलडौल भारी होता है ।

इस कारण यह न तेज ढँड सनती है न उड़ सनती है। तानों और जलाशयोंमें यह मउठनी आदि पकड कर पाती है।

वतचल ( हि० वि० ) रजनाडी, वकी।

वतवदाव ( हि० पु० ) १ ध्वर्ध वात बटाता, कगटा बग्गेडा बडाना।

वतरस ( हि० पु० ) वातचोतका ज्ञानन्द, पातोंका मजा।

वतरान ( हि० खी० ) वातचोत।

वतराना ( हि० खी० ) वातचोत करना।

वतलाना ( हि० क्रि० ) बगाना देवो।

वतवग्हा ( हि० पु० ) एक प्रकारकी नाव। इसमें लोहेके काटि नहीं लगाए जाते। यह केवल बँतसे बाँधी जाती है। इस प्रकारकी नाव चट्टामामकी ओर चलाई जाती है।

वताना ( हि० क्रि० ) १ अभिघ्न करना, जताना। २ निर्देश करना, दिवाना। ३ सम्भानना, शुभाना। ४ नाचने गानेमें हाथ उडा कर भाव प्रकट करना, भाव बताना। ५ किसी फार्यमें नियुक्त करना, कोई काम धधा निकालना। ६ दण्ड दे कर ठीक रास्ते पर लाना, मार पीट कर दुरुस्त करना।

वताना ( हि० पु० ) १ हाथका कडा। २ फटी पुरानी पगड़ी जो नोचे रहती है और जिम्मेके ऊपर अच्छी पगड़ी बाँधी जाती है।

वताला—१ पञ्जाबके मुगदासपुर जिलेकी तहसील। यह अक्षा० ३१ ३५' से ३२ ४ ७० तथा देशा० ७४ ५२' से ७५ ३४' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४७६ वर्ग मील और जनसंख्या तीन लाखसे ऊपर है। इसमें धीगोविन्दपुर, डेरा नानक और वताला शहर तथा ४७८ ग्राम लगेते हैं।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० ३० ४६' ७० और देशा० ७५ १२' पू० मुगदासपुर शहरसे २० मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जनसंख्या तीस हजारके करीब है। यह लोल लोदीके शासनकालमें लाहौरके शासनकर्ता तातार खाँसे जो जमीन प्राप्त की, उसीके ऊपर महिपात्रपूत रापरामदेवने १४६५ ई०में यह नगर

बनाया। सम्राट अकबरशाहने यह सम्पत्ति शमशेर खाँको जागीरस्वरूप दे दी। शमशेर खाँके चलते इस नगरने नाना अटालिकाओंमें सुगोमित हो अपूर्वधीकी धारण किया था। सिपानेगोंके अधिकारमें यह स्थान पहले रामगडिया और पीठे बनाविया मिसलके हाथ लगा। रणजिनके अभ्युदय तक यह रामगडि योंके अधिकारमें था। पञ्जाबके अगरेजी शासनमें आनेके बाद यह नगर कुछ समय तक उक्त किलेका सदर रहा। पीठे यह उठ कर मुगदासपुर नगर चला गया। शमशेर खाँका समाधि मन्दिर और रणजित्के पुत्र शेरसिंह निर्मित अनारख खी नामका भवन देखने योग्य है। इसमें अभी 'बरिग' हाई स्कूल लगता है। शहरमें रेशम, ताघ और चर्मनिर्मित द्रव्यादिका विस्तृत कारखाना चलता है। पञ्जाबने शाल भी प्रस्तुत होते हैं। उक्त हाई-स्कूलके सिधा, एक पेट्रोलो वर्नाक्युलर हाई स्कूल और दो पेट्रोलो वर्नाक्युलर मिडिल स्कूल हैं।

वताशा ( हि० पु० ) वताषा देवो।

वतास ( हि० खी० ) १ गडिया, घातका रोग। २ वायु, हवा।

वतासफेजी ( हि० खी० ) टिकियाके आधारकी एक मिठाई।

वतासा ( हि० खी० ) १ एक प्रकारकी मिठाई। यह चीनीकी चाशनीकी टपका कर बनाई जाती है। टपकने पर पानी बुलबुलेसे बनते जाते हैं जो जमने पर घोगले और हलके होते हैं तथा पानीमें बहुत जल्दी बुलते हैं। २ अनारकी तरह छूटनेवाली एक प्रकारकी आठवाजी। इसमें बडे बडे फूलसे गिरते हैं। ३ बुलबुला, बुड बुड।

वतिपा ( हि० पु० ) घोडे दिनोंका लगा हुआ कथा छोटा फल।

वतिपाना ( हि० क्रि० ) वातचोत करना।

वतिपार ( हि० खी० ) वातचोत।

वत् ( हि० पु० ) कर्नावत् देवो।

वतीतपुती ( हि० खी० ) कानमें वातचोत करतीकी लकड़ जो ब धर करते हैं।

वतौर ( अ० क्रि० वि० ) १ रीतिमें, ततोंके पर। २ सट्टा, मानिद।

वत्सन ( हि० स्त्री० ) वराल देखो ।  
 वत्तिस ( हि० वि० ) वतीय देखो ।  
 वत्ती ( हि० स्त्री० ) १ सूत, रई, कपडे आदिकी पतली छड, चिराग जलानेके लिये रई या सूतका बटा हुआ लच्छा । २ प्रकाश, दीपक । ३ पगडो या चोरेका पीटा हुआ रूपड़ा । ४ कपडेके किनारेका वह भाग जो मोनेके लिये मरोड कर परुडा जाता है । ५ कपडेकी लबी धज्जी जो घावमें ममाद् साफ करनेके लिये भरते हैं । ६ फूसका पूला जिसे मोटो दत्तीके आकारमें बाध कर छाजनमें लगाते हैं, मूठा । ७ पलीता, फलीता । ८ वत्तीकी शरलनी कोई चीज पतली छड या सलाईके आकारमें लाई हुई कोई पस्तु । ९ मोमवत्ती ।  
 वत्तीस ( हि० वि० ) १ तीससेदो अधिक, जो गिनतीमें तीससे दो ज्यादा हो । ( पु० ) २ तीससे दो अधिककी संख्या । ३ उक्त सरयाका अङ्क जो इम प्रकार लिखा जाता है—३२ ।  
 वत्तीसा ( हि० पु० ) एक प्रकारका लड्डू जिसे पुष्टिके वत्तीस मसाले पडते हैं ।  
 वत्तीसी ( हि० स्त्री० ) १ वत्तीमत्रा समूह । २ मनुष्यके नीचे ऊपरके दातोंकी पक्ति जिनकी पूरी सरया वत्तीस होती है ।  
 वधान ( हि० पु० ) गोशूह, गायोंके रहनेकी जगह ।  
 वधुआ ( हि० पु० ) जी, गेहू आदिके खेतोंमें होनेवाला एक छोटा पौधा । जेग इमका माग बना कर खाते हैं । इसकी पत्तिया छोटी छोटी और फूल चुडोके आकारके होते हैं जिनमें काले दानेके बीज पडते हैं । वैद्यमें वधुआ जडराग्नजनक, मधुर, पित्तनाशक, क्षार, अर्श और हृमिनाशक, नेत्रहितकारी, क्लिग्ध, मलमूलजोषक और कफके रोगियोंको हितकारी माना गया है ।  
 वद ( फा० स्त्री० ) १ गरमोनी बीमारोके कारण या सों हो सूजी हुई जाँघ परकी मिल्डी, बाघी । २ चौपायों की एक लूनकी बीमारो । इसमें उनके मुँहसे लार बहती है, उनके गुर और मुहमें दाने पड जाते हैं । ३ घुरे आचरणका मनुष्य, दुष्ट, नीच । ३ पलटा, पवज । ( वि० ) ४ निट्ट, खार ।  
 वदभमरो ( हि० स्त्री० ) रायका कुप्रबन्ध, हलचल ।

वदइतजामी ( फा० स्त्री० ) अथरस्था, कुप्रबन्ध ।  
 वदकशी—वदाफसानासी अफगानजाति । चित्तल, काफरिस्तान आदि स्थाननामियोंके साथ इनका आचार अचरार बहुत कुछ मिलता जुलता है । ये लोग कट्टर मुसलमान नहीं हैं, आकृतिगत सादृश्य देरानेने आर्य जातिके से प्रतांत होते हैं । ये लोग हिन्दू और इरानी जातिके मध्यवर्ती हैं ।  
 वदकारी ( फा० स्त्री० ) १ कुकर्म । २ अ्यभिचार ।  
 वदकिस्मत ( फा० वि० ) मन्दभाग्य, अभाग ।  
 वदखत ( फा० पु० ) १ घुरे अक्षर, घुरा लेख । ( वि० ) २ घुरा लिखनेवाला, जिसका लिखनेमें हाथ न पैडा हो ।  
 वदखाह ( फा० वि० ) अनिष्ट चाहनेवाला, घुरा चाहने वाला ।  
 वदगुमान ( फा० वि० ) स देहकी दृष्टिसे देखनेवाला ।  
 वदगुमानी ( फा० स्त्री० ) किस्मोके ऊपर मिथ्या स देह, भूठा श्रुवहा ।  
 वदगोई ( फा० स्त्री० ) १ निन्दा, शिन्नायत । २ चुगली ।  
 वदचलन ( फा० वि० ) कुमार्गी, घुरे चालचलनका ।  
 वदचलनी ( फा० स्त्री० ) १ दुग्धचरितता, वदचलन होनेकी क्रिया या भाव । २ अ्यभिचार ।  
 वदजवान ( फा० वि० ) कट्टुभाषी, गाली गलीज करने वाला ।  
 वदजात ( फा० वि० ) नीच, ओछा ।  
 वदतमीज ( फा० वि० ) जो शिष्टाचार न जानता हो, गवार, बेहदा ।  
 वदतर ( फा० वि० ) किसीकी अपेक्षा घुरा, और भी घुरा ।  
 वददियानती ( फा० स्त्री० ) विदवासाघात, धोखेबाजी, बेईमानी ।  
 वददुआ ( फा० स्त्री० ) अहित कामना जो शर्धों द्वारा प्रकट की जाय, शाप ।  
 वदन ( फा० पु० ) शरीर, देह । वदन देखो ।  
 वदनतौल ( फा० स्त्री० ) मलसम्भकी एक कसरत । इसमें हृथी करते समय मलसम्भकी एक हाथसे लपेट कर उसीके सहारे सारा वदन ठहराते या तीलते हैं । इसमें सिर नीचे और पैर ऊपरकी ओर रहते हैं ।

वदननिकान ( फा० पु० ) मलप्रभकी एक कसरत । इममें मलय भके पास गये हो कर दोनों हाथोंकी फी जी बाधते हैं । इममें गैलाडोका मु ह नीचे, कमर मल्ल भन्ने सदी हुई और पैर ऊपरको होते हैं ।

वदनसिंह—भरतपुरके जाट राजा श्री एक राजा, चूडामन सिंहके पुत्र । ये १०२२ ई०में जाटदलके सरदार बनाये गये । म्हार नगरमें इनकी राजधानी थी । बिगका विख्यात दुर्ग इन्होंने ही बनवाया था । १७३६ ई०में नादिरशाहके आक्रमण-कालमें ये जीवित थे ।

वदनसीध ( फा० वि० ) अभाग, जिसका भाग्य घुरा हो ।

वदनमोकी ( फा० स्त्री० ) दुर्भाग्य ।

वदना ( हि० कि० ) १ धर्षण करना, कहना । २ नियत करना, ठहराना । ३ सफलता पर जीत और असफलता पर हार माननेकी शर्त पर कोई बात ठहराना, होइ लगाना । ४ स्वीकार करना, मान लेना । ५ गिनतीमें लाना, कुछ समझना ।

वदनाम ( फा० वि० ) जिसकी कुर्याति फैली हो, जिसकी निन्दा हो रही हो ।

वदनामी ( फा० स्त्री० ) अपकीर्ति, लोकनिन्दा ।

वदनीयन ( फा० वि० ) १ जिसको नीयत घुरी हो, जिसका अभिप्राय दुष्ट हो । २ जिसके मनमें धोखा आदि द्वेषकी इच्छा हो, बेईमानी ।

वदनीयती ( फा० स्त्री० ) बेईमानी, दगाबाजी ।

वदनुमा ( फा० वि० ) फुरूप, भदा ।

वदनूर—मध्यप्रदेशके मैदल तहसीलका एक सहर । यह अक्षा० २१ ५५ उ० और देशा० ७७ ५४ पू० मचना नदीके किारे अवस्थित है । जनसंख्या छ हजारके करीब है । यहांसे चार मील दूर खेरला ग्राममें गोंड राजाओंका ग्रामाड और भान दुर्ग विद्यमान है । शहरमें एक मिडिल इंग्लिश स्कूल और एक अस्पताल है ।

वदनीरा—भारतके अमरावती तालुक और जिलेका एक शहर । यह अक्षा० २० ५० उ० और देशा० ७७ ४६ पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या दस हजारसे ऊपर है । यहां प्रेट इण्डिया पेनिन्सुला रेलवेका एक स्टेशन है । अमरावती और इल्लियपुर जानेमें इसी स्टेशन पर उतरना पड़ता है । इस नगरसे अमरावती तक एक

राजकीय रेलवे लाईन चली गई है । अहमदनगरकी राज कन्याने इस नगरको घोंतुकमें पाया था । इसीसे कोई कोई इसे वदनेरावोकी भी कहते हैं । प्राचीन नगर-भागमें मुगल कर्मचारियोंका आवास था । यहावा महोका दुर्ग आज भी नजर आता है । राजवधशरणण अथवा कर संग्रह करते थे जिससे धीरे धीरे यह नगर जनशून्य होता गया । आदिर १८२२ ई०में राजा रामसुयाने इस नगरको अच्छी तरह ढूटा और दुर्ग तथा प्राचीर को तहम तहम कर डाला । शहरमें सूती कपड़े बुनोकी एक बल है । चम्पई शहरमें रईकी रफ्तानी होनेके कारण इस रथागी वाणिज्योन्नति दिनों दिन होती जा रही है ।

वदनोर्ग—राजपूतानेके वदो राज्यका एक प्रधान शहर । यह अक्षा० २५ ५० उ० और देशा० ७४ १५ पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या दो हजारसे ऊपर है । शहरमें एक डाकघर, चर्कीबुलर स्कूल और उत्तरमें पैगताद नायकाका प्राचीन भवन दुर्ग है । यहांके ठापुर राठोरकी भरतिपा जाग्यके अन्तर्गत है और ये अपनेकी राय योषके फनिष्ठ पुत्र दूदाके वधशर बतलाते हैं ।

वदपरहेज ( फा० वि० ) घुपघ्य करनेवाला, जो धाने पाने आदिका समय न रगता हो ।

वदपरहेजो ( फा० स्त्री० ) घुपघ्य, पाने पाने आदि अत्यय ।

वदवचन ( फा० वि० ) अभाग, वक्फिसमत ।

वदवाछा ( फा० पु० ) घट हिस्सा जो बेईमानी करीने मिला हो ।

वदवू ( फा० स्त्री० ) दुर्गन्ध, घुरी घाम ।

वदवुदार ( फा० वि० ) दुर्गन्धयुक्त, जिसमें घुरी घाम आती हो ।

वदमजा ( फा० वि० ) १ दु स्याद, घुरे स्यादका, म्भराव जायकेका, २ आनन्दरहित ।

वदमन् ( फा० वि० ) १ अति उन्मत्त, नशेमें घूर । २ फामोन्मत्त, ल पर ।

वदमन्ती ( फा० स्त्री० ) १ उन्मत्तता, मतवालापन । २ फामोन्मत्तता, ल पटना ।

वदमाग ( फा० वि० ) १ दुर्घट, घुरे फर्मसे जीविक काटो वाग । २ दुष्ट, गीटा । ३ घुराचारी, वदमलन ।

वदमातो ( फा० स्त्री० ) १ घुरी घृति, गोटाई । २ मीजता, दुष्टता ।

वदमिनाज ( फ० वि० ) दु स्वभाव, घुरे स्वभावका, चिड चिडा ।

वदमिनाजी ( फा० रती० ) घुरा स्वभाव, चिडचिडापा ।  
वदरग (फा० वि०) १ घुरे रगका, जिसका रग अच्छा न हो ।  
२ त्रिवण, जिसका रग विगड गया हो । (पु०) ३ चौसर के खेलमें एक एक तिलाडीकी दो गोठियोंमें उह गोठी जो रग न हो । ४ ताशके खेलमें जो रग दाव पर गिरना चाहिये उमसे भिन रग ।

वदर गी ( फा० खी० ) र गका फोकापन या भद्दापन ।  
वदर (स० ह्री०) वदति स्थिरोभवती छिन्नेऽपि पुन प्ररोहतीति, वद अरच् । १ कार्पास, कपास । २ कार्पासजीन, कपासका बीया, विनीला । ३ सेविफल । ४ शृगाल कौलि । ५ वृहत् कौलिवृक्ष, बडा बेरका पेड । ६ कौलि फल, बेरका फल । सस्कृत पत्रिय—कर्कशु, वदरी, कोल, फेणिल, कुजल, घोष्टा, सीवीर, अजाप्रिया, कुहा, कोलिविषम, भयकरु, सौवीरक, गुडफल, चालेष्ट, फल शैशिर, दूढबीज, वृत्तफल, फलकी, वक्ररुण्टकी, वक्र फलक, सुरस, सुफल, सख्ख, कर्कशु, वदर, कोली, कुजली, स्वादुफला, गृध्रनखी, पिच्छिला, कुजल । गुण — मधुर, कषाय, अम्ल । परिपक्व फलका गुण—मधुराह, उष्ण, कफकारक, पचन, अतिसार, रक्त और श्रमदोषपाशक तथा रुचिकर ।

यह पेड प्राय सारे भारतवर्षमें होता है । ज गनी बेरको भरबेरी कहते हैं । जय कलम लगा कर इने तैयार किया जाता है, तब वह पेवँदी ( पैव दी ) कहलाता है । इसकी पत्तिया सारेके काममें और छाल चमडा सिफाने के काममें आती है । बङ्गालमें इस वृक्षकी पत्तियों पर रोमके कोडे भी पालते हैं । इसकी लकडी जो कडी और कुछ लाली लिये हुए होती है, प्राय चेतकी बीजार बनानेके और इमारतके काममें आती है । इममें एक प्रकारके ल बीतरे फल लगते हैं जिनके अदर बहुत कडी गुठली होती है । यह फल पकने पर पीले रगका हो जाता है और मीठा होनेके कारण खुर खाया जाता है । फलम लगा कर इसके फलोंका आकार और स्वाद बहुत कुछ बढ़ाया जाता है ।

६ देवसर्पपशु । ७ द्विशाणमान, दो शाण या आठ मासकी एक तील ।

वदर ( फा० वि० ) बाहर । जैसे, शहर वदर करना ।  
वदरकुण ( स० पु० ) घेर पकनेका समय ।

वदरगञ्ज—बङ्गालके रगपुर जिलान्तर्गत एक गण्डग्राम और प्रधान वाणिज्यस्थान । यह अक्षा० २५ ४० उ० और देशा० ८६ ६० पू०के मध्य अवस्थित है । यहा चावल, धान और सरसों आदि रपनेकी बडी बडी आदते हैं ।

वदरत्रय ( स० ह्री० ) वदराणा त्रय । तीन प्रकारका वदर, वृहद्वदर, शूद्रवदर और शृगालकौलि । ( चरन्सूत्र ४ अ० ) भावप्रनाशके मतसे सीवीर, कोल और कर्कशु यही तीन प्रकारके वदर हैं ।

वदरनीसी ( फा० रती० ) १ हिसाव किताबकी जाँच ।  
२ हिसावमें गड दड रकम अलग करना ।

वदरपाचन—तीर्थभेद । महाभारतमें लिखा है—महर्षि भरछाजकी कन्या श्रुवातीने देवराजकी पत्नी होनेकी इच्छासे बहुत कठिन तपोमुष्ठान किया । भगवान् इन्द्र उसकी तपस्यासे बडे प्रसन्न हुए और वशिष्ठदेवका रूप धारण कर वहा पहुचे । श्रुवावतीने नाना प्रकारसे उनकी पूजा करनेके बाद अपना अभिप्राय प्रकट किया । इस पर वशिष्ठरूपधारी इन्द्रने कहा, 'तुम्हारी कठोर तपस्याका विषय मुझसे छिपा नही है । तुम्हारा मनोरथ अर्थात् शीघ्र पूरा होगा । अभी तुम्हे ये पाच वदर देता ह, उनका अच्छी तरह पाक करो ।' इतना कह इन्द्र वहासे चल दिये और उसी आश्रमके समीप इन्द्रतीर्थ जा कर अग्निका तप इस उद्देशसे करने लगे जिससे श्रुवावती वदर पाक न कर सके । इधर ब्रह्मचारिणी श्रुवावतीने तनमनसे पवित्र हो वदर पाक करना आरम्भ कर दिया । सारा दिन बीत गया, तो भी सभी वदर छुपक न हुए । इस प्रकार श्रुवावतीके अनेक दिन बीत गये । आखिर अपने उद्देश्यको फलीभूत न होते देख वह अपना शरीर दाध करनेकी तुल गई । पहले उसने अपने दो पैर अग्निमें डाले, पर जरा भी हेशे अनुभव न किया । धीरे धीरे उसका सम्पूर्ण शरीर भस्म होने लगा । इसी समय इन्द्रने वहां पहुँच कर श्रुवावतीसे कहा, 'ब्रह्मचारिणी ! अब तुम्हे उदरपाक नहीं करना पडेगा । मैं तुम्हारी भक्तिकी परीक्षा करनेके लिये वशिष्ठका रूप धारण कर आया था । तुम्हारा अभिलाष परिपूर्ण होगा । यह देह



परित्याग करके तुम स्वर्गमें मेरे साथ एकत्र बास करोगी और यह स्थान वरपाचन तीर्थ नामसे प्रसिद्ध होगा। इस तीर्थमें सत्रवा पट्टरतु विराजमान रहेगी।' (भाषत प्रायशब्दे ४८ ४६ ४०)

**वदरपुर**—आमाम प्रदेशके धौदह जिलान्तर्गत एक गाँव ग्राम। यह अक्षां २४ ५१' ३०" और देशां ६२ ३३' ५०"के मध्य अवस्थित है। १८०६ ई०में ब्रह्मसैनाने जब फरार पर आक्रमण किया, तब इसी स्थान पर अंगरेजों के साथ उनका युद्ध हुआ था। यहा पर्वतके ऊपर एक दुर्ग है।

**वदरपुर**—पञ्जाबके अन्तर्गत एक गाँव ग्राम। यह शाल घेतीसे २ फीस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहा एक बहुत बड़ा बौद्ध-स्तूप है जो मनिफल और शाहपुरके स्तूपसे किसी अंशमें कम नहीं। ७व्याशशेकमें परिणत हो जाने पर भी अभी इसकी ऊँचाई ४० फुट रह गई है। इस स्तूपके मध्य जैनरत्न से जुटाने एक मृत् मनुष्यकी दृष्टी पाई थी।

**वदरफली** (स० स्त्री०) वदरस्येय फलमस्य वदरफली-टीपू। भूवदरी।

**वदरबहो** (स० स्त्री०) भूवदरी।

**वदरबीज** (स० स्त्री०) वदरस्थि, येको गुडली।

**वदरा** (स० स्त्री०) १ आदिस्थभक्ता, गुरुगुरु। २ कापाम्नी, कपाम्। ३ वराहकान्ता, वाराही नामका पीपल। ४ एला पर्णी। ५ वाराहीगन्ध। ६ देवेतिपिदागी ७ विष्णुकान्ता।

**वदारामलक** (स० स्त्री०) पानीयामलक, पानी धामला। इसके पीये जलानयोंके पान होते हैं। पत्ते ल वे ल ये और फल लाल रंगके समान होते हैं। यहनियोंमें छोटे छोटे काटे भी होते हैं।

**वदरास्थि** (स० स्त्री०) वदरबीज, येकी गुडली।

**वदरान्धिमञ्जा** (स० स्त्री०) येको गुडलीका गुदा।

**वदराह** (फा० रि०) १ बुधार्णो, बुने गह, पर चरने यात्रा। २ वृष, बुध।

**वदरि** (स० स्त्री०) वदरामलककादरि। कोलिहूँ, येका पीपल या फल।

**वदरिका**—हिमालय पर्वतके प्रसिद्ध यौगव तीर्थ। यह जिम्नोर्ष भूमिका कन्याधरम और तत्र पर्वतके बीच

पड़ता है। इसका दूसरा नाम वदरीनाथनेत्र भी है। इस पुण्य क्षेत्रका ध्यान प्राय ३ योजन और चैत्य १२ योजन है। गणधामादन, वदरी नरनारायण और बुधेश्वर शृङ्ग इसके अन्तर्गत है। यहा वानसे उष्ण प्रत्यय भी है।

हिमालयतीर्थके मध्य वेदान्ताथ जिम प्रसार शैव गणकी प्रियतर है, वैष्णवीके वरिकाक्षेत्र भी उसी प्रकार पद्म स्थान समझा जाता है। (१) तीर्थयात्रिगण अल्पनन्दा (१ गा)की उपन्यका एकके तीर्थोंके वर्तन करत करते ज्योतिर्धाम (२) पदुचने है। ज्योतिर्धाम पार करके ही वे धौली और अल्पनन्दाके मङ्गल तट पर गणधामादन और वदरीक्षेत्र देग पाते हैं। यहा इला, विष्णु, शिव, गणेश, भृगि, शक्ति, सूर्य दुर्गा, धनद और प्रह्लाद आदि कुण्ड हैं। यह रथान विष्णुप्रयाग नामसे प्रसिद्ध है। इसीके उत्तर घटोत्तगाधरम पड़ता है। इस आधरमके पान ही मुनीधर शिव और गणेशकर्म मन्दिर अन्तर्गत है। विष्णु प्रयागके उत्तर पाट्टरपुरथा है। (३) वदरीनाथके समीप जो नदी बहती है उसमें शक्तिनी विनारे परके नरनिधर पर खैचरों लिङ्गतीर्थ और नाम यण कुण्ड देवनेमें धाते हैं। विष्णुमती नदीमें ही धीम उत्तर धैगानम नामक स्थान है। सन्धानिगण यहाँ होम याग किया करते हैं। इसके भी उत्तर चडा बुधेश्वर पर्वत और योमेश्वर भैरव नामक तीर्थ है। इसके बाद प्रयाग नामक मन्दििर और वरिकाक्षेत्रके नामसे कर्मधारा नामक नदी है। इसके पान ही नारदीयजिला, वराहोजिला, तारमि हजिला, मारण्डेय जिला, गारुडोजिला और उन्हीं मत्र नामोंकी पुष रिलिया भी है। उन पर्वत परिधिमें मध्यगणमें विष्णु

(१) इन स्थानका दूसरा नाम विष्णुपुर है। स्थानीय प्रवादण माना जाता है, कि वदरी वृषभ ही इन स्थानके न मध्यय हुआ है।

(२) जोशवट—पहाक नामक मन्दिरके समीप प्रह्लादके विष्णुका धारापान भी थी।

(३) पावडेश्वर—यहाँ पावडेश्वर शिवमन्दिर आज भी विद्यमान है।

मन्दिर प्रतिष्ठित है। इन्कोके समीप बहिनोर्थ और ब्रह्म कपाल, पश्चिमकी ओर १ कोसके म-प्र ही उर्वशीतीर्थ तथा स्वर्णधारा नदी पर शैवतीर्थ है। बदरीनाथके वाम पार्श्वमें इन्द्रधारा, देवधारा, वसुधारा, धर्मजिला और सोम नामक नदी, सत्यपद, चक्र, द्वादशादित्य, सप्तर्षि, रुद्र, ब्रह्मा, नर-नारायण, व्यास, केजप्रयाम और पाण्डुरो नामक तीर्थ तथा मुचुमुन्द और मणिभद्र नामक हृद विद्यमान हैं।

इस अति प्राचीन तीर्थका माहात्म्य बहुतसे प्राचीन ग्रन्थोंमें पाया जाता है। महाभारतमें लिखा है, कि नर नारायण अर्जुनने यहा घोरतर तपस्या की थी। श्रोत्रण्य बदरिकाध्रममें अर्जुनके साथ बहुत दिन ठहरे थे। फिर दूसरी जगह लिखा है, कि श्रोत्रण्यने यहा पर सायगृह मुनिके साथ साक्षात् किया था। द्वारकाधरसके बाद पाण्डवोंने व्यासका आदेश पा कर हिमालयको महा-प्रस्थान किया था। पूर्वमें कर्माचल और पश्चिममें यमुनोत्तरी तथा दून नदी तत्र विस्तृत भूभागके अनेक स्थान आज भी पाण्डवोंके आगमनको गवाही देते हैं। केदारेश्वरके पांच शिखरमन्दिर पाण्डवप्रतिष्ठित माने जाते हैं। पाण्डुकेश्वरमें उन्होंने तपस्या की थी। घामना यतारमें भगवान् विष्णु यहा पर तपस्या करके पूर्णता प्राप्त की थी, इसीसे यह पुण्यक्षेत्र सिद्धाध्रम नामसे भी प्रसिद्ध है। कहते हैं, कि राम और लक्ष्मणने राजनको माग ब्रह्मरथपापमें निष्कृति पानेके लिये हृषिकेश और तपोवनमें तपस्या की थी। यरुचिने यहा आ कर महादेवकी आराधना की और अन्तःकालको वे पुष्पदन्त(४) की तरह स्वर्णधाम चले गये कौशाम्बीराज राज्यनर्यासे उत्पन्न हो शैव जीवन देवसेवाम वितानेके लिये बदरिका ध्रम आये थे।

(४) पद्मपुराणमें बदरीको सब तीर्थों की अपेक्षा पुण्य तम वैष्णवतीर्थ बतलाया है। पुष्पदन्तने महादेवकी तपस्या करके दुर्गाम्बाराजका जयाका पालिमहण किया था। बुढापा आने पर वे दोनो वानप्रस्थ अवस्थान कर बदरिका आये थे। पुष्पदन्तके भाई गुणाधने भी यहा देवसेवाम अपना जीवन बिताया था। घामनपुराणमें भी केदारनाथ और बदरीनाथ देवतीर्थकी पवित्रता वर्णित हुई है।

बदरीनाथप्रतिष्ठाके प्रसङ्गमें यहा एक अच्छी गल्प सुनी जाती है। वह इस प्रकार है,—नारदकुण्ड आ कर शङ्कराचार्यने बहुत-सी देवमूर्तिया जलमें देखीं। उसी समय आम्नाश घाणी हुई जिसके अनुसार वे उन सब प्रतिमूर्तियोंको बदरि वृक्षके नीचे स्थापन कर गये। उस वृक्षने धीरे धीरे बढ़ कर जितना स्थान आम्नान्त किया, वह आदिवरणी रह गया। गंधमादन पर्वतके नीचे यह स्थान वैष्णवधर्म पुनस्थापनके लिये मनोनोत हुआ। इन्को स्थान पर नरनारायणना आश्रम है। वैष्णवप्रभावकी वृद्धिके साथ साथ यहा नरनारायण और बदरीनाथके मन्दिरादि बनाये गये। एतद्विषय लक्ष्मी, मातृकामूर्ति, महादेव और जपरपर त्रिणुमूर्तिके मन्दिर स्थापित हुए हैं। विष्णुके आदेशसे अग्निदेव प्रसन्नवर्णमें अग्रस्थान करते हैं। ब्रमश यह वैष्णव क्षेत्र तप्तकुण्ड, नारदकुण्ड, ब्रह्मकपाली, कर्मधारा, गरुडजिला, नारदजिला, मार्कण्डेयजिला, वराहशिखा, नरसिंहजिला, वसुधारा तीर्थ, सत्यपथकुण्ड और त्रिकोणकुण्ड आदि १२ छोटे छोटे अर्गोंमें विभक्त हो गया है। रुद्रपुराणीय हिमवत्परण्टमें उन सब तीर्थोंका माहात्म्य वर्णित है।

बदरीनाथमें त्रिणु नरसिंहरूपमें विराजित हैं। इनमें नरनारायण और नरसिंह, वराह, नारद, गरुड और अमार्क आदि शक्तियोंका समन्वय हुआ है। बदरी नामक मन्दिरके पाष्यमें ओर भी चार मन्दिर प्रतिष्ठित हैं। वे पाचों मन्दिर पञ्च बदरी नामसे प्रसिद्ध हैं। (५) प्रवाद है कि शङ्करनादापसधारी त्रिणु महाकुम्भके दिन यहाके नीलमण्ड पर्वत गिरपर पर आविर्भूत होते हैं। इनके दर्शन साधक मात्र ही पा सकते हैं। पाण्डु-केश्वरमें योगबदरीका मन्दिर स्थापित है। यहा भग वाक्की वासुदेवमूर्ति प्रतिष्ठित है। (६) ऊरगात्र ध्यान बदरी तथा नृद्धकेश और कर्पेश्वर शिखरमन्दिर, अणिमठमें नृद्धबदरी मूर्ति स्थापित है। यहा हरिव श

(५) योगबदरी, ध्यानबदरी, नृद्धबदरी और आदि-बदरी। पाण्डवप्रतिष्ठित पञ्चवर्षिक-मन्दिर भी पञ्चकेदारके नामसे प्रसिद्ध है।

(६) किरातमण भी बाइदेवकी उपासना करते थे।

परिणत अथवा देवीमूर्ति हैं। जोषीमठमें भविष्यवदरी और वासुदेव, गण्ड और भगवती मूर्ति प्रतिष्ठित हैं। कुछ जनाश्रयी पहलेसे दक्षिणात्यके दण्डो परमहंसगण वदरीनाथके पूजानीया कार्य करते आ रहे थे। पीछे नभूरी ब्राह्मणोंने उक्त कार्यका भार ग्रहण किया। वेनाग से ले कर कास्तिकामास तक वे लोग वदरीनाथकी सेवा किया करते हैं। पीछे जोत पड़ने पर वे ज्योतिषाम चले जाते हैं। देवप्रयागके ब्राह्मण तत्तफुएडमें, काटि घाल, हातोघाल और शरडी ब्राह्मण ब्रह्मचालीमें, डिब्रो ब्राह्मण त्रिव और लक्ष्मी मन्दिरमें, पालिया ब्राह्मण तङ्गनोमें तथा पुरोहितानुचर योगवदरीमें, डिब्रोगण ध्यानवदरीमें और दक्षिणाब्राह्मण यज्ञवदरी और आदि वदरीमें याजकता करते हैं। पञ्चवदरी छोड़ कर नन्द प्रयाग और विष्णुप्रयागके विभिन्न मन्दिरोंमें अपरापर विभिन्न श्रेणीके ब्राह्मण पुजारोका काम करते हैं। नन्द प्रयागमें स्नान करनेसे गो और ब्राह्मणवधका पाप नाश होता है।

वदरिकाश्रम (स० पु० ११०) वदरिकाचिह्नित आश्रम। तीर्थचिह्न। यह तीर्थ धीनगर (गढ़वाल) के पास अल्फ नन्दा नदीके पच्छिमी किनारे पर अवस्थित है। यहां नर नारायण तथा व्यासका आश्रम है। कहते हैं, कि भृगु तु ग नामक शूद्रके ऊपर पर वदरीचूक्षके कारण वदरिकाश्रम नाम पडा। महाभागमें लिखा है, कि पहले यहां गंगाकी गाम और ठंडी दो धाराएँ थीं और रेत मीने की थी। यहीं पर देवताओं और ऋषियोंने तप कर भगवान् विष्णुको प्राप्त किया था। गन्धमादन, वदरी, नरनारायण और सुषेणशूद्र इसी तीर्थके अन्तर्गत हैं। नरनारायण अर्जुनों यहां कठोर तपस्या की थी। पाण्डव महाप्रस्थानके लिये इसी स्थान पर गये थे। पत्रपुराणमें वैष्णवोंके मय तीर्थोंमें वदरिकाश्रम श्रेष्ठ कहा गया है।

“दोऽपतीर्ष्यात्ततोऽश्वेन दक्षायण्यन्तु धर्मनः।  
लोकानां स्वल्पयेऽप्यास्ते तपो वदरिकाश्रमं ॥”

(भाग० ७।१।६)

भगवान् विष्णुने अपने मंत्र द्वारा दक्षायण्यमें अथ तीर्थ हो कर लोगोंकी मन्त्रोंके लिये वदरिकाश्रममें तपस्या की थी। ११।६।६ देखो।

वदरी (स० खी०) वदर गीर्वादिन्यान् टोप्, या वदरि वदिकावदिनि पदो टोप्। १ तिलियुक्ष, पेट्या पेट या फल्। २ वापामो। ३ कपियच्यु, की छ। ४ आधम पिरेव, जम्पाश्रम।

प्रधानदेी सरस्वतीके पदिचमी किनारे ऋषियोंका यह पुंडिकावक शम्पाश्रम नामक पवित्र आश्रम है। यहां बहूनरसे वदरी पूजा है इसी कारण इसका वदरी आश्रम नाम पडा है। यहां भगवान् वेदव्यासने ईश्वरकी चिन्तामें अपना तन मंत्र लगा दिया था। पीछे भक्ति द्वारा जब चित्त निर्मल हुआ, तब पहले पुत्र और पीछे तदपौरा माया उनके दर्शन गोचर हुईं। जो अपर मायामें समोहित जोय स्वयं गुणातीत हो कर भी अपनेकी त्रिगुणात्मक समझते और गुणघन कर्तृत्वाधिको प्राप्त होते हैं उन्हे भी वे देण पाये। वेदव्यासने इस प्रकार आत्मतत्त्वका अवलम्बन करके धोमदुर्भागवत मंदिर्तोकी रचना की। (भाग० १।७०)

वदरी—महिसुर राज्यके अन्तर्गत एक नदी। यह बाबा बुद्धन गिरिमालसे निकल कर पैट्टर नगर होती हुई देमा घाटीमें जा गिरी है। येरेवा-हहा नामक एक और जलपातनी इसके कलेवरकी मुक्ति की है।

वदरी—सहायिके अन्तर्गत एक तीर्थ। यहां तिलोचना त्रिवकी एक मूर्ति प्रतिष्ठित है। (भाग० १।६६)

वदरीच्छद् (स० पु० ११०) तगीनामक गन्धद्रव्य। वदरीच्छद्वा (स० खी०) वदर्या छद्वा इय छद्वा यस्याः। १ हस्तिकोतियुक्ष, एक प्रकारका बेर। २ शङ्खनी, एक सुगन्ध द्रव्य जो जायद किसी समुद्री जलका सूया मास हो।

वदरीनाथ—युक्तप्रदेशके गढ़वाल जिलान्तर्गत एक हिमाश्रय शिखर। यह समुद्रपृष्ठसे २३०१० फुट ऊँचा है। इसी शूद्रभूमिसे अल्पनन्दा नदी निकली है। उसके सातु देगम प्राय १०५०० फुटकी ऊँचाई पर वदरीनाथ नामक प्रसिद्ध विष्णु मूर्ति स्थापित है। यह अक्षा० ३० ४४' १५" उ० तथा देशा० ६ ३०' ४०" पू०के मध्य पडता है। शङ्करग्यामी नामक किसी योगी ने वदरीनाथमें यह मूर्ति तिकाठ का स्थापित की। तीर्थशास्त्रानामें इसकी विवेक व्यापित गाह है। भूमिदरमने मन्दिर नष्ट प्राय हो गया

धा, अमो भक्त गणोंने उमका स स्कार करा दिया है। यहाके पुरोहित राचल कहलाने है। वे लोग दक्षिणत्यवासी नम्य रो ग्राहण हैं। प्रतिगर्ष ग्रीष्मके समय वे लोग यहा पहुँचते हैं और कार्तिकमासमें शीतके प्रारम्भ होते ही अपनी प्राप्त सम्पत्तिनी जमोनमें गाड़ कर जोषीमठ चले जाते हैं। यहा और भी चार मन्दिर हैं। देवसेनाके लिये गढवाल और कुमाउन प्रदेशके कुछ प्रामोंका राजस्व निर्दिष्ट है। यहा प्रतिगर्ष उत्सवके समय बहुतमे लोग समागम होते हैं। ६दे० देखो।

वदरीनारायण (स० झो०) १ वदरीनाथ, नारायणकी मूर्ति जो वदरिकाश्रममें है। २ वदरिकाश्रमके प्रधान दंतता। वदरोपल (स० पु०) वदया पत्रमिन् आन्तरिक्य। नयी नामक गद्यग्रन्थ।

वदरोपलक (स० झो०) वदरोपल स्वार्थे कन्। नगी नामक गद्यग्रन्थ।

वदरोपल्य (स० पु० झो०) कोलिकोमल पल्य, बेरकी मुलायम पत्ती।

वदरोफला (स० टी०) नील जोफालिकाका पौधा।

वदरोपाचन (स० झो०) वदरपाचन तीर्थ। वदरान झणो।

वदरीवन—१ कावेरी नदीके दक्षिणतीर्थ एक पुण्यस्थान। यहा कमलेश्वर शिवमूर्ति स्थापित है। शिवपुराणके अन्तर्गत वदरीवन माहात्म्यमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है।

वदरोहाट—मुर्शिदाबाद जिलेके लालबाघ उपविभागका एक प्राचीन स्थान। यह अक्षा० २४ १८' उ० और देशा० ८८ १५' पू० भागीरथीके दाहिने किनारे अवस्थित है। भागीरथी वक्षसे बहुकोसव्यापी स्थानका ध्वजावशेष देखनेसे इसकी पूर्वमृत्तिका स्मरण आ जाता है। आज भी यहा राजप्रासाद और भग्नावशेष दुर्गका चिह्न दृष्टिगोचर होता है। बहुतसी खणमुद्रा और स्तम्भ गाढमें पालि अक्षरमें लिखी हुई लिपियाँ पाई गई हैं। मालूम होता है कि बौद्धप्रभावके समय इस नगरकी श्रीमूर्ति हुई थी। गौडके पठानराज गयासाहुँदने अपने नाम पर इस नगरका गयासावाद नाम रखा था।

वदरीवन (स० पु०) १ बेरका जङ्गल। २ वदरिकाश्रम।

वदरीशैल (स० पु०) वदरीबहुल शैल पर्वत। हिमालय पर्वतकेदेश, वदरिकाश्रम।

वदरून (हि० पु०) पत्थरकी जालीकी एक प्रकारकी नगणनी जिसमें बहुतसे कीने होते हैं।

वदरी ह (फा० वि०) १ कुमारी, वदचलन। (पु०) २ वदलीका आभाम।

वदल (अ० पु०) १ परिवर्तन, हेरफेर। २ प्रतिकार, पलटा।

वदलगाम (फा० वि०) जिसे भला घुरा मुँहसे निकालते स कोच न हो, मुँहजोर।

वदलना (हि० कि०) १ औरना और होना, परिवर्तित होना। २ एन स्थानसे दूसरे स्थान पर नियुक्त होना।

३ एनके स्थान पर दूसरा हो जाना, जहा जो वस्तु रही हो वहा वह न रह कर दूसरी वस्तुना आ जाना। ४ औरका और करना, परिवर्तित करना। ५ एक वस्तु दे कर दूसरी वस्तु लेना या एक वस्तु ले कर दूसरी वस्तु देना। ६ एकके स्थान पर दूसरा करना, एक वस्तुके स्थानकी पूर्ति दूसरी वस्तुसे करना।

वदलयाना (हि० कि०) वदलनेका काम कराना।

वदला (अ० पु०) १ निमित्त, परस्पर लेने और देनेका व्यवहार। २ किसी वस्तुके स्थानकी दूसरी वस्तुसे पूर्ति, एवज। ३ एककी वस्तुके स्थान पर दूसरा जो दूसरा वस्तु दे। ४ किसी कर्मका परिणाम जो भोगना पड़े, प्रतिकूल। ५ प्रतीकार, पलटा।

वदलाना (हि० कि०) वदलयाना देणो।

वदली (हि० स्त्री०) १ घनविस्तार, फैल कर छाया हुआ वादल। २ एकके स्थान पर दूसरेकी उपस्थिति। ३ एक स्थानसे दूसरे स्थान पर नियुक्ति।

वदलीवल (हि० स्त्री०) अदल वदल, हेरफेर।

वदलकल (फा० वि०) बुरूप, बेडील।

वदसलकी (फा० स्त्री०) १ अशिष्ट व्यवहार, घुरा व्यवहार। २ अपचार, उपाई।

वदसूरत (फा० वि०) बुरूप, भद्दी सूरतगाल।

वदसूर (फा० कि० वि०) मामूली तौर पर, जैसेका तैसा, ज्योंका त्यों।

वदहजमी (फा० टी०) अजीर्ण, अपच।

वडाऊ नाम (का० वि०) १) बेहोज, अन्नत। २) वायुल, विराट। ३) धान, जियाण।

वडाऊ—पुनः प्रदेश का छोटे लटक के अर्थात् पर्वतिका। यह अक्षा० २७ ४०' से २८ २६' उ० तथा देशां० ७८ १६' से ७९ २ ५०' के मध्य स्थित है। भूपरिमाण १६८७ वर्गमी० है। इसके उत्तरीय मुखात्वात्, उत्तरपूर्वीय रामपुर शहर और बनेनी जिला, दक्षिण पूर्वीय ग्राहजहानपुर और दक्षिण पश्चिमीय वडा है। वडा के साथ इसकी प्राकृतिक सुन्दरतामें कोई विशेष पृथक्ता नहीं देवी जाती। वायुमहाती छोटे सब स्थान इसके मजोर है। अन्याय स्थानियोको भूमि गेतीके लिये उपयोगी है और अन्यान्य स्थान बालू कटकमय है। इसके मध्यभागमें सोना नामकी नदी बहती है। इसी मोतनदीके किारे वडाऊ नगर बसा हुआ है। इसका छाउ इसमें गिल, अन्नेरी, छोया और गकानग प्राहित है।

इस जिल्ला कीर प्राचीन इतिहास नहीं मिलता। रगानीय जालाणोंके माले इसका पूर्वनाम 'वेदमाया' अथवा वेदमी था। दिल्लीके तोमरराजोय नरपति महो पालने यहा एक दुर्गका निर्माण किया था। दुर्गमें घरे मार वडाऊका पश्चिमांग बना हुआ है। प्राचीन रमृतिना दृष्टात् स्वरूप मिट्टीका स्वरूप आज भी देगा जाता है। उक्त महाया'ने दरमन्दिर' नामक एक मन्दिर बाबाया था। मुसलमानोंने उम मन्दिरको नष्ट कर उमके स्थानमें जुम्मा मसजिद तैयार की थी। स्थानीय अधिवासियोंका कहना है, कि इस मसजिदमें प्राचीन मन्दिरकी स्वरूपनिपा गयी हुई है।

कोई कह बहने है, कि सुस्त नामके एक अहार राणा ने १०० ई०में इस नगरका समाया था। इसके घणघणने प्राय एक सदी तक यहां राज्य किया था। (१) गजनपाति महम्मदके भाते सैयद सलार मसाउर गाजों १०२८ ई०में राहिल्याएट आक्रमण करने समय यहाँ शा कर

शाम किया था। किन्तु वहाके रतौशाले हिन्दू राजाओं ने जब उमके विकर दियारा उठाया तब यह विपरीत क्षति प्रप्त हो यदाने भाग गया। ११६६ ई०में गणामुद्दीनके प्रतिनिधि हुनुसुद्दीन पेयकने गडाऊ दुर्ग पर हमला कर लुटपाट मचा ही। सुप्राममें कातिहरके राजपूत राजा बाम अये और अलिच्छापुने पर मुसलमानोंका कब्जा हो गया। मुसलमानों अमरमें वडाऊ 'विचार महर' बजने लगा। समुद्दीन अलतमस् इस प्रदेशके बादशाह हुए। सुठ अल्लेके शा १२१० ई०में वे गिरीके तारा पर पैठनेने चले। सस्राट् ही बर भी वडाऊमें उनका मुहल्लत जरा भी नहूदी। ६२० हिजरीमें उवाली जुम्मा मसजिदकी जिलालिपि ही इसका जौना जाना उदाहरण है। पाच साठ मुजने बाद उन्होंने अपने बड़े लडके रकन उदान किरोजको (२) बडाऊ को सलत नत मीपी। यहाकी जुम्मा मसजिद शामांसीको ठहरेति ही बनजाया था। दस्तकारीके लिये उहाँने ग्व गरा उठाया था। १३३ीं और १४वीं सर्दीमें इस प्रदेशमें केषर ग्व राजकी होनी रही थी। यह चिट्रोहयकि मुगलशासन के पहले न शुभ न स्वकी।

१३५६ ई०में शामनकर्ता महायत शाने बागी हो बादशाहके विकर तलवार उठाई। सस्राट् विजिरणों उमको किसी प्रकारसे नो यजमें न ग्य गये। खागिर ग्यारह वर्षके बाद उनके पुत्र सुवारक शाह दुर्ग नाते महायत् कारी की शा करनेमें समर्थ हुए थे। १४३० ई०में बागी सुयेदार मालिक जुमनने सैयद राजाशोका अधीनता पाज तोड आला। १४४१ ई०में आरमट्टाह वडाऊ जागकी देर न थाये। इस समय उनके यजीर बहोल लोदीके साथ पश्यत्र रच उमने बादशाहकी तल्ले उजार दिया। १४०६ ई० तक उहाँने उम सशानिना मजा उठाया। अन्तमें मॉने उन्ने आ पेरा और वे गुनिपाने फूज कर गये। उनकी मृत्युके बाद दामाद हुसैन शाह जालीने इस प्रदेश पर हुकूमत चगाया शुरू किया, किन्तु बहोल लोदीने उकी ज्यादा दिन तक टिकने न दिया। उहाँने हुमायी सुनी तगहल

(१) अ० १) इस विषय 'रत्नराज' प्रकाश करा है। अहीने १६३६ विप सु०० सुवापन नगर ब०नेकी वृक्ष भोग बतपना करते हैं।

(२) १२९१ ई०में वे गिरीके बादशाह हुए।

परास्त कर इस प्रदेशको दिल्लीके राज्यमें मिला लिया । जब हिन्दुस्तानमें मुगल वादशाहत्की नींव पडी तो हिमायूनने इस प्रदेशमें एक सर्दार तैनात कर दिया । अन्वर्की सन्ततमें वदाऊं एक स्वतल महकमा माना गया और कामिभ अली चाँ इसके जागीरदार बनाये गये । १५७१ ई०में बडा भीषण अग्निकाण्ड हुआ, 'सबका सब जल कर खाक हो गया । शाहजहाने विचार अदालत वदाऊंसे उठाना कर बरेलीमें पहुचाया दी । रोहिल्लोंके अभ्युदय पर वदाऊं और भी श्रीहीन हो गया था । १७१६ ई०में फर्खावाद्के नवाब महम्मद चाँ बङ्गमने वदाऊं नगर तक जिलेका दक्षिणार्ध अपने अधिकारमें कर लिया था । बाकीके भाग पर रोहिल्ल मरदार अली महम्मदने अपना दगल जमाया । रोहिल्लाजोंने फर्खावाद्चादमें नवाबको हराया और सब महाल भी अपने काबूमें अकिये । १७७४ ई०में मिरामपुर कटरामें हाफेज रहमत जब हार गया तब यहाके शासनकर्त्ता दाऊदखाने अयोध्याके वजीर शुजाउद्दौलासे सधि कर ली । किन्तु वजीरने थोडे ही दिन बाद उनके ऊपर हमला कर उनको सुरी तहद जिम्स्त दी और उनका राज्य छीन लिया ।

१८०१ई०में यह स्थान ब्रिटिश राज्यमें आया । इस समयसे गदर तक यहा और कोई गनीन घटना न घटी । मोगल्के गदरका समाचार सुन यहाके सभी सिपाही बागी हो गये । अबदुल रहीम चाँ उस समय इस प्रदेशमें राज्य करते थे । किन्तु हिंदू और मुसलमानोंमें इस गोलमालके समय आपसमें वैभनस्य बडा । ठाकुर राजाओं और मुसलमानोंके बीच दो उडे भय कर युद्ध हुये । इस युद्धमें हिंदू हारे । मालागढके वालि दाद दुर्गके पतनके बाद विद्रोही सर्दार वदाऊं में लौटे । किन्तु थोडे ही दिनोंके बाद उन्होंने फतेगढकी तरफ प्रस्थान किया । गुनौरके पास मुसलमानोंसे अहोर परास्त हुए । १८५८ ई०में मिवाज महम्मद सर जहोप प्राण्टके हाथ हार स्वीकार कर वदाऊं शहरमें छिपे थे । उसके दलबलको जय ब्रिटिश सैन्यने अच्छी तरह हरा दिया, तब मुसलमान जरा सी भी देर रणक्षेत्रमें न उठर सके । इसके बाद यह प्रदेश अंग्रेजोंके अधिकारमें आया ।

वदाऊं, साहसवन और त्रिली ये यहाके प्रधान

व्यवसायके केन्द्र स्थान हैं । नील, चीनी, और पीतल के कामनोंकी यहा पर ज्यादा चिनी होती है । ककोरा नामके स्थानमें हर साल कार्तिक मकरान्तिमें बडा भा १ मेला लगता है । इस मेलेमें लाखों मनुष्यनी भीड होती है । चायपुर, सुखेला, लक्ष्मणपुर, वाडचियामें एक और मेला लगता है । यहा अयोध्या सहैलखण्डका एक स्टेशन है ।

२ वदाऊं जिलेकी एक तहसील । यह अक्षा० २७ ५०' से २८ १२' ३० तथा देशा० ७८ ४८' से ७८ १६' पू०के मध्य गङ्गाके उत्तरी किनारे पर बसा हुआ है । भूपरिमाण ३८५ वर्गमील और जनसंख्या ढाई लाखके करीब है । इसमें २ शहर और ३७७ ग्राम लगते हैं ।

३ जिलेका प्रधान नगर और त्रिचार-सदर । यह अक्षा० २८ २०' ३० और देशा० ७६ ७' पू०के मध्य विस्तृत है । जनसंख्या प्राय ३६०३१ है । प्राचीन वदाऊं नगरके पास ही नवीन वदाऊं बसा हुआ है । पुराने वदाऊं में दुर्ग और सुरम्य मकानोंके गड्ढर शीघ्र पडते हैं । मुसलमानाधिकारमें प्रायः चार सौ वर्ष तक वदाऊं शहरमें फातिहरकी राजधानी थी । उस समय इसकी शोभा और सम्पत्ति पूब बडा चडी थी । बलवन जब वदाऊं शहर को देखने आये थे तब यहा मालिक फौज शिरवाणी शासनकर्त्ता थे । ये मादक पस्तुओंको खा कर ऐसे उन्मत्त हो जाते थे, कि एक दिन इन्होंने अपने भृत्यको मार डाला था । भृत्यकी विधवा पत्नीने यह दास्तान सभ्राट बलवनको सुनाई । सभ्राट बलवन इस कचण बहानीको सुन बहुत विगडे और उन्होंने उसे शहरके सदर दरवाजे पर लटकना कर मरवा डाला ।

इस नगरमें वास करनेके कारण मौला अबदुल कादेजा वदाऊं नाम पडा । १००४ ई०में यहा उनकी मृत्यु हुई । उन्होंने १५७१ ई०में वदाऊं का अग्निकाण्ड अपनी आंजोने देखा था । उसके बाद जहागीरके भाई हुनुद्दौल चिस्तीने यहा पर वास किया था । उन्होंने यहाकी जुम्मा मसजिदका जीर्णोद्धार कराया । अनुल फजलने लिगा है, कि यहा पर अनेक भाषु फकीरों की कब्र थीं । बहुतसी कब्र न मालूम कहा चली गई हैं । केवल समशी इद्गाके पास बदरुद्दीन शाह तिलायतकी जियार

और घोड़ोंकी फर्रों देनी जाती है; किन्तु उन फर्रोंका फेना भी इतिहास नहीं पाया जाता। समझो इतना और तुम्हा मस्जिद ही यहाँकी प्राचीन कौत्सिया है। गम्बुजिन अलमगने उसका विमाण कराया था। येनी प्राचीन मुसलमान-कौत्सि भागमें और वहाँ भी दिगाई नहीं देनी। इनके अगला आनन्दके जमाओंमें भी राज्यपायें तथा विद्या-अन्वयके लिये प्रिटिंग म्प पारने अनेक घर बनवा दिये हैं।

**बदायूँमान**—अकगवा लुर्किस्तानके अन्तर्गत एक पार्व-तीय राज्य। यह अक्षा ३५ ५० से ३८ ३० उ० तथा देशा० ६६ ३० से ७४ ०० पू०के मध्य अवस्थित है। हिन्दूकृष्ण पर्वतमाला इसके पाम ही अन्वयमाना है। कोक्या जातिको उपत्यका निवास भी इस राज्यके अन्तर्गत है। यह विस्तोर्ण राज्य १६ विर्गोंमें विभक्त है निम्नमेंसे फौजाबाद ही सर्व प्रधान है। यहा म्रय बान् पन्धर, ताब्र, गन्धरु और मोमर आदि घातक पदार्थ पाया जाता है। १०वीं जनाश्रुमें अरबो भाँगोलिकोंने इस स्थानके मणिल्वात्तिका उल्लेख किया है। यहा पापादि नाना प्रकारके जराय और नाना सुमिष्ट फल उत्पन्न होते हैं। बनुकगी जानि यहाकी अधि यासी है। आचार शय्यहारमें ये लोग काफिरितान, मागनम् और रोगानोंके जैसे हैं।

इस राज्यके प्राचीन इतिहासके सम्बन्धमें कोई विश्वस्त प्रमाण नहीं मिलता। जाधुतिमें मालूम होता है, कि आलेकमन्दके य अज बगकसाके पूर्व गामरक थे। फिर कोई कोई कहते हैं, सि मस्रद वापरने अपने लडके मिर्चा दिन्दल पर बदायूँमानका राज्यमाना था। दिन्दलके भारत आने पर मस्रदके जेतल मिर्चा मुन्नामा राजपाधिकारी हुए। उनके मने पर उनके लश्के राजगद्दी पर बैठे। १८४० ई०में बतयानके मीर मुलाद वेगने इस पर अपना दगल जमाया। बतयान और अकगान-युद्धके समय बदायूँमान बतयानका बन्द राज्य हो गया।

**बदान** (हि० म्बी०) प्रविष्ठा पूर्णक पहलेसे विज्ञो मानना स्थिर किया जाता, किन्तु बातके होनेका पता।

**बदायूँदी** (हि० म्बी०) ही फर्माँकी एक दूसरेके पिन्ड प्रविष्ठा या हद, लग्य हाद, होश होउं।

बदान ( हि० पु० ) बाराणसीके ।  
बदानो ( फा० वि० ) १ बाराणसी देगी । २ श्रीविष्णुके आदिवा एक पत्नी, एक प्रकाशका किन्दिना ।

**बदायिया**--युग प्रदेशके एक जिला-तर्गत एक भाण्डप्राम । यह बूडो नद्दाके किनारे अवस्थित है। इसके दूसरे किनारे मरगेन नगर है। नदी पर लोहेका एक सुन्दर पुग बना हुआ है। म्युनिसिपलिटिकीके अर्थात् करनेके कारण यह स्थान भी नगरमें गिना जाता है।

**बदिया-उर जमातगाँ**—बदायूँके अन्तर्गत धीरभूमका मुसलमान ग्रामाकर्त्ता। इसके पिताका नाम आगल उन्ना था। पिताकी मृत्युके बाद ये सन् ११०५ म्पामें गज मि हासन पर बैठे। उसी समय इन्हें मुर्शिदाबादके नवाब मुर्शिदबुखोर्जासे सनद मिली। भास्वर पण्डितको अधिनायकनाम मरहठोंने बदायूँके पदिम भाग पर आक्रमण करनेके लिये के हुआउ गाके निरुद्ध छावनी डाली थी। बदिया उलजमानने पक्षमान-राज प्रभुतिनी सहायता पा कर मरहठोंकी फटोमामे मेशिनोपुर तक चढ़ा। भीष्म देगी।

**बड़ी** । हि० म्बी० ) १ एक पक्ष, अंधेरा पार । ( फा० म्बी० ) २ अपवार, सुराह ।

**बड़े** ( हि० अर्थ० ) १ लिये, घास्नी । २ दृष्टाणे मगेत दाम ।

**बड़ीनी**—मुल्तान उन् तयारिकके प्रवेता एक विष्णवा मुसलमान प्रयकार । इका प्रथम नाम था शोण शबदुद वादिर बड़ीनी । रणगतमगडके निरुद्ध तोड्प्राममें इनका जन्म हुआ था। पीछे बदायूँमें आ कर पर आनेके कारण इका बड़ीनी नाम पया। इके पिताका नाम मुतुडकनाह था। नगरपासी शोण सुवारकने इन्होंने लिगना पटना मोगा था। मस्रद अक्षयनाहनी इन्हें अपनी समामें बुलाया और अरबो तथा म बहन भाषाके प्रधात्तिका पारन्ती भाषामें अनुवाद करनेके कहा। इन्होंने बदायूँमें रह कर मुस्राम उन् पुग-दान, जमीन्दार रणोरी और रामायणका अनुवाद किया। नीति और धम लिखाके लिये इन्होंने नवान उर-रुन्दिनी रचना की थी। अगला इकाके ये महानगरके दो पयारी अनु याड और १११ दिजरोमें कामीरका म दित इतिहास

प्रणयन कर गये हैं। बुढापा आने पर ये सम्राट् से अनुमति ले कर वदाऊँ गये। वहा १००४ हिजरीमें मुन्तखव उल तवारिख की रचना कर इन्होंने अन्य कीर्त्ति प्राप्त की। कविता रचनाके सबबसे लोग इन्हे कादिरि कहा करते थे। इनका जन्म १४७ और मरण १००४ हिजरीमें हुआ था।

**वटेश्वर**—राजपूतानेके उद्यपुर राज्यान्तर्गत एक गण्ड-ग्राम। यह चित्तोरके दक्षिणपश्चिम पारंतामालाके ऊपर अवस्थित है। इसके चारों ओर दीवार डीड गई है। इसकी रक्षाके लिये पर्वत पर एक दुर्ग भी बनाया हुआ है। वदौलत (फा० कि० वि०) कृपासे, आसरेसे। २ नारणसे, सबबसे।

**वदौसा**—युक्तप्रदेशके बँदा जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५ ३३ से २५ २७ उ० तथा देशा० ८० ५२ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ३३३ वर्ग मील और जनसख्या हजारसे ऊपर है। इसमें १३२ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी नहीं है। वधैन नदी तहसीलके दक्षिण पश्चिम दिशासे बह गई है।

**वदल** (हि० पु०) वाद० देखा।

**वद** (हि० पु०) १ अरबकी एक असभ्य जाति जो प्राय लूटपाट किया करती है। (त्रि०) २ वदनाम।

**वद** (स० त्रि०) वध्यनेस्म इति वन्ध कर्मणि क्तः। १ वन्धनयुक्त, बँधा हुआ। पर्याय—सन्धानित, मूर्ख, उद्धित, सन्धित, सित, निगडित, नद्ध, कोलित, यन्त्रित, सयत। २ अज्ञानमें फँसा हुआ, ससारके बधामें पडा हुआ। ३ वैठा हुआ, जमा हुआ। ४ जुडा हुआ। ५ निर्धारित, निर्दिष्ट, ठहराया हुआ। ६ जिस पर किसी प्रकारका प्रतिबध हो, जिसके लिये कोई रोक हो। ७ जिसकी गति, क्रिया, व्यवहार आदि परिमित और स्थिर स्थित हो।

**वदक** (स० पु०) वन्दी, कैदी।

**वदकोष्ट** (स० पु०) मल अच्छी तरह न निकलनेकी अवस्था या रोग, पेटका साफ न होना।

**वदगुद** (स० ह्री०) वद गुद पायुर्धन। उदररोगविशेष। इसका लक्षण—जिसकी अन्ननाडी अन्न, शाफ, शालुका द्वारा भाच्छादित रहती है, उसका मल धूपित हो कर

मगमार्जनीयित तृणादिकी तरह धीरे धीरे अन्ननाडीके भीतर संचित होता है। गुह्यद्वारमें मल रुक जाता है और यदि बहुत कष्टमे होता भी है, तो थोडा। इससे हृदय और नाभिके मध्यस्थलमें उदर परिवर्द्धित हो जाता है। (भाष०) सुधुतमें लिखा है, नि अन्न वा उपलेपी द्रव्य वा क्षुद्र अग्रमन्त्रण्डना सयोग रहे वा न रहे, यदि अतमें दूषित मल जमा रह कर सौपानश्रेणीकी तरह (अस्थि मालाक्रमसे) नाडीमें अवस्थित रहे और उसमे मलाधार में पुरीप रुक कर बहुत कष्टसे थोडा थोडा निकले तथा हृदय और नाभिके मध्यका ऊपरी भाग बढ आवे और यमनमें विष्टा सी गन्ध हो, तो वदगुदरोग होता है। (सुधुतनि० ७ अ०)

**वदगुदोदर** (स० पु०) पेटका एक रोग। इसमें हृदय और नाभिके बीच पेट कुछ बढ आता है और मल रुक रुक कर थोडा थोडा निकलता है। वदगुद देखा।

**वदजिह्व** (स० त्रि०) जिह्वे जीम हिलानेमें कष्ट मालूम होता है।

**वदपरिकर** (स० वि०) कमर बंधे हुए, तैयार।

**वदपुरीप** (स० त्रि०) निसर्ग मल रुक गया हो।

**वदपिप** (स० ह्री०) वदपाणि, मुट्टी।

**वदफल** (स० पु०) वदानि फलानि यस्य। करञ्ज वृक्ष।

**वदमुष्टि** (स० त्रि०) वदा दृढा दानानिमुत्ता वा मुष्टि र्गम्येति। १ दृढमुष्टि, जिसको मुट्टी बंधी हो। २ कृपण, कनूस।

**वदमूत्र** (स० त्रि०) वद मूल यस्येति। दृढमूल उत्पाटना नहीं मूल, जिसने जड पकड ली हो।

**वदयुक्ति** (स० स्त्री०) यगी वजानेमें उसके छिद्दामे उँगलौ हटा कर उसे धोलनेकी क्रिया।

**वदरसाल** (स० पु०) वदो रसेन आवृत अतएव रसाल रसवान्। उत्तम जातिका एक प्रकारका आम। पर्याय—चक्रतगध, मध्याघ्र, सितजासक, वनेज्य, मग्नयानन्द, मदनच्छाफल। इसके फीमलफलका गुण कटु, अम्ल, पित्त और दाहवर्द्धक, स्वादु, मधुर पुष्टि, वीर्य और बलप्रद माना गया है। (राजनि०)

**वदचर्चंग** (स० त्रि०) मलरोधक।



बद्धविट्क ( म० वि० ) बद्धपुरीय, जिमका मल रक्त  
गया हो ।

बद्धविट्क ( म० वि० ) जिमका गुण और मूल रक्त  
गया हो ।

बद्धवी ( म० वि० ) जिमकी सेना आरम्भ हुई हो ।

बद्धजिम ( म० वि० ) बद्धा जिगा चूड़ा यन्त्रेति ।  
जिमकी जिगा या छोटी रंधी हो । बिना जिगा  
बाधे जो कुण्डधर्म कर्म दिया जाता है वह निष्फल  
होता है ।

"मदोपयोतिता भाग्य सत्त बद्धजिमेन तु ।

विजिगो ध्युगमीनश्च यत्त्रगेति न तत्फलम् ॥"

( प्रायजि० )

( पु० ) जिगु, बद्धा ।

बद्धजिगा ( म० खो० ) बद्धा जिगा यस्या । १ उच्छटा,  
भूम्यामलरुषी । बद्धा जिगा केजाकलापो यस्या । २  
सम्बन्धकेगा, यह रबी जिमके केजा बंधे हैं । ३  
लखुन ।

बद्धमनक ( म० पु० ) रमेभर दर्शनके अनुसार बद्ध रम  
या पाग जो अक्षत, लघुद्रावी, तेजोविजिद, निर्मल और  
गुह बद्धा गया है । रमेभर दर्शनमें देखको स्थिर या  
अमर करने पर मुक्ति कही गई है । यह स्थिरता रम या  
पागेकी निम्नि ठारा प्राप्त होती है ।

बद्धामयपति ( म० पु० ) अयभक्त औरयध ।

बद्धो ( दि० रबी० ) १ प्रोरी, रम्मी, लम्मा । २ मान्दा या  
सिक्कीके आकारका चार लडोंका एक गाहा । उन चार  
लडोंमेंसे दो लडें तो गलेमें होती हैं और दो दोनों कंधों  
परमें जनेऊनी तरह होती हुई छाती और पीठ तक गढ़  
रहती हैं ।

बद्धेदर ( म० पु० ) बद्धगुद रोग । बद्धुर देगो ।

बध ( म० पु० ) हन बध, बधार्थेन । प्राणविद्योगसाधना  
व्यापार, हन्य, हन, मार उच्छात्ता । जिमसे प्राण  
जिद हो, यही बध पदवाच्य है । जो बधसाधना  
अनुष्ठान करने है वह यत्नगामी होने है । इसीसे ज्ञानमें  
बधकी प्रवृत्ति निन्दित बालाया गया है । फेरत बध  
कामे हा लक्षणाको होता है जो नहीं, प्रयोगक, अनु  
सन्ध, अष्टमहद और निरिक्ती के चार भा बधकारीके  
साथ निरपगामी होते हैं ।

ज्ञानमें बध अर्थात् हिंसासाधना ही निरिद बध  
लाया है । फिर दूसरे ज्ञानमें यत्नमें पशुबधका उन्नेम  
देवनेमें आता है । ज्ञानमें लिगा है, कि ज्ञानमें यदि पशु  
बध दिया जाय, तो कोई पाप नहीं होगा । साध्यदर्शनमें  
इस विषयकी सीमांसा की गई है, यह रम प्रसार है—  
धृतिमें हिंसासाधना ही निरिद है अर्थात् कोई भी  
हिंसा न करे, ऐसा कहा गया है । फिर अय धृतिका  
मन है, कि यत्नमें पशुबध करे । इस प्रकार पहले तो दोनों  
धृतिवर्षोंमें विशेष देना जाता है, पर शीघ्र गौर बध यदि  
देना जाय तो वृत्त भी जिगेध मात्तम नहीं पड़ता । क्योंकि  
हिंसा या पशुबध अनिष्टमम्यात्क और यज्ञोप पशुबध  
यज्ञका उपकारक है । यत्नमें जिम प्रकार दान कार्य  
करने होते हैं, पशुबध भी उसी प्रकार उनमेंसे एक है ।  
यथाविहित बधके समाप्त होने पर जिम प्रकार बधके  
लिपे स्वर्ग होता है, उसी प्रकार पशुबधमें लिपे नरक भी  
होता है । अनपय यत्नमें इष्ट और अलिष्ट दोनों ही अवस्था  
भ्यायी हैं । बहुत सुखयोग करनेके बाद यदि  
दुःख भोगना पड़े तो उसकी निम्नी दुःखमें नहीं होगी,  
इसीलिपे ये लोग बधजन्य दुःखकी दुःख नहीं मानते और  
इसमें मत्स्य होता है जो भी नहीं । अनपय दोनों अतिगा  
एक दूसरेके विरुद्ध नहीं हैं किन्तु विधिबद्धमें बंध  
दि साविचारकी जाहू मांगवका यह मत मण्डित हुआ  
है । धर्मज्ञानका अभिप्राय यह है, कि यथातिरिक्त  
बध ही पापका कारण है, वीचबध अर्थात् बधार्थ पशु  
हिंसामें पाप नहीं होगा, यान् बधकी मरुतुल्यताके लिपे  
एक 'अपूर्व' होगा । ये कहते हैं—

"यथायं पतयः मृधा स्वयमेव स्वम्भुता ।

अतस्त्वा पातयिष्यामि नरतास्रमं बधोऽपयः ॥"

( निधिमन्त्र )

यत्नके लिपे स्वय, स्वयम्भूते पशुभारकी मृष्टि का है ।  
अतपय यत्नमें यह पशुबध अवध स्वरुप है अर्थात् बध  
जन्य कोई पाप नहीं होगा ।

नरवर्णमुदी और तिथितककी विचारप्रजादीना  
यदि पिदात्तकमें यथायोग्यता की जाय, तो तिथितकवर्ण  
यत् उच्च समीचीन प्राण नहीं होता । १९११/१९१२  
विद्यय ६६१२२२२ देह ।

वैधातिरिक्त हिंसाभात ही अनिष्टसाधक है, इसमें जरा भी स शय नहीं और न इस । किसीका मतभेद ही देखा जाता है । दश आदमी मिल कर यदि प्राणिबध करने जाय और उनमेंसे केवल एक आदमी वध कर डाले तो सभीको समान पाप होता है, वे सबके सब नरक जाते हैं । हता अधिक पापभागी होगा, सो नहीं ।

'बहूनामेकमर्याणा मर्येषां शस्त्रधारिणा ।

यद्येको घातकस्तत्र सर्वे ते घातका स्मृता ॥”

( मनु )

यदि कही पर एक प्राणिबध करनेसे बहुतों प्राणीको रक्षा होती हो तो वह वध पापमें गणनीय नहीं है ।

( प्रायश्चित्तवि० )

इसके अतिरिक्त जो सुवर्ण चीर, सुरापापी, ब्रह्मघाती, गुणपत्नीगामी और आत्मघाती हैं उनका वध भी पाप जनक नहीं है ।

आततायि शत्रुका वध करनेसे पाप नहीं लगता ।

अग्निदाता, विषदाता, शस्त्रपाणि और धन, क्षेत् तथा दारा इनके अपहरणकारीको आततायी कहते हैं ।

वधक ( स० त्रि० ) वध-कुन । १ वधकर्त्ता, वध करने वाला । २ हिंसा, हिंसा करनेवाला । ( क्ली० ) ३ व्याधि । ४ मृत्यु ।

वधकृत ( स० त्रि० ) वध करोति क्विप् तुक् । वध कर्त्ता, वध करनेवाला ।

वधगराह्यी ( हि० स्त्री० ) रस्मो वटनेका औजार ।

वधन ( स० क्ली० ) वध करने कतन् । अन्न, हथियार ।

वधना ( हि० क्लि० ) १ वध करना, हत्या करना । ( पु० )

२-मट्टी या धातुका टेंटीदार लोहा जिमका व्यवहार अधिकतर मुसलमान करते हैं । ३ चूड़ीवालोंका एक औजार ।

वधभूमि ( स० स्त्री० ) वह स्थान जहा अपराधियोंको प्राणदण्ड दिया जाता है ।

वधस्थली ( स० स्त्री० ) वधस्थ स्थली इत्यत् । श्मशान ।

वधाई ( हि० स्त्री० ) १ वृद्धि, बढ़ती । २ वह आनन्द म गल जो पुत्रजन्म पर किया जाता है । ३ म गलाचार, मंगल अवसरका गाना बजाना । ४ उपहार जो मंगल या शुभ अवसर पर दिया जाय । ५ इष्ट मित्रके शुभ, आनन्द

या सफलताके अवसर पर आनन्द प्रकट करनेवाला वचन या सदेशा, मुबारकबाद । ६ किमी सम्बन्धी, इष्ट मिल आदिके यहा पुत्र होने पर आनन्द प्रकट करनेवाला वचन या सदेशा । ७ आनन्द मंगल, चहल पहल ।

वधाङ्गक ( स० क्ली० ) वध बङ्गमत कप् । पारागार ।

वधाना ( हि० क्लि० ) वध करना, दृष्टसे मरवाना ।

वधप्या ( हि० पु० ) वधाई ।

वधावना ( हि० पु० ) वधा देगो ।

वधावा ( हि० पु० ) १ वधाई । २ उपहार जो स्व-धियो या इष्टमित्रोंके यहासे पुतनन्म, विनाद आदि मंगल अन्मरों पर आता है । ३ मंगलाचार, आनन्द म गलके अवसरका गाना बजाना ।

वधिक ( हि० पु० ) १ वध करनेवाला, मारनेवाला । २ प्राणदण्ड पाये हुएका प्राण निकालनेवाला, जल्लाद । ३ व्याध, बहेलिया ।

वधिया ( हि० पु० ) १ वह वैल या और कोई पशु जो अङ्कोण कुचल या निम्नल कर पड कर दिया गया हो, खस्सी, आप्ता । २ एक प्रकारका मीठा गन्ना । वधियाना ( हि० क्लि० ) वधिया करना, वधिया बनाना । वधिर ( स० त्रि० ) वधनाति कर्णमिति वन्ध ( इषिमिदि मुदीति । उण् १।५० ) इति निरुच । अरणेन्द्रियरहित, बहरा । सस्त्र पर्याय—एड, कल्ल श्रवणापट्ट, उच्चै श्रवा । कुत्र व्यक्ति जन्मसे ही वधिर होते हैं और कुछ अधिक दिन कर्णरोग भुगत कर । इसका लक्षण—

“यदा शब्दग्रह वायु श्रोत आदृत्य तिष्ठति ।

शुद्ध श्लेष्मान्वितो वापि वाधिर्य तेन जायते ॥”

( माधवनि० )

जब वायु स्वयं अथवा कफके साथ मिल शब्दग्रह कर्णश्रोतको आवृत्त करके रोगीनी श्रवणशक्तिको नष्ट कर डालती है, तब वाधिर्य उत्पन्न होता है । कालक और धृष्ट ध्यक्तिको यह रोग होनेसे अमाध्य समझना चाहिये । यदि यह बहुत दिन तक बढ़मूल हो, तो सर्वोंके लिये असाध्य है । वाधिर्य देखो । जो जन्मसे ही वधिर है वह पितृ पनना अधिकारी नहीं हो सकता । 'अनै कर्णोवर्षततो वा यन्धी श्रियो तथा ।' ( मनु ) जो क्लीब, पतित, जमान्ध और जन्मवधिर हैं वे अन्नश हैं अर्थात् अशमागी नहीं हो सकते । २ सुगन्धवृण ।

वर्षिस्ता (स० स्त्री०) वर्षिस्तस्य भावः तद्गुणः। वर्षिस्त, वर्षिस्तापन।  
 वर्षिस्तान्त्य (स० स्त्री०) वर्षिस्तं धीमन्, वर्षिस्ता और अघा। (पु०) ० वर्षिस्तपत्ने पुत्र नाममेत।  
 वर्षिस्तिना (स० पु०) वर्षिस्तस्य भावः (वर्षिस्तादिभ्यः) ध्वन्, वषा ५।।।। ३) वर्षिस्ता, वर्षिस्तापन।  
 वर्ष (सं० स्त्री०) वर्षाति प्रेक्षा या वष उ नलोपः अतः स्वधायां तु यदति स मात्पारः उहते भर्त्सिदिभि रिति या यद-पहर्षदन्तः। उण् ३।८५ इति ऊ धन्वन्ता देन। १ नारी, औरत। २ नरोत्था, नरत्रिपालिता स्त्री। ३ स्तुत्या, पतोह। ४ पूजा। ५ भार्या, पत्नी। ६ गरी, वचूर। ७ जारिचोपधि, अन्तमूल।  
 वर्षक (हि० पु०) ० वृक्षे देते।  
 वर्षजा (स० पु०) वर्षरेव जनः। योषिन्, नारी, स्त्री।  
 वर्षष्टापन (स० स्त्री०) वर्षष्टोता जयनमिव पूजोद्गतं स्वादिशान्मयाकारः। गजाक्ष, भद्रोत्था।  
 वर्ष्टा (स० स्त्री०) अत्यधरका वर्ष अपार्थे दि, पक्षे डीव, यथा वर्ष (वयस्य चरन इति वाक्ये। या ४।।२०) इत्यस्य वासिष्ठोक्त्या पक्षे टाप। १ पुत्रभार्या, पुत्रकी स्त्री, पतोह। २ सुवासिनी, मौमायवती स्त्री। ३ नरं भारं हुं वह।  
 वर्षस्मय (स० पु०) वर्षा उत्सव आरंभः। त्रिविके रजोद्गा १।  
 वर्षस्मयप्रसव (स० पु०) वर्षा उत्सव आरंभः स इय प्रसवः पुण्यादिप्रसवः। रत्नाम्लन।  
 वर्षरा (दि० पु०) अघट, वष इर।  
 वर्षोपन (सं० स्त्री०) वर्षाप उगत। मारणार्थ उपयुक्त, मारणेके त्रिपे नैवार।  
 वर्ष्य (स० स्त्री०) वर्षाहं, मारनेके योग्य। वन्य वर्मन्नि-वर्णम्। २ वारोत्तेजस्य। आधारे फणम्। ३ वर्ष्यस्तथा।  
 वर्ष्यपाल (स० पु०) वर्ष्य वारणार्थं पालयति पालि अन्, उपयुक्तम्। वारापृहवस्तव।  
 वर्ष्यभूमि (स० स्त्री०) इत भाषे वन् वर्षादेन, वर्ष्यस्य भूमिः। इमजान, पतंगी देना रूपान।  
 वर्ष्यंग (स० पु०) अस्तिम्।

वर्ष (सं० स्त्री०) वर्षाज्जेनेति वष्य (वर्षेभाङ्-वदू वच् ५।।१५५) इति वृद्धः। मौस्य, सीमा।  
 वर्षी (सं० स्त्री०) वर्षाज्जेनेति वष्य (वर्षेभाङ्-वदू वच् ५।।१५५) इति वृद्धः। मौस्य, सीमा।  
 वर्षी (सं० स्त्री०) वर्षाज्जेनेति वष्य (वर्षेभाङ्-वदू वच् ५।।१५५) इति वृद्धः। मौस्य, सीमा।  
 वन (हि० पु०) वनं देने।  
 वनभाट (हि० पु०) विप्रात्तु और वनोक्त्य आदिनी जगिता एक प्रकारका पौधा। यह वेगल, मिदिम, बङ्गल, वगमा और उरिण नाममें होता है। यह प्रायः जगली होता है और बोया नहीं जाता। इसकी जड़ प्रायः जगली या देहानी लोग अस्त्रके समय पाने हैं।  
 वनगंडा (हि० पु०) यह वंश जो वनमें पशुभोजी मलके भापसे आप सुगन्धेमें तैवार होता है, अत्ता वंश।  
 वन (हि० स्त्री०) वानो उपन, जगली पैदावार।  
 वनकचड़ी (हि० स्त्री०) वनकचड़ी, पापके पापेठ। यह मिमिगसे ले कर जिनसे तन पाया जाता है। इस पौधेमें एक प्रकारका गोंद और एक प्रकारका रंग भी निकाला जाता है। गोंद दुधाके काममें आता है।  
 वनकटी (हि० स्त्री०) एक प्रकारका वंश। यहाई लोग इसके टोकरे बनाने हैं। ० जगल वाट कर उमे आयाद करनेका स्वत्व या अधिपत जो जगलदार या मालिककी ओरसे किसानों जादिनी मिलता है।  
 वनकर (हि० पु०) १ एक प्रकारका अन्न स हार, जाडूके चलाए हुए हथियारकी निगलन करनेकी एक युति। २ जगलमें होनेवाले पदार्थों अर्थात् लकड़ी घास आदिकी आमदनी। ३ वृष्य।  
 वनकला (हि० पु०) एक प्रकारका जगली पेठ।  
 वनकस (हि० पु०) एक प्रकारकी घास। इसे बनद्वय, बैभो, मोव और वामर भा कहते हैं। इससे रस्सियां बनाए जाते हैं।  
 वनवेरा (हि० पु०) लोनिवाका हाग, लोनी।  
 वनगंड (हि० पु०) वनप्रदेन, जगलका गोंद भाग।  
 वनगंडी (हि० स्त्री०) वनका वंश भाग। २ छोटाका वन। (पु०) ३ वनमें रहनेवाला, जगलमें रहनेवाला।  
 वनगण (हि० पु०) यह भूमि जिसमें विपरीत कर्मका कर्णम बोई गई हो।  
 वनवेरी -मन्व प्रदेनके होंगवृषाद् विप्रात्तु त मोहाग

पुर तहसीलका एक प्रधान नगर। यहा प्रेट इण्डियन रेलपथका एक स्टेशन है।

वनखोर (हि० पु०) कौर नामका पेड़। कौर देखो।  
वनगणपल्ली—१ मन्द्राजप्रदेशके कर्नाूल जिलान्तगत एक सामन्तराज्य। यह अक्षा० १५ २' ३०" से १५ २८' ५०" उ० तथा देशा० ७८ १' ४४" से ७८ २५' ३०" पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २५५ वर्गमील है। कुन्दर नदीके पश्चिम अवगाहिका प्रदेश ले कर यह राज्य समुद्रतट है। अरेरू नामक नदी इसके मध्यदेश हो कर बहती है। इसमें १ शहर और ६४ ग्राम लगते हैं। वनगणपल्ली नगर ही इसकी राजधानी है। चतुर्थांश जमीन इस राजकी परती रहती है। अग्रशिष्टागमें नील, रुई और उट्ट उत्पन्न होती है। सूती और रेशमी कपड़ेका भी निरवृत्त कारबार है।

१७वीं शताब्दीमें मुगलसम्राट् औरङ्गजेबने अपने यजोरके लडके महम्मद बेग कौरको यह स्थान समपण किया। तीन पीढी तक बेग वंशधरोंने यहां राजा किया। अन्तिम राजा अपुवक थे, इस कारण निजामने १७६४ ई०में यह सम्पत्ति वर्त्तमान अधिकारियोंके पूर्वपुरपनी दान कर दी थी। १८०० ई०में निजामने इसका शासनभार ख गेजोंके हाथ सौंपा। सरदारोंको शासनविशुद्धला देव कर १८२५ १८४८ ई० तक कडापाके राजस स प्रा हर् (Collector) ने इसका परिचालन भार ग्रहण किया। पीछे मन्द्राजके गवर्नरने फिरसे यह सरदारोंके हाथ सौंपा। तभीसे दीवानी और फौजदारी शासना, वली सरदारके द्वारा परिचालित होती आ रही है। १८७६ ई०में भारतके भूतपूर्व सम्राट् ७म एडवर्ड जब भारतपर्य पधारे थे, उस समय उन्होंने यहाके सरदारको नवाबको उपाधि दी थी। राजाके बड़े लडके ही राजाके उत्तराधिकारी होते हैं। पुत्रके अभावमें सरदार किसी आत्मीय की सिहासन पर बिठा सकते हैं। राजस्वना अधिकांश नवाबके आत्मीय १८ जागीरदारोंके भरण पोषणमें खर्च होता है। बचो खुची आयसे वे अपना काम चलाते हैं।

० उक्त सामन्तराज्यका प्रधान नगर और सदर। यह अक्षा० १५ १५' उ० तथा देशा० ७८ २०' पू०के मध्य अवस्थित है। यहा नवाबका प्रासाद विद्यमान है।

नगरसे घोड़ी दूर पर हीरेकी एक खान है। १८वीं शताब्दीमें उससे प्रचुर हीरा निकाला गया था। १८०० १८५० ई० तक यहा अति मूल्यवान् पत्थर पाये गये थे, किन्तु उमके बादसे बहुत कम मिलने लगे। अभी जितना पत्थर निकाला जाता है उसने केवल मजदूरोंका खर्च भर चलता है।

वनगाँव—१ वङ्गालके यशोर जिलेका उपविभाग। यह अक्षा० २३ २६' उ० तथा देशा० ८८ ४०' से ६६' २' पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ६४६ वर्गमील और जनसंख्या ३ लाखसे ऊपर है। इसमें १ शहर और ७६४ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त उपविभागका एक नगर। यह अक्षा० २३ ३' उ० तथा देशा० ८८ ५०' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्राय ३६६० है। यहा वेङ्गल सेण्ट्रल रेल कम्पनीका कारखाना और द्राफिक आफिस विद्यमान है।

वनगाय ( हि० पु० ) १ एक प्रकारका बड़ा हिरन। इसे रोम भी कहते हैं। २ एक प्रकारका तेंदू पृष्ठ।

वनचर ( हि० पु० ) १ जगलमें रहनेवाला पशु, वन्य पशु। २ वनमें रहनेवाला मनुष्य, जगली आदमी। ३ जलमें रहनेवाला जोव।

वनचरी ( हि० स्त्री० ) १ एक प्रकारकी जगली घास जिसकी पत्तियां ग्वारकी पत्तियोंकी तरह होती हैं। (पु०) २ जगली पशु।

वनचारी ( हि० पु० ) १ वनमें घूमनेवाला। २ वनमें रहनेवाला आदमी। ३ जङ्गली जानवर। ४ मछली, मगर, घडियाल, कछुवा आदि जलमें रहनेवाला जंतु

वनचौर ( हि० स्त्री० ) १ नेपालके पहाड़ोंमें रहनेवाली एक प्रकारकी जगली गाय। इसकी पूँछकी चोंच बनाई जाती है, सुरा गाय।

वनज ( हि० पु० ) १ कमल। २ शङ्ख, कमल, मछली आदि जलमें होनेवाला पदार्थ। ३ चाण्डाल, व्यस-साय।

वानर ( हि० स्त्री० ) ३ भर देवो।

वनजात ( हि० पु० ) कमल।

बनमार ( हि० पु० ) १ वह व्यक्ति जो वनों पर अन्न लाकर  
कर के त्रिके त्रिके एक भेदसे दूसरे वनको जाती है, टीला  
लाइयेवाला मनुष्य । २ विशेष नियम बनमार जन्ममें  
होता । ३ व्यापारो, बनिया ।

बनजोग्यता ( स० स्त्री० ) भाषणी लता ।

बनडा ( हि० पु० ) बिल्ववृक्ष नामका एक भेद । यह राम  
भूमंडा नाम पर गाया जाता है ।

बादासैत ( हि० पु० ) एक नामका राम जो रूपक ताल  
पर बजाता है ।

बनहाइयासी ( हि० पु० ) वह नामका राम जो एक ताले  
पर बजाया जाता है ।

बान ( हि० स्त्री० ) १ बाना, बनारस । २ अनुकूलता,  
सामयिक, मेला । ३ वह वेद जो मन्मथ या किन्हीं  
देवताओं पर मन्मथ में मित्रोंके बाने होते हैं । इसके  
दोनों ओर हाजिया होता है । जिस घेलक एक ही ओर  
हाजिया होता है उसे चपगम कहते हैं ।

बनतुरई ( हि० स्त्री० ) बदान ।

बनतुरसी ( हि० स्त्री० ) बदाई नामका पीथा । इसके  
पत्तों और मजरी तुलसीकी मों हाली है ।

बनदाम ( हि० स्त्री० ) बामाला ।

बनदेवो ( हि० स्त्री० ) किन्हीं बानी अधिष्ठात्री देवो ।

बनघातु ( स० स्त्री० ) भेक या और कोई रंगीन मिट्टी ।

बनना ( हि० स्त्री० ) १ रखा जाना, तैयार होना । २ किन्हीं  
एक पदार्थका रूप परिवर्तित करके दूसरा पदार्थ  
हो जाना । ३ किन्हीं दूसरे प्रकारका भाव या  
संबंध स्वीकारना हो जाना । ४ किन्हीं पदार्थका पने  
रूपमें जाना जिसमें वह व्यवहारमें आ सके । ५ टोक  
दना या रूपमें जाना । ६ सभ्य होना, हो सकना ।

७ दुखला होना, भरमग्न होना । ८ भाषिकार होना,  
निबलना । ९ भात होना, चमूट होना । १० मर्यादा  
या उम्र के नाममें पहुँचना, धनी मानी हो जाना । ११ कोई  
विशेष पद, मर्यादा या अधिकार प्राप्त करना । १२  
संगम होना, पूरा होना । १३ पूरा सिंगार करना,  
गजना । १४ मर्यादकी रंगी मुद्रा धारण करना जो  
पान्थविक न हो । १५ उदात्तात्मक होना मुर्ग उदरना ।

१६ सूर्य धारण करना । १७ सुयोग मिलना, सुख्यसार

मिलना । १८ मिलभाव होना, भाषणमें मिलना ।

बननीधि ( हि० पु० ) समुद्र ।

बनपट ( हि० पु० ) वृक्षोंकी छात्र भाँदिते बनाया हुआ  
कपडा ।

बनपति ( हि० पु० ) मित्र, शेर ।

बनपथ ( हि० पु० ) १ समुद्र । २ वह रास्ता जिसमें  
जग बहुत पड़ता हो । ३ वह रास्ता जिसमें जग  
बहुत पड़ता हो ।

बनपाट ( हि० पु० ) जगली मग्न, जगली पट्टा ।

बनपाल ( हि० पु० ) बग या बागका रखर, मारी ।

बापाज—बर्द्धमान जिलेके बर्द्धमान उपविभागके भन्ना  
गंत एक गाँव नाम । यहाँ बहिया पीपलका बरना,  
घटा, घुरो, कीचो आदि बनती हैं ।

बनप्रिय ( हि० पु० ) कौबिन्, फोपक ।

बाकल ( हि० पु० ) जगली मैया ।

बनफूँद ( फा० वि० ) बनफूँदके रंगका ।

बानूना ( फा० पु० ) नेपाल, फार्मीर और हिमाचल  
पर्वतमें होनेवाली एक प्रकारकी वनस्पति जो ५००० फुट  
तककी ऊँचाई पर होती है । इसका पीथा बहुत छोटा  
होता है । इसमें पत्तों और छोटी शाखाएँ निकलती  
हैं जिनके सिरे पर रंगीनी या लीले रंगके फुलगात्र  
फल होते हैं । इसके पत्ते अनामके पत्तोंमें बहुत कुछ  
मिलते जुते हैं । इसके जल, फुल और पत्तियाँ तीनों  
ही इसके काममें आते हैं । साधारणतः फुल और  
पत्तोंका व्यवहार पुषाम और ऊर भाँदिते में होता है ।  
जड़ द्रव्यावर दवाओंके साथ मिटा पर दी जाता है ।  
फुल और जड़का व्यवहार बमना बननेके लिये भी होता है  
और पत्तों फुल वेगाथ लानेवाले माने जाते हैं ।

बनहरा ( हि० पु० ) बानौर और भूगम भाँदिते उँद  
देशोंमें मिलनेवाला एक प्रकारका पत्त । यह भूट रंगका  
और लगभग एक फुट लंबा होता है । यह घास और  
पत्तियोंमें बनने का नीली भाँदितेमें पीपलका बनाया  
है । अतिमूल्य जल तक इसके अँद देना मग्य है ।  
माल एक काममें तीव्र कार अँद पाता है ।

बाबाम ( हि० पु० ) १ बनेमें बनेका बिदा या मारका ।

२ भाँदिते बननेका दीनविहाईका दूध ।

वनरामी ( हि० पु० ) १ वनमें रहनेवाला, वह जो वनमें वसे। २ ज गली।

वनवाहन ( हि० पु० ) जलयान, नाव।

वनविनाय ( हि० पु० ) विल्लीकी जातिका एक ज गली जतु। यह उत्तर भारत, बंगाल और उड़ीसामें मिलता है। यह विल्लीमें कुछ बड़ा होता है और इसके हाथ पैर छोटे तथा दृढ़ होते हैं। इसका रंग मटमैला भूरा होता है और इसके शरीर पर काले लवे दाग तथा पूँछ पर काले छल्ले होते हैं। यह प्रायः दलदलोंमें रहता है और वहीं मछली पकड़ कर खाता है। इसका रूप बहुत डरावना होता है। कभी कभी यह कुत्तों या बछड़ों पर भी आक्रमण कर बैठता है।

वनमानुस ( हि० पु० ) १ व वनोंसे कुछ ऊँचा और मनुष्यसे मिलता जुलता कोई ज गनी जानतु। विशेष विषय मावय शब्द देवा। २ विलकुल ज गली आदमी।

वनमाला ( हि० स्त्री० ) तुलसी, कुंद, मदार, परजाता और कमल इन पाच चीजोंको बनी हुई माला। ऐसी मालाका वर्णन हमारे यहाके प्राचीन साहित्यमें निष्णु, कृष्ण, राम आदि देवताओंके सम्बन्धमें बहुत आता है। कहा जाता है, कि यह माला गलेसे पैरों तक लची होनी चाहिये।

वनमाली ( हि० पु० ) १ वनमाला धारण करनेवाला। २ कृष्ण। ३ विष्णु, नारायण। ४ मेघ, बादल।

वनमुर्गा ( हि० पु० ) जगली मुरगा।

वनमुर्गिया ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारका पक्षी जो हिमालयको तराइमें मिलता है। इसका गला और वक्षस्थल श्वेत, संगत शरीर आसमानी रंगका और चोंच जगली रंगकी होती है। यह पक्षी भूमि पर भी चलता है और पानीमें भी तैर सकता है। इसका मांस खाया जाता है।

वनरत्ना ( हि० पु० ) १ वनका रक्षक, जगलकी रक्षवाली करनेवाला। २ बहेलियों तथा जगलमें रहनेवालोंकी एक जाति। इस जातिके लोग प्रायः राजा महाराजाओंके शिकारके सम्बन्धकी सूचनाएँ देते हैं और शिकारके समय जगली जानवरोंकी घेर कर सामने लाते तथा उनका शिकार करते हैं।

वनरा ( हि० पु० ) १ दुल्हा, वर। २ विवाह समयका एक प्रकारका मंगल गीत।

वनराज ( हि० पु० ) १ वनका राजा, सिंह। २ बहुत बड़ा पेड़।

वनराय ( हि० पु० ) वनराज शब्दों।

वनरी ( हि० स्त्री० ) नवयधु, नट व्याहो हुई वधु।

वनरीठा ( हि० पु० ) एक प्रकारका जगली रीठा। इसकी फलियोंने लोग सिरके बाल साफ करते हैं। इसका पेड़ काटिदार होता है और सारे भारतमें पाया जाता है। इसके पत्ते पट्टे होते हैं। इसलिये कहीं कहीं लोग इसकी तरकारी बना कर भी खाते हैं।

वनरीहा ( हि० पु० ) एक प्रकारकी घास। इसकी छालसे सुतली या सूत बनाया जा सकता है। यह घास पशिया पहाड़ी पर बहुतायतसे होती है। इसे रीसा या नकटरा भी कहते हैं।

वनरह ( हि० पु० ) १ वह पीधा जो ज गलमें आपसे आप होता है, ज गली पेड़। २ पक्ष, कमल।

वनरहिया ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी कपास।

वनवर ( हि० पु० ) विनोदा देवो।

वनवा ( हि० पु० ) १ पनडुन्वी नामक जलपक्षी। २ एक प्रकारका वज्रनाग।

वनवाना ( हि० क्रि० ) दूसरेको वनानेमें प्रवृत्त करना, वनानेका काम दूसरेसे कराना।

वनवारी ( हि० पु० ) श्रीकृष्णका एक नाम।

वनरासी ( हि० पु० ) वनका निवासी, ज गलमें रहने वाला।

वनरैया ( हि० पु० ) वनानेवाला।

वनसपती ( हि० स्त्री० ) वनस्पति देखो।

वनसार ( हि० पु० ) जहाज पर चढने और उससे उतरनेका स्थान।

वनसी ( हि० स्त्री० ) व शी देवो।

वनस्थली ( हि० स्त्री० ) जगलका कोई भाग, वनखड।

वनस्पति ( हि० पु० ) वनस्पति देखो।

वनस्पतिविधा ( हि० स्त्री० ) वनस्पति शास्त्र देखो।

वनहटो ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी छोटी नाव जो डाइसे खेई जाती है।

वनहरदी ( हि० स्त्री० ) दारुहल्दी।

वना ( हि० पु० ) १ वर, दुल्हा। २ एक छन्दका नाम। इसमें १०, ८ और १४के विधामसे ३२ मत्तार्य



आरा और विहियाके मध्य इसके ऊपर रेलपथका एक पुल है। इसका सख्त नाम पर्णाशा है। स्थानीय अस्था देवनेसे मालूम होता है, कि एक समय शोण नदीका कुल जल इसी वनास नदीके खात हो कर बहता था। महाभारत सभापर्व ६वें अध्यायमें हम लोग देखते हैं, कि शोण महानद शोण और पर्णाशा महानदी नामसे प्रसिद्ध था।

वनासपती ( हि० स्त्री ) १ जडी, बूटी, पत्र, पुष्प इत्यादि, फल फूल पत्ता आदि।

वनासा—१ युक्तप्रदेशके गढ़वाल राज्यान्तर्गत एक गण्ड ग्राम। यह अक्षा० ३० ४६' उ० और देशा० ७८ २७' ५० यमुना और वनासाके स गम स्थल पर यमुनाके बाप किनारे अवस्थित है। एक गण्डरीलके ऊपर अवस्थित रहनेके कारण इसका स्थानाविक सौन्दर्य देखने लायक है। यहाँ बहुतसे उष्ण प्रस्नवन हैं। १८१६ ई०में पर्वतका कुछ भाग ध स जानेके कारण नगरका अर्द्धांश नष्ट हो गया है।

२ आसाम प्रदेशके अन्तर्गत एक नदी।

वनिक ( हि० पु० ) वनिक देखो।

वनिक ( हि० पु० ) १ व्यापार, वस्तुओंका प्रय विक्रय। २ धनी यात्री, मालदार मुसाफिर। ३ व्यापारकी वस्तु, सौदा।

वनिकारा ( हि० पु० ) वनिकार देखो।

वनिकारिन् ( हि० स्त्री० ) वनिकारा जातिकी स्त्री।

वनिता ( हि० स्त्री० ) १ औरत, स्त्री। २ भार्या, पत्नी।

वनिया ( हि० पु० ) १ व्यापार करनेवाला व्यक्ति, वैश्य। २ आटा, दाल, चावल आदि बेचनेवाला, मोदी।

वनियाइन ( अ० स्त्री० ) जुरांधी घुनावटकी कुरती या ध डी जो शरीरसे चिपकी रहती है, ग जी।

वनियाचन्द्र—बङ्गालके श्रीहट्ट जिलेके हवीगञ्ज उप विभाग का एक ग्राम। यह अक्षा० २४ ३१' उ० और देशा० ६१ ४१' पू०के मध्य अवस्थित है। जनम प्या तीस हजारके करीब है। अवद्रेजा नामक किसी स्वधर्म-त्यागी हिन्दूराजाने १८ वीं शताब्दीके प्रथमभागमें इस नगरको बसाया। पहले इन लोगोंकी लौरमें राजधानी

थी। उक्त व्यक्तिने मुगलकी अधीनता स्वीकार कर इस लाम धर्म ग्रहण किया था। यहा एक मसजिद है।

वनिस्वत ( फा० अव्य० ) अपेक्षा, मुकाबलेमें।

वनिहार ( हि० पु० ) वह आदमी जो कुछ धेतन अथवा उपजका अश देनेके वादे पर जमीन जोतने, बोने, फसल आदि काटने और खेतकी रखवाली करनेके लिये रखा जाय।

वनिहाल—काश्मीर राज्याके अन्तर्गत एक हिमालय गिरि सङ्घट। यह अक्षा० ३३ २१' उ० और देशा० ७५' २०' पू० समुद्रपृष्ठसे प्रायः ७ हजार फुट ऊँचा है।

वनी ( हि० स्त्री० ) १ वनस्थली, वनका एक टुकड़ा। २ वाटिका, बाग। ३ एक प्रकारकी कपास जो दक्षिण देशमें उत्पन्न होती है। ( पु० ) ३ वनिया।

वनीनी ( हि० स्त्री० ) वैश्य जातिकी स्त्री, वनियेकी स्त्री।

वनेठी ( हि० स्त्री० ) वह ल वी लाठी जिसके दोनों सिरां पर गोल लट्ट टगे रहते हैं। इसका व्यवहार पटेवाजीके अभ्यास और खेलों आदिमें होता है।

वनेला ( हि० पु० ) एक प्रकारका रेशमका कीडा।

वनेलीराज—नेपाल प्रान्तर्गत्तों भागलपुर कमिश्नरीके पूर्णिया जिलेके अन्तर्गत चम्पानगरके एक प्रसिद्ध और प्राचीन राजवश। इस वशके राजा मैथिल गणहण हैं। १३वीं शताब्दीके अन्तमें गदाधर नामक एक धार्मिक विद्वान् मैथिल ग्राहण दरभङ्गा जिलेके बंगनी नजदा ग्राममें रहते थे। उनकी विद्वता चारों ओर फैती हुई थी। उनके मुकाबलेके कोई भी पण्डित उस समय नजर नहीं आते थे। उस समय बङ्गाल विहारके शासक थे बादशाह दलवनके छोटे लडके सुल्तान नासिरहोद। सुल्तान पण्डितजीकी अच्छी खातिर करते थे और उन्हीके यत्नसे पण्डितजीका आगे चल कर भाग्य चमका। कहते हैं, कि १३०४ ई०में जब गया सुहोद तुगलक तिरहुत पघारे, तब नासिरहोदनी ही पण्डितजीका उनके साथ परिव्रय करा दिया था। गयासुहोदने प्रसन्न हो पण्डितजीको प्रसुर सम्पत्ति दी जिससे उनके सितारे चमक उठे। पण्डित गदाधर भासे नवीं पीढीमें देवनन्दन भाने जन्मग्रहण किया। देवनन्दनके दो सुपुत्र थे। परमा नन्द भा और माणिक भा। परमानन्दका



होमों हुआ था। उस समय उर्दू भाषा शाखाके थे अन्तर्गत  
कवि थे, जहाँ यहाँ गानों, महाकाव्यों भी उर्दूमें अच्छा  
नाम बनाया था। कुछ समय बाद अन्तर्भावक सर-  
काराने उर्दू दफ्तर्द्वारा एक कम्पनी परलोकना नौबतों पर  
प्रदान किया।

इस समयमें परमानन्द भी परमानन्द चौधरी के  
साथ आये। आस पासके स्थानोंमें उनकी गृहोत्थिता  
लगी। जिसमें बाराणसीमें अमीरशाहद्वारा स्थापित उन पर  
बड़ी विवाहों भी उर्दूमें ज.ओ.में एकत्र लानेके लिये  
संगठन योजना भेजे। इस समय चौधरी जी बुक-बन्धन कर  
रहे थे। विद्यमान गुरुमें इसकी गणना लगे ही उर्दूमें  
यज्ञातुष्टान बंद कर दिया और वैदिक सम्प्रदाय के गतोंका  
घार आना हिम्सा बंधन कर कुछ रूपसे हाथ कर लिये  
और यज्ञात्में संप्रतिशास निरादरताओं ज.ओ.में सम्मिलित हुए।  
जन्मभूमि के नाम छोड़नेके पहले वे एक जन्मभूमि  
विचारों पर विचारों दृष्टि रोष भये थे। यह दृष्टि भाव  
भी यहाँ देखनेमें आता है। कहते हैं कि परमानन्द  
चौधरी पर शत्रुमें प्राण रक्षायें लिये रथ उधर भाग रहे  
थे, उसी समय उनके दो पुत्र उरुवध हुए, एकलाल मिह  
चौधरी और दुर्गा मिह चौधरी। इसी समय उनके  
छात्र जाई मारिज चौधरी भी हीमाज्ज मिह नामक एक  
पुत्र का छात्र परलोक निधारे। परमानन्द बहुत दिनों  
तक एक स्थानमें दृग्ग्रेम भागते रहे थे। जन्ममें भी  
उनका योग्य नहीं होता था। आशिर उर्दू। पूर्णिया  
चिल्लेके अमीर प्राम नामा एक धनी बालक्य और  
मालिकके एक भास्वरुपण किया। वे पूर्णियाके राज  
गना थे। राजपरवला ही उर्दूमें परमानन्दजीके बहुत  
सी जगती प्रसार था। इस समय दुर्गासिंह भी  
अज्ञानों। कर्म कदा शुरू थे, थे ही गेती वारी किया करने  
थे। संवत्सवत्सव तक दिन पैसागरे जलोद्धार राजा  
इ.ओ.संगठन राय कुछ विचारिपरने साथ अमीर हो कर  
थे। ज.ओ. में। परमानन्द चौधरीने कुछ ही समय  
पर एक बड़े रोज़ मजदूरी परने भी, भी उर्दूमें एक  
मजदूरी के राजाकी भेद थे। राजा बड़े समय पुत्र और  
उर्दू में मजदूरी। मारिज के नाम पर अर्धे अर्धे  
संवाहक पर पर निरुत्तर किया। और कर्म करने के

कि वे तदर्थोद्धार नहीं, अर्धेके प्रतिभार थे। कुछ दिनों  
मजदूरीके हाथ था। इसी समय पूर्णियाके पतिवत्त  
गवार आंगरेजमें अर्धेके आये। वे दिन भर ज.ओ.में  
धूमते रहे, पर एक ही बार मारिज उर्दू माहम न  
हुआ। परमानन्द चौधरीने एक बात मार कर उर्दूमें सादरी  
हासिल किया। राजा इसकी घोषणा पर इसी समय  
हुए, कि उर्दूमें लखारों ( 1000 पैसाका प्रवत्सवत्त ) का  
उपाधि प्रदान की। इस समयमें परमानन्द राजारों  
परमानन्द चौधरी नामसे प्रसिद्ध हुए।

इस वक्रे पुत्र दुर्गासिंहमें इति तथा शक्तिय राज  
साय शास प्रचुर सम्पत्ति उजागैर कर रहे। भाष्य लक्ष्मी  
उनके अनुगत हुई। समय वे पूर्णियाके मजदूरी  
कानूनगो हुए। नेवार गुरुमें दुर्गासिंहकी घोषणा, राज  
मन्त्रि और सेवारी संसुष्ट हो उनके दृष्ट कर्मके पुर्णकार  
स्वरूप वृद्धि-मजदूरीमें उर्दू राजा बहादुर को उपाधिमें  
भूजित किया था। यथासमय उनके प्रथम स्त्रीमें सरवा  
गल्मिह और घेदात-मिह तथा द्वितीय स्त्रीमें रज्जुमद  
विहारी जन्मग्रहण किया। आगे चल कर कदाचिद्  
श्रीतपस्के प्रसिद्धावण हुए। बड़े संवत्सवत्त सिद्ध विभा  
कों संवत्सवत्त छोड़े अज्ञान ही करता पाणके पाणमें  
फैले। दुर्गा मिहके संवत्सवत्त होने पर बेदात-मिह  
बहादुर राजनितामय पर अधिकृत हुए। इसका जन्म  
199, 180 में हुआ था। नेवार गुरुमें मन्त्री भी वृद्धि  
संवत्सवत्तों वारी मद्द वदुवां थी। इस समयपरवत्तके  
पुर्णकार स्वरूप थे राजाबहादुरकी उपाधिमें भूजित हुए।  
राज्यमें वृद्ध देसों राजमासात्में प्रथम किया और  
राजा बहादुर अपने पैसाव भादु मद्रान्त्वमिहमें वृद्ध  
गये। बेदात-मिहके निर्णयों को भागवत्त मर दन्तरीराय  
कहाया और रज्जुमद-मिह मरी वारी वार कर गी और  
उनके परिवारों विचारें भागमें दूक दुर्गाव धरुवज  
मिहके नाम पर एक मजदूरी मारिज बनाया जो अज्ञान  
उर्दू मारिजें वक्रे लगी।

राजा बेदात-मिह बहादुरों वदुवत्त मुजद  
मान राजाकोकी विचारों मुजदमन्त्रि बनान कर गी।  
भांगरा इन्के मन्त्रिसेवारी और मजदूरीका दामला भी  
गएने। वे भी विचारें प्रिय मजदूरी विचार और योग्य

शासक थे। वर्तमान बरारोके ठाकुर नशके आदिपुत्र्य मदनठाकुरने बहुत दिनों तक इनके यहा नौकरी की थी। कहते हैं, कि राजा वेदानन्दकी ही उदारता और अनुग्रह ने बाबू मदन ठाकुरने प्रचुर सम्पत्ति इकट्ठी कर ली जिसका उपभोग आज भी उनके वंशधरगण करते आ रहे हैं। बरारी देवो। राजा वेदानन्दसिंह १८५१ ई०में इस धराधामको छोड़ सुरधामको सिधारे।

वेदानन्दकी मृत्युके बाद कुमार लीलानन्द सिंह राज सिंहासनके उत्तराधिकारी हुए। ये भी योग्य पिताके योग्य पुत्र थे। बहान् और कवि भी थे। १८५३ ई०में इन्हें भी वृष्टिया सरकारसे 'राजा-बहादुर' का खिताब मिला था। राजा लीलानन्दका जीवन उदारता, सदा शयता और समवेदना आदि सद्गुण सम्पदका आधार था। चरित और धर्महारके गुणसे वे उच्च नीच सभी श्रेणियोंके अति प्रियपात्र थे। उनके जैसे जनवत्सल सहृदय मनुष्य धनोक्तुलमें बहुत कम दूखे जाते हैं। भागलपुरके सन्याल परगनेके जनसाधारण सम्मान और श्रद्धाके साथ उनकी स्मृतिका पोषण करते हैं। लीलानन्दके प्रथम स्त्रीसे पद्मानन्द सिंह और द्वितीय सीतावतीसे कालानन्दसिंह और इत्यानन्दसिंह नामक तीन सुपुत्र थे। १८८३ ई०की ३री जूनको राजा लीलानन्दसिंह हने अपनी जीवनलीला शेष की।

राजा लीलानन्द सिंहकी मृत्युके बाद राजा परमानन्दसिंह राजसिंहासन पर अधिकार हुए। पिताके जीते जी वे उनकी पदमर्यादाके अधिकारी हुए थे। कुछ समय बाद सारा राजा नी आने और सात आनेमें त्रिभक्त हुआ। सात आनेके अधिकारी हुए राजा परमानन्द सिंह बहादुर और नौ आनेके ये दोनों भाई। राजा पद्मानन्द सिंहके प्रथमा स्त्री पद्मावतीने कुमार चन्द्रानन्द सिंहने जन्मग्रहण किया। १६०४ ई०में राजा पद्मानन्दसिंहने चौथा विवाह रानी पद्मासुन्दरीसे किया। ये आज भी जीती जागती हैं। १६०६ ई०के जनवरीमासमें पद्मासुन्दरीके एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिनका नाम कुमार सूर्या नन्द रखा गया। कुमार चन्द्रानन्द सिंह अकाल ही बरार कालके गालमें पतित हुए। राजा पद्मानन्दका १६१२

ई०में देहान्त हुआ। कुमार सूर्यानन्दको भी इहलोकमें बहुत दिन उठरना न था, वे भी चौदह वर्षकी अवस्थामें अर्थात् १६१६ ई०के सितम्बर मासमें इस धराधामको छोड़ सुरधामको सिधारे गये। इस प्रकार राजा पद्मानन्दसिंहका चिराग सदाके लिये बुझ गया। पीछे रानी चन्द्रावतीने अपना सात आना हिस्सा बेच कर रुमाकीका ऋण परिशोध करना चाहा, पर इत्यानन्द सिंह बहादुर और रानी पद्मासुन्दरीने इसे रोका। कुछ समय तक आपसमें यह विषय ले कर विवाद चलता रहा। आखिर राजा इत्यानन्दसिंह बहो दुरके ही तत्त्वाधानमे सात आनेका हिस्सा रहा। बाद चन्द्रावतीकी मृत्युके प्ने ही इसके प्रथम उत्तराधिकारी होंगे।

राज कालानन्दसिंहका १८८० ई०के सितम्बर मासमें जन्म हुआ था। आप अति धीर, ज्ञान्, सच्चरित और विद्यानुगामी सज्जन पुरुष थे। सङ्गीतविद्या और मृगयामें भी अनुराग था। व्यवहार शिल्पके अनेक विषयोंमें आपका असाधारण अधिकार और व्युत्पत्ति देयी जाती थी। दोनों भाइयोंमें रामलक्ष्मण-सी प्रीति और सद्भाव था। आप छोटे भाईकी मलाह लिये बिना किसी गुरतर कार्यमें हाथ नही डालते थे। १६२३ ई०में मार्चमें आप रामानन्दसिंह और इत्यानन्द सिंह दो सुपुत्र छोड़ परलोक सिधारे।

अनन्तर राजा इत्यानन्द सिंह बहादुरने कुल राजा भार अपने हाथ लिया। आपका जन्म १८७३ ई०की २३री दिसम्बरको हुआ था। पूर्णिया जिला स्कूलमें विद्या रम्भ करके आपने इलाहाबाद मेयर सेण्ट्रल कालेज (Mair central college) से तत्त्वत्रिभुविद्यालयकी प्रवेशिका और वि, ए, परीक्षा पास की है। आप विहारके अभिजात्य-गौरवमे गौरवान्वित उच्च धनी भूयामी के मध्य सर्व प्रथम या एकमात्र प्रौढपट हैं। आप स्वयंसाची मवर्षिका पारदर्शी हैं। क्या क्रीडा क्रीतुक, क्या लक्ष्यसाधन, क्या मृगया, क्या सङ्गीतचर्चा, क्या ग्रन्थरचना, क्या विज्ञान सेवा, क्या शिल्प-नैपुण्य—सब प्रकारके शारीरिक और मानसिक शक्तिका परिचय प्रदान करनेमें आप अग्रणी हैं। सचमुच



था। बालक या वृद्ध, वृद्धा वा युवती किसीका लक्ष्य न कर नादिरशाही चला दी। गर्भवती रमणियोंके उदर फाड़ कर नृशस प्रवृत्तिकी पराकाष्ठा दिखला दी थी। सम्राट्ने इस जघन्य वृत्तिका बदला लेनेके लिये सय इसने युद्ध किया। ज जोरमें परकड़े रहने पर भी वन्दा सम्राट्की आगोंमें धूल डाल भग गया। सेना बल इकट्ठा कर वह सम्राट्का फिर विद्रोही बना। सम्राट् फर कश्शियरने इसको दवानेके लिये काश्मीरके शासन कर्त्ता आबदुस् समद खाँको समन्य भेजा। नितनी बार घोरतर सघर्षके वाद वन्दाने किलेमें आश्रय लिया। समद खानि भी दलबलके साथ आ कर किलेको घेर लिया। रसद आदिके बंद होने पर वन्दा आहाराभावमें आत्मसमर्पण करनेको बाध्य हुआ। वन्दा और अपरापर सिए फेदी दिल्ली भेजे गये। व दा लौह प जरमें आवद्ध हो हाथीकी पीठ पर दिल्ली पहुंचा। सिखोंने अनन्त मस्तनसे यह अनमनना सख को, कि तु मनहो मन इस्लामधर्म ग्रहण करनेकी अपेक्षा मृत्युकी ही उन्होंने श्रेय समझा था। सम्राट्के उन्हें जीयन दान देनेमें प्रतिश्रुत होने पर भी वे लोग दान इस्लामधर्मके ग्रहणमें सन्मत नहीं हुये। फलत सम्राट्की आशासे प्रति दिन सैकड़ों सिख-वीर घातकके हाथसे यमपुर भेजे जाने लगे। आठवें दिन वन्दा मय पुल्लोके मारा जायगा, यह घोषित कर दिया गया। जब वह मौतका दिन पहुंचा, तब घातकने वन्दा और इसके पुत्रको नगरके यहिदुर्गमें ला वन्दा को पुत्रके मस्तनच्छेदनके लिये तलवार दी। व दानि अपने पुत्रका गिरच्छेद करना म जर नहीं किया। इस पर घातकने अपने हाथसे बालकका हृदय विद्रोर्ण कर डाला और बलपूर्वक उस हृत्पिण्ड को वन्दाके मुखमें ठूस दिया। अन्तमें उत्तप्त चीमटोंसे उसके शरीरका मास भुजसा दिया और घोर य त्ना दे कर सिय-युद्धके प्राण ले लिये। १७१५ ई०में इस पाशयिक अत्याचारको अदलभावसे सहा कर वन्दाने प्राणत्याग किया।

वन्दिपत्रम्—मन्द्राजप्रदेशके आर्कट जिलान्तर्गत पर परंत और उन पर प्रवाहित नदी। यह अक्षा० ११ ४३ १५ उ० तथा देशा० ७६ ४८ पू०के मध्य अवस्थित

है। १७५० १७८० ई० तक यह स्थान अ गरज-फरामी युद्धका केन्द्रस्थल बना रहा था।

वन्देल्—बङ्गालके हुगली जिलातगत हुगली प्रहरका एक गण्ड ग्राम। यह अक्षा० २० ५५ उ० तथा देशा० ८८ २४ पू० भागीरथी नदीके किनारे अवस्थित है। यहां रोमन कैथलिक पृष्ठान सम्प्रदायका एक धर्ममन्दिर है। यह मन्दिर १५६६ ई०में बनाया गया है और बङ्गाल भरमें सर्राप्राचीन खृष्टधर्ममन्दिर समझा जाता है। १६२२ ई०में दिहीश्वरके आदेशसे मुगलोंने यह मन्दिर जला दिया और भीतरकी प्रतिमूर्ति तथा चिखोंको नष्ट कर डाला। खृष्टधर्मयाजक जब बन्दीरूपमें आगे लाया गया, तब उसके अनुरोध पर सम्राट्ने धर्ममन्दिरके खर्च वर्चके लिये ७७७ बीघा निष्कर जमीन दान की। उसी आयसे नया मन्दिर बनाया गया और उसमें १४६६ ई०की लिपि भी उत्कीर्ण हुई। पूर्वजनों किसी समय पुर्तगीजोंने इसकी रक्षाके लिये एक दुर्ग बना दिया था। १६वीं शताब्दीमें यहां येसुइट मिशालय, बोडिंग स्कूल, नृष्ठान सतिवियोंके आश्रम आदि निर्मित हुए। अभी पुर्तगीजों और फिरङ्गीजोंकी अवन्तिये साथ साथ यह स्थान भी शोहीन हो गया है। यहांके अधिवासी प्राय बङ्गाली ही हैं, धर्मयाजक बहुत थोड़े हैं। यहां प्रतिवर्ष नवम्बर मासमें कैथलिकोंके नोमेना (Noena) उत्सवमें बहुतसे खृष्ठान जमा होते हैं।

वन्ध (स० पु०) वन्ध हलच्चेति घञ्। १ वन्धन। २ शरीर। जब तक कर्मवन्धनका क्षय नहीं होता, तब तक देहके वाद अर्थात् मृत्युके वाद जन्म और जन्मके वाद मृत्यु अग्रथम्भावी है। इसी कारण शरीरको वन्ध कहते हैं। कर्मवन्धनके शेष हो जानेके वाद फिर शरीर-ग्रहण नहीं करना पड़ता। ३ ग्रन्थि, गाठ, गिरह। ४ कैद। ५ गृहादि वेष्टन अर्थात् घर बनानेमें पहले बाध ठोक कर लेना होता है। १५, १७, १६ वा २१ इन सब व धोंमें गृहादि बनाने होते हैं अर्थात् अयुग्मवन्धमें गृहादि प्रगस्त हैं। युग्मवन्धमें गृहादि भूल कर भी न बनाये। घरकी लम्बाई और चौड़ाई मिला कर जितने हाथ होते हैं उसे वन्ध कहते हैं। (ज्योतिस्तत्त्व)

६ पानी रोकनेका घुस्म, बांध। ७ कोकशाखके रतिके

यदि आपकी चरित्रगुणमें भारतीय धनी पुत्रोंके मध्य आदर्श रथान दिया जाय, तो कोई अन्युक्ति नहीं। आप बड़े मृगयालाभ हैं। आज तक आपने ७७ व्याघ्रोंको मार कर अपनी वीरता और अन्य साहसका परिचय दिया है। उनको सुरक्षित मृतदेह अभी सम्मानगरके गज प्रामादका गौरव और सौन्दर्य प्रदान करती है। अगवा इसके आपके अन्यर्थ सन्धानसे कितने धूम्रार, अन्यराह, मृग और विह गम विहङ्गमा अपने नश्वर देहका त्याग कर परमधामको सिधारी हैं, उसकी शुमार नहीं।

आप केवल मृगयामें ही अपने बाहुबलका परिचय दे कर समय नही विताने, परन्तु आप आत्मीय बन्धु बान्धवोंका पोषण, ब्राह्मणोंका प्रतिपालन, दम्बिनीका भरण और गिरपसाहित्यको उत्साह प्रदान करते हैं। विद्वान और सज्जनका सङ्ग आपको अति प्रीतिकर है। आप अङ्गरेजी, बङ्गला हिन्दी और उर्दू भाषामें अनर्गल कथोपकथन कर सकते हैं। देशके किसी भी सत्कार्य में, म्याउ अनुष्ठानमें और सभासमितियों सदाकापी मिष्ट-भाषी आपको योगदान दिये देते हैं। आप वर्तमान विहार व्यवस्थापर नमाके भी एक विशिष्ट सभ्य हैं। विद्वारमें उच्चशिक्षाकी उन्नति और प्रचारके उद्देश्यसे बनेली राजसे भागलपुरके तेजनारायण जुबली कालेजकी प्रायः ६ लाख रुपयेका दान किया गया है। पटना (बाकीपुर) से प्रकाशित सर्प प्रथम अङ्गरेजी दैनिक पत्रिका 'विहारी' (The Beharee) बनेली राजकी पृष्ठ पोषकतासे स्थापित हुई है। आपने हिन्दू विश्वविद्यालय बनारसको लाप रूपसे, गि स आव घेस मेमोरियल मेडिकल कालेज पटनाको लाप रूपसे और पृष्टिग गवर्मेंटको युद्धके समय डेढ लाख रूपयेका साहाय्य प्रदान किया है। ब्रयले (Brasley) पुस्तकालय पटनामें प्रचुर दान आपके विद्याभारतका परिचय देता है। अलावा इसके आपके रूपा फलसे कितने अस्पतालों और स्कूलोंसे लीग लाभ उठा रहे हैं। जो एक बार भी आपके माध रह चुके हैं। वे सभी आपके चरित्र माधुर्य पर मुग्ध हो आपकी सम्मान और श्रद्धाको दृष्टिसे देवनेमें बाध्य हुए हैं।

बनेली (हि० वि०) बन्धु, ज गली।

बनीटी (हि० वि०) कपासी, कपासके पृष्ठा-मा।

बनीरी (हि० र्नी०) हिमोपल, वर्षाके साथ गिरनेवाला बोल।

बनीवा (हि० वि०) कृत्रिम, बनापटी।

बन्धर—अयोध्या प्रदेशके उनाथ जिलेका एक नगर।

बन्धली—बम्बई प्रदेशके काठियावाड़ राज्याके अन्तर्गत एक नगर। यह नगर २१ २८ ३० उ० और देशा० ७० २२ १५ पू०के मध्य अवस्थित है। बाधली देखो। बन्ध्याल—काश्मीर राज्याके मुजफ्फराबाद विभागके अन्तर्गत हिमालय पर्वतश्रेणीका एक गिरिसङ्घट्ट। यह अक्षा० ३१ २२ उ० और देशा० ७८ ४ पू०के मध्य अवस्थित है। समुद्रपृष्ठसे यह स्था १४८५४ फुट ऊँचा और सब दिन तुपारसे आवृत रहता है।

बन्धर—ब दर देखो।

बन्धर—मन्दाज प्रदेशके ठण्णा जिलान्तर्गत एक तालुक।

यह अक्षा० १५ ४५ से १६ २६ उ० और देशा० ८० ४८ से ८१ ३३ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ७४० वर्गमील और जनम घना दो त्रायसे ऊपर है। इसमें २ शहर और १६१ ग्राम लगेते हैं। बन्धर या मसली पत्तन इसका प्रधान नगर है। मसलीपत्तन देखो।

बन्धरलङ्का (बन्धमूरलङ्का)—मन्दाजके गोदावरी जिलान्तर्गत कुमारीगिरि नगरका एक गण्ड ग्राम। यह अक्षा० १६ २७ उ० और देशा० ८१ ५८ पू०के मध्य अवस्थित है। १८वीं शताब्दीके पहले अंगरेजोंने गोदावरी नदीके किनारे एक कोठा बनी, पर कुछ दिन बाद यह छोड़ दी गई। आज भी यह स्थान समुद्रोपकूलधर्त्यों छोटे बन्धरमें गिना जाता है। गोदावरी नदीकी कौशिकी शाखाके ऊपर अभी यह बसा हुआ है।

बन्दा—गुरु गोविन्दका परपत्नी एक सिर-गुरु। मघ्राट् १म बहादुर शाहके राजत्यकालमें उसने सिरसेना ले लाहौर पर आक्रमण कर दिया। सम्राट् के भ्राता कामरफसने गुरुगोविन्दके पुत्रकी कैद कर मार डाला। इसका बदला लेनेके लिये वे दाने सिपसेना इकट्ठा कर सम्राट्की अनुपरिधतिमें दक्षिणालय पर चढ़ाई कर दी। इन समय इसने मुसलमानोंके प्रति बड़ा अत्याचार किया

था। बालक वा वृद्ध, वृद्धा वा युवती त्रिमीमा लक्ष्मण न कर नादिकाही चला दी। गर्भवती रमणियोंके उदर फाड़ कर नृशम प्रयुक्तिकी पराकाष्ठा दिखला दी थी। सम्राट्ने इस जघन्य वृत्तिकी बदला लेनेके लिये स्वयं इससे युद्ध किया। ज जोरमें पकड़े रहने पर भी वन्दा सम्राट्की आखोंमें धूल डाल भग गया। सेना दल इन्द्रा नर वह सम्राट्का फिर विद्रोही बना। सम्राट् फर पशियरने इसको दवानेके लिये काश्मीरके गामन कर्ता आवदुस् समद पाने ससैन्य भेजा। मितनी वार घोरतर सधर्षके वाद वन्दाने त्रिलेमें आश्रय लिया। समद खाने भी दलबलके साथ आ कर किलेको घेर लिया। रसद आदिके व द होने पर वन्दा आहाराभावमें आत्मसमर्पण करनेको बाध्य हुआ। वन्दा और अपरापर सिख कैदी दिल्ली भेजे गये। व द लीड प जरमें आवद्ध हो हाथीकी पीठ पर दिल्ली पहुँचा। सिखोंने अवनत मस्तकस यह अयमनना सख को, कि तु मनही मन इस्लामधर्म ग्रहण करनेकी अपेक्षा मृत्युकी ही उन्होंने श्रेय समझा था। सम्राट्के उन्हें जीवन दान देनेमें प्रतिधुत होने पर भी वे लोग दान इस्लामधर्मके ग्रहणमें सममत नहीं हुये। फलत सम्राट्की आशासे प्रति दिन सौ फडों सिख-धीर घातकके हाथसे यमपुर भेजे जाने लगे। आठवें दिन वन्दा मय पुर्वीके मारा जायगा, यह घोषित कर दिया गया। जब वह मीतका दिन पहुँचा, तब घातकने वन्दा और इसके पुत्रको नगरके यहिदंगमें ला वन्दा की पुत्रके मस्तकच्छेनके लिये तय्यार दी। व दाने अपने पुत्रका शिरच्छेद करना म जर नहीं किया। इस पर घातकने अपने हाथसे बालकका हृदय विद्रोर्ण कर डाला और बलपूर्वक उस हृत्पिण्ड को वन्दाके मुखमें ठूँस दिया। अन्तमें उत्पन्न चोमटोंसे उसके शरीरका मांस भुङ्गसा दिया और घोर य लणा दे कर सिप-गुरुके प्राण ले लिये। १७१५ ई०में इस पाशविक अत्याचारको अदलभावसे सहा कर वन्दाने प्राणत्याग किया।

वन्दिपल्लव—मद्राजप्रदेशके आर्कट जिलान्तर्गत एक पर्यत और उन पर प्रवाहित नदी। यह अक्षा० ११ ४३' १५" उ० तथा देशा० ७६ ४८' ५०"के मध्य अवस्थित

है। १७०० १७८० ई० तक यह स्थान अ गरेज फरामी युद्धका केन्द्रस्थल बना रहा था।

वन्देल—बङ्गालके हुगली जिलान्तर्गत हुगली शहरका एक गण्ड ग्राम। यह अक्षा० २२ ५५' उ० तथा देशा० ८८ २४' ५०" भागोरधी नन्विके किनारे अवस्थित है। यहा रोमन कैथलिन पुराण सम्प्रदायका एक धर्ममन्दिर है। यह मन्दिर १५६८ ई०में बनाया गया है और बङ्गाल भरमें सर्वप्राचीन ख्रुधर्ममन्दिर समझा जाता है। १६२२ ई०में दिहीश्वरके आदेशसे मुगलोंने यह मन्दिर जला दिया और भीतरकी प्रतिमूर्ति तथा चिन्तोंको नष्ट कर डाला। ख्रुधर्मयाजक जब वन्दीरूपमें आगरे लाया गया, तब उसके अनुरोध पर सम्राट्ने धर्ममन्दिरके लर्च बर्चके लिये ७७७ बीघा निजर जमीन दान की। उसी आरसे नया मन्दिर बनाया गया और उसमें १४६६ ई०की लिपि भी उत्कीर्ण हुई। पूर्वजनों किसी समय पुत्तगीजोंने इसकी रक्षाके लिये एक दुर्ग बना दिया था। १६वीं शताब्दीमें यहा पेसुइट मिशालय, बोडिंग स्कुल, कृषान सतिवोंके आश्रम जादि निर्मित हुए। अमी पुत्तगीजों और फिरदौखोंकी अयनतिसे साथ साथ यह स्थान भी श्रीहीन हो गया है। यहाके अधियासी प्राय बङ्गाली ही है, धर्मयाचक बहुत थोड़े हैं। यहा प्रतिवर्ष नवम्बर मासमें कैथलिनियोंके नोमेना (Novena)-उत्सवमें यहृतसे खुरान जमा होते हैं।

वन्ध (स० पु०) वन्ध हलच्चेति घञ्। १ वन्धन। २ शरीर। जब तक कर्मवन्धनका क्षय नहीं होता, तब तक देहके वाद अर्थात् मृत्युके वाद जन्म और जन्मके वाद मृत्यु अग्रयम्भायी है। इसी कारण शरीरको वन्ध कहते हैं। कर्मवन्धनके शेष हो जानेके वाद फिर शरीर-ग्रहण नहीं करना पडता। ३ ग्रन्थि, गाठ, गिरह। ४ कैद। ५ गृहादि वेष्टन अर्थात् घर बनानेमें पहले वध ठोक कर लेना होता है। १५, १७, १६ या २१ इन सब वधोंमें गृहादि बनाने होते हैं अर्थात् अयुग्मवन्धमें गृहादि प्रजास्त हैं। युग्मवन्धमें गृहादि भूठ कर भी न बनाये। घरकी लम्बाई और चौड़ाई मिला कर पितने हाथ होते हैं उसे वन्ध कहते हैं। (ज्योतिस्तत्र)

६ पानी रोक्नेका घुम्स, बांध। ७ कोकजात्रके रतिके

अनुसार मुख्य सोलह आसनोंमेंसे कोई आसन । मुख्य सोलह आसन ये हैं—१ प्राणसन, २ नागपाद, ३ लता-घेद, ४ अर्द्धसपुट, ५ टुल्लिण, ६ सुन्दर, ७ कैशर, ८ हिलोह, ९ नगमिह, १० त्रिपरीत, ११ क्षुब्ध, १२ धेनुक, १३ उत्कण्ठा, १४ मिहासा, १५ रतिनाग, और १६ विद्या धर ।

इसके अतिरिक्त स्मरदोषिणामें अठारह प्रकारके रतिबंधोंका उल्लेख है, यथा—१ कामप्रण, २ त्रिपरीत, ३ नाग, ४ रतिपाशक, ५ केयूर, ६ त्रियतोष, ७ समपद, ८ परुषपद, ९ समपुट, १० उद्वृत्तमगपुट, ११ स्तनभय, १२ रति सुन्दर, १३ ऊर्णपीड, १४ स्मरनक, १५ ऊरुकम, १६ घेदक, १७ हसकोल और १८ लोलासन ।

( सारदीयिका )

८ योगशास्त्रके अनुसार योगमाधनकी कोई सुद्धा । जैमे, उद्विग्नवन्य, मूल्य ध, जाग्रन्धर ध, इत्यादि । ९ निवन्ध रचना । १० चित्रकाव्यमे छन्दकी ऐसी रचना जिसमे किसी विशेष प्रकारकी आठति या चित्र बन जाय । ११ लयाय, फँसाय । १२ मानमित्र चिन्ता । १३ जिमसे कोई चीज बाधो जाय ।

बन्धक ( श्लो० ) बध्नातीति यध ण्युल । ऋणके लिये ऋणके बद्धलेमें धनोके पास रखी जानेवाली वस्तु, रहन, गिरवी । ऋण लेते समय सुवर्ण या भूमि आदि व धर रगनी पडती है । बादमें सन् सहित ऋण चुकनी होने पर धधनी संपत्ति वापिस हो जाती है । याज्ञ सहितामें इस मयधमें लिखा है,—गिरवी रग यदि कर्ज लिया जाये, तो कर्जके दूने होने पर भी ऋण चुकती न हो, तो गिरवी रगो हर्द वस्तु महाजनकी हो जाती है । उन पर गिरवी रखनेवाला कुछ अधिकार नहीं रहता । गिरवी छुडानेका समय निश्चित रहता है । निश्चिन समयमें गिरवी वस्तुको नहीं छुडानेसे उम पर अधिकार धनोका होता है ।

यदि महाजनको व धकी द्रव्य पर सूद वगयर मित्रता रहे अथवा अन्य लाभ हो, तो व धकी द्रव्य उथोकी ह्यो बनी रहती है । गिरवी द्रव्यके शुभ रूपमे भोगने अथवा फायोक्षम धर देने पर सूद नहीं मिल सन्ता । गिरवी द्रव्यके दो जानेपर उसका मूल्य दे देना पडता है । देवटन

या राजटन उपद्रुमें गिरवी द्रव्यके नाश होनेसे उमका मूल्य नहीं गेता पडता । गिरवी द्रव्य यदि यज्ञपूर्वक सुरक्षित रखने पर भा नष्ट हो जाय तो उमके बद्धलेमें उमका यथोचित मन्त्र देना पडेगा ।

कर्जदार महाजनको मन्त्रगिन जान कर यदि वह मूल्य द्रव्य धधक ररा वर उमसे अन्य धर ले, तो द्विगुण सूद समेत मूलधनके देने पर धधकी द्रव्य वापिस लेता है । यदि कर्जदार यह शर्त करे, 'जब सूद दूना हो जायगा तब द्विगुण सूद दे कर गिरवी द्रव्य छुडा लू गा' तो इस शर्तके अनुकूल ऋणी दूना सूद दे कर अपना द्रव्य ले सका है । ऋणी जब व्याज सहित मूलधन ले कर गिरवी द्रव्य छुडाने आये तब धनोको यह चीज विला उजुर दे देनी चाहिये ।

धनी ऋणोको द्रव्य देनेमें आपत्ति बरे, तो राजाके यहा उमे चोरके ममान द उ मिलता है । धनीको उपस्थिति नहीं रहने पर उसके विश्वस्त मनुष्यके पासमे मूलधन व्याज सहित देने पर धधकी दूना ले लिया जाता है ।

गिरवीदारके पाम गिरवी द्रव्यका लेनेवाला यदि कोई उग्रयुक्त मनुष्य न रहे, अथवा कर्जदार गिरवी द्रव्य घेच गिरवीदारकी अनुपस्थितीमें ऋण शोध धरना चाहे, तो द्रव्यका जितना मूल्य हो उसे निर्धारित कर ले, और जब तक गिरवीदार न आवे तथा धर ले कर गिरवीनामा फाड न दे, तब तक चीज उसीके पास रहने दे । पर उस दिनसे उस पर व्याज नहीं चलेगी, यदि ऋण लेने समय यह शर्त हो जाय, कि मूलधनके दूने होने पर दूना ही लिया जायगा, तो कर्जदार उतना देनेको बाध्य है । यदि मूलधन बढ कर दूना हो जाय और कर्जदारके पास रुपया न रहे तो गिरवीदार साक्षी रग कर गिरवीद्वारा घेच सका है । यदि बिना गिरवी द्रव्य रहे कर्ज बढ कर दूना हो जावे तो कर्जदार उसके बद्धलेमें जमीन गिरवी दारको दे दे । पीछे उम जमीनकी फत्सलसे अपना कुल पावना परिशोध कर महाजन कर्जदारको यह जमीन वापस दे दे ।

मनुस्मृतिमें लिखा है कि यदि भोगके निमित्त कोई धस्तु या दास दासीको गिरवी रख कर महाजनसे रुपया उधार ले तो ध्यान नहीं देनी पडती ।

बलपूर्वक गिरवी द्रव्यका भोग नहीं हो सकता। यदि कर्ज देनेवाला उस द्रव्यको काममें लावे, तो ऋणका खर्च छोड़ना होगा अथवा भोग करनेका कारण यदि उलटा हो, तो कर्जदारको निश्चित मूल्य दे कर सतुष्ट करना होगा। यदि न करे, तो कर्ज देनेवाला चोरकी तरह दंडनीय होगा। गिरवी द्रव्यको कर्जदार जिस समय चाहेगा उसी समय उसको देना होगा। गिरवी द्रव्य जितने दिन कर्जों न रहे, उस पर कर्जदारका सदा हक बना रहेगा। महाजन जितना रुपया कर्जमें दे, वह कर्जदारके पासमें कितने ही दिन कर्जों न रहे, उसके देने से ज्यादा होने पर महाजनको फिर ध्याज नहीं मिलती। (मनुस्मृति ८ अ०)

(पु०) बन्ध स्वार्थे—कन् । २ विनिमय, बदला । ३ रतहिङ्क, वह जो खिरियोंको चुराता हो। (त्रि०) ४ धधन कर्ता, बाधनेवाला।

“न नारी न धन गेह न पुत्रो न सहोदरा ।

बन्धन प्राणिना राजन्नहङ्कारस्तु व धरु ॥”

(भागवत ५।१।३६)

अहंकार ही जीवका बंधक अर्थात् बाधनेवाला है। जब तक 'मैरा' हम, हमारा, अर्थात् हमारी स्त्री, हमारा पुत्र हमारा सुप दुप, यह ज्ञान रहेगा, तब तक व धन अग्रय होगा, इसलिये अहंकार ही बंधक है।

बन्धकी (स० स्त्री०) बध्नाति मानसमिति बन्ध ण्वुल्, गीरादिवात् डीप् । १ ध्यभिचारिणी स्त्री, बदचलन औरत। महाभारतमें लिखा है, कि जो पञ्चपुरपगामिनी है, उसे बन्धको कहते हैं। २ वेश्या, रडी। ३ हस्तिनी, हथनी।

बन्धकर्तृ (स० पु०) शिव, महादेव।

बन्धन (स० स्त्री०) बन्ध भावे—स्त्युट् । १ बंधनक्रिया, बाधनेका काम। २ वह जिससे कोई चीज बाधी जाय। ३ बंध, हत्या। ४ हिंसा। ५ रज्जु, रस्सी। ६ कारागृह, कैदखाना। ७ बन्धनस्थान। ८ शिव, महादेव। ९ शरीरका संधिस्थान, जोड़। (त्रि०) १० बन्धन कत्ता, बांधनेवाला।

बन्धनग्रन्थि (स० पु०) बन्धनस्य ग्रन्थि । १ अस्थि बन्धनको ग्रन्थि, शरीरमें वह हड्डी जो किसी जोड़ पर हो। २ बन्धनकी गाँठ, गिरह।

बन्धनपाल्त्र (स० पु०) कारागार रक्षक, वह जो कारागारकी रक्षा करता हो।

बन्धनप्रेषण (स० स्त्री०) बन्धनाय व धनस्य वा वेषण गृह । कारागार, कैदखाना।

बन्धनस्थ (स० त्रि०) व धने तिष्ठति स्था—क । व धनस्थान, कारारह।

बन्धनस्थान (स० स्त्री०) व धनस्य स्थान । १ कारागार। २ पशु व धन स्थान, मवेशियोंके बाधनेका स्थान।

बन्धनागार (स० पु०) व धनस्य आगार । कारागृह, कारागार।

बन्धनालय (स० पु०) व धनाय व धनस्य वा आलय । कारागार।

बन्धनी (स० स्त्री०) १ भेदावरोधक सूत्रमय और स्थिति स्थापक गुणोपेत पदार्थ, शरीरके अन्दरकी वे मोटी नसे जो सन्धिस्थान पर होती हैं और जिनके कारण वे अग्रय आपसमें जुड़े रहते हैं। २ बन्धनसाधन रज्जु, वह रस्सी जिससे कोई चीज बाधी जाय।

बन्धनीय (स० त्रि०) बन्ध अनीपर । १ बन्धनयोग्य, बाधने लायक। (कली०) २ सतु, पुल।

बन्धमोचनिका (स० स्त्री०) १ बन्धसे मोचनकारो, बन्ध से रक्षा करनेवाला। २ योगिनोविशेष।

बन्धनगोती—अयोध्या प्रदेशवासी क्षत्रिय जातिविशेष। सुलतानपुर जिलेके अमेथी परगनेमें इस जातिके अनेक क्षत्रिय रहते हैं। इसरो जगह कहीं भी इनका बास नहीं देखा जाता कहते हैं कि हसनपुर-राजभृत्यके औरस और घरामो-रमणोके गर्भसे इनकी उत्पत्ति है। आज भी इनके किसी किसी क्रियाकर्ममें 'बद्धा' नामक अस्त्रकी पूजा होती है। उस अस्त्रसे उनके पूर्वपुरुष-गण बास फाड़ते थे, किन्तु वर्त्तमान बन्धनगोतिगण इस नीच उत्पत्तिकी कथा स्वीकार नहीं करते। इन लोगोंका कहना है, कि वे सूर्य व गीय क्षत्रिय हैं, वर्त्तमान जयपुर राजव शकी एक शाखासे उत्पन्न हुए हैं। प्राय ६ सौ वर्ष पहले उस राजके कोई व्यक्ति अयोध्या तीर्थ दर्शनको आये थे और अपने अलौकिक शक्ति प्रभावसे यहां एक नई शाखा स्थापन कर गये। धीरे धीरे दलपुष्ट हो कर उस दलके लोग यहांके सर्वेसर्वा हो उठे।



वन्धयितृ (स० लि०) वन्धयितृ-वृत् । वन्धनकारक,  
वाधनेजाल ।

वन्धय (स० पु०) वाधय टेटो ।

वन्धयस्तम्भ (स० पु०) वन्धायस्तम्भः । हस्तिवन्धन  
स्तम्भ, हाथी वाधनेका गामा या ग्नु टा । पर्याय—आलान,  
गद्गु, अयोट ।

वन्धित्र (स० फली०) वन्ध इत् । १ कामदेव । २ चर्म  
व्यजन, चमडेका पत्ता ।

वन्धु (स० पु०) वन्ध वन्धने (धृस्त्विति) गीति । ३ण्  
१।१ इति उ । १ गृह जो मद्रा साथ रहे या सहायता  
करे । जो स्नेह द्वारा मनको वन्धन करते हैं, वे ही वन्धु  
हैं । पर्याय—सगोत्र, वान्धव, छाति, म्य, खजन, दयाल,  
गोत्र । वन्धु तीन प्रकारका है—आत्मवन्धु, मातृवन्धु और  
पितृवन्धु । यथा—माँसेरे भाई, कुफेरे भाई और ममेरे  
भाईको आत्मवन्धु ; पिताके माँसेरे भाई, कुफेरे भाई  
और ममेरे भाईको पितृवन्धु तथा माताके कुफेरे भाई,  
माँसेरे भाई और ममेरे भाईको मातृवन्धु कहते हैं । आत्म-  
वन्धु और पितृवन्धु वे लोग स्वाभाविक हितकारी हैं ।  
इसो कारण शास्त्रमें इन्हें वन्धु बतलाया है । पितृव्य  
प्रभृतिको भी वन्धु कहते हैं ।

० भ्राता, भाई । ३ पिता । ४ माता । ५ वन्धुका पुत्र ।

वन्धुव (स० पु०) वध-उक्त यद्वा वधवधुकरूपय  
म्यार्थे क् । १ वृक्षभेद, दुपहरिया फूलका पौधा । २ दुप  
हरियाका फल जो लाल रंगका होता है ।

वन्धुव्य (स० फली०) वधुना वृत्त्यर्थं कार्यं । वधुका  
कार्य ।

वन्धुवितृ (स० लि०) हरिवरदि छात्र प्राप्तिपुक्त । (शक्  
१।१३२।३)

वन्धुजन (स० पु०) वधुरेव जनः । वधुलोच, आत्मीय  
कुटुम्ब ।

वन्धुजात्र (स० पु०) वधुरिव जीवयति रसादिनेति वधु  
जीवयत् । १ वधूक वृक्ष, शुल्बदुपहरियाका पौधा । २  
दुपहरियाका फूल ।

वन्धुजीव (स० पु०) वधुवत् जीवयति रसादिना इति  
वधु जीवयत् । वा वधुजीव यस्य स्वार्थे क् । वधूक  
वृक्ष । वधूक वृक्षो ।

वन्धुना (स० स्त्री०) वन्धोर्भाय वधुना ममूहो वा  
(ग्रामजनय धुम्बस्तल् । पा ४।२।४३) इति तल् टाप् ।  
१ वधुसमूह । २ वधु होनेका भाव । ३ भारं चारा ।

वन्धुव (स० पु०) १ वधुता, वधु होनेका भाव । २  
भारं चारा । ३ मित्रता, दोस्ती ।

वन्धुवत् (स० पु०) वधुना वत् । पितृ मातृ वत् । कः  
प्रत्त रीधन, वध धन जो कन्याको विवाहके समय  
माता पिता या भाइयोंसे मिलता है ।

वन्धुवा (स० स्त्री०) १ वैश्या, रडो । २ दुराचारिणी स्त्री,  
वदचलन औरत ।

वन्धुवति (स० पु०) वधुना वति । वधुव्येष्ट, वध जो  
आत्मीय कुटुम्बोंमें प्रधान हो ।

वन्धुपाल (स० पु०) आत्मीय कुटुम्ब प्रतिपालक, वध  
जो अपने कुटुम्बका प्रतिपालन करता हो ।

वन्धुपुत्र (स० लि०) वधुना विषय पूँछनेजाला ।

वन्धुमन (स० लि०) वधु अस्त्यर्थे मत्तुप् । १ वन्धु  
युक्त । २ कुटुम्बसमन्वित । ३ राजभेद । रिया टाप् ।  
४ नगरभेद ।

वन्धुर (स० स्त्री०) वन्ध (१ दृग् र दयव । ण् १।१२) इति  
उरप्रत्ययेन निपातनात् साधु । १ मुकुट, सिरताज ।  
२ मधु धन । ३ स्त्रीबिह । ४ तिलकटक, तिलका चूर ।  
५ वधुव, दुपहरियाका फूल । ६ वधिर, वधरा मनुष्य ।  
७ हंस । ८ त्रिडङ्ग । ९ ऋषमीपथ, लहसुनकी तरहकी  
एक औषधि । १० कर्कटाशुद्धी, कान्ठ्यासिगी । ११  
वध, वगला । १२ विद्वद्, चिडिया । (लि०) १३ रम्य,  
सुन्दर । १४ नम्र । १५ उन्नतानत, ऊँचा नीचा ।

वन्धुरा (स० स्त्री०) वन्धुर टाप् । पण्ययोग्य, मत्त ।

वन्धुरा (स० पु०) वधुत् छाति स्नेहेन शुद्धातीति वधु  
रा क । १ असतीपुत्र, वदचलन औरतका लडका ।  
२ चेशापुत्र, रडोका लडका । (लि०) ३ सुन्दर, रूपमूर्त ।  
४ नम्र ।

वन्धुराज्य (स० पु०) यद्वा जो वधुओंको रगता होता  
हो ।

वन्धुरा (स० पु०) वधुना मीन्द्र्येण चित्तमिति वन्ध  
(उल्लादयश्च । उण् ४।४१) इति ऊकः । (Pentep-  
tes Phoenicea) १ पुष्पविशेष, दुपहरियाका फूल । वध

कूल दो पहारमें बिलला है और शामको सुरभा जाना है।  
संस्कृत पर्याय—रक्तक, बन्धुजीवरु, बन्धुक, बन्धु, बन्धुल,  
जीवक, बन्धुजीय, बन्धुलि, बन्धुर, रक्त, माध्याह्निक, ओष्ठ  
पुष्प, अर्कवत्तलम, मध्यन्दिन, रक्तपुष्प, रागपुष्प, हरि-  
मिय ।

यह पुष्प असित, मित, पीत और लोहितके भेदसे  
चार प्रकारका है। गुण—ज्वरनाशक, त्रिभिध अरिग्रह  
और पिशाचप्रशमनकारक है। २ पीतशालक। ३  
खडूप, व दूक। ५ दोषक नामक वृत्तका परु नाम।  
( त्रि० ) ५ लघु, छोटा ।

बन्धुकपुष्प ( स० पु० ) बन्धुस्य पुष्पमिदं पुष्प यस्य ।  
१ पीतशाल । २ बीजक ।

बन्धुर (स० पु०) घघ-धंधनं ( मधुपुरादयथ । उग १।३२ )  
इत्यत्र खर्जूरदिवादूरप्रत्ययेन सिद्ध । १ विचर, विट ।  
( त्रि० ) २ रम्य, सुन्दर । ३ उन्नतानत, यह स्थान जो कहीं  
ऊँचा और कहीं नीचा हो ।

बन्धुलि ( स० पु० ) बन्धुक वृक्ष, दुपहरिया फलका  
पीषा ।

बन्ध ( स० त्रि० ) बन्ध-यक् । १ ऋतुप्राप्तावधि फल-  
रहित वृथादि, वह पेड़ जिसमें उपयुक्त समयमें भी फल  
नहीं लगते । पर्याय—अफल, अवकेशी, विफल, निष्फल ।  
२ ऐसा पुल जिसके नीचेसे पानी बहता हो, बाँध ।

बन्ध्या ( स० स्त्री० ) १ वह स्त्री जो मन्तान न पैदा कर  
सके, बाम् । मनुमें लिखा है, कि बन्ध्या स्त्री अष्टम वयमें  
अधिवेदनीय होती है । ( मनु ६।८१ )

धूपली स्त्रीको भी बन्ध्या कहते हैं । जिनसे मन्तान  
नहीं होती या हो कर मर मर जाती है उसका नाम  
धूपली है । २ योनिरोगभेद । भावप्रकाशमें उदात्तार्ता,  
विष्णुता और बल्यादिभेदसे योनिरोग नाना प्रकारका  
बतलाया गया है । जिन सब स्त्रियोंका आसव बिनष्ट  
होता है उन्हें बन्ध्या कहते हैं । स्त्रियोंके यह रोग हानेसे  
पथाविधाम चिकित्सा करना आवश्यक है ।

इषकी चिकित्सा ।—बन्ध्यानारी प्रतिदिन मछली,  
काँजी, तिल, उडद, शर्दक जलयुक्त मूत्र और दूधका  
सेवन करे । इससे उनका आर्तव निकल सक्ता है ।  
तितलौकीका बीज, दमती, गुड, मैनफल, सुरायोज और

यवशार इनके समान भागको धूपके दूधमें पीस कर  
मूर्त्ति बनाये । पीछे उस मूर्त्तिको योनिमें देनेसे आर्तव  
निकलता है । ज्योतिष्मतीकी पत्निया, सज्जीपार, वच,  
और शाल इन्हे शीतल दूधके साथ पीस कर पान करे,  
तो न बिनके मध्य ही रज अग्र्य ही निकलने लगेगा ।

रूतेबहेडा, यष्टिमधु, रक्त बहेडा, ककटशुद्धी और  
नागकेसर इन सब द्रव्योंका मधु, दुग्ध और घृतके साथ  
पान करनेमें व ध्यानारी गर्भधारण करती है । असगध  
के काढ़ेके साथ दूध पाक करके कुछ दूध रहने उसे  
उतार ले । पीछे ऋतु स्नान करके उसका घृतके साथ  
सेवन करनेसे निश्चय गर्भ रह जाता है । पुष्पानक्षत्रमें

लक्ष्मणामूल उपाह कर ऋतुस्नान करनेसे वाद घृत  
कुमारीका रस दूधके साथ सेवन करे । इससे व ध्या  
दोष दूर हो जाता है और नारा थोड़े ही दिनोंके अदर  
गर्भधारण करती है । पीत भिष्टीका मूल, घाईना फल,  
बटफा अक्षुर, और नीलोत्पल इन्हे दूधके साथ पीस  
कर पान करनेसे प्रथ्यादीय जाता रहता है । गजपिप्पली,  
जीरा, रूतेपुष्प और शरपुष्प इनके समान भागको पीस  
कर पान करनेसे स्त्री गर्भवती होती है । एक पलाशपत्र

को दूधमें पीस कर पान करनेसे चौर्याजान पुत्र जन्म लेता  
है । शूकशिम्बीमूल, कपित्थको मज्जा और लिङ्गिनी  
बीज, इन्हे दूधके साथ पान करनेसे नारी पुत्रप्रसवणी  
होती है । पुत्रजीव वृक्षका मूत्र, विष्णुकान्ता और  
लिङ्गिनी इनके समान भागको पीस कर आठ दिन सेवन  
करनेसे स्त्री पुत्र प्रसव करती है । ( भाष्य० योनिरोगाधि० )

व ध्या स्त्री यदि पूर्वोक्त औषधादिका यथाविधि सेवन  
करे, तो उनका व ध्या दूर होता है और वे पुत्रप्रसवणी  
होती हैं, इसमें सन्देह नहीं । फिर ऐसी भी औषधि है  
जिनका सेवन यदि पुत्रप्रसवणी स्त्री करे, तो उन्हें गर्भ  
नहीं रहता ।

वैद्यक चक्रपाणिसग्रहमें लिखा है—  
“विष्णुव्य शृङ्गवेरञ्ज मरिच केसरन्तथा ।  
घृतेन सह पातव्य व ध्यापि लभते सुनम् ।”

पिप्पली, शृङ्गवेर, मिर्च और नागकेसर, इन्हे घृतके  
साथ पान करनेसे व ध्या पुत्रप्रसव करती है । बला,  
अतिबला, यष्टि और प्रार्कशाका मधुके साथ पान करनेसे  
व ध्यादीय दूर होता है । ( भाष्यरत्ना० )

वैद्यक चक्रपाणिसग्रहमें लिखा है—  
“विष्णुव्य शृङ्गवेरञ्ज मरिच केसरन्तथा ।  
घृतेन सह पातव्य व ध्यापि लभते सुनम् ।”  
पिप्पली, शृङ्गवेर, मिर्च और नागकेसर, इन्हे घृतके  
साथ पान करनेसे व ध्या पुत्रप्रसव करती है । बला,  
अतिबला, यष्टि और प्रार्कशाका मधुके साथ पान करनेसे  
व ध्यादीय दूर होता है । ( भाष्यरत्ना० )

बन्ध्याकूर्वाटकी (मं० खी०) बंध्याया बर्कटको पुत्र दातृतया बंध्याया उपकारिणी अतोऽभ्यास्तथात् । तित्तकूर्वाटकी, धाम् कर्कडी । पर्याय—बन्ध्या, देवी, नागाराति, नागह्वी, मनोमा, पथ्या, विध्या, पुत्रदा, सक्न्दा, श्रीकन्दा, कन्दवह्नी, ईश्वरी, सुगन्धा, सर्पदमनी, विषकण्टकिनी, परा, कुमारो, भूतहन्त्री । गुण—तित्त कट्ट, उष्ण, कफावह, रथावरादि विषनाशक और रसायन (राश्री०) भावप्रकाशके मतसे इसका गुण—लघु, कफनाशक, घ्रणशोषक, सर्पविषहर, तीक्ष्ण और विसर्प तथा विषहाटक ।

बन्ध्यातनय (स० पु०) बन्ध्याया तनय इय । अलीक पदार्थ, कमी न होनेवालो चीज ।

बन्ध्यात् (स० ह्नी०) बंध्याया भाव ट् । बंध्याका भाव या धर्म ।

बन्ध्यादुहितृ (स० खी०) मिथ्या पदार्थ या वस्तु ।

बन्ध्यापुत्र (स० पु०) अलीक पदार्थ, ठोक वैसा ही असम्भय भाव या पदार्थ जैसे बंध्याका पुत्र, कमी न होनेवालो चीज ।

बन्ध्याश्व (स० पु०) पुराणिक राजभेद ।

बन्ध्यासूत (स० पु०) मिथ्या पदार्थ ।

बन्ध्यासूनु (स० पु०) आकाशकुसुमयत् मिथ्या ।

बन्ध्वीय (स० पु०) बंधुनामैव अन्वेषण । अपने बंधु वर्गका अन्वेषण ।

बन्तो (हि० खी०) अन्नका तिहाई अथवा और कोई भाग जो सेतमें काम करनेके बन्तेमें दिया जाता है ।

बन्नु—बेराजात विभागके अन्तर्गत एक जिला । यह अक्षा० ३३ ५' उ० तथा देशा० ७० २३' से ७१ १६' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण १६७० वर्गमील है । पञ्च बर्से नावादमें इसका विचार-सदर स्थापित है । सिन्धु नदी जिलेके उत्तर दक्षिणमें बहती है । नदीका पश्चिम तीरवर्ती भूभाग कुछ दूर समतल है, उदमें लवण पर्वत की प्रमोन्नत शाला देगी जाती है । गटक गियाजै या मैदानी पर्वतमालाका सुगाजियारात् शिखर समुद्रपृष्ठसे ४७१५ फुट ऊंचा है । इसीके उत्तर भागमें प्रष्ट बन्नु उपत्यका है । यह स्थान डिम्प्यारनि और उत्तर दक्षिण में ३० कोस लम्बा है । इसके चारों ओर प्रान्तरके

आकारमें गिरिमाला है । पश्चिममें याजिरी जातिकी घासस्थान याजिरी पर्वत, पोरघल और शिपिपर शिखर हैं । उत्तरमें फोहटका पटक पर्वत और मफेदको, पूर्वमें तकनियानी और दक्षिणमें शेपजुदिन नामक पर्वत हैं । इस शेपजुदिन पर्वत पर बन्नु और राइस-माइल खाँ-बासी यूरोपियोंके लिये स्वास्थ्यवाम स्थापित है । कुरम और तोची नदी इस उपत्यकाभूमि हो कर बहती हुई सिन्धुमें मिली है । इस जिलेके उत्तर वाला बागके निकट सि धनदी लवण पर्वतकी भेद कर बह गई है । सि धनदके पूर्व यह सिन्धुसागर-दोआच कहलाता है ।

लवणपर्वत और मैदानो पर्वतमाला पर जगह जगह नमक पाया जाता है । कालाबागके दूसरी ओर मारी नामक स्थानमें सँघव नमक बहुतायतसे निकाला जाता है अलावा इसके इसाखेल नामक स्थानमें सोरा, काला बाग और कुटकीमें फिटकरी, दो प्रकारका कौयला, महीका तेल और सिन्धुचर्ममें बहुत कम मात्रामें सोना भी पाया जाता है ।

कुछ सदी तक यहाके अधिवासियोंमेंसे अफगान जातिकी ही प्रधानता देखी जाती है । यहा प्राचीन कालमें हिन्दुओंका वास था और पञ्जाबके बयन बाहोिक (Greco Bictrian)-अधिकारमें इस जिलेमें प्रतीच्य सम्प्रताके क्षीणालोकने प्रवेग किया था । बन्नु उपत्यका के आकराआदि स्थानोंमें आज भी अनेक इएकस्तूप, भन्न मूर्ति, हिं दूका परिहित अलङ्कार और सिक्के आदि देवने में आते हैं । १८६५ ई०में सिन्धुनदके स्रोतियेगमें जो इसी प्रकारके एक प्राचीन समृद्धिशाली नगरका ध्वसा घशोर बह गया था, उममें भी अनेक भन्नमूर्ति और स्तम्भ आदि दिखाई दिये थे ।

इन सब वस्तुसायशेषने जिम प्राचीन समृद्धिकी कल्पना की जाती है, गजनौराज महामुदके सर्घ विलयकारी उपद्रवसे यह खीपट लग गई । स्थानीय प्रयाद है, कि महामुदने यहाके हिन्दू दुर्गादिको जहसे नष्ट कर डाला था । पीछे कुछ सदी तक यह प्राय जन हीन भा पडा रहा । धीरे धीरे बन्नुची या बन्नुजाल और निपाजै जाति यहा आ कर बस गई । मन्नाद बकर

शाहके अमलमें मरघत् लोर्गोंने इस पर अधिकार जमाया और नि जैको खटन नियाजै पर्वत पर मार भगाया। इसके प्रायः डेढ़ मीं वर्ष बाद अहमदशाह दुरानीने जब गङ्ग जातिका प्रभाव नष्ट कर डाला, तब सरहङ्ग लोर्गोंने यहा आ कर आश्रय ग्रहण किया था। मरघत् और वन्तूची आज भी इस प्रदेशमें वास करते हैं।

अकबरके परपत्नी दो सदी तक यहाके अधिवासियोंने नाममात्र दिल्लीको अधीनता स्वीकार की थी। १७३८ ई०में तदिरशाहने यह स्थान जीत कर सारे प्रदेशको शमशान सा बना दिया। अहमदशाह दुरानीने इसी उपत्यका हो कर अपनी सैन्यपरिचालना की थी और जाते समय वे यथासाध्य कर वसूल करनेमें जरा भी धान नहीं आये थे। किन्तु बुद्धिपूर्व अधिवासियोंको वशमें ला कर वे शासकविधिकी स्थापना किसी हालतसे न कर सके। १८३८ ई०में यह स्थान सिखोंके अधिकारमें आया। रणजित्गिहने रावलपिण्डीवासी गङ्ग जाति को परालत कर सिंधुके पूर्ववर्ती स्थानोंमें अपना शासन प्रभाव फैलाया। राज्य फैलानेकी इच्छासे वे धीरे धीरे सिन्धुके पश्चिम वन्तू उपत्यका तक बढ़ गये थे। अन्यान्य सभी स्थान उनके हाथ आने पर भी वे वन्तूवासियोंको काबूमें न ला सके। कई बार युद्धके बाद वे अपने पूर्व पुरखोंकी प्रथाके अनुसार वाकी खजाना वसूल करनेके समय सैन्य प्रेरण द्वारा उन्हें उत्साहित करते थे।

रणजित्की मृत्युके बाद यह स्थान अङ्गरेजोंके अधिकारमें आया। १८४७-४८ ई०में सर हायर्ट एडवार्डिस सिखसेनाके साथ वन्तू उपत्यका देखने आये। इस समय वन्तूवासी स्वाधीन, परस्पर विरोधी और युद्ध विग्रहमें लिप्त थे। प्रत्येक ग्राम एक दुर्गरूपमें परिणत हो गया था। सेनापति एडवार्डिसने अपने बुद्धि फौजिलसे उन्हें वशमें ला कर राज्य भरमें शान्ति स्थापन की। उनके सभी दुर्ग तोड़ फोड़ दिये गये। वे सबके सब स्वेच्छासे राज कर देने लगे। मुलतान युद्धके आरम्भमें एडवार्डिस यहासे सैन्य सप्रद करके युद्धक्षेत्रमें उतरे। अभियानकालमें वन्तूवासियोंने विशेष राजभक्ति दिखलाई थी। एडवार्डिसाबादकी सिखसेना विद्रोही हो कर मुलतानमें आ कर मिल गई। पञ्जान अङ्गरेजोंके

राज्यभुक्त होनेके बाद यहा अङ्गरेजोंका शासन अच्छी तरह जम गया। १८७७ ई०में सिपाही विद्रोहके समय यहा गोद विशेष घटना न घटी। पश्चिमके अधिवासियोंके आक्रमणसे बोच बीचमें शान्ति भङ्ग हुआ करती थी। सीमान्तदेशकी रक्षाके लिये यहा १० थाने हैं जिनमेंसे ८में गोरा और घुरम तथा टोची थानेमें दोगीय सिपाही रहते हैं।

इस जिलेमें २ शहर और ३६२ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या ढाई लाखके करीब है। यहाकी भाषा पुस्तू है। त्रियाशिक्षामें यह जिला बहुत पीछा पड़ा हुआ है। सैकड़ें पीछे ४ मनुष्य पढ़े लिखे मिलते हैं। अभी उच्चनीच श्रेणीके स्कूलोंकी संख्या कुल २०० हैं। स्कूलके अलावा एक सिमिल अस्पताल और एक चिकित्सालय है।

२ उक्त जिलेकी एक तहसील। यह अक्षां ३२ ४४' से ३३ ५' ३०" और देशां ७० २२' से ७० ५८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४४३ वर्ग मील और जनसंख्या प्राय १३०४४४ है। इम उपविभागमें वन्तूची नामक अफगान जातिका वास है। इसमें इसी नामका एक शहर और २१७ ग्राम लगते हैं।

३ उक्त तहसीलका एक नगर। यह अक्षां ३३ ०' तथा देशां ७० ३६' पू० कुर्टम नदीसे एक मील दक्षिणमें अवस्थित है। जनसंख्या १५ हजारके लगभग है। १८४८ ई०में लेफिटनेण्ट एडवर्डने इस नगरकी बसाया। यहा काश्मीरके महाराजाके स्मारकमें एक दुर्ग बनाया गया है जिसका नाम धुलीपगढ़ है। धुलीपनगर नामका एक बाजार भी उन्ही की स्मृतिमें बसाया गया था। चर्च मिशनरी समितितने शहरमें एक गिरजा और १८६५ ई०में एक हाई स्कूल खोला है। यहा ब्रिटिश सरकारका सीमान्तरक्षक सेनादल (१ दल अम्बारोही, २ दल पदातिक, १४७० सङ्गीनवाही सैन्य, ४८२ तलवारधारी और कामानवाही सैन्य) रहता है।

वन्तूची—वन्तू जिलावासी अफगानजाति।

वन्धि (स० हंसी०) बहि देतो।

धपमार (हि० चि०) १ पिताका घातक वह जो अपने पिताकी हत्या करे। २ सबके साथ धोखा और अन्याय करनेवाला।

बपतिस्त्र्या ( अ० पु० ) ईसाई सम्प्रदायका एक मुख्य स स्कार । यह स स्कार निम्नी व्यक्तिको ईसाई बनानेके समय किया जाता है । इसमें पादरी हाथमें जल ले कर अभिमन्त्रित करना और ईसाई होनेवाले व्यक्ति पर छिड़ फना है । जब विधर्मों ईसाई बनाया जाता है, उस समय भी यह स स्कार किया जाता है । इस समय स स्कृत होनेवालेका एक अलग नाम भी रखा जाता है जो उसके कुल-नामके साथ जोड़ दिया जाता है ।

बपुटा ( हि० वि० ) १ आशक, बेचारा ।

बपीती ( हि० स्त्री० ) पितासे मिली हुई सम्पत्ति, धांपसे पाई हुई आयदाद ।

बप्या ( हि० पु० ) पिता, धांप ।

बफारा ( हि० पु० ) १ औषधमिश्रित जलको औंटा पर उसके भांपसे शरीरके किसी रोगी अगको सेकनेका काम । २ वह औषध जिमको भांपसे इस प्रकारका सेक किया जाय ।

बफौरी ( हि० स्त्री० ) यह बरी जो भांपसे पकाई गई हो । इसकी प्रस्तुत प्रणाली—बटलोंईमें अदहन चढा कर उसके मुँह पर थारीफ कपड़ा बाँध दे । जब पानी खूब उबलने लगे, तब रुपडे पर बेसन या उर्दकी पकौडो छोड़े जो भांपसे ही पक जायगी । इन्हीं पकौडियोंको बफौरी कहते हैं ।

बफूफा—पञ्जाब प्रदेशके हजारा जिलान्तर्गत एक नगर । यह अक्षा० ३४ २६' ३०" उ० और देशा० ७३ १५' १५" पु० सिर्हान नदीके दाहिने किनारे अवस्थित है । उत्तर हजारा और स्वात् विभागका यह प्रधान वाणिज्यस्थान है । यहा नील, कार्पास उग्र, ताप्र याल और शल्वाधिकी आमदनी तथा रस्सनी होती है ।

बबकना ( हि० कि० ) उत्तेजित हो कर जोरसे धोला, बमकना ।

बबर ( फा० पु० ) १ वर्षरौ देशका शेर, बडा शेर । २ एक प्रकारका मोटा कम्मल जिसमें शेरकी पालकी मी धारियाँ होती हैं ।

बबा ( हि० पु० ) बाबा देगो ।

बबुआ ( हि० पु० ) १ बेटे या दामादके लिये प्यारका स बोधन शब्द । २ जमींदार, रईस ।

बबुर ( हि० स्त्री० ) १ बन्वा, बेटो । २ किसी डाकुर सरवार या बाजूकी बेटो । ३ पतिकी छोटी बहन, छोटी नन्द ।

बबुर ( हि० पु० ) बबूल देगो ।

बबूल ( हि० पु० ) भारतके प्राय सभी स्थानोंमें मिलने वाला एक प्रसिद्ध फटिदार पेड़ । यह मधोले बन्वा होता है और ज गली अस्पृश्यामें अधिकतासे पाया जाता है । गरम देश और रेतीली जमीनमें यह पेड़ बहुत जल बढता है । कहीं कहीं यह पेड़ मी सौ वर्ष तक रहता है । इसमें छोटे छोटे पत्ते, सूँके बगबर फटि और पीले र गके छोटे छोटे फूल लगते हैं । इसके अनेक भेद हैं । कुछ जातियोंके बबूल तो बागोंमें केवल शोभाके लिये लगाये जाते हैं, पर अधिमानसे इमारत और खेतोंके कामोंके लिये बहुत बच्छी लकडी निकलती है । इसकी लकडी बहुत मजबूत और भारी होती है । यदि यह कुछ दिनों तक किसी खुले स्थानमें पडो रहे, तो प्रायः लोहेके समान हो जाती है । इसकी लकडी ऊपरसे सफेद और अ धरसे कुछ कालापन लिये लाल र गकी होती है । इससे खेतीके सामान, नाये, गाडियों और प्लाँचे धुरे तथा पहिए आदि अधिकतासे बनाये जाते हैं । यह लकडी जलनेमें भी बडे कामती है, क्योंकि इसकी आच बहुत तेज होती है । इसके कोपले भी बनाये जाते हैं । इसकी पतली टहनिया, इस देशमें, वागुमके काममें आती हैं । इसकी जड, छाल, सूखे बीज और पत्तिया औषधोंमें भी व्यवहृत होती हैं । छालका उपयोग चमडा सिफाने और र गनेमें भी होता है । पशु इसकी पत्तियाँ और कभी कभियाँ बडे स्वाधने गाने हैं । सूनी टहनियोंसे लोग शेरों आदिमें बाध लगाते हैं । सूयी कलियोंसे पकी स्याही भी बनती है और फूलोंसे गहव निकलती है । इसमें गोंड भी होता है जो और गोंडोंसे बहुत अच्छा समझा जाता है । कुछ प्रांतोंमें इस पर लापके कोड़े रख कर लग भी पैदा की जाती है । रामबयल, छेद, कुर्छाँ, फरील, चनरोडा, खोनकोबर आदि इसीकी जातिके पृष्ठ हैं ।

बबुला ( हि० पु० ) १ बगुला देगो । २ हृष्टुला देगो ।

३ परती बहल देपो । ४ हाथियेके पात्रमें होनेराला एक प्रकारका फोडा ।

बभ्रुनी ( हि० स्त्री० ) १ एक प्रकारका फोडा । यह छिप-कालेके समान, पर जोंक सा पतला होता है । इसके शरीर पर लंबी सुन्दर धारिया होती हैं । जिनके कारण वह बहुत सुन्दर जान पड़ता है । २ कुजकी जातिका एक तृण जिसे वनकुस भी कहते हैं ।

बभ्रुत ( हि० स्त्री० ) बभ्रुत या विभूति देपो ।

बभ्रुनी ( स० स्त्री० ) बभ्रु शिवरथेय पत्नी, बभ्रु -अण्-डीप्, न वृद्धि । दुर्गा ।

बभ्रु ( स० पु० ) बभ्रु इत् । १ घञ् । ( त्रि० ) २ भरण कर्ता । ३ धारक ।

बभ्रु ( स० पु० ) विमर्त्सि भयति या भू ( कुमुपच । उण् १।२३ ) इति कुम्भित्वञ्च । १ अग्नि, वाग । २ शिव । ३ विष्णु । ४ नकुल । ५ मुनिविशेष । ६ देशभेद । ७ सिता वरशाक । ८ खत्रति । ९ कपिलवर्ण । १० लोमपादसुत । ( वाग० ६।२४।१ ) ११ देवोवृधसुत । १२ ययातिपुत्र द्रष्टु के पुत्र । १३ पञ्चगन्धर्वपतिमेंसे एक । १४ विश्वामित्र के पुत्रभेद । १५ निःश्वगर्भके पुत्र । ये यादवोंके अन्त्यतम थे । इनकी स्त्रीको शिशुपालने हर लिया था । यादवकुल जब जिनप्रयाग हो गया, तब बभ्रु कुण्डके आदेशसे यादव पत्निशैली रक्षाके लिये गये थे । इसी समय कुछ इफेनेनि मिल कर इन्हें मार डाला । ( भारत मांवलप० ४ अ० ) १६ कपिला गाय ( त्रि० ) १७ पिङ्गल वर्ण । १८ त्रिगाल । १९ कपिलवर्णयुक्त ।

बभ्रुक ( स० त्रि० ) १ पिङ्गलवर्ण सम्बन्धीय । ( पु० ) २ गहल, नेरला । ३ कपिञ्जल, व वर ।

बभ्रुकर्ण ( स० त्रि० ) पिङ्गलवर्ण कर्णयुक्त ।

बभ्रुदेश ( स० पु० ) जनपदभेद ।

बभ्रुधातु ( स० पु० ) बभ्रुः पिङ्गलो धातुः । १ स्वर्ण, सोना । २ गैरिक धातु, गेरू ।

बभ्रुनीकाश ( स० त्रि० ) कपिलवर्ण सद्गश ।

बभ्रुमालिन् ( स० पु० ) १ पिङ्गलवर्ण मालाधारी । २ मुनिविशेष । ( त्रि० ) ३ नकुलको तरह मुँहवाला ।

बभ्रुवाह ( स० पु० ) महोदयपति, अर्जुनका पुत्र ।

बभ्रुवाहन देख ।

बभ्रुवाहन ( पु० ) मणिपुरके एक प्रसिद्ध राजा । यह अर्जुनकी स्त्री चित्राङ्गदाके गर्भसे पैदा हुए थे ।

महाराज युधिष्ठिर जिस समय अश्वमेधयज्ञ करते थे, उस समय अर्जुनकी यज्ञके अश्वरथ रक्षक बनाया । यज्ञीय अश्व दौड़ता हुआ मणिपुर पहुँचा, उसके साथमें अर्जुन भी थे । अपने समीप चिनीत भात्रसे बभ्रुवाहन को आते देख अर्जुनने इसका कुछ भी आदर नहीं किया वरन् तिस्कारसे कहा, 'तुम क्षत्रिय तथा वीर पुरुष कैसे, जो मेरे सामने युद्धार्थी बन कर नहीं आये । यह तुमने क्षत्रियोचित कार्य न कर प्रत्युत क्षत्रियनिगर्हित कार्य किया है । अतएव मैं तुम्हें स्त्रीसे भी अधम समझता हूँ ।' अर्जुनके इस प्रकार तिस्कार करने पर उलूपी बहुत विगड़ी । उसने बभ्रुवाहनको अर्जुनके साथ लड़ाई करनेके लिये उसकाया । बभ्रुवाहनने यक्षीय अश्व पकड़ रखा । इस पर दोनोंमें युद्ध हुआ । बभ्रुवाहनने युद्धमें अर्जुनको धराशायी बना दिया । चित्राङ्गदाकी जब यह समाचार मिला तब वह रणाङ्गणमें आई और उलूपी तथा बभ्रुवाहनको कोश कर रोने लगी । उसने स्वामीके साथ सती होनेका निश्चय कर लिया । पिता और माता के शोकसे बभ्रुवाहनने भी प्रियमाण हो प्रत्योपवेशन टान दिया ।

उलूपीने इन लोगोंको प्राणत्यागाकी चेष्टा देत नागलोकस्थित सञ्जीवनीमणिना ध्यान किया । ध्यान करते ही वह मणि उलूपीके पात्र आ गई । नागकुमारी उलूपीने उस मणिको ले कर बभ्रुवाहनको पुकारा, 'वत्स ! शोक छोड़ दे । तुम अर्जुनको पराजित नहीं कर सकते । इन्द्रादि देव भी उन्हें पराजय न कर सके हैं । तुम्हारे और पिता अर्जुनके प्रेम देखनेके लिये मैंने यह माया-जाल रचा था । अर्जुन तुम्हारा पराक्रम जाननेके लिये ही यहा आये थे । मैंने भी इसीलिये तुम्हें युद्ध करनेके लिये उभाडा था । अतएव तुम्हें इस विषयके पापको अणुमात्र भासका न करना चाहिये । मैंने यह विद्य मणि ला दी है, इस मणिको ले जाओ और अर्जुनके यक्षस्थल पर रण दो । धननय मणिके रखने मात्रसे चट उठ खड़े होंगे । बभ्रुवाहनने यह मणि अर्जुनकी छाती पर रख दी । सुनोत्थितके समान अर्जुन उठ खड़े हुये । आकाशसे

इस प्रकार लगा होता है, कि सहजमें गूब अन्नी तरह घूम सके। जिस स्थान पर छेद करना होता है उस स्थान पर नुनीला कोना लगा कर और दन्तके मरारि उसे दबा कर रस्तेकी गगडियोंकी महाधनाने अथवा और किसी प्रकार गूब और जोरसे घुमाते हैं जिससे यहा छेद हो जाता है।

बरसा—ग्रहदे। (देखो।)

बरगी (हि० पु०) १ ब्रह्मगामी, बरमाका रहनेवाला। (खो०) २ ब्रह्मदेगकी भाषा। (वि०) ३ ब्रह्मदेग सम्बन्धी, बरमा देशका। (खी०) ४ गीली नामका पेड़।

बरह्योट हि० खी० एक प्रकारकी नाव जो प्राय ४० हाथ लम्बी होती है। इस नावका पिछला भाग अपेक्षा शत चौड़ा होता है और पीछेकी ओर घेमा यत्र बना होता जिसे बारह आठवीं पैरने चलाते हैं।

बरहा—ग्रहदे। देखो।

बररे (हि० पु० रती०) बरें देखो।

बरपट (हि० खी०) तिल्लो नामका रोग। (वि०) देखो।

बरवल (हि० पु०) भेड़की एक जाति जो हिमालय पर्वतके उत्तर जुमोंगामे निरुद्ध तक और कमाऊंमे सिक्किम तक पाई जाती है। यह पहाड़ी भेड़ोंके पाच भेड़ोंमेंसे एक है। इसके नरके सिर पर मजबूत मींग होते हैं और वह लडाईमें गूब टकर लगाता है। इसका ऊँचा यथापि मैदानकी भेड़ोंसे अच्छा होता है तो भी मोटा होता है और कमल आदि बनानेके काममें ही आता है। इसका मांस खानेमें रूखा होता है।

बरवा (हि० पु०) बरवें देखो।

बरवासागर—मध्यभारतके इन्दौर राज्यात्पते निमार जिल्ला एक शहर। यह अक्षा० २२ १५ उ० और देशा० ७६ ३० पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या छह हजार से ऊपर है। कहते हैं, कि यह शहर १६७२ ई०में परांमा जमींदारके पूर्यज राणा सूर्यमलने बसाया था। निवाजी राज होकररने यह स्थान यहा मिय था, इस कारण उन्हीं ने अपने रहनेके लिये यहा एक सुन्दर राजप्रामाद बा घाया था। शहरमें एक सरकारी और शैटका जग-घर, एक स्कूल, चिकित्सालय, मराय और एक डाक घरला है।

बरवासागर—युक्तप्रदेशके भासी जिल्ला एक नगर। यह अक्षा० २१ २२ उ० और देशा० ७६ ४३ पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या छह हजारसे ऊपर है। इससे पास ही एक उडा पर्वत है जिसके निम्नमें एक सुन्दर हृद है। उक्त पर्वतमें जो जल निकलता है यह रानी हृदमें जमा रहता है। १७०५ १७२७ ई०के मध्य आच्छा राज उदितसिंहने नगरकी शोभा बढ़ानेके लिये उक्त बाध और एक दुर्ग बनवाया था। स्थाननामा भासीवी रानी इस दुर्गकी श्रेय अधिकांशकी थी। अहूरेजोंके अधि कारमें आनेसे यह दुर्ग पा थनियासमें परिणत हो गया है। यहासे तीन मील पश्चिम एक प्राचीन चन्देल मन्दिर है जिसकी वेषमूर्ति मुसलमानोंने विध्वस्त हो गई है। शहरमें एक उडा-सा स्थूल है।

बरवै (हि० पु०) १६ माताओंका एक छन्द। इसमें १२ और ७ माताओं पर यति तथा अन्तमें जगण होता है। इसे ध्रुव और कुरग भी कहते हैं।

बरपा (हि० खो०) १ घृष्टि, पानी बरसना। २ वर्षा फाल, बरसात।

बरपासन (हि० पु०) एक वर्षकी भोजनसामग्री, उना अनाज जितना एक मनुष्य अथवा एक परिवार एक वर्षमें खा सके।

बरम (हि० पु०) बारह महोनों अथवा ३६५ दिनोंका समूह। वर्ष देखो।

बरसगाट (हि० खी०) यह दिन जिसमें किसीका जन्म हुआ हो, जन्मदिन। आगरे आदि प्रातोंमें प्रत्येक व्यक्तिके घरमें एक तागा रहता है। जिसके नामका यह तागा होता है उसके एक एक जन्मदिन पर एक एक गाठ दूँते जाते हैं। इसीसे जन्मदिनकी वर्षगाँठ कहते हैं। प्राचीन समयमें भी ऐसी ही प्रथा थी।

बरमना (हि० द्वि०) १ आषाढसे जल्की पूर्वाका निरन्तर गिरना, मेह पटना। २ बहुत अधिक मान सध्या या मात्रामें चारों ओरसे आ कर गिरना, पहुँचना या प्राप्त होना। ३ वर्षाके जल्की तरह ऊपरसे गिरना। ४ नोसाया जाना, डाली होना। ५ गूब प्रकट होना, गटन आच्छी तरह फटना।

बरसाइत (हि० रती०) जेठ वने जमापस जिस दिन खिया यह साविलीका पूजन करती है।

वरसाइन ( हि० खी० ) वह भी जो हर साल बच्चा दे, प्रतिवर्ष बच्चा देनेवाली गाय।

वरसाऊ ( हि० वि० ) वर्षा करनेवाला।

वरसात ( हि० खी० ) वर्षासत्र, वर्षाकाल।

वरसाती ( हि० वि० ) १ वर्षा सम्बन्धी, वरसातका।

( पु० ) २ वरसातमें होनेवाला घोड़ोंका स्थायी रोग।

३ एक प्रकारका ढीला कपडा जिसे पहन लेनेसे शरीर नही भोगता। ४ पैरमें होनेवाली एक प्रकारकी फुसिया जो वरसातमें होती है। ५ चरस पक्षी, चीनी मोर।

वरसाना ( हि० कि० ) १ घृष्ट करना, वर्षा करना। २ ओसाना, डाली देना। ३ वर्षाके जलकी तरह लगातार बहुत सा गिराना। ४ अधिक सखा या मातामें चारों ओरसे प्राप्त करना।

वरसायत ( हि० खी० ) १ शुभ घड़ी, शुभ मुहूर्त्त। २ वरसाइन।

वरसायना ( हि० पु० ) वरसाना देखो।

वरसिधा ( हि० पु० ) यह वेल जिसका एक सींग खडा और दूसरा नीचेकी ओर झुका हो, मैना।

वरसी ( हि० खी० ) यह वृक्ष जो किसी मृतकके उद्देश्यसे उसके मरनेकी तिथिके ठीक एक वर्ष बाद होता है।

वरसू ( हि० पु० ) एक प्रकारका वृक्ष।

वरसोदिया ( हि० पु० ) पूरे साल भरके लिये रखा हुआ नीकर।

वरसाँडी ( हि० खी० ) वार्षिक वर, प्रति वर्ष लिया जाने वाला कर।

वरह टा ( हि० पु० ) बडी कटाई, कटवा भटा। सस्कृतमें इमे धाताँकी, वृहती, महती, सिद्धिका, रागिद्रका, स्थूल कटा और क्षुद्रभण्टा कहते हैं।

वरह ( हि० पु० ) वध आदिका पत्ता।

वरहना ( फा० वि० ) नग्न, न गा।

वरहम ( फा० वि० ) १ क्रुद्ध, जिसे गुस्सा आ गया हो। २ उत्तेजित, भडका हुआ।

वरहा ( हि० पु० ) १ पेतोंमें निचाईके लिये बनी हुई छोटी नाली। २ मोटा रस्सा।

वरही ( हि० पु० ) १ मयूर, मोर। २ मुरगा। ३ अग्नि, Vol. XV

आग। ४ साहो नामका ज गली ज तु। ( खी० ) ५ प्रसूताका वह स्नान तथा अन्यन्य क्रियाएँ जो सन्तान भूमिष्ठ होनेके वारहवें दिन होती हैं। ६ सन्तान भूमिष्ठ होनेके दिनसे बारहवा दिन। ७ पत्यर आदि भारी बोझ उठानेका मोटा रस्सा। ८ जलानेकी लकड़ीका भारी बोझ, ईन्धनका बोझ।

वरही ( हि० पु० ) सन्तान भूमिष्ठ होनेके दिनसे बारहवाँ दिन। इसी दिन नामकरण होता है।

वराडल ( हि० पु० ) १ जहाजमें उन रस्सोंमेंसे कोई रस्सा जो मस्तूलकी सीधा खडा रखनेके लिये उसके चारों ओर ऊपरी सिरेसे ले कर नीचे जहाजके भिन्न भिन्न भागों तक बांधे जाते हैं। २ जहाजमें इसी प्रकारके और कामोंमें आनेवाला कोई रस्सा।

वराडा ( हि० पु० ) वरामदा देयो।

वराडल ( हि० पु० ) वराडल देयो।

वराडी ( अ० खी० ) एक प्रकारकी मिलायती शराव, घाड़ी।

वरा ( हि० पु० ) १ एक प्रकारका पत्रान जो उडकी पीसी हुई बालका बना होता है। इसका आकार टिकिया सा होता है। इसे घी या तेलमें पका कर यो ही अथवा दही, इमलीके पानी आदिमें डाल कर खाते हैं। २ भुजदण्ड पर पहननेका एक आभूषण, टाँड।

वराइच—अयोध्याप्रदेशके फैजाबाद विभागान्तर्गत एक जिला। यह युक्तप्रदेशके छोटे लालके शासनाधीन अक्षां २७ ४' से २८ २४ उ० तथा देशां ८१ ३' से ८२ १३' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २६४० वर्गमील है। यहा धर्यरा और राप्ती नदी बहती है। दोनों नदीके मध्यवर्ती भूभाग समतल क्षेत्रसे प्राय ४० फुट ऊँचा और प्राय १३ मील प्रशस्त है। पूर्वोक्त दो नदियोंके अलावा यहा कोरियाला, मोहन, गीर्वा, सरयू, मक्ला, सिहिया आदि कई पत्र शाखा नदिया विद्यमान हैं। जलका अभाव नहीं रहनेके कारण यहा सब तरहका अनाज उत्पन्न होता है। इन सब प्रथ्योंकी नदी द्वाप दूर दूर देशोंमें रकनी होती है। अलावा इसके चीनी, रुई, तमाकू, अफीम, नील आदि भी बहुतायतसे उपजती है। जिलेके उत्तर प्रायः २५७ वर्गमील वनभूमि



वृटिश-सरकारसे सुरक्षित है। इसमें ३ शहर और १८८१ प्राम लगने हैं। जनसंख्या १० लाखसे ऊपर है। स्थानीय प्रवाह है, कि जगत्सुद्धा प्रदाने पवित्रचेता श्रुतियोंके प्रद्वारापनाके लिये इसी स्थानको पसन्द किया था। (१) अयोध्यापति श्रीरामचन्द्रके शासनकालमें यह स्थान उत्तरकोशलके अन्तर्भूत था। श्रीरामचन्द्रके पुत्र लज्ज राता नदीके तीररक्षीं ध्यापस्ती नगरीका शासन करने थे। प्रायस्सुद्धके अस्त्युद्ध पर उत्तरकोशलराज्य गौडधर्म की क्रीडामूर्ति हो गया था। स्वयं सुद्धदेवसे इस जिलेके अर्न्त कपिलवस्तुमें जन्मग्रहण किया। वे ध्यापस्तिमें १६वीं शताब्दीमें उदरे थे। उनके नवधर्मके प्रभावसे यह उस समय प्रज्ञाप्यवर्मका लोप हो गया था। सुद्धदेव देवो। चीनपरिव्राजक फा हियन यहांके बौद्ध सङ्घारामादिका ध्वंसापक्षेय देव गये थे। ताण्डव नामक ग्राममें भी बहुत सी बौद्धकीर्तियोंका निदर्शन पाया जाता है। यहां सुद्धकी माता महामायाकी मूर्ति 'नीता माई'के रूपमें पूजी जाती है।

राजपुत्र जातिके अत्याचारसे त्रिशाडित हो भरण इस जिलेमें आ कर बस गये। धीरे धीरे उन्होंने अपना आधिपत्य फैला कर इस पर अपना दखल जमाया।

१०३३ ई०में सैयद सलार मसाउदने बराइन पर आक्रमण किया। सुद्धमें वे राजपूतोंसे पराजित और निहृत हुए; इनकी कब्र भी यहीं पर हुई। उनका समाधि मन्दिर मुसलमानोंके निकट तीर्थक्षेत्र समझा जाता है। मुलतान समसुद्दीन अलतमसके पुत्र नामि रुद्दीने १२४६ ई०में सम्राट् होनेके पहले इस जिलेका शासन करते थे। पीछे अलसादी मुसलमानोंने इसके कुछ अंश अधिष्टन किये। सम्राट् गयासुद्दीनके अधिनार-वाटमें यहां सैयदवशकी प्रतिष्ठा हुई और भरतजगण निकाल भगाये गये। सम्राट् फिरोजशाहके राजन्य कालमें यहां शकैनोंने भारी उपद्रव मचाया था। बरियाशाह नामक विन्नी मुसलमान सेनापतिने उनका वधन किया

जिसने राज्यमें शान्ति स्थापन हुई। पारितोषिक स्वरूप सम्राट्ने इस प्रदेशका शासनभार उस पर अर्पण किया। इकाना नगरमें उसके घणघरण जमादारके तौर पर गोण्डा और बराइनकी कुछ सम्पत्तिका भोग कर रहे हैं। सूर्यवंशीय दो राजपुत्र भाइयोंने यहां आ कर याम गौतोंके भरसरवाके अधीन नौकरी पकड़ी। काश्मीर प्रदेशके राइफ ( रैक ) नामक स्थानसे आगेके कारण वे तथा उनके घणघरण राइफवाइ कहलाने लगे। उनके सुशासनने भर राज्य उन्नतिकी चरम सीमा तक पहुच गया। पीछे भर राजा वृटिश सरकारसे कुछ स्वयंश तोड़ देनेके लिये तैयार हो गये। उन्हीं ने यह सुष भोग वृत्त दिन करने भी न पाया था, कि भर लोगों ने उनको हत्या कर अपना आधिपत्य फैलाया। यह घटना १४०६ ई०में घटी थी।

१५वीं शताब्दीके शेष भागमें इसका पूर्वभाग अत वारके (बरियाशाहके घण), दक्षिण अलसादीके, पश्चिम राइफवाइ और उत्तराश साधोन पार्यतीय सरदारोंके अधिकारमें था। बहोल लोदीके भाजे फालापहाडके शासनकालमें यह स्थान दिल्लीकी अधीनता स्वीकार करनेको बाध्य हुआ। अक्षयशाहके राजत्वकालमें (१५५६-१६०५) यह स्थान सरकार बराइन कहलता था। परन्तुशकैकालमें राइफवाइ और जगवारी ने सुद्ध विप्रदायि द्वारा अपनी सम्पत्ति बदानेकी कोशिश की। सम्राट् शाहजहान अपने कर्मचारीको उत्तरका ननपाड़ राज्य प्रदान किया। यह स्थान सारे अयोध्याप्रदेशमें श्रेष्ठ गिना जाता है।

१७२४ ई०में अयोध्याके नयाव यनीरगण रिहोकाल अधीनता-शुद्ध लोड कर स्थानीय भावमें राज्य करने लगे। ६३ नयाव नयादत्त सानि अर्ष द्वारा राजस्व संग्रह करते अपने राजकोषको बढ़ाया। १८०३-१८१६ ई०में बलाक्रीदास और उसके लडके राय नमरमिहके शासन कालमें बराइन राज्यकी बड़ी उप्रति हुई। पीछे हल्ले अली साँके बुजासनसे राज्य भरमें अज्ञानि फैल गई। १८४६-४७ ई०में रघुपर दयानने राजस्व संग्रहका भार ग्रहण किया। उनके शासनासे बराइनमें घोर अन्यायार शुरु हो गया। १८५८ ई०में अयोध्याके अ गवरेने शासनमें

(१) प्रवाह है, कि प्रज्ञासे इच्छासे यह स्थान यागयहके श्रिदे विरिह हुअ, इस कारण मसा-इरुड वा प्रज्ञा इच्छिने इरुड कर इन नाम पडा है।

आने पर यहाँ का दुःख जाता रहा। गदरके समय जिन्होंने इस महाविप्लवमें साथ दिया था, शान्ति स्थापित होनेके बाद उन लोगोंकी अधिष्ठित सम्पत्ति राजमत्त प्रजाको दे दी गई। जिले भरमें ११६ स्कूल और १४ अस्पताल हैं।

२ उक्त जिलेकी तहसील। यह अक्षा० २७ १६' से २०' ५६' उ० तथा देशा० ८१' २७' से ८०' १३' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ६१८ वर्गमील और जन संख्या प्रायः ३७३८८ है।

३ उक्त उपविभागके अन्तर्गत एक परगना। भूपरिमाण ३२६ वर्गमील है। वराहच नगरके गोण्डा, इकौना, भिगा और नानापाडा आदि स्थानोंमें गाड़ी जाने आने का रास्ता गया है। कर्णेलगञ्ज और नवावगञ्ज यहाँका प्रधान वाणिज्यस्थान है।

४ उक्त जिलेका प्रधान नगर और विचार सदन। यह अक्षा० २७ ३४' उ० तथा देशा० ८१ ३६' पू०के मध्य बहरमघाटसे नेपालगञ्ज जानेके पथ पर अवस्थित है। जनसंख्या २७ हजारसे ऊपर है। म्युनिसिपलिटि और पुलिसकी देखरेखमें रहनेके कारण राजपथादिमें रोशनी का अच्छा प्रबन्ध है। जल निकसनेके लिये ड्रेन भी हैं। घघैरा नदीके किनारे गममेंण्टकी अष्टालिका और बगैरोंका आवास है। यहाँका देवनेयोग्य भवन मसाउदका समाधि मन्दिर ही है। ननाव आसफ उद्दीलाका वीरत्वमाना १६२० ई०में स्थापित हुआ है। मूलतानवासों मुसलमान साथका मन्दिर और मसाउद के अनुचरोंकी कब्र उल्लेखयोग्य है। शहरमें कुल मिला कर ११ स्कूल हैं।

वराह—आसाम प्रदेशके उत्तर कटाडके अन्तर्गत एक पर्वतमाला। यह खासी, नागा और मणिपुर पर्वतमाला के साथ संयोजित है। इसकी ऊँचाई वही २५०० फुट और कहीं ५००० फुट है। यह पर्वत बनमालासे ममा च्छादित है। इसकी एक शाखासे वराकनदी निकली है।

वराई ( हि० र्पो० ) बवाई देखो।

वराक ( हि० पु० ) १ शिव। २ युद्ध, लडाई। (वि०) ३ शोचनीय, सोच करनेके योग्य। ४ अप्रम, पापी। ४ थापुरा, बेचारा।

वराक ( वारक ) आसामकी उपत्यका भूमिमें प्रवाहित एक नदी। कछाड पर्वतके अङ्गामी-नागाओंके अधिष्ठित कोहिमारके निकट इसका उद्गम-स्थान है। पीछे कटाड और थ्रोहट्ट जिलेमें प्रवाहित हो यह मेघनामें मिलती है। तिपाईंमुत्ता ग्रामके निकट इसकी तिपाईं शाखा अवस्थित है। वङ्गा ग्रामके निकट यह दो शाखाओंमें विभक्त होती है। उत्तरमें सुरमा और दक्षिणमें कुशी-पारा नामसे बहती है। उत्तरकछाड, रासिया, जय ती, लुशाई, त्रिपुरा पर्वतोंसे अनेक छोटी छोटी नदिया इसमें आ मिली हैं। उनमेंसे जिरी, चिरी, मधुरा, जातिङ्गा, लुग, चेङ्कपाल, पैन्दा, सोनाई काटापाल लङ्गाई मनु और खोयानी शाखा प्रधान हैं। वराक और उसकी शाखाओंमें सदा ही जल रहता है। पूर्वं बङ्गीय घेल्को और इण्डिया जेनरल स्टीमनभिगसन कम्पनीके दो डीमर इस नदीकी बुगीयारा और सुरमा नामकी शाखाओंमें चलते हैं। राहमें शिलचर, गियालटेन, थ्रोहट्ट, छातक, फौजुयामुत्ता, फेन्गु ज और बाल ग ज प्रभृति नगर पडते हैं। इस प्रदेशके द्रव्य इसी नदीसे मेघनातीरवर्ती औरव-वाजारमें लिये जाते हैं।

वराकूर्जई—प्रसिद्ध दुरानी नामक एक अफगान जातिकी शाखा। दुरानियोंमें यह वराकूर्जई जाति एक समय काधार नगरमें विशेष क्षमताशाली हो गयी थी। अष्टदशह अवदाली और जमानशाहके राजत्वकालमें पायदा खाँ वराकूर्जई काधार राजसिंहासनके प्रधान मन्त्री थे। जमानशाहकी रणजित्ति इसके साथ सधि होने पर पायदा चिढा और शुजा उल मुल्ककी राजसिंहासन देनेके लिये पङ्ख रचने लगा। पश्चान् वह जमानतशाहके द्वारा मारा गया। उसके पुत्र फते खानि जमानशाहकी राज्यच्युत कर महमूदकी काबुलके सिंहासन पर बैठाया। पीछे उन्होंने पेशावरकी सुजा लजाई नामकी जातिको परास्त किया। १८०६ई०में नेपोलियन और रूसके राजा आलेक्सन्दरके आक्रमणके भयसे अङ्गरेजोंने सुजाके साथ सधि कर ली। इसके पहले ही सुजा महमूदकी वधी कर चुके थे। फते खानि फिरसे सुजाको परास्त कर महमूदकी काबुलके सिंहासन पर बिठाया और आप राजमन्त्री हुए। यह

धराकर्म जातिरों से तुष्ट करनेके लिये विशेष धनान्यता दिखलाने लगी। अतएव उसका दण्ड दिन दिन बढ़ने लगा। महम्मद अपने भृत्यको इनना क्षमनाशाली देना कर भी कुछ नहीं कर सके। ये फते गाँके मजीन बिल बुल गहना नहीं चाहत थे। पारसराजके हीरेट अधिकार करने पर १८१६ ई०में महम्मदने उसे वहा भेजा। इस युद्ध में भी फते गाँने विशेष दक्षतासे पारस्य सैन्यको परास्त किया। उसका प्रभाव देश महम्मद और उसका पुत्र कामरान जल्दने लगे। १८१८ ई०में युद्ध यमौरको छलसे बढ़ी कर उसकी आधोमें अग्निशालाका युग्मेड दी। इस निन्दुर आचरणसे धराकर्म जातिके सर्दारोंने विद्रोही हो, महम्मद और कामरानका हीरेट तक पीछा किया और वही मार डाला। गजनोके पास दोस्त महम्मदके साथ महम्मदकी मुठभेड हुई थी। फते गाँने हत्याका प्रति शोध ले कर धराकर्मई सर्दार दोस्त महम्मदके साथ मिल १८२३ ई०में काबुल नगर पर अधिकार जमाया और उनके भाई शेर दिल वहाके राजा हुए। इस प्रकार डुरानी वंश की सिद्दीजाई शासकके अयसान होने पर धराकर्मई जातिने अफगान राज्य पर प्रतिष्ठा प्राप्त की। १८३४ ई०में पारससे तापति अन्वाम मिर्जाके हीरेट पर आक्रमणसे राज्यमें गडबडी मची। यह सुयोग देव सुजाँ काबुल पर आक्रमण कर दिया; किंतु दोस्त महम्मद और उनके भाई कुन्दिलसे पराजित हो उसने रोजत मागिर गाँका आश्रय लिया। काफ़र युद्धमें विजयी होनेसे धराकर्मई जातिके प्रभाव और भी बढ़ गया। सर्दार दोस्त मुहम्मदने लार्ड आर्कवैडके सुशासनने मोत हो १८३१ ई०में रुसराजसे मित्रता कर दी। इसी समय अलेक्जेंडर डर वॉर्नर दूतके रूपमें काबुल राजसभामें उपस्थित हुये। दोस्त महम्मदकी इच्छा रहने पर भी रुसदूत मिटकोमिन्स्की प्रोचनाने अद्वैतोंके साथ मित्रता न कर सके। इस पर अंग्रेजोंने अपनेको अपमानित समझ इस पर सुजाँ उल्लूकको अफगान राज्यता यथायथ उत्तराधिकारी बना युद्धके लिये घोषणा कर दी। इसी अरसर पर सुजाँने भी रणजित्-निहकी भूमिदानसे मंत्रुष्ट कर १८३६ ई०में अगरेजी सेनादल लेकर काबुलके मिहामन पर अधिकार जमाया। दोस्त मुहम्मद अगरेजके वहाँ घेनामोगी गहरबन्दी हुए।

धराकर्म—१ बङ्गालको एक नदी। यह छोटाणागपुरके अधिन्यका प्रदेशसे निकल कर हजारीबाग, मानभूमि होती हुई गङ्गातीरिया प्रामके निकट दामोदरमें मिलती है।

२ उक्त नदीका मुहाना भी धराकर्म कहलाता है। यहा कोयलेकी एक स्थान है। इष्ट इण्डिया रेल्वेका एक स्टेशन रहोसे कोयलेके वाणिज्यमें बहुत सुभोता हो गया है। यहाँ राजा हरिश्चन्द्रका प्रतिष्ठित एक मंदिर है। इसके अलावा विष्णुके नाता अजतारौकी मूर्ति वैसे प्रोमित और भी कितने मंदिर हैं। इसके ३ कोस उत्तर कल्याणेश्वरीका मन्दिर या देवी स्थान है। उस मन्दिरमें कल्याणेश्वरी देवीमूर्ति प्रतिष्ठित है। यहाकी एक शिला लिपिमें पञ्चवॉटके एक राजाका नाम पाया जाता है। कल्याणेश्वरी मंदिरके सामनेवाले शिलालेखमें 'श्रीश्री कल्याणेश्वरीचरणपरायण धीयुक्त देवनाथ देवगर्मा' ऐसा लिखा है। मूल मंदिरके पारवर्षमें और भी कितने ही मंदिर देते जाते हैं।

इस देवीमूर्तिके स्थापनके विषयमें अनेक प्रवाद प्रचलित हैं। एक समय किमी रोहिणीवामी ब्राह्मणने सम्भुत नालेमें एक रत्नालङ्कारविभूषित हाथ ऊपर उठा हुआ देखा। उसने पंचवॉटके राजा कल्याणमिन्दके पास जा कर इसकी गवण दी। देवीके स्थापनादेशके अनुसार राजाने उस प्रस्तरको जलसे निशाल देवीमूर्ति स्थापन कर दी। और भी सुना जाता है, कि यङ्गरा कन्या कल्याणदेवी अपने मैकेसे पितृकुल देवीको ले कर समुद्राल आ रही थी। देवीने स्वप्नमें बालिकासे यह दिया था, 'यदि तुम मुझे वहाँ एक बार जमाँन पर रणोगी, तो मैं यहासे कभी नहीं उठ सकती।' राहमें इसी नदीके किनारे यह बालिका आई और देवीमूर्तिने जमाँन पर रण कर हाथ पाव धोने लगी। पाँछे जब वह उठानी आई, तब मूर्ति टमसे मस न हुई। यह देव कर कल्याणदेवीकी उगी जगह एक मन्दिर बनया दिया।

धरागति—रङ्गपुर जिलेके अन्तर्गत एक नगर।  
धरागाँव—छोटाणागपुरके अन्तर्गत एक गाँव। यह गमुटगुडमें ३४४५ फुट ऊँचा है।

धरागाँव—पुल प्रदेशके बलिया जिलान्तर्गत एक नगर

यह अक्षा २५° ४५' ४" उ० और देशा० ८४ २ ३६" पू०के मध्य अवस्थित है। चित्तकिरी म्बर देवो।

वराणास—अयोध्याप्रदेशके सीतापुर जिलान्तर्गत एक नगर।

वराडी (हि० स्त्री०) वरार और वरानदेशकी रुई।

वरत (हि० स्त्री०) १ वर पक्षके लोग जो विवाहके समय वरके साथ कन्यावालोंके यहा जाते हैं, जनेत। २ उन लोगोंका समूह जो मुरदेके एक साथ श्मशान तरु जाते हैं। ३ कहीं एक साथ जानेवाले बहुतसे लोगो का समूह।

वराती (हि० पु०) १ विवाहमें वर पक्षकी ओरसे सम्मिलित होनेवाला। २ शवके साथ श्मशान तक जाने वाला।

वरातेही—बङ्गालके षट्कजिलान्तर्गत अमिया पर्वत मालाका सर्वोच्च शृङ्ग। इस पर्वतके निम्नदेशमें स्थानीय पूर्वतन किसी सामन्त राजधानीका ध्वसावशेष इधर उधर पड़ा है।

वरानकोट (अ० पु०) १ वह कडा फोट या लवादा जो जाडे या वरसातमें सिपाही लोग अपनी वर्दीके ऊपर पहनते हैं। २ ओवरकाट देवो।

वराना (हि० क्रि०) १ प्रसङ्ग पडने पर भी कोई बात छोड कर और और घातें कहना। २ रक्षा करना, हिफाजत करना। ३ खेतोंमेंसे चूही आदिको भगाना। ४ जान बूझ कर अलग करना, बचाना। ५ देवा देवा कर अलग करना, छाटना। ६ सिचार्फका यानी एक नालीसे दूसरी नालीमें ले जाना। ७ पेतोंमें पानी देना।

वरावर (फा० वि०) १ मान, माता, स ख्या, गुण, महत्त्व, मूल्य आदिके विचारसे समान, तुल्य, एक सा। २ समान पद या मर्यादायुक्त। ३ जैसा चाहिये वैसा, ठीक। जिमको सतह ऊँची नीची न हो। (क्रि० वि०) ५ सर्वदा, हमेशा। ६ साथ। ७ निरन्तर, लगातार। ८ एक पक्तिमें, एक साथ।

वरावरी (हि० स्त्री०) १ समानता, तुल्यता। २ सादृश्य, सदृशता। मुकाबला, सामना।

वरामद (फा० वि०) १ जो बाहर निकला हुआ हो, बाहर आया हुआ। २ लोई हुई, चोरी गई हुई या न

मिलती हुई वस्तु जो कहींमे निकाली जाय। (स्त्री०) ३ वह जमीन जो नदीके हट जानेसे निकल आई हो। ४ निकासी, आमदनी।

वरामदा (फा० पु०) १ मरानोंमें वह छाया हुआ तंग और लवा भाग जो मरानकी स्मीमाके कुछ बाहर निकला रहता है और जो रमों, रेलिंग या छुडिया आदिके आधार पर ठहरा हुआ होता है, वागजा। २ मरानके आगेका वह स्थान जो ऊपरसे छाया या पटा हो पर सामने या तीनों ओर खुला हो, दालान।

वरामोटर (हि० पु०) बैरोमोटर देखो।

वराय (फा० अव्य०) निमित्त, चास्ते, लिये।

वरायन (हि० पु०) वह लोहेका छल्ला जो व्याहके समय दूट्टेके हाथमें पहनाया जाना है। इसमें रत्नोंकी जगह गुजा लगे रहते हैं।

वरार—बेदार देवो।

वरार (हि० पु०) १ पर प्रहारका जगलौ जानवर। २ वह चन्दा जो गाँवोंमें घर पीछे किया जाता हो।

वरारक (हि० पु०) हीरा।

वरारी (हि० पु०) सम्पूर्ण जातिकी एक रागिनी जो दो पहरके समय गाई जाती है। कोई नोई इसे मीरय रागकी रागिनी मानते हैं।

वरारी—भागलपुर जिलेके भागलपुर शहरसे ४ मील ईशान कोणमें गङ्गाके दाहिने किनारे अवस्थित एक कसबा। यहाके जमीदार उच्च-बुलोज्जय मैथिल ब्राह्मण हैं जो ठाकुर कहलाते हैं।

विशय विवरण वरारी शब्दमे देवो।

वरारी—सिन्धुप्रदेशके अहमदावाद नगरके समीप एक प्राचीन ग्राम। यहा राजा चोवनाथकी राजधानी थी। आज भी उसका ध्वसावशेष देवनेमें आता है।

वरारीश्याम (स० पु०) सम्पूर्ण जातिका एक सकर राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

वराय (हि० पु०) निवारण, बचाव।

वरावर—गया जिलेके अन्तर्गत एक शीलमाला। यह अक्षा० २५ १' से २५ २३' उ० तथा देशा० ८५ ३' ३०" से ८५ ७' पू०के मध्य अवस्थित है। यहाका प्राचीन ध्वसावशेष प्रतानच्यानुसन्धिस्तु स्थपतिविद्याचित्पिण्डितोंका

बराक नई जातिको स तुष्ट बरलेके लिये विशेष यदायना दिगलने लगा। अन्तर उमना दल दिन दिन बढ़ने लगा। महमूद अपने भृत्यको इता क्षमतागाली देत पर भी कुउ नही कर सके। ये फते माँके अर्धान बिल कुल रहना नही चाहत थे। पारसराजके हीरट अविचार करी पर १८१६ ई०में महमूदने उने यहा भेना। इस युद्ध में भी फते माँनि विशेष क्षमतासे पारस्य सैन्यको परास्त किया। उसका प्रभाव देव महमूद और उसका पुत्र कामरान जल्ने लगे। १८१८ ई०में वृद्ध यज्ञोष्को छलसे पदी कर उसको आपनोंमें अग्निजलाफा घुसेड दो। इस निष्ठुर आचरणसे बराकजई जातिके सर्वोत्तरे विद्रोही हो, महमूद और कामरानका हीरट तक पोत्रा किया और पदी मार डाला। गननोके पाम दोस्त महम्मदके साथ महमूदको मुठभेड हुं भी। फते माँनि हत्याका प्रति शोध ले कर बराकजई सर्वार दोस्त महम्मदके साथ मिल १८२३ ई०में काबुल नगर पर अधिकार जमाया और उनके भाई शेर विल वहाके राजा हुए। इस प्रकार दुरानी घग की सिद्दीजाई शाकाके अन्तसा होने पर बराकजई जातिके अफगान राज्य पर प्रतिष्ठा प्राप्त की। १८३४ ई०में पारससेनापति अब्बाम मिजाँके हीरट पर आज्रमणसे राज्यमें गडगडी मची। यह सुयोग देव मुजाने काबुल पर आक्रमण कर दिया; किन्तु दोस्त महम्मद और उनके भाई हुन् विलसे पराजित हो उमने रोलात माशिर खाँका आश्रय लिया। बाघार युद्धमें विजयी होनेसे बराकनई जातिका प्रभाव और भी बढ गया। सदार दोस्त मुहम्मदने लार्ड आक्लेण्डको मुशामासे भोत हो १८३१ ई०में रूसराजसे मित्रता करली। इसी समय अलेक्जे डर चार्नेज दूतके रूपसे काबुल राजमहामों उपस्थित हुये। नेस्त महम्मदकी इच्छा रहने पर भी रूसदूत मिटरोपिनकी प्रेरचनासे अङ्ग्रेजोंके साथ मित्रता न कर सके। इस पर अंग्रेजोंने अपनेको अपमानित समझ इस पर सुता उल-मुल्को अफगान गव्यथा गभायथ उत्तराधिपती बना युद्धके लिये तोषणा कर दी। इसी अवसर पर सुताने भी रणजित् सिंहने भूमिदानमें सतुष्ट पर १८३६ ई०में अगरेजों सेनादर ले कर काबुलके सिहासन पर अधिचार जमाया। शीघ्र मुहम्मद अगरेजोंके यहाँ ध्यानमोगा नजरबन्दी हुए।

बराकर—? बङ्गालको एक नदी। यह छोटीनागपुरके अधिन्यथा प्रदेशसे निकल कर हजारोबाग, माभूमि होती हुई बङ्गालोरिया प्रामके निकट दामोदरमे मिलती है।

२ उक्त नदीका मुहाना भी बराकर कहलाना है। यहाँ कोयलेको एक खान है। इष्ट इण्डिया रेलवेका एक स्टेशन रहनेसे कोयलेके वाणिज्यमें बहुत सुभोता हो गया है। यहा राजा हरिद्वजका प्रतिष्ठित एक मंदिर है। इसके अलावा विष्णुके नागा अयतारोंकी मूर्ति योमे शोभित और भी नितने मंदिर हैं। इसके ३ फीस उत्तर कल्याणेश्वरीका मन्दिर या देवी स्थान है। उस मन्दिरमें कल्याणेश्वरी देवीमूर्ति प्रतिष्ठित है। यहाँको एक शिला लिपिमें पञ्चकोटके एक राजाका नाम पाया जाता है। कल्याणेश्वरी मंदिरके सामनेजाले शिलालेखमें "श्रीश्री कल्याणेश्वरीचरणपरायण श्रीयुक्त देवनाथ देवशर्मा" पेशा लिया है। मूल मंदिरके पार्श्वदेशमें और भी चितने ही मंदिर देते जाते हैं।

इस देवीमूर्ति के स्थापनके विषयमें अनेक प्रवाद प्रचलित हैं। एक समय किमी रोहिणीयासी ब्राह्मणने सम्पूर्ण नालेमें एक रजालङ्कारविष्पिन धाथ ऊपर उठा हुआ देगा। उमने पचकोटके राजा कल्याणमिहके पाम जा कर इसकी सहाय दी। देवीके स्थापनादेशके अनुसार राजागे उस प्रस्तरकी जलसे निशाल देवीमूर्ति स्थापन कर दी। और भी सुना जाता है, कि बङ्गराज कल्याणेश्वरी देवी अपने मैकेसे पितृवृद्ध देवीको ले कर ससुराल आ रही थी। देवीने स्वर्गमें बालिकासे कह दिया था, 'यदि तुम मुझे यहाँ एक बार जमीन पर रणोगी, तो मैं यहाँके कभी नहीं उठ सकती।' राहमें इसी नदीके किारे यह बालिका आई और देवीमूर्तिने जमीन पर रण कर हाथ पाय धोने लगी। पीछे जन यह उठाने आई, तब मूर्ति टमसे मस न हुई। यह देव कर कल्याणेश्वरीने उमी जगह एक मन्दिर बना दिया।

बराकति—रङ्गपुर जिलेके अन्तर्गत एक नगर।

बरागार—छोटानागपुरके अन्तर्गत एक गणेशीन। यह समुद्रपृष्ठमे ३४४० फुट ऊँचा है।

बरागाँव—युक्तप्रदेशके बलिया जिलान्तर्गत एक नगर

यह अक्षा २५ ४५' ४" उ० और देशा० ८४ २३' ६" पू०के मध्य अवस्थित है। वितर्किने ३५५ देणो।

वरागाँव—अयोध्याप्रदेशके सीतापुर जिलान्तर्गत एक नगर।

वराडो (हि० स्त्री०) वरार और खानदेशकी रई।

वरात (हि० स्त्री०) १ वर पक्षके लोग जो विवाहके समय वरके साथ कन्याजालीके यहा जाते हैं, जनेत। २ उन लोगोंका समूह जो मुरदेके एक साथ श्मशान तक जाते हैं। ३ कहीं एक साथ जानेवाले बहुतसे लोगो का समूह।

वरानी (हि० पु०) १ विवाहमें वर पक्षकी ओरसे सम्मिलित होनेवाला। २ शवके साथ श्मशान तक जाने वाला।

वरातेही—बङ्गालके कटरुजिलान्तर्गत असिया पर्वत मालाका सर्वांश शृङ्ग। इस पर्वतके निम्नदेशमें स्थानीय पूर्वतन किसी सामन्त राजधानीका ध्वसावशेष इधर उधर पडा है।

वरानकोट (अ० पु०) १ वह कडा कोट या लवादा जो जाडे या बरसातमें सिपाही लोग अपनी बर्दाके ऊपर पहनते हैं। २ ओबरकाट देखो।

वराना (हि० कि०) १ प्रसङ्ग पडने पर भी कोई बात छोड कर और और बातें कहना। २ रक्षा करना, हिफाजत करना। ३ खेतोंमेंसे चूहो आदिको भगाना। ४ जान बूझ कर अलग करना, बचाना। ५ देण देण कर अलग करना, छोटना। ६ मिर्चार्का पानी एक नालीसे दूसरी नालीमें ले जाना। ७ खेतोंमें पानी देना।

वरावर (फा० वि०) १ मान, मात्रा, सख्या, गुण, महत्व, मूल्य आदिके विचारसे समान, तुल्य, एक सा। २ समान पद या मर्यादायुक्त। ३ जैसा चाहिये वैसा, ठीक। जिसकी सतह ऊँची नीची न हो। (कि० वि०) ५ सर्वदा, हमेशा। ६ साथ। ७ निरन्तर, लगातार। ८ एक पक्तिमें, एक साथ।

वरावरो (हि० स्त्री०) १ समानता, तुल्यता। २ सादृश्य, सदृशता। मुकाबला, सामना।

वरामद (फा० वि०) १ जो बाहर निकला हुआ हो, बाहर आया हुआ। २ कोई हुई, चोरी गई हुई या न

मिलती हुई वस्तु जो कहींमें निकाली जाय। (स्त्री०) ३ यह जमीन जो नदीके हट जानेसे निराल आई हो। ४ निकामी, आमदनी।

वरामदा (फा० पु०) १ मकानोंमें वह छाया हुआ तंग और लवा भाग जो मकानकी मीमाके कुछ बाहर निराला रहता है और जो खम्भों, रेलिंग या घुडिया आदिके आधार पर ठहरा हुआ होता है, वारजा। २ मकानके आगेका यह स्थान जो ऊपरसे छाया या पटा हो पर सामने या तीनों ओर खुला हो, दालान।

वरामोटर (हि० पु०) बैरोमोटर देखो।

वराय (फा० अज्य०) निमित्त, चाम्ने, लिपे।

वरायन (हि० पु०) वह लोहेका छल्ला जो ध्याहके समय दूरदेके हाथमें पहनाया जाना है। इसमें रत्नोंकी जगह शुजा लगे रहते हैं।

वरा—बेदार देखो।

वराव (हि० पु०) १ एक प्रकारका जगलो जानवर। २ यह चद्रा जो गाँवोंमें घर पीछे किया जाता हो।

वरावक (हि० पु०) हीरा।

वरावी (हि० पु०) सम्पूर्ण जातिकी एक रागिनी जो दो पहरके समय गाई जाती है। कोई कोई इसे भैरव रागकी रागिनी मानते हैं।

वरावी—भागलपुर जिलेके भागलपुर शहरसे ४ मील ईशान-कोणमें गङ्गाके दाहिने किनारे अवस्थित एक कसबा। यहाके जमींदार उच्च-कुलोद्भूत मैथिल ब्राह्मण हैं जो ठाकुर कहलते हैं।

विशेष विवरण वारावी शब्दमें देखो।

वरावी—सिन्धुप्रदेशके अहमदाबाद नगरके समीप एक प्राचीन ग्राम। यहा राजा चोवनाथजी राजधानी थी। आज भी उसका ध्वसावशेष देखनेमें आता है।

वरावीश्याम (स० पु०) सम्पूर्ण जातिका एक सफर राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

वराय (हि० पु०) निवारण, बचाव।

वरावर—गया जिलेके अन्तर्गत एक शैलमाला। यह अक्षा० २५' से २५ २३' उ० तथा देशा० ८५ ३३' से ८५ ७' पू०के मध्य अवस्थित है। यहाका प्राचीन ध्वसावशेष प्रहलनरजानुसन्धिस्तु स्थपतिविद्याविन् परिडतोंका

आरंभका पदार्थ है। इसके पास ही पटना गया वैष्णवका पेल्ला नामक स्टेजा है। इस पर्वतके सर्वोच्च शिखर पर सिद्धेश्वर नामक प्राचीन मन्दिर प्रतिष्ठित है। निम्नज पुष्के अमुग्नय धामने यह मन्दिर बनाया था। स्थानीय प्रयाद है, कि उस अमुग्नयने धोहराके साथ युद्ध किया था। प्रति वर्षके भाद्रमासमें यहा एक मेला लगता है। पर्वतके दक्षिणतट पर नाना देवमूर्तियां सुगोमिन देगी जाती हैं। यहाके एक पर्वतमें सात गुहाएँ हैं जिन्हे लोग 'सातगर' कहते हैं। उस गुहाके निकट पालिभायामें लियो हुई जो गिलालिपि पाई गई है उससे ज्ञात जाता है, कि उनमेंसे चार गुहाएँ ३५७ ई०सन्के पहले बनाई गई थीं। शेष ३ गुहा नागार्जुन पवन पर अस्तित्व हैं। इसके पास पातालगङ्गा नामक पवित्र प्रवणण है। काकदेश नामक शिखरके निम्नभागमें एक प्रयाण्ड युद्धमूर्ति और श्वर उधर पडी हुई देवमूर्तियां देगी जाती हैं। इस पर्वत पर बहुत पहलेसे बौद्धप्रभाव फैला हुआ था। आचार्य श्रीयोगानन्द, विदेशवासी धनु, योगिकर्ममार्ग भयङ्करनाथ आदि जैन भक्तगण इस स्थानको देख गये हैं। कुछ जैन पतियोंके रहनेके लिये अजोन और उनके पोने द्वा-रथने यह स्थान निर्दिष्ट कर दिया था। उस समय इस स्थानको लोग 'गलतिक' कहते थे।

हड्डों जनाष्टीमें राजा जादृल यर्मा और अनन्तयर्माके अधिकांश-शालमें यहा ब्राह्मण धर्म फैलानेके लिये देव माता कात्यायनी और मद्रादेव आदि हिन्दू देवमूर्तियां प्रतिष्ठित हुए। ७वें जनाष्टीमें यह स्थान ब्राह्मणके अधिकांशमें रहनेके कारण चीनपरिव्राजक युण-तुचगने इस स्थानका कोई उल्लेख नहीं किया।

परास (दि० पु०) १ एक प्रकारका कपूर जो भीमनेगी कपूर भी कहलाता है। कपूर देगो। २ अज्ञातमें पालकी यह रस्सी जिसकी सहायतासे पालकी घुमाते हैं।

बराह (दि० पु०) बाराह देगो।

बराह (फा० क्रि० वि०) १ श्वे और पर। २ छात्र, अरियेने।

बरही (दि० रती०) एक प्रकारकी घटिया ऊन।

बरिमात्र (दि० पु०) बरान देगो।

बर्गिष्ठा (दि० पु०) बरगा देगो।

बर्गिष्ठागढ़—पूर्व या जिन्हेके दृश्यगु उपनिमागानागेन एक प्राचीन दुर्ग।

बर्गिष्ठाटी—२४ परगनेके बागसुर उपविभागके अन्तर्गत एक राजस्य विभाग। बिष्णुपुर, यामालीपुर, जयपुर, मयुरपुर और मारहाट आदि स्थान इसके अन्तर्गत हैं।

बरिद्गाही—दक्षिणात्यके मुसलमान राजपूज। बाह्मनी राजवंशके अथ पतनके समय दक्षिणभागमें पाँच मुसलमान राज्य श प्रतिष्ठित हुए। बरिद्गाही उनमेंसे एक है। इस वंशके प्रतिष्ठा तुर्की व शीघ्र नामक एक कौतवामने की थी। ये बाह्मनी राज २५ महमूदके प्रधान मन्त्री थे। १५०४ ई०में उनकी मृत्यु होने पर उनके लड़के अमोर बरिद् मन्त्री पद पर अभिषिक्त हुए। इन्होंने पालक बाह्मनीराज २५ अहमूदको अपने हाथहा गिलानी बना लिया था। एक एक करके इन्होंने अज्ञा उद्दीन यलि उल्ला और बलाम उल्ला आदि तीनों धर्मियों को राजतल पर विद्याया था। १५२७ ई०में कज्जाम राज्यसुत हो कर अहमूद नगरको भाग। इस समय अमोर बरिद् बाह्मनी राजधानीमें ही अपनीको स्थापान राजा बतला कर घोषणा कर दी। इन्माइल आदिन्गाहके बिहार नगर या कर उद्दीने यहाँ राजधानी बसाई। उनके लड़के अलीको बरिद्गाह उपाधि थी। उसी अहमूद नगर पति घुहानगाहके साथ लड़ कर अपनी सारी सम्पत्ति खो दी।

बिहार या अहमदाबादके बरिद्गाही राजवंश।

कामिब बरिद् १४६२—१५०४ ई०

अमोर बरिद् १५०४—१५४६ "

अली बरिद्गाह १५४६—१५६२ "

इम्राहिम बरिद्गाह १५६२—१५६६ "

कामिब बरिद्गाह १५६६—१६२७ "

मार्जामनी बरिद्गाह १६२७—१६०४ "

अमोर बरिद्गाह (२५) १६०४ "

बरियारा (दि० पु०) हाथ मया हाथ ऊंचा एक छोटा ब्राह्मदार छत्राकार पोषा। इनकी पत्तियां तुलसीकी सों पर कुछ बड़ी और सुगन्ध रगनी होती हैं। इसमें पांटे पांटे फूल लगते हैं। जद फूल गूद जाते हैं।

तब कोढ़ोंकेमे बीज पडने हैं। पीधेकी जड दवाके काम में बहुत आती है। इसके पीधेकी छालमे बहुत अच्छा रेशा निकलता है जो अनेक कामोंमें आ सकता है। इस का गुण—कडुवा, मधुर, पित्तातिसार नाशक, बलवीर्य वर्द्धक, पुष्टिकारक और कफरोधविशोधक माना गया है।

वरियाल ( हि० पु० ) एक प्रकारका पतला बास।

वरिल ( हि० पु० ) पकीडो या बडोंकी तरहका एक परवान।

वरिल्ला ( हि० पु० ) सजीधार।

वरिल्ल ( स० पु० ) वरिष्ठ देखो।

वरिस ( हि० पु० ) वर्ष, साल।

वरी ( हि० स्त्री० ) १ गोल टिकिया, बटी। २ उह मेजा या मिठाई जो दूधकी ओरस दुलहिनके यहा जाती है। ३ उद या मूगकी पीठीके सुझाप हुए छोटे छोटे गोल टुकडे जिनमें पेठे या आढूके फतरे भी पडते हैं। ये घीमें तल कर पकाए जाते हैं। ४ एक प्रकारकी घास या वदन्न। इसके दानोंकी बाजारमें मिला कर राजपूतानेकी ओर गरीब लोग खाते हैं। ( फा० वि० ) ५ मुक, हूडा हुआ।

वरधा ( हि० पु० ) १ ग्रहचारी, वटु। २ ब्राह्मणकुमार। ३ उपनयन सस्कार। ४ मूजके छिलकेकी बनी हुई बस्ती जिससे डालिया आदि बनाई जाती हैं।

वरक ( हि० अव्य० ) वर देखो।

वरना ( हि० पु० ) भारतवर्षके प्राय सभी प्रान्तोंमें मिलनेवाला एक सीधा सुन्दर पेड। इसकी पत्तिया सालमें एक बार झडती हैं। बुसुम फालमें यह पेड फूलोंसे लद जाता है। फूल सफेद और सुगन्धित होते हैं। लकड़ी चिकनी और मजबूत होती है जिससे ढोल, कघियाँ और लिखनेकी पट्टिया अच्छी बनती हैं। इसे वना जीर बलासी भी कहते हैं।

वरनी ( हि० स्त्री० ) पलकके किनारे परके बाल।

वरला ( हि० पु० ) ब्रह्मा देखो।

वरग ( हि० पु० ) वरधा देखो।

वरुघ ( हि० पु० ) वरुघ देखो।

वरुयो—सह और गोमती नदीके बीचकी एक नदी।

वरेंडा ( हि० स्त्री० ) १ लकड़ीका वह मोटा गोल लट्टा जो पपरैल या छाजननी लवाईके बल पर पाखेसे दूसरे पाखे तक रहता है। इसीके आधार पर छप्पर या छाजनका टट्टर रहता है। २ छाजन या पपरैलके बीचो बीचका मवसे ऊंचा भाग।

वरेंटी ( हि० स्त्री० ) बरे वः देखो ॥

वरे ( हि० अव्य० ) १ पलट्टेमें। २ निमिच, चास्ते, रातिर।

वरेयो ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारका गहना जिसे स्त्रिया भुजा पर पहनती हैं।

वरेजा ( हि० पु० ) पानका बगीचा, पानका भीटा।

वरेत ( हि० पु० ) बरेता देखो।

वरेता ( हि० पु० ) सनका भीटा रस्मा, नार।

वरेती ( हि० पु० ) डोर चरानेवाला, चरवाहा।

वरेन्दा—पञ्जावप्रदेशके बसहर राज्यके अन्तर्गत एक हिमालय गिरिसङ्घट। यह अक्षा० ३१ २३' उ० तथा देशा० ७८ १२' पू०के मध्य अवस्थित है। पवर नदी पार कर इस स्थान पर आता पडता है। यह समुद्र पृष्ठसे १५०१५ फुट ऊंचा है।

वरैला—मध्यप्रदेशके मण्डला जिलान्तर्गत वनविभाग। यहां प्राय १० वर्ग मील स्थान शालवृक्षसे परिपूर्ण है।

वरैली—युक्तप्रदेशका एक जिला। वरैली देखो।

वरै डा ( हि० पु० ) वर धः देखो।

वरो ( हि० स्त्री० ) १ आल्की जडका पतला रेशा। ( पु० ) २ एक घास जिससे वागीको हानि पहुंचती है।

वरोक ( हि० पु० ) वह द्रव्य जो कन्यापक्षसे घरपक्षको यह सूचित करनेके लिये दिया जाता है, कि सम्बन्धकी बात चोत पकी हो गई। इसके द्वारा वर रोका जाता है अर्थात् उससे और किसी कन्याके साथ विवाहकी बातचीत नहीं हो सकती।

वरोठा ( हि० पु० ) १ ड्योडी, पींगे। २ बैडक, दीवान-खाना।

वरोदमेर—मध्यभारतके ग्वालियर राज्यान्तर्गत एक नगर।

वरोदा—बडोदा देखो।

वरोधा ( हि० पु० ) वह रेत या भूमि जिसमें पिछली फसल कपासकी रही हो।



बरोह (हि० ग्री०) बगमरने जया जो नानेकी ओर बटमां  
हुई जमीन पर जा कर जट पकट लेती है।

बरी छो ( हि० ग्री० ) मोनारोरो यह पूनी जो मृगणके  
यात्रोकी बनी होती है और निमने ये गहना साफ करते  
हैं।

बरी पा ( हि० पु० ) एक प्रकारका गन्ना जो बहुत ऊँचा  
या लंबा होता है।

बरीदा—१ बुन्देलखण्डके अन्तर्गत एक सामंत राज्य।  
इसका दूसरा नाम पाथरखण्ड भी है। भूपरिमाण २१८  
वर्ग मील है। यह राज्य बहुत प्राचीन कालमें बना था  
रहा है। १८०७ ई०में अङ्गरेजोंने राजा मोहामिहको मन्त  
दे कर राजसिंहासन पर प्रतिष्ठित किया। उनके कोई  
सन्तान न थी। मरने समय ये १८०७ ई०में अपने भतीजे  
सर्वतमिहको उत्तराधिकारी बना गये। यद्यपि उस  
समय गोद लेनेका अधिकार न था, तो भी मृष्टिज सर-  
कारने सर्वतमिहको मजूर पर लिया। १८६२ ई०में  
उन्हे गोद लेनेकी मन्त मिला। उनके बाद मधुबन्ध्याल्-  
मिह राजसिंहासन पर बैठे। राजाबहादुर उनको उपाधि  
थी। सरकारने ६ सलामी तोपे मिलती थीं। १८८०  
ई०में रघुवरकी मृत्यु हुई। उनके कोई सन्तान न थी,  
और न उन्हीं किसीकी गोद हो ली थी। अतः मृष्टिज  
सरकारने ठाकुर प्रसाद मिहको राज्याधिकारी बनाया।  
ये ही वर्तमान राजा हैं। मृष्टिजसरकारने इन्हे ६  
सलामी तोपे मिलती हैं।

इस राज्यमें कुल ७० ग्राम लगते हैं। जनसंख्या  
साढ़े पन्द्रह हजारमें ऊपर है। यहाँकी मापा बगेलालडो  
है।

२ उक्त राज्यको राजधानी। यह अक्षां २५ ३० उ० तथा  
देशां ८० ३८ पू० कालिङ्गमें १० मील उत्तरमें अय  
स्थित है। जनसंख्या १३६० है। यहाँ गिरि एक  
पार्श्वपुत्र स्कूल है।

बरीठा ( हि० पु० ) बरीठा देवी।

बरीनी ( हि० ग्री० ) बरीनी देवी।

बरीरो ( हि० ग्री० ) बरी या बरी नामका पर्वपान।

बरुं (अ० ग्री०) १ विद्युत्, विजली। (वि०) २ चालकर,  
तेज। ३ पूर्ण रूपसे भ्रम्यन्त, षट् उपरिष्ठत होनेवाला।

बर्कत ( हि० ग्री० ) बर्कत दे।

बब लुर—मद्राज प्रदेशके बनारा जिलेके अंतर्गत एक  
प्राचीन ग्राम। जहाँ यह स्थान ७ माघशुक्लमें पवित्र  
हो गया है। १८८१ ८४ ई०में पुर्न गौण-लेणक फेरिया-  
इ मुजाने लिया है, कि पहले इस नगरमें स्वामी  
वाणित्य चरता था। जबमें पुर्न गौणोंने यहां दुग बनाया  
तभीसे इस स्थानकी भौवृद्धिका नाम हुआ।

बैर देवी।

बर्गाम्त ( हि० वि० ) बरताल देवी।

बर्गौरा—मध्यप्रदेशकी भील एजे मीके अंतर्गत एक  
ठाकुरात सम्पत्ति। यहाँके नूमिया सरदार पार और  
मिन्डियाराजके सामंत समझे जाते हैं।

बर्गट—१ मध्यप्रदेशके मन्डलपुर जिलांतर्गत एक उप  
विभाग। यह अक्षां २० ४५ से २१ ४४ उ० तथा देशां  
८० ३८ से ८३ ५४ पू०के मध्य अयस्थित है। भूपरि  
माण ३१२६ वर्ग मील और जनसंख्या पाच लाखके  
नरीबुद्धि। १८७७ ७८ ई०के मद्रमें विद्रोहियोंने यहां भाग्य  
प्रद्वण किया था। इसमें १ शहर और ११७२ ग्राम लगते  
हैं। देवीगढका गौड दुर्ग यहाँके बहर पर्यंत पर अय  
स्थित है। जिरा नामक महानदीकी एक शाखा तह  
सालके मध्य बहती है।

२ उक्त उपविभागका प्रधान नगर। यह अक्षां २१'  
२१'५०" उ० और देशां ८३ ४३' १५" पू०के मध्य  
अयस्थित है। शहरमें एक प्रकारका मोटा बपटा तैयार  
होता है।

बर्गा—बमहर राज्यका एक हिमालयसदृश। यह अक्षां  
३१ १६ उ० तथा देशां ७८ १६ पू०के मध्य अय  
स्थित है।

बर्गी—महाराष्ट्र-दरयु गण पट्टाणमें बर्गी नामके प्रसिद्ध  
थे। ये लोग हथियारबंद दुर्गके साथ नगरमें सुरत  
और नगरवासियोंका सर्वस्व हरण कर लेते थे।

बर्गां ( हि० पु० ) बर्गा देवी।

बर्गां ( हि० वि० ) बर्गा देवी।

बर्गट ( म० पु० ) दुग्धका उत्पत्तिस्थान।

बर्गां ( म० ग्री० ) स्तनका अग्रभाग।

बर्गंत ( हि० पु० ) बर्ग देवी।

वर्तना ( हि० फि० ) १ व्यवहार करना, आचरण करना ।  
 २ व्यवहारमें लाना, काममें लाना ।  
 वर्तान ( हिं० पु० ) बरताव देखो ।  
 वर्त ( हि० पु० ) घुप, घैल ।  
 वर्दाश्त ( फा० खी० ) बरदाश्त देखो ।  
 वर्दा—मध्यप्रदेशके नामो जिलेके अन्तर्गत एक नगर ।  
 वर्ष ( फा० खी० ) १ हिम, जमा हुआ जल । जल जम कर कठिन होनेके बाद जो दूसरी अवस्थामें पलट जाता है उसी को वर्ष कहते हैं । ३२ डिग्री फारन होट उष्णसे जल जम कर कठिन हो जाता है । कठिनताप्राप्तिके साथ साथ जलमें दो प्रकारके प्राकृतिक परिवर्तन होते हैं । पहला श्वेत और कठिनाकार, दूसरा आयतनमें वृद्धि । जलके जमनेसे परिमाणमें वृद्धि होती है । शीतप्रधानदेशोंमें जल का पादप अकसर फट जाते हैं । उत्तर और दक्षिण मेघ देशमें ऐसे वर्षके अनेक पवत दरे जाते हैं । शीतके प्रादुर्भावसे इन स्थानोंकी तुपारराशि कठिन हो रूपान्तरमें प्राप्त होता है हिमालयादि पर्वतोंके हिमानीसिक उच्च शिखर पर वर्ष जमती है । कभी कभी वह लुटकती हुई नीचे गिर पड़ती है । कभी कभी उन वर्ष खड्डोंके साथ साथ शिला-राण्ड भी गिरते दरे जाते हैं । पहिले यह स्वभावजातवर्ष मानवोंके उपकारार्थ व्यवहृत होती थी । आजकल कृत्रिम रूपसे बनायी जाती है जो सब कामोंमें आती है । मत्स्य, मास जो सहज हीमें नष्ट हो सकता है उनको बचानेके लिये वर्षसे ढक कर रखा जाता है जिससे वे खराब नहीं होते । दूर देशोंसे मत्स्यादि लानेमें यह विशेष उप कारी है । यों तो लवणके योगसे भी ये सब चीजें लाई जा सकती हैं पर उससे उनमें लवणका आस्वाद आ जाता है । वर्षसे ढक कर लानेसे कीसा भी फर्क नहीं पड़ता । ज्वरादि रोगोंमें मस्तिष्कमें दाहके उपस्थित होने पर इसका व्यवहार करनेसे बहुत कुछ शान्ति मिलती है । रक्तचाप, हृिकारोग, आहतस्थान और घेदनार्थ वर्षके सघनसे बहुत कुछ फायदा देया जाता है ।  
 वर्षाका व्यवहार करनेके लिये नाना द्रव्योंका आविष्कार हुआ है । जैसे—आइसब्रेकर, आइसबैग, गिलास इत्यादि । वर्षामें औरभी एक गुण है कि उष्ण प्रधानस्थान में रखनेसे यह वायुको शीतल कर उस स्थानको भी शीतल

करती है । इस सुपका उपभोग करनेके लिये बहुतसे लोग वर्षाकी वाटिका और वर्षाका शील बनाते हैं । वर्षाके ऊपर आलोक गिरने पर उसको आलोक शक्ति बढ़ जाती है । आइसलैण्ड द्वीपका ऊपार्श्व और उत्तर में हिम-ज्योति (Aurora borealis) इसके प्रष्ट दृष्टान्त हैं ।  
 २ मज्जनों आदिकी सहायता अथवा और कृत्रिम उपायो से जमाया हुआ पानी । यह साधारण वाजारोंमें विक्रता है और इससे लोग गर्मोंके दिनोंमें पीनेके लिये जल आदि ठंडा करते हैं । ३ कृत्रिम उपायोंसे जमाया हुआ दूध या फलों आदिका रस । यह प्राय गर्मोंके दिनोंमें खानेके काममें आता है ।  
 वर्षास्तान ( फा० पु० ) वह स्थान जहा वर्ष ही वर्ष हो, वर्षाका मैदान या पहाड ।  
 वर्षी ( फा० खी० ) एक मिठाई जो चाशनीके साथ जमे हुए खोप आदिके कतरे काट काट कर बनाई जाती है ।  
 वर्षी देखो ।  
 वर्षट ( स० पु० ) जूँ अटन । राजमाप, बोडा ।  
 वर्षटी ( स० खी० ) वर्षट गीरादित्यात् टीप् । ? वेश्या, रबी । २ श्रीहिमेड, एक प्रकारका धान ।  
 वर्ष ( स० लि० ) भ्रष्ट आचरण किया हुआ, हकलता हुआ । १ घूँघरदार, उठ पाया हुआ । २ असम्य, जगली । ४ अशिष्ट, उद्दण्ड । ( पु० ) ५ वर्षाभ्रमविहीन, असम्य मनुष्य, जगली आदमी । ६ एक पौधा । ७ कौडा । ८ एक प्रकारकी मछली । ९ एक प्रकारका तृत्य । १० अर्योंकी भनकार, हथियारकी आगाज ।  
 वर्षा ( स० खी० ) १ वर्षटी, वनतुलसी । २ एक प्रकार की मछली । ३ एक नदीका नाम ।  
 वर्षी ( स० खी० ) ? वनतुलमी । २ इगुर । ३ पीत चन्दन ।  
 वर्ष ( हिं० पु० ) रस्मेकी विचार्ड जो कुआर सुनी चीन्म को गर्मोंमें होती है । जो रस्सा खींच ले जाते हैं, यह समझा जाता है, कि ये मात्र भर कृतकार्य होंगे ।  
 वर्षक ( अ० रि० ) १ चमकीला, जगमगाता हुआ । २ तेज, वेगवान् । ३ तीव्र । ४ चतुर, चागर । ५ पूज रूपसे अभ्यस्त, खूब मज्ज किया हुआ । ६ धनला, सफेद ।

बराणा ( वि० वि० ) १ कार्य बोधना, कञ्ज वचना । ०  
 मन्त्रकी अयथायामे बोलना ।

बरे ( हि० पु० ) भिष्ट नामका कोटा, तिरीया ।

बरा ( हि० पु० ) एक पत्थरका नाम ।

बराकजाह—यूनानिय गानिरजाहके पुत्र । इन्होंने १४५८ ई०में यद्दुमिहासन पर बैठ कर १७ वर्ष तक राज्य किया ।  
 गिन्नामन वरनाके साथ राज्यगामन करने इन्होंने अरबना नाम क्या लिया था । आठ हजार सिन्धो और आधि सिनिया वेगोय प्रातलासोंको ला कर इन्होंने अपना सेना दूध परिवर्द्धित और सुनिश्चित किया था । ८७६ तिनरो ( १४१४ ई० ) में इनका देहान्त हुआ ।

बरांगो—१ मध्यभारतके भुषावर पञ्जिनकोके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य । यह अथा० २१' ३६" से २२' ७" उ० तथा देगा० ७४' २८" से ७०' १६" पू०के मध्य ताम्रदादीके बायें किनारे अवस्थित है । भूपरिमाण ११७८ वर्गमील है । इसके उत्तर घात्तार, उत्तर पश्चिम अरुंगराजपुर, पूर्व इन्दौर राज्यका कुछ भाग और दक्षिण तथा पश्चिम में बम्बई का सादेरा जिला है । यहाके मरदार उदयपुरके जिओड्यय राजपुत्र वंशके हैं । १४वीं जतादीमें इन्होंने यहा सा कर राज्य बनाया । वर्त्तमानराजके ऊर्ध्वता १५वीं पीढीके परशुरामने अपनी भुजवन्धने लिन्जीयकी सेनाके मातृवराज्यमे मार भगाया था । पीढे के बरहके गये और दिहाे ला कर इस्लाम धर्ममें दीक्षित हुए । इसके बाद ये अपने राज्यमें लौट आये सही, पर सिहासन पर बैठे नहीं । अपने पुत्र भोगसिंहको सिदासन पर बिठा कर लोकलज्ञाके भयम के मीन हा कर दिन बिताते लये । उनका 'समाधि स्तम्भ' अयमगाढमें आज भी देखोमें आता है । इधर उधर पहे हुए भगदुर्ग, श्रीहीन नगर और जतागोमसुद इस राज्यको प्राचीन समसिधा निदर्शन है । विगत जतागोमें महाराष्ट्रराज के इस राज्यको पूर्व भाग नष्ट हो गई है । १८६० ई०में इस राज्यके मरदार गणोयन्त्र सिद्धकी अशमता देख प्रिन्सि सरजामने १८७३ ई० तक इस राज्यका शासन कार्य अपने सरराजानमें क्या । पीछे पनोराजने पुा शासनभार ग्रहण कर १८०० ई० तक राज्य किया । उनके मरने पर १८८० ई०में उनके भाइ इन्डिक्विन्द राज

सिहासन पर बैठे । इनका भी शासाकार्य 'सराहनीय' था । १८१४ ई०में उनको मृत्यु हुई । पीछे उनके बेटे राज्यके स्थानिकुम्बिद मोन्द उपकी अयथायामे राज सिहासन पर अधिकार हुए । ये ही वर्त्तमान राजा हैं और राजा इनको उपाधि है । वृत्तिग सरकारमे इन्हें ६ मन्त्रामो मोषे मिलती हैं ।

इस राज्यमें इसी नामका १ शहर और ३३३ ग्राम लगे हैं । जनसंख्या ८० हजारके ऊपर है जिनमें से बेटे पीछे ५० हिन्दू हैं और शेषमें मुसलमान तथा पेनिमिष्ट गानि हैं । यहाको प्रधान उपज चार, बरबरे, तिल, चना और गेहूँ है । यह राज्य चार परगनोंमें विभक्त है । हर एक परगना समासदारके अधिा है । राजस्य चार गणसे ऊपर है । राजाको किन्ही दरवारमें कर नहीं देना पडता । इन्हें गाजा, भाग, शकोम बेनीना अधिकार है । पहले पहल यहा १८६३ ई०में एक स्कूल खोला गया । पीछे १८६१ ई०में एक दूसरा स्कूल स्थापित हुआ जिस का विपटोगिया हाइ स्कूल नाम रखा गया । अभी कुल जिला पर १६ स्कूल और ६ चिकित्सालय हैं ।

० उक्त सामन्तराज्यकी राजधानी । यह अथा० २२' ०" उ० तथा देगा० ७४' ५४" पू० नमदाके बायें किनारे अय स्थित है । जनसंख्या ७ हजारके ऊपर है । बरते हैं, कि १६५० ई०में राजा चन्द्रसिंहने इस राज्यको स्वगत किया । नगरमें पाग मीलको दूरी पर भयार्गज नामका एक पत्थर है जिस पर बहुतसे जैन मन्दिर देगनेमें धाने हैं । प्रविष्य जावरी माममें मन्दिरके पर्याप्तदूरमें एक मीला लगता है । यहा ग्रेट अतिथि भया, अल्पना, सरकारी डाकघर और टेलीग्राफ, एक बारागार तथा एक स्कूल हैं ।

बरांगो -१ पन्नाबस्त्रदेनाके हिस्सा जिलेकी एक तहसील । भूपरिमाण ५८० वर्गमील है ।

० उक्त जिलेका एक नगर और तहसीलका सदर । इसके चारों ओर पहा हुआ भग्नावशेष इसकी पूर्वी समुलिका परिचय देता है । आज भी यहा पहरेके जैगा यापिण्यभूत बह रहा है । यहाके प्रचान आधिवासी सिद्ध हैं । ये ही लोग पार्थपरवीं भूभागके बर्त हैं ।

बरांग - पन्नाबस्त्रके आबाराज्यके अन्तर्गत एक प्राचीन

नगर। यह धर्मपुरी नामसे प्रसिद्ध है और इरावती नदीकी सुधिल शाखाके बाएँ किनारे अवस्थित है। यहा तीन अति प्राचीन मन्दिरोंका भग्नाशेष देखा जाता है। अभी वह मन्दिर वृक्षोंसे ढक गया है। मन्वने बडे मन्दिर में मणिमहेश नामक शिवमूर्ति, गणेश, दुर्गा आदि मूर्तिया प्रतिष्ठित हैं। शेषोक्त मन्दिर बालब्रह्मदेवके प्रपौत्र मेघब्रह्मदेवने बनजाया था। इसके अलावा मेरुब्रह्म द्वारा प्रतिष्ठित एक और गणेशमन्दिर देखा जाता है।

वर्मायण—गाजीपुर जिलेके बलिया नगरसे तीन कोस उत्तरमें अवस्थित एक प्राचीन नगर। वर्मायणजीके मन्दिरके लिये यह स्थान बहुत कुछ विख्यात है। एक ब्राह्मणरमणी इस मन्दिरकी परिवारिका है। मन्दिरमें एक शिलालिपि भी है। डा० फनिहमने शिलालिपिके समयसे ही उसका प्राचीनत्व स्वीकार किया है। इसके अलावा सैकड़ों बौद्ध स्तूपारामादिका ध्वंसावशेष देखनेमें आता है।

बवुर (स० ह्नी०) वर्ष उरुच। १ उदक, जल। बुर रक वृक्ष, बवूलका पेड़।

वर्स (स० पु०) प्रान्तभाग, अगला हिस्सा।

वर्साना—युक्तप्रदेशके मथुरा जिलान्तर्गत छात तहसील का एक शहर। यह अक्षा० २७ ३६ उ० तथा देशा० ७७ २३ पू० मथुरा शहरसे ३१ मील उत्तर पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या ३५४२ है। यहाके हिन्दुओंका विश्वास है, कि श्रीकृष्णजी की राधिकादेवीका यह प्रिय वास भवन था। इसके पास ही प्रह्ला नामका एक पहाड़ है जिसकी चार चोटो पर १८वीं और १६वीं शताब्दीके बने हुए चार भवन शोभा दे रहे हैं। उन चारमेंसे प्रधान भवनमें, कहते हैं, कि एक समय भरतपुर, ग्वालियर और इन्दौरराज पुरोहित एक ब्राह्मण रहते थे। अभी यहा जयपुरके महाराजने एक सुन्दर मन्दिर बनवा दिया है। यहा बहुत सी पुण्य सलिला पुष्करिणी भी हैं जिनमें स्नान करनेके लिये दूर दूरके लोग आते हैं।

वर्सांत (हि० खी०) बरसात ऋणो।

वर्ष (स० पु०) दन्तपीठ।

वह (स० ह्नी०) वह अच्। १ मयूरपुच्छ, मोरका पंख। २ पत्त, पत्ता। ३ परिवार, कुटुम्ब।

वह केतु (स० पु०) वह केतुदिग्घ्न यस्य। नयम मनुक् पुत्रभेद।

वहणे (स० लि०) वह ल्यु। पत्त, पत्ता।

वहणा (स० लि०) शत्रुहिंसक, शत्रुका संहार करने वाला।

वहणात् (स० लि०) वहणा मनुष्य, मस्य व। हिंसा युक्त।

वहणाश्व (स० पु०) राजा निकुम्भके एक पुत्रका नाम।

वहभार (स० पु०) वहसमूह, मयूरकी पुच्छराशि।

वहम् (स० ह्नी०) वह स्तुती-असुत्। बुध-आन्तरण।

वहिस (स० पु०) वृहयति वृहि रुद्धी इति, नलोपगन्। प्रथिपर्ण, गठिवनका पेड़।

वहिपुप (स० ह्नी०) वहिर्दासिस्तद्वयुक्त पुपमस्य। प्रथिपर्ण, गठिवनका पेड़।

वहिकुसुम (स० ह्नी०) वहिवहयुक्त कुसुम यस्य। प्रथिपर्ण, गठिवन।

वहिण (स० पु०) वहमस्त्यप्येति वह 'कलवर्हाभ्यामि-नच्' इति इनच्वा (बहुलमनात्वापि। उण् २।४६) इति इनच्। १ मयूर, मोर। (ह्नी०) २ तगर।

वहिणवाहन (स० पु०) वहिणो मयूरो वाहन यस्य। कार्तिकेय।

वहिध्वजा (स० खी०) वही ध्वजो वाहन यस्या। चण्डी।

वहिन (स० पु०) वहि अस्त्यर्थे इति। २ मयूर, मोर। २ प्राधापुत्र।

वहिपुष्प (स० ह्नी०) वहिर्नहशालि पुष्प यस्य। प्रन्थिपर्ण, गठिवन।

वहियान (स० पु०) वही मयूर यान यस्य। कार्तिकेय।

वहियोतिस (स० पु०) वहिपि यज्ञे ज्योतिरस्य। यहि, भाग।

वहिसुप (स० पु०) वहिरग्निमुप यस्य। देवता। अग्नि देवताओंके मुखस्वरूप है, इसीसे अग्निमें होम करनेसे वह देवताओंको प्राप्त होता है।

बर्मा ( हि० कि० ) १ धर्य बोलना, फजूल बचना ।  
स्वप्नकी अपस्थामें बोलना ।

बर् ( हि० पु० ) मिड नामका कीड़ा, तिनैया ।

बर् ( हि० पु० ) एक पक्षीका नाम ।

बर्माशाह—बङ्गाधिप नागिरशाहके पुत्र । इन्होंने १४५८ ई०में बङ्गमिहामन पर बैठ कर १७ वर्ष तक राज्य किया ।

विजयनगर दक्षिणाके साथ राज्यशासन करके इन्होंने अच्छा नाम बना लिया था । आठ हजार निघो और आवि सिनिया देगोय मोतदासीको ला कर इन्होंने अपना सेना डल परिवर्द्धित और सुशिक्षित किया था । ८७६ हिजरी ( १४१४ ई० ) में इनका देहान्त हुआ ।

बर्मा—१ मध्यभारतके भुपावर पजेन्वाके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य । यह अक्षा २१° ३६' से २२° ७' ३० तथा देशा ७४° २८' से ७५° १६' पू०के मध्य नर्मदाको बायें किनारे अवस्थित है । भूपरिमाण ११७८ वर्गमील है । इसके उत्तर धारराज्य, उत्तर पश्चिम अलीगजपुर, पूर्व इन्दोर राज्यका कुछ अंश और दक्षिण तथा पश्चिम में बम्बईका ग्वादेश जिगा है । यहाके समुद्र उद्योगके शिशोदीय राजपूत वशके हैं । १४वीं शताब्दीमें इन्होंने यहा आ कर राज्य बसाया । वर्तमानराजके ऊँह तन ८५वीं पीढीके परशुपामने अपने भुजबलसे दिल्लीश्वरकी सेनाको मालवराज्यमे मार भगाया था । पीछे ये एकडे गये और दिहो ला कर इस्लाम धर्ममें दीक्षित हुए । इसके बाद वे अपने राज्यमें लौट आये सही, पर सिंहासन पर बैठे नहीं । अपने पुत्र भीमसिंहको सिंहासन पर बिठा कर लोकरलजाके भयसे वे मौन हो कर दिन बिताने लगे । उनका 'समाधि स्तम्भ' अवसगडमें आज भी देखनेमें आता है । इधर उधर पड़े हुए भग्नदुर्ग, श्रीहोन नगर और जलनालीसमूह इस राज्यकी प्राचीन समृद्धिका निदर्शन है । विगत शताब्दीमें महाराष्ट्रप्रवाद से इस राज्यकी पूर्व धी नष्ट हो गई है । १८६० ई०में इस प्रदेशके सरदार यशोवन्त सिंहको अक्षमता देख ब्रिटिश सरकारने १८७३ ई० तक इस राज्यका शासन कार्य अपने तत्त्वाधानमें रखा । पीछे यशोवन्तने पुनः शासनभार ग्रहण कर १८८० ई० तक राज्य किया । उनके मरने पर १८८० ई०में उनके भाई इन्द्रजित्सिंह राज-

मिहामन पर बैठे । इनका भी शासनकार्य सराहनीय न था । १८६४ ई०में उनकी मृत्यु हुई । पीछे उनके बेटे लङ्के रणजित्सिंह सोलह वर्षकी अपस्थामें राज मिहामन पर अधिरूढ हुए । ये ही वर्तमान राजा हैं और राणा इनकी उपाधि है । ब्रिटिश सरकारसे इन्हें ६ सलामी तोष मिलती है ।

इस राज्यमें इसी नामका १ जहर और ३३३ ग्राम लगते हैं । जनसंख्या ८० हजारसे ऊपर है जिनमेंसे सैकडे पीछे ५० हिन्दू हैं और शेषमें मुसलमान तथा पेनिमिए आदि हैं । यहाकी प्रधान उपज ज्वार, मक्का, तिल, चना और गेहूँ है । यह राज्य चार परगनामें विभक्त है । हर एक परगना कमासदारके अधिन है । राजस्व चार लाखसे ऊपर है । राजाको किसी दरबारमें फेर नहीं देना पडता । इन्हे गाजा, भाग, अफोम बेचनेका अधिकार है । पहले पहल यहा १८६३ ई०में एक स्कूल खोला गया । पीछे १८६१ ई०में एक दूसरा स्कूल स्थापित हुआ जिसका विष्टोरिया हाई स्कूल नाम रखा गया । अभी कुल मिला कर १६ स्कूल और ६ चिकित्सालय हैं ।

२ उक्त सामन्तराज्यकी राजधानी । यह अक्षा २२° ३० तथा देशा ७४° ५४' पू० नर्मदाके बायें किनारे अवस्थित है । जनसंख्या छ हजारसे ऊपर है । कटते हैं, कि १६५० ई०में राणा चन्द्रसिंहने इस राज्यको स्थापन किया । नगरमें पांच मीलको दूरी पर भवनगज नामका एक पत्त हे जिस पर बहुतेसे जैन मन्दिर देखनेमें आते हैं । प्रतिवर्ष जनवरी मासमें मन्दिरके पर्वोत्सवमें एक मेला लगता है । यहा स्टेट अतिथि भवन, अस्पताल, सरकारी डाकघर और टेलीग्राफ, एक कारागार तथा एक स्कूल हैं ।

बर्मा—१ पञ्जाबप्रदेशके हिमाचल जिलेकी एक तहसील । भूपरिमाण ५८० वर्गमील है ।

२ उक्त जिलेका एक नगर और तहसीलका सदर । इसके चारों ओर पडा हुआ भग्नावशेष इसकी पूर्व समृद्धिका परिचय देता है । आज भी यहा पहलेके जैसा वाणिज्यक्षेत्र बह रहा है । यहाके प्रधान आधिवासो मैयद ह । ये ही लोग पाण्डुवर्ती भूभागके बर्सा हैं ।

बर्मावर—पञ्जाबके चम्पाराज्यके अन्तर्गत एक प्राचीन,

नगर। यह वर्मापुरी नामसे प्रसिद्ध है और शरावती नदीकी सुधिल शाखाके बाएँ किनारे अवस्थित है। यहा तीन अति प्राचीन मन्दिरोंका भग्नावशेष देखा जाता है। अभी यह मन्दिर वृक्षोंसे ढक गया है। सबसे बड़े मन्दिर में मणिमहेश नामक शिवमूर्ति, गणेश, दुर्गा आदि मूर्तिया प्रतिष्ठित हैं। शेषोक्त मन्दिर बालरामदेवके प्रपीत्र मेरुवर्मदेवने बनवाया था। इसके अगवा मेरुवर्म द्वारा प्रतिष्ठित एक और गणेशमन्दिर देखा जाता है।

**वर्मायण—गाजीपुर** जिलेके बलिया नगरसे तीन कोम उत्तरमें अवस्थित एक प्राचीन नगर। वर्मायणजीके मन्दिरके लिये यह स्थान बहुत कुछ विख्यात है। एक ब्राह्मणरमणी इस मन्दिरकी परिचारिका है। मन्दिरमें एक शिलालिपि भी है। डा० फर्निहमने शिलालिपिके समयसे हो उसका प्राचीनत्व स्वीकार किया है। इसके अलावा सैरुडों बौद्ध सङ्घारामादिना धर्मशावशेष देखनेमें आता है।

**वर्चुर (स० झी०)** वर्च-उरच्। १ उदक, जल। बरू रक वृक्ष, बबूलका पेड़।

**वर्स (स० पु०)** प्रान्तभाग, अगला हिस्सा।

**वर्साना—युक्तप्रदेशके मथुरा** जिलान्तर्गत छात तहसील का एक शहर। यह अक्षा० २७ ३६ उ० तथा देशा० ७७ २३ पू० मथुरा शहरसे ३१ मील उत्तर पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या ३५४२ है। यहांके हिन्दुओंका विश्वास है, कि श्रीकृष्णकी रानी राधिकादेवीका यह प्रिय वास भवन था। इसके पास ही प्रह्ला नामका एक पहाड़ है जिसकी चार चोटी पर १८वीं और १६वीं शताब्दीके बने हुए चार भवन शोभा दे रहे हैं। उन चारमेंसे प्रधान भवनमें, कहते हैं, कि एक समय भरतपुर, गालियर और इन्दौरराज पुरोहित एक ब्राह्मण रहने थे। अभी यहां जयपुरके महाराजने एक सुन्दर मन्दिर बनवा दिया है। यहां बहुत सी पुण्य सलिला पुष्करिणी भी हैं जिनमें स्नान करनेके लिये दूर दूरके लोग आते हैं।

**वर्सान्त (हि० स्त्री०)** वर्षात देरों।

**वर्च्य (स० पु०)** दन्तपीड।

**वर्ह (स० स्त्री०)** वर्ह-अच्। १ मयूरपुच्छ, मोरका पक्ष। २ पल, पत्ता। ३ परित्राण, कुटुम्ब।

**वर्ह केतु (स० पु०)** यह केतुग्रिह यस्य। नयम मनुके पुत्रभेद।

**वर्हण (स० स्त्री०)** वर्ह-न्त्यु। पल, पत्ता।

**वर्हणा (स० स्त्री०)** शत्रुहिंसक, शत्रुका संहार करने वाला।

**वर्हणावत् (स० स्त्री०)** वर्हणा मतुप, मस्य व। हिंसा युक्त।

**वर्हणाश्व (स० पु०)** राजा निकुम्भके पुत्रका नाम।

**वर्हभार (स० पु०)** वर्हसमूह, मयूरकी पुच्छराशि।

**वर्हस (स० स्त्री०)** वह-स्तुतो-असुन्। दुग्-भास्तरण।

**वर्हिस (स० पु०)** वृहयति वृहि वृद्धी इति, नलोपच। प्रथिपर्ण, गठिनका पेड़।

**वर्हिपुप (स० स्त्री०)** वर्हिर्दोतिस्तद्व्युक्त पुपमस्य। प्रथिपर्ण, गठिनका पेड़।

**वर्हिहसुम (स० स्त्री०)** वर्हिर्वह्युक्त हसुम यस्य। प्रथिपर्ण, गठिन।

**वर्हिण (स० पु०)** वर्हमस्त्यस्येति यह 'कल्बर्हाम्यामित्' इति इन्च्वा ( बहुवचनवापि। उण् २।४६ ) इति इन्च्। १ मयूर, मोर। ( स्त्री० ) २ तगर।

**वर्हिणगहन (स० पु०)** वर्हिणो मयूरो वाहन यस्य। कार्तिकेय।

**वर्हिध्वजा (स० स्त्री०)** वर्हो ध्वजो वाहन यस्या। चण्डी।

**वर्हिन (स० पु०)** वर्ह अस्त्यर्थे इति। २ मयूर, मोर। २ प्राधापुत्र।

**वर्हिपुप (स० स्त्री०)** वर्हि वर्हशालि पुप यस्य। प्रथिपर्ण, गठिन।

**वर्हियान (स० पु०)** वर्हो मयूर यान यस्य। कार्तिकेय।

**वर्हियोतिस (स० पु०)** वर्हियि यजे ज्योतिरस्य। वर्हि, भाग।

**वर्हिमुप (स० पु०)** वर्हिरनिमुष यस्य। देवता। अनि देवताओंके मुखस्वरूप है, इसीसे अग्निमें होम करनेसे वह देवताओंको प्राप्त होता है।

वहियुष्मन् (स० पु०) वहि कुग वल्मस्य । वहि, आग ।

वहियुष्मन् (स० पु०) वहिपि अग्नी, कुगामने या सीदन्ति । वहिपि । विगणनिशेष, विगधिष्ठान् डेवगण । पित्रुणां आदि के उद्देश्यसे तर्पण करनेमें पहले इन्हींके उद्देश्यसे तर्पण करने की उचित विधि तर्पण करना होता है । इन पितरोंके उद्देश्यसे किसी किसीने तीन बार और किसीने एक बार तर्पण करनेको बतलाया है ।

“अनिष्टान्तास्तथा सौम्यान् हविभन्तस्तोथम्पान् ।

सुकालिनो वहिपद आज्यपास्तर्पथेत्ततः ॥”

(आह्निकतत्त्व) तपण देखो ।

० पृथुप्रशज हविर्दानके पुत्रका नाम ।

वहियुष्मन् (स० पु०) वहिस् सद किय पृथोदरादित्वात् सायुः । वहियुष्मन् शब्दात् ।

वहियुष्मन् (स० लि०) १ बालक नामक गन्धद्रव्य । २ दर्भयुक्त ।

वहियुष्मन् (स० पु०) अग्नि, आग ।

वहियुष्मन् (स० इ०) १ हीरे । (लि०) २ कुशस्थित ३ उद्भूततम ।

वहियुष्मन् (स० लि०) १ कुशयुक्त । २ यज्ञयुक्त यजमान ।

वहियुष्मन् (स० लि०) वहिपि दत्त वहिपि हितमिति या यत् ।

यह विष्ट जो कुश पर रखा जाता है ।

वहियुष्मन् (स० पु०) वहियुष्मन् ।

वहियुष्मन् (स० लि०) वहियुष्मन् ।

वहियुष्मन् (स० इ०) १ कुश । २ दीप्ति । ३ अग्नि ।

वहियुष्मन् (स० लि०) ऊचा ।

वहियुष्मन् (स० पु०) भारतके अनेक भागोंमें मिलनेवाला एक पेड़ । इसके फल खट्टे होते हैं और अचारके काममें जाते हैं । फलके रससे लोहे परके दाग भी साफ होने जाते हैं । इसकी लकड़ीसे देतीके सामान बनाये जाते हैं ।

वहियुष्मन् (स० इ०) बलते विष्मन् हस्तोति बल पचाद्यच ।

१ सेन्य, सेना । - स्यौल्य, मोटापन । ३ सामर्थ्य, ताकत । पर्याय—त्रिपिण, तर, सह, शौर्य, स्वामन्, शुभ, शक्ति, पराम्भ प्राण, महत्, शुभम्, उर्जस् ।

वेदिक पर्याय—ओजस्, पाजस्, जय, तर, त्वक्ष, शब्द, वाध

शुभम्, तविपी, शुभ, शुष्ण, शूय, वक्ष, वीडु, वीर, सह, यह, वध, र्ग, रजन, रक्, मज्जना, पीत्स्यानि, धर्मसि, त्रिपिण, स्वन्त्रास, जम्बर । (वेदनिघण्टु) गममें बालकके ६ मासमें बल आ जाता है । ४ गन्धरस । ५ रूप । ६ शुक्र । धातुओंका जो मुख्य तेज है वही ओज या बल कहलाता है । ७ वपु, शरीर । ८ प्लव, कौपल । ९ रक्त, गून्, १० काक, कौया । ११ बलदेव, बलराम । १२ वरुणवृक्ष । सद्योबलकर और सद्योबलहर द्रव्य—

“सद्योबलकरास्त्रीणि धालाभ्यङ्गं सुभोजनम् ।

सद्योबलहरास्त्रीणि, अध्वान मैथुन उवरः ॥”

(वैद्यक)

धालास्त्रीस भोग, तैलमर्दन और उत्तम भोजन से सद्योबलकर तथा अधिक भ्रमण, मैथुन, उवर से तीन सद्योबलहर हैं । पूर्वांक तोनोंके सेपनसे बल बढ़ता है और अन्तके तोनोंसे बलका क्षय होता है ।

विद्या, अभिजन, मिल, वृद्धि, सत्त्व, धन, तप, सहाय, वीर्य और दैव ये १० बल हैं । जिनके ये सब होते हैं उसके दश प्रकारके बल होते हैं और वही व्यक्ति बलवान् कहलाता है । सुश्रुतमें बलके सम्बन्धमें यों लिखा है—

रमसे ले कर वीर्य पर्यन्त समधातुओंके जो उत्कृष्ट तेज हैं, आयुर्वेदके शास्त्रोंमें उसी तेज या ओजको बल बतलाया है । बलके होनेसे शरीर पुष्ट और मज्जत होता है, सब काम करनेमें उत्साह दिखाई देता है, शरीर प्रसन्न रहता है और वाद्य तथा अभ्य तरकी द्रविया घे-रोकटोक अपना काम करने लगती हैं । (सुश्रुत २५ अ०)

शरीरके ओज अथवा बल सीमगुणत्रिगुण, क्रोध, भ्रं तरण, जीतल, स्थिर, मरस, मृदु और सुगन्धित है । यह शरीरमें गुल रूपसे रहता है, और इससे प्राणकी रक्षा होती है । यह शरीरके सभी अवयवोंमें व्याप्त हो कर रहता है । इसके नहीं रहनेसे शरीर शीर्ष बन जाता है । सब धातुओंसे जो सार निकलता है, वही ओज अथवा बल है । मानसिक और शारीरिक बलेश, क्रोध, शोक, एकाग्रचित्तता, धर्म और धृष्टा आदि कारणों से बलका नाश होता है । बलके नाशसे तेज भी जीवोंसे एक ओर किनारा कर जाता है ।

बलके विकार और क्षयसे न विद्यमानोंमें त्रिगुणत्व,

शरीरमें अयसन्नता आ जाती है तथा वात, पित्त और श्लेष्माका प्रकोप होने लगता है। शरीर किसी प्रकारकी क्रिया करनेमें लायक नहीं रहता। बलके विकारसे शरीरमें स्तब्धता, भारीपन, प्रायुजन्य सूजन, वर्णकी विभिन्नता, ग्लानि, नंद्रा, निद्रा आदिके लक्षण दोपने लगते हैं। बल क्षय होनेसे मूर्च्छा, मामक्षय, मोह, प्रलाप और मृत्यु तक हो जाती है।

बलके तीन प्रकार दोष होते हैं—व्यापन, विन्न सा और क्षय। शरीरकी शिथिलता, अयसन्नता और श्रान्ति, वायु, पित्त, कफकी विरति तथा स्वभावसे शरीरका इन्द्रिय कार्य जिस परिमाणमें होना चाहिये उस परिमाण में नहीं होना, विन्न सा होने पर ये सब लक्षण होते हैं। शरीरका भारीपन, स्तब्धता, ग्लानि, शारीरिक वर्णकी विभिन्नता, तन्द्रा, निद्रा और वायुजन्य शोफ आदि बलके व्यापन होने पर ये सब लक्षण होते हैं। बलके क्षय होने पर मूर्च्छा, मासक्षय, मोह, प्रलाप और अज्ञान ये सब लक्षण अथवा मृत्यु तक हो जाती है। बलके विन्न सा या व्यापद होने पर नाना प्रकारके अविद्यद प्रतिकारोंसे उसे स्वाभाविक अस्थायी लाने। अविद्यद क्रियाका यहा पर तात्पर्य है, जिसके सेवनसे कौसा भी विकार उत्पन्न न हो।

-भावप्रकाशके मतसे बलके लक्षण—रससे शुरु पर्यन्त पुष्टिहेतु समस्त कार्योंमें पटुता होनेको बल कहते हैं।

बलक्षयके लक्षण—देहकी शुष्कता, स्तब्धता, मुख ग्लानि, विवर्णता, तन्द्रा, निद्राधिक्; तथा वातजन्य शोथ आदि लक्षणोंसे बलक्षय जानना चाहिये।

बलवृद्धिके हेतु—जिन द्रव्योंसे अग्नि और दोषोंकी समता हो धातु पुष्ट होता है उन्हीं द्रव्योंके सेवनसे बल की वृद्धि होती है। दोष, धातु और मल इनमेंसे किसी एकका क्षय होने पर जिन द्रव्योंसे उसकी पूर्ति हो उसी भोजनको अभिलाषा सक्ती होती है। क्षीण व्यक्तिको जिस द्रव्यके पानेकी इच्छा हो वही द्रव्य यदि उसे खानेकी मिले तो शारीरिक क्षयप्राप्त अथवा पूरण होता है। उस समय अपने आप ही बलकी पूर्ति हो जाती है। रसोंके तृणाधिर्ज्ञानेसे ही शरीर दृश और स्थूल होता है। स्थूलता या कृशता दोनों ही निन्दनीय

हैं। ब्रह्मचर्य, ध्यायाम, पुष्टिकर भोजन ही सदा विधेय है। पुष्टिकर और क्षीणकर दोनों प्रकारके द्रव्य खानेसे शरीरमें अजरम संचालित हो मर्त धातुओंकी समान भावसे पुष्टि होती है। शरीरमें यदि सप्त धातु समान भावसे हों, तो शरीर स्थूल और दृश न हो कर मध्यम भावमें रहता है, सब कार्योंमें समर्थ होता है तथा क्षय, पिपासा, शोथ, गर्मी आदि मह सम्ता है। शरीरस्थ दोष, धातु आदिना कोई निरूपित परिमाण नहीं है। इस लिये शरीरमें ये समान भावसे हैं या नहीं उसका अन्य कारणोंसे निर्णय नहा किया जा सकता। शरीर जब स्वस्थ हो तभी जानना चाहिये, कि तीनों समान हैं। शरीरकी शिथिलता यदि अप्रसन्न मालूम पड़े तो जानना चाहिये, कि बलना हास हुआ है। शरीरमें बल, दोष धातुओंके समानभावमें रहनेसे अन्त करण और इन्द्रिय प्रवृत्ति प्रसन्न रहती है। ( भावप्र० और सुध्रु० )

मनुष्यमें जितना भी बल है उनमें दैवबल ही सबसे प्रधान है। मानव यदि दैवबलसे बलीयान हो, तो वह कठिनसे कठिन काम भा कर सकता है। ब्रह्मर्षि वर्त पुराणके गणेशचण्डसे लिखा है—

अमलस्य बल राजा बालस्य रदित बलम् ।

बल मूर्गस्य मौनन्तु तस्करस्यानुत् बलम् ॥

( ब्रह्मवैवर्तपुरा० शोऽ० २५ अ० )

जो बलहीन है उनके राजा ही बल है। बालकका रोना, मूर्गका मौन तथा चोरका असत्य ही बल है।

इस प्रकार क्षत्रियका युद्ध, वैश्यका वाणिज्य, भिक्षुकी भिक्षा, शूद्रका विप्रसेवन, वैश्याकी हरिमिकि और हरिके प्रति दास्य, खलके प्रति हिंसा, तपस्वीकी तपस्या, वैश्याका भेय, खीना योगन, साधुका सत्य और पण्डितकी विधा हो परमात् बल है। इस प्रकार सभी मनुष्यके बलना नियम अभिहित है। विस्तार हो जानेके भयसे नहीं लिखा गया। बलदेव दे० ।

१३ वायुकरुष प्रदत्त कार्तिकेयके पत्र अनुचरका नाम । १४ श्रीरामचन्द्रके पुत्र कुण्डके चर्ममें उत्पन्न परिव्रात के एक पुत्रका नाम । १५ दत्तायुके पुत्रका नाम । १६ मेघ,



रादल । १७ दैत्यत्रिशय । देवीपुराणमें इसके त्रियय  
में ऐसा लिखा है—

पूर्वकालमें वल नामका एक महापलिष्ठ पराक्रमी  
दैत्य था । इन्द्र चन्द्र प्रभृति अमरगण और यक्ष  
ग धर्मगण उससे डरते थे । उस दैत्यने देवताओं को  
युद्धमें परास्त कर स्वर्गमें इन्द्र के सिंहासन पर अधि-  
कार जमाया । पीछे उसने महात्रिपथा नामेन्द्रोंको वल  
पूर्वक अपने कायमें किया और गरुडको अपना भृत्य  
बना कर ब्रह्मा महित समस्त स्वर्ग जासी देवोंको स्वर्गसे  
पाताल मार भगाया । देवगण सौं वष तक उसके भयसे  
पातालमें रहे । पीछे उन्होंने बृहस्पतिकी शरण ली । बृह-  
स्पतिके परामर्शसे वे त्रिण्युके पास पहुंचे । त्रिण्युने उनसे  
कहा, "हे देवगण । महावलिष्ठ वल अतिशय नीति परायण,  
धार्मिक और युद्धमें अजेय है उसे युद्धमें पराजय करना सहज  
नहीं" अनन्तर वे सत्रके मंत्र महामायाकी शरणमें गये ।  
महामायाकी मोहनीविधासे त्रिण्यु युद्धब्रह्मणका रूप धारण  
कर वेदपाठ करते करते बलामुरके द्वार पर उपस्थित हुए ।  
त्रिण्युमोहिनी मन्त्रको जप वे बलामुरमें बोले, "मैं कश्यप  
पुत्र हूँ, मुझे देवानों मेजा है, ऋषियों ने देवों के साथ यह  
आरम्भ किया है, मैं उसी यज्ञको निपाटनके लिये  
आपके पास आया हूँ । आप दान दीजिये जिससे यह  
यज्ञ सम्पन्न हो । बलामुरने यह सुन प्रतिज्ञा की, 'जो  
वस्तु तुम्हें यज्ञ करनेके लिये आवश्यक होगी वह मैं  
दूंगा, यहाँ तक, कि मैं अपना जीवन भी दे सकूंगा ।'  
त्रिण्युरूपी बड़ द्विज उपयुक्त समय देग बोले, 'वह  
यज्ञ तुम्हारे शरीरसे ही सम्पन्न होगा । अतएव मैं तुम्हारे  
शरीरको मागत हूँ ।' ऐसा कह उन्होने उमका मस्तक  
सुदर्शनचक्रसे काट डाला । जब उस दानरत्न भौतिक  
देहका परित्याग कर दिव्य देह प्राप्त की बलामुर  
के अङ्ग प्रदङ्गोने हीरा भौती माणिक्य पन्ना वन गये  
और उसका शरीर मत्पात्रके दान करनेसे रत्नाकर हुआ ।

( देवीपुराण ५७ ७० )

१८ भार उडानेकी शक्ति, मह । १९ आश्रय, महारा ।  
२० आसरा, भरोसा । २१ पार्श्व, पहलू । ( त्रि० ) २२  
वलयुद्ध, ताकतपत्र ।  
वल ( हि० पु० ) १ लपेट, फेर । २ ऐठन, मनेड ।

३ टेढ़ापन, फज । ४ अन्तर, फर्क । ५ अधपके जानी  
वाल । ६ फेरा, लपेट । ७ लहरदार घुमाव, पेच । ८  
निकुडन, गुलफट ।

वलम्बना ( हि० कि० ) १ उबलना, उफान खाना, गौलना ।  
२ उमडना, जोशमें आना ।

वलकन्द ( स० पु० ) मालाकन्द ।

वलकर ( स० लि० ) करोतीति कर, वलस्य करः । १  
वलजनक, जिसमें बलकी वृद्धि हो । ( क्ली० ) २ अस्थि,  
हड्डी ।

वलकल ( स० पु० ) धक्कल देतो ।

वलकाना ( हि० कि० ) १ उबालना, गौलना २ उते  
जित करना । उमारना ।

वलकुशा ( हि० पु० ) पूर्वीय भारतमें मिलनेवाला एक  
प्रकारका वंस । यह चालीस पचास हाथ लंबा और  
दश बारह अंगुल मोटा होता है । गांठे इसकी लयी  
होती हैं जिन पर गोल छल्ला पडा रहता है । यह  
बहुत दृढ़ होता है और पाइठ बाधनेके कामके लिये बहुत  
अच्छा होता है । इसका दूसरा नाम भलुभा, बडा  
वांस, सिलबदशा भी है ।

वलकृत ( स० लि० ) बल करोति कृ विप्, तुक्च । बल  
कारक ।

वलक्ष ( स० पु० ) बलते क्तिप् बल अक्षत्यस्मिन् घञ्,  
वलक्ष इति । १ श्वेतवर्ण । ( लि० ) २ बलयुक्त ।

वलचिन् ( स० लि० ) जाहूलीन् देशगत ।

वलगुमा ( स० खी० ) धौड रमणीमेड ।

वलचक्र ( स० क्ली० ) १ सैन्यव्यूह । २ राजदण्ड ।

वलचक्रगर्जिन ( स० पु० ) सम्राट्, राजराजेश्वर ।

वलज ( स० क्ली० ) बलवृत्तमाहसयुद्धादिकात् जायते  
वल-जन ड । १ क्षेत्र, वन । २ पुरद्वार, नगरका  
द्वार । ३ शस्य, फसल । ४ धान्यराशि, धानका ढेर ।  
५ युद्ध, लडाई । ६ द्वार, दरवाजा । ( लि० ) ७  
वलजन्य ।

वलजा ( स० स्त्री० ) बलज टाप । १ पृथ्वी । २ यथिफ्त,  
एक प्रकारकी जुही । ३ रज्जु, रस्ती ।

बलद् ( स० पु० ) बल ददातीति दा क् । १ जोरक नामका  
वृक्ष । २ होमानि । होम करनेके समय काय विशेषमें

अनिका मिन्न मिन्न नाम रया गया है। पौष्टिक फसमें अनिका नाम 'बल' है। इस बलद नामसे ही अनिका होम करना होता है। "पौष्टिके बलद स्थत (विधितस्व) ३ पुषम, सौंड ४ पर्यट्क, पित्त पापडा ५ अण्वगन्धा ६ बलदाता, बल देनेवाला।

बलदण्ड (स० पु०) कसरत करनेके लिये लकड़ोका बना हुआ एक ढाचा। इसमें एक काठके दोनो ओर फमानको तरह दो निरखी लकड़िया लगी होती हैं। इसे गट्टेदण्ड भी कहते हैं।

बलदा (स० स्त्री०) अण्वगन्धा।

बलदाऊ (हिं० पु०) १ बलदेव, बलराम।

बलदीनता (स० स्त्री०) बलस्य दीनता। ग्लानि, लज्जा।

बलदेव (स० पु०) वरेन दीव्यतीति दिव अच्। बलराम। इन्होंने अनन्तदेवके अश्रमे जन्म ग्रहण किया था, इसीसे वे शेषागार समझे जाते हैं। (भा०त १।६०।१५१)

विष्णुपुराणमें इस प्रकार लिखा है—गोकुलमें रोहिणी नामकी वसुदेवके पत्नी और पत्नी थी। देवकीके जब सातवाँ गर्भ हुआ, तब महामायासे व सके भयसे उस गर्भको रोहिणीके उदरमें रस दिया। इस प्रकार गर्भ सङ्कषणके लिये उस गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न हुआ, वह पीछे सङ्कषण कहलाया। इसीसे बलदेवका दूसरा नाम सङ्कषण भी है। (विष्णुपु० ५।२ अ०) ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें नामनिरुक्तिके विषयमें लिखा है, कि गर्भसङ्कषणके कारण सङ्कषण, वेदमे अत नहीं होनेके कारण अनन्त, बलोत्प्रेषके कारण बलदेव, हल धारणके कारण हली, नीलगन्धम परिधान करनेके कारण जित्तिवास, मूषण अथ होनेके कारण मूषली, रैवती पत्नी होनेके कारण रैवतीरमण और रोहिणी गर्भसम्भूत होनेके कारण इनका रौहिण्य नाम पडा था। (ब्रह्मवैवर्त्तपु० श्रीरघुनम ० २३ अ०)

नन्दालयमें इन्होंने जन्मग्रहण किया। गोकुलमें था वर महामुनि गर्भ द्वारा इनका नामकरण हुआ। नन्दालयमें श्रीरघुणके साथ वे एकत्र पाले पोसे गये। पीछे भद्ररुके जाने पर बलराम वृष्णके साथ मयुरा पधारे और क सको मार कर वहा कुछ दिन ठहरे। अनन्तर नान्दीपन मुनिके निरुद्ध इन्होंने विद्याभ्यास किया।

रैवतीके साथ इनका विवाह हुआ। यदुकुल ध्वस होनेके समय जब वे योगामन पर गये, तब इनके शरीर उद्विग्नसे रक्तवर्ण सत्स्र मुखगारी पर गृह्यत् श्वेत सर्प निकल कर समुद्रमें चला गया। इस समय बलरामका शरीर प्राणशून्य हो गया था। कुरुकुलपति दुर्योधन इनके शिष्य थे। कृष्ण देखो।

बलदेवकी पूजा करनेमें इस प्रकार ध्यान करना होता है। यथा—

बलदेव त्रिपाहुञ्च शङ्खचुन्द्रेन्दुसन्निभम्।

वामे हलायुधधर मूषल दक्षिणे करे।

हालालाल नोलग्न्य हेलवन्त स्मरेत् परम्॥"

२ वायु, हवा।

बलदेव—युक्तप्रदेशके मयुरा जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २७ २४' उ० तथा रूमा० ७७ ४६' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या तीन हजारसे ऊपर है। इस नगरके ठीक मध्यस्थलमें एक मन्दिर और सामनेमें क्षीर समुद्र नामक एक पुण्यमल्लिका पुष्करिणी है। देव मूर्त्तिद्वान और दीर्घिकासे स्नान करनेके लिये अनेक तीर्थयानी आते हैं। साल भरमें यहा दी मेले लगते हैं।

बलदेवक्षेत्र—उड़ीसाके अन्तर्गत एक तीर्थस्थान। इसे तुलसीक्षेत्र भी कहते हैं। यह पवित्र स्थान कटर जिलेके उत्तमान फेन्टपाडारे अन्तर्भूत है। उड़ीसाके वैष्णव इन्ने पवित्र स्थान समझते हैं। तुलसीक्षेत्र माहात्म्यमें इस स्थानका देवमाहात्म्य उल्लिखित है।

बलदेवत्रिपाभूषण—बलदेवकी एक त्रिपात ब्राह्मण पण्डित। करीब तीन सौ वर्ष हुए ये जीवित थे। वैष्णव दर्शनादिमें उस समय इनके मुकाबलेका काह भी न था। इनका प्रण था, कि वे उन्हीके शिष्य बनेंगे जो उन्हे तर्क में पराजित कर लेंगे। इसी उद्देशसे वे दिग्विजयको निकटे। चङ्ग, मिथिला, काशी आदि प्रान्तप्रधान स्थानोंके पण्डित इनसे परास्त हुए। आश्विन वैश्रमण करते करते नृन्दीपन पहुँचे। वहा प्रसिद्ध टीकाकार विश्वनाथ चक्रवर्त्तोंने भक्तिशास्त्रके विचारमें परास्त हो इन्हो न उन्हीका शिष्यत्व ग्रहण किया। तीक्ष्ण पतिभावसे थोड़े हा समयके अन्तर्गत ये वैष्णवशास्त्रमें व्युत्पन्न

हो गये। इस समय जयपुरराज्यमें गोलमाल चल रहा था। जयपुरमें जो गोविन्दजीकी मूर्ति है, उनका सेवाधिरार गौडीय वैष्णवों को मिला था। कुछ जादूकर संन्यासीने राजाको समझा कर रहा, कि शङ्करके शारीरिकमाथके अतिरिक्त रामानुज, मध्याचार्य, विष्णु-स्वामी और निम्बादित्य इन चारों सम्प्रदायमें वेदान्त दर्शनके चार भाग हैं। किन्तु चैतन्यदेवका मत इन भाग्योंके अन्तर्गत नहीं है और न उस मतका पृथक् भाग्य ही है। अतएव ये लोग असम्प्रदायी हैं। असम्प्रदायी वैष्णव गोविन्दके सेवाधिरारी नहीं हो सकते।

राजाने इसकी जाच करनेके लिये एक साधु सभा बुलाई। बहुतसे पछाहीं, उदासीन पण्डित जमा हुए। चन्द्रावनके गौडीय वैष्णव लोग भी गये। विचार आरम्भ हुआ। बगालियोंकी तरफसे बलदेवने कहा, “कीन कहता है, कि हम लोगोंके भाग्य नहीं है ? श्रीमद्भागवत ही वेदान्तके भाग्य स्वरूप है। ‘गायत्री माध्वरूपोऽहोमावताथ’ विनिर्णय’ इत्यादि वाक्य उसके प्रमाण हैं, महाप्रभुने भी यही कहा है। महाप्रभुने सार्वभौमको जिस वैयासिक भाग्य द्वारा परास्त किया, वही यथार्थमें चैतन्यसम्मत भाग्य है। पद्मसन्दर्भादिमें भी यही निबद्ध हुआ है।” इतना कह कर वे शारङ्कर पण्डितोंके साथ विवादमें प्रवृत्त हो गये और आग्रह उन्हें परास्त कर ही डाला। उन्हें निरस्त करनेके अभिप्रायसे जब शङ्कर पण्डितों ने पूछा, कि यह किस सम्प्रदायके अनुगत है, तब उन्होंने कहा, “यह श्रीचैतन्यमाथानुगत है।” यथार्थमें पद्मसन्दर्भादि मित्र महाप्रभुगत पृथक् भाग्य नहीं था, यह उन्होंने पहले ही कह दिया है।

पछाहीं पण्डितोंने जब उस भाग्यको देखना चाहा, तब वे बोले, “अवश्य दिपलाऊंगा, लेकिन आज नहीं, कल।” इतना कह कर सभा वृत्तने दिनके लिये उठ गई।

भाग्य तो था नहीं, वे देगर्भमें क्या। सो उन्होंने ने एक नया भाग्य बनानेना सक्त्त किया। इस औपण-सागरकी धार करनेके लिये उन्होने श्रीगोविन्दजीकी शरण ली। अनाहार मन्दिरके द्वार पर गडे रहे। इस प्रकार एक दिन, दो दिन, तीन दिन धीन गये। चौथे

दिन भाग्य रचना करनेका इन्हे ब्यताने आदेश मिला। कहते हैं, कि बलदेवने मन्दिरमेंसे “बुद्ध बुद्ध” ऐसा जन्ट सुना था। प्रत्यादेश पाकर प्रसन्न चित्तसे इन्हे ने भाग्यरचनानमें हाथ लगा दिया और श्रीप्र ही सफलता भी प्राप्त कर ली। गोविन्ददेवके आदेशाने रचित होनेके कारण इस भाग्यका “श्रीगोविन्दभाग्य” नाम रखा गया। गोविन्ददेवके आदेशकी वार्ते बलदेवने भाग्यके शेषमें इस प्रकार लिपी है—“विचार्य भूषण मे प्रदाय म्याति निन्ये तेन यो मामुद्रार श्रीगोविन्द स्वप्रनिर्दिष्टभाग्यो राधावन्धुर्वन्धुराङ्ग म जीयान् ॥”

(गो० भा०)

यथासमय वह भाग्य प्रकाश्य समामें दिपलाया गया। सभी अनाक हो रहे। जयपुर और चन्द्रावनमें गौडीय वैष्णवोंका आधिपत्य सदाके लिये जम गया। शारीरिक भाग्यकी तरह इस भाग्यमें सभी जगह श्रुतिप्रमाणकी प्रधानता देगी जाती है। अन्यान्य भाग्योंकी तरह पुराणके प्रमाणका भी अभाव नहीं है।

बलदेव निम्नलिखित वार्षिक ग्रन्थ ना गये हैं—

१ गोविन्दभाग्य, २ सूक्तभाग्य (गोविन्दभाग्यकी टीका), ३ सिद्धान्तखण्ड या भाग्यपीठक, ४ प्रमेयस्तायली और कान्तिमालाटीका, ५ वेदान्तस्यमन्तक, ६ गीताभूषण भाग्य, ७ दशोपनिषद्भाग्य, ८ सहस्रनामभाग्य, ९ स्तत्र मालाभाग्य, १० सारङ्ग रङ्गदा। (लघुभागवतमृतकी टीका)।

इतना चन्द्रानाममें ही शरीरगत हुआ। चहा आज भी उनकी समाधि विद्यमान है।

बलदेवपत्तन (स० ह्णो०) बृहत्स हितोक्त समुद्रतीरवर्षी नगर।

बलदेवसिंह—भरतपुरके जाटव शीय एक महाराज। ये राजा रणजिम्के पुत्र और राजा रणधीरके पण्डित थे। १८२४ ई०में इन्हीने अपने पुत्र बलचन्तको सुवगाव बनानेके लिये अङ्गरेजोंसे सहायता ली थी। १८२५ ई०में उनको मृत्यु हुई। मरुके निश्चयर्त्ता गोवर्धन नामक स्थानमें इनके दोनों भाइयोंके समाधिस्तम्भ प्रतिष्ठित हैं। बलदेवा (स० पु०) तायमाण ओषधि। बलनल (स० पु०) व्याघ्रनाथ, बाघना नागून।

बलना ( हि० क्रि० ) जलना, दहकना ।  
बालनिग्रह ( स० पु० ) बलस्य निग्रह पद्योतत् । बलक्षय ।  
बलनेह ( हि० पु० ) एक स कर राग । यह रामरली,  
श्याम, पूर्वी, सुन्दरी, गुणकली और गधारसे मिल कर  
बना है ।

बलन्द—छोटानागपुरवासी एक आदिम जाति । ये लोग  
अपनेको इतिजीवी और हिन्दू बतलाते हैं । सम्प्रतः ये  
भक्त बलन्द नामक गौड़ जातिकी अन्यतम शाखा हैं ।  
इन लोगोंके मध्य हिन्दू क्रिया कर्म व्यतीत कोई पार्वतीय  
देवदेवी पूजाका परिचय नहीं मिलता । कोरिया राजवंश  
का इतिहास पढ़नेसे मालूम पड़ता है, कि एक दिन  
बलन्द लोग विशेष पराक्रमशाली थे । गौड़ और क्रोञ्च  
नामक कोल जातिके वार वार आक्रमणसे बलन्द राजवंश  
अध पतनको त हुआ ।

बलन्धरा ( म स्त्री० ) भोमसेनकी पत्नी ।

( महाभाग० आदि० )

बलपति ( म० पु० ) १ प्रधान सेनापति । २ इन्द्रका एक  
नाम ।

बलपाण्डुकर ( स० पु० ) बुन्द वृक्ष, फुदका पौधा ।

बलपुच्छक ( स० पु० ) काक, कौआ ।

बलपृष्ठक ( स० पु० ) रोहित मत्स्य, रोहू मछली ।

बलप्रद ( स० लि० ) बल प्रददाति दाक । बन्दायक,  
बलदेनेमाला ।

बलप्रसू ( स० स्त्री० ) प्रसूते इति प्रसूजं ननी बलस्य बल  
देवस्य प्रसूजं ननी । रोहिणी, बलरामकी माता ।

बलबलाना ( हि० क्रि० ) १ ऊँटका बोलना । २ ध्यर्थ  
बकना । ३ निरर्थक शब्द उच्चारण करना ।

बलबलाहट ( हि० स्त्री० ) १ ऊँटको बोली । २ व्यर्थ बक  
वाद । ३ उमग । ४ अहङ्कार, घमण्ड ।

बलबीज ( हि० पु० ) कद्यो नामके पौधेका बीज ।

बलवीर ( हि० पु० ) बलरामके भाई श्रोत्रण्य ।

बलम ( स० पु० ) विपघर कीड, एक विपेला कीडा ।

बलभद्र ( स० पु० ) बल भद्र श्रेष्ठमस्य वा बलमस्यास्तोति  
अर्थ आदित्वाच्च, बली बलवानपि भद्र सौम्य । १  
अनन्त । २ लोभ्र, लोघका पेड़ । ३ गवय, नीउगाय ।  
४ विष्णुपूजनोक्त अष्टदल पद्मस्य योगिविशेष । विष्णु

प्रभृतिके पूजनमें अष्टदलपद्म बना कर योगियोंको पूजा  
करनी चाहिये । इस प्रकार पूजा नहीं करनेसे कोई फल  
नहीं होता । ५ पर्वतविशेष ( भाग० ५१२०१२६ ) ६  
क्षुद्रफल्ग्व्य वृक्ष । ( बि० ) ७ बलशाली, ताकत  
घर ।

बलभद्र—इस नामके कई ग्रन्थकारोंके नाम मिलते हैं ।  
यथा—

१ अद्भुत तरङ्गिणीके प्रणेता । २ आह्निकके रचयिता ।  
३ फालीतस्वामृततन्त्रके प्रणयनकार । ४ चेतसिहविलाम  
के प्रणेता । ५ जातन चन्द्रिका, गृहजातककी नष्टजातका  
ध्यायटीका और होरासूत्रके रचयिता । भट्टोत्पलने  
गृहसंहिताटीकामें इनका उल्लेख किया है । ६ नवरत्न  
धातुनिवादके प्रणेता । ७ महावद्रन्यासपद्धतिके रचयिता ।  
८ योगशतकसङ्कल्यिता । ९ रामगीतावृत्तिके प्रणेता । १०  
शक्तिजादवीनाके रचयिता । ११ महानाटनदीपिकाके  
प्रणेता । ये काशीनाथके पुत्र और ब्रह्मदत्तके पील थे ।  
१५६२ ई०में इन्होंने उक्त ग्रन्थ लिखा था । १० हायनरत्न  
और १६७४ ई०में होरासूत्रके रचयिता । ये दामोदरके  
पुत्र और हरिरामके भाई थे । मकरन्दटीका और भास्वता  
चायटन बीजगणितकी टिप्पणी भी इन्होंने लिखी है ।  
१३ पत्रप्रकाशके रचयिता । १४ महाशत्रुपद्धतिके प्रणेता ।  
१५ बालबोधिनी नामक भास्वतीटीकाके प्रणेता, वमन्तके  
पुत्र और बिलालारके पील । इन्होंने १५४४ ई०को उमा  
नगरमें ग्रन्थ लिखा था । १६ नृन्दसप्रहशेषके प्रणेता ।  
१७ तिन्यानुष्ठानपद्धतिके रचयिता । १८ अशौचसारके  
प्रणेता । १९ एक त्रिल्यात ज्योतिषवृद्ध । अलबीरनीने  
इसका उल्लेख किया है ।

बलभद्र तर्कवागीश—दायभागसिद्धान्तके प्रणेता ।

बलभद्रपुर—तैरभुक्तके अन्तर्गत एक जनपद ।

बलभद्र भट्ट—तर्कभाषाप्रकाशिका, सप्तपदार्थटीका और  
प्रमाणमञ्जरी-टीकाप्रणेता । इनके पिताका नाम विष्णु-  
दास और माताका माधवी था ।

बलभद्रशुक्र—शुद्धतत्त्वप्रदीप और चानुर्मान्यकौमुदीके  
रचयिता । इन्होंने १६२४ ई०में यह ग्रन्थ जयसिंह दक्षित-  
के नाम पर उत्सर्ग किया । इनके पिताका नाम  
स्वधिर था ।

बलभद्रसिंह—१ एक गुर्जासुरदार । १८१४ई०में नेपाल युद्धके

समय इन्होंने जगरेजो के विरुद्ध घमसान युद्ध किया था ।

० अयोध्याके प्राचीन हिन्दू राजपूजके एक राजा । उनके अधीन प्रायः लाहसे ऊपर राजपूत सेना थी । १७८० ई०में उन्होंने लगनऊके नवाब बजीरकी अधीनता अयोध्याके को । दो वर्ष लगातार युद्धके बाद वे मुसलमानोंके हाथ परलोक सिधारे ।

बलभद्रसूरि—प्रमाणमञ्जरीटीकाके प्रणेता ।

बलभद्रस ब्रज ( स० पु० ) धूलोन्मय ।

बलभद्रा ( स० स्त्री० ) बलभद्र टाप । १ कुमारी । २ बायमाण नामकी लता । ३ धनजाता गो, ज गली गाय । ४ नीलगाय ।

बलभद्रिका ( स० स्त्री० ) बलभद्रा स्वार्थे कन् अत इत्व । बायमाणा नामकी लता ।

बलभी — १ मालव राज्यके उत्तर काठियावाड़का एक प्राचीन नगर । इसका वर्तमान नाम वाला है । चीनपरिप्राजक यचनचुय गने यह नगर देख कर लिखा है, कि यहां सैकड़ों स धाराम और देवमन्दिर थे । हीनयान सम्प्रदायी सम्मतीय ज्ञानाके प्राय ६ हजार श्रमण उस समय यहां धर्मचर्चा करते थे । उन्होंने यहांका अशोक-स्तूप भी देखा था । उस समय मालवराज शिलादित्य २ शीय ध्रुवभट्ट नामक एक क्षत्रिय राजा यहांका शासन करते थे । राजधानीके पास ही एक सुप्रसिद्ध स धाराम था जिसमें गुणमति और स्थिरमति नामक दो बौद्ध मन्च रहते थे ।

२ सह्याद्रि पर्वत पर अवस्थित एक नगरी ।

बलभी ( हिं० स्त्री० ) वह कोठरी जो मरानके मवने ऊपर वाली ङन पर बनी हो, चौबारा ।

बलभृत् ( स० त्रि० ) बल विभक्ति भृ मिप लुक् च । उल्लेखनीय ।

बलभद्रा ( स० स्त्री० ) वृक्षविशेष, जयन्ती । इसका गुण रुद्ध, तिक्त, शीत, कण्टजोषक, लघु, कफनाशक, मद्गन्धि, मृष्टकृत् विष और पित्तनाशक माना गया है ।

बलभद्र—शब्दोंके प्रदेशके धारवार जिलेका एक गण्ड ग्राम । यहां विष्णुपरिहृत्पर और वासवना एक मन्दिर है । उसके माल स लाल पाच जिलालिपियोंमेंसे सर्व प्राचीन जिलालिपि १७६ मन्वत्में उत्कीर्ण हुई है ।

बलर—पञ्जाबके अन्तर्गत एक प्राचीन स्थान । एक प्राचीन स्तूपके लिये यह स्थान बहुत कुछ विख्यात है । स्तूपकी ऊँचाई प्रायः ५० फुट और व्यास ४४ फुट है । इसके पास ही १७० फुट स्थानके मध्य और भी कितने छोटे छोटे स्तूप तथा मन्दिरादि हैं । इनसे अनुमान किया जाता है, कि बौद्धाधिकारमें यह स्थान धर्मालोचनाके लिये मजहूर था ।

बलराम ( स० पु० ) राम भावे ध्रुव, बलैव रामो रमण इत्ये । श्रीगुणके बड़े भाई जो रोहिणीसे उत्पन्न हुए थे ।

॥ बलदेव देखो ।

बलरामदास—श्रीचैतन्यचरितामृतके ११वें परिच्छेदमें लिखा है, कि बलरामदास नित्यानन्दप्रभुके भक्त थे । वैष्णव ग्रन्थोंमें जो 'सङ्गीतकारक' हैं वह इन्हींका बनाया हुआ है । अतएव पदकर्ता बलरामदास नित्यानन्दके 'गण' हैं । बलरामने अपनी पदावलीमें अपने प्रभुके रूप गुणका अच्छी तरह वर्णन किया है ।

प्रेमविलास एक प्राचीन ग्रन्थ है । ये ही उसके रचयिता हैं । उस ग्रन्थमें इनका जो आत्मपरिचय है उसमें जाना जाता है, कि बलरामकी माताका नाम सौदामिनी और पिताका नाम आत्मारामदास था । ये जातिके वैश्य थे और धोखण्डमें इनका घर था । इनका गुरुदत्त नाम था नित्यानन्द दास । 'भैरवधारी' वैरागी सम्प्रदायमें ये गुरुदत्त नामसे प्रसिद्ध हैं । किन्तु प्राचीन ग्रन्थादि केगनेसे मालूम होता है, कि पूर्व समयमें वैष्णवोंके दो नाम रहते थे । दृष्टान्त स्वरूप वीरहामित्र और 'प्रेमदास'का नामोन्मेष किया जा सकता है ।

श्रीनित्यानन्द प्रभुके दो स्त्री थीं, यमुधा और जाहवा । जाहवादेवी शिष्यादि करती थीं । उपयुक्ता स्त्री पुण्यकी भी शिष्य बना सकती हैं, यह गुरुपरिवारमें सर्वत्र प्रचलित है । अतएव बलराम ( जाहवा शिष्य होनेके कारण ही ) नित्यानन्द 'परिवार' के हैं, इसीसे चरितामृतमें नित्यानन्द शारदा-वर्णन पर परिच्छेदमें इनका नाम देवनेमें आता है । यदि ज्ञानदास भी इन्हीं प्रकार जाहवाशिष्य थे । शानदास २२ देखो ।

धनरामदेव—दाक्षिणात्यके जयपुर-राजराजगीय पञ्च राजा ।  
नन्दिपुरमें इनकी राजधानी थी ।

धनरामधर्मा—दाक्षिणात्यके त्रिवाङ्कुड राज्यके एक राजा ।  
१७८८-१८१० ई० तक इन्होंने राज्य किया । इनके शासन  
कालमें राज्य भरमें अशान्ति फैल गई थी । राज्यका  
सुप्रबन्ध करनेके लिये इनके अधिकांशमें अगरेज प्रतिनिधि  
नियुक्त हुए ।

धनरामकनिष्कण्डूण—इन्होंने मुकुन्दरामके पहले चण्डीप्रन्ध  
का अनुवाद किया । मेदिनीपुरके अञ्चलमें उन प्रन्धका  
प्रचार था । मुकुन्दरामने इनका प्रन्ध देव कर अपने  
काव्यकी रचना की थी, यह बात वे स्वयं स्वीकार कर  
गये हैं ।

धनरामपञ्चानन—धातु प्रकाश और उसकी टोमा तथा  
प्रबोधप्रकाश नामक स सृष्टि ध्याकरणके पणेत ।

धनरामपुर—१ अयोध्याप्रदेशके गोएडा जिला तर्गत एक बड़ा  
तालुकदारो राज्य । धनराम दास नामक किसी हिन्दूने  
अपने नाम पर यह राज्य बसाया । उन्होंने धीरे धीरे कई  
स्थान जीत कर बहुत दूर तक अपनी राज्यसीमा बड़ा  
ली थी । राजा नेहालमिह १७७७ ई०में राजसिंहासन  
पर बैठे । उन्हींके भुजबलमें धनरामपुर राजराजने सुख्याति  
प्राप्त की थी । उन्होंने लखनऊके राजाओंसे कई बार युद्ध  
किया था । यद्यपि वे नवाबकी सेनासे हार गये थे, तो भी  
अपने जीवन तक उन्होंने उनकी वण्यता स्वीकार न की ।  
बल्कि जो कुछ वे राजकर देते थे, उसीमें उन्हीं सन्तुष्ट होकर  
रहना पड़ता था । पीछे उनके पीत महाराज दिग्बिधयसिंह

K. L. 91 १८३६ ई०में पितृसिंहासन पर अधिरूढ हुए ।  
राज्यशासनके आरम्भमें ही उन्हे उतरीय, इकौना और  
तुलसीपुर आदि सामन्तोंके साथ युद्ध करना पड़ा था ।  
सिपाहीविद्रोहके समय उन्होंने अगरेजोंसे अपने दुर्गमें  
आश्रय दिया और आपिर उन्हे निरापदसे गोएखपुर  
भेज दिया था । दिग्बिजयके ऐसे आचरणसे अस-  
सन्तुष्ट हो लखनऊ पतिने उनका राज्य बाँट लेनेके लिये  
तुलसीपुर, इकौना और उतरीलाके सरदारोंको फर्मान  
भेजा । विन्तु यह कार्यमें परिणत होनेके पहले ही  
उक्त सामन्तगण भिन्न भिन्न स्थानोंमें भेजे गये । धर्परा  
मदीके दूसरे किनारे अगरेज और विद्रोही-दलमें जो

युद्ध हुआ उसमें इन्होंने अगरेजोंका पक्ष लिया था ।  
युद्धमें हार धा कर विद्रोही दल नेपालको भाग गया ।  
दिग्बिजयकी रातभक्ति पर प्रसन्न हो वृष्टिज-सरकारने  
उन्हे तुलसीपुरका कुछ अंश और महाराजकी उपाधि दी  
तथा सैन्डे पीछे १० रुपये कर भी घटा दिया । १८८२  
ई०में उनकी मृत्यु हुई । उनके कोई सन्तान न रहनेके  
कारण रानीने महाराज भगवतीप्रसादको गोद लिया । ये  
ही वर्त्तमान राजा हैं । इनकी उपाधि के, सी, आइ, इ, ई ।  
राजस्व २२ लाख रु० है जिनमेंसे ६ लाखमें ऊपर वृष्टिज  
सरकारको करमें देने पड़ते हैं ।

० गोएडा जिलेकी उतरीला जिलेका शहर । यह अक्षा०  
२७ २६' उ० तथा देशा० ८२ १४' पू०के मध्य अवस्थित  
है । सम्राट् जहागीरके शासनकालमें धनरामदासने इस  
नगरको बसाया । यहा महाराजके प्रासाद, ४० हिन्दू  
मन्दिर और १६ मुसलमानोंकी मस्जिद विद्यमान हैं ।  
इसमेंसे विजलेश्वरी देवीमन्दिर ही शिल्पनैपुण्यने पूर्ण है ।  
यहाके बाजारमें पार्श्ववर्ती स्थानके उत्पन्न शस्यादि,  
स्थानीय सूती कपड़े, कम्बल और छुरी आदिका विस्तृत  
ध्यापार होता है । यहा छा/गनिवास स लखन पञ्च हार्द  
स्कूल, पाच सिकेन्ट्री और प्राइमरी स्कूल, चिन्तिमा  
लय, जनाना अस्पताल, मोहताजखाना और एक अनाथा  
लय हैं ।

धनरामपुर—१ कोचबिहार राज्यके अन्तर्गत एक नगर ।

० मेदिनीपुर जिलेके अन्तर्गत एक विस्तृत परगना ।

धनरामभञ्जा—एक वैष्णव-सम्प्रदाय । धनराम हाडी  
नामक एक चौकीदार इस मतका प्रवक्तृक था । ये लोग  
कर्त्ताभञ्जा आदि वैष्णव धर्ममतका अनुसरण करते हैं ।  
अभी नदिया, बर्द्धमान और पटना आदि स्थानोंमें इस  
सम्प्रदायके अनेक वैष्णव देगे जाते हैं ।

धनल ( स० पु० ) धनराम ।

धनरत्न ( स० वि० ) १ धनविशिष्ट, ताकनगर । ० अति  
शय, बहुत । ( पु० ) ३ गिन ।

धनवत्ता ( स० स्त्री० ) धनवत्त्व, धनवानका धम वा  
भाव ।

धनवन गयास् उद्दीन—दिह्लीके एक मुसलमान अधिपति ।  
बचपनमें ये सुलतान अलतमसके यहाँ बचे गये थे ।

उन्होंने ही रूपाने उलबनने उमरावका पद प्राप्त कर उनकी कन्यासे विवाह किया। अलतममके लडके नागिर-उद्दीन जब दिल्लीके सिंहासन पर बैठे, तब बलचन् वजीर (प्रधान मन्त्री) के पद पर अभिषिक्त हुए। १२६६ ई०में ये दिल्ली श्वरजी राज्यच्युत और निरत करके सिंहासन पर अधिभार कर बैठे। १२७६ ई०में बङ्गालके शासनकर्त्ता अमीन खाँके नाश्व तुगरल खाँको जब मालूम हुआ, कि सम्राट् बलचन् रम्नावस्थामें पड़े हैं, तब उन्होंने विद्रोही हो कर पहले सुल्तान अमीन खाँको कैद कर लिया और पीछे सुल्तान मगिस उद्दीन नाम धारण कर अपनेको स्वाधीन राजा बतलाते हुए तमाम घोषणा कर दी। सम्राट्ने यह समाद पाते ही दो दल सेना उसके विरुद्ध भेजी। किन्तु बङ्गे श्वरजी परास्त करना उनके लिये देही गीर था। आखिर सम्राट्ने उसका दमन करनेके लिये सय बगाल पर चढ़ाई कर दी। तुगरल खाँ त्रिपुराको भागा, पर रास्ते हीमें पकड़ा और मार डाला गया। यह घटना १२८२ ई०में घटी थी। इस अभियानकालमें सम्राट्को सुवर्णप्रामके हिन्दू राजाओंसे महायता मिली थी। लीदते समय वे अपना द्वितीय पुत्र नाशिर-उद्दीनकी बङ्गालके शासनकर्त्तृ पद पर नियुक्त कर गये। बीस वर्ष राज्य करनेके बाद ये १२८६ ई०में परलोकको चल बने। पीछे उनके नाती मोइज उद्दीन कैकोवादाने बङ्गालसे जा कर दिल्लीके सिंहासन पर अधिभार जमाया।

बलबनसिंह—काशीपति महाराज चैतसिंहके पुत्र। ग्वालियरमें इनका जन्म हुआ था। पिताकी मृत्युके बाद ये स्वपरिवार आगरेमें आ कर बस गये थे। उस समय इस राज परिवारके भरणपोषणके लिये मासिक २ हजार रुपयेकी वृत्ति मिलती थी। ये उद्भाषामें एक वीरानकी रचना कर गये हैं।

बलवन्त (स० लि०) बलचान्, बली।

बलवन्तसिंह—काशीके अधिपति, राजा मानसरामके पुत्र और ग्वातनामा चैतसिंहके पिता। १७४३ ई०में यह राजपद पर अधिष्ठित हुए। ३० वर्ष राज्य करनेके बाद इसका देहान्त हुआ।

० भरतपुरके जाटप्रणीय एक राजा। ये १८०४ ई० में पिता बलदेवसिंहके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए।

१८२५ ई०में इनके भाई विख्यात जाट-सर्वदार दुर्जन शालने इन्हें राज्यच्युत करके सिंहासन पर अधिभार जमाया। १८२५ ई०में भरतपुर दुर्गके अपरोध धीरे धीरे वाद दृष्टि सरकारने बलवन्तको फिरसे सिंहासन पर अधिष्ठित किया। १८५३ ई०को ३४ वर्षकी अवस्थामें इनकी मृत्यु हुई। पीछे उनके पुत्र यशोवन्त रायसिंहासन पर बैठे।

बलवन्त (स० पु०) १ सैन्यवृद्धि। २ शूतराष्ट्रक पुत्र का नाम।

बलवन्दिन् (स० लि०) बल वर्द्धयति वृध्णिनि। बल-वृद्धिकारक, बल बढ़ानेवाला।

बलवर्मदेव—एक हिन्दू राजा। भुजङ्गिका नामक स्थानमें इनकी राजधानी थी। समुद्र गुप्तकी लिपिसे मालूम होता है, कि इनकी माता तथा स्त्री दोनोंका नाम वत्त देवी था।

बलवर्मान् (स० पु०) एक प्राचीन हिन्दू राजा। इन्हें समुद्र गुप्तने परास्त किया था।

बलबला (स० स्त्री०) गन्धक।

बलबा (फा० पु०) १ विद्युत्, दगा। २ विद्रोह, दगा घत।

बलवाई (फा० पु०) विद्रोही, बागी। २ उपद्रवी, फसादी। बलचान् (स० लि०) १ वज्रिष्ठ, ताकतवर। २ हृद, मजबूत। ३ सामर्थ्यायान शक्तिमान्। (पु०) ४ आहार। ५ फल। ६ शणधीज।

बलविकर्षिका (स० स्त्री०) दुर्गाका एक नाम।

बलविन्यास (स० पु०) बलाना सैन्याना विशेषण दुर्गभत्वेन न्यास स्थापन। युद्धके लिये सैन्य व्यवहार रचना। मैना इस प्रकार मजानी चाहिये जिन्से शत्रुगण उनमें भेद कर न आ सकें। यह बलविन्यास मकर-पक्षादिके भेदसे नाना प्रकारका है। मसुमें लिखा है—

याताकालमें यदि चारो ओरसे भयकी आगङ्का रहे, तो राजा दण्डव्यूह, पीठकी ओर भय होनेसे शकट व्यूह, दो ओरसे आगङ्का होनेसे बराह और मकरव्यूह, आगे पीछेकी ओर भय होनेसे गण्डव्यूह तथा केवल सामनेकी ओर भय होनेसे सूत्रीयुद्धकी रचना करके याता करे। राजा जब जिस ओर विपदकी अधि

आशङ्का देखे, तब उसी ओर आत्म सेनाको बढ़ावे तथा उन सब सेनापानों पदमव्यूहानाममें मजा कर आप बीचमें छिप कर पड़े रहे। सैन्यमर्या धोड़ी रहनेसे स हतभागमें और अधिक रहनेमें विस्तृत भागमें सत्रि वेगित करना विप्रेय है। (मनु ७ अ०) व्यवहरचना देगो।

वलपिनाशन ( स० पु० ) बलनाशक द्रव्य।

वलपौर ( हि० पु० ) वलपौर देगो।

वलवीर्य ( स० पु० श्लो० ) भगवता प्रगधरभेद । ० वल और वीर्य।

वलव्यसन ( स० पु० ) सेनाको हतना या नितर वितर करना।

वलव्यूह ( स० पु० ) एक प्रकारकी समाधि।

वलशाली ( स वि० ) बलेन शालते शाल पिनि। वल निगिष्ट, बली, ताकतवर।

वलशील ( स० वि० ) शक्तिशाला, बली।

वलसन—पञ्जाबके अन्तर्गत एक पार्वतीय राज्य। यह अक्षा० ३० ५८' से ३१ ७' उ० तथा देशा० ७७ २४' से ७७ ३५' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ५१ वर्ग मील और जनसंख्या सात हजारके करीब है। यह सिमलासे ३० मील पूर्वमें पडता है। यहांके सामन्त राजा उपाधिधानी राजपूत हैं। राजाका विचार-कार्य उन्हींके द्वारा होता है, पर किन्ती अपगधीको प्राणदण्ड देनेमें उन्हें पार्वतीय राजाके परिचालक अगरेज कमचारीसे अनुमति लेनी पडती है। राजस्व ६००० रु०का है जिसमेंसे १०८० रु० ट्रिनिडादराको देने पडते हैं। इस राज्यामें देवदारका एक लम्बा चौडा जंगल है।

वलसम्भर ( स० पु० ) धान्यविशेष, साठो धान।

वलसाने—पान्दे राजिलेके पिम्पलन उपविभागके अन्तर्गत एक उपविभाग। भूपरिमाण २०८ वर्ग मील है। यहां बहुत सी गुहाएँ और सुरक्षित तथा सुप्राचीन मन्दिर देखे जाते हैं।

वलसार—१ बम्बई प्रदेशके सूरत जिला तर्गत एक उपनि भाग। भूपरिमाण २०८ वर्ग मील है। यहांका तिथल नामक समुद्रोपमूलवर्ती स्थान बम्बई प्रदेशमें एक अच्छा स्वास्थ्य निवास समझा जाता है।

० उक्त जिलेका एक नगर और बन्दर। यह अक्षा०

२० ३६' ३०" उ० तथा देशा० ७२ ५८' ४०" पू०के मध्य अवस्थित है। यहां जालनाप्रका विस्तृत वाणिज्य चलता है।

वलसुम ( हि० वि० ) बलशा, निम्में बालू हो।

वलसूदन ( स० पु० ) बल तन्नामा प्रसिद्ध असुर सूर्य तीति बल सूदन्यु। र दन्दु। इद ने इस असुरको युद्धमें मारा था, इस कारण उनके बलसूदन, बलादि, बलपिनाशन आदि नाम पड़े ह। ० विग्यु।

वलसेना ( स० स्त्री० ) सेनादल।

वलसोर—उड़ीसा प्रदेशका एक जिला। बाढे, हर देगा।

वलस्थ ( स० वि० ) १ बलशाली, बलवान्। २ सैन्यदल भूक्त।

वलस्थिति ( स० स्त्री० ) बलाना स्थितिरवस्थान यत्, अभिधानात् खोतय। गिगिग, छावनी।

वलहन् ( स० पु० ) बल सामर्थ्य हन्तीति बल हन् विचप्।

१ श्लेष्मा, कफ। बल तन्नामानमसुर हन्तीति। २ इन्दु। ( वि० ) ३ बलपिनाशक।

वलहर ( स० वि० ) हरतीति ह अच हर, बलस्य हरः। बलनाशक।

वलहरा—एक हिन्दू राजा। ये जलन्धरके सीमान्तर्वाची कम्बर प्रदेशमें राजा करते थे। यहांको खिया अस्तान शाह' कहलाती थी। जिस समय उमर अयदुल अजोब खलीफा पद पर सुगोभित थे, उस समय भी ये दोर्दण्ड प्रतापने राजाशासन करते थे। आखिर खलीफाके आदेशसे मुसाल्लमके पुत्र अब्दुने युद्ध करके उन्हे बगमें फर लिया था।

वलही—मध्यप्रदेशके भण्डारा जिलान्तर्गत एक शील माला। यह प्राय ११ फीस तर् फीले हुई है।

वलहीन ( स० वि० ) बलेन हीन। १ बलवान्य। ( पु० ) २ ग्लानि, बलहीना।

बला ( स० स्त्री० ) कार्यकारित्वेन बलमस्त्यस्य बल शरी आदित्याद्, ततश्चाप्। ( Sidr Cordifolia ) स्वनामरूपान क्षुपविशेष, बरियारा नामक क्षुप। सस्येह पर्याय—वाट्याल, समझा, मोदिना, भडा, भद्रदीनी, दरकाष्टिना, न्यापिनी, भद्र बला, मोटा, पाटी, बलाद्या शीतपाकी, वाट्या, वाटी, विनया, वाट्याली, वाटिका। बला



महाबला, अतिव्रत और नागबलाके भेदसे चार प्रकारका है। इनमेंसे बलाको वाट्यालिका, वाट्या और वाट्यालक महाबलाको पानपुष्पा और मट्टेनी, अतिबलाको अग्र्य-प्रोका और कद्रुतिका तथा नागबलाको गाङ्गेककी और हस्वगवेधुका कहते हैं। ये चारों प्रकारकी बला ग्रीतरीयै, मधुर, यत्नरूक, कान्तिकारक, स्निग्ध, धारक और वायु, रक्तपित्त, रक्तदोष तथा क्षतनिनाशक मानी गई हैं। बला मूलकी छालके चूर्णको दूध और चीनोके साथ मिला कर पान करनेसे भ्रूनातिसार और प्रदर निवृत्त होता है। महाबलाके चूर्णको उका अनुपानके साथ पान करनेसे मूत्रघृच्छ्र दूर होगा है तथा त्रिपथगामो वायु स्वपथगामो होता है। अतिबला चूर्णको दूध और चीनोके साथ मेषन करनेसे प्रमेहरोग जाता रहता है। ( भावध० पूर्व० )

राजनिग्रहके मतसे यह अनि तिरु, मधुर, पित्तानि सारनाशक, बल और बीर्यरूक, पुष्टि और कफरोधवि शोधन है। इसके बीजका गुण—कामोद्दीपक, मेहनाशक, विद्वेजक और वेदनाशक । इसके रेशे (मूलतंतु) धारक और बलकारक माने गये हैं।

अदरक और बलाके रेशेका काथ सविराम ऊर-में विशेष उपकारक माना गया है। पञ्चाघात रोगमें इसके रेशे हि शु, स्निग्ध और लवणके साथ दिये जाते हैं।

२ त्रिधाविशेष । यह त्रिधा श्लक्ष्णया है। त्रिधामितने रामचन्द्रको इस त्रिधाकी शिक्षा दी थी। इस त्रिधाके प्रमाथने युद्धके समय योद्धाको भूष और प्याम नहीं लगती । बला और अतिबला विद्या समस्त ज्ञानकी मातृह्वयकपिणो हैं । ३ नाट्यशास्त्रके अनुसार नाट्योंमें छोटी बहिनका स बोधन । ४ पृथिवी । ५ लक्ष्मी । ६ अश्व प्रजापतिकी एक बन्ध्याका नाम । ७ अनीयोके ग्रन्था नुसार एक देवो जो वर्तमान अश्वर्षिणोंमें सतहर्षे अर्हत उपदेशोंका प्रचार करती है । ८ वग देवो ।

बला ( अ० स्त्री० ) ? आपत्ति, आपत । ० कष्ट, दुःख ।

३ भूत, प्रेत । ३ व्याधि, रोग ।

बलाङ्क ( स० पु० ) बलेन अन्तर्नानि यत्र अक्ष पन्नाद्यन् ।

१ शकन्नानि, बगला । २ एक राजाका नाम जो भागवतके अनुसार पुरुके पुत्र और जम्बुके पौत्र थे । ३ शाक

पुणि ऋषिके एक शिष्याका नाम । ४ एक राक्षसका नाम । ५ जानुकर्ण मुनिके एक शिष्याका नाम । ६ स्व नामग्यात व्याधि विशेष ।

बलाका ( सं० स्त्री० ) बलेते इति यत्र मध्यगणे ( वग० १११४ ) इति अक्ष, ना बलेन अन्तर्नानि बल अक्ष कुटिलगती पचाद्यन् । १ अश्वजातिविशेष, एक प्रकारका बगला । पर्याय—विपरुडिङ्का, चिपरुण्टी, बलागी, वाग यिका, तिङ्गलिका, विपरुण्टी, शुभाङ्गा, दीर्गकन्धरा, घर्मान्ता, कामुकी, श्वेता, मेगागान्दा, जलाग्या । इसके मांसका गुण—वायुनाशक, स्निग्ध, मृष्टमल, घृष्ण, कफ-पित्तहर हिम । यह पक्षीजलमें तैरता है, इस कारण इसे एव जातिके अन्तगत माना है । २ देवो ।

२ कामुकी स्त्री । ३ यकधेर्णी, यगलोंकी पत्ति । ४ गतिके अनुसार नृत्यका एक भेद ।

बलाकाकौशिक ( सं० पु० ) आचार्यभेद ।

बलाकाङ्क ( स० पु० ) ? हरिय शके अनुसार एक राजा का नाम जो अजकके पुत्र थे । २ जङ्घके य शके एक राजा ।

बलाकिका ( सं० स्त्री० ) झुट्टबलाकाभेद ।

बलाकी ( स० वि० ) बलाका प्रोह्लादित्वाग्निनि । १ बलाकायुक्त । ( पु० ) ० धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । बलाप्र ( स० स्त्री० ) १ सेनापति । ० सेनाका अगला भाग । ( लि० ) ३ बलशाली, बली ।

बलाङ्क ( स० पु० ) वसन्तकाल, वसन्तऋतु ।

बलाञ्जिता ( स० स्त्री० ) बलेन अञ्जिता । रामवीणा ।

बलाट ( स० पु० ) बलेन अट्यते प्राप्यते इति अट् घञ् । मुद्, मृग ।

बलाट्य ( स० पु० ) १ माय, उड्ड । ( लि० ) २ बलवान् ।

बलात् ( स० अन्व० ) बलमलतीति बल-भञ् वि । १ बलपूर्वक, जबरदस्तीसे । २ हडाङ्, हठसे ।

बलात्कार ( स० पु० ) बलात्करण बलात् कृ भाषे घञ् ।

१ किसीने इच्छाके विरुद्ध बलपूर्वक कोई काम करना । २ अत्याचार, अन्याय । ३ किसी लोके साथ उमकी इच्छाके विरुद्ध सम्भोग करना ।

बलात्कारगण ( स० पु० ) जैतममयदायभेद ।

बलात्काराभिगम ( स० पु० ) बलात्कारेण अभिगम ।

बलात्कार पूर्वाक किमी खीके सतीतका नाग करना, जिनाविलजग्न ।

बलात्कारित ( स० त्रि० ) जिसमे बलात्कारसे कुछ कराया जाय, जिस पर बलात्कार करके कोई काम कराया जाय ।

बलात्कृत ( स० त्रि० ) १ बलपूर्वक आक्रान्त, जिसके साथ बलात्कार किया गया हो । २ हठान् धृत, जो सहसा पकड़ा गया हो ।

बलात्मिका ( स० स्त्री० ) बलमेव आत्मा स्वरूप यस्या । १ हस्तिशुद्धनुक्ष, हाथीसू ड नामका पीषा । २ राधापन्न । बलादि ( स० पु० ) १ पाणिन्युक्त सप्रत्यय निमित्त शब्द गण । यथा—बल, चुल, नल, दल, वट, लकुल, उरल, पुल, मूट, उल, डुल, वन, कूल । २ अस्त्यर्थे मनुष्य प्रत्यय निमित्त शब्दगण । यथा—बल, उत्साह, उदुभास, उभास, उद्भास, शिगा, कुल, चूडा, सुल, कूल, आयाम, व्यायाम, आरोह, अररोह, परिणाह, युद्ध ।

बलाद्यधृत ( स० स्त्री० ) धृतौषधमेद । इसकी प्रस्तुत प्रणाली—गद्यधृत ४ सेर, षवाधके लिये बला, गोश्त, अजु नको छाल, कुल मिला कर ४ सेर । इन्हें ६४ सेर जलमें उबाले । जब जल १६ सेर बच रहे तब उसे नीचे उतार कर एक सेर यष्टिमधु डाल दे । इसका मैनन करनेसे हृद्दरोग, शूल, क्षत, रक्तपित्त आदि रोग जते रहते हैं । ( मैद्यपरत्ना० ह्योगाधि० )

बलाद्या ( स० स्त्री० ) बलाय आद्या श्रेष्ठा । बला । बलाधिक ( स० पु० ) बलश्रेष्ठ, वह जो अधिक बलशाली हो ।

बलाधिकरण ( स० स्त्री० ) सेनादिका कार्य । बलाधिष्ठान ( स० स्त्री० ) बलस्य अधिष्ठान । बलाधान । बलाध्यक्ष ( स० पु० ) बलम्य अध्यक्ष । सेनापति । बलान—तिरहुत निलेमें प्रवाहित एक छोटी नदी । बलानुज ( स० पु० ) बलस्य बलरामस्य अनुज कनिष्ठ । धीष्ण ।

बलापक्षक ( स० स्त्री० ) बला, अतिबला, नागबला, महा बला और राजबला नामकी पाच औषधियोंके समुदायका नाम । बला देखो ।

बलाबल ( स० स्त्री० ) बलञ्च अबलञ्च । बल और अबल ।

बलाबलाधिकरण ( स० स्त्री० ) बलञ्च अबलञ्च ते अधि क्रियते अस्मिन् अधि व आधारे ल्युट् । आभाटक्षा और अनाभाटक्षारूप बलाबलके निष्चायक जेमिनि उक्त न्यायमेद । ( वेदाश्रुतपरि )

बलामोटा ( स० स्त्री० ) बलमोद्यतीति बल मुट अच् टाप् । १ नामदमनी नामकी औषधि । इसका गुण कटु, तिक्त, लघु, पित्त और कफनाशक, मूत्रहन्तु और प्रणनाशक माना गया है । २ जयन्ती ।

बलाय ( स० पु० ) अयतीति अय, प्रापक बलस्य अय । वरुणवृक्ष, रत्ना ।

बलाय ( अ० पु० ) १ आपत्ति, विपत्ति । २ अत्यन्त दुःख दायी मनुष्य, बहुत तग करनेवाला आदमी । ३ दुःख दायक रोग जो पाछा न छोडे । ४ भूत प्रेतकी बाधा । ५ दुःख, कष्ट । ६ एक प्रकारका रोग । इसमें रोगीकी उगलीके छोर या गाठ पर फोडा हो जाता है । रोगीकी बहुत कष्ट होता है और उगरी कट जाती या टेढ़ी हो जाती है ।

बलापति ( स० पु० ) बलस्य तन्नाम्ना प्रसिद्धासुरस्य अगति । इन्द्र । २ निष्णु ।

बलारिष्ट ( स० स्त्री० ) आयुर्वेदान् औषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—बला १२॥ सेर और अश्रगन्धा १०॥ सेर इमे मिला कर २५६ सेर जलमें पान करे । जब जल ६४ सेर बच रहे, तो नीचे उतार ले । पीछे ठंडा हो जाने पर उसमें ३०॥ सेर गुड, २० सेर ध्रुवका फल, २ पल क्षीर कफोली, २ पल परण्डमूल और रासना, इलायची, लवङ्ग, स्वससकी जड़ और गोनुर प्रत्येक एक एक पल डाल दे । पीछे किसी चीन्से बरतनका मुह ढक कर एक मास तक उसी अवस्थामें छोड दे । उसका सेवन करनेसे बलपुष्टि और अग्निवृद्धि होती तथा प्रबल वातरोग जाता रहता है । ( मैद्यपरत्ना० घातरत्नाधि० )

बलालक ( स० पु० ) बलाय अलनि समर्थो भवतीति बल अच् ष्णुत् । पातीयामलक, तन्त्रात्रला ।

बलाघरेष ( स० पु० ) बलेन अत्रलेष । गण, अहङ्कार, दुर्ष ।

बलाज ( स० पु० ) बलमशानतीति बल अज-अण् । १ श्लेष्मा, रफ । २ फण्डगन्धरोगविशेष, गलेका एक रोग

जिसमें कफ और प्रायुके प्रकोपने गले और केशुडमें सूजन तथा पीडा होती है, मान्य लेनेमें कष्ट होता है।

बलास ( स० पु० ) बलमन्थति क्षिपति अस भण् । १ कफघातु । २ कण्डुगत रोग । बलास देवो ।

बलास ( हिं० पु० ) वरुना नामना पीडा ।

बलासक ( स० पु० ) शुक्रगत नेत्ररोग ।

बलासप्रथित ( स० स्त्री० ) चक्षुःशोथमेष्ट ।

बलासम ( स० पु० ) बुद्ध ।

बलासिन् ( स० लि० ) श्वासरोगयुक्त, जिसे श्वासरोग हुआ हो।

बलाहक ( स० पु० ) १ मेघ, बादल । २ मुस्तक, मोथा ।

३ शाकभन्नीहीपस्थ पर्जन्यशिव । ४ दैत्यविशेष । ५

नागविशेष । ६ मर्पविशेष । ७ कल्किदेवके रमागर्भ

जात पुत्रभेद । कल्किपत्नी रमाने बेजाकी शुभाहादृशीके

दिन जमदग्निके उद्देश्यने व्रत करके महाबलिष्णु दो पुत्र

लाभ किये जिसका नाम मेघपाल और बलाहक था । ये

दोनों सप्रेदा देवताओंके उपकार, यज्ञ, दान और तपस्या

में लगे रहते थे। ( हरिष्णु० ३१ ष० ) ८ श्रीकृष्णका

रथाश्वविशेष, कृष्णचन्द्रके रथके एक घोड़ेका नाम । ९

जयद्रथके भानुविशेष । १० नद्विशेष । ११ कुजाक्षीप

स्थित पर्जन्यशिव । १२ तारापीड राजाके खनामरघात

सेनापति ।

बलाहकन्द ( स० पु० ) बलमाहयतीति बलाहकनाट्टना

कन्द । गुल्मकन्द ।

बलि ( स० पु० ) बल्यने दीयते इति बल् दाने ( धव-

पाहृभ्यो इत् ) उण् ४।१।१३ ) इतीन् । १ वर, भूमिको

उपजका गल अज्ञ जो भूखामो प्रति वर्ष राजाको देता है।

हिन्दू धर्मशास्त्रोंमें भूमिको उपजका दूठा भाग राजार

अश दहराया गया है। इसीको बलि या वर कहते हैं।

२ उपहार, भेद । ३ पूजा सामग्री, यह सामग्री जिससे

देवताओंको पूजा जाता है । ४ चामरदण्ड, चदरफा

दण्ड । ५ बलिवैश्व नामक पञ्च यज्ञोंमें भूययज्ञ । गृह्यथ

को प्रति दिन पाच यज्ञ करने पड़ते हैं ; इसमें प्रतिदिन

पञ्चमूनाजन्त पाप छूट जाता है। अतएव यह यज्ञ

प्रत्येक गृहस्थका वरसंय बतलाया गया है। इन्हीं पाच

यज्ञोंमें जो भूतयज्ञ नामका यज्ञ है उसे बलि कहते हैं।

"अध्यापन प्रणयज्ञ पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।

होमो दैवो बलिर्भौतो नृपशोऽतिथि पूजनम् ॥

पञ्चैतान् यो महायज्ञान् न हापयति शक्तित्वा ।

स गृहेऽपि वसन्नित्य सनाक्षोपैर्न श्रित्यते ॥"

( मनु ३।१०-७१ )

गृहस्थोंको चाहिये, कि ये प्रतिदिन बलिपत्र फेंके ।

गृहस्थको सदा दृढाचिन्त और देवताको पूजामें तत्पर

हो कर होम करना चाहिये । होमके बाद पूर्वादि दिशाओं

में बलि देने चाहिये । अत्र ले कर पहले पूर्व दिशामें

'इन्द्राय नमः' 'इन्द्रपुरुर्येभ्यो नमः' दक्षिण दिशामें

'धमाय नम' 'धमपुरुर्येभ्यो नम पश्चिम दिशामें

'वरुणाय नम' 'वरुणपुरुर्येभ्यो नम उत्तर दिशामें

'सोमाय नम' 'सोम पुरुर्येभ्यो नम', इस प्रकार चारों

दिशाओंमें बलि देने चाहिये । ऐसा करनेके बाद मण्डल

के द्वारमें घों करे 'मरुद्भ्यो नम' जलमें 'अद्भ्यो नम,'

मूसल वा ओषधीमें 'घनम्पतिभ्यो नम' इस प्रकार बोल

कर बलि देने पड़ती है । वास्तु पुरुषके गिर प्रदेशमें, उत्तर

पूर्व दिशामें लक्ष्मीको 'श्रिये नम' ऐसा कह कर, फिर

उसके पाददेशमें 'भद्रकाल्य नम' घरमें ब्रह्माको 'ब्रह्मणे

नम' ब्रह्मन् देवताको 'वास्तोस्तपे नम' ऐसा कह कर

बलि देने होती है । 'विश्वेभ्यो देवेभ्यो नम' 'त्रिधा

चरेभ्यो भूमीभ्यो नम' नम चाग्निभ्यो नम' ऐसा कह कर

समस्त देवताओं तथा दिग्गजर और रात्रिचर भूतोंके

उद्देश्यसे ऊपर आकाशमें बलि फेंक दी जाती है।

वाको बन्धो हर्ष बलिको अपने पृष्ठदेशमें 'सर्वार्त्तमभृतये

नम' कह कर सब भूतोंको बलिप्रदान करना चाहिये ।

अ नमें सम्पूर्ण बलि देनेके बाद जो अन्न बचे उसे दक्षिण

दिशामें सुख कर और प्राचीनावीति हो पितरों-

को 'संधा पितृभ्यः' बोल कर बलि देने चाहिये । बलि

देनेके बाद वह अन्न पुच्छे, पतित, पुच्छे से आगीयिका

करनेवालेको, पापरोगियोंको, कर्षा तथा दृष्टियोंको देना

चाहिये । उस अन्नको भूमि पर इस प्रकार रखने जिससे

उसमें पृत्ति न लगे । जो ब्राह्मण प्रतिदिन इस विधि

द्वारा अन्नसे सम्पूर्ण भूतोंको बलि देने हैं वे मृत्युके बाद

दिव्य शरीरको प्राप्त कर परगिये जाते हैं । इस प्रकार

बलि देनेके बाद भक्तियोंको भोगन कर कर पीछे धाय

स्वयं भोजन करे। ( मनु ३.४० ) वैश्वदेववलि  
सांनिहिक द्राह्मणकी अग्रथ्य कर्त्तव्य है।

काम्यवलिमें वलिके पश्चिम भागमें जगत्से उत्तराप्र  
रेया खीच कर इस मात्रसे वलि देनी चाहिये। यथा—

“ऊ देना मनुष्या पत्रयो वयासि मिद्धा सय  
क्षीरगदैत्य स घा।

प्रेता पिशाचास्तरय समस्ता ये चात्रमिच्छन्ति  
मया प्रदत्तम् ॥

पिपीलिका कोटपतङ्गनाथा वुभुक्षिता कर्म  
निव धदेहा।

परान्तु ने तृप्तिमिद मयात्र तेभ्यो विसृष्ट  
सुप्रिनो भवन्तु ॥

येषा न माता न पिता न बन्धुर्नैवान्मसिद्धिर्न  
तथान्नमस्ति।

तत्तत्रयेऽन्न भुवि दत्तमेतत् प्रयाग्तु तृप्ति  
मुदिता भवन्तु ॥

ऊं भूतानि सर्वाणि तथाममेतदहञ्जि'शुर्न  
यतोऽन्य दस्ति।

तरमादह भूतनिकायभूतमन प्रयच्छामि  
भवाय तेषा ॥

चतुर्दशो भूतगणो येष तत्र स्थिता येऽपि  
भूतसघा।

तृप्यर्थमन्न हि मया त्रिष्टु तेषामिदृते मुदिता  
भवन्तु ॥”

( आहिकृतत्व )

आहिकृतत्वमें इसका विवरण गुलासा तौरसे किया  
गया है। त्रिस्तार हो जानेसे भयसे यहा दो एक हीका  
घर्षण किया जाता है। वलि देनेका तात्पर्य यह है, कि  
कोई अपने उद्देश्यसे पका कर भोजन न करे। समस्त  
भूत, कीड़े, पतङ्ग आदिको अन्न देना ही वलि है  
एव इसी प्रकार वलि दे कर भोजन करना चाहिये।  
शास्त्रमें लिखा है, कि जो अपने सुपके निर्मित भोजन  
पकाते हैं वे केवल पापका ही बोधा वाधते हैं।

नवग्रहके लिये जो वलि दी जाती है उस नवग्रह वलि  
कहते हैं।

सूर्यको गुडोदन, चन्द्रमाकी घी दूध, मंगलको यावक,

बुधको क्षीरान्न, शुकस्पतिको दध्योदन, शुक्रको घृती  
दन, शनिको पिचडी, राहुको बकरेका मास एव केतुको  
चिखोदन वलिमें दिया जाता है। जिनकी जो वलि है  
उनको वही वलि देनेसे वे प्रमत्त होते हैं। देवताओंको  
जिन जिन उपायों द्वारा प्रसन्न एव पूजन किया जाता है  
वह सब वलि कहे जाते हैं।

कालिकापुराणमें वलिका विषय, उसका क्रम एव  
स्वरूप अर्थात् जिस प्रकार रुधिरादि द्वारा देविया प्रसन्न  
होती हैं उसका वर्णन इस प्रकार किया है—साधकों  
को चाहिये, कि वे वलिदानका क्रम जैसा वैष्णवी कल्प  
तत्रमें कहा गया है वीसा हो ग्रहण करें। पक्षी, कच्छप,  
प्राह,मत्स्य, नौ प्रकारका मृग, भैसा, बकरा, भैंडा, गाय,  
बकरी, रू, सूअर, कृष्णसार, गोधिका, शरभ, सिंह,  
शाईल, मनुष्य और अपने शरीरका रून इन्हें चण्डिका  
और भैरवीको प्रसन्न करनेके लिये वलिमें देना चाहिये।  
इन रलियोंको देनेसे सम्पूर्ण इच्छाओंकी पूर्ति एव  
मृत्युके बाद स्वर्गकी प्राप्ति होती है। महामाया दुर्गाजी  
मत्स्य और कच्छपके रुधिरकी वलिसे एक  
मास, प्राहादिके रुधिरसे तीन मास, मृग और  
मनुष्योंके रूनसे आठ मास, गोधिकारके रुधिरसे एक  
साल, कृष्णसार और सूअरके रूनसे बारह वर्ष, अजा,  
भेड और शाईलके रुधिरसे पचीस वर्ष, सिंह, शरभ,  
और अपने रकसे एक हजार वर्ष तक सतुष्ट होती हैं। इन  
सम्पूर्ण पशुओंकी वलिसे दुर्गाजी परिमितकाल तक सतुष्ट  
रहती हैं। कृष्णसार, गैडा और बकरा देवीको बहुत  
प्यारे लगते हैं। वलियोंमें मनुष्यकी वलि सबसे उत्कृष्ट  
है। विधिके अनुसार एक नरवलि देनेसे देवी दुर्गा एक  
हजार वर्ष तक और तीन नरवलि देनेसे एक लाख वर्ष  
तक सतुष्ट रहती हैं। मंत्रसे पवित्र किया हुआ वलि-  
का रक अमृत रूपमें परिणत हो जाता है। वलिका  
मस्तक एव मास देवताका बहुत अमीष्टप्रद है। इसी  
लिये पूजाके समय वलिका शिर और रक देवीको दान  
करना पड़ता है। साधकोंको चाहिये, कि वे भोज्य  
द्रव्यके सहित लीमशून्य अथवा पूनापकरणके सहित भा  
मास हो दे। रक्तशून्य वलिका मस्तक अमृतके  
बराबर है।

कुष्माण्ड, शूद्रगण्ड, मग और ब्राम्हण ये भी बलिमें गिने जाते हैं। जिस जगह पशुकी बलि नहीं ली जाती, उस जगह इक्षु और कुष्माण्ड बलि ही प्रिय है। जो प्रणय है वे अपने घर पर जब शक्तिकी पूजा करते हैं तब पशु बलिके बदले कुष्माण्ड और इक्षु बलि देते हैं। इस बलिके देनेसे भी देवी कृष्णसार और बकरके मासकी तरह प्रसन्न होती हैं। बलिदानमें चन्द्र हाम (चन्द्र) वा कर्तौसे बलिको काटना प्रशस्त है। सिया, तलवार या मारुलसे बलिच्छेद करना मध्यम पत्र उस्तरा और भालेसे बलिको काटना अधम है। शक्ति और वाणसे बलिको काटना मिल्कुल निषिद्ध है। जिन अश्वोंमें बलिच्छेद करना निषिद्ध बतलाया गया है उनसे यदि कोई बरे, तो देवी ग्रहण न करतीं और बलिदान देनेजाला शीघ्र ही मृत्यु मुषमें पहुँचता है। बलि देनेके पहले पशुको स्नान करा कर विधिके अनुसार प्रोक्षण और पाहुँकी पूजा करनी चाहिये। पीछे उसी पाहुँगमें पशुको उन्नर वा पूर्णमुष कर बलि देनी चाहिये।

बलि देनेमें जो हिंसाका दोष लगता है उसको निवारण करनेके लिये मत्तों का पाठ किया जाता है। मत्तोंका तात्पर्य इस प्रकार है—इत्यथ ब्रह्माजिते यक्षके लिये पशुओंकी मृष्टि की हो। इसीलिये मैं यद्यमें पशुकी बलि चढ़ाता हूँ, बलि चढ़ानेमें जो हिंसा हुई है उसका दोष मुझे न हो। बलिके रक्तको पात्रमें रच कर देना चाहिये। वैभयके अनुसार सुवर्ण, चाँसे, पीतल या चाँदीका पात्र बलिके लिये बनाना चाहिये। जो अत्यन्त गरीब है वे यद्यमें चढ़ाने लायक लकड़ाके पात्रमें भी बलिदानके रक्तको चढ़ा सकते हैं। जब बहुत-सी बलि चढ़ाई जाती है तब दो या तीनको सामने कर सर्वोंको एक साथ ही चढ़ाया जाता है। जिन पशुओंकी बलि दो जाती है वे बलि होनेके बाद दिव्यदेहको प्राप्त करते हैं और स्वर्गमें पेश्वर्ण आदि मन्म दापे भोगते हैं। वे सदाके लिये पशुयोनिको छोड़ देते हैं। भेडा, भेसा और बकरेकी बलि ही आज फल प्रचलित दण्डो जाती है। भेयू और बकरे एक ही मन्त्रसे देवीके सामने चढ़ाने होते हैं; किन्तु जहाँ पर यह कहा जाता है कि मैं कौन-सा पशु चढ़ाता हूँ यहाँ पर उसका पृथक् नाम लेना पड़ता है। महिषकी बलि देनेका दूसरा मन्त्र है। (कारिकापुराण ११ अ )

बकरोंमें जिनकी अरुस्था तीज वर्षसे कमती है उनको बलिमें चढ़ाना नहीं चाहिये। यदि ऐसा पशु कोई बलिमें चढ़ावे, तो आत्मा, पुत्र और धनका क्षय होता है।

“गिशुना बलिदानेन चात्मपुत्र धनक्षयः।” (तथित्त्य। दुर्गास्तवतत्त्वमें ऐसा लिखा है—

“पशुघातपूर्वोत्तरकगोर्षयोर्बलित्य”

शु मानेके बाद मस्तक और रक्तका दान करना ही बलि है। इस पशुको तलवारसे मारना चाहिये। शूद्रगना परिमाण इस प्रकार बतलाया गया है—उमकी मूठ बारह अगुल, लम्बाई ३२ अगुल और चौड़ाई ६ अगुल, धार खूब तेज हो, ऐसी तलवारकी उत्तर या पूर्वकी तरफ कर बलि करनी चाहिये।

एक आघातमें ही बलिच्छेद करना चाहिये। यदि एक आघातसे बलिच्छेद न हो, तो उस माल बलि कराने वाले और करनेजालेको पद पद पर विघ्न होवे गे, ऐसा जानना चाहिये। इसलिये बलि देनेमें विशेष सावधानी की जरूरत है। बलिमें यदि विघ्न हो, तो उसकी शान्ति अग्रथ करनी चाहिये।

बलिदानके समय जो पशु एक आघातसे नहीं कटता, उसको फिर काट कर उसी पशुके माससे होम करना चाहिये। विधिके अनुसार उसके माससे पूजा करनेसे शान्ति होती है। अथवा ऐसा न कर सके, तो सहस्रनारा नामके मन्त्रों जप कर देवीके उद्देश्यमें उसके बदलेमें एक और बलि चढ़ानी चाहिये। जो पशु काटनेके समय बाधा जाता है उसका मास अथवा कपिर कुछ भी नहीं चढ़ाना चाहिये। उस पशुके माससे सहस्र बार होम कर ब्राह्मणोंको सुवर्णका दान करना चाहिये। इस प्रकार शान्ति करनेमें उमका प्रतिकार होता है।

बकरे या भेडेको चढ़ानेमें ही ऐसी शान्ति करनी होती है। यदि भी सा बलिदानके समय एक आघातसे न कट जावे तो उसको पृथक् रीतिसे शान्ति करनी होगी।

जिस पशुकी बलि देनी होती है वह पशु सुषा, प्याधि रहित, मधुपूर्ण अङ्गोंसे परिपूर्ण और अच्छे लक्षणोंसे युक्त होना चाहिये। गिशु, पुष्ट, अङ्गहीन और मोटे लक्षणवाला पशु बलिदानमें निन्दनीय गिना जाता है।

इस प्रकारके पशुकी बलि देनेसे नाना प्रकारकी आपत्तिया आती हैं।

ब्रह्मवैवर्तमें लिखा है—दुर्गापूजामें सप्तमीके दिन पूजा कर बलि देनेकी चाहिये, अष्टमीके दिन बलि चढाना निषिद्ध है। अष्टमी दिन चढानेसे कोई न बोध विपत्ति अग्रथ्य आती है। नवमीके दिन पूजा कर यदि त्रिधिके अनुसार बलि दी जाय, तो बहुत पुण्यका लाभ होता है। बलि देनेसे दूरी दुर्गा अग्रथ्य प्रसन्न होती हैं, किन्तु इससे पशु हिंसाजन्य पाप भी अग्रथ्य लगता है। पशु बलिमें जो बलि चढाते हैं अर्थात् पुरोहित, बलिदाता, कष्टनेगाला, पोषा, रक्षक, आगे और पीछे रोकनेवाले ये सात मनुष्य बलिके पाप भागी होते हैं। अतएव बलिसे पाप और पुण्य दोनों ही होते हैं।

ब्रह्मवैवर्तपुराणके प्रकृतिखण्डके ६२वें अध्यायमें लिखा है कि बलिदान देना पाप है। इससे पाप और पुण्य दोनों ही होते हैं। रघुनन्दने तिथितत्त्वमें जहा दुर्गा पूजा के बलिदानका वर्णन किया है वहा पर उन्होंने निश्चय किया है, कि बलिके लिये जो हिंसा की जाती है वह पापजनक नहीं है। अवैध हिंसा ही पापजनक है। वैध हिंसामें पाप न हो कर पुण्य होता है—“यथोऽवध” इसका अर्थ यह है, कि पूजाके लिये जो वध किया जाता है, वह वध नहीं है। ऐसा कहनेका एक माल यही उद्देश्य है, कि बलि चढानेमें किसी प्रकारका पाप नहीं होता। यदि पूजामें बलि न दी जाये, तो ब्रह्म अनर्थ होगा। अतएव पूजा करनेमें बलि अग्रथ्य ही देनी चाहिये।

साख्यकारिकाकी टीकामें वाचस्पतिमिश्रने, बलिमें हिंसा होती है या नहीं, ऐसा वर्णन आने पर, स्थिर किया है, कि बलिमें दोनों होते हैं, पाप भी होता है और पुण्य भी। प्राणीको मारनेसे पाप और पूजा समाप्त होनेसे पुण्य भी होता है। उनके मतसे यह बात बिल्बुद्ध सिद्ध नहीं होती, कि बलि पुण्यजनक है, पापजनक परन्तु नहीं है। वैश्विषा और विषा शब्द देते।

पशु बलिके साथ साथ नर-बलिका भी विधान शास्त्रों में पाया जाता है। किस प्रकारका मनुष्य बलिके योग्य होता है, उसके विषयमें ऐसा लिखा है—माता पितासे हीन, युवक, विवाहिन, दीक्षित, व्याधिग्रन्थ, पर अरिहित

और निर्मल चरितवाले सच्छूद्रकी उसके बुटमियोंके हाथसे मोटी रकम दे कर खरीद लेना चाहिये। तत्पश्चात् उसको स्नान करा कर एक वर्ष तक सप्ताह का भ्रमण कराने। फिर उसकी शपथों और नवमीकी सन्धिमें बलि दे। (दुर्गाविवरण)

जिस समय पशुका मस्तक काटा जाता है उस समय यदि दातोंका रूट फट जाय तो बलि देनेवालेको रोग और काटनेके बाद उसकी आंखेंसे यदि रक्त बाहिर हो, तो जानना चाहिये, कि राज्यका अमङ्गल होगा। महिष का शिर फटने तथा नीचे गिरने पर यदि उसके नेत्रोंमें मूत्र निकले, तो जानना चाहिये, कि प्रतिद्वन्द्वी राजाको मृत्यु होगी। दूसरे पशुके मस्तकसे पानीना निम्नले पर भय होगा, ऐसा जानना चाहिये।

नर बलिके समय यदि मनुष्यका शिर हल्ले, तो जानना चाहिये, कि शत्रुका विनाश और बलि देनेवाले की लक्ष्मी तथा आयुकी वृद्धि होगी। नर-बलिका कटा हुआ मस्तक जिन जिन वाश्योंका उच्चारण करे उनको अग्रथ्य सफल मानना चाहिये। यदि वह हुंकार करे तो राज्यकी हानि और यदि देवताके नामका उच्चारण करे, तो बलि देनेवालेको अतुल ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है।

(कालिकापु० १० अ०)

ऐतिहासिक आलोचनासे जाना जाता है, कि पहले क्या तो भारतवासी, क्या यूरोपवासी सभीमें, चाहे सभ्य जाति हो या असभ्य, पशुबलि या नरबलिकी प्रथा वे रोक टोक प्रचलित थी। वैदिकयुगमें पुरुषमेघकी कथा पहले ही लिखी जा चुकी है। इसके बाद आरण्यकाविले पितृमेघ, गोमेघ और अश्वमेघादि यज्ञोंका वर्णन पाया जाता है। पाणिनि कालमें यद्यपि पुरुषमेघ-यज्ञ निषिद्ध था तो भी चामुण्डाके मामले बलि देनेकी प्रथा प्रचलित थी। कालिकापुराणके ५६वें अध्यायमें देवा पूजनेके समय बलि देना चाहिये, ऐसा लिखा हुआ है।

जब तक तात्विक मतका प्रभाव रहा तब तक यह रक्तकी बलि चलती रही। मानसिक प्रपञ्चकी सिद्धिके लिये पाशावप्रततिके कापालिक भैरवीदेवीको प्रसन्न करने, नरबलि अथवा शयमाधनाके अङ्गोंकी पूर्तिके लिये नर

बलि देते थे। १७० गी जतान्दोमे १६४वीं जतान्दोमे तक यह नृवास पुत्रा पदवि सम्पन्न भारतवर्षमें प्रचलित थी। अब भी धामाचारी सम्प्रदायके अनेक गृहस्थ परिवार जिनमें पहले नर बलि दी जाती थी, जीवित मनुष्यके बदले उनकी प्रतिमूर्ति बना कर देवीकी तृप्तिके लिये बलि देते हैं। इस पुत्राके गानेके बाद उसमें प्राणप्रतिष्ठा की जाती है। सुना जाता है, कि पहले बङ्गालकी स्त्रिया पुत्रकी प्राप्तिके लिये गङ्गाके पास जा कर प्रार्थना करती थीं, कि हमारे पुत्र होनेसे हम धापकी ही दे जावे गी। भाग्यसे यदि उस स्त्रीके कन्या या पुत्रका जन्म हुआ, तो वह गेद चित्त होती हुई गङ्गामें उसको फेक देती थी। कोई कोई उस पुत्रको मलाहोसे निःश्लवा कर पपीद लेते थे। बङ्गालमें और भी आत्मोत्सर्गका वर्णन पाया जाता है, यह सतीका महामरण है। जो सती अपनी इच्छासे पतिके मार्गका अचलभ्रमन करती थीं उनका पवित्र आत्मोत्सर्ग परम श्लाघनीय है। किन्तु जो स्त्री जीवनके दुःपसे पीड़ित हुई, अनिच्छासे अपने कुटुम्बादिनी ताडना तथा लज्जा और भयसे चित्तको उजालामें प्रवेग करती थी उसको निन्दुर बलि न कहा जायतो क्या कहा जाय ? यह बलि पद्मकी तीक्ष्ण धारसे नहीं, वामोंके भीमप्रदारसे होती थी। (२)

शाममें गङ्गामें डूब कर प्राणत्याग करना महा पुण्यजनक कहा गया है। (३) शारंगीय प्रमाणसे जाना जाता है कि गङ्गाके जलमें प्राण त्याग करनेसे ब्रह्महत्या का पाप छूट जाता है और अन्तमें ब्रह्मपद एव मोक्षकी प्राप्ति होती है। उस जीवना फिर कभी जन्म नहीं होता। इसी कारण हमारे देशमें जरसे पीड़ित अस्ती वर्णसे अधिक घृदकी गङ्गाकी यात्रा करायी जाती है। अन्त-

(१) इसका प्रकृत प्रमाण वार्ड साहबके ग्रंथमें लिखा हुआ है।

(२) स्तितियोंका विस्तृत इतिहास सती शब्दमें देखो।

(३) 'गङ्गाया स्वयन्तः प्राणान् कथयामि यगन्ते।

वर्णे तन् परम ब्रह्म वदामि मामक पद्म ॥"

(स्वम्भुपुराण)

"मत्पत्न्य देह गङ्गाया प्रसहापि न मुच्ये।"

(क्रियायोगसार)

जलिके समय नाभि तक गङ्गाके जलमें डूबा जाता है। उस घुसके जब फण्ड तक प्राण जा जाते हैं तब उमने शीतल जलमें डूबे रहनेसे उनकी अन्तर्बन्धि घीरे घीरे सुभ जाती है। पापञ्चित्तस्त्वोत्तूत धमि और स्फुद् पुराणके पचनानुसार यह जाना जाना है, कि उपवास कर आधी देह गङ्गाके जलमें डूबी कर प्राणत्याग करनेसे ब्रह्मसायुज्य होता है। (४)

कालिकापुराणमें जिस प्रकार नरबलि का वर्णन किया गया है उसी प्रकार घृह्णोत्सर्गमें जन्मवलि का। (५) शारंगीहिंगित बलिके सिवाय तालाब, मन्दिर, घर आदि बनानेके समय यदि कोई विघ्न उपलब्ध हो, तो देवताओंको प्रमन्न करनेके लिये नर बलि दी जाती थी। आजकल भी सुना जाता है, कि मनुष्यरजसे बहुतमो अट्टालिकाओंकी नीय डाली जाती है। ऐतिहासिक हिलर साहबने पेसी ही कितनी घटनाओंका वर्णन किया है। हिन्दू राजाओंके समय उक्त कार्यामें मनुष्यका रक्त फाममें लाया जाता था। मुसलमानों का जत्र अधिकार हुआ तब यह नृशस बलि उठा दी गई। सम्राट् शाह

(४) "अत्रादिके तु जाह्नव्या क्षियतेऽनशनेन य ।  
स याति न पुनर्जन्म ब्रह्मसायुज्यमेति च ॥"

(अग्निपुराण)

स्फुद्पुराणमें भी ऐसा ही पद और श्लोक पाया जाता है—

"नाभ्यतं गततोयानां मृताना कयापि देहिना ।

तस्य तीर्थकलायासिनां वकार्या विचारणा ॥"

(स्वम्भुपुराण)

पवित्र हृदयमें किसी सन्ध्यामीको नामी पर्यन्त जलमें डूबी कर प्राणत्याग करने हुए हमने देखा है, यही घाम्त्वयमें आत्मोत्सर्ग है। किन्तु मृत्युके मुणमें पड़ने वाले नरनारियोंका माध्य रहित दूषना, यथोप बलि का छोटा रूप है।

(५) ततः जन्मवलि राजा दधान क्षारेण निर्मितम् ।

स्वयं विन्ध्यात् मोघदृष्ट्या प्रहारजननेन च ॥

कोपेन वधट्टे नि मत्स्य मत्स्य महेश्वरि ।

प्राणप्रतिष्ठा कृत्वा यै शक्यताम्ना महेश्वरि ।

शक्यते मर्देनापि भयत्पेयं न सजय ॥"

(पुद्गोलीलतक)

जहान्ने नगरको नींव डालते समय लाख पशुओं का रक्त उसमें डाला था । (६)

आजकल भी बङ्गालियों के घरमें देवी प्रसन्न करनेके लिये रक्तदानकी प्रथा प्रचलित है । स्वामी, पुत्र या भाई आदिके मरणासन्न बीमार होने पर हिन्दू स्त्रियां उनकी आरोग्यताके लिये देवीको रक्तदान करनेका मनमें रुकल्य करती हैं । दुर्गा या कालीपूजामें स्त्रियां अपनी छातीका मध्यभाग चीर कर मानसिक पूजा समाप्त करती हैं । जनसाधारणका विश्वास है, कि रक्तलेखुपा भीरवी मनुष्य रक्तसे सतुष्ट होती हैं । अतएव स्त्रियां देवीको अपने शरीरका रक्त देकर सतुष्ट करनेका प्रयास करती हैं, सनातन हिन्दूधर्ममें देवोद्देशसे आत्मोत्सर्ग करनेके और भी कितने ही उपाय बतलाये गये हैं । बहुतसे लोग यथाविधि कर्मानुष्ठान करनेके बाद महाप्रस्थान कर या अग्निकुण्डमें प्रवेश कर देवताके सतुष्ट होनेकी आशामें अपने आपको बलि चढा देते हैं । (७) ऐसा सुना जाता है, कि बहुतसे लोगोंने देवताको सतुष्ट रखने और उससे मोक्षप्राप्तिकी आशामें अपने आपको जगन्नाथजीके रथचक्रके नीचे उत्सर्ग कर दिया है ।

जैसे प्राचीन भारत इतिहासमें ऐसी नरवलियों का अनेक जगह उल्लेख है वैसे ही प्राचीन यूरोपादि देशों में भी देवताओं को सतुष्ट करनेके लिये नरबलि दी जाती थी । फिनिकीय और कार्थेजिय वासी अपने बाल ( Ba'al ) और भोलक नामके देवताको रक्त-पिपासा बुझानेके लिये मनुष्यको उपहारमें देते थे ।

स्कान्दिनेजिया और प्रोटिविटेनके रहनेवाले प्राचीन ड्रुइड ( Druid ) पुजारी लोग मनुष्यको जला कर अपने देवात्माको तृप्त करते थे । आथेन्सासी अपने स्वर्ग वासियोंके पापोंको क्षालन करनेके लिये धार्लिया ( Tharsalia ) में प्रतिपक्ष एक नरनारो युगलकी बलि देते थे । भारतीय हिन्दू गजाओंकी तरह भ्रीकधासी भी शलुबलि देनेमें हिचकते नहीं थे । होमरने लिखा है, कि ट्रोजान घदियोंकी पेट्रोक्लिस ( Pitroch ) की समाधि के समय हत्या भी गई थी । इजिप्तके रहनेवाले पजन देवके निकट बलि देनेके लिये बालक 'भेनेलेयस्'की उद्दी कर ले गये थे । (८) अगष्टसने अपने देवतुल्य चचा दिवास जूलियसके सतोपके लिये तीन सौ पेरसिया वासियोंको यमपुर भेजा था । पुराणवर्णित राक्षसोंकी नरबलि और नरमास भोजन युरिपिड्यस वर्णित साइकूप जातिके समान है । (९) युरिपिडस फिलो ट्रेटस् और आरिष्टटलने लामी ( I ma ) और लेट्रीगो ( I estragous ) नामकी जातियों का उल्लेख किया है । इटली, सिसली, ग्रीस, पन्टास और लिघिया नामके स्थानोंमें उनका वास था । समुद्र के किनारे कायेट ( Caye ) नगरमें उनका सर्व प्रधान देवमन्दिर था । यहा हाम ( Ham ) देवताके समझमें सुकुमार बच्चोंकी बलि दी जाती थी । साइरेन ( Sirens ) गिब्या अपनी सुन्दरता और सुमधुर गानसे समुद्रके किनारे आनेवाले मल्लाहोंको लुभा कर कास्पनिया कूलवर्त्ती मदिर्में ले जाती थीं ।

(८) Herodotus Vol II p 119

(९) होमरने आडेसो नामके ग्रन्थमें लिखा है, कि साइकूप सिल्लाने युलिमिखके अनुचरो का मास व गया था । युरिपिडसने भी उनके नरमास भोजनका उल्लेख किया है । इन प्रमाणोंसे अच्छी तरह जाना जाता है, कि भूमध्यसागरके किनारे अनेक स्थानोंमें पहले नर बलि प्रचलित थी । जब कभी मल्लाहका छोटा भाग्य उसे इस प्रकारकी राक्षसप्राय असभ्य जातिके स्थानमें पहुँचा देता था, तब यह अपने प्राणसे हाथ धो बैठता, उसे किसी न किसी देवताकी बलिमें जाना पड़ता था । ( Homers Odessa & Euripide )

(६) History of India Vol IV p 278,

(७) जिस समय तांत्रिकोंका प्रवाह जोरों बह रहा था उस समय देवीपूजाकी सामग्री नर रक्तसे बनायी जाती थी ।

(८) महाप्रस्थान—स्वेच्छासे समुद्रमें डूबकर प्राणो का विसर्जन । श्रीक्षेत्रमें इन उपायोंसे अनेक साधु संन्यासियोंने प्राणत्याग किया है ऐसा सुना जाता है । माकिद्वनवीर आलेकसन्दरके समय कलेनासने तुपानल किया था । हिन्दूशास्त्रोंमें अनेक जगह तुपानलकी व्यवस्था है ।



यहां पर उनकी वति चढाई जाता था । (१) क्रीटगर्सी दिग्मोनिसियारा (Dionysia) में जीवित पशुओंका मांस शतोंसे चौर कर दिग्मोनियाको मनुष्य करने चढाते थे । (२) मिनाडिम् (Minades), थियाडिस (Thyades) और बैकी (Bacch e) प्रभृति जातिओंकी रसलोलुपताका उपाख्यान पाया जाता है । प्रवाद है, कि भाग्यवासने (Orph us) नरमांस भक्षणकी प्रथा उठा दी थी पर ये जीव बलि बद्धन कर सके थे ।

यर्नाड स्मिड (Bernhard Schmidt) अपने ग्रथमें (Genechis. u Siga Munchinas) आर्कडियाके लाइकियन (Mt. I skation) पर्वत पर बन्धिके विषयमें लिख गये हैं । हिरोदोटस स्मिडस द्वीपका उन्हीं यर्णन करते समय लिखा है, कि उस द्वीपके रहनेवाले मनुष्य कुमारों अर्तैमिस देवीकी पूजामें नरबलि चढाते थे । कभी कभी लकड़ोंके आघात या म दिरके पास किसी पर्वतसे यह हतभाग्य मनुष्य नीचे गिरा दिया जाता था । वस उसी पतनसे विचारेकी जोरनलीला समाप्त हो जाती थी । (३) अर्तैमिस वहा पर काली देवीके सभान पूजा जाती थी ।

आसुरियोंमें नरबलिका प्रचल श्रोत प्रमाहित था । असुरोंका विश्वास था, कि ऐसे देवमोगके सिराय और दूसरा कोई उपहार नहीं है । पहिले ही लिखा जा चुका है, कि इजिप्तदेशमें नरबलि प्रचलित थी । दिग्मोदोरस

(१) *Bravants Ancient Mythology*, Vol II 20

(२) *Island of Citos* दिग्मोनिसासकी पूजामें नरबलि चढाई जाती थी । *Porphyry* टेनेडो ओपलिसके (Tenedo Lucpis) ऐसे ही एक कृत्य का उल्लेख कर गये हैं ।

(३) डा० हेण्डली (Dr Hendley) ने लिखा है, कि जोधपुरराजके राव्याधिराजके समय मेवात्वासी भालोंके देवोंका पूजा कर बहुतेसे बकरे परंतु निखरसे नीचे गिराये थे । पहिले चित्तोरगढ़के प्राचीन देवी मन्दिरमें और धम्मर नगरकी अम्बादेवीके सामने नरबलि दी जाती थी, ऐसा सुना जाता है । चित्तोरके किसी राजाने इन्हीं मंदिरमें सात राजपुत्रोंको बलि दी थी । (*Jour As Soc. p 1/11 350*)

और प्यूताक प्रभृतिने ओसिरिसको घेरो ( Her os Osis) का और इडिथिया नगरमें राजकर्तृक प्रदत्त नर बलिका उल्लेख किया है । रोमक लोकोके राज्यने यूरोप एण्डमें सम्भ्यताका प्रचार हुआ, परन्तु वहा नरबलि से रोकटोक प्रचलित रही । नियस, कर्णेलियस, लेंडुस और पि लिंसिनियस क्रमसेके शासनकालमें सिनेटमना की अनुमतिके अनुसार नरहत्या बन्द हुई (१) । मध्य युगमें उच्च शिक्षा, सम्भ्यता और धर्मप्राणताके प्रचारके साथ नरबलिरूपी पापलौत पूर्ण-भारत और पश्चिम रोम साम्राज्यमें व्याप्त हुआ था । प्राचीन यहूदियोंमें भी नर बलि प्रधान देवोपहारमें गण्य थी । ईश्वरकी आज्ञासे अमाहिम अपने पुत्रकी बलि देनेके लिये उद्यत हुए थे । जेफथाकी पूजाका मनमें चिंतयन कर उन्होंने अपनी कन्याकी बलि दी थी । यहूदी मेलकको शान्तिके लिये शिशुबलि करनेकी शिक्षा देते थे । युद्धमें परास्त होने की अशाङ्कसे मोयावपति ( Moab) ने अपने पुत्रको जला कर मारा था (२) । प्रोक और रोमक जातियोंके समान जर्मन, नर्समान और फ्रेंच जातिमें नरबलिका प्रौढ प्रमाहित था । ये किसी विपत्तिके आने पर अपने राजा, राज पुत्र या राजकन्याकी बलि चढानेमें जरा भी नहीं भटकते थे । (३) उत्तर अमेरिकाके अजतेक ( Aztecs ), तोलतेक ( Toltecs ), तेज़कान् ( Tezenueans) और इट् ( Incas) जातिया परस्पर युद्ध कर ग़लूसेनाकी बंदी कर लेती थीं । फिर उन असम्भ्य बंदियोंको ये लोग समय समय पर देवीके लिये बलि चढाते थे । (४)

(१) *Phny 333 e, 3 and Hukson's Ancient Egyptians*, Vol 11 p, 286

(२) *II Kings III 27*

(३) गजा ओपेनघरने अपने पुत्रोंकी बलि दी थी । स्वयं यारसियों दुर्भिक्षके समय अपने राजा क्षामोडिक की देवप्रतिके लिये बलि चढाया था ।

*Grin's Tentonic Mythology* 11 p 44 राज रथानमें भी ऐसी एक घटनाका उल्लेख है । मेवाडपति राजा लक्ष्मण देवीकी रत्नपिपासा दूर करनेके लिये अपने सौ पुत्रोंकी बलिमें चढाया था ।

(४) अमेरिकायामी विभिन्न जाति जयलभ्य धन, और बंदी नरनारिणोंकी महाममार्गमें देव पूजामें भेद

दक्षिण अमेरिकाके पेगुआसी बलिदानके विशेष पक्ष पातो थे। इङ्गसदारीके पीडित होने पर एए देवताकी वृत्तिके लिये उनके पुत्रोंकी बलि दी जाती थी। आरो कानियन जातिके पुलोकन (Pruloucon)-उत्सवमें मृत सैन्यकी प्रेतात्माकी सन्तुष्ट करनेके लिये शत्रुसेनाके बलियोंको बलि देनेकी प्रथा थी। एताद्रिन्न प्रशान्त महासागररूप द्वीपवासी, मुरिरम्बाइट और बदीत प्रभृति आक्रिक जाति, ताताए, तुर्क, मुगल, भोद, याजा सुमात्रा, अएडमन, जापान और चीन वासियोंमें थोड़ा बहुत नरनाजा या गरमास भोजनका इतिहास पाया जाता है। डेलर साहय स्वकीय ग्रन्थमें उल्लेख करते हैं, कि बहुतसे गण्यमान्य मनुष्य प्रेतात्माओंको सन्तुष्ट करने उनकी समाधि पर अपनी अपनी स्त्री और श्रोतदासोंकी बलि दिया करते थे। असाष्टि और यूकेटन वासियोंके यहा किसी भी धर्मात्सवके होने पर कारागारसे बलियो को ला उनकी बलि दी जाती थी। इङ्गलैण्डके इतिहास में धर्मके लिये अनेक जोपनत्यागियो (Martyrs) का उल्लेख पाया जाता है। वहा कोई तो राजानुवाके द्वारा अद्याघातसे खण्ड खण्ड किया जाता था, कोई अग्निदाघ हो कर मनुष्यजन्मकी लीलाको समाप्त करता था। वे या तो राजशत्रु की तरह या प्रचलित धर्मके विपक्ष जाने से नरबलि रूपमें मारे जाते थे। यह देखा जाता है, कि आजकल शक्तिपूजामें मेघ, महिष, छाग, कुष्माण्ड और श्शु वृण्डकी बलि दी जाती है। इन बलियोंमें छागबलि ही ज्वादा प्रचलित है। ४ दैत्यभेद, यह सावणि मन्वन्तरमें इन्द्र हुआ था। (मार्कण्डेयपु० ८०।१०)

बलि (स० पु०) कोई एक असुरराज। प्रहादके पुत्र

चिरोचनसे उसका जन्म हुआ था। यन्तिके एक सी पुत्र थे जिनमेंसे वडेका नाम वाण था। (विष्णु० १।२१ अ०) बलिको वाधने स्वयं विष्णु भगवान् वामनरूप धारण कर भूमण्डल पर अचतौर्ण हुए थे। -

वामन देता।

बलिनै अश्वमेध यज्ञ कर दान देना शुरू किया। विष्णु भगवान् वामनरूप धारण कर उसके सामने उपस्थित हुए। बलिनै उस वामनकी अत्यन्त आदरस पूजा कर उसके आनेका कारण पूछा। वामन रूपधारी विष्णुने उसकी खूब प्रशंसा की और अपने पैरोंसे तान पैर प्रमाण भूमि मागी। इस पर बलिनै ब्राह्मणसे कहा, "तूने वृद्ध पुरुषो को तरह मेरी सुमिष्ट वाषयो से प्रशंसा कर मुझे सन्तोषित किया। अब अश्वकी तरह यह सामान्य भूमि क्यों मागते हो, प्रभूत भूमि और धन मागो, मैं तुम्हे देता हूँ। क्यों कि जो मेरे पास मागने आता है उसे दूसरेके यहा जानेकी जरूरत नहीं रह जाती। अच्छा हो! यदि तुम मुझसे और कोई बहु मूल्य वस्तु मागो, मैं उसे दूंगा।" यह सुन कर वामन बोले, "महाराज। जो मुझे आवश्यक था उसे मैंने आप से कह दिया। क्यों कि विद्वान् अपने प्रयोजनसे अति रिक्त वस्तु ग्रहण नहीं करते।" वामनके ये उपयुक्त वचन सुन बलि उतनी ही जमीन देने राजा हुए। शुक्राचार्य विष्णुको पहचान गये और बलिका तिरस्कार कर बोले, "ये माहात् सनातन विष्णु भगवान् हैं, कश्यपकी भार्या भद्रितिके गर्भसे वामन रूपमें इन्होंने जन्मग्रहण किया है। तुम बिना विचारे भूमि देनेको राजा हुए हो। ये अपने एक पैरसे पृथ्वी ले गे, दूसरेसे स्वर्ग। इनके विशाल शरीरसे गगनमण्डल व्याप्त हो जायेगा। तीसरे पैर रखनेका स्थान नहीं मिलेगा और नहीं देनेसे तुम्हें नरक जाना पड़ेगा। अतएव जिस दानसे विपत्ति उठानी पड़े, यह दान प्रशान्त नहीं होता। अत अब तुम यदि अपनी मलाई चाहो, तो उसे दान मत दो। यही एक उपाय तुम्हारा रक्षाका है और नहीं है। इसमें एक लाभ यह भी है, कि तुमको इससे कूडका पाप भी नहीं लगेगा। क्यों कि परिदासवृत्ति रक्षा वा प्राणसङ्कट के समय कूट बोल्नेसे दोष नहीं लगता। इस समय

देतो थी। १४८६ ई०में ह्विटजिल पोचलिके मन्दिरमें लश्चाधिक नरबलि हुई थी। अनावष्टि होने पर वे जल देवता टनुलोकको तृप्त करने शिशुबलि और तैजकाटल पोकाकी पूजामें भी सुन्दर सुन्दर सुकुमारका बलि देते थे। पश्चिम अडिसावासी पोन्व्गण तारियेन्नु नामको यमुमाताके उत्सवमें नरबलि अर्पण करते थे। विस्वत विवरण (Prescott's Conquest of Mexico Vol 1 p 22 67 68 & 71 74 and Her side s) American Antiquities )

तुम्हारे प्राण पर सट्टे हैं, इसलिए तुमको मूठ बोलनेसे पाप नहीं।' बलिने शुकाचार्यका यह उपदेश सुन कहा, 'गुरुदेव! जो आपने कहा वह सत्य है उसमें जग भी मन्वेद नहीं। किन्तु मैं महात्मा प्रह्लादका पौत्र और त्रिरोचनका पुत्र हूँ। मैंने ब्राह्मणकी वचन दे दिया है, सो अब किस प्रकार उन्हें घृत्तोंकी तरह घनलोममें पट्ट कर लौटा दूँगा। यह ब्राह्मण चाहे मिथ्य हो या शत्रु, मैं तो उन्हें यह भूमि अर्पण दूँगा। मैं अनपराध हूँ, यदि ये अपराध कर मुझे बाधेगे, तो भी मैं उनका वध नहीं करूँगा।' बलिने यह बात सुन कर शुकाचार्यने कोपित हो कहा, 'तू भृश पण्डितमिमानो है। मेरी उपेक्षा कर मेरे शासनकी अपराध करता है। अतएव तू सदाके लिये ध्रोघ्न होवेगा।'

बलि मुझकी जाप सुन कर भी सत्यमे विचलित न हुए। बलिने वामनकी पूजा की और उदकस्पर्शपूर्वक भूमि का दान दिया। अब विष्णु भगवान् वामनरूपसे आर्च्यारूपमें बहने लगे। बलिने देखा, कि विभ्रमृत्ति हरिके पदतलमें रमातल, चरणद्वयमें पृथ्वी, दोनों जङ्घामें पर्वत, जात्रुदेवोंमें पक्षी, ऊरुद्वयमें मरुद्वय, घनमनमें सध्या, गुहा देवोंमें प्रजापति, जत्रुमनमें ममस्त असुर, नाभिस्थलमें आकाश, बुद्धिदेवोंमें समसागर, ऊरुस्थलमें नक्षत्रध्रेणी, हृदयमें हर्म, स्तनद्वयमें ऋत और सत्य, मनमें चन्द्र, वक्षस्थलमें कमला, कण्ठमें वेद और समस्त शब्द, चार बाहुओंमें इन्द्रादि देवगण, कण्ठद्वयमें विद्या, मस्तकमें स्वर्ग, चालोंमें मेघ, नासिकामें अग्नि, चक्षुद्वय में सूर्य प्रभृति तीनों लोक दिन ई देते हैं। बलि और ममस्त असुरगण वामनके इस प्रकार शरीर देखा कर बहुत भयभीत हुए।

तदनन्तर उनके एक पदसे बलिचों ममस्त भूमि, शरीरमें आकाश, वाह्यद्वयमें सम्पूर्ण विशाये आमान्त हो गई। दूसरे पदसे स्वर्ग व्याप्त हो गया और तीसरा पैर रखनेकी वहाँ पर डीर न मिला। उनका यह कृत्य देखा बलिके अनुचरोंने उन्हें मायायो ममम्हा और उन्हें मार डालनेके लिये ये लोग अस्त्रांका निक्षेप करने लगे, किन्तु उनका कोई कुछ भी नहीं बिगाड, मका। बहुतसे दानव विष्णुके अनुचरोंके हाथसे यमपुर सिधारे। बलि

अपने अनुचरोंको युद्धसे निषेध करने लगे और बोले "अभी देव हमारे प्रतिफूल हैं, जो तीन लोकके प्रभु और सर्वेशक्तिमान् हैं उन्हें पुरयकारने जोतनेकी चेष्टा करना बिलकुल असम्भव है। इसलिए तुम लोग घृषा हो लोगोंका क्षय मत करो।" बलिका हतना बहना हो या, कि वामनके अभिप्रायानुसार उसको गदगदने पाशमें बाध लिया। तब भगवान् वामनने बलिसे कहा, "राजा! तुमने मुझे तीन पद भूमि दान की है, मेरे दो पदसे सम्पूर्ण पृथ्वी आक्रान्त हो चुकी है। तीसरे पद रखनेकी और भूमि कहा है, सो दो। मेरे एक पैरसे ममस्त भूलोक आक्रान्त हुआ, मेरे शरीरसे ममस्त आकाश और विद्यायें व्याप्त हो गयी हैं। इस प्रकार तुम्हारी ममस्त भूमि आक्रान्त हो चुकी, सो तुम्हारे पचन पूर्ण नहीं हुये अतएव तुमको नरक जाना होगा। अतः कुलगुण शुकाचार्यकी आज्ञामनी ले कर शीघ्र दो नरक जानेकी तैयारी करो।

विष्णु भगवान्के वचन सुन कर बलि बोले "भागवत! मैं असत्य कभी नहीं बोलता। मेरे कहे हुये वचन मिथ्या नहीं हो सकते। आप ही कपटनापूर्वक वामनरूपमें शिक्षा माग कर अब दूसरा रूप दिगलाले हैं। इस पर यदि आप मुझे मिथ्यावादी मानते हैं तो मैं आपके मर्जी कारको पूर्ण करता हूँ। अपकीर्तिसे मुझे जितना नश्य है उतना नरक या पाशयपनसे नहीं है। अतएव आप तृतीय चरणवमल मेरे मस्तक पर स्थापन कीजिये। भगवान् वामनने बलिके कहे अनुसार अपना तृतीय चरणकमल बलिके मस्तक पर रखा। उस समय बलि भगवान्का स्तय करने लगे। प्रह्लाद आदि भी उसी समय यहा पडुचे और भगवान्को प्रणाम कर बोले, "बलिने अनेक सत्कार्य और सर्वस्य दानमें अर्पण कर दिया है, यह निग्रहयोग्य कदापि नहीं है, इसलिए इसका पचन मोचन कर दीजिये।"

भगवान् विष्णुने कहा, "जिस पर मेरा अनुग्रह होगा है उसका मैं पढिटे घन अपहरण कर लेता हूँ। क्योंकि शर्पमें ममता होती है और मुझमें अविभ्राम करने लगता है। यह बलि देवियोंका अन्तर्ग और कौत्सिधर्मन है। इस व्यक्तिके दुर्जय मायाकी जौना है अतएव अयमत्र हो कर सो यह मुप्य नहीं होता। यह निर्धन, स्थानच्युत, शत्रुकर्तृक बप ही

कम भी सत्यमे विचलित नही हुआ और जातिवाले इस का परित्याग कर दुष्ट होते हैं। यहा तब, कि कुलगुरु शुक्राचार्यने भी शाप दिया है, फिर भी बलि सत्यसे जरा भी विचलित नही हुआ। अतएव मैं इमे देवताओंको दुष्प्राप्य स्थान देता हूँ। मैं रत्रय इसके आश्रय हुआ। यह सावर्णिमन्वतरमें इन्द्र होगा। जब तब यह मन्वन्तर नही जावेगा, तब तक यह विश्वकर्मा निर्मित सुतलमें जा कर रहेगा। यह स्थान सामान्य नहीं, आधि व्याधिः प्राति, जरा और परामवसे रहित है। उसी स्थानका प्रभु हो कर बलि! तू यहा अग्रस्थान कर। मैं कोमोदकी गदासे तुम्हारी रक्षा करूँगा।

बलि भगवान्का आदेश पा पातालको चल दिये। इधर शुक्राचार्यने भगवान् विष्णुकी आज्ञासे यज्ञको पूर्ण किया। (भागवत ८, १८ २ अ०, वामनपुराण आदिमें इसका विशेष विवरण मिलता है। वामन देखो।

५ ययाति य गोद्रव सुतपा राजपुत्र। (स्त्री०)  
रति सनुणोतीति बल सवरणे इत्। ६ जरा द्वापा श्लथ चर्म, बुढापके कारण चमडे पर पडा हुइ गिरन। पर्याय—चर्मतरङ्ग, त्वग्गुर्मि, त्वक् तरङ्ग। ७ अजरावयव। ८ गृह दासमेद। (मेदिनी) ९ गुदादुर। बवासीर होने पर यह निरुलता है। सुश्रुतने लिखा है—

गुहादेशसे आध अगुलको कुछ अधिक दूरी पर प्रमाहणी, विमज्जनी और सम्बन्धी नामकी तीन बलि हैं। ये तीन बलि चार अगुल चौडी, त्रिर्णगु भागसे स्थित और एक अगुल ऊची हैं। शङ्खावर्त्तकी तरह बलयाकार में जडित हो कर एक दूसरेके ऊपर स स्थित हैं। उनका वण हस्तीके तालूके समान है।

गुहादेशजात रोमक अर्द्धभागसे ले कर यवके अर्ध भाग परिमित स्थान तकको गुदाधु फहते हैं। प्रथम बलिका स्थान गुदाधुसे दो अगुल नीचे है।

बलि होनेके पहिले अन्नमें अश्रद्धा, कष्टसे परिपाक, ऊचद्वयका भारोपन, उदरमें शब्द, रुजता, अतिशय उद्गार, नेत्रोंका फूलना आदि लक्षण होते हैं। पाण्डु, प्रहणी अथवा शोष रोगीकी बलि रोगकी सभावना होने पर कास, व्यास, भ्रम, तट्टा, निद्रा और इन्द्रियोंमें दुर्बलता आ जाती है। इन लक्षणोंके दिखाई देने पर जानना चाहिये, कि

बलि रोग प्रगट होगा। यह वायु, पित्त और कफ इस प्रकार विदोषज होती है।

वायुजबलि—वायुजनित बलि शुक्र, अरण्यण, मध्यस्थलमें विषम, कन्ध पुत्र, तुण्डिकेरी, नाडीमुल, या शुचीमुपगने आरुतिके समान होती है। यह वायुज बलि टन टन शब्द करती है। रोगी स हनमानसे अथात् जडसड हो कर बैठता है। कटि, पृष्ठ, पाण्डु, मेदु गुण और नाभिमें वेदना होती है। नय, दन्त, चक्षु, मुख, मूल और पुरीप काले हो जाते हैं।

पित्तजबलि—पित्तजबलिमा अग्रभाग नील जीर्ण सूत्र होता है। यह विसर्पी, ईषन् पीतवर्ण वा यकृन्के समान आभाविशिष्ट होती है। शुक्रपक्षीनी निहाके समान सस्थित, यवके मध्यभागकी आरुतिमी और जोत्रके मुखके समान सजदा श्लेद्ध्युक्त होती है। पित्तजबलिसे दाहयुक्त रुधिर निरुलता है। ज्वर, दाह, पिपासा और सूच्छां प्रभृति उपद्रव तथा नय, नयन, दशन, जन्न, मूल और पुरीप पीतवर्ण हो जात हैं।

श्लेष्मजबलि—श्लेष्मजन्य बलि भवेतवर्ण, महामूल विशिष्ट, दृढ, गोलाकार, स्निग्ध, पाण्डुवर्ण, करोर, पनस के आकारकी, कठिन, आस्त्रावहीन और अतिशय कण्डु विशिष्ट होती है। इसमें श्लेष्मायुक्त और अधिक परिमाणमें मासके घोषनके समान मल निरुलता है। टक्क, नय, नयन, दशन, वदन, मूल और पुरीप भवेतवर्णके होते हैं।

इसके सिवाय रक्तजन्य बलि भी होती है। रक्तजबलि घटके अदुर वा त्रिद्रुमके समान और पित्तजबलिके लक्षणोंसे विशिष्ट होती है। इसमें मल कठिन हो जानेसे दुष्ट शोणित अधिक परिमाणमें निरुलता है। अतिशय शोणित निकलनेसे नाना प्रकारके उपद्रव होते हैं। बलि सान्निपातिक होनेसे उसमें सभी दोष और सब प्रकारके लक्षण होते हैं।

मलद्वारके वाह्यदेश तथा मध्य भागमें बलि होनेसे चिकित्सा करावे, किन्तु यदि अतर्गलि होगी, तो प्रत्याख्यान करना ही निषेध है। (सुश्रुत मुनि० २ अ०)

अर्द्ध देखो।

भावप्रसाशमें लिखा है—वातजन्य अशरोग होने पर

जो बलि होता है वह अधिक सघन, अघन परस्पर विभिन्नरूप हो कर निकलती है। ये बलिया शुष्क, वेदनायुक्त, अनुपचिद, कटिन, अपिच्छिल, कफज और गरम्पर्श होती तथा वनभाज्ये उदनी हैं। उनका अप्रभाग अतिमूत्र और चींटे मुँहका होता है। इन बलियोंका चर्ण धूप या लोहित होता है। उनकी आरुति वेर, राजूर और ककड़ीके फलके समान, कहीं कदम्ब पुष्पके और कहीं गई सरसोंके समान पीतचर्णकी होती है तथा वे मन्म पिष्टनामे परिरोहित रहती हैं। इनमे रोगीका मस्तक, पादपदंग, मूत्रपदंग, कटि, ऊरु और छाती आदि स्थानोंमें चन्ना, उदार विष्ट म हृद्रोग, बगचि, फास, श्वास, त्रियमार्गि, कानोंमें शत्रु और भ्रम होता है। इन में चर्म, नय, विष्टा, मूत्र, चक्षु और मुग्ग कृष्णचर्णके हो जाते हैं।

पित्तज वयासीरमें बलि नील, रक्त, पीत अथवा काली, उनका अप्रभाग नीलचर्ण, सत्पामों अल्प, कोमल और लम्बी होती है। उनकी आरुति शुष्कपक्षीकी जिह्वाके समान, यद्वत्तण्ड यत्रके मृदुग और मध्य तथा अन्त भागमें सूक्ष्म होती है। इस प्रकार बलि होनेसे दाह, ज्वर, घर्म, पिपासा, मूच्छा और प्लानि होती है। पीठे चर्म, नय, मलमूत्रादि हृष्टिदाचर्णके हो जाते हैं।

रक्तज अशौमें बोलिया पित्तज अशौके समान लक्षण दिग्गयो देते हैं। उनकी आरुति बट्टभके बडुके तथा गु जा फलके समान होती है। मल कठिन होने पर भी बलि क्षुण्ण अघच उष्ण रक्त बडे बेगसे निकलती है। इससे रोगीका शरीर मेडकके समान पीला पड जाता है और रक्तस्य उत्पन्न जितने भी उपद्रव हैं समी दिग्वाइ देने लगते हैं। इसमें बल, चर्ण उल्साह, प्राक्किना हाम और इन्टिया आकुल हो जाते हैं। (भा४२०)

अशौभोगमें बलियोंके ये लक्षण उपस्थित होने पर उम्की चिक्त्रिता करती गाहिचे। अशौ रोगकी चिक्त्रिता होने पर बलिया भी सती जाती है। बलि अनेक स्थलोंमें अग्रचिक्त्रितासे दूर की जाती है। (भा४२०)

बलि (दि० खी०) १ बलि देवो। २ सयो।

बलिय (स० पु०) एक नागका नाम।

बलिचर (स० खी०) बलिया उपादान।

बलिकर्म (स० खी०) बलिक्रिया, बलिदान।

बलिका (स० खी०) बलि बलायै वन, टापि धन इत्य। अतिबला।

बलिदान (स० खी०) १ एक देवताके उद्देश्यसे नैवेद्यादि पूजाकी सामग्री चढाता। २ वक्त्रे आदि पशु पुर्गादि देवताके उद्देश्यसे मारना। बलि देवो।

बलिचामिन् (स० पु०) विष्णु। बलि देवो।

बलिन् (स० खी०) बल मत्वर्थे इति (बलादिभ्योमनुष्य तरत्वा। पा५।२।१३५) १ बलवान्, बलवाला। (पु०) २ उद्ग ऊट। ३ महिष, भैसा। ४ धूप, घैल। ५ शूकर, सूकर। ६ बुद्धपुत्र। ७ कफ। ८ माय, उद्ग। ९ बलराम।

बलिन् (स० खी०) बलि पामा दित्वान् न। १ बलिभ, जग द्वारा श्लथचर्मयुक्त, सुढापा आने पर जिसका यमश्री ला हो गया हो।

बलिनन्दन (स० पु०) १ बलिके पुत्र वाणामुत्तर।

बाग देवो।

२ अद्ग, यद्ग और फलिद्ग आदि बलिपुत्र।

(वि०पु० ४।२।१)

बलिनिसूदन (स० पु०) बाल निक्षुद्रयति सूदस्तु। बलि ध्यमी, विष्णु।

बलिन्दम (स० पु०) बलि दमयति दम म, मुम्। बलिया दमन करनेवाला, विष्णु।

बलिपशु (हि० पु०) यह पशु जो किसी देवताके उद्देश्य से मारा जाय।

बलिपुष्ट (स० पु०) वैश्वदेवेन बलिना पुष्टः। वाक, कर्वा।

बलिपोद्दकी (स० खी०) बले पोद्दकी उपोद्दकी। वन प्रकारका नाग।

बलिप्रदान (स० पु०) बलिदान।

बलिप्रिय (स० पु०) बलि उपहृत् प्रीणातीति बलि प्री क। १ लोभपुत्र, लोभका पेट। बलियैश्वर्यपबलिः प्रियो यत्स। २ वाक, कर्वा। ३ उपहारप्रिय।

बलिबन्धन (स० पु०) बलिको बाधनेवाले विष्णु।

बलिविन्ध्य (स० पु०) वैपतक मनुके एक पुत्रका नाम।

बलिभ (स० खी०) बलिभूमिकी त्रोटक्यवदेति बलि

(प्रतिबलि बट, उण् । पा ५।२।१३६) इति भ । १ बलिन, जरा द्वारा श्लथचर्मयुक्त, बुढापा आने पर जिसका चमडा ढोला हो गया है । ( पु० ) २ बृद्ध पुरुष, बूढा आदमी ।

बलिभुक् ( स० पु० ) कौवा ।

बलिभुज ( स० पु० ) बलि भुज क्विप् । १ काक, कौवा । २ चटक, गौरिया । ३ बक, बगला ।

बलिभृत् ( स० लि० ) १ करदाता, कर देनेवाला । २ अधीन, मातहत ।

बलिभोजन ( स० पु० ) काक, कौवा ।

बलिभोजी ( स० पु० ) काक, कौवा ।

बलिभृत् ( स० लि० ) १ बृद्ध, बूढा । २ उपहारनिगिष्ट ।

बलिमन्दिर ( स० स्त्री० ) अधोलोक, पाताल ।

बलिया—युक्तप्रदेशके अन्तर्गत एक जिला ।

विशेष विवरण बालिया शब्दमें देजो ।

बलियद् ( स० पु० ) वृष, साढ ।

बलिवेशमन् ( स० स्त्री० ) बलि का आलय, पाताल ।

बलिवैश्यदेव ( स० पु० ) भूतयज्ञ नामक पाच महायज्ञोंमें चौथा महायज्ञ । इसमें गृहस्थ पाकशालामें पके अन्नसे एक एक प्रास ले कर मन्त्रपूर्वक घरके भिन्न भिन्न स्थानोंमें मूसल आदि पर तथा काकादि प्राणियोंके लिये भूमि पर रखता है ।

बलिज ( स० पु० ) ब शी, कटिया ।

बलिष्ठ ( स० पु० ) अतिशयेन बलवान् इष्टन् मनुषो लुक्, प्रशस्तभावाहकत्वाद्वास्त्य तथात्त्य । १ उष्ट्र, ऊट । २ धर्म सार्थर्णिक मन्त्रन्तर्गत ऋषिभिर्दे । ( मार्क श्रुतेः पु० ६४।१६ ) ( लि० ) ३ अतिशय बलवान् । ये सब बलवान् हैं—गयु, विष्णु, गण्ड, हनुमान, यम, महावराह, शरभ, सत्प्रतिज्ञा, गज, गुरुराज, बलराम, बली, बलि, भीम, सती, शेष और पुराष्टत । ( श्रीरुद्रावत )

बलिष्णु ( स० लि० ) बल्यते बध्यते इति बन् इष्णुच् । अपमानित ।

बलिसन्नन् ( स० स्त्री० ) रसातल ।

बलिहन् ( स० पु० ) विष्णु, वामनदेव ।

बलिहारी ( हि० स्त्री० ) प्रेम, भक्ति, श्रद्धा आदिके कारण अपनेको उत्सर्ग कर देना, निछावर ।

बलिहृत ( स० लि० ) बलि हर्तती क्विप् । १ बलिहरण

कारी, बलि लानेवाला । २ करप्रद, कर देनेवाला । ( पु० ) ३ राजा ।

बली ( स० स्त्री० ) बलि-पक्षे ङीप् । १ बलि, चमडे परकी भुरी । कुष्टौषधिको अच्छे तरह चूर कर घृत और माक्षिक-के साथ रातको सेवन करनेसे बलीपलित विनष्ट होता है । २ वह रेखा जो चमडेके मुडने या सुन्डोसे पडती है ; ( लि० ) ३ बलवान्, पराक्रमी ।

बलीक ( स० स्त्री० ) पटलपान्त, ओलती ।

बलीन ( स० पु० ) १ पुरिचक, विच्छ । २ असुरभेद ।

बलीजा ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी हेल मछली ।

बलिनैटक ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी वैठक । इसमें ज घे पर भार दे कर उठना वैठना पडता है । इससे जाँघ शीघ्र भरती है ।

बलीमुष् ( स० पु० ) बलीयुक्त मुख यस्य । वानर, बंदर ।

बलीयस् ( स० लि० ) अतिशय बलयुक्त, बलिष्ठ ।

बलीयान् ( स० पु० ) गर्डभ, गद्दा ।

बलीवर्द ( स० पु० ) बली च ईवर्दश्च इति । वृष, बैल ।

बैल पर चढ कर याता नहीं बगनी चाहिये, जो अज्ञान पशु ऐसा करते हैं उन्हे नरक होता है और उनके पितृगण उनके हाथका जन्मग्रहण नहीं करते । बैठ गाडों पर चढ कर याता करना भी निषिद्ध बतलाया गया है ।

बलीवर्दिनेय ( स० पु० ) बलीवर्दका अपत्य ।

बलीशक ( स० पु० ) आभ्रातन् वृक्ष, अमडका पेड ।

बलीह ( स० पु० ) बहोकर, उस देशके लोग ।

बलुआ ( हि० वि० ) १ रैतिला, जिसमें बालू अधिक् मिला हो । ( पु० ) २ वह मट्टी या जमीन जिसमें बालूका अंश अधिक हो ।

बलुच—एक जाति जिसके नाम पर देशका नाम पडा । बलुचा देगो ।

बलिचिस्तान—भारतवर्षके उत्तर पश्चिम दिग्वाप्ती एक राज्य । अक्षा० २४ ५४' से ३२ ४' उ० और देशा० ६० ५६' से ७० १५' पू०के मध्य अवस्थित है । इसके उत्तरमें अफगान राज्य, पूर्वमें भारतीय सिंधुप्रदेश, दक्षिण में आरव्योपसागर और पश्चिममें पारसराज्य है । सिंधु प्रदेशके दक्षिण पश्चिम कोणस्थ मोज़ नामक अन्तरीप से छे कर पश्चिमामियुद्धमें बस्तनदीतोरवत्तों जून

अंतरंग पर्यन्त समुद्रोपरकूलतः स्थान वही बालुका-  
मय और वही वही छोटे छोटे परतोंसे परिपूर्ण है।  
समुद्रके किनारे पूर्वमें पश्चिम मुखसिंह, राम अदया,  
गसन, जेनिन प्रभृति और भी वित्तों अतरीप तथा  
सोनियाता और गोयादर उपसागर विद्यमान हैं। शैवोक्त  
उपसागरके तट पर होमरा नामका एक छोटा-सा गाव  
है जहा एक किंग देगा जाता है। वही स्थान यहांका  
थेष्ट बन्दर है।

इस राज्यका कोई भी प्राचीन इतिहास नहीं मिलता।  
प्राचिन सौंदर्यके ऊपर लक्ष्य करनेसे जाना जाता है,  
कि यहाँक पृथ्वीतल अधिप्राप्ती विभवहीन थे। किन्तु ये  
स्वभावे दृढ़नाथ और बलिष्ठ हैं इसीलिये वैदिक  
लोग यलूचिस्तानसे ही घर भारत आनेमें भय खाते हैं।  
आरियाणोंके उल्लेखसे हम जान सकते हैं, कि अलेक  
जे डरके भारताभियान-कालमें ग्रीक सेना इसी मार्गसे  
गुजरी थी। उस समय मत्स्य और राजूर यहांके अधि-  
वासिनों का एकमात्र आहार था। इसका ही स्थान  
जनाश्रीके प्राग् अमे गलीफाकी सेनाने यह प्रदेश विष्य  
मन घर डाला था।

इस राज्यका भूविमाण १३१८५५ वर्ग मील और  
जनसंख्या ८१०७४६ है। प्रहृष्ट और यलूचियोंकी सत्या  
मयसे अधिक है। दोनों जातियोंकी नाना जामा  
और प्रजाया अब भी इस देशके नाना स्थानोंमें दूरी  
जाती है। किन्तु ये लोग कय और कहामे भाये इसकी  
विभरता नहीं है। यद्यपि यलूच जातिके नामसे इस प्रदेश  
का नाम पडा है तो भी यथायमें प्रहृष्टगण यहांके प्रधान  
थे और ये ही सबके ऊपर अधिकार विस्तार करते थे।  
प्रहृष्टगणकी सामाजिक उपति आज भी माता आचार  
व्यवहारेमें भ्रष्टता है। यहां पर बहुतसे प्रजाद  
प्रचारित हैं, उनमेंसे एकमे जाना जाता है, कि एक  
नामक महा हिंदू राजाओंका प्रमाण विस्मृत था। इस  
व शेष शेष राजाने आक्रमण सदाके अधीनस्थ निधु  
वस्तुगणके आक्रमणसे अपनी राज्यसे रक्षा करनेके लिये  
पर्वतगाम्बियोंकी सुन्याया था। पारसीय शुम्भ नामक  
राजाल सदाके दूषणके साथ ही विद्विजियोंकी  
हराया और अनेकी अधिग बालुकाकी जान हिंदूराजकी

मि हासनरुपुत किया तथा उसे राज्यमें निकान भगाया  
उसके अधिष्ठानसे कुमराणी घनकी प्रतिष्ठा है।  
ये कुमराणीगण प्रहृष्ट थे कि नारी, टोच टोच महा' कह  
सकते। पर हा, प्रहृष्टगणके बाद यलूच जातिका भाग  
मन हुआ था, इसमें संदेह नहीं।

यलूचियोंका कहना है, कि ये अरबदेशीय चाहुर  
नामक किसी सदाके अधीन हो आलोपागणमें आये  
हैं। अब भी मडि और भुगति जातिकी धामभूमिके  
निकट गिरिपथमें उस चाहुरका नाम पाया जाता है।  
कैहेरि नामक और एक शेष जातिगा सुमन्मान 'चाहुर  
कीमडी' परतके तट पर रहता है। यह कहता है कि  
यलूचगण मिरिया राज्यमें जब यहां भाये, टोच इसी  
समय उनके पूष पुदुर भी यहां भाये थे। (१) प्रहृष्ट और  
यलूची दोनों ही सुन्नी स प्रदायके सुमन्मान हैं।

कु अरके पूर्वयत्तों हिंदू राज्यराजा कोइ इतिहास  
नहीं मिलता। कु अरकी श्रीधी पीडीमें धवदुला का राजा  
हूय। इस उदत युवकने राज्यप्रवाप्ती ही कच्छराज  
पर आक्रमण किया। युद्धमें जयो हो कु अरानीगणने  
गदाय राजघाती पर अधिपार जमाया। इसी समय  
पारस्यपति नादिगजाह भारत आक्रमणके लिये अग्रसर  
हुय। उन्होंने यथायमें यलूचिस्तान जीतनेकी इच्छासे  
स्वय सैन्यदल भेजा।

अबदुला उनमें अदानी स्वाधार कर अपने पद पर  
अधिष्ठित रह राज्यशासन करने लगे। किन्तु यह सुय  
भाग उन्हें अधिक दिन लय बदा नहीं था। मिंगु  
नवायोंके साथ युद्ध करनेसे उनका प्राणान्त हो गया।  
उनकी मृत्युके बाद उषेष्ट पुत्र हाजा महम्मद का राजा

(१) इसके द्वारा अनुमान किया जाना है, कि अरबदेशीय  
नादिगजाहके आक्रमण पद ट रहा राजा अलिबी काहर एक  
किया था। ग्रीसदेशकी (Gedrosia of Gressin) जग आदि  
की रूप आरिवायने 'Ontac' वा 'Gedrosia' नामसे दूने ली  
है। इसके परिधम प्रहृष्ट जाति का और अरबराज नामके राजा  
में अरबरा नामक जाति का आक्रमण है। गिबि अरब-  
शीरकी Serparrac आदि का उल्लेख कर पाय है। अरबदेशीय  
अभिप्राय कालमें ही इनके दरमें हो हा प्रहृष्टने भाये है।

हुए। नवराजाके लापट्टय और स्पेकट्राचारितासे प्रजा विशेष निरक्त हो गई थी। इसी समय उनके कनिष्ठ भ्राता नाशिर खाँ नादिरशाहको सतुष्ट कर खिलातमें लीट आये। पीछे प्रजावर्गके अनुरोधसे निज भ्राताको हत्या कर उन्होंने राज्यपद प्राप्त किया। नादिरशाह इन स वादसे बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने १७३६ ई० में फार्मानके द्वारा उसको दलूचिस्तानका 'विगलार्मि' बना दिया।

नाशिर खाँ योद्धा और राजनैतिक थे। धीरोचित माहससे वे शासनकार्य सम्पन्न करने लगे। खिलात नगरमें राजदुर्ग बनाया गया और उहाँके यत्नमें उक्त नगरी नाना शोभासे शोभित होने लगी। १७४१ ई०में नादिर शाहको मृत्युके बाद उन्होंने काबुलराज अहमदशाह अबदालीको राजा स्वीकार किया। किन्तु १७५८ ई०में नाशिर खाँके अपनेको स्वाधीन नरपति घोषित करने पर अहमद शाहने पाँके विरुद्ध सेना भेजी। दो तीन युद्धोंके बाद अफगानसेनाके पराजित होने पर उभय पक्षमें शान्ति स्थापित हो गया और स थिकी शर्तके अनुसार काबुलपति खाँके भ्राताको कन्यादान करने और खाँ स्वयं अहमदशाहको मैन्यद्वारा साहाय्य करनेके लिये प्रतिज्ञायत्त हुए। काबुलके कितने ही युद्धोंमें खाँने युद्धविद्याका अच्छा परिचय दिया था। धृन्दायस्थानमें उन्होंने अपने भाई वहराम खाँके विद्रोहदमनसे अच्छी ग्याति पायी थी। १७६५ ई०में उनकी मृत्युके बाद उनके ज्येष्ठ पुत्र महमूदखाँ राजा हुये। उनके राजत्वकालमें राज्य में ज्यादा गडबडी मची। ११८३६ ई०में अ प्रेजीसेनाने जब जैलान गिरिसड्डयसे अफगानराज्यमें कूच किया, तब दलूच सद्दार् मेहराव खाँने अ प्रेजीके साथ विश्वास घातकता की। इसलिये अ प्रेजी सेनाने दलूचिस्तानकी आक्रमण करके पिल त नगर पर अधिकार जमाया। इस युद्धमें खय मेहराव पाँ मारे गये। अ गरेज-राजने खिलात नगरमें अपना शासन फैलाया। १८४१ ई०में मेहरावके नवालिग पुत्र नाशिर खाँ अ प्रेजीके अनुग्रहसे दलूचिस्तानके सिंहासन पर अभिषिक्त हुये।

१८४३ ई०में नेपियरके सिंधु अभियानसे ले कर १८५४ ई०तक अ प्रेज और दलूच सद्दार्के बीच फौद

भी मनोत्राद घटना न घटी। शैपोक वर्षमें लार्ड डल हीसीके शासनके समय खिलातराज्यके दलूच-अधीश्वर मोर नाशिर खाँके साथ अ प्रेज प्रतिनिधिकी एक सधि हुई। उसमें शर्त यह ठहरी, कि वे अ प्रेजी को सीमान्त-रक्षा, स्वराज्यमें अ प्रेजी सेनाका समावेश और बणिक् प्रभृतिकी स्वार्थ रक्षाके सम्बन्धमें विशेष यत्नराम रहेगे और अ प्रेज-राज भी उन्हें वार्षिक १५ हजार मुद्रा देगे। १८५६ ई० पर्यन्त नाशिरने विशेष राजमत्तिके साथ यह शर्त गालन की थी। उनकी मृत्यु होने पर उनके भाई मोर खुदावाद खाँने शासनभार ग्रहण किया। इस समय दलूचमदार्सेने विद्रोहो हो कर उनके अन्यतम भ्राता शेर दिलवाको सिंहासन पर विठानेकी चेष्टा की। किन्तु अ प्रेजीको सहायतासे वे कृतकार्य न हो सके। (१) पर राज्यमें जो अराजकता फैल गयी थी उसकी गतिकी कोई भी नहीं रोक सका। १८७४ ई०में अङ्गरेजीके दलूचिस्तानके साथ राजनैतिक सम्बन्धमें छेड़छाड़ करने पर राज्यमें और भी गडबडी मच गई। अतमें दलूच सद्दार्के खुलानेसे बाध्य हो १८७६ ई०में अ प्रेजीने सुशासनकी स्थापनाके लिये सेना भेजी। खिलातपति और उनके मामन्तोंमें एक तरहसे मेल हो गया और उन्होंने याकुयावादमें अ प्रेज प्रतिनिधि लार्ड लिटनके साथ जा मुलाकात की। १८७७ ई०में विशदोरियाके 'भारतसाम्राज्यो' उपाधि ग्रहणके उपलक्ष्यमें वे दिल्लीदरबारमें आ शामिल हुए थे। खाँके श्वराज्यमें लौटने पर अ गरेज एजेण्टने कौयटामें रहनेकी अनुमति पाई। पर्यन्त अ प्रेजीके अफगान अभियानमें दलूच सरदार्सेने अ प्रेजीको विशेष सहायता पढु चायी थी।

अभी दलूचिस्तानके भ्लावन, सरावन, खिलात, मक्राण, लुस, कच्छगदाया और कोहि आदि विभाग हो गये हैं। खिलात इसकी राजधानी है। मस्तङ्ग ( सरा वन ) फोजदार ( भ्लावाच ), घेला ( घेला ), केज

(१) १८६३ ई०में अ गरेजप्रतिनिधिके बडे आने पर शेरदिल खाँने सद्दार्के लक्षेशानुसार छद्मनामके आक्रमण कर दि हासन पर अधिकार जमाया। किन्तु दूबरे घात हीमें इनकी मार छद्मनाम राजा हुये।





बल्ल—एक प्राचीन राज्य। बहिष्क देखो।

बल्लि—हिमालयकी पार्वत्यप्रदेशवासी एक भौटजाति। हिन्दूकृष्णसे ले कर तिब्बतके नाना स्थानोंमें इनका वास है। इन लोगोंने बहुत कुछ मुसलमानोंका अनुकरण करना सीख लिया है।

बल्लज (स० पु०) तृणभेद।

बल्य (स० स्त्री०) बलाय हित बल (बुद्धिगणकजिह्वेति। पा ४।२।२०) इति प। १ प्रधान धातु, शुक्र। पु०) २ बुद्ध मिश्रक। (वि०) ३ बलकर, ताकतवर।

बल्या (स० स्त्री०) बल्या टाप। १ अतिबला। २ अश्वगन्धा। ३ प्रसारिणी। ३ शिप्रीडी, चगोनी।

बल्ल (स० पु०) बल्ल देखो।

बल्लकी (स० स्त्री०) बल्लकी देखो।

बल्लभ (स० पु०) बल्लभ देखो।

बल्लभ (हि० पु०) १ छड, बल्ला। २ डडा, सौंटा। ३ यह सुनहरा या रूपहला डडा जिसे प्रतिहार या चोखदार राजाओंके आगे आगे ले कर चलते हैं। ४ बरछा, भाला।

बल्लभटेर (अ० पु०) १ स्वेच्छापूर्वक सेनामें भर्त्ता होने वाला। २ स्वेच्छा सेवक।

बल्लभवर्दार (हि० पु०) यह नौकर जो राजाओंकी सवारी या बरातके साथ हाथमें बल्लभ ले कर चलता है।

बल्लव (सं० पु०) १ जातिविशेष। २ पाचक, रसोइया। ३ भीमका यह नाम जो उन्होंने विराटके यहा रसोइयेके रूपमें अज्ञानवास करनेके समय धारण किया था। ४ गोपालक, चरवाहा।

बल्लभगढ—१ पञ्जाबके दिल्ली जिलेकी तहसील। यह अक्षा० २८ १२' से २८ ३६' उ० तथा देशा० ७७ ७ से ७७ ३१' पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ३६ बगमील और जनसंख्या लाखसे ऊपर है। यमुना नदी तहसीलके पश्चिम हो कर बहती है। इसमें दो शहर और २४७ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २८ २०' उ० तथा देशा० ७७ २०' पू० दिल्लीसे २४ मील दक्षिणमें अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ४५०६ है। यह गाम बलराम शब्दका अपभ्रंश है। बलराम एक जाट सरदार थे जिन्होंने यहा पर अपने नाम पर एक दुर्ग और प्रासाद

यनवाया था। १७७५ ई०में दिल्लीसम्राटने यह स्थान अजित सिंहको समर्पण किया। पीछे उनके लडके बहादुर राजगद्दी पर बैठे। अनित्तके उत्तराधिकारीने गद्दीके समय विराहियोंका साथ दिया था, इस कारण पीछे ब्रिटिश सरकारने उनका राज्य छीन लिया। तभीसे यह अ गरीजोंके बखलमें आ रहा है। शहरमें एक वर्नाक्युलर स्कूल और चिकित्सालय है।

बल्ला (हि० पु०) १ लकड़ीकी लवी, सोधो और मोटी छड या लट्टा। २ मोटा डडा, दड। ३ वेद मारनेका लकड़ी का डडा जो आगेकी ओर चौड़ा और निपटा होता है। ४ वास या डडा जिससे नाव खेते हैं। ५ गोबरकी सुन्वाई हुई पहिपेके आकारकी गोल टिकिया जो होलिका जलनेके समय उसमें डाली जाती है।

बल्लापलि—मन्त्राजप्रदेशके कडापा जिलान्तर्गत एक वन विभाग। यहा तरह तरहके बहुमूल्य काष्ठ पाये जाते हैं। बल्लारी (हि० स्त्री०) सम्पूर्ण जातिकी एक रागिनी जिसमें केवल कोमल गाधार लगता है।

बल्लालदेव—दक्षिणाल्यके गिलाहार चण्डीय एक राजा। ये १०१० तकमें विद्यमान थे।

बल्लालवाडी—१ प्राचीन गौडराज्यके अन्तर्गत एक स्थान यह अभी स्तूपाकारमें परिणत हो गया है। इसका घेरा एक मीलसे कम नहीं होगा। बहिर्भागमें जो विस्तृत बाध देखा जाता है, उसका निम्नभाग ५० फुट विस्तृत है। उस प्राचीरके बाहर और भीतर ७५ फुट प्रगस्त परिखा विद्यमान है।

२ चित्रनपुर जिलान्तर्गत एक स्थान। प्रयाद है, कि सेनबन्धीय राजा बल्लालसेन यहा आ कर रहते थे। इस स्थानमें ७६० फुट चतुरस्र एक मूर्तिकानिर्मित किलेका ध्वंसावशेष दृष्टिगोचर होता है। उसके पास ही रामपाल नामक दिग्गी है।

बल्लालसेन और चिकमपुर देखो।

बल्लालपुर—मध्यप्रदेशके चोंडा जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। यह अक्षा० १६ ५४' उ० तथा देशा० ७६ २३' पू० के मध्य अवस्थित है। एक समय इस जनपदमें प्राचीन गौडराज्य प्रकी राजधानी थी। यह प्राचीन नगर ज गलमें परिणत हो जाने पर भी उसका

गिरांन मान भी देखनेमें आता है। १८०० ई०में यहा पत्थरका एक दुर्ग बनाया गया था। इसके उत्तरमें पुष्परिणी और पूर्वमें गोंडराजके समाधि मन्दिरका नान्दायशेष पड़ा है। यहा उदानद्वीकी एक प्रजागाके मध्य एक देवमन्दिर स्थापित है। नदीमें बाढ़ आनेमें यह मन्दिर कुछ समय तक अलमल रहता है। यहाकी समुच्च पर्यतमात्रके मध्य हो कर बदांनदो यह गाँ है और एकर उत्तर धनरानि विराजित रहनेके कारण इस स्थापका प्राकृतिक सौन्दर्य सजापेशा मनोरम है।

**बल्लभराजवंश—दाक्षिणात्यके एक प्रसिद्ध राजवंश।**  
यह यज्ञ हयशाल बल्लभ नामसे प्रसिद्ध है। वर्तमान महिपुर राज्यके समीपवर्ती स्थानोंमें इस वंशके १३वीं शताब्दी तक राज्य किया था। पहले ये लोग कन्नूरी पन्नीय राजाओंके सामन्तरूपमें गिने जाते थे। आगिर उक्त राजवंशका अथ पतन होने पर उन्ही लोगोंमें इस प्रदेशका शासन भार प्रदण किया।

बल्लभराजवंश यादववंशके थे। दाक्षिणात्यमें जब उन लोगोंका पूरा प्रभाव फैला हुआ था, उस समय उन्होंने यादव राजाओंकी प्राचीन राजधानी द्वारसमुद्रमें (वर्तमान नाम हन्नेबोड्ड) राज्य बसाया। शात्र या हय शात्र नामक कोई व्यक्ति इस वंशके प्रतिष्ठाता थे, वेसा बहुतेरीका विश्वास है। (१) किन्तु उसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। शिलालिपिसे बल्लभ पन्नीय राजाओंकी जो चण्डालिका पाई गई है, वह इस प्रकार है—

१०४७ ई०में उत्कीर्ण शिलालिपि(२)से मालूम होता है, कि राजा विनिवाहित्य त्रिभुवनमल्ल पश्चिम चालुक्य राज छटे विक्रमादित्यके सामन्त थे। उनके पुत्रका नाम पद्मगङ्ग था। पद्मगङ्गके तीन पुत्र थे, बल्लभ, विष्णु यर्दन और उदयादित्य। बल्लभने निज भुजबन्धने शाताशतक जगदयकी ११०३ ई०में परान्त किया था। उनके छोटे भाई राजा विष्णुयर्दनने (३) गङ्गराजधानी

तल्लभ पर अधिकार जमाया। एतोंके अधिकारकाल में बल्लभराजवंशकी ग्यानि चारों ओर फैल गई थी। जनसाधारणका विश्वास है, कि रामापुराणमें उद्धे वीष्णुवचनमें कीर्ति किया था। उनके लहके ११, नर सि हने ११४० ११६१ ई० तक राज्य किया। पीछे राजा २५ बल्लभ मिहामन पर बैठे। ये ११६२ ११९१ ई० तक राजा रहे। उन्होंने कन्नूराराजकी परास्त कर राज मुकुट धारण किया। पीछे भाण्ड्य, चोड भादि दाक्षिणात्य राजाओंकी जीत कर अपना प्रभाव फैलाया। १३२३ ई०में देवगिरि यादवराजसे २५ नरमिह परास्त हुए, यह हमें शिलालिपिसे मालूम होता है। उनके बाद राजा मोमेश्वरने चोडराज्यके अन्तर्गत विष्णुपुर जा कर राजधानी बसाई। (१२२५ ई०में) राजा ३५ नरमिह द्वारसमुद्रमें राज्य करने थे। (४) राजा ३५ बल्लभ पा वीर बल्लभदेवने दाक्षिणात्यमें मुसलमानों काक्रमण पर्यंत (१३३० ई०) राज्य किया था। मालिक काफुर द्वारसमुद्रके यादवराजोंके जीतनेके लिये दाक्षिणात्य गये थे। मुद्र में बल्लभ पकड़े गये और परान्त हुए। उनका राज पाट मुसलमानोंके हाथ लगा, पर उन्ही मुसलमानोंकी ह्वाससे ये १३२७ ई० तक राज्यशासन करते रहे थे। पीछे मुसलमानोंके बार बार आक्रमणसे बल्लभराजवंश छार चार हो गया। १३३७ ई०में हम देगते हैं, कि दाक्षिणात्य के मुसलमान शासनकर्ताोंने तापुराणके हयशालके यहाँ आश्रय प्रदण किया था। १३४७ ई०में द्वारसमुद्रके हय शालराज बल्लभदेवने भयराण हिन्दूराजामो के साथ मिल कर मुसलमानोंकी दाक्षिणात्यमें मराज उठायेवा अयमर नहीं दिया और प्राय हो नहीं तब मुसलमान लोग हिन्दूराजामो के पयान्त रहे थे।

**बल्लभराजवंश—महिपुरराज्यके बहुर शिलालिपिसे पश्चिम पाट पर्यन्तमालाका एक पयग। यह समुद्रपृष्ठमें ४६६ फुट ऊँचा है। दाक्षिणात्यमें बल्लभपन्नीय राजामो के**

(१) येन वसयन्त बालका नाम व पुनरामे हय शाल का राज्यकाल १८४३ १०४३ ई० तक चलताया गया है।

(२) Mr. Rice ने १०३१ ई०में उत्कीर्ण उस स्थापकी एक और शिलालिपिका उत्खनन किया है।

(३) विनिवाय, विनिवाय, त्रिभुवनमल्लदेव २५, भुजबन्ध

गङ्गा, बोगगङ्गा, विष्णुगङ्गा कइ एक विष्णु (पृथ्वी) ईगे जाते हैं।

(४) इनके राजवंशमें १२५४ १२८६ ई०के प्राय शिला लिपि उत्कीर्ण देखी जाती हैं।

अधिकारकालमें यह पवत दूरविस्तृत दुर्गमालासे सुशो मित था ।

**बल्लालसेन**—गौडदेशके सेनवंशीय एक राजा । गौडमें जितने राजा हो चुके हैं उन सबमें सेनवंशीय बल्लाल का नाम बल्लालमें किसीसे छिपा नहीं है । बल्लाल-सेनके जन्म और जातिको ले कर अनेक गेग अनेक प्रकारकी बातें कहते हैं । आधुनिक वैद्य कुलजीके मतमें—

“आदिशूरका पशु धजस सेनावज ताजा ।

चिरकसेनका क्षेत्रज पुत्र बल्लालसेन राजा ॥”

फिर विक्रमपुरमें यह प्रवाद इनके विषयमें सुना जाता है—बल्लालसेन वैद्य थे, ब्रह्मपुत्रनदके पुत्र थे, सेरुशुभो दया नामक ग्रन्थमें भी इसो किंवदन्तीका उल्लेख मिलता है । आइन इ अरुवरीके मतमें ये कायर वतलाये गये हैं। किन्तु बल्लालसेनके स्वरचित दानमागर और अद्भुत सागर, सेनराजाओंकी शिगालिपि, हरिमिश्रकी फारिका और आनन्दमट्टरचित बल्लालचरितमें (२) बल्लालसेनको चन्द्रवंशीय ब्रह्मक्षत्रिय (३), विजयसेनके पुत्र, हेमन्तसेनके पीत और सामन्तसेनके प्रपौत्र वत लाया है ।

(१) बल्लालके कायस्थ होनेमें लोग यह कारण वत लाते हैं, कि इस वजने कायस्थको कन्या दी थी ।

च दक्षीण देखो ।

(२) पहिले ‘कुलीन’ शब्दमें मुद्रित बल्लालचरित पर निर्भर करके लिखा गया था, कि १३०० शकमें बल्लाल नामके पर स्वतंत्र वैद्यवंशीय राजा विक्रमपुर अचलमें राज्य करने थे, किन्तु इस समयकी हस्तलिखित बल्लालचरितकी पोथीसे मालूम होता है, कि बल्लाल ब्रह्मक्षत्रिय थे और अर्द्धाधिप कर्णके वंशमें इनका जन्म हुआ था ।

(३) ब्रह्मक्षत्रियकी उत्पत्ति ले कर बल्लालचरितकी पोथीमें लिखा है—

“ब्रह्मक्षत्रिय या योनिर्वंश क्षत्रियपूजंज ।

सेनवंशस्ततो जातो यस्मिन् जातोऽसि पाण्डव ॥”

दक्षिणात्य और सिन्धुप्रदेशमें आज भी क्षत्रिय रहते हैं । उनकी अवस्था कायस्थोके समान है और किसी स्थानमें ये कायस्थ कहे जाते हैं । कुलीन देखो ।

Vol. XV, 61

लक्ष्मणसेन और उनके पुत्र विश्वरूपके तादृश शासन तथा बल्लालके स्वरचित प्रथ और तादृशशासनमें बल्लालसेन “नि शरु शकर गौडेश्वर” और मद्रावीर कह कर धर्णित हुये हैं । बल्लालचरित लेखक आनन्दमट्ट ने लिना है, ‘बल्लालसेन राठ, वरेन्द्र, वग्डी, वड्ड और मिथिला इन पाच गौडके अधीश्वर थे । उनके समय भी मगधमें बौद्धआधिपत्य विलुप्त नहीं हुआ था । इस समय सुवर्णवर्णिकोंमें बह्मभानन्द प्रधान थे; वे मगधाधिपतिके श्वशुर होते थे । बल्लालसेनने इनसे युद्ध के लिये कुछ रुपये कर्ज गये थे, पर बल्लभानन्दने नहीं दिये । इस कारण सुवर्णवर्णिकोंके ऊपर सेनवंशका अत्यन्त प्रकोप रहा ।

बल्लालसेनने गौडराजधानीमें एक बडा भारी यह किया । उस समय यहसभामें विक्रमपुरने ध्रुवसेन, सुप्रसेन, भीमसेन आदि इनके आत्मीय लोग उपस्थित हुए । भीमसेनके ऊपर आहारके बन्दोबस्त कनेका भार था । मोजन स्थानमें ब्राह्मण, क्षत्रिय और शूद्र इन तीन वर्गोंका आसन निर्दिष्ट था । सभी जाति अपने अपने आसन पर बैठी । शूद्रोंके साथ सोनारोंका आसन दिया गया था । किन्तु कोई भी सोनार निर्दिष्ट आसन पर न बैठे और चले गये । भीमसेनने बल्लालसेनके कहा, “सोनारो का नेता बडा अभिमानी हो गया है, यह मगधेश्वर पालराजका श्वसुर बन कर धराको मिट्टीके वर्तन ममान ममकने लगा है । यह डुनु च वृषल स्वजनवर्गके साथ आपकी अज्ञानापर चला गया है ।” इस पर बल्लालसेनने अत्यन्त क्रुद्ध हो तमाम डिडोरा पिटवा दिया, कि आजसे सभी सोनारो की शूद्रमें गिनती हुई । जो ब्राह्मण इनका याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह करेंगे, वे निश्चय पतित होंगे । यह राजादेश सुन सुवर्णकार बड विगडे और उन्होंने दासव्यवसायियोंसे दूता, तिगुना मूल्य दे कर सभी दास परीद लिये । दासा भाउसे प्रनाकी महा कष्ट होने लगा । इस समय वैचर्त्त-लोग राजादेशसे दास्यकर्ममें नियुक्त हुए और वे जला चरणीय भी समके जाने लगे । वैचर्त्तका प्रधान महेश पहले महत्तर था, अभी यह महामाण्डलिक ही दक्षिणघाटमें

मेना गया । (१) इस समयसे मालाकार, बुझकार और कर्मकार ये तीनों जातियां मरुट्टमें गिनी जाने लगी ।

दाम व्यवसाय बंद कर देनेसे सभी प्रजा सुखपूर्वक यजिरी पर विगड़ गई थी । धर्मो प्रादण्यो को उचैज्जा मे बन्धालसेनने घोषणा कर दी, 'कोई भी यजिरू यज्ञ सुल धारण नहीं कर सकता निम्न किस्मोंके गलेमें या गूँथ देना जायगा उसे दंड मिलेगा और यज्ञसूत्र तोड़ दिया जायगा ।' राजमयसे इस समय कितने यजिरू गोंद छोड़ कर चले गये और जो रहे ये यज्ञोपवीत के क कर नीच शूद्रमें गिने जाने लगे । ( बन्धालपरिच )

बन्धालचरितमें ज्ञाना जाता है, कि इसी गोद्वारिणी के गात्रकी सम्पन्न जातिकी यथावय ममाजिक सम्मान व्यवस्था कर दी थी । उनका प्रधान कार्य प्रादण्य और कायस्थोर्मिने महायज्ञसम्भूत और नवगुणयुक्त व्यक्तिवोंकी फौलोन्मयपांदा प्रदान करना था । उनसे राजों और वारेन्द्र प्राणियों ने फौलोन्मयपांदा प्राप्त की थी । बन्धालचरितकार आनन्दभट्टने लिखा है, कि वैदिक

१- वैदिकोंकी जन्मजातोंयताके सम्बन्धमें आनन्द भट्टने १४११ शकमें लिखा है,—

एक दिन बन्धालसेन मुंगया करने घरमें गये । वहा ये एक कर्मकार समर्थीके रूप पर मुख्य हो उम्मे घर ले आये और पिथाइ कर लिया । उस पत्नीने लक्ष्मण सेनाके अतिथि करनेके लिये एक दिन राजा बन्धालसेनके कहा, कि लक्ष्मणसेना उनके प्रति सुरी छुट्टा प्रकट की है । इस पर बन्धालसेन बड़े क्रुद्ध हुए और लक्ष्मणसेना का निरखेडू करकेवा हुकुम दे दिया । इसको रावर लगी है । लक्ष्मणसेन राजधानीया परित्याग कर दूरवस भेजमें गया गया । पीछे बन्धालका शोध उप ज्ञान हुआ तब एक दिन बन्धालसेनकी पुत्रपुत्री विरहपूर्ण श्लोक लिख कर उनके पास भेज दिया । बन्धालसेनकी विरहजगीत श्लोक एक लक्ष्मणसेनकी सुरंग गुला मेंसे लिये भाइयो मेना । हीसोँ १८ चौदहागो भाइयो से कर बन्धालसेनकी गोंद धरमें बहुत उन्म हासिर कर दिया । बन्धाल उनके इस काममें धनि मनुष्य हो उन्हें जन्मजातोंय बना दिया । उनको सनपसे जो जातिग केषो लक्ष्मणसेनको गये थे, ये इतिहास द्वारा हासिर समझे जाने लगे ।

( बन्धालचरित )

लोग यजिरी के पक्षपाती थे, इसलिये बन्धालने उन्हें फौलोन्मयपांदा प्रदान नहीं की थी ।

बुधोस और ब्रह्मभद्र देवो ।

बन्धालके पिता विजयसेनसे सेनपनाका सीमासौत्र होने पर भी बन्धालके समर्थमें ही गौहर्देभमें प्रादण्य धर्मने प्रधानता पाइ, बीह धर्मका गभाव घटा और मिथिला पर्यन्त सेनराज्य विस्तृत हुआ । पालर्यनोय शेष गोविन्दलाल ११६१ ई०में बन्धालसेनके पराजित हुए थे । उनके प्रभावसे अधिकांश बीह गौहका परि त्याग कर नेपाल भाग गये थे । बीह ज्यपिन गौहदेन का उद्धार कर प्रायणप्राधान्य स्थापन करनेके लिये ही बन्धालसेन समाज स स्कारसे प्रयुक्त हुए थे । किमोका यह भी कहना है कि बन्धालसेन अधिनाय प्राणामक थे इसीलिये 'प्रह्लादशिव' नामसे ये तमाम प्रतिद हुए हैं ।

समाजशासक चरोंके लिये बन्धालसेनको उत्तर राज, मुद्दिण राज, वारेन्द्र और व ग इन पात्र रगानो में एक एक राजधानी बसाई थी । आज भी नयहीप, बड मान मित्रा, गौड और विपमपुरमें 'बहाउबाडी', 'बन्धालदिगी' आदि उसके निशान मौजूद हैं ।

आठ १ अफकीके मतसे बन्धालसेनके ५० वर्ष राज्य किया । फिर आनन्दभट्टके विचारमें ६० वर्ष २ मासको उम्रमें ४० वर्ष राज्य करनेके बाद १०२८ शकमें बन्धालसेनकी मृत्यु हुई । शेरशाह मत मर्मोमान प्रसोत नहीं होता । बन्धालसेनके भट्टतत्तापर्यं लिखा है—

गौहर्देगणरूपी पुत्र पुत्रके पक्षरजसम्भारय भुजनायो मदीपति बन्धालने १०१० शकमें अन्न तसारा की रजा आरम्भ की । प्रथमो रचना शेष ग ही पार्य थी, कि इतनेमें उनके पुत्रका मरणोत्तराजाल उपस्थित हुआ । इस महासमारोह कार्यों व्यापृत होनेके कारण अशक्ति प्रथमो परिसमाप्ति ग न कर गये और प्रभूत क्षत्र जनप्रपाठमें शरामय गढ़ा और समुनाया गढ़ना र्वदा दन करने हुए पर्यो सहित धमरघातकी तिथार गये । अनन्तर महासमय मुरदि लक्ष्मणसेनकी बहुत तसम्भ

लगा कर राजा बल्लालसेनके अद्भुतसागरका अत्र शिष्टाश सकलन किया ।

इस कथासे मालूम होता है, कि बल्लालसेनने १०६० शकमें अद्भुतसागरका लिखना आरम्भ किया था । इस ग्रन्थकी परिममाप्तिके पहिले लक्ष्मणसेनको राज्यमें अभिषिक्त कर आप इस स्वर्गलोकसे चल बसे । बल्लालके दानसागरसे पता चलता है, कि १०६१ शकमें यह प्रथम सम्पूर्ण हुआ था । सभव है, इसी शकमें अध्या इमके पहिले बल्लाल स्वर्गारोहण कर गये हो ।

धेनराज्य श देखो ।

बल्लालकी मृत्युको ले कर बल्लालचरितमें एक गल्प इस प्रकार लिखी है,—एक बार बल्लालव्यायादुम्बर नामक एक म्लेच्छके साथ युद्ध करने गये । युद्धयात्रामें वे अपने साथ दो कवृतर ले गये थे । जाते समय उन्होंने महि पियो से कह दिया था, 'वे कवृतर चापिस आ जाय, तो जानना, हमारी मृत्यु हो गई है, तुम लोग सभी चिता रोहण कर लेना ।' इधर बल्लालने महायुद्धमें धाय्यादुम्बरको निहत किया । युद्धके अन्तान होने पर श्रान्ति द्र करके के लिये वे ज्यों ही स्नान करने जलाशयमें धुसे, त्यों ही वे दोनों कवृतर उड़ कर घर पहुँचे । बल्लालकी महिपियोंने कवृतरको देख पतिने मृत्युका निश्चय कर लिया और अपने सतीत्यका परिचय दिया । बल्लालसेनने घर आकर शोचनीय दृश्य देख, अन्तिमें अपना काम तमाम किया । किन्तु इस गल्पकी सत्यता प्रतीत नहीं होती । गौडाधिप बल्लालसेनके दो सौ वर्ष बाद विक्रमपुरमें राम पासके निरुद्ध बल्लालसेन नामक एक वैध राजा प्रादुर्भूत हुए । वे ही मुसलमानो के हाथसे मारे गये थे, ऐसा प्रवाद प्रचलित है ।

बल्य (स० ह्री०) ज्योतिषोक्त करणभेद ।

बल्यजा (स० टी०) एक घासका नाम ।

बल्ल (स० पु०) इल्ल नामक दैत्यके पुत्रका नाम ।

बल्लि (स० पु०) बल्ल-इन्द्र । १ क्षत्रियभेद । २ जनपद भेद ।

बर्षटना (हि० कि०) व्यर्थ फिरना, इधर उधर घूमना ।

बर्षंडर (हि० पु०) १ चक्रचात, चक्रकी तरह घूमती हुई वायु । २ प्रचण्ड वायु, आंधी, तूफान ।

बव (स० पु०) ज्योतिषोक्त प्रथम करण । इस करणमें शुभाशुभ कर्मादि करनेसे कल्याण होता है । जो इम करणमें जन्म लेता, वह शूद्र, अतिशय धीर्यरहितयुक्त, दृढ कर्मा और परिष्टन होता है तथा कमला उसके घरमें हमेशा घास करती है । (शोधि प्र०)

बवघूरा (हि० पु०) बव डर, बगूला ।

बवना (हि० कि०) छिटकना, छितराना, पिघरना ।

बवरना (हि० कि०) वीरना देना ।

बवादा (हि० म्त्रो०) एक प्रकारकी जडो या ओषधि जो हल्दीकी तरहको होती है ।

बवासीर (अ० स्त्री०) एक प्रकारका रोग । इसमें गुदेन्द्रियमें मस्ने या उभार उत्पन्न हो जाते हैं । इसमें रोगीको पीडा होती है और पम्बानेके समय मस्सेसे रक्त भी गिरता है । अशरीरोग देना ।

बशिष्ट (स० पु०) बशिष्ट देखो ।

बगीरी (अ० पु०) अमृतसरमें मिग्नेजाला एक प्रकार का वारोक्त रोगी कपडा ।

बक्य (स० पु०) तरुण वृत्त, पर वर्षका बछडा ।

बक्यणी (स० स्त्री०) बक्यस्तकणजत्स सोऽस्ति अस्या वान्यपामादित्वान्न, पक्षे इति ततो पत्य । चिर प्रसूता गाभि, वह गाय जिसको ध्याए हुए बहुत समय हो गया हो ।

बसत (हि० पु०) बसत देखो ।

बसंता (हि० पु०) हरे रगकी एक चिडिया । इसका सिरसे ले कर कठ तकका भाग लाल होता है ।

बसतो (हि० नि०) १ बसन्त ऋतु सम्बन्धी, बसन्तका । २ खुलते हुए पीले रगका, सरसोंके फूलके रगका । ३ पु० ३ एक रगका नाम जो तुनके फूलों आदिमें रंगनेसे आता है । यह हल्का पीला होता है पर गचक्राने अधिक तेज होता है । बसन्त ऋतुमें यह रग लोगोंको अधिक प्रिय होता है । ४ पीला कपडा ।

बसदर (हि० पु०) अग्नि, आग ।

बस (का० वि०) १ पर्याप्त, भरपूर । (अव्य०) २ पर्याप्त, काफी ।

भेना गया। (१) इस समयसे मालाकार, कुम्भकार और धर्मकार ये तीनों जातिया सचूद्धमें गिनी जाने लगीं।

दास ध्यस्ताय व द कर देनेसे सभी प्रजा सुवर्ण वणिको पर विगड गई थी। अभी ब्राह्मणों का उद्वेगनासे बल्लालसेनने घोषणा कर दी, 'कोई भी वणिक यज्ञ सूत्र धारण नहीं कर सकता जिस किसीके गलेमें यज्ञ सूत्र देना जायगा उसे दंड मिलेगा और यज्ञसूत्र तोड़ दिया जायगा।' राजमयसे इस समय कितने वणिक गौड छोड़ कर चले गये और जो रहे वे यज्ञोपवीत फेर कर नीच शूद्रमें गिने जाने लगे। (बल्लालचरित)

बल्लालचरितसे जाना जाता है, कि इसी गौडाधिपने व गालकी समस्त जातिकी यथायथ सामाजिक सम्मान व्यवस्था कर दी थी। उनका प्रधान काय ब्राह्मण और कायस्थोंमेंसे महाव्यसम्भूत और नवगुणयुक्त धर्मियोंको कौलीन्यमर्यादा प्रदान करना था। उनसे राठो और धारेंद्र ब्राह्मणों ने कौलीन्यमर्यादा प्राप्त की थी। बल्लालचरितकार आनन्दभट्टने लिखा है, कि वैदिक

१—कैरत्तीकी जलचारणीयताके सम्बन्धमें आनन्द भट्टने १४११ शकमें लिखा है,—

एक दिन बल्लालसेन मृगया करने वनमें गये। वहा-वे एक धर्मकार रमणीके रूप पर मुग्ध हो उसे घर ले आये और विवाह कर लिया। उस पत्नीने लक्ष्मण सेनको अनिष्ट करनेके लिये एक दिन राजा बल्लालसेनने कहा, कि लक्ष्मणसेनने उसके प्रति बुरी इच्छा प्रकट की है। इस पर बल्लालसेन बड़े क्रुद्ध हुए और लक्ष्मणसेन का शिरच्छेद करनेका हुकुम दे दिया। इसकी खबर लगते ही लक्ष्मणसेन राजधानीका परित्याग कर दूरवर्त देशमें चला गया। पीछे बल्लालका क्रोध जब शांत हुआ तब एक दिन बल्लालसेनकी पुत्रवधूने विरहपूर्ण श्लोक लिप कर उनके पास भेज दिया। बल्लालसेनने विरहजनित श्लोक पढ़ लक्ष्मणसेनको तुरत बुला लेनेके लिये आदमी भेजा। कैरत्तानि १८ घण्टेवाली रातसे खे कर लक्ष्मणसेनको गौडेश्वरमें बहुत जल्द हाजिर कर दिया। बल्लाल उनके इस कामसे अति सन्तुष्ट हो उन्हें जलाचरणीय बना दिया। उसी समयमें जो जालिक कैरत्त लक्ष्मणसेनको लाये थे, वे क्षणिकार्य द्वारा हालिक समके जाने लगे।

(बल्लालचरित)

लोग वणिकों के पक्षपाती थे, इसलिये बल्लालने उन्हें कौलीन्यमर्यादा प्रदान नहीं की थी।

कुलीन और कायस्थ शब्द देखो।

बल्लालके पिता विजयसेनसे सेनव्यसका सीमाप्योद्वय होने पर भी बल्लालके समयमें ही गौडदेशमें ब्राह्मण धर्मने प्रधानता पाई, बौद्ध धर्मका प्रभाव घटा और मिथिला पर्यन्त सेनराज्य विस्तृत हुआ। फाल्गुनीय शेष गोविन्दलाल ११६१ ई०में बल्लालसेनसे पराजित हुए थे। उनके प्रभावसे अधिराज बौद्ध गौडका परि त्याग कर नेपाल भाग गये थे। बौद्ध प्लावित गौडदेश का उद्धार कर ब्राह्मणप्राधान्य स्थापन करनेके लिये ही बल्लालसेन समाज स स्थापने प्रवृत्त हुए थे। किसीका यह भी कहना है, कि बल्लालसेन अतिशय ब्राह्मणभक्त थे इसीलिये 'ब्रह्मक्षविय' नामसे वे तमाम प्रसिद्ध हुए हैं।

समाजशासन करनेके लिये बल्लालसेनने उत्तर राठ, दक्षिण राठ, वारेंद्र और वग इन पांच स्थानों में एक एक राजधानी बसाई थी। आज भी नवद्वीप, बड़मान जिला, गौड और विक्रमपुरमें 'बल्लालवाडो', 'बल्लालविगी' आदि उसके निदर्शन मौजूद हैं।

आईन इ-अकबरीके मतसे बल्लालसेनने ५० वर्ष राज्य किया। फिर आनन्दभट्टके विचारमें ६५ वर्ष २ मासकी उम्रमें ४० वर्ष राज्य करनेके बाद १०२८ शकमें बल्लालसेनकी मृत्यु हुई। शोभक मत समीचीन प्रतीत नहीं होता। बल्लालसेनके अद्भुतसागरमें लिखा है—

गौडेंद्रगणरूपी कुञ्जर पुञ्जके व धनस्तम्भस्वरूप भुजशाली महोपति बल्लालने १०६० शकमें अद्भुतसागर की रचना आरम्भ की। प्रथको रचना शेष न हो पाई थी, कि इतनेमें उनके पुत्रका राज्यारोहणकाल उपस्थित हुआ। इस महासमारोह कार्यमें व्यापृत होनेके कारण स्वरचित प्रथको परिसमाप्ति व न पर सके और प्रभूत दान जलप्रवाहमें असमय गङ्गा और यमुनाका सङ्गम सपा दन करते हुए पत्नी सहित अमरधामकी सिधार गये। अनन्तर महामान्य भूपति लक्ष्मणसेनने बहुत तनमन

लगा कर राजा बल्लालसेनकृत अद्भुतसागरका अवशिष्टांश सकलन किया।

इस कथासे मालूम होता है, कि बल्लालसेनने १०६० शकमें अद्भुतसागरका लिखना आरम्भ किया था। इस ग्रन्थकी परिसमाप्तिके पहिले लक्ष्मणसेनको राज्यमें अभिषिक्त कर आप इस स्वर्गलोकासे चल बसे। बल्लालके दानसागरसे पता चलता है, कि १०६१ शकमें यह ग्रंथ सम्पूर्ण हुआ था। समझ है, इसी शकमें अथवा इसके पहिले बल्लाल स्वर्गारोहण कर गये हो।

धेनराजव श देखो।

बल्लालकी मृत्युको ले कर बल्लालचरितमें एक गल्प इस प्रकार लिखी है,—एक बार बल्लाल वायादुम्ब नामक एक श्लेच्छके साथ युद्ध करने गये। युद्धयानामें वे अपने साथ दो कन्नूर ले गये थे। जाते समय उन्होंने महिपियो से कह दिया था, 'वे कन्नूर वापिस आ जाय, तो जानना, हमारी मृत्यु हो गई है, तुम लोग सभी चिता रोहण कर लेना।' इधर बल्लालने महायुद्धमें वायादुम्बकी निहत किया। युद्धके अनन्तर होने पर श्रान्ति दूर करने के लिये वे ज्यों ही स्नान करने जलाशयमें घुसे, त्यों ही वे दोनों कन्नूर उड़ कर घर पहुँचे। बल्लालकी महिपियोने कन्नूरको देण पतिकी मृत्युका निश्चय कर लिया और अपने सतीत्वका परिचय दिया। बल्लालसेनने घर आकर शोचनीय दृश्य देण, अग्निमें अपना काम तमाम किया। किन्तु इस गल्पकी सत्यता प्रतीत नहीं होती। गौडाधिप बल्लालसेनके दो सौ वर्ष बाद विजयपुरमें राम पासके निकट बल्लालसेन नामक एक वैद्य राजा प्रादुर्भूत हुए। वे ही मुसलमानों के हाथसे मारे गये थे, ऐसी प्रवाद प्रचलित है।

बल्य ( स० झी० ) ज्योतिषोक्त करणभेद।

बल्यजा ( स० खी० ) एक घासका नाम।

बल्यल ( स० पु० ) इल्लल नामक दैत्यके पुत्रका नाम।

बलि ( स० पु० ) बलह-इन्द्र। १ क्षत्रियभेद। २ जनपद भेद।

बर्षंडना ( हि० कि० ) व्यर्थ फिरना, इधर उधर घूमना।

बर्षंडर ( हि० पु० ) १ चक्रीयात, शक्रकी तरह घूमती हुई वायु। २ प्रचण्ड वायु, आँधी, तूफान।

बज ( स० पु० ) ज्योतिषोक्त प्रथम करण। इस करणमें शुभाशुभ कर्मादि करनेमें कल्याण होता है। जो इस करणमें जन्म लेता, वह शूर, अतिशय धीरप्रकृतियुक्त, छत्र कर्मा और परिणत होता है तथा कमला उसके घरमें हमेशा वास करती है। ( बौद्धि प्र० )

बघघूरा ( हि० पु० ) बघ डर, वगूला।

बघना ( हि० कि० ) छिटकना, उतरना, विखरना।

बघरना ( हि० कि० ) वीरना देखो।

बजादा ( हि० खी० ) एक प्रकारकी जडी या औषधि जो हल्दीकी तरहकी होती है।

बवासीर ( अ० खी० ) एक प्रकारका रोग। इसमें गुदे निद्रियमें मस्से या उभार उत्पन्न हो जाते हैं। इसमें रोगीको पीडा होती है और पखानेके समय मस्सेसे रक्त भी गिरता है। अशरीर देखो।

बशिष्ट ( स० पु० ) बशिष्ट देखो।

बशीरो ( अ० पु० ) अमृतसरमें मिठनेवाला एक प्रकार का वारोक्त रोगी कपडा।

बक्ष्य ( स० पु० ) तरुण वृत्त, एक पर्यंका बछडा।

बक्ष्यणी ( स० खी० ) बक्ष्यस्तद्वर्णस्तस्य सोऽस्ति अस्या बक्ष्यपामादित्वान्न, पक्षे इति वतो णत्व। चिर प्रसूता गामि, वह गाय जिसको प्याप हुए बहुत समय हो गया हो।

बस त ( हि० पु० ) बस त देखो।

बसंता ( हि० पु० ) हरे रगकी एक चिडिया। इसका सिरसे ले कर कठ तकका भाग लाल होता है।

बसतो ( हि० वि० ) १ बसन्त ऋतु सम्बन्धी, बसन्तना।

२ खुलते हुए पीले रगका, सरसाँके फूलके रगना। ( पु० )

३ एक र गाना नाम जो तुलसीके फूलों आदिमें रंगनेसे आता है। यह हल्का पीला होता है पर गन्धकीने अधिक तेज होता है। बसन्त ऋतुमें यह रग लोगोंको अधिक प्रिय होता है। ४ पीला कपडा।

बसंदर ( हि० पु० ) अग्नि, आग।

बस ( फा० वि० ) १ पर्याप्त, भरपूर। ( अज्य० ) २ पर्याप्त, काफी।



वसई (वेसिन)—१ बम्बई जिल्लेके धाना जिल्लान्तर्गत एक तालुक। यह अक्षां १६ १६' से १६' ३५' उ० तथा देशां ७२ ४३' से ७३' १' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २२३ वर्गमील है। इसमें वसाई नामका एक शहर और ६० ग्राम लगते हैं। यहांकी जमीन बहुत उर्वरा है। धान, केरा, ईप और पान बहुतायतसे उत्पन्न होता है। तुङ्गल और कामन नामक पर्वतमाला तालुककी शोभाकी बढ़ाता है। कामन दुर्ग समुद्रपृष्ठसे २१६० फुट ऊंचा है। जलवायु स्वास्थ्यकर है।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षां १६ २० उ० तथा देशां ७२ ४६' पू० वसिन रोड स्टेशनसे ५ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जनसंख्या १०७०२ है। यहां बम्बई, बडोदा और मध्यभारतीय रेल पथका एक स्टेशन है। पहले वसाई द्वीप और भारतीय विभागके मध्य जलनाली बहनेके कारण पुर्तगीजोंने जहाजादि रखनेके लिये इस स्थानको उपयुक्त समझा। इस कारण उन्होंने गुजरातपति बहादुरशाहसे १५३४ ई०में इसका अधिकार ग्रहण किया और उसके दो वर्ष बाद यहां एक दुर्ग बनवाया। प्राय दो शताब्दी तक यह स्थान पुर्तगीजोंके दखलमें रहा। उस समय शहरकी ऐसी श्रीवृद्धि हुई, कि यह Court of the North नामसे पुर्तगीजोंके मध्य प्रसिद्ध हो गया। उस समय यहां सैकड़ों वणिक् रहते थे। उनकी सुरम्प अट्टालिकासे नगरकी जोभा निराली थी। रिवल्गो नामक महाधनवान् व्यक्ति ही नगरमें अपना घर बना सके थे, दूसरेको बसनेका हुकूम नहीं था। वे लोग शहरके बाहर घर बना कर रहते थे। १३वीं शताब्दीके शेष भागमें यहां महामारीका प्रकोप हुआ। १६५७ ई०में यहांके प्राय आधेसे अधिक अधिवासी कराल कालके गालमें फंसे थे।

पुर्तगीजोंका प्रभाव पड़ा होने पर भी १७२० ई० तक वसाई नगरकी श्रीवृद्धि नष्ट नहीं हुई। उस समय पश्चिम भारतमें बेजल यही एक ऐसा शहर था जो अभिमानके साथ अपना मस्तक उठाए हुए था। उपर महाराष्ट्रोद्योग भी अविश्व पथ धीरे धीरे मार कर रहे थे। अतएव एकके स्वर्दागाली-अभ्युदय पर दूसरे की क्षोणमुद्वेग्येति और भी प्रभावाभ्य हो रही थी।

महाराष्ट्रमिहके तर्ज न गज नसे भोन पुर्तगीजदल अत्र मग होने लगा। १७३६ ई०में चिमनाजी अपना कल बलके साथ वसाईको घेर लिया। तीस मास तक तुमुल संप्राम होते रहनेके बाद पुर्तगीजोंने मराठा सेनापतिके हाथ आत्मसमर्पण किया। वसाई नगर और जिला पेगमाने अपने अधिकारमें भर लिया। महा राष्ट्र अधिकारके समय यह स्थाय वैङ्कटनदी और वदन के मध्यवर्ती भूभागका प्रधान वाणिज्यक्षेत्र बनाया गया। १७८० ई०में अङ्गरेजी सेनाने वसाई पर अधिकार किया। १७८२ ई०में सत्रार्थकी सन्धिके अनुसार यह स्थान पुन मराठो को लौटा दिया गया। १८१८ ई०में अन्तिम पेगवान्की सिंहासनन्युतिके बाद यह अङ्गरेजी शासनाधीन हो कर धाना जिल्लेके अन्तर्भूक्त हुआ।

प्राचीन वसाई नगरके प्राचीर और प्राकारादि आज भी विद्यमान हैं। उस प्राचीर परिवेष्टित स्थानके मध्य १५३७ ई०में प्रतिष्ठित सेण्ट पल्थोनी, सेण्टपाल और ओमिनिस्न कनभेण्ट आदि खूब धर्ममन्दिरके ध्वंसावशिष्ट निदर्शन आज भी देखनेमें आते हैं।

वसई (वेसिन)—अ गरेजाधिरत ब्राह्मके पैगू विभागके अन्तर्गत एक जिला। यह अक्षां १५ ५५' से १७ ३०' उ० तथा देशां ६४ ११' से ६५ २८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४१२७ वर्गमील है। आराकन पर्वतमालाके मध्यदेशमें विलम्बित रहनेके कारण इसका पश्चिमाहर्द गण्डरीलसे समाप्तीर्ण है और पूर्वाहर्द इरावती नदीकी तीनी प्रधान शाखा विरलत रहनेके कारण विशेष उर्वरा है।

इस जिल्लेके बङ्गोपसागरकूल पर नेग्रिस तथा पगोडा नामक दो अन्तरीप हैं। उपकूल भागमेंसे कुछ तो वनमालासमाच्छादित है और कुछ बालुनाम्य भूमि दृष्टिगोचर होती है। पैमल, पिन्थाम्, रवेदाधेभ्य, वसाई, थेत्रायथू आदि नदियां समुद्रगर्भमें जा कर मिल गई हैं।

इस जिल्लेका प्राचीन इतिहास नहीं मिलता। दलेमीने भारतीय नदीवर्णनरचलमें गङ्गाके पूर्वादिगुधर्ती जिन सब नदियों और पर्वतोंका उल्लेख किया है, उनमेंसे वसाई नदीका नाम भी पाया जाता है। तैलङ्ग राजवति हासमें ( ६२६ ई०में वसाईके ३२ नगरोंका नामोल्लेख है।

उस समय यह स्थान पेशवास्यके अन्तर्भूक्त था। १२५० ई०में उम मदन दि नाम्नी किसी तैलङ्ग राजकुमारके राजत्वकालमें ब्रह्मावासियोंने वसाई पर अधिकार जमाया। गज इतिहासके मतसे १२८६ ई०में यह प्रदेश पुन पेश्वेके शासनाधीन हुआ। १३८३ ई०में तैलङ्गसम्राट् रजधोरित् जब राजसिंहासन पर बैठे तब मीरुके गामनकर्त्ता लीक व्याने ब्रह्मराजकी सहायतासे पेश्वे पर चढ़ाई कर दी। कुछ समय तक दोनों दलमें घमसान युद्ध होता रहा था।

१६८६ ई०में मन्त्राजके गवर्नरने नेप्रिसमें एक अगरेजी उपनिवेश बसाना चाहा। प्रथम अभियानमें विफल मनोरथ होने पर भी १६८७ ई०में नेप्रिस इष्ट इण्डिया कम्पनीके अधिकारभूक्त हुआ। किन्तु १७५३ ई० तक अगरेज लोग यहा अपना पूरा अधिकार जमा न सके थे। उस समय पेश्वे और ब्रह्मावासियोंमें युद्ध छिड़ गया था। अगरेज लोग ब्रह्मके और फरारसी तैलङ्ग-राजाओंके पक्षमें थे। इस साहाय्य दानमें फरारसियोंकी सिरियम नामक स्थान मिला था।

इसके बाद ब्रह्मराजने अगरेज घणिकोंकी कोठी देखनेके लिये एक दूत भेजा। अगरेज सेनापति बेकारने उनका अच्छा सत्कार किया था। १७७५ ई०में वसाई और नेप्रिसकी कोठी जो भूमिके ऊपर स्थापित थी, उसका दान पल लेनेके लिये कुछ अङ्गरेज कर्मचारी ब्रह्मराजके समीप पहुँचे। किन्तु इस समय अगरेज लोग रङ्गनके निकट तैलङ्गोंको विशेष सहायता कर रहे थे। इन पर ब्रह्मराज अङ्गरेजोंकी विश्वासघातकता देख कर बड़े विगडे। आखिर उन्होंने १७५७ ई०में नेप्रिस और वसाईकी अगरेजाधिपत भूमि इस घणिक समुदायकी सदाके लिये छोड़ दी। इसके लिये वे अगरेजोंसे किसी प्रकारका कर नहीं लेते थे। १७५६ ई०में नेप्रिससे अगरेजोंका घणिक्य अग्रा उठा दिया गया। बहुत थोड़ी सेना अगरेजसम्पत्तिकी रक्षाके लिये यहा रहत थी। उसी साल ब्रह्मपतिने उन पर चढ़ाई कर निरुत्तरभावसे उन्हें मार डाला। १७६० ई० में अगरेजोंने क्षतिपूरण करनेके लिये ब्रह्मराजसे प्रार्थना की। किन्तु ब्रह्मपतिने उनकी

एक भी न सुनी और अगरेजोंकी नेप्रिसमें घुमनेसे मनाही कर दी।

इस समयसे ले कर प्रथम ब्रह्मयुद्ध पर्यन्त अङ्गरेजोंने उपनिवेश बसानेके विषयमें कोई हस्तक्षेप न किया। उक्त युद्धमें वसाई नगर अङ्गरेजोंके हाथ लगा। यन्द्बूकी सन्धिके अनुसार ब्रह्मणके पेश्वे परित्याग करनेके बाद वह पुन लौटा दिया गया। द्वितीय ब्रह्मयुद्धके बादसे यह स्थान अगरेजोंके अधिकारमें आया। जब पेश्वे अगरेजोंके हाथ लगा, उस समय सारे वेसिन जिलेमें अराजकता फैल गई। पर्वतवासी दस्युदल ब्रह्मराजके मामन्त हो कर नाना स्थानोंमें लूटपाट करने लगे। फैल यही नहीं, बर बसानोंमें उन्होने अपना आधिपत्य भी फैला लिया। ब्रह्मराज एक अन्तर्विह्वल उपस्थित हुआ। श्रावती तीरवर्सी जो सब ग्रामवासी अगरेजोंके ष्टीमर पर काम करते थे, उनके ग्राम दस्युगण हाग जला दिये गये। इस पर अगरेज लोग बड़े विगडे और उनका दमन करनेके लिये आगे बढ़े। १८५३ ई०में कप्तान फिचेने वक्षिण पूव दिशासे विद्रोहियोंको मार भगाया। १८५४ ई०में विद्रोही दस्युदलके उपद्रवसे पुन यह प्रदेश विशुद्ध हो पडा। इस समय बौद्ध पुरोहितोंकी सहायतासे अवे-तु और की जन् हा नामक दो व्यक्तिने दलबल समूह करके बड़े एक नगर जीत लिये; किन्तु अगरेजोंसेनाके हाथसे राजविद्रोहियण बहुत ही जल्द दण्डित हुए। तमोसे यह स्थान अगरेजोंके दबलमें चला आ रहा है।

इस जिलेमें २ शहर और २६७७ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या ४ लाखके करीब है जिनमेंसे अधिकांश बौद्धधर्मावलम्बी हैं। यहा १६ सेकण्ड्री, २१७ प्राइमरी, ५ स्पेशल और २३० इलिमेंट्री स्कूल तथा २ अस्पताल हैं।

२ निम्नब्रह्मके वसाई मिलेका उपनिभाग। यह वसाई नदीके किनारे अवस्थित है।

३ उक्त जिलेका प्रधान नगर और मन्दर। यह अक्षा० १६ ३५' से १६ ५६' ३०" तथा देशा० ६४ ३०' से ६५ ३०' पू० वसाई नदीके किनारे अवस्थित है। यह नगर यहाका एक प्रधान घणिक्य-मन्दर गिना जाता है।

घसई (वेसिन) — १ बम्बई जिल्लेके थाना जिलान्तर्गत एक तालुक। यह अक्षा० १६ १६' से १६ ३५' उ० तथा देशा० ७२ ४४' से ७३ १' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २२३ वर्गमील है। इसमें बर्साई नामका एक शहर और ६० ग्राम लगते हैं। यहांकी जमीन बहुत उर्वरा है। धान, केला, ईप और पान बहुतायतसे उत्पन्न होता है। तुङ्गल और कामन नामक पर्वतमाला तालुककी सीमाको बढाता है। कामन दुर्ग समुद्रपृष्ठसे २१६० फुट ऊंचा है। जलवायु स्वस्थकर है।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १६ २० उ० तथा देशा० ७२ ४६' पू० वसिन रोड स्टेशनसे ५ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जनसंख्या १०७०० है। यहां बम्बई, बडोदा और मध्यभारतीय रेल पथका एक स्टेशन है। पहले बर्साई द्वीप और भारतीय विभागके मध्य जलनाली बढनेके कारण पुर्चंगीजोंने जहाजादि रखनेके लिये इस स्थानको उपयुक्त समझा। इस कारण उन्होंने गुजरातपति बहादुरशाहसे १५३४ ई०में इसका अधिकार ग्रहण किया और उसके दो वर्ष बाद यहां एक दुर्ग बनवाया। प्रायः दो शताब्दी तक यह स्थान पुर्चंगीजोंके स्वत्वमें रहा। उस समय शहरकी ऐसी श्रीवृद्धि हुई, कि यह Court of the North नामसे पुर्चंगीजोंके मध्य प्रसिद्ध हो गया। उस समय यहां सैकड़ों बणिक् रहते थे। उनकी सुरक्ष्य अट्टालिकासे नगरकी सीमा निराली थी। रिद्लगो नामक महाधनवान् व्यक्ति ही नगरमें अपना घर बना सकते थे, दूसरेको बसनेका हुकुम नहीं था। वे लोग शहरके बाहर घर बना कर रहते थे। १३वीं शताब्दीके शेष भागमें यहां महाभारतीका प्रकोप हुआ। १६५५ ई०में यहांके प्रायः आधेसे अधिक अधिवासी कराल कालके मालमें फँसे थे।

पुर्चंगीजों का प्रभाव घटने होने पर भी १७२० ई० तक बर्साई नगरकी श्रेष्ठि नष्ट नहीं हुई। उस समय पश्चिम भारतमें फैसल यही एक ऐसा शहर था जो अभिमानके साथ अपना प्रस्तर उठाए हुए था। उधर महागण्ड्रीयगण भी भविष्य पथ धीरे धीरे साफ कर रहे थे। अतएव एकके स्वर्ज्ञानोन्मुख्य पर दूसरेकी क्षोणमुगन्धोनि और भी प्रताडन्य हो रही थी।

महाप्राद्विसिंहके तर्जन गर्जनेसे भीत पुर्चंगीजद्वय अत्र सन्न होने लगा। १७३६ ई०में निमनाजी अपने दल बलके साथ बर्साईको पर लिया। तीन मास तक तुमुल स प्राम होते रहनेके बाद पुर्चंगीजोंने मराठा सेनापतिके हाथ आत्मसमर्पण किया। बर्साई नगर और जिला पेगजाने अपने अधिकारमें कर लिया। महाप्राद्व अधिकारके समय यह स्थान वैङ्कटनदी और दमनके मध्यपर्वतों भूभागका प्रधान वाणिज्यक्षेत्र बनाया गया। १७८० ई०में अङ्गरेजी सेनाने बर्साई पर अधिकार किया। १७८० ई०में सत्पार्की सन्धिके अनुसार यह स्थान पुनः मराठो को लौटा दिया गया। १८१८ ई०में अन्तिम पेगजाकी सिंहासनच्युतिके बाद यह अङ्गरेजी शासनाधीन हो कर थाना जिल्लेके अन्तर्भूक्त हुआ।

प्राचीन बर्साई नगरके प्राचीर और प्राकारादि आज भी विद्यमान हैं। उस प्राचीर परिवेष्टित स्थानके मध्य १५३७ ई०में प्रतिष्ठित सेण्ट पन्थोनी, सेण्टपाल और डोमिनिकन कन्वेंट आदि बृहत् धर्ममन्दिरके ध्वंसावशिष्ट निदर्शन आज भी देखनेमें आते हैं।

घसई (वेसिन) — अंगरेजाधिपत्य प्रहाके पैगू विभागके अन्तर्गत एक जिला। यह अक्षा० १५ ५५' से १७ ३०' उ० तथा देशा० ६४ ११' से ६५ २८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४१२७ वर्गमील है। आरवण पर्वतमालाके मध्यदेशमें विलम्बित रहनेके कारण इसका पश्चिमादर्श गण्डरीलसे समाकीर्ण है और पूर्वादर्श इरावती नदीकी तीन प्रधान शाखा प्रिसृत रहनेके कारण विशेष उर्वरा है।

इस जिल्लेके यद्गोपसागकूट पर नैग्रिस तथा पगोडा नामक दो अन्तरीप हैं। उपकुल भागमेंसे कुछ तो वनमालासमाच्छादित है और कुछ बालुकामय भूमि दृष्टिगोचर होती है। पैमल, पिन्थामू, वेदायैभ्यू, बर्साई, थेरुयथू आदि नदियाँ समुद्रगर्भमें आकर मिल गई हैं।

इस जिल्लेका प्राचीन इतिहास नहीं मिलता। टर्नेमीने भारतया नदीवर्णनस्थलमें गङ्गाके पूर्वदिग्बर्त्तों विनमन नदियों और पनतोंका उल्लेख किया है, उनमेंसे बर्साई नदीका नाम भी पाया जाता है। तैलङ्ग राजराजिशासमें (६२६ ई०में बर्साईके ३२ नगरोंका नामोन्लेख है।

उस समय यह स्थान पेशवाओंके अन्तर्भूक्त था। १२५० ई०में उम मदन दि नाम्नी किसी तैलङ्ग राजकुन्याके राजत्वकालमें ब्रह्मवासियोंने वसाह पर अधिकार जमाया। राज इतिहासके मतसे १२८६ ई०में यह प्रदेश पुन पेशवाके शासनाधीन हुआ। १३८३ ई०में तैलङ्गसम्राट् राजघोरिन् जब राजसिंहासन पर बैठे तब मीरजेके प्रामनकर्त्ता लीकन्याने ब्रह्मराजकी सहायतासे पेशू पर चढ़ाई कर दी। कुछ समय तक दोनों दलमें घमसान युद्ध होता रहा था।

१६८६ ई०में मन्नाजके गवर्नरने नेप्रिसमें एक अगरेजो उपनिवेश बसाना चाहा। प्रथम अभियानमें विफल मनोरथ होने पर भी १६८७ ई०में नेप्रिस इष्ट इण्डिया कम्पनीके अधिकारभुक्त हुआ। किन्तु १७५३ ई० तक अगरेज लोग यहा अपना पूरा अधिकार जमा न सके थे। उस समय पेशू और ब्रह्मवासियोंमें युद्ध छिड़ गया था। अगरेज लोग ब्रह्मके और फारसी तैलङ्ग-राजाओंके पक्षमें थे। इस साहाय्य दानमें फारसियोंकी सिरियम नामक स्थान मिला था।

इसके बाद ब्रह्मराजने अगरेज घणिकोंकी कोठी देखनेके लिये एक दूत भेजा। अगरेज सेनापति बेकारने उनका अच्छा स्त्कार किया था। १७७५ ई०में वसाई और नेप्रिसकी कोठी जो भूमिके ऊपर स्थापित थी, उसका दान-पत्र लेनेके लिये कुछ अगरेज कर्मचारी ब्रह्मराजके समीप पहुँचे। किन्तु इस समय अगरेज लोग रङ्गनके निकट तैलङ्गोंको विशेष सहायता कर रहे थे। इस पर ब्रह्मराज अगरेजोंकी विश्वासघातकता देख कर बड़े विगडे। आधिर उन्होंने १७५७ ई०में नेप्रिस और वसाईकी अगरेजाधि एन भूमि इस घणिक समुदायको सदाके लिये छोड दी। इसके लिये वे अगरेजोंसे किसी प्रकारका कर नहीं लेते थे। १७५६ ई०में नेप्रिससे अगरेजोंका वाणिज्य अग्रा उठा दिया गया। बहुत थोडी सेना अगरेजसम्पत्तिकी रक्षाके लिये यहा रहत थी। उमी साल ब्रह्मपतिने उन पर चढ़ाई कर निरुत्सर्भावसे उठे, मार डाला। १७६० ई० में अगरेजोने क्षतिपूरण करनेके लिये ब्रह्मराजसे प्रार्थना की। किन्तु ब्रह्मपतिने उनकी

एक भी न सुनी और अगरेजोको नेप्रिसमें घुमनेसे मनाही कर दी।

इस समयसे ले कर प्रथम ब्रह्मयुद्ध पर्यन्त अगरेजोने उपनिवेश बसानेके विषयमे कोई हस्तक्षेप न किया। उक्त युद्धमें वसाई नगर अगरेजोके हाथ लगा। यन्द्बूकी मन्धिके अनुसार ब्रह्मराजके पेशू परित्याग करनेके बाद यह पुन लौटा दिया गया। द्वितीय ब्रह्मयुद्धके बादसे यह स्थान अगरेजोके अधिकारमें आया। जब पेशू अगरेजोके हाथ लगा, उस समय सारे वेसिन जिलेमें अराजकता फैल गई। पर्वतयामी दस्युदल ब्रह्मराजके सामन्त हो कर नाना स्थानोमें लूटपाट करने लगे। कैथल यही नहीं, कई स्थानोमें उन्होंने अपना आधिपत्य भी फैला लिया। क्रमशः एक अतर्विह्वल उपस्थित हुआ। इस यती तीरवर्त्ती जो सब प्रामयासी अगरेजोके छीमर पर काम करते थे, उनके प्राम दस्युगण द्वारा जला दिये गये। इस पर अगरेज लोग बड़े विगडे और उनका दमन करनेके लिये आगे बढ़े। १८५३ ई०में फसान फिचने दक्षिण पूर्ण दिशासे विद्रोहियोंको मार भगाया। १८५४ ई०में विद्रोही दस्युदलके उपग्रहसे पुन यह प्रदेश विष्टङ्गल हो पडा। इस समय बीर पुरोहितोकी सहायतासे श्वे तु और वी जन् ह्य नामक दो व्यक्तिने दलबल समूह करके कई एक नगर जीत लिये। किन्तु अगरेजोसेनाके हाथसे राजत्रिद्रोहिगण बहुत ही जल्द दण्डित हुए। तमोसे यह स्थान अगरेजोके दबलमें चला आ रहा है।

इस जिलेमें २ शहर और २६७७ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या ४ लाखके करीब है जिनमेंसे अधिकांश बौद्धधर्मावलम्बी हैं। यहा १६ सेरपण्डी, २१७ प्राइमरी, ५ स्पेशल और २३० इलिमेण्टरी स्कूल तथा २ अस्पताल हैं।

२ निम्नरङ्गके वसाई जिलेका उपविभाग। यह वसाई नदीके किनारे अवस्थित है।

३ उक्त जिलेका प्रधान नगर और मन्दर। यह अक्षा० १६ ३५' से १६ ५६' ३० तथा देशा० ६४ ३०' से ६५ ३' ५०' वसाई नदीके किनारे अवस्थित है। यह नगर यहाका एक प्रधान वाणिज्य-मन्दर गिना जाता है।

नदीके माण्ड किनारे नगरके जे-र्याङ्ग विभागमें जे मू हनुव पागोडा और अ गरेजोंका दुर्ग, विचारवृद्ध तथा घनागार आवि हैं ।

अ गरेजोंके अधिकारमें यहाके वाणिज्यकी दिनों दिन उन्नति देयो जाती है । चौर, लाह, सीसक, चकोर काष्ठ और घान्यादिकी विभिन्न देशोंमें रझनी होती है । घोमर द्वारा यहाका अधिकाराण पण्य द्रव्य रगुन भेजा जाता है । शीमके समय नदीका जल घट जानेसे घोमरोंको जाने आनेमें बड़ी दिक्कत होती है ।

प्रहाराज अर्लीङ्गपायाके शासनकालमें यह नगर विलकुल जनहीन था । इस कारण कोई विशेष घटना न घटी । सुना जाता है, कि तैलङ्ग राजकन्या उमत्वमदनी ने १२४६ ई०में इस नगरकी प्रतिष्ठा की । राल्फकिच् आवि पाश्चात्य भ्रमणकारिण इस स्थानका 'कस्मिन' नामसे उल्लेख कर गये हैं । इसका प्राचीन नाम कुशीम नगर था । १२वीं सदीके प्रारम्भमें भी यहा वाणिज्य ध्ववसाय जोरें चलता था । प्रथम ब्रह्मयुद्धके समय यहाके शासनकर्ता नगरको अनिर्ध्व करके ले मेतकी नामक स्थानमें भाग गये । युद्धके बाद नगरवासिगण फिरसे नगरमें लौटे और वास करने लगे । द्वितीय ब्रह्म युद्धके बादसे अ गरेजोंने इस स्थानको बहुत उन्नत कर दिया । द्रिद प्रजाकी भलाईके लिये अस्पताल खोले गये ।

४ अ गरेजाधिष्ठित प्रहाराज्यके द्वायतीविभागमें प्रयाहित एक नदी । दगा और पन्मावती इसकी दो शाखाएँ हैं । अलावा इसके समुद्रसुपरमें और भी कितनी छोटी छोटी नदियाँ जा मिली हैं । नैमिसद्वीप इस नदीके मुहाने पर अवस्थित है । उसका पश्चिम पार्श्व बन्दरके लायक है, पर पूर्व दिशामें पर्वत रहनेके कारण जहाज यादि नहीं आ जा सकते ।

वसन ( स० पु० ) ४ वन देवो ।

वसना ( हि० कि० ) १ स्थायीरूपसे स्थित होना, रहना ।

२ जनपूर्ण होना । ३ अवस्थान करना, ठहरना । ४

सुगन्धसे पूर्ण हो जाना, वासा जाना । ( पु० ) ५ यह

कपडा जिसमें कोई वस्तु लपेट कर रयी जाय, यैतन ।

६ वजन, मांडा । ७ धैली । ८ यह लक्ष्मी जालोदार

शैली जिसमें रुपया पैसा रखते हैं । ९ यह फोडी निममें रुपयका लेन देन होता हो ।

वसन्तपुर—मुजफ्फर जिलेके अन्तर्गत एक प्रसिद्ध ग्राम ।

यह लालगञ्जसे सारोबगञ्ज जानेके रास्ते पर अवस्थित है । यहा वाणिज्यकी यथेष्ट उन्नति देयी जाती है । इसके उत्तर फेवलपुरकी नीलकोठी अवस्थित है ।

वसन्तपुर—विहारके पृणिया जिलान्तर्गत अररिया उप

विभागका सहर । यह अक्षा० २६ १४' ३०" तथा देशा०

८७ ३३' ५०" पतार नदीके दाहिने किनारे पर अवस्थित

है । जनसंख्या तीन हजारके करीब है ।

वसन्त—पञ्जाबके मुकदासपुर जिलेमें प्रचारित एक नदी ।

बहुनसे पार्वतीय स्रोतोंसे वर्द्धितकलेवर हो यह इगानी

नदीमें मिली है ।

वसन्तपुर—बङ्गालके खुलना जिलेके उत्तर एक प्रसिद्ध

ग्राम । यह अक्षा० २२ २७' ३०" ३०" तथा देशा० ८६

२० १५" पु०के मध्य अवस्थित है । यहा चायलका

प्रचुर वाणिज्य होता है ।

वसर ( फा० पु० ) कालक्षेप, गुजर ।

वसव—वाक्षिणात्ययासी लिङ्गायत धर्मके प्रवर्त्तक ।

इन्होंने प्राचीन लिङ्गायत मतका स स्कार करके अपने

मतकी प्रतिष्ठा की । ये हिङ्गलेश्वरके आराध्य ग्राहण

वशमें उत्पन्न हुए थे (१) । इनके पिताका नाम मवेङ्ग

मदमन्वी और माताका मदल अरसुर था (२) । बचपन

में उपनयन-स स्कार होते समय इन्होंने जब देखा, कि

गायत्री मन्त्रके जपोंमें किसी दूसरेकी उपासना करनी

पडती है, तब भट गलेसे जनेऊ निकाल कर तोड़ डाला

और स्वयके सामने अपना अभिप्राय प्रकट किया, कि वे

ईश्वर या शिवके अतिरिक्त और किसी दूसरेकी अपना

(१) ये लोग 'वीर शैव' ग्राहण नामसे भी परिचित हैं ।

(२) उक्त दम्पती कायमनोवाफयसे सदा शिवजीकी उपासना किया करते थे । इस प्रकार वेदादिदेवी प्रसन्न हो कर अपने अनुचर नन्दीकी उनके पुत्ररूपमें भेजा ।

कणाडो भाषामें वसवका अर्थ है, नियमा साह । निय

दास होनेके कारण ही इस पुत्रका वसव नाम रखा गया ।

शुरू नहीं मान सकते। पुत्रको इस प्रकार विद्वेष भावा-  
पन्न देख कर पिताने बहुत कुछ समझाया, पर इन्होंने एक  
भी न सुनी। इस अवाध्यताके कारण वे घरसे निकाल  
दिये गये। गुणवती बहन पद्मावती देवी भी इनके साथ  
हो ली। वे दोनों देश देशान्तरमें पर्यटन करते हुए ११५६  
ई०में कल्याण नगर पहुँचे। (३)

इस राजधानीमें इनके मामा ढगडनायकके  
पद पर अधिष्ठित थे। उन्होंने भाजिको आश्रय  
दिया और राज-कार्यमें नियुक्त कर इनकी उन्नति  
का पथ ढोल दिया। धीरे धीरे वसवको  
लक्ष्मीयान् देव उनके मामाने अपनी कन्या गंगादेवीका  
इनसे विवाह कर दिया। अपने व्याहके बाद इन्हें अपनी  
बहन पद्मावतीकी शादी सूझी। यथासमय कल्याणके  
राजा जैन विजलके साथ वह व्याही गई। राजाने  
इन्हें अपना प्रधान सेनापति बना लिया। तबसे यही  
संपूर्ण राजकार्यकी देखरेख करने लगे। इन्होंने पुराने  
कर्मचारी हटा दिये और उनकी जगह पर अपने सबंधी  
मनुष्य रख लिये। प्रजाको अपने अधीन करनेके लिये  
इन्होंने बहुत धनका व्यय करना शुरू कर दिया। उनके  
दानसे सतुष्ट हो सभी प्रजा इनके पक्षमें हो गई।

इस प्रकार राज्यभरमें अपना प्रभाव जमा कर इन्होंने  
जैन, स्मार्त, वैष्णवादि मतका खडन किया और लिङ्गोपा  
सना करना ही श्रेष्ठ है इसको सर्वत्र घोषणा कर दी।  
इस धर्मके प्रचारसे ब्राह्मणोंमें विद्वेषकी अग्नि धधक  
उठी। इनके मतमें बालक और बालिकाका विवाह  
करना अन्याय है एवं देवोपासनाके समय सभी  
परिधय किया काष्ठ निर्मूल और अपवित्र हैं। मद्यपान  
और मास्रादि भोजन भी इनके मतमें निषिद्ध था सां  
बहुतसे जैन लोग उनके मतके अनुयायी हो गये। जैन  
संप्रदायको उत्तेजित अथवा वसवके निन्दित आचरण  
को देख कर स्वयं राजा विजल उसको बर्ती करनेके लिये  
अमसर हुए। राजाकी सेना वसवके शिष्योंसे पराजित

(३) इस समय यहा कलचूरिवंशीय राजा राज्य  
करते थे।

हुँ। राजा भी उनसे हार खा कर उन्हें फिर म ली पद  
पर रखनेको बाध्य हुए।

जैन आख्यायिकासे मालूम होता है, कि म ली होनेके  
बाद ही वसवने राजाको मारनेका संकल्प कर लिया था।  
कोल्हापुरके राजा गिलाहारको जीत कर जिस समय  
विजल और वसव अपनी राजधानी लौट रहे थे उस  
समय भीमानदीके किनारे विपके प्रयोगसे राजाकी मृत्यु  
हो गयी। पितानी मृत्युका समाचार पा कर राजपुत्र  
सुरारी राय बदला लेनेके लिये तैयार हुये। उनके आने  
का समाचार पा वसव उत्तर बर्नाटकरके उली नगरको  
भाग और शत्रुसेनाके आनेके भयसे हुए में डूब कर प्राण  
त्याग किया।

लिङ्गायत उपाख्यानसे जाना जाता है कि, भिन्न सम्प्र  
दायवालोंका प्रभाव देख कर जैन राजा विजलने वसवके  
प्यारे दो अनुचरोंको आखें निरालया लीं। वसव राजा  
को अभिशप दे कर सगमेंधर तीर्थको चल दिये एवं  
राजाका काम तमाम करनेका भार जगदेव पर सौंपा।  
जगदेवने दो नौरुंके साथ सन्यासीके भेषसे रणयासमें  
प्रवेश कर ११६८ ई०में राजाको मार डाला। राजाके वियोग  
से राज्यमें बड़ी अज्ञान्ति फैली जिससे कल्याणराजधानी  
धनहीन हो गयी। वसवने सगमेंधरमें यह समाचार  
सुना। जीवोके मर जानेसे उसे मर्मान्तिक पीडा हुई,  
जीना उसे बहुत दुःखदायी प्रतीत होने लगा। वसवकी  
प्रार्थना पर पार्वती देवी मुग्ध हो इन्हें स्वर्गमें ले गयी।

दूसरे लिङ्गायत प्रयोगोंमें लिखा है, कि वसवने अली  
किक कार्य दिया कर सचसाधारणको मुग्ध किया था।  
अत्यद्भुत क्षमता देख कर सभी उनकी तरफ आष्ट होने  
लगे थे। दानमें वे मुक्तहस्त थे। एक समय किसी मन्त्री  
ने राजासे निन्दन किया, कि एक वर्षके दानसे सम्पूर्ण  
राज्यकोय खाती हो गया है। राजाने वसवने इसका  
कारण पूछा। इस पर इन्होंने बहुत सरल भावसे राज्यकोप  
की चावां राजाको दे दी। राजा उनकी सहाय्यमूर्ति देवा  
अज्ञात हो गये। फिर जब वे राज्यको देजाने आये, तब  
उनकी अद्भुत क्षमताका परिचय पा चमत्कृत हो गये।

वसवका धर्म इस प्रकार है—एकमात्र जगत्पति ही  
सम्पूर्ण जीवोंके रक्षक हैं। ईश्वरसे परिचित होने

अथवा ईश्वरके चरणों में स्थान पानेके लिये किसीकी उपासना या यागयज्ञ, उपवास, तीर्थयात्रा आदि करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। लिङ्गधारी नर नारी दोनों ही बराबर हैं। पुत्र्यकी अपेक्षा स्त्रियोंकी शक्ति किसी प्रकार कम नहीं हो सकती। अतएव स्त्रिया विवाह योग्य होने पर अपने आप स्वामीका निर्वाचन कर सकती हैं। लिङ्गधारी शिवके उपासक जब सब समान हैं, तब जातिभेदकी कोई आवश्यकता नहीं। लिङ्गधारी भक्त गण किसी कामके करने पर कभी असुद्ध नहीं हो सकते। जातकर्म, ऋतुधर्म, सूतक, पातक, उनको स्पर्श नहीं कर सकता। मृत्युके बाद शिव भक्तोंकी स्वर्गगति होती है। वह पवित्र आत्मा फिर कभी नीचे नहीं आती, इसलिये उनकी स्वर्गप्राप्तिके लिये कोई भी अल्पेष्ट किया करनेकी जरूरत नहीं। शिव ही एकमात्र जगतके कर्ता हैं। वे ही सब प्रकारसे लिङ्गधारियोंको रक्षा करते हैं। ज्योतिषशास्त्रके प्रदोष और भूतो का प्रभाव लिङ्गधर्योंके ऊपर नहीं चलता।

वसवास ( हि० पु० ) १ निवास, रहना। २ निवास योग्य परिस्थिति, रहनेका डीठ या सुभीता। ३ स्थिति, रहने का ढग।

वसवी—शिवोपासक रमणीमण्डली। दक्षिणात्यके धार याद जिलेमें इस सम्प्रदायकी बहुसंख्यक रमणिया देखी जाती हैं। वसवन् और मल्लिकाजुन इनके प्रधान देवता हैं। धारवाड जिलेके प्रायः प्रत्येक ग्राममें उनकी पूजा होती है। ये लोग मद्यपायी या मांसभोजी नहीं हैं। सभी निरामिष भोजन करते हैं। अलङ्कारादि पहननेमें कोई रोक टोक नहीं है। गलेमें चादोका त्रिङ्गधारण और त्रिभूमिर्हान इन्हे अग्र्य करना होता है। ये लोग सबके सब परिष्कार परिच्छन्न, विनयी और आतिथेयी हैं। जातीय सभा और विवाहादि कार्यक्रमों में गृहस्थ रमणियोंके साथ मिल कर शास्त्रोप त्रिया सम्पन्न करते हैं। घर और कन्याके सामने ये लोग बत्ती जला कर आरती उतारती हैं। देवपूजार्थी पत्रिचर्या और लिङ्गा यतरमणी सभाकी रमणियोंकी अभ्यर्चना करना हाका प्रधान कार्य है। ये लोग विवाहादि करती हैं। विन्दु उपपति महणमें भी बाज नहीं आती। अपने अपने

भरणपोषणके लिये उन्हें लिङ्गायत समितिसे तनखाह मिलती है। वसवी परिचारिका और चलवाडी परिचारक नहीं रहनेसे लिङ्गायत सम्प्रदाय अपूरा रह जाता है। उनके कोई सन्तान नहीं रहने पर वे गोद ले सकती हैं।

वसह ( हि० पु० ) वृषभ, बैल।

वसहर—पञ्जाबप्रदेशके अन्तर्गत एक पार्वतीय राज्य। यह अक्षा० ३१ ६' में ३२ ५' उ० तथा देशा० ७७ ३२' से ७६ ४' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ३८२० वर्ग मील और जनसंख्या ८० हजारसे ऊपर है। इसमें ७० ग्राम लगते हैं। १८०३से १८१५ ई० तक यह राज्य गुरखा-सरकारके अधीन रहा। १८२५ ई०में अंगरेजोंके द्वारा गुरखा प्रभाव क्षीण हो जाने पर यह स्थान पुनः पूवतन राजकर पर समर्पित किया गया। १८४७ ई०में अङ्गरेजों ने निर्दिष्ट राजस्व घटा दिया। राजा समथोर सिंह बहादुर १८४६ ई०में राजसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। ये राजपूतवर्गीय हैं। युद्धके समय जूरत पढ़ने पर वसहरराजकी अङ्गरेजोंकी सहायता करनी पड़ती है।

वसहरि—मध्यप्रदेशके सागरजिलान्तर्गत एक नगर। वसा ( स० खी० ) वषा देना।

वसा ( हि० खी० ) १ वर्ष, मिष्ट, बरटी।

वसात ( हि० पु० ) विघात देगो।

वसाना ( हि० क्रि० ) १ वसने देना, रहनेको ठिकाना देना।

२ स्थित करना, ठिकाना, उद्धारना। ३ जनपूण करना, आवाद करना। ४ विठाना। ५ रखना। ६ बास देना। वसालतजङ्ग—दक्षिणात्यके अरबों प्रदेशके मुसलमान शासनकर्ता, सलावतजङ्गके भाई। इन्होंने १७५६ ई०में बन्दिवासमें प्रथम युद्धके बाद फरारियोंसेनापति बुस्तीके साथ मिल कर अङ्गरेजोंका प्रभाव खर्च कर डालनेकी चेष्टा की थी।

वसिऔरा ( हि० पु० ) १ वर्षकी वृष्ट त्रिधियां जिनमें त्रिया बासी भोजन खाती और बाम्बी पानी पीती है। २ घासी भोजन।

वसिमा ( हि० वि० ) बाबी देणो।

वसियाना ( हि० क्रि० ) बासी हो जाना, ताजा न रह जाना।

वसिष्ठ—वसिष्ठ देखो ।

वसीकृत ( हि० टी० ) १ वस्ती, आबादी । २ वसनेका भाँष या किया, रहन ।

वसोकर ( हि० वि० ) वशीकर, वशमें करनेवाला ।

वसोड ( हि० पु० ) १ दूत, संदेश ले जानेवाला ।

वसोठी ( हि० स्त्री० ) वीत्य, दूतका काम ।

वसोत ( अ० पु० ) एक यन्त्रका नाम जो जहाज पर सूर्य का अक्षांश देखनेके लिये रहता है, कमान ।

वसु ( स० पु० ) वषु देखो ।

वसुबला ( हि० पु० ) एक वर्णवृत्त जिसे तारक भी कहते हैं ।

वसुदेव—वसुदेव देखो ।

वसुधा—वसुधा देखो ।

वसुन्धिया—यशोर जिलेके अन्तर्गत एक ग्राम । यह अक्षा० २३ ८० तथा देशा० ८६ २४ पू०के मध्य अर स्थित है । यहा यशोरकी प्रधान हाट लगती है । नाय ग्रांग चीनी, चावल आदि यशोर लाया जाता है ।

वसुमती—वसु ती देखो ।

वसुरहाट—१ बङ्गालके २४ परगनेके अन्तर्गत एक उप विभाग । भूपरिमाण ३६३ वर्गमील है ।

२ उक्त उपविभागका प्रधान नगर और विचार सदर । यह अक्षा० २० ४० उ० तथा देशा० ८८ ५३ ३० पू०के मध्य अरस्थित है । यहा दीवानी और फौजदारी अदालत लगती है ।

वसुला ( हि० पु० ) बङ्गला देखो ।

वसूला ( हि० पु० ) लकड़ो छोलने और गड़नेका बढईका एक हथियार । यह घेद लगा हुआ चार पांच अगुल चौड़ा लोहेका टुकड़ा होता है जो धारके ऊपर बहुत भारी भार मोटा होता है । यह ऊपरसे नीचेनी ओर चलाया जाता है ।

वसूली ( हि० स्त्री० ) छोटा वसूला ।

वसेरा ( हि० वि० ) १ वसोवाला, रहनेवाला । ( पु० ) २ यह स्थान जहा रह कर यात्री रात बिताते हैं, टिकनेकी जगह । ३ यह स्थान जहां चिडिया ठहर कर रात बिताती है । ४ टिकने या बसनेका भाव, वसना, आवादा होना ।

वसेरी ( हि० वि० ) निवासो, रहनेवाला ।

वसोवास ( हि० पु० ) निवासस्थान, रहनेकी जगह ।

वसो घी ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी रवड़ी जो सुग घित और लच्छेदार होती है ।

वस्त ( अ० पु० ) चित्रकारीमें यह मूर्ति, चित्र या प्रतिवृत्ति जिसमें किसी व्यक्तिके मुख अथवा छातीके ऊपरके भाग मात्रकी आकृति बनाई गई हो ।

वस्त ( स० पु० ) वस्त्यते यन्मार्थं धृत्यते इति वस्त धम् । १ आदित्य, सूर्य । २ छाग, वकरा ।

वस्तः ( स० स्त्री० ) शाकम्बर लवण ।

वस्तकर्ण ( स० पु० ) वस्तकर्ण अर्था आदित्याक्ष । १ शालवृक्ष, शालका पेड़ । २ अजकर्णक । ३ असनाका पेड़, पीतशाल वृक्ष ।

वस्तगन्धक ( स० पु० ) अरुणतुलसीवृक्ष ।

वस्तगन्धा ( स० स्त्री० ) वस्तस्य गन्ध इव गन्धो यस्या । १ अजगन्धा, अजमोदा । २ श्वेतयमानी ।

वस्तगन्धावृत्ति ( स० स्त्री० ) पुत्रदात्री लता ।

वस्तमोदा ( स० स्त्री० ) वस्त छाग मोदयतीति मुटु-णिच् अण् । १ अजमोदा । २ वनयमानी ।

वस्तर ( हि० पु० ) वस्त्र देखो ।

वस्तवास्तिन् ( स० लि० ) वकरेकी तरह शब्द करनेवाला ।

वस्तवृद्धी ( स० पु० ) मेघशृद्धी, मेढा(सोंगी) ।

वस्ता ( फा० पु० ) कपडोका चौकोर टुकड़ा जिसमें कागज के मुट्टे, बहोपाने और पुस्तकादि बाध कर रखते हैं ।

वस्ताण्ड ( स० स्त्री० ) छागाण्ड ।

वस्तान्त्री ( स० स्त्री० ) वस्तस्यैव अत्रमस्या, गौरादि त्वान् डीप् । छागलान्त्रोक्षुप । पर्याय—वृषगन्धाण्या, मेयान्त्री, वृषपत्रिका, अजान्त्री, बकड़ी । इसका गुण कटु, कासरोगनाशक, यौनप्रद और गर्भजनक माना गया है ।

वस्तार—मध्यप्रदेशके वाँदा जिलान्तर्गत एक मित्रराज्य ।

यह अक्षा० १७ ४६ से २० १४ उ० तथा देशा० ८० २० से ८२ १५ पू०के मध्य विस्तृत है । भूपरिमाण १३०६२ वर्गमील है । इसके उत्तरमें फानकर राज्य, दक्षिण में मन्द्राजका गोदावरी जिला, पश्चिममें चाँदा जिला, हैदराबाद राज्य और गोदावरी नदी तथा पूर्वमें जयपुर



राज्य है। इस सामन्त राज्यके प्रधान नगर जगदलपुरमें राजप्रासाद अवस्थित है।

इसके उत्तर, पश्चिम, मध्य और दक्षिण विभाग पर्यंतमालाने समाच्छादित है। पूवभागकी अधिल्यता भूमि समुद्रपृष्ठने २ हजार फुट ऊंची है। यहा सब तरहका अनाज उपजता है। ये शायीला तामर पर्यंत मालाके दो सर्वोच्च शिगरके नाम नन्दिराज और पितुर-राणी हैं। उक्त पर्यंतमालाने असह्य नदिया निकली हैं। उनमेंसे शायरी, इन्द्रती और नाल नामक प्रधान नदिया गोदावरी नदीमें मिली हैं। जमीनमें एक पड़ जानेसे धानकी फसल अच्छी लगती है। यहा लोहेकी एक पान है, पर स्थानवासी उसे काममें नहीं लाते।

इस राज्यमें २५२५ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या तीन लाखसे ऊपर है जिनमेंसे गाँव जातिकों संख्या ही अधिक है। जगदलपुरमें कुछ ब्राह्मणोंके भी घर हैं। ये लोग मास और मछली पाने तथा गाहिरा नामक ग्वालाजानिके हाथका पानी पीते हैं। यहाँ धाकर नामक ब्राह्मण एक निरुद्ध जाति है। इस जातिके लोग भी यक्षोपवीत पहनते हैं।

दन्तेश्वरी या मीली (भवानी और काली) तथा मातादेवी यहाके अधिजासियोंके उपास्य देवता हैं। उद्योग शके हिन्दू अपरापर देवदेवियोंकी भी पूजा करते हैं। दन्तेश्वरी यहाके गजवशकी बुलदेवी है। देवोंके अनुग्रहसे इस राजवशी हिन्दुस्तानसे वरगुल जा कर राज्य पसाया। पीछे जब ये मुसलमानों द्वारा घाते भगा दिये गये, तब देवोंके साथ दन्तिराष्ट्रमें आ कर बस गये। यहा देवीके रहनेके लिये मन्दिर बनवाया गया। पहले देवीको लोलगसनानी कृषिके लिये यहा नरबलि दी जाती थी। पीछे उसे रोकनेके लिये १८४० ईमें उस मन्दिरमें एक स्वतन्त्ररक्षक नियुक्त हुआ तथा इसकी जगदबेदी राजाके सिर रही। यह देवीमूर्ति काले पत्थरकी बनी हुई है और उहाँ सर्वथा श्वेतवस्त्र पहनाया जाता है। जब किसी की अपना अमीद जाता होता है, तब ये देवीके मस्तक पर एक फूल चढ़ाते हैं। उस फूलके बायें या दाहिने गिराते कामका इष्टानिष्ठ समझा जाता है। यहा किसी प्रकारका पाणिज्यद्वय प्रचलित नहीं। तोता, सिपाय मोटे कपड़े के।

आवश्यकिय द्रव्य नागपुर, रायपुर, निजामराज्य और छत्तीसगढ़से लाये जाते हैं।

यहाके राजा अपनेको राजपूत बतलाते हैं। मरहटाके अभ्युदय तक यह राज्य बिलकुल स्वतन्त्र था। १८वीं शताब्दीमें नागपुर गवर्मेंटने इस पर कर निर्धारित कर दिया। इसी समय जयपुर राज्यके साथ मद्रासमें लड़ाई छिड़ गई। कई वर्षों तक यहा अराजकता फैली रही। भूतपूर्व राजा भैरवरायका ६२ वर्षकी उमरमें १८६१ ई० को देहान्त हुआ। पीछे उनके लड़के रत्न प्रताप देव मिहासन पर बैठे। उनको नावागिगी तक राज्य गवर्मेंट की देखरेखमें रहा। ये ही वर्तमान राजा हैं। राजाको दत्तक लेनेका अधिकार नहीं है, एकमात्र जयपुरही सिंहासनके अधिकारी है।

बस्तार (फा० पु०) एक वर्षी हुई बहुत सी वस्तुओंका समूह, मुद्रा, पुलिदा।

वस्ति (सं० पु०) वस्ति देवों।

वस्तिशेष—पञ्जाबप्रदेशके जलन्धर नगरके उपकण्ठवर्ती एक स्थान। १६२७ ई०में शैव वंशके नामक किसी मुसलमानने इस छोटे नगरको बसाया।

वस्ती युक्तप्रदेशके गोरखपुर विभागका जिला। यह अक्षा० २६ २५' से २७ ३०' उ० तथा देशा० ८५ १३' ८३' १४' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २७६२ वर्गमी० है। इसके उत्तरमें नेपाल राज्य, पूर्वमें गोरखपुर जिला, दक्षिणमें गोगरी और पश्चिममें गोएडा है। चिलेका समग्र स्थान पर्यंतमय है। तराई प्रदेशकी तरह कहीं उच्च और कहीं मिट्ट जलभूमिमें परिणत है। मध्य भागमें राती और बुयाना नदी बहती हैं जिनसे जिला तीरा स्वतन्त्र भागोंमें विभक्त हो गया है। इनमेंसे उत्तर विभाग पर्यंतसमावर्ण तराई भूमि, मध्य भाग उर्वरा और ग्राम्यजालिनो तथा घरेरा और बुयानाका मध्यवर्ती निम्नभाग जलान्य है। यहा ऋत्विग उपायसे अजसिद्धन कृषके शास्त्ररत्ना की जाती है। राती, बूदी राती, आरा, वाणगज, मसरो, अमी, बुयाना, कुडा, बोटनारवा और घरेरा ही यहाकी प्रधान नदिया हैं। परमात्र राती और घरेरा ही वाणिज्ययोग्य आ जा सकने हैं। बगिरा बाय दना, पाथरा चाउर और चण्डुनाल नामक कई एक हड़ हैं। उक्त जलान्योंमें नाना प्रकारके पत्थी रहते हैं।

- फाहियान इस स्थानको देग गये हैं। उस समय इसका उत्तरीय भाग जगलमें परिणत हो गया था। कहते हैं, कि १३ वीं शताब्दीमें राजपूतवशने मारस और डीम कटारकी परास्त करके इस स्थान पर दखल जमाया। इसके बाद बहुतसे राजपूत गजा इस स्थानको ले कर आपसमें लड़ते रहे। अरुबरके शासनकालमें मुसल मानोंने गोरखपुर जात कर इन जिलेमें प्रवेश किया और राजाको सिंहासनच्युत करके इसे अवध सूबामें मिला लिया। १६१० ई०में मुसलमानोंकी गोटी यहासे उखाड़ी, पर १६८० ई०में उन्होंने फिरसे इसको अपने दखलमें किया। इसके बादका इतिहास गोरखपुर जिलेके साथ सलम है। गोरखपुर देखो।

जिलेमें ४ शहर और ६६०३ ग्राम लगते हैं। जन सख्या बीस लाखके करीब है। जिनमेंसे सैकड़ें पीछे ८४ हिन्दू और शेष मुसलमान हैं। यद्यपि यह जिला बहुत लम्बा चौड़ा है, पर म्युनिसिपलिट्री एक भी नहीं है। जिलेमें कुल मिला कर ३०८ स्कूल हैं। इनमेंसे २ यूट्रिश गवर्नमेंटमें और १३५ डिस्ट्रिक्टकीउसे परिव्यालित होते हैं। स्कूलके अलावा ८ अस्पताल भी हैं। सब मिला कर यहाकी आवहया अच्छी है।

२ उक्त जिलेकी तहसील। यह अक्षा० २६ ३३' से २७ ६' उ० तथा देशा० ८२ ३७' से ८२ ५६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ५३६ वर्गमील और जनसख्या चार लाखके करीब है।

३ उक्त तहसीलका सदर। यह अक्षा० २६ ४७' उ० तथा देशा० ८२ ४३' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसख्या प्राय १४७६१ है। १७ वीं शताब्दीमें यहा राजप्रासाद था, पर अभी यह राडहरमें पडा है। शहरमें प्राचीन हिन्दू-राजाका दुग भी देखनेमें आता है। यहा तीन स्कूल हैं जिनमेंसे एक बालिकाके लिये है।

बस्ती (हि० खी०) १ नियास, आबादी। २ जनपद, बहुतसे घरोंका समूह जिनमें लोग बसते हैं।

बस्तु (स० खी०) बस्तु देवो।

बस्त्र (स० पु०) रत्न देवो।

बल्प (स० वि०) बल्प देवो।

बलि (स० अर्थ०) क्षिप्र, तेजीसे।

बह गा (हि० पु०) बडी बह गी।

बह गी (हि० खी०) बोम्हा ले चलनेके लिये तराजूके आकारका एक ढांचा, कापर। लगभग चार हाथ लम्बी लचीली लकड़ी या बासके दोनो छोरों पर रस्सीका छोका लटका नर नीचे बाटका चौन्डा मा लगा देते हैं। इसी चौकटे पर गोभ रखा जाता है। बासको बीचोबीच कंधे पर रख कर चलते हैं।

बहकना (हि० क्रि०) १ मार्गभ्रष्ट होना, भटकना। २ किमीकी बात या भुलायेमें आ जाना, बिना मला घुसा विचारे किसीके कहने या फुसलानेसे कोई काम कर बैठना। ३ टीक लक्ष्य या स्थान पर न जा कर दूसरी ओर जा पडना, चूकना। ४ रस या मद्यमें चूर रहना, आपेमें न रहना। ५ किमी बातमें लग जानेके कारण शान्त होना।

बहकाना (हि० क्रि०) १ टीक रास्तेसे दूसरी ओर ले जाना या फेरना। २ शान्त करना, बहलाना। ३ कोई उपयुक्त कार्य करानेके लिये बातोंका प्रभाव डालना, भुलाना देना। ४ लक्ष्यभ्रष्ट करना, टीक लक्ष्य या स्थान से दूसरी ओर कर देना।

बहत्तर (हि० वि०) १ सत्तर और दो, सत्तरसे दो ज्यादा। (पु०) २ सत्तरमें दो अधिर्की सख्या और अक जो इस प्रकार लिखा जाता है—७२।

बहत्तरवा (हि० पु०) जिसका स्थान बहत्तर पर पड़े। बहदुरा (हि० पु०) एक फौडा। यह धान या घनेमें लग कर उसके पत्ते काट कर गिरा देता है।

बहन (हि० स्त्री०) बहिन देवो।

बहना (हि० नि०) १ द्रवपदार्थोंका निम्नतलकी ओर आपसे आप गमन करना, पानी या पानीकी रूपकी वस्तुओ का किसी ओर चलना। २ गया होता होना, अपम या बुरा होना। ३ टीक लक्ष्य या स्थानसे हट जाना, फिसल जाना। ४ क्षयित होना, लगातार बूढ़ या धारके रूपमें निक्कल कर चलना। ५ बिना ठिकाने का हो कर घूमना, मारा मारा फिरना। ६ सन्मार्गसे दूर हो जाना, भ्रायारा होना। ७ गर्भपात होना, अडाना। ८ सस्ता मिलना, बहुनापतसे मिलना। ९ घायुका स चरित होना, हवाका चलना। १० हट जाना, दूर

बहल्यचट्ट ( स० पु० ) पक्षिगात्र शालिघान्य, पक्षिगात्र नामका घान ।

बहल्यचक्र ( स० पु० ) मेघशृङ्गी, मेढ्रासींगी ।

बहल्यवच ( स० पु० ) बहला वृद्धा त्वक्, उल्लस्यम् ।  
१ श्वेतलोध्र, सफेद गोध । २ भूर्जवृक्ष, भोजपत्रका पृक्ष ।

बहल्यदल ( स० पु० ) कृष्णजोभाञ्जन, काली सोहि जना ।  
बहलना ( हि० कि० ) १ दु पक्षी वात भूलना और चित्तका दूसरी ओर लगाना । २ मनोरञ्जन होना, चित्त प्रसन्न होना ।

बहल्यवर्त्मन् ( स० स्त्री० ) नेत्रवर्त्मगत रोगमेघ । वर्त्म देनाका जैसा रंग है उसी रंगकी पिडका जब वर्त्मके चारों ओर हो जाती है, तब उसे बहल्यवर्त्म कहते हैं ।  
बहल्य ( स० स्त्री० ) बहलानि प्रचुराणि पुष्पाणि सन्त्यस्या, अर्थ आदिनात्रच । १ प्रतपुष्पा । २ स्मृतिला, बड़ी इलायची ।

बहल्यङ्ग ( स० पु० ) मेघशृङ्गी, मेढ्रासींगी ।

बहल्यना ( हि० स्त्री० ) १ भ्रष्ट या दु पक्षी वात भुलया कर चित्त दूसरी ओर ले जाना । २ मनोरञ्जन करना, चित्त प्रसन्न करना । ३ मुलाया देना, बातोंमें लगाना ।

बहल्यप ( हि० पु० ) प्रमन्नता मनोरञ्जन ।

बहलिया ( हि० पु० ) बहेलिया लेशो ।

बहली ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी छतरोदार या परदेदार गाड़ी जिसे पैदल चलाते हैं ।

बहली ( हि० पु० ) बुद्धीका एक पेच ।

बहम ( स० स्त्री० ) १ राएडन मण्डनकी सुनि, दलील ।  
२ विषाद, भ्रमण । ३ होड, धाजी ।

बहसना ( हि० कि० ) १ तर्क वितर्क करना, त्रियाद करना ।  
२ धार्त बाधना, होड लगाना ।

बहाउद्दीन नफसवद् शीफ—एक मुसलमान फकीर । इन्होंने सुफो सम्प्रदायकी तपस्य वी श्रावणा प्रवर्त्तन वरके अच्छा नाम कमा लिया था । इन्होंने 'इतनामा' नामक एक नीतिमूलक और 'दलील इ अगिकिन' नामक एक स्वीय साम्प्रदायिक ग्रन्थकी रचना की थी । पारस्य राज्यके इराक नगरमें १४५३ ई०के उनका देहान्त हुआ ।  
बहाउद्दीन बल्द मौलागा—एक मुसलमान साधु, बाहिक

देनायासी ख्यातनामा जलाल उद्दीन मीलवी रुमीर् पिता । ग्याजारिमके शासनकालमें मुल्तान महम्मद् उद्दीनके शासनकालमें इन्होंने विद्येय प्रतिपत्ति लाभ की । सुफो साम्प्रदायिक मतमें उनकी परान्त भक्ति रहनेके कारण उ हो ने अपने मतका प्रचार करनेकी इच्छासे उस धर्मतत्त्वकी विषय व्याख्या प्रकट की । उनकी यह प्रकृता सुननेके लिये पारस्यके नाना स्थानों से दल बाध बाध पर मुसलमान लोग आया करते थे । जीवनकी शेवा परधामें ये मातृभूमिका परित्यक्त पर तुर्क राज्यके कोणिया नगरमें जा बसे । यहा १२३० या १२३३ ई०में उनकी मृत्यु हुई । पीछे उनके पुत्रने इस सम्प्रदायका प्रधान गुरुका आसन प्राप्त किया ।

बहाउद्दीन जकरिया शीफ—मूलतानयामी एक मुसलमान फकीर, कुतुबुद्दीन महम्मदके पुत्र और कमाल उद्दीन सुरेजीके पीव । मूलतानके अन्तर्त्तों फोटफरोड नगरमें ११७० ई०को उनका जन्म हुआ । पाठाध्ययन शीफ करके ये बीगदाद् नगर गये और यहा शैख सहाबुद्दीन मुहर यारीके शिष्य बने । पीछे मूलतान लौटने पर फकीर उद्दीन शकरगझके साथ इनका परिचय हुआ । १२६७ ई०को मूलतान नगरमें इनकी मृत्यु हुई । भारतवर्षीय श्रेष्ठतम मुसलमान साधुओं में ये एक थे । मरते समय ये अपने पुत्रादिको अतुल सम्पत्ति छोड गये ।

बहाउद्दीन साम—घोर और गजनी राज्यके नरपति गया सुद्दीन महमुदके पुत्र । १०१० ई०को १४ वर्षकी अवस्थामें ये पितृसिंहासन पर बैठे । तीन माम राज्य करनेके बाद ये अलाउद्दीन अलमिजले परास्त हुए और होरटके शासनकालसे कैद किये गये । ख्रिस्त धर्मके आक्रमणकालमें इन्होंने बहाबुद्दीनको ख्यातिजमके हाप समर्पण किया जिसने इन्हे नदीमें डुबा मारा ।

बहाउद्दीन—राजपूतानेके शीफोरे राज्यके अन्तर्गत एक निम्न और उसका प्रधान नगर । शीफोरे के ।

बहादुर ( फा० पु० ) १ उल्लाही, माह्मी । २ पराश्रमी, शूली ।

बहादुरी ( फा० स्त्री० ) धीरता, दृढ़ता ।

बहादुर खाँ—( बहादुरखान् इ शैयानी ) दिल्लीके बादशाह अकबरके प्रसिद्ध सचिव खान् जमानके छोटे भाई ।

इसका असली नाम महम्मद मैयद था। हुमायूँ फारससे लौटते समय इन्हें दारुका शासन भार सौंप गये थे। कुछ ही दिन बाद बहादुरने विद्रोही हो कर फान्धार पर दखल करना चाहा। गिलातके शाह महम्मद शा उस समय फान्धारके सेनापति थे। उन्होंने फारस के बादशाहसे सहायता मागी। कुछ काजलवामी ने बहादुर खाँ पर हमला किया था, उस समय उन्होने भाग कर अपनी रक्षा की थी।

बहादुर खाँके आचरणसे दिल्लीके बादशाह उलखे बहुत ही नाराज थे। अकबरने अपने राजत्वके उरे वर्षमें मानकोट अधिकार किया। इस समय बैरामखाँके अनु रोधसे उन्होने बहादुरको क्षमा कर दिया। बहादुर खाँको मूरतानकी जागीर मिली थी। दूसरे वर्ष मालव जयके समय इन्होने बादशाहकी सेनाकी काफी सहायता की थी। बैरामखाँके पतन होने पर माहुम-अनगाकी कोशिश से बहादुरखाँ 'चकोल' और इटावा सरकारके शासन कर्ता हुए थे। चान् जमानके विद्रोहके समय ये भी भाईके साथ जा मिले थे। इसी अपराध पर ये अश्वर के आदेशसे कैद कर लिये गये और ग्राहवाज खाँ कम्बूके हाथसे मारे गये। भाईकी तरह ये भी एक विद्वान् पुरुष थे।

बहादुर खाँ—फानदेशके एक अधिपति, फरफोयशके राजा अली खाँके पुत्र। राजा अली खाने अश्वरकी तरफसे दक्षिणात्यके राजाओंसे घोरतर युद्ध किया था। उसीमें ये शत्रुओंके हाथ मारे गये। इस समय बहादुर खाँ असोरगढमें कैद थे। ऊँचे खानदानमें उत्पन्न होने पर भी इनकी तकदीरमें सुख शान्ति न लिखी थी। यही कारण है, कि उन्होंने १० वर्ष तब फारायासका कष्ट सहा था। पिताकी मृत्युके बाद १५६६ ई०में ये राजा तो हुए, पर सुशिक्षाके अभावसे और निरुद्धिताके कारण ये दिल्ली अश्वरकी अधीनता स्वीकार न कर सके। आदिल दिल्लीसे बादशाहकी फौज चली आई और हमला कर असोर गढ पर कब्जा कर लिए। इस तरह बहादुर खाने अपना राज्य खो दिया।

बहादुर खाँ—बीरदुर्जेबका एक प्रिय सेनापति। इन्होंने द्वापगिकोहकी पुत्र सहित बन्दी करके औरदुर्जेबके मामने हाजिर किया।

बहादुर खाँ—बिहारके एक शासनकर्ता। इन्होंने अपने पिताकी मृत्युके बाद अपनेको स्वाधीन राजा घोषित किया था। दिल्लीके बादशाह इमाहिम लोदीके राज-त्वकालमें (१५२५ ई०में) इन्होंने दिल्लीकी सेनाके साथ बडी तैयारीके साथ कई युद्ध किये थे, जिनमें ये विजयी हुए थे और जम्मलप्रदेश पर्यन्त स्थान अधिकार किया था।

बहादुर खाँ सिस्तानी—मालवा राज अवदुल्ला खाँ उज्जयिण का एक सहकारी सरदार। १५६६ ई०में सभ्राट् अकबरने उज्जयिणके विरुद्ध युद्ध किया था, जिसमें मालवराज के सहकारी सरदारोंने अन्य कोई उपाय न देना मुगल बादशाहकी शरण ली थी। परन्तु बहादुर खाने अपनी फौजके साथ जमुना पार कर अन्तर्देशके बीच मुगल सेनापति मोर मीर उल्मुल्क पर धावा मारा। उसमें मुगलोंकी सेना परास्त हो कर फनीजकी तरफ भाग गई। उसके बाद खाँ जमानके विद्रोह-व्यमनक लिए अकबरशाह जब गाजीपुरकी तरफ बढ़े, तो बहादुर खाने मौका समझ जौनपुर दखल कर लिया। अकबर बहादुर खाँकी क्षमताको शर्ष करनेके अभिप्रायसे जौनपुर लौटे। सभ्राट्के आगमनसे भयभीत हो कर बहादुर खाँ बनारस भाग गये। वहासे बहादुरने सभ्राट्की अधोनाता स्वीकार कर क्षमा प्रार्थना की थी।

बहादुर गिलानी—दक्षिणात्यके बहादुरी राजवंशके अथ पतनके समय (१४७३ १४८६ ई०में) जब बीजापुर सुभ्र आदि स्थानोंके शासनकर्ताओंने अपना अपना प्रभाव जमा कर स्वाधीनता प्राप्त और स्वसत्त राजवंशको प्रतिष्ठा की थी, उस समय कोङ्कण प्रदेशके शासनकर्ता बहादुर गिलानीने भी स्वाधीन होनेकी चेष्टा की थी। इन्होंने विद्रोही हो कर बेलगाँव और गोआ अधिकार किया था। शङ्खे भूखमें अपना राजपाट स्थापन कर इन्होंने १४८६ ई०में मिराज और जामपाटही जय किया था। उसके बाद कोङ्कण उपभूममें भी सेना रणनीकी चेष्टा करने पर १४६३ ई०में सुल्तान मदमुद्दबेगके उद्योगसे और बीजापुरके राजा सुसुफ आदिल खाँ महमुद्दनाहको सहायता से बहादुर खाँ गिलानी मिराजमें पराजित हुए और मार डाले गये। जामण्डी और शङ्खे भूख महमुद्दनाहके

हाथ लगा और बेलगाम आदि अन्य सम्पत्तिया जैन-उल्-मुल्कको दे दी गई।

**बहादुर खाँ नाहर**—राजपूतानेके अन्तर्गत मेवाड़ प्रदेशके कांजाड़ा राजघरके प्रतिष्ठाता। नैमूरके दिल्ली आक्रमण के पड़ने और घातमें इन्होंने दिल्लीराज-दरबारमें विशेष प्रतिष्ठा पाई थी। सम्राट् फिरोजशाहने इसकी धीरता देण कर इन्हें 'नाहर'की उपाधि दी थी। फिरोजशाहसे ३० कोस दक्षिणके पर्यंतके नीचे बसे हुए कोटिला नगरमें इनकी राजधानी थी। इस नगरकी रक्षाके लिए उन्होंने पर्यंतके ऊपर तीन दुर्ग बनवाये थे। १३८६ ई०में (हिजरी ७६१) इन्होंने फिरोजशाह पर अपना कब्जा किया। पीछे राजपुत्र आय बकरकी सहायतासे इन्होंने दिल्लीभर महमदशाहकी सिंहासनसे उतार कर आबूको राजा बनाया था। परन्तु महमदने जब फिर दिल्ली सिंहासन अधिकार किया, तब आबू बकरने पराजित हो कर मेवाड़में जा बहादुरको गणन ली। ७६२ हि०में महमदशाहने मेवाड़ पर चढ़ाई कर बहादुरको परास्त और आबू बकरको कैद कर लिया था। बहादुर राँके क्षमा प्राप्त करना करने पर सुनतानने राज भूषा दे कर उनकी सम्मान रक्षा की थी। ७६५ हि० (१३६३ ई०) में बहादुरने पुन दिल्ली-द्वार तक लूट लिया। इसमें महमदने मोघमें आ कर मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी और कोटिला अधिकार कर लिया। (यह युद्ध-सत्याद कोटिलाकी शुभ्रा मसजिदके गिलालेखमें वर्णित है) बहादुर राँ बकरका फिरोजपुर भाग गये। सुलतान महमूद अला उद्दीनके राज्यके समय ये दिल्लीके किलेकी रक्षामें नियुक्त थे। सबसे ले कर मृत्यु पर्यन्त ये राज्य सन्ध्या-अनेक विषयोंमें लिप्त रहे। यही कारण है, कि सर्व साधारणमें इनकी विशेष प्रतिष्ठा हो गई थी।

प्रवाद है, कि बहादुर राँ नाहर अपने हिन्दू धर्मा शलज्यो अशुभ राणा जन्मवान द्वारा मारे गये। उनके पुत्र अलाउद्दीन राजादाने अपने नानाको मार कर पितृ हत्याना प्रतिज्ञोष लिया था। कोटिलाको शुभ्रा मसजिदमें अब भी बहादुर राँकी कब्र मौजूद है। इन्होंने अल्बारासे ७ कोस उत्तर पूर्वमें बहादुरपुर नामका नगर स्थापित किया था।

**बहादुरगञ्ज**—युक्तप्रदेशके गानोपुर जिलेके अन्तर्गत पर नगर।

**बहादुरगढ**—पञ्जाबप्रदेशके बौहट जिलान्तर्गत एक गांध्र माम। यह अक्षा० ३० १०' ३०" तथा देशा० ७० ५६' १५" पूर्वके मध्य विस्तृत है। इसके दक्षिणमें जो पर्यंत ध्रेणी है उस पर से धा नमक पाया जाता है। उसी नमककी धानके लिये यह स्थान बहुत कुछ मगहर है। फालुल, बलूचिस्तान, देराजात, सिन्धु और भारतपर्यंतके प्रायः प्रत्येक नगरमें इस नमककी रफ्तानी होती है।

**बहादुरगढ**—पञ्जाबप्रदेशके रोहतक जिलेके अन्तर्गत पहा नगर। यह अक्षा० २८ ४१' ३०" तथा देशा० ७६ ५६' ५०" के मध्य विस्तृत है। पहले यह नगर सरफाबाद नामसे प्रसिद्ध था १७५४ ई०में मुगल सम्राट् २५ आलमगोर-ने २५ मार्चके साथ यह नगर बहादुर खाँ नामक किमी बलूच सरदारको दान कर दिया। उक्त सेनापतिने एक दुर्ग बना कर इस स्थानको अपने नामसे बसाया। १७६३ ई०में सिन्धियाके राजाने इस पर अपना कब्जा किया। १८०३ ई०में फ़ज्जके नयाब श्राता इरमाइल खाने साहब लेकके अनुग्रहसे इस स्थानका शासन भाग ग्रहण किया। उक्त नयाबयज १८५७ ई० तक बहादुर शासन करते रहे। शेष नयाब बहादुरजङ्ग राँ गदर के समय अङ्गरेजों के विरुद्ध राडे हुए थे। इस कारण उनका राज्य छीन कर ब्रिटिश साम्राज्यमें मिला दिया गया। पूर्वतन राजमासाद आज भा विद्यमान है।

**बहादुर निजामशाह**—दाक्षिणात्यके महमद नगरस्थ निजाम शाही राजघर (१०म) के अन्तिम राजा। इन्होंने निजाम उल्-मुल्ककी, उपाधि धारण की थी। १५१५ ई०में इनके पिता इब्राहिम शाहकी मृत्यु होने पर अहमद नगरके सिंहासन सन्ध्यामें भगड़ा गडा हुआ। बहादुरने अशरफके पुत्र मुगदको अपनी सहायताके लिये बुला भेजा। मुगदके पहुंचने पर इन्होंने नगर-रक्षा का भार चाचधीवी और नाशिर का पर सौंप गोलकुण्डा और बीजापुरके राजाने सहायता मांगी। इधर सम्राट् पुष मुगदने अहमदनगर अयरोध कर डेडे। इस अवसर पर योगोचित साहस दिख कर चाचधीवी, खमणो-रुद्धका मुघो-जयन्त किया था। किसी तरह अशरफउलखानो

चादवीबीबीको परास्त न कर सकने पर, तथा बीजापुर और गोलकुण्डाकी सेनाके युद्धक्षेत्रमें पहुँच जाने पर मुरादको सन्धि करनी पड़ी। इस सन्धिकी शर्तोंके अनुसार उन्हें चादवीबीबीसे कुछ रुपये और बरारराज्य प्राप्त हुआ था। १५६६ ई०में सन्धिपत्रके अनुसार बहादुरशाह चाण्दके कारागारसे लिये गये और चाद बीबीने इच्छा नहीं होने पर भी उन्हें सिंहासन पर अभिषिक्त किया। परन्तु अपने प्रिय आमात्य महम्मद शाकी मन्त्रिपद पर नियुक्त कर सुलतानाने बड़ी धनसहायता का काम किया था। महम्मद शाकी क्षमता-शुद्धिके साथ साथ चादवीबीबी प्रभुत्व घटता जाता था। उसी वर्ष महम्मद शाके दमनके लिये इब्राहिम आदिलशाहने चादवीबीबीके प्रार्थनानुसार सोहल शाकी सेनाके साथ भेज दिया। चार मास तक दुर्ग अवरोध करने पर महम्मद सुलतानका आश्रय ग्रहण करनेको बाध्य हुए। उस समय निहङ्ग पाने मती बन कर राजकार्य चलाया था।

१६०० ई०में मुगलोंकी सेनाने अहमदनगर फतह कर बहादुरको परिवार सहित ग्वालियरके किलेमें बंद रखा और वहीं पर उनकी मृत्यु हुई। इसके बाद दो एक वज्रधर नाममात्रकी राजा हुए थे। चादवीबी, अकबर और निजामशाही देखो।

बहादुरशाह—बदलाके एक अफगानी शासनकर्ता, महमूद शाहके पुत्र। ५ वर्ष स्वधीनतासे राज्य करनेके बाद ये १५३६ ई०में सलीम शाह द्वारा राज्यच्युत हुए थे।

बहादुरशाह (सुलतान)—गुजरातके एक शासनकर्ता, २५ मुजफ्फर शाहके द्वितीय पुत्र। पिताकी मृत्युके समय ये जौनपुरमें थे, जतः इनके छोटे भाई महमूदशाह अपने ज्येष्ठ सहोदर सिकन्दर शाहकी हत्या कर राजा बन बैठे। बहादुरको मालूम पड़ते ही उन्होंने अपने राज्यमें लूट कर महमूदको सिंहासनसे उतार दिया और १५२६ ई०में स्वयं पितृ सिंहासन पर आरूढ हुए। १५३१ ई०में इन्होंने मालव जीत कर बहाके राजा सुलतान २५ महमूदको बन्दी, फिर हत्या की थी। १५३६ ई०में सम्राट हुमायूँ द्वारा ये मालवमें पराजित हुए और सम्राटकी अपना राज्य समर्पण कर काम्बेकी तरफ भाग गये।

बहा जा कर उन्होंने सुना, कि दीज झीपके पास ही एक यूरोपीय 'भीर बहरी' है। ये उनके 'बी सेनापतिकी हत्या करनेकी मातासे सेना ले कर उधर भ्रमसर हुए। बहा पोच्ची गौजोंके शशाघातसे बेहोश हो कर समुद्रकी गोदमें, १५३७ ई०में सदाके लिए सो गये। बीस वर्षकी उम्रमें राज्याधिकारी हो कर इन्होंने ११ वर्ष राज्य किया था, इस प्रकार ३१ वर्षकी अवस्थामें इस युवककी मृत्यु हुई।

बहादुरशाह १म—(शाह-आलम बादशाह) मुगलसम्राट् १म आलमगोरके द्वितीय पुत्र। ये अमीर तैमूरसे बाराह पीढी नीचे थे। (१०५३ हि०) बरहनुपुरमें इनका जन्म हुआ था। युवराज मुआजिम या हुनुव-उद्दीन शाह आलम नामसे इनकी प्रसिद्धि थी। १११४ हि०में, जब अहमदाबादमें पिताकी मृत्यु हुई थी, तब ये काबुलमें थे। इनके छोटे भाई आजमशाह मौका पा कर राजधानीमें अपनेको भारत साम्राज्यका अधीश्वर घोषित किया। उधर युवराज मुआजिमने भी काबुलमें रहते हुए ही, बहादुरशाह नाम ग्रहण कर राजमुकुट धारण किया था।

राज्याधिकारको ले कर दोनों भाइयोंमें विवाद हुआ। दोनों पक्षोंमें युद्धकी तैयारिया होने लगीं। आगराके पास धौलपुरमें दोनों तरफकी सेनाएँ इकट्ठी हुईं और (१११६ हि०में) बड़ा भारी युद्ध हुआ, जिसमें राजपुत्र आजम और उनके दो पुत्र येंदार घनत और बलाजा मारे गये। फिर इन्होंने राजदण्ड ग्रहण कर ५ वर्ष तक राज्य किया। वजीर मुनाइम र्ना आदिकी सहायतासे इन्होंने दिल्ली, आगरा, जोधपुर, उदयपुर आदि राज्य हस्तगत किये थे। "शाह आलम बहादुर शाह"के नामसे इन्होंने मुद्राङ्कन करा कर गृतया पढवाया था। इनके राज्यके दूसरे वर्ष राजपुत्र महम्मद कामधरस अपने अधिकारसे च्युत हुए जिससे ज़ुल्फिकर शाकी प्रतिष्ठा बढ गई और इनके प्रयत्नसे महाराष्ट्रपतिने सरदेश मुंशी लेनेके लिए आवेदन किया था।

इनके राज्यके ३रे वर्षमें (११२१ हि०में) शुद्ध गोविन्द मिहकी मृत्युसे उत्तेजित हो सिख लोग बन्दाकी अधीनतामें नित्रोही हो गये थे। किन्तु खान, खानाकी प्रयत्न



बहाव ( हि० पु० ) १ बहनेका भाव । २ प्रवाह, बहनेकी क्रिया । ३ बहती हुई धारा, बहना हुआ जल आदि ।  
 बहि ( स० अर्थ० ) बाहर ।  
 बहि ( स० पु० ) पिशाचभेद ।  
 बहिष्कर ( हि० स्त्री० ) स्त्री ।  
 बहिष्कृत ( हि० पु० ) अस्था, उमर ।  
 बहिन ( स० पु० ) बहिन देखो ।  
 बहिन ( हि० स्त्री० ) भगिनी, माताकी कन्या ।  
 बहिनापा ( हि० पु० ) बहनापा देखो ।  
 बहिरङ्ग ( स० स्त्री० ) बहि प्रदनेवाँह्यमङ्ग यस्य । १ व्याकरणोक्त प्रत्ययादि निमित्तक प्रत्ययव्ययादि कार्यं । ( ति० ) २ बाहरवाला, बाहरी । ३ जो गुट या मडलीके भीतर न हो ।  
 बहिरंगल ( स० पु० ) बहिर्भागका अंगल ।  
 बहिरर्थ ( स० त्रि० ) बहिर्विषयमें अर्थयुक्त ।  
 बहिराना ( हि० क्रि० ) निकाल देना, बाहर कर देना ।  
 बहिरगत ( स० त्रि० ) १ जो बाहर गया हो । २ जो बाहर हुआ हो । ३ जो अन्तर्गत न हो, अलग, जुदा ।  
 बहिरंगिरि ( स० पु० ) जनपदभेद ।  
 बहिरांजु ( स० अर्थ० ) हाथोंकी दोनों छुटनोंके बाहर किये हुए । श्राद्ध आदि कृत्योंमें इस प्रकार धैठनेका प्रयोजन पड़ता है ।  
 बहिरांर ( स० स्त्री० ) बहि स्थ द्वारम् । तोरण, बाहरका दरवाजा ।  
 बहिरांरप्रकोष्ठक ( स० पु० ) बहिरांरस्य प्रकोष्ठक । घृहद्वारका बहि प्रकोष्ठ । पर्याय—प्रघाण, प्रघण, अलिन्द ।  
 बहिर्यंजा ( स० स्त्री० ) दुर्गा ।  
 बहिरिगमन ( स० स्त्री० ) बाहर निगमन, बाहर जाना ।  
 बहिरभूत ( स० त्रि० ) बहिस् भू-क । १ बहिरगत, जो बाहर गया हो । २ अलग, जुदा । ३ जो बाहर हो ।  
 बहिरभूमि ( स० स्त्री० ) १ बस्तीके बाहरवाली भूमि । २ भाड़े जगल जानेकी भूमि ।  
 बहिरमुख ( सं० त्रि० ) बहिरांश्विषये मुख प्रवणता यस्य । विमुख, पराङ्मुख, विरुद्ध ।  
 बहिरुद्रा ( स० स्त्री० ) यह मुद्रा जो बाहरमें की जाय ।

बहिर्यांता ( स० स्त्री० ) बहिर्भागमें याना ।  
 बहिर्यान ( स० स्त्री० ) बहिर्यामन ।  
 बहिर्रति ( स० स्त्री० ) रतिके भेदोंमेंसे एक, बाहरी रति वा समागम जिम्मे अन्तर्गत आलिङ्गन, चुम्बन, स्पर्श, मर्दन, नखलान, रूदान, और अप्ररपान है ।  
 बहिर्यम्य ( स० त्रि० ) बाहरकी ओर लघायमान ।  
 बहिर्यापिका ( स० स्त्री० ) काव्य रचनामें एक प्रकारकी पहली । इसमें उसके उत्तरका शब्द पहलीके शब्दोंके बाहर रहता है भीतर नहीं ।  
 बहिर्यामस् ( स० स्त्री० ) बहिर्याम । बाहरका धर । उर दो प्रकारका होता है, अन्तर्यास और बहिर्यास । अन्तर्यासको फोपीन और फोपीनके ऊपर जो गज पहना जाता है उसे बहिर्यास कहते हैं । ( भा० १०६६ )  
 बहिर्यिकार ( स० पु० ) बाहरनिकार ।  
 बहिर्युत्ति ( स० स्त्री० ) बाहरयुत्ति ।  
 बहिर्येदि ( स० अर्थ० ) घेदीके बाहरमें ।  
 बहिर्या ( हि० वि० ) बन्ध्या, बाम् ।  
 बहिर्यचर ( स० पु० ) बहिर्यचरनोति चर ट । १ बहिर्विचरण । ( त्रि० ) २ बहिर्यचरणशील ।  
 बहिर्य ( स० त्रि० ) बहि स्थित, जो बाहरमें हो ।  
 बहिर्यकरण ( स० स्त्री० ) १ बहिर्यिक्रिय । २ बाहर करना ।  
 बहिर्यकार ( स० पु० ) १ निकालना, बाहर करना । २ दूर करना, हटाना ।  
 बहिर्यकार्य ( स० त्रि० ) निकालने योग्य, बाहर करने लायक ।  
 बहिर्यकुटीचर ( स० पु० ) बहिर्यकुट्या चरतीति चर-ट । कुलीर, कँकडा ।  
 बहिर्युत ( स० त्रि० ) १ बाहर किया हुआ, निकाला हुआ । २ त्यागा हुआ, अलग किया हुआ ।  
 बहिर्युति ( स० स्त्री० ) बाहर करनेकी क्रिया, निकालना ।  
 बहिर्यिक्रिय ( स० त्रि० ) बाहर कियाशाली, निकालने लायक ।  
 बहिर्यिक्रिया ( स० स्त्री० ) १ बाहर किया । २ बाहर करना, निकालना ।  
 बहिर्यजोतिष ( स० वि० ) बहिर्यजोतिषभेद ।



बहिष्पष्ट ( स० पु० ) बहिरावरण ।  
 बहिष्पथित ( स० लि० ) पथितनाहीन ।  
 बहिष्पण्ड ( स० लि० ) बहिर्भागमें पिण्डयुक्त ।  
 बहिष्प्रज्ञ ( स० लि० ) निम्नकी प्रज्ञा वाला व्यापारमें नियुक्त हो ।  
 बहिष्प्राण ( स० लि० ) १ जन्मके प्राण बहिर्गत हो गये हैं । २ विस्र ।  
 बहिस्र ( स० अण्य० ) बहि देवो ।  
 बहिस्रथ ( स० लि० ) बहि स्थित ।  
 बहिःसद् ( स० लि० ) बहिः सीदति सद् किप् । बाहरमें उपदेशाकारो, बाहरमें बैठनेवाला ।  
 बहो ( हि० स्त्री० ) हिस्सा बिनाब लिपमेकी पुस्तक ।  
 बहोष्वाता ( हि० स्त्री० ) हिम्माब बिनाबकी पुस्तक ।  
 बहीनर ( स० पु० ) शतानीफके पीत्र ।  
 ( भाव० ६।२२। ४० )  
 बहीर ( हि० स्त्री० ) १ भीड, जनसमूह । २ सेनाके साथ साथ चलनेवाली भीड जिसमें सारिस, सेवक, दूकानदार आदि रहते हैं, फौजफा लयाज ।  
 बहीरज्जु ( स० अण्य० ) रज्जा बहिः । रज्जुके बहिर्भागमें, रस्तीके बाहरमें ।  
 बहीरा ( हि० पु० ) बडेका देगो ।  
 बहु ( स० लि० ) बहते इति बहि घृटी ( संपब क्षीनलोपम । ३७ । ३० ) इति घुर्नलोपश्च । १ बहुत, परस्मै अधिब । २ अधिब, ज्यादा ।  
 बहु ( लि० स्त्री० ) बहु देगो ।  
 बहुव ( स० पु० ) बहु-स क्षया कन् । १ कश्च, फे कडा । २ अर्क, आक । ३ जलगातक, छोटा तालाब । ४ घातक, पपीहा । ५ हरिणयिरोय । ( लि० ) ६ बहु क्षात्र भीत, जो अधिब मोलमें बारीदा गया हो ।  
 बहुवष्टक ( सं० पु० ) १ क्षुद्र गोक्षु र, मोलक । २ यजाम, गमासा । ३ हिमाल वृक्ष । ४ शिशु प्रो क्षु प, सदि-जनता पेठ । ५ कुण्डलनाड वृक्ष । ६ स्तुलो वृक्ष । ७ घाटला वृक्ष । ८ गन्धर्गे वृक्ष ।  
 बहुवष्टका ( स० स्त्री० ) अग्निदमगोवृक्ष ।  
 बहुवष्टरा ( स० स्त्री० ) बहवः कटा कर्त्तव्यति पत्न्या । कर्त्तव्यारी, भट्टकटैया ।

बहुकन्द ( स० पु० ) बहव, कन्दा यस्य । जूष्ण, ओल ।  
 बहुकन्या ( स० स्त्री० ) १ शूद्रकन्या, घृतकुमारी । ० अनेक कन्या ।  
 बहुकर ( स० पु० ) बहु कार्य करोतीति ( विवाहिमाभिज्ञा प्रमेते पा ३।२० ) इति ट । १ उद्ग, ऊँट । ( लि० ) २ मार्जनकारी, भाष्टू देनेवाला । ३ बहुकार्यकर्त्ता, बहुत काम करनेवाला ।  
 बहुकरी ( स० स्त्री० ) बहुकर-टीप् । सम्मार्जनी, भाष्ट ।  
 बहुकर्णिका ( स० स्त्री० ) यदवः कर्णा इय पतानि यस्या । आगुकर्णो, मृमाफानी ।  
 बहुकाम ( स० लि० ) अनेक कामनायुक्त ।  
 बहुकार ( स० लि० ) बहुकार्यकारक, बहुत काम करने वाला ।  
 बहुकूर्चं ( स० पु० ) मधुनारिकेड वृक्ष ।  
 बहुकृत्य ( स० लि० ) बहु कर्त्तव्य, जिसे बहुतने काम करनेको हो ।  
 बहुकेतु ( स० पु० ) पर्यंतभेद ।  
 बहुक्रम ( स० पु० ) वैदिक शब्दका क्रमभेद ।  
 बहुक्रम ( स० लि० ) १ अधिब सदिष्ण । ( पु० ) २ जैन साधुभेद । ३ बुद्धभेद ।  
 बहुगन्ध ( स० स्त्री० ) बहुगन्धो यस्मिन् । १ शुद्धव्य, क्षान्चीनी । ० कुन्डल, धु दुव । ३ पोतचन्द ।  
 बहुगन्धदा ( स० स्त्री० ) बहुगन्ध ददाति या बहुगन्ध दा-फ । कम्बूरी ।  
 बहुगन्धा ( स० स्त्री० ) १ चण्डकलि, चण्डा फूलकी कलि । २ यथिका, जूही । ३ शृण्ण शीर्षक, म्याद जीरा ।  
 बहुगर्हायाज ( स० लि० ) बहुगर्हा बहुनिन्दिता धाम यस्य । कुस्मिन् बहुवादी, अन्जली शब्द बोलनेवाला ।  
 बहुगण ( स० पु० ) पुत्र्य शीघ्र रात्रा सुदुयुके गव पुत्रका नाम ।  
 बहुगुडा ( स० स्त्री० ) १ कष्टकारी, भट्टकटैया । ० भूम्यामलकी, भूतायज ।  
 बहुगुण ( स० लि० ) १ बहुभूयुता । २ बहुमदुगुण ज्ञाना । ( पु० ) ३ अनेक गुण । ४ द्वेषगन्धर्षभेद ।  
 बहुगुना ( हि० पु० ) बौद्ध मुँहका एक गदरा कर्मज । रमके पैदे बीर मुँहका घेरा बराबर होता है । हममें

यात्रा आदिमें कई काम ले सकते हैं। श्रायद् इसीसे इसको बहुगुना कहते हैं।

बहुल (स० लि०) बहु जानाति प्रा क । १ बहुदर्शी, बहुत बातें जाननेवाला । २ बहुविद्, जानकार । बहुप्रिय (स० पु०) बहुवो प्रिययो यस्य । भावुक, भाऊका पेट ।

बहुचारिन् (स० लि०) बहु रथानमें भ्रमणकारी । बहुचित्र स० लि० विभिन्न प्रकार, अनेक तरहका । बहुच्छद् (स० पु०) सप्तपर्ण वृक्ष । बहुच्छिन्ना (स० स्त्री०) बहु यथा स्यात्तथा छिद्यते स्मेति बहु छिद्य क् । कन्वुगुञ्जी ।

बहुजल्प (स० लि०) बहुभाषी, बहुत बोलनेवाला । बहुज्ञात (स० लि०) प्रुतगामी, तेजीसे चलनेवाला । बहुटनी (हि० स्त्री०) एक प्रकारका गहना जो बाँह पर पहना जाता है ।

बहुत (हि० वि०) १ अनेक, गिनतीमें ज्यादा । २ भावप्रयुक्तता भर वा छससे अधिक । ३ जो मालामें अधिक हो, परिमाणमें ज्यादा ।

बहुतन्त्रि (स० लि०) बहुतन्त्रविशिष्ट । बहुतन्त्री (स० लि०) बहुवस्तन्त्रो यस्मिन् । बहुतन्त्र विशिष्ट ।

बहुतन्त्रीक (स० लि०) बहुतन्त्री स्वार्थे कन् । बहुतन्त्र विशिष्ट । जैसे—बहुतन्त्रिका पीणा, बहुतन्त्रीकपट, बहुतन्त्रीकचस्त, इत्यादि ।

बहुतर (सं० लि०) अनेक, प्रभूत । बहुतरकणिश (स० पु०) बहुतराणि कणिशानि धान्यशी पीणि यस्य । तृणधान्यविशेष, चेना नामका अन्न ।

बहुतत्रया (स० स्त्री०) लतामेद । बहुतां (हि० वि०) १ बहुत । (स्त्री०) २ वनियोंकी बोली में तीसरी तीलका नाम । तीलकी संख्या अनुसु समष्टी जाती है । इससे तीलकी गिनतीमें जब वनिये तीन पर आते हैं, तब यह शब्द करते हैं ।

बहुता (स० स्त्री०) अधिकता, बहुत्व । बहुतायत (हि० स्त्री०) बहुतायत देखो । बहुताई (हि० स्त्री०) अधिकता, ज्यादाती । बहुतात (हि० स्त्री०) बहुतायत देखो ।

बहुतायत (हि० स्त्री०) अधिकता, ज्यादाती । बहुतिका (स० स्त्री०) बहुस्तिकी रसो यस्या । काक माची ।

बहुतिथ (सं० लि०) बहु ( बहुपूगणसंख्यस्य तिथुक् । पा ५।२।५२ ) बहुतका पूरण ।

बहुतृण (स० स्त्री०) तृण 'तृणाद्बहु' इति बहुप्रत्यय । मुञ्जातृण, मूज नामकी घास ।

बहुतेरा (हि० वि०) १ अधिक, बहुत सा । ( कि० वि०) २ बहुत परिमाणमें, बहुत प्रकारसे ।

बहुतेरे (हि० वि०) संख्यामें अधिक, बहुतसे । बहुत्र (स० अव्य०) बहु (सप्तम्याश्चत् । पा ५।३।१० ) इति लल् । बहुतोंमें, अनेक विषयोंमें ।

बहुत्व (स० पु०) आधिपत्य, अधिकता । बहुत्वक् (स० पु०) सप्तपर्णवृक्ष ।

बहुत्वक् (स० पु०) बहुत्वगेव बहुत्वच् स्वार्थे कन् । भूर्जवृक्ष, भोजपत्र ।

बहुत्वच् (स० पु०) बहुत्वच्चो यस्य । भूर्जवृक्ष, भोजपत्र ।

बहुधा (स० अव्य०) बहु प्रकारसे, जाना प्रकारसे । बहुदण्डिक (स० लि०) बहुवो दण्डा सन्त्यस्य बहुदण्ड ठन् । बहुदण्डविशिष्ट ।

बहुदर्शिता (स० स्त्री०) बहुदृशता, बहुतसी यातोंकी सामर्थ्य ।

बहुदर्शी (स० पु०) जिम्मेने बहुत कुछ देना हो, जानकार ।

बहुदल (स० पु०) १ तृणधान्यविशेष, चेना नामका अन्न । २ चिञ्चोटक क्षप, चे च साग ।

बहुदला (सं० स्त्री०) चञ्चु, चे च नामका साग । बहुदान (स० पु० स्त्री०) १ प्रदान दे ।

बहुदामन (स० स्त्री०) स्कन्दानुचर मातृमेद । बहुदायिन् (स० लि०) प्रभूतदानशील ।

बहुदुग्ध (स० पु०) बहूनि दुग्धानि अपक्वप्रस्थाया यस्य । १ गोघृत, गेहू । खिया टापू । २ बहुक्षीरा गाभि, बहुत दूध देनेवाली गाय । ३ स्तुदी वृक्ष, पृहर का पेट ।

बहुदुग्धिका (स० स्त्री०) बहुदुग्धा स्वार्थे कन् टापू अत इत्य । स्तुदी वृक्ष, पृहरका पेट ।

बहुदेवन (स० त्रि०) बहुदेव निमित्तक पाठ्य ।  
 बहुदेवत्य (स० त्रि०) बहुदेव मन्वन्धीय ।  
 बहुदेवत (स० त्रि०) बहुदेवता मन्वन्धीय ।  
 बहुदेवत्य (स० त्रि०) बहुदेवता मन्वन्धीय ।  
 बहुधन (स० त्रि०) बहुधनशाली, धनी ।  
 बहुधनेभ्यः (स० पु०) धनीभ्यः । ० बुधेः ।  
 बहुधर (स० पु०) निय, महादेव ।  
 बहुधा (स० अत्र्य०) बहु (विभाषाबोधार्थं विभक्त्येव) । पा०  
 ५।४।२०) बहुप्रकारमे अनेक दृशसे । ० प्रायः, अकसर,  
 अधिकतर अन्वयों पर ।  
 बहुधात्मक (स० स्त्री०) बहुधा आत्मा यस्य । स्वयम्भु ।  
 बहुधान्य (स० लि०) १ बहुधान्ययुक्त । २ जिसके  
 प्रसूत धान्य हो । ( स्त्री०) ३ राजि राजि धान्य । ४ माठ  
 संवत्सरोर्मिं वारहधा संवत्सर ।  
 बहुधार (स० स्त्री०) वही धारा यस्य । वसुधैवकु-  
 र्वि, एक प्रकारका हीरा ।  
 बहुधूप (स० पु०) मन्त्रं पृथक् ।  
 बहुधेनुक (स० स्त्री०) बहुसम्यक बोधनयोग्य गामी ।  
 बहुधेप (स० पु०) बहु नाम युक्त । २ सम्प्रदायभेद ।  
 बहुधनज (स० पु०) शूकर, सुभर ।  
 बहुनादिक (स० लि०) बहुनादिकम् । काय, शरीर ।  
 बहुनादिक (स० लि०) वही नादयो यस्मिन्, बहुनाडी  
 कम् । १ दिवस । २ स्तम्भ ।  
 बहुनाद (स० पु०) बहुमहान्नाद शब्दो यस्य । गङ्गा ।  
 बहुपट्ट (स० लि०) बहुपुत्रियेषु पट्टः । १ बहुकार्यं  
 पृथक्, जो बहुत काम जानता हो ।  
 बहुपत्र (स० पु०) बहुनि पत्राणि दत्तान्यस्य । १ अन्नपत्र,  
 अक्षरक । २ पत्राण्यु, पत्रज । ३ धर्मपत्र, हरिताल ।  
 ४ मुचुकुन्दपृथक् । ५ पलाशपृथक् । (त्रि०) ६ अनेक  
 पत्रयुक्त, जिसमें बहुत सौ पत्रियां हैं ।  
 बहुपता (स० स्त्री०) बहु पत्राण्यु । १ तदानीं पुत्र्य  
 पूजा । २ तापलिङ्गिनी मता । ३ जन्तुका, पदादी  
 नामकी कता । ४ गोरक्षदुर्गा, दुर्गिका धाम । ५ भूम्या-  
 मलकी, भूमांयला । ६ वृत्तुमारि, धीरुवार  
 पृथ्वी ।  
 बहुपरिका (स० स्त्री०) बहुपरा रीत्यायां म्हा

टापि अन इत् । १ भूगामलकी, भूमांयला । २ महा  
 जतायरी । ३ मेधिका, मेधी । ४ वध ।  
 बहुपत्नी (स० स्त्री०) बहुपत्न गीरादित्याम् डोप् ।  
 लिङ्गिनी । २ गृह्यन्त्या, धीरुवार । ३ तुलसीका पीया ।  
 ४ जतुका । ५ पृथ्वी । ६ गोरक्ष दुग्ध, दुर्गिका  
 धाम ।  
 बहुपत्नीक (स० लि०) वही पत्नीयस्य 'अन्नपत्रं मर्षितारो-  
 कम्' इति कम् । बहुपत्नीयुक्त, जिसमे अनेक स्त्रिया  
 हैं ।  
 बहुपट (स० लि०) १ बहुपादयुक्त, जिसके अनेक पैर हैं ।  
 (पु०) २ वटपृथक्, वरगाथा पेठ ।  
 बहुपन्नग (स० पु०) मन्त्रं दे ।  
 बहुपर्ण (स० पु०) बहुनि पर्णानि पत्राणि यस्य । १  
 मतच्छत्रपृथक् । (त्रि०) २ अनेक पत्रयुक्त ।  
 बहुपर्णिका (स० स्त्री०) बहुपर्ण संज्ञायाम् वत्, टापि अन  
 इत् । आरुपणी ।  
 बहुपर्णी (स० स्त्री०) बहुपत्न गीरादित्याम् डोप् ।  
 मेधिका, मेधी ।  
 बहुपशु (स० लि०) बहुपशुयुक्त, जिसमे अनेक मर्षणी  
 हैं ।  
 बहुपाप्य (स० लि०) जिसके घरमें वृत्तियों लिये अनेक  
 नाथ बन्तु बनती हैं ।  
 बहुपाठ (स० पु०) पठपृथक्, वरगाथा पेठ ।  
 बहुपाद (स० पु०) बहुपद दीपो ।  
 बहुपाप्य (स० लि०) बहुपुत्रक गन्तव्य या बहुपुत्रक  
 रक्षितव्य ।  
 बहुपुत्र (स० पु०) बहुपुत्रः पुत्राः मन्त्रयो यस्य । १ सात  
 पर्ण । २ पात्रं प्रजापतिना नाम । (त्रि०) ३ अनेक  
 पुत्रनिमित्त, जिसके बहुतने पुत्र हैं ।  
 बहुपुत्रिका (स० स्त्री०) रुद्रकी अनुचरी, एक मातृका ।  
 बहुपुरी (स० स्त्री०) १ जतायरी । २ भूम्यामलकी ।  
 ३ पृथ्वी ।  
 बहुपुत्र (स० पु०) बहुनि पुत्राणि यस्य । १ पारिमद्र  
 दस, वरहदवा पेठ । २ निम्बदस, नामका पेठ ।  
 (स० स्त्री०) बहुपुत्र सहाया कन्, मन  
 ध्याया पेठ ।

बहुप्रकार ( स० लि० ) नानाविध प्रकार, तरह तरहका ।  
 बहुप्रकृति ( स० लि० ) बहुप्रकृतियुक्त ।  
 बहुप्रज ( स० लि० ) वह प्रजा यस्य । १ बहुसन्तति-  
 विशिष्ट, जिनके बहुत सतान हों । ( पु० ) २ मुञ्जतृण,  
 मूत्रका पीधा । ३ शूकर, सूअर ।  
 बहुप्रतिष्ठा ( स० लि० ) चह्ना प्रतिष्ठा यस्मिन् । १ अनेक-  
 पदसङ्कीर्ण पूर्वपक्षविशिष्टव्यवहार, अनेक विषयक प्रतिष्ठा  
 युक्त व्यवहार । २ अनेक प्रतिष्ठायुक्त ।  
 बहुप्रद ( स० लि० ) प्रददातीति प्र दा क, वहना प्रद । १  
 प्रचुरदाता, बहुत देनेवाला । ( पु० ) २ शिव, महादेव ।  
 बहुप्रसू ( स० स्त्री० ) वहन् प्रसूते इति बहु प्र सिप् । बहु  
 सन्तान प्रसूकारिणी, बहुत बच्चा जननेवाली ।  
 बहुप्रिय ( स० पु० ) यवतृण ।  
 बहुप्रयत्नी ( स० लि० ) बहुप्रयत्नीयुक्त ।  
 बहुफल ( स० पु० ) वहति फलानि यस्य । १ कदम्ब  
 वृक्ष । २ चिकङ्कत, कटाई, वनभटा । ३ तेज फलवृक्ष ।  
 ४ चशधान्य । ५ घटवृक्ष । ६ कफोल । ७ वृक्षवृक्ष ।  
 बहुफला ( स० स्त्री० ) बहुफल टाप् । १ क्षविका, एक  
 प्रकारका वनभटा । २ मापपर्णी, ज गली उडद । ३  
 काशमाची । ४ लपुसी, खीरा । ५ शशाण्डुली । ६  
 क्ष प्रकाखेली, छोटा करेला । ७ भूम्यामलकी, भूआवला ।  
 बहुफ्रिका ( स० स्त्री० ) बहुफला स शया फन्, अत  
 इत्वम् । भूवद्री, एक प्रकारका छोटा पेड़ ।  
 बहुफली ( स० स्त्री० ) एक प्रकारकी ज गली गाजर ।  
 इसका पीधा अन्नवाइनका सा पर उससे छोटा होता है ।  
 पत्ते सीफकी तरह होते हैं और धनियेके फूलोंकेसे पीले  
 रंगके गुच्छे लगते हैं । उ गलीकी तरह या पतली गाजर-  
 सी लबी जड होती है । बीज भूरे हलके और हृदयगार  
 के बीजोंके जैसे होते हैं ।  
 बहुफेना ( स० स्त्री० ) बहु फेनोयस्या । १ सातला,  
 पीले दूधवाला धूर । २ शगहुली ।  
 बहुवल ( स० पु० ) बहु अतिशय बलं यस्य । १ सिद्ध ।  
 ( लि० ) २ अतिशय बलयुक्त ।  
 बहुबलक ( स० पु० ) पियासाल ।  
 बहुबाहु ( स० पु० ) रावण ।  
 बहुबीज ( स० पु० ) १ बीजपूरवृक्ष, बिजौरा नौरू । २  
 बीजवाला फेला । ३ शरीफा ।

बहुवेगम—लखनऊके नवाब आसफ उद्दौलाकी माता ।  
 इन्होंने १७६८से १८१५ ई० तक फैजाबाद नगरका निष्कार  
 भोग किया था । उनकी मृत्युके बाद उक्त नगर तहस  
 नहस हो गया । उनका समाधि मन्दिर आज भी विद्य  
 मात है जो अयोध्याप्रदेश भरमें एक श्रेष्ठ भवन समझा  
 जाता है ।

बहुभद्र ( स० पु० ) जातिविशेष ।  
 बहुभाषिन् ( स० लि० ) बहुभाषने भाष णिनि । बहुत  
 बोलनेवाला, बक्वादी ।  
 बहुभाष्य ( स० स्त्री० ) वह भाषण ।  
 बहुभुज ( स० लि० ) बहु भुज ङिप् । १ बहुभोजनकारी,  
 बहुत खानेवाला ।  
 बहुभुजसेव ( स० पु० ) रेखागणितमें वह क्षेत्र जो चारसे  
 अधिक रेखाओंसे घिरा हो ।  
 बहुभुजा ( स० स्त्री० ) वहव भुजा यस्य । दश भुजा,  
 चुर्गा ।  
 बहुभोजन ( स० लि० ) बहु भोजन यस्य । १ अतिभोजन  
 युक्त । ( स्त्री० ) २ अतिशय भोजन ।  
 बहुभञ्जरी ( स० स्त्री० ) वह्नो मञ्जया यस्याः ।  
 तुलसी ।  
 बहुमत ( स० पु० ) १ अग्र अलग बहुतसे मत, बहुतसे  
 लोगोंकी अलग अलग राय । २ अधिकतर लोगोंका एक  
 मत, बहुतसे लोगोंकी मिल कर एक राय ।  
 बहुमत्स्य ( स० स्त्री० ) बहुमत्स्यशाली जलाशय, यह  
 पोखरा जिसमें बहुतसी मछलियां हों ।  
 बहुमन्तव्य ( स० लि० ) बहु मन तव्य । बहु प्रकारसे  
 मननीय ।  
 बहुमल ( स० पु० ) वहति मलानि यस्य । १ सीसक,  
 सीसा नामकी धातु । ( लि० ) २ अनेक मलयुक्त ।  
 बहुमान ( स० लि० ) बहु मान यस्य । १ बहुमानयुक्त,  
 माननीय । ( स्त्री० ) २ अधिक मान ।  
 बहुमानिन् ( स० लि० ) बहु मन णिनि । अतिशय सम्मा  
 नाह, अधिक आदरणीय ।  
 बहुमान्य ( स० लि० ) बहुमिमान्य । १ अनेक लोक  
 कर्तृक माननीय, जिसका बहुतसे लोक आदर करते हैं ।  
 २ अतिशय माननीय ।

बहुदेवत (म० वि०) बहुदेव निमित्तक पाठ्य ।  
 बहुदेवत्व म० वि०) बहुदेव सम्बन्धीय ।  
 बहुदेवत (म० वि०) बहुदेवता सम्बन्धीय ।  
 बहुदेवत्व (सं० वि०) बहुदेवता सम्बन्धीय ।  
 बहुधन (म० वि०) बहुधनशाली, धनी ।  
 बहुधनेश्वर (सं० पु०) धनी व्यक्ति । ० कुनेर ।  
 बहुधर (स० पु०) गिर, महादेव ।  
 बहुधा (म० अव्य०) बहु (विभाषाबहोर्षा विभङ्गवादे) । या  
 ५।४।२०) १ बहुप्रकारसे अनेक ढंगसे । ० प्रायः, अक्सर,  
 अधिकतर अवसरों पर ।  
 बहुधात्मक (स० स्त्री०) बहुधा आन्ता यस्य । स्वयम्भु ।  
 बहुधान्य (स० वि०) १ बहुधान्ययुक्त । ० जिसके  
 प्रचुर धान्य हो । (क्लो०) ३ राशि राशि धान्य । ४ माठ  
 सबत्नरोंमेंसे बाराहवा मन्वन्तर ।  
 बहुधार (स० स्त्री०) यहाँ धारा यस्य । दशहीरक,  
 एक प्रकारका हीरा ।  
 बहुधूर (स० पु०) नर्जवृक्ष ।  
 बहुधेनुक (स० स्त्री०) बहुसख्यक बोहनयोग्य गामी ।  
 बहुधेप (स० पु०) १ बहु नाम युक्त । ० सम्प्रदायभेद ।  
 बहुध्वज (सं० पु०) शूकर, सूअर ।  
 बहुनाडिक (म० वि०) बहुनाडिक-कन । काय, शरीर ।  
 बहुनाडीक (स० वि०) बहो नाड्यो यस्मिन्, बहुनाडी  
 कम् । १ दिवस । २ स्तम्भ ।  
 बहुनाद (स० पु०) बहुमहानाद शब्दो यस्य । शङ्ख ।  
 बहुपट्ट (सं० वि०) बहुपु विनयेषु पट्टः । १ बहुकार्यमें  
 दस, जो बहुत काम जानता हो ।  
 बहुपत्र (स० पु०) वह्नि पत्राणि टलान्दस्य । १ अन्नक,  
 अन्नरु । २ पलाण्डु, व्याज । ३ व शपत्र, हस्ताल ।  
 ४ सुयुक्तवृक्ष । ५ पलायनवृक्ष । (ति०) ६ अनेक  
 पत्रयुक्त, जिसमें बहुत-सी पत्रिया हों ।  
 बहुपत्नी (सं० स्त्री०) बहु-पत्नीया । १ तच्छनी पुत्र  
 वृक्ष । २ गिरलिङ्गिनी लता । ३ अन्तुका, पदाङ्गी  
 नामकी लता । ४ गौरक्षदुग्धी, दुग्धिया घास । ५ भूम्या  
 मलकी, भूमावला । ६ धूनकुमारि, घांठुवार । ७  
 वृहती ।  
 बहुपतिष्ठा (स० स्त्री०) बहुपत्नी सञ्ज्ञाया म्नायें वा क्व,

टापि-अत इत्य' । १ भूम्यामलकी, भूमावला । २ महा  
 शनाशरी । ३ मेथिका, मेयो । ४ चव ।  
 बहुपत्नी (सं० स्त्री०) बहुपत्नी गौरादित्यात् ङोप् । १  
 लिदिनी । २ गृहकन्या घोरुवार । ३ तुलसीका पीषा ।  
 ४ जतुका । ५ वृहती । ६ गौरम दुग्ध, दुग्धिया  
 घास ।  
 बहुपत्नीक (स० वि०) बहो पत्नीयस्य 'अप्रदी सर्पिरादे  
 क्' इति क्प् । बहुपत्नीयुक्त, जिससे अनेक स्त्रिया  
 हों ।  
 बहुपट्ट (म० वि०) १ बहुपात्रयुक्त, जिसके अनेक पैर हों ।  
 (पु०) २ यदृश्य, बरादका पैड ।  
 बहुपत्नी (स० पु०) मच्छेद ।  
 बहुपत्नी (स० पु०) वह्नि पत्राणि पत्राणि यस्य । १  
 मत्तच्छेदवृक्ष । (ति०) २ अनेक पत्रयुक्त ।  
 बहुपत्नीका (स० स्त्री०) बहुपत्नी सञ्ज्ञाया क्व, टापि अत  
 इत्य । आनुपणी ।  
 बहुपत्नी (सं० स्त्री०) बहुपत्नी गौरादित्यात् ङोप् ।  
 मेथिका, मेयो ।  
 बहुपत्नी (स० वि०) बहुपत्नीयुक्त, जिसके अनेक मज्जों  
 हों ।  
 बहुपाप्य (स० वि०) जिसके धर्ममें दृष्टियोंके लिये अनेक  
 ध्याय वस्तु बनती हों ।  
 बहुपाट्ट (स० पु०) यदृश्य, बरादका पैड ।  
 बहुपाद (सं० पु०) बहु-पदेव ।  
 बहुपाप्य (स० वि०) बहुवर्तुक्त गन्तव्य या बहुवर्तुक्त  
 रसिन्धय ।  
 बहुपुत्र (स० पु०) बहु-पुत्रा सन्तपो यस्य । १ सप्त-  
 पत्नी । ० पाचने प्रजापतिका नाम । (ति०) ३ अनेक  
 पुत्रविनिष्ठ, जिसके बहुतसे पुत्र हों ।  
 बहुपुत्रिका (सं० स्त्री०) मन्त्रकी अनुचरी, एक मातृका ।  
 बहुपुत्री (सं० स्त्री०) १ जवाशरी । २ भूम्यामलकी ।  
 ३ वृहती ।  
 बहुपुत्र (स० पु०) वह्नि पुत्राणि यस्य । १ पारिण्ड-  
 वृक्ष, फलदहन पैड । २ निम्बवृक्ष, नीमका पैड ।  
 बहुपुत्रिका (सं० स्त्री०) बहुपुत्र सञ्ज्ञाया क्व, अत  
 इत्य । घातकीवृक्ष, धायका पैड ।

बहुप्रकार ( स० लि० ) नानाविध प्रकार, तरह तरहका ।  
 बहुप्रवृत्ति ( स० लि० ) बहुप्रवृत्तियुक्त ।  
 बहुप्रज ( स० लि० ) बहू प्रजा यस्य । १ बहुसन्तति-  
 विशिष्ट, जिसके बहुत संतान हों । ( पु० ) २ मुञ्जवृण,  
 मू जका पीधा । ३ शूकर, सूअर ।  
 बहुप्रतिष्ठ ( स० लि० ) यद्वा प्रतिष्ठा यस्मिन् । १ अनेक-  
 पदसङ्कीर्णं पूर्वपक्षविशिष्टव्यवहार, अनेक निपयक प्रतिष्ठा  
 युक्त व्यवहार । २ अनेक प्रतिष्ठायुक्त ।  
 बहुप्रद ( स० लि० ) प्रददातीति प्र-दा-क, बहूना प्रद । १  
 प्रचुरदाता, बहुत देनेवाला । ( पु० ) २ ज्ञिष, महादेव ।  
 बहुप्रसू ( स० स्त्री० ) बहून् प्रसूते इति बहु प्र सिप् । बहु  
 सन्तान प्रसवकारिणी, बहुत बच्चा जननेवाली ।  
 बहुप्रिय ( स० पु० ) यववृण ।  
 बहुप्रियसी ( स० लि० ) यद्वा प्रियसीयुक्त ।  
 बहुफल ( स० पु० ) बहूनि फलानि यस्य । १ कदम्ब  
 पुष्प । २ चिकन्तूल, फटाह, वनभटा । ३ तेज फलवृक्ष ।  
 ४ चशधान्य । ५ घटवृक्ष । ६ ककूल । ७ मृक्षवृक्ष ।  
 बहुफला ( स० स्त्री० ) बहुफल टाप् । १ क्षविष्वा, एक  
 प्रकारका वनभटा । २ मापपर्णी, जगली उडद । ३  
 फाशमाची । ४ त्रपुसी, खीरा । ५ शशाण्डुली । ६  
 क्ष प्रकाश्येही, छोटा करेला । ७ भूम्यामलकी, भूआवला ।  
 बहुफलिका ( स० स्त्री० ) बहुफला स हाया कन्, अन  
 इत्यम् । भूवद्री, एक प्रकारका छोटा पेर ।  
 बहुफली ( स० स्त्री० ) एक प्रकारकी जगली मानर ।  
 इसका पीधा अजवाइनका सा पर उससे छोटा होता है ।  
 पत्ते सौंफकी तरह होते हैं और घनियेके फूलोंकेसे पीले  
 रंगके गुच्छे लगते हैं । उ गलीकी तरह या पतली गाजर-  
 सी लयी जड होती है । बीज भूरे हल्के और हरसिगार-  
 के बीजोंके जैसे होते हैं ।  
 बहुफेना ( स० स्त्री० ) बहु फेनोयस्या । १ सातला,  
 पौले दूधवाला धूर । २ शंखहूली ।  
 बहुफल ( स० पु० ) बहु अतिशय बल यस्य । १ सिंह ।  
 ( लि० ) २ अतिशय बलयुक्त ।  
 बहुबलक ( स० पु० ) पियासाल ।  
 बहुबाहु ( स० पु० ) रावण ।  
 बहुबीज ( स० पु० ) १ बीजपूर्ववृक्ष, विजौरा नीरू । २  
 बीजवाला केला । ३ शरीफा ।

बहुवेगम—लखनऊके नयाव आसक उद्दीलाकी माता ।  
 इन्होंने १७६८से १८१५ ई० तक फैजाबाद नगरका निष्कर  
 भोग किया था । उनकी मृत्युके बाद उक्त नगर तहस  
 नहस हो गया । उनका समाधि-मन्दिर आज भी विद्य  
 माा है जो अयोध्याप्रदेश भरमें एक श्रेष्ठ भवन समझा  
 जाता है ।  
 बहुभद्र ( स० पु० ) जातिविशेष ।  
 बहुभाषिन् ( स० लि० ) बहुभाषने भाष णिनि । बहुत  
 बोलनेवाला, बकवादी ।  
 बहुभाष्य ( स० स्त्री० ) वह भाषण ।  
 बहुभुज ( स० लि० ) बहु भुज षिप् । १ बहुभोजनकारी,  
 बहुत पानेवाला ।  
 बहुभुजश्चैव ( स० पु० ) रेखागणितमें चद क्षेत्र जो चारसे  
 अधिक रेखाओंसे घिरा हो ।  
 बहुभुजा ( स० स्त्री० ) बहुव भुजा यस्य । दश भुजा,  
 दुर्गा ।  
 बहुभोजन ( स० लि० ) बहु भोजन यस्य । १ अतिभोजन  
 युक्त । ( स्त्री० ) २ अतिशय भोजन ।  
 बहुभोजरी ( स० स्त्री० ) बहूतो मज्जयं यस्या ।  
 तुलसी ।  
 बहुमत ( स० पु० ) १ अग्न अलग बहुतसे मत, बहुतसे  
 लोगोंकी अलग अलग राय । २ अधिकतर लोगोंका एक  
 मत, बहुतसे लोगोंकी मिल कर एक राय ।  
 बहुमतस्य ( स० स्त्री० ) बहुमतस्यशाली जलाशय, वह  
 पोखरा जिसमें बहुतसी मछलियां हों ।  
 बहुमन्तव्य ( स० लि० ) बहु मन तव्य । बहु प्रकारसे  
 मननीय ।  
 बहुमल ( स० पु० ) बहूनि मलानि यस्य । १ सीसक,  
 सीसा नामकी धातु । ( लि० ) २ अनेक मलयुक्त ।  
 बहुमान ( स० लि० ) बहु मान यस्य । १ बहुमानयुक्त,  
 माननीय । ( स्त्री० ) २ अधिक मान ।  
 बहुमानिन् ( स० लि० ) बहु मन णिनि । अतिशय सम्मा-  
 नाह, अधिक आदरणीय ।  
 बहुमान्य ( स० लि० ) बहुभिमान्य । १ अनेक लोक  
 कर्तृक माननीय, जिसका बहुतसे लोक आदर करते हों ।  
 २ अतिशय माननीय ।

बहुनाग (स० ह्री०) बहवो मार्गा यस्मिन्, चतुर्विंश  
पथन्त्वात् तथात्त्व । १ चत्वर, चौस्ता । (त्रि०) २  
अनेक पययुक्त ।

बहुमुख (स० पु०) अनेक मुख, बहुतसे मुँह ।

बहुमूत्र (स० पु०) १ रोगविशेष, एक रोग जिसमें रोगी-  
को मूत्र बहुत उतरता है । (त्रि०) २ बहुमूत्ररोगी ।  
प्रथम देखो ।

बहुमूत्रता (स० स्त्री०) बहुमूत्ररोग ।

बहुमूर्ति (स० स्त्री०) बहो मूर्तियस्या । १ चन  
कार्यास, बनकपास । (पु०) २ विष्णु । (त्रि०) ३  
बहुमूर्तिधर, बहुरूपिया ।

बहुमूर्धन (स० पु०) बहवो मूर्धानो यस्य, 'सहस्रशीर्षा  
पुरयः सहस्राक्ष सहस्रपात्' इति ध्रुवेस्तथात्त्व ।  
विष्णु ।

बहुमूल (स० पु०) बहनि मूलानि यस्य । १ इकद,  
नरसल । २ शिमू, सँजना । ३ स्थूलशर, रामशर,  
सरकडा । (त्रि०) ४ अनेक मूलयुक्त ।

बहुमूलक (स० ह्री०) बहुमूलकन् । १ उशीर, खस । २  
वीरण, आदिकी जातिके वृण । ३ इकद, सरकडा ।

बहुमूला (स० स्त्री०) बहुमूल-टाप् । १ शतारती । २  
आमातकवृक्ष, अमडेका पेड । ३ माकन्दी, एक  
प्रकारका कद् ।

बहुमूल्या (स० त्रि०) बहनि मूल्यानि यस्य । महा-  
ध्यवस्तु, अधिक मूल्यका, कीमती ।

बहुयज्यन् (स० त्रि०) बहुयज्ञाकारो ।

बहुयाजिन् (स० त्रि०) बहुयज्ञके कर्त्ता ।

बहुयोजना (स० स्त्री०) स्कन्दायुचर मातृकामेद ।

बहुरगा (हि० वि०) १ चित्रव्यञ्जित, कई रंगका । २  
बहुरूपधारी । ३ अस्थिर चित्तका, मनमौजी ।

बहुरगी (हि० वि०) १ बहुरूपिया, अनेक प्रकारके रूप-  
धारण करनेवाला । २ अनेक रंग दिखानेवाला ।

बहुरथ (स० पु०) एक राजा ।

बहुरत्न (स० पु०) जातिविशेष, किसी किसीने इन्हें  
'बाहुवाच' बतलाया है ।

बहुरन्धिका (स० स्त्री०) बहनि रन्ध्रानि यस्या,  
बहुरन्ध्र-टाप्, सञ्ज्ञाया कन्-टापि अतस्त्व । मेघ ।

बहुरना (हि० वि०) १ लौटना, घापस आना । २  
फिर हाथमें आना, फिर मिलना ।

बहुरस्ता (स० स्त्री०) बहुरस्तो यस्याः । महाज्योति  
ष्मती स्ता । २ रसयती स्त्री । (त्रि०) ३ बहु  
रस्तयुक्त ।

बहुरामपुर—तेरभुजके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर ।  
(संज्ञा० ४५/१४४)

बहुराशिक (स० पु०) गणितभेद । एक त्रैराशिक  
द्वारा दूसरे त्रैराशिकको निदिष्ट राशि जाननेको हो  
बहुराशिक कहते हैं । त्रैराशिक देखो ।

बहुरिया (हि० स्त्री०) नई बह ।

बहुरिवन्द—मध्यप्रदेशके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर । यह  
जयलपुर नगरसे १६ कोस [उत्तर कैमूर गिरिमालाकी  
अधित्यका भूमि पर अवस्थित है] इस पहाड़ीभूमिमें  
जल अटकानेके लिये ४५ बाध हैं । ये सब बाध यदि  
न होते, तो यह स्थान जलमय मरुभूमि हो जाता ।  
पूर्वोक्त बाध द्वारा ३६ भौल बन गई हैं । ये सब बाध  
निरुद्धयसीं ग्रामोंके नामसे ही पुकारे जाते हैं । मुनिया  
ताल नामक बाध लक्ष्मणसिंह परिहारके भारी यमुना  
सिंहसे बनाया गया है । यहा अनेक प्राचीन कौर्त्तियोंका  
ध्व सायरोव देवनेमें आता है ।

बहुरी (हि० स्त्री०) चर्वण, चबेना ।

बहुरहा (स० स्त्री०) बहु यथातथा रोहतीति रुह क  
टाप् । कन्वयुङ्च्वी ।

बहुरूप (स० पु०) बहनि-रूपाणि यस्य । १ सज्जं रस ।  
२ शिव । ३ विष्णु । ४ कामदेव । ५ सरद, गिर  
गिट । ६ प्रह्ला । ७ केश । ८ रुद्र । ९ प्रियव्रतके

पुत्र मेधातिथिके एक पुत्रका नाम । १० वर्षभेद । ११  
शुद्धविशेष । १२ ताण्डव नृत्यका एक भेद जिसमें  
अनेक प्रकारके रूप धारण करके नाचते हैं । १३ शाल  
निर्घात, धना । १४ नानारूपयुक्त, अनेक रूप धारण  
करनेवाला ।

बहुरूपक (स० पु०) बहुरूप स्थायें कर्त् । जादकजन्तु ।

बहुरूपा (स० स्त्री०) बहुरूपस्य गिरिपत्य स्त्री-टाप् । १  
दुर्गा । २ अग्निर्को सात जिह्वाओंमेंसे एक ।

बहुरूपाष्टक (स० ह्री०) सन्निविशेष । ब्राह्मी, माहेश्वरी,

कीमारे, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा और शिव  
 दूती ये आठ बहुरूपा विषय तन्त्र हैं।  
 बहुरूपी (स० त्रि०) १ अनेक रूप धारण करनेवाला।  
 (पु०) २ बहुरूपिया।  
 बहुरूपा (स० स्त्री०) वही बहुरूप रक्षा करस्यादि  
 चिह्नम्। प्रचुर दीर्घचिह्न। सामुद्रिक मतसे जिनके  
 हाथमें अनेक रक्षाए रहती हैं वे दुर्लभागी होते हैं।  
 बहुरूपा (स० पु०) श्वेतकिण्वी वृक्ष।  
 बहुरेतस् (स० पु०) बहु रेतो यस्य। ब्रह्मा।  
 बहुरोमा (स० पु०) बहुनि रोमाणि यस्य। १ मेघ, मेढा।  
 २ वानर, वदर। (त्रि०) ३ लोमश, जिसके शरीरमें  
 अधिक रोम हैं।  
 बहुर (स० स्त्री०) वहते वृत्ति गच्छतीति यहि षुद्ध  
 हुलच्, नलोपयच्। १ आकाश। २ सितमरिचि, सफेद  
 मिर्च। ३ वृष्ण वर्ण। ४ अग्नि। ५ वृष्णपक्ष।  
 (त्रि०) ६ प्रचुर, ज्यादा।  
 बहुलगन्धा (स० स्त्री०) बहुलो गन्धो यस्य। क्षुद्रैला,  
 छोटी इलायची।  
 बहुलच्छद (स० पु०) बहुलानि छदानि यस्य। १ रक्त  
 शिम्बू, लाल सहिजन। २ शोभाजन, काला सहि-  
 जन।  
 बहुलता (स० स्त्री०) बहुलस्य भाव तल्, टाप्। बहुलत्व,  
 अधिकता।  
 बहुलवण (स० स्त्री०) बहुनि लवणानि यस्मिन्। शीपर  
 लवण।  
 बहुलवर्म (स० त्रि०) उत्तम फलचयुक्त।  
 बहुल-पल्लव (स० पु०) चार वृक्ष, पियात्रालका पेड़।  
 बहुला (स० स्त्री०) बहुल-टाप्। १ नीलिङ्का, नीलवा  
 पीथा। २ पला, इलायची। ३ गो, गाय। ४ देवी-  
 त्रिशर। ५ नदीमेद। ५ स्वनामधेयता उत्तमराज  
 पक्षी। ६ वृत्तिका नक्षत्र। ७ गामिनिशेष, एक गाय  
 जिसके सत्यमतकी कथा पुराणोंमें आई है और जिसके  
 नाम पर लोग भादों बदी चौथ और माघ बदी चौथको  
 मत करते हैं।  
 बहुलाचौथ (स० स्त्री०) भादों बदी चौथ। इस दिन  
 बहुला गायके सत्यमतके स्मरणार्थ मत चिया जाता है।

बहुलान्त (स० पु०) सोम।  
 बहुलावन (स० पु०) वृन्दावनके ८४ वनोंमेंसे एक वन।  
 कहते हैं, कि इसी वनमें बहुरूपी गायने व्याघ्रके साथ  
 अपना सत्यमत निवाहा था।  
 बहुलामिमान (स० त्रि०) अतिशय अभिमानी, भूयिष्ठामि-  
 मानी, इन्द्र।  
 बहुलालाप (स० त्रि०) बहुतर वापयन्त्यास।  
 बहुलाशय (स० पु०) मैथिल व श्रीय नृपमेद।  
 बहुलारा—बाकुडा जिलान्तर्गत एक प्राचीन नगर। यह  
 झारिकेश्वर वा दासकेश्वर नदीके दक्षिण कोणमें बाकुडा  
 नगरसे ६ कोस पूर्व अवस्थित है। यहाका शिवमन्दिर  
 बङ्गालके अपरापर स्थानोंके मन्दिरोंसे श्रेष्ठ है। मन्दिरमें  
 शिवकी लिङ्गमूर्ति, दुर्गा, गणेश, बुद्ध आदि मूर्तिया प्रति-  
 स्थित हैं।  
 बहुलिका (स० स्त्री०) सप्तर्षि मण्डल।  
 बहुली (दि० स्त्री०) पला, इलायची।  
 बहुलीरश्मिण्यु (स० त्रि०) अवहुल बहुल करिण्यु बहुल  
 अभूत तद्भावे चिच, कृ-श्मिण्युच्। बाहुल्यकारक।  
 बहुलीशत (स० स्त्री०) अवहुल बहुल एतं अभूत तद्भावे  
 चिच। १ अर्पणतुष्टय धान्यादि, भूसी उड्डाया हुआ  
 धान। (स्त्री०) २ विस्तृतीशत।  
 बहुलेश्वर—बम्बईप्रदेशके खानदेश जिलान्तर्गत एक प्राचीन  
 ग्राम। यहा बहुलेश्वर शिवका एक सुन्दर मन्दिर है।  
 बहुलचन (स० पु०) व्याकरणकी एक परिभाषा जिससे  
 एकसे अधिक वस्तुओंके होनेका बोध होता है।  
 बहुवद् (स० अन्त्य०) बहुवचनके समान।  
 बहुवर्ण (स० पु०) १ गौधिरक जातिमेद। २ अनेक वर्ण,  
 अनेक जाति।  
 बहुवर्त्त (स० स्त्री०) जनपदमेद।  
 बहुवर्त्म (स० पु०) आर्षोका एक रोग। इसमें पल्का  
 के चारों ओर छोटी छोटी फुसियाँ सी फैल  
 जाती हैं।  
 बहुवलिषवि—दाक्षिणात्यवासी एक कवि। इन्होंने नाग-  
 कुमारचरित नामक एक ग्रन्थ लिखा है। उक्त ग्रन्थमें ये  
 वार्त्तसर्वे तीर्थद्वार नेमिनाथके समसामयिक मधुराधिपति  
 नागकुमारका चरित वर्णन कर गये हैं।



बहुयन्त्र (स० पु०) वह्नि यन्त्रानि यस्य । प्रियाल, पिया-  
मालका पेड ।

बहुयद्गी (स० स्त्री०) वृत्तिका लता ।

बहुयद्गी (स० स्त्री०) बहु वदते वद णिनि । बहुभाषी,  
बहुत बोलनेवाला ।

बहुयाद्य—जम्बूखण्डके अन्तर्गत जनपदभेद ।

( महाभारत भीष्म० ६।५५ )

बहुयार (स० पु०) वह्नि वारयतीति बहु वृ णिच् अण् ।  
१ वृक्षत्रियोय, लिस्सोडेका पेड । सस्वृत पर्याय—शीलु,  
शोन, श्लेष्मात, श्लेष्मातरु, उद्दाल, उद्दालक, सेलु । इसके  
फलका गुण—शीतल, श्लेष्मात्रदक, शुष्कारक, गुर,  
दुर्जर और मधुर । २ अनेक वार ।

बहुयारन (स० पु०) वह्नि वृक्षादीनि वारयतीति वृ  
णिन ण्युल् । वृक्षत्रियोय, लिस्सोडेका पेड ।

बहुयार्थिक (स० स्त्री०) बहुवर्षभय, कई वर्षों तक होने  
वाला ।

बहुयि (स० स्त्री०) बहुतर पक्षियुक्त पृक्षादि, यह पेड जिस  
पर बहुतसे पक्षी रहते हैं ।

बहुयिप्र (स० स्त्री०) १ नाना प्रकार वाधायुक्त ।  
( स्त्री० ) २ नाना प्रकारकी वाधाये ।

बहुयिद्र (स० स्त्री०) बहु वेत्ति विद्र किप् । बहुघ, अनेक  
नियमोंसे जानकार ।

बहुयिद्र (स० स्त्री०) बहुघ, बहुतसे बातें जाननेवाला ।

बहुविध (स० स्त्री०) बहवो विधा यस्य । नाना प्रकारका,  
तरह तरहका । पर्याय—विविध, नानारूप, पृथग्-  
विध ।

बहुविस्तीर्ण (स० स्त्री०) बहु यथा स्यात्तथा विस्तीर्ण ।  
और विस्कारयुक्त, सूख लम्बा चौड़ा ।

बहुवीज (स० स्त्री०) वह्नि बीजानि यस्य । गरडगात्र,  
सिताफल ।

बहुवीर्य (स० पु०) बहु वीर्यं तेजो यस्य । १ विभीतक,  
बहेडा । २ तण्डुलीयशाक । ३ शाल्मली घृक्ष, सेवरका  
पेड । ४ मधु, मधुना ।

बहुवीर्या (स० स्त्री०) भूम्यामलकी, भूआंवला ।

बहुवीर्यक (स० स्त्री०) अधिक वाषपव्ययों, बहुत बोलने  
वाला ।

बहुव्ययी (स० स्त्री०) बहु व्यय्य अस्त्यर्थे इति । अतिशय  
व्ययशील, बहुत खर्चवाला ।

बहुवीहि (स० पु०) १ व्याकरणमें छ प्रकारके समासों  
मेंसे एक । इसमें दो या अधिक पदोंके मिलनेसे जो  
समस्त पद बनता है वह एक अन्य पदका विशेषण होता  
है । ( स्त्री० ) बहुवो शीहयो यस्य । २ प्रचुर धाम्य  
युक्त ।

बहुशक्ति (स० स्त्री०) बहु शक्तिर्यस्य । अधिक शक्तिसम्पन्न,  
बहुत ताकतवर ।

बहुशत्रु (स० पु०) बहुव शत्रवो यस्य । १ चटप, गौरा  
पक्षी । ( स्त्री० ) २ बहुशत्रुनिशिष्ट, जिसके अनेक दुश्मन  
हो । तृतीया तिथिमें पटोल खानेसे उसके अनेक दुश्मन  
होते हैं । ( स्त्रीवितरव )

बहुशाल्य (स० पु०) बहु शाल्य यस्य । १ रक्त पदिर,  
लाल रौर । ( स्त्री० ) २ अनेक शल्ययुक्त ।

बहुशस् (स० अर्थ०) वह्नि ददाति करोत्यादि या  
बहु ( बहुव्यापारिभेदि । पा ५।४।४० ) इति शस् । बहु,  
अनेक ।

बहुशाव (स० पु०) १ स्नुही घृक्ष, घृहर । ( स्त्री० ) २  
बहुशावरायुक्त, जिसमें अनेक डालिया हो ।

बहुशाख (स० स्त्री०) बहुशाख कर्मधा० । बहुविध  
शाख ।

बहुशाल (स० पु०) बहुभि शालते इति बहु शाल-अच् ।  
स्नुही, घृहर ।

बहुशिव (स० स्त्री०) बहु शिवा यस्य । १ अनेक  
शिवायुक्त । त्रिया टाप । २ गजपिप्पली । ३  
अनेक शिवा ।

बहुशिरस् (स० पु०) विष्णु ।

बहुश्रु (स० पु०) विष्णु ।

बहुश्रुत (स० स्त्री०) बहु श्रुत यस्य । अनेक शास्त्र  
श्रुतियुक्त, जिसमें अनेक प्रकारके विद्वानोंसे मित्र मित्र  
शास्त्रोंको बातें सुनी हैं ।

बहुश्रुति (स० स्त्री०) अनेक श्रुति, बहु वेदमन्त्र ।

बहुश्रुतीप (स० पु०) बौद्धसम्प्रदायभेद ।

बहुश्रेयसी (स० स्त्री०) बहुनां श्रेयसो यस्य, ईपलन्त  
त्यात् नशप् न या द्रस्य । अनेक श्रेयसीयुक्त ।

बहुस ख्यक (स० पु०) गिनतीमें बहुत ।  
 बहुसवाचार (स० लि०) बहु मदाचारसम्पन्न, अच्छा  
 आचरणवाला ।  
 बहुसन्तति (स० लि०) यही सन्ततिविस्तारोऽन्यथो  
 या यस्य । १ अनेक सन्तानयुक्त, जिसके बहुत बाल  
 बच्चे हो । (पु०) २ प्रहयष्टि, एक प्रकारका वास ।  
 बहुसम्पूट (स० पु०) बहु सम्पूटी यस्य । विणुक्त् ।  
 बहुसार (स० पु०) बहु सार स्थिराशो यस्य । खदिर,  
 क्षर ।  
 बहुसिन्ध (स० लि०) बहुसरविशिष्ट ।  
 बहुसुत (स० लि०) बहुवः सुता यस्य । अनेक पुत्र  
 युक्त, जिसके बहुत सन्तान हैं ।  
 बहुसुता (स० स्त्री०) शतमूली ।  
 बहुसुवर्णक (स० लि०) १ बहुसुवर्णयुक्त । (पु०) २  
 राजपुत्रभेद । ३ गङ्गातीरस्थ अग्रहारभेद ।  
 बहुसू (स० स्त्री०) बहुन् सूते या बहु सू विप् । १  
 शूकरी, मादा सूअर । (लि०) २ अतिशय प्रसवयुक्त ।  
 बहुसूति (स० स्त्री०) बहु सूति प्रसवो यस्या । १  
 बहु अपत्ययुक्ता गाम्ने, वह गाय जिसके अनेक बछड़े  
 हैं । २ बहुसन्तान प्रसविणी स्त्री ।  
 बहुसूयन् (स० लि०) बहुसू-वनिप् । १ बहुप्रजाप्रसव  
 कारक । त्रिया डीप् 'धनोर' इति नस्य र । २ बहु  
 सूयरी, वह प्रजा प्रसविनी ।  
 बहुसूय (स० लि०) बहु यथा तथा सूयति ध्रु अच ।  
 अनेकथा क्षरणशील, अनेक क्षरणशील ।  
 बहुस्रग (स० स्त्री०) शालकी वृक्ष, सलई ।  
 बहुसन (स० पु०) बहुः प्रचण्ड स्वन शब्दो यस्य ।  
 १ पेचक, उलू । २ शीघ्र । (लि०) ३ अनेक शब्दयुक्त ।  
 बहुस्वामिक (स० लि०) जिसके अनेक प्रभु हैं, जिस  
 चीजके बहुतसे मालिक हैं ।  
 बहुदिरण्य (स० लि०) १ बहु सुवर्णयुक्त । (पु०) २  
 बहु सुवर्ण । ३ वैदिक एकाहभेद ।  
 बहुटा (दि० पु०) बाँह पर पहानेका एक गहना ।  
 बहु (दि० स्त्री०) १ पुत्रवधू, पतोह । २ पत्नी, स्त्री । २  
 कोई नवयियाहिता स्त्री, दुल्हन ।  
 बहुदक (स० पु०) वहनि उक्त्वात् शौचाङ्गत्वा यस्य ।

सन्यासिभेद । ससाराध्रमका परित्याग कर ये लोग  
 सन्यास अवलम्बन करते हैं । सात धर्मों में जितनी शिक्षा  
 मिलती है वही उनका आहार है । फेरल एक गृहस्थके यहा  
 शिक्षा नहीं मांगते, सात गृहस्थके घर जाना ही पडता  
 है । यदि एक ही गृहस्थ उन्हे प्रचुर शिक्षा दे दे, तो ये  
 उसे ग्रहण नहीं करते ।

ये सब सन्यासी गो पुच्छ लोमके द्वारा बद्ध त्रिवण्ड,  
 शिष्य, जलपूतपात्र, कौपीन, कमण्डलु, गात्राच्छादन,  
 कन्धा, पादुका, छत्र, पथिव, चर्म, सूची, पथिणी, रुद्राक्ष  
 माला, योगपट्ट, बहिर्वास, पन्थि और वृषाण अपने  
 साथ लिये फिरते हैं । सर्गाङ्गमे भस्मलेपन, त्रिपुण्ड्र,  
 शिखा और यज्ञोपवीत धारण इनका अग्र्य कर्त्तव्य है ।  
 इन्हे वेदाध्ययन और देवताराधनामें रत तथा नृथा  
 वाष्यका परित्याग कर सर्वदा इष्ट देवताके चित्तनमे  
 तत्पर रहना पडता है । शामको गायत्रीजप और स्वधर्मा  
 चित्त क्रियानुष्ठान करना होता है ।

अतिभोजन और रिपुपरतन्त्र होनेसे योगाभ्यासमें  
 मन दृढ नहीं रहता, इस कारण इन्हे परिमित आहार और  
 काम, क्रोध, जोष, मोह, हर्ष, त्रिगाद आदिवा परित्याग  
 करना चाहिये । इनके शास्त्रमें चतुर्मास्य व्रतानुष्ठान  
 वतलाया गया है । ये लोग मोक्षाभिलाषी हैं । मोक्ष  
 लाभके लिये गायत्रीजप ही प्रधान कर्त्तव्य है । इन  
 सब सन्यासियोंकी मृत्यु होनेसे मृतदेह जगह नहीं  
 जाती, जलमें बहा दी जाती है । इन्हे मृत शीनादि  
 भी नहीं होता ।

बहदक—हुमारिकाकी महानदीके निकटर्ची नदीभेद ।  
 (ऊर्माका १५१।१।१५)

बहुदन (स० स्त्री०) प्रचुर अन्न ।  
 बहुपमा (स० स्त्री०) एक प्रकारका आर्षालङ्कार । इमें  
 एक उपमेयके एक ही धर्मसे अनेक उपमान कहे जाते हैं ।  
 बहे गया (दि० पु०) १ एक पक्षी जिसे भुज गा या कर  
 चोटिया भी कहते हैं ।  
 बहेत (दि० स्त्री०) वह काली मट्टी जो तारों या गडदोंमें  
 बह कर जमा हो जाती है । इसी मट्टीके पपर बनते हैं ।  
 बहेगवा (दि० पु०) चौपायोंकी युदाके पास पूछके नीचेकी  
 मासप्रस्थि ।

बहेचा ( हि० पु० ) घडेचा दांचा जो चाकू परने गड बर उतारा जाता हे। इसे जब चापी और पिटनेमे पीट कर बढाते हैं, तब यह घडेके रूपमें आता है।

बहेडक ( स० पु० ) विभीतक वृक्ष, बहेडा।

बहेडा ( हि० पु० ) अष्टुनकी जातिका एक बडा और ऊंचा जंगली पेड। यह पतझडमें पत्ते झडता है और सिंध तथा राजपूताने आदि सुभे स्थानोंको छोड भारतवर्ष के जगलोंमें सर्वत्र होता है। इसके पत्ते महपुकेसे होते हैं। फूल बहुत छोटे छोटे लगते हैं। विभीतक देखो।

बहेडा—वरमङ्गा जिलेके अन्तर्गत एक प्रधान वाणिज्य स्थान। यह अक्षा० २६ ४' ३०" तथा देशा० ८६ १०' ८" पू०के मध्य अवस्थित है। पहले यह स्थान उपधि भागका सदर था। पर आवहवा अच्छी न होनेके कारण वरमङ्गा नगरमें यह उठा कर लाया गया।

बहेडी—युक्तप्रदेशके बरेली जिलेकी तहसील। यह अक्षा० २८ ३५' से २८ ५४' ३०" तथा देशा० ७६ १६' से ७६ ४१' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ३४५ वर्गमील और जनसंख्या २ लाखसे ऊपर है। इसमें २ छोटे छोटे शहर और ४१० ग्राम लगते हैं।

बहेरू ( हि० वि० ) १ शहर उधर मारा मारा फिरनेवाला, जिम्मा का कहीं ठीर ठिकाना न हो। २ व्यर्थ घूमनेवाला, निकम्मा।

बहेरा ( हि० पु० ) बहेडा देखो।

बहेला ( हि० पु० ) कुश्तीका एक पेच।

बहेलिया ( हि० पु० ) पशु पक्षियोंको पकडने या मारनेका व्यवसाय करनेवाला शिकारी।

बहलोलपुर—पंजाबके लुधियाना जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० ३० ३५' ३०" तथा देशा० ७६ २२' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या दो हजारसे ऊपर है। सम्राट् अकबरके समय बहलोल खाँ और बहातुर खाँ नामक दो अफगानोंने इसे बसाया था।

बहोल लोदी, सुलतान—दिल्लीके एक सुसलमान बादशाह। ये मालिक कालाके पुत्र थे, इस कारण लोग इन्हे मालिक बहोल कहा करते थे। इनके चाचा सुलतान बहालोलोदी (इमराम खाँ) सरहिन्दके शासनकर्ता थे। ये बहोलको सुचतुर और बुद्धिमान देख पुत्रकी तरह इनका

लालन पालन करते थे और मरते समय अपना उन्नाधिकारी बना गये थे।

बादशाह बन बहोलने बुद्धिबैभवसे न सार भरमें अपना प्रभाव फैला लिया। किन्तु चचेरा भाई कुतुब या इनके चचेरे नहीं हो सका। उसने दिल्लीके सुलतान महम्मदसे उनकी सुगली पाई। सुलतान महम्मदने उसकी बातोंमें आ, हाजी हिस्साम खाँकी सेना ले कर बहोलका दमन करने भेजा। सिजिराबादके कारागारोंके निरुद्ध दोनों दलोंमें मुठभेड हो गई। हाजी, हिस्साम खाँ हार या कर दिल्लीको भागा।

उमके भाग जाने पर बहोलने उसके विरुद्ध सुलतान महम्मदके पास एक पत्र भेजा। पत्रमें लिखा था, 'मि' इसके अन्याय शासनसे यहाका राज्य एकदम नष्ट हो गया है। दास आपके चरणोंकी सेवा करने सदा मीयाद है। इनकी बातोंमें पड कर सुलतान महम्मदने हाजी हिस्साम खाँकी मरचा डाला और हाजिद खाँको उसकी जगह पर बजाया। यह खबर जिस समय बहोलको सुनी, उसी समय बहुतसे लोदियोंको साथ ले वे सम्राट महम्मदके अभियादनार्थ दिल्ली आये। यहा आ कर इन्होंने अपनी जागीरका चिरस्थायी प्रबंध कर लिया।

अब सुलतानकी तरफ हो कर इन्होंने मालव राजाको हराया और मेठ स्वरूप पानपानाकी उपाधि पाई। इनकी पदोन्नतिसे राजदरबारमें लोदियोंकी गृह बन चली। इन लोगोंने बिना सम्राटकी अनुमतिके लाहौर, दीपालपुर, सशाम, हिस्साम, फिरोजा आदि कितने ही जिलोंमें अपनी गोदी जमा ली।

सुलतान महम्मदने इनकी जड उखाडनेकी बहुत चेष्टा की, पर सभी विफल हुई। अन्तमें इन लोगोंने बिद्रोही हो दिल्ली पर चढाई कर दी। बहुत दिनों तक ब्राह्मणोंमें घेरा डाले रहनेके बाद वे विकल भोग्यसे सरहिन्द लौट आये। मालिक बहोलका इस्तं समय सुलतान नाम पडा। किन्तु बिना दिल्लीको घात किये उन्होंने अपने नाम पर सुन्या पाठ और सिफेका प्रचार नहीं होने दिया।

महम्मदकी मृत्युके बाद उका लडका अलाउद्दीन दिल्लीके राजसिंहासन पर बैठा। इस समय दर्याप

सिंधु (हिन्द) प्रदेश भिन्न भिन्न राजाओंके शासन धिकारमें था, तो भी लोदी-वंशका स्थान सबसे ऊँचा ही था।

बहोलने फिरसे दलबलके साथ दिल्ली पर धावा बोल दिया। किन्तु इस बार भी भयनमनोरथ ही रहे वापिस जाना पड़ा। अलाउद्दीन जब वजीर हामिद खाना काम तमाम करनेका पडबन्त कर रहे थे, उस समय बहोल फिरसे दिल्ली पर चढ़ आये। इस बार हामिद खाकी सहायतासे बहोलने दिल्लीमें प्रवेश किया। हामिदके घर पर बहोलके प्रतिदिन जाने आनेसे दोनों में घासा प्रेम ही गया। किन्तु बहोलके मनसे राज्य-पिपासा और हामिदका उच्छेद-संकल्प कब दूर होने वाला था। छलसे बहोलने हामिदको फँद कर लिया और लिह्लीके राजसिंहासन पर धपना बखल जमाया। अब ८५५ हि० (१४५१ ई०की १६वीं अप्रिल)को भारतके सिंहासन पर बैठ उन्होंने अपने नामसे सुतवापाठ और सिका बलानेका हुकुम दे दिया। ये पुत्रकी तरह प्रजा-पालन करते हुए तथा मन्त्री और सेनाओं को चंग कर नियन्त्रक राज्य करने लगे।

राजा हो कर बहोलने दिल्लीके समीपवर्ती तथा अपने अधिकृत स्थानों और सुलतानमें अच्छा शासन कर अपनी कीर्ति धीमुदी फैलाई। इनके अछे शासनसे विरक्त हो कितने ही अल्लाउद्दीन-वंशके अमीरों ने लोदी वंशका सत्ता मिटानेके लिये जौनपुरके शासनकर्त्ता सुलतान महमूदसे सहायता मागी। तदनुसार महमूदने ६११ हिजरीमें दिल्ली पर चढ़ाई कर दी। बहोल अपने पुत्र एगाना बयाजिदकी अनेक अमीरोंके साथ बिलेकी रक्षा पर नियुक्त किया और आप उड़नेको मुस्तेद हुए। संधिकी बहुत कोशिश करने पर जब कोई फल न निकला, तब उन्होंने लड़ाई ठान दी। दोनोंमें घमसान युद्ध हुआ। अतमें जौनपुरका सेनापति फते रॉ था हिरवी बहोलको सेनाके सामने न उदर सका और फँद कर लिया गया। सुलतान महमूद पीठ दिया कर भागे। इस समयसे बहोलकी राज्यपिपासा बलवती और भी हो गई। उन्होंने अपने बलसे पाथवर्ती हिन्दू और मुसलमान राजाओंको हरा कर वहा अपनी धाक जमाई और उनकी

सम्पत्तिका कुछ अंग अपना लिया। पीछे सुलतान बगउद्दीनके आत्मोय मालिका जहानके उम्फानेसे महमूद गर्कने बहोल पर धावा बोल दिया। बचावका कोई रास्ता न देख बहोलको उनसे सन्धि करनी पड़ी। संधि की शर्तोंने अनुसार बहोल केवल दिल्लीके अधिपति मुबारकजाहदी अधिगत सम्पत्तिसे सरमाधिमारी हुए, पर बलपूर्वक उनको हृद अन्य लोगोंको सम्पत्ति उन्हें वापिस देने पड़ी। कुछ दिनों बाद बहोलने ग्रामसावादके शासनकर्त्ता जूना खाकी हराया और कर्णगायत्री उदाक' गहोका मालिक बनाया।

सुलतान बहोलके शासनसे विरक्त हो जौनपुरके राजा महमूदने उनके विरुद्ध युद्धयात्रा की। ग्रामसावादके निकट फिर दोनोंमें गहरी मुठभेड हु। कुतुबवाँ लोदी फँद कर जौनपुर लाया गया। सुलतान महमूदके मरने बाद उनके लडके महम्मदशाह राजा हुए और दोनोंके बीच सन्धि हो गई। लेकिन कुतुबखाको वापिस आये न देप बहोलने फिर महम्मदसे लड़ाई ठान दी। इस युद्धमें महम्मदको ही जीत हु। उन्होंने कर्णगायत्री राजगद्दीसे उतार कर पुन जूना खाकी ग्रामसावादकी राजगद्दी पर गिठाया

इस समय महम्मदकी आशासे उम्फा छोटा भाइ हसनकी मारा गया जिससे जौनपुरमें बडी हलचल मची। राजमाता बीवी रानीने छोटे पुत्रके धियोगसे सुखित हो जेष्ठ महम्मदका दवानेके लिये स्तिनी ही अमीर भेजे। उन लोगोंके हाथसे महम्मद थमपुरके मेहमान बने। -

बीवी राजाकी आशासे महम्मदका सबसे छोटा भाई हुसैन रॉ जौनपुरकी राजगद्दी पर बैठा। उमने बहोलके साथ मित्रता की। किन्तु बहोलके ग्रामसावाद आक्रमण और जूना खाकी राज्यच्युतिसे विरक्त हो उसने दिल्ली पर चढावो कर दी। कुछ दिनों तक परस्परमें गूब युद्ध चलता रहा। व्यर्थ दोनों तरफकी सेनाशा विनाश देप दोनोंने आपसमें मेल कर लिया और अपने अपने देगकी लॉटे। इसके बाद बहोलने जौनपुर गनाके प्रपान बहाद रॉ मेघातोकी हरा कर अपने धंग कर लिया।

इस समय बयानाके शासनवर्त्ता युसुफ रॉ थे। उन्होंने विद्रोही हो बहोलकी अधोगता छोड दी और

हुनेाके नामसे बयानांमें खुन्वा पाठ और मिजा चलाया। तीन वर्ष तक किसी प्रकारकी लड़ाई न हुई। बादमें हुमेनने बडो सेना ले कर बहोल पर कई बार चढ़ाई कर दी। सराई लख्खके युद्धके बाद दोनोंमें शान्ति स्थापित हो गई। ८६३ हिजरीमें फिर लड़ाई शुरू हुई। हुमेन पाँकी जीत देव कर खुनुव पाँने सन्धि करनेका प्रस्ताव किया। इसकी शर्तोंके अनुसार बहोल गगाके उत्तर और हुसेन गगाके दक्षिण भागके शासनधिकारी हुए। अब युद्ध बंद हुआ। हुसेन जब अपने राज्यकी लौट रहे थे इसी समय बहोलने पीछेसे उन पर आक्रमण कर धनरत्न छीन, उनके किनने ही प्रधान प्रधान व्यक्तिओ को कैद कर लिया। हुसेन हार कर भागा। उनके अधिष्ठत फापिला, पटियाली, साफिन, फील और जलाली नामक स्थान बहोलके हाथ लगे। हुसेनसाँने फिरसे सेना इकट्ठी कर बहोलसे युद्ध छेडा। किन्तु इस बार वे विशेष क्षति प्रसत हो जान ले कर रामोकी ओर भागे। इस समय भी बहोलकी मोटी रकम हाथ लगी थी। रात्रिमें सुलतान हुसेनपाँकी हरा कर उन्होंने इटाया पर आक्रमण किया। इस समय बखरके अधिपति थे राय तिलकचद। उन्होने बहोलका पराक्रम मुन उनकी आघोषता स्वीकार कर ली। सुलतानको खुश करनेकी इच्छामे जमुनाको पार कर राय तिलकचदने सुलतान हुसेन पाँकी पत्राकी ओर मार भगाया। इसी अवसर पर बहोलने जोधपुरकी जितनेकी आशासे सेना इकट्ठी की। हुमेन पाँ अब भी बार अपनी रक्षा किसी प्रकार न कर सका और बराइच की भागा। यहा भी वह निश्चित रूपसे नहीं रह सका। बहोलकी सेनाते उस पर यहा भी आक्रमण किया। रहब मदी (कालीनदी)के तट पर दोनोंमें गूब युद्ध चला। अन्तमें हुसेनकी हार हुई और जीनपुर राज्य बहोल के अधिकारमें आ गया। यहां से मुवारक पाँकी शासन कर्ता बना कर आप बदाऊँकी ओर चल दिये। अक्सर पा हुमेनखनि पुन जीनपुरका उद्धार कर बहासने लोदियों को मार भगाया। परचोबू बहोलके पुत्र बर्जाक और स्वयं सुलतानने उन पर आक्रमण पर दिया। इस बार सुलतान हुसेन पाँ हार कर विहारको भागा।

बहोलने हल्दी नगरमें मुना, जि हमारत चचेरा भाइ

खुनुवा पाँ मर गया है उसी समय वे बहासने चल दिये और उसका दफन किया। पीछे उन्होने उसको जीनपुर के राजसिंहासन पर अपने पुत्र बर्जाकको और कर्नामें राजा बयाजिदके पुत्र आजाम् हुमायूकी अधिष्ठित किया। च बवारके रास्तामें धौलपुर पडा और यहांके राजाने उन्होंने बहुमूल्य पदार्थोंकी भेट ली। यहांसे चल कर वे इनाहपुर ग्यालियर, बाडो आदि स्थानोंमें गये। यहांके राजाओ से भी इन्हे प्रचुर धन प्राप्त हुआ। लौटने समय इन्होंने इटायाके अधिपति राय दानदके पुत्र सगतसिंहको राजगद्दीसे उतार कर दिल्लीकी ओर प्रस्थान किया। दिन रात्रिके घोर परिश्रमसे एव धूपमें निरंतर भ्रमणसे मार्गमें ही वे बीमार पडे और ८६४ हिजरी (१४८८ ई०)में मलावी प्राममें इनका प्राणान्त हुआ। उन्होंने प्रायः ३८ वर्ष ८ मास और आठ दिन बडी घोरतासे राज्य किया था। इनके मरने पर उनके पुत्र सिन्धेर लोदी दिल्लीके सिंहासन पर बैठे।

सुलतान बहोल धार्मिक, धीर, साहसी और विद्वान् थे। उनमें क्या, चतुरता और दानशीलताया भी अभाव नहीं था। वे साधुताके रक्षक थे। धार्मिक कर्मोका करना और उसके नियमादि पालना उनका प्रधान कर्त्तव्य था। वे अपना अधिकारा समय साधु, मन्थरिख और ज्ञानवात् पण्डितों के साथ बीताते, दण्ड, दुर्गिरायों को सदा अपनी दृष्टमें रणते, आश्रितकों कर्मो नहीं छोडते और दिनमें ५ बार नमाज पढते थे।

बहक्षर (स० लि०) बहु अक्षरं यत् । बहु अक्षरयुक्त पद ।

बहगि (स० पु०) वैदोक्त विविध जनि ।

बहध्याय (स० लि०) बहु अध्याय सम्पन्न ।

बहन्न (स० लि०) बहु अन्न द्वारा उपेत ।

बहपू (स० लि०) जलमय प्रदेशादि ।

बहपत्य (स० पु० स्त्री०) बह्नि अपत्यानि यस्य । १

शून्य, सूअर । २ मूयक, मूसा ।

बहमिधान (स० स्त्री०) बहुधन्यता ।

बहन्न (स० पु०) १ मुदगलका एक पुत्र । २ अनेक अर्थ ।

(त्रि०) ३ बहु अश्वयुक्त ।

बहदिन (स० लि०) बहु अस्ति, अद जिनि । बहुमोजक,

बहुन दानेपाला ।

बहादि ( स० पु० ) बहु आदि करके पाणिन्युक्त शब्दगण ।  
गण यथा—बहु, पद्धति, अज्ञति, अद्विती, अहति, शक्ति, शक्ति, शक्ति, चारि, राति, राधि, अहि, कपि, यष्टि, मुनि, चण्ड, अराल, कृपण, कमल, विन्द, विशाल, विसद्वृत्, भयज, ७३ज, चन्द्रभाग, कल्याण, उदार, पूरण, गहन, फोड, नय, खुर, गिजा, बाल, शफ, गुद, भग, गल और राग ।

बहानशिल्प ( स० ह्यो० ) १ बहानिनी भाग ह्य । बहु भोजनकारीका ऋय या भाव, बहुत भोजन ।

बहानिन् ( स० त्रि० ) बहु अनातीति बहु अज निनि । बहु भोजनशील, बहुत पानेवाला ।

बहाश्चर्य ( स० त्रि० ) बहु आश्चर्ययुक्त ।

बहोश्चर ( स० ह्यो० ) नर्मदा तटस्थ एक पवित्र शैवक्षेत्र ।

बहलपुर—पञ्जाबप्रदेशके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य ।

यह अक्षां २७ ४ २' से ३० २५' उ० तथा देशां ६६ ३१' से ७४ १' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण १५६१८ वर्गमीलके करीब है जिनमेंसे १८८० वर्गमील स्थान प्रदेश है । इसके उत्तर पश्चिममें सिन्धु और गतद्रू नदी बहती है ।

बहल नगरमें लुगी, सुपी आदि रेशमी कपड़े सुननेका कारखाना होता है । नील, रूई और धान्यादि शस्य ही यहाँका प्रधान वाणिज्यद्रव्य है । स्थायीय खेती वारीकी सुविधाके लिये नाना स्थानोंमें नहर काटी गई है । इण्डस भेली रेलवे लाइन इसी राज्य हो कर गई है ।

दुरानी साम्राज्यकी उच्छूलता और शाहसुजाके काबुल से भागने पर यहाँके राजवशके पूर्वपुरुष मिन्धुप्रदेशसे आ कर यहाँ स्थापनभावमें राज्य करने लगे । पञ्जाबमें रणजित्सिंहके अन्त्येष्टके डर कर यहाँके नवाब बहल पति अङ्गरेजोंसे आश्रय माँगा । परन्तु अङ्गरेज लोग उन्हें आश्रय देने राजी न हुए । १८०६ ई०में लाहोरमें जो सन्धि हुई उससे रणजितका शतद्रू के दक्षिण सोमान्त गत स्थानों तक अधिकार प्राप्त रहा । १८३३ ई०में वाणिज्य-ध्वंशप्रदेशमें अङ्गरेजोंने नवाबके साथ संधि कर ली । फिर १८३४ ई०में शाहसुजाको काबुल-सन्ध पर विद्वानके लिये बहलपुर-राजके साथ अङ्गरेज गय

मेंएटा राजकोय सम्बन्ध स्थापित हुआ । सन्धिपत्रमें शर्त थी, "गजमेंएट आपद विपद्में नवाबकी सहायता करेंगे और नवाब भी जरूरत पडने पर अङ्गरेजोंको शत्रु से लड़नेमें मदद पहुँचायेंगे । नवाबवशधरगण यहाँके एकमात्र अधिकारी रहेगे । गजमेंएट शासन नियममें कुछ भी उड़छाड नहीं करेगी ।"

प्रथम अफगान युद्धमें नवाबने अङ्गरेजोंको पासी मदद पहुँचाई थी । १८४७ ई०के मूलतान-युद्धमें उन्होंने मेनापति सर हार्नट गडार्डिसके साथ मिल कर युद्ध किया था । इस कार्यके पारितोषिक स्वरूप उन्हें ब्रिटिश सरकारकी ओरसे सञ्चलकोट और भीड़प्रदेश तथा यानजोवन लाख रुपयेकी वृत्ति मिली थी । उनकी मृत्युके बाद उनके इच्छानुसार ३५ पुत्र राजा हुए; किन्तु उनके बडे भाईने उन्हें राज्यच्युत करके सिंहासन पर बजा जमाया । अङ्गरेजोंका आश्रय पा कर ३५ पुत्र बहलपुरके राजस्वसे वृत्ति पाने लगे । अङ्गरेजोंके साथ जो शर्त थीं उन्हे तोड देनेके कारण वे लाहोर दुर्गमें आवद्ध हुए । यहाँ १८६२ ई०में उनका प्राणान्त हुआ ।

बटके यथेच्छाचार और उत्पीडनसे तग आ कर प्रजा १८७३ और १८६६ ई०में बागी हो गई । नवाब ने धीरोचित माहससे दोनों ही दफा विद्रोहियोंको उपयुक्त शिक्षा दी थी । १८६६ ई०में पडयन्तकारियोंने विपयोगसे उनके प्राण ले लिये । पीछे उनका चार वर्षका लडका सादिक महमद खाँ ( ४४ ) राजतत्त्व पर बैठा । बालक राजके शासनकालमें तथा पूर्वविद्रोहमें राज्यभर अशांति फैल गई था । अङ्गरेज गजमेंएटने राज्यनाशकी आशङ्कासे बालकका राज्यकार्यभार अपने हाथ ले लिया । पीछे १८७६ ई०में वालिंग होने पर राज्यभार उन्हें लौटा दिया गया । १८७८ ८० ई०के अफगान-युद्धके समय नवाबने घनज्ञानसे अङ्गरेजोंको सहायता पहुँचाई थी । १८६६ ई०में उनकी मृत्यु हुई । पीछे महम्मद बहल खाँ ( ५५ ) राजसिंहासन पर अधिकृत हुए । राज्य-सुख इनके भाग्यमें बदा नहीं था । चार वर्ष समुद्रयातामें मझाकी तीर्थयात्रा करते समय १६०७ ई०के फरवरी मासमें उनका प्राणान्त हुआ । पीछे उनके लडके हाजी सादिक महम्मद खाँ अथवा राज

तथा देशां ८४ १२ से ५ १७ पूंके मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ३३४ वर्गमील और जनसंख्या साढ़े तीन लाखके करीब है। इसके उत्तरमें गङ्गा बहती है। इसमें पटना और फुल्लवारी नामके २ शहर और ६७५ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त विभागका एक प्रधान शहर। यह अक्षां २५ ३७ उ० तथा देशां ८५ ८ गङ्गाके बाहिरे विहारे अवस्थित है। प्राचीन पटना राजधानीके पश्चिम उप कण्ठमें अवस्थित रहने और युरोपीयगणके वास स्थान होनेके कारण यह स्थान विशेष समृद्धिगाली हो गया है। प्राचीन गंगा नदीके खातके ऊपर राजकीय अट्टालिका और अङ्गरेजोंके आवास भवन अवस्थित हैं। इस नगरके मिठापुर नामक विभागमें इष्ट इण्डिया और पटना-गया रेलवेका स्टेशन है। वांकीपुरसे प्राचीन पटना राजधानीमें जाने आनेकी सुविधाके लिये हालमें एक और स्टेशन खोला गया है। यहासे आध कोसकी दूरी पर गोला नामक स्थान है। यहाका गोलघर देखने लायक है। स्टेशनके पास ही कारागार है जहा फरोब पाच सौ कैदी रखे जाते हैं। १८८१ ई०में स्थापित 'विहार नेशनल कालेज'में बी० ए० तककी पढाई होती है। इसके अलावा यहा जनाना-हाई स्कूल भी है जो पटना विश्वविद्यालयसे सम्बन्ध रखता है।

पटना देखो।

बांकीपुर—बांखपुरके उत्तर पलताके निकटपूर्वी एक प्राचीन ग्राम। यह हुगली नदीके किनारे अवस्थित है। पहले यहा अष्टेण्ड कम्पनी (Ostend Compa.) की वाणिज्य फोटी थी। अष्टिया राजने पूर्व भारतीय वाणिज्यका अंश लेनेकी धान्नासे १७१२ २३ ई०में यह बणिकसमिति भगडन की। इसके कर्मचारिगण अकसर अंगरेज और ऑलन्दाज लोग होते थे। जर्मन सम्राटके भारत-वाणिज्य सन्देशके उक्त बणिक समितिवा अघागतन हुआ। जर्मन बणिकदलने भारतपर्यमें आ कर मद्राजके कोमेलङ्ग और बङ्गालके वांकीपुरमें फोटी खोली। जर्मनोंके सम्बन्ध पर अंगरेज, फ्रांसीसी और ऑलन्दाज बणिक सम्प्रदाय विघलित हो गये। १७२७ ई०में मियेना राजद्वारके बापा डालने और मोरे मोरे अन्यान्य सम्प्रदायोंकी उन्नति

तथा समुद्रपथके वाणिज्य प्रभावसे इनका वाणिज्योद्यम बिलकुल जाता रहा। १७८४ ई०में अंगरेज, ऑलन्दाज और जर्मनोंने मिल कर मुसलमान फौजद्वारेके विरुद्ध भारतभारण किया। मुसलमानी सेनाके वांकीपुरमें घेरा डालने पर अष्टेण्ड कम्पनीके प्रजेण्डने गोला वर्षण द्वारा उन्हें बाह्य कर डाला जिससे वे सबके सब प्राण ले कर भागे। जर्मन बणिकसम्प्रदायकी वाणिज्यरूपी आशा लता जइसे उलाड़ दी गई। अंगरेज जर्मन कर्मचारिगण इस स्थान का परिचय कर अपना घोराव घना ले युरोप भागे।

बांकुड़ा—बङ्गालके वर्तमान विभागान्तर्गत एक जिला। यह अक्षां २५ ३८ से २३ ३८ उ० तथा देशां ८६ ३६ से ८७ ४६ पूंके मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर और पूर्वमें दामोदर नदी, पश्चिममें मेदिनीपुर और पश्चिममें मानभूम जिला है। भूपरिमाण १६२१ वर्गमील है।

इसका पूर्वांश प्रायः समतल है। जितना ही उत्तर और पश्चिम बढ़ते जायें, उतना ही गण्डवैल और जङ्गलभूमि नजर आती है। यह विस्तारण शैलश्रेणी समुद्रपृष्ठसे १४०० फुट ऊँची है। सुशुनिया नामक पहाड़ १४४२ फुट ऊँचा है। उस पहाड़के शिखर पर राजा चन्द्रवर्मदेवकी एक शिलालिपि पाई गई है। दामोदर और दलकिनोर या द्वारकेभर यहाकी प्रधान नदी है। वर्षा ऋतुमें इनके फलेवरकी वृद्धि होती है। इस समय पर्वत परका जल हठाव् बाढकी तरह आ कर आस पासके स्थानोंको बहा देता है। ऐसी बाढका भागमनकाल निरिबन्ध नहीं रहता जिससे मैकड़ों आदमी प्राणसे हाथ धो बैठते हैं। विष्णुपुर नगरके समीप पूर्वतन राजाओंकी अक्षय कोत्ति देखनेमें आती है।

पहले यह स्थान वर्तमान चक्रवाके अन्तर्भूक था। १७६० ई०की ६७ वीं सितम्बरकी यह वृष्टिशामयमेंदरके हाथ लगा। अंगरेजोंके वंगालकी दीवानी पानेके बाद भी बांकुड़ा (उस समय विष्णुपुर उमीदवार नामसे प्रसिद्ध था) चोरभूम चिन्नेके अन्तर्गत था।

विष्णुपुर राजघनका इतिहास ले कर इस जिलेका विस्तृत इतिहास बना है। ११वीं शताब्दीमें यह स्थान विशेष समृद्धिगाली था। राजप्रासाद, नाट्यगाला, अश्व और हस्तिशाला, सेनाबारिक, अलागाद, घनागाद,

देवमन्दिर और पुष्करिणी आदिसे नगरने अर्ध शोभा धारण की थी। परवर्तीकालमें यहाके हिन्दूराजगण कमी तो शत्रुभावमें मुसलमान नवाबों के प्रति क्रूरारण करते थे और कमी मितभावमें उन्हें सहायता पट्टनाते थे। ये लोग कमी भी मुर्शिदाबादके राजदरवारमें हाजिर नहीं होते थे। १८वीं शताब्दीमें इस राजप्रशकी अनन्ति हुई। मराठा उर्फैतोंके आक्रमण, मुसलमान नवाबोंके अथवा फरसप्रद और १७७० ई०के महादुर्मिश्र से विष्णुपुर जनहीन हो गया। विष्णुपुर राज्यका अधि काश स्थान अरण्यमें परिणत हुआ। इस प्रकार धनहीन हो जानेसे राजाने अपनी मदनमोहन देवमूर्ति कलकत्ता घासी-गोकुलचन्द्र मितके यहा घघरू रखी। पीछे अर्थ सम्रह फरके उक्त मूर्ति छुड़ानेके लिये उन्होंने मन्तीने कलकत्ता भेजा। गोकुलमित्रने रुपये ले कर भी देवमूर्ति लौटाना न चाहा। इस पर राजाने देवमूर्तिकी पुन प्राप्तिके लिये कलकत्ते सुप्रिमकोर्टमें नालिश टोक दी। देवमूर्ति उन्हें वापस मिली। विवृत विवरण विष्णुपुर शब्दमें देखो।

अ गरेजोंके अधीन आने पर भी यहाकी दुर्गति दूर न हुई। महाराष्ट्रीय और मुसलमानोंके अथवा फरसप्रद सै अथवाहति पाने और प्रजाका कष्ट दूर होने पर भी १७७० ई०के दुर्मिश्रसे जो लोगोंकी महता क्षति हुई थी उससे वे अपनी अवस्था जरा भी सुधार न सके। विष्णुपुरके ध्वसावशिष्ट दुर्गमें एक प्राचीन कमान रखी हुई है जो १२½ फुट लम्बी है। प्रवाद है, कि यह कमान देवतामे राजाको मिली थी।

इस जिलेमें ३ शहर और ३५६२ ग्राम लगते हैं। जन संख्या ग्यारह लाखसे ऊपर है, जिनमेंसे हिन्दूको सख्या अधिक है। इस जिलेमें फोडकी शिकायत बहुत है। महा माषीका भी अकसर प्रकोप देखा जाता है। यहाकी प्रधान उपज धान, ईख, गेहूँ, मकई, लाह और रई है। पहले यहा नीलकी अच्छी खेती होती थी, पर अब उसका विलुल हास हो गया है। श्यामी, सूतोंके फपडे, पीतल और ताँबेके अच्छे अच्छे बरतन तैयार होते हैं। वाकुडा शहर में टसरका अच्छा कारबार होता है।

विधा शिक्षामें यह जिला बहुत बढा चढा है। अभी यहा कुल मिला कर १३८८ स्कूल हैं जिनमेंसे एक शिग्य

कालेज है। स्कूलके अलावा १० अस्पताल और कुछ श्रम हैं।

२ उक्त जिलेका पश्चिम उपरिभाग। यह अक्षा० २२' ३८' से २३' ३८' उ० तथा देशा० ८६' ३६' से ८७' २५' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १६२१ घर्ग मील और जनसख्या ७ लाखसे ऊपर है। इसमें वाकुडा नामका १ शहर और ४०६६ ग्राम लगते हैं।

३ उक्त उपरिभागका एक शहर। यह अक्षा० २३' १४' उ० तथा देशा० ८७' ४' पू० धमलविशोर नदीके उत्तरो किनारे पर अवस्थित है। जनसख्या प्राय २०७३७ है, हिन्दूकी सख्या ज्यादा है। कहते हैं, कि वाकुरायने इस नगरको बसाया था, इसीसे इसका वाकुडा नाम पडा है। उनके वंशधर आन भी इस शहरमें वास करते हैं। टसरके फपडेका यहा अच्छा कारबार चलता है। १६०२ ई०में जो कुछाश्रम खोला गया है उसमें ७२ रोगी रहे जाते हैं। जलवायु स्वास्थ्यप्रद है।

विष्णुपुर देवो।

वाकुडी ( हि० खी० ) बा६६ देवो।

वाग ( फा० खी० ) १ शब्द, आराज। २ चिल्लाहट, पुकार। ३ यह ऊँचा शब्द या मन्त्रोच्चारण जो नमाज का समय सूचित करनेके लिये कोई मुल्ता मसजिदमें करता है, अज्ञान। ४ प्रात कालके समय मुरोंके बोलने का शब्द।

वागडू ( हि० वि० ) मूर्ख, बेरुकफ।

वांगर ( हि० पु० ) १ छकटा गाडोका यह वाग जो फडके ऊपर लगा कर फडके साथ वाध दिया जाता है। २ अश्रममें पाये जानेवाले एक प्रकारके पैल। ३ ब्यादके विरुद्ध यह भूमि जो कुछ ऊँचे पर अवस्थित हो, यह भूमि जो नदी भीर आदिके बढने पर भी कमी पानीमें न डूने।

वागा ( हि० पु० ) यह रई जो ओटी न गढ़ हो, फपास।

वागुर ( हि० पु० ) पशुओं या पक्षियोंके फसानेका जाल, फदा।

वाचना ( हि० कि० ) १ पढना। २ शेष रहना, वाकी रहना। ३ बचाना, छोड देना।

वाछना ( हि० कि० ) १ अभिलाषा करना, चाहना, इच्छा



करना । २ अच्छी या घुरी चीजे चुना, छाटना ।  
 बाभ ( हि० स्त्री० ) १ बन्ध्या, यह स्त्री निम्ने सन्तान न  
 होती हो । २ कोई माण्ड जिम्ने घषा न होता हो । ३  
 एक प्रकारका पटाही वृक्ष । इसके फले की गुठलिया  
 घषो के गलेमें, उन्को रोग आदिमे बचानेके लिये बाधी  
 जाती है ।

बाभककौली ( हि० स्त्री० ) वन परवल, खेपसा ।  
 बाभकपन ( हि० पु० ) बन्ध्यात्व, बाभ होनेका भाव ।  
 बाट ( हि० पु० ) १ बाटनेकी क्रिया या भाव । २ भाग,  
 हिस्सा । ३ घाम या पपालका बना हुआ एक मोटा-  
 सा रस्सा । गात्रके लोम इन्ने कुनार सुदी १४ की बनाते  
 हैं और मोनो ओरसे कुछ कुछ लोम इन्ने पकड़ कर तब  
 तक गींचातानी करते हैं जब तब यह टूट नहीं जाता । ४  
 गोभी आदिके लिये एक विशेष प्रकारका भोजन । इसमें  
 पत्ती, बिनीला आदि चीजे रहती हैं । इसके पानेमे  
 उनका दूध रहता है । ५ डेडर नामकी घास । यह  
 घानके रेतो में उग कर उसकी फसलको हानि पहु-  
 चाती है ।

बाटचूट ( हि० स्त्री० ) १ भाग, हिस्सा । २ देन लेन,  
 देना दिलाया ।

बाटना ( हि० क्रि० ) १ किसी चीजके कई भाग करके  
 अलग अलग रगना । २ विभाग करना, हिस्सा लगाना ।  
 ३ चितरण करना, थोडा थोडा सबको देना ।

बाटा ( हि० पु० ) १ बाटनेकी क्रिया या भाव । २ भाग,  
 हिस्सा । ३ गाने बजानेवाली आदिका यह इनाम जो  
 वे आपसमें बाट लेते हैं ।

बाड ( हि० पु० ) १ दो नदियोंके म गमके बीचकी भूमि ।  
 यह भूमि नदियों की बाडसे हव जानी है और फिर कुछ  
 दिनोंमें निरून्ना जाती है । इन प्रकारकी भूमि बड़ी उप  
 जाऊ होगी है । ( वि० ) २ बाडा देगो ।

बाडा ( हि० पु० ) १ यह पशु जिनकी कुछ बट गद हो । २  
 परिवारहीन पुरय, यह मर्द निम्नेके लखेवाले न हो ।  
 ३ लोना । ( वि० ) १ पुच्छहीन, जिनके पूछ न हो ।

बाड़ी ( हि० स्त्री० ) १ पुच्छहीन गामी, बिना पूछकी गाय ।  
 २ कोई मादा पशु जिनकी पूछ न हो या बट कई हो । ३  
 छोटी हाडी, छोटी ।

बाड़ीबाज ( हि० पु० ) १ लाठीबाज, लखीसे लखेवाला ।  
 २ उपद्रवी, शरारती ।

बाद ( फा० पु० ) सेजक, दाम ।

बादर ( हि० पु० ) बन्दर देगो ।

बाँदा ( हि० पु० ) १ एक प्रकारकी घनस्पति जो अग्य वृक्षों  
 की शाखाओं पर उग कर पुष्ट होती है । २ किसी वृक्ष  
 पर उगो हुई दूसरी घनस्पति ।

बादी ( हि० स्त्री० ) दासी, ली थी ।

बाट्ट ( हि० पु० ) १ फीदी, ब धुना ।

बाँध ( हि० पु० ) नदी या जलानय आदिके किनारे मिट्टी  
 पत्थर आदिया बनाया हुआ धुस्स । यह पानीकी बाट  
 आदि रोकनेके लिये बनाया जाता है ।

बाँधना ( हि० क्रि० ) १ रस्सी, तारो, कपड़े आदिको  
 सहायतासे किसी पदार्थको घघनमें करना । २ पैसा  
 प्रथम या निग्रथय कर देना जिससे किसीको किसी विशेष  
 प्रकारसे व्यवहार करना पड़े, पाब द करना । ३ कम्मे  
 या जकड़नेके लिये रस्सी आदि लपेट कर उममें गाँठ  
 लगाना । ४ पकड़ कर पद करना, फँद करना । ५  
 चारों ओरसे बटोरे या लपेटे हुए कपड़े आदिके कोनो को  
 चारो ओरसे बटोर कर और गाँठ दे कर मिलाया जिसमें  
 सपुट सा बन जाय । ७ मथान आदि बगाना । ८ प्रेम  
 पाजमें बद्ध करना । ९ रचनाके लिये सामग्री जोड़ना,  
 उपक्रम करना । १० मन्त्र तन्त्रकी सहायतासे भयया  
 और किसी प्रकार प्रभाव, जक्ति या जाति आदिको  
 रोकना । ११ नियत करना, मुकर्रर करना । १२ पानीका  
 बहाव रोकनेके लिये बाध आदि बाँधना । १३ सूर्य  
 आदिको हाथों में दबा कर पिण्डके रूपमें लाना । १४  
 किसी प्रकारका अन्न या मन्त्र आदि साथ रखना । १५  
 ठोक करना, हुदस्त करना । १६ क्रम या व्यवस्था आदि  
 ठोक करना ।

बाँधनू ( हि० पु० ) १ उपग्रह, मन्त्र, २ कपड़े की रसाई-  
 में यह बन्धन जो रंगरंग रखा है । ३ रंगारंग आदि रंगनेके पा  
 या और कोई ऐसा पद  
 गया हो । ४ कोई या  
 उमके स्वघनमें तरह तरह

मिठ्या अभियोग, झूठा दोष । ६ कल्पित बान, मनसे गढी हुई वात ।

बाँस ( हि० पु० ) सापके आकारकी एक प्रकारकी मछली ।

बाँसी ( हि० स्त्री० ) १ दीमके रहनेका भौटा, चैबीठा ।

बाँसी ( हि० स्त्री० ) बाँसी देवो ।

बाँसाछोडो ( हि० स्त्री० ) लहसुनियानी जातिका एक प्रकारका रत्न ।

बाँसारपी ( हि० पु० ) वामन, बीना ।

बाँसा ( हि० स्त्री० ) बाँसा देवो ।

बाँस ( हि० पु० ) १ नृप जातिको एक प्रसिद्ध वास्तुपति ।

इसके काठो में थोड़ी थोड़ी दूर पर गांठे होती हैं और

गांठो के बीचका स्थान प्रायः कुछ पोला होता है । विशेष

विवरण ४२ शब्दमें देखो । २ माला । ३ पीठके बीचकी

दृष्टी जो गर्दनसे कमर तक चली गई है, रीठ । ४ नाव

खेनेकी लगी । ५ सवा तीन गजकी एक माप, लाठा ।

बाँसखाली—चट्टग्राम जिलेके अन्तर्गत एक प्रधान धानिज्य

स्थान । यह अक्षा० २२ ५०' १५" उ० तथा देशा० ६१

३१' पू०के मध्य अवस्थित है । यहा चावलका धानिज्य

जोरो चलता है ।

बाँसगवा—१ युक्तप्रदेशके गोरखपुर जिलान्तर्गत पदरौना

तहसीलका एक ग्राम । यह अक्षा० २६ ४८ उ० तथा

देशा० ८४ १२' पू० गोरखपुर शहरसे ६४ मील पूर्वमें

अवस्थित है । जनसंख्या पाच हजारसे ऊपर है ।

बाँसगाव—२ युक्तप्रदेशके गोरखपुर जिलेकी एक तहसील ।

यह अक्षा २६ १४' से २६ ४३' उ० तथा देशा० ८३ ४' से

८३ ४४' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ६१४

वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ४३८३६४ है । इसमें ४

गहर और १६६७ ग्राम लगते हैं । इसके उत्तर अमी

नदी, दक्षिण गोगरा और पूर्वमें रामी है ।

२ उक्त उपविभागका एक गहर । यह अक्षा० २६ ३३'

उ० तथा देशा० ८३ २२' पू० गोरखपुर शहरसे १६ मील

दक्षिण पड़ता है । जनसंख्या पाच हजारसे ऊपर है ।

शहरमें दो स्कूल हैं ।

बासदा—१ बम्बईके सूरत पञ्जेलीके अन्तर्गत एक सामंत

राज्य । यह अक्षा० २० ४२' से २० ५६' उ० तथा देशा० ७३

१८' से ७४ ३४' पू० के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण

२१५ वर्गमील है । इसके पश्चिममें सूरत जिला, उत्तरमें बर्डीद्वाराज्य, पूर्वमें दङ्गा राज्य और दक्षिणमें घरमपुर राज्य है । इस राज्यका अधिकांश स्थान पर्वत और जङ्गलमय है । कहीं कहीं ममनल क्षेत्र भी देखा जाता है । धान, चना और उड़द यहाकी प्रधान उपज है । सूती फीता, चटाई, पग्या, पशमीना गलीचा भी प्रस्तुत होता है ।

यहाके सरदार राजपूत वंशीय हैं । ये लोग अपनेको हिन्दू और मोलाङ्कि नामक राजपूतवंशसे उत्पन्न बनलाते हैं । वामदा नगरके ममोपत्य दुर्गेच प्राचोर दुर्ग और सैकडों देगमन्दिरादिका ५२ सावशेष इसकी पूर्ण समृद्धिका परिचायक है । मुसलमानी अमलके पहले इनकी राज्य सीमा समुद्रोपकूल तक फैली हुई थी । मुसलमानोंकी चल्तीमें इन्होंने जङ्गल प्रदेशमें आश्रय लिया । महाराष्ट्र लोग इनसे बर लिया करते थे । किन्तु १८०२ ई०में बसाई सन्धिके बाद पेशवा ने बरस प्रहका भार अगरेजोंके ऊपर सौंप दिया । वर्तमान राजाका नाम महारल थ्रोइन्द्रसिंहजी प्रतापसिंहजी राजा साहब है । सरकारको ओरसे इन्हे ६ सलामी तोपें मिलती हैं । इनके पास १५० सेना और १४ ब्रह्मान हैं । मुस्लिमका विचार राजा स्वयं करने है । किसको फासी देनेमें इन्हे पालिटिक्ल पजेण्टकी मलाह लेनी पड़ती है । राजा को दत्तक पुत्र ग्रहणका अधिकार है । बडे लक्ष्मी राजसिंहासनके अधिकारी होते हैं ।

राज्यकी जनसंख्या ४० हजारसे ऊपर है जिनमेंसे हिंदूकी संख्या सबसे अधिक है यहा की भाषा गुजराती है । राजस ७७४३४७ रु० है जिनमेंसे ब्रिटिशसरकारकी ७३५१ रु० कर और १५०० रु० चौथ स्वयंसे देने पड़ते हैं । राज्य भरमें ४ बालक-स्कूल और १ बालिका-स्कूल है । जगली असभ्य जातिके लड़कोंकी मुफ्तमें शिक्षा दी जाती है । शिक्षाविभागमें राज्यका पांच हजारसे ज्यादा रुपया खर्च होता है । राज्यकी ओरसे एक अस्पताल भी खुला है ।

२ उक्त राज्यका प्रधान नगर । यह अक्षा० २० ४३' उ० तथा देशा० ७३ २८' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या ४ हजारके बरोब है । राजाके अनुवादसे यहा बालक और

करना । २ अच्छी या तुरी चीजे' चुनना छाटना ।  
 बाभ ( हि० स्त्री० ) १ बन्ध्या, वह स्त्री जिसे सन्तान न  
 होती हो । २ कोई मादा जिसे बच्चा न होता हो । ३  
 एक प्रकारका पहाड़ी वृक्ष । इसके फलों की गुठलिया  
 बच्चों के गलेमें, उनको रोग आदिसे बचानेके लिये बांधी  
 जाती हैं ।  
 बाभककोली ( हि० स्त्री० ) वन परवल, ऐखसा ।  
 बांभापन ( हि० पु० ) बन्ध्यापन, बाभ होनेका भाव ।  
 बाट ( हि० पु० ) १ वाटनेकी क्रिया या भाव । २ भाग,  
 हिस्सा । ३ घास या पयालका घना हुआ एक मोटा-  
 सा रस्सा । गाँवके लोग इन्ने कुवार सुदी १४ को बनाते  
 हैं और दोनो ओरसे कुछ कुछ लोग इन्ने पकड़ कर तब  
 तक खींचातानी करते हैं जब तक वह टूट नहीं जाता । ४  
 गीओ आदिके लिये एक विशेष प्रकारका भोजन । इसमें  
 खरी, विनीला आदि चीजे रहती हैं । इसके खानेसे  
 उनका दूध बढ़ता है । ५ ढेडर नामकी घास । यह  
 धानके खेतों में उग कर उसकी फसलको हानि पहु  
 चाती है ।  
 बाटचूट ( हि० स्त्री० ) १ भाग, हिस्सा । २ देन लेन,  
 देना दिलाना ।  
 बाटना ( हि० क्रि० ) १ किसी चीजेके कई भाग करके  
 अलग अलग रखना । २ विभाग करना, हिस्सा लगाना ।  
 ३ वितरण करना, थोड़ा थोड़ा सजकी देना ।  
 बाटा ( हि० पु० ) १ वाटनेकी क्रिया या भाव । २ भाग,  
 हिस्सा । ३ गाने, बजानेवाले आदिका वह इनाम जो  
 वे आपसमें बाट लेते हैं ।  
 बाड ( हि० पु० ) १ दो नदियों के स गमके बीचकी भूमि ।  
 यह भूमि नदियों की बाडसे डूब जाती है और फिर कुछ  
 दिनोंमें निरुल जाती है । इस प्रकारकी भूमि बड़ी उप-  
 जाऊ होती है । ( वि० ) २ वाडा देणो ।  
 बाडा ( हि० पु० ) १ वह पशु जिसकी पूँछ कट गई हो । २  
 परिगारहीन पुरुष, वह मर्द जिसके लडकेवाले न हों ।  
 ३ तीता । ( नि० ) १ पुच्छहीन, जिसके पूँछ न हो ।  
 बाँडी ( हि० स्त्री० ) १ पुच्छहीन गायी, बिना पूँछकी गाय ।  
 २ कोई मादा पशु जिसकी पूँछ न हो या कट गई हो । ३  
 छोटी लाठी, छड़ी ।

बाँडीबाज ( हि० पु० ) १ लाठीबाज, लकड़ीसे लडनेवाला ।  
 २ उपद्रवी, शरारती ।  
 बाद ( फा० पु० ) सेवक, दास ।  
 बाँदर ( हि० पु० ) १ दर देखो ।  
 बाँवा ( हि० पु० ) १ एक प्रकारकी घनस्पति जो अन्य वृक्षों  
 की शाखाओ पर उग कर पुष्ट होती है । २ किसी वृक्ष  
 पर उगी हुई दूसरी घनस्पति ।  
 बादी ( हि० स्त्री० ) दासी, ली डी ।  
 बादू ( हि० पु० ) १ कैदी, बंधुवा ।  
 बाँध ( हि० पु० ) नदी या जलाशय आदिके किनारे मिट्टी  
 पत्थर आदिका बनाया हुआ धुस्स । यह पानीको बाढ  
 आदि रोकनेके लिये बनाया जाता है ।  
 बाँधना ( हि० क्रि० ) १ रस्सी, तागे, कपडे आदिकी  
 सहायतासे किसी पदार्थको घननमें करना । २ ऐसा  
 प्रयत्न या निश्चय कर देना जिससे किसीको किसी विशेष  
 प्रकारसे व्यवहार करना पड़े, पाव द करना । ३ कसने  
 या जकड़नेके लिये रस्सी आदि लपेट कर उसमें गाठ  
 लगाना । ४ पकड़ कर बंद करना, कैद करना । ५  
 चारों ओरसे बटोरे या लपेटे हुए कपडे आदिके कोनो को  
 चारो ओरसे बटोर कर और गाठ दे कर मिलाना जिसमें  
 सपुट सा घन जाय । ७ मकान आदि बनाना । ८ प्रेम  
 पाशमें बद्ध करना । ९ रचनाके लिये सामग्री जोड़ना,  
 उपकम करना । १० मन्त्र तन्त्रकी सहायतासे अथवा  
 और किसी प्रकार प्रभाव, शक्ति या जाति आदिको  
 रोकना । ११ नियत करना, मुकूर कराना । १२ पानीका  
 बहाव रोकनेके लिये बांध आदि बाँधना । १३ सूर्ण  
 आदिकी हाथों में दबा कर पिण्डके रूपमें लाना । १४  
 किसी प्रकारका अन्न या शख आदि साथ रखना । १५  
 ठीक करना, ठुकरा करना । १६ क्रम या अवस्था आदि  
 ठीक करना ।  
 बाँधनू ( हि० पु० ) १ उपकम, मंस्वा । २ कपडेकी रगाई-  
 में वह बन्धन जो रंगरेज लोग चुनरी या लहरियदार  
 रंगाई आदि रंगनेके पहले कपडेमें बाधते हैं । ३ चुनरी  
 या और कोई ऐसा वस्त्र जो इस प्रकार बांध कर रगा  
 गया हो । ४ कोई बात होनेवाली मान कर पहलेसे ही  
 उसके सबधमें तरह तरहके विचार, प्याली पुलाव । ५

मिथ्या अभियोग, झूठा श्रेय । ६ कल्पित बात, मनसे गढी हुई बात ।

बाँव ( हि० पु० ) सापके आकारकी एक प्रकारकी मछली ।

बाँवी ( हि० स्त्री० ) १ दीमके रहनेका भोटा, बँबीटा ।

बाँमी ( हि० स्त्री० ) बाँसी देखो ।

बाँयाछोडो ( हि० स्त्री० ) लहसुनियाकी जातिका एक प्रकारका रत्न ।

बाँवारघी ( हि० पु० ) वामन, बीना ।

बाँया ( हि० स्त्री० ) बाँया देखो ।

बाँस ( हि० पु० ) १ तृण जातिकी पत्र प्रसिद्ध वनस्पति ।

इसके फाडो में घोड़ी घोड़ी दूर पर गाठे होती हैं और

गाडो के बीचका स्थान प्रायः कुछ पोला होता है । विशेष

विवरण ४२ शब्दमें देखो । २ आला । ३ पीठके बीचकी

दुब्बी जो गर्दनसे कमर तक चली गई है, रोठ । ४ नाव

खेनेकी लगी । ५ सया तीन गजकी एक माप, लाडा ।

बाँसखाली—चट्टग्राम जिलेके अन्तर्गत एक प्रधान धार्मिक

स्थान । यह अक्षा० २२ ५०' १५" उ० तथा देशा० ११

३१' पू०के मध्य अवस्थित है । यहा चावलका धार्मिक

जोरो चलता है ।

बाँसगया—१ युक्तप्रदेशके गोरखपुर जिलान्तगत पदरीना

तहसीलका एक ग्राम । यह अक्षा० २६ ४८ उ० तथा

देशा० ८४ १२' पू० गोरखपुर शहरसे ६४ मील पूर्वमें

अवस्थित है । जनसंख्या पाच हजारसे ऊपर है ।

बाँसगाव—१ युक्तप्रदेशके गोरखपुर जिलेकी एक तहसील ।

यह अक्षा २६ १४' से २६ ४३' उ० तथा देशा० ८३ ४' से

८३ ४४' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ६१४

वर्गमील और जनसंख्या प्रायः ४३८३६४ है । इसमें ४

शहर और १६६७ ग्राम लगे हैं । इसके उत्तर अमी

नदी, दक्षिण गोगरा और पूर्वमें राती है ।

२ उक्त उपविभागका एक शहर । यह अक्षा० २६ ३३'

उ० तथा देशा० ८३ २२' पू० गोरखपुर शहरसे १६ मील

दक्षिण पड़ता है । जनसंख्या पाच हजारसे ऊपर है ।

शहरमें दो स्कूल हैं ।

बासदा—१ बम्बईके सूरत पत्रेन्सीके अन्तर्गत एक सामन्त

राज्य । यह अक्षा० २० ४२' से २० ५६' उ० तथा देशा० ७३

१८ से ७४ ३४' पू० के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण

२१५ वर्गमील है । इसके पश्चिममें सूरत जिला, उत्तरमें

वडोदाराज्य, पूर्वमें वडोदाराज्य और दक्षिणमें धरमपुर

राज्य है । इस राज्यका अधिकांश स्थान पर्यंत और

जङ्गलमय है । कहीं कहीं समतल क्षेत्र भी देखा जाता

है । धान, चना और उड़द यहाकी प्रधान उपज है ।

सूती फीता, चढाई, प्या, पशमीना गलीचा भी प्रस्तुत

होता है ।

यहाके सरदार राजपूत वंशीय हैं । ये लोग अपनेको

हिन्दू और मोलाङ्कि नामक राजपूतवंशसे उत्पन्न बतलाते

हैं । बासदा नगरके समीपस्थ दुर्भेद्य प्राचीर दुर्ग और

सैनिकों के मन्दिरादिना ४२ सावशेष इसकी पूर्व समु

द्रिका परिचायक है । मुसलमानों अमलके पहले इनकी

राज्य-सीमा समुद्रोपकूल तक फैली हुई थी । मुसल

मानोंकी चलतीमें इन्होंने जङ्गल प्रदेशमें आश्रय लिया ।

महाराष्ट्र लोग इनसे कर लिया करते थे । किन्तु १८०२

ई०में बर्माइ मन्धिके बाद पेशवा ने करसे प्रह्ला भार

अ गरेजोंके ऊपर सौंप दिया । वर्तमान राजाका नाम

महबल श्रोइन्द्रसिंहजी प्रतापसिंहजी राजा साहब है ।

सरकारको ओरसे इन्हे ६ सलामी तोपें मिलती हैं । इन

के पास १५० सेना और १४ कमान है । मुफ्तमेंका

गिन्धार राजा स्वयं करते हैं । किसीको फा सी देनेमें

इन्हे पालिटिकल पजेण्टकी सन्हाह लेनी पडती है । राजा

को दत्तक पुत्र ग्रहणका अधिकार है । बडे लक्ष्मणजी राज

सिंहासनके अधिकारी होते हैं ।

राज्यकी जनसंख्या ४० हजारसे ऊपर है जिनमेंसे

हिंदूकी संख्या सबसे अधिक है यहा की भाषा गुजराती

है । राजास ७९४३४७ रु० है जिनमेंसे प्रशासनकार

की ७३५१ रु० कर और १५०० रु० चीय स्वरूप देने

पडते हैं । राज्य भरमें ४ बालक-स्कूल और १ बालिका-

स्कूल है । जगली असम्पन्न जातिके लडकोंको मुफ्तमें

शिक्षा दी जाती है । शिक्षाविभागमें राज्यका पांच

हजारसे ज्यादा रुपया खर्च होता है । राज्यकी ओरसे एक

अस्पताल भी खुला है ।

२ उक्त राज्यका प्रधान नगर । यह अक्षा० २० ४७' उ०

तथा देशा० ७३ २८' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या

४ हजारके बराबर है । राजाके अनुग्रहसे यहा बालक और

वालिका विद्यालय, औषधालय आदि प्रतिष्ठित हुए हैं।  
 बांसदिहा—१ युक्तप्रदेशके बलिया जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५°४७' से २६°७' उ० तथा देशा० ८३°५४' से ८४°३१' पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ३७१ वर्ग मील और जनसंख्या ३ लाखके करीब है इसमें ५ शहर और ५१५ ग्राम लगते हैं। बहुत-सी छोटी छोटी नदिया तहसीलके मध्य होती हुई घघरामें मिली हैं। प्रतिवर्ष वर्षाऋतुमें इसका अधिकांश स्थान घघराकी बाढसे बह जाता है।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २५°५३' उ० और देशा० ४१°४१' पू० बलिया शहरसे १० मील उत्तर पडता है। जनसंख्या प्रायः १००२४ है। पहले यह स्थान नरौलिया राजपूतके अधिकारमें था। पीछे भूमिहारोंने इसे खरीद लिया। शहरमें अभी १ चिकित्सालय और १ स्कूल है।

बांसपूर ( हि० पु० ) एक प्रकारका धारीक कपडा। कहते हैं, कि यह इतना महीन होता था, कि इसका एक धान बासके चोंगिमें मरा जा सकता था।

बासफल ( हि० पु० ) सयुकप्रान्तमें पैदा होनेवाला एक प्रकारका धान।

बासफोड—युक्तप्रदेशमें रहनेवाली निरुद्ध जाति। यह डोम तामकी नीच जातिकी एक शाखा है। बास फाडना या घरांमीका कार्य करना इनका जातीय व्यवसाय है, इसीसे यह नाम पडा है। मिर्जापुर-वासी बासफोडोंका कहना है, कि वे रेवा नगरके उत्तर पश्चिमस्थ घोरसितपुर नामके स्थानसे यहा आये हैं। गोरखपुर वासी अपनेको घरवाडी डोम बतलाते हैं। ये दूसरोंकी अपनी जातिमें मिला सकते हैं। यदि कोई इस जातिकी रमणी पर आसक्त हो इनमें मिला चाहे, तो उसे महा भोज देना पडता है। पीछे उस जातिके साथ एकत्र बैठ कर मद्य पान करनेसे उसको इस जातिकी पूर्ण अधिकार प्राप्त हो जाता है।

ये लोग डोम जातिके अन्तर्भूक्त होने पर भी कभी कभी अपनेको धानुक बतलाते हैं। भागलपुर शहरमें जो बासफोड हैं उनमें पङ्कत विवाह प्रचलित है। किन्तु उस जिलेके बाहर कहीं भी पङ्कत विवाह प्रचलित नहीं

देखा जाता। नेपाल सीमा तवासी बासफोड वहाके ही विभिन्न थाकमें डीह विवाह करते हैं। मिर्जापुरमें महा वती, चमकल, गौमल, समुद्र, लहर, फलई, मगहि, सरैहा आदि अनेक थाक हैं। इनमें सपिण्ड विवाह भी चलता है। किन्तु ममेरी वा फुफेरी बहनसे शादी नहीं होती। यहा तक कि जिस घरमें बासफोड जाते-दार कन्याका विवाह होता है उस घरमें बिना दो तीन पीढी पीते दूसरा विवाह नहीं हो सकता। गोरखपुरके घरवाडी, बासफोड, माङ्गुता, डोम, घरकार, नाटक, तसिहा, हलालखोद, कूच याधिया प्रभृति विभिन्न थाकों में विवाहादि क्रिया होती है।

ये लोग अनेक विषयोंमें हिन्दूका अनुकरण करते हैं। समाजशासनके लिये इनमें एक नेता होता है जिसे सब कोई 'मोडल' कहते हैं। समाजमें जब अनौति अनाचार या विघ्न उपस्थित होता है, तब यह अनेक सदस्योंकी सम्मति ले न्याय करता है। यदि कोई नीचाशय व्यक्ति धोचिन या डोमिनके साथ आसक्त होता है, तो वह जन्म भरके लिये जातिच्युत किया जाता है। स्त्रियोंको भी इसी प्रकार दण्ड मिलता है। यदि कोई उच्च जातिकी स्त्रीके प्रेममें फस जाय, तो वह एक जातीय भोज देने मात्रसे ही फिर समाजमें आ सकता है। इच्छानुसार एक दो या तीन व्याह तक ये करते हैं। कोई भी पुरुष उपपत्नी नहीं रख सकता और न स्त्री ही स्वामीके रहते दूसरा स्वामी कर सकती है। स्त्री यदि दूसरे पुरुषके प्रेममें फसी हो, तो उसके स्वामी और पिताको एक बडा भोज देना पडता है। दोष साबित न हो, तो स्त्रीको सजा नहीं मिलती।

इन लोगों में वालिका विवाह ज्यादा होता है। यदि व्याहके पहले कोई लडकी ऋतुमती होवे, तो उसका पिता जातिच्युत किया जाता है। घरका मामा व्याह स्थिर करता है। सम्यन्ध स्थिर हो जाने पर कन्याके पक्षमें ४॥ २० पहिले जमा करना पडता है। यदि कोई स्त्री स्वामी का तिरस्कार करे वा उच्छिष्ट भोजन खानेको दे, तो वह समाजकी अनुमति ले कर उसका त्याग कर सकता है और दूसरा विवाह भी कर सकता है। विधवाके समाई या धरेजा करनी है और उनके पुत्र और कन्या

होते ही पितृसम्पत्तिके अधिकारी होते हैं। विधवा बेकरके साथ भी व्याह कर सकती है। उसका प्रथम जातपुत्र पिताको सम्पत्तिले वचित नहीं होता। प्रत्येक व्यक्ति अपने भाई, बहन और नातीको गोद ले सकता है।

पुत्र होने पर १२ दिन तक वे अशुद्ध रहते हैं। छुटिका श्रद्धमें वासीरा जातिकी स्त्रिया इनकी सेवा करती हैं। बारह दिन तक मृत व्यक्तिके उद्देश्यसे सूरजकी बलि दी जाती है। उसके मासकी सभी मिल कर खाते हैं। स्त्रिया इस दिन छुपकी पूजा करती हैं। ये जातबालकके कर्णवेध उपलक्षमें ब्राह्मण पंडितों से मितो सुदवाते हैं। कर्णवेधके बाद प्रत्येक बालक ही समाजमें शामिल गिना जाता है और तमीने जातीय प्रथा नुसार चलता है।

विवाहकी शुभलग्न सुदवानेके लिये ये ब्राह्मण पण्डितोंके पास जाते हैं। विवाहबधनके दूध बरनेके लिये बालकका पिता कन्याके पिताके साथ मदिरा पातकी बवुलता है और कन्याका भाई अपने पिताके मस्तक पर पगड़ी पहनाता है। इनकी विवाह प्रक्रिया घरकार जाति के समान है; किन्तु विवाहके कुछ पहले घरपक्षकी तरफ होम होता है। मण्डपमें ये नीमर और गुलरकी डाल गाड़ते हैं। विवाहमें नख काटते और दोनों पैर लाल रंगसे रंगते हैं। विवाह शेष होने पर हिंदुओं के अनुसार ये गीरी और गणेशजीकी पूजा करते हैं। तत्पश्चात् कन्यादान, ग धवनधन, सिन्दूरदान, आदि कार्य समाप्त करके घर कन्याको आमोद प्रमोदसे सारो रात फोहवर में गितांगी पढती है।

ये लोग मृतव्यक्तिका दाह करते हैं। किन्तु बल्य पयस्क वर्षोंकी अधया सक्रामक रोगग्रस्त व्यक्तिके मिट्टीमें गा : या नदीमें फे क देते हैं। दाहके बाद ये लोग भी नोमकी पत्तिया चखाते हैं। केवल दश दिन तक अठौच रहता है। दशमें दिन मृतका पुत्र, कन्या वा स्त्री अधया छोटा भाई दूध तथा अन्नसे पाच पिण्ड देता है। फिर घर आ कर वे शूकरका मांस खाते और धात्मीय जनोंको भोजन कराते हैं। इन कार्योंमें ब्राह्मणकी आवश्यकता नहीं पडती। पितृ पक्षमें ये १५ दिन तर्पणकी

तरह भूत पुरुषोंको भूमि पर जल दान करते हैं। नवें दिन वे पुरी, पीर, शूकर मास उनको देते हैं। १५वें दिन और भी समारोहसे पितृ पुरुषोंको भोग देते हैं।

विन्ध्याचलकी विन्ध्यावासिनीदेवी ही इनकी प्रधान देवता है। प्रति चैत्रमासकी ४वीं तारीखको ये देवीके नाम पर शूकर बलि देते हैं। गोरखपुरवासी कालिका देवीकी तथा धावणसुदी ५की नागीकी पूजा करते हैं। इसके सिवाय दीह नामके प्राम्पदेयता और पीपलके पेड आदिकी भी ये पूजते देखे जाते हैं। हरदोईवासी काल देव तथा देवीकी पूजा करते हैं। होली, रामनवमी, करवाचीय, गण्डपूजा आदि उत्सवोंमें भी ये लोग रूढ धामोद प्रमोद करते हैं।

स्त्रिया आभूषण पहनती हैं। बालक और बालिकाओं के दो नाम रखे जाते हैं। जातबालकके शरीरको सबल और पुष्ट बनानेके लिये ये बोभा दुलवाते हैं और उप देवताकी छुट्टिसे बचानेकी चेष्टा करते रहते हैं। ये गोमास नहीं खाते। डोम घोवों, छोटे भाईकी स्त्री, बड़े सालेकी स्त्री और मौजेकी स्त्रीमा स्पर्श नहीं करते। उन का स्पर्श करना वे लोग पाप समझते हैं। पपा, टोकनो और धासका बकस बनाना ही इनका दैनिक व्यवसाय है। कोई कोई मजूरी, ष्ठाडूरदार और मेहतरका काम करके भी अपना गुजारा चलाते हैं।

वासलो (हिं० स्त्री०) १ मुल्गी, वासुरी। २ रुपया पैसा रखनेकी एक प्रकारकी जालीदार लची पतली थैली। इस प्रकारकी थैली जो कमरमें बांधी जाती है। ३ धशोके आकारका एक प्रकारका बाजा जो पीतल या लोहेका बना होता है।

वासलोई—भागीरथी नदीकी एक शाखा। यह संधाल परगनेसे निकल कर बोरभूम और मुर्शिदाबाद जिलेके मध्य होती हुई जङ्गीपुरके निफ्ट गहानदीमें मिली है।

वासवाडिया—हुगली जिलेके अन्तगत एक नगर। यह अक्षा० २२ ५८' ३० तथा देशा० ८८ २४' ५० हुगली नदी के किनारे अवस्थित है। जनसंख्या साठे छ हजारके करीब है। यहां ईश्वरदेवीके १३ सुडामन्दिर हैं। लासने अधिक रुपये व्यय करके स्थानीय जमींदारपत्नी शङ्करि दासकी अनुमतिसे यह मन्दिर बनाया गया है।

उक्त सौभाग्यवती रमणीने मराठोंके हाथसे इस मन्दिरकी रक्षाके लिये इसके चारों ओर परिखा और एक कामान तथा अन्नसम्बलित दुर्ग बनवा दिया था।

बाँसवाडा—१ राजपूतानेके अन्तर्गत एक राज्य। यह अक्षा० २३° ३' से २३° ५५' उ० तथा देगा० ७३° ५८' से ७४° ४७' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या १६४६ है। इसके उत्तरमें प्रतापगढ और मेराड, पश्चिममें डू गरपुर और सुन्ध, दक्षिणमें भालोद, ऋवुका और पूर्वमें सेलान, रतलाम और प्रतापगढ है। इस राज्यकी पर्वतमय वन्य भूमिमें भीलजातिका बास है। सरदार यहांके निगो दिया राजपूत हैं। डू गरपुरमें जो राजपूतवंश राज्य करते हैं वे इनकी एक शाखा हैं। १६वीं शताब्दीमें बाँसवाडा और डू गरपुर एक राजाके अधीन था। १५२८ ई०में सरदार उदयसिंहको मृत्यु होने पर उनके दो पुत्रोंने पिता के आदेशानुसार उक्त दोनों सम्पत्ति आपसमें बाँट ली। इसी समय दोनों सामन्तों के वंशधर परस्पर स्वाधीन हो कर राज्य करने लगे। माहो नदी ही उनकी राज्य सीमा निर्देश करती है। १८वीं शताब्दीके शेषमें बाँसवाडाराज मरहटों की अधीनता स्वीकार कर धारके अधिपतिको कर देने लगे। १८१२ ई०में अंगरेजोंने महा राष्ट्रीय बन्धन काट कर उन्हें अपना मित्र बना लिया। १८१८ ई०की सन्धिसे अनुसार राजा अंगरेजोंकी सहायता करनेमें प्रतिभ्रत हुए। भूतपुर सामन्त महारावल लक्ष्मणसिंहका १६०५ ई०में देहान्त हुआ। पीछे उनके बड़े लड़के शम्भूजी गद्दी पर बैठे। उनका जन्म १८६८ ई०में हुआ था। अमी पिरथीसिंह बाँसवाडा-राजसिंहासनकी सुशोभित कर रहे हैं। इनका पूरा नाम है,— पंच पंच राय राय महारावल साहिब श्री पिरथीसिंहजी बहादुर। इन्हें १५ तोपोंकी सलामी मिलती है। राजस्व नौ लाखके करीब है। राजाको गोद लेनेका अधिकार है। अभी इनके पास ५०० पदाति, ६० अश्वारोहो और ३ कमान हैं। पहले यहां सलीमसाही सिका चलता था जो अंगरेजी सिंघकेसे विहाई कम होता था, पर १६०४ ई० से अंगरेजी सिका ही चलने लगा है।

राज्यमें १ शहर और १२८ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या दोनों दो लाखके करीब है। अनाजमें मूकई और चावल

मुख्य पैदावार है। मूग, उड़द, तिल, सरसो गेहूँ, चना, जौ भी अच्छी तरह होते हैं। खनिज पदार्थ अभी तक बहुत कम पाये गये हैं और जो पाये भी गये हैं वे बहुत थोड़ी-सी मात्रा में। यहांकी गाय भैंस अधिक दूध देने वाली नहीं होतीं। इनके सींग और प्रान्तोंकी गाय भैंस से कुछ अधिक लम्बे होते हैं। यहांका जलवायु अप्रिल से जून तक गर्म और पुश्क तथा वरसातमें तर और नम रहता है। शीतकाल सबसे अच्छा समझा जाता है। पर कहीं कहीं इस देगमें ऐसी ठंड भी पड़ती है, कि जिससे उसके विषयमें यह कहा जात प्रसिद्ध हो गई है—

बाँसवाडाको धायरो, आतरीकी टाड।

इनसे भी जो ना मरे, तो छापो वारे फाड ॥

यहांकी राजप्रणाली राजतन्त्र शासन है। दरवारको अपने राज्यके आन्तरिक प्रबंधमें पूर्ण शासनाधिकार है।

२ उक्त सामन्त राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० २३° ३३' उ० और देगा० ७४° २७' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्राय ७०३८ है जिनमेंसे सैंकड़ों पीछे ६० हिन्दू और शेष मुसलमान हैं। १६वीं शताब्दीमें बाँसवाडाके प्रथम सरदार जगमलने इसे बनाया। कहते हैं, कि पहले यह स्थान भील सरदार बाँसनाके दखलमें था। उसीके नाम पर इसका नामकरण हुआ है। पीछे जगमलने उसे मान कर बाँसवाडा पर अधिकार जमाया। इस नगरके चारों ओर प्राचीर है। दक्षिणस्थ उच्चभूमिके ऊपर राजप्रासाद अवस्थित है। शाहीविलास नामक प्रासादमें वर्तमान सरदार रहते हैं। इसके पूर्वमें वार्ड ताल नामकी दिग्गी है। उस दिग्गीमें सलान जो उद्यान है उससे आध कोस दूर बाँसवाडा राजकी छतरी अवस्थित है। वर्तमान नगरसे २ मील दक्षिण पर्वतके ऊपर दुर्गवासादिका खडहर नयनगोचर होता है। यहां प्रतिवर्ष आश्विन मासमें १५ दिन तक मेला लगता है। शहरमें एक शाकधर, टेलिग्राफ आफिस, एक कारागार, एक पड़्डो वर्नायुलर स्कूल और एक अस्पताल है।

बाँसा—अयोध्या प्रदेशके हरदोई जिलान्तर्गत एक नगर। बाँसा (हि० पु०) १ बाँसका बना हुआ चोंगेके आकारका यह छोटा नल जो हलके साथ बंधा रहता है। इसीमें बनेके

लिये अन्न भरा रहता है जो नीचेकी ओरसे गिर कर खेतमें पड़ता है। २ नाकके ऊपरका हड्डी जो दोनों नथनोंके ऊपर बीचोबीच रहती है। ३ एक प्रकारका छोटा पीया। इसमें चर्बई रगके बहुत सुन्दर फूल लगते हैं। इसके बीज बहुत छोटे और काले रगके होते हैं। इसकी लकड़ीके कोयलोंसे धारूढ़ बनती है।

बासागडा ( हि० पु० ) कुश्तीका एक पेच।

बासिनी ( हि० खी० ) एक प्रकारका घास जिसे बरियाल, ऊना अथवा कुल्लुक भी कहते हैं।

बासी—राजपूतानेके उदयपुरके अन्तर्गत बासी सामन्त राज्यकी राजधानी, यह अक्षा० २४ २०' उ० तथा देशा० ७४ २४' पू० उदयपुर शहरसे ४७ मील दक्षिण पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या १२६५ है। मेवाड़के उद्योगोद्भव एक सम्प्रान्त व्यक्ति यहाका शासन करते हैं। 'रायत' उनकी उपाधि है। इस राज्यमें कुल ५१ ग्राम लगते हैं। राजस्व २४००० रु० हैं जिनमेंसे १६२ रु० पृथिञ्ज सरकारको देने पड़ते हैं।

बाँसी—१. युक्तप्रदेशके वस्ती जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २७ से २७ २८' उ० तथा देशा० ८२ ४६ से ४३ १४' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ६२१ वर्गमील और जनसंख्या ४ लाखसे ऊपर है। इसमें 'उसका' नामक एक शहर और १३४३ ग्राम लगते हैं। यह तहसील उत्तर नेपाल सीमासे ले कर दक्षिण राप्ती नदी तक विस्तृत है।

२. युक्तप्रदेशके गोरखपुर जिलान्तर्गत एक नगर और बासी तहसीलका सदर। नगीके दूसरे किनारे नर्कथा नामक ग्राममें यहांके राजा रहते हैं। पहले बाँसी नगर में ही राजप्रासाद अवस्थित था। पूर्वतन राजदुर्गका ध्वसायशोर आज भी विद्यमान है। इस नगरसे कई एक पथ नेपाल, बस्ती, दुमरियागञ्ज, बड्डना आदि स्थानों तक गये हैं। पहले इन सब स्थानोंमें प्रत्यादिका जोरों घाण्डिन्य चलता था, पर अभी उतना नहीं है।

बासी ( हि० खी० ) १ एक प्रकारका मुलायम गतला घास जिससे हुफेके नैचे आदि बनते हैं। २ एक प्रकारका गेहूँ जिसकी बाल गुच्छ काली होती है। ३ एक प्रकारका पत्थर। इसका रंग सकेही लिये पीला होता है और बडी

बडी सिलोंके रूपमें पाया जाता है। ४ एक प्रकारका घान। इसका चावल बहुत सुगन्धित, मुलायम और स्वादिष्ट होता है। यह विशेषतः समुक्तप्रान्तमें पाया जाता है। इसका दूमरा नाम बासफल भी है। ५ एक प्रकारकी घास। इसके उठल मोटे और कड़े होते हैं, इसीलिये पशु कम खाते हैं। ६ एक प्रकारका पशु।

बासुरी ( हि० खी० ) मु हसे फू क कर बजानेका एक वाजा जो बासका बना होता है। इसकी लम्बाई डेढ बालिष्ठ होती है और सिरा बासकी गाठके कारण बंद रहता है। बंद सिरकी ओर सात स्वरोंके लिये सात छेद होते हैं और दूसरी ओर एक विशेष प्रकारसे तैयार किया हुआ बजानेका छेद होता है। उसी छेदवाले सिरकी मुहमें ले कर फू कते हैं और स्वरोंवाले छेदों पर उ गलिया रख कर उसे बन्द कर देते हैं। जब जो स्वर निकालना होता है, तब उस स्वरवाले छेद परकी उ गलिया उठा लेते हैं।

पशी देखो।

बासुली ( हि० खी० ) १ एक प्रकारकी घास जो फसलके लिये बडी ही हानिकारक होती है। २ शब्दी देखो।

बासुलीकन्द ( हि० पु० ) एक प्रकारका जंगली धूरन या जमीकंद। यह गलेमें बहुत अधिक लगता है और प्रायः इसीके कारण छानेके योग्य नहीं होता।

बाह ( हि० खी० ) १, बाहु, भुजा। २ बल, शक्ति, भुजबल। ३ बुरते, फमीज, अगे, फोट आदिमें लगा हुआ घह मोहरीदार टुकड़ा जिसमें बाह डाली जाती है, आस्तान। ४ एक प्रकारकी कसरत जो दो आदमी मिल कर करते हैं। इसमें बारी बारीसे हर एक आदमी अपनी बाह दूसरेके फधे पर रखना है इसमें बाहों पर जोर पड़ता है और उनमें बल आता है। ५ सहायक, मददगार। ६ शरण, सहाय, भरोसा।

बाहूतोड ( हि० पु० ) कुश्तीका एक पेच। इसमें जब गरदन पर जोड़के दोनों हाथ आते हैं तब उन हाथों परसे अपना एक हाथ उल्ट कर उसकी जाधमें अड़ा देते हैं और दूसरा हाथ उसकी बगलसे लेजा कर गरदन पर घुमाते हुए उसकी पीठ पर ले जाते हैं। फिर उसे टांगसे मार कर गिरा देने हैं।

बाँहमरोड़ ( हि० खी० ) कुश्तीका एक पेच। इनमें जब



। जोड़का हाथ कपड़े पर आता है, तब अपना हाथ उसकी जगहमें ले जा कर उसकी उँगलिया पकड़ कर मरोड़ देते हैं और दूसरे हाथसे उसकी कोहनी पकड़ कर टांगसे मारते हैं। ऐसा करनेसे जोड़ तुरत जमीन पर गिर जाता है। यह पेच उसी समय किया जाता है जब जोड़ शरीरसे सटा नहीं रहता, कुछ दूर पर रहता है।

वाही ( हि० स्त्री० ) वाद देखो।

वा ( हि० पु० ) जल, पानी।

वां ( फा० पु० ) वार, दफा, मरतवा।

वाइ ( हि० स्त्री० ) वाई देखो

वाइबिरग ( हि० स्त्री० ) बिडग।

बाइबिल—ईसाइयोंकी प्रधान धर्म पुस्तक। ईश्वर अभिव्यक्त धर्मतत्त्वोंकी मूल वाक्यावली प्रथित कर ईसाई लोग जिस पवित्र धर्मग्रन्थकी मानते हैं उसी धर्मपुस्तकका ४थी शताब्दीमें महात्मा ख्रुसोस्तमने (Chrysostom) 'बाइबिल' नाम रखा। भाषा और अतिरिहित विषयोंकी विभिन्नतासे यह प्रथम दो भागोंमें विभक्त हुआ। प्राचीन कथाओंकी ऐतिहासिकता पर्यवेक्षण कर उन्होंने प्रथमार्द्धको पूर्ण भाग (Old Testament) एवं परार्द्धको उत्तर भाग (New Testament) नामसे प्रकट किया। पूर्व खण्डकी ऐतिहासिक घटनाओंके साथ उत्तरखण्डका घटना निचय विशेषरूपसे सयुक्त है। प्रोटैण्टन्ट सम्प्रदायके ईसाई उक्त दोनों ग्रन्थोंकी संयोजक घटनाखण्डकी एपोक्रिफा (Apocrypha) या अप्रामाणिक समझते हैं। ये समस्त ईश्वरप्राप्त घटनाएँ हैं, इस विषयमें वे अलग संवेद करते हैं।

अभी हम लोग भी जिस बाइबिलको देखते हैं वह दो विभागोंमें विभक्त है, पहला 'ओल्डटेस्टमेण्ट' दूसरा 'न्यूटेस्टमेण्ट'। इस New Testament विभागमें पूर्व खण्डकी विभिन्न धर्मशास्त्र वा Scripture कह कर संकेत किया है। १८० ई०में ईश्वर संभावार विषयक 'न्यूटेस्टमेण्ट' की Scripture कहलाता था। 'इरानियस् (Eranias) ईश्वरप्राप्त पूर्व और उत्तरखण्डकी विभिन्न कथाओंकी Old Testament नाम रखा कये हैं। पूर्वखण्डकी भाषा 'Palaeo-Hebraic' की संभाषण 'Hebraic' की भाषा में लिखी गई है।

मुद्रित बाइबिल ग्रन्थके पूर्वखण्ड (Old Testament) में ३६ प्रथमभाग हैं। अति प्राचीनकालमें इसका कुछ अंश हिब्रू और कुछ कालदीय भाषामें रचा गया था। उसके मध्य ईसासे दो सदी पहले सघटित हिब्रू काल दीय साहित्यकी अनेक घटनाएँ सन्निवेशित हुई हैं।

पूर्वखण्डके इतिहास, परम्परातत्त्व, भविष्यवाणी और काव्याशके पश्चात् उत्तरखण्डका ईश्वर समाचार (Gospel), देव, मनुष्योंका स मिश्रण, ईसामसीहकी अलौकिकलीला और मृत्यु एवं ईसा प्रेरित दूतोंकी (Apostle's) भक्ति, देवानुरक्ति प्रभृति पक्क प्रथित हैं। यहद्विओंके पूर्वखण्डका विभाग वर्तमान प्रणाली से बहुत भिन्न था। उन्होने अपनी वर्णमालाके अनुसार उसे २२ भागोंमें विभक्त किया है। स्मृति (Law), ईश्वर वाक्य और ईश्वर महिमाकीर्त्तन सूचक गान (Hagiographia) ये तीन नम्बरसे लिपिवद्ध हैं। पाच परिच्छेद (Book) तक मूसाकी स्मृति, जसूआ, जाजैस, सामुएल, किस्, ईसाया, जिरिमिया और पेजिका पल प्रभृति ईश्वर नियोजित धर्मापदेशकोंका धर्मतत्त्व और साम्स, प्रोभावंस, इक्लियायिस्, जाव, सलोमाके गीत, रुथ, लैमेन्टेसन, परथर, दानियल, पजरा, नेहेमिया आदिमें ईश्वरप्रेम, भजन और सच्चा गीतोंमें कीर्त्तित हुए हैं। दूसरे दूसरे ग्रन्थोंको ले कर यहूदी और ईसाइयोंमें घमा मतभेद देखा जाता है।

यहद्वियोंके अवरोधसे पूर्व इस प्रथका कोई भी उल्लेख नहीं मिलता। मोजेसके उपदेशसे जाना जाता है, कि यह धर्मप्रथ जलज्वालनकालीन पवित्र जहाजके पार्श्वमें रख दिया गया था। जेरुसालेम का मन्दिर तैयार होनेके बाद राजा सलोमनने इस ग्रन्थको मन्दिरमें रखनेकी अनुमति दी। परवर्ती ईश्वरप्रणोदित व्यक्ति जिससे सावजनिक उपकारके लिये भविष्यमें इस प्रथकी रक्षा कर सकें इसकी भी उन्होंने व्यवस्था कर दी थी। किन्तु नेबुकाडनेजर (Nebuchadnezzar) के द्वारा जेरुसलम ध्वंस होनेके बाद इस प्रथकी हस्तलिपि नष्ट हो गयी। इसके पहले यहूदी इसकी प्रतिलिपि घेरीलन नगरमें ले गये थे इसीसे वह ध्वंससे बच रही। उन लोगोंके अवरोधके

समय दानियाल (Daniel) ने जेरुसालीम की भविष्यवाणी का उल्लेख किया है। अथरोघले मुक्त हो उठने से इस्त्राएल के प्रति ईश्वरप्रोक्त मोजेस गाथा के पुनरुद्धार के लिये पत्ररासे अनुरोध किया। पत्ररा बहुत परिश्रमसे इस पवित्र वाक्यावली की एक प्रतिलिपि संग्रह कर गये। यहूदियों का उसकी पाठशुद्धि की रक्षा करने में विशेष ध्यान था। जोसेफस (Josephus) ने लिखा है, कि उनके समयसे ले कर आर्तारक्षस (Artaxerxes) के राज्य काल तक किसीने भी इस पवित्र ग्रन्थ का फलेचर बढ़ाने की कोशिश न की।

ईसा की २री सदीसे छठी सदीके मध्य यहूदियों का 'तालमुद' नामका धर्मग्रन्थ रचा गया। उसमें विभिन्न बाइबिलोंका शब्दचिन्त्यस और पाठभेद उल्लिखित है। तालमुदके समाप्त होने पर टिबेरियाके मसोरैट लोगोंने (Masorites of Tiberias) बहु परिश्रम स्वीकार कर प्रशुद्धि करनेका सकल्प किया। (१)

हिब्रू धर्मशास्त्रके समारिटन पेन्टाटुक (२) (Samaritan Pentateuch) और सेप्टुआजिन्ट (Septuagint) नामक ग्रन्थका प्रोक्त अनुवाद ही सर्व प्राचीन है। आज कल जो समारिटन पेन्टाटुक देखनेमें आता है वह प्राचीन हिब्रू समारिटन ग्रन्थकी नकल मात्र है। ओरिगेन राजाके राजत्वके पहले समारिया वामियोंने इस ग्रन्थको प्रस्तुत किया था। ७० धार्मिक महापुरुषोंने प्रोक्त अनुवाद किया था इस कारण इसका नाम 'सेप्टुआजिन्ट पडा। (३)

आकुशला, थियोडोसियन और सिमाकस नामके तीनों प्रोक्त अनुवाद २री सदीमें रचित हो ओरिगेनके हेक्माप्लायमें रखे गये थे। तत्पश्चात् १ली शताब्दीमें सिरियोफ, ३रीमें कोष्टिक, ४थीमें इर्थोपिच, ५वींमें आमेनियनोंके सेप्टुआजिन्टके आधार पर पूर्व और उत्तर बाइबिल खण्ड रचा गया। इसके सिवाय १ली या २री शताब्दीमें इतालिय, ४थी शताब्दीमें उलफिलसके गथिक अनुवादकी असम्पूर्ण प्रति पाई गई है।

पहिले जिन सब ग्रन्थों का उल्लेख किया है, वे मूल हिब्रू पुस्तकके अश्विरोपके अनुवाद मात्र हैं। प्रकृत सप्रदाकारमें प्रथित इस पुस्तककी जो एक प्रति सुरा टोनिओके धर्मशास्त्रमें देखी जाती है वह १७० ई० में लिखी गयी थी। इसका प्रथम और शेष भाग नहीं मिलता। जो कुछ पुस्तकमें लिखा है उससे जाना जाता है, कि पवित्रात्मा मार्कके सुसमाचारसे इस ग्रन्थका उद्बोधन हुआ है। किन्तु बीच बीचमें छूट भी है। सिरियोफ लोगोका पेशिटो (the peshito) ग्रन्थ अचिकल अनुवादित तो हुआ है पर उसमें कोई कोई अक्षर छूट गया है।

युसिवियस् (Eusebius) को उत्तर खण्डकी जो प्रति मिली थी वही आजकल जनसाधारणकी आग्रहकी वस्तु हो रहा है। ये इस ग्रन्थके दो हिस्से कर गये थे। एक

चलता है, कि आलेक्सद्रियाके पुस्तकागारकी रक्षाके लिये टलेमी फिलाडेलफस ने स्तुतिग्रन्थके लिये जेरुसलमके सच प्रधान पुरोहित पलियाजारको लिख भेजा था। तदनुसार उन्होने बारह जातिमेंसे छ छ करके १२ व्यक्तियोंकी अनुवादके लिये भेजा। जो कुछ भी हो, सेप्टुआजिन्ट ग्रन्थ जो विभिन्न व्यक्तियोंके द्वारा लिखा गया था उसके बहुत प्रमाण मिलते हैं। पेन्टाटुक ग्रन्थ भी इसी प्रकार टेरमिलेगस या उसके पुत्र फिलाडेलफसके राजत्वकालमें लिखा गया था, इसमें कुछ भी संदेह नहीं है। इसका जीवितकालमें यह पुस्तक यहूदियोंके आदरकी विशेष सामिप्री थी। उसके प्रमाण उत्तरखण्डमें कई जगह लिखे गये हैं। पश्चात् ईसाइयोंके ग्रन्थालोचनानामें प्रकृत होने पर उन्होंने इस ग्रन्थका परित्याग कर दिया।

(१) विभिन्न समालोचकोंका इस विषयमें विभिन्न मत है। कोई कोई कहते हैं, कि उन्होंने पाठशुद्धि कर ग्रन्थकी पवित्रताकी रक्षा की थी। दूसरे कहते हैं, कि इससे ग्रन्थकी पवित्रता नष्ट की गई है। क्योंकि, इसमें पूर्व पुरुषोंके मुताबिक निकले हुए शब्द नहीं हैं; किन्तु इस विषयमें उनकी सद्बिचिन्ना और परिश्रम सबकी मान्य है।

(२) इस ग्रन्थकी मौलिकताकी बहुत लोग स्वीकार नहीं करते।

(३) कोई कोई कहते हैं, कि यह ग्रन्थ यहूदियोंकी 'सान्द्रिम्' महासभामें ७७ सम्मेलनोंके द्वारा अनुमोदित हुआ था। अन्य उपाख्यानोंसे पता

जोड़का हाथ कंधे पर आता है, तब अपना हाथ उसको जगलमें ले जा कर उसको उंगलिया पकड़ कर मरोड़ खेते हैं और दूसरे हाथसे उसकी कोहनी पकड़ कर टांगसे मारते हैं। ऐसा करनेसे जोड़ तुरत जमीन पर गिर जाता है। यह पेच उसी समय किया जाता है जब जोड़ शरीरसे सटा नहीं रहता, कुछ दूर पर रहता है।

वाहो ( हि० खी० ) बाइ देखो।

वा ( हि० पु० ) जल, पानी।

वा ( फा० पु० ) यार, दफा, मरतवा।

बाइ ( हि० खी० ) बाई देखो

बाइबिर ग ( हि० खी० ) बिडग।

बाइबिल—ईसाइयोंकी प्रधान धर्म पुस्तक। ईश्वर अभिव्यक्त धर्मतत्त्वोंकी मूल वाचयावली प्रथित कर ईसाई लोग जिस पवित्र धर्मग्रन्थको मानते हैं उसी धर्मपुस्तकका ४थो शताब्दीमें महात्मा ख्रुसोष्टमने ( Chrysostom ) 'बाइबिल' नाम रखा। भाषा और अतिरिहित विषयोंकी विभिन्नतासे यह ग्रंथ दो भागोंमें विभक्त हुआ। प्राचीन कथाओंकी ऐतिहासिकता पर्यवेक्षण कर उन्होंने प्रथमांशको पूर्व भाग ( Old Testament ) एवं परांशको उत्तर भाग ( New Testament ) नामसे प्रकट किया। पूर्व खण्डकी ऐतिहासिक घटनाओंके साथ उत्तरखण्डका घटना निचय विशेषरूपसे संयुक्त है। प्रोटैण्टन्ट सम्प्रदायके ईसाई उक्त दोनों ग्रन्थोंकी संयोजक घटनापत्रिकी एपोकैफा ( Apocrypha ) या अप्रामाणिक समझते हैं। ये समस्त ईश्वरप्रीत घटनाएँ हैं, इस विषयमें ये लोग सन्देह करते हैं।

अभी हम लोग भी जिस बाइबिलको देखते हैं वह दो विभागोंमें विभक्त है, पहला 'ओल्डटेस्टमेंट' दूसरा 'न्यूटेस्टमेंट'। इस New Testament विभागमें पूर्व खण्डकी लिपिकी धर्मशास्त्र वा Scripture कह कर उल्लेख किया है। १८० ई०में ईश्वर समाचार विषयक ग्रन्थ ही Holy Scripture कहलाता था। ईरानियस ( Irenaeus ) इस धर्मग्रन्थके पूर्व और उत्तरखण्डकी मिला कर उसका Lord's Scripture नाम रख गये हैं। पूर्वखण्डके ग्रीक नाम Palaea bibliotheka से महात्मा पालने 'The Old Testament' नाम रखा। वर्तमान

मुद्रित बाइबिल ग्रन्थके पूर्वखण्ड ( Old Testament ) में ३६ प्रथिविभाग हैं। अति प्राचीनकालमें इसका कुछ अंश हिब्रू और कुछ कालदीय भाषामें रचा गया था। उसके मध्य ईसासे दो सदी पहले सचदित हिब्रू काल दीय साहित्यकी अनेक घटनाएँ सम्निवेशित हुई हैं।

पूर्वखण्डके इतिहास, परमार्थतत्त्व, भविष्यवाणी और काव्याशके पश्चात् उत्तरखण्डका ईश्वर समाचार ( Gospel ), देव, मनुष्योंका संमिश्रण, ईसांमसीहकी अलौकिकलौला और मृत्यु एवं ईसा प्रेरित दूतोंकी ( Apostle's ) मक्ति, देवानुरक्ति प्रभृति एकत्र प्रथित हैं। यहूदियोंके पूर्वखण्डका विभाग वर्तमान प्रणालीसे बहुत भिन्न था। उन्होने अपनी वर्णमालाके अनुसार उसे २२ भागोंमें विभक्त किया है। स्मृति ( Law ), ईश्वर वाक्य और ईश्वर महिमाकीर्त्तन सूचक गान ( Hagiographa ) ये तीन नम्बरसे लिपिवद्ध हैं। पाच परिच्छेद ( Book ) तक मूसाकी स्मृति, जसूआ, जाजेस, सामुयल, किंस, ईसाया, जिरिमिया और पेजिका पल प्रभृति ईश्वर नियोजित धर्मोपदेशोंका धर्मतत्त्व और साम्भ, प्रोभार्चस, इङ्गिजियाइस, जाव, सलोमाके गीत, रथ, लैमन्टेसन, एस्धर, दानिएल, एजरा, नेहेमिया आदिमें ईश्वरप्रेम, भजन और सत्त्वा गीतोंमें कीर्त्तित हुए हैं। दूसरे दूसरे ग्रन्थोंको ले कर यहूदी और ईसाइयोंमें घना मतभेद देखा जाता है।

यहूदियोंके अवरोधसे पूर्व इस ग्रन्थका कोई भी उल्लेख नहीं मिलता। मोजेसके उपदेशसे जाना जाता है, कि यह धर्मग्रन्थ जलझावन-कालीन पवित्र जहाजके पार्श्वमें रख दिया गया था। जेरुसालेम का मन्दिर तैयार होनेके बाद राजा सलीमनने इस ग्रन्थको मन्दिरमें रखानेकी अनुमति दी। परवर्त्ती ईश्वरप्रणोदित व्यक्ति जिससे सावजनिक उपकारके लिये भविष्यमें इस ग्रन्थकी रक्षा कर सकें इसको भी उन्होने व्यवस्था कर दी थी। किन्तु नेबूकादनेजर ( Nebuchadnezzar ) के द्वारा जेरुसालेम ध्वंस होनेके बाद इस ग्रन्थकी हस्तलिपि नष्ट हो गयी। इसके पहले यहूदी इसकी प्रतिलिपि बेबीलन नगरमें ले गये थे इसीसे वह ध्वंससे बच रही। उन लोगोंके अवरोधोंके

समय दानियाल (Daniel) ने जेरुसैमियाकी भविष्यवाणी का उल्लेख किया है। अररोघसे मुक्त हो उन्होंने इस्राएलके प्रति ईश्वरप्रोक्त मोजेस गाथाके पुनरुद्धारके लिये एजरासे अनुरोध किया। एजरा बहुत परिश्रमसे इस पवित्र वाक्यावलीकी एक प्रतिलिपि संग्रह कर गये। यहूदियोंका उसकी पाठशुद्धिकी रक्षा करनेमें विशेष ध्यान था। जोसेफस (Josephus) ने लिखा है, कि उनके समयसे ले कर आर्तजरक्षस (Artaxerxes) के राज्य काल तक किसीने भी इस पवित्र ग्रन्थका कलेजर बढ़ानेकी कोशिश न की।

ईसाकी २री सदीसे छठी सदीके मध्य यहूदिओका 'ताल्मुद' नामका धर्मग्रन्थ रचा गया। उसमें विभिन्न बाइबिलीका ग्रन्थविन्यास और पाठभेद उल्लिखित है। ताल्मुदके समाप्त होने पर टिबेरियाके मसोराइट लोगोंने (Masorites of Tiberias) बहु परिश्रम स्वीकार कर प्रशुद्धि करनेका सफल किया। (१)

हिब्रू धर्मशास्त्रके समारिटन पेन्टाटुक (२) ( Samaritan Pentateuch) और सेप्टुआजिन्ट (Septuagint) नामक प्रथका ग्रीक अनुवाद ही सर्व प्राचीन हैं। आज कल जो समारिटन पेन्टाटुक देखनेमें आता है वह प्राचीन हिब्रू समारिटन ग्रन्थकी नकल मात्र है। ओरिगेन राजाके राजत्वके पहले समारियावासियोंने इस ग्रन्थको प्रस्तुत किया था। ७० धार्मिक महापुरुषोंने ग्रीक अनुवाद किया था इस कारण इसका नाम 'सेप्टुआजिन्ट पञ्चा' (३)

(१) विभिन्न समालोचकोंका इस विषयमें विभिन्न मत है। कोई कोई कहते हैं, कि उन्होंने पाठशुद्धि कर ग्रन्थकी पवित्रताकी रक्षा की थी। दूसरे कहते हैं, कि इससे ग्रन्थकी पवित्रता नष्ट की गई है। क्योंकि, इसमें पूर्वपुण्योके मुखसे निर्मले हुये शब्द नहीं हैं; किन्तु इस विषयमें उनकी सद्बिचिन्ता और परिश्रम सबकी मान्य है।

(२) इस ग्रन्थकी मौलिकताको बहुत लोग स्वीकार नहीं करते।

(३) कोई कोई कहते हैं, कि यह ग्रन्थ यहूदियोंकी 'सानहेद्रिम' महासभामें ७७ सन्धोके द्वारा अनुमोदित हुआ था। अन्य उपाख्यातोंसे पता

आकुइला, थियोडोसियन और सिमाकस नामके तीनों ग्रीक अनुवाद २री सदीमें रचित हो ओरिगेनके हेक्माग्लायमें रखे गये थे। तत्पश्चात् १ली शताब्दीमें सिरियक, ३रीमें कोष्टिक, ४थीमें ईथियोपिक, ५वींमें आमेनियनोंके सेप्टुआजिन्टके आधार पर पूर्ण और उत्तर बाइबिल खण्ड रचा गया। इसके सिवाय १ली या २री शताब्दीमें इतालिय, ४थी शताब्दीमें उल्फिलसके गथिक अनुवादकी असम्पूर्ण प्रति पाई गई है।

पहिले जिन सब ग्रन्थोका उल्लेख किया है, वे मूल हिब्रू पुस्तकके अश्विशेषके अनुवाद मात्र हैं। प्रकृत सग्रहाकारमें प्रथित इस पुस्तककी जो एक प्रति मुराटोनिओके धर्मशास्त्रमें देखी जाती है वह १७० ई० में लिखी गयी थी। इसका प्रथम और शेष भाग नहीं मिलता। जो कुछ पुस्तकमें लिखा है उससे जाना जाता है, कि पवित्रात्मा मार्कके सुसमाचारसे इस ग्रन्थका उद्बोधन हुआ है। किन्तु बीच बीचमें छूट भी है। सिरिय लोगोका पेशुतो (the peshuto) प्रथम अकिरुल अनुवादित तो हुआ है पर उसमें कोई कोई अशब्द छूट गया है।

युसिवियस् (Lusebius) को उत्तर खण्डकी जो प्रति मिली थी वही आजकल जनसाधारणकी आग्रहकी वस्तु हो रही है। ये इस ग्रन्थके दो हिस्से कर गये थे। एक

चलता है, कि आलेक्सन्द्रियाके पुस्तकागारकी रक्षाके लिये, टलेमी फिलाडेलफस ने स्मृति-ग्रन्थके लिये जेरुसलमके सर्वप्रधान पुरोहित पलियाजारको लिख भेजा था। तदनुसार उन्होने बारह जातिसंसे छः छः करके १२ व्यक्तियोंको अनुवादके लिये भेजा। जो कुछ भी हो, सेप्टुआजिन्ट प्रथम जो विभिन्न व्यक्तियोंके द्वारा लिखा गया था उसके बहुत प्रमाण मिलते हैं। पेन्टाटुक ग्रन्थ भी इसी प्रकार टेलमीलेगस या उसके पुत्र फिलाडेलफसके राजत्वकालमें लिखा गया था, इसमें कुछ भी सदेह नहीं है। ईसाके जीवितकालमें यह पुस्तक यहूदियोंके आदरकी विशेष सामिमी थी। उसके प्रमाण उत्तरखण्डमें कई जगह लिखे गये हैं। पश्चात् ईसाइयोंके प्रथमालोचनानामें प्रकृत होने पर उन्होंने इस ग्रन्थका परित्याग कर दिया।

। जोड़का हाथ कंधे पर आता है, तब अपना हाथ उसकी धगलमें ले जा कर उसकी उँगलिया पकड़ कर मरोड़ देते हैं और दूसरे हाथसे उसकी कोहनी पकड़ कर टांगसे मारते हैं। ऐसा करनेसे जोड़ तुरत जमीन पर गिर जाता है। यह पेच उसी समय किया जाता है जब जोड़ शरीरसे सटा नहीं रहता, कुछ दूर पर रहता है।

घाहो ( हि० खी० ) बाइ देखो।

वा ( हि० पु० ) जल, पानी।

वा ( फा० पु० ) वार, दफा, मरतवा।

वाइ ( हि० खी० ) बाई देखो

वाइविरग ( हि० खी० ) विडग।

बाइबिल—ईसाईयोंकी प्रधान धर्म पुस्तक। ईश्वर अभिव्यक्त धर्मतत्त्वोंकी मूल वाषयावली प्रथित कर ईसाई लोग जिस पवित्र धर्मग्रन्थको मानते हैं उसी धर्मपुस्तकका ४थी शताब्दीमें महात्मा कृसोष्टमने ( Chrysostom ) 'बाइबिल' नाम रखा। भाषा और अर्तनिहित विषयोंकी विभिन्नतासे यह ग्रंथ दो भागोंमें विभक्त हुआ। प्राचीन कथाओंकी ऐतिहासिकता पर्यवेक्षण कर उन्होंने प्रथमाब्द को पूर्व भाग ( Old Testament ) एवं पराब्दकी उत्तर भाग ( New Testament ) नामसे प्रकट किया। पूर्व खण्डकी ऐतिहासिक घटनाओंके साथ उत्तरखण्डका घटना निचय विशेषरूपसे संयुक्त है। प्रोटेस्टान्ट सम्प्रदायके ईसाई उक्त दोनों ग्रन्थोंकी संयोजक घटनावलीको एपोक्रिफा ( Apocrypha ) या अप्रामाणिक समझते हैं। ये समस्त ईश्वरप्रोक्त घटनाएँ हैं, इस विषयमें वे लोग सन्देह करते हैं।

अभी हम लोग भी जिस बाइबिलको देखते हैं वह दो विभागोंमें विभक्त है, पहला 'ओल्डटेस्टमेण्ट' दूसरा 'न्यू टेस्टमेण्ट'। इस New Testament विभागमें पूर्व खण्डकी लिपिकी धर्मशास्त्र वा Scripture कह कर उल्लेख किया है। १८० ई०में ईश्वर समाचार विषयक ग्रन्थ ही Holy Scripture कहलाता था। ईरानियस् ( Irenaeus ) इस धर्मग्रन्थके पूर्व और उत्तरखण्डको मिला कर उसका Lord's Scripture नाम रख गये हैं। पूर्वखण्डके प्रोक्त नाम 'Palaea diatheka' से महात्मा पालने "The Old Testament" नाम रखा। अर्त्तमान

मुद्रित बाइबिल ग्रन्थके पूर्वखण्ड ( Old Testament ) में ३६ प्रथमभाग हैं। अति प्राचीनकालमें इसका कुछ अंश हिब्रू और कुछ कालदीय भाषामें रचा गया था। उसके मध्य ईसासे दो सदी पहले संघटित हिब्रू काल दीय साहित्यकी अनेक घटनाएँ सन्निवेशित हुई हैं।

पूर्वखण्डके इतिहास, परमार्थतत्त्व, भविष्यवाणी और काव्याशके पश्चात् उत्तरखण्डका ईश्वर समाचार ( Gospel ), देय, मनुष्योंका स मिश्रण, ईसामसीहकी अलौकिकलौला और मृत्यु एवं ईसा प्रेरित दूतोंकी ( Apostles ) भक्ति, देवानुरक्ति प्रभृति एकल प्रथित हैं। यहदिव्योंके पूर्वखण्डका विभाग अर्त्तमान प्रणाली से बहुत भिन्न था। उन्होने अपनी वर्णमालाके अनुसार उसे २२ भागोंमें विभक्त किया है। स्मृति ( Law ), ईश्वर वाक्य और ईश्वर महिमाकी सन सूचक गान ( Hagiographa ) ये तीन नम्बरसे लिपिबद्ध हैं। पाच परिच्छेद ( Book ) तक मूसाकी स्मृति, जसूआ, जाजेष, सामुएल, किस्, ईसाया, जिरिमिया और ऐजिका एल प्रभृति ईश्वर नियोजित धर्मोपदेशकोंका धर्मतत्त्व और साम्स, प्रोभावस, इझिजियायिस्, जाव, सलोमाके गीत, रुथ, लैमन्टेसन्, एथर, दानिएल, एजरा, नेहेमिया आदिमें ईश्वरप्रेम, भजन और सच्चा गीतोंमें कीर्तित हुए हैं। दूसरे दूसरे ग्रन्थों को लेकर यहदी और ईसाईयोंमें घना मतभेद देखा जाता है।

यहदिव्योंके अवरोधसे पूर्व इस प्रथका कोई भी उल्लेख नहीं मिलता। मोजेसके उपदेशसे जाना जाता है, कि यह धर्मग्रंथ जलह्लावनकालीन पवित्र जहाजके पार्श्वमें रखा दिया गया था। जेद सालेम का मन्दिर तैयार होनेके बाद राजा सलोमनने इस ग्रन्थको मन्दिरमें रखानेकी अनुमति दी। परवर्ती ईश्वरप्रणीत व्यक्ति जिससे सावजनिक उर्ष कारके लिये भविष्यमें इस प्रथकी रक्षा कर सकें इसकी भी उन्होने व्यवस्था कर दी थी। किन्तु नेबूकाडनेजर ( Nebuchadnezzar )के द्वारा जेदसलम ध्वंस होनेके बाद इस प्रथकी हस्तलिपि नष्ट हो गयी। इसके पहले यहदी इसकी प्रतिलिपि वेबोलन नगरमें ले गये थे इसीसे यह ध्वंससे बच रही। उन लोगोंके अवरोधके

समय दानियाल (Daniel) ने जेरुसैमियाकी भविष्यवाणी का उल्लेख किया है। अर्रोथसे मुक्त हो उन्होंने इस्राएलके प्रति ईश्वरप्रोक्त मोजेस गाथाके पुनरुद्धारके लिये पत्ररासे अनुरोध किया। पत्ररा बहुत परिश्रमसे इस पवित्र वाक्यावलीको एक प्रतिलिपि संग्रह कर गये। यहूदियोंका उसको पाठशुद्धिकी रक्षा करनेमें विशेष ध्यान था। जोसेफस (Josephus) ने लिखा है, कि उनके समयसे ले कर आर्तजरक्षस (Artaxerxes) के राज्य काल तक किसीने भी इस पवित्र ग्रंथका कलेर बढ़ाने की कोशिश न की।

इसका २री सदीसे छठी सदीके मध्य यहूदियोंका 'तालमुद' नामका धर्मग्रंथ रचा गया। उसमें विभिन्न वादविलोकका शब्दविन्यास और पाठभेद उल्लिखित है। तालमुदके समाप्त होने पर टियेरियाके मसोराइट लोगोंने (Masorites of Tiberias) बहु परिश्रम स्वीकार कर प्रथमुद्दि करनेका सकल्प किया। (१)

हिब्रू धर्मशास्त्रके समारिटन पेन्टाटूक (२) (Samaritau Pentateuch) और सेप्टुआजिन्ट (Septuagint) नामक प्रथका प्रोक अनुवाद ही सर्व प्राचीन हैं। आज कल जो समारिटन पेन्टदुक देखनेमें आता है वह प्राचीन हिब्रू समारिटन प्रथकी नकल मात्र है। ओरिगेन राजाके राजत्वके पहले समारिया वासियोंने इस प्रथको प्रस्तुत किया था। ७० धार्मिक महापुरुषोंने प्रोक अनुवाद किया था इस कारण इसका नाम 'सेप्टुआजिन्ट पडा। (३)

(१) विभिन्न समालोचकोंका इस विषयमें विभिन्न मत है। कोई कोई कहते हैं, कि उन्होंने पाठशुद्धि कर प्रथकी पवित्रताकी रक्षा की थी। दूसरे कहते हैं, कि इससे प्रथकी पवित्रता नष्ट की गई है। क्योंकि, इसमें पूर्वपुरुषोंके मुखसे निकले हुए शब्द नहीं हैं; किन्तु इस विषयमें उनकी सद्बिवेचना और परिश्रम सबको मान्य है।

(२) इस प्रथकी मौलिकताकी बहुत लोग स्वीकार नहीं करते।

(३) कोई कोई कहते हैं, कि यह प्रथ यहूदियोंकी 'सानहेद्रिम' महामन्त्रामें ७७ सभ्योंके द्वारा अनुमोदित हुआ था। अन्य उपाख्यानो से पता

आकुशल, धियोडोसियन और सिमाकस नामके तीनों प्रोक अनुवाद २री सदीमें रचित हो ओरिगेनके हेक्मालायमें रखे गये थे। तत्पश्चात् १ली शताब्दीमें सिरियक, ३रीमें कोष्टिक, ४थीमें इथियोपिक, ५रीमें आमेनियनोंके सेप्टुआजिन्टके आधार पर पूर्व और उत्तर वादविल खण्ड रचा गया। इसके सिवाय ४ली या २री शताब्दीमें इतालिय, ४थी शताब्दीमें उलफिलसके गयिक अनुवादकी असम्पूर्ण प्रति पाई गई है।

पहिले जिन सब ग्रन्थोंका उल्लेख किया है, वे मूल हिब्रू पुस्तकके अश्विदेशके अनुवाद मात्र हैं। प्रकृत सप्रकाशमें प्रथित इस पुस्तकको जो एक प्रति मुराटोनियोंके धर्मशास्त्रमें देखी जाती है वह १७० ई० में लिखी गयी थी। इसका प्रथम और शेष भाग नहीं मिलता। जो कुछ पुस्तकमें लिखा है उससे जाना जाता है, कि पवित्रात्मा मार्कके सुसमाचारसे इस प्रथका उद्बोधन हुआ है। किन्तु बीच बीचमें छूट भी है। सिरिय लोगोका पेशिटो (the peshito) प्रथ अक्कल अनुवादित तो हुआ है पर उसमें कोई कोई अंश छूट गया है।

युसिवियस् (Eusebius)को उत्तर खण्डकी जो प्रति मिली थी वही आजकल जनसाधारणकी आग्रहकी वस्तु हो रही है। ये इस प्रथके दो हिस्से कर गये थे। एक

चलता है, कि आलेक्सन्द्रियाके पुस्तकागारकी रक्षाके लिये टलेमी फिलाडेलफस ने स्मृति-ग्रन्थके लिये डेरुसलमके सर्वप्रधान पुरोहित पलियाजारको लिख भेजा था। तदनुसार उन्होने वाद जातिमेंसे छ छ करके १२ व्यक्तियोंको अनुवादके लिये भेजा। जो कुछ भी हो, सेप्टुआजिन्ट ग्रंथ जो विभिन्न व्यक्तियोंके द्वारा लिखा गया था उसके बहुत प्रमाण मिलते हैं। पेन्टाटुक ग्रन्थ भी इसी प्रकार टेलमीलेगस वा उसके पुत्र फिलाडेलफसके राजत्वकालमें लिखा गया था, इसमें कुछ भी संदेह नहीं है। इसका जीवितकालमें यह पुस्तक यहूदियोंके आदरकी विशेष सामिमी थी। उसके प्रमाण उत्तरखण्डमें कई जगह लिखे गये हैं। पश्चात् ईसाइयोंके प्रयालोचनामें प्रकृत होने पर उन्होंने इस प्रथका परित्याग कर दिया।

। जोड़का हाथ कंधे पर आता है, तब अपना हाथ उसकी उंगलमें ले जा कर उसकी उँगलिया पकड़ कर मरोड़ देते हैं और दूसरे हाथसे उमकी कोहनो पकड़ कर टांगसे मारते हैं। ऐसा करनेसे जोड़ सुरत जमीन पर गिर जाता है। यह पेच उसी समय किया जाता है जब जोड़ शरीरसे सटा नहीं रहता, कुछ दूर पर रहता है।

वाही ( हि० खी० ) वाद देखो।

वा ( हि० पु० ) जल, पानी।

वा ( फा० पु० ) वार, वफा, मरतवा।

वाइ ( हि० खी० ) वाई देखो

वाइविरग ( हि० खी० ) विडग।

बाइबिल—ईसाइयोंकी प्रधान धर्म पुस्तक। ईश्वर अभिषेक धर्मतत्त्वोंकी मूल वाक्यावली प्रथित कर ईसाई लोग जिस पवित्र धर्मग्रन्थकी मानते हैं उसी धर्मपुस्तकका ४थी शताब्दीमें महात्मा कृस्तोष्टमने ( Chrysostom ) 'बाइबिल' नाम रखा। भाषा और अतिरिहित विषयोंकी विभिन्नतासे यह ग्रंथ दो भागोंमें विभक्त हुआ। प्राचीन कथाओंको ऐतिहासिकता पर्यवेक्षण कर उन्होंने प्रथमाब्दको पूर्व भाग ( Old Testament ) एवं पराब्दको उत्तर भाग ( New Testament ) नामसे प्रकट किया। पूर्वखण्डकी ऐतिहासिक घटनाओंके साथ उत्तरखण्डका घटना निचय विशेषरूपसे संयुक्त है। प्रोटेस्टान्ट सम्प्रदायके ईसाई उक्त दोनों ग्रन्थोंकी संयोजक घटनावलीको अपोकलिफा ( Apocrypha ) या अप्रामाणिक समझते हैं। ये समस्त ईश्वरप्राक्त घटनाएँ हैं, इस विषयमें वे लोग सन्देह करते हैं।

अभी हम लोग भी जिस बाइबिलको देखते हैं वह दो विभागोंमें विभक्त है, पहला 'ओल्डटेस्टमेण्ट' दूसरा 'न्यू टेस्टमेण्ट'। इस New Testament विभागमें पूर्वखण्डकी लिपिकी धर्मशाखा या Scripture कह कर उल्लेख किया है। १८० ई०में ईश्वर समाचार विषयक ग्रन्थ ही Holy Scripture कहलाता था। ईरानियस् ( Irenaeus ) इस धर्मग्रन्थके पूर्व और उत्तरखण्डको मिला कर उसका Lord's Scripture नाम रख गये हैं। पूर्वखण्डके ग्रीक नाम Palaeo theka से महारमा पालने, "The Old Testament" नाम रखा। वर्तमान

मुद्रित बाबिल ग्रन्थके पूर्वखण्ड ( Old Testament ) में ३६ प्रथिभाग हैं। अति प्राचीनकालमें इसका कुछ अंश हिब्रू और कुछ कालदीय भाषाओंमें रचा गया था। उसके मध्य ईसासे दो सदी पहले सघटित हिब्रू काल दीय साहित्यकी अनेक घटनाएँ सन्निवेशित हुई हैं।

पूर्वखण्डके इतिहास, परमार्थतत्त्व, भविष्यवाणी और काव्याशके पश्चात् उत्तरखण्डका ईश्वर-समाचार ( Gospel ), देव, मनुष्योंका स मिश्रण, ईसासोहकी अलौकिकलौला और मृत्यु एवं ईसा प्रेरित इतोंकी ( 4 apostle's ) मक्ति, देवानुरक्ति प्रभृति एकत्र प्रथित हैं। यहदियोंके पूर्वखण्डका विभाग वर्तमान प्रणालीसे बहुत भिन्न था। उन्होंने अपनी वर्णमालाके अनुसार उसे २२ भागोंमें विभक्त किया है। स्मृति ( Law ), ईश्वर वाक्य और ईश्वर महिमाकर्त्तन सूचक गान ( Hagiographa ) ये तीन नम्बरसे लिपिवद्ध हैं। पाच परिच्छेद ( Book ) तक मूसाकी स्मृति, जसूबा, जाजैस, सामुएल, किल्, ईसाया, जिरिमिया और पैजिका पल प्रभृति ईश्वर नियोजित धर्मोपदेशोंका धर्मतत्त्व और साम्प्र, प्रोभार्चस, इज्जियाएल्स, जाव, सलोमाके गीत, रुथ, लैमन्टेसन, पस्थर, दानिएल, एजरा, नेहेमिया आदिमें ईश्वरप्रभं, भजन और सत्त्वा गीतोंमें कीर्तित हुए हैं। दूसरे दूसरे ग्रन्थोंको ले कर यहदी और ईसाइयोंमें घना मतभेद देखा जाता है।

यहदियोंके अवरोधसे पूर्व इस ग्रन्थका कोई भी उल्लेख नहीं मिलता। मोजेसके उपदेशसे जाना जाता है, कि यह धर्मग्रन्थ जलध्वावन-कालीन पवित्र जहाजके पार्श्वमें रख दिया गया था। जेद सालेम का मन्दिर तैयार होनेके बाद राजा सलोमनने इस ग्रन्थको मन्दिरमें रखानेकी अनुमति दी। परवर्ती ईश्वरप्रणोदित व्यक्ति जिससे सावजनिक उपकारके लिये भविष्यमें इस ग्रन्थकी रक्षा कर सकें इसकी भी उन्होंने व्यवस्था कर दी थी। किन्तु नेबूकादनेजर ( Nebuchadnezzar ) के द्वारा जेरुसलम ध्वंस होनेके बाद इस ग्रन्थकी हस्तलिपि नष्ट हो गयी। इसके पहले यहदी इसकी प्रतिलिपि बेबीलन नगरमें ले गये थे इसीसे वह ध्वंससे बच रही। उन लोगोंके अवरोधों

समय दानियाल (Daniel) ने जेरेमिया की भविष्यवाणी का उल्लेख किया है। अपरोधले मुक्त हो उन्होंने इस्राएल के प्रति ईश्वरप्रोक्त मोजेस गाथा के पुनरुद्धार के लिये पत्ररासे अनुरोध किया। पत्ररा बहुत परिश्रमसे इस पवित्र वाक्यावली को एक प्रतिलिपि संग्रह कर गये। यहूदियों का उसकी पाठशुद्धि की रक्षा करने में विशेष ध्यान था। जोसेफस (Josephus) ने लिखा है, कि उनके समयसे ले कर आर्तजरक्षस (Artaxerxes) के राज्य काल तक किसीने भी इस पवित्र ग्रन्थ का कलेवर बढ़ाने की कोशिश न की।

- इसा की २री सदीसे छठी सदी के मध्य यहूदियों का 'तालमुद' नामका धर्मग्रन्थ रचा गया। उसमें विभिन्न बाइबिलों का शब्दचिन्त्यास और पाठभेद उल्लिखित है। तालमुद के समाप्त होने पर टिबेरिया के मसोराइट लोगों ने (Masorites of Tiberias) बहु परिश्रम स्वीकार कर प्रशुद्धि करने का सकल्प किया (१)

- हिब्रू धर्मशास्त्र के समारिटन पेन्टाटुक (२) (Samaritan Pentateuch) और सेप्टुआजिन्ट (Septuagint) नामक ग्रन्थ का प्रोक्त अनुवाद ही सर्व प्राचीन है। आज कल जी समारिटन पेन्टाटुक देखने में आता है वह प्राचीन हिब्रू समारिटन ग्रन्थ की नकल मात्र है। ओरियन राजा के राजत्व के पहले समारिया वासियों ने इस ग्रन्थ को प्रस्तुत किया था। ७० धार्मिक महापुरुषों ने प्रोक्त अनुवाद किया था इस कारण इसका नाम 'सेप्टुआजिन्ट पडा' (३)

(१) विभिन्न समालोचकों का इस विषय में विभिन्न मत है। कोई कोई कहते हैं, कि उन्होंने पाठशुद्धि कर ग्रन्थ की पवित्रता की रक्षा की थी। दूसरे कहते हैं, कि इससे ग्रन्थ की पवित्रता नष्ट की गई है। क्योंकि, इसमें पूर्व पुरुषों के मुखसे निकले हुए शब्द नहीं हैं, किन्तु इस विषय में उनकी सद्बिचिन्ना और परिश्रम सबको मान्य है।

(२) इस ग्रन्थ की मौलिकता को बहुत लोग स्वीकार नहीं करते।

(३) कोई कोई कहते हैं, कि यह ग्रन्थ यहूदियों की 'सानहेद्रिन' महासम्मति ७७ सभ्यों के द्वारा अनुमोदित हुआ था। अन्य उपाख्यानो से पता

आकुइला, थियोडोसियन और सिमाक्स नामके तीनों प्रोक्त अनुवाद २री सदी में रचित हो ओरियन के हेक्मा ग्लयमें रखे गये थे। तत्पश्चात् १ली शताब्दी में सिरीयक, ३री में कोष्टिक, ४थी में इथियोपिक, ५वीं में आमेनियनों के सेप्टुआजिन्ट के आधार पर पूर्व और उत्तर वाइबिल खण्ड रचा गया। इसके सिवाय १ली या २री शताब्दी में इतालीय, ४थी शताब्दी में उलफिलस के गथिक अनुवाद को असम्पूर्ण प्रति पाई गई है।

पहिले जिन सब ग्रन्थों का उल्लेख किया है, वे मूल हिब्रू पुस्तक के अश्वितीय के अनुवाद मात्र हैं। प्रकृत स प्रकाश में प्रथित इस पुस्तक को जो एक प्रति मुरा टोनिओ के धर्मशास्त्र में देखी जाती है वह १७० ई० में लिखी गयी थी। इसका प्रथम और शेष भाग नहीं मिलता। जो कुछ पुस्तक में लिखा है उससे जाना जाता है, कि पवित्रात्मा मार्कनेसुसमाचारसे इस ग्रन्थ का उद्बोधन हुआ है। किन्तु बीच बीच में छूट भी है। सिरीय लोगों का पेशिटो (the peshito) ग्रन्थ अविच्छन्न अनुवादित तो हुआ है पर उसमें कोई कोई अंश छूट गया है।

युसिवियस (Eusebius) को उत्तर खण्ड की जो प्रति मिली थी वही आजकल जनसाधारण को आप्रहको वस्तु हो रहा है। वे इस ग्रन्थ के दो हिस्से कर गये थे। एक

चलता है, कि आलेक्सन्द्रिया के पुस्तकागार की रक्षा के लिये टलेमी फिलाडेलफस ने सृष्टि-ग्रन्थ के लिये जेरुसलेम के सर्व प्रधान पुरोहित पलियाजारको लिख भेजा था। तदनुसार उन्हीं ने वारह जातियोंसे छ छ करके १२ व्यक्तियों को अनुवाद के लिये भेजा। जो कुछ भी हो, सेप्टुआजिन्ट ग्रन्थ जो विभिन्न व्यक्तियों के द्वारा लिखा गया था उसके बहुत प्रमाण मिलते हैं। पेन्टाटुक ग्रन्थ भी इसी प्रकार टेलमीलेगस या उसके पुत्र फिला डेलफस के राजत्वकाल में लिखा गया था, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। इसाके जीवितकाल में यह पुस्तक यहूदियों के आदर की विशेष सामग्री थी। उसके प्रमाण उत्तरखण्ड में कई जगह लिखे गये हैं। पश्चात् इसाईयों के प्रथालोचनानां प्रकृत होने पर उन्होंने इस ग्रन्थ का परित्याग कर दिया।



जोड़का हाथ कंधे पर आता है, तब अपना हाथ उसकी  
 कमरमें ले जा कर उसकी उँगलिया पकड़ कर मरोड़  
 देते हैं और दूसरे हाथसे उसकी कोहनी पकड़ कर  
 टांगसे मारते हैं। ऐसा करनेसे जोड़ तुरत जमीन पर  
 गिर जाता है। यह पंच उसी समय किया जाता है जब  
 जोड़ शरीरसे सटा नहीं रहता, कुछ दूर पर रहता है।

वाही ( हि० स्त्री० ) बाढ़ देखो।

वा ( हि० पु० ) जल, पानी।

वां ( फा० पु० ) यार, वफा, मरतबा।

वाइ ( हि० स्त्री० ) बाई देखो

वाइविरग ( हि० स्त्री० ) विद्वग।

बाइबिल—ईसाइयोंकी प्रधान धर्म पुस्तक। ईश्वर अनि-  
 व्यक्त धर्मतत्त्वोंकी मूल वाक्यावली प्रथित कर ईसाई लोग  
 जिस पवित्र धर्मग्रन्थकी मानते हैं उसी धर्मपुस्तकका ४थी  
 शताब्दीमें महात्मा ख्रिस्तोसमने ( Chrysostom ) 'बाइ  
 बिल' नाम रखा। भाषा और अतर्निहित विषयोंकी  
 विभिन्नताने यह ग्रंथ दो भागोंमें विभक्त हुआ। प्राचीन  
 कथाओंकी ऐतिहासिकता पर्यवेक्षण कर उन्होंने प्रथमाब्द-  
 की पूर्व भाग ( Old Testament ) एवं पराब्दकी उत्तर  
 भाग ( New Testament ) नामसे प्रकट किया। पूर्व  
 खण्डकी ऐतिहासिक घटनाओंके साथ उत्तरखण्डका  
 घटना निम्न विशेषरूपसे संयुक्त है। प्रोटेस्टान्ट सम्प्र-  
 दायके ईसाई उक्त दोनों ग्रन्थों की संयोजक घटनावलि-  
 की अपोकलिफा ( Apocrypha ) या अग्रामाणिक समझते  
 हैं। ये समस्त ईश्वरप्रोक्त घटनाएँ हैं, इस विषयमें वे  
 लोग सन्देह करते हैं।

जमी हम लोग भी जिस बाइबिलको देखते हैं वह दो  
 विभागोंमें विभक्त है, पहला 'ओल्डटेस्टमेण्ट' दूसरा  
 'न्यू टेस्टमेण्ट'। इस New Testament विभागमें पूर्व  
 खण्डकी लिपिको धर्मशास्त्र वा Scripture कह कर  
 जाना जाता है। १८० ई०में ईश्वर समाचार विषयक  
 लिपिको Holy Scripture कहलाता था। ईरानियस्  
 ने ( Eusebius ) इस लिपिको पूर्व और उत्तरखण्डको  
 लिपिको Old Testament and New Testament नाम रखा था।  
 पूर्वखण्डके भाषा 'बाइबिल' नाम रखा गया है।

मुद्रित बाइबिल ग्रन्थके पूर्वखण्ड ( Old Testament ) में  
 ३६ प्रथमभाग हैं। अति प्राचीनकालमें इसका कुछ  
 अंश हिब्रू और कुछ कालदीय भाषाओंमें रचा गया था।  
 उसके मध्य ईसासे दो सदी पहले संघटित हिब्रू काल  
 कीय साहित्यकी अनेक घटनाएँ सन्निवेशित हुई हैं।

पूर्वखण्डके इतिहास, परमार्थतत्त्व, भविष्यवाणी और  
 काव्याशके पश्चात् उत्तरखण्डका ईश्वर समाचार  
 ( Gospel ), देव, मनुष्योंका मिश्रण, ईसामसीहकी  
 अलौकिकलौला और मृत्यु एवं ईसा प्रेरित दूतोंकी  
 ( Apostle's ) भक्ति, देवानुरक्ति प्रभृति पक्क प्रथित  
 हैं। यहद्विओंके पूर्वखण्डका विभाग वर्तमान प्रणाली  
 से बहुत भिन्न था। उन्होंने अपनी वर्णमालाके अनु-  
 सार उसे २२ भागोंमें विभक्त किया है। स्मृति ( Law ),  
 ईश्वर वाक्य और ईश्वर महिमाकीर्त्तन सूचक गान  
 ( Hagiographa ) ये तीन नम्बरसे लिपिवद्ध हैं।  
 पांच परिच्छेद ( Book ) तक मूसाकी स्मृति, जसूआ,  
 जाजेस, सामुएल, किस्, ईसाया, जिरिमिया और ऐजिका  
 एल प्रभृति ईश्वर नियोजित धर्मोपदेशकोंका धर्मतत्त्व  
 और साम्भ, प्रोभावर्स, इफ्रिजियाएस्, जाव, सलोमाके  
 गीत, रुथ, लैम्बेसेन, पस्थर, दानिएल, पजरा, नेहेमिया  
 आदिमें ईश्वरमें भजन और मत्त्या गीतोंमें कीर्त्तित हुए  
 हैं। दूसरे दूसरे ग्रन्थों को ले कर यहदी और ईसाइयोंमें  
 घना मतभेद देखा जाता है।

यहद्वियों के अवरोधसे पूर्व इस ग्रन्थका कोई भी  
 उल्लेख नहीं मिलता। मोजैसेके उपदेशसे जाना जाता  
 है, कि यह धर्मग्रंथ जलप्लावनकालीन पवित्र  
 जहाजके पार्श्वमें रख दिया गया था। जेह सारेम  
 का मन्दिर तैयार होनेके बाद राजा सलीमनने  
 इस ग्रन्थकी मन्दिरमें रखनेकी अनुमति दी।  
 'परवर्ती ईश्वरप्रणोदित व्यक्ति जिससे सावजनिक उपा-  
 कारके लिये भविष्यमें इस ग्रन्थकी रक्षा कर सकें इनकी  
 भी उन्होने व्यवस्था कर दी थी। किन्तु नेबूकाडनेज़र  
 ( Nebuchadnezzar ) के द्वारा जेरुसलम ध्वंस होने  
 के बाद इस ग्रन्थकी हस्तलिपि नष्ट हो गयी। इसके  
 पहले यहदी इसकी प्रतिलिपि घेनीलन नगरमें ले गये  
 थे इसीसे वह ध्वंससे बच रही। उन लोगोंके अवरोधमें

समय दानियाल (Daniel) ने जेरुसालम की मन्दिरवालों को उन्नेत्र किया है। धरतीधरने मुक्त हो उठने के पक्ष में प्रति ईश्वरप्रेम मोक्षिस गाथाके पुनरुद्धारके लिये पत्रवाले अनुसंधान किया। पत्रवा बहुत परिश्रमसे इस पत्रिक वाक्यावलीको एक प्रतिलिपि संग्रह कर गये। यहूदियोंका उसकी पाठ्यपुस्तिका बना करनेमें विशेष ध्यान था। जोसेफस (Josephus) ने लिखा है, कि उनके समयमें से कर आर्ज (Artaxerxes) ने राज्य बना कर किर्सीने भा इस पत्रिक प्रथका कलेवा बढ़ानेकी कोशिश न की।

इसकी २ती सर्दासे छठी सर्दाके मध्य यहूदियोंका 'सातुमुद्र' नामका धर्मप्रपत्र रचा गया। उसमें विभिन्न बाइबिलीका मन्दाविन्यास और पाठभेद उल्लिखित है। सातुमुद्रके समाप्त होने पर टिबेरियाके प्रतोराइट लीगोनि (Marautes of Tiberias) ने बहुत परिश्रम व्यर्थकार कर प्र यमुद्रि करनेका संकल्प लिया। (१)

हिम् धर्मशास्त्रके समाहित पेन्टाटुच (२) (Samarian Pentateuch) और सेप्टुवागिन्ट (Septuagint) नामक प्रथका प्रोच अनुवाद ही सर्व प्राचीन है। आजकल की समाहित पेन्टाटुच देखनेमें आता है यह प्राचीन हिम् समाहित प्रथका बरत मात्र है। योरुसैम गभाके राजत्वके पहले समाहित यामिदीन इस प्रथका प्रयुक्त किया था। ७० धार्मिक महायुद्धोंमें प्रोच अनुवाद किया था इस कारण इसका नाम 'सेप्टुवागिन्ट पक्ष' (३)

आधुनिक, यिपोडोमियन और निमाहम नामके हांम प्रोच अनुवाद २ती सर्दामें रचित हो योरुसैमके हेब्रिया प्रथमें रचे गये थे। तत्पश्चात् ३री सर्दामें निमाहम, ३रीमें कौटिक, ४थमें इरिग्रेगियस, ५थमें शामेनियानोंके सेप्टुवागिन्टके आधार पर पूर्ण और उत्तर बाइबिल बनाइ रचा गया। इसके निपाय ३थी या २री सर्दाधर्ममें इनामोय, ४थी सर्दाधर्ममें उन्निनमके यथिक अनुवादकी धर्मपूर्ण प्रति पाए गए हैं।

पहिले जिन सब प्रथों का उल्लेख किया है, वे मूल हिम् पुस्तकके अन्तर्गतके अनुवाद मात्र हैं। प्रथम प्रकाशकोंमें प्रथित इस पुस्तककी ओर एक प्रति मुक्त टोकिनी के धर्मशास्त्रमें देखी जाती है यह १३० ई० में लिखी गयी थी। इसका प्रथम और येव नाम नहीं मिलता। जो कुछ पुस्तकमें लिखा है उसमें ज्ञाता जाता है, कि पवित्रात्मा मार्केके सुमसाधारण इस प्रथका उद्योषण हुआ है। किन्तु बीच बीचमें छूट भी है। निर्लप लोमो का पेसिडो (The Pesito) प्रथ अविष्कृत अनुवादित हो हुआ है पर उसमें कोई कोई भाग छूट गया है।

युमिथिफस (Luscus) की उक्त धर्मकी ओर प्रति मिली थी यरी धार्मिक जनसाधारणकी धार्मिकी यानु हो रही है। ये इस प्रथके दो हिस्से कर गये थे। एक

(१) विभिन्न समाप्तियोंका इस विषयमें विभिन्न मत है। कई कों करते हैं, कि उत्तरी पाठ्यपुस्तिका प्रथका पवित्रताकी रक्षा का थी। दूसरे करते हैं, कि इसमें प्रथकी पवित्रता गत की गई है। क्योंकि, इसमें पूर्वपुस्तकों के सुगम निरूपण हुए मन्दा गयी हैं। किन्तु इस विषयमें उत्तरी मन्दिपेसना और पवित्रम सबकी मान्य है।

(२) इस प्रथका प्रोचपत्रवाकी बहुत लोग व्याकार नहीं करते।

(३) कौरे कों करते हैं कि यह प्रथ यहूदियों की 'साप्टेगिन्ट' समाप्तमें ७० मन्दीके द्वारा अनुसंधान हुआ था। अन्य उपासनाओं की वशा

बलगत है, कि बाइबिलमन्दिपके पुस्तकशास्त्रीके रूपके लिये उत्तरी किन्ताइमकालमें सृजित-प्रथके लिये अन्तर्गत सर्वप्रधान पुणेहित उल्लिखितकी लिए भेजा था। तत्पश्चात् इन्हींके द्वारा ज्ञानमें छ छूटके १२ धर्मियोंकी अनुवादके लिये भेजा। जो कुछ भी है, सेप्टुवागिन्ट प्रथ की विभिन्न धर्मियोंके द्वारा लिखा गया था उत्तर बहुत प्रमाण मिलने हैं। पेन्टाटुच प्रथ में इसा प्रथक टयनसियान या इसके पुत्र किन्ता डेडरमके राजत्वकालमें लिखा गया था इसमें कुछ भी संदिग्ध नहीं है। इसका अविष्कृतमें यह पुस्तक यहूदियों के अन्तर्गत योरुसैम नामिका थी। उसके प्रमाण उत्तरपक्षमें कर हाट लिये गये हैं। पत्रवा इत्यादीके प्रथकोपक्रममें प्रथक होने पर अर्थात् इस प्रथका पवित्रता कर दिया।

हिस्सेमें स्वीकृत वा प्रामाण्य विषय ( Acknowledged Books) सम्मिलित किये गये हैं और दूसरेमें अप्रामाणिक वा मतभेदयुक्त ग्रन्थांशको स्थान दिया गया है । प्रथम श्रेणीमें उन्होंने फेरल सुसमाचार ( Gospel ), आदर्श पुरुषोंकी क्रियावली ( Acts of the Apostles ) और पाल, जान पीटर प्रभृति महापुरुषोंके पत्रों का उल्लेख किया है तथा द्वितीय श्रेणीमें कितने ही विषयोंको जनसाधारणसे अनुमोदित और कितनेको कृत्रिम तथा प्रक्षिप्त बतलाया है ।

प्रोटैस्टाण्टों के गृहीत वाइबिल पुस्तकका वर्त्तमान अंशसमावेश १५वीं ई०में मार्टिन लूथरके द्वारा सम्पादित हुआ था । पूर्वखण्डकी 'पेन्टाटुक' नामक पञ्च पत्रिका-में सृष्टिप्रकरण, अब्राहम प्रवर्तित ऐश्वरिक विधि, उनके पशुधर्मका इजिप्ट गमन, ईश्वरदेशसे उनका देशत्याग, सिनिया देशीय घनघ्नमण, कानन जय, यहाँ पर निवास स्थानका निर्माण और उस देशके रहनेवालोंके धर्मकर्म में जीवनातिपातके लिये मोजसका विधि प्रभृति लिपि यद्द हुई हैं । जसूया और जाजस नामके प्रथो मे ईस्त्रारजवशके स्थापनके पूर्व यहूदियोंका इतिहास वर्णित है । इनके बाद रुथका उपाख्यान और उसके साथ साथ डेभिडके इतिहासका वर्णन देया जाता है । परवर्ती सामुएल नामक दो पुस्तकों में सायु सामुएल, राजा सल और डेभिडके वर्णन प्रसङ्गमें राजविधि, राज्यस्थापन और नाना धार्मिक कथा, किस, क्रोनिकेल्स् नामक चार पुस्तकोंमें इस्त्राएल और जूडाका राज्यविवरण, सलोमन का राज्यारोहण, यहूदियोंका अवरोध, आसिरिये, बाबिली नीय आक्रमण और यहूदियों का इधर उधर गमन आदि विषय उल्लिखित हैं । इसके परवर्ती इज़रा और नेहेमिया नामक दो पुस्तकों में यहूदियोंको अवरोध मुक्ति और जेरुसलम नगरमें फिरसे राज्यपाठ स्थापन, इस्वरमें यहूदियोंका अग्रोधप्रसङ्ग, जाव(१) नामकी पुस्तकमें कैथल धर्मप्रसङ्ग और इसके बाद सामस, वा गीतिप्रथ है । इस शेष प्रथमें डेभिडके लेख यहू

दियोंके अग्रोध तक स गृहीत प्राथना भजनआदि गीत वर्णित हैं । ये सब भजन जेरुसलेमके मन्दिरमें जोर जोरसे पढे जाते थे । (२)

'प्रभार्थ' नामकी पुस्तकमें सलोमनका ज्ञान गमे और उपदेश सूत्र लिखे हुये हैं । इङ्ग्लिजायर्दिस् में जगत्का असात्व और सलोमनकी गीतिमाला में विश्वासियोंके प्रति ईसाका प्रेम, धर्मसहायतासे जीवात्माका परमात्माके साथ मिलन आदिका वर्णन है । कहीं भी उसमें अश्लील रूपसे वर्णन नहीं देखा जाता । तत्पश्चात् इसाया, जेरिमिया, एजिकाएक, दानिएल, होसिया, जोएल, आमोम, ओवादिआ, जोना, मिका, नाहुम, हवक्कुक, जेफानिया, इग्गे, जकारिया और मालाची प्रभृति धर्मवीरोंका पुस्तकोंमें प्रेम, ईश्वरका न्यायविचार, सृष्टिपूजाका प्रतिषेध और इदोम, निनिम प्रभृति विध्वस्त नगरोंका उल्लेख है ।

उत्तरखण्डके आरम्भमें ही ख्रृष्ट धर्मघोषक ( E. 11-15 B.C ) मेषु, मार्क, लूक और जान-लिखित पुस्तकमें ईसा की महिमाका कीर्त्तन है । ईसाके दूतोंकी कार्यावली ( Acts of apostles ) में यहूदी और जेन्टाइलोंके मध्य ख्रृष्टमहिमा प्रचार, ईसाकी ही ख्रृष्टरूपसे कथन और ख्रृष्ट विश्वासी धर्मसम्प्रदाय आदिका प्रसङ्ग देखा जाता है । तत्पश्चात् पालकी १४, जेभ्मकी १, पिटरकी २, जूडाकी १ धर्मप्रचारिणी पत्रिका एवं जानका प्रत्यावेष्टि सर्वशेष धर्मग्रंथ हैं ।

ईसाइयोंका वाइबिल नामक अशक और किस भाषा में लिखा गया था, इस विषयकी आलोचनामें प्रयत्न हो प्रकृतत्वानुसन्धितसु हिब्रि एण्डितगण एवं शब्दविद्वगण शब्दशास्त्रके सामञ्जस्य द्वारा जिस सिद्धान्त पर पहुँचे हैं उसका एक पूर्वापर इतिहास यहाँ पर दिया गया है । पवित्र वाइबिल प्रथके पूर्वखण्डमें हिब्रू भाषाके तीन

(२) इस अंशमें धर्मका उच्छ्वास, ईश्वर वियोजित आत्माकी कातरकी, आत्मग्लानि, भगवत्मिलन प्रत्याशा में परमानन्द, ईश्वरवाक्य, सद्गुणदेश, वाचिलनमें कातर यहूदियोंका कदन, मदिरेके समुप आर्कको देव पुरोहितोंकी आनन्दध्वनि प्रभृति करण रमात्मक बातोंका वर्णन है ।

(१) यह प्रथम बहुप्राचीन तथा मोजेसका लिखा हुआ है, जैसा बहुतोंका विश्वास है ।

उपनिस्तर देये जाते हैं। सोझरके समय विमर नामके  
 यहूदी लोग बोल्ते थे उसी दिग्ग भाषामें वे टाट्टक विभाग  
 नीर जगूया विपिगत हुए थे। द्विन परस्परमें अर्थात्  
 दिग्ग भाषा जब कुछ भाषित हुए तब जाजिन, मारुण  
 किम, एनिकलस नामक, प्रमाधस और इगाया, ऐसिया,  
 जोय, धायम, मोबदिधा, जोना मिका गहूम, हयजूक  
 प्रभृति प्रथम प्रचलित हुए। इसके बाद धरनेधके समय  
 दिग्ग के मध्य बाबीनीयीय राजापरतिका मंसिधित होने  
 पर इस्वद, एकरा और नेहेनिया आदि प्रयोगी गाना  
 हुई। शक्तिपर और एकराका कुछ अज्ञानो या अर  
 मिथाल भाषामें लिखे हुए हैं। उत्तरगण्ट The New  
 Testament) हेलेनिष्टिक प्रोच भाषामें रचा गया। प्रोच  
 भीयनिधेनिच यहूदियोंने इस भाषाकी व्युत्पत्ति माग  
 कर तदसामयिक प्रयोगी अथवा अपनी भाषामें रच  
 आता। उनमें तर्ह सवासियों अथवा भाषाके जगह भी  
 उत्तरके अरु नामित कर दिये। इस प्रकार मंगीपिग  
 प्रोच भाषा दिग्ग प्रोच कहलाये गया। मारुण इसाके  
 पाठेनिच अरुस्थानकालमें यह मिश्रभाषा यहाँ पर प्रच  
 लित थी। फिर उमा भाषामें उत्तरगण्ट लिखित  
 हुआ। दिग्ग बाबिलका सबसे पहला मुद्रणसर्ग १४८८  
 ई०में मोरिसको द्वारा सभ्यदिग्ग हुआ था। क्यूटेमियन  
 पोप्लिस्टेके लिये काटिनेज्ड जिमेनिस (Cardinal  
 Ximenes) ने अथवा बाबिलका उत्तरगण्ट प्रकाशित  
 हुआ। इसका मुद्रण १५०० ई० में सार्वभ हो १५१४  
 ई० में समाप्त हुआ था। विगु १५२१ तक इतका ज्ञा  
 साधारणके विषय प्रचार न रहा। १६वीं समय इरासम  
 (Erasmus) ने उक्त प्रयोगी १५१६ ई०में मुद्रित कर  
 प्रकाशित कर दिया। १६०० ई०में पा० आन मिचक द्वारा  
 बाबिल मुद्रित हुई जिसमें लाग विभिन्न पाठोंका वर्णन  
 है। १८२० ई० और १८३१ ई०में क्रायनर (Krahn) ने  
 द्विन दो पाठोंमें बाबिल प्रकाशित की उनमें १७४ पुनः  
 बोना प्रयोग है। पाठ १७४ ३३ प्रयोगका पाठ इरा  
 मिका कर प्रत्यगाठ प्रकाशित किया था। विष (Kil),  
 कर्मावर्ण (L. n. १००) प्रभृति जर्मन पाठोंके सट्टेक प्रथ  
 इरासम के लिये बाबिलीय कर्णु १०। इन्हीमें मी कर  
 बाब अनेक प्रकारके बाबिल मुद्रित हुए थे। इस पुनःकी

उपनिस्तर अथवा एकराका भाषाकी ही है। यदि कोई  
 इस अनुमोचन पाठकी छात्रके ही इच्छा करे, तो उदे  
 गावित्त बोर्डमें अनुमति लेनी पडती है। इरासम कीर  
 और उत्तरके प्रवर्तक बाबिलीय भाषाके प्रचारके लिये  
 पुनःकी सम्प्रदायिमें ७० बाबिलीय मोमादिवां स्थापित  
 हुए हैं। मध्य २५३ विभिन्न भाषामें बाबिलीय प्रथ मुद्रित  
 हो चुके हैं। कहीं कहीं एक भाषामें ५० तीर सत्तका  
 अनुवाद देखा जाता है।  
 बाबिलीय—अथवा प्रदेगके अथवा विगणतक एव  
 प्राचीन समय। यह विगणतक मेशानके मध्यमयामें अथ  
 चिनत है। मशान और प्रमाधकके विषय एकराके  
 कालक यह बाबिलीय अरु हो गया है। गहरका सभ्यधर  
 नामक प्राच्य लिखित मन्दिर देगने ज्ञापक है। मन्दिर  
 की बनायत देगने मारुण होना है कि एक समय उनमें  
 द्विन मूर्ति प्रतिष्ठा था। मन्दिर काकमें गृह मरुवारीके  
 १० वीं जलाश्रीमें उन्नाल ही विगणतक पाये जाते हैं।  
 इरामें १६ फरवरी ७२ पति और २५५ पति है।  
 पहला मस्यद है और दूसरा गृहगत कालोवांके नामक  
 का (१४४३ १४४४ ई०) के मरुवयमें लिखा गया है।  
 बाबिल (पा० पु० पु०) बाबिल मरुव। २। १० देगो।  
 बाबिली (लि० वि०) ५। १। १। देगो।  
 बाबिलीय (अ० ग्या०) एक प्रसिद्ध गाड़ी। इसमें प्रागे  
 पाठ हो पाठिये होत है। इसका बोधने निरुक्त पेटो मरुके  
 लिये छाटा मा ग्यान रहता है। बाबिली अथ दोनो हाथ  
 देकने और गाड़ीका पुमानक लिय मरुके अकारकी  
 एक देक होतो है। इसमें मोवेका अथ एक अथ गगा  
 रहता है जो पैरके द्वायमें घूमता है जिसमें गाड़ी बहुत  
 निरुक्त चलती है।  
 बा (दि० ग्या०) १ विदुषीयमिच बाब होय। इसके अन्त  
 में मनुष्य देगुव या पणत हो जाता है। ५५ एतो।  
 २ विदुषीके लिये भाद्रमूयक जग। उदे, धरणाका,  
 मरुका। ३ एक जगह जिसका अन्त एकरी प्रयोगी  
 प्राया देवनामोंके नामके साथ किया जाता है।  
 बाबिल दि० पु० १। ३ नाम और दोका मरुका या मरु जो  
 इस प्रकार किया जाता है—२। वि० ३ बाबिली ही  
 अथिच, जो बाब कीर ही है।

बाईसवाँ ( हि० वि० ) जो क्रममें बाईसके स्थान पर हो, गिननेमें बाईसके स्थान पर पडनेवाला ।

बाईसी ( हि० खो० ) १ बाईस वस्तुओंका समूह । २ बाईस पद्योंका समूह ।

बाउ ( हि० पु० ) पवन, हवा ।

बाउर ( हि० वि० ) १ बावला, पागल । २ भोला भाला, सोधा सादा । ३ मूर्ख, अज्ञान । ४ मूक, गू गा ।

बाउरी ( हि० खो० ) १ एक प्रकारकी घास । २ बावली देखो ।

बाउरी—पश्चिम बङ्गवासी निरूठ जाति । कृषिकार्य, मृत् पात्रनिर्माण और पालकी जहन इनका प्रधान व्यवसाय है । आरुतिगत सदृशता देख कर मानवतत्त्वविद्वने इन्हें पार्वतीय जातिमें शामिल किया है ।

इनके मध्य नौ विभिन्न शाक हैं । यथा—१ मल्ल भूमिया, २ शिकारिया और गोबरिया, ३ पञ्चकोटी, ४ माला या मुले, ५ धूलिया वा धूले, ६ मालुआ या मलुआ, ७ भाटिया वा भेटिया, ८ काडुरिया, ९ पाधुरिया । भिन्न स्थानोंमें बास वा जातीय व्यवसायके कारण इन लोगोंके मध्य वर्त्तमानकालमें बहुत कुछ स्वतन्त्रता आ गई है। किन्तु विवाहके सम्बन्धमें कोई गोलमाल नहीं है । ममेरा और चचेरा सम्बन्ध बाढ़ दे कर ये सगेतमें भी विवाह करते हैं । अलावा इसके एक वंशके मध्य वरकी सात पीढी और कन्याकी तीन पीढी छोड़ कर भी विवाह चलता है । बहुविवाह उसी हालतमें होता है जब वह अपनेको उनके भरणपोषणमें समर्थ देखता है । विवाहके कोई मन्त्र तन्त्र नहीं है । वरकर्त्ता कन्याकर्त्ता को सवा रुपये और उपस्थित ध्यक्तियोंको एक भोज दे सकनेसे ही विवाह कार्य सिद्ध होता है । विधवाविवाह भी प्रचलित है । किन्तु अधिकांश जगह विधवा अपने देवरसे ही कर लेती है । कालो, विश्वकर्मा इनके उपास्य देवता हैं । मर्ने पर शयदेह जलाई जाती है । किन्तु बाँकुडा जिलेमें मृतको औंधे मुह करके गाड़ देते हैं ।

बाउल—वैष्णव सम्प्रदायविशेष । श्री चैतन्य महाप्रभुको ही ये लोग अपने सम्प्रदायके प्रवर्त्तक बतलाते हैं । किन्तु यथार्थमें कौन व्यक्ति इस साम्प्रदायिक मतकी सृष्टि कर गये हैं, ठीक ठीक मालूम नहीं । ये लोग अपनी साधन

प्रणाली किसीके भी सामने प्रकट नहीं करते । इनका विश्वास है, कि किसीके सामने अपना साम्प्रदायिक मत या भजन प्रणाली प्रकट करनेसे पाप लगता है । ये लोग कहते हैं, कि परमदेवता श्री राधाकृष्ण युगल रूपमें मानव हृदयमें विराजित हैं । सुतरा नरदेह त्याग करके उनकी तलाशमें दूसरी जगह जानेकी जरूरत नहीं ।

अलिख ब्रह्माण्डके निखिल पदार्थमात्र ही मनुष्य शरीर में विद्यमान हैं । इस कारण उनका मत देहतत्त्व नामसे भी प्रसिद्ध है । 'जो भाण्डमें है, वह ब्रह्माण्डमें है।' इस बातकी साधकता सम्पादन करनेके लिये ये व्याख्या देते हैं, कि चन्द्र, सूर्य, अग्नि, ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर तथा गोलोक, वैकुण्ठ और चून्दावन, ये सभी देहके मध्य वर्त्तमान हैं ।

मानव देहमें विराजमान परमदेवताके प्रति प्रेमा जुष्टान इस सम्प्रदायका मुख्य साधन है । प्रकृति पुण्यके परस्पर प्रेमसे ही वह प्रेम पर्याप्त होता है । अतएव प्रकृति साधन ही इन लोगोंकी साधनाका प्रधान अङ्ग है । ये लोग एक एक प्रकृति ले कर बास करते हैं और उसी प्रकृतिकी साधनामें आजीवन प्रवृत्त रहते हैं । वह साधन पद्धति अति गुह्य व्यवहार है । दूसरेके जाननेका उपाय नहीं है, जाननेसे भी वह लेखनीय नहीं है । कामरिपु उपभोगके प्रकरण विधेय द्वारा कालका शान्ति-साधन पूर्णकर चरममें परम पवित्र प्रेममात्र अवलम्बन करना इस साधनका उद्देश्य है । इनका मत है, कि ज़रूर वह प्रेम परिपक्व हो जाता है, तब खो पुण्य दोनों ही निदान् आत्म विस्मृत और बालखान शून्य हो कर अपनी लौला से केवल राधाकृष्ण-लीलाका अनुभव कर सकते हैं ।

उस प्रकृति साधनके अन्तर्गत 'चारिचन्द्रभेद' नामक एक क्रिया है । मनुष्य उस क्रियाको अतिमात्र वीमत्स व्यापार समझ सकते हैं पर बाउल सम्प्रदायी उस परम पवित्र पुण्यार्थको साधन मानते हैं । उनका कहना है, कि मनुष्य उक्त चार चन्द्र ( अर्थात् देहसे निर्गत शोणित, शुक्र, मल और मूत्र ये चार पदार्थ )को पिताके औरस और माताके गर्भसे प्राप्त करते हैं । अतएव उन चारों पदार्थका परित्याग न करके पुनः शरीरके मध्य ग्रहण करना कर्त्तव्य है । घृणाप्रवृत्ति परमव्यके लिये इनके

अन्य सामान्य लक्षण देने जाती हैं। इन सम्प्रदायके लोग नर बध तो नहीं करते, पर नर-देह पागेने उनका मांस खाते हैं। जयका पत्र संभ्रम करने उमे पहनेना प्रथा भी इन लोगोंमें प्रचलित है।

यद्यपि ये लोग अनेक विषयोंमें गुणरूपसे लोचकियन्त कार्य करती हैं, तो भी लोक-समाजमें बरक मार कुछ कुछ धोखाधारेके अनुसार भी चलते हैं।

ये लोग केवल लोगोंको दिवानेके लिये तिग्ब और माला धारण करते हैं। मागमें रुकटिक, प्रयाल, पत्र पौत्र पद्मस्त भादि भगवत्पर चरुनो भी सुँधो रहती हैं।

इनके मनसे विग्रह सेवा या उपयामादि भावश्यक नहीं है। कोइ कोई भवाहाधारी वाउल विग्रहकी स्थापना तो करते हैं, पर यह वाउलके मतानुसार दुष्य और चिन्द मोय है। इन लोगोंमें श्यापा उपाधि भी श्रुते जाती है। फलतः वाउल और श्यापा दोनों एक ही अर्थ बोधक है।

ग्रन्थउपासनातरथ, नायिकामिदि, रागमयोक्तया और मोपिनो आदि इनके कई एक सामग्र्याधिक ग्रन्थ हैं। उन ग्रन्थोंमें इस मतका विशेष पृच्छान्त वर्णित हुआ है।

बापू ( हि० वि० वि० ) बाइ और, बाई तरक।

बाबगाल ( हि० वि० ) मुँहमोद, बहुत अतिरिच बोलने वाला।

बाबरो ( हि० स्त्री० ) पाँच महोत्सवी स्याई गाय।

बाबाग ( अ० पु० ) एक प्रकारकी बड़ी मटर जिगरकी कटिणो को तरकारो बनती है।

बाबलो ( हि० स्त्री० ) आगम और मध्यभेदोंमें बहुत बरने मिश्रमवाला एक प्रकारका पुष। इनके पले रंगमके कौहोंको चिन्गये जाते हैं। यह पुष बहुत ऊँचा होता है। इसकी लकड़ो मूरे रंगकी और बहुत मजबूत होती है। इससे रंगीने अच्छे अच्छे सामान बनते हैं। इसकी छालरो कमका विषयाया ज्ञाता है।

बाबागी ( हि० वि० ) ब्रह्मके पातको एक भोरसे दूरती और करनेका काम।

बाकी ( अ० वि० ) १ अचलित, जो बच रहा हो। (स्त्री०) २ अचलितमें बह प्रकारकी रीति ररके अनुसार चिगी बह रीतया वा मानकों चिगी दूरती कँषा वा मानकों

पटाया जाता है। २ पटाके बाद बड़ी हुइ कँषा या मान।

बाकी ( अ० अण्य० ) १ परलु, लेखिन। ( स्त्री० ) २ एक प्रकारका घात।

बाबु भा ( हि० पु० ) हु मोँचे पूलका मुछाया हुआ बेगर। यह धामो और मदींमिं औरपकी तरह दिया जाता है।

बाबुनी ( हि० स्त्री० ) मोमरामा।

बाबुर—बटक मिलेके अन्तर्गत एक समुद्रकी शाही। यह महालक्षीके जामाके मुँहमें मधोजित है। १८१९ ई०में उद्योगो दुर्मिश्रके समय अनेक गयमेंलमे इन शाहीके मुह पर एक पायलकी आहत खोल दी थी।

बाबुर ( म० स्त्री० ) भागमान, बहना हुआ।

बापरगञ्ज—बहुान और आगमके टाका विभागका एक जिला। यह मन्ना० २० २३०से २३७ उ० तथा रेखा० ८१ ५२से ११ ० पू०के मध्य अवस्थित है। मूरतिमान ४५४२ वर्गमील है। इसमें उत्तरमें परीसपुर, पूर्वमें मेघना और नादवाज नदी, दक्षिणमें बहुानकी खाड़ी और पश्चिममें चलेभार नदी है। गङ्गा, मेघना और ब्रह्म पुत्र नामक प्रधान नदी तथा कुछ छोटी छोटी नालार मिलेके मज्य हो कर बह गा है। एकके जम जागेने यहाँ घान काका उपजता है। बापरगञ्जका हालत बाउल व गालमें मज्दूर है। अ गरेजोने इसी स्थानकी कालकी का मन्थम डार ( Gran ry of Lakutta ) बनना कर उद्योग किया है। यहाँकी प्रायः सभी नदियोंमें बाये आती जानी हैं। मेघना नदीमें जब बाढ उमर आती है, तब लोग दग रह जाते हैं। इन नदीके मुहाने पर बहुतसे छोटे छोटे डीय उपमन हुए हैं। इनमेंसे दक्षिण नादवाजपुर, मानपुर, गाडुग और रावनागाडू आदि हीन तो विशेष उल्लेखयोग्य हैं। सुन्दरी कण्ट, कापल, सुपारी आदिको दूर दूर रंगोमे बहुतायतसे लखती होती हैं।

बाबर-मोमरामि टाहरमन्थने १५८२ ई०में इस स्थानकी मोमरामाँच सरकारके अन्तर्गुल कर किया था। १९५८ ई०में सुल्तान सुल्तके अर्देनी जब बाबा गञ्जमें पुनः अरोप कार्य कारमा हुआ, तब सुन्दरदन्डा बापरगञ्जविभाग मुहदवाला कहलामे गया। १६०१ ई०में

सम्राट् मद्भमदशाहके राजत्वकालमें बङ्गालके नवाब जाफर खाँ द्वारा जो जरीप कराई गई, उसमें बापरगञ्ज और सुन्दरवन जहागीरनगर बाङ्गालके अन्तर्भुक्त रहा। बङ्गाल इस्टइण्डिया कम्पनीके हाथ आनेके बाद १७६५ १८१७ ई० तक यह स्थान ढाकाके राजस्व सम्राहकके अधीन था। किन्तु यहाके विचार-कार्यके लिये स्वतन्त्र जज और मजिस्ट्रेट नियुक्त थे। उस समय छप्पनगाटी और खौराबाद नदीके सङ्गमस्थल पर बापरगञ्ज नगरमें ही इसकी अदालत प्रतिष्ठित थी।

१८०१ ई०में विचार विभागके परिशाल नगरमें उठ आयेसे वह स्थान जनशून्य और परित्यक्त हो गया। दूसरे वर्ष इस जिलेकी आरति बहुत कुछ बढ़ गई।

इस जिलेमें ५ शहर और ४६१२ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या २० लाखसे ऊपर है। मुसलमानोंकी संख्या सब कौमोंसे ज्यादा है।

वरिशाल, बापरगञ्ज, बउफल, नलडिटी, फालगाटी और पिरोजपुर नगर यहाके प्रधान स्थान हैं। यहाके अधिवासो बड़े हो बुद्धिर्ष हैं। उकैती, भारपीट और नूनी मुकुदमेंको पेशी वरिशालमें बहुत देखी जाती है। लोगों का अत्याचार जैसा क्षतिकार है, तूफान, बाढ आदि भी वैसा ही प्रत्यादिके लिये हानिकारक है।

विद्याशिक्षामें यह जिला बहुत उन्नति कर रहा है। अभी कुल मिला कर ३०७४ स्कूल हैं जिनमेंसे एक गिल्प कालेज है। स्कूलके अलावा ४१ अस्पताल और चिकित्सालय हैं।

वाग ( ५० पु० ) १ घाटिका, उपवन, उद्यान । २ लगाम । वागडोर ( हि० खो० ) १ वह रस्सी जो घोड़े की लगाममें बांधी जाती है और जिसे पकड़ कर साईस लोग उम्मे दहलाते हैं । २ लगाम ।

वागवा ( हि० कि० ) चन्ना, फिरना ।

वागवा ( का० पु० ) वह जो वागकी रगवाली, प्रथम और द्वितीय आदि करता हो, माली ।

वागवा ( का० पु० ) वागवा व्यवहार इन लोगोंका बहुत कुछ है। वागवा व्यवहार करनेवाले वागवाहकी अमल-दारी में भी बहुतसे कामों में दक्षिण हुए हैं । ये

स्वभावसे ही स्वल दृढकाय होते हैं। पुरुष माथेके बाल छटनाते हैं, किन्तु दाढ़ी रचते हैं। इनकी रमणियोंका वेश भूषा ठीक हिंदू रमणी संरक्षा है। बाजारमें फल, शाक सब्जी आदि बेचनेमें ये पुरुषोंकी सहायता करती हैं। ये लोग अपनी धेणियों ही विवाहादि करते हैं। सामाजिक नियमके भंग करनेवालोंको चौधुरी बंध देते हैं। मुसलमान होने पर भी ये लोग शुभरूपसे हिंदू-देवदेवीको पूजते हैं तथा उत्सव करते हैं। विवाहादि में काजोकी बुलाते हैं। ये लोग हनकी समझायभुक्त सुन्नी मुसलमान हैं इनमें कोई भी कभी कन्नमा पाठ नहीं करता।

वागवाली ( का० रती० ) १ मालोका पद । २ मालोका काम ।

वागर ( हि० पु० ) १ नदी किनारेकी वह ऊंची भूमि जहा तक नदीका पानी कभी पहुँचता ही नहीं । २ वापुः देखो ।

वागलफोट-बम्बईके बीजापुर जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १६ ४से १६ २८ उ० तथा देशा० ७५ २६ से ७६ ३ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमण ६८३ वर्ग मील और जनसंख्या प्राय १२३४५६ है। इसमें १ शहर और १६० ग्राम लगते हैं। जिले भरमें यहाका जलवायु बहुत अच्छा है।

२ उक्त तालुकका सवर। यह अक्षा० १६ ११ उ० तथा देशा० ७५ ४२ पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या उन्नीस हजारसे ऊपर है। यहा रेशमी और सूती कपड़े का विस्तृत कारवार है। शहरसे ढाई कोस दूर मुन्न फन्दि नामक स्थानमें एक बड़ी पुष्करिणी है। उसके जलसे पीतीबारी होती है। शहरमें सब जजकी अदालत, अस्पताल और एक म्युनिसिपल स्कूल है। कहते हैं, कि पहले यह स्थान सिंहाधिपति रावणके गायकके अधि कारमें था। १६वीं शताब्दीमें विजय नगरके राजाने इस पर कब्जल जमाया। १६६४से १७५५ ई०तक यह सब नूरके नज़ावके अधिकारमें रहा। पीछे पेशवाने उसे छीन कर अपने राज्यमें मिला लिया। १७७४ ई०में यह हिंदूके हाथ लगा, पीछे पेशवाने उसका पुनरुद्धार किया। पेशवाके समय शहरमें एक टक्काल थी। जिसमें २८३५

ई० तक मुचारु रूपसे काम चलता रहा था । जहाँमें पाच स्कूल हैं जिनमेंसे एक बालिकाके लिये है ।

बागउपुर—मध्यप्रदेशके नरसिंहपुर जिलान्तर्गत एक नगर ।

बागलान—१ बम्बईके नासिक जिलान्तर्गत एक प्राचीन राज्य । इसके पूर्वमें चन्द्रोद, पश्चिममें सूरत और समुद्र, उत्तरमें सुलतानपुर तथा दक्षिणमें नासिक और बिम्बक हैं । पहले यह राज्य ३४ परगनोंमें विभक्त था । यहांके नौ दुर्गोंमेंसे जालहीर और मूलहीर नामक दो पहाड़ी दुर्गों दुर्गोंमें से थे । दक्षिणात्यकी चढाई करते समय औरङ्गजेबने इस राज्य पर दात गढ़ाया था । तदनुसार उन्होंने १६३७ ई०में वहाँ एक दल सेना भेजी । मूलहीरपतिने आत्मरक्षाका कोई उपाय न देख दुर्गकी ताड़ी मुगलोंके पास भेज दी । १८१४ ई०को ३१ जुलाईके मूलहीर-क़िला अंगरेजोंके हाथ लगा और बागलान राज्य म्यांदेशमें मिला लिया गया । इसके बाद यह नासिक निलेके अन्तर्भूत हुआ ।

२ बम्बईके नासिक जिलेका एक तालुक । यह अक्षा० २० २६' से २० ५३' उ० तथा देशा० ७३ ५१' से ७४ २४' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ६०१ वर्ग-मील और जनसंख्या ६० हजारसे ऊपर है । इसमें १५६ ग्राम लगते हैं, जहाँ एक भी नहीं है । वर्षाऋतुके बाद यहाँ मलेरियाका विशेष प्रकोप देखा जाता है ।

बागवान ( हि० पु० ) बागवान देसो ।

बागवानो ( हि० खो० ) बागवानो देसो ।

बागाँवडा—नादिया जिलेके अन्तर्गत एक ग्राम । यह शान्तिपुरसे ५ मील पश्चिम-उत्तरमें अवस्थित है । यह स्थान गाँवके चरने निकल कर कमाज जङ्गलमें परिणत हो गया और यहाँ बहुतसे बाघ आदि बास करने लगे । इसी कारण 'बाघचर'ने इस स्थानका नामकरण हुआ है । प्रसिद्ध तान्त्रिक रघुनन्दनका यहीं पर बास था । जनसाधारणमें ये पूर्वाणन्दगिरि परमहंस नामसे प्रसिद्ध थे । उनके बनाये हुए अनेक ग्रन्थ मिलते हैं, यथा—पट्टक-मेद, घामकेभरत त्र, श्यामाहस्यतन्त्र, शाकभरत त्र और तत्त्वचिन्तानामि । अन्तिम ग्रन्थ १४६६ शकमें रचा गया था । यहाँ पर दूर दूर देशके लोग

बाग्देवी ठाठुरानीको पूजा करने आते हैं । प्रति शनि और मङ्गल-रात्रको यात्री समागम होते हैं । रघुनन्दनके भागिनेय महादेव मुक्तोपाध्यायके चण्डघर यहाँके अधिकारी माने जाते हैं । बाग्देवी-प्रतिष्ठाके बाद चादराय नामक किसी धनी ध्यत्तिने यहाँ एक शिवालय निर्माण किया । अभी चादरायको अष्टालिका जङ्गलमें परिणत हो गई है । जङ्गल भी चादरायका जङ्गल नामसे प्रसिद्ध है ।

बागा ( फा० पु० ) अंगोकी तरहका पुष्पने सम्यक् एक पहनावा जो घुटनों तक लम्बा होता है और जिसमें छातो पर तीन बट लाते हैं, जामा ।

बागावा—१ बम्बईप्रदेशके काठियावाड राज्यके अन्तर्गत एक छोटा सामन्त राज्य । यहकें सामन्त गायकवाड और जनागडके नवाबको राजकर दिया करते हैं ।

२ काठियावाडके अन्तर्गत एक नगर । यह अक्षा० २१ २६' उ० तथा देशा० ७१ पू०के मध्य पुनकवाडसे १५ मीलकी दूरी पर पडता है । जनसंख्या ६१७८ है । देवनागम देवलीके बलमन्व भाषने इसे १५२५ ई०में जीता ।

बागो ( ब० पु० ) वह जो प्रचलित शासन-प्रणाली अथवा राज्यके विरुद्ध विद्रोह करे, विद्रोही, राजद्रोही ।

बागोवा ( फा० पु० ) उद्यान, उपवन ।

बागुर ( हि० पु० ) पक्षी या मृग आदि फँसानेका जाल । इसका दूसरा नाम बागीर भी है ।

बागेपही—महिसुरके कोटर जिलेका एक तालुक । यह अक्षा० १३ ३७' से १३ ५८' उ० तथा देशा० ७७ ३६' से ७८ ८' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ४४३ वर्गमील और जनसंख्या ६५ हजारके करीब है । इसमें २ शहर और ३२७ ग्राम लगते हैं ।

बागेवाड—१ बम्बई प्रदेशके कालाङ्गी जिलान्तर्गत एक उपविभाग । भूपरिमाण ७६४ वर्गमील है ।

२ एक उपविभागका एक नगर और प्रधान वाणिज्य स्थान ।

बागेश्वर—मुलप्रदेशके अलमोरा तहसीलका एक ग्राम । यह अक्षा० २६ ५१' उ० तथा देशा० ७६ ४८' पू०के मध्य सरयू और गोमती नदीके मध्यस्थल पर अवस्थित



सम्राट् मद्भूमिशाहके राजत्वकालमें बङ्गालके जयाव जाफर खाँ द्वारा जो जरीप कराई गई, उसमें वापरगञ्ज और सुन्दरबन जहागीरनगर बाकलाके अन्तर्भुक्त रहा। बङ्गाल इष्टरिष्टिया कम्पनीके हाथ आनेके बाद १७६० १८१७ ई० तक यह स्थान ढाकाके राजस्य सम्राहकके अधीन था। किन्तु यहांके विचार-कार्यके लिये स्वतन्त्र जज और मजिस्ट्रेट नियुक्त थे। उस समय छण्णफाटी और पौरावाद नदीके सङ्गमस्थल पर वावरगञ्ज नगरमें ही इसकी अदालत प्रतिष्ठित थी।

१८०१ ई०में विचार विभागके वरिशाल नगरमें उठ आनेसे वह स्थान जनशून्य और परित्यक्त हो गया। दूसरे वर्ष इस जिलेकी आरुति बहुत कुछ बढ़ल गई।

इस जिलेमें ५ शहर और ४६१२ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या २० लाखसे ऊपर है। मुसलमानोंकी संख्या सब कौमोंसे ज्यादा है।

वरिशाल, वापरगञ्ज, बउफल, नलछिटी, भालकाटी और पिरोजपुर नगर यहांके प्रधान स्थान हैं। यहांके अधिवासी बड़े ही दुर्बल हैं। डकैती, मारपीट और चूनी मुद्दमेंको पेशी वरिशालमें बहुत देखी जाती है। लोगों का अत्याचार जैसा क्षतिकार है, नूफान, बाढ आदि भी वैसा ही शस्पादिके लिये हानिकारक है।

विद्याशिक्षामें यह जिला बहुत उन्नति कर रहा है। अभी कुल मिला कर ३०७४ स्कूल हैं जिनमेंसे एक गिलफालेज है। स्कूलके अलावा ४१ अस्पताल और चिकित्सालय हैं।

वाग ( ५० पु० ) १ वाटिका, उपवन, उद्यान । २ लगाम । वागबोर ( हि० खो० ) १ चहर ररसे जो घोड़े की लगाममें बांधी जाती है और जिसे पकड़ कर साईस लेग उसे टटलाते हैं । २ लगाम ।

वागना ( हि० कि० ) चलना, फिरना ।

वागवान (फा० पु०) यह जो वागकी रपनाली, प्रवध और सजावट आदि करता हो, माली ।

वागवान्—बम्बई प्रदेशकी धारवाड जिल्लावासी माली जाति विशेष । आचार व्यवहार इन लोगोंका बहुत कुछ कुणवा जातिके ममान है । औरङ्गजेव बादशाहकी अमलदारीमें लोग मुसलमानों धर्ममें दीक्षित हुए हैं । ये

स्वभावसे ही सबल दृढकाय होते हैं । पुरुष माघेके षाल छटवाते हैं, किन्तु दाढी रखते हैं । इनको रमणियोंका पेश भूषा ठीक हिंदू रमणी संरोपा है । वाजारमें फल, शाक सब्जी धान्दि बेचनेमें ये पुरुषोंकी सहायता करती हैं । ये लोग अपनी श्रेणिमें ही विवाहादि करते हैं । सामाजिक नियमके भंग करनेवालोंको चौधुरी बंध देते हैं । मुसलमान होने पर भी ये लोग शुद्धरूपसे हिंदू-देवदेवीको पूजते हैं तथा उत्सव करते हैं । विवाहादि में काजोंकी बुलाते हैं । ये लोग हनकी संप्रदायभुक्त सुन्नी मुसलमान हैं इनमें कोई भी कभी कलमा पाठ नहीं करता ।

वागधानी ( फा० खो० ) १ मालीका पद । २ मालीका काम ।

वागर ( हि० पु० ) १ नदी किनारेकी वह ऊंची भूमि जहां तक नदीका पाती कभी पहुँचता ही नहीं । २ वापु० देखो ।

वागलफोट—बम्बईके बीजापुर जिलेका एक तालुक । यह अक्षा० १६ ४३से १६ २८ उ० तथा देशा० ७५ २६से ७६ ३० पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमण ६८३ वर्ग मील और जनसंख्या प्राय २२३४५६ है । इसमें १ शहर और १६० ग्राम लगते हैं । जिले भरमें यहांका जलवायु बहुत अच्छा है ।

२ उक्त तालुकका सवर । यह अक्षा० १६ ११ उ० तथा देशा० ७५ ४२ पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या उन्नतसे हजारसे ऊपर है । यहां देशमी और सूती कपड़ेका विस्तृत कारवार है । शहरसे द्वाई कोस दूर मुहम्मद नामक स्थानमें एक बड़ी पुष्करिणी है । उसके जलसे खेतोशारी होती है । शहरमें सब जजकी अदालत, अस्पताल और एक म्युनिसिपल स्कूल है । कहते हैं, कि पहले यह स्थान मिहलाधिपति राजाके गायकके अधि कारमें था । १६वीं शताब्दीमें विजय नगरके राजाने इस पर दफल जमाया । १६६४से १७५५ ई०तक यह सब-नूरके नज़ावके अधिकारमें रहा । पीछे पेशवाने उसे छीन कर अपने राज्यमें मिला लिया । १७७४ ई०में यह हैदरके हाथ लग्य, पीछे पेशवाने उसका पुनरुद्धार किया । पेशवाके समय शहरमें एक टकमाल थी । जिसमें १८३५

ई० तक सुचारुरूपसे काम चलता रहा था । गहरमें पाच स्कूल हैं जिनमेंसे एक बालिकाके लिये है ।

**बागलपुर**—मध्यप्रदेशके नरसिंहपुर जिलान्तर्गत एक नगर ।

**बागलान**—२ बम्बईके नासिक जिलान्तर्गत एक प्राचीन राज्य । इसके पूर्वमें चन्दौर, पश्चिममें खुरत और समुद्र, उत्तरमें मुलतानपुर तथा दक्षिणमें नासिक और लिम्बक हैं । पहले यह राज्य ३४ परगनोंमें विभक्त था । यहांके नौ दुर्गोंमेंसे शालहीर और मूलहीर नामक दो पहाड़ी दुर्ग दुर्गें थे । दक्षिणात्यकी चढाई करते समय औरङ्गजेबने इस राज्य पर दात गड़ाया था । तदनुसार उन्होंने १६३७ ई०में वहां एक दल सेना भेजी । मूलहीरपतिने आत्मरक्षाका कोई उपाय न देख दुर्गकी ताली मुगलोंके पास भेज दी । १८१४ ई०को डीरौ लुलाईको मूलहीर-जिला अ गेरोंके हाथ लगा और बागलान राज्य खादेशमें मिला लिया गया । इसके बाद यह नासिक जिलेके अन्तर्भूक्त हुआ ।

२ बम्बईके नासिक जिलेका एक तालुक । यह अक्षा० २० २६' से २० ५३' उ० तथा देशा० ७३ ५१' से ७४ २४' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ६०१ वर्ग-मील और जनसंख्या ६० हजारसे ऊपर है । इसमें १५६ ग्राम लगते हैं, गहर एक भी नहीं है । वर्षाऋतुके बाद यहां मलेरियाका विशेष प्रकोप देखा जाता है ।

**बागवान** ( हि० पु० ) बागवान देखो ।

**बागवानी** ( हि० स्त्री० ) बागवानी देखो ।

**बागांचडा**—नविद्या जिलेके अन्तर्गत एक ग्राम । यह शान्तिपुरसे ५ मील पश्चिम-उत्तरमें अवस्थित है । यह स्थान गंगाके चरने निकल कर क्रमशः जड़ुटमें परिणत हो गया और वहां बहुतसे बाघ आदि वानर करने लगे । इसी कारण 'बाघचर'से इस स्थानका नामकरण हुआ है । प्रसिद्ध तान्त्रिक रघुनन्दनका यहीं पर वास था । जनसाधारणमें वे पूर्णानन्दगिरि परमहंस नामसे प्रसिद्ध थे । उनके वनाये हुए अनेक ग्रन्थ मिलते हैं, यथा—पट्टचक्र भेद, वामकेभरत त्र, द्रयामारहस्यतन्त्र, शाकक्रमतन्त्र और तत्त्वचिन्तामणि । अन्तिम ग्रन्थ १४६६ शकमें रचा गया था । यहां पर दूर दूर देशके लोग

बाग्देवी ठाकुरानीको पूजा करने आते हैं । प्रति शनि और मङ्गल-राको यात्रा समागम होते हैं । रघुनन्दनके भागिनेय महादेव मुखोपाध्यायके वंशधर यहांके अधिकारी माने जाते हैं । बाग्देयी प्रतिष्ठाके बाट चादराय नामक किसी धनी ध्वनिने यहां एक शिवालय निर्माण किया । अमी चादरायको अट्टालिका जङ्गलमें परिणत हो गई है । जङ्गल भी चादरायका जङ्गल नामसे प्रसिद्ध है ।

**बागा** ( फा० पु० ) अ गेकी तरहका पुराने समयका एक पहनावा जो घुटनों तक लम्बा होता है और जिसमें छातो पर तीन बद् लगते हैं, जामा ।

**बागावा**—१ बम्बईप्रदेशके काठियावाड राज्यके अन्तर्गत एक छोटा सामन्त राज्य । यहांके सामन्त गायकवाड और जनागढके नवाबको राजकर दिया करते हैं ।

२ काठियावाडके अन्तर्गत एक नगर । यह अक्षा० २१ २६' उ० तथा देशा० ७१ पू०के मध्य बुनकरावसे १५ मीलकी दूरी पर पडता है । जनसंख्या ६१७८ है । देवगाम देवलोके बलमन्व मायने इसे १५२५ ई०में जीता ।

**बागी** ( अ० पु० ) वह जो प्रचलित शासन प्रणाली अथवा राज्यके विरुद्ध विद्रोह करे, विद्रोही, राजद्रोही ।

**बागीचा** ( फा० पु० ) उद्यान, उपवन ।

**बागुर** ( हि० पु० ) पक्षी या मृग आदि फैसानेका जाल । इसका दूसरा नाम बागीर भी है ।

**बागेपली**—महिसुरके कोटर जिलेका एक तालुक । यह अक्षा० १३ ३७' से १३ ५८' उ० तथा देशा० ७७ ३६' से ७८ ८' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ४४७ वर्गमील और जनसंख्या ६५ हजारसे कटोव है । इसमें २ गहर और ३७२ ग्राम लगते हैं ।

**बागेवाड**—१ बम्बई प्रदेशके कालादुर्ग जिलान्तर्गत एक उपविभाग । भूपरिमाण ७६४ वर्गमील है ।

२ उक्त उपविभागका एक नगर और प्रधान वाणिज्य स्थान ।

**बागेभर**—युज्यप्रदेशके अलमोरा तहसीलका एक ग्राम । यह अक्षा० २६ ५१' उ० तथा देशा० ७६ ४८' पू०के मध्य सरपु और गोमती नदीके मध्यस्थल पर अवस्थित

है। महा मध्य एशिया और भोट राज्यके साथ वाणिज्य चलता है। प्रति वर्ष जनवरीमासमें एक भोटिया मेला लगता है। इस समय पर्यतजात नाना द्रव्य विक्रानेके लिये आते हैं। प्रवाद है, कि मुगल सरकार तैमुरने बागेश्वर उपत्यकामें एक उपनिवेश बसाया था, किन्तु उसका अभी चिह्नमात्र भी नहीं देखा जाता है।

बागेशरी (हि० खी०) १ सरस्वती। २ सम्पूर्ण जातिकी एक रागिनी जो किसीके मतसे मालकौश राजकी खी और किसीके मतसे मैरव, केदार, गौरी और देवगिरी आदि कई रागों तथा रागिनियोंके मेलसे बनी हुई सकर रागिनी है।

बागोर—राजपूतानेके उदयपुर राज्यान्तर्गत इसी नामके परगनेका सहर। यह अक्षा० २५ २२' ३०" तथा देशा० ७४ २३ ५० फोठारी नदीके बाए किनारे अवस्थित है। जनसंख्या ढाई हजारसे ऊपर है।

बागडी—जलडूरी और मेघना नदीके अन्तर्निहित एक प्राचीन जनपद। इसके दक्षिणमें समुद्र पड़ता है। यूपनद्युपगने इस स्थानकी समतट नामसे उल्लेख किया है। विक्रमपुर नगरमें इस प्रदेशकी राजधानी थी।

बागेश्वरगिरा—बङ्गालके रङ्गपुर जिलान्तर्गत एक नगर। बाग्दा—मेदिनीपुर जिलेमें अवस्थित एक नदी जो गंगा घाटोके समीप हुगली नदीमें गिरती है।

बाग्दी—मध्य और पश्चिम घ गंगासी नीच जाति। वास घृत्ति, वृषियार्थ और धीवरघृत्ति ही इस जातिकी प्रधान उपजीविका है। इस जातिके मध्य तैतुलिया, तुलिया, ओष्ठा, मडुया, (मेडुया वा मेडा) गुलमाओ, ब्रह्ममाओ, कुशमेतिया, (कुशमातिया वा कुशपुख), फरोईहुलिया, मह्लमेतिया (मलिया वा मलियाल), याज्ञान्वरिया, वरातिया, लेट, नोदा, ये लयोदज आदि कितने स्वतंत्र धाक इष्टिमोचर होते हैं। बाग, धारा, खा, माओ, गसाल्चो, मोदी, पाल्फाई, परमाणिक, केरका, पुइल, राय, सान्नासर्दार आदि इनकी पदवी हैं। प्रत्येक श्रेणीके मध्य भिन्न भिन्न गोट हैं। अर्द्ध, वाघश्रुति, कच्छप, कोशपक, पाकवसन्ता, पातश्रुति, पोडूश्रुति, जालश्रुति, अलभ्यान, काश्रुप, घामि, वास्य, गदिभायत, काल राशो प्रभृति नाम गोटरूपमें व्यवहृत हैं।

अपने घर छोड़ कर दूसरे घरमें तथा सगोत्रमें विवाह निषिद्ध है। एक तै तुलिया भिन्न अपर श्रेणीके बाग्दी घरमें विवाह नहीं कर सकता। कि तु कन्याके एक गोत्र होने पर विवाह भी नहीं होता है। सपिएट विवाह भी निषिद्ध है।

बाडुडा, मानभूम, और उडीसाके उत्तराशमें बाग दियोंके बीच बालविवाह प्रचलित देखा जाता है। कोई कोई जवानो आने पर पुत्र कन्याका व्याह देते हैं। विवाह के पहले यदि जवान कन्या पर पुरुष पर आसक्त हो जाये तो उसे ये लोग दोग नहीं मानते। २४ परगना, यशोर, नदिया आदि जिलाओंमें बालविवाह प्रचलित है। कोई कोई अस्थानानुसार एकाधिक विवाह भी करता है। इनकी विवाहप्रदति हिन्दुओंके समान होने पर भी इसमें असम्प्रथाके कितने दोग मिश्रित हो गये हैं। वरयात्राके पहिले ये महुआ वृक्षके साथ विवाह करते हैं और उसे सिद्ध प्रदान कर, सूतसे बांध देते हैं। पीछे यह सूत, महुआके पत्तेके साथ चरके दाहिने हाथमें लपेटते हैं। जब वारात दरवाजे पर पहुँचती है, तब कन्या पक्षीय लोग उसे अपने घरमें प्रविष्ट नहीं होने देते। दू-युद्धमें वर पक्षके लोग जयलाभ कर घरकी भीतर ले जाते हैं। शाल पलाच्छादित कु जके मध्यस्थित पीढोके ऊपर घर बैठता है। उसके चारों कोनेमें तेल भाँड गत्य और हल्दी रखी जाती है। मध्यस्थलमें गच्छं चोदकर जल रप दिया जाता है। कन्या आ कर उस शालकु जके चारों ओर सात बार घूमती है। बाद शुद्धमध्यमे आ घरके सामने बैठ जाती है। वह जलपूर्ण गच्छं दोनोंके सामने रहता है। ब्राह्मण द्वारा विवाहके मन्त्रादि पाठ हो जाने पर कन्यासप्रदान शेष समझा जाता है। दक्षिणा देनेके बाद ब्राह्मणकी गण्ट वाधी जाती है। गोत्रान्तरके वाद सिन्दूर दान और माला बदल होने पर विवाह-कार्य शेष होता है। रात्रिमें उपस्थित कुटुम्बियोंकी अस्थानानुसार भोजन कराया जाता है। दूसरे दिन वर कन्याको ले कर अपने घर चला जाता है। विवाहके बाद चार दिनमें गाठे खोलो जाते हैं।

तैतुलिया बाग्दीको छोड़ कर शेष समी बाग्दी श्रेणी में विधवाकी सगाई होती है। इस विवाहमें पहलेके

जैसा म लादिका पाठ नहीं किया जाता। एक धासन पर दोनोंको बिठा दोनोंके कपालमें बटी हल्दीका लेप होता है। दोनोंके मस्तक एक चादरसे ढक दिये जाते हैं। शुभ दृष्टि होने पर वर कन्याके हाथमें लोहेका फडा पहनाता है। विधवा अपने देवरके साथ भी विवाह कर सकती है। जिन सब वाग्द्वानि हिंदू धर्म का आश्रय ग्रहण किया है, उनका आचार व्यवहार उच्च श्रेणीके हिन्दुओं-सा है। किन्तु स्त्रीके बन्ध्या, परपुरुषगामी अथवा अपाध्य होने पर जातीय सभाके मतानुसार उसका त्याग किया जा सकता है। उस स्त्रीको छ मासकी तुराक देनी पडती है। छ मास बाद वह रमणी फिर सगाई कर सकती है। तंतुलिया छोड कर अपर वाग्दी वावरियोंके जैसा निवाह करनेके लिये किसी उच्च जातिको अपनेमें शामिल होने देते हैं।

ब्रह्मा, विष्णु, धमराज और दुर्गा आदि सभी शक्ति मूर्त्तिको ये लोग उपासना करते हैं। पतित ब्राह्मण इन सब देवताओंकी पूजामें इनके यहाँ पुरोहिताई करते हैं। मनसादेवी ही इनकी कुलदेवता है। आषाढ, श्रावण, भाद्र और आश्विन मासमें ७वीं या २०वीं की देवीके सामने महासमारोहसे ये लोग बकरे की बलि देते हैं। नागपचमीके दिन देवीकी चतुर्भुजा मूर्त्ति गढ कर उसको पूजा करते हैं। पूजाके बाद वह पुष्करिणी आदि जलाशयोंमें विसर्जित हो जाती हैं। बाहुडा और मानभूम अञ्चलमें भाद्र-सुकातिके दिन ये लोग भादुदेवीकी प्रतिमूर्त्ति गढ कर महाममारोहसे नगर में स्रमण करते फिरते हैं। इस उत्सवमें शूब नृत्य गीत होता है।

ये लोग शरको जलाते हैं। किन्तु वसन्त (माता) विस्वचिका रोगमें किन्मीकी मृत्यु होने पर उसे मिट्टीमें गाड देते हैं। तीन वर्षके बालक और बालिका भी मिट्टी में गाडी जाती है। अजीबके बाद ये लोग मृतके उद्देश से श्राद्ध करते हैं। अपरापर हिन्दुओंकी तरह इन लोगोंके भी सपत्ति विभाग होता है। ज्येष्ठ पुत्र ही अधिक अंश पाता है, क्योंकि परिवारकी समस्त गृहा स्त्रियों का पालन उसीको करना पडता है।

घटनाली, चौकीदारी आदि दासवर्ति इनके द्वारा

सम्पादित होती हैं। ये लोग लाडो चलानेमें विशेष पट्टे हैं।

बम्बई प्रदेशके बेलगाम जिलेमें एक श्रेणीके वाग्दी बचे जाते हैं। इन लोगोंमें भी समोत्र निवाह निषिद्ध है। पुरुष माथे पर शिखा रखते तथा मद्य और मासके प्रिय होते हैं। स्त्रिया मागमें सि दूर देती हैं, मजूल सूत और बलय पहनती हैं। परिष्कार परिच्छन्न नहीं होने पर भी ये लोग निरोह और श्रान्त हैं। ठेवता और ब्राह्मणमें इनकी विशेष भक्ति है। पुरोहितके न होने पर भी विवाह श्राद्ध आदिमें ब्राह्मण लोग इनकी याजकता करते हैं। बारहवें दिन जातबालकका नाम करण और जाति भोजन होता है। निवाहके प्रथम दिन वर कन्याके शरीरमें हल्दी और तेल लगाया जाता है, दूसरे दिन यथाविहित मन्त्रपाठके बाद निवाह समाप्त होने पर वर और कन्याके शरीर पर चावल छोंटते हैं। बहु विवाह और विधवा विवाह इनमें प्रचलित है। ये लोग मृतदेहको मिट्टीमें गाड देते हैं। तेरहवें दिन पातरु मिट जाने पर स्वनामिवालोंका भोज होता है। सामाजिक निम्राटका विचारमण्डल सम्पन्न करते हैं।

वाग्नी—बम्बईके सतारा जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० १६ ५५ उ० तथा देशा० ७४ २६ पू० अक्षात्से ४ मील दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या ५६५१ है। ग्रामके पश्चिम पुराने समयकी एक प्रमजिदु है।

वागरू—राजपूतानेके जयपुर राज्यान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २६ ४८ उ० तथा देशा० ७१ ३३ पू० आंश्र-अञ्ज मेरके रास्ते पर अवस्थित है। यहाँ राज्यके प्रधान सामन्त ठाडुरका वास है। ये जयपुर दरवारकी प्रयोजन पडने पर चौदह अम्बारोहोसे मदद पहुंचाते हैं। ये किन्मी प्रकारका कर नहीं देते। यहां सूती कपडेकी छोट और रङ्गका विस्तृत कारवार है।

वाग्नी—१ मध्यभारतके इन्दौर पञ्जेन्सीका एक छोटा सामन्त राज्य। भूपरिमाण ३०० वर्गमांल है। यहांके सरदार चम्पावन्-चशोय राजपूत हैं। ठाडुर इनकी उपाधि है। वर्त्तमान ठाडुरराज सिन्धियाके अधीन है। सिन्धिया-राजकी इन्दी कर देना पडता है।

२ उक्त राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २२ ३८

३० तथा देशां ७६ २५' पू०के मध्य अवस्थित है।  
बाघवर (हि० पु०) १ बाघकी घाल जिसे लोग विशेषत  
साधु, त्यागी और अमीर विछाने आदिके काममें लाते  
हैं। २ एक प्रकारका रोप वार फल जो दूरसे देखने पर  
बाघकी खालके समान जान पड़ता है।

बाघ (हि० पु०) शेर नामका प्रसिद्ध हिंसक जन्तु।

व्याघ्र देखो।

बाघ—मध्यप्रदेशके भण्डारा जिलेमें प्रवाहित एक नदी।  
यह किचगढके निकटतरीं पर्वतमालासे निकल कर  
भालाघाट जिलेकी शोण और देव नामक शाखा-नदीमें  
मिलती है। वर्षाके समय इस नदीमें पण्य द्रव्य ले कर  
गमना गमन किया जाता है।

बाघ—१ ग्वालियर राज्यके भोपावर पेजन्सीके अधिष्ठत एक  
परगना। इसकी लम्बाई १४ मील और चौड़ाई १२ मील  
है। इस वनमय पार्वतीय स्थानमें भीषणकाय भील  
जातिका वास है। यहा लोहेकी एक खान है।

२ ग्वालियर राज्यके अन्तर्गत एक छोटा नगर। यह  
अक्षां २२ २४' ३० तथा देशां ७४ ४८' ३०' पू० गिजना  
और घग्गी नदीके सङ्गम-स्थल पर अवस्थित है। जन  
संख्या दो हजारके करीब है। यहाका पञ्चपाण्डु नामक  
गुहामन्दिर बहुत कुछ प्रसिद्ध है। विन्ध्यगिरिमालाके  
दक्षिणस्थ पार्वत्य भूमिके ऊपर यह गुहामन्दिर स्थापित  
है। यहाके बीच विहार अजण्टाके गुहामन्दिरके जैसे  
हैं। ये मत्र ५वींसे ७वीं शताब्दीके मध्यके धने हुए  
हैं, येमा प्रलतत्त्वविश्वको विश्वास है।

बाघवाली—चट्टग्रामके अन्तर्गत एक छोटी नदी।

बाघजन्मा—बङ्गालके २४ परगनेके अन्तर्गत एक नगर।  
यह अक्षां २२ ४७ ३८' ३० तथा देशां ८८ ४७ १६'  
पू०के मध्य अवस्थित है। दमदमाका सेना-वास भी  
इसी नगरकी सीमाके अन्तर्गत है।

बाघडङ्गा—यशोर जिलेके अन्तर्गत एक छोटा ग्राम। यह  
अक्षां २३ १३' ३० तथा देशां ८६ १२' पू०के मध्य  
अवस्थित है। यहा मट्टीके अच्छे अच्छे बरतन तैयार  
होते हैं।

बाघपत—१ मुक्तप्रदेशके मोरट जिलेकी तहसील। यह अक्षां  
२८ ४७' से ३६ १८' ३० तथा देशां ७७ ७' से ७७

२६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४०५ वर्गमील  
और जनसंख्या तीन लाखके लगभग है। इसमें ६ शहर  
और २१८ ग्राम लगते हैं। यह तहसील हिन्दन और  
यमुना नदीके मध्यस्थलमें पड़ती है।

२ उक्त जिलेका एक प्रधान शहर। यह अक्षां २८  
५७' ३० तथा देशां ७७ १३' पू० मोरट शहरसे ३० मील  
पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या करीब ५६७२ है।  
महाभारतमें इस नगरका उल्लेख है। राजा युधिष्ठिर  
कुछ दिन यहा ठहरे थे। नगर दो भागोंमें विभक्त है,  
एक भागमें कसवा (गृहरथ) और दूसरे भागमें मण्डि  
(घणिक) रहते हैं। यमुना पार करनेके लिये नगरके  
बाहर एक पुल है। यहाके अधिवासिगण, चीहान  
घशयी राजपूत हैं। चीनीकी विक्रीके लिये यह स्थान  
बहुत कुछ मशहूर है। अलावा इसके रई, गेहूँ, लाल  
मिर्च, सखीमट्टी पत्राय, राजपूताने तथा शुद्धलकण्डके  
नाना स्थानोंमें भेजी जाती हैं। शहरमें तीन स्कूल हैं।

बाघमती—उत्तर विहारमें प्रवाहित एक नदी। यह नेपाल  
राज्यके काठमाण्डू नगरसे निकल कर मुजफ्फरपुर,  
चम्पारण और दरभंगा जिलेके मध्य होती हुई बूढी गण्डक  
में मिली है। पत्रके ऊपर हो कर बहनेके कारण वर्षा  
कालमें उसका जलप्रवाह बहुत अधिक हो जाता है।  
कभी कभी इसमें पेसी बाढ उमड़ आती है, कि आस-  
पासके गावोंकी बडी क्षति होती है। हीयाघाटके निकट  
इसको कई नामक शाखा निकल कर तिलकेधरमें तील  
शुगा नदीमें गिरी है। लालवाष्य, भुरेनी, लामनदरं,  
छोटी बाघमती, घौस और किम नामक इसकी शाखाए  
प्रधान हैं। मलाईसे बेलनपुर घाट तक बाघमतीका पुराना  
गर्भ दृष्टिगोचर होता है। वर्षाकालमें बाघमतीका स्रोत  
बहनेके कारण उसके बलेरकी वृद्धि होता है। परन्तु  
शीतकालमें उसमें मिर्क २ फुट जल रह जाता है। पुरा  
तन गर्भके पूर्वकालमें बहुत सी नीलकोटी देखनेमें  
आती हैं।

बाघमती (छोटी)—बाघमती नदीकी एक शाखा जो  
मुजफ्फरपुर जिलेमें बहती है। हीयाघाटसे ले कर हर  
भङ्गा तक इसमें वाणिज्य-पोत आ जा सकते हैं। बमला,  
घौस और किम इसके बलेरकी घटि करती है।

वाघमारा—त्रिपुराराज्यके अन्तर्गत एक प्रधान वाणिज्य स्थान।

वाघमारी—मयूरभञ्ज और सिंहभूम जिलेके मध्यवर्ती एक गिरिभङ्ग।

वाघमुण्डी—विहारके मानसून जिलेकी एक अधिपत्यका। इमके सर्वोच्च शिखरका नाम गङ्गावाडी है। यह अक्षा० २३ १२' उ० तथा देशा० ८६ ५' ३०" पू०के मध्य पुरु लिया नगरसे १० कोस दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित है।

वाघल—सिमला पर्वतके निम्नतमर्त्यी पञ्जाबके अन्तर्गत एक पार्वतीय राज्य। यह अक्षा० ३१ ५' से ३१ १६' उ० तथा देशा० ७६ ५५' से ७७ ५' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १२४ वर्गमील और जनसंख्या २५ हजारके करीब है। इसकी राजधानी अर्को है जो सिमलासे २० मील उत्तर पश्चिममें पडती है। यहांके राजगण पुवार वंशीय राजपूत हैं। पहले इनकी उपाधि राणा थी। वर्त्तमान सरकारके पिता किशन सिंहने अङ्ग रैजोको खासी मदद पहुंचाई थी जिससे सरकारने प्रसन्न हो कर उन्हें राजाकी उपाधिसे भूषित किया। १५१५ ई०की सन्धके अनुसार ये लोग इस राज्यका भोग करने आ रहे हैं। मनोकार्यका विचार राजा द्वारा ही परिचालित होता है। प्राणदण्ड देते समय इन्हें कमि शरकी अनुमति लेनी पडती है। यूरोपीय अतिथियोंके रहनेके लिये राजाने एक सुन्दर भवन बनवा दिया है जो निमला पहाडसे १० कोस दूर पडता है। गीड और भारस्वत मालाण तथा कुनेति जाति द्वारा यहांका कृषिकार्य सम्भन्न होता है। गुर्पा-अधिकारमें अर्को नगर राजधानी रूपमें गिना जाता था। वर्त्तमान राजा का नाम विक्रम सिंह है। ये १६०४ ई०में राजसिंहासन पर बैठे। इन्हें ५० सेना और १ कमान रखनेका अधिकार है। राजस्व ५०००० रु०मेंसे ३६००० रु० वृत्ति-सरकारको कररूपक देने पडते हैं।

वाघनापाडा—वर्त्तमान जिलेके अन्तर्गत एक प्रसिद्ध शैल्य-स्थान। यहां प्रति वर्ष एक मेला लगता है।

वाघवचपुर—पञ्जाबप्रदेशके लाहौर जिलान्तर्गत एक गण्ड ग्राम। सलीमके उद्यानके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है। जहांगीर बादशाहके भोलम उद्यानके ढग पर सम्राट्

शाहजहानके प्रधान स्थपति अलीमर्दन खाने यह उद्यान वाटिका बनवाई थी। मुगल सम्राटकी अनतिके साथ साथ यह उद्यान भी लोप हो गया। पञ्जाबकेगरी रण जित् सिंहने उसका जांणस स्कार किया था।

वाघहाट—सिमला शैलके समीपवर्ती अङ्गरेज-वसित एक गिरि राज्य। यह थम्बोला विभागके छोटे लाहके अधीन है। यह अक्ष० ३० ५०' से ३० ५८' उ० तथा देशा० ७७ २' से ७७ १२' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ३६ वर्गमील और जनसंख्या १० हजारके लगभग है। यहांके राणा अपनेको वाक्षिणात्यके घरानगिरि वंशज राजपूत बतलाते हैं। १८०५ ई०में राणा गीलास पुर राज्यको मदद दी थी इस कारण गुरखाने उनका राज्याधिकार बहुत दिनों तक कायम रखा। पीछे १८१५ ई०में राज्यका कुछ भाग जन्त कर पतियालामें मिला लिया गया। १८३६ ई०में कोई राज्याधिकारी न रहनेके कारण राज्य जन्त कर लिया गया, पर १८४२ ई०में भूतपूर्व राणाके भाइके हाथ पाच वर्ष तकके लिये लौटा दिया गया। १८६२ ई०में राणा दलोप सिंह राजसिंहासन पर बैठे। इन्हें सिआइकी उपाधि मिली थी। राज्यकी आय तोस हजार रुपये हैं। वस्तीली और सोलनके सेनानिवामके लिये राणास कुछ स्थान ले कर वृत्ति सरकारने राजस्व माफ कर दिया है।

वाघहाट—हैदराबाद राज्यके मेदक जिलेका तालुक। भूपरिमाण ४५१ वर्गमील और जनसंख्या ६० हजारके करीब है। इममें मुशीराबाद नामका १ शहर और ११० ग्राम लगते हैं। राजस्व ७५००० रु० है।

वाघा (हि० पु०) १ चौपायोंका एक रोग। इसमें पशुओका पेट फूल जाता है और सास रुकनेसे ये मर जाते हैं। २ क्यूतरो की एक जातिका नाम।

वाघी (हि० खो०) एक प्रकारकी गिलटी। यह अधिकतर गरमीके रोगियोंके पैर और जांघकी सन्धिमें होती है। यह वृत्त कष्टदायक होती है और जल्दी दृक्ती नहीं। बहुधा यह पक जाती है और चोरीनी पडती है।

वाघुल (हि० खो०) एक प्रकारकी छोटी मछली।

वाघेरहाट—१ बङ्गालके खुलना जिलेका उपविभाग। यह अक्षा० २२ ४६' से २२ ५६' उ० तथा देशा० ६६ ३२' से

८६५८० पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ६७६ वर्ग मील और जनसंख्या प्राय ३६३०४१ है। इसमें १०४५ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी नहीं है।

२ उक्त उपविभागका मन्दर। यह अक्षा० २२ ४०' उ० तथा देशा० ८६ ४७' पू० और नदीके किनारे अवस्थित है। जनसंख्या हजारसे ऊपर है। नगरके पश्चिम राँ जहान्ना भग्न अट्टालिका स्तूप दृष्टिगोचर होता है। खाँ-जहानकी सातगुम्बज नामक मसजिद और समाधि मन्दिर देवने लायक है। समाधि मन्दिरका ऊपरवाला गुम्बज ४७ फुट ऊँचा है। राँ जहान सुन्दरवनकी आवाज़ करने के लिये यहाँ आये थे। उनकी उक्त समाधि देवनेके लिये दूर दूरके लोग आते हैं। यहाँके अधिवासिगण प्राय मुसलमान हैं जो यहाँ उपद्रवी मालूम पड़ते हैं। नगरकी वाणिज्योन्नति दिनों दिन होती जा रही है।

वाघेभर—कुमायुन जिलेका हिमालयपर्वतसे एक शैव-तीर्थ। यह भोमती और सरयूसङ्गमके समीप सीरकोट नामक स्थानमें अवस्थित है। स्कन्दपुराणके मानस-खण्डमें यह तीर्थमाहात्म्य फोर्सित हुआ है। इसी देवोपदेशसे वर्षमें यहाँ दो बार मेला लगता है। इस समय देवदर्शनकी कामनासे अनेक लोग समागम होते हैं।

वाघेभर—गोंडोके उपदेवताविशेष। गोंड लोग इसकी पूजा किया करते हैं।

वाघेरा—राजपूतानेके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। यह थोत नगरसे ६ कोस पश्चिम वराहनगरके दक्षिण कूल पर अवस्थित है। यहाँ विष्णुकी वराहमूर्ति, प्राचीन वराह-मन्दिर और भागर नामक पुष्करिणी, 'धाम्' आदि वराह' नाम तथा वराहमूर्ति अङ्कित मुद्रा देवनेसे अनुमान होता है, कि एक समय यहाँ वराहमूर्तिपूजाका विशेष आदर था। आज भी यहाँ शहर पवित्र समझे जाते हैं। वाघेरा वासी यदि किसी शूकरकी हत्या करे, तो उसकी अग्रस्थ मृत्यु होगी, ऐसा उन लोगोंका विश्वास है।

वाघेराका प्राचीन नाम वसन्तपुर है। पहले यह चम्बावती नगराधिप गन्धर्वसेनके राज्यामुक्त था। प्राचीन मन्दिरादिके ध्वसावशेष होने पर भी अभी इस नगरमें ३ हजार मनुष्योंका वास है। अधिवासिप्रायसे

अधिकतर ब्राह्मण, राजपूत और वीरिये हैं। वे सबके सब विष्णुके उपासक हैं। यहाँके लोग हाथमें कुठार ले कर इधर उधर भ्रमण करते हैं।

वाचाण्ड—मुन्देलखण्डके अन्तर्गत एक प्रसिद्ध ग्राम। यह क्वाचान नदीके बाएँ किनारे पर्वत तट पर अवस्थित है। एक समय यह रघान महासमुद्रिशालो था। ध्वसाव शेषसे उसका यथेष्ट प्रमाण मिलता है। धामन अ-तार, हरगीरी, विष्णु, लिङ्गमूर्ति, बहुसंख्यक प्रस्तरस्तम्भ और शिलालिपि आदि उसके निदर्शन हैं। शिलालिपि में यह नगर वष्पुनिस्थान नामसे लिखा गया है। यहाँ एक समय चन्देलराज मिटलमदेव राज्य करते थे।

वाचा (हि० खो०) १ बोलनेकी शक्ति। २ बातचीत, वाक्य।

वाछ (हि० पु०) गावमें मालगुजारी, चढ़े, कर आदिका प्रत्येक हिस्सेदारके हिस्सेके अनुसार पगना, बेहरी।

वाछडा (हि० पु०) १ छडा देखो।

वाछल—राजपूत जातिकी एक शाखा। इस शाखाके लोग अपनेकी विराटके पिता वेनराजके वंशधर कहलाते हैं। ११७१ ई०के पहले वाछल राजगण रोहिलखण्ड (पूर्व) देवल और देवहा (पिम्बिनी नदी) नदीके अन्तर्वर्ती प्रदेशका शासन करते थे। कठेरियाओ के अभ्युदय पर वे लोग देवहाके पूर्व भाग गये। मुसलमानोंके उपर्युपरि आक्रमणसे त ग आ कर वे जङ्गलमें जा छिपे और गढ़गाजन तथा गढ़पेरा आदि स्थानोंमें दुर्गस्थापन करके राज्य करने लगे। निगोही नगरमें उनकी राजधानी थी। दिल्लीभरने इस नगरमें घेर डाल कर राजा उदरनके १२ पुत्रोंको यमपुर भेज दिया था। आज भी निगोहीमें उनके १२ समाधिस्तम्भ विद्यमान हैं। उनके वंशधर तर्पण सिंह आज भी इस स्थानका जागीर रूपमें भोग करते हैं।

वाछल-राजपूतोंका गोत्राचार्य शापा अपनेको चन्द्र-परीय बतलाती है। चौहान, राठौर और कच्छशाहोंकी ये लोग अपनी कन्या देते हैं। मपुरा, वडाउन, शाहजहान पुर, रोहिलखण्ड और अलीगढके निकट आज भी वाछल जमींदारोंका अस्तित्व है। अयुक्त-कजल गुजरात-प्रदेशमें इस जातिके आधिपत्यकी कथा लिख गये हैं।

बाछा ( हि० पु० ) १ गायका बच्चा, बड्डा । २ लड्डना, बच्चा ।

बाज ( अ० पु० ) १ सारे ससोरमें मिलनेवाला एक प्रसिद्ध शिकारी पक्षी । यह प्रायः चीलसे छोटा पर उसने अधिक भयकर होता है । उसका रंग मटमैला, पीठ काली और आंखें लाल होती हैं । यह आमाश्रममें उड़ती हुई छोटी मोटी चिड़ियों या क्यूतरो आदिको भफट कर पकड़ लेता है । प्रायः शौकीन लोग इसे दूसरे पक्षियों-का शिकार करनेके लिये पालते भी हैं । इसकी कई जातियां होती हैं । २ एक प्रकारका वगला । ३ तीरमें लगा हुआ पर । ( फा० ) ४ एक प्रत्यय जो शब्दों के अन्तमें लगा कर रखने, रोल्ने, करने या शौक रखनेवाले आदिका अर्थ देता है । जैसे दगाबाज, नरोबाज आदि । ( फा० वि० ) ५ चञ्चित, रहित । ( कि० वि० ) ६ विना, वीर ।

बाज ( हि० पु० ) १ घोटरु, घोडा । २ घाघ, वाजा । ३ सितारके पाच तारोंमेंसे पहला जो पक्के लोहेका होता है । ४ बजानेकी रीति । ५ तानेके सूतोंके बीचमें देनेकी लफडी ।

बाजडा ( हि० पु० ) बाजरा देखो ।

बाजदावा ( फा० पु० ) अपने अधिकारोंका त्याग, अपने दावे या स्वचयसे बाज आना ।

बाजना ( हि० कि० ) १ बाजे आदिका बजाना । २ प्रसिद्ध होना, कहलाना । ३ लडना, भिडना । ४ सामने मौजूद हो जाना, जा पहुँचना ।

बाजबहादुर—मालवके अधिपति । १५५४ ई०में ये पिता सुजा ग्वाके सिंहासन पर अधिरूढ हुए । इनका पूरा नाम मालिक पैयाजिद था । ये मालवके चतुष्पाश्र्वर्षी नाना स्थानोंको जीत कर स्वाधीनभावमें राज्यशासन करते थे । सिंहासन पर बैठते समय इन्होंने सुलतान बाजबहादुरका नाम ग्रहण किया । ये रूपमती नामक किसी रमणीके प्रेममें फस गये थे । यह बात पश्चिम-भारतमें तमाम गाई जाती है । १७ वर्ष राज्य करनेके बाद सम्राट् अकबरने १५७० ई०में उनका राज्य छीन कर अपने राज्यमें मिला लिया । पीछे बाजबहादुर दिल्लीमें अकबरखाहसे मेल कर दो हजार अन्नारोही सेनाके नायक हुए थे । मरने पर

उज्जयिनीकी एक पुष्करिणामें उन दोनोंकी कब्र बनाई गई ।

बाजबहादुरचन्द्र—एक हिन्दुराजा, राजचन्द्रके पुत्र, तिमल्चन्द्रके पीत और लक्ष्मणचन्द्रके प्रपितृ । ये स्मृतिकी स्तुभके प्रणेता अनन्तदेवके प्रतिपालक थे ।

बाजरा ( हि० पु० ) एक प्रकारकी बड़ी घास जिसकी वालोंमें हरे रंगके छोटे छोटे दाने लगते हैं । मारे उत्तरी, पश्चिमी और दक्षिणी भारतमें लोग इसे ग्राते हैं । अनाज मोटा होता है और इसको खेती बहुत-सी बातोंमें ज्वारकी पेतीसे मिलनी जुलती है । यह खरीफकी फसल है और प्रायः उजारके कुछ पीछे वर्षाऋतुमें बोई जाती है । जाड़े के आरम्भमें इसकी बटनी होती है । इसके रोतोंमें खाद देने या सिंचाई करनेकी विशेष आवश्यकता नहीं होती । पहले तीन चार बार जमीन जोती जाती है और तब बीज बो देते हैं । एकाध बार निराईकी जरूरत अत्यन्त पड़ती है । इसके लिये किसी बहुत अच्छी जमीनकी आवश्यकता नहीं होती और यह साधारणसे साधारण जमीनमें भी प्रायः अच्छी तरह होता है । यहां तब, कि राजपूतानेकी बलुई भूमिमें भी यह अधिकतासे होता है । बाजरेके दानोंका आटा पीस कर और उसको रोटी बना कर खाई जाती है । इसकी रोटी बहुत ही बलपूर्वक और पुष्टिकारक मानी जाती है । कुछ लोग दानो को यो ही उगल कर और उसमें तमक मिर्च आदि डाल कर खाते हैं । कहीं कहीं लोग इसे पशुओंके चारेके लिये ही बोते हैं । इसमें बादी, गरम, रूपा, अग्निदीपक, पित्तजडक, कान्तिपनक, बलवर्द्धक और खियोंके कामको बढ़ानेवाला माना गया है ।

बाजहर ( हि० पु० ) बहरमौरा देखो ।

बाजा ( हि० पु० ) बजानेका यन्त्र, घाघ । बाघ देखो । बाजाबत्ता ( फा० कि० वि० ) १ नियमानुसार, जानेके साथ । ( वि० ) २ जो नियमानुक्त हो, जो जान्तेके साथ हो ।

बाजार ( फा० पु० ) १ वह स्थान जहां सब तरहकी चीजोंकी अथवा किसी एक ही तरहकी चीजकी बहुत-सी दुकानें हैं । २ वह स्थान जहां किसी निश्चित समय, चार, तिथि या अथवा आदि पर सब तरहकी दुकानें लगनी हो, हाट, पैठ ।



वाजार—युक्तप्रदेशके सीमान्त प्रदेशके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। यह कालीपाणी नामक नदीके किनारे अवस्थित है। ब्याल और सिन्धुनदके मध्यस्थलमें अवस्थित रहनेके कारण इस स्थानने प्राचीन भारतीय वाणिज्यका केन्द्रस्थान अधिकार किया था। काबुल, मध्य-एशिया आदि नाना स्थानोंसे माल यहांके वाजारमें जमा होता था, इसीसे इसका 'वाजार' नाम पडा। इसके सन्निहित दन्तालोक पर्वत पर अनेक बौद्धगुहा मन्दिरों का एक भावशेष देखनेमें आता है।

वाजारराज—मध्यप्रदेशके नागपुर जिलान्तर्गत एक प्रसिद्ध ग्राम। पूर्व कालसे ही घंघार और बम्बई नगरके साथ यहांका विस्तृत वाणिज्य चला आ रहा है। आमदनी और रपतनी रेलगाडी द्वारा ही होती है। इसके दक्षिण भागके ध्रुम प्राय दुर्गका नागपुरराज जानोजीके पाच, हजारी सेनापति हारकोजी नायक शासन करते थे। प्राय ८५ वर्ष पहले हारकोजीने वह दुर्ग बनवाया था।

वाजारी (फा० वि०) १ वाजार सम्बन्धी, वाजारका। २ साधारण, मामूली। ३ अशिष्ट। ४ मर्यादाहीन, वाजारमें इधर उधर फिरनेवाला।

वाजारू (हि० वि०) वाजारी देखो।

वाजिघोरपडे—एक महाराष्ट्रीय सामन्त, मुधोलके अधिपति। इन्होंने १६४६ ई०में बीजापुर सरकारके पिताके प्रति निर्दय व्यवहार किया था। उमर कृत पापके प्रायश्चित्तके लिये १६६१ ई०में शिवाजीने स्वयं उनके विरुद्ध यात्रा कर दी। घोर पडे पकडे गये और निहत हुए। उनके आत्मीय और अनुचरवर्गने अपने मालिकका पदा नुसरण किया। मुधोल नगर लूट जानेके बाद जला दिया गया।

वाजितपुर—मैसूरसिंह जिलेके विशोरगढ़ उपविभागका एक शहर। यह अक्षा० २४°१३'३० तथा देशा० १०५°५०' पूर्णके मध्य अवस्थित है। जनसंख्या दूज हजारमें ऊपर है। पहले यहां बहुत बडिया ममलिन तैयार होता था जिससे इसकी सुख्याति दूरो फैल गई थी। मसलिन समूह करनेके लिये इष्ट हाँदिया कम्पनीकी यहां एक फीट्री (Factory) भी थी।

वाजितपुर—तीरभुकके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर।

(संग्रह० ४७१४८ पृ५५)

वाजिताग्राम—बङ्गालके धीरभूमने अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह मयूराक्षीसे ४ कोस उत्तरमें अवस्थित है।

(देशा० ५७२१४)

वाजिप्रभु—एक महाराष्ट्र सेनापति। १६६५ ई०में जब मुगलसेना शिवाजीका गर्व खर्व करनेके लिये आगे बढ़ी, उस समय ये मावली और हेटकारो मराठा सेना ले कर पुरन्धर दुर्गमें मौजूद थे। मुसलमान सेनापति मिर्जा, राजा जयसिंह और डिलेर चाँके पुरन्धरकी ओर बढ़ने पर ये असीम साहससे उसके साथ युद्धमें प्रवृत्त हो गये। कई एक युद्धोंके बाद मुगलसेनाने दुर्गके निम्न देश पर अधिकार जमाया। किन्तु हेटकारो मराठासेना ऊपरसे गोली बरसाने लगी जिससे शत्रु गण भाग जाने को बाध्य हुए। इसी समय मावली सेना भी मुगल सेना पर दृढ़ पडी। अच्छी तरह परास्त हो जाने पर भी मुगल सेनापतिने फिरसे लडाईं ठान दी। इसी बीच शिवाजीने कौंगलपूर्वक मुगलसेनापति जयसिंहसे सन्धि करके इस युद्धका अचसान किया। इस युद्धमें वाजिप्रभु ने वीरोचित साहसका परिचय दिया था।

वाजी (फा० खी०) १ शर्त, दौंव, वदान। २ खेलमें प्रत्येक खिलाडीके खेलनेका समय जो एक दूसरेके बाद क्रमसे आता है, दांव।

वाजी (हि० पु०) १ घोडा। २ वजनिया।

वाजीगर (फा० पु०) ऐन्द्रजालिक, जादूगर।

वाजीराव (१म)—एक महाराष्ट्र पेशवा, बालाजी राव विश्वनाथके पुत। १७४० ई०में इनकी मृत्यु हुई।

विस्तृत विवरण पेशवा शब्दमें देखो।

वाजीरावधुनाथ (२५)—महाराष्ट्रके नवम पेशवा। १७१५ ई०में सप्तम पेशवा माधवराव नारायणकी अघघात मृत्युके बाद ये महाराष्ट्रपेशवा पद पर अभिषिक्त हुये। किन्तु महाराष्ट्र मन्त्रिसभाके वार्षिकपरिषदसे कुछ समय तक उनके कनिष्ठ भ्राता 'चिमाताजी माधोरावने' पेशवा हो कर महाराष्ट्रका शासन किया था।

विमानकी मापबन्ध देखो।

१७७१ ई०में मन्त्रिदलकी प्रार्थनाके अनुसार जब

महाराष्ट्र राजसरकारमें होलकर और शिंदेराजका आधिपत्य विस्तृत हुआ, तब रघुनाथराव गुजरातकी तरफ भागे। इस समय वे अपनी गर्भवती पत्नी आनन्दीबाईको धारदुर्गमें छोड़ गये थे। इसके कुछ दिन बाद अन्तिम महाराष्ट्र पेशवा बाजीराव रघुनाथका जन्म हुआ। ज्यों ज्यों वे बढ़ते गये, त्यों त्यों उनकी समुज्ज्वल रूपशोभा तिलने लगी। निस प्रकार रूपमें उसी प्रकार गुण मण्डलीसे भी यह बालक विभूषित होने लगा। विनयादि सद्गुणों ने उसके प्रति जनसाधारणको विशेष अर्थात् उत्पन्न करा दी। जो उसके साथ जरा भी बचनालाप करता, वह उसकी प्रशंसा नित्य विना नहीं रहता। निविष्टचित्त से विद्याभ्यासमें रत रहनेमें अल्प दिनों में ही नाना शास्त्रों में पारदर्शी हो गये। उनके जमानेमें कोई भी ऐसा ब्राह्मण न था जो शास्त्रविचारमें उनकी बरा बरी कर सके। राजवशोचित अस्त्रशास्त्रविद्यामें भी वे बहुत निपुण थे। उनके मनमान अश्वारोही और तीरन्दाज महाराष्ट्र देशमें फिरला ही था।

बालककी ऐसी प्रतिभाशक्ति देख उसे भविष्यमें आशङ्काका कारण समझ कर महाराष्ट्रसचिव नाना फडनवीसने उसे तथा उसके भाइयोंको १७६३ ई०में पूववास कोपर गाँवसे शिवनेरीके पार्यत्य दुर्गमें कैद रखा। पश्चात् १७६४ ई०में जूनारके तिलेमें नगरवद् किया। रघुपन घोरपट्टे और बलवतराव नागनाथ उनकी अभिभावकतामें नियुक्त किये गये। इसके पहले नानाने निनप्रभावकी अश्रुण रखनेके लिये माधोरावको भी बंदी किया था। बाजीरावके अनुनय विनयसे सन्तुष्ट हो बलवतराव रक्षकने उनके पत्रकी माधोरावके हाथमें समर्पण किया। एक दूसरेके प्रति आदर होय। बाजीरावके प्रति माधोरावका अत्यन्त स्नेह देय नानाने उन दोनोंको अलग अलग कर दिया। वे बलवतरावको भी शृङ्खलाबद्ध करनेमें बाज्र नहीं आये। दिनों दिन माधोरावके प्रति नानाफडनवीसका अत्याचार बढ़ने लगा। हताश हो माधोरावने आत्महत्या की। यह सचाद पा नानाफडनवीस परशुराम भाऊ, रघुजी भी सले, दौलतराव शिंदे और तुम्हाजी होलकरको बुला उनसे परामर्श करने लगे। स्थिर हुआ, कि

बाजीरावके सिंहासन पर बैठानेसे महाराष्ट्र राज्यमें अङ्कुरोंका आधिपत्य बढ़ेगा। अतएव उसे राज्य न दे माधोरावकी मित्रता पत्नी यशोदाबाईको दत्तकपुत्र ग्रहण करा उसे ही राज्य देना चाहिये। बाजीरावने इस गूढ अभिप्रायको समझ सिंदियाको अपने हाथ कर लिया। नाना फडनवीस और परशुरामके मोहमत्तसे मुग्ध हो बाजीराव निश्चिन्त रहै। इधर शिंदेके मती बल्लभमठ और शिंदेराज कार्यक्षेत्रमें उपस्थित हो कुछ अप्रतिभ और अपमानित हुये। पूनामें आ बाजीराव और सिंदिया का मिलन होने पर भी महामन्त्री बल्लभने उनके कृतकर्मके प्रायश्चित्त स्वरूप उनके कनिष्ठ भ्राता चिमनानी माधोगवजी १७६६ ई०की २६वीं मईकी पूनामें बुला कर पेशवा पद पर अभिषिक्त किया। इसी समय परशुराम बल्लभकी सहायतासे नानाके उच्छेद साधनमें प्रयासी हुये। पशुनाम और नानाफडनवीस देखो।

नाना दूसरा उपाय न देख पुन बाजीरावको अपने दलमें लानेकी चेष्टा करने लगे। अब तक उन्होंने जो बहु परिश्रमसे धन संचित किया था उससे कितना ही अश पेशवा और सिंदिया सैन्यका अपनी तरफ मिलाया। पेशवा-सेनापति बाबा राव फडके परशुरामके विरुद्ध धरसर हुए। तुम्हाजी होलकर और सपाराम घाटगेने उनकी सहायताके लिये बचन दिया। अन्तमें बाजीरावको हस्तगत कर उन्होंने शिंदेराजको राज्यका लोभ दिया अपने वशीभूत किया। उसके साथ साथ निजाम मन्त्री मासीर उलमुल्क और खण निजामको सुरा-युद्धमें अधिपत निजाम राज्य छोड़नेको प्रतिष्ठावद् हुये। बाजीराव और बाबाराव शिंदे-मती बल्लभके आगमनसे सदैहचित्त हो सैन्यसमूह करने लगे। बल्लभ ससैन्य आ बाजीरावको सम्पूर्ण पडवतका मूल जान उन्हे चारों ओरसे घेर लिया और सपाराम घाटगेके तत्त्वाधानमें उत्तर भारतकी तरफ चालान कर दिया। पथमें जाते जाते उन्होंने घाटगेको अर्धलोभसे वशीभूत कर लिया। वे कुछ दिन तक निकटमें ही रहे। इधर नानाकी कूटमत्तणासे बल्लभ और परशुराम दोनों ही परुडे गये। बाजीराव भी भोमातीरवर्ती कोरेगाव नगरमें रहने लगे।

नाना ने वाजीरावके समीप उपस्थित हो उनसे एक प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करा लिये, कि ये पेशवा पद पर अधिष्ठित हो नाना फडनवीस पर किसी प्रकारका अत्याचार न करेगे। ११६६ ई०की २०वीं नवम्बर को सब लोगोंकी सम्मतिसे ये पेशवा पद पर अधिष्ठित हुये।

वाजीरावके सिंहासन पर बैठनेके बाद १७६७ ई०में फिरसे राज्यसिद्धयके चिह्न दिखाई देने लगे। उसी साल पूना नगरमें पेशवाकी अरवा और देशी सिपाहियोंके बीच एक खडयुद्ध छिड़ गया। उत्तरोत्तर अतीवृद्धयसे राज्यमें घोर निम्नहूलता उपस्थित हुई। वाजीरावके परा मशानुसार घाटगेने नानाके घर और अनुचरवर्गोंको लूटा। नाना अपने परिवार सहित फ़ैद कर लिये गये। वाजीरावने अपने साँतेले भाई अमृतरावको सचिव पद तथा बालाजीपत पदवर्धनको सेनापति पद दे जिंदेराजको मन्त्रिपदसे हटानेका विचार किया, किन्तु जिंदेराजने उनके कटे सुताविक दो फ़रोड़ रुपये मागे। राज्यकीपके खाली पड़ जानेसे वे यथासमय रुपये न दे सके। अत उन्हींने घाटगेको पूना नगर लूट कर अर्धसप्तह करनेका आदेश दिया। पहले राजगृहमें उद्री कर पूनाके आत्मीयवर्ग को निर्यातन फ़लेज उठाना पड़ा। फिर महाजन, धर्मा व्यक्तित्वात्कको फ़डोर अत्याचार और दारुण यत्नणा भोगनी पडी थी। इस कार्यके लिये वाजीरावने प्रकाश्य रूपसे जिंदेरा तिरस्कार किया। १७६८ ई०में महादजी जिंदेकी विधवा पत्नीको अमृतरावने आश्रय दिया। उन्हे ही समयमें आ कर घाटगेने अमृतरावकी छावनी पर आक्रमण कर दिया। क्रमश दोनों पक्षमें घोर युद्ध होनेकी आशङ्का होने लगी।

शिंदेने वाजीरावको भय दिवानेके लिये नानाको अक्षय नगरके दुर्गसे मुक्त कर दिया। वाजीराव पहले हीसे नानाके पदग्रन्थसे डरते थे। अब फ़ारागारसे लुटकारा मिलने पर ये और दृग रह गये। अत उन्हींने सिंधियाके साथ मिलना कर और जिनसे नाना पक्षीय अगरेजोंकी सेना फिर प्रवेश न कर सके उसके प्रतिविधानका ये चेष्टा करने लगे। १६पर ये शुभचर भेन नानाको स्वयं बुला उन्दे मित पद पर अमिषित कर निश्चिन्त हुये।

१७६८ ई०में घाटगेके हाथसे अमृतराव पराजित हुये। महादजीकी तीन पत्नियोंने कोल्हापुर राज्यमें जा आश्रय लिया, बल्लभमठ प्रभुति ब्राह्मणोंने उनका पक्ष अजल्पन किया। पेशवाने फिर शिंदेके साथ मिल कर १८०० ई०में कोल्हापुर पतिका दमन किया था। किन्तु पूनामें चिन्नाटके उपस्थित हो जानेने वे कोल्हापुर राज्यको जय न कर सके। इसी समय नाना फडनवीसकी मृत्यु हुई। वाजीराव सिंधियाके हाथमें फ़टपुतलीकी तरह रहने लगे। यशवतराव होलकर मालवाके विजयसे उत्साहित हो क्रमश अग्रसर होने लगे। उसका दमन करनेके लिये शिंदे पूनासे रवाना हुए। अग्रसर पा वाजीराव पूना घासियों पर यथेच्छा व्यवहार करने लगे। घाटगेकी प्रविशोध देनेमें अपनेको असमर्थ जान उन्हींने जशोवतके साथ मेल कर लिया। उनके हाथसे शिंदेसैन्य विध्वस्त होती जाती थी। उन्हींने जो पेशवाराज्यको लूटा था, उसने वाजीराव असनुष्ट हो उनका दमन करने अग्रसर हुये। किन्तु १८०२ ई० में शिंदे और पेशवाकी मिलित सेना यशवतने अच्छी तरह परास्त हुई। पूनामें विजय घोषणा कर यशोवतने पेशवा परिवारके प्रति सद्य व्यंग्य हार किया। विशेष चेष्टा करने पर भी वे फिर वाजीरावके लौटा न सके। आतिर वे अमृतरावको पेशवा पद देनी राजी हुये। वाजीरावके अङ्गरेजोंके साथ मिलने पर विशेष इच्छा नहीं रहते हुए भी अमृतराव पेशवा पद पर बैठे। १८०२ ई०में वमईको सधिके अनुसार अगरेजी सेनापति वेलेस्लीने होलकर दरगुगणको परास्त कर १८०३ ई० की १३वीं मईको पेशवा पद पर अधिष्ठित किया।

शिंदे, होलकर और पिशाचियों के पुन पुन लुप्टन और १८०३ ई०की अनापृष्टिसे दक्षिणमें दारुण अफ़ाल पडा। साथ साथ महामारी भी उपस्थित हुई। इसी समय वाजीराव शिंदे और रघुजी भोसलेके साथ मिल अङ्गरेजों का प्रमाय रोमनेके त्रिये कटियद्द हुये। १८०३ ई०में अहमदनगर दुर्ग और औस युसमें विजय हो अग्रज दक्षिणात्यके कर्त्ताघर्त्ता हो गये थे। इस समयसे ले कर वाजीरावके पुन अभ्युत्थान पर्यंत महाराष्ट्र-राज्यमें और कोई नयोन घटना नहीं घडी, १६सक दरगु उपद्रव और

विद्रोही सेनादलका उपद्रवमात्र होता रहा था।

१८१२ ई० में एलफिण्टनके अधिष्ठान समयसे बाजो रावने अपनी सेनाको अंग्रेजी प्रधानुसार शिक्षा देना आरम्भ कर दिया। १८१३ ई०में राजप्रतिनिधि खुशरूजी के कर्णाटरूका सूत्रेदार होने पर सदाशिव माणि केश्वर जलने लगे और उन्होने मि० एलफिण्टनके निकट उनकी चुगली खाई। अत उनकी सलाहसे पुशरूजी फिर प्रतिनिधि बननेके लिये राजी हुये और त्रिम्बकजी देङ्गालिया कर्णाटरूके शासनकर्ता बन कर आये। त्रिम्बकजी अंगरेजों की चलती पर जल कर बाजीरावको उनके विरुद्ध उसमाने लगे, पर उससे कोई फल न निकला। इधर त्रिम्बकजीके अत्याचारसे राज्य चौपट लग गया। पूनाके अदालतमें जो ज्यादा भूस देता उसीको जय होती थी।

१८१५ ई०में पेगवा, जिदे, होलकर, भोंसले और पिंडारी सरदारी के पास समाचार भेज उन्हें अंग्रेजों के विरुद्ध लड़नेकी सलाह देने लगे। त्रिम्बकजीकी प्रतीचनासे उन्होने अंग्रेज कर्मचारों एलफिण्टनको निजाम और गायकवाडराजके प्रतिपत्ति लाभकी क्या जताई। उस समय गायकवाडके दूत गङ्गाधर शास्त्री (पूनामें थे) उनको अपने पक्षमें लानेकी त्रिम्बकजी तथा बाजीरावने विशेष चेष्टा की। किन्तु कुछ भी फल न देप उन्होंने शठतासे गङ्गाधरको पण्डरपुरके विठोवा मंदिरमें ले जा कर मार डाला। इसी सबबसे अंग्रेजों राज्य और गोपालराय मैराल त्रिम्बकजी पर सदेह करने लगे। त्रिम्बकको अंगरेजोंके हाथ समर्पण करनेके लिये बाजीरावसे अनुरोध किया गया। बाजीरावने स्वयं त्रिम्बकको अवरुद्ध कर रखा। त्रिम्बकको अर्पित हुए न देप अङ्गरेजों सेना पूनाकी तरफ अग्रसर हुई। बाजीरावने विरक्तस्थविमूढ हो कर त्रिम्बकजीका अङ्गरेजोंके हाथ सौंप दिया। गङ्गाधरकी हत्यामें बडोदा के राजमन्त्री सीतारामने सहायता दी थी, वे भी बाजीरावके पक्षमें आ कर सेनासंग्रह करते थे। उसी वर्ष त्रिम्बकजी धान दुर्गसे अहमद नगरके पर्यंतप्रदेशकी भाग गये।

त्रिम्बकजीके समर्पित होने पर सदाशिव भाऊ मान

केश्वर, मोरोदीक्षित और चिमनानीनारायण बाजीरावके प्रधान परामर्शदाता थे। १८१६ ई०में उन्होंने ऊपरसे अङ्गरेजोंसे मिलता दिखायी, पर भीतर ही भीतर वे जिदे, होलकर, नागपुर और पिंडारियोंके साथ मिल अंग्रेजोंको परास्त करनेके लिये कोशिश करते थे। त्रिम्बकजीका अर्थसे सहायता कर उन्होंने भील, कोल रमसा और मङ्ग आदि पार्वत्य जातियोंको अङ्गरेजोंके विरुद्ध लड़नेके लिये उभाडा। एलफिण्टनने यह समाचार पा पेगवासे कैफियत मागी पेगवाने इसका उत्तर देनेके लिये अपनी सेना भेज दी। एलफिण्टनने इससे सन्तुष्ट न हो पेगवाने कहा, 'आप त्रिम्बकको हमारे हाथ सौंप दें, जब तक नहीं मैंपिगे तब तक सिंहगढ, पुरधर और रायगढ दुग अंग्रेजोंके अधिकारमें रहेगे। यदि आप उक्त तीनों दुर्ग बधनस्वरूप रखनेको राजी न होंगे, तो अंग्रेजराज्य पूनाकी राजधानी पर हमला करनेको बाध्य होगा।' तीनों दुग अंग्रेजोंके हाथ लगे सही परन्तु उनमें एक भी सेना न उच रही थी। १८१३ ई०में पूनाकी स्वधिके अनुसार पेगवा नर्मदाके उत्तर और तुङ्गभद्राके दक्षिणवर्ती भूभाग पर अधिकार छोड देनेको बाध्य हुये। पूनाको स्वधि समाप्त होने पर वे पूना नगरीका परित्याग कर पण्डरपुर में तीर्थयात्राके लिये चल दिये। उसी उप किर्किरी युद्ध में पराजित हो पेगवा सिताराकी तरफ भागे। किन्तु अङ्गरेज सेनाने उनका पीछा किया जिससे उनको अनेक जगह पर्यटन करने पर ससैन्य पूनाकी तरफ बढना पडा। १८१८ ई०की ४थी जनवरीमें अंग्रेजोंसे फिर परास्त हो वे शोलापुरको नींदो ग्यारह हुए। किन्तु आत्मरक्षामें असमर्थ हो उन्होंने आसीरगढके निकटवर्ती डोलकोट नगरमें अंग्रेज सेनापति जनरल सर जनमेरूके हाथ आत्मसमर्पण किया। उक्त वर्षकी ३री जूनको अंग्रेजोंने ८ लाख रुपये मासिक वेतन मुकर्रर कर वानपुरके पास विठुर नगरमें उनके रहनेके लिये स्थान निश्चित कर दिया। सिपाही विद्रोहके प्रधान नेता घुघु पत (नाना साहब) इन्हींके दत्तक पुत्र थे। १८५२ ई०में विठुर नगरमें बाजीरावकी मृत्यु हुई।

वाडू (फा० अन्त्य०) १ दिना, यंगेर। २ अतिरिक्त, सिरा।  
वानू (फा० पु०) १ भुजा, वाडू। २ एक प्रकारका गोदना

जो बाह्र पर गोदा जाता है। इसका आकार बाजूर व-सा होता है। ३ वह जो हर काममें बराबर साथ रहे और सहायता दे। ४ बाजूर द नामका गहना जो गह्र पर पहना जाता है। ५ पक्षीका डैना। ६ सेनाका किसी ओरका एक पक्ष।

बाजूर द (फा० पु०) एक प्रकारका गहना जो बाह्र पर पहना जाता है। यह बड़े तरहका होता है। इसमें बहुधा बीचमें एक बड़ा चौकीर नग वा पटरी होती है। इसके आगे पीछे छोटे छोटे और नग या पटरिया होती हैं जो सबकी सब तामे या रेशममें पिरोई रहती हैं।

बाफना (हि० कि०) बफना देणो।

बाट (हि० पु०) १ मार्ग, रास्ता। २ पत्थर आदिका वह टुकड़ा जो चीजे तौलनेके काममें आता है, घटखरा। ३ पत्थरका वह टुकड़ा जिससे सिल पर कोई चीज पीसी जाय। (खी०) ४ बाटनेका भाव, बटन, यल। बाटना (हि० कि०) सिल पर घट्टे आदिसे पीसना, चूर्ण करना।

बाटली (हि० खी०) जहाजके पालमें उपरकी ओर लगा हुआ वह रस्ता जो मन्तूलके ऊपरसे हो कर फिर नीचे की ओर आता है। इसीको चोंच कर पाल ताना जाता है।

बाटिका (स० खी०) बाग, तुलसी। २ गद्यकाव्यका एक भेद।

बाटी (हि० खी०) १ गोली, पिंड। २ अ गार्तों या उपलों आदि पर सेंकी हुई एक प्रकारकी गोली या पेड़के आकारकी रोटी, लिट्टी।

बाड—१ पटना जिलेके अलग त एक उपविभाग। भूपरिमाण ५२६ वर्ग मील है। फतवा, बाड और मुसामा याना इसके अन्तर्भूक्त हैं।

२ उक्त जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २५°२६'१०" उ० तथा देशा० ८५° ४५' ३२" पू० गङ्गाके किनारे अत्र स्थित है। यहां १६ इण्डिया रेलपथका एक स्टेशन है।

बाड—युक्तप्रदेशके इलाहाबाद जिलेकी तहसील। यह अक्षा० २५ २३' २५" उ० तथा देशा० ८१ ३१' से ८१ ४६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २५३ वर्ग मील और जनसंख्या ५५ हजारसे ऊपर है। इसमें

२३७ ग्राम लगेते हैं, शहर एक भी नहीं है। यहांको प्रधान उपज धान है।

बाड—युक्तप्रदेशके गाजीपुर जिला-नर्मसत एक शहर। यह अक्षा० २५ ३१' उ० तथा देशा० ८३' ५२' पू० गाजीपुर शहरसे १८ मील दक्षिण-पूरुबमें अवस्थित है। जनसंख्या पाच हजारसे ऊपर है। इसके पास ही १५३६ ई०में हिमायू और शेरशाहमें युद्ध हुआ था जिसमें हिमायू की हार हुई थी। शहरमें बहुतसे प्राचीन मन्दिर और दो स्कूल हैं।

बाडूकन (अ० पु०) १ एक प्रकारका सूजा जो छापेबानेमें काम आता है। इसमें पीछेकी ओर लकड़ीका दस्ता लगा रहता है। इससे कम्पोजीटर लोग फर्पोज किये हुए मैटरमेंसे गलतीसे लगा हुआ अक्षर निकालते और उसकी जगह दूसरा अक्षर वैठाते हैं। २ बकरीपानेमें काम आनेवाला एक प्रकारका सूजा। इसका पिछला सिरा बहुत मोटा होता है। यह कितारों आदिमें ठोक कर छेद करनेके काममें आता है।

बाडव (स० खी०) बडवाना समूह बडवा (सन्धिः १२५.१। पा ४११।४५) इत्यम्। १ बडवा-समूह, गोडिबोका भुण्ड। २ प्राहाण। ३ बडवानल, बडवानि। (ति०) बडवया इव बडवा अण्। ४ बडवासम्बन्धी।

बाडवानि (स० पु०) बडवा समुद्रगथा घोटकी तत्सम्बन्धयनि। बडवानल।

बाडवान्य (स० पु०) बाडवेपु प्राहाणेषु आग्न्य धेष्टः। प्राहाणधेष्टः।

बाडवेय (स० पु०) बडवाया घोटारूपधारिण्या सूर्य पत्न्या अपत्ये दुमासी बडवा-इव्। अश्विगोशुमार द्वय। यह शब्द द्विवचनान्त है।

बाडव्य (स० खी०) बाडवाना प्राहाणाना समूह बाडव (प्राहाणानववाडव द्वय) प ४११।४२ इति यत्। प्राहाणसमूह।

बाडन (स० पु०) मन्त्र्य, मछली।

बाडा (हि० पु०) १ चारो ओरसे घिरा हुआ कुछ विस्तृत गाली स्थान। २ यह स्थान जिसमें पशु रहते हैं, पशु प्राता।

बाडा—मध्यप्रदेशके नर्मसतपुर जिलान्तर्गत एक नगर।

पिण्डारी-सरदार चोतूने इम स्थानका जागीर रूपमें भोग किया था। यहा ईपकी विस्तृत खेती होती है। सूती कपड़े बना कर बेचना और छिन्दवाडा राज्यकी वन्य भूमिसे काष्ठ और रङ्गका धाणिज्य करना यहाके अधिवा-सियोंकी प्रधान उपजीविका है।

वाडिस (अ० खी०) टिपोंके पहननेकी एक प्रकारकी अ गरीजो ढ गकी धुरती।

वाडिङ्गन (स० पु०) वाड प्यावन तस्मै इङ्गते इति वाड्, इङ्ग-स्यु। वाचाङ्गु।

वाडी—हजारीबाग जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह ग्राण्ड ट्राङ्क रोड नामक पथके एक ओर अवस्थित है।

वाडी—अयोध्या प्रदेशके सोतापुर जिलेकी एक तहसील। भूपरिमाण १२५ वर्गमील है। पहले यहा कच्छ और अहीर जातिका वास था। १४वीं शताब्दी तक यह स्थान उन्ही के अधिकारमें रहा। पीछे मुसलमान धर्मांग लम्बी प्रतापसिंह नामक किसी हिन्दूने दिल्लीके तुगलक सम्राट्के फरमानके अनुसार यह स्थान दखल किया। उनके पशुधरगण आज भी चौधरी कहलाते हैं। फिल-हाल यहाके अनेक स्थान वैश नामक राजपूतोंके अधि-कारमें हैं।

वाडी (हि० खी०) वाटिका, बारी, कुठारी।  
वाडीगार्ड (अ० पु०) १ किसी राजा या बहुत बड़े राज कर्मचारीके साथ रहनेवाले उन थोड़े से सैनिकोंका समूह जिनका काम उसके शरीरकी रक्षा करना होता है। २ इन सैनिकोंमेंसे कोई एक सैनिक।

वाडीर (स० पु०) भृत्य, नौकर।  
वाड (स० खी०) १ सत्य। २ प्रतिष्ठा। ३ अधिम्ता, वृद्धि।

वाट (हि० खी०) १ बढ़नेकी क्रिया या भाव, बढ़ान। २ अधिक वर्षा आदिके कारण नदी या जलाशयके जलका बहुत तेजीके साथ और बहुत अधिक मानमें बहना। ३ बन्दूक या तोप आदिका लगातार झुटना। ४ वह धन जो व्यापार आदिमें बड़े, व्यापार आदिसे होनेवाला लाभ। ५ तलवार, छुरी आदि शस्त्रोंकी धार, सान।  
वाटकड (हि० खी०) १ तलवार। २ खड्ग।  
वाटसुत्वन् (स० खी०) नि शङ्कामी, अशङ्कित गमन।

वाढी (हि० खी०) १ वाढ, बढ़ाव। २ अधिकता, वृद्धि। ३ वह ध्यान जो किसीको अन्न उधार देने पर मिलता है। ४ लाभ, नफा।

वाढीवान (हि० पु०) यह जो छुरी, कैंची आदिकी धार तेज करता हो।

वाण (स० पु०) वणन वाण शब्दस्तद्वास्यास्तीति वाण धच्। १ अस्तनिशेष, तीर, सायक। प्राचीनकालमें प्राय सारे ससारमें इस अश्वका प्रयोग होता था और अब भी अनेक स्थानोंके जगली तथा अशिक्षित लोग अपने शत्रुओंका सहार या आपेट आदि करनेमें इसीका व्यवहार करते हैं। यह प्रायः लकड़ी या नरसलको डेढ हाथकी छड होती है जिसके सिरे पर पैना लोहा, हड्डी, चक्रमक आदि लगा रहता है जिसे फल या मासी कहते हैं। यह फट कई प्रकारका होता है, कोई लम्बा, कोई अर्द्ध चन्द्राकार और कोई गोल। लोहेका फल कभी कभी जहरमें युक्त भी लिया जाता है जिससे आहतकी मृत्यु प्राय निश्चित हो जाती है। कही कही इसके पिछले भागमें पर आदि भी बांध देते हैं जिससे यह सीधा और तेजीके साथ जाना है। श्वेतुषद शब्द।

२ गोस्नन, गायका धन। ३ फेरल। ४ अग्नि, आग। ५ काण्डावयव, जरका अगला भाग। ६ नीलकिण्टी, नीली कटसरैया। ७ भद्रमुञ्ज वृण, सरपत, रामसर। ८ लक्ष्य, निजाना। ९ पाचनी सप्या। कामदेवके पाच वाण माने हैं इसीसे वाणसे ५ नी सप्याका रोष होता है। १० इश्वारुचशीय विदुषिके पुत्रका नाम। ११ फादम्बरी प्रणेता एक प्रसिद्ध कवि। वाणमश देवो। १२ राजा बलिके सी पुत्रोंमेंसे सबसे बड़े पुत्रका नाम। भाग धतमें इसका विषय यों है—

महाराज बलिके सी पुत्र थे, जिनमेंसे बड़े का नाम वाण था। वाण सर्वगुणसम्पन्न और सहस्रबाहु थे। इन्होंने हजारी वर्ष तपस्या कर शिवसे वरप्राप्त किया था। पातालस्थ गोगपुरीमें इनकी राजधानी थी। महा देवके अनुग्रहसे देवगण इनके निकट सद्गश थे। युद्ध स्थलमें महादेव स्वय आ कर इनकी रक्षा करते थे। वाणके ऊप नाम्नी एक कन्या थी। ऊप प्रति रातकी एक कमनोपयान्ति पुरुष स्वप्नमें देखती थी। क्रमशः

स्वमूढ पुरुषके लिये नितान्त व्याकुल हो उसने सही चिन्तलेपाके समीप अपना अग्रिप्राय प्रकट किया। चित्त-लेपा उस पुरुषकी श्रीकृष्णका पौत्र जान कर योगरत्नसे आकाश मार्ग होती हुई द्वारका पहुँची और यहासे अनि रूद्धको हरण कर ऊँचाके निकट ले आई। अनिरूद्ध कुछ दिन तक गुप्तमासे वहाँ रहे। पीछे वाणको मालूम होने पर उन्होंने अनिरूद्धको कैद कर रखा।

इधर चार वर्ष तक जब अनिरूद्धका वही पता न चला, तब एक दिन नारद श्रीकृष्णके यहा गये और कुल बाते यह सुनाई। अनिरूद्ध वाणके निकट आबद्ध है नारदके मुखसे यह सवादा पा कर श्रीकृष्ण आगमूले हो गये और उसी समय उन्होंने वाण-पुरीको यात्रा कर दी। यहा पहुँच कर श्रीकृष्णने वाणके साथ युद्ध ठान दिया। इस युद्धमें महादेव स्वयं आ कर श्रीकृष्णसे लडे थे। युद्धमें श्रीकृष्णने जन वाणकी मंत्र भुजाएँ काट डालीं, तब शिवजी श्रीकृष्णका स्तन करने लगे। स्तनसे श्रीकृष्णने युद्ध बन्द कर दिया। इस समय वाणकी बेगल चार भुजाएँ बच रही थीं। वाणने ऊँचा समेत अनिरूद्धको श्रीकृष्णके हाथ प्रत्यर्पण किया। श्रीकृष्ण बड़ी धूम धामसे पुत्र और पुत्रवधुकी द्वारका ले आये। (भागवत ६२, ६४ अ०) हरिचरित्रमें १०२वे अध्यायसे आरम्भ करके इसका विस्तृत विवरण लिखा है। विस्तार हो जानेके भयसे यहा उसका उल्लेख नहीं किया गया।

वाणगङ्गा (स० रती०) वाणेन प्रकटिता गङ्गा नदीविशेष। हिमालयके सोमेश्वर गिरिसे निःसृत एक प्रसिद्ध नदी। कहते हैं, कि यह रावणके वाण चलाग्नेसे निकली थी इसीसे इसका यह नाम पडा। इसमें स्नान करनेसे सभी पाप दूर होते हैं। यहा वाणेेश्वर नामका एक लिंग है जिनके दर्शन करनेसे भी अशेष पुण्यलाभ होता है।

वाणवण्ड (स० पु०) वाणस्य वण्ड। वाधावण्ड। इसका पर्याय वेमा है।

वाणधि (स० पु०) वाणाधोयतेऽस्मिन् या आपारे कि।

शुधि, तृण, तरुश्रय।

वाणनागा (स० स्त्री०), नदीभेद।

वाणपञ्चानन (स० पु०) एक ग्रन्थकार।

वाणपति (स० पु०) वाणासुरके स्वामी, महादेव।

वाणपत्र (स० स्त्री०) फल्गुपत्री।

वाणपथ (स० पु०) शरमार्ग, उतनी दूर जहा तक वाण जा कर गिरे।

वाणपात (स० पु०) शरनिक्षेप।

वाणपुङ्खा (स० स्त्री०) वाणस्य पुङ्खा। शरपुङ्खा।

वाणपुर (स० स्त्री०) वाणस्य राश पुरम् नगरम्। वाण राजनगर। पर्याय—देवीकोट, फोटीवर्ष, ऊँचावन, शोणितपुर, आग्नेय, उमावन, कोटवीपुर।

वाणभट्ट—एक प्रसिद्ध कवि। ये कबीरजीके अधिपति श्रीहर्षचन्द्रनके सभापण्डित थे। इन्होंने अपने बनाये हुए 'हर्षचरित' नामक ग्रन्थमें अपने जीवनकी कुछ घटनाओंका उल्लेख किया है। ये शोणतीरवासी सारस्वतवशी ब्राह्मण थे। बचपनमें ही पिता मातासे वियोग होनेके कारण ये उच्छृङ्खल प्रकृतिके हो गये थे। नागरिकोंके साथ रहनेके कारण इनके आचारमें सन्देह किया जा सकता है जो नितान्त निर्मूल भी नहीं है। यद्यपि दुर्घटनाओंमें फस जानेके कारण इका अध्ययन टूट गया, तथापि इस समयके नागरिकोंके समान ये भारतके नागरिक नहीं थे। वाणभट्ट यद्यपि उच्छृङ्खल प्रकृतिके हो गये थे तथापि उनका चरित्र नीच नहीं हुआ। वाणभट्टका मन जब अपने साथियोंसे ऊँच गया, तब ये उनका परित्याग कर श्रीहर्षचन्द्रनकी सभामें उपस्थित हुए। विद्याध्यसनीराजाने इनको उचित आश्रय दिया।

इन्होंने 'हर्षचरित' कादम्बरोदा पूर्वभाग 'चण्डिका शतक' और 'पार्वतीपरिणय' नामक ग्रन्थ बनाये हैं। अनेक विद्वानोंका मत है, कि पार्वती परिणयके कर्ता ये वाणभट्ट नहीं हैं। हर्षचरित और कादम्बरी ये दोन गद्यकाव्य हैं। चण्डिकाशतकमें सौ श्लोकोंसे भगवती की स्तुति की गई है। पार्वतीपरिणय नाटक है। कहते हैं, कि इन ग्रन्थोंके अतिरिक्त पद्य कादम्बरी भी वाणभट्टने बनाई थी परन्तु यह ग्रन्थ अभी तक न तो कही प्रकाशित हुआ है और न उसका कही पता ही लगा है।

ऊपर कहा गया है, कि वाणभट्ट हर्षदेवके रामा

पण्डित थे। काव्यप्रकाशके टीकाकार पण्डितोंने वाणभट्ट और हर्षदेवके सम्बन्धमें एक विलक्षण कमेला डाल दिया है। काव्यप्रकाशकी घृत्तिमें एक स्थान पर लिखा है—“श्रीहर्षादिर्धावकादीनामिज धनम्” अर्थात् श्रीहर्षसे जिस प्रकार धावक आदिको धन प्राप्त हुआ था। काव्य प्रकाशके टीकाकार महेश्वर इसका अर्थ इस प्रकार करते हैं—“श्रीहर्षों राजा, धावकेन रत्नावलीं नाटिका तत्रान्ना कृत्वा बहुधन लब्धम्” काव्यप्रकाशकी टीकामें वैधनाथ ने लिखा है—“श्रीहर्षारपस्य राघो नाम्ना रत्नावली नाटिका कृत्वा धावकारय कविवर्द्धुधन लेभे” दूसरे टीकाकारोंने भी इसी प्रकारका अपना मत प्रकाशित किया है। काव्यप्रकाशके टीकाकार प्रसिद्ध विद्वानोंने जो लिखा है उसको माननेके पहिले कुछ विचार करना आवश्यक है। कालिदास रचित मालविकाग्निमित्र नामक नाटककी प्रस्तावनामें लिखा है—“प्रथितयशसा धावकसौमिल्लक विपुवादीना प्रवन्धानतिवस्य वत्तमानकरो कालि दासस्य इतो किं इतो बहुमा ।” अर्थात् प्रसिद्ध विद्वान धावक सौमिल्ल कविपुत्र आदिके बनाये नाटको के रहते हुए भी वर्त्तमान कविऽ कालिदासके नाटकका इतना आदर क्यों किया जाता है। इससे दो बातोंका पता लगता है, एक तो यह कि धावक एक प्रसिद्ध नाटक-लेखक थे और कालिदाससे प्राचीन थे। अतः ७वीं सदीके हर्षदेवके नामसे कालिदाससे भी प्राचीन धावक कविने रत्नावली नामकी नाटिका बनायी हो, यह किसी प्रकार सुकिसगत नदी समझा जा सकता। इनकी मीमांसामें केवल दो ही उच्चर पर्याप्त हैं। एक तो यह, कि मालविकाग्निमित्रके रचयिता कालिदास रघुवशके रचयिता कालिदाससे भिन्न हैं। क्यों कि रघुवशप्रणेता कालिदास चिनयी थे और मालविकाग्निमित्रप्रणेता कालिदास उद्धत।

वाणभट्ट ७वीं शताब्दीमें विद्यमान थे। कहा जाता है, कि युपनयुचगके भारत आनेके समय वाणभट्ट वत्तमान थे। सूर्य शतककर्त्ता मयूरभट्ट वाणके जामाता और जैन पण्डित मानतुङ्गाचाय इनके मित्र थे। ये तीनों ही ह्यवर्द्धनके सभा पण्डित थे।

वाणयुद्ध ( स० ३१० ) वाणेन सह युद्ध । वाणराजके साथ श्रीहर्षका स प्राम । वाण देखो ।

वाणविद्या ( स० ४१० ) वह विद्या जिससे वाण चलाना आवे, तीरदात्री ।

वाणलिङ्ग ( स० ३१० ) वाणार्धनाथ वृत्त लिङ्ग । नर्मदादि नदीजात शिवलिङ्गविशेष ।

नर्मदा नदीमें जो शिवलिङ्ग पाया जाता है उही वाणलिंग है। यह वाणलिंग सब लिङ्गों की अपेक्षा श्रेष्ठ है। शिवलिङ्ग-पूजनमें कोमललिङ्गके मध्य मृत्लिङ्ग और रुठिन लिङ्गके मध्य वाणलिंग ही सर्वोत्कृष्ट है।

“कोमलेषु च लिङ्गेषु पार्थिव श्रेष्ठमुच्यते ।

कठिनेषु च पापाण पापाणात् स्फाटिक वरम् ॥

हेरण्य राजतात् श्रेष्ठ हेरण्याद्दीरक वरम् ।

हीरकात् पारद श्रेष्ठ वाणलिङ्ग तत परम् ॥

( मेरतन्त्र ६ अ० )

नर्मदा, देविका, गङ्गा और यमुना आदि नदियों में वाणलिङ्ग पाया जाता है। इस लिङ्गका पूजन करनेसे इहजन्मका समस्त अभीष्टलाभ और परजन्ममें मुक्ति होती है।

वाणलिङ्ग भिन्न भिन्न विह्व हारा भिन्न भिन्न नामसे प्रसिद्ध है। यथा—जो लिङ्ग मधु और पिङ्गल वर्णाम तथा वृष्ण कुण्डलिनायुत होता है उसे स्वयं स्मृ लिङ्ग, जो नाना वर्ण तथा जटा और शूलचिह्नयुक्त है उसे स्मृत्युजय लिङ्ग, दीर्घाकार, शुभवर्ण और वृष्णविन्दु चिह्नवालेको नीलकण्ठ शुक्लाम, शुक्लकेश और तीन नेत्र चिह्नयुक्तको महादेव, वृष्णवर्ण आभायुक्त और स्थूल त्रिप्रह्वको कालानिन्द्य तथा मधु और पिङ्गलवर्णाम, अथे त यक्षोपवीतयुक्त, श्वेतपद्मानाम और चन्द्ररेखा भूपित लिङ्गको विपुरारि लिङ्ग कहते हैं।

वाणलिङ्गमें महादेव सर्वदा अग्रस्थित रहते हैं। वाण लिङ्गकी पूजा करनेमें वेदिका वाता आवश्यक है। क्योंकि, उस वेदिकाके ऊपर लिङ्गस्थापन करके पूजा करनी होती है। बिना आधारके पूजा नहीं करने चाहिये। यह वेदिका ताम्र, स्फाटिक, स्वर्ण, पाषाण और रौप्य इन मंसे किसी एककी होनी चाहिये। प्रतिदिन इस प्रकार वेदिकाके ऊपर वाणलिङ्ग रख कर पूजा करनेसे मुक्ति लाभ होता है।



“ताञ्च वा म्काटिनो स्वाणीं पायाणी राजनी तथा ।  
वेदिका च पक्वार्चया तत्र सस्थाप्य पूजयेत् ॥  
प्रत्यह योऽर्चयेद्विङ्गं नामंभ भक्तिभागत ।  
ऐहिक किं फल तस्य मुक्तिस्तस्य वरे स्थिता ॥”  
(सूतसंहिता)

वाणलिङ्ग नाना प्रकारके हैं जिनमेंसे कितने मोक्षा  
धियो के, कितने गृहस्थोंके और कितने सन्यासियोंके  
शुभजनक हैं ।

निम्ननीय लिङ्ग—वाणलिङ्ग यदि कर्षण हो, तो  
उसको पूजा नहीं करना चाहिये, करनेसे खी और  
पुत्रका नाश होता है । एक पाण्डुरियन लिङ्ग, भानलिङ्ग,  
छिद्रलिङ्ग और जिम लिङ्गका अण्भाग तीक्ष्ण हो वैसा  
लिङ्ग, शीर्षदेशनय, लक्षण अर्थात् विमोण लिङ्ग, अति  
स्पृष्ट और अति रुग्ण लिङ्गपूजामें प्रशस्त नहीं है ।  
वर्षिलवर्ण अथवा घनाभलिङ्ग मोक्षार्थियोंके लिये शुभ  
जनक है । जिस लिङ्गका त्रण भ्रमरके जैसा है, वैसा ही  
लिङ्ग गृहस्थोंके पक्षमें शुभकर माना गया है । इस लिङ्गका  
सपीठ और अपीठ दोनों ही अस्थामें पूजन किया जा  
सकता है । वाणलिङ्गपूजामें आवाहन वा विमजन पुत्र  
भी नहीं करना होता है । खीशूद्रको भी इस वाणलिङ्गके  
पूजनमें अधिकार है । शिवका जो ध्यान है उससे भी  
वाणलिङ्ग पूजा की जा सकती है अथवा निम्नोक्त ध्यान  
से भी पूजा कर सकते हैं । ध्यान यथा—

“ओं प्रमत्त शक्तिमयुक्त वाणास्थञ्च महाप्रभम् ।  
फामवाणान्वितं देव ससारादहनक्षमम् ॥  
शृङ्गारादिरसोहास वाणान्यं परमेश्वरम् ।  
एव ध्यात्वा वाणलिङ्गं यजेत् परमं शिवम् ॥”

वाणलिङ्ग नाम पडनेका कारण सूतसंहितामें इस  
प्रकार लिखा है—राजा वाण महादेवके अतिशय प्रिय थे  
और प्रतिदिन शिवलिङ्ग बना कर उसको पूजा करते थे ।  
इस प्रकार दिव्य परिमाण सौ वर्ष तक उन्होंने शिव पूजा  
की थी । आप्तिर महादेवने प्रसन्न हो कर उन्हें इस  
प्रकार घर दिया था, “मैं तुम्हें चौदह करोड़ लिङ्ग प्रदान  
करता हूँ, ये सब सिद्ध लिङ्ग हैं । ये लिङ्ग नर्मदादि पुण्य  
नदीमें रहेंगे ” यथानियम इस वाणलिङ्गको पूजा और  
पूजाके बाद स्तव करके पूजा समाप्त करती होती है ।  
स्तव यथा—

“वाणलिङ्गमहाभाग ससारात्वाहि मा प्रभो ।  
नमस्ते चोप्ररूपाय नमस्ते ध्यक्तयोनये ॥  
ससाराकारिणे तुभ्य नमस्ते तद्वन्नरूपशुक् ।  
प्रमत्ताय महेंद्राय कालरूपाय वै नम ॥  
दहनाय नमस्तुभ्य नमस्ते योगशरिणे ।  
भोगिना भोगवर्द्धे च मोक्षदाये नमोनम ॥”

इत्यादि ।

बोधवार, वाणलि गतेश्वर नर्मदाबन्धु देवो ।

वाणपार (स० पु०) वाण परमुक्तप्रग धारयतीति वृणिच-  
अण् । भटाटिका चोलाह तिस्रसह । पर्याय—चारवाण,  
वारण, चोलाह ।

वाणविद्या (स० स्त्री०) वह विद्या जिससे वाण चलाना  
आये, तीर दाजी ।

वाणसुता (स० स्त्री०) वाणस्य वाणासुरस्य सुता ।  
ऊया ।

वाणहन (स० पु०) वाण वाणासुर हन्तीति हन् किप् ।  
निष्णु ।

वाणा (स० स्त्री०) १ वाणमूल । २ नीलपुष्प भिष्टीशुप,  
नीली फटसरैया ।

वाणारि (स० पु०) वाणस्य वाणासुरस्य अरि । विष्णु ।  
वाणाश्रय (स० पु०) वाणस्य आश्रय । धनु ।  
वाणासन (स० स्त्री०) वाणस्य आसन । धनु ।  
वाणासुर (स० पु०) राजा बलिके सो पुलोंमेंसे सबसे बड़े  
पुत्रका नाम । वाण देवो ।

वाणाहा (स० स्त्री०) १ मुञ्ज वृण । २ नील कमल ।  
वाणज (स० पु०) वणिगेव, वणिज अण् । १ वणिक् ।  
२ वाद्ययानि ।

वाणजक (स० पु०) वणिगेव वणिज् ऊञ् । १ वाद्य  
यानि । २ वणिक् । (त्रि०) ३ धृत् ।

वाणिज्य (स० पु०) ध्यापार, रोजगार ।  
वाणी (स० स्त्री०) तीर्णभिष्टी, नीलो फटसरैया ।

वाणेश्वर (स० पु०) १ शिवलिङ्गभेद । २ त्रिवाद्याप्य  
सेतु नामक ग्रन्थके एक स प्रवृत्तां ।

वाणेश्वरविद्यानङ्कार देवो ।

वाणेश्वरविद्यानङ्कार—बहुताप्ये पर विद्यात वणिज् । इन  
की स्मरण शक्ति बड़ी तीव्र थी । इनके पिता जो सब

स रक्त स्तव पाठ करते थे उन्हें सुन कर ही ये मुखस्थ कर लेते थे। इनकी ऐसी असाधारण मेधाका परिचय पा कर एक दिन इनके पिताने कहा, 'भविष्यमें वायु भी एक पण्डित होगा।' उनकी उक्ति मिथ्या न हुई। थोड़ी ही उमरमें ये सब शास्त्रोंमें पण्डित हो गये। इनकी बनारस हुई सुललित और पाण्डित्यपूर्ण अनेक कविताएँ प्रचलित हैं। पहले ये नवद्वीपाधिपति महाराज कृष्ण चन्द्रके सभा पण्डित थे। पीछे कलकत्ते आ कर इन्होंने महाराज नवलक्ष्मीकी सभा उज्ज्वल की। बड़े लाट धारन हेण्डिसने जिन सब पण्डितोंको सहायतासे 'विवादा र्णसेतु' नामक बृहत् धर्मशास्त्रस प्रह प्रकाशित किया था, उनमेंसे वाणेश्वर एक थे।

वात (हि० स्त्री०) १ वाणी, वचन। २ प्रचलित प्रसंग, फैली हुई चर्चा। ३ प्रसङ्ग, चर्चा, जिज्ञा। ४ प्राप्त संयोग, घटित होनेवाली अवस्था। ५ परम्पर कथोप कथन, गप शप। ६ सदेश, सवेसा। ७ व्यवस्था, हाल, मात्रा। ८ झूठ या बनावटी कथन, मिस, बहाना। ९ कोई मामला तै करनेके लिये उसके सम्बन्धमें चर्चा, किसीके साथ कोई व्यवहार या सवध स्थिर करनेके लिये परस्पर कथोपकथन। १० फँसाने या धोखा देनेके लिये कहे हुए शब्द या किय हुए व्यवहार। ११ अपनी हीसियत, योग्यता, गुण, सामर्थ्य इत्यादिके संबन्धमें कथन या धाक्य। १२ आदेश, उपदेश, सीख। १३ रहस्य, भेद, मर्म। १४ प्रतिज्ञा, कील। १५ मानमर्यादा, प्रतिष्ठा। १६ विश्वास, प्रतीति। १७ कामना, इच्छा। १८ ढग, तौर। १९ गुण या विशेषता, खूबी। २० प्रश्न, सवाल। २१ प्रशंसाका विषय, तारोफकी बात। २२ चमत्कारपूर्ण कथन, उक्ति। २३ गूढ़ रहस्य, अभिप्राय। २४ अभिप्राय, तात्पर्य। २५ कर्त्तव्य, उचित पथ या उपाय। २६ दाम, मोल। २७ वस्तु, पदार्थ। २८ स्वभाव, गुण, प्रकृति। २९ सम्बन्ध, तबल्लुक। ३० आचरण, व्यवहार। ३१ तत्त्व, मर्म।

वातकटक (हि० पु०) एक वायु रोग।

वातचीत (हि० स्त्री०) दो या कई मनुष्योंके बीच कथोप कथन, वाचालाप।

वातड (हि० वि०) वायुयुक्त, वायुवाला।

वातप (हि० पु०) हिरन।

वातफरोग (हि० पु०) १ वात बनानेवाला, वात गढने वाला। २ झूठमूठ इधर उधरकी बात कहनेवाला।

वातर (हि० पु०) पनायमें धान बोनेका एक ढग।

वातलारोग (हि० पु०) एक योनिरोग जिसमें सुई चुभने कीसी पीडा होती है।

वातिङ्गन (स० पु०) वार्त्ताकी, वगन।

वाती (हि० स्त्री०) १ लम्बी सलाईके धाकारमें घटी हुई रई या कपडा। २ कपडे या रईको बट कर बनाई हुई सलाई जो तेलमें डुबा कर दिया जलानेके काममें आती है, बत्ती। ३ धड़ लकड़ी जो पानके पेतके ऊपर बिछा कर छप्पर छाते हैं।

वातुल (हि० पु०) पागल, बौद्धा।

वातूनिया (हि० वि०) वातूनी देखो।

वातूनी (हि० वि०) बकवादी, बहुत बोलने या बात करनेवाला।

वायू (हि० पु०) वधुआ नामका साग।

वायू (हि० पु०) १ तर्क, बहस। २ प्रतिज्ञा, शर्त्त। ३ नाना प्रकारके तर्क वितर्क द्वारा बातका विस्तार, भ्रम, झूठ। ४ विवाद, भगडा। (अव्य) ५ निष्प्रयोजन, फजूल।

वायू (फा० अव्य०) १ पश्चात्, पीछे। (वि०) २ अलग किया हुआ, छोडा हुआ। ३ वस्तूरी या कमीशन जो दाममेंसे काटा जाय। ४ अतिरिक्त, सिवाय। ५ असलसे अधिक दाम जो ध्यापारी माल पर लिख देते और दाम बताते समय घटा देते हैं।

वायू (फा० पु०) वात, हवा।

वायूकाकुल (स० पु०) तालके मुख्य ६० भेदोंमेंसे एक भेद।

वायूनुमा (फा० पु०) वायुकी दिशा सूचित करनेवाला यन्त्र, पवन प्रकाश।

वायूधान (फा० पु०) पाल।

वायू (सं० पु०) बर स्वायं अणु। १ कार्पासवृक्ष, कपासका पीधा। २ कार्पास सूत, कपासका सूत। ३ कर्पूर, कपूर। ४ नैऋत्यकोणमें एक देश। (घृहत्सहिता) (लि०) ५ येर नामक फलका, उससे उत्पन्न या उससे संबन्ध

रप्रनेशाल । ६ कपासका, रुईका बना हुआ । ७ मोटा या लवहय ।

बादर ( हि० चि० ) ज्ञानन्दित, प्रसन्न, आह्लादित ।

बादरङ्ग ( सं० पु० ) अथय्य वृक्ष, पीपलका पेड़ ।

बादरा ( स० स्त्री० ) १ बदरी या पेराका पेड़ । २ कपास का पीषा । ३ जल, पानी । ४ रेशम । ५ दक्षिणावर्त्त शंख ।

बादरायण ( सं० पु० ) बदर्या भवः फलः । वेदव्यास ।

बादरायणि ( सं० पु० ) बादरायण इत् । वेदव्यास ।

बादल ( हि० पु० ) १ शूची परके जलसे उठी हुई यह भाप जो घनी हो कर आकाशमें छा जाती है और फिर पानी की धू बोंके रूपमें गिरती है । मेघ देगो । २ एक प्रकारका पत्थर जो दुधिया रंगका होता है । इस पर रंगनी रंगकी बादलकी सी धारियाँ पड़ी होती हैं । इस प्रकारका पत्थर राजपूतानेमें निकलता है ।

बादला ( हि० पु० ) सोने या चाँदीका चिपटा चमकीला तार जो गोटे धुनेने या कलाबत्त बदनेके काममें आता है ।

बादशाह ( फा० पु० ) १ राजसिंहासन पर बैठने वाला, राजा, शासक । २ स्वतन्त्र, मनमाना करने वाला । ३ धेष्ट पुरय । ४ शतरंजका एक मुहरा जो किम्बत लगनेके पहले फेवल एक बार घोड़ेकी चाल चलता है और दौड़भूषसे बचा रहता है । ५ ताजका एक पसा जिस पर बादशाहकी तसवीर बनी रहती है ।

बादशाहजादा ( फा० पु० ) राजकुमार, कुमार ।

बादशाहजादी ( फा० स्त्री० ) राजकुमारी ।

बादशाहत ( फा० स्त्री० ) राज्य, शासन, हुकूमत ।

बादशाहपस्तन् ( फा० पु० ) दिलबहादर हलका आसमानी रंग, शशाशानी रंग ।

बादशाहपुर—पंजाब प्रदेशके मुर्गाँव और दिल्ली जिलेमें प्रयाहित एक पहाड़ी नदी । यह दिल्ली जिलेकी बल्लभ गढ़ पर्यन्त मालासे निकली है । बादशाहपुर ग्रामके निकट घसीं जलप्रपात भी इसी नामसे प्रसिद्ध है ।

बादशाही ( फा० स्त्री० ) १ राज्य, राज्यधिकार । २ शासन, हुकूमत । ३ व्यवहार, मनमाना । ( चि० ) ४ बादशाहका, राजाका ।

बादशहारे ( फा० चि० चि० ) व्यर्थ, निष्प्रयोजन, सें हो ।

बादा—२४ परगनेके अन्तर्गत लखनऊके भूभाग । यहाँ मछली बहुत पाई जाती है ।

बादाम—स्यनाम प्रसिद्ध वृक्षमेद । ( Terminalia Cateppa ) इसके बीजका गुदा पानेमें बहुत बढ़िया लगता है । आमून आदि घृतोंकी तरह यह ऊँचा और इसका तना मोटा होता है । बादामके साधारण दो भेद हैं, देगी अधरा पात और विलायती । भिन्न भिन्न देगोंमें यह भिन्न भिन्न नामसे प्रसिद्ध है । यथा—

हिन्दी—बादाम, बादामी ; बगला—बादाम । उड़ीसा—बादाम, युक्तप्रदेश—देगी बादाम ; बर्हि पात्य—हिन्दी बादाम, जङ्गली बादाम, यादाम इ, सिन्धि ; बर्ह—बादाम, जङ्गली बादाम, बङ्गाली बादाम, देगी बादाम ; महाराष्ट्र—बङ्गाली बादाम, नट बादाम, जङ्गली बादाम, तामिल—नट बदम, कोहर, नट्टुपदोन, नये बदम, तैलङ्ग—बेदम, नये-बदम विट्टुलु, कनाडी—नट बादामी, तदि, तरु ; मलय—नट्टु बादाम, फोट्टुदु, सिङ्गापुर—कोट अम्मा ; रूस्यत—इङ्ग पी, हिङ्गुरी । पारस्य—बादामे हिन्दि, अ गारेजी—Indian Almond ।

भारतमें प्रायः सब जगह यह वृक्ष वेला आता है समुद्रपृष्ठसे प्राय १ हजार फुट ऊँचे स्थान तक यह वृक्ष वेपनेमें आता है । वृक्षकी छालसे एक प्रकार का ल गोंद निकलता है जो जलमें घुल जाता है । इसके पत्ते और छिलकोंमें थोड़ा रस होता है । इसमें धारयता गुण है । स्याही, दन्तमजन और मिस्सीके बनानेमें लज्जाक लोहे(Iron Salts)के साथ इसे मिलाते हैं । रेशम, पशम और धूती कपड़ेकी नाना बर्णोंमें रंगनेमें यह बहुत उप योगी है । वृक्षकी छालके रेशेसे मद्रासमें एक प्रकारका पत्र बनता है ।

बादामके पीसनेसे तेल निकलता है । यह तेल सुगन्धित और सुस्वादु होता है । धातुरोगप्रसूत उत्पणमस्तिष्क व्यक्तिके शरीरमें इस तेल द्वारा मालिज करनेसे बहुत लाभ होता है । लोग दुग्धनी, दुग्ध आदि चर्भ रोगोंमें इसके बर्षे पत्तोंका रस व्यवहार करते हैं ।

विलायती बादामका विषयानुवादिपेने Prunus Amygdalus नाम रखा है । सिङ्गापुरमें इसे रतकोटका और शीघ्र सभी जगह बादाम या बादामी कहते हैं । अफ गानिस्तान, अलजिरिया, पश्चिमी भारत निर्गिया और

पारस्य प्रभृति देशोंमें यह पैदा होता है। इसका गोंद यूरोपमें 'Hog tragacanth' नामसे विरुता है तथा असल ट्रागाकान्थके बदलेमें इसका व्यवहार होता है।

तिक बादाम विरेचक औषधिके रूपमें प्रयोग किया जा सकता है। कभी कभी स्नायवीय वेदनामें उसका प्रलेप करनेसे पीडा धीरे धीरे दूर हो जाती है। यह द्रुष्टिप्रतिकवदक है। पिपरमेण्टके साथ इनके दूधका सेवन करनेसे सर्दी दूर होती है। साधारणत यह तेज, स्वास्थ्यकर, मूत्रकारक, अशमद्रवकर, प्लीहा और यकन क्षोपनाशक है। घाट फर माथेके बालोंमें लगानेसे जूँ मर जाती हैं। इसके रेशोका गुण—धातुपरिवदक और स्वास्थ्यकर है। अवरधा विशेषमें इसके रसका सेवन तथा प्रलेप किया जाता है। बादामके रसका चीनीके साथ सेवन करनेसे छींके घब होती हैं।

बादामा (फा० पु०) एक प्रकारका रेशमी कपडा।

बादामी (फा० वि०) १ बादामके छिलकेके रगका, कुछ पीलापन लिये लाल रगका। २ अण्डाकार, बादामके आकारका। (पु०) ३ एक प्रकारका धान। ४ बादामके आकारकी एक प्रकारकी छोटी डिविया जिसमें गहने आदि रहते हैं। ५ यह ख्यातामरा जिसकी इन्द्रिय बहुत छोटा हो। ६ पानीके किनारे रहनेवाली एक प्रकारकी छोटी चिडिया। इसका प्रधान पाच मछली है।

बादामी—१ बम्बईके धोजापुर जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १५ ४६' से १६ ६' उ० तथा देशा० ७५ १०' से ७६ ३२' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ६१५ वर्गमील और जनसंख्या लाखसे ऊपर है। इसमें १ शहर और १६७ ग्राम लगते हैं। यहाँकी आवहवा जिले भरमें बराब है।

२ उक्त तालुकका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० १५-५५' उ० तथा देशा० ७५ ४१' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या लगभग ४४८२ है। यहाँ ६५० ई०में निर्मित एक जैन गुहामन्दिर और ५७६ ई०में उत्कीर्ण शिलालिपियुक्त तीन हिन्दू गुहामन्दिर बाहिर हुए हैं। बौद्धधर्मकी वपनतिके समय जब हिन्दुओंकी प्रधानता फिरसे स्थापित हुई, तब इन सब मन्दिरोंका निर्माणकार्य सम्पन्न हुआ था। यहाँके एक मन्दिरमें पञ्चमीर्षा सर्पमूर्तिके

ऊपर भगवान् विष्णु नरसिंहरूपमें स्थापित हैं। अलावा इसके यहाँ सैकड़ों हिन्दूमन्दिरके निदर्शन देखे जाते हैं। १७वीं शताब्दीमें यूपनचुगुङ्ग यहाँ आये हुए थे। उस समय यह स्थान विजयनगरके राजाओंके अधिकारमें था। १८१८ ई०में जनरल मनरोने इसे अङ्गरेजी राज्यमें मिला लिया। १८४० ई०में निजामराज्यकी ओरसे १२५ अरबोंने नरसिंह नामक एक अन्य ब्राह्मणकी अधिनायकतामें इस ग्राम पर दखल जमाया, अङ्गरेजी स्वजाना लूटा और लूटका माल एक एक करके निजाम राज्य पहुँचाया। किन्तु इसके सात दिनके बाद ही ये सबके सब पकड़े गये और जीवन भरके लिये कालापानी भेज दिये गये। शहरमें सिर्फ एक स्कूल है।

बादि (हि० अन्त्य०) व्यर्थ, फजूल।

बादिन्—१ सिन्धुप्रदेशके हिरावाद् जिलान्तर्गत एक तालुक। यह अक्षा० २४ १३' से २४ ५८' उ० तथा देशा० ६८ ४३' से ६६ १६' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्राय ७३८२३ है। इसमें कुल १६५ ग्राम लगते हैं। यहाँकी प्रधान फसल धान और ईख है।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० २४ ३८' उ० तथा देशा० ६८ ५४' पू० हिरावाद् शहरसे ६२ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जनसंख्या २ हजारसे ऊपर है। १७५० ई०में सवालो नामके किसी हिन्दू व्यक्तिने इस नगरको बसाया। विख्यात पठान सरदार मन्वद उर्फ शाह नसिरुद्दिनने इसे तहस नहस कर डाला। यहाँ घी, चीनी, गुड, दधि, तमाकू, चमड़े, रुई और लौह पितलदि धातु निर्मित वस्तुका यथेष्ट वाणिज्य चलता है। प्रति वर्षके जूनमासमें एक बड़ा मेला लगता है। शहरमें सिर्फ एक अस्पताल है।

बादिपुरी—मन्त्राज प्रदेशके नेल्दूर जिलेके अन्तर्गत एक भूस्वम्पति।

बादिया—पश्चिम बङ्गवासी जातिविशेष।

बादिया (हि० पु०) लोहारोंका एक औजार जिससे पेच बनाया जाता है।

बादी (फा० वि०) १ घायु सम्बन्धी। २ घायुविकार-स्यधी। ३ घायुदुष्टि करनेवाला, विकार उत्पन्न करने वाला। (स्त्री०) ४ शरीरस्थ घायु, वातविकार। (पु०)

५ किन्तोंके विषय अभियोग करनेवाला, मुद्दे। ६ प्रति-  
द्वयी, प्रयु। ७ लुहारोंका मिश्रणी करनेका औजार।

बाबु—२४ परगनेके वारासत उपविभागके अन्तर्गत एक  
प्राण्य प्रसिद्ध स्थान।

बाबुडिया—२४ परगनेके वसीरहाट उपविभागका एक शहर।  
यह अक्षा० २४°४५' उ० तथा देशा० ८८°४८' पू०के मध्य  
अवस्थित है। जासंख्या प्राय १२६२१ है। हिन्दूकी संख्या  
मुसलमानसे अधिक है।

बाबुना ( हि० पु० ) घेवर नामकी मिठाई बनानेका एक  
औजार। यह लोहे या पीतलका बना होता है। इसे  
भट्टीके मुह पर रख कर उसमें घी भरते और पतला  
मैदा घाल देते हैं। मैदा एक जाने पर उसे चीनीकी  
चाशनीमें पाग देते हैं।

बाबुर—सनामप्रसिद्ध स्तनपायी पक्षिजातिविशेष,  
चमगादर (Bat)। पक्षीकी तरह पख होने पर भी यह पक्षी  
आदिकी तरह स्तन पीता है। यह नाना आकारका और  
निशाचर होता है। बहुत दूरसे उड़ कर यह अन्य लोगों  
को हानि पहुँचाता है। बाबुरके दो भेद हैं। एक जो कीट  
पतङ्गादिसे अपना पेट भरता है और दूसरा जो सुपक  
फलादिका भक्षण करते हैं। इनकी साँसे छोटी होने पर  
भी दृष्टि तेज होती है। इनकी जितने बड़े फान होते  
हैं, उतनी ही श्रवणशक्ति तीक्ष्ण होती है। घ्राणके द्वारा  
सुपक फलकी गंध जान उसका अनुसरण करते हुए यहाँ  
तक पहुँच जाते हैं। रात्रिमें इतस्तत भोजनकी तलाशमें  
निकलते हैं तथा ये दिनमें पृथक्-कोटरमें, पृथक्की खालमें,  
गुहामें, भान अट्टलिकामें और छतके नीचेकी कढीमें आँधि  
मुँह लटक कर रहते हैं। मादा अंडे नहीं पारती, एक  
बारमें एक या दो बच्चे जनती है। बच्चे माताकी  
आकृतिही हुलनामें बड़े होते हैं।

हाना मुप पतला, शम्भुस्थि (Temporal bone)  
और शम्भुप्रहणके लिये श्रवणन्द्रियरूप्य शम्भुकाकार छिद्र  
यथा, पञ्जर और शुक्रस्थि बडी होती है।

हाके पथाने, फाटनेके वृत्त होते हैं। पैरकी दृष्टी  
अशुक्ति पर्यंत चौड़ी होती है। पथारी हड्डीसे दोनों पाय,  
सूक्ष्मार्मसे ढके रहनेके कारण सहजमें उड़ सकते हैं।  
पैरके पीछेमें नापून हैं। उन्हीं नापून द्वारा ये भूराते हैं।  
पक्षपाथमें दो म्ना होते हैं।

इनके अण्डाण्ड (Cocum) नहीं होता। लिङ्ग सोल  
मा और अस्थिसंयुक्त है। सन्तानोत्पत्तिका समय आने  
पर उनका अक्षकीय बाहिर निकल आता है। गर्भाशय  
में दो छोटे छोटे सींग रहते हैं। कितनी मादा बाबुरके  
शायकपालके रहनेके लिये धैली रहती है। शीतकाल  
में उनके ढक देनेसे बच्चे गरम रहते हैं। बच्चे तरप  
होने पर माताके पीछे पीछे चलते हैं। इनके शरीरमें लोम  
हैं। लोमके बीच Yctaribia नामका कीट पैदा  
होता है।

पृथिवीके चारों तरफ बाबुर क्षेत्रमें आते हैं।  
पैदानिकोंने इस जातिके पक्षीको Pteropodidae,  
Vampyridae Noctilionidae और Vespertilionidae  
प्रभृति श्रेणीमें शामिल किया है। विदेश विवरण नमः १२  
बद्धमें देखो।

बाबोसराय—१ अयोध्या प्रदेशके वाराणसी जिलान्तर्गत  
एक परगना। भूपरिमाण ४८ वर्ग मील है। इसका कुछ  
अंश प्राचीन घघरावाँकी उच्चभूमि पर और कुछतराँ  
प्रदेशकी निम्नभूमि पर अवस्थित है।

२ उक्त जिलेका एक नगर। यह वाराणसी नगरसे  
१२½ कोस उत्तर पूर्व रामनगरसे वृत्तियाबाद जानेके  
रास्ते पर अवस्थित है। बाबुशाह नामक किसी फकीरने  
५५० वर्ष पहले इस नगरकी बसाया। यहाँका मुसलमान  
साधु मलामतशाहका समाधि मन्दिर मुसलमानोंके निजद  
एक पवित्र तीर्थ समझा जाता है।

वाध (सं० पु०) वाधनमिति वाध भाधे घञ्। १ प्रतिबन्धक,  
रुकावट। २ उपद्रव्य, उत्पात। ३ पीड़ा, फट। ४ बडि  
नता, मुश्किल। ५ अर्थकी असंगति, मानोंका ठीक न  
बैठना। ६ यह पक्ष जिसमें साध्यना अभाव म्ना हो।  
७ मूर्जकी रस्ती।

वाधक (सं० पु०) वाधनमिति वाध भाधे ण्वल्। १  
रुनोरोगविशेष। इसमें उन्हे संतति नहीं होती या संतति  
होनेमें बड़ी पीडा या कठिनाता होती है। गिर्बोकें अणु  
बालमें इस रोगका प्रतीक होता है। इस रोगके होनेसे  
सन्तानार्थिगण यदि यथाविधान यज्ञ आदिकी पूजा करें,  
तो यह रोग अत्यन्त दूर होता है। चौधरके अनुसार  
घार प्रशरके दोषसे वाधक रोग होगा है—एतन्माद्री,  
यज्ञी, अ बुर और जलकुमार।

रक्तमाद्रिमै—कटि, नाभि पेड़ आदिमें वेदना होती है और अतु ठोक समय पर नहीं होता। इस प्रकारके अतुमें सन्तान नहीं होती।

यथी वाधकमै—अतुकालमें आँसों, हृद्येलियों और योनिमें जलन होती है और रक्तस्त्राव लालायुक्त होता है तथा अतु महीनेमें दो बार होता है।

अश्रुवाधकमै—अतुकालमें उल्लेख रहता है। शरीर भारी रहता है, रक्तस्त्राव बहुत होता है, नाभिके नीचे शूल होता है, तीन तीन बार बार महीने पर अतु होता है, हाथ पैरमें जलन रहती है।

जलकुमारवाधक रोगमें—शरीर सूज जाना है, बहुत दिनों में अतु हुआ करता है सो भी बहुत थोड़ा। गर्भ न रहने पर गर्भ सा मालूम होता है। इन चारों वाधकोंसे प्राय गर्भ नहीं रहता। पीछे इसकी प्रतिषेधक औषधका सेवन करनेसे यह रोग जाता रहता है। सुश्रुतादिमें इस रोगका कोई उल्लेख देखनेमें नहीं आता। (त्रि०) २ वाधाजनक, प्रतिषेधक।

वाधकता (स० स्त्री०) वाधकस्य भाव तल टाप्। वाधक का भाव या धर्म, बाधा।

वाधन (स० स्त्री०) वाध न्युट्। १ पीडा, कष्ट। २ प्रतिबन्धक, बाधा। (त्रि०) ३ पीडावाता, कष्ट देने वाला। ४ प्रतिबन्धक, विघ्न डालनेवाला।

वाधना (हि० क्रि०) १ बाधा डालना, रोकना। २ विघ्न करना, बाधा डालना।

वाधा (स० स्त्री०) वाध-टाप्। १ पीडा, कष्ट। २ विघ्न, रुकावट, अडचन। ३ भय, डर आशङ्का। ४ निषेध, मनाही।

वाधित (स० लि०) वाध-क्त। १ वाधायुक्त, जो रोक गया हो। २ जिसके साधनमें रुकावट पडी हो। ३ जिसके सिद्ध या प्रमाणित होनेमें रुकावट हो। ४ प्रभाव हीन, प्रस्त।

वाधित् (स० स्त्री०) वाधते इति वाध-त्तुप्। वाधक। वाधिरिक (स० पु०) वाधिरिका शिवावित्वाद्ण् (वा ४।१।१२)। वाधिरिकाका अपत्य।

वाधिर्य (सं० स्त्री०) वाधिरस्य भाव वाधिरप्यञ्। वाधिरका भाव, वाधिरता रोग, वाधिरापन।

वाध्य (स० लि०) वाध प्यन्। १ वाधनीय, वाधितव्य। २ निर्वस्यं।

वाध्यता (स० स्त्री०) वाध्यस्य भाव वाध्य तल् टाप्। वाध्यत्व।

वाध्योग (स० पु०) वध्योग विदादित्वाद्ण्। वध्योगका गोत्रापत्य।

वाध्योगायन (स० पु०) वाध्योगस्य गोत्रापत्य हरितादि त्वात् फक्। वाध्योगका गोत्रापत्य।

वान (हि० पु०) १ शालि वा जडहनकी रोपनेके समय उतनी पेडिया जो एक साथ ले कर एक स्थानमें रोपी जातो हैं। २ अफगानिस्तान तथा आसाममें होनेवाला एक पेड़। यह सात हजारसे नौ हजार फुटकी ऊँचाई तक होता है। पतझड़ नहीं होने पर भी वसन्तऋतुमें इसकी पत्तिया रंग बदलती हैं। इसकी लकड़ी भीतरसे ललाई लिये सफेद रंगकी होती है और बहुत मजबूत होती है। पत्तिया और छाल चमड़े सिक्कानेके काम आती हैं। ३ वाण, तीर। ४ एक प्रकारकी आतशबाजी जो तीरके आकारकी होती है। इसमें आग लगते ही यह आकाशकी ओर चढ़े घेगसे छूट जाती है। ५ यह शुक्लवार छोटा दृष्टा जिससे धुनकीकी ताँतको कटका दे कर बड़े धुनेते हैं। ६ समुद्र या नदीकी ऊँची लहर। (स्त्री०) ७ वैशविन्यास, वराचट। ८ अभ्यास, आदत। (पु०) ९ कान्ति, रंग।

वानदत (हि० वि०) १ याना चलाने या खेलनेवाला। २ वाण चलानेवाला, तीरदाज। ३ बहादुर, योद्धा।

वानक (हि० स्त्री०) १ वेप, भेस। २ एक प्रकारका रेशम जो पीला या सफेद होता है।

वानगी (हि० स्त्री०) किसी मालका यह अश जो प्राहकको विछानेके लिये निकाल कर दिया जाय।

वानर (हि० पु०) चदर।

वानवे (हि० पु०) १ नव्येसे दो अधिककी सख्या या अंक जो इस प्रकार लिखा जाता है—६२। (त्रि०) २ जो गिनतीमें नव्येसे दो ज्यादा हो, दो ऊपर नव्ये।

वाना (हि० पु०) १ वस्त्र, पोशाक। २ अङ्गीकार किया हुआ धर्म, रीति। ३ एक प्रकारका हथियार जो साग या भालेके आकारका होता है। यह लोहेका होता है और

सृष्टा गिरिपथमें शङ्करों नेना सप्रियेजित थी। इन्हीं  
रथान पर मगडोंने शङ्करोंके विरुद्ध अ निम वार अछ  
घारण किया था। इसी गिरिमन्दिरमें श्री तन्मयको  
परास्त हो कर मगडोंने मन्दाके लिये अपना राजधानता  
दो दी।

२ कादमोरराज्यके अन्तर्गत एक गिरिकन्दर। यह  
क्षेत्र ३४' १०" उ० तथा देशा० ७४ ३० पू०के मध्य  
अवस्थित है। यहा विपासा ( फेलम ) नदी बहतो है।  
इस नदीमें एक बडा पुत्र है।

धारवर्द्ध—१ मध्यभारतके इन्दोर राज्यान्तर्गत निमार जिले  
का एक परगना। यह भोपावर पेजेन्सीके शासन-  
धीन है।

२ उक्त जिलेका एक नगर। यह नर्मदा नदीसे १  
मील उत्तर पडता है। यहा राजपुताना-माल्य रेलपथका  
एक स्टेशन रहनेके कारण वाणिज्यकी विशेष सुविधा  
हो गई है। १८४७ ई०में धारवाण, रासडागाड, मण्ड  
लेभर और धारवर्द्ध होलकरराजको समर्पण किया गया।  
भारवर्द्धी—युक्तप्रदेशके फैजाबाद विभागका जिला। यह  
क्षेत्र २६ ३१' से २७ २१' उ० तथा देशा० ८० ५६' से  
८१ ५२' पू०के मध्य विस्तृत है। भूपरिमाण १७५८  
वर्ग मील है। इसका उत्तर पश्चिममें सीतापुर, उत्तर  
पूर्वमें गोगगा, दक्षिणपूर्वमें फैजाबाद और सुल्तानपुर,  
दक्षिणमें रायबरेली तथा पश्चिममें लखनऊ है। यह  
जिला प्रायः समतल है, पर उत्तर पश्चिममें दक्षिण  
पूर्वकी ओर ढाल होता आया है। गोमती, घघरा और  
घौंसा आदि शाखा-नदिया इस जिलेके मध्य हो कर  
बहती हैं जिन्से यहाकी जमीन उपेता हो गई है।  
इसके मध्यभागमें शुद्ध भौल और तालाब हैं। वर्षा  
कालमें कुछ तालाब भर जाते हैं और पक्का हो कर एक  
बन्द अन्त्यामिको तरह दीज पडते हैं। विन्तु वर्षाके  
बाद वे पूर्व पश्चिम आकार घारण बरतो हैं।

इस जिलेके गाँवा स्थानों में जो सब प्राचीन निर्दोष  
देखे जाते हैं, प्रजनरवनिर्दोषण यदि उनका उदार कर  
सकें, तो एक भविष्य इतिहास तैयार हो सकता है।  
यहां गाणपूजोपलक्षमें सैबटो मनुष्य जमा होते हैं।  
नागराज्योंके समयमें ही यहां नागपूजाको सृष्टि हुई है।

यह बात आज भी बहुतेको के मुतासे सुना जाता है। अहि  
चलेनके नागहृदके निरुद्ध जहा सुन्दर देने सक्ता ही  
थो, यहा अशोकनिर्मित एक स्तूपका ध्वंसावशेष देखा  
जाता है। पहले यहा भर जातिका पूर्ण प्रभाव फैला  
हुआ था। उनके अभ्युदय पर अयोध्यामें जगह जगह  
दुर्ग, प्राकार, परिगा और जलादायादि बनाये गये थे।  
आज भी ध्वंसावशेष समूह लुप्तकीर्तियों गवाहो देता है।

प्राक्षपथधर्मका पुनरभ्युदय होने पर बौद्ध लोग यहाँ  
से भगाये गये और क्षत्रियो की प्रधानता स्थापित हुई।  
मुसलमानों का प्रक्रमणसे क्षत्रिय और भररानाओं का  
प्रभाव जाता रहा। १०३० ई०में सैयद सदार मसाउद  
ने इस स्थान पर आक्रमण किया। ११८६ ई०में शीमरी  
सेतोंने गिहूरियाको परामत्त करके यहाँ उपनिवेश बनाया।  
१२३८ ई०में जोहेलपुरके निरुद्ध भर जातिको पराल  
परके मुसलमान सेनापति अयडुल याहिदने इस स्थान  
का जैदपुर नाम रखा। इस समय रीपनीके सैयदोंने  
भर लोगो से मिठौली तथा भाटि नामक मुसलमानोंने  
वार-क्षत्रियगणसे बचीले और भर अधिष्टन मयारं महो  
लारा नामक स्थान छीन लिया। १३०० ई०में रबीनी  
और १३३५ ई०में रसुलपुर भरनासनेले जाता रहा।

१५वीं शताब्दीमें यह स्थान दिल्लीके लोदी और जौन  
पुरके शकौयशका मुद्रस्थान हो गया था। इस समय  
फतेपुरके सूबेदार दरियाय वाने दरियाबादमें और शमी  
पर तथा बहून जातिको धामभूमिमें ( धारवा नदीके  
उभय तीरवर्ती भूमि ) अचरमिहो एक सेनापति  
स्थापित किया था। उक्त अचरमिहोके धनधराल  
आज भी छः भूस्वामिके अधिपती हैं तथा शीस हवार  
कन्दन उन अचर मिहोके अपना पूर्व पुत्र समझ कर  
गौरव करते हैं। इस समय इस जिलेका इतस्ततः मुसल  
मान कर्तृक विशोभित होने पर भी दरदा नगर सूर्य  
यगीके और सूर्यपुर सोमवंशी क्षत्रियोंके हाथ था। राम  
नगरके राक्षसाद क्षत्रियगण जिस समय यहा आ कर  
बस गये थे, उसका कोई प्रष्टन इतिहास नहीं मिलता।

। धारवर्द्ध धर्मो।

सम्राट अक्षय शाहके राजत्वकालमें राक्षसादके  
संसार हरिहरदेवने काशीर-शुद्धमें सूब योयना दिख

लाई थी। पारितोषिक स्वरूप सम्राट् ने उन्हें इस जिलेका सईलाक परगना प्रदान किया। १७५१ ई०में राइक्-पाडोने विद्रोही हो कर लखनऊ पर चढ़ाई कर दी। कन्न्याणी नदीके किनारे मुसलमानी सेनाके साथ उनकी गहरी मुठभेड़ हो गई। आप्तिर पांजादागणने जयी हो कर उनकी कुल सम्पत्ति छीन ली। १८१४ ई०में सयादत् अली खाँकी मृत्युके बाद राइक्वाडगण अपने खोप हुए राज्यका पुनरुद्धार करनेमें समर्थ हुए थे। १८५२ ई०में अगरेजशासनभुक्त होनेके पहले उन्होंने एक विरतृत राज्य संगठन किया था। देशीय राजाके अधिकारमें यह स्थान अत्याचारका आदर्शस्थल हो गया। गोमती और कन्न्याणी तीरतर्ती जङ्गलमय पहाड प्रदेशमें सूर्यपुरके शैराज सिंहजोका, भवानोगढके मही पत सिंहका और फाशुनगढके गद्दाचक्केके दस्युसेना-दलका दुर्भेद्य दुर्ग स्थापित था।

१८५७-५८ ई०के गद्दरमें यहांके तालुकदारगण शामिल थे। नयावगज्जके युद्धमें सीतापुर और बराइचके राइक्वाडोने राजपूतोन्नित घोस्ताका परिचय दिया था। उस समयके कोई अगरेज सेनापति इन लोगोंके रणोन्माद और भोषण साहसकी कथा लिपिबद्ध कर गये हैं। १८५८ ई०के जुलाई मासमें यहां पूरी शान्ति स्थापित हुई। दूसरे वर्ष दूरियाबादसे नयावगज्ज जिलेमें सद्दर उठा कर लाया गया। इस जिलेके अन्तगत वाराचकी, फतेपुर, रामसनेहो और हैदरगढ नामके चार उपविभाग पढते हैं।

इस जिलेमें १० शहर और २०५० ग्राम लगते हैं। जनसंख्या ग्यारह लाखसे ऊपर है जिनमेंसे सैंकड़ें पछि ८३ हिन्दू और १७ मुसलमान हैं। यह निला विद्याशिक्षामें बहुत पीछा पड़ा हुआ है। अभी कुल मिला कर १७० स्कूल हैं। स्कूलके अलावा १२ अस्पताल और चिकित्सालय भी हैं।

२ उक्त जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २६ ५६ उ० तथा देशा० ८१ १२ पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ३०२० है। नयावगज्ज शहरने यह एक मील उत्तर पडता है।

वारवा—वारवा राज्यका प्रधान नगर और बन्दर। यह

अक्षा० १८ ६२' ४०" उ० तथा देशा० ८४ ३७' ३५" पू० के मध्य अवस्थित है। यहाँने नाना प्रकारके प्रयोंकी भारतके विभिन्न देशोंमें रपनी होती है।

वारवा (हि० खी०) एक रागिनी जिसे कु० लोग भाराग की पुनवध मानते हैं।

वारवादी—उड़ीसाकी राजधानी कटकके अन्तर्गत एक दुर्ग। यह अक्षा० २० २६' उ० तथा देशा० ८५ ५६' पू० कटकके दूसरे किनारे महानदीके दाहिने किनारे अवस्थित है। किस समय यह दुर्ग बनाया गया था, ठीक ठीक मालूम नहीं। १४वीं शताब्दीमें हिन्दू राजाओंके अधिकारकालमें उसका गठनकार्य समाप्त हुआ, ऐसा जनसाधारण का विश्वास है। १७५० ई०में मुसलमान और महाराष्ट्र-अधिकारमें इसके कुछ अशौका सस्कार किया गया। अभी यह दुर्ग जगलमें परिणत होने पर भी उसका पूष हार और फते खा रहीम निर्मित मसजिद विद्यमान है। दुर्गकी सीमाके चारों कोने पर दो स्तम्भ प्रस्तरप्राचीर और बीचमें पताकास्तम्भ था। पूर्वद्वारके निकट और दोनों तरफ दो चतुरस्र गुम्बदका चिन्ह भी दृष्टिगोचर होता है। १७६७ ई०में ब्रमणकारी मोटे (M la Motte) इसके गठनकार्यके साथ इङ्ग्लैण्डस्थ विण्डसर दुर्गकी तुलना कर गये हैं। १८०३ ई०में महाराष्ट्र अभियानके शेषमें यह दुर्ग अशौकोंके हाथ लगा।

वारवाला—बम्बई प्रदेशके अहमदाबाद जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २२ ८' १५" उ० तथा देशा० ७१ ५७ ३०" पू० उतीली नदीके बाये किनारे अवस्थित है। यह नगर चारों ओर प्राचीरने घिरा है।

वारवाला—१ पञ्जाब प्रदेशके हिसार जिलेके अन्तर्गत एक तहसील। भूपरिमाण ५८० वर्गमील है।

२ उक्त उपविभागका एक प्रधान नगर और विचार-सद्दर। यहांका ध्यसायशेष इस स्थानकी प्राचीन समृद्धिका परिचय देता है। अधिकांश अधियासिगण सैयद्-धशीय मुसलमान हैं। ये लोग निकटवर्ती स्थानोंके अधिकारी हैं।

वारवसपुर—मध्यप्रदेशके रामपुर जिलान्तर्गत एक सामन्तराज्य। भूपरिमाण ४३ वर्गमील है।

वारवीधा—मुन्नेर जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा०



मुन्ना गिरिपथमें अक्षुजेजी मंगा मन्त्रिप्रेमिनी थी। इसी  
रथान पर मगदोने अक्षुजेजीके चित्त अन्तिम बार क्षत्र  
धारण किया था। इसी गिरिसिद्धमें रानी नयनरश्मी  
परास्त हो कर मगदोने मद्राके लिये अपनी स्थाधानता  
छो दी।

२ काश्मीरराज्यके अन्तर्गत एक गिरिकन्दर। यह  
अक्षांश ३४ १०' उ० तथा देशांश ७४ ३' पू०के मध्य  
अवस्थित है। यहा विपासा (भेलम) नदी बहती है।  
इस नदीमें एक बड़ा पुत्र है।

घारवई—१ मध्यभारतके इन्दौर राज्यान्तर्गत निमारा जिले  
का एक परगना। यह भोपावर ऐजेन्सीके गामना  
पौन है।

२ उक्त जिलेका एक नगर। यह नर्मदा नदीसे १  
मील उत्तर पडता है। यहा राजपूताना मालव रेलपथका  
एक स्टेशन रहनेके कारण वाणिज्यकी विशेष सुविधा  
हो गई है। १८४७ ई०में धारगाव, पतझावाड, मण्ड  
लेखर और घारवई होलकरराजको समर्पण किया गया।

घाराव की—युक्तप्रदेशके फैजाबाद विभागका जिला। यह  
अक्षांश २६ ३१' से २७ २१' उ० तथा देशांश ८० ५६' से  
८१ ५२' पू० के मध्य स्थित है। भूपरिमाण १७५८  
वर्ग मील है। इसका उत्तर पश्चिममें सीतापुर, उत्तर-  
पूर्वमें गोगगा, दक्षिणपूर्वमें फैजाबाद और सुल्तानपुर,  
दक्षिणमें रायबरेली तथा पश्चिममें लखनऊ है। यह  
जिला प्रायः समतल है, पर उत्तर पश्चिममें दक्षिण  
पूर्वको भाग ढालू होता आया है। गोमती, घगरा और  
घीका आदि शाखा-नदिया इस जिलेके मध्य हो कर  
बहती हैं जिससे यहाँकी जमीन उर्वरा हो गई है।  
इसके मध्यभागमें कुछ झील और तालाब हैं। यहाँ  
वालोंमें कुल तालाब भर जाते हैं और एकत्र हो कर एक  
बड़ा जलराजिको तरह बहा पडते हैं। किन्तु यहाँके  
बाद से पूर्व यहाँ आकाश धारण करते हैं।

इस जिलेके नामा रगारो मे जो सब प्राचीन निद्वीत  
देखे जाते हैं, प्रजापरायण्यदिगण यदि उनका उद्धार कर  
सकें, तो एक अभिनव इतिहास तैयार हो सकता है।  
यहा भागपूजोपलक्षमें सैकड़ों मनुष्य जमा होते हैं।  
भागपूजाओंके समयमें ही यहा भागपूजाकी शक्ति हर है।

यह बात आज भी बहूनों के मुँहसे सुना जाता है। अदि  
प्लेवके नागहृदके निवृत्त जहा सुद्धेयने वषट्का श  
थी, यहा अज्ञोऋत्निर्मित एक स्तूपका ध्वंसावशेष देखा  
जाता है। पहले यहा भर जातिका पूर्ण प्रभाव देखा  
हुआ था। उनके अभ्युदय पर अयोध्यामें जगद्वंश  
दुर्गा, प्राकार, परिगा और जलाशयादि बनाये गये थे।  
आज भी ध्वंसावशेष समूह लुप्तकीर्तिका गवाही देता है।

ब्राह्मण्यधर्मका पुनरुत्थुदय होने पर बौद्ध लोग यहाँ  
से भगाये गये और क्षत्रियों की प्रधानता स्थापित हुई।  
मुसलमानों आक्रमणसे क्षत्रिय और भरतानाओं का  
प्रभाव जाता रहा। १०३० ई०में सैयद मलार मसाउद  
ने इस स्थान पर आक्रमण किया। ११८६ ई०में अमीर  
सेफोने जिहरीयाको पराम्त करके यहाँ उपनिवेश बनाया।  
१२३८ ई०में जोहेलपुरके निवृत्त भर जातिको पराम्त  
करके मुसलमान सेनापति अरदुल चाहिदी इस स्थान  
का जैदपुर नाम रगा। इस समय गेजलीके सैयदोने  
भर लोगो से मिठौली तथा भाटि नामक मुसलमानोंने  
घार-क्षत्रियाणसे बर्बादी और भर अविष्टन मगई-नदी  
लारा नामक स्थान छीन लिया। १३०० ई०में कधीली  
और १३३५ ई०में रसुलपुर भरजामाने जाता रहा।

१५वीं शताब्दीमें यह रगारा जिलेके लोदी और जौन  
पुरके शर्कीयशाका युद्धस्थल हो गया था। इस समय  
फतेपुरके सुवेदार दरियावा फाने दरियाशार्दमें और शामि  
यर तथा बहन जानिकी वासूमिमें (भागरा नदीके  
उभय तीरवर्ती भूमि) बाचलसिंहो एक सेनापितो  
स्थापित किया था। उक्त अजलसिंहके घनधरगण  
आज भी छाः भूस्वामितिके अधिकारी हैं तथा योग हजारा  
कलहा उन अचल सिंहको अपना पूर्ण पुत्र्य सम्भ कर  
गौरव करते हैं। इस समय इस जिलेका इतलना मुसल  
मान वर्तक विरोगित होने पर भी हरहा नगर रूप  
घरके और सुवेदार सोमर्षजी क्षत्रियोंके हाथ था। गम-  
नगरके राष्ट्रघात क्षत्रियगण किन्तु समय यहाँ आ कर  
बस गये थे, उसका बौद्ध प्रद्वन इतिहास नदी सिन्हा।

बराबर देखो।

मगद्वंश अक्षर ग्राहके राष्ट्रघातमें राष्ट्रघातके  
संस्कार क्षत्रियदेयने बामनीर-सुद्धोने गृह घोरता दिख

लाई थी। पारितोषिक स्वरूप सत्राट्टने उन्हे इस जिलेका सहाक परगना प्रदान किया। १७५१ ई०में राइक-वाडोंने विद्रोही हो कर लखनऊ पर चढ़ाई कर दी। कल्याणी नदीके किनारे मुसलमानी सेनाके साथ उनकी गहरी मुठभेड़ हो गई। आखिर पौजादागणने जयी हो कर उनकी हुल सम्पत्ति छीन ली। १८१४ ई०में सयादत अली खाँकी मृत्युके बाद राइकवाडगण अपने घोष हुए राज्यका पुनरुद्धार करनेमें समर्थ हुए थे। १८५२ ई०में अगरेजशासनमुक्त होनेके पहले उन्होंने एक विस्तृत राज्य संगठन किया था। देशीय राजाके अधिकारमें यह स्थान अत्याचारना आदर्शस्थल हो गया। गोमती और कल्याणी तीरवर्ती जङ्गलमय पहाड प्रदेशमें सूर्यपुरके शैराज सिंहजीका, भवानीगढके मही पत सिंहका और काशुनगढके गङ्गावक्सके दस्युसेना-दलका दुर्भेद्य दुर्ग स्थापित था।

१८५७-५८ ई०के गदरमें यहांके तालुकदारगण शामिल थे। नवाबगञ्जके युद्धमें सीतापुर और बराइचके राइकवाडोंने राजपूतोचित वीरताका परिचय दिया था। उस समयके कोई अगरेज सेनापति इन लोगोंके रणोन्माद और भीषण साहसकी कथा लिपियुद्ध कर गये हैं। १८५८ ई०के जुलाई मासमें यहां पूरी गान्ति स्थापित हुई। दूसरे वर्ष दरियाबादसे नवाबगञ्ज जिलेमें सदर् उठा कर लाया गया। इस जिलेके अन्तगत बारायकी, फतेपुर, रामसनेही और हैदरगढ नामके चार उपविभाग पडते हैं।

इस जिलेमें १० शहर और २०५२ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या ग्यारह लाखसे ऊपर है जिनमेंसे सैकड़ पीछे ८३ हिन्दू और १७ मुसलमान हैं। यह जिला विद्याशिक्षामें बहुत पीछा पडा हुआ है। अभी कुल मिला कर १७० स्कूल हैं। स्कूलके अलावा १२ अस्पताल और चिकित्सालय भी हैं।

२ उक्त जिलेका एक जहर। यह अक्षा० २६ ५६ उ० तथा देशा० ८१ १२ पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्राय ३०२० है। नवाबगञ्ज शहरसे यह एक मील उत्तर पडता है।

वारवा—वारवा राज्यका प्रधान नगर और बन्दर। यह

अक्षा० १८ ६२ ४० उ० तथा देशा० ८४ ३७ ३५ पू० के मध्य अवस्थित है। यहांसे नाना प्रकारके उर्व्योंकी भारतके विभिन्न देशोंमें रफतनी होती है।

वारवा (हि० खी०) एक रागिनी जिसे कु३ लोग भाराग की पुत्रवध मानते हैं।

वारवाटी—उडीसाकी राजधानी कटकके अन्तर्गत एक दुर्ग। यह अक्षा० २० २६ उ० तथा देशा० ८५ ५६ पू० कटकके दूसरे किनारे महानदीके दाहिने किनारे अवस्थित है। किस समय यह दुर्ग बनाया गया था, ठीक ठीक मालूम नहीं। १४वीं शताब्दीमें हिन्दू राजाओंके अधिकारकालमें उसका गठनकार्य समाप्त हुआ, ऐसा जनसाधारण का विश्वास है। १७५० ई०में मुसलमान और महाराष्ट्र अधिकारमें इमके कुछ अंशोंका सस्कार किया गया। अभी यह दुर्ग जगलमें परिणत होने पर भी उसका पूर्य द्वार और फते खा खोम निर्मित मसजिद विद्यमान है। दुर्गकी सीमाके चारों काने पर दो स्तवक प्रस्तरप्राचीर और बीचमें पताकास्तम्भ था। पृथ्वीरामके निकट और दोनों तरफ दो चतुरस्र गुम्बदका चिन्ह भी दृष्टिगोचर होता है। १७६७ ई०में भ्रमणकारी मोटे (M la Motte) इसके गठनकार्यके साथ इङ्ग्लैण्डस्थ विएडसर दुर्गकी तुलना कर गये हैं। १८०३ ई०में महाराष्ट्र अभियानके शेषमें यह दुर्ग अंग्रेजोंके हाथ लगा।

वारवाला—बम्बई प्रदेशके अहमदाबाद जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २२ ८ १५ उ० तथा देशा० ७१ ५७ ३० पू० उताली नदीके बाये किनारे अवस्थित है। यह नगर चारों ओर प्राचीरसे घिरा है।

वारवाला—१ पञ्जाब प्रदेशके हिसार जिलेके अन्तर्गत एक तहसील। भूपरिमाण ५८० वर्गमील है।

२ उक्त उपविभागका एक प्रधान नगर और विचारसदर्। यहांका ध्वसायशेष इस स्थानकी प्राचीन समृद्धि का परिचय देता है। अधिकांश अधियासिगण सैयद वशीय मुसलमान हैं। ये लोग निकटवर्ती स्थानोंके अधिकारी हैं।

वारवसपुर—मध्यप्रदेशके रामपुर जिलान्तर्गत एक सामन्तराज्य। भूपरिमाण ४३ वर्गमील है।

वारवीधा—मुजफ्फर जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा०

०५ १४ ३० तथा उना० ८१ ४६ पू०के मध्य भय स्थित है ।

वारसिनरुबी—वेगरराज्यके अहीला जिल्लेके अन्तर्गत एक नगर ।

वारह (हि० पु०) १ वारहवाँ मन्था । २ वारहका एक जो इस प्रकार लिखा जाता है—१२ । (वि०) ३ जो संख्यामें दस और दो हो ।

वारहगुप्ती ( हि० स्त्री० ) वर्षमासाका एक अक्षर । इसमें प्रत्येक व्ययनमें अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अ, और अ इन वारह स्वरोंकी, मात्राके रूपमें, उगा कर गोलते या त्रिगते हैं ।

वारहटनहरदाम—अजन्तारचरित नामक हिन्दी ग्रन्थके रचयिता ।

वारहद्वी ( हि० स्त्री० ) चारों ओरसे खुला हुआ द्वीपक । इसमें वारह द्वार रहते हैं ।

वारहपन्थर ( हि० पु० ) १ यह पन्थर जो छायापीपी सरहद पर गाया जाता है, सोमा । २ छायापी ।

वारहयाग ( हि० पु० ) एक प्रकारका बर्धिया सोमा ।

वारहवाता ( हि० वि० ) १ सूर्यके समान दमकजाला । २ ज्योता, नरा ।

वारहवानी ( हि० वि० ) १ सूर्यके समान दमकजाला । २ निदाय, वापरहित । ३ पूर्ण, पूरा । ४ नरा, जोषा । (स्त्री०) ५ मयकी मी ठमक, चोरी चमक ।

वारहमामा ( हि० पु० ) एक प्रकारका पत्र या गीत । इसमें वाग्द महानोकी प्राट्टिक निरीयताओंका वर्णन किसी विरही या विरहिणीके मुँहसे कराया गया हो ।

वारहमासी ( हि० वि० ) १ मय ऋतुओंमें फलने फूलने वाला, सदावहार ।

वारहपगत ( अ० पु० ) अरबी महीने रबी उल-अव्वलकी वे वारह तिथियां जिनमें मुसलमानोंके विज्यायके अनुसार महात्मद माहब होमात्र पड़ कर मरे थे ।

वारहपती ( हि० वि० ) जो स्थापनों वारहद्वयके वार हो ।

वारहमिना ( हि० पु० ) हिरनकी जातिका एक पशु । यह नान नार वृत्त अंगेगा और मान भाट वृत्त मन्था होता है ।

अनेके मोगीके वर 'गाणार्थ' लिख्यो हैं इनकी 'इमरा' 'वारहमिना' नाम पडा । 'वीरार्थके मोगीके' सनात इसके

मोगी पर बडा आवरण नहीं होता, कोमल अमर होता है । इसके सौंगरा आवरण हर माल फामुा केने उतरता है । आवरणके उतरने पर सौंगमेंसे एक नई शाखा न अ पुत्र दिखाई पडता है । इस प्रकार प्रति वर्ष एक नई शाखा निकलती है जो बुभार कालिदास पर पूर्ण बर जाती है । मादाके सौंग नहीं होते, ये नैत पैशाच्यमें बसा देतो हैं ।

वारह्रा ( हि० वि० ) वारहवाँ देवो ।

वारही ( हि० स्त्री० ) यद्योके जन्मसे वाहरवाँ दिन । इस दिन उत्सव आदि किये जाते हैं ।

वारहो ( हि० पु० ) १ किसी मनुष्यके मरनेके दिनमें वार हवा दिन, छाटशाह । २ फल्या या पुत्रके जगसे वारहवाँ दिन । इस दिन कुल व्यवहारके अनुसार अनेक प्रकारकी पूजा होती है । यहतीके यहाँ इसी दिन नामकरण भी होता है, वरही ।

वारा—पञ्जाब प्रदेशके पेशावर जिल्लेमें प्रवाहित एक नदी । यह वारा नामक उपत्यका भूमिसे निकल कर फासुल नदी को शाहबालम शागामें मिलती है । वारा नामक दुर्गके सामने यह नदी तोर घाराओंमें विभक्त हो गई है । एक घारा पेशावर नगरमें और दूसरी बलील तथा मोहमन्द जाति अधिवासित प्रदेशमें बह गई है । कोहट और आदकमें द्रव्यादि ले जानेके लिये नदीमें दो पुल हैं । वारा नदीके किनारे घानकी अच्छी फसल लगती है । मिरा अधिका में यहाँमें पेशावर चावल भेजा जाता था जिसमेंसे अर्ध पाशकी रणजितसिद्धके यहा गणन होती थी । यह पुत्र सलिला नदी यहाँके हिन्दूकी निगाहमें पवित्र समझा जाती है ।

वारा ( हि० वि० ) १ जिसकी बाल्यावस्था हो, जो सपाना न हो । ( पु० ) २ लोहेकी बगाने जो बन्दके निरे पर लगाई जाती है और जिसके किनारेके बेलन फिरता है । ३ एक गोल जिते सुर्जमें मोट लोके समथ गाते हैं । ४ यह भावनी जो सुप पर बहता हो कर भर कर निकले हुए चरने या मोटका पानी उलट कर गिराता है । ५ अंतरेमें तार गीतनेका काम ।

वागण ( हि० स्त्री० ) १ बरयाका, किमोके विद्याहमें उरके परके लोको म ब पिपो, इष्ट मित्रो वा मित्र कर बपूके घर जाना । २ यह ममात जो बरके 'वाण उरें ब्याहने के लिये मत्र कर बापूके घर जाता है ।

वारादरो ( हि० खी० ) बाहदरी देखो।

वाराती ( फा० रि० ) १ बरसाती । ( खी० ) २ वह भूमि जिसमें केवल बरसातके पानीसे फसल उत्पन्न होती है और मी चनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती है। ३ यह कपडा जो पानीसे बचनेके लिये बरसातमें पहना या थोडा जाता है । यह ऊनकी जमा कर या सूती कपडे पर मोम आदि लपेट कर बनाया जाता है। ४ यह फसल जो बरसातके पानीसे बिना सि चाई किये उत्पन्न होती हो।

वारापोल—दाक्षिणात्यमें प्रवाहित एक नदी। यह मद्राज प्रदेशके कुर्ग राज्य और मलयार जिलेमें प्रवाहित हो कर अरवसागरमें गिरी है। कुर्ग राज्यके ब्रह्मगिरि नामक पर्वतके जिस स्थानसे यह नदी निकली है वह लक्ष्मण तीर्थ और पापनाशी नामसे प्रसिद्ध है। कुर्ग सीमान्तमें इस नदीके २ सी फुट ऊँचा एक प्रपात है। वनभाग और पर्वतकन्द्रादिके मध्य हो कर बहनेके कारण तीर भूमिका दृश्य अतीव मनोहर है। कोन्ननूर जानेके रास्ते पर इस नदीके ऊपर एक सुन्दर पुल है।

वारामतो—बम्बई प्रदेशके पूना जिलेके भीमघडी तालुक का एक शहर। यह अक्षा० १८ ६ उ० तथा देशा ७४ - ३६ पू० पूना शहरसे ५० मील पूर्वमें अवस्थित है। जन सख्या ६ हजारसे ऊपर है। म्युनिसिपलिटो १८६५ ई०में स्थापित हुई है। शहरमें सब जगहनी अदालत और दो बन्दरेनी स्कूल हैं।

वारामीदर ( अ० पु० ) वैरोभीदर देखो।

वारासी—भागलपुर शहरसे ४ मील उत्तर पूर्वमें अवस्थित एक फसवा। यह अक्षा० २५ १६ उ० तथा देशा० ८७ २ पू०के मध्य गङ्गाके दाहिने किनारे अवस्थित है। जनसख्या ५ हजारके करीब है जिनमेंसे हिन्दूकी संख्या ज्यादा है। यहां केवल एक पक्की सड़क ही जो भागल पुर शहर तक चली गई है। यी पन डयलू रेलवेका यहां एक स्टेशन भी है। यह स्थान धार्मिकानसे आच्छादित है। यथाशक्तुमें यहांका दृश्य बहुत ही रमणीय और मैत्रीको सुखद प्रतीत होता है। जिधर दृष्टि दौड़ा जाय, उधर ही सज्ज मयमली फर्श विछा मालूम होता है। कौइ स्थान ऐसे हैं जो बड़े ज्ञान्त और सुरम्य दिपाइ

पड़ते हैं। जिनसे प्राचीन कालके ऋषि आश्रमोंका स्मरण हो आता है, लेकिन अधिकतर यह मनोहर छवि थोडे ही दिन तक रहती है। यथाशक्तुके बाद दृश्य विल कुल बदल जाता है, सारी भूमि नग्न, भूरे रंगकी और सूखी बनी रहती है। यहां पर गङ्गाके अनिर्तिक सदैव बहनेवाली नदियोंका अभाव है और न एक तालाब ही है। अधिवासी कलके पानीसे ही अपना कुल काम चलाते हैं। मकह, मू ग, उडद, सरसों, गेहू, चना, जौ आदि फसल प्रायः उसी जमीन पर लगती हैं जो पुण्य सलिला भागीरथीके अपनी पूर्व गतिका परित्याग करने से निरुद्ध आई है। अधिवासियोंमेंसे बहुत थोडे वृषि द्वारा जायिका चलाते हैं, अधिकांशका गुचारा नौकरी पर ही निर्भर करता है।

यहांके जमींदार कुलीन चतुर्भुज मैथिल ब्राह्मण हैं। वास भवन भी इसी कसबेमें हैं। 'ठातुर' इनकी उपाधि है। छेटका प्राचीन इतिहास हमें विस्मृत भावमें मालूम नहीं, जहां तक विश्वस्त सूत्रसे पता लगता है, वह यों हैं,—सर्गोंय वायू मदनमोहन ठाकुर इसके स्थाप यिता थे। कहते हैं, कि पहले इनकी अवस्था उतनी अच्छी न थी। १६वीं शताब्दीके मध्य वे वनेली राज स्वर्गीय वेदा नन्दसिंह बहादुरके यहां नौकरी करते थे। उक्त महाशय को इन पर बडी टूपा रहती थी। अवस्था किसीनी सत्रा एक सी नहीं रहती। जो आज राजतन्त्र पर हैं, उन्हें फल राहके मिचारी और राहके मिचारीने त्रिपुल सम्पत्ति के अधिकारी देपते हैं। वेदानन्द बहादुरके यहां रह कर वायू मदन ठाकुरका अष्टाकाज परिष्कृत हो गया, भाग्य लक्ष्मी सातुकूल हुई। धीरे धीरे वे अतुल वैभवके अधि कारी हो गये जिसका उपयोग आज भी उनके पशुधर गण करते आ रहे हैं। आप साठे मिजाजके थे, देशी फैशा की पोशाक धारण करते थे। केवल उत्सवादि तथा अन्य राजकीय अवसरों पर राजेसी ठाठ पसन्द करमाने थे। अन्त समयमें आप वृजमोहन ठाकुर, जगमोहन ठाकुर और वृणमोहन ठाकुर तीन पुत्ररत्न छोड इहधामका परित्याग कर सुरधामको सिधारे। ये तीनों भाई भी योग्य पिताके योग्य पुत्र थे। प्राय सभी कामों में अपने पूज्यपाद पिताका अनुसरण करते थे।

०५, १४ उ० तथा देना० ८० ४६ पू०के मध्य अक्ष  
स्थित है ।

वारसितकाली - वैशाखमासके अशुक्ला तिथीके अन्तर्गत  
एक नगर ।

वारह ( हि० पु० ) १ वारहनी सन्ध्या । २ वारहका एक जो  
इस प्रकार लिखा जाता है - १०० । (वि०) ३ जो सन्ध्यामें  
दस और गे हो ।

वारहमष्टी ( हि० स्त्री० ) वर्षमानाका एक अक्ष । इसमें  
प्रत्येक व्यंजनामें अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अ,  
और अ इन वारह स्वरोंकी, मात्राके रूपमें, लगा कर  
बोलने या लिखने हैं ।

वारहटारहरणाम - अक्षरारचरित नामक हिन्दी प्रथके  
रचयिता ।

वारहदरी ( हि० स्त्री० ) चारों ओरसे खुला हवादा वैद्यक ।  
इसमें वारह टार रहने हैं ।

वारहपत्थर ( हि० पु० ) १ यह पत्थर जो छापीलीकी सरहद  
पर गाटा जाता है, सोमा । २ छापीली ।

वारहयात्रा ( हि० पु० ) एक प्रकारका बटिया स्तोत्र ।

वारहदाना ( हि० वि० ) १ सूर्यके समान दमकवाला ।  
२ चौगा, गरा ।

वारहवाता ( हि० वि० ) १ सूर्यके समान दमकवाला । २  
निर्द्राव, पापवहित । ३ पूर्ण, पूरा । ४ खरा, नोछा । (स्त्री०)  
५ सपत्नी स्त्री दमक, चोगी चमक ।

वारहमासा ( हि० पु० ) एक प्रकारका पद्य या गीत । इसमें  
वाग्द, मनीषीकी प्रारंभिक विदेशवासीका वर्णन किसी  
विश्वी या विरहिनोके सुँहने कराया गया हो ।

वारहमासी ( हि० वि० ) १ मय ऋतुओंमें चलने फूलने  
वाला, नरसंहार ।

वारहपत्ता ( अ० पु० ) अरबो महीने रबी उल्-अख्यरकी  
ये वाग्द तिथियां चिनमें मुसलमानोंके विन्यासके अनु  
सार प्रथमत्वात्वाद्द बीमार पद्य कर मरे थे ।

वारहर्षा ( हि० वि० ) जो स्यातमें स्यातद्वयके बाद हो ।

वारहसिमा ( हि० पु० ) हिन्दुकी जातिका एक पशु । यह  
तोत्र गार पशु ऊँचा और गाल घाट पशु लम्बा होता है ।  
नरके सोँगमें कई शाखाएँ निकलती हैं इन्गोमें 'दमरा'  
'बालसिमा' नाम पडा । गौरीकोके सोँगीके समान इसमें

सोँगों पर कडा आचरण नहीं होता, कोमल अचर  
होता है । इनके सोँगका आचरण हर साल फागुन शिव  
उत्सव है । आचरणके उत्तरों पर सोँगमेंसे एक नू  
का या अक्षर लिखा पडता है । इस प्रकार प्रति वर्ष एक  
नई शाखा निकलती है जो कुआर जातिका एक पूर्व बन  
जाती है । मादाके सोँग नहीं होते, वे चैन देनागमें बसा  
देती हैं ।

वारहर्षा ( हि० वि० ) वारहवाँ देवो ।

वारही ( हि० स्त्री० ) वर्षोंके जन्मसे वाहरया दिन । इस  
दिन उत्सव आदि क्रिये जाते हैं ।

वारहो ( हि० पु० ) १ किसी मनुष्यके मरनेके दिनमें बार  
हवा दिना, द्वादशगाह । २ पत्न्या या पुत्रके जन्मसे बाह्य  
दिन । इस दिन कुल व्यवहारके अनुसार अनेक प्रकारकी  
पूजा होती है । बहुतेकोके यदा इसी दिन नामकरण भी  
होता है, वारही ।

वारा—पञ्जाब प्रदेशके पेगावर जिल्लेमें प्रचलित एक नदी ।

यह वारा नामक उपत्यका भूमिले निकल कर फागुन नदी  
की जगहजालम शाखामें मिलती है । वारा नामक दुर्गके मानने  
यह नदी तीन घाटाओंमें विभक्त हो गई है । एक घाट  
पेगावर नगरमें और दूसरी खलील तथा मोहम्मद जाति  
अधियासित प्रदेशमें बह गई है । कोहट और भारतमें  
द्रव्यादि ले जानेके लिये नदीमें दो पुल हैं । वारा नदीके  
किनारे धानकी अच्छी फसल लगती है । सिंधु अधिका  
में यहाँमें पेगावर धापर भेजा जाता था जिसमेंसे अधि  
काजकी रणजितसिद्धके यदा खपत होती थी । यह पुष्प  
सलिला नदी यदाके हिन्दूकी निगाहमें पवित समझी  
जाती है ।

वारा ( हि० वि० ) १ जिसकी वात्याग्रह्या हो, जो  
सयाता न हो । ( पु० ) २ लोहेकी बर्गता जो धूलके  
मिटेपर लगाई जाती है और पिसके तिरलेमें बेगन  
फिरता है । ३ एक गीत जिमें सूर्यमें मोट खीरने  
समय गाते हैं । ४ यह भादवाँ जो कुम्भ मकर  
एक भर कर निकले हुए सूर्यमें या मोटका पानी उल्ट  
कर गिराता है । ५ उत्तरमें तार खीननेका काम ।

वागल ( हि० स्त्री० ) १ बरपावा, विरगोके विवाहमें उसके  
घरके लोमो, सब धियो, इष्ट मित्रो का मित्र कर सपुके  
पर जाता । २ यह गणाज जो बरके साथ उर्म लाइने  
के लिये मज कर सपुके पर जाता है ।

वारादरी ( हि० खी० ) वाग्दरीः खी ।

वारासी ( फा० वि० ) १ वरसाती । ( खी० ) २ वह भूमि जिसमें फेरल वरसातके पानीसे फसल उत्पन्न होती है और सी चनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती है । ३ वह कपडा जो पानीसे बचनेके लिये वरसातमें पहना वा ओढ़ा जाता है । यह ऊनको जमा कर या सूती कपड़े पर मोम आदि लपेट कर बनाया जाता है । ४ वह फसल जो वरसातके पानीसे बिना सिंचाई किये उत्पन्न होती हो ।

वारापोल—दक्षिणालयमें प्रवाहित एक नदी । यह मद्राज प्रदेशके कुर्ग राज्य और मलवार जिलेमें प्रवाहित हो कर अरबसागरमें गिरी है । कुर्गराज्यके प्रहगिरि नामक पर्वतके जिस स्थानसे यह नदी निकली है वह लक्ष्मण तीर्थ और पापनाशी नामसे प्रसिद्ध है । कुर्ग सीमान्तमें इस नदीके २ सौ फुट ऊंचा एक प्रपात है । वनभाग और पर्वतचन्द्रादिके मध्य हो कर बहनेके कारण तीर भूमिका दृश्य अतीव मनोहर है । योन्ननूर जानेके रास्ते पर इस नदीके ऊपर एक सुन्दर पुल है ।

वारापती—बम्बई प्रदेशके पूजा जिलेके भीमघडी तालुक का एक शहर । यह अक्षा० १८° ६' ३०" तथा देशा ७४° ३६' ००" पूजा शहरसे ५० मील पूर्वमें अवस्थित है । जनसंख्या ६ हजारसे ऊपर है । म्युनिसिपलिटि १८६५ ई०में स्थापित हुई है । शहरमें सप्तजजकी अदालत और दो अद्वैती स्कूल हैं ।

वारापीटर ( अ० पु० ) वीठीपीटर देखो ।

वारासी—भागलपुर शहरसे ४ मील उत्तर पूर्वमें अवस्थित एक कसबा । यह अक्षा० २५° १६' ३०" तथा देशा० ८७° २' ००" के मध्य गङ्गाके दाहिने किनारे अवस्थित है । जनसंख्या ५ हजारके करीब है जिनमेंसे हिन्दूको संख्या ज्यादा है । यहां फेरल एक पक्की सड़क है जो भागलपुर शहर तक चली गई है । वी पन डवल रेलवेना यहां एक स्टेशन भी है । यह स्थान आन्न फाननसे आच्छादित है । वर्षाऋतुमें यहांका दृश्य बहुत ही रमणीय और मैत्रिके सुखद प्रतीत होता है । जिधर दृष्टि दौड़ा जाय, उधर ही सज्ज मरामली फरी विछा मालूम होता है । कोई स्थान ऐसे है जो बड़े शान्त और सुरम्य दिवाड़े

पड़ते हैं । जिनसे प्राचीन कालके ऋषि आश्रमोंका स्मरण हो जाता है, लेकिन अधिकतर यह मनोहर छवि थोड़े ही दिन तक रहती है । वर्षाऋतुके बाद दृश्य बिलकुल बदल जाता है, सारी भूमि नम, भूरे रंगकी और सूखी बनी रहती है । यहां पर गङ्गाके अतिरिक्त सदैव बहनेवाली नदियोंका अभाव है और न एक तागव ही है । अधिनासी कालके पानीसे ही अपना कुल काम चलाते हैं । मकई, मूग, उड़द, सरसों, गेहूँ, चाय, जौ आदि फसल प्रायः उसी जमीन पर लगती है जो पुण्य सलिला भागीरथीके अपनी पूर्व गतिको परित्याग करने से निकल आई है । अधिवासियोंमेंसे बहुत थोड़े ऋषि द्वारा जायिका चलाते हैं, अधिकांशका गुजारा नौकरी पर ही निर्भर करता है ।

यहांके जमींदार कुलीन चणोद्भूत मैथिल ब्राह्मण हैं । वास-भवन भी इसी कसबेमें हैं । 'ठाकुर' इनकी उपाधि है । ऐटका प्राचीन इतिहास हमें विस्तृत भावमें मालूम नहीं, जहां तक विश्वस्त सूत्रसे पता लगता है, वह यों है,—खर्गीय वाधु मदनमोहन ठाकुर इसके स्थापयिता थे । कहते हैं, कि पहले इनकी अवस्था उतनी अच्छी न थी । १६वीं शताब्दीके मध्य वे वनेली राज खर्गीय बेदा नन्दसिंह बहादुरके यहां नौकरी करते थे । उक्त महाशय को इन पर बड़ी दया रहती थी । अवस्था किसीनी सदा एक सी नहीं रहती । जो आज राजतल्ल पर हैं, उन्हें फल राहके मिचारी और राहके भिपारीको त्रिपुल सम्पत्ति के अधिकारी देपते हैं । वेदानन्द बहादुरके यहां रह कर वाधु मदन ठाकुरका अष्टाकाश परिचर हो गया, भाग्य लक्ष्मी सातुकुल हुए । धीरे धीरे वे अनुल वैभयके अधिकांश हो गये जिसका उपभोग आज भी उनके वंशज गण करते आ रहे हैं । आप साठे मिजाजके थे, देशी फेशाकी पोशाक धारण करते थे । बैंगल उत्सवादि तथा अन्य राजकीय अवसरों पर गजेसो टाठ पसन्द फरमाते थे । अन्त समयमें आप वृजमोहन ठाकुर, जगमोहन ठाकुर और श्यामोहन ठाकुर तीन पुत्ररत्न छोड़ इहधामना परित्याग कर सुरधामको सिंधारे । ये तीनों भाई भी योग्य पिताके योग्य पुत्र थे । प्राय सभी कामों में अपने पुण्यपाद पिताका अनुसरण करते थे ।

२५, १४ उ० तथा उजा० ८५ ४६ पू०के मध्य अक्ष स्थित है।

वारसिन्धु-पैगम्बरान्धके अज्ञेय जिलेके अन्तर्गत एक नगर।

वारह (हि० पु०) १ वारहवा मन्था। २ वारहवा अक्ष जो इस प्रकार लिखा जाता है—१०। (वि०) ३ जो संख्यामें दस और दो हो।

वारहपक्षी ( हि० म्नी० ) वर्षमानाका एक अक्ष। इसमें प्रत्येक व्यंजनमें अ, वा, ए, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अ, और इ इन वारह स्वरोंकी, मायाके रूपमें, लगा कर बोलने या लिखने हैं।

वारहटनहरहटा-अपनारपरित नामक हिन्दी प्रन्थके स्थापिता।

वारहटरी (हि० म्नी०) चारों ओरसे खुला हवावा वैद्यक। इसमें वारहद्वार रहते हैं।

वारहपत्थर (हि० पु०) १ वह पत्थर जो छायाकीभी तरह पर गाया जाता है सोमा। २ छायाकी।

वारहवास ( हि० पु० ) एक प्रकारका बर्दिया सोना।

वारहवाता ( हि० वि० ) १ सूर्यके समान दमकवाला। २ जोगा, मरा।

वारहवाती ( हि० वि० ) १ सूर्यके समान दमकवाला। २ तिहाय, गायरहित। ३ पूर्ण, पूरा। ४ परत, सोसा। (स्त्री०) ५ सूर्यकी सी दाय, सोमी समक।

वारहमासा (हि० पु०) एक प्रकारका पक्ष या गीत। इसमें वारह मन्थोंकी प्राग्निद्वि विद्यमानोंका वर्णन किसी विरही या विरहिनीके मुँहसे कराया गया हो।

वारहमासी ( हि० वि० ) १ सब अक्षुओंमें फलने पूजने वाला, महाबहार।

वारहपत्तल ( अ० पु० ) लक्ष्मी मन्थीने रची उच्च मन्थलकी ये वारह तिगिया पिनमें मुग्धमासीके विद्यमानके अनुसार मन्थमाद मन्थ वारह पत्र कर मरे थे।

वारहवा ( हि० वि० ) जो म्थाममें म्थाम्थके वाद हो।

वारहमिन्हा ( हि० पु० ) हिन्दुकी जातिवा एक पशु। यह मील चार पूज ऊँचा और मान भाट पूज लम्बा होता है। इसके मींगमें बर्द जागता त्रिजली है इसीसे इसका 'वारहमिन्हा' नाम पड़ा। पौनर्दीके मींगके समान इसके

मींगमें पर कड़ा आचरण नहीं होता, फीका बर्द होता है। इसके मींगका आचरण हर माल फामुस मींगमें उतरता है। आचरणके उतरने पर मींगमेंसे पर नई शक्त्ता का अक्षुर दिग्गर्ष पड़ता है। इस प्रकार प्रति वर्ष एक बार जाया निष्कली हो जो कुम्हार कारिता तब पूरे बर्द जानो है। मायाके मींग नहीं होते, ये चीन मींगममें बर्द देतो हैं।

वारह्रा ( हि० वि० ) वारहवा देतो।

वारही ( हि० स्त्री० ) वर्षोंके जन्मसे वारहवा दिन। इस दिन उत्सव आदि किये जाते हैं।

वारह्रा ( हि० पु० ) १ किसी मनुष्यके मरनेके दिनसे बार हवा दिन, द्वादशमाह। २ कन्या या पुत्रके जन्मसे वारहवा दिन। इस दिन कुछ व्यवाहारके अनुसार अनेक प्रकारकी पूजा होती है। यहनोंके यद्वा इसी दिन नामकरण भी होता है, वरही।

वारा—पञ्जाब प्रदेशके पेशावर जिलेमें प्रवाहित एक नदी। यह वारा नामक उपत्यका भूमिमें निष्क क (काबुल नदी को जगहजालम शागमें मिली है। वारा नामक दुर्गके सामने यह नदी तीरा घाटाओंमें विभक्त हो गई है। एक घाटा पेशावर नगरमें और दूसरी मल्लो तथा मोहमन्द जाति अधिवासित प्रदेशमें बह गई है। कोट्ट और भाटके मी ड्रव्यादि ले जानेके लिये नदीमें दो पुल हैं। वारा नदीके पिन्नाके घाटकी अच्छी फसल लगती है। सिवा अधिका में यहासे पेशावर ब्यावल मजा जाता था जिसमेंसे अधिकाका रणचिर्भित्तके यहा गण्य होता था। यह पुण्य मन्थला नदी यहाँके हिन्दूकी निगाहमें पवित्र समझी जाती है।

वाग ( हि० वि० ) १ जिसकी वायावस्था हो, जो रसयान न हो। ( पु० ) २ लोदेकी बर्गनी जो वेनके सिरे पर लगाई जाती है और जिसके किरनेके बदन पिन्ना है। ३ एक गीत जिसे 'सूर्यसे मोट बाबने समय गाते हैं। ४ यह आदमी जो पुण्य पर कड़ा हो कर भर कर निरले हुए चरमें या मीठका पानी उल्ट कर पिन्ना है। ५ जहाँसे तार मीचनेका काम।

वागल ( हि० स्त्री० ) १ बरपाया, किसीके विषाहमें उसके घरके लोमी, सब पिपा, १६ मिवाका मिला कर बपूके घर जाता। २ यह समान जो बरके साथ उसे मीठके लिये मर कर बपूके घर जाता है।

वारादनी ( हि० खी० ) बाग्दही-देखो ।  
 वारासी ( फा० वि० ) १ बरसाती । ( खी० ) २ वह भूमि जिसमें फेवल बरसातके पानीसे फसल उत्पन्न होती है और सी चनेकी आयुष्यमत्ता नहीं पडती है । ३ वह कपडा जो पानीसे बचनेके लिये बरसातमें पहना जा छोटा जाता है । यह ऊनको जमा कर या सूती कपडे पर मोम आदि लपेट कर बनाया जाता है । ४ वह फसल जो बरसातके पानीसे बिना मि चांद किये उत्पन्न होती हो ।

वारापोल—दाक्षिणात्यमें प्रवाहित एक नदी । यह मद्राज प्रदेशके कुर्ग राज्य और मलघार जिलेमें प्रवाहित हो कर अरवसागरमें गिरी है । कुर्ग राज्यके ब्रह्मगिरि नामक पर्वतके तिस स्थानसे यह नदी निकली है वह लक्ष्मण-तीर्थ और पापनाशो नामसे प्रसिद्ध है । कुर्ग सीमान्तमें इस नदीके २ सौ कुट ऊँचा एक प्रपात है । वनभाग और पर्वतबन्दरादिके मध्य हो कर बहनेके कारण तीर भूमिका दृश्य अतीव मनोहर है । कोन्ननूर जानेके रास्ते पर इस नदीके ऊपर एक सुन्दर पुल है ।

वारामतो—बम्बई प्रदेशके पूना जिलेके भीमखडी तालुक का एक शहर । यह अक्षा० १८° ६' ३०" तथा देशा ७४-३६' ५०" पूना शहरसे ५० मील पूर्वमें अवस्थित है । जा सख्या ६ हजारसे ऊपर है । म्युनिसिपैलिटी १८६५ ई०में स्थापित हुई है । शहरमें सब जजकी अदालत और दो अङ्गरेजी स्कूल हैं ।

वारामोट्टर ( अ० पु० ) वैरोपीट्टर देखो ।

वारासी—भागलपुर शहरसे ४ मील उत्तर पूर्वमें अवस्थित एक पसना । यह अक्षा० २५ १६' ३०" तथा देशा० ८७ २' ५०"के मध्य गङ्गाके दाहिने किनारे अवस्थित है । जनसंख्या ५ हजारके करीब है जिनमेंसे हिन्दूको संप्रदाय न्यादा है । यहा फेवल एक पक्षी सङ्घ है जो भागलपुर शहर तक चलो गइ है । धी पन डवलू रेलवेका यहा एक स्टेशन भी है । यह स्थान साम्राज्यके आच्छादित है । वर्षाऋतुमें यहाका दृश्य बहुत ही रमणीय और निरालोके सुन्दर प्रतीत होता है । जिधर दृष्टि डीडाइ जाय, ऊपर ही सङ्ग मजमलो फर्रा बिछा मालूम होता है । कोइ स्थान पेसे है जो बडे शान्त और सुरम्य दिपाई

पडते हैं । जिनसे प्राचीन कालके ऋषि आश्रमोंका स्मरण हो आता है, लेकिन अधिन्तर यह मनोहर छवि थोडे ही दिन तक रहती है । वर्षाऋतुके बाद दृश्य विल कुल बदल जाता है, सारी भूमि नम, भूरे रंगकी और सूखी बनी रहती है । यहा पर गङ्गाके अतिरिक्त सदैव बहनेवाली नदियोंका अभाव है और न एक तागत्र ही है । अधिवासी कलके पानीसे ही अपना कुल काम चलाते हैं । मरुई, मृग, उडद, सरसों, गेहूँ, चना, जौ आदि फसल प्रायः उसी जमीन पर लगती है जो पुण्य सलिला भागीरथीके अपनी पूर्व गतिको परित्याग करने से निरमल आई है । अधिवासियोंमेंसे बहुत थोडे टपि द्वारा जायिजा चलाते हैं, अधिकांशका गुजारा नौकरी पर ही निर्भर करता है ।

यहाके जमींदार कुलीन चण्डिका मैथिल प्रमाण हैं । वास भवन भी इसी कसबेमें हैं । 'ठाकुर' इनकी उपाधि है । छेटका प्राचीन इतिहास हमें विस्तृत भावमें मालूम नहीं, जहा तक विश्वस्त सूत्रसे पता लगा है, वह यों है,—स्वर्गीय वाधू मदनमोहन ठाकुर इसके स्थापयिता थे । कहते हैं, कि पहले इनकी अवस्था उतनी अच्छी न थी । १६वीं शताब्दीके मध्य वे बनेली राज स्वर्गीय चेश नन्दसिंह बहादुरके यहा नौकरी करते थे । उक्त महाशय को इन पर बडी रूपा रहती थी । अवस्था किसीनी सदा एक सी नहीं रहती । जो आज राजतप्त पर है, उहें कल राहके भिखारी और राहके भिखारीनी विपुल सम्पत्ति के अधिकारी देखते हैं । वेदानन्द बहादुरके यहा रह कर वाधू मदन ठाकुरका बहुधाकाज परिपटत हो गया, भाग्य लक्ष्मी सायुकुल हुई । धीरे धीरे वे अतुल वैभवके अधिकारा हो गये जिसका उपभोग आज भी उनके वजघर गण करते आ रहे हैं । आप साडे मिजाजके थे, देशी फैशन की पोशाक धारण करते थे । फेवल उत्सवादि तथा अन्य राजकीय अवसरों पर राजेसी ठाठ पसन्द करमाने थे । अन्त समयमें आप पूजमोहन ठाकुर, जगमोहन ठाकुर और दृष्णमोहन ठाकुर तीन पुवरल छोड इधामका परित्याग कर सुरधामको सिधारे । ये तीना भाइ भी योग्य पिताके योग्य पुत्र थे । प्राय सभी कामों में अपने पुण्यपाद पिताका अनुसरण करते थे ।



बुद्ध समय बाद कृत-शैलीके राजमोहनमें प्रवेश किया और ये सबके सब पृथक्-पृथक् हो गये। वृजमोहन टापुर के चार सुपुत्र थे, हर्तोमोहन टापुर, धर्मोमोहन टापुर, चन्द्रमोहन टापुर और इन्द्रमोहन टापुर। द्वितीय पुत्र धर्मोमोहन टापुर उद्यागिल्यानी प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। भावना धर्म गीर्, शरीर दृष्ट पुष्ट, गठोडा और फद ऊँचा था। आपका प्राकृतिक ज्ञान तथा मनुष्यकी पहचान बहुत बढ़ी थी। प्रवासा पाठन पुनरन् करने थे। आपकी उदारता बहुत प्रसिद्ध है। आप पुनी जमानेके खंम थे। जो कोई विरामत धाजमाईको यहा आते थे, उसकी भाजार विन्नी न किसी रूपमें पुनी हो ही जाती थी। धार्मिक कार्योंमें आपकी पूर्ण श्रद्धा थी, इसी कारण आप अपने प्रामादसे उत्तर गङ्गाके किनारे राधाछात्रकी मूर्ति प्रतिष्ठा कर गये हैं। घटावस्थामें एक पुत्ररत्न छोड़ आपने जीवनशैली सम्भरण की।

पुत्रका नाम धर्मोमोहन टापुर है। आप स्टेटके 3 पदोवारोंमें एक हैं। पिताकी मृत्युके समय आप मिल्लुन् नाशालिग थे। इस कारण आपका स्टेट कोर्ट थाय वार्ड लय गया। आपके लालन पालनका भार आपकी पुत्रनीया माताके सिर रहा। 'लपनऊ बाल मिन तालुकदार' Iuel now (Olym Talukdar) स्कूलमें आपने अत्यान्व भारतीय राजकुमारोंके साथ विद्याशिक्षा प्राप्त की। निगुपनसे ही आपमें अतीविक्रमिन्न अस्तित्व था। कहा भी है कि — "होगदार विद्यान के होत चौकनेपात" अध्यापक आपकी तीव्र बुद्धि और स्मरणशक्तिको देख कर विस्मित होते थे। थोड़े ही दिन हुए (१६२७ ई०के) ७वें मयम्बरको आपने काटिग हो कर राजकार्यका कुल भार अपने हाथ लिया। आप इस थोड़ेसे समयमें अपने उच्च गुणोंसे अपनी प्रज्ञाके ही प्रेमापन्न नहीं विरनु मान पासके समी जो आपकी प्रज्ञा नहीं है, उनके भी धादर और प्रेमेके भाजन हो गये हैं। आपका स्वभाव बहुत हंसमुख है और प्रज्ञाके दुग सुपुत्रको मुताबिके लिये मर्द्व तम्पर रहते हैं। जो एक बार भी आपके साथ रहे चुके हैं, वे आपके लक्ष्मणपुत्र पर मुख ही आपकी महामान और धर्याकी बुद्धिमें भ्रमनेके काण्य हैं। आप साहित्यकारों हैं।

आपके उद्योगसे एक छोटा पुस्तकालय भी लोग गवा है जिसमें प्राय सब भाषाओंका पुस्तकालय संग्रह है। आप मङ्गलेजी, बङ्गला और हिन्दी भाषाओंमें भागल कथोप कथन कर मचने हैं। जिस प्रसाद में आप रहते हैं उसका नाम धोमयन है। पर भयन नारी और भाद्र-जानसे ममान्द्र है जिसने इसकी गोमा देवनी हो बन आती है। इसने नैशति कोणमें थोड़ी ही दूरके फासले पर भागलपुर सेन्द्रल जेल है। फरीर दो वर्ष हुए आपके एक सुपुत्रने जन्मग्रहण किया है।

उपर जगमोहन टापुरके एक पुत्र थे। हर्तोमोहन टापुर उनका नाम था। आप बड़े साहसी मध्यमायी और साहित्यानुगामी थे। आपकी योगता, राज मक्ति और सेवामे सन्तुष्ट हो कर आपके इन्कारों के पुस्तकारम्बरूप घृष्टिा सरकारने आपकी राय बहादुर की उपाधिले भूषित किया था। आप अपने नाम पर एक हाई स्कूल भी गोल गये हैं जिसमें पहले निम्न शिक्षक ही जाती थी। पर कुछ दिन हुए विद्यार्थियोंकी आपो फीस देना पड़ती है। आपने प्रसाहितके अनेक कार्य किये हैं। छेटीकी सीमा आपके समयमें बहुत कुछ बढ़ गई। क्यातीय म्युनिस्पलिटिको पहले पहल पानी की कल रोल्नेमें आपने धोरस हजार रुपयेका दान किया था। बहुत दिनों तक राज्य सुगु गोग करके आप उम मोहन टापुर और प्राणमोहन टापुर दो पुत्ररत्न छोड़ परलोकाके मिषारे। उगमोहन टापुरकी मि.गलताका परधामें मृत्यु हुई। उनका प्रसिद्ध भयन भातम्बरक काठकार्यविशिष्ट है। आमपासकी हर्मिण्यो इनकी गोमार्गी और भी बढ़ती है।

बाबू प्राणमोहन टापुरका भागार ध्ययहार बहुत कुछ अपने पिताके मिलता जुलता था। इतिहासके पत्र पाठसे कथना यह परिचाम विचलता है, कि राज्यका स्थापना पानयिन्न तथा शारीरिक बन्धे छाग हो होतो है। हां यह अयथ है, कि उसको विभागाके लिये उसके पत्रने पुनर्के लिये, उसके क्यायी जीवनके लिये मान तथा धर्म-बन्धकी ही स्थापना होनी है। सर्वोच्च कमानि राज्य स्थापने में वा जा कर महापुत्रिले

फलता फूलता है। "न्यायं चिराज्य" न्याय ही राज्य है। न्यायसे पद च्युत होने पर अधोगतिको प्राप्त होना पडता है। राज्य छोटा हो या बड़ा, धर्म ही राज्यकी दृढ़ और जवरदस्त ढाल है। कहनेका तात्पर्य यह कि वायू प्राणमोहन ठाकुर धर्ममूर्ति थे। सहायभूति और उदारतासे आपमें अच्छा दखल जमाया था। प्रजाकी भलाईकी ओर आपका विशेष ध्यान था। लड़ाई भगडे-से आप एक पुरसा दूर रहते थे। अपने प्रपितामह धामू मदन ठाकुरके चलाये हुए सदावर्तकी आपने अपने जीवन भर अच्छी तरह निमाया। दीन विचारियोंके लिये पठनपाठनकी सामग्री प्रिना मूल्य देनेका आपने प्रयत्न कर दिया था। पर दु जका विषय है, कि अधिक दिन तक यह सुखमोग आपके भाग्यमें न बढ़ा था। अकाल ही आप कराल कालके गालमें पतित हुए। पर शतना ही सन्तोष था आप तीन पुत्ररत्न छोड़ गये थे।

ज्येष्ठ पुत्र राजमोहन ठाकुरका भरी जवानीमें स्वर्ग वास हो गया। आप आदर्श मूर्ति थे। आपकी मृत्यु पर प्रजाकी बात तो दूर रहे, विपक्षियोंने भी शोक प्रकट किया था। आपके कनिष्ठ दो भ्राता, श्री नरेशमोहन ठाकुर और श्री सूर्यमोहन ठाकुर अभी नाबालिग हैं।

आप दोनो भाई योग्य पिताके योग्य पुत्र निकले। भागे चल कर आपसे बहुत कुछ उन्नतिकी आशा की जाती है। स सारमें जो महान् आदर्श हैं उनको सदैव अनेक प्रकारके कष्ट सहने पडे हैं। वास्तवमें ये कष्ट ही आत्माको उच्च पद प्राप्त करनेमें सहायक होते हैं। आप क्रमशः ७-५ वर्षकी अवस्थामें पिताहीन तो हो ही चुके थे परन्तु कुटिल कालन आपका मातृहीन भी कर दिया। श्रीनरेशमोहन ठाकुरकी अभी चढती जवानी है। आप धीर, शान्त, सच्चरित और विद्यानुरागी हैं। सङ्गीत विद्यामें आपका विशेष अनुराग है। ध्यव हार शिल्पके अनेक विषयोंमें आपका आसाधारण अधिकार और द्युत्पत्ति देखी जाती है। राजनैतिक विषयोंमें आपकी अच्छी सूझ है। कभी कभी आपके मनैजर भी इस विषयमें आपसे परामर्श लेते हैं। यदि आपको सराहनीय है, इसमें सन्देह नहीं। आपका 'कञ्चनगढ' नामक प्रसाद बहुत उच्च और सुरम्य है।

अहातेमें जो फूलकी क्यारिया है उनमें तरह तरहके फूल लगते हैं जिससे इसकी शोभा थीर भी खिल जाती है। वर्ष भी पूरा नहीं हुआ है कि आपके एक पुत्ररत्न जन्म ग्रहण किया है। इस जन्मोत्सवमें आपने करीब बीस हजार रुपये खर्च किये थे। कहते हैं, कि जो भिखमंगा आता, चाहे उसकी मांग कितनी ही बड़ी क्यों न हो मुंहमागी वस्तु पा कर निहाल हो घर जाता था। स्टेट भरमें जहा देणो, वहीं आनन्द, वहीं सुख, वही सौभाग्य सम्पद दिखाई देती थी।

यहा 'देवी गङ्गावती ठाकुराना' नामक १ दातय्य अस्पताल है जिसमें रोगी भी रखे जाते हैं। इलाज अच्छा होता है, दूर दूर प्रार्थीके लोग इलाज कराने यहा आते हैं। अनाया इसके तीन विशाल मन्दिर हैं जिनमें राधाष्टय्य, लक्ष्मीनारायण मुरलीधरकी मूर्ति प्रतिष्ठित हैं। प्रथम दो मन्दिर गङ्गाके किनारे अवस्थित हैं जिससे इनकी प्राकृतिक शोभा अति मनोरम है। राधाष्टय्यका मन्दिर मुख्यद्वार है और उसमें जो सीढिया लगी हैं वे गङ्गाके किनारे तक छू गई हैं। उक्त मन्दिरके चारों ओर करीब बीस मुख्य हैं जिनमें नरसिंह, चन्द्र, सूर्य आदि सगममरको मूर्तियाँ स्थापित हैं। राधाष्टय्यकी मूर्ति अष्टधातुकी बनी हुई है और क्रमशः डेढ दो फुट ऊँची होंगी। यह अक्षय कीर्ति वायू श्रीमोहन ठाकुरकी है। स्थापनकालसे ही मु गेर जिलेके अन्तर्गत कसबा प्रामगासी स्वर्गीय मुकुन्द भा उक्त युगल मूर्तिकी सेवा शुभूया किया करते थे। दरदारमें उनकी अच्छी खातिर थी। ये कष्टर धार्मिक और श्री मुरलीधरजीके परम भक्त थे। सन् १३२७ साल (१९२० ई०) मार्द्रोकी अमावसमें उनकी मृत्यु हुई। कहते हैं, कि जिस दिन उनकी मृत्यु हुई, उसके ठीक एक घटा पहले उन्हें ऐसा मालूम पड़ा, मानो कोई उनके कानमें जोरसे कह रहा हो, 'गङ्गाके किनारे चलो'। तदनुसार उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र श्रीनरसिंह भाको जो वहीं पर थे, बुलाया और गङ्गाके किनारे ले जानेको कहा। आश्चर्यका विषय है, कि ज्यों ही गङ्गाजीमें उन्हे प्रवेश करा पर मुखमें जल दिया गया त्यों ही उन्हे प्राणपक्षरू उड गये।

बुछ समय बाद फूट देवी। राजकुमारों में प्रवेश किया और ये सबके सब पूज्य-पूज्य हो गये। पूज्यमोहन ठाकुर के भार सुपुत्र थे, हीरोमोहन ठाकुर, धीरोमोहन ठाकुर, मरुमोहन ठाकुर और इन्द्रमोहन ठाकुर। द्वितीय पुत्र धीरोमोहन ठाकुर उद्यामिलानी प्रतिमागाननी व्यक्ति थे। भावना वर्ण गौर, शरीर हृष्ट पुष्ट, गठीला और बड़े ऊँचा था। भावना प्राणिक ज्ञान तथा मनुष्यकी पहचान बहुत अच्छी थी। प्रताका पात्रा पुत्रजन् करने थे। भावकी उदारता बहुत प्रसिद्ध है। भाव पुत्राने जमानके रसम थे। जो कोई विरमन भाजमाइको गहा भाते थे, उसकी भाजाएँ विमो न विरनी रूपमें पूगे लो ही जाती थी। धार्मिक कार्योंमें भावकी पूर्ण धरता थी, इसी कारण भाव अपने प्रामादने उत्तर गङ्गाके किनारे राधाधर्याकी मूर्ति प्रतिष्ठा कर गये हैं। युद्धारण्यमें एक पुत्ररत्न छोड़ भावने जीवनभराला सम्भरण की।

पुवका नाम धी केदारमोहन ठाकुर है। भाव स्टेटके ३ पट्टेदारोंमेंसे एक हैं। पिताकी मृत्युके समय भाव बिल्कुल नाबालिग थे। इस कारण आपना स्टेट बोर्ड भाव पाट लम गया। भावके छालन पालनका भार भावकी पूजनीया माताके मिर रहा। 'लखनऊ काल मित्र तालुकदार' Lucknow Colva Talukdar) स्वरुधमें भावने अग्यालय भारतीय राजकुमारोंके साथ विद्यानिशता प्राप्त की। निमुपनसे ही आपमें अलौकिक चिह्न अ मुरित थे। कहा भी है कि — "हीनदार विद्यान के हीन घोकनेपात" अध्यापक भावकी तौर बुद्धि और स्मरणशक्तिको देग कर विस्मित होते थे। थोड़े ही दिन हुए ( १६०३ ई०के ७वीं मयम्बरके) भावने बालिग हो कर राजकायका कुल भार अपने हाथ लिया। भाव हम थोड़ेसे समयमें अपने उच्च मुर्षीमें अपनी प्रज्ञाके ही प्रमेपाय नही किन्तु आम पासके सभी जो भावकी प्रज्ञा मदी हैं, उनके भी भादर और प्रमेके भाज्रा हो गये हैं। भावका कर्मसाध बहुत हँसमुख है और प्रचाके दुग मुम्बकी मुननेके लिये सदैव तत्पर रहते हैं। जो एक बार भी भावके साथ रह चुके हैं, वे भावके बरिब्रामाधुपे पर मुग्ध हो भावकी मंगल और धर्याकी दुर्द्विरे देगवता बाध्य हैं। अत्र साहित्यमेंसे ही।

भावके उद्योगमें एक छोटा पुष्पशालय भी खोज गया है जिसमें प्राय सब भाषाओंको पुष्पकीया संस्कृ है। भाव अङ्गरेजों, बङ्गला और हिन्दी भाषामें अत्यंत कथोप कथन कर सकते हैं। जिस प्रसादमें भाव रहते हैं उसका नाम धीमवरा है। यह मया चारों ओर आम-दाननसे समानुपद्र है जिससे इसकी गोमा देवनी हो बन भाती है। इसके नीमति कोणमें घोड़ी ही दूरके फासले पर भागमपुत्र सेन्द्रल लेव है। कठोर दो यर्प हुए भावके पर सुपुत्रने जन्मग्रहण किया है।

उपर जगमोहन ठाकुरके एक पुत्र थे। हरिमोहन ठाकुर उका नाम था। भाव बड़े माहारी मध्यमाओ और साहित्यानुयायी थे। भावको पोस्ता, राज मकि और सेपासे मन्तुष्ट हो कर भावके हजराई के पुरकारम्यरूप मृष्टिा सरकारने भावकी राय बहादुर की उपाधिले भूषित किया था। भाव अपने नाम पर एक हार्ड-स्फूट ओ गोल गये हैं जिसमें पहले निशान निशुक दी जाती थी। पर बुछ दिन हुए विचारियोंको आधी फास देनी पद्यता है। आपने प्रजाहितके अनेक कार्य किये हैं। छेठकी मीमा भावके समयमें बहुत बुछ पठ गईं। स्थानीय म्युनिरुपलिटोको पहले पहर पानी की कल सोलनेमें आपने धोरस हजारा रुपयेका दान किया था। बहुत दिनों तक राज्य सुपुत्र मोग करके भाव उप मोहन ठाकुर और प्राणमोहन ठाकुर दो पुत्ररत्न छोड़ परलोकको विचारने। उपमोहन ठाकुरकी नि मस्ताना यम्पामें मृत्यु हुई। उका प्रमित मया मानमगई कादकार्यविशिष्ट है। भावपामकी हरियाला इसका गोमाओ और भी बङ्गानी है।

बाबू प्रामोमोहन ठाकुरका भागार व्यवसाय बहुत बुछ करने पितासे मिलता सुत्रता था। रिततामके पटन पाठामे बहुधा पर परिचाम विरहता है, नि राज्यका स्थायता पाठविह तथा जारंगिक पन्के टाग हो देनी है। हा पर अक्षय है, नि उका विद्याताके लिये उमके पन्ने पुनैके लिये, उमके स्थायी जीवनके लिये जगम तथा धर्म-बन्ध हो आयदरुता होला है। कपीम स्थायित राज्य स्थापने सौंका जा कर मदापुर्षितने

वारिधि ( स० पु० ) वारिधि - न्वी ।

वारिवाह ( हि० पु० ) वादल ।

वारिज ( फा० पु० ) १ वृष्टि, जग। २ वर्षास्रतु ।

वारिस्टर ( अ० पु० ) वह वकील जिस्मे विवायतमें रह कर कानून परीक्षा पास की हो। ये दोबानी कीजदायी और माल आदिकी सारी छोटी बड़ी अदालतोंमें वादी या प्रतिवादीकी ओरसे मामली और मुकदमोंकी पैरवी, बहस तथा अन्य कार्रवाइया कर सकते हैं। इन्हें वफा लतनामि या मुफ्तारनामिकी आवश्यकता नहीं पडती।

वारी ( हि० स्त्री० ) १ किनारा, तट। २ धार, राह। ३ वह स्थान जहा किसी वस्तुके विस्तारका अन्त हुआ हो, हाशिया। ४ वगीचे, रेत आदिके चारो ओर रोकके लिये बनाया हुआ घेरा, बाड। ५ किसी बरतनके मुहका घेरा या छिछले बरतनके चारो ओर रोकके लिये उठा हुआ घेरा या किनारा। ६ वाटिका, वगीचा। ७ म्रिडनी, कुरीपा। ८ घर, प्रकान। ९ रास्तेमें पड़े हुए भाड इन्पादि। १० मेड आदिसे घिरा स्थान, क्यारी। ११ जहाजके ठहरनेका स्थान, बद्रगाह। १२ पारी, ओसरी। १३ लडकी, कन्या। १४ नवयौवन, 'योडे' चपसकी स्त्री। ( पु० ) १५ एक जाति जो पचल देने बना कर प्याह श्रादी आदिमें देती है और सेवा टहल करती है। पहले इस जातिके लोग वगीचा लगाने और उनकी रपगाली आदिका काम करते थे।

वारीक ( फा० वि० ) १ जो मोटाई या घेरेमें इतना कम हो, कि छूनेसे हाथमें छुल मालूम न हो, महीन। २ जिसे समझनेके लिये सूक्ष्म बुद्धि आवश्यक हो, जो बिना अच्छी तरह ध्यानसे सोचे समझमें न आए। ३ जिसकी रचनामें दृष्टिको सूक्ष्मता और कलाकी निपुणता प्रकट हो, ४ सूक्ष्म, बहुत ही छोटा। ५ निसके अणु अति सूक्ष्म हैं।

वारीका ( फा० पु० ) बालोंकी वह महीन कलम जिससे चित्रकारीमें पतली पतली रेखाएँ खींची जाती हैं।

वारीको ( फा० स्त्री० ) १ सूक्ष्मता, पतलगण। २ साधारण दृष्टिसे न समझमें आनेवाला गुण या विशेषता।

वारीखाना ( हि० पु० ) नौकके कारखानेमें वह स्थान जहा नौककी बरी या टिकिया सुपाई जाती हैं।

वार्य—वर्ददेखो।

वार्यपुर- बङ्गाके २४ परगनेके अन्तर्गत एक शहर। यह अक्षा० २२ २१' उ० तथा देशा० ८८ २७' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्राय ४२१७ है। यहां पानकी निस्तृत गेती होनेके कारण इसका वार्यपुर नाम पडा है। यहांके 'राय चौधरी' वंश प्राचीन जमींदार हैं और डायमण्ड हारवर नामक उपविभागका अधिकांश स्थान इनके अधिकारभुक्त हैं।

वारुणी ( हि० स्त्री० ) वारुणी देखो।

वारुद ( तु० स्त्री० ) एक प्रकारका चूर्ण या बुकनी जो गन्धक, शारे और कोयलेको एकमें पीस कर बनती है और आग पा कर भस्से उड जाती है। वाम, रकेट आदि अग्निशीलाविषयक द्रव्य बनानेमें भी इसी मसालेकी जरूरत पडती है। ऐसा पता चलता है, कि इसका प्रयोग भारतवर्ष और चीनमें बटूक आदि अन्यत्र और तमाशो में बहुत प्राचीनकालसे किया जाता था। अशोकके गिलालेखोंमें अग्निगन्ध वा अग्निस्कन्ध शब्द तमाशो ( आतगवानो ) के लिये आया है। परन्तु इस बातका पना आज तक गिहानोंकी नहीं लगा, कि सबसे पहले इसका आगिगार रहा, फव और किसने किया है। इसका प्रचार यूरोपमें १४वीं शताब्दीमें मूर ( अरब ) लोगोंने किया और १६वीं शताब्दी तक इसका प्रयोग केवल बन्दूकाको चलानेमें होता रहा। आजकल अनेक प्रकारकी वारुद मोटी, महीन, सम विषम रथेकी बनती हैं। सयोजक द्रव्योंकी मात्रा निश्चित नहीं है। देश देशमें प्रयोजनानुसार अंतर रहता है पर साधारण रीतिसे वारुद बनानेमें प्रति सैकडे ७० से ७८ अंश तक शोर, १० या १२ अंश गन्धक और १ से १० तक कोयला पडता है। ये तीनों पदार्थ अच्छी तरह महीन पीस छान कर एकमें मिलाये जाते हैं। वारुदमें तारपीनका तेल या स्पिरिट डाल कर चूर्णकी भलोभाति मलते हैं। अनन्तर उमे धूपमें सुखा लेते हैं। तमाशोकी वारुदमें कोयलेकी मात्रा अधिक डाली जाती है। कभी कभी रोहखुन भी इसलिये डालते हैं, जिससे फूल अच्छे निकले। भारतवर्षमें अब वारुद बन्दूकके कामकी कम बनती है, प्राय तमाशोकी ही वारुद बनाई जाती हैं। वारुदखाना ( हि० पु० ) वह स्थान जहा गोला, वारुद आदि लडाईना मामान रहता है।

जगदोगे मदा रमा 'राय एमिओटाडापुर बहादुर' नामका एक गाँव स्थित है जो १८६८ ई० में स्थापित हुआ है। इसमें जंगल काई भी लकड़ों पड़ते हैं। बागु सुन्दर गाव पशु बौ, व, प्रधागाज्यापर है। भाप कसोय प दुह कपामि इन स्थानों बायें मज्जाजन करने का रहे हैं। स्थानीय स्थानों परगनी पदार्थ और तालीय मगदनीय हैं। तागोक तो यह है, कि कितने लकड़ों विभविद्या लकड़ों जिये चुन कर भेजे जाने, वे नयके सब कामयाब निकलते हैं। इसके पत्रया यहा एक म्मुनिमिपल बापर प्रासतो स्थित है। १९१० ई०में Baran-co-op-rative नामका नो बैंक खुला है, उसमें यहाके तथा आम पामके अधिवासी गाया लग उठा रहे हैं। स्टेटके उन सौनों पदोदारोको आय मिला कर ४ लाख रुपयोंमें लाया है।

**बारामान—२४** परगनेके अन्तर्गत एक उपविभाग। यह अक्षा० २० ३३'से २० ५६' ३० तथा देशा० ८८' ०' से ८८ ४०' पूर्वके मध्य अवस्थित है। भूमिमात्र २७५ वर्गमील और जनसंख्या हार लाखमें ऊपर है। इसमें बारामान और गोबरडगा नामके दो ताल और ०७४ ग्राम लगते हैं।

० उक्त उपविभागा का एक नगर और विचारनगर। यह अक्षा० २० ४३' ३० तथा देशा० ८८' २६' पूर्व के १४ मील उत्तर पूर्व में अवस्थित है। जनसंख्या प्राय ८६३४ है। १८३४ ई०में यज्ञौर और लखिया जिलेमें कितने परगो निवाज कर इसके अन्तर्गत विधे गये औ बारामान विजा पलागो लया है। १८६१ ई० तक यहाँ एक उपारण मन्विष्टे ड थे। यहा की भी देव पयवा एक स्टेशन है।

१८३१ ई०में मीपद सन्मकके मायापुत्री सुसम्मान का तीर्थ मीपों नामक जिली सुसम्मान कबीरकी बायो में एक कर लिखके विषय पडा हो गया। इन उक्त सुसम्मानोमें देवमूर्तिको मोड डाला और मापलो के म्नि विवेक अन्वयण करमा समझा कर दिया। यहाँ तक कि वे मापोंकी भी जगहोंमें बन्ध लगे आये। परन्तु उन्होंने एक बाँधका निर्मा करवाया था। सुन्दरिनीमें भी अन्वेषणों में कसके मामले टहर म नके और पुगों आ

जिये। गोत्रे उसमेंसे एक मीं मारे यध और का भी बन्धी हुए। जो थोपे यध गये, उन्होंने कितने अन्वेषणों के विना तालार उठाई, पर हार म्मा कर निर्दिष्ट हो बैठे। यही लडाई ब गालकी तालमीपकी लडाई मानसे मज्जा है। यहा सखारो अद्वालय और एक छोटा बारामान है जिसमें मिर्ग १३० बीदी रखे जाने हैं। लक के पास ही सुसम्मान कबीर पीर परदिन मादिबने उद्देश्यसे प्रतिगर्ष भेगा लगता है। इस भेजेमें लिखु और सुसम्मान दोनों कामके योग जमा होते हैं।

**बारामिया—**मधुमती नदीको एक शाखा। यह कश्मिर पुर और यज्ञौर जिलेके मध्य हो कर बहती है। यह पाल्नाडाके निकट मधुमतीका परिव्याग कर पुन मोटा गङ्गामे आ मिली है। इस नदीमें गव समय वर्ष द्रव्य ले कर गये जाती जाती है।

**बारिक (अ० पु०)** यिने य गलों या मकानोंकी श्रेणी या समूह जिसे फीचके निपाही रहते हैं, छावनी।

**बारिकपुर—**बारपुर देशो।

**बारिक मास्टर (अ० पु०)** यह प्रभाग वर्मगारी औ बारिककी देशमाल और प्रप च बना है।

**बारोद (अ० पु०)** बारिद देशो।

**बारिकीमाव—**प्रशापमदेजाके अन्तर्गत एक अन्तर्देशी, इरावती और माद्र गमोय विभागा त्रिदीपके मध्यका स्थान। गुल्दामपुर, अमृतनगर साहौर, मल्लगोमारी और मृत्मान जिला इसके अन्तर्गत हैं।

**बारिकीमावपाल- ०** उक्त अन्तर्देशीके माया म्मन्वयणके जिये एक प्रथिम गाळ। यह गुल्दामपुर, अमृतनगर और लहौर तक विस्तृत है। सम्राट् शाहजहाँके स्थाननामा इतिनिपर अंगीमर्दुम साई १६३३ ई०में जो लगने स्थान कटपाया था १८४६ ई०में उसके कलेकरकी प्रति कर्णके जिये लडाई भविपारने उस कार्यमें हाथ लगाया। १८४५-५० ई०में से कर १८५१ ई०के मध्य उस कार्यका देव हुआ। मृत्मान और शासनात्मक से कर इसका परिमाण १८८ लाखों है।

**बारिधर (दि० पु०)** १ बारण, मीप। ८ एक वर्ष पुन। इसके मायक चार्लस स्थान अणन और दो अणन होते हैं।

वारिधि ( म० पु० ) वारिधि रतो ।

वारिवाह ( हि० पु० ) वाद ।

वारिज ( फा० पु० ) १ वृष्टि, वर्षा । २ वर्षाभ्रतु ।

वारिस्टर ( अ० पु० ) वह चकील जिम्मे विलायतमें रह कर फानून परीक्षा पास की हो । ये दोबानी फौजदारी और माल आदिकी सारी छोटी बड़ी अदालतोंमें वादी या प्रतिवादीकी ओरसे मामलो और मुकदमोंकी पैरवी, बहस तथा अन्य कार्रवाईया कर सकते हैं । इन्हे बना लतनामे या मुफ्तारनामेकी आवश्यकता नहीं पडती ।

वारी ( हि० री० ) १ किनारा, तट । २ धार, वाह । ३ वह स्थान जहा किसी वस्तुके विस्तारका अन्त हुआ हो, हाशिया । ४ घगीचे, रेत आदिके आरो और रोकके लिये बनाया हुआ घेरा, बाढ । ५ किसी वरतनके मुहना घेरा या छिछले वरतनके चारो ओर रोकके लिये उठा हुआ घेरा या किनारा । ६ बाटिका, घगीचा । ७ गिडकी, भरोला । ८ घर, मकान । ९ रास्तेमें पडे हुए ऋड इत्यादि । १० मेड आदिमे घिरा स्थान, क्यारी । ११ जहाजके ठहरनेका स्थान, बद्रगाह । १२ पारी, ओसरी । १३ लडकी, कन्या । १४ नवयौवन, थोडे बयसकी स्त्री । ( पु० ) १५ एक जाति जो पत्तल देने बना कर व्याह शादी आदिमें देती है और सेवा टहल करती है । पहले इस जातिके लोग बगोचा लगाने और उनको रंगवाली आदिका काम करते थे ।

वारीक ( फा० वि० ) १ जो मोटाई या घेरेमें इतना कम हो, कि डूनेसे हाथमें छुछ मालूम न हो, महीन । २ जिसे समझनेके लिये सूक्ष्म बुद्धि आवश्यक हो, जो बिना अच्छी तरह ध्यानसे सोचे समझमें न आए । ३ जिसकी रचनामें दृष्टिकी सूक्ष्मता और फलाकी निपुणता प्रकट हो । ४ सूक्ष्म, बहुत ही छोटा । ५ जिसके अणु अति सूक्ष्म हों । वारीका ( फा० पु० ) वालोंकी वह महीन कलम जिससे चित्रकारोंमें पतली पतली रेखाएँ खींची जाती हैं ।

वारीको ( फा० स्त्री० ) १ सूक्ष्मता, पतलापन । २ साधारण दृष्टिसे न समझमें आनेवाला गुण या विशेषता । वारीखाना ( हि० पु० ) नौके नारवानेमें वह स्थान जहा नौकी बरी या टिकिया सुपाई जाती है ।

वार्य—बखदेकी ।

वार्यपुर बङ्गाके २४ परगनेके अन्तर्गत एक शहर । यह जसा २२ २१ उ० तथा देशा० ८८ २७ पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या प्राय ४२१७ है । यहा पानकी विस्तृत रोटी होनेके कारण इसका वार्यपुर नाम पडा है । यहाके 'राय चौधरी' व ज प्राचीन जमींदार हैं और खयमएड हारवर नामक उपविभागका अधिपति स्थान इनके अधिकारभुक्त है ।

वारुणी ( हि० स्त्री० ) वाग्नी देवी ।

वारुद ( तु० स्त्री० ) एक प्रकारका चूर्ण या युक्ती जो गन्धक, शोरे और फोयलेकी परम पीस कर बनती है और आग पा कर भस्से उड जाती है । यम, रकैट आदि अग्निशोषाविषयक द्रव्य बनानेमें भी इसी मसालेकी जरूरत पडती है । ऐसा पता चलता है, कि इसका प्रयोग भारतवर्ष और चीनमें बन्दूक आदि अन्यस्त्र और तमाशेमें बहुत प्राचीनकालसे किया जाता था । अशोकके गिलालेगोंमें अग्निगंध या अग्निस्त्रन्ध शब्द तमाशे ( आतशबाजी ) के लिये आया है । परन्तु इस बातका पता आज तक विद्वानोंको नहीं लगा, कि सबसे पहले इसका आविष्कार कहा, कब और किसने किया है । इसका प्रचार युरोपमें १४वीं शताब्दीमें मूर ( अरब ) लोगोंने किया और १६वीं शताब्दी तक इसका प्रयोग केवल बन्दूकाकी चलानेमें होता रहा । आजकल अनेक प्रकारकी वारुद मोटी, महीन, सम विषम रथेकी बनती हैं । सयोजक द्रव्योंकी मात्रा निश्चित नहीं है । देश देशमें प्रयोजनानुसार अंतर रहता है पर साधारण रीतिसे वारुद बनानेमें प्रति सैकडे ७ से ७८ अंश तक शोष, १० या १२ अंश गन्धक और १४ से १२ तक फोयला पडता है । ये तीनों पदार्थ अच्छी तरह महीन पीस छान कर एकमें मिलाये जाते हैं । बादमें तारपीनका तेल या स्पिरिट डाल कर चूर्णको भलीभांति मलते हैं । अनंतर उन्हे घृषमें सुखा लेते हैं । तमाशेकी वारुदमें फोयलेकी मात्रा अधिक डाली जाती है । कभी कभी लोहयुन भी इसलिये डालते हैं, जिससे फूल अच्छे निकले । भारतवर्षमें अब वारुद बन्दूकके कामकी कम बनती है, प्राय तमाशेकी ही वारुद बनाई जाती है । वारुदगाना ( हि० पु० ) वह स्थान जहा गोला, बन्दूक आदि लडाईना सामान रहता है ।

बाहुरानी ( हि० म्नी० ) बाहुरानी देवो ।  
 बाहुरपुर—अथवागतके अर्थात् एक सामन्तराज्य ।  
 बाहुर नामक सम्भारणक द्वारा यह परिचालित होता है ।

महसुर देवो ।  
 बाहुर—यह मान जिल्लके अन्तर्गत एक लौहक्षेत्र । यह  
 अक्षां २३ ४४ उ० तथा देशां ८७ २० पू०के मध्य  
 अवस्थित है । इस जिल्लोके भूभागमें खनिज लौह प्रचुर  
 परिमाणमें पाया जाता है । मि० डेविड रिमपने इस  
 स्थानका परिदर्शन कर गवर्मेन्टको जो रिपोर्ट दी उसमें  
 जाना जाता है, कि प्रति वर्गमीलमें प्राय ६०० टन टन  
 मिथिल लोहा मिलता है । उक्त गणनेमें कमसे कम  
 १६ लाख टन शुद्ध लोहा उपलब्ध हो सकता है ।

बादे ( फा० नि० वि० ) अन्तको ।  
 बादेमें ( फा० अर्थ० ) प्रसङ्गमें, विषयमें ।  
 बादेमोटर ( अ० पु० ) बेरोमोटर देवो ।  
 बादे—बुन्देलखण्डके अन्तर्गत झांझार पर्वतके पाद  
 मूलस्थ हृदके विनासे अवस्थित एक प्राचीन नगर । यह  
 बाराणस नामके मजहूर है । गोदारिया जाति द्वारा  
 स्थापित गङ्गमर नामक देवमन्दिर तथा इधर उधर पड़े  
 हुए प्रस्ता स्तम्भादि यहांकी पुर्यकोसिक्की घोषणा करते  
 हैं । उस मन्दिरके तथा फिक्कयकी गणेश मन्दिरके गार्भमें  
 अष्टमूर्ति तथा भवभद्रादि मूर्ति स्थापित देखी जाती है ।  
 पादस्थलों जी मान्दरको गठन देवोंने मादर होता है,  
 कि उन प्राचीन मान्दरदिने से सब गठित या सन्ध्य  
 हुए हैं । यहां ६३३ गजबन्में यदुबुज्जितरक सोमर जाभी  
 के समयमें उक्तीर्ण एक जिल्लाजिपि पाई गई है । इसमें  
 अनुमान किया जाता है, कि मालवके सम्राज्यामोरे पहले  
 यहां सोमरप गोप राजाओंका अस्थान हुआ था । उक्त  
 हृदके उत्तरी विनासे एक वैष्णव मन्दिर है जिसके सामने  
 घांठी छत्र पर दश भवभार मूर्ति और उसके पार्श्वमें  
 दोन-आठिक नामक चौदहा स्थापित है ।

पदांश १४ कोम उक्त पर्वते नामक प्राय है जो  
 एक समय इगोके अन्तर्गत था । मजहूर, अर्थात् हृदके  
 राज्यामोरे बुन्देला सरदार राज्यामोरे अब इस  
 प्रकारकी सम्पत्तिका पता तथा एक उर्ध्वमें हृदकाके  
 साथ ही कर देने अर्थात् लहद मृदा । इदका मत

ले कर लीरते समय ये घोषा नदीकी बाहू के  
 अर्धो हो उठे । पीछे उर्ध्वमें घोषाका इस प्रकार लहद  
 किया था ।

“घोषा शुभ पर्याप्त हो सब नदियों सरदार ।  
 सायनमें धाम्य भयो हर्षे सगहो पार ॥”  
 कहेते हैं, कि उनकी इस स्तुतिमें घोषा प्रशंस हुई ।  
 धो । नदीकी बाहू पर जानेसे ये बुज्जान्पूर्वक स्वरूप  
 लांटे ।

बार्थपुसमण्ड—( Edmond Burke ) जो है अंगरेज राज  
 नीतिज्ञ । इसके पिता एक सामान्य व्यवहारजीवी थे । इस  
 लिन विभविद्यालयमें रह कर इन्होंने विद्या उपार्जन की ।  
 १७५७ ई०में ‘मिस्टिफिकेशन ऑफ नैचरल सोसाइटी’ तथा  
 ‘महन् और सुन्दर’ नामक प्रबंध लिख कर ये उन  
 साधारणमें विशेष प्रसिद्ध हो गये हैं । ‘मार्श’ मार्थके  
 काम छोड़ने पर १७८२ ई०में ये गैनागिमागके पेश्व  
 दाता-पद पर अधिष्ठित हुए । इस समय मिथि  
 कॉन्जिल समामें भी इनको धामन दिया गया । दूसरी  
 पर ‘मार्श’ शेल्पोर्णके राजकीय-कला होने पर इन्होंने काम  
 करना छोड़ दिया । भारतवर्षमें अंगरेज शासनकर्ता  
 घानेक हेस्टिगके अन्वयाय शासनसे हृद हो इन्होंने स्वार्थ  
 न्यायहृदयके जो राजनीतिज्ञ बर्क्यूा ( Burke's imple-  
 chment on warren Hastings ) की थी, उर्ध्वमें ये  
 जगद्वाराकी भडाके पाल हुए थे । विषया परामो  
 विस्तृत दोष दिया कर इन्होंने १७९० ई०में आ ब्राजगर्भ  
 प्रबंध लिखा है, ( Reflection on the French Revolu-  
 tion ) यह इनके ज्ञान का पुष्टिका प्रमाण परिचय है ।  
 १७९४ ई०में इन्होंने पार्लियामेन्टका भागन स्वयं किया ।  
 पुढापन्थामें सुनिश्चित सुक्तकी मृत्यु हो जानेसे इनका  
 हृदय चूर चूर हो गया और इगोमें उनकी मृत्यु भी  
 हुई । इस जनक, मार्श सेवने धार्मिक मनोविद्या एक  
 की धार्मिकता और अन्धमार्शियेका भूमि मूर्ति प्रयोग कर  
 गये हैं । १७९० ई०में अर्धजिन मन्तमें उनका अन्त और  
 १७९० ई०में वेद-परिवार नाममें इनकी जीवन्-गीता हीन  
 हुई ।

बार्थमिड-मेम्टर—एक बुद्धिमत्तावान् । इन्होंने इन्हीं  
 स्थानमें अन्तर्गत है । ये अर्थ, अर्थविद्या और अर्थ

१२२० ई०में भारतवर्षमें खूटान धमना प्रचार करनेके लिये भाये थे ।

'बार्डम—खूटानधर्मशास्त्र बार्डबिलके सेण्ट्रल ज्ञान विभाग वर्णित एक साधु । पारम्य सीमान्तवासी भारतवासी तथा साधु जोसेफत नामसे उल्लिखित हुए हैं । पार्श्वत्य परिडतवाण भारतराजपुत्र जोसेफत्सो 'बोधिसत्त्व' मानते हैं ।

बार्डों सर जार्ज—मन्द्राजके अगरेज शासनकर्त्ता । इष्ट इरिडिया कम्पनीके परिदर्शकरूपमें इन्होंने भारतवर्ष पर पदार्पण किया । इनके शासनकालमें १८०६ ई०के वेल्डूरमें सिपाही चिट्रोह उपस्थित हुआ । इस चिट्रोहसे 'अगरेजवणिजगण बहुत डर गये थे ।

बार्डोटीर (स० पु०) १ लघु, रागा । २ अ कुरु, अ खुआ । ३ गणिका सुत, जारज ।

बार्ह (स० लि०) बर्ह सम्बन्धीय ।

बार्हते (स० झी०) वृहत्या फल ह्यक्ष्वादित्वाद्गुण । १ वृहतीफल । उत्सादित्वात् अण् । (लि०) २ वृहति भय ।

बार्हतानुष्टुभ (स० लि०) वृहती अनुष्टुभ छन्द सम्बन्धीय ।

'बार्हदन्' (स० पु०) बृहदन्नेरपत्य कण्वादित्वाद्गुण । वृहदन्नि ऋषिका गोत्रापत्य ।

बार्हदोपत्र (स० पु०) वृहद्विषुवशीय ।

बार्हदुक्य (स० लि०) वृहदुक्यसम्बन्धीय । वृहदुक्य का गोत्रापत्य ।

बार्हद्विर (स० लि०) वृहद्व गिरिसम्बन्धीय ।

बार्हद्वैयत (स० झी०) शौनिक-रचित वृहद्वैयत सम्बन्धीय ।

बार्हद्वल (स० झी०) १ वृहद्वल सम्बन्धीय । २ वृहद्वलका गोत्रापत्य ।

बार्हद्वय (स० पु० झी०) वृहद्वयस्यापत्य शैषिकोऽण् । १ वृहद्वय राजसुत । (लि०) २ वृहद्वय सम्बन्धीय ।

बार्हद्वयि (स० पु०) वृहद्वयका गोत्रापत्य ।

बार्हवत (स० लि०) बार्हवत शब्दयुक्त ।

बार्हस्पत (स० पु०) वृहस्पतेरिद स या देवताऽस्य अण् । १ वृहस्पति सम्बन्धीय । २ वत्सरविशेष । ३ वृहस्पतिके उद्देशसे चरुभृत्ति ।

बार्हस्पत्य (स० पु०) बार्हस्पत्य बृहस्पतिभोक्तृ शास्त्र । अधीयमानत्वेनास्त्यस्येति, अश आदित्वाद्च् । १ नास्तिक । (झी०) २ नीतिशास्त्र । (लि०) ३ वृहस्पति सम्बन्धीय ।

बार्हिण (स० लि०) बर्हिणी विकार तान्नादित्वात् अण् । बर्हिणिकार ।

बार्हिपद (स० पु०) बर्हिपदका गोत्रापत्य ।

बाल (स० पु० झी०) बलतीति बल ण । १ गन्धद्रव्य विशेष, सुगन्धमाला नामक गन्धद्रव्य । पर्याय—ह्रीवेर बर्हिष्ठ, उदीच्य, केशनामक, अम्नुनामक, ह्रिवेर, बर्हिष्ठ, बालक, चारिद, चर, ह्रीवेरक, केय्य, चप्र, पिङ्ग, ललनाम्रिय, कुन्तलोशीर । गुण—शीतल, तिक्त, पित्त, वमन, तृण, ज्वर, कुष्ठ, अतिसार, द्रास, और ब्रणनाशक तथा केश-हितकर । २ अर्भक, बालक, लडका । पर्याय—माणवक, बालक, माणव, किशोर, वट्ट, मुष्टिन्धय, घट्टक, किशोरक, पाक, गर्भ, हितक, पृथुक, शिशु, ज्ञाय, अर्भ, हिम्भक, हिम्ब ।

मनुष्य जन्मकालसे ले कर प्राय १६ वर्षकी अवस्था तक बाल या बालक कहा जाता है । स्त्री भी १६ वर्ष तक बाला पहलाती है ।

"आपोडशाद्भवेद्बालस्तरुणस्तत उच्यते ।

वृद्धः स्यात् सप्ततैरुद्ध वर्षीयान् नवते परम् ॥" (भरत)

भावप्रकाशमें बालपरिचर्याविधि इस प्रकार लिखी है—

बालकको भूमिष्ठ होनेसे यथाविधि कुलाचार और स्त्री आचार जो पूर्वापर प्रचलित हैं, उसका अनुष्ठान करना आवश्यक है ।

वयस्कजन्मेदसे यह बालक तीन प्रकारका है, दुग्धपायी, दुग्धाप्रमोजी और अन्नमोजी । इनमेंसे एक घण तकके बालकको दुग्धपायी, दो घण तकको दुग्धान्नमोजी और तीन वर्षसे ले कर सोलह वर्ष तकके बालकको अन्नमोजी कहते हैं ।

बालककी उमर छ अथवा आठ मास होनेसे यथोक्त विधिके अनुसार बसे थोडा थोडा करने अन्न खिलाये । पीठे वयोवृद्धिके अनुसार उसकी माता बटाती जाय ।



धर्मशास्त्रों में भी बालकका हस्त या आठवां नाम ही माना जाता है। निरिक्तकाल निर्दिष्ट हुआ है। बालकको गोदमें रख कर उसे गिहालापादि द्वारा सुखी करे, कभी भी तर्कादि द्वारा अस्मान न करे। निरिक्त अवसरमें सहसा न उगाये और जब तक स्वयं उठ कर बैठ न सके, तब तक पीठानेरी चोटा न करे। गोद पर बिठाने अथवा गुगाने और भीषादि प्रयोग करनेसे शिवा अथ समयमें आर्यक रोदन न कराये।

बालकके हस्तगुमार अर्थात् शिखरसे उसका मन हमेशा प्रमान रहे, उन विषयमें विशेष यत्न करना आवश्यक है। कभी कि, मनके प्रवृत्त रहनेमें ही शरीर की दिनों दिन वृद्धि होती है। वायु, रौद्र, विद्युत्, सृष्टि, धूम, अग्नि, जल, उद्य और निद्रा स्थानमें हमेशा बचाये रहे।

सौमन्य, उदयमन, स्वान, नेत्राङ्गन, कौमल यत्न और शृङ्खल अनुलेपन आदिमें ही बालकके लिये हितकर है। बालकको आठ वर्ष बाद नम्यका प्रयोग कराये। सोमह धारण करने विरहेयन देना उचित नहीं। (भाष्य०) (सुधु न शरीरस्थान दान अथवायमें इसका विशेष विवरण लिखा है, विस्तार हो जानेके भयसे यहां नहीं लिखा गया।)

बालकके शरीरकी सेवा, बल और बुद्धि बढ़ानेके लिये निम्न निर्दिष्ट शास्त्र प्रकाशके योग निर्दिष्ट हुए हैं। इन सब योगोंका नाम मान है। बालकको शोभने पर योगका सेवन कराना कर्त्तव्य है। प्रथमयोग सुषमन्वुत्, पुष्ट मधु घृत और बभ्रु। द्वितीय मोन्दला, शङ्खुत्, मधु, घृा और सुषमन्। तृतीय अर्धसुषुम्, मधु घृत सुषमन्वुत् और बभ्रु। चतुर्थ सुषमन्वुत्, बभ्रु, शोभनी मृत्तिका, घृा घृत और मधु। सुधुत्तम १०-११४)

(पु०) अरुणि प्रान्तर् रक्षति संशुभोति वा दन ल। ४ शिरोभाष अथशुभनिर्दिष्ट, सोम, वेदा। पचांश-विद्युत्, बभ्रु, कजा वृत्त, सुधुत्, निरिक्त, निद्रा। ५ सोमह निद्रु, सोमका बधा, बडेहा। ६ अनावायधि महेकी दुत्। ७ करिकायि, हाकेरु दुत्। ८ शरि केरु, शरिदत्त। ९ अथरुकेरु हाकेरु शोभनेका हायो।

१० पुच्छ, घृत। ११ मत्स्यविरिद्य, एक प्रकाशकी मण्ड। १२ किन्नी पशुका बधा। १३ यह शिखरको समक अर्थो हो, शानमन् आदमी। (सि०) १४ मूर्ध, नाममन्। १५ जो मर्यादा न हो, जो घृी बाइको न घृीका हो। १६ जिसे उगे वा गिरने हुए घोड़ी ही देर हुए हो। बाल (दि० स्त्री०) १ सुष्ठु बतारों के पीछेके उद्यका यह भाग भाग शिखरके पाठों और शाने गुठे रहने है। २ एक प्रकाशकी मण्डली।

बाल (स० पु०) अङ्गुलीका नाम। बालक (स० पु०) शान न्यायें कर्त्त। १ शोभने, सुषमन्-वाला। २ अशुभोपक, अशुभा। ३ लक्ष्मण, पुत्र। ४ शिखर, शिखर। ५ शिखर, शोभनी उमरका बधा। ६ अशोष शक्ति, भनकन आदमी। ७ हाथीका बधा। ८ घोड़ेका बधा। ९ बन्ध, क मन। १० केडा, बाल। ११ हाथी तथा घोड़े की दुम्।

बालकता (दि० स्त्री०) १ बाल्यावस्था। २ मङ्कल पत्र, शानमन्। बालकपन (दि० पु०) १ बालक होनेका भाष। २ लक्ष्मण, शानमन्। बालकशिया (स० स्त्री०) बालकानी शिया ६ तम्। १ १ इन्द्रबादली। २ बदली, वेला। (सि०) ३ बालक शिखर।

बालकदान-सप्तमी शान्तायके ०५ पुत्र, पासांदासके पुत्र। १८६० ई०में ये विद्येयी दिग्विभीके हाथी मारे गये।

बालकपान-शैवमहोत्सव शोभने प्रस्ता। बालकशक्ति-शुभरत्नमन्त्री नामक अथवा शान्तायके शक्ति।

बालकाल (स० पु०) शान्तायका यह भाग शिखर शान्तायकाके उमर तथा बाल शिखर शक्ति।

बालकाल (स० पु०) शान्तायका, शान्ताय। बालकी (दि० स्त्री०) शान्ता, पुत्री। बालकुराशरीर (स० पु०) शान्तायकाके अर्थ अर्थ है। शान्ताय (स० पु०) शान्ताय केरुका शान्ताय ६ तम्। शान्ताय (स० पु०) शान्ताय केरुका शान्ताय ६ तम्।

वालकृष्ण—कई एक सस्त्रत ग्रन्थकर्त्ताओंके नाम । यथा—  
 १ पञ्चश्लोकितार्जिक प्रणेता । २ मुवितराधवके रच  
 यिता । ३ हरिभक्तभास्करोदयके प्रणेता । कोई कोई  
 इन्हें बालचन्द्र भी कहते हैं । ४ होमविद्याके रचयिता ।  
 ५ दत्तसिद्धान्तमञ्जरीके प्रणेता । ये जलहनीट कर्षणीय  
 देवमठके पुत्र थे । ६ पञ्चश्लोकी और उमकी टीकाके  
 प्रणेता । ७ अलङ्कारसारके प्रणेता । ८ ऋग्वेददेवता  
 क्रमके रचयिता । ९ तर्कटीकान्यायबोधिनीकार । १०  
 तैत्तिरीयसंहिता भाष्यकार । ११ प्रयोगसारके प्रणेता । ये  
 गोकुल ग्रामवासी थे । १२ प्रशस्ति प्रकाशिका नामक  
 ग्रन्थके रचयिता, ब्रह्मानन्दके शिष्य । १३ नन्द परिडतकी  
 तत्त्वमुक्तावली नामक टीकाके प्रणेता । १४ सप्तसंस्थ  
 प्रयोगके प्रणेता, महादेवके पुत्र । १५ गियोत्कर्षप्रकाशके  
 प्रणेता । १६ श्रौतस्मार्त्तविधिके रचयिता । १७ जन्मसर  
 यासी यादवके पुत्र, रामकृष्णके पौत्र, नारायणके प्रपौत्र ।  
 इन्होंने जातककौस्तुभ, जैमिनिस्मृत्यभाष्य, तार्जिककौस्तुभ,  
 योगिनीवशाक्रम आदि ग्रन्थ और त्रिवेणीस्तोत्र, नारायण  
 स्तोत्र, महागणपतिस्तोत्र, यन्त्रोद्धार, शङ्करस्तोत्र, शिर  
 स्तोत्र और स भ्रान्तिनिर्णय आदि कई एक पुस्तकें लिखी  
 हैं । १८ कादम्बरीविषयपदविपुत्तिके प्रणेता । ये वेङ्कट  
 रङ्गनाथदीक्षितके पुत्र थे । १९ न्यायसिद्धान्तमुक्तावली  
 प्रकाशके रचयिता । इन्होंने अपने पुत्र महादेवमठ दिन  
 करके लिये उक्त ग्रन्थकी रचना की ।  
 बालकृष्ण ( स० पु० ) उस समयके कृष्ण जिस समय ये  
 छोटी धर्मस्थाके थे, बाल्यावस्थाके कृष्ण ।  
 बालकृष्णत्रिपाठी—गुणमञ्जरीके प्रणेता, काशीरामके पुत्र ।  
 बालकृष्णदास—शङ्कराचार्यप्रणीत पेत्रेयोपनिषद्भाष्य और  
 तैत्तिरीयोपनिषद्भाष्यके टीकाकार ।  
 बालकृष्णदीक्षित—१ सिद्धान्तमुक्तावलीयोजना और सेवा-  
 फलवृत्ति टिप्पणी नामक ग्रन्थके प्रणेता । ये लालूमठ  
 नामसे प्रसिद्ध थे । २ बल्लभाचार्यद्वय सेवाकौमुदीकी  
 निबन्धविपुत्तियोजना नामकी टीका, निर्णयणध और  
 सुबोधिनी नामक भागवतके १०म स्कन्धकी टीकाके  
 प्रणेता ।  
 बालकृष्णपर्यायुक्त—उपाधितित्त्व चित्रमीमासाग्रुदाधर्मप्रका  
 शिका और राक्षसकाव्य टीका 'काशिका' नामक तीन  
 ग्रन्थके रचयिता । ये बालमठ नामसे प्रसिद्ध थे ।

वालकृष्णमठ—१ श्रौतप्रायश्चित्त नामक काव्यके प्रणेता ।  
 २ विद्वत्भूषण-काव्यके प्रणेता । ये अग्रिमशके थे । इनका  
 जीवनकाल १६१० ई० माना जाता है ।  
 बालकृष्ण भारद्वाज—तिथिनिर्णय नामक ग्रन्थके रचयिता ।  
 बालकृष्णमिश्र—मानवश्रौतसूत्रवृत्तिके प्रणेता, विद्यानाथके  
 पुत्र ।  
 बालकृष्णानन्द—ब्राजिडगासी एक सस्त्रतश्च परिडत । इन्होंने  
 श्रीधाराचार्य, स्वयम्भ्रकाण, शिवराम, गोपाल, पुरुषोत्तम  
 और पूर्णानन्द आदिसे शिक्षा प्राप्त की थी । ईशावास्योप  
 निषद्, षाडकोपनिषद्, केनोपनिषद्, छान्दोग्योपनिषद्  
 और प्रश्नोपनिषद् आदि भाष्य तथा प्रणवार्धनिर्णय  
 भिक्षुसूत्र और भाष्यवार्त्तिक आदि ग्रन्थ इन्हींके बनाये  
 हुए हैं ।  
 बालकेलि ( स० खी० ) १ लडकोंका खेल, गिल्लाड्ड ।  
 २ बहुत ही साधारण या तुच्छ काम ।  
 बालकेशी ( स० खी० ) तृणधिशेष । एक प्रकारकी घास ।  
 बालकोट—पञ्जाबप्रदेशके हजारा जिलान्तर्गत एक नगर ।  
 यह नयनसुख नदीके बायें किनारे अवस्थित है । नौशेरा  
 पासके साथ यहाके अधिवासियोंका दिम्बुत व्यवसाय  
 चलता है ।  
 बालकोट—मध्यप्रदेशके दमोह जिलेके पार्वत्यभूभागस्थ  
 एक नगर । यह प्राचीर और परिखादि परिवेष्टित तथा  
 दुर्ग द्वारा सुरक्षित है । १८५७ ई०में यहाके लोदा अधि  
 वासियोंने विद्रोहमें साथ दिया था । उन्नी समय अ ग  
 रेजीसेनाने यहाके प्राचीन दुर्गकी तहस नहस कर  
 डाला ।  
 बालक्रिया ( स० खी० ) बालके योग्य क्रिया ।  
 बालक्रीडन ( स० खी० ) बालस्य क्रीडन, क्रीड भाषे-ख्युट ।  
 लडकोंके खेल ।  
 बालक्रीडनक ( स० पु० ) बालाना क्रीडनक क्रीडनद्रुष्य । १  
 कपटक, क्रीडी । बाणक क्रीडी ले कर गोलते हैं, इसीसे  
 इसका नाम क्रीडनक पडा है । २ ये सब द्रुष्य जिनसे छोटे  
 छोटे बच्चे खेलते हैं ।  
 बालक्रीडा ( स० खी० ) बालस्य क्रीडा । लडकोंके खेल  
 और काम ।  
 बालखडी ( हि० पु० ) यह हाथी जिसमें कोई दोष हो ।

वाचस्पत्य ( सं० पु० ) मुनिविरचिते । ब्रह्मणो रोमायुषो इव  
 शोभासो उत्पत्ति इति । ये भानां शोभासोऽपि संशुद्धे  
 वतयत् । इत्यो मय्या सात ह्यार इति । (भा० वि० पु०)  
 मरुके मय बडे भारी तपसो ही । भार्येणैवपुत्रात्मने  
 जिम्मा ही, नि शत्रुनी भार्या रत्नविने नाट ह्यार वाच-  
 त्तिव्यागण उपवन ह्यु ओ मरुके मय ऊर्ध्व रेता ही ।

वाचस्पत्यपरिचिन्त- १३२० पुनः ।

वाचस्पत्य-आमाय प्रदेनके धोष्टु जित्वा तर्जित एव गच्छ  
 प्राय । यद् अथा० २४'३०' ३५' उ० तथा देना० २० ५०'  
 १५' ५०' मय्य दुर्गियाय नदीके विनागे भगवित्यत ही ।  
 इय नदी द्वारा यहाके वायुत, पदसा तेजदा बोध भादि  
 को बहूनाके गिरा मिल स्थामेति रूपनां होतो ही ।

वाचस्पतिर्षा ( सं० स्त्री० ) प्रथमगर्भवती, यद् स्त्री पितरौ  
 पश्ये पश्य मांघारण विद्या हो ।

वाचस्पत्य ( सं० पु० ) बालः निगुमूर्ति घटो गोपालः ।

१ शोष्ठ्यको वाचस्पतिः ।

तीरपयोनिपयुद्धनियामं हाच्यन्तश्चतुर्गोनिनिगाय ।  
 दशान्तसुन्दरनृपविलासं तं प्रणामामि च

बालगोपालम् ॥”

२ परिवारके लच्छके लक्ष्मिणां भादि, बाल  
 बन्धे ।

वाचस्पत्योर्षा-शूराधिहारके एव राधा, राजा मन्तारायणके  
 पुत्र । इत्येते इत्ये जित्वासीं राज्य किया । उनके लच्छके  
 लक्ष्मिणांरायणने राधा प्रामरितद्वारा अभ्यधना की थी ।

वाचस्पत्य ( सं० पु० ) बालानां पात्रवर्णां प्रद । वाचस्पत्ये  
 प्रद्विरचित ।

“वाचस्पत्या बालानाम् पौड्यानि निगु यना ।

तस्मात्तदुपमर्गोर्षो रवेज्जान प्रपन्नता ॥ ( ५ ४३० )

भावापर करने पर वाचस्पत्य बालांकीके राजाना ही इन  
 निचे उक्त इतने वस्तु बानी पादिपे ।

बालस्पत्य ही दया-रक्षक, एक वाचस्पत्य, शत्रुनी,  
 देवनी, पूजाय, म पशुतय, शंभुपूजाय, मुग्धापुत्रिका और  
 शीमद्विष । इन से, शरीरे विनाश स्थित और दुष्टय ही ।

( इत्ये १३१'१५५ विवर मच्छ १००० देतो )

वाचस्पत्ये मन्त्रवत्तय कालय-विश्व धर्मो देवनीय,  
 निगुमर्ष देवना मन्त्रवत्तय धर्मो मन्त्रवत्तय मर्षो होय मन्त्र

ओ शीमपयस्त्रिद्वि, बुधित्य वदयहातमें मिल रहता है  
 और विचके परमें फूटा कामका बरतन रहता है म मं-  
 प्रदीका उदय होता है । मद् बर्णक बालांकीके धर्मदा  
 गूढा होने पर प्रदीय। पूजा करनी पड़ती है । पूजने म  
 या मनुष्ट होने ही । और वाचस्पत्य प्रतिपादन करना  
 पादिपे धैर्य न कर अधिपाचार या भरीपाचार करने  
 नया मनुष्टाचार न करलेने बालक भीत या घोरिण होने  
 ही, सब प्रपण उमके शरीमें प्रविष्ट हो जाते ही । वाचस्पत्य  
 देहमें शरीरे लक्ष्णा विकसत होने पर मान्यना पाषण्डका  
 प्रयोग करना पादिपे ।

वाचस्पत्ये घोरिणके सामान्य लक्षण-मर्षदीप  
 बालक कर्मा उद्विज और कर्मा सासमुग हो सेवा ही ।  
 मय, दन्तशरार त्रिध तथा धारोकी विदारण करना ही ।  
 मर्षदा ऊपर और शरीरे दुष्टि, दन्तघर्षण, भार्येणैव और  
 शोष्ठ्य जन्म, आहारमें धर्मिण्य, श्रुमा, बलहास, ईहको  
 मलिनता, शापायरोध, हृदयभङ्गय, पुनः पुनः उन्टी, और  
 न भागा, शोच, स्वरमय, भगीमार और शरीरमें मन्त्रय  
 और रत्नके समान मेष भांती ही ।

बालप्रदुषीकितके विरिध लक्षण-दोनी मेल शरीर,  
 देहमें शोचिनयण, स्त्रीमें में छेप, मुन्य मय, शरीरा एक  
 पन्थ स्थिर, उद्विभता, लक्ष्मणमें भागेपय, शोष्ट्य शोच  
 सेवा हाथो की श्रुष्टि वापना, मन्त्रमें गाढापन भादि  
 लक्षण मन्त्रप्रदात होने पर होते ही ।

मन्त्रप्रदातारके द्वारा घोरिण होने पर कर्मा मर्षे-  
 मय, कर्मा मर्षेण, हान्यत्त बन्धन, मन्त्रमूय नि मय,  
 मन्त्रके साथ उभास भावा, मूधमें चेतोशर भादि लक्षण  
 होते ही ।

शत्रुनिमर्षो पादिप्य होने पर शत्रुों में निगुमर्ष;  
 भागी मन्त्रवता, शरीरमें धारीकी लक्ष दुर्गमि, धान-  
 विविध मय और दाह पाकविधि मन्त्रेणैव प्रण  
 मर्षीकृते धोष्ट्य भादि मय्य होणे ही ।

देहमें मर्षो घोरिण होने पर मय दुर्गिण, देह मन्त्रिण  
 पान्द्रु धा मन्त्रवत्तय, शर, मन्त्रवत्तय, मर्षीकृते देह  
 और मर्षेण मय और कर्मा मन्त्रवत्तय मय भादि  
 लक्षण होणे ही ।

मन्त्रवत्तय घोरिणके मर्षीकृति विविध, देह और मर्षे

में खरब द निद्रा न आना, पतला वस्तु आना, देहमें काकके तुल्य गंध आना, वमन, लोमहर्षण तथा तृणा आदि लक्षण होते हैं ।

अ घपूतनाग्रहामिभूत होने पर स्तनोंमें द्रव्य, अतो-नाद, कास, हिक्रा, वमन, उन्म, सतत विवर्ण और गणित गंध आदि लक्षण होते हैं ।

शीतपूतनाग्रहसे पीडित होने पर, उद्विन्न, अतिशय क्रम्य, रोदन, अजस्रभापसे निद्रा, अतकृज्जन, अङ्ग शैथिल्य आदि लक्षण होते हैं । सुलगण्डिकाग्रहसे पीडितके अग ग्लान, हस्तपाद, और वदन रक्तवर्ण, बहुभोजी, उदरशिराओंसे आनुत्, उद्वेग और मूलकी स्रो गंध आदि लक्षण होते हैं । नैगमयग्रहसे पीडित होने पर फेनेका वमन, देहका मध्य भाग विनमित, उद्वेग विलाप, ऊर्ध्व दृष्टि, स्वद, शरीरमें चर्बीकी सी गंध आना आदि लक्षण होते हैं ।

बालक स्तम्भ भावापन्न, स्तनद्वेषी और बारवार मुहामान होने तथा रोगके सम्पूर्ण लक्षण प्रकट होने पर रोगी शीघ्र ही प्राण त्याग करता है । पेसा न होने पर रोग साध्य है । रोगनी परवाह न करनेसे रोग आराम नहीं होता इसलिये उसकी प्रथमाचर्यासे ही चिकित्सा करनी चाहिये । गिशुकी पचित गृहमें रख पुराने धोका मर्दन करना तथा घरमें सरसों फैलाना चाहिये । रोगीके पास सर्वगंधा औषधि के धोज और गंधमाल्योंसे अग्निमें घृतका धवन करना चाहिये ।

— इन सम्पूर्ण ग्रहोंकी चिकित्सा यों लियो है—स्वद-ग्रहसे पीडित बच्चेको चातम्र वृक्षका पाष, या पेसे वृक्ष की जड़का काथके साथ पाक और सर्वगंधा, सुरामुण्ड और कैटर्का—आदि द्रव्योंको ढाल मर्दन करना प्रशस्त है । देवदारु, रास्ता, मधुसूक्ष्म इनका काथ और वृषके साथ घृत पाक करके पिलाना चाहिये । सरसों, सापकी फेंसुल और ऊट, बरसी, गो आदिके रीसोंका धुआ देना चाहिये । सोमलता, इन्द्रबल्ली, शर्मा, विजयकंडक और मृगादनी आदिको प्रथित कर अङ्गमें धारण करना चाहिये । निजोशालमें स्नान कर चत्वर पर, स्कंदग्रहकी पूजा करनी चाहिये । रक

माल्य, रकपताका, गंध, निविध प्रकार मद्य, घण्टागाय, नूतनशाली, यव, वृषकुट आदिकी बलि देनी चाहिये ।

मत्—“तपसा तेनसाञ्चैव यज्ञसा वयसा तथा ।

निधान योऽथयोदेव स ते रक्त प्रसीदतु ॥”

— ग्रहसेनापतिर्देवो देवसेनापतिर्विभु ।

देवसेनारिपुह्र पातु त्वा मनवान् गृहः ।

— देवदेवस्य मत्तः गावकस्य च यः सुतः ।

गङ्गोमावृत्तिकानाञ्च स ते शर्म प्रयच्छतु ।

रक्तमाल्याम्बरधरो रक्तचन्दनभूषित ।

रक्तदिव्यनमुद्वैच पातु त्वा क्रींचेत्तदन ॥ =

स्कदापस्मारकी चिकित्सा—विल्य, शिरोय, गोलोमी और सुरसादिके कषाथका परिपेचन, सर्वगंधाके साथ तिलतैलमर्दन, क्षीरवृक्ष और पाकल्यादि गणका कषाथ मिलाकर घृत या दुग्धका पान कराना तथा यव और हिंगुका आलेपन करना चाहिये । गृध्र और उल्लूका भुरोय, केज, हाथीके नग, गायका घी और बालोंका धूपमें प्रयोग करना चाहिये । अनता, धिम्बी, मर्कटी तथा वृषकुटी आदि शरीरमें धारण करना चाहिये । चतुष्पथमें स्कदापस्मार ग्रहकी पूजा कर पक्के या कच्चे मांस, प्रसन्न कथिद, दुग्ध और भूतान्नकी बलि देनी चाहिये । मत्—

“स्वदापरमारसद्यो य स्वदस्य ददित सदा ।

विशापसन्नमृच गिशो शिवोऽस्तु चित्तानन ॥”

शकुनिग्रहकी चिकित्सा—शकुनि ग्रहजन्य रोगमें वैत, आम, कपित्थ आदिका काथ परिपेचन, कषाथ और मधुर द्रव्यस्यको मिला कर गर्म तैलका मर्दन, यष्टिमधु, खसखसकी जड़, बाला, श्यामालता, उत्पल, पद्मकाष्ठ, लोष, म्रियगु, मजोठ और शैलज आदिका प्रदेह प्रयोग करना चाहिये । ग्रन्थरोगमें कहा हुआ सूर्ण और घूर्ण, निविध प्रकारका पष्य, आदि प्रयोज्य है । शतमूली, मृगादनी, प्यांच नागडन्ती, निदिग्धका, लक्ष्मणा, सहदेवा, घृहती आदि शरीरमें धारण करना चाहिये । यथोक्त प्रकारसे इसकी पूजा अजस्र कर्त्तव्य है ।

रेवतीग्रहकी चिकित्सा—अजग धा, अजगट्टनी, जारिया, पुनर्वा, मृगानि, मायानि, भूमिभुम्भाप्य, आदि कषाथका परिपेचन, धन, अम्बकर्ण, अङ्गुण, घातकी, विन्दुव, वृष या सर्जरसके साथ पाक कर तैलका मर्दन;

पाशंग्रहादि पाशके योग्ये पञ्च घृतरा गेदव, कुन्दी, शंखपूरां भीर मरुतं घादिका प्रदेरु करना चाहिये । मृग उन्नु, भार्दिके सुतेय भीर जी भार्दिके भूयरा नाम मयेर प्रयोग करनेमें मद्यकोय जानना होता है ।

सोय दूध, जातिशरद, दूधो भादिने सोपालके घटमें निधेयपूर्वक पूजा करे और मङ्गोसूत्र पर घाती भीर बालको स्नान करा कर इन प्रद्वो इस प्रकार स्तुति करे ।

“शापापमपरा देवो विजनाम्यनुत्पेया ।  
 घल्लकुच्छलिनी उद्यामा देवतो मे मसीदनु ॥  
 मङ्गवाकराना विनाता तयैय यन्नुलिना ।  
 देवतो सततं माता मा मे देवो प्रसीद तु ॥”

पूजाप्रद्वकी चिकित्सा—बजोतपका, भातुप, पदल, परिमद्रक, काष्ठमन्त्रिका भादि बायका पांरपेयग, बघ, हरीतकी, मोहोर, हरिनाल, भार्दिका, कुष्ठ भादिसे पञ्च तैजमदेम, तुगासीर, मधुरक, कुष्ठ, तालिग, गरिद, बंदन भादिसे पाक किया हुआ पूज, यध, कुष्ठ, दिपु, गिरिकन्द्य, स्नाययो भीर हरेपु भादिषा पुषां देवा भादिसे । गधनाकुन्दी, कुन्दिवा, कर्कटकी हड्डी भीर पूज का पूज प्रयोग करना चाहिये । काषादना, चिकित्सा, चिकी भीर गुजा भादि मरुतमें धारण करना चाहिये ।

मत्स्य, मय, वरुत भीर मांस इन सबको मरुतमें रख काष्ठात्तन दूध घटमें निधेय कर यथाविधान पूजा करने कायदक है । परधान उच्छिद्य जडसे बाटकको स्नान कराना चाहिये । स्नानके बाद स्तुतिमम -

“मन्त्रितामरमंपुजा मन्त्रिता क्कमूर्जंज ।  
 कुष्मागारधिता देवी दारव” पातु पूजा ॥  
 कुर्तता सुतुंगवा करानमेरवालिहा ।  
 मिन्नात्तामवा देवी दारव पातु पूजा ॥”

अ धतूना प्रद्वकी चिकित्सा— विज सुतेके पतोंका क्कामरुद, सुरा, कर्त्री कुष्ठ, हरिनाल, मन्त्रिता भीर पूजा दूधकी लघावा हुआ तिलका मन्त्र, चिकनी मूक, मधुरवा, मधु, मन्त्रिका भीर कुटो इन सब दूधकी लघावे हूये पूजा करा कर मन्त्रों में मय क्कालका प्रदेरु भीर मन्त्रोंमें इतिग प्रदेरु ही विधेय है । सुतेका सुतेय, वेज, कां, भार्दिक, भीर कर्कटकीका धूधमें

प्रयोग करना चाहिये । कुक्कुटी, मक्की, गिनी, क्कम भादि दूध मरुतमें धारण करना चाहिये । कच्चे लक पञ्चके मांसका या मोहोरको यन्नुनाममें निधेय कर घटमें कच्चेको मर्षगंधवि जलमें स्नान करा कर स्तुति मंत्र पठे—

“कटाग चिकूना गुण्डा कयापामगपातिनी ।  
 देवी बालमिगं प्रीता स तच्छप क्कतूना ॥”

श्रीतपूजाप्रद्वकी चिकित्सा—बजिय, सुकर, चिकीकल, मित्र, प्रयोषद, भीरी, म्हातकी, रोक, लय मय, मोमू, मोषा, वेधदाय, कुष्ठ भीर मर्षगंधा इन सबके तैजकी पत्रा कर उनसे मन्त्रेण कटाग चाहिये । इसके सिवाय रोहिणी, धूग, गरिद तथा पत्रमा भीर मन्त्र मलयक इन सबके बाधमें भी दूधके साथ तैजकी मला कर मन्त्रेण करना चाहिये । धूध भीर उन्नुका पुतेय, म्हाग धा, सर्मगिाोक, निम्बपत्र भीर परिमपु भादि धूधपाके लिये प्रयोष्य है । मग्वा, गुजा भीर काषात्तनी मन्त्रों में धारण करना विधेय है । कुष्ठके साथ मय पाक कर उससे मन्त्रोंके विनादे मीगपूजाकां तर्पण करना चाहिये । मय भीर रधिरका देवोको उपादर दे जलानयके विनादे बालकको यह मंत्र पठ स्नान कराये ।

मंत्र—“मुद्रोदमगतादेवी सुरामोलितपादिनी ।  
 शशाकपाला देवी पातु त्वां श्रीतपूजा ॥”

मुष्मदिद्वकी चिकित्सा—बजिय, विषय, कर्त्री, पामो, म्हेत परदरपल, कुषेदासी भादि दूधकी क्कयक मिक, भूकराज, म्हाग धा, हरिग धा भादिसे मरुतमें लक उन्नु तैज पत्रा कर मन्त्रेण करे । सोय, दूध, तुगासीर, मन्त्रिका, मधुर भीर क्कालका मन्त्र भादि दूधकी तैज विधे हूये पूजा का पाण करना चाहिये । बघ, धूग, कुष्ठ भीर भीरवा पूज देना चाहिये । कां, कर्कटकी भीर मर्ष भादिकी मिहा मन्त्रों में धारण करना, धर्षक, कूर्क, मत्स्य, मय पाद, मन्त्रिका, ये सब भीर क्कया तथा पुतेयका, मीठमें मन्त्रिपान मंत्रपूज जलमें गिनीको स्नान करा कर मंत्र पठे—

“कालका कर्कती गुण्डा कयापामगपातिनी ।  
 मय मलयकपाला पातु त्वां मुष्मदिद्वकी ॥”

नैगमेयग्रहकी चिकित्सा—विल्व, अग्निमथ, छोटी करज आदिका काय, सुरा, काजी और धान्यासुका सेक, म्रिय गु, सारल काष्ठ, धनतमूल, सोंया गोमूल, दधिमण्ड और अमृकाजी आदि द्रव्योंसे पके हुए तैलका अभ्यङ्ग, दूध मूलका घाघ, दूध, मधुरगण, खजूर मस्तक आदिसे घीको पका पिलावे । हरीतकी, जटिला और वच, हिंगु, कुष्ठ, भल्लातक और अजमोद आदिसे घूप बनावे । रात्रिमें जब लोग सो जावे तब उलू और गृध्रका पुरीष निर्मित घूप, तिल, तण्डुल और देवीकी पूजा करे वा बट वृक्ष मूलमें बालकको स्नान करा यह मल पड़े ।

“अज्ञानमश्चलाक्षिण्णू कामरूपो महयथा ।

बाल पालयिता देवो नैगमेयोऽभिरक्षतु ॥”

( सुश्रुत उत्तरत ० २७—३७ भावप्र० बालरोगाधि० )

राघणकृत बालतंत्रमें बालग्रहका विशेष विवरण लिखा हुआ है । विस्तार हो जानेके भयसे इसको नहीं लिखा गया । अति सक्षेपसे इसका वर्णन यहा किया गया है । ये ग्रह बालकोंको जन्मसे १० वर्ष तक पीडित करते हैं । ऊपरकी अग्रस्थावालेकी प्रहोंकी गड़्ढा नहीं रहती ।

प्रथम दिन, प्रथम मास, वा प्रथम सालमें जब नदा नामक मातृका बालकों पर आक्रमण करती है तब ज्वर और आन्धे घट हो जाती हैं, शरीर सदा दु खित रहता है जिससे बालक शयन नहीं कर सकता । सदा रोता ही रहता है दूध अच्छा नहीं लगता और घुनट शब्द करता रहता है ।

द्वितीय दिन, मास वा वर्षमें सुनदा नामक मातृकाके बालक पर आक्रमण करनेसे ऊपरकी तरह लक्षण प्रकाश होते हैं ।

तृतीय दिन, मास वा वर्षमें पूतना नामकी मातृकाके आक्रमण करनेसे ज्वर, चक्षुःउन्मोलन, गात्रोद्भ्रंजन, मुष्टियद, ३ दन, ऊर्ध्वनिरीक्षण आदि लक्षण होते हैं ।

चतुर्थ दिन, मास वा वर्षमें मुखमण्डिका नामकी मातृका बालक पर आक्रमण करती है । जिससे प्रथम ज्वर, फिर चक्षुःउन्मोलन, प्रीवानमन और रोदन आदि लक्षण होते हैं । बच्चोंको नौद नहीं आती और दूध नहीं पीता ।

पंचम दिन, मास वा वर्षमें कटपूतना नामकी मातृका

बच्चोंको ग्रहण करती है उससे उवर होते हैं । छठे दिन, मास वा वर्षमें शकुनिका नामकी मातृका बच्चोंको पीडा देती है । उस समय बच्चोंके शरीरमें पीडा और ऊर्ध्व निरीक्षण आदि लक्षण होते हैं ।

सप्तम दिन, मास वा वर्षमें शुश्रूष्यती नामकी मातृका बालकोंको पीडित करती है तब उवर गात्रोद्भ्रंजन पच मुष्टियदता आदि लक्षण प्रकट होते हैं ।

अष्टम दिन, मास वा वर्षमें अर्षकामातृका और नवम मास, दिन वा वर्षमें स्वस्तिकामातृका, दशम दिन, मास वा वर्षमें निर्मृतामातृका, ग्यारहवे दिन, मास वा वर्षमें कामुयामातृका आक्रमण करती है । इन सब मातृकाओंके आक्रमण करनेसे इनकी पूजा या बलि देवे जिससे ये सतुष्ट हो बालकका परित्याग करे । ऐसा करनेसे बच्चा अपने आप ही अच्छा हो जावेगा ।

रावणकृत बालतंत्र देखा ।

बालग्राम—शोणपाके पश्चिम दिग्बर्षी एक प्राचीन ग्राम ।

बालगौरीतोष्य ( स० ३३० ) एक तोष्यका नाम ।

बालचन्द्र ( स० पु० ) बालेन्दु ।

बालचतुर्भद्रिका ( स० २१० ) औषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—मोथा, पीपल, अतीस, कर्कटपुत्री आदिके चूर्णको मधुके साथ मेषन करनेसे छोटे छोटे बच्चोंका ज्वरातिसार, भ्वास, काश और चर्म दूर हो जाती है ।

बालचरित ( स० ३३० ) बालकोंका खेल ।

बालचय ( स० पु० ) बालस्य बालकस्येव चर्या यस्य । १

कार्तिकेय । २ बालको का चरित ।

बालचर्या ( स० पु० ) बालकका कार्य ।

बालचाङ्गेरीघृत—औषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—घृत ४ सेर, आमफलका रस ४ सेर, बकरीका दूध ४ सेर, चूर्णके लिये कंध, त्रिकटु, सैन्धव, घराक्रान्ता, उरपल, सुगन्धवाला, बेलसोंड, घबकूठ और मोचरस कुल मिला कर १ सेर । इस घृतका अच्छी तरह पाक कर सेवन करनेसे अतिसार और ग्रहणीरोग जाता रहता है ।

बालचिकित्सा ( स० स्त्री० ) बालस्य चिकित्सा । १ बालक की चिकित्सा । २ कौमारभृत्या, दयागरी ।

बालछट ( हि० स्त्री० ) जट्यामानी ।

बालजीवन ( स० स्त्री० ) बालस्य जीवन । दुग्ध । बालक-

विश्वं दूषयती वाः ॥ अथवापरायणं कर्त्तव्यं, इत्यस्यै दूषयती वाः ॥  
यत् नमः कर्म मया है ।

बाल्ये ( मं० स्त्री० ) एक प्रकारची वेल्ल्याची । इतर  
पे वा विपदा भोर वेग मोजेकी भोर लईका तथा उपर  
की भोर अधिक बोधा होता है । इतमें उपरकी भोर  
उत्तमेशें शिष्ये एक रत्ना मी लया रहता है ।

बाल्यवय ( म० पु० ) बाल्यानि गणेश्वरावयानि लभया  
इव वयम् । १ मरिच पुर, गीता पेठ । २ बाल्य वय ।  
( ति० ) ३ बाल्यवयमुक्तम् ।

बाल्यवत् ( म० स्त्री० ) बाल्याय बाल्यवत्तुर्वापि लक्षणमुपाय  
ज्ञायते वा । मरिचपोथया, बाल्यबोके लक्षण पाठन  
आदिबो विद्या, श्यामाती । पर्याय—कुमारभूत्या,  
शशिपुत्रपेक्षया ।

बाल्यवत्तु ( म० स्त्री० ) बाल्यवत्तात्तु मूर्त्ति । मलयुज,  
दत्तो प्राय

बाल्य ( ति० पु० ) बाली ।

बाल्य ( म० स्त्री० ) बाल्य भाव रत्न । बाल्यजा,  
बाल्यका भाव ।

बाल्यवत्तु ( म० पु० ) बाल्यानि दृष्टाणोप दृष्टानि वयम्  
वा बाल इव वृद्ध इव वयम्, तत्र स्वार्थे कञ् । मरिच  
पुर, गीता पेठ ।

बाल्यव्याघरो—पूर्विका जिलेचे अलगांस वर शहर । यह  
भारत० २५ ०३ ०० अक्षा देशा० ८७ ११' पूर्व अक्षा  
० भावस्थान है । एतां १७-१६ ई०में बहूँ स्थर मिश्रण उर्वरता  
के साथ पूर्विकाने असाय मरुत अरुका एक पुत्र हुआ  
था । पुत्रमें पूर्विका राज पराजित मीर विद्वान् हुए थे ।

बाल्यव्यभिच—अथर्वसिद्धोपप्रवाण, अथर्वव्यभिच, उप  
व्यभिचमान, श्रीव्यभिचवर्ग, श्रीव्यभिचवर्ग, श्रीव्यभिच  
महाविद्यालय, बाल्यव्यभिच, श्रीव्यभिचव्यभिचव्यभिच  
॥ श्री वारविकरमवर्गवा अर्चि प्रत्येके मन्त्रेण दे । १८वीं  
अध्यायके मन्त्रवर्गामे अं दित्तु है ।

बाल्यव्यभिच वयमुज मरिचव्यभिचव्यभिच  
के वीरव्यभिच वयमुजके पुत्र है ।

बाल्यव्यभिच ( मं० पु० ) बाल्या वेदात्त श्रीव्यभिच

दि० वेदाव्यभिच

बाल्यव्यभिच ( ति० स्त्री० )

बाल्यव्यभिच ( ति० स्त्री० ) १ अत्रात्ता । २ अथर्ववेदे बाल्य  
रीत्यन कर्त्तव्य ।

बाल्यव्यभिच—पञ्चाशद्वेदांचे अथर्ववेदे  
रात्ते वर अथर्ववेद एक वाच्य शीत । इत पर्यंतके मन्त्र  
पर बाल्यव्यभिच नामक मन्त्रावलि प्रसिद्धि पा । अर्थ  
उपरकी अथर्व शीतवा माथ नामक मन्त्रावलि अर्थव्यभिच है ।

बाल्यवत् ( मं० पु० ) बाल इव वृद्ध वयं वयम् । १ मरिच  
पुर, गीता पेठ । २ यथावत्, अथवात् । ( ति० ) ३  
नूतन वय, वीरवत् । ४ युवावत्ता ।

बाल्यवत्तु ( मं० पु० ) बाल्यवत् स्वार्थे कञ् । मरिचपुर,  
गीता पेठ ।

बाल्यवत्तु ( ति० पु० ) १ बाल्य होनेवा भाव । २ बाल्य  
होनेकी प्रयत्ना, मरुत वय ।

बाल्यवत्ती ( म० स्त्री० ) भंगिका, मेषी ।

बाल्यवत्ता ( म० स्त्री० ) बाल्यवती वेदाव्यभिच हापु  
वयम् । १ श्रीव्यभिचव्यभिच स्वभावव्यभिच पद्धि, शिष्य  
बाल्यां पद्धिनेवा प्राचीन बाल्यवत्तु पर प्रारंभ  
अभूत्तम् ।

बाल्यव्यभिच ( म० स्त्री० ) बाल्यानि शुद्धानि पुत्रानि  
परत्या तत, स्वार्थे कञ्, दावि अत्राप्य । पूर्विक, दत्ता ।

बाल्यव्यभिच ( मं० स्त्री० ) पूर्विक, अत्र ।

बाल्यव्यभिच ( ति० पु० ) मन्त्रावलि, श्रीव्यभिच ।

बाल्यव्यभिच ( म० स्त्री० ) १ बाल्यावती मी कुटि, श्रीव्यभिच  
मरु । ( ति० ) २ अथर्ववेद शुद्धि वर्यांकी मी ह्ये, बहू  
हा घोडो कुटिव्याप ।

बाल्यव्यभिच ( म० स्त्री० ) देवतावती विवि ।

बाल्यव्यभिच ( म० स्त्री० ) श्री बाल्यावती मन्त्रव्यभिच आ मन्त्र,  
बहूत मन्त्र ।

बाल्यव्यभिच ( म० पु० ) यह विधान बाल्याव्यभिच ही  
मन्त्रव्यभिच मन्त्र पारण किया है, बहूत ही अर्थी इतरी  
मन्त्रव्यभिच मन्त्रव्यभिच ।

( मं० पु० ) बाल्यव्यभिच शुद्धि वर्यांका हापु ।

म० पु० बाल्यव्यभिच मरु इव, मन्त्र, स्वार्थे

३३६ दिन शिरी मन्त्रव्यभिच

३३६ दिन शिरी मन्त्रव्यभिच

३३६ दिन शिरी मन्त्रव्यभिच

३३६ दिन शिरी मन्त्रव्यभिच

बालभाय (स० पु०) बालस्य भाव । बालकका भाव, लङ्कपन ।

बालभृत्य (स० पु०) बाल्यकालसे दास ।

बालभैषज्य (स० ह्री०) बाल भैषज्य, बालस्य शिषो भैषज्य । १ रत्नाञ्जन । २ बालककी औषध ।

बालभोग (स० पु०) १ वह नैवेद्य जो देवताओं, गियो पतः बालकृत्य आदिकी मूर्तियों के सामने प्रातःकाल रखा जाता है । २ अन्नपान, कलेरा ।

बालभोज्य (स० पु०) बालाना भोज्य । चणक, चना ।

बालम (हि० पु०) १ पति, स्वामी । २ प्रणयी, प्रेमी ।

बालमउ—१ अयोध्याप्रदेशके हरदोई जिलान्तर्गत एक परगना । सम्राट् अकबरशाहके राजत्यके शेषभागमें बलाइ कुर्मी नामक कोई हिन्दू चन्देलराजाओ का अत्याचार सह न सना और माडीके कच्छवह क्षत्रियगणकी शरणमें पहुँचा । मुसलमानोंके आक्रमणसे उन्हे बचानेके कारण कच्छवह राजाओ ने उसे यह वनविभाग पारितोषिकमें दिया । बलाइने ज गलको काट छाट कर इसे आवादी बना दिया । पीछे उसने बलाइ खेरा नामका जो ग्राम बसाया वही बालमऊ नगर नामसे प्रसिद्ध हुआ । बालमऊ नगरसे हम परगनेका नामकरण हुआ है । चौदह ग्राम ले कर यह परगना संगठित है । यहाके ८ ग्रामों में कच्छवह क्षत्रिय, २में निकुम्भ, ३में सुहल ब्राह्मण, १में कायस्थ और शेष १ ग्राममें कश्मीरी ब्राह्मणों का वास है ।

२ उक्त परगनेका एक नगर । धाणिज्य व्यापारमें यह नगर विशेष उत्तमिणील है ।

बालमति (स० स्त्री०) बालमुद्ध, लडकियोंकी स्त्री अह ।

बालमत्स्य (सं० पु०) मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी छिलका रहित छोटी मछली । इसको मांस पथ्य और बलकारक माना जाता है ।

बालमुमुन्द (सं० पु०) १ बाल्यावस्थाके श्रीरक्षणजो । २ श्रीरक्षणकी शिक्षालकी यह मूर्ति जिसमें वे घुटनोंके बल चलते हुए दिखाए जाते हैं ।

बालमुमुन्द आचार्य—सोनाचरणचामरके प्रणेता ।

बलमूल (सं० ह्री०) कञ्ची मूली ।

बालमूलक (सं० ह्री०) अचिरजात कोमलमूलक, छोटी

और कञ्ची मूली । यह वैद्यकके अनुसार कटु, उष्ण, तिक्त, तोषण तथा द्रास्य, अर्श, क्षय और नेत्ररोग आदिका नाशक, पाचक तथा बलवर्द्धक मानी जाती है ।

बालमूलिका (सं० स्त्री०) आघ्रातक वृक्ष, आमढेफा पेड़ । बालमृग (सं० पु०) हरिणादि मृगजर्म ।

बालमृद्ग—१ मोतनिर्णयके प्रणेता । २ सूर्यगतऋतीकाके रचयिता । ३ आह्निकसारमञ्जरीके प्रणेता, विश्वनाथ भट्ट क्षातारके पुत्र ।

बालयमोपनीतक (सं० ह्री०) बाल यमोपवीत तत स्वार्थे कन् । उपवीतविशेष । पर्याय—उरुट्ट, पञ्च वट ।

बालरस (सं० पु०) रसायनविशेष । इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पारा ८ तोला, गन्धक ८ तोला, स्वर्णमाक्षिक ४ तोला, इन्हे लोहेके बरतनमें घोट कर केजाराज, भृङ्गराज, निसोथ प्रत्येकके रसमें सात बार भायन दे । पीछे सरसोंके समान गौली बनाये । इसका सेवन करनेसे बालकके त्रिदोष, जीर्णज्वर, कास और शूल आदि रोग जाते रहते हैं ।

अन्यविधि—पारद ८ तोला, गन्धक ८ तोला, स्वर्णमाक्षिक ४ तोला इन्हे लोहेके बरतनमें घोट कर केजाराज, भृङ्गराज, निसोथ, पान, काकमोचिका, सूर्यासर्त, पुनर्णाग, भेरुपर्णी और श्वेत अपराजिता प्रत्येकके रसमें सात बार भायन दे । पीछे उसमें ४ तोला मिर्चचूर्ण डाल कर सरसोंके समान गौली बनाये । अनुपान पानका रस रखा गया है । इसका सेवन करनेसे त्रिदोषसम्भूत सुदारुण ज्वर, काश आदि समस्त रोग प्रशमित होते हैं ।

(खेन्द्रशास्त्र० बाह्ययोगि०)

बाहराज (स० ह्री०) बाल स्वत्योऽपि राजते इति राजपचायच् । १ पैटूर्णमणि । (पु०) २ बालकश्रेष्ठ ।

बालरूप—एक नियन्धकार । वाचस्पतिमिश्रने इनका उल्लेख किया है ।

बालरोग (स० पु०) बालस्य रोग । बालककी व्याधि, बालककी पीडा । इसके विषयमें भावप्रकाशमें यों लिखा है—

बालरोगके निदान और लक्षण—गुरु मोचन, विषमाशन और आहार विहारसे धातोंके गरीरमें पातादि दोष



द-सिर्फ दूध पी कर जीवनधारण करता है, इसीसे दूधका यह नाम रखा गया है।

वालटो (अ० स्त्री०) एक प्रकारकी डोलची। इसका पेदा चिपटा और घेरा नीचेकी ओर संकरा तथा ऊपर की ओर अधिक चौड़ा होता है। इसमें ऊपरकी ओर उठानेके लिये एक दस्ता भी लगा रहता है।

वालतनय (स० पु०) वालनि नरोद्गतपत्न्या-तनया इत्यस्य। १ यद्विष्वक्ष, सैरका पेड। २ वालफ पुत्र। (त्रि०) ३ वालतनययुक्त।

वालतन्त्र (स० स्त्री०) वालाय वालकरक्षार्थं तन्त्रमुपाय-शास्त्रं वा। गर्भिणीचर्या, वालकीके लालन पालन आदिकी विद्या, वायागरी। पर्याय—कुमारभृत्या, गर्भिण्यवेक्षण।

वालतृण (स० स्त्री०) बाल नयज्जात तृण। नयतृण, हरी घास

वालद (हि० पु०) बाल। बालत्व (स० स्त्री०) बालस्य भाग्य रजः। बालन्ता, बालकका भाव।

वालदलक (स० पु०) वालानि दलानां दलानि यस्य वा बाल इव क्षुद्र दल यस्य, तत स्वार्थे कन्। यद्विर-पृक्ष, सैरका पेड।

वालदियावाडी—पूर्णिया जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षांश २५ २१' ४०" तथा देशांश ८७ ४१' पू०के मध्य अवस्थित है। यहां १०-६ ई०में बङ्गेश्वर सिराज उद्दीन के साथ पूर्णियाके नवाब सज्जत जङ्गल एक युद्ध हुआ था। युद्धमें पूर्णिया-रान पराजित और निहृत हुए थे। बालदीक्षित—अन्त्यनिष्टोमप्रयोग, आभरणप्रयोग, उपा-कर्मप्रमाण, बौधायनप्रयोग, बौधायनप्रत्यर्घ्य, बौधायन महानिचयन, वाजपेयप्रयोग, श्रौतपरिभाषामहानृत्ति और साधितचयनप्रयोग आदि ग्रन्थोंके प्रणेता। ये १८वीं शताब्दीके मध्यभागमें जीवित थे।

बालदीक्षित पायगुन—मकितरिङ्गिणी-श्रीकाके प्रणेता। ये वैद्यनाथ पायगुनके पुत्र थे।

बालधि (स० पु०) बाला केजा श्रायन्तेऽन्न, बाल धा कि। केजायुक्त लाङ्गल, उम।

बालधि (हि० स्त्री०) दुम, पूँछ।

बालना (हि० कि०) १ जलना। २ प्रचलित करना, रोशन करना।

बालनाथ—पञ्जाब प्रदेशके भेलमने जलालपुर जिलेके रास्ते पर अवस्थित एक गण्ड शील। इस पर्वतके शिखर पर बालनाथ नामक सूर्यमन्दिर प्रतिष्ठित था। इसी उसकी जगह गोरक्ष नाथ नामक गिरालिङ्ग स्थापित है। बालपत्त (स० पु०) बाल इव क्षुद्र पत्र यस्य। १ यद्विर-पृक्ष, सैरका पेड। २ यथास, जवाभा। (स्त्री०) ३ नूतन पत्र, कौपल। ४ डुरालभा।

बालपत्तक (स० पु०) बालपत्त स्वार्थे कन्। यद्विर-पृक्ष, सैरका पेड।

बालपन (हि० पु०) १ बालक होनेका भाव। २ बालक होनेकी अवस्था, लडकपन।

बालपर्णी (स० स्त्री०) मेघिका, मेघी।

बालपाश्या (स० स्त्री०) बालपाशे केजासमूहे मापु यत्। १ शीमन्तिकास्थित म्बणादिरचित पट्टिका, सिरके बालोंमें पहननेका प्राचीन कालका एक प्रकारका आभूषण।

बालपुष्पिका (स० स्त्री०) वालानि क्षुद्राणि पुष्पाणि यस्या तत स्वार्थे कन्, टापि अतश्च। यूषिका, जूही।

बालपुपी (स० स्त्री०) यूषिका, जूही।

बालवच्चे (हि० पु०) सन्तान, औलाद। बालबुद्धि (स० स्त्री०) १ बालोंकी सी बुद्धि, छोटी बुद्धि। (वि०) २ जिसकी बुद्धि बच्चोंकी सी हो, बहुत ही छोटी बुद्धियाला।

बालबोध (स० स्त्री०) देवनागरी लिपि।

बालबोधन (स० स्त्री०) जो बालकोंकी समझमें आ जाय, बहुत सहज।

बालब्रह्मचारी (स० पु०) वह जिसने बाल्यावस्थासे ही ब्रह्मचर्य ग्रहण किया हो, बहुत ही छोटी उम्रमें ब्रह्मचर्य रतनेवाला।

बालन (स० पु०) सुदन्तगज, सुन्दर दाँतवाला हाथी।

बालभद्रक (स० पु०) बालोऽपि भद्र इव, तत स्वार्थे कन्। विषभेद, एक प्रकारका विष जिसे शम्भय मौ कहते हैं।

बालभारत (स० स्त्री०) १ अमरचन्द्ररचित संक्षिप्त भारत-कथा। २ राजदोहर रचित एक नाटक।

बालमाय (स० पु०) बालस्य भाव । बालकका भाव, ललकारण ।

बालभृत्य (स० पु०) बाल्यकालसे दास ।

बालभैषज्य (स० पु०) बाल भैषज्य, बालस्य शिशो भैषज्य । १ रत्नाञ्जन । २ बालककी औषध ।

बालभोग (स० पु०) १ वह नैवेद्य जो देवताओं, विशेषतः बालकाल आदिकी मूर्तियोंके सामने प्रातःकाल रखा जाता है । २ जलपान, कलेवा ।

बालभोज्य (स० पु०) बालाना भोज्य । चणक, घना ।

बालम (हि० पु०) १ पति, स्वामी । २ प्रणयी, प्रेमी ।

बालमउ—१ अयोध्याप्रदेशके हरदोई जिलान्तर्गत एक परगना । सम्राट् अकबरशाहके राजत्वके शेषभागमें बलाई कुर्मी नामक कोई हिन्दू चन्देलराजाओं का अत्याचार सह न सना और माडोके कच्छग्रह क्षत्रियगणकी शरणमें पहुँचा । मुसलमानोंके आक्रमणसे उन्हें बचानेके कारण कच्छग्रह राजाओं ने उसे यह धनविभाग पारितोषिकमें दिया । बलाईने ज गलको काट छाट कर इसे आयादी बना दिया । पीछे उसने बलाई घेरा नामका जो ग्राम बसाया वही बालमऊ नगर नामसे प्रसिद्ध हुआ । बालमऊ नगरसे इस परगनेका नामकरण हुआ है । चौदह ग्राम ले कर यह परगना संगठित है । यहाँके ८ ग्रामों में कच्छग्रह क्षत्रिय, २में निकुम्भ, ३में सुहुल ब्राह्मण, १में कायस्थ और शेष १ ग्राममें कश्मीरी ब्राह्मणों का वास है ।

२ उक्त परगनेका एक नगर । वाणिज्य व्यापारमें यह नगर विशेष उन्नतिशील है ।

बालमति (स० पु०) बालबुद्ध, लडकीकी सी अक्षु ।

बालमत्स्य (स० पु०) मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी छिछका रहित छोटी मछली । इसका मांस पथ्य और बलकारक माना जाता है ।

बालमुकुन्द (स० पु०) १ बाल्यावस्थाके श्रीहृण्णजी । २ श्रीहृण्णकी शिशुकालकी यह मूर्ति जिसमें वे घुटनोंके बल चलते हुए दिग्गम आते हैं ।

बालमुमुक्षु आचार्य—सोताचरणचामरके प्रणेता ।

बालमूल (स० पु०) कच्ची मूली ।

बालमूलक (स० पु०) अचिरपात कोमलमूलक, छोटी

और कच्ची मूली । 'यह वैद्यके अनुसार कटु, उष्ण, तिक्त, तीक्ष्ण तथा श्वास, धरो, क्षय और नेत्ररोग आदि का नाशक, पाचक तथा बलवर्धक माना जाता है ।

बालमूलिका (स० पु०) आघ्रातक घृक्ष, धामडेका पेड़ ।

बालमृग (स० पु०) हरिणादि मृगगर्भ ।

बालम्भट्ट—१ गोलनिर्णयके प्रणेता । २ सूर्यशतपटीकाके रचयिता । ३ आह्निकसारमञ्जरीके प्रणेता, विषयाद्य भट्ट दातारके पुत्र ।

बालयज्ञोपवीतक (स० पु०) बाल यज्ञोपवीत तत स्वार्थे कन् । उपवीतविशेष । पर्याय—उरुट्ट, पञ्च वट ।

बालरस (स० पु०) रसोपघनिशेष । इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पारा ८ तोला, गन्धक ८ तोला, स्वर्णमाक्षिक ४ तोला, इन्हे लोहेके बरतनमें घोट कर केशराज, भृङ्गराज, निसोथ प्रत्येकके रसमें सात बार भावन दे । पीछे सरसोंके समान गोली बनावे । इसका सेवन करनेसे बालकके त्रिदोष, जीर्णज्वर, कास और शूल आदि रोग जाते रहते हैं ।

अन्यविध—पारद ८ तोला, गन्धक ८ तोला, स्वर्णमाक्षिक ४ तोला इन्हे लोहेके बरतनमें घोट कर केशराज, भृङ्गराज, निसोथ, पान, फाकमोचिका, सूर्यावर्त, पुनर्गवा, भेकपणी और श्वेत अपराजिता प्रत्येकके रसमें सात बार भावन दे । पीछे उसमें ४ तोला मिर्चचूर्ण डाल कर सरसोंके समान गोली बनावे । अनुपान पानका रस रखा गया है । इसका सेवन करनेसे त्रिदोषसम्भूत सुदारुण ज्वर, काश आदि समस्त रोग प्रशमित होते हैं ।

(रसन्दाराण्य० बाह्यरोगाधि०)

बालराज (स० पु०) बालः स्वल्पोऽपि राजते इति राज पचाद्यच् । १ वैदूषामणि । (पु०) २ बालकश्रेष्ठ ।

बालरूप—एक निबन्धकार । वाचस्पतिमिश्रने इनका उल्लेख किया है ।

बालरोग (स० पु०) बालस्य रोग । बालककी व्याधि, बालककी पीडा । इसके विषयमें भावप्रकाशमें यों लिखा है—

बालरोगके निदान और लक्षण—गुरु भोजन, विषमाशन और आहार विहारसे घातीके शरीरमें पातादि दोष

सिर्फ दूध पी कर जीवनधारण करता है, इसीसे दूधका यह नाम रखा गया है।

शालटी (अ० स्त्री०) एक प्रकारकी डोल्ची। इसका पेदा चिपटा और घेरा नीचेकी ओर संकरा तथा ऊपर की ओर अधिक चौड़ा होता है। इसमें ऊपरकी ओर उठानेके लिये एक दस्ता भी लगा रहता है।

शालतनय (स० पु०) बालानि नवोद्भूतपत्त्राणि तनया इव यस्य। १ मंदिर वृक्ष, रौरका पेड़। २ बालक पुत्र। (त्रि०) ३ शालतनययुक्त।

शालतन्त्र (स० स्त्री०) शालाय बालकरक्षार्यं तन्त्रमुपायः शास्त्रं वा। गर्भिणीचर्या, बालकोंके लालन पालन आदिकी विद्या, दायाराी। पर्याय—कुमारभृत्या, गर्भमिष्यवेक्षण।

शालतृण (सं० स्त्री०) बाल नवजातं तृण। नवतृण, हरी घास

शालद (हि० पु०) बाल।

शालत्व (स० स्त्री०) बालस्य भावः त्वं। बालकता, बालकका भाव।

शालदलक (स० पु०) बालानि दलानीव दलानि यस्य वा बाल इव क्षुद्र दल यरय, तत स्वार्थे कन्। खदिर-वृक्ष, रौरका पेड़।

शालदियावाडी—पूर्णिया जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २५, २१ व० तथा देशा० ८७ ४१' पू०के मध्य

अवस्थित है। यहां १७५६ ई०में बङ्गेश्वर सिराज उद्दौला के साथ पूर्णियाके नवाय सफत जङ्गका एक युद्ध हुआ था। युद्धमें पूर्णिया-राज पराजित और निहृत हुए थे।

शालदीक्षित—अल्पनिधोमप्रयोग, आग्रयणप्रयोग, उपा-कर्मप्रमाण, वीधायनप्रयोग, वीधायनप्रवर्ध, वीधायन महानिचयन, वाजपेयप्रयोग, श्रौतपरिभाषासप्रहवृत्ति और साहित्यचयनप्रयोग आदि प्रयोगके प्रणेता। ये १८वीं शताब्दीके मध्यभागमें जीवित थे।

शालदीक्षित पायगुप्त—मक्तितरङ्गिणी-टीकाके प्रणेता। ये वैद्यनाथ पायगुप्तके पुत्र थे।

शालधि (स० पु०) शाला केशा धीयन्तेऽन, बाल धा कि। केशयुक्त लङ्गूल, डुम।

शालधि (हि० स्त्री०) डुम, पूँछ।

शालना (हि० स्त्री०) १ जलना। २ प्रज्वलित करना, रोशन करना।

शालनाथ—पञ्जाब प्रदेशके भोलामसे जलालपुर जानेके रास्ते पर अवस्थित एक गण्ड शैल। इस पर्यंतके मिथर पर शालनाथ नामक सूर्यमन्दिर प्रतिष्ठित था। अभी उसकी जगह गोरक्ष नाथ नामक शिवलिङ्ग स्थापित है।

शालपत्र (स० पु०) बाल इव क्षुद्र पत्र यस्य। १ खदिर वृक्ष, रौरका पेड़। २ यनास, जयासा। (स्त्री०) ३ नूतन पत्र, कौपल। ४ दुरालभा।

शालपत्रक (स० पु०) शालपत्र स्वार्थे कन्। खदिरवृक्ष, रौरका पेड़।

शालपन (हि० पु०) १ बालक होनेका भाव। २ बालक होनेकी अवस्था, लडकपन।

शालपर्णी (स० स्त्री०) मेथिका, मेथी।

शालपाश्या (स० स्त्री०) शालपाशे केशसमूहे सायु यत्। १ सीमन्तिकास्थित शर्णादिरचित पाटिका, सिम्के

बालोंमें पहननेका प्राचीन फालका, एक प्रकारका आभूषण।

शालपुत्रिका (सं० स्त्री०) बालानि क्षुद्राणि पुत्र्याणि यस्य तत स्वार्थे कन्, ट्रापि अतश्च। यूथिका, जूही।

शालपुपी (स० स्त्री०) यूथिका, जूही।

शालवच्चे (हि० पु०) सन्तान, श्रौलाद।

शालवुद्धि (स० स्त्री०) १ बालकोंकी सी बुद्धि, छोटी बुद्धि। (वि०) २ जिसकी बुद्धि बच्चोंकी सी हो, बहुत ही थोड़ी बुद्धिवाला।

शालवोध (स० स्त्री०) देवनागरी लिपि।

शालवोधक (स० स्त्री०) जो बालकोंकी समझमें आ जाय, बहुत सहज।

शालवृक्षचारी (स० पु०) वह जिसने बाल्यावस्थासे ही ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया हो, बहुत ही छोटी उम्रसे ब्रह्मचर्य रखनेवाला।

शालम (स० पु०) सुदन्तगज, सुन्दर दाँतवाला हाथी।

शालभद्रक (स० पु०) शालोऽपि भद्र इव, तत स्वार्थे कन्। विषभेद, एक प्रकारका विष जिसे जाम्बय भी कहते हैं।

शालभारत (स० स्त्री०) १ अमरचन्द्ररचित 'संक्षिप्त भारत-कथा'। २ राजशेखर रचित एक भाटक।

बालभाय (स० पु०) बालस्य भाय । बालकका भाय, लडकपन ।

बालभृत्य (स० पु०) बाल्यकालसे दास ।

बालभैषज्य (स० ह्री०) बाल भैषज्य, बालस्य शिगो भैषज्य । १ रसाङ्गन । २ बालककी औषध ।

बालभोग (स० पु०) १ वह नैवेद्य जो देवताओं, गिरी, पतः बालकृष्ण आदिकी मूर्त्तियोंके सामने प्रातःकाल रखा जाता है। २ जलपान, कलेरा ।

बालभोज्य (स० पु०) बालाना भोज्य । चणक, चना ।

बालम (हि० पु०) १ पति, स्वामी । २ प्रणयी, प्रेमी ।

बालमऊ—१ अयोध्याप्रदेशके हरदोई जिलान्तर्गत एक परगना । सम्राट् अकबरशाहके राजत्वके शेषभागमें बलाई कुर्मी नामक कोई हिन्दू चन्द्रलराजाओ का अत्याचार सह न सका और माडीके कच्छवह क्षत्रियगणकी शरणमें पहुँचा । मुसलमानोंके आक्रमणसे उन्हें बचानेके कारण कच्छवह राजाओ ने उसे यह धनविभाग पारितोषिकमें दिया । बलाईने ज गलको काट छाट कर इसे आपादी बना दिया । पीछे उसने बलाई खैरा नामका जो ग्राम बसाया वही बालमऊ नगर नामसे प्रसिद्ध हुआ । बाल मऊ नगरसे इस परगनेका नामकरण हुआ है । चीद्द ग्राम ले कर यह परगना संगठित है । यहाके ८ ग्रामों में कच्छवह क्षत्रिय, २में निकुम्भ, ३में सुकुल ब्राह्मण, १में कायस्थ और शेष १ ग्राममें कश्मीरी ब्राह्मणोंका वास है ।

२ उक्त परगनेका एक नगर । वाणिज्य व्यापारमें यह नगर विशेष उन्नतिशील है ।

बालमति (स० ह्री०) बालरुद्र, लडकोंकी सी अह ।

बालमत्स्य (सं० पु०) मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी छिलका रहित छोटी मछली । इसका मांस पथ्य और बलकारक माना जाता है ।

बालमुकुन्द (सं० पु०) १ बाल्यायस्थाके श्रीरुष्णजी । २ श्रीवृष्णकी शिशुकालकी वह मूर्त्ति जिसमें वे घुटनोंके बल चलते हुए दिखाए जाते हैं ।

बालमुकुन्द आचार्य—सोताचरणचामरके प्रणेता ।

बालमूल (सं० ह्री०) कच्ची मूली ।

बालमूलक (सं० ह्री०) अचिरजात कोमलमूलक, छोटी

और कच्ची मूली । यह वैद्यकके अनुसार कटु, उष्ण, तिक्त, तीक्ष्ण तथा द्रास, अर्श, क्षय और नेत्ररोग आदिका नाशक, पाचक तथा बलवर्द्धक मानी जाती है ।

बालमूलिका (सं० ह्री०) आम्रातरु वृक्ष, आमड़ेका पेड़ । बालमृग (सं० पु०) हरिणादि मृगजर्म ।

बालममृ—१ गोत्रनिर्णयके प्रणेता । २ सूर्यशनकटीकाके रचयिता । ३ आह्निकसारमञ्जरीके प्रणेता, विश्वनाथ भट्ट दातारके पुत्र ।

बाल्यशेषवीतक (सं० ह्री०) बाल यशोपवीत तत स्वार्थे क्वन् । उपवीतविशेष । पर्याय—उरङ्कट, पन्च घट ।

बाल्यस (सं० पु०) रत्नीपथविशेष । इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पार ८ तोला, गन्धक ८ तोला, स्वर्णमाक्षिक ४ तोला, इन्हे लोहेके बरतनमें घोट कर केशराज, भृङ्गराज, निसीय प्रत्येकके रसमें सात बार भावन दे । पीछे सरसोंके समान गोली बनाये । इसका सेवन करनेसे बालकके त्रिदोष, जीर्णज्वर, वास और शूल आदि रोग जाते रहते हैं ।

अन्यविध—पारद ८ तोला, गन्धक ८ तोला, स्वर्णमाक्षिक ४ तोला इन्हे लोहेके बरतनमें घोट कर केशराज, भृङ्गराज, निसीय, पान, काकमोचिका, सूर्यावर्त, पुनर्णय, मेरुपर्णी और श्वेत अपराजिता प्रत्येकके रसमें सात बार भावन दे । पीछे उसमें ४ तोला मिर्चचूर्ण डाल कर सरसोंके समान गोली बनाये । अनुपान पानका रस रखा गया है । इसका सेवन करनेसे त्रिदोषसम्भूत सुदारुण ज्वर, काश आदि समस्त रोग प्रशमित होते हैं ।

(सोमेश्वरस्य० बाकरोगाधि०)

बालराज (सं० ह्री०) बाल स्वल्पोऽपि राजते इति राज पचाद्यच् । १ वैदर्भमणि । (पु०) २ बालकश्रेष्ठ ।

बालरूप—एक निदग्धकार । वाचस्पतिमिश्रने इनका उल्लेख किया है ।

बालरोग (सं० पु०) बालस्य रोग । बालककी व्याधि, बालककी पीडा । इसके विषयमें भावप्रकाशमें बौ लिला है—

बालरोगके निदान और लक्षण—गुरु भोजना, विषमाशन और आहार विहारसे धातुके शरीरमें धातादि दोष

बालसरस्वती—बालभरस्वतीय काव्यरचयिता । इनका दूसरा नाम मठान भी था ।

बालसांगडा ( हि० पु० ) कुशीका एक पेच ।।

बालमात्म्य ( स० ह्री० ) दुग्ध, दूध ।

बालसूरि—रामाद्रिमर्षप्रायश्चित्तके प्रणेता ।

बालसूर्य ( स० ह्री० ) बाल सूर्य इव । १ वैदूर्यमणि । २ मात कालीन सूर्य, उदयकालके सूर्य ।

बालसूर्यक ( स० त्री० ) बालसूर्य एव स्वार्थे कन् । वैदूर्यमणि ।

बालस्थान ( स० ह्री० ) १ बाल्यावस्था, लडकपन । २ गिशुत्व ।

बालहस्त ( स० पु० ) बाला हस्त इव मक्षिकादीनां निपातकत्वात् । १ बालधि, पूछ । ( त्रि० ) बालानां फेशानां हस्त समूह । २ फेशसमूह ।

बाला ( स० खी० ) बाला केशा इव पदार्था विद्यन्ते यस्याः, बाल 'अशीमादित्यावच' उत्तष्टात् । नारिकेल, नारियल । २ हरिद्रा, हल्दी । ३ मल्लिकामेद, बेलके पौधा । ४ अलङ्कारमेद, एक प्रकारका कडा । ५ मध्य, खैर । ६ तूँदि, नुरुसान । ७ घृतबुमारी, घो-कुआर । ८ हवीर । ९ अम्बुष्टा, ग्राहणीलता । १० नीलभिल्लोटी, नीले फट-सरेया । ११ एक वर्षघयस्का गवो, एक वर्षकी अयस्थाका गाय । १२ पौडशवर्षीया स्त्री, बारह-सैरह वर्षसे सोलह-सतरह वर्ष तककी अवस्थाकी स्त्री । यह स्त्री प्रोष्म और शरत्कालमें प्रशमनीया और हर्षदायिनी है । भावप्रकाशमें लिखा है, कि बालास्त्रीका नियन करनेसे थलघृष्टि होती है ।

"नित्य बाला सेव्यमाना नित्य वर्द्धयते बलाः" ( भावप्रकाश )

कन्यामात्रमें ही इस शब्दका प्रयोग देखा जाता है ।

यान् वर्षकी कन्याको भी बाला कहते हैं ।

"पञ्चवर्षा म्मृताबाला" ( शरित १५ )-

दो वर्षसे कम उमरवालीको भी बाला कहते हैं ।

इनकी मृत्यु पर उदकक्रिया और अग्निस्तस्कार नहीं होता । इनकी मृतदेह जमीनमें गाड़ी-जाती है ।

"अनातदन्ता ये बाला ये च गर्माग्निःसुताः ।

न वैशाम्निसरदारो न पिण्ड नोदकक्रिया ॥"

( गण्डवु० १०० अ० )

१३ पत्नी, भार्या । १४ स्त्री, बीरत । १५ सुभा, कन्या । १६ सुगन्धवाला । १७ सूक्ष्म एला, छोटी इलायची । १८ चीनी ककड़ी । १९ दश महाविद्याओंमें एक महाविद्याका नाम । २० गेहूँकी फलकी-जड़ करनेवाली एक प्रकारकी कीड़ी । २१ एक वर्षघृष्ट । इसके प्रत्येक चरणमें तीन रंगन और एक मुकु होता है ।

बाला ( फा० पु० ) ऊँचा, जो ऊपरकी ओर हो ।

बालाई ( हि० स्त्री० ) अनार देवो ।।

बालाई ( फा० वि० ) १ ऊपरकी, ऊपरका । २ निश्चय और के सिवा ।

बालाकि ( स० पु० ) बलाकाया अपत्य बाहादित्यात्-इत् । ( पा ४।१।६६ ) गार्ग्यश्रुतिमेद ।

बालाकुप्पी ( फा० स्त्री० ) प्राचीनकालका एक प्रकारका दण्ड जो अपराधियोंको शारीरिक कष्ट पहुँचानेके लिये दिया जाता था ।-इसमें अपराधीकी एक छोटी धोली पर, जो ऊँचे खमेसे लटकती होती थी, यैठा बैठे थे । फिर उस पीठीकी रस्तीके सहारे ऊपर खींच कर एक दमसे नीचे गिरा-देते थे । इसमें आदमीके प्राण तो नहीं जाते थे, पर उसे बहुत अधिक शारीरिक कष्ट होता था ।

बालाशी ( स० स्त्री० ) बाला केशा इव अक्षिसदृशं पुण्यं यस्याः । केशवृषावृक्ष । पर्याय—भानसी, दुर्गापुष्प, केशधारिणी ।

बालागाना ( फा० पु० ) मकानके ऊपरका कमरा, बँडे के ऊपरकी बैठक ।

बालाघाट—दार्शिन्यायके कर्णाटक प्रदेशके प्राचीन विनय नगर राज्यके अन्तर्गत एक जिला । जो जिला घाट पर्यंतमालाके ऊपर अवस्थित था उसे बालाघाट और जो नीचे था उसे पयनघाट कहते थे । यह अक्षा ८ १०' से ८ १६' उ० तथा देशां ७७ २०' से ८ १० ५०' के मध्य विस्तृत था । स्थानीय अधिवासी बेलारी, कृष्ण ल भीम कडपा जिलेके आन भी बालाघाट कहते हैं ।

बालाघाट—मध्यप्रदेशके नागपुर विभागके अन्तर्गत एक जिला । यह अक्षा २१ १६' से २२ ०४' उ० तथा देशां ७६ ३६' से ८१ ३ ५०' के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ३१३२ वर्गमील है । इसके उत्तरमें मण्डला जिला,

पूर्वमें चिलासपुर और द्रगं जिला, दक्षिणमें अण्डार और पश्चिममें सियनी है। सुहरनपुर इसका विचार सदर है।

यह जिला सागरणत तीन भागोंमें विभक्त है। दक्षिण अर्थात् पहला भाग समतल और सबसे निम्न है।

दूसरा मानतालुक नामक उपत्यका भूमि है और तीसरे भागमें रायगढवोलिया नामक अधित्यकाप्रदेश पड़ता है। पहले विभागमें वेणगङ्गा, बाघ, देव, घिसरो और शोण नदी बहती है। १ला और २रा भाग वनमालासे समाच्छन्न है। ३रे भागकी सर्वोच्च पर्वतभूमि समुद्रपृष्ठसे ३ हजार फुट ऊंचा है। इस पर्वतप्रदेशके स्थान विशेषमें घना जंगल नजर आता है। देवनदीके किनारे कटङ्ग नामक एक प्रकारका बास उत्पन्न होता है जिसकी ऊंचाई १०० फुटके करीब होगी। पेसा सुन्दर बासका जंगल और फर्शोंभी देवगोमें नहीं आता। इस वन्य विभागमें शीश और घैगा जाति अधिक सप्यामें रहते हैं। किसी किसी ऋतुमें सोना पाया जाता है। अलावा इसके लोहा, सुरमा, गेरुमट्टी और अबरक भी बहुतायतसे पाया जाता है।

महाराष्ट्र आक्रमणके पहले इस स्थानके दक्षिण भाग का कोई इतिहास नही मिलता, किन्तु उसके उसी वर्ग पहलेसे ही नागपुरके भोंसले सरदार इस प्रदेशका शासन करते आ रहे थे। मराठीकी अमलदारीके पहले उत्तरी वन्यभूमि पर गडामण्डलके राजवश प्रतिष्ठित थे। अन्तर निर्मित बौद्धमन्दिरने यहाँकी पूवसमृद्धिकी कल्पना की जाती है। लक्ष्मण नामक किसी शक्तिके उद्योग और अथर्वसायसे २८१० ई०में नाना स्थानोंने लोग आ कर यहाँ बस गये। परजवाडा और तन्निक्टवर्सी ३० ग्राम अनी श्यामल शस्यक्षेत्रसे पूर्ण हो इस उपनिवेशकी श्रीवृद्धिका परिचय देते हैं।

इस जिलेमें वालाघाट नामक १ शहर और १०७५ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या ३ लाखसे ऊपर है। विद्याशिक्षामें इस जिलेका स्थान बरहवा पड़ता है। अभी यहाँ १ मिडिल इंग्लिश स्कूल, ३ बर्नाबयुलर मिडिल स्कूल और ६२ मासरो स्कूल हैं। स्कूलके अलावा ६ अस्पताल भी हैं।

२ उक्त तिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २१ १६ से २२ ५ उ० तथा देशा० ७६, ३६ से ८० ४५ पू०के

मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १६८७ वर्गमील और जनसंख्या प्राय २४६६१० है। इसमें वालाघाट नामका १ शहर और ५८२ ग्राम लगते हैं। इस तहसीलमें येनगङ्गाके दोनों किनारे घान रूब उपजता है।

३ वालाघाट तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २१ ४६ उ० तथा देशा० ८० १२ पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्राय ६२२३ है। शहरमें १ मिडिल इंग्लिश स्कूल, १ बालिका स्कूल और १ अस्पताल है।

वालाघाट—घेरार राज्यके अन्तर्गत एक पहाड़ी भूमि। 'यह एजेण्डा पर्वतके ऊपर अवस्थित है।' दक्षिणात्य अधित्यका भूमिकी यही सर्वोत्तर सीमा है।

वालाजी भावजी—महाराष्ट्रकेजरी छत्रपति शिवाजीकी शासनसमामें नियुक्त एक प्रभु-कायस्थ 'चिटनीस' अर्थात् मन्त्री। आप हरि रामाजीके पौत और भावजी हरिके पुत्र थे। आपके पिता पुश्तनीसे हवसोराज-सर फारमें दीवानका कार्य करते थे। भावजी हरि जब जैजुरी में खण्डोवाकी पुना करने गये थे, उसी समय हवसी-राजकी मृत्यु हो गई। इससे उनके श्राति शत्रुओंने अफवाह फैला दी, कि भावजी हरिको पूजाके कारण ही राजाकी मृत्यु हुई है। इस पर राज्यकी तरफसे भावजी हरिके घटा सहित समुद्रमें हुनो देनेका आदेश हुआ। उनके तीनों पुत्र वालाजी भावजी, श्यामजी भावजी और चिमभाजी भावजी माताके साथ राजापुर घन्दर पहुंचाये गये। वहाँ पर वालाजी भावजीके मामा बिसजी शंकरने २५ होन मुद्रा दे कर चारोंको घरोद लिया। वालाजीकी भ्राताने बडे परिधमसे ५ होन मुद्रा परिशोध की। बादमें शिवाजीने बालक वालाजीके सुन्दर हस्ताक्षरों पर प्रसन्न हो कर अशुष्टि २० होन मुद्रा दे कर इन्हे मोल ले लिया और १६४८ ई०में उन्हें अपने यहाँ चिटनीसी पद पर नियुक्त किया।

चिटनीस (Secretary) का पद प्राप्त होनेके बादने ही वालाजीकी भाग्यलक्ष्मीने पत्रा पाया। शिवाजीके कार्योंमें रहने अपना तन मन न्योतावर कर दिया। उनके सभी गुण कार्य बालाजीके द्वारा होते थे। अफजल खानके हत्या, सम्भाजी और जीजाबाईकी मुक्ति, दिल्लीमें

शिवाजी और सम्भाजीके बन्धित्वमोचन तथा अग रेजोंके साथ राज-कारणके उपलक्ष्यमें आप ही अपने मालिकके दाहिने हाथ बने थे। दिल्लीमें रहते हुए आप हीने मिठाईकी खलियामें रत कर शत्रुके हाथसे शिवाजी और सम्भाजीको रक्षा की थी।

उनकी सेवा, भक्ति और निष्ठा पर शिवाजी मुग्ध थे और इसी लिये उनका बालाजी पर विशेष स्नेह था। इनकी विना सलाह लिये वे कोई भी काम न करते थे। इस तरह चटनोम भावजी धीरे धीरे सर्वव्यपक हो गये। उधर मुख्य प्रधान मोरोपन्त पिंगले ईर्ष्यावश इन्हे अप वृष करनेके अभिप्रायसे इनके छिद्र ढूँढने लगे। चिटनोस पुत्र भावजी बालाके उपनयन संस्कारके समय द्राघण प्रवर मोरोपन्तने गडबड मचाई, कि कलिमें कोई क्षत्रिय नहीं है, इसलिये क्षत्रियोचित संस्कारमें कायस्थोंका अधिकार नहीं हो सकता। कुछ भी हो, बहुत बाद विवाहके बाद बालाजीने पुत्रकी उपनयन क्रिया रथगित कर दी। शिवाजीको मालूम होते ही उन्होंने काशीके पद्धितोंका अभिमत समग्र करनेका आदेश दिया। उसके अनुसार बालाजीने काशीकी विद्वन्मण्डलीके सम्मतिपत्र समग्र किये।

राज्याभिषेकके समय शिवाजीका भी उपनयनादि संस्कार नहीं हुए थे। बालाजी भावजीने विशेष उद्योग के साथ परिश्रमपूर्वक गामामहको शास्त्रीय सुक्तिके अनुसार प्रौढ़ अग्रस्थामें शिवाजीका यज्ञोपवीत कराया और राज्याभिषेक किया। शिवाजीने प्रसन्न हो पर इन्हे पुज्यतैनी 'चिटनीस' (Chief Secretary) पद प्रदान किया। शिवाजीके अभिषेकके बाद 'चिटनीस' प्रवर बालाजीने अपने ज्येष्ठ पुत्र बाबाजी बालाकी उपनयन क्रिया सम्पन्न की। इस उत्सवमें गामामह आदि बहुत से प्रसिद्ध परिश्रम उपस्थित हुए थे और यथारीति कायस्थ प्रभुके संस्कारादि कराये थे।

इसके बाद सम्भाजीके राज्याधिकारको ले कर महा राष्ट्र राज्यमें फिर गडबडो मची। उसमें, बालाजी भावजी अन्याय्य मन्त्रियोंके साथ इस मामलेमें शामिल न होने पर भी सम्भाजीके आदेशसे १६०३ गवाष्ट्र (१६८१ ई०) में वे हाथोंके पैरों तले दबा कर मरवा दिये गये।

बालाजी लक्ष्मण—राजदेशके एक महाराष्ट्री शासनकर्त्ता। १८०४ ई०में इन्होंने कोपरगावके सात हजार भीलोंको किसी बहानेमें डाल कर पकड़वाया था और उनमेंसे अधिकांशको दो कूर्मोंमें डलवाया था।

बालाजी बाजीराव—महाराष्ट्र राज्यके तीसरे पेशवा। आप १८ पेशवा बाजीरावके पुत्र थे। बालाराव परिश्रम प्रधानके नामसे वे जनसाधारणमें मशहूर थे। १७४० ई० में आप पिताके सिंहासन पर आरूढ़ हुए और १७६१ ई०में पानीपतकी लड़ाईमें मौजूद थे। इस युद्धमें इनके ज्येष्ठ पुत्र विश्वासराव मारे गये। आपके अन्य दो पुत्र मधुराव और नारायणरावकी क्रमशः पेशवा पद प्राप्त हुआ।

पत्न्या देवा।

बालाजी विश्वनाथ—महाराष्ट्रराज्यमें पेशवा नामक बाह्य पक्षके प्रतिष्ठाता। पहले पहल आप कोङ्कणप्रदेशके एक ग्रामके पटवारी थे। वहासे फिर यादववर्गीय एक सरदार के अधीन काम करने लगे। यहीं पर इकी गुप्त प्रतिभा विकसित हुई। महाराष्ट्र पति शम्भाजीके पुत्र शाहुके राज्यखालमें आप पेशवा पद पर नियुक्त हुये। इस समय वे राज्यके सर्वोच्च थे। १७२० ई०में इनकी मृत्यु होने पर प्रथम पुत्र बाजीराव पेशवाने राज्यका शासन किया था। पेशवा देले।

बालाएडा -- २४ परगनेके अन्तर्गत एक परगना। यह फल वृक्षके पूर्ण और सुन्दरवनके उत्तरमें अवस्थित है। हादभा, गोसाईपुर, हादीपुर, नायाबाद, मानियाएटी, वैदारी, खाटरा जनार्दनपुर, चांदपुर, हरिपुर, गोपालपुर आदि ग्राम यहाके प्रधान वाणिज्यस्थान हैं। हादभा ग्राम में पीर गोरानाबादका प्रसिद्ध समाधिमन्दिर विद्यमान है। बालावस्ती (फा० टी०) १ अनुचित रूपसे हस्तगत करना, नामुनामिद तीरसे वसूल करना। २ बल प्रयोग, जबर दस्ती।

बालादित्य (म० पु०) १ नयोदित सूर्य। २ फांसीरके एक राजा। ग्वाथ और फांसीर देले।

बालापान (दि० पु०) लडकपन, वचपन।

बालापुर—१ बरारके अकोला जिलेका तालुक। यह अक्षा० २० १७' से २० ५५' उ० तथा देशा० ७६ ४१' ७७' पू० के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १०१६७ है।

इसमें बालापुर, पातुर और बाइगाय नामके ३ शहर और १६२ ग्राम लगे हैं। यहासे थोड़ी दूर पर अकबरके चौथे लडके सुलतान मुरादका बनाया हुआ राजप्रासाद भग्नावस्थामें पडा है।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० २० ४० उ० तथा देशा० ७६ ५०' पू० ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवेके पारस स्टेशनसे ६ मील दूरमें अवस्थित है। मून नदी इसके बीच हो कर बह गई है। मुगलोंकी अमलदारीमें इलिचपुरके बाद इसी शहरमें सेगानियास स्थापित हुआ था। बाला नामक देवीमन्दिरके सामने पहले यहा एक भारी मेला लगता था। यहा बालादेवीका मन्दिर रहनेके कारण ही इसका बालापुर नाम पडा है। आईन इ अकबरी ग्रन्थमें इस परगनेकी समृद्धिकी कथा उल्लिखित है।—सम्राट् औरङ्गजेबके पुत्र आजमशाह यहा पर रहते थे। १७२१ ई०में निजाम उलमुल्कने इस नगरके समीप मुगलसेनाको परास्त किया था। मेसघाट पहाडी दुर्गको छोड कर बालापुरका दुर्ग ही बैरारमें सबसे बडा है। शिलालिपिसे जाना जाता है, कि इलिचपुरके नवाब इस्माइल खासे १७५७ ई०में यह दुर्ग बनाया गया था। १०३२ हिजरीमें निर्मित यहाकी जुमा मसजिद भग्नावस्थामें पडी है। नगरके दक्षिण नदी किनारे 'छतरी' नामक छतावृत्ति अट्टालिका नगरको शोभाको बढा रही है। प्रवाद है, कि सम्राट् आलमगीरके अनुचर राजा सवाई जयसिंहने यह छतरी बनवाई थी।

बालावर (फा० पु०) एक प्रकारका अणु। इसमें चार कलिया और छ बन्द होते हैं। अंगरत्ना देणे।

बालामय (सं० पु०) बालस्य आमयः। बालरोग। वाक्त्ररोग देखो।

बालायानि (सं० पु०) बालाया अपत्य तिकादित्वात् फिड् (पा ४११/१५५) बालाका अपत्य।

बालाराय—विख्यात माना साहबके भाई, अयोध्याप्रदेशके सिपाही विद्रोहके एक नेता। तुलसीपुर पर्यंतके नीचे इनके साथ अ गरेजोंकी मुठभेड हुई थी। युद्धमें हार या कर ये धपने भाई नामाकी तरह जगलमें भाग गये। इनके भाग जानेसे ही अयोध्या प्रदेशमें विद्रोह शान्त हुआ और प्रायः डेड छाप सशस्त्र विद्रोहीसेनाने अगरेजोंकी पक्यता स्वीकार की।

बालारुण (सं० पु०) बालाक, बालसूर्य।

बालारोग (हि० पु०) नहयवा रोग।

बालार्क (सं० पु०) बालः नवोदितोऽकः। १ प्रात कालीन सूर्यं। यह सूर्यताप शरीरमें लगनेसे शरीरका अनिष्ट होता है।

"शुक्लमास द्विगो वृद्धा बालार्क स्तरुण वधि।

प्रभाते मैथुन निद्रा सद्य प्राणहराणि पट् ॥"

(चाणक्य)

बालाश्रम (सं० स्त्री०) बालुका, बालू।

बालासिनोर—गुजरात प्रदेशके रेवाकान्धके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य। यह अक्षा० २२ ५३' से २३ १७' उ० तथा देशा० ७३ १७' से ७३ ४०' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १८६ वर्गमील है। इसके उत्तरमें मही कान्ध राज्य, पूर्वमें दूनावाद्-राज्य, पश्चिम और दक्षिणमें कीरा जिला है। यहा माही नामकी नदी बहती है। कृषिकार्यमें कूपका जल काम आता है। यहाके सरदार मुसलमान हैं। 'बाबी' या छाररक्षक (१) इनकी उपाधि है। अ गरेजराज निर्दिष्ट राजनैतिक कर्म चारीकी सलाह ले कर ये हत्यापराधीको दण्ड देते हैं। राजस्व नवा लाख रुपया है जिनमेंसे १५५३२ रु० वृत्ति सरकारको और ३०७८ रु० बडोदाके गायकवाडको कर्म देने पडते हैं। सैन्यसंख्या ११७ है जिनमेंसे १६ सुप्रसवार हैं। नवाबको सरफारखी ओरसे ६ सलामी तोपे मिलती हैं। सलायत् खासे निम्न पाचवी पीढीमें शेरखा बाबोने १६६४ ई०में दिल्ली दरवारसे बालासिनोर और बीजापुरका शासनमार ग्रहण किया। पांछे जूनागढ राज्य भी उनके हाथ लगा। मृत्युके बाद बडे लडके बालासिनोरमें और छोटे जूनागढमें अधिष्ठित हुए। गुजरातमें महाराष्ट्र प्रभाव जम जानेसे (१७६८ ई०में) यहाके सरदारने पेशवा और गायकवाडराजकी अधीनता स्वीकार की। १८१८ ई०में पेशवा अधिष्ठत यह स्थान अ गरेजराजके पालिटिकल एजेण्टके शासन भुक्त हुआ।

(१) दुग्ध राजदरवारमें इउ पक्षके भादिपुरग द्वाररक्षीका काम करते थे।



इस राज्यमें ६८ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या साढ़े तीन हजारके करीब है। यहाकी जमीन बड़ी उपजाऊ है। ज्वार, धान, तोहन और गेहूँ काफ़ी उपजती है। यहा १० स्कूल और ० अस्पताल हैं।

० उक्त राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० २२°५६' उ० तथा देशा० ७३° ०५' पू०के मध्य शीरी नदीके किनारे अवस्थित है। जनसंख्या प्राय ८५३० है। पत्थरकी दीवार शहरके चारों ओर दौड़ गई है, उसमें चार फाटक लगे हुए हैं। शहरके उत्तर एक उच्च स्थान पर नयावका प्रासाद अस्थित है। शहरसे तीन मील दूर एक पहाड़ी पर दुर्गरिया महादेवके उद्देश्यसे अगस्त मासमें वार्षिक मेला लगता है।

बालाहिसार—फाबुलके सोमान्त देशवर्ती एक नगर। इसे 'फाबुल'का द्वार भी कह सकते हैं। १८४४ ई०में यहाँ अंगरेजोंने सैनिकी आधार प्रदण किया था। यहा शाहजुजा की राजप्रासाद और तोरणस्तम्भ है। जब पहले पहल अंगरेजोंने यहा सैनिकीवास गोलना चाहा तब सुजाने आपत्ति की, पर आखिर वे सम्मति देनेको बाध्य हुए।

बालासन—दार्जिलिङ्ग जिलेमें प्रवाहित एक नदी। यह जगत्पेपडा नामक भूभागसे निकल कर तराईकी ओर आ दो भागोंमें विभक्त हो गई है। नूतन बालासन नामक साया त्रिलिगुडीके दक्षिण महानदीमें मिली है और दूसरी पूर्णिया जिला होती हुई वह गई है। इस नदीतीरवर्ती पहाड़ी जगत्पेपडा प्रदेशमें नाना द्रव्यों की खेती होती है।

बालासुर ( स० पु० ) असुरमेद ।

बालाहिरा—राजपूतानेके जयपुर राज्यके अन्तर्गत। एक नगर। यह अक्षा० २६° ५९' उ० तथा देशा० ७६° ४९' पू० आगरेसे अजमेर जानेके गिरिपथ पर अवस्थित है। यहाका पहाड़ीदुर्ग १८वीं शताब्दीके शेष भागमें जिन्दे सैन्यापति टि बायनोने विध्वस्त हुआ था।

बालि (सं० पु०) बानरोंके अधिपति। पर्याय—पेन्द्र, बाली। रामायणमें लिखा है,—मेघ नामका एक श्रेष्ठ पर्वत है। इस पर्वतके किन्हीं एक शिखर पर ब्रह्म-समा प्रतिष्ठित है। एक दिन फल-योगि ब्रह्मा यहा योगाभ्यास कर रहे थे कि इतनेमें सदसा उाके नेत्रोंसे आँवुकी बूँद

टपक पड़ी। बूँदके गिरनेके साथही उससे एक बानर पैदा हुआ, जिसका नाम ऋक्षराज था। ब्रह्माने उन्हे देख कर कहा, "दे गानर। तू इस अमरोंकी विहार भूमि सुमेय पर्वत पर आ कर नाना प्रकारके फल मूल खाता हुआ हमेशा मेरे पास रह।"

एक दिन यह बानर पिपासासे अत्यन्त आतुर हो कर उत्तर मेघ शिखरकी तरफ चल दिया। यहा एक सरोवरके गानीमें अपनी सुँहकी छाया देख कर सोचने लगा, यह तो मेरे जैसा दीपता है, यह मेरा परम शत्रु है, इसलिये इसे शीघ्र ही मार डालना चाहिये। यह विचार कर वह पानीमें कूद पडा। पश्चात् वह बानर सरोवर से निकला और एक मनोरंजनी स्त्रीका रूप धारण किया। इतनेमें इन्द्र और सूर्य दोनों ही बहा आ पहुँचे और उस कामिनीको देख कर कामदेवके चणीभूत हो गये। क्रमशः उनका धैर्य च्युत हुआ। आखिर उम रमणीको न पा कर इन्द्र उसके मस्तक पर स्तलित वीर्य निक्षेप कर निवृत्त हुए। उधर दिवाकर भी मन्मथके वाणीसे घायल थे, उन्होंने भी उसकी प्रीत्यामें निपिक वीज निक्षेप किया। इस प्रकार इन्द्र और सूर्य दोनोंने मदन प्ययासे घुटकाट पाया। बादमें उस कामिनीने इन्द्रके वीजको अमोघ जान कर उससे सर्वश्रेष्ठ बानरका जन्म दिया जिसका नाम हुआ बालि और प्रीत्यामें पतित वीर्यसे सुभीय उत्पन्न हुए। इस तरह इन्द्रसे बालि और सूर्यसे सुभीय की उत्पत्ति है।

उस दिनेके बात जाननेपर ऋक्षराजने फिर बानर रूप प्राप्त किया और अपने दोनों पुत्रोंकी ले कर ब्रह्माके पास पहुँचे। ब्रह्माने उन्हे किष्किन्धामें जा कर राज्य करने की आज्ञा दी। विष्वामितने यहा मनोरम पुरी निर्माण की थी। बालि उसी नगरमें जा कर बानरोंका राजा बन कर राज्य करने लगे। ये दोनों भाई अत्यन्त बलशाली थे, तीनों लोकमें इनकी शानका कोई न था। बालिकी प्रधान महिषोका नाम तारा था और सुभीयकी स्त्रीका नाम रुमा।

एक दिन किसी मायायाँ दैत्यके उपद्रवके कारण, बालि अपने भाईको पातालके द्वार पर बिठा कर स्वयं दैत्योंके विनाशके लिए पाताल चला गया। इधर अशुभ

विलम्ब हो जानेसे सुग्रीवने निश्चय कर लिया, कि बालि की मृत्यु हो गई। वह द्वार पर एक बड़ा भारी 'पत्थर रख कर किष्किन्धा लीटा और वहा जा कर बालिका मृत्यु सजाद प्रचारित किया। बालिकी मृत्यु हुई जान कर मन्त्रियोंने सुग्रीवको राजा बना दिया। पञ्चात् सुग्रीव उनसे मिल कर सुपसे राज्य करने लगे। इस तरह कुछ दिन बाद बालि उन दैत्योंको मार कर उस गुफाके द्वार पर आया, तो देवा जि वहा पत्थर रखा हुआ है। बालिने उस पत्थरको पैरोंकी ठोकरसे तोड़ डाला और अपने भयनमें पहुँचा। सुग्रीवको राज्य और पत्नीका भोग करते देव बालि मारे क्रोधके अधीर हो उठे और सुग्रीवको मारनेके लिए उद्यत हुए। सुग्रीवने भाग कर मतङ्गाका आश्रय लिया। बालि अपनी पत्नी तारा और भ्रातृ-भ्रषु यमाको ले कर सुपसे रहने लगे।

किन्नी समय रावण बालिको पराजित करनेके अभि-प्रायसे किष्किन्धा पहुँचा उस समय बालि दक्षिणसागर में सन्ध्या कर रहा था। रावणके वहा पहुँचने पर, बालिन अपनी बगलमें देवा और भी तीन सागरोंमें भ्रमण करके सन्ध्या समाप्त की। इस पर रावणके विशेषरूप से पराजय स्वीकार करने पर बालिने उसे छोड़ दिया। उधर सुग्रीव बालि द्वारा निकाले जानेके कारण मतङ्गा भ्रममें ही दिन बिता रहा था। रावणके द्वारा सीता हरी जाने पर जय राम और लक्ष्मण सीताको षोडशमें निकले, तो मतङ्गाश्रमवासी सुग्रीवसे उनकी मित्रता हो गई। सुग्रीवकी सहायता करनेको उन्होंने बचा दिया और तदनुसार रामने बालिका बध किया। बालिके मारे जाने पर सुग्रीव फिर किष्किन्धाका राजा हुआ और बालिका पुत्र अङ्गदको युवराज पद मिला। लङ्काधिपति रावणके साथ युद्ध करते समय इन्नी बालि पुत्र अङ्गद तथा सुग्रीवने सीतापति हो कर कई व्याघ्र वानर बाहिनी द्वारा श्रीरामचन्द्रकी सहायता की थी।

(रामा० कि० उ० पापट)

वानरयज्ञी राजा बालिके विषयमें जैन पद्मपुराणमें इस प्रकार लिखा है—

विद्याधर क्षेत्रमें एक किष्किधा नामकी नगरी है। उस नगरीमें सर्वे लक्षणयुक्त सूर्यके समान प्रतापी सूर्य

रज नामके राजा राज्य करते थे। उनके चन्द्रमालिनी नामकी रानी महामनोश अपनी सु द्रुतासे चन्द्रमाको भी लज्जित करनेवाली थी। उन दोनोंका काल सुषसे व्यतांत होता था। एक दिन रानी चन्द्रमालिनीने रात्रि के समय शुभ स्नान देये। उन स्नानोंके फलके अनुसार रानीने गर्भ धारण किया। नवें मास रानीने शुभनक्षत्रमें सर्वलक्षणयुक्त पुत्र प्रसव किया। यह बालक क्रमसे बड़ा हुआ। अवस्थाके अनुसार यथा त्रिधि उसके यशोपवीतादि सस्कार भी हुये। उसने बाल अस्थिका उलट्टन कर यौवन अस्थियामे पदार्पण किया। उसके परिक्रमकी गुणगाथा समस्त सत्सारमें व्याप्त हो गई। उसके समान बलशाली तथा धैर्यवान उस समय कोई भी न था, अतएव सब लोग 'बालि' कह कर उसका सम्मान करने लगे।

एक दिन राजा सूर्यरथको सत्सारसे वैराग्य हो गया। ये द्वादश भावनाओंका चित्रण करने लगे। यद्यपि वे सत्सारसे पहिले हीसे उवासीन थे; पर अब उनका मन सत्सारमें जरा भी न लगा। उन्होंने अपने प्रिय पुत्र बालिको राजा सौंपा और आप तपोवामें जा विगम्यरी दीक्षासे भूषित हुये।

महापराक्रमी बालि किष्किन्धा नगरीके सिंहासन पर बैठ न्यायके अनुसार प्रजाका पालन करने लगे। वे धर्मात्माओंके शिरोमणि थे। प्रतिदिन दारुदीपमें विद्यमान जिनचैत्यालयोंका दर्शन कर आते थे। इनके छोटे भाईका नाम सुग्रीव था।

राक्षसच शीघ्र दधाननका प्रथम प्रतापीरूपी सूर्य उस समय मध्याह्नमें ततायमान हो रहा था। यह लङ्काका राज करता था तथा अपने पराक्रमसे तीन हज़ारों को जीता था। भूमि गोचरी और विद्याधर समस्त राजा उसके चरणोंकी सेवा किया करते थे। जब बालि राज्यसिंहासन पर बैठे, तब उन्होंने रावणकी आज्ञा मानना अव्योकार किया। रावणने उसको अपनी आज्ञा से त्रिमुख हो जान शीघ्र ही उसके पास एक दूत भेजा। दूत बड़े अगिमानसे बालिके दरवारमें जा रावण की प्रशंसा कर कहने लगा, 'हे बालि! तुम्हारे पिताको दधाननने इस किष्किन्धापुरीका राज्य दिया था। जब एक

तुम्हारे पिता रहे, उनका और हमारा आपसमें परम स्नेह रहा। अब तुम जो हमसे विमुक्त हुये हो सो ठीक नहीं है। क्योंकि, रावणके प्रतापके सामने कोई भी ठहर नहीं सकता। इस लिये तुम शीघ्र ही जा अपनी भगिनी सुभ्रमाका रावणके साथ विवाह कर दो और उनके चरणोंमें अपना मस्तक भुकावो।" दूतके गर्ग्युक्त वे घबचन सुन उन्होंने कहा, कि जिस रावणकी प्रशंसाका तुम इतना बड़ा पुल बाध रहे हो उसे मैं अपने बापे हाथकी हथेलीसे चूर सकता हूँ। मैं तुम्हारी सब शक्तें बचल कर सकता हूँ; किन्तु उसके चरणोंमें अपना मस्तक नहीं नमा सकता।

बालि इस प्रकार सोच ही रहे थे कि भावी समरकी आशङ्कासे उनका दिल सभारसे उचट गया। वे विचारने लगे, कि मैं अपने चास्ते कितने प्राणियों को विध्वस्त करनेके लिये तैयार हो रहा हूँ। एक उपाय मेरी समझमें आ रहा है कि मैं विगम्बरो दीक्षा ले लूँ और इस राज्यको सुभ्रमको दे दूँ। इस उपायसे न तो जीयहिंसा ही होगी न मेरा अभिमान ही भग होगा। ऐसा विचार कर उन्होंने अपना शिक्षाका वृत्तान्त समस्त लोगोंमें प्रगट किया और सुभ्रमको राज्य दे आप तपोवनको चल दिये। वहाँ शिला पर बैठे हुए नम्र विगम्बर मुनिके पास जा अनन्त मन्तक हो उनकी स्तुति की और उनसे दीक्षा ले आप द्वादश तपको तपने लगे। यद्यपि वे राज्यकी समस्त विभूतियोंका त्याग कर चुके थे तो भी वे राजा ही प्रतीत होते थे। कारण, इनसे समस्त प्राणियोंकी रक्षा होती थी। वे मुनि नन्दा ध्यानमें तदपर पूर्णरूपसे अहिंसाके प्रतिपालक थे। उन्होंने समस्त संसारकी माया ममताको छोड़ दिया था। चाहे उनकी स्तुति करो या निन्दा, वे सदा मध्यस्थ-भाव रखते थे। शत्रु मित्त पर उनका सदा एक-सा भाव था। सत्सारा में यदि उनके कोई शत्रु था तो केवल अटकमें और मित्त था तो एक धर्म ही।

एक दिन कैलाश पर्यंत पर बालि मुनि कायोत्सर्गसे राठे राठे ध्यानमें तप्तो हो वे अपनी आत्माका चिन्तन कर रहे थे।

जब सुभ्रमने किष्किन्धाका राज्य पाया तो उसने अपनी सुभ्रमा बहिनका रावणके साथ पाणिप्रदण कर दिया।

और धाप उसका आहाकारो सेयक बन यहाका शासन करने लगा। रावणने विद्याधर लोकजी अनेक सुन्दर सुन्दर बालिकाओंके साथ विवाह किया था। नित्यानोरु नगरमें राजा नित्यावलोककी रानी धीर्दियोसे उत्पन्न रत्नायली नामकी पुत्री थी। उसे विवाह कर रावण लड्डा को शाते थे। जब वे कैलाश पर्यंत आये तो उनका पुष्पक विमान इस प्रकार अटक गया जिस प्रकार धामुडल सुभ्रम पर्यंत पर जा अटक जाता है। तब घण्टादिक शब्दसे वह विमान रहित हो गया, मानो वह विमान रुठ पर चुप हो गया हो। रावणने विमानको अटका देण मरोचि म सोसे उसका कारण पूछा। मरोचिने कहा, "देव! यह कैलाश पर्यंत है। यहा पर कोई मुनि कायोत्सर्गसे शिला पर रत्न के स्तंभके समान सूर्यके समुद्रा आतापन योगको धारण कर बैठे होंगे। वे मुनि महा घोर तपको तप रहे होंगे या शीघ्र ही मुक्तिको जानेवाले होंगे। आप नीचे उतर उन पवित्र मुनिके दर्शन कर अपना जगम कृतार्थ कीजिये।" मरौ मरोचिके ये बचन सुन रावण विमानसे उतरा और कैलाश पर्यंतको तरफ गर्ग्युक्त हो देखने लगा। इतने ही में उसने विगम्बरोकी सूडके समान दोनो भुजाओंको बढ़ाया। जिनके शरीरसे सर्प लटक रहे थे, पायाणस्तम के समान जो आतपति शिला पर निश्चल राठे थे ऐसे बालिमुनिको उसने देखा। रावणने जब बालिमुनिको देखा तब पापी पहिले बैरका स्मरण कर भूडुटि चडा उसता हुआ कठोर शब्द बालिमुनिके प्रति कहने लगा,—

"अहो! कैसा तेरा तप है! जो अभिमान अभी तक नहीं छोडता। मेरा विमान चलतेसे क्यों रोका? क्या तू भीत राग धर्मको धारण करता है या शकृत और विरको एक करना चाहता है? पापी! तू कहा और तेरा धीतराग धर्म कहा! ठहर, अभी तेरे गर्गकी चकना चूर किये देता हूँ। मैं तुम्हे सहित इस कैलाश पर्यंतको समुद्रमें डाल दूंगा।" इस प्रकार उस निर्दयीने विकराल रूप बनाया। जितनी विद्याये उसने अभी तक साथी थीं वे चिन्तन करनेसे ही उसके मनोप आयीं। तब रावण विद्याके बलसे पातालमें बैठा। उसका नेत्र प्रचण्ड मोचसे लाठ और हुंकार शब्दसे मुका पाचाल हो गया। अपनी भुजाओंसे कैलाश पर्यंत उठानेका यह उद्योग करने लगा। सिंह,

हस्ति, सर्प, हिरण आदि पशुपक्षी भय कर शब्द करने लगे। जलके भरने टूट कर भय कर आवाज होनेसे पृथक्के समूह उपज गये। इस प्रकार कैलाश पर्वत चलायमान हुआ।

भगवान् बालि ध्यानमें मग्न थे। कैलाश पर्वतके चलायमान होनेसे कुछ देरके लिये उनके ध्यान भंग हुआ। जब भगवान् बालिने रावणका कर्त्तव्य जाना तो वे जरा भी खेद पिनने न हुये और मनमें यों विचारों कि यह कैलाश पर्वत अत्यन्त रमणीक है, चक्रवर्ती भरतने इस पर जित-चैत्यालय धनवाये हैं, वे कहीं भंग न हो जायें इस लिये उन्होंने अपने चरणोंका अंगूठा ढीला कर देवा दिया। इस पर रावण भाराक्रान्त हो दब गयो, उसके नेत्रोंसे रक्त भरने लगा, सुबुट टूट गया और माथा पसीनेसे तर बतर हो गया। उसके पैर, जङ्घाये छिन्न गर्भी और घड़े रोने लगा। तभीसे वह पृथ्वीतलमें रावणों नामसे प्रसिद्ध हुआ। रावणके अत्यन्त दीर्घ शब्द सुन कर राणिया विलाप करने लगीं। पहिले तो सेनापति मल्लिभुम युद्ध करनेके लिये तत्पर हुये, किन्तु जब उन्होंने ऋषिराजका प्रताप जाना तबें चुर्प हो गये। देवता कायबल ऋद्धिक्रान्तिशय जान हु बुभि बाजा बजने लगे। तब परमदेवाल महासुनिने अपना अंगूठा ढीला कर दिया।

रावणने पवतके नीचेसे निकल कर योगेश्वरको चारंबार स्तुति की और हाथ जोड़ उनके चरणोंमें मस्तेक नमां क्षमा मागो। योगेश्वर महाराज स्वयं क्षमांगोल थे। वे क्षमाके आगार थे। जब मिलने उनकी समानवृत्ति थी, अतएव उस कार्यसे न तो उनको क्षोभ ही हुआ, न हर्ष।

कैली ही भगवान् बालिने इस भूतल पर विहार किया। अनेक अज्ञानी जीवोंको सम्बोधन तथा सुदेश और सुनि धर्मका पद्याप्य उपदेश दिया। उनकी शान्ति मूर्ति देख कर सिर्हादिक कर जतुमाने करता छोड़ दी। दुर्बलको सबल नहीं सताने लगे।

कुछ दिनों बाद शेष चार अधातिया कर्मोंकी भी उन्होने नष्ट कर बाला और आप सिद्धशिला पर जा विराजे।

बालि—१ हुगली जिलेके आरामबाग उपविभागका एक ग्राम। यह अक्षां २२ ४६' उ० तथा देशां ८७ ४६' पू० द्वारिकेश्वर नदीके किनारे अवस्थित है। जनसंख्या ७१२ है। रेशमी और सूती कपडे का यहां अच्छा ध्ये साय होता है। २ भागीरथी तीरथतीं एक समृद्धिशाली ग्राम। यह अक्षां २२ ३६' उ० तथा देशां ८८ २३' पू०के मध्य अवस्थित है। यहाँ इष्ट इष्टियां रेलवेका एक स्टेशन है। इस ग्राममें ब्राह्मणोंकी संख्या अधिक है।

बालि—राजपूतानेके योधपुर राज्यके अन्तर्गत बालि जिले का सदर। यह अक्षां २५ १८' उ० तथा देशां ७३ १८' पू०के मध्य अवस्थित है। राजपूताना मालवा रेलवेके फालवा स्टेशनसे ५ मील दूर पडता है। जनसंख्या पाष हजारके करीब है। यहां प्राचीन कालका बना हुआ १ दुर्ग, डोकघर, १ बनावपुर स्कूल और एक अस्पताल है। यहांको गिलाहिलिसे जाना जाता है, कि १०वीं शताब्दीमें राठोर राजा यहांका शासन करते थे। १८वीं शताब्दीके शेष भागमें यह जोधपुर राजके हाथ लगीं।

बालिका (स० स्त्री०) बाला एव बाला स्वार्थे कन् टाप् अर्थास्व। कन्या, छोटी लडकी। २ पुत्री, बेटो। ३ पला, इलायची। ४ बालुका, बालू। ५ कर्णभूषण, कानमें पहननेकी बाली। ६ अम्बट्टा। ७ मूसली।

बालिकुमार (स० पु०) बालि नामक धंदरेका लडका अंगद जो रामचन्द्रजीको सेवामें था।

बालिकविय (स० पु०) पुलस्त्यकन्या सन्ततिसे उत्पन्न क्रतुके साठ हजार पुत्र या ऋषियिशेष। वासकविय देता।

बालिग (अ० पु०) वह जो बाल्यावस्थाको पार कर चुका हो, जो अपनी पूरी अवस्थाको पहुच चुका हो। कानून के अनुस्रार कुछ बालीके लिये १८ वर्ष या इससे अधिक अवस्थाका मनुष्य बालिग माना जाता है।

बालिगपत्र—बलकुत्तेके दक्षिण पूर्वमें अवस्थित एक गण्ड ग्राम। निर्जनतामिय अ गरेजोंका यहां बास होनेके कारण इस स्थानको मर्यादा दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। पतझिन भारतवर्षके बड़े लाटके शरीररक्षी सेना यहां रहती है। कलकत्ता जाने आनेकी सुविधाके लिये यहां पूर्ववर्णीय रेलपथका एक स्टेशन है।

बालिघाटियम—मन्दाज प्रदेशके विशाखपत्तन जिलान्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह अक्षां १७ ३६' उ० तथा देशां ७७

८२ ३८' ३०" पूर्व के मध्य अवस्थित है। प्रलेभ्यरुद्र नामक विख्यात शिवालय प्रतिष्ठित रहनेके कारण दूर दूर देशके लोग देवदर्शन करनेको आते हैं। जिस पर्वत पर यह मन्दिर स्थापित है वहाम वराह नदी निकली है। इस नदीके उत्तर राहिनो होनेके कारण लोग इसका तीर्थ माहात्म्य गाते हैं। इस नदीके किनारे एक गर्तमें भस्म के जैसा पदार्थ देखा जाता है। देवमन्दिरके पुरोहित उस भस्म राजिको बालिचक्रवर्ती नामक किसी व्यक्ति द्वायक होमावशेष बतलाते हैं। यहाकी देवमूर्ति पश्चिममुची है।

**बालिद्वीप**—भारत महासागरके अन्तर्गत एक छोटा सा द्वीप। "बलि" अर्थात् घोर मनुष्य उस द्वीपमें रहते थे इसलिये 'बालिद्वीप' नाम पडा। अब तो बालि नामसे ही प्रसिद्ध है। किसी समय यहा ब्राह्मण और बौद्धधर्मका प्रभाव बढ रहा था, पेसा सनो स्वीकार करते हैं। नोचे इस द्वीपका विस्तृत इतिहास वर्णन किया जाता है।

यह छोटा सा द्वीप यवद्वीपसे पूर्व १॥ मील दूर अक्षा ८ से ६ दक्षिण तथा देशा ११४ २६' से १५०' ४०' पूर्व के मध्य अवस्थित है। दोनोंके बीचमें एक नाली बह गई है जिससे दोनोंमें व्यर्थधान पड जाता है। बालिद्वीपकोपवद्वीपका हिस्सा बहुत लोग मानते हैं। शास्त्राचार्य श्रीगोविन्दने इस स्थानका "बालि या छोटा यव" (Little Java) नामसे उल्लेख किया है। पूर्व और पश्चिममें यह ७० मील लम्बा तथा ३५ मील चौड़ा है। भूपरिमाण १६८५ मीगोलिक वर्गमील है।

इस द्वीपमें ज्यादातर पहाड है। वहाँ चार हजारसे १० हजार फुट तक ऊँचे हैं। इसकी ऊँचाईमें वहाँ वहाँ जिनमें आग जला करती है पेसी चोटिया हैं। गुनडू अन्त नामको चोटो समुद्रकी सतहसे १२३७६ फुट ऊँची है। इस पहाडकी देवर नामकी चोटोमें (६१६८) हमेजा गोरी धानुप निकला करतो है। १८०४ और १८१५ ई०में आग दो दूमरी चोटियोंसे आग निकलती हुई देगी गई थी। यहाकी छोटी छोटी नदियोंमें जितनी दूर तक जग भाडा भापा करता है वन उनको दूर तक हो, देशी नाप इनमें चल सकती है। इनके शिवाय

पहाडके ऊपर बहुतसे तालाब और तलेया देखा जातो है। अन्यन्त गहरे तालाबोंके जलसे पहाकी रोनी लूह हरोभरी रहती है। धान, भुट्टा, कन्दाई, नारंगी और सरद तरहका चावल पैदा होता है।

यहाके वासिन्दोंकी देरकी बनावट यव और मलय द्वीपके शिवालयोंसे मिलतो जुलतो है। लेकिन पहनावा में बहुत गहरा भेद पाया जाता है। चीन और गिनेरिस द्वीपके मूह लोगोंके साथ ये वाणिज्य व्यवसाय करते हैं। सूती कपडे, रुई, नारियल तेल, पक्षियोंके घोंसले और चर्म आदि चीजोंके बढलेमें बालिद्वीपवासों उक्त बस्तियोंसे अफीम, सुपारी, हाथीके दात, सोना, चांदी मोल लेते हैं। पहले इस द्वीपमें दास विक्रयको प्रथा प्रचलित थी। फेदी, वैरी, ऋणो और चोतोंको ये लोग चीनोंके हाथ बेच देते थे।

समस्त बालिद्वीपके एकमात्र अधीश्वर बालि और लम्बकको के सम्राट् कहे जाते हैं। ये होङ्ग कोङ्गसिओ साचोयेनत" नामसे मशहूर हैं। इस द्वीपसाम्राज्यमें आठ छोटे छोटे सामन्तो के राज्य हैं। प्रत्येक भागमें एक एक राजा राज्य करनेको नियुक्त है। ये कतौब आठ लाख झादमियों पर हुकूमत करते हैं। यहाके वासिन्दे यव द्वीपकी अपेक्षा ज्यादा अन्नत हैं। सम्यता और शास्त्रज्ञानमें उन्हो ने दूसरे द्वीपोंसे अधिक श्रेष्ठता प्राप्त की है। किसी समय भी ये यवद्वीपके ओलंदाजों के साथ झूठता करने धाज नहीं हुये। १८४६ ई०में ओलंदाजों और होङ्ग काङ्गोके राजाके बीच जो मुलह हुई उमसे बालिद्वीप उनके मित्त जरूर हुप पर उन्हो ने ओलंदाजोंकी वस्यता स्वीकार नहीं की।

इतिहास।

बालिद्वीपका पुराना इतिहास नहीं मिलता है। लोगो का विश्वास है, कि यहा पहिले राक्षस रहा करते थे। कुछ दिनों के बाद 'मजपहित'से कुछ हिन्दुओं ने आ कर यहा उपनिवेश बनाया। उहाँके द्वारा वासुकी (नागराज वासुकी)के मंदिरमें महादेव हिंदू प्राणायाम मात्राज्यव्यवस्था समय प्रथमतः किया जा मन्वता है। जगत वादि नामके प्रथममें लिले हुये मय राक्षस और उहाँके भुचरोंके परामय तथा देवताओंका भाषिण्य विस्तार

सूचक उपाख्यानोंसे बहुतेरे स्वीकार करते हैं, कि इस छीप में पहिले हिंदूधर्म फैला हुआ था।

उशन-यव नामके ग्रन्थसे जाना जाता है, कि मज पहिले राज अगुङ्ग समुद्र पार कर बलिके शासनरत्नों को दमन करनेके लिये आये थे। बालिराजके हारनेके बाद मजपहित-राजके सद्मयोंने वहा पर रहनेका अधि कार पाया। कुछ दिनोंके बाद भुसलमानोंके अगुमुदयसे मजपहित (विल्वतित्त) राजधानीका जव पतन हुआ तब उक्त राजवशधरोने भी बालिद्वीपमें आ कर आश्रय ग्रहण किया।

यव और बालिद्वीपके दोनों उशन प्रथमें इसी त्रिपय को स्पष्ट करनेवाली एक छोटी सी पौराणिक आध्यायिका देखी जाती है। किसी समय मयराक्षस वशके प्रज दानव नामक बालिके राक्षसराजने राज्यमें उपद्रव करना शुरू कर दिया था। इस पर 'मजपहितराज'ने आर्यडामर और पति गजमह नामके दो सेनापतियोंके साथ आ कर उस राक्षसको पराजित किया था। उन्होंने 'गेलगेल' नामके स्थानमें राजधानी बसाई और वहाँ राज्य करने लगे। उपाध्वानके मूलमें चाहे कुछ भी क्यों न हों, किन्तु बालिवासी सभी यह स्वीकार करते हैं, कि आर्यडामरने बालीको परास्त किया था और मजह पहित राज्यके ध्वंसके बाद वहाके राज्यवशधरीने बालिद्वीपमें आ कर निवास किया था।

बालिद्वीपके 'गेलगेल' नगरमें देव अगुङ्गने राज्य स्थापन कर सम्पूर्ण बालिराज्यको अपनी सेना और मंत्रियोंमें बाट दिया। आर्य डामरने प्रधान पति (सचिव) पद पर नियुक्त हो तबनान प्रदेश पाया था। राजा देव अगुङ्ग आथ डामरके दिना परामर्श लिये कोई भी कार्य नहीं करते थे। पश्चात् डामर "आर्यकेञ्जेङ्ग" नामकी पदवीको धारण कर राजप्रतिनिधि हो राज्यकी देखरेख करने लगे।

आयडामरके भाई आर्य से टो, आर्य धेवेतेङ्ग, आर्य परिङ्गोन, आर्य व्लोग, आर्य कगन्सिा, आर्य विणु ल्हु आदिने भा राज्यानुग्रहसे कुछ प्रदेश पाये थे। इसके सिवा आर्य मजरी द्यु नामके स्थानमें, तनकुचेर, तनकुचुर (हुमार) ता मन्दर ती प्रभावशाली धर्म्योंने भी मिश्र सिन्न स्थानोंमें राजशासन प्राप्त किया था।

पतिगजमह भी मे गुर विभागके शासनकर्ता हुए थे।

इस प्रकार अनेक व्यक्तियों पर बालिका राज्य अवलम्बित था। १६३३ ई०में बोल्टराज राजदूतके वर्णनसे जाना जाता है, कि देव अगुङ्गई समस्त बालिद्वीपके अधि पति थे। दूसरे समस्त सामन्त उनकी अधीनता स्वीकार करने थे। "पश्चात् 'गेलगेल' राजधानीके ध्वंसके बाद होङ्ग फोङ्ग, थङ्गलि, गियायुर और गोलैलेङ्ग प्रदेश देव अगुङ्ग-राजपरिवारके अधिकारमें रहे। पूर्वका राजा जातिके क्षत्रिय थे। कुछ समयके बाद जब वैश्य जाति का प्रभाव बढ़ा तब वे निम्न हो गये।

सामन्तो के वशागत करनेसे बालिद्वीपमें बहुत उथल पुथल मची। मेङ्ग ईरानकी प्रभाववृद्धिके साथ साथ करङ्ग-असेम आदि राज्यकी जय, डामर-राजवशका बदेङ्ग पर आक्रमण और उन्हीकी गोष्ठीका बोनामने स्वाधीन हो कर राज्यस्थापन करना आदि बहुत सी भीतरी उलट पुलट हो गयी। इनके सिवाय होङ्गकोङ्ग और करङ्ग असेम राज्यमें आपसी विघ्नेपभावकी आग और भी धधक उठी। गेलगेलके राजदरवारमें रहते समय गजमह वगीय किसी राजपुत्रकी देवअगुङ्गकी आगासे हत्या की गयी। उस हत्याका बदला लेनेके लिये मेङ्गई और करङ्ग-असेम वासियोंने उनके ऊपर क्रुद्ध हो तलवार उठाई। देवअगुङ्ग इस युद्धमें घुरी तरह हारे और उनका गेल गेलमें मिहासा नष्ट भूट कर दिया गया। देवअगुङ्गका करङ्गअसेम राजकन्याके साथ जय विजय हो गया तब दोनो पक्षो का भगडा निवट गया। इस रानीने बीरो चित्त भावसे दोनो राज्यो का शासा किया। इसी समयसे देवअगुङ्ग वशके राजाओ की प्रभुताका हास हुआ। यद्यपि यह वंश हार गया था तो भी विजेता राज्यो के वहा पूर्ववत् सम्मान पाता था। पर करङ्ग-असेम आदि राना उनको कर नहीं देते थे। यह अपश्य था, कि वे उन्हे सर्वप्रधान राजा मानते थे। पश्चात् करङ्गअसेम राजाओ ने बोलैङ्ग और लम्बन्गको जीत कर अपना प्रभाव फैलाया था। दक्षिणमें तबनानके गोष्ठी रानाओ ने पश्चिम वेदाङ्ग और पूर्वीका कुछ भाग भी अपना लिया। फिर देवअगुङ्ग वगीय देवमङ्गोरा नामके किसी 'पुङ्गकन्'ने गियायुरको लूट कर वहा पर अपना

स्वतंत्र राज्‍य स्‍थापित किया । इस समय हम स्पष्ट रोतिले देखते हैं, कि क्रोड्‍कोड्‍कोड्‍की प्राचीन क्षत्रिय जातिके सियाध और सब ही पतित या नीचे जातिके सम्‍मिलित हो गये थे । नीचे आठ सामन्त राज्‍यो का सक्षित इतिहास दिया जाता है ।

१ हाङ्‍कोङ्—देव अगुङ्‍गनके द्वारा चलाया गया । इनके अधिकारमें प्रायः छ हजार मनुष्य रहते हैं । करङ्‍गसेम और बोलेलेङ्‍ग सामन्त इनके साथ एक मत हो कर कार्य करते हैं । ये शूद्राणोसे पैदा हुए हैं । इनकी सीतेलो मा करङ्‍गसेम राजकन्याके गर्भसे एक पत्‍न्या जन्‍मी थी । राणियो में कोई भी पुत्रवती न थी, अतएव ये शूद्राणो ( ज्येष्ठ ) पुत्र ही राज्‍यपद पर अधिष्ठित हुये ।

२ गियान्‍वर—१८४१ ई०में देवमङ्‍गीराज्ञी मृत्युके बाद उनके पुत्र देवपद्‍मान राजा हुए । यद्यपि ये क्षत्रिय पंशमें उत्‍पन्न हुये थे, तो भी उन्होंने शूद्र तथा पुङ्‍गुकाकी पदवी प्राप्त की थी । इनके प्रतितामह ही इस पदके स्‍थापनकर्त्ता थे । पहिले देवअगुङ्‍गके पूर्व पुराणोके अधीन थे उसी प्रदेश पर दो सी सेनाके नायक थे । छलबलसे अपने स्वामीको उन्होंने अपने हाथमें कर लिया और मेङ्‍गई राज्‍यके अन्तर्गत कामया देश पर अपना अधिकार जमाया । ओलंदाओंने जब बोलेलेङ्‍ग पर आक्रमण किया तब गियान्‍वरके पति देव अगुङ्‍गकी आहाते ये दलबलके साथ भागे बढे । वेदाङ्‍ग राजाके साथ इनको मित्रता विध्यासयोग्य नहीं थी । इस कारण वेदाङ्‍ग-सीमान्तमें रात्‍ना कागोमनने एक वास स्‍थापन करवाया ।

३ वंग्‍गी—देवजदे पुट्‍गें पान् १८७६ ई०में यहाँ राजा हुये थे । ये लोग भी अपनेकी देवअगुङ्‍गके वंशज बतलाते हैं, किन्तु अगुङ्‍ग घनोको अपेक्षा ये मर्पादोमें हीन हैं । ये देव अगुङ्‍गकी अधीनतामें नहीं हैं । यदोङ्‍ग और तय आंनके सामन्तराजाओके साथ इनको कुछ प्रेम है । यहाँ के निवासी साहसी और धीरे होते हैं । बङ्‍गली राजा एव सम्य देव अगुङ्‍गके सेनापति थे । १८४६ ई०में ओन्-दाओंके समय इन्होंने ओलंदाजगघमेंएकी सहायता की थी । इस प्रत्युपकारके पुराहारस्‍वरूप इन्हें 'बोल्लेङ्‍ग प्रदेश मिला । ये बन्‍दूकीसे युद्ध करने थे ।

४ मेंगुरे—पतिगजमह इन् प्रदेशके अधिकारी नियुक्त हुये थे । इनके कोई पुत्र न था । घत्‍मान राजा गण आयश्रमरकी प्रपौत्री कियदानके घदाघर हैं । इन्होंने किसी समय करङ्‍ग असेम, बोलेलेङ्‍ग, लम्‍बक और यदोङ्‍ग आदि राज्‍योंमें भी अपना अधिकार फैलाया था । लम्‍बक, बोलेलेङ्‍ग और करङ्‍ग-असेम राज्‍योंके साथ मेंगुरे-राजवंशका घणित संबन्ध है । १८७६ ई०में अनेक अंगुङ्‍ग कट्टे अगुङ्‍ग यहाँ राज्‍य करते थे ।

५ करंग-असेम—यहाँके अधिपति अपनेकी गज महके घंशघर बतलाते हैं । किन्तु करंग राजपुत्रके साथ मेंगुरे राज कन्याका विवाह भी चलता है । पहले कहा जा चुका है, कि आर्य मजूरी यहाँके वृषभदेशके राज थे । मेंगुरे राजने करङ्‍ग असेम जाता था और बोलेलेङ्‍ग अधिकारके बाद क्रोड्‍कोड्‍ग बोलेलेङ्‍ग प्रदेश उनके हाथसे जाता रहा था । १८७६ ई०में नम राजदे यहाँ राज्य करते थे । मुसलमें इसी घनने विजय पायी थी । इन्होंने गेलगेलका ध्वस और लम्‍बक तथा सेम्‍बो पर आक्रमण किया था । करङ्‍ग और लम्‍बक-राजाओको आपसकी फूटने बहुत नुकसान किया । इसी बीचमें मतरमरात्रने आ कर दोनों को परास्त किया । इस राजपरिवारकी कुल-सलना और बालिकाये सम्‍माननीय रक्षाके लिये अनिमें प्रदेश करते हैं । ये स्‍त्रिया आपसमें दूनपैकी अनिष्ट करनेके लिये अपने प्राणो तककी आहुति देती हैं । बस यही वालिणीवाभियोका 'देव' उत्‍सव है । लम्‍बकके करङ्‍ग असेम राजाओकी अवनतिके बाद वरंग असेम वालि-बोलेलेङ्‍ग और देवअगुङ्‍ग घंशके राजा स्‍थापित हो कर राज्‍य करते रहे । करंग असेमका राज्‍य पंचतम्य है । यहा पर धान्यकी खेती नहीं होती । यहाँके रहनेवाले लकड़ोकी बेच कर अपना निर्वाह करते हैं । लम्‍बक राजाका नामर कट्टे करङ्‍ग असेम नाम है । 'सेलापरङ्‍ग' इनकी अपाधि है ।

६ बोलेले ग—यहाँके राजा मेघर मदे करङ्‍ग असेम बहे जाते हैं । यहाके अधोघर गजमदघणोय हैं । यहाँ यदिदे देवअगुङ्‍गवंशके क्षत्रियोने राज पीढी तक राजा किया था । उनके बाद वैश्यवर्गीय राजाओका प्रभाव बढ़ा । आर्य वेलेलेङ्‍ग-वंशीय मन्त्र २ पंक्ति इन्हीं घनके एक राजा थे ।

पश्चात् करङ्ग असेमके राजाओंने इस प्रदेश पर अधि-  
कार जमाया। किन्तु राजपुत्रोंके आपसी वैमनस्यके  
कारण राज्यमें बहुत हड़ड मचा। अन्तमें जब करेङ्ग  
असेम, कोलेलेङ्ग प्रदेश दो राजकुमारोंको दे दिये गये तो  
उनका विवाद मिट गया। यत्नमान राजभ्राता गोष्ठी  
जेल्न्द्रे ग यहाके सर्वेसर्वा हैं।

७ तयानाव—ये राजवशवाले अपनेको आर्यशामरको  
संतान बतलाते हैं। राजाकी उपाधि रट्ट नम्रूर अगुङ्ग  
है। बास्तवमें ये किसीके साथ ऋगडमें नहीं फसते  
थे। मंगूर-राजके विघड युद्ध करने पर मार्गप्रदेश  
इताममें इनको मिला। तयाननके कोई 'पुङ्गव' मार्यके  
शासनकर्ता थे। ये वैश्य नहीं थे। बालिद्वीपमें इन  
शूद्रराजाओंको छोड और कोई भी शूद्र राजा नहीं हुए।  
इनके पुत्रे पहले ताडी बचते थे। मंगूर राजाकी दयासे  
ये 'पुङ्गव' हो गये थे। मंगूर राजाके बाद यह स्थान  
तयानान राज्यमें आ गया। ये अपने पदकी रक्षा करनेमें  
समर्थ हुए थे।

८ बंदो ग—( बन्दनपुर ) पहिले यह प्रदेश मे गुर  
और आर्य बेलेतोङ्गके पिनति राज्यमें शामिल था।  
तवातानराजगोष्ठीके किसी सदांरने इस राजाको  
स्थापन किया था। ये 'नम्रूर बोला, या अनक अगुङ्ग  
रिङ्गुपुहाहन भूमितयानान नामसे प्रसिद्ध थे। इन  
घशके नम्रूर जडे पञ्चुत्तने, मदे नम्रूर देन पस्मर  
और नम्रूर जडे काशीमनने प्रदेशोंमें रह प्रवल पराक्रमसे  
अपने राजाकी मर्यादा बढ़ायी थी। इनके पतिश्रमसे  
पिनति गियान्यरसे तजङ्ग, गुनङ्गरट्ट, सनोर, तमन, इङ्ग-  
रन, सु ग, तोरगनद्वीप, भ्रोयोङ्कन, लोगियान, कुट्ट, तुवन,  
जेभ्यरन और बालिद्वीपका दक्षिण भाग ये सब प्रदेश इस  
राजामें थे। उक्त नम्रूर बोलासे १०वीं पीढीमें राजा  
काशीमनने इस प्रदेशका कर्तव्य लाम किया था। काशी  
मनके प्रतितामहसे ही इस राजाका इतिहास पाया जाता  
है। ये ही सबसे पहिले तयानान राजासे 'पकेन बंदो ग'  
नामके पाणिज्राक्षेत्रमें जा बसे थे।

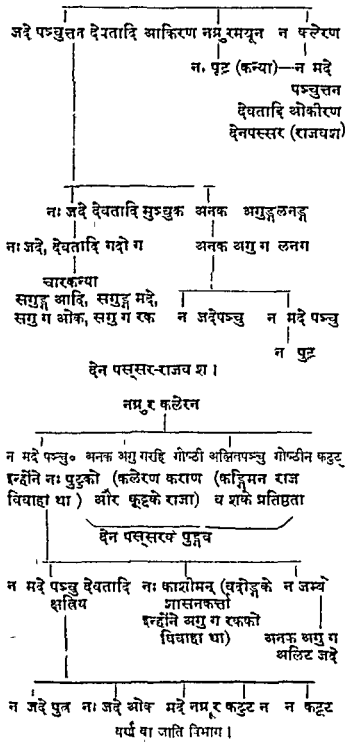
नम्रूर बोलाका पुत्र या पौत्र अनक अगु ग कट्ट  
मण्डेशने गुपाहनहसे गुनु ग बेटुर नामके आनेय पर्यंत पर  
जा कर ठेबीक्षु या ग गाकी उपासना की थी। पश्चात्

उन्होंने बंदो गके मकेल तिगि लोगोंको सहायता या बहुतों  
को अपने ब्रलमें लाया और अपने भापकी मंगूरके 'पुङ्गव'  
नामसे प्रसिद्ध किया। उनके तीन पुत्र गोष्ठी घघदनतगे,  
गोष्ठीन्योमन तगे और गोष्ठी कोटुट कदि नामके थे। इन  
में द्वितीय पुत्र न्योमनने ही इस घशके प्रभावको फैलाया  
और अपने घशघरोंके लिये राजाका सिंहासन स्थाके  
लिये स्थापित किया। ये साहसी, चतुर और योद्धा  
थे। इन्होंने स्वय प्रमियग्रीया स्त्रीके साथ विवाह  
किया था। उनकी एक सालीका विवाह झीङ्ग, कोङ्गके  
साथ हुआ था। यह स्त्री अपने पतिके साथ सती हुई  
थी। इनकी और दूसरी बहनों का विवाह मंगूरकी  
गोष्ठी अगुके साथ किया गया था। इस प्रकार प्रताप  
शाली आत्मीय कुटुम्ब से व्याप्त हो द्वितीय न्योमन अपनी  
क्षमता फैलानेके लिये प्रयास करने लगे। फ्रय उन्होंने  
मंगूर राजको हराया इस विषयका अभी निश्चय नहीं  
हुआ है, तो भी उनके पुत्र और पौत्र उक्त राज्यके पुङ्गव  
थे इस बातका अनुमान किया जा सकता है। उनके  
बाद गोष्ठी नम्रूर जयैमिहिकने राजा किया। इनके दो  
पुत्र थे। पहलेरा नाम था अनक अगुङ्ग जडे गलोगोर  
और दूसरेका अनक अगुङ्ग तल रिङ्ग वतु कोटोक  
तगेल। उन्होंने गालागोरमें राजा स्थापन किया।  
कोटोकके राजवशघर पञ्चुत्तन और देन-अपस्सरके पुङ्गव  
नामसे प्रसिद्ध हुए थे। कोटोकी पञ्चुत्तन राजधानी  
किसी समय बलमें जरूर कमजोर थी। किन्तु उसफे  
राजाओं ने अन्तिम बंदोङ्ग राजाको एक उलाघोन कर  
लिया था। कोटोकके पुत्र 'पुत्र' नामसे मशहूर थे। उनके  
जेष्ठ पुत्र अनक अगुङ्ग पञ्चुत्तन या नम्रूरके प्रभावसे  
पञ्चुत्तन राजा बहुत विस्तृत हो गया था। उन्होने  
निकटवर्ती दूसरे राजाओं को पराजित कर स्वय घदोङ्ग  
पर स्थापित राजा स्थापित किया। उनके पाच सौ  
विवाहिता किया थीं। उनमें यह पाटराणोका पद  
कितनी ही उच्च घनीय राणियों को मिला था।

उक्त नम्रूर शक्तिके पुत्र नम्रूर जडे पञ्चुत्तन राज  
घशके प्रतिष्ठाता थे। इन्हींका केवल राजागमियेक हीता  
है। द्वितीय नम्रूर मयुन और तृतीय वालेरन-देनपस्सर  
राजघशके अधिष्ठाता थे। कलेरनके पुत्र नम्रूर मदे पञ्चु







रण जाति 'कहुल' या दास कह कर प्रसिद्ध हैं। भारतपर्यं धार घर्णोंको छोड़ और भी अनेक मिश्र जातियोंका नियाम है, किन्तु बालिके हिन्दुओंमें वैसी मिश्र वा सङ्कर जाति नहीं पायी जाती। जैसे भारतमें अनुल्लोम और प्रतिलोम सङ्कर जातिकी उत्पत्ति हुई है वैसी बालिद्वीपमें उनकी उत्पत्ति नहीं है।

भारतमें तीन जातिया द्विज कही जाती हैं। उनका यथाकालमें यशोपरीत सस्कार भी होता है। ये जातिया अपनी अपनी जातिमें ही विवाहादि-सम्बन्ध करती हैं। इन तीन घर्णोंमें उच्चघर्णका कोई मनुष्य यदि अपनेसे नीचघर्णकी कन्याके साथ विवाह करे, तो उस कन्याके गर्भसे पैदा हुई संतान पितृजातिकी प्राप्त करनेके अधिकारी होती है। क्षत्रिय और वैश्योंमें ऐसे विवाह बहुत प्रचलित हैं। ऐसी वातु-स्त्री शूद्र जातिकी स्त्रिया धनियो के घरमें दासी या भोग्या कह कर रखी जाती हैं और उनकी सन्तान शूद्र समझी जाती है। किन्तु जब इनका विवाह-सम्बन्ध होने लगता है, तो उनकी पितृजातिकी ही गिनती है। ये शूद्र स्त्रीसे उत्पन्न सन्तान उच्चघर्णकी स्त्रीसे पैदा हुई संतानोंसे नीची अवश्य गिनी जाती है। यदि कोई ब्राह्मण शूद्रसे विवाह कर ले तो उसको प्रापञ्चित करना होगा और स्त्रीको सस्कार द्वारा शूद्र कर घरमें ले जाना होगा। उस स्त्रीके साथ उसके पिताके कुलका कोई सम्बन्ध नहीं रहता। प्रतिलोम विवाह बिलकुल ही वर्जनीय है। यदि ऐसा कोई सम्बन्ध करे, तो उसको निर्वासन अथवा प्राणदण्ड भोगना पड़ेगा। कोई ब्राह्मणपश दो, तीन पीढी तक शूद्रों के साथ विवाहादि किया करे, तो वह भी शूद्र जातिमें गिना जायगा। यदि कोई ब्राह्मण हीन कर्म अथवा अपने धर्मका त्याग कर दे, तो उसे शूद्र जातिमें ही शुमार किया जायगा।

ब्राह्मण ।

बालिद्वीपके ब्राह्मण भगवान् द्विजे पु श्चु खु ( नजा हूत ) पदएडके पशधर बहे जाते हैं। यवद्वीपके केदिरि नामक स्थानमें इस ब्राह्मणका यासस्थान था। उनके पशधर यहासे मजपहित चले गये, फिर मजहपहितसे बालिद्वीपमें आ कर वास करने लगे।

बालिद्वीपके रहनेवाले जयावा हिंदू और कहीं कहीं बौद्ध भी हैं। यहां चारों घर्ण रहते हैं।—ब्राह्मण, क्षत्रिय (क्षत्रिय), वैश्य (वैश्य) और शूद्र इन चार घर्ण या जातिको छोड़ और कोई भी तरहके मनुष्य यहां पर नहीं रहते हैं।

ब्राह्मणोंको 'इदा', क्षत्रियोंकी 'देव' और वैश्योंकी 'गुष्टि' (गौष्टी) पदवी है। शूद्रको कोई भी पदवी अथवा सम्मानसूचक शब्द नहीं है। इसलिये विदेरीया या साधा-

सन ममयु राजवन्धाके म्नाथ पाणिप्रहण किया था । इस त्रियाह-स्युमें धारण हो दोनों राजपंशोनि काशीमन नामकी राजधानी बनाइ थी । विन्तु इमने भी ये सन्तुष्ट न हुये । उन्होंने पपेन यदोद्ग प्रदेशमें जयराज पर आक्रमण कर उनकी पराम्त्त किया । बाद इमके उन्होंने देनपस्मरमें राजधानी स्थापित की और वहाँ पर अपना दरबार ले गये । काशीमनमें उनके दूसरे पुत्र राजा करते थे । ये युद्ध हीमें सदा फँसे रहे, अतएव अपना राजा सीमा बढा न सके ।

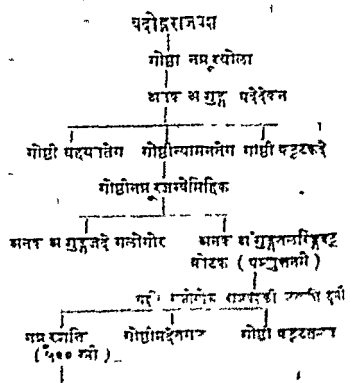
देन पस्मर राजके तीन पुत्र थे । तम्र मदे पञ्चुत्तन और नम्र जये देवापमसर हीमें थे तथा द्वितीय 'तम्र काशीमन काशीमा प्रदेश पर राज्य करते थे । देवापस्सर-राजा लोग 'देवनादि क्षत्रिय' इस उपाधिसे मूषित होते थे । ये जब गियांगर और तवानानके सामान्तो के साथ मिल गये तो इन्होंने माग, मशुह आदि राजाओंको अपना सामन्त बनाया । इस प्रकार दक्षिणस्थ चार सामन्त राज्यों पचन हो १८२६ ई० तक बरतू असेम और बोल-लेङ्ग राज्यके म्नाथ विपक्षता की थी ।

नम्र मदे पञ्चुत्तनके बाद देनपस्मर राजराजमें राजा काशीमा ही सबसे ज्यादा प्रतिभाशाली तथा पराक्रमी थे । उन्होंने अपनी भुजाओंके पराक्रमसे देवापस्मर और काशीमनमें परछल राज्य किया था । उन्होंने तम्र मदे पञ्चुत्तनके पुत्र तम्र मदे ओषाको देनपस्मरके मिहासरासे हटा कर तथा निर्वासित कर स्वयं राजदण्ड धारण किया था । जदेशोका बदला लेनेके लिये बन बन घूमने लगे और मेशुह आदि देशवासियोंको अपने पक्षमें करनेके लिये कोशिश करने लगे । अतमें इन्होंने बहुत बड़ी सेनाके साथ काशीमाको इस्वीता लटकीकी हर कर उससे साथ विवाह कर लिया । इस विवाहसे सब भगदा टंटा मिट गया सही, पर पुत्र काशीमनने देवापस्मरमें अपनी प्रभुता अक्षुण्ण रखनेके लिये नुब प्रयास किया था ।

पञ्चुत्तन तम्र जये देवादि अकिरणके यज्ञमें उनके पुत्र देवनादि और उनके बाद देवनादि पदोद्ग राज्य पर अधिकार हुये । इन्होंने राजाभाके पिता जीर मारपीके विरुद्ध बहुत युद्ध किये थे । उनके भाई अनरमगुड

लनङ्गने राजसेना ले कर जेम्पना प्रदेश पर आक्रमण किया और उसको जीता था । जयराजयज्ञमें कोई सन्तान न थी, अतएव १८३० ई०में ये राजसिंहासना पर बैठे । उनकी 'मुद्रिक' पत्नीके गर्भसे दो पुत्र थे । ये पिताके जीवितकालमें 'पराक्रम' ( राजपरिचर्या ) नामसे पुकारे जाते थे ।

ये दो राजपुत्र नीचयज्ञमें उत्पन्न हुये थे, अतएव उनका राजा होना किसीने भी स्वीकार न किया । इमों बीच देनपस्मरमें काशीमनराज अपने प्रभावकी भी रक्षा चाहते थे । देन पस्सर और दूसरे भाई भी नीचराजो पैदा हुये थे, इसी कारण उनके पुद्गया उनकी अधीनता स्वीकार न की । विन्तु काशीमनके शत्रुयुद्ध होनेपर पञ्चुत्तन राजपंशमें उनका पूर्ण प्रभाव पड़ गया । यदोद्गराजके देनपस्मर और पञ्चुत्तन राजवशके ये ही मुख्य ममिमायक समझे जाते थे । वर्तमान पञ्चुत्तन राजका अधिकार नहीं होता ; विन्तु ये पिताकी मृतदेहके जलनेके बाद सम्पूर्ण विधि करनेके अधिकारी हैं । विन्तु देनपस्सरके राजा अब भी पितृदेहको जला नहीं सकते । ये सम्मत् भारतीय मृतदेहको प्रामादमें रगते हैं । मृतकी अपस्था और मर्षादिके अनुसार उसकी अन्त्येष्टि किया भी होता है । वाचिद्वीपकी प्रथा पुद्गनगणकी घणायली नीचे उद्धृत की जाती है ।



थे। यवद्वीपमें केन्द्रिय स्वसे बड़ा राज्य गिना जाता था तथा क्षत्रिय इसमें अधिक नहीं थे। माहिषगण ही (महा जन) राज्य करते थे।

क्षत्रियोर्मैसे केवल देवअगुह और उरुन वैमान्येय भार्गव आर्य डामर तथा अपर छह मनुज्य वालिद्वीपमें पहिले आये थे। यद्वीप देतो। आर्य डामर और अन्य छह लोगोके घणघर आचारभूट हो वैश्य बन गये थे। केवल देवअगुहको विशुद्ध सदाचारी क्षत्रिय समझ राजा लोग अब भी श्रेष्ठममान देते हैं। यद्वीह, तगानान, मंगुह, करहू असेम आदि स्थानोके रहनेवाले कितने लोग अपनेहो अगुहदेवके कुटुम्बो बतलाते हैं, लेकिन पंडित लोग उनको सदाचारी क्षत्रिय नहीं मानते। इहोह कोह, यद्वीग और गियान्यरमें अब भी क्षत्रियराज राजा करते हैं। बोलेलेहमें पहिले देव अगुहके घणघरा राजा था, इस समय इनके कुटुम्बो लोग यद्वीहमें रहते हैं। देशक, प्रदेव और पुहूकर नामके कितने ही क्षत्रिय हैं जिनका शूद्रस्त्रीके साथ संध देया जाता है।

वैश्य (वैश्य)।

वालिद्वीपमें क्षत्रियोकी अपेक्षा वैश्योंकी संख्या जादा है। करहू असेम, बोलेले गुगमेह, तगानान, यद्वीह और लभन आदि स्थानोमें अब भी वैश्य लोग राजा करते हैं। तगानान और यद्वीहके राजगण क्षत्रिय आर्यडामरके घणघर होनेसे देव अगुहके प्रभाव द्वारा वैश्य हो गये हैं। उनके पूर्वपुरुष वैश्योकी तरह वालोको बाधते थे, इन्लिये वे वैश्य कहलाये जाते थे। वर्तमानकालमें केसोके बीच क्षत्रिय और वैश्योंमें कुछ भेद देखनेमें नहीं आता।

वहा और मजपहितके क्षत्रिय वर्तमानमें "माहिष" (माहिष्य) या "कायो", वैश्य "रयहू" "पति" "हेमाहू" और तुमहूहूहू नामोंसे प्रसिद्ध हैं। पतिप्रेषोके पूर्व पुरुष प्रथमदेव अगुहके मको थे, इन्लिये इस घणघके कोई कोह लोग "मको" कहलाते हैं। आर्यडामर और पति गामहके घणघरोंको छोड़ और सभी शूद्र हो गये हैं।

वृदि, वाणिज्य और शिष्य वैश्योंकी मुख्य आजीविका होने पर भी वहाके प्रधान वैश्य इन सब कामोंको पूर्णतः समझते हैं। ये लोग अमीर पाने और बुद्ध

बहुतो ण विभाग्यं हे, कि पहिले ये प्रायण भारतसे यत्नाप गये थे। भगवान् छिजेन्द्र उन्म भेष्ट अध्यासा मेना थे। छिजेन्द्रके बहुत सौ गिरीस थीं। उनमेंसे पाच गिरीस के गोरे उल्पन् सत्ता पाच विभागोंमें बट कर बाकिहीपमें वास करने लगा। एन पांच प्राणियों के नाम—१ कमेमु २ गेलगेल, ३ बुआया, ४ माम और ५ पायशून्य।

गिया-परद्रेशके कमेमु नामक प्रधानमें जिनका वास हे ये तीस कमेमु प्राणण है। ये प्राणण त्रियोमें पैश हण है। गेलगेल नामक प्रधानमें जिन प्राणणों का वास था ये गेलगेल प्राणण जने जाने लगे। ये छिजेन्द्रकी क्षत्रियपरियो में उल्पन् हुये थे। छिजेन्द्रके औरस और क्षत्रिय बाल विधवाये बुआया प्राणणों की उत्पत्ति हे। इसी तरह पैश कन्याये मामप्राणणों की और दूध ग्यासे पायशून्य नामके प्राणण पैश हुये हैं।

जहा क्षत्रियोंका राज्य हे यहा गेलगेल प्राणणों की प्रधानता और जहा वैश्यों की प्रधानता हे यहा माम प्राणण मचरचर दान पूजा किया करते हैं। मिन्य वर्णकी सत्ताके सम्भागमें जरूर फर्क हे। किन्तु उस त्रियो जताका कुछ भी ध्यान नहीं हे। इन पाच वर्णोंमें जो सचरित, साधुप्रति, धर्मशील, विद्वान, शास्त्रज्ञ हे ये पूज्य और प्रधान गिने जाते हैं।

बालिद्वीपमें प्राणणोंकी ही संख्या ज्यादा हे। सभी प्राणण राजा और क्षत्रियोंके अधीन हैं। क्या तो युद्ध क्या दूत शाय सब समयमें प्राणणोंकी राजाकी आज्ञा मानी पटती हे। राजाकी आज्ञा उल्हून करनेसे प्राणणों को भी डेराने पिटाल दिया जाता हे। ती भी प्राणण राजाको को धपेदा उष्यदरुध और सम्मानित हे। ये राजशब्दाके साथ निषाह कर मन्ते हैं, किन्तु राजा प्राणण कयाता निषाह अपने साथ नहीं कर मन्ते।

बालिद्वीपमें प्राणणोंकी ज्यादा संख्या हे इसा त्रियो और जातियोंका उता प्रभाव नहीं हे। बहुत सौ जातिया उती वासये दृष्टि होन हो गयी हैं और प्राणणोंके त्रियो अपने हाथमें धरिधम करती हे। एना तक कि प्रकृती पशुके और प्राणिक परिधम हास था वनादेमें से कुछ भी कमर नहीं रखते।

प्राणणों में जो सम्पूर्ण शरीरों का रहस्य जानते हैं और समस्त प्राणणोंचिन कायामें पादुगिना प्राप्त करते हैं ये गुरुके द्वारा दृष्ट पा कर 'परिजनदण्य' या 'परिज' उपाधि पाते हैं। गुरुके शरणों में भगो मस्तकको स्म अधिरत गुरुके पादोदरका पास, हर तरहमें गुरुकी आज्ञा तत्पर रहने आदि कठोर कार्यमें उत्तीर्ण होने पर भी इन उपाधिकी प्राप्ति होती हे। जो प्राणण-छात गुरु घरमें वास कर इस उपाधिकी प्राप्त करनेको कोशिश करते हैं राजा नको यथेष्ट उत्साह दान भाडिमें सतुष्ट करते रहते हैं।

"पदुह" उपाधिके पानेवाले ही राजाके दण्ड धिकारी और धर्माधिकारी होते हैं। ये समस्त धर्म चारियोंको दण्ड देते हैं। इहो पदुहोंमें कौं पुरोहित होते हैं। इहा या साधारण प्राणणोंमें जो विद्या, बुद्धि और मरलतामें पदुह हो मन्ते हे उही को राजा अपना पुरोहित बनाते हैं।

पुरोहित ही राजगुरु होते हैं। राजा राजा नियु होता हे और उनको हर तरहसे सेवा किया करता हे। यह समस्त राजनीतिक या धर्मनैतिक कार्योंमें पुरोहित से परामर्श लेना उचित समझता हे। राज्य या मन्त्र राजपरिवारकी मनुल कामनाके लिये पुरोहि मन्त ही यागयज्ञ, जातिपाठ, वेदपाठ आदि शुभकार्योंमें निरत रहते हैं।

बालिद्वीपमें मिन्य भिन्न त्रियोमें से एक एक पुरोहित हे। केय राजपुरोहित ही गुरु कहा जाता हे और सब उसको पूजते हे। समस्त सामन्त भी पदुहों में एकको पुरोहित बनाते हे और उसको गुरु कह कर पुकारते हैं। यद्यपि ममयमें बालिद्वीपमें सात पुरोहित या राजगुरु हैं—कोङ्ककोङ्गमें दो, गियास्वरमें एक, बगो ग या वन्त पुमें दो, तयातामें एक एक मंगुमें एक ऐसे सात पुरोहित या राजगुरु पादा पर हैं। बालिजे नियामों द्वारा देवोंकी तरह पूजते या मन्कार करते हैं। गुरु सब राक्षसयोंके बाहिर निरन्तर हैं तब दृष्टाते मनुष्य उनको साक्षात् मन्कार करते देते जाते हे और बहुतसे लोग उनके पादोदर मेंसे त्रियो अल्पत ध्यस्त रहते हैं।

। ब्राह्मण समस्त वर्णोंसे एक या बहुत स्त्रियां ग्रहण करते हैं। वर्णसङ्कर होने पर भी वे ब्राह्मणवर्णमें ही गिनी जाती हैं। किन्तु सम्पत्तिके अधिकारमें हीनाधिक भाग जरूर रहता है। शूद्राका पुत्र जो ग्रहण कर सकता है उससे अधिक वेश्याका पुत्र, तथा उससे ज्यादा क्षत्रिया का, और सबसे ज्यादा ब्राह्मणीका पुत्र दायभागका अधिकारी है। ब्राह्मणों से शूद्राकी सन्तान होना यह निन्दित है। यदि तीन पोढ़ी ऐसा सबध होता रहा तो वह शूद्र वर्णमें शुमार की जायगी। क्षत्रिय और वैश्यो के लिये भी ऐसा ही नियम है।

ब्राह्मणों की स्वर्णां स्त्री जैसा सम्मान पाती हैं शूद्रा स्त्री उसका शतांश भी नहीं पाती। ऐसा भी देखा जाता है, कि वे स्वर्णां स्त्रियोंके बाद भरण पोषणके लिये जायदाद दे जाते हैं; किन्तु शूद्रकी कुछ भी नहीं दे सकते।

ब्राह्मणों के साथ गमन करना ही निन्दनीय स्त्रियों के लिये गौरव तथा सम्मान है; किन्तु स्वर्णांका सहगमन एकदम निषिद्ध है।

स्वर्णां स्त्रियोंको वेद, होम, यागयज्ञादिमें पूर्ण अधिकारी होता है। वे तिरयाके सती होनेके समय या दानादि कार्य बेलका तर्पण आदि कार्य करती हैं या सहायता कर सकती हैं। जैसे ब्राह्मणोंमें पण्डित या पदपुत्र उपाधि होती है वैसे ही सुग्रीला ब्राह्मण कन्याओंको 'पदपुत्र स्त्री' या 'पण्डित'की उपाधि मिलती है।

ब्राह्मणोंमें तीन ब्राह्मण हैं—शैव बौद्ध, और भुजङ्ग। शैव शिवके, बौद्ध बुद्धके और भुजङ्ग-ब्राह्मण नागोंके उपासक हैं। सध्यामें शैव ब्राह्मण ज्यादा, भुजङ्ग बहुत थोड़े हैं।

कथिय।

भारतमें जैसे विशुद्ध सदाचारी क्षत्रियोंका अभाव है बाल्हीपमें भी वैसे सदाचारी क्षत्रिय नहीं हैं। जिस समय भारतसे हिन्दुओंने आ कर बाल्हीपमें उपनिवेश किया था, उस समय बहुत थोड़े क्षत्रिय आये थे। "उजान-यन्" प्रथमे मालूम होता है, कि कोरियाण, गाल्ङ्ग, कोदिरि और जङ्गल इन चार प्रदेशोंमें क्षत्रियराज्य था। "रगलव" प्रथमें लिखा है, कि यन् अध्या वेदिरि की राजसभामें क्षत्रिय और वैश्य जातिके सामन्त रहते

थे। यन्क्षेत्रमें कोदिरि सभने बड़ा राज्य गिना जाता था तथा क्षत्रिय इन्में अधिक नहीं थे। माहियण ही (महा जन) राज्य करते थे।

क्षत्रियोंमें केवल देवअगुद्ध और उगन वैमात्रेय भाई आर्य डामर तथा अवर छद्म मनुज बाल्हीपमें पहिले आये थे। यन्क्षेत्र देसो। आर्य डामर और अन्य छद्म लोगोके वशधर आचारमूढ हो वैश्य बन गये थे। केवल देवअगुद्धकी विशुद्ध सदाचारी क्षत्रिय समूह राजा लोग अब भी श्रेष्ठसम्मान देते हैं। वदोङ्ग, तगानान, मंगुद, करङ्ग असेम आदि स्थानोंके रहनेवाले कितने लोग अपनेको अगुद्धदेवके कुटुम्बी बतलाते हैं, लेकिन पण्डित लोग उनको सदाचारी क्षत्रिय नहीं मानते। वदोङ्ग, वदुली और गियान्यरमें अब भी क्षत्रियवशज राजा करते हैं। कोलेङ्गमें पहिले देव अगुद्धके वशरा राजा था, इस समय इनके कुटुम्बी लोग वदोङ्गमें रहते हैं। वशक, प्रवेय और पुङ्गकर नामके कितने ही क्षत्रिय हैं जिनका शूद्रस्त्रीके साथ सबध देखा जाता है।

वश्य (वैश्य)।

बाल्हीपमें क्षत्रियोंकी अपेक्षा वैश्योंकी संख्या ज्यादा है। करङ्ग असेम, कोले सुगमेङ्ग इ, तगानान, वदोङ्ग और लम्बक आदि स्थानोंमें अब भी वैश्य लोग राजा करते हैं। तगानान और वदोङ्गके राजगण क्षत्रिय आर्यडामरके वशज होनेसे देव अगुद्धके प्रभाव द्वारा वैश्य हो गये हैं। उनके पूर्वपुरुष वैश्योंकी तरह बाल्हीपमें बाधते थे, इसलिये वे वैश्य कहलाये जाते थे। वर्तमानकालमें वेगोंके बीच क्षत्रिय और वैश्योंमें कुछ भेद देखनेमें नहीं जाता।

वहा और मजपहितके क्षत्रिय वर्तमानमें "माहियण" (माहिय्य) वा "फावो", वैश्य "रवङ्ग" "पति" "दिमाङ्ग" और तुमङ्गुङ्ग नामोंसे प्रसिद्ध हैं। पतिश्रेणीके पूर्व पुरुष प्रथमदेव अगुद्धके मनीं थे, इसलिये इस वंशके कोई कोई लोग "मनीं" कहलाते हैं। आर्यडामर और पति गजमदके वंशधर्योंको छोड़ और सभी शूद्र हो गये हैं।

रुपि, वाणिज्य और ग्राम्य वैश्योंकी मुख्य आजीविका होने पर भी वहाके प्रथम वैश्य इन सब कामोंकी घुणित समझने हैं। वे लोग अकामि धान और कुटुम्ब

मुक्तके धर्म चरानेके लिये कुछ वाणिज्य करने हैं।  
अपर जातिके लोग भी वाणिज्य करने लगे हैं।

रह।

शूद्रोंको धर्म धर्म करनेमें अधिभार नहीं है। द्विजाति की सेवा करना ही शूद्रका मुख्य धर्म है। अपनी वस्तु पर शूद्रोंका कुछ भी अधिकार नहीं रहता। मुगिया या राजा जब चाहें तब शूद्रके घरसे प्रत्येक वस्तु ले सक्ता है उससे शूद्र किसी तरहका निपेय नहीं कर सका। राजा किसी देनामें चला जाये तो उस देनाके शूद्रोंको गणनाके लिये हस, एक कुट्टुटादि चाप-सामग्री इकट्ठी करनी पड़ती है। इस समय राजकर्मचारी अपनी इच्छाके अनुसार शूद्रके घरसे जो चाहे ले सकता है, शूद्र किसी तरहकी शक्ति नहीं कर सका। राजकर्मचारी इच्छानुसार शूद्रों के ऊपर अन्याचार करते थे पर वृद्ध काशीमन्त्री यह प्रथा नष्ट कर द्ये। शूद्रोंकी समीक्षायें बड़ी शोचनीय हैं। परवन्, राजभृत्यगण और मुगिया राजकुमारकी तरह आलस्यसे और शूद्रोंके धन आदिनी लूटपाटमें अपना जीवा विताते हैं तथा अज्ञान पाने और मुगें लूटनेमें सदा व्यस्त रहते हैं।

मण्डल (मण्डलेश्वर), प्रत्येक और अन्यान्य राजकीय पद पर शूद्र नियुक्त होते हैं। मण्डलेश्वर एक देना अथवा तहसीलका मालिक होता है। इनके पूर्व पुरुष देव अगुहके द्वारा शूद्र बनाये गये थे। मजपहितने जो समस्त वैश्य बालिहोपमें आये थे वे सब भी शूद्रोंमें शामिल किये जाते हैं।

यहाके पतित ब्राह्मण भी बहुत कुछ शूद्राचारी हैं। सज्जन नामकी एक श्रेणीके शूद्र हैं, जो स्मृतिपुराण को पढ़ते हैं और मन्त्रोंको पाठ करते हैं। इनके पूर्व प नाम ब्राह्मण थे। "दले मसुर" या बाल्यूना कर ये लोग ब्राह्मण धर्मसे पतित हो गये हैं। इनके बीच एक प्रयाद् भी प्रचलित है,—एक प्रसिद्ध पक्ष्मकी पराज बाधा परित्यक्त था। यह शुभरूपसे अपने प्रमुखा पूजाकर्म देगता और धैर्यपाठ सुनता था। इसी तरह अपने देव साध किया। लेकिन यह नीम ही पाया गया। कोड़े लगाय न देना उन्ने परवन्ने शूद्रपनेसे कुछ दिया तथा उन्ने की उन्ने व ननोंको वैशिश्वक करनेका अधिभार दिया।

वाल्मीकीके वारों धर्म ही प्रायः विभासो, अन्वयनिस साहसी और बमंड हैं।

भावा और साहित्य।

यद्यद्यसे यहाँकी भाषामें बहुत अंतर है। यद्यद्यकी वर्णमालामें २० अक्षर हैं, किन्तु बालि आदि पत्रिभेदिक दीपुजकी वर्णमालामें १८ अक्षर देखे जाते हैं। भाषाके पत्रिभेदिक बालिहोपके साथ सुन्द, मलय प्रभृति पत्रिभेदिक दीपपुञ्जकी भाषामन एकता स्थिर की है। सुन्द और बालिहोपके त, द और घ में विशेष भेद नहीं है। संस्कृत तालव्यके उच्चारणके अनुसार इनका व्ययहार होता है। सुन्द और बालिहोपकी भाषामें आकारपा स्पष्ट उच्चारण किया जाता है, किन्तु यद्यद्यमें 'अ' के स्थानमें 'उ' का प्रयोग होता है। इ, और ए का विशेष भेद रहने पर भी इनका उच्चारण कभी कभी अनुनासिक योगमें होता है। "अ"के स्थानमें य तथा कभी कभी अर्थः स्थान कुछ व्ययहार भी देखा जाता है। इनके अन्वयपद "ह" नहीं होते।

यद्यद्यकी तरह यहाकी भाषा को प्रकारकी है। उन्व श्रेणीके लोग परिमार्जित भाषा बोलते हैं। परिमार्जित भाषा ही यहाकी सभ्य भाषा है। अन्य जनघाण जो भाषा बोलते हैं वह निम्न श्रेणीकी भाषा माना जागी है। परंतुभा यद्यद्यके रहनेवाले जिन परिमार्जित और श्रेष्ठ तर भाषा बोलते हैं, उससे बालिहोपके उच्चारणके लौगीक भाषा बहुत निम्न है। यद्यद्यकी निम्नश्रेणीकी भाषाकी बहुत कषाये बालिहोपकी उसम भाषासे निम्नो ज्ञ्यती हैं। किन्तु यद्यद्यकी भाषामें मर्जित शब्दोंका प्रयोग नहीं देना जाता। यद्यद्यके रहनेवाले शब्दमें बालिहोपकी भाषाका अर्थ समझ कर सकते हैं, किन्तु साफ कुछ चमन नहीं बोल सकते। इन लोगोंको निम्न श्रेणीकी भाषामें मन्व और सुन्दर शोषयास्त्यो की भाषाका भेद बहुत रहता है।

यह भाषा यद्यद्यग विचारियों के लिये समझ हो र्हे है। यद्यद्यके रहनेवाले और बालि उग्रनिधेके स्था पत्रके पत्रिने यहाका अधिवासो यद्यो भाषा बोलते थे। निम्नश्रेणीकी भाषा वचपि रूपान्तरित और परिमार्जित हो गई है तो भा पत्रिभेदिक भाषाकी स्मृति आज

व्यमान बनो हुई है। भाषाके विद्वान् यह भी कहते हैं, कि चार सौ वर्ष पहिले बालि, मलय और सुन्द प्रभृति द्वीप अर्द्धसम्भ्य थे। सुतरा यहाकी प्रचलित भाषा भी उसी तरह विटल रही होगी, इसमें आश्चर्य ही क्या ? सुमात्रासे बालि और उससे पूर्वदिक्-वर्ती द्वीपों की भाषाका निकट सब घ घेज कर भाषाके पंडितों ने यह सिद्धान्त किया है, कि बालिद्वीपमें मलय और सुन्द निवासियोंका उपनिवेश ही इस भाषा सामग्रस्यका कारण है। जब विजयो यवनिवासियो ने आ कर बालिद्वीपके बट्ट सप्यक लोगों को इसी एक भाषामें बोलते देखा तब भाषाके परिवर्तन करनेमें उन्होंने किस्ती प्रकारकी चेष्टा न की। उस समय यवद्वीपनिवासी यही भाषा बोलते थे, इसलिये यह बालिद्वीपको राष्ट्र भाषा बन गई तथा पलिनेशिय मिश्रित भाषा ही बालिद्वीपकी निम्न श्रेणीकी भाषा हो गई।

पूर्वतन यवभाषाके सहित बालिद्वीपकी भाषाका जो निकट सम्बन्ध है वह क्वि भाषामें मिले हुए तगल और मलय शब्दके अस्तित्वसे हो जाना जाता है। क्योंकि, क्विभाषाकी उत्पत्तिके समयमें यवभाषा परिमार्जित नहीं हुई थी। क्विभाषामें जो मलय शब्दका अस्तित्व है उस यवभाषाका पलिनेशीय भाषाके साथ संघ मालूम पड़ता है। किन्तु वर्तमान यवद्वीप भाषामें मलयदेशीय शब्दका प्रयोग नहीं देखा जाता। बालिद्वीपमें यवनिवासियों के आगमन और जातिविभागके स्थापित होनेसे यहाकी भाषामें भी भेद दिखाई देता है अर्थात् कुलीन ब्राह्मण और क्षत्रिय परिमार्जित उत्तम भाषा तथा निरुद्ध शूद्र लोग जघन्य भाषा बोलते हैं। बालिद्वीपके निकट-वर्ती स्थानों में हिन्दू सभ्यताका विस्तार है, तो भी उन लोगों की आदि और पैतृक भाषामें कोई विशेष भेद नहीं है। कथित भाषाको छोड़ बालिद्वीपमें लिखित भाषा भी है। वर्तमान ग्रन्थों के अतिरिक्त प्राचीन काव्यप्रथ कर्तितामें तथा ब्राह्मणों का धर्मशास्त्र संहृत भाषामें लिपिबद्ध होते थे। जो ब्राह्मण यवद्वीपमें आये थे अपने धर्म शास्त्रप्रथों की साथमें लाये थे, ऐसा समीचीन स्वीकार करते हैं। ये लोग उच्च श्रेणीके संहृतविद्वान् थे; किन्तु प्राकृत भाषामें भी उनकी विशेष व्युत्पत्ति थी तथा ये

प्राकृतिकभाषा अचड़ी तरह बोल सकते थे, ऐसा बहुलौका विश्वास है। यदि ईसाजन्मके ५०० वर्ष बाद भारतवासिका इस द्वीपमें आगमन मान लिया जाय तो क्वि भाषाकी उत्पत्तिके प्रारम्भमें कोई न कोई अग्रथ ही कारण होगा। क्योंकि, भारतीय प्राकृतकी विकृतिकासमावेज उमका एकदम नहीं हुआ है। भारतके बहुतसे हिंदू और बौद्ध लोग अपने धर्मके प्रचारके लिये यवद्वीपमें आये थे। वे यद्यपि पाली और प्रकृत भाषाके गुरु जानकार थे तो भी उनकी अपने धर्ममें यहाँके लोगोंको दीक्षित करनेके लिये यहाँकी भाषा सीखनी पड़ी थी। बौद्धलोगोंके साथ ब्रह्मोपासक हिंदू भी यव, बालि आदि द्वीपोंकी भाषा सीखनेमें रत हुये थे। बालिवासियोंकी अपने धर्ममें दीक्षित करने तथा अपने शास्त्रोंमें कथित पूजाओंमें विश्वास उत्पन्न कराने और भक्ति उनके हृदयमें जगानेके लिये बालिभाषा का ही उन्होंने आश्रयग्रहण किया था। क्योंकि, ये जानते थे, कि दूसरे देशमें अपना धर्म फैलानेके लिये यहाकी भाषाका सीखना नितान्त आवश्यक है। प्रभयना और बुद्धोशुद्धोरके खड्डरोंसे जाना जाता है, कि यवद्वीपमें बौद्ध और ब्राह्मण बेरोकटोक एक ही स्थानमें रहते थे। उनकी पूजापद्धति मिश्र अग्रथ थी परन्तु आपसके मूल-मूलोंमें बर्तों भी भेद नहीं पाया जाता था। क्वि भाषा में रचित प्रथों का कुछ भाग शैव ब्राह्मणोंके द्वारा बनाया गया है तो दूसरा भाग बौद्धों के द्वारा। दोनों ही प्रकारके प्रथों को बालिवासी आदरकी दृष्टिसे देवते हैं और उन का पाठ करते हैं।

विदेशियों के समानभाव होनेसे ही क्विभाषाकी उत्पत्ति होती है। भारतसमागत बौद्धों ने यवद्वीप निवासियों की सख्या अधिक देख कर नई भाषाका प्रचार करनेमें साहस नहीं किया। बौद्धलोगों ने विज्ञान और धर्मशास्त्रों के भाषों को तर्ह शनिवासियोंके सरल रूपसे समझानेके लिये यहाँकी भाषामें संहृतका प्रचार किया। यवद्वीप निवासियों की भाषामें ऐसा अर्थबोधक कोई शब्द न रहनेके कारण भारतीय धर्मोपदेष्टाने उनकी शिक्षाके लिये अगणित संहृत शब्द भाषामें विशिष्ट किये। उसी मिश्र भाषासे प्रथ लिखे गये और धर्म शिक्षाका कार्य संपन्न होने लगा।



मनुष्यगत मानवधर्मशास्त्रके नहीं होने पर भी ये लोग मनुजी हो (मनु) धर्मशास्त्रके प्रणेता मानते हैं। पूर्वाधिगम अथवा त्रिगुणास्त नामक ग्रन्थ भी मनुके बनाये हैं। इसकी भाषा कविता और दृष्टीरहित श्रव्य है।

साधारण कविसाहित्यके बीच भारत मुद् नामके ग्रन्थका उल्लेख किया जा सका है। किसी समयमें यही महाभारतका अनुवाद कह कर प्रसिद्ध था; किन्तु महाभारतकी पोथी मिल जानेसे जो छम लोगोंके बीच फैल रहा था वह मिट गया। भीष्म, द्रोण, कर्ण और शत्रुघ्नके ले कर वाग्विदुष्यदेव नाम दिया गया है। वेदिकी राज धीपादुकापातर जयशयकी आश्रामसे हे'पुमवने इस ग्रन्थका निर्माण किया था।

४ विद्याह—म' पुकण्य प्रणीत कविताका एक अपूर्व ग्रन्थ। ५ स्मरवहन—रामायण प्रणेता कवि रामा हनुमके पुत्र मधुधर्मज द्वारा रचित। ६ सुमनाशास्त्र—रघुवज विषयक ग्रन्थ। ७ बोम (भीम) काव्य—जिसमें विष्णुके बीरम और पृथ्वीके गर्भसे भीम दानवकी उत्पत्ति और हृष्णगीके हाथ उसका मरण विषय उल्लिखित है। म'पु प्रथम बोधनामक बौद्धरचित एक शास्त्र है। ८ अर्जुन विजय—रावणकार्तवीर्य और अर्जुनके युद्धका वर्णन इसमें है। यह म'पु हस्तुलर बोध नामके बौद्ध द्वारा प्रणीत है।

९ सुतमोम—इसमें केनकपर्वका उपाख्यान लिखा गया है। १० हरिवंश—महाभारतका परिशिष्ट अंश। मधुपुत्रु बोध नामके एक बौध्ने इसकी कवितायामें लिखा है। पूवाक कितने ग्रंथ उल्लेखनीय हैं।

बयद अथवा ऐतिहासिक शौर्यधर्म १ केनदर श्लोक—वेदिकि, मन्त्रपरिण और कारिराज यज्ञके बादि पुढव प्रथमपुत्र केनरलोचने लेबर मरुत्पायिकाका आरंभ किया है। २ रङ्गमये—जिसमें वेदिकिराजमंभी रङ्गमयके द्वारा त्रिगुणबुद्धकी पराक्रम और वेदिकिराजय शका कवित कल्पित है। ३ उजानपथ और ४ उजानपात्रि—इसमें उल्लेखी हीनेके रामासोके कवितका उल्लेख है। ५ वेमैदङ्ग—इसमें बालिवारुका वर्णनात्मक इतिहास है।

गुणर अथवा धर्मविषयक और आन्विक ग्रंथ अर्धमय है। ये अधिकांश कृतियोंमें लिखे गये हैं। उनमें १ सुवम

संज्ञेय, २ सुवमकोय, ३ सुदम्पतितरुय, ४ शासमसुय, ५ तरुयमान, ६ कन्दमय, ७ समोत्कान्ति, ८ सुतुर कानोष (कामाख्यातक ?), ९ राजनीति, १० भौतिकशास्त्र वा भौतिकशास्त्र, काम दृशनीति, १२ नरनीतीय, १३ रत्नक और १४ त्रिधिदुगुणित ये कितने ग्रंथ सुष्ठु हैं।

पहिले दो धर्मशास्त्रके विषयका उल्लेख किया जा चुका है। यहा पर १ आगम, २ अधिगम, ३ देवगम, ४ नार मनुष्यय, ५ दुष्टकालमय, ६ स्यंभू या हृत्तम्ब, ७ वैवर्ष और ८ यहसय आदि कितने ग्रंथ मिलते हैं। मेनेय शास्त्र नामका एक स्मृतिग्रन्थ है जिसमें भारतीय धर्मशास्त्रके अनुसार एक स्मृतिग्रन्थ है। लेकिन इसका प्रकार अधिक नहीं है। पूर्वाधिगम नामके स्मृतिशास्त्रकी उपर मणिकामें जो कुछ लिखा है वह समस्त उद्धृत नहीं किया गया है। केवल संस्कृत शास्त्रका बालि कणालर नहीं हुआ है। इस मधुमेने सब बौद्धों को मानते हैं, कि यहाकी शास्त्रीयभाषायामें कितने संस्कृत शब्दोंका मिलाव है—

“अभिमानमंत्र। त्रिद्वर्णपूर्वाधिगमशास्त्रशास्त्रोत्तरतु पूर्व्यादिमसङ्ग, तादस धृशासार्थे राजपुरोहित मयं गुणकभापुरादिमसङ्ग सध्वानेन हृय-तमिच्छहण सङ्ग। प्रचुडामणि निरदिन प्रतिष्ठित तकाय सहन पराचार्य निय कये, कनिष्ठ मध्योत्तम न' द्या शिष परमादि मुद् महा भगवातद्गु, गेपीर निर प'शुदारणमस्माद्भूतानीमकदि भयनद्ग, पीर पणद्वहन मस्या तकाय निद्ग, मन्वान प्रणि सन्ता सङ्ग, मसङ्ग, हुर निर अतः प्रमाणभेन पने, निद्ग, रस्निद्ग, शासनाधिगम शास्त्रमातोद्गुम रि दर पद्ग, क मकयेहन गहन गङ्ग, शुभ मे निवागम, किमुत महम सङ्ग, शुगङ्ग, निय विनायक रथपरि विद्, नगर गङ्ग, ( सङ्ग ? ) हृय अ'शुनि धे। गङ्ग, महारेय रिङ्ग, नगर लावन रिङ्ग, प्रदेशनगर कर्हण गङ्ग, गतिक प्रतीयक वरपदायविष्णुदे सङ्ग, अर नङ्ग, मम मयकेन विद्यादिनिद्ग, सर्ववपरिङ्ग, सनातन य शुभङ्ग, रिङ्ग, प्रदेश न त मु इरनीर, पवन गङ्ग, हङ्ग, अधिगमशास्त्रशास्त्रोद्गुम मुग पमकिङ्ग शास्त्रावन्नीरटाकाकये।”

नय वा सुतुरकामोह नामके ग्रंथमें उगमसे मधुपु पर्यन्त बरनीय धर्मशास्त्रीका वर्णन है। पदपञ्चमे

इसी स्मृतिके द्वारा वर्णित धर्मका अवलम्ब ले अपना जीवन बिताते हैं। राजा अथवा ब्राह्मणको इस धर्मनैतिके अनुकूल कार्य करने पर "राजर्षि" उपाधि दी जाती है तथा शास्त्रलिखित आचरणके नहीं करनेमे राजाओंको अभियेन्द्रक्रिया नही होती।

मलत् प्रथममें पञ्जीकी घोरकहानीका जिक्र है। उसके छद्म किदुङ्ग, कबिसे बिलकुल अलहद्द हैं। गम्बु नामक नाट्यशालामें इस प्रथके स्थल विशेषका अभिनय होता है। किन्तु यहा पर कालिदासादि विद्वानोके बनावे गये नाटकको वा आभाम माल नहीं है। भारतीय नाटकके आव्दर नही होनेमें दो कारण कहे जा सके हैं। सभ्य है कि, भारतीय ब्राह्मणोके यद्योगी आनेके बाद कालिदासादि परिणतकोके महामूल्य नाटक बने हो, अथवा धर्मप्रचारक ब्राह्मणोने धर्मशास्त्रसे भिन्न जा नाटककी आलोचना करनेमें ध्यान नही दिया हो।

धर्मशास्त्र, पौराणिक कथा और इतिहासके अनि रिक इनके यहा काल जाननेके लिये ज्योतिषशास्त्र भी हैं। कालके निर्णय करनेमें इन लोगोके ही मत हैं। पर भारतीय दूसरा वाशय अथवा पलिनैशिय।

भृगुगर्ग नामक पुस्तकसे मालूम पडता है, कि वे लोग जालिवाहनराज प्रतिष्ठित शक सम्वत् (७८ ई०)से कालका निर्णय करते हैं तथा कसङ्ग अथवा चैत्रमाससे वर्षके आरम्भका समय मानते हैं। सुमलमानोंके प्रभावसे यद्योगीकाल गणनामें हेर फेर अवश्य हुई, पर यहाकी गणनामें चन्द्रमासको अग्रह सौर मासके अतिरिक्त और कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ। जेष्ठ और आषाढके अतिरिक्त महिनोके नाम मरुत् और बालिदेशकी भाषामें हैं। यथा—धावण (फव), पात्र धा, याद्रवद् (भाद्रपद) अथवा फरो, अमुजि (आष्वयुज धा धादिवन), वनिग (कार्तिक) अथवा कपत, माग शिर, मार्गशीर्ष (अग्रहायन) धा कालिम, वनम धा पोथ्य (पौष), कपित धा माग (माघ), कज्जुल धा पान्जुन (काल्जुन) कसङ्ग अथवा मधुमास (चैत्र), धाद्रा धा घेशक (वैशाख) पव जेष्ठ (ज्यैष्ठ) और आषाढ। प्राचीन रोमक आदिके प्रथके अनुसार बानिद्वीपमें पहिले १० मास प्रचलित थ, उनमें ज्येष्ठ और आषाढके दो माम

नहीं थे तथा वे पहिले ३५ दिनका मास मानते थे। दिनोंके नाम पलिनैशिय और हिन्दी भाषामें मिले हुए हैं। यथा—रदिति सोम, अङ्ग गर, छुङ्ग, वृहस्पति, शुक्र और जनेचर (हिंदी) पर पहिङ्ग, पुजन, वगि, कालियना और मेनिज (पलिनैशिय)। इसके अन्तर्गत उन लोगोंके प्रह नक्षत्र आदिके विषयका तथा इनके द्वारा होनेवाले मनुष्योंके शुभ अशुभ फलोंका भी ज्ञान है। उनका चन्द्रमास शुक्र (तङ्गगल) और हृष्यपक्ष (पुङ्गुगङ्ग) ले कर माना जाता है।

उक्त ३५ दिनमें ३५ नक्षत्रोंके फलाफलको छोड कर भी वे जात बालरुके शुभाशुभ जाननेके लिये सप्ताहके प्रति दिन १ देवता, २ नरमूर्ति, ३ वृक्ष, ४ पक्षी, ५ भूत और ६ सत्यके अस्तित्वको कल्पना करते हैं तथा उनके प्रभावोके अनुसार मानव चरित्रकी कल्पना करते हैं।

अमृत, शून्य, पात्र, पति, और लिन्योक् दिनके वे पात्र लक्षण हैं। अमृत क्षणमे उत्पन्न होनेसे सौभाग्यशाली शून्यमें दरिद्र, कालमें रिपुवश, पति क्षणमें मृत्यु और लिन्योक्में पैदा होनेसे मनुष्य अमकारिक और चोर होता है। इसके सिवाय उनका दिन आठ घटिकांमें विभक्त है। इसीको जाननेके लिये वे जलयतका प्यवहार करते हैं। पानीकी घडी अपने देशमें भी प्रसिद्ध है। प्रत्येक राजमहलमें ऐसी एक घडी होती है। पानी भरने पर उसके पानी फँकनेके लिये एक मनुष्य नियुक्त रहता है। जब घडी पूरी हो जाती है तब वह जनताको जतानेके लिये नगारोंमें चोख देता है।

पञ्जिकाकी गणनामें भृगुगर्गके सिवाय वे सुन्दरी क्रम और सुदरी शुक्र नामकी पुस्तककी सहायता लेते हैं। ज्योतिषचक्रमें राजियोंकी गणना करते हैं। वृत्तिकके स्थानमें सुत्तिक, कर्कटके स्थानमें रकठ, मीनके धरमें कु भ और मेयके धरमें मन्त्र आदि देवी जाती हैं। प्राचीन प्रोक् लोगोंकी तरह वे तुलाराजि नहीं मानते। तुलाके धरमें वृत्तिकका अधिकार पाया जाता है।

भारतनामियोंकी तरह इनका भी विश्वास है, कि राहु प्राससे मृत्यु और चन्द्रमाका ग्रहण होता है। मृत्यु ग्रहणका नाम 'ग्रह' और चन्द्रग्रहका नाम 'राहु' है। ग्रहणके समय वे पत्तों और चित्कार द्वारा विद्वट शब्द करते

मनुनाम मानवधर्मशास्त्रके महो होत पर भी ये श्लोक मनुकी ही ( मनु ) धर्मशास्त्रके प्रणेता मानते हैं । पूर्वाधिगम मध्या नियमात्मन नामक ग्रन्थ भी मनुके बनाये हैं । इसकी भाषा कविता और श्लोकोंमें शुद्ध है ।

साधारण धर्मशास्त्रदृष्टिके बीच बाग्य युद्ध नामके प्रथम उल्लेख किया जा सकता है । किन्तो समयमें यही महाभारतका अनुवाद बह कर प्रसिद्ध था ; किन्तु महाभारतकी घोषी मित्र जातेमें जो मम लोगोंके बीच फैल रहा था यह मिट गया । भीष्म, द्रोण, कर्ण और अन्य पर्वकों से बर ब्राह्मणयुद्ध तैयार किया गया है । केदिरि राज शीपादुवायनाम जयबपकी आशासे हेपुमदो इस प्रथम निर्माण किया था ।

४ विवाह—म पुत्रपुत्र प्रणीत कविताका एक अध्याय प्रथम । ५ ममवृद्धा—रामायण प्रणेता कवि रामा कुसुमके पुत्र मधुचर्मन द्वारा रचित । ६ तुमनागान्तक—रघुवज नियम प्रथम । ७ बीम ( भीम ) काथ—जिसमें विष्णुके नीरस और पृथ्वीके गर्भमें भीम क्षतकी उत्पत्ति और एकात्मके हाथ उतरा मरण विषय उल्लिखित है । मधुमद बोध नामक धीन्द्रगित एक शास्त्र है । ८ भर्तृन विषय—राजगणतंत्रियों और भर्तृनके युद्धका वर्णन इसमें है । यह मधु तन्तुकर बोध नामके बीच द्वारा प्रणीत है ।

९ सुप्रसोम—इसमें केतकपर्व का उपाख्यान किया गया है । १० हरियंज—महाभारतका परिनिष्ठ संज्ञ । मधुपेनुलु बोध नामके एक बोधने इसकी कवितागामे किया है । पूर्वोक्त कितनी प्रथम उल्लेखनीय हैं ।

बपद भाषया पतिदासिक बौर प्रथम १ केदार श्लोक—केदिरि, मन्वदित और बालिदाज प्रथमके आदि पुत्र प्रथमपुत्र केन्द्रधोकासे ले बर ब्राह्मणयुद्धका आरंभ किया है । २ बह्मण्ये—जिसमें केदिरिराज-मकी बह्मण्येके द्वारा नियुक्तकी पराजय और केदिरिराज वजरा चरित वर्णित है । ३ उज्जयय और ४ उज्जययानि—इसमें उक्त दो श्लोकके राजाशोक कविताका उल्लेख है । ५ वेमैवदुइ इसमें बालिदासका वर्णमान इतिहास है ।

गुरु भवया धर्मविद्वज और तात्त्विक प्रथम अर्थात् है । ये कवितागाम स्तोत्रोंमें मिले गये हैं । इसमें १ भुवद-

मधेय, २ भुवनवीप, ३ वृहस्पतिवत्, ४ मारजमुक्क ५ तक्षकान, ६ वन्दमान्, ७ मतोदनामि, ८ गुरु कामेय ( कामाख्यातर्क ? ), ९ राजनीति, १० नीतिप्रथ का गोतिनाम्य, काम वज्रानि, ११ गरीतोष, १२ शकव और १३ तिथिद्विगुणित ये कितने प्रथम मुख्य हैं ।

पहिले ही धर्मशास्त्रके विषयका उल्लेख किया जा चुका है । यहां पर १ आगम, २ अधिगम, ३ देवागम, ४ नार मधुधप, ५ दुष्टकालमय, ६ स्वयंभू या स्वयम्भू, ७ वैश्वंश और ८ यक्षसंघ आदि कितने प्रथम मिलते हैं । मेघद शण्य नामका एक स्मृतिग्रंथ है जिसमें भारतीय धर्मशास्त्रके अनुसार एक स्मृतिग्रंथ है । लेकिन इसका प्रचार कबिद नहीं है । पूर्वोधिगम नामके स्मृतिनामकी उक्त मणियामें जो कुछ लिखा है यह समस्त उक्त श्लोकोंकी स्थी किया गया है ; केवल संस्कृत शब्दका भाति क्या न्तर नहीं हुआ है । इस मधुमेसे सब कवि जान सकते हैं, कि यहाँकी शास्त्रीयभाषामें कितने संस्कृत शब्दोंका मिलन है —

“अभिज्ञानमंत्र । लिट्पूर्वोधिगमशासन शाब्दभाषां जट्ट पूर्वोरम सङ्ग हलन्स घृष्टाचार्ये राजपुरोहित मर्ष गुणतभापुरदिन सङ्ग मर्कात्रन हृदय-अभिप्रदरय सङ्ग प्रवृद्धामणि शिरसि प्रतिष्ठित सङ्ग सदन पराचार्यं निय कथे, कनिष्ठ मध्योक्तन म' व' शिष्य परमादि शुद्ध महा मगयातनङ्ग, वेणीर निर प शुद्धाणनस्माङ्गातनीरसकति भयङ्ग, नीर पणदरम भस्म तक्षपुनिङ्ग, सत्तान कति मन्ता मङ्ग, जसमङ्ग, वृज निर धतः प्रमा'बंन घने निङ्ग, रक्षामिङ्ग, सामार्थाधिगम शाब्दभाषां जट्ट रि पर पङ्ग, मकपेदन जट्ट मङ्ग, सुम् मे निवागम, किमुत मरन मङ्ग, मुवङ्ग, निय विपावः कथिदि रिङ्, नगर मङ्ग ( मन्वण ? ) शृण्य ध मुनि येः मङ्ग, महापय रिङ्ग नगर लायन रिङ्ग, प्रदेगतन्स कन्दल मङ्ग, धार्तिक प्रतीयन धारहामविच्छेद मङ्ग, मय मङ्ग, मम मरकेक पिनाम्निङ्ग, सार्थकानिङ्ग, सगामन्थ मुमङ्ग, रिङ्, प्रदेत म त लु इतनीर, मन्म सङ्ग, इङ्ग, अधिगमशाब्दभाषां जट्ट युग पानिङ्ग शासनप्रणीतरीकारथः ।”

तत्त्व वा गुरुभक्त्या नामके संघमें म्ममेव शृणु पर्वत बरलोच धर्मशिवात्मका वर्णन है । यक्षकाल

इसी स्मृतिके द्वारा वर्णित धर्मका अन्वय ले अपना जीवन बिताते हैं। राजा अथवा ब्राह्मणों ने इस धर्मनिति के अनुकूल कार्य करने पर "राजर्षि" उपाधि दी जाती है तथा शास्त्रलिखित आचरणके नहीं करनेने राजाओंकी अभियेकक्रिया नहीं होती।

मलम् ग्रन्थमें पञ्जीकी गीरकहानीका जिक्र है। उसके छद किडुङ्ग, क्विसे विलकुल अलहदे हैं। गम्बु नामक नाट्यशालामें इस ग्रन्थके स्थल विशेषका अभिनय होता है। किन्तु यहा पर कालिदासादि विद्वानों क बनाये गये नाटकों का आभाम माल नहीं है। भारतीय नाट्यके आर नहीं होनेमें दो कारण कहे जा सके हैं। सम्व है कि, भारतीय ब्राह्मणों के यवहीण आनेके बाद कालि दामादि पण्डितों के महामूल्य नाटक बने हो, अथवा धर्मप्रचारक ब्राह्मणों ने धर्मशास्त्रसे भिन्न जा नाटकों को आलोचना करनेमें ध्यान नहीं दिया हो।

धर्मशास्त्र, पौराणिक काव्य और इतिहासके अति रिक्त इनके यहा काल जाननेके लिये ज्योतिषशास्त्र भी हैं। कालके निर्णय करनेमें इन लोगों के दो मत हैं। एक भारतीय दूसरा धार्मिक अथवा पल्लिनेशिय।

भृगुगर्ग नामक पुस्तकसे मालूम पडता है, कि वे लोग गालियाहनराज प्रतिष्ठित शक सम्वत् ( ७८ ई० )से कालका निर्णय करते हैं तथा कसङ्ग अथवा चैत्र मासमें धर्मके आरम्भका समय मानते हैं। मुसलमानों के प्रमाणसे यवहीणको काल गणनामें हेर फेर अश्य हुए, पर यहाकी गणनामें चन्द्रमासकी जगह सौर मासके अतिरिक्त और कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ। जेष्ठ और आषाढके अतिरिक्त महानो के नाम सस्वट और बालिदेशकी भाषामें हैं। यथा—धायण (कस), पात्र घा, घाद्रवद ( भाद्रपद ) अथवा कटो, अमुजि ( आश्वयुज घा आश्विन ), कतिग ( कार्तिक ) अथवा कपत, माग शिर, मार्गशीर्ष ( अग्रहायण ) घा कालिम, काम घा पोव्य ( पीप ), कपित घा माग ( माघ ), कडुडु घा पाल्युन ( फाल्गुन ) कसङ्ग अथवा प्रभुमास ( चैत्र ), घादस घा वेराक ( वैशाख ) एष जेष्ठ ( ज्येष्ठ ) और आषाढ। प्राचीन रोमक आदिके मतके अनुसार बालिद्वीपमें पहिले १० मास प्रचलित थे, उनमें ज्येष्ठ और आषाढके दो मास

नहीं थे तथा घे पहिले ३५ दिनका मास मानते थे। दिनोंके नाम पल्लिनेशिय और हिंदी भाषामें मिले हुए हैं। यथा—रविति सोम, अङ्ग गर, बुङ्ग, वृहस्पति, शुक्र और ज्ञानेश्वर ( हिंदी ) एष पहिले, पुअन, वागि, कालियना और मेनिग ( पल्लिनेशिय )। इसके अलावा उन लोगों के ग्रह नभ्य आदिके विषयका तथा इनके द्वारा होनेवाले मनुष्योंके शुभ अशुभ फलोंका भी ज्ञान है। उनका चन्द्रमास शुक्र ( तङ्गमल ) और कृष्णपक्ष ( पुङ्गुअङ्ग ) ले कर माना जाता है।

उक्त ३५ दिनमें ३५ नक्षत्रोंके फलाफलको छोड कर भी वे जात कालके शुभाशुभ जाननेके लिये सप्ताहके प्रति दिन १ देवता, २ नरमूर्त्ति, ३ वृक्ष ४ पक्षी, ५ भूत और ६ सत्यके अस्तित्वको कल्पना करते हैं तथा उनके प्रमाणों के अनुसार मानव चरित्रकी कल्पना करते हैं।

अमृत, शून्य, काठ, पति, और लिन्थोब दिनोंके घे पात्रलक्षण हैं। अमृत क्षणमें उत्पन्न होनेसे सौभाग्यशाली शून्यमें द्रिष्ट, कालमें रिपुवश, पति क्षणमें मृत्यु और लिन्थोबमें पैदा होनेसे मनुष्य असचरित और चोर होता है। इसके सिवाय उनका दिन आठ घटिकोंमें विभक्त है। इसीको जाननेके लिये वे जल्यतका प्यवहार करते हैं। पानीकी घडो अपने देशमें भी प्रसिद्ध है। प्रत्येक राज-महलमें ऐसी एक घडो होती है। पानी भरने पर उसके पानी फेंकनेके लिये एक मनुष्य नियुक्त रहता है। जब घडो पूरी हो जाती है तब यह जनताको जतानेके लिये नगरमें चोब देता है।

पञ्जिकाकी गणनामें भृगुगर्गके निवाय घे सुन्दरो क्रम और सु दरी भुङ्क नामकी पुस्तककी सहायता लेते हैं। ज्योतिषकमें राजियोंकी गणना करते हैं। घृश्चिक के स्थानमें मृचिक, कर्कटके स्थानमें रक्व, मोनके घरमें कु म और मेयके घरमें मन्नर आदि देतो जाता हैं। प्राचीन ग्रीक लोगोंकी तरह घे [तुअराशि नहीं मानते। तुगके घरमें घृश्चिकका अधिकार पाया जाता है।

भारतवासियोंकी तरह इनना भी विश्वास है, कि राहु ग्रामसे सूर्य और चन्द्रमाका ग्रहण होता है। सूर्य-ग्रहणका नाम 'ग्रह' और चन्द्रग्रहणका नाम 'राहु' है। ग्रहणके समय घे यतों और चित्कार द्वारा विन्ट शय्य करते

है। विद्वान्मनू ने कि इन अर्थोंमें नयनीय हो ग्रंथ ही  
 इत्युक्त आशयको छोड़ देने है। हमारे देशमें आज  
 का भाषाके समय मन्त्राचार्य और शान्तिशास्त्रादि  
 शास्त्रज्ञ करने हुए मन्त्राचार्य करने हैं।

यह विचार पहिले ही क्या जा चुका है, कि प्रायण इस  
 शास्त्रमें कच आये थे, उनके समयका विचार करना अत्यन्त  
 कठिन है। जब शौर धर्मका प्रसार यदा तब वीर  
 साधुओंके आगे धर्मके प्रचारके लिये नाना देशोंमें पर्यटन  
 किया। शास्त्रशास्त्रों के प्रमाणका और प्राचीन संस्कृत  
 के सिद्धांत दूसरे भाषाके प्रथम अभाव देशोंमें जान  
 मान किया जाता है, कि प्रथम या द्वितीय जन्तुओंके बीच  
 में यदा शास्त्रोंका आगमन हुआ होगा। पूर्वाश्रमण्य शास्त्र  
 शास्त्रोंके लिये ऐसा प्रचार है, कि शिष्ट (कनिष्ठ) देश  
 में उनके देशमें सम्पत्ता धर्म और व्यवस्थाका प्रचार हुआ  
 है। पहिले यद्यपि, पीछे यदासे सम्पत्तियोंमें ध्यात  
 हो गया। यदा पर शास्त्रोंके प्रचुरता देना । तदाशास्त्रोंके  
 उपनिवेशोंके बसाने जाहा। सबसे पहिले १५ जन्तुओं  
 में त्रिमुष्टि नामक किसी प्राणियों बहुतसे लोगोंके  
 साथ आ दक्षिण उपमत्त पार किया और ये सबके सब  
 मनु पर्यंतके पादुमत्तमें बस गये। यद्यपि जो सम्पत्त  
 मत्तका है । उनको त्रिमुष्टि नामके एक प्राचीन राजाने  
 पालाया था। इनके लिये यह सम्पत्त आदिनाक (आदिनाक)  
 नामसे प्रसिद्ध है।

यद्यपि एक उदाहरणसे जाना जाता है, कि  
 पहिले बहुतसे हिन्दू मित कर यदा आये थे। उनके  
 साथमें ही पुत्र थे, यह भी सहजमें निश्चय किया जा  
 सकता है। महामना त्रिमुष्टि भी अपने ही पुत्र सहित  
 आये थे। उनकी महामनीषीका नाम इन्द्राण्य-वाशि  
 ष्ठी ही पुत्रों का मनुमान्तक और मनुमादेव था। ये  
 शौर थे, जो हिन्दू समाज प्रसार करने लिये। इन्होंने  
 और इनके शिष्योंने यहाँ कुछसमय तक राज्य  
 किया था।

१०० सम्पत्तक इस देशमें बहुत अर्थविशेष  
 आये थे। उनमें कुछ प्रसिद्ध शास्त्रोंके नाम थे हैं—  
 वेदशास्त्र—१०० अर्थमें मोक्ष—२०० अर्थमें,  
 पुत्रिक—३०० अर्थमें दूध—३३३ अर्थमें तथा त्रिमुष्टि भी

उनके पुत्र इनबाहु ३५० अर्थमें यहाँ आये थे। ४८० अर्थमें  
 बहुतसे शैव पंडित यद्यपिमें पधारे। विष्णु उनके साथ  
 साथ यद्यपि वामिनीयका मन नहीं मिलता था, इस  
 कारण वे लोग भगा दिये गये। इन्होंने यहाँके राजा मुनु  
 क्षामको जल्प ली। राजा मुनुक्षाम उन लोगोंके साथ  
 हो गये। यद्यपि वामिनीयके मुसत्तमा हो गये कुछ समय  
 पहिले विन्नी शीघ्रमें मनुपरिम नामक स्थानके शैव राजा  
 प्रविशयके यदा आश्रय लिया था। मनुपरिम राजाक मनु  
 सट हो जाने पर ये लोग बालिशास्त्रोंके भाग गये। उन्हें  
 अधिपतिता नाम नामुदाय था।

बालिशास्त्रोंमें इस समय जो शास्त्र चर रहा है, यह पर  
 शास्त्रोंके अर्थका ५ वर्ष कम है। इन पांच वर्षोंकी कमी क्यों  
 हुई। बालिशास्त्रोंके लिये इसका कोई कारण बतला  
 नहीं सके हैं। मालूम पड़ता है, कि शास्त्रमात्र मनुके  
 रथानमें सौर मनुमानक परिवर्तन, पवित्रशास्त्र मनुका  
 संमिश्रण आदि शेषोंमें ऐसा विज्ञात हुआ है। पर  
 १० नामका १ वर्ष, पीछे १२ नामका माना गया। यदि  
 मनुमास्त्रोंके मनुका न की जाय तो भी इनके साथ  
 हिन्दू पवित्रापी विभिन्नता देसों जाती है। उन लोगोंका  
 मुनाशुभा घटना और समय निरूपणके लिये पवित्रापी  
 आश्रयकता नहीं होती। ये लोग विशेष शत्रु शास्त्र पार  
 तोय पुत्रोंका मनुदत्त, मनुदत्त नामक मनुपरि मनुपरि  
 पत्तन अथवा कृपांतर मनुदत्त, अन्य प्राणिक निरुद्ध  
 आदि घटनशैली देना पर समयका निरूपण कर लेते हैं।

५००, देवता और विष्णु।  
 भारतको दो हिन्दू धर्मशास्त्रोंके बालिशास्त्रोंमें प्रयोग  
 किया था। पहिले लिया गया है, कि शैव धर्मशास्त्रोंके  
 साथ साथ शैव शास्त्रोंमें पूर्वाश्रमण्य शास्त्रोंमें उपनिवेश  
 करताये। किन्तु शास्त्राचार्यके अधिक प्रचारके शैव शास्त्रों  
 का प्रसार बहुत कुछ जाता रहा। शैव सब प्रचारके  
 पशुओंके मानकों माने हैं, किन्तु शैव शास्त्रोंके लिये  
 साथ, पुत्र आदि आश्रय शीघ्रका मान नहीं माने।  
 बालिशास्त्रोंके पंडितोंके मुसरी सुना जाता है, कि कुछ  
 लिये बलिष्ठ मनुका थे। इनके शास्त्राचार्यक लिये  
 शैवों में भी आ कोई विचारके शैवोंके पुत्र ली काने,  
 किन्तु पुत्र पत्तियों भी परम्पर मानना देना जाती है।

पञ्चावलिक्रम नामके उत्सवमें शीघ्र पंडित बौद्ध पुरोहितकी बुला कर उत्सर्ग किया करते हैं। राजा अथवा राजपुत्रोंकी अन्त्येष्टि क्रियाके समय शीघ्र पुरोहित शिवपूजाके और बौद्ध पुरोहित बुद्ध पूजाके जलका मृतदेहके मस्तक पर सिंचन करते हैं। इसको अलावा कनिष्ठ धर्म बौद्ध और शीघ्रके परस्पर सुहृद्भावको को ले कर अनेक कथाये लिखी गई हैं।

प्राचीन ब्राह्मण धर्ममें इन लोगोंकी प्रगाढ़ भक्ति थी, तो भी ये लोग शिवापासक कह जाते थे। इन लोगोंका धर्मशास्त्र दो भागों में विभक्त है, पुरोहितोंकी स्तुति में गुप्तपूजा और जनसाधारणकी पूजा।

वैदिकयुगके ब्राह्मणोंके सूर्य और अग्नि उपासना की तरह ये लोग अपने गृहमें सूर्यकी पूजा करते हैं। इसी सूर्यकी ये लोग शिव मानते हैं, क्योंकि शिवके तीन नेत्र ही सूर्यके रूपान्तर हैं।

हर एक पंडित प्रति पूर्णिमा और अमावस्याके दिन प्रातःकालमें १ से ले कर १० घड़ी तक अभ्युक्त रह घरमें सूर्यकी उपासना करते हैं।

पंडित लोग तीन दिनोंके अतिरिक्त कालिबनमें (पलिनेशिय सप्ताहके ५वें दिन) देवकी भक्तिसे उत्सर्ग करते हैं। अलिङ्ग, कलिङ्ग आदि उच्च श्रेणीके याज्ञकलोग प्रतिदिन देव-सेवा करते हैं; किन्तु अमावस्या और पूर्णिमा को छोड़ अन्य किसी दिन देवपूजाका विशेष उत्सव नहीं होता। घरके सामने पूर्व दिशामें मुख कर सूर्यकी पूजाके लिये ये लोग बैठते हैं। नैवेद्य, अक्षत आदि उपकरण, फूल, जल घटा आदि सभी पूजाको सामग्री सज्जित रहता है। विधिपूर्वक वेद मन्त्रका उच्चारण करके पूजा सान्निध्य करनेसे देवावेग होता है। इस समय भक्तिपूर्वक नृत्य होता है। वे देहस्थित देवकी फूलेसे पूजा करते हैं। पूजा करते समय उन लोगोंके पुत्र पिताके सम्मुख कुछ समय तक खड़े रहने हैं, बादमें हट जाते हैं। उनके प्रसादको राजा आदि सभी ग्रहण करते हैं। वे उसको अमृतके समान मानते हैं। पूजाके समय जिस जलको पंडित लोग काममें लाते हैं वह 'तोयतोर्षा' कहा जाता है। यह भी बहुत पवित्र होता है। जनसाधारण इसको पंडित लोगोंसे धरोत्र कर अपनी देहमें या मृतवकी

देहमें पवित्रताके लिये लगाते हैं। श्वस्थियोगकी पूजा अथवा धाद्वादिक अन्त्येष्टि क्रियाओंमें ये लोग उपस्थित हो कर सम्पूर्ण क्रियाओंकी विधिबद्ध कर वाते हैं।

अपने गृहोंमें वे वेद, ब्रह्माण्डपुराण और कनिष्ठधर्मोंकी आलोचना करते रहते हैं। अपने पुत्रों तथा क्षत्रिय बालकोंकी उच्चशिक्षा देते हैं। जो लोग शुभाशुभ उनसे पूछने आते हैं उनको शुभाशुभ ज्योतिषगणनाके अनुसार बतलाते हैं। वे वालिद्वीपकी पञ्जिका या पंचाङ्गकी बनाते हैं। यदि कोई नवीन अन्नको तैयार करे, तो बिना मंत्रोंके पवित्र किए हुए वह अन्न ठीक तरहसे नहीं चलता।

जनताकी मङ्गल-कामनाके लिये ये मन्दिरोंमें पूजा किया करते हैं। उस पूजामें सब श्रेणीके लोग आते हैं। गुरुद्वय अनुङ्ग पर्यंतके पादमूलमें वासुकीना मविर ही सर्वाश्रेष्ठ है। यहाँकी देवमूर्त्तिना नाम 'सङ्गपूर्णय' है। इसके सिवाय तवानाकके बतुरुहु मदिरमें, 'मह जयनिङ्गाव' बदेङ्गके उलु बतु मदिरमें 'देवीदतुर', प्रहूमें 'सुङ्ग माणिक बुमारङ्ग', गिया न्यरके जरुक मदिरमें 'सङ्गपुत्र जय', हुोङ्ग मङ्गके गियलत्र मदिरमें 'सङ्गोङ्गजय' और तवानानके पबेन दुङ्गल मदिर में 'सङ्ग माणिक बलेन' नामक देव मूर्त्तियाँ हैं। महादेवकी समस्त मूर्त्तियोंके हाथमें तलवार, धनुष और बर्छा आदि अच्छी तरह सजे हैं। इन प्रधान प्रधान मदिरोंमें राजा लोग प्रजाकी मङ्गल कामनाके लिये पूजा करवाते हैं। उलुनतुके मदिरमें वालि वर्षके इकोसवें दिन और वासुकीके मदिरमें वार्षिकी पूर्णिमाको बड़ा भारी महोत्सव होता है। इनके मित्राय और भी बहुतसे प्रधान मदिर हैं जिन्हें सभी मनुष्य भक्तिनी निगाहसे देखते हैं।

१—तेरङ्गन ठोपस्य सन्नत्र मदिरमें सङ्गहाङ्ग इन्द्र नामक बज्रधारी इन्द्रमूर्त्ति है। नूतन सालके ११ वे दिन उस मदिरमें महोत्सव होता है।

२—बङ्गोके जेमपुत्र मदिरमें भी इन्द्रमूर्त्ति है। इसके सिवाय जेथोना, ३ रयोत्सवि, ४ समेतिय और गियान्यरके, ५ किन्तेलगुमि मदिरके देवताका येजो नकिनी कथायें प्रचारित हैं।

है। विनाश है, कि इन शब्दोंमें भयभीत हो शीघ्र ही क्षुब्ध चन्द्रमाको छोड़ देते हैं। हमारे देशमें आज १७ मा मद्रासके समय घट्टाध्वनि और आनन्दोन्मादमें सौगहल करते हुए उद्गामान कर रहे हैं।

यह विषय पहिले ही कहा जा चुका है, कि ब्राह्मण इस छापमें बच जाये थे, उनके समयका निश्चय करना अत्यन्त कठिन है। अब शीघ्र धर्मका प्रभाव बढा तब बौद्ध गान्धुओंने अपने धर्मके प्रचारके लिये नाना देशोंमें पर्यटन किया। जालियावाकी वगणजाना और प्राचीन सल्टन के सिवाय दूसरी भाषाके प्रथम अन्त देवनेसे धनु मा किया जाता है, कि प्रथम या द्वितीय जताश्रीके बीच में यहा ब्राह्मणोंका आगमन हुआ होगा। पूर्वाञ्चलरूप छाप वामिनो के मध्य वेसा प्रचार है, कि हिन्दू (कलिङ्ग) देश से उाके देशमें सम्प्रदा धर्म और व्यवस्थाका प्रचार हुआ है। पहिले यद्यद्योपमें, पीछे यहासे समस्त स्थानोंमें ध्यात हो गया। यहा पर शक्यकी प्रचुरता देस। रततवासियोंने उपनिवेशोंकी बमान चाहा। सबसे पहिले १२ जताश्री में त्रितुष्टि नामक किम्सो ब्राह्मणने बहुतसे लोगों के साथ था दक्षिण उपर्युक्त पार किया और वे सके सव मेरु पर्यंतके पादमूलमें बस गये। यद्योपमें जो सम्प्रदा चलता है उसकी त्रितुष्टि नामके एक प्राचीन राजाके चलाया था। इसीलिये यह सम्प्रदा आदिनाक (आदिनाक) नामसे प्रसिद्ध है।

यद्यद्योपके एक उपाययानसे जाना जाता है, कि पहिले बहुतसे हिन्दू मिल कर यहा आये थे। उनके साथमें स्त्री पुत्र थे, यह भी सहजमें निश्चय किया जा सकता है। महामना त्रितुष्टि भी अपने स्त्री पुत्र सहित आये थे। उनकी महर्षिमणिका नाम ब्राह्मण-कानि और दो पुत्रों का मनुमान और मनुमादेव था। ये बौद्ध थे, या हिन्दू इका प्रमाण नहीं मिलता। इन्होंने और इनके पतनजोने यहा कुछममय तक राज्य किया था।

३५० सप्तम तक इस देशमें बहुत औपनिवेशिक आये थे। उनमेंसे कुछ प्रसिद्ध स्थानोंके नाम ये हैं—  
शेनप्रवाल—१०० शकमें, घोटक—२०० शकमें,  
सुचित—३१० शकमें, हग—३३१ शकमें तथा त्रितुष्टि और

उनके पुत्र द्वाबाहु ३५० शकमें यहा आये थे। ४८० शकमें बहुतसे शीघ्र पठित यद्यद्योपमें पधारे; किन्तु उनके मन्त्र साथ यद्यद्योप वासियोंका मत नहीं मिलता था, इस कारण वे लोग भगा दिये गये। इन्होंने यहाके राजा धनु दामकी शरण ली। राजा धनुदाम उन लोगोंके प्रतापसे ही गये। यद्यद्योपवासियोंके मुसलमान होनेके कुछ समय पहिले कितने शीघ्रने मजपहित नामक स्थानके शीघ्र राजा प्रविजयके यहा आश्रय लिया था। मापहित राज्यके नष्ट नष्ट हो जाने पर वे लोग बालिद्योपकी भाग गये। उनके अधिपतिका नाम चाहुराहु था।

बालिद्योपमें इस समय जो शक चल रहा है, यह यद्यद्योपकी अपेक्षा ५ वर्ष कम है। इन पांच वर्षोंकी बसा बसों हुईं; बालिवामो पठित लोग इसका कोई कारण बतना नहीं सकते हैं। मालूम पडता है, कि चाहुमास गणनाके रधानमें सौर गणनाका परिवर्तन, पहिलेनीय गणनाका समिध्रण आदि दोघोंसे येना विज्ञात हुआ है। पहले १० मासका १ धय, पीछे १२ मासका माना गया। यदि मलमासकी गणना न की जाय तो भी इनके साथ हिन्दू पत्रिकाकी विभिन्नता देवी जाती है। उन लोगोंकी शुभाशुभ घटना और समय निरूपणके लिये पत्रिकाकी आवश्यकता नहीं होती। ये लोग विशेष शत्रु द्वारा पार्श्व तोय कुणोंका प्रस्तुतन, समुद्रया सामयिक गति परि वर्तन अथवा रूपान्तर प्रहण, अन्य प्राकृतिक निर्द्वान आदि घटनओंको देव कर समयका निरूपण कर लेते हैं।

धर्मगत, देवतत्व और विष्णव।

भारतकी वो हिन्दू धमदाशाओंने बालिद्योपमें प्रवेश किया था। पहिले लिया गया है, कि बौद्ध धर्मप्रचारकोंके साथ साथ शीघ्र ब्राह्मणोंने पूर्वाञ्चलरूप छापमें उपनिषा बसाये; किन्तु ब्राह्मणधर्मके अधिक प्रचारने बौद्ध लोगों का प्रभाव बहुत कुछ जाता रहा। बौद्ध मन्त्रकारके पशुओं के मासको खाते हैं, किन्तु शीघ्र मन्त्रकारके लोग माय, कुत्ते आदि अल्पदय जीवोंका मांस नहीं खाते।

बालिद्योपके पठितके मुसलमान सुना जाता है, कि कुछ नियमके बनिष्ठ माना थे। दोनों समुद्रय परस्परमें अविरोधी हैं तो भा कोई विभाके देवकी पूजा नहीं करते; किन्तु पूजा पठनमें भी परस्पर सामानता देखी जाती है।

पञ्चायलिक्रम नामके उत्सवमें शैव पंडित बौद्ध पुरोहितको बुला कर उत्सर्ग किया करते हैं। राजा अथवा राजपुत्रों-को अन्त्येष्टि क्रियाके समय शैव पुरोहित शिवपूजाके और बौद्ध पुरोहित बुद्ध पूजाके जलका मृतदेहके मस्तक पर सिंचन करते हैं। इसके अलावा कविप्रथमें बौद्ध और शैवके परस्पर सुहृद्भावों को ले कर अनेक कथाये लिखी गई हैं।

प्राचीन ब्राह्मण धर्ममें इन लोगोंकी प्रगाढ भक्ति थी, तो भी ये लोग शिवोपासक कहे जाते थे। इन लोगों का धर्मशास्त्र दो भागों में विभक्त है, पुरोहितोंकी स्वगृह में गुप्तपूजा और जनसाधारणको पूजा।

वैदिकयुगके ब्राह्मणोंके सूर्य और अग्नि उपासना को तरह ये लोग अग्नि गृहमें सूर्यकी पूजा करते हैं। इसी सूर्यको ये लोग शिव मानते हैं, क्योंकि शिवके तीन नेत्र ही सूर्यके रूपान्तर हैं।

हर एक पंडित प्रति पूर्णिमा और अमावस्याके दिन मातःकालमें ६ से ले कर १० घड़ी तक अभुक्त रह घरमें सूर्यकी उपासना करते हैं।

पंडित लोग तीन दिनके अतिरिक्त कालियनमें (पल्लि नेशिय सप्ताहके ५<sup>वाँ</sup> दिन) देवको भक्तिसे उत्सर्ग करते हैं। अलिङ्ग, कलिङ्ग आदि उच्च श्रेणीके याजकलोग प्रतिदिन देव-सेवा करते हैं; किन्तु अमावस्या और पूर्णिमाको छोड़ अन्य किसी दिन देवपूजाका विशेष उत्सव नहीं होता। घरके सामने पूर्व दिशामें सुल कर सूर्यकी पूजाके लिये ये लोग बैठते हैं। नैवेद्य, अक्षत आदि उपकरण, फूल, जल घटा आदि सभी पूजाको सामग्री सज्जित रहती है। विधिपूर्वक वेद मंत्रका उच्चारण करके पूजा साङ्ग करनेसे देवावेश होता है। इस समय भक्तिपूर्वक नृत्य होता है। वे देहस्थित देवकी फूलोंसे पूजा करते हैं। पूजा करते समय उन लोगोंके पुत्र पिताके सम्मुख कुछ समय तक खड़े रहते हैं, बादमें हट जाते हैं। उनके प्रसादको राना आदि सभी ग्रहण करते हैं। वे उसको शम्भुके समान मानते हैं। पूजाके समय जिस जलको पंडित लोग काममें लाते हैं वह 'तोयतीर्था' कहा जाता है। यह भी बहुत पवित्र होता है। जनसाधारण इस को पंडित लोगोंसे खरीद कर अपनी देहमें या मृतककी

देहमें पवित्रताके लिये लगाते हैं। गृहस्थियोंकी पूजा अथवा श्राद्धादिक अत्येष्टि क्रियाओं में ये लोग उपस्थित हो कर सम्पूर्ण क्रियाओंको विधिपूर्वक करते हैं।

अपने गृहमें ये वेद, ब्रह्माण्डपुराण और कविप्रयोगोंकी धालोचना करते रहते हैं। अपने पुत्रों तथा क्षत्रिय बालकोंको उच्चशिक्षा देते हैं। जो लोग शुभाशुभ उनसे पूछने आते हैं उनको शुभाशुभ ज्योतिषगणनाके अनुसार बतलाते हैं। ये बालिद्वीपकी पञ्जिका या पंचाङ्गको बनाते हैं। यदि कोई नवीन अस्त्रको तैयार करे, तो बिना मंत्रों के पवित्र किए हुए वह अस्त्र ठीक तरहसे नहीं चलता।

जनताकी मङ्गल-कामनाके लिये ये मन्दिरोंमें पूजा किया करते हैं। उस पूजामें सब श्रेणीके लोग आते हैं। गुरुद्वय अनुद्वय पर्वतके पादमूलमें वासुकीका मन्दिर ही सर्वश्रेष्ठ है। यहाँकी देवमूर्त्तिका नाम 'सङ्गपूर्णजय' है। इसके सिवाय तवानान्के वतु-रुद्र मन्दिरमें, 'सह जयतिङ्गात्' बदोङ्गके उलु वतु मन्दिरमें 'देवीदनुर्', प्रहूमों 'सङ्ग माणिककुमारङ्ग', गिया न्यरके जचक मन्दिरमें 'सङ्गपुत्र जय', क्कोङ्गके नूके गिवलव मन्दिरमें 'सङ्गोङ्गजय' और तवानानके पक्केन दुङ्गन मन्दिर में 'सङ्ग माणिक कलेज' नामक देव मूर्त्तियाँ हैं। महादेवकी समस्त मूर्त्तियोंके हाथमें तलवार, धनुष और बछाँ आदि अच्छी तरह सजे हैं। इन प्रधान प्रधान मन्दिरों में राजा लोग प्रजाकी मङ्गल कामनाके लिये पूजा कराते हैं। उलुवतुके मन्दिरमें बालि वर्षके इक्कीसवें दिन और वासुकीके मन्दिरमें कार्तिककी पूर्णिमाको बडा भारी महोत्सव होता है। इनके सिवाय और भी बहुतसे प्रधान मन्दिर हैं जिन्हें सभी मनुष्य भक्तिकी निगाहसे देखते हैं।

१—सेरङ्गन द्वीपस्थ सकरुन मन्दिरमें सङ्गहङ्ग इन्द्र नामक बज्रधारी इन्द्रमूर्त्ति है। नूतन सालके ११ वें दिन उस मन्दिरमें महोत्सव होता है।

२—बङ्गलीके जेमपुल मन्दिरमें भी इन्द्रमूर्त्ति है। इनके सिवाय जेम्रोना, ३ रम्पोत्सवि, ४ समेतिग और गियान्यरके, ५ किन्तेलगुमि मन्दिरके देवताका पेशी शक्तिकी कथायें प्रचारित हैं।



पातरत्नमें दुर्गा, काल और मूर्तीको स्तुतिके लिये मग  
लोग उक्तो पुजन है। दुर्गा नामके मन्दिरमें उच्च जानिये  
मनुष्य और 'पद्मस्तनन' मन्दिरमें शिवजीकी सती लोग  
पूजा किया करते हैं। 'पार्व्यङ्गन' नामक मन्दिरमें देव  
और विद्यापतीकी पूजा हुआ करती है। फलङ्गन, गडक  
द्वङ्गन मङ्गर और मेघ शक्ति छोटे छोटे मन्दिर महादेवकी  
पूजाके लिये निर्दिष्ट है। इन मन्दिरों में शिवजी पद्मानम  
लगा कर बैठे हैं। उन्हींके स्तुति-स्वाध्याय मान्य और  
घन्टादि गद्य श्रवण चढ़ाये जाते हैं। प्रत्येक मन्दिरमें  
लिङ्गकी मूर्ति स्थापित है। समुद्रके किनारे बहुतसे  
पद्मज्येष्ठके मन्दिर हैं। यहमें सतियोंके अनेक मन्दिर  
दृष्टिगोचर होते हैं।

शास्त्रोपम वैष्णवधर्मका प्रचार नहीं है तो भी  
ब्राह्मण शिवपूजाके समय विष्णु भगवान्की पूजा करने  
हैं। ये ही बहुत कुछ हम लोगोंकी हृदयमूर्तिके पफात्म  
स्वरूप हैं। वे मेरु, ईशान और सुसुषुषु का षण्डकी स्वर्ग  
या इन्द्रलोक, विष्णुलोक या ब्रह्मलोक और शिवलोक  
कह कर कल्पना करते हैं और उन तीन लोकोंमें शिवजी  
सर्वमय रूपमें विराजमान हैं। पद्मज्येष्ठ लोग शिवजीके  
मिथाव और किस्ती भी देवताके चार हाथ महो मानते।

शिवजीके प्रमाण अगमामुपम ये सब हैं—अक्षमात्रा,  
चामर, विष्णु और पान। नितनो मन्त्राय शिवमूर्तिधोत्रा  
पहिले ही उल्लेख हो चुका है। शिव और काल एक होने  
पर भी मगलमय शिवमूर्ति सुवारापयल और महात्महायक  
कालमूर्ति घोर तामस हैं। पगतरत्नमें काल और उनकी  
गती दुर्गा तथा अनुचर मूर्तीकी पूजा होती है। शिव  
पत्नी उमा, पार्व्यती, गिरियुती, देवीगङ्गा और देवीदसु  
नामोंसे वृद्धित होती हैं। शक्त्याधिष्ठात्री लक्ष्मीदेवी यहा  
पर शिवपत्नीके रूपमें महादेवजीके साथ वृणी जाती है।

विष्णुकी तरह यहा ब्रह्माजीका कोई मंदिर नहीं है।  
किन्तु महोरमयमें विष्णु और ब्रह्ममूर्तियोंके साथमें बस्थायी  
मन्दिर बनाया है। उन्मन्त्रके बाद काल पुत्रा तोड़ दिया जाता  
है। यहाँ ब्रह्मा-वधोक्ति, प्रकाशित और गनुमन्त्र नाम  
के विष्णुमन्त्र हैं। काल ही ब्रह्माजीके प्रधान भूषा है। जो  
ब्रह्मण्य कर्मिष्ठ उन कालका धारण करते हैं, ये ही  
पद्मज्येष्ठ कहलाते हैं।

ब्रह्माकी पत्नी सरस्वती देवी यहा विद्या नामसे  
पूजित है। उरारी पूजाका कोई मन्त्र मिस मन्दिर  
नहीं है। पतु शुभोग्गु ससाहमें जनेदररके दिव शक्ति  
धामी नाना पोथियोंको एकठा कर शृङ्खलित देयारत्नसे  
सरस्वतीकी पूजा करते हैं।

शास्त्रोपम विष्णुका विदेशरूपमें पूजा नहीं  
करते, तोभी ये विष्णुके मत्स्य, पराह, कूर्म, धामन, परशु  
राम प्रभृति अवतार स्वीकार करते हैं। शंख, पद्म,  
गदा और दण्ड विष्णुके प्रधान चिह्न हैं।

ये लोग भी या लक्ष्मीकी विष्णुकी पत्नी मानते हैं।  
जब विष्णु, ब्रह्मा और शिव (श्रद्धा शक्ति और संहृत्ती) ये  
तीनों शक्तियाँ एक हैं, तब लक्ष्मी सरस्वतीकी प्रभृतिकी शिव  
की पत्नी माननेमें कोई दोष नहीं है। ये लोग शम्भुस  
पद्मसे विष्णुमूर्तिके माथे पर तिलक लगाते हैं। त्रिपदे  
जिम तरह तीन नेत्र हैं, उन्हीं तरह कर्णोन्मथ मिलककी ये  
लोग शिवके नि नेत्र जैसा व्यव करते हैं। वैष्णवी मूर्ति  
लक्ष्मी और सरस्वतीके माथे पर पेरपशन वा यजनिलक  
द्वेते हैं। प्राचीन कविप्रयोगमें कदे हुये अनेक देवताओं  
की मूर्तियाँ भी खुसी हुई हैं। ये हिन्दू देवताओंका त्रिपद  
स्वीकार करते हैं, तो भी उनके यहाँ ब्रह्माण्ड पुराणोक्त  
अपरापर देवताओंका उल्लेख मिलता है। इन्द्र, यम, सूर्य,  
चन्द्र, अनिल, कुबेर, परमण, अग्नि आदि आठ देवताओं  
को ये लोकपाल कहते हैं। इन्द्रके चाल यम और पद्मण  
का ये शक्ति सत्कार करते हैं। देवराज इन्द्र अग्निगुणी  
में अक्षर, विद्याधरी और प्रविद्योनि परिभूत हो  
रहते हैं।

'विवाह' नामके प्रथम रायणके द्वारा किया गया रंभु  
का परामय घणित है। शास्त्रोपमोंका विश्वास है,  
कि इन्द्रलोकवासी मनुष्य बहकी धारण कर करते हैं।  
इन्द्रलोककी पार कर जाय विष्णुलोककी माना है। पद्मक  
शिवलोक जाने पर आत्माको मान्य सुधकी प्राप्ति होती  
है। शिवलोककी प्राप्ति ही मर्त्यकी मुख्य उद्देश्य है, जो भी  
पद्मक पद्मज्येष्ठ लोगकी ही मनुष्यकी प्राप्ति होती है। ये  
अनेक परिधम करके पर श्री शिवलोक गमने का रखते।  
यहा उत्तममें महाकृता मन्त्रीके घोर शायरी रक्षाके लिये  
स्त्रीधर्म ब्रह्मलोकपद्मकी स्वीकार करनेमें शक्तकी स्वयं

प्राप्ति होती है। किन्तु यदि इस आत्मोत्सर्गके समय पुरोहित उपस्थित न हों या शास्त्रविहितकर्म द्वारा स्वर्ग गमनका पथ परिष्कार न किया गया हो, तो उनकी कमी भी स्वर्गलाम न होगा। वे मेढक और सर्प ही कर पृथ्वी पर बहुत काल तक विचरण करेगे। स्वर्ग पहुंचने पर भी यम उनके पुण्यपापका यथोचित रीतिसे विचार करते हैं। इसी विश्वासके घशीभूत हो वे शव का कमी कमी दो माससे २० वर्ष तक दाह नहीं करते।

दुम्भरे लोकपालोंमेंसे बिंसीकी पूजा नहीं की जाती। अनिल और वायुसे संगपूर्ण जीवोंकी रक्षा होती है, अतएव उनका भी वे यथासाध्य आदर सत्कार करते हैं। पदण्ड और वैद्य लोग समय समयमें पखिल धातु या फुत्कार द्वाग रोगोंकी चिकित्सा करते हैं। अनशन व्रतमें वायुमात्रका वे सेवन करते हैं।

कॉसिकेय और गणेशजीकी पूजा कहीं भी दैव नहीं पडती। प्रत्येक प्रवेशद्वारमें एक विघ्नविनाशन गणपतिजीकी मूर्ति प्रतिष्ठित है या कहीं कहीं उनका चित्र-मात्र ही लगा हुआ है। गणपतिजीके हस्तिमुण्ड होनेके कारण बालिव्यासियोंको धारणा है, कि यह पशु मनुष्यके मङ्गलप्रद नहीं है। बोल्लेङ्गराज हाथीकी पीठ पर बैठ कर धूमते हैं। उनको देव सबके सब समझते हैं कि वे या तो राज्यसे भ्रष्ट या पाप पट्टमें भग्न हो गये हैं। व्याघ्रसे तो वे महा घृणा करते हैं। यदि राज्यमें व्याघ्रका उत्पात हो जाय, तो सब लोग विश्वास करने लग जाते हैं, कि शीघ्र ही राज्यमें उपद्रव होगा या उसका उपद्रव होना ही राज्यके अधःपतनका कारण है। किन्तु गे डाकी देवते पर, चाहे इस जन्ममें हो या पर जन्ममें, यह अन्वय ही सम्भानका प्राप्त करेगा, ऐसी उन लोगोंकी धारणा है। किसी किसी महायज्ञमें वे गे डाकी बलि देते हैं। इसका रक्त, मांस, चर्बी उन लोगोंके चावहारमें आती है। बहुतसे मनुष्य काम देवकी भी पूजा करते हैं। इनके प्राचीन कार्योंमें चाण्डिके, अनेक, शक्क नागकी कथा, जनमेजयका सर्पयज्ञ, भगवान् वशिष्ठका राक्षस-यज्ञ और विन्दर, क्रिपुस्य, उरग, वैद्य, दानव, गधर्व, पिशाच आदि पुराणोल्लिखित कथाय पायी जाती हैं।

सृष्टितत्त्व।

बालिके हिंदूलोग सृष्टितत्त्वके विषयमें ब्राह्मण पुराण का मत स्वीकार नहीं करते। वे अण्डसे जगत्की उत्पत्ति मानते हैं। पहिले सनन्द और मनत्कुमारादि चार जन ही पैदा हुये थे। बादमें ब्रह्माने कामसे स्वर्ग, नद, नदी, पर्वत और उद्भिन् आदि तथा भरीचि, भृगु अङ्गिरा प्रभृति देव, ऋषि गणकी सृष्टि की।

सर्वलोक पितामह ब्रह्मा ही परमेश्वर शिवके लक्ष्य हैं। फिर शिव ही ब्रह्माके पितामह माने जाते हैं तथा उनके भव, सर्व आदि काम भी उल्लिखित हैं। शारीरि उपादान मेव उनके ये हैं—१ आदित्यशरीर, २ अप शरीर, ३ वायुशरीर, ४ अग्निशरीर, ५ आकाश, ६ महा परिष्ठत, ७ चन्द्र और ८ अन्तारगुह्य आदि। यही कारण है, कि वे अष्टननु नामसे भी प्रसिद्ध हैं। ब्रह्माने अपने कल्प और धम नामक दो पुत्रोंकी सृष्टिके बाद यथाक्रम देव, असुर, पितृ, मानव, यक्ष, पिशाच, उरग, गधर्व, गण, किन्नर, राक्षस और सबके अन्तमें पशु आदिकी सृष्टि की। पीछे उन्होंने ब्राह्मण आदि चार वर्णोंकी रचा। अनन्तर म्वायमुवादि मनु, शतरूपा, बरह धम, लक्ष्मी, नील लोहित (शिव)से सहस्र रुद्र, अग्नि और मेघोंकी उत्पत्तिक्रम तथा धर्म और अहिंसा, धी और विष्णु, सरस्वती और पूर्णमासके विवाहादि प्रसंग लिखे हैं। स्वायम्भुव आदि मन्वन्तरमें और भी पचास शत रुद्र, द्वादश आदित्य, अष्ट वसु, द्वा विश्वदेव, द्वादश भार्गव आदि विद्यमान थे।

बालिव्यासी भी पृथ्वीको सात द्वीपा मानते हैं। उनके ब्राह्मण पुराणमें भी पृथिवीका चर्च विभाग तथा अनिघादि स्वायम्भुव मनुके पीढ़ोंकी शासनकथा कही गई है। इत, वेता, द्वापर और कलि आदि चार युग ही वे लोग स्वीकार करते हैं। क्रमः क्रमसे मनुष्यकी संख्या घटती है। यह भी वे लोग मानते हैं।

शास्त्रोंमें ब्राह्मणसन्तानके आचरणीय अनुष्ठानादिका नियम इन तरह लिखित है,—१ बाल अन्तर्यामि ब्रह्मचर्य पूर्वक गुरुके घर पर विताध्ययन, २ विद्यावचनमें आवद्ध हो गृहस्थ धर्मका प्रतिपालन, ३ वैधानस (वान-प्रस्थ) अवलम्बन, ४ अन्तमें छद् शत भोजी जीत कर

पर समान सा कर मुगधि इष्टोरा लिंग करने हैं धीर प्रत्येक स नमें पर एक मुठा रूप कर कर देहका वस्त्र, पटाई आदिसे ढक देते हैं । उन श्रवणोंमें श्रोत्रोंमेंसे रस निकलती लगता है । वह रस भोजे रसे हुये धालि नामके पात्रमें जमा होता रहता है, अतमें पर केंक दिया जाता है ।

छह मासमें देहका दाह गहो होनेसे श्रेष्ठ मून जाती है । यदि छह मासमें भी यह रस न सूखे, तो लोहनीर्ष कया पणिल जल और गाना तरहके उपहार शृंगके समुच्च दिये जाते हैं । पञ्चात् नर शरीरमें भूतप्रेति प्रविष्ट होती है । इसी भावसे ये उनके मुगमें एक रोजेनी भ मृगी रस देते हैं ।

दाहसे तीन दिन पूर्व नवका धारण हटा दिया जाता है और आरभीयण उससे अन्तिम चिदा लेनेके लिये आते हैं । इस समय पूर्वति अङ्गनाम जलसे धो कर फिर उसे टाक दिया जाता है । दाहमें मोजेनी अ गृहीके बढते पाग धानुपात्रोंमें श्रोत्र अश्रुके साथ स, य, न, र, ये पाच बीजाशर लिय कर श्रवके मुगमें रग दिये जाते हैं । योजेनी करे हुये पञ्च देव ही उन नरकी रसा करने हैं । पञ्चात् देवपाठ और श्रवके ऊपर शान्तिवाचिका मिश्रण किया जाता है ।

जिस गुरुमें नर रक्षया जाता यह अशुद्ध हो जाता है । वह एक उस घरमें उतका कोई वनपर पाम नहीं करता । किन्तु भूतोंका शत्रु हो जानेके भयसे उनके अन्दर कोई न कोई आता जाता ही रहता है । बदेन्द्र और देवपम्बर राजाओंके शरकी रक्षाके लिये इन न महल बना हुआ है । शररक्षाका सर्वा शोध है । किन्तु शान्ति प्रक्रिया अर्थात् श्रुतक और बहुत शर्वाकी है । शररहनेके लिये मामादने 'यदे' (चित्तो नूर) तक से ज्ञानेक लिये एक शरगना सेतु दाचना पत्ता है । यह सेतु अदिवा तीरमें मज्जाया जाता है । उसके ऊपर मेशके मोरिद एक नूलाकार मंदिर बनाया जाता है । इस मंदिरकी मोला भी अत्रयणीय है । अत्रयणीके अंदर नूला तील तण या ग्याह तण तकका होता है । इनके मोलकं पर भी अशुद्ध तरहने मज्जाये जाने है । राजाओंका शर तण कर उनमें मरने ऊपर पाने शरमें शरकेत यस्से एक कर रक्षया जाता है । यह

शरयारा भी महासमारोहने की जाती है । शरको ले जाने समय उसके व्यवहार करनेसे सब श्रुष उनके साथ रफते जाते हैं । इन शोनोंकी शरयारा इस तरह निकलती है—पहिले दाहक, पीछे पञ्चादि काष्ठमार पात्र, अत्र जल परिपृत सेनापुत्रय, राजश्रवणोप इत्यादि, मस गिरीके सिर पर भूतोंकी मूर्तिके लिये उपहार, वरुणपारो सेना, राजप्ययदार्पण सेना, रापाये यस्तच्छयावार, निम शम्भ पर चद्रा हुआ रापुत्रय वा पीत्र और मरके वाय सेनादल तथा पात्रकषेणो रहती है ।

द्वितीय स्तयकमें मोसे अधिच शिवोंके सिर परतोय तीर्थके जलपूर्ण कु म रहते हैं । तृतीय स्तयकमें भूतो ( यन्तेन वृगम ) के फलमूल और मासादि आदार करने योग्य चीजे रहती हैं । उसके वाय पालको पदण्ड भीर उनके पीछे तद्वैद्यमुत्त एक बडे आकारका शक्तिम रांग रहता है । उस रांगको माह कर ये शरके रागमें जला देते हैं । बड़ेके ऊपर रको दुई शरके पीछे सह श्रुताकक्षिणी घेरा और अत्राय आरभीय रहने हैं । इस महायात्राके समय कथिमायायें गाम होता है । मो भी शोक मूषक नहीं, रामायण अथवा भागवतुद्धका सुललित उल्लूक मज ।

गियात्यरमें पर्यंतके ऊपर एक स्तल त दाहश्रवण है । इसके चारों तरफ इंदो के स्तम्भ और प्राचीरने परि घेष्ठित है । बीचों चलि नामका ग्याम है । इसके पाग ही चार स्तल स्तम्भोंके ऊपर उत या शू है । यहाँ पर शरयारा दाह होता है । जहाँ रापाओंके शरीर जलाये जाते हैं यहाँ पर एक सिंह स्थापित है । किन्तु दूरने मनुष्यों के लिये श्रेत या रूप्य शोचिद्ध होता है । मलमलागि लापिला रमलिपीके दाहके लिये राज दाहश्रवणक नाम भागमें तीन सेलाग्याल बने हुये है । साधारण शोनोंके लिये ऐसे नूदाश्रुद गहों बन गायते । उनको मरकांके क्षणमें ही रग कर भाग करना पडता है । इन गदुहों का आकार कोई कोई यशुसो के आकारका बनाये हैं । उन क्षणमें शरकी टक कर रग दिया जाता है ।

दाहकी पूर्ववर्ती विषया मज्जा कर संशिल्लत शर देहकी विनाशकारणमें दाहके लिये छे जलनेकी आनुषंगिके देने हैं । शक्तिपीठी गिनाके सम्भन करिच १-२ हावका

साँप तैयार करते हैं जिसे घे लोग नागवन्ध कहते हैं। पडित इस दृष्टिमें सापको मार कर मृत देहके साथ जला देते हैं।

शवके दाहस्थानमें पहुचने पर पहले उसे अरथी परसे नीचे उतारते हैं। बादमें फण्डा छक कर उसे मिह या गोमूर्त्तिके बषसमें रख देते हैं। इस समय उपस्थित लोग उसके घट्रोंको लूट लेते हैं और कुछ घरको लीटा ले जाते हैं। पीछे उपरिधत परिडित एक घटा कुछ मंत्र पठ कर और शवको पवित्र देहसे सिचन कर चले जाते हैं। पुरोहितका कार्य जब पूर्ण हो जाता है तब याज्ञिकदल बषसके नीचे चिता बना उसमें आग लगा देते हैं। देहके जल जाने पर उपस्थित आत्मीय लोग अस्थियोंको निकाल उनको अच्छी तरह उपकरणोंसे सजा समुद्रमें फेंक देते हैं। इस समय पदण्डोको मत्तपाठ करना पडता है। इन कार्योंके लिये उनको ५०० रु० और तरह तरहके धन, पकवान मिलते हैं। इस प्रधान अन्त्येष्टि क्रियाके बाद एक वर्ष तक प्रत्येक पक्षमें इसी तरह समारोहसे दाह स्थानमें जाना पडता है। इस प्रकार कई बार शवके बधलेमें अरथीके ऊपर पुणस्वूप सजा कर श्मशान ले जाते और उसे क्षण भंगुरकी तरह प्रति बार समुद्रमें फेंक देते हैं। इस प्रकार एक वर्षके भीतर मृत आत्माके लिये बहुत उपहार दिया जाता है, जो मासिक श्राद्धके समान होता है। दाहकर्मके एक वर्ष बाद जब चार्मिक श्राद्ध हो जाता है तब वे मृतात्माका स्वर्गलाम मानते हैं।

यहा भी सहमरणप्रथा प्रचलित थी। बहु धिवाह प्रचलित रहनेके कारण एकले अधिक स्त्रीग्रहण करने थे। राजा नम्रुर शक्तिका ५ सौ रमणिका पाणिग्रहण उसका अग्रयत्तम दृष्टान्त है। एक स्वामीकी मृत्यु होने पर उसके पीछे बहुत स्त्रियोंको, अग्निज्वालामें देहत्याग करना पडता था। महाभारतादि पवित्र शास्त्रग्रन्थ वर्णित सतीके चरित्रसे यहाकी स्त्रिया इतनी उत्तेजित होती हैं, कि ये सुयशलाभको प्रत्याशासे सहजमें स्वामोके पीछे मरनेको तैयार हो जाती हैं। एक पतिके पीछे बहुत स्त्रियोंका आत्मोसर्ग सचमुच विस्मयकर है।

बालिद्वीपमें एकमात्र क्षत्रिय तथा वैश्य (देव और

गोष्ठीके) राजाओंमें सहमरण प्रथा प्रचलित है। मृत्युमें सहमरण नहीं है। क्यो कि, वे स्वभावसे ही द्रिष्ट हैं। निर्धन अवस्थामें ऐसी डाटवाटके साथ अत्येष्टि क्रिया और बेला उत्सवका करना उनके लिये नितान्त अर्सम्भव है। इनको निम्नश्रेणीका समझ पुरोहित इनके ऊपर धर्मप्रभावका विस्तार करना नही चाहते तथा ये लोग भी पुरोहितो को काफी दक्षिणा नही देते हैं। यहा पर ब्राह्मणोंमें भी कभी कभी सहमरण देखा जाता है, स्वामीके वियोगसे दुःखित ब्राह्मणरमणी स्वामीके विच्छेदको नहीं सहनेके कारण स्वामीके साथ चितामें प्राण त्याग कर देती हैं ये ही यथार्थमें सतीकी योग्य हैं; किन्तु यश चाहने वाली ललनाओंमें भी कोई कोई पतिभक्तिकी बशवर्त्तिनी बन सती नामके सार्थाक गनती है। यदि ब्राह्मण रमणी महमृता नही भी हो तो कोई द्योप नहीं गिना जाता। लेकिन क्षत्रियरमणी और वैश्यस्त्रियोंमें यदि कोई स्त्री अनुमृता न हो तो बडी निंदा होती है।

यहाँकी स्त्रियो का सहमरण दो प्रकारसे होता है। जो स्वामीको चिता पर मचके ऊपरसे कूद कर आत्मा विसर्जन करती हैं ये स्त्री 'सतिपा' हैं। धियाहिता या रक्षिता स्त्री अपनी इच्छाके अनुसार अग्निकुण्डमें कूदती है। दूसरे पक्षमें स्त्रियो को स्वामीसे भिन्न चितामें अग्नि जला कर जीवन त्यागना पडता है। कभी कभी पटराणी को बेला प्रथाके अनुसार प्राण विसर्जन करते देखा गया है। पहले इस प्रकार सहमरणके लिये कौत दासियोंको जबर्दस्ती अग्निमें भोंक दिया जाता था। राजा सहधर्मिणी को छोड जो स्त्रिया रखते हैं ये शूद्राणी होने पर भी खरीदी जाते हैं। सती या बेला होना इनकी इच्छाके ऊपर निर्भर है; किन्तु कौतदासोकी हत्या अवैध नरवलिमात्र है। जिस समय ये सहमरणको इच्छा प्रकट करती हैं, तभीसे लोग उनका पितृ लोगोंको तरह सम्मान करते हैं। उसी समय मनुष्य उनकी प्रीतिके लिये तरह तरहके बटिया भोजन उसके सामने ला कर रख देते हैं। रमणियों के अन्त करणमें धर्मभाव उदोपित करनेके लिये और स्वर्गप्राप्तकी चिरगान्ति सुखकी कथाओं को समझानेके लिये एक विदुषी पण्डित स्त्री सदा उसके साथ घूमती रहती है। कभी कभी उसको धोखेसे वा

मन्त्रीयके प्रयोगसे उन्नत कर कर उनको जिताओ यहि-  
में भो र दिवा जाता है।

मन्त्रीय सामान्य वा असाधारणकी मूल्यके आठवें दिन  
उनकी मितियों में मरणसे लिये अनुलोच किया जाता  
है। जो मरणरूपके लिये अपनी सम्पत्ति प्रकट करती है  
वे जब तक उनके परिचरों अथवा मित्रियों नहीं होते तब  
तक वे मृत्यु सम्मान पाते हैं और सम्पूर्ण सुनकी  
योग करती है। क्रैडरिक आदि किलो ही यूरोप  
घासी १८४१ ई०में गियायराजदेवमन्त्रीयकी अथवा मित्रियों  
कियामें उपस्थित थे। पर्यायिधि जयवाजामें जयदेवकी  
तरह अत्र तीन वर्षोंके ऊपर उनको तीन दिनोंकी  
भी वेडा कर मध्य स्थानमें लाया गया था। अज्ञान  
पहुच कर मनी स्नान करके बाद अनेक पत्र पहनती है  
तथा वेरायिन्याम आदि वस्त्रोंकी तरह हंसमुख हो  
स्वामीमें स्वामीके साथ गमन करनेके लिये उषत होती  
है। इस समय उनके जरीर पर आभूषण नहीं होते।  
अभिर्गम मृदुनेसे पहिले उनके कवरीयधन सोड दिने  
जाते हैं और उनके बाल खुदे रहते हैं।

वाचिन् ( स० पु० ) बाल के उपासिन्धार्येन विद्यते  
यस्य वाच इति। वाचराज वाचि।

“भारतप्रजास्य वाचराज्यं महात्मना।

वाचेषु वृत्तिः शीतं वाचिनाम गभु म ॥

( गना० उत्तरा० १७ म० )

इन्द्रवा प्रमोह तेज बाल अर्थात् वेदासे बलित हुआ  
था इस कारण वाचि नाम पडा है। वाचि देना।

वाचिनी ( स० स्त्री० ) अभिप्रोक्तस्य ।

वाचिया—( बचिया ) युद्धप्रदेशके बाराह विभागका  
एक जिला। यह अक्षा० २५ ३३' से २६ ११' उ० तथा  
देशा० ८६ ३८' म ८४ ३६' पूर्वसे मध्य अक्षांशित है।  
भू-परिमाण १२४५ वर्गमील है। इसके उत्तर पूर्वमें गोगरा,  
दक्षिणमें गङ्गा और दक्षिणमें आनन्दाद तथा गाजीपुर  
है। गङ्गा और घघरा नदीके मङ्गलमध्य परका मम  
ता रोप से कर १८०१ ई०में बर निगा म गटिटा हुआ  
है। गङ्गाके किनारे जिनसे स्थान पडते हैं,  
वे गघराके बाहुमलय स्थानसे विदेश उरुंदा है। उरु  
की नदीके आधाया यहाँ सरयनदी भी बहती है।

आनन्दादके मिया यहाँ मृत्यु वननाम नदी हैका  
जाता। वेद नामक विभाग और घघरा नदीनीचका  
मृधाच्छा निम्नभूमि छोड कर शेष भागो उच्च भूमि पर  
गोडा बहुत फल मिलता है। नदी किनारे जो जंगल है  
उसमें मोलगाय और जंगली मूसर पाये जाते हैं।  
यहाँका जलपाया गाजीपुर और आनन्दादके जैना है।

गाजीपुर और आनन्दाद जिलेका कुण्ड अत्र से कर  
इस जिलेकी उत्पत्ति हुई है। इस कारण इसका प्रामांन  
इतिहास उरुंदा दो जिलोंमें वर्णित हुआ है। यहाँ वर्त  
मान किसी अष्टालिखाका अस्तित्व नहीं रहते पर भी  
पहुनसे बीड साह्यागमादिवा ५५ सावरेव देवतामें आठा  
है। कुण्डलपारी बौद्धयतिोंका बास होनेके कारण ही  
इस स्थानका बलिया नाम पडा है। बीड बालि वा बलि  
शब्दने वर्णकुण्डलका बोध होता है। यहाँ जो एक नाम  
दुर्ग देखा जाता है उसे स्थानोप लोग मन्त्रामक  
अधियासियों द्वारा निर्मित बतलाते हैं। भर लोकोके  
अध्यापानके बाद यहाँ राजपूत जातिवा अस्तुद्वय हुआ।  
वेनगाद, कछौंलिया, कंमिक, विनेग, बोरयद, मनीने,  
कुन्धार, नेहुम, वाई, बरहिवा, लोहलुमिया, हरिदोवन  
गागाए इस जिलेमें घाम करती हैं।

इस जिलेमें १३ शहर और १७८४ ग्राम लगे हैं।  
जनसंख्या १० लाखके करीब है। मैकडे पोटे १३  
दिल्लू हैं और क्षेत्रमें मुसलमान तथा दूसरी दूसरी  
जातियां हैं। यहाँकी प्रधान उपज धान, चना, मक्का,  
और गेहूँ है। इस बहुतायतसे उपहार आती है।

विधानसभामें यह जिला बड़ा घटा .। भागी कुन्ड  
मिलाकर यह १७५ स्क्व है। स्क्वके अन्त्या ५ अल्प  
पाल है।

२ उरु जिलेकी एक सहस्रीड। यह अक्षा० २५ ३३'  
से २५ ५६' उ० तथा देशा० ८३ ५०' से ८४ ३६' पूर्वसे  
मध्य अक्षांशित है। भू-परिमाण ४४१ वर्गमील और  
जनसंख्या प्रायः ४० १३२३ है। इसमें ६ शहर और ५७३  
ग्राम लगे हैं। यहाँकी जमीन मूष उपजाऊ है।

३ उरु जिलेकी एक पत्र प्रवाल शहर और विचार  
शहर। यह अक्षा० २५ ४४' उ० तथा देशा० ८५ १०' पूर्व  
से मध्य गङ्गाके उत्तरी किनारे अक्षांशित है। जनसंख्या

प्राय १५२७८ ई। कहते हैं, कि रामायण-रचयिताके आदि कवि बाल्मीकि मुनिके नाम पर इस स्थानका नामकरण हुआ है, पर उसकेका कोई इतिहास नहीं मिलता। प्राचीन नगरका परित्याग कर १८७३-७१ ई०में नया शहर बसाया गया। यहा प्रतिवर्ष कार्तिकी पूर्णिमामें गङ्गा-सङ्गम पर द्दि नामका एक मेला लगता है। इस मेलेमें ४ लाखसे अधिक मनुष्य जमा होते हैं। मेलेमें मवेशी अधिक सख्यामें विक्रने आते हैं। इष्ट इण्डिया रेलवेके डुमराँय स्टेशनमें उतर कर यहा आना पडता है। इस शहरमें सरकारी दफ्तर, अस्पताल और बहुतसे स्कूल हैं।

बालियाघाटा—१ बङ्गालकी राजधानी कलकत्ता महानगरीसे पूर्व उपकण्ठवर्ती एक प्रसिद्ध ग्राम। यह अक्षा० २० ३३' ४५" उ० तथा देशा० ८८ २७' पू०के मध्य अवस्थित है। यहाँ बाजरगञ्जके चावल और सुन्दरवनके काष्ठकी आढत है। पूर्वतमीय रेलपथकी दक्षिण शाखाके विस्तृत तथा बालियाघाटा पालके रहनेसे वाणिज्यकी विशेष सुविधा हो गई है। अलावा इसके यहा चूनेका कारवार होता है।

२ कलकत्तेके श्यामबाजारसे जो नई खाल काटी गई है, उसीकी बेलघाटा या बालियाघाटा खाट कहते हैं। यह कलकत्तेके दक्षिण बादाभूमि पार कर लचणहटमें मिलती है। आज भी इस खालसे ढाका, यशोर आदि स्थानोंमें नावे जाती आती हैं।

बालियातोटक—मल्लभूमिके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह देवीगामुलीसे ४ कोस उत्तरमें अवस्थित है। यहा राजा गोपालसिंहके मन्त्री राजिवका वासभवन विद्यमान है।

बालियासाहेबगज—भागलपुर जिलान्तर्गत एक प्रसिद्ध ग्राम।

बालिरङ्गन—मन्द्राज प्रदेशके कोयम्बतुर जिलेकी एक गिरि माला। यह महिसुरसे हुस्सनूर-सङ्घट तक विस्तृत है। इस पर्वतकी एक शाखा जो उत्तर दक्षिणको चली गई है उसके पूर्वांशका सर्वोच्च शृङ्ख ५३०० फुट ऊँचा है। इसका उपत्यकादेश धन्यमाच्छन्न और हस्तिसङ्कुल है। गुण्डल और होन्गुलोले नदी इस पर्वतसे निकलती है।

बालिग (स० झों०) वाला सन्ति यस्य इति बाली मस्तक-स्तेन शैते यत् आधारे ड। १ उपाधान, तक्रिया। २ शिशु, बालक। ३ मूख, अवोध प्यकि। (त्रि०) ४ अयोध, अहान।

बालिश्रि / फा० खी०) तक्रिया।

बालिश्रन (फा० पु०) एक प्रकारकी माप। यह प्राय बारह अंगुलसे कुछ ऊपर और लगभग आध फुटके होती है, बीता।

बालिश्रय (स० पु०) मूर्खता, अहानता, नासमकी।

बालिस ट्रेन (अ० खी०) यह रेलगाडी जिस पर सडक बनानेके सामान लाद कर भेजे जाते हैं।

बालिसना—यहोदा राज्यके खाडी विभागन्तर्गत एक नगर।

बालिहन्ता (स० पु०) बालिवालिनी या बानरा राजस्य हन्ता। १ रामचन्द्र। बालि देवा। २ उड्देशके अन्तर्गत ग्रामविशेष।

बालिही—मध्यप्रदेशके जबलपुर जिलान्तर्गत एक अति प्राचीन नगर। यह अक्षा० २३ ४७' ४५" उ० तथा देशा० ८० १६' पू०के मध्य अवस्थित है। पहले इस स्थानका नाम 'बावासत्' या पापाजत था। यहा बालि राजके परास्त होनेसे इसका बालिहरी नाम पडा। पहले यह नगरी प्राय १२ कोस विस्तृत थी और यहा सैकड़ों देवालय शोभा दे रहे थे। उस समय भु डके भु ड जैनतीर्थ-यानी आया करते थे। १७८१ ई०में यह स्थान मराठोंके हाथ लगा। १७६६ ई०में यह नागपुरराजके हाथ सौंपा गया। १८१७ ई०में भोंसलेने यह स्थान वृष्टिग गज-में एटकी दे दिया। सिपाहीविद्रोहके समय रघुनाथ सिंह मुन्डेला यहाके दुर्ग पर अधिकार कर बैठे, पर अङ्ग-रेजोंने शीघ्र ही उसे मार भगाया और दुर्गको पुन अपने कब्जेमें कर लिया। वर्त्तमान नगरके चारों ओर आन्न वन और नतोन्तत गिरिराजिपेटित, नयनमनोहर सुनुहत् सरोवर, सुनिर्मित तडाग और प्राचीन जैन तथा हिन्दू-कीर्तिका ध्वंसावशेष नाना स्थानों में नजर आता है। बाली (हि० खी०) १ कानमें पहननेका एक प्रसिद्ध आभूषण। यह सोने या चाँदीके पतले तारका गोलाकार बना होता है। इसमें शोभाके लिये मोती आदि भी

जान अमीर नेमर था। बाबरका मातृकुल भी मरामात्र नही था। उनकी माता बुलबुलु खां खानम सुगानि-  
न्यामके अविपति मुताम गांरी कत्या और प्रसिद्ध  
पुस्तक गांके पत्रपर महमूद गांकी बदन थी।

१४८३ ई०की १५ फरवरी ( ६ मुहर्रम, ८८८ हिजरी)  
को बाबरका जन्म हुआ और १४९४ ई०के जूना मास  
( १४मास, ८९९ हिजरी )में पिताकी मृत्युके बाद ये फर-  
गन शासिह्मासग पर बैठे। अज्ञान मामक रणायामें  
उनकी राक्षसाती थी।

उन्होंने ग्यारह वर्ष तक तातार और उज्बेकीये साथ  
गाता रणायामें मरामसात युद्ध किया था। किन्तु आखिर  
ये अपना राज्य छोड़ कर फारुकी और भाग जानेकी  
बाध्य हुए थे। जो कुछ हो, थोड़े ही दिनों के बाद उहाँ  
ने फारुज, क पार और बदाकसान पर अपनी मोटी जमा-  
ना थी और २२ वर्ष तक ये वहादा जामन करते रहे  
थे। अनन्तर उन्होंने भारतवर्षमें कदम पड़ाया।  
उनके मौनागाथा पत्र मृत गया।

इस समय पठान अधिपति इब्राहिम हुनेन लोदी  
दिली पर अधिपता करते थे। उन्होंने बुलबुलुके साथ  
पतकी लडाईमें बाबरका सामगा किया। १५२६ ई०की  
२०वीं अगस्तको बाबाने उक्त लडाईमें विजय प्राप्त की  
और उसके साथ साथ भारतवर्षमें सुगल-नामाशयकी  
प्रतिष्ठाका मूलपात हुआ।

बाबर के पत्र और हा नहीं थे, विद्वान और विच-  
क्षण भी थे। ये अति सुललित मुर्की भावामें मत्तारूपे  
आत्मकोपनी रिक्त गये हैं। यह अर्घ्य प्राय 'मूक्तक  
बाबर' नाममें समान म-रुत और मशरफोप है।  
शरकरके राजव्यवहारमें अद्भुत स्थीम तात्कालीन जल-  
प्र घरा पाठगो भावामें अधुपाय किया। इस म-घमें  
बाबरकी मयिनात जोपनी और अनेक ऐतिहासिक  
विवरण मिलते हैं।

बाबरका राजव्यवहार बन्द मिला कर ३८ वर्ष होता है।  
जिनमेंसे उन्होंने अज्ञानमें १९ वर्ष, फारुजमें २३ वर्ष और

मातामें ७ वर्ष राज्य किया। १५१० ई०की २६वीं जिन  
अरको आगरे, उनकी मृत्यु हुई। पहले पसुनाके विजये  
सामगाप उपानामें उाकी कदम हुई थी, पर हा भारतके बाद  
यहांसे फारुज उठा पर लई गई। यहां उनके दरपीनेके  
लन्दके आदरदाकी एक अच्छी ममजिद बाबा ही है,  
जिने एक बार देखागने ही मन आदृष्ट हो जाग है।  
उाकी कब्रके ऊपर 'बदिलत रोजाबाद्' मर्षाम् मर्षा हा  
उाका भाष्य है, येमा रिक्ता हुआ है।

मृत्युके बाद बाबरकी 'फर्दीसा मरामो'की अर्पापि  
दी गई थी। पीछे उनके बड़े लड़के हुमायू राजमभ्य  
पर बैठे। बाबरके तीन पुत्र थे,—मिर्जा कामगान, मिर्जा  
शरकरती और मिर्जा इत्यात्।

फिरिस्ताने लिखा है, कि बाबर अतिशय सुगशाश  
और रमणामें आरतक थे। आमोद् प्रमोद् करनेके समय  
ये फारुजके निकटस्थ अपनी प्रमोद् कामगामें एक महारथ  
की शराबसे भर देते थे और सुप्रती रमणियेके, साथ  
गोटा करते थे। सुगत भी हुमायू देगे।

बाबरकी ( फा० पु० ) भोजन पकानेशाला, रमोतपा।  
बाबरकीसाला ( फा० पु० ) पाकशाला, रमोतपा।  
बाबरा ( हि० वि० ) कानका देगे।  
बाबरके ( हि० वि० ) बाबरकी देगा।  
बाबर ( हि० पु० ) शोषी, मघट।  
बाबर ( हि० वि० ) विहित, वागात्।  
बाबरगापा ( हि० पु० ) वागात्पत्र, मघट।  
बाबरकी ( हि० म्रो० ) १ थोड़े मु हका कुं गा मरामें गामो  
तक मरुचनके लिये सोदिपा कनी हा। २ मोदिपां रगी  
हुई छोटा गहरा तागात्। ३ इनामतका एक मरत। इममें  
माथेसे ले कर थोटाके पास तकके गात् बाट वांग अमुग  
थोडामें मूँट दिप जाते हैं जिसमें गिरके ऊपर  
बूट्टेवागा आकार बन जाता है।

बाबरकी विप्लव—पठानके मरामात एक रदण। यह  
मागवर्षमें वांघ मीन बुलिया पूर्ण हो परतकके मरु-वर्षों  
बन्दराके समीप मर्षाचिप है। मागके व्यवसायिकोंमें  
परिचलन होग पर भी यहां लया निरद-रगी बन्दरों अतीव  
हदुत आदि अतन्व्य बीडकर्मिणों देकनेमें आगी है।  
परिमात्रक मूलतुर्षगने इस रणायामें देला था। बाबरकी

नालाके किनारे प्राचीन ध्वसराणिके ऊपर यह ग्राम बसा हुआ है। हसन अबदुलमे हरिपुर (हजारा जिला) जाके रास्ते पर यह स्थान पडता है। हसन अबदुल और वायतीपिण्डके मध्यस्थी लङ्ककोट वा थोकोट नामक स्थान बहुत प्राचीन है। प्रवाद है, कि श्रीकोटदुर्ग रस्ताहूके चिरशत्रु राजा गिरफ्तके अधिकारमें था।

वावादेव—अपेणमीमासा नामक सरकृतग्रन्थके रचयिता।

वावाशास्त्री—स्वरोदय विवरणके रचयिता।

वाशिदा (फा० पु०) निवासी, रहनेवाला।

वाक्ल (स० पु०) १ एक दैत्यका नाम। २ धार, योद्धा।

३ एक उपनिषद्का नाम। ४ एक ऋषिका नाम। ५ रीत्य, चादी।

वाक्लक (स० त्रि०) वाक्कल सम्बन्धीय।

वाक्कलि (स० पु०) १ वैदिक आचार्यमेद। २ वाक्कल का अपत्य।

वाक्कहि (स० पु०) वाक्कहि अपत्यार्थे अण्। वाक्किका अपत्य।

वाक्प (हि० पु०) १ भाप। वाक्प देखा। २ लोहा। ३ अश्रु, आसू। ४ एक प्रकारकी जडी। ५ गीतमनुद्धके एक शिष्यका नाम।

वाक्पी (स० स्त्री०) हिंदु पत्नी।

वास (हि० पु०) १ रहनेकी क्रिया या भाव, निवास। २

निवासस्थान, रहनेका स्थान। ३ एक छन्दका नाम।

४ वस्त्र, कपडा। (स्त्री०) ५ गन्ध, महक, वृ। ६ इच्छा, वासना। ७ अग्नि, आग। ८ एक प्रकारका अन्न।

९ तेज धारवाली छुरी, चाकू, कीची इत्यादि छोटे छोटे शस्त्र जो रणमें तोपोंमें भर कर फेंके जाते हैं।

(पु०) १० एक बहुत ऊँचा पृक्ष। इसकी लकड़ी

रंगमें लाली लिप फाली और हतनी मजबूत होती है, कि

साधारण कुन्हाडियोंसे नहीं फट सकती। इस लकड़ीसे

पलगके पावे और दूसरे सजावटी सामान बनाये जाते

हैं। इसमें बहुत ही सुगन्धित फूल लगते हैं। इसका

गोंद बर कामोंमें आता है। पहाड़ोंमें यह पेड़ ३०००

फुटकी ऊँचाई तक होता है।

वासकणी (स० स्त्री०) यज्ञशाला।

वासकसजा (स० स्त्री०) घट नायिका जो अपने पति वा

प्रियतमके आनेके समय केलि सामग्री सजित करे। वासग्यारी—अयोध्या प्रदेशके फैजाबाद जिलान्तर्गत एक नगर। प्रसिद्ध मुसलमान साधु मखदुम असरफने १३८८ ई०में इसे बसाया। उनके वंशधर इस नगरके सत्त्वाधिकारी हैं।

वासठ (हि० वि०) १ साठ और दो, इकतीसका दूना।

(पु०) २ साठ और दोकी संख्या जो इस प्रकार लिखी जाती है—६२।

वासठवाँ (हि० वि०) जो क्रममें वासठके स्थान पर हो,

गिनतीमें वासठके स्थान पर पडनेवाला।

वासडा—२४ परगनेके सुन्दरवन विभागका एक गण्डग्राम।

यह अक्षा० २२ २२ उ० तथा देशा० ८८ ३७ पू० विचा-

धरो तदीके किनारे अवस्थित है। फकीर सुवारक

गाजीके समाधिमंदिरके लिये यह स्थान बहुत मशहूर

है। प्रति वर्ष यहां एक मेला लगता है जो 'गाजीसाहबका

मेला' कहलाता है। प्रवाद है, कि गाजी साहबने जङ्गली

पशुओंको स्तम्भित कर दिया था। यहां तक कि बाघ

उनका घाहन बन गया था। आज भी लकड़हारे गाजी

साहबको पूजा दिये बिना लकड़ी काटनेके लिये जङ्गल

नहीं घुसते। निरुद्वर्तनों प्रायः सभी ग्रामोंमें गाजी

साहबकी चेदी देखी जाती है। उस चेदीके सामने

लकड़हारे गाजी साहबके वंशधर फकीर द्वारा नैवेद्य

चढ़ाते हैं।

वासदेव (हि० पु०) १ अग्नि, आग। २ वासुदेव देवो।

वासन (हि० पु०) बरतन, भाँड।

वासना (हि० स्त्री०) १ इच्छा, चाह। २ गन्ध, महक।

(वि०) ३ सुगन्धित करना, महकाना।

वासफूड (हि० पु०) १ एक प्रकारका धान। २ इस

धानका चावल।

वासमती (हि० पु०) १ एक प्रकारका धान। २ इस

धानका चावल। यह पत्रने पर अच्छी सुगन्ध देता है।

वासर (हि० पु०) १ दिन। २ प्रातःकाल, सवेरा। ३

सवेरे गानेका एक राग।

वासव (स० पु०) इन्द्र।

वासवी (हि० पु०) अर्जुन।

वासरीदिशा (स० पु०) पूर्व दिशा, यह इन्द्रकी दिशा

मानी जाती है।





३ उक्त उपप्रभागका एक तालुक। यह अक्षा० १६ ५२' से २० २५' उ० तथा देशा० ७५ ४०' से ७७ २८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १०४६ वर्गमील और जनसंख्या १७७२५० है। इस तालुकमें वासिम नामक एक शहर और ३२४ ग्राम लगते हैं। यहांकी जमीन बहुत उपजाऊ है।

४ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० २० ७' उ० तथा देशा० ७७ ११' पू०के मध्य अवस्थित है। यह प्राचीन कालमें वत्स नामक किसी ऋषिने इस नगरको बसाया। उन्ही के नामानुसार यह स्थान बच्छगुलिन नामसे प्रसिद्ध था। पीछे लोग उसके अपभ्रंशमें वासिम कहने लगे। नगरके बाहर पद्मातीर्थ नामक एक पुण्यसलिला पुष्करिणी है। प्रवाद है, कि वासुकि नामक कोई राजा इस पुष्करिणीमें स्नान कर कुष्ठरोगसे मुक्त हुए थे। उसी माहात्म्यके लिये आज भी सैकड़ों कुष्ठरोगी इसमें स्नान करने आते हैं। १७वीं शताब्दीमें वासिमके देशमुखोंने मुगल सम्राट्से काफी जमीन और रत्न पाया था। नागपुरके भोंसलेके बाद यहां निजाम राजाने सेनानिवास और टुकसाल खोली थी। भोंसलेके सेनापति भवानी बालू-प्रतिष्ठित बालाजीका मन्दिर और पुष्करिणी देखने लायक है।

वासिष्ठी ( हि० स्त्री० ) बन्नास नदीका एक नाम। कहते हैं, कि वसिष्ठजीके तप प्रभावसे ही यह नदी प्रकट हुई थी।

वासो ( हि० वि० ) १ जो ताजा न हो, ढेरका बना हुआ। २ जो सूखा या कुम्हलाया हुआ हो, जो हरा भरा न हो। ३ जिस पेड़से अलग हुये ज्यादा ढेर हो गई हो। ४ जो कुछ समय तक रखा रखा हो। ५ बसनेवाला, रहनेवाला।

वासोदा—मध्यभारतके भोपाल एजेन्सीके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य। भूपरिमाण ४० वर्गमील और जनसंख्या पांच हजारके करीब है। यहांके सामन्तगण पठान वंशीय और नवाब-उपाधिधारी हैं। १७वीं शताब्दीमें ओछांके राजा घोरसिंहदेवने वामोदा नगरको बसाया था। यह राज्य नवाब वसोदा नामसे मशहूर है। इस राजाके पश्चिममें टोडू राजाका मिरजों जिला और ग्वालियरका कुछ अंश; उत्तरमें मध्यप्रदेशका सींगर जिला,

पठारी राज और महम्मदगढ़; पूर्वमें सींगर जिला और भोपाल तथा दक्षिणमें भी भोपाल है।

१८वीं शताब्दीमें घोरसिंहदेवके महम्मद दिलेर खाँ नामक एक बारकजै फिरोज खेले अफगानने इस राज्यको स्थापित किया। उनकी मृत्युके बाद यह राज्य उनके दो लड़कोंमें भिन्नक हुआ। बड़े लड़केके हिस्सेमें कोरवै पडा। छोटे लड़के अहसन उल्ला खा पहले ग्वालियर राज्यके राग और पीछे बहादुरगढ़में बस गये। किन्तु मराठोंसे तंग आ कर वे १७५३ ई०में अपनी राजधानीकी बासोदामें उठा लाये। १८१७ ई०में यह राज्य सिन्धिया के हाथ लगा, पर अंगरेजोंके दबावसे १८२२ ई०में फिर लौटा दिया गया।

असन उल्लाकी १७८६ ई०में मृत्यु हुई। पीछे नवाब बकाउल्ला खा और आसद अली खा राज्याधिकारी हुए। वर्तमान सरदारका नाम हंदर अली खाँ है। ये १८६७ ई०में राजगद्दी पर बैठे। इनकी भी उपाधि नवाब है। इस राज्यमें कुल २३ ग्राम लगते हैं। राजस्व १६००० रु० है। यहांकी जमीन खूब उपजाऊ है।

२ उक्त राज्यको एक राजधानी। यह अक्षा० २३ ५१' उ० तथा देशा० ७७ ५६' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या १८५० है। यहां एक सरकारी डाकघर, कारागार, एक स्कूल और एक निफित्मालय है।

वासोली—राजमौर राज्यके अन्तर्गत एक भूभाग और उस देशका एक नगर। यह अक्षा० ३२ ३३' उ० तथा देशा० ७५ २८' पू०के मध्य हिमालयके दक्षिण इरावती नदीके किनारे अवस्थित है। १७५५ ई०में यह स्थान निघोंके अधिभारमें आया।

वासोधी ( हि० स्त्री० ) बगोधी देवो। वास्त ( सं० लि० ) वस्त वा छागमस्त्राधीय। वास्तायन ( सं० पु० ) वस्तका गोत्रापत्य। वाह ( सं० पु० ) वाहु, वाँह। वाह ( हि० पु० ) घेतकी जोतनेकी क्रिया, घेतकी जोतार्ह। वाहट—एक प्रयकार। मलिनार्थो रघुवशटोकांमं इनका नामोल्लेख किया है।

वाहडी ( हि० स्त्री० ) वह सिचडी जो ममाला और कुम्ह डीरी डाल कर पकाई गई हो।



वाह्वरुतः । स० पु० ) वाह्वरुत होनेका भाव, बहुत सी बातोंकी, सुन कर, प्राप्त की हुई जानकारी ।

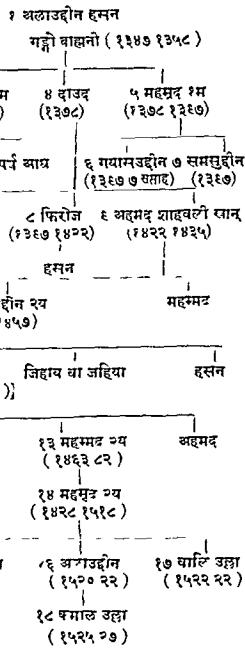
वाह्वसम्भव ( स० पु० ) वाह्व प्रह्वगह्व सम्भवोऽस्य । क्षत्रिय, जिनकी उत्पत्ति ब्रह्माकी बाह्वसे मानी जाती है । वाह्वसहस्रभृत् ( स० पु० ) वाह्वना सहस्र विभक्तौति विप ( हस्वल् पितृगिति तुह् । पा ६।१।६१ ) इति तुक् च । कार्तवीर्याजुंन । परशुरामने पशु द्वारा इनकी हजार भुजाएँ काट डाली थीं । सत्रेरे इनका नाम लेनेसे स्व प्रकारकी दुर्गति और महापातक विनाश होता है ।

“राक्षसीशार्तुं तो नाम राक्ष वाह्वसम्भवत् ।  
 योऽस्य राक्षीक्षित्राम वृत्तमुत्थाय मानय ।  
 न तस्य निचानां स्यात् नष्टञ्च क्षमते पुः ॥”  
 ( भाद्रिनतल् ) कार्तवीर्याजुंन देवो ।

वाह्व ( स० न्प्र ) गह्व देना ।  
 वाह्ववाह्वि ( स० अथ्य० ) वाह्विर्वाह्व भिर्यत् युद्ध वृत्त ।  
 वाह्व द्वारा जो युद्ध होता है, कुरती ।  
 बाह्वेर ( हि० कि०पि० ) पत्रिक, निट्ट ।  
 बाह्वणगाव-मध्यप्रदेशके बाह्वपाट जिलान्तगत एक भूस्वयंति । भूपरिमाण ८ वर्गमील है ।  
 बाह्वण ( हि० पु० ) ब्राह्मणद्विवा ।

बाह्वनीयश-दक्षिणात्यका एक मुसलमान राज-वंश । १३४४ ई०में बरगुल, निजयनगर और द्वारसमुद्रमें हिन्दू राजाओंने मिल कर दिल्लीकी अधीनता त्याग दी थी । यह दीप वीरतावादके मुसलमान शासनकर्ता अन्यान्य मुसलमान सम्राट्ओंकी सहायतासे एक साथ १३४१ ई०में दिल्लीभर मुहम्मद तुगलकके अधीनता पाश छेद कर स्वधीनताकी धराजा उठानेमें समर्थ हुए थे । कुतुबगं ( आगनाबाद ) में उन्होंने अपना राजपाट स्थापित किया था । उक्त वीरतावादके राज प्रतिनिधि एतन बाल्याप्रस्थासे ही अति वरिष्ठ थे । गह्व नामक किसी ब्राह्मणकी सहायतासे इन्होंने राजस्वकारमें प्रतिष्ठा प्राप्त की और पीछे पदोन्नति हुई । ब्राह्मणके प्रति, शत्रुपकारके लिये शतहना प्रशंसा नार्थ वे अपना नाम हसन गह्व बाह्वनी रख कर राज सिंहासन पर बैठे । इन्दी के द्वारा प्रतिष्ठित राजवंश, उस ब्राह्मणके स्मरणार्थ बाह्वनी नामसे प्रसिद्ध हुआ ।

बाह्वनी राजवंश ।



उपर्युल्लिखित अठारह राजाओंने करीब दो सौ वर्ष तक दक्षिणात्यके तुलुवर्गा-राजसिंहासन पर बैठ कर राजकार्य चलाया था । अनन्तर बरिदशाही, आठिलशाही, इमादशाही और कुतुबशाही राजाओंने दक्षिण-भारतमें शासनदण्ड विस्तार किया था ।

अलाउद्दीन अपना राज्य चार भागोंमें विभक्त कर १३५८ ई०में परलीफ सिंधारे । उनके पुत्र महम्मदशाहने गणपति राजव लूट कर बरङ्गल राज्य पर हमला किया । युद्धमें बरङ्गल राजपुत्र नागदेव मारे गये, जिससे गोलकुण्डा आदि राजा महम्मदशाहके हस्तगत हुए ।

पाप किया था, इस कारण राजाके समीप भेजा। राजा  
हो दोषीको दण्ड देने हे, मुझे दण्ड देना कोई भी  
अधिनार नहीं है। अभी तुम और राजा दोनों ही  
परित्र हो गये हो। (भारत नाटिका २३, २४ अ०)

यह नदी हिमालयसे निकली है। हरिवंशमें लिखा  
है,—प्रमेजित राजाके गौरी नामकी एक स्त्री थी।  
स्वामीने कुछ हो कर उन्हे प्राण दिया था जिससे वे  
'बाहुदा' नदीमें परिणत हुई

लेष प्रसन्नित्मार्गो गौरी नाम पतिव्रता।

धमिरता यु वा भर्गो नदी वै बाहुदा कृता ॥”

(हरिवंश १२॥)

२ पुरुषजीय परोक्षिन् राजाकी पत्नी (त्रि०) ३

बहुदात्री, बहुत दानकरनेवाली।

बाहुपाश (स० पु०) १ बाहु द्वारा युद्धकौशल भेद।

२ बाहुदृष्टल।

बाहुमलम्ब (स० त्रि०) अज्ञानुबाहु, जिसकी बाँहें बहुत  
लम्बी हों। ऐसा व्यक्ति बहुत घोर माना जाता है।

बाहुबल (स० त्रि०) बाहो बल। हस्तबल, पराक्रम,  
बहादुरी।

बाहुबलि (स० पु०) गिरिभेद।

बाहुवलिन (स० त्रि०) बाहुबलवाली, पराक्रमी।

बाहुबाध (स० पु०) जनपदभेद।

बाहुभाष्य (स० त्रि०) बहुभाषणशीलता, बहुत बोलने  
वाला।

बाहुभूषा (स० त्रि०) बाहोभूषणभूषा या भूषण। १ फेवर,  
बहुँदा। २ बाहुभूषणमाल।

बाहुभेदिन् (स० पु०) बाहु भिनत्तीति बाहु० भिद जिनि  
विण्णु। (त्रि०) २ बाहुभेदक।

बाहुमत् (स० त्रि०) बाहुयुक्त।

बाहुमात्र (स० त्रि०) बाहुः प्रमाणमस्य बाहु मात्रच्।  
बाहुपरिमाण।

बाहुमितावण (स० पु०) बहुमितवण गोत्रापत्य।

बाहुमूल (स० त्रि०) बाहोमूल। कश, कधे और  
बाहुका जोड़।

बाहुयुद्ध (स० त्रि०) बाहोभूषणभूषा वा युद्ध। भुज  
द्राया सप्राम, महायुद्ध, कुन्ती। पर्याय—त्रियुद्ध। बाहु

युद्धके अंग भेद है, यथा—सदृष्ट, कदृष्ट, कर्षणपर  
और किण महाभारतके विराटपर्व १२ अध्यायमें  
इसका विवरण लिगा है। मत्स्युद्ध देखो।

बाहुयोध (स० पु०) महा, पहलवान।

बाहुल (स० त्रि०) बहुल-अण्। १ बहुलभाष, बहुत  
यत्, ज्यादाती। २ बाहुलान, युद्धके समय हाथमें पहने-  
की एक वस्तु जिससे हाथकी रक्षा होती थी। ३  
अग्नि, आग। ३ फार्सिक मास।

बाहुलक (स० त्रि०) बहुलेन बहुलग्रहणेन निरुक्त  
सङ्कलादित्यात् अण् सशया कन्। व्याकरणोक्त सर्वो  
पाथिरहित विधानादि।

कहीं कहीं विधिका विधानविधि देख कर बाहुलक  
विधि चार प्रकारकी बतलाई गई है, यथा—कहीं प्रवृत्ति,  
कहीं अप्रवृत्ति, कहीं विभाषा और कहीं इसकी अन्यथा।  
बाहुलप्रवीथ (स० पु०) मयूर, मोर।

बाहुलता (स० स्त्री०) बाहुरेय लता, रूपक कर्मधा०। बाहु  
रूप लता।

बाहुलतिका (स० स्त्री०) बाहुरेय लतिका। बाहुलता।  
बाहुलेय (स० पु०) बहुलाना एतिसिपादीनामपत्य पुमान्  
बहुला ङक्। फार्सिकेय।

बाहुल्य (स० त्रि०) बहुलप्यण्। आधिपत्य, अधिकाता।

बाहुल्युक्ते (स० पु०) ताल छो कता।

बाहुर्मोष (स० त्रि०) बाहो धोष्ये। बाहुबल, भुजबल,  
पराक्रम।

बाहुष्यापाम (स० पु०) बाहु द्वारा नाना कौशल।

बाहुशक्तिन् (स० त्रि०) बाहुष्या शक्ति यति धमिमयतीति  
(मुच्यताती णिनिम्ताच्छास्य। पा ३।०।७८) इति णिनि।  
बाहुबलयुक्त।

बाहुशाल (स० पु०) धृक्षभेद। बहुशान देगे।

बाहुशालिन (स० त्रि०) बाहुष्या शालन्ते तद्द्रव्यमाधि  
पथेन प्रशयते शाल इति। १ बाहुशोषाधिपत्ययुक्त, परा  
क्रमी। त्रियां डीप्। (पु०) २ शिव। ३ भौम। ४ धृज  
राष्ट्र पुत्रभेद। ५ शानरभेद। ६ राजपुत्रभेद।

बाहुशिवर (स० पु०) वरम्य, यथा।

बाहुशोष (स० पु०) बाहुमें होनाशाल पराशरका पायु  
रोग जिममें बहुत पीडा होती है।

बाहुश्रुत्यः ( स० पु० ) बाहुश्रुत होनेका भाव, बहुत सी बातोंकी, सुन कर, प्राप्त की हुई जानकारी।

बाहुसम्भव ( स० पु० ) बाहु ब्रह्मगर्ह सम्भवोऽस्य । क्षत्रिय, जिनकी उत्पत्ति ब्रह्माकी बाहसे मानी जाती है। बाहुमहस्रभृत् ( स० पु० ) बाहना महस्र विभक्तौति विप ( हस्त्वल्य पितृनिनि तुक् ) पा ६।१।६१ इति तुक् च । कात्तवीर्यार्जुनः । परशुरामने परशु द्वारा इनको हजार मुजाएँ फाट डाली थीं। सबरे इनका नाम लेनेसे सब प्रकारकी दुर्गति और महापातक विनाश होता है।

“मार्त्तवीर्याजु नो नाम राजा बाहुस्रवमस्र् ।

याऽस्य सतीर्त्तविराम क”मुत्थाय मानव ।

न नस्य विन्ताग स्यात् नञ्च नमते पुा ॥”

( आदिप्रवच ) कात्त वीर्यार्जुन देतो ।

बाहु ( स० स्त्री ) बाहु देवो ।

बाहुवाहनि ( स० अर्थ० ) बाहुभिर्वाहु भिर्यत् युद्ध वृत्त ।

बाहु द्वारा जो युद्ध होता है, कुरतो ।

बाहरे ( हि० क्रि० प्रि० ) पवित, निरुष्ट ।

बाह्यगणव—मध्यप्रदेशके बालाघाट जिलान्तर्गत एक

भूस्वयम्पत्ति । भूपरिमाण ८ वर्गमील है।

बाह्यण ( हि० पु० ) ब्राह्मणदेशो ।

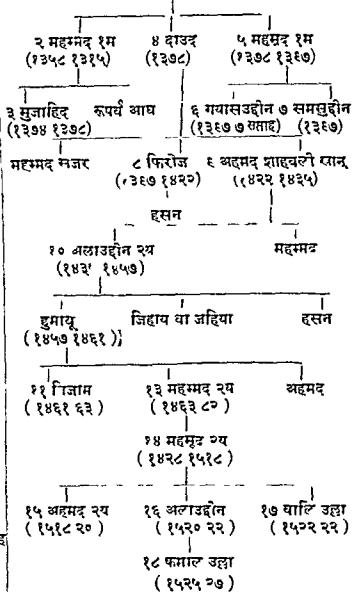
बाह्यनोयश—दक्षिणात्यका एक मुसलमान राज-वंश ।

१३४४ ई०में बरगुज, विजयनगर और द्वारसमुद्रमें हिन्दू राजाओंने मिल कर दिल्लीकी अधीनता त्याग दी था। यह देश दौलताबादके मुसलमान शासनकर्त्ता अन्त्यान्य मुसलमान अमात्योंकी सहायतासे एक साथ १३४१ ई०में दिल्लीधर मुहम्मद तुगलकके अधीनता पाश छेड़ कर स्वाधीनताकी ध्वजा उधानेमें समर्थ हुए थे। कुलुर्ग ( आजनाबाद ) में उन्होंने अपना राजपाट रथापित किया था। उक्त दौलताबादके राज प्रतिनिधि हसन बाल्यान्स्थासे ही अनि द्रिष्ट थे। गङ्गा नामक सिन्धी ब्राह्मणकी सहायतासे इन्होंने राजमरकारमें प्रतिष्ठा प्राप्त की और पीछे पदवीजति हुई। ब्राह्मणके प्रति, श्रुतोपकारके लिये कृतज्ञता प्रदर्शनाथ ये अपना नाम हसन गङ्गा बाह्यनो रख कर राजसिंहासन पर बैठे। इन्हीके द्वारा प्रतिष्ठित राजवंश, उस ब्राह्मणके रमरणार्थ बाह्यनो नामसे प्रसिद्ध हुआ।

बाह्यनो राजवंश ।

१ अलाउद्दीन हसन

गङ्गा बाह्यनो ( १३४७ १३५८ )



उपर्युत्तिगित अठारह राजाओंने करोव दो सी वर्ष तक दक्षिणात्यके कुलवर्ग-राजसिंहासन पर बैठ कर राजकार्य चलाया था। जनस्तर बरिदशाही, आदिल शाही, इमादशाही और हुतुबशाही राजाओंने दक्षिण-भारतमें शासनदण्ड विस्तार किया था।

अलाउद्दीन अपना राज्य चार भागोंमें विभक्त कर १३५८ ई०में परलोक सिंघारे। उनके पुत्र महम्मदशाहने गणपति-राज्य तूट कर बरङ्गल राज्य पर हमला किया। युद्धमें बरङ्गल राजपुत्र नागदेव मारे गये, तिनसे गोल कुण्डा आदि राजा महम्मदशाहके हस्तगत हुए।

१३६०-६६ ई०में इन्होंने विजयनगरके राजाके विरुद्ध युद्ध कर हद दुर्जेकी निःशुनताका परिचाय किया। इस युद्धमें विजयी होने पर भी दोनों पक्षोंमें शान्ति स्थापित न हो पायी थी। १३७१ ई०में इनकी मृत्यु होने पर इनके पुत्र मजाहिदने राज्यासन पर बैठ कर लगातार कई मरतवा विजयनगर पर चढ़ाई की थी। इन युद्धोंमें उनके अत्याचारोंकी सीमा न थी। अन्तिम आक्रमणमें विक्रम मनोहर हो कर पेंट रहे थे, कि रातमें उनके चाचा बाऊले (१३७८ ई०में) इन्हें मार डाला। बाऊद भी राजसिंहासन पर बैठनेके बाद मजाहिदकी वधनके पडयन्त्रसे मारे गये। उस के बाद बागउद्दोंके वनिष्ठ पुत्र महमूद राजा हुए। वरार १६ वर्ष तक निःशुद्ध राजा करके १३६७ ई०में वे फाल्गुन सिंघारे। उनकी मृत्युके बाद उनके दोनों पुत्र गयास उद्दौन और सममुद्दौनने क्रमशः कुछ दिनों तक राज्य किया। बादमें पर श्रीतदासने गयासउद्दौनके आगे उपाट कर उन्हें बँद किया था और सममुद्दौनको दाऊदके पुत्र फिरोजने राज्यच्युत किया था।

फिरोजने २५ वर्ष तक राज्य किया था। उन्होंने १३७८, १४०१ और १४०७ ई०म लगातार तीन बार विजयनगर पर आक्रमण किया था। प्रथम दो युद्धों में विजयनगरके राजा पराजित हुए, परन्तु तृतीय युद्धमें फिरोजको परास्त और विशेष क्षतिग्रस्त हो कर अपने राज्यामें लौट आना पड़ा। द्वितीय युद्धकी विजयमें उपरुध धाम्यरूप फिरोजने विवायनगरकी राजकन्याका पाणिग्रहण किया था १४१२ ई०में उनकी मृत्यु होनेके बाद उनके भाई अहमद जाहने निर्गह अतीजोंकी भगा कर स्वयं राजा पर अधिकार जमा लिया। राजाधिकारके बाद ही इन्होंने विजयनगरके राजाको सुसुद्धमें परास्त कर लेना प्रारम्भ कर दिया। परन्तु वरुद्ध पतिके इनके साथ युद्धमें मारे जानेके कारण उक्त राजा नष्ट हो गया। वे भी विद्वनगर स्थापन कर १४३५ ई०में समाप्त चले गये। उनके पुत्र २५ अशउद्दौनके राजसिंहासन पर आरोहण करने पर वनिष्ठ महमूद विजयनगर नरेशके साथ मित्र कर भाईके विरोधी बन गये और पर विजय राजा कर दिया। पर महमूद परास्त हो कर महज ही में भाईके पक्षीभूत हो गये। अशउद्दौनके विजयनगर

राजधानी उडा लाने पर, १४३७ ई०में विजयनगरके वेय राजा ने लगातार कई बार बाहलीराज्य पर आक्रमण किये। आखिर दोनों पक्षोंमें संधि हो गई। १४५०में २५ अशउद्दौनकी मृत्यु होने पर उनके निःशुद्ध पुत्र हुमायूँने ४ वर्ष राज्य किया। राजकीर्णचारियोंके पडयन्त्रसे १४६१ ई०में हुमायूँ के मारे जाने पर उनके उपेष्टपुत्र निषामकी राज्य मिला। निषाम ८ वर्षके बालक होने पर भी उनकी बुद्धिमती माता और महामन्त्री महमूद गयानने अशुद्ध तरह राजकार्य चलाया था। उस समय उडिया, तेलिङ्ग और मालवाकी सेनाने आ कर बाहलीराज्य पर आक्रमण किया था, परन्तु सभी उल्टे पाव लौट गये। इनकी मृत्युके बाद १४६३ ई०में २५ महमूद ८० वर्षकी उम्रमें सिंहासन पर बैठे। १४६८ ई०में ये महमूद गयानो प्रधान मंत्री नियुक्त कर राज्यकी सीमा वृद्धि करनेके लिये अग्रसर हुए। १४६६ ई०में वे कोट्टण अधिकार करी, उडिया राजको सहायता देने और तेलिङ्ग आक्रमण तथा कोण्डपल्ली एवं राजमहेन्द्र विजय करने आदिमें व्यस्त थे। १४७७ ई०में ये पुन मछुओपतन लौटे थे। यहाँसे फिर समुद्रोपहूट हो कर काव्यापुर तकके स्थान पर आक्रमण किया और लूट मार की। १४८१में इन्होंने अपने दुर्भाग्यवश ही निषाम उल्लुक्क मीरीको सलाहसे महमूद गयानको पदच्युत किया और मार डाला। महमूद गयानकी क्षानगर्भ सुषमागनी और राय परिचालनकी सुव्यवस्था को कर इन्होंने सचमुच ही अपने विरो में सुल्लाही मार ली थी। इस घटनाके बादने ही महमूद राज्यके अथ पतनका सूत्रपात हो गया। महमूद गयानकी मृत्युके बाद राज्यके प्रधा प्रधान सामन्तगण राज्यकी उपेक्षाकृष्टिसे दैतने लगे और राज दरवारमें कम जाने लगे। वे प्राय अपने दलबलके साथ अपने अपने राज्योंमें भ्रमा करते थे। १४६२ ई०में महमूद गयानके वरुधपुत्र सुसुद्ध आदिल शाही को मारा नगरको रक्षाध मेजनेके बाद महमूदको मृत्यु हो गई। उनके पुत्र २५ महमूदने राधा होनेके साथ ही निषाम उल्लुक्क मीरीको अपना मंत्री नियुक्त किया। सुसुद्ध आदिलके राजधानीमें लौटने पर उनकी हत्याके लिये पटयस्त होने लगा। सुसुद्धकी वधर लगते ही वे अपने राज्य बाजापुरकी भाग गये।

अनन्तर महमूदके तेलिङ्गना आक्रमणके लिए चले जाने पर निजाम उलमुल्क मार डाले गये। इन्को मीके पर मालिक अहमद जुनारमें स्वाधीन हो गये। बेरारके शासनकर्त्ता ईमाद उलमुल्क विद्रोही हो कर राज्यके विरुद्ध बडे हुए। मन्त्री कासिम बारिदकी मृत्युके बाद १५०४ ई०में ब्राह्मनराज एक तरहसे अमीर बरिदके अधीन हो गया। १५१२ ई०में तेलङ्गके शासनकर्त्ता युवक उल् मुवकने गोलकुण्डाके राजा बन कर बाहना शासनकी अग्रणी की थी। इसके सिवा बाहना राज सेनाके साथ बीजापुर और बेरार सेनाका कई बार युद्ध होनेसे बाहनी राजशक्ति क्रमश क्षीण हो चली। १५१८ ई०में मह मूदकी मृत्युके बाद उनके पुत्र रय अहमद राजा तो हुए, परन्तु राज्यकी समस्त क्षमता अमीर बरिदके हाथ रही। १५२० ई०में उनकी मृत्यु हुई और फनिष्ठ भ्राता अला उद्दीन राजा हुए। इन्होंने राज मलियोंके कण्डसे छुटकारा पानेकी कोशिश की, जिससे वे १५२२ ई०में राजगढ़ी से उतारे और मार डाले गये। पश्चात् उनके छोटे भाई वाली दो वर्षके लिए राजा रहे, १५२४ ई०में विप दे कर उनका भी काम तमाम किया गया और अमीर बारिदने उनकी विधवा खोसे अपना सम्बन्ध किया। उसके बाद फलाम उल्लाकी सिंहासन पर बिठाया गया, पर वे १५२७ ई०में प्राणोंके डरसे अहमदनगर भाग गये और इधर अमीर बरिदने भी यहाना छोड़ कर नगरमें नयी राजप्रशकी प्रतिष्ठा की। बरिदशही देखे।

बाह (स० स्त्री०) बाहते चालने इति बाहि ष्यत्। १ यान, सवारी। २ भार ढोनेवाला पशु, जैसे—बैल, गधा, ऊँट आदि। ३ बहिस्, बाहर। (त्रि०) ४ बहिर्भव, बाहरमें होनेवाला। ५ बहनीय, ढोनेवाला। ६ बाहरी, बाहरका।

बाह्यकरण (स० स्त्री०) बाह्यक्रिया।

बाह्यकर्ण (स० पु०) महाभारतके अनुसार एक नागका नाम।

बाह्यकुण्ड (स० पु०) नामभेद, एक नागका नाम।

बाह्यतपश्चर्या (स० स्त्री०) जैनियोंके अनुसार तपस्या का एक भेद। यह छ प्रकारकी होती है—अनशन, औनी द्य, वृत्तिस शेष, रसत्याग, कायदेश और लीनता।

बाह्यतस (स० अन्व०) बहिर्भागमें, बाहरमें।

बाहना (स० स्त्री०) बहिविषयता।

बाह्यद्रुति (स० पु०) पारेण एक संस्कार।

बाह्यपटी (स० स्त्री०) जवनिका, नाट्यका परदा।

बाह्यभ्यन्तर (स० पु०) प्राणायामका एक भेद। इसमें आते और जाते हुए श्वासको कुछ कुछ रोकते रहते हैं।

बाह्यभ्यन्तराक्षेपी (स० पु०) प्राणायामका एक भेद। जब प्राण भीतरसे बाहर निकलने लगे, तब उसे निकलने न दे कर उलटे लौटाना, और जब भीतर जाने लगे तब उसको बाहर रोकना।

बाह्यनिद्रधि (स० पु०) एक प्रकारका रोग। इसमें शरीरके किसी स्थानमें सूजन और फोड़ेकी सी पीडा होती है। इस रोगमें रोगीके मुह अथवा गुदासे मवाद निकलता है। यदि मवाद गुदासे निकले तब तो रोगी साध्य माना जाता है, पर यदि मवाद मुहसे निकले तो वह असाध्य समझा जाता है।

बाह्यविषय (स० पु०) प्राणको बाहर अधिक रोकना।

बाह्यगुत्ति (स० स्त्री०) प्राणायामका एक भेद। इसमें भीतरसे निकलते हुए श्वासको धीरे धीरे रोकते हैं।

बाह्याचरण (स० पु०) आडभद्र, ढकोसला।

बाह्यायाम (स० पु०) वायु सम्बन्धी एक रोग। इसमें रोगीको पीठकी नसे पिचने लगती है और उसका शरीर पीछेकी ओरको झुकता लगता है।

बाह्यालय (स० पु०) बहिर्याटी, बाहरका घर।

बाहक—बाहिक देखो।

बाहिक (स० पु०) काश्मीरके उत्तरप्रदेशका प्राचीन नाम जहा आज कल बलख है। यह स्थान काबुलके उत्तरकी ओर पडता है। इसका प्राचीन पारसी नाम बत्तर है। इसी बत्तर शब्दसे यूनानी शब्द बैक्ट्रिया बना है।

बाहङ्ग (स० स्त्री०) बाहु।

बाह्यादि (स० पु०) बाहु आदि करके इञ् प्रत्ययनिमित्त शब्दगण। गण यथा—बाहु, उपबाहु, उपचाहु, निवाहु, शिवाहु, चटाहु, उपरिद्रु, वृषली, चकला, चूडा, बलाका सूयिन, कुगला, छगला, ध्रुचका, ध्रुका, सुमित्रा, दुर्मित्रा, पुष्करसट, अनुदरन्, देवशर्मन्, अग्निशर्मन्, भद्र



घनन, सुनामन, वृत्तामन, सुनामन, पञ्चन, समन, अष्टन, अमिर्गानम, सुधायन, उद्भूत, शिरस, माय, शरायिन, मणेशी, भैरवुदिन, शृङ्खलतोदिन, रागादिन, नगरमर्दिन, प्रसारमर्दिन, लीमन, अजीमर्ग, कृष्ण, युधिष्ठिर, अर्जुन, सान्न, गद्द प्रधुन, राम, उद्भू, उद्क। (पाणिनि)

विदा (हि० स्त्री०) १ ऽण्य गोपीका नाम। २ माघे परका गोल और यज्ञ टीका। ३ इस आकारका कोई चिह्न।

विदी (हि० स्त्री०) १ शून्य, सुधा। २ माघे पर लगानेका गोल छोटा टीका। ३ इस आकारका कोई चिह्न।

विदुका (हि० पुं०) १ विदी, गोल टीका। २ इस आकारका कोई चिह्न।

विदुरी (हि० स्त्री०) १ माघे परका गोल टीका, टिड्डली।  
२ इस प्रकारका कोई चिह्न।

विदुली (हि० स्त्री०) विदी, टिड्डली।

विद्वान (हि० पुं०) वृत्तान्त देखो।

विध (हि० पुं०) विध्यान्त देखो।

विद्याना (हि० स्त्री०) १ यो घनाका अक्षरमं कल्प, छेदा जाना। २ फसना, उलभना।

विधिया (हि० पुं०) यह जो माती की घनेका काम करता हो, मोतीमें छेद करनेवाला।

विध (स० पुं०) विन्ध देखो।

विध्याना (हि० स्त्री०) बधा देना, जनना।

विधायी (हि० वि०) व्याप्त देखो।

विधोग (हि० पुं०) विगण देखो।

विधोना (हि० स्त्री०) विधोके देखो।

विधट (स० स्त्री०) विधट देखो।

विदुना (हि० स्त्री०) किसी पदार्थका द्रव्य दे कर दिया जाना, मृत्यु ले कर लिया जाना, विक्री होना।

विद्वान (स० स्त्री०) विद्वान् देखो।

विद्वान् (स० स्त्री०) विद्वत् देखो।

विद्वान् (हि० स्त्री०) व्याकुलता, बेचैनी।

विद्वाना (हि० स्त्री०) घबराता, व्याकुल होना।

विद्वाना (हि० स्त्री०) बेचैनी काम दूसरेसे करना, किसीसे विक्री करना।

विद्वाना (हि० स्त्री०) १ प्रभुद्वित होना, पालना, पूजना। २ प्रभुद्वित होना, बहुत प्रसन्न होना।

विद्वसाना (हि० स्त्री०) १ विद्वाना देखो। २ विद्वान्तर करना, पालना। ३ प्रभुद्वित करना, प्रसन्न करना।

विद्वाना (हि० स्त्री०) जो विक्रीके लिये हो, विक्रीवाला।

विद्वाना (हि० स्त्री०) विद्वान् देखो।

विद्वान् - विद्वान् देखो।

विद्वान्तर (हि० स्त्री०) १ विद्वत् रूपवाला। २ अद्वितकार हातकारक। (स्त्री०) १ एक प्रकारकी टेढ़ी पाई जो अंकों आदिके आगे सख्या या मान आदि सूचित करने के लिये लगाई जाती है।

विद्वान् (हि० स्त्री०) १ किसी पदार्थके घेरे जानेको क्रिया या भाव। २ वह धन जो बेचनेसे प्राप्त हो, बेचनेसे मिलनेवाला धन।

विद्वान् (हि० स्त्री०) बेचने लायक, विक्राज।

विद्वान् (हि० पुं०) विध, जहर।

विद्वान् (हि० स्त्री०) गरल, विष।

विद्वाना (हि० स्त्री०) लक्षो या कर्णों आदिका इपर उधर गिरना या फैल जाना, छितराना।

विद्वाना (हि० स्त्री०) लक्षों या कर्णोंकी इपर उधर फैलाना, छितराना।

विद्वान् (हि० पुं०) विपद देखो।

विद्वाना (हि० स्त्री०) लक्षो या कर्णोंकी इपर उधर फैलाना तितर बितर करना।

विद्वान् डा (हि० पुं०) एक प्रकारकी लक्षो घाम जो सारे भारतपरमें पाई जाती है। यह ज्वार जातिकी होती है और चारदों महाने हरी रहती है। जब यह अच्छी तरह बढ़ जाती है, तब चारके बहुत उपयोगी होती है, पर आरम्भिक अवस्थामें इसका प्रभाव रोगवाले पशुओं पर बहुत घुटा और प्राय विषके समान होता है। इसमें एक प्रकारके दाने भी निबडते हैं जिन्हें गरीब लोग खाते हैं, पौंस कर लक्ष्या वाजरे आदिमें भाटेके साथ मिला कर खाते हैं। इसकी कहीं कहीं गहरी होती, यह रेतोंकी मेढ़ों पर लक्ष्या जलानयोंके पास पास आगरी भाग उगती है।

विद्वाना (हि० स्त्री०) १ किसी पदार्थके शुष्ण या रूप आदिमें ऐसा विकार होना जिससे उसकी उपयोगिता छट जाय या नष्ट हो जाय, क्षमली रूप या शुष्कता नष्ट

हो जाना, पराव जाना । २ परस्पर विरोध या वैमनस्य होना, लड़ाई भगडा होना । ३ व्यर्थ व्यय होना, विफायदा रच होना । ४ किसी पदार्थके बनते या गढे जाते समय उममें कोई ऐसा विकार होना जिससे वह ठीक या पूरा न उतरे । ५ दुरवस्थाको प्राप्त होना, अच्छा न रह जाना । ६ नीतिपथसे भृष्ट होना, बद्-चलन होना । ७ क्रुद्ध होना, गुस्सेमें आ कर खाट झपट करना, अप्रसन्नता प्रकट करना । ८ विरोधी होना, विद्रोह करना । ९ पशुओं आदिका अपने स्थामी या रक्षकको आक्षा या अधिकारसे बाहर हो जाना ।

विगडें दिन्न ( हि० पु० ) १ हर बातमें लडने भगडनेवाला, वह जो बात बातमें विगड खडा हो । २ कुमार्ग पर चलने वाला, वह जो विगडा हुआ हो ।

विगार ( हि० क्रि० वि० ) रहित, बिना ।

विगारना ( हि० क्रि० ) विगडना देखो ।

विगडा ( हि० पु० ) बीधा देखो ।

विगही ( हि० स्त्री० ) ब्यापी, बरही ।

विगाड ( हि० पु० ) १ विगडनेकी क्रिया या भाव । २ दोष, घुराई । ३ वैमनस्य, भगडा, लडाई ।

विगाडना ( हि० क्रि० ) १ किसी वस्तुके स्वामाधिक गुण या रूपको नष्ट कर देना । २ नीति पथसे भष्ट करना, हुमांगमें लगाना । ३ किसी पदार्थको बनते समय या कोई काम करने समय उसमें कोई ऐसा विकार उत्पन्न कर देना जिससे वह ठीक या पूरा न उतरे । ४ दुरवस्था को प्राप्त करना, घुरी दृशामें लाना । ५ व्यर्थ व्यय करना । ६ स्त्रीका सतीत्व नष्ट करना, पातिव्रत्य भंग करना । ७ घुरी आदत्त लगाना, स्वभाव पराव करना । ८ बहकाना ।

विगाना ( फा० वि० ) १ जो अपना न हो, जिससे आपस दारोका कोई सम्बन्ध न हो, पराया । २ अजनबी, अनजान ।

विगार ( हि० पु० ) विगाड देखो ।

विगारी ( हि० स्त्री० ) बेगारी देखा ।

विगाहा ( हि० पु० ) विगाहा देखो ।

विगुल ( अ० पु० ) अ गरीजों ढ गरी एक प्रकारकी तुखी जो प्राय सैनिकोंको पकत करने अथवा इसी प्रकारका

कोई और काम करनेके लिये स केत रूपमें बजाई जाती है । विगूचन ( हि० स्त्री० ) १ वह अरुस्था जिसमें मनुष्य कि कर्त्तव्यविमूढ हो जाता है, असमजस । २ रुठिनता, विकृत ।

विगूचना ( हि० क्रि० ) १ स कोचमें पडना, दिक्कतमें पडना । २ दबाया जाना, पकडा जाना । ३ दमोचन, धर दवाना ।

विगूतना ( हि० क्रि० ) विगूतना देखो ।

विगोना ( हि० क्रि० ) १ नष्ट करना, विनाश करना । २ भ्रममें डालना, बहकाना । ३ छिपाना, चुपाना । ४ तम कराना, दिक्कत करना ।

विग्गाहा ( हि० पु० ) आर्या छंदाका एक भेद । इसे 'उप्रीति' भी कहते हैं । इसके प्रथम पादमें १२५ द्वितीयमें १५, तृतीयमें १२ और चतुर्थमें १८ मात्राएँ होती हैं ।

विग्रह ( स० पु० ) विग्रह देखो ।

विघटना ( हि० क्रि० ) विनाश करना, विगाडना ।

विचकाना ( हि० क्रि० ) १ किसीकी चिढाके लिये मु द डेढा करना, मु ह चिढाना । २ मु हको डेढा करना, मु ह बनाना ।

विचरना ( हि० क्रि० ) १ इधर उधर घूमना, चला फिरना । २ पर्यटन करना, यात्रा करना, सफर करना ।

विचलना ( हि० क्रि० ) १ विचलित होना, इधर उधर हटना । २ हिम्मत हारना । ३ कह कर इनकार कर जाना, मुकरना ।

विचला ( हि० वि० ) जो बीचमें हो, बीचवाला ।

विचवाना ( हि० पु० ) बीचमें पडनेवाला, बीच-बचाव करनेवाला ।

विचारा ( हि० वि० ) बेचारा देखो ।

विच्छित्ति ( स० स्त्री० ) श्ट्टाररसके ११ हावोंमेंसे एक । इसमें किञ्चित् श्ट्टारसे ही पुरुषको मोहित कर लिया जाना वर्णन किया जाता है ।

विच्छू ( हि० पु० ) १ एक प्रसिद्ध छोटा जहरीला जानवर । वृश्चिक देखो । २ एक प्रकारकी घास । इस घासके छू जानेसे विच्छूके काटनेकी सी जलन होती है । ३ वाक्तु बिका पोषा या उसका फल ।

विछना ( हि० क्रि० ) १ विछानाका अकर्मक रूप, फीलाया

जाना। २ किन्ती पदार्थका जमीन पर बिपेरा जाना, छिटागया जाना। ३ जमीन पर छिटाया या गिराया जाना।

विछन्ना ( हि० कि० ) विगन्ना देख्ते।

विछलाना ( हि० कि० ) विगन्ना देख्ते।

विछलाना ( हि० कि० ) विछानिका वाम दूसरेसे करारा, दूसरेके विछानेमें प्रवृत्त करना।

विछागा ( हि० कि० ) १ जमीन पर उतनी दूर तक फैलाना जितनी दूर तक फैल सके। २ जमीन पर गिरा या लेटा देना। ३ किसी चीजको जमीन पर कुछ दूर तक फैला देना।

विछायन ( हि० पु० ) विछाना देख्ते।

विछायना ( हि० कि० ) विछाना देख्ते।

विछिया ( हि० स्त्री० ) पैरकी उंगलियोंमें पहननेका एक प्रकारका छल्ला।

विछुआ ( हि० पु० ) १ एक प्रकारका गहना जो पैरमें पहना जाता है। २ एक छोटा सा शस्त्र, पर प्रकारकी छोटी डेढ़ी छुरी। ३ अगिया या भायर नामका पीषा। ४ मनकी मूली।

विछुइन ( हि० स्त्री० ) १ विछुइने या अलग होनेका भाव। २ विधोग, जुदाई।

विछुइना ( हि० पु० ) १ साथ रहनेवाले दो व्यक्तियोंका एक दूसरेसे अलग होना, जुदा होना। २ प्रेमियोंका एक दूसरेसे अलग होना, विधोग होना।

विछुरा ( हि० कि० ) विछुइना देख्ते।

विछुरनि ( हि० स्त्री० ) विछुइन देख्ते।

विछुवा ( हि० पु० ) विछुआ देख्ते।

विछोड़ ( हि० पु० ) १ वह जो विछुडा हुआ हो, जिसका विधोग हुआ हो। २ जो विरहका दुःख सह रहा हो, विरही।

विछोडा ( हि० पु० ) १ विछुइनेको किया या भाय, अलग हाता। २ विरह होना, प्रेमियोंका विधोग होना।

विछोह ( हि० पु० ) विधोग, जुदाई

विछोना ( हि० पु० ) १ यह फाटा जा मोनेके बामके निचे विछाया जाना हो, विछायन, विस्तर। २ यह फाटतु स्वामन और बाट बसाट आदि जो उदाह्रोंके

पेदेमें यहमुन्य पदार्थोंकी सोड आदिसे बानेने निचे उनके नीचे बधया उनको टकर आदिसे बाने धीर उचे कमा रखनेके लिये उनके बीचमें बिछाया जाना है।

विजउ ( हि० स्त्री० ) पडग, तलवार।

विजती ( हि० स्त्री० ) हिमालयकी एक जगली जाति।

इस जातिके लोग उस प्रदेशमें रहते हैं जहां प्रद्युम्न नद हिमालयको फाट कर तिब्बतसे भारतमें आता है।

विजनीर—युक्तप्रदेशके बरेली उपविभागका उत्तरीय जिला। यह अक्षा० २६ १' से २६ ५८' उ० तथा देशा० ७८ से ७८ ५७' पू०के मध्य विस्तृत है। भूपरिमाण १७११ वर्गमील है। हिमालय पर्वतके गिरा देशमें जो सड़क उत्तर पूर्वकी ओर चली गई है, यह इस जिलेको गढ़वाल जिलेसे पृथक् करती है। इसके दक्षिण-पूर्व ओर दक्षिणमें नैनीताल तथा मुरादाबाद है। गङ्गा नदी जिलेके पश्चिम हो कर बह गई है। गङ्गाके तीरपक्षों स्थान छोड़ कर और प्राय सभी स्थान परतमण्डित है। हिमालय, गङ्गाल और चण्डी नामक पर्वतमालाका अधिस्वर देश ले कर यह जिला बगडित है। गङ्गातीरपक्षों स्थानोंमें चेतो चारो होती है।

जिलेका कोई प्रभु इतिहास नहीं मिलता। अयोध्याके पत्तार द्वारा विध्यन्त क्रिये जानेके बाद यहाँ रोहिल्लोंका अधिकार रहा। ७वीं शताब्दीमें चीन परिमार्जक युपनचुगने विजनीरसे ४ फीम दूरपक्षों मन्दायर नगर की समुद्रिका उल्लेख किया है। १११४ ई०में मुरारोसे अमवाल धनियोंने आ कर मन्दायर नगरका सम्कार किया और ये लोग यहाँ बस गये। १४३० ई०में नैमुने लाल धाजूके निवट यहाँके अधिवासियोंकी पराम्ना किया। युद्ध उपके बाद मुगलने यहाँ नान्दिरगाही जारी कर दी थी, जिसने नगर विस्तृत जगही हो गया था।

सम्राट अकबरकाहके राज्यकालमें विजनीर सम्मल सरकारके अधीन हुआ। मुगलजातिके अजापतन पर रोहिल्लोंने आ कर उपनिवेश बनाया। रोहिल्ला सरदार अन्ने महम्मदों जबसे निवटपक्षों स्थानों पर अधिकार जमाया आरामे यह स्थान रोहिल्लगण्डके नामसे बन्नने लगा। आरामे महम्मदके दीरालयने उत्पान्दिर हो अयोध्याके सुपेशने महम्मद शाहकी उनके

विरुद्ध उसकाया। रोहिला सरदारके सम्राट्को अधीनता स्वीकार करने पर १६४८ ई० में उन्हें अपना राज्य वापस मिला। उनकी मृत्युके बाद रोहिलावीर हाफिज रहमत खाने राजकार्यका भार अपने हाथ लिया। १७७१ ई० में महाराष्ट्रीयदलने सम्राट् शाहआलम को दिल्लीके सिंहासन पर बिठा कर रोहिलखण्ड पर आक्रमण कर दिया। रोहिलोंने इस असमयमें बगो धनाके घजोरसे सहायता मागी। घजोर सहायता तो क्या देगे, उल्टे १७७२ ई० में उन्हें उरी तरह परास्त किया। युद्धमें हार खा कर रोहिलोंने सारा रोहिलखण्ड राज्य घजारको समर्पण किया। केवल १७७४ ई० की सन्धिके अनुसार अलीके पुत्र फैजउल्ला पाके लिये रामपुर राज्य रब छोडा।

रोहिला पट्टानोंके समय यह पार्वत्यप्रदेश नाना नगरादिसे सुशोभित था। १८०१ ई० में यह स्थान अङ्गरेजोंके दखलमें आया। १८५७ ई०के गदरके अलावा १८३३ ई० में अफजल गढ़के निरुद्ध टोडरूपति अमीर खाका परामय यहाकी उल्लेखयोग्य घटना है। १८१७ ई० तक यह स्थान मुरादाबाद जिलेके अन्तर्भूक्त रहा। बादमें यह स्वतन्त्र जिलामुक्त हो गया। पहले लगनीना नगरमें और पीछे १८२४ ई०को विजनीर नगरमें विचार सन्दर स्थापित हुआ।

मीरट नगरका विद्रोहखीत विजनीर नगर भी पहुँचा था। इस समय दरकीके सेनादलने विजनीरका माघ दिया। नवाबाबादके नवाब अपनी पठानसेना ले कर कार्यक्षेत्रमें उतरे। कुछ समय उच नवाब यहाके राजा रहे। पीछे जब हिन्दू-मुसलमानमें घियाद छिडा, तब हिन्दुओंने मुसलमानोंको भगा कर अपना आधिपत्य फैलाया। सिपाहीविद्रोहके बाद १८५८ ई०के अप्रिल मासमें यह स्थान फिरसे अगरेजोंके शासनाधीन हुआ।

इस जिलेमें १६ शहर और २१३२ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या साठे सात लाखसे ऊपर है। हिन्दूकी संख्या सैकड़ें पीछे ६४ और ३५ मुसलमान तथा शैवमें धर्म लोग हैं। यहाकी प्रधान उपज गेहूँ, जे, बाजरा, चना और ईख है। रुई और तेलहनकी फसल भी अच्छी

लगती है। विद्याशिक्षामें यह जिला भी युक्तप्रदेशके अन्यान्य जिलोंके जैसा बहुत पीछा पडा हुआ है। सैकड़ें पीछे २ मण्यु पढे लिखे मिलते हैं। अभी कुल मिला कर २२५ स्कूल हैं जिनमेंसे ३ गवर्मेंटसे और शेष जिला तथा म्युनिमिपल बोर्डसे परिवर्धित होते हैं। स्कूलके अन्वा १० अस्पताल और चिकित्सालय हैं। कुल मिल कर इस जिलेकी आवहवा अच्छी है।

२ उक्त जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २६ १' से २६ ३८' उ० तथा देशा० ७८ ०' से ७६ २५' पू०के मध्य अवस्थित है। भू परिमाण ४८३ वर्गमील और जनसंख्या दो लाखसे ऊपर है। इसमें ५७२ ग्राम और ६ शहर लगते हैं। विजनीर शहर ही सबसे बडा है। तहसीलके पश्चिम गङ्गा नदी बह गई है।

३ उक्त तहसीलका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० २६ २२' उ० तथा देशा० ७८ ८' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्राय १७५८३ है। कहते हैं, कि राजा घेणने इस नगरको बसाया था। सम्राट् अकबरके पहलेका इस नगरका कोई इतिहास नहीं मिलता। यहा खूती कपड़े, छुरो और जनेऊ तैयार होते हैं। शहरमें एक मिडिल स्कूल और एक वालिका स्कूल है।

विजयनगर (हि० पु०) विजयनगर देखो।

विजयघट (हि० पु०) मन्दिरमें लटकाये जानेका बडा घटा।

विजयसार (हि० पु०) एक प्रकारका बहुत बडा जगली पेड। इसके पत्ते पीपलके पत्तोंसे कुछ छोटे होते हैं। इसमें भाँवलेके समान एक प्रकारके पीले फल भी लगते हैं। इसके फल कडवे, पर पाचक और वादी उत्पन्न करनेवाले होते हैं। इसको लकड़ी कुछ कालापन लिपे लाल रंगकी और बहुत मजबूत होती है। यह ढोल, तबले आदि धनानेके काममें आती है। इससे अनेक प्रकारकी स्याहिया और रंग भी बनते हैं। इसका गुण कुष्ठ, विसर्प, प्रमेह, शुद्धाके रोग, हृमि, कफ, रक्त और पित्तका नाशक माना गया है।

विजली (हि० खो०) १ एक प्रसिद्ध शक्ति जिसके कारण वस्तुओंमें आकर्षण होता है और जिससे कभी कभी ताप और प्रकाश भी उत्पन्न होता है। विद्युत् देता। २

आमकी गुडकीके अन्तरकी गिरी। ३ एक प्रकारका आमभूषण जो वामने पहना जाता है। ४ एक प्रकारका आमभूषण जो गलेमें पहना जाता है। (वि०) ५ बहुत अधिक संचल या तेज। ६ बहुत अधिक चमकनेवाला, चमकीला।

विजलीमार (हि० पु०) आमाम और दारजिलिङ्गके आम पामकी तराईमें अधिगतासे होनेवाला एक प्रकारका बड़ा वृक्ष। यह बहुत सुन्दर और छायादार होता है। इसके हारकी लकड़ी बहुत बड़ी होती है और प्राय निरिमकी लकड़ीसे तरह काममें आती है। आसामवाले इस वृक्ष पर एक प्रकारकी लात भी उत्पन्न करते हैं।

विजहन (हि० वि०) जिसकी रोषण प्रकृति नष्ट हो गई हो, जिसका बीज नष्ट हो गया हो।

विजाती (हि० वि०) १ दूसरी जातिका, और जाति या तरह का। २ जो जानिसे बहिष्कृत कर दिया गया हो, जाति से निकाला हुआ, अजाती।

विजायट (हि० पु०) बाह पर पहनेवा वाजूबद् गहना। विजावर—सीदार देना।

विजिपुर—मन्दाज प्रदेशके विजायपत्तन जिलान्तर्गत एक 'मुक्ता' भूमि। पहले यहा नखलि प्रचलित थी।

विजेपुर—१ राजपूतानेके उदयपुर राज्यके अन्तर्गत एक नगर। यह चित्तोर नगरके पूर्ववर्ती उपत्यका देशमें अवस्थित है। नगरके चारों ओर एक लंबा चौड़ा बांध है। यहांके सरदार ८१ ग्रामका शासन करते हैं।

विजेबाघेगढ़—मध्यप्रदेशके जयपुर जिलान्तर्गत एक भूमिभाग। भूपरिमाण ७५० वर्गमील है। पहले राज गरी सरदार इस प्रदेशका शासन करते थे। १८५७ ई०में सरदारके असह्युय्यदाह पर अमरगुप्त हो वृद्धि सरकारने उनका अधिकार छीन लिया। यहां लोहेकी एक गाँव है।

२ उक्त भूभागका प्रयाग प्रांत। यहां सरदारका आवास भया और दुर्ग है।

विजेमार (हि० स्त्री०) विजमार देना।

विजेरी (हि० पु०) १ विजेरी देना। (वि०) २ अज्ञान, अज्ञान।

विजोलिया—राजपूतानेके उदयपुर राज्यका एक प्रयाग नगर। यह अक्षा० २६° १०' उ० तथा देशा० ७५° २१' पू०के मध्य अवस्थित है। इसमें ८३ ग्राम लगते हैं। यहांके सरदार मेजारके एक सम्प्रदाय के हैं। इनकी उपाधि राय सयाई है। राजस्व ५७६००। ४० है किंग मेंसे २०६० व० करारमें कर स्वरूप दिये जाते हैं। कहते हैं, कि वर्तमान सरदारके पूर्वपुत्र १६ वीं शताब्दीमें क्यासासे मेवार आये थे। ये लोग पोपर राजपूत हैं। इस नगरका प्राचीन नाम विन्ध्यवहरी था। यहां तांग म्बैत मन्दिर और पाच जी मन्दिर हैं।

विजोदा (हि० पु०) केशवके अनुसार एक उन्का नाम। विन्दा देना।

विजोरा (हि० पु०) नीचकी जातिका एक पुर। इसके पत्ते नीचके पत्तेके समान, पर उममे बहुत अधिक बड़े होते हैं। इसके फूलोंका रंग सफेद होता है और फल बड़ी नारंगीके बराबर होते हैं। यह दो प्रकारका होता है, एक बड़े फलवाला और दूसरा छोटे फलवाला। फलोंका छिलका बहुत मोटा होता है। इसका गुण बड़ा, गरम, कष्टशोषक, तीक्ष्ण, हृदयक, क्षीणक, रुचिकारक, स्वादिष्ट और तिरोप, रुमा, र्णाली, तिचका धारिकी दूर करनेवाला माना गया है। इस पुत्रां जट, इसके फल और फलोंके बीज तीनों औषधके काममें आते हैं।

विजोरी (हि० स्त्री०) उदकी पीठी और पेटके मेमने यनी हृद बड़ी, बुद्धिहीन।

विजु (हि० पु०) विहीके आकार प्रकारका एक जंगली जानवर। यह दो हाथ लंबा होता है और प्रायः जंगलों में बिजु कोद कर अपनी मांसाहारे माय उसमें रहता है। इनकी यह बाहर निकट घर नहीं, सुरगिरी आदिवा जिनार करता और उनसे खा जाता है। बगी बगी यह बगीको गोद उनमेंसे मृत शरीरोंको निकाल कर भी खा जाता है।

विजुदा (हि० पु०) एक धार्मिक पुत्र। इसके प्रत्येक चरणमें दो हथल होते हैं।

विजुता—१ प्रदेशका एक वर्गमें अहमद आगीमेंसे एक छोटी जागीर। इसका भूपरिमाण २३ वर्गमील और जागका टेट हजारों ऊपर है। इसके पूर्व और

छोड़ कर और तीनो ओर मुक्तप्रदेशका भाँसी जिला पड़ता है। पहले यह स्थान तेहरी और उच्छाँ राजाओ के अधिकारमें था। इसका अष्टभाई नाम पढ़नेका कारण यह है, कि दीवान रायसिंहने बडगाव जागीरको अपने आठ पुत्रोंमें बाँट दिया था। उनके द्वितीय पुत्र दीवान सानवन्तसिंहके भागमें विजुना जागीर पड़ी। सानवन्तके मरने पर जागीर उनके तोग पुत्रो के बीच बाट दी गई। वृष्टिज शमलवागमे दीवान सुजानको १८२३ ई०में जागीरकी सनद मिली। उनको मृत्युके बाद उनके लडके दीवान मुकुन्दसिंह गद्दी पर बैठे। ये ही वर्त्तमान जागीरदार हैं। ये लोग सुन्देशीय राजपूत हैं। इन जागीरमें केवल चार ग्राम लगते हैं। राजस्व १००००) २० है। जागीरदारकी १५ कमान, ५० श्यारोही और ५३० पदाति सेना रखनेका अधिकार है।

२ उक्त जागीरका प्रधान शहर। यह अक्षा० २५ २७' ३०" तथा देशा० ७६ ०' ५०" पू० भासीके नगरग्न जाने के रास्ते पर अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १०६२ है। विजुनी—१ आसाम प्रदेशके ग्वालपाड जिल्लाका एक राज्य। यह अक्षा० २५ ५३' से २६ ३२' ३०" तथा देशा० ९० ८५' से ९१ ८५' पू०के मध्य अवस्थित है। इसका अधिकांश स्थान जङ्गलायुत है। यहाके राजा अपनेको कोचविहार राजवंशावर्तस वतलाते हैं।

२ उक्त राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा २६ ३०' ३०" तथा देशा० ९० ४७' ४०" पू०के मध्य अवस्थित है। विजुनी—मध्यभारतके भण्डार जिल्लान्तर्गत एक भू सम्पत्ति। भूपरिमाण १२६ वर्गमील है। इसका अधि कांश स्थान पर्वत और जङ्गलसे आवृत है। यहाके दूरे कजा गिरिपथके निकट कछगढ नामक एक गुहा है। कुआरदास और यज्ञारा नदीतीरवर्त्ती स्थान मनोहर दृश्यमें पूर्ण है।

विभू घाटी (हि० रती०) छत्तीसगढमें बोनी जानेवाली एक प्रकारकी भाषा।

विभरा (हि० पु०) एकमें मिला हुआ मटर, चना, गेहूँ और जी।

विभुकाता (हि० कि०) १ भडवना। २ दरना, भयभीत होना। ३ टेडा होना, तनना।

विट (हि० पु०) १ साहित्यमें नायकका यह सखा जो सब कलाओंमें निपुण हो। २ पक्षियोंकी विष्टा, घोट। विटक (स० पु०) पिटक।

विटरा (हि० कि०) १ घघोला जाना। २ गया होना। विटरना (हि० कि०) १ घघोलना। २ घघोल कर गया करना।

विट्टल (हि० पु०) १ विष्णुका एक नाम। २ धर्मई प्रान्तमें गोलापुरके अन्तर्गत पण्डरपुर नगरकी एक प्रधान देव मूर्त्ति। यह मूर्त्ति देखनेमें सुदृक्ती मूर्त्ति जान पड़ती है। जैन लोग इसे अपने तीर्थङ्करकी मूर्त्ति और हिन्दू लोग विष्णु भगवानकी मूर्त्ति वतलाते हैं। विद्वत्त देगो।

विडलाना (हि० कि०) बैठाना देना।

विडाना (हि० कि०) बैठाना देना।

विडम्ब (स० पु०) विडम्ब देगो।

विड (हि० पु०) १ विष्टा। २ एक प्रकारका नमक।

विट देगो।

विडर (हि० कि०) अतिरामा हुआ, दूर दूर।

विडरना (हि० कि०) १ इधर उधर होना, तितर बितर होना। २ पशुओंका भयभीत होना, विचकना।

विडारना (हि० कि०) १ इधर उधर करना, तितर बितर करना। २ भगाना।

विडायते (हि० वि०) ज्यादा, अधिक।

विडारना (हि० कि०) भयभीत करने भगाना।

विडाल (स० पु०) १ विन्नी, विडाव। विडाव देना। २

विडालाक्ष नामक द्रव्य जिसे दुर्गादे मारा था। ३ रोहेके बीसके भेदका नाम। इसमें ३ अक्षर शुफ और ४२ अक्षर लघु होते हैं। ४ आपके रोगोंकी एक प्रकारकी ओषधि।

विडालक (स० पु०) विदान देगो।

विडालपाद (स० पु०) एक तौल जो एक कर्पके बराबर होती है। कर्प देगो।

विडालवृत्ति (स० कि०) विन्नीके समान स्वभाव वाला, लोभो, कपटी, द भी, हि सक, सबको पोखा देने वाला और सबमे टेडा रहनेवाला।

विडालाक्ष (स० कि०) निसकी आये विन्नीकी भाषोंके समान हैं।

विडालाक्षी (स० स्त्री०) एक राक्षसीका नाम।

विद्वानिका ( स० स्त्री० ) । विद्वानि । ० अताल ।  
 विद्वान्नी ( स० स्त्री० ) १ विद्वान्नी । ० एक प्रकारका आणका  
 रोग । ३ एक प्रकारका पीघा ।  
 विद्विष्ट ( स० स्त्री० ) पानका बीडा, गिल्लीरी ।  
 विद्विष्टा ( स० पु० ) इष्टका एक नाम ।  
 विद्विताना ( हि० कि० ) व्याकुल होना, चिन्तागना ।  
 विद्विता ( हि० पु० ) चिन्ता देणो ।  
 विद्विता ( हि० पु० ) चिन्ता देणो ।  
 विद्विता ( हि० कि० ) समय आदि ध्यतीत करना, गुजारना,  
 वाटना ।  
 विद्विता ( हि० पु० ) वैतान देणो ।  
 विद्विता ( हि० कि० ) ध्यतीत होना, गुजारना ।  
 विद्वित ( स० पु० ) चिन्ता देणो ।  
 विद्विता ( हि० पु० ) हाथकी सब उंगलियाँ फैलाने पर अगूठे  
 के सिरेसे वनिष्ठिकाके सिरे तककी दूरी, वास्तविक ।  
 विद्विकता ( हि० कि० ) १ चरित होना, ईरान होना ।  
 २ धरना ।  
 विद्विकता ( हि० कि० ) १ छितराणा, इधर उधर होना ।  
 २ अलग अलग होना, गिल जाना ।  
 विद्विकता ( हि० कि० ) छिटकाता, बिखेरना ।  
 विद्विकता ( हि० कि० ) १ फटना, चिरना । २ चायल  
 होना, जगमी होना । ३ गडधना ।  
 विद्विकता ( हि० कि० ) १ विद्विष्ट करना, फाटना । २  
 चायल करना, जगमी करना ।  
 विद्विही ( हि० स्त्री० ) १ अस्ती और तावेके मेलसे बरतन  
 आदि बनानेका काम । इनमें बीच बीचमें मोने चांदीके  
 तारसे नकामी की हुई होती है । २ विद्वरकी धातुका  
 बना हुआ सामान ।  
 विद्विहीसाम ( हि० पु० ) विद्वरकी धातुसे बरतन आदि  
 बनानेवाला ।  
 विद्वत् ( स० स्त्री० ) विद्वद्वित वल यस्य । १ विद्वद्वित  
 बलायादि, दाद । २ स्वर्णादिका धरपथ । ३  
 दादिन बरत, धनारका धाना । ४ धनादिवहन पात  
 विरोध, बोरका बना हुआ दीरा या बोर पात । ५ रत्ना  
 धार, साल सोना । ६ पिष्टक, पांडो । विद्वत् देणो ।  
 विद्वत्कारि ( स० स्त्री० ) धनादिवद्विषो, धनादिवद्विषो ।  
 विद्वत्सर्विण ( स० स्त्री० ) भद्रां न सुख ।

विद्वत् ( स० स्त्री० ) विद्वद्वितानि वलानि यस्य । १  
 विद्वत्, निमोथ । ( वि० ) २ पतङ्गान्या, शिमसे पत्ते  
 न हो ।  
 विद्वत्ता ( हि० वि० ) धात या बकुनी आंकी फल  
 पर आरम्भमें पाटा या रूंगा चलाता । जिम समय  
 फल एक पालिष्ठकी हो जाती है और धरां होती है,  
 तब मिट्टी गोली हो जाने पर उस पर रूंगा या पाटा  
 चला देते हैं । इसमें फल लेट जाती है और फिर  
 उब उठती है, तब जोरसे बढती है ।  
 विद्वद्वानो ( हि० स्त्री० ) विद्वद्वानो विगा या भाव ।  
 विद्व ( अ० स्त्री० ) १ प्रस्थान, गमन, रवानगी । २  
 जाकी भाग । ३ द्विगमना, गीता ।  
 विद्व ( अ० स्त्री० ) १ विद्व होनेकी दिवा या भाव । २  
 विद्व होनेकी आवाज । ३ यह धा जो किसीने विद्व  
 होनेके समय उसका सरकार करनेके लिये दिया भाव ।  
 विद्वामी ( हि० वि० ) धादामी देणो ।  
 विद्वारना ( हि० कि० ) १ खोरना, फाटना । ० बध  
 करना, विगाटना ।  
 विद्वारी ( हि० पु० ) विद्वारी देणो ।  
 विद्वारोषंद् ( हि० पु० ) एक प्रकारका यद् । इसकी  
 पेलके पसे अरुके पसोके समान होते हैं । यह षंद्  
 पेलकी जडमें होता है । इसका रंग कुछ कुछ साल  
 होता है और इसके ऊपर एक प्रकारके छोटे छोटे रोष  
 होते हैं । इसका गुण—मधुर, शीतल, भारी, तिप,  
 रचपित्तनाशक, कफकारक, धीर्यवर्द्धक, करमपर्द्धक और  
 रधिरविकार, दाह तथा पमनाशक है ।  
 विद्वेस ( हि० पु० ) परदेन, अपने देणके अनिर्दिष्ट और  
 कोरे देण ।  
 विद्वत् ( अ० स्त्री० ) १ पुरानी अच्छी धातकी विगादने  
 वाली नद नाराव दात । ० बध, तबलीक । ३ विपत्ति,  
 भारत । ४ अरवाधार, गुन्ना । ५ दोष, दुर्गा । ६  
 दुर्देना ।  
 विध ( हि० पु० ) १ हाथियोंका नारा । ० प्रकार, तर,  
 ३ धात । ४ जमानाका हिमाव, भाव ध्ययका देण ।  
 विधत्ता ( हि० पु० ) प्रक्ष, कत्तार ।  
 विधत्त दो ( हि० स्त्री० ) भूमिकर देणको एक रीति । इसमें

वांछे आदिके हिसाबसे कोई कर नियत नहीं होता, बल्कि कुछ जमीनके लिये यों ही अन्दाजसे कुछ रकम दे दी जाती है।

विधवपन ( हि० पु० ) वैध व, रंडापा ।

विधवा—विधवा देखो ।

विधवाना ( हि० क्रि० ) विधवाना देखो ।

विधार्ह ( हि० पु० ) विधायक, वह जो विधान करना हो ।

विधाना ( हि० क्रि० ) विधाना देखो ।

विधिना ( हि० स्त्री० ) विधना देखो ।

विधुली ( हि० पु० ) हिमालयकी तराईमें होनेवाला एक प्रकारका वास । इसे नल-वास और देव वास भी कहते हैं । देववाँस देखो ।

विनता ( हि० पु० ) पिडकी नामकी चिड़िया ।

विनती ( हि० स्त्री० ) प्रार्थना, निवेदन ।

विनन ( हि० स्त्री० ) १ विनने या चुननेकी क्रिया या भाव । २ चुननेकी क्रिया या भाव, चुनावट । ३ वह कूड़ा कर्षट आदि जो किसी चीजमेंसे चुन कर निकाला जाय, चुनन ।

विनना ( हि० क्रि० ) १ छोटी छोटी वस्तुओंको एक एक करके उठाना, चुनना । २ इच्छानुसार सप्रह करना, छान छान कर अलग करना । ३ डकवाले जीवका डक मारना, काटना ।

विनरी ( हि० स्त्री० ) अरली देखो ।

विनसाना ( हि० क्रि० ) १ विनाश करना, नष्ट कर डालना । २ विनष्ट होना ।

विना ( हि० अर्थ० ) छोड़ कर, वगैर ।

विनाई ( हि० स्त्री० ) १ होतने या चुननेकी क्रिया भाव । २ वीनने या चुननेकी मजदूरी । ३ चुननेकी क्रिया या भाव, चुनावट । ४ चुननेकी मजदूरी ।

विनाती ( हि० स्त्री० ) विनती देखो ।

विनाना ( हि० क्रि० ) चुनना देखो ।

विनामी ( हि० वि० ) १ अज्ञानी, अनजान । ( स्त्री० ) २ विशेष विचार, गौर ।

विनावट ( हि० स्त्री० ) चुनावट देखो ।

विनामना ( हि० वि० ) विगत करना, स हार करना ।

विनैका ( हि० पु० ) पकवान बनाने समयका वह पकवान

जो पहले घानमेंसे निकाल कर गणेशके निमित्त अलग रग देते हैं । यह भाग पकवान बनानेवालेको मिलता है । विनीरिया ( हि० स्त्री० ) परोकके खेतोंमें होनेवाली एक प्रकारकी घास । इसमें छोटे पीले फूल निकलते हैं । यह घास प्रायः चारेके काममें आती है ।

विनीला ( हि० पु० ) कपासका बीन । यह पशुओंके लिये पुष्टिकाक होता है । इसमें एक प्रकारका तेज भी निकाला जाता है, वनीर ।

विन्दु ( स० पु० ) विदि अथवा वे वाहु अत्रि । विन्दु, अत्र ।

विन्दुवीय ( स० स्त्री० ) विन्दुवि गर्हादित्वात् छ । ( पा ४।१।१८८ ) विन्दुसम्बन्धीय, अशसम्बन्धीय ।

विन्दु ( स० पु० ) विन्दु देखो ।

विन्दुक ( स० पु० ) चिह्न, गोल टीका ।

विन्दुवित ( स० स्त्री० ) विन्दु द्वारा आवृत ।

विन्दुघृत ( स० स्त्री० ) घृतीपथविशेष ।

विन्दुचित ( स० पु० ) रोहिप मृगविशेष ।

विन्दुचित्रक ( स० पु० ) विन्दुरूप चित्रमस्य कप । मृग भेद ।

विन्दुजाल ( स० स्त्री० ) विन्दुना जाल । १ विन्दुसमूह । २ हस्तिशुण्डो परिस्थित विन्दुसमूह, वह विन्दु जो हाथीको सूँड पर होते हैं । ३ हाथियोंका पशक नामक रोग ।

विन्दुतन्त्र ( स० पु० ) १ शारीरफलक, चीपड आदिकी विसात । २ तुरङ्गक ।

विन्दुतीर्थ ( स० स्त्री० ) काशिके प्रसिद्ध पञ्चनद तीर्थका नामान्तर जहा विन्दुमाधवका मन्दिर है ।

विन्दुदेव ( स० पु० ) वीरदेवता भेद ।

विन्दुनाथ ( स० पु० ) हटयोगविद्या प्रवर्तक आचार्यभेद ।

विन्दुपत्र ( स० पु० ) विन्दु पत्र यस्य । भूर्जवृक्ष, भोजपत्र ।

विन्दुफल ( स० स्त्री० ) मुक्तविशेष ।

विन्दुमन् ( स० स्त्री० ) १ विन्दुयुक्त । २ विन्दुकी तरह जिसका आकार हो । ( स्त्री० ) ३ शार्दाघर पद्धति लिखित कुछ चरण । ४ मरुचिपत्ती विन्दुमतकी माता । ५ राघव शत्रुघ्नी कन्या, मान्याताकी स्त्री ।



विन्दुमापय ( सं० पु० ) १ विन्दुका नागान्तर । २ बानी स्थित वेणोमापय । विन्दुमापय देखो ।  
 विन्दुरक ( सं० पु० ) वृक्षविशेष ।  
 विन्दुरेणक ( सं० पु० ) विन्दुजिनिष्टा रेणा यत्र, कन् । पक्षि भेद ।  
 विन्दुरेणा ( सं० स्त्री० ) १ विन्दुसम्बन्धित रेणा । ( Dothure )  
 २ राजा चण्डविग्रमकी कन्या ।  
 विन्दुवामर ( सं० पु० ) विन्दुवातस्य वासर । गर्भमें सन्तानोत्पत्तिकालक शुक्रपातदिन, यह दिन जय प्रथम गर्भमञ्जार हो ।  
 विन्दुसरम् ( सं० पु० ) विन्दुनामक मर । एक सरोवर । यह अग्नि पवित्र और पापनाशक है । महाभारतमें लिखा है—  
 वैराग्यके उत्सर्गमें मैत्राक परतके समीप क्षिण्यकम्बु नामका एक मणिमय पथल है, उसी पर यह रमणोप विन्दुसरोवर है । इसके किनारे भगोरथोने गगादर्शनके लिये बहुत काल तक तपस्या की थी । इन्द्रो भी यहा सौ अभयमेध यज्ञ सम्पन्न कर सिद्धि प्राप्त की थी । मयदानरने जब सुद्विष्टिणी सम्रा निर्माण की थी, तब ये यहीमे रहनादि ले गये थे । ( भारत उभार )  
 विन्दुसार ( सं० पु० ) चन्द्रग्रहके एक पुत्रका नाम ।  
 विन्दुमेत ( सं० पु० ) राजा क्षत्रीयसके पुत्र ।  
 विन्दुदृक् ( सं० पु० ) विन्दुसरोवर ।  
 विपत्ति ( सं० स्त्री० ) विपत्ति दग्गे ।  
 विषम ( हि० वि० ) १ विषय, मञ्जूर । २ परान्त, पराधीन । ( वि० वि० ) ३ विषय हो कर, त्यागारोने ।  
 विषारि ( हि० स्त्री० ) वैरवा एक प्रकारका रोग । इसमें पैरोंके तनुयुक्त नमूटा फट जाता है और यहा जलन हो जाता है । इस कारण चलने चलनेमें बहुत दर्द होता है । यह रोग प्रायः जाड़ेके दिनोंमें और वृद्ध शक्तियों को हुआ करता है ।  
 विषाकी ( सं० स्त्री० ) १ वैशाक होनेका भाग, हिसाव भादिका साक होना । २ समानि, अन् ।  
 विवि ( हि० वि० ) दो ।  
 विविहता ( सं० स्त्री० ) भेद करनेकी बतपत्रो इच्छा ।  
 विविम्बु ( सं० वि० ) ध्वज वा मान करनेमें इच्छुक ।  
 विविस्वियु ( सं० वि० ) भोजनोपु करनेमें पट्ट ।

विश्व ( सं० वि० ) दृष्ट करनेमें इच्छुक ।  
 विमन ( हि० वि० ) १ जिसे बहुत दुःख हो । २ विस्मय, उदाम । ( क्रि० वि० ) ३ बिना निरस लगाय, अनन्य हो कर ।  
 विमोहता ( हि० वि० ) मोहित करना, लुभाना ।  
 विमोहा ( हि० पु० ) मालमोह, कामी ।  
 विम्य ( सं० स्त्री० ) घी गत्यादिपु ( उत्तरायम् ) उम् ५०-५ )  
 इति यन् प्रत्ययेन निराततात् स्यापुः । १ प्रतिविम्ब, छाया, अरस । २ कमण्डलु । ३ मूर्ति । ४ विम्बिका फल, कुक्षु नामक फल । पर्याय—सुन्दिकेरी, रवकला, विम्बिका, पीलुपणों, ओष्ठो, विम्बी, विम्बा, विम्बक विम्बना । गुण—पित्त, कफ, ऊर्ध्व, मूत्र, इहाम और पुष्टनाशक । आयुर्वेदाशके मतने इसका गुण—शीतल, गुण, पित्त, अन्न शार पातान्नाय, रुचिकर तथा आध्याय पाय । ( ही० ) ५ सूर्यचन्द्र मण्डल । ६ मण्डलमात्र । ७ एकलान्ते, विरगिट । ८ सूर्य । ९ आनाम, फल । १० छन्दविशेष ।  
 विम्बक ( सं० स्त्री० ) विम्बक्यायें-कन् । १ चन्द्रमा मण्डल । २ विम्बिका फल, कुक्षु । ३ सम्पत्, माँचा ।  
 विम्बिकि ( सं० पु० ) राजपुत्रभेद ।  
 विम्बिका ( सं० स्त्री० ) विम्ब फल जायतेऽस्यातिष्ठि जग ङ । विम्बिका ।  
 विम्बट ( सं० पु० ) सर्प, सरसों ।  
 विम्बर ( सं० पु० ) उद्य संख्या ।  
 विम्बमार ( सं० पु० ) विम्बमार मारण ।  
 विम्बा ( सं० स्त्री० ) विम्ब फलमाह्वयस्यामि विम्ब अन् टापु । विम्बा दंश ।  
 विम्बिका ( सं० स्त्री० ) १ विम्ब, छाया । २ चन्द्रमा मण्डल ।  
 विम्बिन ( सं० वि० ) विम्ब तात्कादिव्यादितम् । प्रति विम्बमुल ।  
 विम्बिन ( सं० वि० ) विम्ब सम्बन्धीय ।  
 विम्बिमार ( सं० पु० ) एक प्राचीन राजका नाम । ये अज्ञानाद्वानुके दिना और गतिमयुक्तके सम्बन्धीय थे ।

विम्बमार दंश ।

बहते हैं, कि वे पहले शाक थे, पर पीछे बुद्धके उपदेशमें बर्द्ध हो गये।

विन्मी (स० खी०) विन्म-नीरादिर्त्वात् डीप्। विन्मिन्नां।

विन्मु (स० खी०) गुवाक्, सुपायी।

विन्मीष्ट (स० लि०) विन्मिन्मीष्टो 'ओत्वोष्ट्रयो' समाम्ने वा' इति पाक्षिणोऽकारलोपे, विन्म्ये इय औष्ट्री यस्य। जिसके होंठ विन्म्यफलके समान हैं।

वियर (अ० री०) एक प्रकारकी हलकी अमरुतो शराब जो जौकी बनी होती है और जिसे प्रायः स्त्रियां पीती हैं।

वियरसा (हि० पु०) एक प्रकारका बहुत ऊँचा वृक्ष जो पहाड़ोंमें ३००० फुटकी ऊँचाई तक होता है। इसकी लकड़ी कुछ लाली लिए काले रंगकी, बहुत मजबूत और कठो होती है। लकड़ी प्रायः ईमारत और मेज कुरसा आदि बनानेके काममें आती है। इसमें एक प्रकारके सुगन्धित फूल लगते हैं और गीद भी होती है जो कई कामोंमें आती है।

वियाड (हि० पु०) वह खेत जिसमें पहले बीज बोये जाते हैं और छोटे छोटे पीपे हो जाने पर अंहासे उपाड कर दूसरे खेतमें रोये जाते हैं।

वियान (हि० पु०) प्रसव वधा देनेकी क्रिया। २ वधा देनेको भाव। यह शब्द विशेषतः पशुओं के लिये प्रयुक्त होता है।

वियाना (हि० क्रि०) वधा देना, जनना।

वियावान (फा० पु०) पेसा उजाड स्थान या जगल जहाँ फोसो तक पानी न मले

दियो (हि० पु०) घेरेका घेरा, पोता।

विरंग (हि० पु०) १ कई रंगोंका, जिसमें एकसे अधिक रंग हों। २ बिना रंगका, जिसमें कोई रंग न हो।

विरज (फा० पु०) १ चावल। २ पकौ हुआ चावल, भात।

विरजी (फा० खी०) लोहेकी छोटी कौल, छोटा काटा।

विरगिंड (अ० खी०) १ सेनाका एक विभाग जिम्में कई रेजिमेंटें या पलटने होती हैं। २ काम करनेवालोंका कोई पेसा दर जो एक ही तरहकी चर्दी पहनता हो और एक ही अधिकारीकी अधीनतामें काम करता हो।

विरतिया (हि० पु०) हजाम या घारी आदिकी जातिजो यह ध्यक्ति जो विवाह सब ध ठीक करनेके लिये घर पक्ष की ओरसे कन्यावालोंके यहा अथवा कन्या पक्षसे घर पक्षकी योग्यता, मर्यादा, अन्स्था आदि देखनेके लिये जाता है।

विरथा (हि० वि०) १ व्यर्थ, निरर्थक। २ बिना किसी कारणके।

विग्द (हि० पु०) १ बडाई, यश। २ निरद देवो।

विरदित (हि० पु०) १ बहुत अधिक प्रसिद्ध वीर या योद्धा। (वि०) २ प्रसिद्ध, नामी।

विरध (हि० वि०) वृद्ध देवो।

विरधाई (हि० खी०) वृद्धावस्था, बुढ़ापा।

विरधावन (हि० पु०) १ वृद्ध होनेका भाव, बुढ़ापा। २ वृद्ध होनेकी अन्स्था, बुढ़ावस्था।

विरमना (हि० क्रि०) १ आराम करना, सुस्ताना। २ ठहरना, रुकना। ३ मोहित हो कर फन्स रहना।

विरमाना (हि० क्रि०) १ ध्यतीत करना, विताना। २ रोक रखना, ठहराना। - मोहित करके फन्सा रपना।

विरग (हि० वि०) कोई कीद, दफा दुका।

विरवा (हि० पु०) १ वृक्ष। २ पीया। ३ चना, वृट।

विरवाही (हि० री०) १ वह स्थान जहा छोटे छोटे पीपे उगाये गये हों। २ छोटे पीपोंका कुज या बाग।

विरपभ (हि० पु०) वृषभ देवो।

विरसन (हि० पु०) धिप, जहर।

विरदो (हि० पु०) वियोगसे पीडित पुरुष, वह पुरुष जो अपनी प्रेमिकाके निरहसे दुःखित हो।

विराजना (हि० क्रि०) १ शोभित होना, शोभा देना। २ बैठना।

विरादर (फा० पु०) भ्राता, भाई।

विरादरी (फा० री०) १ वन्धुत्व, भाईवारा। २ जातीय समान, एक ही जातिके लोगो का समूह।

विराना (हि० क्रि०) मुह चिदाना।

विरिया (हि० खी०) १ समय, वक्त। २ बाप, दफा।

विरिया (हि० खी०) १ चाँदी या सोनेका बना हुआ कानमें पहननेका एक गहना। यह कटोरीके आकारको होता है। २ चर्खेके घेननमेंकी बपई या लकड़ीकी यह

दिक्किया जो इसलिये लगाई जातो है कि ज्योंकी मूंडी नू देमे रगड न ग्याय ।

विरुधा ( दि० पु० ) एक प्रकारका रगड न ।

विरुध्या ( हि० हि० ) उरुध्या, अरुध्या ।

विरुध्या ( हि० पु० ) कर्णविरुध्या रोग ।

विरुध्या ( हि० वि० ) विरोध करना, पैर करना ।

विरुध्या ( हि० स्त्री० ) अरुध्या, अरुध्या ।

विरुध ( का० पु० ) १ ऊचा । २ बडा । ३ जो विफल हो गया हो ।

विरु ( म० स्त्री० ) १ छिद्र, सुरास । २ गुदा, बदरा । ( पु० ) ३ उर्ध्व श्रया अर्ध । ४ वेनस, घेत ।

विरु ( हि० पु० ) १ जमीनके अर्ध रतोड कर बनाया हुआ बुड जगली जीपोंके रहनेका स्थान । ( म० पु० )

२ पायवेंके हिमावका परन्धा, पुत्ता, दिग्में प्राय वेनी या दो हूँ पंजोंके तिथि सहित नाम और दाम, विन्नीके लिये ध्यय किये हुए धनका विवरण अथवा किसीके लिये किये हुए कार्य या सेवा आदिका विवरण और उसके पुस्तकाकी रक्मका उल्लेख होना है । इसके उप विधन करने पर पात्रिय पायना चुनाया जाता है । ३ विन्नी कानून आदिना यह मनीषा जो जानून बनाती यानी समामें उपस्थित किया जाय ।

विरुधारि ( म० पु० ) विरु करतोति कृ पिति । १ मूषक, नूहा । ( ति० ) २ गल कारक, विरर बनायेवाला ।

विरुधु ( अ० वि० वि० ) १ पूरा पूरा, सब । २ मिरमे पैर तक, आदिमें अन्त तक ।

विरुध्या ( हि० वि० ) १ विलाप करना, रोना । २ दुःख होना ।

विरुध्या ( हि० वि० ) १ विलाप करना, रोना । २ दुःख होना ।

विरुध्या ( हि० वि० ) १ विलाप करना, रोना । २ दुःख होना ।

विरुध्या ( हि० वि० ) १ विलाप करना, रोना । २ दुःख होना ।

विरुध्या ( हि० वि० ) १ विलाप करना, रोना । २ दुःख होना ।

विरुध्या ( हि० पु० ) एक प्रकारका रंग रग ।

विरुध्या ( हि० वि० ) विरुध्या रोग ।

विरुध्या ( हि० वि० ) विरुध्या रोग ।

यह रसोद जो रोजेने कम्पनीमें मिलतो है । जहान मान भेजा जाता है, रसोद यहीं पर मिलतो है । पीनेमें माल पानेवालेके पास यह रसोद भेज दी जातो है ।

विरुध्याय ( स० वि० ) योनिकपाठ प्रक्षालन ।

विरुध्या ( हि० स्त्री० ) काली भौरी । यह अपने रङ्गके लिये होवामें या कुरियाओं पर मट्टीके बारी बनतो है ।

यह यही भूङ्गो है जिसके विषयमें यह प्रसिद्ध है, कि यह किसी कोडेको परत पर भूङ्गो ही बना डालती है ।

२ मारकी पलक पर होनेवाली एक छोटी फुसो, गुहाजनी ।

विरुध्या ( म० वि० वि० ) मृगप्रति, अर्ध ।

विरुध्या ( हि० वि० ) १ छोटे कोडेका इपर उपर रेगना । २ अमम्यद प्रणय करना । ३ व्याकुल हो बनना । ३ भूलने वेचन हो उठना । ४ कष्टके कारण व्याकुल हो कर रोना, चिन्ता ।

विरुध्या ( हि० वि० ) १ विरुध करना, देर करना । ३ उरर आना, रुकना ।

विरुध्या ( हि० वि० ) १ अटका रचना, रोच रचना ।

विरुध्या ( हि० वि० ) १ विलाप करना, विरुध कर रोना । २ व्याकुल हो कर अमम्यद बातें कहना ।

विरुध्या ( हि० वि० ) १ उर करना, बरवाद करना । २ विन्नी कानूनके दूरनेके द्वारा उर करना, बरवाद करना ।

चेने स्थानमें रखवाया या रचना जहाँ कोई देर न करे, छिपाता अथवा छिपातेने काममें दूरनेको प्रयुक्त करना ।

विरुध्या ( म० पु० ) विरुध्या रोग । जट्टक रगु ।

विरुध्या ( म० पु० ) विरुध्या रोग । जट्टक रगु ।

विरुध्या ( म० पु० ) विरुध्या रोग । जट्टक रगु ।

विरुध्या ( म० पु० ) विरुध्या रोग । जट्टक रगु ।

विरुध्या ( म० पु० ) विरुध्या रोग । जट्टक रगु ।

विरुध्या ( म० पु० ) विरुध्या रोग । जट्टक रगु ।

विरुध्या ( म० पु० ) विरुध्या रोग । जट्टक रगु ।

विरुध्या ( म० पु० ) विरुध्या रोग । जट्टक रगु ।

लकड़ोकी एक मिटकनी जो किराडोंमें उतनी बद्ध करने के लिये लगाई जाती है। ३ कुर्पमें गिरा हुआ बरतन या रस्सी आदि निकालनेका काटा। यह लोहेका बना होता है। इसके अगले भागमें बहुत-सी अ कुसिया लगी रहती हैं। उन्ही अ कुसियोंमें चीज फम कर निकल आती हैं।

विलाईकन्द ( हि० पु० ) विदारीकन्द देखो।

विलाना ( हि० क्रि० ) १ नष्ट होना, विलीन होना। २ छिप जाना, अदृश्य हो जाना।

विलार ( हि० पु० ) मार्जार, विह्वार।

विलारी ( हि० स्त्री० ) मजारी, विल्ली।

विलारीकन्द ( हि० पु० ) एक प्रकारका कन्द।

विलाव ( हि० पु० ) वतार देणो।

विलावर ( हि० पु० ) विलौर देणो।

विलावल ( स० पु० ) केदार और कल्याणके योगसे उत्पन्न एक राग। यह दीपक रागका पुत्र माना जाता है। इसके गानेका समय प्रातः काल है।

विलासना ( हि० क्रि० ) भोग करना, भोगना।

विल्वी ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी कमरखका फल या उसका पेड़।

विलियर्ड ( अ० पु० ) एक अ गरीजी खेल। यह गोल अ टों और लंबी लंबी छडियों द्वारा बड़ी मेज पर खेला जाता है।

विलिया ( हि० स्त्री० ) १ कटोरी। २ गाप धैलके गलेकी एक धोमारी।

विल्व ( हि० पु० ) विलौर देणो।

विलेश्य—एक योगाचार्य। हठ प्रदीपिकामें इनका उल्लेख देवनेमें आता है।

विलेश्य ( स० पु० स्त्री० ) विले शैते श्री अच्, अलुक, समासः। १ सर्प, साप। २ मूषिक, मूसा। ३ गोधा, नेयला। ४ शश, परहा। शलकी, साही नामक जंतु।

विलेश्यर ( स० पु० ) तीर्थभेद। यहा विलेश्यर शिवलिङ्ग विद्यमान है।

विलैया ( हि० स्त्री० ) १ विल्ली। २ बहू, मूली आदिके महीन महीन डोरेसे लच्छे काटनेका एक औजार। यह वास्तवमें लोहिका एक चीनी सी होती है। इस पर उमरे हुए छेद बने होते हैं। उन उभारोंसे रगड़ या कट्टे हुए कतरे छेदोंके नीचे गिरते जाते हैं।

विलीन ( हि० वि० ) विना लक्षण्यता, कुरूप।

विलोना ( हि० क्रि० ) १ मथना, खूब हिलाना। २ ढालना, गिराना।

विलोचना ( हि० क्रि० ) ढोलना, हिलना।

विलीनस् ( स० त्रि० ) विल ओर स्थान यस्य। विल्यासी, विलमें रहनेवाला।

विलीन ( हि० पु० ) विलीन देणो।

विल्ल ( हि० क्रि० त्रि० ) निरनुन देणो।

विम ( स० स्त्री० ) विल-वाहु० मन्। १ भासन, चमक। २ गिरखान, टोपी, पगड़ी।

विलिन् ( स० त्रि० ) विल मिन्। १ विलयुत। (पु०) २ रजभेद।

विल्लुका ( अ० वि० ) १ जो घट बढ न सके। (पु०) २ यह लगान जो घटाया बढाया न जा सके। ३ वह पट्टा जिमकी शर्तोंके अनुसार लगान घटाया बढाया न जा सके।

विल्ल ( स० स्त्री० ) विल लाति लाक। १ आलवाल, थाला। २ हिल्लु।

विल्लमूला ( स० स्त्री० ) विल्लमिन् मूल यस्या। वाराही कन्द।

विल्लसू ( स० स्त्री० ) प्रस्तुतशुक्ला, वह स्त्री जिसने दूध पुत्र प्रसव किये हों।

विल्ल ( हि० पु० ) १ मार्जार। विडान देणो। २ चपरासनी तरहकी पीतलकी पतली पट्टी। इन्से पहचानके लिये विशेष विशेष प्रकारके काम करनेवाले बाँह पर या गलेमें पहने रहते हैं।

विल्लो ( हि० स्त्री० ) १ विडान देणो। २ उत्तरीय भारत और बरमाकी नदियोंमें मिलनेवाली एक प्रकारकी मछली। पकड़े जाने पर यह मछली काटनी है जिससे चिप सा चट जाता है।

विल्लोलोटन ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी टूटी। इसके विषयमें प्रसिद्ध है, कि उसको गधसे विल्लो मस्त हो कर लोटने लगती है। यह दूजाके काममें आती है। यूनानी हकीमने इनका 'बादर जवोया' नाम रखा है।

विल्लूर ( हि० पु० ) विलौर देणो।

विल्लौर ( हि० पु० ) १ एक प्रकारका स्वच्छ पत्थर। यह

जीवोंके समान पारदर्शीक होता है। यह वस्तु स्वच्छ जीवा-  
श्रित्तके मीरक मीर कादि न हो।

विज्ञानी ( हि० वि० ) १ विज्ञानीका वना हुआ, विज्ञानी  
परपरका। २ विज्ञानीके समान स्वच्छ।

विज्ञ ( म० पु० ) विज्ञ भेदने उच्चारणार्थेति माधुः।  
कालप्रतिवेद्य, परप्रकार कालका घेद, वेदका घेद।  
पर्याय—जाण्डिल्य, शीतल्य, मातृ, धोकल, महाकल्पि,  
गोहोतकरी, पुनियान्त, अतिमद्गुण, महाकल, ज्ञान्य, हृदय  
गंध, ज्ञानाद्गु, बर्षंटाह, शीतल्य, निवेद्य, पत्रभेद्य, त्रिपत्र, गण-  
पत, लक्ष्मीकल, दुराकह, विजागपत्र, विजिग, नियत्र म,  
सदाकल, मत्पयकल, सुमन्त्रि, समोरमाग। इसके कलके  
गुण—मधुर, हृद्य, कषाय, गुण, पित्त, कफ, उच्च, और  
अतिमार-नाशन। मूलके गुण—निशेध-नाशनक, मधुर,  
लघु और यमन नियारक। इसके कामक कलके गुण—  
स्निग्ध, गुण, सम्राहक और दोषक। परे कलके गुण—  
मधुर, गुण, कटु, तिक्त कषाय, उष्ण, सम्राहक और विदोष  
माशक। ( रागी० )

भावप्रकाशके अनुसार वाचविज्ञकी विद्यकर्मदो  
और विज्ञपेविना रहते हैं। यह धारक और कफ,  
वायु, आमदोष तथा शून्य जानक है। मत्तान्तरमें यह  
धारक, अनिपक्षोपक, पाचक, कटुवसाय, निारक,  
उष्णोष्ण, लघु स्निग्ध तथा वायु और कफनाशनक माना  
गया है। परा कल—गुण, तिरोपजनक, दुष्पाच्य, घाहा  
वायु सुगन्धिहरक, विदाही, विहृमकारक, मधुररस, और  
मन्त्रमिहारक है। कलमें सुषुप्त कल ही विजिग  
गुणदायक है। परन्तु इसके लिये यह नियम नहीं, इसका  
कषा कल हो विजिग गुणदायक होता है। द्राक्षा, विज्ञ  
और हलिकर्ण कादि कलमें सूत्रों पर ही गुणाधिक्य  
होता है। ( भाग० )

विज्ञपूषको उत्पत्तिके सम्बन्धमें गृहजन्मपुराणमें लिखा  
है, कि कम्पना प्रतीदिन मह्य प्रसो द्वारा महादेवकी  
पूजा करती थी। परु दिन के द्वादश पुराणोंके शिखर  
गिर पर पूजाके लिये बैठती, तो कषा देतती हैं, कि २ पर  
बजती होने हैं। तब लक्ष्मीों का ही मत विचार किया,  
कि अगस्त्य विष्णु मेर स्वर्गकी पर कट कर उल्लेख  
किया करती हैं, अतः अगस्त्य दोनो कलकी वाट कर उठो

में पूजा समान कर। परन्तु उन्हीं अक्षरों को  
स्वा ए कर महादेवके मन्त्र पर गद्या। जब  
दाहिना स्तन काटनेकी उपाय हुआ तो महादेवने कष-  
निद्रुमेंसे निकल कर कहा, "तुमका स्तन टूटती की भाव  
प्रकता नहीं। मैं तुम्हारीभक्तिमें बहुत ही प्रसन्न हुआ हूँ।  
तुम्हारा जो छिप स्तन मेरी पूजामें खड़ाया गया है यह  
पृथिवी पर धोकलके नामसे पुण्यप्रद पूषके रूपमें समु-  
त्पन्न होवे। धोकल पूष ही तुम्हारी मूर्तिरानी अति मनकी  
जावे। जब तक मूष और चन्द्र रहेंगे, तब तक तुम्हारी  
यह कर्षि रहेंगी। यह पूष मेरा अत्यन्त प्रिय होगा।  
इस पूषके पयके बिना मेरी पूजा कभी भी न हो सकेगी"  
पर सुन कर लक्ष्मी अत्यन्त आह्लादित हुई।

वैजाग मासकी शुक्ल तृतीयाके दिन विज्ञपूषका  
आविर्भाव हुआ। धोकलपूषके उत्पन्न होते ही कल,  
तासायन, इन्द्रादि देवगण और देवपतिगण, सभी यहाँ  
समागत हुए। तब सर्वोंने देखा, कि यह पूष स्निग्ध,  
नियम्बूप और अर्धो नेत्रमें देखीव्यमा है। यह पूष  
तिपको से सुगोमित है।

भगवान् विष्णुने कहा, 'इस पूषके इतने नाम रखे  
जाने हैं—विज्ञ, मातृ, धोकल, जाण्डिल्य, शीतल्य, निव  
पुण्य, निजप्रद, देशमास, शीतल्य, पावजन, कोमलच्छद,  
जप, विज्ञ, विष्णु, विज्ञान, पर, धुंधल, शुद्धवर्ण, सपत्नी,  
और धातुदेवक। इस पूषका जटने ले कर ती पत्र  
तक कषा परमतीर्थ स्वरूप है। इस पूषके तीन पर  
नाम ताथांके समान है। उत्तर्वपत्र निज, कामक कषा  
और दृष्टिपात्र मासार् विष्णु है। विज्ञपूषकी छाया  
या परत लक्ष्म कषा अथवा पैरों में हुना निविद्य है।  
इस पूषके लक्ष्म कलमें मायु परतों और पैरोंके लक्ष्म  
में भी हलक होता है। मह्य प्रसो छाया पूषा करनेमें  
विजना कल होता है, उनका ही कल पर विज्ञपत कल  
पूषा करनेमें प्राप्त होता है। तुम्हारीदरका तरह विज्ञ  
पत तोहने समय भी सभीकषागण कषाक कषा है।

"पूषपूष मासार् मधुर अत्यन्त।  
मधुरपूषकी कषाके लिये लिखा है।  
इस मधु द्वारा विज्ञपत तोह कर कोड़े विज्ञ  
विज्ञित कषाके कषाक पूषक पूषकी कषाक कषा कादि है।

मन्त्र—“आ गोमे विव्वतरये वदा ऋत्वरुषिणे ।

सकानानि समागानि कुर्वन् शिवर्षद ॥”

सुग्रह उठनेके बाद रूक्षके नीचे चारो तरफ दश हाथ परिमित स्थान गोबर पानीसे लीपना चाहिये । पश्चान्त अर्धात् अमावस्या, पूर्णिमा, द्वादशी, सायंकाल और मध्याह्नकाल, इन समयोंमें विव्वपत्र नहीं चुनना चाहिये । शाखा तोड़ना और वृक्ष पर चढ़ना उचित नहीं । वृक्ष पर चढ़ कर पत्र चुन ले, पर शाखा कदापि न तोड़े । रमणीय, अपण्डित वा पंडित सभी प्रकारके पत्रसे शिवकी अर्चना हो सकती है । ६ मासके बाद विव्वपत्र पर्युपित होता है । सूर्य और गणेशके अति रिक्त समयो देवताओंकी पूजा विव्वपत्र द्वारा की जाती मन्त्रतो है । जिस स्थानमें विव्ववृक्षोंका पानना है । वह स्थान काशोक समान पत्रित है । मकानके ईशान कोन में विव्ववृक्ष लगावेसे विपद्की सम्भावना नहीं रहती । पूजदिशामें रहनेसे सुख, दक्षिणमें रहनेसे मरणभयका नाश और पश्चिममें रहनेसे प्रजालाभ हुआ करता है । श्मशान, नदीतीर, पान्तर और जनमें विव्ववृक्ष होनेसे यह स्थान पीठस्थल नहकाता है ।

घरके आगनके बोचमें विव्ववृक्ष नहीं लगाना चाहिये । यदि दैजात ऐसे स्थानमें उत्पन्न हो जाय, तो शिव समझ कर उसकी अर्चना करनी चाहिये । विव्ववृक्ष छेदन वा उसका काष्ठ दहन करना निषिद्ध है । ग्राहणों के यज्ञके मंत्रा अन्य किसी भी कारणसे विव्ववृक्ष घेचनेसे उसे पतित होना पडता है । विव्वकाष्ठ घर्षित चन्दन मस्तक पर लगानेसे नरक भय दूर होता है । चैत्र, वैशाख ज्येष्ठ और आषाढ इन चार महीनोंमें विव्ववृक्षमें जल-मिचल करना विधेय है । ( बृहदम्पु० ६।११ अ० )

बहिरुपाणमें लिखा है, कि—गोरूप धारिणी लक्ष्मी के पृथ्वी पर अर्पण होने पर उनके गोमयसे विव्व-वृक्षको उत्पत्ति हुई ।

“शुभोत्रदमोभ वा भेत्तु गास्या सा गता महीम् ।

तन्नामयभवो विव्व श्रीभ तस्मादजायत ॥”

( बहियु० )

इस वृक्षमें सर्वदा लक्ष्मीका वास रहता है इसी लिये इसका नाम श्रीवृक्ष है ।

नत्रके अनुसार इसकी उत्पत्ति इस प्रकार है—

विश्वु पत्नी लक्ष्मी पृथ्वी पर विव्ववृक्ष रूपमें उत्पन्न हुई । कारण विश्वु सरस्वतीमें बहुत हा प्यार करते थे । इस लिये लक्ष्मीने महादेवके लिए बहुत चर्प तरु घोर तर तपस्या की थी । इतने पर भी महादेवको प्रीति न हुई । तब वे विव्ववृक्षरूपमें परिणत हुए , बादमें वही विव्व वृक्षके नामसे प्रसिद्ध हुआ । महादेव सर्वदा इस वृक्षमें वास करते हैं । ( यागिनीतन्त्र पूरणपत्र ५ प० )

विव्ववृक्षके नीचे प्राणत्याग करनेकी मोक्ष लाभ होता है ।

‘विव्ववृक्षस्तथा देवी भगवन् ऋत्वरु स्वय ।

विव्ववृक्षतले स्थित्या यदि प्राणस्त्ययेत् सुधी ॥

वत्नयात् गात्रमान्नाति नि तस्य तीथवार्तिभि ।”

( पुराणरणाहास १० पन्ज )

देवपूजामें विव्वपत्र चढ़ाते समय अधोमुख रहना चाहिए । विव्वपत्रके बिना शक्तिपूजादि नहीं होती । भोजन और विव्ववृक्ष देवों ।

विव्वक ( स० ३१० ) १ तोर्थभेद । २ नागभेद । ३ पीठ स्थानभेद ।

विव्वरुदि ( स० पु० ) पाणिन्युक्त शब्दगणभेद । यथा— विव्व, वेणु, वेत्र, वेनस, इक्षु, काष्ठ, कपोत, वृण, क्रुञ्जा, तक्षन् ।

विव्वक्रोय ( स० वि० ) विल्या सन्ति यस्या नडादित्यात् छ डुक् च । विव्वयुक्त भूमि ।

विव्वज ( स० लि० ) विल्यात् जायते जन-ड । विव्वजात मात्र ।

विव्वजा ( स० लि० ) जालिधान्य विरेप ।

विव्वतेजस् ( स० पु० ) नागभेद ।

विव्वतैल ( स० क० ) कर्णरोगांक्त तैलपधभेद । प्रस्तुत प्रणाली—तिलतैल ४ सेर, छागदुग्ध १६ सेर और बेल सोंड १ सेर इसे गोमूत्रमें पीस कर फल्य दे । बाधियैतोग में यह तेल काममें देनेसे बधिरता जाती रहती है ।

अन्यविध—तिलतैल १ सेर, बकरीका दूध ४ सेर, कक धेनुजोंड २ पल । पीले यथानियम इस तैलका पाक करे । वा श्रौणियक बधिरतामें यह तैल कानमें देनेसे बधिरता प्रजमित होती है ।

( भेषजसूत्रा० कर्णरोगाधि० )

विजयनाथ ( म० पु० ) एक हट मोगाचार्य ।  
 विजयन ( म० प्र० ) विजयन पत्र । देवकी पत्निया ।  
 विजयविद्या ( म० प्र० ) विजयविद्या शास्त्राचार्य  
 मूर्त्तिभेद ।  
 विजयनाथर ( म० पु० ) नामभेद ।  
 विजयवेदिना ( म० प्र० ) विजय वेदिना । गुफ  
 विजयपद, वेदमोठ ।

विजयमाला टाकुर—दक्षिणमें रहनेवाले एक प्राणज बुभार ।  
 कृष्णधर्मज्ञानकी नारायणी किमी गांधीमें से रही है । पाया  
 पायामें पिताके, विद्योग हो जानेसे थे भ्रष्ट स्वभावसे  
 उत्तमपिकाकी और लपट हो गये । इस लगेसे दूसरे पार  
 में विजयामणि नामकी एक बेटिया रहली थी । ये टिकागत  
 उममें भागल रह कर प्रेम करने थे । यही प्रेम उकी  
 गय दिन औरआजके दर्शन करने ले गया था ।

एक दिन किमी प्रकार उस बेटाको मालूम हुआ, कि  
 वह विजयमाला मुलाह निधिमं पिताका आश करेगे ।  
 येवना उम दिन उनका नरूपार होना भयगत जान राति  
 में नदी पार होनेले उम्हें निषेध कर दिया । मुद्रकमें करने  
 पर विजयमाला फिर निभर न रह सके, विजयामणिकी  
 दर्शनलगायतमें उद्दिगाजित हो जायो रातमें रातमें रात  
 दिने । रातमें जाते जाते बानी घटाये उठी, उसके साथ  
 साथ अन्धकारगत, बसागत और वृष्टिगत होने लगा । इस  
 प्रकारके बाधा विजयकी अतिक्रम कर ये नदी किनारे पाय  
 हू दनेसे निषेध हो गये । पायापितादिन ज्ञानरामिने  
 भाषणाकार धारण किया था । यारी और उताह नरुद्ध  
 उठ कर नदीकी किमीविषयमयी बना रही थी । प्रेमोगस  
 विजयमाला सेमे असमयमें भी स्थिर न रह सके और  
 जलमें गूद पड़े । जलमें बनी हकी बनी नीचे चले जा  
 थे । अन्तमें बाह्यमने उरके हाथ पर भाग हुआ मुला  
 लगा । उरके भाषणमें नदी पार कर बेटाके पाके  
 माम । विजयमाला उपनिधल हो गये । राति अधिच हो  
 गई थी, ज्ञान रंज देस कर ये गूद प्रेमजकी बेटामें पर  
 के बारीके और पुनले मने । प्राणरकी द्वातमें मीनकी  
 पुत्र लक्ष्मी देस लक्ष्मी उनी स्वामी ज्ञान वरक किया ।  
 उमके मन्त्रके वे प्राणर पर बड़े और प्राणरके बंगलमें  
 बूद पड़े । बूदकेकी मन्त्र मुभत ही विजयामणि मदि

बेटाके दोषके ले कर मारों और पड़े हुए विजयमालाकी  
 उडा कर ले गया । विजय देसके जयकी पूर्णगत विजयकी  
 देस उम्हें ज्ञान कराया और प्रदत्त कारण पूजा । विजय  
 माला विजयामणिके प्रेममें से होना थे, जरीकरा जग मी  
 सुधि न थी ।

उम समय यह बेटा लगेवर्द्ध उमगत इतनी ज्ञान  
 निम्नार भरे बगलमें बनी लगी, ये बेटाकी बीच धरपुत्र  
 और निरिदित हू । तुम प्राणज पुत्र हो, यह प्रेम मुझे न  
 कर पदि तुम इस प्रेमसे गी भागोकर एक माग मी धो  
 पूजाके चरणकमलमें समर्पण करने तो निश्चय ही मुझे  
 चीमुणा कल मित्रता ।

विजयामणिके इस अहंतापापवसे विजयमालाके  
 हृदयमें मन्धमाय उपनिधल हुआ, साथ साथ विवेक  
 और वीरताय दिगाई दिया । उम रातिकी कृष्णकी गये  
 गातमें पिताया, प्रमाद होनेही थे दूसरी जगद बने गये ।  
 रातमें सोमगिरि नामक एक साधुके साथ उत्तरा  
 साक्षात् हुआ । विजयमाला उरके निरज कृष्णरंज  
 दोरित हुये । एक पये युग रीयाके बाद प्रेमवैतना बन  
 उम्हो ने विमुद्ध प्रेमघन प्राप्त किया । इसका भयानक  
 उरके कृष्णदर्शनकी बगिचारा उपरग हूँ । वृद्धावत  
 गमारे अभिलाषी हो ये मार्ग मार्ग विपत्तन बनी  
 लगे ।

कुछ दिन बाद एक गांधीमें जा कर ये मन्धमायोरुण  
 पर वृषके गांधी पैठ गये और कृष्णके, ज्ञानमें दिन  
 विनाले मने । दिवसे एक बनिथेकी त्या उम मरीचकमें  
 ज्ञान करने जायो । विजयमालाकी निगाह उम पड़ी  
 और पूर्णग्यासके वनमें वामायेकी उतना मन्त्र कुछ  
 कृष्णमात्र हुआ । ये उम रूपयता मन्त्रके पीठी बन  
 लिये । मन्त्रो तो भयने मनेमें चला गई और साधु  
 विजयरुद्ध मरके दूरबारी पर पैठ रहे । बनिथेम साधुके  
 देस काता मिष्ट लयनेके उम्हें मन्त्रुष्ट किया । मन्त्रुमें  
 उमकी स्वयंके दर्शनकी प्राप्ति उमके म । ये मन्त्रुके  
 के लिये बनिथेके स्वयं मनेमें जा वम मन्त्रुकेकी मुद्र  
 पय और साधुकेकी मन्त्रा वरकमें साधुके मनेमें  
 उपनिधल कर दिया । उम मन्त्रुके साधुके स्वयंके रूपकी  
 मनेमें मिर लह दिखर मन्त्रुके मन्त्रुके किया ।

इसके अनन्तर उन्होंने उस रमणीय दो सूँ ले कर अपनी जाति फोड़ डाली और वे कृष्ण प्रेमके अतुरागम अत्रेकी तरह धीरे धीरे वृन्दावनकी ओर चल गये। राधाकृष्णके प्रेममें मतराये जा उन्होंने जिम अमृतगीतसे लिभुवनकी पुत्रित कर दिया था; वही गीत श्रोत्राण्यकामृत नामसे प्रसिद्ध है। प्रवाद है, कि गोपवेशमें श्रोत्राण्य उसकी खिलाते थे। एक दिन उन्होंने गोपालकृष्णो श्रोत्राण्यके हाथकी जोरसे दबा लिया। चालने, हाथमें धरया होती है ऐसा कह कर अपना हाथ उनसे छुड़ा लिया। इस पर विन्वमङ्गलने कहा था—

“हस्तमुल्लिख्य याताऽसि वनात्प्राणा किमद्भुतम्।

हरयाद् यदि लिखामि पीरुष गण्ययामि ते ॥

(श्राकण्यक्यामन ३६६)

भक्तप्रेमसे राधाकृष्ण विन्वमङ्गलकी अर बहुत दिन तक झूठ न भे सके। उन्होंने निज पसहस्नके द्वारा उन के ज्ञान चक्षु खोल लिये। अब अन्धके नयन खुल गये, उन्होंने विभङ्गमङ्गल मुल्लिखन श्याममूर्तिके दर्शन किये, पाममें प्रेममयी राधा—पेसा युगल रूप देग कर धे प्रेमावेशमें ढल गये। (भामाज)

विन्वमङ्गलडाकुरका दूसरा नाम लीलाशुक था। श्री कृष्णप्रेममें सन्यासी बन उन्होंने तरयज्ञान लाभ किया था। कृष्णकामृत, कृष्णबालचरित, कृष्णाहिककीमुदी, गोविन्दस्तोत्र, बालकृष्णक्रीडाकाव्य, विन्वमङ्गलस्तोत्र और गोविन्ददामोदरस्तव नामक प्रथम उनके धनाये हुए मिलते हैं।

विन्ववन (स० ह्री०) विन्वस्य वन। वेत्का जगल। वि०वन—दाक्षिणात्यके मदुरा नगरके निकटवर्ती एक तीर्थ। यह वेगवना नदीके किनारे अवस्थित है। स्कन्द पुराणान्तर्गत विन्वाण्य महात्म्य और शिवपुराणके विन्ववन महात्म्यमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है।

विन्ववृक्ष (स० पु०) बेलका पेड़। (Valk amuclos) विभिन्न भाषाओंमें इसके नाम—हिन्दी—बेल, श्रीफल, श्रोफल, ससुरा, विन्व, श्रोफल, मालु, विन्वफल, विन्व सराडी बेल, गुनरातो—विन्व बगना—वेन्, विन्व; आसामी—बेल; सिन्धु—विन्व, कटोरा; अरबी—सकर जले, हिन्दि, सूळ, बोल—लोगगसो मध औरनम् तामिल—विन्वफलम्; मैलङ्ग—मरेदु, मालुमु, विन्व

पण्डु, पतिर; गौड—मरका, महका; मलयालम्—कुन्-लण्यम्, वनाडी—विल्पनी या बेलपत्ती; ब्रह्म—शोक्षित, उपिन्वन्। मिगापुर—बेलगे। भारतमें प्राय सर्वत्र ही यह वृक्ष होता है। हिमालय पर्वतके बन विभागमें और दक्षिण भारत तथा ब्रह्मदेशमें बेलके पेड़ स्थभावत उत्पन्न होते हैं।

इस वृक्षकी छाल अलग कर लेनेसे उसमेंसे एक प्रकार का गौड सा निकलता है। फलके अन्दर श्रेणीबद्ध बीज होते हैं। प्रत्येक बेलमें बीजोंके रहनेके लिए १० से लेकर १५ तक गड्ढे होते हैं। इनकोपोंमें बीज गौडके साथ छिपे हुए रहते हैं। यह गौड भास्याद् हीन और प्रध्यावि जोड़नेके काममें आता है। बेलके गौडमें सूता मिला कर उसने कावके वासन आदि जोड़े जा सकते हैं।

कच्चे बेलके छिलकेसे एक प्रकारका जर्द रंग निकलता है जो हरीके साथ मिलानेसे केलिका नामक वस्त्र रंगनेके काममें आता है।

विन्ववृक्षमें भेज गुण भी बहुत है। कच्चे और पके फल, जड़, पत्ते, छिलका आदि सबमें अलग अलग गुण पाये जाते हैं।

१ कल्पा कषा—कच्चे फलोंको गण्ड गण्ड कर लोम सुजा लिया करते हैं, जो बेलगरीके नामसे बाजारमें विकता है। इसमें धारकता गुण है। लडकोंकी अनीर्ण रोग होने पर इसका चादा बना कर दिया जाता है। यह पाकाशयके लिए धत्यंत उपयोगी है और सहज ही परिपाक होता है। कमी कमी सप्रहणी रोगमें भी इसका पथ्य दिया जाता है। आमाशय (पेचिस) आदि बीदरिक रोगोंमें कच्चा बेल भूत कर गुड या चीनीके साथ खानेसे उपकार होता है।

२ कषा कषा—सुमिष्ट, सुगन्धियुक्त और शीतल होता है। गरमियोंमें शमली या दहीके साथ इसका मठा सरवत बना कर पीनेसे बड़ा स्वादिष्ट मालुम पदुता है और पेट ठंडा रहता है। यह सरवत हृद्य, बलकारक और स्वारक होता है। सुषहमें बरफके साथ सरवत पीनेसे उष्णराम रोग जाता रहता है। पका बेल थोड़ी सी चीनी मिला कर खानेसे पेट बंध जाता है। शीर्षाजीर्ण या आमाशयजनित दौर्बल्यमें यूरोपीय लोग बेलमार्मालिड (Bel marmalide) बना कर सुषहके घसत इसका सेवन करते हैं।



३ वेनरी जड़—इसकी गालका काढ़ा बना कर मयिराम उद्यममें प्रयुक्त किया जा सकता है। दौघनाल म्थायी कौष्ठवद्धता रोगमें जड़की छाल १ आउन्स १० आउन्स गरम जलमें उबाल कर, उसमेंसे १ या २ आउन्स सेवन करनेसे यथेष्ट उपकार मिलता है। चिन्नोन्मावता (Hypochondriasis) और हृदरोग (Palpitation of the heart) में यह फायदेमन्द है। वैद्यक दशमूल पाचनमें घेल्की जड़ रहती है। घेल्की जन सर्पके मस्तरु पर लगानेमें उमरु फन नप ज्ञाता है। सर्पके नाटे हुए स्थान पर घेल्की जड़ लगानेमें निप भी नष्ट होता है।

४ पत्र—घेल्पत्तेका रस अल्पउत्तरमें देनेसे सामान्य दस्त होता है और उत्तर घट जाता है। चक्षु रोगमें अथवा गात्र क्षय कभी कभी घेल्पत्तेको घंट कर, उन स्थान पर कच्ची पुलटिस रगी जाती है, जिससे दर्द घट जाता है। सामान्य उत्तरमें घेल्पत्तेका काढ़ा सेवन कराया जाता है। घेल्पत्तों से शिव वार शक्तिकी पूजा होती है, यह बात विन्प शब्दमें कही जा चुकी है।

५ पत्रना लिलना—यह भी समय समय पर औषधके काममें आता है।

६ फूल—इसमें अच्छी सुगन्धि प्राप्त होती है।

यूरोपीय चिकित्सकोंने घेल्से तीन औषधियां बनाई हैं—(१) Extract of Bal (२) Liquid Extract of Bal और (३) Powder of the Pulp। ये तीनों दवाइयां उदर और उत्तर रोगमें अत्रस्थानुसार सेवन की जाती हैं।

वित्ता ( स० खी० ) वित्त-टाप। हिन्दुपत्नी।

विनाश्रमका ( स० गु० ) देवातीर-स्थित एक तीर्थस्थान।

विल्वेभ्यः ( स० क्ली० ) शिपलिङ्गभेद।

विजोत्केभर ( स० पु० ) शिपमूर्त्तिभेद। हरिप्रशके १३६ अध्यायमें इसके आभिर्भाषना विषय लिखा है।

विल्लूण ( स० पु० ) चालुक्यराज विक्रमाङ्ककी सभाके एक कवि। इन्होंने विक्रमाङ्क-चरित काव्य लिखा है।

इस प्रथम उस समयकी अनेक ऐतिहासिक कथाओंका वर्णन है। इन्टे लोण 'जोग कवि' भी कहा करते थे।

विचरना ( हि० वि० ) १ सुलभना, पक्वमें शुषी हुई वस्तुओंको अलग अलग करना। २ धेधे या शुषे हुए

वालोंको हाथ, कधी आदिसे अलग अलग करके साफ करना, बाल सुलभाना।

विचगना ( हि० क्लि० ) १ बालोंको खुलवा कर सुलभाना। २ बाल सुलभाना।

विशप ( अ० पु० ) ईसाई मतका बड़ा पाद्री।

विशापपत्तन—विशापपत्तन देतो।

विशालरुचि—विशालरुचि देतो।

विश्वनाथ सिंह—विश्वनाथ सिंह देतो।

विषान ( हि० पु० ) विषाण द्रव्य।

विष्णुप्रसाद कुच रि—विष्णुप्रसाद कुचरि देगा।

विसभाग ( हि० वि० ) अभावधान, गाफिल।

विस, हि० वि० ) निप दरो।

विमकण्डिका ( स० खी० ) विषमिप कण्डोऽस्या कप।

बलाका, बगलोंकी पक्ति।

विसकण्डिन् ( स० पु० ) विममिच कण्डोऽस्त्यस्य इति। वक, बगल।

विसकुसुम ( स० क्ली० ) निपस्य कुसुम। कमल।

विसम्परा ( हि० पु० ) १ मोहकी जातिकका एक विप्रेला सगीसप जन्तु। यह हाथ सवा हाथ लया होता है।

इसका काटा हुआ जीव नुरन्त मर जाता है। इसकी जीभ रंगीन होती है जिसे घट थोडो थोडो देर पर निकाला करता है। देखनेमें यह बड़ो भारी छिपकली

सा होता है। २ पुनर्नवा, पथरचटा। ३ एक प्रकार की जगली बूटो। इसकी पत्तियां बनगोमकी सा, पर कुछ अधिर हरी और लवी होती हैं। यह औषधमें काम

आती है। इसका दूसरा नाम विमसपरी भी है।

विमप्रा ( स० वि० ) विस मृणाल खननि खन विट्टा। मृणाल खननकर्त्ता।

विसबादपा ( स० खी० ) १ मृणाल खननबादि। २ वात्स्यायनका कामसूत्र वर्णित नाटकभेद।

विमगापर ( हि० पु० ) विसम्परा देगे।

विसप्रन्धि—विपस्य प्रन्धि। मृणाल प्रन्धि, कमलकद। इसे जलमें देतेसे जलकी मलिनता दूर होती है।

विसज ( स० क्ली० ) विमाज्ञावते जन इ। पत्र, कमल।

विमटी ( हि० ग्री० ) वेगार।

विसनाभि ( स० पु० ) विम नाभिः कृत्तिस्थान यस्य।

- १ पद्मिनी, कमल । २ पद्मसमूह, कमलाका डेर ।  
 विस्नासिका ( स० खी० ) विस्सय नासिका । मृणाल ।  
 विस्नासिका ( स० खी० ) वक्त्रभेद ।  
 विसनी ( हि० वि० ) १ जिसे किसी बातका ध्यान या शीक हो । २ वेण्यागामी, गंडीवाज । ३ जो ध्यतहारकी साधारण रस्तु मामने जाने पर नाम भी निकोडे, जिसे चोडे जल्दी पसन्द न आए । ४ जिसे सफाई सजावट या बनाय मि गार बहुत पसन्द हो, चिकनिया ।  
 विस्मय ( स० खी० ) पक्ष, कमल ।  
 विस्मय ( हि० पु० ) विस्मय देना ।  
 विस्मिल ( फा० वि० ) आहत, घायल ।  
 विस्मिहाह ( अ० पु० ) श्रीगणेश, आरम्भ ।  
 विस्मरना ( हि० क्रि० ) विस्मृत होना, भूल जाना ।  
 विस्मराना ( हि० क्रि० ) विस्मृत करना, ध्यानमें न रखना ।  
 विस्मल ( स० खी० ) विस लातीति ला व । पल्ल, कौपल ।  
 विस्वत् ( स० वि० ) विस चतुर्धादित्यात् भन्तु प मस्य व । मृणाल युकादि ।  
 विस्वत्सर्ग ( स० पु० खी० ) विसाख्य नेत्रवत्सर्गत गेग भेद ।  
 विस्ववार ( हि० पु० ) हज्जामोंकी वह पेटी जिसमें वे हजामत बानेके औजार रखते हैं, विसवत ।  
 विस्वामिनी ( हि० वि० ) १ विश्वास करनेवाला । २ जिस पर विश्वास हो ।  
 विस्ववासी ( हि० वि० ) १ जो विश्वास करे । २ जिस पर विश्वास हो । ३ जिस पर विश्वास न किया जा सके, वेपतवार । ४ जिसका कुछ ठोक न हो, कि वच कथा करे कटावेगा ।  
 विस्वमना ( हि० क्रि० ) १ वच करना, घात करना । २ शरीर फाटना, चीरना फाड़ना ।  
 विसहर ( सं० पु० ) सर्प, साप ।  
 विसहक ( हि० पु० ) म्रोल लेनेवाला, परोद्दार ।  
 विसहिनी ( हि० खी० ) एक प्रकारकी चिडिया ।  
 विसावैध ( हि० वि० ) १ सडी मछलीकी सा गन्धवाला, जिससे मडा मछलीकी सी गंध आती हो । ( खी० ) २ मछलीकी-सी गंध, सडे मासकी सी गंध ।  
 विस्वाह ( हि० खी० ) विस्वाहा देना ।  
 विस्वात ( अ० खी० ) १ धनसम्पत्तिका विस्तार, हेमियत । सामर्थ्य, हकीकत । ३ गतरज या चापड आदि खेलनेका कपडा या विडोना जिम्स पर पाने बने होते हैं । ४ जमा, पूंजी ।  
 विसाती ( अ० पु० ) १ विस्तर वित्रा कर उस पर सीदा रख कर बेचनेवाला । २ छोटी चीनीका दूकानदार ।  
 विसाना ( हि० क्रि० ) १ गग चलना, काट चटना । २ विपका प्रभाव करना, जहरका असर करना ।  
 विस्मार्द ( हि० पु० ) विस्मर देना ।  
 विस्मरना ( हि० क्रि० ) स्मरण न रखना, भुल देना ।  
 विसारा ( हि० क्रि० ) विपक, विष भरा ।  
 विस्मसिनी ( हि० खी० ) विश्वासघातिनी, जिम्स पर विश्वास न किया जा सके ।  
 विसाह ( हि० पु० ) कथ, खरीद ।  
 विसाहना ( हि० क्रि० ) १ कथ करना, परोद्दा । २ जान बूझ कर अपने पीछे लगाना, अपने माथ करना । ( पु० ) ३ मोल लेनेकी वस्तु, कामकी चीज । ४ मोल लेनेकी क्रिया, खरीद ।  
 विसाहनी ( हि० क्रि० ) मोदा, जो वस्तु मोटा ली जाय ।  
 विस्वाहा ( हि० पु० ) सीदा, खरीदी हुई वस्तु ।  
 विस्मिनी ( स० खी० ) विस पुष्पादित्वात् इति । १ पद्मिनी, २ मृणालादियुक्त देश । ३ नत्समुदाय ।  
 विसिल ( स० वि० ) विस काश्पादित्वादि । जो मृणालके समीप हो ।  
 विस्मनना ( हि० क्रि० ) कोई रस्तु खाते समय उसका कुछ अंश नाककी ओर चढ जाना ।  
 विस्मनी ( हि० पु० ) अमरपेठ ।  
 विस्मुवा ( हि० पु० ) विस्वा देना ।  
 विस्मरना ( हि० क्रि० ) १ चिन्ता करना, मोच करना । ( खी० ) २ चिन्ता, फिक्र ।  
 विस्मन ( हि० पु० ) शक्तिपौंती पत्र जाला, किसी समय इनका राज्य वत्तमान गोरखपुरके आस पासके प्रदेशसे ल कर नेपाल तक था ।  
 विस्तुट ( अ० पु० ) स्वामी आटेकी तड़क पर पर्नी हुई एक प्रकारकी टिकिया । यह बहुत हलकी होना है और

दूधों बालनेसे फूल जाता है। विस्तृत नमकीन और मोटा दोनों प्रकारका होता है। इसे यूरोप और बंगालके लोग बहुत खाते हैं।

विस्तर ( हि० पु० ) १ विछीना, विछायन। २ विस्तर, बढाय।

विस्तरना ( हि० क्रि० ) १ फैलाना, अधिक करना। २ बढा चढा कर वर्णन करना, विस्तारमें कहना।

विस्तार ( हि० पु० ) विस्तर देना।

विस्तारना ( हि० क्रि० ) विस्तृत करना, फैलाना।

विस्तुरया ( हि० स्त्री० ) गृहघोषा, छिपकली।

विस्वा ( हि० पु० ) एक योगेश्वर घोमया भाग।

विस्वदार ( हि० पु० ) १ पट्टोदार, हिस्सेदार। २ किसी घड़े राजा या तबल्लुकेदारके अधीन जमींदार।

विस्वास ( हि० पु० ) विश्वास देना।

विहग ( हि० पु० ) विहग देना।

विहडना ( हि० क्रि० ) १ खण्ड खण्ड कर डालना, तोड़ना। २ नष्ट कर देना। ३ फाटना।

विहंसना ( हि० क्रि० ) मुस्कराना, मदमंद हंसना।

विहमाना ( हि० क्रि० ) १ विहंसना देना। २ प्रफुल्लित होना, खिलना।

विहतर ( फा० वि० ) बहुत अच्छा।

विहतरौ ( फा० स्त्री० ) कुशल, भलाई।

विहथल ( हि० वि० ) व्याकुल देना।

विहरना ( हि० क्रि० ) घूमना, फिरना, सैर करना।

विहरो ( हि० स्त्री० ) चढा बरान।

विहाग ( हि० पु० ) एक राग जो आधी रातके बाद राग-भंग २ बजेके गायता जाता है। यह राग हिंदोलराजका पुत्र माना जाता है।

विहागडा ( हि० पु० ) सम्पूर्ण जातिका एक राग। इसमें मधुशुद्ध स्वर लगते हैं। इसके गानेका समय रातकी १६ दण्डसे २० दण्ड तक है। कोई इसे हिंदोल रागकी रागिनी और कोई सरस्वती केदार और मारवाके योगसे उत्पन्न मानते हैं।

विहान ( हि० पु० ) १ प्रातःकाल, सबेरा। ( क्रि० वि० ) २ कलह, कल।

विहार—पटना जिलेका उपविभाग। अन्तस्य 'व'म देना।

विहारना ( हि० क्रि० ) विहार करना, खेल या फौडा करना।

विहारोमल—विहारोमल देना।

विहारौ लाल—विहारोमान देना।

विदाल ( फा० वि० ) व्याकुल, बेचैन।

विदिधन ( फा० स्त्री० ) स्वर्ग, वैकुण्ठ।

विही ( फा० स्त्री० ) पेशावर और काबुलीकी ओर मिलने वाला एक पेड़। इसके फल अमरुदसे मिलते जुड़ते हैं। १ उक्त पेड़का फल जिसकी गन्तवी मेवोंमें आई है। ३ अमरुद।

विहीदाना ( फा० पु० ) विही नामक फलका बीज जो टाकके काममें आता है। इन बीजोंको भिगो देनेसे लुआन निकलता है जो शर्वतकी तरह पिया जाता है।

विहीन ( हि० वि० ) रहित, विना।

विहिन ( हि० वि० ) रहित, विना।

विहोरना ( हि० क्रि० ) विडुडना।

वीड ( हि० पु० ) ग्रीडा देना।

वीडा ( हि० पु० ) १ मडरके आकारका लम्बा नाल जो पेड़की पतली टहनियोंमें चुन कर बनाया जाता है। यह कच्चे कुपू या चींडमें इमलिये दिया जाता है, कि उसका भगाड न गिरे। २ पिडों पिड। ३ जलानेकी लडकी या बाम आदिका बाध कर बनाया हुआ बोक। ४ धानके पयालका बनाया हुआ एक प्रकारका गोल आमन। रम पर गाँवके लोग आगेके किसानों घेत कर तापते हैं। ५ पास आदिकी लपेट कर बनाई हुई गेडुनी जिस पर घड़े रखे जाते हैं। ६ वह गेडुनी जिसे मिर पर रख कर घड़े, टोकने आदिका भार उठाने हैं। ७ बडी बाडी, लुडी।

वीडिया ( हि० पु० ) वह बेल जो तीन बेलकी गाडीमें सबसे आगे रहता है और जिसके गलेके नीचे वीडा रहती है।

वीडी ( हि० स्त्री० ) १ रम्मी या सूतकी वह पिडी जो लम्बी या किसी भी चीजके ऊपर लपेट कर बाहर जाय। २ वह मोटी और थपड़े आदिमें लपेटे हुए रम्मी जो उस बेलके आगे गलेके सामने छाती पर रहती है जो तीन बेलोंकी गाडीमें सबसे आगे रहता है। ३ केसुला। ४ वह लडकी जिस पर

सूत आदिनी लपेट कर बाँडो बाई जाती है । ५ यह गे झुटी जिन्मे सिर पर रत कर घडा टोकरा या और कोइ रोक्क उठाते हैं ।

वींधना (हि० क्रि०) विद्ध करना, छेदना ।

वीं ( फा० स्त्री० ) बीना देखो ।

वीका ( हि० वि० ) घक्क, डेढा ।

वीकाजी—अन्तन्व 'ज'-म देखो ।

वीकानर—वीकानर देखा ।

वीष ( हि० पु० ) पद, कदम, उग ।

वीग ( हि० पु० ) भेडिया ।

वीगहाटी ( हि० स्त्री० ) वह लगान जो बाघेके हिसाबसे लिया जाय ।

वीजा ( हि० पु० ) येन नापनेका एक वग मान जो बीस त्रिभुके होता है । एक जरीव लकी और एक जरीव चौडी भूमि क्षेत्रफलमें एक बोधा होती है । भिन्न भिन्न प्राणतोंमें भिन्न भिन्न मानकी जरीवका प्रचार है । अत प्राणिक बोधेका मान जिसे देहो वा देहाती बोधा कहते हैं, नव जगह समान नहीं है । पक्का बोधा जिसे सर फारी बोधा भी कहते हैं, ३०२५ वर्गगजका होता है जो एक एकडका ५वा भाग होता है । अथ सब जगह प्राय ३मी बोधेका प्रयोग होता है ।

वीच ( हि० पु० ) १ किसी परिधि, सीमा या मर्यादाका केन्द्र अथवा उस केन्द्रके आस पासका कोई ऐसा स्थान जहासे चारों ओरकी सीमा प्राय समान अन्तर पर हो, किसी पदार्थका मध्यभाग । २ दो वस्तुओं या वस्तुओंके बीचका अन्तर, अन्तकाज । ३ अन्तर, मीमा । ४ भेद, फरक । ( स्त्री० ) ५ लहर, तरंग ।

वीचोवीच ( हि० क्रि० वि० ) ठोक मध्यमे, मिलफुल्ल बीचमें ।

बिठ ( हि० पु० ) चिन्तू देखो ।

बीज ( स० स्त्री० ) विशेषण कार्यरूपेण अपत्यतया च जायते 'उपमनो च संगाया' इति जन उ 'अन्येयामपीति' उपसर्गस्य दीर्घ या चिरीयण ईजते बुद्धि गच्छति शरीर या ईज गतिद्वत्समयोः पचादृचच् । १ कारण । "बीज मा त्वर्यभूताना विद्धि पार्थ मनातन ।" ( गीता ११० ) २ शुक ।

'बीज शुक' ( मघतिथि ) ३ अचिरूप । ( मनु १०।१२ ) ४ अशुक । ५ तत्त्वार्थान । ( मदनी ) ६ मझा । ( राजनि० ) ७ गणित त्रिषेण, बीजगणित । ८ पृक्षादिका अशुराधार ।

९ देवताओंके मूर्तमन्त्र, बीजमन्त्र । तन्त्रमें प्रत्येक देवताके भिन्न भिन्न बीजमन्त्र लिखे हैं । बहुत ही सश्रेणमें इस विषय पर प्रकाश डाला जाता है ।

अन्नपूर्णाबीज—'हो नमो भगवति महेश्वरि अन्न पूर्णं स्वाहा ।' विपुटा बीज—'हो ह्रीं वीं ।' त्वरिताबीज—'हो ह्रीं हुं मे छे छे क्ष स्त्री हुं क्षे ह्रीं फट् ।' नित्याबीज—'हे ह्रीं नित्यङ्गिन्ने महद्रेण स्वाहा ।' दुर्गाबीज—'हो ह्रीं हुं दुर्गायै नम ।' महिष मर्दिनीबीज—'हो महिष मर्दिनि स्वाहा ।' जयदुर्गाबीज—'हो हुं हुं रक्षणि स्वाहा ।'

शूलिनीबीज—'ज्यत् जल शूलिनि दुष्टग्रह हु फट् स्वाहा ।' वागीश्वरीबीज—'वद् वद् वाग्वादिनी स्वाहा ।' पारिजान सरस्वती बीज—'हो ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं सरस्वत्यै नम । गणेशबीज—'गं ।' हेरम्बबीज—'ओ ग नम ।' हरिद्रागणेशबीज—'ह्रं ।' लक्ष्मीबीज—'श्रीं ।' महालक्ष्मीबीज—'हो हे ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं जगत् प्रसूत्यै नम ।' सूर्यबीज—'हो घृणि सूर्य आदित्य ।' श्रीरामबीज—'शं ।' रामाय नम जानकीवल्लभाय हु स्वाहा ।' विष्णुबीज—'हो नमो नारायणाय ।' श्रीरुद्र बीज—'गोपीजनवल्लभाय स्वाहा ।' त्रामुद्देवबीज—'हो नमो भगवते त्रामुद्देवाय ।' वाग्गोपालबीज—'हो ह्रीं रुपाय ।' लक्ष्मीवासुदेवबीज—'हो ह्रीं ह्रीं लक्ष्मीवासु देवाय नम ।' दधिग्रामनबीज—'हो नमो विष्णवे सुर पतये महापलाय स्वाहा ।'

ह्यमंत्र'एका बीज—'हो उद्विद्रत्प्रणजोदोघसर्ववागो श्वरेभर । सर्वदेवमवाचिन्त्य सर्वबोधय बोधय ॥ वृन्निहबीज—'उग्र धीर महाविष्णु जलन्त सर्गनोमुग । वृत्सिह भोषण भद्र मृत्युमृत्यु नमाम्यहम् ।' नरहरिबीज—'आ ह्रीं श्रीं हु फट् ।' हरिहरबीज—'हो ह्रीं ह्रीं शङ्करनारायणाय नमः ह्रीं ह्रीं ह्रीं ।' घराह बीज—'हो नमो भगवते घराहकृपाय भूर्भुवः स्वः पतये भूपतित्व मे देहि वदापय स्वाहा ।' शिवबीज—'ह्रीं ।'

मृत्युञ्जयबीज—'ओं जु स ।' दक्षिणामूर्तिबीज—  
'ओं नमो भगवते दक्षिणामूर्तये महा मेधा प्रयच्छ  
स्वाहा । चिन्तामणिबीज—र क्ष म र य ओं ऊ ।'  
नीलकण्ठबीज—'ओं नो ठ नम शिवाय ।' चण्ड  
बीज—'रुध्र फट् ।' क्षेत्रपालबीज—'ओं शौं श्रेत्र  
पालाय नम ।' यदुकुम्भैरबीज—'ओं ह्रीं यदुकाय धाय  
दुष्कारणाय कुम्भ कुम्भ वदुकाय ह्रीं ।' त्रिपुराबीज—'हमरै'  
'हसकलरीं' 'हसरै' । सम्यक्प्रदामैरबीज—'हसरैं सह-  
कलरी हसरै' । भयविघ्नसिनी भैरवीबीज—'हसैं, हस-  
कलरीं, हसरै ।' कौलेशमैरवीबीज 'सहसैं, सहकलरी,  
सहरै' । सकलसिद्धिमैरवीबीज—'सहसैं, सहकलरीं,  
सहसै' । चैतन्यमैरवीबीज—'सहसैं, सकलहो, सहरी ।'  
कामेश्वरीमैरवीबीज—'सहसैं, सकलहो, नित्यहो महद्रवे  
सहरी ।' पटकुट्टामैरवीबीज—'ड र ल कसहै, ड, र  
ल क स ह्रीं ड र ल क स ह्रीं ।' नित्यामैरवीबीज—'ह स  
फ ल र डै, ह स क ल र ओं, ह स कलर डै ।' यदुमैरवी  
बीज—'हसफकरैं, हसकलरी हसौ ।' भुवनेश्वरी  
मैरवीबीज—'हसैं, हसकलहो, हसौ ।' सकलेश्वरी-  
बीज—'सहसैं, सहकलहो, सहसौ ।' त्रिपुरावालाबीज—'ये  
ह्रीं सौ । नवकुट्टामालाबीज—'ये ह्रीं सौ हसैं, हस-  
कलरी, हसौ, हमरै, हसकलरौ हसरौ । अन्नपूर्णा  
मैरवीबीज—'ओं ह्रीं श्रीं ह्रीं नमो भगवति माहेश्वरि  
अन्नपूर्णे स्वाहा ।'

श्रीविद्याबीज—'फ प ई ल ह्री । हम क ह ल ह्री'  
सकलह्री । चिन्तामस्ताबीज—'श्रीं ह्रीं ह्र वज्रधैरो  
चनीये ह्र ह्र फट् स्वाहा । श्यामाबीज—'क्रौं क्रीं क्रीं  
ह्र ह्र ह्रीं ह्रीं दक्षिणकालिके क्रौं क्रीं क्रीं ह्र ह्र ह्रीं ह्रीं  
स्वाहा । शुद्धकालिबीज—'क्रौं क्रीं क्रीं ह्र ह्र ह्रीं ह्रीं  
शुद्धकालिके क्रीं क्रीं क्रीं ह्र ह्र ह्रीं ह्रीं स्वाहा । भद्र-  
कालीबीज—'ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्र ह्र ह्रीं ह्रीं भद्रकाल्यै ह्रीं ह्रीं  
ह्रीं ह्र ह्र ह्रीं ह्रीं स्वाहा ।

शमशानकालिकाबीज—'क्रौं क्रीं क्रीं ह्र ह्र ह्रीं ह्रीं शमशान  
कालि क्रीं क्रीं ह्र ह्र स्वाहा । महाकालीबीज—'क्रीं  
क्रीं क्रीं ह्र ह्र ह्रीं ह्रीं महाकाली क्रीं क्रीं क्रीं ह्र ह्र  
ह्रीं ह्रीं स्वाहा । ताराबीज—'हो रौं ह्र फट् । चण्डो  
प्रद्यूपाणिबीज—'ओं ह्रीं ह्र शिवाय फट् । मातङ्गिनी  
बीज—'ओं ह्रीं ह्रीं ह्र मातङ्गिन्यै फट् स्वाहा ।

उच्छिष्टचाण्डालिनी बीज—सुशुक्लोदेवदे, महापिशा  
चिनी ह्रीं उ ठ उ । धृमावती बीज—'धृ धृ स्वाहा ।  
भद्रकात्रीबीज—'ह्रीं कालि महाकालि किलि किलि  
फट् स्वाहा । उच्छिष्टगणेशबीज—'ओं हस्तिपिशाचि  
लिखे स्वाहा । धनदात्रीबीज—'ध ह्रीं श्रीं देवि रतिप्रिये  
स्वाहा । श्मशानकालिका बीज—'एँ ह्रीं श्रीं ह्रीं कालिके  
एँ ह्रीं श्रीं ह्रीं ।

वगलाबीज—'ओं ह्रीं वगलामुष्टि सर्वदुष्टानां वाच  
मुष्टि स्तम्भय जिहा फौलय फौलय युद्धि नागय ह्रीं ओं  
स्वाहा ।

कर्णपिशाचीबीज—'ओं कर्णपिशाचि उदातीताना  
गतगन्ध ह्रीं स्वाहा । मन्त्रुघोषबीज—'क्रौं ह्रीं श्रीं ।

तारिणीबीज—'क्रौं ह्रीं कृष्णदेवि ह्रीं क्रौं एँ । सार  
स्वत बीज—'एँ । कात्यायनीबीज—'एँ ह्रीं श्रीं श्रीं  
चण्डिकाय नम । दुर्गाबीज—'दृ । विशालाक्षीबीज—  
'ओं ह्रीं विशालाक्ष्यै नम । गौरीबीज—'ह्रीं गौरि रुद्रपति  
योगेश्वरि ह्र फट् स्वाहा ।

ब्रह्मश्रीबीज—'ह्रीं नमो ब्रह्मश्रीराजितेराजपूजिते जपे  
विजये गौरि गान्धारि त्रिभुवनशङ्करि सर्वलोकेशङ्करि  
सर्वलोकेश्वरपुत्रशङ्करि सुयुक्तदुर्गेतराये ह्रीं स्वाहा ।

इन्द्रबीज—'इ इन्द्राय नम ।' गरुडबीज—'क्षिप ओं  
स्वाहा । विपहराग्नीबीज—'ए ए । वृषिकचक्रिपहर  
बीज—'ओं सरह एकु । ओं हिलि हिलि चिलि एकु ।  
ओं हिलि हिलि चिलि चिलि एकु । ब्रह्मणे कु । सर्वस्यो  
देवभ्यस्कु ।

मृषिकविपहरबीज—'ओं गें श्र उ । ओं ग गा  
ड । मृषिकृतागबीज—'ओं सरणे कुः असरणे कुः  
विसरणे कु । लूता विपहरबीज—'ओं ह्रीं ह्रीं ए जष्ट  
ओं स्वाहा गरुड ए फट् । सर्वकीटविपहर बीज—'ओं  
नमो भगवते त्रिण्ये सर सर हन हन हु फट् स्वाहा ।

सुतप्रसवबीज ( मन्त्र )—'ओं मन्मथ मन्मथ बाहि  
बाहि लम्बोदर मुञ्ज मुञ्ज स्वाहा । ॐ मुक्ताः पाशा ।  
विपाशाश्च मुक्ता सूर्येण रथमथः । मुक्ताः सर्वभयात्स  
पथो हि मारोच मारोच स्वाहा ।'

इन बीजों में मन्त्रों में ह्रीं की भी मन्त्र पानों पर आठ बार  
जप कर उस पानों से आत्मनः प्रसवाको विधानसे बना  
यास प्रसव हो जाता है ।

आम पटीबीज—ॐ नमो भगवति धामुण्डे स्व  
 जामने अतिहृतरूपपराकमे अमुकप्रथाय विचेतसे  
 स्वाहा । भी गा हुआ लाल उख पहन कर समुद्रगामिनी  
 नदी अथवा ऊमर भूमिमे दक्षिण मुख बैठ कर यदि यह  
 मन्त्र उद्गृह्यवाहु हो कर जपा जाय, तो उख मूनेके  
 साथ साथ शत्रुके प्राण भी सूखते जाते हैं ।

हनुमद्बीज—ह हनुमते षट्कालकाय हु फट् । योग-  
 साधनबीज—ह पवननन्दनाय राजाह । श्मशानभेरी  
 बीज—श्मशानभेरि नरुधिरासि प्रसामश्रणिसिद्धि  
 मे देहि मम मनोरथान पूज्य हु फट् स्वाहा । ज्वाला-  
 मालिनीबीज—ॐ नमो भगवति ज्वालामालिनी गृध्रगण  
 परिवृत्ते हु फट् स्वाहा । महाराजोबीज—ॐ ॐ ॐ  
 ॐ पशून् गृह्णाण हु फट् स्वाहा ।

निगहबन्धनमोक्षणबीज ( मत्र )—ॐ नम श्रुते  
 निश्रु त तिगमतेचो यन्मय विद्रोता वन्ममेत यमेन दत्त  
 तस्या सत्रिदा नोत्तमे नाके अधोऽगोऽचैर ।

ब्रह्मन्बीज—ॐ ब्रह्मन् यजामहे सुगन्धि पुष्टि  
 वर्द्धन । उर्गच्छकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ।  
 मृतमञ्जीतोरीज—ह्रीं ॐ जू स ओ भूर्भुव  
 स्व । ब्रह्मन् यजामहे सुगन्धिपुष्टिवर्द्धन । उर्गच्छ  
 कमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ।

ओ भूर्भुव स्व । इत्यादि (तन्त्रगार) आक्षर्यणादि जो  
 सब बीज हैं, वे यहा बाहुल्यके भयसे नहीं दिये जा सके ।

“वीनसङ्गतोपाधत्स्य मन्त्राक्रत ।

रीचनामानि कानिचित् वक्ष्यामि त्रिदशै सुदे ॥

माया लजा परा भक्ति शिशुष्या मुनेश्वरा ।

हृत्केपा रन्मुनिना गन्निदेवीश्वरी शिवा ॥”

( प्राणतार्पिण्यो )

प्राणतार्पिणीमें लिखा है—परमेश्वरीका बीज ह्रीं है ।  
 इसी तरह लक्ष्मीका बीज श्रीं, सरस्वती बीज पे, तारा-  
 का बीज हु, फालीका बीज श्रीं, गुमनाल्लोका बीज ह्रीं,  
 शिखा बीज ह्रीं और अस्त्रका बीज फट् है । (भा० तो०)

काली तारा आदि प्रत्येकके बीज मन्त्र पृथक् पृथक्  
 हैं । विशेष विवरण उन उन शब्दा म देगा ।

बीजक (स० पु०) १ सूनी, फेहरिस्त । २ यह सूनी जिस  
 में मालका ख्योर, दर और मूत्र आदि लिखा हो । ३

बीज । ४ यह सूनी जो किसी गड़े हुए घनकी उसके  
 साथ रहती है । ५ असनाका बीज । ६ बिर्जारा बीज ।  
 ७ कवीरणासके पदोंके तीन सप्रहोमिसे एक । ८ जनमके  
 समय वन्चेनी यह अस्थाय जब उसका सिर दोनों  
 भुजाओंके बीचमें हो कर योनिके द्वार पर आ पाय ।

बीजकर्तुं ( स० पु० ) शिवा, महादेव ।

बीजहन ( स० श्लो० ) बीज वीर्य फरोति यज्ञयति र  
 क्षिप्रत्तुक् च् । वानोकरण ।

बीजकीर्ण ( स० पु० ) बीजगा शेष आधार इत् । पक्ष  
 बीजाधार चक्रिना । पयाय वराटन, कर्णिका, बारिहुज,  
 श्रद्धाटक ।

बीजत्रिया ( स० स्त्री० ) बीजगणितके नियमानुसार  
 गणितके किसी गणकी प्रिया ।

बीजपाद ( हि० पु० ) वह रत्न जो जमा दारों या महा  
 जनों आदिकी ओरसे किसानोंको बीज और गद्द  
 आदिके लिये पेजगा दी जाती है ।

बीजगणित ( स० श्लो० ) गणितका वह भेद जिसमें  
 अक्षरोंको सख्याओंका चोतर मान कर कुछ साङ्केतिक  
 चिह्नों और निश्चय युक्तियोंके द्वारा गणना की जाती है  
 और विशेषतः अज्ञात सख्याय आदि जानी जाती है ।  
 बीजगणित दर्शा ।

बीजगम ( स० पु० ) बीजानि गर्भे अभ्यन्तरे यस्य ।  
 पटोल, परवत् ।

बीजगुणि ( स० स्त्री० ) बीजाना गुणियत् । १ शिम्बी,  
 नेम । २ तुप, धानकी भूसी । ३ फली ।

बीजत्व ( स० को० ) बीनस्य भाव त्व । बीजका भाव  
 या धर्म, बीजपन ।

बीजदर्शक ( स० पु० ) अभिनय परिदर्शक, यह व्यक्ति जो  
 नाटकके अभिनेयनी व्यवस्था करता हो ।

बीजधानी ( स० स्त्री० ) नदीभेद ।

बीजधान्या ( स० स्त्री० ) बीजप्रधान धान्य । धान्यक,  
 धनिया ।

बीजनीर—१ जयोध्याप्रदेशके लखनऊ जिलानगत एक  
 परगना । भूपरिमाण १४८ वर्ग मील है ।

२ उक्त जिलेका एक प्रधान नगर । यह अक्षा० २६  
 ५६ उ० तथा देशा० ८० ८४ पूर्वके मध्य लखनऊ शहर  
 से ४ कौम दक्षिणमें अवस्थित है ।

पामोवशीय विजयतीराजने इस नगरको बनाया ।  
उन्होंने यहासे आध कोम उत्तर नाथवन नामक एक दुर्ग  
भी बनवाया था । प्रथम मुसलमान-आक्रमणसे ही  
राजवंशीय लक्ष्मी विवा हो गई । मुसलमानों अमलमें  
यह स्थान उक्त परगनेके सवरूपमें गिना जाता था ।  
यहा आज भी अनेक समाधिमन्दिर विद्यमान हैं ।

बीजपादप (स० पु०) बीजप्रधान पादप । १ भल्लातक,  
गिलायी । २ बीजोत्पन्न ।

बीजपुष्प (स० ह्री०) बीजप्रधान पुष्प यस्य । मरुजक,  
मरुका । २ मदनवृक्ष ।

बीजपुष्पिका (स० री०) वृक्षमैत्र । ( Audipoc on  
\ icharatus )

बीजपुत्र (स० पु०) बीजाना पुत्र समूहो यत्र । १ विजारा  
नीत्र । स स्तन पर्याय—बीजपुष्पे, पूर्णबीज, सुकेशर,  
बीजर, केजाराह, तालुह, सुपूरु, रुचर, बीजफलक,  
जन्तुधन, दन्तुरच्छर, पूरक, रोचनफल । इसके फलका  
गुण— बम्ल, कटु, उष्ण, प्रसाम, कास और रायुनाशन,  
कण्ठशोषणकर, लघु, हृद्य, दीपन, दचिकारक, पावन,  
आध्मान, गुल्म, हृद्रोग, ग्रीहा और उदावर्तनाशक,  
चिबन्ध, हिक्का, शूल और शरीरमें प्रसस्त माना गया है ।  
२ मधुकर्कटी, चकोतरा ।

बीजपूर्ण (स० पु०) बीजेन पूर्ण । १ विजारा नीत्र ।  
२ चकोतरा

बीजपेशिका (स० स्त्री०) बीजस्य शुक्रस्य पेशिकेय ।  
अण्डकोप ।

बीजप्ररोहित (स० लि०) बीजसे उद्गमनशील, बीजसे  
उगनेवाला ।

बीजफलक (स० पु०) बीजप्रधान फल यस्य कन् ।  
बीजपूर, विजारा नीत्र ।

बीजयन्त्र (हि० पु०) घरियानीके बीज, खिर्रिटीके बीज ।  
बीजमति (स० स्त्री०) बीज स्थिर करनेमें समर्थ मन ।  
बीजमन्त्र (स० ह्री०) विभिन्न देवताके उहे रूपसे निर्दिष्ट  
मूलमन्त्र ।

बीजमातृका (स० स्त्री०) कलमगृहा ।  
बीजमातृ (स० ह्री०) १ बीज या वशरक्षायी उपयामिना ।  
२ भद्रदेविका इम मण्डल ।

बीजमार्ग (स० पु०) वामभागका एक भेद ।

बीजमार्गी (हि० पु०) बीजमार्ग पथके अनुयायी ।

बीजरत्न (स० पु०) बीज रत्नमित् यस्य । उडदनी वार

बीजरुह (स० लि०) बीजान् रोहणीति रुह इगुपधान  
शालि प्रभृति ।

बीजरेचन (स० स्त्री०) बीज रेचन रेचक यस्य । जयपा  
जमालगोटा ।

बीजल (स० लि०) बीज (विष्मादिभ्यश्च । पा ५।१।५  
इति मत्पर्ये लच् । बीजयुज, जिममें बांज ही ।

बीजल (हि० स्त्री०) तलवार ।

बीजवपन (स० ह्री०) बीजाना वपन । श्वेतमें बीजवपन  
श्वेतमें बीज बोना । पहले पहल श्वेतमें बीज बोनेमें उक्त  
दिनका विचार करना होता है । ज्योतिषमें लिखा है  
पूर्वफल्युनी, पूर्वापाढा, पूर्वभाद्रपद, वृत्तिका, भरणी  
अश्लेषा और आर्द्रा भिन्न नक्षत्रोंमें निका, अष्टमी और  
अमावस्या भिन्न तिथियोंमें शुभग्रहके फेन्द्रस्थ होने पर  
स्थिरत्वमें जन्मलग्न तथा मिथुन, तुला, कन्या, कुम्भ  
और धनुर्लोकके पूर्वभागमें बीजवपन प्रसस्त बनता  
गया है ।

“इत्यग्रग्रहर्हीनरास्य विधि स्मृत ।

विभवाद्य, शुभे मन्त्रे स्थिरत्वमनुजोग्य ॥”

(ज्योतिस्तत्त्व)

बीजवपनके दिन नवरे जाना प्रकारके मंगलकार  
करके पूर्वमुप हो निम्नोक्त मन्त्रसे बीजवपन करे । मन्त्र  
यथा—

“त्व वै बभुन्धरे धीते बहुपुष्पजप्रदरे ।

नमस्ते मे शुभं नित्यं कृषि यथा शुभं वरु ॥

रोहन्तु वरुशम्भानि बाल देव प्रवर्षतु ।

कपकास्तु भवभूया धान्येन न धेन न त्वाहा ॥”

इस मन्त्रसे प्राजापत्यतौरसे धारा बीजवपन करे । इस  
दिन वायु वायुशक्तिके साथ एकत्र भोजन करना होता है ।  
बीजवपन विषयमें वैशाखमास श्रेष्ठ, ज्येष्ठ मध्यम और  
शेष मास अधम माने गये हैं ।

“वीगासे वपतं श्रेष्ठं मध्यमं गेहिणी रवी ।

भत पर्यन्तपर्यं न जातु धानदा शुभम् ॥”

(ज्योतिस्तत्त्व)

बीजवर ( स० पु० ) कलायमेद, एक प्रकारका उड्ड ।  
बीजवाप ( स० पु० ) बीजस्य वाप । बीजपत्र, बीज  
बोता ।

बीजवापिन् ( स० पु० ) बीजवपाकारी, जह जे बीज  
बोता हो ।

बीजवाहक ( स० पु० ) महादेव, शिव ।

बीजवृक्ष ( स० पु० ) बीजादेव वृक्षो यस्य, बीज प्रदानो  
वृक्ष वा । अमन वृक्ष, अमनाका पेड ।

बीजसञ्चय ( स० पु० ) बीजाना मञ्चय । बीजसंग्रह,  
बोनेके लिये धान आदिका संग्रह । माघ या फाल्गुन  
मासमें बीज संग्रह करे ।

‘ माघे या फाल्गुन वापि मगधीनामि संग्रहत् ।

गोपयत् तापयद्रौद्रे रानो चोपनिधापयत् ॥”

( ज्योतिषस्य )

बीजको धूपमें अच्छी तरह खुपा कर रचना होता है ।  
हस्ता, चित्रा, अदिति, स्वानि, रेवती और श्रवणादय इत  
सब नक्षत्रोंमें, स्थिर लग्नमें वृहस्पति, शुक्र और बुधरा  
को बीजसञ्चय करे । बीजसञ्चयके बाद किसी पत्रमें  
मन्त्र लिख कर उसमें रख दे । ऐसा करनेसे बूढ़े आदि  
को भय नहीं रहता । मन्त्र—

“ वादाय वानोऽकशिताय देहि मे धान्य स्याहा ।

नम इहायै इहा देवी सर्वलोकप्रसिद्धिनी काम-

स्वपिणि धान्य देहि साहा ॥” ( ज्योतिषस्य )

बीजसू ( स० स्त्री० ) बीजानि सूते इति सू क्पिप् । वृथ्वी ।  
बीजस्थापन ( स० स्त्री० ) बीजाना स्थापन । धान्यादि-  
स्थापन ।

बीजहरा ( स० स्त्री० ) एक आदिनीया नाम ।

बीजहारिणी ( स० स्त्री० ) बीजहरा देवी ।

बीजा ( द्वि० वि० ) बीजरा ।

बीजा—सिमरा पर्वतके निकटवर्ती एक सामन्तराज्य ।  
यह अक्षा० ३० ५३' से ३० ५५' उ० तथा देशा० ७६  
५६' से ७७ १' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण  
४ वर्गमील और जनसंख्या ११३१ है । यहांके सरदार  
पूरनचौद राजपूतप्रभय है । ठापुर इनकी उपाधि है ।  
राजस्य ५००) ६० है जिनमेंसे १२४ रुपये करमें देने  
पहते है ।

बीजाष्टन ( स० वि० ) बीजेन सहष्टन टृष्टमिति ( पञ्च  
द्वितीय तृतीयान्मयीनात् कृषि । पा १/१/१/१५ ) इति उाच् ।  
बीजपत्रपूर्वक वृष्टयेव, वह खेत जो बीज बोनेके बाद  
जोता गया हो ।

बीजाक्षर ( स० स्त्री० ) किसी बीजमन्त्रका पहला अक्षर ।

बीजाग्य ( स० पु० ) १ जैपालवृक्ष, जमालगोटा । ( ह्रीं० )  
२ जैपालका बीज, जमालगोटेका बीया ।

बीजागढ—प्राचीन निमार प्रदेशकी राजधानी । अभी  
यह स्थान श्रीहीन हो गया है । मनपुरा पत्रके ऊपर  
भन्नाउग्रेय बीजागढ दुर्ग अचरिखत है । दक्षिण निमार  
का अधिकांश स्थान ले कर उक्त दुर्गके नाम पर होल  
कर राज्यका बीजागढ सरकार और जिला गठित है ।

बीजाङ्कुर ( स० पु० ) १ बीजोद्भूत प्रथम अङ्कुर, अं खुथा ।  
२ बीज और अङ्कुर ।

बीजाङ्कुर न्याय ( स० पु० ) एक प्रकारका न्याय । इस  
का व्यवहार दो मजदूर उस्तु गेके नित्य प्रवाहका दृष्टात  
दोके लिये होता है । बीजसे अङ्कुर और अङ्कुरसे  
बीज होता है । इन दोनोंका प्रवाह अनादिकालसे चला  
जाता है । दो वस्तुओंमें इसी प्रकारका प्रवाह या सम्बन्ध  
दियगानेके लिये इसका उपयोग होता है ।

बीजाट्ट ( स० स्त्री० ) १ बीजयुक्त, बीजवाला । ( पु० )  
२ बीजपूर, बिचौर नैत्र ।

बीजाध्यक्ष ( स० पु० ) गिर ।

बीजापुर—धर्मके दक्षिणी महाराष्ट्र देशकी एक एजेन्सी ।  
यह बीजापुर जिलेके कलकुरवी क्षेत्रमें है । यह अक्षा०  
१६ ५०' से १७ १८' उ० तथा देशा० ७९ १' से ७०  
३७' पू०के मध्य विस्तृत है । भूपरिमाण ६८० वर्गमील  
है । जलराशु बीजापुर जिलेके जमा है । जाटकी  
सतारा जागीर और दफापुर राज्य ले कर यह  
संगठित है । यहांके सरदार गणेशो दफलापुर ग्रामके  
प्रधान लगमाजीके वंशधर बतलाते हैं । १६८० ई०में  
उनके लडेवे सतवाजी राज जाट, करनगो, वरदोल और  
उनद उपविभागके देशमुग नियुक्त हुए । बीजापुर पतन  
के बाद उन्होंने सत्ता और दफलापुरको आत्मसमर्पण किया ।  
१८०० ई०में ब्रिटिश सरकारने जाटके वर्तमान सरदारके  
वंशधरोंकी वार्जाईमें हाथ बँटाया । १८२७ ई०में सताराके



राजाने सरदारका ऋण चुकानेके लिये जाट राज्यको अपने हाथ कर लिया। १८४१ ई०में यह फिर लौटा दिया गया। १८४६ ई०में जाट और दफलापुर सतारा जागीरके जैसा वृष्टि सरकारका फरदराज्य हो गया। जाट-सरदार उच्च कुलोद्भव महाराष्ट्रीय हैं। गोद लेनेका इन्हें अधिकार है। जनम रया ७० हजारके करीब है। इसमें जाट और दफलापुर नामके २ शहर और ११७ ग्राम लगते हैं। राजस्व साढे तीन लाख रुपये हैं जिनमेंसे ६४०० र० वृष्टि सरकारको करमें देने पडते हैं।

बीजापुर - बम्बईके दक्षिणी विभागका एक जिला। यह अक्षा० १५ ४६'से १७° २६' उ० तथा रेखा० ७५ १६'से ७६ ३०' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ५६ ६६ वर्गमील है। इसके उत्तरमें भीम नदी जो इसको शोलापुर और अक्ल कोटसे पृथक् करती है; पूर्व और दक्षिण पूर्वमें निजाम-राज्य, दक्षिणमें मलप्रभा नदी जो जिलेकी धारवाड और रामराज्यसे अलग करती है, पश्चिम में मुधोल, यमटाण्डी और जाटराज्य है। पहिले इस जिलेका नाम कलादुगो था, १८८५ ई०में बीजापुर रया गया है। उन्नी समय सद्दर कलादुगीसे उठा कर बीजापुरमें लाया गया। यहाकी प्रधान नदी ये सब हैं भीमा, दोन कृष्णा, घाटप्रभा और मालप्रभा। दोन नदीका जल बिलडुल सारा है।

पूर्व समयमें यह स्थान चालुक्य वंशके जयधरामें था। १२६४ ई०में जलाल उद्दौल खिलजीके भतीजे अलाउद्दीनने दलबलके साथ आ कर इस स्थानको कपा डाला और राजारामनन्दको दिहाे सम्राट्की अधीनता स्वीकार करनेको बाध्य किया। १७वीं शताब्दीमें मुसुफ आदिलशाही एक स्वतन्त्र मुसलमान राज्य बसाया। बीजापुरमें उसकी राजधानी कायम हुई। इस समयसे जिलेका इतिहास बीजापुर शहरके साथ मिला हुआ है। १७वीं शताब्दीमें बोनपरिमाजक युपनचुप ग यादामी देराने आये थे। उस समय बहा चालुक्यवंशका शासन था।

इस जिलेमें ८ शहर और १११३ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या साढे सात लाखके करीब है जिनमेंसे हिन्दूकी संख्या सैकड़ें पोछे ८८ है। विद्याभिक्षामें प्रेसीडेन्सी-

के चौबीस जिलोंके मध्य यह जिला सोलहवा पडता है। सैकड़ें पोछे चार मनुष्य शिक्षित हैं। अभी २ शहर स्कूल, ३०६ प्राइमरी स्कूल, १०० मिडिल तथा बालिका स्कूल हैं। स्कूलके अलावा बीजापुर शहरमें दो अल्प ताल हैं जिनमेंसे एकमें रिपो की चिकित्सा होती है।

२ बीजापुर जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १६ २०'से १७ ५' उ० तथा रेखा० ७५ २६'से ७६ २' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ८६६ वर्गमील और जनसंख्या लाखसे ऊपर है। इसमें बीजापुर नामके १ शहर और ८४ ग्राम लगते हैं। धोऊ उपत्यकाको छोड कर और प्राय सभी स्थान अनुर्वर हैं। इस पार्यतोप विभागमें वृक्षादि नहीं रहने पर भी स्थानीय जलवायु सारथ्यकर है।

३ उक्त जिलेका एक प्रसिद्ध शहर। यह अक्षा० १६ ४६' उ० तथा रेखा० ७५ ४३' पू०के मध्य विस्तृत है। जनसंख्या २५ हजारके लगभग है जिनमेंसे हिन्दूकी संख्या सबसे ज्यादा है। नगरके प्राचीन इतिहासके सम्बन्धमें फिरिस्ताने इस प्रकार लिखा है, २५ मुरादके पुत्र ख्यातनामा शोसमानखो मुस्तानने बीजापुरमें पहले पहल मुसलमानों राज्य स्थापन किया। उनके चशहर २५ महमूद जब तान पर बैठे, तब उन्होंने अपने सब भाइयोंका काम तमाम करनेका हुजूम दे दिया। इस समय उनकी माताने बडे फौजसे मुसुफ नामक अपने एक पुत्रकी जान बचाई। नाना स्थानोंमें भटकते हुए मुसुफने अहमदाबाद विदारराजके अधीन नीकरी की। गजाकी मृत्युके बाद वे अहमदाबाद राज्यका परित्याग कर बीजापुर आये और जनसाधारणकी सलाहसे उन्होंने अपनेरां राजा बतला कर तमाम जेपित कर दिया। मुसुफने अपने बाहु बलसे समुद्रतार पर्यन्त गज्यमीमा बसा ली। उन्होंने पुर्तगोनीने गोधा नगर भी छीन लिया। बहुत धन रच करके बीजापुरमें एक विस्तृत दुर्गबाटिका बनाई ग। १५१० ई०में उनकी मृत्यु होने पर उनके लडके इस्माल खाने दोर्देण्ड प्रतापसे १५३४ ई० तक राज्य किया। पाछे मुलु आदिलशाह छ माम राज्य करनेके बाद राजतन्त्रसे उतार दिये गये। बाद उनके छोटे भाई इम्रादिल राज

सि हासन पर बैठे। उन्होंने १५५७ ई० तक राज्य किया। उनके मरने पर उनके लड़के अली आदिलशाह राज्याधिकार ले हुए। उन्होंने अपन शासनकालमें बीजापुर नगरको चारों ओर दीवारसे घेर लिया और जुम्मा मस्जिद तथा बहुत सी जलप्रणालिया बनाई जो आज भी विद्यमान हैं। इन्होंने अहमदनगर और गोलकुण्डाराजके साथ मिल कर विजयनगराधिप राजा रामके विरुद्ध अस्वधारण किया। उस समय दिल्लीको छोड़ और कोई भी राजा भारतमें उनके समान शक्तिशाली न थे। कालिन्टके युद्धमें १५६४ ई०को रामराजा मुसलमानोंके हाथसे परास्त और बन्दी हुए। बीजावनगर लड़नेके बाद यन्नराजके आदेशसे वे मार डाले गये। १५७६ ई०में उनका देहान्त हुआ। पीछे उनके भतीजे रय इब्राहिम आदिल कच्चे उमरमें राजतण्ट पर बैठे और राजकार्यका कुछ भार मृतराजकी पत्नी विजयात चाद बीबीने अपने हाथ लिया। अमीसे ले कर मृत्यु पर्यन्त इब्राहिमने बड़ी दक्षतासे राजकार्य चलाया। १६२६ ई०में उनकी मृत्युके बाद महम्मद अली शाह राजा हुए। इन्ही के शासनकालमें महाराष्ट्रकेजरी शिवाजीका आविर्भाव हुआ था। शिवाजीके पिता शाहजी बीजापुर राजके अधीन नौकरी करते थे। इसी सुअसरमें शिवाजीने उक्त राजभण्डारके व्ययसे तथा यहांके सेनादलकी सहायतासे १६४६-४८ ई०के मध्य राणाधिपत अनेक दुर्ग अधिकार कर लिये। इधर शिवाजीके अत्याचारसे, उधर औरङ्गजेव परिचालित मुगवाहितीके लगानार आक्रमणसे महम्मद तग तंग आ गये। इस समय किसी कारणवशत औरङ्गजेवकी आगरा नगर लीटना पडा था जिससे शिवाजीका प्रभाव दक्षिणात्यमें भी फैल गया। महम्मद शत्रुके प्रनापने धीरे धीरे कमजोर होते गये। १६६० ई०में चिन्ताके मारे वे इस लोकसे चल बसे। पीछे आदिलशाह राजा तो हुए, पर बीजापुर राजवशत अध पतन रोक न सके। १६७२ ई०में उनकी मृत्युके बाद उनके छोटे लड़के सिकन्दर आदिलशाह राजगद्दी पर बैठे। वे हा इस घनके अन्तिम राजा थे।

१६८६ ई०में औरङ्गजेवने बीजापुर दखल किया। इनने दिनोंके बाद बीजापुर राजवशकी स्वाधीनता जाती

रही। दिल्लीके मुगल राजवशके अध पतनसे बीजापुरका विस्तृत ध्वम्माशेष महाराष्ट्रप्रासमें पतित हुआ। १८१८ ई०में अन्तिम पेशवाको पदच्युतिके बाद बीजापुर और सताराराज्य बृटिशमरकारके अधिकारभुक्त हुआ। सतारा राजका बीजापुरकी मुसलमानकीर्तिका रक्षाकी आर विशेष ध्यान था। १८४८ ई०में सताराराज इस धराधाम को छोड़ सुरधाम सिधारे। उनके एक भी सन्तान न थी इस कारण बृटिश सरकारने शासनभार अपने हाथ ले लिया। यहांकी जुम्मा मस्जिद, इब्राहिमका रोजा, मह म्दका समाधिमन्दिर, अपुर मुनारकप्रासाद, मेहतुरी महल और वक्तूतागार नामक अट्टालिकाका शिल्पचातुर्य और गठनप्रणाली देखने लायक हैं।

बीजागल ( स० ३१० ) बीजे अण्डोऽसुरसो यस्य । वृक्षगुह ।

बीजाणयतन्त्र ( स० ३१० ) बीजमन्त्रनिर्देशक एक तन्त्र ।

बीजावर—मध्यभारतके बुन्देलखण्डके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य। यह अक्षा० २४ २' से २४ ५७' ३० तथा देशा० ७८ ०' से ८०' ३६' पू०के मध्य स्थित है। भूपरिमाण ६७३ वर्गमील है। पहले यह रयान गढ मण्डला गोंडके अधिकारमें था। पीछे १८वीं सदीमें पन्नाके स्थापयिता छत्रसालने इस पर दखल जमाया। उनकी मृत्युके बाद सारा राज्य उनके पुत्रोंके मध्य बँट गया। विजावर जगद्वाराजके हिस्सेमें पडा। १७६६ ई०में जगद्वाराजके गुमानसिंहने, जो उस समय अजयगढके शासन थे, विजनीर राज्य जगद्वारेके जारज पुत्र वीरसिंह देवकी दे दिया। वीरसिंहने अपने बाहुबलसे राज्यसीमा बहुत दूर तक फैला ली थी। पीछे १७६३ ई०में वे अली बहादुर और हिममत बहादुरसे युद्धमें निहत हुए। अनन्तर १८०२ ई०में हिममत बहादुरने वीरसिंहके लड़के बेजरीसिंहको सनदके साथ राजनिहासन लौटा दिया। कुछ समय तक उनकी सनद जन्न कर ला गई थी। पीछे १८१० ई०में उनकी मृत्युके बाद उनके लड़के रतनसिंहकी सनद लौटा दी गई। उन्होंने अपन शासनकालमें सिका चगाया था। १८६१ ई०में उनके मरने पर भान

प्रतापसिंह राजसिंहासन पर अधिकृत हुए। गवर्के समय उन्होंने वृष्टिज सरकारको ग्रासी मदद पहुँचाई थी जिन्में उन्हें गिलखत और ११ मलामी तोपे मिलीं १८६२ ई०में उन्हें गोद लेनेका अधिकार और १८६६ ई०में महाराजाको उपाधि मिली थी। उनके कुशासनने राज्य भरमें आशान्ति फैल गई, चाप खुद कर्जके बोझसे निक सँथ विमूढ हो गये। १८६६ ई०में उनकी मृत्यु हुई। कोई सन्तान न रहने कारण उन्होंने ओच्छांकि प्रत्तमान महाराजके द्वितीय पुत्र स्वामन्त सिंहको गोद लिया था। ये ही अभी यहाके सामन्त हैं। वृष्टिशमरजारसे इन्हे भी ११ तोपोंकी मलामी मिलती है। इनकी सैन्यसख्या इस प्रकार है—१०० जश्बारीहो, ८०० पदाति और ४ फमान। १८६६ ई०की शासननीतिके चलने यहाके सरदार सब प्रकारके फौजदारी मामले पर विचार करते हैं।

इस राज्यमें इमी नामका १ शहर और ३४३ ग्राम लगेते हैं। जनसख्या सधा लाखके करीब है जिनमेंसे सैबडे पोडे ६६ हिन्दू हैं।

२ उक्त राज्यका सदर। यह अक्षा० २४ ३६' उ० तथा देशा० ७६ ३०' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसख्या ७२२० है। ७७० सद्दोंमें गौड सरदार विजयसिंह एने इले बनाया था। पीछे पनाके छत्रसालने इस पर अधिकार जमाया। शहरमें १ फातागार, १ मकान, १ अरप ताल और १ धमशाला हैं।

बीजिक (स० लि०) बीजयुक्त, बीजनाला।

बीजित (स० लि०) जिसमें बीज बोया जा चुका हो, बोया हुआ।

बीजित (स० पु०) बीजमस्त्यरथेति बीज इति। १ पिता।

(लि०) २ बीजविशिष्ट, बीजनाला। ३ बीजसम्पन्नी।

बीनी (हि० लि०) १ नीति देणे। (खी०) २ गिरी, मींगी। ३ गुडले।

बीजु (हि० खी०) बिजुली।

बीजुपात (हि० पु०) रत्नगल उगना।

बीजुली (हि० खी०) बिजुली देणा।

बीजू (हि० लि०) बीजसे उत्पन्न, जो बीज बोनेसे उत्पन्न हुआ हो, कर्मका उलटा।

बीजोदक (स० खी०) बीजमिज फडिनमुदकं, तरुण वडिन स्वानु तथात्व। करका, ओला।

बीजोत्पिचक (स० खी०) बीजानामुसये शुभाशुभ सूचक चक। बीज बोनेके लिये शुभाशुभ तात्पर्य सर्गकार चक। बीज बोनेमें शुभ होगा या अशुभ, यह इसी चक द्वारा जाना जाता है। ५

बीज्य (स० लि०) विशेषेण इज्य, अथवा बीजाय हित। (उत्सगादिभ्यो यत्। पा ५।१।०) इति यत्। जो अच्छे चलने उत्पन्न हुआ हो, कुलीन।

बीट (हि० खी०) १ पक्षियोंकी चिप्रा, चिडियोंका मुह। २ मुह, मल।

बीडल (लि० पु०) विद्वत देणे।

बीड (हि० खी०) एकके ऊपर एक रखे हुए रुपये जो साधारणतः गुल्लीका आकार धारण कर लेते हैं।

बीडा (हि० पु०) १ सादी गिल्लीरी जो पानमें चूना, कल्था, सुपारी आदि डाल कर और उसे लपेट कर बनाई जाती है। २ वह डोरी जो तलवारकी म्यानमें मुँहके पास बधी रहती है। म्यानमें तलवार डाल कर वह डोरी तलवारके धतके की मुँहमें बाँध दी जाती है जिससे वह म्यानमें निकल नहीं सकती।

बीडिया (हि० लि०) बीडा उठाणेनाला, अगुना।

बीडी (हि० खी०) १ पत्तेमें लपेटा हुआ सुरवीर चूर जिले लोग सिंगरेट या चुस्ट जातिके म्यानमें सुलगा कर पीते हैं। २ मिस्को जिसे मित्राँ दान र गनेके लिये मुँहमें मलतो है। ३ गड्डी। ४ बीडा देणे। ५ एक प्रकारका नाव।

बीतना (हि० लि०) १ समयका विगत होना, गुजरना।

२ सघटित होना, घटना। ३ निवृत्त होना, दूर होना।

\* 'यथाभारुण तयाग्यग्निनाज्येकात्तरजनात्।

मुप प्रीषि गत श्रीषि भागिनाद । इद ॥

पुच्छे चतुर्गि वन्न दिभाष वन्न वदेद ।

यदा चापत्तं मियात् मनस्वत्सारणस्य ॥

उदर धान्यवृद्धि स्यात् पुच्छे धान्यव्रया भवत् ।

इति रोगभयं राभ्य चय बीजानिकम्भव ॥'

(न्यातिसात्र)

बीता ( हि० पु० ) बिता देना ।

बीया ( हि० पु० ) मालगुजारी, निश्चित करना ।

बीन ( हि० ग्री० ) एक प्रसिद्ध वाजा । यह सितारकी तरह का पर उससे बड़ा होता है । इसमें दोनों ओर बहुत बड़े बड़े तबे होते हैं जो बीचके एक लम्बे ऊँडले मिले होते हैं । इसमें एक त्रिरेसे दूसरे त्रिरे तक साधारणत ७ या ७ तार लगे होते हैं । इन तारोंमेंसे पन्धकेमें आशयकतानुसार भिन्न भिन्न प्रकारके स्वर निकाले जाते हैं । यह वाजा बहुत उच्च कोटिका माना जाता है और प्राय बहुत बड़े बड़े गवैयोंके कामका होता है ।

विशेष विवरण बीणा नाम देना ।

बीनना ( हि० त्रि० ) ? छोटी छोटी चीनोंको उठाना, चुनना । ? छोट कर अंग करना, छंटना ।

बीकी ( हि० पु० ) बृहस्पतिवार, गुरुवार ।

बीबी ( फा० स्त्री० ) ? कुलान स्त्री, कुत्रवृष । २ अविद्या हिता लडकी, कन्या । ३ बिरयोंके लिये आदरार्थक शब्द । ४ पत्नी, स्त्री ।

बिबेरना ( हि० पु० ) दक्षिण भारतके पश्चिमी घाटोंमें मिलनेवाला एक प्रकारका वृक्ष । इसकी लकड़ीका रंग पीला होता है और यह इमारत तथा नाव बनानेके काममें आता है । इस लकड़ीमें जल्ने घुन या कीड़ा आदि नहीं लगता ।

बीभत्स ( म० पु० ) बीभत्स्यतेऽत्र जना उच मन करणे घम् । १ अर्जुन । २ काव्यके ती र्मोंके अन्तर्गत सातवा रस । इसमें रक्त मांस आदि पैसी धातोंका वर्णन होता है, जिनमें अरुचि और घृणा तथा ईन्द्रियोंमें सङ्कोच पैदा होता है । इसका वर्ण नील और देवता महाकाल हैं । सुगुप्सा इसका स्थायी भाग है, पीन, मेद, मज्जा, रक्त, मांस या उनका दुग्धि आदि विभाज हैं; कम्प, रोमाञ्च, आलस्य, मङ्गल आदि अनुभाव हैं और मोह, मरण, धावेग, व्याधि आदि उपभिकारी भाव हैं । ( बि० ) ३ घृणित, तिरने देन कर घृणा उत्पन्न हो । ४ क्रूर । ५ पापी ।

बिभत्सित ( स० त्रि० ) घृणित, निन्दित ।

बीभत्सु ( म० पु० ) बीभत्सवति वध मा उ । १ अर्जुन के दश नामोंमेंसे एक नाम । ये युद्धम शत्रुका न्याय

पूर्वक सहार करते थे, कभी भी बीभत्स कर्म नहीं करते, इसीमें इनका बीभत्सु नाम पडा ।

‘ १ युवीं कर्म बीभत्सं सुव्यमान कथन्त्या ।  
तत्र देवमनुष्यु नामत्तुविति विश्रुत ॥’

( भात १।१।१८ )

बीम ( अ० पु० ) ? जहाजके पाइरामें लगाईके बल लगा हुआ बडा जहाज, आडा । ? जहाजना मस्त्व ।

बीमा ( फा० पु० ) ? किसी प्रकारकी विशेषत आर्थिक हानि पूरी करनेकी जिम्मेदारी को कुछ निश्चित रा ले कर उसके बदलेमें की जाती है । आजकल बीमेकी गिती एक प्रकारके व्यापारके अन्तगत होती है और इसके लिये अनेक प्रकारकी कानिया स्थापित हैं । उसमें बीमा करी गाला कुछ निश्चित नियमोंके अनुसार, समय समय पर एक ही साथ कुछ निश्चित धन ले कर अपने ऊपर इस बातका जिम्मा लेना है, कि यदि बीमा करनेवालेकी अमरु कार्य या व्यापार आदिमें अमरु प्रकारकी हानि या दुर्घटना आदि होगी तो उसके बदलेमें हम बीमा करने वालेकी इतना धन देगे । आजकल मनाकों वा गोदामें आदिके दंग होने, समुद्रमें जहाज आदिके डूबने, प्रेषित मालका डीज हाजतमें निदिष्ट स्थान तक पहुचनका अथवा दुर्घटना आदिके सबबसे हाथ पैर टटने या शरीर निष्क्यो जग हो जानका बीमा होता है । जानबीमा नामका एक और प्रकारका बीमा होता है । इसमें बीमा कराने वालेकी हय एक महान, हर एक वर्ष अगला एक ही साथ कुछ निश्चित धन देना पडता है और उसने किसी निश्चित अथवा तत्र पट्टने पर उम्मे बीमेकी रकम मिल जाती है । यदि उम्मे निश्चित अथवा तत्र पट्टनेके पहले ही उम्मी मृत्यु हो जाय तो उम्मेके परिवारियोंको यह रकम मिठ जाती है । फिलहाल गलकोंके विवाह और विवाहिकाके श्यके सध यों भी बीमा होन लगा है । टाकडार पर या माल आदि भेजनेका भी डाक विमाके दंग बीमा होता है । २ यह पत्र वा पारसल आदि निसका इस प्रकार बीमा हुआ हो ।

बीमार ( फा० पु० ) रोगग्रस्त, रोगी ।

बीमारदा ( फा० बि० ) जो रोगियोंकी सेवा करता हो ।

घोमारदारी ( फा० खी० ) रोगियोंकी शुद्ध्या ।

घोमारी ( फा० खी० ) १ व्याधि, रोग । २ भ्रष्ट । ३ पुनो वादत ।

घोया ( हि० पु० ) बीज, दाना ।

घार ( हि० वि० ) १ बीज देगा । ( पु० ) २ भ्राता, भाई ।

( खी० ) ३ सजी, सहेली । ४ चरागाहमें पशुओंकी चरानेका यह महसूल जो पशुओंकी सख्याके अनुसार लिया जाता है । ५ कानमें पहननेका रत्नियोंका एक आभूषण । यह गोल चक्रों-सा होता है और इसका ऊपरी भाग ढालुभा और उठा हुआ होता है तथा इसके दूसरी ओर खुंटी होती है जो कानके छेदमें डाल कर पहनी जाती है । इसमें ढाढ़ तीन अंगुल लंबी क गनीदार पूछ-सी निकली रहती है जिसमें प्राय स्त्रिया रेशम आदिका भूवा लगवाती हैं । यह भूवा पहनते समय सामने कानकी ओर रहता है । ६ एक प्रकारका गहना जो कलाईमें पहना जाता है । ७ पशुओं के चरनेका स्थान, चरागाह ।

घोरल ( हि० पु० ) भ्राता, भाई ।

घोरनि ( हि० खी० ) एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है । इसे वीगी भी कहते हैं ।

घोरबहूटी ( हि० खी० ) एक छोटा रंगेनाला बीजा । यह किलनोको जातिका होता है और प्रायः बरसात शुरू होनेके समय जमीन पर इधर उधर रेंगता हुआ दिखाई पड़ता है । इसका रंग गहरा लाल होता है और मगमल की तरह इस पर छोटे छोटे फोमल रोष होते हैं ।

इन्द्रधनु देगा ।

घोरिट ( स० पु० ) गण ।

घोरो ( हि० खी० ) १ एक प्रकारका गहना जो कानमें पहना जाता है । इसे तरना भी कहते हैं । २ टरकी के बीचमें लम्बाईके बल घट छेद जिसमेंसे नदी भर कर तागा निकाला जाता है । ३ लोहेका यह छेददार डुब्डा जिस पर कोई दूसरा लोहा रग कर लोहार छेद करते हैं ।

घोत्र ( हि० वि० ) १ पोट्टा, भीतरने पाली । ( पु० )

२ वह जमीन जो नोचो हो और जहाँ पानी भर रहता हो । ३ बेल । ४ एक बोधघटा नाम ।

घोवर ( अ० पु० ) उत्तरीय अमेरिका और एशियाके उत्तरीय किनारे मिलनेवाला एक प्रकारका जंतु । यह जलके किनारे झुंड घाघ कर रहता है । इसके मुँहमें बड़े बड़े और मजबूत बटोले दाँत होते हैं । ऊपर नीचे चार डाढ़ होते हैं जो ऊपरकी ओर चिपटी और फटिन होती हैं । इसके प्रत्येक पाचमें पाच पाच उग लिया होता है और पिछले पैरोंको उंगलिया जुड़ी रहती हैं । इसकी पूछ भारी, नीचे ऊपरसे चिपटी और छिलकोंसे ढकी होती है । इसकी नाक और कानकी पनावट ऐसी होती है, कि पानीमें गोता लगानेसे आपे आप उनके उद्भ्र व द हो जाते हैं । इसका चमड़ा जो समर कलाता है, कोमल और बड़े दामोंमें बिकना है । इसका मांस स्वादिष्ट होता है, पर लोग इसका शिकार विशेषतः चमड़ेके लिये ही करते हैं ।

घोनी ( हि० खी० ) गीरो देगा ।

घोम ( हि० वि० ) १ जो सरपामें दसना देना हो । २ श्रेष्ठ, अच्छा । ( खी० ) ३ घोसकी सरपया । ४ घोसकी सरपयाका घोटक चिह्न ।

घोसना ( हि० कि० ) गतरज या चौसर आदि गोलनेके लिये बिसात रिछाना, चेलके लिये बिसात फैलाप ।

घोसग ( हि० वि० ) घोसके स्थान पर पडीनाला ।

घोमो ( हि० खी० ) १ घोस चौजोंका समूह, फौरो । २ भूमिनी एक प्रकारकी नाप जो एक एकडसे कुछ कम होती है । ३ ज्योतिष शास्त्रके अनुसार साठ सारसोंके तीन विभागोंमेंसे कोई विभाग । इनमेंसे पहली घोसी ब्रह्मगोसा, दूसरी त्रिगुणगोसी और तीसरी रुद्र या त्रिगुणगोसी कह्यती है । ( पु० ) ४ तीलनेका ढाया, तुला । ( खी० ) ५ प्रति घोघे दो विघेकी उपन जो जमींदारकी दी जाती है ।

घोहड ( हि० पु० ) १ विषम, ऊचा नीचा । २ जो टोक न हो, जो सरल या समान हो । ३ पृथग, पुत्र ।

घुड ( हि० खी० ) १ घूद, ठोप । २ घोष । ( पु० ) ३ तीर । ( वि० ) ४ घोडा सा, जरा-सा ।

घुदकी ( हि० खी० ) १ छोटी गोत्र विद्वी । २ किसी घोप पर बना या पडा हुआ छोटा गोल दाग या चक्का ।

बु दकीदार ( हि० वि० ) जिस पर बु दकिया पडी या वनी हों, जिस पर बु दो केसे चिह्न हों ।

बु रन्यारी ( हि० री० ) वह ढड जो बटमाजोंसे जमीं दार लेता है ।

बु दमान ( हि० पु० ) छोटी छोटी वृक्षोंको उर्पा ।

बु ग्ना ( हि० पु० ) १ फाममें पहननेका एक प्रकारका आभूषण जो बुलाकके आकारका होता है । इत्ते लोलव मो कहते हैं । २ माथे पर लगानेकी बडी टिखली जो पनी या फाच आदिको बनती और बडी बिन्दीके आकार की होती है । ३ बडी टिखलीके आकारका मोदना । यह माथे पर मोदा जाता है । इन्में बहुतने छोटे छोटे दाने या मोदनेके चिह्न होते हैं ।

बु दिया ( हि० खो० ) १ दी देणो ।

बु दीदार ( हि० वि० ) जिसमें छोटी छोटी बिदिया वनी या लगी हों ।

बु ग्पटी ( हि० पु० ) जहाजमें पिछला पात्र ।

बु ग्रा ( हि० खो० ) वृना देणो ।

बु क ( स० लि० ) बुक अच् घृषोदरादित्यात् उपधात्पोप । १ भीषण शब्द करनेवाला । ( पु० ) २ परण्ड वृक्ष, रेडीका पेड । ३ ईश्वरमहिम्ना ।

बु क ( अ० री० ) १ एक प्रकारका कल्प किया हुआ महीन, पर बहुत करारा कपडा । यह बच्चोंकी टोपियोंमें अस्तर देने या अ गिया, सुरती, जनानी चादरे आदि बनानेके काममें आता है । यह साधारण बकरामने गट्टन पतला, पर प्राय वेसा ही करारा या कडा होता है । २ एक प्रकारकी महोत पत्ती ।

बु क ( अ० खो० ) पुस्तक, किताब ।

बु कचा ( हि० पु० ) १ वह गडरी निम्नमें कपडे व धे हुए हों । २ गडरी ।

बु कची ( हि० खो० ) १ छोटी गडरी विशेषत कपडे की गडरी । २ दर्जियोंकी घेली । इसमें वे सुई, डोग, के चो आदि चीनेके सामान रखते हैं ।

बु कनी ( हि० खो० ) १ किसी चीजका महीन पोना हुआ चूर्ण । २ यह चूर्ण जिसे पानीमें घोळनेसे काई रग उभता है ।

बु कुरा ( हि० पु० ) १ उरटन, बटना । २ बुक देणो ।

बु कुरस ( हि० पु० ) भगो, मेहतर ।

बु कुरा ( हि० पु० ) बुक देणो ।

बु कुरार ( हि० पु० ) वह बाल जो बरमानके बान नदी अपने तट पर छोड जाती है और जिसमें बु उ अन्न आदि बोया जा सकता हो ।

बु कुरन ( हि० पु० ) १ उरुनी । २ किसी प्रकारका पात्रक, चूर्ण ।

बु कुरेफल—भेलमनदी तीरवर्ती एक प्राचीन नगर । माकि दनगीर अलेक्सन्दरका प्रिय युवाभ्य बु कुरेफलस ( Bucphalus ) जिम् स्थान पर मारा गया था, वीरवरने चहा ब्रपने अश्वरके स्मरणार्थ यह नगर बसाया । आज भी इस नगरका ध्वंसावशेष वर्तमान जलालपुर नगरके निकट पडा है ।

बु कुरेरा—मिन्नुप्रदेशके हूदराबाद जिलान्तर्गत एक तालुक । यहां चार मुसलमान समाधिमन्दिर हैं जिनमेंसे जेहा जापोत्रा और पीर फजलशाहकी समाधी ही मर्घप्राचीन और मुसलमान समाधमें विशेष आदरणीय है । इस समाधिमन्दिरके सामने वर्ष भरमें दो बाग मैंग लगता है जिसमें नेरुडों, आन्नी जमा होते हैं ।

बु कुर ( स० पु० ) बुकयति जन्मयत इति बुक अच् । १ छाग, बकरा । २ हृदयस्थ मासपिण्ड । ३ अग्रमास । ४ हृदय, फलेजा । ५ समय । ६ जोणित ।

बु कुरेचरला—मन्दाज प्रदेशके अनन्तपुर जिलान्तर्गत एक गाण्ड ग्राम । यहांका बाध देवने गायक है ।

बु कुरन ( स० खो० ) बुक भाये रयुट् । भाषण, बुक्तेका भौक्षना ।

बु कुरपत्तन—मन्दाज प्रदेशके अनन्तपुर जिलान्तर्गत एक नगर । १७४० ई०में रायटुर्गके पत्तियातोंने इस स्थानमें घेरा डाला था । घेलेरीके पत्तियातोंके आने पर घेरा उटा लिया गया और दोनों धनुषरूपमें बुर्गके मध्य प्रदेश किया । आविर यह नगर घेलेरीके पत्तियातोंके ही हाथ लगा । यहांका चित्रावतीका जल बाध ४०० वर्ष पहले का बना हुआ है ।

बु कुरगाय—विजयनगरके महापराक्रान्त तपति । ये भाषणा चार्थ और भाषवाचार्यके प्रतिपात्रक थे ।

बुकरायसमुद्र—मन्त्राजप्रदेशके अनन्तपुर निला तगत एक गण्ड प्राम । इसके नामनेराटे वाउके नमरे निगारे अनन्तमागर अपस्थित है ।

बुक्रम ( २० पु० ग्री० ) बुक्रम पृथोलगदित्तान् सानु । चाण्डाल ।

बुगा ( २० ग्री० ) बुगा ग १ । १ हृदय, कलेजा । २ अन्नमास, मुद्देमा मास । ३ रक्त, गृह । ४ उग, उमरी । ५ प्राचीन कायका एक प्रकारका राजा जो सुहमे फ क र वजाया जाता था ।

बुका ( हि० पु० ) १ कूटे हुए अमकमा चूण । यह प्राय होलीमें गुलाबके साथ मिलाया जाता या इसी प्रकारके ओग कामीमें धावा है । २ बहुत छोटे छोटे मरुचे मोतियोंके जाने जो पीस कर औषधके काममें आते हैं अथवा विरो कर आभूषणों आदि पर लपेटे जाते हैं ।

बुगाप्रमाम ( २० ग्री० ) बुगस्य अन्नमास । १ हृदय, कलेजा । २ हृदयस्थ मास पिण्डाकार अन्नमास ।

बुगाग ( २० पु० ) बुग कि श्वादि जादे भाये प्रभ, बुक निनाअन्नस्य पार करण । मिहृद्वनि, सि हृका गर्जन ।

बुगी ( २० ग्री० ) बुगी गौरादित्तान् जीव । बुग, हृदय ।

बुगपुर ( गगर — बम्बईके शिवापुर जिलेके मध्यस्थित सिन्धुनदीके तिनारेवा दुर्गपुरशिवा एक द्वीप । यह अक्षा०

२७ ४३ उ० तथा देशा० ६८ १६ पू०के मध्य अपस्थित है । नदीगर्मस्थित यह पर्यटकाल ८ सौ फुट लम्बा और ३ फुट चौडा है । सबर नगरकी प्रगल् रो कर नदीसे एक शाखा बह गई है । १३२७ ई०में यह स्थान

सम्राट् महम्मद तुगलककी अमलदारीमें किसी शासनकर्त्ता हाग परिचालित होता था । सम्भावनीय राजाओंके अधिराजकालमें यह दुर्ग भिन्न भिन्न राजांसि अधिराज हुआ था । राजा जाहपेन आयु नने अलौंगन

दुर्ग नोड फोड कर बुगपुर दुर्गका नस्कार किया । १५ ७४ ई०में सम्राट् अजबराहाने अपने नीकर केशुशाको यह दुर्ग सौवा । १७३६ ई०में कहीराजे राजाये ह १ पर दखल

लमाया । उसके बाद यह अकमालके शासनकी हुआ । गैरपुराधिपति भोग्गस्तन गाने अकमालके हाथमें यह स्थान छोटा लिया ।

मोगोंने यह स्थान १ गरेजी जी सुपूर्द किया । सिन्धु और अकमालकी चडाईके समय यहां अ गरेजीका भस्माकार स्थापित हुआ था । १८७६ ई०में यहां एक कारागार खोला गया ।

बुगाग ( २० पु० ) १ उजर, ताप । २ वाण, भाप । ३ हृदय का उद्वेग, जोक, कोष दृ व आग्नि आवेग ।

बुगागचा ( फा० पु० ) १ फोडरीके नीचे लगीं भादिवा बनी हुई छोटी फोडगी । २ गिडकीके आगेका छोटा बरामदा ।

बुग ( हि० पु० ) १ मच्छर । २ उर देण ।

बुगवा ( हि० पु० ) बुगवा देण ।

बुगदर ( हि० पु० ) मच्छर ।

बुगदा ( फा० पु० ) कम्पार्योंका बुग जिससे वे पशुओंकी हत्या करत हैं ।

बुगशल ( हि० पु० ) पशुओंके चरनेका स्थान, चरागाह ।

बुगुल ( हि० पु० ) विभुन देणो ।

बुगाना—हिमालय पर्वतजामो गल्लण जातिविशेष । ये लोग अपनेकी वाराणसीवासी गौड ब्राह्मणके घणधर वन जाते हैं । कोई कोई नैदान ब्राह्मणमें दाफी उत्पत्ति बत लाते हैं । इनका जाचार व्यवहार मगोला और गद्गारो ब्राह्मणों सा मिलता जुलता है । ये लोग साधारणत विद्यान, बुद्धिमान और कर्मक्ष हैं ।

बुचरा ( हि० पु० ) बुचरा देणो ।

बुगाम्बाव ( फा० पु० ) यह जो पशुओंकी हत्या करता अथवा उनका मांस आदि बेचता हो, बजर बसाय ।

बुचदिल ( फा० वि० ) गीध, डरपोक ।

बुतनी ( हि० ग्री० ) कामें पहानेका एक प्रकारका गला । यह बराफूपे आकारका होता है । इसके नीचे हुमका भी लटकवा जाता है । हमें प्राय धारी तिया पहारते हैं ।

बुनियाला ( फा० पु० ) १ यह बकरीका बन्धा जिसे बल्दर लोग तमागा करना सिखाते हैं । २ यह बकर जिसे बल्दर तमागा करना सिखाते हैं ।

बुनुग ( फा० वि० ) १ जिसकी अथवा बाजि बज हो, बज । २ बुध, पाजो । ( पु० ) ३ पुर्वे, बाप दादा ।

बुजुर्गी ( फा० ग्री० ) बुजुग हीनेरा भाव, बटाप ।

बुजुर ( हि० पु० ) एक प्रकारकी चिडिया ।  
 बुजो ( फा० वि० ) बकरी ।  
 बुझा ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी चिडिया ।  
 बुझना ( हि० क्ति० ) १ अग्नि शिपाका ज्ञात होना, जलने का अत होना । २ चित्तना आयेग या उत्साह आदि मद् पडना । ३ पानी आदिको सहायतासे किसी प्रकारका ताप शान्त होना । ४ पानीका किसी गरम या नपाट हुई चीजसे ठीका जाना । ५ तपी हुई या गरम चीज का पानीमें पड कर ठढा होना ।  
 बुझाई ( हि० स्त्री० ) १ बुझानेकी क्रिया । २ बुझानेका भाव ।  
 बुझाना ( हि० क्ति० ) १ जलते हुए पत्थाका को ठढा करना, अग्नि शांत करना । २ तप्त पदार्थको जलमें डाल कर ठढा करना । ३ चित्तना जायेग या उत्साह आदि शान्त करना । ४ ठढे पानीमें इसलिये किसी चीजको तपा कर डालना जिसमें उस चीजका कुछ गुण या प्रभाव उस पानीमें आ जाय, पानीको छँकना । ५ पाना डाल कर ठढा करना । ६ सन्तोष देना, जी भरना । ७ किसीको बूझनेमें प्रयुक्त करना ।  
 बुझारत ( हि० स्त्री० ) किसी गावके जमोदारोंके वार्षिक आय ध्यय आदिका लेखा ।  
 बुझकी ( हि० स्त्री० ) बुझकी, गोता ।  
 बुझना ( हि० क्ति० ) बूझना देखो ।  
 बुझयुझाना ( हि० क्ति० ) मन ही मन बुझ कर या क्रोधमें आ कर अस्पष्ट रूपसे कुछ बोलना, बड बड करना ।  
 बुझाय ( हि० पु० ) बुझाने देगो ।  
 बुझडा ( हि० वि० ) जिनकी अरस्या अधिक हो गई हो, ५० ६० वर्षसे अधिक अवस्थावाला ।  
 बुझना ( हि० पु० ) पत्थर फूट, छडीला ।  
 बुझाई ( हि० स्त्री० ) बुझाव, बुझापा ।  
 बुझाना ( हि० क्ति० ) बुझावस्थाको प्राप्त होना, बुझडा होना ।  
 बुझापा ( हि० पु० ) १ बुझावस्था, बुझदे होनेकी अवस्था । २ बुझदे होनेका भाव, बुझडा पन ।  
 बुझिया बैठक ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी बैठक । इसमें शीवार, पन्ने आदिका सहाग ले कर बाग बाग उठने बैठते हैं ।

बुझीती ( हि० स्त्री० ) मृदावरथा, बुझापा ।  
 बुन ( फा० पु० ) १ प्रतिमा, मूर्ति । २ प्रियतम, यह निमरुं साथ प्रेम किया जाय । ३ सेसरतुत नामक खेलमे यह दाव निमरुं में खिलाडोके हाथमे केशल तस्वीरे ही हैं अथवा तोनों तांनोंकी उन्नियोंका जोड १०,२० या ३० हों । समझाना ।  
 बुनना ( हि० क्ति० ) बुनना दग ।  
 बुनपररत ( फा० पु० ) १ मूर्तिपूजक, यह जो मूर्तियोंकी पूजा करता हो । २ वह जो सी द्यका उपासक हो, रसिक ।  
 बुनपरस्नी ( फा० स्त्री० ) मूर्तिपूजा ।  
 बुनगिकन ( फा० पु० ) वह जो मूर्तिपूजाका घोर विरोधी हो, वह जो प्रतिमाओंकी तोडता या नष्ट करना ही ।  
 बुनता ( हि० क्ति० ) बुनाना देखो ।  
 बुन ( हि० वि० ) बुन देखा ।  
 बुद ( हि० वि० ) दलालकी बोलीमें 'पाच' ।  
 बुदबुद ( स० पु० ) पानीका बुलबुला, बुल्ला ।  
 बुदबुदा ( हि० पु० ) पानीका बुलबुला, बुल्ला ।  
 बुदलाय ( हि० वि० ) दलालकी बोलीमें 'पन्डह' ।  
 बुद ( स० पु० ) बुध्यते स्म इति बुध क, यथा भावे क, बुद्ध धानमस्यास्तीति अर्थ आदित्वाद्च् । भगवानका अतारविशेष । पर्याय—सर्वम, सुगत, धर्मराज, तथागत, भगवान्, मार्गजित्, लोकहित्, जिन, पड मिह, दणवत्, अद्वयवादी, विनायक मुनीन्द्र, श्रीघन, शास्ता, मुनि, धर्म, त्रिकालम्, धातु, चोचिसरव, महा-सोधि, आर्य, पद्मप्रान, दण्डाह, दण्डभूमिग, धनुस्त्रि शब्दा तत्कश्च, दण्डपारमिताधर, द्वावशान्त, त्रिकाय, सगुण, दयाकृत्, स्वजित, विज्ञानमातृक, महामैत्र, धर्मचक्र, महा मुनि, अमम, स्वमम, मैत्री, वर, गुणाकर, भद्रनिष्ठ, त्रिगण, बुध, रवी, योगाग्नि, नितादि, अर्हण, अर्हन्, महासुप्त, महावत् । बुददे देना ।  
 ( वि० ) २ जागरित, जो जागा हुआ हो । ३ हान वान, शान्ति । ४ पण्डित, निदान् ।  
 बुद्धकल्प ( स० पु० ) बुद्धका कल्प, वर्त्मान युग ।  
 बुद्धक्षेत्र ( स० स्त्री० ) बुद्धकी लीलाभूमि, यह स्थान जहा पर एक बुद्धका भाविर्माण हुआ है ।



बुद्धगया (म० स्त्री०) कौकिल्य बुद्धका गयाभेद ।

बोधगया देखो ।

बुद्धगुप्त (म० पु०) गुप्तप्रणीत एक राजा ।

गुप्तराजका देखो ।

बुद्धगुप्त (म० पु०) एक बौद्धाचार्य ।

बुद्धघोष (म० पु०) एक प्रसिद्ध बौद्धाचार्य । ५वीं शताब्दी में विद्यमान थे ।

बुद्धज्य (म० स्त्री०) बुद्धका कार्य वा जीवन ।

बुद्धजानधरो (म० पु०) एक प्रसिद्ध बौद्धाचार्य ।

बुद्धत्व (म० स्त्री०) बुद्धस्य भाव त्व । बुद्धका भाव वा धर्म ।

बुद्धदत्त (म० पु०) १ चण्ड महासेनका मन्त्री । (लि०) बुद्धने दत्त । २ बुद्ध कर्त्तृक दत्त, जो बुद्धदेवसे दिया गया हो ।

बुद्धलिङ्ग (म० पु०) राजभेद ।

बुद्धदेव—बौद्धधर्मके प्रवर्तक महाजानी पुत्र, हिन्दु-शास्त्रोक्त भगवानके दश अवतारोंमेंसे नवा अवतार ।

देवावतार देखो ।

हिन्दूमत ।

साहित्यरचणकारोंने बुद्धावतारके विषयमें जो श्लोक उद्धृत किया हैं, उनका भावार्थ इस प्रकार है—

“बुद्धावतारमें जिनके ध्यानके मध्य सारा ससार विद्यमान हुआ था, करने अवतारमें जो अधार्मिक मनुष्योंका मट्ठा टांग नाश करेगे, उनकी हम प्रणाम करने हैं ।”

जयदेवने राजावतार श्लोकमें बुद्धावतारके सम्बन्धमें लिखा है—हे केजय ! आपने बुद्ध प्रतीक धारण कर क्यात चिन्तने पशुहिंसाकी अपकारिता दिखलाते हुए यज्ञविषयक मन्त्रोंकी निन्दा की है । हे जगदीश हरे ! आपका जय हो । (१)

श्रीमद्भागवतके प्रथम स्कन्धके तीसरे अध्यायमें लिखा है कि भगवानने इक्ष्वाकु वार अवतार लिये थे । इस कल्पियुगमें वे गयाप्रदेवमें ब्रह्माके पुत्र पुत्रनाममें

अवतीर्ण होंगे । बाद कल्पियुगके शेषकालमें वे त्रिण्यु यगा नामक ब्राह्मणका पुत्र बन कर कल्पिरूपमें जन्मग्रहण करने लगे ।

त्रिण्युपुराणमें तृतीय अंशके १७वें और १८वें अध्यायमें बुद्ध मायामोह नामसे प्रसिद्ध हैं । उक्त पुराण में लिखा है, कि भगवानने अपने शरीरसे मायामोहको उत्पादन कर देवताओंसे कहा—‘यह मायामोह सभी देवताओंको मोहित करेगा । देवताओंके वेदमार्गविहीन होनेसे तुम लोग अतापास उन सबका बंधन रहोगे । अनन्तर मायामोह नर्मदा नदीके किनारे जा कर बोले, ‘हे देव्यपतिगण ! तुम लोग क्यों तपस्या करते हो ? यदि तुम्हें ऐहिक और पारलौकिकको इच्छा हो, तो मेरे कथनानुसार धर्म करो । मैं जो धर्मोपदेश दूंगा, वही मुक्तिका उपयोगी होगा । उससे श्रेष्ठ धर्म और दूसरा नहीं है । उस धर्मके ग्रहण करनेसे स्वर्ग या मुक्ति जो चाहो, मिलेगा ।”

मायामोहकी प्रवचनार्थ देव्यगण वेदमार्गसे पहिचान हुए । यह धर्म है, वह अधर्म, यह सत् है वह असत्, इससे मुक्ति होती है, उससे नहीं, यह परमार्थ है, यह अलौकिक, यह दिगम्बरोका धर्म है, वह बह्यग्रन्थ मनुष्योंका, इस प्रकार नाता मन्वेदहुकु वाक्य कह कर माया मोहने देवताओंको स्वधर्मत्याग कराया और कहा, ‘हे देव्य गण ! तुम लोग मेरे वही हुए धर्मका ‘अर्हत्’ अर्थात् मान्य करो ।’ यही कारण है, कि मायामोहके चलाये हुए धर्मको माननेवाले ‘अर्हत्’ कहलाते हैं । मायामोहका धर्म क्रमशः बहुत दूर तक फैल गया । अनन्तर इन्होंने असुरोंसे कहा, ‘यदि तुम लोग निर्माणकाल श्रयण स्वर्गकी कामना करते हो, तो पशुहिंसा प्रभृति बुरे धर्मोंका परित्याग करो । इस जगत्प्रसाहको विनाशनाम ममको और यह निश्चय जानो, कि इस स सारके कोई आचार नहीं है । इत्यादि ।

इसी प्रकार अग्निपुराण, धाम्युपुराण, स्कन्दके हिम धाम्युख्य आदि पौराणिक ग्रन्थोंमें बुद्धावतारका मोटा बहुत विषय लिखा हुआ है ।

यन्त्रभाष्योंने वैशान्तसूक्तके द्वितीय वाक्यसे उद्घोषित सूक्तकी व्याख्यामें निम्नलिखित आख्यायिका उद्धृत की है—

(१) “निन्दसि नरभिषेहह भुविपातं गदय हृदयस्मितशुभाग्रम् ।

गणत पण्डितैरैव जगदीशं हरिम् ॥” (जयदेव)

'अमात्र पदार्थसे भाव पदार्थकी उत्पत्ति होती है। इस प्रकार एण्डन कर व्याप्तने वेदोंका प्रामाण्य सस्थापन किया है। इसके बाद भगवान् बुद्ध देवियोंकी विमूढ करनेमें प्रवृत्त हुए। बुद्धदेव यत्नरूपी महादेवने बोले, (१) 'हे महाजाहो यत् । हे महाभुज । आप मोहशास्त्रोंकी रचना कर अन्ध और निरन्धरको दिखाइये तथा कई एक करिपत शास्त्रोंकी सृष्टि कर ऐसा उपाय कीजिये जिससे सभी मनुष्य मेरे प्रति विमुक्त हो जाय ।' बुद्धदेव के कथनानुसार महादेव प्रभृतिने भी अपने अपने अशोभित अस्तार लिया और वैदिक धर्ममें प्रवेश कर मनुष्योंकी जिज्ञास दिलानेके लिये वेदोंकी यथार्थ व्याख्या की। अनन्तर उन्होने अस्ति और नास्तिके सिद्धा अविद्या नामक पदार्थको जगत्प्रवाहका कारण बनलाया और उस अविद्याकी निवारितसे ही निर्माण लाभ होता है, ऐसा बतला कर कितने ही जातिभ्रष्ट सन्यासियों और पापण्डोंकी सृष्टि की। यह देख कर ध्यास उन पर बड़े हो प्रसन्न हुए।

बौद्धमत ।

उपर बौद्धग्रन्थकारोंने बुद्धदेवकी भूरि भूरि प्रशंसा की है। अमरसिंहने अपने अमरकोषके प्रथम अध्यायमें ब्रह्मा, विष्णु प्रभृति देवताओंके नामके पहले बुद्धका नामकीर्त्तन किया है—

"सर्वं सुगवा बुद्धो धमराजस्तथागत ।

समन्तभद्रा भगवाः सार्वभौमोऽस्मिन्नि ।।

पद्मभिजा दाननाऽद्भयमादो विनायक ।

मुनेन्द्र धीमन शाल्ता मुनि शाश्वतुस्मिन्नु य ॥

स गान्धर्गिह सराथसिद्ध गोदादतिभ स ।

गौतमधार्कवन्धुश्च मामादेशोमुत्तम स ॥

बुद्धदेशीय प्राचीन बौद्ध कवि रामचन्द्रने कविभारतो भक्तिशतक ग्रन्थमें लिखा है,—

"ब्रह्माडविद्याभिभूतोरुधरिगममहामायामानिर्दिताऽगौ ।

विश्वरुपागातरजोत् निजवपुषि धृता पावती" इत्यण ॥

( १ ) 'त्वन्वच इदं महाजाहो मोहशास्त्रिये कारण ।

अध्यानि शिवध्यानं दर्शयत्व महाभुज ॥

रागमे कल्पितैस्त्वन्न जातु भस्मिन्मान बुद्ध ॥"

वीताग्निगो निमायो जगति स भगवान् रीतरागो मुनेन्द्र ।  
क सेत्र्यो बुद्धिमन्त्रिन्दर्शन मे धारारत्नपुत्रस्ये ॥"

ब्रह्मा अविद्या द्वारा अभिभूत थे विष्णु महामायाके आलिङ्गनमें विमुक्त थे और शङ्करने आस्तित्वशन पार्वतीको अपने शरीरमें धारण किया था। किन्तु मुनि पुद्गल बुद्ध अविद्या, माया तथा आसक्ति इन सबसे विलकुल अलग थे।

विदेह नामक कविने समन्तकूटरत्नना नामक पालि ग्रन्थमें लिखा है,—

"सन्तवितवतिरिति ध्यनारुन्दध्पदस्य ।

विमरहितविधानं सर्वभ्रान्तनेनुम् ।

अमितमतिमगध ससिद्धं मरुमार ।

सुगतमरुधार रूपमार नमामि ॥"

काश्मीरके प्रसिद्ध बौद्ध कवि क्षेमेन्द्रन अत्रदानकल्पलतामें बुद्धजन्म नामक परिच्छेदके प्रारम्भमें लिखा है—

"इवति सन्सन्ताकालावसगाय भानु

परमममृतस्यै वृषातामति चन्द्र ।

इयति जगति पृथ्वं जन्मयद्धानि कश्चिद्

विपुनरुशनेतु सत्त्वतन्तारथाय ॥"

अत्रदानकल्पलतामें महाशाश्वपाकपाल नामक ६३वें पङ्क्तके प्रारम्भमें क्षेमेन्द्रने लिखा है,—

"शन्वायुनक्षयाद्य सुत विन्दिया मुनिराथ वत्कृत ।

यान्ति तत् सुरसुखं नृणापवत यन्त्य कस्य न स विम्वारान्दम् ॥"

बुद्धचरितकाव्यके प्रारम्भमें अश्वमेधने बुद्धकी नमस्कार करने हुए लिखा है—

"भियं परार्थ्या विदपत् विधातृत्तु तमा गिरत्वाभिभूतभाउ  
स्यु ।

सुद्विदार्थं जितवारचन्द्रमा सम्यद्व्यवत् ऽरु इह इन्तनोपमा ॥"

एशिया महादेशके प्राय सभी प्रदेशोंमें बुद्धदेवका जीवनचरित पाया जाता है। उल्लिखित विष्णुस्मृत, बुद्धचरितशाष्य, लङ्कानतारसूत्र, अत्रदानकल्पलता आदि संस्कृत ग्रन्थ, महाप्रज्ञ, महापरिनिर्वाणसूत्र, महावग्ग, जातक प्रभृति पालिग्रन्थ, कोपान् भि चि चि इत्यादि चानग्रन्थ, शाकजित्सुरोह आदि जापाना, मल्लगरत्तु प्रभृति त्रयदेशीय ग्रन्थ, गच्छका रोप (केट शुरुके सूत्र पिटकका ख अध्याय) नामक तिब्बतीय ग्रन्थ इत्यादि बौद्ध

प्रपञ्चका मत भङ्गलम्बन कर वर्त्तमान प्रपञ्च लिखा जाता है।

बुद्धका पूर्वजन्म।

इस धोर तमावृत्त नसारमें अस्मय युगके बाद एक एक बुद्ध आविर्भूत होने आये हैं। जाणयसिंहके पहले भी इस पृथ्वी पर अनेक बुद्धोंने जन्म लिया था किन्तु उनका धाराशाहिक इतिहास नहीं मिलता। वर्त्तमान समय बौद्धशास्त्रानुसार महाभद्रकल्प कहलाता है। इसी कल्पमें प्रहृच्छन्, वनस्पुनि, काश्यप और जाणय सिंहने यथाक्रम ३१०१, २०६०, १०१४ और ६३३ ईस्वी सन्के पहले जन्मग्रहण किया था। इन सर्वोंके पहले और १२० मनुष्य क्रमानुसार प्राबुभूत हुए थे। उनके पूर्व अस्मि कौटि बुद्धोंने जन्म लिया था। बौद्धोंका विश्वास है, कि इस अनादि ससारमें कुछ कितने बुद्धों ने जन्मग्रहण किया, उसकी शुमार नहीं।

यहा पर अन्यान्य बुद्धोंका चरित न लिख कर केवल गौतमबुद्ध या जाणयसिंहके पूर्व जन्मका वृत्तान्त लिखा जाता है।

जाणयबुद्धका प्रथमजन्म।

एक समय जब ब्रह्माने देखा, कि गल्लोकेके अधिवासियोंकी संख्या बहुत बड़ी बन् गई है, तब वे बड़े ही चिन्तित हुए। इसका कारण दृढ़ होने पर उन्हें मात्स्य हुआ, कि पृथिवीपर असंख्य वृक्षके मध्य किसी भी बुद्धने जन्म नहीं लिया है, इसीलिये सभी जीव अपनाच्छन्न हैं। अनेक वर्षोंके भीतर पृथिवी पर पुण्यवान मनुष्योंके जन्म नहीं लेनेके कारण कोई भी मरनेके बाद ब्रह्मलोक नहीं भा सकता; अतएव ब्रह्मलोक जनशून्य हो गया है।

तब ब्रह्मा चारों ओर देग कर सोचने लगे, कि पृथिवी पर क्या कोई ऐसा है, जो कालक्रमसे बुद्धत्वलाभ कर सकता है। वागमें श्यापोगसे उन्हें मात्स्य हुआ, कि कमज निम्न प्रकार दिलनंबी आशाने सूर्योदयकी प्राज्ञा करता है, उसी प्रकार तमनाच्छन्न पृथिवी पर एक धानवान मनुष्य बुद्धत्वलाभकी प्रत्याज्ञामें फाल पागन कर रहा है। उन्हें यह भा मात्स्य हुआ, कि बुद्धत्वलाभके लिये जो सब प्राणी पृथिवी पर विद्यमान हैं, उनमेंसे एक ही सयोग्य है। इस पर ब्रह्माने उद्दीकी

बुद्ध लिया और वे ही गौतमबुद्ध या जाणयसिंहके नामसे प्रसिद्ध हुए।

जिस समय ब्रह्माने उन्हें चुन लिया था उस समय वे ही पृथिवी पर सर्वोंकी अपेक्षा गरीब थे। उनके एक मात्र बुद्ध तथा विद्यया माता थी। गौतम पाणिशय-पञ्चसायका अजलम्बन कर बड़े कष्टसे अपना और विद्यया माताका आहार सम्रह करते थे। एक दिन वे सौभाग्यबुद्धिकी आशाने सुवर्णभूमि नामक देग जानके लिये समुद्रके किनारे गहूचे और नावियोंकी पुरकारा रूपरूप कुछ नावोंके टुकड़े दे कर बोले,—‘ही नाविका गण! तुम मुझे और मेरी बूढ़ी माताकी नाव पर चढ़ा कर सुवर्णभूमि पहुँचा दो। तुम्हारी अनुकम्पाके मिया समुद्र पार कर जानेका हमें और कोई दूसरा उपाय नहीं है।’ इस पर नाविकोंने उन दोनोंकी नाव पर चढ़ाया; किन्तु अभाग्यवश थोड़ी दूर जाते ही वह नाव डूब गई। उसाल तरङ्गमें गौतम अपने जीवार्थी माया छोड़ कर माताकी जीवन रक्षामें लग गए। हिन जलजन्तुओंके प्रति लक्ष्य न कर उन्होंने माताकी अपनी पीठ पर बिठा लिया और थाप तेरने लगे। गौतम को ऐसा दृढप्रतिज्ञ देल ब्रह्माने कहा,—यही एक मनुष्य बुद्धत्वप्राप्तिका यथार्थ अधिकारी है। अनन्तर ब्रह्माने सहायतासे गौतम माताके साथ समुद्र पार कर गए। तब ब्रह्माने विचार, कि सुजस्य लाभ करनेमें जिन सब गुणोंका रहना आशयक है, गौतममें वे सभी मौजूद हैं। उस समय गौतमो भी बुद्धत्वलाभ करनेका दृढ संकल्प लिया। कुछ दिन बाद उनकी मृत्यु हुई और उद्दीकी ब्रह्मलोकमें पुनर्वन्म ग्रहण किया। जिन दिन गौतमके मनमें बुद्धत्वप्राप्तिकी इच्छा उत्पन्न हुई भी उस दिनमें अक्षय्य वर्षोंके भीतर इस समानमें एक लाख पचीस हजार बुद्धोंने अवतार लिया था; किन्तु गौतम तब तक भी न बोधि लाभ न कर सके थे।

सर्वनाशकल्पमें गौतम धम्मवेगोय मज्झाद्वेष बुद्धरूपमें आविर्भूत हुए और इसी कल्पमें उन्हें पाकप्रतिपादन उत्पन्न हुआ उपाका कहना था, ‘मैं बुद्ध होऊँगा और बुद्धत्वलाभ करना ही मेरा अनाद है।’

सारमन्त्रकल्पमें गौतमने पुनर्वन्ती नगरीमें राधा सुन्दरके

-पुत्ररूपमें जन्मग्रहण किया -। इस कल्पमें उन्होंने लुण्णाङ्क बुद्धमें अनियत विवरण (अनिश्चित आश्रय) और दीपङ्कर बुद्धमें नियत विवरण (निश्चित आश्रय) प्राप्त किया। लुण्णाङ्क बुद्ध की कक्षा था, कि गौतम कालक्रममें बुद्धत्व लाभ कर मरने हैं। किन्तु दीपङ्करका कहना था, कि गौतम अग्रण्य ही बुद्धत्व लाभ करेंगे।

गौतम सारमन्दकल्पमें यथाक्रम सुगन्धि ग्राहण, अनुल नागराज, अतिश्रेष्ठ ग्राहण तथा सुजात ग्राहणके नामसे परिचित थे। यत्रन्त्यमें वे क्रमशः यक्षमिह और सन्ध्यामिरूपमें प्रादुर्भूत तथा मन्दकल्पमें राजधर्मवर्तित्वको प्राप्त हुए। बाद असत्य कल्प तब सत्सार घोर अज्ञानान्धकारमें निमग्न रहा।

इस समय गौतम देव, मनुष्य आदि नाना योनियोंमें परिभ्रमण करते रहे। 'पञ्चगत पञ्चाम जातन' नामक पालिग्रंथमें इनके ५० जन्मोंका विवरण लिखा है। इनमें से वे ८३ बार सन्यासी, ५८ बार महागराज, ४३ बार वृक्ष देवता, २६ बार धर्मोपदेशक, २४ बार राजामात्य, २४ बार पुरोहित ग्राहण, २४ बार युवराज, २३ बार भद्र लोक, २२ बार परिणेत, २० बार, इन्द्र, १८ बार मर्कट, १३ बार घणिक, १२ बार घनी, १० बार मृग, १० बार सिंह, ८ बार हंस, ६ बार हस्ती, १२ बार कुपट्ट, ५ बार भृत्य, ५ बार मीर्षण गरुड, ४ बार अश्व, ४ बार वृद्ध, ३ बार बुद्धकार, ३ बार अन्त्यज जाति, २ बार मत्स्य, २ बार हस्तिपत्र, २ बार इन्द्र, १ बार कुपट्ट, १ बार मर्ष-चिकित्सक, १ बार मूत्रधार, १ बार कर्मकार, १ बार मेढक, १ बार शक इत्यादिरूपमें पृथिवी पर अत्यतीर्ण हुए थे।

ऊपर जो तालिका दी गई है, यह पुरी नहीं है। गौतमबुद्धने अस्वत्थ जन्मग्रहण किया था, जिसका आमुत्र घुत्तान्त संग्रह करना नितात दुर्लभ है। उन्होंने एक पर जन्ममें एक एक प्रकारके मत्कर्मका अनुष्ठान किया था। किसी जन्ममें वास्य, किसीमें शीलता, किसीमें नैक्य, किसीमें प्रज्ञा और समयानुसार धर्म, क्षान्ति, सत्य, अधिष्ठान, मैत्री और उपेक्षा आदि मठगुणोंकी पराकाष्ठा भी दिखाई थी। उल्लिखित दश गुण दश पारमिता

कहलाते हैं। गौतम साधारणतः उक्त पारमिताओंका अनुष्ठान करते थे।

गौतमबुद्धने पाटिकाद्वार जन्ममें अपना मरतक, नेत्र, मांस, सन्तान, नो तथा सर्वस्य वितरण कर दानपारमिता (१) अनुष्ठान किया था। भूमिदत्त जन्ममें उन्होंने तीन प्रकारकी शीलपारमिता (२) सम्पन्न की थी। बुद्ध मुन सोममें काञ्चन, मणि, प्राणिक्य, दाम तथा दाम्नी इत्यादिका त्याग कर सन्ध्यामधर्म ग्रहण किया था और इसी जन्ममें उनकी निष्कम पारमिता (३) अनुष्ठान हुई। शत्रु भक्त जन्ममें वे प्रज्ञा पारमिता (४) तथा महाजनक जन्ममें चौर्य पारमिताको (५) चरम सीमा पर पहुँचे थे। क्षान्तिवाद जन्ममें उन्होंने मनुष्यके अन्याय तथा निन्दुर व्यवहारको अस्मान् चित्रसे सह्य कर क्षान्ति पारमिता (६) उज्ज्वल दृष्टान्त दिखाया था। महासुप्त सोमजन्ममें बुद्धने सत्यपारमिता (७), तेमिजन्ममें दृढ प्रतिष्ठ हो श्रेष्ठ धर्मका अनुष्ठान कर अधिष्ठान पारमिता तथा नरजन्ममें शत्रु और मित्र, उपकारी और अपकारी, क्षान्ति और अपरिचित प्रभृति सर्वोंके साथ सम भाव दिखा कर उन्होंने मैत्री (८) गम्य चित्तके अधिष्ठान भाव या उपेक्षा पारमिता (९) परिचय दिया था।

उपर्युक्त पारमिताओंमेंसे प्रत्येकका पूर्णरूपसे अनुष्ठान करनेके कारण ही बुद्धका नाम 'दशभूमिधर' पड़ा। कर्मके विचित्र परिणामसे गौतमबुद्धने ताना जन्मग्रहण किया सही, पर ये कर्म भी असम्बन्धमें प्रवृत्त न हुए। तिर्यग्गोचर जन्म ले कर भी उन्होंने। बुद्धोचित कार्यका अनुष्ठान किया था। बुद्धदेवके कई एक जन्म ग्रहणका विषय जो नीचे लिखा गया है, उसे पढ़नेसे सभी समझ सकते हैं कि बौद्धचरिताप्यायकोंका ऐसा विश्वास था, कि गौतमबुद्ध पशु आदि योनिमें जन्म ले कर भी सत्य, क्षान्ति इत्यादि धर्ममें विचलित न हुए।

मरुतकल्प—प्रणपारमिता।

एक समय गौतम बन्धु रूपमें जन्म ले कर २००० बन्धुओंके अधिपति हुए थे। हिमालयके तराई प्रदेशके जगलमें उनका राज्य था। उनके समीप किसी छोटे गाँवमें एक बहुत बड़ा इमरोंका पेड़ था। बन्धुओंके इमरोंकी इच्छा प्रकट करने पर गौतमों

उनसे कहा "हे प्रजागण ! तुम लोग शिष्टता मत छोड़ो । इस इमलीके पेड़को प्रामवासियोंने बड़ी मेहनतसे लगाया है और वे हमेशा इसकी चीकसोंमें लगे रहते हैं, ताकि यह पेड़ शीघ्र बगवादा हो जाय ।

बन्दरोंने उनकी बात पर कुछ भी उत्तर न दिया । अन्तमें रातको लगभग ५०० बन्दर मिल कर चुपचाप इमली गानेकी चले । उन्होंने मोंचा, कि उन्हें कोई देपन सकेगा, किन्तु वे इमली राते समय अपने आपको विलकुल भूल गए और अपनी बोलीमें अपने अपने मनका आनन्द प्रकाश करने लगे । बाद गाववाले बन्दरोंकी आवाज सुन कर एक एक लाठी ले उस पेड़के नीचे आये । उन लोगोंने विचारा, "हम लोग सुबह तक यहाँ ठहरेगे और बन्दरोंकी पेड़ परने उतरते ही मारेगे । धीरे धीरे यह खबर । ऊँटपूज गीतमको मिली । उन्होंने कहा, 'मेरे मना करने पर भी बन्दर इमली पानेना लालच न छोड़ सके । उन सबोंके जीवन अभी बड़े सट्टमें पड़े हैं, जो हो प्रजाकी रक्षा करना राजाका परम कर्त्तव्य है । अतएव मुझे किसी उपायका अल्पमन कर उनकी रक्षा अत्यन्त करनी चाहिए ।

बाद गीतमने गात्रमें जा कर देखा, कि बच्चे, बूढ़े, स्त्री सबके सब सोये हुए थे और गात्रके वयस्क मनुष्य लाठी ले कर इमलीके पेड़के नीचे पड़े थे । गात्रमें विलकुल सन्नादा छा रहा था, सिर्फ एक घरमें एक बूढ़ी औरत खाँसती थी । उसे नींद नहीं आती, वह कभी उठती, कभी बैठती और कभी विद्यावन पर लेट जाती थी । अब गीतमने उसी बूढ़ीके घरमें आग लगा दी । घर जलने लगा और बूढ़ी चिह्लातो हुई घरके बाहर आई । आग बुझानेका कोई उपाय उसे देख न पड़ा । बाद जो सब मनुष्य इमलीके पेड़के नीचे पड़े थे, उन्होंने बूढ़ीकी आवाज सुन अपनी अपनी लाठी फेंक दी और सब गाव जा कर आग बुझानेमें लग गए । सुबहसर पा कर बन्दर अपने घर चले आये । इसी जन्ममें गीतमने प्रज्ञा पारमिता सम्पन्न की थी ।

उदरिनाय-जन्म-वीर्यपारमिता ।

किसी समय गीतमने ऊदविलावरूपमें जन्म लिया था । यह ऊदविलाव किसी नदीके किनारे एक पेड़

पर रहता और बड़े बलसे अपने बच्चोंका पालन पोषण करता था । एक दिन तीव्र तूफानसे यह पेड़ उगड़ कर नदीमें गिर पड़ा जिससे उस परके सभी बच्चे हूब गए । उस समय गीतमने प्रतिज्ञा की, "समुद्र सुखा कर बच्चोंका उद्धार करूंगा ।" बाद वे अपनी पूँछ नदीमें डुबा डुगा कर किनारे पर भाड़ने लगे । सात दिन तक वे इसी प्रकार करते रहे । तब देवराजने आ कर उनसे पूछा, "हे साधु ऊदविलाव ! तुम्हें जरा भी समझ नहीं, इस प्रकार पूँछ डुबो कर पानी छिड़कनेसे कितने दिनोंमें तुम समुद्र सुखा सकोगे ? समुद्र ८४ हजार योजन गहरा है । तुम जैसे लाखों प्राणीकी ऐसी चेष्टा करने पर भी समुद्र नहीं सूख सकता ।"

इतने पर ऊदविलावरूपी गीतमने देवराजसे कहा, 'हे वीरपुरुष ! यदि सभी मनुष्य आप जैसे साहसी होते, तो आपका कहना सार्थक होता । आपमें कहा तक विक्रम है, वह आपके वचनसे ही मालूम पड़ता है । जो कुछ हो, आप सरोखे भीच, कापुरय तथा निर्बोधके साथ वातनीत करनेसे कोई फल नहान । आपका जहा जी चाहे, चले जाय, मेरे कार्यमें बाधा न डाले । मैंने जो आरम्भ किया है, उसे बिना समाप्त किये न छोड़ूंगा ।" देवराज उस ऊदविलावका अद्भ्य उत्साह देख कर चकित हो रहे । बाद देवताओं की सहायतासे उसने सभी बच्चोंको समुद्रसे बाहर निकाला । गीतमने इस जन्ममें वीर्यपारमिता दिखलाई थी ।

सिंहजन्म—उत्पारमिता ।

एक समय गीतम सिंहरूपमें जन्म ले कर किसी पहाड पर रहते थे । उसके समीप ही कौचडसे भरी हुई एक भील थी जहा हरिण आदि जन्तु चरा करते थे । एक दिन सिंहरूपी गीतमने भूखसे व्याकुल हो कर एक हरिणका पीछा किया ; किन्तु उक्त भीलके कौचडमें वे फँस गए । उसने निकलनेका कोई उपाय न देख उन्होने एक गीदडसे कहा, 'हे भद्र ! मैं बड़ी तकलीफमें आ गिरा हूँ । मेरे दोनो पैर कौचडमें इस प्रकार फँस गये हैं, कि उ हँ बाहर निकालनेकी मुझमें सामर्थ्य नहीं । हे भाई ! तुम दया कर इससे निकाल दो ।' गीदड बोला, 'आप बलवान तथा विक्रमशाली जन्तु हैं ।

अभी आप ऐसे भूचे हैं, कि आपके समीप जानेका मुझे साहस नहीं होता। शायद आपकी रक्षा करनेमें मुझे अपने जीवसे हाथ धोना पड़े। इस पर सिंह उभे नाना प्रकारसे अभयगान दे धारमगार प्रार्थना करने लगे। तदनुसार गीठउठने निकरुवन्धी हृदसे सिंहके पैर तक एक नाटा बनाया। हृदना जल उस नाटके द्वारा सिंहके पैर तक पहुँचते ही वह कौचड जलके समान तरल हो गया। बाद सिंह अनायास कौचडने निकरुल कर उस गीठउठकी घनपवाद देने लगा। उसी दिनसे सिंह और गीठउठ चिरकाल तक एक ही गुफामें सपरिवार रहने लगे। सिंहो कभी भी उभे मारनेकी चेष्टा न की। इस जन्ममें गौतमने मृत्युपारमिताको रक्षा की थी।

वैशम्पान्तराजतरु-दासपरमिता।

जम्बूद्वीपको जयातुंग नगरोमें मञ्ज नामक एक राजा रहते थे। उनकी प्रधान महिषीका नाम था स्पृशती। उनके वैशम्पान्तर् नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। चैत्यराजकन्या माद्रीदेवीके साथ वैशम्पान्तर्की शादी हुई। उसी समय कलिङ्गदेशमें भारी बकाल पडा। कलिङ्गराजको मालूम हुआ, कि वैशम्पान्तर्के जो श्वेत हस्ती है वह पानी बरसा सक्ता है। प्रवाद है, कि उक्त हस्तीके एक आस्तरणका मूल्य २४ लाख रुपये था। कुछ दिन बाद कलिङ्गराजने श्राद्ध श्राद्धणको जयातुंग नगरो भेजा। उपोषध दिनमें वैशम्पान्तर् दरिद्र और भिक्षुको अन्नपत्र इत्यादि दान दे रहे थे, उसी समय उक्त आठो ब्राह्मण बहा जा कर बोले 'महाराज कुमार! आपके जो श्वेत हस्ती है, उसे ही पानेका आशाने हम लोग आपके पास आये हैं।' वैशम्पान्तर्ने कहा, 'हे ब्राह्मणगण। इस हाथीकी बात तो दूर रहे, आप लोग मेरे नेत्र दृष्टपिण्ड इत्यादि जो कुछ चाहें, उसे भी मैं सर्वर्ष प्रदान करूँगा।' 'हम लोगोंका और कुछ भी प्रार्थनीय नहीं है' ऐसा कह कर वे लोग उक्त हस्तीको ले कलिङ्ग देश लौट गए। नगर यासिगण यह खबर सुन कर बड़े ही दुःखित हुए और सबोंने राजप्रसादमें जा कर रातसे निवेदन किया, 'महाराज! हम लोग श्वेतहस्तीसे अनेक उपकार पाते थे। आपके पुत्रन उक्त हस्ती ब्राह्मणोंको दे कर बडा अनिष्ट किया है।' इस पर महाराजने अपने पुत्रको दण्ड

देनेकी इच्छा प्रकट की। बाद नगरवासी बोले, 'महाराज! पुत्रको और बड़े दण्ड देनेका प्रयोजन नहीं उगें गन्थसे गान्ग निगान्ग देना ही समुचित दण्ड होगा।' तदनुसार वैशम्पान्तर् बड्ड नामक पहाड पर भेज दिये गए। हनारों मनाही करने पर भी उनकी स्त्री माद्रीने उनका साथ नहीं छोडा। श्वर महाराजकी स्पृशती पुत्रको निर्वासन वार्त्ता सुन हतचेतन हो पडी। बाद महाराजने उगें मान्त्वना दे कर कहा, 'मैं कुछ दिनेके बाद ही पुत्रको पुन घर ले आऊँगा।'

जिस समय वैशम्पान्तर् और माद्रीदेवीने घर छोडा, उसी समय उन्होंने अपनी सम्पत्ति अथवा जम्बालङ्कारादि द्रिद्रोंको दे दिये। वैशम्पान्तर् सर्वस्व त्याग कर फेरल अपनी स्त्री, पुत्र तथा कन्याके साथ एक रथ पर चढ बट्टगिरिकी ओर चले। उनकी माताने उगें जो कुछ दिया था, उन्होंने उसे भी द्रिद्रोंको बाट दिया। अतमें रास्तेमें दो ब्राह्मण सामने आ वैशम्पान्तर्से बोले, 'महाशय! यदि रथ खी चनेवाले ये दोनों घोडे मिल जाते, तो हम लोग बडे ही उपटत होते। थोडी दूर आगे बढने पर फिर एक ब्राह्मणने आकर कहा, 'प्रभो! आपका रथ पानेसे ही मेरी दरिद्रताकी कुछ कमी हो जाती।' उक्त ब्राह्मणोंके प्राथनानुसार वैशम्पान्तर्ने अपना रथ तथा दोनों घोडे दे लिये। बाद माद्रीदेवी कन्याको और वैशम्पान्तर् पुत्रको अपना गोदमें ले कर पैदा ही चलने लगे। चैत्यदेशके राजाको उन लोगोंको पुत्राया; किन्तु वैशम्पान्तर् उनके यहा नहीं गए।

अनन्तर वे लोग बट्टगिरि पहुँचे। यहा विश्वकामने उन लोगोंके लिए दो छोटे छोटे घर बनाये। वैशम्पान्तर् और माद्रीदेवी उन्ही दोनो घरमें सयत भावसे रहने लगे। स्ताना मातानी अनुपन्थितिनमें पिताके साथ रहती थी। इसी तरह सात महिने बीत गए। एक दिन यूनक नामक एक बडे ब्राह्मणने वैशम्पान्तर्के निकट आ कर कहा, 'महाशय! मैंने बडे कष्टने एक स्त्री रुपये उपाजन कर एक ब्राह्मणके पास ररि ये, किन्तु उसने कुछ रुपये खर्च कर दिये वह बडा शरीर था, सुन्दर रुपये न छोटा सक्नेके कारण उमने मुझे अमिन्नतपा नामकी कन्या प्रदान का है। मेरी उक्त पत्नी (अमिन्नतपा)

घरके सभी कामोंको अकेली नहीं कर सकती। मैंने सुना है, कि आपके जालीय नामका एक पुत्र तथा कृष्णा निना नामकी एक कन्या है। मैं इन दोनोंको लेनेकी इच्छा करता हूँ। ये मेरी पत्नीके दास और दासी हो कर घरके सभी काम करेगे और तभी मुझे घरकी चिन्तासे कुरसत मिलेगी। ब्राह्मणकी बात सुन कर वेश्मान्तर बोले, 'महात्मन ! मेरी दोनों सन्तान द्वारा यदि आपका प्रयोजन सिद्ध हो, तो मैं खुशीसे इन्हें आपसे हाथ सौंप देता हूँ।' इतना सुनते ही जालीय तथा कृष्णाजिना जङ्गलकी ओर भाग गईं। उनकी माता उम समय फल मूलादिकी तलाशमें बाहर गई हुई थी। वेश्मान्तर दोनों सन्तानको जोरमें पुकारने लगे। जालीय आ कर पिताके पैरों पर गिर पड़ा और बोला, 'हे पिता ! हमारी माता अभी तक मृत्यु फल तथा काष्ठकी खोजमें गई हैं, वे जब तक लौट न आवें, तब तक हमें मत छोड़िये।'।

इस पर मिथु ब्राह्मण आगमबूला हो उठे और बोले, 'पैसा भूझा मनुष्य मैंने अब लौं नहो देगा था। आप ससारमें व्यापील कहलाते हैं, किन्तु मेनी समझमें नहीं आता, कि इन दोनों सन्तानकी दे कर भी आप इन्हे नहीं छोड़ते।'।

मिथु रानी बात सुन कर वेश्मान्तरने पत्नीकी अनुपस्थितिमें ही उन बच्चोंको दे दिया। पर्वतके ऊपर रास्तेमें उन दोनोंको जो तफलीफ भेलनी पडी थी, उसे वेश्मान्तरने अपनी आँखों देखा था। मातृदेवीने जगलसे आ कर जब यह बात सुनी, तब वह फूट फूट कर रोने लगी। इस पर वेश्मान्तरने भगवत्याना देते हुए कहा, 'बुद्धत्व लाभ करना सहज नहीं है। मैं पुत्र तथा कन्याको दान कर यदि आगपारमिता सम्पादन कर सकूँ, तो नि सन्देह मुझे सर्वस्य लाभ हुआ। इस कुछ दानको देल कर तुम्हे विस्मित नहीं होना चाहिए।'।

अनन्तर देवराजने देखा, कि वेश्मान्तर ऐसे दानो हैं, कि वे अपनी स्त्रीकी भी चितरण कर सकते हैं। अच्छा मैं इसकी परीक्षा तो लूँ। अतएव उन्होंने ब्राह्मणका रूप धारण कर वेश्मान्तरसे कहा, 'महाशय ! मैं बूढ़ा और रोगी हो गया हूँ—मेरी सेवा शुभ्रपा करनेवाला कोई

नहो है। आपको पत्नी दासी हो कर यदि मेरी सेवा करती, तो मुझे बड़ा सुख मिलता।

ब्राह्मणकी बात सुन कर वेश्मान्तरने मातृदेवीको ओर देगा। मातृदेवीने स्वामीका अभिप्राय जान कर कहा, 'यदि मुझे दान कर आप बुद्धत्व प्राप्त कर सके, तो यह मेरे सौभाग्यकी बात है।'।

बाद वेश्मान्तरने उक्त ब्राह्मणसे कहा, 'महाराज ! मेरी पत्नी ग्रहण कीजिए, यह सामान्य दान मेरे बुद्धत्वलाभका सहायक हो।' इस पर ब्राह्मणरूपी देवराज बोले, 'हे वेश्मान्तर ! मैंने आनन्दके साथ मातृदेवीको ग्रहण किया, अब इन पर आपका कोई अधिकार न रहा। मैं इन्हे आपके पास कुछ दिनोंके लिए गच्छित रख जाता हूँ। पैसा वह कर भिक्षुरूपी देवराज अन्तर्धान हो गए।

उपर यूजक नामक ब्राह्मण जालीय और कृष्णाजिनाका लेकर जयानुरा नगरी पहुँचे। सज अपने पीत तथा पीवी को पा कर बडे ही प्रसन्न हुए और उस ब्राह्मणको इतना खिलाया, कि जिससे वह कराल कालके मारलमें पतित हुआ। सजने बडो धूमनामसे उसकी अन्त्येष्टिकिया की। कुछ दिनोंके बाद बहुत से मनुष्योंको साथ ले सज बड्कगिरि पर जा वेश्मान्तर और मातृदेवीको घर ले आये। पूर्वोक्त श्वेतहस्तोके प्रभावसे कलिङ्ग द्गर्गमें पुरी उपज हुई। बाद उक्त देशवासियोंने उस हाथोको लौटा दिया। वेश्मान्तर, मातृदेवी, महाराज सज, महारानी स्पृशती, जालीय तथा कृष्णाजिना सबके सत्र फिर एक साथ मिले। वेश्मान्तरने शरीर त्याग कर तुषित नामक रजर्गमें पुनर्जन्म ग्रहण किया। इसी जन्ममें गौतमने दान पारमिता प्राप्त की थी।

बौद्धग्रन्थमें इसी प्रकार अपरापर पारमिता साधनके सम्बन्धमें अलौकिक गतप वर्णित हैं। विन्तार हो जाने के भयसे यहा कुलका वर्णन नहीं किया गया। बौद्धगण जिस भावमें बुद्धदेवके पूर्वजन्मकी लीला ग्रहण करते हैं, उसे दिवानेके लिए ही ऊपर कई एक कहानी दी गई, अन्यथा इन सब गल्पोंके साथ शाफ्यबुद्धके जीवनेतिहासका कोई सम्पर्क है पैसा प्रतीत नहीं होता।

बुद्धके पुरुषुप।

महायसु नामक ग्रन्थमें कोलिय-राजपुत्रके उत्पत्ति

वर्णन अभ्यायमें बुद्धदेवके पूर्वपुरपके निपयमें निम्न लिखित वृत्तान्त लिखा है,—

सम्मत नामके कोढ़ एक प्रसिद्ध राजा थे। उनके पुत्रका नाम था कल्याण। कल्याणके पुत्र रव, इनके पुत्र उपोपध और उपोपधके पुत्र मान्धाता हुए। राजा मान्धाताके वंशने पुत्रपौत्रादिक्रमसे हजारों वंश तक राज्य किया था। पश्चिम साकेत नगरमें सुजात नामक इक्ष्वाकुवंशीय राजा राज्य करने थे। उनके ओपुर, निपुर, करकण्डक, उदकामुख तथा हस्तिकशीप नामक पांच पुत्र एवं शुद्धा, धिमला, मिजिता, जला और जरी नाम की पांच कन्या थीं।

राजा सुजात जैन्नी (जयन्ती) नामक किसी विलासिनीके प्रेममें फँस गए। उसके गर्भसे जैन्त (जयन्त) नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। एक दिन राजाने सुजात हो कर जैन्तीसे कहा, 'मैं तुम्हें सुहमाग्य प्रदान करूँगा। जब तुम्हारी जो इच्छा हो, वही वर मागो। इस पर जैन्तीने कहा, 'महागज। पहलेमें अपने मातापितासे पूछ लो, वे जो कुछ कहेंगे, वही मेरा अभिप्रेत होगा।' बाद जैन्ती अपने मातापिता प्रभृति स्वजनोंके पास जा कर बोली, 'राजाने मुझे सुहमाग्य प्रदान करनेकी प्रतिज्ञा की है अब आप सबकी जो आज्ञा हो वही वर मैं मागूँ।' उस समय जिसका जो अभिमत हुआ, उसने वही कहा। कोई बोला, 'जैन्ती। तुम एक उदरघ्न भ्रामक आधिपत्य माग लो, इत्यादि। बाद पण्डिता निपुणा तथा मेघाग्निनी किमी रमणीने कहा, 'जैन्ती। तुम राजाको विलासिनी रूपे हो। राजाने तुम्हें वर मागनेको कहा है, जो तुम्हारे सौभाग्यकी बात है। वे बड़े ही सत्यवादी हैं, उनकी प्रतिज्ञा कभी अन्यथा नहीं होती। तुम उनसे यही वर मागो, कि महा राज! आप अपनी क्षत्रिया स्त्रीके गर्भनात पांच कुमारोंको राज्यसे निर्वासित कर मेरे गर्भसम्भूत जैन्त (जयन्त) नामक पुत्रको यौवराज्य पर अभिषिक्त करें। मेरी आपसे यही एकान्त प्रार्थना है, कि आपके मरने पर जिससे मेरा पुत्र साकेत महानगरका राजा हो सके, उसीका विधान कीजिए।' जैन्तीने यही वर मागा। राजा सुजात जैन्तीकी इस प्रार्थनाको सुन कर बड़े

दुःखित हुए। वे अपने पाचों पुत्रोंको बहुत प्यार करते थे। 'अतएव उन्हें किस प्रकार राज्यसे निकाल दूँगा?' इसका निश्चय नहीं कर सके। इधर जैन्तीको प्रार्थित वर प्रदान नहीं करनेसे उनकी प्रतिभृति भद्दा होती थी। बाद राजाने जैन्तीसे कहा, 'मैं तो तुम्हें वही वर देना हूँ, किन्तु नगर तथा देशकी प्रजाओंकी यह बात मालूम हो गई है, कि मैं अपने पाचों पुत्रको निर्वासित कर तुम्हारे पुत्रको युवराज बनाऊँगा। अब उन लोगोंने भी उन्हींके साथ वन जानेकी प्रतिज्ञा की है।' राजाने भी प्रजाको ऐसा करनेसे नहीं रोका। प्रजागण भी वहाँ बच्चोंकी साथ ले सचमुच उक्त पांच कुमारोंके साथ चल चलो। वे सबके मन साकेत नगरसे बाहर जा कर उत्तरकी ओर बढ़े। कुछ दिन बाद कोशिकोशलके राजा उन सबोंको अपने राज्यमें ले गए। वे लोग कुछ दिन तक वही ठहरे। अनंतर कोशिकोशलके राजाने देखा, कि ये सब मनुष्य इन पांच कुमारोंके प्रति बड़े ही अनुरक्त हैं। यदि वे लोग यहाँ ज्यादा दिन तक रह जाय, तो ही संभ्रता है, कि मुझे मार कर इन्हीं कुमारोंको राजा बनायें। इस प्रकार ईर्ष्याके वशीभूत हो कर राजाने पञ्च कुमारोंके साथ उस भुण्डको कोशिकोशल राज्यसे विदा किया।

अनन्तर वे लोग हिमालय पर्वतके प्रत्यन्त प्रदेशमें शारंगोदयनखण्डस्थित ऋषि कपिलके आश्रममें पहुँचे और वही रहने लगे। वहाँ उन्होंने अपनी बहन, भाजी इत्यादिके साथ एक दूसरेका विवाह किया। जब राजा सुजातने वणिगोंसे यह सुना, कि उनके पुत्र अनुहिमवत् प्रदेशके शारंगोदयनखण्डस्थित ऋषि कपिलके आश्रममें रहते हैं और उन लोगोंने वही पर परिणय कार्य सम्पन्न किया है, तब उन्होने अपने पुत्रोहित और मन्त्रीके पूत्र, कुमारो ने जिस रीतिके अनुसार विवाह किया है, वह शक्य अर्थात् धर्म सङ्गत है या नहीं?' इस पर पुत्रोहित ब्राह्मणपरिणतों ने कहा, 'महागज। कुमारगण अभी जिस अवस्थामें रहते हैं, उसमें उक्त अनुरूप विवाहादि शक्य अर्थात् सङ्गत है।' ब्राह्मणों ने उस कार्यको शक्य उतलया था, इसीलिए कुमारगण 'शक्य' कह लाये और उन्हीं समयमें वे शक्य नामसे प्रसिद्ध हुए।



तदनन्तर उन शाक्य कुमारीने ऋषि कपिलजी अनुमति ले कर एक महानगर प्रमाणा का कपिलश्रृंगपिने उन्हे राम रथान प्रदान किया था, इसी कारण यह नगर कपिल वस्तु नामसे प्रसिद्ध हुआ। कुमारी मेमे ओषुग मजसे बडे थे, ने ही ताके राजा हुए। राजा थोपुरके पुत्र निपुर निपुरके पुत्र करकण्ठन, करकण्ठके पुत्र उरुमामुप, उरुमामुपके पुत्र हस्तिरुग्रीर्ष तथा हस्तिरुग्रीर्षके पुत्र सिंहहनु थे। सिंहहनुके शुक्रोदन, धीतोदन, शुक्रोदन और अमृतोदन नामके चार पुत्र तथा अमिता नामकी एक कन्या हुई।

अमिता बडी गूत्रसूरन थी, किन्तु कुछ दिनके बाद वह कोठिन हो गई। चिकित्सकों ने आलेपन, घसन, निरेचन इत्यादि अनेक प्रकारके प्रतीकारकी व्यवस्था की, पर रोग ठेकेना लेगा ही बना रहा। जोरे घोर अमिताके समूचे शरीरमें फोडा निकर आया और सभी मनुष्य उससे शृणा करने लगे। बाद उसके भाइ उमे रथ पर विठा कर रिमाठयके उत्तम पुत्रकी शुक्रामें ले गए। वहा उन्होंने एक पडा गडहा मोड़ कर अमिताने उममें विठा दिया। अनन्तर गड हेम प्रभूत राय, उरु, उदारतरुण, प्रावरण इत्यादि रथ पदधरो से दरराजा मन्द कर वे मन लौट जाने। चारो चार बन्द रहनेके कारण गडहेमे बडी गर्मी पडने लगी। उम आगत रथानरा राम तथा वहाकी उणताका खेपन कर अमिता कुष्ठयात्रामे निमुक्त हो गई। उसके शरीरमें एक भी फोडा न रह गया। उसने जमानुषिक सौन्दर्य प्राप्त किया। मनुष्यकी गण पा कर एक राय वहा आया और अपने पैरो से दरवाजे परके पदचरो को हटाने लगा।

उसके समीप ही कोल नामक एक राजर्षि रहते थे। उन्होंने पान प्रकारकी अभिज्ञा तथा चांग प्रकारके ध्यान प्राप्त किये थे। उमका जाश्रमपद फल, मूल, पत्र, पुष्प और जलसे समृद्ध तथा निभूषित था। उस ऋषिकी आश्रमके चारो ओर घमते हुए देव कर वाय डरके मारे भाग गया। ऋषिने गडुठेके पाम जा कर उसका दरवाना मोल दिया। वहा उम परम रमणीया शाक्यकन्याकी देन कर उन्होने पूछा, 'तुम कौन हो?' इस पर अमिताने स्नांग हाल कह सुनाया। परम सौन्दर्यशालिनी अमिताने

देव कर ऋषिने अत कारणसे उरुकुट अनुराग उत्पन्न हुआ। उन्होंने सोचा 'यथा स सारमें पेसा फोड़े हे जो चिर प्रहचारी हो तथा जिसके हृदयमें आसक्ति हू तरु भी न गई हो। काठमें जिस प्रकार आग छिपी रहती है, उसी प्रकार प्रहचारीयोंके हृदयमें अनुरागवह प्रच्छन्न भावमें विद्यमान है और मौन मिलने ही वत अनुरागरूप आशान्ति प्रकृषित हो जाता है।

बाद यह राजर्षि शाक्यकन्याके सहचामगे ध्यान तथा अभिज्ञासे भ्रष्ट हुए। वे उस कन्याकी अपने आश्रममें ले गए। उक्त कोल ऋषिके औरस ओर शाक्यकन्या अमितानेके गर्भमे वसोस पुत्र उत्पन्न हुए। वे सभी देवनेमें उडे ही सुन्दर और अश्रिनजटा धारण किये हुए थे। अनन्तर अमिताने अपने पुर्वोसे कहा, 'तुम लोगोके मातामह कपिलवस्तु नगरके राजा हैं, अतएव तुम लोग वही जायो।' मातापिताकी अनुमति ले कर कुमारोने कपिलवस्तु नगरकी ओर यात्रा कर दी। वहाके शाक्योने ऋषिकुमारोसे पूछा, 'आप लोग कौन ह और कहासे आये हैं?' इस पर वे लोग बोले, 'अनुदिमवत प्रदेगमें कोल नामक जो राजर्षि रहते हैं हम लोग उन्हीके पुत्र तथा शाक्यराज सिंहहनुके दीहित हैं। हमारी माता सिंहहनुकी लडकी है।' शाक्यगण यह सुन कर उडे प्रसन्न हुए। जब उन्होने सुना, कि चिम कुष्ठरोग प्रस्ता अमितानेके निरासन किया था, वह रोगमे निमुक्त हो गई और उसोके गर्भसे इन ऋषिकुमारोको उत्पत्ति हुई है, तब उनके आनन्दकी सोमा न रही। उन्होने कुमारो को पचुर दान दिया। शाक्यकन्याओके साथ उनका विवाह हुआ। कोल नामक ऋषिके औरससे उनका जन्म हुआ या इसीलिए वे लोग कोलियवज नामसे प्रसिद्ध हुए।

शाक्योके देवदह नामक एक जनपद था। वहा सुभूति नामक एक ममृदिशाली शाक्यराजा रहते थे।

\* 'कि नापि तानचिरप्रहचारी न चात्य गगानुगयासमृद्धो।

पुनाऽपि सा रागतिना प्रदुष्यति तिष्ठ यथा काष्ठगर्भं अनुहृत्पम् ॥'

। नखदानफलपत्रता, महाराश, जलव, महाभग, सुदन्तरित-काव्य इत्यादि ग्रथोंमें भी ऐसी ही आशान्तिना वर्णित है।

पूर्वाक्त कोलियवधको किसी कन्याके साथ उनका विवाह हुआ। सुभूतिके माया, महामाया, अतिमाया, अनन्तमाया, चूलीया, कोलीसोवा तथा महा प्रजावती नामकी सात कन्या उत्पन्न हुई। पहले ही कहा जा चुका है, कि सिंहदत्त कपिलवस्तुके सिंहासन पर अधिष्ठित थे। उनके शुद्धोदन, शुद्धोदन, धौतोदन और अमृतोदन नामक चार पुत्र तथा अमिता नामकी एक कन्या थी। सिंहदत्तके मरने पर शुद्धोदन कपिलवस्तुके मिहासन पर बैठे। पूर्वाक्त देवदहके राजा सुभूतिके जो पाच कन्याएँ थीं उनमेंसे माया और महाप्रजावतीको शुद्धोदनने न्याहा।

गानयवुद्धकी जाननी।

त्रैशाल मासकी पूर्णिमा तिथिकी ४ मायादेवीके गर्भका सञ्चार हुआ। तदनंतर दश महोनेके बाद माया देवीने कपिलवस्तु नगरके समीप लुम्बिनी नामक परम रमणीय उद्यानमें एक पुत्र प्रसव किया। पुत्रक उत्पन्न होते ही शुद्धोदन सर्वार्थ ससिद्ध हुए थे, इसीलिए उन्होंने उसका नाम सर्वार्थसिद्ध वा सिद्धार्थ रखा। सिद्धार्थके जन्म लेनेके सात दिन बाद ही मायादेवी इस लोकोसे सिधार गईं। कुमारके पालन पोषणका भार उसकी मासी महाप्रजावती गौतमीके हाथ सौंपा गया।

वाचयनीन।

हिमालय पर्वतके पास ही अस्तित नामक एक महर्षि वास करते थे। इस समय वे अपने भाजे नन्दसके साथ कपिलवस्तु नगर पधारे। सिद्धार्थमें बारह प्रकारके महापुरुष लक्षण और अस्सी प्रकारके अनुव्यजन देव कर उन्होंने शुद्धोदनसे कहा, 'यह बालक स सारा धर्ममें अरुहान करे, तो राजवक्रज्जी अथवा यदि गृह त्यागी हो, तो सम्पन्न सम्पत्ति प्राप्त करेगा।' बाद ऋषि अस्तित अपने आश्रमको चल दिये।

कुछ दिन बाद सिद्धार्थ गुरुके निष्कट भेजे गए। उन्हें विश्वामित्र नामक उपाध्यायसे नानादेशीय विधि शिक्षा मिली। गुरुके यहा जानेके पहले ही उन्होंने

निम्न लिखित बीसठ प्रकारकी लिपि सीखी थी। यथा—ग्राही, परोप्री अङ्गलिपि, पुत्ररसारी बङ्गलिपि, मगधलिपि माङ्गल्यलिपि, मनुपलिपि, अगुलीयत्रिपि, गकारिलिपि, ग्हालिपि, द्रात्रिडलिपि, त्रिनारीलिपि, दक्षिणलिपि, उग्रलिपि, सत्यालिपि, अनुलोमलिपि, अङ्ग धनुर्लिपि, दरदलिपि, गाल्यलिपि, चीनलिपि, हूनलिपि, मध्यक्षरमित्तरलिपि, पुपलिपि, देवलिपि, नागलिपि किन्नरलिपि, महोरगलिपि, अमुर लिपि, गहडलिपि, मृगचक्रलिपि, चक्रलिपि, वायुमधलिपि, भीमदेशलिपि, अन्तरीक्षदेशलिपि, उत्तरकुम्भोप लिपि, अपरगौडलिपि, पञ्चविदेहलिपि, उत्तरेपलिपि, निक्षेपलिपि, त्रिभेपलिपि, प्रक्षेपलिपि, सागरलिपि, वज्र लिपि, लेपप्रतिलेपलिपि, अनुद नलिपि, जारान्तलिपि, गणनान्तलिपि उत्क्षेपान्तलिपि, अ-वाहात्तिणीलिपि, सर्वगन्धसहारिणीलिपि, विद्यानुलोमालिपि, त्रिमिश्रित लिपि, ऋषितपस्तता, रोचमाना, धरणीप्रेक्षणलिपि, सर्वोपधिनिवन्द्यात्तिपि, म्वसारात्सप्रहणी और सर्वभूत रतप्रहणी।

धीरे धीरे उन्होंने नाना प्रकारकी विद्या सीख ली और वेद तथा उपनिषदमें विशेष पारिदृश्य लाभ किया। कुछ दिन बाद सिद्धार्थका लिपिना पढना समाप्त हुआ और वे राज जानी कपिलवस्तु लौटे। शुद्धोदनने दण्ड पाणि शाक्यनी कन्या गोपके साथ उनका विवाह कर दिया। सिद्धार्थने विवाहके समय वेद, न्याकरण, निरुक्त, छन्द, जिज्ञा, गणित, साख्य, योग, वैशेषिक इत्यादि शास्त्रोंमें विशेष पारदर्शिता दिखाई थी।

यचपनने ही सिद्धार्थको ससारासे वैशाय उत्पन्न हुआ था। जिस समय वे वर्षमाला सीपते थे उसी समय आभार उच्चारित करने ही 'अनित्य नचससार' ऐसा वाक्य उन्हें सुनाई पडा था। एक दिन वे कृपि ग्राम देगने गए और वही पर एक वृक्षके नीचे अकेले बैठ कर ध्यानमग्न हुए।

तसागरायका कारण।

अनन्तर एक दिन उन्होंने उद्यान देगनेकी इच्छा प्रकट करी हुए अपन साराधर्म रथ तैयार करनेको कहा। साराधर्म भी तैसा ही किया। साराधर्म एक जरानीन रूढ़

\* य वृत्तत क्षन्तिरिस्तर, बुद्धचरितकान्य, सनाजोद्धुरिचु, ग्यसाई रानन इत्यादि ग्रंथके भवनम्भ पर लिखा गया है।

मनुष्यको देव कर सिद्धार्थने सारथिसे पूछा, 'सारथे ! क्यों यह मनुष्य लाठीके बल झुक कर इतनी तरुलीफसे चलता फिरता है ? उसका शरीर दुर्बल और स्थैर्य विहीन तथा मांस, रुधिर और दूग्ध सभी सूख गए हैं । देहकी गिराव भी दिग्वाह पड़ती है । इसका सिंग उन्नत, दात विरल और अङ्ग प्रत्यङ्ग अत्यन्त छद्म हो गए हैं, इसका क्या कारण है ?

इस पर सारथिने कहा, 'हे देव ! यह मनुष्य बुढ़ापेके द्वारा अभिभूत, दुःखित और बलहीन हो गया है । इसकी सभी इन्द्रिया क्षीण हो गई हैं । आत्मीयगण द्वारा परित्यक्त हो यह व्यक्ति अभी निःसहाय हो गया है । वनमें जिस प्रकार सूंगी लकड़ी धर्य पड़ी रहती है यह मनुष्य भी उसी प्रकार अकर्मण्य हो काल यापना करता है ।'

सिद्धार्थने फिर भी सारथिसे पूछा, 'जराप्रस्त होना क्या इस मनुष्यका कुलधर्म है अथवा ससारके सभी मनुष्योंकी, ऐसी ही अवस्था होती है । जल्दी यथार्थ उत्तर दे, मैं इसका कारण रोज निकालूंगा ।

तब सारथिने कहा, 'देव ! यह इस मनुष्यका कुलधर्म या राष्ट्रधर्म नहीं है, ससारके सभी मनुष्य यौवन और जरा द्वारा अभिभूत होते हैं । आप तथा आपके पिता, माता, भाई और कुटुम्ब परिवार आदि कोई भी बुढ़ापेके हाथसे उटकारा नहीं पा सकते । मनुष्यकी यही एक गति है ।

इस पर सिद्धार्थ बोले, 'हे सारथे ! सभी मनुष्य निराध हैं, उनकी बुद्धिकी धिक्कार है, क्योंकि वे जवानोंके मदने उन्मत्त हो कर बुढ़ापे पर ध्यान नहीं देते । तुम रथ लोटाओ, मैं उसी जराप्रस्त व्यक्तिको पुन देखाँगा । मुझे भी एक दिन इसका शिकार बनना पड़ेगा । अतएव इस बीडामुपसे क्या प्रयोजन ?

एक समय सिद्धार्थ नगरके दक्षिण द्वार हो कर उद्यान पुने । उसी समय उन्होंने एक रोगप्रस्त मनुष्यको देव के सारथिसे पूछा, 'हे सारथे ! क्यों यह मनुष्य अपने कुत्सित मलमूत्रमें पड़ा हुआ है ? इसका शरीर पीला पड़ गया है, सभी इन्द्रिया विरल हो गई हैं तथा सर्वाङ्ग सूख गया है, यह बड़ी तेजीसे सास लेता और छोड़ता

है और बड़े बड़से समय व्यतीत करता है, इसका क्या कारण ?

सारथिने जगब दिया,—प्रभो ! यह मनुष्य रोग प्रस्त हो कर अत्यन्त दुःखित है । इसकी मृत्यु निश्चय आ गई है । इसके आरोग्यलाभकी कोई सम्भावना नहीं । इसकी तान्त बिलकुल जाती रही । रक्षा पानेकी कोई आशा न देव कर यह मनुष्य निरावलम्ब हो गया है ।'

तब सिद्धार्थने कहा, 'आरोग्य स्वप्नकीडाकी तरह अलीक है, व्याधिसमूह अत्यन्त भयङ्कर है । क्या कोई विद्वान् पुरुष ऐसी अवस्था देव आमोद प्रमोदमें मत्त हो कर सासारिक सुखका अनुभव कर सकता है ?

एक समय जब सिद्धार्थ नगरके पश्चिम द्वार हो कर उद्यानकी ओर जा रहे थे, तब एक मृतकको देव कर उन्होंने सारथिसे पूछा,—'हे सारथे ! क्यों इस मनुष्यको लोग चारपाई पर ले जा रहे हैं । इसके बाल चारों ओर बिखरे हुए हैं तथा सभी मनुष्य सिर पर धूल फेंकते हैं और छाती पीट पीट कर बिलाप करते हैं, इसका क्या कारण है ?

सारथिने उत्तर दिया, 'हे देव ! जम्हूँपमें इसको मृत्यु हुई है । यह मनुष्य फिर भी अपने पिता, माता, पुत्र और पत्नी प्रभृतिको नहीं देव सकता । घर, पिता, माता, मित्र तथा बन्धु आदिको छोड़ कर यह परलोक जाता है ।'

तब सिद्धार्थने कहा, 'यौवनको धिक्कार है, क्योंकि, जरा इसके पीछे ही लगी रहती है । आरोग्यकी धिक्कार है, कारण, विविध व्याधि अग्रशयम्भायी है । जीवकों धिक्कार है, क्योंकि मनुष्य चिरस्थायी नहीं है । विद्वान् पुरुषको धिक्कार है, कारण वे अलीक आमोद प्रमोदमें मत्त हैं । यदि जरा, व्याधि तथा मृत्यु न होती, तो मनुष्यको पञ्चस्वन्ध धारण कर इस महा दुःखका भोग नहीं करना पड़ता । उन तीनोंके नित्य मदचर हो कर हम लोगोंको जो तन्लीफ उदानों पड़ती हैं, उससे आश्चर्यकी बात और क्या है ? अतएव मैं घर लौट कर दुःखसे उटकारा पानेका उपाय करूँगा ।'

बिन्नी समय सिद्धार्थ नगरके उत्तर द्वार हो कर उद्यानकी ओर जा रहे थे कि इतनेमें उन्होंने एक शागत

दान्त संयत तथा ब्रह्मचारी भिक्षुकको देव कर सारथिसे पूछा, 'हे सारथे ! यह मनुष्य कौन है ? ये शान्ति गोल तथा प्रसान्तचित्त हैं, इनकी आर्ये स्थिर हैं और गेदबा वख पहने हुए हैं। ये न तो उदत्त हैं और न अवनत। ये भिक्षा पात ले कर शान्तभावसे विचरण करते हुए अन्तमालकी प्रतीक्षा करने हैं। इनका पूरा हाल मुझे कहो।'

इस पर सारथि बोला, 'हे देव ! यह मनुष्य भिक्षु है। इन्होंने कामसुपका परित्याग कर जिनोत आचरण अवलम्बन किया है। प्रज्या ग्रहण कर ये आत्माकी शान्तिके अन्वेषणमें लगे हैं तथा आसक्तिहीन और विद्वेपविहीन हो कर सामान्य आहार सम्रत करने हैं।'

तब बोधिसत्त्व बोले,—तुमने जो कुछ कहा, वह अक्षरशः सत्य है। शानो मनुष्य हमेशा प्रमज्याश्रमकी प्रशंसा करते आए हैं। इसी आश्रमका अवलम्बन कर अपनी भलाईके साथ साथ दूसरे जीवोंकी भी भलाई की जा सकती है और तभी मनुष्य सुपसे जीवन व्यतीत कर सकता है। सुमधुर अमृत अर्थात् मुक्ति-इसी आश्रमका फल है।

अभिनिर्गमण ।

अपने पुत्रको इस प्रकार विषय वैराग्यागुरक्त देव शुद्धोद्वेगने उन्हे गृहस्थाश्रममें रखनेकी अनेक चेष्टा की, किन्तु सब व्यर्थ। सिद्धार्थने गृहस्थाश्रमका परित्याग करनेका सकल्प कर लिया। उन्होंने दो पहर रातको पिताके शयनागारमें जा कर उनसे कहा, 'हे पिता ! आज मैं घर छोड़ चला जाऊँगा।'

सिद्धार्थका चित्त उस समय चार प्रकारके प्रणिधान में निमग्न था। यथा—ससारका महाचारक बन्धन तोड़ कर मनुष्यको उन्मुक्त करना, ससारके महान्धनर गहनसे निवारण करनेके लिए उनके प्रज्ञाचक्षुका उत्पादन करना, अहंकार ममकाराभिनिविष्ट मनुष्योंको आर्य मार्गोपदेश प्रदान करना और जो जीव धर्माधर्मके पशीभूत हो कर इस लोकसे परलोक जाते तथा परलोकसे इन लोकमें आते हैं, उन्हें प्रत्यावर्तन करेगसे वचाना।

एक दिन नगरसे बाहर जानेके लिये सिद्धार्थने

छन्द नामक अपने सारथिको रथ सज्जित करनेका आदेश दिया। इस पर छन्दक बोला, 'हे प्रभो ! अभी आपके पर पुण्यलक्षण पुत्र उत्पन्न हुआ है। वह चारों ओरका अधिपति होगा। आप त्रिपुर सम्पत्तिके मालिक हैं। कपिलवस्तु राज्य सुमुद्द तथा रमणीय है। हे देव ! मुनिगण दूसरे जन्ममें ऐसी सम्पत्तिका भोग करने कठोर तपस्या किया करते हैं। आप सम्पत्तिराम कर के भी उसका परित्याग क्यों करने चले हैं ? और भी आपकी पत्नी अत्यन्त रमणीया, विकशित पद्मनी तरह लोचनविशिष्टा, विचित्र हारशोभिता, मणिरत्नभूषिता तथा मेषनिर्मुक्त आश्रमसे समुद्भूत विद्युत्की जैसी प्रभाशालिनी, मतोहरा पर शयनगता है—येसो पत्नीकी उपेक्षा न करे।'

इस पर सिद्धार्थ बोले,—हे छन्द ! मैंने रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द इत्यादि अनेक प्रकारकी काम्य वस्तुका इस लोक तथा देवलोकमें अनन्त कल्प तक भोग किया है, किन्तु मुझे किसीमें भी तृप्ति न मिली। मैंने घर छोड़ देनेकी प्रतिष्ठा की है। वज्र, कुड्यार, शर, प्रस्तर, विद्युत्प्रभाकी तरह प्रज्वलित लौह, आग्नेय गिरिशिखर इत्यादि मेरे मिर पर क्यों न गिर जायें, पर तो भी गृहस्थाश्रममें पुन मेरी अनुरक्ति नहीं करा सकते हो।

सिद्धार्थको दृढप्रतिज्ञ देख कर छन्दने रथ सजाया। दोपहर रातको पुण्यलक्षणके योगमें सिद्धार्थ घर छोड़ कर चल दिये।

वे यथाक्रम शाक्य, कोभ्य, मल्ल और मैनेय प्रभृति देश पार कर गए। छ योजन जानेके बाद सुबह हुई। वादमें उन्होंने अपने शरीर परके आभरण उतार कर छन्दक को घर लौट जानेकी आज्ञा दी। छन्दक जहासे लौटा था, वहा एक चैत्य सस्थापित हुआ जो आज तक भी छन्दकनिर्वाण नामसे प्रसिद्ध है।

मत्तर-मुपदन ।

तदन्तर उन्होंने अपना मत्तर मु डवा लिया। जहा पर उनकी चूडा फेंकी गई थी, वहा एक चैत्य सस्थापित हुआ जो आज भी चूडाप्रतिग्रहण नामसे विख्यात है। बाद उन्होंने कपय वख पहने हुए पर घ्याघनी देवा और उसके वस्त्रसे अपना कौपिक पह-

घन बद्ल लिया। जिस स्थान पर उन्होंने कायायनत्र धारण किया था, वहाँ पर भी एक चैत्य स्थापित हुआ जो आज भी कायायग्रहण नामसे मजहूर है।

छन्दक निजार्थना आभरण ले कर राजधानी कपिल वस्तु पहुँचा। उससे सारा हाल सुन कर शुद्धोदन, महाप्रजायन्ती प्रभृति सभी गभीर जोरसागरमें डूब गए। सिद्धार्थके पुन घर लौटनेमें सम्मानना न देय उन्होंने उनके सभी आभरण पुष्करिणीमें फेंक दिये। यह पुष्करिणी आज भी आभरण नामसे विख्यात है।

गोपाने प्रातःकाल उठ कर जब सुना, कि उनके स्वामीने ससाराश्रमका त्याग किया है, तब वह पृथिवी पर गिर पड़ी और अपना केश काट कर शरीर परके सभी अलङ्कार उतार दिये। वे कहने लगीं,—हाय ! मेरे परिणायक मुझे छोड़ कर चले गए, मैं जीवनकी सभी प्रकारकी प्रिय वस्तुसे आज ही विमुक्त हुई।

दीक्षा-ग्रहण।

बोधिसत्त्व छन्दकको लौटा कर यथान्तम जाक्या और पद्मा नामकी दो ब्राह्मणीक आश्रममें अतिथि हुए। बाद वे रैनत नामक ग्रहार्थिके आश्रममें पहुँचे और अन्तमें वैशाली महानगरी गए। वहाँ आराड कलाम नामक किसी उपाध्यायसे उनके भेंट हुई। उक्त उपाध्यायके तीन सौ चेले थे। बोधिसत्त्वने भी उनका शिष्यत्व ग्रहण कर कुछ दिन तक ब्रह्मचर्यना अनुष्ठान किया। आराड कलाम अपने शिष्योंको आकिञ्चनयायतन धर्मकी शिक्षा देते थे। उनका कहना था, कि इस प्रकार विषय ग्रासनसे विरहित हो कर सर्वव्यागी होना ही परम मुक्ति है, किन्तु बोधिसत्त्व इन शिक्षासे विशेष तृप्ति लाभ न कर सके।

अनन्तर वे मगधके अतर्गत पाण्डव पर्वतरानके समीप विहार करने और राजगृह नगरमें शिक्षा माग कर अपना गुजरा चलाने लगे। राजगृहके सभी मनुष्य उन्हें देग कर बड़े ही विस्मित हुए। उन्होंने वहाँके राजा विम्बिसारके पास जा कर कहा,—महाराज ! स्वयं प्रत्या, देवराज इन्द्र अथवा सूर्य आपके नगरमें भिक्षा मागतें हैं। इस पर विम्बिसार बहुतसे मनुष्योंको साथ ले पाण्डव पर्वतराजके समीप गए।

मगधराजने बोधिसत्त्वसे कहा, 'आपके दर्शन पा कर मैं हतहत्व हो गया। टपया आप मेरे महायक हों, मैं आपसे सारा राज्य दान करता हूँ—आप यथेष्ट काम्यवस्तुका भोग करें।

उपकारो तथा दयादर्शित्त बोधिसत्त्व मधुर, गुरु दिल और प्रेमपूर्ण जाक्यमें बोले, 'हे धरणीपाल ! आप का सर्वदा मद्गल हो, मैं किसी भी कामसुखका प्राणों नहीं। कामना निपतुत्य और अनत दोषका शायर है। कामके वशीभूत हो कर मनुष्य नरक, प्रेत, तिर्यग् इत्यादि योनिमें जन्म लेते हैं। क्षानियोने कामनाकी सत्र जाह गिन्दा की है। मैंने उसे श्रेष्ठमपित्त जैमा जान छोड़ दिया है।'

इस पर विम्बिसारने पूछा,—हे भिक्षो ! आप किस वेषसे आये हैं ? आपका जन्म कहा हुआ और आपके माता पिता कहा रहते हैं ?

बोधिसत्त्वने उत्तर दिया,—हे राजन् ! आपयो का सुसमुद्दिहाली कपिलवस्तु एक नगर है। वहाँ के राजा शुद्धोदन मेरे पिता हैं। बुद्धत्वलाभकी आशासे मैंने प्राज्या ग्रहण की है।

तब विम्बिसार बोले,—आपके दर्शनसे हम बड़ा आनन्द हुआ। हम लोग आपके ही पित्तके शिष्य हैं। हे राजन् ! यदि आप बुद्धत्व प्राप्त करें, तो मैं आपके ही धर्मका आश्रय लूँ। यह कह कर विम्बिसार बोधिसत्त्वके चरणोंकी चन्दना कर राजगृहकी लौट आये।

उस समय गृधक नामक कोई उपाय याय राजगृहमें अध्यापना करते और अपने शिष्योंको 'नैव सपाना सदायतन समापत्तिके उपाय' की व्याख्या देते थे। उनका कहना था, कि श्रद्धा, धर्म, स्मृति, समाधि और प्रज्ञा इन पाँचोंका अग्रलब्धन कर मोक्षमार्गका पथिक होना उचित है। मुक्तिलाभ होनेमें प्रान और अद्यान दोनों का अतिक्रम किया जा मरता है। बोधिसत्त्वने कुछ समय तक गृधकसे प्रमिशिक्षा प्राप्त की। इसके बाद वे मगधके गवाशीर्ण नामक पर्वत पर गए और वहाँ तीन प्रकारकी आध्यात्मिक उपमा उनके मनमें उदित हुईं। इन्होंने कहा, कि जिसके काम्य वस्तु विन

यक राग, लज्जा या विषामात्री निवृत्ति नहीं हुई है, वह कभी भी गान्धर्विक तथा शारीरिक दुःखने निमुक्त नहीं हो सकता। यदि कोई मनुष्य आग जलाने की इच्छासे भी गो लकड़ीको पानीमें डुबा रखे और फिर उसी लकड़ीको भी गो शरणसे रगड़े, तो वह उससे कभी भी आग नहीं निराश सकता। उसी प्रकार जिमका चित्त रागादि द्वारा अभिभूत है, वह कदापि ज्ञानज्योति लाभ नहीं कर सकता। यही उपमा बोधिसत्त्वके मनमें पहले उदित हुई। बाद उन्होंने सोचा, कि जो भी गो लकड़ीको जमीन पर रख कर भी गो शरणसे उसे रगड़ता है, वह भी जिम प्रकार अग्नि उदात्त करनेमें समर्थ नहीं होता उसी प्रकार जिमका हृदय रागादिद्वारा अभिपिक्त है, उसे भी ज्ञान ज्योति नहीं मिलती यही दूसरी उपमा हुई। आन्तर उनके मनमें यह उत्पन्न हुआ, कि जो मृगो लकड़ीको जमीन पर रख कर सभी शरणसे रगड़ता है, वह उसने अनायाम आग जला सकता है। इसी तरह जिसके चित्तसे रागादि विलक्षण चला गया है, वही सिर्फ ज्ञानाग्नि लाभ करनेमें समर्थ होता है। यही तीसरी उपमा कहा गई।

इसके बाद उन्हें गया प्रदेशमें उड़निल्या ग्रामके ममीय नैर्गुना नामकी पर नदी मिली। उस समुदाय गीके किनारे बैठ कर वे सोचने लगे, कि वर्तमान युगमें जम्बूद्वीप पाच प्रकारके पापोंका क्लृप्त है। अभी मैं जम्बूद्वीपके मनुष्योंको किस प्रकार धर्मकार्यमें अभिविधित करूँ, यही मेरा चिन्तनीय विषय है। इस प्रकार सोचते हुए बोधिसत्त्व छ घण्टाकी तपस्यामें प्रवृत्त हुए। सबसे पहले उन्होंने धारुका नरु ध्यानका अनुष्ठान किया। जिम प्रकार बलवान् मनुष्य दुबलके ऊपर अनायास ही आसन कर सकता है, उसी प्रकार वे चित्त तथा देहको सयन करने लगे। जिस समय बोधिसत्त्व उक्त ध्यानामें निगमन थे, उस समय उनके मुँह और नाकसे सासका आना जाना तो विलक्षण बन्द था, परतु उनके कर्णछिद्रसे घड़ी आवाज निकलने लगी थी। धीरे धीरे वह छिद्र भी बन्द हो गया। मुँह, नाक और कानके छेदोंका बन्द होना ही

था, कि सास ऊपरकी ओर चली और मस्तक भेद कर बाहर निकल गई। बाद उन्होंने आहारका नियम कर दिया और अन्तमें प्रतिदिन वे पर चावल खाने लगे। धीरे धीरे उनका शरीर क्षीण होने लगा। कुछ दिन बाद वे यथाविहित आसन पर बैठ कर ललितव्यूह नामक समाधिमें निगमन हुए। बोधिसत्त्व जिस समय नैर्गुना नदीके किनारे बोधिवृक्षके नीचे योगामन पर आसीन हुए उस समय उन्होंने कहा था, 'इस आसन पर मेरा शरीर शुभ्रता लाभ क्यों न करे और मेरा त्वक्, अस्थि तथा मांस यही पर त्रिगुण क्यों न हो जाय, किंतु जब तक सुदुर्लभ उदुधय्य लाभ न कर सकूँगा तब तक मैं कदापि इस आसन परने न डिगूँगा। (अभितरिस्तर)

बुद्धचरितकायके १६ सर्गमें लिखा है,—राजर्षिचशो द्वय महर्षि बोधिसत्त्व जब परमज्ञान लाभ करनेके लिए दृढप्रतिज्ञा हो बोधिवृक्षके नीचे बैठे, तब ससारके सभी मनुष्योंके आनन्दकी सोमा न रही, किंतु सद्वर्माका शब्द मार डर गया। मनुष्य जिसे कामदेव, चित्तायुध और पुष्पणर कहते हैं, पण्डितोंने उसे ही कामराज्यका अधिपति मुक्तिना विद्येयी मार बतलाया है। जिलास, हर्ष और दर्प नामके तीन एत तथा रति, प्रीति और लुण्णा नामकी तीन कन्याने मांगसे पूछा, 'हे पित ! आज आप इतने उदात्त क्यों हैं ?' इस पर मारने कहा, 'शाक्य मुनि दृढप्रतिज्ञा रूप धर्म, सत्वरूप आयुध तथा बुद्धिरूप बाण धारण कर मेरा मारा राज्य जीतनेके लिए बोधिवृक्षके नीचे बैठे हैं, इसी हेतु मेरा मन विचलित हो गया है। यदि वे मुझे पराजित कर ससारमें मोक्ष धर्मका प्रचार करेंगे, तो मैं राज्यमें ज्युत हो जाऊँगा तथा कन्दर्पने वृत्तिका भी लोप हो जायगा। अतएव जब तक वे दिव्यचक्षु प्राप्त न करें और मेरे ही राज्यमें रहे तब तक मैं उनको उच्छिन्न कर डालूँगा। जिस प्रकार नदीका वेग बढ़ कर पुल तोड़ देता है, मैं भी उसी प्रकार उनका भेद करूँगा।' बाद मनुष्यद्वयका अस्वास्थ्यकारी मार पुष्पमय घनुष् और मोहोत्पादक पाच जाण ले कर अपने पुत्र तथा कन्याके साथ उक्त वृक्षके नीचे उपस्थित हुए। अनंतर मार घनुष्के अग्रभाग पर काया हाथ रख प्रजातचित्तमें योगामन पर बैठा और मन्सागरके पार-

गमनेच्छु बोधिसत्त्वने वाते करने लगा। दोनोंमें पहले वाग्युद्ध हुआ। अन तर मारने अपने पुत्र, ऊनरा और असत्प सेनाओंके साथ त्रिविध उपायसे बोधिसत्त्व पर आक्रमण कर दिया, किंतु वे टससे मस न हुए।

मार सम्मुख सभ्राममें पराजित हो कर अत्यंत विषण्ण चित्तसे अपना घर लौटा। बादमें रति, तृणा और भारति नामक तीन कन्याओंने मारको सात्त्वना दे कर कहा, 'हे पिता! आप चिंता न करे, हम लोग कीर्णलपुत्रक बोधिसत्त्वको आपके अधीन कर दे गी।' अन तर वे युवतीका रूप धारण कर उनके निकट गईं।

इन्द्रवदना तथा मोहरूप अलङ्कारमें त्रिभूषिता रति सत्कारके नाना प्रकारके सुखकी कथा सुना कर बोधि सत्त्वको रिक्तने लगी। यह बोली,—हे बोधिसत्त्व! तुम साम्राज्य सुखका परिन्धाग कर क्यों दीन भावसे समय बिताते हो? सम्पत्ति त्याग करनेसे ही मुक्ति मिलती है, यह तुमने किससे सुना है? तुम मेरे आश्रयमें आओ, पर हा, यदि तुम त्रिपथगामो न हो तब। निद्राप्रमित मनुष्य जिस प्रकार किसीकी भी बात नहीं सुनना, ध्यान मान बोधिसत्त्व उन्मो प्रकार रतिकी बात सुन न सके।

रतिका कहना रातम होते ही तृणा और भारति आ कर बोधिसत्त्वको नाना प्रलोभन दिवाने तथा वृद्धका रूप धारण कर नाना उपदेश वाषय कहने लगीं।

एक बार रति, तृणा और भारतिने उनके समोप जा हाथ जोड़ कर कहा था,—भगवन्! हम लोग आपको शरणमें आई हैं। आप हमें प्रव्रज्याधर्म प्रदान करें। आपकी कथा सुन हम सब ग्राहस्थ धमका परित्याग कर सुवर्णपुरसे बहा आई हैं। हम कन्दर्पकी लडकी तथा हमारे पांच सौ भाई हैं। वे सब भी सद्धर्म प्रव्रण केरनेकी उत्सुक हैं। आपने वैराग्यका अलम्बन किया है, अतएव हम सब आज ही विधवा हो जावे गी।

निलज्ज मारन भी अन्तमें यथासाध्य चेष्टा की, पर उसको एक भी न चत्री। बोधिसत्त्व कन्वपको जीत कर महाप्रीत्याहारक्युह नामक समाधिमें लग गए।

बोधिसत्त्वने इस प्रकार मार सेनाकी हरा कर परम शान्ति प्राप्त की। उनका चित्त सुप्रसन्न हुआ। वे पहले सुचित्तक, दूसरे अजितक, तौमरे निष्प्रोतिक और चौथे

अदु यादु न ध्यानमें विहार करने लगे। चित्तकी मत् तथा असत् चित्तिया ही मङ्गलदायक हैं, ऐसा सोच कर उन्होंने सजितकध्यानमें परमानन्द लाभ किया था। फिर चित्तकी मन तथा असत्चुचित्तियोंका परस्पर विरोध मिट जानेसे ही उन्हें अजितक समाधि लाभ हुआ। जब प्रीति और अप्रीति इन दोनोंके प्रति उनकी उपेक्षा उत्पन्न हुई, तब निष्प्रोतिक ध्यान प्राप्त हुआ। सुख और दुःख पर सम्पूर्णरूपसे तिरोहित होनेसे उनका चित्त धीरे धीरे सुनिर्मल हो गया और तभी उन्होंने अदु यासुरा ध्याना लाभ किया।

अनन्तर रात्रिके प्रथम याममें बोधिसत्त्वके दिव्य चक्षु उत्पन्न हुए। उन्होंने तत्त्वज्ञानना साक्षात्कार प्राप्त किया। रात्रिके मध्यम याममें उन्हें पूर्णत विषयीकी शाद आई और अन्तमें वे समारके दुःखका कारण बूढ़ने लगे। तदन्तर चाहा और आम्हन्तर जगत्के क्रिया प्रवाहके मध्य किस प्रकार अविच्छिन्न कार्यकारण भाव निद्यमान है इसमा निर्णय करनेमें वे प्रवृत्त हुए। उक्त भाग के अराएडा नियमके वशाभूत हो कर इस आदिसमार को चाहा वस्तु उत्पत्ति, स्थिति और विनाशको प्राप्त होती है। आध्यात्मिक मसारमें भी बुजल और अबुजल चैतसिक वृत्तियोंने अविद्याकी वशावृत्तों हो कर उत्पत्ति तथा निरोध लाभ किया है। समारमें किस प्रकार दुःख की उत्पत्ति होती है इसका निर्णय करते हुए बोधिसत्त्वने कहा, कि अविद्यासे सत्कार, सत्कारने विज्ञान, विज्ञान ने नामरूप, नामरूपसे पडावतन, पडावतनने स्पर्श, स्पर्शसे वेदना, वेदनासे तृष्णा, तृष्णासे उपादान, उपादानसे भव, भवसे जाति और जातिसे जरामरण, शोक परिदेव, दुःख, दीर्घमनस्य, उपायास इत्यादिकी उत्पत्ति होती है।

अविद्या अध्याग अज्ञान ही दुःखका कारण है। बाद बोधिसत्त्व रात्रिके शेष याममें यह सोचने लगे, कि किस प्रकार अविद्याको निवृत्ति हो जाय, ताकि सभी मनुष्य दुःखसे धिरमुक्ति लाभ कर सकें। अन तर उन्होंने दुःख निवृत्तिना एक उपाय बूढ़ निकाला।

बोधिसत्त्वने जिस सुहृदमें स मारके दृ एममृहको उत्पत्ति तथा निरोधका कारण बतलाया था, उसी सुहृद ने वे 'बुद्ध' नामसे प्रसिद्ध हुए।

बुद्धत्व लाभ करनेके बाद भी सात दिन तक वे बोधि वृक्षके नीचे बैठे थे। पाचवे सप्ताहमें उन्होंने मुचिलिन्द नागराज भवनमें और उठेमें अजपालके न्योप्रोधमूल में राम तथा मातये ममाहमें तारायगमनमें विहार किया था। उसी समय लघुपुत्र और मलिन नामक दो सौतेला बचिष्क बहुतमे मनुष्योंके साथ स्थितिसे उत्तरको ओर जाते थे। उन्होंने वृष्टी ब्रह्मा भक्तिसे बुद्धको आहार प्रदान किया था।

तदन्तर धमचक्र प्रवर्तन करनेके लिये बुद्ध वाराणसी महाजनगरमें सुगदाय नामक स्थानकी ओर चल दिये। गुरुदेव आजीवक नामके त्रिमी दार्शनिकसे उनको मंत्र हो गई। दोनोंमें ताना आध्यात्मिक विषयका कथोपकथन हुआ। अन्तमें आजीवकने पूछा, 'हे गौतम! तुम कहा जाओगे?' उस पर बुद्ध बोले, 'मैं पहले वाराणसी और बाद काशिकापुरी जा कर समागमें अतिवहत धमचक्रका प्रवर्तन करूंगा।' तब आजीवकने ताना मार्ग कर कहा, 'हे गौतम! मैं ताना हूँ। तुम्हारा गन्तव्यपथ अभी बहुत दूर है।'।

अनन्तर गया प्रदेशके सुदयान नामक नागराजने बुद्धको न्योता दिया। कुछ दिन बाद वे गङ्गा तटी पास कर वाराणसी पहुंचे। वहा उन्होंने महाकाश्यप, अश्वजित्, महानाम तथा कौण्डिन्य प्रभृति पाच शिष्योंके निकट निजान धमकी व्याख्या की। इसी प्रसङ्गमें बुद्धदेवने कहा था, - 'दुःख, दुःखको उत्पत्ति, दुःखका निरोध और दुःखको निरोधका उपाय इन्ही चारोंकी आर्यमार्ग कहते हैं। जन्म, जरा, व्याधि, मरण, अप्रियसंयोग और प्रियविशेष इत्यादि सभी दुःख शब्दवाच्य हैं। सम्यक् तृष्णा ही दुःखको उत्पत्ति का कारण है और इसकी निवृत्तिसे ही दुःख निवृत्त होता है। सम्यग् दृष्टि, सम्यग् स्मृत्य, सम्यग् चारु, सम्यक् कर्मान्त, सम्यगाजोष, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि ये आठ आर्याष्टाङ्गिक मार्ग कहलाते हैं और इन्ही आठोंका अवलम्बन करनेसे दुःख निवृत्त होता है।

कुछ दिन बाद ५४ सुराज और एक हजार तीर्थिकने बुद्धदेवका धर्म ग्रहण किया। ये तीर्थिक पहले अग्निनी उपासना करते थे। मगधाधिपति महागज विम्बिसार

भी उसी समय बौद्धधर्ममें दीक्षित हुए। सारिपुत्र और मौद्गल्यायन ये दोनों बुद्धदेवके सर्वप्रधान शिष्य थे। आपण ये त्रेण अग्रध्यायक कहलाये।

अन्तर बुद्धदेव कपिलवस्तु नगर मुलाये गए। उनके पिता शुद्धोदत्त उन्हें देख कर बड़े ही विस्मित हुए। उस समय बुद्धके पुत्र राहुल और सौतेला भाई नन्द दोनोंने बौद्धधर्म ग्रहण किया। कुछ दिन बाद बुद्धके चचेरे भाई अनिरुद्ध और आनन्द तथा साला देवदत्त बुद्धप्रवर्तित प्रथममें दीक्षित हुए। बुद्धदेवने आनन्दको प्रधान उपरधायकका पद दिया। बाद वे वैशाली नगर गए। वहा उन्होंने अपने शिष्योंको संसारकी अनित्यता पर उपदेश किया। अनन्तर वे गजगृहके समीप एक स्थानमें पधारे। वहा वे गेगप्रस्त हुए और जीवक नामके सुप्रसिद्ध चित्रिन्सकने उन्हे दया दी। गेगमुक्त हो कर बुद्धदेवने अनेक अलौकिक घटना दिखाई। यह देव कर कूटदन्त और शौल नामक ब्राह्मणने भी बौद्धधर्म ग्रहण किया। कोशलराज प्रसेनजित् भी इसी धर्मके अनुयायी हुए।

उसी समय देवदत्तने मगधराज अजातशत्रु के साथ मिल कर बुद्धदेवको मारनेकी चेष्टा की। अतमें देवदत्त विफल मनोरथ हुए और अजातशत्रुने बौद्धधर्म तथा मुद्दुका आश्रय लिया। देवदत्त मानुष्टित पापका फल भोगनेके लिये नरकगामा हुए।

बुद्धदेव पहले शिष्योंको अपने धर्ममें दीक्षित नहीं करते थे। अपने सीनी महाप्रजायतीके विशेष अनुग्रह तथा प्रार्थना करने पर बुद्धदेवने पहले उन्हें ही दीक्षित किया। कुछ दिन बाद उनकी पत्नी यशोधरा भी बौद्धधर्ममें प्रविष्ट हुए। धीरे धीरे पाच सौ शिष्योंने बौद्धधर्म ग्रहण किया। और इसी प्रकार बौद्ध भिक्षुणी सम्प्रदायका दल गठित हुआ। राजा विम्बिसारकी पत्नीने उक्त धर्ममें दीक्षित हो कर बहुत सी शिष्योंकी इस ओर आरुष्ट किया। त्रिशाला नामकी शिषिकून्याने बौद्धसम्प्रदायकी यथेष्ट उन्नति की थी।

ध्यावस्तीके अनाथपिण्डक नामक एक बचिष्कने बुद्धधर्मका अवलम्बन कर उन्हें जेतवन विहार प्रदान किया था। बुद्धदेव उसी विहारमें वास कर धर्मोपदेश दिया करते थे।



कुछ दिन बाद बुद्धदेवके दो शिष्य सारिपुत्र तथा मीढगयायनने निर्माण काम किया। बाद आनन्द ही उनके सेवक बने। आनन्द बुद्धके साथ घूम घूम कर धर्म प्रचार करते थे।

जिसी समय बुद्धदेवके आदेशानुसार आनन्दने अमर्या मिश्रकरो राजगृह नगरीकी उपस्थानशालामें बुलाया। वहा बुद्धदेवने कहा,--हे भिक्षुगण ! मैं तुम लोगोंकी स्नात अपरिहानीय धर्मका उपदेश देता हूँ, त्यागने सुनो -

जब तक तुम लोग मम, भस्म, निद्रा और आमोद इन सबमें रत न रहोगे, तब तक तुम लोगोंकी पापेच्छा प्रपल न होगी और जब तक तुम लोग पापमित्रता आश्रय न लीगे तथा हमेशा निर्माणलाभके उपायमें लगे रहोगे तब तक तुम लोगोंका अर्थ यतन न होगा।

हे भिक्षुगण ! और भी सुनो--जब तक तुम लोग प्रज्ञावान, होमान, विनयी शान्त्यक्ष दीर्घशाली, स्मृतिमान् और प्रजाप्राप्त करने रहोगे तब तक तुम लोगोंका क्षय नहीं होगा।

अन्य स्नात अपरिहानीय ये हैं--जब तक तुम स्मृति, पुण्य योग्य प्रीति प्रश्रय, सम्मधि और उपेक्षा इन स्नात प्रकारके ज्ञानाङ्गकी भावना करोगे, तब तक तुम्हारा अर्थ यतन नहीं।

और भी स्नात अपरिहानीय धर्मका विषय वर्णन करना हूँ सुनो। जब तक तुम लोग अमित्य अनान्य शुभ आर्दीनय प्रहाण विराग और निर्गोध इन स्नात प्रकारकी सजाओका चिन्ता करोगे, तब तक तुम लोग चिन्तारोगे कि सम्सारकी सभी वस्तु अनित्य और अतीत हैं; सर्वोक्त परिणाम अशुभ तथा सभी पापमय हैं। इस प्रकार चिन्ता कर अजित पुण्यका संरक्षण, अर्थ पुण्यका लाभ, उत्पन्न पापका परित्याग और अन्य पापकी अनुत्पत्ति इन चार विषयोंमें तुम लोग सम्यक् रूपसे चेष्टाकरना होगे। अनन्तर समासासकिका त्याग कर, धामनाओका नाश कर सकोगे।

दूसरे छ अपरिहानीय धर्म ये हैं--जब तक भिक्षुगण वायमनोवाक्पयने ब्रह्मचारियोंके प्रति मित्रता-सा व्यवहार करेंगे, जब तक वे भिक्षुगण व्यवसृष्टका

सिर्फ अपने ही भोग न कर शीलवान् ब्रह्मचारियोंको भी कुछ बात देंगे और जब तक वे अपने सदाचारको रखा कर सज्जमी और दृष्टि रखेंगे, तब तक उनका क्षय नहीं होगा।

अनन्तर बुद्धदेव राजगृह छोड़ कर आनन्दके साथ अलम्बिका नामक स्थानमें पहुँचे जहा बहुत से भिक्षु रहते हुए थे। वहा उन्होंने शीलसमाधि और प्रसाधियमें नाना धर्मोपदेश करते हुए कहा था, कि शीलपरिशुद्ध समाधि, समाधिपरिशुद्ध प्रज्ञा और प्रज्ञापरिशुद्धचित्त उचित फलदायक होता है।

कुछ दिन बाद वे आनन्दा गए। उहा सारिपुत्र नामक शिष्यके साथ उनकी भेंट हुई। आनन्दके प्राचारिकाप्रपन्न में वे विहार करने थे, कि इतने हीमें सारिपुत्रने उहा धा कर प्रणाम करते हुए कहा, भगवन् ! आपके प्रति मेरी अटूट भक्ति है, क्योंकि इस प्रथिनी पर आज तक किसी गंने अनन्य या ब्राह्मणने चन्म नहीं किया है, जो आपकी अवेशा अधिकतर क्षातो हों। इस पर बुद्धदेव बोले-- हे सारिपुत्र ! पूर्वकालमें जिन सब क्षातो मनुष्योंने जन्म ग्रहण किया था, तुम उनके चित्तके साथ अपने चित्तकी तुलना कर क्या जान सकते हो--वे कैसे शीलसम्यक्, धर्मपरायण तथा प्रज्ञावान् थे ? और भी क्या तुम बता सकते हो, कि भगिन्यफलमें जो सब ज्ञानो मनुष्य जाय भूत होंगे उनका चित्त, धर्म और प्रज्ञा कैसी होगी ? हे सारिपुत्र ! तुमने यदि मेरे चित्तने साथ अपने चित्तकी तुलना की है, तो यह बताओ, कि मेरे जीव, धर्म और प्रज्ञा कैसी हैं ?

इस पर सारिपुत्रने जवाब दिया, भगवन् ! मैं भूत, भगिन्यन् और वर्त्तमान ज्ञानियोंके चित्तके साथमें प्रपन्न चित्तकी तुलना करनेमें समर्थ नहीं। मैं सिर्फ प्रार्थित धर्मकी प्रणालीसे जानकार हूँ। राजा बन्दी अट्टालिका बाना कर उने मज्जपुत दोषारने घेर देते हैं। उनमें सिर्फ एक ही दरवाजा रखा जाता है जिस पर एक दरवान हमेशा रखा रहता और परिचित आदर्मीको भीतर जाने देता है। अट्टालिकाके मोतर जानेका न तो कोई दूसरा रास्ता हो सकता और न दीवारमें कोई ऐसा छेद बना होता है, जिससे वह एक छोटी बारी

भी आ जा सके। हे भगवन्! भूत, भविष्यत् और वर्तमान कालके ज्ञानी मनुष्योंने धमका डीमर वैसा ही पर दरवाजा खोल रखा है। उन लोगोंका रहना है, कि पहले काम, हिंसा, आलस्य, चिकित्सा और मोह इन पाच प्रकारके प्रतिबन्धका निवारण करना चाहिये। अनन्तर क्रोध, उपनाह, प्रशदान, ईर्ष्या, मात्सर्य, शाठ्य, माया, मद, निहिंसा, अहो, अनपलपा, स्त्यान, भौद्धत्य, अश्रादुष्य, कौपीन्य, प्रमाद, मृपितस्मृतिता, विभ्रप, अमप्रज्ज्य, काँटत्य, सिद्ध, विवर्क तथा विचार ये चौबोस प्रकारके उपलेश अर्थात् चित्तका दुखितभाव परिवर्जन करना फल्य है। इसके बाद यह हमेशा यात् रखनी चाहिये, कि शरीर अपवित्र है, देवता दुष्मयी हैं चित्त चञ्चल है और सभी पदार्थ मिथ्या हैं। फिर स्मृति पुण्य, वीर्य, प्रीति, प्रश्रुति, समाधि और उपेक्षा इस सम्बोधि अंग अर्थात् परम ज्ञानके विषयमें सोचना उचित है। और इसी प्रकार सोचने सोचते सम्बोधि अर्थात् परम ज्ञान लाभ किया जा सकता है। भूतकालके ज्ञानियोंने इसी प्रणालीका अवलम्बन कर सम्बोधि प्राप्त की थी। भविष्यत्कालके ज्ञानी मनुष्य भी इस पथका अनुसरण कर सम्बोधि लाभ करेगे। हे भगवन्! ध्याने भी उक्त प्रणालीका अवलम्बन कर सम्बोधि लाभ किया है।

अनन्तर बुद्धदेव पाटली प्राम गए। वहाके उपासकोंने उनकी गृह उपातिर की। बाद बुद्धदेव बोले,—हे उपासकगण! अर्पामिन् और दुग्गील गृहस्थोंकी पाच प्रकारसे हानी होती है,—(१) वे बड़े दरिद्र होते हैं, (२) उनका चारों ओर दुर्नाम फैल जाता है, (३) मनुष्य उनका विश्वास नहीं करते, (४) देहागसानके समय भी उनके चित्तका उद्वेग निवृत्त नहीं होता और (५) मरनेके बाद वे निरयगामी होते हैं। त्रिनु सुगील मनुष्य पाचो प्रकारके लाभ उठाते हैं—(१) वे महा सुखका भोग करते हैं, (२) उनका सुनाम चारों ओर फैलता है, (३) उनका अन्त करण प्रसन्न रहता है, (४) देहागसानके समय उनके चित्तमें किसी प्रकारका उद्वेग नहीं रह जाता और (५) मरनेके बाद उन्हें स्वर्ग प्राप्त होता है।

अनन्तर बुद्धदेव आनन्द और भिक्षुकोंके साथ कोटि

नामक गात्र गये। वहा उन्होंने भिक्षुकोंको सम्बोधन कर कहा,—हे भिक्षुगण! चार प्रकारके सत्यका प्रवृत्त तत्त्व न जाननेके कारण ही मनुष्य चारम्बार इस लोक तथा परलोक जाते जाते हैं। दुःख, इसकी उत्पत्ति, इसका प्रस और इसके धर्मका उपाय इन चार महा सत्यका अच्छो तरह जान लेनेसे ही भवतृष्णाकी निवृत्ति तथा पुनर्जन्मका उच्छेद होता है।

इसके बाद बुद्धदेव नाडिका नामक स्थानमें पटुवे और जहाँ उन्होंने भिक्षुकोंको धर्मादेश नामका धर्मापदेश दिया जिसका सार यह था—जिस मनुष्यका बुद्धधर्म और सद्गुण पर दृढ विश्वास है, उसे नरक या प्रेतयोनिमें जन्म नहीं लेना पड़ेगा।

कुछ दिन बाद बुद्धदेवने पैशाली नगरी जा कर आत्रपाली गणिकाके घर भोजन किया था। उक्त गणिकाने प्रीतिभावसे कहा, “भगवन्! मैं अपना आश्रय भिक्षुसभको प्रदान करती हूँ, कृपया इसे ग्रहण कीजिये। अनन्तर बुद्धदेव उसे नाना प्रकारके धर्मापदेशसे उत्साहित कर वहामें चल दिये।

बुद्धदेवने वहासे विदा ली कर विजयग्राममें गया काल बिताया। उस समय उन्हें अस्वस्थ देख भिक्षुगण व्याकुल हो गए। इस पर उन्होंने आनन्दसे कहा, ‘हे आनन्द! भिक्षुगण मुक्तसे और क्या चाहते हैं? मैंने तुम लोगोंके निमित्त प्रकाश्य धर्मका प्रचार किया है—इसमें कुछ भी गुहा नहीं है। तुम लोग इसका आश्रय ग्रहण कर धर्मरूप दीपक जलाओ और दूसरे किसी धमका आश्रय मत लो, अपनेमें ही अपना आश्रय लो। हे आनन्द! मेरे निर्वाणके बाद जो यह धर्मदीप प्रज्वलित कर मुक्ति लाभके निमित्त अपने ही ऊपर निर्भर करेगा, दूसरेका आश्रय नहीं लेगा, उही भिक्षुओंके मध्य अग्र गण्य होगा।

अनन्तर बुद्धदेव पैशालीनगरीके चापलचित्तमें कुछ दिन तक ठहरे। उसी समय पापात्मा मार्गने आ कर उनसे कहा, ‘हे भगवन्! आप परिनिर्वाण लाभ करे—आपका अन्तिम समय आ गया है।’ इस पर बुद्धदेव बोले, ‘जगत भिक्षु, भिक्षुणी, उपासक और उपासिका समूह विनीत, विशारद, धर्मरत्न तथा धर्मानुधर्मचारी

न हो ले गे, जब तक मनुष्य समाजमें ब्रह्मचर्य सुप्रचारित नहीं होगा, तब तक हे मार ! मैं परिनिर्वृत्त न होऊँगा । तुम इसकी चिंता न करो । आजसे तीन महीने बाद मैं परिनिर्वाण लाभ करूँगा ।'

इसके बाद उन्होंने आनन्दसे कहा—हे आनन्द ! मांशुके आठ सांघान हैं,—१) आ जिनके मनमें रूपका भाव विद्यमान है, ये ही वाराजगत्तम रूप देवते हैं । २) रा, मनमें रूपका भाव तो नहीं, किंतु वहिर्जगतमें वह दीप पडना । ३) रा मनके भीतर रूपका भाव मौजूद है, किंतु वहिर्जगत में मालूम नहीं होता । ४) रा, रूप जगत्का अतिक्रम कर 'आकाश अनंत है' ऐसी भावना करते करते आकाशा-त्यायतनमें विहार करना । ५) आ आकाशान त्यायतनका अतिक्रम कर 'ज्ञान अनंत है' इस प्रकार सांचते मोक्षते विज्ञानान त्यायतनमें विहार करना । ६) आ, विज्ञानान त्यायतनको पार कर 'कुछ नहीं है' ऐसी चिंता करते करते आकिञ्चन्यायतनमें विहार करना । ७) रा, इसका अतिक्रम कर 'ज्ञान भी नहीं है' ऐसी सोचने मोक्षते नैव सन्नानासहायतनमें विहार करना और ८) या नैव सन्नानासहायतनका अतिक्रम कर ज्ञान और प्राता दोनोंका निरोध साधन कर सन्नावेदित्युनिरोधको उपलब्धि होना ।

अनंतर बुद्धदेव वैशाली महावनको कूटागारशाला में गए । उनके आदेशानुसार आनन्दने सब भिक्षुकोंको बुलाया । बाद बुद्धदेवने उन लोगोंमें कहा,—हे भिक्षु-गण ! मैंने जो धर्मोपदेश किया है, तुम लोग अच्छी तरह उसकी पर्यालोचना कर मनुष्यकी भलाई और सुखके निमित्त ससारमें ब्रह्मचर्य स्थापित करना । और हे भिक्षुगण ! मेरे कहे हुए धर्ममेंसे सैंतीस विषय भली भाँति याद रखा जाये—चार स्मृत्युपस्थान, चार सम्यक्-प्रहाण, चार ऋद्धिपाठ, पांच इन्द्रिय, पांच बल, सात बोध्यङ्ग और आठ मार्ग । शरीर अप्रतिरुद्ध है, घेरना तुम पर्यो है, चित्त चञ्चल है तथा सभी पदार्थ भलीभाँति हैं ऐसी भावनाका नाम चतुस्मृत्युपस्थान है । अर्जित पुण्यको रक्षण, अलस्य पुण्यका उपासन, पूर्वमर्जित पापका परित्याग और नूतन पापकी अनुत्पत्ति, इन चार प्रकारकी चेष्टाका नाम चतुः

सम्यक्-प्रहाण है । असामान्य क्षमताप्राप्तिके निमित्त अभिगया, चिन्ता, उत्साह और अन्वेषणको चार ऋद्धिपाठ करते हैं । श्रद्धा, समाधि, शीघ्र, स्मृति और प्रज्ञा इन पाँचोंका नाम इन्द्रिय है और यही पांच फिर पञ्चबल भी कहलाते हैं । स्मृति, धर्म, परिश्रम, शीघ्र, प्रीति, प्रश्रुति, समाधि और उपेक्षा इन सातोंको मन बोध्यङ्ग कहते हैं । सम्यक्-दृष्टि, सम्यक्-सकल्य सम्यक्-वाक, सम्यक्-कर्मान्त सम्यग्जातीय, सम्यक्-व्यायाम, सम्यक्-स्मृति और सम्यक्-समाधि इन आठोंका नाम अष्ट आर्यमार्ग है ।

उक्त सैंतीस पदार्थ लेकर मैंने धर्मका व्यवस्था की है । तुम लोग भलीभाँति आलोचना कर जनसमाजमें इसका प्रचार करो । मैं तीन महीने बाद निर्वाण लाभ करूँगा, अतएव तुम लोग सावधान हो जाओ । उन्होंने और भी कहा था,—मेरा जीवन अब शेष होनेको आचला है, सबोंको छोड़ कर मैं चला जाऊँगा । हे भिक्षुगण ! अप्रमत्त समाहित तथा सुशील बनो और विद्यरत्नकल्प हो कर अपने आपको देवो । जो प्रमादवा परित्याग कर इस धर्ममें विहार करे गे वे ही जन्म और मसारका उच्छेद कर सदाके लिये दुःखसे मुक्त होंगे ।

अनंतर बुद्धदेव भिक्षुओंके साथ भएड नामक ग्राममें गए । वहाँ उन्होंने कहा था 'हे भिक्षुगण ! शील, समाधि प्रज्ञा और विमुक्ति इन्हीं चार प्रकारके अनुशीलनसे मनुष्य में सारपर्ययमें बहुत दिन तक चरण लगाते हैं ।

बाद वे यथाक्रम हस्तिग्राम, जाह्नग्राम जम्भग्राम और भोगनगर पधारे । उन्होंने भोगनगरके आनन्द चैत्र्यमें विहार करते समय कहा था,—हे भिक्षुगण यदि कोई भिक्षु आ कर तुम लोगोंमें कहे, कि 'उन्होंने अनुक वानय भगवान बुद्धदेवने सुना है, भिक्षुसभसे उसका उपदेश पाया है, किसी आज्ञामें कई एक रथविर भिक्षु ने मिल कर उल्लेख उक्त वाक्य कहा है, तो तुम लोग उनकी बात पर पहले विश्वास या अविश्वास न करना । उनके कहे हुए वाक्यको स्मृतिपट्ट या विनयपिट्टके साथ मिला कर देखना, यदि मूल अथवा विनयमें तदुक्त रूप वाक्य रहे तो समझना, कि उक्त भिक्षुने अनुक वाक्य भलीभाँति ग्रहण किया है और तब तुम लोग भी

उनकी बात पर अभितन्दन प्रकट करना, किंतु यदि मृत या त्रिपयमें वैसा वाक्य न मिले, तो उस पर विश्वास करना उचित नहीं।”

अनन्तर बुद्धदेव पावा नामक स्थानमें जा कर बुद्ध नामक शिष्यके आश्रयमें निहार करने लगे। बुद्धने उनके पास जा कर अभिषादनपूरा निवेदन किया, 'भगवन्! - भिक्षुसंघके साथ मिल कर आप कल मेरे यहा अपना भोजन करेंगे।' बुद्धदेवने उनका निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। बुद्धने घर जा कर अनेक प्रकारके खाद्य और बहुत सा शूकरमांस प्रस्तुत किया। दूसरे दिन बुद्धदेव उनके यहा गए और बोले, 'हे बुद्ध! तुम सूर्य-का मांस निफ मुझे ही देना—वह भिक्षुदलमें न पर सना। क्योंकि मनुष्यलोक, देवलोक और प्रहलोकमें मेरे मित्र और कोई भी ऐसा नहीं है जो उस मांसको पचा सके। मुझे परस देनेके वाद यदि और वच रहे तो उसे गडहमें फेंक देना।' बुद्धने भी वैसा ही किया।

बुद्धके यहा भोजन कर चुकनेके बाद ही बुद्धदेव लोहित प्रस्कन्दिक्क नामक व्याधि अर्थात् रक्तामास्य रोगसे ग्रसित हुए और उर्मा समय वे कुशीनगरकी ओर चल दिये। रास्तेमें उन्होंने आनन्दसे कहा, 'हे आनन्द! मैं बहुत थक गया हू। तुम एक कपडेको चार तह करके उस रूक्षके नीचे बिछा दो। मुझे प्यास लगी है, अतएव थोडा पानी भी लाओ। अनन्तर बुद्धदेवने पानी पी कर कुछ विश्राम किया।

उसी समय पुक्कम नामक आलाडकलामके कोई गिण्य पावाकी ओर जा रहे थे। बुद्धदेवकी यहा देख कर उन्होंने ने कहा, 'अहा! प्रमत्त्याका क्या ही असामान्य प्रमान है। एक समय आलाडकलाम किसी शूक्ष्मके नीचे पैठ कर तपस्या कर रहे थे उर्मा समय ५०० गाडी उनके शरीर पर हो कर चली गई, किन्तु उन्होंने न तो उन्हें देखा और न उनका शब्द ही सुन पाया।' पुक्कमकी बात सुन कर बुद्धदेव बोले 'हे पुक्कम! मैं एक समय आत्मा नामक स्थानके भूगारमें तपस्या कर रहा था। उस समय अचिरत मेघगर्जन, वृष्टिपात और विद्युत् नि सरण होती थी। उस दुष्टतनामें भूगारके दो किसान और चार पैल मर गये। जिस जगह वे किसान और चारों

वैल निपट हुए थे, वहा बहुतसे मनुष्य आ कर इकट्ठे हुए। वाद उनमेंसे एकने मुझे पूछा, 'महाशय! यहा क्या हुआ है?' इस पर मैं ने कहा—'मुझे कुछ मान्दम नहीं। फिर वह बोला, 'महाशय! देवदर्पण, मेघगगन, विद्युत् स्फुरण आदिना क्या आपकी कुछ भी खबर नहीं है? क्या आपने कोई शब्द न सुना? क्या आप सोये हुए थे?' मैंने कहा, 'नही, मैं तो जाग्रत था।' इस पर फिर वह मनुष्य बोला, 'वैश्व आश्रयकी बात है, कि आप जाग्रत थे, तो भी कुछ जान न सके।' बुद्धकी बात सुन कर पुक्कम वडे ही आश्चर्यान्वित हुए और उसी दिनसे उन्होंने बुद्ध धर्म तथा सचका आश्रय ग्रहण किया।

कुछ दिन बाद पुक्कमने बुद्धको एक सुनहला वस्त्र प्रदान किया जिससे आनन्दने उनका शरीर ढक दिया। अनन्तर बुद्ध भिक्षुओंके साथ कहुत्था नदीके किनारे गए और वही स्नान कर बुद्धके आश्रयनेमें ठहरे। बुद्धने एक पिडावन बिछा दिया और बुद्धदेवने उस पर बैठ कर कुछ समय तक विश्राम किया। अनन्तर उन्होंने पकान्तमें आनन्दसे कहा, 'हे आनन्द! बुद्धके मनमें यदि किसी प्रकारका परिताप उपस्थित हो तो तुम उसे दूर करना। उसके यहा भोजन करनेमें ही मुझे कठिन रोग हुआ है, ऐसा सोच कर वह दुःखित न होने पावे। तुम उसे कहना, कि बुद्ध और भिक्षुसंघको तिला कर जो सद्धर्म आपने मन्त्रय किया है, उससे आपकी स्वयं लाभ होगा। बुद्धके लिये यह वडे ही सौभाग्यकी बात थी, कि बुद्धने उनके यहा भोजन किया था। जो गाय घा कर उन्होंने समृद्धि तथा परिनिर्वाण लाभ किया था, वह महाफलदायक है।'।

अनन्तर बुद्धदेवने कहा—'दामशील व्यक्तिके पुण्य प्रसिद्धि होता है। मृतके वैर उत्पन्न नहीं होता, धार्मिक अमङ्गलका वर्जन कर सनते हैं और राग, द्वेष तथा मोहका क्षय होनेसे निर्वाणलाभ होता है।

बाद बुद्धदेव हिण्णवती नदी पार कर गालवन गए। वहां वे उनरकी ओर सिरहना कर एक चारपाई पर लेट रहे और बोले,—'हे आनन्द! चार स्थान सर्वोके लिये श्रद्धास्पद हैं, जहा बुद्धका जन्म हुआ था जहां उन्हें सम्यक्संबोधि लाभ हुई थी, जहा उन्होंने धर्मचक्र प्र

चित्त क्रिया था और जहाँ उनका परिनिर्वाण हुआ था।

उसी समय आनन्दने पूजा, भगवान् । 'स्वीकृतिके प्रति कैसा व्यवहार करना होगा ?' इस पर बुद्धदेवने उत्तर दिया 'अर्थात् अर्धान् उपासो मे ट न करन्ता ।' फिर आनन्दने पूजा, 'हे भगवान् । यदि उनसे भेट हो जाय, तो क्या करना चाहिये ?' बुद्ध जाले 'हे आनन्द । जना लाप अर्थात् उनके साथ वातचर्चा न करनी चाहिये ।' 'भगवान् । यदि वे बोल्चाल करे, तो क्या करना उचित है ?' 'हे आनन्द । उपस्थापन अर्थात् उनकी देवताकी तरह पूजा और उपासना करोगे ।'

अनन्तर आनन्दने बुद्धदेवने कहा, 'हे भगवान् । तुजी मगर एक जङ्गलपूर्ण छोटा नगर है, जाप वहा परिनिवृत्त न होंगे । चम्पा, राजगृह, आगन्तो साकेत कौशम्बी, वागणसी आदि अनेक महानगर हैं जहाके ब्राह्मण और क्षत्रिय आपके प्रति भक्तिगम्य हैं । वे आपके शरोरकी पूजा भी करेगे ।' इस पर बुद्धदेवने उत्तर दिया, 'हे आनन्द । तुम ऐसा न रहो । प्राचीनकालमें महासुदर्शन नामक एक धार्मिक और चतुर्भुजकी राजाने जन्म ग्रहण किया था । कुशीनगर या कुशीनतीमें उनकी राजधानी थी । यह नगर धन और जनसे भरा हुआ था । यह पूर्व पश्चिम वारु योजन लम्बा और उत्तर दक्षिण स्नात योजन चौडा है । हे आनन्द । तुम यहाके महलसे कहो, 'यि आज रात्रिके शेष याममें बुद्ध यहा पर परिनिर्वाणलाभ करेगे ।' बाद कुशीनारके महलनिं यहा आ कर बुद्धदेवकी वन्दना और पूजा की ।

इतनेमें सुभद्र नामक परिव्राजक यहा पधारे । उसी दिन रात्रिके शेष याममें गीमबुद्ध परिनिर्वाण लाभ करेगे, ऐसा जान कर वे बोले, 'मिने सुना है, कि सत्तार में जायद ही वीरुधोंकी गति मिलेगी । गीतमपुत्र आज इस लीककी छोड जायगे । मैं उनका उपदेश सुन कर धर्मविययक कई एक सन्देह दूर करूंगा । अनन्तर सुभद्र बुद्धके समीप जाऊँ उद्यत हुए । इस पर आनन्द न कहा, 'महाजय । भगवान् ज्ञान्त हा गये हैं, आप उन्हे अभी विरक्त न करे ।' 'ततो वाने तुा कर बुद्धदेवने आनन्दसे कहा, 'हे आनन्द । सुभद्रकी मत दोने-अहं मेरे पास आने दो ।' बाद सुभद्रने उनके समाप

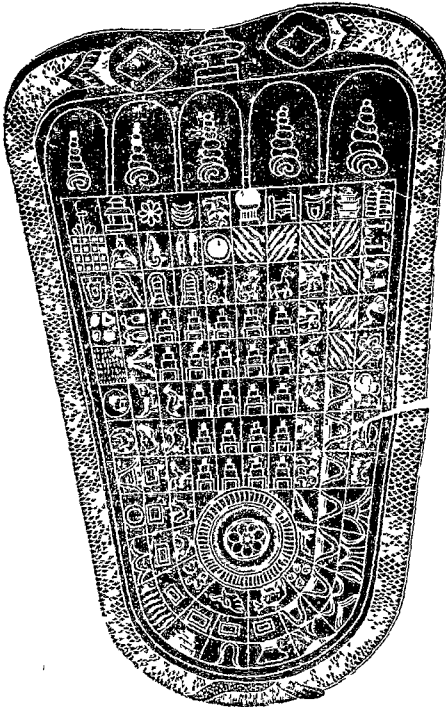
जा कर पूजा, 'हे गीतम । पुरण काश्यप, मरकरी गोभाल, अजित केजगम्बले, ककुत्सकारवायन, सञ्जयपुत्र वैरति तथा निर्बन्ध शातिपुत्र आदि जो सब धर्मापदेशक तीर्थ कर विप्रमान हैं, उनके उपदेश श्रेयस्कर है या नहीं और वे सब आर्योंनि अभिप्र है अथवा नहीं ?' इस पर बुद्धदेवने उत्तर दिया,—हे समुद्र । इन सब तीर्थद्वारकी अभिप्राता कैसी है उमका विचार करनेमें कोई फल नहीं मिलता ? मैं आपकी जिस धर्मका उपदेश देता हूँ, उसे ध्यान दे कर सुनिये । जिस धर्ममें मम्यक् इष्टि, मम्यक् सकल्प, सम्यक् वाक्, सम्यक् कर्मात्त, सम्यगाजीव, सम्यक् ध्यायाम, सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि इन आठ आर्यमार्गाका उपदेश नहो है, ऐसे धर्मावलम्बियोंमें किसी प्रनरका धमण उपपन्न नही हो सक्ता । किन्तु जिस धर्ममें उक्त आठ आर्यमार्गाका उपदेश है उसमें धमण भी मौजूद है । धमण भिन्न दूसरे व्यक्तिका वाक्य शून्य अर्थात् तिरर्थक है । हे समुद्र । मिने अपने उन्तीन्वधे वर्षसे ही प्रमज्याकी ग्रहण किया है और धर्मके अन्वेषणमें इक्ष्वायन वर्ष तक प्रया तथा समाधिना अनुष्ठान किया है । जो मेरे आचरित न्याय और धर्मानुपत्तीं नहीं हैं उनमें धमण भी नहीं है । अनन्तर सुभद्रने बुद्धके समीप प्रमज्या ग्रहण की और बाद त्रलक्षवर्षका सम्यक् अनुष्ठान कर अर्हत् पद प्राप्त किया । ये ही बुद्धके अन्तिम शिष्य थे ।

अनन्तर बुद्धने आनन्दसे कहा, 'हे आनन्द । मेरे मरनेके बाद मेरा प्रप्रचित्त धर्म ही तुम लोगोका परिचालक होगा । तदन्तर वयोउपेष्ट भिक्षुगण नष्ट भिक्षुओंका नाम वा गोत्रोच्चारण करे । हे वन्द्यो ! इसी भावसे सम्बोधन करेगे । फिर नवीन भिक्षुगण प्राचीनकी मान नीय या पूजनीय समझ कर उनको अन्वर्थता करेंगे ।'

बाद भिक्षुओंने बुद्धने कहा,—हे भिक्षुगण । यदि तुम लोगोमेसे किसीकी मेरे प्रप्रचित्त धर्ममें कोई सन्देह या मनभेद रहे, तो हमने पूछ कर दूर कर लो । कुछ देर बाद आनन्द ने,— भगवान् । आपके प्रप्रचित्त धर्मके शिष्यो विषय पर हम लोगोमेंसे किसीकी भी मनभेद नहीं है ।

अनन्तर बुद्धने भिक्षु कौसे कहा, 'हे भिक्षुगण ! सद्यो-  
गोत्पन्न पदार्थका श्वश्र अग्रश्रम्भारी है । तुम जोग

साधधान हो कर अपना अपना काय करोगे, वस यही  
मग अन्तिम राक्षय है ।



गौरीक ज्वाल्य बुद्धदेव ।

तदन्तर बुद्धदेव प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ  
ध्यानमें यथाक्रम विहार करते लगे । फिर उन्होंने आका

शान्त्यायतन, विमाननन्त्यायतन, आञ्जिन्यायतन, नैव  
म ज्ञा या म प्रायतन और म प्रा वेदयित्त निरोध इन सब

योगमें विहार किया। धाम्माज अमीम ही प्राप्त आन्त, स मार अरिञ्जन, स धा और जम शा नेनों ही अदीरु हैं इस प्रकार मोचने हुए शाता तथा प्रिय नेनों का जम होनेने बुद्धने परिनिर्वाण लाभ किया। उमी समय समास के म य एक सर्वप्रधान प्राणी निर्गोहित हुए।

बुद्धके परिनिर्वाण लाभ करने ही भिक्षुगण कृ प्री पर गिर कर रोने लगे। अनन्तर अनिरुद्धने आनन्दने कहा, 'हे शशो! कुशी नगर जा कर मल्लोत्तरे कह दो कि भगवानने परिनिर्वाण लाभ किया है।' तद्बुत्साग आनन्द वहा गण। उनके सुपत्से बुद्धके परिनिर्वाण-लाभका स्याद सुन कर महल्लुव, महल्लुपिया और मल्लगृहस्थ छाती पीट पीट कर चिलाप करने लगे। बाट उन्होंने शापवनमें जा कर नृत्य, गीत, वाद्य पुष्पमाला, गन्ध प्रभृतिसे सात दिन तक बुद्धदेहकी पूजा की। सातवें दिन वे उरुका मृत-शरीर मुकुटबन्धन नामक चैत्यमें ले गए और एक शुद्ध वस्त्र द्वारा उसे ढक दिया। इस प्रकार उनका शरीर पाच सौ वस्त्र और कापांस द्वारा आच्छादित हुआ तथा तैलपूर्ण लोहापावमें रखा गया। बाद वे सर्वगन्धमय चिता प्रस्तुत कर उसे जलाने लगे। उन्होंने चौरास्त्रे पर एक वृहत् स्तूप निर्माण कर कहा, -जो गृहस्थ यहा जा कर माल्य और गन्ध अर्पण करेगे अथवा इस स्थान पर आ आनन्ति होंगे, वे बहुत दिन तक सुखमें रहेंगे।

उमी समय महाकाश्यप ५०० भिक्षुओंके साथ पावा से बुजोगार आये। उन्होंने मुकुटबन्धनचैत्यमें जा कर तीन बार बुद्धचिताकी प्रार्थना और गिर तारा कर बुद्धप्राप्तकी वन्ता की। आन्तर चिता जग उठी और धीरे धीरे बुद्धका धर्म, धाम, स्नायु प्रभृति सभी जल गण निकल दृष्टी वच रही।

अब महाभगव अनातजवनें सुना, कि बुद्धदेवने बुजोगारगममें निर्वाण लाभ किया है, तब उन्होंने दूत द्वारा कहला भेजा, 'भगवान् क्षत्रिय थे और मैं भी क्षत्रिय हूँ। अत मुझ उनके शरीरका एक अंश अल्प मिलना चाहिये, क्योंकि मैं उस अंशके ऊपर महास्तूप निर्माण करूँगा। वैशालीनगरके लिच्छवियोंने भी यहाँ स्याद दूत द्वारा कहला भेजा। इसी प्रकार शक्यगण, अरकक्यके बुध्य

गण, रामग्रामके कोलियगण और पावाके मल्लगण सबों ने बुद्धके शरीरका एक अंश पानेकी आशा की। इस पर बुजोगारके मन्त्रोंने उरु 'भगवान् बुद्धने हम लोगों के प्रामर्शसे परिनिर्वाण लाभ किया है, हम लोग किसी को भी उनके शरीरका अंश प्रत्यापन करने के लिये तब द्रोण नामक प्राणियों सबोंने कहा, 'हे महाशय! मेरी एक बात सुना। बुद्ध शान्तिवादी थे। उनका पुत्रके शरीरका अंशके लिये हमें न लडना चाहिये। आप सभी लोग इच्छते हैं, हम इनका शरीर आठ भागोंमें बाट देंगे हैं। सब ओर स्त्र वनयाये जाय तथा सभी मनुष्य उरें देण कर प्रसन्नता प्राप्त करें।'

सब पर सभी राजा हुए और द्रोण प्राणियों बुद्धकी लक्ष्मी पाठ भागोंमें बाट दी। अनन्तर वे बोले, 'हे महाशयगण! जिस कुम्भमें सब पर बुद्धका शरीर बाटा गया है, वह कुम्भे रखा जाय। मैं उसके ऊपर एक स्तूप बनवाऊँगा।

आन्तर पिप्पलिवीचीने भीयं दूत द्वारा कहला भेजा, "भगवान् क्षत्रिय थे और मैं भी क्षत्रिय हूँ। अतः मुझ उनके शरीरका कुछ अंश मिलना चाहिये।" किन्तु दूतने आ कर भेजा, कि बुद्धके शरीरका पहले ही आठ हिस्सा हो गया है। बाद वह उनकी चिताकी भस्म ले कर लौट गया। पिप्पलिवीचीने भीयाने उस भस्मके ऊपर महास्तूप निर्माण किया। इस प्रकार आठ महा स्तूप, एक कुम्भस्तूप और एक अद्भूतस्तूप कृत वन स्तूप बनाये गये।

सब समय बुद्धधेदवका प्रार्थित धर्म गाने समागममें प्रचारित हुआ था। सम्प्रति भी गायक जातिधर्म गण भगवतीयाज मनुष्य बुद्धके अनुगामी तथा भक्त हैं।

बाद धम भन्तान्तरिणय ग्या।

बुद्धद्विजोगारा (स० पृ०) बुद्धके उद्देशसे अनुष्ठेय प्रतमेद, यह प्रत जो बुद्धके उद्देशसे किया जाता है।

बुद्धद्वय (स० पृ०) बुद्ध स्तूपकारको शान्ति द्रव्य। स्तूपिक, यह वस्तु जो स्तूपमें पाई जाय।

बुद्धधर्म (स० पु०) बुद्धका धर्म बुद्धदेव द्वारा प्रवर्गित अधिमादि धर्म। बुद्ध और शीत ग्या।

बुद्धधर्मसङ्घ ( स० पु० ) बौद्धधर्मके तीन प्रधान अङ्ग अर्थात् बुद्ध, उनका चलाया हुआ धर्म और उनकी अनुयायी धारणसम्प्रदाय ।

बुद्धनन्दि ( स० पु० ) अष्टम बौद्ध स्थविर । उत्तर भारतमें इनका वास था ।

बुद्धनाथ—एक कणकटयोगी । कणकट शब्द वेगो ।

बुद्धनिर्माण—इन्द्रजालविद्या द्वारा बुद्धका मूर्तिगठन ।

बुद्धनोलभएड—नेपालमें अवस्थित एक छोटा हट । इसके उत्तर पूर्व कोनके फलजलसे जलधारा निकलती देखी जाती है । कहते हैं, कि शङ्खुधानी तीन प्रस्तरकी जो मूर्ति हैं उन्हीके हाथमेंके शरसे यह जल हृदयमें गिरता है । वह स्तोत्राखिनी कर्मती नामसे प्रसिद्ध है । हृदके मध्यभागमें जलशयन नामक विष्णु मूर्ति प्रतिष्ठित है । सूर्यशशीय राना हरिदत्तम उक्त मन्दिरकी प्रतिष्ठा कर गये हैं ।

बुद्धपालित ( स० पु० ) नागाजुनका शिष्यभेद । इन्होंने आर्यदेव निरचित प्राथादिकी टीका लिपी है ।

बुद्धपिएडी—बुद्धका स्तूप ।

बुद्धपुर—फसाह नदी तीरवर्ती एक प्राचीन ग्राम । यह मधुयादिके दूसरे किनारे अवस्थित है । यहा एक गण्ड शैलके ऊपर बटसे भयसायशिष्ट मन्दिर वृष्टिगोचर होते हैं । यहाको त्रिङ्ग-मूर्ति बुद्धेश्वर नामसे प्रसिद्ध है । स्थानीय लोग गयापुरीके गदाधरकी तरह बुद्धपुरीके बुद्धेश्वरका माहात्म्य गाते हैं ।

बुद्धपुराण ( स० कृ० ) १ बुद्धाविर्भावोद्दि क्षापक पुराण भेद । २ लघु ललितविस्तरका नामान्तर ।

बुद्धभद्र ( स० पु० ) एक प्यातनामा बौद्ध । इन्होंने अपने माता पिताको प्रसन्न करनेके लिये सुगतायाम निर्माण किया ।

बुद्धभूमि ( स० खी० ) बौद्धोंका स्वप्नप्रथमेद ।

बुद्धमन्त्र ( स० कृ० ) १ धारणी । २ बुद्धका मन्त्र ।

बुद्धमार्ग ( स० पु० ) १ बुद्धका अवलम्बित पथ, बौद्ध धर्म । २ एक बौद्धमिश्र । ये महाराज कुमारसुतके राज्यकालमें विद्यमान थे ।

बुद्धमित्त ( स० पु० ) वसुवन्धुके शिष्य नवम बौद्ध स्थविर ।

बुद्धमिहिर—सिंहके पुत्र एक प्रसिद्ध बौद्ध । १४० शकमें उत्कीर्ण उनकी शिलालिपि पाई जाती है ।

बुद्धरक्षित ( स० पु० ) बुद्धेन रक्षित । १ बुद्ध द्वारा रक्षित । २ बौद्धधर्मक्षु भेद ।

बुद्धराज ( स० पु० ) राजभेद ।

बुद्धलोकनाथ—प्रसिद्ध बौद्ध-यति ।

बुद्धवचन ( स० कृ० ) १ बौद्धसूत्र । २ बुद्धके वाक्य ।

बुद्धयन ( स० कृ० ) बुद्धेन नामक पर्यतभेद । यहा बाँसका एक बटा घन है ।

बुद्धवर्म—चालुक्यवंशीय एक राजा । चालुक्यराजवंश देवो ।

बुद्धविषय ( स० पु० ) बुद्धधर्म ।

बुद्धस गीति ( स० खी० ) १ बौद्ध प्रथमेद । २ बुद्धके सङ्घमेंकी रक्षाके लिये तीन बौद्ध महासभा । बौद्ध देवो ।

बुद्धसिंह ( स० पु० ) असङ्ग बोधिसत्त्वके एक शिष्य ।

बुद्धसेन ( स० पु० ) राजकुमारभेद ।

बुद्धस्थान—राजपूतानेके अन्तर्गत एक प्राचीन जनपद । यह जयपुरसे बैराट जानेके रास्ते पर अवस्थित है । यहा बुद्धपद आदि पाये जाते हैं ।

बुद्धागम ( स० पु० ) बौद्धशास्त्र ।

बुद्धानुस्मृति ( स० खी० ) बौद्ध सूत्रभेद ।

बुद्धान्त ( स० पु० ) बुद्ध भावे क, तस्य अन्त परिच्छेद । जोरकी अवस्थाभेद, जाग्रदवस्था ।

बुद्धावतारस्थान—फल्गुनदी तीरवर्ती बोधगया । यहा शाक्यसिंह बुद्ध हुए थे ।

बुद्धि ( स० खी० ) बुध्यतेऽनयेति बुद्ध क्तिन् । १ निश्च, यात्मिका अन्त करणवृत्ति, यह शक्ति जिसके अनुस्मार मनुष्य किसी उपस्थित विषयके सम्बन्धमें ठीक ठीक निवार या निर्णय करता है । पर्याय—मनोपा, विषणा, धी, प्रहा, शेषुषी, मति, प्रेक्षा, उपलब्धि, चित्त, सम्मित्त, प्रतिपद्, हृत्ति, चेतना, धारणा, प्रतिपत्ति, मेधा, मनन, मनस्, ज्ञान, बोध, हृल्लेख, सत्या, प्रतिभा, आत्मजा, पण्डा, विज्ञान । ( रागि० शब्दरत्ना० )

भगवद्गीतामें सात्त्विक, राजसिक और तामसिक इन तीन प्रकारकी बुद्धिका उल्लेख है ।

सात्त्विकी बुद्धि—“प्रवृत्तिश्च निवृत्तिश्च कार्याकार्य मयामये ।

बन्ध मोक्षश्च या त्ति बुद्धि सा पार्थ सात्त्विकी ।



राजर्षी—यथाधर्ममयमन्त्र कार्यान्नाकायमर न ।

अनगान् प्रजागामि बुद्धि मा पार्थ राजर्षी ॥

तापीरुद्धि—अधर्म धममिति वा मन्यन्ते तामवागृता ।

मर्गान् निपरीताश्च बुद्धि मा पार्थ तामनी ॥”

(गीता १२३०-३०)

जिमके द्वारा प्रवृत्ति, निवृत्ति, कर्त्तव्य, अकृत्यत्व, भय, अमय, बन्धन और मोक्षादि जाना जा सके, उसे मारिचकी बुद्धि, जिमके द्वारा धर्म, अधर्म, कार्यान्नायादि-को भलीभांति बिना जाने सुने अन्वया ज्ञान उत्पन्न हो, उसे राजर्षी बुद्धि और जिमके द्वारा अधर्मको धम और अकृत्यको कर्त्तव्य समझा जाय, ऐसे विपरीत भावप्रदाशक ज्ञानको तामनी बुद्धि कहते हैं ।

इष्टानि विपत्ति अर्थात् निद्रावृत्ति, व्यवसाय, समाधिता अर्थात् चित्तस्थैर्य, मशय और प्रतिपत्ति ये पांच बुद्धिके गुण हैं ।

“शुभ्र्या श्रवणाश्चैव प्रदय धारणा तथा ।

उदोमेहोऽर्थांगान तच्च गानत्र धीगुणा ॥” (हैम)

शुभ्र्या, श्रवण, ग्रहण, धारण, ऊह, उपोह और व्यर्थ-विज्ञान ये सात बुद्धिके गुण हैं । इनकी वृत्ति पांच हैं, यथा—प्रमाण, विपर्यय, विषय, निद्रा और स्मृति । नैयायिकोंने इस बुद्धिके दो भेद बतलाये हैं । अनुभूति और स्मृति ।

‘विमुद्वर्षादि गुणाना बुद्धिस्तु त्रिविधा मता ।

अनुभूति स्मृतिश्च स्वादुभूतिश्चतुर्विधा ।

प्रत्यक्षमन्वयनुमितिक्रियायोगित शब्दज ॥” (भाषापरिच्छेद)

बुद्धि दो प्रकारकी हैं, नित्या और अनित्या । इनमेंसे नित्या बुद्धि परमात्माकी और यह प्रत्यक्षप्रमात्मिका है । अनित्या बुद्धि जीवकी है । स्मृति और अनुभवके भेदमें इनके दो प्रकार हैं । फिर उनके भी दो प्रकार हैं, यथार्थ और अवयार्थ । अनुभवके चार भेद हैं, प्रत्यक्ष, अनुमिति, उपमिति और शब्दज । (न्याय०) साध्यके मतमें विगुणात्मिका प्रवृत्तिकी प्रथम विकार है । इसे महत्तत्त्व भी कहते हैं ।

प्रवृत्तिका प्रथम विकारा बुद्धितत्त्व है । आदिमर्ग कालमें अन्तसारी और अशरीरी आत्माके मरिचिबिजल प्रवृत्तिके माध्य पहले पहल प्रवृत्तित होती हैं । सत्य

गुण सबसे पहले बुद्धितत्त्वरूपमें प्रादुर्भूत हुआ था । वृत्त निर्मल होनेके कारण इसे महत्तत्त्व कहते हैं । इसे हृदयक्षम करनेके लिये यत्नमात्र प्राणिनिचयकी बुद्धिका योजस्थान कहा है, यह विचारना होगा । इससे देवा जायगा, कि समस्त विज्ञेय विशेष बुद्धिका विकासस्थान अन्त करण है । प्रत्येक अन्तकरण हिरण्यमूर्तिकी तरह द्विमूर्त्तिमें विद्यमान है । उसकी एक मूर्त्ति या परिमाणका नाम मनन और अध्ययसाय तथा द्वितीयका नाम अभिमान या अह है । ‘मैं’ ‘मैं हूँ’ ‘वस्तु’ ‘वस्तु है’ ‘मेरा’ ‘मुझसे करने योग्य है’, इत्यादि प्रकारके निश्चयात्मक चिकाशकी अध्ययसाय और प्राज्ञाशक कहते हैं । यह ज्ञानशक्ति सहजातरूपमें जीवनके अन्तरात्मामें निरन्तर सलल रहती है । ज्ञानशक्तिकी समष्टि ही महान् है । महान् और पूर्णज्ञान दोनों एक चीज हैं ।

साध्यमें जिसे महत्तत्त्व और बुद्धितत्त्व बतलाया है, वही पूर्णज्ञानशक्ति है । जो महान् पुरुष महान् बुद्धितत्त्व से अच्छी तरह प्रतिविम्बित होते हैं वह महापुरुष साध्योक्त सृष्टिकर्त्ता और पुराणादि शास्त्रके हिरण्यगर्भ, ब्रह्मा, कार्यब्रह्म और ईश्वर हैं ।

भूलोक, घ लोक, अतरीक्षलोक, चतुर्लोक, सूर्यलोक, प्रहलोक, नक्षत्रलोक और ब्रह्मलोक आदि समस्त पदार्थ इन महान् पुरुषोंके अधीन हैं । यह महत्तत्त्वामय व्यापक बुद्धि मेरा, तुम्हारा, उसका, चन्द्रलोकस्थ मनुष्य का, सूर्यलोकस्थ मनुष्यका, पशु पक्षीका ज्ञान है, इत्यादि क्रमसे उस उस देहमें परिच्छिन्न हो कर विराज करती है । हम लोग जिस प्रकार हस्तपदादिबिजिजित देहके ऊपर ‘मैं’ और ‘मेरा’ यह अभिमान निक्षेप किये हुए हैं, उसी प्रकार हिरण्यगर्भ या ईश्वर सम्पूर्ण बुद्धितत्त्वकी अन्त करण सामष्टिके ऊपर ‘मैं’ और ‘मेरा’ आदि अभिमान निक्षेप किये हुए हैं ।

हम लोगोंके जिम प्रकार नीचे दृष्टने पर आंग पुलते न गुन्ते सहसा अज्ञानतमका अस्त और ज्ञानका उदय होता है, उसी प्रकार नितान्त बुल्लक्ष्य प्रत्यक्ष जगत् ऊपर अपनी सुपुतावस्थासे उठा था, उसी समय प्रवृत्तिगर्भसे सूक्ष्म जायका अभिष्यञ्ज ( अक्षरमयक ), तमोमङ्ग-कारक, सृष्टिमाधर्मयुक्त भगवान् अव्ययप्रम हिरण्यगर्भ

या महत्तत्त्वका आविर्भाव हुआ था। ज्यों ही जगत्की निद्रा टूटी, त्यों ही महान् चा बुद्धिका विकास हुआ। उस समय जगत् अलक्ष्य रूपमें उसके गालमें अङ्कित हो गया। महत्तत्त्व वा बुद्धितत्त्वसे महत्तत्त्वका अविर्भाव होता है। अतः यही बुद्धितत्त्व जगत्का मूल है।

प्रकृति, महत् और सांख्यदर्शन देखो।

कालिकापुराणमें बुद्धिज्ञान और बुद्धिकका कारण इन प्रकार लिखा है—

“शाक नोपथ लोभश्च कामोमोह परासुता ।  
ईर्ष्यामनो भिचिकित्सा ह्यपास्या जुगुप्सता ॥  
डादसोते बुद्धिनाच्छेतेनो मानसा मना ॥”

( कालिकापु० १८ अ० )

शोक, क्रोध, लोभ, काम, मोह, ईर्ष्या, मान, विचिकित्सा, कृपा, असूया और जुगुप्सता ये १२ बुद्धिनाशके कारण और मानस मल हैं।

२ एक प्रकारका छन्द। इसके चारों पादोंमें क्रमसे १६, १४, १४, १३ मात्राएँ होती हैं। इसका दूसरा नाम लक्ष्मी भी है। ३ छप्पयफा ४२वा भेद। ४ उपजाति वृत्त फा १४वा भेद। इसका दूसरा नाम सिद्धि भी है।

बुद्धिक ( स० पु० ) नागराजभेद, एक नागरा नाम।

बुद्धिकर शुक्र—द्विविध जलाशयोत्सर्ग प्रमाणदर्शनके प्रणेता।

बुद्धिकामा ( स० स्त्री० ) बुभारानुचर मातृभेद, कार्तिकेयकी एक मातृकाका नाम।

बुद्धिचक्र ( स० पु० ) प्रज्ञाचक्र, घृतराष्ट्र।

बुद्धिचिन्तक ( स० लि० ) बुद्धिपूज्य चिन्त फारो।

बुद्धिजीविन् ( स० लि० ) बुद्ध्या जीवति जीव गिनि। वह जो बुद्धिकके द्वारा अपनी जीविकाका निर्वाह करता हो।

“भूतानां प्राणिन श्रेष्ठा प्राणिना बुद्धिजीविन।

बुद्धिमत्सु नरा श्रेष्ठा नरेषु ब्राह्मणा स्मृता ॥”

( मनु १।१६ )

बुद्धितत्त्व ( स० स्त्री० ) सांख्योक्त प्रकृतिका प्रथम चिन्ता महत्तत्त्व। बुद्धि और प्रकृति शब्द देखो।

बुद्धिपर ( स० लि० ) जो बुद्धिकसे परे हो, जिस तक बुद्धिक न पहुच सके।

बुद्धिपुर ( स० स्त्री० ) १ बुद्धिकस्थान। २ तञ्जोरके पश्चिम

में अवस्थित एक शिवतीर्थ। इसका उत्तमान नाम पौड लूर है। प्रहाण्डपुराणके अन्तर्गत बुद्धिपुर माहात्म्यमें इसका माहात्म्य विस्तारसे लिखा है।

बुद्धिपूर्व ( स० लि० ) इच्छावृत्त, जो जान बूझ कर किया गया हो।

बुद्धिप्रकाश एक संस्कृत ग्रन्थकार। सारमञ्जरीमें वन मालीने इनका उल्लेख किया है।

बुद्धिमत्ता ( स० स्त्री० ) बुद्धिमान होनेका भाव, समझ दारो।

बुद्धिमान ( स० लि० ) चिन्तकी बुद्धि बहुत प्रबल हो, ता बहुत समझदार हो।

बुद्धिमानी ( हि० स्त्री० ) बुद्धिमत्ता] वर्रो।

बुद्धिराज—याज्ञानकृतपलतोपस्थानप्रयोगके प्रणेता। प्रज्ञ राजके पुत्र।

बुद्धिलगोविन्द—तिथिनिर्णयसम्प्रदके रचयिता।

बुद्धिलिङ्ग—सारस्वतगच्छके एक जैनाचार्य। ये नयम दशपूर्वों थे। पट्टावलीमें लिखा है, कि महावीर निर्वाणके २६५ वर्षके बाद इन्होंने आचार्यपद ग्रहण किया था।

बुद्धिवत ( हि० वि० ) बुद्धिमत्, अहमद।

बुद्धिसवष्प नायक—वेदनूर राजवंशके एक राजा। इन्होंने १७७० से १७५३ ई० तक राज्य किया था।

बुद्धिचर ( स० पु० ) विक्रमादित्यके एक मन्त्री।

बुद्धिवृद्धि ( स० स्त्री० ) १ क्षान्तिवृद्धि। ( पु० ) २ शङ्कराचार्यके एक शिष्यका नाम।

बुद्धिशक्ति ( स० स्त्री० ) प्रेक्षाशक्ति।

बुद्धिशाली ( स० लि० ) बुद्धिमत्, समझदार।

बुद्धिशूल ( स० लि० ) बुद्धिमत्, बुद्धिगाली।

बुद्धिशुद्ध ( स० लि० ) सद्बुद्धिधुक्, अच्छी समझगाल।

बुद्धिशोर्भ ( स० पु० ) बोधिसत्त्वभेद।

बुद्धिसहाय ( स० पु० ) बुद्धी बुद्धाद्यै कार्ये सहायः। मन्त्री, वजीर।

बुद्धिसागर ( स० लि० ) १ अगाधबुद्धियुक्त। ( पु० ) २ एक कोषकार।

बुद्धिसागर—एक जैनसूक्ति, बद्धमानसूरिके शिष्य। यह शायद १०८८ खवत्में विद्यमान थे। इनका बनाया हुआ श्रीबुद्धिसागर नामक एक व्याकरण मिलता है।

बुद्धिस्य ( स० वि० ) बुद्धिरियत ।  
 बुद्धित ( स० वि० ) बुद्धिहीन, जन्ममें बुद्धि न हो ।  
 बुद्धिदा ( स० स्त्री० ) बुद्धिको नष्ट करनेवाली, शराव ।  
 बुद्धिहीन ( स० वि० ) जिसे बुद्धि न हो, मूर्ख ।  
 बुद्धीन्द्रिय ( स० स्त्री० ) बुद्ध्यात्मक वा इन्द्रिय । माने  
 इन्द्रिय ।

“मन कर्षीं तथा नेत्रे खना त्वक् च नाथिके ।

बुद्धीन्द्रियमिति प्राहुः शब्दकोशनिचक्षणाय ॥”

( शब्दरत्ना० )

चक्षु, कर्ण, नासिका, जिह्वा, त्वक् और मन यही  
 बुद्धीन्द्रिय हैं । इन्द्रिय ग्यारह हैं जिनमेंसे पांच शान्तेन्द्रिय  
 और पांच कर्मेन्द्रिय तथा मन उभय इन्द्रिय हैं । पञ्चशान्ते-  
 न्द्रिय ही बुद्धीन्द्रिय हैं ।

बुद्धेडक ( स० पु० ) चैत्य, यह स्थान जहां बुद्धदेवके  
 समय और व्यवहारां द्रव्यादि रखे हुए हैं ।

बुधबुध ( स० पु० ) १ घट लाकार जलविकार, बुलबुला ।  
 २ गर्भरूप अवयवविशेष ।

बुध ( स० पु० ) बुध्यते य, बुध (इगुपशमीप्रिःकः । पा ३।।  
 १३१) पठित । पर्याय—विद्यत्, विपश्चित्, दीपक, सत्  
 सुधी, कोविद, धीर, मनीषी, क्ष, प्राक्ष, सण्यायत्, पठित,  
 कवि, धोमत्, सूदि, इति, लब्धवर्ण, विचक्षण, दूर  
 दर्शिन, दीर्घदर्शिन, विद्वान्, दूरदृश, सूरी, वेदिन, युद्ध  
 बुद्ध, विधानग, प्रक्षिप्त, व्यक्त, प्राप्तरूप, सुरूप, अभिरूप,  
 बुधान, कथितावेदिन, यष्ट, विदित, कवि ।

( अमर, शब्दरत्न०, जटार )

“अत्युग्रं स्तुतिभिर्गुणैः प्रथितभिर्गुणैः कथामिर्गुणम् ।

नियामी रविर्न रोगे शक्य नीलोत्तुर्वाद्रथम् ॥

( नारद )

२ तत्रप्रदके अन्तगत चतुर्ध्रप्रद । घृहस्पतिकी  
 भार्या ताराके गर्भासे चंद्रके द्वारा इसकी उत्पत्ति हुई है ।  
 त्रिंशुपुराणमें लिखा है—चंद्रने देवगुण घृहस्पतिकी पत्नी  
 ताराकी हस्त किया । अनंतर घृहस्पतिकी प्रार्थनासे भग  
 यान् प्रदाने चंद्रको बटु धार रोका, तथा ममस्त देवर्षियोंने  
 भी चंद्रसे याज्ञा की ; किन्तु चंद्रने ताराका परिग्रह  
 नहीं किया । घृहस्पतिके प्रति हेषनीयघन शुभ भी उसके  
 सहायक हो गये । शर भङ्गितासे विद्यालभ कर

भगवान् यत्र भी घृहस्पतिकी सहायता करने लगे । शुभ  
 चंद्रके पक्षमें घे इस कारण प्रधान प्रधान वानय बुधके  
 पक्षमें हो गये । घृहस्पति और चंद्रमें तुमुत् समान  
 यथा । इन्द्र देवताओंके साथ घृहस्पतिकी सहायता धत्ते  
 लगे । उस समय भगवान् प्रज्ञाने अशुर और देवताओं  
 को युद्धसे निर्वृत्त कर घृहस्पतिकी तारा दिलावा की । उम  
 समय घृहस्पति ताराकी गर्भिणी देव कहने लगे, 'हमारे  
 श्रेत्रमें अन्य व्यक्तिके धर्मोंने उत्पन्न पुत्रका धारण करना  
 तुम्हारे लिये उचित नहीं है ।'

घृहस्पतिके यह वचन सुन ताराने ईषिकास्त्र  
 (युद्धके तिनकोंका गुच्छा)में यह गर्भ गिरा दिया । निक्षेप  
 भावसे ममुत्पन्न पुत्र अपने तेज द्वारा देवताओंकी अभिनय  
 करने लगा । इसको देव कर देवताओंने तारासे पूजा, तुम  
 सत्य कहा, कि यह मतान किसकी है ।' ताराने लज्जसे  
 बुध भी जवाब न दिया । उमें समय इस पुत्रगाने  
 माताको शाप देनेमें उद्यत हो कहा, क्यों नहीं हमारे  
 पिताका नाम कहती हो, मैं सुनूँ यही शाप देता हूँ  
 कि अन्य कोई भी तुम्हारे जैसे मन्धर भाषिणी  
 नहीं हो सकती ।' उस समय तारा लज्जित हो  
 बोली, 'यह पुत्र चंद्रका है ।' चंद्रने यह यथा सुन  
 पुत्रका आलिङ्गन किया और उमने कहा, कि तू अति  
 प्राज्ञ है इसलिये तेरा नाम बुध हुआ । (विष्णुपुरा० ५।३ अ०)

काशीलण्डमें लिखा है—बुधने पूर्वोक्त रूपने जन्मधारण  
 कर चंद्रकी अनुमतिसे काशीमें बुधेश्वर नामसे  
 नियलिङ्गकी प्रतिष्ठा की तथा बहुत वर्षों तक कठोर  
 तपका अनुष्ठान किया । महादेवने उसकी तपस्वता  
 प्रसन्न हो उसे यह उर प्रदान किया, 'नक्षत्रलोकके ऊपर  
 तुम्हारा लोक होगा तथा समस्त प्रहमल्लोकके बीचमें  
 तुम श्रेष्ठरूपसे सम्मानित होगे । तुम्हारा प्रतिष्ठित निर  
 लिङ्ग आराधित हो कर सबको शुद्धि प्रदान करेगा तथा  
 अन्तमें बुधप्रलोकमें उतरी गति होगा ।

( काशीलण्ड १५ अ० )

मत्स्यपुराणमें एक विशेष बात है—मैंने आनी है, कि  
 घृहस्पतिके घरमें ताराने १ यय बाद मन्तान पैदा की  
 तथा यथा हो उससे स स्वारोधि कार्य हुए ।

( मत्स्यपुराण २४

मनो पुराणोंमें हो बुधके जन्मका ज्ञान्त पूर्वोक्त-रूपसे लिया है।

गृहोंके बीच बुध चौथा है। एगोन और श्वा दणो। इसका वर्ण काली दूधके समान, यह उत्तर दिग्बली, नपुसक, शूद्रजाति, अधर्म वेदाभिज्ञ, रजोगुण विशिष्ट, मिथितरस, मिथुनराशि, मरुत मणिप्रिय और मगधदेशका अधिपति है। इसके मित्त रवि और शुक्र तथा जल चन्द्र हैं। बुधग्रहके एक एक राशिभोगधा समय २८ दिन है। कालपुरणका वाष्य बुध है। बुध गाल स्वभाव तथा सन्त शाराभिज्ञ है। इसको आश्रित धनुषके समान है। ये ग्रामचर और पशुजातिका है। बुध-ग्रहके अस्थानके अनुसार उत्पन्न बालरुके शुभा शुभादिका निणय किया जाता है।

बुधके नवाशमें उत्पन्न मनुष्य स्थूत्र शरीर, धर प्रकृति, रक्तलोचन, फालीदूधके समान श्यामवर्ण, सव्य हृदय, राजसेमानुरक्त, हृष्ट, दक्ष, स्वकुलतिलक और नाना वेशकारी होता है।

बुधके बारहवें अशमें उत्पन्न मनुष्य शुचि, सम्यकरूप शाखार्थवेत्ता, सुवी, दीर्घायु, प्रभु मित्रवर्गका आश्रय और प्राज्ञ होता है। जिन मनुष्यका जन्म बुधके तेरहवें राशिमें होता है, वह उत्कृष्ट विभ्र और सुखसम्पन्न, नाना प्रकार रत्नसमन्वित तथा दिन पर दिन उमके खजानेकी वृद्धि होती है।

मेघदि हाद्य राशिमें बुधके रहने पर निम्नलिखित फल होता है। मेघराशिमें बुधके रहनेसे विप्रहमिय, अस्त्रवेत्ता, अतिचतुर, प्रतारक, सर्वदा चिन्तान्वित, अतिरुश, सङ्गीत और नृत्यमर्मरत असत्यवादी, रति प्रिय, लिपिबेत्ता, मिथ्यासादयदाता, बहुभोजनशील, बहु-भ्रमोत्पन्न धनधान्य विनाशकर, अनेक वधनभागो, रणमें अस्थिर और वचर, धुपमें इसके दक्ष, दामिकर, दाता, ज्ञानापन्न, विज्ञानशास्त्र और वेदज्ञ, आराम, वस्त्रभूषण, और मान्यविधिबेत्ता, स्थिरप्रति, स्फोटतायुक्त, स्त्री धनयुक्त, मिथवर्ण कथनशील, गाधर्ष हास्यलोला और रतिशील; मिथुनमें रहनेसे शुभवेगधर, मिथभापी, विप्यात, मतिमान, श्लाघान्वित, मानी, प्रसिद्ध घोटके तरह क्रीडनशील, स्त्रीपुत्रविदायन, धतिकाल्य और

कलावेत्ता, कवि, स्वाधीन, प्रियतर, प्रमाणरत, अनेक कर्म-कर्त्ता, बहुपुत्रवान और वृष्टिमित्रस पन्न, कर्चट राशिमें रहने पर प्राज्ञ, विदेशनिरत, खीरति और घरमें अतिशय आसकचित्त, चपल, बहुत प्रलापी, अपने वधुओंका विद्वेषी और वादी, छेष्टा, चौरधारायुक्त, कुत्सितस्वभावी, सत्कर्मि तथा अपने वशको कीर्त्ति द्वारा प्रसिद्ध होता है।

सिंह राशिमें बुधके रहने पर—गान तथा कलाहीन, लोभविख्यात, असत्यवादी, अप्रशरणशील, धनवान, सत्वहीन, सद्गहन्ता, स्त्री दुर्भाग्यहीन, पराधीन, जघन्य कर्मकागे, स्त्रीको तरह आश्रितानाल, सन्वतिहीन, अपने कुलके विरुद्ध काम करनेवाला तथा लोभप्रिय होता है।

तुला राशिमें बुधके रहने पर—सर्वदा शिष्टपन्न और विवादमें अभिरत, वाक्चातुर्य सम्पन्न, अतिशय ध्ययी, नाना दिशाओंमें यागिन्य ध्यसायो, विद्वान्, अतिधिय और शुरुभक्त, इत्थिम ध्यहरकुशल, सम्मानित, देव और त्रिभक्त, शठतापरायण, बलहीन, शीघ्रकोप और परि तोषयुक्त होता है।

वृश्चिक राशिमें बुधके रहने पर—धर्मशोक और अर्थपरायण, अत्यन्त मर्म तथा लज्जाशील, मूर्ख, साधु शीलहीन, लोभी, दुष्टाङ्गनारतिशील, निराश्र और दम्भ निरत, अस्थिरकर्म कर, लोकविशिष्ट, अतिशय त्रिबुद्धर्मा, मृगी और नीचान्वित होता है।

धनूराशिमें बुधके रहने पर—दाता, शास्त्र, श्रुत और धीयसपन्न, मत्तणाकुशल अथवा पुरोहित, कुलप्रधान, महाविभवसपन्न, यज्ञ और अध्यापनरत, मेघावी, वाक्पटु, लिपि, लेखक और शब्दकुशल होता है।

मकरराशिमें बुधके रहने पर—नीच, मूर्ख, पण्डितप्रति, परकर्मकर्त्ता, कलादिगुणहीन, नानादुषयुक्त, शीघ्र-विहारी, अतिशय शीलसपन्न, खल, असत्य चेष्टाविशिष्ट, वधुवियुक्त, अनयतात्मा, मलिन मूर्त्ति, भयचकित और निष्ठाहीन होता है।

कुम्भराशिमें बुधके रहने पर—वाष्य और बुद्धित-कर्महीन, धर्मशून्य, लज्जारहित, आशाहीन शब्दपरा भूत, अशुचि, शीलतावर्जित, अज्ञ, अतिशय दुष्टा स्त्री

युक्त, शत्रुयुक्त, भोगन्यक्त, सर्वदा विभागवेत्ता और हीनयुक्त होता है।

मीनराशिमें बुधके रहने पर—आचार और शीघ्रनिरत, देवतानुरक्त, सततिविहीन, दरिद्र, सुन्दरीपवीयुक्त, माधुर्भोगा प्रियपात्र, परिहामग्न, शूच्यदि कर्मकुशल, परधनस चयगोत्र, राजानता और विस्थात होता है।

बुधके द्वादश राशिमें रहने पर ऊपर कहे हुए फल प्राप्त होते हैं। इसको छोड़ शत्रु या मित्रके घर्में अस्थान करने तथा उनके देवने पर भिन्न रूप फल होता है। बुध यदि मङ्गलके घर्में रहे और रवि इसको देवे, तो मत्स्यवादी, सुषी, राजसत्त्व तथा यधुर्भोगा प्रीतिपात्र होता है। इस बुधको यदि चन्द्र देवे तो युवतियोंके चित्तको हरनेवाला, अतिशय सेवक, अत्यन्त मलिन देह और शीतशील होता है।

यदि बुधको मङ्गल देवे, तो मिथ्याप्रिय, सुन्दर काय और फल्हयुक्त, पण्डित, प्रचुर धनवान्, भूमि प्रिय और शूर होता है। गृहस्पतिके देवनेसे तो सुषी, केशममूह अति सुदर, प्रभूत धनवान्, आशापक और पापात्मा होता है।

शुक्र यदि बुधको देवे, तो उपकार्यकारी, सुभाग, हुषी और चातुर्ययुक्त तथाशनिश्चर यदि देवे तो अतिशय दुःखयुक्त, उपप्रवृत्तिस पन्न हिसारत और नित्यकुलजन विहीन होता है।

इस प्रकार मङ्गल, बुध, गृहस्पति आदि जिस ग्रहके अधिपति हैं बुध उनके ग्रहमें रह कर रवि आदि ग्रहके दृष्टियुक्त होने पर विभिन्न फल होता है। विस्तार होनेके भयसे यहाँ पर सभी लिखा नहीं गया।

यदि बुधग्रह पापग्रहके सहित होवे, तो पाप और शुभग्रहके साथ होवे तो शुभफल होता है। यदि किसीके साथ नहीं रहे, तो गृहस्थामी और दृष्टि मन्थ द्वारा शुभाशुभ निर्णय करना होता है, किन्तु बुध रविके साथ रहे तो दोष नहीं होता। उसने युष्मादित्ययोग बना करना है। इस योगस्थानमें इसके नीचे रविका रहना आपश्य है अर्थात् ये जिस नक्षत्रमें रहे, रवि उन्ही नक्षत्रके न्यून नक्षत्रमें रहेगा। बुधके उत्तरी भागमें रवि रहे, तो यह योग नहीं होगा। इस भागमें

जन्म होनेमें चारचक्षु विचक्षण, ज्ञानवान्, धनवान् तथा राजगण्डलमें पूजित होता है। रविके दोमागमें जो कोई ग्रह फ्यों न रहे, यह ग्रह अस्तमित होगा। जो ग्रह अस्तमित होगा उसका फल अशुभ है। इसमें विशेषता यही है, कि बुधके अस्तमित होनेमें भी उतना अशुभ नहीं होता।

बुध—ज्योतिर्विद्या, मातृग, गणित, वैद्य, सौन्दर्य और शिल्प विद्याकारक है। इसके अस्थानको देग कर इन सबका निर्णय किया जाता है। इसके फल्याराशिके १५ अंशमें रहनेमें उच्च तथा मीनके १५ अंशमें रहनेमें नीच स्थान होता है। उच्च स्थानमें प्रहोका बल अधिक और नीचस्थानमें हीनबल होता है। इसकी पयगतिका काल २१ दिन है।

जुधारिष्ट—जातवालककी कर्कटराशिमें यदि यह भव स्थित करे और वह लग्नके दृष्टे किञ्च टवे स्थानमें हो तथा चन्द्र इसे देवे, तो जातवालककी चार वर्षमें मृत्यु होती है।

बुध यदि केन्द्रमें स्थित हो, तो बुद्धिमार, विद्वान्, माननीय, शुद्धजनके प्रति भक्तिपरायण तथा सुनीला रमणीका पति होता है। इसके तुङ्गकस्थलमें पत्नाके घचन इस प्रकार लिखे हैं—

'कन्याराशिका बुध यदि भाग्यने मिले तो स्त्री वर्षकी आयु होती है। राजा उसे सम्मानपूर्वक युवाता और कुटुम्ब उसके घर आ कर पूजा करता है। मानापिता भेष्ट होते हैं। यह धर्म करनेवाला तीर्थगामो बन नामा सुषी को भोगता है तथा स्थान स्थानमें सम्मान पाता है।

(रत्ना)

बुधका स्वरूप—ये शूद्र, श्यामवर्ण, जिह्वागुह्य प्रारो, वस्त्रलाकार, नृत्यगीत आदिमें निपुण, कौतुहल स पत्र, कोमलघ्राणयिनिष्ठ, विदोपस पत्र, रजोगुणा बलशरी, मध्यमावृत्ति, दाता, कमी शुभता कमी आद्रता करनेवाला, ग्राम, इष्टगृह और शमगाभूमि चारु तथा पत्रपत्रान्गोचर है।

हस्ता, चित्ता, स्वाति और विजारा इन चार मक्षामें जन्म होनेमें अन्यत्रो दशा होती है। इसकी दशाका भोगकाल १५ वर्ष है। इस दशामें मनुष्य उत्तरीकी

समोग मरना है तथा सब समय आमोद प्रमोदरत रहता है, नित्यचनागम और समस्त कामनाये निद्व होती हैं। अन्तर्दशा और प्रत्यन्तर्दशा आदिका फल विचार कर स्थिर करना होता है। प्रहोके अपस्थान भेदमे स्थूलफलकी पृथक्ता होती है।

विशोक्तरीय मतमें भी बुधकी दशा १७ वर्ष है। ६, १८, २७ नक्षत्रमें जन्म होने पर बुधकी दशा होती है। इस मतसे प्रत्यन्तर्दशा स्थिर कर फलना निर्णय किया जाता है। बुधकी पीडा—चूर्ण रोग, क्षिप्तता, शिर पीडा, मृगिरोग, अस्फुटवाचय, स्मृति और वाक्शाक्तिहीनता, घाक्रोरोग, अजोर्ण, सर्दी और जिह्वारोग बुधके निरुद्ध होनेसे होता है।

गोचरमें निम्नलिखितके अनुसार शुभाशुभ जाना जाता है। बुध जन्ममें स्थित हो, तो व वन, द्वितीयमें धनलाभ, तृतीयमें वध और शत्रुभय, चतुर्थमें अर्थलाभ, पंचममें असुख, षष्ठमें स्थागलाभ, सप्तममें बहु प्रकार शरीरपीडा, अष्टममें धनलाभ, नवममें पीडा, दशममें सुख, एकादशमें अर्थलाभ और द्वादशमें निरुत्ताना होता है। प्रहोके विरुद्ध होने पर—उसका दान, जप, होम, मंत्र और कवच धारण करना उचित है।

बुधका दान—नील वस्त्र, स्वर्ण, फासा, उरद, पीला फूल, अ गुर, हाथी दात ये सब दक्षिणाके साथ दान करनेसे शुभ होता है।

ये मीलसरी पुप द्वारा पूजित होनेसे प्रसन्न होते हैं। इनका होम करनेमें अपामार्गका समिन्न करना होता है। इनकी दक्षिणा सोना है। मूलिकाधारणमें वरगद वृक्षको जड़ धारण करनी चाहिये। रत्नधारणके स्थानमें पद्मरागमणि धारण करना विधेय है। इनका स्तोत्र—

“प्रियङ्गु कज्जिकास्थानं रूपयाप्रतिम बुध ।

गोम्य सन्वगुणोपेत नमामि शशिन मुनम् ॥”

( नयहस्तात्र )

ग्रहयज्ञतत्त्वमें लिखा है—बुध मगधदेशोद्भूत, अति शजात, ब्रह्मन्दीर्घ, पीतवर्ण, वैश्यजाति, चतुर्भुज, यामोर्द्धक्रममें चक्र, वर, खट्वा, और गदाधारी, स्यास्य, सिंहवाहन और पीतवस्त्र, इसके अधिदेवता नारायण,

प्रत्यधिदेवता विष्णु धनिष्ठा नक्षत्रयुक्त द्वादशीमें उत्पन्न, भ्रामन्वारी, शुभग्रह, नीलवर्ण, सुवर्णद्वयस्वामी, नर्तुल्लाट्टति, शिशु, इष्टग्रहसंचारी, वानपिच्छरुफालक खोग्रह, प्रात कालमें प्रजल, पक्षिस्थामी, मरुल रसप्रिय है। ( ग्रहयज्ञतत्त्व )

मतान्तरमें—सोम (चन्द्र) बुधका पिता और रोहिणो माता है। पुराणमें लिखा है—किसी समय चन्द्र बृहस्पति पत्नी तारादेवीको हर कर ले गये। इस कारण एक माया युद्ध हुआ। चन्द्रके पत्नसे दैत्य दानव तथा बृहस्पतिके पत्नसे इन्द्रादि देव लडे। पृथ्वीकी प्राधना से ब्रह्माने मध्यस्थ हो बुधसे तारादेवीके प्रत्यपणके लिये अनुरोध किया। इस समय तारादेवी गर्भवती थी। यह पुत्र किम्बका होगा, इसे जाननेके लिये ब्रह्माने तारासे पूछा। तारादेवीने उसको चन्द्रका पुत्र बतलाया। फिर किसीका मत है, कि बुधने वैवस्वत मनुष्या इलादेवीके साथ विवाह किया था। इलादेवीके गर्भसे पुरूरवाका जन्म हुआ। बुधने ऋग्वेदके मत प्रकाशित किये थे। ये सौम्य, रोहिण्य, प्रहसन, रोधन, तुङ्ग और श्यामाङ्ग आदि नामोंसे ये प्रसिद्ध हैं।

यह ग्रह (Mercury) सूर्यके अति सन्निकटमें अवस्थित है। इसका कक्षपथ पृथ्वी कक्षके मध्यभागमें सन्निवेशित होनेके कारण प्रति सध्यामें यह मानवकी दृष्टिगोचर होता है। पृथ्वीकी अपेक्षा इसका आयतन छोटा है। व्यास प्राय ३१४० मील है। सूर्यकी तुलनामें इसका परिमाण नियुक्तके दो अशमात्र है। पृथ्वीकी अपेक्षा इसका उत्ताप और आलोक ७ गुणा अधिक है। सौर्य कक्षपथमें भ्रमण करते करते यह ग्रह कभी कभी सूर्यगोलोकके मध्यभागमें जा जाता है। इस समय सूर्य वक्षमें एक गोलाकार दाग देखा जाता है जिसे अंगरेजोंमें Transit of mercury कहते हैं। १८६१, १८६८, १८७८, १८८०, १८८१ और १८८४ ई०में पृथ्वी वासियोंने सूर्यवक्ष पर इस प्रकार गोल विन्दु देखा था।

२ सूर्यवशीय राजविशेष। ३ कर्तव्युक्तिके प्रणेता एक कवि। ४ वैवर्मान राजाका पुत्र। ( भाग ० १/२/३० ) ५ मगधके एक राजा। ये ३६०० कलिसन्तमें विद्यमान थे। ( उम्मारिकापट्ट ) उग्रयुत देवो।

बुधकौशिक—रामरक्षास्त्रोत्रके प्रणेता ।

उत्तम—गुप्तगनीय एक राजा । १६५ सम्बतमें उत्तरीण इनकी स्तम्भलिपि पाई गई है ।

बुधचक्र ( २० इन्च ) बुधस्य ग्रहविशेषस्य चक्र । बुध ग्रहके अपनी राशिसे अन्यराशिसमें सञ्चारके समय मत्ता-ईस नक्षत्रोंका शुभाशुभ ज्ञापकचक्र ।

बुधचार ( २० पु० ) बुधस्य बुधग्रहस्य चार संचार । बुधग्रहका शुभाशुभ ज्ञापन संचार । गृहत्नहितामें लिखा है—चन्द्रपुत्र बुध उपातातशून्य हो कभी भी उदित नहीं होते । इनके उदयमें धान्यादि मृत्युके ह्यम वा वृद्धिके कारण अकसर जल, अग्नि अथवा तफान हुआ करता है । श्रमणा, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा अथवा उत्तराषाढा नक्षत्रोंको मर्दित कर यदि बुध विचरण करे, तो रोगभय तथा अनावृष्टि होती है । यह ग्रह आर्द्रासे लगायत मघा पर्यन्त जिस किसी नक्षत्रका आश्रय करे, उसीसे ग्ल-पात, क्षुधा, भय, रोग, अनावृष्टि तथा सताप द्वारा प्रजा अपीडित होगी । हस्तासे ज्येष्ठा पर्यन्त ६ नक्षत्रोंमें इसके विचरण करने पर गोपीडा, तैलादि रसोंकी मूल्यवृद्धि और नाना प्रकारके खाद्यद्रव्योंसे पृथिवी पूर्ण हो जाती है । उत्तर फाल्गुनी, कृत्तिका, उत्तर भाद्रपद तथा भरणी नक्षत्रमें इस ग्रहके विचरण करने पर प्राणियोंका धातुक्षय होने लगता है । यह यदि अभिनी, शतभिषा, मूला, तथा रेवती नक्षत्रोंको अभिमर्दित कर विचरे, तो पपय, वैद्य, नौकाजीवी, जलपदार्य, तथा अश्वका उपाघात होता है । पूर्वफाल्गुनी, पूर्वाषाढा और पूर्व भाद्रपद इन तीन नक्षत्रोंमें किसी नक्षत्रको अभिमर्दित कर विचरण करने से क्षुधा, शूल, तसकर, रोग तथा भय उपस्थित होता है ।

पराशरने पहिले बुधकी सात प्रकारकी गति निर्दिष्ट की है । यथा—१ प्राकृत, २ विमिश्र, ३ सक्षिप्त, ४ तोक्षण, ५ योगान्त, ६ घोर, ७ पाप ।

स्वाती, भरणी, रोहिणी तथा कृत्तिका नक्षत्रमें इस नक्षत्रके रहनेने प्राकृतगति होती है । मृगशिरा, आर्द्रा, मघा और अश्लेषा नक्षत्रस्य बुधकी गतिका नाम मिश्र ; पुष्या, पुनर्वसु, पूर्वफाल्गुनी और उत्तर फाल्गुनीकी गतिका नाम सक्षिप्त पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद, ज्येष्ठा, अभिनी

और रेवतीकी गतिका नाम तोक्षण है । मूला, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा नक्षत्रमें जो इसकी गति होती है, वह योगान्तिक है । श्रवणा, चित्रा, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्रमें जो गति होती है उसे घोर तथा हस्ता, अनुराधा अथवा ज्येष्ठा नक्षत्रकी गतिकी पाप कहते हैं । यही ७ प्रकार बुधकी गति है । पराशरने उद्यास्त दिवस द्वारा इसका गतिलक्षण भी निरूपित किया है । इसकी प्राकृत गति ४० दिन, मिश्र ३० दिन, सक्षिप्त २२ दिन, तोक्षण २८ दिन, योगान्त ६ दिन और पापगति १६ दिन होती है ।

जिस समय इसकी प्राकृत गति होती है, उस समय आरोग्य, वृष्टि, शस्यवृष्टि तथा मंगल होता है । संक्षिप्त तथा मिश्रगतिसे मिश्रफल होता और अन्य गतिओंसे विपरीत फल होता है ।

देवलके मतमें बुधकी गति चार प्रकार है—भ्रजु, अति वक्र, वक्र और विमल । इन चार गतिके विद्यमानका काल—३० दिन, २४ दिन, १२ दिन तथा ६ दिनमात्र है । भ्रजुगतिसे प्रजाका हित होता है, अतिवक्रगतिसे अर्थ नाश, वक्रगतिसे शत्रुभय तथा विमलगतिसे भय और रोग होता है । पौष, आषाढ, श्रावण, वैशाख अथवा माघ मासमें यदि ये दीर्घ, तो जगत्में भय किन्तु अस्तमित हो, तो जगत्में शुभ होता है । इसका कार्तिक अथवा आश्विन मासमें दृष्टिगोचर होनेसे शूल, चोर, अग्नि, रोग तथा जलका भय होता है । बुधचारण पहिलेतीका कहना है, कि इसके अस्त समयमें सब नगर रुद्ध तथा उद्यमालमें फिर वही नगर मुक्त हो जाते हैं । कोई कोई कहते हैं, कि यदि पश्चिम दिशामें इनका उदय हो, तो उन सब नगरोंमें शुभ होता है । इनका वर्ष सोने या सुभे अथवा शस्यकृमणिके समान और स्निग्ध होता है तथा स्वयं वृष्टिकाय होते हैं, उस समय सर्वोंका मंगल अन्यथा अशुभ ही होता है ।

( गृहत्नहिता बुधचार ७ अ० )

रवि प्रभृति ६ ग्रहोंमें नियमानुसार एक एक ग्रह वर्षपति होते हैं । इनमें इसके वर्षपति होने पर माघ, इन्द्रजाल, गाधर्व, लेण्य, गणित और व्यत्यजाननवालोककी वृष्टि होती है । राधा लोग प्रजाकी मलाईके लिये

माङ्गलिक कार्योंका अनुष्ठान करते हैं। जगन्में वासा और तृतीयोत्तर अतिकल रहते हैं। मनुजी न्यायचन्द्र नोति अक्छी तरह विराजित होती है। बुध अपने चर्य अथवा माममें पृथ्वी पर हाम्यक, दूत, कवि, बालक, नपु सक, युक्ति, सेतु, जल और पर्यतनिवासियों को वृत्ति तथा पृथ्वीको औपधियोंसे भरपूर कर देते हैं।

(बृहत्सं. १.११.१०-१२)

बुधनामी : हि० पु०) चन्द्रमा, बुधके पिता।

बुधतात (स० पु०) बुधस्य प्रहविशेषस्य तात पिता। चन्द्रमा।

बुधदिन (स० इ०) बुधवार दशा।

बुधदैवम—वप प्रदीपके प्रणेता, कृष्णके पुत्र।

बुधपुर—मानभूम जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह अक्षा० २१° ५८' १५" उ० और देशा० ८६° ४४' पू०के मध्य कसाई नदीके किनारे अवस्थित है। यहाँ तथा यहासे २ कोस उत्तर पाकशीडा ग्राममें अनेक जैन मन्दिरों और तीर्थङ्करादियोंकी प्रतिमूर्तिया मन्वायस्थामें इधर उधर पड़ी नजर आती हैं। बुधपुर दणो।

बुधरत्न (स० इ०) बुधप्रिय रत्न शाकपार्थिवद्वित्वात् समास। मरकतमणि।

बुधवार (स० पु०) बुधस्य वार। बुधप्रहका दिन, सात बारोंमेंसे एक वार। इस वारमें शुभ कार्यादि किये जाते हैं। इस दिन उत्तर और दक्षिणकी ओर यात्रा नहीं करनी चाहिये। इस वारमें जन्म लेनेसे जात बालक गुणी, क्रियाकुशल, मतिमान्, विनोत, मृदुस्वभाव और कमनीयमूर्त्तिका होता है।

“बुधा गुणश कुशल क्रियादी विज्ञानगीमो मतिमान विनीत।

मृदुस्वभाव कमनीयमूर्त्ति बुधस्य वार प्रमोष मनुष्य ॥”

(कोशेप्र०)

बुधसानु (स० पु०) १ पर्ण। २ यज्ञपुरुर्य।

बुधनिहशर्मा—सूत्रानवासो एक ज्यातिविद्। १७६६ ई० में इन्होंने प्रहणदर्श और प्रयोधिनी नामक उसकी टीका लिखी। ये यशोवन्तके पुत्र और गोपालके पौत्र थे।

बुधसुत (स० पु०) बुधस्य सुत पुत्र। १ पुरुरवा।

बुधस्य बुद्धस्य पुत्र। २ बुद्धके पुत्र राहुल।

बुधहाटा—खुर्ना जिलेका एक प्रसिद्ध ग्राम। यह अक्षा० २०° ३०' उ० तथा देशा० ८६° १२' पू०के मध्य अवस्थित है। यहां मन्व प्रकारके द्रव्योंका गणित्य होता है। यहांके भन्वप्राय १२ गिनाय वहुत प्रसिद्ध हैं। प्रति वर्ष रामवाता, दुर्गा और कालीपूजाके उपलभमें यहां बडा मेला लगता है।

बुधा (स० स्त्री०) बोधयति रोगिण या बुध (शुभधेति। पा। ३।१।१३५) इति कस्ततष्टाप्। जटामार्मी।

बुधान (स० पु०) बोधयति बुध्यते वा बुध बोधने (बुधिविषि इश निच। उप् २।६०) इति आनच् क्विच्। १ गुर। २ विज। ३ प्रह्वनादी। ४ म्रियनादी। ५ कवि।

बुधाना—१ युक्तप्रदेशके मुजफ्फरनगर जिलेकी तहसील। यह अक्षा० २६° १२' से २६° २६' उ० तथा देशा० ७७° ६' से ७७° ४२' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २८७ वर्गमील और जनसंख्या दो लाखके करीब है। इसमें फन्धला और बुधाना नामके २ शहर तथा १४६ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २६° १७' उ० और देशा० ७७° २६' पू० मुजफ्फर नगरसे १६ मील दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या प्राय ६६६४ है। १८५७ ई०के गदरमें चिट्रोहियोंने इस पर अधिकार जमाया पर पीछे अङ्गरेजोंने उनका दमन कर इसे पुनरुद्धार किया।

बुधाष्टमा (स० स्त्री०) बुधवारयुता अष्टमी, श्राक पार्थिवादित्वात्समास। व्रतश्रीये, बुधवारमें अष्टमी होने पर यह व्रत किया जाता है। चैत्र, पौष तथा हरिशयन कालको छोड़ अन्य मासोंमें इस व्रतको करना चाहिये। विदितकालमें यदि बुधाष्टमी को जाय, तो पुनरुत्त पुण्यका विनाश होता है।

“पतङ्गे मकर याते देवे जाप्रति माधन।

बुधाष्टमीं प्रदुर्वीत वरत्रिक्त्वा तु वैश्वरम् ॥

प्रवृत्ते तु जगन्नाथ सन्ध्याकाले मधी तथा।

बुधाष्टमीं न दुर्षीत क्त्वा म्नि पुराकृतम् ॥”

(व्रतकारविवक)

कालशुद्धिमें शुद्ध वा सन्ध्यापक्षकी अष्टमीमें बुधवार



हो, तो इस व्रतका अनुष्ठान करना चाहिये। इस व्रतके करनेसे दुःख नहीं होता।

हेमाद्रिके व्रतपत्र भविष्यत्तरमें लिखा है—सत्ययुगमें इल नामक एक राजा था। वे मली आदिके साथ महादेव के शापसे हिमालय पर गये। जिस समय उन्होंने वहाकी भूमि पर पैर रखा उसी समय उनका स्त्रीरूप हो गया। वादमें धूमते धूमते वे उमाके वनमें पहुँचे, वहा पुत्र इनको देख अपने घर ले आये। यह दिन अष्टमीयुक्त बुधवार था। इस कारण बुधवारयुक्त अष्टमी श्रेष्ठ मानी गई है। अतएव इस दिनका नाम बुधाष्टमी पडा। बुधके इस स्त्रीने एक पुत्र हुआ जिसका नाम पुरुरवा रखा गया। ये ही चन्द्रचण्डके आदि पुत्र हैं। बुधाष्टमीके दिन व्रत करनेसे सब प्रकारके अभीष्ट सिद्ध होते हैं। बुधवारमें अष्टमी सम्पूर्ण होनेसे यह व्रत होता है, खण्डा तिथिमें नहीं होता।

इस व्रतको आरम्भ करके आठवें चर्पमें प्रतिष्ठा करनी होती है। गरुडपुराणमें लिखा है, निजलाशयमें बुधको यथागति पूजा कर ब्राह्मणको दक्षिणा देनी चाहिये। वादमें बुधाष्टमी व्रतकी कथा सुन पारण करना होता है।

कथाका तात्पर्य यह है,—पुराकालमें पाटलीपुत्रमें नीर नामके एक श्रेष्ठ ब्राह्मण रहते थे। उनकी पत्नीका नाम रम्भा, पुत्रका कौशिक और कन्याका नाम विजया था तथा उनके धनपाल नामक एक बेटा था। एक दिन ब्राह्मण इनके साथ गङ्गा किनारे गये। वहा पर गोपालवने बेलकी चुरा लिया। गङ्गासे निकल कर ब्राह्मणने चुरा को नहीं देखा, तब वे बड़े दुःखित हुए और बेल दूढ़ने लिये वाममें धूमने लगे। विजया पिपासातुर हो माता के साथ मरोयग किनारे गयी। वहा दिव्य त्रिपासा इस बुधाष्टमीव्रतका आचरण कर रही थी। उनको इस व्रतका आचरण करते देख इन्होंने भी व्रतका अनुष्ठान कर दिया। व्रतके फलसे विजयाका यमके साथ त्रिपासा हुआ और कौशिक अयोध्या नगरके राजा हुये।

हेमाद्रिके व्रतपत्र और व्रतपद्धतिमें इस व्रतका विशेष विवरण लिखा है। विस्तार हो जानेके भयसे यहा पर सविस्तार नहीं लिखा गया।

बुधिकोट—महिसुरके कोलर जिलान्तगत एक ग्राम। यह

अक्षांश १२ ५४ तथा देशांश ७८ ८' पू०के मध्य स्थित है। जनसंख्या प्राय १४६० है। यहा १७०० ई०में दक्षिणात्य विजयी हैदर अली काका जन्म हुआ था। उस समय उनके पिता फते महममद खाँ गिरावे नयाब के अधीन फौजदारका काम करते थे।

बुधित (स० त्रि०) बुध्वने स्म सेट् बुध क। १ बुध। ५ शान।

बुधियाल—१ महिसुरराज्यके चित्तल दुग जिलान्तगत एक भूमिपत्ति। भूपरिमाण ३६६ चगमोल है।

२ उक्त तालुकका विचार-सदर। यह अक्षांश १३ ३६' ३० तथा देशांश ७६ २५' पू० होसदुर्ग शहरसे १६ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या प्राय १११८ है। १५वीं शताब्दीमें विजयनगरके राजकर्मचारियों द्वारा निर्मित यहाके दुर्गमें १६वीं सदीकी बहुत सी गिला लिपिया देखी जाती हैं। मुसलमान और मराठोंके विजयने यह दुर्ग तहस नहस हो गया है। १८३० ई०के गदरमें राजविद्रोहियोंने इस दुर्गमें आश्रय लिया था।

बुधिल (स० त्रि०) बुध्वने य' बुध किलच्' विद्वान्। बुध (स० पु०) बुध्वातीति वन्ध वन्धने (वन्धन्भिधा च। उष् २।७) इति नक् बुधादेशच्। १ बुधमूल। २ मूल देश ३ अग्रभाग।

बुधवन् (स० त्रि०) बुध्वन् मत्तुप् मत्स्य यः। मूल युक्त।

बुधिन्य (स० त्रि०) गाहपत्य अग्नि, बुध्न्य। बुध्न्य (स० पु०) बुध्ने मूले भव यत्। १ गाहपत्य अग्नि। २ अन्तरिक्षभव। ३ रुद्रभेद।

बुनना (हि० कि०) १ जुलाहोंकी वह क्रिया जिसमें धे रनों या तारोंकी सहायतासे कपडा तैयार करते हैं। विशेष विवरण 'वयन-विग' ग्रन्थमें दखा। २ बटुसे तारों आदिकी सहायतासे उक्त क्रियामें अथवा उसमें मिलती जुलती किन्ती और क्रियामें कोई चीज तैयार करना। ३ बहुतसे सीधे और बड़े सूतोंकी मिला कर उनकी कुछके ऊपर और कुछके नीचेमें निकाल कर अथवा उसमें गोंट आदि दे कर कोई चीज तैयार करना।

बुना—पूर्व और मध्य बङ्गवासी एक जातिकी नाम। इस जातिकी गिनती धामडमें की गई है।

बुनाई ( हि० खी० ) १ बुननेकी क्रिया या भाव, बुनाजट ।

२ बुननेकी मजदूरी ।

बुनाजट ( हि० टो० ) बुननेमें सूतोंकी मिलानजटा ढग, सूतोंके संयोगका प्रकार ।

बुनियाद ( फा० खी० ) १ मूल, जड़ । २ नास्तिकता, असलियत ।

बुनियादवासी—वैष्णव सम्प्रदायविशेष । ये लोग निर्गुण उपासक हैं । इस कारण अपने भजनमालमें किसी देव प्रतिमूर्त्तिको रख कर उसकी अर्चना नहीं करते । रामात् निमात् आदि साम्प्रदायिक वैष्णव पापएड बतला कर इनकी घृणा करते हैं । यहा तक कि, इनका अङ्गस्पर्श करनेसे ये लोग अपनेको अशुचि और पापप्रसन्न समझते हैं ।

बुनेरा—राजपूतानेके उदयपुर राज्यान्तर्गत एक नगर । यह अक्षा० २५ ३०' उ० तथा देशा० ७४ ४८' पू० उदयपुर महलमें ६० मील उत्तर पूर्वमें अवस्थित है । जनसंख्या ४२५१ है । यहाके सामन्तराज उदयपुरराजके प्रधान सहाय हैं । नगर प्राचीर घेरित और दुर्ग छारा सुरक्षित है । इस राज्यमें १ शहर और १११ ग्राम लगते हैं । राजस्व ८८००० रु० है जिनमेंसे ४६००० दरवारमें करस्वरूप देना पडता है । १५६७ ई०को यह अकबरके अधिकारमें था । १७वीं शताब्दीमें उदयपुरके राणा राजसिंह ३ मके छोटे लडके भोमसिंह औररङ्गजेवके दरवारमें गये और उन्हें हर हालतसे प्रसन्न कर बनेरा नगर जागोर स्वरूप प्राप्त किया । औररङ्गजेवने उन्हें राजाकी उपाधि भी दी । तभीसे यह उपाधि उनके वंशधरोंमें आन तक चली आ रही है । यहा १७२६ ई०में एक दुग बनाया गया था जिसे तोस वर्षके बाद ही ग्राहपुरके राजाने अपने अधीन कर लिया । परन्तु कुछ समय बाद ही श्व राणा राजसिंहने इसके यथार्थ अधिकारोंको लौटा दिया ।

बुन्द—पञ्जाब प्रदेशके हिन्दू राज्यके भूतगत एक नगर ।

बुन्दी—राजपूतानेके अन्तर्गत एक सामन्त राज्य ।

भूदा दत्त ।

बुन्दार—मद्राज प्रदेशके बीजागावाटम जिल्लाका एक प्रसिद्ध ग्राम । यह कृष्य जातिकी आवासभूमि है । पहले यहा नरयलि थे-रोक टोक प्रचलित थी । उस उप

लक्ष्यमें जो उत्सव होता था, उसे मेरिया या जुम्मा उत्सव कहत थे । १८४६ ई०के पहले यह पाप अभिनय बड़ी धूमधाममें किया जाता था । ग्रामके पूर्व, पश्चिम और मध्यमध्यलमें एक एक नरदेह सूर्यके उदयेश्वर चढाए जातो थे । इनके उपास्य देवताका नाम माणिसोरा था ।

बुन्दाला—पञ्जाब प्रदेशके अमृतसर जिल्लाअन्तर्गत एक नगर । यह नगर अक्षा० ३१ ३२' उ० तथा देशा० ७४ ५' पू० अमृतसरसे ११ मील दक्षिण पूर्वमें अवस्थित है । जनसंख्या ४५०० है । यहा सिख जातिकी संख्या ही अधिक है ।

बुन्देलखण्ड—आर्याजत्त के अन्तर्गत एक देशविभाग । यह अक्षा० २३ ५२' से २६ २६' उ० तथा देशा० ७७ ५३' से ८१ ३६' पू०के मध्य विस्तृत है । इसके उत्तरमें यमुना नदी, पश्चिम और उत्तरमें चम्पल नदी, दक्षिणमें जवल्पुर नदी और सागरविभाग, दक्षिण तथा पूर्वमें बघेलखण्ड ( रेवा ) तथा मिर्जापुर पर्वतमाला है । हमीरपुर, जलौन, भासी, ललितपुर और बान्दा नामक अङ्गरेजाधिपत जिला, ओच्छा, दतिया, समधर, अजय गढ, अलीपुर और धुरवाह, निननातोरी, फनेपुर, पहाडी, वाङ्गा आदि अष्टमाया जागीर, बरी दा, राउणी, बेरी, विहट, बिजावर, चरखारी और फालिखरका चीवीराज्य—पालदेव, पहरा, तराचन, भाईसाँदा, कम्भा, रजौला, छत्तरपुर, गडौली, गीरीहर, जासो, जिनी, खनियाघान, लुघासी, नैगवान, रिवाह, पन्ना, पिलहरी और सरिला आदि सामन्तराज्य इसके अन्तर्भूत हैं ।

यह राज्यखण्ड पिन्ध्याचल, पन्ना और बन्दीकी पयत मालासे समाच्छन्न है । इसी कारण इसका अधिकांश स्थान अधिल्यकामय है । यहाकी प्रधान नदिया सिन्धु, पडुज, घनवा, धासन, वीरमा, घेन, वागाई, पायसुनी और तोम्भ हैं जो यमुना नदीमें गिरती हैं । यहा हीरे, लोहे, फोयले और तांबेकी खान जहा तहा दिख्नाई देती हैं ।

स्वामीय प्रवाद है, कि गोंड लोगोंने सबसे पहले यहा आ कर उपनिवेश बसाया । पीछे चन्देलवंशीय राजपूतोंने गोंड राजाओंको परास्त कर अपनी प्रतिष्ठा जमाई । चन्देलराजाओंके अधिकारके समय यहा सैकड़ों शिल्पकारयुक्त देवमन्दिर और जलशाय आदि बनाये गये

ये। अभी उनका केवल भग्नावशेष माल इधर उधर विक्षिप्त देखा जाता है। अलावा इसके हमीरपुर जिलेकी जलप्रणाली, कालिञ्जर और अजयगढ़का विरयात दुर्ग तथा पञ्जुराह और महोबाका प्रसिद्ध मन्दिर आज भी उनकी प्राचीन कीर्तिकी घोषणा करता है।

फिरिस्ताके वर्णनसे मालूम होता है, कि १०२१ ई०में गजनीपति महमूदके आक्रमणके समय चन्देल राजाने ३६ हजार अणवारोही, ४५ हजार पदाति और ६४० हाथी ले कर उनका मुकाबला किया था। चन्देल चणके प्रतिष्ठाता राजा चन्द्रवर्मासे निम्न २०वीं पीढ़ीमें राजा परमालदेव ११८३ ई०में दिल्लीके चौहानपति पृथ्वीराजसे परास्त हुए थे। परमालदेवके अधःपतनके बाद राज्यमें अराजकता फैल गई और मुसलमानोंके बार बार आक्रमणसे यह स्थान श्रेष्ठ हो गया। आखिर १४वीं शताब्दीमें गङ्गाय शीय राजपूत जातिकी चन्देलशाखा इस प्रदेशमें आ कर यमुनाके किनारे बस गई। उन्होंने धीरे धीरे कालिञ्जर और काटपी नगर अधिकार किया और महोनीमें राजधानी बसाई।

१५३१ ई०में राजा रुद्रप्रतापने ओच्छा नगर स्थापन किया। इनके शासनकालमें सुन्देलाराज्यकी सीमा बहुत दूर तक फैल गई थी। पीछे सुन्देला प्रभाव यमुना के पश्चिम प्रदेशमें भी फैला। तभीसे वह स्थान सुन्देल खण्ड कहलाने लगा।

इसके कुछ दिन बाद ही ओच्छाराज रुद्रप्रतापके प्रपौत्र राजा घोरसिंहदेवने मुसलमानी आक्रमणसे भय पा कर मुगल बादशाहकी अधीनता स्वीकार की। किन्तु चम्पनराय नामक एक चन्देला सरदारने धैर्यता तीरवर्ती पार्वत्यप्रदेशमें रह कर मुसलमानी सेनाको नाकोबम लाया था।

ख्यातनामा सुन्देलाराज छत्रशाल उक्त महापुरुषके सुपुत्र थे। उन्होंने पितृपत्रका अनुसरण करके अपने जीवनकी साधन बनाया था। उन्होंने सुन्देलानगणसे प्रधान सरदार और सेनापति नियुक्त होनेके बाद अपने दलबलके साथ पत्तकी यात्रा की और वहाके पहाड़ी दुर्गों पर अधिकार जमाया। इस प्रदेशमें जहा जहा उनके शत्रु रहते थे उन सब रथानोंको उन्होंने अग्निसे जला

दिया। आपिर कालिञ्जरका दुर्ग जीत कर उन्होंने वहा अपना राज्य बसाया। १७३४ ई०में फर्च खाबादके पठान नयाव अहमद पाँ बहूंसने उन पर धावा बोल दिया। इस बार शत्रुके हाथमें विशेष क्रष्ट पा कर घमराओंकी सहायता लेनेकी बाध्य हुए। महाराष्ट्र पेशवा बाजीराव सुयोग पा कर सुन्देलखण्डमें अपनी मोटी जमानेके लिये दलबलके साथ आये और अहमद पाँकी परास्त कर सुन्देलाराजको विपदसे उद्धार किया। इस कार्यके पारितोषिक स्वरूप पेशवाकी सुन्देलखण्डके पूर्व भागका कुछ अंश और एक दुर्ग मिला। पीछे उन्होंने काशीके एक ब्राह्मण पण्डितको वह स्थान दान कर दिया। अगरेजोंके दलमें आनेके पहले तक वह स्थान उन्हीं काशीपण्डित ब्राह्मणके चशमरोंके शासनाधीन था।

इसके बाद पेशवाने ओच्छाराजसे भ्रासी छीन लिया। उन्होंने जिस सूबेदारके हाथ इस स्थानका कार्यभार सौंपा था, उन्हीके चशमरोंने कुछ समय तक वहाका राज्यकार्य चलाया था। राजा छत्रशालके चशमरगण सामान्य सम्पत्तिके उत्तराधिकारी हो कर भी भिन्न भिन्न भागोंमें इस स्थानका शासन करते थे। किन्तु इस अधःपतन शील राजवंशके राजकर्मचारियोंके निद्रोहसे महा विप्लवता उपस्थित हुई।

इस अराजकता और अन्तर्विद्रवजनित छोटी मोटी लडाइयोंसे सुन्देलाराज्यको चौपट लगने देग बाजीरावके पौत्र बली बाहादुरने (१) तलवार उठाई और घमसान सुद्धके बाद इस प्रदेशका कुछ अंश अधिकार कर लिया। १८०२ ई०में कालिञ्जर दुर्गमें तैरा डालनेके समय अनीकी मृत्यु हुई। पीछे पूना राजदरवारकी अनुमतिसे अलीके पुत्र समीर बहादुरको तरफसे हिम्मत बहादुर राजनाय की देखरेफ करने लगे।

इधर महाराष्ट्रीय मामन्त राजाओंके निद्रोह और बसाईके मन्धिपत्रके गोलमालसे अगरेजान सुन्देलखण्डके कुछ अंशों पर अधिकार कर बैठे। इस पर भयान्तुष्ट हो सिन्धिया, होलकर और घेरावपति तथा समीर

(१) य पेशवा बाजीरावकी मुगलशाह समान उत्पन्न हुए थे।

द्वारा परिचालित महाराष्ट्र सैन्यने अगरेजोंके विरुद्ध अलखधारण किया। राजा हिम्मत बहादुरने भविष्यमें अपनी स्वार्थहानि देख अगरेजोंका पक्ष लिया और इस प्रदेशका कुछ अंश फिरसे उन्हे सपुर्द किया। इस समयके बन्दोख्तके अनुसार अगरेज लोग राजा हिम्मतकी सेव्यरक्षाके लिये २० लाख रुपयेकी सम्पत्ति और महानका लिये जागीर देनेको राजी हुए। अगरेजी सेना बुन्देलखण्डमें घुसी और मीना पा कर समशेरको परास्त किया। हिम्मतकी मृत्युके बाद उनकी सम्पत्ति अगरेजराजने छीन ली। अब उनके वंशधरगण केवलमाल जागीर और वार्षिक वृत्तिका भोग करने लगे। समशेर बहादुरने अगरेजराजसे दी गई ४ लाख रुपयेकी वृत्तिले सतुष्ट हो बन्दामे रहनेकी अनुमति पाई थी। १८२३ ई०में यहा उनकी मृत्युके बाद उनके भाई जुद्धकि कर अली उनकी सम्पत्तिके अधिकारी हुए।

जुद्धकिकरके बाद अली बहादुरने उस सम्पत्तिका भोग किया। परन्तु १८५७ ई०के गदरमें उन्हे शामिल पाये जानेके कारण उनकी सम्पत्ति छीन ली गई और वे इन्दौर राजधानीमें नजर बंद किये गये। १८७३ ई०में उनकी मृत्यु होने पर उनके वंशधरोंको अगरेज राजसे १२०० रुपयेकी वृत्ति मिली।

अगरेजोंने पहले पहल इस प्रदेशमें हिम्मत बहादुर और पेशवा-प्रदत्त कुछ भूमि प्राप्त की। १८१८ ई०में पेशवाके अध पतनके बाद समुद्रा बुन्देलखण्ड अगरेजोंके दखलमें आया। इसके बाद जलीन, फामो, जैनपुर, खड़ी, चिरगाँव, पूर्वा, निजवाचगढ तिरौदा, शादगढ और बाणपुर आदि सामन्त राज्योंके शासनकर्त्ताओंके ध्ववहारने असन्तुष्ट हो वृष्टिग सरदारने उनकी सम्पत्ति अपने हाथ कर ली।

बुन्देला—बुन्देलखण्ड निगामी गाहरवाड शाखासे उत्पन्न राजपूत जाति। देवी विन्ध्यावामिनो भजानीके चरान से ये लोग बुन्देला कहलाये और उनका प्रदेश बुन्देलखण्ड नामसे प्रसिद्ध हुआ। इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि यह गाहरवाड जाति भिन्न देशसे यमुना पार में आ कर यहा बस गई थी। (१)

बुन्देलखण्डके राजइतिहासमें लिखा है, कि यह जाति अयोध्याधिपति सूर्यवर्गीय राजा रामचन्द्रके प्रथमे उत्पन्न हुई है। राज इतिहासमें इसकी वंशतालिका इस प्रकार है—

रामचन्द्रके पुत्र कुश, कुशके पुत्र हरिग्रह (महीपाल), हरिग्रहके पुत्र उरिम, उरिमके अल्म्यान, अल्म्यानके विमलचन्द्र, विमलके पुत्र छत्रपाल, छत्रपालके पुत्र योधपाल, और योधपाठके पुत्र विहङ्गराज (विहङ्गेश) थे। इन मातोंने ही अयोध्यामें राज्य किया था।

विहङ्गके पुत्र काशराजने बनारसमें आ कर राजपाठ स्थापित किया। ये ही पहले पहल काशीधर नामसे प्रसिद्ध हुये। काशीराजके पुत्र गुहिलदेव, गुहिलके विमलचन्द्र, विमलचन्द्रके गोपचन्द्र, गोपके गोविन्दचन्द्र, गोविन्दके तुहिनपाल, तुहिनके विन्ध्यराज, विन्ध्यके लुनिकदेव, लुनिकके विदलदेव विदलके अजु नरह और अजु नके पुत्र वीरभद्र थे। इन्होंने यथाक्रम काशीके सिंहासन पर बैठ कर प्रथम प्रतापके साथ राज्यशासन किया। राजा वीरभद्रके चार पुत्र थे जिनमेंसे कुमार पंचमको राजा अधिक चाहते थे। पिताकी मृत्युके बाद पञ्चम राजगद्दी पर बैठे। उनके अथ भाइयोंने विद्रोही बन इनको राज्यसे निकाल दिया। उन्नामीन ही पंचमने विन्ध्याचल आ कर विन्ध्यावामिनो देवीकी आराधना की। बडोर तपसे भी देवो प्रमन्न न हुए, यह देख कर उन्होंने आत्मोत्सर्ग करना चाहा। जब वे अपनी तलवारसे मस्तक छेदनेमें उद्यत हुए परितः विन्ध्याचल पर्वत गीठ ग्राममें आ बस गया। इस पर्वत काई पूर्ण पुष्प पलाशजके अर्पण काम करते थे। नि मतान पतारामकी मृत्युके बाद उन गाहरवाड राजकमन्धारान उनके दुःख पर अधिराज प्रमाया। किंतु व स्वयं पुत्र रहित थे अथपथ यह नृपन राजपूत उनको मा बन्धु नहा लगता था। व मंगारम उशलीन हा विन्ध्याचलका विन्ध्यावामिनो देवीके निकट चले गये। यहाँ देवीने प्रमाण पानक लिय भयना मन्त्रन वान बनको उद्यन हा गये। उनक पारारथ्य रत्न विद्रोओत एक बालक उत्पन्न हुआ। विटु (बुंदे) म उत्पन्न इनके नाम्ण उत बालकका बुंदेला नाम पडा। उनके पतार भी बुंदेला नाम प्रसिद्ध हुये।

हुये तब देवी पचमके नामने रणशरोरमें आभिर्भूत हुई तथा बड़े प्रसन्न हो उनसे बोली, "उत्स ! हमारे वरदानने तुम राज्यमें लौट जाओ और बहुत राज्योंको जीत कर एक सुदूरव्यापी जनपद बसाओ तथा सुगमने जीवनयात्रा निर्वाह करो । उत्स ! तुमने हमारे नामने अपने जीवन उत्सर्गमें जो रक्तचिन्दु गिराया था उससे तुम्हारे जैसा यह पुत्र उत्पन्न हुआ । यह पुत्र विपत्तिमें और युद्धविग्रहमें तुम्हें सहायता पहुँचायेगा तथा तुम्हारे ये पञ्च पुत्रोंके नामसे प्रसिद्ध होंगे ।

पचम राज्यमें लौट आये और काशीश्वरकी उपाधि ग्रहण कर राज्यशासन करने लगे । पीछे ये अपने पुत्र वीरसिंहकी अयोध्याका शासनभार सौंप आप निश्चिन्त रहे । राजा वीरसिंहने अपने भुजबलसे पूर्व दिशाके प्रदेशोंको जीत अफगानके राजा सत्तर याँ की हराया । बादमें जय प्रणोदित हो उन्होंने कालिङ्ग दुर्ग जीतनेकी इच्छासे दक्षिणकी ओर प्रस्थान किया । कालिङ्ग और कात्पि विना प्रयासके उनके हाथ लगा । इसके अनन्तर उन्होंने महोन्नतमें आ राज्य बसाया । अपनी वीरताके कारण ये लीहघार नामसे विख्यात हुये थे ।

वीरसिंहके पुत्र राजा बलचन्तने भी पिताकी तरह राज्यशासन किया । उनके पुत्र अर्जुनपालने कुटहरा गढ़ पर अधिकार और जैत्रपुरमें राज्यस्थापन किया । अर्जुनके पुत्र सुहिनपाल, सुहिनके महजैन्द्र, महजैन्द्रके लुनिगदेव, लुनिगदेवके पृथ्वीराज, पृथ्वीराजके रामचन्द्र, रामचन्द्रके मेदनीमल्ल, मेदनीमल्लके अर्जुन देव, अर्जुनदेवके पुत्र मालिक द्रुप और मालिकके पुत्र उच्छाधिपति अथातनामा रुद्र प्रतापने सिंहासन पर बैठ पुत्रकी तरह प्रजापालन किया था । उनके भर्तृचन्द्र मधुकर (मधुकर शाह), उदयादित्य, कीर्तिशाह, भगत दाम, उमादास, चन्द्रदास, श्रनश्याम श्याम, प्रयाग दास, भैरवदाम, भीम लण्डेगव आदि १२ पुत्र दया, माया और युद्ध आदि विषयोंमें पाददर्शी थे ।

राजा रुद्रप्रतापकी मृत्युके बाद भर्तृचन्द्र राजा हुए । उनके बाद मधुकर शाह राजसिंहासन पर बैठे । अन्य सब भाइयोंने इनकी अधीनता स्वीकार की, किन्तु उदयादित्यने अपने भुजबल और युद्धमहाके साथ

दलबल सग्रह कर महोन्नतमें राज्य स्थापित किया । उनका पुत्र प्रेमचन्दने बहुतसे युद्धोंमें लैयट और अफगान सेना की हराया । उनके तीन पुत्र थे जिनमेंसे विख्यात वीर भगत न राज महोन्नतके सिंहासन पर मानसिंह शाहपुरने और किन्नरसिंह सिमरोहमें रह राज्यशासन करने थे । भगतन्तके पुत्र कुलचन्द बड़े धार्मिक थे । उनके यङ्गराय, चन्द्रराय, शोभनराय, और चम्पतराय नामके चार पुत्र थे । राजा चम्पतराय मुगलसम्राट् शाहजहाँ के प्रमादकी उपेक्षा कर उन्हे राजकर देनेसे इनका चले गये । इस लिये सेनापति बकि षाँ उन्हें उचित दण्ड देनेके लिये आया । इस युद्धमें मुगल सेना पराभूत हो लौट जानेकी बाध हुई ।

राजा चम्पतरायके पांच पुत्र थे—सर्वहन्, अङ्गराय, रतनशाह, छत्रशाल और गोपाल । इनमेंसे छत्रशाल ही बुद्धि जातिकी शौर्य वृद्धि करनेमें समर्थ हुए थे ।

छत्रशाल का ।

राजा छत्रशालके यज्ञसे लैकडों बुद्धि मदीरोंन एकल हो मुसलमानोंसे युद्ध किया था । छत्रपुरमें छत्रशालकी मृत्यु हुई । इस नगरमें उनका विख्यात ममाधिर्मंदिर आज भी विद्यमान है । हृदयशाह, जगत्तराय, पद्मसिंह, भर्तृचंद्र प्रभृति चार पुत्र उनकी प्रथम पत्नीसे और दूसरी स्त्रीसे उनके १२ पुत्र हुए थे ।

राजा छत्रशालकी मृत्युके समय अपनी सारी सम्पत्ति दो भागोंमें बांट गये थे । हृदयसिंहने पञ्चराज्य पाया और जगन्नाथ जैतपुरके सिंहासन पर अधिष्ठित हुये ।

पञ्चराज्य पञ्चराज्यका विवरण पृष्ठा ।

जैतपुर राज्यमें जगत्तराय अधिष्ठित रह राज्यशासन करते थे । उनके राज्यकालमें महम्मद खाँ बहुरेके अदेशानुसार उनके सेनापति दलिल खाँ दलबलके साथ भ्रमण हुए । नदपुरिया नामक स्थानमें दोनों बलोंमें घोर सङ्घर्ष हुआ । इस युद्धमें बुद्धेतराय रामसिंहका निहत देख प्रत्यावर्त्तन करने थे, वेने ही समयमें जन्म हाथसे आहत हो जगन्नाथ अश्वघुषमें गिर पड़े । श्यामनी में लौट कर उनकी पत्नी गनी अमरकुमारी पतिके न देष भाँत और चकित हो गई । फिर दृढ़चित्त हो स्वामी श्मीनकी प्रन्याशासे रणभूमिमें फूट पड़ा । समैश्व

अग्रमग्न हो उन्होंने पहिले दलिल्लके शिविर पर आक्रमण कर दिया। जतरित अग्रस्थामे आक्रमण करनेमे मुसल मानी सेना ती आक्रमणामें समथ न हुये। युद्धमें उनको हार हुइ। जयलामके बाद उहलसित सैन्यमण्डली मशाल जला कर राणाकी भूपतित देहकी तलाश करने लगी। गैरम शिविर जानेके बाद रानीके यत्रमे राणा होशमें आये।

दलिल्ल खांकी मृत्यु और पराभवमे निरुद्यम न हो प्रहममदने किरसे बु देलणएड पर आक्रमण कर लिया। इस बार निरुपाय देव जगत्प्राय पेशगा वाजीरायसे महायत्नाके लिये प्रार्थना की। वाजीरायने दूतकायके पात्रितोपिन्क स्वरूप बु देलणएडके कितने ही प्रदेश पाये थे। इस म्थानसे चौधबर समग्रपूर्वक वे मस्तानी नामकी एक मुसलमान बालिकाको अपने साथ ले गये। इसी स्मणीके गर्भसे समशेर बहादुरका जन्म हुआ था।

१८१५ सम्बन्धमें ( १७८८ ई०में ) जगत्प्रायका भाउ नगरमें देहान्त हुआ। उनकी मृत्युके पहले उनके पुत्र कर्त्तिसिंहकी मृत्यु हो गयी थी और कर्त्तिसिंहे प्राधनानुसार उहोंने अपने पौत्र कर्त्तिसिंके पुत्र गुमानसिंहको 'नीजान सिनेहो' पद पर अभिषिक्त किया।

राजा जगन्नाथकी मृतदेह ले उनके पुत्र पहाडसिंह जैनपुरमें चत्रे आये। पहले उन्होंने घोषणा कर दी, कि राजा मृत्युरोगसे शायित हो रहे हैं, उनकी मुक्तिका और नोइ उपाय नहीं है। इस शयदेहको वे अपने घरमे रख करय सिहासन गानकी आशामें यडयन्त्र रचने लगे। गुमानसिंहके बदेम उहोंको सिहासन पर अभिषिक्त करनेके लिये वे सेनापतियोंकी घूस भी देने लगे। कुमार कडिमिह, सेनापत् और गीरसिंह देव आदि उाकी ओम्ने गुमानके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये राजी हुये।

पहाडसिंहका सिहासनाधिपत्य और राजा जगत्प्रायका मृत्युसत्वाद् पा गुमानसिंहने दूत भेज अपना प्राय जैन रका सिहासन पानेके लिये अनुरोध किया किन्तु पहाडसिंहने इमे सुनो अनसुनी कर कहला भेजा, कि अपने पिताके सिहासन पानेके वे ही एक मात्र अधिकारी हैं। पुत्रके रहते पौत्रका कोई भी अधिकार सिहासन पर नहीं हो सकता।

गुमान सिंह इम पर बडे विगडे और उन्होंने जैनपुर राज्यको नष्टमष्ट करनेका दृढ सक्थ किया। १७८१ ई०मे बुन्देलाके समीप दीनों सेनामें घोरतर युद्ध हुआ। इस युद्धमे गुमान सिंह स्वीय मिल नयाव नजक पाके साथ परास्त हुये। १७६५ ई०में मृत्युशय्या पर शायित हो पहाडसिंहने गुमानसिंहकी कहला भेजा, 'मै समारका परित्याग कर चला जा रहा हूँ, यदि तुम्हारे इच्छा हो, तो ससैन्य हमारे ऊपर आक्रमण करो।' पहाडसिंह कुलपहाडमें रह निज सम्पत्तिका विभाग कर रहे थे। इसी समय वहा गुमान और उनके भाई सुमानसिंह उपस्थित हुये। उन्होंने गुमानको दादा और सुमानको चारखाडीका राजपद प्रदान किया।

इसके बाद बुन्देला राजाओंकी विशेष प्रतिपत्तिकी कथा मालूम नहीं। महाराष्ट्रके अम्युदय कालमें वे सहकागे रूपके युद्धकार्यमें व्यापृत थे। हिम्मत लाका विद्रोह और अंग्रेज समागम तथा महाराष्ट्र सुडापिका विषय बुन्देलाएडमें विवृत हुआ है।

- बुसुना ( १० क्री० ) जोर जोरसे राना, डाढ मारना।
- बुसुकारी ( १० क्री० ) उच्च स्वरसे प्रन्दन करना।
- बुसुधान ( १० पु० ) १ आचार्य। २ देव। ३ पण्डित।
- बुसुर ( १० स्त्री० ) उदक, जल।
- बुसुसा ( १० स्त्री० ) भोषतुमिच्छा भुज इच्छार्थे मन्, बुसुध धानु (अ प्रत्ययात्) पा ३।१।००) इति अस्ततट्टाप।
- धुधा, खानेकी इच्छा।
- उसुमित ( १० ति० ) बुसुभा भोजनेच्छा सजाताऽस्य (तदस्य सत्तात् तावर्गादिभ्य इत्त्वं) पा ५।१।६) धुधित, जिसे भूल लगी हो। ( मनु १०।१०५ )
- उसुशु ( १० ति० ) भोषतु मिच्छु भुज सन उ। भोजन करौमे इच्छुक।
- उसुर्ष ( १० ति० ) विभक्तु मिच्छु सन उ। भरण करनेमें इच्छुक।
- उसुर्षक ( १० ति० ) उभूषकन। यशकी इच्छा रखने वाग।
- उसुर्षा ( १० स्त्री० ) भवितुमिच्छा भू सन, अ, टाप। यशकी इच्छा रखना।

शुभाम (अ० पु०) चीनी मट्टी का बना हुआ एक प्रकारका गोल गोल ऊँचा बड़ा पात्र । यह साधारणतः तेजाव और अचार आदि रंगनेके काममें आता है, जार ।

शुभकना ( हि० कि० ) १ किम्बो पिम्बो हुई या महीन चीज को हाथसे धीरे धीरे किम्बो दूसरी चीज पर छिड़कना, सुस्तुराना । ( पु० ) २ शबोकी यह वाचान जिसमें वे पटिया आदि पर लिखनेके लिये खरिया मट्टी घोल कर रगते हैं ।

शुभका ( अ० पु० ) १ मुसलमान रियोंका एक प्रकारका पहनावा । यह प्रायः धैलेके आकारका होता है । दूसरे दूसरे वस्त्र पहन चुकनेके बाद यह मिर परसे डाल लिया जाता है और इससे मिरसे पैर तक सभी अंग दके रहते हैं । जो भाग आँवोंके सामने पड़ता है उसमें जाली लगी रहती है जिसमें चलते समय सामनेकी चीजें दिखाई पड़ें । २ यह झिल्ली जिसमें जन्मके समय बच्चा लिपटा रहता है, खेडो ।

शुभकाना ( हि० कि० ) शुरुकनेका काम दूसरेसे कराना, दूसरेको शुरुकनेमें प्रवृत्त करना ।

शुभदू ( अ० पु० ) १ पार्श्व, बगल । २ ओर, तरफ । ३ जहाजका वह भाग जो हवा या तूफानके रब पर न पड़ता हो, शक्ति पीछेकी ओर हो । ४ जहाज का बगल-वाला भाग ।

शुभ ( हि० वि० ) निरुद्ध, मठा ।

शुभाई ( हि० स्त्री० ) १ नीचता, खोटापन । २ बुरे होनेका भाव, शुरुपन । ३ किसीके साथधर्म कही हुई कोई बुरी बात, शिकायत, निन्दा । ४ अशुभ, दोष ।

शुभाना ( फा० पु० ) १ वह चूर्ण जो लकड़ीकी आरसे चोरने पर उममेंसे निकलता है, लकड़ीका चूरा । २ चूर्ण, चूरा ।

शुभुड—शिक्षणावस्थासो अन्त्यजजातिविशेष । वामकी आली आदि तैयार करना हो इन लोगोंका जातीय व्यवसाय है । इनकी उत्पत्ति का विवरण यों है—पहले ये लोग मराठा थे । उपेक्षित पूर्णिमामें पार्वती देवीको बट पूजानाके लिये इन्होंने कल्पवृक्षहस्तोपयोगी आली बनाई थी इसीसे ये जातिच्युत हुए ।

इनके मध्य जाट, कणावी, लिंगायत, मराठा, पयारी

और तैयग आदि श्रेणीविभाग हैं । ये एक दूसरेके साथ न तो आदानप्रदान करते और न एक साथ बैठ कर गाते ही हैं । प्रायः सभी लोग मद्य तथा मांसप्रिय होते और पूजादिमें उपरास करने हैं । इन लोगोंका पहनावा बहुत शुद्ध मराठियोंसे मिलता जुलता है ।

महादेव इनके प्रधान उपास्य देवता हैं । ब्राह्मण और जद्दूमोंमें इनकी अटल भक्ति है । विवाह और श्राद्धादिमें ब्राह्मणोंको बुलाते हैं ।

जातवालकके पाचवे दिन ये पट्टी देवीको पूजा करते हैं । तीन महीनेके बालसे लेकर दो वर्ष तकके बालकोंका सुखडन होता है । मृत्युके बाद ये लोग जगको जलाते और गाडते भी हैं । दशहैं दिवस गण्ड दान करते हैं । इन लोगोंमें विधवा विवाह प्रचलित है ।

शुभापन ( हि० पु० ) इराई दला ।

शुभज ( अ० पु० ) अगरेजा ढग पर बनी हुई किम्बो प्रकारकी कुँची । यह कुँची चीजोंको रंगने, साफ करने या पालिश आदि करनेके काममें आती है । शुभज प्रायः कूटी हुई मूज या कुम्भ विशेष पशुओंके बालोंसे बनाए जाते हैं और भिन्न भिन्न कार्योंके लिये भिन्न भिन्न आकार प्रकारके होते हैं । रंग आदि भरनेके लिये जो शुभज तैयार किये जाते हैं उनमें प्रायः काठके एक चौड़ टुकड़ेमें छोटो छोटो बहुतसे छेद करके उनमें एक विशेष क्रिया और प्रकारसे मूज या बालोंके टुकड़ोंमें एक दस्ता भी लगा दिया जाता है । यह प्रायः मूज या नारियल, पंत जादिके रेशोंसे अधया गोडे, गिलहरी, ऊँट, सूअर, भान्द, बकरी आदि पशुओंके बालोंसे बनाये जाते हैं ।

शुभल ( हि० पु० ) एक प्रकारका बहुत बड़ा पक्ष । यह हिमालयमें १३००० फुटकी ऊँचाई तक होता है । इसका छिलका बहुत साफ और चमकीला होता है जिससे पहाड़ी लोग भूँपडे बनाते हैं । इसकी लकड़ी छत वाटने और पत्ते चारनेके काममें आते हैं ।

शुर्ज ( अ० पु० ) १ किले आदि की दीवारोंमें, दोनों पर आगेंकी ओर निकला अधया आम वास्तकी इमारतके ऊपरकी ओर उठा हुआ गोल या पहलवान भाग । इसमें

बोचमें बैठने आदिके लिये घोड़ी सी जगह होती है। प्राचीनकालमें प्राग इम पर रत कर तोपें चलाई जाती थी। २ गु वट। ३ गु चारा। ४ राशिचक्र। ५ मीनार का ऊपरी भाग अथवा उसके आकारका इमारत या कोई अंग।

बुर्द (फा० खो०) १ ऊपरी लाम, ऊपरी आमन्नी। २ जत, बाजी। ३ जतरजके खेलकी वह अवस्था जब सब मोहरे मर जाते हैं और केवल बादशाह रह जाता है। उस समय बाजी 'बुर्द' कहलाती और आधी मात समझी जाती है।

बुर्द—मध्यभागके ग्वाज़ियर राज्यके अन्तगत एक नगर।

बुरी (हि० ग्री०) वीन बोलना एक ढग। इसमें वीज हलकी जोतमें डाल दिये जाते हैं और उसमेंमें आपे आप गिरने चलते हैं।

बुरी (अ० पु०) उरक गये।

बुर्दान निजामशाह २य—निजामशाही राज्यके ७म राजा। इन्होंने १५६० से १५६४ ई० तक राज्य किया। ये बुर्दानाबाद नामक एक नगर बना गये हैं।

निजामशाही राजा।

बुर्दान इमादशाह—इमादशाही राज्यके ४ थ राजा। इन्होंने १५६० से १५६४ ई० तक राज्य किया। ये तफज़ुल खांसे पराजित और बन्दी हुए थे। उनकी राज्यच्युतिके बाद तफज़ुलने कुछ दिनों तक राज्यशासन किया था।

बुर्दानपुर—१ मध्यप्रदेशके निमार जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २१ ५५' से २१ ३७' उ० तथा देशा० ७५ ५७' से ७६ ४८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ११३८ वर्गमील और जनसंख्या ८० हजारसे ऊपर है। इसमें बुर्दानपुर नामका १ शहर और १६४ ग्राम बसते हैं। असोरगढ नामका यहां एक प्राचीन किला भी है।

२ एक तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २१ १८' उ० तथा देशा० ७६ १४' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या ३३३४१के लगभग है। हिन्दूकी सन्ध्या सबसे ज्यादा है। १४०० ई०में खानदेशके फरुखविशयीय राजा नसिर खाने इस नगरको दीलतावादके विख्यात मुसलमान शेख बुर्दानउद्दीनके नाम पर बसाया। दक्षिणात्य

के अन्यान्य मुसलमान राजाओं द्वारा यह नगर बार बार आक्रमण और लूटे जाने पर भी फरुखि उसके ११वें राजाने यहां राज्य किया था। १६०० ई०में सम्राट् अकबरशाहने इसे अपने शासनभुक्त कर लिया।

बादशाह किलेके दो शिखरतो छोड़ कर प्राचीन फरुखि राजाओंकी और कोई कीर्ति नहीं देनी जाती। एक घण्टेके बारहने राजा अली खां यहां पर छुमा मसजिदु आदि अनेक सुन्दर अट्टालिका बना गये हैं। अकबर और उनके वंशधरोंके उद्यमसे यह नगर सौभाग्यात्मे भूषित हो गया था। १६३५ ई० तक दिल्लीके अधीनस्थ राज पुरखण यहां रह कर राजकार्य चलाते थे। पीछे यहाँमे औरङ्गाबादमे राजधानी उठा कर लाई गई थी। उसके बादसे बुर्दानपुर खानदेश सूबाके प्रमाण नगररूप में परिणत हुआ।

१६१४ ई०में अङ्गरेजी दूत सर दामस रो बुर्दानपुर आ कर यहाँकी अवस्था वर्णन कर गये हैं। उसके ४४ वर्ष बाद टावर्निपरने इस नगरकी विशेष समृद्धिकी वधाका उल्लेख किया है। मुगल प्रभावके समय इस नगरसे नाना द्रव्योंकी रफ्तकी पारस्य, तुर्क्य; मास्को-मियो, पोलण्ड, अरब और इजिप्त आदि प्रदेशोंमें होती थी।

सम्राट् औरङ्गजेबके राजत्वकालमें बुर्दानपुर दक्षिणात्ययुद्धका केन्द्रस्थल बन गया था। १६८५ ई०में औरङ्गजेबके दलबल समेत बुर्दानपुरका परित्याग करनेके बाद ही मराठोंने इस नगरको लूटा। उसके ३४ वर्ष बाद मराठा लोग लगातार युद्धके बाद यहाँसे चौथे सत्रह करनेमें समर्थ हुये थे। १७२० ई०में आसफजाह निजाम उल्मुल्कने दक्षिणात्यको फतह कर इस नगरमें राजपाट स्थापन किया। १७४८ ई०में यही पर उनकी मृत्यु हुई।

१७३१ ई०में नगरके चारों ओर प्राचीर और बुज तथा ६ सिंहाद्वार स्थापित हुए १७६० ई०में उदयगिरि युद्धके बाद निजामने बुर्दानपुरराज्य पेशवाके हाथ में रखा। इसके १८ वर्ष पीछे सिन्धियारजाने एक सम्पत्ति हाथ लगी। १८०३ ई०में सेनापति वेलेस्ली ने नगर पर अधिकार जमाया। किन्तु १८६० ई०से ही



यह समयकरूपसे बङ्गुरेजोंके दरबलमें आया । १८४६ ई०में यहा हिन्दू और मुसलमानके बीच भगडा राडा हो गया था जिसमें दोनों तरफके बहुतसे लोग मरे थे । उर्त्तमान अट्टालिकाके मध्य अकबरशाहका लालकिला और औरङ्गजेबकी जुम्मा मसजिद हो प्रधान है । उर्वर्ति यन्के समयमें ले कर उर्त्तमानकाल तक यहा रैगम मम लिन आदि चर्रोंका विस्तृत कारवार होता चला आ रहा है । शहरमें एक मिडिल इङ्गलिश स्कूल, एक बालिका स्कूल और एक अस्पताल है ।

बुर्हानाबाद—दाक्षिणात्यके अहमदाबाद जिलान्तर्गत एक नगर । मुगलसेनापति शाहवाज खा इस नगरको लूट और विध्वस्त कर गये हैं ।

बुर्होला—राजपूत जातिकी एक शाखा । ये लोग रघुचण्डी और बाई सम्भद्रायकी कन्यासे विवाह करने और अमिठियाओंकी अपनी कन्या देते हैं ।

बुलद ( फा० वि० ) १ उच्च, भारी । २ जिसकी ऊँचाई अधिक हो, बहुत ऊँचा ।

बुलदी (फा० खी०) १ बुलद होनेका भाव । २ ऊँचाई ।

बुलडाग ( अ० पु० ) मझौले आकारका एक प्रकारका विलायती फुत्ता । यह बहुत बलवान, पुष्ट और देखनेमें भयङ्कर होता है ।

बुलदाना—पश्चिम बरार विभागका एक जिला । यह अक्षा० १६ १' से २१ १' ३० तथा देशा० ७५ ५६' से ७६ ५२' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण २८०६ वर्गमील है । चिपलो, मालकापुर और मेहकर नामक तीन तालुकमें यह जिला विभक्त है ।

यह जिला बेरार बालाघाट पर्वतके अधित्यका देशमें अवस्थित है । इसकी उपत्यकाभूमिमें बहुत सी पवित्र नलिला नदियोंके बहनेसे यह स्थान कृषिकार्यके उपयोगी हो गया है । बेणगड्गा, नलगड्गा, विभगड्गा, घन, पूर्णा और काटापूर्णा आदि यहाकी प्रधान नदिया हैं । जिलेके दक्षिण भागमें लोनर नामक द्व्व है । उम हृदके किनारे उत्कृष्ट कारुकार्ययुक्त एक प्राचीन हिन्दूमन्दिर स्थापित है । हिन्दूमात्र ही उस मन्दिरकी पवित्र सम्भते हैं ।

देवलघाट नामक स्थानमें बेणगड्गाके किनारे, मेहकर, सिन्धनेर और पिम्बल गांव नामक स्थानमें हेमाड

पन्थियोंके प्राचीन मन्दिर देखे जाते हैं । जय पूर्णाकी उपत्यकाभूमि मुसलमानोंके हाथ लगी, उम समय जैत राजाओंने यहा आधिपत्य फैलाया था । १२६४ ई०में त्रिन्ड्रीके शासनकर्त्ता अलाउद्दीनने इस प्रदेश पर अधि कार किया और इलिबपुर आदि स्थानोंमें अपनी पतिष्ठा जमाई । धीरे धीरे उनके वंशधरोंके यत्नसे दक्षिणादिग् वर्ती भूभाग मुसलमानोंके शासनभुक्त हुए । १३१८ ई०में ममस्त बेरार प्रदेश पर मुसलमानोंका अधिकार फैल गया था । १५३७ ई०में अहमदशाह बालानोके लडके अलाउद्दीनने रोहन खेर नामक स्थानमें ब्यादेश और गुजरातराजाका नेनाफो परास्त किया । बालानो राजघणके बाद इमाद ग्राही राजाओंने यहा आधिपत्य फैलाया । पीछे अहद नगर राजघणका अभ्युदय हुआ । १५६६ ई०में चाँदबीगोने बेरार राज्य सम्राट् अकबरशाहके हाथ सौंपा । सम्राट्के लडके मुराद और दानयाल बारी बारीमें यहाके राज प्रतिनिधि रहे । १६०५ ई०में अकबरकी मृत्युके बाद आगिसिनिके सरदार मालिक अम्बरने बेरार जीत कर १६२८ ई० तक शासन किया । पीछे सिन्धनेरके देशमुख लाकजी यादवराजकी सहायतासे सम्राट् शाह जहानने इस राज्यका पुनरुद्धार किया । उक्त यादवराज मालिक अम्बरके १० हजार अश्वारोहीके सेनानायक थे । उन्होंने ही शाहजहानका पक्ष ले कर अपने पूर्वस्वामीके अट्टाकाणको घनाम्बकारसे समाच्छन्न कर दिया था । इसी लाकजी यादवकी एक पोयस कन्या महाराष्ट्रकेशरी शिवाजीकी माता थी । औरङ्गजेबके राजत्यकालमें १६७१ ई०की शिवाजीके सेनापति प्रताप राघने यहासे चौध वसूल किया था । पदचात् १७१७ ई०में सम्राट् फर्रुखासिरके समय मराठोंने यहासे चौध और सरपेणमुखी वसूल करनेकी सनद प्राप्त की । १७२४ ई०में चिन्त पिळोच नाँ ( निजाम उलमुल्क )ने साबर गेद्लर ( फतेहेबुला )के निकट मुगलसेनाकी परास्त किया । किन्तु ये मराठोंकी कर समरने निवारण न कर सके । १७६० ई०में मेहकर पेणघाके हाथ मयुर्द किया गया । १७६६ ई०में निजामने भी पूनाराजकी अधीनता स्वीकार की । अंगरेज युद्धमें महाराष्ट्र परा गयके बाद १८०४ ई०की निजामने अंगरेजोंके शुभ्र

से सारा बेरार राज्य प्राप्त किया। १८१३ ई०में महराष्ट्रवलने फिरसे फतेखेदला पर अधिकार किया। फिरहदारी युद्धके बाद १८२२ ई०की सन्धिके अनुसार यह प्रदेश सम्पूर्णरूपसे निजामके हस्तगत हुआ। इसके बाद महाराष्ट्रोंके फिर अपना सिर उठानेका साहस न हुआ। किन्तु रयानीय जमींदार, तालुकदार, राजपूत और मुसलमानोंके उपद्रवसे राज्य भरमें विशेष उच्छृङ्खलता उपस्थित हुई। इस विप्लवके फलसे १८४६ ई०में मालकापुर लूटा गया था। १८५१ ई०में यादवघशहरोंकी अधिनायकतामें शेष पेशवा बाजीरावकी अरीसेनाने निजाम सेनाको परास्त किया। इस कार्यने असन्तुष्ट हो अंगरेजोंने बाजीरावकी पूव सम्पत्ति तीन लो और उन्हे विठ्ठर नगरमें नजर बंद रखा।

इस जिलेमें ६ शहर और ८७० ग्राम लगते हैं। जनसंख्या साठे चार लाखके करीब है। विद्याशिक्षामें यह जिला बेरारके छ जिलोंमें छठा पडता है। सेकडे पीछे ४ मनुष्य पढे लिखे मिलते हैं। अभी कुल मिला कर २०० स्कूल हैं। स्कूलके अलावा १ अस्पताल और ७ चिकित्सालय हैं।

२ उक्त जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २० २० उ० तथा देशा० ७६ १२ पू० समुद्रपृष्ठसे २१६०० फुट ऊंचा है। जनसंख्या ४१३७ है। १८६३ ई०में यहां म्युनिमपलिटो स्थापित हुई है।

बुलन्दशहर—युक्तप्रदेशके मोरट विभागमें अवस्थित एक जिला। यह अक्षा० २८ ४' से २८ ४३' उ० तथा देशा० ७७ १८' से ७८ २८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १८६६ वर्गमील है। इसके उत्तरमें मोरट जिला, पश्चिममें यमुना नदी, दक्षिणमें अजमेर और पूर्वमें गङ्गा नदी है।

गङ्गा और यमुना नदीके अन्तर्वेदीके मध्य अवस्थित रहनेके कारण यह स्थान बहुत उर्वरा है। समूचा जिला अधित्यकाकी तरह समुद्रपृष्ठसे प्राय ६५० फुट ऊंचा है। गङ्गा और यमुनाके अलावा जिलेमें काली नदी (कालिन्दी), हिन्दन, करोन, पटवाई और छोइया नामक कई एक छोटी छोटी नदिया बहती हैं।

स्थानीय प्रवादसे जाना जाता है, कि अति प्राचीन

कालमें यह स्थान पाण्डवराजधानी हस्तिनापुरके अधिकारमें था। उक्त नगर गङ्गामें बह जानेके बाद कोई शासनकर्त्ता आहर नगरमें रह कर यहांका राजकार्य चलाते थे। शिलालिपिसे मालूम होता है, कि एक समय यहां गौड ब्राह्मणोंका वास था और गुजराजगण यहांका शासन करते थे। १०१८ ई०में जब गजनीपति महमूद वरण (बुलन्दशहरका चलिह नाम) नगरमें पहुंचे, उस समय हरदत्त नामक एक हिन्दूराजा यहां राज्य करते थे। मुसलमान ऐतिहासिकोंने लिखा है, कि उस दुर्दुर्ष मुसलमानराजाके बरसे हिन्दूराजाने दलबल समेत इस्लामधर्म ग्रहण कर लिया और इस प्रकार उसके हाथसे निष्कृति पाई। उस समयसे उस अन्तर्वेदीमें नाना वर्णोंके लोग आ कर बस गये। आज भी उन सब जातियोंका इस जिलेके निम्नी किसी स्थान पर अधिकार देखा जाता है।

११६३ ई०में जब कुतबुद्दीनने वरणकी ओर कदम बढ़ाया, तब वहाके अधिपति दोरवणीय राजा चन्द्रसेनने दलबल ले कर उनका मुकाबला किया था। आतिर उनके आत्मोय जयपालके पटयन्त्रसे मुसलमानराजने उक्त नगर पर अधिकार जमा लिया। जयपालके इस्लामधर्म ग्रहण करनेके बाद मुसलमानराजाने प्रसन्न हो उन्हे उक्त नगर का चौधरी पद प्रदान किया। उनके वंशधरगण आज भी इस जिलेकी कुछ सम्पत्तिका भोग कर रहे हैं।

१४वीं शताब्दीसे यहां राजपूत जातिका अन्वयदय देखा जाता है। उन राजपूतोंने वहाके पूर्वतन अधिवासियोंको भगा कर उनके प्रामादि दखल कर लिये। पीछे मुगल-आक्रमणके समय इस प्रदेशकी दुरवस्था और भी बढ गई थी। पीछे सम्राट अकबरके सुशासन से तमाम शान्ति विराजने लगी। परन्तु औरङ्गजेब वहाके इस्लाम धर्मावलम्बी हिन्दू अधिवासियोंके ऊपर अत्याचारकी पराकाष्ठा दिखानेसे बाज नहीं आये। वहा दुरशाहके समयसे (१७०७ ई०) मुगलशक्तिका अधपतन शुरू हुआ। इस अन्तर पर गुजर और जाटसरदारोंने बागो हो कर छोटे छोटे स्वतन्त्र राज्य स्थापन किये थे।

१८वीं शताब्दीमें कोइल-नगरमें रह कर महाराष्ट्र

शासनकर्त्ता राजकाय चलाते थे। वरुण नगर उस समय कोइलके अधीन था। १८०३ ई०में अगरेजी सेनाने कोइल और अलीगढ़ दुर्ग पर दखल जमाया। १८२३ ई०में अलीगढ़ और मोरटका बुछ अश ले कर बुलन्दशहर एक स्वतन्त्र जिलारूपमें गिना जाने लगा। उसके बादसे ले कर १८५७ ई०के गद्दर तक यहा और कोइ उल्लेखयोग्य घटना न घटी।

सियापीरविद्रोहके समय गुजरात, ६म पदातिक सेना दल, मालगढके शासनकर्त्ता बालिदाद खाँ और इस्लाम धर्मावलम्बी राजपूतोंने अगरेजीसे घमसान युद्ध किया था। शिवाहीविद्रोह दणो।

इस जिलेमें २३ शहर और १५०६ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या १० लाखसे ऊपर है। सैकडे पीछे ७६ हिन्दू, १६ मुसलमान और शेषमें आर्य तथा ईसाई लोग हैं। यहाकी प्रधान उब्ज गेहूँ, चना, मक्ई, ज्वार और बाजरा है। विद्याशिक्षणमें यह जिला बहुत पीछा पडा हुआ है। सैकडे पीछे ३ मनुष्य शिक्षित मिलते हैं। अभी कुल मिला कर २०० स्कूल हैं। स्कूलके सियाय यहा ६ अस्पताल और चिकित्सालय हैं।

० उक्त जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २८ १४' में ०८' ४३' उ० तथा देशा० ७७ ४३' से ७८ १३' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४७७ वर्गमील और जनसंख्या साढे तीन लाखके करीब है। इसमें बुलन्दशहर, गिफारपुर, सियाणा और औरङ्गाबाद नामक ३ शहर तथा ३७६ ग्राम लगते हैं। जिले भरमें यह नक्से अच्छी तहसील है। काली नदी तहसीलके उत्तरसे दक्षिणकी वह गई है।

३ उक्त तहसीलका एक सदर। यह अक्षा० २८ १५' उ० तथा देशा० ७७ ५०' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या १८६५६के लगभग है। यहा इट इण्डिया रेलवेका एक स्टेशन है। यह नगर ममुद्राशुल्के ७४१ फुट ऊँचा है। इसका प्राचीन अश एक गण्डरीलके गिगर पर और नूतन नगर निकटवर्ती समतल क्षेत्र पर बसा हुआ है।

प्रसिद्ध माहिन्दनवीर महामा अलेखसन्दर तथा उत्तरभारतके हिन्दूवाहिक राजाओंकी नामादिन मुद्रा आज भी वरुण नगरके नाना स्थानोंमें पाई जाती है।

मुसलमान और वाहिक राजाओंके समय उनके देवोंके लोग यहा आ कर बस गये थे, इसमें जरा भी मन्देह नहीं। दोरअशोय राजा हरदत्तने इस्लाम धर्ममें दीक्षित हो कर तथा तरह तरहका उपद्वीवन भोग कर गननापति महमूदकी सत्तुष्ट किया था। यहाके शेष हिन्दूराजा चन्द्रसेनने महमूदघोरीके युद्धमें अपने जीवनकी न्योछावर कर दिया था। युद्धमें मुसलमान सेनापति स्याजा लाल वरुणी भी रेत गये थे। आज भी उनकी कब्रके भास पामका स्थान उन्हींके नामसे पुकारा जाता है।

प्राचीन हिन्दू प्रधानताके निर्दशन स्वरुप यहा और कोई अट्टालिका वा देवमन्दिरका ध्यसावशेष नचर नही जाता। पर हा, निकटवर्ती स्थानकी मट्टी छोदनेसे जहा तहा घोदित स्तम्भ वा अट्टालिकादिगा गण्डित अश देखा जाता है। उमना गठनकार्य देवतसे वह प्राचीन हिन्दूगठन सा प्रतीत होता है, इसमें कोई उन्न नही। प्राचीन भग अट्टालिकाके मध्य सम्राट् अकबर शाहके प्रधान सेनापति बहलोल खाँका ममाधिमन्दिर ही सर्वप्राचीन है। अत्याया इसके प्राचीन नगरके बीचमें जुम्मा मसजिद दृष्टिगोचर होती है। अगरेजाके दखलमें आनेसे इसकी कोई विशेष श्रीवृत्ति नही हुई है। शहर में एक हाई स्कूल, एक तहसीली स्कूल और चार प्राइमरी स्कूल हैं।

बुलन्दशहर (अ० फा० खी०) एक प्रसिद्ध गानेवाली छोटी चिडिया। इसे अगरेजीमें नाइटडिंगल (Nightingale) वा Pectorum ruficeps) और फारसी भाषामें "बुलबुल-योस्ता" अथवा "बुलबुल हजार दस्ता" कहते हैं। उड़वाले इस शब्दकी पुष्टिग मानते हैं। जान पडता है, कि बहुतोंने इस प्रसिद्ध गानेवाली पक्षीकी देखा है। इसकी सुदस्ता साधारण है। किन्तु इसका स्वर बहुत सुन्दरित है। जिम् किमी व्यक्तिने एक बार भी ध्यान लगा कर इसके गानकी सुना है उमने मुग पत्रसे इसकी गानेवाली पक्षियोंमें सबसे श्रेष्ठ माना है और इसकी चितोन्मात्रक खरका भूरि भूरि प्रशंसा की है। यह पक्षी १०० रूपसे १५० रूपसे तक बिकता है।

प्राणी तत्त्वचिदाका कहना है, कि बुलन्दशहर गानेवाली

योमी सिर और मासपेशी अत्यन्त सबल हैं, अन्य गायक पक्षियोंकी मासपेशी उनकी परिपुष्ट नहीं होती। यही कारण है, कि इसका स्वर इतना बुलन्द है तथा यह बहुत समय तक गाना रचरचमें गाना गा सकती है।

तुलुलुल दो तरहकी देगों जाती हैं। उनमेंसे एक श्रेणीके पक्षी समतल भूमिके जङ्गलोंमें रहते हैं। इनका शरीर पाँच इञ्च लम्बा, पूछ ढाई इञ्च और चोंच एक इञ्चसे कुछ कम होती है। चोंचका अग्रभाग मृन्म और सीधा होता है। चोंच और मुखाग भीतरी भाग पीला होता है। इनकी पीठ आदिके ऊपरी भागका रङ्ग प्रायः नस्यके समान, तलभाग कुछ सफेद और दोनों पैर कुछ ललाई लिये हुये सफेद होते हैं। दूसरी श्रेणीके पक्षी पर्वतों पर रहते हैं। कभी कभी पर्वतके निम्नभागमें स्थित शरण्य आदि स्थानोंमें भी देखे जाते हैं। पर्वतमें नहीं रहनेवाले पक्षियोंकी अपेक्षा इस श्रेणीके पक्षियोंकी देहका परिमाण प्रायः दो इंच अधिक तथा कान भी कुछ बड़े होते हैं। प्रथम श्रेणीके पक्षीकी अपेक्षा द्वितीय श्रेणीके पक्षियोंकी कठञ्चन बहुत ऊँची होती है। विशेषतः द्वितीय श्रेणीकी तुलुलुल ही रजनी गायक कहलाती है। तुलुलुल प्रीढावस्थासे ही अधिक गाती है।

इन पक्षीका नर ही अधिक गाता है। ये सब वाल्य अवस्थामें ही प्रायः दो तीन मास तक गाते हैं तथा दल बाध कर तीन चार मास एक स्थानमें रहते हैं। इस समयमें वे दो बार अण्डप्रसन्न, जावकोत्पादन और उनका पालन करते हैं। शावक अवस्थामें ही नर मादाका भेद अच्छी तरह मालूम पड़ता है। जिन पक्षीके वक्ष और पलका अग्रभाग कुछ पीला और गला सफेद होता है, वे नर और चित्का गला सफेद, पलका अग्रभाग बिलकुल पीला नहीं होता वे मादा समझे जाते हैं।

यह पक्षी सममण्डलवासी है। यूरोप और एशियाके बहुतसे प्रदेशोंमें तथा अफ्रिकाके केवल नील नदीके तीरवर्ती देशमें यह पक्षी मिलता है। मादा एक बारमें ५ या ६ हरे कपासी रंगके छोटे छोटे अण्डे देती है। पंद्रह दिन अण्डे सेनेके बाद बच्चे बाहर निकल आते हैं। इनका घोंसला जमीनसे कुछ ऊपर तथा लम्बे तिनकोंसे ढकी मिट्टीमें रहता है। इनको शावक

अवस्थामें ही लाकर पालना चाहिये। इस समय रानेसे ये पालनेवालेके अत्यन्त प्रीणित हो जाते हैं तथा प्रीढ अवस्थामें निर्मय चित्तमें गाने लगते हैं। ये पोषकके इतने प्रीणित प्रिय और भक्त होते हैं, कि कभी कभी पोषकके चिरहमें अपना जीवन पर्यन्त विसर्जन कर देते हैं। इनमेंसे अजिनाश कीट और पतङ्गमोजी तथा अन्य फलादि भी गाने हैं।

यूरोपके किसी किसी प्रदेशमें तुलुलुलको पकड़नेका विशेष नियम है। यदि कोई प्रीढावस्थामें पक्षीको पकड़े तो उसको रानद्वारामें बँड दिया जाता है। वहाँ तुलुलुलके बच्चोंको पकड़ कर बेचना ही माधारण नियम है।

पालन पक्षी पिंजरेमें हो रहता है। ऐसी अवस्थामें कोई जोड़ा जोड़ा तथा कोई एक एक पक्षीको एक एक पिंजरेमें रखते हैं। पिंजरा लकड़ामें १२ इञ्च तथा ऊँचाईमें १ फुट होता है। बैस्टिन (Mr Bastin) साहबका कहना है कि पिंजरेकी हरे रङ्गसे रगाना और ऊपरसे हरे कपड़े द्वारा उसे ढँक देना उचित है। यदि कोई उनके बड़े अनुसार तुलुलुलके पिंजरेकी हरे रङ्गमें रगे, तो उनको चाहिये कि पक्षीको पिंजरेमें रखनेमें परिश्रम उसको अच्छी तरह शुक्र और दुर्गन्धि रित कर ले। उन्हें पिंजरेमें तीन घन तैयार करना चाहिये उनमें दो पिंजरेके तलके निकट और तीसरा उमसे कुछ ऊपर रहे। पक्षियोंके कोमल पैर निरापद रखनेके लिये तीनों घनको हरिद्वर्णके कपड़े (मृगमल आदि) से मंडित कर देना चाहिये। पिंजरेमें एक जलपात इस तरह रखना चाहिये, कि पक्षी इच्छानुसार उससे उतर कर पादमें स्नान कर सके। पिंजरेके नोबेका भाग एकदम पानीसे न भ्रंज जावे इसलिये उसको तह पर एक ब्लोटिङ्ग पेपर या आबल क्लोथ बिछा देना चाहिये। उसे फिर परिवर्तन कर पिंजरेकी वीटकी बाहर निम्न देना उचित है।

परीक्षाके द्वारा जाना गया है, कि जो तुलुलुल पक्षी यन्त्र पूर्वक साफ पिंजरेमें रमे जाते हैं वे अच्छा मधुर गान गाते हैं। निर्जन या विरक्तिजनक स्थान इनको बिलकुल पसंद नहीं है। ऐसे स्थानामें रखनेसे उतने

प्रबुद्ध चित्तसे गान नहीं करते। गान करनेके लिये कभी कभी छायाचित्र और कभी रीत्रमय स्थान निर्वाचन कर रहा कुछ समयके लिये पिजरेको रख दे। इन पक्षीका मातृधानो तथा मृत्युतासे पालन करना कर्त्तव्य है।

इनको बढिया बाग, सुन्दर सुन्दर स्थान बहुत पसन्द है। पुष्पोंको सुगन्धि इनको बहुत भाती है तथा इनका स्वभाव अत्यन्त कोमल होता है। ये शत्रु ऋतुके अन्तिम भागसे ले कर प्रसतऋतु तक उच्च कण्ठसे मुल्लित गान गाते हैं। जब शीत ज्योत् पडने लगता है, तो इनका गाता कुछ कमती हो जाता है। यह पक्षी मदा अपनेमें ही मद्योग्मत्त और अपने स्वयंसे सदा मस्त देखा जाता है। गाते समय ये दिनकी अपेक्षा रात्रिमें अत्रिधान्त नाना तरहकी स्वरलहरीसे कर्णको सुख पहुंचाता है और हृदय को तो मानो स्वर्गसे दूसरे स्वर्गके रत्न मिहामन पर ही पैठा देता है। इसी गुणसे इस पक्षीका नाम अद्गरेजीमें *Nightingale* अर्थात् रातमें गानेवाली चिडिया रखा है। यदि आपका हृदय बालुकाभय भूमिकी तरह कैरल नीरस या पाणवभाव पूर्ण न हो, तो आप समारोहों या सप्ताहविरागो योगी हों, आपके हृदयको मदा ही शुलभुलके सुललित मनोहर स्वरसे अत्रय ही आष्ट और मोहित होना पड़ेगा। जब ये उत्तेजित होते हैं, तो रातमें एक मुहूर्त्तके लिये भी इनका मनोहर गान बंद नहीं होता। इस अवस्थामें ये किस वक्त सोते हैं इसका निर्णय नहीं किया जा सकता। इस गमार निगोधके समय इनकी सुदूर व्यापिनी स्वरलहरी सुननेसे किसका चित्त मुग्ध नहीं होता? ये एक विश्वासमें बहुत देर तक गान कर सकता है।

यह पक्षी उद्यान तथा फलोंका अत्यन्त प्रिय है। इस कारण सुवासित उद्यानमें पिजरेके आवरणको हटा कर रखना चाहिये अथवा कभी कभी इसके पिजरेमें सुगन्धियुक्त गुलाबदि फूलोंको रख देना उचित है। सवेरे और शाम इसे दूसरे मनोहर गानेवाले पक्षियोंका गान श्रवण कराये। उसे सुन यह पक्षी बहुत प्रसन्न होता है और बढिया तौरसे गान लगता है।

शुलभुलको फर्तिम, घोड़ेको लौटमें उत्पन्न फोड़े, चोटियोंके अण्डे, भुने चनेके सत्तू गरम घीमें भूज कर

यानेके लिये देना चाहिये। कभी कभी उन मत्तधोके साथ मुर्गी या हसके अडोंका रस मिला कर देना उचित है।

यह पक्षी पिजड़ेमें आवद्ध रहनेसे कभी कभी शोमार भी पडता है। उस समय इसकी चिन्तित्सा करना चाहिये। अतएव जो पीडा इसको ज्यादा हुआ करती है उसके कुछ औषधोंका विषय नीचे लिखा जाता है।

आहार ठीक समय न मिलने, पिजड़ेमें रहनेसे उचित ध्यायामका अभाव आदि कारणोंसे इनको मदान्नि हो जाता है। इस समय इनको एक दिनके अंतर पर तीन या चार मकड़ो खिलाता उचित है। इससे भी यदि यह दुर्बल ही दोष पड़े और उसकी पीडा बढ़ती ही चली जाये, तो जलमें लौहसिद्धान ( मोरचा लगा हुआ लोहा )को तीन चार दिन तक डुबो कर रखे और वह जल उसे पीनेको दे। इससे मदान्नि या दुर्बलता दूर हो जाती है।

प्रथम चरणमें गानेके समय इस पक्षीके तारके छेदके ऊपर कुछ छोटे छोटे फोड़े निकल आते हैं। इस समय उन फोड़ों पर मषण सुपड देना उचित है। यदि इससे लाभ न मिले, तो फिटकिरीको प्राहृदके साथ फोड पर लगाना चाहिये। यदि इन दवाइयोंसे फोडा आराम न जाय तो सुदीको अग्निमें गरम कर उससे उन फोडाको जला देवे तथा काले स्यावनके जलसे उस घावको बार बार धो डाले। ऐसा करनेसे जपम अघश्य आरोग्य होगा। इस समय पीने जलके बदले तीन चार दिन तक विट पाल्जूका रस देना उचित है। इसको प्रतिदिन नया बना कर देना चाहिये।

पक्षपरिचरन काल पाल्जू पक्षीमात्रके लिये निपत्ति जाक है, फिर शुलभुलके लिये भी उनका ही विपदावह है। इस समय ये प्राय दुर्बल हो जाते हैं। इसलिये इनका शारीरिक बल सरक्षणार्थ पक्षपरिचरन काठके कुछ परिदे अर्थात् वैशाख मासके अन्तसे ज्येष्ठ मास तक इनकी मुर्गीके अंडे और जाफरान ( कु कुम ) मिश्रित सत्तू देना उचित है। पक्षपरिचरनके आरम्भ होनेसे इनको आहार के लिये घण्टे फोड और पतङ्ग देना हाना तथा बीष धान्यमें मक्खन गानेको देना चाहिये। इस समय इनको स्नान और पीनेके जलमें कु कुम देना नितान्त आवश्यक

है। इस समय इनको शीतल वायु और सब प्रकार की विरक्तिसे रक्षा करना उचित है। पक्षपरिवर्त्तनकालमें किसी किसी पक्षीका नासारन्ध्र उद हो जाता है। ऐसी हालतमें एक या दो दिन पर्यन्त मषयन, गोलमिर्चन चूर्ण और लहसुनका रस मिला कर नासारन्ध्रमें देना चाहिये। इससे भी यदि आरोग्य न हो, तो इस पक्षीके निम्निल एक पत्रको मषयनमें भिगो कर उसे नारुके एक छेदमें प्रवेश करा दूसरे छेदसे हो कर बाहिर निकाल ले। यदि एक बारमें इसके द्वारा नासारन्ध्रमें मषयन न लगे, तो फिर इसी पत्रको दूसरी बार मषयनसे लपेट कर उल्लिपित नियमसे नासारन्ध्रमें प्रवेश कराना आवश्यक है। अर्थात् नासारन्ध्रमें जिससे अच्छी तरह मषयन लगे वही उपाय करना चाहिये। फिर दो दिन पर्यन्त नये वादामका साराश जलके साथ घिसनेसे जो दूधकी तरह हो जाता है, उसे पानीके बदलेमें व्यवहार करावे। इससे रक्षा हुआ नासारन्ध्र खुल जाता है। नासारन्ध्रके रक्त जानेसे कभी कभी इनका पक्षपरिवर्त्तन उद हो जाता है। इसलिये नासारन्ध्रको धोए कर पक्षपरिवर्त्तनार्थ इस पक्षीको आम्रिय जलमें (मछलीके धूप जलमें) स्नान करावे और पीनेके जलको कुकुमसे आरत करके देवे। इस पक्षपरिवर्त्तनकालमें कभी कभी बुलबुल वातरोगसे पीडित हो जाती है। किन्तु यथाथं यह वातरोग नहीं है। यह बहुधा पैरकी हड्डीको आच्छादित करनेवाले मांसकी वृद्धिके कारण होता है। पालतू पक्षीके ढाई वर्ष होने पर जड्वा और अगुलिका अस्थि आच्छादक चर्म बढ़ कर मोटा हो जाता है। वातरोग को तरह पीडा मालूम होवे, तो पहिले आध घण्टा बुलबुलके दोनों पैरको जलमें डुबो कर रगना उचित है। इससे आरोग्य हो जानेकी बहुत कुछ सम्भावना है। यदि आरोग्य न हो तो उष्ण जल अथवा तैल द्वारा पैरके आच्छादक चर्मको नींच कर फेक देना चाहिये। अस्थि आच्छादक चर्मको उठा देनेमें तैल अथवा थोडा गरम जलमें पहिले १०।१५ मिनट पक्षीके दोनों पैर भिगो देवे पीछे सावधानीसे अस्थि आच्छादक चर्मको हटा कर इसके स्थानमें तैल मल देना उचित है। इस समय कभी कभी इनके मलके साथ ऐसा रक्तस्राव निर-

लता है कि, उसको केवल रक्त ही कहना चाहिये तथा इससे पक्षी दुर्बल हो कभी कभी जीवन तक विसर्जन कर देता है। इस तरह जोगितस्राव देखने पर पहिले पीनेके जलके बदलेमें इनको पका हुआ बकरीका दूध पाने देना चाहिये। इससे भी यदि रक्त निकलना उद न हो, तो बकरी दूधके साथ मेप मज्जाको पका कर इसे पीने जलके बदलेमें तीन चार दिन देना उचित है। इससे इनका जोगितस्राव उद हो जायगा।

पक्षपरिवर्त्तनके बाद कभी कभी तुलबुलके मृगीरोग होता है। मूर्च्छित होने पर इस पक्षीको बलपूर्वक शीतल जलमें डुगा कर स्नान कराना चाहिये। इससे आरोग्य न हो, तो पायको एक उंगलीका कुड अथवा काट कर रक्त अधिक मात्रामें निकाल देना चाहिये। ऐसा करनेसे मृगीरोग नष्ट हो जाता है।

यदि पक्षी त्रिपादयुक्त हो, जभाई लेने लगे और पखों को भी उट्टाये रये तो समझना चाहिये, कि इसके पेटमें दर्व होता है। इस अत्रन्ध्रामें जलके साथ कुकुम वगैरोंप उपकारी है।

बुलबुलकी कभी खास रोग भी होता है। इस रोगमें सिरकाको ग्राहदके साथ मिला कर तिलानेसे फायदा होता है।

कोई कोई कहते हैं, कि चीटिया बुलबुलकी भयानक शत्रु हैं। बहुत लोग सुन कर आश्चर्य करेगे कि चीटियाँ योंको पानेसे बुलबुल मर जाता है। इस वास्ते इसके रक्षकको चाहिये कि चीटो न खाने दें अन्यथा यह सुमधुर मनोहर गीत गानेवाली चिडियाको सदाके लिये अपने हाथसे खो बैठेगें। चाहे यह प्रवाद ही हो तो भी प्रतिपालकको इनसे सावधान जरूर रहना चाहिये।

बुलबुलका अच्छी तरह पालन करनेसे २४ २५ वर्ष तक यह जिन्दा रह सकती है। एक वर्षमें आठ नौ मास तक सुललित मनोहर कण्ठसे गाती है। सुसलमान वादशाहोंके जमानेमें इस पक्षीका बहुत आदर था इसीलिये पारसी भाषामें इसकी प्रशंसा ज्यादा की गयी है। फारसी और उर्दूके कवि इसे फलोंकी प्रेमो नायकके स्थानमें मानते हैं।

बुलबुलचम (फा० ग्री०) पम प्रकारकी निडिया ।  
 बुलबुलवाज (फा० पु०) वह जो बुलबुल पात्रता या  
 लडाता हो, बुलबुलका पिलाटी या शीरीन ।  
 बुलबुलवाजी (फा० ग्री०) बुलबुल पालने या लडानेका  
 काम ।  
 बुलबुलबोस्ता (फा० पु०) बुलबुल दवा ।  
 बुलबुला (हि० पु०) बुदबुदा, पानीका बुला ।  
 बुलवाना (हि० नि०) बुलानेका काम दूसरेसे कराना,  
 दूसरेको बुलानेमें प्रवृत्त करना ।  
 बुलाऊ (हि० पु०) वह लयोनग या सुराहीदार मोती  
 जिसे रिया प्राय नथमें या दोनों नथनोंके बीचके परदेमें  
 पहनती हैं ।  
 बुलानी (हि० पु०) घोड़ेकी एक जाति ।  
 बुलाना (हि० नि०) १ आजाज देना पुकारना । २ किसी  
 को बोलनेमें प्रयत्न करना, बोलनेमें दूसरेको लगाना ।  
 बुलाया (हि० पु०) निमन्त्रण, बुलानेकी क्रिया या भाव ।  
 बुलाह (हि० पु०) यह घोडा जिसको गर्दन और पूँछके  
 बाल पीले हों ।  
 बुला (स० ग्री०) बुल-इन विच् । १ ग्रीचिह, भग ।  
 बुला (अ० ग्री०) चौकीर पालके लगेमें बाधनेका एक  
 विशेष प्रकारका रस्सा ।  
 बुलेली (हि० पु०) महिसुर और पृथी घाटमें अधिस्ताने  
 मिलनेवाला मँभोले आकारका एक पेट । इसको लकड़ी  
 मफेट और चिकनी होती है जिससे नव्बोरोंके चौबड़े,  
 मेज, बुरमिया आदि बनाई जाती हैं । इसके बीचोंसे  
 एक प्रकारका तेल निकलता है जो मशीनों आदिके  
 पुरजोंमें डाला जाता है ।  
 बुलीया (हि० पु०) बुलाया देना ।  
 बुलन (हि० पु०) १ मुँह, चोहरा । २ पानीका बुलबुला ।  
 ३ गिरदकी तरहकी पर भूरे रंगकी एक मछली । इस  
 मछलीके झूँड़े नहीं होती ।  
 बुल्य (स० नि०) बुल्य अत्यादित्यात् निपातान् माधु ।  
 तिरद्वीन, तिरछा ।  
 बुल्यार—बुल्य प्रदेशके बुल्य जिलेका उत्तरोप ताट्य ।  
 यह अक्षांश २० ४६ उ० तथा देशांश ७२ ५० से ७३  
 ८ पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण २०८ वर्गमील

और जनसंख्या प्राय ८७८८६ है । इसमें इसी नामका  
 शहर और ६० ग्राम लगते हैं । समुद्रके किनारे बसा  
 होनेके कारण यहाँसे आदवा अच्छी है । बुल्य  
 नगरमें और मनुष्य स्वास्थ्यपरिवर्तनके लिये बहा  
 आते हैं ।

३ उक्त तालुकका एक शहर । यह अक्षांश २० ३७  
 उ० तथा देशांश ७२ ५६ पू०के मध्य अवस्थित है ।  
 जनसंख्या १२८५७ है । यहाँ जलपथ और स्थलपथमें  
 नाना प्रकारके उद्योगोंका वाणिज्य होता है । शहरमें एक  
 सबजजकी अदालत, अस्पताल, एक हाई स्कूल और एक  
 मिडिल इंग्लिश स्कूल तथा ६ प्रजासुल्य स्कूल हैं ।

बुप (स० ग्री०) बुस्यते उत्पद्यते यन्, युष्पेति व,  
 पृषोदरादित्यात् पन् । बुस, अनाज आदिके ऊपरका  
 छिलका ।

बुस (स० ग्री०) बुस्यते तुच्छन्वावुत्पद्यते इति (सुगभ्रा  
 प्रीति, व । पा ३।१।३७) तुष, भूमी । पण्य—कडक, तुष ।  
 २ उदक, जल ।

बुस्त (स० ग्री०) बुस्यते नाद्रियते बुस्त घञ् । पन्  
 मादि फडका त्यन् अञ्, कटहल आदिका वह हिस्सा  
 जो खाने लायक नहीं है । २ मासपिट्तभेद, मांसका  
 पीडा ।

बुहरी (हि० ग्री०) बहरी लग ।

बुहारना (हि० नि०) भाड से जगह साफ करना, भाड  
 देना ।

बुहार (हि० पु०) वह बडा भाड जो ताकनी साफोने  
 बनाया जाता है ।

बुहारो (हि० ग्री०) भाड, मोला ।

बुच (हि० ग्री०) एक प्रकारकी मछली । बुच, दवा ।

बुद (हि० ग्री०) १ जड या नीर किसी तरल पदार्थका  
 यह बहुत ही थोडा अञ् जो गिरने आदिके समय प्राय  
 छोटी सी गोली या गले आदिका रूप धारण कर लेता  
 है । २ एक प्रकारका रगोन देगी कपडा । इसमें कर्मोंके  
 आकारकी छोटी छोटी वृष्टिया बनी होती हैं । ३ धीप ।  
 (नि०) ४ बहुत अच्छा या तेज । इस शब्दमें इसका  
 अन्वय है केवल तलवार, बटार आदि वाटोयाने हाथपागे  
 और शराबके सब धर्मों होता है ।

बूँदा (हि० पु०) १ बड़ी टिकुली । २ सुराहीदार मणि या मोती जो कान या नथमें पहना जाता है ।

बूँदावादी ( हि० स्त्री० ) अथ वृष्टि, हलकी या थोड़ी वर्षा ।

बूँदी—दक्षिण पूर्वी राजप्रान्तके एक सन्तत राज्य । यह अक्षा० २५ से २६ उ० तथा देशा० ७५ १५ से ७६ १६ पू० के मध्य विस्तृत है । इस राज्यके उत्तरमें जयपुर और टोंक का राज्य, पश्चिममें उदयपुर अर्थात् मेवाड़का राज्य, दक्षिणमें कोटा और मेवाड़का राज्य और पूर्वमें खोटा राज्य है । भूपरिमाण २२२० मीलसे कुछ अधिक है । जनसंख्या दो लाखके लगभग और आय १२ लाखके अन्दाज है । इस राज्यमें माहेश्वरके पुराण प्रसिद्ध राजा रन्तदेव(१)का बसाया हुआ चबल नदीके तट पर पाटा नगर एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान है । यहाँ पर केशवराय जीका प्रसिद्ध प्राचीन मंदिर है जिसका जीर्णोद्धार सन् १६६८ वि०में बूँदीके इतिहासप्रसिद्ध वीर नरेशराय राजा छत्रसालजीने करवाया था । फार्सिक सुदि १३से मगशिर बदि दोज तक ५ दिन यहाँ बड़ा मेला जुड़ता है । दूसरा तीर्थस्थान बूँदीसे डेढ़ फीस पर वानगङ्गाके किनारे केदारनाथ है ।

बूँदीके नरेश हाडा चौहान हैं जो माग्हरके चौहान राजा माणिकराज ( सन् ७४१ )की सतानमें अस्थि पालजीके वंशज होनेसे हाडा सत्ताको प्राप्त हुए हैं ।

क्योंकि हाडा वंश चौहानवंशकी एक शाखा है । इस लिये पहले चौहान वंशके विषयमें परिचय देना बहुत आवश्यक है । टाड साहबने चौहानवंशकी अग्निहोत्रसे उत्पत्ति लिख कर भी इनका सामवेद सोमयज्ञ माधुनी शाखा और वाचा गोत्र लिखा है जो विलकुल पर दूसरेके विरुद्ध है । सामवेदकी धौपुनी शाखा है माधुनी शाखा नहीं है माघहिन्दुनी शाखा तो यजुर्वेदकी है । और अग्निहोत्रसे उत्पन्न होनेके कारण सोमयज्ञ भी नहीं हो सकता, अग्नियज्ञ कहा सकता है । केवल सन् १७७७ के राजलु माके शिलालेखमें ब्रह्मके ध्यान और चन्द्रके

योगसे चाहमानजीका चन्द्रलोचसे आना लिखा है उससे चन्द्रवशी होना इस लिये नहीं माना जा सकता, कि उस लेखसे पहले सन् १२००के औरपासके शिलालेखोंमें कई जगह इनको सूर्यवशी लिखा मिलता है । १३वीं शताब्दीके आरम्भके लिये "पृथ्वीराज विजय" काव्यमें जगह जगह चौहानोंको सूर्यवशी लिखा है । उसमें लिखा है, कि ब्रह्माजीको प्राधनासे विष्णुने सूर्यको ओर देखा तो सूर्यमण्डलसे एक पुरुष आया, वही चौहान ( चाहमान ) कहलाया, पर वहाँ ही उसके भाई धन्जयका भी वर्णन है जिसकी उत्पत्तिका कुछ भी पता नहीं, कि वह कहासे आ गया । परन्तु दूसरे स्वप्न पर इनको ( चाहमान ) राम इन्द्राकु और रघुके वंशमें लिखा है (१) । हमीर महाकाव्यमें लिखा है, कि पुष्करमें ब्रह्माजीके यज्ञकी रक्षा के लिये ब्रह्माके ध्यानसे सूर्यमण्डलसे एक दिव्य पुरुष उत्तर कर आया और उसने यज्ञकी रक्षा कर ब्रह्माजीको सन्तुष्ट किया, उसी पुरुषका नाम चाहमान हुआ । पृथ्वीराजराजानी नामक महाकाव्य में वशिष्ठजीके यज्ञकी रक्षाके लिये आठ पर्वत पर ४ क्षत्रियोंको अग्निहोत्रसे उत्पत्ति लिखा है । उसीमें चाहमान ( चतुर्भुज ) कीकी उत्पत्तिका भी वर्णन है । और भी कई ग्रन्थोंमें सूर्य और अग्नि वंशों लिखा है ।

सूर्यवंश वर्णन करनेवालोंमें ब्रह्माजीके यज्ञकी रक्षाके लिये चाहमानजीका सूर्यमण्डलसे आना लिखा है और अग्निवंश वर्णन करनेमें ब्रह्माके पुत्र वशिष्ठके यज्ञकी रक्षा के लिये यज्ञहोत्रसे उत्पन्न होनेका विधान है । भेद कुछ नहीं है, यज्ञकी रक्षा और विष्णुका स्वप्न दोनोंमें है और दोनोंके यज्ञमें देवताओंका आह्वान होना भी सामाविक वात है । सूर्यका नाम भी विष्णु है । अग्निको मृत्यु लोकमें अग्नि, अतरिक्षमें विद्युत् और ध्रुवलोक में सूर्य कहते हैं । अतः सूर्यका नाम भी अग्नि सिद्ध है तब चौहानोंका सूर्यवंश या अग्निवंश होनेका भेद कुछ नहीं है । आज कल चौहान अपनेको अग्निवंशी ही मानते हैं ।

(१) नगदा मथुरा रत्नके सनाह माधुपुर रत्नस ई कान पर रण्येमेोरना प्रसिद्ध प्राचीन शिला है जो सभर है इयां रन्त-दवका जनगाया हुआ हो ।

(१) "कानुत्स्थामिन्द्राकु रघु च यदधत्पुत्राभन नि प्रम रणोदुनम् । कलापि प्राप्य स चाहमानां प्रमृत्तुव प्रर रभूज तन् ॥" ( प्रथीराज विजयि का ७१ )



मघत् १६११ वि०में राय सुरजनजी अपने स्वतन्त्र पैत्रिक राज्य वृद्धीके स्वतन्त्र नरेज हो गये और मेवाड़से इनका कोई सम्बन्ध न रहा। इन्होंने वृद्धी राज्य प्राप्त होने पर मेवाड़में अपने दो छोटे भाइयोंको भी बुला कर वृद्धी राज्यमें ही बीस बीस हजार रुपये वार्षिककी जागीर दे दी और जो वृद्धी राज्यके परगने राय सुरलानसिंहजीके समयमें जन्म लोग दवा घंटे ये उन्हीं घोरतासे विनय कर वृद्धी राज्यमें मिला लिया, जिससे उनकी कीर्ति चारों ओर फैल गई। इसी समय अर्थात् सन् १६१५ चिकम में शेखाही खानदानके हाकिम हानी गा पठानने अस्वर बादशाहके डरसे घबड़ा कर रणधमोरका किला राय सुरजनके हाथ बेच डाला। इस समय मेवाड़वालोंका रणधमोरसे कोई संबन्ध न था। दूसरे वर्ष अस्वरके सेनापति हथोब अलीने अस्वरकी आज्ञासे रणधमोर पर चढ़ाई की और देशमें उपद्रव मचाया, परन्तु राय सुर जनने उसे मार भगाया।

इस समय तक वृद्धीके अधोजि कभी मेवाड़वालोंके अधीन नहीं थे और न रणधमोर पर ही मेवाड़का अधि कार था, ये सदैव स्वतन्त्र नरेज रहे थे (१) चित्तौड़ विजय करनेके पीछे सवत् १६२५ वि०में अकरने रणधमोर पर चढ़ाई की। तुजुके जहागिरीमें जहागिरने लिखा है, कि राय सुरजनके पाम ६७ हजार सवार सदैव नौकर रहते थे। इससे यह भी जाना जा सकता है, कि जब ६-७ हजार सवार राय सुरजनके पास रहते थे तो २५० हजार पैदल भी अवश्य ही रहते होंगे, इसके अलावा गणपति और रथपति। जहागिरने लिखा है, कि राय सुरजनने १४ दिन तक उसके बालिद बादशाह अस्वरकी रणधमोर पर परेशान किया। सुरजन चरित्रमें लिखा है, राय सुर जनने १४वार बादशाह अस्वरको परारत किया था। संमन है, ये १४ लडाइया १४ दिनोंमें हुईं। १४ दिनों लडाईं से हतोत्साह हो कर बादशाह अस्वरने राय सुरजनको नर्षदा, मथुरा और काशी मण्डलोंका लोभ दे कर मधि

की और गढमंडला (धारीगढ-गढ मटर) विजय करने पर सुरनारका परगना और दिया।

राय सुरजनके पुत्र तु भोजने तु घर परमें ही सुर और अहमदनगरका विजयमें अच्छा नाम कमाया। राय राजा भोजने जैसा अकबर बादशाहको अपनी घोरतासे प्रसन्न किया था, वैसे ही उसने उसकी धर्मविरुद्ध आरमाओंको भंग करके अपनी मूर्छोंकी लाली रती थी।

इनके पुत्र सरजुलदराय राय राजा रतसिंहजीने पुर हानपुरके मैदानमें तुरमनी बड़ी सेनाको परास्त कर जहागीरका जाता हुआ राज्य बचाया था। इसके छोटे पुत्र माधोसिंहजीने कोटाका स्वतंत्र राज्य मिला जिसमें उस समय ३६० गाव थे। सर सुल्तदरायके पीत वृद्धीके राय राजा छलसाल और फोटेके राज सुकुन्दसिंहजीने धोल पुर और फतिहाबाद ( उज्जैनके पास ) की लडाइयोंमें शाहजादे धीरूजैब और मुरादको मिथिन सेनाओंमें तुमुल सप्राम कर दाराजिकोहको भागनेका अवसर दे धोरगति पाई, पर जोधपुरके महाराज सयतूमिहको तरह पीठ दिया कर अपने कुलको फलक न लगने दिया। राय राजा छलसालके पुत्र राय राजामायसिंहने औरजैब की धर्मविरुद्ध आज्ञाओंका सदैव तिरस्कार कर मदिरोंकी रक्षा की और जल भूलने एकाइजीके घाँसे ससवका सुलूम अपनी भुजाओंके बल दिल्ली नगर में बड़ी धूमधामसे निकाल कर यमुना तट पर पहुंचाया और पीछे अपने स्थान पर ला कर धर्मरक्षाकी मर्यादा पालन की। इनके प्रापूर्वराय राय राजा अंगद सिंहजीके पुत्र राय राजा सुधसिंहजीने अपनी भुजाओंके बल जाऊके मैदानमें आजमशाहको मार कर पहापुर जादकी विलोके तग्न पर बिठाया और लखनहार मन सब और महाराज राजाकी पदवी पाई। इस युद्धमें आजमका पक्ष समर्थन करने पर जयपुरके सवाई महाराज जयसिंहको घायल हो रेत छोड़ कर भागा पड़ा था जिसका उसके मामों शाह जमा हुआ था। फर्रुखसियर के समयमें जब कि बादशाहने गङ्गाको मची, तो जय पुर नरेज सवाई महाराज जयसिंहको अपने बहोई वृद्धी के महाराज राजा सुधसिंहजीको अपने साथ जयपुर ले आये जहाँ उन्होंने इन्दे बड़ी भौतिक साथ अपने पास

(१) माधोसिंह बादशाह सहायुरजानने चित्तौड़ पर चढ़ाई की। उस समय चित्तौड़क गणना विश्वामदित्य और उनके छोटे भाई उदयसिंहकी सहायतासे भाग्य दिना था।

रख और घोषा दे कर अपनी जाजऊकी हारका बदला लेनेके लिये इनका बूंदी राज्य इन्हींके एक स्वामि प्रोही सरदार करवरके जागीरदारके पुत्र दलेकसिंहको अपनी पुत्री ध्याह कर दे दिया और उसे अपना करद राज्य बना लिया। महाराज राणा युधसिंहजीने जब सवाई जय सिंहका प्रपच मालूम हुआ तो ये जयपुरसे चल दिये। इनके पीछे ही जयपुरकी सेना भी चढी। जयपुर और बूंदीकी सीमा पर दोनोंमें डट कर युद्ध हुआ जिसमें जयपुर राज्यके बड़े बड़े सरदार मारे गये और जब महाराज राजा युधसिंहजीके भो जो थोड़ेसे मनुष्य थे, मारे गये तब ये अपनी सुमराल बेधू (मेगाड) में चले गये। इनके देवलोक होनेके पीछे इनके १३ वर्षके पुत्र वीरकेशरी महाराज राजा उमेद सिंहजीने अपने अनेक वषा के असौम परिश्रम, अतुल पराक्रम और अद्वितीय रणकौशलसे जयपुर जैसे बलाढ्य हाथीके पैदलसे अपना बूंदीमा पैत्रिक राज्य निकाला और अपने पुत्रराओंकी नीतिको उज्जल और चिरस्थाय किया। फिर अपने पुत्र कुंवर अजिन् सिंहजीको राज्य दे आप तीर्थाटनकी निकले और पीछे बानप्रस्थ हो बूंदीसे दो फीस पर अपने केशरनाथजीके आश्रममें तप करने लगे जहा उनके पूर्वज कोल्हन्जीको दंडौती देते समय श्री केशरनाथजीने प्रकट हो कर दर्शन दे उनकी यात्रा सफल की थी।

महाराज राजा अजिन् सिंहजीने बोलैटा गावके भगडे में राणा अरिसीचीको मार कर अपनी वीरता प्रकट की, जिसका वीर अभी तक दोनों राज्योंमें बना हुआ है। इनके पुत्र महाराज राणा विणुसिंहजीने सन् १८०४ ई० में जसवतराज दुन्दरके विरुद्ध अङ्गरेजी सेनापति कर्नल मानसूत साहबको सहायता दे कर सन् १८१८ ई० (सवत् १८७७ वि०) में ब्रिटिश सरकारसे सधि की।

महाराज राजा विणुसिंहजीके पुत्र महाराज राजा रामसिंहजीने अपने ६८ वर्षके राज्यशासनमें प्रजाका उत्तम रीतिसे पालन करनेके सिवाय बूंदीमें सशरत विद्याकी उन्नति कर इसे छोटी काशी बना दिया। ये महाराज राजा धर्म और न्यायकी मूर्ति थे। बूंदीकी प्रजा इनको राजपि सम्बोधन करती है और अङ्गरेजी मरकार भी इनका बहुत मान रखती थी। सन् १८५७ के

गदरमें इन्होंने गजमेंदकी अच्छी सहायता दी थी। इनकी जोधपुरजाली महाराणी राठोडजीसे महाराज कुमार भीमसिंहजीका और नागोदके पंडिहारजीसे हुंवर राणाथसिंहजीका जन्म हुआ था। इन दोनों कुमारोंके देव लोच सिंधारनेके पीछे फतकूनके पंडिहारजीसे मितो आश्रित सन् १ सवत् १६२६ के दिन महाराज कुमार रघुवीर सिंहजीका और उनके पीछे कुरङ्गराज सिंहजी, कुंवर रघुवीर सिंहजी और कुंवर रघुवीरसिंहजीका जन्म हुआ। सवत् १६४५ वि०के चैत्र कृष्णपक्षमें महाराज राजा रामसिंहजीके देवलोक होने पर मितो चैत्र शुक्र ११ भृगुवार सवत् १६४६ ( १२ अप्रैल सन् १८८६ ) को महाराज राजा रघुवीरसिंहजी १६॥ वर्षकी अवस्थामें बूंदी राजसिंहासन पर विराजे। इन महाराज राजाजीके दश विवाह हुए थे, जिनमेंसे बड़ी महाराणी जोधपुरकी राठोड जी श्रीसीमाया कुंवरजीके गर्भसे अग्रहण सन् ५ सवत् १६४६ ( १२ नवम्बर सन् १८८६ ई० ) को महाराज कुमार राघवेन्द्रसिंहजीका जन्म हुआ। परन्तु दु सई, ३ फाल्गुण शुद्ध ८ रविवार सवत् १६५५ ( ५ मार्च सन् १८६६ ई० ) को केवल ११ वर्षकी अवस्था में उनका देवलोक वास होनेसे राजपरिवार और प्रजामें हाहाकार मच गया।

महाराज राजा रघुवीरसिंहजीके समयमें सन् १६११ ई०के १२ दिमम्बरको दिहीमें एक बड़े शाही दरबारमें इङ्ग्लैण्डके राजा और भारतवर्षके सम्राट् पंचमजार्जस राज्याभिषेक हुआ जिसमें भारतवर्षके समस्त राजा महाराजा, नवाब, गवर्नर, लेफ्टिनेन्ट गवर्नर, सरदार सेठ साहूकाग आदि तथा दूसरे दूसरे देशोंके प्रतिनिधि भी आये थे। उसमें निमन्त्रण पा कर महाराज राणा बूंदी भी सम्मिलित हुए थे।

भारतवर्षसे विदा होते समय सम्राट्ने राजा रघुवीरसिंहको १० जनवरी १६१२ ई०के दिन जे सी बी ओ की उपाधिसे भूषित किया।

ये महाराज राजा विद्यानांश आदर् मत्कार करनेमें सदैव तत्पर रहते थे। इनके समयमें रुड्रेय धर्मानुष्ठान और प्राहण भोजन होते रहते थे। प्राचीन मर्यादाका पालन और प्रजापालनमें इतना अनुराग था, कि जब जब

अथवा लपटे तब ही तप लगानके चढे हुए लामों रुपये प्रजाको छोड़ दिये और लामों रुपयोंका नाम प्रताम गाया और परसोईया पाला दिया । इन्होंने वृद्धी राज्यमें गाँवोंके करनेके लिये जमीन छोड़ रखी है । महाराज राजा रघुवीरसिंहजी जैसे धर्म मयादा और धनापालक थे वेमे ही बोर धीर और उत्साही थे । इस समयके नरेशोंमें महाराज राजा साहब पट्टरिचामे अछिनोप थे । मिनी हृष्य १३ मगय्यार सत्रम् १६८४ के दिन महाराज राजा रघुवीरसिंहजीके स्वर्ग सिंघारने पर शाके सहोदर लघु श्रुता महाराज रघुराजसिंहजीके पुत्र महाराज ईश्वरीसिंह जी ही परमात् उत्तराधिकारी थे । ये मिती श्रावण शुक्ल अष्टम्याको वृद्धोत्तम सिंघारमा पर विराजे । ये ही वर्तमान राजा हैं । इन्हें १७ तौपोंकी सलामी मिलनी है ।

वृद्धी ( हि० खी० ) १ एक प्रकारकी मिठाई । यह अच्छी तरह फेंटे हुए बेसनको भरनेमेंसे बूढ़ बूढ़ टपका कर और घोंमें छान कर बनाई जाती है । इसके दो भेद हैं, मोठी और नमकीन । नमकीन वृद्धी बनानेके लिये पहले ही बेसनको घोलते समय उसमें नमक, मिर्च आदि मिला देते हैं, पर मोठी वृद्धी बनानेके लिये बेसन घोलते समय उसमें और कुछ भी मिलाया नहीं जाता । उसे घोंमें छाा कर शीरेमें सुखा देते हैं और तब फिर काममें लाते हैं । छोटे दानोंकी वृद्धीका लडू भी पाएते हैं जो वृद्धीका लडू कहलाता है । २ वषोंके बच्चेको बूढ़ ।

वृ ( का० खी० ) १ वास, गंध, महक । २ दुर्गंध, बदब ।  
 वृष्ठा ( हि० खी० ) १ पिताकी बहन, फूफों । २ भारतकी बड़ी बड़ी नदियोंमें मिलनेवाली एक प्रकारकी मछली । इसका मांस रुखा होता है । ३ बड़ी बहन । ४ मुन लना निषीका परस्पर आदरसुखक संशोधन ।  
 वृष्टि ( हि० पु० ) दिल्लीसे निरुच तब तथा दक्षिण भारतमें मिलनेवाला एक प्रकारका पीपल । यह ऊमरी और तार आदिकों जातिका होता है । इसे जग कर मनोहारि निपालते हैं ।  
 वृष्ट ( हि० पु० ) मानकलकी जातिका एक बड़ा वृक्ष । यह वृक्षों हिमालयमें ५००० से ६००० फुटकी ऊँचाई

रखी जाय तो बहुत दिनों तक लताय नहीं होती । यह खमे, चीन्हे और घरती आदि बनानेके काममें आती है । दार्जिलिङ्गके आम पामके जगलोंमें इनमे बट कर उष योगी और कोई वृक्ष बसाचित ही होता है । यहा इसकी पत्तियोंमे चमड़ा भी सिंगघया जाता है ।

( पु० ) २ चगुल, बकोटा ।  
 वृष्टना ( हि० पि० ) १ मिठ और बट्टकी सहायतासे किसी चीनको महीन पीस कर चूर्ण करना । २ अपनेको अधिक योग्य प्रमाणित करनेके लिये गढ गढ कर बातें करना ।  
 वृष्ठा ( हि० पु० ) यह भूमि जो नदीके हटनेसे निरन्तर आती है, गग बरान ।  
 वृष्ठा ( सं० वि० ) युक्तयति शब्दायते इति युक्त अच् पृषो दरादित्वाद्दोर्घः । युक्त, ददय ।  
 वृष्ठा ( हि० पु० ) भूमा ।  
 वृष्ट ( अ० पु० ) १ बड़ी मेघ । २ बपड़े कागज या चमड़े आदिका वह टुकड़ा जो बन्दूक आदिमें गोली या बारूक को यथास्थान स्थिर रखनेके लिये उसके चारों ओर लगाया जाता है ।  
 वृष्ट ( अ० पु० ) पशुओंका भास आदि बेचनेके लिये उतकी हत्या करनेवाला, कसाई ।  
 वृष्टलाना ( हि० पु० ) वह स्थान जहा पशुओंकी हत्या होती है, कसाई बाड़ा ।

वृष्ठा ( हि० वि० ) १ जिसके कान बड़े हुए हों, बचरटा । २ जिसके पैने अग बट गण हों लघया न हो जिनके कारण यह कुरूप जान पड़ता हो ।  
 वृष्ठा ( हि० पु० ) यह भेद जिनके कान बाहर निकले हुए न हों, यति जिनके कानके स्थानमें बचल छोटा-सा छेद हो हो, मुजरो ।  
 वृष्ठा ( का० पु० ) बन्दर ।  
 वृष्ठा ( पा० वि० ) घोषा देना, छिपाना ।  
 वृष्ट ( हि० खी० ) १ मुक्ति, समझ । २ पहलें ।  
 वृष्ठा ( हि० वि० ) १ मगभता, जानना । २ प्रश्न करना, पृष्टा ।

वृट (अ० पु०) एक प्रकारका अ गरेजो ढ गन्ना जूता जिम्मे से पैरके गट्टे तक ढक जाते हैं।

बूटा (हि० पु०) १ छोटा वृन्, पीथा। २ पश्चिमी हिमालयमें गढवालसे अफगानिस्तान तक होनेवाला एक छोटा पीथा। ३ फूलों या तृशों आदिके आकारके चिह्न जो कपड़ों या दीवारों पर अनेक प्रकारसे बनाए जाते हैं।

बूटी (हि० स्त्री०) १ वनस्पती, जटी। २ नाग, भग। ३ एक पीथा जिसके रेशेसे रस्सिया बनाई जाती हैं। इन्मे गुठवात्रला भी रहते हैं। ४ घोलनेके ताशके पत्तों पर बनी हुई टिड्डी। ५ फूलोंके छोटे चिह्न जो कपड़ों आदि पर बनाये जाते हैं।

बूढना (हि० क्रि०) १ निमज्जित होना, हूबना। २ निमज्ज होना, लीन होना।

बूडा (हि० पु०) वर्षा आदिके कारण होनेवाली जल की बाढ।

बूढ (हि० पु०) १ लाल रंग। २ बीर बहटी।

बूडा (हि० पु०) बुद्धा देखो।

बूस (हि० पु०) बूता देखो।

बूता (हि० पु०) पराक्रम, बल।

बूथड़ी (हि० स्त्री०) आकृति, चेहरा, शकल।

बूना (हि० पु०) चत्वार नामक वृक्ष। चत्वार दण्डो।

बूम (अ० पु०) १ यह लड़ा जो नदी आदिमें नावोंको छिउले पानीसे बचाने और ठीक मार्ग दिखानेके लिये गाडा जाता है। २ जहाजोंके पालके नौचेके भागमें लगा हुआ लड़ा। यह उसे फौलाए रफनेके लिये लगाया जाता है। ३ यह रोक जो बहतसे लट्टों आदिकी बाध कर तैयार की जाती है। यह नदीमें इसलिये लगाई जाती है जिससे बहती हुई लफडिया इन्में रुक जाय। ४ लट्टों या तारों आदिसे बनाई हुई वह रोक जो बन्दरों में शत्रुके जहाज अथवा आनेसे रोकनेके लिये लगाई जाती है।

बूर (हि० पु०) एक प्रकारकी घास जो पश्चिम भारतमें होती है। इसके पानेसे गौओं भैंसों आदिना दूध और दूग्धरे पशुओंका बल बहुत बढ़ जाता है। इसमें पत्र प्रकार की गंध होती है। यदि गीण आदि इसे अधिक पार्य, तो दूधमें भी वही गंध आ जाती है। यह घास दो प्रकारकी

होती है, एक सफेद और दूसरी लाल। इसे मुखा कर १० १५ वर्षा तक रंग मरुते हैं।

बूर (हि० पु०) १ कच्ची चीनी जो भूर रंगकी होती है, शकर। २ स्नाफ की हुई चीनी। ३ महीन चूण, सफ़ूफ।

बुरी (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी बहुत छोटी वनस्पति। यह पीया, उनके तनों, फूलों और पत्तों आदि पर उत्पन्न हो जाती है। इससे वे पत्राथ सडने या नष्ट होने लगते हैं। अ गुरके लिये यह निरीय प्रकारसे घातक होती है। इसकी गणना वृशों आदिके रगोंमें की गई है।

बूला (हि० पु०) पयालका बना हुआ जूता, लतडी।

बृहण (स० लि०) बृहिल्यु। वृष्टिभारक।

बृहणत्व (स० स्त्री०) बृहल्य भाव त्व। बृहणका भाव या धर्म।

बृहित (स० स्त्री०) बृहक। हस्तिगर्जन, चिंघाड मारना।

बृहिता (स० स्त्री०) इन्द्रमातृकाभेद। कहीं कहीं 'बृहिला' ऐसा भी पाठ देखा जाता है।

बृटिण (हि० वि०) त्रिंश देखो।

बृहदुक्थ (स० स्त्री०) पद।

बृटु (स० पु०) १ पणिका तशा। २ वैदिक एक पणिरान।

बृक (स० स्त्री०) जल, पानी।

बृप (स० पु०) वृप देखो।

बृसय (स० पु०) १ असुर। २ त्वष्टा। "अपातिरत बृसय" (ऋक् १६३१४) ३ एक असुर रोग। (वेद०)

बृनी। स० स्त्री० ऋषियोंका आसन।

बृहक (स० पु०) बृहकुन। देवगन्धर्भेद।

बृहधञ्चु (स० पु०) बृहती चञ्चु शान्विशेष। १ महा चञ्चुशाक। (वि०) २ दीर्घचञ्चुयुक्त, लम्बी चोंचवाला।

बृहधित (स० पु०) फग्वर, विज्रीत।

बृहच्छन्दस् (स० लि०) बृहच्छादयुक्त।

बृहच्छीर (स० लि०) बृहदाकारविजिण्ड।

बृहच्छल् (स० पु०) बृहत् शल्को यस्य। चिद्रुमत्स्य।

बृहच्छाल (स० लि०) बृहत् शालयुक्त।

बृहच्छुवस् (स० लि०) बृहत् श्रुतौ यस्य। महायज्ञस्व।

बृहज्जापलपनिपद् (स० स्त्री०) उपनिषद्दे।

बृहज्जाल (स० स्त्री०) बड़ा जाल।

शृङ्गीरन्ती ( स० स्त्री० ) शृङ्गीरान्तिना वृक्ष । पर्याय—  
पक्वमट्टा, मियङ्को, मधुरा, जीवपुष्पा, दृढजोषा, वज-  
स्फरी । गुण—बहुवीर्यशायक, भृत्विद्यायण, वेगपूर्वक  
रमनियामक ।

शृङ्गद्वय ( स० स्त्री० ) शृङ्गो द्वयम् । वडा नगारा ।  
शृङ्गतिना ( स० स्त्री० ) शृङ्गो ( शृङ्गा आच्छादन । पा  
१।१।६ ) इति न्यायं कर् । १ उत्तरीयवज्र, उपर्या ।  
२ शृङ्गो, वडा ।

शृङ्गो ( स० स्त्री० ) शृङ्गो गौदान्तिनाट्टोऽप्य् । १ शृङ्ग-  
वासांको, वामभटा । पर्याय - महती, मान्ता, वासांती,  
मिहिका, पुली, राश्ट्रिका, रण्डिका, भण्डाकी, महो  
टिका, बहुपत्री, कण्ठननु, कण्ठालु, कटफला, वा  
शृङ्गाकी, सिद्धी, प्रमहा, रक्तपाकी, लताशृङ्गिका । गुण -  
फट्ट, सित, उष्ण, वातघ्न, अरोचक, आम, काज, ज्ञास  
और हृद्रोगनाशक । अकान्ता दग्गे

२ विभावस्तु गन्धर्वकी बीणाका नाम । ३ उत्तरीय  
वज्र, उपर्या । ४ कण्ठकारी, भटकट्या । ५ सुधृत  
के अनुसार एक मर्मस्थान जो रीढ़के दोहों और पीठके  
पीठमें है । यदि इस मर्मस्थानमें जोड़ लगे तो बहुत अधिक  
रक्त जाता है और अन्तमें मृत्यु हो जाती है । ६ वाक्प ।  
७ एक वणनृत्त । इसके प्रत्येक चरणमें नौ अक्षर होते हैं  
शृङ्गोपत्न्य ( स० पु० ) वैद्यकमें एक प्रकारका वाया  
वत्प ।

शृङ्गोपति ( स० पु० ) शृङ्गीरां वाचा पति । शृङ्गपति ।  
शृङ्ग ( स० लि० ) शृङ्गमूली ( कलमान् शृङ्गान् महत्ता  
वत्पृथक् । उष्णं तिक्तम् ) इति अति प्रत्ययेन, तिपात  
नात्साधु । १ महत्, बहुत बडा । २ पर्याय । ३ उष्ण,  
ऊँचा । ४ दृढ, बलिष्ठ । ( पु० ) ६ एक मन्त्रना, नाम ।  
शृङ्ग ( स० लि० ) शृङ्गप्रकार ( चन्द्रशेखरान्त्यम् ।  
पा १।१।१ ) इत्यस्य वासिष्ठीकस्या वन । शृङ्गं शृङ्ग  
भाती ।

शृङ्गवन्द ( स० पु० ) शृङ्गवन्द यस्य । १ शृङ्गा, नामर ।  
२ विष्णुवन्द ।

शृङ्गवर्म ( स० लि० ) शृङ्गवर्म यस्य । महावर्मयुक्त,  
शृङ्गं कार्ययुक्त ।

शृङ्गवाय ( स० पु० ) आजमोदव जीव गुग्गुलु ।

शृङ्गकालशाफ ( स० पु० ) शृङ्ग महान् कालशाफ ।  
जीवन्तिल ।

शृङ्गकाज ( स० पु० ) शृङ्ग काज । वडू गट, गटेउर नामक  
गन्धद्रव्य ।

शृङ्गकीर्ति ( स० लि० ) शृङ्गो कीर्तिर्धर्म्य । १ महारोक्ति  
युक्त । ( पु० ) २ आङ्गिरसाग्निपुराणे । ३ धनुर्भेद ।  
शृङ्गकुक्षि ( स० लि० ) शृङ्ग कुक्षियस्य । तुन्दिल, तीर ।  
शृङ्गकेतु ( स० लि० ) शृङ्गकेतुयस्य । १ महाधनुयुक्त,  
( पु० ) २ राजभेद ।

शृङ्गक्षत्र ( स० पु० ) आजमोदवजीव गुग्गुलु ।

शृङ्गसाल ( स० पु० ) शृङ्ग ताड । हिन्ताल ।

शृङ्गसिन्धु ( स० स्त्री० ) शृङ्ग सिन्धु रसोऽस्याः । पाठा,  
सोनापाठा ।

शृङ्गसृण ( स० पु० ) वज्र, वास ।

शृङ्गस्वच्छ ( स० पु० ) शृङ्गो स्वच्छ यस्य । प्रहणाशनपृष्ठ,  
नीमका पेड ।

शृङ्गवज्र ( स० पु० ) शृङ्ग वज्र यस्य । १ हस्तिवन्द,  
हाथी वज्र । २ ज्येष्ठ लोभ, सफेद लोभ । ३ काम  
मर्द ।

शृङ्गवज्रा ( स० स्त्री० ) शृङ्ग वज्र यस्य । विषमिका ।

शृङ्गवर्षण ( स० पु० ) सफेद लोभ ।

शृङ्गवज्राज ( स० लि० ) शृङ्ग वज्रयुक्त, जिसमें वज्र वश  
पत्ते हों ।

शृङ्गवाटि ( स० पु० ) धुम्बूर, धनुरा ।

शृङ्गव्याज ( स० पु० ) शृङ्ग वाद्ये यस्य । वटपृष्ठ, वटवा  
पेड ।

शृङ्गवारिज ( स० स्त्री० ) शृङ्ग महान् परिवर्त । महावारि  
वज्र, वडा अमरुद ।

शृङ्गपाली ( स० पु० ) धात्रीरा ।

शृङ्गपोलु ( स० पु० ) शृङ्ग पोलु वर्मधां० । महापोलुवृक्ष,  
पहाडी अलरोट ।

शृङ्गपुष्प ( स० पु० ) १ महापुष्पाकार, पेडा । ( स्त्री० )  
२ काली पुष्प, केलेका फूल ।

शृङ्गपुष्पी ( स० स्त्री० ) शृङ्गपुष्प यस्योऽपी । १ शृङ्ग-  
वशा । २ ज्ञानपृष्ठ, मारवा पेडा ।

शृङ्गपृष्ठ ( स० लि० ) शृङ्गनामयुक्त ।

बृहत्फल (स० ह्री०) १ कुमाण्ड कुम्हडा । २ पनसीफल, कटहल । ३ जम्बूफल, जासुन । चवैएडा, चिन्चडा ।  
 बृहत्फला (स० स्त्री०) बृहत्फल बरुवा । १ अलावू, लौकी । २ कटुतुम्बी, तितलौकी । ३ महेन्द्रवारुणी । ४ कुमण्डली, कुम्हडा । ५ राक्षसवृक्ष जासुन ।  
 बृहत्वादि (स० पु०) मग्निपातउररोक्त कषाय । प्रस्तुत प्रणाली—वृद्धनी, पुष्कर, भार्गी कचूर, शङ्खी, डुरालभा, उत्तकजीव और पटोल इनका समान भाग ले कर कषाय प्रस्तुत कर अर्थात् आध सेर जलमें सिद्ध करके जब आध पाव जल रहे तब उसे उतार ले । इसका सेवन करनेसे सन्निपातिक उरर जाता रहता है ।  
 बृहत्सर्वत (स० पु०) सवर्षमेद ।  
 बृहत्साम (स० स्त्री०) बृहत् साम नित्यक । साममेद । गीतामें लिखा है कि सामके मध्य बृहत्साम श्रेष्ठ है ।  
 “बृहत्साम तथा साम्नां गायत्री छन्दसामेद ॥” (गीता)  
 बृहत्सुभ (स० स्त्री०) प्रभूत धनी मुख सम्पन्न, खुशहाल ।  
 बृहत्सेन (स० स्त्री०) १ महासेनायुक्त, जिसके बड़ी फौज हो । (पु०) २ बार्हद्रथपत्नीय भावीनृपमेद ३ मगधदेशीय नृपमेद । (स्त्री०) ४ बृहती सेना भारी फौज ।  
 बृहत्सोम (स० स्त्री०) स्तोममेद ।  
 बृहत्सिक्क (स० स्त्री०) बृहत् लिङ्गयुक्त ।  
 बृहत्सिन्धु (स० पु०) नानाविध मन्त्रियुक्त ।  
 बृहत्सु (स० पु०) बृहत्सु बरुवा । मतङ्ग, हाथी ।  
 बृहत्सु (स० स्त्री०) बृहत्सु बरुवा ।  
 बृहत्सुम्बलिका (स० स्त्री०) कुमारानुचर मान्मेद ।  
 बृहत्सुम्बल (स० पु०) बृहत्सु अन्ने यस्य । कामरङ्ग ।  
 बृहत्सुम्बल (स० पु०) ऋषिमेद ।  
 बृहत्सुम्बल (स० पु०) वैद्यक ग्रन्थमेद ।  
 बृहत्सुम्बल (स० स्त्री०) उपनिषद्मेद । इसमें ब्रह्मतरु अति विस्तृतभावमें वर्णित हुआ है । शतपथब्राह्मणपत्र आरण्यक व श ही बृहत्सुम्बल कहलाता है । इसके बृहती भाग्य और टीकाए देखा जाता है ।  
 बृहत्सु (स० पु०) १ आश्रमोदपुत्र नृपमेद । २ ह्यम्बुवर्गीय नृपमेद ।  
 बृहत्सु (स० स्त्री०) १ महत् उरुम्ब । (पु०) २ धर्मवर्गीय तपस्व पुत्र मन्त्रिमेद ।

बृहत्सु (स० पु०) जगत् स्यादकारक प्रजापति ।  
 बृहत्सुत्तरतापनी (स० स्त्री०) उपनिषद्मेद ।  
 बृहत्सु (स० स्त्री०) बृहती एता, बड़ी इनाथची ।  
 बृहत्सु (स० पु०) राधा शिपिके एक पुत्रका नाम ।  
 बृहत्सुगिरि (स० पु०) १ प्रभूत रतुति, खूब तारीफ । २ मरुत्, एक वैवर्णका नाम ।  
 बृहत्सु (स० पु०) रानमेद, एक राधाका नाम ।  
 बृहत्सु (स० पु०) दे विशेष, काकपदेश । यह देश विन्ध्या पर्वतके पीछे मालवादेशक समीप अवस्थित है ।  
 बृहत्सुगोल (स० स्त्री०) बृहत्सुगोल गोलाकारफल यस्य । शोणयुक्त, तरबूज ।  
 बृहत्सुगौरीमत (स० स्त्री०) प्रतमेद ।  
 बृहत्सुप्राधन (स० स्त्री०) बृहत्सु प्रन्तरवत्, बड़े पन्थरके जैसा ।  
 बृहत्सु (स० स्त्री०) परएणवशिष्टय दन्ताधिदेव, एक प्रकारकी दन्ती जिसके पहले परएणके पत्तोंके समान होने हैं । इसके गुण—कटु, वीषण, गुदाकुर, अश्व, शूल, अर्श, कण्ड, कुष्ठ और चिवाहनाजक । दन्ती म्वा ।  
 बृहत्सु (स० पु०) बृहत्सुयुगीय नृपमेद ।  
 बृहत्सु (स० पु०) बृहत्सु नल यस्य । १ पट्टिफालोद्भ, सफेद लोध । २ हिल्मालम्ब । ३ रत्नरमान, लाल लहसुन । ४ मत्स्यवर्णवृक्ष । (स्त्री०) ५ लज्जातुका ठोटी लज्जालु ।  
 बृहत्सु (स० स्त्री०) लज्जावती, लज्जालु ।  
 बृहत्सु (स० स्त्री०) ज्येष्ठ, प्रशस्त्यतम ।  
 बृहत्सु (स० स्त्री०) महावाग्निपुत्र, जिसमें चमक कमक हो ।  
 बृहत्सु (स० स्त्री०) वैद्यके ऋषि प्रतिपादक ग्रन्थमेद ।  
 बृहत्सु (स० पु०) वृषमेद ।  
 बृहत्सु (स० पु०) १ आजमोदपत्नीय नृपमेद । (स्त्री०) बृहत्सुयुगीय । २ महाचापयुक्त ।  
 बृहत्सु (स० पु०) आजमोदपत्नीय नृपमेद ।  
 बृहत्सुपुराण (स० स्त्री०) पुराणग्रन्थविशेष । यह एक उपपुराण है । पुराण देखो ।  
 बृहत्सु (स० स्त्री०) बृहत्सु धन यस्य । १ महाधन । (पु०) २ इश्वराकृष्णगीय नृपमेद ।

युद्धत् ( स० स्त्री० ) युद्धात् युद्धस्य महात्मादन्, बडा  
हत् । पयाप—हत्ति ।

युद्धत् ( स० पुं० ) १ महात्मा । २ सफेत् लोभ । ३  
आपलात्, ल्यात् ।

युद्धोप ( स० पुं० ) युद्धं बोद्ध यस्य । आघातक, अमत् ।

युद्धहृत्पति ( स० पुं० ) धर्मशास्त्रमेद ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) आङ्गिरस श्रुतिमेद ।  
( भारत यनर० २३१ अ० )

युद्धहृत्पति ( स० स्त्री० ) दुर्गाका एक नाम ।

युद्धहृत्पत् ( स० स्त्री० ) लापमाणा लता ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) सार्वणि मनुके षष्ठ पुत्रका नाम ।  
( भार्गवदेवपु० ६१ अ० )

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) हन् भानुशिमिर्भय । १ अग्नि ।  
( भारत ३१००८ ) २ निरक युद्ध । ३ मत्स्यभागाके एक  
पुत्रका नाम । ( भाग० ३११११० ) ४ पृथुलाक्षके एक  
पुत्रका नाम । ( भाग० ६१०३११ ) ५ आङ्गिरस इन्द्रसार्वणि  
मत्स्यन्तर्गमे हरिकी एक भयसथाका नाम । इन्द्रसार्वणि  
मत्स्यन्तर्गमे अगस्त हरिते विद्यागाके कर्म श्रीर सत्पापणके  
औरमले चम्पवहण किया था । इनका नाम युद्धहृत्पत्  
रखा गया । ( भाग० ६१०३११ )

( त्रि० ) १ युद्धशिमिविशिष्ट, अश्ली रीजययाग ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) १ प्रतापीकमेद । स्त्रीया टाप् । २ सूर्यको  
बन्धा, अग्नि भानुको पत्नी ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) इन्द्राशुच्यगके भागि मृगपेद ।  
( भाग० ६१०३११ )

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) युद्धं रथो यस्य । १ इन्द्र । २ यज्ञ  
पात्र । ३ भाग्येत्का अश । ४ सार्वियरेव । ५ निम  
पुत्र । ६ जन्तप-ययुज । ७ देवगत पुत्र । ८ निमित्त  
रापपुत्र । ९ पृथुलाक्षके पुत्र । १० महाधराकमेद । ( त्रि० )  
११ प्रभुपराय त्रिमसे अनेक रथ हों ।

युद्धहृत्पत् ( स० त्रि० ) बहु धाम्युक्त, धनवान् ।

युद्धहृत्पत् ( स० त्रि० ) महाशक्तिकारी, जोरमें आवाज  
बढीजाना ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) शूद्रोत्पन्न, छोटा उद्भवमी ।

युद्धहृत्पत् ( स० त्रि० ) महाधन धारी ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) महाप्रयोग ।

युद्धहृत्पत् ( स० त्रि० ) बहु धाम्युक्त ।

युद्धहृत्पत् ( स० स्त्री० ) रोमकसिद्धात-र्यगिण जापदमेद ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) युद्धात् युद्धस्य सत्त्व्याम्नि स्तोत्रतया  
मनुष्य, मन्व ष । १ युद्धस्यस्योक्तस्तुत्य इन्द्र, युद्धं  
स्यम स्त्रोत्रं ह्यात् स्यात्तयो । २ तरसाध्य यस्य स्त्रोत्रो  
टोप् । ३ नदीमेद ।

युद्धहृत्पत् ( स० त्रि० ) बहु शक्तिशाली, पराक्रमी । २  
अधिरथययन्, याज्ञ उमरका ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) मरुणमागिन्, सोतामयया ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) १ पट्टिका लाट, सफेद लोभ । २  
ममपणरूप ।

युद्धहृत्पत् ( स० स्त्री० ) पारवती, बरेला ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) धर्मशास्त्रमेद ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) यन्त्रेण जनमेद ।

युद्धहृत्पत् ( स० पुं० ) देवधाम्य ।

युद्धहृत्पत् ( स० त्रि० ) अष्टद्वारी घनपत्नी ।

युद्धहृत्पत्पत्नी ( स० स्त्री० ) युद्धमी पारुणी धर्मधाम्य । १ महेन्द्र  
पारुणीलता । २ शालालक्षण ।

युद्धहृत्पत्पत् ( स० स्त्री० ) १ इन नामके एक शास्त्र २ धर्म  
शास्त्र ।

युद्धहृत्पत्पत् ( स० पुं० ) धर्मशास्त्रमेद ।

युद्धहृत्पत्पत् ( स० पुं० ) धर्मशास्त्रमेद ।

युद्धहृत्पत्पत् ( स० त्रि० ) महाशक्त पालनकारी ।

युद्धहृत्पत्पत् ( स० स्त्री० ) सार्वधर्म्यमेद ।

युद्धहृत्पत्पत् ( स० पुं० ) युद्धहृत्पत्पत् । १ महापोटवान्, बडा  
तरकट । २ अशुभका एक नाम । ३ बाहू, बर्द ।

युद्धहृत्पत्पत् ( स० स्त्री० ) अशुभका उस समयका नाम  
त्रिम समय से अज्ञातवासमें स्त्रीके वेदमें रह कर राणा  
विगतकी कथाकी नाम गाता सिन्धुने थे । अशुभ देवी ।

युद्धहृत्पत्पत्पत्पत्पत् ( स० स्त्री० ) पुत्रपत्नी । इसकी गिनती  
उपपुत्रागमें की गई है । पुत्रपत्नी ।

युद्धहृत्पत्पत्पत्पत् ( स० पुं० ) एक उपनिषद्का नाम जिसे  
पारुणी उपनिषद् भी कहते हैं ।

युद्धहृत्पत्पत्पत्पत्पत् ( स० स्त्री० ) उपनिषद्मेद ।

युद्धहृत्पत्पत्पत् ( स० पुं० ) महाशक्ति ।

युद्धहृत्पत्पत्पत्पत् ( स० पुं० ) एक शस्त्र जो महाशक्ति  
में से सिद्ध है । शस्त्र ।

वृहस्पति (म० लि०) ? वृहस्पति, अथवा वडा आँव वाला । २ वृहस्पति, वृहस्पति ।

वृहस्पति (म० लि०) श्रीमन्नमेष, चतुष्पत्ति नामका खेल । चतुष्पत्ति ।

वृहस्पति—(म० पु०) वृहस्पति वाचा पति । (पारस्करेति । पा ३।१।२५) इति सुट् निपात्यते । अङ्गिराञ्च पुत्र, देवताओंके गुरु, धर्मशास्त्र प्रयोजक, नवग्रहोंमेंसे पञ्चम ग्रह । पर्याय—सुराचार्य, गोपति, धिपण, गुरु, जीव, अङ्गिरस, चानस्पति, निवृत्तशिल्पिण । (धर्म) उतथा नुज, गोविन्द, चारु, द्वादशरश्मि, गिरीश, द्विदिव, पूर्व फल्गुनीमय । (जटाधर) सुरगुरु, वाक्पति, वचसापति, इन्द्र, वागीश, चक्षुस्, दीदिवि, द्वादशकर, प्राक्फाल्गुन, गौरध । (शंकरान्ता०)

“एत ते देव सपितर्यस प्राहुर्बृहस्पतये ॥” (शुक्लयजु १।२०)

देवताओंके यज्ञमें बृहस्पति ब्रह्मा होते थे । ऋग्वेदमें बृहस्पति शब्दका अर्थ पुरोहित और मन्त्रपालक देवनेमें आता है ।

‘बृहस्पति य सुभूतं प्रभस्ति’ (शुक् ४।१।७) “वृहस्पति वृत्ता महता मन्त्राणां पालयिता दार उक्तलक्षणं पुरोहित वा ।” (सायण)

प्रध्यागनत्रमें ब्रह्मा वृहस्पतिग्रह इगानत्रेण, पुरुष, ब्राह्मणजाति, ऋग्वेद, सत्रगुण, मयुर रस, धनु और मीनराशि, पुण्यनक्षत्र, वस्त्र, पुण्यरागमणि और मिथुनदेशके अधिपति हैं । इनका शरीर बड गुरु है । ये परास्थित और चतुर्भुज हैं, चारो हाथोंमें अथ, वर, वृद्ध और कमण्डलु धारण किये हुए हैं । इनके अधिदेवता ब्रह्मा और प्रत्यधिदेवता रुद्र हैं । ये अङ्गिरा मुनिके पुत्र, प्रातःकालमें प्रवल्, शुभग्रह, देवगृहस्थामी, वृद्ध, रत्नद्रव्य इगामी, प्रातःपितृकफान्मन्त्र यणिकक्रम कर्ता और अङ्गिरागोत्र हैं । (प्रध्यागनत्र)

द्वीपिकाके मतसे—बृहस्पतिकी आरुति पत्रके समान, वणशौर और जाति ब्राह्मण हैं । ये पुरुष ए, तमागुणके अधिपति और समाधातु विधिण हैं, ऋग्वेदके अधिपति, राशिचक्रमें सप्तम, नवम और पञ्चम ग्रहमें पूर्णदृष्टि हैं । रवि, चन्द्र और मङ्गल मित्र, बुध और शुक्र शत्रु तथा शनि सम है । बृहस्पतिका मूत्र विक्रोण धनु है । वृह

स्पतिके १ राशिसे दूसरी राशिमें जानेमें १ वर्ष और सम्पूर्ण राशिओंमें भ्रमण करनेमें १२ वर्ष समय लगता है । कर्कट राशि बृहस्पतिसे उच्च और मकरके नीचे है, जिसमें कर्कटके ५ अंश बहुत उच्च हैं और मकरके ५ अंश बहुत नीचे हैं । बृहस्पति ऊँचे पर रहनेसे शुभफल और नीचे रहनेसे अशुभफल होता है ; ऊँचे और नीचेके बीचमें रहनेसे भागहार द्वारा फलका निर्णय करना चाहिए । बृहस्पति काल पुत्रका ज्ञान और सुरा है । बृहस्पतिके दोताश ६ हैं अर्थात् बृहस्पतिग्रह जब जिस राशिमें रहते हैं, तब उसी राशिके जितने अंशमें उनका क्रिणजात पूर्णरूपसे विक्षिप्त होता है, उसे दोताश कहते हैं, किन्तु सूर्यके दोताशमें सभी ग्रह अस्तमित होते हैं । बृहस्पतिकी चक्रगातका काल एक सौ दिन है । बृहस्पति धन, पुत्र, काञ्चन और मित्रादिके देनेवाले हैं

बृहस्पतिके दण्डमें जन्म होनेसे वह व्यक्ति अत्यन्त मेधावी, दाम्भिक, बहु पुत्रयुक्त, मिष्टभाषी और नृत्यगीत प्रिय होता है । बृहस्पतिरिष्ट—बृहस्पति यदि मेष अथवा उग्निक राशिमें रह कर किसी लग्नके अष्टम स्थान में जात हों तथा यदि वे रवि, चन्द्र, मङ्गल और शनि द्वारा दृष्ट हों और शुक्रकी दृष्टि न रहे, तो बाल्यकी तीन वर्षके भीतर मृत्यु होती है । बृहस्पतिके तुङ्ग पर अस्थान करनेसे मानव मन्त्री, नक्षत्रेण, अतिशय बलवान् मानव नोय, अति रागान्वित, ऐश्वर्यशाली ; हस्ती, अश्व, यान और सुन्दरी रमणियों द्वारा विभूषित और बहु गोष्ठी पोषक होता है ।

मेष आदि द्वादश राशिओंमें बृहस्पति रहनेसे निम्न लिगिन रूप फल हुआ करता है —

मेषमें बृहस्पति होनेसे रागादि सम्पन्न, कर्मठ, यत्ना, दाम्भिक, जित्तरुणां, तेजस्वी, बहुशत्रु और ध्यार्थयुक्त, कोषी, क्रूर और दण्डनायक होता है ।

वृषमें बृहस्पति पडनेसे—पीनविशालशरीर सम्पन्न, देव किङ्गशुक्र भक्तिमान्, गन्त, सुन्दर, भाग्यवान्, रजद्रातु-रक्त, सुन्दरगुरु युक्त, धताट्ट, उत्तम उरर और भूयण-युक्त, तयवेत्ता, मिथरप्रति, विनीत और औपप्रयोग कुशल होता है । मिथुनराशिमें बृहस्पति रहनेसे मेधावी,



धामनी, विदुषः, धर्म-कुशल, विद्वान्, सुद और वाच्यधर्मों  
 मान्य और मन्वर्तन होता है। कर्त्तराजिमें गृहस्पति  
 होनेमें—विद्या, सुख वैदमन्त्र, गार्ध धर्मप्रिय, मन्त्र  
 भावयुक्त, यज्ञस्था, धर्म, स्त्रोक्षसत्त्व, विद्यात्, मन्-  
 पति, धार्मिक और मन्त्रमें अनुगत होता है। मित्र  
 राजिमें सुहरति होनेमें—स्त्रियैत्यायुक्त, धर्मप्रदति,  
 अतिशय पराक्रमशाली, प्रोषा, निधियुक्त सम्पन्न, दुर्ग,  
 धर्म या अत्यधामनी होता है। १२३ राजिमें गृहस्पति  
 होनेमें—मेधावी, धर्मरत्न, विद्यायुक्त ज्ञानवान्, दाता,  
 विदुषःकर्मण विदुषः व्यक्तित्वा और प्रभुत धारणा  
 होता है। नृत्तराजि। सुहरति जानेमें—मेधावी,  
 बहु मित्रमन्त्र, विद्वान्प्रमाण रत्न, प्रभूत धन  
 धाम्, अर्थात्, नर और नरेश द्वारा धन समा  
 दन तथा कर्मनाथ जर्मन्धारी होता है। सुद्विचरमें प्रद  
 स्त्रिय पदनेम अंश शान्तिमि कुशल, साधुचरित्त,  
 अनेक पत्नी विद्विष्ट, अत्यमन्त्रान युक्त, दुष्टता द्वारा  
 पीडित, बहु परित्थनी, शान्ति, धर्मरत्न और विद्याशाली  
 होता है। धनुषराजिमें गृहस्पति होनेमें—मन, देवता,  
 यज्ञादिधर्ममें आवाय सन्धान विद्या, मन्त्रधर्म अक्षम,  
 दाता, अथवा सुदृष्ट पक्षी प्रिय व्यवहारशाली, राजमन्त्री या  
 मन्त्रज्ञान, वक्ष, ज्ञाना देननिधायी और यज्ञकरण मन्त्रियुक्त  
 होता है। मन्त्रमें गृहस्पति पदनेमें—अन्य कर्त्तराज, कर्त्तव्य  
 मन्त्रिण्यु, मोक्षान्तर परागत, सुदृष्ट, निरन्ध, माङ्गल्य, दया,  
 नीर, बहुधर्ममन् और धर्मसे होत तथा भोक्त प्रयामन्त्री  
 और विद्याशी होता है। कुम्भमें गृहस्पति होनेमें—नर,  
 अमाधुचरित्त, तोत्रामिन्त्र, नृशंस, जैनी, व्याधिप्रमन्,  
 मन्त्रादि सुखदाता और सुशुद्धताशाली होता है। मोनराजि  
 में सुदनेमें धर्म और धर्मप्रदानका धेता, साधु और  
 सुदृष्टवर्णोका पूज्य भूपतिका पेश, श्रेयस्व, धनवान्,  
 निरतोषाविद्विष्ट, सुशोभित्वात्मान विरगत और प्रज्ञान्त  
 नेष्ठाविद्विष्ट होता है। ( भागवतो )

गृहस्पति कुम्भके सुदमें सुदरे प्रद द्वारा दृष्ट होनेमें  
 निरन्ध कर्त्तरा होता है। अत्यन्त महेशमें धर्मका सुद  
 वर्णन किया जाता है।  
 गृहस्पति मन्त्रके सुदमें कर्त्तर रति द्वारा दृष्ट होने  
 धर्म-धार्मिक, अनुभ, भोक्त, धननिधयमान् अनुवि और

योगयुक्त होता है। उक्त सुदमें मन्त्र द्वारा दृष्ट होनेमें—  
 इतिहास और वाच्यमें बुद्धि, बहुदत्त और अनेक स्त्री  
 युक्त, भूपति और परिदत्त होता है। मन्त्र द्वारा दृष्ट  
 होनेमें—धेष्ट राजपुरुष धनी, कुत्स्मित पत्नी और भूय  
 युक्त होता है। बुध द्वारा दृष्ट होनेमें—अनुभवशी, पाप  
 पराधन, परविद्यानेपणमें निपुण, मेधावी, कपटी और  
 मोतिवेत्ता होता है। शुक द्वारा दृष्ट होनेमें—सर्वदा सुद,  
 श्रेय, वरत्न, मन्त्र, मान्य, अन्धकार, सुपत्नी स्त्री, विभय  
 सम्पन्न, उत्तम प्रतिमान और भोक्तव्यभाष होता है। शनि  
 द्वारा दृष्ट होनेमें—मन्त्रिन्धेष्ट, लोभा, उदतप्रद्विनि, मन्त्र  
 मिक, प्रसिद्ध मान गोप और अविधमन्ति होता है।

गृहस्पति शुक्के सुदमें रह कर रति द्वारा दृष्ट होने  
 पर—मनुष्य और पशु आदिना अधिपति, धनी, पण्डित  
 और राज-मन्त्रिय होता है। चन्द्र द्वारा दृष्ट होनेमें—  
 अतिशय धनवान्, मधुनभाषी, अननोक्ष प्रिय, सुवशाप्रिय  
 और उपमोग भोगी होता है। मङ्गल द्वारा दृष्ट होनेमें—  
 बालान्नोक्ष प्रिय, प्राज्ञ, शूर, धनी, सुगी और राज  
 पुरुष होता है। बुध द्वारा दृष्ट होनेमें—परिदत्त, चतुर,  
 विद्यात्, उत्तम भावयमान् विभवशाली, सुजीव और कम  
 नोयमूर्ति होता है। शुक द्वारा दृष्ट होनेमें—अत्यन्त  
 मन्त्रिन्धेष्ट, धनी, मधुनभाष, धेष्ट वच और ज्योति  
 युक्त होता है। शनि द्वारा दृष्ट होनेमें—प्राज्ञ, धनवान्  
 सम्पन्न, प्राण और नगरवासिधर्मों सर्वप्रधान, मन्त्रिन्धेष्ट  
 और कुत्स्मित भाषा युक्त होता है।

गृहस्पति शुक्के सुदमें रह कर रति द्वारा दृष्ट होने  
 में—धेष्ट, प्राणपति, पुत्र वार और धारणा अथाम्बर होता  
 है। चन्द्र द्वारा दृष्ट होनेमें—धनवान्, मानुषरमन्,  
 सुदृष्टि सम्पन्न, सुगी और व्यवहारी होता है। मङ्गल  
 द्वारा दृष्ट होनेमें—सैनिकों सुदामें विचयी, धनी और लोकपूज्य  
 होता है। बुध द्वारा दृष्ट होनेमें—उपयोगिताधर्मों कुशल,  
 बहु पुत्र और दाता युक्त, मन्त्रकार, अतिशय विद्वय  
 पाप सम्पन्न होता है। शुक्के देखने पर—देवताशाली  
 शान्ति, धर्मवान् और धार्मिकोना इत्युद्धार होता है।  
 शनि देखनेमें—प्राणपति, सुधी और दृष्ट, नीर होता है।  
 चन्द्रके सुदमें रहने हुए गृहस्पति रति द्वारा दृष्ट  
 होने पर—अतोदरमें विद्यात्, धन और दाता विद्वान्

तथा अन्तिम भयस्थामें धनी होता है। चन्द्र दृष्ट होने से—अतिशय धृतिमान्, नृपति तुल्य, धन और वाहन द्वारा समृद्धिसम्पन्न, उत्तम पत्नी और पुत्र युक्त होता है। मङ्गल दृष्ट होनेसे—वात्स्यायनस्थामें दाता, पण्डित और शूद्र, बुध देवनेसे—वाण्य और मातृहेतु धनवान्, कलहान्वित, पापहीन, विश्वासी और मन्त्रणा कुशल, शुक्र देवनेसे—अनेक स्त्री-युक्त, धनी और भाग्यवान्, जनि देखनेसे—श्राम, सेना वा नगरका प्रधान, वाचाल, बहुविध सम्पन्न और वृद्धावस्थामें भोगी एव दाता होता है।

रविके गृहमें वृहस्पति हों और रवि द्वारा दृष्ट हों, तो मोक्षप्रिय, विख्यात, नृपति और सुन्दरस्वभाव होता है। चन्द्र द्वारा दृष्ट होनेसे—स्त्रीके भाग्यसे धनवान्, जितेन्द्रिय और मलिनदेह, मङ्गल दृष्ट होनेसे—साधु और शुकजनोंके समीप सत्यवादी, शूर और क्रूरप्रति, बुध देवनेसे—विज्ञानशास्त्रविद्, श्रेष्ठ और विख्यात, शुक्र देवनेसे—स्त्री प्रिय, सुन्दर भाग्यसम्पन्न और राजपूजित, शनि देवनेसे—असुखी तोड़णस्वभाव, देवपत्नी सदृश पत्नीसुख त्रिगिष्ट और भोका होता है।

वृहस्पति अपने घरमें रह कर चन्द्र द्वारा दृष्ट होनेसे—राजविरोधी, सदा परित्यागप्रस्त, धन और आत्मबन्धुहीन, मङ्गल देवनेसे—सप्रामर्श पराजय, क्रूर, धानक परपीडक और उसकी पत्नीका नाश होता है। बुध देवनेसे—राजमन्त्री, अधया नृपति, सुख धन और सौभाग्ययुक्त, सर्वोंके आनन्दकर और अतिशय रूपवान् होता है। शुक्र देवनेसे—अतिशय मलिन, भोक्तृस्वभाव, दौन और सुखभोग रहित होता है।

वृहस्पति जतिके गृहमें हो और रवि द्वारा दृष्ट हो, तो पण्डित, क्षितिपालक और पराक्रमशाली होता है। चन्द्र दृष्ट होनेसे—मातापिताकी भक्तिमें तत्पर, कुलप्रधान, प्राण, दाता, धनी, सुशील और धार्मिक, मङ्गल दृष्ट होनेसे—शूर, शोद्ध, गर्जन, तेजस्वी और प्रसिद्ध, बुध दृष्ट होनेसे—कामुक, गणप्रधान, सबके माथमें मिलता युक्त और पण्डित, शुक्र दृष्ट होनेसे—भोज्य, अन्नपान और विभव सम्पन्न, उत्तम स्त्रीयुक्त, और शनि दृष्ट होनेसे—अग्रेय विद्या विचारक, देश या पुरका प्रधान और धनी हुआ करता है। (सारासली)

इस प्रकार गणना पूर्वक वृहस्पतिके शुभाशुभका निणय किया जाता है। पूर्वोक्त फलदशा, अन्तर्दशा वा प्रत्यन्तर्दशा मध्यमें होती है। अष्टोत्तरी वा त्रिंशोत्तरीके मतसे साधारणतः दशाको गणना की जाती है।

अष्टोत्तरीके मतसे २० पूर्वापादा, २१ उत्तरापादा और अभिजित् तथा २२ श्रवणा नक्षत्रमें जन्म होनेसे वृहस्पति की दशा होती है। इस दशाका परिमाण १६ वर्ष है। इसके प्रति नक्षत्रमें ४ वर्ष ६ मास, प्रति नक्षत्रके बादमें १ वर्ष २ मास १५ दिन, प्रति दण्डमें २८ दिन ३० वण्ड, प्रति पलमें २८ दण्ड ३० पल होता है। नक्षत्रका परिमाण ३० दण्ड होनेसे ऐसा समय होगा, कमी-बेगी होनेसे भागहार द्वारा भोग्यफलका निर्णय करना चाहिए।

मानवकी इस दशाके समस्त राज्यप्राप्ति, धनागम, पुत्रलाभ, निश्चिन्त वस्तुओंका भोग, सुख-वृद्धि, विद्या लाभ, सुख्याति और धनकी प्राप्ति होती है।

त्रिंशोत्तरीके मतसे वृहस्पतिकी दशा १६ वर्ष है। पुनर्वसु, विशाखा वा पूर्वभाद्रपद नक्षत्रमें जन्म लेनेसे वृहस्पतिकी दशा होती है।

अष्टोत्तरी और त्रिंशोत्तरीके मतसे वृहस्पतिकी दशाकी प्रत्यन्तर्दशा इस प्रकार है—

अक्षरोंके मतसे	विंशोत्तरीके मतसे
वर्ष, मास, दिन, दण्ड,	वर्ष, मास, दिन,
५, ५, ३।४।३।२०।	५, ५, २।२।१८।
५, रा, ०।१।१०।१०।	५, ग, २।६।१२।
५ शु, ३।८।१०।०।	३, के, ०।११।६।
५, र, १।०।२०।०।	५, शु, २।८।०।
५, च, ५।७।५०।०।	५, र, ०।६।१८।
५, म, १।४।२६।४०।	५, र, १।४।०।
५, बु, २।११।२६।४०।	५, म, ०।११।०।
५, ज, १।६।३।०।	५, रा, ०।४।२४।
१६ वर्ष।	१६ वर्ष।

वाहुल्य भयसे प्रत्यन्तर्दशा नहीं लिखी जा सकती। दका देखो।

वृहस्पतिप्रह १ वर्ष बाद एक एक राशिका भोग किया करते हैं। गोचरमें वृहस्पति रहनेसे निम्नलिखित प्रकार फल होता है—

पाठको महान्न भी मित्र नके । २ मरकाने व्याघारके व्याघरता ।

बेचना ( हि० वि० ) बेचना कर्म ।

बेट ( हि० स्त्री० ) बीजारों मादिमें लगा हुआ काठ या इसी प्रकारकी भीर बिन्सी चीजका दस्ता, मुंड ।

बेट ( हि० पु० ) १ यह मंडा जो भेड़ोंके भुण्डमें बन्ने उत्पन्न करनेके लिये टूटा रहता है । २ दलालकी बीगी में गणद दणया पैसा, मिकल । ३ पट्टाया । ( स्त्री० ) ४ यह भाज जो किसी मारको गोचे गिरनेसे रोफनेके लिये उस के गोचे लगाए जाय, चौंइ ।

बेटा ( हि० पु० ) १ बेवरा द रं । ( वि० ) २ भाइ, निरछा । ३ कटि, मुशिर ।

बेटी ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारकी टोकरी जो वामकी बगी होता है । इसमें चार रम्मिया बंधी रहती हैं । उन रम्मियोंकी सहायतासे ही आरुमी मित्र कर बिन्सी गहड़ेका पानी उठा कर लेन आदि सींचते हैं । इसे उजिया भीर हौरा भी कहते हैं ।

बेहोमसकली ( हि० स्त्री० ) हँसियाके आकारका लोहे का एक बीजार । इसमें काठका दस्ता लगा रहता है । इससे भरतनों पर चिला भीकी जाता है ।

बेंड ( हि० पु० ) रामे आदिके ऊपरसे पल्ले भागमें पहनाया हुआ किसी चीजका पतला चौकीर पत्त या इसी प्रकार का और कोई पदार्थ । इसका उपयोग यह जालोंके लिये होता है कि हवा किस ओर यह रही है । यह सहजमें चामे और घूम सकता है और हमेशा हवाके तरफ घूमता रहता है, फरहरा ।

बेत ( हि० पु० ) १ एक प्रसिद्ध लता । इसकी गिनती नाद या चक्र आदिकी जालिमें की गई है । भिन्ने विवरण यहाँ लगे हैं । २ बेटके टुकड़ेसे बनी हुई छयो

बेदली ( हि० स्त्री० ) माथे पर लगायीको बिंदी, टिकली ।

बेदर ( हि० पु० ) १ माथे पर लगायेका मोटा मित्र, टोका । २ एक प्रकारका आभूषण जिसे त्रिधा माथे पर पहनाती है । ३ एक प्रकारकी रिचली जो माथे पर लगाई जाती है । ४ एक प्रकारका आभूषण जो त्रिधाके आकारका होता और माथे पर पहना जाता है ।

बेदा ( हि० स्त्री० ) १ दिहने, बिसे । २ गुण, गुण । ३

मरुके पेटका मा बेचबटा । ४ राधाबाबु-बा नामक गहना जिसे त्रिधा माथे पर पहनाती है ।

बेपटा ( हि० पु० ) बंद बिघारके घोड़े लगायेकी लकड़ों । इसे मरगाड भी कहते हैं ।

बेघाता ( हि० वि० ) मित्रानिके लिये बिन्सीके बपटा नपनामा ।

बे ( फा० शब्द ) १ बिगा, बगीर । ( हि० शब्द ) २ छोटा के लिये एक सवोद्यत शब्द जो प्रायः भगिण्टा-मुक्क माना जाता है ।

बेभकल ( फा० पु० ) मूल, बेभकल ।

बेभकली ( फा० स्त्री० ) मूर्ता, बेभकली ।

बेभर ( फा० वि० ) जो किसीका मदद न करता हो, जो बडोंका आदर सम्मान न करता हो ।

बेभर्या ( फा० स्त्री० ) बेभर्य होनेका भाव, गुस्साआ ।

बेभाव ( फा० वि० ) १ निम्नमें भाव या चमक न हो । २ जिनकी कोई प्रतिष्ठा न हो ।

बेभावर ( श्रावण )--अजमेर जिल्लाका एक नगर । यह श्रावण २६ ५' ३० तथा देशां ७४ १६' ५०के मध्य भाग स्थित है । जनसंख्या प्रायः २०००० है जिनमेंमें हिन्दू की संख्या ज्यादा है । स्थानीय लोग इसे 'पानगर' कहते हैं । अजमेर मेवाड़ राज्याके अजमेर कनि जल्दी १८५० ई०में यह नगर संस्थानियामके लिये बसाया । मेवाड़की राज्या है । उद्योग भीर मारुहा की राजधानी जोधपुरके बीचमें स्थापित लेनेका कारण यह स्थान भाडे हा समयके चक्र एक प्रघात कालियके उग्र परिणत हुआ, तथा धनबन्ने पूर्ण है इसकी आज्ञातीय शौरि हह । नगरके चारों ओर पत्थरकी घाटो है । यहाँकी महदक बहुत विस्तृत है और दोनों ही पार्श्व बने बडे द्वारोंका छायाती सुजीत है ।

अहमें कपासहा विस्तृत कारखाने हैं । कपासकी माठ बांधनेके लिये ही हाइड्रालिक बाल्य प्रेम प्रतिष्ठित हैं । अलावा इसके लहिये चाय बगीचा भी एक बहुत लम्बा बीज कारखाना है । इन सब कारणसे अहमें भीर रंगीन कपडोंकी विभिन्न स्थानों में स्फुल्लो होती है । स्थानाए धर्मांकी लेने और कालिय उद्योग कोष है ।

वेआवरु ( फा० रि० ) जिमकी कोई प्रतिष्ठा न हो,  
वे इज्जत ।  
वेआवी ( फा० खी० ) निस्तेजता, मलिनता ।  
वेआरा ( हि० पु० ) एकमे मिला हुआ जी और चना ।  
वेओतो ( हि० खी० ) जुआहाँका एक औजार । यह  
प्रायः बघीके आजारका होता है और तानेके सूतके बीच  
में गहता है ।  
वेइसाफी ( फा० खी० ) अन्याय, इसाफका अभाव ।  
वेइज्जत ( फा० वि० ) १ अप्रतिष्ठित, जिसको कोई  
प्रतिष्ठा न हो । २ जिसका अपमान किया गया हो,  
अपमानित ।  
वेइज्जती ( फा० खी० ) १ अप्रतिष्ठा । २ अपमान ।  
वेइलि ( हि० पु० ) बला देणे ।  
वेइम ( फा० पु० ) जो कोह विद्या न जानता हो, जो कुछ  
पढा लिखा न हो ।  
वेइमान ( फा० रि० ) १ जिसका ईमान टोकर न हो, जिसे  
धर्मका विचार न हो । २ जो अन्याय कपट या और किसी  
प्रकारका अनाचार करता हो ।  
वेइमानो ( फा० खी० ) वेइमान होनेका भाव ।  
वेइज ( फा० रि० ) जो आह्लापालन अथवा धीर कोई  
काम करनेमें कभी किसी प्रकारकी आपत्ति न करे ।  
वेइदर ( फा० वि० ) जिमकी कोई कदर या प्रतिष्ठा न हो,  
वेइज्जत ।  
वेइदरी ( फा० खी० ) वेइदर होनेका भाव, वेइज्जती ।  
वेइनाट ( स० पु० ) कुपीदजीवी मूदखोर ।  
वेइना ( हि० पु० ) पशुओंका सुरपका नामक रोग,  
सुरहा ।  
वेइरार ( फा० रि० ) व्याकुल, रिक्त ।  
वेइरारी ( फा० खी० ) प्याकुलता, वेइनी ।  
वेइरु - मन्त्राज प्रदेशके दक्षिण कनाडा जिला तर्गत एक  
प्राचीन नगर । यह अक्षा० १० २४ उ० तथा देशा०  
७१ ३० के मध्य अवस्थित है । यहा एक सुवृहत् दुर्ग  
सुरक्षित अवस्थामें विद्यमान है । दुर्गका पर्यवेक्षण करने  
से उममें वर्तमान युरोपीय स्थापत्य विज्ञानके अनेक  
निदर्शन पाये जाने हैं । समुद्रगर्भमें जो एक शैल है  
उसोके ऊपर यह दुर्ग स्थापित है । इक्वेरी और चैराकल

राजवज्रके परस्पर विरोधकारणमें इस दुर्गकी प्रथम  
प्रतिष्ठा हुई थी, ऐसा अनुमान किया जाता है । पीछे  
वह स रूहत हो इस प्रकार सुदृढ दुर्गमें रूपान्तरित हो  
गया है । पाश्चात्य भौगोलिक Dr. Bauros ने इस स्थान  
की समुद्रिका उल्लेख किया है । उनके विवरणमें यह  
नगर ( ot : loulam नामसे धर्षित है ।

वेइली ( हि० खी० ) १ वेकल होनेका भाव, चकराहट । २  
खियोंका एक रोग । इसमें उनका गर्भाशय अपने स्थान  
से कुछ हट जाता है । इनमें रोगीको बहुत अधिक  
पीडा होती है ।

वेइम ( फा० वि० ) १ निराश्रय, नि म्हाय । २ दीन,  
गरीब । ३ मातृ पितृहोन, बिना मा बापका ।

वेइम - पाश्चात्य जगत्की प्राचीन जातियों द्वारा पूजित  
देवमूर्त्ति । प्राचीन ग्रीक लोगोंके मध्य यह देवमूर्त्ति  
जिसके पुल देवनिसस, लाटिन जातिमें वेइम  
( Bacchus ) और मिश्रजातियोंमें ओसिरिस नामसे  
प्रसिद्ध है । पाश्चात्य जगत्में वेइमके सम्बन्धमें जो  
विद्वन्तो प्रचलित हैं उसकी पर्यायीवना करनेसे  
पेना प्रतीत होता है मागे उस समय बहुत वेइम विद्य  
मान थी । दिवोदौरस और सिसिरो इस प्रकारकी अनेक  
वेइसोंका उल्लेख कर गये हैं पर जिस वेइसका उल्लेख  
यहा किया जाता है उसी फादममराज-सनया सिमिलोके  
गर्भ और जुपिटर रूहस्पतिके औरसने जन्मग्रहण किया  
है । मिसरोय विद्वन्तोका अनुसरण करनेसे जाना  
जाता है, कि युवराज पेइस एक दिन युवायस्थामें  
नाक्षम क्षीपमें गाडी निद्रामें सो रहे थे, इसी समय कुछ  
नाचिक आ कर उहे चुग ले गये । इस पर युवक  
बड़े दिग्भ्रं और उन्होंने नाचिक-दलको श्राप दिया  
जिससे वे सत्रके मय मछली हो गये । इसी जगहसे  
वेइसको पेशीभक्तिका परिचय पाया जाता है । उन्होंने  
अपने पुण्यबन्ध और पिताको सम्मतिसे माता सिमिलोको  
नरकने उद्धार कर स्वर्गधाम भेज दिया । इस समयसे  
वे साइरने नामसे मशहूर हुए । अनन्तर वेइसने पूर्वकी  
चढ़ाई करके घाटके अधिवासियोंकी द्राक्षाकर्षण और  
मधु आहृणको शिक्षा दी थी । इस कारण वे मधुपायी  
जातिके देवतारूपमें पूजित हुए । वेइसके उत्सव अर्गिज,

केतिरग्निया, कालिका, वाष्पान्तिया या देवग्निया नामसे वाष्पान्त्य जगत्तु धिञ्जित है। श्वासुम गौर उन्नरी पशुपति मिश्रमे इस पृष्ठाका प्रथममे प्रकाश किया। इन उन्नरमें पढ़ते बहुतेके लोग ज्ञानच सोते थे। यदा तदा वि वे क्षमपिच्छुत हो बहुतेके निन्दित वाम भी पर गालते थे। १८० ई०में देवम प्रकाशित उन्नरनी दुर्गा देव कर होम गवमें एते पद उन्नर मद्राके लिये बन्द कर दिया।

येकमपुत्रामें जो मय त्रिया पुरोहितके कायमें लिपि रहती थीं, उन्नरमेद और देवभेदके ये विभिन्न पत्र पढ़ाती थीं। परिच्छेदके तात्पर्यानुसार ये भेदित, धारणित, वेदाणित, मिमलोभाणित, क्षमराधित आदि नामोंसे जनसाधारणमें प्रसिद्ध थीं। मित्राणी देवमयी मूर्तिके लिये गृहकार पर श्रुतयति देते थे। अधिनाग अथ छागशक्ति हो प्रधाता देवी जाती थी। कथीकि, छागकुत्र क्षमराधना नाम करकेमे सदा उन्नर रहता था। श्रुतिना कहना है, कि देवताओंके मध्य राजा मानकर मुकुटाद्यज, पामदेवकी तरह सुम्य और कश्चित्केशवरायमे मानक समात्कान्त मानो चिर घोषा उनके मुत्तपर पर सदा विराज रहता है। कभी सो ये हाथमें अङ्ग लिये विराज करी हैं। इस अङ्गके सम्बन्धमें वाष्पान्त्य जगत्तुम किचरली है कि देवमने पुत्रके द्वारा भूमिपरणकी शिक्षा की थी, उमीके निदर्शन स्वरूप उन्नेने हाथमें अङ्ग धारण किया है। फिर वह केश कहती है, कि वाष्पियर मरुतीरमें अथ ये श्रुतय समेत पशु की और निदायल मुत्ताने वाष्प तथा मुत्तप्राय हो गये थे उस समय उनके पिता जुपियर। भेदाका रूप धारण कर उन्ने वाष्पभवा समय पशु बनला दिया था। उस गतनामि पशुभवा स्वरूप से अङ्गधारी हो गये हैं। निवोरोममे जिन लोक प्रकाशकी देवमपुत्रिता उन्नेत किया है, उमीके (१) भारतविकयी देवम केशव प्रभुसमगियर (२) जुपियर और प्रत्तारतके पुत्र अङ्गधारी और (३) जुपियर तथा गिण्डिकाके पुत्र वैदिककी देवम है। मिमिशोके मत्तानुसार १ प्रत्तारत इस पुत्र २ श्वासके पुत्र, ३ क्षमियरके पुत्र, इन्नों तात्पर्यमे कथना प्रत्तार वैदिकता था, ४ श्वासो और

श्वासुमके पुत्र तथा ५ जुपियर चन्द्रके पुत्र हैं। जतमान कायरो नगरमें ३ भी मीत क्षुशिन उत्तर मिच्छुत जिया नामक वैशिशमं प्रायः १८०० ई० तकके पहल प्रतिष्ठित जुपियर ( पूरुष्पति ) मन्दिरका धारण निदर्शन दृष्टिगोचर होता है।

वाष्पान्त्य जगत्तुम देवमके लिङ्गरूपकी माता भागमें उपासना होती है। कभी तो ये भोद रमणीकानासा सुकुमार युवक, कभी मन्तप पर श्राद्धा या आशुमी लताका विराट और कभी हाथमें लिङ्गा लिये रहते हैं। वाष्प और मिड उनका प्रियजाद और भागदार नामका पक्षी उन्को अधिपति है। ये व्याजार्थसे समात्कान्तिया हो भारतविकणके लिये गय थे। फिर कभी ये मारका गणित भूषो पर उपायध मुक्तिमें मर्य या शोचिनिमके समात्क पुनित होते हैं। भारत प्रमणाकारो बहुतेके प्रकृ पचकारोंके निरुत्कान्तिके उपाय पत्र धरसका उल्लेख किया है। अधिप सम्भय है कि ये भारतवर्षमें मरुदेवकी लिङ्गप्राप्तिके साथ श्रीरुदेवीय देवमके लिङ्ग मयी देवताकाकी मरुजगता देव कर घेता निर्णय कर गये हैं।

- देवम (दि० वि०) विस्वीकी क्षामा या परामरकी म मानयेला।
- देवमूर्ति (का० वि०) नियमविच्छ, जो कात्तु या पायदे के गिण्डा हो।
- देवपु (का० वि०) १ जिसका अर्धी ऊपर बायु म हो, निजना। २ जिस पर निस्वीका बायु न हो, जो विगाके वनामें गरी।
- देवम (दि० वि०) १ जिगे कोई वायु न हो, निरम्मा। (वि० वि०) २ निरर्थक, शय।
- देवपुत्रा (का० वि०) नियमविच्छ, कायदेके गिण्डा।
- देवत (का० वि०) १ निरम्मा निरुत्का। २ जो किसी काममें न धा सके, निरभय।
- देवनी (का० वि०) देवत हीके भाय, माता या निज वाम हीके भाय।
- देवमर (का० वि०) निरपराय, निरगता कोई बायु न हो।
- देवुत्र-पत्र मुत्तप्रायण धर्मसम्बन्धय। पत्र धारणकारक

मुसलमान पाषण्डी साधु ही इसका प्रवर्तक है। १८वीं शताब्दीके प्रथम भागमें इस व्यक्तिने दिल्ली राजधानी पहुँच कर जनसाधारणके बीच यह घोषणा कर दी, कि मैंने अभिनव कुरान पाया है। इस कुराना भाग स्वयं इश्वरने व्यक्त किया है, इत्यादि। बहुतसे लोग उसकी बात पर विश्वास कर तथा प्रशंसा मर्म और मूलतत्त्वा जान कर शीघ्र हो उसके गिण्य बन गये। देखते देखते इस नवीन कुरानके मतानुयायियोंका एक सम्प्रदाय संगठित हो गया। इस सम्प्रदायके गुरु या आचार्य स्थानीय मौलवीगण 'बेकुरा' नामसे प्रसिद्ध हुए और उनका शिष्य सम्प्रदाय फरासुद कहलाया। उक्त मुसलमान पाषण्डी साधुने मौलाना पारमी धर्मग्रन्थसे कुछ अपने मतके अनुकूल वचन उद्धृत करके खीय कल्पनावलसे उक्त कुरानका मङ्गलन किया था।

- बेकुरा (स० खी०) १ वाक्य। ० पाठ्यस्वभेद।
- बेकुरि (स० खी०) वाक्य।
- बेब (फा० ग्री०) मूल, जड़।
- बेबट (हि० वि०) १ बिना किसी प्रकारके पाकेके, बिना किसी प्रकारकी रकानट या अममजसके। (कि० वि०) २ निस्स्पृहके, बिना आगा पीछा किए।
- बेलता (फा० वि०) १ निरपराय, बेरसर। ० अमोय, अचूरु।
- बेबवर (फा० वि०) १ अनचाय, नायानिफ। ० बेतुध, बेदोश।
- बेबवरी (फा० खी०) १ अज्ञानता, बेगवर होनेका भाव। ० बेदोशी।
- बेबुर (हि० पु०) एक प्रकारका पक्षी। इसका शिकार किया जाता है। यह काश्मीर, नेपाल और बंगालमें पाया जाता है, परन्तु अफ़्ग़ानिस्तानमें पहाड परसे उतर कर समभूमि पर आ जाता है। फल मूल ही इसका प्रधान आहार है और प्राय नदियों या जलाशयोंके किनारे छोटे छोटे फुडोंमें रहता है।
- बेबीफ (फा० पु०) निर्मय, निडर।
- बेग (हि० पु०) बग देना।
- बेग (अ० पु०) कपडे, चमडे या कागन वादि लचोले

पदार्थों का एक पैला। इसका मुँह ऊपरसे बट किया जा सकता है।

बेगडो (हि० पु०) १ वह जो हीरा काटना हो हीरा नगश। २ वह जो नगीना बनाता हो, हथफार।

बेगती (हि० खी०) बंगालकी गाटीमें मिलनेवाली एक प्रकारकी मछली। यह प्राय ४ हाथ लंबी होती है और इसका मांस स्वादिष्ट होता है।

बेगनरी चाँ कुचिन—एक मुगल-सेनापति। इन्होंने मुगल सम्राट् अकबरशाहके अत्यन्त सेनापति मुइज्जुल मुल्कके अतीत पौरावाद् युद्धमें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी जाल्तर सम्राट्के शासनकालके ३२वें आर ३३वें वर्षमें इन्होंने यथाक्रम अतुल मतलब और कादिरु पाँके अतीत नारिकियोंके साथ युद्ध किया था। एक हजार सेना इनके अधीन रहती थी। १००१ हिजरीमें इनकी मृत्यु हुई।

बेगम (तु० खी०) १ राजी, रानी। २ ताजके पत्तोंमेंसे एक पत्ता। इस पर एक खी या रानीका चित्र बना होता है। यह पत्ता केवल इशके और बादशाहसे छोटा और बाकी सबसे बड़ा समझा जाता है।

बेगम—अधुलोद्भव मुसलमान रमणियोंकी उपाधि। साधारणतः मुगल बादशाहकी पत्निया इस उपाधिसे सम्मानित होती थी। मुगल 'बेग' उपाधि पु लिङ्गमें और 'बेगम' स्त्रीलिङ्गमें व्यवहृत होती हैं। पाठानोंके मध्य गीबो, निसा, गानुम, खानुम, यानु आदि उपाधिया बेगमकी तरह सम्मानसूचक समझी जाती हैं। यहाँ फारण है कि बेगम या बेगम माहदा नहनेसे साधारणतः बादशाह पत्नी, राजी, रानमहिषी, रानीका ही बोध होता है।

बेगमगुल—बङ्गालके नोआखाली निलान्तर्गत एक गाँव नाम। यहाँ एक धाना है। स्थानीय वाणिज्यकी कुछ कुछ उन्नति देखी जाती है।

बेगमपुर—हुगली जिलेके अन्तगत एक गाँवनाम। यहाँ सती पण्डेका विस्तृत फारवार है।

बेगमपुर—बम्बईके गोलपुर जिलेके गोलपुर तालुकका एक गाँवनाम। यह अ.ता. १७ ३४ उ० तथा गे.ता. ७१ ३४ पू० भोमा नदीके किनारे किनारे गोलपुर शहरसे १२ मील दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या २२०४ है।

जलं मन्त्रं अतिशुद्धं च मन्त्री वन्द्या वेगमासिका  
 मन्त्राधि मन्त्रिण विद्वत्तया हि । इव भीष्मकुवेव दामि  
 पात्य तान् इति इत्यन्त इव प्रामेयं दुर्गते चित्तारे मया  
 पुनर्मै छावन्तं अन्ति ह्यु धे, उमा ममय उत वन्द्याकी  
 मृत्यु ह्यं भी । इम वाप्य औष्ण्येवो इम म्पावता  
 भवन्तौ वन्द्याके नाम पर वेगमपुर नाम स्या । यथा  
 सत्याका छोटा मोटा वाग्माता ते ।

वेगमपुर- पञ्चोत्तर त्रिंशत् नाम एक समृद्धिमन्त्रय गण्ड  
 प्राम । यथा वदन्ते वि ज्ञोय ईसापूर्वोका याम हि ।  
 स्यात्तौय अधिपतिं मनुष्य ही कथ्यते पुत्र कर भवता  
 मुचारा करते हैं ।

वेगममन्त्र- राजाचार्याचारिणो एव मुमन्त्रमान मन्त्री ।  
 यह मामात्य तलकोने जपने अष्टष्ट गुण और शुद्धिके  
 करने कायमहिये हो गई थी । प्रारम्भ राज्यके द्विमस  
 पञ्चोत्तरासो वाज्यर विद्वद्द्वै नामक एक फलामो युवक  
 नी मेनाद्वयं मूलकारका काम करता था । कुछ समय  
 बाद नीमैनाके साथ यह भारतपर्यं आया । यहाँसे यह  
 मौद्विनागरा परिव्याग कर विभिन्न स्थानोंके वेदोय  
 मामन्त्र राजाओंके अधीन काम करने लगे । वदन्तके  
 ब्याव भीरकाजिमके अधीन विगतो नामक जो मामोणोय  
 रंजनापति था, विहाई शुभ भयसर देव कर उसके  
 अधीन सेवाविभागमें भर्ती हो गया । और काजिमके  
 बीजालये पट्टनामें जो अद्वैत ईद रूपे गये थे उतरी  
 हया कर विहाई नवायका मिय हो गया था सही, पर  
 छोटे ही दिनोंके बाद अद्वैतजोने नवायको दुर्गना प्रीर  
 पय भयभयभाजो जान कर उसी वदन्तका परिव्याग  
 किया और भरतपुर का मूलकारका साध्य किया । यहाँ  
 और यह सरदारका काज छोटे कर नवाय खाके अधीन  
 रंजनायकके कार्यामें भर्ती हुआ । ११७८ ई०में उतरी  
 मृत्यु हुई और भागल मन्त्रां लान किया गया ।

उत्तर मो १० ।

हो ई छोड करने हैं कि विहाईने अद्वैतको मन्त्राण  
 (S. number- ) काय प्रदान किया था । यो वाप्य ही  
 कि इतिहासमें यह मन्त्र मन्त्री मन्त्रिण है । इतने  
 विभिन्न राजापर्यन्त तथा वेदोयोंमें मन्त्र खाके कार्या  
 कार्य करते प्रचुर मन्त्रां आते की थी । यह दिन यह

काजरीरको एक युवको महर्षीको देना कर उत पर मोन्त्रि  
 हो गये और आगिर उमने विद्या कर ही लिया ।  
 यही मन्त्री आगे चल कर वेगम मन्त्र नाममें मन्त्र  
 हुए ।

मामोको मृत्युके बाद वेगम मन्त्र नामके अन्तित  
 सत्याका राज्यको अधीनधरी ई । १७८१ ई०में यह  
 कैथलिक मित्रांमें तुष्ट धर्ममें दक्षिण १६ । अन्तर  
 उतरी १७१७ ई०में पुन, मुमो ले खाई मित्र नामक किसी  
 फलामो अद्वैतवेधोने विद्या किया । यह ध्यति अपने  
 स्वभावके योगमें प्रजापतका अभिय हो उठा । मन्त्री  
 प्रजांने विद्वैती ही कर विहाईके पुत्र जाकर याव लीं  
 के नेतृत्वमें वाइमिउता काम तमाम पञ्चोरी डागी ।  
 सुचतुग मन्त्रके प्रजापतके मन्त्रोवाइस अपना सर्वोत्तम  
 उपायित देव नवपत्निपोर म्यामीरी जामहया वदन्ती  
 स्याह की । वाइमिउके निहत होने पर जाज रामय  
 नामक वेगमके एक विद्वान् वमन्त्रांने विहाइका दमन  
 किया । १८०७ ई० जाफरकाजकी मृत्यु हुई । उतरी  
 कन्धाके मन्त्राव पुत्र वैमिउ भरतलोती इमस मोम  
 या वेगम मन्त्र सती मृत्युके बाद १८३६ ई०में आपो  
 मन्त्रासिद्धा उतगधिसारी का गड । उतरी कैथलियम  
 मन्त्रिरी तथा विहाइके विधे प्राय तान त्याग चौहान  
 ह्यार कथेका दात किया था ।

वेगमसुन्त्रा- एव मुमन्त्र राजक्य मन्त्रा । आगरेके इति  
 माद उद्वैतकी मन्त्रिणके बलामे इका मन्त्राधिपति  
 विद्या है । इम मन्त्राधिपतिरके वाक्यमन्त्र जिज्ञा  
 पन्त्रांमें किया है, कि मन्त्राट हयायु व समय १८०८  
 ई०में उतका मन्त्राधि हुई । यह जेय वमन्त्रांके कथा थी ।  
 वेगममन्त्र (मौककई) मन्त्राट भवका जाहके एक रंजना  
 नायक ।

वेगमावा- मुजमदने मन्त्र जिज्ञा कर मन्त्र । यह  
 मन्त्राट २६ ५४ ३० उ मया वेगम ८१ ५३ ३५ ५०  
 के मन्त्रा मन्त्र मन्त्रा १४ मन्त्र तथा विहाइ २० ३० ७  
 हू मन्त्राट्टु रोड नामक स्थान पर अवस्थित है । करीब  
 टेट मं यर् ह्यु मन्त्राट्टुका मन्त्राट्टुका नाम वाज्याई  
 है यही एक सुभत देवमन्त्रिका मन्त्राट्टुका का था । मन्त्र  
 काय मन्त्राट्टुका मन्त्राट्टुका मन्त्राट्टुका मन्त्राट्टुका

मसजिद अभी भग्नावस्थामें पड़ी है। नगरकी श्रीरूद्रिके लिये १८५६ इ०का २०वीं विधिने अनुमार म्युनिसिपल और पुलिसकी रक्षाके लिये कुछ राजस्व बसल होता है। वेगमा (तु० वि०) १ वेगम सम्प्रदायी। २ उत्तम बडिया। (पु०) ३ एक प्रकारका बडिया रूपसे पाया। ४ एक प्रकारका पनीर। इसमें नमक कम डाला जाता है। ५ पञ्जाबमें होनेवाला एक प्रकारका बडिया चायन।

वेगर (हि० वि०) १ वीर दलो।

वेगरज (फा० वि०) १ जिसे कोई गरज या परमा १ हो।

(कि० वि०) २ निःप्रयोजन व्यर्थ।

वेगरीजी (फा० स्त्री०) वेगरीज होनेका भाव।

वेगयता (स० स्त्री०) एक वर्णार्द्धशब्द। इसके विषय पादों में ३ भगण, १ गुरु और मम पादोंमें ३ भगण तथा २ गुरु होने हैं।

वेगसर (हि० पु०) अश्वत्थ, पखर।

वेगामगो (फा० स्त्री०) वेगामा होनेका भाव परायापन।

वेगामा (फा० वि०) १ जो अपना न हो, गैर, पराया। २ अननान, नावारिक।

वेगार (फा० स्त्री०) १ बिना मजदूरीका जबरदस्ती लिये हुआ काम। २ वह काम जो चिन्तन्या कर न किया जाय, वह काम जो वेमनसे किया जाय।

वेगारी (फा० स्त्री०) वेगारमें काम करनेवाला आदमी।

वेगो (पेह्लवी) —सगराजप्रदेशके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर।

यह इन्डोर नगरसे ६ मील उत्तरमें अवस्थित है। जनसाधारणता विषयमें है कि वेङ्गोके तेलिङ्ग राजाओंने पहले यहा राजधानी बनाई थी। ६०५ ई०में नाडुकुय विजयके बादमें ही इस वंशका प्रताप खरा होता आया। ४थी शताब्दीमें जो एक तादप्रकाल उदकीर्ण हुआ है उसमें यह वंश शालाह्वयण-राजवंश कह कर वर्णित है।

जिलालियिके प्रमाणसे और भी जाना जाता है कि वेङ्गीराज्य तामिनात्यका एक अति प्राचीन जनपद था। पल्लवगण यहासा शासन करते थे। काञ्चीपुरके पल्लव राजाओंके साथ इनका नजदीक संबंध था। प्रन्तत्त्व विद्वुर्नरने मत्तानुमार यह राज्य २री शताब्दीमें प्रतिष्ठित हुआ। चालुक्यराजाओंने वेङ्गीसा अथ पतन होनेके बाद काञ्चीपुर ही पल्लवराजाओंकी राजधानी हो गई।

उपरिउक्त पेह्लवीगो नगर ही प्राचीन राजधानी था, यह ठीक ठीक नहीं कहा जा सकता क्योंकि उसीके समीप छिन्नवेगी नामक एक और ग्राम है। वेगी नगरसे ५ मील दक्षिण पूर्वमें देण्डलूर ग्राम तक पुगतन अष्टात्रिंशतीका विस्तीर्ण धर्मस्तूप पडा दृष्टिगोचर होता है। वह गाय पेह्लवीगो और छिन्नवेगी तक विस्तृत है। यह विस्तृत धर्मसायशेष प्राचीन वेङ्गी राजधानीकी समुद्रकीर्ति है। उसीसे नगरको प्राचीन घाण्डियवृद्धि और धीसौन्दर्यका फलपना हो सकती है। किंवदन्ती है, कि मुसलमानोंने वेगी और देण्डलूरका धर्मप्राय मन्दिरादिके पत्थर ले कर इज्जोरका दुर्ग बनाया था।

वेगुन (हि० पु०) बैंग दलो।

वेगुगाह (फा० वि०) १ जिम्मे कोई गुनाह न किया हो, जिम्मे कोई पाप न किया हो। २ निर्णय जिम्मे कोई अपराध न किया हो।

वेगुनी (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी तुरही।

वेगुसराय—विन्ध और उडोमाके सुङ्गेर जिरेना एक उत्तर पश्चिम उपविभाग। यह अन्धा० २५ १०' से २५ ४७' उ० तथा देशा० ८५ ४७' से ८६ २७' पू०के मध्य अण्डित है। भूपरिमाण ७५ वर्गमील और जनसंख्या साठे छ लाखके करीब है। इसमें ७५० ग्राम स्थित हैं जिनमें ३ और वेगुमराय थाना ले कर यह उपविभाग संगठित है। एक समय यहा नौ नदी अच्छे गेनी होती थी। यहा फौजदारी और राजस्वनी कलकरी अदालत है।

२ उक्त उपविभागका मद्रग। यह अन्धा० २५ २६' उ० तथा देशा० ८६ ६' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या ६३३२६के लगभग है। यहा सरकारी दफ्तर और एक जेठ जेठ ह, जिसमें क्षेत्र २८ फीनी रखे जाते हैं।

वेयराम—एक प्राचीन नगर। अभी यह व्यस्तान्ध्यामें पडा है। यह अन्धा० १४ ५३' उ० तथा देशा० ७६ १८' पू०के मध्य कातुल नगरसे २५ मील और जलाला बादसे २ मील पश्चिममें अवस्थित है। नगरके चारों ओर ६० फुट चौड़ी नदी इटकी प्राचीन विषयमान है। मुद्रातत्त्वज्ञ भ्रमणकारी चालन मेमनने इस नगरका पर्यवेक्षण करके इसको Aix indra had e que'नाम कह कर तुलना की है। नगरके धर्मसायशेषका अनुसन्धान



बरेके, मैत्रय और अद्वयपर प्रातःकल्पितेनी यत्ने प्रथम  
 वर्षमें १८५५ तक और कष्ट नीय मुद्रा तथा अमृती,  
 तावाज, बयरा और अस्याव म्भुति निद्रगाय वाये थे।  
 दूसरे वर्ष १८००, तीसरे वर्ष २००० और चौथे वर्ष  
 १८५७ और सबसे अन्तमें अन्तमें १८६७ इतने उदरे  
 १० हजार प्राय और रोमन मीर बाहि, बाकिर, सिन्दू  
 मालक सिन्दू प्राय नामसेय सिन्दू और हिन्दू मुद्रामापी  
 मुद्रा हाथ लगी थी। अज्यायक विरामनेके धरो *Att II*  
 नामक प्रथममें उन सब मुद्राओंमें अन्तगा  
 निम्नान, मध्यमनिय और आन्तका ऐतिहासिक सम्बन्ध  
 निरूपण किया है। स्थानय प्रयाद्वि, कि इस नगरमें  
 पयनराजाओंकी राजधानी थी। कारणसे यहाँ पैसा  
 भयानक महामाला कीनी, कि हजारों मनुष्य उनके  
 निकार बन गये और जातिर यत्र तार जतनाय हो  
 १५५०में पारपाल हा गया है। अन्तमें हिन्दुओंकी इसका  
 हत्याम नाम रखा है।

बेङ्गो क्षात्रिणाथका एक प्राचात जनक। पहले यह  
 बरकतपुर उदकृत पर अजातथत था। इसके पन्चिम  
 पृथपाट पचासगा, उत्तर मोदपरोषी और दक्षिणमें अज्या  
 महा है। वाचवरा सिन्धके द्वारा तालुकके पैली या  
 वेङ्गुवगी प्रायका अथसायनेय ही प्राचीन बेङ्गो राजधानी  
 की मध्यमलि ममका जाता है। देखो पन्।

चातुषवराज २५ गुल्बनाके भाग पुष्करिण्युवर्गकी  
 १५७६०में यहा पूष चातुषवराजपञ्चमी प्रसिद्धा का थी।  
 सन् १७३२में १७५६०के मध्य पहाय मेवापति उपय  
 यमृती अज्जमेयदक्षिणा। तिसाह सत्तार गूलापामकी  
 दगास्त कर उने बेङ्गोनाउने मार अगाया और पूष  
 चातुषवराज ३५ विष्णुवर्गकी राजा मन्दिमारा  
 मन्वता लीकार की। इसके बाद १७६६में १८५३ तक  
 बेङ्गो विहामल पर चातुषवराज मन्दि मुद्राज २५  
 विष्णुवर्गके अन्तहित रद। गन्धुवृष्टयति ३५  
 मोविन्द हने दगास्त करक अने राजाक मन्पा  
 गाये। उक्त बेङ्गोराज मोदरकी तरफ मन्विष्णु  
 निरद रहने लगे। वीरि उ हुने मन्विष्णु दूसरेयोर  
 बसामेय राजा मन्विष्णुका नामा मन्दि पदुपया थी।  
 १७३३६०में गन्धुवृष्टयति ३५ मन्पावर्गकी पुन बेङ्गोराज

की पदद्विज पर राजा और विष्णुवर्ग नाममें चातुषव  
 राना पगास्त हू। मन्दिपदमज ३५ विष्णुवर्ग।  
 मोविन्दके लिये मन्पावरेपुणमें जो दुग्मन्पकी नीय  
 राजा थी उने अमोचयपन १६०० ईकी मोय कर राज।

पर दूसरे जिगर्तिविके प्रमाणस मालूम होता है, कि  
 पुष्करिण्युवराज गुणक विजयाविलेय ३५ (१८५६-१८८८) मे  
 रद और गन्धुगजाओंकी पर हन तथा गन्धुवृष्टयति २५  
 कुणा। पगास्त दक्षे मा योरा मन्पाकी दाय पर राज।  
 राजा २५ गुण या अमान यहूत नि। तह वहा कर म  
 सफ। उरगत चङ्गोराजकी पृष्ट पर हद्वरा गुणा हा  
 लिया। विष्णु वीरि चातुषवराज म ममाने निन  
 भुजयनेके विष्णुवर्गका उत्तर दिया।

१७१२ ईमें मोवराज राजराज देवन बेङ्गोदेनकी  
 गाल पर यहा पञ्चमहाकाय नामक १५ महाद्वेष्ट  
 नायक नियुक्त किया था।

अन्तर अज्याणक पञ्चिम चातुषय ३६ विष्णु  
 दिव्यो इस तार पर अविहार जमाया ( १७३६ १७५६  
 ६० )। इसी समय बेङ्गोमन चाचीय या वन्दीमन् पाह  
 द्वयो काझापुर मन्पा पर चलाई पर की। राजा विष्णु  
 लियके भाई २५ ममानकी राजेष्ट चौदही महापता  
 की। इस सवालमें विन्तित हा राजा विष्णुमन्विष्णु पर  
 लक्षे मन्पा मानी बड़े। मुद्रम दिष्णुमन्विष्णुकी ही जात  
 हू। राजाय ज्ञा ल पर मानी और मोमैमर बन्दी हू।  
 वेङ्गोवुर वेङ्गोमन।

वेङ्गोवद्वे- दामपावरायक एक जनक। पर पचासमें की  
 वन्दीपुत्र मन्विष्णुमें इसका उ लेय है। ममानक बेङ्गो  
 राय वेङ्गोमन्पा नाममें प्रसिद्ध था।

देवक ( वि ५७ ) विहा पर राजा विष्णुवर्ग।  
 देवरा ( वि ५७ ) विष्णुवर्गका, मन्पा वि कर काइ पचास  
 रीत।

देवराज- अन्त प्रदक्षके बर्गोका राजक दक्षम ३५  
 विष्णुवर्ग अन्तगत पर मन्विष्णु दक्षवर्ग और लक्षवर्गके  
 एक मन्विष्णु। पर अन्तपचास विष्णु विष्णुवर्ग  
 हा २० मन्पाका हू। पर ३५ मन्पा है। उने मन्पा ३५  
 मन्विष्णु ममान ३५ मन्पा मन्पा है। मन्पा ३५ २५  
 मन्पा मन्विष्णु ममान ३५ मन्पा है।

वेनगाना ( हि० कि० ) विनगाना देखो।

वेगारा ( फा० वि० ) निसर्ग की साधी या अरुच्य न हो, गरीब, दीन।

वेवाराम—अविकल्पलता दीनाके प्रणेता।

वेवाराम न्यायालङ्कार—आनन्द तरङ्गिणी और मिद्वान्ततरि नामक ग्रन्थ टीकाके रचयिता। ग्रन्थकक्षाने उस ग्रन्थमें सश्रुत काव्यरत्नाकर, चैतन्यरहस्य, भैषज्यरत्नाकर और सिद्धान्तमनोरम नामक ग्रन्थोंका उल्लेख किया है। अत्राया इसके सिद्धान्तमणिमञ्जरी नामक उनका बनाया हुआ एक ज्योतिर्ग्रन्थ भी मिलता है।

वेचिराग ( फा० वि० ) जहा दोना तक न जलता हो, उजडा हुआ।

वेचू—एक निम्नश्रेणीके कवि। इतना जन्म १७५० ई०में हुआ था। इन्होंने भास्करिको कविता की है।

वेचूराम—स्रुतिरत्नावलाके रचयिता।

वेचैन ( फा० वि० ) जिसे किमा प्रन्गर चैन न पडता हो, बेकुर।

वेचैनो ( फा० खी० ) विनलता घबराहट।

वेजड ( फा० वि० ) जिमका काइ जड या उनियाद न हा, जिसके मूलमें कोई तत्व या सार न हो।

वेजडला—मन्डाज प्रदेशके कृष्णा जिलेके गुण्टूर तालुक के अन्तगत एक प्राचीन ग्राम। यहाके गापालस्वामाके मन्दिरके प्रवेश द्वारमें एक प्रस्तरलिपि प्रथित है।

वेजनानेस—बम्बई प्रदेशके काठियावाड विभागके गौहेल वाड प्रांतस्थ एक छाटा सामन्त राज्य। भूपरिमाण २६ घगमोल है। यहाके सामन्त वर्डोदाके गायकवाडका यापिक ३१ रुपये कर दत्त है। वेजनानेस ग्राममें हा सरदारका वास है।

वेजवान ( फा० वि० ) १ जिसमें वातचित करनेकी शक्ति न हा, मूक, मूंगा। २ जो अपनी दानना या नष्टताके कारण किसी प्रकारका विरोध न करे, दान।

वेना ( फा० वि० ) १ जो अपने उचित स्थान पर न हो, बेठिकाने। २ अनुचित, नामुनासिर। ३ खराब, बुरा।

वेजा पाँ—सिन्धुप्रदेशके एक विख्यात दर्युसन्धार। यह जातिकी मुसलमान था। दर्युसूनि उसके तीराका एक मान काय हाने पर भी, सन पूँउये तो यह निश्चुर नहीं

था। उसकी वयाने दूसरेमें उनका पक्ष अलम्बन करनेको प्राथ्य किया। यहा तक कि यह परम दयानान् योडा समझा जाता था।

१८४४ ई०में सर चार्ल्स नेपियरने उसके पैतृक राज्य पुनाजागड पर आक्रमण करा था। इस उद्देश्य में उन्होंने बहाने टेङ्की ५०० सौ अश्वारोही और लेफ्टिनाण्ट फिट्सजो राइडको २०० उद्ग्रु आरही सेनाके साथ पाचत्यप्रेश मेना। उक्त दोनों अगरेज सेनापतिते मद्य भूमि पार कर देखा कि वेजा खाँ सुमाउभत सेनापलके साथ उन गराजों सेनाको रोडनेके लिये मिलकूल तैयार है। अब दोनों दलमें मुझमेड हुए। टेड परास्त और क्षति प्रस्त हो भागे। इस समय वेजा पाँने बहा पर जितने कूप थे उन्हें महीसे भरवा दिया। किन्तु अगरेजोंके सौभाग्यसे एक कूप टूट गया। उसी कूपके जलसे अगरेजोंने अपना जान बचाई।

वेजाखाँके इस जयलामसे मुसलमान लोग चारों ओर से वेजाके दुगमें इकट्ठे होने लगे और उन्होंने प्रकाश्य रूपसे घोषणा कर ली कि वे लोग अमरोशेर महम्मदको ला कर पुन सिन्धु राज्य स्थापन करेगे।

इस दुमकी और जानरागे जाति सीमान्त पर विद्रोही हो उठी। इस समय जिंकारपुरके १५ सरयक देशीय पदातिक सेनादलमें भी विद्रोहिताना पूर्वलक्षण दिखाई देने लगा। यह देप सर चार्ल्स कार्य हानिका आग्रानि स्वयं १८४० ई०की १८वीं जनवरीकी उनका दमन करनेके उद्देश्यसे खाना हुए। त्रिनेडियर हएरने थोड ही समयके अन्दर शिकारपुरके सिपाहियोंकी अड्डी तरह दण्ड लिया। बहान सल्टरी दरिया खाँक अधोनस्थ मात सौ जाकरानी दर्युको परास्त किया। तीन उसी समय बहान वेजदने वेजा खाँके पुनके अधोनस्थ नितनी सेना थी उनका उन्नेड कर डाला।

अगरेजोंके मित्र सरदार बुलीचाँदने इस समय पुनाजो दुगमें वेजा पाँको परास्त कर विजयलक्ष्मी प्राप्त की। उपर्युपरि इस प्रकारके तीन युद्धोंमें हार पा कर वेजा खाँ कांधसे अधीर हो उठा और उक्त परतने पश्चिम पार्श्वकी ओर चल दिया। इस सरदर उच्छेती और डटे रहे और येकव तथा



वेडील ( हि० रि० ) १ जिसका डील या रूप अच्छा न हो, भद्दा । २ जो अपने स्थान पर उपयुक्त न जान पड़े, बेहद गा ।

वेदग ( हि० वि० ) देव्या गयो ।

वेदगा ( हि० रि० ) १ जिनका दृग डीग न हो, गुरे दृग बाला । २ घुसप, भद्दा । ३ जो ठीक तरहसे ग्याया, रखा या सजाया न गया हो ।

वेदगापन ( हि० पु० ) वेदगे हागेगा भाग ।

वेद ( हि० पु० ) १ नाग, बरसादो । २ बोधा हुआ वह वोज जिसमें अक्षर निकल आया हो ।

वेदई ( हि० ग्नी० ) यह रोटी या पूरो जिनमें गल, पोठी आदि कोई चीज भरी हो, कचौडी ।

वेदन ( हि० पु० ) वह निससे कोई चीज घेरो हुई हो ।

वेदना ( हि० कि० ) १ वृक्षों या खेतों तादिसे, उनका रस के लिये चारों ओरसे टट्टी बाध कर अथवा और किसी प्रकार घेरना । २ चीपायोंको गेर कर हार ले जाना ।

वेदव ( हि० वि० ) १ जिनका दव या दग अच्छा न हो । २ जो देखनेमें ठीक न जान पड़े, भद्दा । ( कि० वि० ) ३ अनुचित या अनुपयुक्त रूपसे, गुरी तरहसे ।

वेदा ( हि० पु० ) १ घरके आग पास वह छोटा सा घेरा हुआ स्थान जिनमें तरकारिया आदि बोई जाती हैं । २ एक प्रकारका गहना जो हाथमें पहना जाता है ।

वेदाना ( हि० कि० ) १ घेरनेका काम दूसरेसे करना, घिराना । २ ओढाना ।

वेणीफल ( हि० पु० ) एक प्रकारका गहना जो सिर पर पहना जाता है । इसका आकार फल सा होता है । इसे सीमफूल भी कहते हैं ।

वेतचेरु—मन्द्राजप्रदेशके कर्णूल जिलान्तर्गत नरगल तालुकका एक गाण्डग्राम । मानचित्रमें यह वैभुमचेरु नामसे चिन्ता गया है । यहांके आज्ञनेय मन्दिरमें १४७० शक और १४६७ ई०में उत्कीर्ण दो शिलाफलक देखे जाते हैं । ये दोनों फलक विजयनगर राज सत्ताधिकारके राज्यमालमें किमी राजप्रशसने दिये गये थे । पत्ताचित्र ग्रामके अग्रान्त्य रानोंमें और भी कितनी शिलालिपिया देयी जाती हैं ।

वेतमङ्गल ( हि० रि० ) १ जिसे ऊपरी शिष्टाचारका

प्रियोग ध्यान न हो, सीधामात्र व्यवहार करनेवाला । २ जो अपने हृदयकी बात साफ साफ कह दे । ( कि० वि० ) ३ निना किमी प्रकारके तकल्लुफके । ४ निस्समीच वेतमङ्गल ।

वेतमङ्गली ( फा० री० ) मरलता, सागगी ।

वेतमसोर ( फा० वि० ) निरपगाध, वेगनाह ।

वेतङ्गा—बङ्गालके फरिदपुर जिलान्तर्गत एक ग्राम । यह अक्षा० २३ उ० तथा देशा० ८६ ५७ पू० चन्दना नदीके किनारे अवस्थित है । यहां चावल और उरदका निस्तृत मगवार है ।

वेतना ( हि० कि० ) प्रतीत होना, जान पडना ।

वेतवाव—बम्बईके पान्देज जिलान्तर्गत सिन्दपेत तालुकका एक शहर । यह अक्षा० २१ १३ उ० तथा देशा० ७४ ५७ पू०के मध्य निस्तृत है । जनसंख्या प्राय ४०१४ है । शहरमें १८६४ ई०के म्युनिस्पलिटी स्थापित हुई है । यहां एक स्कूल है ।

वेतवालू—मन्द्राज प्रदेशके कृष्णा जिलान्तर्गत एक प्राचीन नगर । यह नन्दिग्राम तालुक सदरमें १५ मील उत्तर पश्चिममें अवस्थित है । इस नगरके निकटपत्तौ शैल पर जो सुगुहत्तु श्वसावशेष पडा है, उसकी गठनप्रणाली की पर्यालोचना करनेमें यह बौद्धस्तूप सरोपा प्रतीत होता है । उसका व्यास प्राय ६६ फुट है और चारों ओर भास्करशिल्प मर्मरपत्थर विमण्डित है । उसके चारों बगल प्राचीन समाधिघोंके ऊपर बहुसंख्य प्रस्तर निर्मित चक्र दृष्टिगोचर होते हैं । एक चक्रके नीचे एक गोडेकी कुछ हदिया पाई गई हैं जिन्हे देख कर अनुमान किया जाता है, कि समाधिके पहले घोडेकी दो खण्ड करके गाडा गया था । क्योंकि घोडेके मस्तककी हड्डी दूसरी जगह रखी हुई है और उस गड्ढेके चारों कोनेमें चार बडे बडे पात्र रये हुए हैं । घोडेकी वह हड्डी अमी आषसफोर्ड नगरके Ashmolean Museum ग्रहमें सुरक्षित है ।

वेतमङ्गला—दक्षिणात्यके महिसुरराज्यके कोलरजिलान्तर्गत एक तालुक । भूपरिमाण २६० वर्गमील है । पालरनदी इस उपविभागके मध्य हो कर बहती है । इस उपविभागके पश्चिम स्वर्णमयीभूमि और मार्तुपम ग्रामके निकट सोनेकी



वेठील ( हि० वि० ) १ जिसका डाल या रूप अच्छा न हो, भद्दा । २ जो अपने स्थान पर उपयुक्त न जान पड़े, बेढग ।

वेढग ( हि० वि० ) बेग्या रूप ।

वेढगा ( हि० वि० ) जिसका ढग ठोस न हो, खुदे ढग गाला । २ बुरूप, भद्दा । ३ जो ठीक तरहमें ग्याया, रया या मज्जाया न गया हो ।

वेढगापन ( हि० पु० ) वेढगे हानेका भास ।

वेढ ( हि० पु० ) १ नाग, वरवादी । २ बोया हुआ पह वीज जिसमें ज कुर निकर आया हो ।

वेढई ( हि० स्त्री० ) वह गेटी या पूरो जिसमें गाल, पीठी आदि कोई चीज भरी हो, कचौड़ी ।

वेढन ( हि० पु० ) वह जिसमें कोई चीज घेरो हुई हो ।

वेढना ( हि० क्रि० ) १ वृक्षों या खेतों जादियों, उनका रना के लिये चारों ओरसे टट्टी बाध कर यथया और किसी प्रकार घेरना । २ चीपायोंको घेर कर हाक ले जाना ।

वेढव ( हि० रि० ) १ जिसका ढव या ढग अच्छा न हो । २ जो देखनेमें ठीक न जान पड़े, भद्दा । ( क्रि० वि० ) ३ अनुचित या अनुपयुक्त रूपसे, बुरी तरहसे ।

वेढा ( हि० पु० ) १ घरके आस पास वह छोटा सा घेरा हुआ स्थान जिसमें तरकारिया आदि बोई जाती हैं । २ एक प्रकारका गहना जो हाथमें पहना जाता है ।

वेढना ( हि० क्रि० ) १ वेढनेका काम दूसरेसे कराना, घिराना । २ ओढना ।

वेणीफल ( हि० पु० ) एक प्रकारका गहना जो सिर पर पहना जाता है । इसका आकार फल सा होता है । इसे सोमफल भी कहते हैं ।

वेतचेदव—मन्द्राजप्रदेशके कणूल जिलान्तर्गत नन्घाल तालुकका एक गण्डग्राम । मानचित्रमें यह वैसुमचेल् नामसे लिखा गया है । यहाके आडनेय मन्दिरमें १४७० गुरु और १४६७ ई०में उत्कीर्ण दो शिलाफलक देखे जाते हैं । ये दोनों फलक विजयनगर राज सत्ताशिके राज्यकालमें किसी राजवशयोगसे दिये गये थे । एतद्भिन्न ग्रामके अन्यत्र स्थानोंमें और भी विसती शिलालिपिया देखी जाती हैं ।

वेतकन्दुक ( हि० रि० ) १ जिसे ऊपरी शिष्टाचारका

विशेष ध्यान न हो, सीधामादा व्यवहार करनेवाला । २ जो अपने हृदयकी वान साफ साफ रह दे । ( क्रि० वि० ) ३ बिना किसी प्रकारके तरकलुफके । ४ निस्सकोच वेधक ।

वेतकन्दुकी ( फा० स्त्री० ) सरलता, सादगी ।

वेतकसोर ( फा० वि० ) निरपराध, वेगुनाह ।

वेतङ्गा—वडालके फरिदपुर जिलान्तर्गत एक ग्राम । यह अक्षा० २३ उ० तथा देशा० ८६ ५७ पू० चन्दना नदीके किनारे अवस्थित है । यहा चावल और उरुका विस्तृत कारवार है ।

वेतना ( हि० क्रि० ) प्रतीत होना, जान पडना ।

वेतवादा—बम्बईके पान्देश जिलान्तर्गत सिन्धुधेत तालुकका एक शहर । यह अक्षा० २१ १३ उ० तथा देशा० ७४ ५४ पू०के मध्य विस्तृत है । जनसंख्या प्राय ४०१४ है । शहरमें १८६४ ई०को म्युनिस्पालिटी स्थापित हुई है । यहा एक स्कूल है ।

वेतवोल—मन्द्राज प्रदेशके तृष्णा जिलान्तर्गत एक प्राचीन नगर । यह नन्दिग्राम तालुक मद्रासे १५ मील उत्तर पश्चिममें अवस्थित है । इस नगरके निम्नस्वर्ती शैल पर जो खुदहूत ध्वम्बावरोप पडा है, उसकी गठनप्रणाली की पर्यालोचना करनेमें यह दोहदस्वरूप मरीया प्रतीत होता है । उसका व्यास प्राय ६६ फुट है और चारों ओर भास्करजिल्ह मर्मरक्त्थर विमलित है । उसके चारों बगल प्राचीन समाधियोंके ऊपर बहुसंख्यक प्रस्तर निर्मित चक्र दृष्टिगोचर होते हैं । एतद् स्तंभके नीचे एक गोडेको कुछ हदिया पाई गई हैं जिन्हे देग कर अनुमान लिया जाता है, कि समाधिके पहले घोडेको दो तण्ड करके गाडा गया था । क्योंकि घोडेके मस्तककी हड्डी दूसरी जगह रगी हुई है और उस गड्ढेके चारों कोनेमें चार बडे बडे पाव रये हुए हैं । घोडेकी यह हड्डी अभी आपसफोर्ड नगरीके Ashmolean Museum गृहमें सुरक्षित है ।

वेतमङ्गला—दाक्षिणात्यके महिसुरराज्यके कोलरजिलान्तर्गत एक तालुक । भूपरिमाण २६० वर्गमील है । पालर नदी उपनिभागके मध्य हो कर बहती है । पश्चिम स्वर्णमयीभूमि और मातृपम्



भेजनेके लिये दीर्घ और स्थूल स्फुलिङ्ग उत्पादनकारी यन्त्रकी आवश्यकता है। स्फुलिङ्ग जितना ही दीर्घ होगा, इधरमें उतने ही जोरसे आघात करेगा और इधरतन्म उतनी ही अधिक दूर जायगी। फिर स्फुलिङ्ग जितना स्थूल होगा, इधरसे उतने ही अधिक परिमाणमें तरङ्ग निकलेगी। दूर स्थानमें संवाद भेजनेके लिये दोनों ही चीजोंको जरूरत है—इधर तरङ्गका अधिक दूर जाना और तरङ्गका परिमाण भी अधिक होना। अतएव इनडानसन कायेल खरीदनेके पहले यह देखना होगा, कि इससे दोनों उद्देश्य सिद्ध होंगे या नहीं।

पहले ही कहा जा चुका है, कि यन्त्रसे जितना ही लम्बा ताड़ित स्फुलिङ्ग निकलेगा, उतनी ही अधिक दूर तक संवाददादि भेजे जायगे। साधारणत एव इच्च ताड़ित स्फुलिङ्ग द्वारा एक मील तक संवाद भेजा जा सकता है। इस अनुपातसे २० मीलके लिये २० इच्च स्फुलिङ्गकी जरूरत हो सकती है, पर यथायम उतने दीर्घ स्फुलिङ्गकी जरूरत नहीं होती। ६ इच्च स्फुलिङ्गके द्वारा २० मील तक संवाद भेजा जा सकता है। यहा पर यह भी कह देना आवश्यक है, कि केवल स्फुलिङ्गकी दीर्घताके ऊपर दूरीका परिमाण निर्भर नहीं करता, यन्त्रके भिन्न भिन्न अंशके निर्माण-कौशलके ऊपर भी आश्रित परिमाणमें निर्भर करता है—किन्तु स्थानके ऊपर भी बहुत कुछ निर्भर करता है। सामनेमें आ पडनेसे इधर तरङ्ग बहुत दूर तक नहीं जा सकती। यहाँ कारण है, कि समुद्रकी जलरागिके ऊपर जितनी दूर तक संवाद भेजा जा सकता है, पर्यन्तदि समाप्तीय स्थलभूमि उतनी दूर तक भेजनेकी आशा कभी नहीं की जा सकती। यहा पर एक मील पयन्त संवाद भेजनेके उपयोगी य त्वादिना नियम वर्णन किया जाता है।

एक मील दूर संवाद भेजनेमें एक इच्च ताड़ित स्फुलिङ्ग उत्पादनकारी इनडाकसनकायेलकी जरूरत है। तारविहीन टेलिग्राफके यन्त्रोंमेंसे यह अधिकतर मूल्यवान है। इसका समग्र कर सकनेसे अन्यान्य अंश आसानीसे समग्र किया जा सकता है अथवा अपने हाथ से उन्हें थोड़े ही खर्चमें बना भी सकते हैं।

इनडाकसन कायेलके भिन्न भिन्न अंश इस प्रकार

हैं,—इसके ठीक मध्यभागमें कुछ नरम लोहेके तार बहुत मजबूतीसे बडलमें बंधे रहते हैं। इस लोहेके तारका यह गुण है, कि जब इसके चारों ओर ताड़ित प्रवाहित होती है, तब इससे चुम्बकशक्ति निकलती है। फिर ताड़ितप्रवाहके बंध होते ही चुम्बकशक्ति गायब हो जाती है। ताड़ितप्रवाहको उत्पन्न करनेके लिये इस बडलके ऊपर रेगम मण्डित ताबेके तार जड़े रहते हैं। इस तारके दोनों छोरोंसे बैटरीके साथ संयुक्त कर देनेसे इसमें ताड़ित प्रवाहित होती है। इस तारका नाम है प्राइमरी कायेल (Primary Coil)।

इस प्राइमरी कायेलके ऊपर बहुत बारीक और लंबे रेगम मण्डित ताबेके तार जड़े होते हैं जिसे सेकण्डरी (Secondary Coil) कहते हैं। जिससे प्राइमरी और सेकेण्डरी कायेलकी ताड़ित एक दूसरेमें न जा सके इसके लिये दोनों कायेलके मध्यभागमें ताड़ित अपरिचालन इरोनाइटकी चुगी दी हुई रहना है। इसी सेकेण्डरी कायेलके दोनों छोरोंसे पर्यन्तित ताड़ित स्फुलिङ्ग निकलते हैं।

इनडाकसन कायेलमें एक जगह पीतलका स्प्रिंग और दूसरी जगह पीतलका स्तम्भ रहता है। स्प्रिंगके अग्र भागमें लोहेका एक गण्ड और स्तम्भके अग्रभागमें एक पेडाया हुआ रहता है। स्क्रू बडी होगी यारोसे स्प्रिंगके साथ मिला होता है। इस यन्त्रमें एक अग्रनाम कांडेसर (Condenser) है जिससे ताड़ित शक्ति भी अधिक परिमाणमें वृद्धि होती है। कुछ टिन के पत्तर (Tin Oil) और वैरिफिनयुक्त कागज इस प्रकार मजे रहते हैं जिससे प्रत्येक पत्तरके वाद ही एक एक कागज पडे। फिर जोड़ और बेजोड नम्बरके पत्तर एक साथ पृथक् पृथक् संयुक्त किये रहते हैं। इस कारण जोड़ नम्बरके पत्तरके साथ बेजोडका स्पर्श नहीं होता। वनडेन्सर साधारणत इनडाकसन कायेलके बक्सके निम्नभागमें रहता है।

उक्त अंशोंक अलावा 'की' (Key) और बैटरी भी रहती हैं। 'की'के ऊपर दबाव डालनेसे इसके दोनों अंश मिल जाते हैं जिससे ताड़ित बैटरीसे इनडाकसन कायेलमें प्रवेश करता है।



मान है। इसमें दक्षिण पूर्व गण्डपर्यन्तमाला अपूर्व शोभा में रही है।

० उक्त उपविभागका एक प्राचीन ग्रहण है। यह अक्षा० १३ उ० तथा द्र० ७८ ०० पू० पाल्क नदीके किनारे स्थित है। जनसंख्या हजारोंमें ऊपर है। प्रवाद है, कि किसी चाल्प्राज्ञने इस नगरकी प्रतिष्ठा की। अभी नगरका पूर्व सौन्दर्य बिलकुल नहीं है। १८१४ ई०में बॉरोपेट नगरमें उपविभागका विचार सद्तर उठ कर चले जाने तथा रेलके खुलनेसे नगरका कारखार बिलकुल उद सा हो गया और अभी सिर्फ एक गण्डग्राममें परिणत हो गया है।

वैतमीज ( फा० वि० ) जिसे भद्रतासा आचरण कर्ता न आता हो, बहूदा।

वैतम् ( फा० वि० वि० ) • अनुचितरूपमें, गुरी तरहमें। २ असाधारणरूपमें, निरक्षण ढगमें। (वि०)

३ बहुत अधिक, बहुत ज्यादा।

वैतरीका ( फा० वि० ) १ अनुचित, बेकायदा। (वि०) वि० ) २ अनुचितरूपमें, बिना ठीक तरीकेमें।

वैतवा—सुन्दरबण्डकी एक नदी। यह भूपालतालमें निम्न एक समुतामें मिलती है। नगरा दनी।

वैतहाया ( फा० वि० वि० ) • बहुत शोभात्मके, अधिक तेजीसे। २ बिना सांचे समझे। ३ बहुत प्रबलहट।

वैतार ( फा० वि० ) १ दुर्बल, कमजोर। २ व्याकुल, बेचैन।

वैतामी ( फा० खी० ) १ दुर्बलता, कमजोरी। २ व्याकुलता, बेचैनी।

वैतार ( हि० वि० ) बिना ताका जिसमें तार न हो।

वैतारका तार—विद्युत्की सहायतामें भेजा हुआ वह समाचार जो साधारण तारकी सहायतासे बिना ही भेजा जाता हो। गाजमल पेसा कोई भी नहीं जिसमें तारविहीन टेलीग्रामकी फवा न सुनी हो। टाइपिन्ग जहायके जलमन होनेके बाद जनता इसकी उपकारिता अच्छी तरह समझ सकती है। समुद्रगर्भमें निमजित होनेके पहले मुहूर्त्त पयन्त इसके टेलीग्राफ र्भर्मागीने ईमी धोमनासे तारविहीन टेलीग्राफकी सहायतासे द्वारा विपद्याका चारों ओर भेजी थी, यह किमाने विपदा नहीं

है। किन्तु इस तारविहीन टेलीग्राफके द्वारा किस उपायमें सहायता भेजे जाते हैं, यह ज्ञायद बहुतांकी मालूम नहीं है। अत इसका मक्षिम विवरण नीचे लिया जाता है।

विज्ञानजगत् दिन पर दिन उन्नतिके पथ पर अग्रसर होता जा रहा है। गाजमल तारविहीन टेलीग्राफकी बहुत उन्नति हुई है। सहायतादि सूक्ष्मरूपसे ग्रहण करने के लिये यन्त्रमें अनेक नये नये अणु स योजित हुए हैं। यह जनसाधारणके लिये जितना दुःसाध्य और व्यय साध्य प्रतीत होता है, यद्यार्थमें उनका जटिल और व्ययसाध्य नहीं है।

आधुनिक वैज्ञानिक पण्डितोंने स्थिर किया है, कि हम लोगोंकी इस पृथ्वीके चारों ओर वायुकी अपेक्षा सूक्ष्मतरंग एक और आचरण है जिसका नाम है इथर, यह पृथ्वी—पृथ्वी ही क्यों, साग विश्वजगत् ही मानो इथर समुद्रमें डुबा हुआ है। किसी कारणवश इसमें तरङ्ग उत्पन्न होनेसे यह चारों ओर फैल जाती है। प्रकाश, उष्णता, शब्द सभी इथर-तरङ्गके द्वारा उत्पन्न हो कर हम लोगोंके निरन्तर आते हैं। इस इथर तरङ्गकी ग्रहण करनेका यदि कोई यन्त्र रहे, तो उस यन्त्रकी सहायतासे अनायास ही यह तरङ्ग ग्रहणकी जा सकती है। यही तारविहीन टेलीग्राफकी मूल भित्ति है। एक स्थान से ताडित यन्त्रके द्वारा इथरमें तरङ्ग उत्पन्न की जाती है, यह तरङ्ग चारों ओर फैलती है और जहां इस तरङ्गकी ग्रहण करनेका यन्त्र है वहां पहुंचनेसे ही यह अनायास पकड़ ली जाती है। अतएव यह देखा जाता है, कि प्रत्येक स्टेशनमें दो यन्त्रना रहना आवश्यक है—एक इथर तरङ्ग उत्पादनकारो ताडित यन्त्र और दूसरा इथर तरङ्ग ग्रहणकारा यन्त्र।

जिस ताडित यन्त्रकी सहायतामें इथरमें तरंग उत्पन्न की जाती है, उसका नाम इन्डिकेशन कायेल ( Indication coil ) है। यंत्रकी साग समुक्त होने पर इसके दो प्रान्तोंसे ताडित स्तुलिङ्ग निकला करते हैं और उन स्तुलिङ्ग द्वारा ही इथरमें तरङ्ग उत्पन्न होती है। यह स्तुलिङ्ग जितना उभरा और मोटा होगा तरङ्ग भी उसी अनुपातमें उत्पन्न होगी। सुतरा दूर स्थानों से साध

भेजनेके लिये दीघ और स्थूल स्फुलिङ्ग उत्पादनकारी यन्त्रकी आवश्यकता है। स्फुलिङ्ग जितना ही दीघ होगा, इधरमें उतने ही जोरसे आघात करेगा और इधरतरफा उतनी ही अधिक दूर जायगी। फिर स्फुलिङ्ग नितना स्थूल होगा, इधरसे उतने ही अधिक परिमाणमें तरङ्ग निकलेगी। दूर स्थानमें सवादा भेजनेके लिये दोनों ही चीजोंनी जरूरत है—इधर तरङ्गना अधिक दूर जाना और तरङ्गका परिमाण भी अधिक होना। जतपय इनडाकसन कायेल परीदनेके पहले यह देखना होगा, कि इससे दोनों उद्देश्य सिद्ध होंगे या नहीं।

पहले ही कहा जा चुका है, कि यन्त्रसे जितना ही लम्बा ताड़ित स्फुलिङ्ग निकलेगा, उतनी ही अधिक दूर तक सवादादि भेजे जायगे। साधारणतः एक इंच ताड़ित स्फुलिङ्ग द्वारा एक मील तक सवादा भेजा जा सकता है। इस अनुपातसे २० मीलके लिये २० इंच स्फुलिङ्गकी जरूरत हो सकती है, पर यथाथेमें उतने दीघ स्फुलिङ्गकी जरूरत नहीं होती। ६ इंच स्फुलिङ्गके द्वारा २० मील तक सवादा भेजा जा सकता है। यहा पर यह भी कह देना आवश्यक है, कि केवल स्फुलिङ्गकी दीर्घताके ऊपर दूरीका परिमाण निर्भर नहीं करता, यन्त्रके भिन्न भिन्न अंशके निर्माण-कौशलके ऊपर भी आंशिक परिमाणमें निर्भर करता है—फिर स्थानके ऊपर भी बहुत कुछ निर्भर करता है। सामान्यतः पठनेसे इधर तरङ्ग बहुत दूर तक नहीं जा सकती। यही कारण है, कि समुद्रकी जलराशिके ऊपर जितनी दूर तक सवादा भेजा जा सकता है, परन्तु तद्विस्मानीर्ण स्वल्पभूमिमें उतनी दूर तक भेजनेकी आशा नहीं की जा सकती। यहा पर एक मील पर्यन्त सवादा भेजनेके उपयोगी यन्त्रादिका नियम वर्णन किया जाता है।

एक मील दूर सवादा भेजनेमें एक इंच ताड़ित स्फुलिङ्ग उत्पादनकारी इनडाकसनकायेलकी जरूरत है। तारविहीन टेलिग्राफके यन्त्रोंमेंसे यह अधिकतर मूल्यवान है। इसका सग्रह कर सकनेसे अन्याय्य अंश आसानीसे सग्रह किया जा सकता है जधना अपने हाथ से उन्हे थोड़े ही पचमें बना भी सकते ह।

इनडाकसन कायेलके भिन्न भिन्न अंश इस प्रकार

हैं,—इसके ठीक मध्यभागमें कुछ नरम लोहेके तार बहुत मजबूतीसे ब डलमें बंधे रहते हैं। इस लोहेके तारका यह गुण है, कि जब इसके चारों ओर ताड़ित प्रवाहित होती है, तब इससे चुम्बकशक्ति निकलती है। फिर ताड़ितप्रवाहके बंद होते ही चुम्बकशक्ति गायब हो जाती है। ताड़ितप्रवाहको उत्पन्न करनेके लिये इस घडलके ऊपर रेशम मंडित ताबेके तार जडे रहते हैं। इस तारके दोनों छोरों घेटीके साथ संयुक्त कर देनेसे इसमें ताड़ित प्रवाहित होती है। इस तारका नाम है प्राइमरी कायेल (Primary Coil)।

इस प्राइमरी कायेलके ऊपर बहुत बारीक और लंबे रेशम मंडित ताबेके तार जडे होते हैं जिसे सेकेंडरी (Secondary Coil) कहते हैं। जिससे प्राइमरी और सेकेण्डरी कायेलकी ताड़ित एक दूसरेमें न जा सके इसके लिये दोनों कायेलके मध्यभागमें ताड़ित अपरिचालक इथोनाइटनी चुगी दी हुई रहती है। इसी सेकेण्डरी कायेलके दोनों छोरोंसे पूर्वस्थित ताड़ित स्फुलिङ्ग निकलते हैं।

इनडाकसन कायेलमें एक जगह पीतलना स्प्रिंग और दूसरी जगह पीतलका स्तम्भ रहता है। स्प्रिंगके अग्र भागमें लोहेना एक पण्ड और स्तम्भके अग्रभागमें एक पेड़ाया हुआ रहता है। स्क्व घडी होशियारीने स्प्रिंगके साथ मिला होता है। इस यन्त्रमें एक अंशना नाम कांडेसर (Condenser) है जिससे ताड़ित शक्तिनी अधिक परिमाणमें वृद्धि होती है। कुछ टोनके पन्तर (Tin Oil) और पैरेफिनयुक्त कागज इस प्रकार सजे रहते हैं जिससे प्रत्येक पत्तरके बाद ही एक एक अंगन पड़े। फिर जोड और वैजोड नम्यके पत्तर एक साथ पृथक् पृथक् संयुक्त किये रहते हैं। इस कारण जोड नम्यके पत्तरके साथ वैजोडका स्पर्श नहीं होता। घनदेनसर साधारणतः इनडाकसन कायेलके बसनेके निम्नभागमें रहना है।

उक्त अंशोंके अलावा 'सी' (Key) और घेटी भी रहती हैं। 'की'के ऊपर दबाव डालनेसे इसके दोनों अंश मिल जाते हैं जिससे ताड़ित घेटीसे इनडाकसन प्रवेग करता है।

प्राइमरी कायेलका एक तार वैटरीके एक छोरसे तथा दूसरा सिप्र और एक पावरके फनडेन्सरके साथ मिला रहता है। स्तम्भके नीचेसे एक तार फनडेन्सरके अपर पावर और 'की' के साथ तथा एक दूसरा तार वैटरीके अन्य प्रान्तसे संयुक्त रहता है।

'कि' पर (K) द्वारा डालनेसे ताडित वैटरीसे निम्न कर म्प और सिप्र के द्वारा प्राइमरी कायेलमें प्रवेश करेगी। प्राइमरी कायेलमें ताडितके प्रवाहित होते ही भीतरके लीडतारमें चुम्बक गुण आ जायगा। उस समय उक्त लीडतारके सामनेकी ओर आट्ट होगा तथा रिप्र स्क से विच्छिन्न हो जायगा। सुतरा उस समय ताडित प्रवाह बन्द हो जायगा और साथ साथ लीडतारका चुम्बक गुण भी जाता रहेगा। अत रिप्र फिरसे पूर्वस्थान पर आ कर स्क के साथ मिल जायगा। इस प्रकार धीरे धीरे द्र तगतिसे ताडित प्रवाह रुक और प्रवाहित होता रहेगा। इस अवस्थामें सेकण्टरी कायेलमें प्रचण्ड धेगसे ताडित उत्पन्न हो कर इसके दोनों छोरोंसे निरलती रहेगी। विस्तार हो जानेके ब्यसे इस तार विहीन टेलिग्राफके अन्यान्य यन्त्रोंकी कथा नहीं लिखी गई।

वेताल (स० पु०) भूतयोनिविशेष। वेतान वयो।

वेताल (हि० पु०) भाद, पदी।

वेताला (स० स्त्री०) यह वाद्य या संगीत ताल जो मह गामो नहीं है।

वेताहाजीपुर—युक्तप्रदेशके मोरट्ट जिलेका एक गण्ट-ग्राम। यह लोणी नगरसे ३ मील पश्चिममें अवस्थित है। यहां मुसलमान साधु अबदुल्ला जाहकी दरगाह और सम्राट् औरंगजेब द्वारा निर्मित एक मस्जिद है।

वेति—अयोध्या प्रदेशके प्रतापगढ जिलान्तगत एक नगर। अभी यह गण्ट नाममें परिणत हो गया है और एक सुविस्तीर्ण हृदके किनारे अवस्थित है। हृद नर्म कालमें १० वर्गमील और गोमस्रतुमें ३ वर्ग मील स्थान तक छा लेना था। अभी गङ्गाके साथ जो एक नहर-काटी गई है उससे इस हृदका लगाव होनेके कारण अब उतना जल इसमें रहने नहीं पाता। हृदके उत्तरी किनारे सुन्दर सुन्दर घाँसोंके वन हैं और अन्यान्य किनारे खेती

वारी होती है। प्रजाट है, कि अयोध्याके किसी राजाने यहां यक्षकुण्ड खोदवाया था। आज भी उसके आस पासका स्थान खोदनेसे यक्षीय वृक्ष शम्पादि मिलते हैं। इस हृदमें बहुतसी पत्ती बड़ी मछलियां और तीर-पत्तों वनभागमें अपवात उन्मुक्तुण्ड मिलते हैं। हृदके मध्यस्थित छोटे द्वीपके मध्यस्थलमें एक छोटा प्रासाद निर्मित है। पहले उस स्थानमें राजपुत्रगण पक्षी आदिना गिनार करते थे। अन्ततः इसके यहां दो प्राचीन हिन्दू देवाल्य भी हैं।

वेतिया—१ बिहार और उड़ीसाके चम्पारन जिलेका एक उत्तरीय उपविभाग। यह अक्षां २६' ३६' से २७ ३१' ३० तथा देशां ८३ ५० से ८४ ४६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २०१३ वर्ग मील है। इस उपविभागका दक्षिणी हिस्सा समतल है। यहां जो पर्वत-माला है वह करीब २० मील तक विस्तृत है। जनसंख्या साढ़े सात लाखके करीब है। इसमें वेतिया नामका एक शहर और ३३१६ ग्राम लगेते हैं। इस उपविभागका अधिकांश वेतियाराजके शासनाधीन है। वेतियासे १३ मील उत्तर पश्चिम रामनगर नामक एक गण्ट-ग्राम है जहां रामनगरके राजा रहते हैं। राजाकी १६७६ ई०में दिल्लीसम्राट् औरंगजेब द्वारा उपाधि मिली थी। १८६० ई०में ब्रिटिश सरकारने भा उसे खोना कर लिया। त्रिवेणी नामका जो नहर काटी गई है उसमें दुर्मिक्षके समय उपविभागका भारी उपकार होता है।

२ उक्त उपविभागका सदर। यह अक्षां २६ ४८' ३० तथा देशां ८४ ३०' पू०के मध्य स्थल तटोंके प्राचीन गर्भ पर अवस्थित है। जनसंख्या २५ हजारके करीब है जिनमेंसे हिन्दुनी संख्या ज्यादा है। १८६९ ई०में म्युनिस्पलिटी स्थापित हुई थी। यहां जो रोमन कैथलिक मिसन है उसे १७७० ई०में फादर जोसेफ मेरोने स्थापित किया जो इसी शहरमें रहते हैं। कहते हैं, कि उक्त जोसेफ साहय किसी समय नेपालमें वेतियाने और जा रहे थे उन्नी समय राणा प्रधानमन्त्री द्वारा परिचय हो गया। राजाकी कन्या मन्जु सोमर था जोसेफने उन्हें बिल्कुल आरोप्य कर दिया था। इस प्रत्युपकारके पुरस्कारस्वरूप राजाने उन्हें वेतियामें बसा

दिया और एक सुन्दर भवन तथा ६० एकड़ जमीन दी। महाराजाका प्रासाद जो इसी शहरमें है उत्कृष्ट कारुकार्यविशिष्ट है। शहरमें सरकारी दफ्तर और एक छोटा जेल है।

वेतियाराज—बिहार और उड़ीसाके चम्पारन जिलान्तगत एक उपविभागका बड़ा स्टेट। इसका भूपरिमाण १८२४ वर्गमील है। १७वीं शताब्दीके मध्य भागमें प्रसिद्ध योद्धा राजा उग्रसेनसिंहने अपने बाहुबलसे त्रिपुर सम्पत्ति उपाजित की। वे ही इस विस्तृत राज्यके प्रवृत्त स्थापयिता हैं। पीछे राजा युगल किशोरसिंह राजतप पर बैठे। उनके समयमें सरकारों के बहुत पड़ जानेके कारण राजा ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध खड़े हो गये। आखिर राजाकी हार हुई और राज्य अरेकू मनेजमेण्टके अधीन कर दिया गया। कुछ समय बाद जब ब्रिटिश सरकारने दावी कर वसूल होनेका कोई उपाय न देखा तब लार्डार हो १७७१ ई०में मकाव और सिमरोन परगने राजाको तथा शेष अंश उनके भतीजेको प्रदान किये। १७६१ ई०में युगलकिशोरके पुत्र चौर किशोरके साथ उक्त दोनों परगनेका दससाला बन्दोवस्त किया गया। १८३० ई०में चौरकिशोरके उत्तरधिकारी आनन्द किशोर ब्रिटिश सरकारसे महाराज बहादुरकी उपाधिसे भूषित हुए। १८६७ ई०से यह राज्य कोर्ट ऑफ वार्डके अधीन है। राजा जातिके भूमिहार हैं।

बेतोकालान—अयोध्याप्रदेशके रायबरेली जिलेका एक नगर। यहा एक सुन्दर बहुत पुराना महादेवका मन्दिर है।

बेतोगीडी—बम्बई प्रदेशके धारवाड जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १५ २६' ३०" तथा देशा० ७५ ४१' ५०" गडगसे १ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। गडग और बेतोगीडी एक म्युनिसिपलिटिके अधीन है। प्रति सप्ताह एक ट्रेन हाट लगती है। हाटमें विशेषतः रईकी लायों स्पेरी मिली होती है।

बेतुगुदीव—छालुष्य वंशीय एक राजा। सङ्गमेवरमें इनकी राजधानी थी।

बेतुल—मध्यप्रदेशके नरबुदा विभागका एक जिला। यह अक्षा० २१ २६' से २२ २३' ३०" तथा देशा० ७७

२१' से ७८ ३०' ५०" तक मध्य अक्षास्थित है। भूपरिमाण ३८२६ वर्गमील है। इसके उत्तर और पश्चिममें होसङ्गा वाद, पूर्वमें छिन्दवाडा और दक्षिणमें पेरारका अमरीती जिला हैं। बदनूर नगर इसका विचारस्तर है। मध्य प्रदेशके चीफ कमिश्नर से यह जिला शासित होता है।

यह जिला प्रायः पार्वत्य जमिनकासे पूर्ण है और समुद्रपृष्ठसे २००० फुट ऊंचा है। इसके प्राकृतिक दृश्यको पर्यालोचना करनेसे यह दो भागोंमें विभक्त प्रतीत होता है। इसका प्रचुर नगर वेतुल जिलेके ही मध्य में अवस्थित है। माछना और सापना नदीके बहनेसे जमीन गूना उर्वरा हो गई है। नदीतौर अथवा उसके आम पासका स्थाय शरय मम्बुद्विसे श्रोमम्पन हो गया है। इन दोनों नदियोंके पश्चिम भागमें आग्नेय गिरिके अन्वयुत्यातोत्थित पदार्थों द्वारा गठित बहुत ऊंचा पर्वत रहनेके कारण वहा लोगोका वास नहीं है। उसके पश्चिमस्थ निम्न जगलके मध्य ही कर तासी नदी बह गई है। जिलेके दक्षिण भागमें एक पर्वतशृङ्खला पर पवित मूलताह नगर विद्यमान है। इस मूलतार्थी अथित्यका भूमिसे तासी, उर्दा और बेलनदी निकल कर जिलेके पूर्ण और पश्चिमभागमें बह गई हैं। तप नदी जिलेके उत्तर पृथ वीनेमें बहती है। पूर्वस्थित माछना, सापना और मोरन नदीको छोड़ कर पर्वतकी उपत्यकासे और भी कितने पहाड़ी स्रोत निकल कर येतोंमें बर्य भर जल देते रहते हैं। पश्चिमके पार्वत्य वन भागमें शाक, शीजम, अजुन और शाल आदि वृक्षोंका वन है। उम वनमें अधिन्तर गोंड और बुरुजातिका वान है। उम स्थानका २९७ वर्गमील वनभाग गजमेंण्टके २५ श्रेणीका और ८० वर्गमील वन २५ श्रेणीका रक्षित वनभाग कह कर निर्दिष्ट है।

अति प्राचीनकालसे वेतुल नगर गेला गोंड राज्यका शासनकाल चला आ रहा था। किरिस्ताके विवरणमें किसी किमी गोंड राजाका वर्णन छोड़ कर और कहीं भी एक धारावाहिन इतिहास नहीं मिलता। उक्त ग्रन्थसे हम लोगोंको पता लगता है, कि १५वीं शताब्दीमें राजाके साथ मालवराजका घोरतर युद्ध चला था। युद्धमें कभी मालवराजकी और कभी

हुई थी। अनन्तर गोलिराजाओंने प्राचीन गोडराज-  
यगको परास्त किया। किन्तु घोड़े ही समयके अन्दर  
उस गौडजातिने फिरसे नई प्रतिक्रिया सञ्चय कर अपने  
पुरैराज्य पर अधिकार जमाया। जो कुछ हो, प्राय  
१७०० ई०के समकालमें गौडस्मरदार राजा भक्त तुलन्द  
वेतुल सिंहासन पर अधिष्ठित थे, ऐसा प्रमाण मिलता  
है। राजा गौड जादिने होने पर भी इसलामधर्ममें  
दीक्षित हुए थे। देवगढ राजधानीमें रह कर राजा भक्त  
तुलन्द घाटपर्गामालाके निम्नघर्ती नागपुर राज्यका  
शासन करते थे। उनकी मृत्युके बाद उनके एकमात्र  
पुत्र ही राजा हुए। पोछे १७३६ ई०में उनके स्वर्गवासी  
होने पर उनके दो लडकोंमें राज्यसिंहासन ले कर विवाद  
बडा हुआ। बेरारके महाराष्ट्र सरदार रघुजी भोंसले  
उस विवादकी निवटानेके लिये मध्यस्थ बने। परन्तु  
दोनोंके बीच राज्यविभाग कर देनेके उद्देशमें  
उन्होंने वेतुल राज्यको भोंसलोंके अधिष्ठित राज्य  
में मिला लिया। १८१८ ई०में अप्पा साहबकी  
पराजय और पलायनके बाद अङ्गरेजोंके युद्धके पर्व  
स्वरूप दाक्षिणात्यका जो अंश मिला, वर्तमान वेतुल  
जिला उसीका एक अंश है। १८२६ ई०को सन्धिके  
अनुसार वेतुल भूभाग स्पष्ट वृष्टि अधिकारसुक्त हो  
गया। १८१८ ई०में अप्पा साहबके साथ अङ्गरेजोंका  
जो युद्ध छिडा था, उसमें अङ्गरेजोंने मुल्तानई, वेतुल और  
ग्राहपुरमें सेनाकी छावनी डाली थी। आधिर अप्पा  
साहब पाचमाढीसे पश्चिमकी ओर दलदल समेत भाग  
गये। १८२६ ई० तक वेतुलमें अङ्गरेजी सेना रगी गई थी।  
इस जिलेमें २ शहर और ११६४ ग्राम लगते हैं।  
जनसंख्या तीन लाखके करीब है। गेहू, धान, उड़द  
तेलहन, ईल, रुई, पटसन, तमाक तथा और दूसरे दूरदूर  
भगाओंकी खेती होती है। अल्पशुभ उतना धराब नहीं  
है। सृष्टिगत प्रायः प्रतिदिन हुआ करता है। चैत मास  
के शेष तक यहा गरमी रहती है। जामलाशैलका अधि-  
स्थका देश अङ्गरेजोंके पश्चिम विशेष मनोरम है। उदर  
मय रोग यहाका मारामत्र है।

विद्यानिष्ठामे प्रान्तके मध्य इस जिलेका स्थान  
वारहवा आया है। सैफडे पोछे ४ मजुथ्य पत्रे लिये

मिलते हैं। अभी कुल मिला कर १ मिडिल इङ्गलिश  
स्कूल, ३ जर्नालियुलर मिडिल स्कूल और ६० प्राथमी  
स्कूल हैं। स्कूलके अलावा ३ चिकित्सालय हैं।

२ उक्त जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २१-  
२२ से २२ २२ उ० तथा देशा० ७७ ११ से ७८ ३ पू०  
के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १७०६६४ है।  
इसमें बदनूर और वेतुल नामक २ शहर और ७७ ग्राम  
लगते हैं।

३ उक्त तहसीलका एक प्रधान शहर। यह अक्षा०  
२१ ५२ उ० तथा देशा० ७७ ५६ पू० बदनूर शहरसे  
तीन मील दूर पडता है। जनसंख्या ५ हजारके करीब  
है। बदनूर नगरमें जिलेका सदर उठ जानेके पहिले  
इसी शहरमें अङ्गरेजोंका आवास था। यहाका प्राचीन  
दुर्ग और अङ्गरेजोंका समाधि उद्यान देखने लायक है।  
यहाके अधिवासी मट्टीके अच्छे अच्छे धरतन बनाते हैं  
जो भिन्न भिन्न स्थानोंमें विक्रीके लिये, भेजे जाते हैं।  
शहरमें १ जर्नालियुलर मिडिल स्कूल और १ वालिका  
स्कूल है।

वेतुलपिडदुर्ग—मन्द्राजप्रदेशके मालवार जिलान्तर्गत एक  
नगर। यह अक्षा० १० ५३ उ० तथा देशा० ७५ ५८  
१५ पू०के मध्य तिरुके रेल स्टेशनसे २ मील पूर्वमें  
अवस्थित है। यहा वेतुलनाद राजप्रशाक एक प्रसाद  
था। १७८४ ई०में टीपू सुल्तानने इसे तहस नहस कर  
डाला। अभी ध्वंसावशेषके उपकरण ले कर यहाकी  
जमी और कलघट्टी अदालत बनाई गई है।

वेत्तुर—मन्द्राज प्रदेशके मालवा जिलान्तर्गत बल्लयनाड  
तालुकका एक प्राचीन गाँवग्राम।

वेत्तलुम—मन्द्राज-प्रदेशके दक्षिण अर्काट जिलान्तर्गत  
कल्लुचुर्ची तालुककी एक जमींदारी।

वेत्तादपुर—दाक्षिणात्यके महिसुर-राज्यके अन्तगत एक  
पर्वत। यह अक्षा० १२ २७ उ० तथा देशा ७६ ७ पू०  
समुद्रपृष्ठसे ४३ ० फुट ऊँचा है। पर्वत फोणाकार है।  
इसको चोटी पर सुप्रसिद्ध महिवाजुंन महादेवका मन्दिर  
अवस्थित है। पर्वतके पादमूलमें वेत्तादपुर नगर है  
जहा सङ्घटित ब्राह्मण अधिप सत्त्वामें रहते हैं। १०वीं  
शताब्दीमें येजूल राय नामक एक जैन राजाने लिङ्गायत

धर्ममतका अनुसरण कर इस देवमन्दिरका सस्कार कराया था। टोपू सुल्तानके अभ्युदय तक यह स्थान देशीय सामन्तोंके अधीन रहा।

वेत्तु—दक्षिण भारतस्थ जैनदेवस्थान विशेष। यहां न मंडि मन्दिर हैं और न तीर्थङ्करोंको कोई प्रतिमूर्ति ही है। यहां एक प्राचीन वेष्टित विस्तृत प्रङ्गण है जहा गोमती वा गोमत रानाको मूर्ति प्रतिष्ठित है। वहाके लोग उस मूर्ति की पूजा करते हैं।

वेत्तु—महिसुर राज्यके देवनगर तालुके अन्तर्गत एक गण्डग्राम। यह अक्षा० १४ ३० उ० तथा देशा० ७६ ७ पू०के मध्य देवनगर शहरसे २ मील उत्तर अवस्थित है। जनसंख्या १०१० है। क्रि.वन्ती है, कि १३वीं शताब्दीमें यह स्थान देवगिरिके यादवराजाओंको अन्य तम राजधानी थी।

वेत्ता—मध्यभारत पञ्जेन्सीके युन्देलखण्डके अन्तर्गत एक नदी। इसका प्राचीन नाम वेत्तवती है। वेत्तवती देवी।

वेतीर (अ० क्रि० त्रि०) ? बुरी तरहसे, वेद गेपनसे। (त्रि०) २ जिसका तोर तरीका ठीक न हो, वेद गा।

वेद ( स० पु० ) वेद द्रव्य।

वेन्क ( हि० पु० ) हिन्दू।

वेदखल ( फा० वि० ) अधिकारच्युत, जिसका दफल, कच्चा या अधिकार न हो। इसका व्यवहार सिर्फ सफ़ावर सपत्तिके लिये ही होता है।

वेदखली ( फा० स्त्री० ) अधिकारमें न रहनेका भाव, दखल या कब्जेका हटाया जाना अथवा न होना।

वेदनरोग ( हि० पु० ) पशुओंका एक प्रकारका छूतवाला मोषण ज्वर। इसमें रोगी पशु बहुत सुस्त हो कर वापने लगता है, उसका सार शरीर गरम और लाल हो जाता है, भूख बिलकुल नहीं और प्यास बहुत अधिक लगती है। इसमें पाचनेके साथ आँध भी निकलती है।

वेदम ( फा० वि० ) १ मृत्तक मुग्दा। २ जो काम देन योग्य न रह गया हो, जर्जर। ३ जिसकी जीवनी शक्ति बहुत घट गई हो, अधमरा।

वेदमंजजू ( फा० पु० ) एक प्रकारका रूक्ष। इसकी शाखाएँ बहुत भुकी हुई रहती हैं। इसी कारण यह बहुत मुर म्भया और डिबुरा हुआ जान पड़ता है। इसकी छाल

और फलों आदिका व्यवहार औषधमें होता है। वेदमल ( हि० पु० ) लकड़ीकी वह तस्ती जिस पर तेल लगा कर सिखलीगर लोग अपना मस्किला नामक यन्त्र रगड़ कर चमकाते हैं।

वेदमाल ( हि० पु० ) परमन ग्यो।

वेदमुग्ग ( फा० पु० ) पश्चिम भागत और विशेषतः पञ्जावमें अधिभतासे होनेवाला एक प्रकारका वृक्ष। इसमें एक प्रकारके बहुत ही कौमल और सुगन्धित फूल लगते हैं। इन फूलोंके अर्कका व्यवहार औषधके रूपमें होता है। यह अर्क बहुत ही ठंडा और चित्तको प्रसन्न करनेवाला माना जाता है।

वेदरी ( हि० त्रि० ) निदरी देवा।

वेदर्द ( फा० त्रि० ) कठोर हृदय, निर्दय।

वेदर्दी ( फा० स्त्री० ) निर्दयता, बेरहमी।

वेदलेला ( फा० पु० ) एक प्रकारका पीथा। इसमें सुन्दर फूल लगते हैं।

वेदाग ( फा० वि० ) १ निर्दोष, शुद्ध। २ निरपराध, बेकसूर। ३ जिसमें कोई दाग या धब्बा न हो, साफ।

वेदाना ( हि० पु० ) १ एक प्रकारका उत्कृष्ट कातुली अनार। इसकी छाल बहुत पतली होती है। २ एक प्रकारका मोठा छोटा ग्रहणत। ३ एक प्रकारकी छोटे दानेकी मोठी बुदिया। इसमें बहुत रस रहता है। ४ दागलन्दी, चिन्ता। ५ विरोदाना नामक फलका बीज। इसे पानीमें भिगोनेसे लुभाव निकलता है। लोग प्रायः इसका शर बत बना कर पीते हैं। यह ठंडा और बलकारक माना जाता है। ( वि० ) ६ मूर्ध्, बेवकूफ।

वेदाम ( हि० पु० ) १ वादाम देवा। ( त्रि० वि० ) २ बिना दामका, जिसका कुछ मूल्य न दिया गया हो।

वेदाम—मन्द्राजप्रदेशके गज़ाम जिलान्तर्गत एक छोटा सामत राज्य। वेदाम ग्राम दो वर्गमील विस्तृत है।

वेदार ( विदार )—हैदराबाद राज्यके गुलबर्गा विभागका एक जिला। यह अक्षा० १७ ३० से १८ ५१ उ० तथा देशा० ७६ ३० से ७७ ५१ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण - १६८ वर्गमील है जिनमेंसे २१२६ वर्गमील जागीर है। इसके उत्तरमें नान्दर, पूर्व और दक्षिणमें नवाब सर खुर्रोज़ाहक

राज्य तथा पश्चिममें भीर जिंदा और ओममानासाद है। यहाँकी प्रधान नदीना नाम मझरा है।

प्राचीन विदर्भ राज्यमें इसका वेदार नाम पडा है। विदर्भराज नल्के वाए इस स्थानकी वृद्धि वा प्रियेय इतिहासमा परिचय नहीं मिलता। दक्षिणान्यके हिन्दू राजाओंके समय यह स्थान उतिकी चरम सीमा तक पहुँच गया था। १३२१ ई०में मुहम्मद बिन तुगलकने इस पर अधिकार जमाया। पीछे यह १३४७ ई०में बालानी वंशके प्रथम राजा उदान शाह गायूके हाथ लगा। बालानीराजके अथ पतन पर यह जिला विदारके बन्दिशाही के अधीन हुआ। उन्होंने १४६२में १६०६ ई० तक शासन किया। अनन्तर यह बीजापुरके आदिलशाही राज्यमें मिला लिया गया। १६२४ ई०में अहमदनगरके निनाम-शाही मन्त्री मालिक अम्राने इसे लूटा। पीछे बीजापुरके राजाने इसका उद्धार किया। उन्होंने १६५८ ई० तक यहाँका अच्छी तरह शासन किया। अनन्तर औरङ्ग जेजने इस पर दखल जमाया। १८वीं शताब्दीमें यह जिला हैदराबादराज्यमें शामिल कर लिया गया।

इस जिलेमें ७ शहर और १४०७ ग्राम लगेते हैं। जनसंख्या प्राय ७६६,२३६ है। यहाँके अधिकांसी वेदार या वेदारी कहलाने हैं। ये लोग स्नाहसी तथा शिकार और दस्तुनुस्तिमें विलक्षण पटु हैं। जिस पिदारीदलने एक समय भारतवर्षकी रूपा डाला वा उसमें विदारी जातिकी हो सप्या अधिक थी। महिसुर राज्यमें तथा रमणमह पर्वत पर वेमे विदारियोंका वास है। पाच तालुककी ले कर यह जिला समझिन हुआ है, यथा विडार, कारामू गो, निरङ्ग, उद्गोर और उरवाल राहुरा। विद्यार्थियोंमें यह जिला बहुत मिरा हुआ है। सेन्ट्रै पीछे २ मनुष्य पढ़े लिखे मिलते हैं। अभी कुल मिला कर ३० प्राथमरी स्कूल, २ मिडिल स्कूल और १ हाई स्कूल है। स्कूलके अलावा चार चिन्हिसमाज्य हैं निनामेमे एक युवानी है। विदार दुर्ग चारों ओर प्राचीर और बार्देसे घिरा है। यहाँकी जुम्मा और सोरह गुम्बजवागे मसजिद देखने लायक है। शहरके बाहर बन्दिशाही परिवारके ममाधिमन्दिर हैं। आवहवा यहाँकी बहुत स्नाम्य प्रद है।

२ उक्त जिलेका एक तालुक। इसका भूपरिमाण ४८७ वर्ग मील और जासराया लागने ऊपर है। इन्में विदार और बीहिर नामके २ शहर और १७७ ग्राम लगेते हैं जिनमेंसे ८७ ग्राम जागीर हैं। राजस डेढ लागसे ज्यादा है।

३ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १७° ५५' ३० तथा देशा० ७७ ३२' पू० समुद्रपृष्ठमें २३३० फुटकी ऊँचाई पर अवस्थित है। जनसंख्या दश हजारसे ऊपर है। १६वीं शताब्दीके मध्यकालमें यह बालानी राजवशकी राजधानीरूपमें गिना जाता था। उस समय इसकी श्रीवृद्धि भी प्रयेष्ट थी। जो प्रकाण्ड प्राचीर और बुर्ज आदि एक समय चारों ओर बनाये गये थे, वे अभी धरसावस्थामें पड़े हुए हैं।

मुगलसम्राट् बाबरशाहके भारत आक्रमणकालमें वेदारराज्य पार्श्ववर्ती राजाओंके फलनलगत रहा। १७७२ ई०में निजामशाही राजाओंने इस प्रदेशमें अपना शासन फैलाया। १७५२ ई०में पेशवा बाजीराव और सलायत-जङ्गके साथ इस नगरमें संधि हुई थी।

एक समय यहाँ एक प्रकारका बटिया बरतन और विभिन्न धातु पातादि बनते थे जो यूरोपीय वाणिज्य पण्यमें 'बेदार-वेर' (Beder Ware) नामसे प्रसिद्ध हैं। बालानीराजके मंत्री मुहम्मद गावनने यहाँ एक कालेज बनवाया था जो अभी भग्नावस्थामें पडा है। यहाँकी जुम्मा और 'सोलह रमा' मसजिद देखने लायक है। वेधटक (दि० क्रि० वि०) १ नि.स कीच, बिना किन्नी प्रकारके स कीचके। २ बिना किन्नी प्रकारके भय वा आश काके, निडर हो कर। ३ बिना किन्नी प्रकारकी रोक टोकके, बेगकायद। ४ बिना कुछ सोचके समके, बिना आगा पीछा किये। (त्रि०) निरुद्ध, जिसे किन्नी प्रकारका स कीच या छटका न हो। ६ निरुद्ध, निडर। बेधना (दि० क्रि०) किन्तो चुकीगे बीजकी सहायता से छेद करना, छेदना। ७ शरीरमें क्षत करना, घायल करना।

वेधर्म (दि० त्रि०) जिन्ने अपने धर्मका ध्यान न हो, धर्ममें गिरा हुआ।

वेनग (दि० पु०) अपविता पहचानमें मिलनेवाला छोटा

जातिका पहाड़ी वास । यह प्राय लताके समान होता है । इसकी टहनियोंसे लोग छप्परोंकी लकड़ियाँ आदि बाँधते हैं ।

वन ( हि० पु० ) १ व शी, मुरली । २ सँपैरोंके बजानेकी तूमडी, महुजर । ३ वाँस । ४ एक प्रकारका वृष ।

वेन ( अ० पु० ) १ जहाजके मस्तूल पर लगानेकी एक प्रकारकी झडी । इसके फहरानेसे यह पता चलता है, कि हवा किस दफती है । २ वायु, हवा ।

वेनजोर ( फा० वि० ) जिसकी कोई समता न कर सके, अनुपम ।

वेनट ( हि० स्त्री० ) लोहेकी वह छोटी किर्च जो सैनिकों की व दृकके अगले सिरे पर लगी रहती है, सगीन ।

वेनसेढ ( अ० पु० ) जहाजके काममें आनेवाला एक प्रकारका बटा धौला । यह टाट आदिका बना हुआ नलके आकारका होता है । इसकी सहायतासे जहाजके नोचेके भागोंमें ऊपरकी तानी हवा पहुँचाई जाती है ।

वेना ( हि० पु० ) १ एक प्रकारका छोटा पखा जो वासका बना होता है । २ उशीर, बस । ३ व श, वास । ४ माथे पर बँदीके वाचमें पहननेका एक प्रकारका गहना ।

वेनागा ( हि० कि० वि० ) नित्य, लगातार ।

वेनिमून ( फा० वि० ) अद्वितीय, अनुपम ।

वेनी ( हि० स्त्री० ) १ स्त्रियोंकी चोटी । २ भादोंके अन्त या शु वारके आरम्भमें होनेवाला एक प्रकारका धान । ३ गङ्गा, सरस्वती और यमुनाका स गम, विचेणी । ४ क्षियाडीकी वह छोटी लकड़ी जो उसके किसी पल्लेमें लगी रहती है । यह दूसरे पल्लेको खुलनेसे रोक्ती है ।

वेनी—१ एक भाषा कवि । ये असनी जिला फतेहपुरके निवासी थे । इन्होंने स वत् १६६०में जमप्रहण किया था । इनकी कविता बहुत ही सरस, सरल, मधुर और ललित है । खुटकरिस तथा इनका रचा नायिका मेदका एक अत्युत्तम ग्रन्थ पाया जाता है ।

२ रायवरेली जिलेके निवासी एक कवि । इनका जन्म स० १८४४में हुआ था । ये लगनऊके नवाबके दीवान महाराज टिकैतरायके यहा रहते थे । सम्बत् १८६०में ये परलोक सिधारे ।

वेनीपान ( हि० पु० ) बँदी देखो ।

वेनीप्रज्ञेण—लम्बनऊके रहनेवाले एक भाषा कवि । ये जातिके कान्यकुज वाजपेयी ब्राह्मण थे । इनका जन्म सम्बत् १८७६म हुआ था । इनकी कविता बहुत ही अच्छी होती थी । इनका बनाया नायिका त्रिपयक ग्रन्थ देखने योग्य है ।

वेनीसिंह—एक ग्रन्थ-रचयिता । इनका जन्म सम्बत् १८७६में हुआ था । ये हिन्दी साहित्यके अच्छे मर्मज्ञ थे । ये कविजनोंको गूब खातिर करते थे । इनका देहात १६४१ सवत्में हुआ ।

वेनु ( हि० पु० ) १ येणू देवा । २ व शो, मुल्ली । ३ वग, वास ।

वेनुली ( हि० स्त्री० ) जाते या चर्मीमें वह छोटी-सी लकड़ी जो किरलेके ऊपर रखी जाती है और जिसके दोनों सिरों पर जोती रहती है ।

वेनीदी ( हि० वि० ) १ कपासके फूलकी तरह हलके पीले रंगका, कपासी । ( पु० ) २ एक प्रकारका रंग जो कपासके फूलके रङ्गना-सा हलका पीला होता है, कपासी ।

वेपरद ( फा० वि० ) १ अनाघृत, जिसके ऊपर कोई परदा न हो । २ नग्न, नगा ।

वेपरवा ( फा० वि० ) १ जिसे कोई परवा न हो, बेफिक । २ जो किसीके हानि लाभना विचार न करे और केवल अपने इच्छानुसार काम करे, मनमीजी । ३ उदार ।

वेपरवाही ( फा० स्त्री० ) १ वेपरवाह होनेका भाव बेफिकरी । २ अपने मनके अनुसार काम करना ।

वेपर्द ( हि० वि० ) बपरद देगो ।

वेपार ( हि० पु० ) हिमालयकी तराईमें ६०००से ११००० फुटकी ऊँचाई तक अधिरुनासे मिलनेवाला एक प्रकार का बहुत ऊँचा वृक्ष । इसकी लकड़ी यदि सीढ़से बची रहे, तो बहुत दिनों तक ज्योंकी त्यों रहती है और प्राय इमारतमें काम आती है । इस लकड़ीका कीचला बहुत तेज होता है और लोहा गलानेके लिये बहुत अच्छा समझा जाता है । इसको छालमें जगलौसे भोपडियाँ भी छाई जाती हैं ।

वेपीर ( हि० पु० ) व्यापारी देगो ।

वेपीर ( फा० वि० ) १ जिसके हृदयमें किसीके दुःखके



लिये सहायुभूति न हो, दृमरोंके कष्टको कुछ न समझने  
जाग। २ निर्दय, बेधम।

वेपेंदी (हि० वि०) जिममें पैदा न हो, जो पैदा न होनेके  
कारण इपर उधर लुढ़कता हो।

वेकायदा (फा० वि०) १ जिससे कोई फायदा न हो,  
घर्षका। (फि० वि०) २ नाहक।

वेफिर (फा० वि०) निश्चित, बेपरवा।

वेफिरा (फा० खी०) निश्चितता, बेफिक होनेका भाव।  
वेवस (हि० वि०) १ जिसका कुछ वश न चले, लाचार।

२ पराधीन, परबरा।

वेवसो (हि० खी०) विजगता, मजबूरी। २ पराधीनता,  
परबराता।

वेवाक (फा० वि०) जो अज्ञा कर दिया गया हो, चुकता  
किया हुआ।

वेवुनियाद (फा० वि०) निर्मूल, बेजड़।

वेव्यादा (फा० वि०) अविवाहित, कु आरा।

वेभाय (फा० फि० वि०) जिसका कोई हिसाब या गिनती  
न हो, बेहद।

वेम (हि० खी०) जुलाहोंकी कथी।

वेमन (फा० फि० वि०) १ बिना मन लगाए, बिना इत्त  
चित्त हुए। (वि०) २ जिसका मन न लगता हो।

वेमरमत (फा० वि०) जिसकी मरमत होनेकी हो, पर  
न हुई।

वेमरमती (फा० खी०) वेमरमत होनेका भाव।

वेमारो (हि० खी०) बीमारी देणे।

वेमालूम (फा० फि० वि०) १ बिना किसीकी पता लगे।  
(वि०) २ जो मालूम न पड़ता हो, जिसका पता न लगता  
हो।

वेमिलाउट (फा० वि०) शुद्ध, छालिस।

वेमुतासिब (फा० वि०) अनुचित, जो मुनासिब न हो।

वेमुद्वयन (फा० वि०) जिसमें शील या सन्नोचका  
अभाव हो, तोता-चम।

वेमुद्वयती (फा० खी०) वेमुद्वयन होनेका भाव।

वेमीषा (फा० वि०) १ जो अपने उपयुक्त अयसर पर न  
हो। (पु०) २ अयसरका अभाव, मीषेका न होना।

वेवरा (हि० पु०) धरा बली।

वेर (हि० पु०) १ प्रायः सारे भारतमें मिलनेवाला मकोले  
आकारका एक प्रसिद्ध फटीला धूस। इसके छोटे बड़े  
फई भेद होने हैं। विशेष विवरण बदर इल्दम देणे। २  
वेरका फल। (खी०) ३ वार, वफा। ४ बिलम्ब,  
देर।

वेरजरी (हि० खी०) जगली वेर, भडबेरी।

वेरजा (हि० पु०) विरोग दणे।

वेरवा (हि० पु०) सोने या चादीका कडा जो कलाईमें  
पहना जाता है।

वेरस (फा० वि०) १ रमरहित, बिना रसका। २  
जिममें आनन्द न हो, बेमजा। ३ जिसमें अच्छा स्वाद  
न हो, घुरे स्वादवाला।

वेरहम (फा० वि०) निर्दय, निडुर।

वेरहमी (फा० खी०) निर्दयता, निडुरता।

वेरा (हि० पु०) १ समय, बक। २ प्रात फाल, तडका।  
३ एकमें मिला हुआ जी और चना।

वेरा (ख० पु०) यह चपरासी, विशेषतः साहब लोमोंका  
यह चपरासी जिमका काम चिट्ठी-पत्री या समाचार  
आदि पढ्चाला और ले आता आदि होता है।

वेरादरी (हि० पु०) निरादरी देणे।

वेराम (हि० वि०) बीमार देणे।

वेरामी (हि० खी०) बीमारी देणे।

वेरार (बरा,—मध्यभारतके अन्तर्गत एक स्वतन्त्र प्रदेश।

यह पहले बरार राज्यके तामसे प्रसिद्ध था। हैदराबादके  
नवाब निजामने जबसे इमका कर्तृत्व अङ्ग्रेजोंके हाथ  
सौंपा, तबसे यह हैदराबाद एम्पाइड सिट्टिकु नामसे  
प्रसिद्ध हुआ। हैदराबादके रेजिडेण्ट बेरारके चीफ कमि  
श्नर पद पर रह कर यहाका शासन कार्य चलाते थे।  
तमोसे बरारराज्य आकोला, जुलदाना, बासिम, अमरा  
घतो, इत्तिचपुर और मुता इन छः जिलोंमें बँट गया है।  
इसकी उत्तर और पूर्व सीमामें मध्यप्रदेश, दक्षिणमें  
निजामराज्य और पश्चिममें बम्बई प्रेसिडेन्सी है। भूपरि  
माण १७१० वर्गमैल है। यह अक्षा० १६ ३५ से  
२१ ४७ उ० तथा देशा० ७५ ५६ से ७६ ११ पु०के  
मध्य अवस्थित है।

समग्र बरार-राज्य पूरपश्चिममें विस्तृत एव

सुद्रीध उपत्यका-भूमि है। इसके उत्तरभागमें सातपुरा पर्वतमाला और दक्षिणमें अजन्ता शैलश्रेणी है। स्थानीय लोग सातपुरा निरुत्सव उपत्यकाको बैरार पयानघाट तथा अजन्ता शैल और तदन्तर्गत अधिपत्यका देशको बैरार बालाघाट कहते हैं। इन दो भागोंके मध्यमें उत्तराग हो अपेक्षाकृत उर्वर और शस्यशाली है। यहा ताप्तीको शापा पूर्ण आदि कई एक पार्वत नाले सातपुरा और अजन्ता पहाडसे उतर कर मूलनदीमें आ मिले हैं। यहा पर वर्षा नियमितरूपसे और यथेष्ट होती है। इन सब कारणोंसे यहा कमी भी पानीकी कमी नहीं होती और न सूखा ही पडता है। शरदऋतुमें शस्यपूर्ण क्षेत्रोंकी शोभा बडी ही आनन्ददायक होती है। अधिकांश स्थानमें खेती बारी होती है। परिश्रमी रूपरु गण बडे उद्यम और उत्साहके साथ हल जोतते और बोज बोते हैं। कुनबी, भील आदि पार्वत्य जातिया ही यहा किसानोंका काम करतो हैं।

भूपरिमाणकी तुलनामें बैरारप्रदेश आयोनियन द्वीप को छोड कर प्रोस राज्यके समान है, परन्तु जनसङ्ख्या उससे प्राय दुगुनी है। इसकी पूर्वपश्चिममें विस्तृति करीब १५० मील और साधारण प्रस्थ करीब १४४ मील है। यहा सब समेत ५७१० ग्राम हैं। ताप्ती, पूर्णा, बर्दा और पेनगङ्गा वा प्राणहिता ये यहाकी नदिया हैं, परन्तु उनमेंसे बर्दा हो कर बैरार उपत्यकाका अधिकांश जल निकल जाया करता है। बुलदाना जिलेका लोणार नामक लवण जलयुक्त हृदके चारों ओर पहाड है, मानो गोलाकारमें हृदको घेरित कर रखा हो। उस पर्वत पर नाना तरहके वृक्ष शोभित हैं। हृदका जलभाग ३४५ एकड है, परन्तु तीरभूमिकी परिधि ५॥ मीलसे कम नहीं है।

१८८३ ई०के मार्च महीनेकी जरीपके अनुसार यहा का वनभाग ४३४४ वर्गमील है। उसमें ११ ६ वर्ग मील राजरक्षित, २८३ वर्गमील जिला द्वारा रक्षित तथा २६५५ वर्गमील अरक्षित अस्थानमें पडा है। इमें गाविलगड पहाडका वन ही उत्कृष्ट है। यहासे बैरारके अधिवासियोंको नित्य व्यवहार्य और गृहनिर्माणोपयोगी काष्ठ और बांस पयानरूपसे मिलते हैं।

दक्षिण बैरारके गागा उपत्यकाके मेलघाट नामक पार्वत्यप्रदेशमें सेंगुन फाड और जलानेको लऱड्डी तथा घान बहुतायतसे मिलती है। अमराचतीके उत्तर देग यासी तथा पूर्णा नदीके उत्तर तीरस्थ ग्रामवासी उस लकडा और घासको काममें लाते हैं।

बैरारराज्यके पूर्वांशमें तथा बहाके करज पर्वत पर बहुतायतसे खनिज लोहा पाया जाता है। दुर्भाग्यका विषय है कि देशीय लोग उस लोहेको गला कर फिस्सी काममें नहीं लाते और न किसी धातुविद्व वैज्ञानिक द्वारा उसकी परीक्षा ही कराते हैं। बुन जिलेके बर्दा उपत्यका देशमें उत्तर दक्षिणको विस्तृत एक कोयलेकी खान (Coal held) पाई गई है। अनुमानसे यह उत्तरमें बर्दासे दक्षिणमें पेनगङ्गा तक विस्तृत है। १८७० ई०में उस खानको पोद कर परीक्षा भी की गई थी, कई स्थानोंसे कोयला भी निकाला गया था, परन्तु बहा त्रिकीको सुनिधान न होनेसे यह कार्य स्थगित रखा गया। नाग पुरसे भुसावल और बम्बई जानेके लिये जो रेल गई है, उससे यहाके कपास आदिके व्यवसायको विशेष उन्नति हुई है। भारतके अन्यत्र स्थानोंकी रईमें यहाकी रई अच्छी होती है और यहा कपासकी पैदावार भी बहुत है।

यहाकी आवहवा निहायत बुरी नहीं है। दक्षिणात्य में सबत्र ही जैसी गरमी और जाडा पडता है, यहाँ भी वैसा ही समझना चाहिए। परन्तु पयानघाट उपत्यका में गरमी विशेष पडा करती है। मार्च महीनेके अन्तसे ही यहा गरमी शुरू होती, है अप्रैल तक वह किसी तरह सहनीय रहती है, परन्तु मई और जूनमें तो वह विलकुल असह्य हो जाती है। उसके बाद वर्षा शुरू हो जानेसे आवहवामें कुछ शीतलता आती है, रात्रिको यह स्थान स्वभावतः शीतल है। चारों ओर पहाड और उपत्यका सूर्यके तापसे विशेष उत्तम होने पर भी काटेरगकी मिट्टी होनेके कारण गरमी ज्यादा देर नहीं ठहरती। वर्षाके समय चारों ओर सूब ठण्डक रहती है। अजन्ता पहाडके ऊपरवाले बालाघाट पार्वत्य देगमें समतल क्षेत्रकी अपेक्षा बहुत कम उष्ण है। सर्वोच्च गाविलगड पर्वतके तापका प्रभाव मध्यम है, इस पर्वत पर ३७७७ फुट ऊँचे स्थानमें

चिकित्सा नामक म्यान्वय निवाम है जो इलिचपुरने २० मांनू दू है ।

बरात राज्यका इतिहास अधिक प्राचीन नहीं है । नर्मदातट तक ममप्र दाक्षिणात्य जब जिम प्रकारसे जिस राजानी अधीनतामें शासित हुआ है, यह बरारराज्य भी उन्नी प्रकार उनमेंसे किन्नी एक राजाके अधीन रहा है । परन्तु इसके प्राचीनतम इतिहासका पता लगाना कठिन है । गिलालेपसे मालूम होता है, कि इस प्रदेशमें अनेक सामन्तराज थे, पर वे किस किम राजाके अधीन थे, इसका कोई विशेष प्रमाण नहीं मिलता ।

ऐतिहासिक तत्त्वानुसंधान करनेसे मालूम होता है, कि ईसाकी ११वीं और १०वीं शताब्दीमें यहा कल्याणके चालुक्य राजगण राज्य करने थे । ईसाकी १३वीं शताब्दीमें इस देशमें देवगिरि (दीलताबाद)के यादव्यगीय राजाओंका प्रभाव विस्तृत हुआ था, ऐसा अनुमान होता है । क्योंकि उक्त शताब्दीके शीयमागमें पठान राजा अलाउद्दीनने देवगिरिके हिन्दू नरपति रामदेवको परास्त करके मार डाला था । रामदेव एक प्रसिद्ध और प्रबल प्रतापी राजा थे । उस समय इस देशमें यादव यगीय विशेष क्षमताशाली थे, यह बात गिलालेप और इतिहाससे स्पष्ट है ।

कल्याणके चालुक्यबरात और देवगिरिके यादव नरपतियों द्वारा यहा लगातार राज्य किये जाने पर भी यह हम प्राचीन देवकीर्तिके ध्वसावशेषोंवादीसे अनुमान पर सक्त है, कि बरार प्रदेशके दक्षिण पूर्वस्थ जिले बरगुठके प्राचीन हिन्दूरानयणके अधीन थे ।

स्थानीय किंवदन्ती इस प्रकार है कि, इलिचपुर राजधानीके स्वाधीन राजा यहाके अधिपति थे । उस यणमें इल्लामके एक राजा थे । उन्हींके नामानुसार इलिचपुर नामकरण हुआ है । यह राजघर दाक्षिणात्यमें मुसलमानों प्रभावके पहले बरारका शासकत्वा था । स्थानीय स्थापत्यकीर्तिके आलोचनाने मालूम होता है, कि ये जैनधर्मावलम्बी थे । परन्तु अभी तक उक्त ध्वस्तकीर्तिके ध्वस्तों तरह गोन नहीं की गई है, इसलिए हमारा मिश्रित इतिहास अभी कुछ नहीं कहा जा सक्त ।

१३६४ ई०में दिल्लीभर फिरोज चिलौके भतीजे और

जमाई अलाउद्दीन पहले पहल दाक्षिणात्य विजय करने आये थे । उन्हींने देवगणमें यादवराज रामदेवको मुसलमान परास्त और कैद किया था । कोई कोई कहते हैं कि रामदेव मार दिये गये थे, और किसी किसी का कहना है, अलाउद्दीनने बहुत-सा धन ले कर छोड़ दिया था । परन्तु उन्हींने इलिचपुर राज्य उन्हीं नहीं दिया था अथवा धनके साथ साथ राज्य भी ले लिया था ।

अलाउद्दीनने दिल्ली लौट कर अपने चचा या भय्युर को मार डाला और स्वयं दिल्लीके सिंहासन पर बैठे । उनके राजस्यकालमें उत्तर-भारतसे मुसलमान सेना दलोंने दाक्षिणात्यमें जा कर लगातार कई बार यहाके राज्योंको तहस नहस कर दिया था । अलाउद्दीनकी मृत्युके बाद देवगिरिके अधीनस्थ दाक्षिणात्य प्रदेशों पुन स्वाधीनता प्राप्त की, पर यह स्वाधीनता अधिक दिन तक न रही । १३८१ ई०में मुबारक चिलौने हिन्दू विद्रोहका दमन किया । उन्हींने मुसलमानोंका फोडो शासन देवगणके लिए देवगिरिके अन्तिम हिन्दुराजाके शरीरको चमडी उबड़ना डाली थी । उस समयसे १६०६ ई० तक बरार राज्य मुसलमानोंके अधिकारमें रहा । सन् १८०६ में भारतके राज प्रतिनिधि लार्ड कर्जनने राजनैतिक कारणसे निजामको कह सुन कर बरार निजाम राजासे पृथक् करा लिया । तभीसे यह हैदराबाद-प्रता इण्डिस्ट्रियल स्वतन्त्ररूपसे "बरारप्रदेश" कहलाया ।

मुसलमान शासकवर्गोंकी अधीनतामें भी बरार स्वतन्त्र नामसे ही परिचित रहा । हा शासकोंके नामधर्यांनुसार उसको सीमाकी कमी घेनी अवश्य होती रही थी । १३५० ई०में दिल्लीके मुसलमान सम्राट महम्मद तुगलककी मृत्युके बाद बरार राज्य दिल्लीके तुगलकयग की अधीनतामें पृथक् हुआ और उसके बाद लगभग २५० वर्ष तक यहाके मुसलमान शासनकर्त्ताओंने दिल्ली भरकी अधीनताकी शपथ कर स्वाधीन राजाकी तरह यहाका शासन किया । उसके बाद, करीब १३० वर्ष तक यह दाक्षिणात्यके धार्मिक राजवंशके अधीन रहा । अलाउद्दीन हुषैनगानने अपने राज्यको ४ प्रदेशोंमें विभक्त किया था, जिसमें मादुर और बरारके कुछ अंशको भी कर एक प्रदेश गठित हुआ था ।

१५२६ ई०में उक्त ब्राह्मणीयशका अधिपतन होने पर, दक्षिणात्य वेरारतममें पाच मुसलमान राजवंशोंके अधीन शासित हुआ था। उस समय इमादशाही राजा वेरार राज्यके अधिपति थे। इलिचपुरमें उनकी राजधानी थी। प्रजाद है, कि इस राजवंशके अधिपतिता एक कनाडी हिन्दू थे जो युद्धमें बन्दी हो कर वेरारके शासनकर्त्ता खाँ जहानके समक्ष लाये गये थे। या जहानने उनकी बुद्धि और शक्तिका परिचय पा कर उन्हें रानकीय उच्च पद पर नियुक्त किया। धीरे धीरे वह इमाद उल्ल मुल्ककी उपाधिके साथ सेनानायकके पद पर नियुक्त रहा। इमादशाह पीछे वेरारके स्वाधीन राजा हुए थे। इमादके वंशधर उनके समान शक्तिशाली और सीमाव्ययान् न थे। इन लोगोंको राज्य रक्षामें अममथं जान १५७० ई०में बीजापुर और अहमदनगरके राजाओंमें मिल कर वेरार पर आक्रमण किया और वेरारराज्य अहमदनगरके करतलगत हुआ। परन्तु अहमदनगरके राजा उमरु अधिक दिन तक उपभोग न कर सके। १५७६ ई०में उन्होंने अपनी रक्षाके लिए वेरारप्रदेश मुगल सम्राट् अकबरशाहको सौंप लिया। १५६६ ई०में दक्षिणात्यके उपलब्ध राज्योंका बन्दोबस्त करनेके लिये सम्राट् स्वयं बुरहनपुर पहुंचे। उन्होंने अपने पुत्र कुमार दानिपलनी वेरार और अन्यत्र प्रदेशके प्रतिनिधि नियुक्त कर उस प्रदेशके शासनकी व्यवस्था की। "आईन इ अरबरी"में वेरार सूबेका राजस्व और परिमाणादि लिखा हुआ है।

१६०५ ई०में सम्राट् अकबरशाहकी मृत्यु होने पर मुगल राजसरकारमें राज्यव्यवस्थाकी बड़ी गड़बड़ी हुई। मुगलदरबारके उत्तर भारतमें शृङ्खला स्थापनके लिए थस्त रहनेसे दक्षिण भारतके नवाधिष्ठन प्रदेशोंके शासनमें बहू विशेष ध्यान न दे सका। इसी समय वेरारकी अरक्षित देख कर दौलताबादके स्वाधीनता प्रयासी निजाम शाही राजा मालिक अमरने वेरारके कुछ अंश पर अधिकार कर लिया। १६२८ ई०में उनके मृत्यु समय तक वेरार निजामशाही वंशके अधीन रहा। उसके बाद १६३०ई०में मुगलोंने उसे जीत कर वहा निहाश्चरकी शासन शक्ति स्थापित की। मुगल सम्राट् शाहजहानने अपने दक्षिणात्य राज्यकी दो भागोंमें विभक्त कर दोनों

को पृथक् पृथक् शासनकर्त्ताओंके अधीन छोड़ दिया उस समय वेरार, पयानघाट, जालना और पानदेश एक ही विभागमें था। परन्तु यह व्यवस्था विशेष लाभ प्रद न होनेसे फिर उक्त दोनों विभाग एक ही में मिला दिये गये और एक ही शासक द्वारा उसका शासन किया गया। १६१२ ई०में यहा पहले पहल कर लगाये जानेकी व्यवस्था हुई थी। बादमें शाहजहाके समय उमरुका बहुत कुछ सस्कार हुआ था। १६३७-३६ ई०में फमली मन् चलाया गया था।

इसके बाद १६५० ई० तक वेरारका प्रादेशिक स्वतन्त्र कोई इतिहास नहीं मिलता। उस समय दक्षिण भारतमें मुगल, मराठा और मुसलमान राजाओंमें परस्पर नाना स्थानोंमें युद्ध चल रहा था। १६५०से १७१७ ई० तक मुगल बादशाह औरङ्गजेब दक्षिणात्यके युद्धमें लिप्त थे उस समयका वेरारका इतिहास औरङ्गजेबके दक्षिणात्य विजयसे सम्बन्धित है। १७०७ ई०में औरङ्गजेबकी मृत्यु हुई। उसके बाद वेरार प्रदेश मराठा और मुगल सेनाओंके लूट मार और अनिबहनादि अत्याचारका केन्द्रस्थल रहा। इसी समयसे वास्तवमें इस देशकी प्रजासे महाराष्ट्रगण सर्वदेशमुखी और चौध घसूट करने लगे थे। १७१७ ई०में सम्राट् फरुखसिंहके सैयदपत्नीय मन्त्रिण भो कर देनेके लिए घाघ्य हुए थे। १७२०ई०में दक्षिणात्यके मुगल प्रतिनिधि चीन फिलिच यानि निजाम-उल मुल्क नाम धारण कर स्वाधीनताके लिये प्रयास किया। इस पर दो सैयद मन्त्रियोंने उनके विरुद्ध संना भेजा। परन्तु उस सेनाकी उन्होंने युद्धमें परास्त कर दिया और इस प्रकार वे अपना प्रभुत्व विस्तार करनेमें समर्थवान् हुए। इस समय वेरारके सूबेदार उनके साथ मिल गये थे। १७२१ई०में बुरहनपुरमें प्रथम युद्ध और उसके बाद ही बालापुरमें दूसरा युद्ध हुआ। उसके उपरान्त १७२४ ई० में बुलदाना जिलेके सखर-खेलदा नामक स्थानमें तीसरा वा अन्तिम युद्ध हुआ। तबसे सखरखेलदा "फते खेलदा" के नामसे प्रसिद्ध हुआ है। इस युद्धके बादसे वेरार प्रदेश १८वीं शताब्दी तक नाममात्रके लिये ही वेरारशाह-राजवंशके अधीन रहा।

इसकी १७वीं शताब्दीके खेचमागसे ही

पूर्वमसृष्टिका हाम होता रहा। १५६७ ई०में फरामोनी समणकारी M de Thavenotने इस देशका परिचय करके लिया है, कि मुगल-साम्राज्यमें यह स्थान धन धान्य और जलादिसे परिपूर्ण था। उसके बाद, स्थानीय फरस प्रहर्षोंके विद्रोहसे यह स्थान शस्यशून्य और जलहीन हो गया। फिर राजाओंके युद्ध विग्रहसे यह स्थान क्षोभित हो गया। इसी समयमें महाराष्ट्रोंने दुर्गल और अरक्षित धरार राज्यको लूट कर नष्ट कर दिया। उनकी दस्युताके भयसे स्थानीय वाणिज्य का लोग हुआ और इसीलिये लोग देश छोड़ कर चले गये। मुगल सम्राटने जब यहा एक जागीरदार नियुक्त कर राजस्व स प्रहर्षोंके व्यवस्था को सब उधर महाराष्ट्रोंने भी कर वसूलीके लिए सज्जत जागीरदार नियुक्त किये और प्रजाको बलीदान करने लगे। प्रजाओंने इस प्रकारसे दोनों पक्षकी कर देनेके कष्टसे दुःखित हो कर जमीन छोड़ दी। निरन्तर लूट मार और दूस्सोंका सर्वनाश होने पर प्रजाओंका हृदय भी क्लुवित हो गया और वे भी स्थायी बन्दोबस्तके पक्षपाती न रहे।

१८०४ ई०में हैद्राबादकी सन्धिकी शर्तमें घर्षानदीके पूर्ववर्ती जिलोंकी ले कर समग्र धरार राज्य (कुछ अंश नागपुरका भीमले वन और पेगवानोंके अधीन रहा) निजामके अधिकारमें चला गया। गाविलगद नरनाला दुर्ग नागपुरके महाराष्ट्र सरदारोंके अधिकारमें था। १८२२ ई०में फिर एक सन्धि हुई, जिसमें धरारको सीमा निर्दिष्ट हो कर घर्षाके पश्चिमसभ समग्र प्रदेश निजामके अधिकारमें चला गया और नागपुरके राजाकी उक्त नदी के पूर्वस्थित प्रदेश नाममात्रको मिला। १७९७ ई०में पेगवाने जिन जिलोंको अपने राज्यमें रखा था तथा १८०३ ई०तक नागपुरके राजाने जिन स्थानों पर कब्जा किया था यह सब निजामको वापस दिया गया।

उपर्युक्त कारणसे अनेक राजाओंको सेनाओंकी सहायता देनी पड़ी। उन सैनिकोंने अन्य कोई अन्नापूर्जनका उपाय न देना इच्छा किया और शुरु कर दिया। इन इच्छाओंके अत्याचारोंने राज्यकी रक्षा करनेके लिए निजामको बहुत कष्ट सहने पड़े थे और अर्ध-व्यय भी प्रचुर हुआ था। इस अथवा अर्धव्ययके कारण निजामराज्यकी प्रत्य

प्रस्त होना पड़ा और अंग्रेज-गवर्नमेण्ट १८०० ई०की सन्धिके अनुसार राज कोयने सेनाको देना देती रही। इस तरह उत्तरोत्तर विद्रोहोंके कारण निजामके अधिपत देश नष्टप्राय होने पर अंग्रेज लोग शान्तिके लिए तम सर हुप और १८४६ ई०में उन्होंने अल्पासाहबकी फौद पर उनके अधीनस्थ सेना दलको भगा दिया।

निजाम अंग्रेजोंके साहाय्यार्थ 'हैद्राबाद फिस्ट्रेट' नामक सेनादलका पोषण कर रहे थे, स्वयं जब उस के ध्ययभार वहन करनेमें असमर्थ हो गये, तब उन्होंने अंग्रेजोंको सोप दिया। अब तक अंग्रेज गवर्नमेण्ट उस प्रणके चुकता होनेका कोई मार्ग नहीं निकाल सकी थी। इस कारण तथा ऊपर कहे गये युद्ध-विग्रहसे हैद्राबाद राज्य दियालिया हो गया। इसलिये उपाया न्तर न देख १८५३ ई०में अंग्रेजोंके साथ निजामको एक सन्धि हुई, जिसमें अंग्रेजोंको उनका प्रण चुकाने और फिस्ट्रेट सेनादलके पोषणके लिए निजामसे ५० लाखकी धामदके फे जिले प्राप्त हुए। ये जिले अभीसे (धाराशिव और रायचूर दोआबकी छोड़ कर) "हैद्राबाद पसाइण्ट डिस्ट्रिक्ट" नामसे अंग्रेजोंके अधीन परिचालित हुए हैं। उस सेनादलका मूलान पलचपुरमें तथा आकोला और अमरावतीमें कुछ पदातिक मात्र रहे गये।

उस सन्धिमें यह भी तय हुआ कि, अंग्रेज-गवर्नमेण्ट निजामको सालको साल हिसाब देगी और राजस्वका जो कुछ धनका यह भी निजामको मिलेगा। निजामको अब युद्धके समय अंग्रेजोंके लिए सेना नहीं भेजनी होगी। यह सेनादल भी निजामके सेना विभागके अधीन न रहा, मिक उन्हींके कार्यके लिए अंग्रेजोंके अधीन सेनादलके रूपमें रखा गया।

बादमें १८५३ ई०की सन्धिके अनुसार वार्षिक हिसाब दर्शावल करना अनुविधाजनच मादुम हुआ। उस १८०२ ई०की सन्धिकी शर्तमें '५' सौ हजार शुल्क अदा करने की जो बात थी, उसकी ले कर दोनोस और भी विवाद होने लगा। तब अंग्रेजोंने इस विषयसे युद्धकार पानेके अग्रिमपदसे तथा १८५७ ई०के गद्दके समय निजामके शाराकी गई मद्रापताके उपलक्षमें उन्हे पु

स्कार देनेके लिए १८६० ई०के दिसम्बर मासमें और एक सन्धि की, जिसमें अङ्गरेजोंने निजामसे प्राप्य और भी ५० लाख रुपयेका दावा छोड़ दिया। सूरपुरके विद्रोही राजाका राज्य छीन कर निजामको अर्पण किया तथा घाराशिव और रामचूर दोआब उन्हें लौटा दिया। निजामको अंग्रेजों से सम्पत्ति तो मिली पर उन्हें भी उसके बदले गोदावरी नदीके घामकूलमें अस्थित कई जिले और नदीमें वाणिज्यके लिए जो शुल्क घसूल होता-था, वह छोड़ देना पड़ा।

इस प्रकारसे अङ्गरेजों ने बदलेमें जो निजामसे बरार और अन्याय जिलोंमें सम्पत्ति प्राप्त की थी, उसका आम वनी १२ लाखकी थी। अंग्रेज गवर्मेण्ट उस रुपयेसे १८५३ ई०की सन्धिके अनुसार कार्य करेगा। निजाम सरकारको उसे आयव्ययका हिसाब नहीं देना होगा। उक्त पसाएण्ड डिप्टिकुमें सेनाओंके पेतनके लिये निजाम द्वारा की गई जो जागिरे थीं तथा निजामके अपने व्यय के लिये जो सम्पत्तियां थीं उन्हें अपने शासनाधान करने के अतिप्रायसे अङ्गरेज सरकार अन्य स्थानोंमें सम्पत्ति दे कर उसका बदला कर सकती है।

१८६१ ई०में इस परिवर्तनके सिया १८५३ ई०से बरारका और कुछ राजनैतिक परिवर्तन नहीं हुआ। १८५७ ई०में सिपाही विद्रोहके समय भी यहाँ विप्लवके विशेष लक्षण नहीं दिखाई दिये थे। १८५८ ई०में ताँतिया तोपी अपने दलबल सहित सातपुरा शैल तक आ पहुँचा था सही, परन्तु उसे बरारकी उपर्यकामें कोई प्रदेश हाथ नहीं लगा।

अंग्रेजों शासनमें बरारकी उन्नतिके सिद्धा अवनति नहीं हुई है। जो बरार किसी समय महाराष्ट्र और मुगलोंके अत्याचारोंसे जनशून्य हो गया था, वही बरार अंग्रेजोंके शान्तिमय शासनसे जनपूण हो गया। बङ्गालके भूतपूर्व गवर्नर (छोटे लाट) सर रिचर्ड टेम्प्लेने इस स्थानके राणकीय विवरणमें बरारकी तत्कालीन समृद्धि का वर्णन किया है। अमेरिकाके युद्धके समस्त यहाँका रुईका व्यवसाय बहुत बढा चढा था। यहाँ तक कि उस समय रुपये देने पर भी आदमी नहीं मिलते थे। लोग मुह मागे दाम ले कर काम पर लगते थे। ग्रेट इरिड-

यन पेनिन्सुला और निजामस् स्टेट रेलवे स्थापित होनेके बाद यहाँके वाणिज्यकी यथेष्ट उन्नति हुई है।

शहरमें ४ शहर और ५७१० ग्राम लगते हैं। जनसंख्या २८ लाखके करीब है जिनमें हिन्दुओंकी संख्या लगभग २३। लाख, मुसलमान २ लाखके करीब तथा गोड, कुर्कु आदि असभ्य जातियोंकी संख्या १ लाख ७० हजार होगी। जैन, सिख, पारसा और ईसाई भी हैं, जिनकी संख्या अपेक्षाकृत कम है। अधिकांश लोग कृषिजीवी हैं। यहाँ ज्वार, बाजरा, गेहूँ, चना, धान, तिल, सन, तम्बाकू, ईब, कपास, ममीना, तैलकर बीज, गाजा, अफीम और पोस्त आदिकी पैती होती है। यहाँके अधिवासी शारीरिक परिश्रमसे अनेक वस्तुएँ उत्पन्न करते हैं और उनके विनिमयमें वे अन्य देशकी वस्तुओंकी आमद करते हैं। वे भी किसी चीजकी अच्छी तरह पूरा नहीं कर पाते हैं, और न यहाँ ऐसे बल कारखाने आदि हैं, जिनसे वे अपने काममें आने योग्य वस्तुआदि बना सकें। कितने ही लोग सूतके मोटे कपड़े, गलीचे और चार्जामा बनाते तो हैं, पर उनका आदर नहीं है। देशको कपड़े बुननेका थोडा बहुत कारोबार होता है। कहीं कहीं वस्त्र बुननेका व्यवसाय भी चलता है। बुलदानाके निकटवर्ती देवलघाटमें इस्पातसे अर्थात् बनानेका सामान्य कारोबार होता है। नागपुरसे महीन वस्त्र तथा अन्याय आवश्यकीय चीजें बम्बईसे लाई जाती हैं।

अमरावती, आकोला, आकोट, अन्नगाव, बालापुर, बासिम, देवलगाव, इलिचपुर, हिवारपेट, जलगाव, करिड्वा, ग्रामगाव, कस्सगाव, मलकापुर, परनघाटा, पाधुर, सेन्दुरजना, सेगाव और जेउटमाल नगर बरार प्रदेशको समृद्धिके परिचायक हैं। अमरावती, आकोला, ग्रामगाव, सेगाव और बासिममें म्युनिसिपलिटि है।

भारतके राज प्रतिनिधि लार्ड बर्जन्सके राजनैतिक कौशलसे १९०६ ई०में बरार प्रदेश निजाम-सरकारके अधिकारसे छुट होनेसे पहले, यह प्रदेश एक चोफ कमिश्नरके द्वारा शासित होता था। उनके अधीन १ जूडिसियल कमिश्नर तथा १ राजस्व विभागीय कमिश्नर, ६ डेप्युटी कमिश्नर, १७ असिस्टेण्ट कमिश्नर और

१ इन्स्पेक्टर जनरल आफ पुलिस, जेठ और नैजिष्ट्र शन, ६ डिस्ट्रिक्ट सुपरिण्टेण्डेंट आफ पुलिस, ७ आम्बिण्डेण्ट सुपरिण्टेण्डेंट आफ पुलिस, १ मैजिस्ट्रेट कमिश्नर (ये इन्स्पेक्टर जनरल आफ डिस्पेन्सरी और भविसोसन पर पर भी कार्य करते थे), १ सिविल सर्जन, १ डिरेक्टर आफ पब्लिक इन्स्पेक्शन, १ कंजर्मेटर आफ फारेण्ट और असिस्टेन्ट कंजर्मेटर थे। १८८३ ई०में यहा ६७ मजिस्ट्रेट कार्य करते थे। उन सबको दोवानी और राजस्व यजूनी सम्बन्धी मुकदमोंका विचार करनेका अधिकार था। वर्तमानमें अभी डिप्युटी कमिश्नर दोवानी और फौजदारी मामले पर विचार करते हैं। एक एक तालुक एक एक तहसीलदारके अधीन हैं जिनका काम राजस्व वसूल करना है। येसे तहसीलदारोंकी सभ्या बीस है। डिस्ट्रिक्ट जेल सिविल सर्जनके अधीन है। विद्याशिवामें यह जिला आस पासके जिलोंसे बहुत बडा चडा है। जिलेमें पुत्र मिला कर ४७ अस्पताल हैं।

वैरिभा (हि० खी०) समय, बला।

वैरिज (हि० खी०) किसी जिलेकी कुल जमा।

वैरिया (हि० खी०) समय, काल।

वेत (हि० खी०) १ हिमालयमें होनेवाली एक प्रकारकी लता। इसके रेशोंसे ररिसया और मछली फसानेके जाल बाने हैं। इसे 'मुरकूल' भी कहते हैं। २ पर्वमें मिली हुई सरसो और तीसी। ३ रेरे देगे। ४ उतना अनाज जितना एक वार चषोंमें उाला जाता है, अनाजकी मुट्टी जो चषोंमें डाली जाती है।

वेरोउत (हि० पु०) एक शब्द जो महायत लोग हाथीको किसी कामसे मना करनेके लिये कहते हैं।

वेरजा (हि० पु०) वासना यह टुकड़ा जो नाय गीचनेकी गुांमें आगेकी ओर बधा रहता है और जिसे कंधे पर रग कर मलाह धींचने हुए चलते हैं।

वेरई (हि० खी०) वेरया, रखा।

वेरकी (हि० खी०) एक रोग। इसमें पैरोंकी जीभ पर काले काले छाने हो जाते हैं और उसे बहुत कष्ट देते हैं।

वेरव (फा० पि०) १ जो समय पढ़ने पर ठस (मुद्) फेर ले, बेमुरबत। २ मूघ, नाराज।

वेरगो (फा० खी०) अगसर पढ़ने पर मुद् फेर लेना, बेमुरबत।

वेरूप (हि० पि०) बुरूप, बद्रगह।

वेरोक (फा० पि० वि०) निर्विघ्न, वेरवटके।

वे रोऊको (फा० पि०) विधिपूर्वक, बिना अहचनके।

वेरोजगार (फा० पि०) जिसके हाथमें कोई रोजगार न हो, जिम्मे पास करनेको कोई काम घधा न हो।

वेरोजगारी (फा० खी०) वेरोपगार होनेका भाव।

वेरीनक (फा० पि०) जिस पर रीनक न हो, उग्रम।

वेरीनकी (फा० खी०) वेरीनक होनेका भाव।

वेरीं (हि० पु०) मिले हुए जी और चनेका आटा। २ कोईका फल।

वेरींरार (हि० पु०) धरनकी उगाही।

वेरद (फा० पि०) १ उचा। २ जो बुनी तरह पराम्म या रिफल मनोरथ हुआ हो।

वेल (हि० पु०) १ मन्त्रोत्त आकारका एक प्रसिद्ध वंशोला घुस। विशेष विरह विन शब्दमें लगे। (खी०) २ यन स्वपति शारदके अनुसार ये छोटे क्रोमल पींधे जिनमें काय या मोटे तने नहीं होते और जो अपने बल पर ऊपरकी ओर उठ कर नहीं बढ सकते। बली देगे। ३ सन्तान, घरा। ४ नाथ खेनेका डीठ, बहो। ५ कपड़े या दोबार आदि पर एक पतिलें दूर तक बनी हुई फूल पत्तियाँ आदि जो देखनेमें बेलके समान जान पड़ती हैं। ६ विवाह आदिमें कुछ विशिष्ट नयमरों पर न यधियों और विरादरीजालोंकी ओरसे हजामों, गानेपालियाँ और इमी प्रकारके और नेगियोंको मिलनेवाला घोडा घोडा घन।

७ रैनमी या मयमलो फाते आदि पर जरदोनी आदिसे बनी हुई इसी प्रकारकी फूट पत्तियाँ जो प्रायः पतननेके कपड़ों पर टाकी जाती हैं। ८ घोबोना एक रोग। इन्में उनका पैर नोचने ऊपर तक मून जाता है, गुमनाम।

वेल (फा० पु०) १ एक प्रकारकी दुदाली। इससे मन दूर जमीन छोड़ते हैं। २ एक प्रकारका लंबा पुरया। ३ नवदू आदि बतानेके लिये चूनी आदिसे जमीन पर डाली हुई लकीर जो केवल निरूपे रूपमें भयना सीमा निर्धारण करनेके लिये होती है।

वेल् (फा० पु०) कपड़े या कागज आदिकी दह बर्षी

गडरी जो एक स्थानसे दूसरे स्थान पर भेजनेके लिये बाई जाती है, गाड ।

वेलक ( हि० पु० ) फरसा, फागडा ।

वेलकी हि० पु० ) चरवाहा ।

वेलखनी ( हि० पु० ) पूर्वी हिमाचलमें मिलनेवाला एक प्रकारका बहुत ऊँचा वृक्ष । यह चार सौ फुटकी ऊँचाई तक होता है । इसके शीरकी चूड़ो लाल और बहुत मजबूत होती है । इसमें चापके स डूँ, इमारती और आरायगी सामान तैयार किये जाते हैं । वृक्षकी फाटनेके बाद इसकी जड़े जल्दा फूट जाता है ।

वेल्गामरा ( हि० खो० ) एक प्रकारकी मजली ।

वेलगाम (वेल्गाम)—बम्बई प्रेसिडेन्सीके दक्षिण विभाग का एक जिला । यह अक्षा० १० २२' से १६ ५८' उ० तथा देशा० ७३ २०' से ७५ २५' पू०के मध्य अरु स्थित है । भूपरिमाण ४६४६ वर्ग-माइल है । इसकी उत्तर सीमामें मिरज और जाट राज्य, उत्तर पूर्वमें कान्हादगी जिला, पूर्वमें जामखण्डी और मुगोल राज्य, पश्चिम और दक्षिण पूर्वमें धारवाड, उत्तर कणाडा और कोट्टापुर राज्य, दक्षिण पश्चिममें जोआ राज्य तथा पश्चिममें मावतवाडी और कोट्टापुर राज्य हैं । उत्तर पूर्वसे पश्चिम पश्चिमकोणमें यह १०० माइल विस्तृत है और प्रस्थमें १ से ८० माइल तक है ।

यह जिला मद्रेशीयमानासे विभूषित हो कर स्थान स्थान पर उन्नतका, अतिवृष्टि और अत्युच्च शृङ्गायलो-से परिजोमित है । एक तरफ जैनी समतल प्रातर पर नदियोंकी अर्पूँ जातिमयी शोभा है, दूसरी तरफ वैसा ही अत्युन्नत पर्वतकी शिखरों पर दुर्मेध निर्गि दुग्ग का घोर घोर दृश्य है । यद्देशीयश्रेणी पश्चिमघाट या स्यात्रिशैली अल्पतम शाखा है । इस जिलेका पश्चिम और दक्षिणागम पार्वत्य प्रदेश अपेक्षागत उन्नत है और यह पूर्वकी तरफ क्रमशः नीचा होता हुआ कलादग जिला तक गया है । दक्षिणमें महाप्रिपर्वतकी सजिवर शाखा प्रशाखाप इतस्तत विस्तृत होने पर भी बीच बीचमें निचिड पनमाला और जनहीन समतल भूमि देखी जाती है । इस दक्षिण भागमें बड़ी बड़ी नदियोंके किनारे आम, जामुन, कटहर, इमली आदि वृक्ष फल

भारसे वजनत हो उस निजनतामें भी स्थानीय साला की वृद्धि कर रहे हैं । वेलगामका उत्तर और पूर्व अण प्रस्थपूर्व श्यामल प्रा तरमय है और उसके बीच बीचमें छोटी किसनौकी वनित्या हैं ।

इसके उत्तरमें टूण्णा, मध्य भागमें घाटप्रभा और दक्षिणमें मानप्रभानदी सहायि पर्यंतसे निकल कर पूर्वकी ओर धीरमन्थर गतिसे बहती हुई चट्टीपसागर्गमें जा मिली है । इन नदियोंके पश्चिमोक्त जग मीठा है, किन्तु पूर्वां जग जल समुद्रोत्तमें मिल जानेसे कुछ परा हो गया है ।

इस पार्वतीय प्रदेशमें जाट जगह लोहा, अभ्र, लालपत्थर, दानादार और स्फटिकप्रभतर धादि पाये जाते हैं । जङ्गलोंमें साल, सफेद साल, हजो, हर्, और कटहर आदि पेट तथा जानवरोंमें नागा प्रकारके हरिण, जगनी भूकर, बाघ, चीता और तरह तरहके पक्षी देखीं जाते हैं ।

यहाका इतिहास महाराष्ट्र इतिहाससे सम्बन्ध रखता है इसलिए स्वतन्त्र रूपसे पृथक् कुछ नहीं लिखा गया । १८०६ ई०में पूतकी सन्धिके अनुसार वेल्गामो अंग्रेजोंके धारवाड विभागके भाग बट जिला भां दिया ग । तभी से यह धारवाड जिलेमें शामिल सम्भवा जाता था और अंग्रेजों द्वारा इसका शासन होता ग । पीछे जामन कार्यकी सुविधाके लिए १८३६ ई०में यह विभागके पश्चिम भागमें धारवाड और उत्तरभागमें वेल्गाम नामसे दो स्वतन्त्र जिले कर दिये गये । १८४४ ई०में वेल्गाम तथा १८८१ ई०में यहा दूसरा धार वन्धावन्त हुआ था । इस जिलेमें वेल्गाम और उससे गगलुवा सेना विभास ( जयनी ), गोकर्न जयवा, रीयान्त, सन्धले और यमरुणमडों प्रधान नगर हैं । यहाक अधिवासी माघारणत शिद्धान्त शैल हैं । इसके सिवा अन्यान्य धर्मावर्तियों भी हैं । कीमारी नामक वस्तुजाति यहा प्रसिद्ध है ।

यह जिला अथवा, वेल्गाम, बोरी, चिन्नेडी, गोकर्न, पारसगड और सम्भगार नामक बड़े उपविभागोंमें विभक्त है । पारसगड उर्षावर्णने पद्यत पर यहा देवीका प्रसिद्ध तीर्थ है । यहा पर प्रति वर्ष



चित्र मानमें, ज्योके उद्देश्ये प्रजा होती भीग तोप लिन नर  
मेगा लगता है। उम समय यहा करीब ४० हजार तीर्थ  
यात्रियोंका समागम होता है। कात्तिरमें मूत्र मन्दिरेमें  
कुण्ड दूरी पर पर छोटेमें पीठमें जा कर मारण कियाबोधन  
पूजादि होती है। इसके बाद आई हुद मिया यहमा  
द्विवाके पनि विद्योग अनित दु गमें समवेदना प्रष्ट करनेके  
लिए रोनेके स्वरमें भीषण चीन्कार करती है। बीस तीस  
हजार विद्योहा एक साथ मिल कर चीत्कार करता कैम  
भीषण होता होगा, इसका मलज ही अनुमान किया जा  
सकता है। फिर ये मिया देवोके वैधत्यकी समवेदनामें  
भयने हाथोंकी चूड़िया और कण्ठे आदि गहने तोड़ या  
गोल डालती है।

२ बम्बई प्रेसिडेन्सोके बेनगाव जिलेका एक उपनि-  
भाग। यह अक्षा० १५ ४१' से १६ ३' ३० तथा देशा०  
७४ २' से ७४ ४३' पूर्वके मध्य अक्षांशमें है। इसका  
भूपरिमाण ६४४ वर्ग माइल है। इसमें बेनगाव नामक  
१ शहर और २०१ ग्राम लगने हैं। जनसंख्या डेढ़ लाखके  
करीब है।

इस उपविभागमें निम्नलिखित गिरिदुर्ग विभाग  
है— १ बेनगावदुर्ग। २ महोपतगढदुर्ग—यह बेनगाव  
से ६ माइल पश्चिमोत्तरमें सुन्दी नामक स्थानमें अव-  
स्थित है। ३ कन्नानिधिगढ—जो बेनगावसे १० माइल  
पश्चिममें कलियडे नामक स्थानमें है। ४ गन्धर्गद  
बेनगावसे १६ माइल पश्चिमोत्तरमें कोराज नामक स्थान  
में अवस्थित। ५ पारगढ—यह बेनगावसे ३० माइल  
पश्चिम दक्षिणमें पारगढ पहाडके शिखर पर। ७  
चादगढ—जो बेनगावसे २० माइल पश्चिममें अवस्थित  
है। यहा सेलनाथका मन्दिर है।

३ उक्त जिलेका प्रधान नगर। यह समुद्रपृष्ठमें  
२५०० फुटकी ऊँचाई पर बहरीवाग नामक भागका  
नदीके एक जालाश्रितके ऊपर स्थापित है। माइलको  
और माइलमाने परस्पर सम्मिलित हो कर कृष्णानदीके  
पत्तयेरको पुष्ट किया है। यह शहर अक्षा० १५ १'  
३० तथा देशा० ७४ ३१' पूर्वके मध्य अक्षांशमें है।  
जनसंख्या ३५ हजारमें ऊपर है। इसके पूर्वमें दुर्ग तथा  
पश्चिममें सेनानिकाव है। जाति अन्तर्गत है। यहा

वासकी वैराज्य बहुत है। इस लिय कनाडो नायाव  
इसका नाम बेनगाव था, और उन्नीने येणु येणु या  
बेनगाव हो गया है। यहाका गिरिदुर्ग छोटा होने पर  
भी सुरक्षित है। आयतन लम्बाईमें १००० गज और चौड़ाई  
में ७०० गज है। १८१४ ईमें प्रेजाके अध पता पर  
अङ्ग्रेजो सेनाने दुर्ग पर अधिकार कर लिया। २१ दिन  
असुरोथके बाद दुर्गमध्य मैगिरेने अंग्रेजोंके हाथ आत्म-  
समर्पण किया था।

किम्बदन्तो है, कि १५१६ ईमें यह दुर्ग बना था। इसके  
भीतर आमद खाकी दरगाह या मस्जिद मकबरा और दो  
जैन मन्दिर हैं, जो क्रमज १२वीं और १३वीं सदीमें बने  
हैं। दुर्गादके प्रवेशद्वारमें १५३० ईका एक शिलालेख है।

अंग्रेजोंके अधिकारमें आनेके बादने बेनगाव नगर  
को नागा चिपवोंमें आरूढिष्ट है। वाणिज्यके प्रभाव  
से नगर धन और जनसे परिपूर्ण है। सेनास्थान  
स्थापित होनेके साथ ही यहा द्वितीय बालकोंके शिक्षाथ  
स्कूल आत्तिको व्यवस्था हो गई है। विद्युत्का बन्दर  
यहाका प्रधान वाणिज्य केन्द्र है। उन्नी स्थानसे यहाँ  
की यात्र परतु रवाना होता है और वाहरसे आती है।  
यह सूती कपडे सुनीका व्यवसाय होता है। शहरमें  
कुल मिया कर ३०० करके, ६ म्गुनिसाल प्राइमटे  
स्कूल और २ हाई स्कूल हैं। अलावा इसके यूरोपिय  
और यूरेजियन लडकोंके लिये भी दो स्कूल हैं।

बेनगिरी ( हि० ग्री० ) बेनके कन्या युवा।  
बेननरु ( हि० पु० ) बेनका मेवा।  
बेलचा ( फा० पु० ) ? पर प्रकाश छोटी बुझल। इस  
से मालो लोग यागकी पर्याया आदि बनाते हैं।  
कोई छोटी बुझल। ३ पर प्रकाशका यहा मुरपी।  
व दत्तियम—यहोपतगढके अतीत एक छोटा राज्य।

बेनजत ( फा० ग्री० ) ? स्याद गद्दि, निममें निमा  
प्रक रका स्याद न हो। २ निममें कोई सुप गति।  
बेनडो ( हि० ग्री० ) छोटी बेन का लता।  
बेनद्वार—विहार और पश्चिम-बङ्गालमें बहोमाने एक  
निम्नप्रेषीका जाति। ये लोग बेन ( बुझलीका दरदका  
गण भीजा ) से निम्न आति मोदत हैं, इसलिए इसका  
नाम बेनद्वार पडा है। मर्गेश्वर और शिवरकी

अन्वय 'निम' ग्री०।

कोयलेना खानमें ये काम करते हैं । पश्चिम बङ्गालमें ये वाउडो वा फोडा जातिके समान समझे जाते हैं ।

इस जातिको उपस्थिति कोई इतिहास नहीं मिलता । हिन्दू और मुनिया लोगों के साथ इसका बहुत कुछ साम्य है । आर्योपाङ्गके गठनको देखनेमें यह जाति ट्रायिडोय प्रोब्रन और आदिम जातिकी शाखा मान्य पड़ती है । किसी किसीका मत है कि, जङ्गलोंमें निजरा करनेवाली प्रिन् जाति ही आदि है उसीसे वेल्दार और मुल्या जातिकी उत्पत्ति है । पीछे ये बहुत ही तेज अल्पसंख्यक पूर्णतः कुछ अश्लील रूप में ली गये हैं ।

मुल्या और हिन्दू देता ।

विहारगामा वेल्दारोंमें वीहान और कथोमिया या कथाया नामका दो वज्र वा धार तथा काश्यप गोत्र प्रचलित हैं । इनमें बाल-विवाह प्रचलित है । परन्तु बहुत जगह प्रौढ विवाह भी देखनेमें आता है । 'ममेरा' और 'चचेरा' प्रथाके अनुसार वे विवाह करते हैं । विवाह के नियम अल्प निम्न श्रेणीकी जातियोंके सदृश ही हैं । पहली स्त्रीके बध्या होने पर पुरुष दूसरा विवाह कर सकता है । मगईके अनुसार विवाहात्त विवाह भी होता है । पत्नीके विचारसे विवाह रद्द करना है और फिर वह स्त्री अपना दूसरा विवाह कर सकती है ।

मैथिल ब्राह्मण इत्यादि पीरोहित्य करते हैं । श्राद्ध और अत्येष्टियादि धर्म धर्म निम्न श्रेणीके हिन्दुओंकी भांति होते हैं । माघ मासमें तिलसत्रान्तिमें गोडारी पूजा करते हैं । इनमें बहुत से तो गैनोंकारी करते हैं, और कुछ मजदूरी के कर दसमेंका काम करते हैं । पूज बङ्गालमें हिन्दुओंके अगवा मुसलमान वेल्दार भी हैं । वे साधारणतः गायका कूडा करके ले कर गाहक के रूप में हैं, तथा मरे हुए पशुओंको हों कर यथास्थान पहुचाने और जङ्गल काटने हैं तथा हिन्दू और मुसलमानोंके विवाहमें मणालन्तोका काम करते हैं । यही उनको आजोविका है ।

उत्तर पश्चिम भारत और दक्षिणात्यमें भी वेल्दार पाये जाते हैं । इनके कोई निर्दिष्ट वामस्थान या श्रद्धादि नहीं होते, साधारणतः वे तम्बुओंमें ही रहते हैं । जब जहा इन्हे काम मिलता है, तब उ्हारे लिए वे च

दते हैं । नहीं कही ये पत्थर भी काटने हैं तथा कुआ और तालाब खोदनेका भी काम करते हैं । पूनाके बेल दार हिन्दू और मराठी भाषा बोलते हैं । इनकी पगडी लगभग १'० हाथ लम्बे कपडेकी बंधी होती है । ये मडो आड या शीतला माताकी पूजा करते तथा उन्हें मृत्युकी अधिष्ठात्री समझते हैं । इसके सिवा माता, बाद, दधी, भवानो आदि विभिन्न शक्ति मूर्तियोंकी उपासना भी करते हैं । देवी पूजामें बकरा चढ़ाते हैं ।

यद्यपि कमा लेनेके बाद वे विवाह करते हैं । मरे गालकोंको मिट्टीमें गाड देते और तीसरे दिन उस पर पानी और चावल द्वारा पिण्ड देते हैं ।

हिन्दू राजाओंके यहा भी बेलदार सेना रहा करता थी । राजा सौतारामकी बेलदार सेना मिट्टी काटती थी और आवश्यक होने पर युद्धमें भी काम आती थी । उस समय यह सेना निम्न श्रेणीके हिन्दू और जगलियोंमें से सङ्गृहीत होती थी ।

उत्तर पश्चिमके बेलदारोंमें वेल्दार, चीहान और खरोतप्रग प्रचलित हैं । पहलेकी दो शाखाय राजपूत जातिके अनुकरणसे गृहीत हैं । पर नामक तृणविशेष द्वारा चटाइ बनानेके कारण तीसरी शाखाका नाम खरोत पडा है । इसके अलावा बरेलीमें माहुल और ओरा, गोरखपुरमें देगी, पारोबिन्द और सरवरिया, बस्ती जिलेमें ग्यारबिन्द और मासबावा आदि थोक देगे जाते हैं । वर्तमानमें समस्त हिन्दुओंके महवाममें रह कर वे बछगोता, बछल, बहेलिया, बिन्दवार, चीहान, वीक्षित, गहगवाड, गौड, गौतम, घोषी, कुग्गी, लुनिया, ओरा, राजपूत, उखुर आदि वजगत नामसे तथा अगव्याला, अग्रपणी, अयोध्याजाम्नी, भद्रारिया, गिहोवाल गङ्गापानी गोगन्दपुर, गौजिया, कजोवाल, सरवरिया (सरयूतीर यामी) और उन्तराह आदि स्थानोंके अनुकरणसे विभक्त होनेकी कोशिशमें लगे हुए हैं । इस जातिकी प्रग भाग्यवान् कुछ भी नहीं है । हा, परिचय देते समय पहने हैं, कि पहले वे राजपूत थे, किसी राजा द्वारा उत्पत्तक महाहके नाममें नियुक्त किये जानेके कारण समाज में वे इस प्रकार नियुक्तीत हुए हैं । इनमें मगईके अनुसार विवाहाका विवाह होता है । पतिक

महं त्या उपवास रम स्वतो ही । ये पाच्युपोगंरा वृत्ता  
करते हैं । निरगालिषो महादेवको वृत्ता और उपवास  
या करते हैं ।

उत्तियाहं देवनाग निर्णं तालार गोठेका काम  
करते हैं । नमो एक जमादार गता है जिसके अधीन कई  
नायक रहते हैं । ता-टा पायसीये अधीन बहुतसे ये  
दाग दा-पाय कर काम करते हैं । इ-य रहतेका वृत्ता  
विश्वित टिकाया गयी है । जो जहा काम पड़ता है,  
उमा निरैम जा कर काम जाता है ।

वेङ्गदाग ( फा० पु० ) उह मजदूर जो फावड़ा चलाने या  
जमान ग उनेका काम करता है ।

वेङ्गदाग ( फा० ग्रा० ) वेङ्गदागका काम, पायड़ा चलाने  
का काम ।

वेल्ग ( हि० पु० ) १ लकड़ी, पत्थर या लोहे आदिवा  
पना हुआ गोल भारी, और ठण्डके आकारका गण्ड । यह  
अपने अक्ष पर घूमाया है और इसे लुटका कर किसी  
चौकरी पीसने, बिना स्थानको समतल करते अथवा  
पक्क पत्थर आदि कुट कर सड़के बनते हैं, रोल्ड ।  
२ बोटका जाड । ३ बरघेमेका पीसमार । ४ किसी यन्त्र  
आदिमें लगा हुआ राखके आकारका कोइ बड़ा पुरजा  
जो घुमा कर दगो आदि काममा जाता है । ५ कोइ  
गोल और लम्बा लुटकनेवाला पदार्थ । ६ रुइ धुनकनेको  
मुठिया या हत्था । ७ गंगा देवा । ८ एक प्रकारका  
जट्टा धान । ९ एकमें मिश्र हट्टे ये घे ताजे चितकी  
नहायामासे टुषो हट्टे प्राय पात्रोमस निराला जाता है

वेल्गार ( हि० वि० ) वेल्गाराका, जिसमें वेल्ग लगाया है ।

वेल्गा ( हि० पु० ) सड़का गया हुआ एक प्रकारका लवा  
दस्ता । यह बोजम मोटा और दोनो ओर कुड पतला  
हाता है । यह प्राय रोटा, पूर, कर्नाटी आदिवा लोइका  
सकते पर रम कर वेल्गाके बान जाता है । यह कमा  
कमा पालन आदिवा नाकता है ।

वेल्गा ( हि० वि० ) १ रोटा घुम, कर्नाटी आदिको लकड़े  
पर रम कर वेल्गाको मलावामे लया । टुए बड़ा कर  
बड़ा और पतला करता । २ सापट करवा, ३ करवा ।  
३ किसीके विदे पामाके रोट उठाना ।

वेल्गका ( हि० पु० ) लकड़ा ।

वेल्पा ( हि० पु० ) वेल्के कृषकी पत्तिया जो हर एक  
सो कमें तीन तीन होती हैं और जो निपजा पर चढ़ा  
जाती हैं । निर कृषके ।

वेल्पाता ( हि० पु० ) वेल्पा लवा ।

वेल्वागुरा ( हि० पु० ) दिरोंको पत्रकेका जाण ।

वेल्वट्टेदार ( हि० वि० ) जिसमें वेल्वट्टे बनी हैं, वेल् वृत्ती  
घाटा ।

वेल्दरा ( हि० पु० ) एक प्रकारको लघोतरी पिठारा जिसमें  
लगे टुए पान रचे जाते हैं । यह बांस या धातुओं आदि  
की बनी होती है ।

वेल्हनी ( हि० पु० ) सानो पाण ।

वेल्हाजा ( हि० ग्रा० ) लकड़ीका यह टुप्पा जिसस धोती  
आदिके किनारो पर लहरियेदार वेल् छापी जाती है ।

वेल्हाजिया ( हि० पु० ) बन्हापी देवा ।

वेल्हा ( हि० पु० ) १ समेती आदिकी जातिका एक प्रकार  
का छोटा पौधा । २ समेती जेपेद ३ गेके सुगन्धित फूल  
लगते हैं । इन्हें फूलके तीन भेद हैं—मातिया, मे गरा  
और मदागा । पहला मोतीके समान गोल होता है,  
दूसरा उसका बड़ा और प्राय सुपासीके बराबर होता है,  
और तीसरेकी कली प्राय इत्र भर ७पी होती है । २ एक  
प्रकारका गहना जो वेल्के फूलके आकारका होता है ।  
३ त्रिपुरा, मत्तिका । ४ लहर । ५ बटोरा । ६ चामड़ेकी  
धना हट्टे पर प्रकारको छोटा कुन्डिया । इसमें एक  
७पी लफडा लगा रहता है जिसमें नेल नापा या दूसरे  
वस्तुमें भरा जाता है । ७ समुद्रका किनारा । ८ समय ।

वेल्गा ( हि० वि० ) १ माक, गरा । २ जिसमें किसी  
प्रकारको लवाट या सयध म हो ।

वेल्गाडा ( म० पु० ) मकोपका सक्त । यह प्रायः भग  
नेवा औरपामे गाने या पीडन स्थान पर लगायेके काम  
में जाता है ।

वेल्गाव ( हि० पु० ) निपाक लवा ।

वेल्गि ( हि० ग्रा० ) एक लगे ।

वेल्गिया ( हि० ग्रा० ) छोटी कटोरी ।

वेल्गीन ( हि० वि० ) १ सभा, गरा । २ समुद्रकयल ।

वेल्गि- मन्दावका एक जिला । गारा देवा ।

वेल्ग ( वेल्ग या वाणपट्टु ) --मन्दावप्रदेशका अन्तर्गत

उत्तर आर्कट जिलेके बेन्गर तालुकके अधीन एउ प्रसिद्ध शहर। यह अक्षा० १२ ५८४ १३ १० उ० तथा देशा० ७५ ४४' से ७६ ७ पू०म, पाण्डु नदीके किनारे मन्द्राजसे ८० मील तथा जायपुरा १५ मील पश्चिममें अवस्थित है। यहां संगानिगाम, सब कलेक्टरकी पहली अर्थात् संगानिगाम गीय कार्यालय, जेल, ११, अस्पताल, डाकघर, तार घर और गवर्नमेंटके संगानिगाम गीय कार्यालय तथा म्युनिसिपालिटी और जमान रेवेन्यू एउ स्टेशन है। इस कारण यह शहर बहुत ही प्रभावशाली है। जनसंख्या लगभग ५० हजार है। यहांका दुर्ग बहुत ही प्राचीन है। प्रवाद है, कि भद्रनाथ नामी किसी व्यक्तिने १०७३ से १२८२के भीतर उक्त दुर्ग निर्माण कर त्रिचय नगर के राजवशकी अर्पण करा था। यहांको १७३१ प्रजापति के मध्य भागमें बोचापुर से सुलताना उक्त दुर्ग पर आक्रमण किया था। १७७६ में महाराष्ट्र नायक तुकानाराजे ४॥ माम तक अजरोह करनेके बाद वेल्लूर अधिकार किया था। १७०८ ई०म अहमद शाह दुर्रानी आ कर महा राजाकी भगा दिया। उस समय कर्णाटकके अन्तर वेल्लूर दुर्ग ही सर्वाधिक दुर्गमें समझा जाता था। पाठे अस्त अलीने अपने जमादनी यह दुर्ग दे दिया। उनके पुत्र मुसलमान अतीने १७४१ ई०में यहां सबदर अलंका हत्या की। मुसलमान अली अपने अधिनायक आर्सेटके नवाबके आदेशको अमान्य कर स्वधान भागसे यहांका राज्य करते रहे। उस समय ०० प्रेजिडेंटके आशुका मन्त्र थे। वे १७५६ ई०में गुजरात पर शासन करनेके लिये वेल्लूर आये, पर अटक तथा वापस लौटनेके लिये उन्हें वाप्य होना पडा। १७६० ई०म अंग्रजों। पुन वेल्लूर दुर्ग पर चढ़ाई की, इस बार भी उन्हें लाड जाना पडा। कुछ भी हो, फरवरी बाद अंग्रजोंने वेल्लूर अधिकार कर लिया। १७६१ ई०में हैदराबादी वेल्लूर दुर्ग अजरोह करनेका आयात करवा। अन्तमें १७८० ई०में बहुतसङ्घिक सेव्य सामान्य ले कर वे उक्त दुर्गको धेर बेडे। लगभग दो दश तक यहां कायम रहा था, जिससे दुर्ग मध्य अंग्रजोंके नामो दम ना चुकी थी। यहां तक, कि अंग्रजोंके संग आरम्भ मर्मर्पण करनेका तयारा

कर चुकी था, परन्तु अन्तमें हैदराबादीकी मृत्यु हो गई धार मन्दाजसे अंग्रजोंकी भी आ धमकी, इससे उस धार अंग्रजोंको रक्षा हा गद। १६६१ ई०में लार्ड कार्न वालिसने इस दुर्गको केन्द्र बना कर रङ्गपुरका युद्ध उठा। १७६६ ई०में श्रीरङ्गपत्तनके पत्तनके बाद राष्ट्र सुलतानके परिवारके लोग इसी वेल्लूर दुर्गमें आरुद्ध थे। १८०६ ई०में यहां जो सिपाही विद्रोह हुआ था, उसमें टीपू सुलतानके परिवारका हाथ था, ऐसा बहुतोंका विश्वास है। इस विद्रोहमें समस्त अंग्रज राजपुरुषों और यूरोपीयों विद्रोहियोंके हाथ प्राण निरसन विधे थे। अन्तर्जिलेसपीनो चेष्टा से शीघ्र हा विद्रोही लोग शांत हुए और टीपूका परि वारण कलकत्तेकी स्थानान्तरित किये गये।

उक्त दुर्गके मिया यहां एक बहुत हा उमदा विष्णु मन्दिर है। इस मन्दिरका कार्यार्थ और शिष्यनेपुष्य देव कर विमुक्त हाना पडता है। मन्दिरके अलङ्कमें अश्वारोही मूर्तिमें जेसा भास्वय देखा जाता है, उसकी तुलना अन्यत्र देखनेमें नहीं आती। इस मन्दिरके मिया यहांके बाद साहयकी ममतिद भी देखनेकी बात है।

यह शहर गरम होने पर भी स्थिर रहता है। यहां सुगन्धि पुष्पोंकी वृषि यथेष्ट होती है। यहां प्रति दिन फूगकी सैङ्गडों शीघ्रिया रेलके जरिये मन्दाजकी गान होती है।

- वेङ्क ( फा० वि० ) मूर्त्त, मासमक।
- वेङ्क ( फा० र्वा० ) मूर्त्तता नाममकी।
- वेङ्क ( फा० वि० वि० ) अनुपयुक्त समय पर, कुसमयमें।
- वेङ्क ( फा० वि० ) १ रिया उर द्वारका, जिसके रहन आदिका कोई डिफाना न हो। ० परदमी।
- वेङ्क ( फा० वि० ) १ जा मिवता आदिना निर्वाह न करे। २ दुर्ग, वेङ्कगत। ३ र्वाका, किये हुए उप कारकी १ मानेगाल।
- वेङ्क ( हि० पु० ) एउ प्रकारकी घास। इनकी रहती खाट बुननेके काममें आती है।
- वेङ्क ( हि० र्वा० ) चालाना, चालवाची।
- वेङ्क ( हि० वि० ) तकमोत्तर विवरण सहित।
- वेङ्क ( हि० र्वा० ) अन्वय।

वेदवार ( हि० पु० ) व्यवहार देना ।  
 वेदा ( फा० स्त्री० ) विधवा, गंड ।  
 वेदाई ( हि० स्त्री० ) विवाह देना ।  
 वेदा ( हि० पु० ) वन देना ।  
 वेदाकर ( फा० वि० ) नाममन्त्र, फ्राड, मृग ।  
 वेदाकर ( फा० स्त्री० ) मूर्धता, नाममन्त्री ।  
 वेदाक ( फा० वि० वि० ) निस्त देह, जकर ।  
 वेदाकीमत ( फा० वि० ) बहुमूल्य, मृग-पान ।  
 वेदाकीमती ( फा० वि० ) बर्धमान देना ।  
 वेदागम ( फा० वि० ) निर्लज्ज, वेदया ।  
 वेदागमी ( फा० स्त्री० ) निर्लज्जता, वेदयाई ।  
 वेदाी ( फा० स्त्री० ) अधिक्ता, ज्यादाती । ० लग्न,  
 मुताफा । ३ साधारणमें अधिक कार्य करनीकी मन्त्र  
 दुनी ।  
 वेदुमार ( फा० वि० ) अगणित, नमस्तय ।  
 वेदम ( हि० पु० ) गृह, घर ।  
 वेदम ( हि० पु० ) चनेका भाटा, रहन ।  
 वेदनी ( हि० वि० ) १ वेदनका बना हुआ । ( स्त्री० ) ०  
 वेदनकी वशी हुई पूरी । ३ यह कर्चारी जिसमें वेदन  
 भरा हो ।  
 वेदबध ( फा० वि० वि० ) अकारण, विना किसी मन्त्र  
 या कारणके ।  
 वेदवरा ( फा० वि० ) जो म तोय न रख सके, अधीर ।  
 वेदवरी ( फा० स्त्री० ) अपीर्य, असन्तोष ।  
 वेदमन्त्र ( फा० वि० ) मूर्ध, नाममन्त्र ।  
 वेदमन्त्री ( हि० स्त्री० ) मूर्धता, नाममन्त्री ।  
 वेदरा ( फा० वि० ) आश्रयदान, जिसे उदरकी काई  
 स्थान न हो ।  
 वेदसोसामाग ( फा० वि० ) जिसके पास कुछ भी सामान  
 न हो, दरिद्र ।  
 वेदया ( हि० स्त्री० ) वेदया, रणधी ।  
 वेदयार ( हि० पु० ) यह सहाया हुआ मसाला जिसमें  
 जराब घुमाए जाती है ।  
 वेदाहना ( हि० वि० ) १ बरादान, मोल देना । २ जान  
 बूझ कर अपने पीछे लगाना ।  
 वेदाहा ( हि० पु० ) गामना, मीरा ।

वेमिन —वर्ग देना ।  
 वेमिन्मिन्ने ( हि० वि० ) अविशेष रूपमें, बिना किसी  
 वम आदिके ।  
 वेमा ( फा० वि० वि० ) अधिार, ज्यादा ।  
 वेमुध ( हि० वि० ) अर्थ, वेहोज । २ वेगवर, बद्  
 हजाम ।  
 वेमुधी ( हि० स्त्री० ) अमानता बेशबरी ।  
 वेमुद्र ( हि० वि० ) मग । १ आधिको दृष्टिमें जिसका स्वर  
 शोक न हो, वेमेल्य मर ला ।  
 वेमुद्रा ( हि० वि० ) १ जो अपने डिकाने या मीके पर न  
 हो, वेमीरा । २ जो रियमित रूपमें न हो ।  
 वेस्वा ( हि० वि० ) १ आदरहित, जिसमें कोई भन्ना  
 ज्यादा न हो । २ विना ज्यादा मगव ही, बद्  
 जायका ।  
 वेदगम ( हि० वि० ) १ जो देवोंमें भद्रा हो, वेदगा ।  
 वेदय, विरुट ।  
 वेदगमपन ( हि० पु० ) १ बद्, पा, वेद गायन । २ विवदता,  
 भयकरता ।  
 वेदसना ( हि० वि० ) टग कर हँसना, जोरसे हसना ।  
 वेदड ( हि० वि० ) पाए देना ।  
 वेदतर ( फा० वि० ) अपे मग्न अन्धा, जिन्में बट कर ।  
 वेदतर ( फा० अर्थ० ) प्राथेता या आदेशके उत्तरमें म्याहति  
 मूल्यक शब्द ।  
 वेदतरी ( फा० स्त्री० ) ३ अज्ञापन, अज्ञा ।  
 वेदद ( फा० वि० ) १ जिसकी कोई सीमा न हो, असीम,  
 अगार । २ बहुत अधिार ।  
 वेदा ( हि० पु० ) १ अन्त आत्मिका बीम जा वेदमें  
 बोझ जाता है बीमा । वि० ) ० पाला, अर्थ ।  
 वेदया ( हि० पु० ) १ जो किसीका एक जानि जा प्राय  
 पुनीरा काम करता है । २ ऊर पुननेवाला, पुनिया ।  
 वेदया ( फा० वि० ) जिसे हया या लज्जा भादि विरुद्ध  
 न हो, निरुद्ध ।  
 वेदयाद ( फा० स्त्री० ) वेदार्थ, निरुद्धता ।  
 वेदर ( हि० वि० ) १ अविार, अधार । २ पृथक् अन्त ।  
 ( पु० ) ३ घायी, पावना ।

बेहरना ( हि० क्रि० ) किसी चीजका फटना या तड़क जाना, बग़र पड़ना ।

बेहरा ( हि० पु० ) १ एक प्रकारकी घाम जिससे चीपाए बहुत पसन्द करते हैं । २ मूजागो धनी हुई गोलघा चिपटी पिटाती । इनमें नारुमें पहन की नथ रखी जाती है । ( वि० ) ३ पृथक्, खुदा ।

बेहरी ( हि० स्त्री० ) १ जिंसा । शेष कार्यके लिये बहुतमे लोगोंसे चढ़के रूपमें माग प एकल दिया हुआ धन । २ इस प्रकार चढ़ा उगाएकी जिया । ३ वह जिस्त जो असामी शिमोवारको दता ।

बेहला ( हि० पु० ) सारंगीके आकारका एक प्रकारका अङ्गुरजो बाना ।

बेहाल ( फा० वि० ) व्याकुल, बेचैनी ।

बेहाली ( फा० स्त्री० ) बेहाल होनेका भाव, बेचैनी ।

बेहिसार ( फा० क्रि० वि० ) बहुत अधिक, बहुत ज्यादा ।

बेहुनग ( हि० वि० ) १ जिससे फट्टनर न आता हो, मूर्ख ।

२ वह भाव या उदर जो न जा करना न जानता हो ।

बेहुरमत ( फा० वि० ) जिनको कोई प्रतिष्ठा न हो, बेहज्जत ।

बेहृदगी ( फा० स्त्री० ) असदग, अशिष्टता ।

बेहृण ( फा० वि० ) १ जिसमें तोत्र न हो, जो शिष्टता या सम्भता न जानता हो । २ जो शिष्टता या सम्भता के विरुद्ध हो, अशिष्टतापूर्ण ।

बेहृदागन ( फा० पु० ) बेहृण गेनेका भाव, बेहृदगी ।

बेहृक ( फा० वि० ) चिन्तारहित, बेफिक्र ।

बेहृश ( फा० वि० ) अचेत, असुप्त ।

बेहृजो ( फा० स्त्री० ) अच्छा चिन्ताता ।

बेक ( अ० पु० ) वह स्थान या मरुधा जहा जोग ध्याज पानेकी इच्छाने रुपथा जाता करते हैं और ऋण भी लेते हैं, रुपथेके लेन देनका धरोकोठो ।

बैगन ( हि० पु० ) एक वापिस रोधा जिसके फलकी तरकारी बनाई जाती है । फल १ देखो । २ एक प्रकारका घाघल जो फनारा और बंध प्रान्तमें होता है ।

बैगनी ( हि० स्त्री० ) बैगनके रंगवा बैजनी ।

बैजनी ( हि० स्त्री० ) जो लाल, लिये नीले रंगका हो, बैगनी ।

बैड ( अ० पु० ) १ झूठ । २ बन्मन्त्रालीका झूठ जिसमें सब लोग मिल कर एक साथ बाजा बजाते हैं ।

बै ( हि० स्त्री० ) १ बैसर, कघो । २ बय दगो ।

बै ( अ० स्त्री० ) बिसी, बेचना ।

बैकुड ( हि० पु० ) बैकुण्ठ दगो ।

बैखरी ( हि० स्त्री० ) बैखरी देल ।

बैखानम ( हि० वि० ) बैखान देल ।

बैग ( अ० पु० ) १ धौला, भोला । २ दाटका एक प्रकारका धौला । इनमें याती अपना असबाब भर कर हाथमें लटका कर साथ ले जाते हैं ।

बैगन ( हि० पु० ) बगन देलो ।

बैगना ( हि० पु० ) एक प्रकारका पकवान । यह बैंगन आदिके टुकडोंके देसनमें लपेट कर और हेलमें तल कर बाना जाता है ।

बैगनी ( हि० स्त्री० ) बैगना दलो ।

बैजती ( हि० स्त्री० ) १ फलके एक पौधिका नाम । इसके फण्डके सिरे पर लाल या पीले फल लगते हैं । बैजपत्नी देलो । २ विशुकी माला ।

बैज ( अ० पु० ) १ चिह्न । २ चपरस ।

बैजह ( हि० पु० ) एक प्रकारका हलका नीला रंग । इस रंगकी रंगाई लटनक्रमे होती है यह रंग कौवेके अण्डके रंगसे मिलता जुलता है, इस कारण इस रंगको लोग बैजई कहते हैं ।

बैजनाथ ( हि० पु० ) बैजनाथ दला ।

बैजयती ( स० स्त्री० ) बैजयती देला ।

बैजला ( हि० पु० ) १ उर्दका एक भेद । २ कवजोरस देल ।

बैजवाप ( स० पु० ) बैजवापका अपत्य ।

बैजवापीय ( स० स्त्री० ) बैजवापि सम्बन्धीय ।

बैजा ( अ० पु० ) १ अण्डा । २ एक प्रकारका फोडा । इसके भीतर पानी होता है ।

बैजापई—महाराष्ट्र सरदार महाराज दौलतराजसिन्धको महिषी । ये महाराष्ट्र-भन्नी श्रीजीराय घाटगका कन्या थी । १८वीं शताब्दीके शेषभागमें इनका जन्म हुआ था । हिन्दुराज इनके भाई थे ।

बचपनसे ही बैजाकी प्रकृति दार्मिकता पूर्ण थी । यह



वैठवामा ( हि० क्रि० ) १ वैठानेका काम दूसरेसे कराना ।  
 २ वेड पीये लगवाना, रोपाना ।  
 वैठा ( हि० पु० ) चमचा या बड़ी करती ।  
 वैठाना ( हि० क्रि० ) १ स्थित करना, आसीन करना । २ नियत स्थान पर ठोक ठोक ठहरना । ३ प्रतिष्ठित करना, नियत करना । ४ प्रतिष्ठित करना, पद पर स्थापित करना । ५ चन्ता न रहने देना, विगाडना । ६ नीचे की ओर ले जाना, घसाना । ७ अभ्यस्त करना, मानना । ८ पानी आदिमें घुलने वस्तुको तलमें ले जाना जमाना । ९ दवा कर दरावर करना, पचकाना या घसाना । १० क्षित वस्तुको निर्दिष्ट स्थान पर डालना, लक्ष्य पर जमाना । ११ छोड़े आदि पर सवार करना । १२ पीयेको लगाना, जमाना । १३ काम धंधेके योग्य न रखना, बेकाम कर देना । १४ किसी स्त्रीको पत्नीके रूपमें रख लेना ।  
 वैठालना ( हि० क्रि० ) वैठाना लेना ।  
 वैठना ( हि० क्रि० ) यद् करना, वेठना ।  
 वैठाल ( हि० वि० ) विल्लीसम्बन्धा ।  
 वैठालव्रत ( हि० पु० ) विल्लीके समान अपने घातमें रहना और ऊपरमें बहुत सोभा सादा बना रहना ।  
 वैठानव्रत दरा ।  
 वैठालव्रती ( हि० वि० ) विल्लीके समान ऊपरमें सोधा सादा, पर समय पर घान करनेवाला, रणटा ।  
 वैण ( स० पु० ) वासका काम करनेवाला ।  
 वैत ( अ० स्त्री० ) पथ, श्रेण ।  
 वैतरनी ( हि० स्त्री० ) १ वैतरणी नदी । २ आहामे होने वाग पर प्रकाशका धान । इसका चानल बना रहता है ।  
 वैता ( स० पु० ) वेतान नदी ।  
 वैतालिक ( हि० वि० ) वैतानिक नदी ।  
 वैट ( हि० पु० ) चिकित्साशास्त्रज्ञ जाननेवाला पुण्य ।  
 वैद्य ( हि० स्त्री० ) वैद्यकी विद्या या व्यवसाय ।  
 वैद्य ( स० स्त्री० ) १ निम्न नदी सम्प्रदायि पात्र । ( पु० )  
 विदग्गे दालि तन्माम्ना जात विदग्ग अग् । २ पिष्टप्रभेद, दालकी पीठी ।

वैदूर्य ( स० पु० ) वैदूर्य नदी ।  
 वैदहा ( स० स्त्री० ) वैदही नदी ।  
 वैननेय ( स० पु० ) वैनतय नदी ।  
 वैना ( हि० पु० ) यह मिठाई आदि जा विवाहादि उत्सवोंके उपलक्षमें इष्टमिर्वाके यहा भेजे जाते हैं ।  
 वैन्दवाय ( स० पु० ) वैन्दवि सम्बन्धीय ।  
 वैन्दवि ( स० पु० ) विन्दुभव ।  
 वैपारी ( हि० पु० ) व्यापार करनेवाला, रोचगारी ।  
 वैयन ( हि० पु० ) काष्ठपत्रविशेष, लम्बीका एक औजार । यह याना वैठानेके काममें आता है ।  
 वैरंग ( अ० वि० ) वह चिट्ठे या पारसल जिम्का मह सूट भेचनेवालेकी ओरमें न दिया गया हो, पानेवालेसे वसूल किया जाय ।  
 वैर ( हि० पु० ) १ शत्रुता, अशान्त । २ दुर्भाव, डोह । ३ हलमें लगा हुआ चींगा । यह चित्रमके आकारका होता है और इसमें भरा हुआ बीज हल चलनेमें बरार फूडमें पडता जाता है । ४ बररा फल और पेड ।  
 वैरल ( हि० पु० ) १ राना, पतारा ।  
 वैरा ( हि० पु० ) १ हलमें लगा हुआ एक प्रकारका चींगा । यह चित्रमके आकारका होता है और वांटे समय बीज डाला जाता है । २ सेरक, चाकर । ३ इटके टुकड़े, रोडे आदि जो मेहरान बनाते समय उसमें चुगी हुई इटोंको जमी रखनेके लिये चालो रधानमें भर देते हैं ।  
 वैराणो ( हि० स्त्री० ) भुजा पर पहननेका एक गहना । इसमें लोते गोल बडे बडे दाने होते हैं और धागेमें गूथ कर पहने जाते हैं ।  
 वैराम ( स० पु० ) वैराम्य दती ।  
 वैरामो ( हि० पु० ) वैराण्य मनके माधुर्गोका एक भेद ।  
 वैराम्य ( हि० पु० ) वैराम्य ।  
 वैराना ( हि० क्रि० ) वायुके प्रकोपसे विगाडना ।  
 वैरी ( हि० वि० ) १ वैर रखनेवाला, दुश्मन ।  
 वैल ( हि० पु० ) १ एक चीपाया । इसकी मादाको गाय कहते हैं । श्य नदी । २ मूल मनुष्य, जड बुद्धिवा श्रान्ती ।  
 वैलर ( अ० पु० ) पोपेके आकारका लोहेका बडा देग जो मापमें चलनेवाली कर्तमें होता है । इसमें धानो भर कर धौलाने और भाप उठाने हैं के पुजे चलते हैं ।



बैलून ( ३० पु० ) : गुल्फाम । ० बडा गुल्फाम चिमबे  
मगर पारने लाग ऊपर हयामे उला परते थे । इम  
गुल्फामे द्वारा आवाजमार्गमे उा पर अलायामहो घटा  
के विभिन्न वायुस्तरों और गगोलस्थ नक्षत्रोंका परिदर्श ।  
तथा भूभागदृश्य बहुदूरवर्ती देशोंकी देखा जा सकना  
है ।

यह साधारणतः कागज, मोटे रेशमी बस्त्र या गटापाना  
नामक रबर समुक्त घन द्वारा बनाया जाता है । इसकी  
धारित पत्राणु उा तथाकार बन्द विशेषरे सद्मन है ।  
इम प्रकारका एक चली घेलांरो रस्मोके आलमें  
रव कर उममें भाष भरो नातो है । भाषमें भररु हावे पर  
घेलां पूर जाता है और बाकके स्वाभाविक नियमातुसार  
पह ऊपरकी उडती है । उम घेलां पर चढे हुए जायका  
समाम ररिसघोरो इफ्तो बाध कर उममें नाउ बाध ले  
नातो है, उम नायमें कभी एक और कभा कं आल्लो  
घेद कर वायुमण्डलमें उडते है । किम वैसाविफ कारण  
मे बैलून ऊपरकी चढता है, उसका विवरण नीचे दिया  
जाता है ।

उला वायु साधारण वायुसा अपेक्षा हलकी होती है,  
इम कारण बैलून उला वायुमें परिपूर्ण हावे पर वर उा  
की उडता है । दिवाली पर लडके लोम कागजके बैलून  
बाले और उममें धू आ भर कर आवाजो उडति है ।  
बडे बडे श्योमया भी इसी प्रणालीमे उला वायु द्वारा  
ऊपर चढाये जाते है । आन्तक भाग और आठ गीमिग  
जाति जो वायवोप पदार्थ वायुमण्डले हलके है, उाके  
द्वारा भा बैलून उडायो जा सकना है । उद्भूत गाय द्वारा  
छोटे छोटे रबरके बैलून और बडे बडे बैलून भी उडायो  
जा सकते है, किन्तु उनम विज्ञाप व्यव हाता है । अर तो  
समकरो विवापनोरे कारण बैलूनके त्रिड गेउ नैम  
। कोयामे उपरान गीम जिनमे बडे बडे जालमें बपो  
जाय करता है । काममें लाया जाता है । कोबलेरो बाव  
वायुमण्डले हलकी होती है, इमलिफ किमी भी बैलून  
उमे भर का, बैलून वायुमें भाष ऊपरकी उडता रहेगा ।  
यदि उमके नीचे हलकी भाष उडता हो जाय तो लोम  
उममें घेद कर अलायामे भा भागमातकी शैत कर सकते  
है । विज्ञाप्य वायुमे उरिस्थ वायु समान हलके हातो

गते है इमलिफ यह बैलून तब तक ऊपरकी चढना हो  
रहेगा, जब तक कि उममें भारो हू वायुके समान हलकी  
वायुमण्डले उमे मिल जाय । जब समान बचनका वायु  
उमे मिल जायगी तब उमकी उद्भूत्य गति रुक जायगी ।  
फिर ऊपरकी हवा चिम ओर बहेगी, बैलून भी उमी तरफ  
उडने लगेगा । बैलूनको हवा थोड़ी निकाल देनेमे यह  
नीचेकी उाया और उमके नीचे बपो हू नायमेंसे कोड  
भारी नीज नीचे केक देनेसे कुछ ऊपर चढ सकता है ।  
इम प्रकार उमके आगेहीके इच्छातुसार थोडा बहुत  
चढ उतर तो सकते है, परन्तु ये इच्छानुसार एक घेलां  
दूसरे दशाको पहुँचा जा सकते । वायुका प्रभाव उडे जिन  
ओर चाहते जा सकता है, उसमें आगेहारा कोड बना  
गती चढता ।

वायोमें चिम प्रकार कोड नीच समायतनासम्यक  
स्थानान्तरित जलके भाषके समान बर पर बढती रहती  
है, उला प्रकार वायुन भी कोड भा उस्तु भवो समायतन  
स्थानान्तरित वायुके भाषके समान बल पर उडती रहती  
है । जिन प्रकार, जिम चीत्तोंका आपेक्षिक गुण्य जलके  
आपेक्षिक गुण्यमे अधिक है, उन चीत्तोंको वायोमें छोड  
नेमें नीचे चली जाती है, जिमका आपेक्षिक गुण्य जलके  
आपेक्षिक गुण्यमे कम है, वे चीत्त वायोमें बहने लगती  
है और जिनका आपेक्षिक गुण्य जलके आपेक्षिक गुण्य  
के समान है, उा चीत्तोंका वायोमें कहा रना जायगा,  
यहाँ पर ये स्थिर रहेगी, उलो प्रकार जिम वायुमण्डल  
आपेक्षिक गुण्य वायुके आपेक्षिक गुण्यमे अधिक है,  
वे वायुमण्डल वायुमण्डलक नाच गिर जाता है, जिमका आपे  
क्षिक गुण्य वायुके आपेक्षिक गुण्यमे कम है, वे वायु  
मण्डलक ऊपर उडने लगता है और जिमका आपेक्षिक  
गुण्य जिन स्थानका वायुके आपेक्षिक गुण्यमे समान  
है व वायुमण्डल उमी स्थानका वायुमें स्थिर रहेगी । उाके  
समुद्रानुसार गुण्ये वायुमे जिन स्थानक भादि एक  
स्थानक दूरक स्थानमें पहुँच जाते है, उमी प्रकार वायु  
मण्डलके समुद्रानुसार गुण्ये समाने श्योमया भी भाषा  
जायते एक स्थानक दूरक स्थान । यह वा जाता है ।

पुनरुक्तो इम लेखे कायवला बहुवाचको व्यवहृत होये  
थे । प्राचीन आर्यवायु पुनरुक्ति मीमे थड कर आर्यवा

मार्गसे यद्येच्छा गगन वरत थे। पुराणादिमें इन विषय के काफी प्रमाण पाये जाते हैं। परन्तु जिस त्रियाके प्रभावसे वे ध्योमयान रूप रचने इच्छानुसार चलाते थे, वह विद्या अब लुप्त हो गई है। पश्चिम युरोपमें एट वासी शिल्पविज्ञान त्रिशास्त्र विद्वानोंने इस ध्योमयानको इच्छानुसार इधर उधर चलातेके लिए बहुत प्रयत्न किये, परन्तु आज तक वे सकल मनोरथ नहीं कर सके।

१८०४ ई०में विलो और गेल्लस नामक दो विद्वान् ऊपरकी वायुका शैत्य और उष्णता आदि गुणागुण तथा अन्यान्य विषयोंका परीक्षा करनेके लिए नाना प्रकारके यन्त्र, पक्षी, पतङ्ग आदि प्राणियोंको साथ ले कर, १३वीं अगस्तको सुबह १० बजे फरासासी राज्यको राजधानी पैरिस नगरीसे ध्योमयानमे चढ़े थे। वे मेघराज्यको भेद कर करीब ८०० हाथ ऊपर पहुँचे और विविध विषयोंको परीक्षा करते हुए आठ घण्टे तक आकाश मार्गमें भ्रमण कर पैरिससे करीब ६० माइल्सकी दूरी पर मैरिमिल ग्राममें उतरे। ऊपरकी वायु पृथिव्याको निम्नदृष्टीं वायुको अपेक्षा शीतल है, यह बात पून प्रमाणांनुसार निश्चित होने पर भी अब प्रत्यक्ष अनुभूत हुई।

इसके बाद, अन्यान्य विद्वानोंके अनुरोध करने पर गेल्लसको उन्नीस वर्ष १५ सितम्बरको एक बार भेजे गये और ऊपर चढ़े थे। उस वार वे १५३६० हाथ अर्थात् लगभग दो कोस ऊँचे पहुँचे थे और उहाँकी वायुसम्बन्धमें उन्होंने शैत्य, उष्णत्व, लघुत्व, शुद्धत्व आदि अनेक विषयोंकी परीक्षा की थी। उनका कहना है, कि यहाँकी वायु इतनी शीतल है, कि उनमें हाथ पैर अग्रा हो जाते हैं और साथ ही इतनी हल्की है, कि श्याम रंगेनम भी कष्ट मालूम होता है। यहाँ तक कि उस परिशुद्ध वायुके सेवनसे उनका गला गीरम और साद्यन्त गलेसे उतारनेमें अनुपयोगी हो गया था। वे १४३० और १४२० हाथ ऊँचेसे दो बोटल वायु भर लिये थे। उनको परीक्षा करने पर मालूम हुआ, कि पृथिवीकी निम्नदृष्टीं वायुमें जो जो पदार्थ जिम् जिस परिमाणमें मिश्रित है, उतने ऊपरकी वायुमें भी वही पदार्थ उसी परिमाणसे मिले हुए हैं।

उस समय प्राण नामक एक और व्यक्ति भी बैलून पर चढ़ कर ऊपर गये थे। उन्होंने १८३६ ई० तक २२६ बार ध्योमयान द्वारा आकाशमार्गमें परिभ्रमण किया था। अन्तिम वर्ष नवम्बर मासमें जब वे बैलून पर चढ़े थे, उस समय उनके साथ हाल्लड और इस्क्रमेसन साहब भी थे। प्यादा ऊँचाई पर पहुँचनेकी इच्छासे वे एक पक्षके लिए गाने पौने और अन्य व्यवहार्य वस्तुएँ साथ ले कर ७ नवम्बरको दिनके १०।। बजे लण्डन नगरसे बैलून पर सवार हुए। पूर्व-दिशिगयी तरफ गमन करते हुए उन्होंने अनेक ग्राम और नगरोंकी जाँगा देयी। ४ घण्टे ४८ मिनटके बाद वे इंग्लैण्ड भूमिको छोड़ कर समुद्रके ऊपर पहुँचे। साथसाल बीत जाने पर समुद्र पार कर वे फरासीसी राज्यमें आयें। उस अनपराधमय रात्रिमें स्वर्गलोक निवासियोंकी तरह कितने राज्य, राजधानी, नगर नदी, ग्रामादिना निरोपण करते हुए शून्य मार्गसे समस्त रात्रि भ्रमण करते रहे। गति समाप्त होने पर उन्होंने एक वाग कुण्ड ऊपर जा कर सूर्योदय और उस सम्बन्धी जाशयजनक प्रामाणा निरोपण किया और फिर नीचे उतर कर वे अन्तर्मार्गमें आया हो गये। तात्पर्य यह, कि उस दिन उन्होंने सूर्यको तीन बार उदित और दो अस्त गार होने हुए देखा था। इस यात्रामें वे लगभग २२० कीस शून्यमार्गमें भ्रमण करनेके बाद, दूसरे दिन सुबहका जमेनी के अन्तर्गत नामी निम्नवर्ग नामक स्थानमें उतरे थे।

१७८३ ई०में मीएट-गलफियरके युद्धके लिए पहले पहल बैलून पर चढ़नेकी व्यवस्था की गई थी। १७८६ ई०में फरासीसी राज्यमें राज्यविप्लव सम्बन्धी जो घोर युद्ध हुआ था, उसमें साधारणतःती दलने ध्योमयानमें चढ़ कर ऊपरसे विपक्षियोंकी गति विप्रिका पथ ध्वंशण किया था। इस गज विप्लवक कारण १७६४ ई०में पिटरसन नामक स्थानमें अग्निद्वाराकी सेनाके साथ फरासासी सेनायुद्ध जोर्डान साहबका युद्ध हुआ था। उसमें कनक कुतरे साहब एक सामरिक कर्मचारोना साथ ले कर ध्योमयान द्वारा ऊपर चढ़े थे, और इजारेस जाइल साहबकी सव गाते उतलाने जाते थे, जिसके अनुसार चढ़ कर जोर्डान साहबने युद्धमें विजय पाई था उस सामरिक कर्मचारोके साथी कल्ल ल कुपल पर

एक दिने में से दो घण्टा ८ १/२ घण्टा ऊपर चढ़े थे ।  
 विद्युत्प्रयोगों के क्षेत्र पर तोषमें नष्ट करनेवा  
 प्रयत्न किया था । इसके बाद पुनः सादर  
 १९३६ ई०में मारनेके युद्धमें भी इस असमसाहसिक  
 कार्यमें निगुन हुआ । उसके बाद ग्वेनटिउरिण का,  
 प्रादुकोर्ने, उन वगैरे और स्थानों पर भ्रमण । भी सामरिक  
 विभागके आदेशमें वैद्युत् द्वारा विचारणी मति विचारके  
 निराकरण काय चला था । १८९५ ई०में आन्तोभाय  
 सभोपके समय तथा १८०६ ई०में स्तोल्फेरिना स्थानके  
 में वैद्युतमें चढ़ कर उपाय निश्राणकी चेष्टा की गई थी ।  
 १८९१ ई०में अमेरिकाके सन्तियागोके युद्धमें (Civ  
 War) वैद्युत् का सहायतामें दिग्गण्ड और अन्य  
 रथाओंके अन्दर गोपनीय सहाय प्राप्त हुए थे ।

१८९० ई०में फरामोसियोंके साथ प्रुसियों का जो  
 लुमुट युद्ध हुआ था उसमें बलुगावतने धोमयागो का  
 व्यवहार हुआ था । प्रायः पश्चिम सेनादलों की अथवा  
 और उद्योगका पर्यवेक्षण, सपरुद्ध समयों में सहाय प्रेरण  
 और इतन्त्र गमनागमन तथा विपणीय वैद्युत  
 यांत्रियों की आक्रमण करनेके विषये अनेक बार व्यामया  
 व्यवहृत हुए थे । यहाँ तक कि, उस समय वैद्युतों में  
 परस्पर युद्ध भी हुआ था ।

इस प्रकार विभिन्न समयोंमें युद्धके समय वैद्युत् का  
 व्यवहार होने पर भी, वास्तव १८८२ ८४ ई०में यह माम  
 रिक विभाग का एक आश्चर्यकी उपकरण समझा गया ।  
 १८८४ ८५ ई०में फरामोसियोंने टॉरिंग युद्धमें तथा गिटिज  
 पार्लमेंटमें वैद्युत् का व्यवहारके युद्धमें वैद्युतकी प्रियेय  
 उपयोगिताका अनुभव किया था । १८९६ १९०० ई०में  
 दक्षिण अफ्रिकाके युद्ध युद्धमें भी वैद्युत् व्यवहृत हुआ  
 था ।

पौरा आदिकी तरह वैद्युतका भी इत्यानुसार पार्लो  
 तरण करनेकी चेष्टा होने लगी और वास्तव १८६६  
 ई०के लुमुट माममें उक्त अमेरिका के पार्लो सभामें  
 सिर्फे नएकी उक्त विषयका सुझावकेमें प्रस्ताव हुआ ।  
 सादर स्वरूप एक पाठ्याय विभाग बनाया गया । यह  
 विभाग वास्तव योपदिक्ती तरह वास्तविक प्रानिय और एक  
 द्वारा विविध स्थानोंमें परित्यापित हुआ था । वैद्युतिक

आजोचनामें वैद्युतके स्थानमें यहाँ aerop ut और  
 aerop inc नामक यन्त्रों में स्थापित हुआ है ।

‘परो-परो’ का हारो १९१५ ।

युद्धात्मक लयमग ५ वर्ष पहिले मारुतम और  
 कास्ट नामक दो अङ्गरेज धोमयाग पर चढ़ कर आक्रमण  
 में उठे थे । परन्तु युद्धमें एक व्यक्तिने इस विषयमें चेष्टा  
 पटना दिग्गण्ड कि किसे क्षेप कर लोग युग ही गये थे ।  
 इसके बाद स्पेन्सर नामक एक अङ्गरेजने वैद्युतमें चढ़  
 कर भ्रमण करनेके बाद ‘पारायुट्ट’ नामक छतरीकी  
 सहायतामें जमीन पर उतरनेका कीर्तन किया कर लोगों  
 की ओर भी नमस्कृत कर दिया । उनके साथ वैद्युतिक  
 सहायताके अतिप्रामाण्य Mr J Choudhry आदि  
 कई भारतीय विद्यार्थि भी वैद्युत पर चढ़े थे । प्रसिद्ध  
 सहायता विभिन्न रानरुद्ध चट्टोपाज्याय अपनी दिग्गण्ड  
 ‘पारायुट्ट’ की सहायतामें फरवरीमें उतरे थे ।

- वैद्युत् ( स० वि० ) दिग्गण्ड, वैद्युत् ।
- वैद्युत् ( स० वि० ) विद्युत् अक्षरणादिवायु युद्ध । विद्युत्  
 काय ।
- वैद्युतिक ( स० पु० ) विद्युत्कता अथवा
- वैद्युत् ( स० वि० ) विद्युत् केपायन ।
- वैद्युत्क ( स० वि० ) यन्त्रोंके द्वारा अधिप्रापित ।
- वैद्युत्वा ( स० वि० ) विद्युत्वापनी भाति ।
- वैद्युत्वा ( स० वि० ) वैद्युत्वादिपके द्वारा अधिप्रापित ।
- वैद्युत्वाय-पाणिनिके एक यार्निकरका ।
- वैद्युत्वायन ( स० पु० ) वैद्युत्का मात्वाय-य ।
- वैद्युत्वायन ( स० पु० ) वैद्युत्वायन ।
- वैद्युत् ( वि० स्त्री० ) १ आयु उद्ध । २ वीर्य, जवापी ।
- ३ वस्त्रोपके से कर अन्वेषण तक विद्युत्वापनी अधिपनी ।
- एक प्रसिद्ध शास्त्र । इस शास्त्रका एक शास्त्रकार  
 विद्युत्वापनी स्थापनी काय था । पाठे विषय क्षेत्र ६६३  
 के लयमग इस शास्त्रके प्रसिद्ध सहायत्त रूपमें वैद्युत्के  
 प्रयोगोंकी जोता और जवायमें प्रथमी गणनाय । बस्यार ।  
 [इस विषय पर १९१५ ]
- वैद्युत् ( वि० स्त्री० ) युद्धोंका एक यन्त्र । इसमें जमीन  
 कायता पुनर्ने समय कायका वैद्युत् है ।
- वैद्युत्वाय ( वि० पु० ) अथवा पाणिनी प्रसिद्ध ।

नैसाख ( हि० पु० ) वैशाख द्यो ।  
 नैसाखी ( हि० पु० ) एक प्रकारकी लाठी । इसके सिरेको कधेके नीचे बगलमें रख कर लगड़े लोग टेरते हुए चलते हैं । इसके सिरे पर जो अर्द्धचन्द्राकार आडो लकड़ी लगी होती है, वही बगलमें रहती है ।  
 नैदानरि ( स० पु० ) बहोतरका अपत्य ।  
 नौक ( हि० पु० ) लोहेका एक तिकोना काला । यह कायाडके पल्लु में नीचेकी न्यूलको जगह लगाया जाता है ।  
 नौंगना ( हि० पु० ) पीतलका एक बरतन । इसकी वाद ऊँची और सीधी ऊपरको उठी हुई होती है ।  
 नोआइ ( हि० खी० ) १ बोनैका काम । २ बोनैकी मजदूरी ।  
 नोक ( हि० पु० ) बन्ना ।  
 नोकड़ी ( स० खी० ) १ चस्तान्ना । २ धान्यनिशेप ।  
 नोकरा ( हि० पु० ) बकरा देता ।  
 नोफरी ( हि० खी० ) नकरी देना ।  
 नोमला ( हि० पु० ) बकना देना ।  
 नोकाण ( हि० पु० ) पश्चिम दिशाका एक पर्यंत ।  
 नोतार ( हि० पु० ) बुलार देना ।  
 नोमुमा ( हि० पु० ) घोड़ोंकी एक बीमारी । इससे उनके पेटमें पेसी पीडा होती है, कि वे बेचैन हो जाते हैं ।  
 नोज ( हि० पु० ) मोड़ोंका एक भेद ।  
 नोना ( फा० खी० ) चावल प्रस्तुत मद्य, चावलको शराब ।  
 नोभ ( हि० पु० ) १ ऐसा पिएड जिसे गुरुत्वके कारण उठानमें मंडिनता हो, भार । २ कोई ऐसा कठिन काम जिसके पूरे होनेको चिन्ता परावर बनी रहे, मुश्किल काम । ३ कठिन लगनेवाली बात पूरा करनेकी चिन्ता, परतका या अममज्जम । ४ गुरुत्व, भारीपन । ५ उनका ढेर जितना बोल, छोड़े, गाड़ी आदि पर लद सके । ६ किसी कार्यमें करनेमें होनेवाला धम, कष्ट या व्यय । ७ धाम, लकड़ी आदिका उतना ढेर जितना एक धूल उल कर ले सके । ८ वह त्राक या वस्तु जिसके स वन्धमें कोई ऐसी बात करनी हो जो कठिन जान पड़े ।  
 नोभना ( हि० कि० ) किसी नाव या गाड़ी पर माल रखना ।  
 नोभल ( हि० वि० ) भारी, बजनदार ।

नोभा ( हि० पु० ) १ वाक देना । २ एक प्रकारकी सङ्घर्ष कोठरी जिसका आकार स दूक सा होता है । इस प्रकार की कोठरीमें रावके बोरे इसलिये नीचे ऊपर रखे जाते हैं जिसमें शीरा या जूसी निकल जाय ।  
 नोभाइ ( हि० खी० ) १ नोभने या लदानेका काम । २ नोभनेकी मजदूरी ।  
 नोट ( अ० खी० ) १ नाव, नौका । २ अग्निबोट, स्टीमर ।  
 नोटा ( हि० पु० ) १ लकड़ीका काटा हुआ मोटा टुकड़ा जो लम्बाईमें हाथ दो हाथके लगभग हो बढा न हो । २ काटा हुआ टुकड़ा ।  
 नोटो ( हि० खी० ) मासफा छोटा टुकड़ा ।  
 नोट ( हि० खी० ) एक प्रकारका आभूषण जो सिर पर पहना जाता है ।  
 नोटरो ( हि० खी० ) नाभो, तोंदी ।  
 नोटल ( हि० खी० ) एक पक्षी जिसे जेवर भी कहते हैं । इसको खोंच पर एक सींग सा होता है । यह एक प्रकार का पहाड़ी महोष है ।  
 नोडा ( हि० पु० ) १ अन्नगद, बडा साप । २ एक प्रकार की पतली लम्बी फालो जिसकी तरवारो होती है, लोविया ।  
 नोडी ( हि० खी० ) १ दमडी । २ अति अल्प धन ।  
 नोट ( हि० पु० ) नोडोंकी जाति ।  
 नोटक ( हि० पु० ) पानकी पहले वर्षकी गेती ।  
 नोटल ( अ० खी० ) काचका एक गम्भी गरदनका गहरा बरतन जिसमें द्रव पदार्थ रखा जाता है ।  
 नोटलिया ( हि० वि० ) नोटलके रंगना, काटापन लिये हरा ।  
 नोता ( हि० पु० ) ऊटका चढा जिस पर अना स्वामी न होती है ।  
 नोटकी ( हि० खी० ) कुसुम या बर्रकी एक जाति । इन्में काटे नहीं होते । इन्में फूल रंगाईके काममें आते हैं ।  
 नोत्र ( हि० खी० ) १ लचीली उडी । ( पु० ) २ ताउ या जलाशयके किनारे मि चाईका पानी चढानेके लिये बना हुआ स्थान निम्ने कुउ नीचे हो आदमी इधर उधर खड़े हो कर टोकरे आगिने उलोच कर पानी ऊपर गिराते रहते हैं ।



बोधयामें प्रसिद्ध महाबोधि मन्दिरके जगजा लीला जन नदीके बाण किनारे पर जपरिधन उपासके मध्य पर सुवहन् मठ है। यह अट्टालिका चीमिनिली और चारों ओर ईंटोंकी दीवारसे घिरी हुई है। इसके दक्षिणमें 'वारह हागो' नामक अट्टालिका और उत्तरमें बहुत से गुहादि देवनेमें बने हैं। उक्त मठके पश्चिम प्राकार के बहिर्भागसिद्ध रजपके ऊपर धार मन्दिरशुक्त एक अट्टालिका शोभित है। इन चार मन्दिरोंमें एक जग न्नाथ, दूसरेमें गद्गावाइ प्रतिष्ठित राममूर्ति और प्रथमे में शिवमूर्ति स्थापित हैं। उक्त मठके दक्षिण पश्चिम कोणस्थित प्राचीरके बाहर साधुओंका समाधिस्थान है और प्रत्येक समाधिके ऊपर स्तूप या मूर्ति स्थापित हैं। फेरल महन्तोंको समाधिने ऊपर सुदृश्य क्षुद्राकार मन्दिरादि बने हुए हैं।

मठाधिकारी महन्तगण ही उक्त दोनों ग्रामके अधिकारी हैं। राममठको गजस्य दे देनेके बाद प्रहारी बचन और उक्त बोधिरक्षके नोचे हिन्दू या बौद्ध तीर्थ यात्रियोंका दिया हुआ उपहार भिगा कर इसकी स्थापना आय लगभग ८० हजार रुपयेकी होगी। इन आगदनों से उन्हें प्रतिदिन सैन्टों सन्यासोंके भोजन और एक अतिथि शांता तथा प्रियालयका सत्र निभाना पडता है।

सुननेमें आता है, कि यहाँ जगजादीके प्रारम्भमें यह एक मठ स्थापित हुआ था। महन्तोंकी प्रजातिप्रामे जाना जाता है, कि उस समय धमण्टीनाथगिरि नामक एक शैव सन्यासी वहा था एक बग्न गण और अपने साम्प्रदायिक सन्यामियोंके लोके लिये उन्होंने एक मठ स्थापित किया। उनका मृत्युक बाद उनके शिष्य चैतन्यगिरि मठाध्यक्ष हुए। उस समय बुद्धयावाका महा योगि-मन्दिर चन्द्रसे भरत हुआ था। शैवमूर्तिकी परिचर्या तब पूनाके लिये एक पुरोहित भी उस यन्त्र प्रदेशमें नहीं थे और न फोद यावी ही वेपुजाकी इच्छामे वहा जाते थे। मुसलमान प्रभावमे उदसन्नप्राय इस

जनमिमि जो एक साधु धारे धीरे जपना साधु उद्देश्य सा प्रते थे, उस समय किमोका भी उस आर लड़ा न था।

चैतन्यके प्रियतम शिष्य महाजानो महादेव अपनी शिष्यके प्रभावमे निकटपत्तों स्वानोंमें परिचित थे। महाबोधि मन्दिरके सामने एकान्तमें बैठ कर वे महादेवोंकी साधना करते थे। देवोंकी कृपामे वे इस क्षुद्र मठ को एक सुतीर्थ सद्धारणमें परिणत कर गए हैं। प्रवाद है, कि मन्नाट्ट शाहबालकके जादूगानुसार वे इस बुद्ध मन्दिरके एकमात्र सत्वाधिकारी तथा प्रधान महन्तके जैसे माने जाते थे। उनके प्रधान शिष्य लालगिरि तथा परधग हो रहा अतिविशाला स्थापित कर गए हैं। लालगिरिके शिष्य रात्रव, राधवके शिष्य रैनाहित उनके शिष्य शिवगिरि और शिवगिरिके शिष्य हैमन्तगिरिने मठाधिकारी हो कर यानिधम अपने अपने पत्तयका पाला किया था।

यहाँके महन्तगण आचारात् अत्यन्त अचलम्वन करने हैं। शिष्योंसे जो सम्धिक ज्ञानदान और विद्या जाला होते, उन्हें ही प्रधान महन्तका पद मिलता था। किन्तु अभी ऐसा नियम देवनेमें नहीं आता। शिष्योंमें जो सबसे छोटे तथा चिनके साथ मठाध्यक्षता और सीसादृश्य हैं त्रहो बालक महन्तपदके अधिकारी होते हैं। मालवृणा, माहनभाग और भूण उनका प्रधान ग्राह हैं। वर्त्तमान महन्त सुपरिष्ठित और शास्त्रदर्शी हैं।

उद्यगयाका प्राचान्तर।

बुद्धावतार प्रसङ्गमें यह श्याव ताधममूहके मध्यगिना जाना है। शुद्धोत्पन्नके पुत्र शास्त्रमिह राजसिंहासनका परिष्कार कर इस निज्ज प्रदेशमें एक अश्वत्थरक्षके नोचे बौद्ध ध्यानमग्न हुए थे। उन्होंने अपने योगप्रभावमे सन्यसमबोधि प्राप्त की थी, इसलिए यह स्थान 'महा बोधि' का नाम उक्त अश्वत्थरक्ष जनसाधारणमें 'बोधि

\* गया कनारदा आश्रमके कागजात जाना जाता है, कि गुनागिरि नामक एक महन्तने गवमपटने मस्तिपुर ताराटी नामक स्थान कायमी बनौदोस्तव लिया। काइ काइ इस गुतागिरिका ही शिवागिरिका नामान्तर मतजात है।

\* राजा अमरदेवकी भयामाणिक गिलागिरिमें बुद्धया नाम

\* डा० बुरान हमिन्टन जन बुद्धया आश्रम, तब उन्होंने बहने महत्तम सुना था, कि चैतन्यके समय यह स्थान पौनमय था और यदा एक भी बौद्ध धरममें नहीं आते थे।



बोधधर्मके इतिहासमें उरुविल्याका ही प्रसङ्ग मिलता है। महापण्डित पदनेसे जाना जाता है कि, "बुद्धबोध सिंहलसे भारतमें आ कर था (बोधि)-बुद्धकी पूजा करनेकी इच्छासे मगधके अन्तर्गत उरुवेलय ग्राममें उपस्थित हुए।" शाक्य सिंहके यहां पर तपस्या करनेके पहले यह स्थाप उरुविल्या नामसे प्रसिद्ध था, इममें सन्देह नहीं। क्योंकि शाक्यके उद्वेग पानेके पूर्व इस स्थानका "बोधगया" नाम होना नितांत असम्भव है। मुजाताके पिता सेनापति नन्दिक कोकटराजके अधीन काम करते थे। गयानगरी उस समय मगधराज्यकी राजधानी थी। ८वीं और ९वीं शताब्दीमें हिन्दूप्राधान्य स्थापित होनेके बाद उरुविल्याके अगोत्रप्रतिष्ठित बोधमन्दिरविसै गयाक्षेत्रको स्वानम्बराक्षके निप हिन्दूगण इस स्थानको 'बोधगया' नाम कल्पित करत हैं। \* कारण, गयालीगण गया धाममें प्रतिष्ठा लाभ र गयाकी क्रांति और तीर्थसमूह को रक्षा करनेमें यत्नवान् थे। उरुविल्या (बुद्धगया)की पूर्वता अगोत्रकीसिया क्रमशः ध्वंसप्राय हो रही थी।।

\* पहले ही जिया जा चुका है, कि अमरदवकी १०वीं शताब्दीकी उत्कीर्ण शिलालिपिमें बुद्धगया नामका उल्लेख है। Asiatic Researches Vol I p 284

† खलितमिन्मत निता है, कि शाक्यसिंह राजशुभ गयानगर पधारे। बदा मनुयाकी भलाईके लिये उन्होंने विचारव्यय कर निर्यत मनन ध्यान करनेका सन्त्य विधा। उरुविल्या-वन-म बुद्धके सम्बोधिप्राप्त करनके बाद गयानगरीम उनके निराप्य धमप्रचारना मुख्यक्षेत्र हुआ था। किंतु दुःसका विषय है, कि पूरा गवाब्दके प्रारम्भ (४०४ ई. सं.) में जब चान-परिवाजक-यूपनबुद्धन यहां आये थे, उस समय इस स्थानका बोद्धप्रभाव एकबारगी विरोधित हा गया था और चारा नगरी जनशून्य ममायग्रेमन रूप थी। ७वीं शताब्दीम यूपनबुद्धके परिदर्शन-काळमें यहां हिंदूप्रभाव स्थापित हा रहा था, मुतत गयाप्रीगण गयातीर्थ पर अधिकार कर उनकी रक्षामें लगे थे। यहूतोंम मत है, कि महाबोधि तीर्थ लुप्त दानसे हिंदूगण गया-धाममें उन्हीं बोधिनीतियोंको ला कर उनकी रक्षा करते है। बुद्धगयाके अनेक मन्तर और शिलालिपि यहाके मदिदादिम धारों पर भी गयाके प्राचानत्वका लोप नहीं हुआ है। यहाँका

हिन्दूगण प्रतिहिंसापत्न्य हो कर उरुविल्याकी प्राचीन बौद्धकीर्तिकी उपेक्षा करने थे, ऐसा प्रतीत नहीं होता है। उन्होंने यह स्थान जगलमें परिणत देल इसका परित्याग किया। कालक्रमसे अङ्गरेजोंकी अनुकम्पा और प्रह्लाप्राजके अर्थसाहाय्यसे यह लुप्तप्राय महाबोधि मन्दिर नवकलेरमें शोभित हो जनमाधारणके दृष्टि-पथ पर आरूढ हुआ है। बुद्धगयाके इस महाबोधि मन्दिरका जीर्णोद्धार होनेके समय रही कही घोडा परिवर्तन भी हुआ है।

यथायमें विम समय यह स्थान जङ्गलसे परिपूर्ण हुआ था, यह स्थिर करना मुश्किल है। ४थी शताब्दीमें बौद्ध प्रभावके अयमान अथवा प्राहाण्यधर्म-सेवा गवालियोंके अस्त्युत्थानके समय महाबोधि मन्दिर जो अनादृत हुआ था, उसमें सन्देह नहा। हिन्दुओंने जब बौद्धनीर्धको विलोप करना चाहा, तब मित्रदेशीय बौद्ध धर्मावलम्बियोंने यत्नपूर्वक यहाका पूर्व तन बौद्धस्मृतिकी रक्षा की। इस पवित्र मन्दिरके ध्वस्त लतादि समाच्छादित भवसरणिमें परिणत होने पर भी बौद्धगण समयानुसार इन पुण्यतीर्थमें आ कर यथा सम्भव सस्कार करने थे उमरा यथेष्ट ऐतिहासिक प्रमाण शिलालिपिसे मिलता है।

४थी शताब्दीके अन्तमें सैघाट अगोत्र द्वारा प्रतिष्ठित चन्द्रासन और पुरातन मन्दिर तथा उक्त चन्द्रासनके सामने गाँवो हुँई रीयमुद्रादिके मध्य शाक्यराज हुविष्क (४० ई०) का मुद्रा प्राप्त होनेसे इस स्थानके प्राचीनत्वका परिचय मिलता है। इनके बाद चीनपरिभाषक फाहियान भी उरुविल्याके महाबोधिमन्दिरका उल्लेख

विषयदान प्रयुक्तिकी महात्म्य क्या रामायण महाभारतादिम वर्णित है। वासुपुराणार्गत गयामाहात्म्यम गयामुद्रा जा भद्रयुत उपन्यास है उसका समाप्तोचना करनेसे बह रूपके जैवा प्रतात हाता है। दवापुराण विराप स्वभावविद्घ है। असुरोंकी 'श्रेष्ठ वैश्या-यता' शीर्षकी अहिंसाना परिचय देती है। गयामुद्रके निम्नलता-सम्पादनसे, ऐतवार्थकी वापुच्छेदा और धमप्राय हिंदू द्वारा निरोध-बौद्धोंके प्रत्यान्यायके निवा और क्या कहा जाय। गया इन्द्र-म विलुप्त विवरण देवा।



११ मी है। सुतनयुभङ्गके पत्रमें देना पत्रका है, कि  
थवा जगावार्थे मन्व-भाग्यं इमं मन्त्रिका वृत्त मन्त्र  
संभृत दूमा\* और मन्त्रिका प्रान्तमूमि तथा बोधि  
मन्त्रिकाप पञ्चमत्त कन्तु नदीकी वातुमानिमें परिपूर्ण  
हो गया।\* सुतनयुभङ्गके हाथमें ही इस गोधमें मनुष्यो  
का भाग्यपारिधाता कम हो गई, इसमें सन्देह नहीं।

३मी जगावार्थे प्रारम्भमें बौद्धधर्मके प्रधान गुरु  
राजा जगावार्थे यह बोधिद्रुम काट डाला, किन्तु अग  
पश्चात् बुद्धमूर्तिमें उसके मन्त्रा पूर्णधर्मके सुकीर्णमें  
रखा हुई थी। यह मूर्ति भी जगावार्थे मष्ट हो गई है।

इस बोधिवृक्षकी पूर्वावस्थामें जगैरे, लिख ६०० ई०में  
राजा पूर्णधर्मा उसके पार्श्वें और ३४ फुट ऊंची एक  
दीवार बनवा दी।\*

पञ्चमिज्जावन गुरुनयुभङ्गके बा\* ६२८ ई०में  
युवा पत्नी भाग्यमें गा कर याद बने तब महाबोधिमें  
धान किया। ये मित ६६० ई०का महाबोधिमें पञ्चा  
मना देली भाये।\* ६४० ई०में हस्तुन महाबोधिमें पञ्चा  
मनना दान करनेके लिए भाये थे।\*

३मी जगावार्थेमें बौद्धराज दुर्धनवृद्धनेक समय उर  
बौद्धमार्थव स्थापित हुआ, तब चोन्दुनीय बौद्ध परि  
मात्रकी भावनेके साथ धर्मसंरक्षण विस्तार किया था।  
८वीं और ९वीं जगावार्थेमें प्रायण धर्मकी प्रतिष्ठा हो। पर  
बौद्धधर्म हीनमम हुआ। सुतना व्याजयाया बौद्धीय  
भाष्यमें आना पकबावतो हर्षु स हो गया। १०वीं  
जगावार्थेमें मगधके पाल्यजनीय बौद्धराजासोका अधि  
कार हाथमें युवा दूनी देनीमें धर्म प्रचारसम्बन्ध विस्तार  
हुता। राजा महिपालने राजत्वकायमें (१०००-१०४०  
ई०) जो सब बौद्धविचारण महाबोधिमें स्थाप करके

\* बुद्धके पत्रका है, कि मन्त्रिका पत्रका कर्षक पर  
लिखितमें \* लिख हुआ है।

\* Jil. in Hwa Theng Vol. 11 p. 101  
\* इसके इला सुतना दूनी है, कि इन्हीं मन्त्रा इम  
मन्त्रकी सुतना सुतना सुतना बरुवाके, सुतना सुतना  
लिखित है। (१००० ई०) यह विस्तार केनेके सुतना  
केनेके सुतनाकेनेके सुतना है।

भाये थे, ये मन्त्रे मन्त्रे मन्त्रे जो मन्त्रि लिख रख  
गए हैं, परमात्त मनुमन्त्रान्त में सब धारिपत्र हो कर  
प्राचीन इतिहासमें नृपज ज्योतिःप्रदान करने हैं।\*

११वीं जगावार्थेके प्रारम्भमें धर्मराज गुप्त नामक एक  
इतिहासी प्रथमजने महाबोधिमन्त्रि र बनवायेके लिए  
भेजा। उक्त कर्ममें १०३१ ई०में मन्त्रिप्रियत तथा  
उर दान कर गए हैं। एक और दूसरे मित्रानिधिने  
जगा आना है, कि १०३१ ई०में उक्त मन्त्रिप्रियत मित्रानि  
कार्य समाप्त न होकर कारण इसी पर एक और कर्म  
जाये भेजा गया। ये ७ वर्ष १० मास परा पर यह कर्म  
१०३१ ई०में निर्माणाकार्य समाप्त कर ल, जगैरे थे।

अन्तर १२वीं जगावार्थेके मीव नाम (मार्ग ६१६८  
६०को मुसलमान आक्रमणके पहिले) में सवायलक्षपति  
अनोरवर्धुने इसके चिन्तो चिन्तो अज्ञात बुनिर्माण  
किया।

१३वीं और १४वीं जगावार्थेमें गुणा भाग्ि रपण  
मुसलमानोंके हाथ भाये। मियाहने राजेतिहासमें देना  
लगा है, कि राजवृत्तरीने विनिर्माणके हाथमें पवित  
मवाधामकी रक्षाके लिए प्रायणजने मुस किया था।  
महाबोधिमें भी मन्त्राविचारमें बहमगवा का बौद्ध मन्त्रु नहीं  
रहने पर भी महत्तमें मनुमान किया जा सकता है, कि  
मुसलमान बिरतनेके परवर्षों उा पर तब विनिर्माणके  
अप्याचारने बौद्धि हो कर महाके अधिर्माणगण महा  
बोधिमन्त्रि छाड भागे और जगैरामुजा प्रभाव न सह  
सकनेके कारण उक्त प्राचीन बौद्धिवा मन्त्रा धर्ममाप-  
नधमें पविष्ठा हो गई।

सुदगवार्थे जो सब मन्त्राविचार्य वापे गए हैं, तब  
अ-मन्त्रा कर्णमें भारतीय निरिनिहासका एक मन्त्र  
पविष्ठा कर जगा है। जगावार्थे महाबोधिमन्त्रि  
और प्रथममन्त्रि एक अर्थाधिक बर्णित है। यह मन्त्रि  
और उमका मन्त्राकार, प्रथमके महाबोधिमन्त्रि,  
मन्त्राविचार्य, बोधिद्रुम, मन्त्राविचार्यण मन्त्र तथा

\* इन जगावार्थे १०३१ ई०में मन्त्रि, मन्त्रावि  
प्रभावके मन्त्राविचार्य मन्त्राविचार्य है। १०३१  
Jil. in Hwa Theng Vol. 11 p. 102  
\* Jil. in Hwa Theng Vol. 11 p. 103

विहार प्रभृति खण्डकीर्तिया प्रतनतत्त्वानुसन्निप्रत्सुओं को नूतन आलोक प्रदान करती हैं।

१८७६ ई०में ब्रह्मजालने तीन कर्मचारियोंका बोधि मन्दिरका सम्कार करनेके लिए भारतवर्ष भेजा। १८७७ ई०को कर्मक्षेत्रमें पहुँच कर जब वे उक्त कार्यसाधनामें असमर्थ ठहरे, तब बङ्गालके छोटे लाट ( Sir Asely Eden )ने पहले बेगलर साहब ( M J D, Beglar )को तत्त्वावधारक नियुक्त कर भेजा। इससे तृप्त न हो कर उन्होंने पुन राजा राजेन्द्रलाल मित्रसे कायपरिदृशन करनेके लिये प्रार्थना की। उन दोनोंके उगोग और ब्रह्म वासियोंके यत्नसे बोधगयाका स स्कार स्थापित हुआ। यहाँ तक कि, इस महाबोधिमन्दिरने उच्च चूडावलम्बो हो कर पुन बौद्धस्मृतिको जगा दिया। किन्तु अथ भी यहाँको कितनीही सम्पत्ति कलकत्तेके जाद्वरमें सर क्षित है।

वायुपुराणोय गयामाहात्म्यमें बोधगया भी एक हिन्दू तीर्थके जैसा गिना जाता है। यहाँका बोधिद्रुवका दर्शन तथा उसके नीचे पिण्डदान अत्यन्तपुण्यजनक है। बोधघनाचार्य ( स० पु० ) एक उपाध्याय। ये बोधानन्द घन और अहोयलशास्त्री नामसे प्रसिद्ध थे।

बोधह्र (स० पु०) बोध अभिप्राय जानातीति ज्ञा क। अभि- प्रायवेत्ता, श्रोतृण्य।

बोधन ( स० क्री० ) बुध णिच् ल्युट् । १ गन्धदोष, गध दोष देना। २ वेदन, क्षापन, जताना। ३ विज्ञान, इस्त हार। ४ उद्वेगन, अग्नि या दीपक आदिको प्रज्वलित करना। ५ ज्ञान। ६ चैतन्य सम्पादन। यथा—दुर्गादीना बोधन। आश्विन मासमें अकालमें रामचन्द्रने रावण बधके लिए भगवती दुर्गाका बोधन किया था। शास्त्रमें बोधनको ध्यरथादिके विषयमें इस प्रकार लिखा है,—

“इये मात्स्यखिते पक्षे कन्याराशिते स्त्री।

“नवम्यां बोधयेद्देवीं श्रीदात्रीतुम्भजने ॥”

अन कृष्णा देवारादिप इत्यपि गौष्ठाश्विनपर। ( तिथितत्त्व )

रविके कन्याराशिमें पहुँचने पर, अर्थात् आश्विन मास- में एष्ठापक्षकी नवमी तिथिमें देवीका यथाविधान बोधन करना चाहिए। इस स्थानमें ‘आश्विन’ पक्षसे मतलब गौष्ठाश्विन से है। नवमी आदि कल्पखलमें प्राप्त कालमें

कल्पारम्भ हो कर सायंकालमें विव्यतकमूलमें देवीका बोधन किया जाता है। कृष्णा नवमीसे ले कर शुक्ला दशमी अर्थात् विजयादशमी तक प्रति दिन देवीकी पूजा करना चाहिये। नवमी बोधन आश्विन मासमें ही कटा गया है। अन्यत्र इस प्रकार लिखा है।

“आर्द्रांषि बोधयेद्देवीं मूलेनैव प्रवक्ष्यते।

तिथिनक्षत्रयोगेण द्वारेवानुपालनम्।

यागभावातिथिमात्रा देव्या पूनकर्मणि।

कृष्णनवम्यामाद्रायोगो विधौ मन्त्रे च भूयते ॥”

लिङ्गपुराणके मतस—

कन्याया कृष्णपक्षे तु पूयति तत्राश्रे दिवा।

नवम्या वाषपद्देवी महाविभवा विस्तरं ॥” ( तिथितत्त्व )

आर्द्रां नक्षत्रमें देवीका बोधन करना चाहिए। इससे मालूम होता है, कि आर्द्रानक्षत्र युक्त नवमी तिथि ही बोधनके लिए प्राम्त्त दिन है। परन्तु प्रति वर्ष गौष्ठाश्विन कृष्णानवमीमें आर्द्रायोग सम्भवपर नहीं, अर्थात् किसी वर्ष पडा और किसीमें न पडा, ऐसी दशामें ‘आर्द्राया बोधयेत्’ किस प्रकार सम्भव हो सकता है। इसको मीमांसा शास्त्रों में इस प्रकार है, कि नवमीके दिन ही बोधन होगा, हा, यदि उस नवमी। आर्द्रां नक्षत्रका योग हुआ तो बहुत ही उत्तम है। अन्यथा आर्द्रां नक्षत्रके विना बोधन हो नहीं हो सकता, ऐसा नहीं है।

‘अकालमें बोधन करना चाहिए’ यहाँ अकाल शब्दको अथ देवताओंको रात्रि है। कारण, उत्तरायण देवताओंके दिन हैं और दक्षिणायण उनको रात्रि। देवताओंकी रात्रि- में कोई भी कार्य करना प्रशस्त नहीं। इसलिए “अकाले श्रद्धया बोध” इस प्रकार कहा गया है। रात्रि निद्राका समय है, इसलिए बोधन करके पूजा की जाती है।

“अथैतद्विज्ञायान देवानां रात्रिरिति एवम्।

राधायन महामाया ब्रह्मणा बोधिया पुरा।

तथैव च नरा तुयुं प्रतिवत्सकर रूप ॥’

नवमी तिथि यदि उभय दिनमें पूजाक्रम ही प्राप्त हो और दूसरे दिन नक्षत्र लग्न अर्थात् आर्द्रां नक्षत्र हो, तो दूसरे दिन ही बोधन होगा। सुगमादर होनेमें पहले दिन नहीं होगा और दोनों ही दिन यदि पूर्वाह्न लग्नमें और नक्षत्रका योग न हो, तो पूज दिनमें बोधन होगा। कारण,



बोधार्णवयति ( स० पु० ) तत्त्वकीमुदीत्याख्यानके प्रणेता, भारतो यतिके गुण ।

बोधि ( स० पु० ) बुध ( सर्वधातुम्भ इत् । उण् ४।११७ ) इति इत् । १ समागमिभेद । २ गिपल्लग्य, पोपल्लग्य पेड । ३ बोध, ज्ञान । ( त्रि० ) ४ ज्ञाता ।

बोधित ( स० त्रि० ) बुध णिच्-क्त । धापित, जताया हुआ ।

बोधितर ( स० पु० ) बोधिरैव तर । १ अश्वत्थद्रुम, पोपलका पेड । २ गयामें स्थित पोपलका यह पेड जिसके नीचे बुद्ध भगवान् ने म बोधि ( बुद्धत्व ) प्राप्त की थी । बोद्धोंके धर्मग्रन्थोंके अनुसार इस वृक्षका कटपान्तमें भी नाश नहीं होता और इसीके नीचे बुद्धगण सदा म बोधि प्राप्त करते हैं ।

बोधितथ्य ( स० त्रि० ) बुध-णिच्-तथ्य । धापितव्य ।

बोधित् ( स० पु० ) अहंत्भेद ।

बोधिट्टम ( स० पु० ) बोधिरैव ट्टम । बोधित्व देखो ।

बोधियग ( स० पु० ) बोद्धधर्माचार्य । इनका पूर्वनाम बोधिधन है ।

बोधिन् ( स० त्रि० ) ज्ञात, प्रबुद्ध ।

बोधिमद्र ( स० पु० ) एक बोद्धाचार्य ।

बोधिमण्ड ( स० पु० ) बोधिट्टमके नीचे जिस बज्रासन पर बैठ कर शाक्यमुनिने ज्ञानलाभ किया था, पृथ्वीके उत्थित उमी आसनका नाम ।

बोधिमण्डल ( स० द्वी० ) वह आसन जिन पर बैठ कर शाक्यसिंहने स बोधि प्राप्त की था ।

बोधिसङ्घाराम—बौद्ध म धारामभेद । नाथगना देखो ।

बोधिसत्त्व ( स० द्वी० ) बोधि बोधयत् मत्त्व । बुद्धविशेष, यह जो बुद्धत्व प्राप्त करनेका अधिकारा हो, पर बुद्ध न हो । बोधिसत्त्वका तीन अवस्थाएँ होती हैं जिन्हें पार करने पर बुद्धत्वका प्राप्ति होती है ।

बोधिसिद्धि—सहस्रारथ नामक त्रैदान्तग्रन्थके रचयिता ।

बोधेन्द्र—आत्मबोधटीका भावप्रकाशिका, नामरसायन, नामरसोद्घ और हरिहरभेदधिक्कार प्रभृति स स्थूल ग्रन्थके प्रणेता ।

बोधेय ( स० पु० ) धर्मस प्रदाय विधेय ।

बोध्य ( स० त्रि० ) बुध ण्यत् । बोधयोग्य, बोधनीय ।

बोना ( हि० कि० ) १ किसी दाने या फलके बीजको इसलिये मट्टीमें डालना जिसमें उसमेंसे अकुर फूट और पौधा उत्पन्न हो । २ बिल्वराना, छहर उधर डालना ।  
बोवा ( हि० पु० ) १ स्तन, थन । २ गट्टर, गट्टरी । ३ धनका मात्र समान, अ गट्ट वगड ।

बोवो ( हि० स्त्री० ) दक्षिणात्यमें पच्छिमी घाटकी पहाडिओंमें होनेवाला एक प्रकारका सदाबहार पेड । यह पुन्नाग या सुलताना च पानी जातिना होता है ।

बोग ( हि० पु० ) १ डवानेकी क्रिया । २ गु बजक आजारका एक प्रकारका गहना । यह मिर पर पहना जाता है और इसमें मीनाकारिका काम होता है । रत्नादि नी इसमें जडे टुप होते हैं । ३ चाँदी या मीनेका बना हुआ गोल और कगुरेदार घुँघरू । यह आभूषणोंमें गूथा जाता है ।

बोरका ( हि० पु० ) १ दवात । २ मिट्टीकी दवात । इसमें लडके लडिया घोल कर रखते हैं ।

बोरना ( हि० कि० ) १ जल या किसी ओर टुप्य पदार्थमें निमग्न कर देना, डुबाना । बलकित करना, बदनाम कर देना । ३ युक्त या आवेष्टित करना । ४ डुबा कर भिगोना । ५ घुले रगमें डुबा कर रगना ।

बोरसी ( हि० स्त्री० ) मट्टीका बरतन जिसमें आग रख कर जलाते हैं, अ गौठी ।

बोरा ( हि० पु० ) १ टाटका बना हुआ थैला । इसमें अनाज आदि रखते हैं । २ चाँदा या सोनेका बना छोटा घु घरू ।

बोरिका ( हि० पु० ) मट्टीका एक प्रकारका बरतन । इसमें लडके लिखनेके लिये लडिया घोल कर रखते हैं ।

बोरिया ( हि० स्त्री० ) छोटा थैला । ( फा० पु० ) २ विस्तरा, चटाई ।

बोरो ( हि० स्त्री० ) टाटकी छोटी थैली, छोटा बोरा ।

बोरो ( हि० पु० ) एक प्रकारका धान । साधारणत धान तीन प्रकारका होता है, माउम, आमन, बोरो । यह धान नदीके किनारेकी मीडमें बोया जाता है और बहुत मोटा होता है ।

बोरोवास ( हि० पु० ) पृथ्वी बङ्गालमें होनेवाला एक प्रकार का दास ।



बीछाड ( हि० खी० ) १ वायुके भौंकेसे निरछी आती हुई बूँदोंका समूह, भूटास । लगातार वात पर वात जो किसीसे कही जाय । ३ वर्षाको बूँदोंके समान किसी वस्तुका बहुत अधिक न क्षयमें कही आ कर पडना । ४ बहुत सा देते जाना या सामने रखते जाना । ५ व्यय पूर्ण वाषय जो किसीको लक्ष्य करके कहा जाय, ताना । बीजार ( हि० खी० ) बीछाड देणे ।

बीडहा ( हि० वि० ) पागल, वाबल ।

बीना ( हि० पु० ) समुद्रमें तैरता हुआ निशान, तिरा ।

बीद ( स० डी० ) बुद्धने प्रणीत बुद्ध अण् । १ बुद्धगत निरोधर शास्त्र । मत्स्यपुराणमें लिखा है, कि बृहस्पति इस शास्त्रके प्रवक्तृक थे । ( मत्स्यपु० २४ अ० ) २ बुद्ध मतावलम्बी धर्मसम्प्रदाय । बुद्धशास्त्र वेत्ति श्रद्धीते या अण् । ( ति० ) ३ बुद्धशाखाध्यायी । ४ बुद्धशास्त्र वेत्ता । पर्याय—मिन्नक, क्षपण, श्लोक, वैनासिक ।

बौद्धधर्म—भगवान बुद्ध द्वारा प्रवृत्त धर्म । भगवान शाक्यबुद्धने मत्त जिस धर्मके अनुसार चल्ते हैं, वही बौद्धधर्म है ।

बौद्धधर्मकी उत्पत्ति ।

भारतवर्षमें बौद्धधर्मका आविर्भाव कबसे हुआ, उसका ठीक ठीक पता लगाना कठिन है । पर हा इतना स्थिर हो चुका है, कि उपनिषद्बुद्धके अस्तित्वके साथ ही साथ बौद्धधर्मका आविर्भाव हुआ । कारण, बौद्धधर्मके लिपिपत्र और सूत्रकी पर्यालोचना करनेसे साफ साफ, प्रालम्ब होता है कि उम समय उपनिषद् या वेदान्तमत उन्नतिकी चरम सीमा पर था । योगसाधना वेदान्तका अन्त नहीं होने पर भी यद्यद्यमें वेदान्तिकोंने उमकी पूर्णाङ्गना सम्पादन करनेमें विघ्नमत प्रकाश नहीं किया है । योगसूत्रकार पतञ्जलिके समयमें योगधर्मकी जितनी उन्नति तथा पुष्टि हुई थी, बुद्धदेवके आविर्भावकालमें उतना जनसमाजमें प्रचार न रहने पर भी योगचर्या जो मिथु या संन्यासिसमाजमें विशेष आदृत और अनुष्ठित थी, यह प्राचीन बौद्धग्रन्थादिकी आलोचना करनेसे स्पष्ट प्रतीत होता है । बुद्ध प्रवृत्त कर्मवाद और आत्माका देहा न्तरवाद उम समय जनसाधारणमें प्रचलित था, इनमें सम्वेद नहीं । बौद्धगण यद्यपि आत्माका अस्तित्व

स्वीकार नहीं करते, किन्तु वे कर्मफलको अपने धर्मतत्त्व का मार मानते हैं । जीव या आत्माका यह धर्म बौद्ध मनोविज्ञानका सम्पूर्ण विरोधी होने पर भी उम समयके वेदान्त और योगतत्त्वके प्रचारविपयके निदर्शन स्वरूप में बाङ्गोंको धर्मनीतिमें स्थान मिला था ।

बौद्धधर्मके आविर्भावके समय शिक्षित और चिन्ताशील भारतवासियों पारलीकिंग मुक्तिचिन्ता गभीर दुश्चिन्ता ( बौद्धमतसे सम्वेग ) में परिणत हुई । तब वे किस आदर्शका लक्ष्य कर धर्म और नीतिके पथ पर अग्रसर हुए थे, उसकी आलोचना करनेसे जान पडता है, कि उस समय सभी कष्टमय जीवनकी यन्त्रणा, बाह्य तथा मृत्युको आशङ्कामें डर गए थे । वारम्बार जन्म परिग्रहके मयने उनकी इस पीडादायक चिन्ताको और भी भयानक बना दिया था । सभी सम्प्रदायके मनुष्य उस समय जीवनको अत्यन्त गुरुभार समझने और इसीको ही मानवजीवनके परमात्त अविमिश्र दुःखका कारण मानते थे । इसीसे सभी पुनर्जन्म या 'समारव्यन्वणा' से मुक्तिलाभ करनेमें व्यतियत्त थे । सर्वोका यह दृढ विश्वास था, कि पुनर्जन्मनिवारणके विभिन्न उपाय हैं और उनका अनुष्ठान करनेसे ही मुक्तिलाभका पथ प्रशस्त होता है । अज्ञान या अविद्याका पराजय और श्रेष्ठतम सत्य ( सम्बोधि ) का लाभ करना हा इस पथाश्रयका एकमात्र उपाय है । वेदान्तिकोंका कहना है, कि परमात्मा और जागृतात्माके एकात्त भावमें एक साथ सश्रयका नाम सत्य या तत्त्वज्ञान है । साध्यवादी कहते हैं, कि आत्मा अनन्त तथा विशुद्ध है और भूत या तत्त्वसे सम्पूर्ण विच्छिन्न है । आत्मा देहायच्छिन्न रहने पर भी कदापि परिवर्तना नष्ट नहीं करती । बौद्धगण आत्मा या परमात्मारूप किसी पदार्थका अस्तित्व स्वीकार नहीं करते ।

आर्यसत्य ।

सम्बोधि लाभके बाद महात्मा शाक्यबुद्धने आर्यसत्य और प्रतीत्य समुत्पादका प्रचार किया । बुद्धदेव स्वयं अपने । यही दो उनके प्रचारित धर्मकी मूलभित्ति है, यथा—दुःख, समुदय, निरोध तथा प्रतिपद या मार्ग ये ही चार सत्य आर्यसत्य हैं । दुःख है, यह बात कोई

बोर्ड ( अ० पु० ) १ किसी स्थायी कार्यके लिये बनी हुई समिति । २ नागजरी मोटी टफती । ३ मालके मामलोंके फैसले या प्रबंधके लिये बनी हुई समिति या कमेटी । बोर्डिंग हाउस ( अ० पु० ) वह घर जो विद्यार्थियोंके रहने के लिये बना हो, छात्रावास ।

बोलगोबास ( हि० पु० ) उड़ोमा और चट्टामाकी ओर हानेवाला एक प्रकारका वाम । यह घर्मेमें लगता है और टोकर बनानेके काममें आता है ।

बोल ( हि० पु० ) १ चञ्चल, वाणी । २ ध्वज्य, लगती हुई बात । ३ कथन वा प्रतिपत्ता । ४ वाजोंका वधा हुआ शब्द । ५ प्रतिज्ञा, वादा । ६ सत्या, अर्थ । ७ गीतका टुकड़ा, अंतरा । ८ एक प्रकारका सुगंधित गोंत्र । इसका स्वाद कड़वा होता है । यह गूगलकी जातिके एक पेड़ से निकलता है ।

बोलचाल ( हि० स्त्री० ) १ कथोपकथन, बातचीत । २ मेल मिलाप, परस्पर सद्भाव । ३ चलती भाषा, रोजमर्रा । ४ हस्तक्षेप, छेड़छाड़ ।

बोलता ( हि० पु० ) १ ज्ञान कराने और बोलनेवाला तत्त्व, आत्मा । २ अर्थायुक्त शब्द बोलनेवाला प्राणी, मनुष्य । ३ हुक्म । ४ जीवनतत्त्व, प्राण । ( वि० ) ५ वाक्पटु, धांचाल ।

बोलती ( हि० स्त्री० ) वाक्, वाणी ।

बोलना ( हि० क्रि० ) १ मुँहसे शब्द निकालना । २ किसी वस्तुका शब्द उत्पन्न करना । ३ बुद्ध कहना, कथन करना ।

बोलवाना ( हि० क्रि० ) १ उच्चारण कराना । २ बुनवाना देना ।

बोलवाला ( अ० पु० ) एक बहुत ऊँचा सदाबहार पेड़ । इसकी लकड़ी बहुत मजबूत और भीतर ललाई लिये बहुत अच्छी होती है ।

बोलमर ( हि० पु० ) मीलसिरी ।

बोलास ( हि० पु० ) वह अज्ञ या भाग जो किसीका वह दिया गया हो ।

बोलाना ( हि० वि० ) बुझाना देना ।

बोलावा ( हि० पु० ) निमन्त्रण, आह्वान ।

बोली ( हि० स्त्री० ) १ वाणी, मुँहसे निकली हुई आवाज ।

२ अथयुक्त शब्द या वाक्य, उचन । ३ नीग्राम करने वाले धीरे लेनेवालेका जोरसे दामन करना । ४ वह शब्द जिसका व्यवहार किसी प्रदेशके निवासी अपने भाव या विचार प्रकट करनेके लिये सबेते रूपसे करते हैं, भाषा । ५ अर्थायुक्त शब्द वा वाक्य । बोलीदार ( हि० पु० ) वह आसामी जिसे जंगनेके लिये येन यो ही जवाबी ऋह कर दिया जाय, कोर् लिखा पदो न हो ।

बोलाह ( हि० पु० ) घोड़ोंको पक जाति ।

बोवना ( हि० क्रि० ) गेना देखो ।

बोवाई ( हि० स्त्री० ) बोआई देखा ।

बोवाना ( हि० क्रि० ) बोनका काम दूरसे कराना ।

बोह ( हि० स्त्री० ) झुपकी, गोता ।

बोहनी ( हि० स्त्री० ) १ किसी सौदेगी पहली बिक्री । २ किसी दिनकी पहली बिक्री । जब तक बोहनी नहीं हुई रहती, तब तक वृक्षानदार किसीको उधार सौदा नहीं देते । उनका विश्वास है कि पहली बिक्री यदि अच्छी होगी, तो दिन भर अच्छी होगी । इस पहली बिक्रीका प्रारंभ किसी समय सब देशोंमें माना जाता था ।

बोहारना ( हि० क्रि० ) बुराना बनो ।

बोहारी ( हि० स्त्री० ) भाइ ।

बोहिया ( हि० स्त्री० ) चीनमें होनेवाली एक प्रकारका चाय । इसकी पत्तिया छोटी और काली होती हैं ।

बौंड ( हि० स्त्री० ) १ टहनी जो दूर तक ओरीके रूपमें गई हो । २ लता, बेल ।

बौंड ना ( हि० क्रि० ) लताको तरह बढ़ना, टहनी फेंकना ।

बौंडर ( हि० पु० ) घूम घूम कर चलनेवाली वायुका भौंडा, बगडा ।

बाडी ( हि० स्त्री० ) १ पीछों वा लताओंके वे कच्चे फल जो साररहित होते हैं । २ फली, छीमा ।

बोभाना ( हि० क्रि० ) १ सज्जनास्थाका प्रलाप, सपनेमें कुछ कहना ।

बोवाल ( हि० वि० ) पागल, मनको ।

बोवालाना ( हि० क्रि० ) कुछ कुछ पागल हो जाना, सनक जाना ।

बोया ( हि० स्त्री० ) हवाका तेज भौंडा जो घेगमें आंघोरी कम हो ।

बीछाड ( हि० खी० ) १ वायुके भौंजेने तिरछी आती हुई बूँदोंका समूह, भूटास । २ लगाताग वात पर वात जो किसीसे बहो जाय । ३ वर्षाको बूँदोंके समान किसी वस्तुका बहुत अधिक स रसामें बहतीं वा कर पडना । ४ बहुत सा देते जाना या सामने रखते जाना । ५ व्यय पूर्ण वाषय जो किसीको लक्ष्य करके कहा जाय, ताना । बीछार ( हि० खी० ) बौद्धाद देणे ।

बीडहा ( हि० वि० ) पागल, वावला ।

बीता ( हि० पु० ) समुद्रमें तैरता हुआ निशान, तिराटा ।

बौद्ध ( सं० क्ली० ) बुद्धने प्रणीत बुद्ध अणु । १ बुद्धद्वय निरोधपर शास्त्र । मत्स्यपुराणमें लिखा है, कि बृहस्पति इस शास्त्रके प्रवर्तक थे । ( मत्स्यपु० २४ अ० ) २ बुद्ध मतावलम्बी धर्मसम्प्रदाय । बुद्धशास्त्र वेत्ति अभीते वा अणु । ( लि० ) ३ बुद्धशास्त्राध्यायी । ४ बुद्धशास्त्र वेत्ता । पर्याय—मिन्नक, क्षपण, श्लोक, चैनासिक ।

बौद्धधर्म—भगवान बुद्ध द्वारा प्रवर्तित धर्म । भगवान शाक्यबुद्धके भक्त जिस धर्मके अनुसार चरते हैं, वही बौद्धधर्म है ।

बौद्धधर्मकी उत्पत्ति ।

भारतवर्षमें बौद्धधर्मका आविर्भाव कबसे हुआ, उसका ठोक ठोक पता लगाना कठिन है । पर हा इतना स्थिर हो चुका है, कि उपनिषद्बुगके अस्तानके साथ ही साथ बौद्धधर्मका आविर्भाव हुआ । कारण, बौद्धधर्मके लिपिपत्र और सूत्रकी पर्यालोचना करनेसे साफ साफ, मालूम होता है, कि उस समय उपनिषत् या वेदान्तमत उन्नतिकी चरम सीमा पर था । योगसाधना वेदान्तका अङ्ग नहीं होने पर भी यथार्थमें वैदान्तिकोंने उसकी पूर्णाङ्कता सम्पादन करनेमें विघ्नमत प्रकाश नहीं किया है । योगसूत्रका पतञ्जलिके समयमें योगधर्मकी जितनी उन्नति तथा पुष्टि हुई थी, बुद्धदेवके आधिर्भावकालमें उतना जनसमाजमें प्रचार न रहने पर भी योगचर्या जो भिक्षु या संन्यासिनमाजमें विशेष आदृत और अनुष्ठित थीं, यह प्राचीन बौद्धग्रन्थादिनी आलोचना करनेसे स्पष्ट प्रतीत होता है । बुद्ध प्रवर्तित कर्मवाद और आत्माका देहांतरवाद उस समय जनसाधारणमें प्रचलित था, इनमें संदेह नहीं । बौद्धगण यद्यपि आत्माका अस्तित्व

स्वीकार नहीं करते, किन्तु वे कर्मफलको अपने धर्मतत्त्व का मार मानते हैं । जीव या आत्माका यह धर्म बौद्ध मनोविज्ञानका सम्पूर्ण निरोधी होने पर भी उस समय के वेदान्त और योगतत्त्वके प्रचारविषयके निदर्शन स्वरूप में बौद्धोंको धर्मनीतिमें स्थान मिला था ।

बौद्धधर्मके आविर्भावके समय शिक्षित और चिन्ताशील भारतवासियोंका पारलौकिक मुक्तिचिन्ता गभीर दुरिचिन्ता ( बौद्धमतसे सम्बन्ध ) में परिणत हुई । तब वे किस आदर्शका लक्ष्य कर धर्म और नीतिके पथ पर अग्रसर हुए थे, उसकी आलोचना करनेसे ज्ञान पड़ता है, कि उस समय सभी ऋषय जीवनकी यत्नता, वाद्ध्य तथा मृत्युको आजङ्गसे डर गये थे । वारम्बार जन्म परिग्रहके अपने उन्नीस पीडादायक चिन्ताको और भी भयानक बना दिया था । सभी सम्प्रदायके मनुष्य उस समय जीवन में अत्यन्त गुरुभार समझते और इसी को ही मानवजीवनके एकमात्र अविमिश्र दुःखका कारण मानते थे । इसीलिए सभी पुनर्जन्म या 'समारयन्वणा' से मुक्तिलाभ करनेमें यत्नियस्त थे । सर्वोका यह दृढ़ विश्वास था, कि पुनर्जन्मनिवारणके विमिश्र उपाय हैं और उनका अनुष्ठान करनेसे ही मुक्तिलाभदा पथ प्रशस्त होता है । अज्ञा या अविद्याको पराजय और श्रेष्ठतम सत्य ( सम्बोधि ) का ज्ञान करना हा इस पथाश्रयका एकमात्र उपाय है । वैदान्तिकोंका कहना है, कि परमात्मा और जीवात्माके एकान्त भावमें एक साथ सश्रयका नाम सत्य या तत्त्वज्ञान है । सत्य ज्ञान कहते हैं, कि आत्मा अनन्त तथा विशुद्ध है और भूत या तत्त्वसे संपूर्ण विच्छिन्न है । आत्मा देहायच्छिन्न रहने पर भी कदापि पवित्रता नष्ट नहीं करती । बौद्धगण आत्मा या परमात्मारूप किसी पदार्थका अस्तित्व स्वीकार नहीं करते ।

भार्यतत्व ।

सम्बोधिलाभके बाद महात्मा शाक्यबुद्धने आर्य सत्य और प्रतीत्य समुत्पादका प्रचार किया । बुद्धदेव मन्द था । यही दो उनके प्रचारित धर्मकी मूलभित्ति है, यथा—दुःख, समुदय, निरोध तथा प्रतिपद या मार्ग ये ही चार सत्य आर्यसत्य हैं । बुद्ध है, यह बात सर्वो



अस्वीकार नहीं कर सकते। दुःख रहना ही उसका कारण (समुदय) है। इस दुःखका निरोध करनेके लिए अग्र्य ही कोई पथ या उपाय (मार्ग) है।

प्रतीत्यसमुत्पाद।

प्रतीत्यसमुत्पाद वारह प्रकारका है, इसका दूसरा नाम 'द्वादशनिदान' भी है। इस द्वादश निदानका उद्देश्य है दुःखका यथार्थ कारण निर्णय करना। आयुर्वेदके साथ निदानका जो सम्बन्ध है, आयुर्वेदके साथ द्वादशनिदानका भी वही सम्बन्ध है। द्वादशनिदानके नाम ये हैं—अग्नि, मस्तिष्क, विज्ञान, नामरूप, पञ्चायतन, स्यर्ग, वेदना, लज्जा, उपादान, भय, जाति, जरामरण, शोक, परिवर्तना, दुःख, दौमनस्य, उपायाम इत्यादि।

बुद्धदेव शब्द देता।

मनुष्य पहले अविद्याच्छत्र अर्थात् अज्ञान निद्राभिभूत रहते हैं। थोड़ी चेतना लाभ करनेसे ही वे जितने ही सस्कारके घनीभूत हो जाते हैं—उस समय भी उनके पूर्णचेतना नहीं होती। सस्कारके बाद विज्ञान या चेतना होती है। चेतना होनेसे प्रत्येक नाम और रूप का ज्ञान होता है। नामरूपको उपलब्धिके बाद पञ्चायतन अर्थात् पंडिन्द्रियकी क्रिया आरम्भ होती है जिससे गहरी वस्तुके साथ सम्पर्क होता है। सम्पर्कसे घटना या अनुभूति और अनुभूतिसे लज्जा अर्थात् सुखप्राप्ति तथा दुःखपरिहारकी इच्छा होती है। लज्जासे कार्यको चेष्टा या उपादान उत्पन्न होता है। चेष्टाका आरम्भ होनेसे एक अवस्थायी उत्पत्ति होती है जो अच्छी या बुरी भी हो सकती है। इस अवस्थायी नाम है भय। इसके बाद ही जाति या नवजीवनको उत्पत्ति होती है। जन्मको उत्पत्ति होती है, उसका विनाश अवश्यम्भावी है। सुतरा जीवनमें शोक, दुःख जरामरण प्रभृतिका अग्र्य ही भोग करना होगा। जिससे इस जरामरण दुःखद्विसे निस्तार मिले उस पथका आधिकार करना ही बुद्धधर्मका मुख्य उद्देश्य है। यही भी योगशास्त्रके साथ उक्त मतका उत्तम विरोध नहीं है। अग्नि ही सभी अमद्गुणका निदान है। इसका विनाश करना दोनों ही उद्देश्य है। किन्तु इसमें एक कठिना समस्या है। योगशास्त्रकार दार्शनिक ब्राह्मणवादी—वे अमृतत्व और

धपरिवर्त्तनशीलताके भाकाशी है। जो क्षणस्थायी तथा परिवर्त्तनशाल है, नहीं अमद्गुण है और इसका परिहार करना ही जीविका प्रधान कर्त्तव्य है। किन्तु बौद्धधर्म आत्माके अस्तित्वका स्वीकार नहीं करते। आत्माके सम्बन्धमें तीन मत प्रचल हैं—

(१) शाश्वतवाद—आत्मा इहलोक तथा परलोक दोनों लोकमें वर्त्तमान रहती है।

(२) उच्छेदवाद—आत्मा केवल इसलोकमें ही वर्त्तमान रहती है।

(३) अडमन—आत्मा इहलोक अथवा परलोकमें प्रवृत्तिकरूपसे वर्त्तमान नहीं रहती।

हिन्दूधर्म और बौद्धधर्म को कर्मवादमें भी प्रभेद है। हिन्दूगण आत्माके अमरत्व पर विश्वास करते हैं और इनका कर्म ही इसी विश्वासके ऊपर संस्थापित है। आत्माके अमरत्व पर अविश्वासो बौद्धोंने ऐसा न मान कर कर्मवादको काटछाट कर अपने मतानुसार कर लिया है। बौद्धधर्ममें कर्मका इस प्रकार वर्णन किया है,—“मनुष्य को मृत्यु है जैसे उसके भिन्न भिन्न खण्ड भी उसीके साथ विनष्ट होते हैं। किन्तु उसके कर्म द्वारा विनष्ट खण्डका जगह नये खण्ड उपस्थित होते हैं तथा इन्हीं सब खण्डों द्वारा गठित अन्य एक जोय परलोकमें जन्म-ग्रहण करता है। यद्यपि यह जोय भिन्न खण्ड द्वारा गठित है, किन्तु कर्म एक रहनेके कारण यह जोय और मृत मनुष्य दोनों ही एक हैं। सुतरा ससारमें जाय यद्यपि अस्थायी जन्ममृत्युके अधाम है, तो भी एक कर्म-सूत्र द्वारा हा उसका एकत्र स्थिर रहता है।”

ऐसी गति ज्ञान या युक्ति घटिभूत ही प्रतीत होने पर भी कुछ विशेष होता जाता नहीं है। कारण, बौद्धधर्म मानवज्ञानके अतीत और सदा नित्यके ऊपर प्रतिष्ठित है ऐसा बौद्धगण विश्वास करते हैं।

“सचम अनित्यम्” सभी अनित्य क्षणस्थायी है—यद्दीर्घाका एव मूलसूत्र है। इस मूलसूत्र पर बहनेरे आक्षेप करते हैं,—“यदि सभी अनित्य या क्षणस्थायी हैं, तो कर्म किस प्रकार जन्मजन्मान्तरमें स्थायी होगा ?” इसके उत्तरमें कहा जा सकता है, कि समस्त पार्थिव आनन्द ही। जन्म कर्म द्वारा मानवजीवन

जन्मजन्मान्तरमें प्रयित है, वह आदर्शसूत्र पार्थिव अनित्य वस्तुके मध्य नहीं गिना जाता ।

एक और भी कठिन समस्या है। बौद्धधर्मग्रन्थमें बहुत सो पौराणिक गल्प पाये जाते हैं ।

इन सब विषयोंकी आलोचना करनेसे यही मालूम होता है, कि परवत्तो बौद्धशास्त्रधर्ममें जिस धर्मकी कथा पाई जाती है, महात्मा बुद्धका प्रचारित मूलधर्म उससे पृथक् है। किसी किसी पण्डितका कहना है, कि महात्मा शाक्यबुद्धने कर्मवादका प्रचार नहीं किया और न अतिरिजित उपन्यास, रूपक गल्प या आत्ययिका ही उनके ज्ञानगर्भ तथा तत्त्वज्ञानपूर्ण उपदेशको कलङ्कित कर सकती है। उनके निर्वाणप्राप्तिके वाद नितने धर्म प्रथम सङ्कलित हुए हैं, उतने ही वे तानारूप आयजना तथा ज जालजालसे पूर्ण हैं ।

अत्रा तर विषयके सम्बन्धमें जो कुछ हो, बौद्धधर्मको मूलनैतिकी कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। दार्शनिकम ध्या प्रदान करनेसे बौद्धधर्मको निरोधर माया वाद कहा जा सकता है। पाश्चात्य दार्शनिक वार्कली का मायावाद भी इसी प्रकारका है। बाह्यतत्त्वकी एक सत्त्वा है इस नान्त सत्कारके उशीभूत हो कर मनुष्य नाना प्रकारके स्रममें पतित होते हैं। मनुष्य अपनी अनुभूतिके निरा और कुछ अनुभव नहीं कर सकते, वे स्वय ही अपनी अनुभूतिके कारण हैं। स सारके समस्त ज्ञात और ज्ञेयपदार्थ कर्त्ताके ज्ञानानुसार हैं। वे सभी 'बह' अर्थात् 'मै' के फलस्वरूप हैं, 'मै' के लिये 'मेरे' द्वारा 'मुझ' में हो वर्धमान है। वार्कलीके मतसे ईश्वरवाद है, किन्तु बौद्धमतसे नहीं, सिर्फ इतना ही प्रमेद है ।

सत्त्वाका विभिन्न उपादान ।

प्रत्येक जीवके दो विभिन्न उपादान हैं, नाम और रूप । नाम द्वारा मानसिक गुण और रूप द्वारा बाह्य गुण प्रकाशित होते हैं । वेदना, सद्भा, स स्कार तथा विज्ञान ये चार गुण 'नाम' द्वारा और मृत्तिका, वादि, अग्नि तथा मयन् ये चार महाभूत तथा इनसे उत्पन्न सभी पदार्थ 'रूप' द्वारा प्रकाशित होते हैं ।

उपयुक्त सभी गुण या स्कन्धको समष्टि अथवा

जन्म और पुनर्जन्मके कारणका नाम है कर्म । अत यैसा कहा जाता है, कि नाम और पुनर्जन्मकी धारा ग्राहिक समष्टिका नाम स सार है। कर्मका आरम्भ नहीं, किन्तु अन्त हो सकता है। इस अवस्थाप्राप्तिके आठ पथ निर्दिष्ट हुए हैं ।

मुक्तिपथ ।

निर्वाणकामी जीवकी चार अवस्थाका अतिक्रम करना पडता है। जो क्रमागत इन चार अवस्थाको प्राप्त हुए हैं, वे यथाक्रम श्रोत आपन्न, सद्ददागामी, अनागामी और अर्हंत कहलाते हैं। इनका साधारण नाम ध्रायक या सेवक है। प्रन्धेन अवस्था फिर दो भागमें बटो है, जैसे मार्ग और फल ।

मुक्तिसामीरी चार अवस्था ।

( १ ) जिनने प्रथम अवस्था प्राप्त की है उनका नाम है श्रोत आपन्न । इन्होंने स योजन ( मानवप्रवृत्ति ) के प्रथम तीन बन्धनका अतिक्रम किया है, इन्हें अपाय या किसी विषयका भय नहीं ।

( २ ) जो फिरसे मनुष्ययानिमें जन्म लेते हैं, वे सद्ददागामी हैं। वे यज्ञत सन्धेहादि प्रथम तीन बन्धन से मुक्ति नहीं पाते; इसके सिवा उन्होंने राग ( अनुराग, स्नेह, ममता ), द्वेष और मोह इन तीन शत्रुओंको उशी भूत किया है ।

( ३ ) जो अनागामी पांच बन्धनसे मुक्त हुए हैं। कामलोकमें उाका पुनर्जन्म न हो कर ब्रह्मलोकमें ही जन्म होगा ।

( ४ ) अर्हत्—जो समुदय क्षयवितता दूर कर समस्त क्लेशोंकी उपेक्षा करनेमें समर्थ है, जिसे प्रजारके प्रलोभनमें भी जो नोतिपथसे विन्युत नहीं होते, जिनके समस्त षत्तव्यकर्म सम्पन्न और सभी बन्धन छिन्न हुए हैं, वे ही अर्हत् हैं। वे चार प्रकारकी उच्चप्रवृत्ति लाभ करते हैं—उनका किन् पुनर्जन्म नहीं होता ।

निराण ।

जो उक्त चार अवस्थाका क्रमागत अतिक्रम कर मुक्ति पथके पथिक हैं, वे ही प्रकृत आर्य हैं। आर्यके जीवन का मुख्य उद्देश्य है निर्वाणलाभ । निर्वाणके विषयमें बहुत कुछ कहना है, यहा पर २० दी जानी है ।

निर्वाणता पराङ्मता है— अर्थात् इस म मार्गम रह कर जो निर्वाणलाभ करते हैं, वह वैदिकान्तिकोंका जीवन्मुक्ति कहा जा सकता है। यही प्रथम निर्वाण है। इसका दूसरा बौद्धनाम उपाधिशेष है। अन्य निर्वाणका नाम है परिनिर्वाण। मृत्युके बाद पुद्गलण इसी निर्वाणके अधिकारी होते हैं। इस निर्वाणलाभसे निरकालके लिये सभी प्रकारकी पार्थिव कल्याणका अवगमन होता है। यह त्रिशुद्ध आनन्दकी अवस्था तथा अनन्ददात्म्यायी है।

इस परिनिर्वाण प्राप्तिके बाद अनुभवक्षमता वक्ष्यमान रहती है या नहीं, यही पत्र आलोच्य विषय है। बौद्धधर्मका मूलसत ले कर विचार करनेमें निर्वाणप्राप्तिके बाद अनुभवक्षमताका रहना सम्भवपर प्रतीत नहीं होता, किन्तु इस विषयमें बौद्धोंके मनमें भी नियम मन्दैर जा पड़ता है। कारण उन्होंने जब बुद्धसे सुना, कि वे पूर्व जन्मकी सभी घटनाएँ कह सकते हैं तब उनके मनमें यह संस्कार हो सकती था, कि निर्वाणप्राप्तिके बाद भी स्मृति और अनुभव रहनेकी सम्भावना है। जो कुछ हो, इस सम्बन्धमें आलोचना करना महात्मा बुद्ध का ही विषय है।

धर्म-साधना ।

निर्वाणप्राप्तिकी चेष्टा करनेमें बहुत ध्यानधारणाका प्रयोजन है। इस उच्च अवस्थाका आयोजन करनेमें जिस स्तोत्राकी आवश्यकता है, उसका नाम भावना, (अर्थात् चर्चा या अनुज्ञालन) है। इसके चार स्तर हैं—मैत्री, करुणा, मुद्रिता (सन्तोष) और उपेक्षा। योगियोंकी साधना-रथाके साथ इसका सादृश्य है। इसका दूसरा साधारण नाम प्रहाविहार है।

सत्यायुक्तार और भी एक भावनाका उल्लेख देवियोंमें आता है। उसका नाम 'अशुभ' भावना अर्थात् शरीरमें जो सब घुणित भाव है, उनकी उपलक्ष्य है। यह भावनाका अर्थ यथा नहीं, किन्तु उपलक्ष्य है। यह अशुभ दश प्रकारका है। पालिग्रन्थमें इस दश अशुभ भावनाके नाम ये हैं—१ उद्बुधभाव, २ विनीलक, ३ त्रिपुण्ड्र, ४ विच्छिन्नक, ५ त्रिपयाथिनक, ६ हतविर-चित्तक, ७ रोहितक, ८ पुण्ड्रक, ९ अट्टिक। रत्न, माम,

अस्थि, कृमि प्रभृति द्वारा देहका जो अग्रस्थान्तर होता है, यह इस अशुभ द्वारा ही सूचित हुआ करता है।

उक्त दश प्रकारके अशुभ तथा चार प्रकारके प्रज्ञा विहार ४० 'कमत्थान' या धर्म कार्यके अङ्गविशेष विद्युद्धिमार्गमें वर्णित है। ललितविरतरमें ये सब १०८ कर्माण्युपके अन्तर्निविष्ट हैं। अशुभभावनामें एक प्रकारकी गूढ साधना भी है जिसका नाम कसिण अथवा कस्त्यायन है। इस साधनाके समय जिन दश वस्तुओंके प्रति मन संयोग कर भावना करनी होती है, उसके नाम ये हैं, यथा—मृत्यु, चारि, अग्नि, वायु, नील, पीत, लोहित, ज्वेत, आगेरु और शून्य या शून्य भावना।

उक्त चालोस प्रकारके मध्य दश प्रकारकी अनुष्णुति का उल्लेख देनेमें आता है। यथा—बुद्ध, धर्म, सद्गुण, वेदता, नीति स्वाग, मृत्यु, देह, आनापास्मृति (निवास प्रभावमयी नियमावता) तथा जाति या निर्वाण।

आनापास्मृति द्वारा निश्वास प्रवासके प्रति मन त्रिपिष्ट कर विनये ही निर्दिष्ट विषयकी चिन्ता करनी होती है, यह अति उच्च अङ्गकी समाधि है।

कमत्थानके मध्य 'आरण्य' नामक चार विशेष हैं, ये भी ब्रह्मलोकागुगत हैं। इन चारोंके नाम हैं 'आकाशा-नाश्चायता (आकाशानन्त्यायतन) 'त्रिपुण्ड्रनाश्चायतन' (विगतानन्त्यायतन) 'जाति-अप्रयायतन' (आधि-अन्त्यायतन) और 'परासमाप्रानान्तनाश्चायता' (नैवसत्ता नामे-शायतन)। जो ध्यान और समाधि द्वारा ये सब लोकविषयलाभ करनेमें समर्थ है उदरों ही धर्मकी अत्यन्त उच्च अवस्था प्राप्त की है। इसमें भी एक उच्चतर अवस्था है जिसका नाम है सन्नायेदित्तिसंघ। इस अर्थस्थानमें साधककी त्रिमोक्ष लाभ होता है।

यद्यपि कमत्थानके मध्य चार प्रकारके ध्यानका विशेष उल्लेख नहीं है, किन्तु स्वरूप मित्रा कर देनासे मालूम होगा, कि चार प्रकारके ध्यानकी अवस्था साधनाके चार अङ्गविशेषरूपमें वर्णित है। यथा परमात्मा के अग्रस्थान है, कि बौद्धधर्म-प्रत्यागमन चाल पालने ही ध्यानका प्रथम प्रवर्णन थी। किन्ती किन्तीके मतमें

ध्यानकी अवस्था पाच प्रकारकी बतलाई गई है। उन्होंने द्वितीय अवस्थाको दो भागोंमें बाटा है।

ध्यानका विषय रहनेमें समाधिका विषय भी कहना होता है। समाधिके नाग प्रकारके भद्र देवोंमें आते हैं। बौद्धशास्त्रमें तीन प्रकारकी समाधिके नाम ये हैं— सचितकं सचिचार, अचितकं विचारमात्र और अचितकं अचिचार। अन्य तीन प्रकारकी समाधिका नाम शून्यता, अनिमित्त (कारणहीन) और अप्पाणिहित (अप्रणिहित) या विशेष उद्देश्यरहित है।

समाधिके दो भोवान हैं। निरुष्ट समाधिका नाम उपचारसमाधि और उन्नुष्ट समाधिका नाम अप्पा (अपणा) समाधि है। महायानमतवाचकजी बौद्धगण और भी अनेक प्रकारकी समाधि बतलाते हैं। प्रज्ञा पारमिताप्रथममें १०८ प्रकारकी समाधिका उल्लेख मिलता है।

पूर्वकथित चालीस प्रकारके कर्मस्थानके अलगवा और भी दो एकका उल्लेख देया जाता है। आहारपटि षडुपासत्रजा (अर्थात् आहारप्रतिकृतसखा या आहार्य द्रव्यमें अपरिव्रताबोध), चतुर्धातुव्यथान अर्थात् चार महाभूतका निर्णयकरण इत्यादि।

भुगस्थान और जीवभेदीभेद।

बौद्धशास्त्रके मतसे विश्वप्रहाण्डमें बहुसंख्यक चक्र घाले हैं। पृथ्वी चक्रालमें त्रिभिन्न पृथ्वी, सूर्य, उन्द्र, स्वर्ग और नरक हैं। हम लोगका पृथ्वीके षष्ठ स्थरमें मेघ अथवा सुमेरुपर्यंत प्रतिष्ठित है। जिसके चारों ओर प्रधान प्रधान कुलाचल पर्यंत और इन सब पर्वतोंका अतिक्रम कर चार महाद्वीप अग्रस्थित है। उत्तरमें उत्तरकुण्ड, मेघ पर्वतक दक्षिणमें जम्बूद्वीप (भारतखण्ड), पश्चिममें अण्ड-मोक्षान और पूरुवमें पूर्वदिह वनप्रान है।

प्रत्येक गोलकमें तीन लोक या धातु हैं। सबसे निम्न कामलोक, उसके ऊपर रूपलोक और स्वर्गपरि अरूपलोक है।

सबसे निम्न लोकमें १ प्रकारके देवताका वास है— १ चागें और पाल, २ तैलीस देवता, ३ यमगण, ४ तुषिगण, ५ निर्माणरतिगण ६ परिनिर्मित और चण

वसिगण। इनके मित्र मनुष्य अमुर प्रेत और जीव लोक तथा नरक मिला कर कुठ ग्यारह कामलोक है।\*

रूपप्रलोक सोलह भागोंमें विभक्त है। जिनके काम को जीत कर देवत्व लाभ किया है, वे अपने अधिकारा पुमार इस लोकमें वास कर सकते हैं। इन लोकोंमेंसे १५ निम्नलोक प्रलयपरिसर, १२ प्रलयपुरोहित, ३२ महाप्रलय, ४५ पश्चिम, ५५ अयमाणाम, ६४ धामाखर, ७५ परीत्तशुभ, ८५ अयमाणशुभ ९५ शुभ घृन्म, १० वा इन्द्रफल, ११वा अमसत्त्व, १२वा अग्रह, १३वा अनपसु, १४वा सुदश, १५वा मुद्गर्शन और १६वा सर्वोच्च लोक अकनिष्ठ है। प्रथम ध्यानके पहले, दूसरे और तीसरे स्तरमें जो पादशौं हैं वे प्रथमसे तृतीय लोकके अधिकारी होते हैं। द्वितीय ध्यानके अधिकारी चतुर्थमें पृष्ठ लोकके वासोपयोगी हैं। तृतीय ध्यानके अधिकारी सातवें से नवें लोकमें, चतुर्थ ध्यानके अधिकारी दशवेंसे ग्यारहवें में और अनागामिगण ग्यारहवेंसे सोलहवें लोकमें वास करनेके उपयुक्त हैं। रूपप्रलोकके बाद अरूपप्रलोक है। इसका पुन भिन्न भिन्न स्तर निर्णित हुआ है।

जीवोंके रहनेके लिए कुल इकतीस स्थान निर्दिष्ट है। सबसे निम्न स्थानका नाम नरक या निरय है। आठ प्रकार नरकका उल्लेख है, यथा—मन्वीय, कालसूत, सघात, रौरव, महारौरव, तपन, प्रतापन और अर्वाचि। उक्त आठ नरकके सिवा और भी अनेक छोटे छोटे नरक देवनेम आते हैं।

नरकके ऊपर इतरप्राणियोंका स्थान है। इसके ऊपर प्रेतलोक और उसके भी ऊपर असुर लोक है। असुरमें राट्ट सप्त प्रधान हैं। तस्क और इसमें ऊपर उक्त तीन लोक अपायलोक कहलाता है। यही भागका स्थान है।

इकतीस स्थानके अलावा और भी एक लोक है जहा प्राणिगण अपने कर्मफलानुसार उच्च और नीचगति पा कर रहते हैं। जिसने अति उच्चपद पाया, उसकी भा गति अयोग्य हो सकती है। जेवन् युद्ध, प्रत्येक युद्ध और अहंताकी अयोग्यि भली होता।

\* पत्तिगिगर, अगुनरिहाय और सुत्तल दया।

निम्नलिखित रूपसे श्रेणीबिभाग किया गया है,—(१) सुद्ध, (२) प्रत्येकसुद्ध, (३) अहंत्वा, (४) देव, (५) ब्रह्म, (६) गन्धर्व, (७) गरुड, (८) नाग, (९) यक्ष, (१०) बुम्भाण्ड, (११) असुर, (१२) राक्षस, (१३) प्रेत, (१४) नरक-धामी ।

उक्त श्रेणीबिभागके मध्य केंद्र प्रथमोक्त तीन ही शालोच्य विषय हैं ।

अहंत्वा ।

निर्वाणप्राप्तिके पूर्व चार सोपानका उल्लेख किया गया है । सर्वप्रथम सोपान पर अहंत्वागुण अवस्थित है । सामान्य मनुष्यकी अपेक्षा इनकी मानसिक शक्ति कदा श्रेष्ठ है । ये अर्थ, धर्म, निरुक्ति और प्रतिभा यही चार प्रकारकी प्रतिस्मिद्धिसे सम्पन्न हैं । इसके सिवा इनके पांच प्रकारकी अभिज्ञा है । अभिज्ञा द्वारा वे अमानुषिक और वाञ्छन्यजनक कार्य करनेमें, पूर्व जन्मका कथा स्मरण रखने, पृथिवीके सभी शब्द सुनने तथा उनके अर्थ समझने, पृथिवीकी समस्त पटनाएँ देखने और जीवोंकी मृत्यु तथा पुनर्जन्म किस प्रकार होता है, उसे समझनेमें समर्थ हैं । इनके और पाँच प्रकारकी अभिज्ञा है जिसके द्वारा सभी नीच प्रवृत्ति समूल विनष्ट हो जाती हैं । अहंत्वागुण इन्हीं आठ प्रकारकी विद्यासे विनिष्ट है । इनका सर्वप्रधान गुण प्रज्ञा है । इस प्रज्ञाके बलसे ही वे मज्जिमसुद्ध पार हो जाते और इन्हीं विधि से प्राणविमुक्त कहलाते हैं । अहंत्वाके निम्नश्रेणीस्थ आवागामा प्रभृति इस अवस्थाको लाभ नहीं कर सकते ।

जा आय स ज्ञा पानेके अधिधारी हैं, उनमेंसे अहंत्वागुण ही सर्वश्रेष्ठ है । यद्यत्तवग आय, अहंत्वा तथा ध्यायव ये तीन शब्द एक ही अर्थमें व्यवहृत हों, ज्ञाने हैं ।

परवर्तिहान्ते महायान सम्प्रदायविगण प्रत्येक शब्द से पुनः पुनः शब्दोंसे सम्पन्न और उन शब्दोंके अर्थोंके अन्वयान्तरोंके प्रति भी उन्हीं शब्दोंका प्रयोग करती हैं ।

महायानगण समस्त बौद्धमतानकी यान या मध्य मार्गमें विभक्त करते हैं—(१) ध्यायकयान, (२) प्रत्येक सुद्धयाग और (३) वैधिसरयान । सद्धमपुण्डरीक

प्रथमे इन्हीं तीन यानका उल्लेख है । इस प्रथमके मतने रथचरि अर्थात् पुनर्मतावलम्बिगण ध्यायक, निर्जन में चिन्तापरायण दार्शनिकगण प्रत्येकसुद्ध और निरुद्ध, गुरु तथा धर्मप्रचारकगण वैधिसरय कहलाते हैं ।

यद्यपि बौद्ध धर्मावलम्बियोंमें श्रेणीबिभाग तथा मन विरोध होता है, तीनों अन्तमें सर्वोत्तरी वरम गति एक है । इस्मलिय तथागतने कहा है, 'मैं सभी जीवोंकी निर्वाणके पथ पर ले जाऊँगा । समस्त जीव मेरी ही सम्ता हैं ।'

प्राचीन प्रत्येकसुद्धयाग और महायान बौद्धोंका कहना है, कि अहंत्वाकी अपेक्षा प्रत्येकसुद्ध कदा श्रेष्ठ है । प्रत्येकसुद्ध भी बुद्धकी तरह अपनी क्षमता द्वारा निर्वाण प्राप्तिके उपयोगी ज्ञानालम्ब करनेमें समर्थ हैं, किन्तु धर्मप्रचार करना उनका कर्तव्य नहीं है । वे समस्त विषयके दर्शन नहीं कर सकते और सभी विषय बुद्धके निम्न आत्मनके अधिकारी हैं । प्राकृतिक नियमके बलसे बुद्ध और प्रत्येकसुद्ध एक मज्जमयाम नहीं कर सकते ।

सुद्ध ।

सुद्ध कीर्ति है, इसे जाननेमें उनके पांच और आभ्यन्तरिक सभी लक्षणोंकी आलोचना करना आवश्यक है । वाह्यलक्षणके मध्य प्रथम उल्लेखयोग्य ३२ महापुरुषलक्षण हैं, बाद ८० प्रकारके अनुश्लेषन । इनके अन्तर्गत २१६ माहूल्य लक्षणको कथा वर्णित है । बुद्धघटे प्रत्येक पैरमें १०८ करके ये लक्षण या चिह्न प्रचलित रहते हैं । बुद्धगण अपने वैश्वर्य द्वारा प्रतिदिन छ बार पृथ्वीकी स्पर्शते हैं । फोद नोए करते हैं कि गौतम बुद्धघके १० हाथ थे और फिर कोई उनके १८ हाथ पतलाते हैं । सिंहल प्रदेशके श्राद्ध शीलशुद्ध पर उपास जो श्रीपदचिह्न देना जाता है, वह ५ फुटमें अधिक लम्बा और ३२ फुट चौड़ा है ।

सुद्धकी मानसिक गुणावली तीन भागोंमें विभक्त है—(१) दश वर, (२) अठारह आवेगिकधर्म और (३) चार वैशारद्य । दश वर रहनेके कारण बुद्धका दूसरा नाम दशवर्ष भी है । उपयुक्त या अनुपयुक्तताका ज्ञान, कर्मका अवश्यभाविकता, उद्देश्यताका प्रवृत्तपथ, विभिन्न भूतका ज्ञान प्रभृति दश वरका उल्लेख है । भूत

भविष्यत और वृत्तमान सभी घटना देवनेकी क्षमता प्रकृति अद्वारह आरेणिक धम ह । निम्नलिखित चार वैश्या रथको कथा देगो जातो हे, यथा—( १ ) तथागतका सबक्षण क्षमतालाभ, ( २ ) पापहानता, ( ३ ) निर्वाण प्राप्तकी अन्तराजोका क्षानलाभ और ( ४ ) प्रकृत मुक्ति पथ दिग्यानेकी क्षमता ।

बुद्धके अन्य नाम—जिा, सुात, तथागत, अहत्, शास्ता, भागत, दशबल, स्नेहविद्, सबल, निभय, निरयथ, पुरुषदम्यसारथि, पडभिह, अनुज, नरोत्तम, देवाति देव, विकालस, विप्रानिहार्यसम्पत्, इत्यादि । ये सब नाम समो समयके बुद्धोंने प्रति प्रयोज्य हें । वृत्तमान समयके बुद्धके अर भी कितने विशेष नाम हें,—शाक्यमि, शाक्य मुनि, शाक्य, शाक्यपुद्गल, सिद्धार्थ, सर्वार्थसिद्ध, गोक्षेत्रिनि, वादित्यधनु, सूर्यवश, आङ्गिरस और गौतम इत्यादि ।

प्राचीन गौड शास्त्रग्रन्थके मतानुसार उत्तमा युग के बुद्धके पूर्व और भी २४ बुद्ध हो गये हें जिनके नाम ये हें,—दीपकर, कीण्डिय, मङ्गल, सुमना, रेत, शोमित, अनोमदर्शी, पद्म, गान्ध, पञ्चोत्तर, सुमेध, सुनात, प्रियदर्शी, अष्टदर्शी, उगदर्शी, सिद्धार्थ, पुष्य, विपारिय, शिखा, त्रिभुम्, कृबुच्छन्द, कोणागमन और काश्यप ।

भूतकालमें जैसे बुद्ध थे, भविष्यत्में भी तैस ही बुद्ध अत्ताण होंगे । उनका नाम मैत्रेय होगा और अजित उनकी उपाधि होगी । वृत्तमानमें ये तुपितस्वर्गमें गोजि सरस्वरूपमें वास करने हें ।

समस्त तथागत हो प्राय समतुल्य हें, पर मान्दान्य विषयमें परस्परमें थोडा प्रमेद देखा जाता ह । शारीरिक आकृति और आयुपरिमाणमें कुछ विषयता हे । किन्तीने क्षणियरशमें और किन्तीने ग्राहणकु ठमें जन्मग्रहण किया हे । सभी बुद्धोंने एक ही प्रकारकी नीतिका प्रचार किया था । कालक्रमेण जब प्रचारिन सत्य अन्तर्हित हो गया तब एक बुद्धने जन्मग्रहण कर अपनी क्षमताके बलसे बिना किन्ती शुभकी सहायताके ही पूर्व प्रचारित नीति और सत्यका पुन आविष्कार किया ।

महायान सम्प्रदायवाण और भी एक प्रकारके बुद्ध बतलाते हें जो ध्यानोबुद्धके नामसे प्रसिद्ध हें । इनके नाम हे—वैरोचन, अक्षोभ्य, रत्नसम्पत्, अमिताम और

अमोघमिद्धि । इनके फिर पञ्चशक्ति या पञ्चतारा महा योगिनी हें ।

पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे शाक्यमुनि ही एकमात्र ऐतिहासिक बुद्ध हें । इनके पहले जिनके नामका उल्लेख मित्रता हे, उह कल्पित हे ।

हम लोग बुद्धके ग्राहलक्षण और आभ्यन्तरोण गुणा उलोको समालोचना कर बुद्ध कौने व्यक्ति थे इसकी जो मोमासा करना चाहते हें, उसे बुद्ध स्वय ही इस प्रश्नका उत्तर दे गा हें । बुद्धको एक वृक्षके नीचे उडा हुआ देण कर एक ग्राहणने पूजा, "क्या आप देवता हें ?" बुद्धो उत्तर दिया, "नहीं ।" "क्या आप गन्धर्व हें ?" उत्तर मिला 'नहीं ।' ग्राहण बोले "क्या आप यक्ष हें ?" बुद्धने कहा, 'नहीं ।' ग्राहणने फिर पूजा "क्या आप मनुष्य हे ?" बुद्ध बोले, "मैं मनुष्य भी नहीं हू ।" इस पर ग्राहणने बडे ही आश्चर्यान्वित हो पूजा "तब आप कौन हें ?" बुद्धने उत्तर दिया, "हे ग्राहण ! मैं बुद्ध हू ।" अतएव देखा जाता हे, कि बुद्ध मनुष्यका अद्वैत धारण करके भी प्रकृति और गुणमें मनुष्य नहीं थे । वे बुद्ध थे—किन्तु मनुष्य, देवता, यक्ष या गन्धर्व नहीं थे । अनेक अग्रन्थाका अतिराम करनेमें बुद्धत्व प्राप्त होता हे । बोधिसत्व ।

जो बुद्ध होनेके अधिकारी हे, वे बोधिसत्त्व कहलाते ह । बोधिसत्त्व शब्दका साधारण अर्थ 'बुद्धिमान जीव' हे । जिनके बोधि हे, वही बोधिसत्त्व हें । किन्तु यह 'बोधि' सम्यग् सम्बोधिमें पारणत नहों हाती । वह अरस्या प्राप्त करनेमें बुद्ध हो जाता हे ।

बोधिसत्त्वका तीन अरस्था हे—अभिनाहार ( अर्थात् बुद्धत्वप्राप्तिको उच्च आकाक्षा ), ध्यानरण ( तथागत कर्तृक भविष्यदाणी कि वे बुद्ध होंगे ) और हलाहल ( बुद्धत्व प्राप्त होनेसे पुन जन्म न होगा, इसके लिये मान्दधुनि । यही उसका शेष जन्म हे, पुन जन्मग्रहणरूप पलेडा भोगता नही पडेगा ) कोर कोर बोधिसत्त्वके जोरन-कार्यको चार भागोंमें बाटने हे, यथा—मानस ( अमिप्राय ), प्रणिधान ( दृढ संकल्प ), वाक्प्रणिधान ( वाक्य द्वारा संकल्पका प्रकाश ) और प्रियरण ( अमिष्यति ) ।

बुद्धकी तरह बोधिसत्त्वके भी

महासत्त्व नाम हो अरुसर व्यरहन् एता है। बौद्धधर्म प्रथमं पटुतसे बाधिमत्त्वके निरूपण पाये जाते हैं जिनमें से मंत्रेय, लोकेश्वर या अरुलाकिनेश्वर और मञ्जुश्री समधिक विख्यात हैं।

जो भविष्यन्मै सुख होंगे, उन्हे बहुतजन्म अतिक्रम करने होंगे। पूर्वम जो सत्र बुद्ध हुए, वे अपनी बुद्धत्व प्राप्तिके विषयको भविष्यहाणो कर गये हैं। उनके जन्मजन्मान्तरके कार्य और गुणना स्वैकरीं प्रथमा नातक तथा अथदान नामक सिद्धग्रन्थमें वर्णित हैं। वर्तमान भद्रकालके बुद्ध शाक्यमुनिन पूर्वजन्मके सम्प्रत्यमे वेसे ही असम्भ इतिहास तथा भक्त चिन्तित और प्रवर्णित हैं। पालि चरित्यापिटक और आयशूर खिच पाठकमाना गया।

बोधिमत्त्वमें अनेक नीतिन तथा मानसिक गुणोंका रहना आवश्यक है। सर्वोको अपेक्षा प्रधान गुण है जीवोंके प्रति दया।

पालिधर्मप्रथम दशपारमिता या महागुणना उल्लेख देखनेमें आता है। यथा—दान, शील, विराम या (निर्ग्राम या समार त्याग), पञ्चा (प्रज्ञा), त्रिरिय (नीर्य), पन्ति (श्रान्ति), सच्च (मत्त्वयादिता), अधिदान (दृढसङ्कल्प), मैली (मैली या ममता), उपेक्षा (उपेक्षा)।

इन सब आध्यात्मिक गुणके अलावा बोधिमत्त्वमें उच्चमानसिक गुणना रहना भी परमावश्यक है। इन गुणोंका नाम है बोधिपथधर्म और इनकी संतोम है। ये सब गुण वेदक बोधिसत्त्वके लिये प्रयोजनीय नहीं हैं, अर्हत्त्वमें भी इनका रहना आवश्यक है। ये गुण मात भागोंमें विभक्त हैं। यथा—

(१) देह, अनुभूति, उपस्थित चिन्ता और धर्म सम्यग्धमे चार प्रकारका 'स्मृत्स्मरणान्त' अर्थात् स्मृति या चिन्ताशीलता।

(२) चार प्रकारके सम्मत्पधान (सम्यक् प्रहाण) अर्थात् प्रयोग या सन्त्वेष्ट।

(३) चार प्रकारका इन्द्रियाद (अस्त्रियाद) या अलौकिक क्षमता।

(४) पञ्च इन्द्रिय।

(५) पञ्च पाक् (मानसिक शक्ति)।

(६) मात प्रकारकी बाधि, योग्यद्व या सम्बोधन, स्मृति, अनुमन्वितसा, उपम प्रीति, शम, मनःसयम, सनाधि, उपेक्षा।

(७) अष्टाङ्गक मार्ग या आठ प्रकारका पथ।

उपयुक्त गुण और धर्मके सिवा बोधिसत्त्वके अन्यान्य गुणना उल्लेख ना जगह जाह पर देखनेमें आता है।

उनक भारतीय प्राचीन बौद्ध-सम्प्रदायके महापस्तु नामक ग्रन्थमें बोधिसत्त्वना १० प्रकारकी भूमि या ब्रह्मत्वा वर्णित है। यथा—प्रसूदिता, विमला, प्रमाकरी, शक्तिमती, मुहुर्जाया, अभिसुजा, दुरङ्गमा, बाला, मधुमती और धर्ममेधा।

बोधिमत्त्वमें जसे उस वय गुणोंका रहना आवश्यक है, वैसे ही उनके अधिभार भी असम्भव है।

शाक्यमुनिनके बुद्ध होनेके पहले जिन सब बोधिसत्त्वों ने जन्मग्रहण किया था, वे उन्हींके अन्तार माने जाते हैं। किसी किसी सम्प्रदायका विश्वास है, कि बुद्धत्वप्राप्ति के बाद भी उन्होंने अन्तार लिया है। ये लोग अगोरुके पुत्र बुणालकी भी एक अन्तारमे गिाते हैं।

वीर्यमनीति।

ब्राह्मण्य धर्म को वाणि वेद, स्मृति, पुराण, साधुओंके आचरण और व्यक्तिगत प्रियके ऊपर सहायित है, किन्तु बौद्धधर्म नीति केवल बुद्धके उपदेश तथा उनके प्रदर्शित पथका अनुगत है। अर्हन् बुद्धों जो एक ही धर्म नीतिनो प्रतिष्ठा की थी, वेसा भी तने कह सकते। कारण, उन्हींके प्रथम ही भवेत् समस्त प्राचान् स्मृतिरिणी धर्म नीतिनो यथेष्ट सुरयानि की है। उन्हीं यह भी कहा है कि प्राचीन ब्राह्मणगण अपने उच्च धर्म और नीतिके लिए स मारमें प्रसिद्ध थे।

बौद्धधर्म अपने धर्मप्रथमे ब्राह्मण्य दिग्दुधर्मकी कथा करीकार तो नहीं करने, पर याम्बधर्म उन्हींके अनेक धर्म नीति, साधु और सन् आचारका पर्यहार दिग्दुधर्म प्राचान्मे ग्रहण किया है।

मुल्लाने उपदेश दिया है, कि पत्थन धार्मिक गृहपति अन्य धारणकी पञ्चाग्नि प्रदान करना चाहिए। परिवार, अतिथि, गिनूगण, भूनामो और दानाओंकी यह पञ्च

वलि या उपहार देना उचित है। यह उपज्ञानि स देह स्मृतिमें ग्रहण किया गया है।

बौद्धधर्ममें आत्मका अस्तित्व स्वीकार नहीं करने पर भी महात्मा बुद्धने अनेक समय आत्म या त्रिररका उल्लेख किया है। इससे जान पड़ता है, कि अज्ञातकारमें हिं दुधम से बौद्धधर्मोत्पत्ति का कुछ अंश लिया गया है।

और भां, मालूम होता है, कि अहिंसा, पितामहात्म्य भरणपोषण तथा शिक्षादान आदि नीति भी प्राचा धर्म सूत्रसे ग्रहीत हुई हैं।

बौद्धधर्म प्रथम जगह नहीं धर्मनीतिके सम्बन्धमें उपदेश दिया गया है, प्रायः वही पर पत्राङ्गना व्यवहार हुआ है। समस्त अश पद्यमें लिखित नहीं होने पर भी कुछ अंश जो पद्यमें लिखे गए हैं, वे सत्य ही वेदान्तमें आते हैं। ये सत्य उपदेश बहुत जगह बौद्धधर्मके मूलसूत्रमें विभिन्न तथा कही कही विरुद्धमतप्रकाशक हैं। यह वेदान्तसे प्रतीत होता है, कि वेदान्त, बौद्धधर्मके कर्त्तव्य और अकर्त्तव्यके निर्धारणके सिद्धा और कोड भी धर्मनीतिके पहले उत्सर्जन न थी। धर्मविस्तारके साथ ही साथ वह भी लिपिवद्ध हुए हैं।

बौद्धधर्मनीतिकी प्रथम धारणा धर्ममें उद्भव वाते वाद रूपकी हीं। (१) विद्वत् और गृही दोनों धर्मोके लिए ही नीतिका उपदेश दिया गया है। यह गण कुछ परिमाणमें साधारण नातिने अतीत है। मुनिने किसी प्रकारकी आसक्ति रहनी चाहिए और न प्राति अथवा अप्रीतिजनक कोड वाप करना ही उचित है। जो पुत्रन्याका परित्याग कर सकते हैं, वे शान्ति कहलाते हैं। मित्रधर्मग्रहणके लिए जो अपनी स्वयंकी छोड़ सकते और जो किसी भी प्रकारसे स्वो पुत्रका तत्त्वाधारण नहीं करते हैं उक्त ही सारमें जत्यन्त सत्कार्य करनेकी प्रज्ञा और समान्तर मिलता है। फिर अन्यत्र स्वानोमें ऐसा भी देखा जाता है, कि स्त्री ही सर्वात्प्रेष्ठ पशु है और वी पृथिवीका सर्वश्रेष्ठ धन कहलाती है। बौद्धधर्मप्रथम ऐसा ही वैषम्य जस्तर देखा जाता है।

उत्तर और दक्षिण प्रदेशोंके मध्य धर्मनीतिके नियममें काइ विशेष वैषम्य नहीं दिखाई पड़ता। हा, उत्तराञ्चलके बौद्धधर्मोंमें सत् और सुनाति अधिस्तर रूपमें धर्मोंमें परिणत हुई स्त्री जान पड़ती है। यही कारण है, कि इनका धर्ममत दक्षिणाञ्चल बौद्धधर्मोंकी अपेक्षा समाधिर् विस्तृत हुआ है।

चाहे भारतमें ही अथवा अन्य देशोंमें, सभी जगह नाति लो भाषोंमें विभक्त हो सकती है, शत्रु जिन सब विरोधा उठाना करनेसे ज्ञानरतों के विरोधा विद्विष्ट ही और शत्रु विषय अज्ञातकार पाठन करनेसे प्रशंसा, गौरव अथवा पुरस्कार मिलता है। प्रथम श्रेणीके नियमोंका अग्र्य ही प्रतिपालन करना चाहिए, क्योंकि ऐसा नहीं होनेसे समाजव्यथा सिद्ध हो जायगा। इनका नाम धर्म है और द्वितीय श्रेणीके अनुशासनका नाम नियम। नियम सभी समय सबकोके अग्र्य प्रतिपाल्य नहीं हैं, तब जो उनका पालन कर सकते हैं वे जनमानसमें महान तथा आदर्श समझे जाते हैं।

बौद्धधर्मनीतिके मध्य देश शिक्षापाद भी इसी प्रकार के हैं, मित्रसंप्रदायकी अग्र्य ही इनका प्रतिपालन करना चाहिए। जो गृही हैं उनके लिए प्रथम पाच ही प्रतिपात्य हैं। इस देश शिक्षापाद द्वारा निम्न लिखित वाये निषिद्ध हुए हैं,—

- ( १ ) जीवनाश, ( २ ) चाय, ( ३ ) व्यभिचार, ( ४ ) मित्रावहिता, ( ५ ) मद्यपान, ( ६ ) अनियमित समयमें गाल, ( ७ ) सामारिक आमोदप्रमोदमें योगदान ( ८ ) अलङ्कार अथवा विद्यासटय्यकी व्यवहार, ( ९ ) गृहत् अथवा मायमज्जापूर्ण पालङ्का व्यवहार और ( १० ) अर्थग्रहण।

प्रथम पाच सूचकें त्रिषु प्रयोच्य हैं, किन्तु इसमें भी कुछ विशेषता है। शत्रु या शत्रुत्वसयम अर्थात् सन्यासी और सन्यासिनोके लिए सब प्रकारसे स्वापुण्यमर्गका परिहार और गृहोके लिए घर पुरुष या परस्त्री गमननिषिद्ध है, इत्यादि।

जो ससारका परित्याग कर धर्मण संप्रदायभुक्त हुए हैं, उनके त्रिषु उक्त शिक्षापादके सिवा और अनेक कठोर नियम विधिबद्ध हैं। इनके

\* भङ्गुत्तरनिवास २५ भाग ६८ पृ०।



भागों में विभक्त हो सकते हैं जिनमेंसे प्रथम दो भाग प्रायः उपयुक्त दृश्यानिज्ञावादके समान हैं। किन्तु नृत्तोंय अरुस्था इत्यने पहले उद्यत है। इस अरुस्थामें पशु घटि, अधिव्यथाणी या उद्योतिपत्राग्रमें त्रिष्वाम प्रभृति निरिद्ध है। प्रातःपथधर्मके चौथे आश्रममें यति या मुक्त प्राक्षुणोंकी जो अवस्था है, धर्मणोंकी तीसरी अरुस्था वैसी ही है।

बौद्धधर्ममें प्रशामाका विषय यह है, कि कर्मस्वर और घृणित धर्ममत इसमें स्थानन हो पा सकता।

बौद्धगण विरुद्ध धर्म जादियोंके साथ नृत्तपि तर्क वितर्क नहीं करने और आकारण ही उन्हें किसी प्रकार धमन्तुष्ट कराने नहीं चाहते हैं। बुद्ध स्वयं भी जनसाधारणके मतका सम्मान करते थे। यदि किसी शिष्यका अपराध उनके निश्च विचार्य विषय होता था, तो वे इस प्रकार विचार कर देते थे, कि जनसाधारणमें कोई भी उनके प्रति असन्तुष्ट नहीं हो सकता था। वे कोई चेम्ना उपदेश या आदेश नहीं देते थे, जो अत्यन्त कठोर सा प्रतीत हो। जब देवदत्तने बुद्धदेवसे अनुतोष किया था, कि धर्मणगण कदापि मत्स्य या मासाहार न कर सके, चेम्ना नियम किया जाय, तब देवदत्तके इस अनुतोष पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया था। (१)

चेम्ना गण प्रवर्तित है, कि एव जैनने बुद्धदेवसा शिष्यप्रवृत्त प्रहण किया। बुद्धने उन्हे उपदेश दिया था, 'सुतो! निर्व्रण्णो ( ज्ञात्वाय ) ने बहुत दिन तक तुम्हारे धर्ममें आश्रय लिया है, अतएव जब वे तुम्हारे पास आवे तब उनको भिक्षाप्रदान करना तुम्हारा कर्त्तव्य है।' इससे जाना जाता है, कि अन्य धर्मावलम्बियोंके प्रति बुद्धदेवकी हिंसा या द्वेष न था। किन्तु जो धर्मके बहाने अभिया या कुकिया करते थे वे कदापि बुद्धदेवके श्रद्धास्पर्ध न हो सके। उस समय आज्ञायक नामक एक

सम्प्रदाय था जिसकी अनेक कुकियायोंकी कथा सुनी जाती है। एक दिन एक आदर्मीने बुद्धदेवसे पूछा, 'क्या कोई आज्ञायक मृत्युके बाद स्वर्ग जा सकता है?' इस पर उन्होंने उत्तर दिया,—मुझे ६१ क'परी कथा याद है, इसके मध्य क'प' एक ही आज्ञायककी स्वर्गमें देखा है जो 'कर्म'वादिन' और 'किरियवाद्' (क्रियावाद्) समझता था।

बौद्धधर्मको व्यवहारिक नीतिका विशेषत्व निर्देश करता दुरुद्ध है। इसके दो कारण हैं। प्रथम बौद्धधर्म नीतिके आदर्श और भाग्यत्वके अत्यान्व धर्मके आदर्शमें कोई विशेष पार्थक्य दिखलाई नहीं पता। द्वितीयत विभिन्न बौद्धधर्मप्रदायका भिन्न भिन्न मत है। बौद्धधर्म प्रघात मिश्र या सन्ध्यात्मिका धर्म है। कर्म इसने जब गृहस्थधर्ममें प्रवेश किया, तब स्थान, काल और पाठविशेषमें अनेक नियमादि काट छाँट कर वे गृहस्थके व्यवहारोपयोगी कर लिये गए हैं।

दक्षिण और उत्तरदेशीय बौद्धसम्प्रदायकी जैसी मत विभक्तता देवी जाती है, वैसा ही महायान और हीनयान इन दो सम्प्रदायोंमें भी मतविरोध है। महायानोंके धर्मग्रन्थोंमें अहिंसा और दयाकी जितना श्रेष्ठत्व दिया गया है वन्तरे सम्प्रदायके ग्रन्थोंमें उतना नहीं दिया जाता। इसलिए वे दोनों ही बौद्धधर्मके विशेषत्वसे जान पड़ते हैं।

महायानबौद्धोंका 'पार्श्व' उक्त होने पर भी, उनमें एक उदात्त भाव है। वे अपनी ग्या और उदारता जनसाधारणमें विशेषरूपसे प्रकाशित कर अन्य सम्प्रदायोंमें इन सब गुणोंकी कृति दिखानेके लिए सर्वदा उन पर तोष आक्रमण करने लगे। यही तब, कि राजमार्गवर्गी हीनयान सम्प्रदायके प्रति भी उनका व्यङ्ग्य उतना उदार नहीं था।

यद्यपि धर्मोंने भारतके, अत्यान्व धर्मसम्प्रदायकी अपेक्षा अनेक उदारता लिखा है, धर्ममें सन्देह नहीं। बौद्धधर्मका प्रचार करनेमें वे बौद्धसमाजके मनुष्योंकी हिंस्रसमानताई नई सद्गुण गच्छीके मध्य मण्डलमें प्रयासी नहीं होने। इसलिए बौद्धधर्म समारमें एक मायात्मकी धर्मके जैसा प्रसिद्ध हुआ है।

(१) महायोग ६।३।१।१५, महाभिनिका ( ३।३।५ )

प्रयाग प्राता बौद्धधर्मसम्प्रदाय, अभुत या अलम्बिधम एव मत्स्य और माय प्रदायकी स्वभवा है। महायानमें मनुष्य, हला, भन्व, बुद्ध, कर्, भाव, स्वाम, श्रुत और तरलुका माय प्राता निर्दिष्ट बलवा है।

भारतीय संन्यासधर्म ।

अनेक देशोंमें देजा जाता है, कि समयानुसार मनुष्य चारों ओर सांसारिक और सामाजिक भोगविलासको बहुतायतसे निरक्त हो अथवा अपने मायावीचनमें जिस प्रियतमा आशाको ले कर जीवन धारण करते थे, उनसे निराश हो कर जब सांसारिक सुखकी असारता और अनित्यता समझ सकते हैं, तब वे इस कष्टतापूर्ण सांसारिक सुखका परित्याग कर प्रकृत तथा पवित्र सुखा न्वेषणके लिए निर्जन प्रदेशमें अस्थान पूर्वाक धर्म और ईश्वरचिन्तारूप पवित्र कायमें जीवन विताते हैं । भारत वागै प्राकृतिक सौन्दर्य, प्राचीन आर्याभूमियोंके अतीत जीवन, भारतवासीकी चिन्ताशोलता और अत्यधिक परिमाणमें धर्मानुराग प्रभृतिके कारणसे इस संन्यास धर्म प्रहणको विपासा भारतवर्षमें ही बहुत देवी जाती है ।

यदि प्राचीनकालमें भारतवर्षमें निम्न चार आश्रमों को प्रथा प्रचलित है, उन्हींमें संन्यासधर्मका बीज निहित है । ब्रह्मचर्यको प्रथम अस्थामें जब गुरुगृहमें रहना पड़ता था, उस समय संन्यासधर्मको समस्त ऊडोरताका प्रतिपालन करना होता था । इन्हीं सब प्रथाओंमें बौद्ध भिक्षुओंने प्रहण किया है ।

ब्रह्मचारीकी इच्छा होने पर आजीवन शिष्य भावसे गुरुगृहमें रहना पड़ता था । ऐसे ब्रह्मचारी और बौद्ध भिक्षुके मध्य कोई पृथक्ता नहीं देखी जाती । यदि, मुक्त, संन्यासी और परित्राजक इत्यादि नामसे भी वे परिचित हैं ।

यद्यपि बौद्धधर्मके आभिर्भावका ठोक समय निर्देश करना दुश्वार है, किन्तु सम्राट अशोकके समयमें जो बौद्धप्रसङ्ग प्रतिष्ठित और बहुत से धर्मग्रन्थ लिपिबद्ध हुए थे, इसमें तनिक भी संदेह नहीं । इसका प्रमाण अशोकके अनुशासनसे ही मिलता है । इससे जाना जाता है, कि अशोकके राजत्वके बहुत पहलेसे ही बौद्धधर्मने प्रधान्य लाभ किया था । बौद्धधर्मग्रन्थमें निर्ग्रन्थ और आजीवन सम्प्रदायका बारम्बार उल्लेख देजा जाता है और उनके साथ बौद्धोंका विशेषविषय भी उसमें वर्णित है । इससे मालूम होता है, कि उक्त दोनों सम्प्रदाय ही उस समय प्रचलित थे । इन्हीं सब सम्प्रदायके दृष्टान्तका

अनुसरण कर बौद्धने सप्ताहमें एक दिन धर्मचार्यके लिए निर्दिष्ट किया था । बुद्धदेवने बहुत कम नीति या विधि बनाई थी । अनेक समय वे प्रचलित साधारण मतके ग्रहण हारमें जो अप्रूपणीय समझते, उसे ही ग्रहण करते थे । वे नियम या विधानकी सृष्टि करनेके लिए विशेष उत्सुकता नहीं दिखानते थे तथा नियमरक्षामें सर्वदा लगे रहते थे ।

प्रातिमोक्ष ।

सङ्घके जिन सब विधान द्वारा मण्डलीका शासन या शास्त्रविधान होता था, उसका नाम "प्रातिमोक्ष" (प्रातिमोक्ष) था । पालि ग्रन्थमें जिस प्रातिमोक्षका विधान है, वही सर्व प्राचीन है और वही बौद्ध भिक्षुओंको दण्डविधि है । सभी बौद्धधर्मप्रदायका विधान ऐसा ही है । पर उसकी सख्यामें कमी या वेशी अवश्य देवी जाती है । पालिग्रन्थके मतसे संन्यासियोंके प्रातिमोक्षकी सख्या २२७, चीनदेशमें प्रकाशित धर्मगुप्त सम्प्रदायमें २५०, तिब्बतमें २५३ और महाव्युत्पत्तिमें २५६ है ।

बुद्धदेवका आदेश था, कि प्रति मास दो बार अर्थात् प्रत्येक पक्षमें एक बार उस नियमावलीकी पढ़ना चाहिए । चार भिक्षुक जिस जगह इकट्ठे होते थे, वही इसकी आवृत्ति होती थी । प्रत्येक विधानकी आवृत्ति समाप्त होने पर पाठक पूछते थे, क्या किसी भिक्षुने इसका उल्लङ्घन किया है ? उल्लङ्घन करने पर उन्हें खुले रूपमें सभामें कहना पड़ता था ।

प्रातिमोक्षके सिवा भिक्षुओंके प्रतिपाल्य और भी कितने नियम हैं, जिनके नाम धूताङ्ग या धूतगुण हैं । दक्षिण प्रदेशीय बौद्धोंके ग्रन्थमें इसकी संख्या १३ और उत्तर प्रदेशीय बौद्धके मतमें १२ है । नीचे संक्षिप्त विवरण दिया जाता है ।

( १ ) पाशुबुद्धिक—अर्थात् छिन्न वस्त्र पहण्ड द्वारा बसन बनाना चाहिए । सभी भिक्षु इस नियमका प्रतिपालन नहीं करते, केवल आरण्यक भिक्षु ही इसका विशेष भावसे पालन करने हैं ।

( २ ) तैच्चरिक ( तैचीचरिक ) प्रत्येक भिक्षुको तोनसे अधिक परिधेय नहीं रहने चाहिये ।

( ३ ) पैण्डपातिरु—दरवाजे दरवाजे भिक्षा द्वारा खाद्य संग्रह करना उचित है ।

( ४ ) 'सायदानचारिया' ( सायदान-चर्या ) एक धारने दूसरे धार पर नियमानुसार मित्रा भागनी चाहिए ।

( ५ ) एकामनिक ( ऐकात्मिक )—एक भासन पर बैठ कर आहार करना चाहिए ।

( ६ ) पत्तपिण्डक ( पातपिण्डक ) एक पातसे आहार, ( उत्तर प्रदेशीय बौद्धोंमें यह नियम चालू नहीं है । )

( ७ ) 'चलुपच्छामत्तिक'—आहार्य द्रव्य अमङ्गल मालूम होनेसे उने न पाना ।

( ८ ) आरण्यक—घनमें वास करना ।

( ९ ) रुक्कमृत्तिक ( वृक्षमृत्तिक )—वृक्षके नीचे पाम करना ।

( १० ) 'अवभोवासिक' ( अभ्योवकामिक ) अनाच्छादित स्थानमें रहना ।

( ११ ) 'मोसानिक' ( प्रमाशानिक ) श्मशानमें अथवा उसके समीप वास करना ।

( १२ ) 'यथासन्धतिक' ( याथासंस्तारिक )—जहा रात हो जाय, वहाँ डेरा करना ।

( १३ ) 'नैसज्जिक' ( नैराश्रयिक )—निद्राकालमें भी शयन न कर बैठे रहना ।

उक्त नियम सबोंके लिये प्रयोजनीय नहीं है, तब इनका पालन करना अच्छा ही है । आठवेंसे ले कर ग्यारहवें तक सन्यासियोंके लिये प्रयोज्य नहीं है । ग्यारहवें से तेरहवें तक उनके लिये बिल्कुल निषिद्ध है । गृहीके लिये केवल ५५ और छठा प्रतिपाल्य है ।

प्रमज्या, उपसम्पदा ।

जब कोई पुरुष अथवा स्त्री रमणी स्वसारके भोगसुखका परित्याग कर भिक्षु जीवन विनानिके अभिलाषी या अभि लाषिणी होती थी, तब उन्हें भिक्षु सम्प्रदायमें ले लिया जाता था । इसमें जाति या मर्यादाकी विशेषता न थी । फेरल दस्यु, तक्षर, व्रीतदास, युद्धव्यवसायी और रोगग्रस्त या महापापी व्यक्ति नहीं लिए जाने थे । सङ्घमें प्रवेश करनेका नाम प्रमज्या और भिक्षु क या श्रमण धर्ममें दीक्षित होनेका नाम उपसम्पदा है । प्रमज्या ग्रहणमें तिस्र प्रकार दस्युतन्त्रादि भवोग्य गिने जाते हैं, उसी प्रकार बुद्धमान्वित मनुष्यों

को दीक्षा नहीं दी जाती थी । रमणियोंके दीक्षाग्रहणमें चौबीस अन्तराय थे ।

प्रमज्या और दीक्षा या उपसम्पदाकी पृथक्ता ले कर बौद्धग्रन्थोंने अनेक समय बड़ा ही गोलमाल किया है । तब पर प्रकारसे यही समझ लेना यथेष्ट होगा, कि सन्यास धर्मग्रहणके लिये गृहत्यागका नाम प्रमज्या और उस धर्ममें दीक्षित होनेका नाम उपसम्पदा है । बौद्धधर्म ग्रन्थ पढ़नेसे जाना जाता है, कि बुद्धदेवने पहले साठ शिष्यों को भिक्षु पदमें वरण किया । इन्होंने थोड़े समयमें ही ब्रह्मचर्यधर्मका उत्तरण दिया था । जब धुदगिन्य धर्मप्रचारसे लौट आये, तब उनके साथ बहुतसे मनुष्योंने आकर बुद्धदेवसे प्रमज्या और उपसम्पदाकी दीक्षा मागी । उसी समयसे उन्होंने ऐसा अनुमति दी, कि भिक्षुगण भी दीक्षा प्रदान कर सकते हैं और उसी समयसे मस्तक तथा श्मश्रु मुण्डन और कायायचर्य पहननेका नियम प्रवृत्ति हुआ ।

उस समय दीक्षाग्रहणकारियों के तीन आश्रय लेने पड़ने थे—बुद्ध, धर्म और सङ्घ—'बुद्ध शरणं गच्छामि धर्मं शरणं गच्छामि सङ्घं शरणं गच्छामि ।' ( १ )

प्रमज्याग्रहण और भिक्षु सम्प्रदायमें प्रवेश एक ही समय हो सकता था । जिसके अनेक दृष्टांत हैं । ( २ ) बौद्ध मूलक जब सात वर्षके होते थे, तब वे पितामाता को अनुमति ले ब्रह्मचर्यका अवलम्बन कर वे भिक्षु धर्म-ग्रहणको अपेक्षा करते थे । जब तक बीस वर्षकी उम्र न हो जाती थी, तब तक कोई भी प्रमज्या ग्रहणका अधिकारी नहीं होता था, सुतरा श्रमणोंको १० वर्ष तक ब्रह्मचर्य सीखना पड़ता था । इस समय वे दश प्रकार शिक्षापाठका अभ्यास करते थे ।

अन्य धर्मावलम्बी कोई यदि सन्यासग्रहणको इच्छा करते थे, तो उन्हें भी यथावृत्ति नियमना पालन करना और परीक्षाके लिये उन्हें कुछ दिन तक ठहरा पड़ता

( १ ) महावज्र नामक पाणि ग्रन्थमें यह 'वि-रत्तमना' कृतज्ञात है । साठ व्रतीय प्लुत्तिसन्धयमें वि-रत्तका पला अर्पं चिया गद है—'बुद्ध भिक्षुदानमय्य धर्मविरागनामय्य धर्मं गच्छामि मय' ।

( २ ) दोषर्ग १३५२ ।

था। इस समयका नाम है परिचाम। चूड़ाधारी अग्नि उपासक जटिल तथा शाक्यवंशके सिवा और किसीकी भी (परिचासमित्र) उपसम्पदा लाभ करनेमें नहीं देखा जाता।

मिश्रपदप्रार्थी व्यक्तिकी दश अथवा समयानुसार पाच भिक्षुओंके समक्ष एक परीक्षा देनी पड़ती थी। इस परीक्षाके पहले पदप्राधीको कमण्डलु और कापाय वस्त्रप्रदान तथा एक उपाध्याय या गुरु चुन लेना पड़ता था। भिक्षुओंके मध्य एक मनुष्य सभापतिरूपमें दीक्षाप्रार्थीकी परीक्षा लेते थे। यदि वे सन्तुष्ट होते तब वे वहाके समवेत भिक्षुओंकी उपस्थित व्यक्तिकी प्रार्थना तथा उसकी उपयुक्तता सुना देते थे। उन्हे दो बार अपना नाम प्रकाश करना पड़ता था। भिक्षुगण जब उसे उपयुक्त समझते थे, तब वे मीन द्वारा अपनी सम्मति देते थे। बाद सभापति महाशय भिक्षुपदप्राथीको भिक्षुमण्डलमें प्रहण कर उसे आजीवन केवल चार प्रकारके आवश्यकनीय द्रव्यका भोग और चार प्रकारके पापका परिहार करनेके लिये उपदेश देते थे। चार प्रकार आवश्यकनीय द्रव्यके अलावा अन्यान्य द्रव्य एकवारगी निषिद्ध न था, पर वह आवश्यकनीय गिना जाता था।

रमणियोंमेंसे जो सन्यासधर्म प्रहण करती थी, उन्हे भी पुरुषकी नाईं समी नियमोंका पालन करना पड़ता था। (सुलंग्ग १०।१७)

उपसम्पदा या दीक्षाप्रणालीके सम्बन्धमें उत्तर और दक्षिण प्रदेशोंय बौद्धोंमें सामान्य कुछ कुछ मतभेद रहने पर भी मूल त्रिपयमें कोई वृथक्ता नहीं देखी जाती। (१)

परिधेय।

भिक्षुओंका परिधेय तीन भागमें विभक्त था,— अन्तरवासक, उत्तरासङ्ग और सघाति। अन्तरवासक कमरसे ले कर पैर तक लटकता रहता और कमरमें काप बन्धन या पेटोसे बंधा रहता था। इसका दूसरा नाम है, निवासन। उत्तरासङ्ग उत्तरीयका काम करता था, यह वक्ष और स्कन्धद्वैशके आवरणके लिये व्यवहृत

होता था। सघातिका प्रवृत्त व्यवहार क्या था, इसका निश्चित निर्धारण करना कठिन है। भिन्न भिन्न जगहोंमें मिला कर परिधेय प्रस्तुत किया जाता था। मगधके शशत्रेयके अनुकरण ही इसका उद्देश्य कहा जाता था।

भिक्षुओंको वस्त्र देना गृहोंके लिए पुरण्यकर्म है। प्रत्येक वर्ष वर्षाके अन्तमें परिधेय वितरण करनेका नियम है। इस वितरणकार्यका नाम "कठिन" है। इसके अनेक प्रकारके नियम और प्रणाली हैं। शरीरका आच्छादन करनेके लिए किसी वस्त्रका व्यवहार करना भिक्षुओंकी विलासिता समझी जाती थी। बौद्धग्रन्थमें विलान द्रव्यका व्यवहार निषिद्ध है। काष्ठपादुका (खड्डाऊं) और चट्टोजूनेके व्यवहारमें उतना निषेध नहीं है, छाताका व्यवहार विशेष कारणके सिवा अनावश्यक कीय है, पर पक्षेके व्यवहारकी अनुमति है।

(महाजग २-४ और जुडवग्ग ४।२।२३)

उक्त प्रकारके परिच्छिद्दके अलावा निर्गल्पित द्रव्य भी भिक्षुओंके नित्य व्यवहारमें गिने जाते हैं—एक भिक्षुपात्र, कमरबन्ध, एक सूई (जान पड़ता है, कि फटे कपड़े सीनेके लिए), क्षीरनायके लिए एक क्षुर (अस्त्रुरा) और एक जलपात्र।

उत्तराञ्चलमें भिक्षुगण एक लाठीका व्यवहार करते थे जिसका नाम पफवर था। दक्षिणाञ्चलमें यह 'क्त्तर' कहलाता था।

जपकी माला बौद्धोंके मध्य अब सभी जगह प्रचलित देखी जाती है। किंतु मालूम होता है कि इसका व्यवहार बहुत थोड़े दिनसे आरम्भ हुआ है। जपमालाकी व्यवहारप्रथाको भारतवर्षमें उत्पत्ति हुई है या नहीं इसमें भी घोर सन्देह है।

वर्षान्तर।

भिक्षुओंके वर्षाकालमें किसी एक स्थानमें वास करनेकी विधि थी। उस समय भ्रमण करना निषिद्ध था। आषाढी पूर्णिमामें ले कर कार्तिकपूर्णिमा तक वे घरमें रहा करते तथा कोई कोई एक महीनेके बाद किसी पूर्णकालमें आश्रय लेते थे। उत्तर प्रदेशोंय भिक्षुगण आश्रयके प्रथम दिनसे ले कर कार्तिकके प्रथम दिन तक गृहवास करते थे।

मिथु सम्प्रदायकी सृष्टिके पहले चेमे वासस्थानकी ध्वरगथा प्रवर्तित थी या नहीं, इसका निर्धारण करना मुशक है बहुत से मिश्रुओंको एक साथ रहना चाहिए ऐसा कोई नियम न था। वर्तमान सिंहलवासियों मिथु-गण वर्षाकालमें अपना मठ परिव्याग कर समव्योपयोगी स्थानमें रहते हैं, किन्तु बुद्धप्रोपका विवरण विस्फुल म्यतन्त्र था। इस विवरणमें देखा जाता है, कि मिश्रुओं का कर्त्तव्य यह है,—विहारका तत्त्वावधारण, अपने आहार तथा पाठ्यका संरक्षण, विग्रहादि मूर्त्तियों सेवा और अन्यान्य पदाविहित अनुष्ठान। मिश्रुओंको प्रति दिन उष्य स्वस्मे दो या तीन बार कहना पड़ता था, 'मिं केजल तीन महानिके लिए इस विहारमें धास करनेकी आया ह।'

इस व्यवहारका प्रश्न उद्देश्य यही था, कि वर्षाकाल में जिमसे मिश्रु गण भ्रमण न करें, इसीलिए उस समय उनके गृहवासका नियम निर्दिष्ट हुआ था। मिश्रुओंका वासगृह निर्दिष्ट होनेके सम्बन्धमें ऐसा प्रवाद है,—पहले उनके कोई निर्दिष्ट वासस्थान न था। वन, पर्वतगुहा, वृक्षमूल, शमशा या चेमे ही किसी स्थानमें वे रहते थे। राजगृहके एक समृद्धिशाली वणिग्ने उनके लिए वास रथा वनानेकी इच्छामें गुडदेशकी अनुमति मागी। इस पर उन्होंने मिश्रुओंको विहार आलि पाव प्रसारके वास स्थानमें रहनेकी अनुमति दी और उन वणिग्ने भी उनके धामके लिए एक दिनमें ६० वासगृह बनवाए।

विहार।

'विहार' अर्थसे केवल बौद्धमठ ही नहीं वरन् मन्दिर भी समाका जाता है। वृणनुअभङ्गका कहना है, कि सिंहल में मिश्रुओंके वासस्थानका नाम 'पर्णजाल' और जहा देव देवी आदिकी पूजा होती है उसका नाम 'विहार' है। मिश्रुओंके वासस्थानका दूसरा नाम है "महुा राम"। प्रथेक बौद्धमठके मध्य विहार था। यथा—नालन्दा और सारनाथका विहार।

मध्ययुगमें भारतवर्ष और सिंहलके सभारामवा प्रकृत विवरण चीन देशीय बौद्ध परित्राजकोंके लिखे प्रथम ही मिलते हैं। इसमें पता लगता है, कि जो मठमें रहते, वे 'भावार्थिक' कहलाते थे। राजा तथा पनी

मनुष्योंकी दानशीलताके कारण भ्रमणोंको मठके व्यक्ती चिन्ता नहीं करनी पड़ती थी।

मिथुओंका कर्त्तव्य।

मिश्रुओंके लिए नैमित्तिक कर्त्तव्य है—पुण्यकार्यका अनुष्ठान, धर्मसूत्रपाठ और ध्यानधारणा, किसी मठमें आगन्तुक (अथ स्थानके अपरिचित मिश्रु) के आगमन से मठवासी उनकी सम्पर्कना करते थे। वे उनके यत्नादि द्रोते, पैर धोनेके लिए जल और शरीर मर्दनके लिए तेल का देते तथा नियमित समयमें जो नियमित आहार रहता था, उसे प्रदान करते थे। प्रागन्तुकके कुठ देर विधाम करने पर वे उनसे पूछते थे, 'आपने कबसे मिश्रु प्रत ग्रहण किया है।' प्रश्नका उत्तर मिलने पर उनके लिए निद्रा और वासका स्थान निर्दिष्ट होता था तथा उनकी मर्यादाके अनुसार जो सब परिचर्या विहित थी, उसी प्रकार उनकी सेवा की जाती थी। गमिन (गमनोद्यम), पिएडकारिक ( शिक्षाकार्यमें नियुक्त) और आरण्यक (अरण्यवासी) मिश्रुओंके लिए विभिन्न प्रणालीकी अभ्यर्थना तथा परिचर्या विधियत्त है। (पुलकग)

मठकी कार्यप्रणाली।

मठकी कार्यप्रणाली नियमित करनेके लिए उपयुक्त मिश्रु गण स ध्वारा नियुक्त होते थे। रात्रिपिभाग, वासस्थाननिर्देश भण्डाररक्षा, धरणादिरक्षा, परिच्छद प्रदान, वर्षाकालके लिए म्यतन्त्र भावसे परिच्छद रथा, मठके उपासना तत्त्वावधारण, पानिके जलकी ध्वरगथा आदि नाना प्रकारके कार्य अनेक मनुष्योंके ऊपर सौंपा हुआ था। सब विषयोंका सुनियम विधियत्त था। सुनते किसी प्रकारके शोभालाल होनेका सम्भावना न थी। किसी किसी मठमें मनुष्य नियुक्त नहीं रहते थे। जब आवश्यकता पड़ती थी; तभी मिश्रुओंके ऊपर सामयिक कार्यभार सौंपा जाता था। दृष्टान्तको जगहमें 'नवकर्मिक' पक्ष उल्लेख किया जा सकता है। यदि कोई व्यक्ति मिश्रुओंके लिए घर बनवानेमें प्रस्तुत हो कार्यकी क्षेत्रके लिए एक उपयुक्त मिश्रु चाहते थे, तो वरको उस कार्य पर रथ दिया जाता था।

प्राचीन कालमें धान और उष्यका छोटा बटा ले कर

मिन्मूओंकी पद्मपर्यायामें कोई विशेषता न थी। तब ऐसा भी नहीं कह सकते, कि षोडश श्रेणीविभाग न था। कार्यके भेदसे श्रेणीभेद होता था। जो उन्नतें बड़े थे, वे 'स्वधिर' और जो छोटे थे वे 'दहर' कह्यते थे। इनके अन्वया उपाध्याय (शिष्यादाता), साङ्गविहारी (सदस्य), धाचार्य (अध्यापक) और अन्नो वासी (शिष्याधी) इन कई एक श्रेणीमें भिक्षुगण विभक्त थे। सिंहलमें भी ऐसा ही श्रेणीविभाग था, किन्तु वहाके महानायक पद पर अधिष्ठित हो कर एक भिक्षु सभी कार्यांकी देपभाल करते थे। महायानोंमें ऐसी प्रथा न थी।

मिन्मूओंका खाय।

घी, मक्खन, तेल, मधु, चीनी, मछली, मांस, दूध और दही आदि खाय भिक्षुओंके लिए निषिद्ध था। किन्तु कोई पीडाग्रस्त होनेसे आवश्यकतानुसार इनमेंसे किसी द्रव्यका व्यवहार कर सकते थे। फिर वही ऐसा भी देया जाता था, कि तीन प्रकारमें पवित्र होने पर मत्स्य और मांस भी खा सकते हैं। तीन प्रकार थे—आट्टप, अश्रुत और असन्दिग्ध। इन नियमकी कोई कार्यकारिता न थी। कहते हैं, कि बुद्धने स्वयं ही शूकरका मांस खाया था। वास्तवमें बात यह है, कि वीद्धर्मण इन मत्स्य नियमोंमें ब्राह्मणका पथानुसरण करते थे। मत्स्य मानके व्यवहारमें ब्राह्मणके लिए जितना निषेध है, भिक्षुओंके लिए भी उतना ही है। उस समय देशमें जो व्यवस्था प्रचलित थी, वीद्धोंने अपने समाजमें भी उसीका प्रवर्तन किया था।

वीद्धभिक्षुगण (पुरुष या रमणों) ब्रह्मचारियोंकी तरह अपना आहारोप द्रव्य भिक्षा द्वारा ही सम्रह करते थे, किन्तु प्रभेद यह था, कि ब्रह्मचारी भिक्षा मागते थे, पर भिक्षुओंमें मागनेकी रीति न थी। यदि कोई अपनी इच्छासे कुछ दे देता ले वही वे ले लेते थे।

रोग होने पर औषधग्रहण करनेकी विधि थी। उस समय घी, मक्खन, तेल, मधु और शकर औषधके रूपमें व्यवहार कर सकते थे। नानारूप औषध प्रस्तुत करने की विधि और विधिप्रकारके अथवा विवरण बौद्धग्रन्थमें मिलता है। इससे जान पड़ता है, कि प्रभूत उन्नति हुई थी। (महायग)

प्रातिमोक्ष या दंष्ट्रविधि।

प्रातिमोक्ष प्रधानत आठ भागमें विभक्त था। प्रत्येक अशक्ती थोड़ी विधि नीचे दी जाती है,—  
१म। कठिन अपराध करने पर अपराधी सद्गुण निकाल बहार कर दिया जाता था, सभी बौद्धग्रन्थका इस सम्यग्धमें एक मन था। अपराधका विवरण (१) कामरिपुके वशीभूत हो कर इन्द्रिय निग्रहका प्रतिष्ठाभङ्ग, (२) चौर्य (३) प्राणनाश और (४) अलीकिक क्षमता का कीर्णत्व दिखलाना।

२म। तेरह प्रकारका अपराध। इसकी शास्ति थी किसी किसी निर्दिष्ट समयके लिए सद्गुणें यदि पकरण।

३म। इस विभागके सम्यग्धमें दो विधान हैं। ४थं। इसमें तिरसठ अपराधोंका उल्लेख है और नाना ग्रन्थमें नानारूपसे सन्निवेशित हैं। दण्डग्रहण क्षम प्रायश्चित्त।

५म। इस श्रेणीमें ६२ अनुशासनकी कथाए हैं। इन सब अपराधियोंकी शान्ति प्रायश्चित्त है। चीन देशीय धर्मग्रन्थ और द्युत्पत्ति नामक ग्रन्थमें केवल ६०का ही उल्लेख देया जाता है।

६म। चार प्रकारके अपराध—अपने मुण्डसे अपराध स्वीकार करने पर ही उसका प्रतीकार होता है।

७म। शिक्षाकार्य—नाना विषयकी नियमावली, उद्देश्य, सम्भ्यता और सदाचारकी शिक्षा। पालिग्रन्थमें इसकी संख्या ७५, चीन देशीय ग्रन्थमें १०० और द्युत्पत्तिमें १०६ है।

८म। आईन विषयक सात नीति।

रती भिक्षुके लिए भी उक्त विधि प्रवर्तित हैं, तब श्रेणीविभागमें कुछ परिवर्तन मालूम पड़ता है। किसी समाजमें नियम प्रवर्तन करनेसे सद्गुणरामका शासन विधान करना आवश्यक है। बौद्धसङ्घमें भी शास्ति का विधान है, यद्यपि वह कठिन नहीं, तो भी यथेष्ट है। सर्वप्रधान शास्ति सद्गुणें बहिष्करण है, इससे निम्न स्तरकी शास्ति है कुछ समयके लिए निर्वासन। एक और प्रकारकी शास्तिकथा नाम नि सारण है। निर्वासन और नि सारणमें पृथक्ता जानना कठिन है। निर्वासन

परित्राद और निःकारण प्रभृति दृष्टिके बाद जब मिथुओंकी पुन मङ्गलें लिया जाता था, तब मिथुगण पक्व हो कर निहोण करने थे, कि अपराधोको शास्ति हुई है या नहीं। इस समय २० या इससे अधिक मिथुओंका समावेश होना आवश्यक था। प्रह्लादप्रह्लाद नामक एक प्रकारकी अट्ठमुन शास्तिशा उल्लेख देगनेमें आता है। परिनिर्वाण प्रातिके कुछ दिन पहले बुद्धदेवने चण्ड नामक एक व्यक्तिसे यह शास्ति प्रदान करनेके लिए अपने प्रिय गिण्य आनन्दको आदेश दिया था। आनन्द उस समय जानने नहीं थे, कि प्रह्लाद किस कहते हैं। पूछने पर बुद्धदेवने कहा था, "चण्डको जो तुमी हो मो बोधे, किन्तु मिथु धीमेंसे न तो कोई उसके साथ यातचीत करे और न कोई उसे उपदेश दे या कुछ पूछे।" इसी शास्तिसे चण्डके भारी अनुताप हुआ था और इसीसे यह शास्ति प्रचलित हुई।

अपराध स्वीकार करना अन्त्यतम शास्ति है। पहले नियम था, कि जब भिक्षुगण प्रति पथमें पक्व होते थे, तब यह स्वीकारोक्ति करनी पड़ती थी। किन्तु उसमें विलम्ब होता था और कार्यमें हानि पहुचती थी; इसलिए अन्त में यह नियम हुआ, कि चयोच्येष्ट किसी भिक्षुके समीप स्वीकार्य अपराधकी स्वीकारोक्ति करनी होगी।

उपाख्य।

पहले ही कहा जा चुका है, कि दोक्षाकालमें तीनकी शरण लेनी पड़ती थी। वीक्षोंके घड़ी प्रधान उपाख्य विरत्न या तीन रत्नत्रय है,—सुदृष्ट, धर्म और सद्गुण।

इसके अलावा और भी अनेक पदार्थ हैं, जो वीक्षोंके निवृत्त सम्मान तथा अर्चनके विषय हैं,—साधुमहात्माओं की पवित्र स्मृतिका परिचायक कोई द्रव्य और उनके स्मरणार्थ प्रतिष्ठित स्मृतिस्तम्भादि। इस मनुदायका साधारण पाप है धातु। धातु तीन भागमें विभक्त है,— शारीरिक, उद्देशिक और पारिभोगिक। शारीरिक धातु शरीर मन्थघोष है। उद्देशिक—स्मरण उद्देश्यमें जो संस्थापित है पारिभोगिक—जो मन्थ द्रव्य बुद्धदेवके व्यवहारमें लगे हैं।

तपु और भक्ति नामक दो धर्मोमें जब बुद्धदेव का गिन्यत्व प्रहण किया, तब उन्होंने प्रयापरयज्ञ दो

उनके स्मरणार्थ केशगुच्छ दिया था। यही मन्थोंके लिए प्राचीनतम पवित्रस्मृति है। कोई कोई कहते हैं, कि उन दोनों धर्मोमें नम और केशक मिया उनको पात और तीन परिच्छेद भी पाये थे।

सिंहउर्म भी पेशां ही केशरन्तिका विषय प्रचलित है। कशीज, अशोया, मयुरा आदि आर्यावर्तके धर्म रथानोंमें बुद्धदेवका केश और नगरूप पवित्र स्मृति संरक्षित है और वहा स्तूप बनाया गया है। कशीजके इस स्तूप और पवित्र स्मृतिके सम्बन्धमें वीक्षसमाजमें अनेक अलौकिक कथाएँ प्रचलित थीं। सत्कारके बाद शरीरका जो अणु बच जाता है, यही मन्थप्रधान शारीरिक स्मृति है। बुद्धदेवकी मृत्युके बाद उनके शरीर की अवशेष स्मृति ले कर राजगृह, वैशाली, कपिलवस्तु गङ्गकल्प, रामग्राम, वेदाहोप, पावा और कुशीनगर इन आठ स्थानोंमें आठ स्तूप बनाए गए। उक्त आठ स्तूप के निवा बुद्धदेवके स्मरणार्थ द्रोण और मौर्यवंशियोंने भी दो मूर्तिको प्रतिष्ठा की थी। प्रवाद है, कि बुद्धदेव का एक दांत सार्धम, एक गान्धारमें, एक कलिङ्गमें और एक नागलोक्षमें पूजित होता है।

फायुल नदीके दक्षिण नगर नामक स्थानमें निताने पवित्र स्मृति चिह्न विद्यमान हैं, उतने नहीं हैं। हिन्दुनगरीमें बुद्धदेवके मस्तककी हड्डी और चक्षुगोलक स्वरूप पवित्र स्मृतिरक्षाके लिए तीन विहार प्रतिष्ठित हैं।

सिंहल आदि दक्षिणदेशोंमें भी पवित्र स्मृतिका अभाव नहीं है। सिंहलमें दन्तस्मृति सुप्रसिद्ध है। इसके सिवा यहाके वीक्षोंका विश्वास है, कि नित अर्थात् बुद्धदेवके एक घको हड्डी भा यहा धन है। घेर सरभूते इसके स्मरणार्थ ले जा कर सिंहउर्म रखा है। खना घेलो नामक स्थानमें बुद्धदेवकी अस्थि संरक्षित है, यह भी प्रसिद्ध कथा है।

पूर्व पूर्व युगके सुदीनों कोई शरीरतपणस्मृति किन्तो भी स्थानमें रक्षित है, ऐसा सुना नहीं जाता। किन्तु यह सुननेमें आता है, कि श्रावस्तो नामक स्थानके एक स्तूपमें बुद्धदेवके स्मरण अन्वित संरक्षित है। पर्यन्त साधु और भिक्षुकी अनेक स्मृति बहूतसे स्थान में रक्षित है, इसका पता लगा है।

चीनपरिव्राजक फाहियानने वैशालीके समीप आनन्दके आधे शरीरके ऊपर एक स्तूप बना हुआ देखा था। उनका अपराध शरीर मगधमें पवित्र स्मृतिकी रक्षा करता है। मधुपानगरमें सारिपुत्र, मीदगल्यायन, पूण-मैत्रायणीपुत्र, उपाली, आनन्द और राहुलकी स्मृतिरक्षाके लिये स्तूप निर्माचित हुए थे। यहा उपगुप्तके नव पवित्र स्मृतिरूपमें सरस्विती हैं और मञ्जुश्री तथा अन्यान्य बोधि सत्त्वके स्मृतिसंरक्षणके लिये भी एक स्तूपकी वात सुनी जाती है।

बुद्ध और साधुगण जिन सत्र द्रव्योंका व्यवहार करते थे, वे बौद्धसमाजमें अत्यन्त भक्तिके साथ पूजित होते हैं। किस समयसे इस भक्ति और पूजाका आरम्भ हुआ इस का निर्देश करना कठिन है, किन्तु यह निश्चित है, कि मध्ययुगके बहुत पहलेसे ही उत्तर और दक्षिणभारत में इस पूजाका आरम्भ हुआ था।

फाहियान जब तीर्थभ्रमणमें बाहर निकले थे, तब उन्होंने नगरके समीप बन्दनग्राहकी बनी हुई बुद्धदेवकी यष्टि देखी थी जिसकी लम्बाई लगभग १६ या १७ फुट होगी। इस स्थानके समीप ही उन्होंने एक मन्दिरमें बुद्धकी सघाति देखी थी। यूपनचुअङ्गने वही पर सद्भावति और कापाय दोनों ही देते थे।

तीर्थपर्याटक फाहियानने बुद्धदेवका मिश्रापाल पेजा यरमें देखा था। बुद्धदेवका पवित्र स्मृतिरश्मक नह मिश्रापाल सर्वसाधारण द्वारा पूजित होता था। दो ज्ञातावृद्धके बाद यह पारस्याधिपतिके अधिभारमें था। प्रवाद है, कि मिश्रापाल पहले वैशालीमें था। फाहियानका कहना है, कि उन्होंने ऐसी अभियन्तापनी सुनी थी कि मिश्रापाल पर्यन्त समयमें यथाक्रम तुर्किस्तान, खोटाण, फरावर, चीन सिंहल और भारतवर्षमें भ्रमण कर अन्तमें तुपित देवनागोंके स्वर्गमें जायगा।

सिंहल धर्मग्रन्थमें अनेक परिभोगस्मृतिविद्भके विवरण देते जाते हैं। बुद्ध कष्टसन्ध ( बुद्धच्यन्द ) के पानपाल, कोनागमनके फररवन्द और काश्यप तथा गौतमबुद्धके स्नानरक्षकी कथाका सविस्तार उल्लेख है।

दक्षिणात्यके कोट्टणपुरमें ७वीं शताब्दीमें एक विहार था। इसमें सिद्धार्थके बाल्यकालका मस्तकावरण

संरक्षित था। भक्तगण इसे मत्ताहर्म एक ही दिन ( विश्राम दिनमें ) देव सकृते और उत्तकी पूजा करते थे। जिस चीनपरिव्राजकने यह सचवाद् दिया है, उनका कहना है, कि यामियान नामक स्थानमें स्थित मातासिक्का लीहपात्र और पविच्छर रक्षित था जो मणिनिर्मित होने के कारण लाल रंगका था। प्रवाद है, कि जब तक बौद्ध धर्म और बौद्धनीति पृथिवी पर वर्तमान रहेगी, तब तक यह पविच्छर भी रहेगा।

श्रीर भी एक प्रकारकी स्मृतिव्याज उल्लेख मिलता है—इसे छाया स्मृति कहते हैं। अनेक स्थल पर गुहा विशेषमें बुद्धदेव या बोधिसत्त्व छाया रख गए हैं जो भक्तोंको दिग्दर्शित जाती थी। कौशास्त्री, गया और नगर इन तीन स्थानोंको कथा ही विशेष प्रसिद्ध है। कौशास्त्री की गुहा रहने पर भी यूपनचुअङ्ग यहा छाया न देय सके, किन्तु वे गयाधाममें छायादर्शनसे वृत्तार्थ हुए थे। पूर्ववर्ती परिव्राजक फाहियानका कहना है, कि बुद्धको यह छाया लगभग तीन फुट लम्बी थी और उस समय यह खूब साफ सुधरा दिपलाई पड़ती थी। नगरकी निरुपवर्ती गुहामें बुद्धकी छाया समधिच प्रसिद्ध थी। इसी गुहामें नाग गोपाल रहते थे और बुद्धदेव महा-निर्वाण प्रातिके कुछ पहले इसमें अपनी छाया रख गए हैं। गुहाके प्रवेश द्वार पर दो चौकोण प्रस्तर थे जिनके ऊपर तथागतका पदचिह्न देखा जाता था।

चैत्य, विहार।

बौद्धप्रभावके समय भारतवर्षने जिस स्थपति और भारतर विद्याका परिचय दिया है, आज भी वह पृथ्वीके पुरातत्त्वविदोंकी आलोचनाका विषय है तथा और भी बहुत दिन रहेगा। आज तक जितने स्तूप, मन्दिर मूर्त्ति, स्मृतिस्त्वम या चैत्यादि आविष्कृत हुए हैं, उनके आमूल विवरणका उल्लेख करना असम्भव है। हा, जो विशिष्ट-रूपसे धर्मादि कार्यके साथ संसृष्ट है, उसका स्पूल विवरण नोचे दिया जाता है।

धर्ममन्दिर या मठका साधारण नाम है चैत्य। चैत्य कहनेसे सिफ इट या पत्थरका बना मन्दिर ही नहीं समझा जाता बरन् पवित्र बुद्ध, स्मृतिपरिचायक प्रस्तर, पवित्र स्थान या क्रान्ति स्थिति आदि भी सम्झी जाती



है। सुनरा पवित्र धर्मसूत्रमान ही चैत्य हैं; किन्तु चैत्य होनेसे ही यह कोढ़ घर या मन्दिर नहीं होगा।

ऐसे पवित्र मन्दिरोंके मध्य विहार और स्तूप ही प्रधान हैं। मठ अथवा जीवित युद्धोंके वास्तरधान या मूर्त्तिलमन्त्रित मन्दिरसे माधारणतः विहार कह सकते हैं। नेपालमें चैत्य और विहारका पांश्वर्य ही उनमें कुछ चिह्नोपना नहीं देखी जाती। इनमेंसे जहा आदि बुद्ध या ध्यानोपुद्धकी मूर्त्ति है, यह चैत्य और जहां प्राच्यदेश अथवात्त्व मात मानुषी युद्ध अथवा माधुओंकी मूर्त्ति है, यह विहार कहलाता है। नेपाली चैत्यका विस्तृत विवरण पढ़नेसे मालूम होता है, कि चैत्य स्तूपके मिया और कुछ भी नहीं है। स्तूपका पालिगाम घुप है। बहुतेरे स्तूपका अर्थ धातुगर्भ या गर्भ लगाते हैं। यथार्थमें स्तूपके एक अशको गर्भ कहते हैं अर्थात् जहा पवित्रस्मृति सरक्षित होती है वही गर्भ है। प्रसिद्ध व्यक्तिप्राकी समाधिके ऊपर स्मृति सरक्षणके लिए स्तूप बनाया जाता था, ऐसा बहुताका कहना है तथा यह सम्भवपर भी मालूम होता है। स्तूपकी भित्ति चौकोन और गोलाकार दोनों ही हो सकती हैं। इनके ऊपर एक गुम्बज और गुम्बजके ऊपर विपरीतभावमें संस्थापित एक पौरामिड या चूडा भी बनी होती थी। पौरामिड एक क्षुद्र 'गल' द्वारा सलन रहता था। मयमे ऊपर पद या दो छत्र और छत्रके ऊपर पताका तथा पुष्पमाला इत्यादि परिष्कामित होती थी।

फार्लिके गृहामन्दिरमें जो स्तूप देगा जाता है, यह उपर्युक्त प्रकारसे बना है। इनके ऊपर अब भी वाष्-निर्मित छत्रका चित्र देगा जाता है।

मिहल और नेपालके प्राचीन चैत्योंका आकार ऐसा ही है। मिहलमें किसी किसी स्तूपके ऊपर पार्श्वरति गुम्बज देगनेमें आता है, किन्तु साधारण आदिन जल सुष्पुद्र-सी है और उसके ऊपर यथाक्रम तीन छत्र संस्थापित हैं।

छत्रकी संख्या अथवा पौरामिडके विभिन्न स्तर प्राच्यदेशके विभागनिर्देशक हैं। उत्तर और दक्षिण प्रदेशोंय शौद्धयण बहुतासे स्तूपोंके मध्य मेरुपयशर मन्दिहति देखी है।

चीनदेशके परिप्राजक जिस समय भारतपर आये थे, उन समय देशके नागा स्थानोंमें स्तूप और चैत्य थे। अब उनमेंसे बहुताका अस्तित्व भी नहीं है; किन्तु वही वही भग्नावशेष नजर आता है।

यूनानुबुद्ध जब तीर्थपर्यटनमें भारतपर गया, उस समय उन्होंने यहुतसे विहार और सद्धाराम भग्नावस्था में देखे थे जो उनके लिखे विवरणमें ही मालूम होता है। किन्तु इसके दो शताब्दी पहलेके विवरणमें जान पड़ता है, कि ये सब अमानावस्थामें ही थे। पेजावरका सुष्पुद्र स्तूप ४०० हाथमें भी अधिक ऊंचा था। यूनानुबुद्धने जिस समय इसे देगा था, उसके पहले भी यह तीन बार अग्निदाहमें नष्ट हो गया था। यह स्तूप महा राज शक्तिरुके समयका बना हुआ था। जान पड़ता है, कि मानिकियालका स्तूप भी उसी समय बना था। प्रमाद है, कि पुष्कलायनीमें दो स्तूप अशोकके समयमें निर्मित हुए थे। ब्रह्मा और इन्द्र देवतासे बहुसूत्र प्रस्तर से चिनिर्मित दो स्तूप संस्थापित किये थे, ऐसा जो प्रमाद है, उसमें कदापि ऐतिहासिकगण विश्वास नहीं करेंगे। उपर्युक्त स्तूपसमूहका भग्नावशेष यूनानुबुद्धने देगा था।

अशोकयशानमें लिखा है, कि सम्राट् अशोकने भारत पर्यमें कुल ८४००० धमराजिका या स्तूप और विहार बनाये। बुद्धदेवके निर्माणप्रसक्तिके बाद जो आठ स्तूप निर्मित हुए, उनमेंसे सातका द्वार अशोक द्वारा उद्घाटन हुआ है। मिकं रामप्राम स्तूपका द्वार थे नहीं गोल सके थे।

वाराणसीके विश्व माग्नाथका विहार और स्मृति प्रामाद ०३११ गताशदीमें भी अविश्वत अवस्थामें था; किन्तु अभी यह भग्नावशेषमें परिवर्तन हुआ है। यहाँका एक मन्दिर अब जैतोंके अधिपत्यमें है।

केशर नाथु और धार्मिकोंके हस्तरणक लिए स्तूप गढ़ी बनाये जाते थे; मथुरामें मारिस्तुत्र, मीठन्यायन और आनन्दके उद्देश्यमें ऐसे स्तूप उत्सर्ग किये गए थे। अनाधर्म, पितृय और मृतप्रत्यके उद्देश्यमें भी स्तूप बनानेका विवरण मिला है।

वपितृयस्तुत्रमें भी बहुत स स्मृतिपरिचायक स्तूप और

विहारकी कथा सुनी जाती है, किन्तु उनका नामनिर्णय तक भी नहीं है। मध्ययुगमें मगधमें भी स्तूपकी कमी नहीं थी।

सिंहलके सबसे प्रसिद्ध और प्राचीन स्तूपका नाम महाथूप था। दुदुगामनिके समयमें बुद्धदेवके पदचिह्नके ऊपर यह स्तूप बनाया गया था। यह अनुरोधपुरके उत्तर में स्थापित और तीन सौ हाथ ऊँचा था। इनके समीप ही अभयगिरिका प्रसिद्ध सङ्घाराम वर्तमान था। इसके अलावा अन्यान्य स्तूप, विहार और प्रासाद इत्यादिको संख्या सिंहलमें उतनी कम नहीं थी।

प्राचीन बौद्धधर्मग्रन्थमें बुद्धदेवकी मूर्त्तिपूजाका विवरण नहीं देखा जाता। उनके पदचिह्न, आसन, वेदी या चक्र आदिके निरूपण ही मनुष्य बुद्धदेवकी उपस्थितिकी कल्पना कर उनका पूजा तथा भक्ति करते थे, सिर्फ ऐसा ही विवरण मिलता है। बहुतांश विश्वास है, कि अशोकके राजत्वके बादसे मूर्त्तिपूजाकी प्रथा प्रचलित हुई है। इस सभ्यधर्ममें कोई ऐतिहासिक तथ्य तो नहीं मिलता, पर नाना प्रकारके प्रवाद और उपन्यास अल्प प्रचलित हैं। सब अर्चनाओंकी यथायथ आलोचना और अनुसन्धान कर ऐतिहासिक तथ्य निर्णय करना इस प्रबन्धमें असम्भव है। यूरोपीय पुरातत्त्वविदोंका सिद्धान्त है, कि ईसाजन्मके एक सौ वर्ष पहले या उससे बाद मूर्त्तिपूजाकी प्रथा प्रचलित हुई है। किन्तु अलेक्जेंडरके समय प्राकृत लिखित कथागीसे भी जाना जाता है, कि इससे पहले भी मूर्त्तिपूजा प्रचलित थी। जो कुछ हो, सम्राट् कनिष्कके समयसे ही यह प्रथा समस्त भारतवर्षमें प्रसिद्ध थी। धर्मपिपासु चीनपरिव्राजकोंने अपने भ्रमण-वृत्तान्तमें सेकड़ों बार बुद्धदेवकी मूर्त्तिके उल्लेख किया है। फाहियानने ५वीं शताब्दीमें साङ्घाय नामक स्थानमें बुद्धदेवकी द्वादश हाथ लम्बी पड़ी मूर्त्ति देखी थी और यूपनचुअङ्ग भी ७वीं शताब्दीमें उक्त मूर्त्ति देखा गण थे। उन्होंने पेजावरमें बारह हाथ लम्बी श्वेत मस्तरकी बनी बुद्धमूर्त्तिका दर्शन और पूजन किया था। यह मूर्त्ति कनिष्कस्तूपके समीप ही थी और रातकी इस स्तूपके चारों ओर घूमती थी।

निर्माणप्रतिके समय बुद्धदेवकी उपविष्ट प्रतिमूर्त्तिका

उल्लेख अनेक बार देवनेमें आता है। यामियान नामक स्थानमें वैसी ही एक मूर्त्तिकी कथा सुननेमें आती है जो लगभग १०० फीट ऊँची थी। यूपनचुअङ्गका कहना है, कि उन्होंने कुशीनगरके शालयनमें निर्माणप्रतिकी अवस्थापरिचायक एक और बुद्धमूर्त्ति देगी थी।

बुद्धदेवकी चित्रित प्रतिमूर्त्तिका सभ्या भी मध्ययुगमें पण्डित कम नहीं थी। यूपनचुअङ्गने पेजावरमें एक प्रतिमूर्त्ति देगी थी जिसके शिरोपचातुय और मूर्त्तिका पर वे चित्रित हो गये थे। इसके समीप ही उन्होंने बुद्धदेवकी दो मूर्त्ति देखी थी जिनमेंसे एक छ फीट और दूसरी चार फीट लम्बी थी।

बौद्ध भक्तगण केवल शाक्यमुनिकी ही श्रद्धा भक्ति में नहीं लगे रहते, चरन् पूर बुद्धोंकी मूर्त्ति भी पूजते थे। अनेक स्थानोंमें शाक्यबुद्धमूर्त्तिके साथ तीनों या छ गन बुद्धकी मूर्त्ति देखी जाती है। भाविष्यदुक्तमें वेदके प्रति उनको और भी ज्यादा भक्ति थी। वे अभी बोधिसत्त्व अवस्थामें वर्तमान हैं। इनकी अनेक मूर्त्ति नजर आती हैं। सबसे प्रसिद्ध मूर्त्ति उद्यानकी राजधानीके निकट उपत्यकामें थी जो ६० हाथ ऊँची और सुनहले काठकी बनी थी। बौद्धग्रन्थमें पता चलता है, कि बोधिसत्त्व अब लौं पृथिवी पर अवतीर्ण नहीं हुए हैं। सुतरा जिस शिरोपिने यह मूर्त्ति बनाई थी, वह अर्ध मध्याह्नकके अनुग्रहसे तुलित स्वर्ग गया था और वह बोधिसत्त्वका शारीरिक परिमाण और वर्ण इत्यादि देख कर पृथिवी पर आया और वैसी ही मूर्त्ति बनाई।

उत्तर प्रदेशीय बौद्धगण केवल बोधिसत्त्व मूर्त्तिकी मूर्त्तिपूजा पर परिहृत नहीं रहे। वे अवलोकितेश्वर और मञ्जुश्री बोधिसत्त्वका भी मूर्त्तिपूजा करते थे। फाहियानका कहना है, कि उन्होंने मथुराके महायान सम्प्रदायकी प्रज्ञापारमिता, मञ्जुश्री और अवलोकितेश्वरकी पूजा करते देखा था। इसके दो शताब्दी बाद यूपनचुअङ्गने पारिस्रमणकालमें अवलोकितेश्वरकी उत्तरय मूर्त्ति देखी थी। कपिश, उद्यान, कामीर, कन्नौज, गया और मथुराएकके कपीयसङ्घाराममें इस बोधिसत्त्वके मूर्त्तिपूजाकी कथा उनके सिद्ध विवरणसे मिलती है। किन्तु यान परिभाषकोंके कथीं पर

एन मछाट् अशोककी गिरिलिपिमें उमका स्पष्ट प्रमाण मिलता है। उन गिरिलिपिमें विद्यापिटकका सारांश 'धिनयमनुत्कथ' नामक प्रतिमोक्ष, सूत्रपिटकके अमुत्तर निवायके अन्तर्गत आरण्याय 'अनामन् भव' सत्र, त्रिनय पिटकके महाउग्नके अन्तर्गत 'उपतियप्रश्न' या 'आरि पुत्रप्रश्न' सूत्रपिटकके मुत्तनिपातके अन्तर्गत 'मुनिगाथा' नामक १२३ सूत्र, मज्झिमनिकायके अन्तर्गत 'राजुलो यादमं मृपात्राक' या अम्यलट्टिका राजुलोयाद नामक ६१ सूत्र इत्यादि प्राचीन बौद्धग्रन्थालीका स्पष्ट उल्लेख है। प्रियदर्शी च्च देवा।

अशोकके राजाशाममें बीडधर्मका प्रचार।

पहले ही कहा जा चुका है, कि अशोकके राजत्व कालमें पाटलिपुत्रमें सङ्गीतिना अधिवेशन हुआ था, यह विषयमात्र ही है। अशोकविन्दुसारके पुत्र और चाट्टमुनके पौर थे। सम्भवत ३१६ ईस्वीसन्के पहले अशोकका राज्याभिषेक हुआ था। प्रियदर्शी देवा।

अशोकके समयके जो सब अजुनासादि मिलते हैं, उनमें देखा जाता है, कि बीडधर्ममें दीक्षित हो कर यद्यपि उन्होंने इस धर्मप्रचारके लिए यथान्नाध्य चेष्टा की थी और बहुत सा धन भी खर्च किया था, तो भी आजीवक निर्मल्य प्रभृति संप्रदायकी उन्होंने नहीं सताया। किन्तु बौद्धों ने उस सम्प्रदायके मनुष्योंकी सब समय टण्णवर्ण में चित्रित करनेमें एक भी कसर उठा न रगी। अशोकके उनके प्रति शत्याचार नहीं करनेके कारण बीडगण कभी कभी उनसे अप्रसन्न रहते थे।

उन्होंने बीडधर्मका अत्यल्पन कर दिन सब अजुना जाका प्रचार किया था, उनसे जाता जाता है, कि वे युवा-पस्थांमें बौद्धधर्मके विषे यद्ये अर्धप्रय शर अपनेके एक भिक्षु बतला गए हैं। उनके राजत्वकालमें बौद्ध धर्म भारतवर्षमें उन्नतिके चरम मोमा पर था। जब वृद्धावस्थांमें वे मलिन्यो और राजकुमारोंके परामर्शांनु सार कालमें घाघ्य हुए, उसी समयमें बौद्धधर्म प्रचारके लिए खर्चकी बसा हो गई, वेसा बौद्धधर्म प्राय पदनेसे मात्तम होता है। अधिक मया, अशोकके समय यथार्थमें 'अहिंसा परमोधर्मो' रूप मृगमन्त्र केवल भारतवर्षमें ही नहीं, देश देशान्तरमें भी प्रचारित हुआ था। इनके

पहले सैकड़ों यथाशास्त्रमें हजारों पशुबध होना था। अशोकने पशुबध रोकनेके लिए वेसा अजुनासत्र प्रचार किया था —

'द्वैयताओंके प्रियताना प्रियदर्शीका करना है, कि अभिषेकके ३ वर्ष बाद निम्नलिखित आर्थांका बध निवारित हुआ—

शुक, आरिका, अलुन, चक्रपाक, ह म, गान्धोमुन, गिलाट् अतुरा, मग्गाकपीलिका, दन्वी, अलडिका, मत्स्य, वेदधेय, गङ्गापुत्र, संयुसमतस्य, कफटान्यरु, पन्न मन्, मृगर, पण्डक, बोकापिण्ड, पलमत, श्वेतकपीत, प्राय्यरूपीत और अन्य सभी चतुःपद ( जीव ), जिसका भोग नहीं लगता और न खाया ही जाता है, अन्का (छागों) पडका ( भेडी ), शूकरी, गमिणी या दुग्धवती तथा उनके छ मासके छोटे वर्ष भी श्रवण्य हैं। अनिष्टार्थ या हिंसाधे वामें आग न लगानी चाहिए और न जीव द्वारा दूम्ने जीवका पावन ही करना चाहिए। तो चतु मांसधर्म, पौष पूर्णिमा, चतुर्दशी, अमावस्या तथा प्रतिपदु मे और प्रति उपवासके दिन मत्स्य अन्ध्य हैं इन समय वेचना भी मना है। अष्टमी, चतुर्दशी तथा पूर्णि मामें त्रिप्य और पुनर्वासु नक्षत्रयुक्त दिनमें, तीव्र चातुर्मांस्य और पर्वादिनमें वृष, शय, मेघ, शूकर तथा अत्यान्व जीवकी शस्त्री न करना चाहिए। त्रिप्य और पुनर्वासु नक्षत्रमे, चतुर्मांस्य पूर्णिमा तथा पक्षमे भद्रय या गो लाष्टित करना उचित नहीं।"

(५म शान्तिनिपात अजुना)

युद्धधर्मके आरंभकालमें मध्यदेश और प्रायव या पूर्वा भारतमें बीडधर्म जो प्रचारित हुआ था, उसका पता बीडधर्मके प्रथमे मिलता है। अशोकके बौद्ध धर्ममें दीक्षित होनेके पहले तक अन्य किसी स्थानमें धर्मप्रचारका कोई विशेष चेष्टा नहीं होता थी। अशोक के समयमें ही बौद्धधर्मका प्रभाव नागस्थानमें फैल गया, यह सर्वथादिशम्भत है। किन्तु प्रगाथी प्रणाली से कर अनेक प्रकारका मतभेद देखा जाता है।

अशोकके राजत्वकालमें बीडधर्मप्रचारका प्रधान केन्द्र मिटल हा था। पहले ही लिखा जा चुका है, कि निषाधप्रान्तके पूर्ण पुद्गलेश्वरोंके मन्त्रिपञ्चाला भी, कि २३६

वर्ष बाद महेन्द्र नामक एक व्यक्ति सिंहलमें बौद्धधर्मका आलोक प्रज्वलित करे। जिस वर्ष पाटलिपुत्रमें अधिवेशन हुआ था, उसी वर्ष महेन्द्रने सिंहलमें धर्म प्रचारका भार ग्रहण किया और चांग धर्मणोंको साथ ले वे चल दिये। पहले उन्होंने विदिशगिरि जा कर अपनी माताको दीक्षित किया। प्रवाद है, कि उसी स्थान पर स्वर्गसे देवराज इन्द्र उनकी मुलाकातमें आये थे और सिंहलमें कुस स्काराच्छन्न मनुष्योंके निरुद्ध बौद्धधर्म का सत्त्वालोक प्रकाश करनेका उद्देश्य आदेश दिया। महेन्द्र अपने साथियोंके साथ शून्य मार्गसे सिंहलकी ओर चले और मिससक नामक पर्वतके ऊपर उतरे। वहाँ सिंहलके राजा देवानाम्पिय शिकार करते थे। कालक्रमसे राजाके साथ उनकी भेंट हो गई और उन्होंने राजाको 'हत्तिवदसुत्त' होनेके लिये उपदेश दिया। राजा वहाँ पर ४० हजार अनुचरोंके साथ बौद्धधर्ममें दीक्षित हुए। बाद वे राजधानी गए और वहाँ राजकुमार, राजपुत्री तथा ममासदानों में उनका धर्मापदेश सुन कर वहाँ धर्म ग्रहण किया। धीरे धीरे मनुष्योंकी संख्या इतनी बढ़ गई, कि नगरके बाहर नन्दन उद्यानमें धर्मोपदेश प्रदान करनेका स्थान निर्दिष्ट हुआ। यहाँ भी बहुतसे सिंहलवासियोंने बौद्धधर्मका आश्रय लिया। राजाने मेघवन नामक उद्यानमें कपड़े का घर बनावा कर प्रचारकोंके रहनेका स्थान निर्दिष्ट कर दिया। दूसरे दिन राजाने वहाँ जा कर जब देखा, कि धर्मगण उनको निर्दिष्ट आवासस्थलमें अत्यन्त आराम तथा सन्तोषके साथ रहते हैं, तब उन्होंने यह मेघवा उद्यान सद्गुरुके नामसे उत्सर्ग किया। यहाँ मेघवन धर्ममें तिस्माराम या महाविहारमें परिणत हुआ।

महाविहारके श्रमणोंने सिंहलमें बौद्धधर्मप्रचारके सम्यग्धर्ममें यद्यपि अनेक अशौचिक तथा महेन्द्रकी क्षमता प्रभृति का खूब बढ़ा घटा कर वर्णन किया है, ता भी इसे एकवारअनुमूलक नहीं कह सकते। क्योंकि, उत्तराञ्चलके बौद्धगण भी स्वीकार करने हैं, कि महेन्द्र द्वारा ही पहले पहल सिंहलमें बौद्धधर्मका प्रचार हुआ। प्रमेद इतना ही देखा जाता है, कि महाविहारके मिश्रुओंने महेन्द्रको अशोकका पुत्र कहा था किन्तु उत्तरप्रदेशीयगण उन्हें अशोकके भाई वतलाते हैं।

दोनों प्रदेशके बीचोंने धर्मप्रचार सम्यग्धर्म मध्यान्तिक नामक एक साधुको खूब प्रशंसा की है। सिंहलवासियोंका कहना है, कि मध्यान्तिकसे महेन्द्रने उपसम्पदा प्राप्त की थी और मध्यान्तिकने गान्धार प्रदेशमें एक ब्रह्मूद तथा भयावह नागराजका दमन कर बहुत से मनुष्योंको उसके दासत्वमें मुक्त किया था। फेरल नागलोक ही नहीं, उन्होंने नरलोकमें भी वृत्तोंको बौद्धधर्मका आभास दिया था। उत्तरप्रदेशीय बौद्धोंके विवरणसे मालूम होता है, कि मध्यान्तिक आनन्दके शिष्य थे। उन्होंने काश्मीरमें हलुण्ड नामक नागने शासन कर उसे बौद्धधर्ममें दीक्षित किया। काश्मीरमें उनके द्वारा बौद्धधर्मका इतना अधिक प्रचार हुआ, कि थोड़े दिनोंमें ही वहाँ नागगण कर्तृक पाच सौ मठ प्रतिष्ठित हुए।

मज्झिम नामक एक दूसरे स्थानिरे हिमालयके पश्चिमी बौद्धधर्ममें दीक्षित किया था, ऐसा भी वर्णन मिलता है।

महादेव नामक एक और विख्यात धर्मप्रचारकका विवरण देना जाता है। उन्होंने महेन्द्रने प्रणयकी थी। इन्होंने महाेन्तल प्रदेशमें जा कर बहुतोंको धर्ममुक्त किया था। उत्तरदेशीय बौद्धधर्मग्रन्थमें भी इनका नाम मिलता है, किन्तु इन सब ग्रन्थोंमें वे मन्वेन्द्राद्रीके ऊँचे स्थान पर स्थित हुए हैं। इनके कृतत्वके द्वारा बौद्धोंमें अनेक प्रकारके मतभेद तथा वादविसर्ग हुए थे। हिन्दू-देवता महादेवकी वर्णनाके साथ इन महादेवका अनेक सादृश्य देखा जाता है। काश्मीरमें इनका बड़ा ही प्रभाव था और इनसे बौद्ध धर्मप्रचारमें बहुत ही विघ्नवाधाएँ हुई थी। किसी किसी बौद्ध परिवर्तकका कहना है, कि श्रीदेवराज भी काश्मीरमें बौद्ध धर्मप्रचारके प्रतिबन्धक हुए थे और वहाँ दूसरे भागमें महादेवके मन्थे मडा गया है।

सिंहलदेशीय विवरणमें और भी अनेक धर्मप्रचारकके नाम मिलते हैं,—रक्षित, महारक्षित, धर्मरक्षित और महाधर्मरक्षित। इनके नामोंमें नितान्त साँसादृश्य रहा पर भी इनमेंसे कोई भी छोड़ देने लायक नहीं है। शीत और उत्तर नामक और भी दो मनुष्योंके नाम मिलते हैं। वे स्वर्णभूमि नामक स्थानमें गये और वहाँसे पिशाचोंको भगा कर बहुतोंको मुक्तिपथ पर लाये। यथार्थमें वे



वर्ष बाद महेन्द्र नामक एक व्यक्ति सिंहलमें बौद्धधर्मका श्रालोक प्रचलित करेगे। जिस वर्ष पाटलिपुत्रमें अधिपेशन हुआ था, उसी वर्ष महेन्द्रने सिंहलमें धर्म-प्रचारका भार ग्रहण किया और चार धर्मणोंको साथ ले वे चल दिये। पहले उन्होंने त्रिदिशगिरि जा कर अपनी माताको दीक्षित किया। प्रवाद है, कि उसी स्थान पर स्वर्गसे देवराज इन्द्र उनकी मुलाकातमें आये थे और सिंहलमें हुए स्काराच्छन्न मनुष्योंके निरुद्ध बौद्धधर्मका मत्स्यालोक प्रकाश करनेका उन्हें आदेश दिया। महेन्द्र अपने साथियोंके साथ शून्य मार्गसे सिंहलकी ओर चले और मिस्सक नामक पर्वतके ऊपर उतरे। वहा सिंहलके राजा देवानाम्प्रिय शिकार करते थे। कालक्रमसे राजाके साथ उनकी भेंट हो गई और उन्होंने राजाको 'हत्तिवदसुच' होनेके लिये उपदेश दिया। राजा वहीं पर ४० हजार अनुचरोंके साथ बौद्धधर्ममें दीक्षित हुए। बाद वे राजधानी गय और वहा राजकुमार, राजपुत्री तथा सभासदोंने भी उनका धर्मापदेश सुन कर वही धर्म ग्रहण किया। धीरे धीरे मनुष्योंकी संख्या इतनी बढ़ गई, कि नगरके बाहर नन्दन उद्यानमें धर्मापदेश प्रदान करनेका स्थान निर्दिष्ट हुआ। वहा भी बहुतसे सिंहलवासियोंने बौद्धधर्मका आश्रय लिया। राजाने मेघवन नामक उद्यानमें कपड़े का घर बनाया कर प्रचारकोंके रहनेका स्थान निर्दिष्ट कर दिया। दूसरे दिन राजाने वहा जा कर जब देखा, कि ब्रमणगण उनके निर्दिष्ट आवासस्थलमें अत्यन्त आराम तथा सन्तोषके साथ रहते हैं, तब उन्होंने यह मेघवन उद्यान सङ्घके नामसे उदमर्ग किया। वही मेघवन अन्तमें तिस्साराज्य या महाविहारमें परिणत हुआ।

महाविहारके धर्मणोंने सिंहलमें बौद्धधर्मप्रचारके सम्यन्धमें यद्यपि अनेक अशौचिक तथा महेन्द्रकी श्रमता प्रभृतिका खूब बडा बडा कर वर्णन किया है, तो भी इसे एकबारगो अमूलक नहीं कह सकते। क्योंकि, उत्तराञ्चलके बौद्धगण भी स्वीकार करते हैं, कि महेन्द्र द्वारा ही पहले पहल सिंहलमें बौद्धधर्मका प्रचार हुआ। प्रमेद् इतना ही देखा जाता है, कि महाविहारके मिश्रुओंने मरेन्द्रकी शयोफका पुत्र कहा था किन्तु उत्तरप्रदेशीयगण उन्हें अशोकके भाई बतलाते हैं।

दोनों प्रदेशके बौद्धोंने धर्मप्रचार सम्यन्धमें मध्यान्तिक नामक एक साधुको खूब प्रशंसा की है। सिंहवासियोंका कहना है, कि मध्यान्तिकसे महेन्द्रने उपसम्पदा प्राप्त की थी और मध्यान्तिकने गान्धार प्रदेशमें एक ब्रह्म तथा भयावह नागराजका दमन कर बहुत से मनुष्योंको उसके दाम्तरसे मुक्त किया था। केवल नागलोक ही नहीं, उन्होंने नरलोकेमें भी बहनोंकी वासुधर्मका आभास दिया था। उत्तरप्रदेशीय बौद्धोंके विवरणसे मालूम होता है, कि मध्यान्तिक आनन्दके शिष्य थे। उन्होंने काश्मीरमें हुल्लुण्ड नामक नागकी शासन कर उसे बौद्धधर्ममें दीक्षित किया। काश्मीरमें उनके द्वारा बौद्धधर्मका इतना अधिक प्रचार हुआ, कि घोड़े दिनोंमें ही वहा नागगण कर्तृक पाच सी मठ प्रतिष्ठित हुए।

मज्झिम नामक एक दूसरे स्थविरने हिमालयके यक्षोंको बौद्धधर्ममें दाक्षित किया था, ऐसा भी वर्णन मिलता है।

महादेव नामक एक और विख्यात धर्मप्रचारकका विवरण देया जाता है। उन्होंने महेन्द्रने ८८० वर्षकी थी। इन्होंने महात्तल प्रदेशमें जा कर बहुतोंका अधनमुक्त किया था। उत्तरप्रदेशीय बौद्धधर्मग्रन्थमें भी इनका नाम मिलता है, किन्तु इन रूब ग्रन्थोंमें वे सन्देशवादीके जैसे वर्णित हुए हैं। इनके फुटतर्क द्वारा बौद्धोंमें अनेक प्रकारके मतभेद तथा चाद्विस वाद हुए थे। हिन्दू-श्रेयता महादेवकी वर्णनाके साथ इस महादेवका अनेक सादृश्य देया जाता है। काश्मीरमें इनका बडा ही प्रभाव था और इनसे बौद्ध धर्मप्रचारमें बहुत ही विघ्नवाधाप हुई थी। किसी किसी बौद्ध परिदत्तका कहना है, कि शीतलप भी काश्मीरमें बौद्ध धर्मप्रचारके प्रतिवन्धक हुए थे और वही दूसरे भावमें महादेवके मध्ये मडा गया है।

सिंहलदेशीय विवरणमें और भी अनेक धर्मप्रचारकके नाम मिलते हैं,—रक्षित, महारक्षित, धर्मरक्षित और महाधर्मरक्षित। इनके नामोंमें नितान्त सीसादृश्य रहा पर भी इनमेंसे कोई भी छोड देने लायक नहीं है। शोन और उत्तर नामक और भी दो मनुष्यों का नाम मिलते हैं। वे स्वर्णभूमि नामक स्थानमें गये और वहासे पिशाचोंकी भगा कर बहुतोंकी मुक्तिपथ पर लाये। यथार्थमें वे

दोनों व्यक्ति जो उत्तर या उत्तर नामके एक ही व्यक्ति थे, यह निर्णय करना दुर्लभ है।

असोपस ले कर अनिष्क तक नौद्वयप्रभाव।

अग्रीक की मृत्युके बादसे कनिष्कके सिंहासनारोहण पर्यन्त तीन शताब्दी तक बौद्धधर्मका प्रभाव उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया। यद्यपि शुङ्गवशीय राजाओंने बौद्धधर्मके प्रति उतना सुदृष्टिपात नहीं किया, तो भी बौद्धधर्मका प्रभाव उत्तरमें हिमालयकी भेद कर चीनदेश तक फैला हुआ था और दक्षिणमें सिंहल देशमें इसने जो प्रभाव निरस्त किया था, वह आज भी वर्तमान है।

मौर्यवशीय श्रेय राजा पुष्यमित्रके द्वारा राज्यच्युत हुए थे। पुष्यमित्र ब्राह्मणधर्मके विश्वासी थे। इन्होंने बौद्धधर्मके प्रति नितना अत्याचार किया था, उनका ऐतिहासिक तथ्य स प्रह करना सहज नहीं है। तब इस विषयमें अनेक किंवदन्ती प्रचलित हैं—एक विवरणमें देखा जाता है, कि इन्होंने मध्यदेशसे ले कर जल धर तक बहुत से बौद्धस घोराम जला दिये और अनेक मठधारो शिक्षित बौद्ध भिक्षुओंको मार डाला। फिर भी एक दूसरे विवरणमें लिखा है, कि इन्होंने देशसे बौद्धधर्म हटानेका इच्छासे पाटलिपुत्रका कुम्भट्टदाराय ध्वंस कर डाला तथा शाक्य प्रदेशके निरन्तरचौं भिक्षुओं या पिताय किया। तीसरे विवरणमें पता चलता है, कि नागार्जुनके समयमें ले कर असङ्गके समय तक बौद्धोंके प्रति तीन बार क्रोत्तर अत्याचार किया गया था।

दो शताब्दीमें मध्यदेशमें बौद्धधर्मकी वीतनी भी अस्त्यथा पर्यो न हो, उत्तर पश्चिम भारतवर्षमें यत्र राजाओंके अधिकारमें बौद्धधर्मका प्रबल प्रभाव उस समय भी वर्तमान था। उनमें मिलिन्द ( Meninder ) नामक नरपति बौद्ध धर्मानुरक्त थे। ऐसा विवरण भी मिलता है, कि ये रथविर नागमेन द्वारा बौद्धधर्ममें दीक्षित हुए थे।

नागमेनके सम्बन्धमें विशेष विवरण नहीं मिलता। किन्तु देशाय एक प्रथम देखा जाता है, कि मोल्द महापुराणमें एक पुरुष काश्यपकी मृत्युके बाद धर्मप्रचारमें निरन्तर। एक और तिथ्यतोय पुस्तकमें पता चलता है, कि नागमेन धर्म मनोरथ इन दोनोंमें मतभेद ही

गया था। इन सब ग्रन्थोंमें जो समय निर्देश किया गया है, वह विश्वासयोग्य नहीं है और न उसके ऊपर निर्भर करना ही निगपद है।

साहित्यिक प्रमाण छोड़ कर यदि केवल प्राचीन सङ्घागम, विहार, अनुशासन प्रवृत्तिके ऊपर निर्भर किया जाय, तो निःसन्देह प्रमाणित होगा, कि ख्रिष्ट पूर्व ३०० और १०० ई०के बीच बौद्धधर्म ने विशेष विख्याति पाई थी। इस मूल धर्मसे अनेक प्रकारके सम्प्रदायोंकी भी खृष्टि हुई थी। कनिष्कके राजत्वके पूर्व काल तक अठारह प्रकारके विभिन्न सम्प्रदायना विवरण मिलता है। मालूम होता है, कि २री शताब्दीमें ही महायान सम्प्रदायकी पुष्टि, अश्वत्थ तथा चित्ताने बौद्धसमाजमें प्रवेश किया था।

सिंहलमें बौद्धधर्मका प्रभाव एकसा बना रहा। देवानाम्भिय राजाने चालीस वर्ष तक राज किया, बाद उनके भाई सिंहासन पर अधिकार हुए। देवानाम्भियके ६६ या १०६ वर्ष बाद अमयदुद्गामनीना राजा आरम्भ हुआ। ये बौद्धधर्मके यडे हो अनुरागी थे। इन्होंने बहुत से स्तूप, विहार और लीह्मसाद बनवाये थे। कहते हैं, कि महाविहार इन्हींका बनाया हुआ था। फिर किन्ना किसीका कहना है, कि तिस्सके समयमें महा विहारना प्रतिष्ठा हुई थी। महास्तूपके पाददेशमें बुध, धर्म, सद् और धर्मप्रचारक महादेव, उत्तर तथा धर्मरक्षित की प्रतिमूर्ति स्थापित हैं।

जान पड़ता है, कि अमयदुद्गामनीके राजत्वकालमें अमयगिरि सङ्घारामकी स्थापना हुई थी। उसी समय सिंहलमें त्रिपिटक और अत्यन्तया (बौद्धधर्मनीति) लिखी गई थी।

इसके बाद और १५५ अनेक राजाओंने बौद्धसङ्घके महदुपदेशना साधन किया था जिनमेंसे षसम (अष्टम) का नाम हो श्रेष्ठ था। इन्होंने बहुत से स्तूप बनवाये थे। इसमें जलया एक विहार और एक उपासनागृह, अनेक भन्तारामना स्तूपार विना तथा ४४ दार वैशाली त्पत्र माताया था। और भी अन्यान्य प्रकारके स्तूपकार्य द्वारा ये यज्ञनी हुए थे।

कनिष्क ।

कनिष्कका राज्य भारतवर्षके इतिहासमें बड़ा ही प्रसिद्ध है। इहो जातिजिताने जाकस वत्सग की गणना शुरू हुई है। योतन, कामगार, गान्धार, सिन्धु, उत्तर पश्चिम भागत, काश्मीर, मध्यदेश, यहा तत्र कि पूर्ण भारतका अधिराश इनके राज्यभुक्त हुआ था। ये भी अशोकके जैसे महाप्रतापशाली राजा थे और इन्होंने बौद्धधर्मकी मूल उन्नति की थी।

प्रवाद है, कि ये पहले बौद्धधर्मके अविश्वासी थे। धार्मिकप्रवर मुद्देशोने इन्हें बौद्धधर्ममें दीक्षित किया था। किस समय इन्होंने यह धर्म ग्रहण किया, इसका निर्णय करना मुश्किल है। तब उनके समयमें (१०० ई०में) जो सघषा अधिवेशन हुआ था, वह निश्चिन्त है। कोई कोई कहते हैं, कि अलन्धरके निकट कुचनके विहारमें यह सङ्गोति हुई थी। फिर किसी किसीका कहना है, कि काश्मीरके अन्तर्गत कु तलवनके विहारमें इसका अधि वेशन हुआ था।

इस तृतीय महासङ्गोतिके कार्यनिवरणमें नाना प्रकारके मतभेद हैं, यहा सर्वोका उल्लेख करना असंभव है। तिर्यतरेगीय एक प्र धर्म देखा जाता है, कि एक सौ वर्षसे भी अधिक समयसे बौद्धोंने मध्य जो मतभेद चला जाता था, उसको मीमांसा करानेके लिए कनिष्कने यह सङ्गोति वैठाई थी। कुल मिला कर अठारह सम्प्रदाय इस सभामें उपस्थित थे तथा सगो धर्मक मूलसूत्रकी रक्षामें लगे थे। इस सभामें स पूरा विषय और सब तथा अभिधर्मके अलिखित अथ लिखित ग्रंथ हुए थे। उसी समय महायान सम्प्रदायका उदय कुट्ट धर्म मत लिया गया था, किन्तु प्राचीन बौद्ध धर्मकोंने उसमें कोई आपत्ति नहीं की।

एक दूसरे तिर्यतीय प्रथम देखा जाता है, कि धर्म-प्रथमसूत्रकी लिपिवद्ध करनेके लिए पाठके दृग्भुक्त पांच सौ बर्तत तथा वसुमित्रके दलभुक्त पाच सौ त्रिंघि मत्त्व यहाँ इन्हें हुए थे।

यूननयुअङ्गका कहना है, कि राजा कनिष्कने ही मत भेद और विरोध मिटानके लिए यह सङ्गोति या सभा वैठाई। इसमें पाठकी भी अनुमति ली गई थी। नहंतोंके

समिलनके लिए राजाने एक विहार बनवाया जहा ५०० भिक्षु इन्हें हुए थे। इस महाधर्मसभाम उत्तरमें तिबत, सिक्किम, भूटान, नेपाल, लाडन, चीन, मङ्गोलिया, तातार, यहा तत्र कि जापानने और दक्षिणमें सिटल, त्रल, श्याम आदि स्थानोंमें बौद्धप्रतिनिधि आये थे। सिंहके महायज्ञसे जाना जाता है, कि अठसह (अत्रेसद्विया) ने यहा तीन हजार भिक्षु राजा आग मन हुआ था। वसुमित्रके कर्तृत्वाधीनमें इस सभाम का कार्य सम्पन्न हुआ था। यहा सूत्रपिटका लक्षणोन्ममन्वित एक भाष्य, उतना ही श्रोत्रममन्वित तिनव पिभास ( तिनयका भाष्य ) और अभिधर्मका विभास ( अभिधर्मका भाष्य ) रचा गया था।

यद्यपि इस तृतीय सङ्गोतिके सभ धर्म अनेक विषय अधकारमें पडे हुए है, किन्तु पर विषयका स्पष्ट प्रमाण मिलता है। सिटलसे प्रतिनिधके जाने पर भी इस सङ्गोतिमें सम्भवत उन्होंने योगदान नहीं दिया। भारतवर्षीय बौद्धोंके सभी स प्रदायक प्रतिनिधि इसमें उपस्थित हुए थे और इस सङ्गोति द्वारा जो छोटे ठोडे मतविरोधका मीमांसा हुई थी, उने ही परम लाभ कहना चाहिये।

महायान-सम्प्रदाय ।

पहले ही कहा जा चुका है, कि महायान सम्प्रदायके नाव और चिन्ताने उदत पहलेमें ही बौद्ध समाजमें प्रवेश किया था। जिस समय इस स प्रदायका प्रथम आविभाव हुआ, इसका ठीक ठीक पता लगाना असंभव है। बहंतोंका अनुमान है, कि बुद्धधर्मागमक एक सौ वर्ष बाद वैजालीकी महासङ्घिक सभामें ही महायानमतका मूलपात और स्थिर अव्ययों द्वारा शी जतयदीमें उ उ मन जनसाधारणम प्रचारित हुआ। अति बौद्धधर्माग पालिभाषामें लिखा था, -सत्राट्ट धर्मागके आश्रयम महा यानके अश्रुत्यये माघ सहस्रत भाषामें बौद्धधर्माग रचिन और प्रचारित हुए। जकराजा प्रधाना मार ने, कनिष्कके बौद्धधर्माग ग्रहण करने पर महायान मतम सार्वभाम स्वामित हुआ। महायाग प्रान उपाय अमिताभको बहुतेरे मृगदयताका प्रतिग्य मानने हैं। बौद्धधर्ममें लिया है, कि वार्धमत्त्व नागानु तने



तृतीय सर्गोक्तिके समय जन्मग्रहण किया। ये ही माध्यमिक सम्प्रदायके प्रवर्तक थे और इन्होके द्वारा पूर्ण प्रवृत्ति महायान सम्प्रदायकी यद्यपि उत्पत्ति हुई। ये राहुलभद्र नामक एक ब्राह्मणके शिष्य थे जो महायान सम्प्रदाय भुक्त थे। इन ब्राह्मणके श्रोत्रार्थ और गणेशसे अनेक विषयों, जिज्ञासा हुई थी। इससे जान पड़ता है, कि महायान सम्प्रदायका धर्ममत बहुत कुछ भगवद्गोतासे लिया गया था। बहुतोंका विश्वास है, कि शैवधर्मके सिद्ध भी महायान शैव धर्मके शिष्य हैं।

किमोका कहना है, कि नागार्जुन ६० वर्ष तक जीवित थे और इसके बाद सुदायती स्वर्गको गए। कोई कोई कहते हैं, कि वे एक सौ वर्ष तक जीवित थे, फिर कोई उन्हें पांच सौ वर्षके अधिककी परमायु प्रदान करनेमें भी कुण्ठित नहीं होने। राजतरङ्गिणी नामक ऐतिहासिक ग्रन्थमें लिखा है, कि नागार्जुन तुरुक राजाओंके बाद आविर्भूत हुए थे। इस विवरणके ऊपर निर्भर कर यह सिद्धान्त करना सम्यक् नहीं होगा, कि नागार्जुन २री शताब्दीके मध्यभाग या शेषभागमें जीवित थे। देव नामक एक सिद्धवासी स्थविरके साथ नागार्जुनका शौरतर वाक्युद्ध हुआ था, ऐसा वर्णन मिलता है। ये देव अपत्यम्क थे और तीसरी शताब्दीमें भी जीवित थे। इससे भी समझा जाता है, कि नागार्जुन २री शताब्दीके शेष भागमें विद्यमान थे।

यह १३वीं धर्मसम्प्रदाय बहुतसे धर्मग्रन्थोंके लिए बद्ध कर अपनी वार्धतत्परताका परिचय दे गया है। अनेक स्थान पर त्रिपिटकमें मूलसत्य ले कर आश्रयकता सुमार परिवर्तित तथा परिवर्धित हुआ है। हीनयान महायानोंको बौद्धधर्मका जन्म बतलाने के नहीं, पर वैसा नहीं किया जाता है। किन्तु यह असंकोचक भी नहीं कर सकते, कि मूत्रधर्मका मूल ही महायानोंके प्रदण किया है और शैवार्थिणों द्वारा उमरका दूसरा अर्थ लगाया है।

मूल बौद्धधर्म कठोर नियमाधीन कुछ मिश्रसद्गुणके समीपवर्धक था अर्थात् आदि बौद्धधर्ममतसे केवल मिश्र गण ही मोक्षलाभमें समर्थ थे। किन्तु महायानसम्प्रदायने निर्गल जगन्मूर्त्तिप्रियण किया था। यद्यपि सभी

महायानका आश्रय ले तो अनायास, और बहुत जल्द बोधिसत्त्व हो संसारसागर पार कर निर्वाणपथके पथिक हो सकते हैं। इस विशाल और उदार मोतिसे ही यह सम्प्रदाय 'महायान' नामसे प्रसिद्ध हुआ था। फिर मद्बोधि बुद्धि तथा बहुत छोड़े मनुष्योंके मतानुसर्त्त होनेके कारण आदिबौद्धधर्मनुगामियोंको महायानगण ही अग्रवाके साथ 'हीनयान' कहते थे। यद्यार्थमें वे ही प्रत्येकबुद्धयान या श्रावकयान कहलाते थे।

महायानोंके मतसे कर्मशून्य अर्हत्तोंको अपेक्षा दया तथा सहानुभूतिपूर्ण बोधिसत्त्वगण श्रेष्ठ हैं, इसीलिए हीनयानगण उनको निन्दा करते हैं। महायानगण शून्यवादके पक्षपाती हैं। इन्ही महायानोंसे भारतवर्षमें शून्यवाद अर्थात् 'सर्व शून्य' यह मत विशेष भावसे प्रचलित हुआ था।

महायानधर्मके प्रचारका प्रधान कारण यह था कि इन्होंने भक्तिका श्रेष्ठ भासन दिया है और ध्यानधारणा तथा साधना आदिको धर्मका अङ्ग बतलाया है। इसके साथ साथ जोयोंके प्रति दया और सहानुभूति प्रकाश करना इनका प्रधान कर्त्तव्य होनेके कारण भारतवर्षमें लायों नरकारियोंने इस धर्मका आश्रय लिया था।

प्राधान्य लाभके लिए महायानोंको हीनयान सम्प्रदायके साथ बहुत दिन लड़ना पड़ा था।

यह पहले ही कहा गया है, कि सिंहलवासी बौद्धोंने जलन्धरकी सङ्घातमें योगदान नहीं किया था, यहा तक कि उनके ग्रन्थमें कर्त्तव्यका नाम तक भी नहीं पाया जाता। इनमें प्रतीत होता है, कि १३वीं शताब्दीमें इन दोनों सम्प्रदायमें सम्पूर्ण पार्ष्ण था।

२०६ या २७७ ई०में सिंहलपति तिर्यके समय सेतुप्यात्रिका एक शौरतर विवाद उपस्थित हुआ जिसका प्रधान उद्देश्य यह था—बुद्ध मनुष्य नहीं हैं, वे सुपित स्वर्गमें रहते हैं, उनके द्वारा धर्मोपदेश नहीं हुआ है। उनके प्रेरित तथा आन्वि आनन्दसे ही धर्मोपदेश किया गया है। यही मन ले कर स्वर्ग उपस्थित हुआ। यह मत सेतुप्यात्रिका या त्रिगुणवादा नामसे प्रसिद्ध है। परन्तु तिर्यकापके यत्नसे यह गोलमाल रुक गया। इस समय थेरुदेय नामक एक प्रसिद्ध बौद्धधार्मिक आधिपत्या हुआ था।

३री शताब्दीके मध्यभागमें अभयमेघवरणके राजन्व कालमें महाविहार तथा अभयगिरिके मिश्र ओंके साथ मतविरोध उपस्थित हुआ और उसी समय सागलिज सम्प्रदायको उत्पत्ति हुई। महासेनके राजत्वकालमें महाविहारके बौद्धोंके प्रति बड़ा ही अत्याचार हुआ। कहते हैं, कि शुनओंकी प्ररोचनासे महाविहार विध्वस्त हो गया और अभयगिरिके बौद्धोंकी रूत उन्नति हुई। पीछे यह महाविहार फिरसे निर्मित हुआ।

प्रवाद है, कि महासेनके पुत्र मेघवरणके राजत्वकालमें (३०६ ई०में) प्रसिद्ध बुद्धदन्त सिंहल लाया गया था। महासेनके समय कादियान सिंहल आये थे। उनका कहना है, कि उस समय महाविहारमें ३००० और अभयगिरिमें ५००० भ्रमण रहते थे तथा अभयगिरि महाविहारको अपेक्षा ममधिक सन्तुद्धिग्रालो था। महा नामने ४१० ४३२ ६० तक राज्य किया। उसी समय भारतवासि बुद्धयोग्य सिंहल भ्रमणके लिये गये और विशुद्धिमार्ग नामक प्रकाण्ड ग्रन्थकी रचना की। सिंहल यासी उन्हे स्वय मीवीय कह कर सम्मान करते थे।

और भी अनेक राजाओंने सिंहलमें बौद्धधर्मको उन्नतिके लिए भिन्न भिन्न रूपमें सहायता पहुँचाई थी।

चार दार्शनिक शाखा

चीनपरिव्राजक यूएनचुअङ्ग जिस समय भारतवासि रहते थे, उस समय बौद्धसमाजमें चार प्रधान दार्शनिक संप्रदाय थे — वैभाषिक, २ मौनान्तिक, ३ योगाचार और ४ माध्यमिक। प्रथम दो होनयान तथा क्षेपोक दो महायान सम्प्रदायभूत थे। यूएनचुअङ्गका कहना है, कि सिंहलके महाविहारवासी होनयान और अभयगिरिके मिश्रुण महायान संप्रदाय थे।

वैभाषिक।

वैभाषिकगण पृथ्वीका अस्तित्व स्वीकार करते हैं। वे कहते हैं, कि बाह्य जगत्के सभी द्रव्योंका ज्ञान उपलब्ध करनेकी क्षमता मनुष्यमात्रकी है। ये सूत्रका प्राधान्य अस्वीकार कर "अभिधम्मको" ही प्रामाण्य ग्रन्थ मानते हैं। इनके मतानुसार शाक्यमुनि एक माधारेण मनुष्य थे। तब विना दुस्मरेकी सहायताके वे जो ज्ञान प्राप्त कर सके थे, वही उनका देवत्व था।

शैथान्तिक।

मौनान्तिकोंका कहना है कि बाहरी सभी पदार्थ प्रकृत नहीं, छायामात्र हैं, सुतरा उनका ज्ञान प्रत्यक्ष नहीं हो कर पर्येक्ष है। ये केवल सूत्रका ही विश्वास करते हैं। इनके मतमें बुद्धका जगत् चार वैशारद्य, तीन स्मृत्युपस्थानसमन्वित तथा मय भूतोंके प्रति दयावान् थे। इनके दो काय हैं, १ला धमकाय और २रा भोगकाय। कुमारलब्ध इस मतके प्रवक्तृ थे।

योगाचार।

योगाचार धेणीके बौद्धशास्त्रिकगण विज्ञानके अलावा और किसीका अस्तित्व स्वीकार नहीं करते। इमोलिप इनका अन्य नाम विज्ञानवादी है।

माध्यमिक।

माध्यमिकोंका कहना है, विश्वमसार इन्द्रजालके सदृश है। सत्य दो प्रकारका है, परामर्श और सृष्टि (चेदान्तना पारमार्थिक और व्यग्रहारिक)। इनके मतानुसार सभी स्वप्नरत हैं,—न सत्ता है, न विनाश है, जन्म, मृत्यु या निर्वाण कुछ भी नहीं है। 'सत्त्वम ये ज्योग मायावादी होने पर भी 'माया'का व्यग्रहार नहीं करते; यरन् माल्य मतके 'प्रधान' और प्रकृति'के बन्धुमें 'प्रज्ञा' और 'उपाय' शब्दान व्यग्रहार करने हैं।

सर्वदर्शनसंग्रहकारोंने माध्यमिक, योगाचार, शैथान्तिक तथा वैभाषिक इन चार मतोंका मन्थित परिचय तथा समाबलीना इस प्रकार की है —

'उक्त चारों मतमें माध्यमिकके मतानुसार—'कुछ भी नहीं है—सभी शून्य है' ऐसा दृष्टान्त दिव्यगया गया है। किन्तु जो सब वस्तु स्वप्नारस्थामें दिग्गद पड़ती हैं, जाग्रत्स्थामें वह फिर देवनेम नहीं आता और जो वस्तु जाग्रदवस्थामें दिग्गद पड़ती हैं स्वप्नारस्थामें फिर वह कुछ भी देखा नहीं जाती और सुषुप्ति दृष्टामें कोई भी वस्तु नहीं गीगती है। सुतरा हमसे यह सावित होता है, कि वस्तुन कोई भी वस्तु सत्य नहीं है, सत्य होनेसे अग्रथ ही वह सभी समय देवी जाती।

योगाचारके मतमें चाण्डरन्तु मात्र ही मित्या है, केवल क्षणिक विज्ञान रूप आत्मा ही सत्य है। यह

विज्ञान दो प्रकारका है, प्रवृत्ति विज्ञान और आल्य विज्ञान। जाग्रत तथा सुप्त अवस्थामें जो ज्ञान होता है, उसे प्रवृत्त विज्ञान और सुषुप्तिज्ञानमें जो ज्ञान होता है, उसे आल्य विज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान वैजल आत्मा का ही अवलम्बन नियो रहता है।

सौत्रान्तरिकगण वाह्यवस्तुका सत्य तथा अनुमान सिद्ध मानते हैं। वैभाषिकोंके मतसे वाह्य वस्तु प्रत्यक्ष सिद्ध है। परमात्र भगवान् बुद्धके बौद्धधर्मके उपदेष्टा होने पर भी जिन्योंमें मतभेद होना असम्भव नहीं। इस का हटान्त उन्होंने इस प्रकार दिया है। यदि कोई व्यक्ति कहे, कि 'सूय द्वय गये' तो यह वाक्य सुन कर लम्बट व्यक्ति परदारहरण तथा तस्कर परधनापहरणका समय उपरिधत हुआ ऐसा समझेगा। किन्तु साधु मन्थ्या घन्दनादि भगवत् उपासनाका समय आ गया, ऐसा समझेंगे। अतएव एक व्यक्तिके घक्ता होने पर भी श्रोता गण अपने अभिप्रायानुसार एक वाक्यका पृथक् पृथक् तात्पर्य ग्रहण करते हैं।

उनके मतानुसार वाक्, पाणि, पाद, मुख और लिङ्ग ये पाच कर्मेन्द्रिय तथा नासिका, जिह्वा, चक्षु, त्र्यक् और श्रोत्र ये पाच ज्ञानेन्द्रिय हैं; तथा मन और बुद्धि उभयेन्द्रिय हैं। इन्हीं बारह इन्द्रियाँका आयतन (आवासस्थान) होनेके कारण शरीर द्वादशायतन कहलाता है। सभी बौद्धमतानुसार धर्मोपार्जन द्वारा इस द्वादशायतन शरीरकी सम्यक् शुश्रूषारूप पूजा करना प्रधान कर्म है। इसके मतसे देवता सुगत और जगत् क्षणभंगुर है, प्रत्यक्ष तथा अनुमान ये दो प्रमाण हैं। दुःख, आयतन, समुत्पन्न और मार्ग ये चार तत्त्व; विज्ञानस्कन्ध, संज्ञास्कन्ध, घेदना स्कन्ध, संस्कारस्कन्ध तथा रूपस्कन्ध ये पाच स्कन्ध हुए तस्य, पाच इन्द्रिय तथा रूप, रस, गन्ध, रसरी और प्राद्व ये पाच त्रिषय एवं मन और धर्मायतन अथात् बुद्धि ये बारह आयतनतत्त्व हैं। मनुष्योंके अत कर्णमें स्वभा यतः जो रागद्वेषादि उत्पन्न होता है, उसे समुद्भय तत्त्व कहते हैं।

इस मतसे सभी सम्भार क्षणमात्र रूपी हैं, ऐसी जो लियर धामना है उसका नाम मार्गतरण है। मार्गतरण ही मोक्ष कहलाता है। चर्मासन, वमान्दु, मुण्डा,

चौर, पूर्वाह्न भोजन, समूहावरधान और रक्षाभ्यर ये सब यति धर्मके अङ्ग हैं।

उक्त बौद्धसम्प्रदायके मतसे सभी वस्तु क्षणिक अर्थात् प्रथम क्षणमें उत्पन्न और द्वितीयमें विनष्ट होती हैं। आत्मा भी क्षणिक और ज्ञानस्वरूप है; क्षणिक ज्ञानातिरिक्त स्थिरतर आत्मा नहीं है। (सदसंनठ०)

नागार्जुन प्राच्यमिक मतके प्रवर्तक थे। इसी प्रकार उनके समसामयिक कुमारलक्ष सौत्वान्तिक मत-प्रवर्तक समझे जाते हैं। इस समय आर्यदेव तथा अव्यथाप नामक और भी दो प्रसिद्ध स्थविरके नाम मिलते हैं। महायान सम्प्रदाय अव्यथापको स्व सम्प्रदाय भुक्त मानते हैं। नागार्जुन और आर्यदेवके सम सामयिक अथवा वय कनिष्ठ नागाहय उपाधि तथागत-भट्ट नामक एक प्रसिद्ध आचार्यका उल्लेख है। ये नालन्दाविहारके प्रधान आचार्य थे। बहुतेरे नागाहय और नागार्जुनका एक ही व्यक्ति मानते हैं।

प्रधान प्रथा बौद्धाचार्य।

वैभाषिकोंके मध्य धम तात, घोषक, बुद्धदेव, वसु मित आदि भदन्तगण प्रसिद्ध थे। धर्मतात आर्यदेवके शिष्य तथा महाप्रभाया और उदानवर्गके प्रणेता थे। वसुमित कनिष्-राजपुत्रके राजतयकालमें प्रिद्यमान थे। ६३० प्रता-दीमें दा प्रसिद्ध दार्शनिक पण्डितोंका आवि भाव हुआ था चिनमेंसे एकका नाम आर्य असङ्ग और दूसरेका वसुवन्धु था। ये दोनों ही गान्धारवासी थे। असङ्ग योगाचारमतावलम्बी थे। ये पहले महाशासक और पीछे महायानसम्प्रदायभुक्त हुए। बहुत दिनों तक इन्होंने अयोध्याके निकट एक मद्गाराममें वास किया। पीछे ये राजगृहमें रहने लगे और वहाँ उनकी समाधि हुए। इन्होंने यागसम्बन्धमें एक प्रसिद्ध पुस्तक रची है।

वसुवन्धु असङ्गके छोटे भाई और नालन्दाविहारके अध्यापक थे। नेपालमें इनकी मृत्यु हुई। इनका प्रदान प्रथ अविधर्मकीय है। इसके अलावा इन्होंने महा यान प्रथकी टीका भी लिखी है।

उक्त दोनों व्यक्तिके अलावा और भी चिनने प्रसिद्ध तथा अनाधारण पण्डितों का विवरण मिलता है जिनमेंसे कोई महायान और कोई होनवान् सम्प्रदायभुक्त थे। इनके

नाम थे हैं—दिट्ठान्ध, गुणप्रभ, निधरप्रति, मद्दुदाम्, बुद्धवाम्, धर्मपाल, शीलभद्र, जयसेन चन्द्रगोमिन, चन्द्रकीर्त्ति, गुणमति, वसुमित्र ( २५ ), यशोमित्र, भज्य, बुद्धपालित और रविगुप्त ।

- किन्ती किन्तीका मत है, कि इनमेंसे धर्मकीर्त्ति सबसे अन्तमें विद्यमान थे। फिर कोई कहते हैं, कि धर्मकीर्त्ति कुमारिल भट्टके समसामयिक थे, किन्तु यूपनचुअङ्गने इनका नाम नहीं बतलाया है।

-- महायानोंके प्राधान्यके साथ इस सम्प्रदायके मध्य किसी किसीने तान्त्रिक शुद्धधर्मका अन्वेषण और प्रकाश किया। भोटदेशीय लामागण नागार्जुनको ही शुद्धमतका प्रवर्तक मानते हैं। ६वीं शताब्दीमें वे शुद्धमतावलम्बीगण 'मन्त्रयान' नामसे प्रसिद्ध हुए। उस समय चीन और जापान तक बौद्धमतान्विकरणा अभ्युदय हुआ था। ७वीं शताब्दीमें भोटदेश ( तिब्बत ) में 'मन्त्रयान' मत प्रचलित हुआ। १०वीं शताब्दीमें यही मन्त्रयान नाना विभक्तसमूहोंमें 'कालचक्र' नामसे मारे भोटमें फैल गया जो नेपालमें 'वज्रयान' नामसे आज भी प्रचलित है।

उत्तर भारतमें बौद्धधर्म।

प्रवाद है, कि शङ्कराचार्य और कुमारिलभट्ट दोनोंने मिल कर बौद्धधर्मको भारतपर्यन्तसे निवर्तित किया। किन्तु यह वहाँ तक सत्य है, मान्य नहीं। शङ्कराचार्य के बाद भी बौद्धधर्म भारतपर्यन्तमें प्रचलित था, इसका यथेष्ट प्रमाण मिलता है। शङ्करके समय ही धर्मका अभ्युदय होने पर भी पराक्रान्त राजत्ववर्ग बौद्ध और हिन्दूधर्मको कुछ समय तक एक साथ धरने थे।

- ७वीं शताब्दीमें राजा हर्षवर्द्धनने बौद्धधर्मको पूर्य उन्नति की। उनका दूसरा नाम मिलादित्य था। वे यद्यपि महायान सम्प्रदायभुक्त थे, तथापि सभी बौद्ध सम्प्रदायको समभावमें देखते थे। वे बौद्धाचार्य मैत्रायणोय द्विषाकर मिलकी विशेष भक्ति करने थे उनकी बहन राज्यश्री बौद्ध भिन्नुणी हुई थी। उन्ही के समय चीनपरिव्राजक यूपनचुअङ्ग भारतपर्यन्तमें आये थे। वे लिख गए हैं, कि सम्राट् हर्षवर्द्धनके राजत्वमें नाना सम्प्रदायके हिन्दू और बौद्धगण सुव्यवृत्तसे रहते थे।

उस समय हीनयान और महायान इन दो सम्प्रदायो बौद्धोंके मध्य ही दृश्यनी थी। कर्णसुवर्णराज शाकाद्ध बौद्धधर्मनमे विशेष तत्पर थे, किन्तु ऐसा दृष्टान्त बहुत विरल है।

उस समय काश्मीरमें भी बौद्धधर्मका प्रभाव ज्योंका त्यों बना था। किन्तु यहा कायस्थय श्रीय राजा दुर्लभ-वर्द्धनके राज्यकालमें श्रीय प्रभाय धोरे धोरे बद्धर्धित होनेका प्रमाण मिलता है। वे स्वयं श्रीय हो कर भी बौद्धधर्मके प्रति विराग नहीं निधरलते थे।

पहले ही कहा जा चुका है, कि ७५० ई०से बौद्धधर्मकी अवनति आरम्भ हुई किन्तु पश्चिम भागपर्यन्तमें इसके पहले ही सुन्यमान कर्तृक मिथुत्रियज ठारा ( ७१० ई०में ) अवनतिरा सूत्रपात हुआ था।

सिंहलमें मिश्रुओंके मध्य जो साम्प्रदायिक विरोध चलता था, वह अश्वमेधिके राजत्वकालमें बहुत कुछ शांत हो गया था। क्योंकि उस समय तामिलगण बौद्धोंके प्रति अत्याचार करते थे, जिससे इनके मध्य परताना बन्धन दृढतर हो गया। राजा सह्युत्रिय पराक्रमवाहु ( १म ) के ( ११५३—११८४ ई०में ) राजत्वकालमें सभी सम्प्रदायके मध्य परताना धनके लिए विशेष चेष्टा होती थी और ११६५ ई०में अनुरोधपुरकी सङ्घातिमें वह कार्यमें परिणत हुई।

१३वीं शताब्दीके आरम्भमें कलिङ्गसे माघ नामक एक राजाने पुन बौद्धदेवके प्रति अत्याचार करना शुरू कर दिया। लगभग १२५० ई०में विजयनाहुन राजा हो कर इस अत्याचारको रोक और बौद्धधर्मको सजोय बनाया। उनके पुत्र पराक्रमवाहु ( ३य ) अत्यन्त धर्मानुरागी तथा शिक्षामे मी थे। संस्कृत भाषाके वे अगाध परिदत्त थे तथा बहुतसे परिदत्त उनकी सभामें स्थान पाते थे।

सिंहलमें बौद्धधर्म आज तक भा घेसा ही बना है। अङ्गरेज, मुसलमान तथा हिन्दू धर्मका आक्रमण सह्य करके भी वह एकचारगी तिरोहित नहीं हुआ। सिंहलमें उद्योगेणाने सभी मनुष्य बौद्धधर्मविश्वासो मे। किन्तु यत्तमान सिंहली बौद्धधर्म हिन्दूधर्मको छाया तथा उनके प्रभावसे जडित है।

विज्ञान में प्रकाशक है, प्रवृत्ति विज्ञान और आलय विज्ञान। ज्ञानरूप नया सुभ अरुधामे जा ज्ञान होता है, उसे प्रज्ञा विज्ञान और सुसुप्तिज्ञानमे जा ज्ञान होता है, उसे आलय विज्ञान कहते हैं। यह ज्ञान एतल आत्मा का हो अलम्बन किये रहता है।

सौतान्त्रिकगण चाण्ड्यस्तुका सत्य तथा अनुमान सिद्ध मानने हैं। वैभाषिकोंके मतमें चाण्ड्यस्तु प्रत्यक्ष सिद्ध हैं। एकमात्र भगवान् बुद्धके बौद्धधर्मके उपदेष्टा होने पर भी शिष्योंमें मतभेद होना असम्भव नहीं। इस का दृष्टांत उन्होंने इस प्रकार दिया है। यदि कोई व्यक्ति कहे, कि 'सूय इव गणै' तो यह वाक्य सुन कर लम्पट व्यक्ति परदारहरण तथा तरकर परधनापरहरणका समय उपरिधत हुआ ऐसा समझेगा। निरुत्तु साधु मन्थ्या यन्त्रादि भगवान् उपासनाका समय जा गया, ऐसा समझेगा। अतएव एक ब्यक्तिके वक्ता होने पर भी श्रोता गण अपने अभिप्रायानुसार एक वाक्यका पृथक् पृथक् तात्पर्य ग्रहण करते हैं।

उनके मतानुसार चार्, पाणि, पाद, शुभ और लिङ्ग ये पाच कर्मेन्द्रिय तथा नासिका, जिह्वा, चक्षु, श्रवण और श्रोत्र ये पाच ज्ञानेन्द्रिय हैं, तथा मन और बुद्धि उभयेन्द्रिय हैं। इन्हो वारह इन्द्रियोंका भाषयन (आज्ञासुधान) होनेके कारण शरीर द्वादेशायतन कहलाता है। सभी बौद्धमतानुसार धर्मोपासना द्वारा इस द्वादेशायतन शरीर को सम्यक् शुभवारूप पूजा करना प्रधान धर्म है। इनके मतमें देवता सुगत और जगत क्षणभंगुर हैं, प्रत्यथ तथा अनुमान ये दो प्रमाण हैं। दुःख, आयतन, मनुष्य और मार्ग ये चार तत्त्व। विज्ञानस्वरूप, संज्ञास्वरूप, चेतना स्वरूप, सत्कारम्कच तथा रूपान्कच ये पाच स्वरूप दुःख तत्त्व, पाच इन्द्रिय तथा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द ये पाच त्रिय एव मन और धर्मायतन अर्थात् बुद्धि ये वारह आयतान्तर हैं। मनुष्योंके अतः कर्णमें स्वभाषतः जो रागद्वेषादि उत्पन्न होता है, उसे मनुष्य तत्त्व कहते हैं।

इस मतमें सभी सम्भार क्षणमात्र स्थायी हैं, ऐसी जो स्थिर धामना है उसका नाम मार्गतत्त्व है। मार्गतत्त्व ही मोक्ष कहलाता है। चर्मोत्सा, वमण्डल, मुण्डन,

चौर, पूजाह भोजन, समूहापरधान और रक्ताभ्यार ये सब यति धर्मके अङ्ग हैं।

उक्त बौद्धसम्प्रदायके मतसे सभी वस्तु क्षणिक अर्थात् प्रथम क्षणमें उत्पन्न और द्वितीयमें विनाश होती है। आत्मा भी क्षणिक और क्षणस्वरूप है; क्षणिक ज्ञानातिरिक्त स्थिरतर आत्मा नहीं है। (संदर्शनसं०)

नागार्जुन माध्यमिक मतके प्रवर्तक थे। इसी प्रकार उनके समसामयिक कुमारान्ध सौतान्तिक मतप्रवर्तक समझे जाते हैं। इस समय आर्यदेव तथा अश्वघोष नामक और भी दो प्रसिद्ध स्थविरके नाम मिलते हैं। महायान सम्प्रदाय अश्वघोषको म्ब सम्प्रदाय-भुक्त मानते हैं। नागार्जुन और आप्यदेवके समसामयिक अधक उप कनिष्ठ नागाहय उपाधि तथागत-भद्र नामक एक प्रसिद्ध आचार्यका उल्लेख है। ये चालन्द्याविहारके प्रधान आचार्य थे। बहुतेरे नागाहय और नागार्जुनका एक ही व्यक्ति मानते हैं।

प्रधान प्रधान बौद्धाचार्य।

वैभाषिकोंके मध्य धर्मज्ञात, घोषक, बुद्धदेव, चाण्ड्य मिल आदि भदन्तगण प्रसिद्ध थे। धर्मज्ञात आर्यदेवके शिष्य तथा महाविनाया और उदानदर्शके प्रणेता थे। वसुमिल कनिष्ठ-राजपुत्रके राजतयकालमें विद्यमान थे। ६ठी शताब्दीमें वा प्रसिद्ध दार्शनिक पण्डितोंका आधि भाग हुआ था जिमेंसे एकका नाम आर्य असङ्ग और दूसरेका वसुजगु था। ये दोनों ही गान्धाररासी थे। असङ्ग योगाचारमतान्त्रय्यो थे। ये परले महोशासक और पोछे महायानसम्प्रदायभुक्त हुए। बहुत दिनों तक इन्हो ने अयोध्याके निरुद्ध एक महाराममें वास किया। पोछे ये राजपुत्रमें रहने लगे और वहीं उनकी समाधि हुई। इन्होंने योगसम्बन्धमें एक प्रसिद्ध पुस्तक रची है। वसुजगु असङ्गके छोटे भाई और चालन्द्याविहारके अध्यापक थे। नेपालमें इका मृत्यु हुई। इनका प्रधान ग्रंथ अविधर्मकोष है। इसके अलावा इन्होंने महायान ग्रन्थको टोका भी लिखी है।

उक्त दोनों ब्यक्तिके अलावा और भी चिन्ने प्रसिद्ध तथा भगवान्तरण पण्डितों का विवरण मिलता है चिन्नेमें कोई महायान और कोई क्षान्तयान सम्प्रदायभुक्त थे। इनके

नाम ये हैं—दिङ्नाथ, गुणप्रभ, स्थिरमति, मङ्गुडाम, सुद्धदास, धर्मपाल, शीलभद्र, जयसेन, चन्द्रगोमिन, चन्द्रकीर्त्ति, गुणमति, वसुमित्र ( २५ ), यशोमित्र, भञ्ज, सुद्धपालित और रजिगुप्त ।

किसी किमोका मत है, कि इनमेंसे धर्मकीर्त्ति मन्वने अन्तमें विद्यमान थे । फिर कोई कहते हैं, कि धर्मकीर्त्ति कुमारिल भट्टके समसामयिक थे, किन्तु यूपनचुवन्नने इनका नाम नहीं बतलाया है ।

- महायानोंके प्राधान्यके साथ १५म सभ्रदायके मध्य किमो किसीने तान्त्रिक गुह्यधर्मका अवलम्बन और प्रकाश किया । भोटदेशीय लामागण नागार्जुनको ही गुणमतका प्रवर्तक मानते हैं । ६ठी शताब्दीमें ये गुणमताद्यग्भोगण 'मन्त्रयान' नामसे प्रसिद्ध हुए । उस समय चीन और जापान तक बौद्धतान्त्रिकका अस्त्युदय हुआ था । ७वीं शताब्दीमें भोटदेश ( तिब्बत ) में 'मन्त्रयान' मत प्रचलित हुआ । १०वीं शताब्दीमें यही मन्त्रयान नाना विभक्तसमूहोंमें 'पालचक्र' नामसे सारे भोटमें फैल गया जो नेपालमें 'वज्रयान' नामसे आज भी प्रचलित है ।

उत्तर भारतम बौद्धधर्म ।

प्रवाद है, कि शङ्कराचार्य और कुमारिलभट्ट दोनोंने मिल कर बौद्धधर्मको भारतपर से निरासित किया । किन्तु यह कहा तक सत्य है, मालूम नहीं । शङ्कराचार्य के बाद भी बौद्धधर्म भारतपर्यमें प्रचलित था, इसका यथेष्ट प्रमाण मिलता है । शङ्करके समय हिन्दुधर्मका अस्त्युदय होने पर भी पराक्रांत राजत्ववर्ग बौद्ध और हिन्दुधर्मको कुछ समय तक एक साथ देखने थे ।

७वीं शताब्दीमें राजा हर्षवर्द्धनने बौद्धधर्मकी सूत्र उन्नति की । उसका दूसरा नाम शिलादित्य था । ये यद्यपि महायान सभ्रदायभुक्त थे, तथापि सभी बौद्ध सभ्रदायको समभावमें देखते थे । ये बौद्धाचार्य मैत्रायणीय दिघाकर मिलकी विशेष भक्ति करते थे, उनको बहन राज्यधी बौद्ध मिश्रुणो हुए थे । उन्ही के समय चीनपरिव्राजक यूपनचुवन्न भारतपर्यमें आये थे । ये लिग गए हैं, कि सम्राट् हर्षवर्द्धनके राजदरबानमें नाना सभ्रदायके हिन्दू और बौद्धगण सुव्यजातिसे रहते थे ।

उस समय हीनयान और महायान इन दो सभ्रदायी बौद्धोंके मध्य ही दलबंदी थी । कर्णसुवर्णराज शशाङ्क बौद्धधर्ममें विशेष तत्पर थे, किन्तु ऐसा दृष्टान्त बहुत विरल है ।

उस समय काशमीरमें भी बौद्धधर्मका प्रभाव ज्योंका य्यों बना था । किन्तु यहा कायस्थयणीय राजा दुर्लभ-वर्द्धनके राज्यकालमें शीघ्र प्रभाव धीरे धीरे वृद्धित होनेका प्रमाण मिलता है । ये स्वयं शीघ्र ही कर भी बौद्धधर्मके प्रति विराग नही दिखलाते थे ।

पहले ही कहा जा चुका है, कि ७५० ई०में बौद्धधर्मकी अवनति आरम्भ हुई किन्तु पश्चिम भारतपर्यमें इसके पदचौ ही सुसलमान कृतक सिन्धुविजय द्वारा ( ७१२ ई०में ) अवनतिना सूत्रपात हुआ था ।

सिंहलमें मिश्रुओंके मध्य जो साम्प्रदायिक विरोध चलता था, वह अग्रयोधिके राजत्वकालमें बहुत कुछ शांत हो गया था । क्योंकि उस समय तामिलगण बौद्धोंके प्रति अत्याचार करते थे, जिमसे इनके मध्य एकताका बन्धन दृढतर हो गया । राजा सङ्गुधोधि पराक्रमवाहु ( १म ) के ( ११५३—११८४ ई०में ) राजत्वकालमें सभी सभ्रदायके मध्य एकताव घनके लिए विशेष चेष्टा होती थी और ११६५ ई०में अनुरोधपुरकी सङ्घोतिमें यह कार्यमें परिणत हुई ।

१३वीं शताब्दीके आरम्भमें कलिङ्गमें माघ नामक एक राजाने पुन बौद्धधर्मके प्रति अत्याचार करना शुरू कर दिया । लगभग १२५० ई०में विजययाहुने राजा हो कर इस अत्याचारको रोक और बौद्धधर्मको सजीव बनाया । उनके पुत्र पराक्रमवाहु ( ३य ) अत्यन्त धर्मानुरागी तथा शिक्षामें भी थे । सस्कृत भाषाके ये अगाध परिद्वत थे तथा बहुतसे परिद्वत उनका सम्भारमें स्थाप पाते थे ।

सिंहलमें बौद्धधर्म आज तक भी वैसा ही बना है । अनुरेज, सुसलमान तथा हिन्दू धर्मका आक्रमण सहा करके भी वह पर्यारगो तिरोहित नहीं हुआ । सिंहलमें उद्योगेणिके सभी मनुष्य बौद्धधर्मविध्यासी थे । किन्तु उच्चमान सिंहली बौद्धधर्म हिन्दूधर्मकी छाया तथा उसके प्रभावसे जडित है ।

भारतमें बौद्धधर्म प्रमाणात् क्षोभ ।

तान्त्रिकताका प्राधान्य जब आरम्भ हुआ उसी समय मे बौद्धधर्मकी जयनति होने लगी । इसके गिण फेवल हिंदू हो दायी नहीं थे । बौद्धगण भी अन्तमें इस तान्त्रिक कृतान्तमें आरथा स्थापन कर नाना प्रकारके श्रौतिक क्रियाश्रान्तप और सिद्धिनामकी आगामने इसकी चचा करते थे । अमुद्गका निरोमाय और धर्मकीतिके अत्रि भाँवके समय बौद्धतान्त्रिकताकी परिपुष्टि स्थापित हुई । भोटदेशी लामा तारानाथने लिखा है, कि धर्मकीतिके शब्द ही अनुसूच योग प्रयत्न हो उठा था ।

गौडके पालराजगण बौद्धधर्मावलम्बी थे, इसके प्रमाणका अभाव नहीं है । इन पालराजाओंकी सभाम बहुतसे सिद्धपञ्जाचार्यने नाना श्रौतिक कार्य दिया दिग्ग कर जनसाधारणको विमुग्ध किया था । यही समय चन्द्रयात्राका परिणति-काल है । उसी समय गुरु कर्तृक वानमें तान्त्रिक बौद्धमन्त्र देनेकी व्यवस्था हुई ।

पालराजने ७७०-११६ ई० तक राज्य किया । उस समय विक्रमशिलाका मठ तान्त्रिकशास्त्र-चर्चाका एक प्रधान स्थान था ।

पालराजवंशके बाद सेनराजगण प्रबल हुए । ये लोग यद्यपि हिन्दूधर्मावलम्बी थे तथापि बह्मालसेनने स्वयं तान्त्रिकधर्म ग्रहण कर बौद्धोंके प्रति अत्याचार नहीं किया । १००० ई०में अर्थात् मुसलमान विजयके बाद मगधमें बौद्धधर्म विरुद्ध तिरोगाय हो गया । उद्दण्डपुर और विक्रमशिलाका मठ भूमिसान्त हुआ । भिक्षु भीमेंसे कुछ तो मारे गए और कुछ भागे । उन्होंने उड़ीसा, नेपाल, ब्राह्म, कम्बोज आदि देशोंमें जा कर आश्रय लिया । उनमेंसे बौद्धाचार्य प्रायशः पहले उड़ीसा, बाद तिब्बतमें, उत्तरदिक्षित नेपालमें, उदुमित्र तथा उनके अनुसन्धिगण दक्षिणभारतमें, सङ्घम धोक्षाण पार्श्वके माय ब्राह्म और कम्बोज प्रभृति स्थानोंमें चले गए । किन्तु निम्न निम्न स्थानोंमें उक्त महात्माओंने पदार्पण किया था, जहा बौद्धधर्मका क्षीण दीपांगक बहुत दिनों तक जलता रहा था । अब भी दक्षिण बङ्ग, उड़ीसा तथा दक्षिण भारतके स्थान स्थानोंमें बौद्धधर्मावकी क्षीण स्मृति दिद्यमान है । १८वीं शताब्दी तक भोटदेशीय तीर्थायात्री तिपुरा और

उड़ीसाके पार्वत्य प्रदेशोंमें बौद्धधर्मके निदर्शन देत गए हैं । आज भी उनको स्मृति मयूरभञ्जके पार्वत्य प्रदेशमें मौजूद है ।

काश्मीरमें लगभग १४वीं शताब्दीके मध्यभाग तक बौद्धधर्माव विद्यमान था । १३४० ई०में मुसलमानोंके आधिपत्यकालमें कस्ते पर लाङ्करी छोड़ कर और दूसरे स्थानसे बौद्धधर्म तिराहित हो गया ।

बङ्गालमें १६वीं शताब्दी तक भी बौद्धधर्माव आलोक प्रखरलित था । १५वीं शताब्दीकी बङ्गालके एक राजाने गयके श्रौतिकरूपके पादार्पाठका तीर्थ संस्कार किया था । उड़ीसाके राजा सुबुन्ददेव हरिचन्द्रन यद्यपि हिन्दू थे, तो भी उनके राजत्वकालमें बौद्धधर्माव पुनः सजीव हो उठा । बाद में मुसलमानोंने आ कर उस चिरागको बुझा दिया ।

जो मय आचार्य नेपाल गए थे उनके पार्श्व यहीं चन्द्रयानके प्रवर्तक हुए । इस सप्रदायके मध्य चन्द्राचार्यने स्वर्गप्रधानगुरुका आसन ग्रहण किया था । आज भी नेपालमें 'चन्द्रयान'को प्रचलता है । यह स प्रदाय चोर्तर तान्त्रिक तथा पञ्चमकारका उपासक है । नेपालकी तरह तिब्बतमें भी चन्द्रयान या कालचक्रयानकी प्रधानता देखी जाती है । नेपाल, तिब्बत, चीन, जापान, ब्रह्म, स्थान, लामा आदि गन्द ल्याग ।

बङ्गाल और तिहार आदि देशोंमें भाग कर बौद्धधर्म नेपालमें आश्रय लिया । यहाँ उनके प्रति किसी प्रकारका, अत्याचार न हुआ । अब भी नेपालमें बहुतसे बौद्ध वास करते हैं । किन्तु धर्मके प्रति अनुत्साह, संसार वित्पान, मुक्तिकी ऐकान्तिक जामना आदि जो बौद्धधर्मके आकर्षणके नियम थे उनमेंसे कुछ भी इस समय चर्यामान नहीं है ।

आज भी नेपालमें नाममात्र बौद्धभिक्षु देशी जातें हैं । यथाधर्म चन्द्राचार्य या गुरुदेवतान्त्रिक गुरुका स्मृति पश्य ही प्रयत्न है । पर समय जहा मुक्तिकामी हो कर समी तत्र तथा धारणी सम्बुद्धको श्रवण करते थे, अभी यही अर्धकरी व्यवसायमें परिणत हुआ है ।

चर्यामानधर्मोंमें नेपालके बौद्धधार्मिक समाजमें स्वाभाविक, वैश्विक, कार्मिक तथा यात्निक ये चार

प्रकारके मत प्रचलित हैं। ये ही कई एक सम्प्रदाय नाम मात्रके लिए विरत्नको मानने हैं, किन्तु उनके निकट इसका अर्थ अन्वय रूप है। वे बुद्धका अर्थ मन, धर्मका भूत और सङ्घका अर्थ दोनोंके साथ जड़ जगत्का सम्पर्क, ऐसा लगाते हैं। स्वाभाविकगण चार्वाक हैं, ऐश्वरिक नैमिक और मीमांसक तथा कार्मिक और यात्निक गण द्वैत तथा पुरुषकारवादी हैं। यद्यपि बहु पूर्वकालमें ये सब मत प्रचलित हैं किन्तु विरत्नके साथ सम्बन्ध और सङ्घको अभूतपूर्व व्याख्याको आलोचना करनेमें ये सब मत अभी नेपालमें प्रचलित हैं, उसमें सन्देह नहीं।

गौडधर्मकी शेष स्मृति तथा प्रवृत्त गौड सम्प्रदाय।

जिस बौद्धधर्मने ढाह हजार वर्ष तक पूर्ण भारतमें प्राधान्य लाभ किया था, आद्यालवृद्धवनिता जिस धर्ममें हजारों वर्ष अभ्यस्त थीं, वही बौद्धधर्म पूर्व भारतसे एक बागी तिरोहित होगा, ऐसा कदापि सम्भव नहीं।

महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री महाशयने प्रमाण किया है, कि बङ्गदेशमें धर्मपरिवर्तकोंके मध्य अब भी प्रच्छन्न बौद्धधर्म विद्यमान है। डोम तथा शीतलपण्डितों ने भूतपूर्व बौद्धप्रभासकी क्षीण स्मृति बना रखी है। धर्मठातुर शब्द दणो।

महायान और इस सम्प्रदायसे उद्भूत मन्त्रयान तथा यज्ञयानोंके नाना बुद्ध, बोधिसत्त्व तथा नाना शक्तिमूर्ति और उनमें पूजाका प्रचार करने पर भी अनेक कुसकार और आवर्जनासे विशुद्ध बुद्धमत्त अन्धकारावृत्त था सही, पर महायानगण बिल्कुल लयन्न नहीं हुए थे। उनका लक्ष्य उसी महाशून्यवादको ओर था। बौद्धगण अपने धर्म को 'धर्म' या 'सद्धर्म' तथा अपनेको 'सद्धर्मी' बतलाते थे।

क्या हीनयान क्या महायान दोनों में प्रदायमें विरल का पधेष्ट सम्मान था। परवर्ती महायानोंसे विरत्न ही मूर्तिपरिग्रहमें उपासित हुए। धर्म खोमूर्ति बन कर बुद्धदेवके नाम पाश्र्वामें और सङ्घ पुरुषमूर्तिमें परिणत हो कर बुद्धके दक्षिण पाश्र्वामें अधिष्ठित तथा पूरित होने लगे। विरत्नका ऐसा परिवर्तन चित्र गणाने महाबोधिसत्त्व आश्रित प्राचीन भास्कर गिनते पाया गया है। जिस धर्मके लिए बुद्धप्रदेन अतुल्य शक्तिधर्मका

परित्याग और कठोर साधना कर सिद्धि प्राप्त की थी। धीरे धीरे उसी धर्मने बौद्धसाधारणके प्रधान उपास्य तथा बुद्ध और शक्तिके मध्य सर्वप्रधान आसन पाया। जो शून्यवाद बौद्धधर्मका प्रधान लक्ष्य था, वही महाशून्य धर्मदेवताके नामान्तरसे गण्य हुआ और इसी निराकार महाशून्यमें सभी बुद्ध, देवदेवी तथा सर्वजगत्की उत्पत्ति कल्पित हुई।

हिन्दू तथा मुसलमानप्रभावसे महायान बौद्धप्रभाव बिलुप्त होने पर भी जनसाधारणके हृदयमें उक्त धर्मदेवता जिस आसनको विछाये बैठे थे, कि उन्हें सहजमें कोई भी वहासे विच्युत नहीं कर सका था। जो धर्मदेवताको भूतपूर्व बौद्धधर्माशेष बतला कर नहीं छोड़ सके, गौडबुद्धके महाप्रधान समाजमें वे ही हीन जातिमें परिणत हुए। उनके यज्ञधरगण आज भी धर्मठातुरके नेत्रक या पूतक हैं। मालूम होता है, कि महायान प्रभावकी शेषावस्थामें धर्मकी नामोमूर्ति बनाने पर भी बुद्धके धर्मपूजकोंमें जो एक स्थलके सिवा सभी जगह वह मूर्ति आदृत थी। वास्तवमें उनके कोई रूप न था, पर वहाँ वहाँ ध्यानमें उत्पत्ति धर्मराज रूपमें पूजित होता है। किन्तु अनेक स्थानों पर जो धर्मठातुरका ध्यान पाया गया है उसे पढ़नेसे ही शून्यमूर्तिकी परिचय पाया जायगा।

"यस्यान्ता नास्ति मध्ये। न च कश्चरषी नास्तिकयो निपादं नाकारा नैव रूपं न च भयमरणे नास्ति जन्मानि वस्य।

यागान्दे पानगम्यं तत्र तदज्ञानं गयसाकैत्रनाथं भवता कामपू सुनरपरदं चिन्तयन् शून्यमूर्ति।।"

यह शून्यमूर्ति किस प्रकार हुई, उसका विवरण सत्रदशमस प्रह गौडधर्मदर्शन प्रस्तावमें इस प्रकार देया जाता है —

"अस्ति नास्ति तदुभयाभयवत्प्रकृतिभिर्निवृत्त शून्यरूपं।"

चास्त्रमें बौद्धधर्मका सर्वोच्चदर्शन ही शून्यवाद है। प्रज्ञापारमिता आदि प्रसिद्ध बौद्ध ग्रंथोंमें शून्यता और महाशून्यताको विशेष आलोचना हुई है। किसी भी हिन्दूशास्त्र ने ऐसे शून्यवादका समर्थन नहीं किया है तथा परवर्ती हिन्दूदर्शनिक शून्यवादका खण्डन करनेमें यत्नवान् हुए हैं। महायानोंके इस शून्यवादकी आलोचना करनेका कारण यह है कि यद्यपि महायान सम्प्रदाय अभी अङ्ग बुद्ध

\*Cunningham's Mahabodhi p 55, plate 111  
Vol. XV 141



कलिक्रमने एकवारगो अन्तर्हित हो गया है तथा प्राप्तण प्राधान्यनिर्देशक किसी हिन्दुगारममें शून्ययाद स्वीटन नहीं हुआ है, तो भी आज तक यज्ञउत्कल्याणोंके इतर जन-साधारणके मध्य शून्ययादका प्रसार विलुप्त नहीं हो सका है, केवल शून्यपुराण ही नहीं, परन्तु बहुत धर्ममङ्गल तथा शोभ हाथी प्रभृति मोच जातिके धर्मविश्वासमें यहो शून्य याद स्पष्टरूपसे धरामान है। यज्ञके उक्त साम्प्रदायिक मङ्गलप्र प या मोच जातिका ही विश्वास नहीं है, वरन् मयूर मञ्जके दुभेय जङ्गलाश्रित प्रदेशसे आविष्कृत सिद्धात उडुम्बर, अमयपटल, आकार महिता प्रभृति उत्कल प्र य से भी महापान धर्मको विगत स्मृति पारं गई है।

सिद्धपाल उडुम्बरके प्रारम्भमें ही यह श्लोक देखा जाता है—

“भनाकाररूपं शून्यं शून्यं मध्ये निरूपनः।

निराकारमङ्गल्यति मन्व्यति भंगरागमम् ॥”

धर्मपूजाप्रयत्नक रमाई पण्डितके शून्यपुराणमें भी यही श्लोक है,—

“शून्यमप्य निराकारं शरुयिप्रमिनामम्।

संनर परेय सत्त्वात्त्वं वरदो भव ॥”

सुतरा देया जाता है, कि दोनों प्र यकारोंका लक्ष्य शून्ययाद है तथा उद्देश्य भी एक ही।

नेपाली बौद्धोंके रम्य भूपुराणके प्रारम्भमें भी ऐसा ही श्लोक है,—

“नमो बुद्धाय ध्याय सङ्करूपाय वै नमः।

स्वयमुये विपञ्चान्तभावे धर्मपातन ॥ ( १ )

भक्ति नास्ति स्वप्नाय शानरूपस्वरुपिणे।

शून्यरूपस्वरुपाय नानरुपाय वै नम ॥ ( ३ )”

रमाई पण्डितको पदुघतिमें भी देया जाता है, कि उस महाशून्यमूर्ति “लहित अयतार”-रूप धर्मसे आधा शक्ति पापेताका जन्म है और बाद उस पार्यतोसे प्रज्ञा विष्णु और महेश्वरकी उत्पत्ति हुई है।

धर्मपूजाकी पदुघतिमें “धो धी धं धगाव नमः” इन प्रकार शून्यमूर्ति धर्मराजका बीज निर्दिष्ट है। मयूर निरुत्तउडुम्बरप्र धर्म “मो ज्ञी शून्यरूपं य” इत्य शून्य रूप निरुत्तवा पाव देया जाता है। किसी हिन्दुगारम में यज्ञको शून्य नहीं बनलाया है, अनप्य महापान

बौद्धोंके इस धोम लको त्रिशुद्ध कहा बाहुय है।

पहले हो कहा जा चुका है, कि महापानोंने त्रिलोमेंसे एक ( सङ्ग )को पुरयमूर्ति माना था जो वप भी बोध-गयामें विद्यमान है। गौडयज्ञके धर्मोपासकोंके साधारणत इस मूर्तिको ग्रहण नहीं करने पर भी धर्ममङ्गल-समूहके नायक प्रसिद्ध धर्मभक्त लावसेनकी राजधानी मैनागढके समीप जो धर्मस्तम्भ पाया गया है, उसमें बुद्धधमयाको सङ्गमूर्तिको स्तम्भ इस प्रकार है,—

“श्वतरञ्ज श्वेतमायं श्वेतयणोरपीतवम्।

श्वतासो श्वेतमप्य निरुत्तं नामाङ्गु वे ॥”

उक्त आदर्श रम मयूरभञ्जके सिद्धपाल-उडुम्बर प्र धर्म धर्म और सङ्गको एकल लक्ष्य करके प्रसिद्ध विष्णुका ध्यान करिष्यत हुआ है। यथा—

भो शुक्राम्बरधरं देवं शक्तिर्यं चतुर्भुजम्।

प्रणव यदनं ध्यायेत् सर्वत्रोपशान्तये ॥”

जहा पर उक्त ध्यान है, उससे पहले ऐसी-धर्म-गायत्री देयी जाता है,—

“ओ शिद्धदेव शिद्ध धर्मा वरेषमव्य धीमहि।

भयदेशो धीमो यान शिद्धयम प्रादयात् ॥”

( विद्वान्त-उडुम्बर १० ५० )

सिद्धान्त उडुम्बरमें अज्ञातपूर्व बड़े एक आख्या विनाय मिलती है जो पौराणिक सो प्रतीत होती है। त्रितु आश्रयका विषय है, कि क्या धर्म क्या हिन्दू किसी पौराणिक ग्रन्थमें ऐसा आस्थाधिकारका समर्थन नहीं मिला। इन्में जान पडता है, कि सिद्धात उडुम्बरकी रचनाके समय अर्थात् दो वर्षोंमें भा पण्डे वावरी सम्राज में ऐसा प्रवाद प्रचलित था वधवा प्रवादसमर्थक यदि कोई ग्रन्थ रदता तो उसीके अनुसार उडुम्बरका वाचने जातिका परिचय दे जाते। निराकारके द्वाप उरुमें विप और मुणयने त्रिजामिदवा जन्म हुआ था तथा उन्होंने वावरी जातिका उत्पत्ति दे। इन निराकारके दाहिने अङ्गने पञ्चालया नामक एक ध्यान जन्म लिया। इनके धर्म और विश्वामिदके धीमरुम अज्ञानशापी नामक वाचरीका उत्पत्त हुए जो ह्यने वाचक बनलाये। दुर्निवाचकी तथा उनसे उग्रधरणा प्राप्तकीके माध

चेदपात्र करने थे। उस समय ब्राह्मण ज्येष्ठ और वावरो  
 वनिष्ठ रहलते थे। वायोवाण्डि, परमानन्द माद और  
 राघो शाममल ये तीनों पद्मात्रयके ७ श्वर थे। ये ही  
 तीन दुली वावरो थे। विश्वामित्रकी दूसरी स्त्रीका  
 नाम था, चित्रोर्वशी। इनके गर्भसे कुशसर्वा, विधु  
 कुश और उर्वकुश उत्पन्न हुए। विश्वामित्रका तीसरी  
 स्त्री गणकेशोसे प्रयशा, उद्यम और माधुघर्म नामक  
 तिन पुत्र हुए जो वायुति ( वाग्दी ) नामसे परिचित  
 थे। उनकी चौथी भार्या वायुरेखासे जयमर्वा,  
 विजयसर्वा और वीर्यकेतु नामक तीन पुत्र जन्मे जो  
 श्वर कहलाये। उक्त दुलि वावरो, वायुती और श्वरसे  
 पुत्र १२ जाति या शाखा हुई यथा—दुलिवावरी,  
 काहाल, अनय काहाल, गुरु काहारि, ऐरी, वावरी, श्वर,  
 सुवर्ण, यादु, भादु, गुरु और नूधन।

सिद्धान्त उद्भवकारका विवरण दूसरे किसी ग्रन्थमें  
 नहीं मिलता। किंतु विश्वामित्रस श्वर जातिको उत्पत्ति  
 हुई है, यह बात ऋग्वेदके ऐनरेय ब्राह्मणमें भी मिलती  
 है। यथा—“त एतेऽन्ना पुषद्वा चरन्तः सुविन्दा मृनिवा  
 इत्युदन्त्या बहवो भवन्ति। विश्वामित्रा दस्तुनां भृषिद्या।”

( ७।३६ )

सिद्धान्त उद्भवकारने उक्त परिचयके मध्य एक  
 विशेष बात लिखी है।

पञ्चालयाके तीन पुर्वींसे ज्येष्ठ पुत्रके साथ त्रिणु  
 की बातचीत हुई थी। त्रिणुने शङ्खासुरको मार कर  
 उन्हें सद्ग दिया था। इन प्रर पद्मात्रयके व घरने  
 पात्र सद्गोंसे सम्भाषण किया था।

यहां पर सद्ग शब्दका अर्थ है बौद्धसद्ग। शून्यपुराणमें  
 भी इसी प्रकार 'सद्ग' की जगह 'सद्ग' शब्द व्यवहृत  
 हुआ है। बौद्धधर्मनिमित्त जनसाधारणके निवृत्त  
 'सद्ग' सद्गमें परिणत हुआ है। सद्गके शत्रुओंको मार  
 कर बुद्धदेवके लिए हो ज्येष्ठ दुर्लिवावरो सद्गाधिप हुए  
 थे। इसी प्रकार उनके तथा छोटे दो भाइयोंक वधधरने  
 बौद्धसद्गमें प्रवेश किया था। किंतु बाका ६ जायाने बौद्ध  
 धर्म ग्रहण नहीं किया, इसीलिए वे अस्पृश्य समझते  
 जाते लगे।

सिद्धान्त उद्भवकारने स्पष्ट लिखा है, "दुलि वावरी

अटन्ति, ब्राह्मण सद्गे चेद पड्धाति। ब्राह्मण ज्येष्ठ  
 वावरो वनिष्ठ। ए पड्धिले राजा प्रतापकद्रुडुडाय  
 गाय्य करि रत्ति अच्छ ति।”

उद्धृत प्रमाणसे साफ साफ मालूम होता है, कि वावरी  
 जातिने राजा प्रताप रुद्रके समय तक बौद्धाचारका  
 पात्रन किया था और वह ब्राह्मणोंके समान गिती जाता  
 था। राजा प्रताप रुद्रके समयसे इस जातिका अथ पतन  
 हुआ। राजा प्रतापरुद्र महाप्रभु चैतन्यदेवके समसाम  
 यिक थे। उस समय उडोसा तथा वाग्निगात्यके अनेक  
 स्थानोंमें जो बौद्धसमाज विद्यमान था, वह महाप्रभु  
 चैतन्यदेवके भ्रमणवृत्तान्तके लेखक गोविन्ददासके विवरण  
 और उनके चरिताख्यायक नूडामणिदासके चैतन्यमङ्गल  
 से ही जाना जाता है। चैतन्यप्रवर्तित वैष्णव धर्ममें श्रेष्ठ  
 बौद्धधर्म। सार और निम्न श्रेणीके वैष्णव या सहजिया-  
 के मध्य हीन बौद्ध धर्म जो एक साथ मिला हुआ है,  
 उसका भी यथेष्ट प्रमाण पाया गया है। युगल भजन प्रभृति  
 सहजियाका प्रधान अङ्ग जो तिलुस बौद्ध धर्मके जञ्जालसे  
 लिया गया है, वह नेपालसे आविष्कृत कानुमट्टका 'चर्या  
 चय त्रिनिश्वर्य' नामक बौद्धग्रन्थ पढ़नेसे मालूम होता  
 है। " एलिं माहव उटकलाधिपति प्रतापरुद्रको सभामें  
 पहले गौडोका समादर और अन्तमें बुद्धधर्मनिष्ठके इति  
 हासका वर्णन कर गए हैं \*।

सिद्धान्त-उद्भव्यर और उक्त उटकलके इतिहासकी  
 एक साथ आलोचना करनेसे समझा जाता है, कि वावरी  
 जातीय बौद्धाचार्यगण ही राजनिग्रहसे छिपे रूपमें रहने  
 लगे, साथ साथ उन्होंने बुद्ध तथा बौद्धचक्रियोंका  
 नाम भी छिपा रखा। त्रिणुने ही बुद्धका अरतार लिया  
 था, ऐसा विश्वास कर वे बुद्धको जगह विष्णुवा पूजन  
 करने लगे। हिन्दू देवदेवियोंको उपास्य मान कर अ. वे  
 अपने प्रधान लक्ष्मीसे त्रिचालन नहीं हुए—उन्होंने शून्यवाद  
 के मूलधर्मको ही सर्वप्रधान समझ रखा। ब्रह्मा, विष्णु  
 तथा महेश्वर भी उनके नामने कुछ गिने जाते लगे।

" महामहाभाष्यय इप्रसक्त नामने इय ग्रन्थका भाषिकार  
 किया है ना हजारों वष पहलेका राजाभाषामें लिखा है। ग्रन्थ  
 नितान्त अश्रील है।

धर्मभक्त धर्मपरिष्कृत तथा डोमपरिष्कारण निम्न प्रकार हिन्दूधर्ममात्रमें अल्पव्यय हैं, राजनिप्रदत्त हिन्दूधर्ममात्रके द्वारा वाचगे जाति नो उसो प्रकार अस्पृश्य हुई । निदानत उदुम्बरदारका कहाया है—“कण्डियुगे न दृश्य । वाचरी डूले मशर पातर क्षय ह्य बोलि जिणुमाया करि गोण्य करि रणि अछ नि ।”

सिद्धात उदुम्बरने जाना जाता है, कि वाचगे जाति में प्राचीन महाया सम्प्रदायकी तरह महाशून्यता या शून्यप्रवृत्ति हो जगन्ना मूल बतला कर गोपणा की गई है, बाधां उनके प्रचलन बौद्धमतके मध्य महायोनिका विशुद्ध शून्यताका आभास मिलता है ।

राजा प्रतापदत्तके समय १६वीं शताब्दीमें बौद्धधर्म उत्कलमें प्रचल हो गया था । त्रिभु राजनिप्रदत्त बौद्धधर्म बना अरस्तान होने पर भी बौद्धसम्प्रदाय पर्यवारगी त्रिभु हो गया । सम्भवत राजनिप्रदत्तके इरसे गीर्द्धीन उडीसाके गडजात दुर्गम पार्वत्य प्रदेशमें आश्रय लिया ग ।

उत्कलके स्वामीन राजा मुकुन्द देव थे । एवं समय उत्तरमें त्रिषोणी और दक्षिणमें गङ्गा तक इनके अधिकारमें था । ये भी कुछ कुछ बौद्धासुरगी थे और उनके अधिकार में बहुतसे बौद्धागण रहते थे, तिष्ठतमापामें सुभ्यो धाम्यो रचित 'पद्मम जेननम' प्र-वसे उसका पना चलता है ।

१७वीं शताब्दीमें जो बौद्धधर्मका क्षीणता गोक अनेक स्वामीमें प्रचलित था उसका कुछ कुछ प्रमाण मिलता है । तिष्ठतमापामें बौद्धधर्मके इतिहासमालक Dr. Waddell ने भोटमापामें रचित बुद्धमुनि तथागतनाथना अमणवृत्तात प्रकाशित किया है । उक्त महात्मा १७०८ ई०में भारत गये जाये थे । उनके अमण-वृत्तातमें जाना जाता है कि १७ वीं शताब्दीमें भी त्रिपुराके देवीकोट, हरिभञ्ज, कुम्भराट और पारंगटमें बहुत से बौद्धधरमि तथा बौद्धधर्म प्रचलित था ।

हरिभञ्जका अरस्तान-निगय ।

बुद्धमुनि तथागतनाथ पारंगटयात्रिपुराज्यकी क्षेप कर हरिभञ्ज नामक स्वामीमें पधारें । इस स्वामीकी मयूरभञ्ज भी कहते हैं । १७वां शताब्दीमें अर्थात् बुद्धमुनिके समय हरिभञ्ज प्रतिष्ठित हरिदरपुत्रम मयूरभञ्जकी राजधानी

थी । हरिपुरमें एक समय जो बौद्धसम्प्रदाय था, वहाँके धर्मसाधोपसे आधिष्ठित जाणुनीताराने उसका आभास मिलता है । बुद्धमुनिने इस अञ्चलमें हरिभञ्ज वैश्यका दर्शन किया था । यहा उन्होंने हितगर्भकन्या नामक एक बौद्ध-उपासिकासे तथा एक प्रधान धर्मपरिष्कृतकी जीवनीसे अनेक गुह्यतत्त्वका पता लगाया था ।

कुम्भराटका संस्था ।

कुम्भराट या कुम्भराट—तिष्ठतमापामें 'कुम्भ'का अर्थ है सिद्धगुहा । सिद्धगुहावेष्टित राट प्रदेश हो कुम्भराट है । वर्तमान पगाल प्रदेशका पश्चिमदक्षिणान जिस प्रकार "राट" कहलाता है उसी प्रकार मयूरभञ्जना पारंगट प्रदेश भी अधियासियोंके निकट 'राट' नामसे परिचित है । केवल स्वामीय अधिवासिगण ही नहीं, परन्तु उत्कलराजसो भी मयूरभञ्जको राट कहते हैं । इसी प्रकार हरिभञ्जके निकटवर्ती सिद्धगुहावेष्टित (कुम्भ) राटको मयूरभञ्जका पारंगट्य प्रदेश कह सकते हैं ।

पारंगटका स्थान ।

उडीसाके गडजातसमूहके अन्वयतम वर्धमान पाल लहरा राज्य ही भोट अमणकारीका पालगड है । सुनते हैं, कि इस समय यहा बौद्धपालराजाओंके व शहरगण राज्य करते थे और बौद्धधार्मिकता भी अभाव नहीं था ।

१७वीं शताब्दीमें जहा बौद्ध उपासिका हितगर्भकन्या रहती थी, धर्मपरिष्कृतकी जीवनी और उनके प्रवर्तित गुह्यतत्त्वका जहा सभी आदर्शपूर्णके अध्ययन करते थे, जहा अनेक गनि तथा अनेकानेक धर्मप्रचरका अभाव नहीं था वह हरिभञ्जके वैश्य कहा है ।

मयूरभञ्जकी राजधानी धारिपदाने भाट कोसकी दूरी पर अरस्तिया वर्तमान बटनारै ग्रामके बोधिदेवार्थके समीप क्षुद्र वैश्यमूर्ति निकली है । उसके निकट प्राचीन हरिभञ्ज वैश्यका जो अयव्याग था, वहाँ उक्त स्थानके बैसा प्रतीन होता है ।

नेपालके ज्ञाना स्वामीके वैश्यकी अर्थव्याग क्षेप कर जान पड़ता है कि जहा वहाँ एक मूल्य वैश्य है वहाँ उसका आदर्शस्वरूप एक या एकसे अधिक छोटा वैश्य देखा जाता है । नेपालमें मध्ययुगके या वर्तमान वैश्यमें आधि

बुद्ध, पञ्चध्यानी; तिरत्न या बुद्ध धर्म और मङ्गलमूर्ति तथा चैत्य पाश्र्वमें हारोतीकी मूर्ति त्रिधामान हैं।

बडसाईं ग्राममें भी ऐसा छोटा चैत्य देवनेमें आता है। यह चैत्य अमी 'चन्द्रसेना' नामने स्थानीय हिन्दुओं के निकट परिचित है। ऐसै चैत्यकी हम लोग वृहत् चैत्यका आदर्श मानते हैं।

नेपालके प्रत्येक छोटे बड़े आदर्श चैत्यके चारों ओर या कुल्लुङ्गोमें अशोभ्य, रत्नसम्भय अमिताम, अमोघसिद्धि ये चार ध्यानी बुद्ध नजर आते हैं।

बडसाईंग्रामके उक्त आदर्शचैत्यके चारों ओर वैसी ही चार मूर्ति हैं। उनका अशोभ्यादि चार ध्यानी बुद्धके जैसा रूप नहीं होने पर भी उक्त चार बुद्धके वाहन तथा उनके चार पुत्र बोधिसत्त्वकी मूर्ति हैं, जैसे—अशोभ्यकी जगह उनका वाहन हस्तो और उसके ऊपर दण्डायमान वज्रपाणि बोधिसत्त्व, रत्नसम्भवकी जगह उनका वाहन अश्व और उसके ऊपर रत्नपाणिबोधिसत्त्व-दण्डायमान हैं। इसी प्रकार अमितामकी जगह उनका वाहन मयूरपक्षी और उसके ऊपर पद्मपाणिबोधिसत्त्व तथा अमोघसिद्धकी जगह उनका वाहन गण्ड और उसके ऊपर विश्वपाणि-की मूर्ति हैं। ऊर्ध्व मध्य भागमें येरोचनकी जगह एक मुद्गाहृति है।

उक्त चैत्यपाश्र्वमें तिरत्नकी दूसरी चतुर्भुजा धर्म मूर्ति विराजमान हैं। नेपालके बहुतसे चैत्योंमें ऐसी ही धर्ममूर्ति देपी जाती है \*।

बडसाईं ग्राममें उक्त चतुर्भुजा धर्ममूर्तिकी मूर्ति वर्तमान है। पहले ही लिखा जा चुका है, कि नेपालके प्रत्येक बौद्धचैत्य या मन्दिरपाश्र्वमें शीतला या हारोती की मूर्ति देखी जाती है। नेपालीबौद्धोंके पृथक् स्वयम्भू पुराणमें भी इसी प्रकार वर्णित हुआ है—

“ततश्च हारीतीं दशै पञ्चपुत्रशतैर्हृताम्।

भौत्स्वयम्भुश्चिन्माम्रे दक्षिणात्प्य संस्थापितम् ॥

ये च या मा भुम्भ्याश्च पञ्चोपचारकैरपि।

मगधादिभि पूज्ये मांसे वनिभिर्मानवै ॥

नेहै ये वैवै नानै पानै भक्तपिण्डाभ्यां पुत्रिणम्।

तस्या पुण्यप्रसादाच्च न त्रातु इत्युपद्रगान् ॥

अथवा अन्यथा लोका शैवापि बौद्धमयका।

हारोत्यामीप यन्निययां सदा मुदा प्रपूजितम् ॥”

( ७म अ० )

इसने यह स्थिर होता है, कि जहा चैत्य है वही तिरत्न और यानीबुद्धगोभित आदर्श चैत्य है, तथा उसीके समीप हारोतके अधिष्ठानकी सम्भावना है। बडसाईं ग्रामके एक स्थानमें उक्त तीन मूर्तिसे क्या यह स्पष्ट जान नहीं पडता, कि एक समय जहा एक वृहत् चैत्य था ? यहाके अधियासियोंका कहना है, कि बडसाईं ग्रामके पाश्र्वरत्नों बोधिपुंकरणोंके समीप पूर्वोक्त तीन मूर्ति विद्यमान थी। थोड़े दिन हुए, कि वहामे ला कर ये सब मूर्ति या ग्राममें रखी गई हैं। बोधि पुंकरणोंके चारों ओर अमी विस्तीर्ण कृपिक्षेत्र है। एक समय इसके निकट ही जो बौद्धचैत्य था और उसीसे इसका नाम ऐसा पडा है, उसमें सन्देह नहीं। उस प्राचान बौद्धचैत्यका अभी कोई चिह्न नहीं मिलता। लगभग एक सौ वर्ष पहले जो सामान्य स्मृतिपरिचायक चिह्न था, कृपणोंके हलचालनसे यह भी स्थानान्तरित हो गया है—सिर्फ बीच बीचमें बड़े बड़े कटे हुए पत्थर क्षोण स्मृतिका परिचय देते हैं।

हरिपुरसे ३ कसनी दूरा पर उक्त बोधिपुंकरणों है और इसीके पाश्र्वस्थ बडसाईं ग्रामके सिंग हरिपुरक निकट रत्नों और किसी जगह ऐसा बौद्धचैत्यनिर्देशन नहीं मिलता है। इसी लिए बडसाईंके निकटस्थ धुंढुपगुप्त वर्णित हरिभञ्जचैत्यका अत्रस्थान स्योनाम किया जाता है। तथागतनाथने यहा बहुतसे गुद्ग्यात्र तथा धर्म परिदत्तकी जोयनी सुना था। यथाथम इसी बडसाईं ग्रामसे प्रच्यत्र बौद्धमतसमयाग सिद्धधान्तउद्भूय्य, अनाकारमहिता, अमरपदल प्रभृति अपूर्वप्रथ आधिकृत हुए हैं। मालूम नहीं, कि इस धञ्जलमें विशेष अनुसंधान करोंसे वैसी कितनी ही शोर्जे मिल सकती है। धर्मपूजाप्रयत्नक रमाईपरिदत्तके शून्य पुराणका और यहाके सिद्धपात उद्भूय्यका मूलदूत था लक्ष्य। एक ही यह पहिंटे ही लिखा जा चुका है।

बडसाईंके उक्त धर्म, चैत्य और हारोतीपूजामें आज भी प्राहणको अधिहार नहीं है—अति निम्नश्रेणीकी देहरी

\* Oldhelds Aepal p 214

धर्मगत धर्मपरिष्कृत तथा शोमपरिष्कृतगण निम्न प्रकार हिन्दू समाजमें अग्रगण्य हैं, राजनिग्रहसे हिन्दू समाजके द्वारा बाघरी जाति में उनको प्रकार 'रघूश्य हुर्'। निम्नोक्त उद्युम्बरका कहना है—'दलियुगे १ इत्यय। बाघरी हुले सख्य पातक क्षय ह्य धोलि जिष्णुमाया वरि गोप्य करि रति जच्छ ति ।'

मिथान उद्युम्बरमे नामा जाता है, कि बाघरी जाति में प्राचीन महापाप सम्प्रदायको तरह महाशून्यता या शून्यप्रपञ्च ही जानका मूल बतला कर घोषणा की गई है, अर्थात् उनके प्रकृत राजसमूहके मध्य महायोनिका विद्युत् शून्यताका आभास मिलता है।

राजा प्रतापरुद्रके समय शूद्रों जनाश्रमों बौद्धधर्म उत्पन्नमें प्रयत्न हो गया था। त्रिभु राजनिग्रहसे बौद्ध धर्म वका अस्तित्व होने पर भी बौद्धसम्प्रदाय परवाराती त्रिभुत्त हो गया। सम्भवत राजनिग्रहके इरमे योनों उद्योगोंके गठनात् दुर्गम पार्वत्य प्रदेशमें आश्रय लिया जा।

उत्कलके स्वाधीन राजा मुकुन्द देव थे। एक समय उत्तरमें विधेणों और दक्षिणमें गजाम तक इनके अधिकारमें था। वे भी कुट कुट बौद्धराजगो थे और उनके अधिकार में बहुतसे बौद्धगण रहने थे, तिब्बतभाषामें सुम्पो धाम्पो रचित 'धर्मसम ज्ञानज्ञम' ग्रन्थसे उसका पता चलता है।

१७वीं जनाश्रमों जो बौद्धधर्मका क्षीणानेक स्थानोंमें प्रचलित था उसका कुट कुट प्रमाण मिलता है। तिब्बतमें योश्रमोंके इतिहासलेखक Dr. W. edel ने भोटनायामें रचित सुदगुप्त तथावननाथना समणवृत्तात् प्रकाशित किया है। उक्त महादमा १०८ ई०में भारत धर्म आया था। उनके समणवृत्तात्में जाना जाता है कि १७ वीं जनाश्रमों में विजुराके देवीकोट, हरिभद्र, कुबराट और पालगडमें बहुत से बौद्धधरति तथा बौद्ध धर्म विद्यमान थे।

हरिभद्रका पञ्चम निर्माण।

सुदगुप्त तथागतनाथ पाथार्याविजुराका देव कर हरिभद्र नामक स्थानमें पधारि। इन स्थानोंके मयूरभद्र भी कहते हैं। १७वां जनाश्रमों अर्थात् सुदगुप्तके समय हरिभद्रभद्र प्राचिण हरिभद्रपुरमें मयूरभद्रको राजधानी

थी। हरिपुरमें एक समय जो बौद्धसंख्य था, यहाँके धर्मसाधकोंमें आधिष्ठित जागृतांतरासे उमका आभास मिलता है। सुदगुप्तने इन भद्रभूमि हरिभद्र चैत्यका दर्शन किया था। यदा उन्होंने हितगर्भकन्या नामक एक बौद्ध उपासिकासे तथा एक प्रधान धर्मपरिष्कृतकी जीवनीसे अनेक गुणतत्त्वका पता लगाया था।

पुत्रराटका संख्या।

कुबराट या पुगराट—तिब्बतीय भाषामें 'पुग'का अर्थ है सिद्धगुण। सिद्धगुणसे हित प्रदेश ही पुग राट है। वर्तमान पगाल प्रदेशका पश्चिमदक्षिणार्ध जिन प्रकार 'राट' कहलाता है उसी प्रकार मयूर भद्रका पार्वत्य प्रदेश भी अधिवासियोंके निरुद्ध 'राट' नामसे परिचित है। केवल स्थानीय अधिवासियों ही नहीं, बल्कि उत्कलवासियों भी मयूरभद्रको राट कहते हैं। इसी प्रकार हरिभद्रके निरुद्धयत्ती सिद्धगुणसे हित (कुब) राटको मयूरभद्रका पार्वत्य प्रदेश कह सकते हैं।

पानगडका संख्या।

उद्योगोंके गठनात्समूहके अन्ततम वर्तमान पाल लहरा राज्य ही भोट भूमणकारीका पालगड है। सुम्पो है, कि इस समय यहाँ बौद्धपालराजाओंके यज्ञधरगण राज्य करते थे और बौद्धधर्मविद्या भी बनाव नहीं था।

१७वीं जनाश्रमों जहाँ बौद्ध उपासिका हितगर्भकन्या रहती थी, धर्मपरिष्कृतकी जीवनी और उनके प्रचलित गुणतत्त्वका जहाँ सभी आदर्शपूर्ण अध्ययन करते थे, जहाँ अनेक यति तथा अनेकानेक धर्मग्रन्थका समाव नहीं था, यह हरिभद्रचैत्य वहाँ है।

मयूरभद्रकी राजधानी धारिपदाने आठ बीमकी दूरी पर अवस्थित वर्तमान कटनार प्रामके बौद्धधरारके समोप शूद्र चैत्यमूर्ति निकली है। उसके निरुद्ध प्राचीन हरिभद्र चैत्यका जो अवस्थान था, वहाँ उक्त स्थानके जैना प्रतीक होता है।

नेपालके माना स्थानोंके धर्मकी अवस्था देव कर जान पड़ता है कि जहाँ कोई एक शूद्र धर्म है वहाँ उसका आदर्शस्वरूप एक या वरुण अधिष्ठित छोटा चैत्य देखा जाता है। नेपालमें मध्ययुगके या वर्तमान चैत्यमें आदि

बुद्ध, पञ्चध्यानी, त्रिरत्न या बुद्ध धर्म और मद्गुप्ति तथा चैत्य पाश्र्वाभिं हारीतीकी मूर्ति विद्यमान है ।

बडसाई ग्राममें भी ऐसा छोटा चैत्य देखनेमें आता है । यह चैत्य अभी 'चन्द्रसेना' नामसे स्थानीय हिन्दुओं के निकट परिचित है । ऐसे चैत्यकी हम लोग बृहत् चैत्यका आदर्श मानते हैं ।

नेपालके प्रत्येक छोटे बड़े आदर्श चैत्यके चारों ओर या कुलुङ्गीमें अशोभ्य, रत्नसम्भज अमिताभ, अमोघमिद्धि ये चार ध्यानी बुद्ध नजर आते हैं ।

बडसाईग्रामके उक्त आदर्शचैत्यके चारों ओर चैमी ही चार मूर्ति हैं । उनका अशोभ्यादि चार ध्यानी बुद्धके जैसा रूप नहीं होने पर भी उक्त चार बुद्धके वाहन तथा उनके चार पुत्र बोधिसत्त्वकी मूर्ति हैं, जैसे—अशोभ्यकी जगह उनका वाहन हस्तो और उसके ऊपर दण्डायमान वज्रपाणि बोधिसत्त्व, रत्नसम्भजकी जगह उनका वाहन शम्भ और उसके ऊपर रत्नपाणिबोधिसत्त्व-दण्डायमान हैं । इसी प्रकार अमिताभकी जगह उनका वाहन मयूरपक्षी और उसके ऊपर पद्मपाणिबोधिसत्त्व तथा अमोघसिद्ध की जगह उनका वाहन गरुड और उसके ऊपर त्रिश्रपाणि-की मूर्ति हैं । ऊष्ण मध्य भागमें वेरोचनकी जगह एक मुञ्जावृत्ति है ।

उक्त चैत्यपाश्र्वमें त्रिरत्नको दूसरा चतुर्भुजा धर्म मूर्ति विराजमान है । नेपालके बहुतसे चैत्योंमें ऐसी ही धर्ममूर्ति देवी जाती है \* ।

बडसाई ग्राममें उक्त चतुर्भुजा धर्ममूर्तिकी मूर्ति वर्तमान है । पहले ही लिखा जा चुका है, कि नेपालके प्रत्येक बौद्धचैत्य या मन्दिरपाश्र्वमें शीतला या हारीती की मूर्ति देखी जाती है । नेपालीबौद्धोंके बृहत् स्वयम्भू पुराणमें भी इसी प्रकार वर्णित हुआ है—

“ततश्च हारीतीं वीं पञ्चपुत्रकनैर्हताम् ।  
भीस्वयम्भूपञ्चमामे दक्षिणात्य संस्थापितम् ॥  
ये च या वा मनुष्याश्च पञ्चोपचारवैरिपि ।  
मयधारादिभि पूज्ये मामे विक्रिभिर्मौन्यै ॥  
वेद्यै देये माने पाने भक्षिपिडम्भां पूजितम् ।  
सत्या पुण्यप्रदातश्च न जातु इत्युच्यते ॥

\* Oldfields Nepal p 214

अथना भन्यना टाका शैवापि बौद्धस्यका ।  
हारीत्यामपि यन्त्रियया सदा मुदा प्रपुनितम् ॥”

( ७म अ० )

इससे यह स्थिर होता है, कि जहां चैत्य हैं वही त्रिरत्ना और ध्यानीबुद्धप्रोभित आदर्श चैत्र है, तथा उन्की समीप हारीतके अधिष्ठानकी सम्भावना है । बड साई ग्रामके एक स्थानमें उक्त तीन मूर्तिले पया यह स्पष्ट जान नहीं पडता, कि एक समय यहां एक बृहत् चैत्य था ? यहांके अधिष्ठातियोंका कहना है, कि बडसाई ग्रामके पार्श्वर्तों बोधिपुंकरणोंके समीप पूर्वोक्त तीन मूर्ति विद्यमान थीं । थोड़े दिन हुए, कि वहांसे ला कर वे सब मूर्तियां ग्राममें रखी गई हैं । बोधिपुंकरणोंके चारों ओर अभी विस्तोर्ण दृष्टिकेव है । एक समय इसके निकट ही जो बौद्धचैत्य था और उन्कीसे इसका नाम ऐसा पडा है, उसमें सन्देश नहा । उस प्राचान बौद्धचैत्यका अभी कोई चिह्न नहीं मिलता । लगभग एक सौ वर्ष पहले जो सामान्य स्मृतिपरिचायक चिह्न था, क्लृप्तके हल्चालनसे वह भी स्थानान्तरित हो गया है—सिर्फ चोच बोधन बड़े बड़े फटे हुए पत्थर क्षोण स्मृतिका परिचय देते हैं ।

हरिपुरसे ३ कोसको दूरी पर उक्त बोधिपुंकरणों हैं और इसीके पार्श्व बडसाई ग्रामके मित्रा हरिपुरक निकट चर्तों और किसी जगह ऐसा बौद्धचैत्यनिर्देशन नहीं मिलता है । इसी लिए बडसाईके निकटस्थ बुद्धगुप्त वर्णित हरिमञ्जुचैत्यका अन्वयान स्थोकार किया जाता है । तथागतनाथने यहां बहुतसे गुह्यगार तथा धर्म परिष्ठतनी जोरती सुना था । यथाधर्म इसी बडसाई ग्रामसे प्रच्छन्न बौद्धमतसमधार मिदुधाम्तउद्भूय, अनाकारसहिता, अगपटल प्रभृति अपूर्व प्रथ आविष्कृत हुए हैं । मालूम नहीं, कि इस अञ्चलमें विशेष अनुसंधान करनेमें चैमी किनां हो चोज मिल सकती है । धर्मपूजाप्रवर्तक रमापरिष्ठतके शून्य पुराणका और यहांके मिदुधाम्त उद्भूयका मूलवृत्त वा लक्षण एक है यह पहिले ही लिखा जा चुका है ।

बडसाईके उक्त धर्म, चैत्य और हारीतीपूजामें आज भी प्राज्ञणको अधिकार नहीं है—अति निम्नधेणीकी

ज्ञानि आ कर पूजा करती है। पहले बायुरोगण पूजा करने से और धर्म भाषे समयानुसार करने है। जिस दिन बौद्ध जगत्में सभी जगत् बुद्धदेवता जन्मोत्सव मनाया जाता है, आज भी उस स्मरणार्थ बैजांगी पूर्णिमाके दिन उन बुद्ध मार्ग प्रामाण्य चरित्रना नामक बौद्ध चैत्यका पूजन तथा महोत्सव होता है। जसाधारणका विश्वास है कि बहुत दिनोंसे यहा बैजांगीपूर्णमासा महोत्सव चला आता है जो "उद्घाटन" कहलाता है। इस उत्सवमें २०-२५ हजार मनुष्य इकट्ठा होते हैं जिसमें बायुराजा स्वयं काम नहीं रहता। ऐसा उत्सव मयूरभद्रमें और कहीं भी नहीं होता। कभी कभी उक्त क्षुद्रचैत्यकी पूजाके उपरान्त जनता असाधारण नयमनि दिखलाता है। यहा तक कि, ब्राह्मण भी आ कर उससे सामने मिर भुजाते हैं। नेपालमें अब भी ऐसी मूर्तिनिष्ठ चैत्यका सब जगत् महामासादर और पूजा प्रचलित है।

अभी बैजांगी पूर्णिमाके 'उद्घाटन'के मिया और दूसरे किमी दिन उक्त क्षुद्र चैत्यकी पूजा नहीं होती, किन्तु हारोतोदेवीकी पूजा सब समय हुआ करती है। कारण, बहुत दिनोंसे बौद्ध तथा हिन्दूजनसाधारण हारोतो या जीतलाका पूजा करने आये हैं। आश्चर्यकी बात है, कि अभी यह मूर्ति जनसाधारणमें 'कालिका' नामसे परिचित है। इसलिए चाहे दिन हुए ब्राह्मण भी इस देवीकी पूजा करने लग गये हैं। किन्तु साधारणतः वे बीच देवरोने ही पूजा करते हैं और विभक्तियोंके देवुरोगण बहुत दिनोंसे यहाकी देवसम्पत्तिका भोग करने भाय हैं।

जो कुछ हो, हाई सी पर्यं पहले जिस स्थानमें बौद्ध उपासक तथा उपासिकाका अमाय नहीं था निष्पत्ति बहुत दूर दिनोंसे बौद्ध आचार्यगण जहाँके मसिद्ध चैत्य और माना गृह्यनाम्नोंके दर्शन करने आते थे, अभी वहाँके उक्त सामान्य निदर्शनके मिया और कुछ भी नहीं देखा जाता। स्थानीय प्राचीन मनुष्योंमें सुना जाता है, कि बायरी जातिको वेदान्त ही इस सब दृष्टीकी रक्षा हुई है।

बायुरी और बायरी।

उक्त बायुरी जाति मयूरभद्र और निकटवर्ती अलग

गद्गजानके मिया वहाँ दूसरी जगह रही मिलती। सिद्धान्त उद्युम्भमें ६ प्रसारको ब्राह्मणजातिके मध्य "बायरी" नामक जिस एक ( वर्तमान अष्टमयुग्य) ब्राह्मण जातिको कथा लिगी है, यहाँ छिपे रूपसे मयूरभद्रके पार्वत्य प्रदेशमें 'बायरी' नामसे प्रसिद्ध है। बायरीजाति भार्य नहीं थी—इसको गिनती मुसल्यजातियोंमें होती थी। इनमेंसे बहुतोंने राज्यशासन भी किया है तथा अनेक देवकीनिका स्थापना कर खुस यसमाजका परिचय भी दिया है जिसका मयूरभद्रमें पाकी प्रमाण मिलता है। मयूरभद्रके दुर्गम निमला पहाड़के ऊपर स्थापत्यगिन्य का गिगाल निदर्शन 'अठारह देव' नामक जो प्राचीन प्रस्तर मन्दिर और प्रस्तर अट्टालिकादि है, यहाँ गिगाल कोर्त्ति बायुरीजातिको पूर्ण समुद्धि का परिचय देती है। कुछ दिन पहले जो इस जातिके मध्य राजा, राजमन्त्री, सामन्त प्रभृति प्रियमा थे, अब भी उनको शोणस्मृति वर्त्तमा है। बायुरिया मान भी अपनेको भार्यजाति और ब्राह्मणके समकक्ष बतलाते हैं। ये ब्राह्मणकी तरह यज्ञस्य धारण तथा उन्हीके जैसा दशाह अर्वाच्यका पालन करते हैं। यह अर्वाच्यके नापि आ कर श्रौं कर देता है। आरह्ये दिन ही श्राद्ध समाप्त होता है। प्रायण पुरो हत ही पारोहित्य करने से। पञ्चाङ्गको ही ब्राह्मण भोजन तथा स्वजाति भाग होता है। वर्त्तमान समयमें इस जातिके सर्वप्रधान ध्यति 'महापात' कहलाते हैं। मयूरभद्रके गूटा बरकचिया नामक स्थानमें महापातों का वासस्थान है। प्रत्येक बायुरी गृहस्थको पुत्ररूपके विवाहके समय महापातको मयादास्वरूप एक धार, १० सुपारी और १०० पाग देने हाते हैं। किसी भा उत्सवके समय महापातका अनुमति लेती पड़ती है। मयूरभद्रके महापात पञ्च अनेको प्येष्ठ और केवम्बर दन्तुर प्रभृति महापात यन्त्रको बगिच्छकी मन्त्रा का करताते हैं।

अमाप्ययज इस जातिको अरण्या अभी अर्पण होने पर भी जातीय सम्मान तथा धर्ममार्गका और उक्त विनये लक्ष्य है। कौं भी बायुरी ब्राह्मणादि किमी दूसरा जातिका अन्न चढ़ापि नहीं पाते, यदि कोई दूसरी जातिका अन्न चढ़ण या गिन्य जातीय धर्मार्थे साथ हीन मन्त्र चढ़े तो ये बनि शोभ मनात और

जातिच्युत होते हैं। आश्चर्यका विषय है, कि ये किसी दूसरी जातिको जूनेमें घुणा बोध करते हैं। ये धर्मराज, जगन्नाथ और विचित्रेश्वरी या छोटी विचित्रेश्वरीको पूजते हैं। इनका कहना है, कि निरञ्जननी गडुसे हा इनके बीजपुष्पकी उत्पत्ति हुई है, इसीलिये इनका वाहुरो या बाधुरी नाम पडा है।

बाधुरी शब्दसे जो 'बायरी' या 'बाधुरी हुआ है, उम में सर्वदेह धरनेका कोई भी कारण नहीं। वर्तमान बाधुरी जातिका यज्ञसूत्र, अगोच, श्राद्ध, आभिजात्यमर्यादा तथा आचार व्यवहार देव धर यही सिद्धान्त उद्भूयर् वर्णित महायान बौद्धमन्त्राय भुक्त बायरी जाति सी प्रतीत होती है।

यथाथमें यह जाति अत्यन्त उग्रि रूपसे वनमें रहती है। पहले ही कहा गया है कि बाधुरीगण दूसरी जाति को जूनेमें घुणा करते हैं। ब्राह्मणप्रमावाच्यित हिन्दूराजाके अधिभारमें यास और अवस्था वैगुण्यके कारण बहुतांके 'पूर्वाचारका परित्याग करने पर भी ये लोग अब भी पूर्व धर्ममत तथा विश्वास एकवारगी छोड नहीं सके हैं और धर्मराज जगन्नाथको महायान बौद्धभावमें पूजते हैं। विचित्रेश्वरी जो प्रकाण्ड बुद्धमूर्ति निकली है छोटी 'विचित्रेश्वरीको मूर्ति बौद्ध तान्त्रिक ममाजमें सिता रात्री नामक शक्तिमूर्ति कहलाती थी। इस मूर्तिके गालमें अमो भी "ये धर्म हेतु प्रमया" इत्यादि बौद्धसूत्र उल्लेख हैं। बाधुरीगण "धर्म मा" नामक और एक देवीकी पूजा करते हैं यः छिभुज रमणीमूर्ति विचित्र में अधिष्ठित है, अवस्थानुसार बाधुरीमहिलाए हीनश्रेणी की रमणियोंकी तरह समुचे हाथमें कासे या पीतलका पाट्टार पहनती हैं। उस देवी भी उसी तरह हीनजाति वैशम्पायन भूपित होने पर भी विरलन अन्यतम धर्म मूर्तिसी प्रतीत होती है। वहाँ वहाँ पर बाधुरीगण "शून्य प्रण"की भी पूजा करते हैं। सिद्धान्त उद्भूयर्से "ओं शून्य प्रणये नम" चेमा बीज मन्त्र पहले ही उद्घुष्ट किया गया है। अगिश्चि हीनारम्भाय वहाँ वहाँ बाधुरी इन प्रण को 'वम्' या 'वम्' बागते हैं। कोर स-यालीके मध्य एक बडामकी उपासना प्रचलित है। क्या ही आश्चर्यकी बात है, कि बडम और बडामका नामसादृश्य देख कर

बहुतेरे बाधुरीजातिको हीन अनाथजातिमें गिनती करते हैं। सिद्धान्त-उद्भूयर्से लिखा है, कि "बायरी दिव्य अन्नपिण्ड" अर्थात् ब्राह्मणकी तरह बायरी भी अन्नपिण्ड देत हैं वर्तमान बाधुरीजातिमें भी महापात्र प्रभृति प्रधानोंके श्राद्धमें अन्नपिण्ड देनेकी व्यवस्था है। इससे भी यह जाति जो एक समय बौद्धप्रभावकालमें ब्राह्मणोंके ऊपर प्रभुत्व जमानेकी अपसर हुई थी, उसका कुछ आभास भलकता है। जो कुछ ही, महाराज प्रताप रक्षके समयसे राजनिग्रहसे यह जाति जो पार्वत्य प्रदेशमें आश्रय लेनेकी वाध्य हुई थी और बौद्धप्रभावके विलोप के साथ साथ वनप्रदेशमें डोमपण्डितको तरह अति होन तथा अल्पव्य हो गई है, इसमें सन्देह नहीं। मयूरभञ्ज और निरुद्धरसौ पायत्य गहनकाननवासो अपरिचित जातिको हो प्रच्छन्न बौद्ध कहते हैं। इस जातिके दो एकके मुखमें गारखनाथ, मणिकानाथ और मार्कण्डेयका नाम सुना जाता है। बडसाइमामने आविष्कृत अमर पुटलमें मीननाथका ही नाम मणिकानाथ है। शून्य पुराण तथा नाना धर्मग्रन्थमें दूसरे किसी श्रविका विद्याय परिचय नहीं रहने पर भी मार्कण्डेय, गोरक्ष, मीननाथ आदिका नाम मिलता है। यहाकी अनाकार सहितामें मार्कण्डेयका तपस्या और अमरपटलमें मीनगोरक्ष सवाद् वर्णित है। बौद्धसमाजमें गोरक्षनाथ एक प्रधान बौद्ध चायके जैसे सम्मानित थे। मीननाथका तो बडा ही सम्मान होता था। वे अब भी नेपालके अधिष्ठातृदेवता मच्छेन्द्रनाथ नामसे बौद्धसमाजमें विशेष पूजित हैं तथा नेपाली बौद्धगण इस मच्छेन्द्रनाथको ही 'पद्मपाणि' बोधि सत्त्वका अवतार मानते हैं।

जो कुछ ही, उक्त प्रमाण और अनेक कारणोंसे

• It is stated in Pagasm Jon-zan (by Sumpo khaupo a renowned Buddhist Teacher of Tebbet) 'About ( 13th Century AD ) this time foolish yogis, who were followers of Buddhist Yogi Goraksha became Caste Samnvasis' (Journal of the Asiatic society of Bengal, 1898 Pt 1 P, 25)

† Dr Oldfield's Nepal, vol II, P, 264



बाधु, रवियोंकी प्रख्यन तथा चोचन बौद्ध माननेमें कोई भावति न रहे ।

बोध ( सं० पु० ) सुप्रख्यापत्य पुमान् बुधश्च । बुधके पुत्र, पुत्रवत् ।

बोधनामी- सत्प्रयाचम्यति न्याम्यापके प्रजेता ।

बोधायता । सं० पु० ) १ आङ्गिरसम भिन्न बोधस्मयिकी मन्वति । २ एक प्रणि । इन्होंने श्रीगमूत्र, गृहगमूत्र और धर्ममूलकी रचना की ।

बोधि ( सं० पु० ) बोध गम् । आङ्गिरसम भिन्न बोधना गोत्रापत्य ।

बोध ( सं० पु० ) बोधे घम् । आङ्गिरसम गोत्रापत्य । महाभारत प्राणितपर्यमें बोध्यगोता अध्यान् बोध्यका जो उपदेश है, उसका स्मृत तात्पर्य इस प्रकार है — एक निम्न यथातिने बोध्यने पुत्रा था, 'आपने किसके उपदेशसे प्राणितलाभ किया है ?' बोधने उत्तर दिया, 'मैंने विगला घेरा, कौश, सर्प, भ्रमर, शरणीमाता और कुमारी का छ जनोंके उपदेशसे प्राणित पाई है । आजा स्वप्ने बल्यनी है । आजाका विज्ञान कर स्वप्नेने ही परम सुग प्राप्त होता है । विगला आजाका परित्याग कर सुगमे मोड़े थी । निरामिय ध्यक्तियोंने कौशने आमिय प्रहण करने देण उने मार डाला था, यह देण कर किम्बो एक कौशने आमियका परित्याग कर परमसुग प्राप्त किया था । स्वयं घर दात कर रहना सुगका हेतु नहीं है । माप दूस्नेके बनाये हुए घरमें सुगमे मोना है । तपयि गण निमागृतिश अल्पवत् कर भृङ्गकी तरह पर्यटन करने हुए ध्यान्पूर्वक बोधिका निवाह करने हैं । एक जार बानीयाला जार बानेमें मेमा मशामूत्र था कि उस के स्ताने राधाके गन्ने होने पर भी वह निरालुन अन मार रहा, किसे प्रकार उनका त्यागन न कर रहा । एक दिन एक कुमारी प्रख्यनभागेने वृत्र अतिविषीकी भोजन बतानेकी वामनासे ऊहापमें घात कृत रही थी । मोट देतेते उपके हागमंकी नृष्टियां भन भन जगद बाने लगीं । उमने मानका, कि बहनेके एक जगद रहनेने ही कण्ठ पीडा होना है सो उमने सब नृष्टियां 'तोड डालने' केरत एक रहने दी । प्रन्पय धरंकेन विगणन करनेसे

किम्बो भी म्नाध विवाद् होवने सम्भावता नहीं, यह। बोध्यके उपदेशका स्मृत तात्पर्य है ।

( भारत गानितः १७८ म० )

बोधो देशभेदेऽभिज्ञतोऽस्य ज्ञानिकादित्वात् स्म ।

( ति० ) २ विज्ञादिकमसे उस देशके अधिवासी ।

बोधा ( हि० पु० ) बहुत छोटे डीलका मनुष्य, अत्यंत डिगना या नाटा मनुष्य ।

बोभुस ( सं० वि० ) १ दृष्टि । २ अनादारापसग द्यान ध्यक्ति । ३ दृश । ४ क्षुधित ।

बोह हि० पु० ) आमके मजदूर, मोर ।

बोह ( हि० स्त्री० ) पागलपन, मनक ।

बोहना ( हि० वि० ) धामके पेड़में मंजरी निकलना, धामका फूलना ।

बोहदा ( हि० वि० ) विक्षिप्त, पागल ।

बोरा ( हि० वि० ) १ विक्षिप्त, पागल । २ गुंठा । ३ अज्ञान, भाला ।

बोराना ( हि० वि० ) १ विक्षिप्त हो जाना, सनक जाना ।

२ उमत्त हो जाना, विवेक या बुद्धिसे रहित हो जाना ।

बोरा ( हि० स्त्री० ) बायली रमी । बोरा दलो ।

बोलाडा ( हि० पु० ) एक प्रकारका गहन जो सिर पर पहना जाता है । इसका आकार सिकड़ी सा होता है ।

ब्यंग ( हि० पु० ) अन्तस्थ 'य' में वेरो ।

ब्यजन ( हि० पु० ) स्मरण देना ।

ब्यक्ति ( सं० पु० ) व्यक्ति दको ।

ब्यजन ( सं० पु० ) स्मरण देना ।

ब्यथा ( सं० स्त्री० ) व्यथा देना ।

ब्यधित ( हि० वि० ) ब्यधिण दको ।

बदलीक ( सं० वि० ) बदलाक देना ।

बदवमाय ( सं० पु० ) ब्यवसाय देना ।

ब्यवस्था ( सं० स्त्री० ) व्यवस्था देना ।

ब्यवहारिया ( हि० पु० ) व्यवहार या जेनदेन करनेवाली, महाजन ।

ब्यवहार ( हि० पु० ) १ व्यवस्था लेन देन । २ व्यवसाय लेन देनका अर्थ । ३ इदमितिका व्यवस्था । ४ व्यवहार देना ।

ब्यवहारी ( हि० पु० ) १ व्यवस्था, मामला करनेवाला ।

२ लेन देन करनेवाला । ३ जिसके साथ लेन देन हो ।  
 ४ जिसके साथ प्रेमका व्यवहार हो ।  
 व्यसन ( सं० पु० ) व्यवसन देखो ।  
 व्यसनी ( सं० स्त्री० ) व्यसनी देखा ।  
 व्याज ( हि० पु० ) १ वृद्धि, सूद । २ व्याज देना ।  
 व्याघ ( हि० पु० ) व्याघ बघो ।  
 व्याधा ( सं० स्त्री० ) व्याधि देखा ।  
 व्याधि ( सं० स्त्री० ) व्याधि देखा ।  
 व्याना ( हि० क्रि० ) उत्पन्न करना, पैदा करना ।  
 व्यापार ( सं० पु० ) व्यापार देखा ।  
 व्यारो ( हि० स्त्री० ) १ रातका भोजन, ब्यालू । २ वह भोजन जो रातके लिये हो ।  
 ब्याल ( सं० पु० ) ब्याल दपो ।  
 ब्याली ( हि० स्त्री० ) १ सर्पिणी, नागिन । २ सर्पों को धारण करनेवाला ।  
 ब्यालू ( हि० पु० ) १ रात, रातका भोजन ।  
 ब्याह ( हि० पु० ) विवाह । विवाह देखा ।  
 ब्याहता ( हि० चि० ) १ जिसके साथ विवाह हुआ हो । ( पु० ) २ पति ।  
 ब्याहना ( हि० क्रि० ) किसीका किसीके साथ विवाह सयध कर देना ।  
 ब्यूंगा ( हि० पु० ) चमाराका एक यन्त्र जो लकड़ोका बना होता है । इससे घे चमड़ेको रगडा दे कर मुल्भाते हैं । इसका आकार सौपीके आकार मा होता है, पर भगला भाग अधिक चौडा होता है ।  
 ब्यूचना ( हि० क्रि० ) १ किसी अगका एकवारगी श्चर उधर मुड जाना जिससे गीडा हो । २ हाथ, पैर उ गले गरदन आदि धडसे अनिरिक किसी अगके एकवारगी भौंकेके साथ मुड जानेमे नसोंका स्थानसे हट जाना ।  
 ब्यूत ( हि० पु० ) १ विवरण, मात्रा । २ युक्ति, उपाय । ३ उपक्रम, आयोजन । ४ साधारण प्रणाली, तरीका । ५ प्रपद्य, इतजाम । ६ सयोग, अरमर । ७ पहनावा बनानेके लिये कपड़ेकी काट छाट, तराज । ८ प्राम सामग्रीसे कार्यके साधनकी व्यवस्था, काम पूरा उतारने का हिस्साव किताब । ९ साधन या सामग्री आदिकी सीमा ।

ब्यूतना ( हि० क्रि० ) १ मारना, फाटना । २ कोई पहनावा बनानेके लिये कपड़ेको माप कर काटना छाटना, नापसे करना ।  
 ब्यूताना ( हि० क्रि० ) दरजोमे नापके अनुमार कपड़ा काटना ।  
 ब्यूवार ( हि० पु० ) व्यापार देखा ।  
 ब्यूवारी ( हि० पु० ) व्यापारी देखो ।  
 ब्यूरना ( हि० क्रि० ) १ सत या तागेके रूपकी उलभी हुई वस्तुओंके तार तार अलग करना । २ गुथे या उलझे हुए बालोंको अलग अलग करना ।  
 ब्यूरा ( हि० पु० ) १ निररण, तफसील । २ किसी विषय का अग प्रत्यग, किसी एक विषयके भीतरकी सारी बात । ३ वृत्तान्त, समाचार ।  
 ब्यूसाय ( हि० पु० ) व्यवसाय देखो ।  
 ब्यूहर ( हि० पु० ) रुपया ऋण देना, लेा देनका व्यापार ।  
 ब्यूहरा ( हि० पु० ) सूद पर रुपया देनेवाला, हुं डी चलानेवाला ।  
 ब्यूहरिया ( हि० पु० ) महाजनी करनेवाला ।  
 ब्यूहार ( हि० पु० ) व्यवहार देखो ।  
 ब्यूहर ( हि० पु० ) ब्यूहर देखो ।  
 ब्यूहरिया ( हि० पु० ) ब्यूहरिया देखो ।  
 ब्यूहार ( हि० पु० ) व्यापार देखा ।  
 ब्रज ( सं० पु० ) मन देखा ।  
 ब्रजवादीनी ( हि० पु० ) एक प्रकारका आम । इसका पेड लताके रूपका होता है । इसका दूसरा नाम राजनहो भी है ।  
 ब्रध्न ( सं० पु० ) वन्ध बन्धने ( बन्धे प्रथिपुधीच उण् । ३।१ ) इति न क् प्रधादेशाच्च । १ सूयं । २ वृक्षमूल । ३ अर्क, आकका पौधा । ४ शिज । ५ तिन । ६ मरु, घोडा । ७ चौदहवे मनु चैत्यके पुत्रका नाम । ८ रोग विशेष । इसका लक्षण—

“यन्व बापु प्रवृत्ति गेक्युत्तरभ्यम् ।  
 बह्व्यापु वृष्यो याति ब्रध्नन्वापरायत ॥”

( चरक १८ अ० )

प्रल ( म० श्रु० ) गंहति यत्न निरतिशयमहत्त्वमप्य  
 वृद्धिमान् भवतीति इति वृत्ति ( प० श्रु० ) उक्तं ( ११५४ )  
 मन्त्रिन्नाशान्मयाकृतं स्वयं । वेदं । 'अथान्' इति  
 तन्मन्त्रस्तु 'गान्' । ( ध्रुति ) १ नपस्य, नप । ३ मस्य ।  
 ४ तस्य, यथायं । ( अन् ) ५ सर्वशुणातीतं विदुः सुतोय  
 चिन्त्यरूप, यैतन्मन्त्ररूपं प्रल, ज्ञानमय परमात्मा ।  
 वेदान्तमें लिखा है—

"अथादिमकलजडमसूहोऽयस्तु, प्रकृते चित्त्य  
 यस्तु, तद्व्यवर्तिगमनित्य" अर्थात् प्रल ही एकमात्र चित्त  
 यस्तु है । प्रलके अनिरिक्त अणानादि समस्त जड  
 समूह अयस्तु और अचित्त्य है । ध्रुतिमें पाया जाता  
 है, कि "यतो या इमानि भूयानि जातानि येन  
 जातानि जीवन्ति यत्प्रपन्ति अस्मिन्विद्यन्ति ।" ( ध्रुति )  
 निम्नमें हम भूत समूहको उद्वेगित हो कर स्थिति  
 हुए हैं और चित्तमें यह लीन होता है, यही प्रल है । वेदान्त  
 दर्शनमें प्रल चित्तान्तराके स्थानमें 'अघातो प्रलनिष्ठात्मा'  
 इस सूत्रके बाद 'जन्माद्यस्य यत्' इस मंत्रम द्वादश  
 लक्षण वर्णित हुआ है । यहा अति संक्षेपमें वेदान्त  
 प्रतिपादित प्रलका विषय लिखा जाता है ।

"मन्त्रेय मोयेत्तमम आमीत्रेकमेवद्वितीयम् ।" ( ध्रुति )  
 इस जगत् सृष्टिके पहले 'मन्त्र' मात्र था, नाग और  
 रूप कुछ भी न था । समस्त एवमात्र और अद्वितीय  
 था ।

"यादात्तम्भिर्दं सर्वं तन् सत्यं स आत्मा तत्रयमसि  
 श्रेयतेतो ।" ( ध्रुति ) यह समस्त जगत् यादात्त  
 अर्थात् सद्दानु ही इन सबको आत्मा है, यह सद्दानु  
 एवमात्र सत्य है और यही आत्मा या प्रल है । हे ज्ञेय  
 जेनो ! सुदृष्टो यह प्रल हो । यह सद्दानु ही सत्य है ।  
 इसमें प्रमाणित होता है कि कार्य अर्थात् जगत् सत्य  
 नहीं है, असत्य अर्थात् मिथ्या है । तुम पणो हो, जेमा  
 कहोते, जोयात्मा और परमात्मा एक, जिन नहो ।  
 यही एक सत्य है । 'एकमेवाद्वितीयम्' 'एव' 'एव'  
 'अद्वितीय' इन तीन शब्दोंके द्वारा सद्दानुमें अर्थात् प्रलमें  
 भेदरूप निरागत हुए हैं । आत्मा अर्थात् जगत्में जोन  
 तील प्रकाशक भेद देखा जाता है । जैसे स्वयम्भवे,  
 सजातोपभेद, और विजातोपभेद । अथवायके साथ

अथवातोभेद स्वयम्भवे हे, अर्थात् पर, पुत्र और  
 फलदिष्टे साथ वृक्षरा जो भेद है, उभे स्वगत भेद  
 कहते हैं । पर एवमें दूसरे वृक्षमें भेद अथवा ही है,  
 दर्शन भेदना नाम सजातोपभेद है । कारण, इस भेदके  
 प्रतियोगी और अनुयोगी दोनों ही वृक्षसमत्व हैं । जिन  
 अर्थिको अपेक्षा वृक्षमें जो भेद है, वह विजातोप भेद है ।  
 आत्मयस्तुको तरह आत्मयस्तुमें अर्थात् प्रलमें भेद  
 तयको यादात्त ही कहती है । इस यादात्तका चित्तिये  
 चित्त 'एकमेवाद्वितीयम्' यह रूप निरूपित हुआ है ।  
 'एव' शब्दके द्वारा स्वगत भेद, 'एव' से सजातोप भेद और  
 'अद्वितीय' शब्दके द्वारा विजातोप भेद निरागत जाता है ।  
 जो पर अर्थात् निरज या चित्तियेय है, उसमें स्वगत भेद  
 ही नहीं सकता । यद्यपि, अज या अथवाय द्वारा हा  
 स्वगतभेद हुआ करता है । सद्दानुके अथवाय नहीं है ।  
 कारण, जो स्वायत्त है, अथवाय उसको उद्वेगित होगी ।  
 अथवायके परस्पर स योग या सन्निवेशके पूर्वमें स्वाय  
 य वस्तुका अस्तित्व नहीं रह सकता । अथवाय सयोग  
 के बाद स्वायत्त वस्तुका उद्वेगित होता है यह कहना  
 ही पड़ेगा । सुतरा स्वायत्त यस्तुको उद्वेगित है ।  
 निम्नको उद्वेगित है, यह जगत्का आदि कारण नहीं ही  
 सकता । यद्यपि उसका उद्वेगित भा कारणानुसारको  
 अपेक्षा रहता है । इस अवस्थामें सिद्ध होता है, कि  
 आदि कारण या सद्दानुके अथवाय नहीं है । चित्तके  
 अथवाय नहीं है, उक्त स्वयम्भवे नहा ही सकते । नाम  
 और रूप सद्दानुके अथवाय रूपमें का पन नहा ही  
 सकते हैं । नामके लयन घटादिहा सजा और रूपके  
 अर्थमें उनका आकार समानता जा सकता है । नाम और  
 रूपके उद्वेगित नाम सृष्टि ही सृष्टिके पूव नाम और रूपका  
 उद्वेगित नहीं होगा । अथवाय नाम और रूपका अज दर्शनमें  
 कथना पर उद्वेगित द्वारा जो सद्दानुके स्वगत भेदका सम  
 यम किया जा सकता है । अथ विजातोप भूमा, कि प्रलमें  
 स्वगत भेद नहा है और नष्ट सकता है । सद्दानु  
 अर्थात् प्रलका स्वजातोप भेद भी अथवाय है । यद्यपि  
 सद्दानुको स्वजातोप भूमा सम स्वगत होगा, और 'एव'  
 पदार्थ परमात्र है । वास्तव 'एव' शब्द 'एव' प्रलका  
 एक यादात्तमें प्रतीकमान वस्तु एक ही होगा, मात्रा भेद ही

सकता। दो सत्पदार्थ मानने पर उनमें परस्पर बेल  
क्षुण्य भी मानना पड़ेगा। सत् पदार्थोंमें व्यापारिक  
बेलक्षुण्य रहना असम्भव है। अतएव अन्य सत् पदार्थोंका  
कोई प्रमाण नहीं। सत् पदार्थ परमात् होनेसे, सुतरा  
अन्य पदार्थ न होनेसे, सत् पदार्थोंमें सजातीय भेदका  
होना निरान्त असम्भव है। घट सत्ता, पट सत्ता इत्यादि  
रूपसे सबस्तुओंमें सजातीय भेदकी प्रतीति होती है सहा,  
किन्तु प्रकाश, मटाकाश इत्यादिकी तरह वह भेद भा  
औपाधिक है, व्यापारिक नहीं। नाम और रूप स्वरूप  
उपाधिभेदसे सत् पदार्थोंके भेद भी सृष्टिके उत्तरकालमें  
हो सकते हैं पूर्वकालमें नहीं। क्योंकि सृष्टिके पूर्व  
कालमें नाम और रूपका उद्भव ही नहीं हुआ। अत  
एव ब्रह्ममें सजातीयभेद नहीं है। स्रगत भेद और स  
जातीय भेदकी तरह सत्पदार्थोंमें विजातीय भेद भी नहीं  
बतलाया जा सकता। कारण, जो सत्का विजातीय  
है वह सत् नहीं है, असत् है। जो असत् है  
उमका अस्तित्व नहीं है और जिसका अस्तित्व  
ही नहीं है, वह भेदका प्रतियोगी नहीं हो सकता।  
जो विद्यमान है, वह अपर अस्तुमें भिन्न है; और अपर  
चस्तु भी उससे भिन्न हो सकती है। जिमका अस्तित्व  
नहीं है वह कुछ भी नहीं हो सकता। अतएव सत्  
पदार्थोंमें विजातीय भेद भी अजातपुत्रक नामकरणके समान  
अशुद्ध है। पर, एव, अद्वितीय, इत तीन पदोंके ब्रह्ममें  
स्रगतभेद, सजातीय भेद और विजातीय भेद नहीं है,  
यही कहा गया है।

सृष्टिके पहले अद्वैतत्व अर्थात् 'एक ब्रह्म' इमे शब्द भी  
अस्वीकार नहीं कर सकता। जो प्रस्तुत अद्वैत  
है, वह कभी भी द्वैत नहीं हो सकता। वस्तुका  
अन्यथाभाव असम्भव है। आलोक कभी अन्धकार नहीं  
हो सकता और न अन्धकार ही कभी आलोक होता है।  
वास्तवमें भेद और अमेद दोनों परस्पर विरोधा  
होनेसे दोनों सत्य नहीं हो सकते। मन्त्र  
द्रष्टिसे विचार करनेसे मालूम होता है, कि अमेद सत्य है,  
भेद मिथ्या है। अमेद शब्दका अर्थ परस्व है और भेद  
का अर्थ नानात्व।

परस्वव्यवहार निरपेक्ष है, और नानात्व व्यवहार

दुमरेकी अपेक्षा रखता है। पूज सिद्ध एकत्व उत्तरकाल  
में व्यवहियमान नानात्व द्वारा बाधित नहीं हो सकता।  
वस्तु पूजसिद्ध एकत्व द्वारा पर भावी नानात्व ही बाधित  
हो सकता है। निरपेक्ष होनेसे परस्व प्रबल है, और  
सापेक्ष होनेसे नानात्व दुर्बल है। विरोधके स्थल पर  
प्रबल दुर्बलको बाधित करता है, परस्व प्रमेद नानात्व  
अर्थात् भेदका उपजीव्य है। प्रतियोगिज्ञानके बिना  
भेदका ज्ञान नहीं हो सकता। आश्रयके बिना कोई ठहर  
नहीं सकता। इसलिए भी भेद अमेदकी अपेक्षा दुर्बल है।  
अनपेक्ष अमेद सत्य है और भेद मिथ्या। ब्रह्म एक और  
अद्वितीय है। उपनिषद्में यह विषय विस्तृतरूपमें उप  
दिष्ट हुआ है। द्वैत उपदिष्ट न होने पर भी उपनिषद्में  
किन्हीं किसी जगह द्वैतका आशाम पाया जाता है। द्वैत  
और अद्वैत, इन दोनोंमें एक ही सत्य है, दूसरा काल्प  
निक है, यह अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा। क्योंकि  
उस्तु एकरूप होगी, दो रूप नहीं हो सकती। द्वैत  
को पारमार्थिक और अद्वैतको वाच्यनिक कहनेसे एक  
विज्ञानसे सर्वविज्ञान प्रतिष्ठा भङ्ग होती है, उपादान  
मानके लिए ही सत्यताका अन्वधारण असङ्गत होता है,  
और ब्रह्मात्मका सिद्धिन्तु निर्देश अनुपपन्न होता है।  
सुतरा अद्वैत वा अमेद वाच्यनिक है, पारमार्थिक, द्वैत  
वा भेद मिथ्या वा व्यवहारिक है, यही सिद्धान्त ध्युति  
सद्गत है।

"यत्र हि द्वैतमिव भवति तद्विद्वत् इतर पश्यति"  
(ध्रुति) जिस समय द्वैत सद्गत होता है, उस समय  
एक दूसरेका देण सकते हैं। ध्रुतिमें "द्वैतमिव" है इस  
शब्दके प्रयोगसे द्वैतत्वका मिथ्यात्व प्रस्थापित  
होता है।

"मन्दान्धकार रज्जु एवं इव भवति।" (ध्रुति)

मन्द अन्धकारमें रज्जु सर्पकी भांति दीव्यती है। ऐसे  
स्थलमें 'सर्प इव' कहनेसे सर्पका मिथ्यात्व जैसे बतलाया  
गया है, उसी तरह मन्धकारना चाहिये।

"मृत्यो य मृत्युमारब्धाति य इह तान पश्यति।" (ध्रुति)  
जो इस ब्रह्मकी नाना रूपमें दर्शन करना है,  
उही मृत्यु द्वारा विनाशकी प्राप्ति होता है। इस जगह

मी 'भवेत्' ईं शब्दके प्रयोग द्वारा मानात्त्व यान्त्विक  
 'भवेत्' ईं नानात्व सिद्धता है, यहाँ कहा गया है। "एष  
 मन्व्यं वदथा कल्पयन्ति।" (५१) एक प्रश्नको अनेक  
 रूपमें कल्पना होगी है। ऐस बट जाके भयमें प्रमाण  
 नहीं सिद्ध गये। छान्दोग्य और तूद्धारण्यक उपनिषद्  
 में भा वेदान्तदर्शो देगनेमें इसके बहुत प्रमाण मिल  
 सकते हैं।

अतिसमतानुसार सृष्टि घट्बुत मन्व्य नहीं है का-  
 ल्पित मात्र है। कल्पना द्वारा पारमार्थिक अद्वैतको फोंर  
 भी क्षति नहीं हो सकती। निम्नका आगे लिखमिया  
 'गर्' है या योगयुक्त है, यह यदि एक चन्द्रमाको कर्  
 'चन्द्रमाकी भाति देखे, तो उसके देखनेमें चन्द्रमा शीत  
 नहीं हो सकती। कारण, चन्द्रका अनेकत्व यान्त्विक  
 नहीं है, यह उसकी आगोंमें विकार होनेसे, जिन्नी  
 कल्पना है। कल्पित रूप घट्बुतका स्पर्श नहीं करता,  
 घट्बुतके साथ कल्पितरूपका फोंर सम्बन्ध नहीं। इसी  
 तरह अविद्याके शेषमें हमारे चित्रित चरतुओंका दया  
 कर्त्तों पर भी उसके द्वारा प्रयत्न रूपमें प्रत्य जगत्कार  
 नहीं हो सकते।

किन्तो किन्तो ध्रु तिममें प्रत्यके परिणामसादका आभास  
 देगनेमें आता है। परन्तु भविष्या कल्पित नाम रूपा  
 एक रूपमेंके प्रत्य परिणाम व्यवहारके मोक्ष होने पर  
 भी, अत सिध्यातव और अद्वैत मन्व्यव बोधक ध्रुतिवैकि  
 मत्तानुसार विषयसादको पारमार्थिकता सिद्ध होती है।  
 किन्तु परिणाम प्रतिपादके विषयमें ध्रुतिका तात्पर्य  
 नहीं है। कारण, उस प्रकारका प्रमाणमाय धानमोक्ष  
 का साधन है। सहस्रबोध्य परिणाम प्रविद्याके अनुसार  
 सृष्टि है इसलिये ध्रुतिमें 'नि' 'नि' अभावात् यह प्रत्य  
 नहीं है, यह प्रत्य नहीं है, इस प्रकारसे प्रपञ्चका निषेध  
 का निषेध प्रमाण भावका ही उपदेश दिया गया है।

एक प्रश्न बहुरूपमें कल्पित होते है। यह पहले ही  
 कहा जा चुका है, 'जगत्सात्म्य' यतो या इमाणि भूतानि  
 जागानि कि प्रथमं हो इम जगत्को सृष्टि हुई है।

"भास ग वा इदमप्यन्तरे म एवम प्रसा ह्ये।  
 इदमन्वन्तुतवता ग एवमिदं वदन्तः।  
 मन्वन्तुतवता एवमन्वन्तवः वदन्तः।  
 मन्वन्तुतवता एवमन्वन्तवः वदन्तः ॥

बहुधासाम्यमान प्रत्यवेर्णन काम्य।  
 तन्वन्तुतवता एवमन्वन्तवः वदन्तः।  
 इदमप्यन्तरे मन्वन्तुतवः वदन्तः।  
 तत्तादात्म्यवदन्तरीणि मन्वन्तुतवः वदन्तः ॥"

(चरकी देत वि० १६)

इस अन्त ब्रह्माण्डकी सृष्टिके पहले केवल एकमात्र  
 प्रमाण ही विद्यमान थे, उस समय और कुछ भी विद्यमान  
 न था। उस अद्वैतको प्रत्यके मतमें सङ्कल्प हुआ, कि  
 "म जगत्को सृष्टि करूँगा"। उसके 'इस सङ्कल्प मात्रमें  
 ही चराचर जगत्की सृष्टि हो गई। सैत्तरीय ध्रुतिके  
 देखनेसे मालूम होता है कि, प्रत्यके सङ्कल्प मात्रमें ही  
 आकाश, वायु, अग्नि, जल, 'वृष्टि' और भीषण आदि  
 सभी घट्बुत यथाक्रम उत्पन्न हुए। उसी प्रथम—"म बहु  
 होकर जगत्में परिणाम होऊँगा" 'पेसा' सङ्कल्प किया,  
 और इसी सङ्कल्पका फलोत्पत्ति उन्होंने अनन्त ब्रह्माकी  
 सृष्टि की है।

छान्दोग्य उपनिषद्में भी कहा गया है कि, इस अर्थात्  
 सोप ब्रह्माण्ड सृष्टिके पहले और कुछ भी नहीं था।  
 केवल एकमात्र मन्व्यरूप ब्रह्मा ही विद्यमान था। वहीमें  
 सङ्कल्प किया कि, नानाकारमें जगत् उत्पन्न होये, उसी  
 समय ब्रह्मके उस सङ्कल्पके बलमें यह जगत् उत्पन्न हो  
 गया।

इन ध्रुति प्रमाणोंके द्वारा सिद्ध होता है कि, प्रत्य ही  
 एकमात्र जगत्कारण है। वहीमें सृष्टि, स्थिति और  
 लय होता है। अणुवैद्यन, अक्षय, अक्षय, अज्ञान  
 और अज्ञान प्रत्यकी पारमार्थिक शक्ति अज्ञान है। अज्ञान  
 के प्रादुर्भावसे अज्ञानकारणिको उत्पत्ति होती है, अज्ञान  
 थे परिच्छिन्न श्रेय है, फिर उसीके निरन्तरात्में अर्थात्  
 चिच्छिन्न और निरञ्जग है। यह अज्ञान ऐशान्ति, जगत्  
 योगि, अज्ञानानि, माया, सृष्टिनि, मूलप्रकृति आदि-  
 के नाममें परिणामित हुआ है। यथा अज्ञान प्रपञ्च और  
 यथा यादवप्रपञ्च, यतो यज्ञाज्ञाया विद्यात् है, इमोत्पत्ति  
 यह अज्ञानका विद्युत्मान कहलाता है।

"अज्ञानं भवेत् किं रूपं तदा भासन्तवदन्तः।  
 अज्ञानं अज्ञानं जगत्सु यथा इदम् ॥" (छान्दोग्य उपनिषद्)  
 शक्तिरूपं अज्ञानं अज्ञानं अज्ञानं अज्ञानं ॥

जगत् दिखाया है। इसलिए जगत् और ब्रह्म अब विभिन्न  
'अभित' या एकाग्रभासमें भासित हैं। यही कारण है कि  
अब प्रत्येक दृश्य ही पञ्चरूपों हो रहा है। ( १ )  
'अस्तित्व' है, ( 'माति' भासता है, ( ३ ) 'प्रिय'  
प्यारा लगता है, ( ४ ) 'रूप यह एक प्रकारका है, ( ५ )  
'नाम' यह अमुक वस्तु है। इन पञ्चरूपों में प्रथमोक्त भिन्न  
रूप तीन वृक्ष हैं, अजगत् दो रूप जगत् अर्थात् अज्ञान  
विकार हैं। अज्ञान विकार या जगत् परमार्थतः सत्य  
नहीं है, इसीलिए कहा गया है कि, जगत् मिथ्या है,  
एकमात्र ब्रह्म ही सत्य है। श्रवण, मनन और निदि  
ध्यासनादि द्वारा अज्ञान तिरौलित होता है।

स्वरूप और तटस्थ, इन दो लक्षणों द्वारा श्रुतिने  
ब्रह्म निरूपण किया है। ब्रह्म जगत्कारण है, यह तटस्थ  
लक्षण है, ब्रह्म सच्चिदानन्द, अव्यक्त, एकरस और  
अद्वय है, स्वरूप ही इसका लक्षण है। ब्रह्म जगत् कारण  
होने पर भी सारथकी प्रकृति और वैशेषिकों के परमाणुओं  
तर्ह परिणामी और आरम्भिक नहीं हैं। वे स्वयं ही अपनी  
मायासे आकाशादिके रूपमें परिवर्तित हुए हैं। सुतरा  
अभिन्न निमित्तोपादान विवर्तिका कारण है। अभिन्न  
निमित्तोपादान कृदन्त मन्ती है। मरुडो मज्जमान  
सूत्रके प्रति स्वैतन्य प्राधान्यसे निमित्तकारण है, और  
स्वशरीर प्राधान्यसे उपादान कारण है। मरुडो जो मृत  
धनाती है उसका उपादान वह नहीं अन्यसे नहीं पाती,  
यह उसके शरीरमें ही है।

जगत् ब्रह्मका विचार नहीं है, विवर्त है। सत्यमुत्  
ही जो वस्तु एक प्रकारसे अथ प्रसारमें रूपान्तरित हो  
जाती है वह विचार और मिथ्या है अन्यथा  
प्रतीत होनेसे उसे विवर्त समझना चाहिए। दुःख दधि  
हो जाता है, यद् विकार है। रज्जुमें सर्पका प्रतीति होती  
है। यह भी विवर्त है। जगत् ब्रह्मका विचार नहीं है।  
किन्तु विवर्त है। सुतरा यह दृश्य जगत् इच्छाजाल महद्वय  
तादृशकस्तान्मय है, अथात् मिथ्या है।

ब्रह्म बिना व्यापारके स्पेच्छासे जगत्का सृष्टि करने  
है। उनको इस प्रकारकी इच्छा शक्ति ही नाम माया  
है। गुणधर्मों माया एक होने पर भी गुणके प्रभेदों ही  
जीव और ब्रह्ममें इस प्रकारका विभाग प्रचलित है।

उत्कृष्ट मस्त्रके प्रायल्यसे माया है और मलिन मस्त्रके  
प्रायल्यसे अविद्या, मायाके उपहित ब्रह्म और अविद्याके  
उपहित जीव हैं। जोय केवल उपहित नहीं, किन्तु अविद्या  
के वक्ष्य भी है। माया ए. ए. है इसलिए ब्रह्म भी एक है।  
मार्शल्यके अत्राधिपत्यके अनुसार अविद्या बहुत है।  
तदनुसार जीव भी नाश है, जैसे—सुर, असुर, पशु, पक्षी  
मनुष्य आदि। मायाका मायाओं ज्ञानशक्तिका चरमोत्कर्ष  
है, इसलिए उसके उपहित ब्रह्म भी सर्वज्ञ है स्वतन्त्र और  
सर्व नियन्ता है। जोय ज्ञानशक्तिकी अन्तर्गतके कारण  
वैसा नहीं है। जैसे, एक ही आकाश, घट रूप उपाधिमें  
घटाकाश उसके त्यागने पर गटाकाश है, वैसे ही ब्रह्म  
भी मनुज आदि उपाधिमें जीव और उसके त्याग करने  
पर ब्रह्म है।

शास्त्र, युक्ति और अनुभव, इन तीनों प्रकारके अनु  
सन्धानसे मालूम होता है कि, अस्तित्व और प्रकाश  
जिनके अधीन है, वह अपनेमें ही कल्पित है। जैसे, तरङ्ग  
उदुबुदु आदि जलके अधीन होनेसे जलमें ही कल्पित है  
अथान् उनको सत्ता जलसत्ताके अतिरिक्त नहीं है, उसी  
तरह इस दृश्य ब्रह्माण्डका अस्तित्व और प्रकाश सच्चि  
दानन्द ब्रह्मसत्ताके अधीन है। इससे स्थिर किया जाता  
है कि सच्चिदानन्द ब्रह्म है, चैतन्यमें कल्पित जीव इस  
ब्रह्म रचियत भावका सात्वात्कार करनेमें अमर्ष  
है। जैसे, तर्पण की मालिमा द्यपणसे, स्वच्छ  
स्यमायके प्रच्छन्न कर देना है उसी तरह  
अपने अनिर्वाचनोय अज्ञान अज्ञानने भी स्वस्वरूपको  
प्रच्छन्न कर दिया है। इसी वज्र, ताप द्वैत प्रपञ्चके  
मिथ्यात्वसे ज्ञात नहीं है। अत्राणादि द्वारा ब्रह्मत्व, मार्शल्य  
परिमाजित होने पर फिर वे समझ सकते हैं, कि मैं पूर्ण  
हूँ, अनरच्छिन्न और सत्य हूँ। अथ समस्त मेरेमें और  
मेरे कल्पित हैं। मैं ही ब्रह्म हूँ।

सृष्टिके पहले यह समस्त मनु, अथान् ब्रह्म, आ, और  
कुछ भाग था, यह सब ही ब्रह्म है। अद्वय, ब्रह्म ही  
आदित्व है। इन सब धृतियोंके द्वारा सृष्टिके रूपमें  
अद्वय ब्रह्मत्वका उपदेश किया जानेसे और उनके प्रति  
पादार्थ तत्त्वगमि आदि महाशक्तिका उपदेश करनेसे  
स्पष्टतया समझमें आता है कि 'द्वय प्राण', 'सुप्त', ही ब्रह्म है।

वैदिक आचार्यक, साधारणने अष्ट तयाद्वा हाते पर भी, उनमें भी प्रवारात्मके द्वैतताका विनाश समझार नहीं है, वेदोंके साधारणण प्राय सभी विनिष्ठाईतयाही है। प्रथम सत्य, त्वंनानिमान और निमित्त क, गगगुके साधर है। जोग्यमा समा वृष्टके प्रजा है, परस्पर निष्ठ और ब्रह्मके द्वाग है। जगत्प्रथका जनि विधान और परिणाम है, सुतरा मत्त्व है। मत्त्वसादि गुणविनिष्ट प्रथम है, सत्य त्वादि गुणविनिष्ट जगत् है, और अत्यन्त प्रथमांशदि गुण विनिष्ट जोग्यमा अभिन्न है अथात् जोग्यमा जगत् ब्रह्मके सिद्ध हो कर मा सिद्ध नही है। जोर और ब्रह्मका स्वरूप अभिन्न नहीं है, किन्तु भादित्यके प्रभाव को मोत नर प्रथमे सिद्ध नहीं है, परन्तु प्रथम जोरसे अचिद है। जैसे प्रथमे भादित्य अचिद है, उमा प्रथम जोरमे प्रथम अचिद है। प्रथम सर्वज्ञादिमान् और सर्वज्ञ ब्रह्माण्डगुणक साकर है, प्रथमांशदिद्वैत्य जीव उसमें विद्यमान है।

प्रथमेदामे, द्वैताद्वैत और अनेकान्तवाद् विनिष्ठा द्वैतयादका नामान्तर माय है। प्रथम एक ही है, अनेक भी है। वृक्ष जैसे अनेक जाग्यायुक्त होने हैं प्रथम भी वैसे ही अनेक जनिपुन नाता है। अद्वैतवादिवाके मतमें यह मत प्रथमत्व है। कारण, दो वस्तु एक समयमें परस्पर निष्ठ और अभिन्न नही हो सकता। बयोवि भेद और अमेद परस्पर विरोधी हैं। अमेदका अर्थ है भेदका अभाव। भेद और भेदका अभावका एक समयमें एक वस्तुमें रहना असम्भव है। वाय और कारण यदि अभिन्न हो, तो जगत् प्रथमे अभिन्न हो सकता है। परन्तु कार्य और कारणके अभिन्न होनेमें जैसे मूर्तिकारणमें घटजाग्यादिका और सुवर्णरूपमें कुण्डलमुकुटादिका परस्पर वदा जाता है, उसी प्रकार घटजाग्यादि और कुण्डलमुकुटादिका परस्पर वदा नहीं होता। अथात् घटजाग्यादि और कुण्डलमुकुटादि रूपमें जैसे मानकर वदा जाता है, उसी प्रकार उसी रूपों ही परस्पर भा बगैँ बन जाता है। कारण, मूर्तिकार और घटजाग्यादि तथा सुवर्ण और कुण्डलमुकुटादिके अभिन्न होनेमें मूर्तिकार सुवर्णादिका धम एकत्र घट सुवर्णादि और कुण्डलमुकुटादिका धम मानकर मू

सुवर्णादिमें अन्वय हा है। बर्णादि वाय और कारण प्रथम वस्तु है तब एकत्र और मानकर धर्म भी अन्वय हो कार्य और कारणगत होने।

किसी किसी भावार्थक इस दोषके परिहारके लिये अत्यान्त निष्ठा है। उनका बहदा है, कि भेद और अमेद अत्यन्तमेदम हाता है अथात् अत्यान्त मेदमें एकत्र और मानकर दोनों ही स्तर हैं। समाराग्यवान नाकार्य और मोक्षारण्यामें एकत्र है। अर्थात् समाराग्यस्यामें जोर और प्रथम निष्ठ है और लौकिक तथा नात्याप परदारम सत्य है। मोक्षारण्यामें जाय और प्रथम अभिन्न है तथा तमो लौकिक और जाग्याय समान व्यवहार विज्ञ हाते है, यह निष्ठात्मक भी समूह नहीं है। कारण 'तरतमधि' 'मदं प्रथमिभ इत्यादि धृति बोधित बोधके प्रथमाय अत्यन्तविरोधमें निवमित नहीं है। बयोवि प्रथम भाव बोधक धृतिमें अत्यन्तविरोधका उल्लंघन नहीं है। जोरका अत्यन्तप्रथामेद सत्तात्मक अर्थात् सत्यदा विद्यमान है, यदा धृति द्वारा आता जाता है। धृतिमें वदा गया है, कि यह सिद्ध नही है। धृतियावर्णकी अत्यन्त विरोधमें अभिप्रायक। अथात् निष्ठात्मक है। 'तत्त्वमसि' इस धृति बोधित जोरका प्रथमाय किसी प्रकारक प्रथम या निष्ठा सत्त्वरूपमें निष्ठा नही हुआ है। 'असि' इस पदमें इत निष्ठ अर्थका मान प्रथापन किया गया है।

अतएव जो लोग कहते हैं कि, जोरका प्रथमाय मान और कर्ममनुष्यवमें साध्य है उनका विनाश समूह नहीं है और विषयक यह है कि एकत्र और मानकर विपत्ति नहीं हो सकता। कारण, यथाशक्त अथवात् ज्ञानका और उगके वायका विपत्तिके हो सकता है। यथाशक्त या सत्य वस्तुका विपत्तिके नहीं सकता। वस्तुतः परिकल्पित सर्वथा निष्ठात्मक होता है, परन्तु सुवर्णरूप कुण्डलमुकुटादिका विपत्तिके नहीं होता। एकत्रत्वका द्वारा मानकर विपत्तिके नहीं होने पर साधारणत्वमें भी वस्तुता वस्तुके मानक मानकर रहेगा। सुवर्ण मूर्तिके हा नहीं हो सकते।

मैत्राचार्यगण विनिष्ठा तयाद्वैतवाद्वा है। त्वंनानि

चिन् और अचिन् अर्थात् जीव और जड रूप प्रपञ्च त्रिगुण आत्मा शिव अद्वितीय है, वे ही ब्रह्म हैं। यह त्रिरूप ब्रह्म ही कारण और कार्य है। इनका नाम त्रिगुण त्रिगुणैव है। चिदाचित् सभी प्रपञ्च शिव नामक ब्रह्म का शरीर है। वे जीवकी तरह शरीरी होने पर भी उसने तरह दुःखके भोक्ता नहीं हैं। अनिष्ट भोगके प्रति शरीर सम्बन्ध कारण नहीं हैं अर्थात् शरीरी होने पर भी अपने अज्ञान अनुपत्तना जनित अविष्टा भोग नहीं करते। जीव इश्वर परवश है। ईश्वर का अज्ञान का अनुपत्तन न करनेसे उन्हें अविष्ट भोगना पड़ता है। इश्वर स्वाधीन हैं, इसलिए उनके अनिष्ट भोग नहीं हैं। शरीर और शरीरकी भाति—गुण और गुणाका तरह त्रिगुणैव तत्राद शैवाचार्याका अनुमत है। मूर्त्तिका और घटकी भाति काय-कारणरूपमें तथा गुण और गुणीकी तरह विशेषण विशेष्य रूपमें बिना भावरहित्य ही प्रपञ्च और ब्रह्मके अतन्वत्य है। जैसे उपादान कारणसे बिना कर्मका भाव अर्थात् सत्ता नहीं रहती, मूर्त्तिकाके बिना घट नहीं होता, सुवर्णके बिना कुण्डल नहीं रहता, गुणके बिना गुण नहीं रहता, उसी तरह ब्रह्मके बिना प्रपञ्च शक्ति नहीं रह सकती। उष्णताके बिना जैसे धूमिके जाननेका कोई उपाय नहीं, उसी तरह शक्तिके बिना ब्रह्मकी भी नहीं जाना जा सकता। चिसके बिना जिसका ध्यान नहीं होता, वही उन्मत्ता त्रिगुण है। गुणके बिना गुणीको नहीं जाना जा सकता इसलिए गुणी गुणत्रिगुण है। प्रपञ्चशक्तिके बिना ब्रह्मकी नहीं जाना जा सकता, इसीलिए ब्रह्म प्रपञ्चशक्ति-त्रिगुण है। यही उनका स्वभाव है। देवता और योगिगण चिस भाति कारणान्तरकी अपेक्षा न करने हुए ही अविद्यशक्तिके प्रभावसे नानारूप मूर्त्ति कर डालते हैं, तब भी उसी तरह अविद्यशक्तिके प्रभावसे नानारूपमें परिणत होते हैं। नानारूपमें परिणत होने पर भी उनका एकरूप नहीं होता।

अविद्यश्व, अनन्त और विविन्न शक्ति ब्रह्ममें ही विद्यमान है। ब्रह्मके असाध्य कुट भी नहीं है, और न कुछ अमम्भय है। अतएव यह मम्भय है, यह अमम्भय है इस प्रकारकी कल्पना ब्रह्मके लिए ही नहीं सकती। लौकिक

प्रमाण द्वारा जिन वस्तुओंका बोध होता है, ब्रह्म उन सभीसे विजातीय है। वे वेद्यमानात्मा ज्ञातव्य हैं ज्ञातमें वे जिम प्रकारसे उपनिष्ट हुए हैं, वे उसीरूप हैं। इस त्रिपयमें सन्देह नहीं हो सकता। लौकिक दृष्टान्त के अनुसार उनके विषयमें विरोध भागड़ा करना उचित नहीं है। कारण, वे लौकिकीय या अलौकिकीय हैं।

ब्रह्ममें मायाशक्ति अचिन्त्य, अनन्त और विचित्र शक्ति युक्त है। तादृश शक्ति युक्त मायाशक्ति विद्युष्ट परमें वर अपना शक्तिके अंग द्वारा प्रपञ्चाकारमें परिणत है, और स्वतः वा स्वयं प्रपञ्चान्त है।

ब्रह्म प्रपञ्चाकारमें परिणत होते हैं, इस विषयमें जिज्ञास्य हो सकता है कि एतन्न अर्थात् ममस्त ब्रह्म ही प्रपञ्चारूपमें परिणत होता है, या ब्रह्मका एक देश वा पकाज। इसके उत्तरमें यदि कहा जाय कि, एतन्न ब्रह्म जगदाकारमें अर्थात् कार्याकारमें परिणत होत है, तो मूलोच्छेद हुआ जाता है। ब्रह्मके दृष्टव्यत्व उपदेश तब उसके उपायरूपमें श्रवणमननादि वा श्रवणादि भी अनावश्यक है। ब्रह्म यदि मृदादिकी भाति सावयव होते, तो उनका एकदेश कार्याकारमें परिणत वा एकदेश यथावत् अवस्थित है, ऐसी कल्पनाकी जा सकती थी और दृष्टव्यत्वादिका उपदेश भी सार्थक होता। क्योंकि कार्याकारमें परिणत ब्रह्मांग अयत्नद्वेष होने पर भी अपरिणत ब्रह्मांग अयत्न दृष्ट नहीं है। परन्तु ब्रह्मके अयत्न नहीं माने जा सकते, कारण ब्रह्म निरयत्न है यह बात श्रुतिसिद्ध है। ब्रह्मके अयत्न स्वीकार करनेमें श्रुतिका विरोध होता है। इसके उत्तरमें शैवाचार्योंका कहना कि ब्रह्म ज्ञानैकममधिगम्य है, प्रमाणान्तरगम्य नहीं। ज्ञातमें ब्रह्मका कार्याकार परिणाम, निरवयवत्व और कार्यके बिना ब्रह्मका अवस्थान ये सभी त्रिपय ध्रुत हुए हैं। अतएव उन आपत्ति की हो नहीं जा सकती।

मगवान् गङ्गाचार्यने इन सब प्रतीतों को दृष्टि कर कहा है, कि ब्रह्मका परिणामनाद किसी प्रकार भी सङ्गन नहीं हो सकती। कारण कार्याकारमें परिणाम और अपरिणत ब्रह्मका अवस्थान ये दोनों बातें परस्पर विरुद्ध हैं। एक ममयमें एक वस्तुके परिणाम और अपरिणाम दोनों नहीं हो सकते। इसी प्रकार सावयवत्व



और निरपेक्ष रूप परस्पर विरुद्ध है। एक जन्तु एक समय में मातृपक्ष और निरपेक्ष ही वह बनी भी सम्भव नहीं हो सकता। भूमि भा भ्रमरमय 'पौर विरुद्ध भयं प्रतिपादन करनेमें असमर्थ है। या यथा जायद बाधना असंभव कारण है। जतपर ज्ञान अयोग्य अथ प्रतिपादन करनेमें अक्षम है।

'प्रधाना, रक्षणमे वनस्पतय सतमान्त' अर्थात् परस्पर जानोमें रहता है। जूनीं यत्र किया था, इत्यादि साम्यमायित अथ बोधन अर्थया-बाधने यथाशुत अर्थमें उन्ने तात्पर्य नहीं है, अर्थात्तरमें तात्पर्य है, उसी प्रकार परिणाम बोधन बाधक भी अर्थ विरोधमें तात्पर्य करना पड़ेगा। प्राय एकदाममें परिणत और अदालतरमें परिणत है, यह क-पना भी पुक्ति सिद्ध नहीं है। इसमें प्रजा ही सतता है कि, कायकायमें परिणत प्रहमान प्रत्येक भिन्न है या भिन्न। यदि भिन्न है, तब बृहस्पके कार्याकारमें परिणत नहीं हुआ। क्योंकि कार्याकारमें परिणत प्रहमान प्रहम नहीं है प्रहममें भिन्न है। एकके परिणाममें दूसरेका परिणाम नहीं बढ़ा जा सकता। मूलिकार्थ परिणाममें सुवर्णका परिणाम नहीं होता। पयान्तरमें कार्याकारमें परिणत प्रहमान यदि बृहस्पके भिन्न न हो, अर्थात् भिन्न न हो तो मुनेरुदेकी मापति उपलब्ध होगी है। परिणत अथवा बृहस्प एक बृहस्पके भिन्न होने पर परिणत और बृहस्प एक यन्तु वह जातो है। अथवा सम्पूर्ण बृहस्प परिणामका अन्वेषण नहीं किया जा सकता। यदि कदा जाय कि परिणत बृहस्पका बृहस्पके निम्नमायित अथवा भिन्न और भिन्न जातो है। परिणत बृहस्पका कारणरूपमें बृहस्पके भिन्न है और कार्याकारमें बृहस्पके भिन्न है। प्रहममें कहा जा सकता है कि बुद्धत्वमुद्रादि सुषुप्तरूपमें भिन्न है और बुद्धत्वमुद्राकार्यमें भिन्न भेद और अनेक परस्पर विरुद्ध पक्षों हैं वे दोनों एक समयमें एक ब्रह्ममें रह ही नहीं सकते। कार्याकारमें परिणत अथवा या तो बृहस्पके भिन्न होगा या भिन्न होगा। भिन्न भी ही और भिन्न भेद, यह ही नहीं सकता। और भी विरोध विरुद्ध है कि बृहस्प स्वभावतः अमृत है, वे परिणत-अर्थमें मरणात् प्राय

करेगे, यह ही ही नहीं सकता। पक्षान्तरमें मरण जीव है, यन्तु बृहस्प है, यह भी नहीं हो सकता। जिसो प्रहार भी स्वभावमें अथवा नहीं हो सकता। जो लोग कहते हैं कि जन्तुजानुसार तम और ज्ञान इस दोनोंके द्वारा मरण जायको अमृतत्व प्राप्त होगा उनका यह मत भी असंगत है। क्योंकि, स्वभावतः अमृत बृहस्पके भी यदि मरणता हो, तो मरण जीवका कर्मज्ञानसमुच्चयमाध्य अमृतभाव अर्थात् मोक्षायत्ना सधावो होगा, यह दुरागत मार है। जगजान जन्तुजायकी यह मरण देण कर बृहस्प विवर्तनात् पक्ष ही स्थिर किया। इनके मतमें बृहस्प मृत या निर्विशेष है। प्रपञ्च मरण नहीं, रज्जु मर्यादि का तरह भिन्न है। इसलिए बृहस्पमें कोई विशेष या धर्म नहीं है, वे निर्विशेष बृहस्प भवित्तीय है। प्रपञ्च अर मिष्ट्या है, बृहस्पके अतिरिक्त यन्तु जब मरण बढ़े हैं, तब बृहस्प भवित्तीय है, यह अनापान ही बोध मय है। जीव बृहस्पमें भिन्न नहीं है, यह बात एक स्थापना प्रयोगमें नहीं गढ़ है -

“कालोऽपि परस्परमिदं यदुक्तं ज्ञानं वादिभिः ।

मय सर्वं जगन्मिया ततो मयैव कथयामि ॥”

काटि कोटि प्रथममें जो कहा गया है, मैं इकाकार द्वारा यही कहूँगा। यह यही है, बृहस्प सत्य है, तत्त्व भिन्न है, जाय ही बृहस्प है। जन्तुजायका यही भिन्न मत है। सभी अज्ञानवादिमें एक बाधकमें भूमिकी ही अज्ञानवाका मृत प्रमाण माना है। भूमिके तात्पर्य या पर्यायवाचकमें जो भिन्नता हाया, यह वाचकमयक के अभावतः कर्तव्य स्थिति याव है।

जैतवजुका बृहस्पपदेशकके अभावमें ही बुद्धि छायाय उपलब्ध है, एक आत्माविषयका सक्षित तात्पर्य यही प्रदर्शित किया जाता है। आदर्शमें जैतवके बुद्धि नामक अर्थ पुत्रता रक्षा, है जैतवके, मुद्रावृत्तमें जा कर सुषुप्ताकार अभावतः कर। क्योंकि हाते बुद्धिमें कोई कर्तव्य विना अन्वयन विधि बृहस्पक्यु नहीं होता। आदर्शकी व बाल्य जैतवके विषयके इपदेशात्प्राप्त मुद्रावृत्तमें जा अन्वयन समाप्त कर कौशिक मर्त्यके अन्वयनमें अन्वयन और वे अन्वयकी एक अन्वयताय विद्यात् सदावर्तनीय है। यही कारण था कि, वे विद्याय बालकय भी नहीं

करते थे। पुत्रकी पेशी अवस्था और अभिमानक प्रति लक्ष्य करके अर्धणिने कहा, 'श्वेतकेतो! तुम अनुत्थान गामी हो अर्थात् अपनेको बड़े विद्वान् समझते हो और मिमीके साथ बातचीत भी नहीं करते। अच्छा बतलाओ तो सही, तुमने शुरूके समझ ऐसा कोई प्रश्न किया था कि जिसका उत्तर यथावत् मिलने पर अश्रुत विषय श्रुत, धमत विषय मत और अज्ञात विषय विज्ञात हो सकता हो? श्वेतकेतुने यह असम्भन समझ कर कहा—'हे भगवन्! यह किन प्रकार सम्भन हो सकता है?' आरुणि बोले—'हे प्रियदर्शन! जैसे एक मृत्पिण्ड विज्ञात होने पर भी सम्भन्त मृण्मय अर्थात् मृत्त्विकार विज्ञात होता है, एक लखनिष्टन्तन (नहरनी) विज्ञात होने पर कार्णायम अर्थात् शृण लौहका विकार विज्ञात होता है, क्योंकि मृत्तिका, लौह और कृष्णायस यही सत्य है, विचार केवल वाक्य द्वारा ही भासता होता है, अर्थात् मृत्तिकामें लक्षणविशेषके अनुसार घटपटादि नाम होते हैं, परन्तु साम्प्रत्यम मृत्तिकादिके अतिरिक्त विकार नहीं है, उसी प्रकार एक विज्ञानमें सर्वविज्ञान सम्भवपर ही सक्तते हैं। उपादान मात्र ही सत्य है, विकार मिथ्या है। इस कारण जगत्का उपादान जान लेनेसे सब कुछ जाना जा सकता है।' इस पर श्वेतकेतुने कहा—'हे भगवन्! आप ही मुझे उपदेश दीजिए।' श्वेतकेतुके प्रार्थना करने पर आरुणिने उन्हें जगत्कारणका उपदेश दिया। इस जगह एक विज्ञानमें सब विज्ञान की प्रतिष्ठा कर उसके उपादानके लिए जगत्कारणका उपदेश दिया गया। विचार चस्तुगत्या सत्य होने पर कभी भी एक विज्ञानमें सर्वविज्ञान नहीं हो सकता कि उपादान विज्ञान होने पर भी उपादेय अथवा उसका विकार अविज्ञान रह सकता है। अतएव प्रतिपन्न होता है, उपादानके मित्रा विकारका वास्तविक अस्तित्व नहीं है। उदाहरणार्थ—'मृत्तिकेन्द्रेय सत्य, लोहमित्प्रेय सत्य, कृष्णायसमित्प्रेय सत्य' (भुवि) अर्थात् मृत्तिका ही सत्य है, लौह ही सत्य है, कृष्णलौह ही सत्य है। इस प्रकारसे उपादानकी सत्यता अन्वयण करनेसे विकारकी असत्यता स्पष्ट ही प्रतीत होती है। जो

असत्य है, वह मिथ्या है, यह कहा जात्यमान है। उपदेश देते समय आरुणिने पुन पुन कहा था।

“एतदात्ममिदं मय तत् सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्रुतेते।”

सत्यं सम्बन्धमत्र आहीदेरमर्थाद्द्वितीयम्॥”

यही मत् चस्तु एकमात्र सत्य है, ये ही ब्रह्म हैं और ये तुम ही हो। तुम ही समस्त, एकमात्र और अद्वितीय हो। इस श्रुतिके तात्पर्यका वर्णन पहले ही किया जा चुका है।

जीवात्मा और परमात्मा वा ब्रह्मका ऐक्य ही वेदान्त का धर्म प्रतिपादित हुआ है। साधारणतः जीवात्मा ब्रह्ममें भिन्न रूपमें प्रतीयमान होने पर भी वेदांतशास्त्र समझाते हैं कि जीवात्मा वास्तविक ब्रह्मके अतिरिक्त नहीं है, ब्रह्मस्वरूप है। वेदान्तादि दर्शनशास्त्रका प्रयोग जन मुक्ति है। अध्यान या अधिद्यानी नियुक्ति और स्वस्वरूपमें आनन्द प्राप्ति ही मुक्ति कहते हैं। यह मुक्ति जीव और ब्रह्मके ऐक्य साक्षात्कार साध्य है। अर्थात् जीव और ब्रह्मका ऐक्य साक्षात्कार होनेसे ही मुक्ति है। आपत्ति हो सकती है, कि ससारशास्त्र भी स्वस्वरूप आनन्दका अर्थव्यापार नहीं है। क्योंकि चस्तुस्वरूपमें अर्थव्यापार असम्भव है। अतएव स्वस्वरूप आनन्द नित्यप्राप्त होनेसे उन्नी प्राप्ति नहीं हो सकती। अप्राप्त चस्तुकी प्राप्ति हो सकती है, जा नित्यप्राप्त है, उसको फिर प्राप्ति क्या होगा। स्वस्वरूप आनन्दकी प्राप्ति न कर सकने पर जीव ब्रह्मका ऐक्य साक्षात्कार और उनका साधन भी नहीं हो सकता। इसके उत्तरमें वक्तव्य यह है, कि नित्यप्राप्त चस्तु भी मिथ्याज्ञान या भ्रमवशतः अप्राप्त मालूम होता है। यह भ्रम दूर होने पर वह प्राप्त रूपमें प्रतीयमान होती है। कण्टकत स्वर्णहार नित्य प्राप्त होने पर भी विस्मरणके कारण अप्राप्त और तन्वगत में कहा फिर प्राप्त प्रतीत होता है। उसी प्रकार आनन्द ब्रह्मका स्वरूप होने पर भी ससारदर्शानमें अत्रिया श्रोतसे वह साम्यप्रतिभात नहीं होता, इसलिये अप्राप्त मालूम होता है। त्रियाके द्वारा अत्रियासे निरृत होनेसे यही साम्यरूपमें प्रतिभात होता है, इसलिये यह प्राप्त हुआ, ऐसा विवेचित होता है।

स सारवस्थामं अत्रियाश्रोतमं ब्रह्म आनन्दरूपत्व

विशेषरूपमें प्रतीतमान नहीं होता। किन्तु सामान्यरूपमें प्रतीयमान होता है। जैसे किन्ना चरमं बुद्ध याज्ञिकोंके वेदाध्ययन करने कहनेमें दमार्थके रूपमें वैश्वेदुव उसके पिताको सामान्यरूपमें मान्य होता है, कि उरुका पुत्र भी ऐसा व्यवह कर रहा है, परन्तु उस पुत्रके वेदाध्ययनको ध्यान विशेषरूपमें नहीं मान्य पड़ती, उरुके प्रकाश प्रकाश आत्मरूपव्यव सन्नाह्यनामै सामान्यरूपमें प्रतिभात होने पर भी विशेषरूपमें प्रतिभात नहीं होता। विशेषरूपमें प्रतिभात न होने पर भी किसी कारणवश भी प्रत्येक आत्मरूपव्यवश अन्वयना नहीं होता, प्रत्येक धर्मव्यवस्था है। प्रत्येक धर्मव्यवस्था के प्रभावमें उरु समुद्र प्रकाशित होता है। उरुसमुद्र व्यवस्था नहीं है। इसलिये उरुसमुद्र प्रत्येक नहीं है। प्रत्येक धर्मव्यवस्था और नियम है। प्रत्येक धर्मव्यवस्थाके जोर उनके सम्बन्धकी उपपत्ति और विनाशको भी उपपत्ति और विनाश नहीं है। इसलिये प्रत्येक नियम है, जो नियम है वह अन्वय नहीं हो सकता। अन्वय प्रत्येक सत्य व्यवस्था है।

“यत् नानाकर्मैः प्र , सर्वं गतं मननं नदमः।” ( मुनि )

ज्ञान और धर्म एक होने पर भी अनादि भविष्य या अनागत जो वास्तविक सन्तान या कल्याण होता है। अज्ञानकी आधरण और विशेष नामक भी जानिया है। वरु भी कर्मरूपमें सर्वका ज्ञान होता है, रजसुका ज्ञान होने पर सर्वका धर्म नहीं होता। रजसुका अज्ञान सर्व धर्मका कारण है। रजसुका अज्ञान आधरण जतिके द्वारा रजसु व्यवस्था पर आधरण आधरण है, वास्तु विशेष जतिके द्वारा रजसुमें सर्वका उद्घाटन करता है। धर्म, और धर्म विशेष अज्ञान नी आधरणजतिके द्वारा धर्म या अज्ञानरूप पर आधरण आधरण कर दिग्दर्शनमें प्रथम कर्तव्य मोक्षरूपवर्द्धि धर्मका तथा आकाशवर्द्धि प्रथमका उद्घाटन करता है। आकाशमें वास्तु होने पर सत्य सत्यन दृष्टिगोचर नहीं होता परन्तु वह सत्य नहीं है। कारण भोक्ता मा वास्तु कर्तव्यजसु विज्ञान गुणव्यवस्थाके एक नहीं सकता। अज्ञान, अज्ञानकी सामर्थ्य वरु आधरण है, इसीमें उरुसमुद्र आधरणरूपव्यवस्था आधरणका धर्म होता है। इसी प्रकार धर्मव्यवस्था अज्ञान आधरण

अन्वयनामै अन्वयों परन्तुव्यवस्था आधरण नहीं कर सकता। परन्तुवह अन्वयव्यवस्था या बोधका मुक्तिका आधरण अन्वय करता है। इसीमें प्रत्येक आधरण मुक्त आधरण पड़ने है। प्रत्येक व्यवस्था आधरण होनेमें प्रत्येक अन्वय नहीं हो सकता। ऐसी ज्ञानमें अन्वयव्यवस्था या बोध दिग्दर्शन हो कर अज्ञानमें प्रत्येक और अज्ञानके धर्मको धर्म मान्यता है। इस प्रकारका बोध अज्ञानस वहनाता है। भी मनुष्य हो कर अज्ञानमें अज्ञानव्यवस्था उद्घाटन है। कर्तव्य रजसुवर्द्धि वेदका धर्म प्रथममें अज्ञानव्यवस्था है। यरु मेरा है, इत्यादि मन्वावस्था नाम संवर्धनव्यवस्था है। यह अज्ञान परम्परा अनादि है। उरुमें भी पूर्ण पूर्णका अज्ञान या तत्कालिन सन्तान वास्तुके अज्ञानमें वाधण है। प्रत्येक धर्मव्यवस्था अन्वय, अन्वय और मन्वाता है। कोई भी प्रत्येक इष्ट या अनिष्ट नहीं कर सकता। परन्तु, वास्तवमें प्रत्येक इष्ट या अनिष्ट बुद्ध ही ही नहीं है। इसलिये जो अज्ञानव्यवस्था है उनके समर्थ व होता अन्वय है। वेद और इन्द्रियों आधिका इष्ट और अनिष्ट हो सकता है, वा वास्तवगत, वेदाधिका इष्ट अनिष्ट ही आधिका इष्ट अनिष्ट समर्थ जाता है। सुतरी उरु इष्ट और अनिष्टके विषयमें समर्थ व धर्म प्रकृतिक। भावि भाव है, और अर्थवर्द्धि होनेमें आधरण कर्मका धर्म अज्ञान पड़ता है। धर्म पड़ता माग सुतरी वरु उपपत्ति में सिया और बुद्ध भी महा है। इसलिये सुतरी वरु उपपत्तिके लिये सन्तान कर्मव्यवस्था आधरणके लिये अज्ञान परिसर करता पड़ता है। मोक्षधर्म सुतरी भावमें लिये धर्म करता है और धर्म धर्मके लिये भाग करता है। जिस तादात्म्य प्रत्येक उपपत्तिमें सुतरीव्यवस्था होता है, उरु ज्ञानीय प्रत्येक सन्तानव्यवस्था प्रकृतिक स्वाभाविक और प्रत्येक नियम है। अज्ञान इस अन्वय परम्पराका निदान है। अज्ञान मा अविद्याका धर्म होने अविद्यामें अज्ञान है। जब विद्याके द्वारा अविद्याका नाश हो जाता है, तब प्रत्येक व्यवस्था अन्वय होता है। इसीमें लिये “साधु धर्म” वह धर्म दृष्टव्य होता है।

अथ अज्ञान या सन्तान है कि अज्ञानव्यवस्था अज्ञान है, अज्ञानमें अज्ञानकी नाश निमित्त है और सुतरीव्यवस्था अज्ञान नाश पर भी अविद्याव्यवस्था अज्ञान संसार, सुतरी

पापका लोप और दुःखका भोग होता है। अतएव अविद्या ही सम्पूर्ण अनर्थोंका मूल है। त्रिधाके द्वारा सर्वात्म्यमूढ अविद्याका नाश करना बुद्धिमानका उत्तम धर्म है। किन्तु जिज्ञास्य यह है कि आलोचनमें अधिकांशकी तरह स्वप्रकाश ब्रह्ममें अविद्या कैसे रह सकती है? द्वितीयतः ब्रह्म इच्छा पूर्वक अपने लिए अनन्तर मिथ्याज्ञान का अग्रलभ्यन करेगा, यह भी नितान्त असम्भव है। त्रीश्रमी बुद्धिमान् व्यक्ति इच्छा पूर्वक अपने लिए अनिष्टकर विषय ग्रहण नहीं कर सकता। इसके उत्तरमें यह कहा जा कि दोनों ही सम्भव हैं।

स्वप्रकाशक ब्रह्ममें अविद्या कैसे रह सकती है, अविद्या किसकी है? इस विषयमें वैदान्तिक आचार्यों ने निस्कृत आलोचना की है। मक्षेपमें उसका यत्किञ्चित् आभास मात्र प्रदर्शित किया जाता है।

“अप्रकाशो बुतोऽविद्या तां विना कथमावृत्तिः ।

इत्यादि तर्कज्ञानानि स्यान्भूतिप्रवृत्त्यपी ॥

स्यानुभूताविश्रान्ते तर्कस्याप्यनुरस्थिते ।

कथं वा तार्किकस्मन्मन्त्वनित्यनिश्चयानुयात् ।

शुद्धासौहाय्य तर्कश्चेदपश्येत तथा वति ।

स्यानुभूत्यनुवायेण तर्कान्तां मा कुतर्क्यताम् ॥”

इसका तात्पर्य यह है कि, स्वप्रकाश ब्रह्ममें अविद्या किस प्रकार रह सकती है? अविद्या नहीं मान तो फिर ब्रह्मके स्वरूपमें आचरण किस प्रकार हो सकती है? स्यानुभव तर्कजालको निरादृत करता है, अपने अनुभवसे ही यह सब अकिञ्चित् करत प्रतिपन्न होता है। क्योंकि, मैं अद्य हूँ, मैं अपनेसे नहीं जानता, इस प्रकारका अनुभव प्रत्यक्षमिद है। स्यानुभव पर विश्वास न करने से जो अपनेसे तार्किक समझने हैं, वे कैसे तत्त्वका निश्चय करेगे? कारण, तर्क तो अस्थिर नहीं होता। देखा जाता है, कि एक तार्किक जिस तर्कका न्यास करने हैं, अन्य तार्किक उसे तर्कानाम सिद्ध कर देते हैं। उसका तर्क भी अन्य तार्किक द्वारा तर्कभासमें परिणत किया जाता है। इसलिये केवल तर्कके द्वारा तत्त्वका निश्चय नहीं किया जा सकता। अनुभूत विषय बुद्ध्या रुद्ध होनेके लिए अर्थान् जो अनुभव है उसे अभावाति

ममभनेके लिए वा उसमें दृढ़ विश्वास जमानेके लिए तर्कको आवश्यकता हो सकती है, परन्तु तो भी अपने अनुभवके अनुसार तर्क करना उचित है, बुद्धि करना उचित नहीं। फलतः जब सभी अपने अज्ञानका अनुभव कर रहे हैं, तब अज्ञान किसके है? यह प्रश्न उठ नहीं सकता। स्वप्रकाश ब्रह्ममें अज्ञान कैसे सम्भव हो सकता है, यह प्रश्न हो सकता है, पर इसका मूल्य नहीं। क्योंकि स्वप्रकाश ब्रह्ममें अज्ञान जब साक्षात् अनुभव होता है, तब अज्ञानके अस्तित्वमें सन्देह करनेको गुणाश्रय नहीं। अतएव अज्ञान मत्ताका कारण निर्णय न होने पर भी कुछ हानिलालम नहीं हो सकता। तादृश अनुभव होता है इस कारण वैदान्तिक आचार्याने कहा है, कि नित्य स्वप्रकाश चैतन्य अज्ञानका विरोधी नहीं है। क्योंकि नित्य स्वप्रकाश चैतन्यमें ज्ञान का अनुभव हो रहा है, इस कारण नित्य स्वप्रकाश चैतन्यको अज्ञानका विरोधी नहीं कहा जा सकता। कारण, विरोध भी अविरोधके अनुभवानुसार निर्णय होता है। विवेक या विचार जनित यथाय ज्ञान होने पर वह अज्ञान विगिष्ट होता है, इसलिये विवेक जनित ज्ञान अज्ञानका विरोधी है।

रज्जु गोचर अज्ञान रज्जुस्वरूपको आपृत कर उसमें सर्पका उद्भावन करता है। रज्जु तत्त्वका साक्षात्कार होनेसे रज्जु गोचर अज्ञान और उसका कार्य मप याधित होता है। रज्जु तत्त्वके साक्षात्कारके पहले रज्जु गोचर अज्ञान और उसका कार्य सर्प याधित तो नहीं मालूम पड़ता, किन्तु वास्तवमें उस समयमें भी यह याधित रहता है। उस समय भी रज्जु सपना वास्तविक अस्तित्व नहीं है। इसी प्रकार ब्रह्मत्वका साक्षात्कारके बाद अज्ञान और उसका कार्य याधित होता है। ब्रह्म तत्त्व साक्षात्कारके पहले अज्ञान और उसका कार्य याधित प्रतीयमान न होने पर भी उस समय वह याधित ही रहता है। इसलिये श्रुतको आभा है, कि ब्रह्म नित्यमुक्त है। उसका वर्णन वास्तविक नहीं है। सुतरा मुक्तिगम भी वास्तविक नहीं है। अतएव ज्ञान दृष्टिम अविद्या तुच्छ है, अथात् आकाश बुद्धिमक



ब्रह्मद्वारादिदेहान्तात् प्रत्यगात्मेति गीषते ॥

ह्यभ्यमानस्य सर्वस्य जगत्स्त्वस्मीयते ।

ब्रह्मज्ञानेन तद्ब्रह्म स्वरूपाशास्त्ररूपम् ॥”

( पञ्चदशीका महावाक्यनि १-८ )

जिस निरव्य चैतन्यकी सहायतासे न्यबु द्वारा रूपादि दृश्य पदार्थ दृष्टिगत होते हैं, जिसके द्वारा वाक्यादि वा श्रवण होता है, जिसकी सहायतासे गन्धका आघ्राण किया जाता है, जिसके साहाय्यसे कण्ठनाली आदि वागिन्द्रिय द्वारा वाक्य उच्चारित होते हैं, और जिससे स्वादु और अस्वादु आदि रसका परिज्ञान होता है, यह ज्योतिर्मय जीवचैतन्य ही ब्रह्मान है, और ब्रह्मान ही ब्रह्म है । इसलिये श्रुतिमें 'ब्रह्मान ब्रह्म' ऐसा कहा गया है । सच्चिदानन्दमय सर्वव्यापी पर ब्रह्म ही ब्रह्मा और इन्द्र आदि देवगुणोंमें, मनुष्य और गो, श्वभ आदि जन्तुवर्गमें, तथा अन्यान्य सृष्ट पदार्थोंमें अन्तर्भाव रूपमें अवस्थान कर रहे हैं । इसलिये मुक्कम भी वे अवस्थित हैं । अत एव दोनों चैतन्य एक ही हैं, अर्थात् जीवचैतन्य और ब्रह्मचैतन्य अनिर हैं । इसीलिये श्रुतिमें 'अहं ब्रह्मस्मि' इस प्रकार कहा गया है । पूर्ण ज्ञानस्वरूप ब्रह्म अपनी मायाशक्तिके वशीभूत हो कर मायामय ससारमें शमदमादि साधन द्वारा ब्रह्मतरज साधनके उपाय-स्वरूप पञ्चभौतिक देहमें अवस्थानपूर्वक अन्तःकरणके साक्षिरूपमें प्रकट होते हैं । उन्हें देहात्मादि द्वारा परिच्छिन्न नहीं किया जा सकता । उही पूर्ण ज्ञान-स्वरूप परमात्मा ही अहं शब्दका अर्थ है । यह 'अहं ही ब्रह्म है । जो स्वतःसिद्ध सर्वव्यापी है पूर्व ब्रह्मरूपी परमात्मा है, वे ही ब्रह्म शब्दके प्रतिपाद्य हैं, अर्थात् 'ब्रह्म' शब्दके उच्चारण करनेमें ही उस सर्वव्यापी परब्रह्मका बोध होता है, और 'अस्मि' शब्दसे 'अहं' शब्द प्रतिपाद्यचैतन्य और ब्रह्मचैतन्य इन दोनोंका ऐक्य प्रतिपादित होता है । यदि 'अहं' शब्दाच्चाय जीवचैतन्य और ब्रह्मचैतन्य इन दोनोंका ऐक्य प्रतिपादित हो गया तो जीवन्मुक्त पुण्य जो कहते हैं, कि 'मैं ही ब्रह्म हूं' उन्में कोई दोष नहीं होता और वैसा व्यवहार भी होता है । इस प्रत्यक्षाभूत नामरूप स्वरूप शैशिव्यमान जगदन्वी श्रुतिरूपिक पहलू केरलमात्र नामरूप विरजित अद्वितीय

सच्चिदानन्द स्वरूप सर्वव्यापी परब्रह्म विद्यमान थे और अब भी वे उसी रूपमें विराजमान हैं । इसीलिये उपनिषद्में 'तत्त्वमसि' रूपमें उनका उपदेश किया गया है । जो इस परिदृश्यमान जगत्के मूलाधार और एकमात्र कारण स्वरूप हैं, वे सच्चिदानन्द परात्पर ब्रह्मचैतन्य ही ब्रह्मपदके प्रतिपाद्य हैं । वे स्रष्टाशक्ति स्वरूप हैं, अर्थात् वे स्वयं प्रकृति न होने पर कोई भी उनका प्रकाश नहीं कर सकता । वे स्वयं ही प्रकाश स्वरूप हैं । ब्रह्मोपनिषद्में लिखा है,—ब्रह्मके अवस्थानके चार स्थान हैं, नामि, हृदय, कण्ठ और मूर्धा \* ।

इन चारों स्थानोंमें ब्रह्म प्रकट होते हैं । जागरित, स्वप्न, सुषुप्त और तुरीय ये ही ब्रह्मके चार पद हैं । जागरितमें ब्रह्मा, स्वप्नमें विष्णु सुषुप्तमें रुद्र और तुरीयमें परमाक्षर हैं । उक्त चार प्रकारकी अवस्थाओं सहित ब्रह्म ही आदित्य हैं, विष्णु, इश्वर और वे ही प्राण जीव और ब्रह्मा हैं । इन जाग्रत आदि अवस्थाओंमें ब्रह्म प्रकाशरूपमें अवस्थान करते हैं ।

ब्रह्मके मन नहीं है, न कर्ण हैं, न हाथ हैं और न पैर हैं । वे इन्द्रियादिके रहित होते हुए भी स्वयं प्रकाश स्वरूप हैं । उनके सामने लोक भी लोक नहीं है, देवता भी देवता नहीं हैं, वेद भी वेद नहीं हैं । पक्ष, पिता, माता, पुत्रवधु अण्डाल, अन्त्यजानि भादि कोई कुछ भी नहीं है । ब्रह्मके समोप सभी समान हैं । ब्रह्मके ममत्व काई भी अपना ज्ञान नहीं विखला सकता केवल ब्रह्म ही सर्वत्र प्रकाशित रहते हैं ।

“श्वयममन्त्यामभोत्रमाग्निपाद न्याविरजित न तत्र श्लाका न श्लोका, देवा न देवा, उदान वदा यज्ञा न यज्ञा, माता न माता, पिता न पिता, स्तुषा न स्तुषा, चायदाना न चायदान, पीश्वगो न पीश्वस, अग्नी न अग्नि, पाया न पयः, ताप्यो न तापः इत्येकमेव परं ब्रह्म विभाति ॥” (ब्रह्मसूत्रनि १८)

\* “अथान्य पुण्यस्य न्याविर स्थानानि भवन्ति, नामि हृदयं कण्ठं मूर्धा नि ।” “तत्र चतुर्षादं ब्रह्म विभाति ।” जागरित स्वप्न सुषुप्त तुरीयविभि । जागरित ब्रह्मा, स्वप्ने विष्णु सुषुप्त रुद्र तुरीय परमाक्षर, स आदित्यश्च त्रिपुत्रुश्चैव स पुण्य स प्राण सत्रीय सोऽग्नि सन्मन्त्र जाग्रत् तयो मध्ये यस्मिं ब्रह्म विभाति ।” (ब्रह्मसूत्रनि १७-१७)



वास्तविक असत्य होने पर भी सत्यरूपमें प्रतिमानित होते हैं। अथवा तेजमें जलका भूम इत्यादि जैसे वस्तुन मिथ्या है, उसी प्रकार जिनके अतिरिक्त सत्य, रज और तम इन तीनों गुणोंकी सृष्टि अलोक है तथा अपने नेत्र। प्रभावसे जिनमें किसी प्रकार उपाधि सम्बन्ध नहीं है, उस सत्य स्वरूप परब्रह्मकी नमस्कार है। 'ब्रह्म' शब्दकी अन्यान्य विवरण "यदात्त दर्शना" शब्दमें देखो।

ब्रह्मवैवर्तपुराणमें सगुण ब्रह्मके नौ प्रकार रूपका उल्लेख है,—

"योगिनो य वेदन्त्येन ज्योतीरूपं सनातनम् ।  
 ज्योतिरर्च्यते नित्यरूपं भक्ता वदन्ति यम् ॥  
 वेदा वदन्ति सत्यं नित्यमात्र निचक्षणया ।  
 यं यदति सुरा सर्वे स्वच्छामय प्रभुम् ।  
 सिद्धं वा मुनय सर्वे सर्वरूपं यदति यम् ॥  
 यमनिर्बन्धीयन्व योगीन्द्र शङ्करो वदत् ॥  
 स्वयं धाता च प्रवदत् कारयानान्व कारय ।  
 जेया यदेदन्तं य मन्धारूपमीश्वरम् ॥

(बृहार्णवो. पु० श्रीकृष्णजन्माद्य, १२५ अ०)

(१) ज्योतीरूप सनातन, (२) अभ्यन्तरज्योति नित्यरूप, (३) सत्यस्वरूप, (४) नित्य और आदिपुरुष, (५) स्वच्छामय प्रभु, (६) सर्वरूप, (७) अनिर्बन्धीय, (८) कारणका कारण और (९) अनन्त। उल्लिखित नौ प्रकारसे ब्रह्मका नाम निर्देश हुआ करता है।

गण्ड पुराणके ४४वे अध्यायमें सगुण और निर्गुण ब्रह्मका ध्यान लिखा हुआ है; बाहुल्यके भयसे यहाँ विस्तृत नहीं किया जा सका।

(पु०) ५ सृष्टिकर्त्ता देवता विशेष "वृ हति प्रजाय ।" जिन्होंने प्रजाकी सृष्टि की है, वे ही ब्रह्मा हैं। पर्याय—  
 शात्मभू, सुरेश्येष्ठ, परमेष्ठी, पितामह, हिरण्यगर्भ, लोकेश, स्वयम्भु, चतुरानन, धाता, अज्ञयोनि, द्रु हिन, विरिञ्चि, कमलासन, रुद्र, प्रजापति, वेधस्, त्रिधाता, विश्वसृज् विधि, (भरत) नामिनन्म, अण्डज पूर्वाभिधन कमलोद्भूय, सदानन्द रजोमूर्त्ति, सत्यक, ह सवाहन, (किर्त्ती क्रिया अमरकायमें य पर्याय भी दत्तामें आते हैं) द्रु षण, विरिञ्चि, स्वयम्भु, पशयोनि, पशामन, विश्वसृज्, विधि, (भरत)

देवदेव, पद्मगर्भ, गुणमागर, वेद्गम, बहुदेवस्, स्वम्, मन्याराम, सुधावर्ष, टपाद्वैत, रसवर्षण, लोकनाथ, महावीर्य, सरोजो मञ्जुप्राण, नामिजन्मन्, बहुरूप, जटा धर, मननशतधृति, कञ्ज, प्रभु, चिन्तामणि, पद्मपाणि, पुराणग, अष्टाङ्ग ह सरथ, सर्वकर्त्ता, चतुर्मुख (शन्दरक) क, ( एकाक्षरकोष ) आ, शतपथविज्ञास, स्वायम्भुय मञ्जु पिता, ( कविस्व० ) म, ( प्रणवनाम्ना )

ब्रह्माकी उत्पत्तिकारित्रण प्राय सभी पुराणोंमें आलोचनित हुआ है। अत्यन्त संक्षेपमें यहाँ थोड़ा सा विवेचन किया जाता है। मनुस्मृतिमें लिखा है— जब कि यह परिदृश्यमान जगत् एकमात्र अन्धकारवृत्त और अप्रत्यक्ष था, तब अन्धक स्वयम्भु ब्रह्मने अपने शरीरसे त्रिभिध प्रजा सृष्टिकी इच्छा कर सबसे पहले ध्यानयोगसे जलकी सृष्टि की। परचाह् उस जलमें बीज डाला, और उस बीजसे एक अण्ड उत्पन्न हुआ। उम अण्डसे स्वयं ब्रह्मने पितामहके रूपमें जन्मग्रहण किया। नर अर्थात् परमात्मान्मे उत्पन्न होनेसे जलका नाम नारा है, ब्रह्मरूपमें अवस्थित परमात्माका सर्वप्रथम अयन था आश्रय होनेसे ब्रह्माकी नारायण कहते हैं, तथा आदि कारण, अव्यक्त और नित्य पुरुषमे उत्पन्न होनेसे उद्दे ब्रह्मा कहा गया है। ब्रह्मने उस अण्डमें ब्राह्मणके स वत्सर फाल वास करके अन्तमे उसे दो भागोंमें विभक्त कर दिया। उनके अर्द्ध अण्डमें स्वर्गानि लोक और अधोलण्डमें पृथिव्यादि, तथा मध्य भागमें आकाश, अष्ट दिशाप और समुद्र निर्माण किया। पीछे ब्रह्मने इन जगत् और विविध प्रजाको सृष्टि की। सृष्टि देवा।

\* गोविन्ध्याय शरीरात् स्नात्कियन्तुविविधा प्रजा ।

अण्व सवजादी तातु धीचमवात्तात् ॥

तदडमभवद्वैमं सङ्क्रोशुधमप्रभम् ॥

तस्मिन् वने स्वयं ब्रह्मा सर्वलोकपितामह ॥

आना नारा इति प्राक्ता आनो वै नरवृत्त ॥

ना यदस्यापन पूर्व तेन नारायण सृष्ट ॥

यन्त् कारणमन्वक नित्यं सदेवदात्मकम् ॥

तद्विद्युः स पुरुषो लोकं ब्रह्मेति कीर्त्तित् ॥





वास्तविक असत्य होने पर भी सत्यरूपमें प्रतिभामित होते हैं। अथवा तेजमें जलका भ्रम इत्यादि जैसे वस्तुन मिथ्या है, उसी प्रकार जिनके अतिरिक्त सत्य, रज और तम इन तीनों गुणोंकी सृष्टि अलोक है तथा अपने तेज प्रभावसे जिनमें किन्ही प्रकार उपाधि सम्बन्ध नहीं है, उस सत्य स्वरूप परब्रह्मको नमस्कार है। 'प्रथम' सम्बन्धी अन्यान्य विवरण "वदन्ति दशान्" शब्दमें देखो।

ब्रह्मणोऽवतारपुराणमें सगुण ब्रह्मके नौ प्रकार रूपका उल्लेख है,—

"यागिनो य वेदन्त्यत्र ज्योतीरूपं सनातनम् ।  
ज्योतिरभ्यन्तं नित्य रूपं भक्ता वदन्ति यम् ॥  
वदा वदन्ति सत्य यं नित्यमाय विचक्षणया ।  
यं वदति सुरा सर्वे पर स्वच्छामय प्रभुम् ।  
सिद्धं द्रा मुनय सर्वे सर्वरूप उदति यम् ॥  
यमनिर्चनीयम् च योगीन्द्रा शङ्कते वेत् ॥  
स्य धाता च प्रवदेत् कारयानाम् च कारय ।  
शेनो वेदेदन्त यं नयधारूपमीश्वरम् ॥

( ३५६-५०० श्रीशृण्णजन्मपद, १२८ अ० )

( १ ) ज्योतीरूप सनातन, ( २ ) अभ्यन्तरज्योति नित्यरूप, ( ३ ) सत्यस्वरूप, ( ४ ) नित्य और आदिपुरुष, ( ५ ) स्वच्छामय प्रभु, ( ६ ) सर्वरूप, ( ७ ) अनिर्चनीय, ( ८ ) कारणका कारण और ( ९ ) अनन्त । उल्लिखित नौ प्रकारसे ब्रह्मका नाम निर्देश हुआ करता है।

गण्ड पुराणके ४४३ अथायमें सगुण और निर्गुण ब्रह्मका ध्यान लिखा हुआ है : बाहुल्यके भयसे यहाँ विस्तृत नहीं लिखा जा सका।

( ५० ) ५ सृष्टिकर्ता देवता त्रिशेष ' वृहति प्रजाय । " निम्हींने प्रजाकी सृष्टि की है, वे ही ब्रह्मा हैं। पयाय-आत्मभू, सुरदेव्येष्ट, परमेष्ठो, पितामह, दिग्ग्यगर्भ, लोकेश, स्वयंभु, चतुरानन, धाता, अज्ञयोनि, द्रुहिण, विरिञ्चि, कमलासन, स्रष्ट, प्रजापति, वेधस्, विधाता, विश्वसृज्, विधि, ( भरत ) नाभिजन्म, अष्टज पृथ्विधन कमलो ज्ञय, सदानन्द रनोमूर्ति, सत्यक, ह मजाहन, ( किञ्चि किञ्चि अमरकोपमें ये पयाय भी नेत्रेण भाने हैं ) द्रुघण, विरिञ्चि, स्वयम्भु, पदायोनि, पद्माम्ना, त्रिभुवृज्, त्रिधि, ( भरत )

देवदेव, पद्मगर्भ, गुणसागर, वेदगर्भ, बहुरेतस्, स्वभू, सन्धाराम, सुधावर्ण, वृषाडैत, स्वसपण, लोकनाथ, महावीर्य, सरोजो मञ्जुप्राण, नाभिजन्मन्, बहुरूप, जटा धर, सननुशतधृति, वज्रज, प्रभु, चिन्तामणि, पद्मपाणि, पुराणग, अष्टकण, ह सरथ, सर्वकर्ता, चतुर्भुज ( गन्धर्ज ) क, ( एकाक्षरकोप ) आ, शतगवनिरास, स्वायम्भुय मनु पिता, ( त्रिबन्धु ) म, ( प्रणयन्याख्या )

ब्रह्मानी उत्पत्तिका त्रिचरण प्राय सभी पुराणोंमें आलोचित हुआ है। अन्यन्त सक्षेपमें यहाँ थोड़ा सा त्रिचरण किया जाता है। मनुस्मृतिमें लिखा है— जब कि यह परिदृश्यमान् जगत् एकमात्र अन्धकारावृत और अप्रत्यक्ष था, तब अथवा स्वयम्भु ब्रह्मने अपने शरीरसे त्रिचिध्र प्रजा-सृष्टिको इच्छा कर सबसे पहले ध्यानयोगसे जलकी सृष्टि की। परन्तु उम जलमें धीज डाला, और उस बीजसे पद्म अण्ड उत्पन्न हुआ। उस अण्डसे स्वयं ब्रह्मने पितामहके रूपमें जन्मग्रहण किया। नर अर्थान् परमात्मासे उत्पन्न होनेसे जलका नाम नादा है, ब्रह्मरूपमें अवस्थित परमात्माका सद्यप्रथम अयन या आश्रय होनेसे ब्रह्माको नारायण कहते हैं, तथा आदि कारण, द्रव्यक और नित्य पुरुषसे उत्पन्न होनेसे उन्हें ब्रह्मा कहा गया है। ब्रह्मने उस अण्डमें ब्रह्मणके स वत्सर काल वाम करके अन्तमें उसे दो भागोंमें विभक्त कर दिया। उसके बाह्य अण्डमें स्वर्गादि लोक और अन्तर् अण्डमें पृथिव्यादि, तथा मध्य भागमें आकाश, अष्ट दिशाएँ और समुद्र निर्माण किया। पीछे ब्रह्मने इस जगत् और विविध प्रजाकी सृष्टि का सृष्टि देना।

\* मोक्षिण्याय शरीरात् स्वात्सिन्नुगिधिषा प्रजा ।

अथैव सननादी तानु बीचमरासृजत् ॥

तदहमभवद्दमं सृष्ट्वांशुसमप्रभम् ।

तस्मिन् यमं स्वयं ब्रह्मा सर्वलोकप्रितामह ॥

आपो नारा इति प्राक्ता भाषो वै नरघृत्त ॥

ता यदस्यायन पूर्वं तेन नारायण सृजत् ॥

यत्तत् कारयामन्वच नित्यं तदसदात्मकम् ।

तद्विद्युत् स पुरो लोके ब्रह्मेति कीर्त्तये ॥

काशिकचतुर्दशानां विष्णो ह्ये - पूर्वमेव प्रथमं सृष्टिं पठति। तत्र तत्र कृत्वा मुनयो भासि तस्मात्सर्वे मुनेषु यथा  
 लभ्ये मातृ, यथा। भासि प्रसङ्गात्त एव । उत तस्य  
 श्रितं वा, वृत्तेशो, यथा, भासता, यासु भासि प्रथमं सृष्टिं  
 कृत्वा मातृ। ये, उत तस्य कथमभासि सुप्तं सृष्टिं,  
 भासिप्रा, अन्वय, भद्र, भासता एव यथा सप्त हा ये  
 भासि सप्त, सप्त, प्रसृति मुक्तं मातृ। भासता का  
 विष्णो मातृ। ये हा यथा प्रथमं सृष्टिं भासि मातृ  
 भासि इत प्रकाशनात् सप्तं विष्णो हुयि ।

पारमार्थिके वृष्टि परमार्थिके अभिधायने पठति प्रसृति को  
 विष्णो मितं विष्णो । प्रसृति के विष्णो ही पर मदनरत  
 म विविध मद्भासि भी मद्भासने पद्य तस्मात्त को  
 उत्पत्ति हुं । परमात् नदत्ताभासने सृष्टिगत भासि  
 भासता भी सप्तभासने प्रथमं सृष्टि कर्तृत्वानि भयो  
 भासतात्त उत प्रसृतिगत पारमार्थिके । उत्तरे वाद्  
 उत्तरी मुनयत् सप्तभासि भासिप्रा प्रसृति को सृष्टिके  
 श्रितं विष्णो मितं विष्णो । श्रितं प्रसृतिमे उत कारण  
 प्रथमं विष्णो मितं प्रसृति पारमार्थिके विष्णो । यही वात  
 समस्त सृष्टिको भास हा ही दुष्मा सुविनात सुवर्णमप  
 भासतात्तानि परिलत हुआ भी इत तत्र, प्रसृति भी  
 उपासि लीन हा भा । सप्त भासना प्रसृत्यत्तानि उत  
 भासने प्रसृतिगतं यथा कथं उपासि भेदत विष्णो ।  
 भासने उपासि उपासु क्व सुमेत भी भासताप पयसि  
 भयस्यत्त एव श्रितं सप्तभासु भासि विष्णो मितं  
 प्रसृतिहा उत्पत्त हुं । श्रितं सप्ताने प्रसृति के इच्छात्तुभास  
 भासने प्रसृतिहा भास भासो विष्णो विष्णो । उपासि  
 भासता उपासना उत यथाप चतुसु म, सप्तसु म, कमल  
 फेनरसामित भासतात्तानि श्रितं भासने परिलत हुआ ।  
 उपासि सप्तभासने विष्णो भी प्रसृतिगतानि श्रितक्यु ही,  
 यथाप कथाभासने सप्त, विष्णो भी सप्तभासने श्रितक्यु

का उपासि हुमा । सप्ताने उपासि सृष्टि सप्त श्रितं हास्य  
 ये हा सप्त हा । श्रितं सप्तभासने म०१ ॥१०१॥  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—

भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—

भासताप विष्णो सृष्टि कर्त्तव्यो सप्ताने प्रसृत्य  
 मदनरत, मद्भासताप भी पद्यस्यत्तानि भास तात्त  
 यथा सुप्त वीसयत्त भासतात्तानि भासता इतिप भी पद्यमदा  
 मुन इत श्रीसुप्त सप्ताने विष्णो विष्णो सृष्टि भासने को  
 भी । सृष्टिके पारमार्थिके श्रितक्यु सुवर्णमप भी उपासि  
 कर्त्तने पर उपासि भासि सप्तभास हास्य भासताप विष्णो  
 सप्तक्यु वति सप्त उपासने हुय । उपासि उत विष्णो  
 सृष्टिके भासतात्तानि भास भासतापि सप्तभास  
 कर्त्तित हुय है ।

भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—

भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—

भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—

भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—  
 भासतात्तानि मितं विष्णो ही,—

भृगु, पुत्रस्त्य, पुलह, क्रतु, अङ्गिरा, मरौचि वः, अत्रि और वशिष्ठ ये नौ ब्रह्माके मानस पुत्र हैं। ये भी ब्रह्मा कहलाते हैं।

मत्स्यपुराणके तृतीय अध्यायमें ब्रह्माके चतुर्मुप होनेका कारण इस प्रकार लिखा है,—ब्रह्माके शरीरमें एक कन्या उत्पन्न हुई। ब्रह्मा उस कन्याको देण कर कामसे पीड़ित हुए। पश्चात् वे उस कन्याकी ओर सन्तुषण दृष्टिसे देखते रहे और 'अति आश्चर्य रूप है' 'अति आश्चर्य रूप है' बार बार चेना रहने लगे वह कन्या ब्रह्माके भावको ताड़ गई और उनके चारों तरफ प्रदक्षिणा देने लगी। इस तरह चारों ओरसे कन्या दृष्टिगोचर हो, इसलिए ब्रह्माके चारों ओर चार मुख हो गये। (मत्स्यपु० ३५०)

सृष्टिके प्रारम्भमें ब्रह्माके दश मानसपुत्र उत्पन्न हुए; पहले मरौचि, फिर अत्रि, अङ्गिरा, पुत्रस्त्य, पुत्रह, क्रतु प्रचेता, वशिष्ठ, भृगु और नारद।

ब्रह्माके शरीरसे दश प्रजापतियोंकी उत्पत्ति हुई। दक्षिण अगुप्तसे दक्षप्रजापति, स्तनान्तसे धर्म, हृदयसे कुसुमायुध, भ्रूमध्यसे श्लोथ, अधरसे लोभ, बुद्धिसे मोह, अङ्गुलसे मद, कण्ठसे प्रमोद और लोचनसे मृत्युना उद्भव हुआ था। दश प्रजापतियोंका नियम उन उन शब्दोंमें तथा प्रजापति शब्दम देलो।

महाभारतमें प्रातिपत्तिका १८०३ अध्यायमें ब्रह्माकी उत्पत्तिकी विवरण लिखा है। लेख यह जानने भयसे यहाँ अधिक नहीं लिखे गये।

कल्पके प्रारम्भमें ब्रह्मा सृष्ट होते हैं और कल्पके क्षयमें उनका ध्वंस होता है। ब्रह्माकी पूजा आदिके विषयमें कालिकापुराणमें इस प्रकार लिखा है।

ब्रह्माका मन्त्रीदार,—

“पशुतोयञ्च बह्निञ्च शेषशरगमन्वित।

चन्द्रविन्दुवमायुतां महामन्त्र प्रकीर्षित ॥” (कालिकापु०)

पर्याके तृतीयवर्ग 'अ' के नीचे रक्षार जोड़नेसे 'प्र' और उसमें ओंकार तथा चन्द्रविन्दु लगातेसे ब्रह्माका मन्त्र "म्रीं" होता है। यही ब्रह्माका योत्रमन्त्र है। इस मन्त्रके द्वारा ब्रह्माकी पूजा करनेसे अक्षिलपित वस्तुकी प्राप्ति होती है।

ब्रह्माका ध्यान इस प्रकार है  
 “ब्रह्मा कमलधरश्चतुर्वक्त्रश्चतुर्भुजः ।  
 त्रदन्विदत्तकमले हस्ताह्ण कदाचन ॥  
 यगेन रक्तगौराङ्ग प्रायुस्तुक्ताद् उज्ज्वल ।  
 त्रमङ्गलनामकर स्रुतो हस्ते नु दक्षिणे ॥  
 दक्षिणोपस्थथा मान्ना वामोपञ्च तथा मुख ।  
 आज्यस्थानी वामोपञ्च वदा यन्मन्त्र स्त्रिया ॥  
 रात्रिभोगमगञ्चस्था दक्षिणोपस्था सरण्या ।  
 सर्वे च शृण्व्या ह्यग्रे त्रयामिभञ्च चिन्तनम् ॥”  
 (कानिनापु० ८२)

इस मन्त्रसे ब्रह्माना ध्यान करना चाहिए। “पद्मा सनाय विभ्रते ह सारूढाय धीमहि तन्नो ब्रह्मन् प्रचो द्यात्” यह ब्रह्माकी गायत्री है। नेत्र रक्षणके अतिरिक्त समा उपचार ब्रह्माको दिष्टे जा सकते हैं। रक्तवर्ण कौपिय उत्र ब्रह्माको परम प्रीतिकर है। आज्य, खीर और तिल युक्त घृत ये तीन ब्रह्माके प्रधान भोग्य पदार्थ हैं। ब्रह्माके पाश्र्वमें पिण्डु और शिखकी पूजा करनी चाहिए। ब्रह्माके करस्थित श्रृङ्गाणि, मस्त्वती, सायित्री, हस औद पत्र इनकी भी पूजा करना विधेय है। इनका अर्घ्य दुग्ध द्वारा और प्रणाम दण्डवत् हो कर करना चाहिए।

(कानिनापु० ८२ अ०)

गृहदाहादि हानिसे ब्रह्माकी पूजा का जानी है।  
 ६ ऋत्विज भेद, एक प्रकारके ऋत्विज। होम करते समय ब्रह्माकी स्थापना करना चाहिए। ये चिन्त्र ग्राहण के अभाजमें हुआपत द्वारा ब्रह्मा बना कर उसमें स्थापना की जाती है।

“उत्पन्नवशो भजत् ब्रह्मा अथ केनानु निररः ॥”

(उदावहस्य)

हुजामय ब्रह्माको यथानियम बना कर उसका अग्रभाग ऊँचा कर देना चाहिए। जिनके अग्रभाग सान हों, ऐसे ५० हुआपतोंसे ब्रह्माका निर्माण करना उचित है। अनिसे पूर्वकी ओर प्रागप्र हुआ विडा कर उसके ऊपर ब्रह्माका स्थापना किया जाता है। मन्त्रदेयमें इसकी प्रणाली विस्तृतरूपसे लिखी है।

७ विशुद्धम आदि सत्ताइस योगोंमेंसे पचीसवा योग। इस योगमें सभी प्रकारके शुभ कर्मादि किये जा



“पद्मगन्धेन दत्ता य स्नायति भक्तित ।

ब्रह्मकूर्चविधानेन त्रिगुणलक्षे महीयते ॥”

“ब्रह्मकूर्चं विधानेन त्रुणोदकमुक्तेन ।” (दशप्रतिशतत्वत् ।

ब्रह्मरत्न ( स० वि० ) ब्रह्म तप करोतीति ब्रह्म विष्णु । १ तापस, तपस्याकारणे । २ स्तोत्रकारणे, जो धायमनो धारणसे पुत्रा और भजना करते हैं । ( पु० ३ त्रिगु । ४ शिव । ५ इन्द्र ।

ब्रह्मवृत्त ( स० वि० ) ब्रह्मणा वृत्त । ब्रह्मा द्वारा किया हुआ ।

ब्रह्मरुति ( स० टी० ) क्रियमाण ब्रह्मस्तोत्र ।

ब्रह्मरोग ( स० पु० ) ब्रह्माका रत्नभण्डार, ब्रह्मतरुजा अत्र पवित्र शब्द वा ग्रन्थ ।

ब्रह्मकोशो ( स० खी० ) ब्रह्मण कोशोय । अनमोदा ।

ब्रह्मक्षत्र—१ ब्राह्मण और क्षत्रियसे उत्पन्न एक जाति । २ ब्रह्मतेजा क्षत्रिय ।

“ब्रह्मक्षत्रमप्य या योनिर्वासा परिप्लवत्त ।”

( वि० पु० ४१२१४ )

श्रीधरस्वामीने तट्टीकामें इस क्षत्रिय जातिसे सम्बन्धमें इस प्रकार व्यवस्था की है,—“ब्रह्मण्याः ब्राह्मणस्य सन्तस्य क्षत्रियस्य च यानि कारणं क्षत्रियैरेतौ कैश्चित्तपानिरोधाय ब्राह्मणस्य क्षत्रियमिति ।” दाक्षिणात्यमें ये ब्राह्मक्षत्रगण आज भी कायस्थोंके आचार व्यवहारका पालन करते और कायस्थ कहलाते हैं । कुलीन देवा ।

३ ब्रह्मज्ञान और क्षत्रबोधशाली । प्रजापति दक्ष ब्रह्मतेज और क्षत्रिय बोधसे पूर्ण हो ब्रह्माधिष्ठित प्रदेश तपस्याके लिये गये थे ।

“दत्तो दत्त्वाऽथ ना कन्या ब्रह्मक्षत्र प्रपद्य च ।

ब्रह्मण्याऽधुषितपुष्यं धर्माहितमना मुनि ॥”

( इति त ११२ )

ब्रह्मक्षेत्र ( स० खी० ) १ ब्रह्माका अधिष्ठानस्थान मान्य वेद ।

“ब्रह्मण्या मीशतविद्धा जनिषे प्रथमे पदे ।

ब्राह्मण्याऽधुषितान्पुष्यं ब्रह्मक्षेत्रमिदोच्यते ॥”

( इति य )

२ धर्मन्वपारण ब्राह्मण अधिष्ठासित पुण्यस्थान ।

ब्रह्मगति ( स० खी० ) मुक्ति, नशात ।

ब्रह्मगन्ध ( स० पु० ) ब्रह्मका विकास या ज्ञानरूप स्वीगन्ध ।

ब्रह्मगया—गयातीर्थ । गया शरी ।

ब्रह्मगर्भ ( स० पु० ) १ एक स्मृतिशास्त्रके प्रणेता । ( खी० )

ब्रह्मो न गर्भा यस्या । २ आदित्यभक्ता, हुरहुर । ३

अजगन्धा, अजमोदा ।

ब्रह्मगवी ( स० खी० ) ब्राह्मणकी अधिष्ठन गाम्भी ।

ब्रह्मगाढ ( हि० खी० ) जनेऊकी गाढ ।

ब्रह्मगायत्री ( स० टी० ) गायत्री मन्त्रविशेष ।

ब्रह्मगार्थ ( स० पु० ) ब्रह्मिभेद ।

ब्रह्मगिरि ( स० पु० ) ब्रह्मणा गिरिः पर्वत । ब्रह्मशैल ।

यह पर्वत नीरकूट नामक कामाख्यानिलयके पूर्वमें अवस्थित है ।

ब्रह्मगिरि—मन्नाज प्रेसिडेन्सोके मल्वार जिलाम्तर्गत

एक गिरिश्रेणी । समुद्रपृष्ठमें इसकी ऊँचाई प्राय

४५०० फुट है । दासमीरेता नामक इसका सर्वोच्च

शिखर ५७७१ फुट ऊँचा है । यह अक्षांश ११ ५६' उ०

नभा देशां ७६ २०' पू०के मध्य अवस्थित है । इसके

चारों तरफ जंगल हैं ।

ब्रह्मगीता ( स० खी० ) ब्रह्मण गीता ६ तन् । १ महाभारतके

अनुशासन पर्वमें ब्रह्मकूर्चकथित अनुशासन रूप

गाथा । ( भारत अनुशासन० ३५ अ० ) २ शिवपुराणके धन्तर्गत

ज्ञानगण्डके ६से ६ अध्याय पर्यन्त, यह विभाग जिसमें

वेदान्त और योगशास्त्रकी अवतारणा हुई है ।

ब्रह्मगातिज्ञा ( स० खी० ) यूपानी स्तुति वा गीत ।

ब्रह्मगुण । स० पु० ) १ विद्याधर माम पत्नीके गर्भ और

ब्रह्माके औरसमें उत्पन्न एक पुत्रका नाम । २ एक ज्योति

विद् । इसका जन्म ५६६ ई०में हुआ था । इसका बनाया

हुआ ब्रह्मसिद्धान्त आज भी मिलता है । ३ भक्त सम्प्रदाय

के एक गुण ।

ब्रह्मगुप्तोय ( स० पु० ) ब्रह्मगुप्तजोद्धव राजपुत्र ।

ब्रह्मगोत्र ( स० पु० ) भूमण्डल, पृथ्वी ।

ब्रह्मगौरव ( स० वी० ) ब्रह्ममर्दिमसूत्रर अम्बुदि ।

ब्रह्मग्रन्थि ( स० पु० ) यथापरोत या जनेऊकी मुख्य गाढ ।

ब्रह्मश्रेष्ठ ( स० पु० ) ब्रह्मशक्ति ।



“पञ्चगव्येन दत्तं यं क्षापयति भक्तित् ।

ब्रह्मचर्यविधानेन विष्णुश्लोके महीयते ॥”

“ब्रह्मचर्यं विधानेन जुगोदकयुक्तेन ।” (देवप्रतिशतत्त्व)

ब्रह्मरुत (स० लि०) ब्रह्म तप कर्तेतीति वृ कियप् । १  
तापस, तपस्याकारो । २ स्तोत्रकारो, जो कायमनो  
चाक्यसे पूजा और भजना करते हैं । (पु० ३ त्रिणु ।  
४ शिष्य । ५ इन्द्र ।

ब्रह्मरुत (स० लि०) ब्रह्मणा रूत । ब्रह्मा द्वारा किया  
हुआ ।

ब्रह्मरुति (स० स्त्री०) क्रियमान ब्रह्मस्तोत्र ।

ब्रह्मबोध (स० पु०) ब्रह्माका रत्नमण्डार, ब्रह्मतत्त्वा  
धित पवित्र शब्द वा ग्रन्थ ।

ब्रह्मकोशो (स० स्त्री०) ब्रह्मण कोशोय । अजमोदा ।

ब्रह्मक्षेत्र—१ ब्राह्मण और क्षत्रियसे उत्पन्न एक जाति ।  
२ ब्रह्मनेजा क्षत्रिय ।

“ब्रह्मक्षेत्रस्य या योनिर् ॥ सार्वात्मकवृत्तः ।”

(वि०पु० १२१४)

श्रोत्रधारस्वामीन तद्दोषकर्मै इति क्षत्रिय जातिके  
सम्बन्धमे इति प्रकार व्यवस्था की है,—“ब्रह्मण्याः  
ब्राह्मणस्य क्षेत्रस्य क्षत्रियस्य च यानि कारणं क्षत्रियैर  
कैश्चित्पानिशोयान् ब्राह्मणस्य क्षेत्रमिति ।” दाक्षिणात्यमे  
ये ब्रह्मभरणगण आज भी कायस्थोंके आचार व्यवहारका  
पालन करते और कायस्थ कहलाते हैं । जुलैन देवा ।

३ ब्रह्मज्ञान और क्षत्रियोंके गाली । प्रजापति दत्त  
ब्रह्मनेज और क्षत्रिय वीथसे पूर्ण हो ब्रह्माधिष्ठित प्रदेश  
तपस्याके लिये गये थे ।

“दत्तो दत्त्वाऽयं ना कन्या ब्रह्मज्ञानं प्रपद्य च ।

ब्रह्मण्याऽध्युषितं पुत्र्यं समाहितमा मुनि ॥”

(हरिच ११२)

ब्रह्मक्षेत्र (स० स्त्री०) १ ब्रह्माका अधिष्ठानस्थान मान्य  
वेह ।

“ब्रह्मण्याः श्रोत्रविद्वान् जनिषे प्रथमे पर ।

नाहं मण्याऽध्युषितवान् ब्रह्मज्ञानमिदं चत ॥”

(हरिच १)

२ वेदमन्त्रपारंग ब्राह्मण अधिवासित पुण्यस्थान ।

ब्रह्मगनि (स० स्त्री०) मुक्ति, नजात ।

ब्रह्मगन्ध (स० पु०) ब्रह्मका चिकाना या क्षानरूप सौगन्ध ।

ब्रह्मगया—गयातीर्थ । गया दत्तो ।

ब्रह्मगर्भ (स० पु०) १ एक स्मृतिशास्त्रके प्रणेता । (स्त्री०)

ब्रह्मो गभा यस्या । २ आदित्यभक्ता, हुरहुर । ३  
अजगन्धा, अजमोदा ।

ब्रह्मगवी (स० स्त्री०) ब्राह्मणकी अधिष्ठन गामी ।

ब्रह्मगाठ (हि० स्त्री०) जनैककी गाठ ।

ब्रह्मगायत्री (स० स्त्री०) गायत्री मन्त्रविशेष ।

ब्रह्मगार्ग्य (स० पु०) ऋषिप्रेत ।

ब्रह्मगिरि (स० पु०) ब्रह्मणा गिरि पर्वतः । ब्रह्मशैल ।

यह पर्वत नीलकण्ठ नामक कामाख्यानिलयके पूर्वमें अज  
स्थित है ।

ब्रह्मगिरि—भद्रनाथ प्रेसिडेन्सीके मलबार जिलातर्गत  
एक गिरिच्छेपा । समुद्रपृष्ठसे इसकी ऊँचाई प्रायः  
४५०० फुट है । दाचमोरेता नामक इस्फुरा मन्थ  
जिगर ५०७६ फुट ऊँचा है । यह अक्षां ११ ५६' ३०  
तथा देशां ७६ २०' के मध्य अस्थित है । इसके  
चारों तरफ जंगल है ।

ब्रह्मगीता (स० स्त्री०) ब्रह्मण गीता ६-तन् । १ महाभागके  
अनुशासन परममें ब्रह्मकर्तृक कथित अनुशासन रूप  
गाथा । (भारत अनुशासन १३ अ०) २ शिवपुराणके अन्तर्गत  
ज्ञानपण्डके ६से १ अध्याय पर्यन्त, यह विभाग जिसमें  
वेदान्त और योगशास्त्रकी अवतारणा हुई है ।

ब्रह्मगातिका (स० स्त्री०) यक्षाकी स्तुति या गीत ।

ब्रह्मगुप्त (स० पु०) १ विद्याधर मोम पत्नीके गर्भ और  
ब्रह्माके औरससे उत्पन्न एक पुत्रका नाम । २ एक ज्योति  
विद् । इनका जन्म ५८८ ई०में हुआ था । इनका बनाया  
हुआ ब्रह्मसिद्धान्त आज भी मिलता है । ३ अन्त सम्प्रदाय  
के एक मुनि ।

ब्रह्मगुप्तोय (स० पु०) ब्रह्मगुप्तकी उद्भवा रानपुत्र ।

ब्रह्मगोल (स० पु०) भूमण्डल, पृथ्वी ।

ब्रह्मगीर्य (स० स्त्री०) ब्रह्मभद्रमन्त्रक अन्वयि ।

ब्रह्मप्रधि (स० पु०) यज्ञोपवीत या जनैककी मुख्य गाठ ।

ब्रह्मप्रह (स० पु०) ब्रह्मगक्षस ।





“पद्मगन्धेन देवस्य य स्नापयति भक्तिः ।

ब्रह्मवृत्तविधानेन निःशुल्केन महीधने ॥”

“ब्रह्मवृत्तं विधानेन कुशोदकयुक्तेन ॥” (दिगमतिष्ठानत्त्व)

ब्रह्मव्रत (स० वि०) ब्रह्म तप करोतीति वृत्तिः । १

तापस, तपस्याकारी । २ रतोत्तवाकरी, जो कायमनो

वाष्यने पूजा और भजना करते हैं । (पु० ३ विष्णु ।

४ शिव । ५ इन्द्र ।

ब्रह्मवृत्त (स० वि०) ब्रह्मणा वृत्तः । ब्रह्मा द्वाग क्रिया  
हुया ।

ब्रह्मवृत्ति (स० रत्नी०) क्रियमाण ब्रह्मस्तोत्र ।

ब्रह्मकोश (स० पु०) ब्रह्माका स्तनभण्डार, ब्रह्मतत्त्वा  
श्रित पवित्र शब्द वा ग्रन्थ ।

ब्रह्मकोशो (स० स्त्री०) ब्रह्मण कोशीय । अजमोदा ।

ब्रह्मक्षत्र—१ ब्राह्मण धीर क्षत्रियसे उत्पन्न एक जाती ।  
२ ब्रह्मतेजा क्षत्रिय ।

“ब्रह्मक्षत्रस्य वा योनिर्वा ॥ राजर्षिगृह्यते ॥”

(वि० पु० ४।११४)

धीधरस्वामीन तट्टीकामे इम क्षत्रिय जातिके  
सम्बन्धमें इस प्रकार व्यवस्था की है,—‘ब्रह्मणा  
ब्राह्मणस्य सन्त्य क्षत्रियस्य च यानि काण्य क्षत्रियैरेव  
कैश्चित्तपाविशेषान् ब्राह्मण्य लब्धमिति ॥’ डाक्षिणात्यमें  
ये ब्रह्मक्षत्रगण आज भी कायस्थोंके जाचार व्यवहारका  
पालन करते और कायस्थ कहलाते हैं । जुलौ देगा ।

३ ब्रह्मज्ञान और क्षत्रवीर्यशाली । प्रजापति वृक्ष  
ब्रह्मतेज और क्षत्रिय वीर्यसे पूर्ण हो ब्रह्माधिष्ठित प्रदेश  
तपस्याके लिये गये थे ।

“दक्षा दत्त्वाऽथ ता कन्या ब्रह्मज्ञान प्रथमम् ।

ब्रह्मण्याऽध्वुपितं पुण्यं समाहितमना मुनि ॥”

(हरिवंश ११२)

ब्रह्मक्षेत्र (स० स्त्री०) १ ब्रह्माका अधिष्ठानस्थान मान्य  
देह ।

“ब्रह्मण्या स्नापयति दक्षा जनिषे प्रथमम् ।

ब्राह्मण्याऽध्वुपितमन्त्रं ब्रह्मक्षेत्रमिहोच्यते ॥”

(हरिवंश)

२ वेदमन्त्रपारंग ब्राह्मण अधिष्ठातित पुण्यस्थान ।

ब्रह्मवृत्ति (स० स्त्री०) मुक्ति, नतीत ।

ब्रह्मगण (स० पु०) ब्रह्मका विकाश या ज्ञानरूप सौगन्ध ।

ब्रह्मगया—गयातीर्थ । गया शरी ।

ब्रह्मगर्भ (स० पु०) १ एक स्मृतिशास्त्रके प्रणेता । (स्त्री०)

ब्रह्मो गर्भा यस्या । २ आदित्यमका, हरहर । ३

अजगधा, अजमोदा ।

ब्रह्मगयी (स० स्त्री०) ब्राह्मणकी अधिष्ठित गामी ।

ब्रह्मगाढ (हि० स्त्री०) जौंऊकी गाढ ।

ब्रह्मगायत्री (स० स्त्री०) गायत्री मन्त्रविशेष ।

ब्रह्मगाय (स० पु०) ब्रह्मिभेद ।

ब्रह्मगिरि (स० पु०) ब्रह्मणा गिरिः पर्वत । ब्रह्मशैल ।

यह पर्वत नीलकण्ठ नामक कामाख्यानिलयके पूर्वमें अव  
स्थित है ।

ब्रह्मगिरि—मन्त्राज प्रेसिडेन्सीके बलुवाग जिल्लागत  
एक गिरिश्रेणी । समुद्रपृष्ठसे इसकी ऊँचाई प्रायः

४००० फुट है । दाघमीयेत्ता नामक इसका सर्वोच्च  
शिखर ५००१ फुट ऊँचा है । यह अक्षा० ११ ५६ उ०

तथा देशा० ७६ २० के मध्य अवस्थित है । इसके  
चारों तरफ जंगल है ।

ब्रह्मगीता (स० स्त्री०) ब्रह्मण गीता इत्यतः । १ महानारतके  
अनुज्ञानन पर्यं ब्रह्मकर्तृक कथित अनुशासन रूप

गाथा । (भारत अनुशासन ३५ ४०) २ शिवपुराणके अन्तर्गत  
ज्ञानखण्डके ६से ६ अध्याय पर्यन्त, वह विभाग जिसमें

वेदान्त और योगशास्त्रकी अवतारणा हुई है ।

ब्रह्मगीतिका (स० स्त्री०) ब्रह्माकी स्तुति या गीत ।

ब्रह्मगुप्त (स० पु०) १ विद्याधर भोज पत्नीके गर्भ और

ब्रह्माके औरसे उत्पन्न एक पुत्रका नाम । २ एक ज्योति  
र्विदु । इनका जन्म ५६८ ई०में हुआ था । इनका बनाया

हुआ ब्रह्मसिद्धान्त आज भी मिलता है । ३ भक्त सम्प्रदाय  
के एक गुरु ।

ब्रह्मगुप्ताय (स० पु०) ब्रह्मगुप्तयशोद्वय राजपुत्र ।

ब्रह्मगोल (स० पु०) भूमण्डल, पृ० गो ।

ब्रह्मगौरव (स० स्त्री०) ब्रह्ममहिममूच्य अग्रादि ।

ब्रह्मप्रिय (स० पु०) यज्ञोपवीत या जनेऊकी मुख्य गाढ ।

ब्रह्मव्रत (स० पु०) ब्रह्मव्रतम् ।



४ जैनमतानुसार पाच व्रतोंमेंसे एक व्रत । इसके दो भेद हैं—(१) एकदेश ब्रह्मचर्याणुवत और (२) सर्वदेश ब्रह्मचर्यमहाव्रत । इस व्रतकी स्थिरताके लिए जैनागममें पाच पाच भावनाएँ कही गई हैं ।

इस व्रतकी रक्षार्थ रितियोंमें प्रीति उत्पन्न करनेवाली कषायोंके सुननेका त्याग, उनके मनोहर अङ्गोंको अनुरागसे देखनेका त्याग, पूज समयमें भोगे हुए स्त्री सम्भोगके स्मरण करनेका त्याग, कामोद्दीपन, पुष्टिकर और इन्द्रियोंको उत्तेजित करनेवाले रसोंका त्याग और शरीरको बहु शृङ्गारादिमें मोहक बनानेका त्याग, ये पाच ब्रह्मचर्यव्रतकी भावनाएँ हैं । गृहस्थ गण एकदेश ब्रह्मचर्यव्रतका पालन करते हैं अर्थात् आचार सहित गृहस्थ स्वदारमें सन्तोष रहते हैं और आचाररहित ध्राजक मैथुनादिका परित्याग करते हैं । सर्वदेश अर्थात् पूर्ण ब्रह्मचर्य मुनिगण पालन करते हैं, जो महाव्रतमें गणनीय है । जैनागममें इस व्रतको दूषित करनेवाले पाच अतीचार भी माने गये हैं । यथा—

“परिवाहरकरोत्परिवाहपरिग्रहीताभारशरीतागमनान्नर्नडा कामतीमाभिननेशाः ॥” (मोक्षशास्त्र ७२८)

दूसरेके पुत्र पुत्रियोंका विवाह करना, दूसरेकी प्याही व्यभिचारिणी स्त्रीके गहा आना जाना वा चचना लाप करना, येश्यादि व्यभिचारिणी स्त्रियोंके साथ तेन देन आदि व्यवहार रचना, कामसेवनके अङ्गोंको छोड़ कर अन्य अनङ्गों द्वारा काम क्रीडा करना और अपनी स्त्रीमें कामसेवनकी अल्पन्तजामना रचना, ये पाच ब्रह्मचर्याणुवतके अतीचार हैं । गृहस्थ ब्रह्मचारियोंको इससे बचते रहना चाहिए । महाव्रती मुनियोंका अल्पएक ब्रह्मचर्य होता है, उहा नो केवल धाम्नामें लीन होना ही ब्रह्मचर्य है ।

ब्रह्मचर्यप्रतिमा—जैनमतानुसार ध्राजक अर्थात् जैनगृहस्थों को एकादश श्रेणियोंमेंसे सप्तम श्रेणी । इस प्रतिमाको पालन करनेवाले ब्रह्मचारी, सप्तमप्रतिमाधारी वा वर्णों कहलाते हैं ।

ब्रह्मचर्यमहाव्रत—जैनमतानुसार मुनिगण द्वारा पालनाय त्रयोदश प्रकार सम्बन्धु चरित्रमेंसे पत्र चरित्र और पत्र विधि महाव्रतोंमेंसे एक व्रत ।

‘जैनधर्म’ नाममें मुद्रियम् प्रयो ।

ब्रह्मचर्यव्रत ( स० वि० ) ब्रह्मचर्य विद्यनेऽस्य मनुष् मन्थ य । ब्रह्मचर्ययुक्त, ब्रह्मचारी ।

ब्रह्मचर्याणुवत—जैनमतानुसार पाच अनुव्रतोंमेंसे चतुर्थ अनुव्रत । ब्रह्मचर्य देखो ।

ब्रह्मचारणी । स० र्यो० । ब्रह्मणा वेदेन चारयति आचरतीति ब्रह्म-चर स्वार्थे णिच्, कर्त्तरि ण्यु डीप् । मार्गी ।

ब्रह्मचारी ( स० पु० ) ब्रह्म ज्ञान तपो वा आचरतीति अर्नयन्त्यत्रय्य ब्रह्म चर आश्रयके णिणि । प्रथमाश्रमी, ब्रह्मचर्याश्रमी, उपनयनके बाद नियम पूर्वक साङ्गवेदाध्ययनके लिए गुरुगृहमें अस्थान करनेवाला ब्रह्मचारी । मनुसंहितामें ब्रह्मचर्याश्रम और ब्रह्मचारिके कृत य इस प्रकार लिखे हैं—उपनयनके उपरान्त ही ब्रह्मचर्याश्रम विधेय है । उपनयन होते ही द्विजोंके प्रति त्रैविद्यादि अथवा मधु मास वर्जनादि व्रतोंका आदेश और विधि पूचक वेदग्रहणका भाग अर्पित होता है । उपनयनके समय जिस ब्रह्मचारिके प्रति जो चर्म, जो सूत्र, जो मेखला, जो ऋड और जो घसन विहित हैं, चात्रायणादि व्रतके समय भी वे ही विधेय हैं । गुरुगुरुलमें धाम करते समय ब्रह्मचारिको इन्द्रिय सयमपूर्वक अपने अङ्गुली वृद्धिके लिए निम्नलिखित नियमोंका पालन करना चाहिए । प्रतिदिन स्नान करके शुद्धतामें देव, ऋषि और पितृ तर्पण देवपूजा तथा माथ और प्रातःकालमें सम्पूर्ण ममिध हाग होम करना उचित है । ब्रह्मचारिके लिए मधु और मान भोजन, गन्धद्रव्य सेवन, माल्यादि धारण, शुद्ध प्रभृति रस ग्रहण और स्त्री सम्भोगानि निषिद्ध हैं । जो पदार्थ स्वभावात् मधुर किन्तु कारण पा कर अम्ल हो जाते हैं अर्थात् अग्नि इत्यादिका सेवन, प्राणियोंकी हिंसा, नैल द्वारा आपात्मस्त्वक अभ्यञ्जन, कञ्जलादि द्वारा चक्षु रञ्जन पादुका य छत्र धारण, लोचोंके माथ वृथा कलह, देण वात्तादिका अन्येयण, मिथ्या भाषण, बुद्धिमत्त अभिप्रायसे स्त्रियोंके प्रति कटाक्ष वा धनना आदिङ्गन और दूसरेके प्रति अनिष्टाचरण इत्यादिने ब्रह्मचारी निरुक्त रहा करने हैं । सर्वत्र पक्काक गयन करना चाहिए और कदापि हस्तव्यापारादि द्वारा रेत-पात न करना चाहिए । कामयज्ञ रेत पान करनेसे आमव्रत बिलकुल ही नष्ट हो जाता है और तो क्या,



ब्रह्मचारीको इन सब नियमोंका पालन कर जीवनका चतुर्थ भाग गुरु-गृहमें बिताना चाहिए। ब्रह्मचर्याश्रम के बाद उन्हें गुरु गृहसे लौट कर दार परिग्रह यानी विवाह करके गृही बनना चाहिए। ( मनु० २ अ० )

सामान्य ब्रह्मचर्य द्विज मात्रको ही धारण करना चाहिए, अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इा तोंनों जातियोंको ही ब्रह्मचर्य अपलम्बन करना चाहिए। ब्रह्मचारी अवस्थामें विशेष पीडादिके सिवा पर स्थानाहत धर्म भोजन नहीं करना चाहिए। क्षत्रिय और वैश्य ब्रह्मचारीको श्राद्ध भोजनमें अधिकार नहीं है। ब्रह्मचारी को ही मधु, मांस, अन्न, गुरुके सिवा अन्य व्यक्तिका उच्छिष्ट भोजन, निष्ठुर वाष्य प्रयोग, खो समोह, जीर्ण-द्विसा, उत्पाम्त समयमें सूर्यदर्शन, अश्लील अर्थात् मिथ्यावाक्य या जुगुप्सित वाक्य तथा पगिाद् अर्थात् सत्य हो वा असत्य दूसरेका दोषोद्घोषन भादि त्याग देना चाहिए। ब्रह्मचारीको एक एक वर्षके अध्ययामें बारह वर्ष ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिए, इसमें अममर्थ होनेसे पाच पाच वर्ष तो ब्रह्मचर्य धारण करना ही चाहिए।

नैष्ठिक ब्रह्मचारीको आचार्य के ममज्ञ, आचार्यके अभावमें उनके पुत्रके समोह, उनके अभावमें आचार्य पक्षके समक्ष और उनकी अनुपस्थितिमें अग्निहोत्रीय अग्निके समक्ष यावज्जीवन वास करना चाहिए। जितेन्द्रिय ब्रह्मचारी उक्त विधिके अनुबन्धन पूर्वक ममसे देहत्याग करे, तो उन्हें मुक्ति प्राप्त होगी है। इस समाप्त में फिर उन्हें जठर यन्त्रणा नहीं भोगनी पडनी।

( याज्ञवल्क्यस० १ अ० )

ब्रह्मचर्य दो प्रकारका है—एक उपकुर्वाण और दूसरा नैष्ठिक। जो विधि पूर्वक वेद अध्ययन करनेके बाद गृहस्थाश्रम अनुबन्धन करते हैं उन्हें उपकुर्वाण और जो मरणान्त पर्वन्त ब्रह्मचर्यसे रहते हैं, उन्हें नैष्ठिक ब्रह्मचारी कहते हैं। ( कर्मसु० २ अ० )

विष्णु पुराणमें लिखा है,—उपनयनके बाद ब्रह्मचर्य अनुबन्धन पूर्वक गुरुगृहमें वेदाध्ययन करना चाहिए।

“शाल इनापनयना वदाहरण्यन्तर ।

गुणैश्च वनस्पु । ब्रह्मचारी समाहित ॥”

( विष्णुसु० ३।६।१ )

२ गन्धर्व विशेष, पर गन्धर्व ।

ब्रह्मचारिणी ( स० स्त्री० ) ब्रह्मणि वेदे चरतीति ब्रह्म-चरिणि, त्रिया डीप् । १ दुर्गा, पार्वती । २ ब्रह्मचर्य धारिणी स्त्री । ३ वाचणी वृक्ष । ४ ब्राह्मीशाल । ५ सरस्वती । ६ ब्रह्मपटिका, चरङ्गा ।

ब्रह्मचोदन ( स० त्रि० ) यज्ञके प्रति ब्राह्मणोंका प्रेरक ।

ब्रह्मज ( स० पु० ) ब्रह्मणो जायते जन इ । १ हिरण्यगर्भ । हिरण्यगर्भ सृष्टिके पहले ब्रह्मसे सृष्ट हुए । ब्रह्मने अपने शरीरमें विविध प्रजा-सृष्टिको इच्छा करके पहले जन्मकी सृष्टि की । पीछे उसमें बीज डाला गया जिससे एक अण्ड निकला । उस अण्डसे सर्वलोकपितामह ब्रह्मणो उत्पत्ति हुई । अतएव ब्रह्मा ब्रह्मज हैं । २ ब्रह्मनात मात, पञ्चभूतादि, जन्तु जगत् प्रभृति ।

“यत्वा वा इमानि भूतानि जायन्त” ( श्रुति )

जिसमें इन भूतोंको सृष्टि हुई, वही ब्रह्मज है। ब्रह्म ही इस जगतके मूल हैं, उन्हो से इन जगत्की सृष्टि, स्थित और लय हुआ करता है।

ब्रह्मजटा ( स० स्त्री० ) ब्रह्मणो जटेय सहता । दमनक वृक्ष, दंतेना पीषा ।

ब्रह्मजन्म (स० स्त्री०) ब्रह्मब्रह्मणार्थं जन्म । उपनयन संस्कार, उपनयन देनेसे ही ब्रह्मजन्म होता है ।

“उत्पादकब्रह्ममदागरीयान् ब्रह्मदः पिवा ।

ब्रह्मजन्म हि विप्रस्य प्रेन्य घट च गाधतम् ॥”

( मनु ५।१५६ )

ब्रह्मजाया (सं० स्त्री०) १ ब्राह्मणपत्नी । २ जुहु । ये ब्रह्मवेद के १०।१०६ सूक्तक ऋषि थे ।

ब्रह्मनार ( स० पु० ) १ ब्राह्मणोंका उपपत्ति । २ इन्द्र ।

ब्रह्मजिज्ञासा (सं० स्त्री०) ब्रह्मण जिज्ञासा । १ ब्रह्मज्ञानत फलक विचार । २ शारीरक सुख । उदान्त दानो ।

ब्रह्मनीयो (सं० पु०) श्रौत भादि कम करा कर जीविका चलानेवाला ।

ब्रह्मजुष्ट (सं० स्त्री०) ब्रह्मण जुष्ट । स्तय या मन्त्रसे प्रीत । ब्रह्मजुत ( सं० त्रि० ) स्तोत्र द्वारा आष्ट ।

ब्रह्मण (सं० पु०) ब्रह्म जानतीति ब्रह्म-ष्वाक । १ शोणोपाल । २ विष्णु । ३ पार्लिकेय । (त्रि०) ४ ब्रह्मपत्नी, ब्रह्मणो जाननेवाला ।



हुए प्रथम अज्ञानका आवेग मानना अन्याय है। कारण, ज्ञान और अज्ञान एकत्र रह ही नहीं सकते, यह नियम है।

निपुण हो कर अनुसन्धान करनेसे मालूम होता है कि चैतनकी पाश्चर्य शक्ति अज्ञान है और उसकी सत्ता चैतन्य सत्ताके अधीन है। ये दोनों परस्पर प्रतियोगी हो कर भी परस्परके स्वरूपके बोधक हैं। अधकारकी सत्ता न रहनेसे किसरी सामर्थ्य है, कि आलोचको सिद्ध कर सके ? जड़ न रहनेसे और अज्ञानका अभाव होनेसे कौन चैतन और ज्ञानकी सत्ता पर विश्वास ला सकता है ? वस्तुतः प्रत्येक आलोच और प्रत्येक चैतनके अधीन अधकार और अज्ञानका अस्तित्व न देखा जाता है। कौनसे चैतनका अज्ञानसे सहाय नहीं है ? सम्पूर्ण चैतन जीवोंमें अज्ञानका सहाय देय कर विचार किया जा सकता है, कि ज्ञान चैतनकी पाश्चर्य शक्ति है। छाया जैसे आलोचकी पाश्चर्य है, वैसे ही अज्ञान भी ज्ञानका पाश्चर्य है। ये दोनों ही शक्तियाँ कोई एक अनिर्वाच्य सम्बन्धसे कभी दूरमें कभी निकटमें, कभी प्रनाशरूपमें और कभी अप्रनाशरूपमें आलोच और ज्ञानके साथ देखी जा सकती हैं। सुविधा यह है, कि परस्पर विरुद्ध स्वभावात्मिक हैं, साक्षात् सम्बन्धमें देखी जा सकती हैं। जैसे अज्ञानके समय आलोचका नाश हो जाता है, उसी प्रकार अज्ञानके समय ज्ञानका और ज्ञान के समय अज्ञानका तिरोभाव हो जाता है। ज्ञान होते ही अज्ञान भाग जायगा, यह स्थिर होनेसे ही हम अज्ञान के निवारणार्थ प्रयत्न करते हैं। अज्ञानसे ही सत्कार है, समाज और पुत्र भी नहीं है। अलएड चैतन अद्वय प्रकाश की पाश्चर्य शक्ति अज्ञान है, उसके प्रादुर्भावमें अन्त करणादिकी उत्पत्ति है, अनन्तर ये अन्त करणादि परिच्छिन्न जीव हैं, और उसीके तिरोभावसे अपरिच्छिन्न और निरञ्ज होते हैं। क्या अन्त प्रपञ्च और क्या महा प्रपञ्च, सभी कुछ अज्ञानका विनाश है, इसीलिए इन सबको नाशितना विनाशमण कहा गया है।

“अस्ति भाति प्रिय रूप नाग चत्वारिपदात्म्।

आद्यस्य गृहस्थस्य जगत्स्य तदा द्वयम् ॥”

शक्तिरूपी प्रणाशित अज्ञानसे प्रकाश वा प्रकाश जगत्

देता है। इसीलिए जगत् और अज्ञान अथ विमिश्रित वा एक मालूम पड़ता है। यही कारण है, कि प्रत्येक दृश्य ही पञ्चरूपी दिखाई देता है। जैसे, १ अस्ति—है, २ भाति—भामता वा प्रकाशित होता है, ३ प्रिय—अच्छा लगता है, ४ रूप—यह इस प्रकार, है, ५ नाम—यह अमुक वस्तु है। इस प्रकार पञ्चरूपमें प्रथमोक्त तीन प्रकार प्रकाश और अज्ञान दो प्रकार जगत् अर्थात् अज्ञान प्रकार है। अज्ञान प्रकार वा जगत् परमार्थतः सत्य नहीं है, इसीलिए कहा जाता है, कि जगत् मिथ्या और प्रकाश सत्य है।

अज्ञानके समय अर्थात् समावेशमें 'अह' में, यह वृत्ति अस्थिर या अनिश्चतरूपसे उदित रहती है। समावेशकालका अह ज्ञान प्रकाश नहीं है इसीलिए यह अप्रमा अर्थात् मिथ्या है। विचारणा चाहिए, कि अज्ञान कालका अह कभी मन, कभी इन्द्रिय और कभी शरीरका आधार बना कर अस्तित्व करता है। पूर्ण चैतन्यकी ओर अप्रसर नहीं होता। सुतरा समावेश कालका अह ज्ञान अस्थिरता युक्त और सन्निधधर्मी तब अप्रमा अर्थात् मिथ्या है। जननीके समान हिताभि लादिषो धृति तत्त्वमसि आदि महापापके उपदेग द्वारा उम अप्रमा वा भ्रान्तिकी दूर करनेमें प्रवृत्त है। अज्ञान परदेमें असफल होनेसे मनन करना चाहिए और मनन में भी सफलता न होनेसे निदिध्यासन अत्यन्त करना उचित है।

अज्ञान, मनन और निदिध्यासनमें अधिकार प्राप्ति और बुद्धिकी दुर्बलता निवारणके लिए पहले चित्तपरि- कर्मकारक उपसना आवश्यक है। शम, दम, उपरति, धृष्टा, समाधान आदि चेतके अनुष्ठानमें रत रहनेसे चित्त निर्मल होता है। तभी अज्ञानादि कारणोंमें अधिकार उत्पन्न होता है। ज्ञान निदिध्यासनके प्रगायने प्रति बन्धन अभाव प्राप्त होता है। प्रतिबन्धन समाप्त होते ही अज्ञानका कल प्रलक्षण (अह प्रकाश इत्याकार अनुभाव) अगनेसे ही उपन हो जाता है। इस प्रकार प्रलक्षण होते ही मुक्ति वा मोक्ष प्राप्त होता है। अज्ञानान्धजीव मायामें मोहित हो कर सर्वदा सुखके लिये दुःख भोग रहा है। जीवके अज्ञानको नष्ट करनेके



ब्रह्मज्ञान (स० क्र००) प्रमाणि प्राविश्ये यज्ञज्ञान । १ प्रा  
पियक ज्ञान, तत्त्वमसि आदि वाक्य जन्य प्रतिफलित  
वृत्तारूढ ज्ञान । ( वदान्तत्रयुचन्द्रिका ) २ मिथ्याज्ञान  
विरह निगिष्ट आत्ममिन्न भिन्नज्ञान । ( सुक्तिवाद ) ३  
शुभ्रकर्मविधाकाशयनियुक्त हिरण्यगर्भ विषयक ज्ञान  
४ प्रकृति पुरुषके विवेक विषयक ज्ञान । ( सात्त्विक० ) ५  
आत्मज्ञान, स्वानुभूति, अपने आत्मका यथाथ अनुभव,  
केवलज्ञान । ( जैनदर्शन )

ब्रह्मज्ञानका विषय वेदान्तमें इस प्रकार है,—अपने  
ब्रह्मज्ञानका अपरोक्षज्ञानमें आरूढ होना ही ब्रह्मज्ञान है ।  
जैसे मरु मरोचिकामें जल्की भ्रान्ति है, वैसी ही ब्रह्ममें  
दृश्य भ्रान्ति है । सुतरा दृश्य प्रपञ्च मिथ्या है, ब्रह्म ही  
सत्य है । पहले इस ज्ञानको अर्जन और दृढ करना  
चाहिए । अनन्तर 'मैं ही यह ज्ञान हूँ और उसका  
आधार यह देह है, इन्द्रिय और मन सभी कुछ भ्रान्ति  
विशेषका विलास है और कुछ नहीं", सुतरा "मैं ज्ञान  
हूँ और मैं ज्ञानका आधार हूँ" यह सब ब्रह्ममें रज्जु सर्प  
को तरह मिथ्या है, ऐसा ज्ञान जब अधिचल हो जाता है,  
तब अपने आप 'अह' अर्थात् 'मैं' जो ज्ञान है, वह इन्द्रिय  
और मन सबको त्याग कर ब्रह्ममें जा कर अवगाह किया  
करता है । 'अह' ज्ञान ब्रह्मावगाही होनेसे ही ब्रह्मज्ञान  
होता है । इसको तत्त्वज्ञान या आत्मज्ञान भी कहा  
जा सकता है ।

एक ही चैतन्य हममें और अन्यान्य जीवोंमें विराज  
मान है । यही एक अपरेंट चैतन्य ही प्रा है और यही  
अनादि अनन्त ब्रह्मचैतन्य उपाधिभेदसे अर्थात् आधार  
( वेदादि )-भेदसे विभिन्नभाव प्राप्तके सद्गुण हो जाता  
है । यस्तुत वह अमिन्नके अतिरिक्त विभिन्न नहीं है ।  
उपाधिके दूर होते ही एक ही, अन्यथा बहुत । सर्ग,  
मर्त्य, पाताल, यह लोकत्रय ब्रह्मचैतन्यमें अभ्यासित है  
अथवा मायिकरूपमें दीप्त पड़ता है । क्योंकि, जिम प्रकार  
एकाद्वय महान् व्यापिचैतन्यमें स्वाश्रित अज्ञानके प्रभावसे  
विश्वरूप इन्द्रजाल प्रकट होता है, उन्ही प्रकार विभ्य  
मिथ्या है । केवल प्रकाशक चैतन्य ही सत्य है और  
तो क्या, सत्य चैतन्यमें जो जो भावमान हैं, वे भी  
आत्मक हैं । ये सब चैतन्याश्रित अज्ञानके विलासके

सिवा और कुछ नहीं हैं । ऐसी प्रतीति सुदृढ होना  
चाहिए, और प्रतीतिके सुदृढ या अपिचलित होते ही  
जोष अपो ब्रह्मत्वका साक्षात्कार कर इतार्थ ही सक्ता  
है । ज्ञानमान् गुह जिस समय विवेकी और युमुत्सु  
जिथ्यको 'तत्त्वमसि' 'मम' खल्विद् ब्रह्म' इत्यादि महा  
वाक्योंका उपदेश करते हैं, उस समय उनके द्वारा उक्त  
वाक्यकी सामर्थ्यसे पूर्वोक्त प्रकार प्रतीति अर्थात् विश्वका  
मिथ्यात्व और अपनेमें ब्रह्मत्वबोध उपस्थित होता है ।  
अनन्तर यही ज्ञान स्नाघनके बलसे अपरोक्ष पथमें प्रविष्ट  
हो कर जोरको इतार्थ कर देता है ।

अवगाहिके वाद दो प्रकारमें वाक्य बोध होते देखा  
जाता है, एक परोक्षरूपसे और दूसरे अपरोक्षरूपसे ।  
वाक्यप्रकाश्य वस्तु श्रोताके समक्षमें (प्रत्यक्ष मार्गमें)  
होनेमें तद्बोधक वाक्य तद्वस्तु विषयमें अपरोक्ष ज्ञान  
उत्पन्न करता है और असमक्षमें होनेमें परोक्षज्ञान  
रूता है ।

'तत्त्वमसि' आदि महावाक्य ही शिष्योंको मनुष्य  
भ्रान्तिको दूर कर ब्रह्मका साक्षात्कार करते रहते हैं ।  
कारण, ब्रह्म ही स्वाश्रित अनादि अनिर्वाच्य अज्ञानमें 'मैं  
अमुक हूँ' इस सद्य भाव या परिच्छेद भ्रान्तिप्राप्त और  
जोष हो कर मौजूद हैं । सुतरा अद्वय ब्रह्मबोधक तत्त्व  
मसि आदि महावाक्य ही अपो उक्त स्वात्मभ्रान्तिको  
दूर कर ब्रह्मस्वरूपका साक्षात्कार करानेमें समर्थ है ।  
आवेगात्मक तत्त्वमसि आदि महावाक्य जिज्ञासु शिष्यके  
मनमें इहानारायुक्ति उदित करती है । उसके द्वारा  
कमसे उनकी 'मैं अमुक हूँ' यह भ्रान्तिश्रुति विकृति  
या निरृत्त हाती है ; उम समय उसके यह चिरसिद्ध  
अद्वय भाव अर्थात् ब्रह्मभाव स्थिर होता है । यह अद्वय  
ब्रह्मज्ञान ही ब्रह्मज्ञान है ।

यद्यपि आलोक और अन्धकारकी तरह ज्ञान और  
अज्ञान अर्थात् चैतन्य और अचैतन्य परस्पर विरोधी  
पदार्थ हैं, तथापि उनके अभिभाव्य अभिभावकभाव अप्र  
त्याख्येय हैं । इनका तात्पर्य यह है, कि विरोधी पदार्थ  
का सहानुभूति नहीं होता । जैसे आलोक और अन्ध  
कार एक साथ नहीं रह सकते, वैसी ही ज्ञान और  
अज्ञान कभी भी एक साथ नहीं रह सकते । यह देखते

हृण प्रहमे अज्ञानका आवेग मानना अन्याय है। कारण, ज्ञान और अज्ञान एकत्र रह ही नहीं सकते, यह नियम है।

निपुण हो कर अनुसन्धान करनेसे मालूम होता है कि चेतना पाश्चर्यचर शक्ति अज्ञान है और उसकी सत्ता चैतन्य सत्ताके अधीन है। ये दोनों परस्पर प्रतियोगी हो कर भी परस्परके स्वरूपके बोधक हैं। अन्वयकारकी सत्ता न रहनेसे किसकी सामर्थ्य है, कि आलोचको मित्र कर सके ? जड़ न रहनेसे और ज्ञानका अभाव होनेसे कीन चैतन और ज्ञानकी सत्ता पर विश्राम ला सकता है ? वस्तुतः प्रत्येक आलोच और प्रत्येक चैतनके अधीन अन्वयकार और अज्ञानका अन्वय न देखा जाता है। कौनसे चैतनका अज्ञानसे सख्य नहीं है ? सम्पूर्ण चैतन ओंमें अज्ञानका सख्य देव कर निश्चय किया जा सकता है, कि अज्ञान चैतनकी पाश्चर्यचर शक्ति है। छाया जैसे आलोचकी पाश्चर्यचर है, वैसे ही अज्ञान भी ज्ञानका पाश्चर्यचर है। ये दोनों ही शक्तियां कोई एक अतिरिच्य सख्य घसे कभी दृग्में कभी निश्चयमें, कभी प्रकाशरूपमें और कभी अपश्यरूपमें आलोच और ज्ञानके साथ देवो या सुनो जाता है। सुविधा यह है, कि परस्पर विरुद्ध स्वभावान्वित हैं, साक्षान् सख्य-प्रम देवो गही जा सकती। जैसे अन्वयकारके समय आलोचका नाश हो जाता है, उसी प्रकार अज्ञानके समय ज्ञानका और ज्ञान के समय अज्ञानका तिरोभाव हो जाता है। ज्ञान होते ही अज्ञान भाग जायगा, यह स्थिर होनेसे ही हम अज्ञान के निवारणार्थ प्रयत्न करते हैं। अज्ञानसे हो ससार है, ससार और कुठ भी नहीं है। अलएउ चैतन अथय प्रह्य की पाश्चर्यचर शक्ति अज्ञान है, उसके प्रादुर्भावमें अन्त करणादिकी उत्पत्ति है, अन्तर ये अन्त करणादि परिच्छिन्न जीव है, और उसीके तिरोभावरसे अपरिच्छिन्न और निरञ्ज होवे हैं। क्या अन्त प्रपञ्च और क्या गह्य प्रपञ्च, सभी कुछ अज्ञानका विलाम है, इमोलिप इत सबको श्रान्तिका विवृम्भण कहा गया है।

“अस्ति भाति श्रिय रूप नाम चैत्यधपयसम्।

भायनय वृम्भण जगत्सुं वतो श्रयम् ॥’

शक्तिरूपी प्रह्याश्रित अज्ञानने प्रह्य रा प्रह्यका जगत्

देखा है। इमोलिप जगत् और प्रह्य अब विमिश्रित वा एक मालूम पडता है। यही कारण है, कि प्रत्येक दृश्य हो पञ्चरूपी दिग्गई देता है। जैसे, १ अस्ति—है, २ भाति—भासता वा प्रकाशित होता है, ३ श्रिय—अच्छा लगता है, ४ रूप—यह इस प्रकार है, ५ नाम—यह अमुक वस्तु है। इस प्रकार पञ्चरूपमें प्रथमोक तीन प्रकार प्रह्य और अश्रिय ओ प्रकार जगत् अर्थात् अज्ञान विकार है। अज्ञान विकार वा जगत् परमार्थतः मल्य नहीं है, इमलिए कहा जाता है, कि जगत् मिथ्या और प्रह्य सत्य है।

अज्ञानके समय अर्थान् ससार-दशामें ‘अह’ में, यह वृत्ति अस्थिर या अनिश्चतरूपमें उदित रहती है। ससार काटना अह ज्ञान एकाकार नहीं है इमोलिप यह अप्रमा अर्थात् मिथ्या है। त्रिनारता चाहिये, कि अज्ञान कालका अह कभी मन, कभी इन्द्रिय और कभी शरीरका आधार बना कर अनुसन्धान करता है। पूर्ण चैतन्यकी ओर अप्रसर नहीं होता। सुतरा ससार कालका अह ज्ञान अस्थिरता युक्त और सन्निवधकी तरह अप्रमा अर्थात् मिथ्या है। जननोके समाप्त हितामि लानिपी श्रुति तत्त्वमसि आदि महावाक्यके उपदेश द्वारा उस अप्रमा वा अज्ञानकी दूर करनेमें प्रवृत्त है। अरण करनेमें असफल होनेसे मनन करना चाहिये और मान में भी सफलता न होनेसे निदिध्यासन अनुसन्धान करना उचित है।

अरण, मनन और निदिध्यासनमें अधिकार प्राप्ति और बुद्धिकी दुबलता निवारणके लिए पहले चित्तपरि कर्मकारण उपसना आवश्यक है। शम, दम, उपरति, धृढता, समाधान आदि धेदोके अनुष्ठानमें रत रहनेसे चित्त निर्मल होता है। तभी श्रयणाणि कार्यमें अधिकार उत्पन्न होता है। मनन निदिध्यासनके प्रभावसे प्रति वन्धन अभाव प्राप्त होता है। प्रतिबन्धक अभाव प्राप्त होते ही अरणका फल ज्ञान (‘अह प्रह्य’ इत्याकार अनुभाव) अपनेसे ही उपन्न हो जाता है। इस प्रकार प्रह्यागत होते ही मुक्ति वा मोक्ष प्राप्त होता है। अज्ञाना-पाशकी मायामें मोहित हो कर सख्य सुखके लिये दुःख भोग रहा है। जीवके अज्ञानकी नष्ट करनेके

लिपि ब्राह्मणकी बहुत बड़ी आवश्यकता है और उसकी प्रातिके लिए तत्त्वमसि वाक्य श्रवण, मनन और निदिध्यासन नितात आवश्यक कर्त्तव्य है।

“वदान्तर्गत्यसिद्धान्तरात्मानं वदान्प्रभम्।

यद् ब्रह्म पर ज्योतिर्विस्तृप्तिर्यत्र चिन्तयेत्॥

पूर्वं ह्यङ्गोनि ब्रह्मी च ज्योतिरसं निधा स्थितम्॥” इत्यादि (गण्डपु० २४० अ०)

गण्डपुराणमें पूर्वोक्त धारयका ही समर्थन किया गया है, इसलिए यादृश्यके भयसे उसका उल्लेख नहीं किया जा सका। विशेष विवरणके लिए ब्रह्म और वेदान्त शब्द देवना चाहिए।

ब्रह्मज्ञानी (स० लि०) ब्रह्मज्ञान विघ्नतेऽस्य, ब्रह्म ज्ञान इति।

ब्रह्मज्ञान विशिष्ट, परमार्थ तत्त्वका बोध रखनेवाला।

ब्रह्मज्य (स० लि०) ब्राह्मणके ऊपर अत्याचार करने-वाला।

ब्रह्मज्येय (स० त्रि०) ब्राह्मणत्रिग्रह, ब्राह्मणके ऊपर हीरात्म्य।

ब्रह्मज्येष्ठ (स० पु०) १ ब्रह्माके ज्येष्ठ सहोदर। (त्रि०) २ ब्रह्मप्रधान।

ब्रह्मज्योतिस् (स० त्रि०) १ जिन। २ ब्रह्मा का देवता की ज्योति। (त्रि०) ३ ब्रह्मतेज, ब्रह्मयुति।

ब्रह्मणपति (स० पु०) ब्रह्मण पति अबलुक्ममाम। १ ब्राह्मण जाति स्वामी। २ मन्त्रस्वामी।

ब्रह्मण्य (स० पु०) ब्राह्मणे हित ब्रह्मन् (सन्ततमागतिवृत्तय ब्रह्मण्यश्च। १।१।०) इति यत् (येचाभाय कर्मणो। पा ६।४।१६८) इत्यण् प्रत्यया। १ विष्णु। २ ब्रह्मदाकृष्टश्च। ३ सुब्रह्मण। ४ तृत्वृक्ष। ५ शनिश्चर। ६ कार्तिकेय। ७ दुर्गा। ८ स्तोत्र। (त्रि०) ९ प्रभाविययमें साधु। १० ब्रह्मसम्बन्धी।

ब्रह्मण्यदेव (स० पु०) ह्यस्ये देव। शोधण्य।

ब्रह्मण्यता (स० त्रि०) ब्राह्मणस्य भाव तत् टाप्। ब्राह्मण का धर्म या भाव।

ब्रह्मण्यतीर्थ (स० पु०) आचार्यमेद।

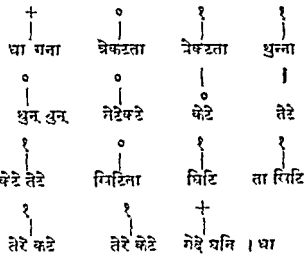
ब्रह्मता (स० त्रि०) ब्रह्मणो भाव तत् टाप्। ब्रह्मण्य।

ब्रह्मताल (स० पु०) १ चतुर्भुजाताल। यह दृग तातात्मक है। इसमें माताप ७ हैं, क च द त प इन पञ्चा-

क्षरोंके उच्चारणकाल मात्रा है। प्रथमलघुमात्रा, तद्वत् द्रुत मात्रा, उसमें ४ लघु और ६ द्रुत हैं। १०१०१००० ऐसी मात्राएँ हैं।

‘चतुर्भुजाभिः ताले जगणान्तरं ज्युतः।’ (ब्रह्मवेदान्त०)

चाद्यका ताल विशेष, बाजेका एक ताल। यह चौतह पदका ताल है। इसमें दृग ताल और चार गाली पड़ने हैं। जैसे—



ब्रह्मतीर्थ (स० त्रि०) ब्रह्मणस्तीर्थ। १ पुष्करभूल। २ रैवाके तट पर एक प्राचीन तीर्थ। इस तीर्थमें स्नान करनेमें अन्य वर्णको ब्रह्मण्य लाभ और ब्राह्मणको परमागति प्राप्त होती है। (भारत ३।३।१०५)

ब्रह्मनेजम् (स० त्रि०) १ ब्रह्मणिक। (त्रि०) ब्रह्मणस्तेज इव नेत्रो यस्य। २ ब्रह्मणो तरह तेज जाती।

ब्रह्मण्य (स० त्रि०) ब्रह्मणो भाव (तद्गुणस्त्व। पा ५।१।३६) इति त्व। १ शुद्धका भाव। २ ब्राह्मणत्व। ३ ब्रह्मा नामक ऋत्विक् हुनैका भाव या धर्म।

ब्रह्मण्यन् (स० पु०) १ सप्तपण्यृक्ष। २ ब्राह्मणवष्टिका, भारगी।

ब्रह्मद (स० पु०) ब्रह्मवेदं ददाति, दाय-। वेददाता वाचायै। उपवनयके बाद शुद्ध शिष्यको वेदप्रदान करते हैं। ब्रह्मदाता गुरु जन्मदाता पिताको अपेक्षा माननीय हैं।

“उत्पादक ब्रह्मदातोऽगरीयान् ब्रह्मदं विना। ब्रह्मजन्म हि निरस्यं मेव वेदं च शास्त्रात्॥” (मनु २। ब्रह्मदर्श १)

ब्रह्मण्यवष्टिका, भारगी। २ ब्रह्मण्यवष्टिका सिद्ध यष्टि। १ ब्रह्मण्यवष्टिका, भारगी। २ ब्रह्मण्यवष्टिका सिद्धयष्टि।

“विष्णुर्जन्म कर्मवचनं ब्रह्ममता। यत्र यत्नम्। एतेन ब्रह्मद्वयेन ब्रह्मणा नातिता मम॥”

३ ब्राह्मणका शापरूप दण्ड, ब्रह्मजाप। ४ विप्रकी यष्टि। ५ केतुमेद।

ब्रह्मदेशी (स० स्त्री०) ब्रह्मणे ब्रह्मोपासनाार्थं दण्डी क्षत्री दण्डः। जङ्गलोंमें मिलनेवाली एक जड़ी। इसकी पत्तियों और फलों पर काटे होते हैं। वैद्यकमें इसे गरम और कड़वी तथा कफ और वातनाशक माना गया है।

ब्रह्मदत्त (स० पु०) १ इक्ष्वाकुप्रणीय राजविशेष। इसका पर्याय ब्रह्मसूनु है। २ स्वनामख्यात नीपपुत्र। (त्रि०) ३ ब्रह्मकर्तृक दत्त, जो ब्रह्मने दिया गया हो। ४ ब्राह्मण को जो दिया गया हो। (पु०) ५ शुक्रदेवकी कन्या हन्वीसमाख्याके गर्भसे उत्पन्न अणुहके एक पुत्रका नाम। हरिवंशके ११ वें अध्यायमें इसका उत्पत्ति-विवरण लिखा है।

ब्रह्मदर्मा (स० स्त्री०) ब्रह्मणे हितो दर्भो यस्या। यमानिका, अन्नवाहन।

ब्रह्मदातृ (स० पु०) ब्रह्म-दा तृच। वेददाता आचार्य। ब्रह्मद वेणे।

ब्रह्मदान (स० क्री०) ब्रह्मण वेदम्य दान। वेददान, वेदाध्यापन। सभी दानोंमें वेददान उद्वेष्ट है।

ब्रह्मशक्र (स० क्री०) ब्रह्मणो ब्राह्मणस्य हितकरो दाक। १ स्वनामख्यात अश्वधाकार पृथ्वीविशेष, ग्रहनृत्त। पर्याय—नृत्, पूष, क्रमुक, ब्रह्मण्य, तूट, पलाजिक, तल, पूष, यूप।

ब्रह्मदाय (स० पु०) वेदका वह भाग जिसमें ब्रह्मका निरूपण हो।

ब्रह्मदेवा (स० स्त्री०) ब्रह्मणे देवा। ब्रह्मविधिके अनुसार देवा कन्या, ब्रह्मविवाहमें ही जायेवाली कन्या।

ब्रह्मदेश—भारतवर्षके पूर्वदिग्बर्त्तो प्रायद्वीपके अन्तगम वर्त्तमान अंगरेजाधिपत एक राज्य। भू-परिमाण २३७००० चगमोल है जिनमेंसे १६६००० ब्रिटिश राज्यके अधान और ६८००० बर्गमोल स्वतन्त्र राज्य है।

जब ब्रह्मशासियोंका उत्पात असह्य हो गया तब अंगरेजोंने ब्रह्मदेशके आक्रमणसे भारतसीमान्तकी रक्षाके

लिए १८२४ और १८५० ई०में दो युद्ध दिये जिनमें उन्हें ब्रह्मराज्यका कुछ अंश युद्धव्ययकी क्षतिपूर्तिमें मिला। वही इतिहासमें अंगरेजाधिपत ब्रह्म (British Burma) नामसे लिया है। शासनकार्यकी सुविधाके लिए अंगरेजोंने उस प्रदेशको चार विभाग और बीस जिलेमें बांट दिया। यान्द्रासू-सन्धिके बाद आराकान और तेनामरीम विभाग भी भारतसाम्राज्यके अन्तगत हुआ। उन्नीसवसे अष्टतीस वर्ष तक उक्त स्थानका शासनभार बङ्गालके छोटे लाटके ऊपर सौंपा गया। १८५३ ई०में पैगु और मात्तवान अंगरेजोंके अधिकारमें आया। १८६२ ई०में अंगरेजोंने उक्त चार प्रदेश एक साथ मिला दिये और सर अर्थर फेरी (Sir Arthur Phayre, The first Chief commissioner) को वहाका स्वतन्त्र शासनकर्त्ता बनाया।

वर्तमानमा पर आक्रमण करनेका समुचित दण्डस्वरूप दक्षिण ब्रह्म (Lower Burma) का कुछ अंश अंगरेजोंके हाथ सौंप कर सत्राट् आलीमपयाके बसधर उच्चप्रहल (Upper Burma) की ओर चले गए और आज नगरमें राजधानी बसा कर रानकार्य चलाने लगे। राजाधीन-चेता ब्रह्मराजके उद्धत राजभारको रोकने और उनके अनुचरवर्ग द्वारा अंगरेजीप्रता जो सताई जाती थी उसे निवारण करनेके लिये भारराजप्रतिनिधि लाट् स्फरितने १७८५ ई०के शेष भागमें मन्दालयकी ओर एक दल सेना भेजी। इस सेनादलने वहा जा कर राजसिंहासन छीन लिया और ब्रह्मराजको नगरबन्ध कर भारतवर्ष भेज दिया। वडे लाटने पहले मन्त्रिसभा (Central Council of Burmese Ministers) द्वारा वहाके राजकार्यकी देख-भाल करनेका विचार किया था, किंतु कुछ मन्त्रिदलके घुरे व्यवहार और जालराजपुत्रोंके सिंहासन पर अधिकार जमानेकी चेष्टाके हेतु युद्धनिग्रहसे उक्तता कर उन्होंने १८८६ ई०में मारा ब्रह्मसाम्राज्य अंगरेज शासनाधीन कर लिया। पहले प्रधान कमिश्नर द्वारा ही रानकार्य परिचालित होता था। अन्तमें मारे ब्रह्मके प्रधान शासनकर्त्ता स्वरूप एव टेफ्टेनेट गयनर नियुक्त हुए हैं।

स्वाधीन ब्रह्मराज्य जब अंगरेजोंके अधिकारमें आया

० यूरोपीय भोगालिनीन इल Eastern rennival : या India beyond the Ganges नामक उल्लेख किया है।

तब उसकी सोमा परिवर्तित हुई। पहले प्रह्लादात्म्यको जो सोमा थी, अगरेज सरकार जब भी उसी विस्तीर्ण साम्राज्यका शासन करती है। यह अक्षां ६ ५६' से २७ २०' उ० तथा देशां ६२ ११' से १०१ ६' पू० के मध्य अवस्थित है।

अगरेजोंके हाथमें आनेके बाद प्रह्लादात्म्यमें किसी किसी देशी गिरफ्तारी अत्यन्तिके साथ साथ नाना विषयकी उचित भी हुई है। यद्यपि यह राज्य स्वाधीन था, तो भी यहाँ की प्रजा सुव्यवस्थामें एक दिन भी न बिताती थी। धोरी करना, दूमरेका धन छीन लेना, घर जला देना, जोंवोंकी मारना आदि अनेक प्रकारके तुरे काम यहाँके अविवास्मियोंका अङ्गभूषण था। विन्तु अगरेजों शासनमें सभी प्रकारके अत्याचार जाते रहे।

यह देश पथरीला होनेके कारण यहाँ सालचीन नदी की अत्यधिक प्रदेशमें घाग, चना, मरई, गेहूँ, फलार्ई, तम्बाकू, रुई, सरसों और नोल आदिकी अच्छी पैती होती है। इसके अलावा जह्मवासीका अत्यन्त प्रिय चायका पौधा (Theodandron persicum) और आमरूढ़, केला, पपीता, इमली, नींबू, नारङ्गों आदि नाना-जातिके फलवृक्ष भी यहाँ पाये जाते हैं। उत्तर प्रह्लमें इरावती नदीको केंद्र ठेके, मितुके और शैले आदि शाखाएँ बढ़ती हैं। नाम कये नामक नदी मणिपुर और तुमाइ गिरिमालाक बीच हो कर बढ़ती हुई केंद्रठेके नदीमें मिल गई है। इसके निचा बहुत-सी नदियाँ इरावती सालचीन और थालचीन नदीका कलेवर बढ़ाती हुई भारतमहामागमें गिरती हैं।

यहाँके जङ्गलमें बहुत से जाल और वेगुनके पेड़ हैं तथा बडिया छाह और खरका गोंदभी पाया जाता है। ये सब द्रव्य चाण्डकके लिए उत्तर और दक्षिण प्रह्लासे रङ्गण बन्दरमें ला कर नाना स्थानोंमें बेचे जाते हैं।

यह राज्य गनिप पदार्थका आगर है। यहाँ सोना, चांदी, तांबा, टांग, मासा, रमाजन, यिस्माथ, एम्बर, कोयला, गिलगैल (Pecolium), गंधक, मोडा, नमक, लोहा, मर्मर पत्थर आदि पाये जाते हैं। इसके अलावा मन्थालके ३५ कोस उत्तर पूर्वमें बडिया और वेगकोमती नदी तथा चुन्ती पत्थर पृथिवीमें गडा हुआ गिलता

है। इस विस्तीर्ण भूभागमें निकाली हुई प्रन्तरराजि राजकोयमें ही रचो जाती हैं। यहाँका चूना पत्थर सब देशोंम प्रसिद्ध है।

नाफ नदीके मुहानेसे ले कर नैग्रोम अन्तरीप तक आराका विभाग विस्तृत है। इसके उत्तर और पूव सोमास्थित आराकानयोम, पर्यंतमालाके अथङ्ग गिरिसङ्घट हो कर इरावतीकी उपत्यकाभूमिमें जा सगने हैं। समुद्रीपङ्कलमें कई एक छोटे छोटे द्वीप हैं, उनमेंसे चेयूदा और रामरी ही प्रधान हैं। ये सब उपजाऊ हैं। नाफ नदीके सिवा यहाँ मयु कुलवन, तत्क और अथङ्ग, आदि कई पर नदियाँ हैं। कुलवन या आराकान नदीके दक्षिण कूट पर आकायाय नगर बसा हुआ है। विन्तु पेगु और इरावती विभाग ही विशेष अत्युत्पन्न हैं। यहाँ इरावती, छेङ्ग या रगुन, पेगु और सिचोङ्ग आदि नदियाँ बढ़ती हैं। यही कारण है, कि उनके अत्यधिक प्रदेश बहुत उपजाऊ हैं। लगभग १०४० मील पार कर इरावती नदी यङ्गोपसागरमें मिलती है। इस नदीमें ६०० माल तरु नाव आ जा सकती है।

समुद्रीपङ्कल स्थित तेनासरीम विभाग अक्षां १० से १८ उत्तरके मध्य बसा है। यहाँकी प्रधान नदी है सालचीन। यह नदी रहाने निकली है, इसका आन तक भी पता नहीं लगा है, विन्तु युगा प्रदेशके समीप ही इसका गच्छोत अनुभव किया जाता है। इस विभागकी पूवसीमामें नो पर्वतमाग दिवारि पड़ती है, वह पौङ्ग लौङ्ग पर्वतमाग है। इसी पर्वतमालासे प्रह्ल और श्यामराज्य पृथक् होता है।

राज्यमें प्रधानत तीन गिरिप्रेणी देखी जाती हैं। इसका सर्वप्रथम भागकानयोमा पर्वत धामाम प्रदेश की नागागिरिमालासे उठ कर नैग्रिम अन्तरीपमें आ मिला है। इसकी अन्तिम शाखा पर 'हाथेन' नामक पागोदा (मन्दिर) अवस्थित है और बीचमें पेगुयोमा गिरिमाला है। इरावती और सिचोङ्ग उपत्यकाभूमिके मध्य अवस्थित रहनेमें यह उन दोनों नदीके अववाहिका प्रदेशकी विभक्त करती है। यह पर्वतमाग उत्तर प्राची भेमेधिर गिरिप्रेणीके मागुदेगसे ले कर दक्षिणकी ओर इरावतीके डेन्टा तक फैल गई है। यहाँ एक पर्वत

शिखर पर बृहन्नारायण विष्णुवात दीव्यतीर्थ शैवमगो मन्दिर अवस्थित है। पीनूनीनू नामक गिरिमाला मित्तीनू और साङ्गीत उग्रवक्राके बीच विस्तृत है। तीर्थ-शु प्रवेशके मन्दिपट इम्फा पत्र शिखर ६ हजार फीटने भी अपिउ ऊँचा है ।

यहा कई छोटे छोटे हट भी ननर आने हैं, उनमेंसे र गूनके निरुटरतों कन्दर्ग, दानजादा जिलेका 'नू' नामक हट और वेमिन जिलेके दो हट उन्गयोग्य हैं। पेशु और मित्तीनू तथा र गन और इराजतोंके मिलाने चाले दो खाई वाणिज्य तथा क्रयिनाय की विशेष उप कारी है ।

पश्चिमा महादेशके दक्षिण भागमें तीन प्रायद्वीप समुद्रमें घुस गये हैं। अरब और भारतपके माध प्राचीन जगत्को ऐतिहासिक घटनाएँ जैसी मिलती जुलती है, इस ब्रह्मदेशका वैसे कोई ऐतिहासिक वैभव नहीं है। विद्यो नति, धर्म या वाणिज्य विस्तारका कोई प्रसङ्ग ही नहीं देखा जाता है। महाभारतके समापत्रम 'शर्मक' और 'वर्मक' नामक दो देशोंका उल्लेख है। कोई कोई इन्ही दोनोंको यथाक्रम श्याम और ब्रह्मदेश बतलाते हैं। महाभारतके समय यह स्थान तिरात और भगदत्त के अधिकारभूत था। भारतपमें आर्यदि तुर्कोंका उप निवेश स्थापित होनेके बाद जो वाणिज्य प्रभाव पूर्वमें धोन और पश्चिममें इजिप्ट आदि स्थानोंमें फैला हुआ था, यह प्रदाराज्य तक नहीं जा सका, यह फौन कह सकता है ? फेरल टलेमीके भूगोलनूनामने इस स्थान का *Theroncesus* अर्थात् सुवर्णभूमि नाम पाया जाता है।

पूर्वोक्त दोनों प्रायद्वीपको तरह अब भी धीरे धीरे धर्मप्रभाव विस्तृत हुआ था, किन्तु बड़े दु स्वकी बात है, कि उस भगद्योतमें पड कर भी अधिशासमाण धानन्द लाम न कर सके। अहिंसाको महिमा प्राप्त न कर सङ्केके कारण उद्योग प्रतिहिंसाके विपने जन्मित हो कर अपनी वास्तभूमि स्वयंत्रमें परिणत की थी। परस्पर की उन्नतिले इर्गान्धित हो कर उन्होंने पार्श्वघर्षों राज्य गार्भमें मिला दिया ।

अनूरेमोंके अ न अपने अधिकारमें

त्रिया था, उसमें आराजान, थरजुन, मार्त्ताया और पेगु ने ही चार राज्य थे। इन्हीं चार राज्योंके इतिहासमें जाना जाता है, कि यहाके राजा अपनेको भारतीय हिन्दुवजो रूप बतलाते थे। उनका धर्म और शासप्रथ भारत-वर्षसे हा लाया गया था, इसमें सन्देह नहीं। एक समय जो ग्हा भारतीय सम्राट हुआ था, उसका प्रमाण टलेमी लिखित 'इरावती नदीके उन्ना घराजतों' स्थान समुद्रकी भौगोलिक तालिफामे मिलता है। किसी तरह का प्राचीन इतिहास न मिलने पर भी रगुन और रामश-देशमें इधर उधर पडी हुई जो म्ब बहुप्राचीन वीत्तिमसुह आपिरट्टन हुए हैं, उनसे भी भारतीय हिन्दुका ब्रह्मदेश जाना सूचित होता है ।

आराजानके ब्रह्मराजका इतिहास पढ़नेमें जाना जाता है, कि गांतपुङ्कने बहुत पहले एक वाराणसी राजपुवने आराजान आ कर वर्त्तमान सान्दारपके निरुट रामा-यती नगरमें राजधानी बसाई थी। वे प्रति वर्ष वारा-णसीराजको कर देते थे। इसी प्रकार कुछ दिन चीत जाने पर वाराणसी राज शेरवजतो (निन्दोंने दूसरे जन्म म गीतमपुङ्कुरूपमें जन्म लिया था) अपने चतुर्थ पुत्र फनिनके ऊपर ब्रह्मराज्यका शासन भार सौंप गए। उक्त राजपुवने ब्रह्म, श्याम और मलयसामियोंके ऊपर अपना आधिपत्य जमाया था। उनके राज्यकी उत्तर नीमा मणिपुरसे ले कर चीत तक फैली हुई थी। फनिन अपने राज्यमें बहुत सी अनम्य जातियोंको बसा गए थे। इस गत्यको कोई सत्यता न रहती पर भी इसके द्वारा ब्रह्ममें भारतीय स अर और बौद्धधर्मके प्रवेशलाभके

Dr Iorchhammer और Major R C Temple हा शर्मे मरौदयके भुगुण्यनम ब्रह्मदेशक प्रव्रतत्वका रूनदार उदाहित हुआ है ।

प्रसक प्राचीन एतिहासिकयथा यहाँ बने भारी भ्रममें पड़े थे। शासनपमें गीतम पुङ्कका जन्म और उनका दूसरा नाम शासगिरि दानक कारण उन्होंने शास्य (श्रेयस्वती)के सुद-जन्मत्वकी कल्पना की है। वे तिर गीतगोपुप शास्यरा पुत्रत्व क्षामक कारण गामावर स्थापार करते हैं ।

मित्रा और किसी विपक्षी सूचना नहीं मिलती।

आराकानके प्रचलित प्रवादके ऊपर निर्भर करनेसे पता लगता है, कि किसी एक समयमें भारतीय हिंदू और बौद्धगण इस देशमें आये थे। फिर पूर्वाञ्चलसे भी प्रतीति यहा आ कर उपनिवेश स्थापित किया था। उस अधिनिवेशिक दलके कोई भी आदिम अधिवासियोंके विरुद्धाचारी न हुए। इसके बाद बौद्धधर्मके प्रचाराय शाक्यधर्मीय एक राजा यहा आ कर राज्य करते थे। इन्हीके वंशधर २६वें राजाके समयमें ( १४६ ई०में ) यहा बौद्धधर्मका पूर्णरूपसे प्रचार हुआ था।

उस समय और उसके परवर्तीकालमें प्रलोक विभिन्न प्रदेश कम्बोजके राजाओंके अधिभारमें थे, उनमेंसे कोई शीघ्र, कोई वैश्वय और कोई वैश्य थे। कम्बोज देनी।

६वीं शताब्दीके प्रारम्भमें मुसलमान चणिक आराकान उपकूलमें आये। इसी वर्ष आराकानराज चङ्गविजय करने गये और चट्टग्राममें उन्होंने एक कीर्त्तिस्तम्भ स्थापित किया। १०वीं शताब्दीमें प्रेमराजने आराकान पर चढाई की; उस समय वहाजी राजधानी प्रोहोङ्ग नगरमें स्थापित हुई थी। उसके बाद पांच सौ वर्ष तक यहा पर प्रह्ल, ज्ञान, तैलङ्ग और प्यूस आदि विभिन्न जानिने चढाई की।

बोधगयामें प्राप्त १२वीं शताब्दीकी जिलालिखिसे जाना जाता है, कि पगानराजने चङ्गल पर आक्रमण किया। दिनाजपुरके राजमहलमें जो प्राचीन जिला लिपि हैं, उसमें यहाके कम्बोजराज द्वारा शिवमन्दिर-प्रतिष्ठाकी कथा लिखी है। सम्भवत वे ही पगानराज होंगे। ११३३ से १५५३ ई० तक बङ्ग, पेशु, पगान और श्याम आदि प्रदेशके राजाओंने आराकानराज गव ल्यकी अधीनता स्वीकार की थी। गजलयके कीर्त्तिस्तम्भ महती मन्दिरके १८२५ ई०में बङ्गरेजीसेनाने तहस नहस कर दिया। इसके एक सौ वर्ष बाद ज्ञान और तैलङ्ग जातिके उपर्युपरि आक्रमणसे यह स्थान विध्वस्तप्राय हो गया। अन्तमें १२६४ ई०की राजा मित्ति विपक्षियोंकी भगा

क अपने राज्यका उदार किया और पगान तथा पेशु राज्य जीत कर उसकी सीमा बढा दी। बाद उनके वंशधरोंने लगभग १४०४ ई० तक राज्य किया। उसी वर्ष राजा मिनसव मूलके अत्याचारने तग आ कर सब प्रजा विगड गई जिसमें वे राज्य छोड़ कर भाग गये। और बङ्गालके मुसलमान राजाओंकी शरणमें पहुचे। कुछ दिन बाद वे मुसलमानोंकी सहायतासे पुनः अपने राज्य पर प्रतिष्ठित हुए। उसी समयसे आराकानो मुद्रा पर मित्रन पारसो और नागरी अक्षरमें नामादि लिखे रहने लगे।

विद्रोही प्रनादलने आराकानकी शरण ली। आराकानने वहा १४३० ई० तक राज्यशासन किया। उसके बाद आराकानराज्यमें उन्ल्लेखयोग्य कोई घटना न घटी। १६वीं शताब्दीके आरम्भमें पूर्वकी ओरने प्रलयासी और समुद्रपथसे पुर्तगाल जलदस्त्रुने आराकान पर आक्रमण किया। पुर्तगालोंके उपद्रवसे प्रोहोङ्ग (प्राचीन आराकान) नगरकी रक्षा करनेके लिए १५३१ ई०में १८ फीट ऊंचे पत्थरके दीवार बनाई गई थी। १५७३ ई०में उसके चारों ओर खाई खोदी गई। उसी समयसे आराकानकी विशेष उपयोगी हो रहते थे। १५६०ने १५७० ई०के बीच उन्होंने चट्टग्राम जीत कर वहाँ पर शासन करना शुरू कर दिया और आराकान-राजपुत्र उस समय वहाके राजा हुए। धीरे धीरे मुगलसाम्राज्यके प्रतिद्वन्द्वी होनेकी इच्छासे उन्होंने पुर्तगाल दस्त्रुदलके अपने राज्यमें गुलाबा और मसुद्रोपकूलमें उनका वासस्थान नियुक्त कर दिया। चट्टग्राम ही उन्हीं दस्त्रुताका प्रधान केन्द्रस्थल था। यहा उन्हीं मुगलरणतरीकी दोनों ओर घड़े रह कर रणनिपुणताका परिचय दिया था और बारबार जयतामसे उत्प्लुष्ट हो कर आध्ययदाता आराकान-राजकी अधीनता तोड़ दी। १६०५ ई०में उदतम्बगवा पुर्तगालोंकी

• उस समय आराकानवासीन दक्षिण पूर्ण बङ्गालकी ओर भ्रमण हो कर धनारवागके बङ्गाल राजा राजेश्वर गवण किया था।

• आराकानमें प्रचलित राजविषयदिन १०वीं शताब्दीकी भारतीय पुनः पाई गई है।

घट्टनाममें पृथक् रूपसे शासनविस्तार करते हुए देख कर आराकानपति फ़ूद्ध हुए और १६०६ ई०में उनको घहामे भगा दिया। विशेष विवरण पुर्नगोन शब्दमें द्यो।

१५वीं शताब्दीके प्रारम्भसे १८वींके शेषभाग तक इस देशके इतिहासमें केवल युद्धके सिवा और निसा विशेष घटनाका उल्लेख नहीं देया जाता। इसके अन्तर्गत जएडराज्य परतंत्रित होने पर भी प्रह्ल और तैलङ्गके अधिवासियोंने यथाक्रम यहाका राजासन अग्रि कार किया था। १६वां शताब्दीके अन्तमें आजा और पेगु राजाओंके बीच घोरतर सभ्राम हुआ। इधर आरा कानपतिने उद्गाधिपतिको हीनार देव कर मेगाता नये तक्षका रथान अपने दुखलमें कर लिया। तौङ्ग-गुके शासन कर्त्ताकी सहायतासे उनके पुत्रने भी पेगुराजके विरुद्धा चारी हो कर उक्त प्रदेश अधिारमें रखनेकी इच्छासे अपने पुर्नगोज कर्मचारी निकोटी (Hulip de Britov Nuote) के ऊपर भार सौंप दिया। निकोटीने इस प्रकार पदोन्नतिसे उद्भूत हो राजगुग्रह उक्रेण कर लग भग १३ वर्ष तक अपने हाथबलसे उहाका राज्यशासन किया। अ तमें आवापतिने १६१३ ई०में उनको रणक्षेत्र में मार कर इस प्रदेश पर पुन अधिार जमाया।

१८वीं शताब्दीके मध्यभागम राजा आलीङ्गरया (अनोभ्या) के अशुद्धकालमें प्रह्लराज्य पक्क्य हुआ था। उसी समय आराकानराज्य अतन्त्रितगो विद लित होनेपर १७०४ ई०में राजपुत्र वादव पयागे उसे आवा साम्राज्यमें मिला लिया। इसी युद्धसे यथार्थमें यद्गमीमान्तमें प्रलयासियोंका पदार्पण हुआ। अङ्गरेजराजने उनके अनधिकार प्रदेशसे उच्यत हो कर १८२४ ई०में युद्धघोषणा कर दो बाद १८२६ ई०में यान्दाउको सन्धि के अनुसार अङ्गरेजोंकी आराकान और तेनासेरोम प्रदेश हातिपूरण-स्वरूप मिला।

धातुन, पेगु और मात्तावन आदि जगपद तैलङ्ग

● प्रथमपक्षी वर्षिपरने क्रिया है, कि १७वीं शताब्दीमें यह स्थाप अथवाहृदय यूसुधिभनोंके द्वारा पूर्ण हुआ था। निकोटीके बाद रिशादिकन गज्रातिपणे रनदोपमें पुर्नगोज प्रभाव फैलाया था।

(मुन) ६ के अधिारमें थे। प्रथयासिगण तैलङ्ग राज्यको रामन्न या रमनिया कहते थे। मूष्टजन्मके यहुन पदके भारतीय औपनिवेशिनोंके द्वारा धातुन नगर स्थापित हुआ। यहाका ध्वन्नायशेव अब भी प्राचीनत्वका परिचय देता है। यह नगर समुद्रसे पाच कोम दूर नदीके किनारे बसा हुआ है। नदीके मुह पर पङ्क जम जानेसे यहाके याणिज्यका हास हो गया और नगर श्राहीन हो कर १७ समें परिणत हुआ। यहाका प्रह्ल इतिहास नहीं मिलने पर भी बौद्ध इति हाससे पता लगता है, कि इस्वी सन् ३०० वर्ष पहले महाबोधिसङ्गके समय धातुन नगर (सुवर्णभूमि) में दो धर्मप्रचारक भेजे गये थे। ४०३ ई०में सिहलसे बुद्ध घोष यहा बौद्धग्रन्थादि लाये थे। ११वीं शताब्दी तक यह नगर विशेष समृद्धिसम्पन्न था। इसके बाद पगान सम्राट् अनव्रतने इसे ध्वंस कर दिया। राजेतिहाससे जाना जाता है, कि यहा ५६ राजाओंने प्राय १६८३ वर्ष तक राज्य किया था।

प्रसार है, कि धातुनने भारतनामी ५७३ ई०में पेगु नगर आ कर रहने लगे। उन्होंने ही पेगुमें राजधानी स्थापित की। इसके तीन वर्ष बाद मात्तावन नगर बसाया गया। रामन्न देशवासी उस समय उन्नतिको चरम सीमा पर चढे हुए थे और रामन्नका आद्यतन घेसिन तक फैल गया था। मार्त्तावन राजव शके १७३ राजा तियने दूमरा धर्म ग्रहण किया। उसी समयसे देगीय राजव जग्य लोप हुआ। अनव्रतविजय (लगभग १०५० ई०) के बाद पेगु समृद्धिगाली हो उठा।

मार्त्तावानके समोप तन्त्रगुन्निवासी मगदू नामक एक व्यक्तिने जिद्रोही डलमें मिल कर पेगु और मार्त्तावान नगर जीता। उनके विरुद्ध पगानने प्रेरित मुसलमान सेनाको हरा कर उन्होंने धोरे धोरे सारा तैलङ्गराज्य

● ये मद्रस्ताविका एक विन्टि जाया हैं। इनकी बोली यहूत उच्च कम्मान और आवासी भाषात मिश्रती सुनती है।

† दक्षिण भारतके वरमपहल उपरुज्जत भारतवासी बुद्धुदा गए। कम्बोज भादि राज्यके साथ भारतीय संतन पुराण्यदिस चला जाता है।



प्रायश्चित्तके अधिवासो नाधारणतः कठोर परिश्रमो और शिथिल नियुक्त होते हैं। नौका और गृहादिका निर्माण तथा निर्माणनैपुण्यपूर्ण धर्मप्रदान उनके अत्युत्कृष्ट निदर्शन हैं। शिल्पकार्यमें प्रलोकके कोमल स्वभावका परिचय मिलता है मदी, किंतु अत्यन्त सामान्य कारणसे ही वे प्रसूत हो जाते हैं। मनुष्य जीवनके प्रति उन्हें तनित्र भी दया नहीं है। छोटी छोटी सी बातके लिये भी वे नरहत्या कर डालते हैं—यहां तक कि किसी दिन घ्यञ्ज नादिर खराब होनेसे वे अपना प्रियतमा स्त्रीका प्राणनाश करनेमें भी कुण्ठित नहीं होते। वरयुष्मिन् तथा अत्याचार व्यभिचार इनके जीवनका एक पौष्टिक जनक कार्क हैं।

यदाकी स्त्रिया परदानगोन नहीं होतीं—वे स्त्रजन्तु से इधर उधर घूम सकती हैं। बाजारसे द्रव्य आदि पसीदा, घरका कामकाज करना, पण्यद्रव्य बेचना और रेशमी कपडा बुनना इत्यादि प्रधान कर्म हैं। विवाहसे पहले बालिकागण बाजारमें शल्लूलादि बेच कर जो लाभ उठाती हैं। उसीसे वे अपना घरालङ्कार बनाती हैं।

ब्रह्मदेशमें जो सम्भन्ध प्रचलित है वह ६३६ ई०के अमिल (वैशाख) से आरम्भ हुआ है। २६ या ३० दिनका चान्द्रमास रूप बारह महीनेका वर्ष होता है। प्रति मासके शुक्र या रवण पक्षमें मासगणना होती है। दिन रात आठ घण्टेके अर्धान् दिन और रात प्रति तीन घण्टेके अन्तर विभक्त है। उस समय एक एक बार घण्टेकी ध्यायन होती है।

पहले ही लिया जा चुका है, कि ब्रह्मकी भाषामें भौक पालि और अपव्रज संस्कृत शब्दका प्रयोग है। ब्रह्मभाषाका प्रत्येक शब्द ही भारतीय वर्णमालासे लिया गया है। इनके काव्यविभागको जब तक विशेष ध्यान देना न की जाय, तब तक उसे समझना असम्भव है।

● संस्कृत शब्दका ब्रह्मभाषामें परिवर्तन अन्तः (अन्तः) अभिन्न (निर्गुण), चक्र (चक्र), द्वय (द्वय), क्व (कव) रूपि (रुपि) आदि है।

१०६५ ई०की १५वीं फरवरीका कथम् गवध (Michael Gove) नामक विद्वान् ने यह प्रमाण देकर कहा है कि ब्रह्मदेश के लोग

प्रायश्चित्तस्थित समी मठमें तालपत्र और बाँससे बनाए हुए कामज पर लिखी हुई पोथी गजर आती है। यज्ञ, पशु, भ्रम आदिका निरन्तर उनका चन्दन दाने।

पशुका शिथिलपशु पागोदा ब्रह्मका एक प्रधान और विख्यात मन्दिर है। रङ्गून नगरके समीप शिल्पघामोल मन्दिर भी बहुत सुन्दर है। पर्यतके शिगर पर अत्यन्त होतसे यह स्थान दूर देशवासीकी भी दृष्टि आकर्षण करता है और इसकी स्वर्णचूडा स्वर्णकी किरणोंमें विभाजित हो कर चारों ओर प्रकाश फैलाती है। मन्दिर घाटिका और चतुर्दिक्स्थ सौधमाला देवकीसिंकी अपूर्ण गोभा बढ़ाती है। नगरमें मन्दिरमें आनेका जो गस्ता है, उसके स्थान स्थान पर गौतम बुद्धकी प्रतिमूर्ति परिगोमित है। अमरावतीका राजप्रासाद भी शिल्पनैपुण्यमें कम नहीं है।

ब्रह्मवासिगण उत्सव वडे ही पक्षपाती हैं। प्राय प्रति सप्ताहमें एक महोत्सव हुआ करता है। धनी मनुष्य के दाह कार्य, युवकोंके राहान (अर्हन् पुरोहित) दोहामें ये लोग बहुत लचक करते हैं। ८५० वर्ष तक शाक मठप्रदेशके अधिकारी हैं।

ब्रह्मद्वैत्य (२० पु०) ब्रह्मा ब्रह्मणरूपो द्वैत्य। प्रेतयोनि प्राप्त प्राण, यह ब्राह्मण जो मर कर प्रेतयोनि पाता है। ब्रह्मद्वैत्य (२० पु०) ब्रह्म हत्या, ब्राह्मणकी मारनेका दोष। ब्रह्मद्वैत्य (२० वि०) यह जिसे ब्रह्महत्या लगी है। ब्रह्मद्वैत्य (२० पु०) गङ्गा जन्म। ब्रह्मद्वैत्य (२० पु०) पण्य, देव। ब्रह्मद्वैत्य (२० वि०) ब्राह्मणोंमें से रत्नोपाय। ब्रह्मद्वैत्य (२० वि०) ब्रह्ममातृका पन्ध, गोपद्वैत्य की माता हुआ यह उद निम्नसे योगियोंके प्राण निकलते हैं। ब्रह्मद्वैत्य (२० वि०) ब्रह्मण वेद्य विप्राय न दृष्टि दिव्य

कर करूँगे। यदा यदा प्रायश्चित्त उदाहा प्रायश्चित्त की। उदाहा अन्तः मात्तं प्रायश्चित्त उदाहा प्रायश्चित्त की। उदाहा अन्तः मात्तं प्रायश्चित्त उदाहा प्रायश्चित्त की।

विष्। वेद और ब्राह्मणद्वेषक, जो वेद और ब्राह्मणकी  
हिंसा करता हो।

ब्रह्मधर ( स० झी० ) ब्रह्मज्ञानसम्पन्न।

ब्रह्मधातु ( स० पु० ) १ ब्रह्मरूप धातु। २ रुद्र।

ब्रह्मण—ब्रह्म देतो।

ब्रह्मनाम ( स० पु० ) ब्रह्म नामी यस्य। विष्णु।

ब्रह्मनाल ( स० झी० ) ब्रह्मणो ब्रह्मलोकप्राप्तौ नालमिष।

काशीधामके मणिकर्णिका समोपस्थ तीर्थत्रिशोष।

“वितामहेश्वर सिंग ब्रह्मालोपरिस्थितम्।

पूजयित्वा नरो भक्त्या ब्रह्मलोकमनापनुयात् ॥”

( काशीख० ६१ अ० )

ब्रह्मनालके ऊपर महेश्वर लिङ्ग स्थापित हैं। इस  
लिङ्गको पूजा करनेसे ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। इस  
तीर्थमें शुभाशुभ जो कर्म किया जाता है, वह अक्षय  
होता है। काशीपण्डके ६१वें अध्यायमें त्रिशोष विवरण  
लिखा है, विस्तार हो जानेके भयसे यहा कुल नहीं दिया  
गया।

ब्रह्मनिर्वाण ( स० झी० ) ब्रह्मणि परब्रह्मो निर्वाण ल्य।  
ब्रह्ममें निवृत्त, परब्रह्ममें ल्य प्राप्त होना ही ब्रह्मनिर्वाण  
है। अध्यायके विलकुल दूर होनेसे ही ब्रह्मनिर्वाण  
होता है।

“एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ ! तैनां प्राण्य विमुक्तयि।

स्थित्वास्वामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमुच्छति ॥”

( गीता १७२ )

जो समस्त पासा-सर्भोंका नि शेषरूपसे परित्याग  
कर धाकिर जीवनके ऊपर भी निरपृह हो अहं मदी  
यस्यभावको विसर्जन करते हुए विचरण करते हैं, उन्हीको  
निर्वाणमुक्ति होती है। इस अवस्थाको ब्रह्मसम्प्यान कहते  
हैं। यह ब्रह्मस रथा या ब्राह्मीस्थिति प्राप्त होनेसे ही जीव  
पुनर्बार मुग्ध नहीं हो सकता। जीवकी शेष दशामें भी  
यदि जीव ऐसी ब्रह्मनिष्ठामें रत रहे, तो भी वह ब्रह्ममें  
हो चिलीन हो जाता है। इसीका नाम ब्रह्मनिर्वाण है।

ब्रह्मनिष्ठ ( स० पु० ) १ पारिगपिप्पल, पारिस पीपल।

( वि० ) २ ब्राह्मणभवत्। ३ ब्रह्मज्ञानसम्पन्न।

ब्रह्मनीड ( स० झी० ) ब्रह्मका अवस्थित-स्थान।

ब्रह्मनुत्त ( स० झी० ) मन्त्रबन्धसे अपसारित।

ब्रह्मपति ( स० पु० ) १ बृहस्पति। २ ब्रह्मणस्पति।

ब्रह्मपत्र ( स० झी० ) ब्रह्मणस्तदाप्यया प्रसिद्धस्य वृक्षस्य  
पत्र। पलाश पत्र, पलासना पत्ता।

ब्रह्मपत्रो ( स० खी० ) वाराही नामक महाबन्ध शाक।

ब्रह्मपथ ( स० झी० ) ब्रह्म प्राप्तिकर पन्थ।

ब्रह्मपद ( स० पु० ) १ ब्रह्मका ध्यान। ( झी० ) २ ब्रह्मन्व।  
३ ब्राह्मणत्व।

ब्रह्मपन्नग ( स० पु० ) मरुत्मेद।

ब्रह्मपर्णो ( स० रती० ) ब्रह्मो विस्तीर्णानि धामूर्त्तं  
स्थितानि पर्णानि यस्या। पृथिनपर्णो, पिठवन नामकी  
लता।

ब्रह्मपर्णत ( स० झी० ) पयतमेद।

ब्रह्मपलाश ( स० पु० ) अथर्ववेदकी एक शाका।

ब्रह्मपत्रि ( स० पु० ) ब्रह्मणि वेदोक्तकर्मणि पयित्। कुश।

ब्रह्मपादप ( स० पु० ) ब्रह्म तदाप्यया प्रसिद्धा पादप।  
पलाश वृक्ष।

ब्रह्मपार्षध ( स० पु० ) वृक्ष विशेष, ब्रह्मपर्णो। २ पौद्धके  
मतसे ब्रह्माका परिचारक यग।

ब्रह्मपाश ( स० पु० ) ब्रह्मवृत्त अस्तविशेष, ब्रह्मका दिया  
दुधा पाश नामक अस्त्र। पाश या फंदेका प्रयोग प्राचीन  
कालमें युद्धमें होता था।

ब्रह्मपिशान्च ( स० पु० ) ब्रह्मराक्षस।

ब्रह्मपुत्र—अन्वय्य चर्म देतो।

ब्रह्मपुत्री ( स० खी० ) ब्रह्मण पुत्री कन्या। १ सरस्वती  
नदी। २ सरस्वती। ३ वाराहीबन्ध।

ब्रह्मपुर ( स० झी० ) ब्रह्मणः पुर। १ ब्रह्मके अनुभवका  
स्थान, हृदय। २ ब्रह्मलोक। ३ इंजानकोणमें स्थित  
एक देग।

ब्रह्मपुराण ( स० झी० ) वेदव्यास प्रणीत महापुराणमेव।  
पुराणोंमें इसका नाम पहले आनेसे कुछ लोग इसे ब्यादि  
पुराण भी कहते हैं। विशेष विवरण पुराण रुद्रमें देतो।

ब्रह्मपुरो—१ मध्यप्रदेशके चन्द्रा विडान्तगंत एक तह-  
सील। भू-परिमाण ३३२। धर्ममौल है।

२ उक्त जिलेका एक नगर और ब्रह्मपुरि तहसीलका  
नगर। यह एक पर्वतके ऊपर स्थापित है। इसके  
सर्पोय स्थान पर एक प्राचीन दुर्ग अवस्थित था। अभी

यदा विद्यायाऽय, विद्यालय और पुलिस्तायास बनाया गया है। यदा बटिया सूतीके कपड़े तथा पीतल और ताबेके बरतन तैयार होते हैं।

ब्रह्मपुरी (स० खी०) ब्रह्मण पुरी । १ विधाताका नाम । २ काशीधाम ।

ब्रह्मपुरुर्य (सं० पु०) ब्रह्मण पुरुर्य इव । ब्रह्मपात्रक द्वारपालरूप चक्षु, वाक्, मन और प्राणादि पञ्च ब्रह्म पुरुर्य । ये सब स्वर्गलोकके द्वारपाल स्वरूप हैं।

ब्रह्मपुरोगय (स० त्रि०) पुरोगत ब्रह्म ।

ब्रह्मपुरोहित (स० पु०) ब्रह्म षूदस्पति पुरोहितो यस्य । देवताओंके पुरोहित षूदस्पति ।

ब्रह्मपूत (सं० लि०) ब्रह्मणा पूतः । ब्रह्म द्वारा पवित्र । तप स्वादि द्वारा पूतदेह । (अथर्व १३।१।३६)

ब्रह्मप्रसूत (स० त्रि०) ब्रह्मणा प्रसूतः । १ ब्रह्मज्ञात जगत् । ब्रह्मसे इस जगत्की उत्पत्ति हुई है। (छी०) २ ब्रह्मणा-रूप्य कर्म ।

ब्रह्मप्रिय (स० त्रि०) ब्रह्मध्याननिरत, जो सदा ब्रह्मचिन्ता में निमग्न रहते हैं।

ब्रह्ममी (स० त्रि०) ब्रह्मणा प्रीणाति मी विप् । १ सोम-लक्षण अन्न द्वारा प्रीत । २ स्तोत्रप्रिय ।

ब्रह्मकास (हि० खी०) ब्रह्मपात दत्तो ।

ब्रह्मबन्धु (स० पु०) ब्रह्मणो बन्धुरिव । १ अधिज्ञेय । २ निर्देश । ३ निन्दित ब्राह्मण, यह ब्राह्मण जो अपने कर्ममें होन हो । ४ विप्रतुल्य भट्टादि ।

ब्रह्मबध्या (स० खी०) बध भावे-बधप्, टाप्, ब्रह्मण बध्या । ब्रह्महत्या, ब्राह्मणबध ।

ब्रह्मबल (स० पु०) यह तेज वा शक्ति जो ब्राह्मणको तप ध्यादि द्वारा प्राप्त हो ।

ब्रह्मबलि (स० पु०) अधप्रयेदके मन्त्रविवर्त्तव गुरु भेद ।

ब्रह्मविन्दु (स० पु०) ब्रह्मणि वेदाध्ययनकाले विन्दु । १ वेदाध्ययनकालमें सुगति मृत लाला, यह राल जो वेद पढ़ते समय मुखमें टपकती है। यह राल दोगायद गद्दी समझी जाती ।

ब्रह्मयोज (स० खी०) ब्रह्मसंज्ञक योजमन्त्र । १ यो१ । २ वृक्षविशेष ।

ब्रह्मवेध्या (स० खी०) नदीभेद ।

ब्रह्मवृषाण (स० पु०) आत्मा ब्रह्माण प्रते प्र ज्ञानच् । यह जो अपनेको ब्राह्मण बतलाता हो । वर्णने अपनेको ब्राह्मण बतला कर परच्यारमसे अन्न शाल्य सीपा था । (भारत १।३।१ अ०) २ ब्राह्मणग्रू, अथर्व ब्राह्मण ।

ब्रह्मभद्रा (स० खी०) ब्रह्मणि भद्रा ७ तत् । विप्रहितार्थ लायमणोपधीभेद ।

ब्रह्मभवन (स० खी०) ब्रह्माका वासस्थान । ब्रह्मलोक । ब्रह्मभाग (स० पु०) ब्रह्मणो भागः । ब्रह्मरूप प्रवृत्तिके हट-णोय यष्टण्यका भागभेद ।

ब्रह्मभाव (सं० पु०) ब्रह्मणो भाव । १ ब्रह्म । २ ब्रह्मवा स्वरूप ।

ब्रह्मभावा (स० लि०) ब्रह्म भावयति उपदिशति ब्रह्म भू णिच् ण्युल । ब्रह्मोपदेशक ।

ब्रह्मभिद्रु (स० त्रि०) ब्रह्मभेद्व, जो एक ब्रह्मके विविध-भेदकी वक्षणा करता हो ।

ब्रह्मभुवन (स० खी०) ब्रह्मलोक ।

ब्रह्मभृति (स० खी०) ब्रह्मणो भूतिरङ्गसम्पदिव भूति यैत्या । १ शब्धा । (त्रि०) २ ब्रह्मज्ञानमात्र ।

ब्रह्मभूमिजा (स० खी०) ब्रह्मभूमिजायते या, ब्रह्म भूमि जन रिष्यां टाप् । सिंहलो ।

ब्रह्मभूय (स० खी०) ब्रह्मणो भावः । १ ब्रह्मत्व । २ मोक्ष । ३ ब्रह्मभाव ।

ब्रह्मभूयस् (स० खी०) १ ब्रह्ममें लीनभाव । २ ब्रह्मध्यानमें एकाग्रता ।

ब्रह्मभूयत्व (स० खी०) १ ब्रह्मा भिन्न रूपमें अक्षरघान । २ ब्रह्मलीनता । ३ ब्रह्मणत्व ।

ब्रह्मभोज (स० पु०) ब्राह्मणोंकी गिलानेका कर्म, ब्राह्मण ३ भोजन ।

ब्रह्मम गलदेयता (स० खी०) लक्ष्मीका नामान्तर । ब्रह्ममठ (स० पु०) ब्राह्मणका विद्यामन्दिर । २ राततर्पणकी र्णित कादमोरका एक विद्यामन्दिर ।

ब्रह्ममण्डुकी (सं० खी०) १ मञ्जिष्ठा, मैनाठ । २ मण्डक पर्णी । ३ भारङ्गी ।

ब्रह्ममति (स० पु०) बीडोमें एक प्रकारके उपदेयता । ब्रह्ममय (स० लि०) ब्रह्ममन्त्र, ब्रह्मण गपट् । १ प्रजा रनक, ब्रह्मम्वरूप । २ ब्रह्मात्म ।

ब्रह्मसूत्र (स० पु०) ब्रह्मणो महः । ब्रह्मणके उद्देश्ये  
वत्सव ।  
ब्रह्मसाक्षात्की (स० टी०) ब्राह्मोणाक । ब्रह्मसम्यक्की देवो ।  
ब्रह्ममित्त (स० पु०) ब्रह्ममित्तमस्य । मुनिभेद ।  
ब्रह्ममीमांसा (स० टी०) ब्रह्मणो मीमांसा इत्यतः ।  
ब्रह्मज्ञानार्थं वेदान्त वाक्यत्रिचारात्मक व्यास प्रणीत ग्रन्थ  
भेद । विशेष निरूपण 'वेदान्तदर्शन' नामक ग्रन्थे ।  
ब्रह्ममुद्गल (स० पु०) सूर्योदयके ३४ घड़ी पहलेका  
समय ।  
ब्रह्ममूर्च्छभृत् (स० पु०) ब्रह्मणो मूर्च्छभृत् जिरोमणिरिव ।  
शिव ।  
ब्रह्ममेतल (स० पु०) ब्रह्मणा ब्राह्मणानां मेतला पु वद  
भाव । मुञ्जवृण, मूज ।  
ब्रह्ममेध्या (स० स्त्री०) नदीभेद ।  
ब्रह्मयज्ञ (स० पु०) ब्रह्मणो ब्रह्मणे वा यज्ञ । विधि  
पूर्वक वेदाभ्यसन, शिष्योंका वेदाध्यापन । यह पञ्च  
यज्ञके अन्तर्गत है । प्रतिदिन ब्रह्मरूप वेदाध्ययन करना  
ब्राह्मण मातृका अत्रय कर्त्तव्य है ।  
ब्रह्मयज्ञस् (स० स्त्री०) ब्रह्माकी यज्ञोराशि ।  
ब्रह्मयज्ञस (स० स्त्री०) ब्रह्माका यज्ञोपासनामन्त्र  
विशेष ।  
ब्रह्मयज्ञस्यिन् (स० स्त्री०) अत्यधिक पवित्रताशाली ।  
ब्रह्मयष्टि (स० स्त्री०) ब्रह्मणो यष्टि रिव । १ मार्गी,  
भारगी । २ वृक्षविशेष । ब्रह्मयष्टिके फलको जलमें पीस  
कर उसका लेप देनेसे रक्तक्षय जाता रहता है । ३ ब्राह्मण  
के हस्तस्थित दण्ड ।  
ब्रह्मयाम (स० पु०) ब्रह्मणोयाम । ब्रह्मयज्ञ ।  
ब्रह्मयाम (स० पु०) यामुभेद ।  
ब्रह्मयामल (स० स्त्री०) तन्त्रशास्त्रविशेष ।  
ब्रह्मयुग (स० स्त्री०) ब्रह्मा विप्रस्तनुपलक्षित युग ।  
हिरण्यार्मका विप्रसृष्टि प्रधान कालभेद ।  
ब्रह्मयुज् (स० स्त्री०) ब्रह्म युज् षिण् । मन्त्र द्वारा  
युक्त ।  
ब्रह्मयोग (स० पु०) ब्रह्मज्ञानसाक्षात्कारस्य योग  
समाधिः । ब्रह्मसाक्षात्कारसाधन समाधिभेद ।

प्रजापति ब्रह्मा ही ब्रह्मण्य यज्ञ हैं, वे ही प्रकृत साध्य  
योग और विद्या हैं । वे ही चार्वाकोंका स्वभाव तथा  
साध्योंकी प्रकृति और पुरुष हैं, वे ही छात्र और स दत्ता  
हैं । वे ही कालरूपा साक्षात् इष्टर हैं । फिर वे ही काल  
क्षय, क्षय और विद्या हैं अर्थात् जो जिस भावमें ब्रह्मण  
करने हैं वे ही उनके तत्स्वरूप हैं । यही ब्रह्मयोग है ।  
इस ब्रह्मयोगका ज्ञान हो जानेसे सभी अज्ञान तिरोहित  
होता है । ( हरि० २१० म० )

२ निरुद्धमादि पञ्चविंश योगके अन्तर्गत योगभेद । ३  
१८ मानवाओंका एक ताल । इसमें १२ आघात और  
६ चाली होते हैं ।

ब्रह्मयोनि (स० पु०) ब्रह्मणो योनिवत्पत्तिरत्त । १ ब्रह्म  
गिरि । २ ब्रह्मप्राप्तिकारण ब्रह्मध्यान । ३ सर्वोंका उत्पत्ति  
कारण—ब्रह्म । ४ तीर्थविशेष । ( त्रि० ) ५ जिसका  
उत्पत्तिकारण ब्रह्म हो ।

ब्रह्मयोनि (स० स्त्री०) ब्रह्मा योनिवत्पत्तिकारण पस्या,  
स्त्रिया पक्षे डोप् । बुद्धेश्वरस्य सरस्वतीतीर्थवर्ती पृथ्वीक  
के निकट अवस्थित तीर्थविशेष । यहा पर ब्रह्मा चार  
घणाकी सृष्टि करते हैं । इस तीर्थमें स्नान करनेसे मुक्ति  
लभ होती है । ( यामगु० ३५ म० )

ब्रह्मरक्षम (स० स्त्री०) अपदैयताविशेष ।  
ब्रह्मरय (स० पु०) १ ब्राह्मणका शकट या यानविशेष ।  
२ ब्रह्माका वाहन, हस ।

ब्रह्मरत्न (स० स्त्री०) ब्रह्माकी ब्रह्म धनरत्न ।  
ब्रह्मरन्ध्र (स० स्त्री०) ब्रह्मण परमात्मन अधिष्ठानार्थ  
रन्ध्र आकाश, या ब्रह्मणे ब्रह्मप्राप्तये रन्ध्रं । उत्तमोद्ग,  
ब्रह्मतालु, मस्तकके मध्य यह गुप्त छेद जिससे हो कर  
प्राण निकलनेसे ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है । कहते हैं,  
वि योगियोंके प्राण इसी रन्ध्रसे निकलते हैं ।

ब्रह्मरस (स० पु०) ब्रह्मज्ञानरूप उत्कृष्ट सुधा ।  
ब्रह्मराक्षस (स० पु०) आदी ब्रह्मा ब्राह्मणः पद्भ्याश्चाक्षन्ः  
इकर्मभिः राक्षसयोनि गत । १ भूतविशेष, यह ब्राह्मण  
जो मर कर भूत हुआ हो ।

"सर्वो पतिवैगत्या परस्वयैव च योषिष्ठान् ।  
भगवत्स्वयं विप्रस्यं मर्षां ब्रह्मरन्ध्रम् ॥" (मनु० १३६०)  
जो पतितके साथ स्वसर्ग, परलोक गमन और ब्राह्मणका

बाधन ब्रह्मरूप करता है, यही ब्रह्मराश्रस होता है।  
 कामायणमें लिखा है, कि ब्रह्मराश्रस यज्ञके विष्णोत्पादक  
 होते हैं। (रामा० १।१२ ५०)

२ महादेवका गणविशेष। पारिभाषिक प्रयोगमें भूय,  
 एषो, वच्छर, बांजो और वधिर इन पाचोंकी ब्रह्मराश्रस  
 पहते हैं।

“मूर्धाः स्त्री कच्छर श्वेत् शशी वधिर एव च ।  
 यदीदं न मुञ्चन्ति वञ्चेत् ब्रह्मराश्रस ॥”

(ब्रह्मसाम०)

ब्रह्मराज (सं० पु०) १ राजपुत्रभेद। २ ब्रह्मदेशका अधिपति।  
 ब्रह्मरात (स० स्त्री०) ब्रह्म तज्ज्ञान रातः यस्मै।  
 १ शुक्रदेव। २ पाण्डवलय्य मुनि। इन्होंने जनकसे ब्रह्म  
 विद्या सीखी थी। शूद्रद्वारण्यः उपनिषद्में यह उपाध्याय  
 बणित है।

ब्रह्मराज (स० पु०) राखेरप रासा, ब्रह्मणो रात्रः। ब्रह्म  
 मुहूर्त्त, रात्रिका शेष चार वषट्। इस समय सर्वोंको  
 विद्यायतन परने उठना चाहिये।

“ब्रह्मराज उपाशुते वासुदेवानु मोदिताः।

अनिच्छन्त्यो यदुगान्य स्वयहाव भगवतः प्रियाः ॥”

(भागवत १०।३।४६)

ब्रह्मरात्रि (सं० पु०) १ रात्रवलय्य मुनि। ये ब्रह्मज्ञान  
 देते हैं, इसीसे इका ब्रह्मरात्रि नाम पडा है। हेमचन्द्र  
 टीकामें इनकी ध्युत्पत्ति इस प्रकार लिगी है। ब्रह्मरात्रा  
 रात्रि ददाति यः, ब्रह्मराश्रस रात्रातोर्नाम्नी। निरल्पयीन्मनाऽपम्  
 (देशीका) (स्त्री०) २ ब्रह्माकी रात्रि। मनुमें इस  
 ब्रह्मरात्रिका परिमाण इस प्रकार बतलाया है—अठारह  
 निमिष बाधार्त्त चाक्षुके पल्यकी एक षाष्टा, तीस काष्ठाकी  
 एक कला, तीस बलादा एक मुहूर्त्त और तीस मुहूर्त्तको  
 एक दिन रात होगी है। मनुष्योंके लिये दिवाभागमें  
 जागृत्य और रात्रिकालमें निद्रा बतलाई गई है। मनुष्यका  
 एक मास विष्णोवकी एक दिनरात होता है। उनमेंसे  
 द्वावषष्ट उनका दिन और शूद्रपशु रात होता है।  
 द्वावषष्ट काम करीश और शूद्रपशु द्योतिश समय  
 है। मनुष्यका एक वर्ष देवताओंकी एक दिन रात  
 माता गया है। फिर उनके भी इस प्रकार विभाग हैं,—  
 उच्चरायण देवताओंका दिन और वृद्धिवायन उनकी रात्रि

है। देवपरिमाण चार हजार वर्षका सत्ययुग होता है।  
 इन युगके चार सौ वर्ष सन्ध्या और चार सौ वर्ष  
 सन्ध्यावा है। तीन हजार वर्षोंमें वेतायुग बलिग  
 हुआ है। उसकी सध्या और सध्यांगना परिमाण  
 तीन सौ वर्ष है। छायर युग दो हजार वर्ष और बन्धियुग  
 हजार वर्ष इनकी सध्या है और सन्ध्याग एक एक सौ  
 वर्ष काम है। मनुष्योंको जो चार युगोंकी सध्या निरूपित  
 हुई, उसके बाद हजार वर्षका देवताओंका एक युग होगा  
 है। इस प्रकार देवपरिमाण सहस्रयुगका एक दिन और  
 उतने ही समयकी उनकी एक रात होती है। (मनु १ ५०)

ब्रह्मरात्रि (सं० पु०) १ परितः ज्ञानरात्रि। २ पवित्र  
 ग्रन्थसमूह। ३ परशुरामका नामान्तर। ४ बृहस्पति  
 कर्तृक आमान्त श्रवणा नक्षत्र।

ब्रह्मरात्रि (सं० स्त्री०) ब्रह्मवर्णा रात्रिः। १ पितृकभेद,  
 एक प्रकारका पीतल। २ ब्रह्मा या ब्राह्मणकी रात्रि।  
 ब्रह्मरूपकः (सं० पु०) एक प्रकारका छप्पू। इसके अर्थके  
 चरणमें गुग्गुलुयुके क्रमसे १६ अक्षर होते हैं। इसे चञ्चला  
 और चित्र भी कहते हैं।

ब्रह्मरूपिणी (सं० स्त्री०) १ यदा, बाँदा। २ ब्रह्मस्व-  
 रूपा।

ब्रह्मरेता (सं० स्त्री०) भाग्य या अभाग्यका लेख। इनके  
 विषयमें कहा जाता है, कि प्रता किसों जीवके गर्भमें  
 भाते ही उसके मन्त्रक पर लिख देते हैं।

ब्रह्मर्षि (सं० पु०) ब्रह्मा ब्राह्मणः ऋषिः वा ब्रह्मा वेदं  
 पश्यन् वा ऋषिः वेत्ति। यनिष्ठादि मुनिगण।

ब्रह्मर्षिदेव (सं० पु०) ब्रह्मर्षीणा देशः कामयोगरूपान्।  
 बुद्धश्रेयान्दि चार देव, यह भूभाग विम्वके अन्तर्गत कुल-  
 क्षेत्र, मत्स्य, पाञ्चाल और शारङ्गक देव थे। इन ब्रह्मर्षि  
 देवाम्भून ब्राह्मणोंने वृष्टोंके सभी लोगोंकी सदाकार  
 मोक्षाचा चाहिये।

ब्रह्मनिमित्त (सं० पु०) ब्रह्मदेव, मानवकी अष्टान्द्रिपि।

ब्रह्मलोक (सं० पु०) ब्रह्मणो लोकः भुवनः। ब्रह्माधिष्ठान  
 भुवन, सत्यलोक। ब्रह्मा इन लोकमें शायरपाल करते हैं।

“ब्रह्मलोकं यममो क्षेत्रं एतुर्गर्भं विभूत् ॥

ब्रह्मलोकः कः यमामोवा इमर्भियात्तद्वचनम् ॥”

(देशीयुग)

विष्णुपुराणके मतानुसार तपोलोकमें छः गुणा ऊपर सत्यलोक है। इसीको ब्रह्मलोक कहते हैं।

“पञ्चगुणेन तपोलोकं सत्यलोके निराजते।

अपुनर्मरिका यत्र ब्रह्मलोको हि यस्मृत ॥”

(विष्णुपु० २।३ व०)

ब्रह्मैव लोक । २ तुरीय ब्रह्मस्वरूप ।

वेदान्त दर्शनमें लिखा है, कि जो नाडोरश्मिमन्थन्य घटित अर्चिरादि पर्वनिशिष्ट देवयानपथसे ब्रह्मलोकको गमन करते हैं, वे सब उपानसगण चन्द्रलोकगत उपासकोंकी तरह भोगक्षयके बाद पुन इस लोकमें जन्म नहीं लेते। इस पृथ्वीसे तृतीय स्वर्गमें ब्रह्मलोक है। यहाँ 'अर' और 'न्य' नामक समुद्रतुल्य सुधाहृद, अन्नमय और मक्कर सरोवर तथा अमृतवर्षी अश्वत्थ है। यह स्थान तत्त्वज्ञानो ब्रह्मोपासकको छोड़ कर दूसरेके लिये अगम्य है। यह लोक अजेय ब्रह्मपुरी है। यहाँ प्रभु ब्रह्मके निनिमित्त हिरण्यमय गृह है। उपासना द्वारा ब्रह्मलोक प्राप्त होनेसे फिर यहाँसे लौटना नहीं पड़ता। उपासक ब्रह्मलोकमें जा कर अमर होते हैं अर्थात् मुक्तिलाभ करते हैं।

वेदान्त और ब्रह्म शब्द देखो।

ब्रह्मवक्तृ (स० पु०) १ परब्रह्मरूप सत्यधर्मका प्रचारक।

२ वेदधर्मके प्रवर्तक आचार्य।

ब्रह्मवत् (स० त्रि०) ब्रह्मया ब्रह्मज्ञान सम्पन्न। वेदसम्बन्धीय।

ब्रह्मवद् (स० पु०) सम्प्रदायविशेष।

ब्रह्मवध (स० क्ली०) यज्ञ वेदस्तस्य वधन (वद-मुणि-भय-प। पा १।३।१।६) इति भावे यत्। ब्रह्मका धारण।

ब्रह्मवधा (स० त्रि०) ब्रह्मणा वेदन उच्यते या ब्रह्मवधदाप्। कथा।

ब्रह्मवध (स० पु०) ब्रह्मणहत्या।

ब्रह्मवध्या (स० पु०) ब्रह्महत्या, ब्रह्मण वध।

ब्रह्मवध्यावृत (स० क्ली०) ब्रह्मण हत्याजनित पाप।

ब्रह्मवर्जित (स० त्रि०) ब्रह्मणापुस्त।

ब्रह्मवर्षस (स० क्ली०) ब्रह्मणो वेदस्य तपसो या धर्मस्तेज। १ यह शक्ति जो ब्रह्मण तप और स्वाध्याय द्वारा प्राप्त करे। २ ब्रह्मतेज। मनुमें उक्त है, कि ऋषिगण दीर्घकाल तक सन्ध्याका अनुष्ठान करते हैं, इस कारण वे

दीर्घ-आयु, ब्रह्मा, धरा, कीर्ति और ब्रह्मतेज प्राप्त करते हैं। ब्रह्मवर्षस्यैव (स० पु०) ब्रह्मणो वर्षसं समासान्तविधेरनित्यत्वान्न न अथ्वसमासान्त ततोऽस्त्यर्थे विनि। ब्रह्म तैजोयुन, ब्रह्मतेजनाला।

ब्रह्मवर्त्त (स० पु०) ब्रह्मणा ब्राह्मणाना वर्त्तं वर्त्तनं यस्मिन्। ब्रह्ममन्त्रदेश।

ब्रह्मवद न (स० क्ली०) ब्रह्मणस्तपसो वर्दनं यस्मात्। ताम्र, तौवा।

ब्रह्मवल (स० पु०) सम्प्रदायविशेष।

ब्रह्मवल्लो (स० स्त्री०) लताविशेष।

ब्रह्मवाटीय (स० पु०) मुनिभेद।

ब्रह्मवाद (स० पु०) ब्रह्मणो वेदस्य यादो वदन् पठनमिति यावत्। १ वेदपाठ, वेदना पठना पठाना। २ यह सिद्धान्त जिसमें शुद्ध चैतन्य मात्रको सत्ता स्वीकार की जाय, अनात्मको सत्ता न मानी जाय।

ब्रह्मवादिन् (स० पु०) ब्रह्मवाद वेदपाठोऽस्यास्तीति ब्रह्मवादं गिनि। वेदवक्ता, वेदपाठक। पर्याय—वेदान्ती।

ब्रह्मवादिनो (स० स्त्री०) ब्रह्मवादिन्, क्लीप्। आपत्ती।

ब्रह्मवाद्य (स० क्ली०) ब्रह्मज्ञान विषयमें प्रतियोगिता।

ब्रह्मवल्लुक (स० क्ली०) तीर्थभेद।

ब्रह्मवास (स० पु०) ब्रह्मणो वास। ब्रह्मलोक।

ब्रह्मवाहस (स० त्रि०) ब्रह्मणा मन्त्ररूपवेदेन कृतो ब्रह्मकर्मणि वाद् अस्ति च णिघ। मन्त्र द्वारा प्राप्यमान।

ब्रह्मवचिच (स० क्ली०) ब्रह्मविदो भाव त्व। ब्रह्मविदुका भाव या धम।

ब्रह्मविद् (स० पु०) ब्रह्मस्वरूपतया वेत्ति आत्मानं विद्वा विप्। १ ब्रह्मात्मैक्यवेत्ता। २ विष्णु। ३ शिव। (त्रि०) ४ वेदार्थज्ञाता, वेदका अर्थ जाननेवाला।

ब्रह्मविद्या (स० स्त्री०) ब्रह्मणो ब्रह्मविषयिणो या विद्या। १ ब्रह्मज्ञान। २ दुर्गा। ३ उपनिषद्दे, यह विद्या जिसके द्वारा कोई व्यक्त ब्रह्मको जान सके।

ब्रह्मविद्यातीर्थ (स० पु०) एक ग्रन्थकार।

ब्रह्मविद्विप् (स० त्रि०) वेद या ब्रह्मणको हिंसा, द्वेष या घृणाकारी।

ब्रह्मविषयार्दन (स० पु०) ब्रह्मणो विषयार्दनं ६ तत्। १ तपोवर्द्धक। २ विष्णु। (क्ली०) ३ तप आदिका विशेषरूपसे वर्द्धन।

का भजन अग्रदत्त बनता है, यही अन्नराज्य होता है।  
 कामाद्यन्तमें लिखा है, कि अन्नराज्यस यज्ञके विष्णोत्पादक  
 होते हैं। (समा० १।११ म०)

१ माण्डदेवका मानविशेष। पारिभाषिक प्रयोगमें मूय,  
 खो, कच्छ, बानी और बधिर इन पाचोंको अन्नराज्यस  
 कहते हैं।

“यानि खो कच्छश्च श्वौ बानी बधिर एव च।

यस्यैवार्थ १ शुम्भन्ति पन्थैः अन्नराज्यस ॥”

(व्यपहरण०)

अन्नराज (स० पु०) १ राजपुत्रभेदः २ अन्नदेशका अत्रिपति।  
 अन्नराज (स० स्त्री०) अन्न तज्ज्ञान रात्रः ३ यस्मै।  
 १ शुभदेव। २ पाण्डवलय मुनि। इन्होंने जाकसे अन्न  
 चिन्ता स्वीकी थी। गृहद्वारण्य उपनिषद्में यह उपाध्याय  
 वर्णित है।

अन्नराज (सं० पु०) रात्रेरय रामः, अन्नराजो राजः। अन्न  
 सुहृत्, रात्रिका शेष चार वृष्ट। इस समय सर्वोंको  
 विद्यापान करने उठना चाहिये।

“अन्नराज उपाधुः पाण्डुरायानु मोदिताः।

अनिच्छत्यो वसुगोत्र्यै स्वयंदात भगवत्प्रियाः ॥”

(भागवत १०।३३।४६)

अन्नरात्रि (स० पु०) १ पाण्डवलय मुनि। ये अन्नराज  
 होते हैं, इसीसे इनका अन्नरात्रि नाम पड़ा है। हेमचन्द्र  
 टीकामें इनको व्युत्पत्ति इस प्रकार लिखी है। अन्नरा  
 रात्रि ददाति यः, अन्नरात्रा रघुवंशान्नीति विप्रत्यर्थात् राज्ञाम्  
 (इन्द्राका) (स्त्री०) २ अन्नको रात्रि। मनुमें इस  
 अन्नरात्रिका परिमाण इस प्रकार बतलाया है—अठारह  
 निमिष अर्थात् चन्द्रके पलकको एक काष्ठा, तीस काष्ठाको  
 एक कला, तीन कलाका एक मुहूर्त्त और तीस मुहूर्त्तको  
 एक दिन रात्र होना है। मनुष्योंके लिये दिवामागमें  
 जागरण और रात्रिकागमें निद्रा बालाई गई है। मनुष्यका  
 एक मास गित्कालको एक दिनरात्र होता है। उनमेंसे  
 श्रावण उनका दिन और शुक्लपक्ष रात्र होता है।  
 एकादश पान करीब और शुक्लपक्ष सोमेरा समय  
 है। मनुष्यका एक वर्ष देवताओंकी एक दिन रात्र  
 माना गया है। किन्तु उनके भी इस प्रकार विभाग है,—  
 अन्नराज्य देवताओंका दिन और ब्रह्मराज्य उनको रात्रि

है। देवपरिमाण चार हजार वर्षका सत्ययुग होता है।  
 इस युगके चार सौ वर्ष सन्ध्या और चार सौ वर्ष  
 सन्ध्यावाह है। तीन हजार वर्षमें प्रेतायुग कल्पित  
 हुआ है। उसकी सन्ध्या और सन्ध्यावाहना परिमाण  
 तीन सौ वर्ष है। छापार युग दो हजार वर्ष और कल्पियुग  
 हजार वर्ष इनकी सन्ध्या है और सन्ध्यावाह एक एक सौ  
 वर्ष बन है। मनुष्योंकी जो चार युगोंकी सन्ध्या तिहरिया  
 हुई, उसके बारह हजार वर्षका देवताओंका एक युग होगा  
 है। इस प्रकार देवपरिमाण सहस्रयुगका एक दिन और  
 उतने ही समयको उनकी एक रात्र होती है। (मनु १ म०)  
 अन्नरात्रि (स० पु०) १ पतिव्रत कानरात्रि। २ पतिव्रत  
 प्रथमपुत्र। ३ परशुरामका मामान्तर। ४ गृहस्थापि  
 कर्तृक आत्रात ध्रुवणा नक्षत्र।

अन्नरात्रि (स० स्त्री०) अन्नवर्णा रात्रिः। १ पितृभेद,  
 एक प्रशारका पीतल। २ अन्न वा अन्नवर्णकी रात्रि।  
 अन्नरूपक (स० पु०) एक प्रकारका छन्द। इसके मन्थक  
 चरणमें शुक्लधुके क्रमसे १६ अक्षर होते हैं। इसे चञ्चल  
 और चित्र भी कहते हैं।

अन्नरविणी (स० स्त्री०) १ यदा, रात्रि। २ अन्नस्य-  
 रूपा।

अन्नरोगा (स० स्त्री०) भाग्य वा कामाग्यना लेख। इसके  
 धियवर्षमें कड़ा जाता है, कि प्राण किसी जीवके गर्भमें  
 भाते ही उसके मस्तिष्क पर लिपि दते हैं।

अन्नरहि (स० पु०) अन्ना अन्नपानः अग्नि वा अन्ना वैशं  
 पराश्रय वा अग्निवति चेत्ति। यज्ञिष्टादि मुनिगण।

अन्नरविदेज (स० पु०) अन्नरविर्देजः नाम्नोपहरणम्।  
 कुश्लोत्पत्ति चार देज, यह भूभाग जिसके अन्तर्गत कुश  
 क्षेत्र, मत्स्य, पाण्ड्या और शूरसेनक देज थे। इन अन्नरवि  
 देजसम्भूत अन्नरविर्देज पृथ्वीके सभी लोगोंको सदाचार  
 सौंपना चाहिये।

अन्ननिमित्त (स० पु०) अन्ननिमित्त, मानवकी अन्नपुत्रिणि।  
 अन्ननिमित्त (सं० पु०) अन्नको लोचः मुचलं। अन्ननिमित्त  
 भुवन, सत्यलोचः अन्ना इस लोकमें अन्नपान्य करते हैं।

“एतन्मनुष्यं अन्नं प्राकः अन्नमन्तरात्प्राकम्।

अन्नमन्तरात्प्राकम् अन्तरीकालकल्पः ॥”

(वर्षयुगम्)

विष्णुपुराणके मतानुसार तपोलोकने छ गुणा ऊपर सत्यलोक है। इसीको ब्रह्मलोक कहते हैं।

“यद् गुणेन तपोलोकान् सत्यलोकं विराजते।

अपुनर्मरिचा यत्र ब्रह्मलोको हि स स्मृत ॥”

(विष्णुपु० २।३ अ०)

ब्रह्मैव लोक । ० नुरीय ब्रह्मस्वरूप ।

वेदान्त दर्शनमें लिखा है, कि जो नाडोरश्मिसम्बन्ध घटित अर्चिराद्रि पर्यन्तिगिष्ट देवयानपथसे ब्रह्मलोकको गमन करते हैं, वे सत्र उपासकगण चन्द्रलोकगत उपासकोंकी तरह भोगक्षयके बाद पुन इस लोकमें जन्म नहीं लेते। इस पृथ्वीसे तृतीय स्वर्गमें ब्रह्मलोक है। यहा 'अर' और 'न्य' नामक समुद्रतुल्य सुधाह्वय, अश्रमय और मङ्कर सरोवर तथा अमृतवर्षी अश्वत्थ है। यह स्थान तत्त्वज्ञानो यज्ञोपासकको छोड़ कर दूसरेके लिये अगम्य है। यह लोक अजेय ब्रह्मपुरी है। यहा प्रभु ब्रह्माके विनिमित्त हिरण्यमय गृह है। उपासना द्वारा ब्रह्मलोक प्राप्त होनेसे फिर यहासे लौटना नहीं पडता। उपासक ब्रह्मलोकमें जा कर अमर होते हैं अर्थात् मुक्तिलाभ करते हैं।

वेदान्त और ब्रह्म शब्द दसो।

ब्रह्मवचन (स० पु०) १ पत्रहाराक सत्यधर्मका प्रचारक।

२ वेदधर्मके प्रवर्तक आचार्य।

ब्रह्मवन् (स० त्रि०) ब्रह्मया ब्रह्मज्ञान सम्पन्न। वेदसम्बन्धीय।

ब्रह्मवद् (स० पु०) सम्प्रदायविशेष।

ब्रह्मवध (स० इ०) यहा वेदस्तस्य वधन (वद-मुपि-न्यप्) च। या १३।१०६ इति भाषे यत्। यज्ञाका वाष्य।

ब्रह्मवधा (स० त्रि०) ब्रह्मणा वेदेन उच्यते या ब्रह्मवधा थाप्। कथा।

ब्रह्मवध (स० पु०) ब्राह्मणहत्या।

ब्रह्मवध्या (स० पु०) ब्राह्मणहत्या, ब्राह्मण वध।

ब्रह्मवध्याहत (स० इ०) ब्राह्मण हत्याजनित पाप।

ब्रह्मवनि (स० त्रि०) ब्राह्मणानुरक्त।

ब्रह्मवर्चस (स० इ०) ब्रह्मणो वेदस्य तपसो या वर्चस्तेज। १ यह शक्ति जो ब्रह्मण तप और स्वाध्याय द्वारा प्राप्त करे। २ ब्रह्मतेज। मनुमें लिखा है कि ऋषिगण दीर्घकाल तक सन्ध्याका अनुष्ठान करते हैं, इस कारण वे

दीर्घ-आयु, प्रज्ञा, यज्ञ, कीर्ति और ब्रह्मतेज प्राप्त करते हैं। ब्रह्मवर्चस्येन (स० पु०) ब्रह्मणो वर्चः समामान्तविधेरनित्यत्वात् न अचसमासान्त ततोऽस्त्यर्थे चिनि। ब्रह्म तेजोयुक्त, गृह मतेजवाला।

ब्रह्मवर्च (स० पु०) ब्रह्मणा ब्राह्मणाना यत् वर्चं वर्त्तन यस्मिन्। यह मयत्तदेश।

ब्रह्मवचन (स० इ०) ब्रह्मणस्तपसो वर्द्धन यस्मात्। ताम्र, ताँगा।

ब्रह्मवल (स० पु०) सम्प्रदायविशेष।

ब्रह्मवल्लो (स० स्त्री०) लताविशेष।

ब्रह्मवाटीय (स० पु०) मुनिभेद।

ब्रह्मवाद (स० पु०) ब्रह्मणो वेदस्य वादो वद्वन पठनमिति यावत्। १ वेदपाठ, वेदना पठना पठाना। २ यह सिद्धान्त निम्नमें शुद्ध चैतन्य मात्रको सत्ता श्लोकार की जाय, अनात्मको सत्ता न मानी जाय।

ब्रह्मवादिन् (स० पु०) ब्रह्मवाद वेदपाठोऽस्यास्तीति ब्रह्मवाद ग्निनि। वेदवक्ता, वेदपाठक। पर्याय—वेदान्ती।

ब्रह्मवादिना (स० स्त्री०) ब्रह्मवादिन् ङीप्। गायत्री।

ब्रह्मवाद्य (स० इ०) ब्रह्मणा विषयमें प्रतिभोगिता।

ब्रह्मवल्लुक (स० इ०) तीर्थभेद।

ब्रह्मवास (स० पु०) ब्रह्मणो वास। ब्रह्मलोक।

ब्रह्मवाहस (स० त्रि०) ब्रह्मणा मन्त्ररूपवेदेन ऊरते ब्रह्मकमणि घाटु असिच् पिथ्य। मन्त्र द्वारा प्राप्यमान।

ब्रह्मविचर्य (स० इ०) ब्रह्मविदो भाव त्व। ब्रह्मविदुका भाव या धर्म।

ब्रह्मविद् (स० पु०) ब्रह्मस्वरूपतया वेत्ति आत्मानं विद् विप्। १ ब्रह्मात्मैक्यवेत्ता। २ विष्णु। ३ शिव। (त्रि०)

४ वेदाध्याता, वेदका अर्थ जाननेवाला।

ब्रह्मविधा (स० स्त्री०) ब्रह्मणो ब्रह्मविषयिणी या विधा। १ ब्रह्मज्ञान। २ दुर्गा। ३ उपनिषद्, यह विधा जिसके द्वारा कोई व्यक्ति ब्रह्मको जान सके।

ब्रह्मविधातीर्थ (स० पु०) एक प्रत्यकार।

ब्रह्मविधिप् (स० त्रि०) वेद वा ब्राह्मणको हिंसा, ह्येप वा घृणाकारो।

ब्रह्मविद्यर्द्धन (स० पु०) ब्रह्मणो विद्यर्द्धन इ तत्। १ तपोवर्द्धक। २ विष्णु। (इ०) ३ तप आदिवा विशेषरूपसे वर्द्धन।



का धन अथवा दान करना है, यही ब्रह्मदान ही होता है।  
 सामान्यतः विद्या है, कि ब्रह्मदान ही यज्ञके विद्योत्पादन  
 होते हैं। (उपानि० १।११ म०)

१ ब्रह्मदेवता गणविद्योत्पत्तिः। पारिभाषिक प्रयोगमें मूल,  
 अग्नि, अथवा, वाचो मूर्ति अथवा इत वाचोको ब्रह्मदानम  
 कहते हैं।

“तृप्तं स्त्री कन्द्यत श्वैर वाची बलि पयतः।  
 यदीत्यर्थं न मुञ्चन्ति पञ्चैतं ब्रह्मदानम् ॥”

(श्वयस्याराम०)

ब्रह्मरात्रि (स० पु०) १ रात्रिपुत्रोत्पत्तिः। २ ब्रह्मदेवता अथवा विद्या।  
 ब्रह्मरात्रि (स० पु०) ३ ब्रह्म तज्ज्ञानं रात्रि यस्मिन्।  
 १ शुक्रदेव। २ वाद्ययन्त्रय मुनि। इन्होंने जानकसे ब्रह्म  
 विद्या सीखी थी। गृहदारण्य उपनिषद्में यह उपाख्यान  
 बलिपत्त है।

ब्रह्मरात्रि (स० पु०) ४ रात्रेरथ रात्रिः, ब्रह्मरात्रि रात्रिः। ब्रह्म  
 मुहूर्त, रात्रिका देव चार दृष्ट। इस समय सबको  
 विद्यायत्न परसे उठना चाहिये।

“ब्रह्मरात्रि उपाख्ये [वायुदेवात् सोदिताः।  
 अविच्छेदात् पशुर्गोयन् इत्येवैतं भगवत्प्रियाः ॥”

(भागवत १०।३३।४६)

ब्रह्मरात्रि (स० पु०) ५ रात्रिपुत्रय मुनि। ये ब्रह्मज्ञान  
 होते हैं, इसीसे इनका ब्रह्मरात्रि नाम पडा है। ऐमचन्द्र  
 टीकामें इनकी व्युत्पत्ति इस प्रकार लिखी है। ब्रह्मरात्रि  
 रात्रि इति यत्, ब्रह्मरात्रि रात्रिः सोदिताः अथवा  
 (इन्द्रात्) (सो०) २ ब्रह्मरात्रि रात्रिः। मनुमें इस  
 ब्रह्मरात्रिका परिमाण इस प्रकार बतलाया है—ब्रह्मरात्रि  
 निमित्त अथवा चतुर्षु पलकनी एक काष्ठा, तीस काष्ठाकी  
 एक कला, सोम अथवा एक मुहूर्त और तीस मुहूर्तकी  
 एक दिन रत होती है। मनुष्योंके लिये दिवामागमें  
 जागरण और रात्रिकालमें निद्रा बतलाई गई है। मनुष्यका  
 एक मास पित्रोत्पत्ति एक दिनरात्र होता है। उसीसे  
 ब्रह्मरात्रि उनका दिन और शुक्रपक्ष रात्र होता है।  
 ब्रह्मरात्रि काल ब्रह्मरात्रि और शुक्रपक्ष सोमिका समय  
 है। मनुष्यका एक वर्ष देवताओंकी एक दिन रात्र  
 नामा गया है। फिर उनके भी इस प्रकार विभाग है—  
 ब्रह्मरात्रि देवताओंका दिन और ब्रह्मरात्रि उनका रात्रि

है। देवपरिमाण चार हजार वर्षका मन्वन्तुग होता है।  
 इस युगके चार सौ वर्ष मन्वन्तुग और चार सौ वर्ष  
 मन्वन्तुग है। तीस हजार वर्षों देवामुग बलिपत्त  
 हुआ है। उसकी सध्या और मन्वन्तुगका परिमाण  
 तीन सौ वर्ष है। ब्रह्मरात्रि युग दो हजार वर्ष और बलिपत्त  
 हजार वर्ष इनकी सध्या है और मन्वन्तुग एक एक सौ  
 वर्ष पम है। मनुष्योंकी ओ चार युगोंकी सध्या निरूपित  
 हुई, उसके बाद हजार वर्षोंका देवताओंका एक युग होगा  
 है। इस प्रकार देवपरिमाण सहस्रयुगका एक दिन और  
 उनको ही समयको उनको एक रात्र होती है। (मनु १ म०)

ब्रह्मरात्रि (स० पु०) ६ पवित्र ज्ञानरात्रिः। २ पवित्र  
 मन्वन्तुगमूह। ३ परब्रह्मणमका नामांतर। ४ ब्रह्मरात्रि  
 पत्तुव आक्रान्त धवणा नक्षत्र।

ब्रह्मरात्रि (स० पु०) ५ ब्रह्मरात्रि रात्रिः। १ पितृभ्रमेद,  
 एक प्रकारका पीतल। २ ब्रह्मा या ब्रह्मणकी रात्रि।  
 ब्रह्मण्यक (स० पु०) एक प्रकारका छन्द। इसके अर्थक  
 चरणमें शुक्लसुके क्रमसे १६ अक्षर होते हैं। इस अक्षराला  
 और चित्र भी कहते हैं।

ब्रह्मरात्रि (स० पु०) ६ यद्रा, वाँडा। ७ ब्रह्मरात्रि-  
 रूपा।

ब्रह्मरात्रि (स० पु०) ८ भाग्य या अभागायका लेख। इसके  
 विषयमें कहा जाता है, कि ब्रह्मरात्रि जीवके गर्भमें  
 आते ही उनके अन्तक पर लिख देते हैं।

ब्रह्मरात्रि (स० पु०) ९ ब्रह्मरात्रिः अथवा या ब्रह्मरात्रि  
 परब्रह्म या अथवा वेत्ति। यगिष्टादि मुनिगण।

ब्रह्मरात्रि (स० पु०) १० ब्रह्मरात्रि देवा कास्योपस्थान।  
 शुक्रदेववि चार देव, यह भूमिका जिनके अन्तर्गत शुक्र-  
 देव, मत्स्य, पाश्चात् और इत्येव देव थे। इन ब्रह्मरात्रि  
 देवामभूत ब्रह्मरात्रि देवताके समीप लोगोंकी महाभार  
 सीधका चारिधे।

ब्रह्मरात्रि (स० पु०) ११ ब्रह्मरात्रि, मातृकी जगदीश्वरि।

ब्रह्मरात्रि (स० पु०) १२ ब्रह्मरात्रि, भुवन्तः। ब्रह्मरात्रि  
 भुवन्तः, ब्रह्मरात्रि। ब्रह्मा इस लोकमें अथवा काले है।

“ब्रह्मरात्रि कालः कालः, ब्रह्मरात्रि कालः।  
 ब्रह्मरात्रि, ब्रह्मरात्रि कालः कालः ॥”

विष्णुपुराणके मतानुसार तपोलोकसे छ गुणा ऊपर सत्यलोक है। इसीको ब्रह्मलोक कहते हैं।

“यद् गुणैर्न तपोलोकं सत्यलोकं विराजते।

अनुमार्गिका यत्र ब्रह्मलोको हि स स्मृतः ॥”

(निष्कण्ड २।३ व०)

ब्रह्मैव लोकः । २ तुरीय ब्रह्मस्वरूपः ।

वेदान्त दर्शनमें लिखा है, कि जो नाडोरश्मिसम्बन्ध घटित अर्चिरादि पर्वनिगिष्ट देवयानपथसे ब्रह्मलोकको गमन करते हैं, वे सब उपासकगण चन्द्रलोकगत उपासकोंकी तरह भोगक्षयके बाद पुन इम लोकमें जन्म नहीं लेते। इस पृथ्वीसे तृतीय स्वर्गमें ब्रह्मलोक है। यहा 'अर' और 'न्य' नामक समुद्रतुल्य सुधाहृद्, अन्नमय और मदकर सरोवर तथा अमृतवर्षी अश्वत्थ है। यह स्थान तस्यज्ञानो ब्रह्मोपासकको छोड़ कर दूसरेके लिये अगम्य है। यह लोक अजेय ब्रह्मपुरी है। यहा प्रभु ब्रह्माके त्रिनिर्मित हिरण्यमय गृह है। उपासना द्वारा ब्रह्मलोक प्राप्त होनेसे फिर यहासे लौटना नहीं पड़ता। उपासक ब्रह्मलोकमें जा कर अमर होते हैं अर्थात् मुक्तिलाभ करते हैं।

वेदान्त और ब्रह्म सन्ध देला।

ब्रह्मवैवर्त ( स० पु० ) १ परब्रह्मरूप सत्यधर्मका प्रचारक ।  
२ वेदधर्मके प्रवर्तक आचार्य ।

ब्रह्मवत् ( स० लि० ) ब्रह्मवा ब्रह्मज्ञान सम्पन्न । वेदसम्बन्धीय ।

ब्रह्मवद ( स० पु० ) सम्प्रदायविशेष ।

ब्रह्मवध ( स० ह्री० ) ब्रह्म वेदस्तस्य वदन ( वद-मुनि-न्यप् ) । पा १३।१।६ इति भावे यत् । ब्रह्माका पाप्य ।

ब्रह्मवधा ( स० लि० ) ब्रह्मणा वेदेन उच्यते या ब्रह्मवध द्वाप् । कथा ।

ब्रह्मवध ( स० पु० ) ब्राह्मणहत्या ।

ब्रह्मवध्या ( स० पु० ) ब्रह्महत्या, ब्राह्मण वध ।

ब्रह्मवध्याकृत ( स० ह्री० ) ब्राह्मण हत्याजनित पाप ।

ब्रह्मवर्षि ( स० लि० ) ब्राह्मणपुराण ।

ब्रह्मवर्षस ( स० ह्री० ) ब्रह्मणो वेदस्य तपसो या वर्चस्तेजः । १ यह शक्ति जो ब्रह्मण तप और व्याध्याय द्वारा प्राप्त करे । २ ब्रह्मतेज । मनुमें लिखा है कि ऋषिगण दीर्घकाल तक सन्ध्याका अनुष्ठान करते हैं, इस कारण वे

दीर्घ आयु, प्रज्ञा, यश, कीर्ति और ब्रह्मतेज प्राप्त करते हैं ।  
ब्रह्मवर्षस्विन ( स० पु० ) ब्रह्मणो वर्चः समासान्तविधेरनित्यत्वात् न अचसमासान्त ततोऽस्त्यर्थे त्रिनि । ब्रह्मतेजोयुक्त, ब्रह्मतेजमाला ।

ब्रह्मवत्तं ( स० पु० ) ब्रह्मणा ब्राह्मणाना यत्तं वर्चनं यस्मिन् । ब्रह्मवत्तद्वेद्य ।

ब्रह्मवद न ( स० ह्री० ) ब्रह्मणस्तपसो वदन् यस्मात् । ताम्र, ताँबा ।

ब्रह्मवल ( स० पु० ) सम्प्रदायविशेष ।

ब्रह्मवन्ती ( स० स्त्री० ) लताविशेष ।

ब्रह्मवाटीय ( स० पु० ) मुक्तिभेद ।

ब्रह्मवाद ( स० पु० ) ब्रह्मणो वेदस्य वादो वदन पठन मिति यावत् । १ वेदपाठ, वेदना पठना पठाना । २ यह सिद्धान्त जिसमें शुद्ध चैतन्य मात्रको सत्ता स्वीकार की जाय, अनात्मको सत्ता न मानी जाय ।

ब्रह्मवादिन् ( स० पु० ) ब्रह्मवाद वेदपाठोऽस्यास्तीति ब्रह्मवादं णिनि । वेदवक्ता, वेदपाठक । पर्याय—वेदान्तो ।

ब्रह्मवादिनो ( स० स्त्री० ) ब्रह्मवादिन् स्त्रीप् । गायत्री ।

ब्रह्मवाच ( स० ह्री० ) ब्रह्मज्ञान विषयमें प्रतियोगिता ।

ब्रह्मवल्लुङ्ग ( स० ह्री० ) तीर्थभेद ।

ब्रह्मवास ( स० पु० ) ब्रह्मणो वास । ब्रह्मलोक ।

ब्रह्मवाहस ( स० लि० ) ब्राह्मणा मन्त्ररूपवेदेन ऋषयो ब्रह्मकर्मणि याहु अस्मिन् णिष् । मन्त्र द्वारा प्राप्यमान ।

ब्रह्मवित्त्व ( स० ह्री० ) ब्रह्मविद्येो भावः त्वः । ब्रह्मविद्युका भाव या धर्म ।

ब्रह्मविद् ( स० पु० ) ब्रह्मस्वरूपतया वेत्ति आत्मानं विद्-विप् । १ ब्राह्मत्वैक्यवेत्ता । २ विष्णु । ३ शिव । ( लि० ) ४ वेदाध्यक्षाता, वेदका अर्थ जाननेवाला ।

ब्रह्मविद्या ( स० स्त्री० ) ब्रह्मणो ब्रह्मविद्यिणी या विद्या । १ ब्रह्मज्ञान । २ दुर्गा । ३ उपनिषद्भेद, यह विद्या जिसके द्वारा कोर्षेय्यक ब्रह्मको जान सके ।

ब्रह्मविद्यातीर्थ ( स० पु० ) एक प्रस्थकार ।

ब्रह्मविद्विप् ( स० लि० ) वेद या ब्राह्मणकी दिक्षा, द्वेष या पूजाकारो ।

ब्रह्मविद्वन् ( स० पु० ) ब्रह्मणो विद्यवदन् ६-जत् । १ तपोवर्द्धक । २ विष्णु । ( ह्री० ) ३ तप आदिवा से वर्द्धन ।

ब्रह्मणः ( स० पु० ) नशाभया प्रसितो वृक्ष वा ब्रह्मणो  
वेदकर्माद्यं यो वृक्षः । १ पत्राज वृक्षः । २ उडम्बर,  
गुल्फवा पेड ।

ब्रह्मवृत्ति ( स० स्त्री० ) ब्रह्मणो ब्राह्मणस्य वृत्तिर्ब्रह्मणो  
पाप । १ ब्राह्मणका जीवन्मोपाय, ब्राह्मणकी जीविना ।  
२ ब्रह्माकार अन्त करणावृत्ति ।

ब्रह्मवृत्त ( स० लि० ) जप तप द्वारा चर्हितगतिकि या तन्  
संगण ।

ब्रह्मवृत्त ( स० स्त्री० ) ब्राह्मण-समा ।

ब्रह्मवृत्त ( स० स्त्री० ) ब्रह्मप्रतिष्ठित नगरभेद ।

ब्रह्मवेद ( स० पु० ) ब्रह्मणो वेद एवा ई-तन् । ब्रह्म  
ज्ञान । २ ब्रह्मप्रतिपादक वेदभाग । ३ वेदान्त ।

ब्रह्मवेदमय ( स० लि० ) ब्रह्ममयेदमुक्त्वा ।

ब्रह्मवेदो ( सं० स्त्री० ) ब्रह्मणो वेदिरिव । १ वेदप्रियोगेप ।  
२ ब्रह्मके वेदोका आसन ।

ब्रह्मवेदिन् ( स० लि० ) ब्रह्म विद् विन् । ब्रह्मविद्,  
ब्रह्ममत्तपथ ।

ब्रह्मवैषत् ( स० स्त्री० ) विद्वितरेव वैषमं स्वार्थे धनु, ब्रह्मणो  
वैषमं विरोधेण विद्वितरेव । १ यह प्रतीति मात्र जो  
ब्रह्मके कारण हो । २ ब्रह्मके कारण प्रतीति होनेवाला  
जगत्, ब्रह्मका विपत्तं जगत् । विपत्तं और विकारका  
सङ्गण हम प्रकार है ।

“वास्तवज्ञानधामया विकार इत्युदाहृत ।

कारणताज्ञानधामया विरक्त इत्युदाहृत ॥”

( वेदान्त० )

एक प्रकारकी वस्तु अन्य प्रकारकी होनेमें विकार  
और अन्वया प्रतीत होनेमें विपत्तं होता है । दूधमें  
सूदा होनेका विकार और रजसुका सर्पाकारमें प्रतीत होना  
विपत्तं है । जगत् ब्रह्मका विकार नहीं है, किन्तु  
विपत्तं है । इसीको ब्रह्मवैषम्य कहते हैं । ३ अकारक  
पुत्रादींमेंसे वा पुत्राज ओ वृक्षा मणि सम्बन्धो है । इसमें  
ब्रह्मका अन्वयो तद्वद विपत्तया क्रिया मत्ता है, इसीसे  
इसका नाम ब्रह्मवैषम्य पडा है । विद्वत् विरक्त्य पुत्राज  
सम्बन्धं वेत्त ।

ब्रह्मवैषम्य ( स० स्त्री० ) ब्रह्मविपत्तः । यह भावनी चर्च-वृत्त

परना होता है । जो यह भाव करने हैं उन्हें ब्रह्मवैषम्यका  
प्राप्ति होनेो है ।

ब्रह्मवैषम्य ( सं० पु० ) ब्रह्मो यं गुणम शून्यं अन्तर्गतो यत्प,  
अनि गून्मात्रमन्वात् तथास्य । सोमय-क, वृक्षका पेड ।

ब्रह्मवैषम्य ( स० स्त्री० ) १ तीर्थभेद । २ वेद पट्टीका  
घर ।

ब्रह्मवैषम्य ( सं० स्त्री० ) ब्रह्मण शान्त्य विणयो उपदेशो  
या यस्मिन् । १ ब्रह्मविचार वृद्ध । इसका पर्याय धर्म  
कीलक है । २ ब्रह्मको वाषा या उन सब वाषांमें ब्रह्म  
परचूर्ण नियोजन । ३ वेद या स्मृतिकी भाषा । भाषा  
रचनकारो ब्रह्मवेदोको नरका होता है । ४ विधाताका  
अनुशासन या कर्त्तव्यरूप उपदेश । ५ वेद । ६ गयव्रीष  
के पूर्व-वृक्षिणवाणमें गङ्गाके दूसरे किनारे अवस्थित एक  
ग्राम । ७ यह ग्राम या भूमि जो राजाकी ओरमें ब्राह्मण  
को दी गई हो ।

ब्रह्मवैषम्य ( स० स्त्री० ) धारकभेद । इसका उल्लेख रामायण  
और महाभारत दोनोंमें है । इस अजना चलाना अगम्य  
से सोच कर प्राणाचार्यो अर्जुन और अभ्युपगामको  
सिखाया था । ( भारत कीर्ति० १२ अ० )

ब्रह्मवैषम्य ( स० लि० ) अनिपयसाधन मन्त्र द्वारा  
अल्पज्ञ ।

ब्रह्मवैषम्य ( स० लि० ) सामभेद ।

ब्रह्मवैषम्य ( स० लि० ) ब्रह्मणा संशित ३ तत् । मन्त्र  
द्वारा तोड़पीठन ।

ब्रह्मवैषम्य ( स० स्त्री० ) ब्रह्मलोक या ब्रह्ममन्त्र ।

ब्रह्मवैषम्य ( स० लि० ) १ ब्रह्ममें सम्पूर्णभावसे लिपित । २  
ब्रह्मज्ञानमय ।

ब्रह्मवैषम्य ( सं० स्त्री० ) वैशनाथाचारसिद्धान्त अन्वयायना  
रसक प्रथमभेद, भगवत्सुमिद्वान्त सं-ब्रह्म-मन्त्रविशेष ।

ब्रह्मवैषम्य ( स० स्त्री० ) मन्त्रमयो गद्दी ।

ब्रह्मवैषम्य ( स० स्त्री० ) ब्रह्म वेदमन्त्राकारक मन्त्र । ब्रह्मवैषम्य,  
विशिष्टपूर्व वेदपाठ ।

ब्रह्मवैषम्य ( स० लि० ) ब्रह्ममन्त्र मन्त्रपर्यो हवि । ब्रह्मवैषम्य  
कारक ।

ब्रह्मवैषम्य ( स० स्त्री० ) साक्षात्सिद्ध मन्त्र भाषासे स्मृत्  
३ तत् । यद्यपि ब्रह्मणो भावस्य साक्षात्सिद्ध

भासन जो वारुणी काष्ठना और कुशसे ढका हुआ होता था। ( कात्या० श्रौत० २।१।२ ) ० द्विरप्यवर्गं सदन । ३ तीर्थभेद ।

ब्रह्मसदस् ( स० ह्यो० ) ब्रह्माका आलय ।

ब्रह्मसभा ( स० र्यो० ) ब्रह्माकी समिति ।

ब्रह्मसमाज ( स० पु० ) एक नया संप्रदाय जिसके प्रवर्तक

बंगालके राजा राममोहनराय थे । ब्रह्मसमाज देखो ।

ब्रह्मसम्भव ( स० पु० ) द्विपृष्ठ नामक जैनविशेष ।

ब्रह्मसर ( स० ह्यो० ) तीर्थभेद । इस तीर्थमें जा कर एक

रति पास करनेसे ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है । ब्रह्माने

स्वयं इस सरोवरमें एक श्रेष्ठ यूप उषिद्धत किया था ।

इस यूपका प्रदक्षिण करनेसे वाजपेय-यज्ञका फललभ

होता है । ( भारत ३।८।१७६ )

ब्रह्मसर्प ( स० पु० ) ब्रह्मसृष्टि सप । सर्पविशेष । पर्याय—

हलाहल, अश्वत्थाना ।

ब्रह्मसव ( स० पु० ) ब्रह्मसव ।

ब्रह्मसागर ( स० पु० ) तीर्थभेद ।

ब्रह्मसामन् ( स० ह्यो० ) सामभेद ।

ब्रह्मसायुज्य ( स० ह्यो० ) युनक्तोति युज ( इगुक्तेति । पा

३।१।१५ ) क । तत ( तिन गृहेति । पा २।२।२८ ) इति बहु

ग्रीहि । ब्रह्मका भाव । पर्याय—ब्रह्मभूय, ब्रह्मत्व, ब्रह्म

सायुज्य ।

ब्रह्मसार्धिता ( स० स्त्री० ) ब्रह्मण सार्धिता समान

गतिता । ब्रह्मतुल्य गतित्व ।

ब्रह्मसावर्णि ( स० पु० ) ब्रह्मपुत्रो सावर्णि । दशम मनु

भेद । भागवतके अनुसार इनके मन्त्रन्तरमें त्रियम्बके

अपतार और इन्द्र, शम्भु, सुवासन विरुद्ध इत्यादि देवता

होंगे । ( भागव० ८।१३ अ० )

ब्रह्मसिद्धान्त ( स० पु० ) पैतामह ज्योतिषसिद्धांतभेद ।

ब्रह्मसुत ( स० पु० ) ब्रह्मण सुत । १ वेनुभेद । २ मरीचि

भृति ब्रह्माके पुत्र ।

ब्रह्मसुता ( स० स्त्री० ) सररजती ।

ब्रह्मसुवर्चला ( स० स्त्री० ) १ तन्नामक औषधिविशेष ।

२ आदित्यमत्का, हुरहुज या हुरहुज नामका पीथा । पहले

तपस्यो लोभ इसका कष्टना रस पीते थे । ३ ब्राह्मी

शाक ।

ब्रह्मसू ( स० पु० ) चतुर्विधत्व विष्णुकी एक मूर्ति,

अनिरुद्ध अजतार । पर्याय—उपापति, प्रद्युम्न, काम  
देव । कत्यांतरमें ब्रह्मा अनिरुद्धसे उत्पन्न हुए थे ।

( मद्भ्युराण्य )

यलसूत्र ( स० ह्यो० ) ब्रह्मणि घेदप्रहणकाले उपनयन-

ममये धृत यत् सूत्र । १ यज्ञसूत्र, जनेऊ । पर्याय—

पवित्र, यज्ञोपवीत, द्विजायनो, उपवीत, साधित, साधिली

सूत्र । २ व्यासका शारीरिक सूत्र जिसमें ब्रह्माका प्रति

पादक है और जो वेदातदर्शनका आधार है ।

ब्रह्मसूत्रिन् ( स० त्रि० ) ब्रह्मसूत्र अस्त्यर्थे इनि । ब्रह्म-

सूत्रधारी, यज्ञसूत्री ।

ब्रह्मसूत्र ( स० पु० ) ब्रह्मण सूत्र पुत्र । १ इक्ष्वाकु-

वशीन्द्रय राजविशेष । पर्याय—ब्रह्मदत्त । २ ब्रह्मपुत्र ।

ब्रह्मसूत्र ( स० पु० ) १ ब्रह्माको उत्पन्न करनेवाला । २

शिवका एक नाम ।

ब्रह्मस्तम्भ ( स० पु० ) ब्रह्माके आश्रयस्वरूप जगद्दे-

ब्रह्माण्ड ।

ब्रह्मस्तेय ( स० पु० ) ब्रह्मण स्तेय इ-तत् । गुप्तकी

विना अनुमतिके अन्यको पढाया हुआ पाठ सुन कर

अध्ययन करना । ( मनु २।११६ )

ब्रह्मस्थल ( स० ह्यो० ) नगरभेद ।

ब्रह्मस्थान ( स० ह्यो० ) ब्रह्मण स्थान इ-तत् । तीर्थ

भेद ।

ब्रह्मस्य ( स० ह्यो० ) ब्रह्मणो ब्राह्मणस्य स्व घन । ब्राह्मण

सम्बन्धि घन । ब्राह्मणका घन तर्फी सुराना चादिपे,

सुरासे उन्ने भारी पाप होता है तथा जब तक सूर्य

चन्द्रमा रहेगे, तब तक घट नरकमें बास करता है ।

( ब्रह्मवैवर्त प्रवृत्त० ४६ अ० )

ब्रह्मस्वरूप ( स० पु० ) १ ब्रह्म । २ जगत्प्रवृत्तिक

प्रतिरूप । र्योलिङ्गमें ब्रह्ममस्वरूप और ब्रह्ममस्वरूपिणी

पद होता है । ३ मूल प्रवृत्तिकरूप भगवती ।

ब्रह्महत्या ( स० स्त्री० ) ब्रह्मणो हना ( हन्त्व ८।३।१

१०८ ) इति भावे ष्यप, तकारोऽन्तादेनाश्च स्त्रीत्व

लोकान् । ग्राह्यभणवध । यह एक महापातक है ।

“ब्रह्महत्या मुराचानं स्तेयं गुण्डानाम् ।

महान्त्वि पालकान्दय रयवाभारि ते खर ॥” ( मनु )

ब्रह्महत्या, सुगायन, शेष, मुद्राजो गनन और इतरज म मर्ग मो महापातक है।

ब्रह्महत्याविधिवानो देवताका मरुप ब्रह्मपैवसै-पुत्रात्म इम प्रकार वर्णित है,—

“एतद्व्रतस्यैवात्मानं ब्रह्मस्यैवात्मानम् ।  
एतद्व्रतस्यैवात्मानं वा शुक्रपरीक्षितमुक्तुः ॥  
इत्येवमायदन्ता म्नाभ्योऽन्व कलरः ।  
भारतं परिभारतौ बन्दिता इत्येवमन् ॥  
सकृद्व्रतं द्वापन् अ द्वादीना च मूर्च्छन् ॥  
इ हो एतन्ना च ता परां स्मार स्मार मुपोऽनन् ॥  
विना मन्वगवो मृषाततुम्वक्त्र ॥”

( ब्रह्मसंहिता ० भीष्मपर्व ० ५० म० )

ब्रह्महत्याकृतित महापातकको निरुत्तिके लिये प्रायश्चित्त करना विधेय है। इस प्रायश्चित्तका विषय प्रायश्चित्त विधेयमें विलून भावसे वर्णित है। ब्रह्म मज यदि बिना जागे प्रातनकष करे, तो उसे पापदान्तिके लिये बाण्ड वर्ष प्रतापुष्ठार करना चाहिये। प्रायश्चित्त विधेयमें लिखा है—

“ब्रह्महा द्वात्प्रस्यो जुगो वृता वा वग्ना ।  
भेदवाववात्मस्युत्सर्गं कुरुम “वीरोधमम् ॥  
मिज्ञां विरोधमं वपैवदि १ जीरति ॥”

( गृ ११०१ )

यदि इस द्वादन पार्षिक मरुका अनुष्ठान करेमें भगमर्ग हो, तो १८० धेनुदान करना चाहिये और यदि यह भी न कर सके, तो मूर्च्छादान करना भावश्यक है। इसमें ५४० कार्यापन उत्सर्ग और १०० कार्यापन दक्षिणा देणे होगी है। अनन्तर प्रायश्चित्तके विधानानुसार प्रायश्चित्त करना होगा। प्रायश्चित्तित इस प्रकार प्रायश्चित्तानुष्ठान करनेसे ब्रह्महत्यापातक जागा रहता है।

ब्रह्म मज यदि सातवर्षक ब्रह्महत्या करे, तो उसे त्रिगुण द्वादनपार्षिक मरुका अनुष्ठान करना होगा। यदि यतना न कर सके, तो ३६० धेनुदान, उसके समायमें १०८० कार्यापन उत्सर्ग और २०० कार्यापन दक्षिणा मरुकर दे। अनन्तर ये प्रायश्चित्तके विधानानुसार प्रायश्चित्त करे। शरिप यदि भ्रष्टाण प्रातनहत्या करे, तो उसके लिये प्रायश्चित्तका कषके प्रायश्चित्तको दूना

प्रायश्चित्त विधेय है। इत्यापूर्वक प्रतनहत्या करनेसे उसे पूर्वोक्त प्रायश्चित्तके दूना करना होगा।

वैश्य समाजत यदि प्रायहत्या करे, तो उसे एतमेम वर्ग मज करना होगा। यदि उसमें गजता हो, तो ५४० धेनुदान और उसके भी समायमें १६२० कार्यापन दान और ४०० कार्यापन दक्षिणा मरुकर दे। इत्यापूर्वक करनेसे उसको ०२ वर्ष प्रतापुष्ठार करना होगा। इसमें भगमर्ग होसे १०८० धेनुदान और उसके अन्याय में ३२४० कार्यापन दान और ४०० कार्यापन दक्षिणा दे। ब्रह्म यदि भ्रष्टाणतः प्रायहत्या करे, तो उसे ४८ वर्ष मज करना होगा। भगमर्गके लिये ०२० धेनुदान और उसके समायमें २१६० कार्यापन उत्सर्ग तथा ४०० कार्यापन दक्षिणा देना विधेय है। सातवर्षक करनेसे इसके दूने प्रायश्चित्तका अनुष्ठान भावश्यक है।

( मर्षा-विधेय )

प्रायश्चित्तपुत्राणमें सातदिनिम ब्रह्महत्याका विषय इस प्रकार लिखा है :—

धौरण, निय, गणेश और सूर्य सादि देवताओंकी पुत्राणमें जो भेद समझता है, उसे प्रायहत्याका पाप लगता है। गुरु, इष्टदेवता, जननाका, पिता और माता सादि गुरुजनके प्रतिभेद समझनेसे भी ब्रह्महत्याका पाप होता है। जो हरिषे पादोदकके साथ अन्य देवताक पादोदककी गुग्ना करने और विशु विष्णुसामन तथा मर्गशक्तिस्वरुपा प्रहृतिनी पिना करती हैं उन्हें भी ब्रह्महत्याका पाप लगता है। भारतवर्षमें धामुदाको दिनों मूलतः, जन्में जीवादित्याग, गुरु, माता, पिता, माध्या र्मों और अनाथाका पातन पोषण नहीं करनेसे ब्रह्महत्यापातक होता है।

प्रायश्चित्तानुगणकके प्रहृतिगण्ड ३०में अण्णापानं इसका विष्णु विवरण लिखा है। विष्णार हो जाणे के मयसे बहा कुरुका उल्लेख नहीं किया गया।

प्रश्न ( म० पु० ) ब्रह्मार्ज्य ब्राह्मणं कृत्वात्तुं प्रश्न इव ( मर्षा-विधेय ) विवर । वा शान्तिः ) इति विष्णु । प्रश्न, प्रायश्चित्तके दूना कर्तव्यता । मर्षा-विधेय ।

ब्रह्महत्यापरि महापातककारी अनेकों वर्ग मरुका आंग करके पांडे पुत्रो, गृह्य, गदटे, ऊ २, कदरे, भेद्रे,

मृग, पक्षी, खण्डाल और पुष्प आदि योनियों में जन्म लेते हैं ।

“अशुकरस्योद्भवां गोऽजविमृगपक्षिषाम् ।

अप्यहोतृपुष्पकृशानाञ्च ब्रह्महा योनिमृच्छति ॥”

( मनु १२/१५ )

ब्रह्महविस् ( स० कृ० ) ब्रह्मैव हविरर्प्यमाणमाप्य ।  
अर्प्यमाणं हवि ।

“ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्मणो ब्रह्मया हुतम् ।

“ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्म समाधिना ॥” (गीता ४/१०)

ब्रह्महुत ( स० कृ० ) ब्रह्मणि ब्रह्मणे हुतं दत्त ब्रह्मपदमत्र  
उपलक्षणं तेन नृमान्ने बोध्य । पञ्चमहायज्ञके अर्थात्  
अग्निपूजनरूप यज्ञविशेष ।

ब्रह्महृदय ( स० पु० ) नक्षत्रभेद, प्रथमवर्गके १६ नक्षत्रों में  
से एक नक्षत्र जिसे अक्षरेजोमें कैपेला ( Capella ) कहते  
हैं ।

ब्रह्महृत् ( स० पु० ) हृदयविशेष ।

ब्रह्मा ( स० पु० ) ब्रह्म देखो ।

ब्रह्माक्षर ( सं० कृ० ) प्रणव, ओङ्कार ।

ब्रह्माक्षरमय ( सं० लि० ) ब्रह्माक्षर मयत् । मत्र ।

ब्रह्माम् ( स० पु० ) ब्रह्मणोऽग्ने सम्मुपे भवतीति भू  
विवप्, यन्नाथं ब्रह्मणो देहाज्ञातत्वात् तथात्व । घोटक,  
घोडा ।

ब्रह्माञ्जलि ( स० पु० ) ब्रह्मणे वेदपाठार्थं कृत्वा योऽ  
ञ्जलि । १ सामवेद पाठके समय स्वरविभागार्थं जो  
अञ्जलि को जाती है, उसका नाम ब्रह्माञ्जलि है । २ वेद-  
पाठार्थं गुरुके निरुद्ध फर्त्तव्य यिनवाञ्जलि ।

ब्रह्माणो ( स० स्त्री० ) ब्रह्माणमणति कीर्त्तयतीति अण्  
शब्दे कर्मण्यण् ङीप्, या ब्रह्माणमानयति जीवयतीति  
अन् प्राणो ज्यन्तादस्मात् कर्मणि अणि ष्टे ( गेरुणिटि ।  
पा ६/१/११ ) इति णिलोप , ततो ङीप् पूर्यपदादिति  
णत्वञ्च । ब्रह्माकी पत्नी । ब्रह्माके आधे शरीरमे  
इनकी उत्पत्ति हुई है । इनका नामान्तर साविकी, सरम्पती  
और गायत्री है । २ दुगा । ३ रेणुका नामक गन्धद्रव्य ।  
४ एक छोटी नदी जो कटकके जिलेमें पैतरणी नदीसे  
निकलती है ।

ब्रह्माण्ड ( सं० कृ० ) ब्रह्मणो जगत्प्रदुरण्डम् । १ चतु  
द्वैत्रमुपन, चिदहो भुवनोऽसौ समूह, गोलक । ब्रह्मणा  
विश्वरुचा हुतमण्डम् । २ भुवनकोप, विश्वगोलक ।  
मनुमें लिखा है, कि स्वयंभू भगवान्ने प्रजासृष्टिको इच्छासे  
पहले जलनी (सृष्टि की) और उसमें बीज फेंका । बीज  
पड़ते ही सूर्यके समान प्रकाशगाला स्वर्णमि अद्द या  
गोल उत्पन्न हुआ । पितामह ब्रह्माका इसी अद्द या  
ज्योतिर्गोलकमें जन्म हुआ । उसमें अपने एक सत्रत्सर  
तक निवास करके उन्होंने ४१ नरलसे उसके आधे आध  
दो छाप किये । ऊर्ध्वखण्डमें स्वर्ग आदि लोकोंकी और  
अधोखण्डमें पृथ्वी आदिकी रचना की तथा मध्यभागमें  
आकाश अष्टदिक और मनुज आदि स्थापित किये ।  
विश्वगोलक इसीलिये ब्रह्माण्ड कहा जाता है ।

( मनुस्मृति १ अध्याय )

विष्णुपुराणमें लिखा है, कि भगवान् ब्रह्माने एक  
अण्ड या गोल उत्पादन किया । वह प्राणत अण्ड भूतों  
की महायतासे घेरे घेरे बढता गया । अत्यन्तरूप  
जगत्पति विष्णु व्यक्तरूपी हो ब्रह्मस्वरूपमें उस अण्डमें  
व्यवस्थित हुए । सुमेय इमका उद्व अर्थात् गर्भवेष्टन  
चर्म, अन्धान्य महोदर जरायु और समुद्र गर्भदिक हुआ ।  
पोछे उस अण्डने पवन सहित समस्त द्वीप, समुद्र और  
सदेवासुर मनुष्य आदि उत्पन्न हुए । ब्रह्माके अण्डसे  
उत्पन्न होनेके कारण इसका ब्रह्माण्ड नाम पडा ।

( विष्णुपुराण १/२ म० )

ब्रह्मवेदसंपुराणमें श्रीरुद्राण्डमण्डलके ८४वें अध्याय  
में ब्रह्माण्डकी उत्पत्तिका विवरण लिपिवद्ध है ।  
विस्तार हो जानेके भयसे यहां पर कुछ नहीं लिखा  
गया । सूर्यसिद्धान्त और सिद्धान्त गिरोमणि आदि  
ग्रन्थोंमें भी ब्रह्माण्डकी उत्पत्ति कथाका वर्णन किया  
गया है । बिल्कुल विवरण समाप्त, श्रुति और भूगोल सूत्रमें  
दना ।

० महादान विशेष । पुण्यदिनमें तुल्यपुरुष दानके  
विधानानुसारसे यह दान विधेय है । सुपुत्रं ह्यार  
ब्रह्माण्ड प्रस्तुत करके उनमें अष्टदिग्गज, पद्मेदाहू,  
अष्टलोकपाल, ब्रह्मादि देवगण, उमा, लक्ष्मी, वसु  
आदित्य और मरुत् आदि अर्पित करे । यह

निर्दिष्ट ब्रह्माण्ड मी उगनीका होना चाहिये । उसके पूर्वमें ब्रह्माण्डका, पूर्वदक्षिणमें प्रमुञ्ज, अक्षिणमें प्रदक्षिणी और मध्यमें पश्चिममें चार्णो वेद और अनिष्टक तथा उत्तरमें अग्नि और वायुदेवी मुक्ति अर्द्धि रदं गी । पीछे पश्चादिषान् पृथा और होमाग्नि करने मुबर्ण प्रमाण्डका तीन बार प्रदक्षिण करना होगा । प्रदक्षिण करनेका मन्त्र इस प्रकार है,—

‘ नरात्तु विभ्रर विभ्रवान् उभ्रुर्मान् मगधन्मन्त्र ।  
 गन्धान्देवान्भूतान्प्रेतान् गन्धान्प्रेतान् भूतान् ॥  
 ते दुर्विचारेण विभ्रो मन्त्रुः प्रमाण्डं पावति चरातापान् ।  
 तस्मात्प्रमाण्डात्सर्वान् ब्रह्माण्डदण्डं प्रत्येकं मन्त्रुः ॥”

( ब्रह्माण्डपुराण ११० अ० )

यह प्रमाण्ड दान करनेसे सभी पाप जाने रहते हैं । उक्त महापुराणके २००वें अध्यायमें इसका विस्तृत विवरण दिया है । ब्राह्मणपुराणमें भी इस दानका विधान देवनेमें कहा है । वास्तव मासकी शुक्लद्वादशी या पूर्णिमाका दिन सुषुर्णमित्त ब्रह्माण्ड दान करनेसे सुधियो स्थित सभी वस्तुके दानमें जो पुण्य है, यही पुण्य प्राप्त होता है ।

“अस्माकं देवदेवोऽग्निर्वासी ज्ञानी पतिर्वा ।

वासी देवर्वासी वास्तु ममापात्रं कर्त्तव्यं परम् ॥”

( ऋग्वेद १० )

३ शोषण, कषाल । ४ दण्ड गिण्डास भेद ।

ब्रह्माण्डपुराण ( स० पु० ) अठारह महापुराणके अन्तमें एक पुण्य । यह पुण्य पूर्य और उत्तर भागमें तथा प्राग्ज्या, मधुपद्म, उपोक्षात और उत्तर द्वार नामक चार भागमें विभक्त है । इसकी स्तोत्र मन्त्रका १० उद्धार है । ७वें उपाख्यमें यह महापुराण वक्त्रोपमें तथा तथा धार और यही कविभाषामें इसका मधुपाद हुआ था । विष्णु विरच्य पुण्य और ब्रह्मण्डल नामों से यह ।

ब्रह्माण्ड ( स० पु० ) प्रधान आत्मन शरीरान् अध्यात्मि ब्रह्माण्डम् भूक्ति । अन्ध, भेदः । मूढताका एक उपाख्यमें विरक्त है कि घोडा अन्धके जन्तुके उपाख्य हुआ है । अन्धुरापाय । आध्यात्म उपाख्य अर्थ इस प्रकार किया है ‘अन्ध नामक ब्रह्माग्नि ब्रह्माण्डे उपोख्ये उपाख्य पूर्य ।’ ( ब्रह्माण्डपुराण १०० अ० ) इतिवत् इति वदन्त्याम् ।

ब्रह्मादिज्ञाता ( स० खो० ) प्रधान आदिपाला मन्त्रुता । गोदापरी ।

ब्रह्मादिरूप—विद्यारूपदन् और प्रकृतान वा प्रमाण्डके नामक प्रथमे प्रणेता, मोक्षोपलब्धि पुत्र । इतना मन्त्रुता नाम ब्रह्माके भी भा ।

ब्रह्माण्ड ( स० पु० ) ब्रह्मण्युक्त आत्मान्, ब्रह्माण्डके उत्तरमें आत्मनि । यह आत्मान् सब आत्मान्में भेद है । प्रमाण्डात्मान् होने पर जो आत्मान् होता है, उसीका नाम ब्रह्माण्ड है ।

ब्रह्माण्ड—१ मेकलाख्योके शिष्य । इन्होंने पटञ्जल दीपिका, शकानन्दतरङ्गिणी, भाष्यार्थदीपिका आनन्दहरटोषा, विपुलाख्यनरहस्य और ज्योत्स्ना ( दृष्ट प्रदीपिका ) नामक ग्रन्थ बनाये हैं । २ शिष्यलाकामृतके प्रणेता ।

ब्रह्माण्डविग्रि—धूमद्रापक्षु गीता टीकाके प्रणेता ।

ब्रह्माण्डमार्गो—१ भाग्यत पुण्यीकद्वाराव्यपगाके प्रणेता । २ रामान् और गोपायानन्दके शिष्य । इन्होंने गुरुदाचार्य एत दाक्षयसुधा और विष्णुमन्त्र नाम भाग्यको टीका लिगे हैं ।

ब्रह्माण्डयोगी—वैश्वि मित्रातके प्रणेता ।

ब्रह्माण्डमन्त्रपत्रो—१ आनन्दयोगी कपूरम्बोजटीकाके प्रणेता । २ चन्द्रभटा पतिवत्सुतोषर दाराक कविका । ३ देवाद्याख्योपनिषद्दशोपाख्य, देवाद्याख्योपनिषद्दशम्य, माण्डूक्योपनिषदनाथ्य और धैर्यागत्युक्तमुत्पन्नयोगी प्रभृति ग्रन्थके प्रणेता । ४ पुरुषार्थमेषोष प्रायत कर्ता । ५ नारायणतोष, परमाण्ड सरस्वती और विमोक्षणके शिष्य । इन्होंने अष्टतमिन्द्रिया वा लघु चन्द्रिका नामक मधुपद्मरुद्र अष्टतमिन्द्रिका एक टिप्पणी और अष्टतमिन्द्रियाविद्याना, विद्वान्निन्दुष्याय कथापटी, गीत ब्रह्माण्डो और ब्रह्माण्ड्याय नामक प्रकाशनाये हैं । ये उपाख्यतापत्रमें गीत ब्रह्माण्ड नामके परिचित थे ।

ब्रह्माण्डो—संज्ञायापदार्थके प्रणेता ।  
 ब्रह्मावत ( स० पु० ) ब्रह्माके प्रदक्षिण करनेके लक्ष्मणे उपाख्य, तथा पूर्यप्रादित्याय पापु । मूढताके उपाख्यताके उपाख्य । भाष्यके अर्थमें मूढताके अर्थ है इन्द्र, मन्त्रुति कथन्, शिरोमन्ता, प्रमाण्ड, प्राग्जि

ः और भूतराद्र ये सात राक्षस वाम करने हैं।

( विष्णुपु० २१०।१७ )

ब्रह्माभ्यास ( स० पु० ) ब्रह्मण वेदस्य अभ्यास । वेदाभ्यास ।

ब्रह्मायण ( स० त्रि० ) १ ब्रह्मका आश्रय स्थान । २ नारायणका नामान्तर ।

ब्रह्मायतन ( स० क्ली० ) ब्रह्मणः आयतन । १ ब्रह्मणका शृङ्गा २ ब्रह्ममन्दिर ।

“ब्रह्मायतने विप्रान् विनिर्हज्याद्ब्रामिने गोत्रे ।

( बृहत्स० ३३।२२ )

ब्रह्मणके घर पर उत्कापात होनेसे विप्रगणका विनाश होता है ।

ब्रह्मार्पण ( स० क्ली० ) ब्रह्मण वेदस्य अर्पणमिद । वेदपाठ भूमि ।

ब्रह्मार्पण ( स० क्ली० ) ब्रह्मैवार्पणम् । १ सचकमाद्यात्मन्यक रूपमें ब्रह्मचिन्तन ।

“ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्मग्नौ ब्रह्मणाहुतम् ॥”

( गीता ४।२५ )

२ परमात्मा ब्रह्ममें सर्वकर्म फलका त्याग । कर्मपुराणमें लिखा है—

ब्रह्मणसे जो कुछ दिया जाता है, यह फिर ब्रह्मको ही अर्पित होता है । हम लोग किसी कार्यके कर्ता नहीं हैं, ब्रह्म ही सबके कर्ता है । इस प्रकार हमको कर्मों के अर्पणका नाम ब्रह्मार्पण है । ( कर्मपु० ४ अ० )

ब्रह्मवर्त्त ( स० पु० ) ब्रह्मणा ब्रह्मनिष्ठब्रह्मणा तामावर्त्त इय, बहुलब्रह्मणाधयत्वाद्स्य तथात्त । १ देशविशेष । ‘सगन्धर्वी और वृषहती इन दो नदियोंके बीच जो प्रदेश पड़ता है, उसीका नाम ब्रह्मवर्त्त है । यह देश देवनिर्मित होनेके कारण पवित्र माना गया है । इस देशमें ब्राह्मणादि वर्णोंका जो आचार है, वही सदाचार कहलाता है ।

इस देशका आचार ही सबके शिष्यणोप है । अलग-अलग इसके कुछ क्षेत्र, मत्स्य, कान्यकुब्ज और मथुरा ये सब ब्रह्मवर्त्त हैं । बृहत्संहिता देखो ।

२ ब्रह्मवर्त्तमें अन्वयित एक तार्थका नाम ।

( भारत ३।५।४० )

ब्रह्मामन ( स० क्ली० ) ब्रह्मणे ब्रह्मप्राप्तौ आम्ना । ध्यानासन, योगासन । जिस आसन पर बैठ कर ब्रह्मध्यान किया जाता है, वह पद्म और स्वस्तिवादि आसन है । २ रुद्रयामनेक देवपूजाङ्ग आसन भेद ।

“ब्रह्मामनं तदा वदय यत्कृत्वा ब्राह्मण्या मनत् ।  
एव पादमूरी दत्त्वा तिष्ठ इत्यहृत्कृतिर्भनत् ॥”

( रुद्रयामन )

ऊपरमें एक पाद दे कर दण्डावृत्ति अवस्थान करनेसे ब्रह्मासन होता है । इस प्रकार आसन करके तपस्या करनेसे ब्रह्मन्वयलाभ होता है ।

ब्रह्मास्त्र ( स० क्ली० ) ब्रह्मास्त्ररूपमन्त्र । ब्रह्मस्म्यरूप अस्त्र विशेष । यह सब अस्त्रोंसे श्रेष्ठ है । मन्त्रपूत अस्त्रके इसका प्रयोग करना होता है ।

“तदा रामस्य वृद्धेऽत्र ब्रह्मास्त्रं प्रति रामणे ।  
नारायणविनायार्थं चिन्तित चेत्तुराननम् ॥” ( देवीपु० )

२ एक रसोपध जो सन्निपातमें दिया जाता है । यह रस पादे, गन्धक, सोर्गिया और काली मिर्चके योगसे बनता है ।

ब्रह्मास्य ( स० क्ली० ) ब्रह्मा या ब्रह्मणका गुण ।

ब्रह्माहुत ( स० त्रि० ) श्रुताहुति, जिसे आहुति यो गई हो ।

ब्रह्माहुति ( स० रत्नी० ) ब्रह्मैवाहुति । ब्रह्मवत्, वेदाध्ययन ।

ब्रह्मिन् ( स० पु० ) ब्रह्म वेदस्त्वपो वाऽस्त्यस्य शेरतया ब्रह्मादित्वादिनि, तिष्ठोप । १ वेद और तपस्याके श्रेणी भूत परमेस्वर । ब्रह्म वेदो वैद्यतयाऽस्त्यस्य इति । २ वेद और तदर्थाभिज्ञ ।

ब्रह्मिष्ठ ( स० त्रि० ) अतिशयने प्रदो इष्टन्, टिलोपः । अतिशय ब्रह्मण, ब्रह्मज्ञानमग्नयन् ।

ब्रह्मिष्ठा ( स० स्त्री० ) ब्रह्मिष्ठ-टाप् । दुर्गा ।

ब्रह्मी ( स० स्त्री० ) मेधाजनकन्यात् ब्रह्मणे हिता ब्रह्म मन्त्रवाह्यकान्त्र न सूक्ति । स्वनामण्यात् प्राकविशेष, ब्रह्मी प्राक । इसका गुण—मारक, शीतवीर्य, तिक्त, कषाय, मधुर, रस, लघु, मेधाजनक, शीतल, मधुरविपाक, आमुस्कट, रसायन, स्वर और स्मृतिशक्ति-वर्द्धक, पुष्ट, पाण्डु, मेह, रक्तदोष, काम, विष, शोथ और ज्वरनाशक ।

( भारत० ) बृहत्संहिता ३।५।४०



३ प्रभुगणकमन्त्र, एव प्रसादो मन्त्रो ओ विओ  
वशः वरमं हो वरतो ही । ३ वज्रिका भार्गवो ।

प्रभोपूत ( म ० प्री० ) प्रभोपात पूत । पूतीरधि विरोध ।  
इसका दूसरा नाम भास्वरोपूत है । प्रस्तुत प्रसादो—  
मूल और एव शक्ति प्रसादाकारक जन्मं धा का  
ऊपरमं वृद्धे; धामने उभवा हम तिरोट से, ज्ञानत  
यह हम १६ मंत्र, यत्न पूत ४ मंत्र, वरार्थ हरिष्ट,  
मालतोपुष, वृष्ट, निमोग, हरोवकी, प्रत्येकका हम एव  
यत्न और पीपल, विटल, सैश्वर्य, घोषो, वज, प्रत्येक दो  
मोत्र्य द्वारा यथाविधान धामो धामने पात्र करना  
होगा । यह पूत पात्र करनेसे श्वरविरति हू होतो है ।  
ओ कोविन्दो जैसा भयना वन्दस्वर बनाया चाहे  
उत्तै इस पूतका अर्थय संयत करना चाहिये । ७ दिन  
तक इस पूतका संयत कराने विचारनी तरह वन्दस्वर  
शरि एव मान संयत कराने धुतिपर होता है । इस  
पूतके संयत करनेसे वृष्ट, मर्ग, प्रेम और काननाम प्रदा  
मित एवं वज, वषो और अमिको वृद्धि होती है । ( भैरव  
राजसो अर्चोवधिका )

प्रभोपम ( म ० वि० ) अतिशयोक्ती प्रभो प्रदा संयतुत, टिणे ।  
प्रविष्ट, प्रसादानममन ।

प्रबेष्टमरत्ययो— १ यज्ञानपरिभाषाये प्रवेत्ता । २ वज  
प्रचरार । वयोऽट्टन वयोऽट्टनोदयमे इवका  
उत्प्रेग है ।

प्रबेष्टम्यायो— एव प्रचरार । वयोऽट्टनोदयमे इवका  
पन्विय देवनें साता है ।

प्रबेष्टय ( म ० वि० ) प्रवृत्ति लामि मेरे ओ भूत् पूवो  
द्वारिस्वाम् मापु । १ वारिस्वय । २ विष्णु ।

प्रबेष्टर - वाचनिसप्रवोषये प्रवेत्ता ।

प्रबेष्टरार्थ ( म ० प्री० ) मीर्यविरोध ।

प्रबेष्टर ( म ० पु० ) प्रव देवमुत्पत्ति उभक्त रयामं मन्त् ।  
वेदस्वामा । मनुते वेदस्वामोकी अनुवाकको वज  
रगता है ।

प्रबेष्टर ( म ० प्री० ) मीर्यवेत् ।

प्रबेष्ट ( म ० वि० ) प्रवृत्ति वा-साम्पू-परादेव उर्ध प्रवि  
रत् । इहामं प्रविप ।

प्रबेष्ट ( म ० वि० ) प्रदा वन्दस्वर उभयः प्रवर्धं वन्द ।

प्रवयन स्वामिक भाषादि, एव भूमि ओ प्रवयनको वज  
को जाय । प्रवोत्त भूमिका वर महो रगता ।

प्रवोत्तार्थ ( म ० प्री० ) मीर्यविरोध ।

प्रवोत्तर ( म ० पु० ) निय ।

प्रवोत्त ( म ० प्री० ) प्रवो वेदस्वय वदनें वृक्ष वद-वपत् । १  
प्रववाषय, वेदवाषय । २ प्रववका वाषय । ३ वृक्ष  
वयत ।

प्रवोत्ता ( म ० मी० ) प्रव वद वपत् टात् । प्रवो  
वथा ।

प्रवोत्तियत् ( म ० पु० ) उपनिश्वरियेव ।

प्रवोत्तियत् ( म ० पु० ) इन्द्रार्थं प्रवार्थं उपनयने इति, प्रव  
उप गा-मन्त् । १ वलानवृत्त । २ प्रववका उपनयन  
करानेवात्त ।

प्रवोत्त ( म ० प्री० ) प्रवो देवमोदा । यह मन्त्र जो यह  
मे श्रवितवर्तको दिया जाता है ।

“ वृक्षारो विष्णो वचमि भवामु ॥”  
( म ० प्री०/१० )

प्रवृष्ट ( वा मो-३ )— वलुगिम्नानरवा पावैर्यदेवामो जाति  
विरोध । विद्याके लीको हो ये लोग राजा मानते हैं ।  
इतकी भाषा बाहुँ है जो पारसी, पैगु या वटुको भाषामें  
क्यतरव है । १ मन्त्रपर और मराधर प्रवेदानं बहुवचनव

● प्रवृष्टवर्तु मेमनेके मत यह जाति कश्चित्क  
मन्त्रम वनुविनाशके पदान प्रवर्धे का वर वज है । इन  
कलहकत का प्रवोत्त शक्तिरितीय और भूमिस्वामिके उद्धारण  
भाषा बनाकर विन्दित कर रहे हैं । उनका वर भी मन्त्रम  
है, कि कर्तुं तत्र कर्तव्ये तद्व द्रवित वज गण-विद्य वज  
भारतव्य भवेत् । प्रवृष्टवर्तु करना है, कि उक्त वृष्टु  
हाथ और कश्चित्क तत्र कर्तुं इव इवो भाव है । वि-  
द्वे तद्वे उक्तो भाषामें प्रवयन वलु वलवभाषा प्रवेग  
जाता है । उनका पदान है, कि बाहुँतम मन्, वृष्टवर्तु  
वर्तुत वन्दस्वर मन्त्रम है । मन्त्रमन्दरक मन्त्रार्थ वज  
( म ० प्री० ) मन्त्रमन्दर वन्दस्वर वज और मन्त्रमन्दर मन्त्र  
वर्तु वन्दस्वर, भाषामें भवेत् । मन्त्रमन्दर के भाषा वि-  
द्वे मन्त्रमन्दर वज वज कर्तुं मन्त्र मन्त्रिने वज वज । कभी  
मन्त्र मन्त्रमन्दर वज वज कर्तुं मन्त्रमन्दर मन्त्रुं मन्त्रिने  
मन्त्र वज मन्त्रमन्दर कश्चित्क वज वज वज है ।

ब्राह्मण रहते हैं। साधारणतः इनके ७३ धाक हैं। प्रत्येक धाकके ऊपर एक एक सरदार आधिपत्य करते हैं। ये लोग वहाँ भी एक जगह स्थिर हो कर नहीं रहते। तोमन नामक पशमनिर्मित तम्बू ही इनका पासगृह और जयन तथा भोजनोपयोगी पानादि ही इनका अस्वभाव है। ये सबके सब हानपेली सम्प्रदायभुक्त मुनी मुसलमान हैं। इनका विश्वास है, कि स्वयं महम्मदने विशेष अनुग्रहपूर्वक इनके धर्मका पर्यवेक्षण करनेके लिये ४० साधुओंको भेज दिया था। बलुचिस्तानके उत्तरदिग्गतां चिहल-ती नामक पर्वत पर उक्त ४० जनोंकी समाधि है। उक्त ४० के अलावा उनके मध्य पीर, मुला या फनीर आदि दूसरे साधु मुसलमान नहीं हैं। सैन्डों हिन्दू और भिन्न भिन्न सम्प्रदायी मुसलमानगण इस पवित्र पर्वतके वशन करने आते हैं।

पठान और बलुचो जातिले इनके जागीरिक गठामें बहुत फर्क पड़ता है। कच्छ गण्डरके प्रगर सूर्यकर और पार्वतीय शीत तथा हिमना महन करके ये लोग स्वमाघत बलशाली हो गये हैं। ये लोग कर्मदक्ष श्रमिकार्थ निरत, सहिष्णु, सत्साहसो, उद्यमशील, शिकारी और योद्धा हैं। अर्धांग्धु हाने पर भी ये विश्वासी, विवादाशुन्य और हिंसाशुचिहीन हैं।

शीत अथवा प्रोथम ऋतुमें इनका पहनावा एक ही तरहका रहता है। तलवार, डाल और बन्दूक इनका प्रधान युद्धास्त्र है। आजकल ब्रिटिश सरकारके बम्बई सेनादलमें बहुत सी ब्राह्मण सेना काम करती हैं।

खिलासके र्वां स्वयं ब्राह्मण य जके और कुम्भराणी ब्राह्मणके प्रतिष्ठाता कुम्भरके च शहर हैं। इस ब्राह्मणके तीन धाक हैं। बालदजर्, खानी और कुम्भराणी। कुम्भराणी धाकके लोग शेष दो धाकोंकी बन्धा लेते हैं। खिलासपात ब्राह्मण जातिके प्रतिनिधिरूपमें राज नैतिक सम्बन्धको रक्षा करते हैं।

ब्राह्म (स० ६१०) ब्राह्मण इद, ब्राह्मण (तत्सर्व) पा ४। १२०) इत्यण् (नस्तद्धित) पा ६। १। १२४) इति टिप्पणे । १ ब्राह्मणोर्थात् । यद् तोष वृद्धागुष्टके मन्त्रमें अवन्धिया है। आचमन करते समय ब्राह्मणकी इस तोष पर जल रख कर आचमन करना चाहिये। हाथके दर्शिन और

अ गुष्टके उत्तर जो रेखा है, वही ब्राह्मणोर्थात् है। उसी रेखा पर जल ले कर आचमन करना होता है।

२ ब्राह्मणगण । ३ ब्राह्मणदेवताके अग्रप्रादि । (पु०) ब्राह्मणोऽपत्य पुमान् इति अन् । ४ नारद । ब्राह्मण इवाप मिति अन् । ५ त्रिग्राहविशेष, ब्राह्मणविवाह । महर्षि मनुने ब्राह्म, प्राजापत्य, देव आदि ८ प्रकारके विवाहोंका उल्लेख किया है।

बन्धाको ब्रह्मण्डूकारादि द्वारा आच्छादन करके विद्या और सदाचारसम्पन्न बरको पधाधिधि अर्चना पूर्वक जो बन्धा सम्प्रदान किया जाता है, उसीको ब्राह्मण विवाह कहते हैं। विल्लूत विरग्य विवाह अन्धमें देखो।

६ मुहूर्त्तविशेष, ब्राह्मणमुहूर्त्त, रात्रिके शेष चार घण्टे । ७ मनुक राजाजका धम विशेष, राजाओंका एक धर्म जिसके धनुमार उन्हे गुरुकुलसे लींटे हुए प्राप्तियोंकी पूजा करनी चाहिये । ८ तक्षत्र । ९ ब्राह्मणसम्बन्धी दिन । १० सम्प्रदायविशेष । ब्राह्मणसमाज दत्ता । (ति०) ११ ब्राह्मण सम्बन्धीय ।

ब्राह्मण (स० ६१०) ब्राह्मण वृत्त कुलादित्यात् वृष् । विप्रवृत्त, ब्राह्मणका विद्या हुआ ।

ब्राह्मणतेय (स० ६१०) ब्राह्मणतका गोत्रापत्य ।

ब्राह्मणुत (स० ६१०) ? आयुधजाति बर्गभेद । स वर्गों में पा द्विगर्तादित्यात् छ । २ ब्राह्मणुर्माय आयुधजाति बर्गभेदयुक्त ।

ब्राह्मण (स० ६१०) ब्राह्मणो विप्रस्य प्राजापतेर्वा अपत्य, ब्राह्म वेदस्तमधीते वा ब्राह्मण बण् । (ब्राह्मणशास्त्रो) पा ६। १। १२४) इति न, टिप्पणे । विप्र जातिभेद, ब्राह्मण स्वजाति, ब्राह्मण जाति । पर्याय—द्विजानि, अप्रजन्मा, भूदेव, वाडव, विप्र । (भार) द्विज, सुलकण्ड, उपेष्ट-पण, अप्रजातर, द्विजन्मा, उपतन्न, मैत, वेदवाप्त, नय, गुय । (अन्तर्यामि) ब्राह्म, पट्टर्मा, द्विजोत्तम । (राजनि०) ब्राह्मण ममस्त वर्णार्थं श्रेष्ठ होते हैं। ब्राह्मणोपमें इनकी स प्रा ह न हैं। ब्राह्मणोपमें श्रुतिपर, बुद्धोपमें बुद्ध, मीश्रोपमें गुरु, शाक्योपमें श्रुतमत कहलाते हैं। पुत्रकण्डोपमें सभी एक वर्ण हैं (भाग०) "ब्राह्मणो ऽयं मुख्यमामीन्" (धृति)

ब्राह्मके मुणसे ब्राह्मण उत्पन्न हुए थे। मनुसंहितामें



— इन वृत्तियों द्वारा जीविनानिर्वाह करनेवाला प्राज्ञपथ  
 द्वार श्रेणियोंमें विभक्त है, जैसे कुशू धान्यरु, कुम्भी  
 धान्यरु, त्र्यहृदिक और अश्वस्तनिक । जो प्राज्ञपथ तीन  
 वर्षों तक आयास ही निर्वाह कर सक्ता है, उसको  
 कुशूधायक कहते हैं । इस प्रकारके प्राज्ञपथ सोमपान  
 करनेके योग्य हैं । जो एक वर्षके लिए धान्यादिना  
 सग्रह कर रखते हैं, ऐसे प्राज्ञपथ कुम्भीधान्यरु कहलाते  
 हैं । किसी किसीके मतसे ६ मासके दिव्ये जो धान्यरु  
 सग्रह रखतेवालेको कुम्भीधान्यरु कहत हैं । तीन दिन  
 लयकर धान्यरु सग्रह रखें, ऐसे प्राज्ञपथ त्र्यहृदिक कहाते  
 हैं । जो फलके लिए भी कुछ सग्रह नहीं करते, नित्य सग्रह  
 करते और निर्वाह करते हैं, ऐसे प्राज्ञपथ अश्वस्तनिक हैं ।  
 अश्वस्तनिक विप्र ही सर्वमें श्रेष्ठ हैं । उनके बाद  
 त्र्यहृदिक और कुम्भीधान्यरु हैं । कुशू धान्यरु प्राज्ञपथोंमें  
 निम्न है ।

इन सभी प्रकारके प्राज्ञपथोंमेंसे कोई ऋतामृतादि  
 पद कर्मशील हैं, कोई विरमगाराही हैं, कोई विरमधान्य  
 हैं और कोई अध्यायना मात्र द्वारा ही निर्वाह करते हैं ।

जिलोच्छ्रुति परायण विप्र धन साध्य पुण्य कर्ममें  
 अक्षम हैं तो वे केवल मात्र अग्निहोत्रपरायण होंगे, और  
 परं तथा अयनान्तमें जो यज्ञ किये जाते हैं ( अर्थात् दर्श  
 पौर्णमासादि यज्ञ ) करेंगे । जो दम्भादिने रहित और  
 सरल हों, जिन आजीविकाके लिए कुछ भी श्रमता या  
 यज्ञता न करनी पड़ती हो, जो अति विशुद्ध  
 अर्थात् पाप रहित हों, ऐसी आजीविका प्राज्ञपथको यजन  
 याज्ञादि द्वारा सम्पन्न करना योग्य है । सुगार्थी प्राज्ञपथ  
 मात्र सन्तोष अत्रय्यन पुत्रकथन चेष्टादिसे विरत रहे ।  
 वारण, सन्तोष ही सुपुत्रा मृत् है और असन्तोष  
 दुःखका कारण ।

गृहस्थ प्राज्ञपथोंको उपयुक्त वृत्तियोंमेंसे कोई भी एक  
 वृत्ति अथलम्बन कर निम्नोक्त नियमोंका पालन करना  
 चाहिए । प्राज्ञपथोंको उचित है, कि यावज्जावन निरलस  
 रह कर अपने अपने आश्रमानुसार वेदोक्त और स्मार्त  
 कर्तव्यकर्मोंका सम्पादन करे । चित्त त्रिययोंमें इन्द्रियोंकी  
 शीघ्र आशक्ति होती है ऐसे कर्म या ज्ञानविषयक अया  
 ज्ययापनादि तथा धन रहने पर या उसके अभावमें

किसी स्थानसे धन सञ्चयनी चेष्टा करना प्राज्ञपथके  
 लिए निषिद्ध है । इच्छापूर्वक किसी इन्द्रिय विषयमें  
 आसक्त न हो; इन्द्रिय किसी त्रिययमें आसक्त हों,  
 तो उनको भी निवृत्त करना चाहिये । कोई भी  
 ऐसा उपार्जन न करे जो वेदाभ्यासके विषय हो । किसी  
 भी प्रकारसे परिचारका प्रतिपालन कर, प्रतिदिन स्वा  
 ध्याय त्रय मारु कर लेने मात्रसे ही प्राज्ञपथका जीवन  
 सफल है । जैसी उग्र हो, जैसा कर्म हो, तितना धन हो,  
 जैसा वेदाध्ययन और जैसा यज्ञको मर्यादा हो, उसीके  
 अनुसार वेग, भूषा, याष्य और बुद्धि रखना ही विधेय  
 है । प्राज्ञपथको चाहिए, कि वह ऋषियज्ञ अर्थात् वेदाध्य  
 यन, देवयज्ञ तथा होम, भूतयज्ञ, ( भूतयज्ञ ) मनुष्ययज्ञ  
 ( अतिथिनत्कार ) और पितृयज्ञ ( धाद ) इन पाद्य  
 यज्ञोंका सचदा अनुष्ठान करे । शक्ति हो तो इन यज्ञानु  
 स्थानोंका कदापि परित्याग न करे । उदित होमकारीको  
 प्राज्ञपथ दिन और रात्रिके प्रारम्भमें तथा अगुदित होम  
 कारीको दिन और रात्रिके अन्तमें सर्वदा अग्निहोत्रयज्ञ  
 करना चाहिए । वृष्यायज्ञ समाप्त होने पर दर्श नामक  
 यज्ञ तथा पृथिमाको पौर्णमास यज्ञ, नूतन जस्य उत्पन्न  
 होने पर अग्रहायण याग, ऋतु पूर्ण होने पर चातुर्मास  
 याग और अयनके प्रारम्भमें पशुयाग करना उचित है ।

वेद विरक्त मार्गावलम्बी, वर्णान्तरवृत्तिजीवी, विलाङ्ग  
 धना, वेदविद्वत्ताधिक और वप्रप्रती प्राज्ञपथोंको याष्य  
 द्वारा अचना नहीं करनी चाहिये । अन्नदानके लिये  
 निषेध नहीं है । स्नातक प्राज्ञपथको मुण्डन न  
 कराना चाहिए, विन्दु ब्रंज, नख और श्मश्रु कर्चन कर  
 सक्ते हैं । इन्हीं सर्वप्रथम श्लेष्मण्डलशुद्धि और शुक्रमास  
 परिधान करना चाहिए । शिक्षादिके समय घेषु निर्मित  
 यष्टि और शीघ्र प्रत्यावाधिके लिए जल पूर्ण कमण्डलु  
 साथ रखें । सूर्यादय और सूर्यास्तके समय सूर्य दर्शन  
 करना निषिद्ध है । राहु-ग्रन्त और जल प्रतिबिम्बित  
 सूर्यका दर्शन भी विषेय नहीं । घटसव्यग्रतकी रज्जुका  
 उद्गहन, पारिवर्षणके समय द्रुत गमन और जलमें अपना  
 प्रतिबिम्ब दर्शन ये कार्य भा निषिद्ध कहे गये हैं । एक  
 यज्ञ पढ़न कर भोजन करना, त्रियय हो कर स्नान करना  
 तथा मागमें, अस्त्रके ऊपर, गोचारण स्थानमें, फालु द्वारा

वर्तन भूमिमें प्रथम, जन्मानुभव विद्या और देव गन्धर्वमें  
मूलिकामके स्वर और गर्भमें मन्त्रमुद्राएँ समायाता सर्वथा  
विधेय नहीं हैं ।

प्राधान्य मुहूर्तों पूर्व कर अलग न उठायें । मन्त्रा-  
धानमें भोजन, ध्यान और शयन निरहित हैं । वेनादि  
हारा भूमि धावन करना और पढ़को पूर्व माता शयन  
शोथना निरहित हैं । शिव प्रथम अथवा समाप्त अथवा  
निर्वाण वा न हो, जो शयन श्राद्धयनपूर्वों ही और जहाँ  
देव गन्धर्वों न पायनहोना प्रविष्टता हो, ऐसे स्थानमें  
प्राधान्योक्तो न रहना चाहिये । शिव पदाथिका स्तोत्रमय  
सारासारा विद्याएँ विद्या गया हो, ये पदार्थ भी प्राधान्योक्तो  
न मनाया चाहिये । जिसमें दृष्ट और अदृष्ट विषयो प्रकाश  
वा भी पावन नहीं है, ऐसेको तथा वेला भी करना उचित  
नहीं । प्राधान्य अशुभि हारा जन्म न पोये, न ऊरुके  
ऊपर हथ कर भोजन करे और न विद्या प्रयोगन विषयो  
विषयमें बर्णन ही करें । प्राधान्यमय सुख गीत अथवा  
यादिव यादन न करें । साहसके मालिन या ऊपर हथेको  
रथ कर आचरंटाएँ ध्वनि, दलनयन और गन्धमादिनी  
सह्य औरकर करना माप्राधान्यके लिये निरहित है । गर्भमें  
के फालमें पैर धो । पूर्व बहानमें मीना कनका मगो  
माय अथवाग्न होये हैं, इच्छित्ये वेता न करना चाहिये ।  
दुमहेके ध्यवहाय धर्मपाठना, धर्म उपयोजन, अष्टद्वार,  
माया और कर्मपाठ्य भादि धर्मधर्ममें शान्त उचित  
नहीं । कर्षण धर्मों नम और लोभ ऐरा न करना  
चाहिये ।

प्राधान्योक्तो चाहिये कि प्राधान्युक्त । अर्थात् गर्भिके सोर  
प्रदूर्तमें जगत्ति होकर धर्म और अर्थका तथा कीये वापहे न  
ये वह प्रण होये, इसका विद्या करें । प्रदूर्यथायं परदुष्य  
निष्काम करण अर्थको उठे । उसके बाद भावद्वय मय  
सुख शयन कर भूमि हा कर समानित मगमें प्राधान्यमय  
सह्यमा और भावको जय करें । इसमें दोषायु प्रजा, यज्ञ,  
बौद्धि और अद्वैत प्रण होना है । इच्छित्ये ।

शिव मन्त्रके लिये अष्टांगी और अष्टांगी और अष्टांगी  
मय देव ।

प्राधान्यके लिये प्रविष्टित मन्त्रविद्या मन्त्राध्यायनादि  
करना अथवा करनीय है । यदि करे प्राधान्य मोहमें भा

कर मन्त्राध्यायनादि न करें तो, देव और गन्धर्व उभये  
हारा का दुर्देव पूजा और ध्यानादि मन्त्र नहीं करते । ऐसे  
प्राधान्य श्राद्धके समाप्त देव और गन्धर्वोंमें यज्ञयोग है ।

' १ । सर्वेभ्यः सुखयोगे विद्या । विद्यायाम् ॥  
न च पूजा न द्विकोप विद्यायादिभ्यः च ॥'  
' नरोऽपि न पूर्णो गन्धर्वः कश्चिदपि ॥  
य मुद्रादपि नरोः सर्वथाऽपि नरोऽपि ॥'  
( मन्त्रोक्तोक्तो मन्त्रोक्तो २१ म० )

वेदान्तधर्ममें विद्या है—आय श्राद्धयादि विद्यायाम्  
ने नहीं करनेमें प्राधवाय होता है । इससे अष्टांगीमें  
देवगन्धर्व पाय क्षय होने है । "विद्यायानि, अथवाये प्राय  
पाय साधनायि मन्त्राध्यायनादिनि" ( नरोऽपि )

प्राधान्यके प्रविष्टित मन्त्राध्यायनादिना कान  
' मन्त्राध्यायनादि यदियथायं कश्चिदपि ।  
य च सुखयोगे विद्यायाम् अथवा ॥  
मन्त्राध्यायनादिना मन्त्राध्यायनादिना ॥  
य मन्त्राध्यायनादिना मन्त्राध्यायनादिना ॥  
य मन्त्राध्यायनादिना मन्त्राध्यायनादिना ॥  
य मन्त्राध्यायनादिना मन्त्राध्यायनादिना ॥'  
( मन्त्रोक्तोक्तो मन्त्रोक्तो २१ म० )

जो प्राधान्य साधनायन विद्यायाम्का अष्टांगी करने  
है, ये सर्वथ समाप्त होनायों होने हैं । उभये पद पद  
परमा हारा पूर्विको पदिक हारो है, उभये सर्वथायें सोर  
अष्टांगीय भी पदिक होता और पाय मन्त्राध्यायनादिना ॥

प्राधान्यके लिये निरहित धर्मों दे हैं—विद्यायाम्का  
परिष्कार, विद्यायाम्का उभय, एकद्वारा न करना, विद्या  
मैदय अथवा, श्राद्धमय मन्त्राध्यायनादिना, श्राद्धमय,  
कर्म विद्या, मन्त्राध्यायनादिना और विद्यायाम्का  
कर्म प्राधान्यके लिये निरहित है । इसके विद्या धाकह,  
द्वय शयन, दृष्टमय, अर्थमय, मन्त्राध्यायनादिना, मन्त्राध्यायनादिना  
मोहा, मन्त्राध्यायनादिना मोहा, मन्त्राध्यायनादिना, मन्त्राध्यायनादिना  
द्वयमय विद्यायाम्का, मन्त्राध्यायनादिना और मन्त्राध्यायनादिना  
मन्त्राध्यायनादिना निरहित है । ( मन्त्रोक्तोक्तो मन्त्रोक्तो २१ )

' सर्वेभ्यः सुखयोगे विद्या । विद्यायाम् ॥  
न च पूजा न द्विकोप विद्यायादिभ्यः च ॥'  
( मन्त्रोक्तोक्तो मन्त्रोक्तो २१ )

यदि ब्राह्मण शूद्रास्त्रीके साथ गमन करे, तो वह पृथलीपति कहलायगा । इस श्रेणीके ब्राह्मणोंके आश्रयका पिण्ड विष्ठा-सद्गन्ध और तर्पण मूल तुल्य है, तथा उसका कोटि जन्माजित तपस्याका फल नष्ट होता है ।

ब्राह्मणके लिए प्रतिग्रह निषेध—कुम्भक्षेत्र, वाराणसी, यदरी, गङ्गासागरसङ्गम, पुण्डर, भारुकर्षेत्र, प्रभाम, रासमण्डल, हरिद्वार, केदार, सोमतीर्थ, यदरपाचन, सरस्वती नदीतीर, घृन्दाजन, गोदावरी, कीर्तिनी, त्रिवेणी और नारायणक्षेत्र आदि तीर्थमें ब्राह्मणको प्रतिग्रह न करना चाहिए ।

परिभाषिक महापातकी ब्राह्मण—

“शूद्रस्रोत्रिणयाजी भ्रामयाजी कीर्तित ।

देवोपनीव नीमो च दयभ्रम्व प्रकीर्तित ॥

शूद्रपाकोपनीयी य एषकार प्रकीर्तित ।

सन्ध्यापूजाविहीनम्ब प्रमत्त पतित स्मृत ॥

एते महापातकिन कुम्भीपाकं प्रयान्ति ते ॥”

(ब्रह्मसूत्रवस्तुपु० प्रवृत्तिले० २७ अ०)

सात शूद्रोंके अधिक यजनकारोका नाम भ्रामयाजी हैं । ये भ्रामयाजी ब्राह्मण, देवोपनीवी देवल, शूद्रका पाचक ब्राह्मण और सन्ध्याबन्दनादि विहीन प्रमत्त ब्राह्मण महापातकी हैं । इस श्रेणीके ब्राह्मण कुम्भीपाक नरक में जाते हैं ।

ब्राह्मण प्रसन्न चित्तसे जो भो आशीर्वाद देते हैं, वह पूर्णस्वरयजन है ।

“आशिर्षं कर्त्तं महर्षित प्रव्रजमनसा सिशुम् ।

पूर्णस्वरस्वययां स्वानो निरासीर्षं च भ्रुवम् ॥”

(ब्रह्मसूत्रवस्तुपु० भीष्मप्यजन्म तं० १३ अ०)

ब्राह्मण अपने कर्म द्वारा अपाङ्क्येय या पङ्क्तिपाजन होते हैं । अपाङ्क्येय ब्राह्मण, जैसे—कृतिय, घृणहा, यक्ष्मी, पशुपालक, दाह्युपिक, गायक, स्वर्णविभ्रयो, अगार दारी, गरद, कुण्डाशी, सोमविभ्रयो, भामुद्रिक, राज दूत, तैलिक, कूटकारक, पिताके साथ विवादकारी, अभि शान्त, स्तेन, शिन्धोपजीवी, पर्वकार, छूची, मित्तग्रीही, पारवारिक, परिविजित, द्रुश्रवर्मा, शुक्तल्पग, कुशालय, देवलक और नक्षत्रनीची आदि ब्राह्मण अपाङ्क्येय हैं, भर्षात् इनके साथ बैठ कर भोजन न करना चाहिए ।

‘पङ्क्ति पारन’ ज्ञेय देवे ।

ब्राह्मण क्षत्रियादि त्रिवर्णके द्वारा प्रणम्य हैं । पुण्ड-हस्त, पयोहस्त, देवहस्त, तैलाम्यङ्कित विप्रद, देवगृह-स्थित, ओदेव पूजाके समय, इन अत्रस्थाओंमें ब्राह्मणको प्रणाम नहीं करना चाहिए ।

“पुण्यहस्तं पयाहस्तं देवहस्तान्च भुङ्क्ते ।

न नमत् प्राह्मण्यं प्रातस्त्रोत्राम्भंगितविप्रहम् ॥” इत्यादि ।

(पद्मपु० त्रिपायोग शा० २ अ०)

आततायो ब्राह्मणको बध करनेमें कुछ भी क्षेप नहीं है ।

(शूद्रमंत्रवत् पु० गणपति तं० २५ अ०)

यहा तक तो विभिन्न शास्त्रोंसे ब्राह्मणके आचार

प्यग्रहार और अनुष्ठेय प्रतकर्मादिका विषय लिखा गया ।

अब अन्यान्य विषय लिखे जाते हैं । ब्रह्मके मानस-कल्पमें

मानवादि सृष्ट होनेके बाद, उनमें जाति विभाग सङ्कटित

हुआ । भारतवर्षके सिवा अन्वयाय देशके अधिवासी

गण एक जातिमें शामिल हैं और विभिन्न सम्प्रदायोंमें

विभक्त हैं । परन्तु इस हिन्दू प्रधान भारतभूमिमें ब्राह्म-

णादि चार जातियोंका विभाग है । मध्य एशियासे भी

आर्य औपनिवेशिक पहले भारतको तरफ जाये थे, उनमें

इस प्रकारका वर्ण विभाग था या नहीं, इसका कोई प्रकृत

प्रमाण उपलब्ध नहीं है । हम ऋग्वेदके पुरुषसूक्तमें

(१०।६०।११-१२) देखते हैं, कि पुरुष त्रिभक्त होने पर

उनके मुखसे ब्राह्मण हुए थे । इनके अतिरिक्त याज्ञ

सनेय संहिता (१।४।२-३६), अथर्ववेद (१।५।१०।१-३

और १।६।६), तैत्तिरीय संहिता (७।१।१।४-६), तैत्ति

रीय ब्राह्मण (१।२।१।७ और ३।२।१।६।३) और अतपथ

ब्राह्मणके (२।१।४।३) सूक्तमें ब्राह्मणादिकी उत्पत्तिक

उल्लेख है । वेदके सिवा मनुस्महिता कूर्मपुराण और

भागवत पुराणमें भी पुरुषसूक्तके अनुसार चार जातियों

की उत्पत्तिक विवरण लिखा है । ब्रह्माण्डपुराणमें

(पूर्वभाग ८।१५०-१६०) ‘अर्धभूते ब्रह्म विद्यमानं’ इत्य

प्रकार चिन्तापृच्छि धारी प्रमाणय स्वयम् ब्रह्मा द्वारा

ब्राह्मण-रूपमें निर्दिष्ट हुए थे । त्रिण्यु, मत्स्य और भाष्य

एडेय पुराणमें भी ठीक ऐसा ही वर्णन पाया जाता है ।

हरिवंशमें शुद्ध सत्त्वगुणसे, महाभाष्य आदिपर्यं

मनुसे और शान्तिपर्यं कृष्णके

गजतमें (३।६।२३-२७)



वेदके ब्राह्मणभागका लक्षण स्थिर करना बहुत ही कठिन है, कारण वेदभागकी इसका कोई अन्वधारण न होनेसे ब्राह्मणभागके अन्यभागके लक्षणमें अन्व्याप्ति और अतिव्याप्ति क्षेप होता है। इसलिये इसका कोई निर्दिष्ट लक्षण न करना ही श्रेय है। परन्तु इतना कहा जा सकता है, कि मन्त्रभाग एक है और ब्राह्मणभागमें हेतु, निर्वचन, निन्द, प्रशंसा, सजय, विधि, परक्रिया, पुरा कल्प और ध्यवधारण कल्पना आदि कहे गये हैं। वेद मन्त्र और ब्राह्मण इन दो भागोंमें विभक्त हैं। वेदका मन्त्रातिरिक्त भाग ही ब्राह्मणभाग है। ३ विष्णु। ( भारत १३।१४६।८५ ) ४ शिव। ( भारत १३।१४६।८५ ) ५ अगिना नामान्तर, अग्निका एक नाम। ( शवधत्ता० १।१३।२ ) ६ नक्षत्रभेद, एक नक्षत्र।

ब्राह्मणकः (सं० पु०) ब्राह्मण कुटुम्बतार्थं क्व०। १ कुत्सित। ब्राह्मण, निन्दित ब्राह्मण। ब्राह्मणेन जातिमालेण कथयति कैक। २ ब्राह्मणदृष्ट्यरहित ब्राह्मणजाति। स ह्याया क्व०। ३ आधुजनीय ब्राह्मणप्रधान देश।

ब्राह्मणरूप (सं० पु०) १ वेदके ब्राह्मण और कल्पभाग (त्रि०) २ ब्राह्मण सहृदय।

ब्राह्मणश्लेष (सं० लि०) ब्राह्मणक छ (पा ४।२।१०५) ब्राह्मणकसम्बन्धीय।

ब्राह्मणकाम्या (सं० स्त्री०) ब्राह्मणस्य काम्या ६-तत्। १ विप्रच्छा। २ ब्राह्मण विषय।

ब्राह्मणधन (सं० लि०) ब्राह्मणं हन्ति दनक। ब्राह्मण धातक।

ब्राह्मणचक्षुस् (सं० स्त्री०) ब्राह्मणस्य सर्वार्थप्रकाश कर्तात् चक्षुरिव। ध्रुति और स्मृति ही ब्राह्मणके चक्षु हैं।

“श्रुतिस्मृती च विप्राणां चक्षुषी देवनिर्मिते।  
काण्यस्तैरेव होनो ब्राह्मणमन्थ प्रकीर्तिते॥” (हारीत)

ब्राह्मणचण्डाल (सं० पु०) ब्राह्मणश्चाण्डाल इव। शास्त्र निर्दिष्ट कर्मकारो अपशुच्य ब्राह्मण।

ब्राह्मणजात (सं० स्त्री०) १ ब्राह्मणयश सम्भूत। २ विप्र जाति।

ब्राह्मणपातोय (सं० लि०) ब्राह्मण सम्बन्धीय।

ब्राह्मणजीविका (सं० लि०) पौरहित्यरूप यजनयाजनादि तथा अध्यापनादिरूप उपजीविका।

ब्राह्मणता (सं० लि०) ब्राह्मणस्य भावः तत् टाप्। १ ब्राह्मणका धर्म, ब्राह्मणका कर्त्तव्य कर्म। २ ब्राह्मण रूपत्व।

ब्राह्मणता (सं० अज्य०) ब्राह्मणाय देय त्वाच्। ब्राह्मणको देने लायक।

ब्राह्मणत्व (सं० स्त्री०) ब्राह्मणस्य भाव त्वल्। ब्राह्मण का भाव या धर्म, ब्राह्मण-पन।

ब्राह्मणदारिका (सं० स्त्री०) ब्राह्मण-कन्या।

ब्राह्मणद्वेयिन् (सं० लि०) ब्राह्मणका हिंसाकारी, ब्राह्मणकी हिंसा करनेवाला।

ब्राह्मणपथ (सं० पु०) वेदके ब्राह्मणविशेष।

ब्राह्मणपाल (सं० पु०) राजपुत्रभेद।

ब्राह्मणप्रिय (सं० लि०) ब्राह्मण प्रियो यस्य। १ विष्णु। ब्राह्मणस्य प्रिय। २ विप्रहित।

ब्राह्मणदुघ (सं० पु०) ब्राह्मणवशोत्पन्नतया वेदोक्त कर्माशुच्यप्रति आत्मानं ब्राह्मणं प्रवीतीति ब्राह्मणं दूक, बोद्धुकान् वच्चादेश। ब्राह्मण जातिमातोपजीवी, वेदविहित कर्मादिहीन ब्राह्मण। जो सध ब्राह्मण स स्पृष्ट अर्थात् उपनयनादि स स्कारशुच हो कर नित्य और निमित्तिक कर्म अथवा अध्ययन और अध्यापनादि किसी भी कर्मका अनुष्ठान नहीं करते, उन्हें ब्राह्मणदुघ कहते हैं। जो ब्राह्मण हो कर ब्राह्मणके किसी भी कर्त्तव्यका पालन नहीं करते और अपनेको ब्राह्मण होनेका दावा करते हैं वे ही ब्राह्मणदुघ हैं।

“वमममममो दानं शिषुषं ब्राह्मणदुघे।

भगोने हतवाह्यमान्त वेदपारो॥” (मनु ७।८५)

भगवान् मनुने लिखा है, कि अब्राह्मणको दान करनेसे उसका मुख्यरूप फल, ब्राह्मणदुघको दान करनेसे उसका दूता, अर्थात् ब्राह्मणको दान करनेसे लाय गुना और वेद रग ब्राह्मणको दान करनेसे अनन्त गुणफल प्राप्त होता है।

ब्राह्मणभोजन (सं० स्त्री०) ब्राह्मणानां भोजनम्। ब्राह्मण को गिलाना। किसी देव या पौरुष कर्मका अनुष्ठान करनेसे उसके अद्वैतरूप ब्राह्मणभोजन कराना अथवा



करके है। सुमे प्राशनानुसारा विषय इस प्रकार लिखा है,—

पञ्चाशके लगाने विदुषांसे विरतेना मनुष्य कामेके विषये एक भी प्राशनोक्तन करमा उचित है। बरिद्वैष्य भी प्राशनोक्तनको प्राशयचना नहीं होता।

द्वैष्यायें ही और विदुषाणमें तल प्राशन अथवा देवतायें एक भी लिखादि नहीं भी एक प्राशनोक्तन करमा होता है। मन्त्रां होने पर भी हममें अधिप्राशनोक्तन करतोना निषेध नहीं है, क्योंकि अधिप्राशन होनेसे उनको देवा, देव, वाय, सुदामुष्ट और पातापानके विचार आदि सम्बन्धमें विमो विषयका मन्त्ररूपमें प्रतिपाद्य नही होता। इसी कारण बहुत प्राशनोक्तो विष्णुना विषय है। प्राशन द्वैष और विदुषाणां एक एक वेदविदु प्राशनाको विष्णुना चाहिये। वेदका अन्तर्गत मन्त्र शैब्यो प्राशयको विष्णुना भी नहीं न जाय, तो भी कोई एक नहीं। वेदपारा प्राशनके सम्बन्ध। विषये मनुष्यमान करना आशयवक है, आशान् उनके पिता, पितामहादि, पूर्वपुत्रपरा भी किता आनि आरवादि मन्त्र था, उनका निरूपण करे। मन्त्रारम्भका मुष्ट, वेदपारा प्राशन मीन ही प्रसार है। वेदके अन्तर्गत जहाँ द्वा राग प्राशन मीनन करने हैं, उन मन्त्रमें यदि वेदविदु एक भी प्राशनोक्तन करे, तो द्वा राग प्राशनोक्तन करतोना पत्र होता है। एक प्राशन आशो जिनमें पाय मासम करने हैं, परलोकेमें उम्हें उनको ही मीरविन्द चाने पत्रते है।

प्राशनोक्तो अथ कां आश्विनानिष्ठ, वेद ताम्ब पगपन, कां ताम्ब्य और अश्विन उपनिष्ठ और कोरि कारकिष्ठ है। इन चार प्रकारके प्राशनमें आश्विनानिष्ठ प्राशनको ही प्राशनोक्तो लिखता चाहिये। विदुषु द्वैष्यकर्ममें एक चारों हा प्रकारके प्राशन मीनन करमा है। जिनके पिता सुमे है अथवा जो सुमे से द्वापरा है या जो सुमे मन्त्र और पिता से द्वापरा है इन दोनोमें विषयके पिता वेदपारा है, उम्हें प्राशन अधिपत्र करमा होता है। वेदपारा प्राशनोक्तन मनुष्यो प्राशन अथवा इन तम वेदो प्राशनोक्तो विचारको

है। आश्वमे वेमो प्राशयका अभाव हो तो कल्पविषयको कां प्राशन करे।

मनुष्यविषय—प्राणम, मातृप, मातृनेत्र, अक्षर, मुष्ट, दौहिन, आमात्र, मातृपत्र, विदुषका सुचारि, वेपु पुरोहित और निव्य इत्ये मीनन करना चाहिये। वेम आश्वकर्ममें ही ऐसे प्राशनका विचार किया जा सकता है। अन्य दीपनयामें उक्त मनुष्यमन्त्र नही देखा जाता। विदुषु निष्ठोक्त विष्णुना प्राशनोक्तो, काद द्वैष्यकर्म हा या वैरा विमो भी चारोंमें भोजन नहीं करना चाहिये। जो सब प्राशन चारी करने हैं, जो क्वाण, मातृपत्र, वेदाप्यपत्राण्य, प्राशनोक्तो चारोंमेपयन मनुष्य प्राशनपयन, बहुपया, विष्णुरामप्यपयना प्रतिपात्ताप्यपत्र, देव्य, वाणिश्योपमो, कुलो, इनापयन अथवा इनापयन दत्तविनिष्ठ, सुमे प्रतिष्ठापयनकारी, धीन तथा मन्त्रां अनिर्विवाहकारी बुजोदधाय, वेपु पाल्य इत्यादि तथा और भी जो निष्ठिन प्राशन हैं उम्हें विष्णुनेमो प्राशनोक्तनका पत्र नही होता, वे पाय हो जाता है। ( मन्त्रोक्तो ३ अथवा )

प्राशन उक्त मनुष्यमन्त्र प्राशन नहीं मिलने, इसी कारण बुजामय प्राशन बना कर आश्वदि निष्पन्न किया जाता है।

प्राशनपत्र ( मं० पु० ) प्राशननातकमन्त्रो वेदः मन्त्रात् गोप्य कथना० । विष्णुनातकमन्त्रो गोप्यमन्त्रो यत् । "मन्त्रमन्त्रो गोप्यमन्त्रमन्त्रो" ( ब०पा० मं० ११११ ) प्राशनपत्रिका ( मं० त्यो० ) प्राशनपत्र कादिचिः तपः स्वार्थो शंकाया या वन अथा इय । द्वाविषय, मातृप । पंचां—वृत्रिवा, प्राशना, पत्र, मातृ, अक्षर, वे, इनापयन, चर्च, यद्वे, मन्त्रपत्र, वृत्रिवा, वेद, मन्त्र पूर्वोक्त अक्षरपत्र, चर्च प्राशिका, मनुष्यमन्त्र । गुण—द्वैष्य, कृष्ण, शिव, विषय, गुण, दत्त, मीन, दाम दत्त ।

योग, तपस्या, दम, दान, सत्य, शौच, दया, ज्ञान और आस्तिक्य ये सब प्राज्ञणके लक्षण हैं।

प्राज्ञणवध (स० पु०) प्राज्ञणस्य वध । प्राज्ञणदत्या ।

प्राज्ञणयत् (स० त्रि०) १ प्राज्ञणतुल्य । २ प्राज्ञणयुक्त ।

३ वेदके प्राज्ञणनिर्दिष्ट विधिके अनुरूप ।

प्राज्ञणवर्चस् (स० ङी०) प्राज्ञणस्य वच ततोऽचसमा

मान्त । प्राज्ञणक' तेज । प्रवर्चस्त्वं दरो ।

प्राज्ञणशत्रु (स० ङी०) प्राज्ञणस्य शत्रुमिव तन्

कार्यकारित्वात् । अभिचारादि मन्त्रोच्चारणात्मक विप्र

याच्य । प्राज्ञण जिस मन्त्रका उच्चारण करके अभिचारादि

कार्य सम्पन्न करते हैं वह याच्य शस्त्रकी तरह कार्य

करता है, इसीसे इसका प्राज्ञणशत्रु नाम पडा ।

प्राज्ञणसम (स० पु०) प्राज्ञणस्य सम । क्रियारहित विप्र,

वह प्राज्ञण जो प्राज्ञण-कर्त्तव्यकर्म नहीं करता है। प्रह

बीजसे जन्म ले कर मत्त और सस्कारादि प्रजित होनेसे

उसको प्राज्ञणसम कहते हैं ।

प्राज्ञणसात् (स० अन्य०) प्राज्ञणाधीन करोति प्राज्ञण

साति । जो प्राज्ञणके अधीन हो ।

प्राज्ञणस्पत्य (स० पु०) गृहस्पतिका फाय ।

प्राज्ञणहित (स० त्रि०) प्राज्ञणस्य हित । प्राज्ञणका

हितकारो । पर्याय—प्राज्ञण्य ।

प्राज्ञणाच्छ सिन् (स० पु०) प्राज्ञणे मन्त्रेतरचेत्नाभगे

विहितानि शास्त्राणि उपचारात् प्राज्ञणानि तानि शसति

द्वितीयार्थे पञ्चभ्युपसर्षण इति अलुक् । सोमयज्ञमें

प्रह्लरूप ऋत्विजका सहकारो ऋत्विग्भेद ।

प्राज्ञणाच्छसोय (स० त्रि०) प्राज्ञणाच्छसिनो भाव

'होताभ्यदृष्ट', इति च्छ । प्राज्ञणाच्छसोका भाव या कर्म ।

(शाल्या० मा० ३०।६)

प्राज्ञणाच्छरः (स० त्रि०) प्राज्ञणाच्छसिसम्बन्धीय ।

प्राज्ञणादि (स० पु०) भाव और कर्ममें प्यम् प्रत्यय

निमित्त पाणिन्युक्त शब्दगण । यथा—प्राज्ञण, वाड्य,

माणव, चोद, धूर्त्त, धाराधय, अपराधय, उपराधय, पक्

भाय, द्विभाय, त्रिभाय, गन्धभाय, अत्रेत्तय, सवादिन्,

मधेदिन्, समादिन्, बहुभाविन्, शोषंदातिन्, विप्रातिन्,

समस्य, विप्रमस्य, परमस्य, मध्यमस्य, अतोभ्यद, कुशल,

चपल, निपुण, पिशुा, कुन्दल, क्षेत्रण, मिश्र, घालिज,

अलस, दुष्पुरुष, कापुरुष, राजन्, गणपति, अधिपति, गङ्गुल दायाद, विशस्ति, विपम, निपात, निपात ।

(पाणिनि)

प्राज्ञणायन (स० पु०) प्राज्ञणस्यापत्य ऋग्विष्णु, फर् ।

(पा ४।१।६६) प्राज्ञणका गोतापत्य, शुद्धयशजित विप्र ।

प्राज्ञणिक (स० त्रि०) प्राज्ञणस्य मन्त्रेतरवेदभागस्य

व्याख्यानो ग्रन्थ ठक् । मन्त्रेतर वेदभाग व्याख्यान ग्रन्थ ।

प्राज्ञणी (स० स्त्री०) प्राज्ञण स्त्रिया ङीप् । १ प्राज्ञण

पत्नी । मनुमें प्राज्ञणोगमनका विषय इस प्रकार लिखा

है—

शूद्र यदि अरक्षिता प्राज्ञणो-गमन करे, तो उसका

लिङ्गच्छेद और सर्वस्वहरण तथा भर्तादि कर्त्तृक

रक्षिता प्राज्ञणगमन पर उसका वध और सर्वभ्य

हरण दण्ड विधेय है। वैश्य यदि रक्षिता प्राज्ञणी

गमन करे, तो उसे एक वर्ष कारावरोध दण्ड दे और

उसकी सारी सम्पत्ति छीन ले। क्षत्रिय यदि ऐसा

करे, तो उसे सहस्र पणदण्ड तथा गर्दभमूत्र द्वारा

उसका मस्तक मुडवा दे। वैश्यथा क्षत्रिय यदि अरक्षिता

प्राज्ञणी गमन करे, तो वैश्यको ५०० सौ पण और क्षत्रिय

को १०० पण दण्ड होना चाहिये। वैश्य वा क्षत्रियके

गुणवती रक्षिता प्राज्ञणीका गमन करनेसे उसे शूद्रवत्

दण्ड और प्राज्ञणके बलपूर्वक रक्षिता प्राज्ञणी गमन

करनेसे सहस्र पण दण्ड तथा सकामा प्राज्ञणीगमन

करनेसे ५०० सौ पण दण्ड होना चाहिये। (मनु ८ अ०)

“कुसुता विप्ररत्नीनां गमन मुरविप्रया ।

वद्मदहत्यापोदशारां पातकं भवत् पुनः॥”

(मनुवेधसु० ऋत्वि ९० ४४ अ०)

कुसुता प्राज्ञणी-गमन करने पर भी दण्डहत्याके १६

भागोंका एक भाग पाप लगता है।

२ बुद्धि। महाभारतमें 'बुद्धि'को परिभाषिक प्राज्ञणी

रूपमें बतलाया गया है। (भारत १।३।४।११ १०)

३ तार्थविशेष। इस तार्थमें स्नानज्ञादि करनेसे

पद्मार्णयान द्वारा प्रहलोत्की गति होती है।

(मातृ ३।३।४।४)

प्राज्ञणीत्व (सं० ङी०) प्राज्ञणी भावे त्य । प्राज्ञणीका

भाव मा धर्म ।

कराये है। मनुमें ब्राह्मणभोजनका विषय इस प्रकार लिखा है,—

पञ्चयज्ञके अन्तर्गत पितृयज्ञमें पिताको रूतुष्ट करनेके लिये एक ही ब्राह्मणभोजन कराना उचित है। बलिवैश्व में ब्राह्मणभोजनकी आवश्यकता नहीं होती।

द्वैकार्यमें दो और पितृकार्यमें तीन ब्राह्मण अथवा द्वैयज्ञमें एक और पितादि पक्षमें भी एक ब्राह्मणभोजन कराना होता है। समर्प होने पर भी इससे अधिक ब्राह्मणभोजन करानेका नियम नहीं है, क्योंकि अधिक ब्राह्मण होनेसे उनको सेवा, देश, काल, शुद्धाशुद्ध और पात्रापात्रके विचार आदि सम्बन्धमें किसी नियमका सम्बन्धरूपसे प्रतिपालन नहीं होता। इसी कारण बहुत ब्राह्मणोंको गिलाना निषिद्ध है। ब्राह्मण द्वैय और पितृकार्यमें एक एक वेद्विद्वि ब्राह्मणको खिजाना चाहिये। वेदमें अनभिन्न यदि सैकड़ों ब्राह्मणको पिलाया भी क्यों न जाय, तो भी कोई फल नहीं। वेदपारंग ब्राह्मणके सम्बन्धमें विशेष अनुसन्धान करना आवश्यक है, अर्थात् उनके पिता, पितामहादि, पूर्वपुरुषका भी कौत्सा जामि जात्यादि गुण था, उसका निरूपण करे। यज्ञपरम्परा-शुद्ध, वेदपारंग ब्राह्मण भोजन ही प्रशस्त है। वेदसे अनभिन्न जहा दश लाख ब्राह्मण भोजन करते हैं, उस धारमें यदि वेदविद्वि एक भी ब्राह्मणभोजन करे, तो दश लाख ब्राह्मणभोजन करानेका फल होता है। अथ ब्राह्मण धारमें जितने प्राप्त भोजन करते हैं, परलोकमें उन्हें उतने ही लीहपिण्ड जाने पड़ते हैं।

प्राणियोंके मध्य कोई भ्रामहाननिष्ठ, कोई तपस्या परायण, कोई तपस्या और अध्ययन उभयनिष्ठ और कोई कर्मनिष्ठ है। इन चार प्रकारके ब्राह्मणोंमें भ्रामहाननिष्ठ ब्राह्मणको ही धारमें गिजाना चाहिये। किन्तु द्वैय-यज्ञमें उन चारों ही प्रकारके ब्राह्मण-भोजन प्रशस्त है। जिनके पिता मृग हैं अथवा जो स्वयं वेदपारंग हैं या जो स्वयं मृग और पिता वेदपारंग हैं इन दोनोंमें जिनके पिता वेदपारंग हैं, उन्हें भोजन करानेमें अधिक-से प्राप्त होता है। वेदपारंग श्रद्धेरी ब्राह्मण, ममन्नाशाशाध्यायो यजुर्वेदी ब्राह्मण अथवा न्यामवेदी ब्राह्मण, -- इन तीन वेदी ब्राह्मणोंमेंसे किसीको भोजन करा देने

है। धारमें ऐसे ब्राह्मणका समाप हो तो कल्पविधानसे कार्य सम्पन्न करे।

अधुनकविधि—मातामह, मातुल, भागिनेय, भ्यशुद, गुग्, ईहिव, आमाता, मातृश्वर, पित्रुवृत्, पुगादि, बधु, पुरोहित और शिष्य इन्हें भोजन कराना चाहिये। केवल धारकर्ममें ही ऐसे ब्राह्मणका विचार किया जा सकता है। अन्य द्वैयक्रियामें उनका गुणागुण नहीं देखा जाता। किन्तु निम्नोक्त निन्दित ब्राह्मणको, चाहे द्वैय कार्य हो या पैत्र किसी भी कार्यमें भोजन नहीं कराना चाहिये। जो सब ब्राह्मण चोरी करते हैं, जो क्लोय, नास्तिक, वेदाध्ययनशून्य, ब्राह्मचारी चर्मरोगग्रस्त, छूत फोडापरायण, बहुरागो, चिकित्साध्ययसायो, प्रतिमा पारचालक, देवद्व, यागिज्योपजोयो, हुनपी, श्यायदन्त अर्थात् दृग्गण दन्तविशिष्ट, गुग्, प्रतिभूलचरणकारी, धीन तथा स्मार्त्त अनिपतिस्वागकारी कुतोदनीयो, पशु पालक इत्यादि तथा और भी जो निन्दित ब्राह्मण हैं उन्हें गिलानेमें ब्राह्मणभोजनका फल नहीं होता, यद्यपि पाप हो होता है। ( गृह्यसूत्र ३ अध्याय )

आजकल उक्त गुणयुक्त ब्राह्मण नहीं मिलते, इसी कारण कुजमय ब्राह्मण बना कर धारदादि निष्पन्न किया जाता है।

ब्राह्मणयज्ञ ( स० पु० ) ब्राह्मणमातृकत्त्वं यो यम मध्यपद लो। व कमधा० । विप्रमालकरायं स्त्रीरामणोय यम । "नादमण्यत योममपवृद्धिकामत्य" ( कात्या० भी० १६।११ ) ब्राह्मणयष्टिका ( स० स्त्री० ) ब्राह्मणस्य यष्टिरियः ततः स्वार्थं सहाया या वन् अन इत्य । वृष्टविशेष, भारणी । पर्याय—कविज्ञा, ब्राह्मणी, यज्ञा, भागी, अन्नारवर्गी, बाल्यशक, वयं, वयं, ब्राह्मण, कर्त्रीका, यष्टी, यष्टि यष्टि, सुर्वा, अन्नारवर्गी, बाल्य, ब्राह्मण, भृगुभक्त, पय्या, परजाक, इष्टीका । गुण—रुद्र, वट्ट, तिक, गतिरुद्र, उष्ण, पाचन, लघु, क्षीपन, गुल्म, रक्त, गोघ्न, कास, बन्ध, श्याम, पीनसरो, उजर और घायुनाशक । ( भाट्ट० ) २ विप्ररुद्र ।

ब्राह्मणयष्टी ( स० स्त्री० ) ब्राह्मणस्य यष्टीय । भागी । ब्राह्मणरुद्रण ( स० स्त्री० ) ब्राह्मणस्य रुद्रणम् । विप्रना अस्ताधारण धमभेद ।

योग, तपस्या, दम, दान, सत्य, जीव, दया, शास्त्र-  
ज्ञान और आस्तिक्य ये सब प्राक्षणके लक्षण हैं ।

प्राक्षणवध ( स० पु० ) प्राक्षणस्य वध । प्राक्षणदृत्या ।

प्राक्षणयन् ( स० त्रि० ) १ प्राक्षणतुय । २ प्राक्षणयुक्त ।

३ वेदके प्राक्षणनिर्दिष्ट विधिके अनुरूप ।

प्राक्षणचर्चस् ( स० क्ली० ) प्राक्षणस्य वच ततोऽचसमा  
सान्त । प्राक्षणका तेज । प्राक्षचर्चस् दगो ।

प्राक्षणशास्त्र ( स० त्री० ) प्राक्षणस्य शास्त्रमिव तन्  
कार्यकारित्यात् । अमिचारादि मन्त्रोच्चारणारम्भ विप्र  
याष्य । प्राक्षण जिम मत्तका उच्चारण करके अमिचारादि  
कार्य सम्पन्न करते हैं यह याष्य शास्त्रकी तरह कार्य  
करता है, इसीसे इसका प्राक्षणशास्त्र नाम पडा ।

प्राक्षणसम ( स० पु० ) प्राक्षणस्य सम । द्वियारहित विप्र,  
यह प्राक्षण जो प्राक्षण-कर्त्तव्यकर्म नहीं करता है । ब्रह्म-  
बोजसे जन्म ले कर मत्त और सस्वारादि वर्जित होनेसे  
उसको प्राक्षणसम कहते हैं ।

प्राक्षणसाक्ष ( स० अन्त्य० ) प्राक्षणाधीन करोति प्राक्षण  
साति । जो प्राक्षणके अधीन हो ।

प्राक्षणस्पत्य ( स० पु० ) बृहस्पतिका काय ।

प्राक्षणहित ( न० त्रि० ) प्राणास्य हित । प्राक्षणका  
हितकारो । पर्याय—प्राक्षण्य ।

प्राक्षणाच्छसिन् ( स० पु० ) प्राक्षणे मत्तेतरवेदभागे  
धिहितानि शास्त्राणि उपचारात् प्राक्षणानि तानि शंसति  
द्वितीयार्थे पञ्चम्युपसङ्गान इति अल्फ् । सोमयज्ञमें  
ब्रह्मरूप ऋत्विजका सहकारो ऋत्विज भेद ।

प्राक्षणाच्छसोय ( स० त्रि० ) प्राक्षणाच्छसिनि भाव  
'द्वीताम्बुष्ट', इति च्छ । प्राक्षणाच्छसोका भाव या कर्म ।

( वा० ३०६ )

प्राक्षणाच्छर ( स० त्रि० ) प्राक्षणाच्छसिसम्यन्धीय ।

प्राक्षणादि ( स० पु० ) भाव और कर्ममें प्यम् प्रत्यय  
निमित्त पाणिन्युक्त ष्ट्ठगण । यथा—प्राक्षण, घाडन,  
माणन, चोर, धूर्त्त, आराधय, अपराधय, उपराधय, पक्ष  
भाय, द्विभाय, त्रिभाय, अन्यभाय, अशेषय, सवादिन्,  
सधेजिन्, समापिन्, बहुभापिन्, शोर्षवातिन्, विद्यातिन्,  
समस्य, विगमस्य, परमस्य, मध्यमस्य, अनोभ्य, कुशल,  
चपल, निपुण, पिशुन, कुन्डल, क्षेत्त, मिश्र, घालिन्,

अल्स, दुःपुण्य, कापुण्य, राजन्, गणपति, अधिपति,  
गडुल दायद, विशस्ति, विपम, विपात, निपात ।

( पाणिनि )

प्राक्षणापान ( स० पु० ) प्राक्षणास्यापत्य नडादिभ्य, फर् ।

( पा ४।१।६६ ) प्राक्षणका गोतापत्य, शुद्धयज्ञात विप्र ।

प्राक्षणिक ( स० त्रि० ) प्राक्षास्य मत्तेतरवेदभागस्य  
व्याख्याको ग्रन्थ ठक् । मत्तेतर वेदभाग व्याख्यान प्रथ ।  
प्राक्षणी ( न० स्त्री० ) प्राक्षण क्रिया ङीप् । १ प्राक्षण  
पत्नी । मनुमें प्राक्षणीगमनका विषय इस प्रकार लिखा  
है—

शूद्र यदि अरक्षिता प्राक्षणीगमन करे, तो उसका  
लिङ्गच्छेद और सर्वस्वहरण तथा भर्तादि वस्तु क  
रक्षिता प्राक्षणगमन पर उसका पक्ष और सर्वस्व  
हरण दण्ड विधेय है । वैश्य यदि रक्षिता प्राक्षणी  
गमन करे, तो उसे एक वर्ष फायावरोध दण्ड दे और  
उसकी सारी सम्पत्ति छीन ले । क्षत्रिय यदि ऐसा  
करे, तो उसे सदृश पणदण्ड तथा गर्दममूल द्वारा  
उमसा मस्तक मुडवा दे । वैश्यया क्षत्रिय यदि अरक्षिता  
प्राक्षणी गमन करे, तो वैश्यको ५०० मी पण और क्षत्रिय  
को १०० पण दण्ड होना चाहिये । वैश्य या क्षत्रियके  
गुणवती रक्षिता प्राक्षणीका गमन करनेसे उसे शूद्रयत्  
दण्ड और प्राक्षणके बलपूर्वक रक्षिता प्राक्षणी गमन  
करनेसे सहस्र पण दण्ड तथा सक्षामा प्राक्षणीगमन  
करनेसे ५०० सौ पण दण्ड होना चाहिए । ( मनु ८ भ० )

“शूद्रया विप्रपत्नीता गमन मुद्रविप्राः ।

यूद्मस्त्यापोदनां पातवृद्भु भवत् पुनम् ॥”

( अथर्ववेत्तु० मृत्ति ४० ४५ भ० )

कुलटा प्राक्षणीगमन करने पर भी ब्रह्मदत्ताके १६  
भागोंका एक भाग पाप लगता है ।

२ बुद्धि । महाभारतमें 'बुद्धि'को परिभाषिक प्राक्षणी  
रूपमें बतलाया गया है । ( भारत १।३।११-१२ )

३ तार्थयिथोय । इस तार्थमें स्नानदानादि करनेसे  
पञ्चवर्ण यान द्वारा ब्रह्मलोककी गति होनी है ।

( भारत ३।१।४४ )

प्राक्षणीत्य ( सं० क्ली० ) प्राक्षणी भायेत्य । प्राक्षणीका  
भाव मा धर्म ।

ब्राह्मण्य ( सं० ३१० ) ब्राह्मणानां समूहः ब्राह्मण ( ब्राह्मण्य मानवशास्त्राद्याम् । वा भा० ४२ ) इति यत् । ब्राह्मण्य समूहः । ० ब्राह्मण्यका धर्मः, विप्रत्य ।

ब्राह्मण्य यदि शूद्रान्ते पुनोत्पादन करे, तो उसके ब्राह्मण धर्मकी हाजि होती है । ( पु० ) ३ अग्निप्रद ।

ब्राह्मण्यदन्त ( सं० पु० ) १ ब्राह्मण्यका हस्तस्थित षण्ड । ब्राह्मण्य मेद ।

ब्राह्मण्यदत्तायन ( सं० पु० ) ब्राह्मण्यदत्त नदीदित्वात् कश् ( वा भा० १६६ ) ब्राह्मण्यदत्ता अपत्य ।

ब्राह्मण्यप्राजापत्य ( सं० त्रि० ) ब्राह्मण्यप्राजापति सम्बन्धीय ।

ब्राह्मण्यमुहूर्त ( सं० पु० ) ब्राह्मण्य ब्राह्मण्यदत्ताको मुहूर्त । ब्राह्मण्यदत्ताकाके प्रथम क्षे षण्ड, सूर्योदय ।

ब्राह्मण्यराति ( सं० पु० ) ब्राह्मण्यदत्ताका गोवापत्य ।

ब्राह्मण्य समाज—हिन्दूशास्त्र सम्मत धर्मसम्प्रदाय विशेष, हिन्दू शास्त्रानुमोदित एक धर्म समाज । एकमात्र परब्रह्मको उपासना ही इस सम्प्रदायका मुख्य उद्देश्य है । "एक मेवाहित्तियोम्" के सिवा यह समाज अन्य देवताओंका वास्तविक अस्तित्व नहीं मानता । साथ ही ये लोग सरकारके बजोभूत हो कर 'सर्वत' हो ब्रह्म विद्यमान हैं, इस तत्त्वज्ञापकी दुर्गाई दे कर बालों, दुर्गा आदि देवी-देवताओंके प्रति नक्ति प्रदर्शनी करीमें भी कुल्लिठ नहीं होते । पर ब्राह्मण्यके मित्रा जगद्गुरु और द्वितीय मूल जकि नहीं , यह शुद्ध अद्वैतवादिप्राप्त मत है । महात्म्या राममोहनराय ठारा प्रतिष्ठित ब्राह्मण्यमत उसीका अनुरूप है । "ॐ तत् सत्" इका मूल मन्त्र है ।

ब्राह्मण्यमाजका उत्पत्ति प्रकरण उसके प्रतिष्ठाता राजा राममोहनरायकी जायतीके साथ इतना उल्लेख हुआ है, कि उनकी जीवनीकी आलोचना बिना किये उसका प्रश्न निरूपण करना बहुत ही कठिन हो जाता है । अतएव इस धर्म-समाजकी स्थापनाके प्रसङ्गमें उसके प्रयत्नकी कुछ जीवनी भी लिखी जाती है ।

बङ्गालके अन्तर्गत हुगली जिलेके दक्षिण विभागमें बानाकूल ग्राममें सदा हुआ राधानगर नामक एक ग्राम है ; इसी ग्राममें राजा राममोहन रायका जन्म हुआ था । इसके जन्म-समयके विषयमें मगोद है : कीर्ति कहते हैं, कि १७७४ ई०में इनका जन्म हुआ था और कीर्ति कहते हैं, कि १७७२ में हुआ था । राममोहनराय आर्यिहन्त्य गोवीय बन्दीपाध्यायवनीय सुदर्भ मेल्ल राइय कुलीन ब्राह्मण थे । उनके पूर्वपुरुष सुमलमान नाराय मङ्गलार्थमें प्रतिपत्तिनाली थे; इसीने उनकी 'राय' उपाधि थी । राम मोहन अष्टौजके प्रथम अधिकाके समय बन्दीकृतीके क्षीयान पद पर प्रतिष्ठित हुए थे । तबसे लोग उन्हें क्षीयान राममोहन राय कहते थे । आगिरमें दित्तोके पेनान प्राप्त सम्प्रदायमें 'राजा'की उपाधि दे कर उन्हें अपनी पेनानकी श्रद्धि करानेके लिए इन्हींके भेजा जिमसे ब्रह्ममें ये राजा राममोहनराय बहलये ।

राममोहनका पितृकुल वैष्णविकमतके वैष्णवका उपासक और मातृकुल तान्त्रिकमतानुसार जकिता उपासक था । उन दोनों कुलोंके मध्यधर्ममतमें विद्यारत्ताकी विशेष रूपाति थी । राममोहन प्राक्मिक आर्यधर्ममें पितृकुलके वैष्णवधर्ममें परम भागिन्नाम्न थे । कहा जाता है, कि ये प्रतिदिन श्रीमङ्गलवतनका एक अध्याय पाठ बिना किये जल तब प्रहण न करते थे ; इसके अनितिक उनकी २२ पुत्रधरण विपानी बात भी सुनी जाती है ।

राममोहन अपनी ब्रह्ममें बंगला और फारसी सोचने के बाद अरबीकी शिक्षा पानेके लिए पटना भेजे गये । पछि सस्कृत सोचनेकी वाणी भी पढ़ी । आप

द्विध भाषणके कारणके हुए भाषाप्रति हो गई है । अन्तः किमी किमी ब्रह्ममें बहुताने ईश्वर का मूल सिद्धि है वे जाते हैं ।

● महत्त्वा राममोहन राय विम ब्राह्मण्यका प्रचार कर गये हैं, यह कर्णपूर्वकने शास्त्रानुगति है या नहीं इस रण वाका भीमया नहीं करना चाहते । उन्होंने वेदान्त और उपनिषदादिसे वा धर्मनकी व्याख्या की है, उनका अधिकारित्य जाकाधारके लिए विना सम्भार है उनी सम्बन्धमें वेदान्तधर्ममें विगा है कि—"अधिकारि तु विधिरदधीर्गैर्येदाय एवनातगोपिगतानिच वेदाभिमिया जन्मिचमन्तेषाकाम्य निरिद्वन्द्वयुर्वा निचोचितिक प्रायःक्यातागानुशलेन विना निरिद्वन्द्वयुर्वा निगान्तिर्नैक्यन्त एषाननुदयगन्तव्य मन्ता ।" यह कुछ भी है, पर इकमें इन्दर नहीं, कि उनकी

सामान्य ज्ञान-रूपसे परिष्कृत नहीं हुए ; इन सभी भाषाओंमें आपने उच्चतम वैज्ञानिक और दार्शनिक ग्रन्थों का अध्ययन किया था। जब ये पन्द्रह वर्षके हुए, तब तीनों भाषाओंमें द्युत्पन्न और गारार्थके मर्मके ज्ञान फार हो गये। आपका यह ज्ञान हृदय कुटोरमें सकी र्णतासे न रह सका, और न विचार भी पहचानाहितामात था; यही कारण है, कि धर्मोसे आपके ब्रह्म विचार में आपको प्रज्ञा हुआ, कि ब्रह्म एक है तो हम बहुतसे देवताओंकी, आराधना और परिच्छिन्न मूर्तियों की पूजा क्यों करते हैं? आपका यह प्राणस्पर्शी विचार उत्तरोत्तर प्रबल होने लगा। इस विषय में आपका अपने पिताके साथ भी तर्क वितर्क हुआ था। परन्तु पुत्रके इस प्रकारके व्यवहारसे पिता क्रुद्ध हो गये। पिताका क्रोध देख पुत्र भी निरमर्षभावापन्न हो गये। परन्तु फिर भी आप सहजमें निरस्त न हुए। अधिकतर ज्ञान उपादानके लिए आप देशभ्रमणको निकले। इस यात्रामें राममोहन तिष्ठत तक जा कर यौद्ध्यामाओंके धर्मतत्त्वको जाननेकी कोशिश की थी। ३४ वर्ष बाद आर घर लौटे। परन्तु धर्मका सारतत्त्व निर्णय आपके जीवनका प्रधान कार्य हो गया था। इसलिए आप घरमें न रह कर फिर बागी चर दिये। बड़ा वेदातादिशास्त्री प्रगाढ आलोचनासे जो ब्रह्मतत्त्व आपको ज्ञान हुआ, उसके साथ प्रचलित धर्मोंमें बहुत अन्तर देख कर आप उन ब्रह्मतत्त्वको उद्दी पनाके लिए प्रस्तुत होने लगे। उस समय आपकी अवस्था केवल २५ वर्षकी थी।

इसके बाद आपने अग्रजो पढना प्रारम्भ किया। विशेष उद्यमके साथ नूतन भाग्य शिक्षामें प्रयत्न होने पर भी आपका मन ब्रह्मतत्त्वके निर्णयमें फसा रहनेके कारण, अग्रजो सीपनेमें अधिक मिलभ्य होने लगा।

१८०३ ई०में राममोहाके पिता रामकान्त रायको मृत्यु हुई। उस समय आप अर्धा-मज्जुतिके लिए अ ग रोज सरकारमें कार्य करनेको तैयार हुए। १८०४से १८१४ ई० तक आपने सरकारी कार्य किया। अन्तमें वित्तके ही धर्म तक आप क्लेशरुकोके दीवान रहे।

उस समयका दीवानी पदका कार्य फिसा था, हम

लोगोंकी मनभ्रममें नहीं आता। स्वभावतः आप परि-धर्मो थे और अपनी तोषण बुद्धिसे जटिल विषयोंकी जन्दी ही मीमांसा कर डालते थे। इसने उन्हें सर-कारी कार्य करनेके बाद भी अन्य कार्य करनेके लिए काफी अवकाश रहता था। उस समयमें आप धर्मकी अलोचना किया करने थे। अब उनकी तत्त्वानुसन्धि-त्साके साथ अर्थशास्त्रिका योग हुआ समझना चाहिए। इससे भारतके नाना सम्प्रदायके लोगोंके साथ समागम और शास्त्रचर्चाके अनेक सुयोग आपको मिले। इस समयमें अपने निगूढ ज्ञानार्थ भी लिपिबद्ध किये थे।

'तुरफतु उल् मुवाहिदीन' नामक आपका रचा हुआ एक ग्रन्थ है, जिसका भूमिका बरबो भाषामें और अन्यान्य अज्ञ फारसी भाषामें लिखा गया है। इन ग्रन्थसे राममोहन रायका परिचय मिलता है। ग्रन्थका मर्म यह है कि—कोई पथिक कहता है, कि मैंने समस्त पृथिवीमें भ्रमण किया, पर वही भी धर्म सम्प्रदायोंका समिलन नहीं देखा; किन्तु प्रणिधान पूर्वक देखनेसे ज्ञान होगा, कि सभी धर्मों में एक इभ्यरकी बात है। केवल धर्म पाजकोंने ही भेद-पद न किया है। इस ग्रन्थके शेषमें कहा गया है कि—लोक हितने लिए प्रयत्न करो, यही ध्येष्ट है। उत्तर देने हुए आपने समस्त शास्त्रीय विचारसे अरोपकारको हो कोटि ग्रन्थोंका सार पाषय बतलाया है। इसे उनके तिष्ठत आदि दूरदेश पर्यटनका और बौद्ध समर्गका फल हो समझना चाहिए। यह ग्रन्थ पहले लिखे जाने पर भी सम्भवतः उस समयमें ही मुद्रित हुआ था। परन्तु साधारण धर्मोके लोगोंमें इस ग्रन्थका अधिक प्रचार या विचार नहीं हुआ।

प्रच्छन्नाभायसे ज्ञाना-धेपणमें व्यापृत रह कर राम मोहन राय अपने जीवनमें बड़ी कृति अनुभव करते थे। इन अपरिसोम ज्ञानानन्दमें उनकी अर्थ तुष्णा धर्मज-निवृत्ति और बौद्धने लगी। आप दीवान होते हुए भी लय धाये क्लेशरु थे। क्लेशरु दिग्बो सादर आपकी महात्मा सनभते थे और बड़ा आदर करते थे। यह मान-सर्वादा भी अब आपकी अच्छा न लगने लगी। स ग्यासीकी तरफ तिष्ठत गये थे; उपरसे लौटने समय

आपकी तम-नगरी, मयासधर्म की महत्ता घुम चुकी थी। गार्दियर उततिके लिए आपने जो जो कार्य किये थे, सब आरको हेय मालूम होने लगे। ४० वर्षकी अवस्था में आप अनुयायियोंको लड़ा बना कर, दोबानो-पद छोड़, धर्मोन्नतिके लिए कठकता पधारे। उस समय आपकी रयागसुदि ऐसी बलवती थी, कि अंग्रेज सरकारके सादर आह्वानके प्रति भी आपने बड़ी निर्भीकतासे उद्गीर्णताका परिचय दिया। तत्कालीन भारत राज प्रतिनिधि ( गवर्नर जनरल बहादुर ) के एक गुल्तर काय मन्वादाके लिए आपने प्रार्थना करने पर भी, आपने मोतीक दैयममपुसाधना में सर्वान्तरण लगा दिया और उस पर कुछ भी स्थाल न किया।

राममोहन रायों कलकत्ता और समस्त यगालकी अवस्था देख कर सर्व साधारणके हितके लिए क्या क्या किया था, यह बात उनकी कार्यावलीमें स्पष्ट मालूम हो जाती है।

इस विस्तीर्ण भारतभूमिमें अब सूर्य, चन्द्र या अग्नि प्रमासम्पन्न हिन्दू राजन्यवर्गका अधिपत्य नहीं है। अब धात और क्षात्र शक्तिके स योग वियोगका विचार निष्प्रयोजन है। शास्त्रानुसार राजा ही युग परिचायक हैं, आपस्य मुसलमानोंके अधिभारसे भारतमें नूतन युगका आविर्भाव सम्भवा नाहिए। कालहाल अंग्रेजों का अधिभार है। इस नयतर युगके पहलेसे ही दूर-यती देशोंके स यर्दित धान, विधान और सम्पत्ताका प्रकाश धीरे धीरे भारतक्षेत्रमें होने लगा था। सम्प्रति समस्त पृथिवीको धानोन्नति और सम्पत्ताका प्रवाह विद्युत्क्षेपमें इस प्राचीन क्षेत्रमें आ पहुँचा है।

सृष्टि, स्थिति और प्रत्यक्षी अतीतदेशीया प्रहाराणी भारत की अक्षय और चिरन्ता सम्पत्ति है। राममोहन राय अपनी पूर्णपुत्र-परम्परासे युगयुगान्तर प्रवाहिका उसी अमृत्य शक्तिके प्राप्त कर उसीकी मूलमपीयती शक्तिके प्रभावसे सर्वधर्मो विधायिनी "ॐ तन्मन्त्र" आदि प्रधाराणी उन्वारण-सूर्यक, उसी पूजासे मनुष्यके सार्वभौमिक बन्धान-भाषाके लिए गये हुए।

कलकत्तामें अंग्रेजी राज्यकी राजधानी प्रतिष्ठित होनेके साथ साथ ही बङ्गालमें एक नवोन्नत युगका

उपक्रम हो रहा था, कि इसी समय राममोहन रायने जन्मग्रहण किया। जिन समय प्रधा विचाररपति सर विलियम जोन्सने एशियादेशके और प्रथमतः भारत वर्षके शास्त्रोंके अनुसन्धानार्थ "एशियाटिक सोसाइटी" स्थापित की थी, उस समय राममोहन राय धातस सप्रहके लिए अकेले भारतके ताता प्राप्तीमें समण कर रहे थे। पीछे उन्होंने भी यूरोपाय विदेशोंकी तरह आरु भाषाओंमें धर्मिता हो कर उन कार्यमें प्राधान्य प्राप्त किया था। १८१४ ई०में आप कलकत्ता आये। उस वर्ष कलकत्तामें ईसासम्पत्तीके विज्ञापका आसता प्रतिष्ठित हुआ था। इससे पहले कलकत्ता 'टाउन' ( Town ) मात्र था, अब 'सिटी' ( City ) हो गया है। ईसाई मिशनरिया सिर्फ कर्तव्य निष्ठामें इस देशमें आ कर धर्मप्रचार करते थे। फिर राजशाक्तिकी महावतासे वे भारतमें ईसाई धर्मके प्रचारमें प्रवहनशील हुए। येने कठिन समयमें वेदान्त ग्रन्थ हाथमें ले कर राममोहन राय उद्भित हुए।

राममोहन रायों कलकत्ता आ कर प्रथमतः अपनी देशीय लोगोंके धर्ममतमें विनोषा करनेकी चेष्टा की। उसके लिए उन्होंने सबसे पहले वेदान्तग्रन्थके सुविस्मृत शूद्र भाष्यका समाधि यगलामें लिखा और उसे छपा कर प्रकाशित एवं प्रचारित किया। इसके साथ ही वेदान्त शास्त्रके सारमर्मका सकलन करके एक छोटी पुस्तिका भी प्रचारित हुई थी। पीछे और भी कई एक उन निपदीका इसी प्रकारसे बङ्गालुयाद् परके उनका प्रचार किया गया। इसके बाद ही, उन्होंने अंग्रेजी भाषामें एक ग्रन्थोका अनुयाद् प्रकाशित कराया। उक्त ग्रन्थोंकी कई-एक भूमिकाओंमें महान्मा राममोहनरायने अपना अभिप्राय व्यक्त किया है। उसमें उन्होंने अपने मनके साधकी स्पष्टरूपसे व्यक्त करनेमें वाषय विन्यासमें किसी प्रकारकी सुदि नहीं रखी है। नीचे उनके कुछ वाषय उद्धृत किये जाते हैं, जिससे उनका मक्षित अभिप्राय मालूम हो सकता है।

वेदान्तग्रन्थके अर्थ-व्याख्याक प्रारम्भमें आपने काली वाषयमें कहा है कि—“वेदमें युग युग प्रतिष्ठा करते हैं, कि सङ्पूर्ण धर्ममें प्रद्वरों कहा गया है और धात ही वेदके प्रतिपाद है।”

इस ग्रन्थको भूमिकामें आपने लिखा है—“इस अकिञ्चनने वेदान्तशास्त्रका अर्थ भाषामें एक प्रकारसे यथासाध्य प्रकट किया है। इसकी दृष्टिसे जानियेगा, कि हमारे ज्ञानानुसार अति पूर्ण परम्परासे और बुद्धिकी विवेचनाने जगत्के स्रष्टा, पाता और रूढतां इत्यादि विशेषणों द्वारा व्यक्त कैवल ईश्वर ही उपास्य हुए हैं। अथवा स त्रिधि विषय क्षमतापन्न होनेसे प्रह्लादमय और इस रूपमें वे ही ब्रह्म साधनीय हुए हैं।”

इन ग्रन्थोंके प्रकाशित होने पर ब्राह्मणोंने नाना प्रकार से आपत्ति का थी। उसके उत्तरमें राममोहन रायने अपना यह सिद्धान्त प्रकट किया कि “जब ज्ञानके बिना मोक्ष नहीं होगा, तब सबके लिए ज्ञानकी साधना आवश्यक है। इसमें वर्ण, आश्रम, वेदाध्ययनादिका विधि निषेध घटा कर लोगोंको परमार्थसे ब्रह्म करना अनुचित है। यतिकी जिस प्रकार ब्रह्मविद्यामें अधिकार है, उन्ही प्रकार उत्तम गृहस्थको भी अधिकार है, कि वह ब्रह्मज्ञान अर्जन करे। साधारणतः ज्ञान साधनके समय प्रणय उपनिषदादिके श्रवण मनन द्वारा आत्मानि परनिष्ठा होनेका अनुष्ठान और इन्द्रिय निग्रहमें यत्न, इतना ही आवश्यक है। वर्ण धर्माचार करनेसे उत्तमता है, परन्तु उसके बिना ब्रह्मज्ञान उत्पन्न नहीं होता, ऐसा नहीं है। फलतः इन्द्रिय धमन, प्रामादिका अभ्यास, परस्परमें मोति और ध्वज मननादि द्वारा ब्रह्मका साक्षात्कार करना, ये ही आवश्यक कर्तव्य हैं।

इस प्रकार ब्रह्मज्ञान साधनको कर्तव्यताका प्रतिपादन कर राममोहन रायने ‘गायत्रीका अर्थ’ और ‘गायत्री परमोपासना विधान’ आदि पुस्तकोंका प्रचार किया, और यिनयके साथ विज्ञापन किया कि “वेद मन्त्रोंके अर्थको बिना समझे उका व्ययहार करनेसे कोई लाभ नहीं, बल्कि हानि है।” आपने और भी निर्देश किया, कि “समकालमें अनुष्ठान हो, इस आशयसे ज्ञानियोंका अर्थ भाषामें अनुवादित किया है, मेरा और कुछ बतलाना नहीं है, ज्ञानार्थ समझ कर जो बतलाना हो, कर।”

संदेशीय लोगोंमें “एकमेवाद्वितीय” ब्रह्मत्वकी घेदका मुख्य तात्पर्य प्रतिपादन कर आपने तद्विद्वत्वादां विदेशियोंको प्रेषित करनेके लिए १८१७ ईमें अंग्रेजी

भाषामें उसी मर्मकी अनेक पुस्तकें लिखीं। उन पुस्तकोंमें “सत्र परब्रह्मका उपदेश ही हिन्दूशास्त्रोंका मुख्य तात्पर्य है” यही पुन कहा गया है। अंग्रेजीमें बड़े ओपसल वचन निव्यासमें करा है कि ‘इसमें ब्रह्म ज्ञानके अभावसे हमारे देशमें अनेक दुर्गतिशा हो रही है। उसको उद्दीपनाके सिवा हमारे वैदिक और पारलिक मङ्गल साधनके लिये और कोई भी उपाय नहीं है। इससे पहले आपके द्वारा प्रकाशित वेदान्तमय ग्रन्थ अङ्ग रेजी अनुवादको पढ़ कर यूरोप और अमेरिकाकी विद्वत् मण्डली चमत्कृत हो गई थी। इन्होंने बड़ी दृढताके साथ कहा था कि “हिन्दु” नामसे हिन्दुओं पर फलट्टा रोप और उसके लिये उनके प्रति अवज्ञा का व्यवहार करना नितान्त अविहित है।”

५. राममोहन रायने उत्तरकाशमें निच ब्राह्मणमाजकी प्रतिष्ठा की थी, यह निच प्रकारसे उद्धृत हुआ था, इस बातका स्पष्टीकरण करनेके लिये हम उक्त अनुष्ठानोंकी आलोचना करते हैं। इस प्रयत्नमें और भी कई एक विषय दृष्टव्य हैं,—

१। राममोहनने पौराणिक मतके विपर्यय करा है—“पुराण अल्पयुद्धियोंके बाधाधिनारके लिये रपक बन कर ईश्वरके महात्म्यका वर्णन करते हैं, परन्तु पुराण यह भी बार बार द्वाते हैं कि यह सब ब्रह्म अर्थमतिपोंके हितके लिये कहा गया है, जिससे पुराणमें दोषमाल स्थान न कर सके।”

२। किता इत्यादि मित्रनदीने कहा है कि, इस देश मनुष्य सब प्रकारकी नीति और धर्मके विनाश करनवाली भ्रष्टाता और जटवासे जाग्रत हो रहे हैं। इस बाधन श्चेतनीय परिपक्वोंकी भ्रष्टानना समक राममोहन रायन उखता उत्तर दिया कि — “मुझे तैद है कि भाग इतने दिन इस द्वात रह कर भी इस देश के लोगोंका विद्याभ्यास और गारस्थ धर्म भी न समक सके। एकर ही कई वर्षोंमें देशमें अमानके लोगों ही परमाथ सम्बन्धी तथा स्मृति, वच, व्याकरण, ज्योतिष आदि विषयके सेवकों प्रथ रह कर प्रकाशित किये हैं। परन्तु मुझे आश्चर्य नहीं होगा कि यह भागका सभी एक मात्र न हुआ हो, कारण मानन तथा प्रायः अन्यान्य सभी मित्रनरीयोंने इस देशके उच्चमत्त दर्शनके लिय एक साथ ही चतु रोज रह रहे हैं।”

३। राममोहन राय भवनेका किया प्रकाशमें



उत्तम शब्द राममोहारायणने ईसाई उपदेश वाचका यलोका न कर्त्ता कर ( १८२० ई०में ) जो जगता धर्मि प्राय प्रकट किया, उसमें उन्होंने ईसायियोंके विप्लवाङ्कको समुत्त मित्र कर दिखलाया। उन्होंने यह भी कहा, कि ईसायियोंका एक महिमामन्वित पुत्र यह, उन्हा उपदेश पालन करनेसे सुगम शान्ति मित्र बनती है। इस प्रत्यक्षके प्रकाशनसे प्रमाणात हो कर मिश्रारिषियों आपत्ति यन्त्रों की और बहो गये, कि "ईसायियों और परमेश्वर एक ही है" इस तत्त्वमें तथा ईसाई प्रायश्चित्तमें विश्वास न करनेसे केवल उन्हा उपदेश पालन करी मात्र कभी भी परिवर्तन नहीं हो सकता। इस विषयमें ईसाई मिश्र नरिषियोंस राममोहारायणका नामा प्रकार छाद्वापुवाद हुआ। इस कारण राममोहन रायों ईसायियोंकी अर गतिके लिये क्रमशः तीन पुस्तकें प्रकाशित कीं। उक्त तीनों पुस्तकोंने आपने हिन्दू और शीव भाषाओंमें लिखित मूठ वाचिकासे कोई कोई वाक्य उद्धृत कर सिद्ध किया है, कि भद्रनेनी अनुयायने मूल प्रायके भाषकों वई न्यायोंमें विद्वान् कर दिया गया है। इस अनुयायने राममोहन रायने प्राचीन और नवीन विधानकी वाचिक पर उदाहोहके साथ मूठ विचार करके सिद्ध कर दिया कि, ईश्वर एक है, उनमें त्रिपक्ष नहीं है। ईसायियोंमें जो भी कुछ शक्ति और महत्त्व है, यह ईश्वर प्रदत्त है, अतएव ये ईश्वरप्रेरित एक महापुरुष मान हैं, ईसायियोंस समानके उपदेशके प्रकाशने मनुष्योंके परिवर्तनके हेतुभूत

वा धर्मवर्तक इत्यादि नहीं समझाये। उनके पेशकश्या- प्रकरी "उत्तरात्मकी हूत प्रकाशने उन्हे प्रीतिग प्रकाशका कर्मकारण करने पर उन्हे न भन्ने हूँ, सेनाके गाने रूप कर स्पष्ट किया कि "मे हूँ, पुरुषोंके प्रकरी वा ही यह रहा है, मरा निरी भाष्य इन्ने मुझ भी नहीं है।" आन्ने "A Defence of Hindu Theism" और "A Second Defence of the Monotheistical System of the Vedas" नामके दो पुस्तकोंने उन्हा उदाह मरायक वीरविजया मन्वर्क, प्री- कर्त्ता सत्ता दिव्य है।

\* I had I I appeal to the Christian Public.

और पथस्वरूप हुए हैं। जिन्योंके प्रति ईसायियोंका यह उपदेश है कि—"तुम लोग जा कर समान्य जातियोंके मनुष्योंके जिन्य बान्धो, पिता, पुत्र और पतिर आत्माके नामसे उन्हे अपनाओ।" ( मथ १५, १६ ) ईसायियोंके नामसे धर्म प्रकाशका यही मूठ है। राम मोहन रायने इस वाक्यकी विवेचना करके विवचना है, कि ईसायियोंके नव विधानिक जिन्यपाल पट्टी या अन्त्याय जातियोंके साथ बहो मिल न जाय, इसलिये उन्होंने न उन्हा प्रशियामें ईश्वरके पुत्र बतला कर अपना नाम प्रथित करनेकी व्यवस्था की है। परन्तु उनमें भी उन्होंने "रसू-अन्नाह" महत्त्वकी तरह ईश्वरके प्रेरित धर्मवर्तकके मिया अन्य किन्ने मर्पादाका अकाशा नहीं रनेो है।

इस आलोचनासे मिश्रारिषियोंके मस्कारापुवापो ईसाई मतकी दोषात्मके विषय उपरिधन हुआ था। राम मोहन रायका उद्देश था कि, ईसाईके विमुक्त और सुशान्ति पूर्ण उपदेश द्वारा लोगोंको नौतिकी जिज्ञा मिल सकती है, पर दुर्भाग्यसे मिश्रारिषिया उस प्रायकी कल्पनाकी विषये डागती हैं। राममोहारायणका यह आन्दोलन वि- पुत्र निष्कार नहीं गया। उन्होंने देवरेण्ड भाद्रम आदि उदाहनेना कुछ स्थितियोंकी वाचिकवना यथाय धर्म समझा कर उनके द्वारा भारतीय एशेभर विविधयन समाजने प्रतिष्ठा कराई। उनके द्वारा प्रकाशित "शा- वित्र" विचार मध यूरोप और अमेरिकाके एशेभरवादी ईसायियोंका मनपोषण हुआ था। इस विचारके पट्टनेगे उनको आन्तरिक दृढता उत्पन्न हुए और उनका संगठन भी क्रमशः पुष्ट होता गया। राममोहारायण इस बातका बड़ा आनन्द हुआ था, कि ये उन्हे उन्किपदाक प्रकाशनेका आम्नादन करणोंमें समर्थ हुए।

उपरोक्त मूम लक्ष्योंकी देन कर राममोहन रायका उत्साह हुआ हो गया। यहाँ तक कि आपने अपने विचरण मिल भाद्रम माहदकी अवता सर्वस्व दान करने का न कल्प कर लिया। उन्होंने अन्नाह माहदकी यहाँके एशेभरवादी ईसायियोंके मिश्रारिषिया वादने बना दिया और मध" वाच्यवाचकधर्मोंके साथ उन प्रकाशनेमें जा कर

ईश्वरोपासना करते थे \* । ऐसे भजनालयमें विशुद्धभावसे उपासना होती थी, ऐसा उनकी छोटी सी पुस्तिकामें प्रकट है ।

राममोहन राय ईसाई धर्म के विशोधन-कार्यमें अनु रक्त हो कर उसके अनुकूल इतने अग्रसर हो गये थे, कि गिर्जा प्रकरणमें उपासना विधि पूर्वम्बुस्त न होने पर भी उस समय उन्होंने ईसाइयोंके साथ तादृश उपासना करनेकी अपना कर्तव्य समझा था । उन्होंने अपने पूर्व सस्कारके अनुसार "गायत्रा ब्रह्मोपासनाविधान" अर्थात् गायत्री जप और तदनुयायी ब्रह्मचिन्तन द्वारा उपासना विधान सस्त्रत भाषामें प्रकाशित किया और बादमें उसका अ प्रेजी अनुवाद भी किया । अ प्रेजी पाठकोंमेंसे जो शब्द ब्रह्म या सर्वत्र ब्रह्मदर्शन का तत्त्व न समझ सकते थे, उनके लिए वे उतने अशकी व्याख्या भी लिख गये हैं ।

इधर क्रमशः आदम साहबका गिर्जा लोक शून्य होने लगा । उस समय पक्षेऽरवादी ईसाइयोंका एक स्वतन्त्र गिर्जाका प्रचलन अब भव समझ कर तथा हिन्दू सभ्यताके पक्षेऽरवादी भी अथ पन्था देखने लगे, इसलिये राममोहनने अपने प्रयत्नोंको गति बदल दी थी ।

कहा जाता है, कि एक दिन पक्षेऽरवादी ईसाइयोंके उपासनालयसे लौटने समय राममोहन रायके हमेशाके साथी तागचंद चक्रवर्ती और चन्द्रशेखर देवने कहा कि "हम परगण समाजमें क्यों जाते हैं; हमारा अपना एक उपासनालय होना चाहिए ।" राममोहन भी ऐसा ही चाहते थे । धीरे धीरे अपने समाजका मत विशोधन करना उनका अभिप्रेत था । वे अपने सस्कार, शिक्षा और

माधानाके अनुसार ब्रह्मोपासना करेंगे, इससे बढ कर उनकी प्रार्थनीय वस्तु और क्या हो सकती थी ? उनके वस्तुगुण उद्योग करने लगे । थोड़े ही समयमें वेदविधि सम्मत एक उपासना समा स्थापित हो गई । अनेकोंकी स्वतः प्रवृत्त चेष्टामें जिम्मकी उत्पत्ति हुई, उसकी दृढ प्रतिष्ठा आकाशगोप्य है । वही आजकलका यह अशीति वर्षीय ब्राह्मसमाज है ।

महात्मा राममोहन राय जब रंगपुरमें नागा सभ्यताके उपासकोंके साथ एकत्र हो कर धर्मानुगीलनमें रत थे, तभीसे एक नूतन धर्म मन्त्राग सुवपात हुआ था । कलकत्ता आ कर उन्होंने वास्तवमें एक आत्मीय समाजका संगठन कर डाला । इस समाजमें वेदका पाठ और इश्वरके उद्देशसे स्तुति गीत होते थे । कुछ दिन बाद हिन्दू और ईसाई मतके बहुदेवोपासकोंके साथ यादानुयादमें तथा सहमरण विषयका महा आन्दोलनमें प्रवृत्त होनेसे राममोहन राय फिर इस आत्मीय समाजकी रक्षान कर सके । ४ वर्ष तक यथानियमसे अपना उद्देश साधन कर वह समाज दृढ गई । उसके १० वर्ष बाद नगोन उद्गमसे तथा प्रशस्तर पत्तनसे वर्तमान ब्राह्मसमाजकी प्रतिष्ठा हुई ।

शक स० १७१०के, भाद्रपद मासमें (ई० सन् १८०८) यह समाज स्थापित हुई \* । इस समाजमें राममोहनराय साधारण व्यक्तिके समान एक उपामक मात्र गिने जाते थे । प्रति महाह इस समाजका अधिपति होता था । सूर्यास्तसे कुछ पहलेसे प्रारम्भ कर कुछ रात्रि तक इसका कार्य होता था । समाजमनके एक पार्श्वमें दो तैलदूक प्रालाप बैठ कर वेद पाठ करते थे । सूर्यके अस्तगत होने पर उत्सवानन्द विद्यायागोश समाजमनमें आ कर उपविष्टुका पाठ और उमकी व्याख्या करते

\* १७१६ शक सं०भ 'ब्रह्मजा इत्तरा' नामक शङ्करकी टीकाद्वयके कार्यालयके ऊपरके हिस्सामें सत्तारमें एक दिन आदम साहब ईश्वरोपदेश देते थे । राममोहन राय, उनके भानज, पुत्र तथा अन्यन्व्य सुदम्पात्रा, ताराचंद्र चक्रवर्ती और चंद्रशेखर देव यहाँ उपस्थित रहते थे । (संस्कृतविधि पत्रिका, वैशाख, १८६६ सं० १७६६) इसत पहले त्यागभावने कारण कभी कभी राम-माहात्म्यके स्तुत पालन मकानमें भी आदम साहबका यह उप-पुत्रा करगा था ।

\* कलकत्ताके जीहावांरा मुहल्लेमें कनकचोचन बसुक मकान पर इन समाजकी प्रथम प्रतिष्ठा हुई थी । इसके बारह पत्र पहले इस मकानमें हिंदू कालेजका कार्य हुआ था । उत्तरकाठमें (१८१० ई०) इस मकानमें डा० गार्हने 'नरान एसम्पिडन इन्सटिट्यूशन' का प्रारम्भ किया था । इस सामान्य मकानका परिवर्ण ईसाइयोंके योग्य दिग्ग्य हो गया है ।

ब्राह्मसमाजकी प्रतिष्ठाके लिए महात्मा राममोहन राय धर्मधर्मके अनुमानित हो कर वेद विहित प्रभो पासना रूप धर्म प्रारम्भमें प्रबोधित हुए थे। उस प्रसङ्गमें उन्हें समान सभ्यरूप और भी एक दुःख कायमें हस्तक्षेप करना पड़ा था। यह था भारतभूमिका विगलन प्रचलित सतीदाह या समरपण प्रथाका निराकरण। प्रब्रह्मके प्रभावसे उन महात्मागे इस 'समहर्षणसम्प्रदाय'की निवृत्ति की था। गवादार या गहमण्य दने।

इस ती यह समझूँ निवारित हुआ और उधर मङ्गलमूत्र ब्राह्मसमाजका गृह निर्माणवा कार्य समाप्त हुआ। राममोहन रायने 'सतीदाह'के बन्दे प्रयत्नके मङ्गलमूत्रकी प्रवृत्ति कर (साध महोत्सव) ब्राह्मसमाज के स्वकीय नवीन भवनमें प्रबोधित प्रारम्भ कर दी।

यह घटना ब्राह्मसमाजके लिए मूल अनुकूल हुई सही, परन्तु कार्यत प्रतिफल उद्दण्ड। सतीदाहके पक्ष समर्थनकारितियों इस आदि के कारणके लिए ब्राह्मसमाजके प्रतिपक्षी एक समाजकी सृष्टि कर जाती।

● भारतभूमिमें जिनकी बार नगणना उद्योग हुई है, उनका ही बार सर्वोत्तम कामना-मूल्य यथावधि कर्त्तव्यताके उक्तका प्रभाव लक्ष्य था। कर्मसंग्रह शास्त्रा महात्मा विचारित हैं। सती दाहके, कम द्वारा मुक्तिवादी पेशा, रत्न द्वारा रत्न पेशा, वा एक द्वारा पदभूमि स्थापना प्रमाण करता, भयना युवा द्वारा युवा भाषा करनेक गन्तव्य है। (मनु ११.१२, भीमसूक्त १.१२) गतांगे गान्धीय द्वारा सर्वत्र भूमिदाह दानका उल्लेख है। परन्तु उनका प्रशंस्य अन्य प्रकार है। गीताका उल्लेख है कि, कर्मका कामका द्वाय कर कम करा, परन्तु गुरुमण्डपके सततताम इह उद्योगका यथावधि विचार हुआ था। जिस प्रकार लार्डमुन्सकी कायताम परमपण अद्युष्टि होता था, उभा प्रकार मुन्सकायना मिल देना उद्योग हुई है, उक्त करने कर्म गीताका भी उद्योग हुआ था, अथवा निरुक्त धर्मकी शक्तिवा हुई थी, वह अनुभव भी गरी विद्युत का लक्ष्य। अब उनी कायका सतीदाह प्रभाव ही सतीदाहके पक्ष में लक्ष्यका यथावधि उद्योग किया। जिस कर्म ब्राह्मसमाज सर्वत्र हुआ था ( १८२८ ), उक्त कर्म ही कर्म १८२२ ई० क ४ (सतीदाह) इस युद्धका निराक कर्त्तव्य था।

मात्र माममें ही इस विरोधकारो धर्मसमाजको नोय पड़ी। इसके ६ दिन बाद ही ब्राह्मसमाज स्वकीय नवन मन्त्रिधर्म आसन जमा कर बैठे। इसी प्रकार धर्मसमाजके सभ्य पनार्थ एक मन्त्रिधर्मके लिए भी चन्दा इकट्ठा हुआ, परन्तु यह स्थायी न हुआ। जन सं० १७११में वीर और नाय माममें इस घटना पर कलकत्ताके हिन्दू समाजो भारने आन्दोलन उठाया था, यह उस समयके सामाजिक साहित्यके अग्रणीकासे ज्ञात होता है।

कुछ भी हो, गीतोक प्राणाभिरा प्रभाव होते हुए भी भारतभूमिमें कर्मबीजने शाशा प्रजाशासुक्त पताहण एक कष्टकृतक उद्योग हुआ था, कि निरन्तर उद्योग और दाहकर्म माहात्मा राममोहन राय द्वारा सन्नाहित हुआ। यह भारतकी एक प्रष्ट पतिहासिक घटना है। इस कष्टक जाग्ये अथगमने हिन्दूविधवाभिरा मनुक ब्रह्मचर्यका तथा गान्धीक मुक्तिवादीका मार्ग प्रगल्भ हुआ है, इसमें सन्देह नहीं।

राममोहन रायके मन्त्रणाकूप सर्वोत्तमसे कठोर सर्वोदाह प्रथाका भयङ्कर अथमारित होने पर, हिन्दू जाति अन्य सभ्य जातियोंके समस्त मान्यक कर्त्तव्य करनेमें समर्थ हुई थी। इस सर्वोदाहको रोमके लिए उन्हें सतीदाहप्रथाके समर्थकोंके विरुद्ध लिलायत वागा करनेकी पड़ी थी। इसके लिए धर्मप्रण राममोहन उस समय अपनै द्वारा प्रतिष्ठित ब्राह्मसमाजकी भी उसी अवस्थामें छोड़ स्वयं शक्य सन्तुष्टमें वृत्त पड़े थे।

● सर्वोदाह प्रथाका शोका राममोहन रायके निवे जिनका गीताका विचार था, उगा ही वह उनके निवे सुगमिकता भी कारण था। काय, इस निवे उनी विरुद्धमें हजारों भासना गरी हा गरी थे, यदा एक कि उनका यत्न गुरुमण्डप है, गवा था। कर्त्तव्यके पेशा मात्रम ही काय था कि अद्युष्टि गान्धीय धर्मका कर्म। इस सर्वोदाहके विरुद्ध तथा पर काय कर्मके सर्वोदाहके कारणकी विचारकाये काय थी। राममोहनकी भी इस निवे कर्त्तव्य था। इस कर्मके निवे यह ही कारण विरुद्ध अद्युष्टिमें भी युक्तके लक्ष्य काय भास्युक्त कि दू गान्धीय काय गान्धीय काय काय में करने पड़ा था, जब कि काय भास्युक्त काय काय केकने गरी ही कर्म हुए थे।

राममोहनराय भारतभूमिसे जन्मरके लिये विदा ले कर उत्तमाशा अन्तरीप घेएनपूर्क छ मास समुद्रपथरे फटफो महेते हुए ८वीं अप्रैलको इंग्लैण्ड पहुचे थे। वहा उन्हें तीन वर्ष रहना पडा था। आश्विन शुक्ल चतुर्थी, शक सं० १७५५ ना० २७ सेप्टेम्बर १८३३ ई०को त्रिपुल नगरमें आपने देहत्याग किया था। मृत्यु-समय में उनकी अवस्था ५६ या ६१ वर्षकी थी।

ब्राह्मसमाजके इतिहासमें राममोहनरायके इंग्लैण्ड पासके विषयमें दो विषय जानने योग्य हैं। एक तो यह, कि वहाके एकेअरवाट्रियोका कहना था, कि यदि राममोहनराय तीन वर्ष रह कर वहाके विद्वानोंके साथ धमालोचना न करते, तो वहाका यूनिवर्सिटीन सप्रदाय इतनी जल्दी परिपुष्ट न होती। दूसरा विषय यह है कि, सहमरणप्रथा निरासित होने पर भी प्रार्थनोंकी आहृतिके प्रभावसे उसके पुनर्जन्मकी सम्भावना होने लगी थी, परन्तु राममोहनरायने प्रिरी कीन्सिल तक समुत्थित हो कर १८३२ ई०की ११वीं जुलाईको इसकी "अपील नाम जूर" करा दी थी। विधवा हिन्दू रमणियों का मनुक प्रसवार्थ-गौरव सुदूर विलायत तक विद्योपित हुआ था।

राममोहनरायके सम्पूर्ण जीवनके कार्योंसे ब्राह्मसमाजका कुछ न कुछ समझने अवश्य है। अब ब्राह्मसमाज सङ्घट्टोंमें गिरता पडता किन्तु तरह क्रमशः श्रद्धिको प्राप्त हुआ इस बातका वर्णन किया जाना चाहिए।

उपर्युक्त भावविवाद और अन्यान्य प्रतिफल घटनाओंमेंसे राममोहनरायके अर्चमानमें ब्राह्मसमाजकी रक्षा करना एक दुर्कर कार्य था। इससे पहले करीब ५०६० व्यक्ति समाजको उपासनाके समय उपस्थित होते थे। सन्त्यगण बढ़नाभी होनेके कारण क्रमशः समाजका संयक छोड़ने लगे। परन्तु राममोहनरायके चिरमहाय महामहोपाध्याय रामचन्द्र विद्यादागीशान् इस समाजके प्रथम दिन जो आचार्यका आसन ग्रहण किया था, उससे ये किसी भी तए विचलित न हुए। ब्राह्मसमाजके इतिहासमें इस महान्माका नाम और गुणावली विशेष उल्लेखनीय है।

हुगली जिलेके अतर्गत मालापाडा ग्राममें रामचन्द्र विद्यादागीशान् जन्म हुआ था। उा १५ अगस्त ज्ञाता तान्त्रिक साधक थे, नाम था हरिहरानन्द तीर्थ स्वामी कुत्राघात १\* तीर्थस्वामी राममोहनरायके तत्रोपदेश थे। उनके अनुचर रामचन्द्र विद्यादागीश राममोहनरायके कश्मिता-वासमें प्रारम्भसे ले कर आगिर तरु छायाकी तरह उनके अनुचरों थे। उन्होंने प्रथमतः अपने प्रतिष्ठित वेद चतुर्णाणोंमें वैदान्तशास्त्रका अध्यापन किया। बादमें सन् १८५५ ई०में मृत्युशास्त्रके अध्यापन नियुक्त हुए। इस कार्यमें नियुक्त रहने पर भी विद्यादागीश महाराज ब्राह्मसमाजके नेताओंमें एक प्रधान व्यक्ति समझे जाते थे। सर्वथ उनका आदर था। हिन्दू-कान्ठेनके अतर्गत पट्टला पाडगालाके छात्रोंको भी आप नियमितरूपसे नौतिशिक्षा दिया करते थे। शक सं० १७००से १७६१ तक पट्टल वर्ष आप ब्राह्मसमाजके आचार्य पद पर समाहित रहे। इस वर्ष थीमहे देवेद्रनाथ प्रमुख कुत्र उतनाही युवकोंके ब्राह्मसमाजके मन्त्राङ्गोन उन्नतिमाधनमें प्रती होने पर उनके जीयतका कार्य समाप्त हुआ था। इसके कुछ दिन बाद ही आप पीडित हो कर शय्याशायी हुए। अन्तमें काशीपाला की ओर मार्गमें ही १७६६ शकाब्दमें फाटगुन मासमें आप की मृत्यु हुई।

इसके बाद ब्राह्मसमाजका कार्य भार श्रीमहे देवेद्रनाथ ठाकुर पर सौंपा गया। देवन्द्रनाथ ठाकुर गये।

१७६० शकाब्दमें, इकोस बरगो उन्नमें ही देवेद्रनाथ ठाकुरका धर्माभाव उद्देत हुआ था। एक दिन सहसा राममोहनराय द्वारा पचास दिन शोपनियद् प्रथक एक दिन परमें 'ईशानास्यमिद् सर्व' इस ब्रह्मसूत्रको पढ़ कर आप परम पुत्रकिन्तु हुये थे। यही उनकी नवोन्मत्त सावित्रीमन्त्रोदा है। तबाने, केवल त्रिसध्यामें ही वर्षों, किन्तु दिन और रातकी भी शोपनियद्के मत उनका रमनामें विलास करते रहते थे।

\* अर्चोप्रथम ब्रह्मके पहले इनका नाम नन्दकुमार था।  
† इस समय भाषने ब्राह्मसमाज जो व्याख्यान दिए थे, उनमें १७ दिनेके व्याख्यान बार बार दिये थे।

० 'राममोहनराय' - ब्रह्मके सम्पूर्ण विवरण लिखा गया है।



धर्मप्रथम इचा गया। उस प्रथमके सङ्घटनमार्गीना सुशोधक व गला अनुवाद और व्याख्या भी कर दी गई। भारतके प्राचीन प्रह्लादादी ऋषिगण ग्रहण विषयक जो महामन्त्र नित्य पाठ करते थे, इनने समय वाद के श्रुति वाक्य सज्जनगणोंके गोचर हुआ और अर्थबोधके साथ उनका नित्य पाठ होने लगा। हृदयको तृप्तिकर और शूद्रोपनोको सर्वमङ्गलकर नन्नीतिनी रचनाशली घर घरमें ध्वनित होने लगे। बंगालकी विद्वान्मण्डली प्राचीन ऋषियोंके आशीर्वाद सहित ज्ञानालोकको प्राप्त कर पेरिष्क और पारद्विष परम मङ्गलको साधना प्रवृत्त हुई।

परन्तु फिर भी देवेन्द्रनाथको सर्वतोभावेसे परिणत न हुई। उन्होंने देखा, बहुतसे माई तर्कप्रिय हैं, उनमें प्रेम नहीं है, धर्मसाधनामें समुचित निष्ठा नहीं है, सुतर्क योगधर्मको भी विशेष चर्चा नहीं हो रही है। इन सब लक्षणोंको देख कर वे निगूढ धर्म चिन्तामें प्रवृत्त हुए। कश्चित्तोमें उनका चित्त समाधान न हुआ। वे हिमालय प्रदेशको चल दिये।

दो वर्ष हिमालय प्रदेशमें भ्रमण कर देवेन्द्रनाथ घर लौटे। शक सं० १७८०में कलकत्ता लौट कर उन्होंने प्राणधर्मानुरागो और एक उदसाही युग्म दल देगा। इस युग्म दलके नेता थे श्रीमत् केशवचन्द्र सेन।

श्रीयुक्त केशवचन्द्र सेन द्वारा प्रचारित नवविधान समाजका विवरण यथास्थानमें लिखा गया है। १७८१ शकाब्दसे १७८६ तक इन्होंने ब्राह्मसमाजमें रह कर उसको जो महोन्नति की है, ब्राह्मसमाजके इतिहासमें वही उल्लेख-योग्य विषय है। नवविधान समान द्वारा प्राण-समाजका जो उपकार हुआ है, वह भी आगिरमें दिगाया जायगा। केशवचन्द्र और नवविधान लेखी।

केशवचन्द्रके पितामह रामकमल सेन एक लक्ष्मप्रतिष्ठ प्रियारान्थकिये। राममोहन रायके प्रतियोगी और प्रविद्ध हो विलमन साहबके साथ उनको गहने मिलता था। राममोहाने विरुद्ध धर्म समा स्थापित होने पर, रामकमल सेन उन समाजके नेताओंमें प्रधान नेता समझे जाते थे। परन्तु विधाताके विचित्र विधान है, उन्होंने रामकमलके पीतनी 'विशिष्टयन' कुसुमकोसे अपनी रक्षा

करते हुए राममोहन रायकी प्रतिष्ठित सभारा गौरव बढानेमें कोई कसर न रखी।

प्रथमानुष्ठानमें उन्होंने एक सुपरिष्कृत पादरोसे विरोध निपुणताके साथ क्रिश्चियन धर्मप्रथम पढा। राममोहन राय द्वारा सङ्कलित क्रिश्चियन उपदेशको पढ कर वे उन्हें ईसाई धर्मम अनुकूल समझने लगे थे। किन्तु आगेचला करते रहनेसे पीछे उनका यह भ्रम दूर हो गया। तत्पश्चात् वे ब्राह्म धर्मके समझी समझ कर प्रतिष्ठापत्रमें हस्ताक्षर करके ब्राह्मसमाजके मन्त्र्य बने। फिर देवेन्द्रनाथके साथ केशवचन्द्रका सम्मिलन हुआ। थोड़े दिनोंमें यह मिलन एक अनुज और अनुकूलोय सौहार्दरूपमें परिणत हो गया था।

देवेन्द्रनाथका हृदय ईश्वर प्रेमसे गदगद था। केशव चन्द्रका भी यही हाल था। दोनोंके सम्मिलन आर सौहार्द-वर्द्धनमें यही एक कारण था। देवेन्द्रनाथ अष्टैदम्तु को अच्छा न समझते थे। उन्होंने शानी भक्त रामप्रसाद को तर्ह वृत्तप्रारम्भे तत्पश्चात् स्थापन किया था। केशव चन्द्रने उसे हा सर्वसाधारणके लिए प्रहणोय बना दिया।

दोनोंने मिल कर एक प्रभु विद्यालय गोल दिया। देवेन्द्रनाथ ओपनसल सुन्वाडु माधुमायामें और केशवचन्द्र हृदय-प्राहो तेनस्कर अ प्रेजीभाषामें उस विद्यालयके सैकड़ों छात्रोंको उपदेश दिया करते थे। सिर्फ विद्यालयमें ही नहीं, चर्क धर्म, मदानमें, सबदा ज्ञान और धर्म का चर्चा किया करते थे। इन प्रकार 'मत्य प्राण-मन' परमेश्वरके प्रेम और पवित्रताका तथा मनुष्यके प्राह्मभावको जित्त और व्याख्या, अगेचला और प्रचारमें केशवचन्द्र और देवेन्द्रनाथ स्वयं जैसे मग्न हो गये थे, श्रोता और सहचरवर्ग भी वैसे ही सर्वांगमें उनके सह धर्म बनने लगे थे। एक प्राणताके विस्तारके साथ ब्राह्मप्रका प्रचार होने लगा। ब्राह्मधर्म प्रचारके लिए कुटुम्बक धन मान, प्राण तक निरसन करनेके लिए प्रतिशपथ हो गये।

शक सं० १७८५ तक यही रत्कार रही। देवेन्द्रनाथ इस समयको ब्राह्मसमाजका 'सन्तकाल' कहा करते थे। उनको उक्ति यह थी—'इस समयमें हृदयके प्रीति कुसुम द्वारा हृदयेश्वरकी अर्चना कर ब्राह्ममात्र ही हृत्ताई हुए थे।'

द्वैतप्रमाण एव सुदिने भयमात्रे 'प्रोक्तात्पक्षे प्रथम रीति और अन्वयार्थ' सहजे हृदय पूर्वोक्त यमार्थके मन्व्यादिपक्षे स्वरूप करते करते थे। हम भी प्रायश्चित्तमन्त्रके इतिहासमत्र उक्त मन्त्र तत्र भा पढ़ते हैं।

प्रायश्चित्तमन्त्रके विवरणमें हम उक्त और प्रोक्तात्पक्षके लक्षणोंकी आलोचना करना आवश्यक है। जब तत्र प्रायश्चित्तमन्त्रके मन्वयार्थ पर मतमें वायं करते रहे तब तत्र मन्वयार्थ प्रयागे यमार्थका समझना चाहिए। उदमें हमें मानें हुआ और परम्परा विद्या धारण हो। तथा, तयमें प्रायश्चित्तमन्त्रमें अन्वयार्थका समा कृत प्रोक्तात्पक्षके लक्षण विचारद्वे देते लगे।

पहले प्रायश्चित्तमन्त्रके सहजमें विमो प्रकृतका मत भेद था ही नहीं, ऐसा नहीं कहा जा सकता। किन्तु उदमें उतरी स्थानात नहीं पढ़ना था। ये व्यवस्था पूर्वक मतभेद नहीं करते थे। चिमरी हृदय यदि प्रायश्चित्त मन्त्र कहते हैं, उसका नाम पहले प्रायश्चित्तमन्त्र ही न था। इसके बाद मैदिनीपुर, डाका और फिर यश मन्त्रात् आदि जगतीं भी प्रायश्चित्तमन्त्र स्थापित हुए, उद्यों स्थानात् मतभेदके कारण भी अपना नाम "प्रायश्चित्तमन्त्र" नहीं रखा। किन्तु फिर भी ये मन्त्र मूल

प्रायश्चित्तमन्त्रकी जाया निम्नी जाती थी। उदमें सङ्घर्ष अन्वयार्थपरमें विदमान था। इसके बाद जो प्रथम हृदय उदमें प्रायश्चित्तमन्त्रके मन्वयार्थ 'प्रायश्चित्त' नाममें विवेचन पाया उपरम किया। उदमें एक एक सङ्घर्ष गति होनेका प्रमाणमें विचार शुरु हुआ था।

पहले उदमें किया गया है, कि राममोहन रायके पञ्चसतस्य विद्यावान् एवंभारवादी होने पर भी, यूरोप और अमेरिका यामों यूनिवर्सिटीय मित्रियन लोग उदमें प्रायश्चित्तमन्त्रके विचारार्थ और वैदिकमन्त्रके कारण, पुनः स्थापित और अपने मन्त्रार्थमें शामिल नहीं सतक मके थे। वेजवच उत मित्रियनोंके समर्थमें और उदमें अतिमत्त सत्याममें संवर्धित हुए थे, इसलिये जातिमि उदके दृष्टिमें विद्या पर्यायिक और मङ्गल मान्य कता था। मित्र उद ही नहीं, वे हिन्दुमन्त्रकी मङ्गल गति नातिमीने ऐसा कृत मन्त्रके थे, कि मामों उदका मङ्गल सङ्घर्ष विधे विना धर्मस्थापना और उपायान्तर ही 'प्रायश्चित्त' है। इसी विधेयामें उद्यों हिन्दु मन्त्रमन्त्रके सामुद्र संवर्धने लिये हृदयमन्त्र ही कर उद का पुनर्गठन करना चाहा था और परन्तु पाठ्यमन्त्र की स्थापनामें यह विचारिता हो सकता है पर विचार कर ये प्रथम प्रायश्चित्तमन्त्रका ही वे एक नियमोंके सहजनेका उद्योग करने लगे। इसके लिये प्राय १७६६के कार्तिक मासमें उद्यों वास्तवमें समस्त प्रायश्चित्तमन्त्रोंमें उद उद मन्त्रके एक एक प्रतिनिधियों कायना गुलावा। अतिमात्र यह कि, उद प्रतिनिधियोंके प्रति मन्त्रमें मिलनाय प्रायश्चित्तमन्त्रोंके मन्त्र पूर्वोक्त परिक्रम करता और मन्त्रात् समस्त मन्त्रोंकी विमोचित करनेका उपाय विचारण करता। इतने ३५ मात्र पढ़ने केजाय-

• "उद-प्रायश्चित्तमन्त्रके सहजमें विमो प्रकृतका मत भेद था ही नहीं, ऐसा नहीं कहा जा सकता। किन्तु उदमें उतरी स्थानात नहीं पढ़ना था। ये व्यवस्था पूर्वक मतभेद नहीं करते थे। चिमरी हृदय यदि प्रायश्चित्त मन्त्र कहते हैं, उसका नाम पहले प्रायश्चित्तमन्त्र ही न था। इसके बाद मैदिनीपुर, डाका और फिर यश मन्त्रात् आदि जगतीं भी प्रायश्चित्तमन्त्र स्थापित हुए, उद्यों स्थानात् मतभेदके कारण भी अपना नाम "प्रायश्चित्तमन्त्र" नहीं रखा। किन्तु फिर भी ये मन्त्र मूल

१. उदमें प्रायश्चित्तमन्त्रके सहजमें विमो प्रकृतका मत भेद था ही नहीं, ऐसा नहीं कहा जा सकता। किन्तु उदमें उतरी स्थानात नहीं पढ़ना था। ये व्यवस्था पूर्वक मतभेद नहीं करते थे। चिमरी हृदय यदि प्रायश्चित्त मन्त्र कहते हैं, उसका नाम पहले प्रायश्चित्तमन्त्र ही न था। इसके बाद मैदिनीपुर, डाका और फिर यश मन्त्रात् आदि जगतीं भी प्रायश्चित्तमन्त्र स्थापित हुए, उद्यों स्थानात् मतभेदके कारण भी अपना नाम "प्रायश्चित्तमन्त्र" नहीं रखा। किन्तु फिर भी ये मन्त्र मूल

२. उदमें प्रायश्चित्तमन्त्रके सहजमें विमो प्रकृतका मत भेद था ही नहीं, ऐसा नहीं कहा जा सकता। किन्तु उदमें उतरी स्थानात नहीं पढ़ना था। ये व्यवस्था पूर्वक मतभेद नहीं करते थे। चिमरी हृदय यदि प्रायश्चित्त मन्त्र कहते हैं, उसका नाम पहले प्रायश्चित्तमन्त्र ही न था। इसके बाद मैदिनीपुर, डाका और फिर यश मन्त्रात् आदि जगतीं भी प्रायश्चित्तमन्त्र स्थापित हुए, उद्यों स्थानात् मतभेदके कारण भी अपना नाम "प्रायश्चित्तमन्त्र" नहीं रखा। किन्तु फिर भी ये मन्त्र मूल

चंद्रने (अपीतलिक) ब्राह्मसमाजनुसार एक वैधनातीय धरके साथ कायस्थजातीय एक त्रिधनाकन्याया त्रिवाह कार्या सम्यन कराया था। इससे उनके मनोभावका कुछ अश प्रस्तुटित हो चुका था। उनकी आतरिक चेष्टा थी, कि समस्त ब्राह्मसमाजके मद्रस्यगण एकमत हो कर इसी आदर्श देशकी कुरीतियां और कुसस्कारोंकी जडमूलसे उखाड कर फेंकते रहे।

बहना धर्य है, कि इस प्रकार आदर्शने कार्य करना देवे त्रनाथके अभिप्रायसे विकृद्ध न था, इसलिए समस्त ब्राह्मसमानके प्रतिनिधिओंका बुलाना और उांमें मतेष्य सम्पादन करना कुछ भी सुसाध्य न हुआ।

परन्तु केशवचन्द्रको त्रियाम था, कि इस प्रकार किसे बिना ब्राह्मधर्म प्रतिपालित नहीं होता। इस लिये उन्होंने अपनी कोशिगसे स्वमतावलम्बी सदस्यों द्वारा इस प्रकारने ब्राह्मधर्मका अडुष्टान और ब्राह्मधर्म-प्रचार त्रिवाह करनेका सकल्प कर तदनुसार प्रचार कार्यादि पृथक् रूपसे करना शुरू कर दिया। दूसरे ही वर्ष १७८७ शताब्दीमें देनेन्द्रनाथ द्वारा परिचालित आदि ब्राह्मसमाजसे सर्वथा विच्छिन्न ब्राह्मसमाज स्थापनके लिये उद्योग करने लगे।

केशवचन्द्रके आदि ब्राह्मसमाजका सम्यन्ध छोट पर नूतन उपासनालयके आयोजनमें ध्यस्त होने पर महात्मा राजनारायण धसुने उक्त आदि-ब्राह्मसमाजका परिचालक पद ग्रहण किया।

केशवचन्द्रने अपने अभिप्रायानुसूल ब्राह्मसमाजकी स्थापनाके लिये जनसाधारणसे सहायता मागी थी ६। जानि, वर्ण और सम्प्रदाय निर्विशेषसे जिस ब्राह्मसमाज की स्थापना हुई है वहा किन्मी जातिका विह रहना उचित नहीं, यह सस्कार बलीधान होने पर भारतके

केशवचन्द्रकी सहायतायर्थ रूपसे आने लगे। ये बिना पूजोके ईश्वर सहाय हो कर घरसे निकले, परन्तु सत्र त ही मफलकाम हुए। "ब्रह्मगृपाहि केवता" इत्यादि नामाङ्कित धनना उडाने हुए ये अतुल्य अर्थ सञ्चयपूर्णक करकसा लींटे। उनका ब्राह्मधर्मप्रचार बाहुन्यतासे होने लगा। अनेक व्यक्ति अपने परिवारने मम्यन्ध हटा कर उनके ममानमें प्रविष्ट हो गये। १८६६ ई०को ६ठी मार्चको "भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज"के स्वतन्त्र उपासना मन्दिरका द्वार उमुक्त हुआ।

केशवचन्द्र हिन्दुओं द्वारा पोषित कुसस्कार और उपधर्मके दुर्गमो तोडनेके लिये शुद्ध भावने पादिरारिक और मामाचिक त्रिया त्रिवाह करनेकी प्रतिभाके कारण आदि ब्राह्मसमानमें पृथक् हुए थे। उनका कार्य भी इस प्रकारने नियन्त्र होने चगा। परन्तु फिर भी एक बलवत् अन्तराय रह गया। यह यह, कि नधोन ब्राह्मत्रिवाह पद्धति कानून तनायज सिद्ध त्रिना त्रिये इस स्वतन्त्र सम्प्रदायकी त्रिमी तरह भी रक्षाका उपाय न देस थे भारतके बडे लाटके शरणापन हुए। स्वयं गवर्नर जन रल लाड लादेस बहादुर केशवचन्द्रके उपासनालयमें आया करने थे और उनको आदरकी दृष्टिने देगते थे। केशवचन्द्रने उनसे एक सशुद्ध त्रिवाह कानूनकी पाण्डुलिपि तयार करवाई। उस पर सर्वसाधारण जनताके आपत्ति करने पर सिर्फ ब्राह्मीके लिये 'ग्राह' तामने इस कानून को विधियद्ध करानेकी चेष्टा की गई। पर आदि ब्राह्म समाज और तदनुगत अन्यान्य समाजके साथीं उस पर भी आपत्ति की। इससे यह भी रद्द हो गया। बादमें रनिष्टरी द्वारा सिद्धित्रिवाहका कानून विधियद्ध हुआ। इस रनिष्टरी-कार्यके अद्ययहित पूर्वमें या बादमें ब्रह्मोपासना और पिनाके पक्षमें बन्ध्यादानादि कार्य करने

७ केशवचन्द्रने भारतवर्षके समस्त ब्राह्मणसमाजोंका एक धुने गू धाँके उद्देशसे अपने द्वारा स्थापित इस समाजका नाम रला—"भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज। १८६६ ई०के तन्म्वर मासमें उन्होने ब्राह्मधर्मानुसारी ध्यचिमात्रसे प्रार्थना की कि, उाँके प्रचार कार्यमें तथा त्रिशुद्ध आदर्शोंत इस ब्राह्मसमाजो स्थापना समाजों-अं द्वारा सहायता पनुनामा चाहिए।

। इसम कानून हाता दे कि, ब्राह्मणसमाज कहोम एक मकान और उगके भक्तेके भादमा ही नहीं समझना चाहिए, त्रिक ब्राह्मसमाजका अथ सम्पूर्ण ब्रह्मोपासकोंके गन्तु हो दे। उपासनाभममका ब्रह्मका उपासना नदिर वा ब्रह्ममादिर कहना चाहिए। कत्रकृपाम ८६ १० गनुआवाजार पीटमें केशवचन्द्रका नवविधा समाज प्रविष्ट हो दे।



की यात्रा न थी। खेजवृक्ष की इमें भी अथवा आगे  
समक वर प्रदत्त किया था। १८७० ईके १६ मार्चको  
यह जानून पाया हुआ था। इस प्रकारमें सम्प्रदाय  
बचावके सर्वाधिकरण समझीत होने पर खेजवृक्षकी  
आरक्षणा पूर्ण अतीव गिरिधी और विपुल परिधाय मार्तक  
हुआ था।

उसके द्वारा अरक्य अधीनस्थ अनुष्ठान तथा आदि  
और यथा विधिमें किया आदि पुर स्थापन  
दियाय आदि मन्त्रिमें करने लगे। अब नर प्रायश्चम  
तथा ब्राह्मणान् स्मृतत और पण्डितलक्षणोंमें मर्पतनीं  
के दृश्यरूप हा हुआ था। एक दिन देवैन्द्रनाथने 'ब्राह्मण'  
लक्षण प्रकट करनेके विरिक्त अन्तर युक्त अनुष्ठान  
पहननेकी व्यवस्था की थी। इस प्रकार ब्राह्मण सम्प्रदायके  
सोमोका स्वतंत्र चित्र निरूप हुआ • ।

आश्वीकी दशोदधिके साध साध उसकी पुनरुत्थान  
मन्त्रातीको म स्या भी करने लगे। जिसने जापकर्म,  
नामकरण और विवाहादि ब्राह्म अनुष्ठानोंका बाहुष्य होने  
लगा। विवाहकानून विधिवत् होनेके ६ था बाद  
खेजवृक्षकी कल्याण विद्यालय स्थापित हुआ।  
इस विद्यालयमें खेजवृक्षकी कृती ही विषयमें पढ़ना  
पड़ा था। उन्ने साध्य ही कर अथवा कल्याणके सम्प्रदाय  
लक्षणोंके हाथ मोंय देना पड़ा। इस विद्यालयमें उनकी  
मात्र ही कोई भी आदि काम न आया। यह कीर्तिदाय  
विवाहके नाममें प्रसिद्ध (१८७६ ई०) है।

इस घटनामें खेजवृक्षके सम्प्रदायके अधिकांश  
धर्मि उन्ने प्रति सदुत्पन्न हा गये। उन्ने ही आराज  
वाक्यत बनाया अ न्नेका उठा कर जिस आरंभकी अथवा  
हो पाठ्याय कागया था, धनन लिए उस आरंभ पर उन्ने ही  
हुए भा ६७०० न किया अनुष्ठानके उन्नेने अन्नेके  
मन्त्रिमें धर्मि चला दिया; इस प्रकार तथा भी नी कइ  
कारका निरूपण उन्ने विरक्त पनेने लगा। भागिरथा  
उन्ने विरक्तवाय प्र लाने मिन कर उन्ने मध्य तथा  
दिया और एक मया समाप स्थापित किया मिन  
जाय गया 'साधारण ब्राह्मण'। १८७६ ई०

\* १८७६ ई० के १६ मार्चको १६ मार्च ।

अथवा' मर्कके यह सम्प्राप्त स्थापित हुआ था ।

नामकी व्यवस्थामें इनका प्रदत्त भी समझी जा सकी  
है। खेजवृक्ष की अविहार विवाह घटनाकी विचाराका  
विशेष विधान बना कर आन उद्दृष्टा-दीपको मिश्रो  
गये • उपर दे भा खेजवृक्षकी भालाकरीय ब्राह्मणमात्रके  
उपासना मन्त्रिके अधिकांशमें ध्युत करनेकी चेष्टा करने  
लगे। पाँडे पुनिगको सहायतासे उन्ने भी अधिकांश  
की रक्षा कर पाए थे। फिर खेजवृक्ष की घोषणा की, कि  
'यह मन्त्रिके मेरे लिए विधानोंका दान है।' इस प्रकार  
आराधनीय ब्राह्मणान्के अधिकांशमें सब तरह धर्मिय  
हो कर उस मन्त्रिके उपासकोंमें यह नवीन समाप भी  
नवीन उपासना मन्त्रिके निर्माण कराया और उन्नेम सर्व  
प्रकारसे साधारण न ल राजनीतिक अनुसन्धन किया  
गाया। अतएव प्रथम ही उन्नेका नाम 'साधारण ब्राह्मण'  
समाज" रखा गया।

साधारण ब्राह्मणमात्रके परिचय देनेके लिए अर्ध  
शुद्ध न लिखेंगे। इस समाजके स्वरूपका जब अन्तर्गतोंय  
ब्राह्मणमात्रके साथ एक योगमें उपासनादि करते थे, उस  
समय थे जिस प्रकारमें उपासना और वास्तविक तथा  
सामाजिक क्रियाश्रमपाठिका अनुष्ठान करने थे, अब भी  
उन्ने उन्ने समस्त आराधकोंके विधिपूर्वक तथा ।  
केवल धर्मिधर्मिके पत्राधिकारका लक्षण और  
साधारणत्वकी राजनीतिक स्थापन करनेके लिए  
उन्ने बहुविधयुक्त कार्यविधिदिन मया और उन्नेकी  
जागत प्रजागर्भ बहनों पड़ी थीं। दे लोय प्रनेती  
गिर्ताकी श्रेष्ठयानुसार पर कल्याणके उस साधारण उपा  
सना मन्त्रिमें ला कर उन्ने विवाहकानून सम्प्रदाय करने  
लगे। इन्ने उपासनादिमें भा अन्ने विरिक्तयन भाषों  
का धर्म देलनेमें आया है।

इस खेजवृक्ष आत्माय जीविका विरिक्तियाय  
अधिक हो कर अन्नेम ईश्वर विधानों विधान हुए । ये पूर्वा  
पर यह देलन भा रहे थे, कि मीम मुनि और लके पर  
अधिक निर्भर रह कर एक प्रकार अन्नेम भी स्थापना  
लानी हुए जा रहे हैं। ब्राह्मणमात्रके इस प्रकारके

१८७६ ई० के १६ मार्चको १६ मार्च ।

नास्तिक्य और यथेच्छाचारको नष्ट करनेके लिये उन्होंने जो विधिनियम चलाये, ब्राह्मसमाजमें उनका प्रचार न होते देख वे "नवविधान" नामसे ध्यात्म मत प्रकाशित करने लगे।

यद्यमान नवविधान मत पर विश्वास रखनेवाले व्यक्ति इन सार सत्व्योंमें मन्द्बुद्ध और तर्क न करे, स्थिर विश्वाससे वैदिक और पागनिक कल्याणकर कथा का अनुष्ठान करते रहे, यही नवविधानका नातपर्य है।

नवविधानाचार्य केशवचन्द्रने सर्वभर्म सांगभूत इन तत्त्वोंको पत्तनस्वरूप कर, पृथार्पर साधनोंमें शान भक्ति, योग और वैराग्यके समन्वयकी चेष्टा की है। ये आगे समुद्रायमें हिन्दुओंका होम, ईसाइयोंका जलमज्जन, सिखोंका दरवार भजन, वैष्णवोंका सङ्कीर्तन और जाकों की 'मा' 'मा' घापी, यह सब कुछ समिन्विष्ट कर गये हैं। इस मतके साधक ब्राह्मण मुसलमानधर्म प्रति छाता महम्मदकी तरह केशवचन्द्रकी नवविधानप्रवक्तृक "आचार्य" मानते हैं। सम्प्रति ज्ञान नामसे जो स प्र दाय गठित है, उस स प्रदायके सभी व्यक्ति उपयुक्त विशेष विधानमें एक मत न होने र भी केशवचन्द्रकी अपा मूल स्वीकार करते हैं।

इस प्रकारसे इस समय "ब्राह्मसमाज" जन्मसे दो प्रकारकी अर्थात्मज्ञति की जाती है—(१) ब्राह्म नामधारी व्यक्तियोंका स प्रदाय और (२) प्रहोपात्मकोंकी मण्डली। आदि ब्राह्मसमाज द्वारा ब्राह्मसमाजमें प्रहोपात्मक मण्डलीकी अधिक वृद्धिची चेष्टा हो रही है। उनमें ऐसे ही व्यक्ति अधिष्ठ हैं, जो ध्यरथापुत्र व द्वेषताओंके बहुरवको एकत्वम अर्थात् परब्रह्ममें समावेश करते हैं,

जो बाह्यपूजाके बन्दे मागम पुपाका विधाण करते हैं, जो श्रयणकीर्त्त रादि प्रारण और भनिमार्गम पर सर्वे श्वरके प्रति निष्ठान्तर होते हैं, जो नीतिपालनकी अथक इश्वरकी श्रेष्ठ आराधना समभते हैं जो योगमार्गमें परमात्माके निरिशेषतयकी साधना करते हैं। ऐसे सभी र्थाक आदि ब्राह्मसमाजके मतका अनुवर्त्तन करते हैं, अथवा आदि ब्राह्मसमाजका कार्य करते हैं, पेसा सम भना चाहिए। अतएव नवविधानी और साधारणी ब्राह्मोंके साथ यह परमात्मनिष्ठ व्यक्तित्व आदि ब्राह्म समाज अर्थात् प्रहोपासकाका मण्डलीमें परिगणित हो सकते हैं।

ब्राह्मसमाजक शाह्यममें पर त्रिय और भी दृष्टय है —

द्वेष्टतायके साथ केशवचन्द्रके त्रिच्य दके समय दोनोंके भिन्न सरदारोंने जो प्रयत्ना धारण की थी, उम का वर्णन हम पहले ही कर चुके हैं। द्वेष्टतायों देना कि, केशवचन्द्रके भाय इगाइयार्मानुगत हैं और गति विज्ञा तीय हुए जा रही है। इससे व जातीय भावका उदोपनाम प्रवृत्त हुए। इस समय स्वदेश, स्वचाति और हि दूधमके नामसे उन्नत्तिसाधन बहान्मा समाममिति और प्र थादि पा प्रराजन होने लगा। हिंदू रीतिनातिमें चितता उन्ष्ट और निद्रय वज है, उसको रक्षाके लिय आदि ब्राह्म समाजमें दृढता उत्पन्न हु। ममज केशवचन्द्रमें धरिय मजागत हिंदूनाय परिम्पुटिन होने लगा। उन्होंने हिंदुओंके शुद्धाचार धारण लिये। बहुत वचपाम ही वें निरा मिय साहार करते थे। उनके प्रभायने ब्राह्मोंमें मन्स्य मासादि आहारकी प्रसक्ति कार्य हो गई। विलायत प्रयासी हमार लेशके सुषर्कों, एवेष्टीय रीतिनाति धारण के लिये श्रीमती महाराणी भारतेश्वरी विक्रीरिया द्वारा

\* शक १०१८०६के मापमजने नवविधान फेरित हुआ।

(१) ईश्वर हैं, (२) न पिता हैं जो हमका पुत्र, (३) इश्वर पवित्र हैं, हमें पतोंका त्याग करना चाहिए। हमें सार और गत्य म... (१)

पन्था दृष्ट कर भाग्य ध्यानीकी

\* दन्ष्टनायन मा...म प्रथम उपनिषद्का वादर्थ विमुक्त संनमामम भन्ति कर भन्वाक ब्राह्मण पविशतो िय बर्देत्तनत् मरियम, मरुत्तना उदापार त्रिय त्रितर्य िय भा। समगदाराय ब्राह्मसमाजकी प्रतिष्ठान दिन ( ५गला भा.को ) वा...के विवाह। ब्राह्मण पापहर्तृको ११५।

मनासून, वेद-ग्रन्थ ही सुप्रसन्नताय है। यहाँ के अन्त-  
 य उच्यते ही ईश्वरविद्या, उच्यते भीम धर्मशास्त्रादि, गुण  
 मयूत एव गुणोके आदर्शभूत मानके गये हैं।

आदि-ब्रह्मसमाजके भारतवर्षीय ब्राह्मणशास्त्रा-  
 उच्यते, उच्यते किर साधारण समाजकी उन्नति, इसी  
 योग्यते ब्राह्मणविद्या, धारणक। धारणकताके विषयमें  
 वादायुवाद एव हीन परमात्मोके प्रसङ्गमें ब्राह्मणों ने गुण-  
 विद्यादक्षो गया। अब हीन ब्रह्मज्ञानि हीनो ब्राह्मणताका  
 धर्मो प्रजापितामहोरा विचार कर रहे हैं। ब्राह्मणों में अब  
 विश्वदृष्टिकी सम्मिलना नहीं है। प्रयुक्त विविध गुण  
 वर्णोपलब्धिमें हीनो समाजके उन्नति करके होते हैं। युरोप  
 और अमेरिकाका विमुक्त एकेभ्यवादा समाज, इस  
 देशका अर्थसमाज, धिमात्रिकण सम्प्रदाय, और परम-  
 हस मन्त्रसम्प्रदाय आदि इस २५ वर्षके पुनर्मे ब्राह्मण  
 समाजके आयुर्वर्णने गठित है। ब्राह्मण्य इस समय  
 एत समाज उन्नत ब्राह्मण्य प्रयोगोंको प्रोत्तिवी दृष्टिमें  
 देखते हैं और जहाँ सम्भव होता है उनके साथ समि-  
 लनकी चेष्टा करते हैं। आदि-समाजके पुत्रात्त अन्वय  
 पक्ष गुण्य सर्वबोधितो प्रतिष्ठामा देवे-प्रथाय अब भी  
 धारणक विचारमें हैं और इस प्रथाके मृत्यु होने पर  
 भी वे अमर हैं।

"आत्मज्ञानके प्रकाश रोद्र और अन्धकारका चे वाद  
 धर्मोका उन्नतिपा होना।" "सत्त्वित्यु हो कर उसके लिए  
 अज्ञेया करो।" धीमाद्र देवे-प्रथाके एक स० १०८०में  
 बदे हुए थे वाक्य अब स्मरण ही आते हैं। चिन गुणोंय  
 पुण्य भोगाहोत और मीनमदुन्य हो जाने हैं, धर्मोको उन्न-  
 धारणमें उनमें भी पुण्योकी नूतन धो और मीनम प्रकट  
 होता है। ब्राह्मण्य अब ब्राह्मणसमाज २५वें पुण्यवर्षका  
 उत्तरी अर्धकाके देखनेकी धारणा कर रहे हैं।

ब्रह्माहोरात्र ( स० पु० ) ब्रह्मलोकोद्धारः। ब्रह्मण्य  
 राज और दिन। इसका समय मनुष्यकी ही कल्पके  
 क्ताकर है। देवपरिपालनके महत्प्रयुक्त ब्रह्माका  
 एक दिन और उच्यते ही समाजकी एक राति होती है।

ब्राह्मि ( स० वि० ) ब्रह्म इम् दिनेतः । १ ब्रह्माका  
 अन्वय । २ ब्रह्माका अन्वयः । "नमो ब्रह्मण्ये ।"

ब्राह्मिका ( स० स्तो० ) ब्राह्मण्य संज्ञायां अर्थो वा क्य-  
 मय इत्यत्र। ब्राह्मण्यवहिका।

ब्राह्मो ( स० स्तो० ) ब्रह्मण्य इत्, ब्रह्मण्य अणु रिणोर्य, रिणो-  
 टोप् । १ गुणो । ( स० पु० ५१ म० ) २ रिणोको अणु  
 मान्यकाके अन्वयमें मान्यकादिगे । ३ सरस्वती । ४  
 मूर्ध्नि । ५ रोहितो नमः । इस अन्वयके अर्थप्रकाश  
 देवता प्रजा है। ६ ब्राह्मण्ये, अन्वयके काममें जाने  
 धर्मो एक मूर्ध्नि । यह एकेही तरह जमीनमें ईश्वर,  
 ऊँचो मूर्ध्नि हीनो है। इसको पालितो एकी छोटा और  
 गोमू होतो है और एक और गिला रती होतो है। सामुद्र्य  
 जायमें इसको उन्न, पत्ते और उन्न औरिचे विरोध  
 विरोध गुण विविधय हुए हैं। यह गुणवर्ण और मनु  
 विरोध है। धरमिन्त सेव्य साथ ब्राह्मण्यका एक  
 गात्र पर भागिन्य करनेमें वेदविद्यायान जाता रहा है।  
 यह उन्नय, अन्वय, अन्वय, अन्वय आदि गोमिमें विरोध  
 उपजाता है। साथ हीन पक्षोंके अन्वय साथ ३ अन्वय  
 पायक जटको मधुके साथ मिलन करनेमें अन्वयकी  
 उन्नयता गट होतो है। अन्वय इमके यह विरोध, अन्वय  
 पाय, वायुगोय, गोमो, गुण्यो देवता आदिकी दूर  
 करनेराली भागी जातो है। ७ फलिक, धर्मो ; ८  
 पद्मगण्य सरस्व । ९ रोमन्वयो । महाव्योक्तिमयी । १०  
 धारोहोत्रम् । ११ दिव्यमोचिरा । १२ भाग्यवर्णो यह  
 प्राच्य विवि विद्यमें मायण, धर्मता आदि आयुमिन्  
 विविधो विद्यो है। यह विवि उन्नो प्रकाश वा आर्यो  
 दाहिनी ओर विद्यो जाता भी और धर्मो निरन्ती हुए  
 धारणकी विविधो अन्वयविद्योमें विविधके जो  
 नाम विद्याय गए हैं उनमें ब्रह्मविद्यो भी नाम विद्या  
 है। इस विद्यो सबमें पुत्रता मनुता मात्र भी  
 अन्वयके अन्वयमें विद्या है। धारण्यविद्योके  
 ब्रह्मा है, वि नातनधर्मो । अन्वय विद्यो विद्योके  
 मीनो और ब्राह्म, विवि भी उन्नो प्रकाश धर्मो विद्यो  
 विद्यत विद्यो भी मी, विद्यो धर्मो अन्वय, गुण्यो,  
 एतक आदि विद्यो । धर्मो ब्रह्मण्य देवोय विद्योके  
 अन्वय एव विद्य विद्य है विद्यो विद्यो विद्यो  
 अन्वय अन्वय हीनो हुए । धर्मो देव ।

प्राचीननुष्टुप ( स० पु० ) एक वैदिक छन्द । इसमें सय मिला कर ४८ वर्ण होते हैं ।  
 प्राचीउत्थिक ( स० पु० ) एक वैदिक छन्द । इसमें सय मिलाकर ४२ वर्ण होते हैं ।  
 प्राचीकन्द ( स० पु० ) प्रहस्या कन्द इय कन्दो यस्य । धाराहीकन्द ।  
 प्राचीकुण्ड ( स० स्त्री० ) एकन्दपुराणोक्त तीर्थभेद ।  
 प्राचीगायत्री ( स० स्त्री० ) ३६ वर्णवाला एक वैदिक छन्द ।  
 प्राचीजगती ( स० स्त्री० ) ७२ वर्ण वाला एक वैदिक छन्द ।  
 प्राचीविष्टुप ( स० पु० ) ६६ वर्ण वाला एक प्रकारका वैदिक छन्द ।  
 प्राचीपक्ति ( स० स्त्री० ) ६० वर्ण वाला एक वैदिक छन्द ।  
 प्राचीगृहती ( स० स्त्री० ) ५४ वर्ण-वाला एक वैदिक छन्द ।  
 प्राचीदैनिक ( स० स्त्री० ) ब्राह्मणोंकी पाकामि ।  
 प्राह्य ( स० स्त्री० ) १ विस्मय । २ दृश्य । ब्राह्मण इदं ब्राह्मन् ध्यम् । ( स्त्री० ) ३ ब्राह्मण बन्धों ।  
 त्रिगेड ( अ० पु० ) सेनाका एक समूह ।  
 त्रिगेडियर जनरल ( अ० पु० ) एक सैनिक कर्मचारी जो एक त्रिगेड भरका सचालक होता है ।  
 त्रिटिज ( अ० स्त्री० ) १ उम होंके सम्बन्ध रखनेवाला

जिममें इङ्ग्लैण्ड और स्काट्लैण्ड हैं । २ इङ्गलिस्तानका, अ गरेजी ।  
 त्रिडा ( हि० स्त्री० ) मीठा दवा ।  
 त्रिजियर ( अ० पु० ) एक प्रकारका छोटा टावर । यह आठ प्जार टका अधान् पाइका ः होता है ।  
 त्रीहि ( हि० पु० ) मीठि दवा ।  
 त्रुपत ( स० स्त्री० ) त्रुतीति त्रु जन् । वत्ता, बोलने वाला ।  
 त्रुघाण ( स० स्त्री० ) त्रुने इति त्रु ज्ञानम् । यत्ता, बोलने वाला ।  
 त्रुश ( अ० पु० ) थालोंका बना हुआ कूँचा । इसमें टापी या जूते इत्यादि माफ किये जाते हैं ।  
 त्रुहम ( अ० स्त्री० ) एक प्रकारकी घोडागाडी । इसे त्रुहम माहवने पहले पहल निकाला था, इसीसे त्रुहम नाम पडा । इसमें एक ओर डाकुरके पैदनेका और उसके सामने दूसरी ओर झेजल द्याभोंका घेरा रखनेका स्थान होता है ।  
 त्रुवरी ( हि० स्त्री० ) एक प्रकारका बढिया कश्मीरी त चाकू ।  
 त्रुवाक ( अ० पु० ) १ ठप्पा जिम पर कोई चित्र छापा जाय । २ भूमिका कोई चौकोर टुकडा ।  
 त्रुव्लेक ( स० पु० ) जट ।

## भ

भ—हिन्दी वर्णमालाका चौथीसर्वाँ और परगँथा चौथा वर्ण । इसका उच्चारण रधान ओष्ठ है । उच्चारण कालमें ओष्ठके साथ निहाका अग्रभाग स्पर्श होता है, इसीसे यह स्पर्शवर्ण है । इसका प्रयत्न स धार, ताद और धोप है । यह महाप्राण है और इसका अन्यप्राण 'ब' है ।  
 भकारका स्वरूप—

“भकारं श्चरु चार्यणि स्वरं परमकृपयती ।

महामोक्षप्रदं कर्षं तच्छ्रुत्वाहित्यं क्षममम् ।

पञ्चप्राण्यमर्षं कर्षं पञ्चदशानं वदा ॥” ( कामभनु० )

यह वर्ण परमकृपयन्ती स्वरूप, महामोक्षप्रद, तदण आदित्यमङ्गल, पञ्चप्राण और पञ्चदेयमय है । ध्यान पूर्वक इस वर्णका दश धार जप करनेसे समस्त अमीष्ट मिद होते हैं । इसका ध्यान—



भजना (हि० कि०) \* जिमक होना, टुम्डे टुम्डे होना ।  
 \* जिमी वडे सिक्क या छोटे छोटे सिक्कोंसे घटना  
 जाना, भुनना । ३ वटा जाना । जैसे—रस्मी या  
 तापका भजना । ४ मोझा जाना, भाजा जाना ।

भजनी (हि० स्त्री०) करघेना पर अंग । यह तानेको  
 विस्तृत रखनेके लिये उसके किनारे पर लगाया जाता  
 है । इसे बामकी तीन चिन्नी सीधी और बृह लक-  
 डियोंनि बनाते हैं । वे लकडिया पाम पाम समाना  
 तगर पर रहती हैं । इन्हीं तीनों लकडियोंके बीचकी  
 सन्धियोंमें ऊपर नीचे हो कर ताना लगाया जाता है ।  
 यह बुननेवालेके सामने किनारे पर रहता है ।

भजाना (हि० कि०) १ भागों वा अंगोंमें परिणत करना,  
 तुडवाना । २ बड़ा मित्रा आदि दे कर उतने ही मूल्य  
 के छोटे सिक्के देना, भुनाना । ३ दूसरको भाँजनेके  
 लिये प्रेरणा करना वा नियुक्त करना । जैसे—रस्मी  
 भजाना, कागज भजाना ।

भभा (हि० पु०) यह लकड़ी जो कृष के किनारेके खम्भे  
 या ओटेके ऊपर आड़ी रखी जाती है और जिस पर  
 गडारी लगा कर घुमे टिकाए जाते हैं ।

भटकटैया (हि० पु०) भटकटैया देगो ।  
 भटा (हि० पु०) घगत ।

भडताल (हि० पु०) एक प्रकारका गाना और नाच ।  
 'इममें गानेवाला गाता है और 'शैव' समानो उसके पीछे  
 तालिया पीटते हैं ।

भडना (हि० कि०) १ हाथि पहचाना, विगाटना । २ भग  
 करना, तोटना । ३ नष्ट भ्रष्ट करना, गडबड करना ।  
 बपकीस फौलाना, बडनाम करना ।

भंडफोड (हि० पु०) १ मट्टीके बरतनोंको गिराना वा  
 तोडना फोडना । २ मट्टीके बरतनोंका टूटना फूटना ।  
 ३ भेद गोलनेका माय, रहस्योद्घाटन ।

भडभांड (हि० पु०) एक बडोला धूप । इसको पत्तिया  
 चुकीनी, लम्बो और बडोली होती हैं । जाड़ेके दिनोंमें  
 यह उगता है । इसका फूल पोस्तके फूलके आकारका  
 पीले या बसंतों रंगका होता है । जब फूल भट्ट जाते हैं  
 तब पोस्तकी तरह लम्बो और फाटोले मुक्त हँदो लगनी  
 है जिममें पकने पर बाले रङ्गके पोस्त से और कुछ बडे

ताने निरलते हैं । इस दानोंको पेरनेसे तेल निकलता  
 है । इस तेलको लोग जलाते और दवाके काममें पाते  
 हैं । इसके पीलेसे पीले रंगका दूध निकलता है जो  
 पाय और चोट पर लगाया जाता है । इसकी जड़ भी  
 फोडे कु मियों पर पीस कर लगाई जाती है । इसके  
 नरम ड टलकी गूदीकी तरकारी भी बनाई जाती है ।

भडरिया (हि० पु०) एक जातिकी गाम । इस जातिके  
 लोग फलित ज्योतिष या सामुद्रिक आदिकी सहायतासे  
 लोगोंको भविष्य बता कर अपना निर्पाद करते हैं । ये  
 लोग जनेश्वररुद्रि ग्रहोंका श्राप भी लेते हैं । कहीं कहीं  
 इस जातिके लोग तीर्थार्थ यात्रियोंको स्नान और दर्शन  
 आदि भी कराते हैं । इस जातिके लोग ब्राह्मणोंमें गिना  
 कुल अन्तिम श्रेणीके समझे जाते हैं । २ पापगडो, डोंगी ।  
 ३ धूर्त, मजाग । (स्त्री०) ४ दीवारों अथवा उनको  
 सन्धियोंमें बना हुआ वह ताप या छोटी दीर्घा जिसके  
 आगे छोटे छोटे दरवाजे लगे रहते हैं और चिनमं छोटी  
 चीजे रखी जाती हैं ।

भडमार (हि० स्त्री०) यह गोठाम जहा सम्ना अंग परोद  
 कर मह गोमि घेउनेके लिए इकट्ठा किया जाता है ।

भडा (हि० पु०) १ पाद, भाडा । २ मजारा । ३ रहस्य,  
 भेद । ४ यह लकड़ी या बल्ला जिसका सहारा लगा कर  
 मोटे और भारी बल्लोंको उठाते या समरते हैं ।

भडागा (हि० कि०) १ उपद्रव करना, उछल बुद करना ।  
 २ नष्ट करना, तोडना फोडना ।

भडाग (हि० पु०) १ फोप, मजाना । २ अगादि रखने  
 का स्थान, कीडाग । ३ पादशाग, भडारा । ४ उद्द,  
 पेट । ५ अग्निशेण । ६ मंजारा देना ।

भडाग (हि० पु०) १ भंजारा देना । २ समूह, कुड । ३  
 साधुओंका भोजन । ४ उद्द, पेट ।

भडागी (हि० स्त्री०) १ छोटी फोडती । २ बोज, गजाना ।  
 (पु०) ३ बोपाध्यक्ष, सचानची । ४ रमोइया, रमोई  
 दार ।

भंडेरिया (हि० पु०) भंडेरिया देना ।

भंडेरियापन (हि० पु०) १ मजारा, डोंग । २ चालाकी ।

भंडोआ (हि० पु०) १ माँझके मामेकर गोल । २ दास्य  
 आदि रमोकी साधारण अन्नका निरालादिना कतिता



भकुडाना ( हि० कि० ) १ लोहेके गजसे तोपके मुहका भीतरी भाग म्पाफ करना । २ लोहेके गजसे तोपके मुहमें बत्ती भरना ।

भकुड़ा ( हि० वि० ) भकुआ देखो ।

भकुट्ट ( स० झी० ) भस्य कूटम् । एक प्रकारकी राशिर्षोफा समूह जो त्रिगह गणनामें शुभ मानी जाती है ।

“क्षेत्रात्तत्त्व नाक्षत्रेत् सत् भकूटम् ।” ( सुहृत्तचिंता० )

भक्रोसना ( हि० कि० ) १ किसी चीजको बिना अच्छी तरह कुचले हुए जल्दी जल्दी घाना, निगलना । २ घाना ।

भक्रर—मध्यभारतका एक देशी राज्य । वाहमभर देखो ।

भक्रर—१ पञ्जाबके मियानवाली जिलेका उपविभाग ।

इसमें भक्रर और ल्याह नामक दो तहसोल लगती हैं ।

२ उक्त विभागकी एक तहसोल । यह अक्षा० ३१ १०' से ३२ २२' उ० तथा देशा० ७० ४७' से ७२ ५०' के मध्य विरतुत है । भूपरिमाण ३१३४ वर्गमील और जनसंख्या मगलाखसे ऊपर है । इसमें भक्रर नामक १ शहर और १६६ ग्राम लगते हैं ।

३ उक्त तहसोलका प्रधान नगर और विचार सदर । यह अक्षा० ३१ ३७' उ० तथा देशा० ७७ ४' ५०' स० के बाएँ किनारे अवस्थित है । जनसंख्या साठे पाच हजारके करीब है । नगरका पश्चिमांग उर्वर और शस्यशाली है जो प्रतिवर्ष बाढ़से बह जाता है । पूर्वभाग वृणगुल्मादिचिदीन बालुकामय मरुभूमि सहृण है । पूर्वतन अफगान राजाओंके अधिभारकालमें यहासे आम्नादि कायुल भेजे जाते थे । ६२४ हिजरीमें सुल्तान समसुद्दीनने भक्रर दुर्गमें घेरा डाला और उने जीत लिया । भक्ररपति मालिक नासि-रद्दीनने यह सवाद पाते ही जलमें डूब कर आत्म विसर्जन किया । १५वीं शताब्दीके शेषभागमें किसी बन्दूक मरदारका अनुगमनकारी औपनिवेशिक दल यहा ना कर बस गया । उक्त सरदारके घशधर तमीसे यहा-का शासन करते रहे । आगिर अल्लदशाह दुर्रानीने इस स्थानको जीत कर किसी व्यक्तिको दान कर दिया । उस व्यक्तिने राजगतिकी सहायतासे बन्दूक शासनवर्षाको राज्यने विनाश कर अपनी गोठी जमाई । शहरमें एक अस्पताल और म्युनिसिपल पनाबयुलर मिडिल स्कूल है ।

भक्रिका ( स० स्त्री० ) भिहरी, भी गुर ।

भक्त ( स० झी० ) भज्यने स्मेति भन संगाया कर्मणि क्त । अत्र, भक्तके अपभ्र शब्दे “भात” शब्द हुआ है । भाव प्रकाशमें लिखा है, कि अत्र, अन्ध, कूर, ओदन, मिस्त्रा और दीदित्रि, ये सब भक्तके पर्याय शब्द हैं । भक्त (भात) प्रस्तुत करनेकी विधि यों है —चावलको अच्छी तरह घो कर उससे पाच गुणा धौलते हुए जलमें पाक करे और जय उत्तमरूपसे सिद्ध हो जाय, तब उसे उनार पर माड फेंक दे । इसके गुण—अगिपदक, वृत्ति जनक, रुचिकर, और हलका । बिना घोये हुए चावलका भात तथा जिसका माड अच्छी तरह नहीं निकाला गया हो वह शीतनीय, गुरु ( भारी ), अरुचिकर तथा कफवर्द्धक है । ( भावप्रकाश )

वैष्णव मतमें भात विष्णुको नैवेद्य लगा कर खाना चाहिये । यदि कोई भूल कर बिना नैवेद्य लगाये भोजन करे, तो उसके लिये यह अन्न विष्टा तुल्य हो जाता है । जो प्रतिदिन भक्तिपूर्वक विष्णुको नैवेद्य लगा कर भोजन करता है वह भगवानका दासत्व लाभ करता है ।

अनदानके समान और दान नहीं है । अनदानमें सब प्रकारका पुण्य होता है । निरन्तरित ध्यक्तियोंके अन्न वर्जनीय है :—

राजाका अन्न, नाचनेवालेका अन्न, सुराया हुआ अन्न, पुरशर, भकुआ, घेया तथा नपु सक्का अन्न नहीं खाना चाहिये । तेली, रजक, तस्कर, धवजी, गान्धर्व अर्थात् नाचनेवाले, लोहाट, जुलाहा, काल, चित्रकार, धार्पणिक, पतित, वर्णसक्कर, छात्रिक, अमिगत, मोनार, शैलूय, व्याधिन, आनुर, चिपिटसक, पुशरने, दामिक, चोद, नास्त्रिक, देवतानिन्दक, मदिरा घेजीगाना, अयाक, अर्थाजित, अर्थात् स्वैण, शस्त्रनीयी, ह्रीय, मत्त, उन्नत्त, मोन, रुद्रित, अलद्रेयो और पापकृति आदिका अन्न तथा आदान, अनाद्यान्न, शीघ्रदानादि भोजन नहीं करना चाहिये । मनुष्य जो दुर्धर्म करता है वह अन्नमें सम्ममिंत होता है, इसलिये यह अन्न जो मनुष्य खाता है यह मानो पाप भोजन करता है । अतः पापीका अन्न निषिद्ध है ।



भँधूरी ( हि० स्त्री० ) एक पेड़ जो बगुलकी आतिका होता है। इसे फुलाई भी कहते हैं। उन्नाई देतो।

भँमरना ( हि० कि० ) भयभीत होना, डरना।

भमा ( हि० पु० ) विल, छेद।

भमाका ( हि० स्त्री० ) अधिक अस्थायी स्त्रीकी योनि।

भमाना ( हि० कि० ) गौ आदि पशुओंका चिल्लाना, रँमाना।

भँमीरी ( हि० स्त्री० ) एक पतिया। इसकी पूछ लम्बी और पतली, रंग लाल और बिलकुल झिल्लीके समान पारदर्शक चार पर होते हैं। इसको आपने टिट्टीकी आँखोंकी तरह बड़ी और ऊपर निकली रहती है। यह वर्षाके अतमें दिखाई पड़ता है और प्रायः पानीके किनारे घासोंके ऊपर उड़ता है। पकड़ने पर यह अपने पैरोंको हिला कर भन भन शब्द करता है। इसका दूसरा नाम जुलाहा भी है।

भमर ( हि० पु० ) १ बड़ी मधुमक्खी, सारंग। २ बँद, भिड़।

भवना ( हि० कि० ) १ घूमना, फिरना। २ चक्कर लगाना।

भर ( हि० पु० ) १ भँरा। भर देतो। २ गर्त, गड्ढा। ३ पानीके बहावमें वह स्थान जहाँ पानीकी लहर एक केन्द्र पर चक्रान्तर घूमती है। ऐसे स्थान पर यदि मनुष्य वा नाव आदि पहुँच जाय, तो उसके डूबनेकी संभावना रहती है।

भँवरकली ( हि० स्त्री० ) लोहे या पीतलकी फडी। यह कोलमें इस प्रकार जड़ी रहती है कि उसे जिधर चाहे उधर सहजमें घुमा सकते हैं। यह प्रायः पशुओंके गलेकी सिकडी या पट्टे आदिमें लगी रहती है। पशु चाहे जितने चक्कर लगावे, पर इसकी सहायतासे उसकी सिकडीमें घल नहीं पड़ने पाता।

भ वरगीत ( हि० पु० ) भमरगीत देखो।

भ वरजाल ( हि० पु० ) भ्रमजाल, ससार और सासारिक ऋणों वषेडे।

भँवरभीष ( हि० स्त्री० ) वह भीष जो भौरके समान घूम फिर कर मारी जाय, वीन प्रकारकी भिक्षामेंसे दूसरी।

भ वरा ( हि० पु० ) भँरा देखो।

भ वरी ( हि० स्त्री० ) १ पानीका चक्कर, भ वर। २

जन्तुओंके शरीरके ऊपर वह स्थान जहाँके रोए' और घाल एक केन्द्र पर घूमे हुए हों। वालिका इस प्रकारका घुमाव स्थानपेदेसे शुभ अथवा अशुभ लक्षण माना जाता है। ३ बनिर्घोका सौदा ले कर घूम घूम कर घेचना, फेरी। ४ रक्षक, फोतवाल या अन्य कर्मचारियोंका प्रजा को रक्षाके लिये चक्कर लगाना, गश्त। ५ परिक्रमा। ६ भ वर देखो।

भ वारा ( हि० वि० ) भ्रमणशील, घूमनेवाला।

भ सना ( हि० कि० ) १ पानीके ऊपर तैरना। २ पानीमें डाला या फेका जाना।

भ सरा ( हि० पु० ) भँजना देखो।

भ सस ( स० पु० ) पायु, गुदा।

भइया ( हि० पु० ) १ भाई। २ एक आदरसूचक शब्द।

इन्का व्यवहार प्रायः बराबरवालोंके लिये होता है।

भक ( हि० स्त्री० ) सहसा अथवा रह रह कर आगके जल उठने अथवा वेगसे धूप के निकलनेके कारण उत्पन्न होनेवाला शब्द। इसका प्रयोग प्रायः 'से' विभक्तिके साथ होता है। जैसे लप भकसे जल उठा।

भकक्षा ( स० स्त्री० ) भस्य कक्षा। नक्षत्रकक्षा।

भकराघ ( हि० स्त्री० ) अनाजके सड़नेकी गंध, सडे हुए अनाजकी गंध।

भकराधा ( हि० वि० ) सड़ा हुआ।

भकसा ( हि० वि० ) जो अधिक समय तक पडा रहनेके कारण कसैला हो गया हो और जिसमेंसे एक विशेष प्रकारकी दुर्गंध आती हो।

भकसाना ( हि० कि० ) किसी पाय पदार्थका सफाई तक पडे रहने अथवा और किसी कारणसे कसैला हो जाना।

भकाऊ ( हि० पु० ) बच्चोंको डरानेके लिये व्यक्ति, हाँवा।

भकार ( स० पु० ) भ-स्वरूपकार। भ स्वरूपवर्ण।

भकुआ ( हि० वि० ) मूर्ख, मूढ़।

भकुआना ( हि० कि० ) १ चक्रपका जाना, घबरा जाना।

२ चक्रपका देना, घबरा देना। ३ मूर्ख बनना।

भकुडा ( हि० पु० ) मोटा वस्तु जिससे तोपमें बत्ती आदि टूँसी जाती है।

मकुटाना ( हि० कि० ) १ लोहेके गजसे तोपके मुहका भीतरो भाग माफ करना । २ लोहेके गजसे तोपके मुहमें बत्ती भरना ।

मकुड़ा ( हि० नि० ) मकुड़ा देणे ।

मकुट ( स० क्री० ) मस्य कूटम् । एक प्रकारकी राजधियोका समूह जो त्रिग्राह गणनामें शुभ मानी जाती है ।

“क्षेत्रात्त्वं नाशयेत् एत् मकुटम् ।” (सूक्तचिन्ता० )

मकुसुना ( हि० कि० ) १ किसी चोत्रको बिना अच्छी तरह कुटते हुए जल्दी जल्दी खाना, निगलना । २ पाना ।

मकर—मध्यभारतका एक देगो राज्य । चाणमकर देणे ।

मकर—१ पञ्जाबके गियानवाली निलेका उपविभाग । इसमें मकर और ल्याह नामक दो तहसिल लगती हैं ।

२ उक्त विभागको एक तहसिल । यह अक्षा० ३१ १०' से ३२ २२' उ० तथा देगा० ७० ४७' से ७२ पू०के मध्य विस्तृत है । भूपरिमाण ३१३४ वर्गमील और जनसंख्या सत्ता लाखसे ऊपर है । इसमें मकर नामक १ शहर और १६६ ग्राम लगते हैं ।

३ उक्त तहसिलका प्रधान नगर और विचार सदर । यह अक्षा० ३१ ३७' उ० तथा देगा० ७७ ४' पू० तकके धारु किनारे अवस्थित है । जनसंख्या साठे पाच हजारके फरोब है । नगरका पश्चिमांग उर्पर और प्रायशाली है जो प्रतिवर्ष बाढसे बह जाता है । पूर्वभाग वृणगुम्मादिविहीन वाजुकामय मरुभूमि सङ्ग है । पूर्वतन अफगान राजाओंके अधिकारकालमें यहासे आम्नादि फायुल भेजे जाते थे । ६२४ हिजरीमें सुलतान समसुद्दीनने मकर दुर्गमें घेरा खटा और उने जीत लिया । मकरपति मालिक नासि रद्दीनने यह सवाद् पाते ही जलमें डूब कर आत्म विसर्जन किया । १५वीं शताब्दीके शेषभागमें किन्गी बलूच सरदारका अनुगमनकारी भीपनिवेशिङ्ग बल यहा आ कर बस गया । उक्त सरदारके पशुधर तमोसे यहाका शासन करते रहे । आरिज अहमदशाह दुर्गाने इस स्थानको जीत कर किसी व्यक्तिसे दान कर दिया । उस व्यक्तिने राजशासिकी सहायतासे बलूच शासनकर्त्ताको राखने निकाल कर अपनी गोटी जमाई । शहरमें एक अस्पताल और म्युनिसिपल पनाथसुलर मिडिल स्कूल हैं ।

मक्रिका ( स० खी० ) म्क्रिी, भी गुर ।

भक्त (स० क्री०) मन्वये स्मृति भज सेवाया कर्मणि क । अथ, भक्तके अर्थमें गजे “भक्त” शब्द हुआ है । भाव प्रकाशमें लिखा है, कि अथ, भक्त, कुर, बोद्ध, मिस्ता और दीद्विधि, ये सब भक्तके पर्याय शब्द हैं । भक्त (भात) प्रस्तुत करनेकी विधि यों है—चावलको अच्छी तरह धो कर उमसे पाच गुणा खोलते हुए जलमें पाक करे और जब उमरूपसे सिद्ध हो जाय, तब उसे उतार कर माड फेंक दे । इसके गुण—अनियर्क क, कृति जनक, रुचिहर, और हलका । बिना धोये हुए चावलका भात तथा जिसका माड अच्छी तरह नहीं निकाला गया हो वह शीतवीर्य, गुरु ( भारी ), अर्धचिन्त तथा कफवर्द्धक है । (भायमका)

वैष्णव मतमें भात विष्णुको नैवेद्य लगा कर खाना चाहिये । यदि कोई भूल कर बिना नैवेद्य लगाये भोजन करे, तो उसके लिये यह अन्न विष्टा तुल्य हो जाता है । जो प्रतिदिन भक्तिपूर्वक विष्णुको नैवेद्य लगा कर भोजन करता है वह भगवानका दासत्व लाभ करता है ।

अनन्दाके समान और दान नहीं है । अनन्दानमें सब प्रकारका पुण्य होता है । निर्दलितित्त्वपत्तियोंके अन्न वर्जनीय है —

राजाका अन्न, नाचोयालेका अन्न, सुराया हुआ अन्न, सुन्दार, भुङ्गा, घेरा तथा नपु मक्का अन्न नहीं खाना चाहिये । तेली, रजक, तम्बाकू, धूम्र, माधव अर्थात् नाचनेवाले, लोहार, जुलाहा, काल, शिवकार, धार्मिक, पतित, वर्णसंकर, छात्रिक, अमिगत, मोनार, शैत्य, व्याधित, आतुर, चिपित्सक, पुश्चलो, दाम्भिक, चोर, नास्तिक, देवतानिन्दक, मद्रिा सेवनेवाला, भ्रष्टाक, मार्याजित, अर्थात् स्वैण, शत्रुभीषा, हीव, मत्त, उमत्त, मोत, रुदित, प्रसङ्गेपी और पापदचि आदिका अन्न तथा भ्रातृद्वान, अशाचान्न, शौचान्नादि भोजन नहीं करना चाहिये । मनुष्य जो दुःखमें करता है यह अन्नमें संश्रमिंत होता है, इसलिये यह अन्न जो मनुष्य खाता है यह मानो पाप भोजन करता है । भक्त पापीका अन्न निविद्य है ।

दुष्कृत हि मनुष्यस्य समन्तरेऽनुष्ठितम् ।

यो यस्यान्तेऽ जीवते न तस्याभाति त्रिणिष्णम् ।

(रामपु० उपनिषद्भाग १६ अ०)

० घन । 'भक्त घन (मेधातिथि) ( त्रि० ) भजने स्मेति भज सेवाया क । ३ तत्पर, भक्तियुक्त, पूज्यविषयक अनुराग भक्तिले युक्त । भज भावे क । ४ भजन । भक्तिके लक्षण —

जिसको वृत्त्यको कथामें विशेष अनुराग है तथा अशु और पुत्रकोद्वेगम होता है, मन सदा श्रोत्राणामें निमग्न रहता है, वही भक्त है । जो पुत्र और स्त्री आदिको मन वचन और शरीरसे कृष्णके तुल्य मानते हैं वे ही भक्त हैं । सब जीवों पर जिसकी माया है तथा जो सारे ससारको श्रोत्रकृष्णका स्वरूप जानते हैं वे ही महाहानी और भक्त हैं ।

जिाके भक्तिके उपदेशसे शरीर पुत्राभ्यामान होता है, जो कभी एसते हैं, नभी नाचते हैं, जो सदा ही परमानन्दित हैं अथवा जो कभी आनन्दमें निमग्न, कभी गानमें अथवा जो भगवान्के भागमें डूबकर रोदन करते हैं, जो भगवान् प्रेममें निमग्न रहते हैं और जो सर्वज्ञ ईश्वर को जान कर सनातन विष्णुका भजन करते हैं, तथा जिनका सभी प्राणियों पर समान अनुराग है वे ही भक्त कहलाते हैं ।

प्राह्ण यदि हरिभक्त हों, तो उनका प्रभाव अतुलनीय है । हरिभक्त प्राह्णके चरणकमलकी धूलमें पृथ्वी पत्रित हो जाती है । उनके पदचिह्नकी गणना तीर्थामें होती है और उसको रक्षा करनेसे तीर्थरक्षण पाप भी विनाश होता है । उनके आलिङ्गन, उनके साथ वार्त्तालाप, उनके जूटे भोजन, दर्शन और स्पर्श करनेसे सब पाप नाश होते हैं । सब तीर्थोंमें घूम कर स्वनादादिसे जैसा पुण्य होता है, एक भगवान्भक्त प्राह्णके दर्शनसे भी उसी तरहका पुण्य लाभ होता है ।

विष्णु भक्तके शरीरमें सारे तीर्थ अत्रस्थान करते हैं । विष्णुभक्तकी पदरजसे पृथ्वी, तीर्थ, तथा सारा ससार पत्रित हो जाता है । जो विष्णुमन्त्रकी उपासना करते, विष्णुका उच्छिष्ट भोजन करते और विष्णुका जो भी एकमात्र ध्यान करते हैं, वे सब विष्णुभक्त विष्णु

को प्राणसे भी अधिक प्रिय हैं । कल्पियुगमें दश हजार वर्ष तक ये विष्णुभक्त रहेगे । अनन्तर विष्णु भक्तोंके चलेजाने पर सब कोई एक वर्ण होंगे तथा पृथ्वी कल्पमें प्रसक्त होगी ।

विष्णुभक्तका कर्त्तव्य—विष्णुभक्त सर्वदा सब मनुष्योंके सामने विष्णुका कीर्त्तन करेगे और अपने पाप जो कुछ हो उन्हें विष्णुको चढ़ा दने ।

भक्त विष्णुमन्त्रसे दीक्षित हो कर पवित्र होते हैं तथा उनके पूर्वज भी पवित्र हो जाते हैं । भक्त घ्राणत्व, अमरत्व, इन्द्रत्व, मनुत्व, निवाणमुषित, अथवा अणिमादि ऐश्वर्य आदिकी कुछ भी याचना नहीं करते । केवल मात्र विष्णुके प्रति एकान्त अनुराग वा परा अनुरक्ति रहे, यही उनको अभिलाषा है । शरीर मा, वचनसे एकमात्र भगवान्में अनुरक्त रहना ही उनकी आकांक्षा है । ब्रह्म हत्या, गुरुहत्या, गोवध, खीरध, आदिसे जिस प्रकार लोग पातकी वनता है, एकमात्र भक्तको त्यागनेसे ही उसी प्रकार पातकी हो कर रहता है । उसका इस समय और अविषयमें मगल नहीं होता । ( मार्कण्डेयपुराण हरिश्चन्द्रोपा० ) हरिभक्तिविलासमें भक्तका विशेष विवरण दखा ।

भक्ति परायण ही भक्त है । उत्तम, अधम और प्राकृत आदि भक्तके अनेक भेद हैं । अत्यन्त सक्षेप रूपमें उस त्रिपयकी पर्यालोचना की जाती है । जो भजन करता है, वह भी भक्त है । गोतामें कहा गया है—

चतुर्था भजनमां जना मुहतिनाऽर्चुन ।

आनो त्रिशानुरथार्थो पाना च भरतभम ॥ (गीता)

श्रोत्राण्यने अनुनसे कहा है—आर्त्त (पीडित), जिघ्रासु, अर्थ चाहनेवाला तथा ज्ञानी ये चार प्रकारके मनुष्य मेरा भजन करते हैं । गजेन्द्र आर्त्तभक्त, सनत् सनातनादि जिघ्रासु भक्त, ध्रुव आदि अर्थाधी भक्त और शुक्रदेवादि ध्यातिभक्त हैं ।

भक्ति-याजनमें अधिकारीको भक्त कहा जाता है । उत्तम, मध्यम और कनिष्ठ इसके तीन भेद हैं । श्रीमद्भागवतके ११वें स्कन्धमें उक्त तीनों अधिकारियोंका उल्लेख है ।

उत्तम—“धर्मश्रुतेषु य पश्येद्भगवद्भागवतमन ।

भूतानि भगवत्कामन्येय भागवतोत्तम ॥

मध्यम—इसके तदधीनैव वासिष्ठोऽपि द्विपत्यु च ।

प्रमैत्री श्लेषेण य करोति स मध्यम ॥

कनिष्ठ—अर्थात्प्रिय हृदये पूर्वा य श्रद्धयश्चेत् ।

१ तद्वद्वेषु चान्येषु स भक्त प्राकृत स्युः ॥”

श्रीमद्भागवतके सप्तमस्कन्धमे श्रवणादि जो नी प्रसारकी भक्तिके श्रवण कहे गये हैं उनके एक एक भक्ति श्रवण यद्य करनेवाला भक्त कहलाता है । नवधा भक्ति यथा—

“श्रवण कीर्त्तन शिष्यो स्मरण शरतयन ।

अर्चना यन्दा दास्य सख्यमात्मनिवेदनं ॥

श्रुति पुकारिता शिष्यो भक्ति चैतन्नकृपा ।

श्रियते भगवन्पद्मा तन्मन्वेऽधीतमुत्तमम् ॥”

( भागवत ७।१०-१४ )

श्रवण, कीर्त्तन, स्मरण, पादसेवन, श्लेष न, श्लेषन, दास्य, सख्य और आत्म, शिष्येयन यही नी भक्ति हैं ।

इन नी प्रसारकी भक्तियोंके अधिकारी भक्त यथा—

“धीशिष्यो श्रवणे परीक्षितभरद्वाजकि कीर्त्तन,

प्रदा स्मरणे तदभि भजो लक्ष्मी श्रु पूर्वा ।

अकस्वभिनन्दो कपिशिरोऽन्येऽय सख्यशुर्वा ।

गर्भ्यात्मनिवेदने नक्षिरभूत शिष्यातिष्या पर ॥”

( भक्तिरत्नामृतसिन्धु पूर्वो २।१०६ )

श्रवणभक्तिसिद्ध भक्त परीक्षित, कीर्त्तनभक्तिसिद्ध भक्त वेदव्यामनन्दन शुकदेव, स्मरणभक्तिसिद्ध भक्त प्रह्लाद पादसेवनभक्तिसिद्ध भक्त लक्ष्मी, श्रुजनभक्तिसिद्ध भक्त महाराज पृथु, श्लेषनभक्तिसिद्ध भक्त धरु दाम्य भक्तिसिद्ध भक्त हनुमान, श्लेषभक्तिसिद्ध भक्त अहुरन और आत्मनिवेदनभक्तिसिद्ध भक्त बलिराज ।

इसके आलाप्य पद्मपुराणमें भी भगवत्पूजाके प्रसंग में कतिपय भक्तोंके नाम उद्धृत देखे जाते हैं ।

“मात्र वडयोऽन्वरीपथ वसुव्याया विभीषण ।

पुत्रदरीका वनि गन्धु प्रहादा विदुरा प्रथ ॥

दास्य पराकृते तीक्ष्णा नारदागम वैष्णवे ।

श्लेषा हरि निवन्धनो तो वेदरा पर भव ॥”

हरि सेवानन्तर, मार्कण्डेय, अच्युतोप, यमु, व्यास, विभीषण, पुत्रगेक, वनि, शम्भु प्रहाद, विदुर, धूम, शम्भु, परानर, भाग्य तथा नारदादि भक्तोंकी सेवा

करना वैष्णवोंके शिष्ये अग्र्य कर्त्तव्य है, नहीं करनेसे घोरतर अपराध होना है । पूजित मार्कण्डेयादि मनीषि गण भक्त तथा प्रहाद भनराजके नामसे पुकारे जाते हैं । प्रहाद भादि भक्तोंमें पाण्डुनन्दन श्रेष्ठ भक्त हैं । फिर पाण्डुनन्दन भी यादवगण श्रेष्ठ भक्त हैं ।

“शदानिमदिश्रुत्वा ममतापिचयना हर ।

पादसेव्योऽपि यद केनि श्रेष्ठतमा मता ॥”

( जगुभाग )

सर्वदा श्रीशरणके निरन्तर रहनेसे ममतातिशय निरन्धन कतिपय यादव पाण्डुनन्दन श्रेष्ठ तथा इन यादवोंके मध्य उदय भक्त श्रेष्ठ थे । इस उदयसे भी फिर अन्तर्द्वेषण श्रेष्ठ भक्त थी । उन लोगोंके मध्य श्रीशरण प्रिया श्री र शिष्या ही सबसे अधिक श्रेष्ठ भक्त थी ।

“नक्षत्रि चर्त्तनोपा राधिकाति परीषणी ।

श्राधिनेन कथिता प्रत्युत्पागमादिषु ॥”

इन स गोपियोंमें श्रोत्राधिका ही अधिक श्रेष्ठ थीं । कर्त्तन, पुताण तथा वेदादि शास्त्रोंमें उन्होंकी मर्त्तोंमें श्रेष्ठ बतलाया है ।

भक्तिरत्नामृतसिन्धु नामक वैष्णवग्रन्थमें भक्तोंके अनेक भेद कहे गये हैं । उनमेंसे शान्त, दाम्य, सख्य, दास्य और मधुरसखे नक गेग श्रेष्ठ हैं । सख्यसख्यादि शान्तरसक भक्त थे । दाम्यभक्त चार प्रकारके हैं—अश्रु श्रु, आश्रित, पारिषट और अजुग । प्रया, शिष्य, श्रु इत्यादिको अधिकृत नाम भक्त कहा जाता है

आश्रित दाम्यभक्त—शरणगता, शान्तिष्ठ और सेवा शिष्टके भेदस तीन प्रकारका है ।

कालिय नाम तथा जगन्मधवगणारम वद रूपति गण शरणगता दास्यभक्त थे ।

जिहोंने मुनिश शब्दा छोड़ कर फेवल भगवान्का हा आश्रय शिष्य है वे शान्तिष्ठ भक्त हैं । शान्तिष्ठ शिष्य लोग शान्तिष्ठ दाम्यभक्त थे ।

जो पदित होस भया विषयमें आसक्त हैं, वे हा सेवाश्रित दाम्यभक्त हैं । अश्रुश्रु, हरिहर, बटुलाय, इत्यादि, श्रुतदेव, पुण्डरीक भादि ही सेवा शिष्ट भक्तोंके निर्दोष हैं । पारिषट दास्यभक्त—छात्रान्तर्गतमें उदय, दास्य, सख्य, श्रुतदेव,

श्राजित्, नन्द, उपनन्द और भद्र आदि पार्षद दाम भक्त थे। ये मन्त्रणा तथा मारण्यादि कार्यों में नियुक्त रहते हुए भी किसी किसी समय परिवर्ष्यादि कार्यों में प्रवृत्त रहते थे। कुक्षुशमें भोष्प, पतिङ्गिन् और विदुर आदिमें भी पापवदासभक्त कहा जाता है। अनुग-दाम भक्त—जो सर्वदा स्वामीके सेवाकार्यों में दत्तचित्त रहता है उसे अनुग कहते हैं। यह अनुग दो प्रकारका है—पुरस्थ और व्रजस्थ।

‘सुवद्रो मयडल स्वम्ब सुतम्बाया पुरानुगा’।

सुनन्द, मण्डल स्वम्ब और सुतम्बादि पुरस्थ अनुग दासभक्त हैं। रत्नरु, पत्नर, पत्नी, मधुकण्ठ, मधुजत, रसाल, सुविलास, प्रेमकरुण, मरुड, आनन्द, चन्द्रहास, पयोद, चक्रुण, रसद और शारद आदि व्रजस्थ अनुग दासभक्त हुए।

सत्परम भक्त—पुरसम्बन्धी और व्रजसम्बन्धीके भेदसे दो प्रकारका है। अनुंन, नीम, और द्रुपद नन्दिनी स्त्रीपदी और श्रौदाम आदि सत्परसके पुर सम्बन्धी भक्त कहे जाते हैं।

सुहृत् सखा, सखा, प्रियसखा और प्रियनर्मसखाके भेदसे व्रजस्थ सत्परसके भक्तगण इन चार श्रेणियोंमें विभक्त हैं। श्रीकृष्णसे कुछ उन्नत अधिभक्त, वारसत्पयगन्धि युक्त, सदा शत्रु द्वारा दुष्टों से श्रीकृष्णकी रक्षा करनेवाले ही श्रीकृष्णके सुहृद सखा हुए। सुभद्र, मडलीभद्र, भद्रवर्द्धन, गोभद्र, यक्षेन्द्रभद्र, भद्राङ्ग वीरभद्र, महागुण, विजय और वल्गभद्र आदि भी सुहृद सखा थे। जिन लोगोंकी मित्रता कुछ सेवामिश्रित है, जो कृष्णसे उन्नत हैं कुछ कम और श्रीकृष्णके सेवासुख के अभिलाषी हैं वे ही सखा हैं। जिनाल, वृषभ, ओजस्वी, देवप्रथ, धरूधप, मरुन्द, कुसुमापीड, मणिवन्ध, करन घम, आदि सत्परसके भक्तगण सखा नामसे विख्यात हैं।

प्रियसखा—जिनकी मित्रता शुद्ध है अर्थात् जिनमें दास्य वा वात्सल्यका गन्धमात्र भी नहीं है, इस तरहके समवयस्क मित्रोंको प्रियसखा कहते हैं। श्रौदाम, सुदाम, दाम वसुदाम, किङ्कणी, स्तोत्रकृष्ण, अशु, भद्रसेण, विलासी, पुण्डरीक, विटंक और कञ्जिक आदि प्रिय

सखा नामसे विख्यात हैं। वे अनेक तरहके खेल और वाद्य युद्ध तथा दण्डयुद्ध आदि कौतुक द्वारा सर्वदा श्रीकृष्ण को आनन्दित किया करते थे।

प्रियनर्म सखा—प्रिय सखासे भी सब प्रकारसे श्रेष्ठ, अत्यन्त रहस्य कार्योंमें नियुक्त तथा विशेष भावके रखने वालेको ही प्रियनर्म-सखा कहते हैं। सुबल, अनुंनगोप, गन्धर्व, वसन्त और उज्जल प्रभृति प्रियनर्म सखाके नामसे विख्यात हैं।

श्रीकृष्णके गुरुवर्ग ही वत्सल-रमके भक्त थे। व्रज रानी यशोदा, व्रजराज नन्द, रोहिणी, द्रव्या इन सर्वोपे जिन गोपियोंके पत्नोंको हृषण किया था, वे सब गोपी, देवकी, देवकीको सपत्नीगण, कुन्ती, वसुदेव और सान्दी पनि मुनि आदि श्रीकृष्णके गुरुवर्ग थे। प्रेयसीगर्ग मधुर रसके भक्त थे। कृष्णके सभी प्रेयसीवर्गमें वृष भानुनन्दिनी शोराधिका हा सर्वप्रधाना थीं।

‘प्रैयसापु हरेतासु प्रयका वर्धमाननी’

पहले ही कहा जा चुका है, कि जो देवताओंके चरणोंमें तन मन समर्पण कर स्थिरचित्तसे उनकी आराधना में सदा नियुक्त रहते हैं, वे ही भक्त हैं। श्रेयतामें प्रेम अथवा भक्ति न रहनेसे भक्त नहीं हो सकता, अटल निश्वास ही भक्तका पूर्ण लक्षण है। भक्तश्रेष्ठ-नामाजो कृत ‘भक्तमाल’-की टीकामें प्रियदासने लिखा है—

हरि गुरु दास छौं राचो सोई भक्त सही

गही एक टेक निरि उतरे न दरि है।

भक्ति स्वरूप को स्वरूप है छविचार

चाह हरि ताम लेल अश्रुनि भरि है ॥

यही भगवन्त सन्तामीतिको विचार करे

धरे दूरि ईग ताहु पापडोनीसों करि है।

गुरु गुरुताई की यचाई ले दिखारि, जाहि

गाई श्रीपे हरिजूकी रोति रत्न भरि है ॥

जो भक्त अधिचलितचित्तमें हरिको गुरु कह कर जानते हैं वही श्रेष्ठ भक्त गिने जाते हैं। हृदयमें भक्ति के स्वरूपका उदय होनेसे अनर्थ नाश और सर्व स्वार्थ लभ होता है। एकमात्र भगवान्, भक्त और गुरुके चरणध्यानके विना भक्तोंके मनमें और किसीमें भी प्रेमभाव स्थान नहीं पा सकता। जो स्वयं स्वार्थत्याग

पूर्वक आनन्द कीतुष अथवा प्रेम पूर्वक सदा राधाष्टण का नाम हृदयमें धारण करने हैं वे ही श्रेष्ठ हैं, वहीं तो स्वार्थक्षान्ति ही पूजन भजनादि बणित्र वृत्तिमात्र है। जो हरिगुणगान और हरिरसास्वादनको ही सब विचारों और सर्वमङ्गलैका सार जान कर प्रेममें निमग्न रहते हैं वे ही भक्त हैं अर्थात् देवतत्त्वमें प्रवृत्त विश्वासीको ही भक्त कहा जाता है।

पद्मपुराणमें विष्णुभक्तकी देवीरूपि बतलाया है। हरिपदके शरणार्थी भक्तको चाहिये, कि वे श्रीगणकी भक्तिमें लीन हों कर उनका भजन करे। जो विष्णु भक्ति नहीं करते उनके पूर्वपुरुष तक्र भी नरकगामी होते हैं। भक्तकी कामना हो या न हो, वे तीव्र भक्तियोगसे उपाधिरहित पूर्ण पुरुष श्रीभगवान्की ही पूजा करे। एक माल भमला अथवा निष्कामा भक्ति ही श्रीभगवान्की प्रीतिसाधनमें समर्थ है।

भक्तोंको चाहिये, कि वे भक्ति सहित वैष्णवके निकट षण्णमत्र ग्रहण करे, अवैष्णवके निकट मलदीक्षासे हरिभक्ति नहीं बढ़ती। विष्णु भक्ति त्रिहीन मनुष्यके निकट भ्रंत लेनेसे हरिभक्तका हृदय भक्तिपूर्ण नहीं हो सकता। ब्राह्मण वैष्णवसे मन्त्र लेना उचित है। शास्त्र अथवा श्रौषसे मन्त्र लेनेसे हरिभक्तिमें विघ्न उत्पन्न हो सकता है। देवीपुराणमें लिखा है, कि विभिन्न सम्प्रदायके भक्तोंकी नास्तिष्का यज्ञ करना चाहिए। गुरु और शिष्यके विपरीत मार्गमें चलनेसे कभी भी भक्तके हृदयमें भक्तिका आविर्भाव नहीं हो सकता तथा उसका इष्ट वस्तुका साधन निष्फल होता है। प्रवृत्त भक्तकी अपने उपास्य देवताके प्रति अचला भक्ति रगनी चाहिये, किन्तु ऐसा कहनेका यह तात्पर्य नहीं है भक्त देवताओं में भेदज्ञान करे। हरिभक्तोंमें स्वयं महादेव श्रेष्ठतम बड़े गये हैं। शास्त्रमें शुक्रदेवगोस्वामी तथा महर्षि नारद आदिकी कथा सुनी जाती है। षण्णके भक्त लोग चतुर्गुण फलकी इच्छा नहीं करते, वे निष्काम तथा मातुष्य मयी भक्ति द्वारा श्रीष्टणका व्रत कर प्रेमरसको सिद्ध करते हैं। अन्याय योगधर्मसे धर्मार्थकाम मिद तो होता है, पर श्रीष्टणके भजनसे एकमात्र प्रथमं नषामको प्राप्ति होती है। प्रवृत्त भक्त मिदिकी ओर दृष्टिपात

नहीं करते, केवल प्रेममानन्दमें षण्णसेजानन्दकी प्राप्ति करते हैं।

“शास्त्रोपकारिं शामीष्य सत्कृत्यैकत्वमप्युत।

दीयमानं न शक्नोति विना मन्त्रवां जना ॥”

( भाग० ३।२६।१३ )

षण्ण भक्तके निकट विजगत् तुच्छ है, उसका चित्त सदा आनन्दमय रहता है। भक्त ऊँच नीच जातिका भेदविचार नहीं करते। वैष्णव भक्तका स्पृष्ट अनजल अथवा उनका उच्छिष्ट भोजन या चरणोदक पान करनेमें कभी पराङ्मुख नहीं होना चाहिये। स्वयं भगवान् श्रीष्टणने अर्जुनसे कहा था—

“य म भक्तना पाप न म मस्ताभ त ना।

मद्वक्तानाश्च य मक्तान्त्वे मे भक्ततमाः मताः ॥”

( भादिपुराण )

जो हमारे भक्तके भक्त हैं वे ही श्रेष्ठ भक्त बड़े जाते हैं, स्वयं ब्रह्मा भी षण्णभक्तकी समता नहीं कर सकते। इमीलिये उन्होंने अर्जुनको श्रीमुखसे हां कहा है, कि वैष्णवकी सेवा करो, उसके परे षण्णभक्त होनेका उपाय नहीं है। उन्होंने और भी कहा है—

“षापरो हृदयं मत्र साधूनां हृदयन्त्यश्म।

मदन्त्य ते न जानन्ति नार्हो ज्यो मनागपि ॥”

भक्त और भगवान्का शरीर दो होने पर भी उनके हृदय एक हैं। भक्त भगवान्में भिन्न और किम्बोका ध्यान नहीं करते और भगवान् भी उसे वैसा ही समझते हैं। भक्तका हृदयकोरक भक्तिबुसुम पूर्ण है। भक्तगण विभिन्न उपायसे भगवान्को पाते हैं। गोपियेनी कामसे, तद् यज्ञोदाने र्नेहमे, षसनं भयसे, वृन्दावन वासीने पुण्यफलसे, राजपतिशुपालादिने द्वेषसे, प्रह्लादादिने भक्तिसे और शुक्रव्यादिने शासने गारायणसे प्राप्त किया था।

समी शास्त्रोंमें हरिभक्त वैष्णवोंकी प्रहिमा और आराधनाविधि बतलाते हैं। हरिभक्तकी नीचजाति समझनेसे उसे नरक होता है। पत्रिचिन्ता शुद्धको भी रामचन्द्रने आर्जुन किया था। पामन अर्जुनरमें उन्होंने अमुरश्रेष्ठ पल्लवाजका दामन स्वीकार किया था स्वयं भगवान् श्रीष्टण भगवत्कर्म अर्जुनके मार्ग

यने थे तथा उन्होंने पाण्डवपत्नी द्रौपदीकी लाज रखी थी। जिस भक्त प्रेमसे उन्होंने शृवभानुसुता श्रोत्राधिकारका मानभङ्गा किया था, उसी भक्त प्रेमसे उन्होंने पालयित्रा यज्ञोमतकी कथन और गोपपति नन्द-के वाधावहा द्रोणको सह्य किया था। भक्तराज अक्रूर और त्रिभुज भक्ति साधनासे हो उठे पाया था। भक्ताका मनोरथ पूर्ण करनेकी कामनासे उन्होंने भक्तवर प्रह्लादको प्राथना करने पर स्फटिकस्तम्भके मध्य वृसिंह रूपमें हिरण्यकशिपुको दर्शन दिये थे।

महाभारतके राजधर्म पर्वार्थाध्यायमें उन्होंने बलिसे कहा है,—

“नित्य ये प्रातस्त्थाय वैष्णवाणान् कौर्त्तनम्।

उत्तन्ति त भागवता वृष्णजुष्या बली बले ॥” (भारत)

प्रात कालमें विद्यापनसे उठ कर जो वैष्णवोंके नाम-कौर्त्तन करते ह, वे ही मल्लिमें भागवत और वृष्णतुल्य समझे जाते हैं। पहले ही कहा जा चुका है ‘मद्भक्तवासाय ये भक्तास्ते म भक्ततमा मता ॥’ अतएव भगवान् स्वय स्वीकार करते हैं, ‘भक्तकी महिमा अपार है, जो विष्णुभक्तके दास और वैष्णवान्मोक्षी हैं, वे नि शङ्कित्तसे यज्ञभुक्तोको गतिको पाते हैं। विष्णुभक्तकी अर्चना सर्वतोभावमें श्रेयस्कर है। जो उसका विप रीत आचरण करते हैं, वे दाम्भिक वा विष्णुवञ्चर हैं। पादोत्तरपण्डमें भागवत पूजनकी भूरि भूरि प्रशंसा की गई है। दूसरी जगह भगवान् शीठण्ये और भी भक्तपूजाकी अधिकता और अग्रथ कर्त्तव्यता निर्देश को है। हरिभक्तोंके प्रिय व्यक्ति सर्गोंके लिये बन्दगीय हैं।

जिसके घरमें वैष्णव भोजन करते हैं, वैष्णवमन्त्रलाभ से उनका शरीर निरुपाय हो जाता है; वहा वृत्तान्तरका भी अधिकार नही है। स्वय भगवान् भक्तकी रसनामें रसास्वादन करते हैं। नारदपुराणमें भी विष्णुभक्तका माहात्म्य वर्णित है। श्रौमत् मध्वाचार्यने लिखा है,—

“भागवद्भक्ततादाकं पादुकाभ्यां गोडस्तु म।

वात्संगम यापनस्य वाच्यशासितज्ञमुत्तमम् ॥”

(हरिभक्ति विनाय)

पद्यानलीमें भी भगवद्भक्तोंके पादुवाण श्रवणस्वन की कथा लिखी है। वृष्णभक्तिके दर्शन वा रपर्शनसे

साक्षात् पुत्रग भी पवित्र हो जाता है। हरिभक्तकी पूजा करनेसे ब्रह्मरुद्रादि भी उन पर प्रसन्न रहते हैं। भगवान् भक्तिरूपमें ही लोकसमुहका विधान करते हैं। हरि भक्तना नाम भी महत् है तथा ब्रह्मरुद्रादि पहलेसे भी उदरुष्ट हैं। वे हरिभक्तिपरायण महात्मा सर्व धर्मके कृता वतलाये गये हैं। केजप जिन पर स तुष्ट रहत है, वह यदि चण्डाल भी क्यों न हो, ब्रह्मय होता है। वह भक्त ब्रह्मप्राप्ती होने पर भी पवित्र है। जिनके शरीरमें तप्तमुद्रादि भागवत चिह्न दिखाई देते हैं, तथा जो सर्वदा एरिगुणगानमें रत हैं, वे ही बलिमें देवता समझ जाते हैं।

अपरमें भक्तोंके लक्षण और महिमादिका वर्णन किया गया। अब साधन परम्परासिद्ध महिभसम्पन्न भक्तों के मध्य जो सामान्य प्रभेद लक्षित होता है, वही नीचे लिखा जाता है। जिनका भक्त करण अपने अमीष्टभाव में भावित है, उन्हें वृष्णभक्त कहते हैं। साधन और सिद्धके भेदसे वृष्णभक्त दो प्रकारका है।

“वद्वाक्यभाविनस्त्वान्ता वृष्णभक्ता इतीरिता।

ते साधनाश्च विद्वान्श्च द्विविधा परिकीर्त्तिता ॥”

वित्तमद्गुलडाकुर एक साधक भक्त थे। उन्हीं के सम्मान भक्त साधकभक्त कहलाते हैं।

“विष्णुमालतुल्या ये साधनास्ते प्रकीर्त्तिता ॥”

फिर जो किसी प्रकारका क्रोश जानते ही नहीं, जिनकी वृष्णार्थ ही समस्त क्रिया है और जो निरन्तर सर्वदा प्रेमसुधास्वादानमें रत रहते हैं, वे ही सिद्ध भक्त हैं।

“अविश्रान्तापिबद्धे सा सदा वृष्णाभिताभिया।

विद्या स्य सत्तत प्रेमयोन्मत्सादादपरयथा ॥”

सिद्ध भक्त दो प्रकारका है—सप्राप्तसिद्ध और नित्य सिद्ध। फिर सप्राप्तसिद्धके भी दो भेद हैं—साधन सिद्ध और वृष्णसिद्ध।

साधनसिद्ध—जो भक्तिप्रभावसे क्रोशपरम्पराको वञ्चित करके मन्त्र चरणोंमें परिणत होते हैं, जो मोक्षादिकी घोर वृष्णपातमें भी घृणा बोध करते, जिनके उत्तरोत्तर वर्द्धमान प्रेमोन्मत्त्वसे अत करण स्वयन्त और आनन्दश्रुजलसे वदन्मण्डल आश्र और

शरीर अतिशय पुष्टकित होता है, उन धय पुरुषोंको प्रणाम करता है। मार्कण्डेयादि साधन द्वारा प्राप्त सिद्ध हुए थे।

“मार्कण्डेयाद्यः प्रोक्ता साधनैः प्राप्तिद्वयः ॥”

श्रीमद्भागवतके दशमस्कन्धमें वृषासिद्धका विषय इस प्रकार लिखा है —

“नामो द्विजातिर्हस्कारो न निगमा गुणवधि ।

१ तपो नात्ममीमांसा न शीघ्रं न क्रिया शुभा ॥

तथापि ह्युत्तमश्लोके वृष्यो योगेश्वरेश्वर ।

भक्तिर्दृष्टा न चात्मानं संस्कारादिमतामपि ॥”

इनका द्विजोचित संस्कार नहीं होता, ये मुख्यरूपमें वास नहीं करते, तपस्या और आत्मविचार नहीं करते और न शीघ्र तथा शुभ कर्म ही करते हैं, तथापि उत्तम श्लोक योगेश्वरेश्वर भगवान् श्रीराममें इनको प्रगाढ़ भक्ति रहती है। हम लोग संस्कारादि रहते हुए भी वैसी भक्तिसे वञ्चित हैं। यद्यपत्नी, बलिद्वैप्य और शुक्रदेवादि वृषासिद्ध हैं। “वृषासिद्धा यशस्यो वैराचि शुक्रदत्तः” यादव और गोपगण श्रोत्ररूपक नित्यप्रिय हैं। ये ही नित्यसिद्ध भक्त कहलाते हैं।

सुधीभक्तके दोनों अपराधसे सावधान रह कर श्रीरामको अर्चना करनेमें शीघ्र ही प्रेम उत्पन्न होता है। नामग्रहणसे सेवापराध दूर होता है, किन्तु नामापराधसे मानवकी नरकभोग भिन्न अन्य गति नहीं है। नामापराध और सेवापराध दूरे।

परले ही कहा जा चुका है, कि श्रीविष्णुके नाम गुणादि श्रवण, कीर्तन, स्मरण, उनकी पादपत्रिचर्या और पूजा, उनका घन्टा, उनका दाम्य वा संत्रवत्न, सस्य वा बन्धुदान तथा जात्मनिवेदन अर्थात् देहसे शुद्धात्मापर्यन्त सभी आत्माको उन्हे निवेदन, यही ही भक्तके प्रधान भक्तिक्षण है। पतञ्जिन शुरुपादाश्रय, दोषा, शुद्धसेवा, सद्धर्मनिहासा और शिक्षा, सामार्गाय लस्या, वृष्णप्रिय घन्टुमें भोगलात्सा पर्वत, एकादशी, कार्तिकेय प्रभृति प्रतामुद्धान, गो विप्रवीण्य सेवा, अपराध यज्ञ, धर्मस्थसेवन, अथ श्रेयता या शारदामें अर्धेद् ज्ञान, मयुरामण्डलम् वास, श्रीमद्भागवत पाठप्रणय आदि और भी बौद्ध प्रकारके भक्तिक्षण कहें गये हैं। निम्न विवरण भी इन्द्रम दंगे।

भक्त स (स० पु० कि०) भक्तार्थं कर्म । भक्ताहरणाथ पाव कामेका यह वरतन निम्में मात ग्याया जाता है ।

भक्तकर (स० पु०) भक्त भजन करोतीति वृत् । १ एक प्रकारका सुगन्धित द्रव्य जो अनेक दृमरे द्रव्योंके योगसे बनाया जाता है । (त्रि०) २ भक्तिकारक ।

भक्तार (स० पु०) भक्तभक्त करोतीति वृ (कर्मवयण् । पा ३।२।१) इत्यण । १ पाचक, रसोइया । पर्याय—भूट, औदिनित्र, गुण, भक्षुद्गार, सुषकार, आरालिष, चल्लय । २ भक्तकर नामक सुगन्धित द्रव्य ।

भक्तवत् (स० इ०) भोज्यादिका अयोचन ।

भक्तव्यन्द (स० पु०) १ क्षधा । २ आकाशा

भक्तवा (स० स्त्री०) अमृत ।

भक्तता (स० स्त्री०) भक्तस्य भाव तल् टाप् । भक्त्य, भक्ति ।

भक्त्यूर्ध्व (स० इ०) भयनस्य तद्गोचनकालस्य आयेद् रु वा भयते तद्गोचनकाले यादनीय तूर्ध्व । भोजनकालमें यादनीय तूर्ध्व, प्राचीनकालका एक प्रकारका वाचा जो भोजन करते समय बजाया जाता था । इसका पर्याय नृपमान है ।

भक्त्य (स० पु०) तिसीके अङ्ग वा भाग होनेका भाव, अव्ययीभूत होता ।

भक्तदास (स० पु०) भक्तेन अग्रमात्रेण दास । पन्द्रह प्रकारके दासोंमेंसे एक दास, यह दास जो फेरल भोजन ले कर ही काम करता हो ।

भक्तुमें ७ प्रकारके दाम्नीया उल्लेख हैं तिनमेंसे भक्त दास दूसरा है । (भु ८।११७)

० एक राजा । ये श्रीरामचन्द्रजीके परम भक्त थे और संवेदा रामायण सुना करत थे । एक दिन सोनाहरणका वृत्तान्त जब इन्होंने सुना, तब आधिगममें आ सीताके उद्धारके लिये हाथमें तन्कार लिये मसुठमें फूट पड़े । फटते हैं, कि इसी समय स्वयं रामचन्द्रजी सीताके साथ यहाँ उपस्थित हुए और उन्हे मसुठसे बाहर निकाल कर बोले, ‘मैंने रायणका वध कर सीताको उद्धार किया । अब चिन्तारहित ही अपने राज्यमें लौट जा । राजा सीता सहित श्रीरामचन्द्रके लगे पर फूले १ समाये और अपनी घरकी पार्ष्ण भाय ।



भक्तद्वेष (म० पु०) भयते द्वेष । १ अन्नमे अणुचि । २ , भगवद्भक्तके प्रति द्वेष ।

भक्तद्वेषिन् (स० वि०) भयत द्विप णिनि । भयतद्वेष युक्त ।

भक्तनिष्ठ (स० वि०) १ निष्ठावान् भक्त । २ भयत सेवन विषयमें विशेष निष्ठायुक्त । ३ एक राजा । आदि पुराणमें उनको साधुना और भयत वैष्णवके प्रति भयित निष्ठाका जो विवरण लिखा है वह इस प्रकार है—

एक दिन दो चोर वैष्णवका घेरा धारण कर चोरीके उद्देशसे राजाके समीप पहुँचे । राजाने परम भयित भावसे उनका पादप्रक्षालन कराया । यहा तक, कि चरण सेवाके लिये उन्होंने रानियोंको नियुक्त रखा । दो पहर रातकी जब सभी निद्रा वैधोकी गोदमें सो रहे थे, उसी समय वैष्णववेशी प्रतारक उन चोरोंने रानीको मार कर उनके अलङ्कारादि ले लिये और वहासे चम्पत हुए । किन्तु धर्मकी जय होती हो है, वे सब चोर रास्ता भूल गये और इधर उधर भटकने लगे । सबेरे राज भृत्यगण उन दोनोंको राजाके समीप पकड़ लाये । परम भयितमन्त राजा वैष्णवको ऐसी कथनदशा देव चित्कार कर उठे । क्रमश उन्होंने रानीकी हत्यावाचा भी सुनी । रानीका हत्याकारक जान कर भी राजाने उन वैष्णव चोरोंको मुक्त कर देनेका हुकुम दिया और उनका पादोदक ले कर रानीके मुखमें देने कहा । भयतके सहाय भगवान् हैं, राजाके भयितवत्से रानी जी उठी । अनन्तर राजाने उन दोनों वैष्णवोंको स्तवसे सुनुष्ट कर विदा किया ।

( भक्तमाल )

४ एक महाराज । ये भी विख्यात हरिभक्त थे । एक दिन कोई भयतप्रधान उनके समीप उपस्थित हुआ । राजाने यथाप्रधान उस वैष्णवश्रेष्ठ अतिथिकी अर्चना की । एक वर्ष तक राजाके साथ रह कर जब उन साधु भयतने जानकीके इच्छा प्रकट की, तब राजाने प्राणत्याग करनेका सकल किया । यह वेष रानीने अपने दो पुत्रोंकी निज शिवा कर मार डाला । राजपुत्रकी मृत्यु पर हाहाकार मच गई, सभी छाती पीट पीट कर रोने लगे । अब साधुने राजारानीको इस दंगामें छोड़ जाना अच्छा नहीं समझा । इसलिये वह अन्त पुरमें उन लोगोंकी मान्यता

देनेके लिये गया । रानीने उन भक्तसे अपने पुत्रका निधनकारण कह दिया तथा चार दिन और ठहरोक उनसे अनुरोध किया । साधुमें राजा और रानीकी प्रीति देख कर भयत चमत्कृत हो रहा । पीछे रानीने उस साधुके चरणामृत ले कर मृत पुत्रके ऊपर छिड़क दिया जिससे वह उठ कर पड़ा हो गया, मानो धमी सो' कर उठा हो । वैष्णवके चरणामृत पर रानीका अट्ट धिःवास देख साधु आश्चर्यान्वित हो गये तभीसे उन्होंने फिर कभी भी राजा 'रानीका साथ नहीं छोड़ा ।

( भक्तमाल )

भयतपन (हि० पु०) भयित ।

भयतपुलाक (स० पु०) भयतस्य पुलाक इव । १ माँड, पोच । २ मासाच्छादनयोग्य अन्नपिण्ड ।

भक्तप्रिय—एक महाराज । वैष्णवमें उका अक्षुण्ण प्रेम था । डोम भाइ आदि वैष्णवोंका घेरा धारण कर उनके सामने नृत्यगीत करते थे । ये भी प्रेममें मत्त हो 'उन्हें कभी तो वृण्डवत् और कभी आलिङ्गन करते थे ।

( भक्तमाल )

भक्तमण्ड (स० पु० क्लो०) भक्तस्य अत्रस्य मण्ड । अन्नप्र रस, माड । पर्याय—मासर, आचाम, निस्त्राय ।

भयतमाल—नृत्यपुरके एक राजा । इन्होंने ६६५ हिजरीमें मान कोट अवरोधके समय अन्नरक्षाके शत्रु सिक्न्दरकी सहायता की थी । सिक्न्दरकी दुर्गति देख कर ये पीछे मुगल सम्राटकी शरणमें पहुँचे । मुगलशाहिनीके साथ जब ये लाहोर नगर लडने गये, तब वहा वैराम राँके हाथ इनकी मृत्यु हुई ।

भयतमाल—एक प्राचीन धर्मग्रन्थ । वैष्णव कवि लाल दासने इसकी बगला उन्धमें रचना की । भयतोंकी जीवनी इस ग्रन्थमें मालाकारमें प्रथित होनेके कारण इसका नाम भयतमाल रखा गया है । ग्रन्थकारने अपनी रचनाके मध्य भयतचरित और वैततचरित बहुत से तारिखक विषयोंका समावेश किया है । भय यत्तत्र, जीवतत्त्व, मायातत्त्व, सृष्टितत्त्व, और साध्यात्त्व आदि विषय भयतचरितके आनुपदिक हैं । इस विषय तत्त्वकी आलोचना गद्दी के कारण भयतमालग्रन्थकी साधारणतः चरित्र और

तात्त्विक विभागमें विभक्त किया गया है। चरित्र विभाग प्रधानतः नामाजीवित हिन्दोभक्तमाला और प्रिय कामकृत तन्दोकासे तथा तात्त्विक विभाग उषत दोनों प्रथम और श्रीहरिमक्तिचिन्तास, श्रीलक्ष्मणभक्तमाला, भक्तिरसामृतसिन्धु, उज्ज्वल-नोलमणि, पद्मसुन्दर धी चैतन्यचरितामृत, प्रह्लासहिता, श्रीमद्भागवतगीता, प्रह्ला, गण्ड, प्रह्लाण्ड, पद्म, स्वप्नादिपुराण और अपरापर अनेक भक्तिशास्त्रोंसे सङ्कलित है। इसमें २७ माला या परिच्छेद हैं। उन २७ मालाके शेषमें प्रथकारने स्वकृत प्रथमा फलश्रुतिवर्णन और निज देव्यादि स्थापन करके अतमें सचाष्टाण्य विषयक एक गीतमें प्रथमा उपसहार किया है। इस प्रथमे कितने अमाज नौष दोष रहने पर मा वे इसकी गुणराजिके मध्य छिप गये हैं।

इस चङ्कला भक्तमाला प्रथमे ही चङ्कालीके हृदयमें विष्णुमग्न, जयदेव, तुलसीदास, रघुनाथदास, प्रबोधा नन्द सरस्वतीरूप, सनातन और जीव गोस्वामी, श्रीधरभ्यामी बोधदेव, शंकर, रामानुज, मोरारवादि, कर मेतीवादि और कवीर आदि तत्त्वरसनिम्न महानुभवोंका ध्यान, भक्ति और धैराग्यकी वैचित्र्यमी जीवलीला जग मगा रही है।

प्रमाण प्रयोगादि द्वारा प्रतिपाद्य विषयकी दृढता सम्स्थापन करनेके लिये इस प्रथमे २७ शालोप श्लोक उद्धृत हुए हैं। श्लोकावली छोड़ कर इसमें नामाजीवित हिंदी मूल और उसकी टीकासमिष्टि है।

भक्तराज (स० पु०) भक्तश्रेष्ठ।

भक्तपति (सं० टी०) १ क्षुधा। २ भोजन करनेक प्रवृत्त इच्छा।

भक्तरोचन (स० त्रि०) क्षुधाका उद्रेक।

भक्तवल्गल (स० त्रि०) भक्तेषु घटस्त्वः ७ तत्। १ भक्त के प्रति घटस्त्व, भक्तों पर स्नेह करनेवाला। २ विष्णु।

भक्तविपाकयटी (स० टी०) यतिकीपत्रिचैर। प्रस्तुत प्रणाली—बज्जली २ भाग, स्वर्णमासिक, हरिताल, मैन की छाल, इमलीकी जड़, दन्तीमूल, मोघा, चितामूड, सोंठ, पोपल, मिर्च, हरितकी, यमानी, कृष्णजीरा, दिगु, शुद्ध, सैध्व, बनदमारी, जायफल, यक्ष्मा प्रत्येकका चूर्ण १ भाग, इन सब द्रव्योंकी अक्षरके रस, सम्हालू

के पनोंके रस, ज्योतिष्मतीके पत्तोंके रस और चिता रसमें तीन दिन भायगा दे कर गोली बनाये, अणुपान लवङ्गचूर्ण ४ माणा। इन औषधका सेवा करनेमें अनिमाचादि अति जोष प्रशमित होता है। (स्वकी०)

स्नेहस्वारसप्रथमे भक्तपाकयटीका उल्लेख द्वेपनेमें आता है। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—अन्न, पारा, गंधक, हिशुल, ताम्र, हरिताल, मनशिला, यङ्ग, हरीतकी, बहेडा, विष, नीपाली, दन्ती, कर्कटचूर्ण, सोंठ, पोपल, मिर्च, यमानी, चिता, मोघा, जीरा, कृष्णजीरा, मोहागा, इन्धयची, तेनपत्र, लवङ्ग, होंग, कायफल, सैन्धव प्रत्येक तीन भाग। इन सब द्रव्योंके चूर्णकों अक्षरक, चिता, दण्डी, तुलसी, अहस और वेत्पत्र प्रत्येकके रसमें सात बार भायना दे कर तीन रत्नोंकी गोली बनाये। इसका सेवन करनेमें कोष्ठरुद्ध, कफ, और विक्षोभजनित मन्त्ररुद्ध, मदानि, विषमज्जर और विक्षोभजनित विषमज्जर जाता रहता है। (स्नेहस्वारसप्रथमवर्ण १०)

भक्तशरण (हि० पु०) यह स्थान जहा भक्त पका कर रखा जाता है, रम्पीघर।

भक्तशाला (स० टी०) १ स्थान या भोजनघर। २ आवेदनकारियोंका सम्बन्धनाघर। ३ यह स्थान जहा भक्त लोग बैठ कर धर्मोपदेश सुनते हैं।

भक्तमिषध (स० पु०) भक्तस्य मिषधः ६ तत्। भानका माँड।

भक्तोष (स० पु०) भोजनशाला।

भक्तदाय (स० पु०) धान्यादि द्वारा स नृहीत कर।

भक्तभिलाष (स० पु०) भक्ते अभिलाषः ७ तत्। १ अथके प्रति अभिलाष। भक्तस्य अभिलाष। २ भगवद्भक्ति को इच्छा।

भक्ति (सं० टी०) भज्यते इति भज्तिन्। १ विभाग, भाग। २ सेवा शुधया। ३ अनेक भागोंमें विभक्त करना, बाटना। ४ अग, अथय। ५ गट। ६ वह विभाग जो देवा द्वारा किया गया हो। ७ विभाष करकेबानी देवा। ८ पूजा, भजन। ९ श्रद्धा। १०

१२ अणुराग, स्नेह। १३ अक्षरके रस, सम्हालू

निरतिगय विनिष्ट तथा

१५ गीणवृत्ति । १६ उपचार । १७ एक वृत्तका नाम ।  
इसके प्रत्येक चरणमें तगण, यगण और अन्तमें गुरु  
होता है । १८ पुत्राविषयमें अनुगम भक्ति । शण्डिल्य  
स्वप्नमें भक्तिका लक्षण इन प्रकार लिखा है ।

“अथानो भक्तिविशाला या परानुरितोश्चरे ॥” (शां० ४०)

ईश्वरमें परानुरक्तिका नाम भक्ति है । आगध्यत्रिय  
में जो अनुगम है, यही भक्ति है । ‘आराध्यत्रियवक्रागल-  
मेव भक्तित्व’ भक्तिमूलसे ईश्वरमें परानुरक्ति ही भक्ति है ।  
परा प्राञ्ज द्वारा परा और गीणी यही दो प्रकारकी भक्ति  
समझनी चाहिये । परमेश्वर त्रियमें अन्न करणकी  
वृत्ति ही परानुराग कहलाती है और यही भक्ति है ।  
उपासना, परमेश्वरमें परमप्रेम ‘नहोष्टदेनात् परमस्ति  
किञ्चिद्’ इष्टदेवमें और कुछ भी श्रेष्ठ नहीं है, ऐसी चित्त  
वृत्तिका नाम भक्ति है । यह प्रीतिके अंगीन है ।

“नाथ । योऽस्मिन्नेषु येषु येन ब्रह्मात्म्यम् ।

तेषु तेऽन्यथुता भक्तिरन्युतास्तु सदा त्वयि ।

या प्रीतिरवियेकानां विषयेष्वामासिनी ।

त्वामनुस्मरत सा मे हृदयान्मामपसुर्वु ॥”

(विष्णु १२०।१६ २०)

“धर्मार्थकामे किं तस्य मुनितस्य के रिधता ।

समनजगता मूले यन्म भक्तिः क्षिरा त्वयि ॥”

(विष्णु १२०।२७)

हे भगवन् । मैं जिम् किसी योनिमें जन्मग्रहण धरों न  
करू किन्तु आपमें मेरी अटल भक्ति बनी रहे । अधि-  
किर्तनीकी विषयवामनमें जैसे प्रीति रहती है, आपमें मेरी  
धेसा ही अनिचलित प्रीति हो । समस्त ब्रह्माण्डके मूलों  
भूत रक्षकों जिनकी प्रगाढ भक्ति है, उनकी मुक्ति कर  
रिधत है—उन्दे धर्म अर्थनामने और कोई प्रयोजन  
नहीं ।

यहा पर जिस प्रीतिपदका उल्लेख किया गया है, उसे  
सुगनिरत राग समझना चाहिये । कारण, यदि वह सुगनिरत  
न हो, तो उसमें आसक्ति हो ही नहीं सकती अर्थात् जो  
कुछ भी धरों न किया जाय, उसका मूल सुग ही है, ऐसा  
समझना आवश्यक है अन्यथा कोई किसी काममें प्रवृत्त  
नही हो सकता । अनग्न यह प्रीति सुगनिरत राग  
पहलाती है । पानशूलमें उमका लक्षण इन प्रकार कहा

गया है—‘सुगानुगयी राग’ (पात २।३६) यह स्मरण  
तथा कीर्तनादि द्वारा हुआ करता है । भक्तगण भगवान्  
के नामकीर्तन या उनके नाम स्मरणसे सुग अनुभव  
करते हैं । इसीलिए वे बारम्बार ऐसा किया करते हैं ।  
भक्तिका वेग जितना ही बढ़ता है, भक्तोंकी कीर्तनादिमें  
उतनी ही आसक्ति होती है । उस समय भक्त अनन्य  
कामों हो भगवच्छरणमें मन प्राण समर्पण कर उनके  
नामादि कीर्तनमें लगे रहते और तद्गतचित्त हो कर  
केवल उन्ही का भजन करते हैं ।

‘जो मन्थित तथा मद्गतप्राण हो कर आपसमें मेरे  
तत्त्वना वातालाप करते हुए पर दूसरेको समझा देते  
और इन्हीं अधिकतर आनन्द लाभ करते हैं, जो मेरे  
प्रति अनुरक्त तथा योगयुक्त हो कर भक्ति पूर्वक मेरी  
( ईश्वरको ) उपासना करते हैं, मैं उन्हें बुद्धियोग अर्थात्  
तत्त्वज्ञान प्रदान करता हू । इस तत्त्वज्ञान द्वारा वे मुझे  
पाते हैं । मैं उन भजनकारी व्यक्तियोंके प्रति अनुकम्पायं  
उनके अत करणमें रह कर तत्त्वज्ञानरूपी उज्ज्वल प्रदीप  
द्वारा अज्ञानान्धकारको दूर करता हू । अतएव भक्तिका  
फल मुक्ति है, यह अग्रय स्वीकार करना पड़ेगा ।  
‘तनुसस्थयाम्भृतत्तोपदेशात्’ तत्सस्था ‘तस्मिन् ईश्वरे  
सस्था भवित्यर्थस्य’ जिनकी ईश्वरमें अधिचलित भक्ति  
है, उन्हें अमृतत्वन अर्थात् मोक्ष लाभ होता है ।

(गीता १०।६ १०)

‘तेषामहं समुत्थत्तां मृत्युसंसारमगारात् ।

भगामि न चिरात् पाप मन्वावेक्षितचेतवाम् ॥” (गीता १२।७)

जिनका चित्त मुझमें ही निविष्ट रहता है, मैं उन्हें  
मृत्युरूप ससार मागरसे उद्धार करता हू । तैस्तिरीय  
मन्त्र भागमें भी लिखा है,—

“श्रम्यन्तं यामरे सुगन्धि पुष्टिर्दाम् ।

उर्वराकर्मिन वन्नामृत्योमुन्नायमामृतात् ॥”

‘अन्न यजन भक्ति’ इससे भी मालूम होता है, कि  
भक्तिका फल मुक्ति है । शाण्डिल्यस्वप्नमें ज्ञान भी भक्ति  
का अङ्ग बतलाया गया है । भक्तिका फल मुक्ति है, यह  
पहले ही कहा जा चुका है; किन्तु तत्त्वज्ञान द्वारा अज्ञान  
को निरपत्ति नहीं होनेसे मुक्ति नहीं हो सकती, ऐसा  
सभी स्वीकार करते हैं । अनुगमविशेष ही अज्ञानका कार्य  
है; अन्त करणवृत्तिरूपा भक्तिमें किस प्रकार मुक्ति

मित्र सखतो है ? इसकी सीमासा इस प्रकार है—चूँकि इस भक्ति रूप अन्त परपराश्रित्तमें आनापना कार्य है इसलिए यह अज्ञाननहित है। अज्ञान रहनेसे मुक्ति अमम्भव है। इससे यह सांगित होता है, कि मुक्तिका प्रज्ञान कारण भक्ति नहीं, परन्तु ज्ञान है। अतएव भक्तिका सीध पर मुक्ति है, यह निश्चय है। भक्ति अधिचालित होनेसे ज्ञान होता है। जब ज्ञान उत्पन्न होता है, तब आनापना कार्य जो अनुपगविशेष है, वह भी नहीं रहता। सुतरा मुक्तिमें और कोई बाधा नहीं होती। अतएव भक्तिका अद्भुत ज्ञान ऐसा न कह कर भक्तिको ही आका अद्भुत कहना सुचितसंगत है। शास्त्रमें भी लिखा है, कि 'भक्तिं हान्ताय कल्पते' ईश्वरमें प्रणिधान, तपस्या और व्याख्या यादि कार्ययोग द्वारा भक्ति उत्पन्न होती है ; अनन्तर भक्ति अचल होनेसे ज्ञान उत्पन्न होता है और इसीसे मुक्ति मिलती है।

वैष्णवगण भक्तिका फल मुक्ति है, ऐसा स्वीकार नहीं करते। उनका कहना है, भक्तिका फल प्रेम है। वे मुक्तिको प्रार्थना नहीं करते। उनके मतमें प्रेम ही परमपुरुषार्थ है। 'उपायपूर्व भगवति मन स्थिराश्चरणा भक्ति' उपायपूर्वक भगवान्में मन स्थिराश्चरणका नाम भक्ति है। विहिता और अविहिताके भेदसे यह दो प्रकारकी है।

बिना किसी कारणके ही देव और वैदिक कर्ममें मन की जो व्याभाविक सात्त्विक शक्ति उत्पन्न होती है, वही विहिता भक्ति है। मिथ्या और शुद्धाके भेदसे यह भी दो प्रकारकी है—

मिथ्या भक्ति तीन प्रकारकी है,—कर्ममिथ्या, कर्मज्ञान-मिथ्या, और ज्ञानमिथ्या। इनमेंसे कर्ममिथ्या भक्तिके तामसो, राजसी और सात्त्विकी ये तीन भेद हैं। फिर तामसो भक्तिके हिंसायाँ, दम्भायाँ और मातृमयायाँदि भेद हैं। हिंसा, दम्भ और मातृसयपूर्वक जो काम करते हैं वे ही तामस भक्त हैं। विषयायाँ, यतोऽर्थाँ और पेयार्थाँके भेदसे राजसीभक्ति तीन प्रकारकी है। जो विषय, यज्ञ और पेयार्थके लिए भगवान्में भक्तिपरायण होते हैं, वे राजसिक भक्त कहलाते हैं। कर्मक्षयाया, विष्णुप्रेतव्या और विधिनिवृध्यर्थी प्रभृति सात्त्विकी

भक्तिके लक्षण हैं। कर्मभयके लिए या विष्णुकी प्रीति के उद्देशसे अथवा ज्ञानार्थ भगवानकी आराधना नहीं की है, इत्यादि कारणसे जो ईश्वरकी आराधना करते हैं, वे ही सात्त्विक भक्त हैं। कर्मज्ञानमिथ्या भक्ति तीन प्रकारकी है,—उत्तम, मध्यमा और अधमा।

उत्तमा भक्ति—जो मंत्र भूतोंमें अपना भगवद्भाव देखते हैं तथा जो अपेक्षित और भगवान्में सब प्राणिपौत्रा अस्मया हैं, ऐसा समझते हैं, वे उत्तम भक्त हैं। मध्यम और अधम भक्तका विषय भक्त शब्दमें लिखा गया है।

ज्ञानमिथ्या भक्ति—मेरा गुण सृष्टिने ही मुझमें जिनकी अविच्छिन्न मति हो जाती और पुरुषोत्तम विष्णु में जिनकी रीतुकी मति होती है, जो मेरी सेवाके लिये सत्त्विकयात्ति मुक्ति पा कर भी उसका अभिमान नहीं करते, वे ही ज्ञानमिथ्या भक्त कहलाते हैं।

अविहिता भक्तिके चार भेद हैं,—कामका, द्वेषका, मयका और रनेहका।

गोपिका कामसे, शम्भयसे, वैद्यादि राना द्वेषसे और छिणि उपनिगण सम्बन्ध तथा स्नेहमें भक्तिपरायण हुए हैं। कर्ममिथ्या भक्ति भी प्रकारकी है। गृहस्थ गण इन्हीं ही प्रकारकी भक्तिके अधिकारी हैं। कर्मज्ञानमिथ्या भक्तिके तीन भेद हैं और इनके अधिकारी बनवासाँ हैं। ज्ञानमिथ्या भक्ति एक प्रकारकी है; केवल विष्णुगण ही इसभक्तिके अधिकारी हुआ करते हैं।

शाण्डिल्यस्मृत भाष्यमें लिखा है, कि कल्याणोपायसे जो कुछ भाष्यों न किया जाय, भक्त उन सबोंको भगवान् आराधनमें समर्पण करते हैं। यह भक्ति उन्नत प्रकारकी है, यथा—१ पद्मिन्दुवर्ग, २ विजडुवर्ग, ३ पद्मिन्दुवर्ग, ४ पद्मिन्दुवर्ग, ५ चतुर्विजडुवर्ग, ६ विजडुवर्ग, ७ पञ्चविजडुवर्ग, ८ छष्टादशवर्ग, ९ पञ्चदशवर्ग, १० तयोदशवर्ग, ११ द्वादशवर्ग, १२ एकादशवर्ग, १३ अष्टवर्ग, १४ नववर्ग, १५ सप्तवर्ग, १६ षड्वर्ग, १७ पञ्चवर्ग, १८ चतुर्वर्ग, और १९ त्रिवर्ग।

उन्नत उन्नतगर्ग भक्तिका विषय भागवतमें विशेष रूपसे लिखा है, जिन्कार दो जातिके भयसे यह कहा नहीं किया गया। भागवतके दुर्भे, सातवें, दशवें और

ग्यारहवें स्कन्धमें इसके अनेक उदाहरण तथा दृष्टान्त दिये गए हैं।

नारदरत्न भक्ति सूत्रमें भक्तिका विषय जो आठो विन भुआ है, यह भी वक्ति शिक्षतभायमें नीचे दियो जाता है। "भो पूज्यादिभ्युराग इति पारम्यम्", "भो कथा दिमित्तित गर्भा", "भो आत्मरत्वादिभिरेति ज्ञापिडल्य", "भो नारदस्त्वदिनागिज्ञानात्सतातदिस्मरते परमव्याजुल्लेति।"

(नारदभक्तिसूत्र १६-१६)

भगवत् पूजादिमें अनुरागना नाम ही भक्ति है, ऐसा महाप्रियेदव्यासका मत है। इन्द्रियोंको कर्म द्वारा निवृत्त करनेके लिए त्रिभिर्पूर्वक पूजादिका प्रयोजन है और इस प्रकार पूजा करते करते प्रेमोदय होता है। सम्पूर्ण प्रेमा वेग होनेसे चाला और मानस पूजाका निवृत्ति होती है और धीरे धीरे त्रिशुद्ध भक्ति दिवादि पडने लगती है।

गर्गाचार्यके मतानुसार भगवत्पूजादिमें जो अनुराग है उसीका नाम भक्ति है। भगवत्गुणानुवादके श्रवण और कोचनने ही समस्त साधनाना मार जान कर उसमें गाढाभिनिवेश और श्रद्धा करने हीको भक्ति कहते हैं।

जाण्डिल्यके मतसे आत्मरतिके अतिरोधविषयमें अनुरागका नाम भक्ति है। जगद्गोपका परित्याग करके एकमात्र आत्मचैतन्यमें अन्यान्य सभी अस्तित्वको अहृति प्रदान कर पूर्णानन्दमें विमोह रहना ही आत्मरति कहलाता है। चाहे हँत भावसे हो अथवा अहँतसे आत्मरतिका अनुकूल, अनुराग घृत्तिना प्रभाव ही भक्ति नामसे अभिहित है। लौकिक और पारमार्थिक भेदसे कर्म दो प्रकारका है। मनुष्य वाग्यशादि जिम किसी कर्मका अनुष्ठान क्यों न करे सभी ईश्वरार्थ या उनकी पूजा विवेचना करनेसे ही भक्ति साधित होती है।

"मातस्त्वया लयाद्द वासाहान् प्रातरन्तत ।

यत् करोमि जगन्मात । तदेव तव पूजनाम् ॥"

प्रात कालसे सन्ध्याकाल तक और सन्ध्याकालसे पुनः प्रात काल तक 'जितने लौकिक तथा पारमार्थिक कार्य करता हूँ, हे जगन्मात । ये सभी आपका पूजा माल है। "भो कथा प्रवर्णविद्या" (नारद भक्तिसूत्र २१) घृन्दाविद्यारिणी गोपारणियों ही प्रेमभक्तिकी पराकाष्ठा

दिगलाई है। घस्तुत प्रेममें विमोह हो कर मय पायो मनुष्यकी तरह जो गृह, ससाद, पेटवर्ष, मान, सम्भ्रम, लोकलज्जा प्रभृति छोड देने हैं, वे ही परम भक्त हैं। स्वयं भगवान्ने उद्धवमें कहा है, 'हे उद्धव । गोपियोंने मुझमें ही अपना मन समर्पण किया है—मैं उनका प्राण हूँ, मेरे लिए उन्होंने सर्वस्व त्याग किया है। जिन्होंने मेरे ही लिए सब कुछ त्यागा है, मैं उनकी रक्षा करूँगा। गोपिया मुझे प्रियसे भी प्रियतम मानती है। जब मैं उन सर्वोंसे अलग रहता हूँ, तब मुझे रमरण कर वे निदारुण विरहव्यथासे व्याकुल हो अपनी को भूत जाती हैं। मुझे न पा कर वे बड़े कष्टसे प्राण धारण करती हैं। घृन्दावयमें मेरे पुनरागमनका शुभस्वाद सुनते ही वे जीवित हो जाती हैं। मैं भी उन्ही गोपियोंकी आत्मा हूँ और वे मेरी प्रेमभक्तिको बढ़ाने वाली हैं।"

"भो सा तु कर्मज्ञायोग्योऽप्यधिकतरा।"

(नारदय० २५)

यह भक्ति कर्म, ज्ञान और योगसे भी श्रेष्ठ है। भगवद्गोतामें भी कहा गया है,—

"तपरिम्योऽधिको योगी शान्तिम्योऽपि मतोधिक ।

कर्मिभ्यश्चाधिका योगी तस्माद्योगी भगवतु न ॥

योगिनामपि उपर्यां महत्वेनान्तरात्मा ।

श्रद्धानां भवते यो मां स मे युक्ततमो मत ॥" (गीता)

उक्त वाक्यसे भगवान्ने ज्ञान और कर्मकी अपेक्षा योगकी प्रधानता दिया कर भक्तको योगियोंके मध्य प्रधान बतलाया है। कर्मयोग और ज्ञानसाधनके समय घर्ष, आश्रम, अधिकार तथा अनधिकार आदि का विचार देया जाता है; किन्तु भक्तिसाधनमें इनकी कुछ भी आवश्यकता नहीं। यत्न तथा चेष्टा द्वारा मुक्ति लाभ की जा सकती है, किन्तु भक्ति मुक्तिसे भी दुर्लभ है, 'भो परमपूज्यार ।' (नारदय० २६) क्योंकि यह फलस्वरूप है। शताभिमानियोंका बहना है, कि भक्ति साधन द्वारा ज्ञानस्वरूप फल प्राप्त हो जाता है। किन्तु नारदके मनने ज्ञानसाधन द्वारा भक्तिरूप फल लाभ होता है। गीतामें कहा है—

“अद्वयार वन दर्पं काम शोधं परिग्रहम् ।  
विमुच्य निर्मम शान्तो ब्रह्मभ्याय कल्पत ॥  
ब्रह्मभूत प्रगतात्मा न शोचति न काङ्क्षति ।  
सम वस्य भूतेषु मद्भक्तिं लभते परम् ॥”

इस वाक्यमें भगवान् श्रीरघुणने यह दिमाया है, कि ज्ञान, कर्म और योगसाधन द्वारा मनुष्य अहंकार, बल, द्वेष, काम और क्रोधका परित्याग कर निर्मम, शान्त और ब्रह्मान्मग्न प्राप्त करते हैं। वाद परमानन्दपूर्ण हो शोक और कामनादिविहीन तथा सब प्राणियोंमें समदर्शी होनेसे उन्हें परा भक्ति लाभ होता है। सभी साधनाओंका लक्ष्य है भगवत्प्राप्त्य लाभ। किन्तु भगवान्की दृष्टादृष्टि न होनेसे भक्तिवा सञ्चार नहीं होता, इसीलिये भक्ति सभी साधनकी फलस्वरूप है। ‘ओ ईश्वरत्वाप्यभिमानदेवित्वात् देव्य भित्त्वापि’ (नारदाद्य० २०) भगवान्की भी धर्मि मानके प्रति चिह्न और दोनताके प्रति प्रियभाव रहता है। कर्म, ज्ञान और योग साधनके समय यदि साधकको उसका अभिमान हो जाय तो भगवान् प्रसन्न नहीं होते हैं। अभिमानो ईश्वरको प्यार नहीं कर सकते और जब तक उन्हें प्राणसे बढ कर प्यार किया जाय अर्थात् अपनेकी उनके चरणमें भलीभांति समर्पण न कर दे तथा ‘मै तुम्हारा और तुम मेरा’ ऐसे भावमें विगठित न हो जाय, तब तक भगवत्प्रीति लाभ हो नहीं सकती।

किसी किसी परिदृष्टिके मतसे ज्ञान ही भक्तिका साधन है।

भक्तितत्त्वकी आलोचना करनेमें यह मत समीचीन नहीं जा पड़ती; क्योंकि गृह्यवेदनादिने प्राणलाभ नहीं करके भी भक्तिपूर्वक भगवान्की पुकार था और उन्हें भगवान्के दर्शन भी मिले थे। ‘ओ अन्त्यान्त्याश्रयत्वमित्त्वन्ते’ (नारद भक्तिय० २६) कोइ कोइ कहते हैं, कि भक्ति और ज्ञान परस्पर एक दूसरेका आश्रय किये हुए हैं और यही बात सुक्तिसंगत जान पड़ती है। क्योंकि भक्तिके उत्पन्न होनेसे ज्ञानतत्त्वकी ओर प्रवृत्ति ही नहीं होती।

‘ओ नानं कल्पतेति ब्रह्मपुराणम् ।’ (नारदग० ३०) सनत्कुमारदि और नारदके मतसे भक्ति स्वयं फलस्वरूप है कारण, किसी चेष्टा या कौशल द्वारा भक्ति प्राप्त नहीं हो सकती।

“ओ तस्मात् शैव प्राह्य मनुजुभिः” (नारदग० ३१)

मोक्षार्थी केवल भक्ति ही ग्रहण करते हैं। सूत्रकार नारदो ओर प्रवृत्ती युक्ति द्वारा दिखताया है, कि कर्म, योग और ज्ञान मुक्तिका साधन होन पर भी उसमें विपुल विग्रहो सम्भावना है। भक्तिनाम तथा भगवान्के दर्शन करनका अन्तिम ही निर्मम पथ है। इसीलिये वे ज्ञानके प्रति दया विगठन कर भक्तिसाधनमें प्रवृत्त हुए हैं। मुक्ति भक्तिका लक्ष्यार्थफल नहीं है। किन्तु भक्ति-साधन मार्ग पर अग्रसर होनेमें यथासमय मुक्ति आपे ही उपस्थित होती है और मुक्तिलाभके बाद भी भक्तिका पथ बना रहता है। मुक्तिके लिए मुमुक्षु पुण्यको स्वतन्त्र साधन करना पड़ता है। भक्ति ही समस्त परमार्थकी द्वेनगले है।

“ओ तत्तद्विषय त्वागात् उद्वलयागात्” (नारदग० २५)

भक्ति विषय और सङ्कट्याग द्वारा साधित हुआ करता है। इन्द्रियोंके विषयान्वित होनेसे मन उसीमें मग्न हो जाता है। विषयकचि मनको हमेशा एक विषयमें दूसरे विषय में आसक्त करती है। इस प्रकार विषयवा शयना मनुष्य का सङ्ग मनका चिह्न कर देता है, अतः मन भी विद्वित, चञ्चल तथा दुर्बल हो जाता है। सम्पूर्ण एकाग्र होनेसे भक्ति जायेनकी सम्भावना नहीं। भक्ति साधन करनेमें पहले वैराग्यवान् और निःसङ्ग होना आवश्यक है। जीवत धारणके आरम्भकीय कायका समय छोड़ कर जब अथ काश मिले, उसी समय भगवान्का नाम जप तथा गुणगान करना चाहिए। कारण, हरिचिन्तासे विभ्राम पाने पर ही मन, रज और तमोगुणके आधेयमें धामोदित होता है शन्यथा विषयचिन्ता मनकी भुजायें झाल देती है। सभी कार्य और सभी अचरणार्थों यदि इन्द्रियोंके साथ मन भगवत्पदमें लगा रहे, तो प्रमदग भक्तिवा आवेश बढता है। जब तक चिह्नेदरूपसे भगवन्-भजन-साधनाको समाप्य नहीं हो जाय, तब तक अज्ञानप्राप्त मनुष्यकी भगवन्-बधा सुनना और स्वयं उसे मनुष्यके निकट बोलन करना अच्छा है, क्योंकि ऐसा करनेसे चित्त प्रमदग भगवन्की ओर आश्रय होता है।

“नान्तायैः हरी चिन अन्त्यारी यन् गदा ।

या म यथात्ति वनयाय यदा भगन् ॥

जब तक चित्तमें भक्तिभावका उदय नहीं होता, तब तब ममयानुसार हृदिप्रथा सुननेमें धीरे धीरे उममें आसक्ति बढ़ती है और धीरे धीरे भक्तिका रज भी दृढ़ हो जाता है। महान्माओंकी कृपा या भगवान्की कृपामणा दृष्टि ही भक्तिका मुख्य साधन है। ओं महत्पद्मन्तु दुर्लभा जगन्मोक्षसाधकः ॥" (नारदय० १६) महत्सद्गुरुर्भ, अगम्य और अमोघ है। साधुकी पहचाननेमें अथा अहीभाय समभवा चाहिए। साधुके सामने आने पर भी मनुष्य उन्हें नहीं पहचान सकते हैं। इसीलिए महत्सद्गुरुर्भ है। साधुकी पहचान करने पर भी उनके साधनमिद भ्रातृके मध्य प्रवेग करना सुशिल है। वनपत्र महत्सद्गुरुर्भ है। किन्तु साधुमामाग कदापि व्यर्थ नहीं होता, अपने अधिकारानुरूप फल अर्प्य ही मिलता है, इसी कारण महत्सद्गुरुर्भ अमोघ है। ओं लभ्यतेऽपि तत्परिवे" (नारदय० ४०) भगवान्को कृपा होनेसे ही महत् अर्थात् सज्जनका सद्गुरु होता है। ओं तस्मिन् तज्जे भेदाभावात्" (नारदय० ४१) भगवान् और भगवद्भक्तमें कुछ भी भेद नहीं। भगवान् भक्ताधीन हैं—भक्तियुक्त साधुका क्रिया फल ही उनको लीला है। भक्तोंके हाग ही ससारमें उनकी महिमा प्रचारित होती है। भक्त उनमें और वे भक्तोंमें विरानमान रहते हैं।

ओं तदेव साध्यां तस्य साध्यात्" (नारदय० ४२) उनकी साधना करो, उनकी साधना करो। नारदने भक्तिलामाग दूसरा उपाय न देप और दूसरे किसी प्रकारसे जीवकी गति नहीं होगी, ऐसा जान कर तपके प्रभावसे भक्तिको ही साधन समुद्रका अमृत्यनिधि समभाया था और जीवों को भलाईके लिए चारम्बार भक्ति साधन करनेका उपदेश दिया है।

किम निस कारणसे भक्तिप्रथा कीज हृदयमें अद्विष्ट नहीं हो सकता, इसकी आलोचना नोचे की जाती है। दूषित धर्म करनेसे प्रवृत्ति दूषित होती है, अतः भक्ति लामेच्छुक्तको पहले सुसद्गुरु परित्याग करना चाहिए। "ओं दुस्तद्गुरुं तापेय स्वयं" "ओं कामकोभोरस्वृष्टिप्रस ग सुदिना गर्जनास्फारणन्वात् ॥" (नारदय० ४३, ४४)

कुसद्गुरु को काम, प्रीति, मोह, स्मृतिप्रस, बुद्धिपाश और स्वयनाज्ञाका कारण है। सुसद्गुरुके कुपराभशं तथा

असत् आदर्शने जीवकी इन्द्रियभोगासना बढ़ती है और किसी कारणसे भोगेच्छावृत्तिमें बाधा पहुचनेसे क्रोध होता है। क्रोधोदय होनेसे ही चित्त चञ्चल और सदसद्बुद्धि विचारहीन हो जाती है। इसीसे मोहकी उत्पत्ति होती है। मोहवशत चित्तके तमसाच्छप्र होनेमें चित्तमें जो मरकारावस्थ विषय हैं, वे विसृष्टाई नहीं पड़ते। सुतरा अपने मङ्गलसाधनका उपाय भी नहीं सूझता इस प्रकार स्मृतिप्रस होसे बुद्धि विकल हो जाती और बुद्धिवैचल्य ही मनुष्यको शूलोक तथा परलोकके कल्याणमार्गमें विव्युत कर देता है। पराभक्तिका फल अनिर्वचनीय प्रेम है।

ओं अनिर्वचनीय प्रेमरूप। ओं मूनासादयत्। ओं प्रकाश्यां वापि पाते। ओं गुणरहितं कामादितं प्रतिक्षणार्दमानमिचिद्वत् गूढमतस्मनुभवरूपम् ॥" (नारदभक्ति० ५१ ५४)

प्रेमका स्वरूप मृकके रसास्वादनकी तरह अनिर्वचनीय है अर्थात् गूना जिस प्रकार मिष्टरस आस्वादन कर आनन्दते गङ्गात् हो जाता और पृष्ठने पर भी रसकी व्याख्या नहीं कर सकता है, मनुष्य उसी प्रकार प्रेमनिर्भाजके समय आनन्दकी पराकाष्ठा पर पहुच जाते हैं, किन्तु यही भाव अनुभव करके भी दूसरेको समझ देनेमें समर्थ नहीं होते। इसलिये यह अनिर्वचनीय है। यह गुणवर्जित कामनातात, प्रतिक्षण वर्द्धमान, अविच्छिन्न, सूक्ष्म और केवल अनुभवस्वरूप है। भक्त उन्में प्राप्त कर यही देपते, यही सुनते, यही बोलते और उसीकी चिन्ता करने हैं। प्रेमिकाके सामने प्रेममय भगवान्का स्वरूप तथा प्रेमका स्वरूप दोनों एक ही पदार्थ हैं। जिह्वांने प्रेम लाम किया है, उर्ध्वंने भगवान्को भी पाया है। सुतरा इसके सिवा उनकी और कुछ देपते, सुनने बोलने या चिन्ता करनेकी इच्छा नहीं होती।

ओं तत्प्राप्य तदेगालोयति तदेव शृणोति तदेव भावयति तद्वद चिन्तयति ॥" (नारदय० ५५)

ऊपर परामर्शिका विषय आलोचित हुआ। अब गौणभक्तिका विषय वर्णन किया जाता है।

"ओं गौरीं त्रिधा गुणभद्रादात्तदि भद्राम्"

(नारदय० ५६)

गुणमेव या गान्तादिमेदमे गौणा भक्ति तीन प्रकार की है। इस भक्ति में तमोगुणकी अपेक्षा रागसिक्की और रजोगुणमे स्थायिकी भक्ति श्रेष्ठ है। अशौचीकी अपेक्षा जिज्ञासु और जिज्ञासुकी अपेक्षा आर्त्तभयन श्रेष्ठ है। कारण, जिज्ञासु या आर्त्तभयनकी उपासनासे विशुद्ध भक्तिके उदय होनेकी सम्भावना रहती है।

दूसरे साधनकी अपेक्षा भक्तिसाधना सुलभ है, क्योंकि इसमें आचार, त्रिचार, वर्ण आदि कुछ भी नहीं देखना पड़ता। भक्तिके गुणसे ही गणिकाने विचारती न हो कर भी, उद्धार पाया था। गोपियोंने त्रैदाध्ययन न कर, शूद्र और गचो मनुष्य त ही कर तथा गृहजने उच्चारण न हो कर भी केवल भक्तिगुणमे ही भावानकी प्राप्त किया था। भक्तिसाधनमें कायकेश और कात रता गही है—भक्तिके जैसा सुलभ साधन और देवनेमे नही आता। भक्तिराज्यमे वादसम्वाद कुछ भी नहीं होता। “ओ अन्यस्मात् सोलभ्य भक्ते। ओ प्रमाणान्तराण पङ्क्तान् स्वयं प्रमाणात्वात्। ओ गतिरूपान् परमांदर्याय। (नारदभक्तिश्लो० ५८६ )

इसमें दूसरे प्रमाणका प्रयोजन नहीं, क्योंकि यह स्वयं ही प्रमाणस्वरूप है। भगवानकी भक्ति करनेमें जो कुछ परिश्रम और केश होता है, उस किमीमे भी छिपा गही है; जो भक्तिने उपासक है वे स्वयं ही इसका अनुभव कर सकते हैं। भक्ति हुईया गही, वादविवाद द्वारा इसका सूक्ष्मसाधन नही किया जाता है। भक्तिसाधनमें हेशका होना तो दूर रहे, चरन् सभी केशीकी निवृत्ति होना है। भक्ति जालि तथा परमानन्दस्वरूप है। जहा वात् त्रिवाद, छठ, उद्देश, सजय, सकप, चिकप और सुगदुभागादिकी तरफका लेजामात्र गदा रहता, वही ज्ञान्तिविकसन है। ज्ञान्तिमयनीं ही परमानन्दका प्रकाश होता है।

“ओ विवक्तय भक्तिग शरीरगी” (नारदश्लो० ८१)

भूत, भक्तियन् और वक्तमान सभी समयमें सत्य स्वरूप भगवानमें भक्ति ही सर्वविश्व श्रेष्ठ है। भगवान की प्राण करनेके लिए ज्ञात्रमें तिनकी प्रकाशने साथ गए कही गई हैं, उनमेंमे केवल भक्तिसाधना ही सर्वो का अपेक्षा सुगम और श्रेष्ठ है। अन्याय साधना कष्ट साध्य तथा कष्टयुक्त और सर्वोमें सभा मनुष्योका

अधिकार भी नहीं है। केवल दीनवेगमं भक्तिपूर्वक पुकारनेसे ही भगवान् एदयमें उपस्थित हो जाते हैं। योगसाधनासे जो युगयुगानमें भी नहीं होता, यह भक्तिसाधनासे भय भय हो सकता है। योगसाधने जो वात्मानके धनोत हैं, भक्तिराज्यमें वे ही एदयकी पनि तद प्रथित और त्रिजडित हैं। इसीगिण नारदो समारमें यह घोषणा की है कि, ‘भक्तिव अपेक्षा श्रेष्ठ साधना और दुमरा नहीं है।’

यह भक्ति ग्याह प्रर रकी है। यथा,—गुणमाहात्म्य सभित, रूपामभित, पूजामभित स्मरणामभित, दान्यामभित, मर्यामभित, कात्तामभित, वास्त्यासभित, आत्मनिवेदनामभित, तमयनासभित और परमविरहा सभित।

जो जिसकी प्यार करता है, यह उम्मा सभी काम और सब अद्भुत ही देगता है। किन्तु कोई कोर किमी अद्भुत सुन्दरता या किमी भावमें विशेष भाकृष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार भक्तगण भगवान्में स्वयंते भावने आसक्त होने पर भी कोई कोई भक्त किमी किमी भावमें विशेषरूपसे आसक्त हो रहते हैं। इसे केवल रचिरेचिद्वक्ता फाउ समझना चाहिए। राजा परोक्षिय, नारद, हनुमान पृथुराज प्रभृति गुणमाहात्म्यासक्त भवन थे। गणकी दान्यास्थामें तन्द, उपान्द और पशोशक्ति तथा युवायस्थामें प्रचनारी प्रभृति उांमे गयोगी थों, जाणय वे मर रूपामभित भयत कहताये। पृथुराजा पूजा सभित, प्रहाद स्मरणामभित, हनुमान्, अवर और त्रिपुरादि दान्यासभित, बर्तुन, सुश्रीय, उदय, कावेर, सुयय, श्रीदा मादि मर्यामभित। मयपोषिदायण वात्तामभित, तन्द, यशोदा, कौमल्या, हजराय, कश्यप, अदिनि प्रभृति दान्यासभित शक्तिराजा आत्मनिवेदनसभित और कौण्डिन्य, शुक्रवादि तनयतासभित भयत थे। शुक्रदेव भक्तिनिज्ञा के पर प्रधानम आचार्य थे, इसीगिण भक्तिमरप्रधान ‘शुक्रमुगादमृतमयमुत’ श्रीमद्भागवत ग्रन्थ कहा गया है:

“भगवा भजनेमर्थात्प्रीयका पामे तदुद्गुमा”

(नारदश्लो० १६)

भजता या सेवा हा गौणी भक्ति है। यहा गौणी



जब तक चित्तमें भक्तिमात्रका उदय नहीं होता, तब तक ममयानुसार हरिश्वा सुननेमें धीरे धीरे उसमें आसक्ति बढ़ती है और धीरे धीरे भक्तिका बीज भी दृढ़ हो जाता है। महात्माओंकी कृपा या भगवान्की कृपासंग-दृष्टि ही भक्तिका मुख्य साधन है। ओं महत्सद्गुरु दुर्लभा-  
 जगम्पेऽसाधनम् ॥” (नारदय० ३६) महत्सद्गुरु दुर्लभ, अगम्य और असाध्य है। साधुकी पहचाननेमें अपना अहोभाग्य गगनगता चाहिए। साधुके सामने जाने पर भी मनुष्य उन्दे नहीं पहचान सकते हैं। इसीलिए महत्सद्गुरु दुर्लभ है। साधुकी पहचान करने पर भी उनके साधनविद्वद् भावके मध्य प्रवेश करना मुश्किल है, अतएव महत्सद्गुरु अगम्य है। चिन्तु साधुसमागम कदापि व्यर्थ नहीं होता, अपने अधिकारारूप फल उपज्य हो मिलता है, इसी कारण महत्सद्गुरु असाध्य है। ओं लभ्यतेऽपि तद्वृथैव” (नारदय० ४०) भगवान्की कृपा होनेसे ही महत् अर्थात् सज्जाया सद्गुरु होता है। ओं तस्मिन् तज्जे भेदाभावात्” (नारदय० ४१) भगवान् और भगवद्गतमें कुछ भी भेद नहीं। भगवान् भयताधीन हैं—भक्तियुक्त साधुका क्रिया फलाप ही उनकी लीला है। भक्तोंके द्वारा ही ससारमें उनकी महिमा प्रचारित होती है। भक्त उनमें और वे गकोंमें निराजमान रहते हैं।

ओं तदेव साध्यतां तदेव साध्यतां” (नारदय० ६०) उनकी साधना करो, उनकी साधना करो। नारदने भक्तितलाभका दूसरा उपाय न देगा और दूसरे किसी प्रकारसे जीवकी गति नहीं होगी, ऐसा जान कर तपके प्रभावसे भक्तिकी ही साधन समुद्रना अमृत्यपिधि समझाया था और जीवों को भलाईके लिए धारण्यार भक्ति साधन करनेका उपदेश दिया है।

किस किस कारणसे भक्तिरत्ना बीज हृदयमें अफुरित नहीं हो सकना, इसकी आलोचना नीचे की जाती है। दूषित कर्म करनेसे प्रवृत्ति दूषित होती है, अतः भक्ति लाभेल्लुप्तकी पहली बुझना परित्रयान करना चाहिए। “ओं तु मद्गुरुं सर्वथैव त्यज्य” “ओं कामकैषामहस्मृतिभ्यश्च बुद्धिभ्यश्च सर्वकारकाप्यन्वा ॥” (नारदय० ४३, ४४)

सुसद्गुरु का काम, मोक्ष, मोह, स्मृतिभय, बुद्धिनाश और सर्वनाशका कारण है। सुमद्गुरुके सुपरामश तथा

अमत् आदर्शसे जीवकी इन्द्रियभोगयासना बढ़ती है और किसी काम्पने भोगेच्छावृत्तिमें बाधा पहुचनेसे क्रोध होता है। क्रोधोदय होनेसे ही चित्त चञ्चल और मद्सद्गुरुद्वि विचारहीन हो जाती है। इसीसे मोहकी उत्पत्ति होती है। मोहवशात चित्तके तमम्याच्छन्न होनेसे चित्तमें जो सरकारारूप विषय हैं, वे विलाग्न नहीं पड़ते। सुतरा अपने मद्गुरुसाधनका उपाय भी नहीं सूकता इस प्रकार स्मृतिभय होनेसे बुद्धि विकल हो जाती और बुद्धिवैकल्य ही मनुष्यको इहलोक तथा परलोकके कल्याणमार्गमें विच्युत कर देता है। पराभक्तिका फल अनिर्घचनीय प्रेम है।

ओं अनिर्घचनीय प्रेमस्य ॥ ओं मृगहादावत् ॥ ओं प्रजाश्रये वापि पात्रे ॥ ओं गुणरहितं कामनारहितं प्रतिक्षयवर्द्धमानमनि-  
 चिद्धं सूक्ष्मतत्त्वमुपवर्णयम् ॥” (नारदभक्तिय० ५१, ५४)

प्रेमका स्वरूप मनुके रसास्वादनकी तरह अनिर्घचनीय है अर्थात् मृगा जित प्रकार मिष्टरस आस्वादन कर आनन्दसे गदगद हो जाता और पृष्ठने पर भी रसकी ध्याना नहीं कर सकता है, मनुष्य उसी प्रकार प्रेममाविर्भावके समय आनन्दकी पराकाष्ठा पर पहुच जाते हैं, किन्तु वही भाव अनुभव करके भी दूसरेको समझा देनेमें समर्थ नहीं होते। इसलिए यह अनिर्घचनीय है। यह गुणवर्जित कामजातीत, प्रतिक्षण चर्द्धमान अविच्छिन्न, सूक्ष्म और श्रेयल अनुभवस्वरूप है। भक्त उसे प्राप्त कर नहीं देखते, वही सुनते, वही बोलते और उसीकी चिन्ता करते हैं। प्रेमिकाके सामने प्रेममय भगवान्का स्वरूप तथा प्रेमका स्वरूप दोनों एक ही पदार्थ हैं। जिन्होंने प्रेम लाभ किया है, उन्होंने भगवान्की भी पाया है। सुतरा इसके स्थिया ढाकी और गुण देगने, सुनने बोलने या चिन्ता करनेकी इच्छा नहीं होती।

ओं तन्मन्य तद्वाक्योपैति तदेव शृणोति तत्र भगवति तदेव चिन्तयति ॥” (नारदय० ५५)

ऊपर पराभक्तिका विषय आलोचित हुआ। अर्ध गौणभक्तिका विषय यहाँ किया जाता है।

“ओं गौणी विद्या गुणभेदादत्तादि भवता”

(नारदय० ५६)

गुणसेवक या आर्त्तादिभिःसे गीणी भक्ति तीन प्रकारकी है। इस भक्तिमें तमोगुणकी अपेक्षा राजसिककी और रजोगुणमें सात्त्विकी भक्ति श्रेष्ठ है। अर्थात्की अपेक्षा विद्यासुख और विद्यासुखी अपेक्षा आत्मभयन श्रेष्ठ है। कारण, विद्यासुख या आत्मशक्तिकी उपासनासे विशुद्ध भक्तिके उच्च होनेकी सम्भावना रहती है।

दूसरे साधनकी अपेक्षा भक्तिमाध्या सुलभ है, क्योंकि इसमें आचार, विचार, वर्ण आदि कुछ भी नहीं देवता पड़ता। भक्तिके गुणसे ही गणितने विद्यापती न हो कर मीठे उद्गार पाया था। गोपिकोंने वेदाध्ययन न कर, श्रद्ध और गनने मनुष्य न हो कर तथा गुरुजन उच्च वर्ण न हो कर भी केवल भक्तिगुणमें ही भावान्की प्राप्त किया था। भक्तिमाधनमें फायजे श और फात रता नहीं है—भक्तिके जैसा सुलभ साधन और देवतामें नहीं आता। भक्तिराज्यमें बादस्ववाद कुछ भी नहीं होता। "ओ अन्वयमात्, योऽन्वयं भवती। ओ प्रमाणात्वररथान पक्षमात् स्वयं प्रमाणात्वात्। ओ गतिरूपान् परमानन्दमात्। (तारदभक्तिवत् ७८ ६८)

इसमें दूसरे प्रमाणका प्रयोजन नहीं, क्योंकि यह स्वयं ही प्रमाणस्वरूप है। भगवान्की भक्ति करनेमें जो कुछ परिश्रम और क्लेश होता है, वह किसीमें भी छिपा नहीं है जो भक्तिके उपासक हैं वे स्वयं ही इसका अनुभव कर सकते हैं। भक्ति हुई या नहीं, चादविवाद द्वारा स्वयं मनुष्यमाध्यान नहीं किया जाता है। भक्तिमाधनमें ज्ञेयका होगा तो दूर रहे, उन्मत्तों ज्ञेयोंकी निरृति होती है। भक्ति शान्ति तथा परमानन्दस्वरूप है। जहां चान् विवाद, हठ, उद्वेग, सङ्ग, संकल्प, विषय और सुखदुःखादिकी तरङ्गा लक्षणमात्र नहीं रहता, वहाँ शान्तिभक्तिन है। शान्तिमयनमें ही परमानन्दका प्रकाश होता है।

"ओ भिक्तव्य भित्तव गरीयसी" (नारदव ८१)

भूत, भविष्यत् और वर्तमान सभी समयमें सत्य स्वरूप भगवान्में भक्ति ही सर्वोपदेश श्रेष्ठ है। भगवान्की प्राप्त करनेके लिए ज्ञातमें जिनकी प्रफारकी साधनाएँ कही गई हैं, उनमेंसे केवल भक्तिमाधना ही सर्वोपी अर्थात् सुगम और श्रेष्ठ है। अन्वय साधना उच्च साध्य तथा बहुयत्नयुक्त और सर्वोम समी मनुष्यादि

अधिकार भी नहीं है। केवल हीनवेदान्त मतिपूर्वक पुनरन्वेष ही भगवान् हृदयमें उपस्थित हो जाने हैं। योगसाधनासे जो सुगुणात्ममें भी नहीं होता, वह भक्तिमाधनासे क्षण भरमें ही सकता है। योगराज्यमें जो राशुमाके अतीत हैं, भक्तिराज्यमें वे ही हृदयकी पति तद् प्रथित और चिन्तित हैं। इमोलिप तारने समारमें यह घोषणा की है कि, 'भक्तिक अपेक्षा श्रेष्ठ साधना और दूसरा नहीं है।'

यह भक्ति प्यार प्रकारकी है। पधा,—गुणमाहात्म्या मफित, रूपासफित, पूनासफित स्मरणामफित, दाम्या मफित, सफ्यामफित, फान्तामफित, घात्सन्व्यामफित, आत्मनिवेदनासफित, तन्मयतासफित और परमयिहदा मफित।

जो निम्नकी प्यार करता है, वह उम्कव सभी काम और स्वयं अङ्ग अङ्गा ही देवता है। किन्तु कोई कोई किसी अङ्गकी सुन्दरता या किसी भावमें विशेष धाकृष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार भक्तगण भगवान्में सर्वतो भावसे आत्मन होने पर भी कोई कोई भक्त जिम्मा किसी भावमें विशेषरूपसे आत्मक हो रहते हैं। इसे केवल यन्त्रियेचित्तका फल समझना चाहिए। राजा परमात्मा नाम्द, हनुमान्, पृथुरान् प्रभृति गुणमाहात्म्यासफा अपन थे। शृण्णीयायात्रास्यामें नन्द, उपाय्द और घशायाति तथा युवात्रास्याम प्रजनारी प्रभृति उनम उच्यतेन था अरण्य वे स्वर रूपात्मन भवत पहलाये। पृथुगता पूना मफत, गहाद स्मरणामफत, हनुमान्, अन्व व और विदुगादि दाम्यामफत अनु न, सुमोय, उद्वेग, फादिग, सुयल, श्रौदा मादि सफ्यासत, प्रामोपिफामण फातामफत, तद्, यज्ञोदा, मीगत्या, दशरथ, वृषय, अदिनि प्रभृति धात्म त्यामफत, बलिगता आत्मनिवेदनमफत और वैगिण्य सुकृदयादि तन्मयतामफत भवत थे। भुक्देव भक्तिज्ञाना के एक प्रधानतम आचार्य थे, इसीलिए भक्तिस्मरणका भुगुणादमृताद्यमसुत श्रौवदुःसायत मय कहा गया है।

"मन्वा भानमग्निसाता" का पहाद हृदयरा"।

(मन्वद्वय ५ १६)

भक्ता या सेवा ही गीणो भक्ति है। यही गीणो

भक्ति परामर्शिनकी भक्तिव्यरूप है। परामर्शिनकी साधना करनेमें जो नाना प्रकारके विप्र उपस्थित हो कर साधकको भक्तिमार्गसे विच्युत कर देते हैं, गौणीभक्ति उन्हीं विपदाशिमियोंके विनष्ट कर परामर्शितलामका पथ प्रस्तुत करती है। यहा पर जो भक्तिपद व्यग्रहृत हुआ है, वह गौणी भक्तिका प्रतिपादक है।

“रागायप्रतीतिघाटनार्थं चेतनान्” (शिविह्नपथ १७)

नामस्कार, नामकीर्तनादिका फल केवल अनुराग है। भगवान्की लोलाभूमिका दर्शन, भगवन् मूर्ति की सेवा, श्रद्धावाग प्रभृति मन्व प्रकारकी सेवा केवल गैकान्तिक अनुराग लाभ करनेके लिए है। गौणी भक्ति द्वारा पत्रिलता लाभ होती है। श्रद्धापूयक भगवत्सेवा करते करते अन्त करणकी वृत्तियां परिशुद्ध हो जाती हैं और चित्तशुद्ध होनेसे निर्मल भक्तिका अभ्युदय होता है। इसीलिए किसी किसी धाचार्यने गौणीभक्तिकी प्रधानता स्वीकार की है।

बहुतेरे ज्ञान यज्ञ है या भक्ति इस विषयको ले कर तर्क चितर्क करते हैं। शाण्डिल्य सूत्रमें इमका सिद्धान्त इम प्रकार देणनेमें आता है,—छानादि सभी साधन हो भक्तिसाधनके उपादानस्वरूप हैं। ज्ञान और भक्ति दोनों ही साधन तथा साधकके भेदसे दो प्रकारके हैं। ज्ञान द्वारा वरतुरा जो परिचय उपलब्ध होता है, वह 'साधनान' और ज्ञान, प्रय तथा ज्ञानके अतीत जो ज्ञान है, वह 'साधन' है, यह ज्ञानरूपक हो ज्ञान है। भक्ति द्वारा ज्ञानादि पाठ और देवार्चणादिमें जो प्रवृत्ति होता है वह साधनभक्ति या गौणी भक्ति कहलाता है तथा ज्ञानयोगादि द्वारा भगवत्प्राप्ति के बाद मुक्तिलाभ करने पर भगवान्को वृणादृष्टिसे जो प्रीतिका सञ्चार होता है, उनका नाम परामर्शिन या साधनभक्ति है। साधन द्वारा साधनभक्ति लाभ और साधन भक्ति द्वारा साधन ज्ञान लाभ होता है। अन्वयके भेदसे दोनोंके ही लाघव तथा गौरव है। यथाथंसे साधनज्ञान और परामर्शिनमें कुछ भी विभेद नहीं—यह भक्ति और ज्ञान दोनों ही एक हैं।

“देवा रागादिनि चचेतनारतदत्तान् उभयान्”

(शिविह्नपथ २०)

अनुरागना नाम भक्ति है। किसी किसी भक्ति

मत है, कि अनुराग दु राका कारण है, सुतरा इसे त्याग कराा ही श्रेय है। कारण, सत्सङ्गकी तरह इमका आधार उत्तम है। मनुष्योंके मध्य परस्परमें अनुरागका जो सञ्चार है, उससे त्रियोगजन्य दु ए हुआ करता है, किन्तु इंग्रानुरागमें इमके होनेकी सम्भावना नहीं; क्योंकि इंग्रके त्रियोग है और विच्छेद ही। कुम्भ करनेसे दुःख मिटनेकी सम्भावना रहती है, परन्तु सत्सङ्गमें दुःखको कुछ भी आगङ्गा नहीं है। जो पुण्यके अनुरागमें दु राकी आगङ्गा है, किन्तु उसका त्याग करना उचित नहीं। इश्वरानुराग परम सुगम और मनुष्यका एकान्त प्रार्थनीय है। अतएव भक्ति ही एक मात्र श्रेष्ठ है।

“नैव श्रद्धा तु साधारणयान्” तत्त्वा तत्त्वोचानवस्थानान्”  
(शिविह्नपथ २४, २५)

भक्ति और श्रद्धा एक नहीं है क्योंकि श्रद्धाका साधारणत्व दिपलाई पडता है। कर्ममें श्रद्धा, उपासनामें श्रद्धा, शास्त्र वाक्यमें श्रद्धा इत्यादि प्रकारने श्रद्धाका साधारणत्व नजर आता है। किन्तु भक्ति भगवान्को छोड कर और कहीं भी नहीं रह सकती। श्रद्धा और भक्तिकी एकता सम्या दा करनेमें अननुस्थाका दोष हुआ करता है। अमुक व्यक्तिने श्रद्धापूर्वक देवपूजा का है, ऐसा कहतेसे श्रद्धा देवपूजाका एक प्रधान श्रद्ध समझा जाता है। किन्तु भक्ति वैसी नहीं, वह सभी साधनका एकमात्र श्रेय फल है। अतएव सभी साधनार्थकी अपेक्षा केवल भक्ति ही श्रेष्ठ है। गीतामें स्वयं भगवान्ने कहा है, कि ज्ञान और कर्मने मेरी भक्ति ही श्रेष्ठ है।

हरिभक्तिचिन्तासमे भक्तिका विषय इस प्रकार लिखा है—

भक्तिका सामान्य लक्षण—जो मन्व इन्द्रिय बाहर है और ज्ञानकी सहायतासे शब्द, रूप और रस प्रवृत्तिका बोध होता है, सत्यमूर्ति हरिके प्रति उन सर्वोपा जो स्वाभाविक वृत्तिस्वरूप है वही भगवत्भक्ति है। इन्द्रियाका यह वृत्तिस्वरूप धेदप्रतिपादित कमानुष्ठानके मिया प्रादुर्भूत नहीं होता।

साधनभक्तिका लक्षण भगवत्भक्तिके प्रति चातन्व्य, उनकी अचंदादा अनुभूति न्स्मरति हो कर श्रद्धापूर्वक उाकी पूजा, उनकी लीलाय सुननेमें

अनुरक्ति, उनके आगे नृत्यगीतादि, प्रतिदिन उनका नाम-  
स्मरण और उन्हींके नामसे जीवाधारण करना जो  
इन षाठ प्रकारके भक्तिप्रयोगों का अनुष्ठान करते हैं, वे  
नोच होने पर भी श्रेष्ठ हैं। जिनकी शैवनाम, मन्त्रों  
और मन्त्रादाय शुरुमें उन षाठ प्रकारकी भक्ति है  
भगवान् उन्हींके प्रति पसन्द होते हैं। विष्णुका नाम,  
लीलादि श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पदसेवा, अर्चन, वन्दन,  
कर्मोपेक्षा, सत्य तथा आत्मनिवेदन यह अष्टलक्षणान्विता  
भक्ति यदि भगवान्में स्मरपिन हो, तो भक्त एतदुत्तम  
होते हैं। हरिका शब्दोंक लक्षण ऊर्ध्वमुख धारण,  
विष्णुमन्त्र प्रहण, उनकी अर्चना, जप, ध्यान, स्मरण,  
नामकीर्तन, श्रवण, वन्दन, पदसेवा, पादोदक धारण,  
उनका निवेदित प्रामादप्रहण, वैष्णवोंकी सेवा, द्वादशी  
व्रतमें निष्ठाभाव और तुलसीरोपण भगवान् विष्णुमें  
वे सोलह प्रकारकी भक्तिप्रकारका कही गई है। भगवान्  
का मूर्त्तिसन्दर्शन, मधुरा, वन्दन आदि तीर्थक्षेत्रमें  
गमन, भ्रमण और अस्तिपति, घृणावशेषादिका आघात;  
निमान्यप्रहण, भगवान्के आगे नृत्य, घोणावादन, हृण्य  
लीला आदिका अभिनय, भगवान्के नामध्वनमें तत्प  
रता, पत्र और तुलसीमाला धारण, एकदशो प्रभृति  
रक्षितमें जागरण, भगवान्के उद्देश्यसे गृहनिर्माण तथा  
यात्रामहोत्सव प्रभृति भी भक्तिके लक्षण कहे जाते हैं।

श्रवणादि विषयक तिन सब भक्तिके लक्षण लिखे  
गए हैं उनमेंसे कुछ प्रधान और कुछ अप्रधान हैं।  
कारण, प्रेमसाधन सम्बन्धमें पूर्वोक्त लक्षणसमूहके मध्य  
कितनेको तो बहिरङ्ग और कितनेको अन्तरङ्ग समझना  
चाहिए। जिम् प्रकार सत्त्व, रज और तमोगुणके भेद  
से जोषकी चिन्मिता देखी जाती है, उसी प्रकार भक्तों  
की भक्तिके अनुष्ठानकी भिन्नता होती है। प्रेमभक्ति  
सिद्ध होनेसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूप सभी  
प्रकारके पुरुषार्थ संवकको तरह काम करते हैं।

प्रेमभक्तिके लक्षणके विषयमें नारदपञ्चरात्रमें उक्ति  
है, कि जिस काममें अपापन प्राप्त न रहे, चिन्ममें अग  
धन्में मरम समता अर्थात् भगवान् ही मेरे इस शान्त  
परिचय है, उसीको भोग, प्रलाद, उदय और नन्द्यादि  
मन्त्रोंन प्रेमभक्ति कतल्याया है। प्रेमभक्तिका महाहृदय  
मनिके महाहृदयकी अपेक्षा श्रेष्ठ है।

प्रेमभक्तिका चिह्न—जब आनन्दातिशयानिष्ठान  
पुरुष और प्रेमाश्रु प्रकाशित होता है, जब मनुष्य गद  
गदचित्त हो ऊर्ध्वमुखमें कभी आनन्दधरि, मोक्ष, रोदन  
और नृत्य; कभी महाभिन्तकी तरह हास्य, रोदन, ध्यान  
और वन्दना करते श्रवण कभी दीर्घनिश्वासका पन्थियाग  
कर दे हरे! हे जगन्पते! हे तारावण! यह नाम  
उच्चारण करते हुए लज्जारहित हो रहने हैं, तब भक्त  
सम्भो बन्धनोंसे मुक्त हो जाते हैं। भगवद्भयमें उनका  
अन्त करण और घाय शरीर लगा रहता है; यहां तक,  
कि उस समय स्मृतिशून्य भक्तिनिष्ठान उस शक्तिशून्य  
अज्ञानभाव और वासना एकाकारगी नि शेषरूपसे क्षुण्ण  
हो कर भक्तिप्रथमें गमनपूर्वक भगवान्को प्राप्त करते  
हैं। (हरिभक्तिविज्ञान ११ वि०)

उत्तमा भक्तिका लक्षण—धीरुष्णमन्त्रकी अनुष्ण  
अनुशीलनको भक्ति कहते हैं। यह अनुशीलन शांत  
और कर्मादि द्वारा अनारुत तथा अथ वस्तुके प्रति स्पृहा  
शून्य होनेसे उत्तमा भक्ति कही जाती है। (भक्ति-० वि०)

इन्द्रिय द्वारा तत्परत्वरूप अर्थात् अनुष्णतारूपसे  
हृषीकेशकी सेवाको भक्ति कहते हैं। इस सेवाका मन्त्र  
पाणि-रहित अर्थात् अन्याभिलाषिता शून्य तथा निर्मम  
श्रवण ज्ञानकर्मादिसे अनारुत होना आवश्यक है। भक्ति  
ज्ञानमें यह पदगुणाचितके जैसा कीर्तित हुआ है।  
यथा—

हृश्यामी, शुभदा, मोक्षलघुनारन्, सुदुर्लभा सात्रा  
तन्वियिशोवत्सला और धीरुष्णाधरपणो ये सब उत्तमाभक्ति  
हैं। पाप, पापके बीज और अविद्याके भेदसे हृश्यामी  
तोषन प्रकारकी है। जो भक्ति अकाररूप और प्रारुत  
पापरूप हृश्यामी नष्ट करती है, यह हृश्यामी कह-  
लाती है।

सम्पूर्ण जगत्का प्रीतिविधान, सर्वोंमें अनुष्ण,  
सदगुण और सुख इत्यादि शुभका करनेका नाम शुभदा  
भक्ति है। भक्तिले 'सुखं वैषयिकं प्राहर्मभ्यश्चेति  
तन्वितथा।' वैषयिक सुख, प्रत्यसुख और वैश्वरसुख लाभ  
होता है।

जिनके हृदयमें धीरुष्णो भी भगवत्प्रति उदित हुई  
है, वे धर्म, धन, काम और मोक्ष इन चार पुरुषार्थको



गाम्यदासीं श्रीमन्मधुरामयटले स्थिति ॥  
 वीधीभक्तिविषय वैश्विन्सादासामा उच्यते ॥"

इस वेधो भक्तिको कोई कोई मगगाठ मार्ग कहते हैं।  
 रागागुणभक्ति, - प्रजापतियोंमें प्रसादयत्नमें विराग  
 मा जो भक्ति है उन्में रागाभिका भक्ति कहते हैं। इस  
 रागाभिका भक्ति की अनुगता जो भक्ति है उसका नाम  
 रागागुण भक्ति है। यह रागागुण भक्ति विवेकसे निमित्त  
 है। परन्तु रागाभिका भक्तिका वर्णन किया जाता है।

"इष्ट आरतिरीराग परमादिष्टा भवत्।  
 तन्मयो या भवत् भक्ति साध रागात्मिका भवत्।"

अभिलषित वस्तुको राजाभागीको आवेगसरासाष्टा  
 का नाम राग है। वही रागमयी भक्ति रागात्मिका भक्ति  
 कहलाती है।

यह रागात्मिका भक्ति कामरूपा और सम्बन्धरूपाक  
 भेदमें दो प्रकारकी है।

जो भक्ति सम्भोग लुब्धाको प्रेमाय रूपमें विराग  
 करती है, उसका नाम कामरूपा भक्ति है। काम्य इस  
 कामरूपा भक्तिमें फल प्राप्तिमें निमित्त उद्यम देखनेमें  
 आता है।

श्रीकृष्णमें विनू वादि अभिमान ही अधार्मिक श्रावका  
 पिता है, मैं उनकी माता हूँ मैं उनका भाई हूँ, इत्यादि  
 अभिमानका नाम सम्बन्धरूपा भक्ति है।

रागात्मिका भक्ति दो प्रकारकी होनेके कारण रागा  
 गुण भक्ति भी कामागुण और सम्बन्धागुणके भेदसे दो  
 प्रकारकी है।

केवल रागागुणभक्तिनिष्ठ प्रणयामियोंकी भक्ति-  
 प्रामिके लिए जिना चित्त लुब्ध होता है, उन्हीकी  
 भक्तिको काम गुण या सम्बन्धागुण कहते हैं।

कामरूप भक्तिका अनुगामिनो जो लुब्धा है, उसका  
 नाम कामागुणभक्ति है। यह सम्भोगेच्छामयी और  
 उन्मादभावयुक्त भेदसे दो प्रकारकी है।

अपनेमें विवृद्ध, मातृव्य तथा मातृव्य मत्तकाको  
 पण्डितोंने सम्बन्धागुण भक्ति कहलाया है।

शुद्धसम्बन्धविशेषरूप प्रेमरूप मूर्खका चिन्तनादृश्य  
 यात्रा और भगवद्भाष्यभिराग्य, उन्के धानुक्त्याभिलाष  
 तथा सीद्दादिभिराव द्वारा चित्तकी रितयथा सम्पत्क  
 को भक्ति है उसका नाम भावभक्ति है।

भक्तके हृदयमें इस भावभक्तिका अक्षर उदय  
 होनेसे -

आनिरत्यभिराग्यं चित्तमागुण्यम् ॥  
 आनिरत्य वदुष्पथा गगणा सरासि ।  
 आनिरत्यस्तदुष्पथान्या प्रतियतद्वर्षउसमे ॥  
 इत्यारवाजुगाय "तुकाभास अरु तो ॥"  
 प्रमनभित - तसल रामाचारुपमं चित्त निर्मा  
 द्वा है और जो अन्तर मनतापुत्र है, उन भाषयो  
 पण्डितान प्रेम यत्नान है।

साधरान्ता प्रमनभक्तिक पादुनायक विषयमें भक्ति  
 रमागुणि धुम इस प्रकार लिखा है, -

गौ धरा तव साधु मद्राध भगवधिया ॥  
 उवाचभक्तिगत स्याता विशागिगता ॥  
 ताम्भित्तमता भासता प्रेमामुदग्रति ॥  
 साधानाम प्रेम प्रादुभा भयत्कम ॥  
 विशेष लिखा है इन्द्रमें गया ।

उपरम ईशानुग परानुरक्तिको ही भक्ति कहा  
 गया है। जारा लुब्धाके प्रति आंतरिक अनुराग और  
 उनसे भजासाधकता सेनादिम आन्तरिक प्राप्ति ही  
 भक्तिका लक्षण है। अथवाणि नो प्रकारकी भक्तिसे  
 एक एक अङ्गका रसास्वादा तथा सुषपादाभवादि च्छिन्न  
 प्रकारके भक्त्यङ्गका प्राप्ति करना भी भक्तिका एकान्त  
 कर्तव्य है। इसके अलावा श्रावार्थे अगिन्नेष्टा सम  
 पंन, नव विषयोंमें उनका श्रावपलोक, जम, और  
 यात्रादिका महोत्सव प्राप्ति, नियम, पृथक पार्थिक्य  
 प्रादि समापन साधुसूत्र, भागयत धाम्वात्ता, मधुरा-  
 मन्त्रमें धाम, तामसूत्रान, धरा और प्रीतिष साथ  
 आमुक्तिसेवत प्रभृतिपक्ष भक्तान्की भरोष महिमा कही  
 गई है।

भक्तियोग गौणी मुक्तिमती भक्ति है। जो क रता  
 पर गए हैं, मियुगमने दावाने उसका भासात मिता  
 है। उन देवोपतिमाष श्रीब्रह्मं अक्षर, श्या, तिष्ठ, मन,  
 हर्मिग, साधुविद्या, धर्मण धीर अनुगमादिके लक्षण  
 लिखा है परने है ० । इसके अलावा कथल भक्तिका ही

• "भक्तो प्रीतिष आ पदना मय कत  
 भक्त भक्तियोग मन्त्र कथन हुदावे ।

उपाङ्ग निरूप्य हुआ। उपर्युक्त आधुनिक लक्षणोंके सम्मिलित सन्निविष्ट नहीं होनेसे मनु उनके हृदयमें कदापि भक्तिका सम्प्रसार नहीं हो सकता। भक्तके उद्भव होनेसे आसद्भाविकी परिलिप्ता जाती रहती है और अज्ञानानुय निवृत्त होनेसे सिद्धांतनु अज्ञानाधिकी गति होती है। क्रमशः कृत्तिके विकासमें हृदयमें आन्तकित वलप्रती हो जाती और स्विका अथवा चिन्त आता है। बाद यह रति प्रेममें परिणत हो जाती है। यह चिन्तयात्मक प्रेमालोक ही अज्ञानानुवृत्त दूर करनेमें समर्थ है। अज्ञानमूलक अनुत्पन्न मोक्षाधेनोका पार कर प्रेममार्गमें पहुँचनेमें तत्त्वज्ञान लाभ होता है। भक्ति समिधणके सिवा फेरल धर्म या धारा द्वारा साधुव्य लाभ नहीं हो सकता। जिसका प्रायः भक्तिपुस्तक है, उसकी सुविधा करतत्त्वगत है।

अमोघ और आराध्य देवताके प्रति ऐकान्तिक अनुत्पन्न फेरल साधुसङ्गमें प्रवल होती है। तिल्लत साधुमेवाराूप जलसेचामे तत्त्वज्ञानाकांत भक्तिवृत्तकी प्राया प्रशाया हृदयाकाशमें परिल्याप्त हो कर स्निग्ध प्लया प्रितरण करती है। वाद हृदयमें एक मार्चनीन कोमलता आ उपरिधन होती है, यह हेम्वरप्रेमके मिया और दृमरा पुञ्ज नहीं है। यही एकमात्र भगवत्प्रेम जीवोंके पाप, ताप माया और दुःखको दूर करनेमें समर्थ है।

उपादानभूत अङ्गसम्प्रदायिके अलाया भक्तिमें ज्ञान्ति, दास्य, सम्य, वात्सल्य और श्रुद्धार ये पञ्चस्वात्मक भाव विद्यमान हैं। इनके मिया शास्त्रमें भक्तिता प्रमेद कल्पित हुआ है —

भक्ति आठ प्रकारकी है—यथा विष्णुके नाम और फर्मादि कीर्तन करते करते शश्रुविसर्जन, श्रीहरिके धरणपुमल ही मेरे नित्यधर्म हैं ऐसा निश्चय और

- मना मुर्नर भहयन कण्ठोप दया
- तानि वम्न मनो मोले करारये ।
- भामरय तान हरि साधुभवा कय पून
- माज्जी मुग्य नर करारये ।
- भक्ति मदर्नको यत् नर चरु की ।
- काद दय वा सिहारि हरे काळ प्यादा पाद ।

तद्विरुद्ध प्रयुक्त, ३ प्रमापपूर्व भक्तिमें साधु भगवत कथित शास्त्रका कात्तो, ४ भगवान्के भक्त्यात्मक गुणकी पूजा कर उसका अनुमोदन, ५ भावयत्तुया सुवनेमें प्रोत्ति, ६ विष्णुमें भावनिवेश, ७ स्वय विष्णुको अर्चना और ८ विष्णु ही मेरे उपजात्य रहे, ऐसा ध्यान।

“भक्ति रथात्ता साया मस्मिा म्लेच्छेप्रति गच्छते ।  
य विम्रेन्द्रो गुणि भंमारा गकी यत् पविहत् ॥  
तन्मे दय तात्ता प्रात ग च पूज्या दया हरि ।”

( गुरुपुराण पृ. ३० २११।१०-११ )

म्लेच्छमें भी यदि उद्यत आठ प्रकारकी भक्ति धर्मात्मा रहते, तो उसकी गिनती विम्रेन्द्र, मुनि, धोमाव, यति और पण्डितोंमें होती है—यहा व्यक्ति श्रीहरिके जैसा पूजनीय है। जिसके हृदयमें हरिनिमित्त विद्यमान है, वह मुनिसे भी धेष्ट है।

ऊपरमें भक्ति प्रकरणके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा गया है, वह सब धर्मशास्त्रसम्मत है। सम्प्रदायभुक्त नहीं होनेसे मनुष्यके हृदयमें कदापि भक्तिवा उद्रेक नहीं होता। साधककी गुणवाद और सम्प्रदायकी आधय कर दोक्षा लेनी चाहिए; अन्यथा उनकी दोक्षा निष्फल हो जाती है। पञ्चपुराणमें लिखा है, कि कलिजालमें श्रे, माधु, गुरु और स्वकर्तामक चार सम्प्रदायी धेणयों का आविर्भाव होगा और यही चार वैश्वसम्प्रदाय पृथिवीके पवित्रताविधायक होंगे। वैष्णवसम्प्रदायी शृण्य निष्ठ भक्तिवद पुण्यात्मा ही भक्तिके अधिकारी है। अज्ञानसम्प्रदायिक तथा अज्ञानके निकट मन्त्रपृथीताके हृदयमें भक्ति नहीं आ सकती, यत्न उसने उसका क्षीयतिपर्यय ही घट जाता है। शृण्य निष्ठ कदापि धर्मविचारो नहीं होते है। भक्तिमागारोही भागवत गण अपन अपने मित्रिपथका आ रूप कर साम्प्रदायिक धर्ममतका प्रवर्त्ता कर गए है। धोषात्म्यामीने अपना भागवतीकीने इस साम्प्रदायिक वैज्ञानिक उन्नेम किया है। सम्प्रदाय धर्म।

पहले ही कहा जा चुका है, कि भक्तिका फल ज्ञान है और इसने मनुष्यको मुक्ति मिलती है। वैष्णव साधकों का प्रथम प्रेमको ही भक्ति का मुख्य स्तोत्रान बन गया है। साधना और भगवा द्वारा जो नहीं प्राप्त होता,

भक्ति रहनेमें यह इष्टपस्तु अनायास मित्र जानी है ।  
तब साधनापरम्परा भक्ति मोषापाारोहणकी अत्यल्पिका  
मात्र है ।

भक्तिचर (स० त्रि०) १ भक्तियोग्य । २ भक्तिव्युत्पादक,  
जिसे देव कर भक्ति उत्पन्न हो ।

भक्तिचेष्ट (स० पु०) १ विष्णुभक्तके विशेष चिह्न । जैसे,—  
तिलक, मुद्रा आदि । २ रचना वा रेषाभङ्गाविशेष, वह  
चित्रकारी जो रेषाओं द्वारा की जाय ।

भक्तिपूर्वम् (सं० अर्थ०) भक्ति वा सम्मानके साथ ।  
भक्तिमात्र (स० त्रि०) भक्ति भजते भक्त्विज । भक्तिके  
वात्र ।

भक्तिमत् (सं० त्रि०) भक्तिरस्यास्तीति भक्ति-मत्तुप ।  
भक्तियुक्त ।

भक्तिमहत् (स० त्रि०) १ अशेष भक्ति-सम्पत् ।  
२ निष्ठावान् भजन ।

भक्तियोग (स० पु०) भक्तेर्योग भक्त्या यो योग ।  
१ भक्तिका साधन । २ सदा भगवानमें श्रद्धापूर्वक मन  
लगा कर उनकी उपासना करता ।

गोताके १२वें अध्यायमें भक्तियोगका विषय इस  
प्रकार लिखा है ।

“एवं कृतस्तुता य भारतस्त्वां पय्युपासत ।

य चान्यत्रमन्यन्त तेषां क योग वित्तमा ॥” (गोता १२।१)

अनुमते भगवान्त्वे पूछा था, “भगवन् ! निर्गुण  
और सगुण प्रलक्षी जो उपासना करते हैं उनमें  
कौन श्रेष्ठ है ?” उत्तरमें भगवान्ते वहा, “जो व्यक्ति एकाग्र  
चित्त और सात्त्विक श्रद्धायुक्त हो मेरे सगुण स्वरूप  
की आराधना करते हैं, वे ही श्रेष्ठ हैं ।” इसका तात्पर्य  
यह, कि सगुण या स्माररूपमें जिसके चित्तका एकाग्र  
भावना होता है अथवा जो एवमात ‘गतिस्त्व’ ऐसा कह  
कर अनन्यभाषमें प्रीति पूर्णचित्तसे भगवान्के आराधना  
होते हैं, वे ही भगवान्का स्वरूप लाभ करते हैं । मैं भगवान्  
को उपासना करता हूँ, निश्चय है, वे मेरा उद्धार करेंगे’  
इस प्रकार आस्तिकता बुद्धिसे जिनका सात्त्विक धर्मात्मा  
उदय होता है और जो पित्त आराध्यरूपको सर्वत्र और  
मयक व्यापारिधता जान कर उन्होंने भक्तिपूर्णचित्तसे  
भजना करते हैं, वे ही श्रेष्ठ अर्थात् भक्तयोगी हैं ।

जो सर्वदा मनुष्ट, ममाहित चित्त, मयनारमा और  
दृढनिश्चय हैं तथा जिन्होंने अपनी मंगोबुद्धि दृष्टमें अर्पण  
कर दो है, वे ही श्रेष्ठ हैं अर्थात् जो प्राप्ति वा अग्रामिमें,  
सम्पत् या विपद्में मनुष्ट रहते हैं जो मयदा भगवानमें  
निविष्टचित्त हैं, आरंभ और इच्छादि विन्दोंन अपने वचनमें  
कर गी हैं जिनका भगवानमें दृढविश्वास है अर्थात्  
विडम्बनात्म चित्त । चित्त भगवान्मात्रमें विचरित नहीं  
होता और जिन्होंने सकल्प चित्तव्यथा परित्याग कर अपने  
मन और बुद्धिको भगवान्में अर्पण कर दिया है, वे ही भक्त  
भगवान्के प्रिय हैं । जिसके हाग कोई मनुष्ट मन्त नहीं  
होता अथवा जो दूसरोंमें खुद भी मन्त नहीं होता तथा  
जिसने हर्ष, विषाद, मय और उद्वेगका परित्याग कर  
दिया है, वे ही भगवान्के प्रिय हैं । जो निरपेक्ष,  
शुचि, दक्ष, उदात्त, व्यवधानित और सर्वार्थम्भ  
परित्यागी हैं तथा जो इष्ट लाभ करके सन्तोष या  
दुःखके कारण द्वेषको प्रकाश नहीं करते, जो शोक या  
अनाशा परित्युक्त और शुभानुभव परित्यागी हैं वे ही भक्त  
भगवान्के प्रिय हैं । चित्तके लिये शत्रु और मित्र, शोन,  
उष्ण, मान और अपमान, सुख और दुःख सभी न्यमान हैं  
वे ही भक्त भगवान्के प्रिय हैं ।

भक्तिरस (स० पु०) भक्ति इवविषया रतिरेव रस ।  
तन्व्यायिभावात् रसभेद उह रस जिमका स्थायिमाय  
भक्ति है ।

“विमारेतुभोम्भ गास्तिरैन्वभित्तिभि ।

व्यापत्व हृदि मस्तानामतीता भाष्पादिभिः ॥

एषा इत्यारति प्यायिभावे भक्तिरसो भवेत् ॥”

(० निरामानुषंभु)

इंद्रमें रति स्थायिभाष प्राप्त होनेसे भक्तिरसका  
उत्पन्न होता है । यह स्थायिभाष विभाष, अनुभाष,  
सात्त्विक और सञ्चारिभाषके सहयोगसे भक्तिरसरूपमें  
परिणत होता है । उस समय भक्त एव अर्पण भक्ति  
रसका स्वाद पाता है । इंद्र और उरुता भक्त आनन्दन  
विभाष, इंद्रके गुणादि और भक्तों इंद्र हेतु चेष्टादि  
उदात्त विभाष, मन्म स्वेद, रोमाञ्ज, स्वरभेद, कम्प,  
वैषम्य आभु प्रत्य (सुप्त दुःखादि बोधमान्वा) वे  
सब सात्त्विक भाष, विषेद, विषाद, दीन्य, आनि आदि



ने तौम सञ्चारो भाव है । इन्हांमें रति पावके भेदने मित्र होता है । ज्ञान, वाच्य, सण्य, यान्मय, प्रियता इन पाच प्रकारोंमें यह प्रकाश पाता है । किसी साधक में इसका एक एक मात्र प्रकाश पावेले उमें फेर-गति और उसके विभिन्नभावमें उपविष्ट होनेको र-गुणगति कहते हैं । किन्तु हमेंसे जो प्रधान पदार्थ पाता है उसीके अनुसार साधकका भाव निकृपित होता है ।

( भक्तिरत्नसिन्धु )

भक्तिरत्नसिन्धुमें चौं लिखा है—

विभाव, अनुभाव, सात्त्विकभाव और सञ्चारिभाव द्वारा अभिव्यक्त श्रोत्राण्यविय-रथाविभाव, अवणादि द्वारा भक्तोंके हृदयमें आत्मादेह-रता प्राप्त हो कर भक्ति स्वरूपमें परिणत होता है ।

भक्तिरसके अर्थकारी—

जिसके हृदयमें प्राप्तगी और आपुनिकी सद्गुणियात्मता विराज करती है, उसीके हृदयमें इस भक्तिरस का आस्वादन उत्पन्न होता है ।

भक्तिरसका विभाव—आत्मज्ञानके कारणोंको विभाव कहते हैं । यह विभाव आत्मज्ञान जीत उद्घोषणके भेदसे दो प्रकारका है । इसमेंसे शृण और ठणभयतगण आत्मज्ञान विभाव है ।

जो भावको प्रकाश करता है, उसे उद्घोषणविभाव कहते हैं । श्रोत्राणका गुण, चैष्टा प्रमाध्या, रिमत, अङ्ग सौन्दर्य, यज्ञ, शृङ्ग, नृपुत्र, गङ्गा, यद्वाङ्क, क्षेत्र, तुष्णी, अत और तटासरादि उद्घोषण विभाव हैं ।

भक्तिरसका अनुभाव—चित्तगत भावके गोषकको अनुभाव कहते हैं । यह अनुभाव कैसा है, उसका विवरण निम्नश्लोकमें किया गया है ।

“तत्त्वं त्रिभुक्ति गीर्ष शोचनं तनुमन्मम् ।

हुङ्गात् शुम्भणं श्वात्तुसा लोकाजाम्निम् ।

आत्मज्ञानात्तद्गुणान्भ्य पुर्यां हिरादवाडिति ॥”

सात्त्विकभाव—साक्षात् पा पश्यतामं शृणमन्प्रविभाव द्वारा आत्मात्त विचरने सरत कहते हैं । इस स्वरूपसे उत्पन्न भावका नाम सात्त्विकभाव है । यह सात्त्विकभाव सत्त्व, दिग्ध और रसके भेदसे तीन प्रकारका है ।

अब भगवद्भक्तियमें आत्मात्त चित्त अधीर हो कर भगवन्को

प्राणवायुमें अर्पण कर देता है, तब प्राण सूक्ष्मी अद्यम्या में जा कर देहको अत्यन्त क्षीभित कर डालता है । उस समय भक्तके शरीरमें स्वम्भादि सभी भाव उत्पन्न होते हैं ।

स्वम्भादि भाव—स्वप्न, स्वैद, रोमाञ्च, स्वरभेद, वेपथु, वैषर्ष्य, अधु और प्रलय ये आठ सात्त्विक भावके लक्षण हैं ।

निर्वैद, त्रिपाद, सैन्य, शृगानि, धम, मद्, मय, गङ्गा, वास, आयेग, उन्माद, अपस्मृति, व्याधि, मोह, मृति, आत्माद, जात्य, मोहा, अवहित्वा, स्मृति, जितर्ष, चिन्ता, मति, धृति, हर्ष, औत्सुक्य, औष, शर्म, अमूया, चापत्य, मित्र, सुति और सौघ ये तीन व्यभिचारी भाव हैं ।

श्रोत्राणत्रिपयिणी रतिको रथायीभाव कहते हैं । इसका त्रिणेत्र त्रिवरण भक्तिरत्नसिन्धु और हरिभक्ति विलस जादि प्रथमोंमें लिखा है ।

भक्तिरत्नसिन्धु—धोरुप गोग्रामित्र प्रथयिष्ये । यह ग्रन्थ चार भागोंमें विभक्त है । प्रथम भागका नाम पूर्वविभाग है । इस पूर्वविभागमें चार लहरी हैं । यथा—सामान्यभक्ति लहरी, साधानकिक लहरी, भावभक्ति लहरी और प्रेमभक्ति लहरी ।

द्वितीयका नाम दक्षिणविभाग है । इसमें पात्र लहरी है—त्रिभात्र लहरी, अनुभाव लहरी, सात्त्विक लहरी, व्यभिचारि लहरी और रथाविभाव लहरी ।

तृतीय नामक नाम पश्चिमविभाग है । इसमें ज्ञान, वाच्य, सण्य, यान्मय और मन्त्र यह पक्ष मुख्य भक्तिरस पात्र लहरीमें वर्णित है ।

चतुर्थ भागका नाम उत्तरविभाग है । इसमें भी लहरी हैं । पहले चार भाग लहरीमें आस्वादि सप्त गौणरतका वर्णन है । अष्टम लहरीमें स्वकी मत्तवैरिस्थिति और नाम लहरीमें रत्नभाव वर्णित है ।

इस ग्रन्थका इत्येकमक्या मूल ३३२५, टीका ३६५५ है । इसमें टीकाकार शानोय गोस्वामी हैं । ग्रन्थकर्ता का काल

“सामान्यभक्ति” किं तनुमन्मम्, शिवाय ।

श्री श्री गणेशाय नमः ॥”

मै ३४ हो कर भा राम (३) अङ्ग ( १ ) शक ( १४ )

अर्षान् १४६३ शकमें गोकुलमें रह कर इस भक्तिरसामृत सिन्धुको उत्तम रूपसे उद्भूत किया।

भक्तिराग (स० पु०) भक्तिवा पूर्वापुराण।

भक्तिल (स० पु०) भक्त भङ्गी लातीति ला-क। १ साधु घोटक, उत्तम घोडा (त्रि०) २ भक्तिदाता।

भक्तियाद (स० पु०) भक्तिप्रियविणो कथा।

भक्तिसूत्र (स० स्त्री०) वैष्णव सम्प्रदायका एक सूत्र ग्रन्थ। यह प्रथम शाण्डिल्य मुनिके नामसे प्रख्यात है। इसमें भक्तिवा वर्णना है।

भक्तोत्तरीय (स० स्त्री०) औपधविशेष। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—अन्न, मन्त्र, पीपल, पञ्चलवण, यवदास, साचि क्षार, सोहागा, त्रिफला, हरिलाल, मैनसिला, पारद, वनयमानी, यमानो, स्तोया, जीरा, हिंगु, मेथी, चितामूल, चड, वच, दुन्तीमूल, निम्बोय, मोथा, सिलाजित, लौह, रसाञ्जन, निम्बोज, पटोलपत्र और विद्वडक प्रत्येक दो नो तोला और शोधित घन्टा १००, इन्हें चूर्ण करके भोजन करनेके बाद सेवन करे। इससे अनिद्रादि होती तथा शरीर और अन्तर्बुद्धि आदि नाना रोग प्रशमित होते हैं (भैषज्यरत्ना०)।

भक्तोद्देशक (स० पु०) बौद्ध-स धारामादिमें नियुक्त कर्मचारिविशेष। ये लोग इस बातकी जाच करते हैं, कि आज कौन क्या भोजन करेगा।

भक्तोपसाधक (स० पु०) १ पाचक, रन्धोद्या। २ परि धेजक।

भक्ष (स० पु०) भक्ष भावे कर्मणि या घञ्। १ अज्ञान, खानेका काम। २ भक्षणीय वस्तु, खानेका पदार्थ। भक्षक (स० त्रि०) भक्षयतीति भक्ष (यञ्च्)। पा ३।१।३३) १ खादक, खानेवाला। पर्याय—पक्षर, अन्नर।

भक्षकार (स० पु०) भक्ष करोति कृ भञ्। भक्षयपिष्टमेष जीयो, हलधारे।

भक्षटक (स० पु०) भक्ष भटन, ततः सहाया कन्। क्षुद्र गोक्षरक, छोटा गोघरक।

भक्षण (स० स्त्री०) भक्ष भावे क्युट्। किसी वस्तुको खाने से काट कर खाना, भोजन करना। पर्याय—ख्याद, खटन, खादन, अज्ञान, निपस, बल्लभन, अभ्यवहाद, जगिष, जक्षण, छेद, प्रत्ययसाग, घसि, आहार, इमान, अर खान, विष्वाण, भोजन, जेमान, भदन।

भक्षणीय (स० त्रि०) भक्ष भनोपर्। १ भक्ष्य द्रव्य। २ भक्षण योग्य, खाने लायक। भक्षणीय द्रव्य किन्तु जगह रचना चाहिये, पाकरतोभ्ररमें उरका विषय इस प्रकार लिखा है। सामने भोजन पाव, उगरे मध्य मागमें भक्ष, दाल तरकारी मछली मारा दादिर्ना और, प्रलेहादि द्रव्य, पाणीय, पानक और चोष्य आदि बाइ और तथा इधु विकार, पक्षा, पायस और क्षि सामने रखा चाहिये। इस प्रकार भक्षणीय द्रव्य रण कर भोजन करना उचित है। (पात्रराजपर)

भक्षपला (स० स्त्री०) भक्ष भक्षणीय पत्रप्रत्या। नाग यष्टी।

भक्षयितृ (स० त्रि०) भक्षि तृण। भक्षणकारी, खानेवाला। भक्षयितृष्य (स० त्रि०) भक्षि जितृ तृष्य। भक्षणिय, चाचोपयोगी।

भक्षालि (स० पु०) भक्षणामालिर्बल। १ देशमेद। ततो भवाधे सुह्। भक्षालि तद्वेशमय।

भक्षित (स० त्रि०) खाया हुआ।

भक्षितृ (स० त्रि०) भक्षि तृच्। भक्षक, खानेवाला।

भक्षितृष्य (स० स्त्री०) भक्षि तृष्य। भक्ष्य, खानेका पदार्थ।

भक्षिन (स० त्रि०) भक्षि भक्ष्यर्थे णि। भक्षणकारी, खानेवाला।

भक्षिपस् (स० त्रि०) भक्षि षत्तु घेदे न णिरत्। भक्षण, खाना। वैदिक प्रयोगमें हो यह पद सिद्ध होता है, लौकिक प्रयोगमें 'विभक्षिपस्' पद होता है।

(भयर्न० ६।७३।३)

भक्ष्य (स० त्रि०) भक्षने इति भक्ष ष्यत्। भक्षितरय, खानेके योग्य। 'प्रतिदि मुन्माषट न भक्ष्य दन्त्या कर्मन्ती न भक्ष्य' (स्मृतिव्यास)

सुधुतमें भक्ष्यद्रव्य और उमरे गुणादिका उल्लेख है। रस, धीर्ष और विपाकके अनुसार भक्ष्य द्रव्योंके गुणादि नोचे लिखे जाते हैं।

क्षीरजात समस्त भक्ष्यद्रव्य—बलकर, शुभरुद्रि कर, सुगन्धिय, सुमायो, अनिरर और पित्तनाशक। इतमें घृतपक पिष्टकादि बडकर, सुगन्धिय, कफकर, पातपित्तनाशक, शुभरुद्रि, शुभपाक और रणन माग पर्यक है।

गुह्यज्ञान लक्ष्यद्रव्य-पुष्टिपर, गुरुपाक, वायुनाशक, भवाद्यो, पित्तनाशक, मुक्त और वक्त्रवर्द्धक है। घृतदि द्वारा एक गोधूमचूर्णजात पिष्टक और मधुमिश्रित पिष्टक विष्टेवरूपसे गुरुपाक और वृष्टिदिफालक है। मोक्षक द्रव्य अति दुर्गम अर्थात् सहजमें जीर्ण नहीं होता। मट्टक या जोरा मिला हुआ मट्टा-गन्धि, अग्नि और स्वरका हितकर, पित्त और वायुनाशक, गुरुव क तथा वृष्टिदिनाशक। विष्यन्दन अर्थात् कषा गोधूम चूर्ण पूत और दुग्धसे साथ प्रस्तुत गाद्य-सुगन्धिय, सुगन्धा, मधुर, म्लि घ, कफहर, गुरुपाक, वायुनाशक, नृमि और कफहर। गोधूम चूर्ण द्वारा प्रस्तुत भस्म द्रव्य-ए हण, वायु और पित्तनाशक तथा कफहर; इन मेंसे फेनक अर्थात् गुह्यमिश्रित गाद्य द्रव्य अतिग्राय मुग्धिय हितकारक और लघुपाक है। मुद्ग प्रभृति वैम वार - विष्टमो और वैमवार मानके साथ होनेसे गुग्पाक और वृ हण। पाल्ल अर्थात् तिल गुडादि द्वारा प्रस्तुत पिष्टक श्लेष्मजस, जंहुलि, कफ और पित्तका प्ररोपकर, विदाहो और अतिग्राय गुरुपाक। वैदक (पिष्टक-भेद)-लघुपाक, कपायस्मविशिष्ट पथ वायुसंशारक; उरद सभान् पिष्टक विष्टमो, पित्तगुणविशिष्ट, श्लेष्मनाशक, मल वृद्धिकर, बल और शुक्रवर्द्धक तथा गुरुपाक। बुन्धिका अर्थात् दुग्ध विकारनात गाद्यद्रव्य-गुरुपाक और तानिपित्तकर। घृतपक गाद्यद्रव्य-एव, सुगन्धी, शुक्लवर्द्धक, लघुपाक, पित्त और वायुनाशक, कफहर, यर्ण और पुष्टिदा प्रसवनाशक। नैलपक गाद्यद्रव्य-विदाहो, गुरुपाक, परिपात्रमं कटुरस्मविशिष्ट, वायु और पुष्टिनाशक, पित्तहर और श्वक्का क्षीयनाशक। गन्ध, मान्, चीनो तिल और उरद द्वारा प्रस्तुत तैज मस्करत मध्य द्रव्य-कफहर, गुरुपाक, वृ हण, हृद्य और म्रिय। सूय मध्यद्रव्य-अतिग्राय लघुपाक, किडाट (छेपा) भादि दुग्धपाक और कफहरनकर। बुन्धमाय अर्थात् अन्वमिद पथ गोधूमादि वातहर, क्लृ, गुरुपाक और मलना हितकर। मृष्टपथ और गोधूमादिका मन्ड उता यत्तीरोमनाशक और कान्, पीनम तथा मेहप्रतिषेधक। सब प्रकारका मन्ड-गृह ण, एण, नृपा, पित्त और कफ नाशक, कफहर, मेरुक और वायुनाशक। यह सर

तरल और पिष्टावृति होनेसे गुरुपाक तथा कटिन होने से लघुपाक होता है। सक्तका अवलोक्य श्रुता प्रयुक्त बहुत जल्द पचता है। लाज (गोल)-सर्दी और अतिमारनाशक, अग्निकर, कफनाशक, क्लृकर, कपाय और मधुरस्मविशिष्ट, लघुपाक, नृपा और मलनाशक। गज या गोलका सक्त-नृपा, सर्दी, श्वा, घर्म रक्त पित्त और स्वरनाशक। पृथुय-गुरुपाक, क्षिण्य, वृ हण और कफवर्द्धकर। दुग्धमिश्रित पृथुय-कफहर, वायु नाशक और मलभेदक। नृता वण्डुल-अतिग्राय दुग्ध, मधुरस्मविशिष्ट और वृ हण, पुराता तण्डुल-अम मन्ध्यास्म और मेहनाशक माना जाता है। निरिस्मक को चादिये, कि वे भक्ष्यद्रव्यका इस प्रकार गुणगुण स्थिर करके भोक्ताके इच्छानुसार भक्ष्यद्रव्य निर्देश कर दे। (सुभु गच्छा० १६५०)

मध्यकार (स० क्रि०) मन्ध्रा अक्षय्य वसोतीति ए (कर्मपान। पा ३।११) इति अन्। विष्टकविद्यय जोषो, हलवारि। पर्याय-भाषुपिक, कान्धिक धूपिक, धूपजिनयो, मोक्षकादिजिषयो। (ऋत्वा०)

मन्ध्यामध्य (स० क्रि०) मध्यममध्यक। कान्ध्यागाद्य द्रव्य, गाद्य और अन्ध्याद्य।

प्रत्ययैवर्णपुराणमें मक्षामक्षया इत्य प्रकार विवरण किया है,-

लौहपात्रमें पथ, मध्य, मिश्रान्, मधु, गुड, नारियल का जग, कल और मृत् अमक्ष है। मध्यात्र, तमसोवीर, कान्ध्यापात्रमें नारियलोद्भ, ताद्यपात्रमें मधु और मध्य अमक्ष है किन्तु पूत अक्ष है। ताद्यपात्रमें पथ पाय, उन्ध्याए पूत मोचन, सलवण दुग्ध मधुमिश्रित पूत वा तैज और गुणयुक्त आदर, पात्रोव जग, माध्यासमें मृत् अमक्ष है। श्लेष्मवर्णनाल, प्रतीयमं धुपाण्ड, क्षीयोपात्रमें एदो, सूतीया और अतुषीमें मृत्, पक्षमीमं विन्ध्य, पक्षीमं तिम्य, सममीमं ताट अक्षमीमं नारियल, मवमीमं गुग्धो, द्वासीमं कल्मसी, कफादनामं क्षिण्य, ह्यदनीमं वृत्तिका, तयादनामं वाताहु, अतुर्दनीमं माव, पूर्णमा और अमायन्वामं मीन तथा कविपात्रमें आर्द्रक अमक्ष है। प्रत्ययोंके निये एवियत्र अक्षा है। मक्षाम मक्षया विवर प्रत्ययैवर्णपुराण द्रव्यपात्रके २७वें अन्ध्यासमें

और कृष्णजन्मग्रहके दृष्टवै। अध्यायमें मन्त्रिस्तार लिखा है, विस्तार हो जानेके भयसे यह कृष्ण नहीं लिखा गया।

भक्षालातु (स० स्त्री०) भयना भक्षार्हा अलातुः। वडा कद।

भक्षना (हि० कि०) १ भोजन करना, खाना। २ निगलना।

भर्षा (हि० स्त्री०) दलदलोंमें होनेवाली एक प्रकारकी घाम। यह छप्पर छाने और दृष्टियां बनानेके काममें आती है। नैनोतालमें इस प्रकारकी घास बहुत पाई जाती है। इसके फलमें नारंगोकी सी महक होती है। पकने पर यह घास लाज रंगकी हो जाती है। इसे चौपाय बड़े चायसे पाते हैं। इसका दूसरा नाम 'धरो' भी है।

भग (स० पु० स्त्री०) भन्वतेऽनेनास्मिन् वेति एतदाश्रित्यैष कन्दप सेवने इति भावः। भज सेवाया (पुमि गकारां प प्राण्य) पा ३३। १८ इति घ। १ स्त्री विद्म, योनि। पर्याय—चराङ्ग उपद्रव्य, स्मरमन्दिर, रतिगृह, जन्म उत्तम, अथर, अवाक्यदेश, प्रवृत्ति, अथ, स्मरकूप अथदेश पुण्यो, ससारमार्ग, गृह्य, स्मरगार, स्मरध्वज, रत्यङ्ग, रतिगृह, कलत्र, अथ। ("चरत्तारानी") भगशास्त्रे लिङ्ग और योनि दोनोंका सा बोध होता है।

भगन्तवनती भगो महती, भगन्त्यस्मिन्नि भग वाति।

(भाष्य० मन्त्र०)

रतिगङ्गामें विस्तीर्ण और गम्भीर इन दो प्रकारके भगोका उल्लेख है—

'विस्तार्याय गम्भीरस्य द्विविधं भगनशब्दम्।' (शंभ०)

गुर्मेपृष्ठ, गणस्त्रय, पद्मगन्ध अथवा मुक्तोमल, अफो

मल, और मुनिस्तीर्ण ये चार प्रकारके भग उत्तम हैं।

"कृमन्तं गजस्त्रयं पद्मगन्धं मुक्तोमलम्।

भङ्गायुग्मं मुनिस्तीर्णं पद्मैव च भगताता ॥" (शंभ०)

शोणल, निम्ब, अष्टगुण और गोविद्धा सद्गुण भग विन्दित वतसाया गया है।

"नीचं निम्नतस्तुभ्य गाजिद्रवायव्यं पद्मम्।

रतुना रामायणे भगदोषनशुद्धका ॥ (शंभ०)

भगमें शुभाशुभ लक्षणोंदि सामुद्रिकमें इस प्रकार लिखा है—

कन्दप पृष्ठके जैसा विस्तृत और हस्तों स्वम्बके जैसा उन्नत भग ही त्रियोंके लिये मङ्गलदायक है। भगका दायम भाग उन्नत होनेसे कन्या और दक्षिण भाग उन्नत होनेसे पुत्र जन्म लेंगे हैं। जो भग दृढ़, अथय में विस्तृत, परिमाणमें बृहत् और उन्नत होता है, जिसका ऊपरी भाग मृगिक गात्रवत् चिरल लोमयुक्त, मध्यभाग में अपरजित, क्षीण पार्श्वमें मिलित प्राय, गडन और घर्षणमें कमन्दके सदृश, धमशः अधोदिक् सूक्ष्म और सून्दर तथा जो आश्रितमें पीपलके पत्तेके जैसा तिङ्गोना होता है, वही भग मङ्गलदायक और प्रशस्त है। जो भग हरिणके खुरकी तरह, अल्पायत सूक्ष्म भौतरी भगके जैसा गहरविशिष्ट, लोमपूण और जो मध्यभागमें प्रश्रंजित तथा अनानुप्राय है वह भग अशुभदायक माना गया है। इस प्रकार योगविशिष्ट स्त्रीका गर्भ अकसर गृहस्था करता है।

(पु०) भन्वते इति घ। २ रयि, सूर्य। ३ द्वाद्वा दित्य भेद, वारह आदित्योंमेंसे एक। ४ रोषर्षादि पद, छ प्रकारकी विभूतियां निरुद्धे सम्यक् रोषर्ष, सम्यग् धौर्य, सम्यक् धन, सम्यक्श्रिय और सम्यक् ज्ञान कहते हैं। ५ भोगाम्पदत्त। ६ कृष्णमण्डला भिमानी। (रामायण ३। २१। ७ इच्छा। ८ माहात्म्य। ९ यत्न। १० धर्म। ११ मोक्ष। १२ स्तुति। १३ धान्ति। १४ चन्द्र। १५ ज्योतिषोक्तयोनि नक्षत्रद्वय पृथक्पुण्योत्तमशुभ। १६ घन। १७ पद। १८ गुणदेश शुद्ध। १९ एक देशताका नाम। पुराणातु सार दृष्टके घर्षणं घोरमगने इनकी द्वाय जोड ही थी। (शं०) २० भवनीय।

• "शुभं कण्ठशोभो गजस्त्रयधारात् भग।

गामोभारोत्तं कन्ध्याय पुत्रो दक्षिणोत्तम् ॥

आशुतामा गृह्णन्त्याः सुश्रियं गहनं ह्यु।

द्रुह कमन्तयोमं मुभोऽध्वर्याहृत् ॥

कुम्भपुत्रकृता कञ्जिर्कादरमन्त्रिभः।

रामसो विदुःशब्दश्च गमनात्प्रीतु ग ॥'

(विस्तार गणित)

भगवन् ( स० पु० ) भगं तन्मेव हन्ति यः । महाश्वेत् ।  
दक्षप्रकोत्तौ रत्नो भगवो आर्षेण कोट्यद्वीशो, रसोमे  
इत्या नाम भगवन् पद्ये है ।

“तन्मे विदुष्यात् भगवन्तार नतोम ।”

( भाग ७१०० ब० )

भगवन् ( स० पु० ) माना नक्षत्राणा गण समूहः । १  
नक्षत्रसमूहः । किन्तो ग्रहके एक बार बारह राशि समण  
कराया नाम एक भगवन् है अर्थात् किसी ग्रहके सैपादि  
बारह राशियोंका अतिव्रत करनेमें जो समय लगता है,  
उसको भगवन् कहते हैं । सूर्यनिदान्तमें लिखा है, कि  
साठ विकलाकी एक क्या, साठ क्याता एक अन्न,  
तीस अन्नको एक राशि और बारह राशिका एक भगवन्  
होता है ।

‘ विद्वानां कथाख्या तत्पण्या भाग उच्यते ।

सर्विदा भवेद्राशिर्भगवा इत्येवैव ते ॥” ( सूरसि० )

इस प्रकार एक एक ग्रह सभी नक्षत्रोंमें रह कर  
बारह राशिका भोग करता है । नक्षत्रमें भोग होनेके  
कारण उसका नाम भगवन् पड़ा है ।

“श्रीमग्नान्यथात्ता कालो महतात्मा ।

तेषान् परितस्तान् पीष्यान्ते भगवा स्मृत ॥” (सूरसि०)

ग्रहार्णवमें इस प्रकार लिखा है, — पहले देवान्तर स्थित  
करके, पीछे भगवन्ता निरूपण करना आवश्यक है ।  
सुमेरु पर्यन्त और लड्डाकी मध्यगत भूमिके ऊपर हो कर  
उत्तरदक्षिण विस्तीर्ण जो एक रेखा कल्पित हुआ है,  
उसका नाम मध्यरेखा है । उस मध्यरेखामें अपना  
वेद जितना योजन दूर होगा उतने योजनको दूगसे  
गुणा करके तेरहसे भाग दो । भागफल जो निकलेगा  
वही पत्र होगा । यह पत्र यदि ६०से अधिक हो, ता उसे  
दृष्टमें ला कर मध्य रेखाके पूर्वदेशमें जोड़ी और  
मध्यरेखाके पश्चिमदेशमें घटाओ ।

विषुव दिग्वा अर्द्धात् १० दृष्टमे तितना अधिक  
होगा उसे सूर्य चराक्ष और जितना ग्यून होगा, उसे  
हाथ चरण कहते हैं । सूर्यचराक्ष तितना होगा,  
उमें विषुवमें अग्निजे कारादिमें योग और हीनचराक्ष की  
विधेय करना होगा । वेना करनेसे चराक्ष सरहृण  
विषुवप्रथ निजन्त भाषेगा । जिन चारमें जितने दृष्ट

समयमें विषुवप्रथ होगा, उस समय सूर्य गेगमें जायेगी ।  
इस प्रकार सूर्य बारह महीनेमें एक एक करके मेवादि  
बारह राशियोंका भोग करने है । हा बारह राशियोंका  
भोग करनेसे एक भगवन् होता है ।

चतुर्गुणमें सूर्य, बुध और शुक्रका मध्य ( ग्रहोंकी  
पर्याय गतिका भाग मध्य है ) तथा मङ्गल, राशि और  
बृहस्पतिका जोम ४४२०००० भगवन्, चन्द्रका ५७७०३३  
भगवन्, चन्द्रपेन्द्रका मध्य ५७२६५१३७ भगवन् है । मङ्गल  
का मध्य २०६६८३२ भगवन् है । बुधका जोम १७६३७०३,  
बृहस्पतिका मध्य ३६४०१२ भगवन्, शुक्रका जोम  
७०२२३६४ भगवन्, राशिका मध्य १६६५८० भगवन् और  
राहुका मध्य ३३०२४२ भगवन् है ।

ग्रहोंके मध्य भगवन् और शीघ्र भगवन् जो ऊपर बत  
लाये गये हैं, उन्हें कल्पवृक्षसे गुणा करके तैत्तलीस लाख  
बोस हजारसे भाग दो, भागफल भगवन् होगा । भागशीघ्र  
को १२ से गुणा करके उक्त भाजक द्वारा भाग देनेसे जो  
लब्धि होगी वह राशि और भागरेखा ३० से गुणा कर  
के भाजक द्वारा भाग देनेसे अज ; फिर शेषको ६०से  
गुणा करके भाजक मङ्गल द्वारा भाग देनेसे लब्धि कल्प  
होगी । पीछे इसी प्रकार प्रथिवा द्वारा विकलादि भा  
निकाले जायेंगी । इस लब्धिमें भगवन्का त्याग करना  
होगा । अनन्तर राश्यादिमें अपना अपना मध्य, शीघ्र,  
शीघ्र जोड़नेसे जिस समय सूर्य मेघराशिमें जायेंगे, उस  
समयका मध्य शीघ्र होगा ।

शेष शीघ्र शीघ्रको शेष शीघ्रमें जोड़नेसे स्वयं  
शीघ्र होगा । शीघ्र राश्यादि—रविका मध्य ११०७  
५१४१०, चन्द्रका मध्य ११११३४३३२, चन्द्रपेन्द्रका  
मध्य ८११३६३२८, मङ्गलका मध्य ११०८५११४१८,  
बुधका जोम १११२१७१२५८, बृहस्पतिका मध्य ११०७  
४६११०१६, शुक्रका जोम ११०७१३१२५५४, राशिका  
मध्य ११०७१५५३८४६, राहुको मध्य ५१०६१३६३३  
इस शीघ्रका योग करनेसे सूर्य जित समय मेघराशिमें  
जायेंगे उस समयका मध्य होगा ।

जिन चरणके जित दिग्जे जिन मध्यका मध्य लम्बा  
होगा, पहले उस चरणके विषुवदिक्का मध्य स्थित कर  
विषुवदिग्में यह अर्द्ध दिग्म ७वा जितना होगा उमें

प्रदोंके अपने अपने भगण द्वारा गुणा करके उस बुद्धि न अर्थात् चतुर्गुण परिमित दिन १५,७७६१७८२८ अष्टु हाग भाग देनेसे जो भागफल होगा, वही भगण है। पीछे ऊपर बताये गये विधयसे राज्यादि निकाल कर भगणको अलग कर दो और राश्यात्मिकी पूजाओंमें जोडेनेमें विधुन दिनके चितने दण्डादिमें सूर्य मेषराशिमें गये हैं, उस दिनके भी उतने दण्डात्मिका मन्त्र हांगा ५ ।

प्रहस्तुद्ध और प्रहणादि गणनामें भगण स्थिर करके गणना करनी होती है। ( अर्थात् ) एगान्न दया ।

२ छन्द शास्त्रानुसार एक गण । इमें आदिका एक र्ण गुरु और अन्तके दो वर्ण लघु होते हैं ।

भगन ( हि० वि० ) १ सैयक, उपासक । २ साधु । ३ चो मास आदि न पाता हो, सबटका उलटा । ४ विचार यान् । ( पु० ) ५ वैष्णव या यह साधु जो तिलक लगाता और मास आदि न खाता हो । ६ भूत प्रेत उतारने वाला पुरुष, ओम्हा । ७ वैश्याके साथ तबला जादि बजानेका काम करनेवाला पुरुष, सफर दाई । ८ राज पूताकी एक जातिका नाम । इस जातिकी कन्याएँ वैश्यावृत्ति और नाचने गानेका काम करती हैं । मित्रिय विरथा भगविया मन्त्र देणे । ९ होलीका यह स्वाग जो भगनका किया जाता है । स्वामें एक मादमी सफेद बालोंकी दाढी मोल लगाता और मिर पर तिलक, गलेमें तुन्नीया सिमी और काठ की माटा पहनता है । सारे शरीरमें वह रास लगा कर हाथमें एक तु की और सोटा ले लेता है । इस प्रकार अपनेको सजा कर यह स्वागी जोगीडेमें नाचनेवाले लड़िके साथ मिल जाता है और बीच बीचमें नाचता और भाँडोंकी तरह मसपरापन करता जाता है ।

भगविया ( हि० पु० ) राजपूताकी एक जातिका नाम । इस जातिके लोग वैष्णव साधुओंकी सतान हैं जो अथ गाने बजानेका काम करते हैं । इस जाति को कन्याएँ वैष्णव वृत्ति करके अपने बुद्धिवका भरण-पोषण करती हैं और भगनित कहलाती हैं ।

भगदत्त ( म० पु० ) भगमैश्वर्य दत्त मर्मम इति । १ नरक राजके ज्येष्ठ पुत्र । ये प्रागुज्योतिषपुरके राजा थे ।

भगवान् धाराश्रयने नरकको मार कर इन्होंने राणा बनाया था । रामव्ययमके समय अर्जुनके साथ इनका आठ दिन युद्ध हुआ था । पीछे इन्होंने युधिष्ठिरकी वश्यता स्वीकार की थी । इन्होंने साथ हीका अन्धा सन्नाय था । महाभारत युद्धमें ये कौरवोंकी ओर थे । युद्धस्थलमें इन्होंने विराट, भीम, अभिमन्यु, धृतेष्पथ और अर्जुन आदिष साथ लड़ कर धौरताकी परा काष्ठा दिखलाई थी । द्रोणने जब पुरुमेव्यका सेना पति होगा मजूर किया, तब एक दिन भीमके साथ इनका युद्ध आरम्भ हुआ । उस दिन कुछ समय तक युद्ध करनेके बाद भामने अश्विन्कारिणाप्रभायसे अपने गत शरीरमें लीन हो गनको घन्तणा देना शुरू किया । श्वर पाण्डव सेनाके, भीम मारे गये हैं ऐसा जान कर भगदत्तके साथ युद्ध थान दिया । पीछे युधिष्ठिर, सात्यकि, अभिमन्यु आदिके साथ भी इनका तुमुन्मप्राम हुआ । युद्धमें पैकडों सेना निहत्त हो रही है, यह देख कर महावीर अर्जुनने युद्धमें प्रवेश किया । उस समय दुर्योधन और कर्ण दोनों भारने अर्जुन पर दृष्ट पड़े । अर्जुनने पीछे हों नमयके अन्दर उन्हें पराम्त्त कर भगदत्त पर आश्रमण किया । भग दत्त ने अर्जुन पर अब वैष्णवास्त पैका, तब भीष्मण ने उसे अपने पहलमें धारण कर लिया । पीछे बडा धीरताके साथ लड़ कर ये अर्जुनके हाथमें मारे गये । ( वाविकापु० ३६ अ०, भारत गंगा और शंखर० )  
० एक राजा । ये गौड, धौड, कलिङ्ग और बंगाल राज्यके अधिपति थे ।

भगदर ( हि० स्तो० ) अमानक बहुत से लोगोका विस्ती कारणने एक मोर ब्यम्ब व्यस्त हो कर भागा ।

भगनहा ( हि० पु० ) करेदसा नामक कटोली बेल ।  
हरत्रा देणे ।

० "गुण शूराणां स्वयुध्रदायांसा ।  
शुभार्तिगुरुणीमाया भगणां पूर्वायिनाम् ॥  
इन्द्रो रवाकिविनेषु तनभूत्तमाग था ।  
चक्रेन्द्रविरामैरु थायांमागिनन्त्तम् ॥  
कुनव्य दन्तागचु नन्दप्रानन्दनददा ।  
शुभ नामऽद्भगनाभरौभाकिन्ददेवता ॥" इत्यादि ।  
( महापाँव ६, ७, ८ )

भगना ( हि० पु० ) रजिन्का लक्ष्मी भागना ।

भगतो ( हि० स्त्री० ) भक्तो देवो ।

भगतचक्र ( हि० पु० ) निरुद्धा नामाङ्कन ।

भगद्दर ( सं० पु० ) अर्गं गुणगुणस्थान दारपतीति दृष्टिम् ( गुणगुणार्थे इति । पा ३।१।४१ ) इत्यत्र 'भगो च श्वरेतिनि पञ्चमस्य' इति वार्तिकोक्तेरिति गन् ( गणि ह्यत् ) पा ३।१।४६ ) इति ह्यत् मुमुन् । अथाभेदेन मणरोग विशेष, एक रोगस्य नाम ।

वैषम्यरोगस्य इम रोगस्येति नाम और निर्विक्रमालिका विषय इम प्रकार ज्ञिया है —

गुणदेवके दो अगुण परिमित पात्रयनीं स्थानमें नाति प्रणकी भातिका जो क्षय उत्पन्न होता है, उसे भगद्दर कहते हैं । कुपित यातात्रिदोय प्रथमत उम स्थायीं एक प्रणजोष उत्पन्न करता है, बादमें उमके एक कर पुट गति पर वहासे सुगं रगसा फेन और पोष आदि निरुद्धो लगी है । क्षय अघिह होनेमें वहासे प्रर और मुवादि नो निरुद्ध करता है । गुणदेवमें किसी प्रकारका भा हो कर एक जाय, तो उमे नो अगुण रूपमें परिणत होने देना गया है । सुगुणके पढोने मालूम होना है कि, यात, पिन, कण, सत्रियात और आगस्तु इन पान कारणीनि जनपोषक, उद्भवीय, परिश्रायो, जग्गुकार्त और उमगोों ये पात्र प्रकारके भगद्दररोग उत्पन्न होते हैं । भग, मग्द्वार और यन्त्रिदेवता विदाणीं करता है, इम लिय इमका नाम भगद्दर पडा है । भगद्दरमें जो प्रण होता है, वह नदीं पत्रा नो 'घोडना' और एक गया तो 'भगद्दर' कहलाता है । वट्टि और कपालमें घेदा तथा मलद्धारमें कण्डु, दाह और जोष ये भगद्दरक पूर्ण लक्षण हैं ।

जलपोषक भगद्दरके लक्षण—अथय वैषम्यरोग वायु कुपित हो कर मलद्धारके शक्तो तथा एक या दो अगुणि प्रमाद्य स्थानके माम और जोषितो दूगिा कर रकठ गुणकी घोडना उत्पन्न करता है । उमके द्वारा मग्द्वारमें तोद आदि वायनाप होतो है । अंग हो रगसा प्रती कार न किया जाय, तो यह एक जातो है । मूत्रान्तके साथ संबंध रहनेमें 'यत् कुद् गुणन तथा जलपोषक' ।

भक्ति छोड़े छोड़े छिद्रोंमें प्रक ज्ञेयपूर्ण हो जाता है । उम मन्वय उा छिद्रोंमें पैरायुक्त लगातार अग्नाय विरक्तता रहता है और सुनसुताहट मालूम पडतो है । पाँडे मलद्धार विशेषों होने पर उा छिद्रोंमें यात, मूत्र, पुरोय और रेत निम्न होता रहता है ।

उद्भवीय भगद्दरके लक्षण—पित्त कुपित और वायु द्वारा अधोभागमें सञ्चालित हो कर पूर्णको भाति मग्द्वारमें अवस्थित रह कर रक्तवर्ण, सूक्ष्म, उन्नत और उद्भवीया सद्गुण पाडना उत्पन्न होतो है । उममें उग्नाता, दाह आदिकी घेदा हाता और प्रतीकार न करनेमें एक जातो है । उम मणमें अति और क्षामसे जल जानेके जैसा द्वा होता है तथा उग्ना और दुर्गन्धयुक्त अग्नाय विरक्तता रहता है । उसको परवाह न पो जाय, तो यात, मूत्र, पुराय और रेतः भी निरुद्ध होने लगता है ।

परिश्रायो भगद्दरके लक्षण—दूलेय्या कुपित और वायु द्वारा अधोभागमें सञ्चालित हो कर पूर्णयत् गुण देवमें गवस्थान पूर्ण गुणवर्ण कण्डुयुक्त पोडना उत्पन्न करता है । प्रतीकार न करनेमें एक जातो है । पहले प्रण वट्टिन और कण्डुयुक्त होता है, पाँडे उससे अघि कतामें चिकता अग्नाय विरक्तता है । ऐसी अवस्थामें उपरवाहो करनेमें मणसे यात, मूत्र, पुरोय और रेतका निकृता प्रारम्भ हो जाता है । इमे परिश्रायो भगद्दर कह सकते हैं ।

जग्गुकार्त भगद्दर वायु कुपित हो कर कुपित पित्त और ऐन्ध्रको ले कर अधोभागमें जातो है और यहा पूर्णयत् अघिचयन रद कर पाशंगुष्ठ परिमित विनिग्न प्रकार लक्षणविशिष्ट घोडना उत्पन्न करतो है । उममें तोष, दाह और कण्डु आदि पोडा शक्तो है । उपयुक्त प्रतीकार नहीं करनेमें एक जातो है और मणसे नाला पाकका अवस्था विरक्तता रहता है ।

उमगोों भगद्दर—मांग लातुप चिकि यदि अगके साथ अघिचयनकी नो गया जाय, तो यह मग्द्वारके साथ विभिन्न हो कर अधोभागमें सञ्चालित होता और निरुद्ध मन्वय मग्द्वारमें क्षय उत्पन्न करता है । आग्द्वैर्भूयिज जैसी दृष्टि होती है उमो गद्दरकी इति श्वकथातमें हो जातो है । इमिमें मलद्धारके पात्र

यतीं स्थानको त्या कर विनोर्ण करती है। उन ग्राये हुए छेदोंसे प्रमग्न वात, मूत्र, पुरीय और रेत निगृत होते हैं। इन्हे उन्मार्गी भगन्दर कहते हैं।

सभी प्रकारके भगन्दर अत्यन्त यत्नणावायक और कष्टसाध्य होते हैं। जिस भगन्दरमें अत्रोपाय, मल, मूत्र और एमि निकलना शुरु हो गया हो, उसमें फिर रोगोंसे बचनेकी कोई आशा नहीं। जो भगन्दर पढ़ने स्तनकी भांति उगत हो कर उत्पन्न होता है और बादमें विक्षीर्ण होने पर तबके वायुवासी भांति आजार धारण करता है उसे असाध्य समझना चाहिए।

वायु विगमन स्थानमें जो कुछ कुछ उग्रद्वय और शोफ विनिष्ट रोग उत्पन्न हो कर शोष हो उपजमित हो जाते हैं, उनका नाम 'पीडका' है। पीडका भगन्दरमें गिनत है। जिस पीडकामें भगन्दर हा जाता है, यह इसमें विपरोत है। जिस पीडकामें भगन्दर होता है, वह पायुके दो अग्रणी प्रमाण स्थानमें उत्पन्न होता है। यह गुटमूल, वेदना और ज्वरविनिष्ट हुआ करता है। किसी मसारीमें बैठ कर जाते समय वा मलत्याग करते समय पायुदेगमें कण्डु, वेदना, दाह, शोफ और कटिमें वेदना होना भगन्दरके पूर्वलक्षण हैं। सभी प्रकारके भगन्दरमें घोर दुःख होता है। उनमें भी त्रिदोष और क्षत जन्म भगन्दर असाध्य है। (सुधृत निदानशा. ४ व. ०)

मायप्रकाशमें इस रोगके उत्पत्ति का कारण और चिकित्साप्रकरण तथा पुर्णरूप और लक्षण इस प्रकार लिखा है—भगन्दर होनेसे पहले कटोकलकमें सूचीविश्व च्च वेदनादि तथा गुणम दाह, कण्डु और वेदनादि उपास्था हुआ करता है। गुणके ष्व पाथ्वं म द्वा अ गुलि परिमिति स्थान पर वेदानामन्यत पीडका हो कर फट जाने पर उसे भगन्दर कहते हैं। यह भगन्दर पात्र प्रकारका होता है—घातक, पैसिक, शैथिलिक, सांनि पातक और शय्यज। यातजन्यको जतपोषक भगन्दर, पिचगन्यको उग्रप्रीय भगन्दर, श्लेष्मन्को परिश्रायो भा न्दर, सनिधाताका अग्रुफ भगन्दर और जन्म्यको उन्मार्गी भगन्दर कहते हैं। इनके लक्षण सुधुताक भग न्दरके सहज हैं। गुणक्रममें कण्डुनादि द्वारा वा नप द्वारा क्षत हो कर जो शोष उत्पन्न होता है, त्यापराधीग

उमकी चिकित्सा १ करानेमें प्रमग्न यह बढता जाता है और उममें कमि उत्पन्न हो जाती है। ये एमि मांस को विदाग पर छिद्रविनिष्ट अथवा मण उत्पन्न कर देती है जिससे उन्मार्गी भगन्दर हो जाता है।

भगन्दररोग मात्र ही अति भयंकर अतिघट्टाण्य है। उममें सन्निपातव भार क्षतव भगन्दर सर्वप्रकारसे असाध्य है। जिस भगन्दरमें मूत्र, पुरीय, शुक और एमि निचलने लगे, उस भो धसाय समझना चाहिए।

इसकी चिकित्सा गुणयोगे पात्रका शान्ति बडे घनके साथ उसका चिकित्सा करनी चाहिए। यह पीडका जिसमें पक्षी १ पक्षी, पेसा जयल करना ठीक है तथा जिससे अधिग्रहामें रक्तश्राव १ हो, यह भी करना आवश्यक है।

उटप, इष्टक, सौंठ, गुग्गु और पुनप पा पोस कर उसका पीडकाप्रकारों महा पर तैप करनेसे भगन्दररोग नष्ट होता है। पीडकाको अणकायस्थामें प्रथमत अति तर्पण, पीले कमग्न चिरेचन परन्त एकाद्वग्न मियाप करनी चाहिए। नि तादि म्हाभोवा विवण 'मण' च्चदम देगा।

उस पाडकाके मिनन वा फट जाने पर एषयो द्वारा ज्ञापका अत्रेयण, छेत्ता, क्षारप्रयोग और अमिकर्म आदि मियाप करके दोषानुसार चिकित्सा पूर्ण मणकी भांति चिकित्सा करनी चाहिए। तिल, तिग और धर्ममधु, इनका समाप्तनाममें दूधके साथ घाम कर जीतन प्रलेप देनेमें मरत वेदना न युक्त भगन्दर गष्ट होता है। ज्ञात पत्र, चटपत्र, गुग्गु, सौंठ और मी-धय दासी तत्रके साथ पोम कर प्रलेप करनेसे नग दूर शीघ्र ही प्रशमित होता है। निनाथ, तिल, हाथोय डा, और मन्नीठ इनको पोम कर यो, मधु और मी-धयके साथ प्रलेप करनेसे भगन्दररोग जाता रहता है। म्हादेकाछका वषाध, विकटा, गुग्गु या विट गका काथ पापने नद दूर च्चया हो जाता है। न्यप्रोत्रादिगणका पाथ और उत्तरे करके साथ मूत्र या पूत्र पाक करके मेषन करनेसे जो यह रोग प्रशमित होता है। तिग, गका, पिटकरी, कृद विपत्ताहूना, हापगमाला, मोर्षा, तिमेध और दूनी इन का प्रलेप भा फापदेमन्द है। इस रोगके जीषन और रोपणार्थ तिग, हरितकी, लोच, निम्बपत्र, हस्ति, दाह



हृदि, वेदेल तथा वृद्धम इत्या प्रयोग भी वाये  
 वाये है। मीन या मर्यागके गोदके साथ द्वापारिष्ठाने  
 चूर्णा का पात्र करके उससे बर्तन बना कर जोषमें प्रविष्ट  
 करायेमे भगन्दर वा मर्यागरीत्या ज्ञोष निश्चित होता  
 है, तथा विषयमें कामके साथ विषयगणिकी पोष  
 कर प्रोष देनेसे भी भगन्दर आरोष्य हो जाता है।  
 पिष्टकूमार, पिष्टका, छोटी च्यापनी और पिष्टलञ्जुणं  
 इनको मयु भीर केके साथ चाटनेसे भगन्दर जोष  
 हो प्रशमित होता है। इसके सिवा विषयन्त नैत्र,  
 निजाघ नैत्र, कर्मरीरादि नैत्र और नयचारिक गुग्गु  
 भादि औषध भा विरोध उपकार है।

जतपोनक भगन्दरमें नाडीके वायुम क्षय करके मृत्वि  
 रणको निश्चल देना चाहिए। पीछे उम क्षयके मर  
 जाने पर नाडीप्रणकी भाति चिह्नितमा करना उचित है।  
 षट् त्रिद्विगिष्ट शतपोनकगोमे जिस्मिमाकी विवेचना  
 पूर्वक मर्यागकूटक, लाङ्गूलक, मरुतोमद्रक वा गोतोमद्रक  
 छेदा करना चाहिए। मरुटाके दोषों और समाप्त  
 छेदन करनेको लाङ्गूलक छेदा और एक तरफ हस्तछेदन  
 करनेको अर्ध लाङ्गूलक छेदन करने हैं। नेचोमघान  
 परित्याग पुत्रक गुणद्वारकी चार गण्डोमें छेदन करना मी  
 मरुतोमद्रक छेद है। मरु निगममार्गकी तरफ न  
 करके बगलमे छेदन करना गोतोमद्रक छेद है। ज्ञा  
 पोषकोगमें पूषादि घ्रायके सभी गुणोंकी अन्विकर्म  
 द्वारा दूष करना चाहिए।

उद्धरीय भगन्दरगोमे जोषके दोषमें गणकी प्रविष्ट  
 करके छेदा किया जाता है। पीछे उममें क्षय प्रयोग  
 तथा मृत्विमाल निवारणार्थ अन्विकर्म भी हितकर है।  
 घ्रायमार्गको ज्ञापने छेद कर क्षय वा अन्विकर्म द्वारा  
 दूष करना चाहिए। जोषका अन्वेषण करके ज्ञान  
 द्वारा छेदन करना उचित है। छेदाकेलिय मरुचूर्ण  
 पत्रिफ, मरुचूर्ण, कर्मशय, मूतोमुष और मयादमुष  
 ज्ञापकोष प्रयोग हितकर है। छेदाके बाद अग्नि वा  
 मार द्वारा दूष करना चाहिए।

जतपोनयोग द्वारा यदि अन्वेषण वेदना उपस्थित हो  
 तो उन्म नैत्रका परिषेधा करना  
 भगन्दरमें दन्तके साथ जोषको छेदन

ज्योष्ठ वा नम त्रीहृत्पात्रका द्वारा दूष करना उचित  
 है। भगन्दर रोगी आरोष्य होने पर भी एक पर्यं तत्र  
 उमे घ्रापान, रवी मर्मगं, युज, धज्जदि पर आरोहण  
 और मुकुद्रण भोजन त्याग देना चाहिए।

(भाष्य-भगन्दर रोगी-)

सुधुतमे भी भगन्दररोगीको चिकित्सा प्रणाली लिपी  
 है। इन पात्र प्रकारके भगन्दरमें प्रशुभाचर्ष और  
 जन्वेष भगन्दर हो अमाध्य है। अत्रिष्टितान कष्ट  
 साध्य है। भगन्दर होने पर अल्पव अवस्थामें रोगीको  
 अतिवर्णने ले कर विरोध पर्यन्त प्वापान प्रसार  
 प्रतिहार करना विधेय है। पीठका एक ज्ञो पर स्नेह  
 मदन और अयगाहन करना उचित है। स्नेह वा  
 कष्य आदि किसी प्रकार मरु पदार्थम आरोरणी दुषी  
 देना अयगाहन कर्त्तव्य है। पदयान् रोगीको द्रव्या  
 पर लिटा कर अर्धरोगीको मार्ग मूत्र वा ज्ञापकम  
 से वाध कर भगन्दर अधोमुष है वा मरुमुष है, अन्व  
 भाति परीक्षापूर्वक पणोमे क्षयघानकोऊ वा करके  
 पूषाजय सहित छेदा कर उठा लेना चाहिए। अन्तमुष  
 भगन्दर होने पर रोगीको अलोभाति वाध कर प्रवाहण  
 प्रयोग मरुद्वारमें दिय देना पडता है। इस प्रकारकी  
 प्रक्रियासे भगन्दरका मुह दोषने पर, पणो प्रान्त  
 पूर्वक प्रख्यान करना उचित है। अग्नि वा क्षाका  
 प्रयोग सभी भगन्दर रोगीमें होगा।

जतपोनक भगन्दरमें मरुद्वारके बीच पात्रे क्षुद्र  
 प्रलोकी छेदा चाहिए। उन मायोके नर ज्ञोपर  
 फिर मरुद्वारकी मूत्राशोकी चिकित्सा की जागी है। जो  
 ज्ञापक परम्पर सम्बद्ध है उन्मेंमे प्रत्येकका प्राज्ञदेशमें  
 छेदा करना उचित है। जो नादिया परम्पर संबंध  
 नहीं है, उन्हें भी एक साथ छेद देनेमें प्रत्या मूत्र अन्वेष  
 दूषको जाता है। इत्यर्थ उम प्रान्त मुषमे मयमूत्र  
 निश्चय करना है, तथा वायु द्वारा छाद्यो भीर मरु  
 द्वारमें पीठ होम लपटा है। इस प्रकारके भगन्दरमें  
 मूत्र प्रखण करके छेदा नहीं करना चाहिए।

जतपोनयोग द्वारा यदि अन्वेषण वेदना उपस्थित हो  
 तो उन्म नैत्रका परिषेधा करना  
 भगन्दरमें दन्तके साथ जोषको छेदन

चाहिए। मीठ या फीमल प्रकृति ध्यकिको ज्ञानपोनक भगन्दर होने पर आरोग्य होना दुःख है। इस रोग में शीघ्र ही वेदना और आघ्राव नाशक स्वेदका प्रयोग करना उचित है। उष्ण वा शीत स्वेद अथवा लग्न, तिसिर आदि द्रव्य और सज्जलदेश पशुके मांस के सहयोगसे वृक्षादनी, परएड और जिन्दादिगणका क्याय वा चूर्ण स्नेह कुम्भमें रख कर घणमें स्वेद दिया जाता है। तिल, परएड, तोसी, उडद, जी, गेह सरसों, नमक और अम्लवर्ग, इन सबको स्थालीमें रख कर रोगीकी स्वेद दे सकते हैं। स्वेद दिये जाने के बाद कुष्ठ, नमक, चन् हिशु और अजमोदा आदि को समान भागमें घृत, द्राक्षा वा अम्लरस, मुरा अथवा काजीके साथ सेवन कराओ। उसके बाद घणमें मधुकनील सेचन और मलहारमें घायुरोग नीला रक नीलका परिपेचन करो। इस प्रकार प्रतीकार करनेमें मलमूल अपने मार्गसे निकलेंगे तथा अथान्य तीम उप द्रव्योंकी भी प्राप्ति हो जायगी।

उद्ग्रीय नामक भगन्दरमें प्यण्टी द्वारा छेद कर क्षार दे देना चाहिए। पशुवात् उसमेंसे पूति मांसको निकाल जालो और अग्निदग्ध करो। पूति मांसके निकल जाने पर तिल पोस कर चाँके साथ उस पर भस्म दो और वाघ कर घी परिपेचन करो। तीन दिन बाद गोलो; यदि घणमें कोई क्षोप दिगार्द है तो पहले उसका सशोधित होने पर यथाविधि रोपण करना उचित है।

परिप्रायो भगन्दरमें रसरत्नादि आख्य होता रहें तो उसके मार्गको छेद कर क्षार वा अग्नि द्वारा दग्ध करो। पीछे उसमें कुष्ठ उष्ण अणुनैलका प्रयोग कर यमतीय औषध द्वारा अल्प परिमाणमें परिपेचन करो। इस प्रकार के प्रतीकारसे घण क्षीमक तथा वेदना और आघ्राय हान होने पर उसके मुगदोरको अज्येयन सूषक छेदन कर अग्नि द्वारा भली भाँति दग्ध करो। राजरूप, मधुसूत, मूक, सूक्ष्मगुण और अगदरुम्ल आदिके आकार में भगन्दर छेदन दिया जाता है। प्रयोजन होने पर पुन क्षार द्वारा भा दग्ध कर सकते हैं। उसके बाद घण अथ फीमल हो जाय तब उसका सशोधन करना चाहिए।

बालकको यादमुग वा अन्तर्मुख रिमी भी प्रसार भगन्दर होने पर धिरेचन, अग्नि, क्षार वा जल दितकर नहीं है। जो औषध फीमल और तीष्ण हैं, उनका ही प्रयोग करना उचित है। आरम्यघ हरिद्रा और मूल चूर्णको मधु और घृणमें फेट कर वसिन्नाके भागारसे घण पर प्रयोग कर शोधन करना चाहिए। इस प्रयोगसे घणकी नाटो शीघ्र ही आरोग्य हो जाती है। आगनुक भगन्दरमें नागी होनेसे दग्ध द्वारा छेद कर आम्बोष्ठ प्रलाका दाहन पूर्वक अगिवर्ण करके घणस्थानको दग्ध करे, तथा आरम्यघ होने पर एमिनाजक और दान्य अथनयनविधिके अनुसार वाय करे। घणजगल ध्यकिके लिए यह रोग असाध्य है। भगन्दरमें जलपात जन्य यदि वेदना हो, तो उम पर उष्ण अणुनैल परिपेचन करना चाहिए, अथवा स्थालीमें यातना औषध भर कर उसके मुदरो छिद्रयुक्त दधाने टक दे, पीछे रोगीकी जिद्रा कर और उसके मलहारमें घृत सेना कर उसमें स्थालासुच द्ययका उष्ण स्वेद देना चाहिए। अथवा रोगीको लिटा कर उसके द्वारा वेदना शान्ति कर ताई स्वेद भी दिया जा सकता है।

त्रिवृत्त, वर, हिन्दू, लवण, श्यामा, दन्ती, विट्ट, तिल, कुष्ठ, जतमूत्र, गोशेमी, गिरिवर्जिका, कसौम, काञ्चनमूल और शरीरो वर्ग, इन्में भगन्दर घण यजोधित किया जाता है। त्रिवृत्त, तिल, नागदन्ती और मञ्जिष्ठा इनकी दुग्धके साथ मित्रा कर मधु और सै घय सहित प्रयोग करनेसे भगन्दर घणका नाश होता है। रत्नाजग, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, मञ्जिष्ठा, निम्बपत्र, त्रिवृत्त या पिपपली और दन्ती इनके कल प्रयोगसे भगन्दरका तालीमण आरोग्य होता है। कुष्ठ, त्रिवृत्त, तिग, दन्ती, पिपल, सै घय, मधु, हरिद्रा, त्रिकला और तुल्य आदि घण जोषणके लिए लाभकारी है। पाँपत्र, दाँष्टमधु शोध, कुद, इन्धायवा, रेणुका, मनाड, धातकी पुत्र, श्यामलता, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, त्रिवृत्त, सनैरस, पत्रकाष्ठ, पत्ररंजना, कलिचूर्ण, घय, एगदरुकी, मांस और सै घय आदिका तैल पाक करके प्रयोग करनेसे भगन्दररोग ज्ञान प्रशानित होता है। (युष्क चिकि ८५०)

अपत्य रत्नापत्रीमें भगन्दररोगाधिकारमें स्तचिदानिह

हरिद्रा, बेडोला, लोध्र तथा शुद्धयुग् इका प्रयोग भी कार्य पारी है। सीज या थक्कापे गोदूधके साथ दागहरिद्राके चूर्णका पाक करके उससे त्रिफला बना कर शोषमें प्रविष्ट करानेसे भगन्दर वा सर्परीरोगत शोष निवारित होता है, तथा विफलामें काधने साथ त्रिडालास्थिको पोम पर प्रलेप देनेसे भी भगन्दर आरोग्य हो जाता है। विडङ्गमार, विफल, छोटी इलायची और पिप्पलीचूर्ण इनको मधु और तैलके साथ चादनेसे भगदर शोष ही प्रजमित होता है। इसमें सिद्धा त्रिपन्धत तैज, निजाघ तैल, कर्पूरारणि तैज और नजपार्थिक गुग्गुलु आदि औषध भी विशेष उपकारक हैं।

शतपोनक भगन्दरमें नाडीके वायुमें क्षन करके दुषित रक्तको निकाल देना चाहिए। पीठे उस क्षनके भर जाने पर नाडीमणकी भांति चिक्रितसा करना उचित है। षट् छिद्रप्रविष्ट शतपोनकरोगमें चिक्रितसाकी विवेचना पूर्वक अर्द्धलाङ्गलक, लाङ्गलक, सर्वतोभद्रक या गोतीर्थक छेदन करना चाहिए। मलद्वारके दोनों ओर समान छेदन करनेको लाङ्गलक छेदन और एक तरफ हल्बछेदन करनेको अर्द्ध लाङ्गलक छेदन कहते हैं। सेवनीस्थान परित्याग पूर्वक गुलद्वारको चार गण्डोंमें छेदन करना भी सर्वतोभद्रक छेद है। मल निर्गममार्गकी तरफ न करके बगलमें छेदन कराना गोतीर्थक छेद है। शत पोनकरोगमें पूषादि श्रावके सभी मुण्डोंको अग्निशर्म द्वारा दग्ध करना चाहिए।

उद्गमोच भगन्दररोगमें शोषके बीचमें पपणी प्रविष्ट करके छेदन किया जाता है। पीछे उसमें द्वार प्रयोग तथा पूनितमार्ग निवारणार्थ अग्निशर्म भी हितकर है। श्रावमार्गकी शास्त्रमें छेद कर श्वाश वा अग्निशर्म द्वारा दग्ध करना चाहिए। शोषका अन्वेषण करके शास्त्र द्वारा छेदन करना उचित है। छेदनेकेलिपि स्रग्जूर-पलिक, अर्द्धचन्द्र, चन्द्रप्रग, सूचोमुख और अवाष्ट मुग शास्त्रोंका प्रयोग हितकर है। छेदनके बाद अग्नि वा श्वाश द्वारा दग्ध करना चाहिए।

जात्रप्रयोग द्वारा यदि अन्धन्त वेदना उपस्थित हो तो उष्ण तैलका परिपेचन करना चाहिए। शल्यक भगन्दरमें पलके साथ शोषको छेदन कर अग्नि वा

जम्बोष्ठ वा तप्त लोहशलाका द्वारा दग्ध करना उचित है। भगदर रोगी आरोग्य होने पर भी एक चर्य तक उसे ध्यायाम, ग्नी समर्ग, सुष्ठ, अश्वानि पर आरोहण और सुष्ठुद्वय भोजन त्याग देना चाहिए।

(भाष० भगन्दर रोगाधि०)

मुध्रुतमें भी भगन्दररोगको चिकित्सा प्रणाली लिखी है। इन पाच प्रकारके भगन्दरोंमें जम्बूकावर्ण और शल्यक भगन्दर ही असाध्य हैं। अवशिष्ट तीन कष्ट-साध्य हैं। भगन्दर होने पर अपक्व अजघाममें रोगीको अतितपणसे ले कर विरेचन पर्यन्त पक्कादश प्रकार प्रतिहार करना विधेय है। पीडका पक्व जाने पर रनेह-मर्दन और अजग्राह्य करना उचित है। स्नेह वा काय आदि किसी प्रकार तरल पदार्थमें शरीरको शुद्ध देना अजग्राह्य कहलाता है। पञ्चान् रोगीको शय्या पर लिटा कर अर्धरोगीको भाति सूत्र वा शाटकयन्त्र से बाध कर भगन्दर अधोमुख ही वा अर्द्धमुख ही, भली भांति परीक्षापूर्वक पपणीसे क्षतस्थानको ऊंचा करके पूषाशय सहित छेदन कर उठा लेना चाहिए। अन्तमुग भगन्दर होने पर रोगीको भलीभांति बाध कर प्रजग्राह्य अर्वाण् मलद्वारमें दग देना पड़ता है। इस प्रकारकी प्रक्रियामें भगन्दरका मुह क्षीयने पर, पपणी प्रग्न पूर्वक शस्त्रपात करना उचित है। अग्नि वा श्वाशका प्रयोग सभी भगदर रोगोंमें होगा।

शतपोनक भगन्दरमें मलद्वारके बीच पहुँचे क्षुद्र यणोंको छेदना चाहिए। उन यणोंके भर जाने पर किम मलद्वारकी मूत्रनाडीकी चिक्रितसा की जाती है। जो गिराप परस्पर सम्बद्ध हैं उनमेंसे प्रत्येकको प्राणदेशांमें छेदन करना उचित है। जो नाडिया परस्पर संध्य नहीं हैं, उन्हें भी एक साथ छेद देनेसे प्रणका मुख अत्यंत गृह्ण हो जाता है; इगल्लिप उस प्रगस्त मुगमें मलमुख निकला करता है, तथा यायु द्वारा आटोप और मल द्वारमें पीडा होने लगता है। इस प्रकारके भगन्दरों में मुग प्रगन्न करके छेदन नहीं करना चाहिए।

इस षट्छिद्र मुक्त भगन्दर रोगमें सर्द्धलाङ्गलक, लाङ्गलक, सर्वतोभद्र अथवा गोतीर्थक छेदन किया जा सकता है। र्नादिश्रावके मार्गोंकी अग्नि द्वारा जला देना

चाहिए। मीरु या कीमलप्रदृति व्यक्तिको जतपोनर भगदर होने पर आरोग्य होना दुष्कर है। इस रोग में शीत ही वेदना और आन्त्राज नाशक स्वेदका प्रयोग करना उचित है। रजरा या खीरका स्वेद अथवा लव, तिसिर धादि प्राग्य और मन्त्रदेज पशुके मांस के सहयोगमे वृक्षादनी, परण्ड और त्रिल्लादिगणका बगध या चूर्ण स्नेह कुम्भमें रख कर घणमें स्वेद दिया जाता है। तिल, परण्ड, तीसरी, उटद, जी, गेह सतसों, नमक और अम्लरस, इन सबको रथालीमें रख कर रोगीको स्वेद दे सकने हैं। स्वेद दिये जाने के बाद कुष्ठ, नमक, यच हिंगु और अचमोदा धादि को समान भागमें घृत, द्राक्षा या अम्लरस, मुगु तथा काशीके साथ सेवन कराओ। उसके बाद घणमें मधुकरतल सेचन और मलद्वारमें घायुरोग नीरा रफ तैलका परिपेचन करो। इस प्रकार प्रतीहार करनेसे मलमूत्र अपने मार्गसे निकलेंगे तथा अन्यान्य तीव्र उप द्रव्योंकी भी शान्ति हो जायगी।

उद्भ्रमोच नामक भगन्दरमें पयणी द्वारा छेदन कर क्षार दे देना चाहिये। पयणात् उसमेंसे पूति मांसको निकाल जालो और अग्निदग्ध करो। पूति मांसके निकल जाने पर तिल पोस कर घोके साथ उस पर प्रलेप दो और बंध कर घी परिपेचन करो। तान दिन बाद पोलो; यदि घणमें कोई क्षोष दिखाई दे तो पदर उसका सशोचित होने पर यथाविधि रोपण करना उचित है।

परिक्वायो भगन्दरमें रसकत्तादि आरग्य होना रहे तो उसके मार्गको छेद कर क्षार या अग्नि द्वाग दग्ध करो। पीछे उसमें कुष्ठ उरुण अणुनैलका प्रयोग कर घमनीय औषध द्वारा अथ परिक्वायमें परिपेचन करो। इसप्रकार के प्रतीहारसे घण कीमल तथा वेदना और आरग्य प्राप्त होने पर उसके मुखदोषके अधीकरण पूरव छेदन कर अग्नि द्वारा मली भाति दग्ध करो। मज्जै रूपन, मज्जै चद्र, चक्र, सूचीमुगु और अयाइमुल आदिके आहार में भगन्दर छेदन दिया जाता है। प्रयोजन होने पर पुन क्षार द्वारा भी दग्ध कर सकने हैं। उसके बाद घण जब कीमल हो जाय तब उसका सशोधन करना चाहिये।

बालकको वाहसुगु या अन्तर्मुंघ रिमी भी प्रवार भगदर होने पर त्रिरेव्य, अग्नि, क्षार वा अन्य दितरर नहीं है। जो औषध कीमल क्षीर तीक्ष्ण हों, उनका ही प्रयोग करना उचित है। आरग्यध हरिद्रा और मीरु चूर्णको मधु और घृतमें पेट कर यतिशयके भाकारमें घण पर प्रयोग कर शोधन करना चाहिये। इस प्रयोगसे घणकी नाली शीत ही आरोग्य हो जाती है। भगदर भगदरमें नाली होनेसे जग्न छाग छेद पर जाम्योष्ठ शरका दाहन पूर्वक अग्निार्ण करके घणस्थापको दग्ध करे, तथा आरग्यध होने पर हृमिनाशक और अन्य अवयवनिधिसे अनुसार कार्य करे। भ्रमणशोच व्यक्तिके लिए यह रोग असौख्य है। भगन्दरमें शरयपान अन्य यदि वेदना हो, तो उस पर उरुण अणुनैल परिपेचन करना चाहिये, अथवा रथालीमें यातघ्न औषध भर कर उसके मुखको छिद्रमुपत दृष्याने दृक् दे, पीछे रोगीको पिडा कर और उसके मलद्वारमें घृत सेचन कर उसमें स्वाशोस्व द्रव्यका उरुण स्वेद देना चाहिये। अथवा रोगीको लिटा कर नमक द्वारा वेदना शान्ति कर ताडी स्वेद भी दिया जा सकता है।

त्रिपट्ट, यच, हिङ्गु, लज्जण, श्यामा, दन्ती, त्रिपुन, तिल, कुष्ठ, शतमूरी, गोलोमी, गिरिकर्णिका, वसीम, वाहनपूजा और क्षीरी घर्ष, इनसे भगन्दर घण सशोधित किया जाता है। त्रिपुन, तिल, ताम्रदानी और मज्जिष्टा इनको दुग्धके माघ मित्रा कर मधु और तै घघ सहित प्रयोग करनेसे भगन्दर घणका नाश होता है। रसादन, हरिद्रा, क्षारहरिद्रा, मज्जिष्टा, निम्बपत्र, त्रिपुन गज पिप्पला और दन्ती इनके कण प्रयोगसे भगन्दरका नालीघण आरोग्य होता है। कुष्ठ, त्रिपुन, तिल, दन्ती, पिपल, मैघन, मधु, हरिद्रा, तिलला घौग कुग्ध आदि घण शोधनके लिए लाभकारी है। पापत्र, परिमधु लोथ, कुष्ठ, श्यापना, रेणुका, मषाट, घातकी पुत्र, श्यामलता, हरिद्रा, क्षारहरिद्रा, त्रिपट्ट, मज्जैरु, पत्रकाष्ठ, पत्रकेजार, कल्पिचूर्ण, यच, लानुलकी, मोम और मैघ घ आदिका तैल पात्र करके प्रयोग करनेसे भगन्दररोग जग्न प्रशान्त होता है। (सुभुत चिकि० ८३०)

अन्य रत्नापत्तमें भगन्दररोगापिचारमें स्तत्रिद्वैतिक

हृदि, वेदेल, लोघ तथा शुद्धभूम इका प्रयोग भी कार्य  
 करते हैं। सीज या अश्वयनके गोदके साथ शाल्वरिडिके  
 चूर्णका पाच करके उससे चर्नि बना कर शोयमें प्रविष्ट  
 करानेसे भगन्दर या सर्पज्वरगत शोष निवारित होता  
 है, तथा चिकित्सामें हाथके साथ विडालारिधके पोस  
 पर प्रलेप देनेसे भी भगन्दर आरोग्य हो जाता है।  
 विडङ्गुमाग, चिकला, छोटी इलायची और पिप्लीचूर्ण  
 इनकी मधु और तैलके साथ चाटनेसे भगदर शीघ्र  
 ही प्रशमित होता है। इसके मित्रा त्रिप्यन्दन तैत्र,  
 निगाध तैत्र, कर्पूरीगन्धि तैत्र और नववार्धिक शुग्गुत्र  
 क्षात्रि औषध भी विदोष उपकारक हैं।

शतपोनर भगन्दरमें नाडीके वायुमें क्षत करके दूषित  
 रक्तको निकाल देना चाहिए। पीछे उस क्षतके भर  
 जाने पर नाडीप्रणकी भांति चिकित्सा करना उचित है।  
 यह छिद्रविशिष्ट शतपोनरोगमें चिकित्साकी विवेचना  
 पूर्णक अर्द्धलाङ्गुल, लाङ्गुल, सर्पतोम्रक या गोतीर्थक  
 छेदना करना चाहिए। मलद्वारके दोनों ओर समान  
 छेदन करनेसे लाङ्गुल छेदन और एक तरफ हृम्यछेदना  
 करनेसे अर्द्ध लाङ्गुल छेदना कहते हैं। सेवतीस्थान  
 परित्याग पूर्णक शुभ्रद्वारको चार गण्डोमें छेदन करना जो  
 सर्पतोम्रक छेद है। मत्र निर्गममार्गकी तरफ न  
 करके बगलसे छेदना करना गोतीर्थक छेद है। शत  
 पोनरोगमें पूवादि श्रावके सभी मुखोंको अतिक्रम  
 द्वारा दूष्य करना चाहिए।

उष्णप्रयोग भगन्दररोगमें शोषके शोचमें लपणी प्रविष्ट  
 करके छेदन किया जाता है। पीछे उसमें क्षार प्रयोग  
 तथा पुनिमाग निवारणार्थ अतिक्रम भी दितकर है।  
 श्रावमार्गको शारसे छेद कर क्षार या अग्निरमें द्वाग  
 दूष्य करना चाहिए। शोषका अन्वेषण करके शारत्र  
 द्वाग छेदन करना उचित है। छेदनकेलिप्य जख्दूर  
 पत्रिक, अर्द्धचन्द्र, चन्द्रयग, सूचीमुख और अयाष्ट मुख  
 शारत्रोंका प्रयोग दितकर है। छेदाके बाद अग्नि या  
 क्षार द्वारा दूष्य करना चाहिए।

शरप्रयोग द्वाग यदि अत्यन्त घेदा उपमिधन हो  
 तो उष्ण मैलका परिपेचन करना चाहिए। शल्यज  
 भगन्दरमें घटनेके साथ शोषको छेदन कर अग्नि या

जम्बोष्ठ या तप्त लोहशलाका द्वाग दाघ करना उचित  
 है। भगन्दर रोगी आरोग्य होने पर भी एक वर्ष तक  
 उसे व्यायाम, खी मसमर्ग, युद्ध, अथवादि पर आरोग्य  
 और शुद्धद्रव्य भोजन त्याग देना चाहिए।

(भास० भगन्दर रोगाधि०)

सुश्रुतमें भी भगन्दररोगकी चिकित्सा प्रणाली लिगी  
 है। इन पाच प्रकारके भगन्दरोंमें शम्भूवायत और  
 शल्यज भगन्दर ही असाध्य है। अरविष्ट तोन कष्ट  
 साध्य है। भगन्दर होने पर अथवा अरुध्यामें रोगीकी  
 अतितपणसे ले कर विरेचन पर्यन्त एकादश प्रकार  
 प्रतिहार करना विधेय है। पीडना एक जाने पर स्नेह  
 मर्दन और अयगाहना करना उचित है। स्नेह या  
 वाध आदि किसी प्रकार तरल पदार्थमें शरीरको डुबो  
 देना अयगाहन कहलाता है। पदचात् रोगीको शय्या  
 पर लिटा कर अर्शरोगीकी भांति सूक्ष्म या शारत्रयन्त्र  
 से वाध कर भगन्दर अधोमुख है या अर्द्धमुख है, भली  
 भांति परीक्षापूर्वक एषणीसे क्षतस्थानको छुना करके  
 पूयाशय सहित छेदना कर उठा लेना चाहिए। शतमुं  
 ग भगन्दर होने पर रोगीको भलीभांति वाध कर प्रयादन  
 अर्थात् मलद्वारमें वेग देना पड़ता है। इस प्रकारकी  
 प्रक्रियामें भगन्दरका मुह टोपने पर, एषणा प्रदान  
 पूर्वक शरपात करना उचित है। अग्नि वा क्षारका  
 प्रयोग सभी भगन्दर रोगोंमें होगा।

शतपोनर भगन्दरमें मलद्वारके बीच पहले क्षत्र  
 प्रणोंको छेदना चाहिए। उन घावोंके भर जाने पर  
 फिर मलद्वारकी मुग्नाडीकी चिकित्सा का जाती है। जो  
 गिराए परस्पर सम्बद्ध है उनमेंसे प्रत्येकका प्राग्देशमें  
 छेदन करना उचित है। जो नाडिया परस्पर संसंध  
 नहीं है, उन्हें भी एक साथ छेद देनेसे प्रणका मुख अत्यंत  
 दृढ़ हो जाता है; इसलिए उस प्रजास्त मुखसे मलमूत्र  
 निकलना करता है, तथा वायु द्वारा आटोप और मल  
 द्वागमें पीडा होने लगता है। इस प्रकारके भगन्दरमें  
 मुख प्रशान्त करके छेदना नहीं करना चाहिए।

इस वलुछिद्र मुख भगन्दर रोगमें माह लाङ्गुलक,  
 लाङ्गुलक, सयतोम्र अथवा गोतापैत्र छेदन किया जा  
 सकता है। रतादिश्रावके मार्गकी अग्नि द्वारा जला देना

उत्पत्ति, प्रत्यय, आगति, गति, विद्या और अत्रिया को ये जानते हैं, इसीसे उनका भगवान् नाम पडा है। ज्ञान, शक्ति, बल, ऐश्वर्य, धैर्य और तेज आदि भगवत् शब्दके वाच्य हैं। प्रलय-शब्दादिके शशोचर हैं, उनकी पूजाके लिये ही फेरल भगवन् शब्द द्वारा उनका कीर्तन किया जाता है। अतएव एक मात्र परमब्रह्म ही भगवत् शब्दके वाच्य है। सर्वदा भगवन्नाम कीर्तन, भगवत्सेवा आदि करना सर्वोक्त अत्यय कर्त्तव्य है। ३ जिन। (भारत १३।१७।२०) ४ विशु। ५ कर्मिणेय। ६ जितेन्द्र। ७ सूर्ये। ८ ध्याम इव। ९ पूजनीय शुभ पुरोहित। ( वि० ) १० ऐश्वर्यवत्, पूजनीय।

भगवत्-चाराणसीके दक्षिण भागमें अवस्थित एक परगना। गौतमोंके आक्रमण कागमें यह स्थान जामियात् प्राँ गहरवाडके अधिकारमें था। जामियात् ने प्रनावर्ग की सहायतासे यहाके पटोट दुर्गकी रक्षा की थी। इस परगनेका प्राचीन नाम हूरोर है।

भगवत्-विशु उपासक बनिया सम्प्रदायविशेष।

भगवत्त्व (स० ह्री०) भगवतो भाव, त्व, भगवान्का भाव या धर्म।

भगवत्दास-साधारण श्रेणीके एक प्रथकर्ता। इन्होंने रामरत्नायन विगत् और भगवत्चरित प्रथोंकी रचना की है।

भगवत्पदी (स० स्त्री०) गद्गाका नामान्तर। विशु पक्षे विशुके कारण गद्गाका यह नाम पटा है। भागवत्म लिंगा है, कि बलियुगमें दानप्रदणके समय भगवत् धामपद्मादुगुष्ट नगसे अण्डकटाद भिन हो कर जो जलपारा निकली यही जाहनी, भागोरथी आदि नामोंसे प्रसिद्ध है। (भाग० १।१७।१)

भगवत्पादाचार्य-तन्त्रसार और प्रात स्मरणस्तोत्र नामक इन्होंने प्रथोंके प्रणेता।

भगवत्पुर-एक प्राचीन जनपद। यह परमाण्वनीय महाराज वात्पतिराजदेवके राज्यभुक्त था।

भगवत्पुराण-एक महापुराण निम्नमें १८ हजार श्लोक हैं। वैश्वदेवके मतसे विशुभागवत और जागर्गके मतमें वैश्वभागवत ही इस नामसे प्रसिद्ध है। लिपि लिख्य गुण्य इन्द्रमें देगा।

भगवन्मुद्रित-एक भाषा कवि। इन्होंने हितचरित, सेवचरित और रमिन अत्यन्त मान्य बनायी थी। इनकी कविता साधारण होती थी। ये राधायहनी सम्प्रदायके थे।

भगवन्रमिक-शुन्दावत निवासी एक कवि। इनका जन्म स० १६०९में हुआ था। ये माधवदासजीके पुत्र और हरिदासजीके गिण्य थे। इनकी बनाई कुण्डलियोंका कवि समाजमें बड़ा आदर है।

भगवतादास-एक भाषाके कवि। ये जातिके प्राल्लण थे। इनका जन्म सन् १६८८में हुआ था। इनका बनाया भाषामें 'नचिकेतोपाख्यान' है जिसकी कविता मनोरम है।

भगवदानन्द-१ गोडपादोष्याण्याके प्रणेता। इनका दूसरा नाम आनन्दनीय है। २ स्वप्रकाशरहस्यके प्रणेता।

भगवदीय (स० पु०) विशुके उपान्तक।

(भाग० १।१।१०)

भगवद्गोता (स० स्त्री०) भौधपर्वके अन्तर्गत अष्टा-दशाध्यायात्मक कर्मयोग, ध्यानयोग और भक्तियोग सूक्त प्रथ। इसमें उन उपदेशों और प्रश्नोत्तरोंका वर्णन है जो भगवान् शृण्वचन्द्रने बहुत बड़ा मोह दुष्टानों के लिये उससे बुद्धरूपमें किया थे। यह प्रथ प्रस्था चतुष्टयमें चौथा है और बहुत दिनोंसे महाभारतसे पृथक माना जाता है। विशेष विवरण गोता इन्द्रमें देगे।

भगवद्द्रुम (स० पु०) महावैश्वदेव।

भगवद्भक्त (स० पु०) १ भगवान्का भक्त, ईश्वर भक्त। २ विशुभक्त। ३ दक्षिण भारतके वैश्वदेवोंका एक सम्प्रदाय।

भगवद्भट्ट-नूतनतरिस्मनरक्षिणीपौटीकाके प्रणेता।

भगवद्भक्तिक-छा-दोष्योपनिषद्बुक्तिके रचयिता।

भगवत्त्रिपद (स० पु०) भगवान्का त्रिपद, भगवान्को मूर्ति।

भगवन्त-मुद्रन्त्र विज्ञानशास्त्रके प्रणेता।

भगवन्तदेव-परेण नामके अधिपति। ये वेङ्ग (शुद्धिवर) जातीय म्मुनिभास्कर प्रथके रचयिता नीचरुटके प्रतिपादक थे। उन प्रथकारोंके अपने प्रथमें इस वेङ्ग राज

गुग्गुलु, त्रिफल, मन्थ, करवीर, चन्दन, निमिष, तैल, सौम्य, तैल, मारुत, रस, चिचिमाष्टक, रस, ताम्र, प्रयोग तथा चिचिषु मुष्टियोग जिते हुए हैं । रसैः प्रसारणप्रभृति इम रोगके प्रकरणमें चारिणाएडवग्म और भगद्वहर रमका उल्लेख है ।

मगुल प्रणालिकां उन्ही शब्दोंम देवो ।

मगुल पुगणमें अर्ध और भगद्वर रोगोपशमकी औषधि इम प्रकार कही गई है —

“भट्टपाद्यनेष गुं पृथङ्गिणा वात् ।  
सूर्यं शुकलं तु क्षोभेज्ज अर्धोत्तमहर पर ॥  
गुग्गुलु विज्यापुत्रं पीत्वा रश्मिद्रागन्दरम् ॥”

( ग० १८८३५ )

मगद्वहररस ( स० पु० ) रसीकषयित्रिय । प्रस्तुत प्रणाली—पारा एक भाग और गन्धक दो भाग इन्हें प्लुतपु मारोके रसके साथ तीन दिन घोट कर ताम्र और लौहके मूल्यरूपमें मिश्रित करे । पीछे एक यरतनमें रस कर दो पहर तक ख्येद दे । बादमें उम भरमको वागजी नीचूके रसमें सात वाग भाजना दे कर पुटपात्र करे । रसो भर गोलीया सेवन करनेमें भगद्वर बहुत जल्द जाता रहता है । विविन्मद्र सोच विचार कर अनुपातकी ध्ययस्था दे । ( रमन्दधारस० भगन्दर चिचि० )

भगपुर ( स० पु० ) मृत्तानके अन्तर्गत एक नगर ।

भगमस ( स० वि० ) भगे ग्री नक । धनरत, धनके पीछे लगा हुआ ।

भगमद्रक ( स० पु० ) भग योनिस्तामुपाश्रित्य भद्रयति औषिषा निर्वाहयतीति मद्र षण्णु । तायक और नायिकाका मेलन, योग्येरा अत्र जानेजाला । इनका अत्र योनिमें चात्रायण करना होता है ।

“यो यन्मरुतं कल्पयत् गगुभिर्मांसायैरपि ।  
बुधगानी पथ तानानं मुग्गा जन्मनापयात् ॥”  
( मारुतदेवपु० मशताराध्या० )

भगमुग ( स० पु० ) वृहस्पतिक धारह्यगुर्गोमिसे अ िम युग । इसके पाच वाय दुहुर्नि, उदारी स्थता, शोष और क्षय ० । इनमें पहलेकी छोट कर शेष चार वर्षे उत्तरोत्तर भयानक जाने जाते हैं ।

भगर ( हि० पु० ) सहा गया अन्न ।

भारना ( हि० कि० ) रातेमें गरमों का कर बनाजका सख लाना ।

भगल ( स० वि० ) भग तट्टपापार लाति गन्ध । भग ध्यापारप्राहक ।

भगल ( हि० पु० ) १ कगट, डोंग । २ राधकी मकान जादू ।

भगली ( हि० पु० ) १ छली, डोंगी । २ बाजोगर ।

भगवती ( स० ग्री० ) भग मनुष्य तत विद्या डीप् । १ पूथ्या । २ गौरी । ये प्रकृतिस्वरूपिणी महामाय देवी हैं ।

“शान्तिमपि वेतामि देवि भगवती हि सा ।  
यजदादाय मोहाय मोहनाया प्रपच्छति ॥”  
( मार्गपु० ८१५० )

३ सरस्वती । ४ गङ्गा । ५ दुर्गा ।  
आनन्दलम्बकवन्तं सर्वं मिथ्यैव वृथिमम् ।  
दुर्गा गत्यन्वया सा प्रकृतिभगवती यथा ॥  
सिन्धुपैर्गर्भादिभ सज वन्यामन्ति युग युगे ।  
सिद्ध्यन्दिने भगो वेगन्तो भगवती रचुता ॥”

( मद्रवैकत पु० प्रकृति० ५४ भ० )

६ दक्षिणात्यमें प्रचलित भगवतीचिदाङ्कित पयोदा, स्वर्णमुद्रात्रियेय ।

भगवतीपुर—पडमा जिलेके मनोहरजाही परगणेके अन्तर्गत एक गण्डप्राम । यह शता० २३ ४२ उ० तथा देशा० ८८ ५ ३० पू०के मध्य विस्तृत है ।

भगवत् ( स० पु० ) भग पडै भव्यं अस्त्यस्त्य नित्य योगे मनुष्य, मन्थ व । १ ऐश्वर्योदियुक्त या यडै भव्यं सम्पन्न परमेश्वर । २ बुद्ध । परमेश्वर ही भगवच्छब्दवाच्य हैं । विष्णुपुराणमें लिखा है, नि विशुद्ध और सर्वकारणके कारण महाविभूतिनाली पदपाम हो भगवत् शब्द प्रयुक्त होता है । भगवत् शब्दके भ कारणके दो अर्थ हैं, पहला ये ही सर्वोके भगवत्कर्ता और सर्वोके चाचार हैं, दूसरा ग वाक्यका अर्थ समपिता, समस्त कामें और ज्ञान कल्या प्रापक और स्वच्छा है । समस्त ऐश्वर्य, धर्म, यज्ञ, धी, एता और वैराग्य इन छत्र नाम भग हैं । परम प्रद्वेषी यह भगवत् शब्द मार्यक होता है । दुर्गरी जगत् समस्त भयोग योगमें निर्भङ्ग होता है । भवोर्ध

मिल कर जिन सब जिलालिपि तथा तादृशशासनादिकी प्रतिलिपि पढते थे, उनकी जट्टा दूर करनेके लिये भगवान लाल मूलकालकका पाठ मिलाया करते थे। इसी उद्देशसे पहले सारे ब्रम्हई प्रातसे आरम्भ कर पण्डित भगवानलाल गुजरात, काठियावाड, उज्जयिनी, विन्दिगा, इलाहाबाद, मितरो, सारनाथ और नेपाल तक पहुँचे थे। वे केवल उक्त का प्रदेशोंमें जा कर चुपचाप बैठे रहे सो नहीं, धार्यानुसार उन्होंने पूर्व और पश्चिम राजपूताना, जयशालमीर तक सारी मरुभूमि, मध्यभारत मालव, भूपाल, मिन्देरान्य, मध्यप्रदेश, बागल, मरुवा, वाराणसी प्रभृति स्थान, उज्ज, विहार और उड़ीसा तथा उत्तरभारतके यूसुफजई जिलेके शाहवाजगढ़में पूर्व नेपाल तक हिमालय प्रदेशमें परिभ्रमण कर नाना स्थानोंके गिलाकालक और मुद्रादिकी प्रतिलिपिका पाठ तथा प्रथम मुद्रादिकी प्रतिलिपिका पाठ तथा प्रथम पत्र मुद्राका सप्रद किया था। इसके अलावा अपने भ्रमणकालमें प्राप्त विभिन्न जाति, धर्मसम्प्रदाय और ध्वंसप्राय सुप्राचीन कृति समूहका आमूल वृत्तान्त वे अपनी पुस्तकमें लिख गये हैं। १८७५-७६ ई०में इन्होंने अङ्गरेजी और ग्राह्य भाषाम शिक्षा प्राप्त की। अंगरेजोंभाषामें विशेष अभिरुचि नहीं होने पर भी वे वैज्ञानिक प्रथादि अतायास पढ़ लेते थे।

इस प्रकार प्रज्ञतत्त्वानुसन्धानमें रह कर उन्होंने जिलालिपिके पढ़नेमें विशेष दक्षता लाभ की। नेपालका काम समाप्त कर वे लौट ही रहे थे कि उसी समय १८७५ ई०की २६ थी मईको डा० भाऊदानजीकी मृत्यु हो जाने और उनके चरणधरोंके अर्थसाहाय्य अस्वीकार करने पर उन्हें सतन्त्रभाव तथा पाण्डित्यसे ऐतिहासिक सरसोंकी आलोचना करनेका अवसर मिला। १८७७ ई०से 'इण्डियन ऐण्डियवादी' और 'ब्रम्हई प्राच भाव साधन' पत्रियादिक सौसाइटीकी पत्रिकामें उनके लिखे प्रपञ्च प्रकाशित होने लगे। इन्होंने उक्त दोनों पत्रिका

में जो अद्भुत प्रयत्न किये थे उनमें बहुतसे मुख्यतः ऐतिहासिक मन्त्र आदि पत्र हुए हैं। इससे सिवा डा० कीर्तिमानकी आर्किवाजिकल सर्वे रिपोर्ट और 'ब्रम्हई गेजेटियर' नामक पुस्तकमें जो उन्होंने कई एक महामूल्य प्रपञ्च प्रकाशित किये।

१८८३ ई०में इन्होंने लन्डन यूनिवर्सिटीमें Doctor of Philosophy की उपाधि पाई। इसके कुछ दिन बाद ही वे Koninklijk Institut voor de Taal Landen Volken Kunde van Nederland Indische और Royal Asiatic Society of Great Britain and Ireland नामक दो समाजे अतिरिक्त मन्त्र चुने गए। डा० जॉर्ज, डा० फार्बेन, डा० सेनार्ट, डा० कोडिन, डा० वूलर और प्राफेसर कार्णै भादि महामना यूरोपीय पण्डितोंके साथ नव्यंदा पत्रपर्यटनमें प्रत्येक वर्ष सचवाय महामतका निर्दोषण देने थे। यहाँ नगरके अपने कालकेभर प्रान्तात्में सस्त्रज्ञ यूरोपीय अतिथिके समागम पर वे बडे ही आनन्दित होते और उन लोगोंके सन्देशपूर्ण प्रत्यतत्त्वानुसंधानफलके प्रत्येक उत्तरदातात्में उन्हें उपरत तथा तुष्ट करते थे। दुष्की बात है, कि ऐसे उद्यमशील भारतस ताने, भारत इतिहासकी गम्भीर गवेषणामें नियुक्त रह कर निम्न वृत्तकी लगाया, उनका सुमधुर फल और उन्हे अधिक दिन तक यहाँ भोगता पडा। १८८८ ई०की १६ मईको ४६ वर्षकी उम्रमें ही भयलीला शय कर स्वर्गधामकी चल् बसे ०।

आचान परित्यक्त करके भी वे कभी सांसारिक सुख स्वच्छन्दताम न कर सके। उनकी आर्थिक दशा उतारी अच्छी न थी। ऐतिहासिक गवेषणामें उनका मन्त्रिक आलोचित होने पर भी उन्हे उदरपूर्तिके लिये व्यतिथ्यस्त होता पडता था। वुलर माह (G. Bühler)का कहना है, कि जिस समय भगवानलालसे डाका परिचय हुआ था उस समय वे किसी ईशान्य घण्टिके आश्रितमें काम करने मध्या उसके हिस्सेदार थे। जीवन भर उन्हीं

० अन्वय और सन्दर्भार्थे निःशक्ति प्रत्येकी वस्तु-  
विद्यामें Jour Bom Brk, (S vol III 113 और  
vol VIII, IX XI भागमें इन कथाका उल्लेख किया है।  
Vol XV, 172

मातृक चार मद्र न पहले २७वीं जनवरीका इन्हीं कुञ्ज  
सादरका बनन दैय और तदधिक भूमिकाके कामें एक एक  
विशेष भाग विषयमें गुलाब-दोस्तान बुद्ध मद्र भागी था।



यज्ञो गान्धिका प्रदान की है। राजा कर्णके पुत्र विजोष, विजोषके अष्टमक, जन्मके समय, राक्षसे वैराटराज, वैराटके बंधुराज, बंधुके नक्षत्रदेश, नक्षत्रक्षेत्रे मनुष्यदेश, मनुष्यके चन्द्रपाल, चन्द्रपालके जिनमण, जिनके रोलिचन्द्र, रोलिके कर्मसेन, कर्मके रामचन्द्र, रामके यज्ञोदेश, ताराचन्द्र, यज्ञोदेशके ताराचन्द्रके पुत्र चन्सेन, पौत्र राजमिह और प्रवीर माहिदेश्य थे। इन्हीं माहिदेश्यके पुत्र भग य तदय विशेष विद्योत्साही और मज्जनप्रतिपालक थे।

**भगवन्तनगर—**अयोध्या प्रदेशके एहि मिथान्तर्गत एक नगर। प्राय दो मी वष हुए, सम्राट् आंग्रजके हिंदू डोया राजा भगवन्तनगर अपने नाम पर यह नगर स्थापित कर गए हैं।

**भगवन्ताराय—** भाषाके गद्य कवि। इन्होंने तुजसोदात्मश्च नामक रामायणके मानीं याहोंका कवित्तो में अनुवाद किया है। इनकी रचना अद्भुत है।

**भगवन्तसिंह गाचर—**गाजोपुरके एक हिंदू नरपति। इन्होंने राजद्रोहा ही कर कोरा पर अधिभार जमाया और पक्षके शासनरक्षा जासोसर गाँवके भगा दिया। अतमें वे रुद्धमें मारे गए। यह गबर दिहो पदुचने ही राजमन्त्री कमरहोतगान् अपने बहोईके हत्यापराधनका बदला चुनौतीके लिए उनके बिकर मुक्त यात्रा की; यितु युद्धमें हार ला कर वे जीट गए। मंत्रिपरके आदेशके फलका बादके नाराय महमद गौरी कोरा पर चढ़ाई की, यितु ये भी बिकर मारोया हो अपने राज्यमें लौट आये। अन्तमें दिहोभय द्वारा गहराच्य सुहोता उठ मुक्तके हाथ सौवा गया। तत्राव और राज्यमेंस्थीमें घोरवार लड़ाई छिया। युद्धकेमें विजोष योग्य दिना कर भगा त कोराके चौकाशर दुर्गा सिद्धके हाथमें मारे गए।

**भगवन्त (सं० लि०)** एकाधिकारिता, जो विभिन्नरूपमें भगवान्के ध्यानमें लगा हो, ईश्वरमें लयलीन रहने वाला।

**भगवत (हि० लि०)** भगवान् का।

**भगवानाश्व—** अयोध्या मिथान्तगत एक प्राचीन ग्राम। वहाँ गद्य प्रति प्राचीन भगव इष्टरूप्य और अयोध्यादिष्ट मंत्रिरेका निरुद्धा पाया जाता है। प्रान्तस्थपिडमण इस रूपकी ईंधां मत्र छत्रो जगतोके पहलेका वष हुआ दोवल्भूत जिया अनुमान कर्तो है।

**भगवानलाल इन्द्रजी—**न्यायप्रदात एक प्रजास्वयम्। इन्होंने अपनी विद्यापराकाष्ठाके लिए पण्डित तथा डाक्टर को उपाधि प्राप्त की थी। इनके पूर्वपुरुषमण सौराष्ट्र (सौराष्ट्र) के नवाब सरकारके अधीन काम कर भयगा देशीय राजन्यवर्गका सहायता पा कर विशेष प्रतिष्ठाप्राप्ती हुए थे। उक्त ब्राह्मण-यज्ञके प्राचीन प्रधानुमार सैजवा यस्थामें ही बालक भगवान्को सरस्वतभाषा सीगनी पडी। इसके अलावा उन्हें विद्यायके निर्दिष्ट पाठ्य अध्ययन करने पड़ते थे। अपनी धीमातिके प्रभावसे और असाधारण अध्ययनभावसे वे शीघ्र ही साहित्य, काव्य, दर्शन तथा शास्त्रमूत्रक सभ्यता प्रत्यादिमें वार दर्जो हुए। शान्तिके साथ साथ उनकी ऐतिहासि अनुगोल्नी शक्ति भी दिनों दिन बढ़ती गई। स्वदेशस्थ गिनर पर्यंत पर छिपी हुई प्राचीनतम गौरवकी सिंधीकी ऐतिहासिक धुतिक भयउभय कर वे प्रसन्नस्वयिपवष यधेष्ट अनुसन्धानका परिचय दे गये हैं।

बाल्यकालसे ही उनके हृदयमें यह अनुमन्धिस्ता प्रवृत्ति प्रबल हो उठी। उस समयकी आंतरिक धृदा तथा भक्तिके कारण ये गिनर-पर्यंत पर चढ कर प्रायः इधर उधर भ्रमनेमें ही समय बिताता थे। पर्यंतके ऊपर सम्राट् अंगोस्को प्रशस्ति और कद्रदान तथा स्वल्गुन की सामयिक मिलान्धि सिद्धि देग कर उनके हृदय में बड़ा ही कीतुल्य उत्पन्न हुआ। प्रान्तगतमें गौरी हुई उस विचित्र ऐषमात्रका समावेश देग कर पढ़ने में मन्मथ हो गए। उमे पढ़ने पर मन्मथता उमने कीई शर्लकिक नरच आयाटन हो सकता है, यही चिन्ता उनके सुषुमार हृदयमें निम्नर जागदर रही। धीरे धीरे ये प्रिसेग साहस्य 'भारतीय अक्षत मान्धिवा' सम्रद पर उत्तीको सहायतामे उसे पठ 'जनमाधारणकी' ममथा देगेमें ममथे हुए। बालकको इस अद्भुत प्रतिभाको देग कर फार्पिस साहब (Mr. Kimloch Ior ks) ने भगवानकी पण्डितकायमे नियुक्त करनेके लिए डा० भाऊदासोमे विशेष अनुरोध किया। तद्गुमार के १८६१ ई०में भाऊदासो पण्डितके अपान रद कर प्रान्तसरगुसिचरताके प्रान्तोषमें भयनर हुए। डा० भाऊदासो और पण्डित गोमरपायडुग पक्ष साथ

भगवानमित्र-द्वन्द्वलये प्रथम तथा प्रथम कानूनगो ।  
 काठोपाये निरुद्धरत्नीं पृथुदिशेके मित्रवज तथा उत्तर  
 राष्ट्रीय कायस्थ कुत्रमें इनका जन्म हुआ था । भगवानके  
 बाल उनके छोटे भाई यदुविनोद बहुत दिनों तक कानूनगो  
 पर प्रतीष्ठित रहे । विनोद उदार प्रवृत्तिके मनुष्य थे,  
 आत्मीय स्वजनका प्रतिपालन करना उनके जीवनका महा  
 धर्म था । उनके ही मानगुणसे मित्रवजने 'यद्गाधिकारी'  
 आख्या प्राप्त की है । उनके रचनामञ्जिहिन विनोदनगर  
 और औरद्वारा परगना यद्गाधिकारीयजकी प्राचीन  
 भूमिपति है ।

भगवानसिंह-नाभावशके परक राजा । नामा देगे ।  
 भगवेदन ( स० लि० ) ऐश्वर्यं शापक ।  
 भगदास्य ( स० श्लो० ) भगव्यापारशोधरु शास्त्र मध्य  
 पदलोपि कर्मघा० । कामशास्त्र ।  
 भगम् ( स० श्लो० ) भग, योगि ।  
 भगहन ( स० पु० ) भग चेत्ये सहारखाने हन्ति इन  
 कियप् । विष्णु ।  
 भगहारो ( स० लि० ) गिय, महादेव ।  
 भगासिंह ( स० लि० ) गिय ।  
 भगाहू र ( स० पु० ) भगे गुहास्थाने अक्षुर इव । जर्मी  
 रोग, वयासोर ।  
 भगाधान ( स० श्लो० ) भगस्य व्याधान । १ माहात्म्याधान ।  
 २ सौभाग्य ।

भगाता ( दि० कि० ) १ किसी दुमरेकी भगानेमें प्रवृत्त  
 करना, वीडाना । २ हटाना, राडेडना ।  
 भगात् ( स० श्लो० ) भजति सुखदुःखादिय कर्मजन्य  
 मनेगति भज्यतेऽनेनेति वा भज ( पीयूषाण्यम् ) कान्ति  
 उप् ३।०६ इति बाह्वृत्कान् भजेरपोति उज्ज्वदत्त  
 इति कालन्, स्पृष्ट्वाद्रित्वात् कुटवश्च । नृकरोदि,  
 आदमोषो घोषडी ।

भगालिन् ( स० पु० ) भगात् नृरपाल भूयतयेतस्त्व-  
 न्यपि इति । १ नृकपाधारी, आदमीको शापडी  
 धारण करनेवाला । २ गिय, महाद्व ।

भगात् ( स० पु० ) प्राचीन कालका एक अग्र ।  
 भगिगो ( स० स्त्री० ) भगं यत्नः पितृदितो द्रव्यदाने  
 विद्यतेऽस्या इति इति, ततो डोप् । १ सहोदर, बहन ।

भग योगिरम्या भस्तीति भग इति डीप् । २ स्त्रीमात ।  
 मनुमें लिगा है, कि पर स्त्री अथवा जिन स्त्रीके साथ  
 किसी प्रकारका सम्बन्ध नहीं है, उसे भयति, सुभगे या  
 भगिनिसे सम्बोधन करना उचित है ।

"परत्वा तु या स्त्री न्यादसम्बन्धा च भोति ।  
 वा प्रयाद्भार्यास्वर्गं पुमं भगिनीति च ॥" ( मनु २।१२६ )

भगिनोपनि ( स० पु० ) भगिन्या पतिः । स्वसृगत्त,  
 बहुभोई । पयाथ-आयुक्त, भाय ।

भगिनीय ( स० पु० ) १ भगिनी सम्यग्धीय या भगिनी  
 जान पुत्र । २ भगिनेय, भाग्यज्ञ ।

भगीरथ ( स० पु० ) भ ज्योतिष्य मरुत्तं गार्गं मय  
 तत्र रथ इन्द्रियाणि रथ इव यम्य । सूर्यवनीय नृपभेद ।  
 ये सूर्यवनीय अशुमानके लक्षके, दिलीपके पुत्र थे ।  
 कर्पिके शापसे जल जानके कारण सम्यग्धीय  
 गार्गाओंने गंगाकी पृथ्वी पर लानेका बहुत प्रयत्न किया  
 था, पर उनका सफलता नहीं हुई । अन्तमें भगीरथ  
 योगतपस्या करके गङ्गाको पृथ्वी पर लाये थे । इस  
 प्रकार उन्होंने अपने पुत्रगामोंका उद्धार किया था । इसी  
 लिये गङ्गाका एक नाम भगीरथी भी है ।

( मत्स्यपु० १० म० सर्गा० १४२, ४३, ४४ ६० )  
 गङ्गा और भगीरथी दणो ।

( लि० ) २ भगीरथकी तपस्याके समान भारी,  
 बरत बडा । जैसे भगीरथ प्रयत्न ।

भगीरथ अग्रमिथ-एक विष्णवान् टीकाकार । ये पौत्रमुण्डी  
 घटोप धीर्हर्षदेवके पुत्र और कल्मष पण्डितके च शपथ  
 थे । पुर्माचलाधिप जगन्नाथके आश्रयमें रह कर इन्होंने  
 अष्टौ प्रतिष्ठा प्राप्त की थी । ये काव्यादर्भटीका, शिवाता  
 सुभाषटीका, विजयादेवोपाहाटीका, वैगधीयटीका,  
 महिषस्तयटीका, कृष्णदीपिका नामक मेघदूतटीका, जग  
 न्नाथदीपिका नामक रघुपट्ट टीका और जिशुगान्धर्षकी  
 टीका लिग गये हैं ।

भगीरथमिथ-यद्गमान्गवर्धन न्याय लोकायतीकी टीकाके  
 रचयिता ।

भगीरथमेय-एक प्रथमाद, ये रामचन्द्रके पुत्र और  
 जयदेवके पौत्र थे । लोग इन्हें भगीरथ ठकुर भी  
 कहा करते थे । जयदेव पण्डितके निरुद्ध इहोभे विद्या

कार्यमें लिप्त रह कर ये अपना मस्तारिफ़ कार्यं प्रगति में । मन्मोघत स्वाध्याय प्रवृत्तिके लक्ष्यप्राप्ती होने पर भा उन्होंने बर्मा में गवर्मेण्टके अधीन काम करना स्वीकार नहीं किया । परई बार ये बार्गोज और कैम्पेय साहबके अनुरोधसे बम्बई गैजेटियर परिषदाके स प्रदकार्यमें लगे थे । इनके अगत्या काठियावाड प्रभृति क्षेत्रोंय राजाओं की बदान्यनामे उन्हें विशेष कष्ट भोगना पडी पडा । मृत्युके पहले ही उन्होंने अपना स गृहोत प्राचीन मुद्रादि वृष्टिा म्युजियममें दे दी थी ।

**भगवान गोला**—बङ्गालके मुजिर्दाबाद जिलान्तर्गत गङ्गा नदीके किनारे एक धार्मिज्य स्थान । यह अक्षा० २४ २०' ३०" और देशा० ८८ २०' ३८" पूर्वके मध्य कल्कत्ते से ६० कोस उत्तर आस्थित है । नये और पुताके भेद से इसी नामके दो ग्राम इहाँ कौसकी दूरी पर बसे हैं । मुसलमानी अधिकारसे पुगने ग्रामका सग मुजिर्दाबाद का धार्मिज्यकेन्द्र था और गंगाको बाढसे डूब जाने पर भी अभी यहाँ बहुत से मत्पुय इकट्ठे होते हैं । यहां पुन्नीस रहती है । दूसरे समय जब नदीकी जलगति परिवर्तित हो जाती है, तब मत्पुय नये नगरमें चले आने हैं । कारण, उस समय पुतने भागमें पण्यवाही नौवादि नदी आजा सकती ।

श्रीभामिहके विद्रोहवा क्षम करनेके लिए बादशाहो सेना जब बङ्गालकी ओर बढ़ी तब विद्रोहिनीला शहीम ग्राहने इसी भगवान गोलाके निकट समावेश हो कर जयरदत्त थां और बादशाहो सेनाके विरुद्ध घोरतर युद्ध किया था ।

**भगवान दास**—एक निष्ठावान् वैष्णव साधु । एक समय राजाके आशा घोषित कर दी, कि जो कोई वैष्णव तिलक और तुलसी माला धारण करेगा, तीन दिन बाद उनका मिर काट लिया जायगा । इस कठिन दण्डनाको सुनने ही अनेकियोंके मनमें भय उत्पन्न हुआ और उन्होंने कण्ठो तथा तिलकका परित्याग किया । किन्तु भगवानदासने उस प्रमादकालमें मृत्युका निश्चय जान सारे शरीरमें तिलक लगा लिया । तीन दिन बाद राज-समर्थाचारोग्य उन्हें परकृष्ट कर राजाके समीप ले गये । अनन्तर राजाने उनकी विनाश भक्ति निष्ठासे स प्रष्ट हो कर उनकी छोड दिया । ( भक्तमल २५ )

**भगवानदास (राजा)**—अनन्तराधिपति राजा विद्याभिमदके पुत्र और पुत्रगमनापति राजा मानसिहके पिता । ये राज्य गृह घणके थे । १६६ ई०में सछाट अक्षरग्राह जय भञ्ज मेर देशमें गये, उस समय पिता और पुत्र दोनों मिल कर सछाटसे आश्रय मागा था ।

१८० ई०में सर्पलके समीप इस्लामि हुमायुनियोंसे साथ युद्धके समय उन्होंने अक्षरग्राहकी जान बचाई थी । अनन्तर वे राजा अमरसिंहको दिल्लीमें पकृष्ट लाये और इसीसे उनकी यज्ञ भवति चारों ओर फैल गई । सछाटके राज्यकालके नैरहयें वर्षमें कच्छग्राहगण उका तुमुत्र पञ्जाब ले गये, तदनुसार राजा भगवान दास भी उक्त प्रदेशके शासनपत्ता बनाये गये । २४वें वर्षमें भगवानकी कल्याके साथ सछाट-पुत्र सन्तोसका विवाह हुआ । ३३वें वर्षमें ये पान हजारी सेनानायक और जायल्लौरस्थानके शासनपत्ताके पद पर अभिषिक्त हुए । रौराबादमें रहनेके समय उनका मस्तिष्क सञ्जा हो गया और उन्होंने आन्तानाजकी इच्छासे अपने शरीरमें अत्याघात किया । अनन्तर आरोग्यप्राप्त करने पर उनके परिवारवर्गके भरणपोषणके लिए सछाटने (३३वें वर्षमें) बिहारमें एक जागीर प्रदान की और मानसिह यहाँके राजप्रतिनिधि बनाये गये ।

१६८ दिजरीमें राजा टोडरमलकी मृत्युके बाद ही लाहौर नगरमें उनका देदान्त हुआ । प्रयाद है, कि टोडर मलकी अन्वेषिष्टियाके बाद वे घर लौटने ही मृतपृष्ठ रोगमें आक्रान्त हुए और इसके पात्र दिन बाद ही १५८६ ई०की १५वीं नवम्बरका उन्होंने मानवलीला संस्करण की ।

उनकी मृत्युके समय सछाट कायुलमें थे । उन्होंने यहाँ से बङ्ग विहागके अधिपति हुमाय मानसिहके ऊपर राजाकी उपाधि और गांध हजारी सेनानायक का पद धर्षण किया । राजा भगवानदासने अविन कायमें लाहौर नगरकी हुमाय मानसिह बनावाई ।

● राजा विद्याभिमदने अपनी कन्या दे कर अक्षर ग्राहके साथ पुत्रसंवा दृष्ट का । रामपुत्रीके हत्येन ही कन्य परसे गुण्यवर्गमें कर्मान नीचरी कर की । विहारगिर्य देना ।  
 + राजकुम मृतक इह राजकुम-राजाक एकमात्र पुत्र ।

कहते हैं। इनमेंमें चर्णित, छिन्न, अनिपातित और मज्जायु-  
गन शूल साध्य हैं। एज, गूद, क्षीण और क्षयरोगी  
पुष्ट और श्वास रोगियोंके मधिभङ्ग होनेसे यह कष्टसाध्य  
समझा जाता है।

निसका कपाट बिलकुल फट गया हो तथा कटि  
देगकी सन्धि मुक्त या भ्रष्ट हो और जघनदेश प्रतिषिद्ध हो  
गया है, उसके जीवनकी कोई आशा न रखें। चिकि-  
त्स्य ऐसे रोगियोंका परित्याग कर दें। जिसके कपाट  
की अरिध विकृष्ट और ललाट चूर चूर हो गया है,  
स्नन, शङ्ख, पृष्ठ और मस्तक टूट गया है तथा जिसकी  
अस्थि और मन्धि स्थान पहलेसे ही घिड़त हो गया है,  
वैने रोगीके भी जीवनकी आशा न रखें, चिकित्सकके  
लाभ प्रयत्न करने पर भी वह आरोग्य नहीं हो सकता।

(गुह्यत १० १५ अ०)

इस रोगको चिकित्साके सम्बन्धमें निम्नलिखित  
प्रकरणोंके प्रति विशेष लक्ष्य रखना फर्त्तव्य है।

अत्याहारी, अमिताचारी, अथवा वायुगटित व्यक्तिके  
भन्नरोग होनेसे अथवा भन्नरोगमें किसी प्रकारका उपद्रव  
होनेसे वह यद्यो मुक्तिफलसे आरोग्य होता है। मैयुन,  
स्युनाप, व्यायाम, अथवा रुद्ध अन्नका भन्नरोगीको कदापि  
सेवन नहीं करना चाहिये। अभिर चिकित्सकको चाहिये  
कि वे भन्नरोगीको पालि धान्यका तण्डुल, मास रस, दुग्ध,  
घृत, छोटे मटरका जूस तथा अन्यान्य पुष्टिकर आहार  
पानेकी दे। मधुशु, उडुश्वर, अश्वत्थ, पलाश, अर्जुन,  
यगसात अथवा यदके स्वकृष्णभन्नस्थानमें प्रलेप दे कर उसे  
बाध दे। मज्जिष्ठा, यष्टिमधु अथवा रक्तचन्दन या घृतकी  
ग्री वार घो कर पिष्ट जालितण्डुलके साथ पिला कर  
प्रलेप देनेसे भन्न आरोग्य होता है। हेमन्त और शिशिर  
कालमें प्रति ७ दिनोंके अन्तर पर, शरत् और घसन्त  
कालमें ५ दिनोंके अन्तर पर तथा आग्नेय ऋतुमें प्रति तीन  
दिनोंके अन्तर पर प्रलेप बदल कर फिरसे बाध देना  
उचित है। भन्न स्थानमें कोई द्रव्य होनेसे वाचनको  
पोल कर फिरसे बाध देना आवश्यक है। उस कृष्णके  
निधित होनेसे सधिस्थापन स्थिर नहीं रहता। यथा  
इद होनेसे वह जगद सूज जाती और वेदा होता है।  
पीछे वह स्थान पक्क जा सकता है। भन्न रंधन इस

प्रकार रहता चाहिये कि किसी प्रकारकी तकलीफ न  
मालूम पड़े। न्यप्रोधादिका शीतल पशय उम यथा  
स्थान पर मोंय दे। भङ्गस्थानमें धेदना मान्द्रम होनेसे  
पञ्जसूरीके साथ दुग्धको पाक कर उस दुग्ध मधया  
चकतीका उम पर मेष दे। काल और द्रव्यका विचार  
कर द्रव्यन औषधके साथ मेष और प्रत्येक शीतल  
अन्यथायें भङ्गके ऊपर प्रयोग करना उचित है। बराद  
या शूकरके दुग्धको घृत और मधु और भीषके  
साथ पका कर जब घट डंडा हो जाय, तो उसे  
लाक्षारसके साथ भन्नरोगीको मधेरे पानेकी दे। भङ्ग-  
स्थानमें फोडा होनेसे उममें प्रतिनारणीय द्रव्यका प्रचुर  
परिमाणमें घृत और मधुके साथ मेष दे तथा यथाविधि  
भङ्गकी चिकित्सा करे। बालकको अस्थि या मधि  
भङ्ग सहजमें आरोग्य होता है। किसी रोगीके यह  
भङ्गरोग यदि अन्यद्रव्यनिष्ठ तथा शिदार कालमें हो,  
तो गचपनमें एक मासमें और सुदापेमें तीन मासमें  
मधि टूट हो जाती है। भङ्गस्थानकी अस्थि टूटो हो  
जानेसे उसे उन्नमित और उन्नमित होनेसे उसे अथनमि  
करके घघन करे। अन्धि यदि मन्धिस्थानसे हट जाय,  
तो उस स्थानको अच्छी तरह गोंय कर भन्न अन्धिके  
साथ मिला देना उचित है। मन्धिस्थानसे अस्थिके  
अधोगत होनेसे उसे ऊपर उगत करके पोत्रे कथन और  
लेपादिका प्रयोग करे।

प्रत्यङ्ग भङ्गकी चिकित्सादि गोत्रे लिखा जाती है।  
नपनमधि उत्पिष्ट हो कर रक्के सञ्चित होनेसे भारा  
नामक जत्रद्वारा उम स्थानको मधित कर सञ्चित रक्त  
बाहर निकाल दे। पीछे उममें पीसे हुए जालितण्डुलका  
लेप दे। उगर्ग टूटने वा संधिविद्विष्ट होनेसे सधि  
स्थानकी सममायमें स्थापित करके उसे बारीक कपडे-  
से लपेट दे और ऊपरसे घोंका मेष दे। जाय या उसके  
नग होनेसे उसे शीघ्रमायमें घोंच कर सधिस्थान पर  
पूजों प्रकारसे दृशनी छाल रग दे और ऊपरसे बारीक  
कपडे द्वारा घघन कर दे। बटोके भङ्ग होनेसे कटीके  
ऊद और अधोभागकी शींच कर सधिभागकी अर्धो  
स्थानमें संयोजित करे। मधिकी अर्धे स्थानमें  
संयोजित करनेमें घस्त्रिकिया करनी होती है।

सोपानो धी । निरुपायनीप्रमत्त व्याख्या, श्रुत्यप्रकाशिका, श्यायवृक्षमुमाप्रतिप्रकाश प्रकालिका और श्यायनीलावती प्रकाशव्याख्या नामक श्यायवृक्ष इत्ये कनापे हुरे लिखे हैं ।

भोगेन्द्र ( हि० वि० ) १ भागा हुआ, जो कहींसे छिप कर भागा हो । २ जो काम पड़ने पर भाग जाता हो, कायर ।

भोगेन्द्र ( हि० वि० ) भोगेन्द्रगो ।

भोगेयित ( म० वि० ) ध्यायिष्य रहस्ययुक्त ।

भोगेन ( म० पु० ) भगव्य ईज ६ तत् । ऐ-उर्यादि के ईभ्य ।

भोगेन ( हि० वि० ) १ भागा हुआ । २ भागनेवाला, कायर ।

भोगेन ( म० पु० ) भागान् नरुपाणा नभग्यसमुद्देश विरिज गोलाकार वक्ष्य । भयङ्ग, भयचक्र ।

गणेश उगो ।

भोगेन्द्र ( हि० वि० ) भागोक्तो उद्यत । २ कायर । ३ भेदने रगा हुआ, भगया ।

भोग्य ( हि० वि० ) जो विपत्ति देय कर भागता हो, कायर ।

भोज ( म० वि० ) भोजन, सङ्गान्, विद्विष्टस्वान् तथात्वं । १ पचाजित, जो हास या हसया गया हो । २ चूर्णित, टटा हुआ । ( ली० ) अत्यन्त आमर्षसे विद्विष्टयत्ने इति मञ्जु क । ३ रोगविशेष । हृदयके स्थानमनुन होने कथया टटनेसे शरीरमें जो व्याधि उत्पन्न होती है, उसे भोजरोग कहते हैं । सुशुम्में इसके चिदादि इस प्रकार लिखे गये हैं—उद्य स्थानसे पतन प्रहाय, आशोषण, दिक्प्रसुके दुग्धन आदि गाना कारणोंसे अस्थि और अस्थिमर्षि भग्न हो जाते हैं । एक सन्धिस्थानसे दूसरे सन्धिस्थानके मध्यवर्ती अस्थिगण्ड की काट्ट कटने हैं । इस प्रकारको दो काट्टास्थि त्रिस संयोगस्थान पर सायउ है, उगीका नाम अस्थिमर्षि है । प्रपातन अशरोग दो प्रकारका है—स चिमद्ग ( Dislocation ) और कण्डभद्ग ( Fracture ) । कारण भेदसे स चिमद्ग ३ प्रकारका है—उरिवट, विच्छेद, विरक्ति, तिघमग्न, क्षिप और अघोमग्न । साधारणत एव उ प्रकारके सन्धिभग्नोमें ही भद्गवा

प्रसारण, भाकडा, परिवर्तन, आशोषण, और इनमन विपेय तथा काट्टकात्में उत मन्व दार्ढ्यकी उत्तिहोताका शेष, अतिशय यालता और शर्मा करनेसे असहा येदना या अनुभव होता है ।

स पिक्के उत्तिष्ट होनेसे शोनों हो पाण्डं मूत्र जाने हैं और साथ साथ येना भी होती है । विशेषत रातको यह येदना और भी पष्ट जाती है । मधिके विच्छेद होनेसे घोड़ी मूत्रा और मजन येदा तथा स पिक्की विरति होती है । सपिके विरक्ति होनेसे भद्ग विरत और शोनों वाधमें तोय येदना मादुम होती है । तिर्णंग गत होनेसे भी इसी प्रकारको येदाया अनुभव होता है । मधिके अस्थिके विक्षिप्त होनेसे शूलान्क येदना और अघोमद्ग होनेसे येदना तथा मधिके विरतन होता है ।

काट्टभद्ग साधारणत १० प्रकारका है—१ चर्दक, २ अश्वकर्ण, ३ चूर्णित, ४ विक्षित, ५ अस्थिव्यस्तित, ६ काट्टभद्ग, ७ मज्जानुग, ८ अतिपातित, ९ घन, १० छिप, ११ पाटिन और १२ स्फुटित । इस रोगमें अश्वर अतिशय शयथु, स्पन्दन, विषसंन, शर्मा परीये असहा येदा, शीघ्रनेमें शूलानुभव तथा भद्गसमूह अन्त और गाना प्रकारकी येदना आदि लक्षण दिग्गमें लेते हैं । येसो अश्वघाममें नेगी कर्मा भी सुगणाम नदी कर मकता ।

१ अस्थिगण्डके शोनों और टट कर मध्यस्थानमें प्रथिकी तरह उगत हो जानेसे उमकी कर्दक, २ शोनों भद्गास्थि घोडेके शानकी तरह उगत हो जानेसे अश्व कण, ३ अस्थिके चूर्णित हो जानेसे चूर्णित, अतिशय शूल और अधिक मूत्र जानेसे विरिजत, शोनों वाधकी छोटी हृदयिक उत जानेसे अस्थिव्यस्तित, ६ प्रसारण करनेमें कथिया होनेमें काट्टभद्ग, ७ शिगी अस्थिगण्डके अस्थि मध्य प्रदेत कर मज्जानो बिद्ध करनेमें उसे मज्जानुग, ८ अस्थिके घनो तरह छिप हो जानेसे अतिपातित, ९ अस्थिके कुष्ठ गक हो कर भद्ग या विच्छेद होनेमें वर, १० अस्थिके भद्ग हो कर एक काट्टमें कुष्ठ लगे रहनेमें छिप, ११ गाना प्रकारके विरक्ति हो कर येदनाविच्छेद होनेमें पाटिन और १२ शूलान्कके सद्ग सूत्र आंगमें उमकी स्फुटित

कहते हैं। इनमेंसे चर्णित, छिन्न, अतिपातित और मज्जातु गत शब्द माध्य हैं। एग, गुड, क्षौण और क्षयणगी पुष्ट और श्वास रोगियोंके मन्थिमज्जा होनेमें यह ऋष्टमाध्य समझा जाता है।

जिसका कपाल विलकुल फट गया हो तथा यदि देशकी सन्धि मुक्त या भ्रष्ट हो और अघनदेश प्रतिपिष्ट हो गया है, उमरे जीवनकी कोई आशा न रखें। चिकित्सक ऐसे रोगियोंका परित्याग कर दें। जिसके कपाल की अन्धि विकिम्प और ललाट चूर चूर हो गया है, स्नान, शर्दू, पृष्ट और मस्तक टूट गया है तथा जिसकी अन्धि और सन्धि स्थान पहलेसे ही विरत हो गया है, वैसे रोगीके भी जीवनकी आशा न रखें, चिकित्सकके लाव प्रयत्न करने पर भी यह आरोग्य नहीं हो सकता।

(सुश्रुत १० १५ अ०)

इस रोगकी चिकित्साके सम्बन्धमें निम्नलिखित प्रकरणोंके प्रति विशेष लक्ष्य रखना फलदायक है।

अत्याहारी, अमिताचारी, अथवा घायुप्रति व्यक्तिके मन्थरोग होनेमें अथवा मन्थरोगमें किसी प्रकारका उपद्रव होनेसे यह बड़ो मुश्किलमें आरोग्य होता है। मैथुन, सूचनाप, श्यायाम, अथवा रुक्ष अन्नका मन्थरोगीको कदापि सेवन नहीं करना चाहिये। अमिश्र चिकित्सकको चाहिये कि वे मन्थरोगीको पालि धान्यका तण्डुल, मास रस, दुग्ध, घृत, छोटे मटरका जूस तथा अन्यान्य पुष्टिकर आहार गीको दे। मधुर, उडुम्बर, अम्बुद, पलाम, अर्जुन, यशसाक्ष अथवा कटके त्वक्का मन्थस्थानमें प्रलेप दे कर उसे बाध दे। मजिष्ठा, यष्टिमधु अथवा रक्तचन्दन या घृतको भी बार घो कर पिष्ट जालितण्डुलके साथ पिला कर प्रलेप देनेसे भग्न आरोग्य होता है। हेमन्त और निगिर कालमें प्रति ७ दिनके अन्तर पर, शरत् और यमन्त कालमें ५ दिनके अन्तर पर तथा शीत ऋतुमें प्रति तीन दिनके अन्तर पर प्रलेप बदल कर फिरसे बाध देना उचित है। भग्न स्थानमें कोई क्षौण होवेसे यन्थनको गोल कर फिरसे बांध देना आवश्यक है। उस ऋतुके निधि होनेमें मन्थिस्था स्थिर नहीं रहता। यथन टूट होनेमें यह जगद सूत जाती और वेदा होती है। पाछे यह स्थान पक जा सकता है। भन यथन इस

प्रकार रहता चाहिये कि किसी प्रकारकी तरलीक न मालूम पड़े। न्यग्रोधोदिका शीतल वशाथ उम यथन स्थान पर मौच दे। भङ्गस्थानमें धन्ता मालूम होनेमें पञ्जमूर्तिके साथ दुग्धको पाव कर उम दुग्ध भयया चकतीयथा उम पर सेक दे। काल और क्षौण विचार कर क्षौण औषधके साथ लेक और प्रत्येक शीतल अस्थानमें भङ्गके ऊपर प्रयोग करना उचित है। बराह या शूकरके दुग्धको घृत और मधु औषधके साथ पका कर जब यह ठंडा हो जाय तो उसे ल्याारमके साथ मन्थरोगीको सर्वेरे पीनेको दे। भङ्गस्थानमें फोडा होनेमें उममें प्रतिसारणाय श्रथका प्रसुर परिमाणमें घृत और मधुके साथ सेक दे तथा यथाविधि भङ्गकी चिकित्सा करे। बालकको अन्धि या सन्धि भङ्ग सादनमें आरोग्य होता है। किसी रोगीके यह भङ्गरोग यदि अल्पदेशविशिष्ट तथा निदान कालमें हो, तो नचयनमें पर मासमें और पुद्गापेमें तीन मासमें सन्धि टूट हो जाती है। भङ्गस्थानकी अन्धि टूटो हो जानेमें उम उन्नमित और उन्नमित होनेमें उसे अयागिा करके यथन करे। अन्धि यदि मन्थिस्थासे हट जाय, तो उस स्थानको अच्छी तरह गोंच कर भग्न अस्थिके साथ मिला देना उचित है। सन्धिस्थानमें अन्धिके अधोगत होनेसे उम ऊपर उन्नत करके पांचे यन्थन और लेपनादिका प्रयोग करे।

प्रत्यङ्ग भङ्गकी निरिस्तादि गोत्रे त्रिया जाती है। नचसन्धि उन्विष्ट हो कर रखके सञ्चित होनेमें आग नामक शस्त्रद्वारा उम स्थानको मथित कर सञ्चित रज बाहर निराल दे। पीछे उसमें पीने हुए जालितण्डुलका लेप दे। उगन्त टूटने या सन्धिस्थान टूटनेमें सन्धि स्थानकी समन्तायमें स्थापित करके उसे शरीरक फण्डेसे लपेट दे और उपरने घोषा सेक दे। जाण या उसके भग होनेमें उसे क्षौणमाथमें खोंच कर सन्धिस्थान पर पूर्वोक्त प्रकारमें यक्षीरो छाल रग दे और ऊपरमें शरीरक फण्डे द्वारा यथन कर दे। कटीके भङ्ग होनेमें कटीके ऊर्ध्व और अधोभागकी रीच कर सन्धिभागको भरने स्थानमें म योजित करे। सन्धिके अपने स्थानमें सयोजित करनेमें पल्लिमिया कर्तव्य होती है।

पादपत्रकी अस्थिसे नङ्ग होनेसे रोगीको मरना करके धारि मान्जि करे। पीछे दक्षिण या वाम पादकी भङ्गास्थिपर ऊपर प्रत्येक बीच दे। गुप्त अस्थिसे गण टूटने हो, पर टूटने हो और रक्त निरगत हो, तो उस दातको धरुणों तरह घेडा दे और बाहरसे सधातोय द्रव्यका मोतल धालेया प्रयोग करे। पूछके दात टूटनेसे पद कृपापि नहीं घेडना।

अधिर कालकी मधि यदि विगिण्ट हो जाय, तो स्नेह प्रयोग करके स्वेद दे तथा सुदु प्रक्षिया करे। काण्डमङ्ग हो कर यदि निरगत भावसे मलिन हो भर जाय तो फिरसे समनायमें मलिन कर उमका प्रयोकार करे। प्राये मध्य शुभ अस्थि रहनेसे उसे निकाल कर फिरसे मयत कर दे। अंगेरका ऊदुधवेद (मस्तिष्क) टूटने पर कर्णपूरण घृतपात्र और नस्य उपकारक है। किसी प्रनासाके टूटने पर अनुपासना कर्त्तव्य है।

( शुभ्रत निधि ० भ० )

भावप्रकाशमें इसकी विदित्माका विषय इस प्रकार लिखा है—वपुलकी छात्रके चूर्णकी मधुके साथ पाननेसे तीन दिनेके अन्दर टूटी हुई हड्डी जुड़ कर यम मृदुन हुड हो जाती है। इसकीके फलकी पीम कर तेज और मीमीरके साथ मित्रा कर स्वेद देनेसे टूटी हुई हड्डी पहलीके तरह जुग जानी है। पहलीके गायके दूधकी काशेय्यादिगण द्वारा पाय करे। पीछे उंडा होने पर उसमें घृत और लण डाल दे। सपेरे इसका पान करनेसे भङ्गटोग जाता रहता है। अस्थिसहाय, लाक्षा, गेहूँ और आकको छाल, इन्हे एक साथ हो या पृथक् पृथक् घृत या दुधके साथ पान करनेसे विमुक्तबंधि और अस्थिमङ्ग जुट जाता है। नदरूल, मधु, लाक्षा, घृत और चांभोरके एक साथ पीम कर गणोमें सब प्रकारका मङ्ग भरोष्य होता है। अनुज और लक्ष्मणुर्ण, घृत और गुग्गुलुके साथ देहा करके पीछे दुध और घृत मोक्षा करानेसे मङ्ग संबोजित होता है। पिडपाके मूलकी मूर कर मास इसके साथ गणोमें तीन सप्ताहके अन्दर अस्थिमङ्ग जाता रहता है। अनाया इसके अनायासुमुल, लक्ष्मणुमुल और कर्पूर आदि धीरध विरेच उपकारी है।

भङ्गटोगीको लपण, कटु, शार्द, बन्ध, कृषद्वय, परिधन, स्वस्तङ्ग धीर अथापम आदिवा परित्याग करना चाहिये। भायप्रकाशादि वैद्यक प्रयोगमें इसका गिस्तन विस्तार लिखा है, विस्तार होनेके भयसे यदा पर संक्षेपमें लिखा गया।

भनपूत ( सं० पु० ) रणदीर्घसे हाथ कर भागो हुइ यह सेना जो राजाको पराजयका समाचार देने आती हो।

भनपाद ( सं० श्लो० ) १ कलितज्योतिषके अनुसार पुन र्गंध, उल्लापादा, हृत्तिरा, उतरफाल्गुनी, पूर्णमासपर और विनाया ये छः नक्षत्र। इमेंमें किसी एकसे मनुष्यके मनेसे दिपाद क्षेत्र लगाया है। इस क्षेत्रकी जालि अर्थात्कालके अन्तर हो करकेया विपार है। २ यह निमके पैर टूट गये हों।

भनपाकर्ष ( सं० श्लो० ) भनपाटं शूर। पुत्रराय छः नक्षत्र। भनपाट देखो।

भनपृष्ठ ( सं० पु० ) भनपृष्ठम्वित। १ सम्भुग। २ मुदित मरुदण्ड। ( श्लो० ) भनं पृष्ठ यस्य। ३ भनपाको पीठ टूट गई हो।

भनप्रयम ( सं० पु० ) भनः प्रक्रमो यः। काण्यग वाष्य क्षेत्र भेद। दाण इन्द्र देवो।

भनप्रधमता ( सं० स्त्री० ) वाष्यका क्षेत्र, रचनाका मम मङ्ग।

भनसंधि ( सं० पु० ) भनः संधिलताममाहु या। संधि स्थान भङ्गटोगविशेष। भन घण दणा।

भनसंधिक ( सं० श्लो० ) भनो विदित्ठ संधि मंगा तोड्ड। तर्क, महा।

भनता ( सं० पु० ) १ मूल द्रव्यका विभाग या भाग। २ गणित जाल्योन भङ्गटोगविशेष। किसी वस्तुका वीं भाग या उससे अधिच समान भागीमें बाटनेसे उत्पन्न या विभागको, अथवा जिस राशि द्वारा वस्तुका अंश दिया जाय उसे भनता कहते हैं। इस प्रकार किसी एक अवाच्छिष्ट गणितके समान अंशके दो भाग हो एक भागको अर्द्धक कहते हैं।

विशेष विवरण भिन्न इतर म म म

भनता ( सं० पु० ) भनः भनोण होन आत्मता इतो यायः हृत्ता मनिपदादि प्रमेलेके कर्त्तव्यके देश भनतरेयायः तथायं। कर्त्तव्य।

भग्नायण्येय (सं० पु०) १ किन्तो दृष्टे-फटे भगान या उजड़ो हुई बस्तीका बच्चा भग, खडहर । २ किन्तो दृष्टे हुए पदार्थ के बच्चे हुए टुकड़े ।

भग्नाया (सं० त्रि०) भग्ना आया यस्य । जिसकी आया भग हो गई हो, हताश ।

भग्नी (सं० स्त्री०) भगिनी पृषोदरादित्यात् साधु । भगिनी, बहन ।

भङ्गारी (सं० स्त्री०) भमित्यथ्यनजन्द् करोतीति ए अन्, पैरादित्यान् डिय् । दण, भच्छड ।

भङ्गकृ (सं० स्त्री०) भन्ज् कर्त्तरि लृण् । भङ्गकर्ता, तोड़ने कोइनेवाला ।

भङ्ग (सं० पु०) भज्यते इति भञ्ज् कर्मणि घञ् । १ तरङ्ग, लहर । २ पराजय, हार । ३ खण्ड । ४ रोगविशेष । ५ भेद । ६ कौटिल्य, कुटिलता । ७ भय, डर । ८ विच्छिन्न, बाधा । ९ रोगमात्र । १० निर्गम । ११ गमन । १२ पर नागका नाम । १३ दृष्टनेका भाव, विराग । १४ टेढ़े होने या भुक्नेका भाव । १५ लकवा नामक रोग । इनमें रोगीके भय टेढ़े और बेगम हो जाते हैं ।

भङ्गकार (सं० पु०) १ अजिज्ञिन् गृपपुत्रभेद । २ सना-त्रिन्पुत्रभेद ।

भङ्गसत्रिय—उत्तर और पूवबहुवासी राजयज्ञी और पत्नीया लोगोंने एक सत्र ।

भङ्गवाम (रा० ति०) भङ्गे चामः सीरभमस्या । हरिटा, हलदी ।

भङ्गसार्धं (सं० ति०) भङ्ग घनभाय भनार्जवत्यमित्यर्थः स्वपति थ्यस्वपति यत् या क्रिया इति यानत्, भङ्गसमथय तीति अर्थ अथ, कौटिल्यथयसायक्रियार्थित्यादस्य तथात्वं । कुटिल ।

भङ्गा (सं० स्त्री०) भज्यते इति भन्ज् (दन्तन) वा ३।३। १२१ इति वाहुलकान् घञ्, टाप् । दृष्टविशेष, भाग । पयोप—गजा, मानुलानी, मादिनी, विनया, जया । गुण—कसकट, तिक, प्राहक, वाचक, लघु, तीक्ष्णोष्ण, पिप्पयर्षक, मोह, मन्द्यायु और अमिर्त्तक (भागमसा ५०) गिद्धि क्षतो ।

भङ्गाकट (सं० स्त्री०) भङ्गाया रजः भङ्गा-रजसि षट्न् । भङ्गीषथ ।

भङ्गान (सं० पु०) भङ्गेन अनिति इति अन् अच् । मन् २-

विशेष, एक प्रकारकी मञ्जरी । पयोप—शौर्यपङ्क । भङ्गारो (सं० स्त्री०) भङ्गारो पृषोदरादित्यान् साधु । शरा मच्छड ।

भद्रास्वन—एक राजा । इहोति पुत्रो कामताने इन्द्र विद्विष्ट अग्निष्टुम् यज्ञका अनुष्ठान किया । यज्ञके फल से उनके एक सौ पुत्र हुए । किसी कारणसे इन्द्र उन पर बड़े क्रुपित हुए और बहुत सेनेका भौका दूडने लगे । एक दिन राजा जब गिनारको बाहर गये, तब इन्दी मायाजाल फैला कर उन्हें मोह लिया । जब राजा माया मोहित हो इधर उधर घूमना करने करते बहुत थक गये तब व्यास भुजाके इच्छासे एक तालाबके किनारे उपस्थित हुए । तालाबमें ज्यों ही उन्होंने डूब लगाया, त्यों ही वे स्त्री रूपमें परिणत हो गये । अब वे घर लौट अपने पुत्रोंके ऊपर राज्यभार सौंय निश्चित्त माने जङ्गल को चले दिये । यहाँ एक तपस्वीके साथ उनकी मुलाकात हुई । दोनोंके सहवासमें स्त्रीरूपों गजाके गर्भसे पुत्र सौ पुत्र उत्पन्न हुए । राजाने इन पुत्रोंको भीरुपुत्रोंके साथ सुगर्भे रहनेका हुक्म दिया । इन सब राजपुत्रोंके को एक साथ रहते देण इन्नेने उनके बीच प्राणविशेष पैदा कर दिया । उस विशेषने पेमा भयंकररूप धारण किया, कि वे सबके सब एक दूसरेके हाथ मारे गये । यह सत्राद पा कर राजा रोदन करने लगे । इस समय ब्राह्मणरूपमें पट्टे कर इन्नेने उनसे कहा, 'तुमना अनादर करके मेरे विद्विष्ट अग्निष्टुम् यज्ञका अनुष्ठान किया था । उर्मोंके फलसे तुम्हारे सगरी पुत्र विनष्ट हुए हैं । अब इन्द्रके चरणोंमें गिर कर राजाने उन्हें प्रसन्न किया । इन्द्र बोले, 'मैं तुम्हारे दो सौ पुत्रोंसे केवल एक सौको प्राणदान करूंगा, सो तुम पुण्यपापकाके या स्त्री भयस्थाके सौ पुत्रोंका प्राणदान चाहते हो, मारक माफ करो !' उत्तरमें राजाने स्त्री भयस्थाके सौ पुत्रोंके प्राणदानके लिये प्रार्थना की । इन्द्रके इच्छा कारण पूउने पर राजाने कहा, 'निर्वाँको स तानन्वेद पुण्यरत्नो भवेत्सा बहुत उपादा है, इनोमें मैं भङ्गनायस्थाके पुत्रोंके प्राणके लिये प्रार्थना करता हूँ ।' इस पर इन्दी उनके मरती पुत्रोंकी त्रिज्ज विना और बादमें राजाने पूउ, 'तुम सभी पुत्र पा ग्यो इनमेंसे किम् रूपमें रहना चाहते हो ?



पार्श्वदेशकी अस्थि के भङ्ग होनेसे रोगीको खड़ा करके घोंसे मालिश करे। पीछे दक्षिण या वाम पार्श्वकी भङ्गास्थि के ऊपर प्रलेप बाँध दे। युवा ध्यात्तिके दात टूटने हों, पर हलते हो और रक्त निरुलता हो, तो उस दातको अच्छी तरह बँठा दे और बाहरसे सधानीय द्रव्यका शीतल आलेपन प्रयोग करे। बृद्धके दात हलनेसे वह कदापि नहीं तैठता।

अधिक कालकी संधि यदि विशिष्ट हो जाय, तो स्नेह प्रयोग करके रवेद दे तथा मृदु प्रक्रिया करे। काण्डभङ्ग हो कर यदि विपरीत भावमें सलग्न हो भर जाय तो फिरसे समभावमें सलग्न कर उसका प्रतीकार करे। व्रणके मध्य शुष्क अस्थि रहनेसे उसे निकाल कर फिरसे स्वयन कर दे। जरीरका ऊदुध्वंदेश (मस्तिष्क) टूटने पर कर्णपूरण घृतपान और नस्य उपकारक है। किसी प्रशापकाके टूटने पर अनुवासन कर्त्तव्य है।

(मुधुत चिकि० अ०)

भावप्रकाशमें इसकी चिकित्माका विषय इस प्रकार लिखा है—धूलनी छालके चूर्णको मधुके साथ पानेसे तीन दिनके अन्दर टूटी हुई हड्डी जुड़ कर यज्ञ सद्गण ढूढ़ हो जाती है। इमलीके फलको पीस कर तेल और सौंजीरके साथ मिला कर स्वेद देनेसे टूटी हुई हड्डी पहलकी तरह जुड़ जाती है। पहलौटी गायके दूधने का कोल्यादिगण द्वारा पाक करे। पीछे उढा होने पर उसमें घृत और लाख डाल दे। सवेरे इसका पान करनेसे भङ्गरोग जाता रहता है। अस्थिरुहार, लाक्षा, गेहूँ और आक्की छाल, इन्हे एक साथ ही या पृथक् पृथक्, घृत या दुग्धके साथ पान करनेसे त्रिमुक्तसंधि और अस्थिभङ्ग जुड़ जाता है। लहसून, मधु, लाक्षा, घृत और चीनीको एक साथ पीस कर पानेसे सब प्रकारका भङ्ग आरोग्य होता है। अर्जुन और लाक्षान्चूर्ण, घृत और गुग्गुलुके साथ लेहन करके पीछे दुग्ध और घृत भोजन करनेसे भङ्ग मनोजित होता है। पिठजनके मूलको चूर कर मास रसके साथ पानेसे तीन सप्ताहके अन्दर अस्थिभङ्ग जाता रहता है। अलाया इसके धाभागुग्गुलु, लाक्षागुग्गुलु और गन्धतैल आदि औषध विशेष उपकारी हैं।

भङ्गरोगीको लवण, कटु, क्षार, अम्ल, रुक्षद्रव्य, परिधम, ह्रीसङ्ग और ध्यायाम आदिषा परित्याग करना चाहिये। भावप्रकाशादि वैद्यक ग्रन्थोंमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है, विस्तार होनेके भयसे यहा पर संक्षेपमें लिखा गया।

भग्नदूत (म० पु०) रणक्षेत्तमे हार कर भागी हुई वह सेना जो राजाको पराजयका समाचार देने आती हो। भग्नपाद (स० सू०) १ फलितज्योतिषके अनुसार पुनर्घुप्त, उत्तरायाढा, वृत्तिका, उत्तरफाल्गुनी, पूर्वभाद्रपद और विशाखा ये छ नक्षत्र। इनमेंमें किसी एकमें मनुष्यके मरनेसे द्विपाद दोष लगता है। इस दोषकी गाम्ति अर्वाचनकालके अन्दर ही करनेका विधान है। २ वह जिसके पैर टूट गये हों।

भग्नपादार्क्ष (स० सू०) भग्नपाद ऋक्ष। पुष्कराख्य छ नक्षत्र। भग्नपाद देखो।

भग्नपृष्ठ (स० पु०) भग्नपृष्ठस्मिन्। १ सम्मुख। २ मुटित मेघरुण्ड। (त्रि०) भग्न पृष्ठ यस्य। ३ जिसको पीठ टूट गई हो।

भग्नप्रक्रम (स० पु०) भग्न प्रक्रमो यत्। काव्यगत वाक्य दोष भेद। दोष शब्द देखो।

भग्नप्रक्रमता (स० स्त्री०) काव्यका दोष, रचनाका क्रम भङ्ग।

भग्नसंधि (स० पु०) भग्न संधिरन्नास्माद् वा। संधि स्थान भङ्गरोगविशेष। भग्न रोग देखो।

भग्नसंधिक (स० ह्यो०) भग्नो त्रिशिष्ट संधि संघा तोड। तर्क, मह्य।

भगनाश (स० पु०) १ मूल द्रव्यका विभाग वा खण्ड। २ गणित शास्त्रीक अङ्कविशेष। किसी वस्तुको दो तीन या उससे अधिक समान भागोंमें बाटनेसे उनके एक एक विभागको, अथवा जिस राशि द्वारा एकका अंश व्यक्त किया जाय उसे भगनाश कहते हैं। इस प्रकार विभक्त किसी एक अवच्छिन्न राशिके समान अंशके दो भागोंमें से एक भागको अर्द्धक कहते हैं।

विशेष विवरण भिन्न शब्दमें देखो।

भगनात्मा (स० पु०) भग्नः क्रमेण हीन आत्मा देहे यस्य; वृष्ण प्रतिपदादि क्रमेणैकैककालच्छेदेन भग्नदेहत्यादस्य तथात्प। चन्द्रमा।

भग्नायुधेय ( सं० पु० ) १ किसी टूटे-पूटे मकान या उजड़ी हुई बस्तीका बचा अंश, गढहर । २ किसी टूटे हुए पदार्थ के बचे हुए टुकड़े ।

भग्नाश ( सं० लि० ) भग्ना आशा यस्य । जिसकी आशा भंग हो गई हो, हताश ।

भग्नी ( सं० स्त्री० ) भगिनी पृषोदरादित्यात् साधु । भगिनी, वहन ।

भङ्गारी ( सं० स्त्री० ) भमित्यथ्यत्तज्ज् वरोतीति ए अन् गैरादित्यात् टिप् । दश, मच्छड ।

भङ्गकू ( सं० स्त्री० ) भञ्ज् कूर्त्तरि तुण् । भङ्गकूर्त्ता, तोड़ने फोड़नेवाला ।

भङ्ग ( सं० पु० ) भङ्ग्यते इति भञ्ज् कर्मणि घञ् । १ तरङ्ग, लहर । २ पराजय, हार । ३ धाएड । ४ रोगप्रदेश । ५ भेद । ६ कौटिल्य, कुटिलता । ७ भय, डर । ८ विच्छिन्न, वाधा । ९ रोगमात्र । १० निर्गम । ११ गमन । १२ एक नागरका नाम । १३ टूटनेका भाव, विनाश । १४ टेढ़े होने या झुकनेका भाव । १५ लकवा नामक रोग । इसमें रोगीके घ ग टेढ़े और घे नाम ही जाते हैं ।

भङ्गकार ( सं० पु० ) १ अत्रिंशत् नृपपुत्रभेद । २ सत्राजिन्पुत्रभेद ।

भङ्गशत्रिय—उत्तर और पूर्ववङ्गवासी राजवंशी और पत्नीया लोगोंकी एक सन्ध्या ।

भङ्गास ( सं० लि० ) भङ्गे न घाम् मीरत्नमस्या । हरिद्रा, हल्दी ।

भङ्गसार्धं ( सं० लि० ) भङ्गं घञ्भाघ अनाजंयत्वमित्यर्थः स्वयति व्यस्वयति यन् या क्रिया इति यावन्, भङ्गसमघयतीति अर्थ अच, कौटिल्यस्यसायक्रियार्थित्वाद्स्य सार्धत्वं । कुटिल ।

भङ्गा ( सं० स्त्री० ) भङ्ग्यते इति भञ्ज् ( इत्तया ) वा शः । १२१ इति बाहुलकात् घञ्, टाप् । पृथग्विधेय, भाग । पदार्थ—राजा, मातुलानी, मादिनी, त्रिधा, जया । गुण—कणक, तिर, प्राहक, पात्रक, लघु, मोक्षणोप, पिस्तुर्त्तक, मोह, मन्दायु और अग्निवर्त्तक (भागमत्ता पू०) इति दशो ।

भङ्गाकट ( सं० स्त्री० ) भङ्गाया रजः भङ्गा-रजसि षट् । भङ्गीष्य ।

भङ्गन ( सं० पु० ) भङ्गे न मज्जति इति अन् अच । मन्सर-

जिगेय, एव प्रकारकी मछली । पयार्थ—दीर्घमङ्गल । भङ्गारी ( सं० स्त्री० ) भङ्गरो पृषोदरादित्यान् साधु । दश मच्छट ।

भङ्गास्या—एक राजा । इहोनि पुत्रको कामनासे इष्ट निद्रिष्ट अग्निष्टुम् पक्का अनुष्ठान किया । यक्षके पाल से उसके एक मी पुत्र हुए । किसी कारणसे इष्ट उन पर बड़े दुपित हुए और बदला लेनेका मौका ढूढ़ने लगे । एक दिन राजा जय जिकारको बाहर गये, तब इन्द्रो मायाजाल फैला कर उन्हें मोह लिया । जब राजा माया मोहित हो इधर उधर भ्रमण करते करते बहुत थक गये तब व्यास बुझानेकी इच्छासे एक तालाबके किनारे उपस्थित हुए । तालाबमें ज्यों ही उन्होंने डूब लगाया, त्यों ही वे स्त्री रूपमें परिणत हो गये । अब वे घर लौट अपने पुत्रोके ऊपर राज्यभार सौंप निश्चिन्त भावसे चङ्गल को चले दिये । यहा एक तपस्वीके साथ उनकी मुलाकात हुई । दोनोंके सहजात्मने स्वरूपो राजाके गर्भसे पुत्र मी पुत्र उत्पन्न हुए । राजाने इन पुत्रोको औरमपुत्रोके साथ सुखसे रहनेका हुक्म दिया । १२ तब राजकुमारों को पर साथ रहते देन इन्द्रो उनके बीच प्राणविरोध पैदा कर दिया । उस विरोधोके चेतना भयङ्करूप कारण कियो, कि वे सबसे सब एक दूसरेके हाथ मारे गये । यह सजाद पा कर राजा रोदन करने लगे । इस समय ब्राह्मणरूपमें पहुच कर इन्द्रने उनसे कहा, 'तुमने अनानुदर करके मेरे निद्रिष्ट अग्निष्टुम् पक्का अनुष्ठान किया था । उसीके फलसे तुम्हारे सभी पुत्र बिनष्ट हुए हैं । अब इन्द्रके चरणोंमें गिर कर राजाने उर्द्धे प्रणम किया । इष्ट बोले, 'मैं तुम्हारे दो मी पुत्रोंसे बंधन एक मीको प्राणदान करूंगा, मी तुम पुत्रशायल्याके या स्त्री भयस्याके मी पुत्रोका प्राणदान चाहते हो, भाग स्नाफ कहो ।' उत्तरमें राजाने स्त्री भयस्याके मी पुत्रोके प्राणदाके लिये प्रार्थना की । इष्टके इसका कारण पूढ़ने पर राजाने कहा, 'त्रिषोको स गान्धेष्ट पुत्ररकी भयेश बहुत उपाहा है, इसीसे मैं भङ्गनायस्याके पुत्रोके प्राणके लिये प्रार्थना करता हूँ ।' इस पर इष्टो उनके स्त्री पुत्रों से विला दिया और बादमें राजाने पुत्र, पुत्रक वामी पुत्र्य वा स्त्री इनमेंसे जिस रूपमें

राजाने उत्तर दिया, 'खीरूप ही मुझे पसन्द आता है। इसलिये मैं फिर पुरुष होना नहीं चाहता।' इसका कारण पूछने पर राजाने जवाब दिया, 'वियराज ! ससर्ग-कालमें खी पुरुषके मध्य खीको ही विशेष आनन्दलाभ होता है, इन कारण मैं खीभावमें ही रहना चाहता हूँ। सच कहता हूँ, जबसे मैंने खीत्वलाभ किया है, तबसे मैं बड़ा ही आनन्द लाभ करता आया हूँ, इसीसे इस रूपके परित्याग करनेकी मेरी विलकुल इच्छा नहीं है।' तभीसे राजा खीरूपमें ही रहने लगे। (भारत अनुशा० १२ अ०)

भङ्गि (स० खी०) भज्यते इति भनज इन् न्यङ्कादत्वात् घृत्व । १ विच्छेद । २ कुटिलता, टेढाई । ३ विन्यास, अदाज । ४ कलोल, लहर । ५ भङ्ग । ६ घ्राज । ७ प्रति कृति । ८ अवयवादिके भङ्गयत् विरतभावके अनुकरण-रूप कार्य ।

भङ्गिन् (स० त्रि०) भङ्ग-अस्त्वर्थे इति । भङ्गप्रण, भङ्ग शील, नष्ट होनेवाला ।

भङ्गिभाव (स० पु०) घकभाज ।

भङ्गिमत (स० त्रि०) भङ्गि विघतेऽप्य मत्तुप् । भङ्गि युक्त ।

भङ्गिन् (स० पु०) भङ्ग-गुहलकात् स्वार्थे इमनिच् । १ भङ्गि, शाभा । (त्रि०) २ तरङ्गयुक्त ।

भङ्गी (स० खी०) भङ्गि दृष्टिकारादिति पत्रे डीप । १ भङ्गि । (पु०) २ भङ्गशील, नष्ट होनेवाला । ३ भङ्ग करने वाला, भगकारी । ४ रेखाओंके झुकावसे रोचा हुआ चित्र वा बेलवृद्धा आदि ।

भङ्गी—(मिसल) सिखांका एक सम्प्रदाय । पाञ्चवार-कासी अठवशाय छजासिंह, इस दलके प्रतिष्ठता हैं। इन्होंने सिख गुरु बैरागी बन्वासे 'पहाल' प्रहण किया था। कब्दाकी मृत्युके बाद भीमसिंह, महसिंह और जगत्सिंह कामक शान आत्मीयोंने उनके निकट दीक्षा ली। परस्पर-मीनि-सीवाह ले और आलोचयतामें सम्बद्ध हो कर ये लोग, वस्युपुत्ति करनेकी आज्ञासे एक दल बांधनेकी क्रमेणिय करने लगे। धीरे धीरे मिहामसिंह, गुलाबसिंह, ककरसिंह, और गुरुनवससिंह, आणसिंह, यगुंग और आदि सरदारोंने एक छजासिंहके निकट सिखधर्म ग्रहण किया। ये सभी छजा

सिंहको गुरुकी तरह मानते थे। इस दलके सभी भङ्गी पीनेमें मस्त रहते हैं। इसलिए इस सम्प्रदायके सिपा गण भङ्गी नामने प्रसिद्ध हुए।

इस प्रकारसे नाना स्थानोंके सिख सम्प्रदायिकोंके द्वारा पुष्ट हो कर भङ्गी सरदारने रातिके समय वस्यु-पुत्ति करना प्रारम्भ कर दी। लूट-पसोईमें इनकार्य होने पर एक दिन उनके दृश्यमें गुरुगोविन्दके भविष्यत् वाक्यका स्मरण हो आया। धीरे धीरे उनके हृदयमें राज्य करनेकी इच्छा हुई और इसके लिए वे अपना बल बढ़ाने लगे। इसी बीचमें छजासिंहकी मृत्यु हो गई और भीमसिंहने उस दलका नेतृत्व ग्रहण किया। उहाँकी अधिनायकतामें भगी सम्प्रदायकी सुदृढ़ता और बलाधिष्य सम्पादिन हुआ। नादिरशाहके भारत आक्रमण के बाद, भीमसिंह अपने सहकारी मरलसिंह और जगत्सिंहको ले कर इस बलशाली सिपसम्प्रदायकी स्थापना कर गये।

भीमसिंह हकी मृत्युके बाद उनके दत्तक पुत्र हरिसिंह इस मिसलके सरदार चुने गये। इस निर्भीक और साहसी नेताके नीचे रह कर भङ्गीगणोंने लूट पाट कर बहुत अर्थोपार्जन किया। इन्होंने करीब २० हजार अनुचर ले कर सियालकोट, ऋडियाल और मोरोवाल नामके स्थान अधिकार किये। गिलवाली ग्राममें इन्होंने अपना प्रधान अष्टा कायम किया। चिनिओत और भग लूटनेके बाद इन्होंने आवदाली राज अहमदशाहके विरुद्ध युद्ध किया। १७६२ ई०में फोद घाजा सैद आक्रमण करके ये लाहोरके अफगान शासनकर्ता एजाज ओवेदामा यथासर्वस्व हरण कर लाये।

उसके बाद हरिसिंह द्वारा परिचालित भ गियोंने सिन्धुसमतट और डेराराजत प्रदेशमें लूट मचाई तथा अन्यान्य सेनाओंने रावलपिण्डी, मालवा और मौंका प्रदेश जय कर जम्मु लूटा। जम्मूराज रणजित्देव इनकी अधीनता खीकार करनेके लिए बाध्य हुए। यमुनाके समीप भगी सरदार रायसिंह और भगतसिंहने रोहिला और प्रहारापु सेनाका सामना कर नाजिब उद्दौलाको विषयसे और निहल किया। १७६३ ई०में रामगडिया और कर्णहियादलके सहयोगसे उन्होंने कसूर आक्रमण

क्रिया था। दूसरे वष वे पटियाला राज अमरसिंहके विरुद्ध युद्ध करते समय मारे गये।

हरिसिंह हके दो स्त्री थी। पहली खोसे ऋण्डासिंह तथा दूसरीसे छत्रसिंह, दीवानसिंह और वासुसिंह, इस तरह पाच पुत्र थे। ऋण्डासिंहने दलपतित्व ग्रहण कर चारों भाइयों तथा साहबसिंह, रायसिंह, भागसिंह, सुधासिंह, दीधिया और निधानसिंह आदि सरदारोंकी सहायतासे भंगि शक्तिसे शीघ्र स्थान तक पहुँचा दिया।

१७६६ ई०में ऋण्डासिंह बहुत सेनाके साथ मूलतान के शासनकर्त्ता सुजा खा और बहवलपुरके दाउद पुत्रोंके साथ शतद्रु नदीके किनारे इनका जो युद्ध हुआ था, उसमें पाचपत्तन तक स्थान सिन्ध राज्यकी सीमा स्थिरी कृत हुई थी। बादमें फसूरके पठानोंको पर जित कर उन्होंने पुत्र १७७१ ई०में मूलतान आक्रमण किया। करीब डेढ़ मास तक मुलतान दुर्ग घेरे रहनेके बाद वे भाग आनेके लिए बाध्य हुए। उस समय अफगान सेनापति जहान खाँ और दाउद-पुत्रों ने विशेष रण निपुणताका परिचय दिया था।

१७७२ ई०में ऋण्डासिंहने लहनासिंह आदि सिपसरदारोंके सहयोगसे पुन मूलतान आक्रमण किया और वहाके शासनकर्त्ता और दाउद पुत्रोंको पराजित कर मुलतान प्रदेश अपनेमें वाट कर दीवानसिंहको किलेदार बना दिया। मूलतानसे लौट कर इन्होंने वैलूच प्रदेश, भङ्ग, मानगेडा और काल बाग अधिकार किया। उसके बाद व अमृतसर देजने गये, तो वहा भङ्गी किला \* और एक बाजार बसा गये। फिर रामनगरकी तरफ अग्रसर हो कर इन्होंने छद्म लागोंसे प्रसिद्ध जमजमा † नामक तोप पर काजा किया। जम्भूके सुकैचक्रिया सरदार चरत्सिंह और कन्हैयापति जयसिंह प्रनराजदेवके पक्षमें हो कर उनके विपक्ष आवरण करने

\* लोन-मण्डीके पीछे अब भाँ उस घखानसिंह किलेका बिल्द पाया जाता है।

† अग्नेय-सनापति सर हनरी हाडिन्ने १८४५ ई०में पिसोय-शहरक युद्धम यह तोप प्राप्त की थी। तारीखके सन्तु-म्बुगियमने यामनेके दरवाने पर अब भी यह रखी गई है।

से वे सेना सहित जम्भूनी तरफ अग्रसर हुए। वहा कई दिन तक घोरतर युद्ध होनेके बाद चरत्सिंह और खुद उनकी मृत्यु हो जानेसे † जयसिंहने जयपताका फहराई।

ऋण्डासिंहकी हत्याके बाद उनके भाई गण्डासिंह दल-पति चुने गये। इन्होंने अपने दलकी विशेष अध्य-वसायसे पुष्टि की। इन्हांके उद्यमसे भङ्गी दुर्गका निर्माण कार्य सम्पादित हुआ और अमृतसरनगरी सौधमालासे विभूषित हुई।

कन्हिया सरदार जयसिंहकी विश्वासघातकतासे अपने भाईकी मृत्यु पर गण्डासिंहके हृदयकी आग जोरोंसे धधक रही थी। वे विवाद्के त्रिप छिद्रान्वेषण करने लगे। आपिर पठानकोटजागीरके सम्बधमें भगडा पडा हुआ। † पठान-कोट लौटाया नहीं गया, यह देख वे सेना सहित पठान-कोटकी तरफ अग्रसर हुए।

तारासिंह उनके आनेकी खबर पा कर बडे घबराये और अपने दल पति शुक्नषसिंहकी सहायतासे आत्म-रक्षाकी चेष्टा करने लगे। दीवानगरके सामने दोनों दलोंमें १० दिन तक भारी युद्ध हुआ, परन्तु सहसा गण्डासिंहकी मृत्यु हो जानेसे युद्धकी फल निष्पत्ति न हो सकी। उनके पुत्र देशासिंह नाबालिग थे, अत मतीजे चरत्सिंहने अधिनायकता ग्रहण की। इस युद्धमें शत्रुओं के हाथसे चरत्सिंहकी मृत्यु होने पर भङ्गी दल छत्रमङ्ग हो कर पठानकोट छोड गया।

अमृतसरमें जा कर भङ्गी-दलने बालक देशासिंहको अपना सरदार घोषित किया। धीर हरिसिंह और ऋण्डा सिंह द्वारा परिचालित भङ्गी सेना और सरदारगण क्रमश गालककी अधीनताकी उपेक्षा करते हुए स्वाधीन होनेके चेष्टा करने लगे। १७७७ ई०में मूलतानके राजा

† अपन ही एक सैनिकसे मृत्यु हुई थी।

+ ऋण्डासिंहने नन्दसिंह नामक एक मिसलदारको पठान-कोट दिया था। उसकी निधना मीने तारासिंह कन्हियाको अपनी कन्या धर्मपति की थी, इत्यन्तु शीघ ही वह सम्पत्ति जमाहके हाथ लगी। भङ्गीकी सम्पत्ति कन्हियाभीके हाथ दगवने, देख कर ऋण्डा सरदारने उस लौटा देनेकी कहा। हरी चुनेने दोनोंमें विवाद हो गया।

राजाने उत्तर दिया, 'खीरूप ही मुझे पसन्द आता है। इसलिये मैं फिर पुरुष होना नहीं चाहता।' इसका कारण पूछने पर राजाने जवाब दिया, 'दिवराज। ससर्ग-कालमें खी पुरुषके मध्य खीको ही विशेष आनन्दलाम होता है, इस कारण मैं खीभावमें ही रहना चाहता हूँ। सच कहता हूँ, जबसे मैंने खीत्वलाम किया है, तबसे मैं बड़ा ही आनन्द लाम करता आया हूँ, इसीने इस रूपके परित्याग करनेकी मेरी विल्कुल इच्छा नहीं है।' तभीसे राजा खीरूपमें ही रहने लगे। (भारत अनुशा० १२ अ०)

भङ्गि (स० खी०) भज्यते इति भजन् इत् न्यङ्कादत्वात् कुत्व। १ विच्छेद। २ कुदिलता, टेडाई। ३ विन्यास, अदाज। ४ कल्लोल, लहर। ५ भङ्ग। ६ वजाज। ७ प्रति धृति। ८ अपयवादिके भङ्गवत् विरतभावके अनुकरण-रूप कार्य।

भङ्गिन् (स० त्रि०) भङ्ग-अस्त्यर्थे इनि। भङ्गप्रण, भङ्ग शील, नष्ट होनेवाला।

भङ्गिभाव (स० पु०) यकभाव।

भङ्गिम् (स० त्रि०) भङ्गि विद्यतेऽस्य मतुप्। भङ्गि-युक्त।

भङ्गिम् (स० पु०) भङ्ग वाहल्लात् स्वार्ये इमनिच्। १ भङ्गि, गामा। (त्रि०) २ नरङ्गयुक्त।

भङ्गी (स० खी०) भङ्गि छदिकारादिति पञ्चे डीप। १ भङ्गि। (पु०) २ भङ्गशील, नष्ट होनेवाला। ३ भङ्ग करने वाला, भगकारी। ४ रेखाओंके फुकावसे पोचा हुआ चित्त वा बेलवृद्धा आदि।

भङ्गी—(मिसल) सिपाका एक सम्प्रदाय। पाञ्चरा-यासो जाठवशोय छजासिंह इस दलके प्रतिष्ठाता हैं। इन्होंने सिख गुरु वैरागी बन्दासे 'पद्दाल' ग्रहण किया था। बन्दाकी मृत्युके बाद भीमसिंह, मल्लसिंह और जगत्सिंह नामक तान आत्मीयोंने उनके निकट दीक्षा ली। परस्पर-प्रीति सौहार्दसे और आत्मीयतामें सम्बद्ध हो कर ये तीनों दस्युवृत्ति करनेको आशासे एक दल वाघनेकी कोशिश करने लगे। धीरे धीरे मिहारासिंह, गुलावसिंह, कहरसिंह, और गुरुवषसिंह, आगरसिंह, गङ्गौरा और मनवनसिंह आदि सरदारोंने उक्त छजासिंहके निकट 'पद्दाल' ले कर सिख धर्म धारण किया। ये सभी छजा

सिंहको गुरुकी तरह मानते थे। इस दलके सभी भङ्ग पीनेमें मस्त रहते हैं। इसलिये इस सम्प्रदायके सिख गण भङ्गी नामसे प्रसिद्ध हुए।

इस प्रकारसे नाना स्थानोंके सिख-सम्प्रदायिकोंके द्वारा पुष्ट हो कर भङ्गी सरदारने राविके समय दस्यु-वृत्ति करना प्रारम्भ कर दी। लूट-पसोटेमें कृतकार्य होने पर एक दिन उनके हृदयमें गुरुगोविन्दके भविष्यत् वाक्यका स्मरण हो आया। धीरे धीरे उनके हृदयमें राज्य करनेकी इच्छा हुई और इसके लिए वे अपना बल बढ़ाने लगे। इसी बीचमें छजासिंहकी मृत्यु हो गई और भीमसिंहने उस दलका नेतृत्व ग्रहण किया। उहाँकी अधिनायकतामें भगी सम्प्रदायकी सुशुद्धता और बलाधिषय सम्पादित हुआ। नादिरशाहके भारत आक्रमण के बाद, भीमसिंह अपने सहकारी मल्लसिंह और जगत्सिंहको ले कर इस बलशाली सिद्धमम्प्रदायकी स्थापना कर गये।

भीमसिंह हकी मृत्युके बाद उनके वक्त्र पुत्र हरिसिंह इस मिसलके सरदार चुने गये। इस निर्भीक और साहसी नेताके नीचे रह कर भङ्गीगणोंने लूट पाट कर बहुत अर्थोपार्जन किया। इन्होंने करीब २० हजार अनुचर ले कर सियालकोट, कडियाला और मोरोवाल नामके स्थान अधिकार किये। गिलवाली ग्राममें इन्होंने अपना प्रधान अड्डा काशम किया। चिनिओत और भग लूटनेके बाद इन्होंने आबवाली राज अहमदशाहके विरुद्ध युद्ध किया। १७६२ ई०में कोट बजाजा सैद आक्रमण करके ये लाहोरके अफगान शासनकर्ता बजाज ओचेदाराका यथासर्वस्य हरण कर लिये।

उनके बाद हरिसिंह द्वारा परिचालित भ गियोंने सिन्धुसमतट और डेराराजत प्रदेशमें लूट मचाई तथा अन्यान्य सेनाओंने रावलपिण्डी, मालवा और माँभा प्रदेश जय कर जम्मु लूटा। जम्मूराज रणजित्देव इनकी अधीनता स्वीकार करनेके लिए बाध्य हुए। यमुनाके समीप भगी सरदार रायसिंह और भगतसिंहने रोहिला और महाराष्ट्र सेनाका सामना कर नाजिब उहाँलाकी विषयस्त और निहत किया। १७६३ ई०में रामगढिया और कनहियादलके सहयोगसे इन्होंने फसूर आक्रमण

किया था। दूसरे घप वे पटियात्रा राज अमरसिंहके विरुद्ध युद्ध करते समय मारे गये।

हरिसिंहके दो खी थीं। पहली खीसे ऋण्डासिंह तथा दूसरीसे छरतसिंह, दीवानसिंह और बामुसिंह, इस तरह पांच पुत्र थे। ऋण्डासिंहने दलपतित्व ग्रहण कर चारों भाइयों तथा साहबसिंह, रामसिंह, भागसिंह, सुधासिंह, दौधिया और निधानसिंह आदि सरदारोंकी सहायतासे भंगि प्रतिक्रिया शीघ्र स्थान तक पहुँचा दिया।

१७६६ ई०में अण्डासिंह बहुत सेनाके साथ मुल्तान के शासनकर्त्ता सुजा पा और वहवलपुरके वाउद पुत्रोंके साथ शतद्रु नदीके किनारे इनका जो युद्ध हुआ था, उसमें पाकपत्तन तक स्थान सिख राज्याँ सीमा स्थिरो रूत हुई थी। बादमें कसूरके पठानोंको पर जित कर उन्होंने पुन १७७१ ई०में मुल्तान आक्रमण किया। कतीब डेड मास तक मुल्तान दुर्ग घेरे रहनेके बाद वे भाग आनेके लिए बाध्य हुए। उस समय अफगान सेनापति जहान खाँ और दाउद-पुत्रो ने विशेष रण निपुणताका परिचय दिया था।

१७७२ ई०में अण्डासिंहने लहनासिंह आदि सिखसरदारो के सहयोगसे पुन मुल्तान आक्रमण किया और वहाके शासनकर्त्ता और दाउद पुत्रोको पराजित कर मुल्तान प्रदेश अपनेमें वाट कर दीवानसिंहको किलेदार बना दिया। मुल्तानसे छोट कर इन्होंने बैलूच प्रदेश, ऋण्ड, मानपेडा और काल बाग अधिकार किया। उसके बाद व अमृतमर देवने गये, तो वहा भङ्गी किला \* और एक वानार बसा गये। फिर रामनगरकी तरफ अग्रसर हो कर इन्होंने छट्ट लोणोंसे प्रसिद्ध जमजमा † नामक तोप पर कब्जा किया। जम्बूके सुकेचैकिया सरदार चरत्सिंह और कन्हियापति जयसिंह प्रजापतिदेवके पक्षमें हो कर उनके विपक्ष आचरण करने

से वे सेना सहित जम्बूनी तरफ अग्रसर हुए। यहा कई दिन तक घोरतर युद्ध होनेके बाद चरत्सिंह और खुद उनको मृत्यु हो जानेसे † जयसिंहने जयपताका फहराई।

अण्डासिंहकी हत्याके बाद उनके भाई गण्डासिंह दल पति चुने गये। इन्होंने अपने दलकी विशेष अध्ययसायसे पुष्टि की। इन्हाँके उद्यमसे भङ्गी दुर्गका निर्माण कार्य सम्पादित हुआ और अमृतसरनगरी सौधमालासे विभूषित हुई।

कन्हिया सरदार जयसिंहकी विश्वासघातकतासे अपने भाईको मृत्यु पर गण्डासिंहके हृदयकी आग जोरोंसे धक्कर रही थी। वे विवाद्के फिफ उद्धान्वेषण करने लगे। आखिर पठानकोटनागीरके सम्बधमें भगडा खडा हुआ। † पठान-कोट लीटाया नहीं गया, यह देख वे सेना सहित पठान कोटकी तरफ अग्रसर हुए।

तारासिंह उनके आनेकी खबर पा कर बड़े धवरापे और अपने दल पति गुरुबखससिंहकी सहायतासे आत्मरक्षाकी चेष्टा करने लगे। दीवानगरेके सामने दोनों दलोंमें १० दिन तक भारी युद्ध हुआ, परन्तु सहसा गण्डासिंहकी मृत्यु हो जानेसे युद्धको फल निगपति न हो सकी। उनके पुत्र देशासिंह नावालिग थे, अत अतोजे चरत्सिंहने अधिनायकता ग्रहण की। इस युद्धमें शत्रुओं के हाथसे चरत्सिंहकी मृत्यु होने पर भङ्गी दल छत्रमङ्ग हो कर पठानकोट छोड गया।

अमृतमरमें जा कर भङ्गी-दलने बालक देशासिंहको अपना सरदार घोषित किया। और हरिसिंह और अण्डा सिंह द्वारा परिचालित भङ्गी-सेना और सरदारगण क्रमश बालककी अधीनताकी उपेक्षा करते हुए स्वाधीन होनेके चेष्टा करने लगे। १७७७ ई०में मुल्तानके राजा

\* नपन ही एज सैनिक मृत्यु हुई थी।

† अण्डासिंहने नन्दसिंह नामक एक मिशजदारको पठानकोट दिया था। उसकी विधवा स्त्रीने तारासिंह कन्हियाको अपनी कन्या समर्पित की थी, इसलिये शीम ही यह सम्पत्ति नमार्हेके हाथ लगी। भङ्गीका सम्पत्ति कन्हियाओंके हाथ लागे, देख कर मयडा सरदारने उस लौटा देनेको कहा। इसी स्वसे दोनोमें विवाद हो गया।

\* कोन-मयडोके पीछे अब भी उस अस्त्रासिद्ध किलेना चिह्न पाया जाता है।

† अश्रेय-सनापति सर हनरी हार्डिन्गे १८५५ ई०में पिरान-गहरण युद्धमें यह वाप प्राप्त की थी। लाटोके सेन्ट्र-न्युजियमके सामनेके दरवाजे पर अब भी वह रखा गई है।

मुजफ्फर खाके विद्रोही होने पर दीवानसिंहने विशेष निपुणताके साथ उनका दमन किया था। इन्ही बीचमें अहमदशाहके पुत्र तैमूरशाह काबुलके सिंहासन पर बैठ कर पञ्जाबराज्य दबल करनेकी माशासे सेना तयार करने लगे। उधर सिखोंने भी विपत्तिकी सम्भाषना देख तयारिया करनी शुरू कर दी। १७७७-७८ ई०में मुल्तान प्रदेशमें अफगान और सिख सेनामें घोरतर युद्ध हुआ। अफगानोसेनापति हाशमीर्षा इस युद्धमें बन्दी हुए। सिखोंने बड़ी निपुणताके साथ उन्हें तोपसे उडा दिया। इस प्रकार फटोर अत्याचारसे प्रपीडित हो कर शाह तैमूरने पुन दूसरे वर्ष शोतकालमें भङ्गीदलका दमन करनेके लिए जङ्गीर्षाकी भेजा। इस दुरानो सरदारने युसुफ-जै, बुरानो, मुगल और फाजलवासियोंकी सहायतासे सिखोंको परास्त कर मुल्तान पर अधिकार कर लिया और सुजापाको वहाका शासनकर्त्ता बना दिया। अफगान विप्लव शान्त होने पर भङ्गी सरदार देशासिंह चिन्तित-वामियोंके दमनार्थ अप्रमत्त हुए। शुकेर्चकिया सरदार महासिंहके साथ किसी एक पण्डित युद्धके बाद १७८२ ई०में रणक्षेत्रमें उनकी मृत्यु हो गई।

भङ्गी सरदार हर्षिसिंहके प्रसिद्ध सेनापति गुददफस सिंहने कुछ समय तक अपने उपद्रवादि द्वारा भङ्गी गौरव की रक्षा की थी। उनकी मृत्युके बाद दत्तक पुत्र लहना सिंह और उनके दीहित गूजरसिंहमें विरोध पडा हुआ। पीछे उस सम्पत्तिके समानरूपसे विभक्त हो जाने पर दोनों सरदारके भण्डासिंह और गण्डासिंहके सहयोगसे युद्ध विप्रदादि करने पर भी उन्होंने स्थतन्त्ररूपसे जो कार्यादि किये थे, भङ्गी-इतिहासमें वे भी उल्लेख योग्य हैं।

अहमदशाह भारतसे लौटते समय लाहोरमें काबुली मल्ल नामक एक हिन्दूको शासनकर्त्ता नियुक्त कर गये थे। लहना सिंह और गूजर सिंहने दल सहित आक्रमण कर लाहोर लूट लिया। १७६५ ई०में गूजर सिंहने उत्तर पञ्जाब अधिकार करनेकी चेष्टा की। लाहोरमें दो वर्ष रहनेके बाद, १७६७ ई०में अहमदशाहके आखिरी धार भारत आक्रमणके समय, वे अफगानो-सेनाके आनेकी खबरसे डर कर लाहोर छोड़ पञ्जाबकी तरफ भागे, परन्तु

अहमदशाह उक्त दोनों भङ्गी सरदारोंके हाथ लाहोरका कर्त्तव्य सौंप कर काबुल चले गये। बादमें ३० वर्ष तक इन्होंने शान्तिसे लाहोर राजधानीमें रह कर राज्य भोगा था। पीछे शाह जमानने फाजलसिंहसिन पर बैठ कर भारत साम्राज्य स्थापनके लिए १७६३, १७६५ और १७६६ ई०में लगातार तीन बार पञ्जाब पर आक्रमण किया। पहलेके दोनों युद्धमें वे सफल न होने पर भी तीसरे युद्धमें उन्होंने लाहोर पर कब्जा कर ही लिया। १७६७ ई०में ३री जनवरीको लहनासिंह नगरकी चाबी दे कर भाग गये। शाह जमानके लौट जाने पर उसी वर्ष लहनासिंह और शोभासिंहने लाहोर अधिकार कर लिया, किन्तु थोड़े ही समय बाद उन दोनोंकी मृत्यु हो जानेसे लहनाके पुत्र चेत सिंह और शोभाके पुत्र मोहरसिंहने शासनकर्त्ताका पद प्राप्त किया। राज्यशासनमें अक्षमता और मद्यपानादि दोषसे उनके राज्यमें विभ्रष्टलता होने लगी। मौका देख प्रसिद्ध शुकेर्चिया सरदार रणजित्सिंहने लाहोर आक्रमण का सङ्कल्प किया। १७६६ ई०में अन्यान्य भङ्गी सरदारोंके पडयत्नसे बुलाये जाने पर उन्होंने सेना-सहित लाहोरमें प्रवेश किया, इससे चेतसिंह और मोहरसिंह भाग गये।

उधर भगी मिसलके दलपति देशासिंहकी मृत्युके बाद उनके नावालिन पुत्र गुलाब सिंहने १७८२ ई०में पितृ पद प्राप्त किया। उनकी बुद्धिचित्त विशेष परिष्कृत न होने से उनके भाई कर्म सिंह मिसलका सब काम काज देखते थे। गुलाब सिंहने पहले ही कसूर पर कब्जा कर लिया था, परन्तु वे ज्यादा दिन उसका शासन न कर सके। १७६४ ई०में कसूरके पठान सरदार निजामउद्दीन खान ने उसे पुन अपने अधिकारमें कर लिया। १७७७ ई०में रणजित् सिंहकी लाहोर विजयसे डर कर गुलाबसिंह भगी, जेसासिंह रामगडिया और निजामउद्दीनने एक साथ मिल कर रणजित्सिंहके प्रभावको र्धित करनेकी चेष्टा की। लाहोर और अमृतसरके बीचके भसिल नगरमें दोनों दलोंकी मुठभेड़ हुई। इस युद्धमें मिलित सरदार सेनादलको पराजय स्वीकार करनी पडी। यहाँ पर मद्य पान जनित फषप्रत्याप रोगसे गुलाबसिंहकी मृत्यु हुई। गुलाबकी मृत्युके बाद १० वर्षके पुत्र गुददीतसिंहने

पितृसिंहासन प्राप्त किया। परन्तु मिसल परिचालना का भार उनकी माता और मुसलमान सुखाना पर दिया गया। भङ्गीयोंके अमृतसर दुर्गकी अभिलाषासे रणजित् सिंह विवाहके लिए छिट्टान्वेषण करने लगे। आखिर जमनामा तोप मांगी, और उसके न मिलने पर भङ्गी दुर्ग पर धावा बोल दिया। भङ्गी सेनादल ५ घण्टा तक युद्ध करनेके बाद रणमें मग डाल कर भाग गया। रानीमाता निरुध्वाय दंग कर पुत्र गुरुदीतको ले रामगढ भाग गई। (१८०२ ई०)।

लाहौर विजयके बाद गुजरसिंहने दलाल साहब उत्तरकी ओर प्रस्थान किया। उनकी धीर बाहिनीने विशेष उद्यमके साथ एक एक कर क्रमश गुजरात, जम्मु, इस्लामगड, पञ्च और देव भताला, गढड, भोमचेर और मांफा प्रदेश अधिकारपूर्वक लूटे। बादमें महरोंके प्रसिद्ध रोहताम (रोटस) दुर्गको जीत कर अपना प्रसिद्धि की। इनके मध्यमपुत्र साहबसिंहके साथ शुकेन्द्रिकिया चरतसिंहकी कन्या राजसूरीका विवाह हुआ। ज्येष्ठपुत्र खूवासिंह पिताके साथ कलहमें मारे गये और मध्यमपुत्र अपने साले महासिंहके लिए पिता अपमान करनेके कारण पितृस्नेहसे वञ्चित रहे। वृद्ध गुजरसिंह अ तमें कनिष्ठ फतेसिंहको अपनी सम्पत्तिका उत्तराधिकारी स्थिर कर लाहौर लौट आये। वहा १८८८ ई० में उनकी मृत्यु हुई।

अब पितृ सम्पत्तिके लिए दोनों भाइयोंमें विवाद उपस्थित होते देख, महासिंहने फतेसिंहका पक्ष लिया। इस सूत्रमें साले बहनोई दोनोंमें फगडा उठ राडा हुआ। करीब २ वर्ष इसी प्रकार मनोमालिन्यमें घेतने पर, १७६२ ई०में दोनों शत्रुओंके हृदयोद्दीप्त अग्नि प्रज्वलित हो उठी। महासिंहने दलसहित आ कर सोधरादुर्गमें साहबसिंहको घेर लिया, परन्तु देववशात् उनकी मृत्यु होने पर भी भ गियोंकी ही विजय हुई। १७६८ ई०में जब शाह जमानने चौथी बार पञ्जाब पर आक्रमण किया, तब भी इस सिखसम्प्रदायने विशेष रणनिपुणताया परिचय दिया था।

शाह जमापूके भेजे हुए दुरानी सेनापति सहित ५ हजार सेना नष्ट कर देने और अन्यान्य साहसिकताके

परिचयोंसे साहबसिंहकी वीरत्वप्रभा किसी समय समग्र पञ्जाबप्रदेशमें विभासित हो गई थी। परन्तु धीरे धीरे घोर मदिरासक्त हो कर वे इतने निरुत्थे बन गये कि उनका उद्यम, साहस, वीरत्व आदि एक साथ ही लुप्त हो गया। प्रतिद्वन्द्वी सामन्त और सरदारों के विरोधी हो कर वे अपना ही बल घटाने लगे। रणजित् सिंहने मौजूा समक उनकी समस्त सम्पत्ति पर आक्रमण किया और उनका मर्त्य अपने नए साम्राज्यमें मिला लिया। १८१० ई०में साहबसिंहकी माता लछमीमार्हकी प्रार्थना पर रणजित् सिंहने उनके भरणपोषणके लिए साहबसिंहको एक लाप रुपयेकी जागीर दे दी। मुलतान विजयके बाद, उन्होंने उक्त महात्माको विधवा पत्नी दयाहुमारी और रतनहुमारीके साथ बादरान्दजी प्रथासे विवाह किया। गुजरसिंहके कनिष्ठ पुत्रने कपूर्वलाके अहलूयलिया सरदारके अर्पण कर्मग्रहण किया। उनके परमात्म चरण जयमल्लसिंहने पितृसम्पत्तिके वञ्चित रह कर रामगढमें जीवन बिताया। इस प्रकार पञ्जाबके शरी रणजित् सिंहके अभ्युदयसे यह महामभावशाली भङ्गीसम्प्रदाय छतमङ्ग हो कर लोपको प्राप्ति हुआ।

भङ्गी—उत्तर-पश्चिम और दक्षिण भारतवासी एक निकट जाति। भाङ्गदारीका काम ही इनका जातीय व्यवसाय है। इस जातिको उत्पत्तिके विषयमें विशेष मतभेद है। कोई कोइ मेहतर, चण्डाल या डोमसे इस जातिको उत्पत्ति मानते हैं। मुसलमानोंके अधिकारमें ये लोग मेहतर, हलालघोर, धानरौब, दाहरवाला, मुसल्लो आदि नामोंसे पुकारे जाते थे। पञ्जाबप्रदेशके भङ्गी लोग दुहारा नामसे प्रसिद्ध हैं। इसके अलावा लोलयेगी, शेख आदि स्वतन्त्र भङ्गीयोंके धर्मसम्प्रदाय या उनके प्रवर्तकों के नामसे पैदा हुए हैं। किसीका मत है कि, भङ्ग पानेके कारण इनका नाम भङ्गी पडा है। इनगत्सके रहनेवाले भाङ्गदारी का कहना है, कि 'सर्वभङ्ग' अर्थात् सम्पूर्णरूपसे हिन्दू समाजसे विच्युत, इस अर्थसे भ गी नाम पडा है।

वनारसके लालयेगी लोग धर्म पाण्डव नकुलमें ही अपने पूर्वपुरुषकी कल्पना करते हैं। इस उद्देशकी सिद्धिके लिए उन्होंने पाण्डवका महामस्थान, बाघमें



मुजफ्फर खाके मित्रोही होने पर दोपानसिंहने विशेष निपुणताके साथ उनका दमन किया था। इसी बीचमें अहमदशाहके पुत्र तैमूरशाह काबुलके सिंहासन पर बैठ कर पञ्जाबराज्य दफल करनेकी मनशासे सेना तयार करने लगे। उधर सिखोंने भी विपत्तिकी सम्भावना देय तयारिया करनी शुरू कर दीं। १७७७ ई०में मुल्तान प्रदेशमें अफगान और सिख सेनामें घोरतर युद्ध हुआ। अफगानीसेनापति हाइनीखाँ इस युद्धमें बन्दी हुए। सिखोंने थडी निपुणताके साथ उन्हें तोपसे उडा दिया। इस प्रकार कठोर अत्याचारसे प्रपीडित हो कर शाह तैमूरने पुन दूसरे वर्ष शीतकालमें भङ्गीदलका दमन करनेके लिए जङ्गीयाँको भेजा। इस दुरानी सरदारने मुसुफ-जै, दुरानी, मुगल और काजलवासियोंकी सहायतासे सिखोंको परास्त कर मुल्तान पर अधिकार कर लिया और सुजापाको बहाका शासनकर्ता बना दिया। अफगान विप्लव शान्त होने पर भङ्गी सरदार देशासिंह चिनि शीत-चामीयोंके दमनार्थ अग्रसर हुए। शुकेर्चकिया सरदार महासिंहके साथ किसी एक खण्ड युद्धके बाद १७८२ ई०में रणक्षेत्रमें उनकी मृत्यु हो गई।

भङ्गी सरदार हरिसिंहके प्रसिद्ध सेनापति गुरुबक्स सिंहने कुछ समय तक अपने उपद्रवादि द्वारा भङ्गी गौरव को रक्षा को थी। उनकी मृत्युके बाद दत्तक पुत्र लहना सिंह और उनके दौहित्र गूजरसिंहमें विरोध खडा हुआ। पीछे उस सम्बन्धिके समानरूपसे विमर्क हो जाने पर दोनों सरदारके फण्डासिंह और गण्डासिंहके सहयोगसे युद्ध विग्रहदि करने पर भी उन्होंने स्वतन्त्ररूपसे जो कार्यादि किये थे, भङ्गी-इतिहासमें ये भी उल्लेख योग्य हैं।

अहमदशाह भारतसे लौटते समय लाहोरमें काबुली मल्ल नामक एक हिन्दूकी शासनकर्ता नियुक्त कर गये थे। लहना सिंह और गूजर सिंहने दल सहित आक्रमण कर लाहोर लूट लिया। १७६५ ई०में गूजर सिंहने उत्तर पञ्जाब अधिकार करनेकी चेष्टा की। लाहोरमें दो वर्ष रहनेके बाद, १७६७ ई०में अहमदशाहके आखिरी बार भारत आक्रमणके समय, वे अफगानी-सेनाके आनेकी खबरसे डर कर लाहोर छोड़ पञ्जाबकी तरफ भागे, परन्तु

अहमदशाह उक्त दोनों भङ्गी-सरदारोंके हाथ लाहोरका कर्तृत्व सौंप कर काबुल चले गये। बादमें ३० वर्ष तक इन्होंने शान्तिसे लाहोर राजधानीमें रह कर राज्य भोगा था। पीछे शाह जमानने काबुलसिंहासन पर बैठ कर भारत साम्राज्य स्थापनके लिए १७६३, १७६५ और १७६६ ई०में लगातार तीन बार पञ्जाब पर आक्रमण किया। पहलेके दोनों युद्धमें वे सफल न होने पर भी तीसरे युद्धमें उन्होंने लाहोर पर कब्जा कर ही लिया। १७६७ ई०में डरी जन घरीको लहनासिंह नगरकी चावी दे कर भाग गये। शाह जमानके लौट जाने पर उसी वर्ष लहनासिंह और शोभा सिंहने लाहोर अधिकार कर लिया, किन्तु थोड़े ही समय बाद उन दोनोंकी मृत्यु हो जानेसे लहनाके पुत्र चेत सिंह और शोभाके पुत्र मोहंहरसिंहने शासनकर्ताका पद प्राप्त किया। राज्यशासनमें अक्षमता और मद्यपानादि दोषसे उनके राज्यमें विशृङ्खलता होने लगी। मौका देख प्रसिद्ध शुकेर्चिया सरदार रणजित्सिंहने लाहोर आक्रमण का सङ्कल्प किया। १७६६ ई०में अन्यान्य भङ्गी सरदारोंके पडवबसे बुलाये जाने पर उन्होंने सेना-सहित लाहोरमें प्रवेश किया, इससे चेतसिंह और मोहंहरसिंह भाग गये।

उधर भगो मिसलके इल्फति देशासिंहकी मृत्युके बाद उनके नाबालिग पुत्र गुलाब सिंहने १७८२ ई०में पितृ पद प्राप्त किया। उनकी बुद्धिपुत्रि विशेष परिफुट न होने से उनके भाई फरम सिंह मिसलका सब काम-काज देखते थे। गुलाब सिंहने पहले ही कसूर पर कब्जा कर लिया था, परन्तु वे ज्यादा दिन उसका शासन न कर सके। १७६४ ई०में कसूरके पठान सरदार निजामउद्दौल खाँ ने उसे पुन अपने अधिनारमें कर लिया। १७७७ ई०में रणजित्त सिंहकी लाहोर निजयसे डर कर गुलाबसिंह भगी, जैसासिंह रामगडिया और निजामउद्दीनने एक साथ मिल कर रणजित्तसिंहके प्रभावको खर्चित करनेकी चेष्टा की। लाहोर और अमृतसरके बीचके भसिल नगरमें दोनों दलोंकी मुठभेड़ हुई। इस युद्धमें मिलित सरदार सेनादलको पराजय स्वीकार करनी पडी। यहाँ पर मद्य पान जनित कम्पप्रलाप रोगसे गुलाबसिंहकी मृत्यु हुई।

गुलाबकी मृत्युके बाद १० वर्षके पुत्र गुरुदीतसिंहने

पितृसिंहासन प्राप्त किया। परन्तु मिसल परिचालना का भार उनकी माता और मुसलमान सुखान पर दिया गया। भङ्गीयोंके अमृतसर दुर्गकी अभिलाषासे रणजित् सिंह विवादाके लिये छिद्रान्त्रेयण करने लगे। आखिर जमजमा तोप मागी, और उसके न मिलने पर भङ्गी दुर्ग पर धावा बोल दिया। भङ्गी सेनादल ५ घण्टा तक युद्ध करनेके बाद रणमें भग डाल कर भाग गया। रानीमाता निरुपाय दस कर पुन गुरुदोतको ले रामगढ भाग गई। (१८०२ ई०)।

लाहौर मिजयके बाद गुजरसिंहने दलाल साहब उत्तरकी ओर प्रस्थान किया। उनकी वीर बाहिनीने विशेष उद्यमके साथ एक एक कर क्रमश गुजरात, जम्मू, इसलामगढ, पञ्च और देव भताला, गड्ड, भीमनेर और मांभा प्रदेश अधिकारपूर्वक लड़े। बादमें भङ्गीके प्रसिद्ध रोहताम (रोहम) दुर्गकी जीत कर अपना प्रसिद्धि की। इनके मध्यमपुत्र साहबसिंहके साथ शुकेविक्रिया चरतसिंहकी कन्या राजकीरका विवाह हुआ। ज्यैष्ठपुत्र सूर्यासिंह पिताके साथ कलहमें मारे गये और मध्यमपुत्र अपने साले महासिंहके लिये पिता अपमान करनेके कारण पितृस्नेहसे वञ्चित रहे। युद्ध गुजरसिंह वनतमें फनिष्ठ फतेसिंहको अपनी सम्पत्तिका उत्तराधिकारी स्थिर कर लाहौर लौट आये। वहा १८८८ ई० में उनकी मृत्यु हुई।

अब पितृ सम्पत्तिके लिये दोनों भाइयोंमें विवाद उपस्थित होते देख, महासिंहने फतेसिंहका पक्ष लिया। इस युद्धमें साले बहनोई दोनोंमें झगडा उठ पडा हुआ। फरीब २ वर्ष इसी प्रकार मनोमालिन्यमें बीतने पर, १७६२ ई०में दोनों शत्रुओंके हृदयोद्घोष अनि प्रउलित हो उठी। महासिंहने दलसहित आ कर सोधरादुर्गमें साहबसिंहको घेर लिया, परन्तु दैवशास्त्र उनकी मृत्यु होने पर भी भगिणीकी ही विजय हुई। १७६८ ई०में जब शाह जमानने चौथी धार पञ्जाब पर आक्रमण किया, तब भी इस स्वित्तसम्प्रदायने विशेष रणनिपुणताका परिचय दिया था।

शाह जमानके भेजे हुए दुरांनी सेनापति सहित ५ हजार सेना नष्ट कर देने और अन्यान्य साहसिकताके

परिचयोंसे साहबसिंह हकी वीरत्वप्रभा किसी समय समग्र पञ्जाबप्रदेशमें विभासित हो गई थी। परन्तु धीरे धीरे घोर मदिरासक्त हो कर वे इतने निकम्मे बन गये कि उनका उद्यम, साहस, वीरत्व आदि एक साथ ही लुप्त हो गया। प्रतिद्वन्द्वी सामन्त और सरदारों के विरोधी हो कर वे अपना ही बल घटाने लगे। रणजित् सिंहने मौका समझ उनकी समस्त सम्पत्ति पर आक्रमण किया और उनका सर्वस्व अपने नव साम्राज्यमें मिला लिया। १८१० ई०में साहबसिंह हकी माता लछमीमाई की प्रार्थना पर रणजित्सिंहने उनके भरणपोषणके लिये साहबसिंहको एक लाख रुपयेकी जागीर दे दी। मुलतान मिजयके बाद, उन्होंने उक्त महात्माकी विधवा पत्नी दयाशुमारी और रतनशुमारीके साथ चादरान्दजी प्रथासे विवाह किया। गुजरसिंहके फनिष्ठ पुत्रने कपूरथलाके अहलूवालिया सरदारके अधीन कर्मग्रहण किया। उनके पुत्रमात चशधर जयमलसिंहने पितृसम्पत्तिसे वञ्चित रह कर रामगढमें जीवन बिताया। इस प्रकार पञ्जाबके शरी रणजित्सिंहके अभ्युदयसे यह महाप्रभावशाली भङ्गीसम्प्रदाय छत्रभङ्ग हो कर लोपकी प्राप्ति हुआ।

भङ्गी—उत्तर पश्चिम और दक्षिण भारतजासी एक निरुद्ध जाति। ऋडू, दारोका काम ही इनका जातीय ध्येयसाय है। इस जातिकी उत्पत्तिके विषयमें विशेष मतभेद है। कोई कोई मेहतर, चण्डाल वा डोमसे इस जातिकी उत्पत्ति मानते हैं। मुसलमानोंके अधिकारमें ये लोग मेहतर, हलालखोर, खाकरोब, दाहरवाला, मुसल्लो आदि नामोंसे पुकारे जाते थे। पञ्जाबप्रदेशके भङ्गी लोग सुहात नामसे प्रसिद्ध हैं। इसके अलावा लालनेगी, शैख आदि स्वतन्त्र भङ्गीयोंके धर्मसम्प्रदाय वा उनके प्रवर्तकों के नामसे पैदा हुए हैं। किस्तीका मत है कि, भङ्ग पीनेके कारण इनका नाम भङ्गी पडा है। बनारसके रहनेवाले ऋडू, दारो का कहना है, कि 'सर्वभङ्ग' अर्थात् सम्पूर्णरूपसे हिन्दू समाजसे विच्युत, इस अर्थसे भगो नाम पडा है।

बनारसके लालनेगी लोग धर्म पाण्डय नकुलमें ही अपने पूर्वपुरुषकी कल्पना करते हैं। इस सिद्धिके लिये उन्होंने पाण्डयका महाप्रस्थान,

सीताकी खोजमें रामचन्द्रके साथ नकुलका साक्षात्कार, रामानुचर द्वारा नकुलकी पूजा, नकुलका ब्राह्मणवध और चण्डाल रपाति तथा चण्डारूपी नकुलको पापमुक्तिके लिए गुरुनानरुका मर्यगमन आदि विचित्र प्रसंगोंकी अतारणा की है। जहा पर वह चण्डाल ईश्वर चिन्तामें रत था, वही स्थान चण्डालगढ़ ( वर्तमान चुनार ) नामसे प्रसिद्ध हुआ। मुसलमान लोग उन्हे गढ़ नामसे पुकारते हैं। उनका आस्थाना गढ़पहाड मुसलमान और भगियो का पवित्र तीर्थस्थान है।

उस चण्डालके कालू और जीवन नामके दो पुत्र थे। कालूके वंशधर लोग डोम और चण्डाल कहलाये, तथा जीवनके वंशसे भगियो की उत्पत्ति हुई। लालवेग नामक एक साधुपुरुषकी कृपासे जीवनने ७ पुत्रों की प्राप्ति हुई। साधुपुरुषके कृपालव्य होनेसे उसने सन्तान परम्परा लालवेगी कहलाई। किम्बदन्ती इस प्रकार है— माकिद्वन चौर आलेरुसन्दरके भारतमें किसी अनावनीय कारणसे जीवनको उत्पीडित करने पर जीवन अपने पुत्रो सहित भागा। उसका प्रथम पुत्र प्रीक चौर द्वारा यवन धर्ममें दीक्षित होने पर उसके वंशधर शैप वा मुसलमान भंगी, द्वितीयका पुत्रगण रातरत गी, तृतीयका वंश धानुरु, चतुर्थका वंश वासफोड, पञ्चमकी सन्तान हेला, छठेकी सन्तति हाडो और सातवे का वंश लालवेगी नामसे परिचित हुआ। इसके सिवा इनकी उत्पत्तिकी और भी अनेक किम्बदन्तिया हैं।

भ गियो की उत्पत्तिके विषयो में जो आख्यान सुनने में आते हैं, उनसे अनुमान होता है, कि यह झाडू दार-वंश पहले हिन्दू था, बादमें कोई कोई मुसलमानो के अधिकार-कालमें इसलामधर्ममें दीक्षित हुआ है। यही कारण है, कि इनके उपाख्यानो में हिन्दू और वीच पुराणोक्त पाण्डव, दाल्मीकि, गिब, भोरक्षनाथ, मरुत्येन्द्रनाथ, शकन्दनाथ आदि नाम और मुसलमान इतिहासोक्त गजनीरंज, पीराण पौर, श्वदुल कादेरजिलानो, सेपसरम आदिके प्रसंग पाये जाते हैं।

इस भगीजातिकी हिन्दूशाखामें १३५६ और मुसलमानशाखामें ४७ थोत्र हैं, ऐसी प्रसिद्धि पाई जाती है। उनमें बागडो, वाई, वाइसवार, वालकचमरिया, वडगुजर, भदौरिया, विनेनगोव, बुन्देलिया, चमरिया, चन्देल, चौहान, छोपी, धेलफोड, गदरिया, जादोन, यदुवशी, जैसवार, जोगिया, कडाह, फायस्यवशी, त्रिन्दर, सकरवार, टाक, टाकुरवाई, तुर्किया, अन्तर्वेदी, विल्खरिया, वनीध, बरनवार, भोजपुरी, रावत, गाजीपुरी रावत, जमालपुरिया, जमुनापारी, जनकपुरी, जौनपुरी, कानपुरी, कनपुरिया, काडोगिया, मगलौरी, मुलतानी, नानरपुरी, सैयदपुरे, शर्करिया, उज्जैनवाल, वदलान, धारलेग, नानरगाही, चनाहिया, मिलौर, मचाल, देशवाल, गह लोत, सोद, चचनवार, भगवतिया, भोकर, चीहिला, चुनार, धरकीलिया, गरौडिया, ज धारे, जण्णवली, नीरतन, निरवानो, पानवाडी, फूलपानवार, राडी, रोल्पाल, सेखावत, तरवारिया, जुतेले, कलावत, खरीतिया, कोडिया, कौशिकिया, मयुरिया, पथरवाड, चुरेली पथरघोटी, डडूमर्दन, राजौरिया, गगवनी, बरची, भूमियान, वसोद, डोमर, सूपभगत, औसियार, देशी डोम, वासफोड और तुरेहा इत्यादि शाखाए ही प्रधान हैं।

इनमें हिन्दू और मुसलमानका निर्णय करना कठिन है। लालवेगी और शैव मेहतर लोग अपनेको हिन्दू वा मुसलमान बताने पर भी मन्दिर या मन्मजिदमें प्रवेश नहीं कर पाते। धर्ममतके प्रभेदके कारण इनमें भी थोडा बहुत मतपार्यय देखा जाता है। मजहबो नामके नानरगाही लालवेगी भगी शैप मेहतरोंके साथ वैठ कर भोजन करते हैं। ये सभी हिन्दू और मुसलमानो का जूटा खा सकते हैं। अपनेसे भिन्न श्रेणीमें ये अपभव द्रव्य ग्रहण करते हैं और अपनी श्रेणीमें कचो रसोई खानेमें कोई दोष नहा मानते। मुसलमानो तक छेदन ( सुन्नत ) करते हैं और सूअरका मांस अस्पृश्य समझते हैं। हेल-भ गी कुत्तोको नहीं छूते। लालवेगी और शैव मेहतर लोग अन्य हीन सम्प्रदायके लोगोंकी अपनी श्रेणीमें मिला सकते हैं। ये लोग साधारणतः दूसरोंके मुर्देको नहीं जलाते, परन्तु दिहोके पश्चिममें रहनेवाले भगी श्वदाह और झाडू दारके कामसे

पूणा नदी करते। अन्वय चमार लोग ही भाडू देते हैं और प्रायः डोम लोग ही मुर्दे जलाते हैं। मजहबी और रगरेटा भगो सिखधर्मको मानते हैं। पहाल लेनेके वाद ये लोग सिर पर बड़े बड़े बाल रखते हैं। ये साधारणतः सफाईसे रहना पसन्द करते हैं। कमी भी दूसरेके मलमूत्र आदिका स्पर्श नहीं करते। ताम्रकूट सेवन समीमें निषिद्ध है।

ये सिध्द सम्प्रदायमें शामिल होने पर भी नीचत्वके कारण अल्पान्य सिध्द इनके साथ नहीं रहते। गुरु तोग वहादुरको ये अपना प्रधान गुरु कहते हैं। लालवेगो और हिन्दू छुहराओंमें इनके शादी-व्याह होते हैं। सैनिक वृत्तिमें ये विशेष पटुता रखते हैं। रगरेटा लोग अपनेकी मजहबियोंसे ऊँचा बतलाते हैं। दस्युवृत्तिके लिए इनकी विशेष र्याति है।

भगी जातिको उत्पत्ति और विस्तृतिका कोई धारा बाहिक इतिहास न रहने पर, भी वर्तमानमें इनकी जातीय भिन्नि अर्पेक्षाहत प्रशस्ततर हो गई है। निम्नश्रेणीमें जन्म लेने पर भी इनके हृदयमें धर्मभाव प्रबल है। अमृतसर, मरहदपुरके मकदुम शाहकी कब्र, वादा जिले की कालिकामाई, विध्याचलकी विन्ध्यावासिनी और गदपहाडी आदि तीर्थानि इनका समागम होता है। चैत्र मासके अन्तमें ये लोग महासमारोहसे उक्त शक्ति मूर्तियोंकी पूजा किया करते हैं। उस दिन ये लोग वहा पुत्रपीनादिका चूडाकरणदि करते और देवीके समक्ष यथायोग्य पूजा बलि आदि चढाते हैं।

बनारसके निवालय (शिवालय) घाटमें गुरुनानरुके नामसे पवित्र पचायत अग्राडा है, वहा इनके सामाजिक म्गडोंका निबटारा होता है। इनमें भी समाज परिचालक एक चौधरी होता है और उसके नीचे और भी कई कर्मचारी होते हैं। इस प्रकारसे इनकी समास गठित है और उनके नीचेके कर्मचारीगण साधारण लोगोंमें सम्मानाह होते हैं। अश्रेजी सेना निवासमें काम करते रहनेके कारण, इन लोगोंनि भी अपने अपने दलपति आदिके अश्रेजी नाम रख लिये हैं। आवश्यक होने पर उन कर्मचारियोंका चुनाव हो जाता है। चौधरी वा दलपति 'शिरोधियर जमादार' और उसके नीचेके

कर्मचारी 'मुन्सिफ' और 'नायव' आदि कहलाते हैं। उक्त पदोंके ग्रहण करते समय उस शाखाके तमाम लोगोंको एक भोज देनेसे पद प्राप्तमें फिर कोई बाधा नहीं रहती।

इस सामाजिक समाजमें किसी विषयकी जालिश रज्जु करनी हो तो पहले १) सवा रुपया तलबाना देना पडता है। मामला स गोन होने पर समापति और उसे श्रेणीके तमाम आदमियोंको खबर देनी पडती है, तथा जहा जिस समय विचार होगा उसकी भी इत्ला हो जाती है। विचार-क्षेत्रमें एक बहुत लम्बी चौडो चरपाई पर, एक तरफ पहले जमादार, उसके बाद चारों कमचारी और फिर साधारण पुण्य बैठते हैं। \*

इस भावमें साधारणतः तीन प्रकारके विचार होते हैं,—१ अर्थदण्ड, २ बल पूर्णक भोग या खाना बसूली और ३ जातिकुयुति (छुजात) करना। यदि कोई इस समाजके विचारको अप्राह्य कर अर्थदण्ड न दे, तो उसे समाजसे बहिष्कृत कर दिया जाता है। असती खिपोंके लिए बडो भारी सजाकी व्यवस्था थी। बहुधा स्त्री इत्याजनित पातक भोगना पडता था, इस कारण वह ध्यरस्था अब उठा दोगे है। जातिसे बहिष्कृत व्यक्ति यदि फिर कभी

\* बनारसके द्वाधनेगियोंमें ८ श्रेणी हैं। १ सदर या सान-निरालके साधारण कर्मचारी द्वारा रक्षित, २ काली-पटन या बहात पदातिक सनादलके अधीन, ३ काल कुरती या अश्रेजी सेनाके परिचारक, ४ वेसान या राजघाट मुगलसराय आदि रेखे-स्टेशनने कर्मचारी, ५ रामनगर या बाराणसी सरकारके कर्मचारी, ७ कोठीनाल अथवा मद्र छाह ब्यादिके घरमें काम करनेवाले और जनरली यानी अश्रेजी सेनादलमें बनारसी सासनके समय अश्रेजीके अधीन काम करनेवालोंके बशघर। एक समाजगत होने पर भी इन ८ सम्प्रदायोंमें परस्पर कुछ भिन्ना है, और इत्यानिय उनमें स्वतन्त्र कर्मचारी नियोगकी व्यवस्था है। सामाजिक म्गडोंके मिटाने समय दक्षपतिके सामने उक्त कर्मचारीको खान दिया जाता है। उसके बाद साधारण लोगोंका स्थान है। अश्रेजी सनामें काम करते रहनेसे इन लोगोंनि अपनेमें भी उसी तरहके नाम रखे हैं। साधारण लोग विवाही और दूत-रूपसे साधारणके निकट सचनादि पहुचानेवाले प्यादा कहलाते हैं।

उपयुक्त अर्थदण्ड वा भोजन दे कर समाजमें प्रवेश करना चाहता है, तो यह सभा उसे जातिमें शामिल कर सकती है।

ये अपनी अपनी श्रेणीमें विवाह करनेके लिए जाय हैं, परन्तु स्वर्गाव ( तर ) में नहीं। किन्तु यदि अन्य श्रेणीकी स्त्री पहले लालबेगी-समाजमें शामिल हो जाय, तो फिर उसके ग्रहण करनेमें कोई आपत्ति नहीं। इस प्रकारसे ये डोम, चमार आदिकी कन्या भी ग्रहण करते हैं। पहली स्त्रीकी अनुमतिके बिना, अथवा उसके वारूपनेको सावित किये बिना ये लोग दूसरा विवाह नहीं कर सकते। फुकेरो या मीरोरो बहन और बडो सालीके साथ विवाह करना निषिद्ध है। अन्यान्य धोकोंमें भी ऐसे ही कुछ नियम बने हुए हैं। परन्तु हेलाके सिवा अन्य साधारण लोग स्वश्रेणीके अतिरिक्त अन्य श्रेणीमें विवाह नहीं कर सकते। स्वर्णविवाहको ये लोग 'शादी' कहते हैं। डोम, धोबी आदि निम्न श्रेणीकी कन्या यदि यथाविधि भ गी दीक्षा ले कर विवाह नये तो उस असम्पूर्ण विवाहनाम 'सगाई' होगा। वह रीति धर्मान्तर ग्रहण करने पर भी 'परजात' समझी जायगी, परन्तु उसकी सन्तान भगी होगी। श्रेण्य लोग इस्लाम धर्ममें दीक्षिता भद्रवश्या गिर्यौंन पाणिग्रहण कर सकते हैं। परन्तु वह स्त्री कुनबी, जहीर, कोइरी आदि जातिकी होने पर विवाह नहीं हो सकता।

लालबेगी-बलमें शामिल करनेकी दीक्षा गणाले इस प्रकार है—जो व्यक्ति इस धर्मान्तर ग्रहणको इच्छुक है, उसे सामर्थ्यानुसार १५ सजा मनसे ले कर ५० सेर तक मिठाई बनवा कर जातीय सभाके समक्ष एक चौकी पर रखनी होगी। फिर यथापूर्व कुर्सीनामा वशास्त्री और नानकवाणी कीर्तनके वाद दलपति उस व्यक्तिको चरणाभूत और प्रसाद खाने देते हैं। पञ्जावके भ गिर्यौंनमें धर्मदीक्षाके समय यह मन्त्र पढ़ा जाता है—

“यहो सन्धयुगको कुर्सी है। त्रेता, द्वापर और कल युगमें सोनेके स्थानमें क्रमसे चादी, तांबा और मिट्टीका उल्लेख है। इसके वाद चिउडा, घी, पान, लौंग, और दालचीनी आदि सुगंध द्रव्योंमेंसे लालबेगी पञ्जा की है।”

श्रेण्य भ गिर्यौंनका विवाह अनेकशर्म सुसलमानोंकी शादी वा निष्काहके सदृश है। हिंदूशास्त्रमें पहले घटक ( निचधरिया ) द्वारा सम्बन्ध और कन्या पण स्थिर होना पर शुभ लग्न ठहराया जाता है। उस दिन भोज होता है। दूसरे दिन उसके यहाँ और उसके एक दिन कन्या के यहाँ भोज एक विवाह मन्त्र बनया जाता है। ग्राह्यण द्वारा 'साइत' ( शुभदिन ) 'चोधी जागेके वाद, उपरक्षके लोग चरको ले कर लटकीगालेके यहाँ जाते हैं। उस समय लडकोवाला उनके पैठनेके लिए रथान दे कर एक हठी अन्न चरके सामने रखता है। चरके मित्तों द्वारा उसका आस्वाद लिये जानैके वाद लटकीगाला उस के वाद दुआरजार प्रवा अर्थात् दरवाजेके एकतरफ खड़े, हो कर चर और कन्या परस्परको अत्रलेकन करते हैं। दोनोंमें चादर मालका व्यवधान रहना है। पदचाल्य यथारति चरण प्रारम्भ होता है और तिलकदानके वाद गँटजोड़ हो कर विवाहकार्य समाप्त होता है। बाबाजी कहलानेगाला साधुचेता कोई एक भ गी अथवा वरका बहनोईको ही गँटजोड़ा करनेका अधिकार है। इसके दूसरे ही दिन सुबह चरकन्याको विदा होती है। उस समय चरके कन्यापक्षीय शुभजनकों नमस्कार करने पर उस अत्रस्थानुसार 'विदाई' मित्रा करनी है। उस के वाद उहाँके नाइ, धोबिन और दाइयोंको कुछ कुछ इनाम दिया जाता है। घर खानेके वाद ४ दिन पर और कन्याकी परस्पर भेट नहीं होती। चौथे दिन वरपक्षीय नारी त्रिया इकट्ठी हो कर एक कमल पर दूल्हा और दुलहिनको आमने सामने बिठा कर शर्म उड़ा देती है।

इन्में भी विवाह-बंधन-उद्घनती व्यस्तथा है। स्वामि के उपजम ग, कुष्ठ वा उन्मादरोगग्रस्त होना पर स्त्रीसवध विच्छेदकी अर्जो पेश कर सकती है। परन्तु इस विच्छेदके लिए उसे ५ या १० रुपये नगद और सामा जिकूसभाकी भोज देना पड़ता है। इनकी सभा ही विवाह वरक चुका करनेमें एकमात्र अधिकारिणी है, परतु सब जगहके भगिर्यौंनमें ऐसी प्रथा नहीं है। शरीरगत रोगके कारण पतिका रथागना विहित नहीं है। स्त्रीना चरित्र दुष्ट होनेसे उसका रथाग किया जा सकता है। कभी कभी उस स्त्रीको जातिसे पृथक् कर दिया जाता है।

विधवा स्त्रीको उसका देवर ध्याह सजता है। यदि कोई विधवा स्त्री अन्य किसीके साथ विवाह कर, तो वह अपन पूर्व पतिनी सम्पत्तिकी भी अधिकारिणी होता है, परन्तु शेष और गाजीपुरी राज्यमें ऐमा नियम नहीं है अर्थात् ऐसी विधवा स्त्री अपने पृत्र पतिकी जायदादकी हकदार नहीं होती।

गर्माचस्थामे स्त्रिया गलेमें एक रुपया बाधे रहती हैं। उनका विश्वास है, कि इससे उपदेवताओंका उस गर्भिणी पर फिर किसी प्रकार अत्याचारका भय नहीं रहता। पाचवे या सातवें महीनेमें वे सतीपूजा करती हैं। प्रसव के समय चमारिन ही इनके यहा दाईका काम करती है। बच्चा पैदा होनेके बाद उसकी नाल काट कर उसी सोर-चाले घरमें गाढ दी जाती है और उस पर आग जलती रखते हैं। छठे दिन प्रसूति स्नानके बाद पवित्र हो जाता है। हेलाओंमें चारहवें दिन पवित्र होनेका नियम है। उसके बाद ब्राह्मणको बुला कर बच्चेका नाम रखते हैं और उसी समय मिर भी मुढा देते हैं। बालक ५ या ६ वर्ष होने पर उसे कालिकामाई या त्रिभ्यवासिनी देवीके पास ले जाते हैं और कर्णवेद पद्य चूडाकरणदि करनेके बाद पूजा चढाते हैं। मिरजापुरके हिला लोग स्तिकाग्रह त्यागनेके बाद काले डोम और गद्दामाईकी पूजा करते हैं।

इनमें शवदहके दाह करने वा गाडनेके कोई विशेष नियम नहीं है। कोई कोई तो मुर्देको गाड देते हैं और कोई मुषान्नि वा हाथ पर जला कर उसे जप देते हैं। इसके बाद उस शवदेहको तृप्तिके लिए उसको पत्र पर याद्यादि पदार्थ चढाते हैं। अपेक्षाकृत उन्नत हिन्दू भाडद्वार लोग निम्न श्रेणिके ब्राह्मण द्वारा मुषान्नि मन्त्र पढवा कर अपने अपने शवका दाह करते हैं और अस्थानुसार श्राद्ध भी किया करते हैं। शेष भ गियोंके बालकगण प्रेतात्माकी तृप्तिके लिए कलमा पढते और तीज तथा बरसी उत्सव मनाते हैं। लालबेगी और गाजीपुरी राज्य लोग पितर पक्षमे श्राद्ध और पिण्ड देते हैं।

दक्षिणात्यके अहमदनगर, सतारा, बेलगाम और धारवाड आदि जिले मे भी यह भ गो जाति बसती है। इसके आचार व्यवहार और बुलप्रथा परंपरमें विभिन्न

होने पर भी इनको उत्तरभारतीय भ गियोंकी श्रेणीमें शामिल किया जा सकता है। बेलगामके हलालपोर भ गो मत्र और माससेवी हैं। अम्बा भगानी जेलम्मा और प्रह्लादेव इनके उपास्य देवता हैं। ये हिन्दुओंके त्योहारो मे उपनासादि नहीं करते हैं, फिर भी त्योहार मनानेमें कोई कसर नहीं रखते। इनमें विधवा विवाह प्रचलित है। सद्यजात बालकके ५३ दिन पाच-भाई पूजा और १२वें दिन नामकरण होता है। तीसरे दिन ये लोग मृतके कलेवर्के ऊपर पिण्ड देते हैं। १० दिन में अशीक दूर होता है और उसके बाद ११वें दिन क्षाति कुटुम्बका भोज भी होता है। सभी तरहके ब्राह्मण इनका पौरोहित्य कर सकते हैं।

सताग जिलेके भ गियोंके दशहरा और दिवाली ये दो त्योहार ही प्रधान हैं। ये स्थानीय हिन्दूदेव देवियोंकी पूजा किया करते हैं। बहिरोगा, देवकाई, जनार्द, ज्योतिरा और परशुमा आदि इनके बुलदेवता हैं। इन देवमूर्तियोंको ये अपने घरमें रख कर उनकी पूजा किया करते हैं। धारवाडविवाह, बहुविवाह और विधवा विवाह इनमें प्रचलित है। नगरका मेला साफ करना ही इनका प्रधान कार्य है। जब सरकारी कार्यमें नियुक्त रहते हैं तब इनको पोशाक बहुत ही मँली रहती है, परन्तु दिनका काम पतम कर शामको ये स्त्री पुत्र मिल कर अच्छी पोशाकमे घूमा करते हैं। मास और मादक द्रव्य मात्र ही इनकी खास प्रीतिकी वस्तु है।

अहमदनगरके भ गो आपाढ और कार्तिककीशुका पनादगो, दशहरा, दिवाली, गोकुलाष्टमी और शिव रात्रि आदि पना में विशेष श्रद्धा रखते हैं। हुसेनी ब्राह्मण-गण हिन्दूभ गियोंके और काजीलोग शैव भ गियोंके विवाह कार्यमें याजकता करते हैं। शवदेह गाडनेके बाद २० या ४० दिनमें ये क्षाति कुटुम्ब चालीको भोज दिया करते हैं। यहाके भ गो हिन्दू और मुसलमानोके सभी पर्वका लक्ष्य रख कर चलते हैं।

धारवाडके भ गो प्राय सभी त्रिपथीमें दक्षिणात्यके अन्य भ गियोंका अनुकरण करते हैं। दक्षिण भारतके भ गियोंका कहना है, कि ये गुजरात ओर उत्तर भारतसे आ कर बसे हैं। स्थानीय कुछ आचार-व्यवहारोंका

अनुकरण करने पर भी उनके अन्य आचार व्यवहार प्राय उत्तर पश्चिमभारतके भगियोंके अनुरूप हैं।

भङ्गीमीर दीक्षित—सोमप्रयोग नामक ग्रन्थके प्रणेता।

भङ्गील (स० ह्री०) ज्ञानेन्द्रियकी विकलता।

भङ्गुर (स० लि०) भज्यते स्वयमेवेति भज्ज ( भङ्गभास-भिदोक्तुत् । पा १।२।६१ ) इति कर्मकर्त्तरि घुरच्, घिच्वात् घुत्वमिति काशिका । १ स्वय भजनशील, नाश चान् । २ कुटिल, टेढा । ( पु० ) ३ नदीका मोड़ या घुमाव ।

भङ्गुरा (स० स्त्री०) भगुर टाप् । १ अतिविषा, अतीस । २ म्रियगु ।

भङ्गुरता (स० स्त्री०) भ गुरस्य भाव तल् टाप् । भगुर का भाव ।

भङ्गुरावत् (स० लि०) १ पापी, राक्षसादि । २ अनय-स्थितचित्तवृत्ति ।

भङ्गोद्—मन्द्राज प्रदेशके विशाखपत्तन जिलान्तर्गत एक भूमिभाग । यहा प्लोएडजातिका वास है । पहले यहा नरवलि होती थी । विसमकटक देखो ।

भङ्गा (स० ह्री०) भङ्गाया भवन क्षेत्रमिति भङ्ग ( विभा-पातिलमागोभङ्गास्तुभ्य । पा १।२।४ ) इति पक्षे यत् । १ भङ्गक्षेत्र, वह पेत जिसमें भाग होती हो । ( लि० ) भङ्गमहतीति भङ्ग-द तादित्वात् यत् । २ भङ्गाह, टटने लायक ।

भङ्गा—अयोध्याप्रदेशके वहराहच जिलान्तर्गत एक नगर । यह राप्ती और भाकला नदीके दोआबके ऊपर अवस्थित है । इसके चारों ओर विस्तोर्ण आध्रजन है ।

भचक ( हिं० स्त्री० ) भचक कर चलनेका भाव, लँगडा पन ।

भचकना ( हिं० लि० ) १ आश्चर्यमें निमग्न हो कर रह जाना । २ चलनेके समय पैरका इस प्रकार द्रु कर या टेढा पडना कि देखनेमें लँगडापन मालूम हो ।

भचक (स० ह्री०) भाषा राशीना चक । १ राशिकक । २ नक्षत्रचक । ३ नक्षत्रसमूह ।

भज—पश्चिमघाट पर्यंतमालाके अन्तर्गत एक प्राचीन स्थान । यह भीरटाटले दो कोस दक्षिणमें अवस्थित है । यहा पर ईसा जन्मके पहलेके बने हुए एक प्राचीन

चैत्य ( गुहामन्दिर ) का निदर्शन पाया जाता है ।

भजक ( स० लि० ) भजतीति भज णुल । १ भजनकारी, भजनेवाला । २ विभाजक, विभाग करनेवाला ।

भजग ( स० पु० ) रोमक सिद्धात-वर्णित जनपदमेद ।

भजत् (स० लि०) भजति विभजतीति वा भज् लट् शतृ । १ भागकर्त्ता, विभाग करनेवाला । २ सेवक, भजन करनेवाला ।

भजन (स० ह्री०) भज-भावे रघुट् । १ भाग, रज । २ सेवा, पूजा । वैष्णवोंका भजन साधनाका एक अङ्ग है । देवादि-के उद्देशसे जो गीत और स्तव किया जाता है, उसे भजन कहते हैं । ३ बारबार किसी पूज्य या देवता आदि-का नाम लेना, स्मरण ।

भजनता (स० स्त्री०) भजनस्य भाव तल् टाप् । भजगका भाव या धर्म ।

भजना ( हिं० कि० ) १ सेवा करना । २ आश्रय लेना, आश्रित होना । ३ देवता आदिका नाम रटना । ४ भागना नाग जाना । ५ प्राप्त होना, पहुचना ।

भजनानन्द—अद्वैतदर्पणके रचयिता । ये भुजाराम नामसे भी प्रसिद्ध थे ।

भजनानन्द (स० पु०) वह आनन्द जो परमेश्वरका नाम स्मरण करनेसे प्राप्त होता है, भजनसे मिलनेवाला आनन्द ।

भजनानन्दी (स० पु०) वह जो दिनरात भजन करनेमें मग्न रहता हो, भजन गा कर सदा प्रसन्न रहनेवाला ।

भजनी ( हिं० पु० ) भजन गानेवाला ।

भजनीय, स० लि०) भज अनौर्य । १ भजनयोग्य, विभाग करने लायक । २ सेवनीय, सेवा करने लायक । ३ आश्रय लेने योग्य ।

भजमान (स० लि०) भजते फलमनुब्रह्मतीति भज ताच्छि ल्ययीवचनशक्तिपु चानश् । पा १।२।२६ ) इति आनश, शानञ् वा । १ न्याय । २ न्यायागत द्रव्यादि । ३ भज कर्त्तरि शानच् । ३ विभागकारी, भाग करनेवाला । ४ सेवक, सेवा करनेवाला । ( पु० ) साचरतनूपके एक पुत्रका नाम । ( भाग० ६।२।४६ )

भजाना ( हिं० कि० ) १ दौडना, भागना । २ भगाना, दूर कर देना ।

भक्ति (स० पु०) भज धातुनिर्देशी इत् । १ भजधातु । ० सात्वतनृत्यके एक पुत्रका नाम । (भा० ६।२४।६)

भक्तिवाउर (हि० स्त्री०) चावल, दही, घोसा आदि एक साथ पका कर बनाया हुआ भोजन । इस प्रकारके भोजनमें नमक भी डाला जाता है । इसे उभिया और मित्रियाउर भी कहते हैं ।

भक्त्य (स० त्रि०) भज बाहु कर्मणि पत्य । भजनीय ।

भक्तरथ (स० पु०) राजभेद ।

भक्ति—पञ्जाब प्रदेशके अन्तर्गत एक छोटा पहाड़ी राज्य । यह ब्रह्मा ३१ ७ से ३१ १७ उ० तथा देशा० ७७ २ से ७७ २३ पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ६६ वर्गमील और जनसंख्या प्राय १३२०६ है । यहाके सरदार राजपूत वंशीय और राणा उपाधिधारी हैं । फाङ्गडा राजवंशके किसी वंशधरने इस स्थानको जीत कर वर्तमान राजवंशको प्रतिष्ठा की है । १८०३ और १८१५ ई०में गुरखा लोगोंने इस स्थानको लूटा । पीछे अंगरेजोंने गुरखानोंको यहासे मार भगाया और राणाको उस सम्पत्तिका भोगाधिकार प्रदान किया । इसी उपकारके लिये यहाके राणा ब्रिटिशसरकारको वार्षिक १४४० रु० कर दिया करते हैं । वर्तमान सरदार राणा दुर्गा सिंह १८७५ ई०में राजगद्दी पर बैठे । आय २३००० रु०की है जिसमेंसे १४४० रु० ब्रिटिशसरकारको करमें देने पडते हैं । यहा अफीम बहुतायतसे उपजती है । राणाको फासी देनेका अधिकार नही है ।

भक्त्य (स० त्रि०) भज यत् । विभागयोग्य । २ सेवनीय, सेवा करनेयोग्य । ३ भजनेके योग्य ।

भक्ति—एक प्राचीन राजवंश । ये लोग उड़ीसा प्रदेशमें राज्य करते थे । शिलालिपिसे इस भक्तिवंशकी जो दो तालिका पाई गई है वह इस प्रकार पाई गई है—

शतुभक्तिदेव वा कोटभक्ति

द्विभक्ति

रणभक्तिदेव

राजभक्तिदेव

नेत्रिभक्तिदेव

दूमरी शिलालिपिसे इस वंशके कुछ राजाओंकी वंशावली इस प्रकार पाई गई है—

ब्रह्मभक्तिदेव

दिव्यभक्तिदेव

शिलाभक्तिदेव

महाराजविद्याधरभक्तिदेव

भक्तक (स० त्रि०) भज ण्वुल् । १ भज्जनकर्त्ता, निरासक । ० भङ्गकारक, तोडनेवाला ।

भज्जन (स० स्त्री०) भज्ज-ल्युट् । १ भङ्गकरण, भग करना । २ भङ्ग, ध्वंस, नाश । ४ अर्कटक्ष, मदार । ५ शिर मर्णादिका आमर्शन । ६ वायुजन्य प्रणयेवना विशेष, घणकी वह पीडा जो वायुके कारण होती है । ७ सिद्धि भाग । (त्रि०) ८ भक्तक, तोडनेवाला ।

भज्जनक (स० पु०) भनक्ति आमर्दयतीति भज्ज ल्यु, ततः स्वार्थे स ह्राया वा षन् । मुखरोगविशेष । लकना । इसमें मुह टेटा हो जाता है । मुखरोग देखो ।

भज्जनागिरि (स० पु०) पाणिनिके किशुलुकादिगणोक्त पर्वतभेद ।

भज्जय (स० पु०) भनक्तीति भज्ज बाहुलकात् अय । देवकुलोद्भूत तत्त्व ।

भज्जा (स० स्त्री०) भनक्ति भयादिकमिति भज्ज अच्, टाप् । अन्नपूर्णाका एक नाम ।

भट (स० पु०) भटयते त्रियते, वा भटतीति भट् अच् । १ योद्धा, युद्ध करने या लडनेवाला । २ म्लेच्छभेद । ३ घोर । ४ पामरविशेष । ५ रजनीचर । ६ वर्णसङ्घट्ट जातिविशेष ।

भटकटाई (हि० स्त्री०) एक छोटा और कटिदार क्षुप । यह क्षुप बहुधा औषधके काममें आता है । इसके पत्तों पर भी काटे होते हैं । इसमें बैंगनीरंगके फूल लगते हैं और फूलका जीरा पीला होता है । कहीं कहीं सफेद फूलकी भटकटैया मिलती है । विशेष विवरण कपटकारी शब्दमें देखो ।

भटकना (हि० क्ति०) १ श्वर्थ इधर उधर घूमते फिरना । २ रास्ता भूल जानेके कारण इधर उधर घूमना । ३ ध्रममें पडना ।

भटकना (हि० क्ति०) १ गलत रास्ता बताना, ऐसा रास्ता बताना जिसमें आदमी भटके । २ शोखा देना, डालना ।



भटतीतर ( हि० पु० ) उत्तर पश्चिम भारतमें मिलनेवाला एक प्रकारका पक्षी । यह प्राय १ फुट लंबा होता है । इसकी मादा एक वारमें तीन अंडे देती है । लोग प्राय इसके मासके लिये इसका शिकार करते हैं ।

भटधर्मा ( हि० वि० ) वीर धर्मका पालन करनेवाला, सच्चा बहादुर ।

भटनास ( हि० स्त्री० ) चीन, जापान और जायामें बहुत अधिकतासे मिलनेवाली एक प्रकारकी लता । अथ प्रल, पूर्व बङ्गाल, आसाम तथा गोरखपुर वस्ती आदिमें भी इसकी खेती होने लगी है । इसमें एक प्रकारकी फलिया लगती हैं और उन्हीं फलियोंके लिये इसकी खेती की जाती है । फलियोंके दानोंकी दाल भी बनाई जाती है और सस भी । ये फलिया बहुत पुष्ट होती हैं और पशुओं को भी खिलाई जाती है । इसके दो भेद हैं, सफेद और दूसरी काली । मैदानों में यह प्राय घसीक की फसलके साथ बोई जाती है ।

भटनेर—एक प्राचीन राज्यका मुख्य नगर । यह सिंध नदीके पूर्वी तट पर स्थित था । इस नगरकी तैमूरने अपनी चढ़ाईके समय लूटा था ।

विशेष विवरण भाटोर शब्दमें दोजे ।

भटनेरा ( हि० पु० ) १ भटनेर नगरका निवासी । २ वैश्यो की एक उपजाति ।

भटबलाप्र ( स० पु० ) १ वीरपुरुष, सेनापति । ( स्त्री० ) २ सेना समूह ।

भटभटमातृतीर्थ ( म० स्त्री० ) तीर्थभेद ।

भटमेरा ( हि० पु० ) १ दो धीरोंका सामना, मुकाबला ।

२ आकस्मिक मिलन, ऐसी भेंट जो अनायास हो जाय ।

३ घना, टकर ।

भटा ( स० स्त्री० ) भट टापू । इन्द्रवाहणी ।

भटा ( हि० पु० ) बैंगन देणे ।

भटार्क ( स० पु० ) वल्लभी राजवंशके प्रतिष्ठाता । ये पहले सेनापति आर्यासे भूषित थे । मैत्रक जातिकी परास्त करनेके कारण उनका वंश मैत्रक कहलाया ।

वल्लभी देसा ।

भट्ट ( स० स्त्री० ) भटति भट्टयते वेति भट इत् । शूल-पक मासादि, कवाव ।

भट्टियार ( हि० पु० ) भट्टियार देणे ।

भट्टियारी ( स० स्त्री० ) रागिणीविशेष । यह ससृष्ट मतानुयायी प्राचीन रागिणी नहीं है । रहते हैं, कि त्रिकमादित्यके भाई भर्तृहरिने इसका सङ्कलन किया, इसीसे यह भर्तृहारिका, भट्टियारी वा भाटियारी नामसे प्रसिद्ध है । यह रागिणी ललित और परजयोगसे उत्पन्न है । सा वादी, म सम्वादी है, स्वरधाम यो है—

“श्रु ग म प ध नि सा ” ( स गीतरत्ना० )

भट्टियाल ( हि० स्त्री० ) धारकी ओर, धारके साथ साथ ।

भट्ट ( हि० स्त्री० ) १ स्त्रियोंके संबन्धके लिये एक आदर सूचक शब्द । २ सखी, गोइया । ३ प्रिय व्यक्ति ।

भट्टेरा ( हि० पु० ) वैश्यो की एक जाति ।

भट्टेश्वरी ( स० स्त्री० ) राजपूतानेके श्रावृषर्षस्थ शक्ति मूर्तिविशेष । दामि शास्त्रामुक्त किसी राजपूतने उनकी धाराधना करके श्रीसमृद्धि प्राप्त की । तभीसे उनके वंशधर भट्टेश्वरिया कहलाते हैं । आज भी दुबेला सरोही नामक स्थान उनके अधिकार में हैं ।

भट्टैया ( हि० स्त्री० ) भट्टश्टैया ।

भट्टोड ( हि० पु० ) यानियोंके गलेमें फासी लगानेवाला ढग ।

भट्टोला ( हि० वि० ) १ भाट सत्रधो, भाटका । २ भाटके योग्य ( पु० ) ३ वह भूमि जो भाटकी इनामके तीर पर दी गई हो ।

भट्टकला ( म० स्त्री० ) तीर्थविशेष ।

भट्ट ( स० पु० ) भटतीति भट्ट बाहुलकात् तल् । १ जातिविशेष ।

“वं श्याया शूद्रवीर्येण पुमानो मे वभूव ह ।

स भट्टो वानदूकम्ब गणया लुत्तिपाठक ॥”

( श्रावृषर्षवत्पु० जहाल० १० अ० )

वेश्याके गम और शूद्रके औरससे इस जातिकी उत्पत्ति हुई है । ये लोग लुत्तिपाठक हैं । कोई कोई क्षत्रिय और विप्र कन्याके सयोगसे भट्टजातिकी उत्पत्ति वतलाते हैं ।

२ स्वामित्व । ३ वेदाभिज्ञ । ४ पण्डित । ५ योद्धा,

सूर। ६ भाट्ट। ७ ब्राह्मणोंकी एक उपाधि। इस के धारण करनेवाले दक्षिण भारत, माल्य आदि कई प्रान्तों में पाये जाते हैं। ८ महाराष्ट्र ब्राह्मणोंकी एक उपाधि। इसके धारण करनेवाले दक्षिण भारत, माल्य आदि कई प्रान्तों में पाये जाते हैं। ९ महाराष्ट्र ब्राह्मण। १० तुतातामिष मीमांसक भेद। इसका मत मीमांसा दर्शनमें लिखा गया है। मीमांसा केने।

मट्ट—१ मोक्षपद मीमांसाके प्रणेता। आलङ्कारिक, अलङ्कार सर्वस्वमें उनका नामोल्लेख है। २ सस्कृतज्ञ जीर वेदपारक ब्राह्मणोंकी उपाधि।

मट्ट—सुमिताद्वारकी मान्देहिङ्ग उपत्यका नामी जातिविशेष। इस जातिके लोग जिस भाषामें बोलते हैं, वह मलय यासी भाषासे भिन्न है। किन्तु निम्नतराई स्थानोंकी भाषा इसके साथ बहुत कुछ मिलती जुलती है। त्रिपि द्वारा भाषाको व्यक्त करनेके लिये इन्होंने अपनी उपयोगी एक चणमालाकी सृष्टि की है। भारतीय द्वीपपुञ्जस्य इस असम्भ्य जातिके मध्य अक्षरमालाका आविष्कार और भाषातत्त्वका उज्ज्वल आलोक प्रसारित होने पर भी नर मास भोजनरूप जपन्धयुक्तिने इसके हृदयको बहुत दिनों से क्लृपित कर रखा है। ये लोग व्यभिचार और द्रोणहर रातको सृष्ट पाठ मन्त्राते हैं, रणमें वन्दी, जात्यन्तरमें दार परिग्रहकारी हैं अथवा विश्वासघातकता पुर्यक अन्य ग्राम, गृह वा मनुष्यको आक्रमण और ग्रामादि वाहन प्रभृति द्रोण दुष्ट व्यक्तियों से लोग मार कर खा जाते हैं। भूत योनि पर इनका विश्वास नहीं है।

मट्टकेदार—वृक्षरत्नाकरके प्रणेता।

मट्टनायक—एक आलङ्कारिक। महिनाथने इनका नामो ल्लेख किया है।

\* १२९० ई०में मानगिलेरी और १८०० ई०में सर धामफोर्ड रेणलठने अपन भ्रमणवृत्तान्तमें तथा मावडेन साहने अपन सुमाना इतिवृत्तमें इस वीभन्ध व्यापारका उल्लेख किया है। १८६५ ई०में अमेरिकानावा भ्रमणकारी प्राचर त्रिकोमर जेन सुमाना दगो आये थे, तब उन्हें इस मट्टनातिके नरमास यवनना विषय मालूम हुआ था। उन्होंने लिखा है, कि ओलन्दानोके मान्देहिङ्ग उपत्यका जीतन पर जो परतयुद्धाम द्विप रट थे, य

मट्टनरायण—महाराज आदिशूर द्वारा बद्धमें लाये गये पाच कन्नौजी ब्राह्मणोंमेंसे एक। इसके पिताका नाम क्षितिश या। ये आण्डिलय गोत्रीय थे। आदिशूरके लडके नूशूरके साथ राहदेशमें आकर ये मर बस गये। तभीसे उनकी मन्तान राट्रीय सभासे भूषित हुई था। राजा क्षितिशूरने उनके वराह, वृद्ध, राम, नान, निपो, गुजि, गुण, गृह त्रिक, गुण्ड, निपो, मधु, देवा, सोम, काम और दोन नामक सोलह पुत्रोंको ६ ग्रामोंका अधिनार प्रदान किया। ये सब पुत्र उत्तमान १६ ब्राह्मणप्रणके आविष्टुरय हैं। उक्त सोलह पृथक् पृथक् ग्राममें बस जानेके कारण उसी ग्रामके नाम से पुत्रारे जाने लगे। यथा,—वराह—वाडुगी, राम—गड गडी, निपो—बेशरकोणी, तान—कुसुमकुली, वाट्ट—पारिहाल, गुजि—कुलमी, गुण्ड—दीर्घाङ्गी, गुण—घोपाली, त्रिकसन—चटव्याल (बडाल), गड—मास चटन, तिनो—वसुयाडी, मधु—बडियाल, देव—सीऊ, सोम—दोषट्टाल, नीन—कुजि (कुयारी) और काम—क्षिन्नाडी।

२ बेणी सहर नामक नाट्यके प्रणेता। ३ रघुनाथ दीक्षित। उन्होंने १६/६ 'जिमशब्दमें' अपेक्षित व्याख्यानमें नामक उत्तरगम चरितकं एक टीका लिखी है। ४ प्रयोगरत्नके प्रणेता, श्रीभट्टरामेश्वर सूरिके पुत्र। जारा जमीधाममें रह कर उन्होंने इस ग्रन्थका सम्पादन किया। ५ एक कश्मीरी पण्डित, स्वयं चितामणि निवृत्ति नामक एक ग्रन्थ रचियता। ये महामाेश्वरकी उपाधिमें भूषित थे।

मट्टप्रयाग (८० पु०) गङ्गा और यमुनाका सङ्गम स्थान।

मट्टवलमट्ट (८० पु०) त्रलसिद्धातके एक टीकाकार।

मट्टवीजक (८० पु०) एक कवि। शाङ्गधर पद्धतिमें इन का उल्लेख है।

आन भी नरमास पाते हैं। किन्तु जो ओलन्दानके साथ मित कर रान लग थे, उन्होंने इस निरुद्ध शक्तिको निरुत्तुल द्रोड दिया है। सिप्रीकोके राजाके पदुकेके ओलन्दान का नाम कहा था, कि उन्होंने नरमास है और उसका द्वन्द्वीकी

भट्टभास्कर मिश्र ( स० पु० ) एक टीकाकार ।

भट्टमदन ( स० पु० ) एक ग्रन्थकर्ता ।

भट्टमीम—रावणाजुंनोय नामक काव्यके प्रणेता । ये घलभी स्थान निवासी थे ।

भट्टमूर्ति—एक तेलगू-कवि । ये राजा वृष्णरायकी सभा में प्रियमान थे । इनके बनाये हुए नरेशभूपालियम् और घसुचरिखम् नामक दो अत्युत्कृष्ट काव्य मिलते हैं ।

भट्टमहल ( स० पु० ) एक वैयाकरणिक । इन्होंने अख्यात चन्द्रिका वा एकार्थाद्यनिघण्टु, शब्दार्थ वृत्ति और क्रियानिघण्टु नामक कई एक व्याकरण लिखे हैं ।

भट्टयशस् ( स० पु० ) एक कवि ।

भट्टविश्वेश्वर ( स० पु० ) मिताक्षराके सुचोधिनि नामक टीकाकार, पेट्टिभट्टके पुत्र ।

भट्टशिख ( स० पु० ) एक दार्शनिक परिदत्त । शङ्करदिग्वि में इनका नामोल्लेख है । इन्होंने साख्यमतका खण्डन किया है ।

भट्टशङ्कर—वैद्यविनोद नामक वैद्यग्रन्थके सङ्कलनकर्ता । ये अनन्तभट्टके पुत्र थे । अम्बरपति जयसिंहके पुत्र राजा रामसिंहको अनुमति ले कर इन्होंने उक्त ग्रन्थकी रचना की ।

भट्टश्रीशङ्कर ( स० पु० ) एक ज्योतिषी । वृहज्जातकमें इनका नामोल्लेख है ।

भट्टसोमेश्वर—१ एक ग्रन्थकार । कमलाकरभट्टके शूद्रधर्म तत्त्वमें इनका उल्लेख है । २ कुमारिलकृत तन्त्रवार्त्तिककी टीकाके रचयिता, माधवभट्टके पुत्र । 'न्यायसुधा' उनकी उपाधि थी ।

भट्टस्वामिन् ( स० पु० ) एक कवि । शाङ्गधरपद्धतिमें इनका उल्लेख है ।

भट्टाचार्य ( स० पु० ) भट्ट तुतातभट्ट; आचार्यउदयनाचार्य ती तुल्यतया तन्मताभिन्नत्वेनास्त्य स्थेति अन् । १ तुतातभट्ट और उदयनाचार्यको तरह जो परिदत्त हैं, वे ही भट्टाचार्य हैं । २ तुतात भट्ट और उदयनाचार्यके मताभिन्न ।

“नास्तिकानां निग्रहाय भट्टाचार्यो भविष्यत ॥”

( प्राचीनशास्त्र )

जो ब्राह्मणतुतात भट्टकी मीमांसा और उदयनाचार्यकी

न्यायसंग्रह अध्ययन करके दृढविद्य हूप हैं, वे ही यह उपाधि पानेके योग्य हैं । दर्शनशास्त्रज्ञ, अध्यापक, वेदाध्यायी ब्राह्मणोंकी भी यह उपाधि है ।

भट्टाचार्य—१ अशौचतिशक्तोंकी टीका, अशौचसंग्रह और उसकी चिह्नित तथा त्रिगच्छोंको आदि कुछ ग्रन्थोंके प्रणेता ।

२ काव्य प्रकाशके रचयिता । ३ पद्मजरी, शाण्डिल्य सूत्रदीपिका और सिद्धात पञ्चानन नामक न्यायग्रन्थके प्रणयनकर्ता । ४ मुक्तावली और तट्टीकाके प्रणेता । ५ नाददीपक नामक सङ्गीतग्रन्थके रचयिता ।

भट्टाचार्यचूडामणि ( स० पु० ) न्यायसिद्धान्तमञ्जरीके रचयिता । इनका पूर्ण नाम जानकीनाथ भट्टाचार्य चूडामणि था ।

भट्टाचार्यतर्कालङ्कार—द्रव्यभाष्यटीका नामक प्रशस्तपदाचार्यकृत वैशेषिकद्रव्यलक्षणभाष्यकी ध्याख्याके प्रणेता । ये महामहोपाध्याय उपाधिले भूषित थे ।

भट्टाचार्य शतावधान ( स० पु० ) राघवेन्द्रका नामान्तर ।

भट्टाचार्यशिरोमणि—नैयायिक रघुनाथका नामान्तर ।

भट्टार ( स० लि० ) भटतीति शिवप्, भट् चासी तार्यचेति कर्मधा षुनोदरादित्वात् साधु यद्वा भट् स्वामित्त्वं ऋच्छतीति अण् । पूज्य ।

भट्टारक ( स० पु० ) भट्टार सञ्ज्ञया कन् । नाट्योक्तिमें राजा भट्टारक नामसे अभिहित होते हैं । २ तपोधन । ३ देव । ४ सूर्य ( लि० ) ५ पूज्य ।

भट्टारक—गुप्तराज स्कन्दगुप्तके एक सामान्तराज । ये सेनापति भटार्क वा भट्टारक नामसे प्रसिद्ध थे । सौराष्ट्रके सामान्तपद पर अधिष्ठित रह कर वे धीरे धीरे बलभीके अधीश्वर हो गये थे । इनकी प्रचलित मुद्रा पर “महा राज्ञो महाक्षत्र परमादित्य गक्षोऽसामन्त महाध्रो भट्टारकस्य” ऐसा पाठ लिखा है ।

२ प्रभासपण्ड वर्णित गुजरात प्रदेशके एक राजा ।

( प्रभासख० २८२११३ )

३ जैनोंके सारस्वत-गच्छके अन्तर्गत १म आचार्य धर्मभूषणका नामान्तर ।

भट्टारकमुनि—सारस्वतगच्छके अन्तर्गत यद्दमानशिष्य २य धर्मभूषणका नामान्तर ।

भट्टारकवार ( स० पु० ) भट्टारक सूर्य तस्य वार ।  
रविवार ।

भट्टारिका (स० स्त्री०) १ नदीभेद । (कालिकापुराण २३०५०  
११) २ अनहिलवाड पत्तनके अन्तर्गत एक प्राचीन  
स्थान ।

भट्टि—पञ्जाबवासी राजपूतजातिकी एक शाखा ।

भाटि देखो ।

भट्टि—भट्टिकाव्यके प्रणेता भर्तृहरिका नामान्तर । ये  
भर्तृस्वामिन, भट्टस्वामी वा म्यामिभट्ट नामसे भी जन  
साधारणमें परिचित थे । बलभीराज भट्टारकपुत्र  
श्रीधरसेनकी सभामें ३८० मन्त्रको ये विद्यमान थे ।  
भर्तृहरि क्यो ।

भट्टिक (स० पु०) चित्रगुप्तके एक पुत्रका नाम ।

भट्टिकदेवराज—एक हिंदूराज । ये प्रतिहारराज सिलुकसे  
परास्त हुए थे ।

भट्टिकाव्य—भर्तृहरि प्रणीत एक महाकाव्य । यह काव्य  
रसभावमय रामायणकी प्रसिद्ध घटनाके आधार पर  
लिखित होने पर भी कविने इसे व्याकरणकी विविध  
प्रक्रिया द्वारा सुन्दरभावसे सज्जित किया है । रचना  
कालमें व्याकरणके प्रति ही कविकी सुतीक्ष्ण दृष्टि थी ।  
व्याकरणमें स्थिर-व्युत्पत्ति लाभ करनेके पक्षमें भट्टिकाव्य  
विशेष उपायोगी है । प्रथके शेषमें कविने स्वयं एक जगह  
लिखा है—

“दीपुय प्रथमोऽय शब्दलक्षणचतुषाम् ।

हस्तामर्ष इवान्धाना मरेद्व्याकरणाहते ॥”

(भट्टि २१२३)

प्रमाद है, कि कवि भर्तृहरि पर राजाके यहा रह कर  
उन्हे प्रति दिन व्याकरण पढाते थे । एक दिन राजा  
व्याकरण पढ रहे थे, कि उली समय एक हाथी शुरु  
और शिप्यके मध्य हो कर चला गया जिससे उनके पाठ-  
में बाधा पड्यो । प्रचलित नियमके अनुसार उस घटनासे  
टोक एक वर्ष तक व्याकरणका पढ़ना बंद रखा गया । उस  
समय राजाके व्याकरणकी व्युत्पत्ति स्थिर रखनेके लिये  
कवि भर्तृहरि काव्यच्छलसे व्याकरणकी रचना कर राजा  
को यही व्याकरण पढाने लगे । भट्टिकाव्य अध्ययन कर  
राजाको फिर अन्य व्याकरण पढनेका प्रयोजन नहीं पडा ।

यह काव्य केवल व्याकरणकी काठिन्यपूर्ण नीरसपद  
परम्परा द्वारा ही रचा गया है, सौ नहीं । इसमें कई  
जगह उस रसकदम्बकलोलमय कवित्वपूर्ण कोमलकान्त  
पदावलीकी भी अति सुन्दर अवतारणा देयी जाती है  
तथा इसमें सहृदयवेध शब्द और अर्थालङ्कारादिका भी  
अभाव नहीं है ।

यह ग्रन्थ पढनेसे व्याकरणके अलावा छन्द और  
अलङ्कारशास्त्रमें भी विशेष व्युत्पत्ति लाभ की जाती है ।  
संस्कृत काव्यके मध्य भट्टि मिन्न ऐसा कोई काव्य ही  
नहीं है जिसमें ऐसे सुन्दर भागमें और सुन्दरुलाके साथ  
व्याकरण, छन्द तथा अलङ्कारसमुच्चयना एकत्र समावेश  
हो । इसके द्वितीय स्वर्गका शृङ्गर्जन और दशमका  
काव्यालङ्कार बडा ही रमणीय है ।

ग्रन्थके शेषमें ग्रन्थकर्ताने अपना जो परिचय दिया  
है वह इस प्रकार है—

“काव्यमिद निहित मया यक्षाम्यां

श्रीधरसेननेलेन्द्रपाशितायाम् ।

कीर्तिरतो भवतान्प्रपत्य तस्य

ज्ञेमन्न कित्तियो यत् प्रजानाम् ॥”

बलभीराज श्रीधरसेनके आश्रयमें रह कर उन्होंने  
इस काव्यकी रचना की ।

भट्टिनी (स० स्त्री०) १ नाट्यकी भाषामें राजाकी यह  
पत्नी जिसका अभिप्रेक न हुआ हो । २ ग्राहणभार्या ।

भट्टिमोल—दाक्षिणात्यकी कृष्णा नदी तीरवर्ती एक प्राचीन  
नगर । यह बेल्लुर नगरसे १ कोस पश्चिममें अवस्थित  
है । यहाँका लज्जादिव्य नामक सुरहत् शृङ्गस्तूप इसके  
प्राचीनतमका निर्दान है । वह स्तूप प्राय १७०० वर्ष-  
गज स्थान तक फैला हुआ है ।

भट्टियाना—पञ्जाबप्रदेशके शीर्षा जिलान्तर्गत एक भूभाग ।  
भट्टि (भाटी) नामक दुर्ग पर राजपूतजातिके वाससे  
इस स्थानका भट्टियाना नाम पडा है । एक समय हरि-  
याना बीकानेर और बहलपुर आदि स्थान इसी भट्टि-  
राज्यके अन्तर्गत थे । आज भी घाघरकी उपत्यका  
के उभय पार्श्ववर्ती स्थानोंके ध्वसावशिष्ट अट्टालिका  
और जनशून्य ग्रामादि उस प्राचीनसाम्राज्य जातिके गौरव  
का परिचय देते हैं मुसलमान तैमूर शाहने भारतकी

चढाईके समय इस प्रदेशको लूट कर विलङ्घल जनहीन कर डाला था। अङ्गरेजों अधिकारमें आनेके बादसे यहा पञ्जाब और राजपूतानेके बहुतसे लोग आ कर बस गये। उस समय प्रयाग नदी बहवलपुरके निकट शतद्रुके साथ मिलती थी। अभी वंह बीकानेरकी मरुभूमि पर बह कर सूख गई है। १८वीं शताब्दीमें यह स्थान माटि दस्युदलके आवासरूपमें गिना जाता था। इस समय उन लोगोंने विपदसे अपनेको बचानेके लिये कई एक ग्राम दुर्गादिसे सुरूढ कर लिये थे। १७६५ ई०में उन्होंने यद्यपि जार्ज टामसकी वधयता स्वीकार कर ली थी, तो भी वे कभी भी अङ्गरेजोंके पदान्त नहीं हुए। १८०३ ई०में लार्ड लेक्वी विजयके बाद दिल्लीप्रदेशके साथ साथ समूचा भट्टियानराज्य अङ्गरेजोंके दखलमें आ गया। किन्तु १८१० ई० तक अङ्गरेजराज उक्त प्रदेशका पूर्णाधिकार प्राप्त न कर सके थे। भट्टिसरदार बहादुर खा और जावता पौंका दमन करनेके लिये उसी साल अङ्गरेजी सेना भेजी गई। बहादुर पौं गज्यसे भगा दिया गया और जावता पौंने अवनत मस्तकसे अङ्गरेजोंकी अधीनता स्वीकार कर ली। ७८१८ ई०में जावता पौंने चुपकेसे जब अङ्गरेजाधिरत फतेहाबाद पर चढाई की तब बृटिशसरकारने उसे राज्यच्युत करके उसके राज्य पर अपना दखल जमा लिया। १८३७ ई०में भट्टियाना एक स्वतन्त्र जिलारूपमें गिना जाने लगा। पीछे वह १८५८ ई०में पञ्जाबके अन्तर्भूक्त हो कर शीर्षा नामसे घञ्जने लगा।

भट्टिखार—श्रीरङ्गस्तवके प्रणेता। ये वेङ्कटाचार्यके शिष्य थे।

भट्टी ( हि० खी० ) भट्टी देतो।

भट्टीय ( स० हि० ) भट्टमन्त्रन्धीय, आर्थभट्ट सम्बन्धीय।

भट्टराण—एक राजा या उनका पुत्र। जैन एरियजमें लिखा है, कि इस राजपुत्रने गुप्तराजाओ के पुत्रों प्राय २४० वर्ष तक भारतका शासन किया था।

( जैनरि ६०८६८ )

भट्टोजिदोक्षित—एक विख्यात पण्डित, लक्ष्मीधर सूरिके पुत्र। ये भानुजी (वीरेश्वर) दोक्षितके पिता और हरि हरके पितामह तथा कुशक्षेत्रप्रदीपके प्रणेता कृष्णदत्तके

गुरु थे। रामायण शिष्य वत्स्यराज ( १६४१ ई०में ) और नोलरूएठने आचारमयूषमें इनका उल्लेख किया है। अर्द्धतर्कस्तुभ, आचारप्रदीप, अर्णोचलितजन्तुका, अशीचनिर्णय, आह्निककारिका, कालनिर्णयसंग्रह, गौतमप्रवर निर्णय, चतुर्विंशतिसुनिमित्तशरणा, चन्दनधारणत्रिधि, तत्त्वकौस्तुभ, तत्त्वविधेकदीपन ध्याष्या, तन्त्रसिद्धान्त दीपिका, तन्त्राधिकारनिर्णय, तर्कामृत, तिथिनिर्णय, तिथिनिर्णयसंग्रह, तिथि प्रदीपक, तीर्थयात्राविधि, त्रिस्य लोसेतु और त्रिस्यलीसेतुसारसंग्रह, दशश्लोकीटीका, धातुपाठ, प्रायश्चित्तत्रिनिर्णय, प्रौढमनोरमा, वालमनो रमा, मासनिर्णय, लिङ्गानुशासनसूत्रवृत्ति, शत्रुकौस्तुभ, श्राद्धकाण्ड, सन्यासमन्त्रध्याष्यान, सर्गसारसंग्रह, सिद्धान्तकौमुदी ( पाणिनि ध्याकरणकी वृत्ति ), दान प्रयोग, भट्टोजिदीक्षिणीय प्रभृति ग्रन्थ इनके बनाये हुए मिलते हैं। सिद्धान्तकौमुदी ध्याकरण लिपि कर इन्होंने अष्टाध्यायी पाणिनिस्वरूपको प्राञ्जल और सहजबोध कर दिया है।

भट्टोत्पल—एक ज्योतिर्विदु। इन्होंने ७८८ शकमें बृहज्जातकनी जगच्चन्द्रिका नामक एक विवृति लिपी है। अलाया इसके योगयात्रानिवरण, लघुजातकटीका, बृहत्सहिताविवृति और वाद्यरायण प्रश्नटीका नामक कई ग्रन्थ भी इनके रचित मिलते हैं। किसी ग्रन्थमें इनका उत्पल आचार्य नाम भी लिखा हुआ देखनेमें आता है।

भट्टोद्भट्ट—एक प्रसिद्ध कश्मीरी पण्डित। राजतरङ्गिणीमें लिखा है, कि ये राजा जयापोडके समापण्डित थे और प्रतिदिन १ लाप दीनार पाते थे। इनका बनाया हुआ कुमार सम्भव तथा एक अलङ्कार शास्त्र मिलता है।

( राजतर गिणी ४४६५ )

भट्टोपम स० पु० ) एक बौद्धाचार्य।

भट्टा ( हि० पु० ) १ बडो भट्टी। २ इट या खपडे भाद्रिकरुनेका पञ्जाब।

भट्टी ( हि० ग्री० ) १ विशेष आकार और प्रकारका हँटों आदिका बना हुआ बडा चूल्हा। इस पर हलगाई पकवान वापते, लोहार लोहा गलाते, वैद्य लोग ग्स्त आदि फू कते अथवा इसी प्रकारके और काम करते हैं। २ देशी मद्य टपकनेका कारखाना, यह स्थान जहा देशी शराब बनती हो।

भट्टारा—वाक्षिणात्ययासी मुसलमान जातिकी एक शाखा। बवर्चीका नाम या दूकानदारी इनकी प्रधान उपजीविका है। ये लोग दिलोसे आ कर यहां निरन्ध्रेणी के हिन्दूधर्मत्यागी मुसलमानोंके मध्य विवाह जादी करके निरन्ध्रेणीमें गिने जाने लगे हैं। ये लोग सभावात ही अपगिंकार हैं। इनकी सम्प्रदायी सुनी मुसलमान कह कर अपना परिचय देने पर भी ये कभी भी फलमा पाठ नहीं करते।

भट्टियाना (हि० कि०) समुद्रमें भाटा आना, समुद्रके पानी का नीचे उतरना।

भट्टियारण (हि० पु०) १ भट्टिसारका काम। २ भट्टि यारोंको तरह लडना और अश्लील गालियाँ बरकना।

भट्टियारा (हि० पु०) सरायका प्रबंध करनेवाला  
भाटियारा दखो।

भट्टियाल (हि० पु०) ज्यारका उल्टा, भाटा।

भट्टोले (हि० टो०) उठेरोंकी मिट्टीकी बनी हुई वह छोटी भट्टी जिसमें किसी चीजको गडनेसे पहले तपाते या लाल करते हैं।

भट्ट वा (हि० पु०, आडभ्यर, दिग्गीशा शान।

भट्ट (स० पु०) भट्ट परिहासे परिभाषणे त्रा अच्। वर्ण सङ्कर जातिविशेष। इसकी उत्पत्ति छेट पिता और तोयर मातासे हुई थी।

“लेट्स्तीवर कन्याया जनयामास धरारा।

माल मल मातरश्च भट कोत्रश्च कन्दरम्।

(ब्रह्मवैवर्तपु० ब्रह्मव० १० अ०)

भट्ट (हि० खी०) १ एक प्रकारकी बहुत हलकी नाय। २ योद, योद्धा।

भट्टक (हि० खी०) १ विखाऊ चमक टमक, चमकीला पन। २ भट्टरुनेका भाज, सहम।

भट्टरुदार (हि० पि०) १ जिसमें खूब चमकदमक हो, चमकीला। २ रोवदार।

भट्टरुना (हि० कि०) १ प्रज्वलित हो उठना, तेजीसे जल उठना। २ क्रुद्ध होना। ३ बढ जाना, तेज होना। ४ डर कर पीडे हटना, चीकरना। इस शब्दका प्रयोग विशेष पत घोडे आदि पशुओंके लिये होता है।

भट्टरुना (हि० कि०) १ प्रज्वलित करना, जलाना। २

उत्तेजित करना, उभारना। ३ किसीको इस प्रकार भ्रम में डालना, कि वह कोई काम करनेके लिये तैयार न हो। ४ चमकना। ५ बढावा देना।

भट्टकीला (हि० वि०) भट्टकरदार, चमकीला। २ डर कर उत्तेजित होनेवाला, चीकरना होनेवाला।

भट्टकीलापन (हि० पु०) चमक दमक, भट्टकीले होनेका भाव।

भ भट्ट (हि० खी०) १ भट्टभट्ट शब्द जो प्राय एक चीज पर दूसरी चीज जोर जोरसे पटकने अथवा बडे बडे ढोल आदि बजानेसे उत्पन्न होता है, आघातोंका शब्द। २ व्यर्थको और बहुत अधिक बात चीन ३ जनसमूह, जिसमें छोटे उडे या छोटे गैरेका विचार न हो, गीड।

भट्टभडाना (हि० कि०) १ भट्टभट्ट शब्द करना। २ किसी चीजमेंसे भट्टभट्ट शब्द उत्पन्न होना।

भट्टभडिया (हि० वि०) बहुत अधिक और व्यर्थकी बातें करनेवाला, गप्पी।

भट्टभांड (हि० पु०) एक बटोला पाँचा। पमोप देतो।

भट्टभूजा—हिन्दुओंकी एक छोटी जाति जो अन्न भूनेका काम करती है। इनके दो थोक हैं, परदेशी और मराठा। मराठा बहुत कुछ महासाधियोंसे मिलते हैं। परदेशी उत्तर भारतमें दक्षिणापथमें आ कर जुद्ध, वेड सिरूर, धीजा पुर, पुरन्धर आदि म्थानोंमें बस गये हैं।

परदेशी भट्टभूजा अपनेको साधारणत कनोजिया और काश्यपगोखीय वतलाते हैं। ये लोग आपसमें पुत्र कन्याका आदान प्रदान तथा भोजनारवि करते हैं। मास मछलने इनको बहुत प्रिय है। शीतलादेवोकी पूजामें छांग बली देते हैं। परिश्रमी होने पर भी ये लोग अपरिच्छन्न हैं, त्रि-तु देवता ग्राहणमें इनकी विशेष भक्ति देखी जाती है। प्रत्येक घरमें बहिरेशा, भगानी, रानदोषा, और महादेव आदिनी मूर्तिया रहती हैं। परदेशी ग्राहण सभी क्रमोंमें उनको याजकता करते हैं। आलण्डी, कोन्दनपुर, पण्डरपुर और तुलजापुर आदि इनके प्रवान पवित्र तोर्थ स्थान हैं। ये गिबराति, आपाढी एफादगी, गोतुलाएमी, अनन्तचतुर्दशी, फार्सिक एकादशी तथा 'प्रदोष' अर्थात् प्रतिमासके वृष्यातकदोषो आदि परदिनोंमें उपवास करते और सिमगा, नागपञ्चमी, इत्यादि तथा दीवालीके दिन उत्सव मनाते हैं।

जातवालकके १२वें दिन प्रसूतिका अशौचान्त होता है। इस दिन सन्ध्या समय पुरोहित आ कर वालकका नामकरण करते हैं। एकसे सात वर्षके मन्त्र शुभ दिनमें वालकका मुण्डन होता है। सुषर्माका ३० वर्षमें और युवतियोंका १२-१६ वर्षमें शुभ विवाह होता है। जब कन्या ब्याहने योग्य होती है तब कन्याकर्त्ता घर-कर्त्ताके पास जा कन्याग्रहणको प्रार्थना करते हैं। वर कर्त्ताके स्वीकार करने पर एक दो रुपये या एक चरतनमें थोड़ी चीनी वरके हाथ दे कर कन्याकर्त्ता अपने घरको लौटते हैं। विवाहके पहले वर और कन्याके घरमें एक विवाह मण्डप बनाया जाता है। उस दिन एक बुभारी वर और कन्याके शरीरमें उबटन लगाती है। विवाहके दिन एक तालपलका और वरके सिर पर रख कर वारात वरको ले कन्याके घर जाते हैं। कहीं कहीं कन्या ही वरके घर लाई जाती है। जहां कहीं भी र्षीं न हो, वर और कन्याके विवाहस्थल पर उपस्थित होनेसे उनके माथेके ऊपर रोटी और जल परछन कर स्नान कराया जाता है। इसके बाद एक लोहार घर और कन्याके दहिने ओर बाये हाथमें लोहेका कड़क दे कर सूता बाध जाता है। तदन्तर वर और कन्याको चौकी पर बिठा पुरोहित सम्प्रदान कार्य शुरू करते हैं। बाद कन्याकर्त्ता घरके दोनों पैर जलसे धो कर पूजा करता है। उठने के समय वर और दम्पतीके सिर पर हाथ रख आशौचादि देता तथा दो या पाच रुपये धोतुक दे जाता है। यही इन लोगोंके कन्या दानकी प्रथा है। विवाह हो जाने पर जाति-कुटुम्बको खिलाया जाता है। बादमें वारात निदा होती है। किन्तु वरका वह भीर कन्याके पितालयमें ही रहता है। जब तक एक और शुभ विवाह नहीं हो जाता तब तक माङ्गलिक जान कर उसे घरमें यत्नपूर्वक रखते हैं। बाद वह नदीके किनारे अथवा तालाबमें फेक दिया जाता है। साधारणतः ये लोग शत्रुदेहको जलाते हैं। वसन्तःरोगसे यदि किसीको मृत्यु होती है तो लाशको जमीनमें गाडते हैं। मृत-श्रुतिके ऊपर गरम जल डाल कर नये वस्त्रसे उसको देह ढक देते हैं। विधवा होनेसे उजला धान, पुरुष होनेसे उजला बापता और सधमा रमणी होनेसे हरा फपडा पहना दिया जाता है। उसके

बाद उस शवके ऊपर फूल और पान छिड़क कर सभी उसे प्रणाम करने तथा उसके दोनों हाथोंमें गेहूँ के पिण्ड देते हैं। श्मशानमें शवको चिता पर रख कर सुन्वानिके मुरप अधिकारी मुँहमें जल और अग्नि देते हैं, बादमें शम्भूदेह जलाई जाती है। अन्त्येष्टि किया समाप्त होने पर सब कोई स्नान कर घर लौटने हैं। तीन दिनके बाद उस भस्मको साफ कर दाहरधानको गोबर और चूनेसे परिष्कार करते तथा वह मृतकी प्रेतात्माको तुष्टि के लिये पाचादि रख देते हैं। स्त्री होनेसे ६ दिनमें और पुरुषको मृत्यु होनेसे १० दिनमें अशौचान्त हो कर श्राद्धादि करते हैं।

घोडापुरके भडभूजे एक स्वतन्त्र त्रेणिके है। ये लोग अपनेमें हो कन्यागुलका निजाहादि करते हैं। प्रवाद है, कि स्थानीय भोई नामक जालिकगण इसलोक धर्ममें दाक्षित हो कर इस प्रकार अनस्थान्तरको प्राप्त हुये हैं। अन्य विषयमें मुसलमानोंका अनुकरण करने पर भी हिन्दू देवीकी पूजा और पावणादि प्रतिपालनसे ये पराङ्ग मुग नहो हैं। किन्तु निजाह या सत्कार्य होने पर काजी-को बुला कर कार्य सम्पादन करते हैं। ये लोग हनफी सम्प्रदायो सुन्नी मुसलमान हैं।

हिंदू भडभूजोंमें कहीं कहीं बाल्य विवाह, विधवा विवाह और बहु विवाह प्रचलित है।

भडवा ( हि० पु० ) भडुआ देखो।

भडसार ( हि० खी० ) भोज्यपदार्थ रखनेके लिये कियाडी दार आला या ताम्र, भंडरिया।

भडहर ( हि० खी० ) भंडहर देखो।

भडाल ( हि० पु० ) थोडा, सुमट।

भडित ( सं० पु० ) पाणिनिके गणादिगणोक्त ऋषिभेद।

( पा० ४११०५ )

भडियाद—बम्बई प्रदेशके अहमदाबाद जिलेके धन्धुका तालुकके अन्तर्गत एक प्राचीन स्थान। यह घोलेरा नगरसे १ कोस उत्तर पश्चिममें अवस्थित है। यहांको पीर भडियाद रोजा नामक त्रिपटात अट्टालिका मुसलमान और गुजरातवासी निम्नश्रेणीके हिन्दुओंका पवित्र तीर्थस्थान है। उस रोजा के मध्य सैयद बोपायी महमूद शाह चालिस सैयद अबदुल रहमानको कब्र है। प्राय ६ वर्ष पहले उक्त महात्मा १५वें

युद्धों तोर्ययात्राके उद्देश्यसे अपनी जन्मभूमि उच्छ (पञ्जाबके अन्तर्गत) का परित्याग कर इधर उधर भ्रमण की निकले। इस समय घन्धुनासे ७ कोस दक्षिण चोकि (नकावती) नामक स्थानमें पद्म राजपूत राज्य करते थे। कहते हैं, कि उक्त राजा उपवासके बाद पारणके दिनमें एक मुमलमानकी हत्या किये बिना जलग्रहण नहीं करते थे। एक समय किसी बुद्धियाका एकलौता इसी प्रकार मारा गया। शीघ्रसे विद्वल हो उस बुद्धियाने महमूद ग्राहके निकट अपना दुखडा रोया। साधुहृदय इस निन्दुर सवासे उछे लित हो उठा। उन्होंने मुसलमानोंको उच्छे-जित कर राजाके विच्छद हथियार उछाने कहा। युद्धमें राजाके निहत होने पर भी उनके पुत्रके प्रजल कोपानलसे महमूद ग्राहने परित्याग नहीं पाया। रणक्षेत्रमें राजपुत्रके हाथने वे मारे गये। उनकी अन्तिम प्राथनाके अनुसार मुसलमानोंने गजवनग्राह नामक स्थानमें उनका दफन किया। उसी समाधिके ऊपर भडियादका रोजा निद्यमान है। उक्त घटनाके दो सौ वर्ष बाद काभेके नगवने रोजा भवन बनया कर उसके खर्चके लिये वार्षिक ३०० रु० का प्रगन्ध कर दिया। प्रतिवर्ष यहा सैन्डों मुमलमान इच्छे होते हैं। दरगाहके मध्य १। मन वजनका एक लोहच्छूल है। कहते हैं, कि एक समय उस लोहच्छूलमें ऐसा प्रभाव था, कि अनपराधीकी कमरमें वह बाध देनेसे ७ कदम आगे बढ़ने पर दो खण्ड हो जाता था। जिसके क्षणसे वह खण्ड नहीं हो सन्ता था, वह व्यक्ति अपराधी वा दोषी समझा जाता था और तदनुसार उसे सजा मिलती थी।

भडिल (सं० पु०) भडतीति भडि (वलिन्वयनिमहिमडि भण्डति। उण् १।१५) इति इलच्। १ सैयक। २ शूर। भडिहा (हि०पु०) तस्कर, चोर।

भडी (हि० स्त्री०) वह उच्छेजना जो किसीको मुर्ग बनाने या उच्छेजित करनेके लिये दी जाय, कूडा बढावा।

भडुआ (हि० पु०) १ वह जो चेश्याओंकी दलाली करता हो, पुश्चली स्त्रियोंकी दलाली करनेवाला २ चेश्याओं के साथ तबला या सारंगी आदि बजानेवाला, सफर-दार।

भडुर (हि० पु०) ब्राह्मणोंमें बहुत निम्नश्रेणीकी एक

जाति। इस जातिके लोग महादिवका दान लेते अथवा यात्रियोंके दशन आदि कराते हैं, भडर।

भणन (सं० की०) भण ल्युट। कथन।

भणित (सं० लि०) भण च। शब्दित, ध्वनित। २ कथित, जो कहा गया हो। (स्त्री०) ३ कही हुई बात, कथा।

भणिति (सं० स्त्री०) भण्यते इति भण चिन्। वाक्य।

भण्डन (सं० पु०) मारिष क्षुप, मरसा नामका साग।

भण्टा (सं० स्त्री०) १ निञ्जीतरु, बेंच साग। २ वार्ताकी, वै गन।

भण्टाकी (सं० स्त्री०) भण्टते भण्यते वा भट भृती भण गब्दे वा (पिनासदयथ। उण् ५।१५) इति निपात्यते च, गौरादित्वात् टोप्। १ वार्ताकी, वै गन। २ गृहती, वनभटा। ३ वृत्ताफ, पोंडका साग।

भण्डुक सं० पु०) भडतीति भडि-उक्तात्। श्योनाकक्ष। किसी किसी पुस्तकमें 'भण्डुक' ऐसा भी पाठ देखनेमें आता है।

भण्ड (सं० पु०) भण्डते इति भडि प्रतारणे अच्। १ अण्णोलभापो, वह जो गदो वारते वन्ता हो। २ भौंड। (लि०) ३ घृथा धर्माभिमानी, धूर्त।

भण्डक (सं० पु०) भण्ड-सहाया कन्। १ खजान पक्षी। २ एक कवि।

भण्डतपस्विन् (सं० लि०) भण्ड तपस्यो कर्मधा०। भक्त विष्टे, कपट-तपस्वी, त्रिपाल-धार्मिक।

भण्डन (सं० स्त्री०) भडि भावादी ल्युट। १ छलाकार, प्रतारणा। २ क्वच। ३ युद्ध। ४ क्षति, हानि।

भण्डनादित्य—चालुष्यराज विजयादित्य कलिमरुच्छुका एक सेनापति और सामन्त। ये पट्टवर्द्धिनीवशीय काल कम्पके चशधर थे। शिलालिपिमें इनकी चौरस्थकाहिनी कीर्तित हुई है।

भण्डहासिनो (सं० स्त्री०) भण्डेन गलीकारेण ऽसति या, हम् णिनि डोप्। गणिका, चेश्या।

भण्डारो—बम्बई प्रेसिडेन्सीमें रहनेवाली एक जाति। मग बनाना और ताडशुंसे ताडी सप्रध कर बेचना ही इनका प्रधान व्यवसाय है। इनमें कोते और सिंदे नामकी दो श्रेणिया हैं, उनमें परस्पर वैवाहिक सम्बन्ध



वा भोजनादि नहीं होता। साधारणतः ये साफ सुधरे और विलासो होते हैं। प्रायः सभी मध, ताड़ी और गाजा पीते हैं। मादकताके चशीभूत होने पर भी ये मित्याचार और आतिथ्यादि शुणोसे भूषित हैं। पुषपवर्ग सिर घुटाते और चोटी रखते हैं। स्त्रिया और बालकगण नाना कार्यों में पुषयोंको सहायता करते हैं। भूतपति महा देव ही इनके प्रधान उपास्वदेव हैं। देशी और पहाड़ प्राहाण इनके सभी कार्यों में पीरोहित्य करत हैं। हिन्दुओंकी भाति प्रायः सभी पराँमें ये उपावासादि करते हैं। पण्डरपुद, गोरुण और वनारस आदि तीर्थस्थानोंमें जानेके लिये इनमें विशेष उत्सुभता पाई जाती है। जन्म और विवाहकार्यमें ये प्राहाणके परामर्शानुसार कार्य करते हैं। अन्यान्य जातीय या सामाजिक ऋगणों का निवटेरा इनकी जातीय सभा ही कर दिया करती है। ये मुदाँको जलाते भी है और गाड भी देते हैं।

भण्ड ( स० खी० ) भण्डि इन् । वाचि, लहर ।

भण्डिका ( स० खी० ) मञ्जिष्टा, मजीठ ।

भण्डिजङ्घ ( स० पु० ) वाणिज्यक ऋषिभेद ।

भण्डित ( स० पु० ) भण्डि-क । ऋषिभेद, एक गोतकार ऋषिका नाम ।

भण्डिन्—हर्षचरित प्रणेता कवि वाणभट्टका नामान्तर ।

भण्डिर ( स० पु० ) भण्डिल रत्नयोरैषयम् । शिरोपवृक्ष, सिरसा ।

भण्डिल ( स० पु० ) भण्डयते परिहसतीवेति भावते इवेति वा, भण्डि ( ललितकविमहिम्निभण्डिभण्डिती । उष्ण १।५५ ) इति इलच् । १ शिरोपवृक्ष, सिरसका पेड ।

२ दूत । ३ गितपी । ( ति० ) ४ शुभ, अच्छा ।

भण्डो ( सं० खी० ) भण्डयते इति भण्डि इन् कृदिकारादिति पक्षे ङीप् । १ मञ्जिष्टा, मजीठ । २ शिरोपवृक्ष, सिरसा । ३ इवेति त्रिवृत, सफेद निशेध ।

भण्डोतकी ( सं० खी० ) भण्डो सती तकतीति तक अच्, गौरादित्वात् ङीप् । मञ्जिष्टा, मजीठ ।

भण्डोर ( सं० पु० ) भण्डि बाहुलकात् इरन् । १ समष्टिलक्षुप, मँडभाँड । २ तण्डुलीय शाक, चीलाई । ३ गिरीपवृक्ष, सिरसा । ४ घटवृक्ष ।

भण्डोरलतिका ( सं० खी० ) भण्डोर इव लतते इति लति

अच् स्याथे अन् टाप् अत इत्व । मञ्जिष्टा, मजीठ । भण्डोरी ( सं० खी० ) भण्डोर गौरादित्वात् ङीप् । मञ्जिष्टा, मजीठ ।

भण्डोल ( सं० पु० ) भण्डोर-रत्नयोरैकत्व । मञ्जिष्टा, मजीठ ।

भण्डुक ( सं० पु० ) भण्डि-उक् । १ मत्स्यविशेष, भाङ्गुर नामक मछली । गुण— मधुर, शीतल, वृष्य, श्लेष्मकर, शुक्रनिष्ठम्भी और रक्तपित्तहर । २ श्योनाकवृक्ष ।

भतरौड ( हि० पु० ) १ मथुरा और वृन्दावनके बीचका एक स्थान । इसके विषयमें यह प्रसिद्ध है, कि यहा श्रीकृष्णने चीनाइनोंमें भात भगवा कर लाया था । २ ऊँचा स्थान । ३ मन्दिरका गिरपर ।

भतवान ( हि० पु० ) विवाहकी एक रीति । इसमें विवाहके एक दिन पहले कन्यापक्षके लोग भात, दाल आदि कच्ची रसोई बना कर घर और उसके साथ चार और कुआरे लडकोंको जुला कर भोजन कराते हैं ।

भतार ( हि० पु० ) पति, खाविद ।

भताला—मध्यप्रदेशके चान्दा जिलातर्गत एक गण्डग्राम । यह भाण्डक नगरसे १३ कोस उत्तर पश्चिममें अवस्थित है। एक समय यह स्थान प्राचीन भट्टावती राज्यके अन्तर्भुक्त था । निकटवर्ती पर्वतके ऊपर सुरक्षित प्राचीन देवमन्दिर और दुर्गादि स्थानीय प्राचीन कित्तिका परिचय प्रदान करते हैं। पर्वतके पादमूलस्थ सुदृश्य पुष्करिणी आदिसे इस स्थानकी शोभा अतिवर्चनीय हो रही है। यहा पत्थरकी एक उत्कृष्ट खान है ।

भतोजा ( हि० पु० ) भाईका पुत्र, भाईका लडका ।

भतुआ ( हि० पु० ) सफेद कुम्हडा, पेठा ।

भतुला ( हि० पु० ) गकरिया, बाटी ।

मतोली—सुजयपुर जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम । यह सुजयपुर नगरसे ६ कोसकी दूरी पर अवस्थित है। यहा 'केचरि दी' नामक एक १०० फुट उंच सुवृद्ध स्तूप है। स्थानीय प्रजाद है, कि उस स्थान पर चेरु राजाओंका एक दुर्ग था। सुसलमान अमलदारीसे बहुत पहले यह आगसे विलुप्त बरवाद हो गया था। स्तूप बनते समय देखा गया है, कि उसका गठनकार्य और इष्टकादि प्राचीन हिंदू ढंगकी बनी हुई है। अलावा

इसके उस स्तूपमें और भी कितनी हिन्दू देवमूर्तियां पाई गई हैं। इस स्थानके अनेक निदर्शन आज भी कलकत्तेके जादूघरमें सुरक्षित हैं।

भत्ता (हि० पु०) दैनिक व्यव जो किसी कर्मचारीकी कलाके समय दिया जाता है।

भयान—बम्बईप्रदेशके फाटियागाड राज्यान्तर्गत भूलापर निलेवा एक छोटा सामन्तराज्य। यह अक्षा० २२ ४१' ३०" तथा देशा० ७१ ५४' पू०के मध्य अवस्थित है। यहां के सरदार घुट्टिशा सरकारकी तथा जूनागढके नवाबकी कर देते हैं।

भई (हि० वि०) भादो सम्बन्धी, भादोंका। (खो०) २ यह फसल जो भादोंमें तैयार होती है।

भदन्त (स० पु०) भदन्ते इति भद्रि कट्याणे (भन्देनलोपाच)। उच्च २।१३०) इति ऋच् नगोपश्च। १ सौंग ताद्विबुद्ध, मायादेवीके पुत्र। २ सुतेज। (त्रि०) ३ पूजित। ४ प्रवर्जित।

भदन्त—एक ज्योतिर्विद्वत्। बराहमिहिरने इनका नामो उल्लेख किया है।

भदन्तगोपदत्त (स० पु०) एक बौद्धाचार्य।

भदन्तभानुवर्मन—एक कवि। शाङ्गधरपद्धतिमें इनका उल्लेख है।

भदन्तधर्मभात—एक बौद्धाचार्य।

भदन्तराम—एक बौद्धाचार्य।

भदन्तयमन—एक कवि। शाङ्गधरपद्धतिमें इनका उल्लेख है।

भदन्तश्रीलाम—एक बौद्धाचार्य।

भदमद (हि० वि०) बहुत मोटा। २ भद्र।

भदयल (हि० पु०) मेंढक।

भदर्या—बम्बई प्रदेशके रेवासाथ राज्यके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य। भूपरिमाण २७ वर्गमील है। यहांके सरदार राणा उपाधिधारी हैं। ये लोग गायकवाडराजकी कर देते हैं।

भदर्या—अयोध्या प्रदेशके फैजाबाद जिलांतर्गत एक नगर जो मरहानदीके किनारे अवस्थित है। इस स्थानका प्राचीन नाम भायादर्या है। प्रवाद है, कि दशरथ तनय भरत इसी स्थान पर अपने बड़े भाई श्वेतामच द्रुपकी साथ मिले थे।

भद्वरिया (हि० वि०) भदवार प्रान्तका।  
भद्राक (स० पु० क्लो०) भद्वन्ते इति भद्रि (पिनाकादयश्च। उच्च ५।११) इति आक, नलोपश्च। मङ्गल।

भद्रारि—पञ्जाबप्रदेशके अन्तर्गत एक प्राचीन राजधानी। राजा चोवनाथ यहां पर राज्य करते थे। भेराके पार्श्वबर्त्ती अटमदावाद् नगरके समीप उसका ध्वसाय शेष आज भी विद्यमान है।

भदावर—एक प्रान्त जो आज कल ग्वालियर राज्यमें है। यहांके क्षत्रियोंने पर विशिष्ट वंश है। यहांके वैल भी बहुत प्रसिद्ध होते हैं।

भदेव (हि० वि०) बुरूप, भद्र।

भदेल (हि० पु०) मेंढक।

भदौला (हि० वि०) भादों मासमें उत्पन्न होनेवाला, भादोका।

भदौह (हि० वि०) भादों मासमें होनेवाला।

भदौरा—पञ्जाबके पतियाला राज्यके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० ३० २८' ३०" तथा देशा० ७५ २३' पू० बडनालासे १६ मोल पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या साठ सात हजारसे ऊपर है। १७१८ ई०में पतियालाके राजा आलसिंह भाई सरदार दुन्नसिंहने इसे बसाया। यह सदर दिन पर दिन उन्नति कर रहा है।

भदौरा—ग्वालियर राज्यके गुणा सब पजेन्सीके अन्तर्गत एक सामन्त राज्य। जनसंख्या २२७५ और भूपरिमाण ५० वर्गमील है। इसमें इसी नामका एक शहर और १६ ग्राम लगते हैं। स्थानीय डकैतोंके उपद्रवादिसे देशकी रक्षा करनेके कारण १८२० ई०में सिन्देराजने मानसिंह नामक किसी सरदारको यह सम्पत्ति प्रदान की। यहांके सरदार उदयपुर घरानेके सिसोदिया राजपूत हैं और 'राजा' इनकी उपाधि है। उमरीके हिम्मतसिंहके लडके जगत् सिंहने १७२० ई०में राजसिंहासन पर अधिकार जमाया। उनकी मृत्युके बाद रणजित्सिंह गद्दी पर बैठे। ये ही वर्तमान सरदार हैं। राजस्व ५०००० रु०के करीब है।

२ उक्त राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २४ ४८' ३०" तथा देशा० ७७ २४' पू०के मध्य विस्तृत है। जनसंख्या सात लीके करीब है।

भदोरिया—राजपूतजातिकी एक शाखा। चमुला (चमयल)

नदीके-दक्षिणतीरमें आगरानगरके दक्षिण पृथक् भदावर जिलेमें रहनेके कारण ये 'भदौरिया' कहलाये। जो भदौरिया पूर्वमें रहते हैं, वे अपनेको मिड-वशीय कहते हैं। परन्तु अन्यान्य भदौरियाओंके अपनेको चौहान वंश ही बताने पर भी चौहान लोग उनके ज्ञातित्व स्वीकार नहीं करते। कुछ भी हो, वक्त मानमें उन्होंने परस्परमें विवाह सम्बन्ध द्वारा बुद्धिमत्ता स्थापन कर ली है।

इनमें ६ श्रेणिया पाई जाती हैं, जैसे—अठमश्या, कुलहिया, मैनु, तसेली, चन्द्रसेनिया और रागत।

इस जातिकी सामाजिक उन्नति और प्रतिष्ठाके सम्बन्धमें अनेक तरहकी किम्बदन्तियां सुननेमें आती हैं। गोपालसिंह नामक सरदार मुसलमान बादशाह महम्मद शाहके बड़े प्रिय थे, इसलिये उन्हें कई जागीरें मिली थी। तभीसे यह सरदारवश पार्श्ववर्ती राजन्यर्गीका विशेष सम्मानार्ह हो गया है।

चन्द्रसेनिया, कुलहिया अठमश्या और रागतगण चौहान, कठवाह, राठौर, चन्देल, शिन्नेत, पानचार, गौतम, रघुवशी, गहरवाड, तोमर और गहलोत वशीय राजपूतोंकी कन्या ग्रहण करते हैं, तथा चौहान, कठवाह और राठौर श्रेणियोंके उच्च राजपूतव शर्म अपनी कन्या देते हैं। तसेली राजपूत निम्नश्रेणियोंके राजपूतव शर्म विवाह करते हैं। 'आईन-ए अफ़वकी'के पढ़नेसे मालूम होता है, कि उक्त जिलेकी हरकाटा नगरमें इनको राजधानी थी। ये दिल्लीके निकट रह कर दस्तुर्तुसि द्वारा मुगलशक्तिभी उपेक्षा करते हुए स्वाधीनभावसे अपने राज्यमें निचरण किया करते थे। सम्राट अफ़वरशाहने इनके अत्याचारोंसे उकता कर भदौरिया सरदारको हाथीके पैरों तले बसा कर मरवा दिया था। फिर इन्होंने दिल्लीकी वशपता स्वीकार कर ली।

परवर्ती भदौरिया सरदार राजा मुकतमनने मुगल-सम्राटके अधीन कार्य किया था और वे १ हजारी मन सयदार पदके अधिकारी हुए थे। वे हिजरी सन् ६६२में युद्धार्थ गुजरात भेजे गये थे। बादशाह जहांगीरके समयमें राजा विक्रमजित्ने मुगल-सेनाके सहकारी रूपमें युद्ध किया था। - उनकी मृत्युके बाद उनके पुत्र भोज

राजा हुए थे। सम्राट् शाहजहाके राजत्वकालमें भदौरिया सरदार राजा किसनसिंहको मुगलोंके पक्षमें भागकरसिंह, खान् जहान लोदी, निजाम-उल-मुल्क और नाह भोंसले आदिके विरुद्ध युद्ध करना पटा था। दौलताबादके अवरोधके समय उनकी वीरता चारों ओर ध्यात हो गई थी। हिजरी सन् १०५३में उनकी मृत्यु होनेसे उनके चचेरे भाई बदन (शुभ) सिंहको राज्य मिला। सम्राट् शाहजहा (२१वे वर्षमें) एक दिन राज-दरवारमें बैठे हुए थे, कि इतनेमें वहा एक मत्त हलती चला आय और उसने दरवारके एक व्यक्तिको दाँतोंसे घायल कर दिया। यह देव बदनसिंहने शरसे उस हाथीको मार डाला। सम्राटने उनके धीरदण्डसे सतुष्ट हो कर उन्हें एक पिलबत दी और भदावर-राज्यका ५० हजार रु०का कर भोजक कर दिया। उसके बाद इन्हे डेढ हजारी सेनानायकका पद मिला था। शाहजहाके २५वे वर्षमें वे औरङ्गजेब और दाराशिकोहकी तरफसे कान्दाहार-युद्धमें गये थे। इसके दूसरे ही वर्ष इनको मृत्यु हो गई। उनके पुत्र मानसिंह १ हजारी पदाति और ८ सौ अश्वारोही सेनाके नायक हुए। औरङ्गजेबके राज्यमें बुन्देला-विद्रोह और युसुफजैतो दमन कर वे बादशाहके उडे प्रियपाल बन गये थे। इनके पुत्र ओदत (रुद्र) सिंह चित्तोरके सेनापति हुए थे।

'तयारीर ३ हिन्द' नामक मुसलमान इतिहासमें लिखा है कि, सम्राट् महम्मदशाहके समयमें महाराष्ट्र सेनाके भदावरमें शुभ पढ़ने पर सरदार अमरू (अमरत) सिंहने स-सैन्य अग्रसर हो कर उससे युद्ध किया था। युद्धमें जयी होने पर भी महाराष्ट्रोंने लूट कर उनके राज्यको तहस नहस कर दिया था।

भदौरिया (हि० नि०) भदावर मान्तका, भदावर सयधी। भद्रगाँव—बम्बई प्रदेशके पान्देश जिलेका एक तगर। यह अक्षा० २० ४०' उ० तथा देशा० ७५ १४' पू० गिराना नदीके बाएँ किनारे अग्रस्थित है। जनसख्या ७६५६ है। १८६१ ई०में यहा म्पुनिसपलिटी स्थापित हुई है। रई, नील और तीसोफा याणिय जौरी चलता है। १८७२ ई० को इस नगरका अर्धां ज बह गया था। अधिवासिधुंकी महती क्षति हुई थी। शहरमें सब जन्नकी अदालत, अस्पताल और चार स्कूल हैं।

भद्रा (हि० पु०) १ जिसकी घनावटमें अग प्रत्यगकी सापेक्षिक छोटाई बडाईका ध्यान न रखा गया हो। २ जो देखनेमें मनोहर न हो, बेढा गा।

भद्रापन (हि० पु०) भद्र होनेका भाव।

भद्र (स० क्री०) भन्दते इति भद्रि कल्याणे (शृङ्खलान्नाम वर निम कुत्र सुत्र खुर मद्रोप्रेति। उण् २।२८) इति रन् निपात्यते च। १ मङ्गल, क्षेमकुण्डल। २ ज्योतिषोक्त वच आदि करके समम करण। ३ महादेव। ४ राजरीट, राजन पत्नी। ५ धूपम, धैल। ६ कदम्बक, कठक। ७ करिजात विशेष, हाथियोंकी एक जाति जो पहले त्वध्यावलमें होती थी। ८ नरशुक्रा-बलान्तर्गत जिनभेद। ९ घामचर।

१० सुमेध। ११ स्तुही। १२ चन्दन। १३ साध्य मौलिकों का पदातिविशेष। (पु०) १४ यमुदेवके एक पुत्रका नाम। (भाग ६।२।४४) १५ सरोवरविशेष। १६ तृतीय उत्तममनुके अन्तरमें देवगणभेद। १७ पुराणानुसार न्याय भुव मन्वन्तरके त्रिणुसे उत्पन्न एक प्रकारके देवता जो तृपित भी कहलाते हैं। १८ पर्यतभेद। १९ कूर्मविभाग स्थ मध्यदेशवासी मनुष्य। २० सुवर्ण, सोना। २१ मुस्तक, मोथा। २२ दिक्कहस्तिविशेष, उत्तरदिशाके दिग्गणका नाम। २३ रामचन्द्रकी सभाका वह सभासद जिसके मुहसे सीताजी निन्दा सुन कर उन्होंने सीताजी बनवास दिया था। २४ विष्णुका वह द्वारपालजो उनके दरवाजे पर राहिली और रहता है। २५ एक चोलराजका नाम। २६ बलदेवजीके एक सहोदर भाई। २७ एक प्राचीन देशका नाम। २८ विष्णुके एक पारिपदका नाम। २९ रामजीके साखाका नाम। ३० स्वरमाधनका एक प्रणाली जो इस प्रकार है—सा रे सा, रे ग रे, ग म ग, म प म, प ध प, ध नि ध, नि सा नि, सा रे सा। सा नि सा, नि ध नि, ध प ध, प म प, म ग म, ग रे ग, रे सा रे, सा नि सा। ३१ प्रकके ८४ बनोंमेंसे एक वन। (वि०) ३२ मन्थ, सुशिखित। ३३ कल्याणकारी। ३४ श्रेष्ठ। ३५ माधु।

भद्र (हि० पु०) सिर, दाढी, मूँठों आदि सबके सब बालोंका मुडन।

भद्रक—१ बङ्गालके बालेश्वर निलान्तर्गत एक उप विभाग। यह अक्षा० २० ४४' से २१ १५' उ० तथा देशा०

८६ १८'४०" से ८७ ५०'के मध्य अक्षस्थित है। भूपरिमाण ६०६ वर्गमील है। भद्रक, वासुदेवपुर, धर्मनगर और चाँदवासी यहाके प्रधान चाण्ड्यस्थान हैं।

२ उक्त विभागका सदर और प्रधान नगर। यह अक्षा० २१ ३' १०" उ० तथा देशा० ८६ ३३' २५" पू०के मध्य विस्तृत है। कलकत्तासे कटक जानेके रास्ते पर स्थापित होनेके कारण यह एक चाण्ड्यकेन्द्रमें गिना जाता है।

भद्रक—सद्याद्रिवर्णित एक हिन्दूराजा। ये लोग अम्बादेवोंके भक्त और वृद्धविष्णु मुनिके कुलजात थे।

(कथाद्रि० ३१।७८)

भद्रक—वाक्षिणात्यके सुवृद्धगोत्र एक राजा।

भद्रक (स० क्री०) भद्र सहाया स्वार्थे या कन्। १ भद्रमुस्तक, नागरमोथा। २ देवदारु। ३ वृत्तरत्नाश्रको छन्दोभेद। इसके प्रति चरणमें २२ अक्षर रहते हैं। इस छन्दके १, ४, ६, १२, १६, १८, २२ जहर गुरु, शेष लघु होते हैं। ४ एक प्राचीन देशका नाम। ५ चना, मूँग इत्यादि अन्न।

भद्रकण्ड (स० पु०) भद्र कण्डो यस्य। गोक्षुर, गोखरु।

भद्रकन्या (स० स्त्री०) मोक्षदायनको माता।

भद्रकपिल (स० पु०) शिव, महादेव।

भद्रकर्ण (स० पु०) भद्रस्य घृषस्य कर्णो यत्। गोकर्णरूपतीर्थभेद।

भद्रकर्णिका (स० स्त्री०) गोकर्णकी दाक्षायणीका एक नाम।

भद्रकर्णेश्वर (स० पु०) भद्रकर्णस्य ईश्वर। १ गोकर्णतीर्थस्थित शिवलिङ्गभेद। स्विधा टीप। २ तीर्थभेद।

भद्रकल्पिन् (स० पु०) एक बोधिमन्त्रका नाम।

भद्रका (स० स्त्री०) इन्द्रपत्नी।

भद्रकाम—मणिकूट पर्वतके पूर्वदिक्स्थ तीर्थभेद।

भद्रकाय (स० पु०) १ नानजित्तोके गर्भसे उत्पन्न श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम। (वि०) २ मङ्गलदेहक। ३ सुन्दर आहतिपुत्र।

भद्रकाय (स० वि०) भद्र करोनि वृत्तन उपपद म०।

१ मङ्गलकारक। (पु०) २ एक प्राचीन देशका नाम जिसका उल्लेख महाभारतमें आया है।

भद्रकारक (स० वि०) भद्रस्वकारक। मङ्गलकारक, कल्याण करनेवाला।

भद्रपाणि—एक प्राचीन राजा । फश्यभुनिके गोत्रसम्भूत और महालक्ष्मीपाद पत्रलेखन अनुपर्णराजवजायनस रचियके एक पुत्रका नाम ।

भद्रपाद (स० लि०) भद्रपदासु जान अण् उत्तरपदवृद्धि । भद्रपदान्तरजात, पूर्वभाद्रपद और उत्तर भाद्रपान नभय जात ।

भद्रपाल (स० पु०) बोधिसत्त्वभेद ।

भद्रपीठ (स० पु० उ०) भद्रार्थ पीठ । १ यह सिंहासन जिस पर राजाओं या देवताओंका अभिषेक होता है । २ पासन जिस पर बैठे जाय ।

भद्रपीठ—एक हिन्दू राजा ।

भद्रपुर (स० ही०) प्राचीन नगरभेद । अग्निनेमिके पुत्र मत्स्यने इस नगरको जीता था ।

(जैन हरिव १५३०)

भद्रव्या (स० खो०) इन्द्रजी ।

भद्रवन (स० पु०) मनुष्यके पासका एक वन ।

भद्रवस्तु—एक बौद्धमिथु । इन्होंने अजय्या गुहामन्दिरस्य सौमित्र शूद्रका निर्माणकार्य श्रेय किया था ।

भद्रवलन (स० पु०) भद्र महत् उलन वलमस्य । बलराम ॥

भद्रबल (स० खो०) भद्रा बला । १ लताशिशेप । पर्याय—सरणा, प्रसारणी, कटभरा, राजबला । २ गन्धिजा, माधवीलता ।

भद्रबल्लभ (स० पु०) बलराम ।

भद्रबाहु (स० पु०) १ रोहिणीके गर्भने उत्पन्न असुदेवके एक पुत्रका नाम । २ मगधराजभेद ।

भद्रबाहुस्वामिन् (स० पु०) एक ग्रन्थकार । चारित्र सिंहाण्टिक पठदर्शावृत्तिने इनका नामोत्पत्ति ।

भद्रबाहुस्वामी—एक प्रसिद्ध जैन ग्रन्थकार, द्दुष्ट श्रुतकेरली श्वेताश्वरके मतानुसार इन्होंने आवश्यकसूत्र, वज्रवैका

लिकमूल, उत्तराध्ययनसूत्र, सूत्रहोताङ्गसूत्र, वजाश्रुतसूत्र, स्वयंभूत, कर्णसूत्र, व्यसहारसूत्र, स्यप्रसासिसूत्र, आचारारङ्ग

सूत्र, और ऋषिभाषितसूत्र नामक १० नियुक्ति ग्रन्थ रचे थे । श्वेताश्वर जीप्रयोगोंमें इन्हें श्रुतपात्रा और योग

प्रधान कहा गया है । मुनिरत्नसरिते उनको दो वज्र नियुक्ति योंको तुलना ऋग्वेदके वज्रमण्डली ही का है । इसके

सिवा इनके रचे हुए जातकाम्भोनिधि, भद्रबाहुसंहिता और नर्मदासुन्दरीकथा नामक कई ग्रन्थोंमें जैनधर्मका माहात्म्य बतलाया गया है । खरतर और तपोगच्छकी पदाङ्गलिमें इनका जीवनकाल दिया गया है । ये प्राचीनगोत्रसम्भूत थे । ४५ वर्ष गृहवासमें रह कर इन्होंने उपसर्गहरस्तोत्र, फरपसूत्र, शतब्रह्मपत्र और १० नियुक्ति ग्रन्थ प्रणयन किये और १७ वर्ष प्रज्ञाचारी रहे । उसके बाद १४ वर्ष तक योगप्रधान रूपमें अवस्थित कर धीरे नि० स० १७० में ७६ वर्षकी अवस्थामें इनका शरीरान्त हुआ । जैनधर्म देखो ।

धर्मबोधोपक्रमणि शूत्र ऋषिमण्डलप्रकरण नामक श्वे० जैन ग्रन्थमें लिखा है कि, दक्षिणात्यके प्रतिष्ठान नगरमें ५ भद्रबाहु और बराह नामके दो भ्राता राज्य करते थे । यशोभद्र नामक एक जैनाचार्यका धर्मापदेश सुन कर दोनों भाइयोंने जिन दीक्षा ली । भद्रबाहुके पाण्डित्य पर प्रसन्न हो कर गुरु यशोभद्रने उन्हें सूरि प्रदान किया । इसी समय भद्रबाहुने पूर्ण कथित दस नियुक्ति और भद्रबाहुसंहिताकी रचना की । उसके बाद यशोभद्रके रचमपुरी गमन करने पर, उनके प्रधान शिष्य आर्यासम्भूति और भद्रबाहुने आचार्यपद ग्रहण कर भारतके नाना स्थानोंमें धर्मप्रचारार्थ भ्रमण किया ।

राजावली कथा नामक कनाटी इतिहासमें भद्रबाहुका इस प्रकार जीवनवृत्तान्त लिखा है—भारतखण्डके पुण्ड्रवर्धन राज्यके अन्तर्गत कोटिकपुर नगरमें पद्मरथ नामक एक राजा राजत्व करते थे । उनके राज्यकालमें राजपुरोहित सोमशर्माजी पत्नी सोमश्रीने एक सर्गसुलक्षण सम्पन्न पुत्र प्रसव किया । पिताने शुभलक्षणांके सन्दर्भसे प्रीत हो कर अपने पुत्र कोछीकलका निर्णय कर देवा कि, समयान्तरमें यह बालक जैनधर्म परिवर्तन होगा । तदनुसार उन्होंने जैन प्रथासे बालकका चील

\* किन्हींका मत है कि वे आनन्दपुर (बदायण) निवासी और उद्धरीराज धनुषसेनके समसामयिक थे । Ind Ant vol II p. 139, जोर किसी किसीका यह बरता है कि वे सम्राट् चन्द्रगुप्त या अशोकके समकालीन थे ।

और उपनयन-संस्कार कराया। एक दिन बालक भद्र-  
बाहु अपने साधियोंके साथ क्रीडा कर रहे थे, कि उसी  
समय महामुनि गोवर्द्धनस्वामी, नन्दिमित और अपरा-  
जित नामक चार धृतिकेवली ५ सौ शिष्योंके साथ  
जम्बूस्वामीके समाधि सन्दर्शनको कोटिपुर आये।  
महामुनि गोवर्द्धन बालक भद्रबाहुके शुभनिर्दोषके देख  
कर अनुमान किया कि यही बालक अन्तिम धृतिकेवली  
होगा। अतएव इसके लिए शिक्षाविधानकी आवश्यक  
कता है। ऐसा विचार कर वे बालकका हाथ पकड़  
कर उसे सोमशर्माके पास ले गये और बालकको शिक्षा  
का भार अपने ऊपर लेनेका अभिप्राय प्रकट किया।  
पिताको पहलेसे ही मालूम था कि पुत्र जैनधर्मका प्रचा-  
रक होगा। गोवर्द्धनस्वामीके शुभागमनसे उनके हृदय-  
में पूर्वभूति जाग उठी। उन्होंने गद्गद् कण्ठसे प्रणति  
पूर्वक आचार्यवरको आज्ञा स्वीकार की। परन्तु माता  
मोमश्रीने दीक्षाके पहले एक बार पुत्रदर्शनको प्रार्थना  
की थी। दोनोंके वाच्य और सम्मतिसे सन्तुष्ट हो कर  
गोवर्द्धनस्वामी भद्रबाहुको ले कर अश्वत्थारकके घर  
पहुंचे और वहा उनके अस्थान, भोजन और अध्ययन  
की व्यवस्था कर दी।

स्वामीजीके तत्त्वावधानमें रह कर भद्रबाहुने शीघ्र ही  
योगिनी, मन्त्रिनी, प्रणा और प्राण नामक वेदोंके चारों  
अनुयोग, ध्यानरूप और चतुर्दश विज्ञानका अभ्यास कर  
लिया। ज्ञान मार्गमें जितना ही वे अग्रसर होने लगे,  
उतना ही उन्हें सासारिक विषयोंसे त्रिरक्ति बढ़ने लगी।  
दीक्षाग्रहणके बाद वे यथाक्रमसे ज्ञान, ध्यान, तप और  
सत्यमादिमें अभ्यस्त हो कर आचार्यमें परिगणित हो  
गये। इनके आचार्यपद प्राप्त करनेके बाद गोवर्द्धन  
धृतिकेवलीका तिरोधान हुआ।

एक दिन पाटलिपुत्रके राजा चन्द्रगुप्तने कार्तिककी  
पूर्णिमा रातको निद्राके आवेशमें १६ स्वप्न देखे \*।

\* १ सूर्य अन्न हो रह है, २ कल्पवृक्षकी शाखा टूट कर  
गिर पड़ी है, ३ स्वर्गीय रथ शून्यम अवतीया हुआ है और  
ऊपरको जा रहा है, ४ चन्द्रमण्डल मानो इतन्तत भिन्न हो गया  
है, ५ दो काले हाथी लड़ रह हैं, ६ उपासकम क्षत्रात दीति

निद्रा भङ्ग होने पर उनका हृदय बहुत ही उर्ध्वलित हो  
उठा। किसी प्रकार भी उनका चित्त स्थिर नहीं हुआ।  
प्रातः वृत्त्यादि-सम्पन्न करके वे मन्त्रणागृहमें चुपचाप  
जा बैठे। इतनेमें प्रतिहारोंने आ कर सवादा दिया कि,  
भद्रबाहुमुनि नाना दिग्देशोंमें परिभ्रमण करने हुए राज्ञो  
घानमें आ पहुँचे हैं। राजा अमात्यवर्गसे परिभ्रत हो  
कर मुनिके समीप उपस्थित हुए। राजाकी अभिवन्दनाने  
सन्तुष्ट हो कर मुनिश्रेष्ठने उन्हें धर्मादेश दिया। तद्  
न्तर राजाने अपने १६ स्वप्नोंका हाल सुनाया, जिनका  
फल मुनिने इस प्रकार कहा,—१ सम्यग्यान तमसाच्छन्न  
होगा, २ जैनधर्मकी अवन्ति होगी और तुम्हारे घराघर  
गण सिंहासन पर बैठे हुए ही दीक्षा ग्रहण करेंगे, ३  
देवतागण अब भारतवर्षमें नहीं आवेंगे, ४ जैनगण  
विभिन्न सम्प्रदायोंमें विभक्त हो जायेंगे, ५ वर्षाके मेघ  
जलवर्षण न करेंगे और उसी अनाद्युष्टिके कारण शस्यादि-  
की उत्पत्ति नहीं होगी, ६ सत्यज्ञान लोपको प्राप्त होगा  
और ७६ एक क्षाणज्योति इतन्तत विकीर्ण होगी, ७  
आर्यराज्योंमें जैनधर्मका प्रसार बहुलतासे न होगा, ८  
असतको प्रतिष्ठा और सतका लोप होगा, ९ लक्ष्मी  
निम्नगामिनी होगी, १० राजा राजस्वके पट्टाशसे तृप्त न  
हो कर अर्धलोलुप होंगे और अधिक लाभको आशासे  
प्रजाकी पीडावृद्धि करेंगे, ११ मनुष्य यौवनवस्थामें धर्मा-  
प्राण हो कर बार्द्धक्यमें सब कुछ विसर्जन कर देंगे,  
१२ उच्चशरीर राजा नीचा के सहवाससे क्लृपित होंगे,  
१३ नीच उच्चको नष्टभष्ट कर समता प्रतिपादनका प्रयास  
करेंगे, १४ राजागण अयथा कर ग्रहण कर प्रजाकी  
दुर्दशा प्रस्त करेंगे, १५ निम्नश्रेणीके मनुष्य अन्त सार

द रह हैं, ७ एक तालाव सूखा पडा है, ८ आकाश धूमाच्छन्न  
हा गया है, ९ बानर सिंहासन पर बैठा हुआ है, १० स्वर्पापमें  
कुक्कुर खीर पा रह हैं, ११ बैल लड़ रहे हैं, १२ क्षत्रिय गधे  
पर प्रमथा कर रह हैं, १३ बानर मरालीको भगा रह हैं, १४  
गायके बड़डे सन्तुष्टमें बृद्ध रहे हैं, १५ फरपान बृद्ध पैलोको मार  
रह हैं और १६ एक सग बाहर पनोको पैदा कर अग्रसर हा रहा  
है। चन्द्रगुप्त दलौ।

दिग्म्बर मतासुर १४ खन्ध देव थ।

शून्य वाष्यालापसे ज्ञानियों की उपेक्षा करने और १६ द्वादश वार्षिकी अनावृष्टिके कारण वसुन्धरा शून्य हो जायगी।

इसके कुछ दिन बाद उन्होंने शिष्यों को विदा कर दिया और एकाकी भ्रमण करते हुए एक बालकका आर्त्तनाद सुना। पुकारने पर कोई उत्तर नहीं मिला, इससे समझ लिया कि भव द्वादशवार्षिकी अनावृष्टिका सबपात हो गया \*। राजाचन्द्रगुप्तने इस द्रैगप्रकोपकी शान्तिके लिए विविध अनुष्ठान किये। किन्तु किसी प्रकार भी शान्ति न हुई, यह देख वे दोक्षा ग्रहण कर वानप्रस्थाचारी हो कर भद्रबाहुस्वामीके सहचर हो गये।

भद्रबाहुने ज्ञानदृष्टिसे देखा कि, उम महामारोके समयमें विन्ध्यापर्वतसे ले कर नीलगिरि पर्यन्त समग्र भारतमें किसी प्रकार जस्यादि न होंगे। अनाहारमें लोग प्राण त्याग करेगे और धर्म भी क्लृप्त होगा। तब वे अपने १२ हजार शिष्यों और अन्यान्य लोगों के साथ दक्षिणापथको चल गये। मार्गमें अपना मृत्यु

समय उपस्थित जाग उन्होंने एक पर्वत शिखर पर चढ़ कर अन्तिम ध्यानमें निमग्न होनेकी इच्छा प्रकट की। उस स्थानमें भी दुर्भिक्षका पूर्ण प्रकोप देख कर उन्होने प्रियशिष्य विशाख मुनिको सध सहित चोलमण्डलमें चले जानेके लिये आदेश दिया। उनकी अनुमतिके अनुसार एकमात्र चन्द्रगुप्त ही उनके साथ रहे। उन्होने गुरुकी मृत्युके बाद उनकी अन्येष्टिकियां सम्पन्न कर, उनके पादपद्मकी पूजामें निरत रहे\*।

भद्रभोमा ( स० खी० ) पुराणानुसार कश्यपकी एक कन्याका नाम जो दक्षकी कन्या क्रोधाके गर्भसे उत्पन्न हुई थी।

\* पाटलिपुत्रके राजा ये चन्द्रगुप्त कौनसे थे? राजानलीकथा नामक क्लाडी ग्रन्थतः इतिहासिक सत्यका अङ्कुर उत्पन्न होता है। यदि भद्रबाहु और चन्द्रगुप्तका आन्व्यान रूपक न हो, और अश्वमेधजगडाके निर्जन पर्वतशिखरसे शिलालेपके मौलि कृत्यमें सन्देह हो, तो इस विचित्र आन्व्यान पर विचार करनेकी आवश्यकता ही न था। जब चन्द्रगुप्त पाटलिपुत्रके सिंहासन पर उपविष्ट न, उस समय नैनेधर्म लुप्त होनेका अन्तर आ पहुँचा था इस बातकी सभी स्वीकार करते हैं। सम्भवतः उसी समय वैशालीके शोषतम ईष्ट भूतकेपत्नी भद्राहु स्वामीका आविर्भाव हुआ था। वारय, उसके बाद फिर वह उस पद पर अधिष्ठित नहीं हुए। इधर देवते हैं कि चन्द्रगुप्तने बाद बौद्धधर्मका पुनर्विस्तार हुआ था। भद्रबाहुस्वामीका गुणकीर्तिकारी जैनग्रन्थसारण्य अन्वय ही ऐसे प्रसन्नप्रताप नरपतिके जैनपादाश्रय ग्रहणसे गौरवान्वित हुए होंगे, इसमें सन्देह नहीं। यही कारण है, कि उन्होंने तत्कालमयिक राजा चन्द्रगुप्तः भद्रबाहुक अनुचर शिष्यरूपमें ग्रहण किया है। राजा चन्द्रगुप्त ३७२ ई०में विद्यमान थे। प्रियदर्शी और चन्द्रगुप्त दरत।

इधर भद्रबाहु वीर १० स० १००में ७६ वर्षकी अवसामें म्रान्त गये हैं। ऐतिहासिक आचाननाय मृत्युपूर्वक १५७७ की वीर निराय कात्र खिर हुआ है। अतः ५२७—१७०=३५७ वृष्ट पूर्वमें, मतान्तरसे भूतनेजनीयय वीरनिवायाके बाद १६२ गय तन थ, तो शेष भूतनेजनी भद्रबाहु अवयव ही ३६५ गृष्ट-पूर्वात्क तक विद्यमान थ। इष्टल प्रमाथित होता है कि दानों एक समयमें ही भारतभूमिमें विद्यमान थ।

\* राजावली-वर्णित चन्द्रगुप्तका सत्य न हो। पर भा द्वादश-वार्षिकी अनावृष्टिकी जात शिलालेखोंसे प्रमाथित हो जाती है। दक्षिणात्यके अश्वमेधजगडाके निरन्तरती इन्द्रगिरि शिखरसे प्राचीन क्लाडी अक्षरोंमें सस्कृत भाषामें लिखित शिलालेखके पत्थेसे मान्य होता है कि, शौतमगणपत्तके शिष्य भद्रबाहुस्वामीकी उच्चविनीर्णमें ही शाश्वतम इस द्वादशवार्षिकी अकालक परिज्ञान हो गया था। जस्ताधारणको इस भारी निपत्तिका हान सुना कर वे अनेक मनुष्योंके साथ दक्षिणात्यको चम दिव्ये। नाना ग्राम और जनपदोंको अतिश्रम करते हुए वे कोटव पर्वत पर पहुँचे और अपनी मृत्यु निरन्तरती जान वहीं रह गये। यहा पर अन्तिम समाधिमें निमग्न होनेसे पहले उन्होंने सबको विदा कर तिर एक शिष्यको अपने पास रखा। उसके बाद संन्यास मताचरण पूर्णक उन्होंने सततत मृष्टिके अभीष्ट पदको प्राप्त किया था।

Ind Ant vol III, p, 253

इस गुणाचीन शिलालेखिमें लिखी हुई भद्रबाहुकी दक्षिणा-यात्राका समर्थन राजावलीमें भी किया गया है। निराखना जौनमपडलमें गमन और चन्द्रगुप्तने गुदके साथ अन्त्यानका आभास भी निरान्त अग्रसद्विक नहीं जाना पडना।

भद्रभुज ( स० पु० ) १ कल्याणविधायक भुज । ( लि० )  
 २ मङ्गलजनक भुजशाली । ३ प्रशस्त वाद्ययुक्त ।  
 भद्रभूषण ( स० स्त्री० ) देवीमूर्तिभेद ।  
 भद्रमनस् ( स० स्त्री० ) १ घेरावत हाथीकी माता । ( लि० )  
 २ मनहरी, प्रगस्तचेता ।  
 भद्रमन्द ( स० पु० ) हाथियोंकी एक जाति ।  
 भद्रमन्मथ ( स० पु० ) हाथियोंकी एक जाति ।  
 भद्रमल्लिका ( स० स्त्री० ) भद्रमल्लिका । १ गवाक्षी । २  
 मल्लिकामेद, नयमल्लिका ।  
 भद्रमातृ ( स० स्त्री० ) स्नेहमयी माता ।  
 भद्रमुख ( स० लि० ) भद्र मुख तद्व्यापारोऽस्य । १  
 सुन्दका । २ सुन्दरमुखविशिष्ट । ( पु० ) ३ नाग  
 भेद ।  
 भद्रमुञ्ज ( स० पु० ) भद्रो मुञ्ज इति कर्मधा० । मुञ्जशर,  
 सरपत । पर्याय—शर, धाण तेजन, इक्षुवेष्टन । गुण—  
 मधुर और शिथिल, दाह और तृणानाशन, विसर्प, अन्त्र,  
 मूत्र, वस्ति और चक्षुरोगमें हितकर, विदोषनाशन तथा  
 वृष्य ।  
 भद्रमुस्तक ( स० पु० ) भद्रो मुस्तक । नागरमुस्तक ।  
 भद्रमुस्ता ( स० स्त्री० ) भद्रा मुस्ता, नागरमुस्तक, नागर  
 मीथा । पर्याय—वराही, गुन्दा, प्र धि, भद्रकाशी, कशेरु,  
 क्रीडेष्ट, कुकविन्दाण्या, सुग धि, ग्रन्थिल, हिमा, चल्या,  
 राजकशेरु, कञ्जोल्या, मुस्ता, अणाद, वारिद, अम्भोद  
 मेघ, जाम्बत, अत्र, नोरद, अन्न, घन, गादूय । गुण—  
 कषाय, तिक्त, शीतल, पाचन, पित्तउत्तर और कफनाशक ।  
 ( राजी० ) भावप्रकाशके मतसे इसका गुण—कटु,  
 हिम, तिक्त, दोषन, पाचन, कषाय और कफ, पित्त,  
 अक्षूक, उत्तर, अचचि तथा घमिनाशक । अनुपदेशजात  
 भद्रमुस्ता ही सर्वोत्कृष्ट है । ( भाग० )  
 भद्रमृग ( स० पु० ) हाथियोंकी एक जाति ।  
 भद्रपर ( स० पु० स्त्री० ) भद्र शुभदो यव । इन्द्रिय,  
 इन्द्रजी ।  
 भद्रयान ( स० स्त्री० ) उत्तम यान, बढिया सवारी ।  
 ( पु० ) २ शाखाप्रवर्तक एक वृद्ध जाचाव ।  
 भद्रयोग ( स० पु० ) १ शुभ समय, माहेन्द्रयोग वा क्षण ।  
 २ पुराण सर्वज्ञका एक अङ्ग ।

भद्ररथ ( स० पु० ) कश्यपुचरीय हर्ष्य राजाके एक पुत्र  
 का नाम ।  
 भद्रराम—एक ग्रन्थकार । इन्होंने राजा अनुपासिहकी  
 अनुमतिसे अयुत होमलक्षहोमकोटिहोम नामक एक ग्रन्थ  
 लिखा था । जनसाधारणके निकट ये होमगोप नामसे  
 प्रसिद्ध थे ।  
 भद्ररश्मि ( स० लि० ) १ सत्प्रवृत्तिशाली । २ पश्चिम  
 भारतवासी एक बौद्धमिक्षु । ये हेतुविद्या तथा महा-  
 यान सम्प्रदायके अपरापर शास्त्रोंमें विशेष पारदर्शी थे ।  
 मालवराज शिलादित्यकी सभामें इन्होंने विशेष प्रतिष्ठा  
 प्राप्त की थी ।  
 भद्ररूपा ( स० स्त्री० ), रमणीयावृत्ति रमणी । २  
 सुरूपा ।  
 भद्ररथु ( स० पु० ) भद्रा रेणवोऽस्य । घेरावत हस्ती ।  
 भद्ररोहिणी ( स० स्त्री० ) भद्रार्थ रोहिति रुह णिनि-डीप् ।  
 कद्रोहिणी ।  
 भद्रउट ( स० पु० ) १ आश्रमभेद । २ तोर्धभेद ।  
 भद्रउत् ( स० लि० ) भद्रमत्स्यस्मिन्निमित्त मत्स्य, मस्य य ।  
 १ कल्याणविशिष्ट, मङ्गलयुक्त । ( क्ली० ) २ द्वेवदाय ।  
 भद्रवती ( स० स्त्री० ) भद्रवत् स्त्रिया ङीप् । १ भद्र  
 पर्णी । २ कल्याणविशिष्ट । ३ नानजित्तिके गर्भसे  
 उत्पन्न श्रीकृष्णकी एक कन्याका नाम । ४ मधुकी माता ।  
 ५ अष्टमहासेनकी पालिता हथनी । इसका वेग असीम  
 था । वामवदन्ता इसी हथनीकी पीठ पर सवार हो उद-  
 यनके साथ भागे थे । हथनी जब विन्ध्यारव्यी तक पहुँची,  
 तब वहाका गरम जल पी कर पञ्चत्वरो प्राप्त हुई ।  
 ( कथासहित्या० )  
 भद्रवन ( स० स्त्री० ) घुन्दावनस्थित धीहृष्णका कैलि-  
 काननविशेष । यह वारह कैलिकाननमेंसे एक है और  
 नन्दघाटके अग्निकोणमें यमुनाके पूर्वीकिनारे अवस्थित  
 है । एक समय निदाघ समयमें सखियोंके साथ कौतु-  
 हल करनेके लिये श्रीकृष्णने यहा मद्दयुद्ध किया था ।  
 भद्रवर्म ( स० पु० ) भद्रेण वृणीति आत्मानमिति  
 शेष न्यृ मनिर । नयमल्लिका ।  
 भद्रवल्लिका ( स० स्त्री० ) भद्रा वल्लिका । गोपवल्ली,  
 अनन्तमूल ।



भद्रवल्की (स० खी०) भद्रा चासी वल्की चेति कर्मधा० ।  
 १ मल्लिना । २ माघयोलता । ३ लताविशेष । पर्याय—  
 शान्तभोक, भूमिमण्डा, अष्टपादिका ।  
 भद्रवसा (स० ह्री०) उत्कृष्ट परिच्छद, वदिया  
 पदनाम ।  
 भद्रवाच् (स० लि०) १ मायुवका । २ साधु कथा या  
 प्रमद्ग ।  
 भद्रवाच्य (स० ह्री०) बोलने योग्य शुभवाक्य ।  
 भद्रवादिन् (स० लि०) म्बुछुभापी ।  
 भद्रविन्द (स० पु०) श्रीगणके एक पुत्रका नाम ।  
 (हरिव ३ ६१८७ ग्त्रो०)  
 भद्रविराट (स० पु०) एक पर्णाईमम वृत्तका नाम ।  
 इसके पहले और तीसरे चरणमें १० और दूसरे तथा  
 चौथे चरणमें ११ अक्षर होते हैं ।  
 भद्रविहार (स० पु०) बौद्धसङ्घात्प्रभेद ।  
 भद्रशर्मन् (स० पु०) भद्र शर्म सुख यस्य । पुत्राद्यानन्द  
 युक्त ।  
 भद्रशाय (स० पु०) भद्रा जाजा, महाया यस्य ।  
 कार्तिकेय ।  
 भद्रशील (स० लि०) सच्चरित्र, साधुशील ।  
 भद्रशोचि (स० लि०) १ कन्याणदीप्ति । (पु०) २ अग्नि ।  
 भद्रशौनस (स० पु०) चिन्तिसाक्षात्मके प्रणेता ।  
 चौडवानन्दने इनका नामोल्लेख किया है ।  
 भद्रश्रय (स० ह्री०) भद्राय श्रोयते गृहाने इति श्रि-  
 फर्मणि अच् । चन्दन ।  
 भद्रश्रयस् (स० पु०) कर्मका पुत्रभेद ।  
 भद्रश्री (स० पु०) भद्रा शीर्षस्य । चन्दनवृक्ष ।  
 भद्रश्रुत (स० लि०) प्रचुर शब्द श्रोता । २ सम्पक्  
 श्रवणकारी । (ह्री०) ३ मिष्टगन्ध श्रवण ।  
 (हरिव ३ २६ अ०)  
 भद्रश्रेण्य (स० पु०) हरिवशके अनुसार वाराणसीके  
 एक प्राचीन राजा जो द्विवेदाससे भी पहले हुए थे ।  
 भद्रपट्टी (स० खी०) दुर्गादेवी ।  
 भद्रसरस् (स० ह्री०) भद्र सर कर्मधा० । सुपाश्र्व-  
 पर्यत्स्थित सरोवरभेद । २ उत्तम सरोवर ।  
 भद्रस्मार (स० पु०) राजाविन्दुसारका एक नाम ।

भद्रसालजा (स० ह्री०) भद्रसालस्य वन ई तत् ।  
 भद्राश्वर्यपरिधन वनभेद (भारत भीष्मप० ७ अ०)  
 भद्रसेन (स० पु०) १ देवकी गर्भ सम्भूत चसुदेवके एक  
 पुत्रका नाम । असुरपति कसने इसे मारा था (भाग०  
 ६।२।३५) २ अष्टमके एक पुत्रका नाम । ३ हुन्तिराजके  
 एक पुत्रका नाम । ४ महिमतके एक पुत्रका नाम । ५  
 काश्मीरके एक राजा । ६ बौद्धिके अनुसार 'भारपापीय'  
 आदि कुमतिके दलपतिके नाम । ७ अज्ञातशुक्रा गोला  
 पत्य । ८ सहादि-वर्णित दो राजा ।  
 भद्रसोमा (स० खी०) भद्र सोम इत्यास्या दूव इति  
 टाप । १ गङ्गा । २ कुचर्यस्य नदीविशेष ।  
 भद्रहर्ष (स० पु०) सहादि-गण्ड वर्णित जाङ्गलिक-  
 राजवंशीय एक राजा ।  
 भद्रा (स० खी०) भद्र अज्ञादित्यात् टाप । १ रास्ता ।  
 २ व्योमनदी, आकाशगंगा । ३ कृष्णनी । ४ द्वितीया,  
 सप्तमी, द्वादशी तिथियोंको स भा ।  
 "प्रतिषेदादनी पयो नन्दा शंया मणीधिभि ।  
 द्वितीयाद्वादशी चैव भद्रा प्रोक्ता च सप्तमी ॥"  
 (ज्याति सार०)  
 सुषवारके दिन भद्रा तिथी होनेसे सिद्धियोग होता  
 है । सिद्धियोग सभी कामोंमें शुभ है । ५ प्रसारिणी । ६  
 कटफल । ७ अन्ता । ८ जीवन्ती । ९ अपराजिता ।  
 १० नीली । ११ अतिबला । १२ शमी । १३ वचा । १४  
 दन्ती । १५ हरिद्रा । १६ श्वेतदूर्वा । १७ काश्मीर, पुष्कर  
 मूल । १८ चन्द्रशूरा, चसुर । १९ मारिचाविशेष । २०  
 गामि, गाय । २१ भद्राश्ववर्षस्थित नदीभेद । यह नदी  
 गङ्गाकी एक शाखा है और उत्तर कुचर्यमें बहती है ।  
 २२ स्वरिका । २३ बुद्धिशक्तिविशेष । पर्याय—तारा, महाश्री,  
 ओङ्कार, स्याहा श्री, मनोरमा, तारिणी, जया, अन्ता,  
 शिवा, लोकेश्वरात्मजा, स्वदूरवासिनी, वैश्या, नीलसर  
 स्वती, शङ्खिनी, महातारा, वसुधारा, धनन्ददा, त्रिलोचना,  
 लोचता । २४ उपायके गर्भसे उत्पन्न सूर्यकी एक कन्या ।  
 २५ एक विद्याधरतनया । चिट्पकने बडे कष्टमें इसके  
 पाया था । २६ केकयराजकी एक कन्या जो श्रोत्रुण्यजीको  
 व्याही थी । इसके गर्भसे स प्रामजित्, वृद्धत्सेन, शूद्र,  
 प्रहरण, अरिजित्, जय, सुभद्र, राम, शायु और सत्य

उत्पन्न हुए थे। (भाग०) २७ काशीजानकी एक कन्या जो द्युपिताभक्तो व्याही थी। विवाहके कुछ समय बाद ही ये विधवा हुई। द्युपिताभक्तने अपने ज्ञानमें धारि भूत हो कर अयुवकगर्भाके गर्भमें पुत्र उत्पादन किया था। (भाग आदिपर्व १।१२७ अ०) २८ सुभद्राका एक नाम। २६ विष्टिभद्रा। कृष्णपक्षकी तृतीया, दशमोके शोषार्द्र, सप्तमी और चतुर्दशीके पूर्वाह्न, शुक्लपक्षकी एकादशी और चतुर्थीके शोषार्द्र तथा अष्टमी और पूर्णिमाके पूर्वाह्नको विष्टिभद्रा कहते हैं। कर्कट, मिह, कुम्भ और मोनराशिमें भद्रा होनेसे पृथ्वीमें, मेघ, वृष, मिथुन और वृश्चिकराशिमें होनेसे स्वर्गलोकमें तथा कन्या, धनु, तुला और मकरराशिमें होनेसे पाताललोकमें विष्टिभद्रा का अस्तित्व होता है। स्वर्गमें विष्टिभद्राके रहनेके समय जो कोई काय किया जाता है, वह अशुभ सिद्ध होता है, पातालमें रहनेके समय धनागम और मर्त्यलोकमें रहनेके समय सभी कार्य चिन्तए होते हैं। भद्राके शेष तीन दण्डका नाम पुच्छ है। इस पुच्छमें समस्त कार्योंकी सिद्धि होती है। विष्टिभद्राके समय यात्रा अथवा और कोई शुभकाय नहीं करना चाहिये।

विष्टिभद्रा देतो।

३० पिङ्गलमें उपजाति घृत्तिका दशर्षा भेद। ३१ कामरूप प्रदेशकी एक नदीका नाम। ३२ वाधा, अडचन।

भद्रा—१ महिसुरराज्यके अन्तर्गत एक नदी। तुङ्गानदीके साथ मिल कर यह तुङ्गभद्रा नामसे बहती है। पश्चिम घाट पर्यन्तमालाके गङ्गामूलाशिखरके पाददेशको घोंटा हुआ यह कट्टर जिलेमें आई है और दक्षिणकी ओर घूम कर बुढालीके समीप तुङ्गामें मिलती है। इसके दोनों पार्श्ववर्तीस्थान बनमाला और पर्यन्तपरिगणित है। बेङ्गुरीपुरके निकट इस नदीके ऊपर एक पुल बनाया गया है। पुराणादिमें भी इन भद्रा नदीका उत्पत्ति आस्थान देखनेमें आता है। बराहरूपी विष्णुके दक्षिण दन्त द्वारा भद्राकी उत्पत्ति हुई है। तुङ्गभद्रा देतो।

२ कामरूपके अन्तर्गत एक महानदी। यह अजयनदीके ऊर्ध्वमें अवस्थित है। इस नदीमें भाद्रमासकी शुक्ल चतुर्दशीको स्नान करनेसे स्वर्गलोककी प्राप्ति होती है। (वाल्मीकि ७।३२) ३ नदीविशेष।

भद्रा—मध्यप्रदेशके बालाघाट जिलान्तर्गत एक सामन्त राज्य। भूपरिमाण १२८ वर्गमील है। १८वीं सदीके शेष भागमें लखीके सूत्रादारने यह भूस्वत्तिका पट्टान घनीय जैनउद्दीन खाँको जमींदारी शर्त पर प्रदान की। यह सरदारराज आन भी इस स्वत्तिका भोग कर रहा है। बेली ग्राममें सरदारका आवास भवन विद्यमान है।

भद्रारूचाना—एक बौद्ध मिथु धर्माचारिणी।

भद्राकरण (स० क्री०) भद्र डाच, कृत्युट, मुण्डन, सिर मुँडाना।

भद्राकापिलानी—बौद्धधर्मावलम्बिता एक मिथु रमणी। जे मनी मठस्वामीने धर्मापदेश दिया करती थीं।

भद्राकुण्डलकेजा—बौद्धमिथुणीभेद।

भद्राङ्ग (स० पु०) भद्रमङ्गलस्य। धराराम।

भद्राचल—१ मन्दाज प्रदेशके गोदावरी जिलान्तर्गत एक तालुक। यह अक्षा० १७ २७'में १७ ५७' उ० तथा देशा० ८० ५२' से ८१ ४६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ६११ वर्गमील और जनसंख्या ५० हजारके करीब है। इनमें भद्राचलम नामक एक शहर और ३२० ग्राम लगने हैं।

१८६० ई०में जब निजामने इन स्थानकी अङ्गरेजोंके हाथ समर्पण किया, तब यह गोदावरी कलेक्ट्रेटीकी पञ्जेन्सीमें मिला लिया गया। १८७४ ई०में रेकपल्ली और रम्पाप्रदेश इसके अन्तर्भुक्त हुए।

२ उक्त तालुकका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० १७ १४' उ० तथा देशा० ८१ पू०के मध्य अवस्थित है। इस नगरकी तटभूमि ही कर परल्लोता गोदावरी नदी बहती है। निरुदरथ एक पर्वतशिखर मद्दूर यशकुण्ड नामसे प्रसिद्ध है। यहाँ जो रामचन्द्रजीका मन्दिर है, वह दक्षिणात्य रासियोंके निम्न एक पवित्र तीर्थ समझा जाता है। प्रवाद है, कि कपिकुलको साथ ले कर भगवान् रामचन्द्र लट्का जाते समय गोदावरी पार कर इस स्थान पर ठहरे थे। उहाँके उम श्रुमागमनके स्मरणार्थ आज भी नगरवासिगण वर्षमें एक बार महामेला का आयोजन करते हैं। ऋषिप्रतिष्ठ नामक विंसी साधुपुत्रने चार सदी पहले इस मन्दिरकी पहिले पहल

प्रतिष्ठा की, वाद व च बीचमें स्फकारादि द्वारा उसका आयतन भी बढ़ाया गया। देवताके आभरणोंमें कितने बहुमूल्य हीरादि भी दिये जाते हैं। इस देव मूर्तिके खर्च-वर्चके लिये निजाम सरकारसे प्रति वर्ष १३ हजार रुपये मिलते हैं। यहां जो मेला लगता है, वह पैशाघमासमें आरम्भ होता है। रामचन्द्रजीके मन्दिरको छोड़ कर यहां मरकताम्बिका नामक एक और शक्तिमूर्ति स्थापित है।

वे सब मन्दिर स्थानीय जमींदार और निजामसैन्यके अहमदा युद्धमें नष्ट हो गये। निजामने जब देखा कि, ये यहाका सम्पूर्ण राजस्व वसूल करनेमें विलकुल असमर्थ हैं, तब उन्होंने १८६० ई०में इस सम्पत्तिको अङ्गरेजोंके हाथ सौंप दिया। प्राय २०० वर्ष पहले रामदास नामक एक निजाम-कर्मचारी राजस्व-सम्बन्ध करनेके लिये यहां भेजे गये। जो कुछ रुपये उन्होंने वसूल किये उन्हे राजमरकारमें १ भेज कर एक मन्दिर और गोपुर निर्माणमें लगा दिया। रामदासके ऐसे ध्यरहार पर निजाम सरकार उन्को विगडो और उन्हे कैद कर लिया। पीछे तीरम लक्ष्मी नरसिंह राव नामक एक दूसरा व्यक्ति राजस्व सम्बन्धमें नियुक्त हुए। उन्होंने भी निजामको थोडो मो रकम भेज कर वाका मन्दिरके सरकार कार्यमें पत्र कर डाला था। इस समय मन्दाजवासी धनी घरदरामदासने मन्दिर बनानेमें उन्हे मदद पहुंचाई। घरदरामका मृत्युके बाद उन्होंने भी अपनी प्राणरक्षाना कोडे उपाय न देना और निजामके भयसे गोदावरी नदी में डूब प्राण त्यागा।

इस तीर्थके समीप ही वर्णशाल तीर्थ है। कहते हैं, कि राक्षसपति रावण इसी स्थानसे सीतादेवीको चुरा ले गया था। यहांके पञ्च तीर्थवासियोंको सीताके पदचिह्न, उनके बैठीके कितने प्राचीन स्थान बतलाते हैं।

भद्रात्मज ( म० पु० ) भद्र रितकर आत्मज श्व रक्षाकर त्वाङ् । गङ्गा ।

भद्रागर ( स० श्रौ० ) नगरभेद ।

भद्रागन्ध—गिवाचामहोदधिके प्रणेता ।

भद्रानन्द ( म० पु० ) एक प्रकारको खर साधना प्रणाली

जो इम प्रकार है—आरोही—सा रे ग म, रे ग म प, ग म प ध, म प ध नि, प ध नि सा : अवरोही—सा नि ध प, नि ध प म, ध प म ग, प म ग रे, म ग रे सा ।

भद्रायुध ( स० पु० ) राक्षसभेद ।

भद्रारक ( स० पु० ) पुराणानुसार अठारह क्षुद्र द्वीपोंमेंसे एक द्वीपका नाम ।

भद्रापत्रिका ( स० श्रौ० ) भद्राय अलति पर्याप्तोतीति अल अच् भद्राल पत्र यस्या कप्, टाप् अत इत्य । गधाली ।

भद्राला ( स० ख० ) भद्र अल् अच् भद्राल गीरादित्वात् डोप । १ गधाली । २ मङ्गलश्रेणी ।

भद्रावकाश ( स० श्रौ० ) पुण्यसलिला नदीभेद ।

भद्रावती ( स० श्रौ० ) भद्रस्य अस्तोति मनुष्यस्य व सहाया पूर्वपदस्य दीर्घ । १ कटहलफा पेड । २ महाभारतके अनुसार एक प्राचीन नगरी । पाण्डवगण यहांसे युवनाश्रुका अश्वमेधका घोडा चुरा ले गये थे ।

भद्रेश्वर देवो ।

भद्राग्रत ( म० श्रौ० ) विधिप्रत ।

भद्राश्रय ( म० पु० ) भद्रस्य आश्रय । चन्दन ।

भद्राश्व ( स० श्रौ० ) भद्रा अश्वो अल । जम्बूद्वीपके अन्तर्गत एक वप वा क्षेत् । भागवतमें इस वर्षका विवरण इस प्रकार लिखा है,—द्रावृत्तवर्षके पूर्व और पश्चिममें पश्चिमसे माल्यवान् और गधमादा पर्वत, उत्तरमें नील पर्वत और दक्षिणमें निपघाचल पर्वत दो हजार योजन विस्तीर्ण केतुमाल और भद्राश्ववर्षको सीमा निर्दिष्ट हुई है। सुमेरुके चारों ओर मन्दर मेरुमन्दर, सुषार्ष्व और कुमुद नामक चार अष्टम पर्वत हैं। उन पर्वतोंका विस्तार और उच्चता अत्युत्त योजन है। चारों पर्वतों पर आश्र, जम्बू, कदम्ब और न्यग्रोध नामक चार प्रधान वृक्ष हैं; जिन्का विस्तार भी सी योजनका है। इनकी शाखाए भी सी सी योजन विस्तृत हैं।

उक्त चारों वृक्षोंके निकट ही चार हृद हैं। जिनमेंसे एकमें दुग्धजल दूसरेमें मधुजल, तीसरेमें इक्षु रसजल और चौथेमें शुद्धजल है। इन चारों हृदोंका जल अति श्रेय आश्रयकारी है। उपदेशतानुगत उमका सेवन कर

शाभाविक योगीश्वर्यको धारण करते हैं। इसके सिवा उक्त स्थानमें चार उन्कृष्ट उद्यान भी हैं, जिनका नाम नन्दन, चैत्ररय, वैभाजक और सर्वातीभद्र है। इन उपवनों में प्रधान देवगण और उत्तमा रमणोगण विहार करते हैं।

मदर पर्वत पर देवचूत नामक एक रुख है, जो ग्यारह सौ योजन ऊँचा और सर्वदा भूरि भूरि अमृततृण फलों से सुगोमित रहता है। ये फल पर्यतशुद्धके समान स्थूल और अपने आप गिरते हैं। उन फलोंके रससे एक अक्षणोदा नामक नदी उत्पन्न हुई है, जो मदरपर्वतके शिखर से निकल कर पृथ्वी और इलाहूत वर्ष तक विस्तृत है। इस नदीका जल सेना करनेमें भयानांकी अनुचरी यशोङ्गनाओंके अङ्ग सुगन्धित होने हैं। परन्तु इस सुगन्धकी दृश योजन फैलाती है। इसा प्रकार जम्बूफलोंके रससे जम्बू नदीको उत्पत्ति हुई है। यह नदी मेरुमन्दरके शिखरसे निकल कर अयुत योजन अन्तरमें पृथिवी पर गिरी है, जिससे समग्र इलाहूतवर्ष व्याप्त हो रहा है।

इस नदीके दोमें कितानेको मिट्टी प्रवाहित जल और रससे अनुविद्ध हो कर वायु और सूर्यके स्वयोगसे विशेष पात्रको प्राप्त हुई है, जिससे जम्बूनद नामक सुगर्ण उत्पन्न हुआ है।

सुपार्श्वपर्वतके पार्श्वदेशमें महाकदम्ब नामका जो प्रकारकदम्बवृक्ष है, उसके कोटरोंसे पाच मधु धाराए निकली हैं, जो उस पर्वतके शिखरदेशको निषिक्त करती हुई पश्चिममें अपनी सुगन्ध द्वारा इन्द्रावृतवर्षको आमो दित कर रही हैं। कुमुदपर्वत पर शतवर्ण नामक जो एक विस्तारण घट विरपी है, उसके स्कन्धसे अधोमुख उक्त पर्वतके अग्रभागमें दधि, दुग्ध, घृत, मधु, गुड, अज तथा वसन भूषण शयन आसनादि समस्त अभिलषित वस्तुओंको देनेवाले नद निम्नले हैं। इसलिये यहाके लोगोंको कमी अङ्गुलीकल्प, क्लान्ति घर्म, जरा, रोग, अप मृत्यु, शीत या उष्णजन्य वैषम्य तथा अन्यान्य उपमर्ग नहीं सहने पडते। ये यावज्जीवन केवल सुख सम्भोगमें ही काल व्यतीत करते हैं। (भागवत ५।१६ अ०)

वराहपुराणके मतसे यह जम्बूद्वीपके अन्तर्गत नव वर्षोंमें एक वर्ष है। माल्यवान् पर्वतके पूर्वपार्श्वमें

भद्रशालवनसे सुगोमित यह वर्ष अवस्थित है। यहाके पुरुष श्वेतवर्ण और स्त्रिया कुमुदवर्णा हैं। इस वर्षमें शैलवण पर्वन, मालापर्वत, चरजस्य, त्रिपर्ण और नील नामक ५ कुलपर्वत हैं। यहा सीता, सुवाहिना, हस्तवती, काशरी, सुरसा, गालागरी, इन्द्रनदी, अङ्गारवर्हिनी, हरितोया, सोमापर्वत शतहृदा, वनमाली, वसुमती, हस्ता, पर्णा, पञ्चाङ्ग, धनुमती, मणियमा, सुगन्धभाग, विद्यामिना, शृण्णतोया, दुष्योदा नागवती, शिवा, शैवा लिनो, मणितला, क्षीरोदा, वरुणापती, विष्णुपदी, महा नदी, हिरण्यस्तम्भवाहा, सुपारती, यामोदा आदि प्रधान नदिषा हैं, तथा इनके सिवा बहुत सी छोटी छोटी नदिषा भी हैं। (ब्रह्मसू०)

२ महाशिवपुराणके पाच राजा। (सहास्रिण ३३। ४४, ७७, ९५, १४०, १५३)

भद्रासन (स ० ३।०) भद्राय लोकहिताय आस्पते आस-  
आघारे त्पुट्। १ नृपासन, राचासन, अभिषेकके समय राजाको जिस आसन पर विद्या कर अभिषेक किया जाता है, उसे भद्रासन कहते हैं। बृहत्संहितामें लिखा है,— प्रशस्त लक्षण युक्त वृषचर्म पूर्णको और दे कर उस पर सिंह और वृषचर्मका आस्तरण करना चाहिये, फिर उस पर कनक, रजत और ताम्र द्वारा प्रस्तुत आसन या क्षीर-तर्हनिर्मित आसन रखना चाहिये। यह आसन तीन प्रकार परिमाणविशिष्ट होता है—एकहस्त प्रमाण, पात्राधिक एकहस्त प्रमाण और डेढ हस्त प्रमाण। इस प्रकारका आसन भद्रासन कहलाता है।

२ तन्त्रसारोक्त योगियोंका एक आसन। दोनों गुल्फोंको स्थिर कर उन्हें सीबनीके पार्श्वमें रखनेसे यह आसन बन जाता है।

३ वासगृह, वह घर जिसमें वास किया जाता है, रहनेका घर। वास्तु देश।

भद्राह (स ० ३।०) भद्र अह र्मघा०। पुष्याह, पुष्य दिन।

भद्रि—अयोध्याप्रदेशके प्रतापगढ जिलेका एक नगर। यहा एक प्राचीन दुर्गका ध्वसावशेष देखा जाता है। भद्रिका (स ० २।०) भद्रा स्वार्थे कन् राप्। १ भद्रा तिथि। २ योगिनो दशान्तर्गत पञ्चमी दशा।

“म गता विंगला धन्या भ्रमरी भद्रिका तथा ।  
उरवा सिद्धा नददा न योगिन्पटौ प्रसीतिता ॥”

( ४६५वाक्य )

भरणों, मद्य, ज्येष्ठा और उत्तरभाद्रपद नक्षत्रमें जन्म होनेमें भद्रिकानी दशा होती है। इस दशाका शोककाल ५ वर्ष है। इस दशाकालमें मनुष्य सुख, लाभ, यश, सतीय, धर्म, भोग, ऋी और पुत्रसम्पन्न होता है। इन सब दशाओंकी भी फिर अन्तर्दशा और प्रत्यन्तर्दशा है। तदनुसार फल गिन्य करना होगा। (५० ज्योति०)

३ त्रुत्तन्नाम्नोक्त नराक्षर पादक छन्दोभेद। इम्-  
फाल्पण—“भद्रिका भवति रो नरी” (वृत्तरत्ना०) ४  
गुणा।

भद्रिनपुर—एक प्राचीन नगर। (जैनश्रुति १८।११)

भद्रेश ( २० पु० ) शिवलिङ्गभेद।

भद्रेश्वर ( २० पु० ) भद्र शुभदृष्ट्यासावीश्वरचेति  
भद्रात्मक महालमय ईश्वरो वेति। १ फल्पप्रामस्थित शिव  
मूर्त्ति। इस भद्रेश्वर शिवके दर्शन करनेसे चक्रतीर्थ  
गमनका फल प्राप्त होता है। २ महादेवको पानके लिये  
पार्वती द्वारा आराधित हिमायस्थित पार्विय शिवलिङ्ग।  
( वामनपु० ४६ अ० )

३ गङ्गाके पश्चिमो किनारे गरिटाण्य श्रामके उत्तरमें  
अवस्थित पाषाणमय शिवलिङ्ग और प्राम। ४ तीर्थ  
विशेष।

“श्रीशैले माधवी ताम भद्रा भद्रेश्वरे तथा।” (मत्स्यपु०)

यहा पर भद्रा नामक शक्तिमूर्त्ति विद्यमान है।

भद्रेश्वर—महार्थमञ्जरी टीकाके प्रणेता।

भद्रेश्वर—राजतरङ्गिणी वर्णित एक राज कर्मचारी। ये  
कायस्थ कुलोद्भूत थे। राजकर्ममें नियुक्त हो कर इन्होंने  
जनसाधारणके ऊपर अत्याचार आरम्भ कर दिया था।  
( राजतर० ७।३८-४४ )

भद्रेश्वर—वर्षा प्रदेशके कच्छ प्रदेशके अन्तर्गत एक  
प्राचीन नगर। यह भद्रपति नामसे प्रसिद्ध है। यहाकी  
सुप्राचीन ध्वजाशिष्ट अट्टालिकाओंके प्रस्तरादि ले कर  
दूसरी जगह शूलादि धनाये गये हैं। दो ध्वस्तप्राय  
मसजिद और एक शिवमन्दिरका स्तम्भ तथा गुम्बज  
बाज भी इसकी प्राचीन स्मृतिका परिचय दते हैं। निम्न

वर्षों एक कुण्डके सामने माता आशापुरीया मन्दिर  
विद्यमान है। बहुत पहले बौद्ध और जैनधर्मने यहा पर  
प्रतिष्ठालाभ किया था। यहाका जैनमन्दिर जनसाधारण-  
के विशेष आदरकी सामग्री है। जो सब प्राचीन निदर्शन  
आज भी मन्दिरादिके गालमें पथित देखे जाते हैं वे  
१,२५ ई०के परवर्त्तीकालमें जगद्देव शाह नामक किसी  
वनियेसे रक्षित हुए थे। उक्त मटाजान भद्रेश्वर नगरको  
दानमें पा कर उसके मन्दिरादिना जोर्णरुस्वार किया  
थ। उसी समय प्राचीन निदर्शन यहासे हटा लिये  
गये थे।

२३वीं और १३वीं शताब्दीमें यह स्थान तीर्थक्षेत्ररूप  
में गिना जाने लगा। इसी समयसे यहा तीर्थ यात्रियोंकी  
बारी भीट होने लगी, जिलालिपिमें इम्फा प्रमाण  
मिलता है। ११वीं शताब्दीके शेषभागमें मुसलमानोंने  
इस मन्दिरकी लूटा। इस समय जैनतीर्थद्वारोंकी अनेक  
मूर्त्तिया नष्ट कर डाली गईं। मुसलमानोंके इस उपद्रवके  
बादसे यह स्थान बिलकुल जनशून्य हो गया है। अभी  
इसके मन्दिर और दुर्गादिका ध्वसावशेष वर्त्तमान मुद्रा  
गन्दरना घर धनानेमें ध्वस्तहूत हाता है। रथानीय पीर  
लालशोयकी दरगाहमें अरबी भाषामें लिखित एक गिला  
फटक देखा जाता है। प्राचीन भद्रपतिना कुछ अश  
वर्त्तमान नगररक्षमें अन्वयित है।

भद्रेश्वर—बुद्धाचकेहुगली जिलान्तर्गत एक नगर। यह  
अक्ष० २४ १६ ३० तथा देशा० ८७ ५७ ५० ईष्ट  
इण्डियन रेलवेके नवादा एंशनसे ४ मील दक्षिणमें अ  
स्थित है। जनसंख्या चार सौके करीब है। यहा रोजमका  
कारवार होता है।

भद्रेश्वर आचार्य—एक ग्रन्थकार। गणरत्नमहोद्घममें इनका  
नामोल्लेख है।

भद्रेश्वरसूरि—१ एक वैवाकरण, द्वीपक नाम व्याकरण  
ग्रन्थके प्रणेता। २ चन्द्रगच्छके अन्तगत सूरिभेद। ये  
अभयदेव और देवभद्रके गुरु थे। सिद्धनेनरुत प्रवचन  
मानोद्धार और बालचन्द्रकी विवेक मञ्जरीटीका पदमेंसे  
मातृम होता है, कि ये १२ सम्बन्धके श्रेयभागमें विद्यमान  
थे। ३ एक जैनपूरी। ये राजा जयविहके समनामयिक  
जैनाचार्य देवसूरिके शिष्य थे। उनको सतीर्थ स्तनप्रमा

सूचित धर्मदानगणिकी उपदेशमालाटीकासे जाना जाता है, कि वे सम्मत १२३८ मन्वत्के मन्विष्ट वृत्ती किसी समयमें जीवित थे।

भद्रैला (स० स्त्री०) भद्रा ण्या। स्थूलैला, वडा इलायची।

भद्रोत्कट (स० पु०) भद्रमुस्त, भद्रालिया मीथा।

भद्रोदनी (स० स्त्री०) भद्र उदनिर्नि वनयेति, उद वन् वच्, गीराण्टिवात् डीप्। १ उला। २ नागवला।

भद्रोदप (स० स्त्री०) सुधुतोक्त औषधभेद।

भद्रोपवास व्रत (स० स्त्री०) व्रतभेद।

भट्टी—बम्बई प्रदेशके कान्धियावाड जिलान्तर्गत एक सामन्त राज्य। यहाके सरदार वृष्टिश सरकार और जूनागढके नवाबको कर देते हैं।

भद्रा—बम्बई प्रदेशके हल्लार जिलान्तर्गत एक छोटा राज्य। यहाके सामन्त राज जूनागढके नवाब तथा वृष्टिश सरकारको कर देते हैं। भागना नगर यहाका प्रधान स्थान है।

भद्रवाना—बम्बई प्रदेशके भलार जिलान्तर्गत एक सामन्त राज्य।

भद्रक (हि० स्त्री०) १ धीमा शब्द, ध्वनि। २ अस्पष्ट या उड़ती हुई पत्तर।

भद्रकना (हि० स्त्री०) बोलना, कहना।

भद्रमताना (हि० स्त्री०) भद्र मत शब्द करना, गुजारना।

भद्रमाहट (हि० स्त्री०) भद्रमतानेका शब्द, गुजार।

भद्रविधि (स० स्त्री०) स्तुतिरूप इष्टियुक्त।

भद्रन (स० स्त्री०) कल्याणकारी।

भद्रिल (स० स्त्री०) १ शुभ। २ धर्म। ३ दूत।

भद्रिष्ठ (स० स्त्री०) अतिगव स्तोता, अन्यन्त स्तनकारी।

भद्रुक (स० पु०) भारतवर्षके अन्तर्गत जनपदविशेष।

भद्रसाली—काञ्चप्रदेशवासी राजपूत जातिकी एक शाखा। ये लोग सोलाङ्की घ शीय ह, किन्तु आचार ब्रध होनेके कारण ये अभी सोलाङ्कीके साथ नहीं मिल सकते। सभी जनेज पहनते हैं और अपनेको क्षत्रिय वत मानते हैं। प्रवाद है, कि ये लोग जाडेजादिके साथ यहां आ कर बस गये हैं, वृषि-कार्य और वाणिज्य इनका प्रधान व्यवसाय है। यहां पर ये लोग धेयू नामसे परिचित हैं।

भद्रश्चर (स० स्त्री०) भाना नक्षत्राणा पञ्चरम्। नक्षत्रचक्र।  
भद्रपति (स० पु०) भाना नक्षत्राणा पति। चन्द्रमा।  
भद्रपट (स० पु०) एक आयुर्वेद। इहोने काश्मीरमें भद्रपटे श्वर नामसे जिवमूर्ति स्थापित की।

भद्रका (हि० पु०) अर्क उतारने या जगत् चुआनेका बद् सु हना एक प्रकारका वडा घडा। इसके ऊपरी भागमें एक लगे नली लगी रहती है। जिस चीजका अर्क उतारना होता है, वह चीज पागे आदिक साथ इसमें डाल कर आग पर चढा दी जाती है और उसकी भाप बनती है। तब वह भाप उसी नलीके रास्तेसे उठी हो कर अर्क आदिके रूपमें पास रखे हुए दूसरे बरतनमें गिरती है।  
भद्रक (हि० स्त्री०) किसी वस्तुका एकपत्र गरम हो कर ऊपर को उठाना, उठल।

भद्रका (हि० स्त्री०) १ उठाना। २ गरमो पा कर किसी चीज का फटना। ३ प्रखलित होना, जोरसे जलना, भडकना।

भद्रका (हि० पु०) भद्रा देणे।

भद्रकी (हि० स्त्री०) भूठी धमकी, घुडकी।

भद्रका (हि० पु०) उराला, लपट।

भद्रत (हि० स्त्री०) १ वह भस्म जो शिवजी लगाया करने थे। निवृत्ती दत्ता। २ शिवकी मूर्तिके सामने जलने वाली अग्निकी भस्म जिसे गौव लोग मस्त्रक और भुजा आदि पर लगाते हैं।

भद्रवर (हि० स्त्री०) भद्रव वणे।

भद्रवड (हि० स्त्री०) अव्यवस्थित जन समुदाय, भोड माड।

भद्रवटल (स० स्त्री०) भाना नक्षत्राणा मण्डल। नक्षत्र चक्र, राशिचक्र।

भद्रम (स० पु०) भद्र इत्यव्यय शब्देन भातीति भा क। १ मक्षिका मच्छड। २ धूम, धूआ।

भद्रमरालिका (स० स्त्री०) भद्र इत्यव्ययक शब्दस्य भव बाहुल्य मालाति श्रुतातीति आ ला क गौरादित्वात् टोप तत स्वार्थे कन्टाप्, पूर्वस्य ह्रस्वत्व। भद्रमरी, मच्छड

भद्रमराली (स० स्त्री०) भद्रमराल गौरादित्वात् टोप। मक्षिकामेद।

भद्रमासार (स० पु०) मगधराजविशेष। पर्याय—श्रेणिक।

भय ( स० ह्री० ) नी ( एत् । पा ३।३।१६ ) इत्यल् 'भया  
दीना मुपस प्यान नपुंसके षतादि निरृत्यर्थम्' इति  
घाञिक्फोष्यादि अपादाने अच् । १ भय हेतु । २ एक  
प्रसिद्ध मनोविचार जो किसी आनेवाली भोषण आपत्ति  
अथवा होनेवाली भारी आगङ्कामे उत्पन्न होता है ।  
पर्याय—दर, तास, भोति, भी, साध्वस, कडास, साधु  
सम्भव, प्रतिभय, आतङ्क, आगङ्का, भिया ।

परमे अनिष्ट सम्भावनाका नाम भय है । यथा—  
'व्याघ्राङ्घ्रिमेति' यहा पर—व्याघ्रसे भय होता है, अर्थात्  
व्याघ्रसे मृत्युकी आगङ्का होती है—इसी अनिष्टागङ्काका  
नाम भय है । इसका लक्षण—

“रीद्रशक्त्या तु जनिता चित्चोषणं यद् भयम्”

( साहित्यद० ३ प० )

रीद्ररसकी शक्तिसे भय उत्पन्न होता है । इससे  
चित्तमें विकलता उत्पन्न होती है ।

भयके उपस्थित होने पर अभीत व्यक्तिको तरह  
रहना चाहिये । भय उपस्थित होनेके पहले भय करना  
उचित नहीं है । ३ भयानक रसका स्थायी भाव भय ।  
४ हुन्नक पुष्प, मालती । ५ बालकोंका वह रोग जो  
उमके कहीं डर जानेके कारण होता है । इस समय  
उसे हृदयहृदकम्प (Palpitation) रोग और साथ साथ  
शारीरिक उत्तापजनित ज्वरका आविर्भाव होता है ।  
६ निम्बुतिके एक पुत्रका नाम । ७ द्वेषके एक पुत्रका  
नाम जो उनकी अभिमति नामक रोगके गर्भसे उत्पन्न  
हुआ था । ८ यन्नराजविशेष । ( ति० ) ९ घोर,  
भीषण ।

भयकर ( स० लि० ) करोतीति क् अच्, भयस्य कर ।  
भयकारक, जिसे देव कर भय लगे ।

भयकर्तृ ( स० लि० ) भयस्य कर्ता । भयकारक, भय  
उत्पन्न करनेवाला ।

भयश्रुत ( स० लि० ) भय करोतीति क् क्तिप् । १ भय  
कारक, भय श्रुतति श्रुत छेदने क्तिप् । २ परमेभयर ।

भयदूर ( स० लि० ) भय करोतीति भय-दृ ( मेरुत्तिभयेपु  
श्रुत्वा पा ३।१।४३ ) इति छच्, मुमुच् । भयजनक, जिसे  
देवसे भय लगे । पर्याय—भीरव, दावण, भीषण,  
भीष्म, घोर, भीम, भयानक, प्रतिभय, भयावह । ( पु० )  
२ दृ द्रुल पक्षी । ३ एक अस्त्रका नाम ।

भयचक्र ( हि० वि० ) भौचर देवो ।

भयजात ( स० ति० ) भयसे उत्पन्न ।

भयडिण्डिम ( स० पु० ) भयाय शत्रुभयजननाय डिण्डिम ।  
प्राचीनकालका एक वाजा जो लडाईमें धजता था ।

भयन ( हि० पु० ) चन्द्रमा ।

भयनातृ ( स० लि० ) भयस्य वाता द-नत् । भयमे  
बचानेगाला ।

भयद ( स० लि० ) भय दा क । भयदानकारी, भय  
उत्पन्न करनेवाला ।

भयदा ( स० स्त्री० ) भूपात्री, भूभायला ।

भयदायिन् ( स० पु० ) भय-दा णिनि । भयदाता, डरायना ।

भयदोष ( स० पु० ) जैनोंके अनुसार एक प्रकारका दोष ।  
यह दोष उस समय लगता है जब मनुष्य अपनी इच्छासे  
नहीं वचिन् लोकापवादके भयसे सामयिक कर्म आदि  
करता है ।

भयद्रुत ( स० लि० ) द्रु वृत्तं रि क भयेन द्रु ता । भोति  
द्वारा पलायित, जो डरके मारे भाग गया हो । पर्याय—  
कान्दिशीक ।

भयनाशन ( स० लि० ) भय नाशयतीति नाशि त्यु । १

भयनिवारक ( पु० ) २ विष्णु ।

भयनाशिन् ( स० लि० ) भय नाशयतीति भय नश णिच्,  
णिनि । १ भयनाशकारक । खिया डीप । २ त्राय  
माणा लता ।

भयप्रद ( स० लि० ) भय प्रददातीति दा-क । भयद, जिसे  
देव कर भय उत्पन्न हो ।

भयप्राप्तण ( स० पु० ) भयने प्राप्तणः सम्पत्तये । वह जो  
डरके मारे अपनेको प्राप्तण यतलाता है ।

भयभञ्जन—रमन्-रहस्य और रमल रहस्यसमूहके प्रणेता ।  
भयभीत ( स० लि० ) भयेन भीत । जिनके मनमें भय  
उत्पन्न हो गया हो, डरा हुआ ।

भयन्नष्ट ( स० लि० ) भयेन नष्ट । भयद्रुत, जो डरके  
मारे भागा हो ।

भयमोचा ( स० लि० ) भय दृष्टानेगाला, डर दूर करने  
वाला ।

भयवर्जिता ( स० स्त्री० ) ध्यवहारमें दो गायोंके बीचको  
वह सीमा जिसे धाधो और प्रतिपादी आपसमें मिल्द

वर ही मान ले और जिसका निर्णय किमी दृष्टिको न करना पडा हो ।

भयवाद ( हि० पु० ) एक ही गोत्र या वंशके लोग, भाइ बन्ध । २ विरादरीका आदमी, सजातीय ।

भयव्यूह ( स० पु० ) भये सति व्यूह । राजाओंका व्यूहभेद । युद्धकालमें भयव्यूह रचना चाहिये, क्योंकि भय उपस्थित होने पर इस व्यूहमें आश्रय ले कर प्राण-रक्षा की जा सकती है । व्यूह देखो ।

भयहरण ( स० लि० ) भयका नाश करनेवाला, भय दूर करनेवाला ।

भयहारी ( हि० वि० ) डर छुड़ानेवाला, डर दूर करनेवाला ।

भया ( स० स्त्री० ) एक राक्षसो जो कालकी बहन और हेतिकी स्त्री थी । विद्युत्केश इसीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था ।

भयाकुल ( स० पु० ) भयसे घाकुल, डरसे घरवाया हुआ ।

भयातिसार ( स० पु० ) अतिसारका एक भेद । इसमें कंठल भयके कारण दस्त आने लगते हैं ।

भयानुद ( स० लि० ) भयानुद, डरसे घबराया हुआ ।

भयानक ( स० पु० ) विभोत्यस्मादिति भो ( शीर्ष मिय । उप् ३८२ ) इति आतक । १ व्याघ्र, बाघ । २ राहु ।

३ शृङ्गारादि आठ रसोंके अन्तर्गत छठा रस । इसमें भीषण दृश्यों ( जैसे—पृथ्वीके हिलने वा फटने, समुद्रमें तूफान आने आदि ) का वर्णन होता है । इसका वर्ण शाम, अधिष्ठाता देवता यम, आलम्बन भयङ्कर दर्शन, उदीपन उसके घोर कर्म और अनुभाव कप, स्वेद, रोमाञ्च आदि माने गये हैं । जुगुप्सा, वेग, संभ्रोह, सत्रास, ग्लानि, दीनता, शङ्का, अपस्मार, भ्रान्ति और मृत्यु आदि इस रसके व्यवभिचारिभाव हैं ।

( लि० ) २ भयङ्कर, डरावना ।

भयापह ( स० पु० ) भयअपहन्तीति हन् ( अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते वा शश१०३ ) इति । १ राजा । ( लि० ) २ भयनाशक ।

भयावह ( स० लि० ) आवहतीति आ वह अच् भयरय । आवह । भयङ्कर, डरावना ।

भयावहा ( स० स्त्री० ) रात्रि, रात ।

भय ( स० क्री० ) भी भावे यत्, वेदे निपातनात् साधु । भय, डर ।

भय्या ( हि० पु० ) भैया दत्तो ।

भर ( स० लि० ) भरतीति भृ पचाद्य च् । १ अतिशय, बहुत । २ भरणकर्त्ता, भरणपोषण करनेवाला । ( पु० )

३ भार, बोझ । ४ सग्राम । ५ दो सी पलका एक परिमाण ।

भर ( हि० पु० ) १ भार, बोझ । २ पुष्टि, मोटाई । ( वि० ) ३ कुल, पूरा, तमाम ।

भर—युक्तप्रदेश, अयोध्या और पश्चिम बङ्गाल वास, निम्नप्रेणीको एक क्षत्रिय जाति । जातितत्त्वविशुगण इस जातिको द्राविडोय शाखाके अन्तर्गत समझते हैं \* । इस जातिके लोग साधारणतः राजभर, भरत वा भरत पुत्र नामसे परिचित होते हैं ।

इस जातिको उत्पत्तिके सम्बन्धमें नाना स्थानोंमें नाना प्रकारको किम्वदन्तिया प्रसिद्ध हैं । सामाजिक और कौलिक आचारादिमें समुन्नत हो कर ये क्रमशः उच्चप्रेणोके हिंदू समझे जाने लगे हैं । कोई कोई कहते हैं, कि ये क्षत्रियराज भरद्वाजके वंशधर हैं । अयोध्या और युद्धप्रदेशके भरोंका कहना है, कि, उनके पूर्वपुत्र्य अयोध्याके पूर्वा जमें राज्य करते थे । अयोध्याके उस

\* अनार आर्य-विशिष्ट इस जातिन किसी समय भारतक्षेत्रमें प्रविष्ट प्राप्त की थी, इसका कोई विशेष प्रमाण नहीं मिलता । पुराणादिमें भी इस भर जातिकी प्रतिष्ठा कोई उल्लेख नहीं है । जातितत्त्वविदोंका अनुमान है कि, यह जाति दलेर्भा द्वारा बर्षिय बरहई ( Burhrai ) वा मिनीनी उबारी ( Ubarai ) हागी । क्रिन्हीं ब्रह्मपुराण-वर्णित जयध्वज वंशजतण भारतीयोंके भयना महामारतोक भीमसेन द्वारा पराजित भर्गजातिको वर्तमान भरजातिना पूर्वपुत्र्य माना है । और कोई कई कहते हैं, कि पार्वतीय भरत ( शबर बर्नर आदि ) जातिते भरजातिका अभ्युदय स्वीकार करते हैं । गेरिंग् सांने लिखा है कि हिन्दूशास्त्रों-म दस्तु और अमुर शब्दसे अनार्य जातिका उल्लेख हुआ है । अनार्य द्वारा विताबित हा कर अयोध्या इतनात गमा और उप वर्णन स्थापन उनाप प्रदेशके इतिहास-वर्णित कृतकृतका पराम्भ और पलायन उसका समयन कर रहा है ।



प्राचीन और प्रसिद्ध सूर्यवंशीय राजाओंका शासन प्रभाव विस्तृत होने पर यहा भरजातिकी आधिपत्य विस्तृत हुआ। सूर्यवंशीय राजा कनकसेनक राजतत्कालमें इस अनार्य भरजातिने हिमालयके पाचनीय निजामसे अतर्तोरण हो कर अयोध्यामें प्रतिष्ठा प्राप्त की। राजा कनकसेन दुर्द्धर्ष भरोचका आक्रमण सह न सके जिससे ये गुजरातकी तरफ भाग गये। उनके साथ हीनवल् क्षत्रिय-सन्तानगण भी नाना स्थानोंमें फैल गये हैं। द्रव्युत्ति और लूट मार आदि इनका प्रधान कार्य है। अपनेमें किसीको धर्मचर्चा करते हुए देखते हैं, तो उसे विशेष लाञ्छित करते हैं। गाजीपुर, बम्बी, मीजापुर, भरोच आदि जिले के दुर्गादिके ध्वंसावशेषसे प्रमाणित होता है, कि इन दुर्द्धर्ष जातिने किसी समय सुदूर विस्तृत युक्तप्रदेशमें आधिपत्य विस्तार किया था। कौशिक राजपूतों द्वारा ये मारजपुरसे भगाये गये थे। विन्ध्याचलके निरुदरर्षी पद्मपुत्रमें इनकी राजधानी थी।

प्रतन्त्रचरित्रगुण केवलमात्र किम्बदन्तियों पर आस्था स्थापन कर भरजातिकी पृथ-प्रतिपति स्वोकार करनेमें सहमत नहीं हैं। नाहुतुदीन गोगीके भारता-क्रमण और कनोज पति जयपालके अध पतनके समय राजपूतजाति पूर्व प्रान्तमें अश्रुयित हुई। उस समय भर लोग राजपूतों से पराजित हुए थे। ये आजमगढ़ और गाजीपुरसे मेनगरी द्वारा, मिजापुर और इलाहा बादके आसपाससे गहरवाडी द्वारा, गोरखपुरसे कौशिकों द्वारा, फैजाबाद और अयोध्यासे बाई तथा भद्रोही और प्रयागके पश्चिमभागसे मोना, बाई, सोनक आदि जातियों द्वारा भगाये गये थे।

इस प्रकारसे भर जातिके अध पतन होनेके बाद समग्र युक्तप्रदेश राजपूतजातिकी विभिन्न श्रेणियों के सरदारोंके शासनाधीन हो गया था। उक्त राजपूतगण

† वर्तमान प्रन्त्रजत्वविद्गण भरजातिकी इस पुरतन गौरव-पात्रोंकी स्तुति करते हैं। परन्तु जो ध्वंसावशेष भरजातिके कीर्तिनाम्न समझे गए थे, अब उनमें बहुतग विभिन्न राजपूतों द्वारा भारतीय प्रमाणित हुए हैं।

'छत्रो' नामसे परिचित हुए। उपर्युक्त घटना परम्परा द्वारा किसी ऐतिहासिक सत्य पर नहीं पड़्या जा सकता। कारण, सिन्धु एक किम्बदन्तीके इस विषयमें और कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

इनमें भरक्षत्र, कनोजिया और राजभर नामक तीन सतन्त्र श्रेणियां हैं। मिर्जापुरी भर भुईहार, राज भर और दुसाद नामक तीन श्रेणियोंमें विभक्त हैं। भुईहार लोग अपनेको उन लब्धप्रतिष्ठ भरराजोंके वंश धर और सूर्यवंशीय राजपूत कहा करते हैं।

ये सगोलमें, अधमा पितृ या मातृ कुलमें विवाह नहीं करते, किन्तु यदि ४ या ५ पीढ़ीमें पिण्ड वाधक न हो, तो ये लोग वृद्धाको कन्याके साथ भी विवाह कर लेते हैं। अपने धर्ममें विवाह करना ही इनको विशेष अभिप्रेत है। आजमगढ़के राजभर वास्तवमें हिंदू हैं। इनके सम्पूर्ण क्रियाकलाप हिंदुओंके समान हैं। ये हिंदू भरणण 'पतंत' कहलाते हैं। निम्नश्रेणीके भरोचों 'तुलित' कहते हैं। पतंतो ने अपने आचारादि द्वारा समाजमें उच्च स्थान प्राप्त किया है, और नूतन लोग शूद्रर पालन जैसे निष्टे ध्यस्तायमें जीवन विताते हैं। उक्त दोनो श्रेणियोंमें परस्पर आदान प्रदान प्रचलित रहने पर भी शूद्रर-ध्यस्तायियोंके साथ उन्नत व्यक्ति अपनी सन्तान का विवाह सम्बन्ध नहीं करते। शूद्रर पालन भर समाजमें नीच समझा जाता है। यदि कोई अविवाहिता बालिका स्वजातीय किसी युवकके साथ अवैध प्रणयसे आसक्त हो, तो जातीय सभा उस कन्याके पितासे क्षुमांना ले कर लडकीको जालि ले लेती है। उस धर्मसे बड़ी कन्याका विवाह निषिद्ध है। यह कन्या समाजमें 'रजस्वला' होनेके कारण निन्दनीय है, उसके साथ कोई भी

† कागी साक्ष्यका घटना है कि पूराभिमुणी विशाल राज-पूतवाहिनी नागवंशीय राजाओं द्वारा पराजित हुई थी। जो क्षत्री भय उक्त प्रदेशमें प्रचलित हैं वे भरके विषय और कोई नहीं हो सकते। भारतमें आर्योंके प्रभावने समय इनका प्रभाव घट गया था। अब विद्वान इनके गन्ध साधक्यत अनुमान करते हैं, कि ये भारतीय काल प्रथम परतन्त्रित होने। विन्ध्याचलके कैदूर अधित्यकायासा अनार्यजातिक साथ इत्या बहुत उक्त गुणधर्म हैं।

सम्बन्ध करनेको राजी नहीं होता। साधारणतः ५ या ७ वर्षकी कन्या ही विवाह योग्य समझी जाती है।

पहली स्त्रीके रहते हुए दूसरा विवाह करना निषिद्ध नहीं है। परन्तु बन्ध्यापि कारण बिना दिखाये वह विवाह ब्राह्म नहीं होता। यदि कोई स्त्री अपनी इच्छासे पतिको दूसरा स्त्रीके लिए अनुमति दे तो फिर उसे घरका कोई काम नहीं करना पड़ता, सपत्नी ही सब करनेके लिए बाध्य है। दूसरी स्त्री बही हो सकती है, जो पहली स्त्रीकी रिश्तेमें छोटी बहन या वैसी ही कोई लगती हो। त्रिभंग्य चाहे तो सगाईके प्रधानुसार विवाह कर सकते हैं। सामाजिक सभी विषयोंका फैसला पञ्चायत सभाके प्रतिनिधि स्त्रीके द्वारा होता है। स्त्री अथवा पतिके स्वास्थ्यिक शीर्षल्य, शरारत रोग वा व्यभिचार आदि कारणों पर विवाह बन्धन तोड़ा जा सकता है, परन्तु उसमें भी पञ्चायत सभाकी अनुमतिकी आवश्यकता है।

विवाहमें घरके मामा ही घटक बनते हैं। कन्याका पिता १) ४० दे कर वरका मुह देखता और विवाह पत्र करता है। 'पानीके दिन' कन्याका पिता स्त्रजनसे परिपूत हो कर वरके घर जाता है और आगनके चौंरमें वरके सामने बैठ कर वह अपन जमाईके मस्तक पर चावल और दही लगाता है। ब्राह्मणके द्वारा शुभ दिनका निश्चय होने पर उस दिन वर और कन्याके घर विवाह मञ्च बनता है। विवाहके पहले दम्पतिकी मङ्गलकामानके लिए अग्रयान देव, पाच पीर और फूलमतीदेवीकी पूजा होती है। कन्याके घर पर पठु चते ही पुरोहित पहले गौरी और शङ्करकी पूजा करता है। उसके बाद वर और कन्याको (गाठे बंध जानेके बाद) विवाह मञ्चस्थ मध्य दण्डके चारों ओर पाच बार प्रदक्षिण कराया जाता है।

मिस्री स्त्रीके गर्भवती होने पर, घरकी मालकिन उसने सिर पर पैसा और चावल फेरती हैं तथा प्रसव अच्छे तरह हो इसके लिए फूलमतीदेवी और प्राय्य देवताकी पूजा करती हैं। प्रसविके ६३ दिन छोटी वा पशुपूजा और १२वें दिन अगीचान्त होता है। ५वें या ६३वें वर्ष वर्षावेध होनेके बाद बालकको समाजके समस्त नियमोंका पालन और भोज्यादिवा भी विचार करना पड़ता है।

ये विसूचिका, चेचक या अविवाहित दशामें मृत्यु होने पर मुर्देकी जलाते हैं, परन्तु अन्य अरस्थाओंमें गाडते या पानीमें बहा देते हैं। ६ महीनेके भीतर शोचक प्रेतोंके उद्देशसे प्रतिष्ठित बना कर उनकी अन्त्येष्टि क्रिया सपहित की जाती है। इनमें मृताशौच १० दिन तक माना जाता है। अशौचके प्रधान अधिकारीको उक्त दशों दिन कुण्ठण द्वारा पानी और मृतकी प्रेतात्माके लिए पिण्डदान देना पड़ता है। दशवें दिन क्षीरकमके बाद पिण्डदान और श्राद्ध होता है। उक्त दिन ब्राह्मणको अपक्व दूध और छाति कुटुम्बादिनी भोज दिया जाता है।

पहले ही लिया जा चुका है कि ये प्रायः सभी कार्योंमें अग्रयानदेव, फूलमतीदेवी और पाच पीरका पूजा करते हैं। इनके मित्रा ये कालिका और फाशीदास बाबाको पूजा। भी विशेष धूमधामके साथ करते हैं। फगुआ, दशहरा, दिवाली, पिचडी और तीज आदि इनके प्रधान पत्र हैं। ग्रामस्थ घट रक्षके नीचे प्रेतयोनिकी पूजामें ये लोग शून्करकी बलि चढ़ाते हैं। कोई कोई गयाजा जा कर पिण्डदान करने हैं। प्रत्येक पीपलके पेडनी नारायणकी चासभूमि समझ कर ये उसकी पूजा करते हैं और स्त्रिया पीपलके पेडकी लाज मारती हैं।

पश्चिम-बङ्गाल और छोटा नागपुरके भर प्रधानतः वृषिकी होते हैं। बहुतसे पञ्चकोट (पचेट) राज सरकारमें कार्य करते हैं। इनमें मघया और बङ्गाली नामके दो धोक हैं, जिनका परस्परमें विवाहादि सम्बन्ध नहीं है। लगभग सभी विषयोंमें ये हिन्दुआना अनुकरण करना सीप गये हैं। इनमें बाल्यविवाह प्रचलित है, परन्तु अरस्थाके भेदसे वयस्था कन्याका विवाह भी ब्राह्म है। विधवा विवाह विलुप्त नहीं होता। मृतदेहका दाहणमें और १३वें दिन श्राद्ध आदि हिन्दुओंकी प्रवृत्ति के अनुसार होता है। पचेट राजसरकारमें कार्य ग्रहण कर ये समाजमें बहुत उन्नत हो गये हैं। मानभूममें ये तस्वीली और हलवाथ्योंकी श्रेणीमें गिने जाते हैं। उच्च श्रेणीके हिन्दूमाल इनके हाथका पानी पीते हैं।

भरई (हिं० पु०) भरदून दगो।

भरक (हिं० पु०) पत्राव और बङ्गालमें अधिकतासे मिलने

पाला एक प्रकारका पत्तों। यह अक्सर इन्ड्रुलोंमें हो रहता है और भरनेला। सभी पत्तों को तोन भी एक साथ दियाईं देते हैं। मासके लिये इसका गिहार किया जाता है। (खी०) २ मडक दवा।

भरका (हि० पु०) १ यह अमीन निम्नकी मट्टी काली और चिकनी हो। सुराने पर यह सफेद और भुत्भुरी हो जाती है। यह प्रायः जोती नहीं जाती। २ मख दवा।

भरकी (हि० खी०) भरना देखो।

भरकूट (हि० पु०) मस्तक, माथा।

भरके (हि० अर्थ०) एक रूबेन जो पालकी होनेवाले फहार नाली आदिमें बच कर चलनेके लिये करते हैं।

भरचिद्यो (हि० खी०) एक प्रकारको घास जो हिमार प्रान्तमें होती है। वर्षाऋतुमें यह अधिकतामें उगती है। पशु इसे घट्टे चाबसे खाते हैं और यह पुष्टिकारक भी है।

भरट (स० पु०) विभक्तानि भू (जी०दा०च्युत्तमदिरमिनभ-भन्त्य इत्थिति। उण् ४।१०४) इति अटच्। १ वृम्भ-कार, कुम्हार। २ सेयक, नौकर।

भरटक (स० पु०) सन्यासि सम्प्रदायत्रिवेद।

भरटिक (स० लि०) भरटेन हरति भन्वादित्वाद् घट्त् (पा ४।४।१६) १ भरट द्वारा हरणकारी। गिवा टोप। २ भरटिकी।

भरण (स० खी०) त्रियतेऽनेनेति भू करणे ण्युट्। १ वेतन, तनप्याह। भू भावे ल्युट्। २ पोषण, पालन। ३ भरणी नक्षत्र। ४ किसीके बदलेमें जो कुछ दिया जाय, भरती।

भरणी (स० खी०) भरण-भारितादित्वात् णीप्। १ पोषण-रत्ता। २ अश्विनो आदि सप्तार्यस नक्षत्रोंमेंसे द्वितीय नक्षत्र। पर्याय—यमदेवत। (हम) इस नक्षत्र का अधिष्ठात्री देवता यम है। इसकी आकृति बिक्रोण है, और तीन कोणोंमें तीन शीथ्यमान तारका हैं।

“तारकाशयमिते बिक्रोणके मन्त्रे दिविपदधनो यो।

पद्भारिग शिष्या कुन्नीरत कायकादि मुत्तम ग्न्का कता ॥”

(कालिदास-वृत्त रावित्रन्मत्त)

यह नक्षत्र उग्रगण और अधोमुग्रगणोंने अन्तर्गत है। शतपदचन्द्रानुसार नामकरणके स्थानमें इस नक्षत्रमें प्रथमादि चार पदोंमें लि, लृ, ले, लो इत्यादि अक्षर होंगे।

इस नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मेघराजि और शुक्रकी दशा होती है। यह व्यक्ति सर्वदा धान्यादि घरनुके प्राय विक्रयमें नियुक्त नर रत्नभाज, शीर्षजरीर सम्पन्न, उत्तम पोषवान्, विद्वेजवासी और वैरपक्ष विजयो हुआ करता है। (काशिकभाष)

भरणीभू (स० पु०) भरणी भूकृत्पत्तित्वात् यस्य। राहुग्रह।

भरणीत्र (स० लि०) भू कर्मणि अनौचर्। भरणयोग्य, पालने पोसनेके लायक।

भरण्ड (स० पु०) विभक्तानि भू (अणुण्डश्च भू ष्ट्। उण् ३।१२८) १ ग्यामी, मालिक। २ भूपाल, राजा। ३ वृष, बैल। ४ भू, वृष्टयो। ५ दृष्टि, कौड।

भरण्य (स० खी०) भरणे ग्नाथु (त्रिण् णथु। पा ४।४।१८) इति यत्। १ मृत्य, दाम। २ वेतन, तनप्याह।

भरण्यभुज् (स० लि०) भरण्य वेतन भुनक्ति इति भुज्-विभप्। कर्मन्तर, वह जो मजदूरी ले कर काम करता हो।

भरण्या (स० खी०) भरण्य अजात्तित्वात् टाप्। वेतन, तनप्याह।

भरण्याहा (स० खी०) भरण्या ब्राह्मण्यस्या। पच पु'पी, रामदुती।

भरण्यु (स० पु०) कण्ठादि गणोय भरण्य धातु यादृत्काल् उण्। १ शरन्त्यु, मंत्र। २ मित्त। ३ अर्ति। ४ इन्द्र। ५ ईश्वर। ६ वृष, बैल।

भरत (स० पु०) विभक्तिं स्वाङ्गमिति विभक्तिं लोका-मिति वा (भू-भूरसिक्तीति। उण् ३।११०) इति अतच्। १ नाट्यशास्त्र। २ मुनिविदेव। ये अन्तरारि शारङ्गोंके उष्टिर्भक्तं थे। भरतरूप शिष्य तरपेदमित्यण्, अणोत्तुर्।

३ गट्। ४ रामचन्द्रजोंके छोटे भाह। ५ ह्युमन्तरपे पुत्र। ६ शरत्। ७ तन्तुयायु, जुटादा। ८ शैल, तैल।

६ भरतात्मज। दुष्मन्तराजपुत्र भरतके पयाय - शाबुन्त लेप, दीभन्ति, मय'दमन। १० यहिपुत्रमेद। ११ भीत्य प्रतुके ष्य पुत्रश्च नाम। १२ ब्राह्मण जीयिसहमेद।

१३। प्रवित्र्।

भरत (स० पु०) केश्योके गर्भंसे उत्पन्न राधा दशमके पुत्र। रामायणके पटनेसे मालुम होता है कि

अपुत्रक राजा दशरथने वशिष्ठ के परामर्शानुसार पुत्रोत्पत्ति यज्ञ कराया। लोमपादके पुत्र ऋष्यशृङ्ग इस यज्ञमें अध्वर्यु बने थे। यज्ञ समाप्त होने पर स्वयं अग्निदेवने वह्निहृदसे आविर्भूत हो कर दशरथके हाथमें त्वोर दी, जिसे राजाने अपनी रानियोंमें बांट दिया।

उस दौरको या कर कौशल्या देवीने रामचन्द्रको, कैकयीने भरतको और सुमित्राने लक्ष्मण और शत्रुघ्नको प्रसन्न किया। भरतने मोनलम्न और पुथ्यानक्षत्रमें तथा लक्ष्मण और शत्रुघ्नने कर्कलम्न और अश्लेषानक्षत्रमें जन्म ग्रहण किया। लक्ष्मणके कनिष्ठ भ्राता शत्रुघ्न भरतके अति शय प्रिय थे। भरत अपनी ननसारमें रहते थे। कुग ध्वजकी कन्या माण्डवोके साथ उनका विवाह हुआ। विवाहके बाद भरत शत्रुघ्नके साथ पुन ननसार चले गये। रामके पितृसत्य पालनार्थ वनवास करने पर पुत्र-शोकमें दशरथकी मृत्यु हो गई। उस समय भरतको नन सारमें अत्यन्त दुःख प्राप्त हुआ। बादमें अयोध्यामें दूत गया और वह भरतको ले आया। भरतने अयोध्या आ कर पिताके ऋतुर्धर्मदेहि कार्य सम्पन्न किये। कैकयीके आदेशसे राम निर्वासित हुए हैं, सुन कर भरतने माता कैकयीका अत्यन्त तिरस्कार किया। विमातृ तन्त्र होने पर भी ज्येष्ठ भ्राता रामचन्द्रके प्रति उनकी अचला भक्ति थी। उन्नी प्रत्यभक्तिके वश ही अपने ज्येष्ठ भ्राता रामचन्द्रको वापस लानेके लिए चित्तकूट पर्वत पर पहुँचे। वहाँ चराधारी रामचन्द्रकी देव कर वे जोरुमें गृह्यमान हो गये और रामचन्द्रने अयोध्या लौट चलनेके लिए उन्होंने बहुत अनुनय विनय की। रामचन्द्रने मृत्युभङ्ग कर लौटना किसी प्रकार भी स्वीकार नहीं किया। तब भरतने वहाने रामचन्द्रकी पादुका ला कर प्रह्लाचरोके वेशमें नन्दोप्राणमें रह कर राज्यशासन किया था। चौदह वर्ष बाद राम चन्द्रके अयोध्या लौटने पर इन्होंने ज्येष्ठ भ्राता रामचन्द्र को राज्य लौटा दिया।

भरतके तक्ष और पुंकर नामके दो पुत्र थे। भरतने अपने दोनों पुत्रोंको साथ ले कर सुवृक्ष गन्धर्वराज शैल्यसे युद्ध कर सिन्धुनदके उत्तरस्थित गन्धर्वदेश जय किया और उस प्रदेशको दो भागोंमें विभक्त कर अपने दोनों पुत्रोंको बांट दिया। पुत्रोंने तक्षशिला और

पुंकरावती नामक दो नगर स्थापित किये और वहीं रहने लगे। पौत्रे भरतने रामचन्द्रके साथ स्वर्गारोहण किया। रामचन्द्र देवा। (रामायण, विष्णुपु०, भाग०)

जैनमतानुसार भरत जैनधर्मके परमभक्त थे और जोवनके शेषभागमें उन्होंने दिग्गम्बरी दीक्षा ग्रहण की थी। भरत और रामचन्द्रके मोक्षकालमें बहुत अन्तर है।

२ ऋषभदेवके पुत्र। भागवतमें लिखा है कि ये विष्णुभक्ति परायण थे। राजा हो कर इन्होंने विश्वरूपतामजा पञ्चजनाके साथ विवाह किया था। उनके गभसे सुमति, राघूभूत, सुदर्शन, आचरण और धूमकेतु नामक पांच पुत्र उत्पन्न हुए थे। राजाने पुत्रोंको राज्य बांट कर स्वयं तपस्या धारण की थी। एक दिन वे नदीके तट पर स्नान करनेके बाद सध्याचन्द्रनादि कर रहे थे, कि इतनेमें वहाँ एक आसनप्रसन्ना हरिणी आ कर जलपान करने लगी। मृगोंको देख कर नदी तटपत्तों परण्यस्थित सिंह गर्जन करने लगा। सिंहकी गर्जना सुन कर मृगों नेहासे भागी और भय पच शीघ्रताके धारण फिसल कर गिर पड़ी, जिससे उसकी उली क्षण मृत्यु हो गई और गर्भम्रष्ट हो गया। भरत उस मृगशिशुको अपने आश्रममें ले आये और उसे पालने लगे। मायाका कैसा आश्चर्य प्रमाय है। नि सङ्ग तापस भी मृगके मोहमें कमश तपको भूल गये और मृगकी चिन्ता करते करते मृत्युको प्राप्त हुए। दूसरे जन्ममें वे मृग हुए, किन्तु भगवत् प्रसादसे जातिस्मरण हो जानेसे कालक्षर पर्वत पर पुलहाश्रममें देह त्याग किया। जन्मान्तरमें वे आङ्गिरसगोत्र और प्राह्ल-कुलमें उत्पन्न हुए थे। उम जन्ममें उनके ६ वीमात्रेय अप्रज और एक सहोदरा भगिनी थी। ये लोकसङ्ग-निर्वाहित रहनेके अभिप्रायसे जडवत् रहते थे। कालान्तरमें इनके मातापिताको मृत्यु हुई। इनके साथ किसीका कैसा ही व्यवहार क्यों न हो, वे उस पर ध्यान नहीं देते थे। इनकी भौताश्या इनका बहुत अनादर करती थी। वहाँ तक कि अन्धाय तक खिला देती थीं। अतमें उनके ज्येष्ठ भ्राताने उनकी स्त्रीके कर्ह अनुसार उन्हें रोत रचानेका काम सौंप दिया।

एक दिन चौरराजने पुत्रकी कामनामें तरपशुश्रुति देने का सकल किया। बलि देनेके लिए जिन मनुष्यका लाया गया था वह भाग गया, निम्नसे उनके अनुचर जड़रूपी भरतको एकट लाये। देवी भद्रकाली इस बातमें अन्यत कुपित हुई और उन्होंने चौर घनाका ध्वज कर डाला। एक दिन निम्नु सतीगौरोंके राजा ररुगण ह्नुपती के किनारे उपस्थित हुए। उनके शिविकायाहर्षीमेंसे एक बोमार पड गया, इससे उन्होंने भरतको हृष्टपुष्ट देण कर उन्हे ही उम कार्यमें नियुक्त कर दिया। भरत शिविका बहनके समय, पैरोंके नीचे टब कर कहीं जाय न मर जाय इस ध्यासे बहुत ही साधधानीसे चलने लगे आर बीच बीचमें सामने आये हुए जीकोंको हाथसे हटाने लगे। यह देख कर राजाने उनका उपहास किया। राजाके उपहास पर कुटुम्बाना वे कर उन्होंने उन्हे तत्परोपदेश दिया। राजाने उनके प्रति परमभक्तिमान हो कर उन्हे छोड दिया। इससे बाद वे देण पर्यटनके लिए निकले थे और कुटु दिन बाद मुक्ति प्राप्त की थी। (भाग०) जहभरत दलो।

३ जैनमतानुसार आदि तीर्थान्तर ऋष्यमनाथ भगवान् के पुत्र। ये छ सण्डके अधिपति चक्रवर्ती थे। समारसे परम निरक्त रहते थे। भरतचक्रवर्ती दला।

४ शकुन्तलाके गर्भसे उत्पन्न दुष्मन्तके पुत्र। महाभारतमें लिखा है कि.—चन्द्रयज्ञीय महाराजा दुष्मन्तने कण्वाश्रममें शकुन्तलाके साथ गन्धर्व विवाह किया था। उस समय शकुन्तला गभवती हुई थीं। उस गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। महर्षि कण्वने इस बालकका सर्वदमन नाम रण कर शकुन्तलाके साथ उसे राजा दुष्मन्तके पास भेज दिया। शकुन्तलाने राजाके समझ मशूर्ण पृत्तात कह सुनाया, पर राजाको विस्मृतिवश कोई भी बात याद नहीं आई। उन्होंने पुत्रसहित शकुन्तलाका वापस कर दिया। उस समय यहाँ यह श्रवणाणी हुई, "राजन्! शकुन्तलाने जो कुछ कहा है वह सत्य है, आर हमारे कहे अनुसार इस वादवका भरणपोरण करें।" इस वाक्याश्रयानामें वादवका नाम भरत पड गया। महाराजा दुष्मन्तने किन परती और पुत्रको गृहण कर मियतम भरतकी वापरायसे अभिपिन किया।

राजा भरत ममस्त राजाओंको परास्त कर सार्वभौम राजन हुए। इन्होंने यमुना-तीर पर एक मी, सरस्वती तीर पर तीन सौ और गङ्गातीर पर चार सौ अश्वमेध यज्ञका अनुष्ठान किया। पदचात् पुन महारण अश्वमेध और सौ राजसूययज्ञ सम्पन्न कर अग्निष्टोम, अतिरात्र, उष्य, विश्वजिन् और हस्तारों वाजपेय यज्ञ सम्पन्न किये थे। उनके नामसे भारतवर्षका नामकरण हुआ था। यह भारतीयीति भरतने ही हुई है भरतका चशधर गण भारत नामसे प्रसिद्ध हुए थे। वे भगवान् विष्णुके अश्वमें आविर्भूत हुए थे। विदर्भराजकी तीन कन्याओंके साथ उनका विवाह हुआ था इन्होंने वृहस्पतिके तनय भरद्वाजका पालन किया था।

(भारत १।७३ ३०, विष्णु०, भाग०)

भरत—मेवाडके एक राजा। मेवाडके राजा समरसिंहके ज्ञाता सूर्यमहलके पुत्र। समरसिंहकी मृत्यु होने पर उन के पुत्र कर्ण पितृ सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। कर्णके सिंहासन पर बैठने पर अगत शत्रुके पठयन्त्रमें पड कर चित्तोर छोड सिन्धुदेशकी चले गये। यहा पडु बनेके कुछ दिन बाद ही उन्हे मुसलमान राजासे आरोर नगर प्राप्त हुआ। इन्होंने पुगल्की मद्रियशायी किसी राजपुत्राको के साथ पाणिग्रहण किया। उसी स्त्रीके गर्भमें राहुप नामक उनके एक पुत्र हुआ था, जो ननसालमें रहता था।

इधर राजा कर्ण प्रियतम ज्ञाता भरके देशान्तर चले जाने और पुत्र माहुपको अवोष्यताको विचारते हुए बड़े कष्टसे कालयापन करने लगे और थोड़े ही समय बाद उनका देहान्त हो गया।

आलोरके शाणिसुर वशाय मन्द्ारने कर्णकी कन्या का पाणिग्रहण किया था। उस कन्याके गर्भसे रणधवल नामक एक पुत्र हुआ। आलोर पतिने जगन्धर विश्वास घातकता करके चित्तोरके प्रधान गिहलोटीको मार कर पहाके सिंहासन पर अरने पुत्र रणधवलकी विवाह दिया। कर्णके पुत्र माहुप अपने सरसाधिकारको रक्षामें मगधा अमरगा गे। विनाका राज्य अन्य प्लिकियों द्वारा अधिग्रहण हुआ, परन्तु फिर भी उन्हे उसके उद्धारार्थ कुछ भी कोशिश नहीं की। कण्वारा सिंहासन चौहान कुलके हस्त

गत हो गया, वषाका कीर्तिस्तम्भ उन्मूलित प्राय हो चुका, आश्चर्य नहीं कि कुछ दिनोंमें चित्तोरसे पप्पा रावलका नाम तक मिट जाय, यह चिन्ता एक उन्नतमना कुलपाठका चार्म ( राजभाट ) के हृदयमें समुत्थित हुई। उन्होंने इस अनिष्टपातके प्रतिविधानके लिए भरतके पास जा कर उन्हें सारा वृत्तान्त कह सुनाया। अपने पूर्वपुरुषोंके प्रनष्ट राज्य और गौरवके उद्धारके लिए भरत सिंधुदेशीय सेना-दलके साथ मेवाडराज्यकी तरफ अग्रसर हुए। चित्तोरेश्वरके अधोनस्थ समस्त सरदारगण इस शुभ समाचारको सुन कर बड़े आनन्दके साथ अपने उद्धार कर्त्ताको प्रोद्भूत पताकाके नीचे आ इकट्ठे हुए। पत्नी नामके स्थानमें प्रतिद्वन्द्वी गणगुह्व शीर्योंको युद्धमें पराजित कर भरतने सिंहासन अधिकार किया।

इस घटनाके कुछ दिन बाद भरतके पुत्र राहुप चित्तोरके सिंहासन पर अघिष्ठित हुए। राज्याभिषिक्त होने के कुछ ही दिन बाद नामौर नामक स्थानमें यवनसेना पति समसुद्दीनके साथ उनका युद्ध हुआ, जिसमें वे पराजित हो गये। राहुपके राजत्वकालमें उनके राज्यमें दो प्रधानपटनाए हुई थी। इससे पहले, मेवाडके राजपूतगण गिहोट कहलाते थे, परन्तु अबसे वे इस नामके बदले सिसोदिया नामसे प्रसिद्ध हुए। इसके निवा वषाके व शघरोंकी उपाधि 'रावल' के बदले "राणा" प्रचलित हुई।

राहुपने अत्यन्त दक्षताके साथ ३८ वर्ष तक अपने राज्यका शासन किया था। राहुप दखे।

भरत—एक टीकाकार। इन्होंने अपने ज्येष्ठ रामचन्द्र एत समरसार और समरसार-स ग्रह प्रथमी टीकाए लिखे हैं।

भरत ( हि० खी० ) मालगुजारी। इस शब्दका प्रयोग दोहोपासी करते हैं।

भरतभाचार्य—एक सङ्गीताचार्य। इन्होंने नाट्यशास्त्र या भरतशास्त्र और सङ्गीतनृत्यशास्त्र नामके दो ग्रंथ रचे हैं।

भरतखण्ड (स० खी०) १ भारतवर्षके अतर्गत कुमारिका खण्ड। २ राजा भरतके किए हुए पृथ्वीके नौ खण्डोंमेंसे एक खण्ड, भारतवर्ष, हिन्दुस्तान।

भरतगड—बम्बई प्रदेसके रत्नगिरा जिलेका एक गिरि दुर्ग। यह वालवलि खाडके दक्षिणी किनारे अवस्थित है। इस दुर्गके शिपर पर पडा होनेसे मसूरका मालयन ग्राम दृष्टिगोचर होता है। गडके चारों ओर जो प्राकार है वह १८ फुट ऊँचा और ५ फुट मोटा है। उसके उत्तर पूर्व और दक्षिण पश्चिम कोणमें दो बर्ज हैं। पतद्रिज गडके वहि प्राचारके ऊपर प्राय १० अर्द्धगोलाकार बर्ज देखने में आता है। यह प्राचौर भी चौडाईमें १२ फुट है। प्राचीरके सामनेमें एक वृहत लची चौड़ी खाई है।

भरतद्वादशाह (स० पु०) भरत एत द्वादशाहसाध्य यज्ञभेद। कात्यायन श्रौतसूत्रमें इस यज्ञका विधान विशेष रूपसे लिखा है। इस यज्ञमें सभी प्रकारके अग्निष्टोम करने होते हैं।

"धर्वाग्निन्द्येम भरतद्वादशाह" (कात्या० श्रौ० २५।५।२२)

भरतपक्षी—स्वनाम प्रसिद्ध पक्षि जाति विशेष ( *Alauda arvensis* )। विज्ञानविदोंने इस जातिको ( *Alauda* ) श्रेणीमें शामिल किया है। साधारणतः धानके रेतोंमें इस जातिके पक्षी विचरण करते हैं। टपकोंसे भगाये जाने पर यह जितना ही ऊँचा ऊपर उठता है उतना ही उसकी सुमधुर कलध्वनि मानवके श्रुतिगोचर होती है। यह गीतध्वनि मानव हृदयको मोहित कर डालती है।

इङ्ग्लैण्डमें इस जातिके पक्षीको Sky Lark ( *Alauda arvensis* ), फ्रान्समें *Alouette*, इटलीमें *Lodola*, जर्मनीमें *Feld Lerche*, स्काटलैण्डमें—*Lark*, पश्चिम

भारतमें—भरत, भरत, बगालमें भरई, तैलङ्गमें बरतपिट्ट, तामिलमें मनव यडि, ब्रह्ममें त्रि लोन और सिंहलमें गोम रिट कहते हैं। सारे भारत साम्राज्य, सिंहल, अन्दमन और निकोबर द्वीप, हिमालय पर्वत और यूरोपमें जगह जगह इस जातिके पक्षी देखनेमें आते हैं। स्थान विशेषमें उनके शरीरका रंग भी पलट जाता है।

भारतमें सब जगह घेंगाखसे आषाढ मासमें और जह्ममें पीपसे चैत्रमासमें मादा एक बारमें प्रायः ४ या ५ अंडे देती है। इस समय घे मट्टीके ऊपर घासके घोंसले बनाती है। इङ्ग्लैण्डके भी *Alauda arvensis* पक्षियोंके अंडे पीलापन लिये सफेद और धूसर बिन्दुयुक्त होते हैं।

ये सब दूल् बधि कर रहता पमन्द करने हैं। युरो-  
पाय 'स्फार्-लार्' में जो सब गुण पाये जाते हैं, भारतके  
भरतपुरकीमें उन सब गुणोंका धमाय नहीं है। शीतकालमें  
घासके रीतेमें ये अन्नकर पाये जाते हैं। ये अनाजके  
वन और कौड़े मकोड़े को गाता बहुत पमन्द करते हैं।  
भरतपुरक (स० पु०) मन्तव्य नाट्यशास्त्रप्रणेता पुत्रक ।  
नाटकमें नाट्य करनेवाला पुत्रक, नट ।

भरतपुर—राजपुतानेके अन्तर्गत एक हिन्दूराज्य । यह अक्षा०  
२६ ४३' से २७ ५०' उ० और देशा० ७६ ५३' से ७७ ४६'  
पूर्वके मध्य विस्तृत है। भूपरिमाण १६४२ वर्ग मील है।  
इसके उत्तरमें झरूरेजाधिरत गुरुगाय जिला, पूर्वमें मथुरा  
और भागरा, दक्षिणमें ढोलपुर, कदौली और जयपुरराज्य  
तथा पश्चिममें अल्पारप्रदेश है।

समुद्रपृष्ठमे इस स्थानकी ऊँचाई प्राय ६०० फुट है  
सब जगह प्रायः समतल है, केवल उत्तर, दक्षिण, पूर्व  
और पश्चिम मोमान्तदेशमें गण्डमालाके विराजित रहने  
से देशका प्राकृतिक सौन्दर्य देखते ही बन आता है। सारा  
स्थान पल्लिमय होने पर भी यहाँ वनमालाका अभाव नहीं  
है। यह पल्लिमय मट्टी कठिन और सुखी है तथा कहीं  
कहीं मरुभूमि सहज बालुकाराजिसे परिपूर्ण है। देशीय  
अधिवासियोंके चलनेसे ऐसे स्थानमें भी प्रचुर जम्ब्यादि  
उत्पन्न होता है। पृष्टिके समय बाद इनकी उमड़ आती  
है, कि आस पासके निम्नतर स्थान जलमग्न हो जाते हैं।

भरतपुर, फिरोजपुर, फलवार, गोपालगढ और  
पहाडी आदि स्थानोंके निम्नतरनीं उत्तर दक्षिणमें विस्तृत  
गिरिमाताके कई एक श्रृङ्ग बहुत उन्नत हैं। कालापहाड  
नामक पर्यतका आलिपुर शिगर (१३५१ फुट) भरतपुर  
में सबसे ऊँचा है। अलावा इसके अन्नारका छपरा  
१२०० फुट, दमदमा १२१५, रमिया १०५६, मघोना  
७१४ और उपराष्ट्र ८१७ फुट ऊँचा है। उपरामें  
धनी पहाडपुरका विषशत पत्थर अवस्थित है।

यहाँके पथनों पर शृङ्गनिर्माणयोग्य परधरके अलावा अन्य  
कौंसे भी मूल्यवान परधर नहीं हैं। मुगलवादशाहोंके  
भागरा, दिल्ली और फतेपुर सिक्खोंके वीरसन्तम तथा  
मथुरा, दोग और भरतपुरकी ब्रह्मणिकादि यहाँके सश्रुत  
मन्तर स्तम्भसे बर्णित हैं।

इस राज्यमें ऐसी एक भी नदी नहीं जिसमें नाव  
आ जा सके। बाणगङ्गा या उच्छान्, रूपरेल, गम्भीरा  
और काफन्द नामक नदी प्रधान हैं। जब कभी इन नदियोंमें  
बाढ आ जातो है, उस समय भी पैदल पार कर सकते हैं।  
बाणगङ्गानदी भरतपुरके मध्य हो कर बह गई है। इस  
राज्यमें ७ शहर और १२६५ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या  
साढ़े छ लाखके करीब है जिनमेंसे सैंकड़ें पीछे ८१  
हिंदू १८ मुसलमान और शेषमें अन्यान्य जातियां हैं।  
यहाँकी भाषा मग्न है।

इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि यहाँ एक समय  
जाट लोगो ने अपना आधिपत्य फैलाया था। किन्तु  
यथार्थमें किस समयसे उन्हीं ने यहाँका शासनादृष्ट  
धारण किया था इसका कोई विशेष उल्लेख नहीं मिलता।  
फिरिस्तामें लिखा है, कि गजनीपति महमूदके १०२६ ई०में  
गुजरातसे लौटते समय जाट दलने उन पर चढ़ाई कर दी।  
१३६७ ई०में दिल्ली आक्रमणकालमें तैमूरलङ्गे जाटस्वु-  
गणके साथ युद्ध किया। इस युद्धमें जाट लोग दल-  
बल समेत मारे गये। १५६६ ई०में जाट लोगोंने मुगल  
सम्राट् बाबरको पञ्जाबप्रदेशमें तग तग कर दिया। जाट  
सरदारोंके ऐसे उपद्रवसे उद्यत हो कर मुगल सम्राटने  
फतेह शासनसे उन्हें दमन किया था। किन्तु औरङ्गजेब  
को मृत्युके बाद जय राज्यमें विज्ज्य पडा हुआ, तब  
जाट लोगोंने पुन अपना मानक उठाया। इस समय जाट  
सरदार चूडामनने मुगल सम्राट् आलमगोरके दक्षि  
णात्यगामी सेनादलको टूट कर मोटी रकम १५६७ को।  
उस रकमसे घे धुन, मिगामिनिया और भरतपुरमें दुर्ग  
बना कर दलबल समेत आत्मरक्षा करनेको प्रस्तुत हुए।  
उनकी इस प्रशस्ती धीरता पर प्रसन्न हो कर जाट  
लोगोंने उन्हें दलपति बनाया। उनके यज्ञधर्मने राजाकी  
उपाधिमें भूषित हो भरतपुर राज्यका शासन किया था।

चूडामनके भाई बदनमिहकी प्रेरणासे जाटदलने  
चूडामनका प्रभुत्व त्याग दिया। उन लोगोंकी सहायता  
से बदनमिहने 'ठापुर'को उपाधि ग्रहण कर दोग नगरमें  
स्वतन्त्र शासपाट बनाया। १७२० ई०में सम्राट् मद्रन्द्  
जाह और कुनब उठ मुक वीर अथउता मौके युद्धमें  
चूडामन मारे गये। पीछे उनके लडके बदनमिह भारत  
पुरके सिंहासन पर बैठे।

वर्गसिंहके पुत्र सूर्यमल्लके राजत्वकालमें भरतपुरका वीरत्न गौरव चारो ओर फैल गया था। सूर्यमल्लने जयपुर राज्यकी सहायतासे दीगराज्य पर अधिभार नमाया था।

१७३० ई०से भरतपुर दुर्गकी दुर्भेद्यता और जाट सैनिकोंकी वीरत्व काहिनी प्रियोषित होती आ रही है। १७३४ ई०में सूर्यमल्लने अकेले वजीर गाजोउद्दीन, महा राट्र और जयपुरराजकी सेनावाहिनीको पराजित शक्तिकी परास्त किया था। इस युद्धमें फिरसे जब उन्होंने अपने अधिक बलक्षयकी सम्भावना देयी, तब ७ लाख रुपये दे कर मेल कर लिया। इसके ६ वर्ष बाद उन्होंने महा राट्र सेनापति शिवदास भावके साथ मिल कर अहमद शाह दुराणोक विरुद्ध कूच किया। किन्तु महाराट्र सेनापतिकी अवाध्यता और सेनापरिचालन शक्तिकी अक्षमण्यता देकर वे लौट जानेको बाध्य हुए\*।

इधर पानीपतकी लडाईमें जब सभी उलझे हुए थे, उसी समय सूर्यमल्लने आगरेको अधिकार कर लिया, किन्तु उनके भायमें इस सुल्तानराज्यका भोग अधिष्ठान न बढ़ा था। १७६३ ई०में वे आक्रान्त और निहत्त हुए। उनके पांच पुत्रोंमेंसे तीनने यथानुक्रम भरतपुरके सिंहासन का सुशोभित किया। ३५ पुत्र नरालसिंहके राजत्वकालमें उनके भतीजे रणजित्सिंह वागी हो गये। रणजित्के सुगलसेनापात नजफ खाँसे मदद मागने पर, नजफने आ कर आगरे पर अधिकार कर लिया। उन्हें रोहिला विद्रोह दमनमें जाना था, इस कारण वेणी दिन उठर न सके। नरालसिंहने भी मौजा पा कर शत्रु नजफ खाँके राज्य पर चढाई कर दी। नजफको इसकी खबर लगते ही वे आगरेबूला हो गये और रणजित्सिंहके साथ ले भरतपुर राज्य पर दूट पड़े। भरतपुर उनके हाथ लगा, साथ साथ नगद रूपये भी काफा मिले। भरतपुर दुर्ग और ६ लाखकी सम्पत्ति रणजित्की मिली और वाकी सभी स्थान नजफने अपना लिये। नजफकी

\* श्रीभाग्य बल्लभ उन्होंने लौट कर दुराणोक हाथत रत्ना पाइ थी, नहीं तो पानीपतकी लडाईमें महाराट्रसेनाक शिकार बन जाते।

मृत्युके बाद सिन्दुराजने इस राज्यको फतह किया। उन्होंने रणजित्की बगोचूद माताके प्रार्थनानुसार उक्त सम्पत्ति पुन उसे लौटा दी। अगरेज सेनापति पोरोँ (General Perron)की मदद पहुंचानेके कारण अङ्गरेजराजने पारितोषिक स्वरूप उन्हें तीन परगने दान दिये।

उत्तर भारतक मध्य परमात रणजित्सिंह ही एक ऐसे थे जिन्होंने अङ्गरेजोंके साथ मिलता की थी। लासवारोके युद्धमें सिन्दुराजके साथ अङ्गरेजोंकी जो तलवार चला थी उसमें रणजित् अश्वारोही सेनादलने लाड लेक्को विशप सहायता पहुंचाई थी। अङ्गरेजराज महाराट्र युद्धके प्रारम्भ (१८०३ ई०) में दृढता स्वरूप उन्हें सात लाख रुपये रानस्वके पांच जिले दिये थे, किन्तु होलकरराजके साथ अङ्गरेजोंका जो युद्ध हुआ था उसमें सहायताकी बात तो दूर रहे, वरन् उनसे शत्रुता ही की थी। होलकर सेनादलके लडाईमें पीठ दिपाने पर अङ्गरेजी सेनाने उनका पीछा किया। इस समय दीग दुर्गमें रह कर उनकी सेना अङ्गरेजों पर गोला बरसाने लगी। भरतपुर राजके ऐसे आचरणसे विरक्त हो लाड लेक दीगकी अधिकार कर भरतपुरकी ओर बढ़े। यहा उन्होंने जाट लोगों पर लगातार चार बार आक्रमण कर दिया, किन्तु जाटसेनाका एक बाल भी बाँका न हुआ। उस दुर्दर्शन सेनादलके सामने टहर कर अङ्गरेजी सेनाको नगर प्राचीर भेदनेका साहस न हुआ। इस युद्धमें अङ्गरेजसेनापति पराजित और विशेष क्षतिग्रस्त हुए। इस समय कादुधोष नामक किसी बगाली कायस्थने अङ्गरेजोंकी ओरसे लड कर विशेष घोरताका परिचय दिया था। कालुषाण दया।

राजाकी जीत तो हुई, पर अगरेजोंका डर उनके हृदयसे दूर नहीं हुआ था। अब दोनोंमें शान्ति स्थापन के लिये सन्धिकी बात छिडी। रणजित्सिंहने लडाईके क्षतिपूर्ण स्वरूप अगरेजोंके हाथ दीगदुर्गकी समर्पण किया।

१८०५ ई०में रणजित्की मृत्यु हुई। उनके बड़े लडके रणधीरने १८ वर्ष और पीछे मकले बलदेवसिंहने १८ मास राज्य किया। बलदेवकी मृत्युके बाद उनके लडके



ये सब दल बाध कर रहना पसन्द करते हैं। यूरोपीय 'स्वाइल-कार्क'में जो सब गुण पाये जाते हैं, भारतके भरतपक्षीमें उन सब गुणोंका अभाव नहीं है। गीतकालमें धानके खेतोंमें ये अक्सर पाये जाते हैं। ये अनाजके वन और कोड़े मकोड़ेको खाना बहुत पसन्द करते हैं। भरतपुत्रक (स० पु०) भरतस्य नाट्यशास्त्रप्रणेते पुत्रक । नाटकमें नाट्य करनेवाला पुरप, नट ।

भरतपुर—राजपुतानेके अन्तर्गत एक हिंदूराज्य । यह अक्षा० २६ ४३ से २७ ५० उ० और देशा० ७७, ५३ से ७७ ४६ पू०के मध्य विस्तृत है। भूपरिमाण १६४२ वर्ग मील है। इसके उत्तरमें बङ्गरेजाधिपत गुरुगाव जिला, पूर्वमें मथुरा और आगरा, दक्षिणमें डोलपुर, कदौली और जयपुरराज्य तथा पश्चिममें अलवारप्रदेश है।

समुद्रपृष्ठसे इस स्थानकी ऊँचाई प्राय ६०० फुट है। सब जगह प्राय समतल है, केवल उत्तर, दक्षिण, पूरु और पश्चिम सीमान्तदेशमें गण्डमालाके विराजित रहने से देशका प्राकृतिक सौन्दर्य देखते ही वन आता है। सारा स्थान पलिमय होने पर भी यहाँ वनमालाका अभाव नहीं है। वह पलिमय मट्टी कठिन और सूखी है तथा कही कही मरुभूमि सदृश बालुकाराशिसे परिपूर्ण है। देशीय अधिवासियोंके यत्नसे ऐसे स्थानमें भी प्रचुर शस्यादि उत्पन्न होता है। वृष्टिके समय बाढ़ क्षती उमड़ आती है, कि आस पासके निम्नतम स्थान जलमग्न हो जाते हैं।

भरतपुर, फिरोजपुर, फलवार, गोपालगढ़ और पहाडी आदि स्थानोंके निम्नतमनीं उत्तर दक्षिणमें विस्तृत गिरिमालाके कई एक शृङ्खल बहुत उन्नत हैं। कालापहाड नामक पर्वतका आलिपुर शिखर (१३५१ फुट) भरतपुर में सबसे ऊँचा है। अलावा इसके अलवारका छपरा १२०० फुट, दमदमा १२१५, रसिया १०५६, मघोना ७१४ और उपेराशृङ्खल ८१७ फुट ऊँचा है। उपेरामें घरी पहाडपुरका विषपात पत्थर अस्थित है।

यहाँके पर्वतों पर गृहनिर्माणयोग्य पत्थरके अलावा अन्य कोई भी मूल्यवान् पत्थर नहीं है। मुगलवादाशार्होंके आगरा, दिल्ली और फतेपुर-सिकरोके कीर्त्तस्तम्भ तथा मथुरा, दोग और भरतपुरकी अट्टालिकादि यहाँके समृद्धीत प्रस्तर स्तवकसे बनाई गई हैं।

इस राज्यमें ऐसी एक भी नदी नहीं जिसमें नाव आ जा सके। बाणगङ्गा वा उच्छङ्ग, रूपरेल, गम्भीरा और कान्द नामक नदी प्रधान हैं। जब कभी इन नदियोंमें बाढ़ आ जाती है, उस समय भी पैदल पार कर सकते हैं। बाणगङ्गानदी भरतपुरके मध्य हो कर बह गई है। इस राज्यमें ७ शहर और १२६५ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या साढ़े छ लाखके करीब है जिनमेंसे सैकड़ें पीछे ८१ हिंदू १८ मुसलमान और शेषमें अन्यान्य जातिया हैं। यहाँकी भाषा ब्रज है।

इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि यहाँ एक समय जाट लोगो ने अपना आधिपत्य फैलाया था। किन्तु यथार्थमें किस समयसे उन्होने यहाँका शासनदण्ड धारण किया था इसका कोई विशेष उल्लेख नहीं मिलता - फिरिस्तामें लिखा है, कि गजनोपति महमूदके १०२६ ई०में गुजरातसे लौटते समय जाट दलने उन पर चढ़ाई कर दी। १३६७ ई०में दिल्ली आक्रमणकालमें तैमूरलङ्कने जाटदल गणके साथ युद्ध किया। इस युद्धमें जाट लोग दल-बल समेत मारे गये। १५६६ ई०में जाट लोगोंने मुगल सम्राट् नाबरको पञ्जाबप्रदेशमें तग तग कर दिया। जाट सरदारोंके ऐसे उपद्रवसे उत्पन्न हो कर मुगल सम्राटने कठोर शासनसे उन्हें दमन किया था। किन्तु औरङ्गजेबकी मृत्युके बाद जब राज्यमें विप्लव खड़ा हुआ, तब जाट लोगोंने पुन अपना मस्तक उठाया। इस समय जाट सरदार चूडामनने मुगल सम्राट् आलमगीरके दक्षिणपत्यगामी सेनादलको लूट कर मोदी रकम इकट्ठी की। उस रकमसे वे धुन, सिनसिनिवार और भरतपुरमें दुर्ग बना कर दलदल ममेत आत्मरक्षा करनेकी प्रवृत्त हुए। उनकी इस प्रकारकी वीरता पर प्रसन्न हो कर जाट लोगोंने उन्हें दलपति बनाया। उनके व शहरोंने राजाकी उपाधिसे भूषित हो भरतपुर राज्यका शासन किया था। चूडामनके भाई बदनसिंहकी प्रेरचनासे जाटदलने चूडामनका प्रभुत्व त्याग दिया। उन लोगोंकी सहायता से बदनसिंहने 'ठाऊर'-की उपाधि ग्रहण कर दोग नगरमें स्वतन्त्र राजपाट बसाया। १७२० ई०में सम्राट् मरहमूद शाह और कुतब उल मुल्क सैयद अवउल्ला खोंके युद्धमें चूडामन मारे गये। पीछे उनके लड़के बदनसिंह भरतपुरके सिंहासन पर बैठे।

बदनसिंहके पुत्र सूर्यमल्लके राजत्वकालमें भरतपुरका वीरत्व गौरव चारो ओर फैल गया था। सूर्यमल्लने नयपुर राज्यकी सहायतासे दीगराज्य पर अधिकार नमाया था।

१७३० ई०से भरतपुर दुर्गकी दुर्भेद्यता और जाट सैनिकोंकी वीरत्व-काहिनो विधोपिन होती आ रही हैं। १७५३ ई०में सूर्यमल्लने अकेले वजीर गजोउद्दीन, महा राट्ट और जयपुरराजकी सेनापतिनीको पराजित शक्तिको परास्त किया था। इस युद्धमें फिरसे जय उन्होंने अपने अधिक बलशक्तकी सम्भावना देखी, तब ७ लाख रुपये दे कर मेल कर लिया। इसके ६ वर्ष बाद उन्होंने महा राट्ट सेनापति शिवदास भावके साथ मिल कर अहमद शाह दुराणिको विरुद्ध कूच किया। किन्तु महाराट्ट सेनापतिनी अपाध्यता और सेनापरिचालन शक्तिकी अक्षमण्यता देव कर वे लौट जानेको बाध्य हुए\*।

इधर पानीपतको लडाईमें जय सभी उलभे हुए थे, उसी समय सूर्यमल्लने आगरेको अधिकार कर लिया, किन्तु उनके भायमें इस सुख राज्यका भोग अधिक दिन न बढ़ा था। १७६३ ई०में वे आक्रान्त और निहत हुए। उनके पाच पुत्रोंमेंसे तौनने यथानुक्रम भरतपुरके सिंहासन का सुशोभित किया। उय पुत्र नवाबसिंहके राजत्वकाल में उनके भतीजे रणजित्सिंह वागी हो गये। रणजित्के सुगलसेनापात नजफ चाँसे मदद मागने पर, नजफने आ कर आगरे पर अधिकार कर लिया। उन्हें रोहिला विद्रोह दमनमें जाना था, इस कारण वेशी दिन ठहर न सके। नवाबसिंहने भी मीरका पा कर शत्रु नजफ चाँके राज्य पर चढाई कर दी। नजफकी इसकी खबर लगने ही वे आश्रयलू हो गये और रणजित्सिंहने साथ ही भरतपुर राज्य पर दृट पड़े। भरतपुर उनके हाथ लगा, साथ साथ नगद रुपये भी काफो मिले। भरतपुर दुर्ग और ६ लाखकी सम्पत्ति रणजित्को मिली और बाकी सभी स्थान नजफने अपना लिये। नजफकी

मृत्युके बाद सिन्दराजने इस राज्यको फतह किया। उन्होंने रणजित्की वधोद्घ माताके प्रार्थनानुसार उन सम्पत्ति पुन उसे लौटा दी। अगरेज सेनापति पोरी (General Poree)की मदद पहुचानेके कारण अङ्गरेजराजने पारितोषिक स्वरूप उन्हें तौन परगने दान दिये।

उत्तर भारतके मध्य एकमात्र रणजित्सिंह ही एक ऐसे थे जिन्होंने अङ्गरेजोंके साथ मित्रता की थी। लासवारोके युद्धमें सिन्दराजके साथ अङ्गरेजोंकी जो तलवार चला थी उसमें रणजित् अश्वारोही सेनादलने लार्ड लैकको विश्वास सहायता पहुचाई थी। अङ्गरेज राज महाराट्ट युद्धके प्रारम्भ (१८०३ ई०) में एतद्वता स्वरूप उन्हें सात लाख रुपये रानस्वके पाच जिले दिये थे, किन्तु होलार-राजके साथ अङ्गरेजोंका जो युद्ध हुआ था उसमें सहायताकी बात तो दूर रहे, वरन् उनसे शत्रुता हा की थी। होलार सेनादलके लडाईमें पीठ दिवाने पर अङ्गरेजो सेनाने उनका पीछा किया। इस समय दीग दुर्गमें रह कर उनकी सेना अङ्गरेजों पर गोला बरसाने लगी। भरतपुर राजके ऐसे आचरणसे निरक्त हो लार्ड लैक दीगकी अधिकार कर भरतपुरकी ओर बढ़े। यहा उन्होंने जाट लोगों पर लगातार चार बार आक्रमण कर दिया, किन्तु जाटसेनाका एक बाल भी वाँश न हुआ। उस दुर्दुर्ग सेनादलके सामने टहर कर अङ्गरेजो सेनाको नगर प्राचीर भेदनेका साहस न हुआ। इस युद्धमें अङ्गरेजसेनापति पराजित और विशेष क्षति-प्रस्त हुए। इस समय कालुजोप नामक किसी बगाली कायसने अङ्गरेजोंको आरसे लड कर विशेष वीरताका परिचय दिया था। कालुथाप दतो।

राजाकी जीत तो हुई, पर अगरेजोंका उर उनके हृदयसे दूर नहीं हुआ था। अब दोनोंमें जान्ति स्थापन-के लिये सन्धिको बात छिडी। रणजित्सिंहने लडाईके क्षतिपूरण स्वरूप अगरेजोंके हाथ दीगदुर्गको समर्पण किया।

१८०५ ई०में रणजित्की मृत्यु हुई। उनके बड़े लडके रणधीरने १८ वर्ष और पीछे मन्हे बलदेवसिंहके मास राज्य किया। बलदेवकी मृत्युके

\* सीमागय बलस उन्होंने लौट कर दुराणीके हाथने रक्षा पाव थी, यही वो पानीपतकी लडाईमें महाराष्ट्र-सेनाके शिकार नन गये।

बलचन्त सिंहासनके प्ररत उत्तराधिकारी हुए। किन्तु रणजित्के पाँत दुर्जनशालने १८२६ ई०में भरतपुर दुर्गको अधिकार कर बलचन्तको फेंद रखा। इस अन्याचारको रोकनेके लिये लार्ड कम्बरमियर (Lord Combermere) २५ हजार सेनाके साथ भरतपुरको ओर दौड पडे। अवरोधके समय जब उन्होंने देखा, कि दुर्गका प्रकार दुर्मेघ है, तब नीचे सुरग छोडनेका विचार किया। २३री दिसम्बरसे ७री जनवरी तक एक सुरग खोदी गई। १८वीं जनवरीको उसी सुरगसे जा कर अगरेजों की सेनाने दुर्गको फतह किया और दुर्जनशाल अगरेजों के हाथ बन्दी हुए।

अगरेजोंके अनुग्रहसे बालक बलचन्तसिंहने पितृपद और मर्यादाकी प्राप्त किया और उनको माता राजकार्यकी परिदर्शक हुई। १८३५ ई०में बालिग हो कर उन्होंने शासनभार अपने हाथ लिया। १८ वर्ष राज्य करनेके बाद ही वे इहलोकसे चल बसे। बादमें उनके पुत्र महाराज यशोवन्त सिंह पितृसिंहासन पर अधिरूढ हुए। इस समय उनको उमर सिर्फ एक वर्षकी थी। इस कारण अगरेजोंके राजकीय कर्मचारी और ७ सामन्तगज गठित एक सभा द्वारा राजकार्यकी पर्यालोचना होने लगी। १८६६ ई०में बालिग हो कर उन्होंने छुल शासनभार अपने हाथ लिया। १८७७ ई०में उन्हें जी सी एस आई की उपाधि मिली और सलामी तोपें १७ से बढ़ा कर १६ कर दी गई। इनके राजत्वकालमें जो सब घटना घटो वह यों हैं—१८७३ ४ ई०में रेलवे लाइन पोलो गई, १८७७ ई०में दुर्मिश्र पडा, नमकना कारवार बंद कर दिया गया, शराब, अफीम तथा अन्य मादक वस्तुको छोड कर शेष पण्यद्रव्य परसे महसूल उठा दिया, अंधारोही और पदाति सेनाकी सख्या बढ़ा दी गई। १८६३ ई०में यशोवन्त सिंह इस घराधामको छोड सुरघामको सिंधारे। पीछे उनके बडे लडके रामसिंह राजतप पर बैठे। ये कडे मिजाजके थे, प्रजा इनसे तग तग रहती थी, राजकार्यकी ओर ध्यान भी कम था। इन सब कारणोंसे १८६५ ई०में इनका अधिकार छीन लिया गया। पीछे दीवान और पालिटिकल एजेंट द्वारा राजकार्य चलने लगा। १६०० ई०में रामसिंहने गुस्सेमें आ कर अपने एक नीकरको

जानसे मार डाला। इस पर ब्रिटिश सरकारने इन्हें सिंहासन परसे हटा दिया और उनके लडके किशोरसिंहको राजगद्दी पर बिठाया। इनका जन्म १८६६ ई०में हुआ। ये हो वर्तमान महाराजा हैं। इनका पूरा नाम है—एच, एच महाराजा श्रीगृजेन्द्र सवाई किशोर सिंह साहब बहादुर जङ्ग। चूडामन जाट कर्चुक भरतपुर राज्यकी प्रतिष्ठा होनेके बाद यहा निम्नलिखित राजाओंने शासनदाण्ड धारण किया था—

भरतपुरके राजगज ।

चूडामनजाट—

- राजा बदनसिंह—चूडामनके पुत्र ।  
 " सूर्यमहल—बदनके पुत्र  
 " जवाहिर सिंह } सूर्यमहलके पुत्र ।  
 " राधरतन सिंह }  
 " खड्गसिंह—रतनसिंहके पुत्र ।  
 " नमाल सिंह—सूर्यमहलके तृतीय पुत्र और रतन के भाई ।  
 " रणजित् सिंह—नवालके भतीजे ।  
 " रणधीर—रणजित्के पुत्र ।  
 " बलदेव—रणधीरके भाई ।  
 " बलचन्त—बलदेवके पुत्र ।  
 महागज यशोवन्त—बलचन्तके पुत्र ।  
 राजा रामसिंह—यशोवन्तके ज्येष्ठ पुत्र ।  
 महाराज किशोर सिंह—रामसिंहके पुत्र ।  
 ( वर्तमान शासनकर्त्ता )

यह जाटराज्य चूडामनके पहले ब्रज नामक किसी जाट सरदार द्वारा दीगके अन्तर्गत सिनसिनी ग्राममें बसाया गया था। चूडामनिने अपने वीरोचित साहससे लूट पाट द्वारा काफी रकम इकट्ठी कर ली थी। उसी रकमसे उन्होंने एक दुर्ग बनवाया और जाटजाति तथा भरतपुर राज्यको रक्षा की थी।

यहाके वमान नगरमें श्रीकृष्णको जो मूर्ति है वह हिन्दुओंके निरूढ पवित तीर्थमें गिनी जाती है। कुम्भार नगरके पास भी बलदेव, रोहिणी, सुधिष्टिर, आदि कई महापुरुषोंको मूर्ति विद्यमान है। बयाना तहसीलसे

१ कोस दक्षिण पश्चिममें विजयगढ नामक एक दुर्ग है जहा बोधेय राजपूतकी एक गिलालिपि देखनेमें आती है। रूपे ल नदीके दूसरे किनारे सिकरी नामका जो बाध है वह बहुत पुराना है। कहते हैं कि १८४० ई०में महाराज बलवंत सिंहने उस बाधको बननाया था। पीछे उस बाधका हाता और भी बढ़ाया गया जिसमें डेढ लाखसे ऊपर रुपये खर्च हुए थे।

ब्रिटिश शासनप्रणालीके अनुसार राजकार्य चलाया जाता है। सबसे निम्नश्रेणीकी अदालत नायब तहसील-दारकी है। ये तुताय श्रेणीके मजिस्ट्रेट हैं और दीवानी ५० स० तकके मामले पर विचार करते हैं। इनके ऊपर तहसीलदार हैं जिन्हें द्वितीय श्रेणीके मजिस्ट्रेटका अधिकार है। ये २०० स० तकके दीवानी मामले पर विचार कर सकते हैं। दोनों अदालतकी अपील जिलेके नाजिम अदालतमें सुनी जाती है। इन्हें डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटका सा अधिकार है। इनसे भी ऊपर सिमिल और सेसन जज हैं। कासिल ही सबसे बड़ी अदालत है। इन्हें मृत्युदण्ड भी देनेका अधिकार है, पर इनमें गवर्नर जनरलके पंजेण्ट की अनुमति लेना पड़ती है। राज्यकी कुत्र आय मिला कर ३१ लाख रुपयेकी है। राज्यमें सरकारी सिक्का ही चलता है। पहले यहा दो टरुसाल थी एक हीगमें और दूसरी राजधानीमें, पर दोनों ही क्रमश १८७८ और १८८३ ई०में यद कर दी गईं। पहले यहा जो सिक्का चलता था, उसे 'हाला' कहते थे। उसका मान सरकारी दश आनेके बराबर था।

राजपूतानेके बीस राज्योंके मध्य विद्याशिक्षामें इस राज्यका स्थान ग्यारहवां पडता है। अभी कुल मिला कर ६६ स्कूल हैं जिनमेंसे ३६ दरवार द्वारा और ३ चर्चमिम नरा सोसाइटी द्वारा परिचालित होते हैं। उक्त स्कूलोंमें से हाई स्कूल, सम्मल स्कूल और पड़ली वनांभु-लर स्कूल प्रधान हैं। चार बालिका स्कूल भी हैं। विद्याशिक्षामें छेठके करोड पचास हजार रुपये वार्षिक व्यय होते हैं। स्कूलके अगवा ७ अस्पताल और १० चिकित्सालय भी हैं।

२ उक्त राज्यकी राजधाना। यह दुर्ग द्वारा सुरक्षित है और अक्षा० १७ १३' उ० तथा देशा० ७७ ३०' पू०के

मध्य विस्तृत है। जनसंख्या प्राय ४३६०१ है। यहा राजपूतानेकी राजकीय रेलवे लाइनके खुल जानेसे जाने जानेकी विशेष सुविधा हो गई है।

यहाका वर्तमान दुर्ग १७३३ ई०में राजा चदनसिंहने बननाया था। १८०५ ई०में लार्ड लेक और १८२७ ई०में कम्ब्रिमियरके अररोधके लिये इस दुर्गने भारतवर्षमें विशेष प्रसिद्धि लाभ की है।

शहरमें बहुत बढ़िया चामर तैयार होता है जो दूर दूर देशोंमें भेजा जाता है। भरतपुरके प्राय सभी अधिवासी शृण्भक्त हैं और श्रोत्रुण्भक्तों 'विहारी' नामसे पूजते हैं। निरीह स्वभाव परमवैष्णव होने पर भी जरूरत पडने पर गद्दुके साथ हिंसावृत्तिका आचरण करते हैं। यहाके जेलमें उच्छ्रेष्ट कम्बल तैयार होता है। शहरमें कुल मिला कर आठ स्कूल हैं जिनमेंसे पाच दरवारके द्वारा और तीन चर्च मिशनरी सोसाइटीके द्वारा परिचालित होते हैं। दरवार हाई स्कूलमें मैट्रिक तककी शिक्षा दी जाती है और वह इलाहाबाद विश्वविद्यालयके अधीन है। स्कूलके अगवा पाच अस्पताल और एक चिकित्सालय है। भरतपुर—मध्यप्रदेशके चाङ्गभकार राज्यका सदर। यह अक्षा० २३ ४४' उ० तथा देशा० ८१ ४६' पू०के मध्य वनास नदीसे २ मील उत्तर पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या ६३५ है।

भरतप्रसू (न० खी०) प्रसूते इति सू मिवप् प्रसू, भरतस्य प्रसू। भरतकी माता कैकयी।

भरतरी (हि० खी०) पृथ्वी।

भरतवर्ष (हि० पु०) भारतवर्ष देखो।

भरतवीणा (स० खी०) वीणायन्त्र विशेष, एक प्रकारकी वीणा। भरतवीणाका नाम सुन कर बहुतसे इसका योगिक अर्थ—भरतश्चपि प्रणीत वीणा—ग्रहण कर इसे प्राचीन सङ्गीतशास्त्रानुमत अति प्राचीन यन्त्र समझ सकते हैं, परन्तु वास्तवमें यह बात नहीं है। यह वीणा अत्यंत आधुनिक है। रुद्रवीणा और कच्छपीवीणाके मिश्रणसे इसकी उत्पत्ति हुई है। भरतवीणाका ध्वनिकीय अर्थ कुल रुद्रवीणाके समान काष्ठनिर्मित और चर्माच्छादित है तथा वृत्त, कौलक, तांतीनी सख्या, खरबन्धक, धारण और यादनप्रणाली आदि सभी कच्छपीवीणाके हैं।

कुल मिला कर, इसमें पौतलकी वनी हुई कई पाष्णातन्त्रिकाएँ रहती हैं, जो पृथक् रूपसे बजाई न जा कर प्रधान तारोंके कम्पनसे स्वतः ध्वनित होती हैं। भरतवीणाका नायकी तार लोहेका होता है, अन्य तार धातुके न हो कर तन्तुमय होते हैं। इस वीणाकी ध्वनिकी मधुरता रखाव या कच्छपोके समान नहीं, वटिक अपेक्षाकृत कुछ गीरस सी मालूम होती है। (यन्त्रकोष)

भरतमह (स० पु०) एक वैयाकरण।

भरतमहिक—वैद्यकुलोत्पन्न एक सुविषय पण्डित। सरस्वत भाषामें इनकी जिलक्षण व्युत्पत्ति थी। करीब दो शताब्दी पहले आप जन्मिन् थे। आप कल्याणमहलके आश्रित और वैद्यकुलतिलक हरिहरगणके यशधर गौराङ्गमहिकके पुत्र थे। उपसर्गवृत्ति, एकवचनार्थसंग्रह, क्षरकोलास, किराताजुंणोयटीका, कुमारसम्भव टीका, घटनपरटोना, द्रव्योपध्याकरण और द्रुत्वोधिना नामक उसकी व्याख्या, भट्टिकाष्य टीका, अमरकोष टीका, सुलेपन नामके आपके रचे हुए कई ग्रन्थ पाये जाते हैं। वैद्यकुल पञ्जिका भी आप ही की बनाई हुई है।

भरतसेन दण्डो।

भरतसेन—प्रसिद्ध वैद्यजि भरतमहिकका नामान्तर। ये गौराङ्गसेनके पुत्र और हरिहरखानके यश सम्भूत थे। अपनी विद्यायत्ताके कारण इन्होंने महामहोपाध्याय और यशस्वन्त्रयकी उपाधि पाई थी। ये राठोय वैद्योंके एक प्रधान कुलीन थे। उनकी बनाई हुई वैद्यकुलपञ्जिका पढ़नेसे मालूम होता है, कि वे छिज और वैद्योंके सेनक तथा राजपण्डित थे। उनकी उपसर्गवृत्तिके शेष श्लोकसे पता चलना है, कि वे १७५८ शकमें विद्यमान थे।

भरतस्वामी—एक प्राचीन पण्डित, नारायणके पुत्र। ये होसलाघोष्वर, रामनाथके प्रतिपालित थे। १३वीं शताब्दीके शेषभागमें श्रीरङ्गमें रह कर इन्होंने सामवेद विवरण (द्वैपराजने इस वेद भाष्यका उल्लेख किया है) और धीमायनकल्पसूत्र विवरण नामक दो ग्रन्थ लिखे थे। २ पत्र उगोतिर्गिद। आत्मरूपणोने इनका उल्लेख किया है।

भरता (हि० पु०) एक प्रकारका सालन। यह बँगन,

आलू या अरई आदिको भून कर उसमें नमक मिच आदि डाल कर बनाया जाता है। कभी कभी उसे घी या तेल आदिमें भी छौंरने हैं।

भरताग्रज (स० पु०) भरतस्य अग्रज। दागर्गध, श्रीराम।

भरतार (हि० पु०) १ पति, वासम। २ स्वामी, मालिक।

भरताश्रम (स० पु०) भरतस्य आश्रम। भरतमुनिका आश्रम।

भरतिया (हि० वि०) १ भरत अर्थात् कसकुट घातुका बना हुआ। (पु०) २ कसकुटके वर्तन या घटे आदि ढालनेवाला, भरत घातुसे चीजें बनानेवाला।

भरतो (हि० खो०) १ किसी चीजमें भरे जाननेका भाव, भरा जाना। २ दापिल या प्रविष्ट होनेका भाव, प्रवेश देना। ३ वह नाव जिसमें माल लादा जाता हो। ४ नकाशी, चित्रकारो या कणोदे आदिमें बीच बीचका पाली रखान इस प्रकार भरना जिसमें उसका सौंदर्य बढ जाय। ५ समुद्रके पानीका चढाव, उचार। ६ वह माल जो नावमें भरा या लादा जाय। ७ जहाज पर माल लादने को क्रिया। ८ नदीके पानीकी बाढ। ९ पशुओंके चारेके काममें आगेवाली एक प्रकारका घास। १० सावर्णामक कृष्ण।

भरतेश्वरतीर्थ (स० द्वी०) एक तीर्थका नाम।

भरतोद्भवा (स० पु०) केशवके अनुमान एक प्रकारके छन्दका नाम।

भरथ स० पु०) विभसोति भृशू (भृशूभिः। उष् ३। ११५) इति अथ, सच चित्। लोकपाल।

भरथ हि० पु०) भरत देखो।

भरथरी (हि० पु०) भरतृहरि देवो।

भरतूज (हि० पु०) भरतकी दत्ता।

भरद्वाज (स० पु०) द्वाभ्यां जायते इति जन् उ तत पूर्वो द्रादित्वात् द्वाजः सङ्कर, म्रियते मरुत्प्रिरिति भृष्ट भ्र, भरद्वासी द्वाजश्चेति कर्मधा०। मुनिभेद, एक मुनि। इनके जन्मका विवरण भागवतमें इस प्रकार लिखा है,— एक दिन उतधरकी पत्नी ममताकी ससस्त्रायण्यामें वृहस्पतिने छिप कर अपनी भातभायाके साथ मैथुन किया। परन्तु उस समय ममताके गर्भमें एक सन्तान

थी, दूसरे गर्भ के लिए वहाँ स्थान न था, अतः गर्भ-स्थित बालकने बृहस्पतिको तीर्थसेक करनेके लिए निषेध किया। बृहस्पति कामान्ध हो रहे थे, गर्भस्थ बालकके निषेध करने पर उ होने मूढ़ हो कर "अन्ध हो" कह कर उसे शाप दिया और बगभूयं तीर्थसेक किया। बृहस्पतिके शापसे यह पुत्र अन्धा हो गया। बादमें गर्भस्थित बालकने पार्ष्णि प्रहाग द्वारा बृहस्पतिके तीर्थ को योनिसे बाहर कर दिया। उस शुकके बाहर गिरने ही उससे उमा क्षणमें एक पुत्र उत्पन्न हुआ।

पति ध्याग्निनारिणो ज्ञान कही परिन्वयाग न कर दे इस भयसे उदयय गिता भमताने उम पुत्रको त्यागना चाहता, किन्तु बृहस्पतिके निषेध करने पर उनके साथ ध्यताताना निरोध उपस्थित हुआ। तब बृहस्पतिने ममतामे कहा कि, 'यह बालक एकके क्षेत्रमें दूसरेके तीर्थसे उत्पन्न हुआ है, सुनरा यह तुम्हारे स्वामीका भो पुत्र हुआ। अर्त्ताने तुम डरो मत, तुम इसका भरण पोषण करो।' इस पर ममताने कहा, 'तुम भी इसका पोषण करो। हम दोनोंसे अन्यायरूपमें इस बालकका जन्म हुआ है, अतः मैं अकेली क्यों पोषण करूँ ?' पिता और माता अर्थात् बृहस्पति और ममता पर प्रकारसे विवाद करते करते उस बालकको छाड़ कर चले गये। इस कारण बालकका नाम भरद्वाज हुआ। बृहस्पति और ममताके छोड़ कर चले जाने पर मरुदुमण उम बालकको उठा ले गये और उन्होंने उसका प्रतिपालन किया।

भरतके पुत्र सम्भायना वितथ होने पर अर्धात् पुत्र होने की सम्भायना न रहने पर उन्होंने मरुत्स्तोम यज्ञका अनुष्ठान किया। मरुदुमण इस यज्ञसे घटुत सतुष्ट हुए और उन्हें पुत्रदाता दिया। इसलिए भरद्वाजका नाम वितथ हुआ। इनके पुत्र मनु थे।

(भाग० ६।२०, २१ अ०, त्रिम्बुपु० ४।१६ अ०)

महाभारतमें लिखा है—किसी समय ये हिमालय पर तपस्या करने गये। इसके कुछ दिन बाद एक दिन वे गङ्गामें स्नान करने गये, उस समय घृताची बरसरा चहासे जा रही थी, देवने हवाके भक्नोरैमे उसके रसत खूब गये। घृताचीको गन्नायस्थामें देव कर मुनिका रेत-

स्पर्शन हो गया। उस रेत को द्रोणमें रखा गया, बादमें उसीसे द्रोणाचार्यका जन्म हुआ था।

द्रोणाचार्य दत्तो।

रैम्यके साथ इनको सातिग्रह व धुता थो। भरद्वाज के पुत्र यवकोतके द्वारा रैम्यको पुत्रत्रधूका सतोत्प नष्ट होने पर रैम्यने उसे मार डाला। भरद्वाजने इस भीतरों वृत्तार्त्तोंको बिना जाने ही रैम्यको शाप दे दिया कि यह बिना अपराधके ज्येष्ठ पुत्र द्वारा मारे जाये। बादमें सब हाल मालूम होने पर वे दुःखित हृदयसे अनलर्म जल कर मर गये, किन्तु रैम्यके पुत्र अर्वा चसुके तप प्रभावसे पुनर्जीवित हुए प्रयागमें इनका आश्रम था। द्वादश द्वार-में भरद्वाज व्यास थे। (दशमो १।१।२६)

भावप्रकाशमें भरद्वाजका चेसा प्रसन्न पाया जाता है—देवयोगसे एक दिन बृहस्पत्यक महर्षि हिमालय परत पर किसी परान्त स्थानमें मिल कर प्राणियोंके ध्याधिप्रशमनकी उपाय चिन्तामें निरत थे। परंतु कोई भी इसके लिए मद्दयुक्ति स्थिर न कर सके। तब सबने मित्र कर भरद्वाज मुनिसे कहा—'भगवान्! आप ही इस निपत्तिसे उद्धार करनेमें परमात् नमर्थ हैं। अतएव आप सुरपुरमें जा कर महस्त्रनेचन इन्द्रके निकट आयु चेंद ज्ञात्र अध्ययन कर हमलोगों की शिक्षा दीजिए, तभी हम सब आयुचेंदका मम ममम्ब सकते हैं और जगत्का कल्याण साधत करनेमें समर्थयान् हो सकते हैं।

भरद्वाज ऋषियोंके प्रस्ताव पर सम्मत हो कर सुरपुर गये। उहा कुछ समय रह कर इन्द्रसे त्रिस्वधदेव, त्रिद्वीपत्र और ज्ञानात्मक अर्धात् रोगका निदान, रोगका लक्षण और औषधशापत्र समस्त आयुचेंदका यथाविधि अध्ययन कर मत्प्राममे आये और उन ऋषियों की शिक्षा दी। उनका उस शिक्षासे ही क्रमश आयुचेंदका प्रचलन हुआ। (भावप्रकाश)

२ पक्षीनिशेय, एक चिडिया। पर्याय—व्याघ्रराट, भरद्वाजक। ३ गोत्रपेद, एक गोत्रका नाम। (मनु)

(द्वि०) ४ सन्नियमण ह्यविलक्षणान्युक्त यजमानादि।

(काण्य)

५ मनोरूप सचेतन ऋषिभेद । (शतपथभा० ८।१।१।६ )  
प्रजाजनका भरण करते थे, इसलिये भरद्वाज नाम  
पडा । ( भारतभट्ट० प० ६३ अ० )

भरद्वाज—१ कालियकुतूहलप्रहसनके प्रणेता । २ चारतु  
तस्वके रचयिता । ३ वेदपादस्तोत्रके प्रणयनकर्ता ।  
भरद्वाजक (सं० पु०) भरद्वाज स्वार्थे-अन् । १ धाम्नाटपक्षी ।  
२ भरद्वाज देवो ।

भरना ( हि० क्रि० ) १ पूर्ण करना, खाली जगहको पूरा  
करनेके लिये कोई चीज डालना । २ रिक्त स्थानको पूर्ण  
अथवा उसको अशत वृत्ति करना, स्थानको खाली न  
रहने देना । ३ उलटना, डालना । ४ ऋणका परिशोध या  
हानिको पूर्ति करना, चुकाना । ५ पद पर नियुक्त करना,  
रिक्त पदको पूर्ति करना । ६ तोप या बट्टक आदिमें  
गोली बारूद आदि डालना । ७ दो पदार्थोंके बीचके  
अवकाश या छिद्र आदिमें कुछ डाल कर उसे बंद  
करना । ८ काटना । ९ निर्वाह करना, निवाहना । १०  
खेतमें पानी देना । ११ गुप्त रूपसे किसीकी निंदा करना  
अथवा कोई बुरी बात मनमें बैठाना । १२ धातुके छड  
आदिको पीट कर अथवा और किसी प्रकार छोटा और  
मोटा करना । १३ किसी प्रकार घ्यतीत करना, कठिनता  
से विताना । १४ सारे शरीरमें लगाना, पोतना । १५  
सहना, भेलना । १६ पशुओं पर बोझ आदि लादना ।  
(क्रि० अ०) १ किसी रिक्त पाल आदिका कोई और पदार्थ  
पडनेके कारण पूर्ण होना । २ उड़ैला या डाला जाना । ३  
ऋण आदिका परिशोध होना । ४ तोप या बट्टक आदि  
में गोली बारूद आदिका होना । ५ मनमें क्रोध होना ।  
६ रिक्त स्थानको पूर्ति होना, स्थानका गाली न रहना ।  
७ पदार्थोंके बीचके छिद्र या अवकाशका बंद होना । ८  
जितना चाहिये, उतना ही जाना, कुछ भी कमी या कसर न  
रह जाना । ९ पशुओंका गर्भ धारणकरना । १० चेचक  
के दोनोका सारे शरीरमें निकल जाना । ११ धातुके छड  
आदिका पीट कर मोटा और छोटा किया जाना । १२ घाव  
का ठीक और दवावर होना । १३ किसी अङ्गका बहुत  
काम करनेके कारण दर्द करने लगना । १४ शरीरका दृष्ट  
( पुष्ट होना ।

भरना ( हि० पु० ) १ भरनेकी क्रिया या भाव । २ शिव  
( पत, घूस ।

भरनी ( हि० स्त्री० ) १ करघेमेंकी ढरकी, नार । २ छल्लू दर ।  
३ मोरनी । ४ गारुडी भरल । ५ एक प्रकारकी जगली  
वृत्ती ।

भरपाई ( हि० क्रि० वि० ) १ भलीभाति, पूर्णरूपसे । ( स्त्री० )  
२ भर पानेका भाव, जो उछ बाकी हो, वह पूरा पूरा पा  
जाना । ३ वह रसीद जो पूरी पूरी वसूली हो जाने पर  
दी जाय, कुल बाकी चुक जाने पर दी जानेवाली रसीद ।  
भरपुरसिंह—नामा राजवंशके एक राजा । ये १८५६ ई०में  
अपने पिताके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए थे । सन्  
१८५७ ई०के सिपाही विद्रोहके समय आपने दिली,  
लुधियाना, जालंधर आदि स्थानोंमें अंग्रेजोंकी तरफसे  
युद्ध किया था । अम्याला दरवारमें लार्ड कैनिंगने आप  
की उपकारिताकी विशेष सुरवाति को थी । १८६३ ई०में  
भारतके वायसराय लार्ड एंग्लिनने इनको लेजिस्लेटिव  
कौन्सिलका सदस्य चुना था । उसी वर्ष ६वीं नवेम्बर-  
की अत्यधिक परिश्रमजनित ज्वररोगसे आपकी मृत्यु  
हो गई । आपके कोई पुत्र न होनेसे भतीजे राजा भग  
वानसिंह सिंहासन पर बैठे । नामा देवो ।

भरपूर ( हि० वि० ) १ जो पूरी तरहसे भरा हुआ हो, पूरा  
पूरा । २ परिपूर्ण, जिसमें कोई कमी न हो । ( क्रि० वि० )  
३ पूर्णरूपसे, अच्छी तरह पूरा करके । ४ भलीभाति ।  
( पु० ) ५ समुद्रकी तरङ्गोंका चढाव, उजार ।

भरभरना ( हि० क्रि० ) १ रोना उडा होना, धवराना ।

भरभूजा ( हि० पु० ) भडभूजा देवो ।

भरम ( सं० क्रि० ) भृ बाहुलकात् अमच् । भरणकर्त्ता,  
पालन पोसन करनेवाला ।

भरम ( हि० पु० ) १ भ्रान्ति, सशय । २ रहस्यभेद ।

भरमना ( हि० क्रि० ) १ घूमना, चलना । २ मारा मारा  
फिरना, भटकना । ३ धोपेमें पडना । ( स्त्री० ) ४ भूल,  
गलती । ५ भ्रान्ति, भ्रम ।

भरमाना ( हि० क्रि० ) १ भूममें डालना, चक्रमें डालना ।  
२ ध्यर्थ इधर उधर घुमाना, भटकाना ।

भरमार ( हि० स्त्री० ) अत्यन्त अधिकता, बहुत ज्यादाती ।

भरगना ( हि० क्रि० ) १ भरर जड़के साथ गिरना, भर  
राना । २ पिल पडना, टूट पडना । ३ भरर शब्दके  
साथ गिरना । ४ दूसरोंको पिलने अथवा टूट पडनेमें  
प्रवृत्त करना ।

भरल ( हि० खी० ) नीले रंगकी एक प्रकारकी जगली भेड़। यह हिमालयमें भूटानसे लद्दांग तक होती है।

भरवाइ ( हि० खी० ) वह डलिया या टोकरी जिसमें बोझ रखा जाता है। २ भरवानेकी क्रिया या भाव। ३ भरवानेकी मजदूरी।

भरवाना ( हि० कि० ) भरनेका काम दूसरेसे कराना, दूसरेको भरनेमें प्रवृत्त करना।

भरसक ( हि० कि० वि० ) यथाशक्ति, जहा तक हो सके।

भरसव ( हि० खी० ) फटकार, डाट।

भरसाइ ( हि० पु० ) भाइ देना।

भरस ( स० पु० ) भृ असन्। मरण।

भरहाल—बाघाके एक अधिपति। ये टाकनीशिय थे।

भरहरना ( हि० कि० ) भरभराना देना।

भरहराना ( हि० कि० ) भरहराना देना।

भरहुत—मध्यप्रदेशके नागोदराज्यके अन्तर्गत एक प्राचीन जगस्थान(१)। यह उच्चहस्ते ३ कोस उत्तर पूर्व तथा प्रयागसे ६० कोस दक्षिण पूर्वमें अवस्थित है। सुल्ता रेल स्टेशनसे ४५ कोस दक्षिण पूर्व पडता है।

बहुत पहलेसे यह प्राचीन नगर निर्गिड जगलोंमें परिपूर्ण था। डा० कनिहम आदि प्रत्नतत्त्वविदोंके अनुसन्धानके फलसे इसके भीतर छिपा हुआ ऐतिहासिक रत्न आनिष्टत हुआ है। ईसा जन्मके ४ सदी पहले यह स्थान बौद्धकीर्त्तिका केन्द्रस्थल था। यहाकी बौद्धकीर्त्ति जगत्का एक प्राचीन रत्न है। इस ध्व साव शिष्ट कीर्त्तिस्तूपका व्यास प्राय ६८ फुट और चारों ओरके प्राचीरका व्यास ८८ फुट है। प्रत्नरगठिन बाहरवाले द्वीवार टूट फूट गई है और उसका कुछ अंश आस पासके ग्रामवासी उठा ले गये हैं।

इसके भीतरकी स्तम्भश्रेणी, द्वारद्वेज और चतुर्दिक्कथ प्राचीरका शिल्पनैपुण्य देखने योग्य है। डाक्टर कनिहम उसके द्वार परकी शिलालिपिको अक्षरमाला देल कर अनुमान करते हैं, कि सिन्धुपारसिन्ध वैदेशिक

कारोगरीकी श्रुत्तराजने मध्यभारतसे बुलाया था। उनकी यह अक्षरकीर्त्ति आज भी अधूण रह कर पूर्णगीरवकी घोषणा करती है। बहुतांका अनुमान है, कि इस सुट हन् बौद्धकीर्त्तिकारि प्राचीर सम्राट् अशोकके राज्यकाल में बनाया गया होगा।

इस प्राचीन मन्दिरमें जो सब खोदित चित्र हैं, वे बौद्धोंके जातक ग्रन्थसे गृहीत हुए हैं \*। पतद्विभ्र कुछ चित्रोंमें नीचे उसका विवरणज्ञापमलिपि लोदित है। बौद्धचित्रको छोड कर यहा हिन्दू चित्रका भी अभाव नहीं है। अयोध्यापति रामचन्द्र, जनकराज, शीतलादेवी, यक्ष थीर यक्षिणी आदि मूर्त्ति तथा अन्यान्य नानाचित्र परिशीलित हैं। इन चित्रोंकी वैशभूपासे उस समयके परिच्छेदपरिपाटन उपलब्ध हो सकता है। इस ध्वसा प्रशेषके कुछ अंशको ले कर पास हीमें एक और भी यद्विया आधुनिक मन्दिर बनाया गया है। उसमें भी अनेक हिन्दू देवदेवियोंकी मूर्त्ति देवनेमें आती हैं।

भररति ( हि० खी० ) भ्रान्ति दायो।

भराई ( हि० खी० ) १ एक प्रकारका कर जो पहले बना रखमें लगता था। इस करमेंसे आधा कर सप्रहकरनेवाले राजस्वमंचारीको मिलता और आधा सरकारमें जमा होता था। २ भरनेकी क्रिया या भाव। ३ भरनेकी मजदूरी।

भराडी—दाक्षिणात्यवासी एक जाति। ये कुनबीजातिके चशधर कहे जाते हैं। यह तत्र सडकों पर डमरू बजा कर ये अम्बावाड़े वा समरटङ्गादेवीकी महिमा गाते फिरते हैं। शिक्षा ही इनकी प्रधान उपजोयिका है। इनमें दो स्वतन्त्र थोक हैं, एक गद् अर्थात् शुद्ध भराडी और दूसरा बन्दु अर्थात् सङ्कर भराडी। इन दोनों श्रेणियोंमें पररूपर विवाहादि सम्बन्ध नहीं होता। ये साधारणतः काले और बलिष्ठ होते हैं। गाय और सुधरके मासको छोड कर अन्य ग्राम, मत्स्य और मद्यमें इनकी विशेष प्रीति है। आकारानुरूप भोजन करनेमें समय होने पर भी ये रन्धनकार्यमें नियोग निपुण होते हैं। मद्यके सिवा गाना और तम्बाकू भी इहे प्रिय है।

\* इसजातक, विरजातक, भृगजातक, मनादरीयजातक, यवमन्त्रिकय जातक विपहरयीय जातक, लज्जनातक प्रभृति।

(१) भौगोलिक टनेमीने इस स्थानको *Birdotis* नामसे उल्लेख किया है। मानचित्रमें इत्का वर्साद नाम लिखा है।



ये मराठो भाषामें बात करते हैं और साधारणतः इनकी पोशाक महाराष्ट्रीयोंकी तरह होती है। स्त्री और पुरुष दोनों ही गहने पहनते हैं। पुरुष मिर घुटा कर चोट्टी रखते हैं। 'गोन्धल' नाचके समय ये लोग नाना अलङ्कारोंसे सुसज्जित हो कर गाजे बाजेके साथ तुलजा भवानी और भैरवनाथके गीत गाते हैं। नरनारायणउत्सवके समय इस नृत्यगीतके लिए प्रत्येक घण्टासे इन्हें धान्यादि की कुउ न कुउ वार्षिक नहायता प्राप्त होती है। यह नृत्य और देवदेवियोंका सङ्गीत सूर्यास्तमें ले कर प्रातः साठ तक होता है। इस तरह नाच गा कर ये जो कुउ भी अर्थ उपाजन करते हैं, उसीसे इनकी गुजर हो जाती है। भविष्यके लिए ये कभी भी अन्न इकट्ठा करके नहीं रखते। ये लोग साफ सुन्दरे होते हुए भी आलसी बहुत हैं।

दृष्टि होने पर भी इनकी धर्ममें मति पूर्णतः है। ये सभी हिन्दू देवदेवियोंकी भक्ति करते हैं। प्रत्येक पूजा और पर्वोदिके समय उपवास करते हैं। जेजुरि, माहुर, पण्डरपुर, सोनारी, तुन्जापुर आदि तीर्थस्थ देव दर्शनके लिए इनमें बड़ी उत्सुकता पाई जाती है। सर्वसाधारण इन्हें नाथ सम्प्रदायी समझते हैं। ग्रामके जोशी लोग इनके यहा पीरोहित्य करते हैं, फिर भी 'कनफटा' गुसाई-से मन्त्र प्रहण करने हैं। गुरुके प्रति इनकी अचला भक्ति है।

डाहन, प्रेतयोनि आदि पर इनका विश्वास है। जन्म, कर्णवेध, त्रिवाह और मृत्यु विषयक चार संस्कार इनमें यथारोति पाये जाते हैं। ५से ८ वर्ष तक बच्चेके कान छेड़ दिऐ जाते हैं। उस समय गुरुके नानने बालक वा बालिकाको कान छिदा कर पीतल या सींगकी चाली पहनायी जाती है।

इनमें बालविवाह, बहुविवाह और त्रिधवा विवाह प्रचलित है। त्रिवाह संस्कार लगभग अन्यान्य निष्टष्ट जातियोंके समान है। सामाजिक भगडा उपस्थित होने पर इन लोगोंको पचायत समाज आदेश मानना पडता है। चौगुला, पाटील और चारभरी लोग इनके नेता हैं। अन्यान्य सभी लोग उक्त नेताओंका विशेष सम्मान करते हैं।

इनमें शत्रुदेहको धैलेमें भर कर समाधि तैरमें ले जाने

का प्रथा है। उन समय अशौचका प्रथा अधिकारी मिट्टीके बरतनमें आग रख कर आगे आगे और अन्यान्य लोग जिद्दा बजाते हुए पीछे पीछे चलते हैं। समाधि स्थान आने पर, शत्रुदेह पर भस्म लपेट कर उसे जमीन में गाड देते हैं। गाडनेसे पहले मृतदेह पर फूल, त्रिलपत्र और पानी भी देते हैं। अशौचाधिकारी धूप ले कर तथा और सब उसको पीछे पीछे ब्रह्मकी प्रदक्षिणा देते हैं। शत्रुबाहिगण मृतके घर जा कर नामके पत्ते चानाके याद अपने अपने घर चले जाते हैं। तीसरे दिन अशौचाधिकारी फिर समाधिस्थानमें जाते और पूर्ववत् ब्रह्ममें फूल आदि चढा आते हैं। उसके बाद उसे शव वार्षिकीका नैधा मलना पडता है। इनमें प्रष्ट अशौच वा पिण्डदानादिकी व्यवस्था नहीं है। तीन दिनके बाद किसी भी दिन भोज देने मात्रसे ये सब कार्यसे निवृत्त हो जाते हैं।

मरापूरा (हि० पु०) १ समग्र, जिसे किसी चीजका अभाव न हो। २ जिसमें किसी बातकी न्यूनता न हो। भराज (हि० पु०) १ भरनेका भाव, भरत। २ भरनेका काम। ३ कर्मिटा वाढनेमें पक्षियोंके बीचके रधानको तागोंसे भरना।

भरिणी (स० स्त्री०) मनो विभक्ति हरतीति भृ णिनि गौरादित्वात् ङीप्, षुपोदरादित्वात् पूजादीर्घे माधु। हरिद्वर्ण, पीला।

भरित (हि० स्त्री०) भरोऽस्य जात इत्च, षुपोदरादित्वात् माधु। १ हरिद्वर्ण, पीला। २ पुष्ट, भरा हुआ। ३ जिस पर भरण या पालन पोषण किया गया हो।

भरिमन् (स० पु०) भृ (ट ष्ट ष्ट स्तृश्रम्य इमनिच्। उष् ४।१७) इति भावे इमनिच्। १ भरण। २ कुटुम्ब।

भरिया (हि० वि०) १ पूर्ण करनेवाला, भरनेवाला। २ ऋण भरनेवाला, कर्ज चुकानेवाला। (पु०) ३ वह जो बरतन आदि ढालनेका काम करता हो, ढलाई करने वाला।

भरिय (स० स्त्री०) भरणकुशल।

भरी (हि० स्त्री०) एक तील जो दश माशे या एक रुपये के बराबर होती है।

भर (स० पु०) भरति विभक्ति जगदिति भृञ् भरणे

(भृगुश्रीवृ चरितचरितनिधनिमिमस्विन्म्य उ । उष्ण १।७)  
१ त्रिण्यु । २ समुद्र । ३ स्वामो । ४ स्वर्ण ५ शिप ।

भरु (हि० पु०) गोक, वजन ।

भरुआ (हि० पु०) १ टसर २ । भरुआ वना ।

भरुफ (स० पु०) दक्षिणद्वगमेद ।

भरुक्खळ (स० पु०) प्राचीन द्वगमेद । यह भरोच नामसे ही प्रसिद्ध है । भरोच देखो ।

भरुका (हि० पु०) पुरखेके आकारका चुकड़ ।

भरुच (स० पु०) मेति शब्देन रजतीति रुज क । क्षुद्र शृगाल, छोटा गीदड़ ।

भरुदक (स० क्लो०) भृ वाहुल्यत् उद, सक्षया क्त् ।  
भृष्टामिय, भृता हुवा मास ।

भरुहाना (हि० कि०) १ धमण्ड करना, अभिमान करना ।  
२ बहकाना, धोषा देना । ३ उत्तेजित करना, बढावा देना ।

भरुही (हि० स्त्री०) १ कलम बनानेकी एक प्रकारकी कच्ची किलक । २ भरतपत्नी देखो ।

भरुंड (हि० पु०) रड दलो ।

भरु (सं० शब्द०) भृ वाहुल्यत् ५ । सप्राम ।

भरुङ्गा—काश्मीर राज्यके अन्तर्गत एक उपत्यका विभाग । यह अक्षा० ३३ २०' से ३३ ३०' उ० तथा देशा० ७५ १०' ने ७५ ३६' पू०के मध्य अवस्थित है । यह स्थान सुग्ग्य गिरिकन्दर और निर्भर्रादिसे परिशोभित है । आचार्याद नामक विख्यात प्रकरणसे भरुङ्गी नदी निकली है । मोरवल नामक गिरिमड्ड हो कर इस उपत्यकामें पहुँचते हैं ।

भरुङ्गा—काश्मीरराज्यमें प्रवाहित एक नदी । भरुङ्गा उपत्यका देशमें प्रवाहित होनेके कारण इसका भरुङ्गी नाम पडा है ।

भरुंड (हि० पु०) दरवाजेके ऊपर लगी हुई यह लकड़ी जिसके ऊपर दीवार उठाई जाती है । इसे 'पटाव' भी कहते हैं ।

भरुपुत्रा (स० पु०) सोमका नामान्तर ।

भरुहनगरी (स० स्त्री०) चर्मण्यती नदीके सङ्गम पर अवस्थित एक नगर । यहाके राजा भगवान्द्वेजके राज्य काटमें पण्डितपर नीलकण्ठ द्वारा श्राद्धमयूच रचा गया ।

भरुैया (हि० त्रि०) १ पोपफ, पालन करनेवाला । २ भरने वाला, जो भरता हो ।

भरोच—बम्बई प्रदेशका पत्र जिला । यह अक्षा० २१ २५' से २० १५' उ० तथा देशा० ७० ३१' से ७३ १०' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण १४६७ वर्गमील है । इसके उत्तरमें माही नदी, पूरुमें धडोदा और राजपिण्डोना नामान्तरराज्य, दक्षिणमें त्रिम नदी तथा पश्चिममें कोम्ब (रम्भात उपसागर है ।

रम्भात उपसागरवर्ती स्थान पलिमय मट्टीसे गठित है । बीचमें बालुनास्तूपको तरह इतस्तत विक्षिप्त नितने गण्डशैल सागरापङ्कलके वाष्प रूपमें दण्डवमान हैं । माही और त्रिम नदीके अगवा यहा धाघर और नर्मदा नामको और दो नदी बहती हैं । त्रिनारा अधिक ऊँचा होनेसे नदीके जल द्वारा ऐनोबारीमें सुविधा नहीं होती । समतल जमोनका जल गड्डेमें गिर कर नदीमें अथवा न्यय पश्चिमउपतृल्वर्ती ढालू जमानसे ढाडीमें गिरना है । धाघर नदीके विस्तृत मुहानेके सिवा यहा मोटा, भूची और उद नामक कितनी खाडिया हैं ।

यहाकी मिट्टी काली होनेसे रूह बहुतायतसे उपजता है । इसके धलावा यहा आम, ताड़, इमली, बूलू आदि वृक्ष भी हैं । इस ताड़ पेड़के रमसे एक प्रकारकी शराब तैयार होती है । भरोच नगरसे ६ कोस उत्तर नर्मदा नदीके त्रिनारे पर छोटे द्वीपमें 'करीरुद' नामका एक बडा वटवृक्ष है । साधुश्रेष्ठ कवीरने इस वृक्षको डालसे दत्तजन किया था, ऐसा सुना जाता है ॥

वर्तमान भरुच (Broach) जिलेका प्राचीन नाम

० यूरोप भ्रमणकारके उपानम मालूम होता है, कि १७८० ई०म इस वृक्षम ३५० गडे और ३ हजार छोटे छाट वने थे । मूल तनकी परिधि प्राय २००० फुट था । एक समय इस वृक्षन नीचे ७ हजार मनने आश्रय गहण किया था । १८२६ ई०म निशाप हन्टर (Bishop Heber) ने इस वृक्षको देख कर लिखा है, कि कुछ दिन हुए, नदीकी बाण्ड इगगा कुछ असा बह गया है । अभी भी जो मीरू है उसके जोड़का कुछया भर तहीं है । काल और वन्यान्त प्रभातसे इसका पूरुगीरय जाता रहा है ।

भरकच्छ है। पाद्यवात्य भौगोलिक टलेमी तथा पेरीप्लस ने 'बरुगाज' (Barugaza) ग्रन्थमें इस स्थानका नामो ल्लेख किया है। हिन्दुओंके प्राचीनपुराणमें इन लोगों का तथा उस देशके वासियोंका उल्लेख रहने पर भी इन का उस प्राचीनतम समयका इतिहास नहीं पाया जाता। गिलालिपि पढ़नेसे जाना जाता है, कि ४थी वा ५वीं शताब्दीमें गुर्जरराजोय दह्वचशर्धरोंने भरकच्छमें अपना राजत्व फैलाया था \*। वलभोराज ४थे ध्रुव सेनने ३३० शकमें भरकच्छको विजय कर शासन विस्तार किया था।

गुर्जरराज जयभट्ट और दह १म पहले सामन्तराज कह कर परिचित हुये थे ॥ ४०० ४१७ शकमें उत्कीर्ण २य दह ( प्रशान्तराज ) की गिलालिपिमें एकमात्र महाराजा धिराज नाम मिलता है। वाद इसके यहा राष्ट्रकूट राज व शका श्रम्युदय हुआ। कावी नगरसे प्राप्त राजा ३य गोविन्दकी ७४६ शकमें उत्कीर्ण शिलालिपिसे जाना जाता है, कि भरोचनगरमें उा लोगोंकी राजधानी थी (१)।

१६१६ ई०में वाणिज्य विस्तार हेतु अङ्गरेजोंने यहा एक कोठी खोली। इससे पहले यह स्थान देशीय सामन्तों और मुसलमान नवानोंके अधिनारमें था, किन्तु उस समय यहा कोई उल्लेखयोग्य घटना न घदी। १७५६ ई०में सुराष्ट्र दुर्ग पर चढाईके बाद, अङ्गरेजोंने पहले स्थानीय शासनकर्त्ताओंके साथ राजकीय सम्बन्ध जोडा था किन्तु सुराष्ट्रमें राजकीय शासनदण्ड प्रारण करनेके कुछ दिन बाद राजस्वसक्रान्त प्रश्नोत्तरमें अङ्गरेजों और भरोचपतिके बीच विरोध खडा हुआ। तदनुसार १७७१ ई०में सूरतके नवाबके विरुद्ध अङ्गरेजी सेना भेजी गई। अङ्गरेजी सेना इस युद्धमें पराजित हो वापस आई, किन्तु दूसरे वर्ष भरोच नवाबके अङ्गरेजोंकी स्वीकृत चार लाख रुपये देनेमें अक्षम होने पर १७७२ ई०में अङ्गरेजोंने पुन

भरोचपतिके विरुद्ध युद्धयात्रा कर दी। इस युद्धमें भरोच नगर और १६० गांव अङ्गरेजोंके हाथ लगे तथा अङ्गरेज सेनापति ओडाररण मारा गया। १७८३ ई०में अ कलेश्वर, हसौत, देहेजवाड और आमोद आदि प्रदेश अङ्गरेजाधीन रहे; सालवाईकी सन्धिमें अङ्गरेजोंने पूर्व-जित राज्य महादजी सिन्धियाको और परजसों अधिष्ठत स्थान पेशवाके हाथ सौंपा। १६ वर्ष तक यह स्थान महाराष्ट्रोंके अन्तर्भुक्त था। १८०३ ई०में अङ्गरेजी सेनाने सिन्धेराजके अधिष्ठत गुजरात प्रदेश पर चढाई की और भरोच नगर अधिकार कर लिया। १८१८ ई०में पूना की सन्धिके बाद तीन और उपविभाग इसके अधीन हुए। १८२३ ई०का कोलिचिट्रोह और १८५७ ई०का मुसलमान तथा पारसीगणोंका परस्पर विवाद यहाकी उल्लेखयोग्य घटना है।

विचार विभागकी सुविधाके लिये यह जिला आमोद, भरोच, अ कलेश्वर, जम्भूसर और वस्रा नामक पांच प्रधान नगरों के नाम पर ही उक्त पांच तहसील सगठित की गई। यहा १५ प्रधान तीर्थ हैं जिनमें ११ हिन्दूके और शेष मुसलमानके हैं। शुक्र तीर्थ, भारभूत और करोड नामके स्थानमें बडा मेठा लगता है। इसमें कभी कभी लाखसे भी ऊपर मनुष्य समागम होते हैं।

१८२० ई०में यहा देगम, टकारी, गन्धार, देहेज भरोच नामक पांच बन्दरगाह थे। उनमेंसे भरोच और टकारी बन्दरमें आज भी वाणिज्य चलता है।

२ उक्त जिलेका एक उपविभाग। भू परिमाण ३०२ वर्गमील है। यहाका नर्मदानदी तीर्थस्वी स्थान उर्धरा है।

३ गुजरात प्रदेशके भरोच जिलेका प्रवान नगर। यह नर्मदा नदीके दक्षिण किनारे मुहानेसे १५ फीसकी दूरी पर अवस्थित है। यह अक्षा० २१ ४३' ३० तथा देशा० ७३ २' ५०के मध्य अवस्थित है। नर्मदा नदीके उस पारसे देखनेसे नगरकी शोभा अति मनोरम जान पडती है। स्थानीय प्रवाद है, कि अनाहिल वाडपति सिद्धराज जयसिंहने १२वीं शताब्दीमें नदीके किनारे प्रस्तर-प्राचीर तथा अपर तीन दिशाओंमें प्राकार और परिखादि निर्माण किये थे। मिरट् ६ सिंके

\* Indian Antiquary vol. 1 p, 110 115

१ कारण, शिलालिपिमें उनकी ठाडुर, समधिगत पद्ममहागन्ध और महावामन्ताधिपति आदि उपाधि देती जाती है। Ind. Ant. vol III, p 633 vol. II p, 199

(१) Indian Antiquary vol. v, p, 151

न्दिर नामक मुसलमानी इतिहास पढनेसे मालूम होता है, कि अहमदनगरराज सुलतान बहादुरकी आशासे १५२६ ई०में यहाका गढ और परिछा आदि निर्मित हुए थे। १६६० ई०में मुगल सम्राट औरङ्गजेबने नगर प्राचीर नष्ट कर दिया था। इसके २५ वर्ष बाद मराठीसेनाके आक्रमणसे नगर रक्षाके लिये उन्होंने फिर इस प्राचीरका पुनर्निर्माण कराया था। भूमिभागके प्राकारादि-मालूमने प्रिय हो गया है, यहा तक कि वही जहाँ उमका चिह्न-माव भी नहीं है। नटोनी गढसे नगरक्षेत्र दक्षिणकी ओर को प्राचीर है यह प्राय ४० फुट उंचा और १ मोल लम्बा है। वह प्रस्तर प्राचीर अब भी पूर्णमस्कारमें है। इसका कोई स्थान भंग नहीं हुआ है। इस प्राचीरमें पाच बड़े द्वार हैं। प्राचीरका उपविभाग ऐसा प्रशस्त है कि इसके ऊपर आ जा सकते हैं। इस दीवारका मध्यस्थल ६०से ले कर ८० फुट ऊंचा है।

किन्तु इस प्रकार है, कि शृगु नामक एक महा मुनि यहा वास करते थे। उन्हीके नामानुसार यह स्थान शृगुपुर नामसे ख्यात है।

१५वीं शताब्दीमें यह स्थान वरगजा या बडगन नामसे घोषित हुआ। उस समय यह नगर पश्चमी भारतमें एक प्रधान बन्दरगाह और राजधानीरूपमें परिगणित था। २री शताब्दीके बाद यहा राजपूत राज वंशका राजपाट स्थापित हुआ। ७वीं शताब्दीमें चीन परिघाजक यूनचुबङ्गकी वर्णनासे घात होता है, कि यहा १० बौद्धसङ्घाराम, १० मन्दिर और ३ सौ मिथु रहते थे। इसके अर्द्ध शताब्दीके बाद मरोच नगरका समृद्धि गौरव चारों तरफ फैल गया। वाणिज्यसमृद्धिके लोभमें पड कर मुसलमानोंने उस समय पश्चिम भारतमें युद्धके लिये प्रस्थान किया। अतहिलवाडके राजपूतराजाओंके राजत्वकाल (७४६-१३०० ई०) में इसका वाणिज्य प्रभाव अत्युत्तम था। आहिलगाडराज वंशका अन्त पतन होनेसे मरोचराज्य विभिन्न राजाओंके हाथ लगा तथा उस विशृङ्खलताके समय वाणिज्यका भी

हास हुआ। १३६१ १५६२ ई० तक यह स्थान अहमदाबादके मुसलमान राजवंशके अंतर्भुक्त रहा। उसमेंसे १५३४ ३६ ई० दो वर्ष तक सम्राट हुमायूँ का एक सेनापति यहाका शासनकर्त्ता हुआ था। उस समय १५३६ और १५४६ ई०में पुर्तगोजीने दो बार इस नगरको लूटा। १५७३ ई०में अहमदनगरके अन्तिम मुसलमानराज ३य मुजफ्फरशाहने सम्राट अकबर शाहकी मरोच सपुर्त किया। दश वर्ष बाद मुजफ्फर स्वाधीन होने पर भी मोगल राजके पराप्त हुए। १६१६ ई०में अङ्गरेज वणिक्ोंने तथा १६१७में ओलन्दाज वणिक्ोंने यहा फोटी खोली। औरङ्गजेबके समय मुगलशाकि हीन होती देव महाराजोंने १६२५ और १६८६ ई०में इस स्थान पर आक्रमण किया और लूटा। दूसरी बार उनकी चढाईके बाद सम्राट औरङ्गजेबने इसके प्रकारादि पुनर्निर्माणकी आशा दी। नगरके सस्त्रत होनेसे उ होने इसका सुभावाद् नाम रखा था। निनाम उल मुकने १७३६ ई०में मराचके मुसलमान शासनकर्त्ताको नगरीकी उपाधिसे भूषित किया। १७७१ ई०में विफलमनोरथ हो पुन नय उद्यमसे अगरेजोंने १७७२ ई०में मरोच बन्दरको दखल किया। १७८३ ई०में अगरेजोंने सिन्दराजके हाथ इसे समर्पण कर फिर १८०३ ई०में छीन लिया।

समुद्रतीरवर्ती इस भग्नुच्छनगरने बहुत प्राचीन कालसे वैदेशिक वाणिज्यमें विशेष उन्नति की थी। इसा जन्मके बहुत पहलेसे पश्चिम एशियाके साथ भारतीय वाणिज्यका सन्न था। इस मरोच नगरसे पण्यद्रव्यादी की जहाज द्वारा पश्चिममें आदेन और लालसागर तीरवर्ती बन्दरोंमें तथा पूरुब गाल, यन्दीप, सुमात्रा और बहुत दूर चीन तक रत्नो होती थी। अथी बम्बई, सुराष्ट्र और कच्छदेशके माण्डवी बन्दर तक मरोचके जलपथका वाणिज्य फैला हुआ है। सुतो कपडें, लौड, काष्ठ, सुपारी

\* पुर्तगोजीगण्य इस नगरकी समृद्धिकी कथा उल्लेख कर गये हैं। यह नगर अद्यावत्तिकाभास परिशोधित तथा इतिहास द्वारा निर्मित चित्रो द्रव्य और यद्मगन्धमूर्तियों पूर्ण था। इस समय यहासे सुल्हा उच्छ्रेय नत्र पुन घटते थ।

Decadas de conto १, p, 325

\* यहा बहुसंख्यक भार्गव ब्राह्मणोंका वास है। वे अपनोंको महर्षि शृगुके वंशधर बतलते हैं।

गुड, चावल आदि यहाँना प्रधान वाणिज्य द्रव्य है। यहाँका 'घास्ता' नामक सूक्ष्म वस्त्र और अन्यान्य प्रकारके केलिको घरके हेतु ओलन्दाज और अङ्ग्रेज वणिक् यहाँ कीठी गोलनेको वाध्य हुये हैं। बम्बई, सुराद्र, अहमदाबाद आदि स्थानोंमें कपड़े चुननेकी फल आदि स्थापित होने पर भी यहाँना हाथका ताल (देशीय वस्त्रयनयन्त्र) आज भी अप्रतिहत है। केरलमात्र कुछ जुलाहे उन्नतिको आग्रासे बम्बई गये हैं। इस प्राचीन नगरमें बहुत सी प्राचीन हिन्दू और मुसलमान कीर्तिया रक्षित हैं। मुसलमानोंके आधिपत्यकालमें बहुत से प्राचीन हिन्दू, जैन या बौद्ध मन्दिर विध्वस्त हुए तथा उसी जगह उसके प्रस्तरादि द्वारा मुसलमानकी मजजिद बनाई गई हैं।

१ जमा मसजिद, २ बाबा रहन साहबकी दरगाह, ३ इद्रुस मसजिद, ४ छत्रपीरका समाधि मन्दिर, ५ माटासा मसजिद, ६ रोठकी हबेयो, ७ भृगुस्थान या आश्रम, ८ कजोरस्थान, ९ गङ्गानाथ महादेव, १० अम्बाजीमाता, ११ पिङ्गलेश्वर (दशाश्वमेध तीर्थ), १२ लालुभाईका वाव, १३ खेवहीनका वाव, १४ आलन्दोंका कस्बिस्तान, १५ आदीश्वर भगवान्, १६ बहुचाराजी माता, १७ नारायणस्वामी, १८ साठ धोवनकी धर्मशाला, १९ सोमनाथ, २० भृगुभास्करेश्वर, २१ भूतनाथ, २२ काशीशिवभ्रमर, २३ मनसुवतस्वामी, २४ देवासर (जैनमन्दिर), २५ चोधि वट्टो मन्दिर, २६ पार्थनाथमन्दिर, २७ सागरगञ्जका आदीश्वर, २८ ओलन्दाजोंकी कीठी, २९ भोडभञ्जन कूप, ३० नीलकण्ठ महादेव और ३१ मिन्दवाई माताका मन्दिर आदि देवनेकी चीज हैं। पारसियोंकी श्रमज्ञानपुरी (Tower of silence) देवनेसे अनुमान होता है, कि पारसियोंने यहाँ ११वीं शताब्दीके प्रारम्भमें आकर वास किया है।

भरोष्ठी—आड्यजातीय रागत्रिशेष। यह पूरिया, गीरी और श्यामयोगसे उत्पन्न है।

भरोसा (हि० पु०) २ आश्रय, आसरा। २ अरलम्ब, सहाय। ३ आशा, उम्मेद। ४ दृढविश्वास, यकीन। भरोसी (हि० वि०) १ भरोसा या आसरा रखनेवाला, जो किसी बातकी आशा रखता हो। २ आश्रित,

जो आश्रयमें रहता हो। ३ विश्वसनीय, जिसका भरोसा किया जाय।

भरौंट (हि० पु०) राजपूतानेमें अधिकतासे मिलनेवाली एक प्रकारकी जङ्गली घास। पशु इसे बड़े चावसे खाते हैं। इसमें छोटे छोटे दाने या फल भी लगते हैं जिनके चारों ओर बट्टि होते हैं।

भरौती (हि० स्त्री०) वह रसीद जिसमें भरपाई की गई हो, भरपाईना कागज।

भरौना (हि० वि०) बोकल, वजनी।

भर्ग (स० पु०) भृज्यते कामादिरनेनेति भृज् 'हृत्प्रचेति' घञ्। १ शिव। २ वीतिहोत्रके पुत्र। ३ आदित्यानर्गत तैत्तिरीय। ४ भर्जन भाङ्गमें भूना हुआ अन्न। ५ धृष्टकेतु वशीय नृपमेद। ६ देशमेद।

भर्गतीर्थ (स० स्त्री०) तीर्थमेद।

भर्गभूमि (स० पु०) नृपपुत्रमेद।

भर्गस् (स० स्त्री०) भर्जत इति भृज् भर्जने (अञ्चण्विभृजीभृजिभ्य क्त्विच्)। उण् ४।२।१५ इति आसुन्न, कर्मगश्चान्तदेशः। ज्योति, दीप्ति, चमक।

भर्गस्वत् (स० स्त्री०) दीप्तिमत्, मधुर।

भर्गादि (स० पु०) पाणिन्युक्त शब्दगण। यथा—भर्ग, कल्प, केकय, कश्मोर, साल्व, उरस्, कौरथ्य।

भर्गाशन (स० पु०) एक गोत्र प्रवर्त्तक ऋषिका नाम।

भर्ग्य (स० पु०) भृज् (अहलोपर्यन्त)। पा ३।१।२२४ इति ण्यन्, चञीगिति कुट्य। भर्ग्य।

भर्कुन्तु—एक कवि। शाङ्गधरपदानेमें इनका उल्लेख है।

भर्जन (स० स्त्री०) भृज् ल्युट्। भृष्टि, भुना हुआ अन्न।

भर्णस् (स० स्त्री०) भृ अस्तु, गुणागम। भरणकारक।

भर्त्तव्य (स० स्त्री०) भृ-तन्व्य। भर्णाय, भरण पोसन करने योग्य।

भर्त्ता (हि० पु०) भर्तृ देतो।

भर्त्तार (हि० पु०) स्वामी, प्राधिपन्।

भर्त्तृ (स० पु०) विभर्त्ति, गुणाति, पालयति धारयतीति या भृञ् धारणपोषणयो (यञ्नुक्चो)। पा ३।१।२३३ इति रुच्। १ अधिपति, मालिक। पर्याय—अधिप, ईश, नेता, परिदृढ, अधिभू, पति, इन्द्र, स्वामी, नाथ, आर्ष,

प्रभु, ईश्वर, विभु, ईशित, इन, नायक । २ स्वामी, खानिन्द । ३ विष्णु । ( ति० ) ४ धाता और पोष्टा । भर्तृकृत्य ( स० कृ० ) खोके प्रति स्वामीका कर्त्तव्य, पत्नीको स्वास्थ्यरक्षा और गर्भाघातादिके सम्बन्धमें पतिका कर्त्तव्यार्त्तव्य भावप्रकाशमें इस प्रकार लिखा है—

“आयु क्वयमयाङ्गतां प्रथमे दिवस खियम् ।  
द्वितीयेऽपि दिन रत्यै त्यजेदनुमतीं तथा ॥  
तत्र यन्वाहितो गर्भा जायमानो न जीवति ।  
आहितो यत्सुतीयेऽह्नि स्वत्पायुर्विकलाङ्गन ॥  
अनन्वयुधीं पथी त्यादृष्टमा दशमी तथा ।  
द्वादशी वापि या रात्रिस्तस्या तां विधिना भजेत् ॥”

भर्तृघ्नो ( स० खी० ) भर्त्ता हन्तीति हन ढक् डाप् । पतिघातिनो ।  
भर्तृत्व ( स० कृ० ) भर्तृभाः त्व । पतित्व, पतिका भाव या धर्म ।

भर्तृदारक ( स० पु० ) भर्त्ता द्वियते इति दृङ् आदरे कर्मणि घञ् तत स्वार्यं कन । नाट्योक्तिमें युवराज । नाटकमें युवराजको भर्तृदारक नामसे संबोधन किया जाता है ।

भर्तृप्राप्तियत—स्वामिलाभके लिये स्त्रियोंका जाचरणीय यतमेद । बराहपुराणमें लिखा है, कि वासन्तो शुक्र पक्षकी द्वादशी तिथिको यह यत किया जाता है ।

( बराहपुर० २६६ अध्याय )

भर्तृभट्ट—गुहिलवंशीय एक राजपूत राजा । ये मङ्गलके बाद वित्तोरेके सिंहासन पर बैठे । उनके द्वारा प्रतिष्ठित मन्नगढ और धरणगढ आज भी विद्यमान हैं । उनके १३वें पुत्र मालव और गुर्जरराज्यमें राज्यप्रतिष्ठा करके माहेंवा निहोद नामसे परिचित हुए थे ।

भर्तृमती ( स० खी० ) भर्त्ता विद्यतेऽस्य मतुप् । स्वामि युक्ता स्त्री, सधवा स्त्री ।

भर्तृमैण्ड—एक प्राचीन कवि । श्रीकण्ठरचित शाङ्गधर-पद्वति और सुश्रुतिलकमें इसके रचित श्लोक उद्धृत हुए हैं ।

भर्तृयक—एक प्राचीन पण्डित । इन्होंने कात्यायन श्रौत सूत्रका एक भाग्य और श्राद्धकल्प प्रणयन किया ।

कात्यायन श्रौतसूत्रभाष्यके प्रणेता अनन्त और याज्ञिक-देव तथा हेमाद्रि, शुकपाणि आदिने इनका नामोल्लेख किया है ।

भर्तृव्रता ( स० खी० ) भर्त्ता एव व्रत यस्या । पति-व्रता स्त्री ।

भर्तृसात् ( स० अ० ) भर्त्ता साति । भर्त्ताके अधीन ।

भर्तृस्नान ( स० कृ० ) १ तीर्थमेद । २ पतिस्नान ।

भर्तृभ्यामिन्—एक प्राचीन कवि । मट्टि दण्डो ।

भर्तृहरि ( सं० पु० ) स्वनामप्रयात एक वैद्याकरण और कवि । आप उज्जयिनी-राज जिन्ममादित्यके भ्राता थे । राजावलोमें लिखा है गन्धर्वसैनिके औरस और दासीके गर्भसे इनका जन्म हुआ था ।

“अथ कालेन क्रियता सममाणा महीतले ।

दास्यां गन्धर्वसैन्यु पुत्रमेकमजीजनत् ॥

तस्य भर्तृहरीत्येवं नाम चक्रे महामति ॥”

( राजावल्लो ४११-२ )

वत्सोस सिंहासनमें इनका विचरण इस प्रकार मिलता है—जिन्ममादित्यके पिताके औरस और उनकी मातृ सप्तकी गर्भसे भर्तृहरिने जन्मग्रहण किया था । विक्रमादित्यके परामर्शसे उनके मातामहने उन्हें राजसिंहासन सौंप दिया । ये अत्यन्त स्वैर्य थे । पीछे खीकी दुश्चरित्रताकी देण कर ससार त्यागो हुए । इनके द्वारा प्रणीत हरिकारिका, वाक्यप्रदीप और शृङ्गारगतकादि ग्रन्थ विशेष प्रसिद्ध हैं । बहुतसे विद्वान् इनके इस राज भ्रातृत्वकी अनुमान सापेक्ष समझते हैं । प्रवाद है, कि राजा भर्तृहरि अपनी प्रियतमा पत्नीके चरित्रमें सन्देह हो जानेसे राजपाट छोड़ कर कागो चले गये थे । यहां सन्यासमत ले कर उन्होने योगधारण किया था । उसी समय उन्होने शृङ्गारगतक, नीतिशतक और वैराग्यशतक नामक सौ सौ श्लोकीके तीन ग्रन्थ रचे थे । इन ग्रन्थोका अनुवाद १६७० ई०में पहले फरासी भाषामें, फिर लैटिन, जर्मन और अङ्ग्रेजी भाषामें हुआ । व्याकरण शास्त्रमें भी इनकी विशेष व्युत्पत्ति थी । इनका वाक्यप्रदीप या हरिकारिकासूत्र पाणिनिको तरह आदर पाता है । इसके सिवा आपने महाभाष्यदीपिका और महाभाष्यलिपदी व्याख्या नामक दो ग्रन्थ और भी लिखे

हैं। किन्हीं किन्हींना कहना है, कि मट्टकाल्यके प्रणेता ये ही थे। प्रमाद है, कि ये अपने भाई विक्रमादित्यके जरिये मारे गये थे। विक्रमादित्य देखो।

२ रागिणीप्रियेय, एक रागिणीना नाम। इन्से भट्टियारी या भट्टियाला भी कहते हैं। यह रागिणी ललित और परनयोगसे उत्पन्ना है। सा वादी है और न सजवादी। सखात्र इस प्रकार है—“ऋ ग म प ध नि सा” (सङ्गीतरत्ना०)।

भर्तृहरियोगी—साधुसम्प्रदायविशेष। विक्रमादित्यके भाई भर्तृहरिने इस सम्प्रदायको परिचरत्न किया। राजा भर्तृहरिने किन्सी योगीका शिष्यत्व ग्रहण किया था, इस कारण उनके प्ररचित सम्प्रदायिकगण भी योगी नामसे अभिहित हुए हैं। ये लोग हाथमें वाद्ययन्त्र लिये भर्तृराजके गुणकोत्तन किये घूमते हैं। काशीधामके राजरी तालाब नामक स्थानमें उनका प्रधान अड्डा है। ये लोग नेत्र पहनते और शत्रुदेहको समाविष्ट करते हैं।

भर्तृहेम—‘शुद्धात्पतक’ नामक ग्रन्थके प्रणेता, सन हरिश्चन्द्र नाम।

भर्तृस (स० लि०) भर्तृसणुद। भर्तृसनामारी, तिरस्कार करनेवाला।

भर्तृस (स० ह्री०) भर्तृसल्युद। अपकार उचन, निन्दा, शिफायन। पर्याय—कुत्सा, निन्दा, जुगुप्सा, गर्हा, मारण, निन्दन, कुत्सन, परिवाद, परोपाद, जुगुप्सा, नाक्षेय, अर्ण, निराद, अपकोश। २ डाट डपट। भर्तृसपत्रिका (स० खी०) भर्तृसे स्मेति भर्तृस घञ्, भर्तृस त्रिन्दित पत्र यस्याः, कप् टाप् अन इत्व। महा नीलो।

भर्तृना—१ युक्तप्रदेशके इटावा जिलान्तर्गत एक तहसील। अम्बल और कुमारी नद्रीके तीरवर्ती वन्यप्रदेग, यमुना उपन्यका और उत्तर दोआबको ले कर यह उपविभाग गठित है। भूपरिमाण ४१५ वर्गमील है।

२ उक्त उपविभागका एक प्रधान ग्राम और तहसीलका मन्दर। यह इटावा नगरसे दक्षिण पुर अत्रस्थित है। यहाँ इष्ट शिल्पयन रेतकेका एक स्तेगन है।

भर्तृर—गुजरातवासी जातिविशेष। इस जातिके लोग शस्यादि घेच कर जीविका निर्वाह करते हैं।

भर्तृगढ—मध्यप्रदेशके उन्धवाडा जिलान्तर्गत एक भू सम्पत्ति। कोई गौड सरदार यहाँके जागीरदार है। टोकधाना वा पाँजरा ग्राममें इनका वास भवन विद्यमान है।

भर्म—राष्ट्रकुटुम्बशेष एक राजा। ये वाजपतिके अधिपति थे। प्रभासमें इनका राजधानी थी। इनके राज्यकालके १४३७ और १४४२ स्ववतमें उत्कर्ष शिलालेख मिलते हैं।

भर्म (स० ह्री०) म्रियन्नेनति भृ बाहलकात् मन्। १ स्वर्ण, सोना। २ भूति, नौकरी। ३ नाभि।

भर्मण्या (स० खी०) नर्मणि भरणे साधुरिति भर्मन् यत् टाप्। वेतन, तनखाह।

भर्मन् (स० ह्री०) भरति भ्रियते वेति भृन् (सधायुभ्यो मनिन्। उण् ४१४४) इति मनिन्। १ वेतन, तनखाह। २ स्वर्ण, सोना। ३ धुरदूर, घट्टा,। ४ नाभि। ५ भरण, पालन पोसन।

भर्माभ्य (स० पु०) भरतवशेष नृपभेद।

(भाग० ६।०।१०४)

भर्ता (हि० पु०) १ पशियोंकी उडान। २ एक प्रकारकी निडिया।

भर्ताना (हि० कि०) भर् भर् शब्द होना, नावाज भर्ताना।

भर्तन (हि० खी०) १ निन्दा, अपवाद। २ फटकार, डाँट डपट।

भर्सिया—सुरतानपुर नामी राजपूत जातिकी एक शाखा। भै सोल ग्राममें वास करनेके कारण इनका भै सोलियान वा भर्सिया नाम पडा। ये मैनपुर घासी चौदानोंके वंशधर कहलाते हैं। करणसिंह नामक इस शाखाके एक सरदारने अयोध्या प्रदेशमें आ कर कई कम्पाना पाणिग्रहण किया था। उनके एक वंशधर राजसिंहने शेरशाहके राजत्वयत्नमें इस्लाम धर्ममें दीक्षित हो कर गान इ आजम भै सोलियन नाम पाया था। वाईन-३ अकबरामें उर्षित चौदान इ नौ-मुस्लिम नामक मुसलमान हुए जाते हैं।

भल (सं० पद) दान।

भलका (विशेष) दुःख

सोने या चाँगेका टुकड़ा। इसे शोभाके लिये तथ पर जड़ते हैं। २ एक प्रकारका वाँस।

भलगमडा—बम्बईप्रदेशके काठियावाड़ विभागके ऋणार जिलान्तर्गत एक छोटा सामन्तराज्य। यहाके सरदार घुट्टा-सरकार और जुनागढके नज़ावको कर देते हैं। भलगम बुलदोड़—वाकशिन काठियावाड़ विभागके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य। भलगम नामक ग्राम इसका प्रधान स्थान है। यह अक्षा० २२ २७' उ० तथा देशा० ७० ५४' पू०के मध्य विस्तृत है।

भलदी (हि० खी०) हँसिया नामक लोहेका औतार। भलता (सं० खी०) भातीति भा बाहुल्यकात्, भा चासी लता वेति कर्मधा०। राजवला।

भलन्दन—१ कान्यकुब्जदेशके एक राजा। इन्होंने योगाय सानमे अयोनिसम्भवा कलायतीको प्राप्त किया था। (ब्रह्मवैवर्तपु० श्रीकृष्णजन्मपर० १७ अ०)

२ दिष्टवशीय नृपभेद, नाभागके पुत्र। नाभाग दत्ते।

मार्कण्डेयपुराणमें इनका भनन्दन नामसे वर्णन किया गया है। नाभागमें सुप्रभा नामक वैश्वकन्याके रूप लापण्यमें मुग्ध हो कर पिताको आज्ञाके विरुद्ध उसके साथ विवाह किया था, इसलिये वे पितृ सिंहासनसे वञ्चित रहे थे। उनके पुत्र भनन्दन माताके आदेशसे गोपालनार्थ हिमालय शैल पर गये थे और वहा पर तप परावण नोप नृपतिके अनुग्रहसे विविध अद्विद्याओंसे उल्लान्न हो कर राजवेश लीटने पर उन्होंने पुन पितृ-सिंहासन अधिकार किया था। इन्हीके औरससे प्रसिद्ध वत्समी राजाका जन्म हुआ था। (मार्क०पु० ११४-११६)

भलपति (हि० पु०) भाला रखनेवाला, नेजेवरदार।

भलमनमत (हि० खी०) सज्जनता, शराफत।

भलमनसाहत (हि० खी०) भलगास्त देते।

भलमनसी (हि० खी०) भलमनसत देवा।

भल्ला—बम्बई प्रदेशके भलाघर जिलान्तर्गत एक छोटा राज्य। भल्ला ग्राम ही यहाका प्रधान स्थान है। यह अक्षा० २२ ५४' उ० तथा देशा० ७१ ५६' पू०के मध्य विस्तृत है।

भला (हि० खी०) १ जो अच्छा हो, उत्तम धष्ट। २ बढ़िया, अच्छा। (पु०) ३ कलायण, भलाइ। ४ लाभ, नफा। (अथ०) ५ अस्तु, नैर।

भलाइ (हि० खी०) अच्छापन, भलापन। २ उपहार नेकी। ३ सौभाग्य।

भलानस—ऋग्वेद वर्णित एक प्राचीन जाति। जातितत्त्वविद् औपर्ट (Dt, Oppert) का अनुमान है, कि यह बोलन गिरिसिद्धमें वास करनेवाला प्राई जाति है।

(शूक् ११८०)

भलापन (हि० पु०) भनाइ देता।

भले (हि० कि० रि०) १ भलाभाति, अच्छा तरह। (अथ०) २ सूब, नाह।

भलोद—निम्नश्रेणीकी एक राजपूत जाति। पूरमें भलोद ग्राममें इम जातिकी नाम भूमि थी, इसीलिये इसका भलोद नाम पडा है।

भल्ल (स० पु०) भल्लते इति भल्ल अच्। १ भल्लक, भालू। २ देशभेद ३ शस्त्रभेद। हारीतमें लिखा है, कि इस शस्त्र द्वारा शरीरमें घँसा हुआ तीर निकाला जाता था।

४ बध, हत्या। ५ दान। ६ एक प्रकारका वाण। ७ प्राचीन फाल्गुनी एक जाति। ८ पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थ। ९ सन्निपातविशेष। १० महातक गृह।

भल्लक (स० पु०) भल्लस्वार्थे कन्। १ भल्लक, भालू। २ पक्षिभेद। एक प्रकारकी चिडिया। ३ इगुदीगृह। ४ भल्लतकगृह, मिठावा। ५ सन्निपातविशेष।

भल्लकित्तरय (स० पु०) मत्स्यविशेष। इसका गुण शीतक, शुक्र, बन्धक, मधुर और श्लेष्मवर्द्धक माना गया है।

भल्लकोय (स० खी०) भल्लस्य अपत्य छ। भल्लकका अपत्य।

भल्लद—काश्मीर-निवासी एक कवि। ये राजा शङ्करवर्माके आश्रित थे। (राजत० ५१२०३)

इनके यनाप हृद भल्लाटगतक और पदमञ्जरी नामक दो ग्रन्थ देखनेमें आते हैं। औचित्यविचाररचा कवि-कथाभरण और शङ्खघरपदनिर्णय इनके रचे हुए श्लोक उद्धृत किये गये हैं।

भल्लतीर्थ—प्राचीन तीर्थभेद।

भल्लपाल (स० पु०) भल्ल पालयति पालि अण् उप पर म०। भल्लपात्रक, भल्लदेशपालक।

भल्लपुच्छी (सं० खी०) भल्लस्य पुच्छमिय पुच्छं यस्य। गयेयका नामक नृपभेद।



हैं। किन्हीं विन्हीका कहना है, कि भट्टकान्तके प्रणेता थे। ही थे। प्रवाद है, कि ये अपने भाई निकमादित्यके जरिये मारे गये थे। विन्हीकादित्य थे।

२ रागिणीविशेष, एक रागिणीका नाम। इसे भट्टियारी वा भट्टियाला भी कहते हैं। यह रागिणी ललित और परनयोगसे उत्पन्न है। सा वादी है और न सजादी। सरगम इस प्रकार है—“ऋ ग म प ध नि सा।” (संगीतशास्त्रे)

भर्तृहरियोगी—साधुसम्प्रदायविशेष। विन्हीकादित्यके भाई भर्तृहरिने इस सम्प्रदायको परित्रस्तन किया। राजा भर्तृहरिने किन्हीं योगीका शिष्यत्व ग्रहण किया था, इस कारण उनके प्रशंसित सम्प्रदायिकगण भी योगी नामसे अभिहित हुए हैं। ये लोग हाथमें वाद्ययन्त्र लिये भर्तृगजके गुणकीर्त्तन किये घूमते हैं। काशीधामके राजरी तलाव नामक स्थानमें उनका प्रथा धरा है। ये लोग गेरुचूर्ण पहनते और जन्मदेहको नमाविष्ट करने हैं।

भन्तु हेम—‘शृङ्गारगतक’ नामक ग्रन्थके प्रणेता, भर्तृहरिका एक नाम।

भर्त्सक (स० ति०) भर्त्सन् पुंलृ। भर्त्सनामारो, तिरस्कार करीयाला।

भर्त्सन (स० इ०) भर्त्सन् त्र्युट्। अपचार उचन, निन्दा, जिहायन। पर्याय—कुत्सा, निन्दा, जुगुप्सा, गर्दा, गृहण, निन्दा, कुत्सन, परिवाद, परीवाद, जुगुप्सा, शाक्षेण, अपर्ण, निन्दा, अपकीर्ण। २ उट्ट डपट।

भर्त्सपत्रिका (स० स्त्री०) भर्त्सने ग्मेति भर्त्सन् घञ्, भर्त्सन्ति पक्ष यरया, कप् टाप अत इत्य। महा नीला।

भर्त्सना—१ सुतप्रदेशके इटावा जिलान्तर्गत एक तहसील। चम्पल और कुमारी नदीके तीरस्वर्ती चम्पप्रदेश, यमुना उपन्यजा और उत्तर दोआबको ले कर यह उपनिभाग गठित है। भूपरिमाण ४१५ वर्गमील है।

२ उक्त उपनिभागका एक प्रधान ग्राम और तहसील का सदर। यह इटावा नगरसे ६ कोस दूर अवस्थित है। यहां इष्टदृष्टियन देवदेवा एक स्थान है।

भर्त्सन्—शुक्रानवामी जातिविशेष। इस जातिके लोग शस्त्रादि घेच कर जीविका निर्वाह करते हैं।

भर्त्सगढ—मध्यप्रदेशके त्रिभुवाडा जिलान्तर्गत एक भू सम्पत्ति। श्वेड गोंड-सरदार यहाके जागीरदार हैं। टोफ-धाना वा पाँजरा प्रामांमे इनका धान भवन विद्यमान है। भर्त्स—राष्ट्रकूटप्रदेश एक राजा। ये बाजनोंके अधिपति थे। प्रभासमें इनकी राजधानी थी। हाके राज्यकालके १४३७ और १४४२ सवतमें उत्तरीर्ण शिला लेय मिलते हैं।

भर्त्स (स० स्त्री०) स्रियर्त्सनेति भृ वाहुत्काम् मन्। १ स्वर्ण, सोना। २ भृति, नौरुती। ३ नाभि।

भर्त्सण्या (स० स्त्री०) भर्त्सन्ति भरणे साधुरिति भर्त्सन्त्यत् टाप। वेतन, तपसा।

भर्त्सन् (स० स्त्री०) भर्त्सन्ति भ्रियते वेति भृत् (सर्वथात्प्रो मन्ति। उष्ण ४१४४) इति मन्तिन्। १ वेतन, तनखाह। २ स्वर्ण, सोना। ३ धुस्तर, धत्तर,। ४ नाभि। ५ भरण, पालन पोसन।

भर्त्सन्ध (स० पुं०) भर्त्सन्धशोय तृपभेद।

(भाग० २२१२४)

भर्त्स (हिं० पुं०) १ पक्षियोंको उडान। २ एक प्रकारकी चिडिया।

भर्त्सना (हिं० स्त्री०) भर्त्स भर्त्स शब्द होना, आवाज भर्त्सना।

भर्त्सन् (हिं० स्त्री०) १ निन्दा, अपवाद। २ फटकार, टाट टपट।

भर्त्सिया—सुरतानपुर यासो राजपूत जातिकी एक जाति। भै स्मोल प्रामांमे घास करनेके कारण हाका भै स्मोलियान या भर्त्सिया नाम पडा। ये मैनपुर धामकी चौहानोंके वंशधर कहलाने हैं। परणमिह नामक इस शाखाके एक सरदारने अधोध्या प्रदेशमें आ कर बाई कम्बाना पाणिग्रहण किया था। उनके एक वंशधर राजसिंहने बीरशाहके संपत्कालमें इस नाम धर्ममें दाक्षिण हो कर गान इ आजम भै स्मोलियन नाम पाया था। आईन इ इकबरांमें उर्धित चौहान इ नौ-मुस्लिम नामक सुसन्मान इमी वंशके भ्रमके जाते हैं।

भर्त्स (स० पुं०) १ मार डालनेकी क्रिया, वध। २ दान। ३ निरुपण।

भर्त्सका (हिं० पुं०) १ एक विशेष आकारवा वा हुया

सोने या चाँदीका टुकड़ा। इसे शोभाके लिये नथ पर जड़ते हैं। २ एक प्रकारका वस्त्र।

भलगामडा—बम्बईप्रदेशके काठियावाड़ विभागके भलगाम जिलान्तर्गत एक छोटा सामन्तराज्य। यहाँके सरदार वृद्धि-सरकार और जूनागढ़के नवाबको कर देते हैं।

भलगाम बुलदोई—वांशिन काठियावाड़ विभागके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य। भलगाम नामक ग्राम इसका प्रधान स्थान है। यह अक्षां २२ २७' उ० तथा देशां ७० ५४' पू०के मध्य विस्तृत है।

भलदो (हि० खो०) ईंसिया नामक लोहेका औतार। भलता (स० खी०) भाताति भा बाहुलकात् ड, भा चासो क्ता चेति कर्माया०। राजवडा।

भनन्दन—१ कान्यकुब्जदेशके एक राजा। इन्होंने योगावसानमं अपोनिस्सम्भवा कलावतीको प्राप्त किया था।  
(महावैतर्त्तु० श्रीरामचरितमस० १७ अ०)

२ द्विपेशवीय नृपभेद, नाभागके पुत्र। नाभाग दत्ता।

मार्कण्डेयपुराणमें इनका भनन्दन नामसे वर्णन किया गया है। नाभागमें सुप्रभा नामक वैश्यकन्याके रूप लाभ्यमें मुग्ध हो कर पिताकी आज्ञाके विरुद्ध उसके साथ विवाह किया था, इसलिए वे पितृ सिंहासनसे ध्वस्त रहे थे। उनके पुत्र भनन्दन माताके आदेशसे गोपालनाथ हिमालय-शैल पर गये थे और वहाँ पर तप परायण नीप नृपतिके अनुग्रहसे विविध अत्रविद्याओंसे बलवान हो कर स्वदेश लौटने पर उन्होंने पुनः पितृ सिंहासन अधिकार किया था। इन्हींके औरससे प्रसिद्ध यत्नमौ राजाका जन्म हुआ था। (मार्क०पु० ११४-११६)

भटपनि (हि० पु०) भाला रखनेवाला, नेजेरदार।

भलमनसत (हि० खी०) सज्जनता, शराफत।

भलमनसाहत (हि० खी०) भलमनसत देखो।

भलमनसा (हि० खी०) भलमनसत दखो।

भलला—बम्बई प्रदेशके भलावर जिला-तर्गत एक छोटा राज्य। भलला ग्राम ही यहाँका प्रधान स्थान है। यह अक्षां २२ ५१' उ० तथा देशां ७१ ५६' पू०के मध्य विस्तृत है।

भला (हि० खी०) १ जो अच्छा हो, उत्तम अष्ट। २ उदिया, अच्छा। (पु०) ३ कल्याण, भलाई। ४ लाभ, नफा। (अश्व०) ५ अस्तु, तैर।

भलाई (हि० खी०) अच्छापन, भलापन। २ उपहार नेत्री। ३ सीमापय।

भलानस—अग्निदे वर्णित एक प्राचीन जाति। जातिनरचन्द्र औपट्ट (Dr. Oppert) का अनुमान है, कि यह बोलन गिरिसङ्घमें वास करनेवालो प्राहुइ जाति है।

(भूर ११८५७)

भलापन (हि० पु०) भजाह देना।

भले (हि० कि० खी०) १ भलाभाति, अच्छा तरह। (अश्व०) २ नृव, वाह।

भलोड—निम्नश्रेणीकी एक राजपूत जाति। पुरमें भलोड ग्राममें इम जातिकी नास भूमि थी, इसीलिये इसका भलोड नाम पडा है।

भल (स० पु०) भलते इति भल अच्। १ भल्लूक भालू। २ देशभेद ३ अश्वभेद। हारीतमें लिखा है, कि इस अश्व द्वारा शरीरमें घँसा हुआ तीर निकाला जाता था। ४ वध, हत्या। ५ दान। ६ एक प्रकारका वाण। ७ प्राचीन कालकी एक जाति। ८ पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थ। ९ सन्निपातविशेष। १० भलातक रत्न।

भलक (स० पु०) भल-स्वार्थे कन्। १ भल्लूक, भालू। २ पक्षिभेद। एक प्रकारकी चिडिया। ३ इशुद्रीरत्न। ४ भल्लातकवृक्ष, भिलाया। ५ सन्निपातविशेष।

भलान्मिस्वय (स० पु०) भलान्मिस्वयविशेष। इसका गुण शीतल, गुरु, वक्त्रर, मधुर और श्लेष्मवर्द्धक माना गया है।

भलनीय (स० खी०) भलस्य अपत्य छ। भल्लूकका अपत्य।

भल्लूक—काश्मीर-निवासी एक कवि। ये राजा शङ्करवर्माके आश्रित थे।  
(राजत० १२०३)

इनके बनाए हुए भल्लाटगतक और पदमञ्जरी नामक दो ग्रन्थ द्वैतमें आते हैं। औचित्यविचारचर्चा फनि-कण्ठामरण और शार्ङ्गधरपद्धतिमें इनके रचे हुए श्लोक उद्धृत किये गये हैं।

भल्लतीर्थ—प्राचीन तीर्थभेद।

भल्लपाल (स० पु०) भल्ल पात्यति पालि अण् उपपद स०। भल्लपालक, भल्लदेशपालक।

भल्लपुच्छी (स० खी०) भल्लस्य पुच्छमिव पुच्छ यस्या। गवेजका नामक क्षुपभेद।

भल्लय (स० पु०) ईशान त्रिशाखा एक प्राचीन प्रदेश ।

भल्लयि (स० पु०) प्रायमेद ।

भल्लाक—राजपुत्रमेद । (वायुपु०)

भल्लास (स० ति०) भल्लम्पेरासि यस्य अस्समा सान्त । १ मन्ददृष्टि, निते कम दिवाई देता हो । (पु०) २ हसमेद ।

भल्लाट (स० ह्यो०) १ शशिध्वजराजपुर । भगवान् विष्णु फटिक वनतार धारण कर पहले सेनाके साथ इषी नगरमें गये थे । (फाँकपु० २२ अ०) (पु०) २ दण्ड सेनके पुत्र । ३ पर्वतमेद ।

भल्लात (स० पु०) भल्ल भल्लात्रमिय अतति आत्मान प्रापयतीति अत अच् । भल्लातकदृक्ष, मिलागौ ।

भल्लानक (स० पु०) भल्ल इय अततीति अत कुन वा भल्लात स्वार्थे कञ् । स्वनामख्यात वृक्षविशेष, मिलावे-का पेड़ । (Semicarpus Anacardium वा The marking nut tree) वग्रादिमें चिह्न देनेके लिए, विशेषत रजकगण, इसका व्यवहार करते हैं । इसके रससे सूती कपड़े फालेरगसे रंग जाते हैं । शतद्रुमे आसाम तरु पर्वतके निम्नतट पर वा आसपास, भारतमहासागरके पूर्वद्वीपपुञ्जमें तथा उत्तर अफ्रीलियामें यह वृक्ष काफी तीर पर होता है ।

स्थानविशेषमें यह वृक्ष विभिन्न नामसे परिचित है । जैसे, हिन्दीमें—मेला, मिलाग, मिलरन, भ्योला, वैल तक ; बङ्गालमें—भेला, मेलतकि, मन्थाल—शोसो, कोल—लोसों, उडिया—भल्लिया, गारो धबरी ; आसाम—मोलगुटी, नेपाल—भल्लेयो, भल्ले, लेपचा—चोड्डी, मलया—चेरुणपुच, कम्पिरा ; गोंड—कोका, विवा, युक्त प्रदेश—मिलाग, भाल, भल्लियान, पञ्जाब—मिलाच, मेला मिलादर ; मध्यप्रदेश—मिलावा, कोक, भल्लिया, बम्बई—विष, भीव, भीराम, विलम्बी ; मराठी—विण्व, विवृ, विभ, गुजराती—मिलाग, दाक्षिणात्य—मिलरन, वेल्तक ; तामिल—शनकोट्टे, सेरम-कोट्टे, मीडू, सेयडू, तेगु—जिट्टि विट्टु, जिडि, नेल्लुजिडि, नल्लु जिडि, चेडू, जोडिचेडू, तुममद, मामिडि, कन्दू—गैडू, घेर, घेड ; त्रास—व्वेचैन, पिसि ; सिहल—किरि वडुल्लं, फारसी—मिलादुर, अरब—मिलदिन,

हाजुल फहम, हयेल-कञ्च । सस्वृत पर्याय—अकस्कर, भल्लात, शोधेत्, वहिनामा, घोरतक, मणरुन, भूत नाशन, भ-शतकी, अग्निमुखी, घोरदृक्ष, निर्दहन, तपन, अनठ, कृमिघ्न, शीलवीज, वातारि, स्फोटयोजक, पृथक्-वोज, धनुर्दृश, वोजपादप और वहि । इसके गुण—कट्ट, तिक, कषाय, उष्ण, ठमि, रुफ, वात, उदर, आनाह और मेहनाशक । फलगुण—कषाय, मधुर, कोष्ण, कफ, क्षम, श्वास, आनाह, विषघ्न, शूल, जडर, आध्मान और कृमि-नाशक ।

इसका मल्लगुण विशेषरूपमें दाह और पित्तनाशक, तर्पण, वात और अक्षिनाशक तथा दीप्तिजनक है ।

(राजन०)

भाष्यप्रकाशमें लिखा है,—भल्लातक शब्द तीनों लिङ्गोंमें व्यवहृत होता है । अयक, अकस्कर, अगिक, अग्निमुखी, भल्ली, घोरदृक्ष और शोफेत्, ये भल्लातकके प्रसिद्ध नाम हैं । इसका पका फल मधुरकषायरस, मधुरविपाक, लघु, पाचक, स्निग्ध, तोदण, उष्णवीर्य, छेदी, मेदक, मेघाजनक अग्निकारक तथा कफ, वायु, घण, उदर, कुष्ठ अर्श, प्रहणी, गुल्म, शोथ, आनाह, ज्वर और ठमिनाशक है । इसकी मज्जा—मधुररस, शुक्रवर्द्धक, मासवर्द्धक, वायु और कफनाशक है । भल्लातक—कषाय, मधुररस, उष्णवीर्य, शुक्रवर्द्धक, लघु, वायु, श्लेष्मा, उदरानाह, कुष्ठ, अर्श, प्रहणी, गुम, ज्वर, शिथल, अग्निमान्, ठमि और घणनाशक होता है ।

इन वृक्षसे एक प्रकारका काले रंगका गोंद सा निकलता है । उससे बार्निंगका काम होता है । इसका बीजकीय तिल और धारकगुणविशिष्ट है । उसमें जो काले रंगका गोंद सा रहता है, उसे कपड़े पर लगा कर ऊपरसे चूनेका पानी डाल देनेसे फिर वह कमी भी नहीं छूटता । इसके काले रसमें कित्तरी मिला कर उससे कपड़ें रंगे जाते हैं । बालेश्वर जिलेमें ऊपरकी हँडियामें मिलावा रब कर नाचैनी हँडिया भाग पर रपो जाती है । कमश गरम होने पर ऊपरकी हँडियाके छेत्से रस टपक कर नोचैकी हँडियामें इकट्ठा होता रहता है । तब उस रसमें तेल और चूनेका पानी मिला कर कपड़े रंगे जाते हैं । हजारीबागमें पहले कपड़ोंकी अच्छी तरह

घो कर फिटकरीके पानामें भिगो देते हैं, पीछे उसे सुपा कर मिलावाके रगमें डुबो देते हैं। इस तरह कपडेंमें रग अच्छी तरह भिद जाने पर उसे सुपा कर धो लेना पड़ता है। सरसोंके तेलमें मिलावाका चूरा मिला कर उसे चमडो पर लगाया जाय, तो चमडा सड कर नष्ट नहीं होता। गेडे और मैसेके चमडोको साफ करनेमें प्रधानत मिलावाका व्यवहार होता है।

इसकी गरी और बीजकोपसे एक प्रकारका मोठा तेल पाया जाता है। चायुके सयोगसे वह काला पड जाता है। पोटासियम मिलानेसे वह सफ हो जाता है। इस फलकी गरी चरपरी होती है, पर आगमें जला कर खानेसे अच्छी लगती है। इसका बौद अगर देहसे लग जाय, तो घाव हो जाता है। हाथ पैरोंकी गाठोंमें इसके तेलकी मालिश करके उस पर धूआ दिया जाय तो सूजन हो जाती है। चायुरोगसे फूले हुए स्थान पर तथा डाढ़ोंमें लगानेसे फायदा होता है। परन्तु अच्छी मली जगहमें लगा देनेसे घाव हुए बिना न रहेगा। इसके प्रयोगमें चमडो लाल हो कर फूल जाय, तो नारियलका तेल या इमलीके पानीसे उस स्थानको धो डालना चाहिए। इससे आराम पडता है।

इसके पत्तोंसे पत्तले बनती हैं, और लकड़ी सिर्फ पलानेके ही काम आती हैं।

भ्रंजातकगुड ( स० पु० ) अशौंरोगाधिकारमें एक गुडी पधमेद। प्रस्तुत प्रणाली—मिलावा २ ००, जल ६४ शराव, शेष १६ शराव, गुड १२॥ शराव, छिन्नमल्लातक ५००, त्रिफला, त्रिकटु, मोथा और संधय प्रत्येक २ तोला। इन सब द्रव्योंका यथानियम पाक करनेमें गुड प्रस्तुत होता है। अशौंरोगमें इसका सेवन करनेसे अशरोग अति शीघ्र जाता रहता है। ( चन्द्रक अशौंरोगाधि० )

मैथव्यरत्नावलीके कुष्ठाधिकारमें एक महाभ्रंजातक गुडीपधकी व्यवस्था लिखी है। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—नौमकी छाल, श्यामलता, अतीस, कटुकी, इमर, त्रिकला, मोथा, पित्तपापडा, अनन्तमूल, वच, पदिर काष्ठ, रक्तचन्दन, अकपन, सौंड, कपूर, धरङ्गे, अडूस मूलकी छाल, चिरापता, कूटज मूलकी छाल, विडडक, गोपालकर्षकी जड, मुरगामूल, विडङ्ग, इन्द्रयन्, त्रिय,

चितामूल, हस्तिशर्णपलाशकी छाल गुल्बज, घोषानोम छाल, पटोलपत्र, हरिद्रा, दारहरिद्रा, पिपुल, अमलतास फलकी मज्जा, कल्यालता, ओल, चीनाघास, मजीठ, चाकुन्दुका बीज, तारमूले, प्रिय गु, कायफल, शरपुड, शिरोशकी छाल, प्रत्येक दो पल, मिलावा तीन हजार, जल ६४ सेर, शेष १६ सेर। इन दोनों ढांडोको छान कर एक साथ मिलावे। पीछे उनमें पुराना गुड १२॥० सेर और एक हजार मिलावाकी मज्जा २ कर पाक करे। तदन्तर त्रिकटु, त्रिकला, मोथा, सैन्धव, यमानो, प्रत्येक १ पल, गुडलवण, तेजपत्र, इलायची, नागेश्वर, प्रत्येक २ तोला और गन्धक ४ पल डाल दे। इन्हें यथाविधि पाक करके घृतभण्डमें रख छोडे। इसका अनुपात गुल्बजका पचास और दूध है। पथ्य उष्ण अन्न बतलाया गया है। इस औषधका सेवन करनेसे कुष्ठ, पातरक्त आदि जाते रहते हैं। ( मैथव्यरत्ना० कुष्ठाधि० )

भ्रंजातकघृत ( स० क्री० ) घृतीयधविशय। चन्द्रक चिकित्सित स्थानके ५म अध्यायमें इस घृतको प्रस्तुत प्रणाली लिखी है। इसके सेवनसे गुल्मराग जाता रहता है।

मैथव्यरत्नावलीमें अमृत भ्रंजातक नामक घृतीयधका उल्लेख है। यह अमृतके समान उपकारक है, इसीसे इसका नाम भ्रंजातक रखा गया है। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—धूससे गिरा हुआ भूपपत्र मिलावा ८ सेर, इसे इटके चूरमें मिला कर पीछे जलमें धो ले और धूपमें सूखने दे। सूख जाने पर उन मिलावोंको दो पण्ड करके ६४ सेर जलमें पाक करे। जब १६ सेर जल रह जाय, तब उसे उतार कर ठंडा होन दे। बादमें उसे छान कर फिर आठ सेर दूधमें पाक करे। इसके बाद पादशेष रह जाने पर उसे फिर आठ सेर घीमें पाक करे। सिद्ध हो जाने पर उसे उतार ले और चार सेर चोनी डाल कर अच्छी तरह मिलावे। चिकित्सक स्वास्थ्यकी विवेचना करके यथायोग्य मात्रामें इसका व्यवहार करे। यह घृत प्रात कालमें सेवनोप है। सेवनाप्रस्थामें आहार विहादादि करना विष्कुल माना है। इसकी मात्रा ॥५॥ आनासे २ तोला निश्चित है। इसके सेवनमें कुष्ठादि नानारोगोंका ध्वंस हो कर बलवोप और सुखि होतो है। ( मैथव्यरत्ना० कुष्ठाधि० )

पकिपावन, पञ्चानिक और मोमवणकारो ब्रह्मरावो, ब्राह्मणोंका घास था। उनके यशमें वाजपेयव्रतके सम्पादनकारी पूज्य महामन्त्रि गोपाल भट्टका जन्म हुआ। उन्हीं गोपालके पौत्र और पवित्तकीर्त्ति नीलकण्ठके पुत्र रूपमें भवभूतिने जन्मग्रहण किया।\*

आपके पितृपुरुषगण वेदविद्यामें सुप्रसिद्ध थे। यशगत विद्यानुशीलन तथा अपनी असाधारण प्रतिभा और अध्यवसायसे ये सस्त्रन-रचनामें पारदर्शिता प्राप्त करने के कारण अनन्य साधारण श्रीकण्ठ उपाधिसे समलङ्कृत हुए थे। आपकी माताका नाम जातुकर्णी था।<sup>१</sup> बाल्यकालमें आप सर्गशास्त्रज्ञ धाननिधि नामक एक उपाध्यायके निकट अध्याय करते थे।<sup>२</sup>

विदर्भदेशमें<sup>३</sup> जन्मग्रहण करनेके बाद भवभूतिने अपना बाल्यजीवन कहा और किस प्रकार विताया इसका कोई विशेष विवरण नहीं मिलता। मालतीमाधवके प्रकरणको पढ़ कर हम इतना तो जान सकते हैं, कि उनके समयमें कुण्डिनपुरमें विदर्भकी राजधानी थी।<sup>४</sup> जिस पञ्चपुरमें कविका जन्म हुआ था, यह स्थान अब जनशून्य घोर अरण्य हो गया है।

ऐतिहासिकरूपेण भवभूतिके आविर्भाव-कारके निर्धारण गभीर गवेषणा पूर्वक जो प्रमाण सङ्गृहीत विधे हैं,

\* "अलि दक्षिणायनं पञ्चपुरं नाम नगरम् । तत्र केचि-  
त्तैत्तिरायिष्य कान्ध्याभाभरणापुरव पविपापना पञ्चाम्यो धृतप्रता  
सोमरायिन उदम्भरा ब्रह्मरादिन प्रतिवमन्ति । तदामुपाय-  
णस्य तत्र भगता वाजपेयाजिनो महारूपे पञ्चपुर्यहीताम्नो भट्ट-  
गोपालरूपेण पवित्रकीर्त्तेर्नीलकण्ठस्यारत्नसम्भ्रम श्रीकण्ठपद-  
हस्तकृते भवभूतिर्नामजातुकर्णीपुत्र कविमिश्रेयसमसाकमित्यत्र  
भवन्तो विदाङ्गुन्तु ।"<sup>१</sup>

<sup>१</sup> भवभूतिकी माता जातुकर्णीनामभवभूता थीं। जातुकर्णी-  
नामसम्भारत्याम् भवभूतिजायित्री जातुकर्णी इत्यभ्युपाधि ।

( उदारन० टीका )

× "श्रेष्ठ परमदुमाना महर्षीव्यामिवादिना ।

यथार्थमात्रा भगवता वस्य ज्ञाननिधिषु व ।" ( वीरन० )

" शर्वमा परार प्रेश ।

+ अथ विदार नाम्ने प्रसिद्ध है ।

उमसे मालूम होता है, कि भवभूति ८म शताब्दीमें हुए हैं। अयोध्यापति रामचन्द्रके चरितास्थानको ले कर जितने भी नाटक रचे गये हैं, उनमें कविका उत्तर-चरित और वीरचरित सर्वापेक्षा प्राचीन हैं, इसमें सन्देह नहीं।<sup>५</sup> काठिदास और भवभूतिके कार्योंकी परस्पर तुलना करनेसे कालिदासको ही श्रेष्ठ मानना पड़ता है। कालिदासकी कविता मरल और स्वाभाविक है, भवभूतिकी काव्य दीर्घ समामके कारण जटिल हो गया है, परन्तु उनकी स्वभाष्यर्णना प्रकृतिकी विशेष अनुकारिणी है।

कविकी रचनाशक्ति और वर्णनाशक्ति सुगमत् विस्मयोद्दीपन है। इस प्रकारका भाषाधिपत्य अन्य किसी भी कविके काव्यमें नहीं देखा जाता। आपकी लेखनी से निकला हुआ उरुह्वपद समग्रित दीर्घसमास चिन्वास मेघमन्त्रके समान स्निग्ध, गम्भीर और चित्तप्रादी है। मालतीके प्रणयस निराश हो कर माधव आत्मविसर्जन के दिग्गमशान घाटमें उपस्थित हुए हैं। कविने विमोचिका पूर्ण उस शमशानका जो चित्र अङ्कित किया है, उसे हम उदाहरणार्थ यहाँ उद्धृत करते हैं।—

' गुञ्जतुञ्जुटारकीशिरयदा

पुन्कारसंगित्यत अन्दर पर

चपन्तात्सृतिभ्रतप्राग्भाभीभैसटै ।

अन्त शीर्षा-परङ्क करपयः संशय सुलङ्घन ।

स्रोतोर्गमभोरपरपररा पर शमशानं स्मित् ।"<sup>६</sup>

निशीथ समयमें भीषण शमशान भूमिमें आनेवाले मनुष्य के हृदयमें रजभायसः हो भौतिकभाव उत्पन्न हुआ करता है। उस पर भी नेशान्धकार विजडित उस चित्तानिकी क्षीणदीप्त प्रभामें गाढ़ अधकारमय शमशानपुरीका दृश्य

× अध्यापक विरतन, आन्दराम बहुया आदि मनीषिणी नामा मुक्तिप्राप्त यह बात प्रमाणित कर दी है। बालरामायण और प्रचण्डगणधर नाटकके प्रयोता राजशेखरने रामचरित-रचकोंका इत प्रकार परिचय दिया है —

"भवभूय बर्माविभन कवि पुरा

ता प्रद भवि भल्लमपठताम् ।

स्निग्धः पुनया भगमतिरपया

स वरति सम्प्रति राजशेखरः ॥" ( प्रचण्डगणधर )

और विभोषिकामय हो गया है। भूतसङ्ग प्रभूत भय, क्षीणलोक प्ररुदित पिशाचोंकी अमातुषिक आरुति, वेगसे चलनेवाली चायुका साथ साथ शब्द, शवोंके कङ्काल, प्रतिहतप्रवाहा शैबलिनोका घोर घर्षर नाद, उल्लुञ्जोका उदामकारी रव और शृगालोंके दीर्घ शब्द इन सर्वोंने उम मीयम श्मशान प्रदेशको और भी भया वह कर दिया है।\* उक्त श्लोकके दीर्घ समाप्त तथा सज लित, घुत्कार, चण्ड, तात्हत भुत, प्राग्भार, भीम, घोर घर्षर और श्मशान आदि पद भीति सञ्चारके प्रधान सहायक हो गये हैं।

भवभूतिके काव्यमें दीर्घसमाप्तका प्रयोग देख कर कोई कोई प्रतन्त्ररविद्व उन्हे वाणभट्ट, दण्डी आदि के समभुगुपत्तौं समझते हैं। राजतरङ्गिणीके पढ़नेसे मालूम होता है, कि कवि भवभूति कान्यकुब्जराज यशोवर्माकी सभामें विद्यमान थे। वाक्यतिराज

\* एतिहासि एन्फिन्स्टोने इनकी श्मशान वर्णनानो स्व-भेद समझा है —

Among the most impressive descriptions is one where his hero repairs at midnight to a field of tombs, scarcely lighted by the flames of the funeral pyres and evokes the demons of the place whose appearance filling the air with shrill cries and unearthly forms is painted in dark and powerful colours, while the solitude, the moaning of the wind, the hoarse sound of the brood, the wailing owl and the long drawn howling of the jackals which succeed on the sudden disappearance of the spirits, almost surpass in effect, the presence of their supernatural terrors

। वाणभट्ट, मधुर आदि सजत्की पंचम शतादीषे शेष भाग म विद्यमान थ।

॥ “रुनिनाम्पतिराज भीमभूमत्यादि सचित ।  
जितो ययो यशोवर्मा तद्गुणस्तुति बन्दिताम ॥”

(राजतर० पृ१४४)

शत गौडगुध नामक प्रथमें भवभूति समुद्रसे काव्यामृत मन्थनका कथाका उल्लेख है।

शाङ्ग धरपञ्जति, प्रचण्डपाण्डव, बालरामायण, भोज

राजा यशोवर्मा स्वतःकी इठी जताब्दीके शेषभागमे कान्य कुब्ज सिंहासन पर अविधित हुए थे। मभभूति इनके राजत्व-बालम विद्यमान थ, इस बातका प्रमाण हमें कारिनाश्रुतिके शेषाश्लोक रचयिता वामन प्रणीत ध्वन्यालोक श्लोचनन मित्र सनता है। वामनो उक्त प्रथमें उत्तरचरितके श्लोक उद्धृत किये हैं। आलोचना करनेसे मालूम होता है, कि वामन ७वीं शताब्दीके शेषभागम वा ८वीं सदीके प्रारम्भमें जीवित थे।

इन्दौरसे प्राप्त मालतीमाधवकी हस्तलिखित प्रतिके श्लोकके अन्तम ‘इति कुमारिलसिन्धुवृत्त’, ‘इति कुमारिलस्वामीप्रसादप्राप्त वाचैभन श्रीमदुम्वेकाचार्यनिरचित’ और ‘इति भग्म विविचरिवत्’ इत्यादि पाठ रहनेस काई काई विद्वान भवभूतिको कुमारिलका शिष्य समझते हैं। यह बात नितान्त व्योचितक नहीं जान पडती। कुमारिल-वृत्त सारूपकारिका मान्य ५५७-५८३ ई०के मध्य चीनी भाषाम अनुवादित हुआ था। भवभूतिके पाठकमें जा बौद्धविरोध है, उससे प्रतिपन्न हाता है कि ये कुमारिलके मतानुसृत हुए थे।

मानतीमाधवकी भूमिकामें डा० भवडारकरने लिखा है, कि “पण्डितसमाजमें प्रवाद है, कि भवभूति कालिदासके समवामिक थे।” यह प्रवाद इस प्रकार है,—भवभूति उत्तररामचरितकी रचना करके कालिदासके उसके नियममें उनका अभिमत पूछा था। कालिदासने उस समय चतुरङ्गरीडामें रत होनेस, प्रथमके उद्धृतसे पढ़नेके लिये कहा। भाद्रप्योपान्त अरण्य कर कालिदास ने सन्तोषके साथ कहा कि प्रथ उत्तम है, परन्तु—

“किमपि किमपि मन्दं मन्दमाशंसि योगा

दविरक्षितरूपो न जल्पतोरकृमेण ।

अग्निधिलपरिरम्भम्यात्राकैकदोषो

रिपिदितगतयामा राधिरथ व्यरसीत् ॥” (उत्तर ६)

“इस श्लोकके इस चरखम एक शब्दमें एक अनुवाद अर्थ हो गया है।” उनके उपरानुसार भवभूतिन कहा “राधिरथ व्यरसीत्” पाठ बना लिया। पर इस जरा-सी वाग पर, जाकि अशक्तमें प्रवाद है, भवभूतिको कालिदासका समझानेकी नहीं कहा जा सकता।

ग्रन्थ, प्रौढमनोरमा, सरस्यतीकण्डाभरण और साहित्य-  
दर्पण आदि ग्रन्थोंमें भगभूतिको उल्लेख है, परन्तु उसमें  
कविके काल निर्णयमें विशेष सहायता नहीं मिलती।

भगभूति उन मालतीमाधवप्रकरणको अभिनिवेश-  
पूर्वक पढ़नेसे तत्सामयिक बौद्ध और तान्त्रिक समाजकी  
आभ्यन्तरोप अग्रथाका आभास पाया जाता है। कुमारिल  
आदि उस बौद्धमत प्वाविन भारतमें प्रारम्भ्य धर्म और  
वैदिक क्रियाकलापादिके स्थापनमें जैसे बद्धपरिहर हुए  
थे, कवि भगभूतिने अपने नाट्यवाच्यमें परोक्षभावे उसी  
मतका पोषण किया है। परिप्राञ्जिका कामन्दकीके  
कार्यकलापका अवलोकन करनेसे, उस समयकी बौद्ध  
समाजकी भगवत्प्रथाका पञ्चम्य मिलता है। मालती  
माधवको विद्याहसुत्वमें आयत्त करवा और मालतीका  
मीमांसकवृद्धिके लिए टण्डुलचतुर्दशामं शिवपूजनार्थ पुष्प  
चयन देण कर अनुमान होता है, कि उस समय हिन्दू  
धर्म पुनरभ्युदित हुआ था। वस्तुतः उस समयके बौद्ध  
गण शिवाराधना करें या बुद्धमार्गका अनुसरण करें,  
कुछ स्थिर न कर सके थे। उस समय बौद्ध और हिन्दू  
सम्प्रदायमें परस्पर वैभवाव नही था। गणपतमन्त्री  
भूषिसु और देवरातेने बौद्ध-कला कामन्दकी और सौदा  
मिनो आदिके साथ एक ही गुरुकी पाठशालामें अध्ययन  
किया था। द्वितीय अङ्कके "गीतश्यायमर्थाऽङ्गिरसा"  
इत्यादि वाक्यमें बौद्धोंने हिन्दूमहिताका अध्ययन सूचित  
हुआ है।

भगभूतिके समसामयिक तान्त्रिक समाजकी अवस्था  
अतीव शोचनीय थी। सौदामिनो, कपालकुण्डला  
और अघोरघण्टके चरित्रमें सम्पूर्णतः इनका प्रति-  
भास है। सौदामिनोचरित्रमें बौद्धोंके स्वधर्मत्याग  
पूर्वक अघोरो शैव या तान्त्रिक उपान्तनाका आभास  
पाया जाता है। पहले सौदामिनो बौद्धधर्मावलम्बिनी थीं,  
पश्चात् उन्होंने अघोरघण्टकी शिष्या हो कर गुरुचर्या,  
तपस्या, तन्त्र, मन्त्र, योग, अभियोग आदिके अनुष्ठान  
द्वारा मिरिदालाग किया। उनके तान्त्रिकधर्म ग्रहण करने  
पर बौद्धोंने विशेष निष्ठे प्रभाव नहीं प्रकट किया था।

पञ्चमाङ्कमें चामुण्डाके मन्त्र बलिदानकी व्यवस्था  
देण कर अनुमान किया जा सकता है, कि उस समय

दाक्षिणात्यमें नर त्रिं प्रचलित थी। अघोरघण्ट और  
कपालकुण्डला इस पित्राच प्रशक्तिके चरम निदर्शन हैं।

कविके वीरचरित और उत्तरचरितके पढ़नेसे वैदिक  
समाजके त्रिंशद लक्षणोंका परिप्राञ्जित हो जाता है।  
रत्न और पुत्रका जातकर्म, चूडाकरण, उपनयन  
और वेदाध्ययन, रामचन्द्रका वीक्षा प्रण, गोदान  
मङ्गल और विद्याहाति संस्कार तथा भाण्डायनादिका  
प्रह्वचर्य, अतिथिसत्कार और उसकी प्रयोज  
नीयता आदि वैदिक आचार विगदरूपसे विरुत्  
हुआ है। भगभूति द्वारा अङ्कित प्राचीन समाज चित्र-  
का धर्मशास्त्रकारोंने भी अनुमोदन किया है। किस प्रकार  
उका पालन किया जाता है, ग्रन्थकारने दोनों ही राम  
चरित्रोंमें इन बातका आभास दिया है। इसके सिवा  
वेद, उपनिषद्, धर्मसहिता, पुगण, रामायण, महाभारत  
आदिके मत उद्धृत कर उन्होंने वैदिक समाजका आदर्श  
गठन किया है। बौद्ध और तान्त्रिक धर्मने प्रतिनिवृत्त  
हो कर जनसाधारण जिससे वैदिक आचार ध्वजारका  
अनुपत्तन कर सके, यह गूढ उद्देश तोनों ही नाटकोंमें  
विमिश्रित है। कवि द्वारा वर्णित वैदिक समाजकी परि-  
वृत्ता, महत्ता तथा तान्त्रिक क्रियाकलापकी भोषण नीति  
प्रवृत्ता और हिंसाप्रयत्नाका अनुधावन करनेसे माहूम  
होता है कि, वे सनातन आर्यधर्मके विशेष पक्षपाती थे।

काव्य, अलङ्कार और व्याकरण शास्त्रकी भाति वेदा-  
न्तादि दर्शनशास्त्रोंमें भी आपकी विलक्षण व्युत्पत्ति  
थी। ५ उत्तररामचरितकी जरा व्यागमे पढ़ा जाय तो  
माहूम हो सकता है कि भगभूति शङ्कराचार्यके पूर्व प्रादु-  
र्भूत हुए थे। भगभूतिकी विद्याप्रभाव पारों और

\* "विद्यायां मेवा मरुता मेवानां भूषणमपि।

नदधीयं विवर्तना कापि विप्रलया कृत ॥"

( उक्तल० ६ )

इगम विरतीनादका कुछ कुछ आभाण दिया गया है।

। उक्त ग्रन्थके ४थे अङ्कके "बन्धनमिन्त्यातयुर्वी नाम ते  
लोरा नेत्र्य प्रतिविपीपन्ने ये आत्मयानि इत्यां कृप्यो गन्त्यन्ते  
इत यावन्को देण कर अनुमान होता है कि, ग्रन्थकारने वाचपीय  
यद्विनीपनिरदके विन्नाद्विपित स्मेवीका आभय प्रण किया  
था—

व्याप्त होने पर वे क्रमसे उज्जयिनी राजाके सभापरिषदत नियुक्त हुए थे। यहाँ पर कन्निके जीवनका अधिकांश समय व्यतीत हुआ था। आपके उक्त तीनों ही नाटक उज्जयिनीके अधिष्ठातृदेव काल प्रिय नाथके समर्थ अभिनीत हुए थे \*।

“असूया नाम ते खोत्रा अन्येन तमसाहृता।  
तास्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति य के चात्मनो जना ॥”

( वाचसपथ उ० )

कथमान उक्त श्लोकके शब्दाथ पर लक्ष्य कर भरभूतिन उक्त अपने ग्रन्थमें समाविष्ट किया है। महर्षि शङ्कराचार्यने अपने वाचसपथवापनिष्ट भाष्यम इसकी विवृति दी है जा इस प्रकार है—  
“अथ इदानीं अविद्विन्दिदार्थाऽन मन्त्र आरभ्यते। असूया परमात्म भागमद्वयमपेक्ष्य देवादयोऽपि असुरास्तेषां च असूया। नाम सन्नेऽन्यको निपात। ते ह्याना कर्मफलानि लाभयन्तेदुःखयुज्यन्त इति जन्मानि। अन्येन अदर्शनात्मनेन अज्ञान तमसा आहृता च्छादितान्सास्त्रान्स्वार्थान्तामन पूर्येव त्यक्त्वा इम देव अभिगच्छन्ति यथार्थं यथाभुताम्। ये के चात्महन। आत्मन प्रन्तीति आत्महन। के ते ये अविद्वार। कथ ते आत्माना तित्य रिचन्ति। अत्रियादायथ त्रियमानस्य आत्मनस्त्विदरत्नरण्यात्। त्रियमानस्य आत्मनो यत् कार्यं पन अजरामरत्वादिमनेदनादिलक्षणं तत् तस्यैव तिराभूतं भवतीति प्राज्ञता अत्रिद्वारो जना आत्महन उच्यते। तं हि आत्महननदोषाय संमरन्ति ते।’ (शाङ्करभाष्य ३)

भरभूति और शङ्करकी व्याख्यामें वैषम्य देव कर कोई अनुमान करते हैं कि उत्तरचरितकी रचनाके समय उक्त उपनिषद्का शांकरभाष्य नहीं था। शङ्करकी अभिप्राय एव मनोरम व्याख्या मिलने पर भरभूति कभी भी उक्त उपनिषद्वाक्यके आक्षरिक अर्थको ग्रहण नहीं करते। भरभूति शङ्कराचार्यके पूर्वजनों थे, इस बातको बहुतसे विद्वान् स्वीकार करते हैं। वर्तमान अनुमन्धानसे प्रमाणात् होता है कि शङ्कराचार्य ईसाकी ६ठी शताब्दीके निकटवर्ती किसी समयमें त्रियमान थे। इसलिये उनका शङ्कराचार्यके पर्यास्तत्वका मानना किसी प्रकार असमोचीन नहीं मालूम होता।

\* भरभूति द्वारा प्रकटित कालप्रियनाथ कीर्तनी देवमूर्ति है और वहाँ प्रतिष्ठित थी, इसका विशेष विवरण कुछ नहीं मिलता। स्वर्गीय ईश्वरचन्द्र विद्यासागरने जगद्गुरुके मतानुसरण कर उन्हें परमगुरुस्य देवमूर्ति विशेष बतलाना है। परन्तु

भरभूति ( स० लि० ) भय स्वरूपे भयट । भय स्वरूप । भवमोचन ( स० लि० ) ससारके घटनोंमें लुडानिवाला, भगवान् । भवरुन् ( स० खी० ) भये जन्माग्निप्रदे ससारे रोदिति अनेनेति भवे जन्मान्ते रोदित्वनेनेति जा छद् क्षिप् । प्रेत पटह, एक प्रकारका धाना जो मृतकी आत्मेष्टि कियाके समय बजाया जाता है ।

भवर्ग ( स० पु० ) नक्षत्रवर्ग । भरभूति ( स० खी० ) जिज्जोकी स्त्री, पार्वती । भवविलास ( स० पु० ) १ माया । २ ससारके सुख जो धानके अन्धकारसे उदित होते हैं । भवशर्मन्—मिथिगतासी एक परिषद । इहानि मिथला राज भूमिहके मन्त्री रामदत्तके आदेशसे षोडश महात्मान पद्धति प्रणयत की । भरभूति ( स० पु० ) सांसारिक दुःख और क्रोध । भरसम्भर ( स० लि० ) सांसारिक, ससारमें होने वाला ।

भवसार—मुचरानामां निरुष्टे जातिविशेष । वस्तुदि रमाना इनका जातीय व्यसय है । भरभूति—१ वरपत्रियरणके प्रणेता । २ वीधायन श्रौत सूत्रके भाष्य, अग्निष्टोमप्रयोग, वीधायनवातुमांस्यसूत्र भाष्य और वीधायनदर्शपूर्णमास प्रभृति ग्रन्थोंके प्रणेता । केजघट्ट प्रयोगसारमें इनका मत उद्धृत हुआ है । भवसूत्र ( स० पु० ) १ त्रियन ब्रह्माण्डके सृष्टिकता, प्रज्ञा । २ त्रिणु । भवर्वा ( हि० खी० ) भकर, भारी । भवर्वा ( हि० खी० ) घुमाना, फिराना ।

वानरमाथय, कथापरित्सागर, रतुना ( ६।३५ ) और भवभूत ( १।३५ ) आदि ग्रन्थोंमें उज्जयिनी नगरीमें प्रतिष्ठित त्रियमूर्तिक ही महाकाव्यनाथ, महाकाल-निकेतन, महाकालरूप आदि नामम उल्लेख किया गया है। भरभूति त्रिय समय उज्जयिनी राज समाने परिषद थे, तब सम्भवतः ये उज्जयिनीके अधिष्ठातृवका कालप्रियनाथ नामसे सम्बोधन करते होंगे। उज्जयिनी नगरीकी शिवा नदीके पूर्वांतरस्य विगतचमुपदेशके पुरा-दक्षिणार्धके महाकालका यथा भागे मन्दिर म्म



मया (स० खी०) पार्यती, दुर्गा ।

मयाचल (स० पु०) मया महादेवस्य अचल । मन्दर पर्वतके पूर्वपत्नी शैलभेद ।

मयात्मना (स० खी०) भवस्य शिवस्य आत्मजेति । मनसादेवि ।

मयादृष्ट (स० ति०) भवानिव दृश्यते य इति व्युत्पत्त्या भवच्छब्दपूर्वक दृष्ट घातोः कमणि क्रमेण सक् क्विप् टर् प्रत्ययेन निष्पन्नः । युष्मन् सदृश, आपके जैसा ।

मयादृश (स० ति०) मयादृश देखो ।

भवानन्द—१ एक प्राचीन कवि । पद्यावलीमें इनकी रचना उद्धृत हुई है । २ एक वैदान्तिक । इन्होंने कलकलता नामक वैदान्तग्रन्थ स फलन किया । ३ सदर्पकन्दर्पकाव्यके प्रणेता ।

भवानन्द तर्कवागीश—नरहीपवासी एक पण्डित । इन्होंने रघुनाथ शिरोमणिद्वारा आर्यातयादको एक टिप्पणी लिखी है ।

भवानन्दपुर—बङ्गालके दिनाजपुर जिलान्तर्गत एक गण्ड ग्राम । यह हुलिकनदीके पश्चिमी किनारे पाप भरकी दूरी पर अवस्थित है । यहा एक आश्र-काननके मध्य पीर नैरुमर्दकी समाधि है । प्रति वर्ष वैशाखमासमें उक्त पीरके उद्देश्यसे मेला लगता है ।

भवानन्द मजूमदार—रुष्णनगर राजव शके प्रतिष्ठता । भट्टनारायणसे अधस्तात् विरातितम पुरुष रामचन्द्र सेमा दारके उद्येष्ठपुत्र । इन्होंने बाल्यकालमें ही स सृष्टवचिद्यां

विशेष पारदाश्रिता प्राप्त की थी । १४ वर्षकी उम्रमें एक मुसलमान फौजदारको हुगलीकी मार्ग दिखा देनेके कारण फौजदार इन पर बहुत खुश हुए और इनकी सरलता और साहसको देख कर वे इन्हें सप्तग्राममें ले गये । यहा इन्होंने पारसी भाषा और राजकार्यकी शिक्षा पाई । उक्त हुगलीके फौजदारके प्रयत्नसे बंगालके नवाबने इन्हें कानूनगोका पद दे कर सम्राट् के यहासे सनद और मजूमदार उपाधि दिला दी । प्रतापा दिव्य विजयके समय इन्होंने सैन्य सहित मानसिंहको लगातार सात दिन तक होनेवाली आधीमें भोजनादि दे कर उनकी रक्षा की थी । प्रतापादित्यको पराजित कर दिल्ली जाते समय मानसिंह भवानन्दको अपने साथ लेते गये । यहा उन्होंने जहागीर वादशाहसे अनुरोध कर भवानन्दको महतपुर, नदीया, मरुपदह, लेपा, सुलतान पुर, कामिमपुर, बयसा, मसुण्डा आदि १४ परगनोंका फरमान दिलाया था । ( हिजरी १०१५, ई० १६०६ )

सम्राट्से फरमान पाते समय इन्हें नौवत, उड्डा, घडो, निगाने आदि मिली थी । स्वदेश लौट कर आपने मटियारीमें राज-भवन बनवाया और वहाँ वे राजकार्य करते रहे । आपके कार्यसे परिनुष्ट हो कर सम्राट्ने सात वर्ष बाद पुनः इन्हें उरउडा आदि कई परगने दिये (१६१३ ई०) । श्रीकृष्ण, गोपाल और गोविन्द नामक आपके तीन पुत्र थे । गुण ज्येष्ठ मध्यमपुत्र गोपाल पितृ-राज्यके अधिकारी हुए थे । (कृत्वीगण शालि )

